मानक हिन्दी कोश

•

रामचन्द्र वर्मा

मानक हिन्दी कोश

द्वितीय खण्ड

रामचन्द्र वर्मा

शब्द-संख्या--२३६५३

मानक हिन्दी कोश

[हिन्दी भाषा का अद्यतन, अर्थ-प्रधान और सर्वांगपूर्ण शब्द-कोश]

तीसरा खंड

[थ--प]

प्रधान सम्पादक
रामचन्द्र वर्म्मा

सहायक सम्पादक
बदरीनाथ कपूर, एम. ए., पी-एच. डी.

शकाब्द १८८६ : सन् १९६४

हिन्दी साहित्य सम्मेलन • प्रयाग

प्रथम संस्करण

मूल्य
पचीस रुपये

मुद्रक
रामप्रताप त्रिपाठी, सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग

प्रकाशकीय

मानक हिन्दी कोश का यह तृतीय खण्ड हिन्दी-जगत् के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें विशेष प्रसन्नता है। हिन्दी-प्रेमियों ने जिस स्नेह और प्रेम से इसके पूर्व प्रकाशित दो खण्डों का स्वागत किया है और जिस उत्सुकता से वे इसके शेष तीन खण्डों की प्रतीक्षा कर रहे हैं उससे हमें अपने प्रयास के महत्व का अनुभव हुआ है और हमारा उत्साह-वर्धन हुआ है। इसके लिए हम सहज ही हिन्दी-प्रेमी महानुभावों के अनुगृहीत हैं और उन्हें विश्वास दिलाना चाहते हैं कि मानक हिन्दी कोश के शेष चौथे और पाँचवें खण्डों के प्रकाशन में हम यथासम्भव शीघ्रता करेंगे। संकलित सामग्री संपादित होकर तैयार है केवल मुद्रण-कार्य बाकी है।

कोश का काम निरंतर गतिशील और वर्धमान बना रहता है। हिन्दी-जैसी विकासशील और प्रगतिशील भाषा में बड़े वेग से नये शब्द आते जा रहे हैं। भारत के विभिन्न प्रदेशों में तो इसका प्रचार एवं प्रसार हो ही रहा है, विदेशों में भी इसके पाठकों की संख्या बढ़ती जा रही है। हिन्दी-क्षेत्र में भी इसके लेखकों और साहित्यकारों की संख्या बढ़ रही है। सरकारी और गैरसरकारी हलकों में भी जो अनुवाद और शब्द-चयन का काम हो रहा है उससे भी हिन्दी का शब्द-भण्डार भरता जा रहा है। इन सबको पाँच खण्डों के शब्दकोश में सीमित समय के भीतर समाविष्ट करने का प्रयास हम कर रहे हैं। जिस वेग से हिन्दी में नित्य नये शब्द आते जा रहे हैं उस वेग से उन्हें संकलित करना कितना श्रमसाध्य कार्य है इसका अनुभव कोश-प्रणयन-कार्य से सम्बद्ध लोगों को है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन अपने इस गुरुतर कर्त्तव्य के प्रति जागरूक है। हम विनम्रतापूर्वक हिन्दी-सेवियों को यह आश्वासन देना चाहेंगे कि इस काम में कोई बात न उठा रखी जायगी। हमारा यह काम मानक हिन्दी कोश के पाँचों खण्डों के प्रथम संस्करण के बाद भी जारी रहेगा क्योंकि उसके बाद ही प्रथम संस्करण के दोषादि का निराकरण किया जा सकेगा। हम अपने इस कार्य में उन सभी विचारवान व्यक्तियों की सहायता चाहेंगे जो कोश की भूलचूक तथा उसमें नये शब्दों के प्रवेश के विषय में सुझाव देना चाहेंगे।

हम इस कोश के प्रधान संपादक, उनके सहयोगी तथा अन्य सभी लोगों के प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने इसके मुद्रण और प्रकाशन में विशेष योगदान किया है। सम्मेलन मुद्रणालय के प्रबन्धक और कर्मचारी अपने ही हैं फिर भी उन्हें साधुवाद देना आवश्यक है क्योंकि कठिन परिस्थिति में विशेष सतर्कता के साथ उन्होंने इसके मुद्रण का कार्य संपन्न किया है।

गोपालचन्द्र सिंह
सचिव
प्रथम शासन निकाय

हिन्दी साहित्य सम्मेलन
प्रयाग

संकेताक्षरों का स्पष्टीकरण

अं०—अंगरेजी भाषा
अ०—(कोष्ठक में) अरबी भाषा
अ०—(कोष्ठक से पहले) अकर्मक क्रिया
अज्ञेय—स० ह० वात्स्यायन
अनु०—अनुकरणवाचक शब्द
अप०—अपभ्रंश
अर्द्ध० मा०—अर्ध-मागधी
अल्पा०—अल्पार्थक
अव्य०—अव्यय
आस्ट्रे०—आस्ट्रेलिया के मूल निवासियों की बोली
इब०—इबरानी भाषा
उग्र०—पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'
उदा०—उदाहरण
उप०—उपसर्ग
उभय०—उभयलिंग
कबीर०—कबीरदास
कश०—कश्मीरी भाषा
केशव०—केशवदास
कोंक०—कोंकणी भाषा
कौ०—कोटिलीय अर्थशास्त्र
क्रि०—क्रिया
क्रि० प्र०—क्रिया प्रयोग
क्रि० वि०—क्रिया विशेषण
क्व०—क्वचित्
गुज०—गुजराती भाषा
चन्द्र०—चन्द्रवरदाई
जायसी—मलिक मुहम्मद जायसी
जावा०—जावाद्वीप की भाषा
ज्यो०—ज्योतिष
डिं०—डिंगल भाषा
ढो० मा०—ढोला मारू रा दूहा
त०—तमिल भाषा
ति०—तिब्बती
तु०—तुरकी भाषा
तुलसी०—गोस्वामी तुलसीदास
ते०—तेलगु भाषा
दादू—दादूदयाल
दिनकर—रामधारीसिंह 'दिनकर'
दीनदयालु—कवि दीनदयालु गिरि
दे०—देखें
देव—देव कवि
देश०—देशज
द्विवेदी—महावीरप्रसाद द्विवेदी
नपुं०—नपुंसक लिंग
नागरी—नागरीदास
निराला—पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी
ने०—नेपाली भाषा
पं०—पंजाबी भाषा
पद्माकर—पद्माकर कवि
पन्त—सुमित्रानन्दन पन्त
पर्या०—पर्याय
पा०—पाली भाषा
पुं०—पुंलिंग
पु० हिं०—पुरानी हिन्दी
पुर्त्त०—पुर्त्तगाली भाषा
पू० हिं०—पूर्वी हिंदी
पैशा०—पैशाची भाषा
प्रत्य०—प्रत्यय
प्रसाद—जयशंकर प्रसाद
प्रा०—प्राकृत भाषा
प्रे०—प्रेरणार्थक क्रिया
फा०—फारसी भाषा
फ्रां०—फ्रांसीसी भाषा
बंग०—बंगाली भाषा
बर०—बरमी भाषा
बहु०—बहुवचन
बिहारी—कवि बिहारीलाल
बुं० खं०—बुन्देलखण्डी बोली
भारतेन्दु—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
भाव०—भाववाचक संज्ञा

भू० कृ०—भूत कृदन्त
भूषण—कवि भूषण त्रिपाठी
मतिराम—कवि मतिराम त्रिपाठी
मल०—मलयालम भाषा
मि०—मिलावें
मुहा०—मुहावरा
यहू०—यहूदी भाषा
यू०—यूनानी भाषा
यौ०—यौगिक पद
रघुराज—महाराज रघुराज सिंह, रीवाँ-नरेश
रसखान—सैयद इब्राहीम
रहीम—अब्दुर्रहीम खानखानाँ
राज० त०—राजतरंगिणी
लश०—लशकरी बोली अर्थात् हिन्दुस्तानी जहाजियों की बोली
लै०—लैटिन भाषा
व० वि०—वर्ण-विपर्यय
वि०—विशेषण
वि० दे०—विशेष रूप से देखें
विश्राम—विश्रामसागर
व्या०—व्याकरण
शृं०—शृंगार सतसई
सं०—संस्कृत भाषा
संयो०—संयोजक अव्यय
संयो० क्रि०—संयोज्य क्रिया
स०—सकर्मक क्रिया
सर्व०—सर्वनाम
सिं०—सिन्धी भाषा
सिंह०—सिंहली भाषा
सूर—सूरदास
स्त्री०—स्त्रीलिंग
स्पे०—स्पेनी भाषा
हरिऔध—पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय
हिं०—हिन्दी भाषा

*यह चिह्न इस बात का सूचक है कि यह शब्द केवल पद्य में प्रयुक्त होता है।

†यह चिह्न इस बात का सूचक है कि इस शब्द का प्रयोग स्थानिक है।

संस्कृत शब्दों की व्युत्पत्ति के संकेत

अत्या० स०—अत्यादि तत्पुरुष समास (प्रा० स० के अन्तर्गत)

अव्य० स०—अव्ययीभाव समास

उप० स०—उपपद समास

उपमि० स०—उपमित कर्मधारय समास

कर्म० स०—कर्मधारय समास

च० त०—चतुर्थी तत्पुरुष समास

तृ० त०—तृतीया तत्पुरुष समास

द्व० स०—द्वन्द्व समास

द्विगु० स०—द्विगु समास

द्वि० त०—द्वितीया तत्पुरुष समास

न० त०—नञ्तत्पुरुष समास

न० ब०—नञ्बहुव्रीहि समास

नि०—निपातनात् सिद्धि

पं० त०—पञ्चमी तत्पुरुष समास

पृषो०—पृषोदरादित्वात् सिद्धि

प्रा० ब० स०—प्रादि बहुव्रीहि समास

प्रा० स०—प्रादि तत्पुरुष समास

ब० स०—बहुव्रीहि समास

बा०—बाहुलकात्

मयू० स०—मयूरव्यंसकादित्वात् समास

शक०—शकन्ध्वादित्वात् पररूप

ष० त०—षष्ठी तत्पुरुष समास

स० त०—सप्तमी तत्पुरुष समास

√—यह धातु चिह्न है।

विशेष—पृषो०, नि० और बा० ये तीनों पाणिनीय व्याकरण के संकेत हैं। इनके अर्थ हैं, 'पृषोदर' आदि शब्दों की भाँति, 'निपातन' (बिना किसी सूत्र-सिद्धान्त) से और 'बाहुलक' (जहाँ जैसी प्रवृत्ति देखी जाय वहाँ उस प्रकार) से शब्दों की सिद्धि। जिन शब्दों की सिद्धि पाणिनीय सूत्रों से सम्भव नहीं होती उनकी सिद्धि के लिए उपर्युक्त विधियों का प्रयोग किया जाता है। इन विधियों से किसी शब्द को सिद्ध करने के लिए वर्णों के आगम व्यत्यय, लोप आदि आवश्यकतानुसार किये जाते हैं।

मानक हिन्दी कोश

तीसरा खण्ड

थ

थ—देवनागरी वर्णमाला के तवर्ग का दूसरा वर्ण। उच्चारण तथा भाषा-विज्ञान की दृष्टि से यह दंत्य, अघोष, महाप्राण और स्पर्शी व्यंजन है।
पुं० [सं०] १. रक्षण। २. मंगल। ३. भय। डर। ४. पहाड़। पर्वत। ५. भय से रक्षा करनेवाला। भय-रक्षक। ६. आहार। भोजन।

थंका—पुं० [?] ऐसा पट्टा जिसके अनुसार निश्चित लगान घटाया-बढ़ाया न जा सके। बिलमुकता।

थंडिल†—पुं० [सं० स्थंडिल] १. यज्ञ की वेदी के लिए तैयार की हुई भूमि। २. यज्ञ की वेदी। ३. ऐसी जमीन जिस पर आदमी सो सकता हो या सोता हो।

थंब—पुं० [सं० स्तम्भ] [स्त्री० अल्पा० थंबी] १. खंभा। २. सहारा। टेक। ३. राजपूतों का एक भेद।

थंभ—पुं० [सं० स्तम्भ] [स्त्री० अल्पा० थंभी] १. खंभा। २. चाँड़। टेक। थूनी।

थंभन—पुं०=स्तम्भन।

थँभना†—अ०=थमना।

थँभवाना—स०=थमवाना।

थँभाना†—स०=थमाना (पकड़ाना)।

थंभित*—वि०=स्तंभित।

थइँ—स्त्री० [हिं० ठाँव, ठाँई] ठाँव। जगह।
स्त्री०=थही।

थइली—स्त्री०=थैली।

थक†—पुं०=थाक।

थकन†—स्त्री०=थकान।

थकना—अ० [सं० स्था+क्त, प्रा० थक्कन] १. अधिक समय तक कोई काम या परिश्रम करने तथा शारीरिक शक्ति के अत्यधिक व्यय हो जाने के कारण ऐसी स्थिति में आना या होना जिसमें अंग-अंग शिथिल होने लगते हैं। शरीर की शक्तियों का मन्द पड़ना और शिथिल होना। श्रांत होना।
विशेष—इस क्रिया का प्रयोग स्वयं व्यक्ति के लिए भी होता है और उसके शरीर के अंगों अथवा शरीर के सम्बन्ध में भी। जैसे—(क) चलते-चलते हम थक गये। (ख) दिन भर की दौड़-धूप से टाँगें या सारा शरीर थक गया है।
२. कोई काम करते-करते ऐसी स्थिति में आना कि मन में वह काम और अधिक या फिर करने का उत्साह न रह जाय। हार जाना। जैसे—हम समझाते-समझाते थक गये, पर वह कुछ सुनता ही नहीं। ३. वृद्धावस्था के कारण शरीर का बहुत-कुछ शिथिल हो जाना और पूरा काम करने के योग्य न रह जाना। जैसे—वृद्धावस्था के कारण अब हम बहुत थक चले हैं।
अ० [सं० स्थग्] चकित या मोहित होने के कारण स्तब्ध हो जाना।

थकर†—स्त्री०=थकान।

थकरी†—स्त्री० [हिं० थाक] खस आदि कुछ विशिष्ट पौधों की सींकों की कूँची जिससे स्त्रियाँ बाल झाड़ा करती थीं।

थकायक†—अव्य० [अनु०] १. थक-थक शब्द करते हुए। २. निरंतर। लगातार। ३. अधिक मात्रा में।
वि० ढेर-सा। यथेष्ट।

थकान—स्त्री० [हिं० थकना] १. थके हुए होने की अवस्था या भाव। २. थकने के कारण होनेवाला शारीरिक शक्ति का ऐसा क्षय जिसकी पूर्ति विश्राम करने से आप से आप हो जाती है। जैसे—अभी वे यात्रा की थकान मिटा रहे हैं।

थकाना—स० [हिं० थकना] ऐसा काम करना या कराना जिससे कोई थक जाय।

थका-माँदा—वि० [हिं० थकना+फा० माँदः] जो इतना अधिक थक गया हो कि अशक्त और अस्वस्थ-सा जान पड़ने लगे।

थकार—पुं० [सं०] 'थ' अक्षर या वर्ण।

थकाव†—पुं० [हिं० थकना] थकावट।

थकावट—स्त्री० [हिं० थकना+आवट (प्रत्य०)] थकने के कारण होनेवाली वह अनुभूति या अवस्था जिसमें अंग टूटने लगते हैं और कोई काम करने को जी नहीं चाहता।
क्रि० प्र०—आना।—मिटाना।

थकाहट—स्त्री०=थकावट।

थकित—वि० [हिं० थकना] १. थका हुआ। २. चकित। ३. मुग्ध। मोहित।

थकिया—स्त्री० [हिं० थक्का] १. गाढ़ी चीज की जमी हुई मोटी तह। छोटा थक्का। २. वह पिंड जो गली हुई धातु ठंढी होने पर बनता है।

थकैनी†—स्त्री०=थकावट।

थकौहाँ—वि० [हिं० थकना+औहाँ (प्रत्य०)] [स्त्री० थकौंही] थका हुआ। शिथिल।

पद-थकौहें ढार*—इस रूप में कि मानों बहुत थका हुआ हो।

थक्कर†—पुं० [हिं० थाक] १. दे० 'थक्का'। २. झुंड। समूह।

थक्का—पुं० [सं० स्था+कृ; बँग० थाकना=ठहरना] [स्त्री० थक्की, थकिया] १. गीले और गाढ़े द्रव पदार्थ की जमी हुई मोटी तह या पिंड। जैसे—खून का थक्का, दही या मक्खन का थक्का। २. गलाई हुई धातु के जमने से बना हुआ पिंड। जैसे—लोहे या सोने का थक्का।

क्रि०प्र०—जमना।—बँधना।

थगित—वि० [हिं० थकित] १. ठहरा या रुका हुआ। २. ढीला पड़ा हुआ। शिथिल। ३. धीमा। मंद। ४. दे० 'थकित'।

थट्ट*—पुं० १.=ठाठ। २. =ठट्ठ।

थड़ा—पुं० [सं० स्थल] १. बैठने की जगह। बैठक। २. वह स्थल जहाँ बैठकर दूकानदार सौदा बेचता है। ३. मकान के मुख्य द्वार के आगे की ऊँची तथा समतल रचना जिस पर प्रायः लोग बैठते हैं। चौंतरा। (पश्चिम)

थण†—पुं० [सं० स्तन] १. कुच। स्तन। उदा०—थापै थूल नितंव थण।—प्रिथीराज। २. मादा पशुओं का थन।

थति*—स्त्री०=थाती।

थतिहार—पुं० [हिं० थाती+हार (प्रत्य०)] वह जिसके पास थाती रखी गई या रखी हुई हो।

थत्ती—स्त्री० [हिं० थाती] ढेर। राशि।

थथोलना†—स०=टटोलना।

थन—पुं० [सं० स्तन] १. गाय, भैंस, बकरी इत्यादि चौपायों का वह अंग जिसमें दूध जमा रहता है। २. उक्त अंग का फली के समान का उपांग जिसे दबा तथा खींचकर दूध दूहा जाता है।

थनकुदी—स्त्री० [देश०] एक तरह की नीले रंगवाली छोटी चिड़िया।

थनगन—पुं० [बरमी] एक प्रकार का बड़ा पेड़ जो मध्यभारत में बहुतायत से होता है।

स्त्री०=ठन-गन।

थन-टूटू—वि० [हिं० थन+टूटना] (मादा पशु) जिसके थन का दूध टूट गया हो; अर्थात् दूध आना या उतरना बन्द हो गया हो।

थनी—स्त्री० [सं० गलस्तन] १. गलथना। (दे०) २. हाथी के कान के पास गलथने की तरह निकला हुआ मांस-पिंड। ३. घोड़े की लिंगेंद्रिय में थन के आकार का लटकता हुआ मांस जो ऐब समझा जाता है।

थनु—पुं०=थन।

थनुसुत*—पुं० [सं० स्थाणु+सुत] शिव के पुत्र गणेश और कार्तिकेय।

थनेला—पुं० [हिं० थन+एला (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० थनेली] १. स्तन पर विशेषतः स्त्रियों के स्तन पर होनेवाला एक तरह का फोड़ा। २. एक तरह का कीड़ा जिसके गाय आदि के थन पर काटने से उनका दूध सूख जाता है।

थनैत—पुं० [हिं० थान] १. किसी स्थान का अधिकारी देवता या शासक। २. गाँव का मखिया। ३. वह अधिकारी जो जमींदारों की ओर से गाँवों से लगान वसूल करता था।

थपक—स्त्री० [हिं० थपकना] १. थपकने की क्रिया या भाव। २. थपकने के लिए किया जानेवाला आघात। थाप।

थपकना—स० [अनु० थप-थप] १. इस प्रकार हलका आघात करना कि थप-थप शब्द हो। थपकी देना। २. हथेली से इस प्रकार थप-थप करते हुए किसी पर हलका आघात करना कि उसे अच्छा लगे। थपथपाना। जैसे—बच्चे को थपककर सुलाना। ३. किसी चीज पर बिना जोर लगाये हलका आघात करते चलना। ४. किसी को उत्साहित करने अथवा किसी का आवेश या क्रोध शांत करने के लिए उसकी पीठ पर हथेली से धीमा आघात करना।

संयो० क्रि०—देना।

थपका—पुं० दे० 'थपकी'।

थपकी—स्त्री० [हिं० थपकना] १. थपकने की क्रिया या भाव। २. थपकने के लिए हथेली से स्नेहपूर्वक किया जानेवाला हलका आघात। जैसे—घोड़े या बच्चे को थपकी देना। ३. किसी को उत्साहित करने के लिए या आशीर्वाद देने के समय उसकी पीठ पर स्नेहपूर्वक किया जानेवाला हलका आघात।

क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

४. दे० 'थापी'।

थपड़ी—स्त्री०=थपोड़ी।

थपथपी—स्त्री०=थपकी।

थपन*—पुं०=स्थापन।

थपना—स० [सं० स्थापन] १. स्थापित करना। बैठाना। २. धीरे-धीरे ठोकना या पीटना। ३. दे० 'थोपना'। ४. दे० 'छोपना'। (पश्चिम)

अ० १. स्थापित होना। बैठना। २. ठोका या पीटा जाना।

पुं० थापी, जिससे राज-मजदूर गच या छत पीटते हैं। पिटना।

थपरा—पुं०=थप्पड़।

थपाना*—स० [हिं० थपना] किसी को कुछ थपने में प्रवृत्त करना।

थपुआ—पुं० [?] मिट्टी को पाथकर पकाया हुआ वह चौरस चिपटा खपड़ा जो छत छाने के काम आता है। दो थपुओं के जोड़ पर नरिया रखकर उनकी सन्धि ऊपर से बन्द की जाती है।

थपेटा—पुं०=थपेड़ा।

थपेड़ना—स० [हिं० थपेड़ा] १. थपेड़ा लगाना। २. थप्पड़ लगाना। ३. आघात करना।

थपेड़ा—पुं० [अनु० थप-थप] १. किसी चीज के वेग से आकर टकराने या लगने का ऐसा आघात जिसमें थप-थप शब्द हो। जैसे—नदी या समुद्र की लहरों के थपेड़ों से नाव उलट गई।

क्रि० प्र०—लगना।

२. दे० 'थप्पड़'।

थपोड़ी—स्त्री० [अनु० थप-थप] १. दोनों हथेलियों से बजाई जानेवाली ताली। २. बेसन की बनी हुई एक प्रकार की मसालेदार पूरी या पकवान।

थपोरी†—स्त्री०=थपोड़ी।

थप्पड़—पुं० [अनु० थप-थप] १. गाल पर हाथ के पंजे से किया जानेवाला आघात। झापड़। तमाचा।

क्रि० प्र०—कसना।—देना।—मारना।—लगाना।

२. ऐसी बात जिससे किसी की प्रतिष्ठा को आघात पहुँचे।

३. दाद या फुंसियों का चकत्ता। ४. दे० 'थपेड़ा'।

थप्पन—वि० [हिं० थपना] स्थापित करनेवाला।

पुं०=स्थापन।

थप्पी—पुं० [लश०] एक तरह का जहाज।

थम—पुं० [सं० स्तम्भ; प्रा० थंभ] १. खंभा। स्तम्भ। २. चाँड़। थूनी। ३. धरहरा। मुनारा। ४. पूरियों, मिठाइयों आदि का वह ढेर या थाक जो मांगलिक अवसरों पर देवता या देवी के आगे रखा जाता है। (पश्चिम)

थमकारी*—वि० [सं० स्तंभन, हिं० थामन+कारी] १. थामनेवाला। २. स्तम्भन करने अर्थात् रोकनेवाला।

थमना—अ० [सं० स्तंभन] १. चलते-चलते किसी चीज का रुकना या गतिहीन होना। जैसे—कोल्हू या गाड़ी का थमना। २. आड़, सहारे आदि के कारण किसी आधार पर ठहरा रहना और नीचे की ओर न आना या न गिरना। जैसे—चाँड़ लगने से छत का थमना। ३. किसी प्रकार की क्रिया, गति या प्रवाह का बन्द होना। जैसे—(क) युद्ध थमना। (ख) बरसता या बहता हुआ पानी थमना। ४. सब्र करके या यों ही किसी काम में लगने से कुछ समय के लिए ठहरना। धीरज धरना। जैसे—हमारे कहने से वह थम गया है; नहीं तो अब तक दावा कर देता।

अ० [हिं० थामना का अ०] थाम लिया जाना। थामा जाना।

थमवाना—स० [हिं० थामना का प्रे०]=पकड़वाना।

थमाना—स० [हिं० थामना का प्रे०]=पकड़ाना।

थमाव—पुं० [हिं० थमना+आव (प्रत्य०)] थमने या ठहरने की क्रिया, भाव या स्थिति। ठहराव।

थमुआ—पुं० [हिं० थामना] चप्पू या डाँड़ का वह भाग जहाँ से उसे नाव खेते समय पकड़ा जाता है।

थर—पुं० [सं० स्तर] १. जमी हुई परत। तह। २. दीवारों की चुनाई में लगाई जानेवाली ईंटों की प्रत्येक पंक्ति या परत। ३. ब्राह्मणों में, जाति या वर्ग का वाचक शब्द। जैसे—पहले उनसे उनका थर तो पूछ लो।

पुं० [सं० स्थल] १. स्थल। २. सिंध देश का एक प्रदेश या विभाग। ३. जंगली जानवरों की माँद। चुर।

थरकना†—अ० १. =थर्राना। २. =थिरकना।

थरकाना—स० [हिं० थरकना] १. थरकने या थरथराने में प्रवृत्त करना। २. थिरकने में प्रवृत्त करना।

थरकौहाँ*—वि० [हिं० थरकना] १. भय आदि से जो थर-थर काँप रहा हो। २. हिलता-डुलता हुआ। चंचल।

थर-थर—स्त्री० [अनु०] डर से काँपने की मुद्रा। थरथराहट।

क्रि० वि० डरकर काँपते हुए।

थर-थराना—अ० [अनु० थर-थर] [भाव० थरथराहट, थरथरी] १. डर से काँपना। २. काँपना।

स० किसी को इतना अधिक भयभीत करना कि वह थर-थर काँपने लगे।

थरथराहट—स्त्री० [हिं० थरथराना] १. थरथराने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. निरंतर कुछ समय तक काँपते या थरथराते रहने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—चढ़ना।

थरथरी—स्त्री०=थरथराहट।

थरना†—स० [हिं० थर] १. रह-रहकर हलका आघात या चोट करना। २. कोई चीज गढ़ने या बनाने के लिए उसे धीरे-धीरे हथौड़ी आदि से पीटना। ३. अच्छी तरह मारना या पीटना। थूरना। ४. दीवारों की चनाई में एक थर के ऊपर दूसरा थर लगाना।

पुं० कसेरों का एक औजार जिससे वे नक्काशी या फूल-पत्तियाँ बनाते हैं।

थरमामीटर—पुं० [अं०] ताप-मापक यंत्र।

थरसना—अ० [सं० त्रसन] १. त्रस्त होना। २. दुःखी होना।

स० १. त्रस्त करना। २. दुःखी करना।

थरसल†—वि० [हिं० थरसल] त्रस्त। पीड़ित।

थरहर†—स्त्री०=थरथराहट।

थरहराना†—अ०, स० [भाव० थरहरी]=थरथराना।

थरहाई†—स्त्री० [?] एहसान।

थरिया†—स्त्री०=थाली।

थरी—स्त्री० [सं० स्थली] जंगली पशुओं की माँद। चुर।

थरु†—पुं०=थल।

थरुलिया—स्त्री० [हिं० थारी] छोटी थाली।

थरुहट—पुं० [हिं० थारु] थारू जाति के लोगों की बस्ती।

थर्मस—पुं० [अं०] एक तरह का छोटा वर्तुल डिब्बा जो वायु अनुकूलित होता है तथा जिसमें रखी हुई चीज का ताप-मान कुछ समय तक प्रायः ज्यों का त्यों बना रहता है।

थर्मामीटर—पुं० [अं०] ताप-मापक यंत्र।

थर्राना—अ० [अनु० थर-थर] १. डर के मारे थर-थर काँपना। जैसे—सिपाही को देखते ही चोर थर्रा गया। २. बहुत अधिक भयभीत होना। दहलना।

संयो० क्रि०—उठना।—जाना।

स० किसी को इतना अधिक डराना कि वह थर-थर काँपने लगे।

थल—पुं० [सं० स्थल] १. जगह। स्थान।

मुहा०—थल से बैठना=शांत या स्थिर होकर बैठना। चंचलता, विकलता आदि से रहित होकर सुख से बैठना।

२. किसी देवता का अथवा कोई पवित्र स्थान। ३. ऐसी सूखी जमीन जहाँ या जिसमें जल न हो। स्थल। 'जल' का विपर्याय। ४. वह ऊँची भूमि जहाँ वर्षा का पानी इकट्ठा न होता हो। ५. वह स्थान जहाँ बहुत-सी रेत पड़ गई हो। भूड़। रेगिस्तान। जैसे—थर पर खर। ६. जंगली जानवरों की माँद। चुर। ७. बादले का एक प्रकार का छोटा गोल साज जिसे बच्चों की टोपी आदि पर टाँका जाता है। ८. फोड़े के घाव के चारों ओर का लाली लिये हुए सूजा हुआ स्थान। थाला।

क्रि० प्र०—बँधना।

थलकना—अ० [सं० स्थूल; हिं० थूला, थुल थुल] १. शरीर के क्षीण होने पर त्वचा तथा मांस का ढीला पड़ना तथा लटकने लगना। २. भारी चीज का रह-रहकर कुछ ऊपर उठना और नीचे होना या हिलना।

थल-चर—पुं० [सं० स्थलचर] १. पृथ्वी पर रहनेवाले जीव (जल या वायु में रहने या विचरनेवाले जीवों से भिन्न)।

थल-चारी—वि० [सं० स्थलचारी] भूमि पर चलने या विचरण करनेवाला।

थल-थल—वि० [सं० स्थूल; हिं० थूला] (व्यक्ति, उसका शरीर अथवा शरीर का कोई अंग) मोटाई के कारण झूलता या हिलता हुआ।

थलथलाना—स० [अनु०] ऐसी क्रिया करना जिससे किसी चीज का तल थल-थल शब्द करता हुआ रह-रहकर कुछ ऊपर उठे और फिर नीचे गिरे। थल-थल शब्द करता हुआ।

अ०=थलकना।

थल-पति—पुं० [सं० स्थलपति] राजा।

थल-बेड़ा—पुं० [हिं० थल+बेड़ा] नाव या जहाज के ठहरने की जगह।

मुहा०—थल-बेड़ा लगाना=शान्तिपूर्वक ठहरने या रुकने के लिए उपयुक्त स्थान मिलना। ठिकाना लगना।

थल-भारी—पुं० [हिं० थल+भारी] १. ऐसा स्थल जिस पर चलना कठिन हो। २. रेतीला मैदान।

थलरुह*—वि० [सं० स्थलरुह] धरती पर उत्पन्न होनेवाले जंतु, वृक्ष आदि। स्थल अर्थात् भूमि पर जन्म लेनेवाला।

थलिया†—स्त्री०=थाली।

थली—स्त्री० [सं० स्थली] १. स्थान। जगह। २. वनस्थली। ३. जलाशय, नदी आदि के नीचे का तल। ४. सुख से ठहरने या बैठने की जगह। ५. परती जमीन। ६. बालू का मैदान। रेतीली जमीन। ७. ऐसी ऊँची जमीन जहाँ वर्षा का पानी न ठहरता हो।

थवई—पुं० [सं० स्थपति; प्रा० थवइ] मकान बनाने विशेषतः जोड़ाई करनेवाला कारीगर। राज।

थवन—पुं० [देश०] दुलहिन का तीसरी बार अपने पति के घर जाने की क्रिया।

थवाना†—पुं० [सं० स्थापन; हिं० थपना] कच्ची मिट्टी का वह गोला जिसमें लगी हुई लकड़ी के छेद में चरखी की लकड़ी पड़ी रहती है। चरखी के घूमने से नारी भरी जाती है। (जुलाहे)

थह*—पुं० [सं० स्थल या हिं० घर?] माँद। उदा०—जागै नह थह में जिते, सद्म हाथल सादूल।—बाँकीदास।

†स्त्री०=थाह।

थहना*—स० [हिं० थाह] १. थाह लेना। पता लगाना। २. थाह लेने के लिए गहराई में उतरना या जाना।

थहरना— अ०=थर्राना।

थहराना—अ० [अनु० थर थर] १. दुर्बलता, भय आदि से अंगों का काँपना। २. काँपना। ३. दे० 'थर्राना'।

थहाना—स० [हिं० थाह] १. पानी की गहराई का पता लगाना। थाह लगाना या लेना। २. किसी के ज्ञान, विचार आदि की थाह या पता लेना।

थहारना†—स० १. =ठहराना। २. थहना।

थही†—स्त्री० [सं० स्तर; हिं० तह] १. तह। परत। २. चीजों का लगा हुआ थाक। ढेर। राशि।

थाँग—स्त्री० [हिं० थान] १. चोरों या डाकुओं के रहने का गुप्त स्थान। २. चोरों या चोरी गई हुई चीजों का लगाया जानेवाला पता। ३. किसी प्रकार के रहस्य की प्राप्त की हुई जानकारी या लिया हुआ भेद। ४. खोज। तलाश।

क्रि० प्र०—लगाना।

थाँगी—पुं० [हिं० थाँग] १. चोरों का सरदार। २. वह जो चोरों से माल खरीदता और अपने पास रखता हो। ३. चोरों की चोरी के माल का पता लगानेवाला व्यक्ति। ४. रक्षा करने या आश्रय देनेवाला व्यक्ति। उदा०—निगुसाएँ वह गए, थाँगी नाँहीं कोइ।—कबीर।

थाँगीदारी—स्त्री० [हिं० थाँगी+फा० दार] थाँगी का काम या पद।

थाँन†—पुं०=थान।

थाँभ—पुं० [सं० स्तम्भ] १. खंभा। २. चाँड़। थूनी।

थाँभना —स०=थामना।

थाँवला—पुं० दे० 'थाला'।

थाँवाँ—पुं० [सं० स्तंभ] दादूदयाल का चलाया हुआ एक उप-संप्रदाय।

थाँह†—स्त्री० [सं० स्थान] १. जगह। २. दे० 'थाह'।

थाँहैं†—अव्य० [हिं० थाह] ठीक उसी स्थान पर। वहीं। (पश्चिम) जैसे—थाँहैं मारना।

था—अ० [सं०√स्था] हिं० 'होना' क्रिया अथवा वर्तमान कालिक 'है' का एक भूतकालिक रूप। एक शब्द जिससे भूत-काल में होना सूचित होता है। रहा। जैसे—मैं उस समय वहीं था।

थाई—वि० [सं० स्थायी] बहुत दिनों तक चलने या बना रहनेवाला। स्थायी।

स्त्री० १. सुख से बैठने की जगह। २. बैठने का कमरा या कोठरी। अथाई। बैठक। ३. दे० 'अस्थायी' (संगीत की)।

थाक—पुं० [सं०√स्था] १. एक के ऊपर एक करके रखी हुई चीजों का ढेर। राशि। जैसे—कपड़ों या किताबों का थाक।

†स्त्री०=थकन (थकावट)।

क्रि० प्र०—लगना।

थाकना—अ० [सं० स्थगन] १. ठहरना। रुकना। २. दे० 'थकना'।

थाका*—पुं० [सं० स्तवक] गुच्छा। (पूरब) उदा०—अधर निमाल मधुरि फुल थाका।—विद्यापति।

थाकु†—पुं०=थाक।

थाट†—पुं० १. =ठाठ। २. =ठट्ठ (समूह)। उदा०—नमस्कार सूराँ नराँ भारथ गज थाटाँ मिड़ै अड़ै भुजाँ उरसाँह।—बाँकीदास।

थाण—पुं० [सं० स्थान; प्रा० थाण] थाला। आलबाल।

थात*—वि० [सं० स्थात्, स्थाता] जो बैठा या ठहरा हुआ हो। स्थित।

थाति—स्त्री० [हिं० थात] ठहराव। स्थिति।

स्त्री०=थाती।

थाती—स्त्री० [हिं० थात] १. समय पर काम में लाने के लिए बचाकर रखी हुई चीज या धन। जमा। पूँजी। २. किसी के विश्वास पर उसके पास रखी हुई वह चीज या धन जो माँगने पर तुरन्त वापस मिल सके। धरोहर। अमानत।

थान—पुं० [सं० स्थान] १. जगह। स्थान। जैसे—(क) काली या

भैरव का थान। (ख) बड़ी भाभी माँ के थान होती है। २. ठहरने या रहने की जगह। ३. चौपायों, विशेषतः घोड़ों को बाँधकर रखने का स्थान।

पद—**थान का टर्रा**=(क) वह घोड़ा जो खूँटे या खूँटों से बँधा रहने पर भी नटखटी करता हो। घुड़साल में भी उपद्रव करनेवाला घोड़ा। (ख) वह व्यक्ति जो अपने स्थान पर (या घर में) ही सारी अकड़ या ऐंठ दिखाता और घर के लोगों से ही लड़ता-झगड़ता रहता हो। **थान का सच्चा**=वह घोड़ा जो कहीं से छूटने पर फिर सीधा अपने खूँटे पर आ जाय।

४. कुल। वंश। जैसे—अच्छे थान का घोड़ा। उदा०—संभरि नरेस चहुवान थान, प्रिथिराज तहाँ राजंत भान।—चंदबरदाई।

५. वह घास जो घोड़े के नीचे बिछाई जाती है।

मुहा०—**थान में आना**=घोड़े का थकावट मिटाने के लिए घास या जमीन पर लोटना।

६. कपड़े, गोटे आदि का पूरा टुकड़ा जिसकी लंबाई प्रायः निश्चित होती है। जैसे—किनारी या गोटे का थान; नैनसुख या मलमल का थान। ७. कुछ विशिष्ट पदार्थों के संबंध में उनकी स्वतंत्र सत्ता के आधार पर संख्या का वाचक शब्द। जैसे—चार थान गहने, दस थान धोती।

थानक—पुं० [सं० स्थानक] १. स्थान। २. नगर। ३. वृक्ष का थाला। आल-बाल। ४. झाग। फेन।

थाना—पुं० [सं० स्थान; हिं० थान] १. टिकने, ठहरने या बैठने का स्थान। अड्डा। २. किसी का उद्गम या मूल निवास-स्थान। ३. बाँसों की कोठी। ४. आज-कल वह स्थान जहाँ पुलिस के कुछ सिपाही और उनके वरिष्ठ अधिकारी स्थायी रूप से कार्य करते हैं और जहाँ से आस-पास के स्थानों का प्रबंध होता है। पुलिस-कार्यालय। नाका।

मुहा०—**(किसी स्थान पर) थाना बैठाना**=अव्यवस्था, उपद्रव आदि के स्थानों पर शांति बनाये रखने के लिए पुलिस के कुछ सिपाही और अधिकारी नियत करना। **थाने चढ़ना**=थाने में पहुँचकर किसी के विरुद्ध कोई सूचना देना। पुलिस में इत्तला या रपट लिखाना।

थानापति—पुं० [सं० स्थानपति] ग्राम देवता।

थानी—पुं० [सं० स्थानिन्] १. किसी स्थान का प्रधान अधिकारी या स्वामी। २. दे० 'थानैत'। ३. दे० 'दिग्पाल'।

वि० १. थान या ठिकाने पर पहुँचा हुआ। २. (काम) जो पूरा किया जा चुका हो। संपन्न या संपादित। ३. ठिकाने लगाया हुआ।

थानु*—पुं० १. =स्थाणु। २. =थान।

थानेत—पुं०=थानैत।

थानेदार—पुं० [हिं० थाना+फा० दार] [भाव० थानेदारी] थाने का विशेषतः पुलिस के थाने का प्रधान अधिकारी। दारोगा।

थानेदारी—स्त्री० [हिं० थाना+फा० दारी] १. थानेदार का कार्य। २. थानेदार का पद।

थानैत—पुं० [हिं० थान+ऐत (प्रत्य०)] १. किसी स्थान का अधिपति। २. किसी चौकी या अड्डे का मालिक। ३ ग्राम-देवता।

थाप—स्त्री० [सं० स्थापन] १. थापने की क्रिया या भाव। २. ढोलक, तबले, मृदंग आदि के बजाने के समय उन पर हथेली से किया जानेवाला विशिष्ट प्रकार का आघात।

क्रि० प्र०—पड़ना।—लगना।

३. एक चीज पर दूसरी चीज के भर-पूर बैठने के कारण बननेवाला चिह्न। जैसे—बालू पर पड़ी हुई पैरों की थाप। ४. थप्पड़। तमाचा। ५. कसम। शपथ। सौगंध। जैसे—तुम्हें देवी की थाप है, वहाँ मत जाना। ६. जमाव। स्थिति। ७. मान-मर्यादा आदि का दूसरों पर पड़नेवाला प्रभाव। धाक। ८. पंचायत। (क्व०)

थापन—पुं० [सं० स्थापन] १. स्थापित करने की क्रिया या भाव। स्थापन।

थापना—स० [सं० स्थापन] १. स्थापित करना। २. कोई चीज कहीं बैठाना, लगाना या स्थित करना। ३. हाथ के पंजे की मुद्रा अंकित करना या छापना। थापा लगाना।

स्त्री० १. स्थापित करने या होने की क्रिया या भाव। स्थापना। प्रतिष्ठा। २. नव-रात्र में देवी के पूजन के लिए किया जानेवाला घट-स्थापन।

थापर†—पुं०=थप्पड़।

थापरा—पुं० [देश०] छोटी नाव। डोंगी। (लश०)

थापा—पुं० [हिं० थाप] १. थापने की क्रिया या भाव। २. हाथ के पंजे का वह चिह्न जो गीली पीसी हुई मेंहदी, हलदी आदि मांगलिक द्रव्यों से शुभ अवसरों पर दीवारों आदि पर लगाया जाता है। हाथ के पंजे का छापा।

क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

३. खलिहान में अनाज की राशि पर गोबर, मिट्टी आदि से लगाया जानेवाला हाथ के पंजे का चिह्न या किसी प्रकार की लकीर। ४. वह ठप्पा जिससे चिह्न आदि अंकित किये जाते हैं। छापा। ५. वह साँचा जिसमें कोई गीली सामग्री दबाकर या डालकर कोई वस्तु बनाई जाय। जैसे—ईंट का थापा, सुनारों का थापा। ६. ढेर। राशि। ७. देहातों में देवी-देवता आदि की पूजा के लिए लिया जानेवाला चंदा। पुजौरा।

पुं० [?] नेपाली क्षत्रियों की एक जाति या वर्ग।

थापिया—स्त्री०=थापी।

थापी—स्त्री० [हिं० थापना] १. थापने की क्रिया या भाव। २. काठ का वह उपकरण जो चिपटे सिरेवाले लंबे छोटे डंडे के रूप में होता है और जिससे कुम्हार मिट्टी के घड़े पीटकर बनाते हैं। ३. उक्त आकार का वह डंडा जिससे राज या मजदूर छत पीटकर उसमें का मसाला जमाते हैं। ४. आशीर्वाद, शाबाशी आदि देने के लिए धीरे-धीरे किसी की पीठ ठोंकने या थपथपाने की क्रिया।

क्रि० प्र०—देना।

थाम—पुं० [सं० स्तंभ; प्रा० थंभ] १. खम्भा। स्तंभ। २. मस्तूल। (लश०)

स्त्री० [हिं० थामना] थामने की क्रिया या भाव।

†पुं०=थंभ (स्तम्भ)।

थामना—स० [सं० स्तंभन; प्रा० थंभन=रोकना] १. हाथ में लेना या हाथ से पकड़ना। जैसे—लड़के की उँगली या हाथ थामना।

२. वेगपूर्वक आती, गिरती या आगे बढ़ती हुई चीज को हाथ से पकड़कर या और किसी प्रकार से रोकना। पकड़ना। जैसे—मारनेवाले का हाथ थामना। ३. गिरती हुई चीज को पकड़कर या उसके नीचे सहारा लगाकर उसे गिरने से रोकना। सँभालना। जैसे—चाँड़ ने ही यह छत थाम रखी है। ४. बीच में आ या पड़कर किसी बिगड़ती हुई स्थिति को और अधिक बिगड़ने से रोकना। सँभालना। जैसे—समय पर वर्षा ने आकर थाम लिया; नहीं तो अभी अनाज और महँगा होता। ५. किसी काम या बात का उत्तरदायित्व या भार अपने ऊपर लेना। ६. किसी चीज का दूसरी चीज पर लग या सटकर उस पर चिपक या जम जाना। जैसे—लकड़ी या लोहे को रंग जल्दी थामता है। ७. चलती हुई चीज को रोककर खड़ा करना। जैसे—गाड़ी थामना। ८. किसी को पकड़कर पहरे या हिरासत में लेना। (क्व०)

थामा†—पुं० [सं० स्तंभ] खंभा।

थाम्हना†—स०=थामना।

थायी†—वि०=स्थायी।

थार†—पुं०=थाल।

थारा†—सर्व० [हिं० तिहारा] तुम्हारा।

†पुं०=थाला।

थारी—स्त्री०=थाली।

सर्व०=तुम्हारी।

थारू—पुं० [देश०] नेपाल की तराई में रहनेवाली एक अर्द्धसभ्य जाति।

थाल—पुं० [हिं० थाली] [स्त्री० अल्पा० थाली] भोजन आदि परोसने का धातु का बना हुआ चौड़ा, छिछला तथा गोल बर्तन। बड़ी थाली।

थाला—पुं० [सं० स्थल; हिं० थल] १. पेड़, पौधे आदि के चारों ओर का वह गोल गड्ढा जिसमें पानी भरा जाता है। आल-बाल। २. किसी चीज के चारों ओर का उभरा हुआ गोलाकार दल या भाग। जैसे—इस फोड़े ने बहुत थाला बाँधा है।

क्रि० प्र०—बाँधना।

पुं० [?] दरवाजे की कुंडी जिसमें ताला लगाया जाता है। (लश०)

थालिका—स्त्री० [हिं० थाला] वृक्ष का थाला। आलवाल।

थाली—स्त्री० [सं० स्थाली=बटलोई] १. धातु का बना हुआ गोलाकार छिछला, बड़ा बरतन जिसमें खाने के लिए भोजन परोसा जाता है।

पद—थाली का बैंगन=ऐसा व्यक्ति जिसका स्वयं कोई सिद्धांत न हो और जो उसी की प्रशंसा तथा समर्थन करे जिससे उसे खाने को मिल जाता हो। **थाली जोड़**=थाली और उसके साथ कटोरा या कटोरी।

मुहा०—थाली फिरना=किसी स्थान पर इतनी अधिक भीड़ होना कि यदि ऊपर से उस भीड़ पर थाली फेंकी जाय तो वह ऊपर ही ऊपर घूमती-फिरती रह जाय; जमीन पर गिरने न पाये। जैसे—उस मेले में तो थाली फिरती थी। **थाली बजना**=थाली बजाते हुए साँप का विष उतारना। **थाली बजाना**=(क) साँप का विष उतारने के लिए थाली बजाकर मंत्र पढ़ना। (ख) नवजात शिशु के समक्ष उसका भय दूर करने के लिए थाली बजाकर कुछ जोर का शब्द करना। **थाली भेजना**=किसी के यहाँ थाली में रखकर भोजन, मिठाई आदि भेजना।

२. नाच की एक गत जिसमें बहुत थोड़े से घेरे के अंदर नाचना पड़ता है।

थाव—स्त्री०=थाह।

थावर—पुं० [सं० स्थावर] १. जो अपने स्थान से कभी न हटे। २. शांत। ३. ठहरा हुआ। स्थिर। ४. दे० 'स्थावर'।

थाह—स्त्री० [सं० स्था] १. किसी चीज की ऐसी अधिकता, गहराई, ज्ञान, महत्त्व आदि की सीमा जिसका पता लगाने के लिए प्रयत्न करना पड़े। जैसे—उनके धन (या विद्या) की थाह पाना सहज नहीं है।

क्रि० प्र०—पाना।—मिलना।

मुहा०—थाह लगाना या लेना=यह जानने का प्रयत्न करना कि अमुक चीज की गहराई कितनी है। जैसे—किसी के पांडित्य, मन या विचार की थाह लेना।

२. उक्त के आधार पर किसी चीज की अधिकता, महत्त्व, रहस्य आदि का होनेवाला ज्ञान या परिचय। जैसे—वे आपके मन की थाह लेने आये थे। ३. जलाशय (झील, नदी, समुद्र आदि) में पानी के नीचे की जमीन या तल। जैसे—इस घाट पर पानी की थाह मिलना कठिन है।

क्रि० प्र०—मिलना।

मुहा०—डूबते को थाह मिलना=संकट में पड़े हुए हताश व्यक्ति को कहीं से कुछ सहारा मिलना या मिलने की आशा होना।

४. पानी की गहराई की वह स्थिति जिसमें चलते हुए आदमी का पैर जमीन पर पड़ता हो। जैसे—जहाँ थाह न हो, वहाँ तैरना ही पड़ता है। उदा०—चरण छूते ही जमुना थाह हुई।—लल्लूलाल।

थाहना—स० [हिं० थाह] १. किसी प्रकार की गहराई की थाह लेना या पता चलाना। २. किसी के मन के छिपे हुए भावों या विचारों का पता लगाना। थाह लेना।

थाहर—पुं०=थर (माँद)। उदा०—सूनी थाहर सिंघरी, जाय सके नहि कोय।—बाँकीदास।

थाहरा†—वि० [हिं० थाह] १. जिसकी थाह मिल चुकी हो अथवा सहज में मिल सकती हो। २. (नदी-नाले के संबंध में) कम गहरा। छिछला।

थाहैं†—अव्य० [हिं० थाह] (नदी, नाले की) गहराई में।

थिति†—स्त्री०=तिथि।

थिएटर—पुं० [अं०] [वि० थिएटरी] १. रंगभूमि। नाट्यशाला। रंगशाला। २. नाटक का अभिनय।

थिएटरी—वि० [अं० थिएटर] थिएटर अर्थात् रंगशाला-संबंधी।

थिगली—स्त्री० [हिं० टिकली] कपड़े, चमड़े आदि का छेद बंद करने के लिए उसके ऊपर टाँका जानेवाला कपड़े, चमड़े आदि का दूसरा टुकड़ा। चकती। पैबंद।

क्रि० प्र०—लगाना।

मुहा०—आसमान या बादल में थिगली लगाना=(क) बहुत ही कठिन या दुष्कर काम पूरा करना या उसके लिए प्रयत्न करना। पहुँच के बाहर का कार्य करना। (ख) अनहोनी और असम्भव बातें कहना या काम करने का प्रयत्न करना।

थित*—वि० [सं० स्थित] [भाव० थिति] १. ठहरा हुआ। २. स्थापित। रखा हुआ।
†स्त्री०=तिथि। (पश्चिम)

थिति—स्त्री० [सं० स्थिति] १. ठहराव। स्थायित्व। २. ठहरने या विश्राम करने की जगह। ३. स्थिर रूप में होनेवाला निवास। ४. बने रहने की अवस्था या भाव। ५. अवस्था। दशा। हालत।
†स्त्री०=तिथि।

थितिभाव—पुं० [सं० स्थितिभाव]=स्थायीभाव।

थिथाऊ†—पुं० [देश०] मध्ययुग के ठगों की परिभाषा में, शरीर के दाहिने अंग में होनेवाली फड़कन जिसे वे लोग अशुभ समझते थे।

थियासोफिस्ट—पुं० [अं०] वह जो थियासोफी के सिद्धान्तों को मानता तथा उनका अनुसरण करता हो।

थियासोफी—स्त्री० [अं०] १. ब्रह्म-विद्या। २. एक आधुनिक पाश्चात्य सम्प्रदाय जो यह मानता है कि आत्मा और परमात्मा अथवा जीव और ब्रह्म के पारस्परिक संबंध का सच्चा ज्ञान भौतिक साधनों से नहीं, बल्कि आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनाने से ही होता है।

थिर—वि० [सं० स्थिर] १. जो चलता या हिलता-डुलता न हो। ठहरा हुआ। स्थिर। २. जिसमें चंचलता न हो। थिर और शांत। ३. सदा बहुत-कुछ एक ही अवस्था में चलने या बना रहनेवाला। (विशेष दे० 'स्थिर')

थिरक—पुं० [हिं० थिरकना] थिरकने की क्रिया, अवस्था, ढंग या भाव।

थिरकना—अ० [सं० अस्थिर+करण] [भाव० थिरक] १. शरीर के किसी अंग का रह-रहकर और धीरे-धीरे किसी आधार या जमीन से कुछ ऊपर उठना और फिर जमीन पर आना। जैसे—नाचने में पैर (या मृदंग बजाने में हाथ) थिरकना। २. व्यक्ति का ऐसी स्थिति में होना कि उसका सारा शरीर, मुख्यतः पैर रह-रहकर जमीन से कुछ ऊपर उठे। जैसे—नाचनेवालों का थिरकना।

थिरकौहाँ†—वि० [हिं० थिरकना+औहाँ (प्रत्य०)] [स्त्री० थिरकौहीं] १. रह-रहकर थिरकनेवाला। २. थिरकता हुआ।
वि० [हिं० थिर=स्थिर] जो अपने स्थान पर स्थिर हो। ठहरा हुआ। स्थिर।

थिरजीह—पुं० [सं० स्थिरजिह्व] मछली।

थिरता (ई)†—स्त्री० [सं० स्थिरता] १. ठहराव। स्थिरता। २. स्थायित्व। ३. धीरता। ४. शांति।

थिरथानी*—वि० [सं० स्थिर+स्थान] जो किसी स्थान पर स्थिर होकर रहे।
पुं० लोकपाल। दिग्पाल।

थिरथिरा—पुं० [देश०] बुलबुलों की एक जाति।

थिरना—अ० [सं० स्थिर, हिं० थिर+ना (प्रत्य०)] १. पानी या किसी द्रव पदार्थ का हिलना-डोलना बंद होना। शांत और स्थिर होना। २. जल या द्रव पदार्थ की उक्त अवस्था होने पर उसमें घुली या मिली चीजों का नीचे तह में एकत्र होना या बैठना। ३. उक्त स्थिति में जल या द्रव पदार्थ का निर्मल या स्वच्छ होना। ४. दे० 'निथरना'।

थिरा—स्त्री० [सं० स्थिरा] पृथ्वी।

थिराना—स० [हिं० थिरना] १. क्षुब्ध जल या द्रव पदार्थ को इस प्रकार स्थिर होने देना कि उसमें घुली हुई चीज नीचे बैठ जाय और जल या द्रव पदार्थ अपेक्षया साफ हो जाय।
विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग स्वयं जल के पक्ष में भी होता है और उसमें घुली हुई चीज के पक्ष में भी।
२. किसी प्रकार शांत या स्थिर करना।

थी†—विभ० [सं० तः, पु० हिं० तें] से। (राज०) उदा०—जब थी हम तुम बीछुड़े........।—ढोलामारू।
सर्व० पु० हिं० में 'तू' या 'तुझ' का एक रूप। उदा०—जो मैं थी को साँचा व्यास।—कबीर।
अ० हिं० भूतकालिक क्रिया 'था' का स्त्री०।
*वि०=स्थित।

थीकरा*—पुं० [सं० स्थिति+कर] किसी स्थिति को सँभालने का भार अथवा कोई कार्य करने का (अपने ऊपर) लिया जानेवाला दायित्व या भार।
विशेष—मध्ययुग में किसी गाँव या बस्ती में किसी प्रकार की विपत्ति की सम्भावना होने पर वहाँ के रहनेवाले लोग बारी-बारी से रक्षा या सहायता का जो भार अपने ऊपर लेते थे, वह 'थीकरा' कहलाता था।

थीता—पुं० [सं० स्थित; हिं० थित] १. स्थिरता। २. शांति। ३. कल। चैन।
वि० १.=स्थित। २.=स्थिर।

थीति—स्त्री०=स्थिति।

थीथी*—स्त्री० [सं० स्थिति] १. स्थिति। २. शांति। ३. धैर्य। धीरज। ४. चैन। सुख।

थीर (ा)*—वि०=थिर।

थुकवाना—स० [हिं० थूकना का प्रे०] १. किसी को कहीं अथवा कुछ थूकने में प्रवृत्त करना। २. किसी के द्वारा दूसरे को परम घृणित और निन्दनीय सिद्ध करना। ३. उगलवाना।

थुकहाया†—वि० [हिं० थूक+हाया (प्रत्य०)] [स्त्री० थुकहाई] जिस पर सब लोग थूकते हों, अर्थात् जिसकी सब लोग बहुत निंदा करते हों।

थुकाई—स्त्री० [हिं० थूकना] थूकने की क्रिया या भाव।

थुकाना—स०=थुकवाना।

थुकायल, थुकैल—वि० दे० 'थुकहाया'।

थुक्का-फजीहत—स्त्री० [हिं० थूक+अ० फजीहत] ऐसी कहा-सुनी या झगड़ा जिसमें दोनों पक्षों की खूब दुर्दशा और बेइज्जती हो तथा दोनों एक दूसरे का घोर तिरस्कार करते हुए थू-थू कहते हों।

थुक्की†—स्त्री० दे० 'थुड़ी'।

थुड़ना—अ० [हिं० थोड़ा] १. थोड़ा या कम होना। २. थोड़ा या कम पड़ना। (पश्चिम)

थुड़ी—स्त्री० [हिं० थू थू से अनु०] १. एक परम घृणासूचक और धिक्कार का शब्द जो बहुत ही निन्दनीय काम करनेवाले के प्रति यह बतलाने के लिए प्रयुक्त होता है कि हम तुम पर थूकते हैं। जैसे—उनके इस आचरण पर सब लोग थुड़ी-थुड़ी कर रहे हैं। २. धिक्कार। लानत।

थुत—भू० कृ० [सं० स्तुत] जिसकी स्तुति हुई या की गई हो।

थुतकार—स्त्री०=थुथकार।

थुतकारना—स०=थुथकारना।

थुत्कार—पुं० [सं० √कृ (करना)+घञ्=कार, थुत्—कार ष० त०] १. थूकने की क्रिया या भाव। २. थूकने से होनेवाला शब्द।

थुथकार—स्त्री० [हि० थू थू से अनु०] १. किसी के परम घृणा और धिक्कार का सूचक थू-थू शब्द। २. परम घृणित स्त्री। ३. पैर की जूती। ४. पैरों में डाली जानेवाली बेड़ी। ५. छिपकली। (मुसल० स्त्रियाँ)

थुथकारना—स० [हिं० थुथकार] थू थू या थुड़ी थुड़ी करते हुए किसी को परम घृणित या निंद्य ठहराना या बतलाना।

थुथना†—पुं०=थूथन।

थुथाना—अ० [हि० थूथन] १. थूथन फुलाना अर्थात् नाराज होकर मुँह फुलाना। (व्यंग्य) २. उदासीन भाव से मुँह फुलाकर चुपचाप बैठे रहना।

थुनी*—स्त्री०=थूनी।

थुनेर—पुं० [सं० स्थूण; हि० थून] गठिवन का एक भेद जो वैद्यक में त्रिदोष नाशक तथा वीर्यवर्धक माना जाता है।

थुन्नी†—स्त्री०=थूनी।

थुपथुपी—स्त्री०=थपकी।

थुपरना—स० [सं० स्तूप; हिं० थूप] महुए की बालों का ढेर इस उद्देश्य से लगाना कि उनमें गर्मी आवे और वे कुछ पक जायँ।

थुपरा—पुं० [सं० स्तूप] महुए की बालों का ढेर जो दबाकर औसने के लिए रखा जाय।

थुरना—अ० [सं० थुर्वण=मारना, हिं० 'थूरना' का अ० रूप] थूरा (अर्थात् कूटा या मारा-पीटा) जाना।
†अ०=थुड़ना (कम पड़ना)।

थुर-हथा—वि० [हि० थोड़+हाथ] [स्त्री० थुर-हथी] १. जो अपने छोटे-छोटे हाथों के कारण चंगुल, मुट्ठी या हथेली में अधिक चीज न ले सकता हो। उदा०—कन देबो सौंप्यो ससुर बहू थुर-हथी जानि।—बिहारी। २. जो इतना कंजूस हो कि दूसरों को उठाकर थोड़ी-सी चीज ही दे सकता हो, अधिक न दे सकता हो। ३. मितव्ययी। कंजूस।

थुलथुल—वि० [अनु०] अधिक क्षीण होने के कारण जिसके शरीर का कोई मांसल अंग झूलने या हिलने लगे।

थुलमा—पुं० [सं० उल्वण ?] एक प्रकार का पहाड़ी मोटा कंबल जिसमें एक ओर रोएँ ऊपर उठे हुए होते हैं।

थुली—स्त्री० [सं० स्थूल; हि० थूला] मोटे कणों के रूप में दले हुए अन्न के दाने। दलिया।

थूंक—पुं०=थूक।

थूंकना—स०=थूकना।

थू—अव्य० [अनु०] १. थूकने का शब्द। २. एक घृणासूचक शब्द।

थूआ†—पुं० [सं० स्तूप; प्रा० थूप, थूव] १. मिट्टी आदि का ऊँचा टीला। ढह। २. गीली मिट्टी का लोंदा। धोंधा। ३. मिट्टी का वह ढूह या मेंड़ जो सीमा आदि सूचित करने के लिए बनाई जाती है। ४. गीली मिट्टी का वह ढेर या लोंदा जो ढेकली आदि की लकड़ी पर भार के रूप में रखा जाता है। ५. किसी गीले पदार्थ का गोलाकार ढेर। जैसे—पीने के तमाकू का थूआ जो तमाकू की दुकानों पर रहता है। ६. वह बोझ जो कपड़े में बँधी हुई राब के ऊपर उसकी जूसी निकालने के लिए रखा जाता है।

थूक—पुं० [अनु० थू थू] १. वह गाढ़ा, लसीला सफेद पदार्थ जो मुँह से प्रयत्नपूर्वक निकालकर बाहर गिराया या फेंका जाता है।
पद—थूक है=(तुम्हें) धिक्कार या लानत है।
मुहा०—थूक उछालना=व्यर्थ की बकवाद करना। **थूक बिलोना**=व्यर्थ की कहा-सुनी या बकवाद करना। **(किसी को) थूक लगाना**=बुरी तरह से नीचा दिखाना या परास्त करना। (अशिष्ट और बाजारू) **थूक लगाकर रखना**=बहुत बुरी तरह से जोड़-जोड़कर इकट्ठा करना या रखना। बहुत कंजूसी से जमा करना। **थूकों सत्तू सानना**=कंजूसी के कारण बहुत थोड़े व्यय में बहुत बड़ा काम करने का प्रयत्न करना।

थूकना—स० [हि० थूक+ना (प्रत्य०)] १. मुँह में आई हुई थूक अथवा रखी हुई कोई चीज बाहर गिराना या फेंकना।
मुहा०—किसी (व्यक्ति या वस्तु) पर न थूकना=इतना अधिक घृणित समझना कि उस पर थूकने तक को जी न चाहे। **थूक कर चाटना**=(क) कोई वचन देकर मुकर जाना। (ख) किसी को कोई वस्तु देकर बाद में फिर ले लेना। (ग) फिर कभी वैसा घृणित काम न करने की प्रतिज्ञा करना।
२. किसी के प्रति अपनी परम घृणा प्रकट या प्रदर्शित करना।

थूथन—पुं० [देश०] १. कुछ विशिष्ट प्रकार के पशुओं का लंबोतरा और कुछ आगे की ओर निकला हुआ मुँह। जैसे—घोड़े, बैल या सूअर का थूथन। २. रुष्ट व्यक्ति का फूला हुआ और रोषसूचक मुँह। (व्यंग्य)
मुहा०—थूथन फुलाना=किसी से बहुत रुष्ट होकर बिलकुल चुप हो जाना। मुँह फुलाना। (व्यंग्य)

थूथनी—स्त्री० [हिं० थूथन] १. छोटा थूथन। २. हाथी के मुँह का एक रोग जिसमें ऊपर के तालू में घाव हो जाता है। ३. दे० 'थूथन'।

थूथरा—वि० [हि० थूथन] जो आकार-प्रकार या रूप-रंग में थूथन की तरह का हो।

थूथून†—पुं०=थूथन।

थून—स्त्री० [सं० स्थूण] थूनी। खंभा।
पुं० दक्षिण भारत में होनेवाला एक प्रकार का मोटा गन्ना।

थूना—पुं० [देश०] मिट्टी का वह लोंदा जिसमें रेशम, सूत आदि फेरने का परेता खोंसा जाता है।

थूनि†—स्त्री०=थूनी।

थूनी—स्त्री० [सं० स्थूण] १. लकड़ी आदि का खड़ा गड़ा हुआ बल्ला। खंभा। २. भारी चीज को गिरने से रोकने के लिए उसके नीचे लगाई जानेवाली मोटी और लंबी लकड़ी। चाँड़। ३. वह गड़ी हुई लकड़ी जिसमें रस्सी के फंदे से मथानी का डंडा खड़ा रखा जाता है। ४. आश्रय या रक्षा का स्थान। उदा०—कबीर थूनी पाई थित भई सति गुरु बाँधी धीर।—कबीर।

थून्हीं†—स्त्री०=थूनी।

थूबी—स्त्री० [देश०] साँप के काटे हुए स्थान को गरम लोहे से दागकर विष दूर करने की क्रिया या प्रकार।

थूर—पुं० [सं० तूवर] अरहर।

स्त्री० [हिं० थूरना] थूरने की क्रिया या भाव।

थूरना†—स० [सं० थुवर्ण=मारना] १. अच्छी तरह कूटना। २. अच्छी तरह मारना-पीटना। ३. खूब कसकर भरना। ४. खूब कस कर और भर पेट भोजन करना। (व्यंग्य) उदा०—कैसी गधी हो, बच्चों का खाना हो हूँसती। रातिब तो तीन टट्टू का जाती हो थूर आप।—जान साहब।

थूल*—वि० [सं० स्थूल] १. मोटा। भारी। २. भद्दा।

थूला—वि० [सं० स्थूल] [स्त्री० थूली] १. मोटा-ताजा। हृष्ट-पुष्ट। २. भारी और मोटा।

थूली—स्त्री० [हिं० थूला=मोटा] १. किसी अनाज के दले हुए मोटे दाने। दलिया। २. पकाया हुआ दलिया। ३. सूजी।

थूवा—पुं०=थुआ। (देखें)

थूहड़—पुं०=थूहर।

थूहर—पुं० [सं० स्थूल] एक प्रकार का झाड़ या पौधा जिसमें लचीली टहनियों की जगह प्रायः बड़ी गुल्ली या छोटे डंडे के आकार के मोटे और गाँठदार डंठल निकलते हैं और जिसके पत्तों में से एक प्रकार का कड़ुआ दूध निकलता है। सेंहुड़।

थूहा—पुं० [सं० स्तूप; प्रा० थूव] [स्त्री० अल्पा० थूही] १. छोटा टीला। ढूह। २. ढेर। राशि। ३. कूओं आदि पर मिट्टी के बने हुए वे दोनों खंभे जिन पर वह लकड़ी या लोहे का छड़ रखा जाता है जिसमें गराड़ी पहनाई हुई होती है।

थेई-थेई—स्त्री० [अनु०] १. नृत्य का ताल सूचक शब्द। २. थिरक-थिरककर नाचने की मुद्रा।

क्रि० प्र०—करना।

थेगली—स्त्री०=थिगली।

थेथर†—वि० [सं० शिथिल] १. बहुत अधिक थका हुआ। २. जो कष्ट, दुर्दशा आदि भोगता-भोगता हद से ज्यादा तंग या परेशान हो गया हो।

थेथरई†—स्त्री० [हिं० थेथर] १. थेथर होने की अवस्था या भाव। २. निर्लज्जतापूर्वक किया जानेवाला दुराग्रह। ३. अपने दोषों, भूलों आदि पर ध्यान न देकर निर्लज्जतापूर्वक सब के सामने सिर उठाकर उद्दंडतापूर्वक की जानेवाली बात।

थेवा—पुं० [देश०] १. अँगूठी में जड़ा हुआ नगीना। २. अँगूठी के ऊपर लगा हुआ वह घर जिसमें नगीना जड़ा या बैठाया जाता है।

थैं—अव्य० [पु० हिं० ते] से। उदा०—वेद बड़ कि जहाँ थैं आया।—कबीर।

थैचा—पुं० [देश०] खेत में बनी हुई मचान का छप्पर।

थै-थै—अ० य० [सं० अव्यक्त शब्द] नृत्य, वाद्य आदि का अनुकरणात्मक शब्द।

थैला—पुं० [सं० स्थल=कपड़े का घर] [स्त्री० अल्पा० थैली] १. कपड़े या ऐसी ही और किसी चीज के लम्बे टुकड़े को दोहरा करके और दोनों ओर से सीकर छोटे बोरे की तरह बनाया हुआ वह आधान जिसमें चीजें भरकर रखते हैं। एक प्रकार का झोला।

मुहा०—(किसी को) थैला करना=मारते-मारते बेदम कर देना।

विशेष—पहले कहीं-कहीं टाट के बड़े थैलों में या बोरों में अपराधियों को भरकर और ऊपर से थैले का मुँह बंद करके घूँसों, ठोकरों आदि से खूब मारते थे। इसी से यह मुहावरा बना है।

२. पायजामे का वह भाग जो जंघे से घुटने तक और देखने में बहुत कुछ उक्त आधान की तरह होता है।

थैली—स्त्री० [हिं० थैला] १. छोटा थैला। २. एक विशेष प्रकार की छोटी थैली जिसमें रुपए आदि रखे जाते हैं।

मुहा०—थैली खोलना या थैली का मुँह खोलना=यथेष्ट धन व्यय करने के लिए प्रस्तुत होना।

३. वह धन जो थैली में भरकर किसी बड़े आदमी को समर्पित किया जाता है। जैसे—कांग्रेस अध्यक्ष को वहाँ दस हजार की थैली भेंट की गई है। ४. उक्त आकार-प्रकार की कोई ऐसी चीज जिसके अंदर कोई दूसरी चीज सुरक्षापूर्वक बंद हो अथवा रहती हो। जैसे—गर्भकाल में बच्चा झिल्ली की थैली में बंद रहता है।

थैलीदार—पुं० [हिं० थैली+फा० दार] १. वह आदमी जो खजाने में रुपयों की थैलियाँ उठाकर रखता या लाता है। २. तहवीलदार। रोकड़िया।

थैली-बरदारी—स्त्री० [हिं० थैली+बरदारी] दूसरों की थैली (या धन) उठाकर इधर-उधर ले जाना।

थोक—पुं० [सं० स्तोक या स्तोमक; प्र० थोवँक; हिं० थोक] १. एक ही तरह की बहुत सी चीजों का ढेर या राशि। थाक। (देखें)

क्रि० प्र०—करना।—लगाना।

२. चीजें बेचने का वह प्रकार जिसमें एक ही तरह की बहुत-सी चीजें एक साथ या इकट्ठी और प्रायः दूकानदारों या बड़े ग्राहकों के हाथ कम मुनाफे पर बेची जाती हैं। 'खुदरा' या 'फुटकर' का विपर्याय। ३. जत्था। झुंड। दल। ४. वह स्थान जहाँ कई गाँवों की सीमाएँ मिलती हों। ५. जमीन का वह बड़ा टुकड़ा जो एक ही मालिक के हाथ में हो।

थोकदार—पुं० [हिं० थोक+फा० दार] वह व्यापारी जो थोक का कार्य करता हो।

थोड़†—स्त्री० [हिं० थोड़ा] १. थोड़े होने की अवस्था या भाव। कमी। जैसे—यहाँ खाने-पीने की कोई थोड़ नहीं है। २. ऐसा अभाव या कमी जिसकी पूर्ति की आवश्यकता जान पड़ती हो। जैसे—हमारे यहाँ भी बच्चों की थोड़ है। (पश्चिम)

थोड़न—पुं० [सं० थुड् (ढाँकना)] ढाँकने या लपेटने की क्रिया या भाव।

थोड़ा—वि० [सं० स्तोक; पा० थोअ+ड़ा (प्रत्य०)] [स्त्री० थोड़ी] १. जो मात्रा, मान आदि में आवश्यक या उचित से बहुत कम हो। अल्प। जैसे—यह कपड़ा कुर्ते के लिए थोड़ा होगा।

मुहा०—(व्यक्ति का) थोड़ा थोड़ा होना=लज्जित या संकुचित होना या होता हुआ जान पड़ना।

पद—थोड़ा बहुत=अधिक या यथेष्ट नहीं। कुछ-कुछ। **थोड़े में**=संक्षेप में। **थोड़े ही**=बिलकुल नहीं। जैसे—हम वहाँ थोड़े ही गये थे।

२. केवल उतना, जितने से किसी तरह काम चल जाय। जैसे—कहीं से थोड़ा नमक ले आओ।

क्रि० वि० अल्प मात्रा या मान में। कुछ। जरा। जैसे—थोड़ा ठहरकर चले जाना।

थोती†—स्त्री०=थोथी।

थोथ—स्त्री० [हिं० थोथा] १. थोथे होने की अवस्था या भाव। थोथापन। २. खोखलापन। ३. निस्सारता।
†स्त्री०=तोंद।

थोथरा—वि०=थोथा।

थोथा—वि० [देश०] [स्त्री० थोथी] १. जिसके अंदर का सार भाग नष्ट हो गया हो या निकल गया हो। २. जिसमें कुछ भी तत्त्व या सार न हो। निःसार। जैसे—थोथी बातें, थोथा विवाद। ३. निकम्मा, बेढंगा और भद्दा। ४. (पक्षी या पशु) जिसकी दुम कटी हो। बाँड़ा। ५. (शस्त्र) जिसकी धार कुंठित हो गई हो या घिस गई हो। भोथरा।

थोथी—स्त्री० [हिं० थूथन] थूथन का अगला छोटा नुकीला भाग।
†स्त्री० [?] एक प्रकार की घास।

थोपड़ी—स्त्री० [हिं० थोपना] चाँद अर्थात् खोपड़ी के बीचवाले भाग पर लगाई जानेवाली हलकी चपत या धौल। थोपी।

थोपना—स० [सं० स्थापन; हिं० थापना] १. किसी चीज पर कोई गाढ़ी गीली चीज इस प्रकार कुछ जोर से फेंकना या रखना कि उसकी मोटी तह-सी जम जाय। मोटा लेप लगाना। जैसे—(क) कच्ची दीवार की मरम्मत करने के लिए उस पर गीली मिट्टी थोपना। (ख) शरीर के किसी पीड़ित अंग पर कोई गीली पिसी हुई दवा थोपना।
संयो० क्रि०—देना।
२. अभियोग, उत्तरदायित्व, भार आदि बलपूर्वक किसी पर रखना या लगाना। आरोपित करना। मत्थे मढ़ना। जैसे—किसी के सिर कोई कलंक (या काम) थोपना। ३. दे० 'छोपना'।

थोपी—स्त्री० [हिं० थोपना] वह हलकी चपत या धौल जो प्रायः बच्चे खेलते समय आपस में एक दूसरे के सिर पर लगाते हैं। थोपड़ी।

थोबड़ा—पुं० [देश०] १. जानवरों का निकला हुआ लम्बा मुँह। थूथन। २. व्यक्ति के मुँह की वह आकृति जो मन ही मन बहुत रुष्ट होने पर होती है। फूला हुआ मुँह। ३. दे० 'तोबड़ा'।

थोभ—स्त्री० [सं० स्तोम] बाधा। रुकावट।
पुं० [देश०] केले की पेड़ी के बीच का गाभा।

थोर†—पुं०=थूहर।
†वि०=थोड़ा।
†स्त्री०=थोड़।

थोरा—वि०=थोड़ा।

थोरिक—वि० [हिं० थोरा+एक] थोड़ा-सा। तनिक-सा।

थोरी—स्त्री० [देश०] एक अनार्य जाति।

थौंद—स्त्री=तोंद।

थ्यावस—पुं० [सं० स्थेयस] १. ठहराव। स्थिरता। २. धीरता। धैर्य।

द

द—देवनागरी वर्णमाला के तवर्ग का तीसरा वर्ण, जो उच्चारण तथा भाषा-विज्ञान की दृष्टि से घोष, अल्पप्राण, स्पर्शी, दन्त्य व्यंजन है।
प्रत्य० [सं०√दा (दान करना+क] [स्त्री० दा] शब्दों के अंत में लगकर यह प्रत्यय के रूप में 'देनेवाला' का अर्थ देता है। जैसे—करद, जलद, फलद और कामदा, धनदा आदि।

दंग—वि० [फा०] अप्रत्याशित अथवा अनोखी बात देखकर जो बहुत अधिक चकित या स्तब्ध-सा हो गया हो।
क्रि० प्र०—रह जाना।—हो जाना।
पुं० १. डर। भय। २. घबराहट।
†पुं० दे० 'दंगा'।

दंगई—वि० [हिं० दंगा] १. दंगा या लड़ाई-झगड़ा करनेवाला। उपद्रवी। झगड़ालू। २. उग्र। तीव्र। प्रचंड। ३. बहुत बड़ा या भारी। दंगल। (क्व०)
स्त्री० १. दंगा-फसाद या लड़ाई-झगड़ा करने की प्रवृत्ति। २. दंगा-फसाद। उपद्रव।

दंगल—पुं० [फा०] १. पहलवानों की वह प्रतियोगिता, जिसमें प्रतिद्वन्द्वी को कुश्ती में जीतने पर प्रायः पुरस्कार के रूप में विशिष्ट धन-राशि मिलती है। २. उक्त के आधार पर कुश्ती लड़ने का अखाड़ा जिसमें उक्त प्रकार की बहुत-सी प्रतियोगिताएँ होती हैं। ३. कोई ऐसी प्रतियोगिता जिसमें बहुत-से प्रतियोगी सम्मिलित हुए या होते हों। जैसे—कवियों या गवैयों का दंगल। ४. मोटा गद्दा। तोशक।
वि० सामान्य आकार-प्रकार से बहुत अधिक या बड़े आकार-प्रकार-वाला। जैसे—दंगल मकान।

दंगली—वि० [फा०] १. दंगल-संबंधी। २. दंगलों में सम्मिलित होने-वाला। (पूरब) ३. जिसने दंगलों में विजय प्राप्त की हो। ४. बहुत बड़ा या भारी।

दँगवारा†—पुं० [हिं० दंगल+वारा (प्रत्य०)] एक किसान द्वारा दूसरे किसान को हल-बैल आदि देकर की जानेवाली सहायता। जिता। हरसीत।

दंगा—पुं० [फा० दंगल] १. ऐसा झगड़ा या लड़ाई, जिसमें मार-पीट भी हो। उपद्रव। उदा०—जियत पिता से दंगम-दंगा। मुए पिता पहुँचाये गंगा।—कबीर। २. विधिक क्षेत्र में, ऐसा उपद्रव, जिसमें बहुत-से लोग विशेषतः विभिन्न दलों के लोग आपस में मार-पीट, लूट-पाट आदि करके सार्वजनिक शांति भंग करते हों। ३. गुल-गपाड़ा। हो-हल्ला। शोर।

दंगाई—पुं० [हिं० दंगा] दंगा या उपद्रव करनेवाला व्यक्ति।
स्त्री०=दंगई।

दंगैत†—पुं०=दंगाई।

दंड—पुं० [सं०√दंड् (दंड देना)+घञ्] १. बाँस, लकड़ी आदि का वह गोलाकार लंबा डंडा, जो प्रायः चलने के समय सहारे के लिए हाथ में रखा जाता अथवा किसी को मारने-पीटने के काम आता है। लाठी। सोंटा। २. उक्त आकार की कोई लंबी लकड़ी, जो कुछ चीजों में

उन्हें चलाने, पकड़ने आदि के लिए लगी रहती है। डंडा। डाँड़ी। जैसे—तुला का दंड, ध्वजा या पताका का दंड, मथानी का दंड, हल में का दंड आदि। ३. उक्त प्रकार की वह पतली, लंबी लकड़ी जो संन्यासी सदा हाथ में रखते हैं।

मुहा०—दंड ग्रहण करना=संन्यास-आश्रम ग्रहण करना या उसमें प्रवेश करना।

४. उक्त आकार-प्रकार की कोई पतली, लंबी चीज। जैसे—भुज-दंड, मेरु-दंड। ५. जहाज या नाव का मस्तूल। ६. लंबाई की एक पुरानी नाप जो प्रायः चार हाथ की होती थी। ७. समय का एक मान जो ६० पलों का होता है। घड़ी। ८. वास्तुशास्त्र में, ऐसा आँगन जिसके उत्तर और पूर्व में कोठरियाँ हों। ९. ज्योतिष में, एक प्रकार का योग। १०. एक प्रकार की कसरत, जो जमीन पर हाथों और पैरों के पंजों के बल उलटे लेटकर की जाती है और जिससे भुज-दंडों की शक्ति बढ़ती है।

क्रि० प्र०—करना।—पेलना।—मारना।—लगाना।

११. अश्व। घोड़ा। १२. उत्पात, उपद्रव आदि का दमन या शमन। शासन। १३. कोई अनुचित काम या अपराध करनेवालों को उसके बदले में दी जानेवाली सजा। (पनिशमेन्ट)। १४. सेना, जो प्राचीन काल में अपराधियों को दंड देने के उद्देश्य से रखी जाती थी। १५. अर्थ-दंड। जुरमाना। १६. कोई अपराध, प्रतिज्ञा-भंग अथवा किसी का कोई अपकार या हानि करने के बदले में दिया या लिया जानेवाला धन। हरजाना। (पैनेल्टी)

क्रि० प्र०—पड़ना।—भोगना।—लगना।—सहना।

मुहा०—(किसी पर) दंड डालना=यह कहना या निश्चित करना कि अमुक व्यक्ति दंड के रूप में इतना धन दे। **दंड भरना**=किसी के अपकार या हानि के बदले में अथवा प्रतिकार-स्वरूप कुछ धन देना।

१७. यमराज जो मरने पर प्राणियों को दंड या सजा देते हैं। १८. विष्णु। १९. शिव। २०. कुबेर के एक पुत्र का नाम। २१. इक्ष्वाकु के सौ पुत्रों में से एक। २२. दे० 'दंडवत्'। २३. दे० 'दंड-व्यूह'।

दंड-कंदक—पुं [सं० ब० स०, कप्] सेमल का मुसला। वृरणी-कंद।

दंडक—वि० [सं०√दंड्+णिच्+ण्वुल्—अक] दंड देने या दंडित करनेवाला।

पुं० १. डंडा। सोंटा। २. दंड देनेवाला व्यक्ति। ३. राजा इक्ष्वाकु के एक पुत्र जिनके नाम पर दंडकारण्य का नामकरण हुआ था। ४. छंदशास्त्र के अनुसार (क) ऐसा मात्रिक छंद, जिसके प्रत्येक चरण में ३२ से अधिक मात्राएँ हों अथवा (ख) ऐसा वर्णिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में २६ से अधिक वर्ण हों। ५. एक प्रकार का वात-रोग जिसमें हाथ, पैर, पीठ, कमर आदि अंग स्तब्ध होकर ऐंठ-से जाते हैं। ६. संगीत में शुद्ध राग का एक प्रकार या भेद। ७. दे० 'दंडकारण्य'।

दंडक-ज्वर—पुं० [सं०] मच्छरों के दंश से फैलनेवाला एक प्रकार का ज्वर जिसमें सारे शरीर में पीड़ा होती है और शरीर तथा आँखें लाल हो जाती हैं। (डेंग्यु)

दंडकला—स्त्री० [सं०] दुमिल छंद का एक भेद, जिसके अंत में एक गुरु अथवा सगण होता है।

दंडका—स्त्री० [सं० दण्यक+टाप्]=दंडकारण्य। (दे०)

दंडकारण्य—पुं० [सं० दण्डक-अरण्य मध्य० स०] एक प्रसिद्ध बहुत बड़ा वन, जो विंध्यपर्वत और गोदावरी नदी के बीच में पड़ता है। सीता का हरण रावण ने इसी वन में किया था। आज-कल इसका कुछ अंश साफ करके मनुष्यों के बसने योग्य किया जाने लगा है।

दंडकी—स्त्री० [सं० दण्डक+ङीष्] १. छोटा डंडा। २. छड़ी।

दंडगौरी—स्त्री० [सं०] एक अप्सरा।

दंडघ्न—वि० [सं० दण्ड√हन् (चोट पहुँचाना)+टक्] १. डंडे से मारनेवाला। २. दंड या सजा न मानने या उसकी परवाह न करनेवाला।

दंडचारी (रिन्)—पुं० [सं० दण्ड√चर् (घूमना)+णिनि] सेना का अध्यक्ष। सेनापति। (कौ०)

दंड-ढक्का—पुं० [मध्य० स०] एक तरह का ढोल या नगाड़ा।

दंड-ताम्र—स्त्री० [मध्य० स०] जलतरंग बाजा, जिसमें पहले ताँबे की कटोरियाँ काम में लाई जाती थीं।

दंड-दास—पुं० [मध्य० स०] वह व्यक्ति जो अर्थ-दंड न दे सकने पर उसके बदले में किसी की दासता करता हो।

दंड-धर—वि० [ष० त०] १ हाथ में डंडा या लाठी रखनेवाला। २. दंड धारण करनेवाला।

पुं० १. यमराज। २. शासक। हाकिम। ३. संन्यासी। ४. प्राचीन भारत में एक प्रकार के राजपुरुष जो शासन आदि की व्यवस्था में सहायता देते थे। ५. वह, जो लाठियों से मार-पीट या लड़ाई-झगड़ा करते हों। लठैत। लठबंद।

दंडधारी (रिन्)—वि० [सं० दण्ड√धृ (धारण करना)+णिनि] डंडा रखनेवाला।

पुं०=दंडधर।

दंडन—पुं० [सं०√दण्ड्+ल्युट्—अन] [वि० दंडनीय, दंडित, दंड्य] १. दंड देने अथवा किसी को दंडित करने की क्रिया या भाव। दंड देना। २. शासन।

दंडना†—स० [सं० दंडन] किसी को दंड देना या किसी पर दंड लगाना। दंडित करना।

दंड-नायक—पुं० [ष० त०] १. वह शासनिक अधिकारी जो प्राचीन भारत में अपराधियों को दंड देने तथा राज्य में सुव्यवस्था तथा शान्ति बनाये रखने का काम करता था। २. शासक। हाकिम। ३. सेनापति। ४. सूर्य के एक अनुचर का नाम।

दंड-नीति—स्त्री० [ष० त०] १. अपराधी को दंडित करने की नीति। २. दंड देकर किसी को वश में लाने या रखने की नीति। ३. दे० 'दंड-विधान'।

दंडनीय—वि० [सं०√दण्ड्+अनीयर्] १. (व्यक्ति) जिसे दंड दिया जाने को हो। २. जिसे दंड दिया जा सकता हो। दंडित किये जाने के योग्य। ३. (कार्य) जिसे करने पर दंड मिल सकता हो। जैसे—दंडनीय अपराध।

दंड-पांशुल—पुं० [तृ० त०] द्वारपाल।

दंड-पाणि—वि० [ब० स०] १. जिसके हाथ में दंड या डंडा हो। पुं० १. यमराज। २. काशी में भैरव की एक मूर्ति। ३. दंडनायक। (दे०)

दंड-पात—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का सन्निपात जिसमें रोगी को नींद नहीं आती और वह पागलों की तरह इधर-उधर दौड़ता-फिरता है।

दंड-पारुष्य—पुं० [ष० त०] १. उचित से अधिक और बहुत ही कठोर दंड या सजा।

विशेष—प्राचीनों ने इसे भी राजाओं के सात मुख्य दुर्व्यसनों में माना था।

२. आक्रमण। चढ़ाई।

दंडपाल—पुं० [सं० दण्ड√पाल् (रक्षा करना)+णिच्+अण्, उप० स०] १. न्यायाधीश। २. वह पहरेदार, जो हाथ में डंडा लेकर घूमता हो। ३. ड्योढ़ीदार। द्वारपाल। ४. एक प्रकार की मछली।

दंडपालक—पुं० [दण्डपाल+कन्]=दंडपाल।

दंडपाशक—पुं० [ब० स०, कण्] १. दंड देनेवाला अधिकारी या कर्मचारी। २. फाँसी देनेवाला कर्मचारी। जल्लाद।

दंड-प्रणाम—पुं० [मध्य० स०] भूमि में डंडे के समान पड़कर प्रणाम करने की मुद्रा। दंडवत्।

दंडबालधि—पुं० [ब० स०] हाथी।

दंडभृत—वि० [सं० दण्ड√भृ (धारण करना)+क्विप्] डंडा रखने, चलाने या घुमानेवाला।

पुं० कुम्हार। कुंभकार।

दंड-मत्स्य—पुं० [उपमि० स०] एक तरह की मछली। बाम मछली।

दंड-माथ—पुं० [मध्य० स०] मुख्य और सीधा रास्ता।

दंडमान*—वि० [सं० दंड+हिं० मान (प्रत्य०)] दे० दंडनीय।

दंड-मानव—पुं० [मध्य० स०] १. वह व्यक्ति जिसे अधिक या बराबर दंड दिया जाता हो। २. बालक।

दंड-मुख—पुं० [ब० स०] सेनापति।

दंड-मुद्रा—स्त्री० [मध्य० स०] १. तंत्र की एक मुद्रा, जिसमें हाथ के बीच की उँगली दंड के समान खड़ी रहती है और शेष उँगलियाँ बँधी या मुँदी रहती हैं। २. साधुओं के दो चिह्न—दंड और मुद्रा।

दंड-यात्रा—स्त्री० [च० त०] १. सेना की वह चढ़ाई, जो किसी देश या राजा को दंड देने के उद्देश्य से हो। २. दिग्विजय के लिए होनेवाली यात्रा। ३. किसी प्रकार का सैनिक आक्रमण या चढ़ाई। ४. वर-यात्रा। बरात।

दंडयाम—पुं० [सं० दण्ड√यम् (नियंत्रण करना)+अण्, उप० स०] १. यम। २. अगस्त्य मुनि। ३. दिन। दिवस।

दंडरी—स्त्री० [सं० दण्ड√रा (देना)+क–ङीष् ?] एक तरह का ककड़ी की जाति का फल। डँगरी फल।

दंडवत्—पुं० [सं० दण्ड+वति] दंड के समान सीधे होकर तथा पृथ्वी पर औंधे लेटकर किया जानेवाला नमस्कार। साष्टांग प्रणाम।

वि० डंडे के समान, खड़ा या सीधा।

दंड-वध—पुं० [तृ० त०] वध करने या किये जाने का दंड। प्राण-दंड। मृत्यु-दंड।

दंडवासी (सिन्)—पुं० [सं० दण्ड√वस् (बसना)+णिनि] १. द्वारपाल। दरबान। २. गाँव का हाकिम या मुखिया।

दंडवाही (हिन्)—पुं० [सं० दण्ड√वह् (वहन करना)+णिनि] वह प्राचीन कर्मचारी जो हाथ में डंडा रखकर शान्ति की व्यवस्था करता था (आज-कल के पुलिस-सिपाही की तरह का)।

दंड-विज्ञान—पुं० [ष०त०] समाज शास्त्र की वह शाखा, जिसमें इस बात का विचार होता है कि अपराधियों पर दंड का कैसा उलटा परिणाम होता है और अपराधियों को दंड न देकर किस प्रकार सहानुभूति-पूर्वक अन्य उपायों से सुधारा जा सकता है। (पेनॉलोजी)

दंड-विधान—पुं० [ष०त०] १. दंड देने के लिए किया जानेवाला विधान या व्यवस्था। २. दे० 'दंडविधि'।

दंड-विधि—स्त्री० [ष०त०] वह विधि या विधान जिसमें विभिन्न अपराधों तथा उनके अनुरूप दंडों का अभिदेश होता है।

दंड-वृक्ष—पुं० [मध्य०स०] सेंहुड़ या थूहर का पेड़, जिसकी डालियाँ डंडे की तरह मोटी और सीधी होती हैं।

दंड-व्यूह—पुं० [मध्य०स०] एक प्रकार की प्राचीन व्यूह-रचना, जो प्रायः डंडे के आकार की होती थी और जिसमें आगे बलाध्यक्ष, बीच में राजा, पीछे सेनापति, दोनों ओर हाथी, हाथियों के बगल में घोड़े और घोड़ों के बगल में पैदल सिपाही रहते थे।

दंड-शास्त्र—पुं० [ष०त०] १. वह शास्त्र, जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि किसे अथवा कौन-सा अपराध करने पर कितना अथवा क्या दंड दिया जाना चाहिए। २. दे० 'दंड-विधान'।

दंड-संधि—स्त्री० [मध्य०स०] लड़ाई में सेना का सामान लेकर की जानेवाली संधि।

दंड-संहिता—स्त्री० [ष०त०] वह ग्रंथ जिसमें किसी देश में अपराधों के के लिए दिये जानेवाले दंडों का विधान हो। दंड-विधि। (पेनल-कोड)

दंड-स्थान—पुं० [ष०त०] १. वह स्थान जहाँ लोगों को दंड दिया जाता हो। २. वह जनपद या राष्ट्र जिस पर मुख्यतः सेना के बल पर ही शासन होता हो। (कौ०)

दंड-हस्त—पुं० [ब०स०] तगर का फूल।

वि० जिसके हाथ में डंडा हो।

दंडा†—पुं०=डंडा।

दंडाकरन*—पुं०=दंडकारण्य।

दंडाक्ष—पुं० [सं०] चंपा नदी के किनारे का एक प्राचीन तीर्थ। (महाभारत)

दंडाजिन—पुं० [दण्ड-अजिन, द्व०स०] १. वह दण्ड और मृगचर्म जो साधु-संन्यासी अपने पास रखते हैं। २. व्यर्थ का आडंबर। ३. लोगों को धोखा देने के लिए धारण किया जानेवाला वेष। ४. एक प्रकार का बहुत सूक्ष्म उद्भिज जो तृणाणु से कुछ बड़ा होता है और जिसका प्रजनन-प्रकार भी उससे कुछ भिन्न होता है।

दंडात्मक—वि० [दण्ड-आत्मन्, ब०स०, कप्] दंड-संबंधी। २. दंड के रूप में होनेवाला।

दंडादंडि—स्त्री० [दण्ड-दण्ड, ब० स० (इच् समा० पूर्वपद दीर्घ)] डंडों की मार-पीट। लट्ठबाजी।

दंडादेश—पुं० [दण्ड-आदेश, ष०त०] किसी को उसके अपराध के फलस्वरूप मिलनेवाले दंड की दी जानेवाली सूचना।

दंडादेशित—भू० कृ० [सं० दण्डादेश+इतच्] जिसे दंडादेश दिया जा चुका या मिल चुका हो।

दंडाधिकारी (रिन्)—पुं० [दण्ड-अधिकारिन्, ष०त०] वह राजकीय

अधिकारी, जिसे आपराधिक अभियोगों का विचार करने और अपराधियों को दंड देने का अधिकार होता है। (मजिस्ट्रेट)

दंडाधिप—पुं०[दण्ड-अधिप, ष०त०] कोई स्थानीय प्रधान शासक।

दंडापूपन्याय—पुं०[दण्ड-अपूप, मध्य० स०, दण्डापूप-न्याय मध्य०स०?] एक प्रकार का न्याय जिसके अनुसार दो परस्पर संबंधित बातों में से एक के सिद्ध होने पर दूसरे की सिद्धि उसी प्रकार निश्चित मान ली जाती है, जिस प्रकार डंडे के चूहे द्वारा खा लेने पर उसमें बँधे हुए पूए का भी चूहे द्वारा खा लिया जाना निश्चित होता है।

दंडायमान— वि०[सं० दण्ड+क्यङ्+शानच्] जो डंडे की तरह सीधा खड़ा हो।

क्रि० प्र०—होना।

दंडार—पुं०[सं० दण्ड√ऋ (जाना)+अण्]१. रथ। २. नाव। ३. कुम्हार का चाक। ४. धनुष। ५. ऐसा हाथी, जिसके मस्तक से मद बह रहा हो।

दंडार्ह—वि०[सं० दण्ड√अर्ह्+अण्] जिसे दण्ड दिया जाना उचित हो। दंड पाने योग्य।

दंडालय—पुं०[सं० दण्ड-आलय, ष०त०]१. न्यायालय, जहाँ अपराधियों के लिए दंड का विधान होता है। २. वह स्थान जहाँ अपराधियों को शारीरिक दंड दिया जाता है। ३. दंडकला छंद का दूसरा नाम।

दंडाश्रम—पुं०[सं० दण्ड-आश्रम, मध्य०स०] वह आश्रम या स्थिति, जिसमें तीर्थयात्री हाथ में डंडा लेकर पैदल चलते हुए तीर्थों की ओर जाते थे, अथवा अब भी कहीं-कहीं जाते हैं।

दंडाश्रमी (मिन्)—पुं०[सं० दण्डाश्रम+इनि] संन्यासी।

दंडाहत—वि०[दण्ड-आहत, तृ०त०] डंडे से मारा हुआ।

पुं० छाछ। मट्ठा।

दंडिका—स्त्री०[सं० दण्डक+टाप्, इत्व] बीस अक्षरों की एक वर्णवृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में एक रगण के उपरान्त एक जगण, इस प्रकार के गणों के जोड़े तीन बार आते हैं और अंत में गुरु-लघु होता है। इसे वृत्र और गड़का भी कहते हैं।

दंडित—भू० कृ०[सं०√दण्ड् (दण्ड देना)+क्त] जिसे किसी प्रकार का दंड दिया गया हो। दंडप्राप्त।

दंडिनी—स्त्री०[सं० दण्डिन्+ङीप्] क्षाग। दंडोत्पला।

दंडी (डिन्)—पुं०[सं० दण्ड+इनि]१. दंड धारण करनेवाला व्यक्ति। २. यमराज। ३. राजा। ४. द्वारपाल। ५. दंड और कमंडलु धारण करनेवाला संन्यासी। ६. सूर्य के एक पार्श्वचर। ७. जिनदेव। ८. धृतराष्ट्र का एक पुत्र। ९. दौने का पौधा। १०. मंजुश्री। ११. शिव। १२. दशकुमार चरित के रचयिता एक प्रसिद्ध संस्कृत कवि।

दंडोत्पल—पुं० [दण्ड-उत्पल. मध्य०स०] एक प्रकार का पौधा जिसे गूमा, कुकरौंधा, सहदेया भी कहते हैं।

दंडोत्पला—स्त्री०[सं० दण्डोत्पल+टाप्]=दंडोत्पल।

दंडोपनत—वि०[दण्ड-उपनत, तृ० त०] (राजा या शासक) जो पराजित या परास्त हो चुका हो।

दंड्य—वि०[सं०√दण्ड+ण्यत्] दंड पाने के योग्य। दंडनीय।

दंत—पुं०[सं०√दम् (दण्ड देना)+तन्] १. दाँत। २. ३२ की संख्या। ३. गाँव की हिस्सेदारी में बहुत ही छोटा हिस्सा, जो पाई से भी कम होता था। (कौड़ियों में दाँत के जो चिह्न होते हैं, उनके आधार पर स्थित मान) ४. कुंज। ५. पर्वत की चोटी।

पुं०[सं० दन्ती] हाथी। उदा०—खाग त्याग करि दीपतों, के वी दंत कुदाल।—जटमल।

दंतक—पुं०[सं० दन्त+कन्]१. दाँत। २. पहाड़ की चोटी। ३. एक तरह का पत्थर।

दंत-कथा—स्त्री०[मध्य०स०] कोई ऐसी अप्रामाणिक अथवा कल्पित कथा, जिसे लोग परम्परा से सुनते चले आये हों।

दंतकर्षण—पुं०[सं० दन्त√कृष् (खींचना)+ल्यु-अन] जंभीरी नींबू।

दंतकार—पुं०[सं० दन्त√कृ (करना)+अण्] टूटे या निकाले हुए दाँत नये सिरे से बनानेवाला चिकित्सक। दाँतों का डाक्टर। (डेन्टिस्ट)

दंत-काष्ठ—पुं०[मध्य०स०] दतुवन। दातुन।

दंत-काष्ठक—पुं०[ब०स०, कप्]आहुल्य वृक्ष। तरवट का पेड़।

दंतकूर—पुं०[ब०स०] युद्ध। संग्राम।

दंतक्षत—पुं०[सं०] दाँत काटने से अंग पर बननेवाला चिह्न या निशान।

दँतखोदनी—स्त्री०[हिं० दाँत+खोदना] धातु का वह छोटा पतला, लंबा टुकड़ा जिससे दाँतों की संधियों में फँसी हुई चीजें खोदकर बाहर निकाली जाती हैं।

दंत-घर्ष—पुं०[ष०त०]१. ऊपर और नीचे के दाँतों में होनेवाली रगड़। २. उक्त रगड़ से होनेवाला शब्द। ३. दे० 'दाँता-किटकिट'।

दंतच्छद—पुं० [सं० दन्त√छद् (ढकना)+णिच्+घ, ह्रस्व] होंठ।

दंतच्छदोपमा—स्त्री०[सं० दन्तच्छद-उपमा, ब०स०] बिंबाफल। कुँदरू।

दंत-जात—वि०[ब०स० (पर निपात)]१. (बच्चा) जिसके दाँत निकल आए हों। २. बच्चों के नये दाँत निकलने के लिए उपयुक्त (काल या समय)।

दंत-ताल—पुं०[ब०स०] ताल देने का एक तरह का प्राचीन बाजा।

दंत-दर्शन—पुं०[ष०त०] (क्रोध या चिड़चिड़ाहट में) दाँत निकालने की क्रिया या भाव। दाँत दिखाना।

दंत-धावन—पुं०[ष०त०] १. दातुन, मंजन आदि से दाँत और मुँह का भीतरी भाग साफ करने की क्रिया। २. दातुन। ३. करंज का पेड़। ४. खैर का पेड़। ५. मौलसिरी।

दंत-पत्र—पुं० [ब० स०] कान में पहनने का एक गहना।

दंत-पत्रक—पुं०[ब०स०, कप्] कुंद का फूल।

दंत-पवन—पुं०[ष०त०]१. दाँत शुद्ध करने की क्रिया। दंतधावन। २. दतुवन। दातुन।

दंतपार—स्त्री०[हिं० दंत+उपारना] दाँत की पीड़ा। दाँत का दर्द।

दंत-पुप्पुट—पुं०[ष०त०?] एक रोग, जिसमें मसूड़ों में सूजन आ जाती है और पीड़ा होती है।

दंतपुर—पुं०[सं० मध्य०स०] एक प्राचीन नगर, जिसमें राजा ब्रह्मदत्त ने महात्मा बुद्ध का एक दाँत स्थापित करके उस पर एक मंदिर बनवाया था।

दंत-पुष्प—पुं०[ब०स०]१. निर्मली। २. [उपमि०स०] कुंद का फूल।

दंत-फल—पुं० [ब०स०]१. कनकफल। निर्मली। २. कपित्थ। कैथ।

दंतफला—स्त्री०[सं० दन्तफल+टाप्] पिप्पली।

दंत-मांस—पुं०[मध्य०स०] मसूड़ा।

दंतमूल—पुं०[ष०त०]१. दाँत की जड़। २. दाँत का एक रोग।

दंत-मूलिका—स्त्री०[ब०स०, कप्+टाप् (इत्व)] जमालगोटे का पेड़। दंती वृक्ष।

दंतमूलीय—वि०[सं० दन्तमूल+छ–ईय] (वर्ण) जिसका उच्चारण करते समय जिह्वा का अग्रभाग दंत-मूल को स्पर्श करता हो। जैसे—त, थ, द और ध वर्ण।

दंत-लेखन—पुं०[ष०त०] एक तरह का यंत्र जिससे प्राचीन काल में मसूड़ों में से मवाद निकाली जाती थी।

दंतवक्र—पुं०[ब०स०] शिशुपाल के भाई का नाम, जिसका वध श्रीकृष्ण ने किया था।

दंत-बीज—पुं०[ब०स०] अनार।

दंत-वस्त्र—पुं०[ष०त०] होंठ। ओष्ठ।

दंत-वीणा—स्त्री०[मध्य०स०] १. एक तरह का बाजा। २. दाँत किटकिटाने की क्रिया या उससे होनेवाला शब्द।

दंत-वेष्ट—पुं०[ष०त०] १. एक प्रकार का दंत-रोग। २. मसूड़ा। ३. हाथी के दाँत पर चढ़ाया जानेवाला धातु का छल्ला।

दंत-वैदर्भ—पुं०[ष०त०] दाँत का एक रोग।

दंतव्यसन—पुं०[ष०त०] दाँतों का टूटना।

दंत-शंकु—पुं० [मध्य०स०] चीर-फाड़ करने का एक उपकरण जो जौ के पत्तों के आकार का होता था। (सुश्रुत)

दंत-शठ—पुं०[स०त०] वे वृक्ष जिनके फल खाने से खटाई के कारण दाँत गुठले हो जायँ। जैसे—कैथ, कमरख, जंभीरी नींबू आदि।

दंत-शठा—स्त्री०[स०त०, टाप्]१. खट्टी नोनिया। अमलोनी। २. चुक। चूक।

दंत-शर्करा—स्त्री०[ष०त०] दाँतों का एक रोग।

दंत-शाण—पुं०[ष०त०] दाँतों पर लगाने का रंगीन मंजन। मिस्सी।

दंत-शूल—पुं०[ष०त०] दाँत की जड़ में होनेवाली पीड़ा।

दंत-शोफ—पुं०[ष०त०] दाँत के मसूड़ों में होनेवाला एक प्रकार का फोड़ा। दंतार्बुद।

दंत-हर्ष—पुं० [ब० स०] दाँतों की वह टीस, जो अधिक ठंढी या खट्टी वस्तु खाने से होती है। दाँतों का खट्टा होना।

दंतहर्षक—पुं० [सं० ष० त०] जंभीरी नींबू।

दंताघात—पुं० [दन्त-आघात, तृ० त०] दाँत से किया जानेवाला आघात। पुं० [दन्त+आ√हन् (पीड़ा पहुँचाना)+अण्] नींबू, जिससे दाँतों को आघात पहुँचता है।

दंताज—पुं० [सं० दन्त+आ√जन् (प्रादुर्भाव)+ड] १. दाँतों की जड़ों या संधियों में लगनेवाले कीड़े। २. उक्त कीड़ों के कारण होनेवाला दाँतों का रोग, जिसमें मसूड़ों से मवाद निकलता है। (पायरिया)

दंतादंति—स्त्री० [दन्त-दन्त, ब० स० (नि० सिद्धि)] ऐसी लड़ाई, जिसमें दोनों पक्ष, एक दूसरे को दाँत काटें। दाँत-कटौअल।

दंतायुध—पुं० [दन्त-आयुध, ब० स०] जंगली सूअर।

दंतार—वि० [हिं० दाँत+आर (प्रत्य०)] जिसके बड़े-बड़े दाँत हों।

दंतारा—वि०=दँतार।

दंतार्बुद—पुं० [दन्त-अर्बुद, ष० त०] मसूड़े में होनेवाला फोड़ा।

दंताल—पुं० [हिं० दँतार] हाथी।

दंतालय—पुं० [दन्त-आलय, ष० त०] मुख।

दंतालिका—स्त्री० [सं०√अल् (पर्याप्ति)+ण्वुल्—अक, टाप्, इत्व, दन्त-आलिका, ष० त०] लगाम।

दंताली—स्त्री० [सं० दन्त√अल्+अण्+ङीप्] लगाम।

दंतावल—पुं० [सं० दन्त+वलच् (पूर्वपद दीर्घ)] हाथी।

दंताहल*—पुं० [सं० दंतावल] हाथी। (डिं०)

दंतिका—स्त्री० [सं० दन्ती+कन्—टाप्, ह्रस्व] जमाल-गोटा। दंती।

दंतिया—स्त्री० [हिं० दाँत+इया (प्रत्य०)] बच्चों के छोटे-छोटे दाँत।

पुं० [देश०] एक तरह का पहाड़ी तीतर। नीलमोर।

दंती—स्त्री० [सं० दन्त+ङीप्] अंडी की जाति का एक पेड़। दंती दो प्रकार की होती है—लघुदंती और बृहद्दंती।

दंतीबीज—पुं० [ब० स०] जमालगोटा।

दंतुर—वि० [सं० दन्त+उरच्] जिसके दाँत आगे निकले हों। दंतुला। दाँतू।

पुं० १. हाथी। २. सूअर।

दंतुरक—वि० [सं० दन्तुर+कन्] जिसके दाँत निकले हों।

दंतुरच्छद—पुं० [ब० स०] बिजौरा नीबू।

दंतुरिया*—स्त्री० [हिं० दाँत] बच्चों के छोटे-छोटे दाँत। दँतिया।

दंतुल—वि० [सं० दंतुर] दाँतोंवाला।

दंतुला—वि० [सं० दंतुर] [स्त्री० दँतुली] बड़े-बड़े दाँतोंवाला।

दंतोद्भेद—पुं० [दन्त-उद्भेद, ष० त०] बच्चों के मुँह में दाँतों का निकलना।

दंतोलूखलिक—पुं०[सं० दन्त-उलूखल, उपमि० स०, दन्तोलूखल+ठन्—इक] एक प्रकार के संन्यासी जो केवल फल और बीज खाते हैं, काटी, कूटी या पीसी हुई चीजें नहीं खाते।

दंतोष्ठ्य—वि० [सं० दन्त-ओष्ठ, द्व० स०,+यत्] दाँतों और होंठों की सहायता से उच्चरित होनेवाला (वर्ण)। जैसे—'व्'।

दंत्य—वि० [सं० दन्त+यत्] १. दाँत-संबंधी। दाँतों का। जैसे—दंत्य रोग। २. (वर्ण) जिसका उच्चारण दाँतों की सहायता से होता हो।

विशेष—त् थ् द् और ध् दंत्य वर्ण कहे गये हैं। 'न्' वर्त्स्य है।

३. (औषध) जो दाँत के रोगों के लिए हितकारी हो।

दंद—स्त्री० [सं० दहन, दंदह्यमान] गरम चीज या जगह में से निकलनेवाली गरमी। वैसी गरमी, जैसी तपी हुई भमि पर पानी पड़ने से निकलती या खानों के अन्दर होती है।

†पुं०=दाँत। (पंजाब)

पुं० [सं० द्वन्द्व] १. उत्पात या उपद्रव। २. लड़ाई-झगड़ा। ३. हो-हल्ला। शोर।

क्रि० प्र०—मचाना।

दंदन*—स्त्री० [हिं० दंद=दाँत] एक रोग जिसमें मनुष्य के ऊपर नीचे के दाँत आपस में कुछ समय के लिए सट जाते हैं और वह मूर्च्छित हो जाता है। (पश्चिम)

क्रि० प्र०—पड़ना।

वि० [सं० दमन] [स्त्री० दंदनी] दमन करनेवाला।

दंदश—पुं० [सं०√दंश् (काटना)+यङ्, +अच्] दाँत।

दंदशूक—पुं० [सं०√दंश्+यङ्,+ऊक] १. सूर्य। २. एक राक्षस।

दंदह्यमान—वि० [सं०√दह (जलना)+यङ+शानच्,] दहकता हुआ।

दंदा—पुं० [देश०] ताल देने का पुरानी चाल का एक तरह का बाजा।

दंदान—पुं० बहु० [फा० दंदाँ] दाँत

दंदाना—पुं० [हिं० दन्दान] [वि० दंदानेदार] दाँत के आकार की उभरी हुई नोकों की पंक्ति। जैसे—कंघी या आरे के दंदाने।

†अ० [हिं० दंद=द्वन्द्व] १. गरमी के प्रभाव में आना या पड़ना। गरम होना। जैसे—धूप में सारा घर दंदाने लगता है।

स० सरदी से बचने के लिए आग के पास बैठकर या कंबल, रजाई आदि ओढ़कर अपना शरीर गरम करना।

दंदानेदार—वि० [फा०] जिसमें दंदाने हों।

दंदारु—पुं० [हिं० दंद+आरु (प्रत्य०)] छाला। फफोला।

दंदी—वि० [हिं० दंद] १. झगड़ालू। २. उपद्रवी।

दंपति—पुं०=दंपती।

दंपती—पुं० [सं० जाया-पति, द्व० स० (जाया शब्द को दम् आदेश)] पति-पत्नी का जोड़ा।

दंपा*—स्त्री० [हिं० दमकना] बिजली।

दंभ—पुं० [सं०√दम्भ् (पाखंड करना)+घञ्] अपनी योग्यता, शक्ति आदि का उचित मात्रा से अधिक होनेवाला असद् अभिमान।

दंभक—वि० [सं०√दम्भ्+ण्वुल्—अक] दंभी।

दंभान*—पुं०=दंभ।

दंभी (भिन्)—वि० [सं०√दम्भ्+णिनि] जिसमें दंभ हो। असद् अभिमानी।

दंभोलि—पुं० [सं०√दम्भ्+असुन्, दम्भस् (प्रेरणा) √अल् (पर्याप्ति)+इन्] १. इंद्र का अस्त्र। वज्र। २. हीरा।

दँवरिया—स्त्री०=दँवरी।

दँवरी—स्त्री० [सं० दमन, हिं० दाँवना] कटी हुई फसल को इस उद्देश्य से बैलों से रौंदवाना कि उसमें के बीज डंठलों से अलग हो जायँ।

दँवारि*—स्त्री० दे० 'दवाग्नि'।

दंश—पुं० [सं०√दंश् (काटना)+घञ्, अथवा अच्] १. दाँत से काटने की क्रिया या भाव। २. वह क्षत या घाव, जो किसी के दाँतों से काटने पर होता है। दंत-क्षत। ३. किसी कीड़े या जानवर के काटने से होनेवाला क्षत या घाव। जैसे—सर्प-दंश। ४. दाँत। ५. जहरीले जानवरों का डंक। ६. एक प्रकार की मक्खी, जिसके डंक में जहर होता है। डाँस। ७. कोई ऐसी बहुत कठोर और चुभती हुई बात जिससे मन को बहुत अधिक कष्ट हो। कष्टप्रद कटूक्ति। ८. द्वेष। वैर।

क्रि० प्र०—रखना।

९. लड़ाई में पहना जानेवाला बखतर। वर्म। १०. महाभारत के अनुसार सत्ययुग का एक असुर, जो भृगु मुनि की पत्नी को उठा ले गया था और जो उक्त मुनि के शाप से मल-मूत्र का कीड़ा हो गया था।

दंशक—वि० [सं०√दंश् (काटना)+ण्वुल्—अक] दाँतों से काटनेवाला।

पुं० डाँस या दंश नाम की मक्खी।

दंशन—पुं० [सं०√दंश्+ल्युट्—अन] [वि० दंशित, दंशी] १. दाँतों से काटने की क्रिया या भाव। २. वर्म। बखतर।

दंशना—स० [सं० दंशन] १. दाँत से काटना। २. डंक मारना। डसना।

दंशभीरु—पुं० [पं० त०] भैंस या भैंसा, जो मच्छरों से बहुत डरता है।

दंश-मूल—पुं० [ब० स०] सहिजन का पेड़।

दंशित—भू० कृ० [सं०√दंश्+णिच्+क्त] १. जिसे किसी ने दाँत से काटा हो। दाँत से काटा हुआ। २. जिसे किसी ने डंक मारा या डसा हो।

दंशी (शिन्)—वि० [सं०√दंश्+णिनि] [स्त्री० दंशिनी] १. दाँत से काटने या डसनेवाला। २. कड़ी और चुभती या लगती हुई बात कहनेवाला। ३. द्वेष या वैर का भाव रखकर हानि पहुँचानेवाला।

स्त्री० [सं० दंश+ङीष्] एक प्रकार का छोटा मच्छर।

दंशूक—वि० [सं०√दंश्] (डसना)+ऊक (बा०)] डँसनेवाला (जीव)।

दंष्ट्र—पुं [सं० दंश्+ष्ट्रन्] दाँत, विशेषतः मोटा और बड़ा दाँत।

दंष्ट्रा—स्त्री० [सं० दंष्ट्र+टाप्] १. दाढ़। चौभर। २. बिच्छू नाम का पौधा।

दंष्ट्रा-नखविष—वि० [ब० स०] (जन्तु) जिसके दाँतों और नखों में विष हो।

दंष्ट्रायुध—वि० [दंष्ट्रा-आयुध, ब० स०] जो अपने दाँतों से ही आयुध या अस्त्र का काम लेता हो।

पुं० सूअर।

दंष्ट्राल—वि० [सं० दंष्ट्रा+ल] जिसके बड़े-बड़े दाँत हों।

पुं० एक राक्षस का नाम।

दंष्ट्रास्त्र—वि०, पुं०=दंष्ट्रायुध।

दंष्ट्रिक—वि० [सं० दंष्ट्रा+ठन्—इक] दाढ़ोंवाला।

दंष्ट्रिका—स्त्री० [सं० दंष्ट्रा+क+टाप् (ह्रस्व, इत्व)]=दंष्ट्रा।

दंष्ट्री (ष्ट्रिन्)—वि० [सं० दंष्ट्रा+इनि] बड़े-बड़े दाँतोंवाला।

पुं० १. सूअर। २. साँप।

दंस*—पुं०=दंश।

दँहगल—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की छोटी चितकबरी चिड़िया; जिसकी आँख की पुतली भूरी, चोंच काली, और पैर गाढ़े सिलेटी रंग के होते हैं।

दइअ*—पुं०=दैव (ईश्वर)।

दइउ—पुं०=दैव।

दइजा†—पुं०=दायजा।

दइत*—पुं०=दैत्य।

दइमारा—वि०=दईमारा।

दई—पुं० [सं० दैव] १. ईश्वर।

पद—दई का खोया, घाला या मारा=जिस पर ईश्वर का कोप हो। **दईदई**=हे दैव! हे दैव! (रक्षा के लिए ईश्वर से की जानेवाली पुकार)

२. दैव-संयोग। ३. अदृष्ट। प्रारब्ध।

वि० [सं० दया] दयालु।

दईमारा—वि० [हिं० दई+मारना] [स्त्री० दईमारी] १. जिस पर दई (दैव) या ईश्वर का कोप हो। २. अभागा।

दउरना—अ०=दौड़ना।

दउरा†—पुं०=दौरा।

दक—पुं० [सं० उदक, पृषो० सिद्धि] जल। पानी।

दकन—पुं० [सं० दक्षिण से फा०] १. दक्खिन दिशा। २. दक्षिणी भारत।

दकनी—वि० =दक्षिणी।

स्त्री० उर्दू भाषा का वह आरम्भिक रूप जो दक्षिण हैदराबाद में विकसित हुआ था। विशेष दे० 'दक्खिनी'

दकार—पुं० [सं० द+कार] तवर्ग का तीसरा अक्षर 'द'।

दकार्गल—पुं० [सं० दक-अर्गल ष० त०]=दगार्गल।

दकियानूस—पुं० [यू० से अ०] एक रोमन सम्राट् जो ३४९ ई० में सिहासनारूढ़ हुआ था तथा जो अपने अत्याचारों के लिए बहुत प्रसिद्ध है। वि०=दकियानूसी।

दकियानूसी—वि० [अ०] १. दकियानूस के समय का; अर्थात् बहुत पुराना। २. नवीनता का विरोधी और पुरानी तथा अनद्यतन विचारधाराओं का समर्थक।

दकीका—पुं० [अ० दक़ीक़ः] १. कोई सूक्ष्म बात या विचार। २. उपाय। उक्ति।

मुहा०—कोई दकीका बाकी न रखना=प्रयत्न करते समय अपनी ओर से कोई कमी या त्रुटि न करना।

३. बहुत थोड़ा समय। क्षण। पल।

दक्काक—वि० [अ० दक्काक़] १. आटा पीसनेवाला। २. कूटनेवाला।

दक्खिन—पुं० [सं० दक्षिण] [वि० दक्खिनी] १. दक्षिण दिशा। २. उक्त दिशा का कोई प्रदेश। ३. भारत का दक्षिणी भाग।

दक्खिनी—वि० [हिं० दक्खिन] १. दक्षिण की ओर या दिशा का। दक्खिन का। २. दक्षिण देश का।

पुं० दक्षिण दिशा में पड़नेवाले देश का निवासी।

स्त्री० १. दक्षिण देश की भाषा। २. मध्ययुग में दक्षिण भारत में प्रचलित हिंदी का वह रूप जिसमें मुसलमान कवि कविता करते थे और जिससे आधुनिक उर्दू के विकास का घनिष्ठ संबंध है।

दक्ष—वि० [सं०√दक्ष् (शीघ्रता से करना)+अच्] [भाव० दक्षता] १. जिसमें कोई या सब काम तुरन्त, सहज में और सुन्दरतापूर्वक करने की योग्यता हो। कुशल। निपुण। होशियार। २. दाहिनी ओर का। दाहिना।

पुं० १. एक प्रजापति, जिनसे देवता उत्पन्न हुए हैं। २. विष्णु। ३. महादेव। शिव। ४. शिव की सवारी का बैल। नन्दी। ५. अत्रि ऋषि का एक नाम। ६. बल। शक्ति। ७. वीर्य। ८. कुक्कुट। मुरगा। ९. राजा उशीनर का एक पुत्र।

दक्ष-कन्या—स्त्री० [ष० त०] सती।

दक्षक्रतुध्वंसी (सिन्)—पुं० [सं०दक्ष-क्रतु, ष०त०,√ध्वंस् (नष्ट करना)+णिनि] १. दक्ष प्रजापति के यज्ञ का ध्वंस या नाश करनेवाले शिव। २. शिव के अंश से उत्पन्न वीरभद्र, जो शिव के उक्त कार्य में सहायक हुए थे।

दक्षता—स्त्री० [सं० दक्ष+तल्—टाप्] १. दक्ष होने की अवस्था, गुण या भाव। २. निपुणता।

दक्षता-अर्गल—पुं० दे० 'प्रगुणता अर्गल'।

दक्ष-दिशा—स्त्री० [मध्य० स०] दक्षिण की दिशा।

दक्ष-विहिता—स्त्री० [तृ० त०] एक प्रकार का गीत।

दक्ष-सावर्णि—पुं० [मध्य० स०] नवें मनु का नाम।

दक्षांड—पुं० [सं० दक्षा-अंड, ष० त०] मुर्गी का अंडा।

दक्षा—वि० स्त्री० [सं० दक्ष+टाप्] कुशला। निपुणा।

स्त्री० पृथ्वी।

दक्षाय्य—पुं० [सं०√दक्ष्+आय्य] १. गरुड़। २. गिद्ध पक्षी।

दक्षिण—वि० [सं०√दक्ष् (गति)+इनन्] १. दाहिना। 'बायाँ' का विपर्याय। २.उस ओर या दिशा का जिधर दाहिना हाथ पड़ता है, जब हम सूर्य की ओर मुँह करके खड़े होते हैं। ३. आचरण, व्यवहार में अनुकूल, कृपालु और प्रसन्न रहनेवाला। किसी प्रकार का अपकार, द्वेष या विरोध न करनेवाला। ४. दक्ष। निपुण। होशियार।

पुं० १. वह दिशा जो उस समय हमारे दाहिने हाथ की ओर पड़ती है, जब हम सूर्य की ओर मुँह करके खड़े होते हैं। २. साहित्य में, वह नायक जिसका प्रेम अपनी सभी प्रेमिकाओं के साथ एक-सा होता है। ३. तंत्र में, एक प्रकार का आचार या मार्ग जो वाममार्ग से बिलकुल भिन्न और विपरीत होता है। ४. विष्णु का एक नाम। ५. परिक्रमा। प्रदक्षिणा।

दक्षिण-गोल—पुं० [कर्म० स०] विषुवत् रेखा से दक्षिण पड़नेवाली ये छः राशियाँ—तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ और मीन।

दक्षिण-नायक—पुं० [कर्म० स०] साहित्य में, शृंगार रस का आलंबन वह नायक जो अनेक नायिकाओं से अनुराग का व्यवहार समान रूप से करता हो।

दक्षिण-प्रवण—पुं० [स० त०] वह स्थान, जो उत्तर की अपेक्षा दक्षिण की ओर अधिक नीचा या ढालुआँ हो। मनु के अनुसार श्राद्ध आदि के लिए ऐसा ही स्थान उपयुक्त होता है।

दक्षिण-मार्ग—पुं० [कर्म० स०] [वि० दक्षिणमार्गी] १. वैदिक धर्म या मार्ग, जिसके विपरीत होने के कारण तांत्रिक मत या धर्म 'वाममार्ग' कहलाता है। २. परवर्ती तांत्रिक मत के अनुसार एक प्रकार का आचार जो वैदिक वैष्णव और शैव मार्गों से निम्न कोटि का बताया गया है। ३. आधुनिक राजनीति में, वह मार्ग या पक्ष जो साधारण और वैधानिक रीति तथा शान्त उपायों से उन्नति तथा विकास चाहता हो और उग्र उपायों से क्रांति करने का विरोधी हो। (राइट विंग)

दक्षिणा—स्त्री० [सं० दक्षिण+टाप्] १. दक्षिण दिशा। २. वह धन, जो ब्राह्मणों को कर्मकांड, यज्ञ आदि कराने के बदले में अथवा दान देने, भोजन कराने आदि के उपरान्त या साथ दिया जाता है। ३. वह धन जो किसी के प्रति आदर-सम्मान प्रकट करने के लिए उसे भेंट किया जाता है। ४. लाक्षणिक रूप में, किसी को नकद दिया जानेवाला धन। ५. साहित्य में वह नायिका,जो नायक के दूसरी स्त्रियों के साथ संबंध करने पर भी उससे पूर्ववत् प्रेम रखती है और किसी प्रकार का द्वेष या रोष नहीं करती।

दक्षिणाग्नि—पुं० [दक्षिण-अग्नि, कर्म० स०] गार्हपत्य अग्नि के दक्षिण में रखी जानेवाली अग्नि।

दक्षिणाग्र—वि० [दक्षिण-अग्र, ब० स०] जिसका अग्रभाग दक्षिण की ओर हो।

दक्षिणाचल—पुं० [दक्षिण-अचल, मध्य० स०] मलयगिरि पर्वत।

दक्षिणाचार—पुं० [दक्षिण-आचार, कर्म० स०] १. अच्छा और शुद्ध आचरण। सदाचार। २. वाममार्ग का एक पंथ या शाखा जिसमें उपासक अपने आपको शिव मानकर पंच तत्त्वों से शिव की पूजा करता है।

दक्षिणाचारी (रिन्)—वि० [सं० दक्षिणाचार+इनि] १. दक्षिण अर्थात् अच्छे और शुद्ध मार्ग पर चलनेवाला। २. धर्मशील और सदाचारी।

दक्षिणा-पथ—पुं० [सं० दक्षिणा, दक्षिण+आच्, दक्षिणापथ, स० त०] १. दक्षिण दिशा की ओर जानेवाला पथ। २. दक्षिण भारत या उसमें के प्रदेश।

दक्षिणापरा—स्त्री० [दक्षिणा-अपरा, ब० स०] नैर्ऋत कोण।

दक्षिणाभिमुख—वि० [दक्षिणा-अभिमुख ब० स०] १. जिसका मुँह दक्षिण की ओर हो। २. जो दक्षिण की ओर उन्मुख हो।

दक्षिणा-मूर्ति—पुं० [ब० स०] तंत्र के अनुसार शिव की एक मूर्ति।

दक्षिणायन—वि० [दक्षिण-अयन ब० स०] १. जो दक्षिण की ओर हो। २. भू-मध्य रेखा से दक्षिण की ओर का। जैसे—दक्षिणायन सूर्य।
पुं० [स० त०] १. सूर्य की वह गति जो कर्क रेखा से दक्षिण और मकर रेखा की ओर होती है। २. वह छः महीनों का समय, जिसमें सूर्य की गति उक्त प्रकार की रहती है।

दक्षिणावर्त—वि० [सं० दक्षिणा+आ√वृत् (बरतना)+अच्, उप० स०] जिसका घुमाव, प्रकृति या मुँह दाहिनी दिशा की ओर को हो। जैसे—दक्षिणावर्त शंख।
पुं० एक प्रकार का शंख, जिसका घुमाव या मुँह (साधारण के विपरीत) दक्षिण या दाहिने हाथ की ओर होता है।

दक्षिणावर्तकी—स्त्री० [सं० दक्षिणावर्त्त√कै (शब्द करना)+क—ङीष्] वृश्चिकाली नाम का पौधा।

दक्षिणावह—पुं० [सं० दक्षिणा√वह् (बहना)+अच्] दक्षिण दिशा से आनेवाली वायु। दक्खिनी हवा।

दक्षिणाशा—स्त्री० [सं० दक्षिणा-आशा, कर्म० स०] दक्षिण दिशा।

दक्षिणाशा-पति—पुं० [ष० त०] १. यम, जो दक्षिण-दिशा के स्वामी माने गये हैं। २. मंगल ग्रह।

दक्षिणी—वि० [सं० दक्षिणीय] १. दक्षिण दिशा-संबंधी। २. दक्षिण प्रदेश में होनेवाला।
पुं० दक्षिण प्रदेश का निवासी।
स्त्री० भारत के दक्षिण प्रदेश की भाषा।

दक्षिणी-ध्रुव—पुं० [हिं० दक्षिणी+ध्रुव] पृथ्वी के गोले का दक्षिणी सिरा। कुमेरु। (साउथ पोल)

दक्षिणीय—वि० [सं० दक्षिण+छ—ईय] १. दक्षिण का। दक्षिण-संबंधी। २. दक्षिण देश का। ३. [दक्षिणा+छ-ईय] जिसे दक्षिणा दी जानी चाहिए अथवा दी जाने को हो।

दक्षिण्य—वि० [सं० दक्षिणा+यत्] =दक्षिणीय।

३—३

दक्षिन—पुं० =दक्षिण।

दक्षिनी—वि०, पुं०, स्त्री० =दक्षिणी।

दखन—पुं० =दकन।

दखनी—वि०, स्त्री० १.=दकनी। २.=दक्खिनी।

दखमा—पुं० [फा० दख्मः] पारसियों का कब्रिस्तान, जो गोलाकार खोखली इमारत के रूप में होता है और जिसमें कौओं, चीलों आदि के खाने के लिए शव फेंक दिये जाते हैं।

दखल—पुं० [अ० दख़्ल] १. प्रवेश। २. पैठ। पहुँच। ३. जानकारी। ४. अधिकार। जैसे—वह मकान आज-कल हमारे दखल में है। ५. अनधिकार-पूर्वक या अनुचित रूप से किया जानेवाला हस्तक्षेप। जैसे—तुम उनकी बातों में दखल मत दिया करो।

दखल-दिहानी—स्त्री० [अ० दख़्ल+फा० दिहानी] विधिक क्षेत्र में, अधिकारियों या शासन द्वारा ऐसी संपत्ति पर किसी को कब्जा दिलाना जिस पर किसी दूसरे का दखल चला आ रहा हो।

दखल-नामा—पुं० [अ० दखल+फा० नामः] वह पत्र जिसमें दखलदिहानी की आज्ञा लिखी हुई हो।

दखिन†—पुं० =दक्षिण।

दखिनहरा—पुं० [हिं० दखिन+हारा (प्रत्य०)] दक्षिण दिशा से आनेवाली हवा।

दखिनहा—वि० [हिं० दखिन+हा (प्रत्य०)] १. दक्षिण में होनेवाला। दक्षिण का। २. दक्षिण से आनेवाला।

दखिना—पुं० [हिं० दखिन+आ (प्रत्य०)] दक्षिण से आनेवाली हवा।
†स्त्री० =दक्षिणा। (पश्चिम)

दखील—वि० [अ० दख़ील] १. जो दखल देता हो। हस्तक्षेप करनेवाला। २. जिसकी कहीं पहुँच हो। ३. जिसने कहीं या किसी चीज पर दखल या कब्जा कर रखा हो। काबिज।

दखीलकार—पुं० [अ० दखील+फा० कार] वह असामी, जो पिछले बारह वर्षों अथवा उससे अधिक समय से जमींदार का खेत जोत-बो रहा हो और इस प्रकार जिसे सदा के लिए वह खेत जोतने-बोने का अधिकार मिल गया हो। (आकुपेन्सी टेनेन्ट)

दखीलकारी—स्त्री० [अ० दखील+फा० कारी] १. दखीलकार होने की अवस्था, पद या भाव। २. वह जमीन, जिस पर दखीलकार का अधिकार हो।

दगइल—वि० १.=दगैल। २.=दगाई।

दगड़—पुं० [?] १. लड़ाई में बजाया जानेवाला बड़ा ढोल। जंगी ढोल। (राज०) २. पत्थर। (मराठी)

दगड़ना—अ० [हिं० दगड़] १. दगड़ बजाना। २. सच्ची बात पर विश्वास करना।

दगदगा—पुं० [अ० दग़दग़ः] १. डर। भय। २. कोई अप्रिय घटना या बात होने की आशंका। खटका। ३. पुरानी चाल की एक प्रकार की कंडील।

दगदगाना—अ० [भाव० दगदगाहट] =चमकना।
स० =चमकाना।

दगदगी—स्त्री० =दगदगा।

दगध†—वि० =दग्ध।

†पुं०=दाह।

दगधना—स०[सं० दग्ध+हिं० ना (प्रत्य०)] १. दग्ध करना। जलाना। २. बहुत अधिक दुःखी या सन्तप्त करना। दाहना।

अ० १. जलना। २. दुःखी या संतप्त होना।

दगना—अ०[सं० दग्ध+ना (प्रत्य०)] १. दाग, चिह्न आदि से दागा जाना या अंकित होना। २. गरम लोहे, तेजाब, दवा आदि से किसी अंग का इस प्रकार जलाया जाना कि उस पर दाग पड़ जाय। ३. झुलस जाना। ४. (तोप, बंदूक आदि के संबंध में) दागा, चलाया या छोड़ा जाना। ५. दाग या कलंक से युक्त होना। कलंकित होना। ६. किसी नये या विशिष्ट नाम से प्रसिद्ध होना। उदा०—लोक बेदहूँ लौ दगौ नाम भले को पोच।—तुलसी।

†स०=दागना।

दगर—पुं० =दगरा।

दगरा—पुं० [?] देर। विलंब।

†पुं० = डगर (रास्ता)।

दगरी—स्त्री० [?] ऐसा दही जिस पर मलाई न जमी या लगी हुई हो।

दगल—पुं० [अ० दग़ल] फरेब। धोखा। छल। उदा०—पहिरहु राता दगल सोहावा।—जायसी।

पुं० [?] रूईदार ढीला अँगरखा।

दगलना—अ० [अ० दग़ल] छल करना। धोखा देना।

दगल-फसल—पुं० [अ० दग़ल+अनु० फसल या हिं० फँसाना] कपट। छल। धोखा। फरेब।

दगला—पुं० [?] [स्त्री० अल्पा० दगली] रूईदार ढीला-ढाला अंगरखा। दगल। उदा०—वाह वाह मियाँ बाँके, तेरे दगले में सौ सौ टाँके।—कहा०।

दगवाना—स० [हिं० दागना का प्रे०] दागने का काम किसी से कराना। (दागना के सभी अर्थों में)

दगहा—वि० [हिं० दगना+हा (प्रत्य०) अथवा सं० दग्ध] १. जिसमें दाग हों। दागवाला। २. (पशु) जो किसी उद्देश्य से दग्ध किया या दागा गया हो। जैसे—दगहा घोड़ा, दगहा साँड़। ३.(व्यक्ति) जिसके शरीर पर कोढ़ के सफेद दाग हों।

वि० [हिं० दाह=प्रेतकर्म+हा (प्रत्य०)] (व्यक्ति) जिसने अभी हाल में किसी मृतक का दाह-संस्कार किया हो और जो अभी तक अशौच में हो।

दगा—पुं० [अ० दग़ा] १. छल। कपट। धोखा। २. विश्वासघात। क्रि० प्र०—देना।

पद—दगाबाज, दगादार आदि।

दगाई—स्त्री० [हिं० दागना] १. दागने की क्रिया, भाव या मजदूरी। २. दागे जाने का चिह्न।

वि० [अ० दग़ा] दगा देनेवाला।

*स्त्री० = दगा।

दगादार—वि० [अ० दग़ा+फा० दार] दगा देनेवाला। धोखेबाज।

दगाबाज—वि० [फा० दग़ाबाज़] [भाव० दग़ाबाजी] दगा देनेवाला। धोखेबाज।

दगाबाजी—स्त्री० [फा० दग़ाबाजी] १. दगाबाज होने की अवस्था या भाव। २. दगा देने की क्रिया या भाव। ३. कोई ऐसा कार्य जो किसी को धोखा देने के लिए किया गया हो।

दगार्गल—पुं० [सं० दकार्गल (पृषो० सिद्धि)] एक प्राचीन विद्या, जिसके अनुसार भूमि के ऊपरी लक्षण देखकर यह बतलाया जाता था कि इसके नीचे जल है या नहीं।

दगैल—वि० [अ० दाग़+हिं० एल (प्रत्य०)] १. जिसमें किसी प्रकार के दाग या धब्बे हों। २. जो किसी रूप में दग्ध करके अंकित या चिह्नित किया गया हो। ३. जिसमें कोई दाग लगा हो। दूषित। कलंकित। ४. जो कारागार का दंड भोग चुका हो।

†वि० = दगाबाज।

दग्ध—वि० [सं० दह (जलाना)+क्त] १. जला या जलाया हुआ। २. जिसके शरीर पर दागे जाने का कोई चिह्न हो। ३. जिसे बहुत अधिक मानसिक कष्ट या संताप हुआ हो। परम दुःखी और संतप्त। ४. अशुभ।

दग्ध-काक—पुं० [कर्म० स०] डोम कौवा।

दग्ध-मंत्र—पुं० [कर्म० स०] तंत्र के अनुसार वह मंत्र जिसके मूर्द्धा प्रदेश में वह्नि और वायु-युक्त वर्ण हों।

दग्ध-रथ—पुं० [ब० स०] इंद्र का सारथी चित्ररथ गंधर्व।

दग्ध-रुह—पुं० [सं० दग्ध+√रुह् (उगना)+क] तिलक वृक्ष।

दग्ध-रुहा—स्त्री० [सं० दग्धरुह+टाप्] कुरु नामक वृक्ष।

दग्धा—स्त्री० [सं० दग्ध+टाप्] १. सूर्य के अस्त होने की दिशा। पश्चिम दिशा। २. कुरु नामक वृक्ष। ३. ज्योतिष में कुछ विशिष्ट राशियों से युक्त होने पर कुछ विशिष्ट तिथियों की संज्ञा।

वि०, पुं० [सं०√दह् (जलाना)+तृच्] जलानेवाला।

दग्धाक्षर—पुं० [सं० दग्ध-अक्षर, कर्म० स०] पिंगल के अनुसार झ, ह, र, भ और ष ये पाँचों अक्षर, जिनका छंद के आरंभ में रखना वर्जित है।

दग्धाह्व—पुं० [सं० दग्ध-आह्वा, ब० स०] एक तरह का वृक्ष।

दग्धिका—स्त्री० [सं० दग्धा+कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व]=दग्धा।

दग्धित*—वि० =दग्ध।

दग्धेष्टका—स्त्री० [सं० दग्धा-इष्टका, कर्म० स०] झाँवाँ।

दचक—स्त्री० [हिं० दचकना,] १. दचकने की क्रिया या भाव। २. झटके या दबाव से लगी हुई चोट। ३. धक्का। ठोकर। ४. दबाव।

दचकना—अ० [अनु०] [भाव० दचक, दचकन] १. ठोकर या धक्का खाना। २. झटका खाना। ३. भार के नीचे पड़कर इस प्रकार दबना कि ऊपरी अंश कुछ कट या फट जाय।

स० १. ठोकर या धक्का लगाना। २. झटका देना। ३. इस प्रकार दबाना कि ऊपरी अंश कुछ क्षत-विक्षत हो जाय।

दचका—पुं० दे० 'दचक'।

दचना—अ० [देश०] एकाएक ऊपर से नीचे आ पड़ना। गिरना। अ०, स०=दचकना।

दच्छ—वि०, पुं० = दक्ष।

दच्छकुमारी—स्त्री० =दक्षकुमारी (सती)।

दच्छना—स्त्री० =दक्षिणा।

दच्छसुता—स्त्री० [सं० दक्ष+सुता] दक्ष की कन्या, सती।

दच्छिन—वि० =दक्षिण।

दज्जाल—वि० [अ०] बहुत बड़ा धोखेबाज या धूर्त।
पुं० मुसलमानों के मतानुसार वह व्यक्ति जो कयामत से पहले जन्म लेगा और खुदा होने का झूठा दावा करेगा।

दज्झना†—अ० [सं० दहन] १. दहन होना। जलना। २. बहुत अधिक दुःखी या संतप्त होना।
स० १. दहन करना। जलाना। २. बहुत अधिक दुःखी या संतप्त करना।

दड़घल—पुं० [सं० दण्डोत्पल] सहदेई नामक पौधा।

दड़बा†—पुं० =दरबा।

दड़ोकना—अ० [अनु०] दहाड़ना। गरजना।

दड़ोबड़†—अव्य० =धड़ाधड़।

दढ़ना*—अ० [सं० दग्ध] जलना। उदा०—भई देह जो खेह करम बस ज्यों तट गंगा अनल दढ़ी।—सूर।
स० =दढ़ाना।

दढ़ाना—स० [हिं० दढ़ना] जलाना।

दढ़ियल—वि० [हिं० दाढ़ी+इयल (प्रत्य०)] (व्यक्ति) जिसे दाढ़ी हो। दाढ़ीवाला।

दढ्ढ*—वि० [सं० दग्ध] दग्ध। जला हुआ।

दणियर—पुं० [सं० दिनमणि] सूर्य। (डिं०)

दतना†—अ० [सं० दत्तचित्त] १. किसी काम में दत्तचित्त होकर लगना। २. मग्न या लीन होना।
† अ० = डटना।

दतवन—स्त्री० =दातुन।

दतारा—वि० =दँतार।

दतिसुत—पुं० [सं० दितिसुत] दैत्य। राक्षस। (डिं०)

दतुअन— स्त्री० = दातुन।

दतुवन†—स्त्री० =दातुन।

दतून—स्त्री० =दातुन।

दतौन—स्त्री० =दातुन।

दत्त—वि० [सं०√दा (देना)+क्त] [स्त्री० दत्ता] १. जो किसी को दिया जा चुका हो। २. जिसका कर, देन, परिव्यय आदि चुकता कर दिया गया हो। (पेड)
पुं० १. दान। २. चंदे, सहायता आदि के रूप में किसी संस्था को दी जानेवाली रकम। (डोनेशन) ३. दत्तक संतान। ४. दतात्रेय। ५. जैनों के नौ वासुदेवों में से एक।

दत्तक—पुं० [सं० दत्त+कन् (स्वार्थे)] संतान न होने पर दूसरे कुल और परिवार का वह लड़का जो विधिवत् गोद लेकर अपना पुत्र बनाया गया हो। मुतबन्ना। (एडाप्टेड सन)
विशेष—ऐसा पुत्र धर्म और विधि (या कानून) दोनों के अनुसार हर तरह से औरस या स्वजात पुत्र के समान माना जाता है।

दत्तक-ग्रहण—पुं० [सं० ष० त०] किसी लड़के को अपना दत्तक पुत्र या मुतबन्ना बनाने की क्रिया या विधान। (एडाप्शन)

दत्तक-ग्राही—वि० [सं० दत्तक-ग्राहिन्] जो किसी दूसरे के लड़के को अपना दत्तक पुत्र बनावे।

दत्त-चित्त—वि० [ब० स०] जो किसी कार्य के संपादन में मनोयोगपूर्वक लगा हुआ हो। जो किसी काम में पूरा मन लगा रहा हो।

दत्ततीर्थकृत—पुं० [सं०] गत उत्सर्पिणी के आठवें अर्हत। (जैन)

दत्तस्यानपा कर्म—पुं० [सं० व्यस्त पद] दी हुई चीज फिर वापस ले लेना।

दत्ता—पुं० =दत्तात्रेय।

दत्तात्मा (त्मन्)—पुं० [सं० दत्त-आत्मन्, ब० स०] वह अनाथ अथवा माता-पिता द्वारा त्यक्त बालक जो स्वयं किसी के पास जाकर उसका दत्तक बने। स्वयं अपने आपको किसी का दत्तक पुत्र बनानेवाला बालक या व्यक्ति।

दत्तात्रेय—पुं० [सं० दत्त-आत्रेय, कर्म० स०] अत्रि मुनि और अनुसूया के पुत्र अवधूत-वेषधारी महात्मा जिनकी गिनती २४ अवतारों में होती है।

दत्ताप्रदानिक—पुं० [सं० दत्त-अप्रदान, ष० त०+ठन्—इक] दान किये हुए किसी पदार्थ को अन्यायपूर्वक फिर से प्राप्त करने का प्रयत्न जो व्यवहार में अठारह प्रकार के विवाद-पदों में से पाँचवाँ विवाद पद माना गया है।

दत्तावधान—वि० [सं० दत्त-अवधान, ब० स०] १. किसी ओर अवधान या ध्यान देनेवाला। २. सावधान।

दत्ति—स्त्री० [सं० द०+क्तिन्] दान।

दत्ती—स्त्री० [?] विवाह-संबंध या सगाई पक्की होना।

दत्तेय—पुं० [सं० दत्ता+ढक्-एय)] इंद्र।

दत्तोपनिषद्—पुं० [सं० दत्त-उपनिषद्, मध्य० स०] एक उपनिषद् का नाम।

दत्तोलि—पुं० [सं०] पुलस्त्य मुनि का एक नाम।

दत्र—पुं० [सं०√दा+कत्रन् (बा०)] १. धन। २. सोना। ३. दान।

दत्रिम—पुं० [सं०√दा+क्त्रि (मप्)] दत्तक पुत्र।

ददन—पुं० [सं०√दद् (दान)+ल्युट्—अन] कुछ देने अथवा दान देने की क्रिया या भाव। देना।

ददमर—पुं० [सं०] एक प्रकार का वृक्ष।

ददरा†—पुं० [देश०] [स्त्री० ददरी] वह महीन कपड़ा जिससे बारीक पीसा हुआ चूर्ण छाना जाता है।

ददा†—पुं० = दादा।

ददिऔर (ा)†—पुं० =ददिहाल।

ददिता (तृ)—वि० [सं०√दद्+तृच्] देनेवाला। दाता।

ददियाल—पुं०=ददिहाल।

ददिया ससुर—पुं० [हिं० दादा+ससुर] जो संबंध में ससुर का बाप हो।

ददिया सास—स्त्री० [हिं० दादी+सास] जो संबंध में सास की सास हो।

ददिहाल—पुं० [हिं० दादा+सं० आलय] १. वह घर, नगर या प्रदेश जिसमें दादा अथवा उसके पूर्वज या वंशज रहते चले आये हों अथवा रह रहे हों। २. दादा का कुल या वंश।

ददोड़ा—पुं० = ददोरा।

ददोरा—पुं० [हिं० दाद] १. त्वचा में होनेवाला एक प्रकार का विकार जिसमें उसका कोई अंश सूजकर लाल हो जाता है। चकत्ता

उदा०—हँसी करति औषधि सखिनु देह ददोरनु भूलि।—बिहारी। २. मच्छर, बर्रें आदि के काटने पर बननेवाला उक्त प्रकार का चकत्ता। क्रि० प्र०—पड़ना।

ददौरा† पुं० =ददोरा।

दद्रु—पुं० [सं०√दद्+रु (ब०)] १. दाद नामक चर्म रोग। २. कछुआ।

दद्रुक—पुं० [सं० दद्रु+कन्] दद्रु। (दे०)

दद्रुघ्न—पुं० [सं० दद्रु√हन् (मारना)+टक्] चकवँड़। चकमर्दा।

दद्रुण—वि० [सं० दद्रु+न] जिसको दाद निकली हुई हो। दाद रोग से पीड़ित।

दद्रू—पुं० [सं० दरिद्रा+उ (नि० सिद्धि)] दाद नामक रोग।

दद्रूण—वि० =दद्रुण।

दध*—पुं० =दधि।

दधना*—अ० [सं० दग्ध] जलना। स० जलाना।

दधसार*—पुं० =दधिसार।

दधि—पुं० [सं०√धा (धारण करना)+कि (द्वित्व)] १. दही। २. वस्त्र। कपड़ा।

†पुं० [सं० उदधि] १. समुद्र। २. छोटा दह या तालाब। उदा०—और रबि होहु कँवल दधि माहाँ—जायसी।

दधि-काँदों—पुं० [सं० दधि+हिं० काँदों=कीचड़] जन्माष्टमी के अवसर पर होनेवाला एक उत्सव जिसमें हल्दी मिला हुआ दही एक दूसरे पर फेंका जाता है। (कृष्ण-जन्म के अवसर पर आमोद-सूचक)

दधि-कूर्चिका—स्त्री० [मध्य० स०] फटे या फाड़े हुए दूध का सार भाग। छेना।

दधिचार—पुं० [सं० दधि√चर् (चलना)+णिच्+अण्] मथानी जिससे मथने के समय दही चलाया जाता है।

दधिज—वि० [सं० दधि√जन् (पैदा होना)+ड] दही से उत्पन्न। पुं० मक्खन।

दधि-जात—वि० पुं० [पं० त०] दधि या दही से उत्पन्न या बना हुआ। *पुं० [सं० उदधि+जात] चंद्रमा।

दधित्थ—पुं० [सं० दधि√स्था (ठहरना)+क, पृषो० सिद्धि] कैथ।

दधित्थाख्य—पुं० [सं० दधित्थ-आ√ख्या (कहना)+क] लोबान।

दधिधेनु—स्त्री० [मध्य० स०] पुराणानुसार दान के लिए कल्पित गौ जिसकी कल्पना दही के मटके में की जाती है।

दधि-नामा (मन्)—पुं० [सं० ब० स०] कैथ का पेड़।

दधि-पुष्पिका—स्त्री० [ब० स०, कप्+टाप्, इत्व)] सफेद अपराजिता का वृक्ष।

दधि-पुष्पी—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] सेम।

दधि-पूप—पुं० [मध्य० स०] साठी के चावल के चूर्ण को दही में मिलाकर और घी में तलकर बनाया जानेवाला एक तरह का पकवान।

दधि-फल—पुं० [ब० स०] कैथ।

दधि-बरी†—स्त्री० [सं०+हिं०] दही में डाली हुई बरी या पकौड़ी।

दधि-मंड—पुं० [ष० त०] दही का पानी।

दधि-मंडोद—पुं० [दधिमंड-उदक, ब० स०, उद—आदेश] दही का समुद्र। (पुराण)

दधि-मुख—पुं० [ब० स०] सुग्रीव का मामा जो मधुबन का रक्षक था।

दधियार—पुं० [देश०] अर्कपुष्पी। अंधाहुली।

दधिषाय्य—पुं० [सं० दधि√सो (नाश करना)+आय्य पत्व] घी।

दधि-सागर—पुं० [ष० त०] दही का समुद्र। (पुराण)

दधिसार—पुं० [ष० त०] मक्खन।

दधि-सुत—पुं० [ष० त०] मक्खन। नवनीत।
* पुं० [सं० उदधि-सुत] १. कमल। २. मोती। ३. जहर। विष। ४. चन्द्रमा। ५. जालंधर नामक दैत्य।

दधि-सुता—स्त्री० [सं० उदधि-सुता] १. लक्ष्मी। २. सीपी।

दधि-स्नेह—पुं० [ष० त०] दही की मलाई।

दधि-स्वेद—पुं० [ष० त०] छाछ। मठा।

दधीच—पुं० [सं० दध्यञ्च्] =दधीचि।

दधीचि—पुं० [सं० दध्यञ्च्] एक प्रसिद्ध वैदिक ऋषि जो परोपकार और उदारता के लिए प्रसिद्ध हैं। इन्होंने इन्द्र के माँगने पर अपनी हड्डियाँ इसलिए उन्हें दे दी थीं जिनसे वे अस्त्र बनाकर वृत्रासुर को मार सकें।

दधीच्यस्थि—पुं० [सं० दधीचि-अस्थि, ष० त०] १. वज्र। २. हीरा। हीरक।

दध्न—पुं० [सं०√दध् (दान)+न (बा०)] चौदह यमों में से एक यम।

दध्यानी—पुं० [सं० दधि-आ√नी (लेजाना)+क्विप्] सुदर्शन वृक्ष।

दध्युत्तर—पुं० [सं० दधि-उत्तर, ष० त०] दही की मलाई।

दन—पुं० [सं० दिन] दिन। (डिं०)
पुं० [अनु०] बंदूक, तोप आदि चलने से होनेवाला शब्द।
पद—दन से=चट-पट। तुरंत। जैसे—दन से यह काम कर डालो।

दनकर—पुं० [सं० दिनकर] सूर्य। (डिं०)

दनगा—पुं० [देश०] खेत का छोटा टुकड़ा।

दनदनाना—अ० [अनु०] १. दन दन शब्द होना। २. खुशी मनाना। आनंद करना।
स० दन-दन शब्द उत्पन्न करना।

दनमणि—पुं० [सं० दिनमणि] सूर्य। (डिं०)

दनादन—अव्य० [अनु०] १. दन-दन शब्द करते हुए। २. निरंतर। लगातार। ३. चटपट। तुरंत।

दनियाँ†—वि०=दानी। उदा०—अंग अंग सुभग सकल सुख दनियाँ।—सूर।

दनु—स्त्री० [सं०√दा (दान)+नु (नि० सिद्धि)] दक्ष की एक कन्या जो कश्यप की पत्नी थी तथा जिसके गर्भ से चालीस पुत्र उत्पन्न हुए थे, जो सब के सब दनुज या दानव कहलाये।

दनुज—वि० [सं० दनु√जन् (उत्पन्न होना)+ड] दनु के गर्भ से उत्पन्न। पुं० दानव। राक्षस।

दनुज दलनी—स्त्री० [ष० त०] दुर्गा।

दनुजराय—पुं० [सं० दनुज+हिं० राय] दनुजों अर्थात् राक्षसों का राजा हिरण्यकश्यप।

दनुजारि—पुं० [दनुज-अरि, ष० त०] दानवों के शत्रु, देवता।

दनुजेंद्र—पुं॰ [दनुज-इंद्र, ष॰ त॰] दानवों का राजा रावण।

दनुसम्भव—पुं॰ [ष॰ त॰] दनु से उत्पन्न, दानव।

दनू-—स्त्री॰ [सं॰ दनु+ऊङ॰] =दनु।

दन्न—पुं॰ [अनु॰] =दन (शब्द)। (दे॰)

दपट—स्त्री॰ = डपट।

दपटना—अ॰ =डपटना।

दपु*—पुं॰ =दर्प।

दपेट—स्त्री॰ = डपट।

दपेटना—अ॰ = डपटना।

दप्प*—पुं॰ = दर्प।

दफ—स्त्री॰ [फा॰ दफ़] बड़ी डफली।

दफतर—पुं॰ = दफ्तर।

दफतरी—पुं॰ = दफ्तरी।

दफतरी खाना—पुं॰ =दफ्तरी खाना।

दफती—स्त्री॰ =दफ्ती।

दफदर†—पुं॰ = दफ्तर।

दफन—पुं॰ [अ॰ दफ़्न] १. किसी चीज को जमीन में गाड़ने की क्रिया या भाव। २. मृत शरीर को बनाए हुए गढ़े में रखकर उसे मिट्टी से तोपने की क्रिया।

वि॰ १. जमीन के नीचे गाड़ा हुआ। २. कब्र के अन्दर रखा या गाड़ा हुआ।

दफनाना—स॰ [अ॰ दफ़्न+हिं॰ आना (प्रत्य॰)] १. मृत शरीर को कब्र में रखकर उसे मिट्टी से ढकना। २. जान-बूझकर कोई बात इस प्रकार दबाना जिससे वह दूसरों पर प्रकट न हो सके।

दफरा—पुं॰ [देश॰] काठ का वह टुकड़ा जो नाव के दोनों ओर इसलिए लगा दिया जाता है कि किसी दूसरी नाव की टक्कर से उसका कोई अंग टूट न जाय। हौंस। (लश॰)

दफराना—स॰ [देश॰] १. किसी नाव को किसी दूसरी नाव के साथ टक्कर लगने से बचाना। २. (पाल) खड़ा करना। (लश॰) ३. रक्षा करना। बचाना।

दफा—स्त्री॰ [अ॰ दफ़ऽ] १. क्रम, संख्या आदि के विचार से किसी परम्परा में का वह अवसर या काल जिसमें कोई ऐसा काम या बात हुई हो जिसकी फिर भी आवृत्ति हो या होने को हो। बार। बेर। जैसे—(क) वे दिन में तीन दफा भोजन करते हैं। (ख) आज कलकत्ते में पुलिस ने चार दफा भीड़ पर गोली चलाई। २. बिना किसी क्रम, परम्परा या शृंखला के विचार से, वह अवसर या काल जिसमें कोई विशिष्ट तथा स्वतंत्र घटना घटित हुई हो या होने को हो। बार। बेर। जैसे—(क) एक दफा की बात है कि हम लोग मसूरी गये थे। (ख) एक दफा तो मैं भी उन्हें यहाँ बुलाकर समझाना चाहता हूँ। ३. विधिक क्षेत्र में, किसी कानून, विधान, विधि आदि का वह कोई ऐसा पूरा तथा स्वतंत्र अंश या खंड जिसमें किसी एक विषय की सब आवश्यक बातें कही या लिखी हों। धारा। जैसे—इस कानून की ७वीं दफा गवाहों की पात्रता या योग्यता (अथवा लगान चुकाने के प्रकार) से संबद्ध है। ४. साधारण लोक-व्यवहार में दंड-विधि का उक्त प्रकार का वह अंश या खंड जिसमें किसी विशिष्ट अपराध और उसके लिए नियत दंड का उल्लेख या विवेचन होता है। धारा। जैसे—(क) आज-कल शहर में १४४ वीं दफा लगी हुई है। (ख) पुलिस ने उन पर दफा १०९ का मुकदमा चलाया है।

मुहा॰—(किसी पर कोई) दफा लगाना=अभियुक्त के संबंध में यह कहना कि इसने अमुक दफा से सम्बद्ध अपराध किया है। जैसे—उस पर चोरी की नहीं; बल्कि डकैती की दफा लगाई गई है।

वि॰ [अ॰ दफ़अ] तिरस्कारपूर्वक दूर किया या हटाया हुआ। जैसे—इस पाजी को तो किसी तरह यहाँ से दफा करना चाहिए।

पद—दफा दफान करना=(क) किसी व्यक्ति को तिरस्कृत करके दूर करना या हटाना। (ख) किसी बात या विषय का उपेक्षापूर्वक अंत या समाप्ति करना। रफा दफा। (देखें स्वतंत्र पद)।

दफादार—पुं॰ [अ॰ दफ़अ+फा॰ दार] [भाव॰ दफादारी] पुलिस या सेना का एक छोटा अधिकारी।

दफादारी—स्त्री॰ [हिं॰ दफादार+ई (प्रत्य॰)] दफादार का काम या पद।

दफाली—पुं॰ = डफाली।

स्त्री॰ = डफली।

दफीना—पुं॰ [अ॰ दफ़ीनः] जमीन में गड़ा हुआ धन का खजाना या निधि।

दफ्तर—पुं॰ [फा॰ दफ़्तर] १. वे सब कागज-पत्र जिनमें आय-व्यय के विवरण अथवा काम-काज के विवरण आदि लिखे हों। २. बहुत लंबी-चौड़ी चिट्ठी या पत्र जिसमें कोई विस्तृत विवरण हो। ३. वह स्थान जहाँ बैठकर कुछ लोग लिखने-पढ़ने या हिसाब-किताब रखने का काम करते हों। कार्यालय। (आफ़िस)

दफ्तरी—पुं॰ [फा॰दफ़्तरी] १. किसी दफ्तर या कार्यालय का वह कर्मचारी जो कागज आदि ठीक तरह से रखने, संभालने आदि का काम करता हो। २. वह कारीगर जो पुस्तकों आदि की जिल्द बाँधता या प्रतियाँ बनाकर तैयार करता हो।

दफ्तरी खाना—पुं॰ [फा॰ दफ़्तरी+ख़ानः] वह स्थान जहाँ दफ्तरी लोग बैठकर पुस्तकों की जिल्दें बाँधते या प्रतियाँ तैयार करते हों।

दफ्ती—स्त्री॰ [अ॰ दफ्तीन] एक तरह का बहुत मोटा, कड़ा और प्रायः रूखा कागज जो जिल्द बाँधने आदि के काम आता है।

दबंग—वि॰ [हिं॰ दबाव या दबाना] १. जो बिना भयभीत हुए विशेषतः अधिमूलक अथवा विरोध-सूचक कोई काम करता हो। बिना किसी से दबे हुए और दृढ़तापूर्वक सब काम करनेवाला। २. प्रभावशाली।

दबक—स्त्री॰ [हिं॰ दबकना] १. दबकने या छिपने की क्रिया या भाव। २. सिकुड़न। शिकन। ३. लंबा तार या पत्तर बनाने के लिए धातुओं को पीटने की क्रिया।

दबकगर—पुं॰ [फा॰ तबकगर] तबक अर्थात् धातु को पीटकर उसके पत्तर बनानेवाला कारीगर।

दबकना—अ॰ [हिं॰ दबना] १. भय के कारण किसी के सामने से हट और छिप जाना। दुबकना। २. लुकना। छिपना।

क्रि॰ प्र॰—जाना।—रहना।

स॰ धातु का पत्तर पीटकर चौड़ा करना।

दबकनी—स्त्री० [हिं० दबना] भाथी का मुँह जिसके द्वारा हवा उसके अंदर आती है।

दबका—पुं० [हिं० दबकाना=तार आदि पीटना] कामदानी का सुनहला या रुपहला चिपटा तार।

पद—दबके का सलमा=एक प्रकार का सलमा जो बहुत चमकीला होता है।

† पुं० = दबदबा।

दबकाना—स० [हिं० दबकना] १. छिपाना। लुकाना। २. आड़ में करना।

दबकिया†—पुं० = दबकगर।

दबकी—स्त्री० [देश०] सुराही की तरह का मिट्टी का एक बरतन जिसमें पानी रखकर खेतिहर आदि खेत पर ले जाते हैं।

† स्त्री० [हिं० दबकना] १. दबकने की क्रिया या भाव। २. धातु पीटकर तार, पत्तर आदि बनाने की क्रिया या मजदूरी।

दबकैया†—पुं० = दबकगर।

वि० १. दबकने या छिपनेवाला। २. दबकाने या छिपानेवाला।

दबगर—पुं० [देश०] १. ढाल बनानेवाला। २. चमड़े के कुप्पे बनानेवाला।

दबड़ू-घुसड़ू—वि० [हिं० दबाना+घुसाना] हर बात में दबकर कहीं घुस या छिप जानेवाला। बहुत बड़ा कायर या डरपोक।

दब-दबा—पुं० [अ० दब्दबः] किसी व्यक्ति के संबंध की वह महत्त्वपूर्ण स्थिति जिसमें उसके अधिकार, प्रभाव तथा भय से सब लोग सहमते हों और उसके विरुद्ध कुछ कर या कह न सकते हों। रोब।

दबन—स्त्री० [हिं० दबना] दबने की क्रिया, अवस्था या भाव।

दबना—अ० [सं० दमन] [भाव० दबाव, दाब] १. किसी प्रकार के भार के नीचे आ या पड़कर ऐसी स्थिति में होना कि या तो इधर-उधर न हो सके या कुछ क्षति-ग्रस्त हो। जैसे—(क) संदूक के नीचे किताब या कपड़ा दबना। (ख) पत्थर के नीचे उँगली या हाथ दबना। २. ऐसी अवस्था में पड़ना या होना जिसमें किसी ओर से बहुत जोर या दबाव पड़े। दाब में आना। जैसे—भीड़ में बहुत से लोग दब गये। ३. ऐसी संकटपूर्ण स्थिति में आना या होना कि इच्छानुसार कोई या यथेष्ट गति-विधि न हो सके। जैसे—आज-कल मँहगी से सब लोग बे-तरह दबे हुए हैं। ४. किसी चीज का ऐसी स्थिति में पड़ या पहुँच जाना कि जल्दी वहाँ से निकल न सके। जैसे—उनके यहाँ हमारे बहुत-से कपड़े या किताबें दब गई। ५. किसी के उत्कृष्ट गुण, प्रभाव, शक्ति आदि की बराबरी या सामना करने में असमर्थ होने के कारण उसकी तुलना में ठहर न सकना अथवा अपनी इच्छा के अनुसार अपने अधिकार का प्रयोग या ऐसा ही और कोई कार्य न कर सकना। जैसे—(क) जब से ये नये अध्यापक आये हैं, तब से कई पुराने अध्यापक दब गये हैं। (ख) बड़ों के सामने छोटों को दबना ही पड़ता है। ६. किसी अच्छी चीज के सामने उस वर्ग की दूसरी साधारण चीज का अपनी शोभा या सौन्दर्य दिखाने अथवा देखनेवालों पर प्रभाव डालने में असमर्थ होना। अच्छा या ठीक न जँचना। जैसे—इस नये मकान के आगे मुहल्ले के पुराने मकान दब गये हैं। ७. किसी चीज या बात का विशेष कारणवश अधिक फैल या बढ़ न सकना और धीमा या मंद पड़ना। जैसे—रोग का प्रकोप दबना। ८. किसी मनोविकार या मनोवेग का मंद, मद्धिम या शान्त होना। कम होना। घटना। जैसे—क्रोध या वैर-विरोध दबना। ९. अधिक समय बीत जाने के कारण किसी बात का पहलेवाला प्रबल रूप न रह जाना या लोगों के ध्यान से उतर जाना। जैसे—दबी हुई बात फिर से नहीं उठानी चाहिए। १०. किसी बात का अपनी प्रकृत या साधारण अवस्था या मान से कुछ कम, रुका हुआ या हलका होना। जैसे—आमदनी कम होने (या नौकरी छूट जाने) के कारण किसी का हाथ दबना।

मुहा०—दबी आवाज (या जबान) से कोई बात कहना=ऐसे अस्पष्ट या मंद रूप में कहना जिसमें यथेष्ट दृढ़ता, शक्ति, साहस आदि का अभाव दिखाई देता हो। **दबे-दबाये पड़े रहना**=भय, लज्जा, संकोच आदि के कारण क्रिया-शीलता से रहित होकर या शांत भाव से अपने स्थान पर पड़े या बने रहना। **दबे पाँव या पैर (चलना)**=इस प्रकार धीरे-धीरे पैर रखते हुए चलना कि दूसरों को आहट न मिले या किसी प्रकार का शब्द न होने पावे।

दबमो—पुं० [देश०] एक प्रकार का बकरा जो हिमालय में होता है।

दबवाना—स० [हिं० दबना का प्रे०] किसी को कुछ दबाने में प्रवृत्त करना। जैसे—टाँगे दबवाना।

दबस—पुं० [?] जहाज पर की रसद तथा दूसरा सामान। जहाजी गोदाम में का माल।

दबाई—स्त्री० [हिं० दबाना] १. दबाने की क्रिया, भाव या मजदूरी। २. अनाज निकालने के लिए बालों या डंठलों को बैलों के पैरों से रौंदवाने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

दबाऊ—वि० [हिं० दबाना] १. दबानेवाला। २. (गाड़ी आदि) जिसका अगला हिस्सा पिछले हिस्से की अपेक्षा अधिक बोझिल हो।

दबाना—स० [हिं० दबना का स०] [भाव० दबाव, दाब] १. ऐसा काम करना जिसमें कुछ या कोई दबे। २. किसी के ऊपर कोई भार रखकर उसे ऐसी स्थिति में लाना कि वह कुछ क्षतिग्रस्त हो जाय अथवा हिल-डुल न सके। जैसे—सब कपड़े या कागज दबाकर रख दो जिससे हवा से उड़ या बिखर न जायँ। ३. किसी चीज पर कोई भार डाल या रखकर ऐसी स्थिति में लाना कि उसका ऊपरी तल अथवा सब अंग बहुत नीचे जायँ। जैसे—गड्ढे में या जमीन के नीचे रखकर ऊपर से मिट्टी आदि इस प्रकार डालना कि ऊपर या बाहर से दिखाई न दे। गाड़ना। ४. इस प्रकार अपने अधिकार में करके या छिपाकर रखना कि और लोग देख न सकें। जैसे—इस नौकरी में उन्होंने बहुत से रुपए दबाकर अपने पास रख लिये थे। ५. अनुचित रूप से या बलपूर्वक अपने अधिकार में कर के रख लेना। जैसे—बाजारवालों के बहुत से रुपए उन्होंने दबा लिये थे। संयो० क्रि०—बैठाना।—रखना।—लेना।

६. किसी पर किसी ओर से ऐसा जोर या दाब पहुँचाना कि उसे अपने स्थान से बहुत-कुछ पीछे हटना पड़े। जैसे—सिपाही भीड़ को दबाते हुए सड़क के उस पार तक ले गये। ७. शरीर के किसी अंग पर उसकी थकावट, पीड़ा आदि कम करने के लिए अथवा उसमें रक्त का संचार करने के लिए रह-रहकर हाथों से उस पर कुछ हलका भार डालना। जैसे—किसी के पैर या सिर

दबाना। ८. ऐसी स्थिति में डालना या पहुँचाना कि मनुष्य बहुत कुछ दीन-हीन बनकर या विवश होकर रहे अथवा समय बिताये। जैसे —आपस के झगड़ों (या नित्य की बीमारियों) ने उन्हें आज-कल बहुत कुछ दबा रखा है। ९. अपने प्रभाव, शक्ति आदि से किसी को ऐसी स्थिति में लाना कि वह अपनी इच्छा के अनुसार कोई काम न कर सके अथवा अपनी इच्छा के विरुद्ध कोई काम करने के लिए विवश हो। जैसे—उन्हीं के दबाने से हमें सौ रुपए छोड़ने पड़े (या उनकी तरफ से गवाही देनी पड़ी)। १०. अपने गुण, महत्त्व, विशेषता आदि से किसी को कुछ घटकर या हलका सिद्ध करना। जैसे—हाट के इस नगीने ने और सब नगीनों को दबा दिया है। ११. कोई विशेष उपाय या प्रयत्न करके किसी चीज या बात को उभरने, फैलने या बढ़ने से रोकना। दमन करना। जैसे—(क) अराजकता या विद्रोह दबाना (ख) अपमान या कलंक दबाना। १२. कुछ रुक या सोच-समझकर अथवा संकीर्णता या संकोचपूर्वक कोई काम करना। जैसे—हाथ दबाकर खरच करना।

दबाबा—पुं० [देश०] मध्य युग में, वह संदूक जिसमें कुछ आदमी बैठाकर गुप्त रूप से शत्रु-पक्ष में उपद्रव आदि कराने के लिए पहुँचाये या ले जाये जाते थे।

दबाव—पुं० [हिं० दबाना] १. दबाने की क्रिया या भाव। दाब। २. किसी बड़े या महत्त्वपूर्ण व्यक्ति का ऐसा प्रभाव जिससे दबकर लोग कोई काम करते हों।

क्रि० प्र०—डालना। पड़ना।—मानना।—में आना।—

दबिला—पुं० [देश०] हलवाई का एक उपकरण जिससे भूनते समय खोआ, बेसन आदि चलाते हैं।

दबीज—वि० [फा० दबीज़] जिसका दल मोटा हो। संगीन। जैसे—दबीज कपड़ा या कागज।

दबीर—पुं० [फा०] १. लिखनेवाला। मुंशी। २. एक प्रकार के महाराष्ट्र ब्राह्मणों की उपाधि।

दबूसा†—पुं० [देश०] १. जहाज का पिछला भाग। पिच्छल। २. नाव का वह अंश जिसमें पतवार लगी होती है। ३. जहाज का कमरा। (लश०)

दबेला—वि० [हिं० दबना+एला (प्रत्य०)] १. दबा हुआ। जिस पर दबाब पड़ा हो। २. (काम) जो जल्दी-जल्दी पूरा किया जाने को हो। (लश०) ३. दे० 'दबैल'।

दबैल—वि० [हिं० दबना+ऐल (प्रत्य०)] १. जिस पर किसी का प्रभाव या दबाव हो। २. किसी से बहुत दबने या डरनेवाला। ३. किसी के आंतक, उपकार आदि से दबा हुआ। ४. कमजोर। दुर्बल।

दबोचना—स० [हिं० दबाना] १. किसी को सहसा झपटकर पकड़ते हुए दबा लेना। धर दबाना। २. छिपाना।

संयो० क्रि०—लेना।

दबोरना†—स० = दबाना।

दबोस—पुं० [देश०] चकमक पत्थर।

दबोसना†—स० [देश०] अधिक मात्रा में कोई चीज पीना। जैसे—शराब दबोसना।

दबौनी—स्त्री० [हिं० दबाना+औनी (प्रत्य०)] १. कसेरों का लोहे का एक औजार जिससे वे बरतनों पर फूल-पत्ते आदि उभारते हैं। २. करघे में की वह लकड़ी जो भँजनी के ऊपर लगी रहती है।

दब्ब—पुं० = द्रव्य।

दब्बू—वि० [हिं० दबाना] [भाव० दब्बूपन] जो स्वभावतः दूसरों से डरता और दबकर रहता हो।

दभ्र—वि० [सं० √दम्भ् (कपट करना)+रक्] अल्प। थोड़ा।

दमँगल—पुं० [फा० दंगल ?] युद्ध। उदा०—दमँगल विण अपची दियण वीर धणी रो धान।—कविराजा सूर्यमल।

दमंस†—स्त्री० [हिं० दाम+अंश] खरीदी या मोल ली हुई चीज, विशेषतः जायदाद या संपत्ति।

दम—पुं० [सं०√दम् (दमन करना)+घञ्] १. दमन करने की क्रिया या भाव। २. वह काम जो किसी का दमन करने के लिए किया जाय। ३. शरीर की इंद्रियों को वश में रखने और उन्हें अनुचित कामों या बातों में लगाने से रोकने की क्रिया। ४. दंड। सजा। ५. घर। मकान। ६. एक प्राचीन महर्षि जिनका उल्लेख महाभारत में है। ७. पुराणानुसार मरुत् राजा के पौत्र जो बभ्रु की कन्या इंद्रसेना के गर्भ से उत्पन्न हुए थे और जो वेद-वेदांगों के बहुत अच्छे ज्ञाता तथा धनुर्विद्या में बहुत प्रवीण थे। ८. बुद्ध का एक नाम। ९. विष्णु। १०. दबाव। ११. कीचड़।

पुं० [फा०] साँस। श्वास।

क्रि० प्र०—आना।—चलना।—रुकना।—लेना।

मुहा०—**दम अटकना**=साँस रुकना। **दम उखड़ना**=बहुत देर-देर पर साँस आना या सहसा चलना जो मृत्यु के बहुत पास होने का लक्षण माना जाता है। **दम उलझना या उलटना**=इतनी अधिक घबराहट या विकलता होना कि ठीक तरह से साँस न लिया जा सके। **दम खींचना**=(क) साँस अंदर की ओर खींचना, चढ़ाना या लेना। (ख) बिलकुल चुप या शांत रह जाना। **दम खाना**=कुछ भी उत्तर न देना। बिलकुल चुप रह जाना। (क्व०) **दम घुटना**=साँस का इस प्रकार रुकना या रुककर आना कि जीवित रहना कठिन और कष्टप्रद जान पड़े। **दम घोटकर मारना**=(क) गला घोंट या दबाकर मारना। (ख) बहुत अधिक शारीरिक कष्ट देकर मारना। **दम चढ़ना**=दम फूलना। **दम चुराना**=जान-बूझकर इस प्रकार साँस रोकना कि दूसरे को आहट न मिले। **दम-टूटना**=(क) बहुत अधिक थक जाने के कारण और अधिक काम करने के योग्य न रह जाना। (ख) साँस का आना-जाना या चलना बंद हो जाना। मृत या मृतप्राय हो जाना। **दम तोड़ना**=मरने के समय बहुत ठहर-ठहर या रुक-रुककर साँस लेना। **(किसी के सामने) दम न मारना**=किसी की उपस्थिति में बहुत ही चुपचाप और विनीत तथा शांत भाव से रहना। **दम पचाना**=निरंतर कोई परिश्रम या काम करते रहने से ऐसा अभ्यास हो जाना कि अधिक या जल्दी साँस न फूलने लगे। **दम फूलना**=(क) अधिक परिश्रम करने या तेज चलने, दौड़ने आदि के कारण साँस जल्दी जल्दी-चलना। हाँफना। (ख) दमे या श्वास का रोग होना। **दम फूंकना**=मुँह से किसी चीज के अंदर हवा भरना। **दम भरना**=परिश्रम करते-करते इतना थक जाना कि और अधिक काम न हो सके। **(किसी बात या व्यक्ति का) दम भरना**=अभिमानपूर्वक यह विश्वास प्रकट करना कि हम अमुक काम या बात

कर सकेंगे, अथवा अमुक व्यक्ति से हमें कभी धोखा न होगा या सहारा मिलता रहेगा। जैसे—अपनी बहादुरी या किसी की दोस्ती (अथवा प्रेम) का दम भरना। **दम मारना**=बहुत अधिक परिश्रम के उपरांत कुछ विश्राम करना। सुस्ताना। **दम साधना**=(क) साँस रोकने का अभ्यास करना। (ख) बिलकुल चुप या मौन रह जाना। कुछ भी उत्तर न देना। (ग) निश्चेष्ट होकर चुपचाप पड़ जाना या पड़े रहना। **(किसी की) नाक में दम करना**=बहुत अधिक कष्ट या दुःख देना। बहुत तंग या परेशान करना।

२. साँस खींचकर जोर से बाहर फेंकने की क्रिया। ३. जादू-टोना करने के लिए मंत्र आदि पढ़कर किसी पर फूँक मारने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—करना।—पढ़ना।—फूंकना।

३. गाँजे, चरस, तमाकू, आदि का धूआँ (नशे के लिए) साँस के साथ अंदर खींचने की क्रिया।

मुहा०—दम लगाना=चिलम पर गाँजा रखकर उसका धूआँ साँस के साथ अंदर खींचना।

४. संगीत में किसी स्वर का ऐसा लंबा उच्चारण जो एक ही साँस में पूरा किया जाय। जैसे—(क) गवैये के गले का दम। (ख) बाँसुरी या शहनाई का दम।

मुहा०—दम भरना=गाने के समय साँस रोककर एक ही स्वर का देर तक लंबा उच्चारण करते रहना।

५. कुछ विशिष्ट प्रकार के खाद्य पदार्थ पकाने की वह क्रिया जिसमें उन्हें किसी बरतन में रखकर और उसका मुँह ढककर या बंद करके आग पर चढ़ा देते हैं या उसके ऊपर कुछ जलते हुए कोयले रख देते हैं।

पद—दम आलू।

मुहा०—दम खाना=खाद्य पदार्थ का उक्त प्रकार की क्रिया से पकना। जैसे—चावल अभी कुछ कच्चा है, जरा दम खा जाता तो ठीक हो जाता। **दम देना**=किसी चीज को बरतन में रखकर इसलिए उसका मुँह बंद करके आग पर चढ़ा देना कि वह अंदर की भाप से ही पक जाय। **(किसी चीज का) दम पर आना**=पूरी तरह से पकने में इतनी ही कसर रह जाना कि थोड़ा दम देने से ही अच्छी तरह पक जाय।

६. कलंदरों की वह क्रिया जिसमें वे भालू के मुँह पर लकड़ी या हाथ रखकर साँस खींचना सिखाते हैं। (कहते हैं कि इससे भालू की पाचन-क्रिया ठीक होती और वह शांत रहता है।) ७. उतना समय जितना एक बार साँस लेने में लगता है। क्षण। पल।

पद—दम के दम=बहुत थोड़ी देर। क्षण (या पल) भर। जैसे—दम के दम ठहर जाओ मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा। **दम पर दम**=बहुत थोड़ी-थोड़ी देर पर। जैसे—वहाँ दम पर दम शराब का दौर चलता था। **दम-ब-दम**=दम पर दम। **हर दम**=प्रति क्षण। हर समय। सदा। हमेशा। जैसे—मैं तो आपकी सेवा के लिए हर दम तैयार रहता हूँ।

९. जान। प्राण। जैसे—अब इसका दम निकलने में अधिक देर नहीं है।

मुहा०—दम खुश्क होना=दे० नीचे 'दम सूखना'। **दम चुराना**=काम या परिश्रम करने से अपने आप को बचाना। जी चुराना। **दम निकलना**=जीवन का अंत होना। प्राण निकलना। मरना। **(किसी पर) दम निकलना**=किसी पर इतना अधिक प्रेम होना कि उसके वियोग में प्राण निकलने का-सा कष्ट हो। **(कोई काम करने में) दम निकलना**=किसी काम के प्रति परम अरुचि या विरक्ति होना। जैसे—लिखने-पढ़ने (या पैसा खरच करने) में तो इनका दम निकलता है। **दम पर आ बनना**=ऐसी नौबत या स्थिति आना कि मानों अब जीवित नहीं बचेंगे। बहुत ही परेशान या हैरान होना। **दम फड़क उठना या जाना**=किसी चीज का गुण, रूप आदि देखकर चित्त का बहुत प्रसन्न होना। **दम फना होना**=दे० नीचे 'दम सूखना'। **दम में दम आना**=घबराहट, भय आदि दूर होने पर चित्त कुछ शांत और स्थिर होना। **दम में दम रहना या होना**=जीवित रहना। जिंदगी बनी रहना। **दम सूखना**=बहुत अधिक भय के कारण ऐसी अवस्था होना कि खुलकर साँस भी न लिया जा सके।

१०. किसी बड़े आदमी के संबंध में, उसके महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व का सूचक पद। जैसे—अतिथियों का यह सारा आदर-सत्कार बस आपके दम से ही है (अर्थात् आप ही ऐसा कर सकते हैं; आपके बाद और कोई ऐसा आदर-सत्कार करनेवाला दिखाई नहीं देता)।

मुहा०—किसी का दम गनीमत होना=किसी प्रकार के अभाव की दशा में किसी का अस्तित्व और व्यक्तित्व ही दूसरों के लिए बहुत-कुछ आशा-प्रद, उत्साहवर्द्धक या संतोष की बात होना। जैसे—पुराने रईसों में अब आपका ही दम गनीमत है (अर्थात् और सब तो चले गये, आप ही बच रहे हैं)।

११. वह शक्ति जिससे कोई पदार्थ ठीक तरह से बना रहता और अपना पूरा काम देता है। जीवनी-शक्ति। जैसे—अब इस कुरते (या उनके शरीर) में कुछ भी दम नहीं रह गया। १२. तत्त्व। सार। जैसे—तुम्हारी इन बातों में कुछ भी दम नहीं है। १३. तलवार या छुरी आदि की बाढ़। धार।

पद—दम-खम। (देखें)

१४. किसी को छलने या धोखा देने के लिए कही जानेवाली ऐसी बात जिससे उसके भी मन में आशा, धैर्य, साहस आदि का संचार हो।

पद—दम-झाँसा, दम-दिलासा, दम-पट्टी। (देखें)

क्रि० प्र०—देना।—में आना।—में लाना।

मुहा०—दम खाना=किसी के धोखे में आना।

पुं० [देश०] दरी बुननेवालों की एक प्रकार की तिकोनी कमाची जिसमें तीन लंबी लकड़ियाँ एक साथ बँधी रहती हैं।

दमक—स्त्री० [हिं० 'चमक' का अनु०] चमक-दमक। जैसे—चमक दमक।

दमकना—अ० [हिं० दमक (चमक का अनु०)] १. चमकना। २. प्रज्वलित होना। सुलगना। (क्व०)

दमकल—स्त्री० [हिं० दम+कल] १. वह यंत्र जिसमें ऐसे नल लगे हों जिनके द्वारा कोई तरल पदार्थ किसी ओर जोर या झोंके से फेंका जा सके। (पंप) २. उन यंत्रों का वर्ग या समूह जिनके द्वारा कारखानों, घरों आदि में लगी हुई आग बुझाई जाती है। ३. उक्त सिद्धांत पर बना हुआ वह यंत्र जिससे कूओं आदि का पानी निकाला जाता है। ४. दे० 'दमकला'।

दमकला—पुं० [हिं० दम+कल] १. वह बड़ा पात्र जिसमें लगी हुई पिचकारी से महफिलों आदि में लोगों पर गुलाब-जल छिड़का जाता है।

२. जहाज में, वह यंत्र जिससे पाल खड़े करते हैं। ३. दे० 'दम-चूल्हा'। ४. दे० 'दमकल'।

दम-खम—पुं० [फा० दम=जीवनी-शक्ति+खम=वक्रता या बाँकपन] १. कोई विशिष्ट कार्य करने की शक्ति जो अब भी किसी में यथेष्ट रूप में हो। २. दृढ़ता। मजबूती। ३. तलवार के संबंध में, उसकी धार तथा लचीलापन।

विशेष—तलवार की धार और लचीलेपन से ही यह पता चलता है कि वह कितना और कैसा वार या काट कर सकती है।

४. मूर्ति की सुंदरता और सुडौल गढ़न। ५. चित्र में, विशेष आकर्षण लाने के लिए खींची जानेवाली कोई गोलाई लिये लंबी रेखा।

दमघोख—पुं०=दमघोष।

दमघोष—पुं०=शिशुपाल के पिता।

दमचा†—पुं० [?] मचान।

दम-चूल्हा—पुं० [देश०] लोहे का बना हुआ एक प्रकार का बड़ा गोल चूल्हा जिसमें कोयला जलाया जाता है।

दमजोड़ा—पुं० [?] तलवार। (डिं०)

दम-झाँसा—पुं० [फा० दम+हिं० झाँसा] =दम-पट्टी।

दमड़ा—पुं० [हिं० दाम+ड़ा (प्रत्य०)] १. दमड़ी। दाम। २. रुपया-पैसा। धन।

दमड़ी—स्त्री० [सं० द्रविण और धन] १. एक प्रकार का पुराना सिक्का जिसका मूल्य एक आने के बत्तीसवें अंश के बराबर होता था। पैसे का आठवाँ भाग।

मुहा०—**दमड़ी के तीन होना**=बहुत ही तुच्छ या हीन होना।

पद—**दमड़ी का पूत**=बहुत ही अयोग्य तथा हीन व्यक्ति। उदा०—लंपट धूत पूत दमरी को विषय जाप को जापी।—सूर।

२. चिल-चिल नाम का पक्षी।

दमथ—वि० [सं० √दम् (दमन)+अथच्] (मनोवेगों आदि का) दमन करने या दबानेवाला।

दमथु—वि० [सं० √दम्+अथु]=दमथ।

दम-दमड़ी—स्त्री० [फा० दम+हिं० दमड़ी] शक्ति और धन-संपत्ति। जैसे—हमारे पास दम-दमड़ी तो है ही नहीं, हम वहाँ जाकर क्या करेंगे!

दमदमा—पुं० [फा० दमदम] १. किले के चारों ओर की चहारदीवारी। २. वह कृत्रिम चहारदीवारी जो युद्ध के समय वीरों में बालू, मिट्टी आदि भरकर तथा उन्हें एक दूसरे पर रखकर खड़ी की जाती है।

क्रि० प्र०—बाँधना।

दमदार—वि० [फा०] १. जिसमें अधिक दम अर्थात् जीवनी-शक्ति हो। २. दृढ़। पक्का। मजबूत। ३. जो अच्छी तरह और पूरा काम करने या देने के योग्य हो।

दम-दिलासा—पुं० [फा० दम+हिं० दिलासा] समय पर किसी के सहायक होने के लिए उसे दिया जानेवाला आश्वासन और उसमें किया जानेवाला उत्साह या बल का संचार।

दमन—पुं० [सं०√दम् (दंड देना)+ल्युट्—अन] १. इंद्रियों, मनोवेगों आदि को किसी ओर प्रवृत्त होने अथवा कोई काम करने से रोकना। निग्रह। जैसे—इच्छा या वासना का दमन। २. उठते, उभरते या बढ़ते हुए किसी प्रकार के विरोध-मूलक कार्य तथा उसके कर्ताओं को बल तथा कठोरतापूर्वक दबाना, कुचलना या नष्ट करना। ३. किसी को नियंत्रण में रखने के लिए दिया जानेवाला दंड। ४. विष्णु। ५. शिव। ६. एक ऋषि जिनके आश्रम में दमयंती का जन्म हुआ था। ७. एक राक्षस का नाम। ८. दमनक। दौना। ९. कुंद (पौधा और फूल)। १०. द्रोणपुष्पी।

स्त्री० दमयंती का वह विकृत नाम जिससे वह उर्दू-फारसी साहित्य में प्रसिद्ध है।

दमनक—वि० [सं० दमन+कन्] दमन करने या दबानेवाला।

पुं० १. दौना नाम का पौधा। २. एक प्रकार छंद जिसके प्रत्येक चरण में तीन नगण, एक लघु और एक गुरु होता है।

दमनपापड़—पुं० दे० 'पित्त पापड़ा'।

दमन-शील—वि० [सं० ब० स०] [भाव० दमनशीलता] जो दमन करता हो। जिसका स्वभाव दमन करने का हो।

दमना* —अ० [फा० दम] काम करते-करते थक जाना और फलतः दम या साँस फूलने लगना।

स० [सं० दमन] दमन करना।

†पुं० दे० 'दौना'।

दमनी—स्त्री० [सं० दमन+ङीप्] अग्निदमनी नाम का क्षुप।

वि० [सं० दमन] दमन करनेवाला।

†स्त्री० लज्जा। संकोच।

दमनीय—वि० [सं० √दम् (दमन)+अनीयर्] १. जिसका दमन किया जा सके। २. दमन किये जाने के योग्य।

दम-पट्टी—स्त्री० [फा० दम=धोखा+हिं० पट्टी=तख्ती] किसी को धोखे में रखकर अपना काम निकालने के लिए उससे कही जानेवाली आशापूर्ण मीठी-मीठी बातें।

क्रि० प्र०—देना।—पढ़ाना।

दम-पुख्त—वि० [फा०] १. दम देकर पकाया हुआ (खाद्य पदार्थ)।

पुं० हाँड़ी अथवा देग का मुँह बंद करके पकाया जानेवाला मांस या पुलाव।

दम-बाज—वि० [फा० दम+बाज] [भाव० दमबाजी] १. चकमा या दम-बुत्ता देनेवाला। २. गाँजे आदि का दम लगानेवाला।

दमबाजी—स्त्री० [हिं० दमबाज] दमबाज होने की अवस्था या भाव।

दम-बुत्ता—पुं० [हिं० दम] किसी को फुसलाने या कुछ समय के लिए शांत रखने के लिए दिया जानेवाला झूठा आश्वासन।

दम-मार—पुं० [हिं०] वह जो गाँजे या चरस का दम लगाता हो। गाँजा या चरस (का धूआँ) पीनेवाला। उदा०—दम-मार यार किसके, दम लगाया और खिसके। (कहा०)

दमयंतिका—स्त्री० [सं० दमयन्ती+कन्—टाप्, ह्रस्व] मदनबान (लता)।

दमयंती—स्त्री० [सं०√दम् (दमन करना)+णिच्+शतृ+ङीप्, नुम्] १. पुराणानुसार विदर्भ देश की एक राजकुमारी जो राजा भीमसेन की पुत्री थी और जिसका विवाह राजा नल से हुआ था। २. एक तरह की लता। मदनबान।

दमयिता (तृ)—वि० [सं०√दम्+णिच् + तृच्] दमन करनेवाला।

दमरक (ख) †—स्त्री० दे० 'चमरख'।

दमरी†—स्त्री०=दमड़ी।

दमशील—वि०=दमन-शील।

दमसना—स० [सं० दमन] १. दमन करना। २. आघात करना।

दमसाज—पुं० [फा०] १. किसी के साथ रहकर उससे सहानुभूति रखने और उसकी सहायता करनेवाला व्यक्ति। २. संगीत में, वह व्यक्ति जो किसी गवैये के साँस लेने पर उसके बोल के स्वरों को दोहराता या पूरा करता हो।

दमा—पुं० [फा०] फेंफड़ों में कुछ विशिष्ट प्रकार का विकार होने पर उत्पन्न होनेवाला एक प्रसिद्ध रोग जिसमें साँस बहुत अधिक तेजी से फूलने लगता है और जिसके फलस्वरूप रोगी को बहुत अधिक और बराबर खाँसते रहना पड़ता है।

दमाग†—पुं०=दिमाग।

दमाज—पुं० [फा० दमामा ?] धौंसा। नगाड़ा।

दमाणक†—स्त्री०=दमानक।

दमाद—पुं० [सं० जामातृ] संबंध के विचार से वह व्यक्ति जिसको कन्या ब्याही गई हो। जामाता। दामाद।

दमादम—अव्य० [अनु०] १. दमदम शब्द करते हुए। २. निरंतर। बराबर। लगातार।

दमान—पुं० [देश०] पाल का कपड़ा। (लश०)

दमानक—स्त्री० [देश०] युद्ध के समय तीरों, गोले-गोलियों आदि की कुछ समय तक बराबर होनेवाली बौछार या मार। उदा०—ज्यौं कमनैत दमानक मैं फिर तीर सों मारि लै जात निसानो।—रहीम।

दमाम—पुं० =दमामा।

दमामा—पुं० [फा० दमामः] बहुत बड़ा नगाड़ा। धौंसा।

दमार—स्त्री०=दमारि (दावानल)।

दमारि*—पुं० [सं० दावानल] जंगल की आग। दावानल।

दमावति—स्त्री०=दमयंती।

दमाह—पुं० [हिं० दमा] १. बैलों के हाँफने का एक रोग। २. वह बैल जिसे उक्त रोग हो।

दमित—भू० कृ० [सं० दम्+णिच्+क्त] १. (मनोवेग या वासना) जिसका दमन किया गया हो। २. (उपद्रव, विद्रोह या उसका कर्त्ता) जो बलपूर्वक प्रयोग करके दबाया गया हो।

दमी (मिन्)—वि० [सं० दम+इनि] दमनशील।

वि० [फा० दम] दम लगाने या साधनेवाला।

पुं० १. गँजेड़ी। २. हुक्के का एक प्रकार का छोटा सफरी नैचा जो जेब में भी रखा जा सकता है।

पुं० [हिं० दमा] वह जिसे दमे या श्वास का रोग हो।

दमुना†—पुं० [सं० दावानल] अग्नि। आग।

दमैया†—वि० [हिं० दमन+ऐया (प्रत्य०)] दमन करनेवाला।

दमोड़ा—पुं० [हिं० दाम+ओड़ा (प्रत्य०)] दाम। मूल्य। (दलाल)

दमोदर—पुं०=दामोदर।

दमोय†—पुं० [दमोह; मध्य प्रदेश का एक स्थान] एक प्रकार का बैल जो बोझ ढोने के लिए अच्छा समझा जाता है।

दम्य—वि० [सं०√दम् (दमन करना)+यत्] १. जिसका दमन किया जा सके या हो सके। दमन किये जाने के योग्य। २. (पशु) जो बधिया किया जा सकता हो या किये जाने के योग्य हो।

दयत—पुं०=दैत्य।

दयनीय—वि० [सं०√दय्+अनीयर्] १. जिसे देखकर मन में दया उत्पन्न होती हो। २. जैसे—दयनीय स्थिति। घोर विपत्ति या संकट में पड़ा हुआ।

दया—स्त्री० [सं०√दय्+अङ्—टाप्] १. मन में स्वतः उठनेवाली वह मनुष्योचित सात्त्विक भावना या वृत्ति जो दुःखियों और पीड़ितों के कष्ट, दुःख आदि दूर करने में प्रवृत्त करती है। २. अपने व्यक्ति या अपने से दुर्बल व्यक्ति के साथ किया जानेवाला उक्त प्रकार का कोमल व्यवहार। मेहरबानी। (मरसी) ३. दक्ष प्रजापति की कन्या जो धर्म की पत्नी थी।

दया-कूर्च—पुं० [स० त०] बुद्धदेव।

दया-दृष्टि—स्त्री० [मध्य० स०] किसी के प्रति होनेवाली अनुग्रहपूर्ण दृष्टि या भावना।

दयानत—स्त्री० [अ०] १. देने की भावना। २. ईमानदारी। सत्य-निष्ठा।

दयानतदार—वि० [अ० दयानत+फा० दार] [भाव० दयानतदारी] ईमानदार। सच्चा।

दयानतदारी—स्त्री० [अ० दयानत+फा० दारी] ईमानदारी। सचाई।

दयाना*—अ० [हिं० दया+ना (प्रत्य०)] दयापूर्ण व्यवहार करने में प्रवृत्त होना। दयालु होना।

दया-निधान—पुं० [ष० त०] दया-निधि।

दया-निधि—पुं० [ष० त०] १. बहुत बड़ा दयालु। २. ईश्वर का एक विशेषण जो संज्ञा, संबोधन आदि के रूप में भी प्रयुक्त होता है। जैसे—दयानिधि, तोरी गति लखि न परै।

दया-पात्र—वि० [ष० त०] जो दया प्राप्त करने का अधिकारी या पात्र हो। जिस पर दया करना उचित हो।

दयामय—वि० [सं० दया+मयट्] १. दया से पूर्ण। परम दयालु। २. ईश्वर का एक विशेषण।

दयार—पुं० [फा०] प्रदेश। अंत। भू-खंड।

*वि०=दयालु।

†पुं०=देवदार (वृक्ष)।

दयार्द्र—वि० [दया-आर्द्र, तृ० त०] [भाव० दयार्द्रता] जिसका मन दया से आर्द्र हो गया हो।

दयाल—पुं० [?] एक प्रकार की चिड़िया जो बहुत मधुर स्वर में बोलती है।

†वि०=दयालु।

दयालु—वि० [सं०√दय् (पालन करना)+आलुच्] [भाव० दयालुता] जो सब पर दया करता हो। दयावान्।

दयालुता—स्त्री० [सं० दयालु+तल्—टाप्] दयालु होने की अवस्था, गुण या भाव।

दयावंत—वि० [सं० दयावत्] [स्त्री० दयावती] दयावान्।

दयावती—वि० स्त्री० [सं० दयावत्+ङीप्] दया करनेवाली।

दयावना—अ०=दयाना।

वि०=दयापात्र।

दयावान्(वत्)—वि० [सं० दया+मतुप्] जिसके चित्त में दया हो। दयालु।

दयावीर—पुं० [तृ० त०] वह जो दया करने में वीर हो। वह जो दूसरों पर दया करने में सबसे बढ़-चढ़कर हो।

दया-शील—वि० [ब० स०] जो स्वभावतः दूसरों पर दया करता हो।

दया-सागर—पुं० [ष० त०] जिसके चित्त में अगाध दया हो। अत्यंत दयालु मनुष्य।

दयित—वि० [सं०√दय् (दान, रक्षण)+क्त] [स्त्री० दयिता] प्रिय। प्यारा।

पुं० विवाहिता स्त्री का पति। स्वामी।

दयिता—स्त्री० [सं० दयित+टाप्] १. प्रियतमा। २. पत्नी।

दयित्नु—वि० [सं०√दय् +इत्नु] दया-शील।

दरंग—पुं० [?] टीला। (राज०)

दर—पुं० [सं०√दृ (भय, विदारण)+अप्] १. डर। भय। २. शंख। ३. कंदरा। खोह। गुफा। ४. गड्ढा। ५. दरार। ६. चीरने या फाड़ने की क्रिया। विदारण। ७. जगह। स्थान। ८. ठौर-ठिकाना।

वि० चीरने या फाड़नेवाला। (यौ० के अंत में।) जैसे—पुरंदर।

वि० किंचित्। थोड़ा।

स्त्री० [हिं०] १. किसी चीज का वह दाम जिस पर वह हर जगह मिलती हो अथवा खरीदी या बेची जाती हो। जैसे—गेहूँ (या सोने) की दर बराबर चढ़ रही है। निर्ख। भाव। २. महत्त्व आदि के विचार से होनेवाला आदर या कदर। प्रतिष्ठा। जैसे—इस जगह अपनी दर घटाओ।

*पुं०=दल।

*पुं० [फा०] १. दरवाजा। द्वार।

मुहा०—**दर दर मारा मारा (या मारे मारे) फिरना**=बहुत दुर्दशा में पड़कर इधर-उधर घूमते और ठोकरें खाते रहना।

२. कमरे, खाने, दालान आदि के रूप में किया हुआ विभाग। जैसे—अलमारी के दर। ३. वह स्थान जहाँ जुलाहे ताना फैलाने के लिए डंडियाँ गाड़ते हैं।

स्त्री० [सं० दारु=लकड़ी] ईख। ऊख।

दर-कंटिका—स्त्री० [ब० स०, कप् टाप्, इत्व] सतावर नाम की ओषधि।

दरक—वि० [सं०√दृ+वुन्—अक] डरपोक। भीरु।

स्त्री० [हिं० दरकना] दरकने के कारण होनेवाला अवकाश या चिह्न। दरार।

दरकच—स्त्री० [हिं० दरकचना] १. दरकचने की क्रिया या भाव। २. दरकचने के कारण किसी चीज पर पड़नेवाला चिह्न या उसके कारण होनेवाला क्षत।

दरकचना—स० [अनु०] १. हलके आघात से थोड़ा दबाना या पीसना। कूटकर मोटे-मोटे टुकड़े करना।

अ० उक्त क्रिया से दबना या क्षत होना।

दरकटी—स्त्री० [हिं० दर (भाव)+काटना] १. किसी चीज की दर या भाव में की जाने या होनेवाली कमी। २. दर या भाव के संबंध में किया जानेवाला निश्चय।

दरकना—अ० [सं० दर=फाड़ना] आघात लगने या दबने के कारण किसी चीज का कुछ कट या फट जाना।

स० हलके आघात या दाब से कोई चीज काटना, कुचलना या तोड़ना।

दरका—पुं० [हिं० दरकना] १. दरकने की क्रिया या भाव। २. दरकने के कारण पड़ा हुआ चिह्न या लकीर। दरार। ३. ऐसा आघात जिससे कोई चीज दरक या फट जाय।

दरकाना—स० [हिं० दरकना] दरकने में प्रवृत्त करना। थोड़ा काटना, कुचलना या पीटना।

दरकार—वि० [फा०] किसी काम में लाने के लिए जिसकी अपेक्षा या आवश्यकता हो। जैसे—इस समय हमें सौ रुपए दरकार हैं।

स्त्री० अपेक्षा। आवश्यकता। जैसे—जितनी दरकार हो ले जाओ।

दरकारी—वि० [फा० दरकार] जिसकी अपेक्षा या आवश्यकता हो। आवश्यक। जरूरी। जैसे—सब दरकारी चीजें अपने साथ रख लो।

दर किनार—वि० [फा०] किसी प्रकार के क्षेत्र से अलग या बाहर किया हुआ।

पद—**दर किनार**=अलग या दूर रहे। चर्चा ही छोड़ दी जाय। जैसे—इनाम देना तो दर किनार, वे तनख्वाह तक नहीं देते।

दरकूच—क्रि० वि० [फा०] बराबर कूच या यात्रा करते हुए। यात्रा में बराबर आगे बढ़ते हुए।

दरखत—पुं० = दरख्त (वृक्ष)।

दरखास्त—स्त्री० [फा० दरख्वास्त] १. किसी काम या बात के लिए किसी से किया जानेवाला निवेदन या प्रार्थना। २. प्रार्थना-पत्र।

मुहा०—**(किसी पर) दरखास्त पड़ना**=किसी के विरुद्ध अधिकारी के सामने कोई अभियोग-पत्र उपस्थित किया जाना। नालिश या फरियाद होना।

दरखास्ती—वि० [फा० दरख्वास्त] दरखास्त या प्रार्थना-पत्र-संबंधी। जैसे—दरखास्ती कागज=ऐसा चिकना, बढ़िया और मोटा कागज जिस पर दरखास्त लिखी जाती है।

दरख्त—पुं० [फा० दरख्त] पेड़। वृक्ष।

दरगाह—स्त्री० [फा०] १. चौखट। दहलीज। २. कचहरी। ३. राज-सभा। दरबार। ४. किसी पीर या बहुत बड़े फकीर का मकबरा। मजार।

दर-गुजर—वि० [फा० दर-गुज़र] जो गुजर या बीत चुका हो। व्यतीत।

पुं० १. किसी में अवगुण या दोष देखकर भी उसे अनदेखा करना अर्थात् उस पर ध्यान न देना।

मुहा०—**(कोई बात) दर-गुजर करना**=बीती हुई घटना या बात को उपेक्षापूर्वक भूल जाना। ध्यान न देना। जाने देना।

२. क्षमा। माफी।

दर-गुजरना—अ० [फा० दर-गुजर] उपेक्षापूर्वक छोड़कर अलग होना। रहित रहने में ही अपना कल्याण समझना। बाज आना। जैसे—माफ कीजिए हम ऐसी दावत (या मेहमानदारी) से दर-गुजरे।

दरज—स्त्री० [फा० दर्ज] १. वह पतला लंबा अवकाश जो दो चीजों को एक दूसरी से सटाने पर बीच में बच रहे या दिखाई दे। दरार। २. दीवार आदि ठोस रचनाओं के बीच में फटने के कारण उसमें टेढ़ी-सीधी रेखा के समान बननेवाला चिह्न जिसमें पानी समाता है।

वि०=दर्ज (लिखा हुआ)।

दरज-बंदी—स्त्री० [हिं० दरज+फा० बंदी] दीवार आदि की दरजें बंद करने के लिए उसमें मसाला लगाना।

दरजन—पुं० [अं० डजन] १. गिनती में बारह वस्तुओं का समूह। २. उक्त को एक इकाई मानकर चीजों की की जानेवाली गिनती। जैसे--चार दरजन संतरे (अर्थात् १२×४=४८ संतरे)।

† स्त्री० = दरजिन।

दरजा—पुं० [अ० दर्जः] १. प्रतिष्ठा, महत्त्व या सम्मान का पद या स्थान। २. ऐसा स्थान जहाँ रहकर अधिकारपूर्वक किसी कर्तव्य का पालन या किसी प्रकार का प्रबंध आदि करना पड़े। ओहदा। पद। जैसे—अब तो उनका दरजा बढ़ गया है। ३. ऐसा वर्गीकरण या विभाजन जो गुण, योग्यता आदि की कमी-बेशी के विचार से किया गया हो अथवा जिसमें ऊँचे-नीचे, छोटे-बड़े आदि का भाव निहित या सम्मिलित हो। श्रेणी। जैसे—यह पुस्तक उससे हजार दरजे अच्छी (या बढ़कर) है। ४. पाठशालाओं, विद्यालयों आदि में उक्त दृष्टि से स्थिर किये हुए ऐसे विभाग जिनमें से प्रत्येक में समान योग्यता रखनेवाले या समान परीक्षा में उत्तीर्ण होनेवाले विद्यार्थियों को एक साथ और एक ही तरह की शिक्षा दी जाती हो। श्रेणी। जैसे--इस विद्यालय में १० वें दरजे तक पढ़ाई होती है।

मुहा०—दरजा चढ़ाना=विद्यार्थी को परीक्षा में उत्तीर्ण होने अथवा योग्य समझे जाने के कारण आगे या बादवाले बड़े दरजे में पहुँचाना।

५. किसी रचना के अन्तर्गत सुभीते आदि के विचार से बनाये हुए खाने या किये हुए विभाग। जैसे—पाँच दरजोंवाली अलमारी, तीन दरजोंवाला संदूक। ६. धातु की बनी हुई चीजों की ढलाई में, कोई चीज ढालने का वह साँचा (फरमे से भिन्न) जो मौलिक या स्वतंत्र रूप से न बनाया गया हो, बल्कि फरमें से ढाली हुई चीज के अनुकरण और आधार पर तैयार किया गया हो। जैसे—ये मूर्तियाँ तो दरजे की ढली हुई हैं, हमें तो फरमे की ढली हुई मूर्तियाँ चाहिए।

विशेष—जो चीजें मौलिक या स्वतंत्र रूप से नये बनाये हुए साँचे में (जिसे पारिभाषिक क्षेत्रों में 'फरमा' कहते हैं) ढली होती हैं, वे रचना-कौशल, सफाई, सुंदरता आदि के विचार से अच्छी होती हैं। परंतु इस प्रकार ढली हुई चीज से अथवा उसके अनुकरण पर जो दूसरा साँचा बनाया जाता है, वह 'दरजा' कहलाता है। दरजे की ढली हुई चीजें अपेक्षया घटिया या निम्न वर्ग की समझी जाती हैं।

दरजावार—अ०य० [अ०+फा०] क्रमशः एक दरजे या श्रेणी से दूसरे दरजे या श्रेणी में होते हुए।

वि० जो दरजों या श्रेणियों के रूप में विभक्त हो। श्रेणीबद्ध।

दरजिन—स्त्री० [हिं० दरजी का स्त्री०] १. कपड़े सीने का काम करने-वाली स्त्री। २. दरजी की पत्नी। ३. दरजी जाति की स्त्री।

दरजी—पुं० [फा० दर्जी] [स्त्री० दरजिन] १. वह व्यक्ति जो दूसरों के कपड़े सीकर जीविका उपार्जित करता हो। सूचिक।

पद—दरजी की सूई=ऐसा आदमी जो कई प्रकार के काम कर सके या कई बातों में योग दे सके।

२. कपड़ा सीने का काम करनेवाले लोगों की एक जाति। ३. एक प्रकार की चिड़िया जो अपना घोंसला पत्ते सीकर बनाती है।

दरण—पुं० [सं०√दृ (विदारण)+ल्युट्+अन] १. दलन करने अर्थात् चक्की में डालकर कोई चीज पीसने की क्रिया या भाव। २. ध्वंस। विनाश।

दरणि—स्त्री० [सं०√दृ+अनि] =दरणी।

दरणी—स्त्री० [सं० दरणि+ङीष्] १. भँवर। २. लहर। ३. प्रवाह।

दरथ—पुं० [सं०√दृ+अथ] १. गुफा। २. पलायन। ३. चारे की तलाश में किसी दूसरे स्थान पर जाना।

दरद—वि० [सं० दर√दा (देना)+क] भयदायक। भयंकर।

पुं० १. काश्मीर और हिंदूकुश पर्वत के बीच के प्रदेश का प्राचीन नाम। २. उक्त देश में रहनेवाली एक पुरानी म्लेच्छ जाति। ३. [दर (किंचित) दै (शुद्धि)+क] ईंगुर। शिंगरफ।

पुं० [फा० दर्द] १. शारीरिक कष्ट। पीड़ा। २. प्रसव के समय स्त्रियों को होनेवाली पीड़ा। ३. किसी प्रकार की अप्रिय या दुःखद हार्दिक अनुभूति। जैसे—मेरो दरद न जाने कोय।—मीराँ। ४. कोई ऐसी विशेषता जो हृदय को अभिभूत कर ले। हृदय में होने-वाली एक प्रकार की मीठी टीस। जैसे—उसके स्वर या गले में दरद है।

दरदमंद—वि० [फा० दर्दमंद] [भाव० दरदमंदी] १. जिसे दर्द हो। पीड़ित। २. जो दूसरों का दर्द या पीड़ा समझकर उनके साथ सहानु-भूतिपूर्ण व्यवहार करता हो। सहानुभूति करनेवाला।

दर-दर—अव्य० [फा० दर=दरवाजा] १. दरवाजे-दरवाजे। २. प्रत्येक स्थान पर। जगह-जगह।

मुहा०—दर-दर की ठोकरें खाना=सब जगहों से तिरस्कृत होते हुए इधर-उधर घूमना। मारे-मारे फिरना।

†वि० दरदरा।

दरदरा—वि० [सं० दरण=दलना] [स्त्री० दरदरी] [भाव० दरदरापन] (दला हुआ पदार्थ) जिसके कण महीन चूर्ण के कणों की अपेक्षा कुछ मोटे तथा कठोर होते हैं। जैसे—दरदरा आटा।

दरदराना—स० [सं० दरण] १. इस प्रकार कोई चीज पीसना जिससे उसके कण दरदरे बनते हों। †२. दाँत कटकटाना।

दरदरी—स्त्री० [सं० धरित्री] पृथ्वी। भूमि। (डिं०)

वि० हिं० 'दरदरा' का स्त्री०।

दरदवंत—वि० [हिं० दरद+वंत (प्रत्य०)] १. दूसरों का दरद समझने और उसे दूर करने की मनोवृत्ति या सहानुभूति रखनेवाला। २. जिसे कष्ट या व्यथा हो। पीड़ित।

दरदवंद—वि० =दरदवंत।

दर-दालान—पुं० [फा०] एक दालान के अंदर का दूसरा दालान। दोहरा दालान।

दर-दामन—पुं० [फा०] ओढ़नी, चादर आदि का दामन अर्थात् आँचल का भाग।

दरदावन†—पुं०=दर-दामन। उदा०—बादले की सारी दरदावन जगमगी जरतारी झीने झालरि के साज पर।—देव।

दरदीला—वि० [हिं० दरद+ईला (प्रत्य०)] १. जिसमें या जिसे दरद हो। २. दूसरों का दर्द अर्थात् कष्ट या पीड़ा समझनेवाला। उदा०—नारायन दिल दरदीले।—नारायण स्वामी।

दरद्द—पुं० = दर्द।

दरध—पुं० = दर्द।

दन्न*—पुं० = दरण।

दरना†—स० [सं० दरण] १. दलना। पीसना। २. ध्वस्त या नष्ट करना। ३. शरीर पर रगड़कर लगाना। मलना। उदा०—कहूँ रत्नाकर धरैंगी मृगछाला अस धूरि हूँ दरैंगी जऊ अंग छिलि जाइगैं। —रत्ना०।

दरप*†—पुं० = दर्प।

दरपक—पुं० [सं० दर्पक] कामदेव। उदा०—ऐसे जैसे लीने संग दरपक रति है।—सेनापति।

पुं० =दर्प।

दरपन—पुं० [स्त्री० अल्पा० दरपनी] =दर्पण।

दरपना*—अ० [सं० दर्पण] १. दर्प से युक्त होना। क्रोध करना। २. अहंकार या अभिमान करना।

दरपनी—स्त्री० [हिं० दरपन] चौखटे में मढ़ा हुआ छोटा शीशा।

दर-परदा—वि० [फा० दर-पर्दः] जो परदे या आवरण के अंदर या पीछे हो। अव्य० १. परदे की आड़ या ओट में। २. दूसरों की दृष्टि बचाकर। छिपकर।

दर-पेश—अव्य० [फा०] किसी के समक्ष। सामने। जैसे—कोई मामला दर-पेश होना।

दर-बंद—पुं० [फा०] १. चहार-दीवारी। २. पुल। ३. दरवाजा।

दरबंदी—स्त्री० [फा० दर+बंदी] १. चीजों की दर या भाव निश्चित करने की क्रिया। २. जमीन की लगान की दर निश्चित करने की क्रिया। ३. अलग-अलग दर (खाने या विभागों के) निश्चित करने या बनाने की क्रिया।

†स्त्री० = दरबंद।

दरब†—पुं० [सं० द्रव्य] १. द्रव्य। धन। २. धातु। ३. चीज। वस्तु। ४. एक प्रकार की मोटी चादर।

दरबर†—वि० [?] १. दरदरा। २. (जमीन या रास्ता) जिसमें कंकर, ठीकरे आदि अधिक हों। (कहार)

दरबराना—स० [हिं० दरबर] १. थोड़ा पीसना। दरदरा करना। २. दबाना। ३. किसी को इस प्रकार भयभीत करना कि वह खंडन या विरोध न कर सके। ४. किसी प्रकार का दबाव डालना।

दरबहरा—पुं० [देश०] एक तरह की शराब।

दरबा—पुं० [फा० दर] १. काठ आदि की खानेदार अलमारी या संदूक जिसमें कबूतर, मुरगियाँ आदि रखी जाती हैं। २. दीवारों, पेड़ों आदि में का वह कोटर जिसमें पक्षी रहते हैं।

दरबान—पुं० [फा० मि० स० द्वारवान्] वह व्यक्ति जो दरवाजे पर चौकसी करता हो। द्वारपाल।

दरबानी—स्त्री० [फा०] दरबान (द्वारपाल) का काम या पद।

दरबार—पुं० [फा०] [वि० दरबारी] [भाव० दरबारदारी] १. वह स्थान जहाँ राजा या सरदार अपने मुसाहबों के साथ बैठते और लोगों के निवेदन या प्रार्थना सुनते हैं। राज-सभा।

क्रि० प्र०—करना। —लगना।—लगाना।

मुहा०—(किसी के लिए) **दरबार खुलना**=दरबार में आते-जाते रहने का अधिकार या सुभीता मिलना। (**किसी के लिए) दरबार बंद होना**=प्रायः राजा के अप्रसन्न होने के कारण दरबार में आने-जाने का निषेध होना।

२. दरबार करनेवाला प्रधान व्यक्ति अर्थात् राजा। (राज०) ३. किसी ऋषि या मुनि का आश्रम। ४. दरवाजा। द्वार। (क्व०) ५. दे० 'दरबार साहब'।

दरबारदार—पुं० = दरबारी।

दरबारदारी—स्त्री० [फा०] १. प्रायः दरबार में उपस्थित होकर राजा के पास बैठने और बात-चीत करने की अवस्था। २. किसी बड़े आदमी के यहाँ बराबर आते-जाते रहने की वह अवस्था जिसमें बड़े आदमी का चित्त प्रसन्न करके उसका अनुग्रह प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। खुशामद करने के लिए दी जानेवाली हाजिरी।

दरबार-विलासी*—पुं० [फा० दरबार+सं० विलासी] द्वारपाल। दरबान।

दरबार साहब—पुं० [फा०+अ०] अमृतसर में सिक्खों का वह प्रधान गुरुद्वारा जिसमें 'गुरुग्रन्थ साहब' का पाठ होता है और जो सिक्खों का प्रधान तीर्थ है।

दरबारी—पुं० [फा०] १. वह जो किसी के दरबार में सम्मिलित होता हो। २. बड़े आदमियों के पास बैठकर उनकी खुशामद करनेवाला व्यक्ति। दरबार-दार।

वि० १. दरबार-सम्बन्धी। दरबार का। २. दरबार के लिए उपयुक्त या शोभन।

दरबारी-कान्हड़ा—पुं० [फा० दरबारी+हिं० कान्हड़ा] संपूर्ण जाति का एक राग जो रात के दूसरे पहर में गाया जाता है।

दरबी†—स्त्री० [सं० दर्वी] कलछी। उदा०—दरबी लै कै मूढ़ जरावत हाथ कौ।—हित हरिवंश।

दरभ—पुं० [?] बंदर।

†पुं० १. = दर्भ। २. =द्रव्य।

दरम—पुं० =दिरम।

दरमन—पुं० [फा० दर्मा] १. उपचार। इलाज। २. औषध। दवा।

दर माँदा—वि० [फा० दरमाँदः] [भाव० दरमाँदगी] १. जो बहुत अधिक थककर किसी के दरवाजे पर पड़ा हो। २. दीन-हीन। बेचारा। ३. विवश। लाचार। उदा०—दरमाँदे ठाढ़े दरबार।—कबीर।

दरमा—स्त्री० [देश०] बाँस की वह चटाई जो बंगाल में झोंपड़ियों की दीवार बनाने के काम आती है।

†पुं० [सं० दाड़िम] अनार (वृक्ष और फल)।

दरमाहा—पुं० [फा० दरमाहः] हर महीने मिलनेवाला वेतन।

दरमियान—पुं० [फा०] मध्य। बीच।

अव्य० बीच या मध्य में।

दर-मियाना—वि० [फा० दरमियानः] १. बीचवाला। २. जो आकार में न बहुत बड़ा हो न बहुत छोटा। मँझला। मझोला।

दरमियानी—वि० [फा०] बीच या मध्य का।

पुं० १. वह जो दो दलों या पक्षों के बीच में पड़कर उनका झगड़ा निपटाता या मामला तै कराता हो। मध्यस्थ। २. दलाल।

दरया—पुं० = दरिया (नदी)।

दरयाई—वि०, स्त्री० =दरियाई।

दरयाफ्त—भू० कृ० =दरियाफ्त।

दररना—स० १. = दरना (दलना)। २. = दरेरना।

दरराना*—अ० [अनु०] १. वेगपूर्वक आना। २.इस प्रकार आगे बढ़ना कि आस-पास के लोगों को दबना पड़े या उन्हें धक्का लगे।

दरवाजा—पुं० [फा० दरवाज़ा] १. कुछ विशिष्ट प्रकार से बना हुआ वह मुख्य अवकाश जिसमें से होकर कमरे, कोठरी, मकान, मैदान आदि में प्रवेश करते हैं। द्वार।

मुहा०—**(किसी के) दरवाजे की मिट्टी खोद डालना** = इतनी-अधिक बार किसी के यहाँ आना-जाना कि वह खिन्न हो जाय या उसे बुरा लगने लगे।

२. वह चौखट जो उक्त अवकाश में लगा रहता है और जिसमें प्रायः किवाड़ या पल्ले जड़े रहते हैं। ३. किवाड़। पल्ला।

क्रि० प्र०—खड़खड़ाना।—खोलना।—बंद करना।—भेड़ना।

४. लाक्षणिक रूप में, कोई ऐसा उपाय या साधन जिसकी सहायता से अथवा जिसे पार करके कहीं प्रवेश किया जाता हो।

दरवी—स्त्री० [सं० दर्वी] १. कलछी। २. संड़सी। ३. साँप का फन।

दरवीकर†—पुं० = दर्वीकर।

दरवेश—पुं० [फा०] [वि० दरवेशी] १. भिखारी। २. मुसलमान साधुओं का एक संप्रदाय।

दरश—पुं० = दर्श या दर्शन।

दरशन—पुं० = दर्शन।

दरशनी—वि० [सं० दर्शन] दर्शन या देखने से संबंध रखनेवाला। जैसे—दरशनी हुंडी।

स्त्री० दर्पण।

दरशनी हुंडी—स्त्री० [हिं०] १. महाजनी लेन-देन में ऐसी हुंडी जिसे देखते ही महाजन को उसका धन चुकाना या भुगतान करना पड़े। २. ऐसी हुंडी जिसका भुगतान तुरंत करना पड़े। ३. कोई ऐसी चीज जिसे दिखाते ही कोई उद्देश्य सिद्ध हो जाय या उसके बदले में कोई दूसरी चीज मिल जाय।

दरशाना—अ० = दरसाना।

दरस—पुं० [सं० दर्श] १. देखा-देखी। दर्शन। २. भेंट। मुलाकात। ३. खूबसूरती। सुंदरता। ४. छवि। शोभा।

दरसन†—पुं० दर्शन।

दरसना*—अ० [सं० दर्शन] दिखाई पड़ना। देखने में आना।

स० = देखना।

दरसनिया†—पुं० [सं० दर्शन] १. मंदिरों में लोगों को दर्शन करानेवाला पंडा। २. शीतला आदि की शांति के लिए पूजा-पाठ करनेवाला व्यक्ति।

दरसनी*—स्त्री० [सं० दर्शन] दर्पण।

वि० = दरशनी।

दरसनीय†—वि० = दर्शनीय।

दरसाना—स० [सं० दर्शन] १. दर्शन कराना। दिखलाना। २. प्रकट या स्पष्ट रूप में सामने रखना। ३. स्पष्ट रूप में बिना कुछ कहे केवल आचरण, व्यवहार आदि के द्वारा जतलाना। झलकाना। जैसे—उन्होंने अपनी बात-चीत से दरसा दिया कि वे सहमत नहीं हैं।

†अ० दिखाई देना।

दरसावना—स० = दरसाना।

दर-हकीकत—अव्य० [फा०+अ०] हकीकत में। वास्तव में। वस्तुतः।

दरहम—वि० [फा०] अस्त-व्यस्त।

पद—**दरहम-बरहम**=अस्त-व्यस्त।

दराँती—स्त्री० [सं० दात्री] घास, फसल आदि काटने का हँसिया नाम का औजार।

मुहा०—**(खेत में) दराँती पड़ना या लगना**= फसल की कटाई का आरंभ होना।

दराई—स्त्री० = दलाई।

दराज—वि० [फा०* दराज़] [भाव० दराजी] १. बहुत बड़ा या लंबा। दीर्घ। जैसे—दराज कद, दराज दुम। २. दूर तक फैला हुआ। विस्तृत।

क्रि० वि० अधिक। बहुत।

स्त्री० [अं० ड्राअर] मेज में लगा हुआ संदूकनुमा वह लंबा खाना जिसमें वस्तुएँ आदि रखी जाती हैं और जो प्रायः खींचकर आगे या बाहर निकाला जा सकता है।

†स्त्री० = दरार।

दरार—स्त्री० [सं० दर] किसी तल के कुछ फटने पर उसमें दिखाई देनेवाला रेखाकार अवकाश। दरज।

दरारना—अ० [हिं० दरार+ना (प्रत्य०)] विदीर्ण होना। फटना।

स० विदीर्ण करना। फाड़ना।

दरारा—पुं० १. =दरेरा। २. =दरार।

दरिंदा—पुं० [फा० दरिन्दः] वह हिंसक जंतु या पशु जो दूसरे जीवों को चीर-फाड़कर खा जाता हो। जैसे—चीता, भालू, शेर आदि।

दरि—स्त्री० [सं० √दृ (विदारण)+इन्] =दरी।

दरित—भू० कृ० [सं० दर+इतच्] १. डरा हुआ। २. फटा हुआ।

दरिद—वि०, पुं० =दरिद्र।

पुं० = दरिद्रता।

दरिद्दर†—वि०, पुं० =दरिद्र।

पुं० = दरिद्रता।

दरिद्र—वि० [सं०√दरिद्रा (दुर्गति)+अच्] [स्त्री० दरिद्रा] [भाव० दरिद्रता] १. जिसके पास निर्वाह के लिए कुछ भी धन न हो। निर्धन। कंगाल। २. बहुत ही घटिया या निम्न कोटि का। ३. सारहीन। पुं० कंगाल या निर्धन व्यक्ति।

दरिद्रता—स्त्री० [सं० दरिद्र+तल्+टाप्] दरिद्र होने की अवस्था या भाव। कंगाली। निर्धनता।

दरिद्रायक—वि० [सं०√दरिद्रा +ण्वुल्—अक] = दरिद्र।

दरिद्रित—वि० [सं० √दरिद्रा+क्त] १. दरिद्र। २. दुःखी।

दरिद्री†—वि० =दरिद्र।

दरिया—पुं० [फा० दर्या] १. नदी। २. समुद्र। सागर।

†पुं० = दलिया।

वि० [हिं० दरना] १. दलनेवाला। २. नाश करनेवाला।

†पुं० = दलिया।

दरियाई—वि० [फा० दर्याई] १. दरिया अर्थात् नदी-संबंधी। दरिया या नदी का। २. नदी में या उसके आस-पास रहने या होनेवाला। जैसे—दरियाई घोड़ा। ३. समुद्र-संबंधी। समुद्र का।
स्त्री० पतंग उड़ाने में वह क्रिया जिसमें एक आदमी उसे पकड़कर पहले कुछ दूर ले जाता है और तब वहाँ से ऊपर आकाश में छोड़ता है। छुड़ैया।
स्त्री० [फा० दाराई] एक प्रकार का धारीदार रेशमी कपड़ा। (पश्चिम) उदा०—केसरी चीर दरयाई को लेंगो।—मीराँ।

दरियाई घोड़ा—पुं० [फा० दरियाई+हिं० घोड़ा] अफ़्रीका के जंगलों में मिलनेवाला घोड़े के आकार का एक तरह का जंगली जानवर जो नदियों के किनारे झाड़ियों में रहता है।

दरियाई नारियल—पुं० [फा० दरियाई+हिं० नारियल] १. समुद्र के किनारे होनेवाला एक प्रकार का नारियल (वृक्ष) जिसके फल साधारण नारियल से बहुत बड़े होते हैं। २. उक्त वृक्ष का फल।

दरियादास—पुं० [?] विक्रमी १७वीं-१८वीं शती में वर्तमान एक हिंदू (परंतु जन्म से मुसलमान) संत जिन्होंने दरिया नामक संप्रदाय चलाया था।

दरियादासी—पुं० [हिं० दरियादास+ई० (प्रत्य०)] दरियादास का चलाया हुआ पंथ जिसमें निर्गुण की उपासना का विधान है।

दरियादिल—वि० [फा०] [भाव० दरियादिली] जिसका हृदय नदी की तरह विशाल और उदार हो। परम उदार।

दरियादिली—स्त्री० [फा०] उदारता।

दरियाफ्त—भू० कृ० [फा० दर्याफ़्त] जिसके संबंध में पूछ-ताछ करके जानकारी प्राप्त कर ली गई हो। पता लगाकर जाना हुआ।

दरिया-बुर्द—पुं० [फा०] ऐसा खेत या जमीन जो किसी नदी के बहाव या बाढ़ के कारण कट या डूबकर खराब या निरर्थक हो गयी हो।

दरियाव†—पुं० १. =दरिया (नदी)। २. =दरिया (समुद्र)।

दरी—वि० [सं० दरि+ङीप्] १. फाड़नेवाला। विदीर्ण करनेवाला। २. डरनेवाला। डरपोक।
स्त्री० [सं०दरि+ङीप्] १. खोह। गुफा। २. पहाड़ के नीचे का वह खड्ड जिसमें कोई नदी गिरती या बहती हो।
स्त्री० [सं० दर=चटाई] मोटे सूतों का बुना हुआ मोटे दल का एक प्रकार का बिछौना। शतरंजी।
स्त्री० [फा०] ईरान देश की एक प्राचीन भाषा।

दरीखाना—पुं० [फा० दर+खाना] १. ऐसा कमरा या मकान जिसके चारों ओर बहुत से दरवाजे हों। २. बारह-दरी।

दरीचा—पुं० [फा० दरीचः] [स्त्री० दरीची] १. छोटा दरवाजा। २. खिड़की। ३. रोशनदान।

दरीबा—पुं० [हिं० दर या दरबा ?] १. वह स्थान जहाँ एक ही तरह की बहुत-सी चीजें इकट्ठी बिकती हों। जैसे—पान का दरीबा। २. बाजार।

दरी-भृत्—पुं० [सं० दरी√भृ (धारण करना)+क्विप्] पर्वत। पहाड़।

दरी-मुख—पुं० [ष० त०] १. गुफा का मुख। २. राम की सेना का एक बंदर।

दरती—स्त्री० [सं० दर-यंत्र] छोटी चक्की।
† स्त्री० = दराँती।

दरेक—पुं० [सं० द्रेक] बकायन (वृक्ष)।

दरेग—पुं० [अं० दरेग] कसर। त्रुटि।

दरेज—स्त्री० [?] एक प्रकार की छपी मलमल या छींट।

दरेर—स्त्री० [हिं० दरेरना] १. दरेरने की क्रिया या भाव। २. दरेरे जाने के कारण होनेवाला क्षत या क्षति। ३. नाश। बरबादी।

दरेरना—स० [सं० दरण] १. किसी पदार्थ के तल के साथ इस प्रकार अपना तल रगड़ते हुए उसे दबाना कि उसमें कुछ क्षत हो जाय अथवा उसकी कुछ क्षति हो। २. रगड़। ३. नाश करना।

दरेरा—पुं० [सं० दरण] १. दरेरने के लिए दिया जानेवाला धक्का। २. दबाव। चाप। ३. बहाव का तोड़।

दरेस—स्त्री० [अं० ड्रेस] एक प्रकार की फूलदार छींट।
वि० [भाव० दरेसी] जो बना-बनाया तैयार हो और तुरंत काम में लाया जा सके।

दरेसी—स्त्री० [अं० ड्रेसिंग] १. कोई चीज हर तरह से उपयुक्त और काम में आने योग्य बनाने की क्रिया या भाव। तैयारी। २. इमारत के काम में, ईंटों के फरश में, मसाले से दरज भरना।

दरैया†—पुं० [सं० दरण] १. दलनेवाला। जो दले। २. ध्वस्त या नष्ट करनेवाला।

दरोग—वि० [अ० दुरोग़] असत्य। झूठा।
पुं० असत्य कथन।

दरोग-हलफी—स्त्री० [अ०दुरोग हल्फ़ी] १. सच बोलने की कसम खाकर या शपथ लेकर भी झूठ बोलना जो विधिक क्षेत्रों में दंडनीय अपराध माना गया है।

दरोगा—पुं० = दारोगा।

दरोदर—पुं० [सं० दुरोदर (पृषो० सिद्धि)] १. जुआरी। २. पासा।

दर्कार—स्त्री० = दरकार।

दर्गाह—स्त्री० = दरगाह।

दर्ज—वि० [अ०] जो स्मृति, हिसाब-किताब आदि के लिए अपने उपयुक्त स्थान (कागज, किताब, बही आदि) पर लिखा गया हो।
† स्त्री० दे० 'दरज'।

दर्जन—पुं० =दरजन।
स्त्री० =दरजिन।

दर्जा—पुं० =दरजा।

दर्जावार—वि०, क्रि० वि० =दरजावार।

दर्जिन—स्त्री० =दरजिन।

दर्जी—पुं० =दरजी।

दर्द—पुं० =दरद (कष्ट या पीड़ा)।

दर्दमंद—वि० =दरदमंद।

दर्दर—वि० [सं०√दृ (विदारण)+यङ्+अच् (पृषो० सिद्धि)] फटा हुआ।
पुं० १. थोड़ा टूटा या चटका हुआ कलसा। २. पहाड़।

दर्दरीक—पुं० [सं०√दृ+णिच्+ईकन्] १. मेंढक। २. बादल। ३. एक तरह का बाजा।

दर्दी—वि० = दरदमंद।

दर्दुर–पुं० [सं०√दृ +उरच्,(नि० सिद्धि)] १. मेढक। २. बादल। मेघ। ३. अबरक। अभ्रक। ४. एक प्रकार का पुराना बाजा। ५. कवित्त का एक प्रकार या भेद। ६. बहुत से गाँवों का समूह। ७. नगाड़े का शब्द। ८. एक राक्षस का नाम। ९. पश्चिमी घाट पर्वत का एक भाग। मलय पर्वत से लगा हुआ एक पर्वत। १० उक्त पर्वत के आस-पास का प्रदेश।

दर्दुरक—पुं० [सं० दर्दुर +कन्] १. मेंढक। २. [दर्दुर√कै (शब्द) +क] २. एक तरह का बाजा।

दर्दुरच्छदा—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] ब्राह्मी बूटी।

दर्द्रु— पुं० [सं० √दरिद्रा (दुर्गति)+उ, नि० सिद्धि] दाद (रोग)।

दर्प—पुं० [सं०√दृप् (गर्व करना) +घञ्] १. अभिमान। घमंड। २. वह तेजस्वितापूर्ण राग या क्रोध जो स्वाभिमान पर अनुचित आघात होने या उसे ठेस लगने पर उत्पन्न होता है और जिसके फल-स्वरूप वह अभिमान तथा दृढ़तापूर्वक प्रतिपक्षी को फटकार बताता है। जैसे—महिला ने बहुत दर्प से उस गुंडे की भर्त्सना की। ३. अहंकार करनेवाले के प्रति मन में होनेवाला क्षणिक विराग। मान। ४. अक्खड़पन। उद्दंडता। ५. वैभव, शक्ति आदि का आतंक। रोब। ६. कस्तूरी।

दर्पक—वि० [सं० √दृप्+ण्वुल्—अक] दर्प करनेवाला।
पुं० [√दृप्+णिच्+ण्वुल] कामदेव।

दर्पण—पुं० [सं०√दृप् (चमकना)+णिच्+ल्यु—अन] १. मुँह देखने का शीशा। आईना। २. आँख। नेत्र। ३. ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक। ४. उत्तेजित या उद्दीप्त करने की क्रिया या भाव।

दर्पन—पुं० =दर्पण।

दर्पित—भू० कृ० [सं० दृप् (गर्व)+णिच्+क्त] १. जो दर्प से युक्त हुआ हो। जिसने दर्प दिखलाया हो। २. अभिमानी। घमंडी।

दर्पी (र्पिन्)—वि० [सं० दर्प + इनि] १. जिसमें दर्प हो। जो दर्प दिखलाता हो। २. अभिमानी। घमंडी।

दर्ब*—पुं० [सं० द्रव्य] १. द्रव्य। धन। २. चीज। पदार्थ। ३. धातु।

दर्बान—पुं० =दरवान।

दर्बार—पुं० =दरबार।

दर्बारी—पुं० =दरबारी।

दर्बी—स्त्री० =दरवी।

दर्भ—पुं० [सं०√दृभ् +घञ्] १. एक प्रकार का कुश। डाभ। २. कुश का बना हुआ बैठने का आसन।

दर्भ-केतु—पुं० [ब० स०] राजा जनक के भाई, कुशध्वज।

दर्भट—पुं० [सं०√दृभ् (निर्माण करना)+अटन् (बा०)] घर का वह कमरा जिसमें गुप्त रूप से विचार-विमर्श आदि किया जाता हो।

दर्भण—पुं० [सं०√दृभ् +ल्युट्—अन] कुश की बनी हुई चटाई।

दर्भ-पत्र—पुं० [ब० स०] काँस नामक घास।

दर्भांकुर—पुं० [दर्भ-अंकुर, ष० त०] डाभ का नोकीला अंग।

दर्भासन—पुं० [दर्भ-आसन, मध्य० स०] दर्भ या कुश का बना हुआ आसन। कुशासन।

दर्भाह्वय—पुं० [सं० दर्भ+आ√ह्वे (बुलाना)+श] मूंज।

दर्भेषिका—स्त्री० [दर्भ-ईषिका, ष० त०] कुश का डंठल।

दर्मियान—पुं० =दरमियान।

दर्मियानी—वि० =दरमियानी।

दर्याव†—पुं० =दरिया (नदी)।

दर्रा—पुं० [फा० दर्रः] पहाड़ों के बीच का सँकरा तथा दुर्गम मार्ग।
पुं० [हिं० दलना] १. किसी चीज का मोटा पीसा हुआ चूर्ण। जैसे—गेहूँ या दाल का दर्रा। २. ऐसी मिट्टी जिसमें बहुत-से छोटे-छोटे कंकड़-पत्थर हों। (ऐसी मिट्टी प्रायः सड़कों पर बिछाई जाती है।)
† पुं० = दरार।

दर्राज—स्त्री० [फा० दराज=लंबा] बढ़इयों का एक उपकरण जिससे वे लकड़ी सीधी करते हैं।

दर्राना—अ० [अनु० दड़-दड़, धड़-धड़] तेजी से और बेधड़क चलते हुए आगे बढ़ना या कहीं प्रवेश करना। जैसे—दर्राते हुए किसी के घर में घुस या चले जाना।

दर्व—पुं० [सं०√दृ (विदारण)+व] १. हिंसा करनेवाला मनुष्य। २. राक्षस। ३. उत्तरी पंजाब के एक प्रदेश का पुराना नाम। ४. उक्त देश में बसनेवाली एक प्राचीन जाति।
† पुं० = द्रव्य।

दर्वरीक—पुं० [सं०√दृ +ईकन्, नि० सिद्धि] १. इंद्र। २. वायु। ३. एक बाजा।

दर्वा—स्त्री० [सं०] उशीनर की पत्नी।

दर्विक—पुं० [सं०√दृ+विन्+कन्] करछुल।

दर्विका—स्त्री० सं० दर्विक+टाप्] १. घी की बत्ती जलाकर बनाया जानेवाला काजल। २. बनगोभी।

दर्विदा—स्त्री० [सं० दर्वि√दो (खण्डन)+ड+टाप्] कठफोड़वे की तरह की एक चिड़िया।

दर्वी—स्त्री० [सं० दर्वि+ङीष्] १. करछी। कलछी। २. साँप का फन।

दर्वी-कर—पुं० [सं० ब० स०] फनवाला साँप।

दर्श—पुं० [सं०√दृश् (देखना)+घञ्] १ दर्शन। २. अमावास्या तिथि जिसमें चंद्रमा और सूर्य का संगम होता है; अर्थात् वे एक ही दिशा में रहते हैं। ३. अमावास्या के दिन होनेवाला यज्ञ। ४. चांद्र मास की द्वितीया तिथि। दूज। ५. नया चाँद।

दर्शक—वि० [सं०√दृश् +ण्वुल्—अक] १. (वह) जो कोई चीज देख रहा हो अथवा देखने के लिए आया हो। जैसे—खेल आरंभ होने से पहले मैदान दर्शकों से भर चुका था। २. [दृश्+णिच्+ण्वुल्] दिखलाने या दर्शानेवाला। (यौ० के अंत में) जैसे—मार्ग-दर्शक।
पुं० १. वह व्यक्ति या व्यक्तियों का वह समूह जो कहीं बैठकर कोई घटना, तमाशा दृश्य आदि देखता हो। २. द्वारपाल। दरबान।

दर्शन—पुं० [सं० √दृश्+ल्युट्—अन्] १. देखने की क्रिया या भाव। २. नेत्रों द्वारा होनेवाला ज्ञान, बोध या साक्षात्कार। ३. प्रेम, भक्ति और श्रद्धापूर्वक किसी को देखने की क्रिया या भाव। जैसे—किसी देवता या महात्मा के दर्शन के लिए कहीं जाना।
क्रि० प्र०—करना।—देना।—पाना।—मिलना।—होना।
विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग संस्कृत के आधार पर बहुधा बहुवचन में ही होता है। जैसे—अब आप के दर्शन कब होंगे?

४. आपस में होनेवाला आमना-सामना या देखा-देखी। भेंट। मुलाकात। ५. आँख या दृष्टि के द्वारा होनेवाला ज्ञान या बोध। ६. आँख। नेत्र। ७. स्वप्न। ८. अक्ल। बुद्धि। ९. धर्म या उसके तत्त्व का ज्ञान। १०. दर्पण। शीशा। ११. रंग। वर्ण। १२. नैतिक गुण। १३. विचार या उसके आधार पर स्थिर की हुई सम्मति। १४. किसी को कोई बात अच्छी तरह समझाते हुए बतलाना। १५. कोई बात ध्यान या विचारपूर्वक देखना और अच्छी तरह समझना। १६. वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें प्राणियों को होनेवाले ज्ञान या बोध, सब तत्त्वों तथा पदार्थों के मूल और आत्मा, परमात्मा प्रकृति, विश्व, सृष्टि आदि से संबंध रखनेवाले नियमों, विधानों, सिद्धांतों, आदि का गंभीर अध्ययन, निरूपण तथा विवेचन होता है। सब बातों के रहस्य, स्वरूप आदि का ऐसा विचार जो तत्त्व, नियम आदि स्थिर करता हो। दर्शन-शास्त्र।

विशेष—तर्क और युक्ति के आधार पर व्यापक दृष्टि से सब बातों के मौलिक नियम ढूँढ़नेवाले जो शास्त्र बनाते हैं, उन सब का अंतर्भाव दर्शन में होता है। हमारे यहाँ सांख्य, योग, वैशेषिक, न्याय, मीमांसा (पूर्व मीमांसा) और वेदांत (उत्तर मीमांसा) ये छः दर्शन बने हैं, जिनमें अलग-अलग ढंग से उक्त सब बातों का विचार और विश्लेषण हुआ है। इनके सिवा चार्वाक, बौद्ध, आर्हत, पाशुपत, शैव आदि और भी अनेक गौण तथा सांप्रदायिक दर्शन हैं। अनेक पाश्चात्य देशों में भी उक्त सब बातों की जो बिलकुल स्वतंत्र रूप से और गहरी छान-बीन हुई है, वह भी दर्शन के अंतर्गत ही है।

१७. किसी प्रकार की बड़ी और महत्त्वपूर्ण क्रिया या ज्ञान के क्षेत्र के सभी मौलिक तत्त्वों, नियमों, सिद्धान्तों आदि का होनेवाला विचार-पूर्ण अध्ययन और विवेचन। जैसे—जीवन, धर्म, नीति शास्त्र आदि का दर्शन, पाश्चात्य दर्शन, भारतीय दर्शन आदि। १८. उक्त विषय पर लिखा हुआ कोई प्रमाणिक और महत्त्वपूर्ण ग्रंथ। १९. कोई विशिष्ट प्रकार की तात्त्विक या सैद्धांतिक विचार-प्रणाली। जैसे—गांधी-दर्शन।

दर्शन-प्रतिभू—पुं० [च० त०] वह प्रतिभू या जमानतदार, जो किसी व्यक्ति की किसी विशिष्ट समय तथा स्थान पर उपस्थित होने की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेता हो।

दर्शनीय—वि० [सं०√दृश्+अनीयर्] १. जिसके दर्शन करना उचित या योग्य हो। २. देखने योग्य। मनोहर। सुंदर।

दर्शनी हुंडी—स्त्री० = दरशनी हुंडी।

दर्शाना—स० = दरसाना।

दर्शित—भू० कृ० [सं०√दृश्+णिच्+क्त] जो दिखलाया गया हो। दिखलाया हुआ।

दर्शी (र्शिन्)—वि० [सं०√दृश्+णिनि] १. देखनेवाला। जैसे—आकाशदर्शी। २. मनन या विचार करनेवाला। जैसे—तत्त्वदर्शी।

दर्स—पुं० [अ०] १. पठन। पढ़ना। २. उपदेश। ३. शिक्षा।

दल—पुं० [सं०√दल् (भेद करना)+अच्] १. किसी वस्तु के उन दो सम खंडों में से हर एक जो एक दूसरे से स्वभावतः जुड़े हों पर जरा-सा दबाव पड़ने से अलग हो जायँ। जैसे—अरहर, उरद, चने आदि के दानों के दो दल। २. पौधों के कोमल छोटे पत्ते। जैसे—तुलसी-दल। ३. फूलों के वे अंग जो छोटे कोमल पत्ते के रूप में होते हैं। पंखड़ी। जैसे—कमल या गुलाब के फूल के दल। ४. किसी बड़ी इकाई के अलग-अलग छोटे खंड या टुकड़े जो स्वतंत्र रूप से काम करते हों। जैसे—सैनिकों के कई दल नगर में घूम रहे हैं। ५. ऐसे व्यक्तियों का वर्ग या समूह जो किसी विशिष्ट (अच्छे चाहे बुरे) उद्देश्य की सिद्धि के लिए संघटित हुआ हो और साथ मिलकर काम करता हो। (पार्टी) जैसे—डाकुओं या स्वयंसेवकों का दल। ६. एक ही जाति या वर्ग के प्राणियों का गरोह या झुंड। जैसे—कबूतरों, च्यूँटियों या बंदरों का दल। ७. आधुनिक राजनीति में, किसी विशिष्ट विचार-धारा के अनुयायियों का वह संघटित समूह जो देश, संस्था आदि का शासन सूत्र संभालने के लिए चुनाव आदि लड़ता है। ८. परत की तरह फैली हुई चीज की मोटाई। जैसे—दल का शीशा। ९. फुंसी, फोड़े आदि के आस-पास कुछ दूर तक होनेवाली वह सूजन जिससे वहाँ का चमड़ा मोटा हो जाता है। जैसे—इस फोड़े ने बहुत दल बाँध रखा है।

क्रि० प्र०—बाँधना।

१०. अस्त्र के ऊपर का आच्छादन। कोष। म्यान। ११. धन। दौलत। १२. जलाशयों में होनेवाला एक प्रकार का तृण। १३. तमालपत्र।

दलक—स्त्री० [हिं० दलकना] १. दलकने की क्रिया या भाव। २. कुछ देर तक होता रहनेवाला बहुत हलका कंप। थरथराहट। ३. रह-रह-कर होनेवाली हलकी पीड़ा। टीस।

पुं० छुरी की तरह का एक उपकरण जिससे राजगीर नक्काशी के अंदर का मसाला साफ करते हैं।

स्त्री० [फा०] गुदड़ी।

दलकन—स्त्री० [हिं० दलकना] १. दलकने की क्रिया या भाव। दलक। २. थरथराहट। ३. आघात आदि के कारण लगनेवाला झटका।

दलकना—अ० [सं० दल या दलन] १. किसी चीज के ऊपर के दल या मोटी तह का रह-रहकर कुछ ऊपर उठते और नीचे गिरते हुए काँपना या हिलना। जैसे—चलने में तोंद दलकना। २. डर से काँपना या थर्राना। ३. उद्विग्न या विकल होना। घबराहट से बेचैन होना। उदा०—दलकि उठेउ सुनि हृदै कठोरू। —तुलसी।

†अ० दरकना।

स० [सं० दलन] डराकर या भयभीत करके कँपाना।

दल-कपाट—पुं० [ब० स०] हरी पँखड़ियों का वह कोश जिसमें कली बंद रहती है।

दल-कोश—पुं० [ब० स०] कुंद का पौधा।

दल-गंजन—वि० [सं०√गञ्ज् (नाश करना)+ल्यु—अन, ष० त०] अनेक दलों या व्यक्तियों के समूहों को नष्ट करने या मारनेवाला, अर्थात् बहुत बड़ा वीर।

पुं० एक प्रकार का धान।

दल-गंध—पुं० [ब० स०] सप्तपर्ण वृक्ष। सतिवन।

दल-घुसरा—पुं० [हिं० दाल+घुसड़ना] वह रोटी जिसमें दाल या पीठी भरी हो।

दल-थंभ†—पुं० [सं० दल+हिं० थामना] सेनापति।

दलथंभन—पुं० [हिं० दल+थामना] १. कमखाब बुननेवालों का एक

औजार जो बाँस का होता है और जिसमें अँकुड़ा और नकशा बँधा रहता है। २. दलथंभ।

दल-दल—स्त्री० [सं० दलाढ्य] १. बहुत गीला और मुलायम निम्नतल जिसमें मिट्टी के साथ इतना अधिक पानी मिला हो कि उस पर आदमी का बोझ टिक या ठहर न सके, बल्कि नीचे धँस जाय। (मार्श) २. लाक्षणिक रूप में, वह विकट या संकटपूर्ण स्थिति जिसमें हर प्रकार से खराबी या बुराई होती हो तथा जिससे जल्दी छुटकारा या बचाव न हो सके।
क्रि० प्र०—में पड़ना (या फँसना)।
स्त्री० [अनु०] कहारों की परिभाषा में, बुड्ढी स्त्री (जो डोली या पालकी पर सावर हो)।

दलदला—वि० [हिं० दलदल] [स्त्री० दलदली] (प्रदेश) जिसमें दलदल बहुत अधिक हो।

दलदार—वि० [हिं० दल+फा० दार] जिसकी तह, दल या परत मोटी हो। जैसे—दलदार आम।

दलन—पुं० [सं०√दल् (भेदन)+ल्युट्—अन] [वि० दलित] १. पीसकर छोटे-छोटे टुकड़े करने की क्रिया। चूर-चूर करने का काम। २. ध्वंस। विनाश। संहार।
वि० ध्वंस या नाश करनेवाला। (यौ० के अंत में) जैसे—दुष्ट-दलन।

दलना—स० [सं० दलन] १. चक्की, जाँते आदि में डालकर बीज आदि पीसना। जैसे—गेहूँ या जौ दलना। २. दरदरा पीसना। ३. बुरी तरह से कुचल, मसल या रौंदकर नष्ट करना। ४. बहुत अधिक कष्ट देना या दमन करना। ५. पत्तियाँ, फूल आदि तोड़ना। ६. झटके से कई खंड या टुकड़े करना। (क्व०)

दलनि—स्त्री० = दलन।

दल-निर्मोक—पुं० [सं० ब० स०] भोजपत्र का पेड़।

दलप—पुं० [सं० दल√पा (रक्षण)+क] १. दल का नायक, प्रधान या मुखिया। दलपति। २. [√दल्+कपन्] अस्त्र। ३. सोना। स्वर्ण।

दल-पति—पुं० [ष० त०] १. दल का नायक। यू-थप। २. सेनानायक।

दल-पुष्पा—स्त्री० [सं० ब० स०+टाप्] केतकी का पौधा।

दल-बंदी—स्त्री० [हिं० दल+फा० बंदी] १. दलों का निर्माण तथा संघटन करना। (क्व०) २. किसी दल के अंतर्गत अथवा किसी संस्था के कार्यकर्ताओं में प्रायः फूट, राग-द्वेष के कारण छोटे-छोटे समूह बनाने की क्रिया या भाव।

दल-बल—पुं० [सं० मध्य० स०] १. लाव-लश्कर। फौज। २. अनुयायी, संगी-साथी, नौकर-चाकर आदि। जैसे—मंत्री महोदय दल-बल सहित पहुँचे थे।

दलबा—पुं० [हिं० दलना] वह अशक्त पक्षी (जैसे—तीतर, बटेर आदि) जिसे उसका स्वामी दूसरे पक्षियों से लड़ाकर और मार खिलाकर दूसरे पक्षियों का साहस बढ़ाते हैं।

दल-बादल—पुं० [हिं० दल+बादल] १. बादलों का समूह। २. किसी के साथ चलने या रहनेवाले बहुत से लोगों का समूह। ३. बहुत बड़ी सेना। ४. एक प्रकार का बहुत बड़ा खेमा या शामियाना।

दलमलना—स० [हिं० दलना+मलना] १. किसी चीज को खूब दलना और मलना। २. अच्छी तरह कुचलना, मसलना या रौंदना। ३. पूरी तरह से ध्वस्त या नष्ट करना।

दलमलाना—स० हिं० 'दलमलना' का प्रे० रूप।
अ० = दलमलना।

दलवाना—स० [हिं० दलना का प्रे० रूप] १. दलने का काम दूसरे से कराना। २. ध्वस्त कराना। ३. दमन कराना।

दलवाल—पुं० [सं० दलपाल] सेनापति। फौज का सरदार।

दलवैया—वि० [हिं० दलना] दलनेवाला।

दलसारिणी—स्त्री० [सं० सार+इनि+ङीप्, दल-सारिणी, स० त०] केमुआ। बंडा। कच्चू।

दल-सूचि—पुं० [सं० ब० स०] १. ऐसा पौधा जिसके पत्तों में काँटे हों। २. [ष० त०] उक्त प्रकार के पत्तों का काँटा। ३. किसी प्रकार का काँटा।

दलसूसा†—स्त्री० [सं० दलत्रसा] पत्तों की नसें। दलों की शिराएँ।

दलहन—पुं० [हिं० दाल+अन्न] ऐसे बीज जिनकी दाल बनाई जाती है। जैसे—अरहर, उड़द, चना, मूंग आदि।

दलहरा—पुं० [हिं० दाल+हारा] १. वह जो दलहन पीसकर दाल बनाता हो। २. केवल दालें बेचनेवाला रोजगारी।

दलहा—पुं० [सं० थल, हिं० थाल्हा] थाला। आलवाल।

दलाढक—पुं० [सं० दल-आढ़क, तृ० त०] १. जंगली तिल। २. गेरू। ३. नागकेशर। ४. सिरिस का पेड़। ५. कुंद का पौधा या फूल। ६. एक प्रकार का पलाश जिसे गजकर्णी भी कहते हैं। ७. फेन। ८. खाईं। ९. बवंडर। १० गाँव का मुखिया। ११. हाथी का कान।

दलाढ्य—पुं० [सं० दल-आढ्य, तृ० त०] नदी के किनारे का कीचड़।

दलादली—स्त्री० [सं० दल+अनु०] आपस में होनेवाली दल-बंदियाँ और उनकी लाग-डाँट या होड़।

दलान†—पुं० = दालान।

दलाना—स० [हिं० दलना का प्रे० रूप] कोई चीज दलने में किसी को प्रवृत्त करना।
†अ० दला जाना।

दलामल—पुं० [सं० दल-अमल, तृ० त०] १. दौना। २. मरूआ। मैनफल।

दलाम्ल—पुं० [सं० दल-अम्ल, ब० स०] लोनिया साग। अमलोनी।

दलारा—पुं० [देश०] एक तरह का झूलनेवाला बिस्तरा। (लश०)

दलाल—पुं० [अ० दल्लाल] १. वह व्यक्ति जो किसी चीज के लेन-देन के समय क्रेता और विक्रेता के बीच में पड़कर उस वस्तु का दर या भाव निश्चित कराता या सौदा पक्का कराता हो और एक या दोनों पक्षों से अपनी सेवा के प्रतिफल में कुछ धन लेता हो। २. वह व्यक्ति जो कामुक पुरुषों को पर-स्त्रियों से मिलाता और उनसे धन प्राप्त करता है। ३. जाटों, पारसियों आदि में एक जाति या वर्ग।

दलाली—स्त्री० [फा०] १. दलाल का काम। क्रेता-विक्रेता के बीच में पड़कर सौदा तै कराने का काम। २. दलाल को उसके परिश्रम या सेवा के बदले में मिलनेवाला धन या पारिश्रमिक।

दलाह्वय—पुं० [सं० दल-आह्वय, ब० स०] तेजपत्ता।

दलि—स्त्री० [सं०√दल् (भेदन)+इन्] = दलनी।

दलिक—पुं० [सं० दलि+कन्] काष्ठ।

दलित—भू० कृ० [सं०√दल्+क्त] १. जिसका दलन हुआ हो। २. जो कुचला, दला, मसला या रौंदा गया हो। ३. टुकड़े-टुकड़े किया हुआ। चूर्णित। ४. जो दबाया गया हो अथवा जिसे पनपने या बढ़ने न दिया गया हो। हीन-अवस्था में पड़ा हुआ। ५. ध्वस्त या नष्ट किया हुआ।

दलित वर्ग—पुं० [सं०] समाज का वह निम्न-तम वर्ग जो उच्च वर्ग के लोगों के उत्पीड़न के कारण आर्थिक दृष्टि से बहुत ही हीन अवस्था में हो। जैसे—दास प्रथावाले देशों में दास, सामंत-शाही व्यवस्था में कृषक, या पूँजीवादी व्यवस्था में मजदूर दलित वर्ग में माने जाते हैं। (डिप्रेस्ड क्लासेज)

दलिद्दर—वि० [सं० दरिद्र] १. दरिद्र। २. बिलकुल गया-बीता और बहुत ही निम्न कोटि का। परम निकृष्ट।

पुं० १. दरिद्रता। २. कूड़ा-करकट। झाड़-झंखाड़। बिलकुल निकम्मी और रद्दी चीजें। जैसे— दीवाली पर घर का सारा दलिद्दर निकाल कर फेंका जाता है।

दलिद्र—पुं० = दरिद्र।

दलिया—पुं० [हिं० दलना] १. किसी खाद्यान्न के बीजों का पीसा हुआ मोटा या दानेदार चूर्ण। २. उक्त का दूध आदि में पकाया हुआ गाढ़ा रूप।

दली (लिन्)—वि० [सं० दल+इनि] १. जिसमें दल या मोटाई हो। २. जिसमें दल या पत्ते हों। ३. जो किसी दल (वर्ग या समूह) में मिला हुआ या उसके साथ हो।

दलीप—पुं० = दिलीप।

दलील—स्त्री० [अ०] १. कोई ऐसी पूर्ण उक्ति या विचार जिससे किसी बात या मत का यथेष्ट समर्थन या खंडन होता हो। युक्ति। २. वाद-विवाद। बहस।

दले-गंधि—पुं० [सं० ब० स०] सप्तपर्णी वृक्ष।

दलेपंज—पुं० [हिं० ढलना+पंजा] वह घोड़ा जिसकी उमर ढल गई हो या ढल चली हो।

वि० जिसकी उमर ढल गई हो या ढल चली हो।

दलेल—स्त्री० [अ० ड्रिल] १. सिपाहियों को दिया जानेवाला एक प्रकार का दंड या सजा जिसमें उन्हें पूरी वर्दी पहनाकर और कई प्रकार के हथियारों से युक्त करके टहलाते हैं। २. वह कवायद जो सजा की तरह पर कराई जाती हो।

मुहा०—दलेल बोलना= सजा की तरह पर कवायद करने या उक्त प्रकार से टहलते रहने की आज्ञा या दंड देना।

दलैं†—अव्य० [अनु०] फीलवानों का एक शब्द जिसका उच्चारण वे हाथी से उसका मुँह खुलवाने के लिए करते हैं।

दलैया—पुं० [हिं० दलना] १. दलन या नाश करनेवाला। २. दलने या पीसनेवाला।

दल्भ—पुं० [सं० दल् (भेदन) +भ] १. छल। धोखा। प्रतारणा। २. पाप। ३. चक्र।

दल्भि—पुं० [सं०√दल्+भि] १. शिव। २. इंद्र का वज्र।

दल्लाल—पुं० = दलाल।

दल्लाला—स्त्री० [अ०] कुटनी।

दल्लाली—स्त्री० =दलाली।

दवँगरा—पुं० [सं० दव+अंगार?] पावस ऋतु की पहली वर्षा।

दवँरी—स्त्री० = दवनी।

दव—पुं० [सं०√दु (जलाना)+अच्] १. वन। जंगल। २. जंगल में प्राकृतिक रूप से लगनेवाली आग। दावाग्नि। ३. अग्नि। आग।

दवथु—पुं० [सं०√दु+अथुच्] १. जलन। दाह। २. कष्ट। दुःख। पीड़ा।

दवन—पुं० १. = दमन। २. =दमनक (दौना)।

दवन-पापड़ा—पुं० [सं० दमनपर्पट] पित पापड़ा।

दवना*—स० [सं० दव] जलाना।

अ० = जलना।

† पुं० = दौना।

दवनी—स्त्री० [सं० दमन] कटी हुई फसल को इस प्रकार बैलों से रौंदवाना जिससे बीज डंठलों से अलग हो जायँ। मिसाई। मिंड़ाई।

दवरिया†—स्त्री० = दवारि।

दवा—स्त्री० [फा०] १. वह वस्तु जिससे कोई रोग या व्यथा दूर हो। औषध। २. कोई ऐसा उपचार या चिकित्सा जिससे रोग शांत हो। ३. किसी प्रकार का अनिष्ट, दोष या बुराई दूर करने या किसी बिगड़ी हुई बात को ठीक करने का उपाय, युक्ति या साधन। जैसे—इस बेवकूफी की कोई दवा नहीं है।

* स्त्री० [सं० दव] दावानल।

दवाई†—स्त्री० =दवा (ओषधि)।

दवाईखाना—पुं० = दवाखाना।

दवाखाना—पुं० [फा०] १. वह स्थान जहाँ ओषधियाँ बनती या बिकती हों। २. अस्पताल। चिकित्सालय।

दवागि*—स्त्री० [सं० दावाग्नि] वनाग्नि। दावानल। दावाग्नि।

दवागिन—स्त्री० = दावाग्नि।

दवाग्नि—स्त्री० [सं० दव-अग्नि, कर्म० स०] वन में लगनेवाली आग। दावानल।

दवात—स्त्री० [अ०] १. मिट्टी, धातु, शीशे आदि का वह छोटा पात्र जिसमें लिखने की स्याही घोली जाती है। मसि-पात्र। २. स्याही से भरा हुआ उक्त पात्र।

दवान*—पुं० [देश०] एक तरह का अस्त्र।

दवानल—पुं० [सं० दव-अनल, कर्म० स०] दावाग्नि।

दवामी—वि० [अ०] बराबर बना रहनेवाला। स्थायी। चिरस्थायी।

दवामी काश्तकार—पुं० [अ० दवामी+फा० काश्तकार] वह जिसे स्थायी रूप से काश्तकारी का अधिकार प्राप्त हो।

दवामी पट्टा—पुं० [अ० दवामी+हिं० पट्टा] वह पट्टा जिसके अनुसार स्थायी रूप से किसी चीज के भोग का अधिकार किसी को मिले।

दवामी बंदोबस्त—पुं० [फा०] वह अवस्था जिसमें जमीन की सरकारी मालगुजारी चिरकाल के लिए निश्चित हो जाती है।

दवार—स्त्री० = दवारि।

दवारि—स्त्री० [सं० दावाग्नि, हिं० दवागि] १. वनाग्नि। दावानल। २. संताप।

दश (न्)—वि० [सं०√दंश् (हिंसा करना)+कनिन् (बा०)] दस। (संख्या)

दश-कंठ—वि० [ब० स०] दस कंठोंवाला।
पुं० रावण।

दशकंठारि—पुं० [दशकंठ-अरि, ष० त०] (रावण के शत्रु) श्रीरामचंद्र।

दश-कंध—पुं० [सं० दश-स्कंध, हिं० कंध] रावण।

दश-कंधर—पुं० [ब० स०] रावण।

दशक—पुं० [सं० दशन्+कन्] १. दस का समूह। २. दस वर्षों का समूह। ३. सन्, संवत् आदि में हर एक इकाई से दहाई तक के दस-दस वर्षों का समूह। (डीकेड) जैसे—बीसवीं शताब्दी का तीसरा दशक अर्थात् १९२१ से १९३० तक के वर्षों का समूह।

दश-कर्म (न्)—पुं० [मध्य० स०] गर्भाधान से लेकर विवाह तक के हिंदू-धर्म के अनुसार बालक के दस संस्कार—गर्भाधान, पुंसवन, सीमंतोन्नयन, जातकर्म, निठक्रमण, नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकरण, उपनयन और विवाह।

दश-कुलवृक्ष—पुं० [मध्य० स०] तंत्र के अनुसार ये दश वृक्ष—लिसोड़ा, करंज, बेल, पीपल, कदंब, नीम, बरगद, गूलर, आँवला और इमली।

दश-कोषी—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] संगीत में, रुद्रताल के ग्यारह भेदों में से एक।

दश-क्षीर—पुं० [मध्य० स०] १. सुश्रुत के अनुसार दूध देनेवाले ये दस जीव—गाय, बकरी, ऊँटनी, भेड़, भैंस, घोड़ी, स्त्री, हथनी, हिरनी और गदही। २. उक्त जीवों का दूध।

दश-गात्र—पुं० [द्विगु० स०] १. शरीर के दस प्रधान अंग। २. कर्मकांड में, वे कृत्य जिनमें किसी के मरने पर दस दिनों तक दस पिंड इस उद्देश्य से बनाकर दिये जाते हैं कि मृतात्मा के दसों अंग फिर से बन जायँ और उसका शरीर पूरा हो जाय।

दश-ग्राम-पति—पुं० [दश-ग्राम, द्विगु स०, दशग्राम-पति, ष० त०] प्राचीन भारत में दस गाँवों का अधिकारी या स्वामी।

दश-ग्रीव—पुं० [ब० स०] रावण।

दशति—स्त्री० [सं० दश-दश (नि० सिद्धि)] सौ। शत।

दशद्वार—पुं० [मध्य० स०] शरीर के ये दस छिद्र—२ कान, २ आँखें, २ नाक, १ मुख, १ गुदा, १ लिंग और १ ब्रह्मांड।

दशधा—वि० [सं० दशन्+धा] दस प्रकार का। दस रूपोंवाला।
अव्य० दस प्रकार से।

दशधा भक्ति—स्त्री० [सं०] नवधा भक्ति और उसमें सम्मिलित की हुई दसवीं प्रेम-लक्षणा भक्ति का समाहार।

दशन—पुं० [सं०√दंश् (काटना)+ल्युट्—अन, नलोप] १. दाँत। २. कवच। ३. चोटी। शिखर।

दशनच्छद—पुं० [सं० दशन√छद् (ढकना)+णिच्+घ, ह्रस्व] होंठ।

दशन-बीज—पुं० [सं० ब० स०] अनार।

दशनांशु—पुं० [दशन-अंशु, ष० त०] दाँतों की चमक।

दशना—वि० [सं० दशन से] दाँतोंवाली (स्त्री)।

दशनाढ्य—स्त्री० [दशनाढ्य, ब० स०, टाप्] लोनिया शाक।

दश-नाम—पुं० [सं० द्विगु स०] तीर्थ, आश्रम, वन, अरण्य, गिरि, पर्वत, सागर, सरस्वती, भारती और पुरी संन्यासियों के ये दस भेद।

दशनामी—पुं० [हिं० दश+नाम] संन्यासियों का एक वर्ग जो अद्वैतवादी शंकराचार्य के शिष्यों से चला है और जिसमें दशनाम (देखें) वर्ग के दश भेद हैं।
वि० १. दशनाम-संबंधी। २. दशनाम वर्ग के अन्तर्गत किसी नामधारी शाखा या भेद से संबंध रखनेवाला।

दशप—पुं० [सं० दशन्√पा (रक्षण)+क] =दशग्रामपति।

दश-पारमिता-धर—पुं० [दश-पारमिता द्विगु स०, दशपारमिता-धर ष० त०] बुद्धदेव।

दशपुर—पुं० [सं० दशन्√पॄ (पूर्ण करना)+क] १. केवटी मोथा। २. मावल देश का एक प्राचीन विभाग जिसमें दस मुख्य नगर थे।

दश-पेय—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का यज्ञ।

दश-बल—पुं० [ब० स०] बुद्धदेव।

दश-बाहु—पुं० [ब० स०] महादेव।

दश-भूमिग—पुं० [दश-भूमि, द्विगु स०,√गम् (जाना)+ड] बुद्धदेव (जो दस भूमियों या बलों से युक्त समझे जाते हैं)।

दश-भूमीश—पुं० [दशभूमि-ईश ष० त०] =दश भूमिग।

दशम—वि० [सं० दशन्+डट् मट्—आगम] १. गिनती में १० के स्थान पर पड़नेवाला। २. जो किसी चीज का दसवाँ भाग हो।

दशम-दशा—स्त्री० [कर्म० स०] साहित्य में वियोगी की वह दसवीं और अंतिम दशा जिसमें वह परम दुःखी होकर प्राण त्याग देता है।

दशम-भाव—पुं० [कर्म० स०] जन्म कुंडली में लग्न के स्थान से दसवाँ घर। (ज्यो०)

दशमलव—पुं० [सं०] १. गणित में वह विंदु जो किसी इकाई, का दसवें, सौवें आदि के बीच का कोई अंश सूचित करने के लिए उससे पहले लगाया जाता है। जैसे—.६ (६।१० भाग); .०६ (६।१०० भाग) २. उक्त चिह्न लगाकर सूचित की जानेवाली संख्या। (विशेष देखें 'दशमिक प्रणाली')

दशमलवकरण—पुं० [सं०] गणित में इकाई से कम मान सूचित करनेवाले अंशों को दशमलव का रूप देना। (डेसिमलाइजेशन)

दशमांश—पुं० [दशम-अंश, कर्म० स०] किसी चीज के दस समान भागों में से हर एक। दसवाँ भाग या हिस्सा।

दशमाल—पुं० =दशमालिक।

दशमालिक—पुं० [सं०] एक प्राचीन देश।

दशमास्य—वि० [सं० दश-मास, द्विगु स०,+यत्] दस मास की अवस्थावाला।
पुं० बालक, जो दस महीने गर्भ में रहता है।

दशमिक—वि० [सं०] दशमलव भाग से संबंध रखनेवाला।

दशमिक प्रणाली—स्त्री० [सं०] नाप, तौल, मान आदि स्थिर करने की वह गणितीय पद्धति या प्रणाली जिसमें हर मान अपने से निकटस्थ बड़े मान का दसवाँ भाग और निकटस्थ छोटे मान का दस गुना होता है। (डेसिमल सिस्टम) जैसे—(क) यदि दस पैसों का एक आना और दस आनों का एक रुपया मान लिया जाय अथवा दस तोले की एक छटाँक, दस छटाँक का एक सेर और दस सेर का एक मन मान लिया जाय तो यह

अवस्था दशमिक प्रणाली के अनुसार होगी। इससे आना तो पैसे का दस-गुना और और रुपये का दसवाँ भाग होगा। इस प्रकार सेर तो छटाँक का दस गुना होगा और मन का दसवाँ भाग। (ख) आज-कल भारत में तौल, दूरी, सिक्के आदि के नये मान इसी प्रणाली के अनुसार स्थिर होने लगे हैं।

दशमिक-भग्नांश—पुं० [सं०] दशमलव। (दे०)

दशमी—स्त्री० [सं० दशम+ङीप्] १. चांद्र मास के प्रत्येक पक्ष की दसवीं तिथि। २. विजया दशमी। ३. मनुष्य की दसवीं और अंतिम दशा, अर्थात् मरण। मृत्यु। मौत। ३. सांसारिक आवागमन और बंधनों से मुक्त होने की अवस्था। मुक्ति।

वि० [सं० दशम+इनि] जो अपने अस्तित्व या जीवन के ९० वर्ष पार कर के सौ वर्षों के लगभग हो रहा हो, अर्थात् बहुत पुराना या बुड्ढा।

दश-मुख—पुं० [सं० ब० स०] रावण, जिसके दस मुख थे।

दश-मूत्रक—पुं० [सं० द्विगु स० +क] वैद्यक में हाथी, भैंस, ऊँट, गाय, बकरा, भेड़ा, घोड़ा, गदहा, मनुष्य और स्त्री इन दस जीवों का मूत्र।

दश-मूल—पुं० [सं० द्विगु स०] १. सरिवन, पिठवन, छोटी कटाई, बड़ी कटाई, गोखरू, बेल, सोनपाठा, गंभारी, गनियारी और पाठा इन दस वृक्षों की जड़।२. उक्त पेड़ों की छाल। ३.उक्त पेड़ों की जड़ों या छालों का बनाया हुआ काढ़ा।

दश-मौलि—पुं० [सं० ब० स०] रावण।

दश-योग-भंग—पुं० [सं० ष० त०] एक नक्षत्रवेध जिसमें विवाह आदि शुभ कर्म नहीं किये जाते। (फलित ज्योतिष)

दश-रथ—पुं० [सं० ब० स०] अयोध्या के एक प्रसिद्ध सूर्यवंशी राजा जिनके राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न ये चार पुत्र थे।

दश-रश्मि-शत—पुं० [सं० ब० स०] सूर्य।

दश-रात्र—पुं० [सं० द्विगु स०,+अच् समा०] एक प्रकार का यज्ञ जो दस रातों में समाप्त होता था।

दश-वक्त्र—पुं० [सं० ब० स०] रावण।

दश-वदन—पुं० [सं० ब० स०] रावण

दश-वाजी—(जिन्) पुं० [सं० ब० स०] चंद्रमा, जिसके रथ में दस घोड़े जुते हुए माने जाते हैं।

दश-वीर—पुं० [सं० ब० स०] एक प्रकार का यज्ञ।

दश-शिर (रस्)—पुं० [सं० ब० स०] रावण।

दस-शीर्ष—पुं० [सं० ब० स०] १. रावण। २. एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र, जिससे दूसरों के चलाये हुए अस्त्र व्यर्थ किये जाते थे।

दशशीश*—पुं० =दश-शीर्ष।

दश-स्पंदन—पुं० [सं० ब० स०] राजा दशरथ जिनके यहाँ दस रथ थे।

दशहरा—पुं० [सं० दश हिं०हरा] १. वह उत्सव जिसमें गंगा नदी की पूजा तथा आराधना की जाती है। २. ज्येष्ठ शुक्ला दशमी, जिस दिन उक्त उत्सव मनाया जाता है। ३. आश्विन शुक्ल प्रतिपदा से दशमी तक के दस दिन। ४. विजया दशमी।

दश-हरा—स्त्री० [सं०] १. गंगा नदी जो दस प्रकार के पापों की विनाशिनी मानी गई है।

दशांग—पुं० [सं० दशन्-अंग, ब० स०] दस प्रकार के सुगंधित द्रव्यों के योग से बननेवाला एक तरह का धूप।

दशांग-क्वाथ—पुं० [सं० मध्य० स०] दस प्रकार की ओषधियों के योग से बननेवाला काढ़ा।

दशांगुल—पुं० [सं० दशन्-अंगुलि, ब० स०,+अच्] खरबूजा।

दशांत—पुं० [सं० दशा-अंत ष० त०] अंतिम दशा या वय, अर्थात् वृद्धावस्था। बुढ़ापा।

दशांतर—पुं० [सं० दशा-अंतर, ष० त०] जीवन की विभिन्न अवस्थाएँ।

दशा—स्त्री० [सं०√दंश् (काटना)+अङ्, नलोप, टाप्] १. कुछ समय तक बराबर चलने या बनी रहनेवाली कोई ऐसी विशिष्ट अवस्था जिसमें कोई घटना अथवा बात हुई हो, होती हो अथवा हो सकती हो। हालत। जैसे—देश की आर्थिक दशा का चित्रण। २. मनुष्य के जीवन में घटित होनेवाली घटनाओं, परिवर्तनों आदि के विचार से भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ जो संख्या में कहीं ४, कहीं ८ (जन्म, शैशव, बाल्य, कौमार, पौगंड, यौवन, जरा और मरण) और कहीं १० (अभिलाषा चिंता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग, संताप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और मरण) कही गई हैं। ३. साहित्य में, रस के अंतर्गत विरही या विरहिणी की अवस्था या हालत। ४.फलित ज्योतिष में, अलग-अलग ग्रहों का नियत या निश्चित भोग-काल जिसका प्रभाव मनुष्य के जीवन-यापन पर पड़ता है। जैसे—आज-कल उनके जीवन में शनिश्चर (अथवा मंगल, बुध आदि) की दशा चल रही है। ५. कपड़े का छोर या सिरा। पल्ला। ६. दीए की बत्ती। उदा०—ज्योति बढ़ावति दशा उनारि।—केशव। ७. चित्त या मन। ९. प्रज्ञा। ८. कर्मों का फल। १० भाग्य। ११. दे० 'दशिका'।

दशाकर्ष—पुं० [सं० दशा+आ√कृष् (खींचना)+अच्] १. कपड़े का छोर या सिरा। २. दीआ। दीपक।

दशाकर्षी (र्षिन्)—पुं० [सं० दशा+आ√कृष्+णिनि] =दशाकर्ष।

दशाक्षर—पुं० [सं० दशन्-अक्षर, ब० स०] एक तरह का छंद।

दशाधिपति—पुं० [सं० दशा-अधिपति, ष० त०] १. दशाओं के अधिपति ग्रह। (ज्योतिष) २. वह अधिकारी जिसके अधीन दस सैनिक रहते थे।

दशानन—पुं० [सं० दशन्-आनन, ब० स०] रावण।

दशानिक—पुं० [सं० √अन् (जीना)+घञ् आन+ठक्—इक, दशा-आनिक स० त०] जमाल-गोटा।

दशा-पवित्र—पुं० [सं० उपमि० स०] वस्त्र के वे टुकड़े जो श्राद्ध आदि में दान दिये जाते हैं।

दशाब्द—पुं० [सं० दशन्-अब्द, द्विगु स०] दस वर्षों का समूह। दशक।

दशामय—पुं० [सं० दशन्-आमय, ब० स०] रुद्र।

दशारुहा—स्त्री० [सं० दशन्+आ√रुह् (उगना)+क—टाप्] कैवर्तिका नाम की लता जिसके पत्तों से तैयार किये हुए रंग से कपड़े रंगे जाते हैं।

दशार्ण—पुं० [सं० दशन्-ऋण, ब० स०, वृद्धि] १. विंध्य पर्वत के पूर्व-दक्षिण के उस प्रदेश का प्राचीन नाम जिससे होकर धसान नदी बहती है। विदिशा (आधुनिक भिलसा) इसी प्रदेश की राजधानी थी। २. जैन पुराणों के अनुसार उक्त प्रदेश का राजा। जिसका अभिमान तीर्थंकर ने चूर्ण किया था। ३. तंत्र में एक दशाक्षर मंत्र।

दशार्णा—स्त्री० [सं० दशार्ण+अच्-टाप्] विंध्य पर्वत से निकली हुई धसान नामक नदी।

दशार्द्ध—पुं० [सं० दशन्√ऋध् (बढ़ना)+अण्] बुद्धदेव, जो दस बलों से युक्त माने जाते हैं।

दशार्ह—पुं० [सं०] १. एक प्राचीन देश जिस पर किसी समय वृष्णियों का अधिकार था। २. उक्त देश का राजा वृष्णि। ३. राजा वृष्णि के वंश का व्यक्ति। ४. विष्णु। ५. बौद्ध।

दशावतार—पुं० [सं० द्विगु स०] विष्णु के दस अवतार।

दशावरा—स्त्री० [सं०] दस सदस्यों की शासन-सभा।

दशाश्व—पुं० [सं० दशन्-अश्व, ब० स०] चंद्रमा (जिसके रथ में दस घोड़े लगते हैं)।

दशाश्वमेध—पुं० [सं० दशन्-अश्वमेध, ब० स०] १. काशी के अंतर्गत एक प्रसिद्ध घाट और तीर्थ। २. प्रयाग के अंतर्गत एक घाट और तीर्थ।

विशेष—कहते हैं कि किसी समय वाकाटकों ने उक्त दोनों स्थानों पर दस-दस अश्वमेध यज्ञ किये थे।

दशास्य—पुं० [सं० दशन्-आस्य, ब० स०] दशमुख। रावण।

दशाह—पुं० [सं० दशन्-अहन्, द्विगु स०, टच् समा०] १. दस दिन। २. मृतक की मृत्यु के दसवें दिन होनेवाले कृत्य।

दशिका—स्त्री० [सं० दशा+कन्-टाप्, ह्रस्व, इत्व] कपड़े के थान का छोर या सिरा। छीर। दसी।

दशी—स्त्री० दे० 'दशक'।

दशेंधन—पुं० [सं० दशा-इंधन, ब० स०] दीपक।

दशेर(क)—पुं० [सं० दशेर+कन्] १. मरु देश। २. उक्त देश का निवासी। ३. ऊँट का बच्चा।

दशेश—पुं० [सं० दशन-ईश, ष० त०] १. दस ग्रामों का नायक। २. [दशा-ईश] सूर्य।

दष्ट—भू० कृ० [सं० √दंश्+क्त, पत्व] जो किसी द्वारा डसा गया हो।

दष्षना*—स० =देखना।

दस—वि० [सं० दश] १. जो गिनती में नौ से एक अधिक हो। पाँच का दूना। २. अनेक। कई। जैसे—वहाँ दस तरह की बातें होती रहती हैं।

पुं० १. नौ और एक के योग की सूचक संख्या। २. उक्त संख्या का सूचक अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—१०.

दसखत†—पुं० =दस्तखत।

दसठौन—पुं० [सं० दश+स्थान] बुंदेलखंड में प्रचलित एक रीति जिसमें बच्चा जनने के दसवें दिन प्रसूता स्त्री नहाकर सौरीवाली कोठरी से निकलकर दूसरी कोठरी या कमरे में जाती है।

दस-तपा—पुं० [हिं० दस+तपना] जेठ महीने में मृगशिरा नक्षत्र के अंतिम दस दिन जिनके खूब तपने पर आगे चलकर अच्छी वर्षा की आशा की जाती है।

दसन—पुं० [देश०] एक प्रकार की छोटी झाड़ी जो पंजाब, सिंध, राजपूताने आदि में होती है। दसरनी।

†पुं० = दशन।

दसना—अ० [हिं० डासना] हिं० 'दसाना' का अ० रूप। बिछाया जाना। बिछना।

स० दे० 'दसाना' (बिछाना)।

पुं० बिछौना। बिस्तर।

स० दे० 'डसना'।

दसबदन—पुं० =दशवदन (रावण)।

दस-मरिया—स्त्री० [हिं० दस+मढ़ना] एक साथ दस तख्ते लंबाई के बल में जोड़कर बरसाती नदी में तैरने के लिए बनाई जानेवाली एक तरह की बड़ी रचना।

दसमाथ*—पुं० [हिं० दस+माथ] रावण।

दसमी—स्त्री० =दशमी।

दसरंग—पुं० [हिं० दस+रंग] मालखंभ की एक प्रकार की कसरत।

दसरनी—स्त्री० दे० 'दसन' (झाड़ी)।

दसरान—पुं० [हिं० दस+रान?] कुश्ती का एक पेंच।

दसवाँ—वि० [सं० दशम] गिनती में दस के स्थान पर आने, पड़ने या होनेवाला। जैसे—महीने का दसवाँ दिन।

मुहा०—**दसवाँ द्वार खुलना**=(क) मृत्यु के समय ब्रह्मांड (मस्तक का ऊपरी भाग) खुलना या फटना, जिसमें से होकर आत्मा का शरीर से निकलना माना जाता है। (ख) लाक्षणिक रूप में अक्ल या होश-हवास गुम हो जाना।

पुं० हिंदुओं में वह कृत्य जो किसी के मरने के दसवें दिन होता है।

दसहरा—पुं०=दशहरा।

दसहरी—पुं० [हिं० दसहरा] एक तरह का बढ़िया आम।

दसांग†—पुं० =दशांग (एक तरह की धूप)।

दसा—पुं० [हिं० दस] अग्रवाल वैश्यों के दो प्रधान भेदों में से एक। (दूसरा भेद 'बीसा' कहलाता है।)

† स्त्री०=दशा।

दसाना*—स०=डसाना (बिछाना)।

दसारन—पुं०=दशार्ण। (दे०)

दसारी—स्त्री० [देश०] एक तरह का छोटा जल-पक्षी।

दसी—स्त्री० [सं० दशा या दशिका=कपड़े का छोर] १. कपड़े के थान, दुपट्टे, धोती आदि में लंबाई के बल में दोनों सिरों पर भिन्न रंगों के डोरों में बने हुए चिह्न जो थान के पूरे होने के सूचक होते हैं। छीर। २. ओढ़ने या पहनने के कपड़े का आंचल या पल्ला। ३. चिह्न। निशान। ४. बैल-गाड़ी में दोनों ओर लगी हुई पटरियाँ। ५. चमड़ा छीलने की राँपी।

दसेंई—पुं० [देश०] तेंदू का पेड़।

दसैं—स्त्री० [सं० दशमी, हिं० दसई] दशमी तिथि। (पूर्व)

दसोतरा—वि० [सं० दशोत्तर] गिनती में जो दस से अधिक हो।

पुं० प्रति सौ में दस।

क्रि० वि० दस प्रतिशत।

दसौंधी—पुं० [सं० दास=दानपत्र+बंदी=भाट] बंदियों या चारणों की एक जाति जो अपने को ब्राह्मण मानती है। ब्रह्मभट्ट। भाट।

दस्तंदाज—वि० [फा०] [भाव० दस्तंदाजी] बीच में हाथ डालने अर्थात् दखल देनेवाला। हस्तक्षेप करनेवाला।

दस्तंदाजी—स्त्री० [फा०] किसी काम में हाथ डालने की क्रिया या भाव। किसी होते हुए काम में की जानेवाली छेड़-छाड़ जो प्रायः अनुचित समझी जाती है। हस्तक्षेप।

दस्त—पुं० [सं० हस्त से फा०] १. हस्त। हाथ।

पद—दस्तकार, दस्तखत, दस्तबरदार आदि।
२. पेट में विकार होने के कारण निकलनेवाला असाधारण रूप से पतला मल। प्रायः पानी की तरह पतला शौच होने की क्रिया।
मुहा०—दस्त लगना=बार-बार बहुत पतला मल निकलना या शौच होना।

दस्तक—स्त्री० [फा०] १. हाथ से किया हुआ हलका आघात। २. ताली। ३. किसी को बुलाने के लिए उसके दरवाजे पर उक्त प्रकार से खटखटाने की क्रिया।
क्रि० प्र०—देना।
४. अधिकारियों द्वारा किसी के नाम निकाला हुआ वह आज्ञा-पत्र जिसमें उससे अपना देन चुकाने के लिए कहा गया हो।
क्रि० प्र०—भेजना।
पद—दस्तक सिपाही=वह सिपाही जो किसी से मालगुजारी आदि वसूल करने या किसी को पकड़ने के लिए दस्तक (आज्ञा-पत्र) देकर भेजा जाय।
मुहा०—दस्तक माफ करना=(क) क्षमा करना। (ख) उत्तरदायित्व से मुक्त करना।
५. कहीं से कोई माल ले आने या ले जाने के लिए मिला हुआ वह अधिकारपत्र जो कुछ विशिष्ट स्थानों पर दिखाना पड़ता है। निकासी या राहदारी का परवाना। ६. कर। महसूल।
क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।
७. ऐसा आकस्मिक अनावश्यक काम जिसमें कुछ व्यय करना पड़े।
मुहा०—दस्तक बाँधना या लगाना=व्यर्थ का व्यय ऊपर डालना। नाहक का खर्च जिम्मे लगाना या लेना। जैसे—तुमने यह चंदे की अच्छी दस्तक बाँध ली है।

दस्तकार—पुं० [फा०] [भाव० दस्तकारी] वह कारीगर जो हाथ से छोटे-मोटे उपकरणों की सहायता से (मशीनों से नहीं) चीजें तैयार करता हो। शिल्पी।

दस्तकारी—स्त्री० [फा०] १. हाथ से चीजें बनाकर तैयार करने का काम। २. इस प्रकार तैयार की हुई कोई वस्तु।

दस्तकी—स्त्री० [फा०] १. वह छोटी बही जो याददाश्त के लिए बात आदि टाँकने के काम आती और प्रायः हर-दम पास रखी जाती है। २. बहेलियों का दस्ताना जो शिकारी पक्षियों के वार को रोकने के लिए हाथ में पहना जाता है।

दस्तखत—पुं० [फा०] १. किसी के हाथ के लिखे हुए अक्षर। २. (लेख के अंत में) हाथ से लिखा हुआ अपना नाम जो इस बात का सूचक होता है कि उक्त लेख मेरी इच्छा से लिखा गया है और मैं उससे अनुबद्ध होता हूँ। हस्ताक्षर।

दस्तखती—वि० [फा० दस्तखत] जिस पर दस्तखत हो। २. (लेख) जिस पर लिखने या लिखानेवाले का नाम उसी के हाथ का लिखा हो। हस्ताक्षरित। जैसे—दस्तखती चिट्ठी।

दस्तगीर—पुं० [फा०] [भाव० दस्तगीरी] किसी का हाथ विशेषतः संकट के समय किसी का हाथ पकड़ने अर्थात् उसका सहायक होनेवाला।

दस्तगीरी—स्त्री० [फा०] दस्तगीर अर्थात् सहायक होने की अवस्था या भाव।

दस्तपनाह—पुं० [फा०] चिमटा।

दस्तबरदार—वि० [फा०] [भाव० दस्तबरदारी] १. जिसने किसी वस्तु पर से अपना अधिकार या स्वत्व छोड़ दिया या हटा लिया हो। २. किसी चीज या बात से बिलकुल अलग रहनेवाला।

दस्तबरदारी—स्त्री० [फा०] किसी चीज से अपना अधिकार हटाकर सदा के लिए छोड़ या त्याग देने की क्रिया या भाव।

दस्त-बस्ता—अव्य० [फा० दस्त बस्तः] १. किसी के आगे हाथ बाँधे अर्थात् जोड़े हुए (प्रार्थना करना)। २. विनम्रतापूर्वक।

दस्तयाब—वि० [फा०] [भाव० दस्तयाबी] हाथ में आया या मिला हुआ। प्राप्त। हस्तगत।

दस्तर—स्त्री०=दस्तार (पगड़ी)।

दस्तरखान—पुं० [फा० दस्तरख्वान] वह कपड़ा जिसके ऊपर खाने के लिए भोजन के थाल आदि सजाये या रखे जाते हैं।

दस्ता—पुं० [फा० दस्तः] १. हाथ में पकड़ने या रखने की चीज। जैसे—गुल-दस्ता। २. औजारों, हथियारों आदि का वह अंश जो उन्हें काम में लाने या चलाने के समय हाथ से पकड़ा जाता है। बेंट। मूठ। जैसे—आरी, चाकू, तलवार या हथौड़ी का दस्ता। ३. किसी चीज का उतना अंश या भाग जो सहज में हाथ में रखा या लिया जा सकता हो। ४. कागज के २४ या २५ तावों की गड्डी। ५. हाथ में रखने का डंडा। सोंटा। ६. कबा, चोगे आदि में की वह घुंडी जो प्रायः बंद में लगी रहती है। ७. सिपाहियों या सैनिकों का छोटा दल। टुकड़ी। ८. चपरास। ९. गोट। मगजी। संजाफ। १०. एक प्रकार का बगला जिसे हरगिला भी कहते हैं।
†पुं० दे० 'जस्ता' (कपड़ों आदि का)।

दस्ताना—पुं० [फा० दस्तानः] १. पंजे और हथेली में पहनने का बुना हुआ कपड़ा। हाथ का मोजा। २. उक्त प्रकार का लोहे का वह आवरण जो युद्ध के समय हाथों पर (उनकी रक्षा के लिए) पहना जाता था। ३. वह लंबी किर्च या सीधी तलवार जिसकी मूठ के ऊपर कलाई तक पहुँचनेवाला लोहे का आवरण लगा रहता है।

दस्तावर—वि० [फा० दस्त आवर] (औषध या खाद्य पदार्थ) जिसे खाने से दस्त आने लगें। रेचक। जैसे—हर्रे दस्तावर होती है।

दस्तावेज—स्त्री० [फा०] विधिक क्षेत्र में, वह कागज जिस पर दो या अधिक व्यक्तियों के पारस्परिक लेन-देन, व्यवहार समझौते आदि की शर्तें लिखी हों और जिस पर संबद्ध लोगों के हस्ताक्षर प्रमाण स्वरूप अंकित हों। लेख्य। (डीड) जैसे—तमस्सुक, दानपत्र, बैनामा, रेहननामा आदि।

दस्तावेजी—वि० [फा० दस्तावेज] दस्तावेज-संबंधी। दस्तावेज का। जैसे—दस्तावेजी कागज।

दस्ती—वि० [फा० दस्त=हाथ] १. हाथ में रहने या होने अथवा उससे संबंध रखनेवाला। जैसे—दस्ती रूमाल। २. जो किसी व्यक्ति के हाथ दिया या भेजा गया हो। जैसे—दस्ती, खत, दस्ती वारंट।
स्त्री० १. छोटा दस्ता। छोटी बेंट या मूठ। २. वह बत्ती या मशाल जो हाथ में लेकर चलते हों। ३. छोटा कलमदान। ४. वह इनाम या भेंट जो राजा-महाराजा स्वयं अपने हाथ से सरदारों आदि को दिया करते थे। ५. कुश्ती का एक पेंच जिसमें पहलवान अपने विपक्षी का दाहिना

हाथ दाहिने हाथ से अथवा बायाँ हाथ बाएं हाथ से पकड़कर अपनी ओर खींचता है और तब झटके से उसे गिरा या पटक देता है।

दस्तूर—पुं० [फा०] १. बहुत दिनों से चली आई हुई प्रथा या रीति। चाल। परिपाटी। २. कायदा। नियम। विधि। ३. पारसियों के धर्म-पुरोहितों की उपाधि जो दस्तूर (नियम या प्रथा) के अनुसार सब कृत्य करते-कराते हैं। ४. जहाज के वे छोटे पाल जो सबसे ऊपरवाले पाल के नीचे की पंक्ति में दोनों ओर होते हैं। (लश०)

दस्तूरी—वि० [फा०] दस्तूर अर्थात् नियम-संबंधी।

स्त्री० वह धन जो सौदा खरीद कर ले जानेवाले नौकर को दूकानदारों से (कोई सौदा लेनेपर) पुरस्कार रूप में मिलता है।

दस्पना†—पुं० [फा० दस्तपनाह] चिमटा।

दस्म—पुं० [सं०√दस् (ऊपर फेंकना)+मक्] १. यजमान। २. चोर। ३. दुष्ट व्यक्ति। ४. अग्नि।

दस्यु—पुं० [सं०√दस् +युच्] [भाव० दस्युता] १. एक प्राचीन अनार्य जाति। २. अनार्य या म्लेच्छ जो पहले प्रायः यज्ञों में लूट-मार करके निर्वाह करते थे। ३. डाकू। लुटेरा। ४. खल। दुष्ट।

दस्युता—स्त्री० [सं० दस्यु+तल्+टाप्] १. दस्यु होने की अवस्था या भाव। २. डकैती। लुटेरापन। ३. क्रूरता और खलता। दुष्टता।

दस्युवृत्ति—स्त्री० [ष० त०] १. डकैती। लुटेरापन। २. चोरी।

दस्युहन्—पुं० [सं० दस्यु√हन् (मारना)+क्विप्] (असुरों को मारने-वाले) इंद्र।

दस्र—वि० [सं०√दस्+रक्] १. दोहरा। २. क्रूर। ३. ध्वंसक। ४. असभ्य। जंगली।

पुं० १. दो की संख्या। २. दो का जोड़ा। युग्म। ३. अश्विनी कुमार। ४. शिशिर ऋतु। ५. गधा।

दस्सी—स्त्री० [सं० दशा या दशिका] थान के सिरे पर का अंश। छीर।

दह—पुं० [सं० ह्रद (आद्यंत विपर्यय)] १. नदी में वह स्थान जहाँ पानी गहरा हो। नदी के अंदर का गहरा गड्ढा। पाल। जैसे—काली-दह। २. पानी का कुंड। हौज।

स्त्री० =दाह (जलन)।

वि० [सं० दश से फा०] नौ और एक। दस।

दहक—स्त्री० [हिं० दहकना] १. दहकने की क्रिया या भाव। २. आग की लपट। धधक। ३. जलन। दाह। ४. पश्चात्ताप या उसके कारण होनेवाली लज्जा।

दहकन—स्त्री० [हिं० दहकना] दहकने की क्रिया या भाव। दहक।

दहकना—अ० [सं० दहन] १. आग का इस प्रकार जलना कि लपट ऊपर उठने लगे। धधकना। २. तापमान के अत्यधिक बढ़ने के कारण शरीर का जलने लगना। तपना। ३. दुःखी या संतप्त होना।

दहकान—पुं० [फा०] १. देहात या गाँव का रहनेवाला व्यक्ति। २. किसान। ३. मूर्ख व्यक्ति।

दहकाना—स० [हिं० दहकना] १. आग या और कोई चीज दहकने अर्थात् अच्छी तरह जलने में प्रवृत्त करना। इस प्रकार जलाना कि लपटें निकलने लगें। जैसे—कोयला या लकड़ी दहकाना। २. उत्तेजित करना। भड़काना।

संयो० क्रि०—देना।

दहकानियत—स्त्री० [फा०] दहकान होने की अवस्था या भाव। गँवारपन।

दहकानी—पुं० [फा०] दहकान।

वि० दहकानों या गँवारों की तरह का।

दहग्गो—स्त्री० [हिं० दाह+आग] गरमी। ताप।

दहड़-दहड़—क्रि० वि० [सं० दहन या अनु०] (आग की लपटों के संबंध में) दहड़-दहड़ शब्द करते हुए।

दहदल†—स्त्री० =दलदल।

दहन—पुं० [सं०√दह् (जलना, जलाना) +ल्युट्—अन] [वि० दहनीय, दह्यमान] १. जलने की क्रिया या भाव। दाह। जैसे—लंका-दहन। २. [√दह्+ल्यु—अन्] अग्नि। आग। ३. एक रुद्र का नाम। ४. ज्योतिष में एक योग जो पूर्वा भाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद और रेवती नक्षत्रों में शुक्र ग्रह के आने पर होती है। ५. उक्त के आधार पर तीन की संख्या। ६. कृत्तिका नक्षत्र। ७. क्रूर, क्रोधी और दुष्ट स्वभाववाला मनुष्य। ८. चित्रक या चीता नामक वृक्ष। ९. भिलावाँ। १०. कबूतर।

†वि० १. जलानेवाला। २. नष्ट करनेवाला। (यौ० के अंत में) जैसे—त्रिपुरदहन।

पुं० [फा०] मुँह। मुख।

†पुं० [सं० दैन्य] दीनता (पूरब)। उदा०—दहन मानै, दोष न जानै....।—विद्यापति।

†पुं० [?] कंजा नाम की कँटीली झाड़ी या पौधा।

दहन-केतन—पुं० [ष० त०] धूम। धूआँ।

दहनर्क्ष—पुं० [दहन-ऋक्ष, कर्म० स०] कृत्तिका नक्षत्र।

दहन-शील—वि० [ब० स०] जो जल्दी या सहज में जलता या जल सकता हो।

दहना—स० [सं० दहन] १. दहन करना। जलाना। २. बहुत अधिक दुःखी या संतप्त करना। कुढ़ाना या जलाना।

अ० १. दहन होना। जलना। २. बहुत अधिक दुःखी या संतप्त होकर मन ही मन कुढ़ना या जलना।

वि०=दाहिना।

अ० [हिं० दह] नीचे बैठना। धँसना।

वि०=दाहिना।

दहनागुरु—पुं० [दहन-अगुरु, च० त०] धूप।

दहनाराति—पुं० [दहन-अराति, ष० त०] पानी।

दहनि†—स्त्री० [हिं० दहना] दहन होने अर्थात् जलने की क्रिया या भाव। २. जलन। ताप। ३. मन ही मन होनेवाला संताप। कुढ़न।

दहनीय—वि० [सं०√दह् +अनीयर्] जलने या जलाये जाने के योग्य। जो जलाया जा सके या जलाया जाने को हो।

दहनोपल—पुं० [दहन-उपल, च० त०] सूर्यकांतमणि। सूर्यमुखी। आतशी शीशा।

दहपट—वि० [हिं० दह=दहन+पट=समतल] १. गिराकर जमीन के बराबर किया हुआ। ढाया हुआ। ध्वस्त। २. चौपट, नष्ट या बरबाद किया हुआ। ३. कुचला, मसला या रौंदा हुआ।

दहपटना—स० [हिं० दहपट] १. ध्वस्त करना। ढाना। २. चौपट, नष्ट या बरबाद करना। ३. कुचलना। रौंदना।
†स०=डपटना। (क्व०)

दहबाट†—वि० [हिं० दह=दस+बाट=रास्ता] छिन्न-भिन्न। तितर-बितर।

दहबासी—पुं० [फा० दह=दस+बाशी (प्रत्य०)] दस सिपाहियों का नायक।

दहर—पुं० [सं०√दह् +अर] १. छोटा चूहा। चुहिया। २. छछूंदर। ३. भाई। ४. बालक। लड़का। ५. नरक। ६. वरुण। वि० १. छोटा या हलका। २. कम। थोड़ा। ३. बारीक। महीन। सूक्ष्म। ४. गहन। दुर्बोध।
पुं० [सं० ह्रद (वर्ण-विपर्यय)] १. जलाशय के अंदर का गहरा गड्ढा। दह। २. जल का कुंड। हौज।

दहर-दहर—क्रि० वि०=दहड़-दहड़।

दहरना†—अ०=दहलना।
†स०=दहलाना।

दहराकाश—पुं० [सं० दहर-आकाश, कर्म० स०] १. चिदाकाश। ईश्वर। २. हठयोग के अनुसार, हृदय में स्थिति वह छोटा सा अवकाश या स्थान जिसमें विशुद्ध आकाश व्याप्त है, और जिसमें निरंतर अनाहत नाद होता रहता है।

दहरौरा—पुं० [हिं० दही+बड़ा] [स्त्री० अल्पा० दहरौरी] १. दही में पड़ा हुआ बड़ा। दही-बड़ा। २. एक तरह का गुलगुला।

दहल—स्त्री० [हिं० दहलना] १. दहलने की क्रिया या भाव। २. किसी बड़े या विकट काम या चीज को देखकर मन में उत्पन्न होनेवाला वह भय जो सहसा उस काम या चीज की ओर बढ़ने न दे।

दहलना—अ० [सं० दर=डर+हिं० हलना=हिलना] १. किसी बड़े या विकट काम या चीज को देखकर इस प्रकार कुछ डर जाना कि वह काम करने अथवा उस चीज की ओर बढ़ने का साहस न हो। इतना डरना कि आगे बढ़ने की हिम्मत न हो। जैसे—शेर की दहाड़ या हाथी की चिंघाड़ सुनकर जी दहलना। २. भय से स्तंभित होकर रुक जाना। संयो० क्रि०—उठना।—जाना।
विशेष—इस क्रिया का प्रयोग स्वयं व्यक्ति के लिए भी होता है और उसके कलेजे या जी के संबंध में भी। जैसे—सिपाही का दहलना; और सिपाही का कलेजा या जी दहलना।

दहला—पुं० [फा० दह=दस+ला (प्रत्य०)] ताश या गंजीफे का वह पत्ता जिस पर दस बूटियाँ हों। दस बूटियोंवाला ताश का पत्ता।
†पुं०=थाँवला (वृक्ष का)।

दहलाना—स० [हिं० दहलना का स०] ऐसा काम करना जिससे कोई दहल जाय या डरकर आगे बढ़ने से रुक जाय।
संयो० क्रि०—देना।

दहली—स्त्री०=दहलीज।

दहलीज—स्त्री० [हिं० देहरी या देहली का उर्दू रूप] द्वार के चौखट के नीचेवाली लकड़ी जो जमीन पर रहती है। देहरी। डेहरी। देहली।

दहशत—स्त्री० [फा० दहशत] किसी भयंकर या विकट आकृति, कार्य या पदार्थ को देखने पर होनेवाला ऐसा डर या भय जो आदमी का साहस छुड़ा दे। जैसे—शेर या साँप की दहशत बहुत जबरदस्त होती है।

दह-सनी—स्त्री० [फा० दह=दस+सन्=संवत्] ऐसा खाता या बही जिसमें दस-दस सनों (अर्थात् संवतों) के लेखे या हिसाब अलग-अलग लिखे हों या लिखे जाते हों।

दहा—पुं० [सं० दश से फा० दह] १. मुहर्रम मास के प्रारम्भिक दस दिन जिनमें मुसलमान ताजिया रखते और मातम करते हैं। २. ताजिया। ३. मुहर्रम का महीना।

दहाई—स्त्री० [फा० दह+आई (प्रत्य०)] १. गिनती में दस होने की अवस्था, भाव या मान। जैसे—पाँच दहाई पचास। २. गिनती के विचार से लिखे हुए अंकों का दाहिनी ओर से (बाईं ओर से नहीं) दूसरा स्थान जिस पर लिखे हुए अंक का मान उसकी अपेक्षा ठीक दस गुना अधिक माना जाता है। जैसे—१२६ में का ६ इकाई के स्थान पर, २ दहाई के स्थान पर और १ सैंकड़े के स्थान पर है।

दहाड़—स्त्री० [अनु०] १. दहाड़ने की क्रिया या भाव। २. शेर के जोर से गरजने का शब्द। ३. जोरों की ऐसी चिल्लाहट जो दूसरों को डरा दे।

दहाड़ना—अ० [हिं० दहाड़+ना (प्रत्य०)] १. शेर का जोर से शब्द करना। २. इस प्रकार जोर से चिल्लाना कि लोग डर जायँ।

दहाना—पुं० [फा० दहानः] १. किसी चीज का मुँह विशेषतः चौड़ा और बड़ा मुँह। २. मशक का मुँह। ३. घोड़े की लगाम जो उसके मुँह में रहती है। ४. भिश्ती की मशक का मुँह। ५. पनाला। मोरी। ६. दे० 'मुहाना' (नदी का)।

दहार†—पुं० [अ० दयार=प्रदेश] १. प्रांत। प्रदेश। २. गाँव के आस-पास की भूमि।
स्त्री०=दहाड़।

दहिऔरी†—स्त्री०=दहरौरी।

दहिंगल—पुं० [देश०] कीड़े-मकोड़े खानेवाली एक छोटी चिड़िया जिसके परों पर सफेद और काली लकीरें होती हैं। यह रह-रहकर अपनी पूँछ ऊपर उठाया करती है।

दहिजरा†—वि० १. =दारी-जार। २. =दाढ़ी-जार।

दहिजार†—वि० १. =दारी-जार। २. =दाढ़ी-जार।

दहिना—वि०=दाहिना।

दहिनावर्त्त—वि०=दक्षिणावर्त्त।

दहिने—अव्य० =दाहिने।

दहियक—पुं० [फा० दह=दस] दशमांश। दसवाँ भाग या हिस्सा।

दहियल†—पुं०=दहला।

दही—पुं० [सं० दधि] दूध में जामन लगाकर जमाये जाने पर उसका तैयार होनेवाला रूप जो थक्के की तरह होता है।
पद—**दही का तोड़**=दही का वह पानी जो उसे कपड़े में बाँधकर रखने पर निकलता है।
मुहा०—**दही-दही करना**=कोई चीज देने या बेचने के लिए चारों ओर घूम-घूमकर लोगों से उसे लेने के लिए कहते फिरना।

दहीला†—वि० [सं० दाह] [स्त्री० दहीली] १. जला या जलाया हुआ। २. परम दुःखित। संतप्त। उदा०—तातैं नहिन काम-दहीली।—सूर।

दहुँ*—अव्य० [सं० अथर्वा] १ अथवा। या। किंवा। २. कदाचित्। शायद।
वि० [सं० दश] पु० हिं० दह (दस) का समष्टि-वाचक रूप। दसों। उदा०—बिनु चरनन कौ दहुँ दिसि धावै बिनु लोचन जग सूझै।—कबीर।

दहेंगर—पुं० [हिं० दही+घड़ा] दही रखने का घड़ा या मटका।

दहेंड़ी—स्त्री० [हिं० दही+हाँडी] दही रखने की हाँड़ी। उदा०—अहै दहेंड़ी जनि धरैं, जनि तू लेहि उतार।—बिहारी।

दहेज—पुं० [अ० जहेज] कन्या-पक्ष की ओर से विवाह के अवसर पर कन्या को दिया जानेवाला वह धन और वस्तुएँ जो वह अपने साथ ससुराल ले जाती है। दायजा।

दहेला—वि० [हिं० दहना+एला (प्रत्य०)] [स्त्री० दहेली] १. जला हुआ। दग्ध। २. दुःखी। संतप्त। दहीला।
वि० [?] १. भींगा हुआ। आर्द्र। २. ठिठुरा या सिकुड़ा हुआ। ३. जिसने किसी रस का अनुभव या भोग किया हो। उदा०—जिनकी मति की देह दहेली।—केशव।

दहोत्तरसो—पुं० [सं० दशोत्तरशत] एक सौ से दस ऊपर; अर्थात् एक सौ दस।

दह्य—वि० [सं० दाह्य] जो जल सकता या जलाया जा सकता हो। (कंबसचिबुल)

दह्यमान—वि० [सं०√दह्+शानच्] जो जल रहा हो। जलता हुआ।

दह्यो†—पुं०=दही।

दाँ†—पुं० [सं० दाच् (प्रत्य०) जैसे, एकदा] दफा। बार। बारी।
वि० [फा०] जाननेवाला। ज्ञाता। (यौ० के अंत में) जैसे—फारसी-दाँ=फारसी भाषा जाननेवाला।

दाँई—वि०=दाईं।

दाँग—स्त्री० [फा०] १. छः रत्ती की तौल। २. किसी चीज का छठा भाग। ३. ओर। दिशा।
पुं० [हिं० डूँगर] १. टीला। २. पहाड़ की चोटी।
पुं० [हिं० डगा ?] नगाड़ा।

दाँगर—वि०, पुं०=डाँगर।

दाँगी—स्त्री० [सं० दंडक=डंडा] जुलाहों की कंघी में लगी रहनेवाली लकड़ी।

दाँजा†—स्त्री० [सं० उदाहार्य?] १. तुलना। बराबरी। २. स्पर्धा। होड़।

दांड—वि० [सं० दण्ड+अण्] दंड से संबंध रखनेवाला। दंड का।

दांडक्य—पुं० [सं० दण्डक+ष्यञ्] 'दंडक' होने की अवस्था या भाव। (दे० 'दंडक')

दाँड़ना—स० [सं० दंडन] १. दंड या सजा देना। २. अर्थ-दंड या जुरमाना लगाना।

दांडाजिनिक—पुं० [सं० दण्डाजिन+ठञ्—इक] वह जो दंड और अजिन धारण करके अपना अर्थ-साधन करता फिरे। साधु के वेष में लोगों को धोखा देने या ठगनेवाला व्यक्ति।

दाँड़ा-मेड़ा—पुं०=डाँड़ामेड़ा।

दांडिक—वि० [सं० दण्ड+ठञ्—इक] दंड देनेवाला।
पुं० जल्लाद।

दाँड़ी—स्त्री०=डाँड़ी।

दाँत—पुं० [सं० दंत; प्रा० दंद] १. अधिकतर रीढ़वाले प्राणियों के मुँह में नीचे और ऊपर की अर्ध-चंद्राकार पंक्तियों में के वे छोटे-छोटे अंश जो हड्डियों की तरह के और अंकुर के रूप में उठे हुए होते हैं और जिनसे वे काटने, खाने, चबाने जमीन खोदने, आदि का काम लेते हैं।
विशेष—कुछ रीढ़वाले प्राणी ऐसे भी होते हैं जिनके गले, तालू या पेट में उक्त प्रकार के कुछ अंग या रचनाएँ होती हैं।
२. मानव जाति के बालकों और वयस्कों के जबड़ों में मसूड़ों के साथ जुड़े हुए वे उक्त अंकुर या अंश जिनकी संख्या प्रायः ३२ (१६ नीचे और १६ ऊपर) होती है; और जिनसे खाने-चबाने आदि के सिवा कुछ वर्णों के उच्चारण में भी सहायता मिलती है।
विशेष—अनेक मुहावरों के प्रसंगों में 'दाँत' कोई चीज पाने या लेने, क्रोध, दीनता, प्रसन्नता आदि प्रकट करने अथवा किसी को कष्ट या हानि पहुँचाने की प्रवृत्ति के भी प्रतीक अथवा सूचक होते हैं।
मुहा०—**दाँत उखाड़ना**=(क) मसूड़े से दाँत निकालकर अलग करना। (ख) किसी पर ऐसा आघात या प्रहार करना अथवा उसे दंड देना कि वह फिर कोई उपद्रव या दुष्टता करने के योग्य न रह जाय। **(किसी से) दाँत काटी रोटी होना**=इतनी अधिक घनिष्ठ मित्रता या मेल-जोल होना कि एक दूसरे के साथ बैठकर एक थाली में भोजन करते हों। **दाँत काढ़ना**=दाँत निकालना। (देखें नीचे) **दाँत किरकिराना**=कुछ खाने के समय दाँतों के नीचे कंकड़ी, रेत आदि पड़ने के कारण भोजन चबाने में बाधा होना। **दाँत किरकिरे होना**=प्रतियोगता, विरोध आदि में कष्ट भोगते हुए बुरी तरह से विफल होना। **(किसी के पास) दाँत कुरेदने को तिनका तक न होना**=सर्वस्व नष्ट हो जाने के कारण बिलकुल कंगाल हो जाना। **(किसी के) दाँत खट्टे करना**=किसी को प्रतियोगिता, लड़ाई, विरोध आदि में बुरी तरह से परास्त करना। बुरी तरह से पूरा हराना। **(किसी चीज पर) दाँत गड़ाना**=कोई चीज अपने अधिकार में करने या पाने के लिए निरंतर उस पर दृष्टि लगाये रहना। **दाँत चबाना**=दाँत पीसना। (देखें नीचे) **दाँत टूटना**=(क) दाँत का अपने स्थान पर से निकलकर अलग होना। (ख) बुढ़ापा या वृद्धावस्था आना। (ग) किसी को कष्ट देने या हानि पहुँचाने की शक्ति से रहित या हीन होना। **(किसी के) दाँत तोड़ना**=किसी को ऐसी स्थिति में पहुँचाना कि वह कष्ट देने या हानि पहुँचाने के योग्य न रह जाय। **(अपने) दाँत दिखाना**=तुच्छता और निर्लज्जतापूर्वक हँसना। दाँत निकालना। **(किसी को) दाँत दिखाना**=इस प्रकार क्रोध प्रकट करना मानों काट ही लेंगे या खा ही जायँगे। **(पशुओं के) दाँत देखना**=घोड़े, बैल आदि की अवस्था या उमर का अंदाज करने के लिए उनके दाँत गिनना। **दाँत निकालना**=ओछेपन से या निर्लज्जतापूर्वक हँसना। **(किसी के आगे या सामने) दाँत निकालना**=(क) बहुत ही दीन बनकर कोई प्रार्थना या याचना करना। गिड़गिड़ाना। (ख) तुच्छतापूर्वक अपनी अयोग्यता, असमर्थता या हीनता प्रकट करना। **दाँत निपोरना**=दाँत निकालना। (देखें ऊपर) **दाँत पीसना**=बहुत अधिक क्रोध में आकर दाँतों पर दाँत रखकर ऐसी मुद्रा दिखलाना कि मानों खा या चबा ही

जायँगे। **दाँत बनवाना**=गिरे या टूटे हुए दाँतों के स्थान पर नये नकली दाँत बनवाकर लगवाना। **दाँत बैठना या बैठ जाना**=पक्षाघात, मिरगी, मूर्छा आदि रोगों के आक्रमण की दशा में पेशियों की स्तब्धता के कारण दाँतों की ऊपर और नीचेवाली पंक्तियों का परस्पर इस प्रकार मिल या सट जाना कि मुँह जल्दी न खुल सके। नीचे ऊपर के जबड़ों का सट जाना। **दाँत मसमसाना या मिसना**=दाँत पीसना। (देखें ऊपर) **(किसी चीज पर) दाँत लगना**=(क) दांत चुभने का घाव या निशान होना। (ख) (किसी चीज पर) दाँत गड़ना। (देखें ऊपर) **(किसी चीज पर) दाँत लगाना**= (क) दाँत गड़ाना या धँसाना। (ख) कोई चीज पाने के लिए उसकी घात या ताक में लगे रहना। **दाँत से दांत बजना**=बहुत अधिक सरदी लगने पर दाढ़ों का इस प्रकार काँपना कि नीचे और ऊपर के दाँत आपस में हलका कट-कट शब्द करते हुए टकराने या बजने लगें। **(किसी चीज पर) दाँत होना**=कोई चीज पाने या लेने की बहुत अधिक इच्छा होना। **(किसी व्यक्ति पर) दाँत होना**=(क) बदला चुकाने आदि के उद्देश्य से किसी पर क्रूर दृष्टि होना और उसे हानि पहुँचाने की घात या ताक में रहना या होना। (ख) किसी से अनुचित लाभ उठाने की ताक में होना। **दाँतों उँगली काटना या दबाना**=बहुत अधिक अचरज में आना। चकित हो जाना। दंग रह जाना। **(किसी के) दाँतों चढ़ना**= ऐसी स्थिति में होना कि कोई हर दम कोसता, गालियाँ देता या बुरा मानता रहे। **दाँतों तले उँगली दबाना**=दाँतों उँगली काटना या दबाना। (देखें ऊपर) **दाँतों धरती पकड़कर**=(क) अत्यंत दीनता और नम्रतापूर्वक। (ख) अत्यंत कष्ट और विवशता या संकीर्णता से। **(बच्चे का) दाँतों पर आना या होना**=उस अवस्था को पहुँचना जिसमें दाँत निकलनेवाले हों या निकलने लगे हों। **दाँतों पर मैल तक न होना**=अत्यंत निर्धन होना। कंगाल या बहुत गरीब होना। **दाँतों पसीना आना**=इतना अधिक परिश्रम होना कि मानों दाँतों तक में पसीना आ गया हो। **(किसी का) दाँतों में जीभ की तरह होना**=उसी प्रकार सब ओर से विरोधियों या शत्रुओं से घिरे रहना जिस प्रकार जीभ हर तरफ दाँतों से घिरी रहती है। **दाँतों में तिनका गहना, पकड़ना या लेना**=दया के लिए उसी प्रकार गौ बनकर अर्थात् दीन-भाव से प्रार्थना या याचना करना जिस प्रकार गौ मुँह में तिनका लेकर सामने आती है। **(कोई चीज) दाँतों से उठाना या पकड़ना**=बहुत कंजूसी से बचाकर इकट्ठा या संचित करना। **(किसी के) तालू में दाँत जमना**=दुर्भाग्य के कारण किसी का इस प्रकार आवश्यकता से अधिक उद्दंड, क्रूर या स्वेच्छाचारी होना कि लोगों को उसके पतन या विनाश के दिन पास आते हुए जान पड़ें।

३. कुछ विशिष्ट पदार्थों में उक्त आकार-प्रकार के वे अंश जो एक पंक्ति में अंकुरों के रूप में उठे, उभरे या निकले हुए होते हैं। दंदाना। दाँता। जैसे—आरी या कंघी के दाँत, कुछ पौधों के पत्तों में दोनों ओर निकले हुए दाँत, यंत्रों में के चक्करों या पहियों के दाँत। ४. उक्त प्रकार का कोई चिह्न या रूप।

मुहा०—(किसी वस्तु का) दाँत निकालना=जोड़, तल, सीअन का इस प्रकार उखड़, उधड़ या फट जाना कि जगह-जगह दाँत की तरह के चिह्न दिखाई देने लगें। जैसे—इस जूते ने तो दो ही महीनों में दाँत निकाल दिये।

दांत—वि० [सं० दान्त] १. जिसका दमन किया गया हो। दबाया हुआ। २. वश में किया या लाया हुआ। ३. जिसने इंद्रियों को वश में कर लिया हो। जितेंद्रिय।

वि० [सं० दन्त से] १. दाँत का। दाँत-संबंधी। २. दाँत का बना हुआ।

पुं० १. मैनफल। २. पहाड़ के ऊपर का जलाशय या बावली। ३. विदर्भ के राजा भीमसेन के दूसरे पुत्र जो दमयंती के भाई थे।

दाँत-घुंघनी—स्त्री० [हिं० दाँत+घुँघनी] पोस्ते के दाने की घुँघनी जो बच्चे का पहला दाँत निकलने पर बाँटी जाती है।

दाँतना—अ० [हिं० दाँत] १. दाँतों से युक्त होना। २. जवान होना। ३. किसी अस्त्र के ताँतों का कुंठित होना।

दाँतली—स्त्री० [हिं० डाट] डाट। काग।

दाँता—पुं० [हिं० दाँत] दाँत के आकार का बड़ा और नुकीला सिरा। दंदाना।

मुहा०—दाँता पड़ना=किसी हथियार की धार में गुठले होने के कारण कहीं कुछ उभार और कहीं कुछ गड्ढे हो जाना, जिससे वह ठीक काम करने के योग्य नहीं रह जाता।

दांता—स्त्री० [सं० दान्त, √दम् (दमन)+क्त+टाप्] एक अप्सरा का नाम। (महाभारत)

दाँता-किटकिट—स्त्री० [हिं० दाँत+किटकिट (अनु०)] १. प्रायः होती रहनेवाली कहा-सुनी या जबानी लड़ाई। कलह।

दाँता-किलकिल—स्त्री०=दाँता-किटकिट।

दांति—स्त्री० [सं० √दम् (वश में करना)+क्तिन्], [वि० दांत] १. इंद्रियों को वश में रखना। इंद्रियनिग्रह। २. अधीनता। वश्यता। ३. नम्रता। विनय।

दांतिक—वि० [सं० दंत+ठक्—इक] १. दाँत का बना हुआ। २. हाथी-दाँत का बना हुआ।

दाँतिया—पुं० [?] रेह का नमक जो पीने के तंबाकू में उसे तेज करने के लिए मिलाया जाता है।

दाँती—स्त्री० [सं० दात्री] घास, फसल आदि काटने की हँसिया।

स्त्री० [?] १. किनारे पर का वह खूँटा जिसमें रस्से से नाव बाँधी जाती है। २. काली भिड़। ३. छोटा दरी।

†स्त्री० [हिं० दाँत] दंतावलि। बत्तीसी।

मुहा०—दाँती बैठना या लगना=दाँत बैठना या बैठ जाना। (दे० 'दाँत' के अंतर्गत मुहा०)

दाँना—सं० [सं० दमन] १. कटी हुई फसल के डंठलों से दाने या बीज अलग करना। २. उक्त काम के लिए डंठलों को बैलों से रौंदवाना। दँवरी करना।

दांपत्य—वि० [सं० दम्पती+यत्र] वि० दंपती-संबंधी। दंपती या पति और पत्नी में होनेवाला। जैसे—दांपत्य प्रेम।

पुं० १. दंपती होने की अवस्था या भाव। २. एक प्रकार का अग्निहोत्र जो दंपती अर्थात् पति और पत्नी दोनों मिलकर करते हैं।

दांभ—वि० [सं० दम्भ+अण्] दांभिक। (दे०)

दांभिक—वि० [सं० दम्भ+ठक्—इक] १. जिसे दंभ हो। दंभ करने-वाला। २. अभिमानी। घमंडी। ३. ठग। वंचक। ४. पाखंडी। ५. धोखेबाज।

पुं० बगला (पक्षी)।

दाँयँ†—स्त्री० [अनु०] बंदूक, तोप आदि छूटने का शब्द।
†स्त्री=दँवरी।

दाँयाँ†—वि०=दाहिना।

दाँव—पुं० [सं० दा (दाच्), जैसे—एकदा] १. दफा। बार। मरतबा। २. क्रम, परम्परा, योग्यता आदि की दृष्टि से कोई काम करने के लिए आनेवाली पारी। बारी। जैसे—जब हमारा दाँव आवेगा, तब हम भी समझ लेंगे। ३. खेल में प्रत्येक खेलाड़ी के खेलने का अवसर या समय जो एक दूसरे के पीछे क्रम से आता है। खेलने की बारी।

मुहा०—दाँव देना=लड़कों का खेल में हारने पर नियत दंड भोगना या परिश्रम करना। **दाँव पूरना**=(क) ठीक तरह से बाजी खेलकर अपना पक्ष निभाना। (ख) अपना कर्त्तव्य पूरा करना। उदा०—अब की बार जो होय पुकारा कहहिं कबीर ताको पूर दाँव। —कबीर। **दाँव लेना**=खेल में हारनेवाले से नियत दंड भोगवाना या परिश्रम कराना।

४. जूए के खेलों में, कौड़ी, पाँसे आदि के पड़ने का वह रूप या स्थिति जिससे किसी खेलाड़ी या पक्ष की जीत होती है। हाथ।

मुहा०—(किसी का) दाँव कहना=किसी के कथन का यों ही समर्थन करना। हाँ में हाँ मिलाना। उदा०—रहिमन जौ रहिबौ चहै, कहै वाहि के दाँव।—रहीम। **(अपना) दाँव चलना**=खेल में अपनी पारी या बारी आने पर कौड़ी, गोटी, पत्ता या पाँसा आगे बढ़ाना, फेंकना या सामने रखना। जैसे—अब तुम्हारी बारी है, तुम अपना दाँव चलो। **दाँव पर (कुछ) रखना या लगाना**=(क) जीत-हार के लिए कुछ धन अथवा कोई वस्तु सामने रखना। किसी चीज की बाजी लगाना। जैसे—(क) उसने ताव में आकर सौ रुपए का एक नोट (या सोने का छल्ला) दाँव पर रख (या लगा) दिया। (ख) कोई ऐसा जोखिम या साहस का काम करना जिसका परिणाम या फल बिलकुल अनिश्चित हो। जैसे—इस रोजगार (या सौदे) में उन्होंने अपनी सारी संपत्ति दाँव पर रख दी थी। **दाँव फेंकना**=अपनी बारी आने पर कौड़ी या पाँसा फेंकना।

५. किसी काम या बात के लिए अनुकूल या उपयुक्त अवसर, समय या स्थिति। ठीक जगह, मौका या हालत। जैसे—वहाँ से उसके बच निकलने का कोई दाँव नहीं रह गया था।

मुहा०—दाँव चूकना=ठीक अवसर या मौके पर आवश्यक या उचित काम करने से रह जाना या वंचित होना। **दाँव ताकना**=अवसर या मौके की ताक में रहना। **दाँव पड़ना**=अनुकूल या उपयुक्त अवसर प्राप्त होना। उदा०—पूरब पुन्यनि दाँव पर्यौ अब राज करौ ··· ··· ···। —कबीर। **दाँव लगना**=उपयुक्त अवसर या मौका हाथ आना।

६. अपना काम निकालने का अच्छा ढंग या युक्ति। सोच-समझकर निकाली हुई तरकीब।

मुहा०—(किसी के) दाँव पर चढ़ना=किसी की युक्ति के जाल में इस प्रकार पड़ना या फँसना कि उसका उद्देश्य सिद्ध हो जाय। **(किसी को) अपने दाँव पर चढ़ाना या लाना**=किसी को अपनी युक्ति के जाल में इस प्रकार फँसाना कि सहज में उससे काम निकाला जा सके। जैसे—कुश्ती में हर पहलवान अपने प्रतिद्वंद्वी को दाँव पर लाने की तरकीब करता है। **(किसीके) दाँव में आना**=(किसी के) दाँव पर चढ़ना। (देखें ऊपर)

७. अपना काम निकालने का ऐसा ढंग या युक्ति जिसमें कुछ कुटिलता या चालबाजी हो। कपट या छल से भरी हुई तरकीब। चालाकी।

मुहा०—(किसी के साथ) दाँव करना या खेलना=चालाकी से भरी हुई तरकीब करना। चालबाजी या धूर्तता करना। **(किसी से) दाँव लेना**=जिसने बुरा व्यवहार किया हो, उपयुक्त अवसर आने पर उसके साथ भी वैसा ही व्यवहार करना। बदला चुकाना, निकालना या लेना।

विशेष—यद्यपि इस शब्द का उच्चारण सदा 'दाँवँ' ही होता है; फिर भी लिखने में 'दाँव' रूप ही प्रशस्त और शिष्ट-सम्मत है।

दाँवना—स०=दाँना।

दाँवनी†—स्त्री० १.=दावनी (गहना)। २.=दँवरी। ३.=दाँवरी।

दाँवरी—स्त्री० [सं० दाम] रस्सी। डोरी।
स्त्री०=दँवरी।

दा—अव्य० [हिं०] दफा। बार (यौ० के अंत में) जैसे—एकदा।
प्रत्य० [सं०] समस्त पदों के अंत में, देनेवाला। जैसे—धनदा, पुत्रदा।
पुं० [अनु०] सितार का एक बोल। उदा०—दा दि दाड़ा इत्यादि।
विभ० [पं०] 'का' विभक्ति का पंजाबी रूप। जैसे—मिट्टी दा पुतला।

दाइ*—पुं० १.=दाय। २.=दाँव।

दाइज—पुं०=दायजा (दहेज)।

दाइजा—पुं०=दायजा।

दाइँ—स्त्री० [सं० दाक् या दाँ] दफा। बार।
वि० हिं० 'दायाँ' (दाहिना) का स्त्री० रूप।
स्त्री० =दाँज (बराबरी)। जैसे—देखो तुम्हारी दाईं का लड़का कैसा काम करता है।

दाई—स्त्री० [सं० धात्री, मि० फा० दायः] १. दूसरे के बच्चे को अपना दूध पिलानेवाली स्त्री। धाय। दाया। २. बच्चों की देख-रेख करने और उन्हें खेलानेवाली दासी या नौकरानी। ३. घर का चौका-बरतन तथा इसी तरह के दूसरे छोटे काम करनेवाली नौकरानी। मजदूरनी। ४. वह स्त्री जो प्रसव-काल में बच्चा जनाने का काम जानती और करती है। प्रसूता की उपचारिका।

मुहा०—दाई से पेट छिपाना=अच्छी तरह जाननेवाले से कोई बात छिपाना। ऐसे व्यक्ति से कोई बात छिपाना जो सारा रहस्य जानता हो।
†स्त्री० [हिं० दादी] १. पिता की माता। दादी। २. बढ़ी-बूढ़ी स्त्रियों के लिए संबोधन।
वि० देनेवाला। जैसे—सुखदाई।

दाउँ*—पुं०=दाँव।

दाउ*—स्त्री०=दावानल।
पुं०=दाँव।

दाउनी*—स्त्री०=दावनी (सिर पर का गहना)।

दाउर*—पुं० [सं० दारु] कपड़ा धोने का काठ का डंडा। पिटना।

दाऊ—पुं० [सं० देव] १. बड़ा भाई। २. बलदेव या बलराम (कृष्ण के बड़े भाई)।

दाऊद—पुं० [अ०] एक पैगंबर जिनका स्वर बहुत मधुर था।

दाउदखानी—पुं० [फा०] १. एक प्रकार का चावल। २. एक प्रकार का बढ़िया गेहूँ। दाऊदी। गंगाजली।

दाऊदिया—पुं० [अ० दाऊद] १. एक प्रकार का गेहूँ। दाऊदी। २. गुलदावदी का फूल। ३. एक प्रकार की आतिशबाजी जिसमें उक्त फूल के सदृश चिनगारियाँ निकलती हैं। ४. एक प्रकार का कवच।

दाऊदी—पुं० [अ० दाऊद] १. एक प्रकार का बढ़िया जाति का गेहूँ जिसका छिलका बहुत नरम तथा सफेद रंग का होता है। २. एक प्रकार का नरम छिलकेवाला बढ़िया आम।

दाक—पुं० [सं०√दा (देना)+क, कलोपाभाव] १. यजमान। २. दाता।

दाक्ष—वि० [सं० दक्ष+अण्] दक्ष-संबंधी।
पुं० दक्षिण दिशा।

दाक्षायण—वि० [सं० दाक्षि+फक्—आयन] १. दक्ष-संबंधी। दक्ष का। २. दक्ष से उत्पन्न या उसके वंश का। ३. दक्ष के गोत्र का।
पुं० १. सोना। स्वर्ण। २. सोने की मोहर। अशरफी। ३. सोने का बना हुआ गहना। ४. एक यज्ञ जो वैदिक काल में दक्ष प्रजापति ने किया था।

दाक्षायणी—स्त्री० [सं० दक्ष+फिञ्—आयन, +ङीष्] १. दक्ष की कन्या। सती। २. दुर्गा। ३. कश्यप की पत्नी अदिति। ४. अश्विनी, भरणी, रोहिणी आदि नक्षत्र। ५. दंती वृक्ष।

दाक्षायणी-पति—पुं० [ष० त०] चंद्रमा।

दाक्षायण्य—पुं० [सं० दाक्षायणी+यत्] सूर्य।

दाक्षि—पुं० [सं० दक्ष+इञ्] दक्ष का पुत्र।

दाक्षि-कंथा—स्त्री० [ष० त०] वाह्लीक देश।

दाक्षिण—वि० [सं०] दक्षिण दिशा में होनेवाला। दक्षिण-संबंधी।
पुं० एक होम का नाम। (शतपथब्राह्मण)

दाक्षिणक—पुं० [सं० दक्षिणा+वुञ्—अक] वह बंध जो दक्षिणा की कामना से इष्टापूर्ति आदि कर्म करने पर प्राप्त होता है।

दाक्षिणात्य—वि० [सं० दक्षिणा+त्यक्, नि० आदि पद वृद्धि] दक्षिण दिशा में होनेवाला। दक्षिणी।
पुं० १. दक्षिण भारत। २. उक्त प्रदेश का निवासी। ३. उक्त प्रदेश में होनेवाला नारियल।

दाक्षिणिक—वि० [सं० दक्षिण+ठक्—इक] दक्षिण-संबंधी। दक्षिणी।

दाक्षिण्य—वि० [सं० दक्षिण+ष्यञ्] दक्षिण-संबंधी।
पुं० १. दक्षिण होने की अवस्था या भाव। २. अनुकूल या प्रसन्न आदि होने की अवस्था या भाव। ३. दूसरे को प्रसन्न करने का भाव अथवा योग्यता। (साहित्यशास्त्र)

दाक्षी—स्त्री० [सं० दाक्षि+ङीष्] १. दक्ष की कन्या। २. पाणिनि की माता का नाम।

दाक्षेय—पुं० [सं० दाक्षी+ढक्—एय] पाणिनि मुनि।

दाक्ष्य—पुं० [सं० दक्ष+ष्यञ्] दक्षता।

दाख—स्त्री० [सं० द्राक्षा] १. अंगूर नामक लता और उसका फल। २. मुनक्का। ३. किशमिश।
वि०=दक्ष। उदा०—ताकों विहित बखानहीं, जिनकी कविता दाख।—मतिराम।

दाखना—स० १.=दिखाना। २.=देखना।

दाख-निर्विषी—स्त्री० [हिं० दाख+सं० निर्विषी] हर-जेवड़ी नामक झाड़ी जिसकी पत्तियों और जड़ों का औषध के रूप में व्यवहार होता है। पुरही।

दाखिल—वि० [फा०] १. जो किसी विशिष्ट क्षेत्र या स्थान की सीमा लाँघ कर उसमें प्रविष्ट हो चुका हो। २. कहीं आया या पहुँचा हुआ। ३. जो कहीं दिया या पहुँचाया गया हो। (फाइल्ड)

दाखिल खारिज—पुं० [अ०] किसी वस्तु पर से किसी का स्वामित्व बदलने पर पुराने स्वामी का नाम काटकर नये स्वामी का नाम सरकारी कागज-पत्रों पर चढ़ाया जाना।

दाखिल दफ्तर—वि० [फा० दाखिल] (निवेदन, याचना आदि संबंधी पत्र) जो बिना किसी प्रकार का निर्णय या विचार किये, परंतु रक्षित रखने के लिए दफ्तर के कागज-पत्रों, नत्थियों आदि में रख दिया गया हो।

दाखिला—पुं० [फा० दाखिलः] १. किसी व्यक्ति के कहीं दाखिल या प्रविष्ट होने की क्रिया या भाव। २. नियत शुल्कों आदि के अतिरिक्त वह धन जो पहले-पहल किसी संस्था में दाखिल या सम्मिलित होकर उसके सदस्यों में नाम लिखाने के समय अथवा विद्यालयों आदि में भरती होने के समय विद्यार्थियों को देना पड़ता है। प्रवेश-शुल्क। ३. वह पत्र जो कहीं कुछ चीजें दाखिल या जमा करने पर उसके प्रमाण के रूप में लिखा जाता है और जिन पर उन चीजों का विवरण या सूची और दाखिल करनेवाले का नाम, पता आदि बातें लिखी रहती हैं।

दाखिली—वि० [अ०] १. आंतरिक। भीतरी। अंतरंग। 'खारिजी' का विपर्याय। २. दिली। हार्दिक।

दाखी†—स्त्री० =दाक्षी।

दाग—पुं० [सं० दाह] १. जलाने की क्रिया या भाव। दाह। २. हिंदुओं में मृतक का शव जलाने की क्रिया या भाव।
मुहा०—दाग देना=मृतक का दाह कर्म करना। मुरदे का शव जलाना।
३. जलने के कारण अंग या वस्तु पर पड़नेवाला चिह्न या दाग। ४. जलन। ताप। ५. ईर्ष्या। डाह।
पुं० [फा० दाग़] [वि० दागी] १. किसी वस्तु के तल पर बना या लगा हुआ वह चिह्न जो उसका सौन्दर्य कम करता या घटाता हो। धब्बा। जैसे—धोती या कमीज पर लगा हुआ स्याही या रंग का दाग।
पद—सफेद दाग। (देखें)
२. किसी प्रकार के भीतरी विकार का सूचक ऐसा चिह्न जो किसी वस्तु के बाहरी तल पर दिखाई देता हो। जैसे—इस सेव पर सड़ने का दाग है। ३. मुगल शासन-काल की एक प्रथा जिसके अनुसार सैनिकों के घोड़ों के पुट्ठों पर, पहचान के लिए गरम लोहे से जलाकर चिह्न या निशान बना दिया जाता था। ४. चरित्र, यश आदि पर (अपराध, दोष आदि के कारण) लगनेवाला कलंक। धब्बा। लांछन। जैसे—इसने अपने खानदान पर दाग लगाया है।
क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।
५. किसी प्रकार की दुर्घटना आदि के कारण मन को होनेवाला ऐसा कष्ट या दुःख जो जल्दी दूर न हो सके या भुलाया न जा सके। जैसे—जवान लड़के के मरने का दाग।
पद—दागे जिगर=संतान का शोक।

दागदार—वि० [फा०] १. जिस पर किसी तरह का दाग या धब्बा लगा हो। २. जो किसी अपराध या दोष में दंडित या सम्मिलित हो चुका हो। ३. जिस पर कोई कलंक लगा या लग चुका हो।

दागना—स० [फा० दाग़] १. किसी चीज का तल गरम लोहे आदि से इस प्रकार जलाना या झुलसना कि उस पर दाग पड़ जाय। जैसे—शरीर पर शंख, चक्र आदि की मुद्राएँ दागना।

विशेष—प्रायः किसी को दंड या कष्ट देने, भूत-प्रेत की बाधा या यम-यातना आदि से बचाने के लिए यह क्रिया की जाती है।

२. तेजाब, दाहक औषध आदि से किसी घाव या फोड़े पर इस उद्देश्य से लगाना जिसमें उसका विषाक्त अंश जल जाय और इधर-उधर फैलने न पावे। ३. तोप, बंदूक आदि की प्याली में के बारूद में इसलिए आग लगाना कि उसके फल-स्वरूप गोली निकलकर अपने निशाने पर जा लगे। ४. आज-कल (यांत्रिक और रासायनिक प्रक्रियाओं में) चलनेवाली तोप, बंदूक आदि चलाना। ६. पहचान आदि के लिए किसी चीज पर कोई अंक, चिह्न या निशान बनाना। अंकित या चिह्नित करना। जैसे—बजाजों का कपड़े का थान दागना; अर्थात् उन पर मूल्य आदि अंकित करना। संयो० क्रि०—देना।

दाग बेल—स्त्री० [फा० दाग+हिं० बेल] वे रेखाएँ या चिह्न जो किसी जमीन पर इमारत आदि की नींव खोदने के समय अथवा किसी प्रकार के विभाग सूचित करने के लिए बनाये या लगाये जाते हैं।

दागर†—वि० [हिं दागना] १. नष्ट करनेवाला। २. दागदार।

दागल†—वि० [फा० दाग़] दागदार। उदा०—अकबरिये, इकबार, दागल की सारी दुनी।—दुरसा जी।

दागी—वि० [फा० दाग़] १. जिसपर किसी तरह का दाग या धब्बा लगा हो। २. जिसके ऊपर कोई ऐसा चिह्न हो जो भीतरी विकार, सड़न आदि का सूचक हो। जैसे—दागी फल। ३. जिस पर कोई कलंक या लांछन लगा हो या लग चुका हो। ४. जिसे न्यायालय से कारावास का दंड मिल चुका हो। जो किसी अपराध में जेल की सजा भोग आया हो।

दाघ—पुं० [सं०√दह् (जलाना)+घञ्] १. गरमी। ताप। २. जलन। दाह।

दाज—पुं० [?] १. अँधेरी रात। २. अंधकार। अँधेरा।
†पुं०=दहेज। (पश्चिम)
†स्त्री०=दाझ।

दाजन—स्त्री०=दाझन।

दाजना—अ०, स०=दाझना।

दाझ—स्त्री० [सं० दाह] जलन। ताप। उदा०—धूप दाझ तैं छाँह तकाई मति तरवर सचुपाऊँ।—कबीर।

दाझन†—स्त्री० [सं० दग्ध] दाझने अर्थात् दग्ध करने की क्रिया या भाव।

दाझना—अ० [सं० दग्ध वा दाहन] १. जलना। २. ईर्ष्या या डाह करना। स० १. जलाना। २. बहुत अधिक दुःखी, पीड़ित या संतप्त करना।

दाझनि—स्त्री०=दाझन।

दाटक†—वि० [?] १. दृढ़। पक्का। २. बलवान्। बलिष्ठ। उदा०—दाटक अनड़ दंड नह दीधो, दोयण धड़ सिर दाब दियो।—दुरसा जी। ३. पराक्रमी।

दाटना—स०=डाँटना।
अ० [?] जान पड़ता। प्रतीत होना।

दाड़क—पुं० [सं०√दल् (दलन करना)+णिच्+ण्वुल्—अक] १. दाढ़। डाढ़। २. दाँत।

दाड़व—पुं० [?] पुराणानुसार काशी से दो योजन पश्चिम एक गाँव जिसमें कल्कि भगवान अधर्मी म्लेच्छों का नाश करने के उपरान्त शांति-पूर्वक निवास करेंगे।

दाड़स—पुं० [हिं० दाढ़] एक प्रकार का साँप।
†पुं०=ढारस।

दाडिब—पुं० [सं० दाडिम] अनार का वृक्ष और उसका फल।

दाड़िम—पुं० [सं०√दल् (भेदन)+घञ्, दाल+इमप्, ल—ड] १. एक प्रसिद्ध पौधा और उसका फल। अनार। २. इलायची।

दाड़िम-पुष्पक—पुं० [ब० स०, कप्] रोहितक नामक वृक्ष। रोहेड़ा।

दाड़िम-प्रिय—पुं० [ब० स०] शुक। तोता।

दाड़िमाष्टक—स्त्री० [दाडिम-अष्टक, मध्य० स०] वैद्यक में एक प्रकार का चूर्ण जिसमें अनार का छिलका तथा कुछ और चीजें पड़ती हैं।

दाड़िमीसार—पुं०=दाडिम।

दाड़ी†—स्त्री० [√दल् (भेदन)+घञ्+ङीप्] दे० 'दाड़िम'।
†स्त्री=दाढ़ी।

दाढ़—स्त्री० [सं० दंष्ट्रा; प्रा० डड्डा या सं० दाड़क] जबड़े के भीतर के मोटे चौखूंटे दाँत जो दोनों ओर दो-दो ऊपर नीचे होते हैं। चौभर।
मुहा०—दाढ़ गरम गरम होना=अच्छी-अच्छी चीजें अधिक मात्रा में खाने को मिलना।
†स्त्री०=दहाड़।

दाढ़ना—स०=दाहना (जलाना)।
†अ०=दहाड़ना।

दाढ़ा—पुं० [सं० दाह] १. बन की आग। दावानल। २. अग्नि। आग। ३. जलाने के लिए लकड़ियों, पत्तों आदि का बनाया या लगाया हुआ ढेर। ४. गरमी। ताप। ५. जलन। दाह।
मुहा०—दाढ़ा फूंकना=बहुत अधिक जलन या दाह उत्पन्न करना।
पुं० [हिं० दाढ़ी] ऐसी बड़ी दाढ़ी जिसमें बहुत अधिक घने और लंबे बाल हों। बड़ी दाढ़ी।
†पुं० = दाढ़।
†पुं० = डाढ़ा।

दाढ़िका—स्त्री० [सं० दाढ़ा+क+टाप्, इत्व] दाढ़ी।

दाढ़ी—स्त्री० [सं० दाढिका] १. मनुष्यों में पुरुष जाति के लोगों की ठोढ़ी पर उगनेवाले बाल जो या तो मुँडवाकर साफ किये जाते हैं या बढ़ाकर बड़े बड़े किये जाते हैं।
मुहा०—दाढ़ी घुटवाना या बनवाना=दाढ़ी पर के बाल उस्तरे से मुँडवाना।
२. ठोढी। चिबुक। ३. कुछ विशिष्ट प्रकार के पशुओं की ठोढ़ी पर के वे बाल जो प्रायः बढ़कर झूलने या लटकने लगते हैं। जैसे—बकरे की दाढ़ी।

दाढ़ीजार—पुं॰ [हिं॰ दाढ़ी+जलना] स्त्रियों की एक गाली जो वे बहुत क्रुद्ध होने पर पुरुषों को देती हैं, और जिसका अर्थ होता है—जिसकी दाढ़ी जलाई गई हो अथवा मुँह झुलसा या फूँका गया हो।
विशेष—कुछ लोग इसको सं॰ 'दारी-जार' (अर्थात् दुश्चरित्रा स्त्री का यार और संगी-साथी) से व्युत्पन्न मानते हैं।

दाण†—पुं॰ = दान।

दात*—पुं॰ [सं॰ दातव्य] १. दान के रूप में शुभ अवसर पर किसी को दिया जानेवाला पदार्थ। २. दान।
†वि॰ = दाता।

दातन—स्त्री॰ = दातुन।

दातव्य—वि॰ [सं॰√दा (देना)+तव्यत्] १. जो दिया जाने को हो या दिया जा सकता हो। २. दान-संबंधी। दान का। ३. जहाँ से दान रूप में कुछ दिया जाता हो। जैसे—दातव्य औषधालय।
पुं॰ १. दान। २. दानशीलता। ३. वह धन जो चुकाना या देना आवश्यक हो। (ड्यू) जैसे—कर या महसूल।

दाता (तृ)—वि॰ [सं॰√दा+तृच्] [स्त्री॰ दात्री] १. समस्त पदों के अंत में, देनेवाला। जैसे—सुखदाता। २. बहुत अधिक दान करनेवाला। दानशील।
पुं॰ १. ईश्वर या परमात्मा जो सब को सब-कुछ देता है। २. बहुत बड़ा दानी व्यक्ति।

दातापन—पुं॰ [सं॰ दाता+हिं॰ पन] बहुत बड़ा दाता होने की अवस्था या भाव। दानशीलता।

दातार—वि॰ [सं॰ दाता का बहु॰] दाता। देनेवाला। बहुत दान देनेवाला। बहुत बड़ा दाता।

दाति—स्त्री॰ [सं॰√दा (दान)+क्तिच्] १. देने की क्रिया या भाव। २. वितरण। ३. किसी दूसरे स्थान से किसी के नाम आई हुई वस्तु उसे देना या पहुँचाना। (डिलिवरी)

दाती*—स्त्री॰ [हिं॰ 'दाता' का स्त्री॰] देनेवाली।

दातुन—स्त्री॰ [हिं॰ दाँत+अवन (प्रत्य॰)] १. किसी पेड़ की पतली नरम टहनी का वह टुकड़ा जिसका अगला सिरा कुचलकर दाँत साफ किये जाते हैं। २. दाँत और मुँह अच्छी तरह साफ करने की क्रिया।

दातुन—स्त्री॰ [सं॰ दंती] १. दंती की जड़। २. जमालगोटे की जड़।
† स्त्री॰ = दातून।

दातृता—स्त्री॰ [सं॰ दातृ+तल्+टाप्] दाता होने की अवस्था या भाव। दानशीलता।

दातृत्व—पुं॰]सं॰ दातृ+त्व] दानशीलता। दातृता।

दातौन—स्त्री॰ = दतुवन।
स्त्री॰ = दातुन।

दात्यूह—पुं॰ [सं॰ दाति√ऊह् (वितर्क)+अण्] १. पपीहा। चातक। २. बादल। मेघ।

दात्योनि*—स्त्री॰ = दातुन।

दात्यौह—पुं॰ [सं॰ दात्यूह (पृषो॰ सिद्धि)] १. पपीहा। २. बादल।

दात्र—पुं॰ [सं॰ √दो (काटना)+ष्ट्रन्] [स्त्री॰ अल्पा॰ दात्री] घास, फल आदि काटने की दरांती। दाँती। हँसिया।

दात्री—स्त्री॰ [सं॰ दातृ+ङीप्] देनेवाली।
स्त्री॰ दराँती या हँसिया नामक औजार।

दात्व—पुं॰ [सं॰√दा (दान)+त्वन्] १. दाता। २. यज्ञ का अनुष्ठान। ३. यज्ञ।

दाद—स्त्री॰ [सं॰ दद्रु] एक प्रसिद्ध चर्म रोग जिसमें शरीर के किसी अंग में ऐसे चकत्ते पड़ जाते हैं, जिनमें बहुत खुजली होती है।
वि॰ [फा॰] समस्त पदों के अंत में दिया हुआ। जैसे—खुदादाद।
स्त्री॰ १. इंसाफ। न्याय।
क्रि॰ प्र॰—चाहना।—देना।—माँगना।
२. न्याय के लिए की जानेवाली प्रार्थना। ३. न्यायपूर्वक (अर्थात् बिना किसी प्रकार के पक्षपात के) किसी द्वारा किये हुए किसी काम और उसके कर्ता की भी की जानेवाली प्रशंसा। सराहना।
मुहा॰—**दाद देना**=न्यायपूर्वक और बिना पक्षपात किये किसी की उक्ति, कार्य आदि की प्रशंसा करना। **दाद पाना**= उचित अनुग्रह, न्याय, सत्कार आदि का पात्र या भाजन बनना। उदा॰—सदा सर्वदा राज राम कौ सूर दादि तहँ पाई।—सूर।

दाद-ख्वाह—वि॰ [फा॰] न्याय चाहनेवाला। फरियाद करनेवाला।

दादगर—वि॰ [फा॰] न्याय करनेवाला।

दादनी—स्त्री॰ [फा॰] १. वह जो दिया जाने को हो। दातव्य। २. वह धन जो किसी काम के लिए अग्रिम या पेशगी दिया जाय; विशेषतः वह धन जो खेतिहरों को अनाज पैदा होने के पहले बनिया या महाजन इसलिए पेशगी देता है कि अनाज दूसरों के हाथ न बिकने पावे।

दादमर्दन—पुं॰ [सं॰ दद्रुमर्दन] चकवँड़ नामक पौधा, जिसकी पत्तियाँ पीसकर दाद पर लगाई जाती हैं।

दाद-रस—वि॰ [फा॰] न्याय करनेवाला।

दादरा—पुं॰ [?] संगीत में एक प्रकार का चलता गाना (पक्के या शास्त्रीय गानों से भिन्न)।

दादस—स्त्री॰ [हिं॰ दादा+सास] सास की सास। ददिया सास।

दादा—पुं॰ [सं॰ तात] [स्त्री॰ दादी] १. पिता का पिता। पितामह। २. बड़े-बूढ़ों के लिए आदरसूचक संबोधन।
पुं॰ [स्त्री॰ दीदी] बड़ाभाई।

दादि†—स्त्री॰ =दाद (न्याय)।

दादी—पुं॰ [फा॰ दाद] वह जो दाद (अर्थात् कष्ट का प्रतिकार) चाहता हो। दाद या न्याय का प्रार्थी।
स्त्री॰ हिं॰ 'दादा' (पितामह) का स्त्री॰।

दादु†—स्त्री॰ [सं॰ दद्रु] दाद।

दादुर—पुं॰ [सं॰ दर्दुर] मेंढक। मंडूक।

दादुल*— पुं॰ = दादुर (मेंढ़क)।

दादू—पुं॰ [अनु॰ दादा] १. दादा के लिए संबोधन या प्यार का शब्द। २. बड़े भाई के लिए स्नेहसूचक संबोधन।
पुं॰ दे॰ 'दादू दयाल'।

दादूदयाल—पुं॰ एक प्रसिद्ध संत जिनके नाम पर दादू नाम का पंथ चला है। कहते हैं कि ये अहमदाबाद के धुनिया थे। जो अकबर के शासन-काल में हुए थे। कबीर-पंथी इन्हें कबीर का अनुयायी कहते हैं।

दादूपंथी—पुं॰ [हिं॰ दादू+पंथी] दादू दयाल नामक संत के चलाये हुए पंथ या संप्रदाय का अनुयायी।

दाध*—स्त्री० [सं० दाह] जलन। दाह।

दाधना*—स० [सं० दग्ध] जलाना। भस्म करना।

दाधिक—वि० [सं० दधि+ठक्-इक] दही से बना हुआ। जिसमें दही डाला गया हो।

दाधिचि—पुं० =दाधीच।

दाधीच—पुं० [सं० दधीचि+अण्] दधीचि ऋषि का वंशज।

दान—पुं० [सं०√दा (दान)+ल्युट्—अन] १. किसी को कुछ देने की क्रिया या भाव। देन। २. धर्म, परोपकार, सहायता आदि के विचार से अथवा उदारता, दया आदि से प्रेरित होकर किसी को कुछ देने की क्रिया या भाव। खैरात। ३. उक्त प्रकार से दिया हुआ धन या कोई वस्तु।

क्रि० प्र०—देना। —पाना। —मिलना।—लेना।

४. राजनीति के चार उपायों में से एक, जिसमें किसी को कुछ देकर शत्रु का पक्ष निर्बल किया जाता है अथवा विरोधी को अपनी ओर मिलाया जाता है। ५. कर। महसूल। ६. हाथी के मस्तक से निकलनेवाला मद। ७. शुद्धि। ८. छेदने की क्रिया या भाव। छेदन। ९. एक प्रकार का मधु या शहद।

वि० [फा०] १. जाननेवाला। जैसे—कद्र-दान। २. (यौ० के अंत में संज्ञा रूप में प्रयुक्त) आधार या पात्र बनकर अपने अंतर्गत रखनेवाला। जैसे—कलमदान, पानदान।

दानक—पुं० [सं० दान+कन्] कुत्सित या निकृष्ट दान। बुरा दान।

दान-कुल्या—स्त्री० [ष० त०] हाथी का मद।

दान-धर्म—पुं० [मध्य० स०] दान देने का धर्म।

दान-पति—पुं० [ष० त०] १. बहुत बड़ा दानी। २. अक्रूर का एक नाम जो स्यमंतक मणि के प्रभाव से सदा बहुत अधिक दान करता रहता था।

दान-पत्र—पुं० [ष० त०] वह पत्र जिसमें अपनी संपत्ति सदा के लिए किसी को दान रूप में देने का उल्लेख किया जाता है।

दान-पात्र—पुं० [ष० त०] वह व्यक्ति जिसे दान देना उचित हो। दान प्राप्त करने का अधिकारी।

दान-प्रतिभू—पुं० [ष० त०] किसी के द्वारा लिये जानेवाले धन की जमानत करनेवाला व्यक्ति।

दान-प्रतिष्ठा—स्त्री० [ष० त०] किसी दान की हुई संपत्ति के साथ दक्षिणा रूप में दिया जानेवाला धन। दक्षिणा। उदा०—पुनि कछु गुनि बोले अब दान-प्रतिष्ठा दीजै।—रत्ना०।

दान-लीला—स्त्री० [सं० मध्य० स०] १. कृष्ण की वह लीला जिसमें वे ग्वालिनों से गोरस बेचने का कर वसूल करते थे। २. वह पुस्तक जिसमें उक्त लीला का विस्तृत वर्णन हो।

दानलेख—पुं० = दान-पत्र।

दानव—पुं० [सं० दनु+अण्] दनु (कश्यप की स्त्री) के वे पुत्र जो देवताओं के घोर शत्रु थे। असुर। राक्षस।

दानव-गुरु—पुं० [ष० त०] शुक्राचार्य।

दानवज्र—पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्रकार के घोड़े जो देवताओं और गंधर्वों की सवारी में रहते हैं, कभी बुड्ढे नहीं होते और मन की तरह वेगवान् होते हैं।

दान-वारि—पुं० [कर्म० स०] हाथी का मद।

दानवारि—पुं० [सं० दानव-अरि, ष० त०] १. दानवों का नाश करनेवाले, विष्णु।२. देवता। ३. इंद्र।

दानवी—वि० [सं० दानवीय] दानवों का। दानव-संबंधी। जैसे—दानवी माया।

स्त्री० [सं० दानव+ङीप्] दानव जाति की स्त्री। राक्षसी।

दान-वीर—पुं० [स० त०] वह जो सदा बहुत बड़े-बड़े दान करता रहता हो और दान करने में कभी पीछे न हटता हो।

दानवेंद्र—पुं० [सं० दानव-इंद्र, ष० त०] राजा बलि।

दान-शील—वि० [ब० स०] [भाव० दानशीलता] जो स्वभावतः बहुत कुछ दान देता रहता हो। बहुत बड़ा दानी।

दान-शीलता—स्त्री० [सं० दानशील+तल्+टाप्] दानशील होने की अवस्था या भाव।

दान-सागर—पुं० [ष० त०] एक प्रकार का बहुत बड़ा दान जिसमें भूमि, आसन आदि सोलह पदार्थों का दान किया जाता है। (बंगाल)

दानांतराय—पुं० [दान-अंतराय, ष० त०] जैनशास्त्र के अनुसार अंतराय या पाप-कर्म जिनके उदय होने पर मनुष्य दान करने में असमर्थ होता है।

दाना—पुं० [फा० दानः] १. अन्न का कण या बीज। २. अन्न जो पकाकर खाया जाता है। अनाज।

पद—**दाना-पानी**। (देखें)

मुहा०—**दाने-दाने को तरसना या मोहताज होना**=कुछ भी भोजन न मिलने के कारण बहुत ही दीन भाव से कष्ट भोगना। **दाना बदलना**=एक पक्षी का अपने मुँह का दाना दूसरे पक्षी के मुँह में डालना। चारा बाँटना। **दाना भरना या भराना**=पक्षियों का अपने छोटे बच्चों के मुँह में अपनी चोंच से दाना डालना या रखना।

३. भाड़ में भूँजा हुआ अन्न। ४. वनस्पतियों आदि के बीज। जैसे—राई या सरसों का दाना। ५. कुछ विशिष्ट प्रकार की छोटी गोलाकार चीजों का वाचक शब्द। जैसे—घुँघरू, मूँगे या मोती का दाना, गले में पहनने के कंठे या माला के दाने। ६. कुछ विशिष्ट प्रकार के पदार्थों का गोलाकार छोटा कण। जैसे—घी, चीनी, दही या मलाई के ऊपर दिखाई देनेवाले दाने। ७. उक्त प्रकार की गोलाकार छोटी चीजों के साथ प्रयुक्त होनेवाला संख्या-सूचक शब्द। जैसे—चार दाना आम, तीन दाना काली मिर्च, दो दाना मुनक्का। ८. रोग, विकार आदि के कारण शरीर के चमड़े पर होनेवाले गोलाकार छोटे उभार। जैसे—खुजली या शीतला के दाने। ९. किसी तल पर दिखाई देनेवाले छोटे गोलाकार उभार। जैसे—नारंगी के छिलके पर के दाने, नकाशीदार बरतनों पर के दाने।

वि० [फा०] [भाव० दानाई] बुद्धिमान। अक्लमंद। जैसे—नादान दोस्त से दाना दुश्मन अच्छा होता है।

दानाई—स्त्री० [फा०] अक्लमंदी। बुद्धिमत्ता।

दाना-चारा—पुं० [फा० दाना+हिं० चारा] जीव-जंतुओं को दिया जानेवाला भोजन।

दाना-चीनी—स्त्री० [हिं०] वह चीनी जो महीन चूर्ण के रूप में नहीं, बल्कि कुछ मोटे कणों या दानों के रूप में होती है।

दानादेश—पुं० [सं० दान-आदेश, च० त०] १. किसी को कुछ दान दिये जाने की आज्ञा। २. 'देयादेश'।

दानाध्यक्ष—पुं० [सं० दान-अध्यक्ष, ष० त०] मध्ययुग में किसी देशी राज्य का वह अधिकारी जो यह निश्चय करता था कि राजा या राज्य की ओर से किसे कितना दान दिया जाना चाहिए।

दाना-पानी—पुं० [फा० दाना+हिं० पानी] १. जीवन-निर्वाह के लिए आवश्यक खाने-पीने की चीजें। अन्न-जल। २. पेट भरने के लिए कुछ चीजें खाने या पीने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—छोड़ना।—मिलना।

३. भरण-पोषण का आयोजन। जीविका। ४. भाग्य की वह स्थिति जिसके कारण किसी को कहीं जाकर रहना और वहाँ कुछ खाना-पीना पड़ता हो, अथवा वहाँ रहकर जीविका का निर्वाह करना पड़ता हो। अन्न-जल।

मुहा०—(कहीं से किसी का) **दाना-पानी उठना**=भाग्य या विधि का ऐसा विधान होना जिससे किसी व्यक्ति को किसी स्थान से (कहीं और जाने के लिए) हटना पड़े।

दाना-बंदी—स्त्री० [फा० दान+बंदी] खड़ी फसल से उपज का अंदाज करने के लिए खेत को नापने का काम।

दानिनी—स्त्री० [सं०] दान करनेवाली स्त्री।

दानिया—पुं० [सं० दान] १. वह जो दान अर्थात् कर उगाहता हो। २. दानी। दाता।

वि० १. दान-संबंधी। २. दान लेनेवाला। जैसे—दानिया ब्राह्मण।

दानिश—स्त्री० [फा०] १. अक्ल। बुद्धि। विवेक। २. विद्या।

दानिस†—स्त्री० [फा० दानिस्त] १. समझ। बुद्धि। २. राय। सम्मति।

†स्त्री० = दानिश।

दानी(निन्)—वि० [सं० दान+इनि] [स्त्री० दानिनी] १. बहुत दान करनेवाला। दानशील। २. देनेवाला। (यौ० के अंत में) पुं० १. वह जो दान देने में बहुत उदार हो। बहुत बड़ा दाता या दान-शील।

पुं० [सं० दानीय] १. कर आदि उगाहनेवाला अधिकारी। २. नेपालियों की एक जाति या वर्ग।

स्त्री० [फा० दान से] कोई चीज रखने का छोटा आधान या पात्र। (यौ० के अंत में) जैसे—चूहेदानी, बालूदानी, सुरमेदानी।

दानीय—वि० [सं०√दा (देना)+अनीयर्] दान किये जाने योग्य। जो दान के रूप में दिया जा सके।

दानु—वि० [सं०√दा+नु] १. दाता। २. विजयी। ३. वीर। बहादुर।

पुं० १. दान। २. दानव। ३. वायु। हवा। ४. तृप्ति। तुष्टि। ५. अभ्युदय। ६. पानी आदि की बूँद।

दानेदार—वि० [फा०] जिसके अंश दानों अर्थात् कणों के रूप में हों। जैसे—दानेदार घी, दानेदार चीनी।

दानौ†—पुं० = दानव।

दाप—पुं० [सं० दर्प प्रा० दप्प] १. अभिमान। घमंड। २. बल। शक्ति। ३. दबदबा। रोब। ४. तेज। प्रताप। ५. बल। शक्ति। ६. क्रोध। गुस्सा। ७. जलन। ताप।

दापक—पुं० [हिं० दापना] १. दबानेवाला। २. रोकनेवाला।

दापना—स० [हिं० दाप] १. दबाना। २. मना करना। रोकना।

दापित—भू० कृ० [सं०√दा (देना)+णिच्+क्त] १. जो देने के लिए बाध्य किया गया हो। २. जिस पर अर्थ-दंड लगाया गया हो। ३. जिसका निर्णय या फैसला किया गया हो।

दाब—स्त्री० [हिं० दबाना] १. दबाने की क्रिया या भाव। २. ऐसी स्थिति जिसमें किसी प्रकार का दबाव या भार पड़ता हो। दबने या दबे हुए होने की अवस्था।

क्रि० प्र०—पहुँचाना।—रखना।—लगाना।

३. वह भारी वस्तु जो किसी दूसरी चीज के ऊपर उसे दबाये रखने के लिए रखी जाती है। भार।

क्रि० प्र०— डालना।— रखना।

४. पत्थर, शीशे आदि का वह छोटा टुकड़ा जो कागजों को उड़ने से बचाने या उन्हें दबाये रखने के लिए उन पर रखा जाता है। (पेपर वेट) ५. नैतिक, वैयक्तिक या शारीरिक दृष्टि से प्रबल व्यक्ति का किसी दूसरे व्यक्ति पर पड़नेवाला प्रभाव या दबाव।

मुहा०—**किसी की दाब तले होना** = किसी के वश में या अधीन होना। **(किसी की) दाब मानना** = किसी बड़े का अधिकार या प्रभाव मानना और उसकी आज्ञा, इच्छा आदि के वशवर्ती होकर रहना। **(किसी को) दाब में रखना** = नियंत्रण, वश या शासन में दबाकर रखना।

६. यंत्रों आदि में किसी चीज पर यंत्र के किसी ऊपरी, बड़े भाग का इस प्रकार आकर पड़ना कि उसके फल-स्वरूप उस चीज पर कुछ अंकित हो या किसी प्रकार का अभीष्ट फल हो। जैसे—छापे के यंत्र में कागज पर पड़नेवाली दाब।

†पुं० = द्रव्य।

दाबकस—पुं० [हिं० दाब+कसना] लोहारों के छेदने के औजारों (किरकिरा, बरदुआ आदि) का एक हिस्सा।

दाबदार—वि० [हिं० दाब+फा० दार] रोबदार। आतंक रखनेवाला। प्रभावशाली। प्रतापी।

दाबना—सं० १. = दबाना। २. = गाड़ना।

दाब-मापक—पुं० [हिं०+सं०] वह यंत्र जिससे यह जाना जाता है कि किसी चीज पर दूसरी चीज का कितना दाब या भार पड़ रहा है। (मैनो मीटर, प्रेशर गेज)

दाबा—पुं० [हिं० दाब] कलम लगाने के लिए पौधों की टहनी को मिट्टी में गाड़ने या दबाने की क्रिया या पद्धति।

पुं० [?] नदियों में रहनेवाली एक प्रकार की छोटी मछली।

दाबिल—पुं० [हिं० दाब] एक प्रकार की बड़ी सफेद चिड़ियाँ जिसकी चोंच दस बारह अंगुल लंबी और सिरे पर गोल और चिपटी होती है। यह प्रायः जलाशयों के कीड़े-मकोड़े और छोटी मछलियाँ खाती है।

दाबी—स्त्री० [हिं०] कटी हुई फसल के बँधे हुए एक-जैसे पूले जो मज-दूरी में दिए जाते हैं।

दाभ—पुं० [सं० दर्भ] कुश की जाति का एक तरह का तृण जिसकी पत्तियाँ सूई की नोक के समान नोकदार होती है। डाभ।

दाम्य—पुं० [सं०] जो इस योग्य हो कि नियंत्रण या शासन में रखा जा सके। जो दबाकर रखा जा सके।

दाम (न्)—पुं० [सं०√दो (खण्ड करना)+मनिन्] १. रस्सी। रज्जु। २. माला। हार। ३. ढेर। राशि। ४. भुवन। लोक। ५. राजनीति की चार प्रकार की युक्तियों में से वह जिसमें शत्रु को धन देकर वश में किया जाता है। जैसे—साम, दाम, दंड और भेद सभी तरह से वे अपना काम निकालते हैं।

विशेष—यद्यपि 'दाम' का एक अर्थ धन भी है, पर जान पड़ता है कि राजनीतिक क्षेत्रवाला 'दाम' का उक्त अर्थ उसके 'रस्सी' वाले अर्थ के आधार पर विकसित होकर लगा है, और इसका आशय रहा होगा—किसी को धन देकर अपने जाल में फँसाना या बाँधकर अपनी ओर करना। यहाँ यह भी ध्यान रहे कि फारसी में 'दाम' का एक अर्थ जाल या फंदा भी है।

पुं० [यू० ड्रैम (चाँदी का एक सिक्का) से सं० द्रम्म, फा० दाम] १. प्राचीन भारत का एक छोटा सिक्का जो एक दमड़ी के तीसरे भाग और एक पैसे के चौबीसवें भाग के बराबर होता था।

मुहा०—दाम-दाम भर देना= जितना देन या ऋण हो, वह सब पूरा पूरा चुका देना। कुछ भी बाकी न रखना।

२. सिक्कों आदि के रूप में वह धन जो कोई चीज खरीदने पर बदले में उसके मालिक को दिया जाता है। कीमत। मूल्य।

विशेष—यह शब्द अपने पुराने अर्थ के आधार पर बहुवचन में बोला जाता था। जैसे—इस कपड़े के कितने दाम होंगे? अर्थात् दाम नाम के कितने सिक्के देने पड़ेंगे? परंतु आज-कल इसका प्रयोग अधिकतर एकवचन रूप में ही होता है। जैसे—इस पुस्तक का क्या दाम है?

मुहा०—दाम उठना= किसी चीज का जो उचित मूल्य हो या उसमें जो लागत लगी हो, वह बिकने पर मिल जाना। **दाम करना**= कोई चीज खरीदने के समय कुछ घटा-बढ़ाकर उसका दाम या भाव निश्चित करना। दाम तै या निश्चित करना। **दाम खड़ा करना या खड़े करना**=उचित मूल्य प्राप्त करना। कीमत ले लेना। **दाम चुकाना** = (क) कीमत या मूल्य दे देना। (ख) दाम करना। (देखें ऊपर) **दाम भरना**= कोई चीज खो जाने या टूट-फूट जाने पर उसके मालिक को उसका दाम चुकाना या देना। **दाम भर पाना**=पूरा-पूरा मूल्य प्राप्त कर लेना।

३. धन। रुपया-पैसा। जैसे—दाम खरचने पर सब काम हो जाते हैं। ४. सिक्का।

मुहा०—चाम के दाम चलाना = अपने अधिकार या प्रभुत्व के बल पर अनोखे और विलक्षण काम या मनमाना अंधेर करने लगना। (एक भिश्ती के राजा बन जाने पर चमड़े के सिक्के चलाने के प्रवाद के आधार पर)

५. जाल। पाश फंदा।

*स्त्री० दामिनी। उदा०—मुकुट नव-घन दाम।—सूर।

दाम-कंठ—पुं० [ब० स०] एक गोत्र-प्रवर्तक ऋषि।

दामक—पुं० [सं० दाम+क] १. गाड़ी के जुए में बाँधी जानेवाली रस्सी। २. बाग-डोर। लगाम।

दाम-ग्रंथि—पुं० [ब० स०] महाभारत में वर्णित राजा विराट् के सेनापति का नाम।

दाम-चंद्र—पुं० [सं० ब० स० ?] राजा द्रुपद के एक पुत्र का नाम।

दामन—पुं० [फा०] १. गले में या वक्षःस्थल पर पहने हुए अंगरखे, कुरते आदि का कमर से नीचे का वह भाग जो झूलता या लटकता रहता है।

मुहा०—दामन छुड़ाना—संबंध छोड़कर अलग होना। (किसी का) **दामन पकड़ना**= संकट आदि के समय किसी ऐसे व्यक्ति का आश्रय लेना जो संकट के समय पूर्ण रूप से सहायक हो सके।

२. पहाड़ के नीचे का कुछ ढालुआँ भाग। ३. जहाज का पाल। ४. नाव या जहाज के जिस ओर हवा का झोंका लगता हो उसके सामने की दिशा। (लश०)

दामनगीर—वि० [फा०] १. न्याय, संरक्षण, सहायता आदि के लिए किसी का दामन या पल्ला पकड़नेवाला। २. अपना कोई काम कराने या अपना प्राप्य लेने के लिए किसी का दामन या पल्ला पकड़ने या पीछे पड़नेवाला।

दामन-पर्व (न्)—पुं० [सं० दमन+अण्, दामन-पर्वन्, ब० स०] १. दमन-भंजन तिथि। चैत्र शुक्ल-चतुर्दशी। २. चैत्र शुक्ल की द्वादशी तिथि।

दामनी—स्त्री० [सं० दामन+अण् + ङीप्] रस्सी। डोरी। स्त्री०[फा० दामन] १. ओढ़ने की चादर विशेषतः वह चादर जो मुसलमान औरतों के जनाजे पर डाली जाती है। २. घोड़ों की पीठ पर डाला जानेवाला कपड़ा।

दामर—स्त्री० [देश०] १. राल जो दरार भरने के लिए नावों में लगाई जाती है। २. वह भेड़ जिसके कान छोटे हों। (गड़ेरिये) *स्त्री० [सं० दामन] रस्सी।

पुं० = डामर।

दामरि—स्त्री० = दामर।

दामरी—स्त्री० [सं० दाम] १. रस्सी। रज्जु। २. छोटा जाल।

दामलिप्त—पुं० [सं० ताम्रलिप्त (पृषो० सिद्धि)] दे० 'ताम्रलिप्त'।

दामांचल—पुं० [सं० दामन्-अंचल ष० त०] वह रस्सी जिसे घोड़े के पिछले पैरों में फँसाकर खूँटे में बाँधते हैं।

दामांजन—पुं० = दामांचल।

दामा—पुं० [?] एक प्रकार का पक्षी जो प्रायः अपनी दुम नीचे-ऊपर उठाता-गिराता रहता है। नर दामा का रंग काला और मादा का बादामी होता है। इसे कलचिरी भी कहते हैं।

*स्त्री० = दावा (दावानल)।

दामाद—पुं० [सं० जामातृ से फा०] संबंध के विचार से वह व्यक्ति जिसे कन्या ब्याही गई हो। जँवाई। जामाता। दमाद।

दामादी—वि० [हिं० दामाद] १. दामाद-संबंधी। जैसे—दामादी बन। २. दामादों की चाल-ढाल जैसा। दामादों की तरह का। जैसे—दामादी ऐंठ।

स्त्री० दामाद या जामाता होने की अवस्था, पद या भाव।

मुहा०—(किसी को) दामादी में लेना = किसी के साथ अपनी कन्या

का विवाह करके उसे अपना जँवाई या दामाद बनाना। (मुसल०)

दामासाह—पुं० [हिं० दाम+साहु=बनिया] वह दिवालिया महाजन जिसकी संपत्ति लहनदारों में उनके लहने के अनुपात में बराबर बँट गई हो; अर्थात् जिससे लोगों को बहुत-कुछ पावना मिल गया हो।

दामासाही—स्त्री० [हिं० दामासाह] १. किसी दिवालिए महाजन की संपत्ति का लहनदारों के बीच में होनेवाला बँटवारा। २. पावने का वह अंश जो उक्त बँटवारे के अनुसार लहनदारों को मिले या मिलने को हो।

दामिनी—[सं० दामा+इनि+ङीप्] १. बिजली। विद्युत्। २. दावनी नामक आभूषण।

दामिल—स्त्री० [?] प्राचीन भारत की एक स्थानिक भाषा। (कदाचित् आधुनिक तमिल भाषा)

दामी—स्त्री० [हिं० दाम] कर। मालगुजारी।

वि० १. अधिक दाम या मूल्य का। २. मूल्यवान।

दामोद—पुं० [सं०] अथर्ववेद की एक शाखा का नाम।

दामोदर—पुं० [सं० दामन्-उदर, ब० स०] १. श्रीकृष्ण।

विशेष—यशोदा ने एक बार बालक कृष्ण की कमर और पेट में रस्सी बाँध दी थी, इसी से उनका यह नाम पड़ा।

२. विष्णु। ३. एक जैन तीर्थंकर। ४. बंगाल का एक प्रसिद्ध नद जो छोटा नागपुर के पहाड़ों से निकलकर भागीरथी में मिलता है।

वि० इन्द्रियों को वश में रखनेवाला।

दायँ—पुं० १.=दाँव। २.=दाँज (बराबरी)।

स्त्री० १.=दाई। २.=दवँरी।

वि० दायाँ (दाहिना)।

दाय—वि० [सं०√दा (देना)+घञ्] १. (धन या पदार्थ) जो किसी को दिया जाने को हो अथवा दिया जा सकता हो। २. जिसका दिया जाना आवश्यक या कर्त्तव्य हो।

पुं० १. देने की क्रिया या भाव। दान। २. वह अवस्था जिसमें किसी को कुछ देना या किसी के लिए कुछ करना आवश्यक, उचित अथवा कर्त्तव्य हो। दायित्व। उदा०—सिर धुनि धुनि पछतात मीजि कर, कोउ न मीत हित दुसह दाय।—तुलसी। ३. ऐसा धन या संपत्ति जिसका बँटवारा या विभाजन उत्तराधिकारियों में होने को हो या न्यायतः होना उचित हो। ४. बँटवारा होने पर हिस्से में आने या मिलनेवाला धन या संपत्ति। ५. ऐसा धन या पदार्थ जो अनिवार्य रूप से किसी को मिलने को हो या मिल सकता हो। उदा०—और सिंगार म्हारे दाय न आवै।—मीराँ। ६. कन्या को उसके विवाह के समय दिया जाने-वाला धन और पदार्थ। दहेज। दायजा।

† स्त्री० =दाई।

* पुं० [सं० दायित्व] १. जिम्मेदारी। दायित्त्व। २. उत्तर-दायित्व। जवाब-देही। जैसे=जमदाय=यमराज के सामने उपस्थित होनेवाला लेखा और उसका दिया जानेवाला उत्तर।

पुं० १=दाँव। २. =दाव।

दायक—वि० [सं०√दा (दान)+ण्वुल्—अक] १. समस्तपदों के अंत में लगने पर, देनेवाला। जैसे—सुखदायक, दुःखदायक, पिंडदायक। २. (कार्य) जिसमें आर्थिक दृष्टि से लाभ होता या हो रहा हो। (पेंइंग)

दायज†—पुं० = दायजा।

दायजा—पुं० [सं० दायसे फा०] दहेज। वह धन जो विवाह के उपरान्त कन्या को विदा करते समय अपने साथ ले जाने के लिए दिया जाता है।

दाय-भाग—पुं० [सं० ष० त०] १. धर्म-शास्त्र का वह अंश या विभाग जिसमें यह बतलाया गया है कि पिता अथवा पूर्वजों का धन उसके उत्तराधिकारियों अथवा संबंधियों में किस प्रकार और किन सिद्धान्तों के अनुसार बाँटा जाना चाहिए। २. पैतृक संपत्ति का वह अंश जो उक्त व्यवस्था के आधार पर किसी उत्तराधिकारी को मिले। उदा०—सोचो यह स्वार्थ क्या तुम्हारा दायभाग है ?—गुप्त।

दायम—अव्य० [अ० दाइम] सदा। हमेशा।

दायमी—वि० [अ० दाइमी] नित्य या सदा बना रहनेवाला।

दायमुलहब्स—पुं० [अ० दाइमुल हब्स] १. जन्म भर के लिए दी जाने-वाली कैद की सजा। आजीवन कारावास का दंड।

दायर—वि० [अ० दाइर] १. घूमता या चलता-फिरता हुआ। २. जारी। प्रचलित। ३. (अभियोग या मुकदमा) जो निर्णय या विचार के लिए न्यायालय में उपस्थित किया गया हो। जैसे—किसी पर कोई मुकदमा दायर करना।

दायरा—पुं० [अ० दाइरः] १. गोल घेरा। २. वृत्त। ३. कक्षा। ४. मंडली। ५. क्रिया या व्यवहार का क्षेत्र। हल्का। ६. खँजड़ी, डफली आदि बाजे जिनमें मेंडरा लगा होता है।

दायाँ—वि० = दाहिना।

दाया—स्त्री० [फा० दायः] १. वह स्त्री जो दूसरों के बच्चों को अपना दूध पिलाकर पालती हो। २. बच्चा जनाने की विद्या जाननेवाली स्त्री। बच्चाजनाने वाली स्त्री। ३.† नौकरानी।

† स्त्री० = दया।

दायागत—वि० [सं० दाय-आगत, तृ० त०] जो दाय अर्थात् पैतृक संपत्ति के बँटवारे में मिला हो।

पुं० पन्द्रह प्रकार के दायों में से वह जो दाय अर्थात् पैतृक संपत्ति के बँटवारे में मिला हो।

दायागरी—स्त्री० [फा० दायःगरी] १. दाई का पेशा या काम। २. बच्चा जनाने की विद्या या वृत्ति। धात्रीकर्म।

दायाद—वि० [सं० दाय+आ√दा (देना)+क] [स्त्री० दायादा] जो दाय का अधिकारी हो। जिसे पैतृक संबंध के कारण किसी की जायदाद में हिस्सा मिले।

पुं० १. कुटुंब का ऐसा व्यक्ति जो संपत्ति के उक्त प्रकार के बँटवारे में हिस्सा पाने का अधिकारी हो। सपिंड कुटुँबी। पुत्र। बेटा।

दायादा—स्त्री० [सं० दायाद+टाप्] १. उत्तराधिकारिणी। २. कन्या।

दायादी—स्त्री० [सं० दाय√अद् (भक्षण)+अण्+ङीप्] कन्या।

पुं० ऐसा संबंधी जो पैतृक संपत्ति में हिस्सा बँटवा सकता हो। दायाधिकारी।

स्त्री० लोगों में परस्पर उक्त प्रकार का संबंध होने की अवस्था या भाव।

दायाद्य—पुं० [सं० दायाद+ष्यञ्] वह संपत्ति जिस पर सपिंड कुटुंबियों का अधिकार माना जाय या माना जा सकता हो।

दायाधिकारी—पुं० [सं० दाय-अधिकारिन्, ष० त०] वह जो किसी का उत्तराधिकारी होने के नाते उसकी संपत्ति का कुछ अंश पाने का न्यायतः अधिकारी हो। उत्तराधिकारी। वारिस। (हेयर)

दायापवर्तन—पुं० [सं० दाय-अपवर्तन, ष० त०] किसी जायदाद में मिलनेवाले हिस्से की जब्ती।

दायित—भू० कृ० [√दय् (देना)+णिच्+क्त] १. दिलाया हुआ। २. दान के रूप में सदा के लिए दिलाया हुआ।

दायित्व—पुं० [सं० दायिन्+त्व] १. दायी (जवाबदेह) होने की अवस्था या भाव। जिम्मेदारी। (ऑब्लिगेशन) २. देनदार होने की अवस्था या भाव। (लायबिलिटी)

दायिनी—वि०, स्त्री० [सं० दायिन्+ङीप्] सं० दायी का स्त्री० रूप। देनेवाली। जैसे—जन्मदायिनी, सुखदायिनी।

दायी(यिन्)—वि० [सं०√दा+णिनि] [स्त्री० दायिनी] १. देनेवाला। २. (व्यक्ति) जिस पर किसी कार्य या बात का दायित्व या जवाबदेही हो। जैसे—इस गड़बड़ी के लिए आप ही दायी हैं।

दायें—क्रि० वि० [हिं० दायाँ] दाहिनी ओर। दाहिने।
मुहा० के लिए दे० दाहिना के मुहा०।

दायोपगतदास—पुं० [सं० दाय-उपगत, तृ० त०, दायोपगत-दास, कर्म० स०] वह दास जो बँटवारे में मिला हो।

दार—स्त्री० [सं०√दृ (विदारण करना)+णिच्+अच्] पत्नी। भार्या।
पुं० [√दृ+घञ्] १. चीरना। विदारण। २. छेद। ३. दरार।
पुं० दारु।
वि० [फा०] [भाव० दारी] एक विशेषण जो कुछ शब्दों के अंत में प्रत्यय के रूप में लगकर 'रखने वाला' या 'वाला' का अर्थ देता है। जैसे—(क) किरायेदार, दुकानदार। (ख) छज्जेदार, छायादार।

दारक—पुं० [सं०√दृ+णिच्+ण्वुल्–अक] [स्त्री० दारिका] १. पुत्र। बेटा। २. बालक। लड़का।
वि० विदीर्ण करने या फाड़नेवाला।

दार-कर्म (न्)—पुं० [ष० त०] दार अर्थात् भार्या ग्रहण करने की क्रिया या भाव। पुरुष का विवाह।

दारचीनी—स्त्री० [सं० दारु+चीन] १. तज की जाति का एक प्रकार का वृक्ष जो दक्षिण भारत और सिंहल में होता है। सिंहल में ये पेड़ सुगंधित छाल के लिए बहुत लगाए जाते हैं। यह दो प्रकार की होती है—जीलानी और कपूरी। कपूरी की छाल में बहुत अधिक सुगंध होती है और उससे बहुत अच्छा कपूर निकलता है। भारतवर्ष, अरब आदि देशों में पहले इसकी सुगंधित छाल चीन देश से आती थी; इसी से इसे दारु चीनी कहने लगे। २. उक्त पेड़ की सुगंधित छाल जो दवा और मसाले के काम में आती है।

दारण—पुं० [सं०√दृ (विदारण करना)+णिच्+ल्युट्-अन] १. चीरने-फाड़ने या विदीर्ण करने की क्रिया या भाव। चीर-फाड़। विदारण। २. फोड़ा या व्रण चीरने की क्रिया या भाव। चीर-फाड़। शल्य-चिकित्सा। ३. चीरने-फाड़ने आदि का अस्त्र या औजार। ४. ऐसी चीज या दवा जिसके लगाने से फोड़ा फट या फूट जाय। ५. निर्मली का पेड़।

दारणी—स्त्री० [सं० दारण+ङीप्] दुर्गा।

दारद—पुं० [सं० दरद+अण्] १. एक प्रकार का विष जो दरद देश में होता है। २. पारद। पारा। ३. ईंगुर।
वि० दरद देश का।

दारन—वि० = दारुन।
पुं० = दारण।

दारना*—स०[सं दारण] १. विदीर्ण करना। फाड़ना। २. नष्ट करना। न रहने देना। ३. मार डालना। उदा०—दारहि दारि मुरादहि मारिकै, संगर साह सुजै बिचलायौ।—भूषण।

दार-परिग्रह—पुं०[ष० त०] विवाह करके किसी को अपनी पत्नी बनाना। पाणि-ग्रहण।

दार-मदार—पुं० [फा० दारोमदार] १. आश्रय। सहारा। २. ऐसा अवलंब या आधार जिस पर दूसरी बहुत-सी बातें आश्रित हों। जैसे—अब तो सारा दार-मदार आपके न या हाँ करने पर ही है।

दारव—वि० [सं० दारु+अञ्] १. दारु अर्थात् लकड़ी से संबंध रखनेवाला। २. काठ या लकड़ी का बना हुआ।

दार-संग्रह—पुं० [ष०त०] पुरुष का अपना विवाह करके किसी स्त्री को पत्नी या भार्या के रूप में ग्रहण करना। दार-परिग्रह। पाणि-ग्रहण।

दारा—स्त्री० [सं० दार+टाप्] पत्नी। भार्या।
स्त्री० [?] एक प्रकार की समुद्री मछली जो प्रायः तीन हाथ तक लम्बी होती है।
पुं० [?] किनारा। तट। (लश०)

दाराई—स्त्री० [फा०] पुरानी चाल का एक प्रकार का रेशमी कपड़ा। दरियाई।

दारि†—स्त्री० = दारी।
स्त्री० = दाल।

दारिउँ†—पुं० = दाड़िम।

दारिका—स्त्री० [सं० दारक+टाप्, इत्व] १. वह युवती स्त्री जिसका अभी तक विवाह न हुआ हो। कुँवारी लड़की। कुमारी। २. बालिका। लड़की। ३. पुत्री। बेटी। ४. कठ-पुतली।

दारिका सुन्दरी—स्त्री० [सं०] वेश्या की वह लड़की जिसका अभी तक किसी पुरुष से संबंध न हुआ हो। नथिया-बंद।

दारित—भू० कृ० [सं०√दृ (विदारण)+णिच्+क्त] १. चीरा-फाड़ा हुआ। विद्रीर्ण किया हुआ। २. विभक्त किया हुआ।

दारिद्र†—पुं० दारिद्रय (दरिद्रता)।

दारिद्र*—पुं० = दारिद्रय।

दारिद्रय—पुं० [सं० दरिद्र+ष्यञ्] दरिद्र होने की अवस्था या भाव। दरिद्रता।

दारिम*—पुं० = दाड़िम।

दारी—स्त्री० [सं०√दृ० +णिच्+इन्—ङीप्] पैर के तलवे का चमड़ा फटने का एक रोग। बिवाई।
स्त्री० [सं० दारिका] १. दासी या लौंडी विशेषतः ऐसी दासी या लौंड़ी जो लड़ाई में जीतकर लाई गई हो। २. परम दुश्चरित्रा स्त्री। छिनाल। पुंश्चली। उदा०—चंचल सरस एक काहू पै न रहै दारी....। —भूषण।

पद--दारी-जार। (देखें)

स्त्री० [फा०] दार अर्थात् रखनेवाला होने की अवस्था या भाव। जैसे--किरायेदारी, दूकानदारी आदि।

दारीजार--पुं० [हिं० दारी+सं० जार] १. लौंडी का उपपति या पति। (गाली) २. दासी-पुत्र। ३. परम दुश्चरित्र से अनुचित संबंध रखनेवाला पुरुष। परम व्यभिचारी।

विशेष--हिं० का 'दाढ़ीजार' संभवतः इसी 'दारीजार' का विकृत रूप है।

दारु--पुं० [सं०√दृ (चीरना)+उण्] १. काष्ठ। काठ। लकड़ी। २. देवदारु। ३. कारीगर। शिल्पी। ४. पीतल।

वि० १. दानशील। दानी। २. उदार। ३. जल्दी टूटने-फूटनेवाला।

दारुक--पुं० [सं० दारु+कन्(स्वार्थे)] १. देवदारु। २. काठ का पुतला। ३. श्रीकृष्ण के सारथी का नाम। ४. एक योगाचार्य जो शिव के अवतार कहे गए हैं।

दारु-कदली--स्त्री० [उपमि० स०] जंगली केला। कठ-केला।

दारुका--स्त्री० [सं० दारु√कै (शब्द करना)+क+टाप्] कठपुतली।

दारुका-वन--पुं० [मध्य० स०] एक वन जो पवित्र तीर्थ माना गया है।

दारु-गंधा--स्त्री०[ब० स० टाप्] विरोजा जो चीड़ से निकलता है।

दारुचीनी--स्त्री० =दारचीनी।

दारुज--वि० [सं० दारु√जन् (उत्पन्न होना)+ड] १. दारु अर्थात् लकड़ी में (या से) उत्पन्न होनेवाला। २. दारु अर्थात् लकड़ी का बना हुआ।

पुं० मृदंग की तरह का एक प्रकार का बाजा। मर्दल।

दारुण--वि० [सं०√दृ (भय)+णिच्+उनन्] [भाव० दारुणता] १. भयानक। भीषण। २. घोर। विकट। ३. उग्र। प्रचंड। ४. जिसे सहना बहुत कठिन हो। जैसे--दारुण कष्ट या विपत्ति। ५. (रोग) जो बहुत बढ़ गया हो और सहज में अच्छा न हो सकता हो। (सीरियस) ६. फाड़ डालनेवाला। विदारक।

पुं० १. चित्रक वृक्ष। चीते का पेड़। २. रौद्र नामक नक्षत्र। ३. साहित्य में, भयानक रस। ४. विष्णु। ५. शिव। ६. राक्षस। ७. पुराणानुसार एक नरक का नाम।

दारुणक--पुं० [सं० दारुण√कै (मालूम होना)+क] सिर में होनेवाला रूसी (देखें) नामक रोग।

दारुणता--स्त्री० [सं० दारुण+तल्+टाप्] दारुण होने की अवस्था या भाव। दारुण्य।

दारुणा--स्त्री० [सं० दारुण+टाप्] १. नर्मदा खंड की अधिष्ठात्री देवी का नाम। २. अक्षय तृतीया।

दारुणारि--पुं० [सं० दारुण+अरि, ष० त०] विष्णु।

दारुण्य--पुं० [सं० दारुण+ष्यञ्] दारुण होने की अवस्था या भाव। दारुणता।

दारुन*--वि० = दारुण।

दारु-नटी--स्त्री० [सं० मध्य० स०] कठपुतली।

दारु-नारी--स्त्री० [मध्य० स०] कठपुतली।

दारु-निशा--स्त्री० [मध्य०स०] दारु हलदी।

दारु-पत्री--स्त्री० [ब०स०, ङीप्] हिंगुपत्री।

दारु-पर्वतक--पुं०[सं०] वह नकली पर्वत जो राजप्रसाद के उद्यान में क्रीड़ा आदि के लिए बनाया जाता था।

दारु-पात्र--पुं०[ष०त०] काठ का बना हुआ बरतन।

दारु-पीता--स्त्री०[तृ० त०] दारु हलदी।

दारु-पुत्रिका--स्त्री०[मध्य०स०] कठपुतली।

दारु-फल--पुं०[मध्य०स०] पिस्ता।

दारुमय--वि० [सं० दारु+मयट्] [स्त्री० दारुमयी, दारुमय+ङीप्] सिर से पैर तक काठ का बना हुआ।

दारुमुच्--पुं०[सं० दारु√मुच् (त्यागना)+क्विप्] एक प्रकार का स्थावर विष।

दारुमूषा--स्त्री०[सं० मध्य०स०] एक प्रकार की जड़ी।

दारु-योषित्--स्त्री० [मध्य०स०] कठपुतली।

दारुल्-शफा--पुं० [अ० दारुश्शिफा] १. चिकित्सालय। २. आरोग्य-शाला।

दारुल्-सलतनत--स्त्री०[अ० दारुस्सल्तनत] राजधानी।

दारु-सिता--स्त्री० [स० त०] दार-चीनी।

दारु-हरिद्रा--स्त्री०[स०त०] दारु हलदी।

दारु हलदी--स्त्री० [सं० दारुहरिद्रा] गुल्म जाति का सात-आठ हाथ लंबा एक सदाबहार झाड़ जिसके पत्ते दंतयुक्त, फल पीपल के फलों जैसे, और फूल पीले रंग के छः छः दलोंवाले होते हैं। यह हिमालय के पूर्वी भाग से लेकर आसाम तक होता है। इसकी लकड़ी दवा के काम में आती है।

दारू--स्त्री०[फा०] १. उपचार। चिकित्सा। २. दवा। औषध। ३. मद्य। शराब। ४. बारूद।

विशेष--यह शब्द मूलतः स्त्री० ही है, फिर भी लोक में प्रायः पुं० ही बोला जाता है।

दारूकार--पुं०[फा० दारू+हिं० कार] शराब बनानेवाला। कलवार।

दारूड़ा†--पुं०[फा० दारू] मद्य। शराब। (राज०)

दारूड़ी--स्त्री०=दारूड़ा।

दारूधरा--पुं०[फा० दारू=बारूद+हिं० धरना] तोप या बंदूक चलानेवाला। उदा०--जुर्रा रु बाज कूही गुहा, धानुक्की दारूधरा।--चंदबरदाई।

दारो*--पुं०=दार्यो (दाड़िम)।

दारोगा--पुं०[फा० दारोगः] १. निगरानी रखनेवाला अफसर। देख-भाल रखनेवाला या प्रबंध करनेवाला अधिकारी। जैसे--चुंगी या जेल का दारोगा। २. पुलिस-विभाग का वह अधिकारी जिसके अधीन बहुत से सिपाहियों की टुकड़ी और प्रायः एक थाना होता है।

दारोगाई--स्त्री०[हिं० दारोगा] दारोगा का काम, पद या भाव।

दारोमदार--पुं०[फा०] दार-मदार। (देखें)

दार्ढ्य--पुं०[सं० दृढ़+ष्यञ्] दृढ़ होने की अवस्था या भाव। दृढ़ता।

दार्दुर--वि०[सं० दर्दुर+अण्] दर्दुर-संबंधी। दर्दुर का।

पुं० एक प्रकार का दक्षिणावर्त्त शंख।

दार्दुरिक--पुं०[सं० दर्दुर+ठञ्--इक]कुम्हार।

दार्भ—वि०[सं० दर्भ+अण्] १. दर्भ अर्थात् कुश-संबंधी। २. दर्भ या कुश का बना हुआ। जैसे—दार्भ आसन।

दार्यों*—पुं०=दाड़िम (अनार)।

दार्वंड—पुं०[सं० दारु-अंड, ब०स०] [स्त्री० दार्वंडी] मयूर या मोर पक्षी (जिसका अंडा काठ की तरह कड़ा होता है)।

दार्व—पुं०[सं० दारु+अण्] एक प्राचीन प्रदेश जो कूर्म विभाग के ईशान कोण में और आधुनिक कश्मीर के अन्तर्गत था।

दार्वट—पुं० [सं० दारु√अट्(भ्रमण)+क] मंत्रणा करने का गुप्त स्थान। मंत्रणा गृह।

दार्वाघाट—पुं०[सं० दारु आ√हन् (चोट करना)+अण्, नि० टत्व] कठफोड़वा।

दार्वाट—पुं०[फा० 'दरबार' से] मंत्रणा-गृह।

दार्विका—स्त्री०[सं० दार्वी+क (स्वार्थे)-टाप्, ह्रस्वत्व]१. दारुहलदी से निकाला हुआ तूतिया। २. वन-गोभी।

दार्वि-पत्रिका—स्त्री०[सं० ब०स०, +कन्+टाप्, इत्व] गोजिह्वा। गोभी।

दार्वी—स्त्री०[सं० √दृ (विदारण करना)+णिच्+उण्+ङीष्] दारुहलदी।

दार्श—वि०[सं० दर्श+अण्] दर्श-अमावास्या के दिन होनेवाला।

दार्शनिक—वि०[सं० दर्शन+ठञ्–इक]१. दर्शन-शास्त्र संबंधी। दर्शन-शास्त्र की तरह का।

पुं० वह जो दर्शनशास्त्र का अच्छा ज्ञाता या पंडित हो।

दार्षद—वि०[सं० दृषद्+अण्]१. पत्थर पर पीसा हुआ। २. पत्थर का बना हुआ। ३. खान से निकला हुआ। खनिज।

दार्षद्वत—पुं०[सं० दृषद्वती+अण्] कात्यायन श्रौतसूत्र के अनुसार एक यज्ञ जो दृषद्वती नदी के किनारे किया जाता था।

दार्ष्टांतिक—वि०[सं० दृष्टान्त+ठञ्–इक] १. दृष्टान्त-संबंधी। २. जो दृष्टान्त के रूप में हो।

दाल—स्त्री०[सं० दालि]१. अरहर, उरद, चना, मसूर, मूँग आदि अन्न जिनके दाने अन्दर से दो दलों में विभक्त होते हैं, और जिन्हें उबाल कर खाते हैं, या जिनसे पकौड़ी, बरी आदि बनाते हैं।

क्रि० प्र०—दलना।

मुहा०—(किसी की) दाल गलना=किसी का प्रयोजन सिद्ध होना। मतलब निकलना। जैसे—ये बातें किसी और से करना यहाँ तुम्हारी दाल नहीं गलेगी।

२. हल्दी, मसाला आदि के साथ पानी में उबाला हुआ कोई उक्त दला हुआ अन्न जो भात, रोटी आदि के साथ सालन की तरह खाया जाता है।

पद—दाल-दलिया, दाल-रोटी। (देखें)

मुहा०—दाल चप्पू होना=एक का दूसरे से उसी प्रकार गुथ या लिपट जाना जिस प्रकार बरतन में से दाल निकालने के समय चप्पू (कलछी) के साथ लिपट जाती है। **दाल में कुछ काला होना**—ऐसी अवस्था होना जिससे खटके या संदेह की कोई बात हो। **जूतियों दाल बाँटना** =आपस में खूब लड़ाई-झगड़ा और थुक्का-फजीहत होना।

३. चेचक, फोड़े, फुन्सी आदि के ऊपर का चमड़ा जो सूखकर छूट जाता है। खुरंड। पपड़ी।

क्रि० प्र०—छूटना।—बँधना।

४. सूर्यमुखी शीशे में से होकर आयी हुई किरनों की वह गोलाकार छाया जो दाल के आकार की हो जाती है और जिससे आग पैदा होने लगती है।

मुहा०—दाल बँधना—धूप में रखे हुए सूर्यमुखी शीशे का ऐसी स्थिति में होना कि उसकी किरणों का समूह एक केन्द्र में स्थित होकर दाल का-सा रूप बना दें।

५. अंडे की जरदी (अपने पीले रंग और द्रव रूप के कारण)।

पुं०[सं० दल+अण्]१. पेड़ के खोंडर में मिलनेवाला शहद। २. कोदों नामक कदन्न।

पुं०[?] पंजाब और हिमालय में होनेवाला तुन की जाति का एक पेड़ जिसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है।

दालचीनी—स्त्री० = दारचीनी।

दाल-दलिया—पुं०[हिं०] गरीबों के खाने का रूखा-सूखा भोजन। जैसे—जो कुछ दाल-दलिया मिल जाय, वही खाकर गुजर कर लेते हैं।

दालन—पुं०[सं० √दल् (नाश करना)+णिच्+ल्युट्–अन] दाँत का एक रोग।

दालना*—स०=दलना।

दालभ्य—पुं० =दाल्भ्य।

दाल-मोठ—स्त्री० [हिं० दाल+मोठ=एक कदन्न] घी, तेल आदि में तली तथा नमक, मिर्च लगी हुई मोठ (अथवा चने मूँग या मसूर आदि) की दाल जिसकी गिनती नमकीन खानों में होती है।

दाल-रोटी—स्त्री० [हिं० पद] १. नित्य का साधारण भोजन। जैसे—किराए की आमदनी से ही उनकी दाल-रोटी चलती है।

पद—दाल-रोटी से खुश=जिसे साधारण भोजन मिलने में कोई कष्ट न होता हो।

२. जीविका या उसका साधन।

मुहा०—दाल-रोटी चलना=जीविका निर्वाह होना।

दालव—पुं०[सं० √दल् (दलन करना)+उन्, दलु+अण्] एक तरह का स्थावर विष।

दाला—स्त्री०[सं० √दल् +घञ् (कर्मणि)+टाप्] महाकाल नामक लता।

दालान—पुं०[फा०]किसी भवन या मकान के अन्तर्गत वह लम्बी वास्तु-रचना जिसके तीन ओर दीवारें, ऊपर छत और सामनेवाला भाग बिलकुल खुला होता है। बरामदा।

दालि—स्त्री०[सं०√दल्+इन्, नि० सिद्धि] १. दाल। २. देवदाली लता। ३. अनार। दाड़िम।

दालिद*—पुं०=दारिद्र्य (दरिद्रता)।

दालिम—पुं०[सं० दाडिम, नि० लत्व] दाड़िम। अनार।

दाली—स्त्री०[सं० दालि+ङीष्] देवदाली नामक पौधा।

दाल्भ्य—वि०[सं० दल्भ+यञ्] दल्भ ऋषि के गोत्र का।

पुं०वृक मुनि का दूसरा नाम।

दाल्मि—पुं०[सं०√दल्(नाश करना)+णिच्+मि (बा०)] इंद्र।

दावँ—पुं०=दाँव।

दाव—पुं०[सं०√दु (पीड़ित करना) +ण]१. वन। जंगल। २. जंगल

में लगी हुई आग। दावानल। ३. अग्नि। आग। ४. जलन। ताप। ५. धावरा नामक वृक्ष। ६. एक प्रकार का प्राचीन शस्त्र।

†पुं०=दाँव।

*पुं० [सं० दर्भ] कुश। घास। दाभ।

दावत—स्त्री० [अ० दअवत] १. किसी को कोई काम करने के लिए दिया जानेवाला निमंत्रण। आवाहन। २. भोजन के लिए दिया जानेवाला निमंत्रण। ३. ज्योनार। भोज। जैसे—विवाह पर दावत भी देनी चाहिए।

क्रि० प्र०—खाना।—देना।—मिलना।

पद—दावत नामा=निमंत्रण-पत्र।

दावदी—स्त्री०=गुलदावदी।

दावन—वि० [सं० दमन] [स्त्री० दावनी] दमन करनेवाला। उदा०—त्रिविध दोष दुख दारिद दावन।—तुलसी।

पुं० १. दमन। २. ध्वंस। नाश। ३. खुखड़ी नाम का हथियार। ४. दराँती या हँसिया नाम का औजार।

स्त्री० [सं० दाम] खाट या चारपाई में पैंताने की ओर बाँधी जानेवाली रस्सी। उनचन।

†पुं०=दामन।

दावना—स०=दाँवना (दाँना)।

स० [हिं० दावन, सं० दमन] दमन करना।

स० [सं० दाव] १. आग लगाना। २. प्रकाशमान करना। चमकाना। उदा०—दामिनि दमकि दसो दिसि दावति छूटि छुवत छिति छोर। —भारतेन्दु।

दावनी—स्त्री० [सं० दामनी=रस्सी] माथे पर पहनने का एक तरह का झालरदार लंबोतरा गहना।

दावरा—पुं० [देश०] धावरा नामक पेड़।

दावरी*—स्त्री०=दाँवरी।

दावा—स्त्री० [सं० दाव] दावानल।

पुं० [अ०] १. किसी वस्तु पर अपना अधिकार या स्वत्व करने की क्रिया या भाव। यह कहते हुए किसी चीज पर हक जाहिर करना कि यह हमारी है या होनी चाहिए। २. अधिकार। स्वत्व। हक। जैसे—उस मकान पर तुम्हारा कोई दावा नहीं है। ३. न्यायालय में प्रार्थना-पत्र उपस्थित करते हुए यह कहना कि अमुक व्यक्ति से हमें इतना धन अथवा अमुक वस्तु मिलनी चाहिए जो हमारा प्राप्य है अथवा न्यायतः जिसके अधिकारी हम हैं। ४. दीवानी अदालत का अभियोग। नालिश। जैसे—महाजन ने उन पर दो हजार रुपयों का दावा किया है। ५. फौजदारी अदालत में कुछ विशिष्ट अवस्थाओं में उपस्थित किया जानेवाला उक्त प्रकार का अभियोग। जैसे—किसी पर मानहानि (अथवा लड़का भगा ले जाने) का दावा करना। ६. नैतिक अथवा लौकिक दृष्टि से किसी वस्तु या व्यक्ति पर होनेवाला अधिकार, जोर या वश। जैसे—तुम पर हमारा कोई दावा तो है नहीं जो हम तुम्हें वहाँ जबरदस्ती भेज सकें। ७. अभिमान या गर्वपूर्ण कही जानेवाली बात। जैसे—वे इस बात का दावा करते हैं कि हमने कभी झूठ नहीं बोला।

दावागीर—पुं० [अ० दावा+फा० गीर] दावा करनेवाला। अपना अधिकार या हक जतानेवाला।

दावाग्नि—स्त्री० [सं० दाव-अग्नि, मध्य०स०] वन में लगनेवाली आग। दावानल।

दावात—स्त्री०=दवात।

दावादार—पुं०=दावेदार।

दावानल—पुं० [सं० दाव-अनल, मध्य०स०] वन की भीषण आग जो बाँसों, वृक्षों आदि की टहनियों की रगड़ से उत्पन्न होती है और दूर तक फैलती है। वनाग्नि।

दावित—भू० कृ० [सं०√दु (पीड़ित करना)+णिच्+क्त] पीड़ित।

दाविनी*—स्त्री० [सं० दामिनी] १. बिजली। तड़ित्। २. बेंदी नाम का गहना जिसे स्त्रियाँ माथे पर पहनती हैं।

दावी—पुं० [सं० धव] धव का पेड़।

दावेदार—पुं० [अ० दावा+फा० दार] १. वह जिसने किसी पर दावा किया हो। २. किसी चीज पर अपना अधिकार या हक जतलानेवाला व्यक्ति।

दाश—पुं० [सं०√दंश् (मारना)+ट, आत्व] १. मछलियाँ मारकर खानेवाला। मछुआ। २. केवट। मल्लाह। ३. नौकर। सेवक।

दाश-पुर—पुं० [ष०त०] १. धीवरों या मछुओं की बस्ती। २. [दाश√पृ (पूर्ति)+क] केवटीमोथा। कैवर्त मुस्तक।

दर्शमिक—वि० [सं०] १. दशम संबंधी। २. दशमिक। दशमलव संबंधी)।

दाशरथ—वि० [सं० दशरथ+अण्] १. दशरथ-संबंधी। दशरथ का। २. दशरथ के कुल में उत्पन्न।

पुं० दशरथ के चारों पुत्रों में से कोई एक, विशेषतः श्रीरामचन्द्र।

दाशरथि—पुं० [सं० दशरथ+इञ्]=दाशरथ।

दाशरात्रिक—वि० [सं० दशरात्र+ठञ्—इक] दशरात्र संबंधी।

दाशार्ण—पुं० [सं० दशार्ण+अण्] १. दशार्ण देश। २. उक्त देश का निवासी।

वि० दशार्ण देश का।

दाशार्ह—पुं० [सं० दशार्ह+अण्] दशार्ह के वंश का मनुष्य। यदुवंशी।

दाशेय—वि० [सं० दाशी+ढक्—एय] दाश से उत्पन्न।

पुं० दाश का पुत्र।

दाशेयी—स्त्री० [सं० दाशेय+ङीप्] सत्यवती।

दाशेर—पुं० [सं० दाशी+ढक्—एय, यलोप] धीवर की संतति।

दाशेरक—पुं० [सं० दाशेर+कन्] १. मरु-प्रदेश। मारवाड़ देश। २. उक्त प्रदेश का निवासी। मारवाड़ी। ३. दशपुर का निवासी।

दाशौदनिक—वि० [सं० दशन्ओदन ब०स०, दशौदन+ठञ्—इक] दशोदन यज्ञ संबंधी।

पुं० दशोदन यज्ञ में मिलनेवाली दक्षिणा।

दाश्त—स्त्री० [फा०] किसी को अपने पास रखने की क्रिया या भाव। जैसे—याद-दाश्त। २. अपने पास रखकर पालन-पोषण तथा देख-रेख करने की क्रिया या भाव।

वि० [स्त्री० दाश्ता] अपने पास रखा हुआ।

दाश्ता—स्त्री०[फा० दाश्तः] उपपत्नी के रूप में रखी हुई स्त्री। रखनी। रखेली।

दाश्व—वि०[सं० √दाश् (दान करना) +वन्] १. देनेवाला। २. उदार।

दास—पुं०[सं० √दास् (दान)+अच्] [स्त्री० दासी] १. ऐसा व्यक्ति जिसे किसी ने धन-संपत्ति आदि की तरह अपने अधिकार या स्वामित्व में रखा हो और जिससे वह अपनी छोटी-मोटी सेवाएँ कराता रहता हो। गुलाम।

विशेष—प्राचीन काल में योद्धा लोग और धनवान् लोग गरीबों को खरीदकर अपना दास बना लेते थे और अपने ही घर में तुच्छ सेवकों की तरह रखते थे। ऐसे लोगों की संतान भी दास वर्ग में ही रहती थी। कभी-कभी लोग अपने ऋण या देन न चुका सकने के कारण, जुए में हार जाने के कारण या अकाल में अपना या अपने परिवार का भरण-पोषण न कर सकने के कारण भी अपनी इच्छा से ही दूसरों के दास बन जाते थे। पाश्चात्य देशों में प्रबल जातियाँ दुर्बल जाति के लोगों को पकड़कर और विदेशों में ले जाकर दास रूप में बेचने का व्यवसाय भी करती थीं। ऐसे लोगों को किसी प्रकार की विधिक या सामाजिक स्वतंत्रता नहीं होती थी। हमारे यहाँ मनु ने सात प्रकार के और परवर्ती स्मृतिकारों ने पन्द्रह प्रकार के दास बतलाये हैं। हमारे यहाँ भी विधान था कि ब्राह्मण न तो कभी दास बन सकता था और न तो बनाया जा सकता था। क्षत्रिय और वैश्य कुछ विशिष्ट अवस्थाओं में दासत्व से मुक्त भी हो सकते थे, परन्तु शूद्र कभी दासत्व के बंधन से मुक्त नहीं हो सकता था।

२. ऐसा व्यक्ति जो अपने आपको किसी की सेवा करने के लिए पूर्ण रूप से समर्पित कर दे। उदा०—(क) दास कबीरा कह गए सबके दाता राम।—कबीर। (ख) देश या जाति का दास। ३. वह जो हर तरह से किसी के अधिकार, प्रभाव या वश में हो। जैसे—इंद्रियों या दुर्व्यसनों का दास; परिस्थितियों का दास।

४. वह जो वेतन लेकर दूसरों की छोटी-मोटी सेवाएँ करता हो। चाकर। नौकर। सेवक। ५. शूद्र। केवट। ६. धीवर। ७. डाकू या लुटेरा। दस्यु। ८. वृत्रासुर का एक नाम। ९. वह जो किसी बात या विषय मुख्यतः दान का उपयुक्त पात्र हो। १०. वह जिसने आत्मा और ब्रह्म का पूरा ज्ञान प्राप्त कर लिया हो। आत्मज्ञानी।

†पुं०=डासन (बिछौना)। उदा०—सेज सवाँरि कीन्ह भक्त दासू।—जायसी।

दासक—पुं०[सं० दास+कन्] १. दास। सेवक। २. एक प्राचीन गोत्र प्रवर्त्तक ऋषि।

दासता—स्त्री०[सं० दास+तल्–टाप्] १. दास होने की अवस्था या भाव। गुलामी। २. दास का काम।

दासत्व—पुं०[सं० दास+त्व]=दासता।

दास-नंदिनी—स्त्री० [सं० ष०त०] धीवर की कन्या सत्यवती जो व्यास की माता थी।

दासन—पुं०=डासन (बिछौना)।

दासपन—पुं०[सं० दास+पन (प्रत्य०)] दासत्व। सेवाकार्य।

दासमीय—वि०[सं० दसम+छण्–ईय] १. दसम देश में उत्पन्न। २. दसम देश-संबंधी।

पुं० दसम देश का निवासी।

दासमेय—वि०=दासमीय।

पुं०[सं०] एक प्राचीन जनपद।

दासा—पुं० [सं० दासी=वेदी] १. दीवार से सटाकर उठाया हुआ वह ऊँचा बाँध या पुश्ता जिसपर घर की चीजें रखी जाती हैं। २. आँगन के चारों ओर दीवार से सटाकर उठाया हुआ वह चबूतरा जो आँगन के पानी को घर या दालान में जाने से रोकने के लिए बनाया जाता है। ३. वह पत्थर या मोटी लकड़ी जो दरवाजे के चौखटे के ठीक ऊपर रहती है और जिससे दीवार का बोझ चौखट पर नहीं पड़ने पाता। ४. पत्थरों की वह पंक्ति जो दीवार के नीचेवाले भाग में लंबाई के बल बैठाई जाती है।

†पुं०[सं० दशन] हँसिया।

दासानुदास—पुं० [सं० दास+अनुदास, ष० त०] १. दासों का भी दास। २. अत्यन्त या परम तुच्छ दास। (नम्रता सूचक)

दासायन—पुं०[सं० दास+फक्–आयन] दास पुत्र।

दासिका—स्त्री०[सं० दासी+क+टाप्, ह्रस्व] दासी।

दासी—स्त्री० [सं० दास+ङीष्] १. दास वर्ग की स्त्री। २. सेवा करनेवाली स्त्री। टहलनी। लौंडी। ३. मजदूरनी। ४. शूद्र वर्ण की स्त्री। ५. काक-जंघा। ६. कटसरैया। ७. काला कारोठा या नीलाम्लान नाम का पौधा। ८. वेदी।

दासेय—वि०[सं० दासी+ढक्–एय] [स्त्री० दासेयी] दासी का वंशज।

पुं० १. दास। गुलाम। २. धीवर। मछुआ।

दासेयी—स्त्री०[सं० दासेय+ङीप्] व्यास की माता सत्यवती, जो धीवर कन्या थी। दासनंदिनी।

दासेर—पुं०[सं० दासी+ढ्रक्–एय, यलोप] १. दास। २. केवट। धीवर। मछुआ। ३. ऊँट।

दासेरक—पुं०[सं० दासेर+कन्] १. दासी पुत्र। २. ऊँट।

दास्तान—स्त्री०[फा०] १. ऐसा विस्तृत विवरण या वृत्तान्त जिसमें किसी के जीवन के उतार-चढ़ावों की भी चर्चा हो। २. वृत्तान्त। हाल। कथा। कहानी। ३. बहुत लंबा-चौड़ा वर्णन।

दास्य—पुं० [सं० दास+ष्यञ्] १. दासता। दासत्व। २. भक्ति के नौ भेदों में से एक जिसमें उपासक अपने उपास्य देवता को स्वामी और अपने आपको उसका दास समझता है।

दास्यमान्—वि०[सं०√दा (देना)+लृट्—शानच्] जो दिया जानेवाला हो। जिसे दूसरे को देना हो।

दास्र—पुं०[सं० दस्र+अण्] अश्विनी नक्षत्र।

दाह—पुं०[सं०√दह् (जलाना)+घञ्] १. जलाने की क्रिया या भाव। २. हिन्दुओं में शव को जलाने की क्रिया या कृत्य।

क्रि० प्र०—देना।

३. जलन। ताप। ४. किसी प्रकार के रोग के कारण शरीर में होनेवाली ऐसी जलन जिसमें खूब प्यास लगती और मुँह सूखता हो। ५. शोक। संताप। ६. ईर्ष्या या डाह के कारण मन में होनेवाली जलन।

पुं०[फा०] दास।

दाहक—वि० [सं० √दह् (जलाना)+ण्वुल्–अक] [भाव० दाहकता] १. जलानेवाला। २. दाह-कर्म करनेवाला।
पुं० १. अग्नि। आग। २. चित्रक या चीता नाम का पेड़।

दाहकता—स्त्री० [सं० दाहक+तल्–टाप्] जलने या जलाने की क्रिया, गुण या भाव।

दाहकत्व—पुं० [सं० दाहक+त्व]=दाहकता।

दाह-कर्म (न्)—पुं० [ष० त०] १. मृत शरीर या शव जलाने का कृत्य। २ दाह-संस्कार। (दे०)

दाह-काष्ठ—पुं० [च० त०] अगर, जिसे सुगंध के लिए जलाते हैं।

दाह-क्रिया—स्त्री० [ष० त०] दाह-कर्म। (दे०)

दाह-गृह—पुं० [ष० त०] शव जलाने के लिए श्मशान से भिन्न वह स्थान जहाँ मृत शरीर किसी यंत्र में रखकर विद्युत् आदि की सहायता से जलाये जाते हैं। (क्रिमेटोरियम)।

दाह-ज्वर—पुं० [मध्य०स०] वह ज्वर जिसमें शरीर में बहुत अधिक जलन होती है।

दाहन—पुं० [सं० √दह् +णिच्+ल्युट्–अन] १. जलाने की क्रिया या भाव।

दाहना—स० [सं० दाहन] १. जलाना। भस्म करना। २. बहुत अधिक कष्ट देना।
†वि०=दाहिना।

दाह-संस्कार—पुं० [ष०त०] हिन्दुओं के दस संस्कारों में से एक और अंतिम संस्कार जिसमें मृत शरीर चिता पर रखकर जलाया जाता है।

दाह-सर—पुं० [सर,√सृ (गति)+अप्, दाह-सर, ष०त०] मरघट। श्मशान।

दाह-हरण—पुं० [सं०] खस।

दाहा—पुं० [सं० दश से फा० दह=दस] १. मुहर्रम के दस दिन, जिनमें ताजिया रखा जाता और जिनकी समाप्ति पर दफन किया जाता है। दहा। २. ताजिया।

दाहागुरु—पुं० [दाह-अगुरु, च०त०] वह अगरु जिसकी लकड़ी सुगंधि के लिए जलाई जाती है।

दाहिन†—वि०=दाहिना।

दाहिना—वि० [सं० दक्षिण] [स्त्री० दाहिनी] १. मानव-वर्ग के प्राणियों में उस हाथ की दिशा या पार्श्व का, जिस हाथ से वह साधारणतः खाता-पीता और अपने अधिकतर काम करता है। मनुष्य के शरीर में जिधर हृदय होता है, उसके विपरीत पक्ष या पार्श्व का। दायाँ। 'बायाँ' का विपर्याय। जैसे—दाहिनी आँख।
विशेष—(क) जब हम पूर्व अर्थात् सूर्योदयवाली दिशा की ओर मुँह करके खड़े होते हैं, तब हमारा जो अंग या पार्श्व दक्षिण दिशा की तरफ पड़ता है, वही हमारा 'दाहिना' कहलाता है। और इसके विपरीत जो अंग या पार्श्व उत्तर की ओर पड़ता है, वह हमारा 'बाँया' कहलाता है। (ख) शरीर-शास्त्र की दृष्टि से अधिकतर प्राणियों में दाहिनी ओर की पेशियाँ ही अपेक्षया अधिक सबल होती हैं; और फलतः उसी ओर के अंगों में सब तरह के काम करने की अधिक तत्परता और शक्ति होती है। इसी लिए सब लोग खाने, पकड़ने मारने, लिखने आदि के काम दाहिने हाथ से ही करते हैं। कुछ लोग बाएँ हाथ से भी उक्त सब काम करते हैं। पर उनकी गिनती अपवाद में होती है। (ग) जीव-जंतुओं के शरीर में दाहिने-बाएँ अंगों या पार्श्वों का निरूपण भी उक्त सिद्धांत के आधार पर ही होता है।

मुहा०—**(किसी का) दाहिना हाथ होना**=किसी का बहुत बड़ा सहायक होना। जैसे—इस काम में वही तो हमारे दाहिने हाथ रहे हैं।

पद—**दाहिने बाएँ**=(क) किसी की दाहिनी और बायीं ओर। दोनों तरफ। जैसे—उनके दाहिने बाएँ राजे-महाराजे खड़े थे। (ख) चारों ओर।

२. मनुष्य के दाहिने हाथ की दिशा में स्थित। जैसे—आगे बढ़कर दाहिनी गली में घूम जाना। ३. अचल, जड़ या स्थावर पदार्थों के संबंध में, वह अंग या पार्श्व जो उनके मुँह या सामनेवाले भाग का ध्यान रखते हुए अथवा उनकी गति, प्रवृत्ति आदि के विचार से उक्त सिद्धान्त के आधार पर निश्चित या स्थिर होता है। जैसे—(क) पंडित जी का मकान हमारे मकान की दाहिनी ओर पड़ता है। (ख) पटना और बाँकीपुर दोनों गंगा के दाहिने किनारे पर स्थित हैं। (ग) रंगमंच पर नायिका दाहिने कक्ष से आई थी और नायक बाएँ कक्ष से आया था। ४. जड़ परन्तु चल पदार्थों के संबंध में (उस स्थिति में जब वे हमारे सामने आते या पड़ते हों) उस दिशा या पार्श्व का जो हमारे दाहिने हाथ के ठीक सामने या पास पड़ता है। जैसे—(क) उर्दू लिपि दाहिनी ओर से लिखी जाती है। (ख) अलमारी के नीचेवाले खाने में दाहिने सिरे पर जो किताब रखी है वह उठा लाओ।

विशेष—ऐसी स्थिति में उस पदार्थ या वस्तु का जो अंग या पार्श्व उक्त आधार पर वास्तव में दाहिना होता है, वह हमारे लिए बायाँ हो जाता है। उदाहरणार्थ, यदि किसी चित्र में दस आदमी एक पंक्ति में खड़े हों और हमें उन दसों आदमियों के नाम उस चित्र के नीचे लिखने पड़ें तो हम लिखेंगे—'चित्र में खड़े हुए लोगों के नाम बाईं ओर से इस प्रकार हैं।' यहाँ उक्त सिद्धान्त के आधार पर चित्र का जो वास्तविक दाहिना पार्श्व होगा, वह हमारे लिए बायाँ हो जायगा और उसके बाएँ पार्श्व को हम अपनी दृष्टि से दाहिना कहेंगे। परन्तु पहनने की कुछ चीजें जब हमारे सामने आवेंगी, तब भी हम उनके दाहिने-बाएँ का निरूपण अपने शरीर के अंगों के विचार से ही करेंगे। जैसे—(क) दरजी ने इस कुरते की दाहिनी आस्तीन कुछ टेढ़ी (या तिरछी) काटी है। (ख) हमारा दाहिना जूता एड़ी पर से घिस गया है। (ग) हमारा दाहिना दास्ताना (या मोजा) खो गया।

५. जो आचरण, व्यवहार आदि में अनुकूल, उदार, प्रसन्न अथवा कार्यों में विशिष्ट रूप से सहायक हो। उदा०—सदा भवानी दाहिने, गौरी पुत्र गणेश।
पुं० गाड़ी, हल आदि में जोड़ी के साथ जोता जानेवाला वह पशु जो सदा दाहिने ओर रखा जाता हो।

दाहिनावर्त्त—वि०, पुं०=दक्षिणावर्त।
†पुं०=परिक्रमा।

दाहिनी—स्त्री० [हिं० दाहिना] देवता आदि की वह परिक्रमा जो उन्हें अपने दाहिने हाथ की ओर रखकर की जाती है। दक्षिणावर्त परिक्रमा। प्रदक्षिणा।

क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

मुहा०—दाहिनी लाना=दक्षिणावर्त परिक्रमा करना। प्रदक्षिणा करना।

दाहिने—क्रि० वि० [हिं० दाहिना] १. दाहिने हाथ की ओर। उस तरफ जिस तरफ दाहिना हाथ हो। जैसे—उनका मकान हमारे मकान के दाहिने पड़ता है। २. आचरण, व्यवहार आदि में अनुकूल, उदार या प्रसन्न रहकर। जैसे—हम तो यही चाहते हैं कि आप सदा दाहिने रहें।

दाही (हिन्)—वि० [सं०√दह् (जलाना)+णिनि] [स्त्री० दाहिनी दाहिन्+ङीप्] १. जलानेवाला। भस्म करनेवाला। २. दुःख देनेवाला।

दाहुक—वि० [सं०√दह+उकञ् (बा०)] दाही। (दे०)

दाह्य—वि० [सं०√दह+ण्यत्] जलाने योग्य।

दिंक—पुं० [सं० दिङ√कै (शब्द करना)+क] जूँ।

दिंड—पुं० [?] एक तरह का नृत्य।

दिंडि—पुं० [सं० तिण्डि (पृषो० सिद्धि)] दिंडिर। (दे०)

दिंडिर—पुं० [सं० हिण्डिर (पृषो० सिद्धि)] पुरानी चाल का एक तरह का बाजा।

दिंडी—पुं० [सं० दिण्डि+ङीष् ?] उन्नीस मात्राओं का एक छंद, जिसमें नौ और दस मात्राओं पर विश्राम होता है और अंत में दो गुरु होते हैं।

दिंडीर—पुं० [सं० हिण्डीर, पृषो० सिद्धि] समुद्रफेन।

दिअना—पुं० दीया (दीपक)। उदा०—सबके महल में दिअना जरतु है, हमारी झोंपड़िया प्रभु कीन्ह अँधेरा।—गीत।

† स० दीया जलाना।

दिअरी†—स्त्री० = दिअली।

दिअला†—पुं० = बड़ी दिअली। दे० 'दिअली'।

दिअली—स्त्री० [हिं० दीया (छोटा कसोरा) का स्त्री० अल्पा०] १. मिट्टी का बना हुआ बहुत छोटा दीया या कसोरे के आकार का पात्र, जिसमें प्रायः बत्ती जलाई जाती है। २. चमकी, बादले आदि की अथवा धातुओं आदि की बनी हुई वह छोटी कटोरी जो झालर आदि बनाने के लिए कपड़ों में टाँकी जाती है। ३. चेचक, सूखे हुए घाव आदि के मुँह पर जमी हुई पपड़ी। खुरंड। ४. मछली के ऊपर का गोलाकार छोटा चमकीला छिलका। सेहरा।

दिआ—पुं० = दीया (दीपक)।

दिआना†—स० = दिलाना।

दिआबत्ती—स्त्री० = दीया-बत्ती।

दिआर—पुं० = दयार।

दिआरा—पुं० [?] १. दे० 'दयार'। २. दे० 'दियारा'।

दिआसलाई—स्त्री० = दिया-सलाई।

दिउला—पुं० = बड़ी दिउली।

दिउली—स्त्री० = दिअली।

दिक् (श्)—स्त्री० [सं०√दिश्+क्विन्] दिशा। ओर। तरफ।

विशेष—दिक् शब्द का मूल रूप दिश् है, किन्तु समस्त शब्दों में सन्धि के अनुसार कहीं इसके रूप दिक्, कहीं दिग् और कहीं दिङ दिखाई पड़ेंगे।

दिक—वि० [अ० दिक़] १. जिसे बहुत कष्ट पहुँचाया गया हो। हैरान। तंग। जैसे—तुम तो बहुत दिक करते हो। २. अस्वस्थ। बीमार। पुं० क्षय नामक रोग। तपेदिक।

दिकचन—पुं० [देश०] एक प्रकार का ऊख जिसका गुड़ बहुत अच्छा बनता है।

दिकदाह—पुं० दे० 'दिग्दाह'।

दिकली†—स्त्री० [?] चने की दाल।

दिकाक—पुं० [अ० दकीक = बारीक] किसी चीज का कटा हुआ छोटा टुकड़ा। कतरन। धज्जी।

वि० [अ० दकियानूस] बहुत बड़ा चालाक। खुर्राट।

† स्त्री० [?] बर्रे। भिड़।

दिक्क—पुं० [सं० दिश्√कै (शब्द करना)+क] हाथी का बच्चा।

वि०, पुं० = दिक।

दिक्कत—स्त्री० [अ०] १. दिक होने की अवस्था या भाव। २. कष्ट। तकलीफ। ३. परेशानी। हैरानी। ४. कठिनता। मुश्किल। जैसे—यह काम बहुत दिक्कत से होगा।

दिक्-कन्या—स्त्री० [सं० कर्म० स०] दिशारूपी कन्या। प्रत्येक दिशा जो ब्रह्मा की कन्या के रूप में मानी गई है।

दिक्कर—पुं० [सं० दिक्√कृ (करना)+टच्] [स्त्री० दिक्करिका] १. महादेव। शिव। २. नवयुवक। जवान।

दिक्करवासिनी—स्त्री० [सं० दिक्कर√वस् (बसना)+णिनि+ङीप्] पुराणानुसार दिक्कर अर्थात् महादेव में निवास करनेवाली एक देवी।

दिक्किर—पुं० = दिक्करी।

दिक्करिका—स्त्री० [सं० दिक्करिन्√कै (शोभित होना)+क+टाप्] पुराणानुसार एक नदी जो मानसरोवर के पश्चिम में बहती है। यह नदी दिग्गजों के क्षेत्र से निकली हुई मानी गई है।

दिक्करी (रिन्)—पुं० [सं० दिश् (क्)-करि (री) न्, ष० त०] आठों दिशाओं के ऐरावत आदि आठ हाथी। दिग्गज।

दिक्कांता—स्त्री० [सं० कर्म० स०] दिक् कन्या।

दिक्-कुमार—पुं० [ष० त०] जैनियों के अनुसार भवनपति नामक देवताओं में से एक।

दिक्-चक्र—पुं० [ष० त०] आठों दिशाओं का समूह।

दिक्-पति—पुं० [ष० त०] १. ज्योतिष के अनुसार दिशाओं के स्वामी ग्रह। २. दे० 'दिक्पाल'।

दिक्पाल—पुं० [सं० दिक्√पाल् (पालना)+णिच्+अण्] १. पुराणानुसार दसों दिशाओं का पालन करनेवाला देवता। यथा—पूर्व के इन्द्र, अग्निकोण के वह्नि, दक्षिण के यम, नैर्ऋत्यकोण के नैर्ऋत, पश्चिम के वरुण, वायु कोण के मरुत्, उत्तर के कुबेर, ईशान कोण के ईश, ऊर्ध्व दिशा के ब्रह्मा और अधो दिशा के अनंत। २. चौबीस मात्राओं का एक छंद जिसमें १२ मात्राओं पर विराम होता है। उर्दू का रेख्ता यही छंद है।

दिक्-शूल—पुं० [स० त०] = दिशा मूल।

दिक्-साधन—पुं० [ष० त०] वह उपाय या क्रिया जिससे दिशाओं का ठीक ज्ञान हो।

दिक्-सुन्दरी—स्त्री० [कर्म० स०] दे० 'दिक्कन्या'।

दिक्-स्वामी (मिन्)—पुं० [ष० त०] = दिक्पति।

दिक्षा—स्त्री० = दीक्षा।

दिक्षागुरु—पुं० = दीक्षा गुरु।

दिक्षित—भू० कृ० = दीक्षित।

दिखणी—वि० [सं० दक्षिणी]। दक्षिणी। उदा०—झूठा पाट पटंबरा रे, झूठा दिखणी चीर।—मीराँ।

दिखना—अ० [हिं० देखना] दिखाई देना। देखने में आना।

दिखराना†—स० = दिखलाना।

दिखरावना†—स० = दिखलाना।

दिखरावनी—स्त्री० = दिखावनी।

दिखलवाई—स्त्री० [हिं० दिखलाना] १. दिखलवाने की क्रिया, या भाव या पारिश्रमिक। २. दे० 'दिखलाई'।

दिखलवाना—स० [हिं० दिखलाना का प्रे० रूप] किसी को कोई चीज दिखलाने में प्रवृत्ति करना।
† स० = दिखलाना।

दिखलाई—स्त्री० [हिं० दिखलाना] १. दिखलाने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक। २. वह चीज या धन जो कुछ देखने या दिखाने के बदले में दिया जाय। दिखाई।

दिखलाना—स० [हिं० देखना का प्रे० रूप] = दिखलवाना।

दिखलावा—पुं० [हिं० दिखलाना] १. दिखलाने या दिखलवाने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. दे० 'दिखावा'।

दिखवैया—पुं० [हिं० दिखाना+वैया (प्रत्य०)] १. वह जो किसी को कुछ दिखलाये। २. स्वयं जिसने कुछ देखा हो। देखनेवाला।

दिखहार*—वि० [हिं० देखना+हार (प्रत्य०)] १. देखनेवाला। द्रष्टा। २. जिसे दिखाई देता हो।

दिखाई—स्त्री० [हिं० दिखाना+आई (प्रत्य०)] १. देखने की क्रिया या भाव। २. देखने के बदले में दिया जानेवाला धन, पारिश्रमिक, या पुरस्कार। जैसे—नई आई हुई बहू को दी जानेवाली मुँह-दिखाई। ३. दिखाने की क्रिया या भाव। ४. दिखाने के बदले में दिया जाने वाला धन, पारिश्रमिक या पुरस्कार। ५. देखे जाने की अवस्था या भाव।

दिखाऊ—वि० [हिं० दिखाना या देखना+आऊ (प्रत्य०)] १. (चीज) जो दिखाई जाय। २. देखे जाने के योग्य। दर्शनीय। ३. जो देखने या दिखाने भर में अच्छा हो, परन्तु जिसमें वास्तविक सार या तत्त्व कुछ भी न हो। दिखौआ। दिखावटी। † ४. दिखानेवाला।

दिखादिखी†—स्त्री० = देखा-देखी।

दिखाना—स० [हिं० देखना का प्रे० रूप] १. किसी को कुछ देखने में प्रवृत्त करना। जैसे—मुँह दिखाना, हाथ दिखाना। २. स्पष्ट रूप में सामने उपस्थित करना। जैसे—नफा या नुकसान दिखाना। ३. अभिव्यक्त या प्रगट करना। जैसे—गुस्सा या रोब दिखाना। ४. वास्तविक रूप छिपाकर केवल ऊपर से प्रगट करना। जैसे—उन्होंने ऐसा भाव दिखाया कि मानों सचमुच अप्रसन्न हों। ५. लोगों के सामने दृश्य रूप में उपस्थित या प्रदर्शित करना। जैसे—खेल या नाटक दिखाना। ६. अच्छी तरह समझाकर बतलाना या सिद्ध करना। जैसे—हम अब यह दिखायेंगे कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा कैसे करती है।

दिखाव—पुं० [हिं० देखना+आव (प्रत्य०)] १. देखने का भाव या क्रिया। २. ऊपर का बाहर से दिखाई देनेवाला दृश्य या रूप। नजारा। (व्यू) ३. दे० 'दिखावा'।

दिखावट—स्त्री० [हिं० देखना+आवट (प्रत्य०)] १. कुछ दिखाने या दिखलाने की क्रिया, ढंग या भाव। २. ऊपर या बाहर से दिखाई देनेवाला आकार-प्रकार या रूप-रंग। ३. ऊपरी या बाहरी तड़क-भड़क। ४. ऐसा आचरण या व्यवहार जो दिखाने भर के लिए हो, और जिसके अन्दर तथ्य या वास्तविकता का बहुत कुछ अभाव हो। बनावट।

दिखावटी—वि० [हिं० दिखावट+ई (प्रत्य०)] १. जो देखने में भड़कीला हो, परन्तु जिसमें कुछ सार या तत्त्व न हो। २. केवल औपचारिक रूप से और दूसरों को दिखलाने भर के लिए होनेवाला। नाम मात्र का। दिखौआ। जैसे—दिखावटी शिष्टाचार। ३. झूठा। मिथ्या।

दिखावा—पुं० [हिं० देखना + आवा (प्रत्य०)] १. दिखलाने की क्रिया या भाव। जैसे—दहेज का दिखावा। २. झूठा ठाठ-बाट। ऊपरी तड़क-भड़क। आडंबर। ३. ऐसा काम जो केवल दूसरों को दिखाने के लिए किया गया हो, पर जिसमें तत्त्व या सार कुछ भी न हो।

दिखैया*—वि० [हिं० देखना+ऐया (प्रत्य०)] देखनेवाला।
वि० [हिं० दिखाना] दिखानेवाला।

दिखौआ—वि० [हिं० देखना+औआ (प्रत्य०)] १. जो केवल देखने योग्य हो, पर काम में न आ सके। बनावटी। २. जो केवल दूसरों को दिखलाने भर को हो और जिसमें तथ्य, वास्तविकता, सत्यता आदि का अभाव हो। जैसे—दिखौआ व्यवहार।

दिखौवा†—वि० = दिखौआ।

दिग्—स्त्री० [सं० दिक्] दिशा।

दिगंगना—स्त्री० [सं० दिक्-अंगना, कर्म० स०] = दिगांगना।

दिगंत—पुं० [सं० दिक्-अंत, ष० त०] १. दिशा का अंत, छोर या सिरा। २. आकाश की अंतिम सीमा या छोर। क्षितिज। ३. ओर। दिशा। ४. चारों दिशाएँ। ५. दसों दिशाएँ।
पुं० [सं० दृक्+अंत] आँख का कोना।

दिगंतर—पुं० [सं० दिक्-अंतर, ष० त०] दो दिशाओं के बीच का कोना। कोण।

दिगंबर—वि० [सं० दिक्-अम्बर, ब० स०] जिसका अंबर दिशाओं के सिवा और कुछ न हो; अर्थात् बिलकुल नंगा। नग्न।
पुं० १. अंधकार जो दिशाओं का अम्बर कहा गया। २. महादेव। शिव। ३. एक प्रकार के जैन साधु जो सदा नंगे रहते हैं।

दिगंबरता—स्त्री० [सं० दिगम्बर+तल्+टाप्] दिगंबर होने की अवस्था या भाव। नंगापन। नग्नता।

दिगंबरी—स्त्री० [सं० दिगम्बर+ङीप्] दुर्गा।

दिगंश—पुं० [सं० दिक्-अंश, ष० त] खगोल विद्या में, क्षितिज वृत्त का ३६० वाँ अंश। (गणना में इसका उपयोग आकाश में रहनेवाले ग्रहों, नक्षत्रों आदि की स्थिति जानने के लिए होता है।

दिगंश यंत्र—पुं० [मध्य० स०] वह यंत्र जिसके द्वारा किसी ग्रह या नक्षत्र का दिगंश जाना जाय।

दिगंशीय—वि० [सं० दिगंश+छ—ईय] दिगंश-संबंधी।

दिगधिप—पुं० [सं० दिक्+अधिप, ष० त०] दिक्पाल।

दिगपाल†—पुं०=दिक्पाल।

दिगमग*—वि०=डगमग।

दिगर—वि० [फ़ा० दीगर] दूसरा। अन्य।

दिगवस्थान—पुं० [सं० दिक्+अवस्थान, ब० स०] वायु।

दिगशूल—पुं०=दिशा-शूल।

दिगागत—वि० [सं० दिक्+आगत, पं० त०] दूर से आया हुआ।

दिगिभ—पुं० [सं० दिक्+इभ, ष० त०] दिग्गज।

दिगीश—पुं० [सं० दिक्+ईश, ष० त०] दिक्पाल।

दिगीश्वर—पुं० [सं० दिक्+ईश्वर, ष० त०] १. आठों दिक्पाल। २. सूर्य, चन्द्रमा आदि ग्रह।

दिगेश—पुं० [सं० दिगीश] दिक्पाल।

दिग्गज—पुं० [सं० दिक्+गज, ष० त०] पुराणानुसार वे आठों हाथी जो चारों दिशाओं और चारों कोणों में पृथ्वी को दबाए रखने और उन दिशाओं की रक्षा करने के लिए स्थापित हैं।
वि० हाथी की तरह बहुत बड़ा या भारी। जैसे—दिग्गज पंडित, दिग्गज भवन।

दिग्यंद—पुं० = दिग्गज।

दिग्गी—स्त्री० = दीघी।

दिग्घ†—वि० = दीर्घ।

दिग्घी—स्त्री० [सं० दीर्घिका] बड़ा तालाब। दीघी।

दिग्जय—पुं० [सं० ष० त०] दिग्विजय।

दिग्जया—स्त्री० [सं० ष० त०] दिगंश। (दे०)

दिग्दंत—पुं० = दिग्दंती (दिग्गज)।

दिग्दंती (तिन्)—पुं० [सं० ष० त०] दिग्गज।

दिग्दर्शक—वि० [सं० ष० त०] १. दिशा बतलाने अथवा उसका ज्ञान करानेवाला। २. दिग्दर्शन कराने वाला।

दिग्दर्शक-यंत्र—पुं० [कर्म० स०] दिशाओं का ज्ञान करानेवाला घड़ी के आकार का एक छोटा यंत्र। कुतुबनुमा। (कंपास)

दिग्दर्शन—पुं० [ष० त०] १. दिशा या ओर दिखलाना। २. किसी को यह बतलाना कि किस ओर, किस काम में अथवा किस प्रकार आगे बढ़ चलना या बढ़ना चाहिए। ३. यह बतलाना कि किस ओर अथवा दिशा में क्या-क्या है अथवा हो रहा है। ४. वह तथ्य जो उदाहरण-स्वरूप उपस्थित किया जाय। ५. अभिज्ञता। जानकारी। ६. दे० 'दिग्दर्शक यंत्र।'

दिग्दर्शनी—स्त्री० [दिग्दर्शन+ङीप्] दिग्दर्शक यंत्र।

दिग्दाह—पुं० [सं० ष० त०] क्षितिज में होनेवाली एक प्राकृतिक विलक्षण घटनाएँ जिनमें कोई दिशा ऐसी लाल दिखाई देती है कि मानों आग-सी लगी हो। यह अशुभ मानी जाती है।

दिग्देवता—पुं० [सं० ष० त०] = दिक्पाल।

दिग्ध—वि० [सं०√दिह् (लेपन) + क्त] १. जहर में बुझा या बुझाया हुआ। २. लिप्त। लीन। ३. दीर्घ। लंबा।
पुं० १. जहर में बुझाया हुआ तीर या बाण। २. तेल। ३. अग्नि। आग। ४. निबन्ध।

दिग्पट—पुं० [सं० दिक्+पट, कर्म० स०] दिक् रूपी वस्त्र। २. दे० 'दिगंबर'।

दिग्पति—पुं० [सं० दिक्+पति, ष० त०] = दिक्पाल।

दिग्पाल—पुं० दिक्पाल।

दिग्बल—पुं० [सं० ष० त०] फलित ज्योतिष के अनुसार आदि पर स्थित ग्रहों का बल। फलित ज्योतिष में वह बल जो ग्रहों के किसी विशिष्ट स्थिति में रहने पर प्राप्त होता है।

दिग्बली (लिन्)—पुं० [सं० दिग्बल+इनि] १. फलित ज्योतिष में वह ग्रह जो किसी दिशा के लिए बली हो। २. वह राशि जिसे किसी ग्रह से बल प्राप्त हो रहा हो।

दिग्भू—स्त्री० [सं० द्व० स०] दिशाएँ और पृथ्वी। उदा०—कंपित दिग्भू अंबर, ध्वस्त अहंमद डंबर। —पंत।

दिग्भ्रम—पुं० [सं० ष० त०] दिशाओं के संबंध में होनेवाला भ्रम। जैसे—भूल से पश्चिम को दक्षिण या पूर्व समझना।

दिग्मंडल—पुं० [सं० दिङ+मंडल, ष० त०] दिशाओं का समूह। समस्त दिशाएँ।

दिग्राज—पुं० [सं० ष० त०,+टच्] = दिक्पाल।

दिग्वसन—पुं० [सं० ब० स०] दिग्वस्त्र। (दे०)

दिग्वस्त्र—पुं० [सं० ब० स०] १. महादेव। शिव। २. लग्न। ३. दिगंबर जैन यति।

दिग्वान् (वत्)—पुं० [सं० दिग्+मतुप्, म–व] चौकीदार। पहरेदार।

दिग्वारण—पुं० [सं० ष० त०] दिग्गज।

दिग्वास (स्)—पुं० [सं० ब० स०] दिग्वस्त्र। (दे०)

दिग्विन्दु—पुं० [सं० मध्य० स०] वह विन्दु या निश्चित-स्थान जो सीध या ठीक उत्तर, दक्षिण, पूर्व या पश्चिम में पड़ता है। (कार्डिनल प्वाइंट)

दिग्विजय—स्त्री० [सं० ष० त०] १. प्राचीन भारतीय महाराजाओं की एक प्रथा जिसमें वे अपना पौरुष और बल दिखाने के लिए सेना सहित निकलकर आस-पास विशेषतः चारों ओर के देशों और राज्यों को अपने अधीन करते चलते थे। २. किसी बहुत बड़े गुणी या पंडित का दूसरे स्थानों पर आकर वहाँ के गुणियों और विद्वानों को अपनी कलाओं, गुणों आदि से परास्त करके उन पर अपनी विशिष्टता का सिक्का जमाना।

दिग्विजयी (यिन्)—वि० [सं० दिग्विजय+इनि] [स्त्री० दिग्विजयनी दिग्विजयिन्+ङीप्] जिसने दिग्विजय प्राप्त की हो।

दिग्विभाग—पुं० [सं० ष० त०] दिशा। ओर। तरफ।

दिग्विभावित—वि० [सं० स० त०] जिसकी प्रसिद्धि सभी दिशाओं में अर्थात् सब जगह हो।

दिग्व्यापी (पिन्)—वि० [सं० दिक्+वि√आप् (पहुँचना)+णिनि] [स्त्री० दिग्व्यापिनी दिग्व्यापिन्+ङीप्] सब दिशाओं में व्याप्त रहने या होनेवाला।

दिग्व्याप्त—वि० [सं० स० त०] सब दिशाओं में व्याप्त।

दिग्व्रत—पुं० [सं० मध्य० स०] एक तरह का व्रत जिसमें कुछ निश्चित समय के लिए किसी निश्चित दिशा में नहीं जाया जाता। (जैन)

दिग्शिखा—स्त्री० [सं० ष० त०] पूर्व दिशा।

दिग्शूल—पुं० = दिशा शूल।

दिग्सिंधुर—पुं० [सं० ष० त०] गिदगज।

दिघी—स्त्री० = दीघी।

दिघोंच—पुं० [देश०] एक तरह का पक्षी जिसके डैने कुछ काले तथा सुनलहे रंग के होते हैं।

दिग्घ—वि० = दीर्घ।

दिङ-नक्षत्र—पुं० [सं० मध्य० स०] चारों दिशाओं से संबंधित कुछ विशिष्ट नक्षत्रों का समूह।

विशेष—प्रत्येक दिशा में ऐसे सात-सात नक्षत्र माने गये हैं।

दिङनाग—पुं० [सं० ष० त०] १. दिग्गज। २. एक प्रसिद्ध बौद्ध आचार्य जो ईसवी चौथी शती में हुए थे।

दिङ-नाथ—पुं० [सं० ष० त०] १. दिग्गज। २. एक प्राचीन बौद्ध आचार्य जो कालिदास के समकालीन और प्रतिद्वंद्वी कहे जाते हैं।

दिङ-नारी—स्त्री० [सं० मध्य० स०, वा ष० त०] १. वेश्या। रंडी। २. कुलटा या दुश्चरित्रा स्त्री। पुंश्चली।

दिङ-मंडल—पुं० [सं० ष० त०] दिशाओं का समूह।

दिङ-मातंग—पुं० [सं० ष० त०] दिग्गज।

दिङ-मात्र—पुं० [सं० दिक्+मात्रच्] १. उदाहरण मात्र। २. संकेत मात्र।

दिङमूढ़—वि० [सं० ष० त०] १. जिसे दिशाओं का ज्ञान न होता हो। २. बेवकूफ। मूर्ख।

दिङ-मोह—पुं० [सं० ष० त०] दिग्भ्रम।

दिच्छा†—स्त्री० = दीक्षा।

दिच्छित—भू० कृ० = दीक्षित।

दिजराज*—पुं० = द्विजराज।

दिजोत्त*—पुं० = द्विजोत्तम।

दिट्ट*—वि० = दृष्ट।

दिट्टि*—स्त्री० = दृष्टि।

दिठवन†—स्त्री० = देवोत्थान एकादशी।

दिठादिठी*—स्त्री० [हिं० दीठ] देखादेखी। उदा०—लहि सूतैं घट करु गहत दिठादिठी की ईठि।—बिहारी।

दिठाना†—स० [हिं० दीठ+आना (प्रत्य०)] १. नजर लगाना। दृष्टि लगाना। २. दिखाना। (क्व०)

अ० १. नजर लगना। २. दिखाई देना। (क्व०)

दिठियार—वि० [हिं० दीठ=दृष्टि + इयार (प्रत्य०)] १. देखनेवाला। २. जिसे दिखाई देता हो। ३. समझदार। बुद्धिमान।

दिठौना—पुं० [हिं० दीठ = दृष्टि+औना (प्रत्य०)] काजल का वह बेढंगा चिह्न या बिंदी जो लोग छोटे बच्चों के माथे या गाल पर उन्हें दूसरों की बुरी नजर से बचाने के लिए लगाते हैं।

क्रि० प्र० —लगाना।

दिढ़†—वि० = दृढ़।

दिढ़ता†—स्त्री० = दृढ़ता।

दिढ़ाई†—स्त्री० = दृढ़ता।

दिढ़ाना—स० [सं० दृढ़+हिं० आना (प्रत्य०)] १. दृढ़ अर्थात् ठीक और पक्का करना या बनाना। २. पूर्ण रूप से निश्चित या स्थिर करना।

अ० १. दृढ़ या पक्का होना। २. निश्चित या स्थिर होना।

दिढ़ाव—पुं० [हिं० दिढ़ाना] १. दृढ़ या निकुचत करने की क्रिया या भाव। २. दृढ़ता। उदा०—है दिढ़ाइबे जोग जो ताको करत दिढ़ाव।—भूषण।

दिणयर*—पुं० = दिनकर (सूर्य)।

दित—भू० कृ० [सं०√दो (खण्डन करना)+क्त इत्व] १. कटा हुआ। २. विभक्त। ३. खंडित।

दितवार†—पुं० = आदित्यवार (रविवार)।

दिति—स्त्री० [सं०√दो +क्विच्, इत्व] १. कश्यप ऋषि की एक पत्नी जो दक्ष प्रजापति की कन्या और दैत्यों की माता थी। २. काटने, तोड़ने-फोड़ने आदि की क्रिया या भाव।

वि० देनेवाला। दाता।

दिति-कुल—पुं० [ष० त०] दैत्यों का कुल या वंश।

दितिज—वि० [सं० दिति√जन् (उत्पन्न होना)+ड, उप० स०] [स्त्री० दितिजा] दिति से उत्पन्न।

पुं० =दैत्य।

दिति-सुत—पुं० [ष० त०] दैत्य। राक्षस।

दित्य—पुं० [सं० दिति+यत्] दैत्य।

वि० काटे या छेदे जाने के योग्य। जो काटा या छेदा जा सके।

दित्सा—स्त्री० [सं०√दा (देना) +सन्+अ+टाप्] १. दान करने या देने की इच्छा। २. वह व्यवस्था जिसके अनुसार कोई अपनी संपत्ति का बँटवारा अमुक-अमुक लोगों में अपने मरने के उपरांत चाहता है। (विल)

दित्साक्रोड़—पुं० [ष० त०] १. दित्सापत्र के अंत में लिखा हुआ परिशिष्ट रूप में कोई संक्षिप्त लेख या टिप्पणी जो किसी प्रकार की व्यवस्था या स्पष्टीकरण के रूप में होती है। २. दित्सा-पत्र का वह अंश जिसमें उक्त प्रकार का लेख हो। (कोडिसिल)

दित्सापत्र—पुं० [ष० त०] वह पत्र या लेख जिसमें यह निर्देश होता है कि मेरे मरने के उपरांत मेरी संपत्ति अमुक-अमुक लोगों को अमुक-अमुक मात्रा में दी जाय। वसीयतनामा। इच्छापत्र। (विल)

दित्सु—वि० [सं० √दा (देना)+सन्+उ] १. जो दान करने या देने को इच्छुक हो। २. जिसने अपनी संपत्ति के संबंध में दित्सा-पत्र लिखा हो। वसीयत करनेवाला।

दित्स्य—वि० [सं०√दा+सन्+ण्यत्] जो दान किया जा सके। किसी को दिये जाने के योग्य।

दिदार†—पुं० = दीदार।

दिदृक्षा—स्त्री० [सं०√दृश् (देखना)+सन्+अ+टाप्] देखने की अभिलाषा या इच्छा।

दिदृक्षु—वि० [सं०√दृश्+सन्+उ] देखने की अभिलाषा या इच्छा रखनेवाला।

दिदृक्षेण्य—वि० [सं० √दृश्+सन्+केन्य] दिदृक्षेय। (दे०)

दिदृक्षेय—वि० [सं० दिदृक्षा+ढक्—एय (बा०)] देखने योग्य। दर्शनीय।

दिद्यु—पुं० [सं० दिद्युत् से] १. वज्र। २. तीर। बाण।

दिद्युत्—पुं० [सं० √ द्युत् (चमकना) + क्विप् (नि० सिद्धि)] वज्र।

दिधि—पुं० [सं०√धा (धारण करना)+कि] १.धारण करने की क्रिया या भाव। २. धैर्य। ३. दृढ़ता।

दिधिषु—पुं० [सं० दिधि√सो (नष्ट करना)+कु] १. पहले एक बार ब्याही हुई स्त्री का दूसरा पति। दोबारा ब्याही हुई स्त्री का दूसरा

पति। २. गर्भाधान करनेवाला व्यक्ति। ३. स्त्री की दृष्टि से उसका दूसरा पति।

दिधिषू—स्त्री० [सं० दिधि√सो+कू] १. वह स्त्री जिसके दो ब्याह हुए हों। २. वह स्त्री जिसका विवाह उसकी बड़ी बहन के विवाह से पहले हुआ हो।

दिधिषू-पति—पुं० [ष० त०] विधवा भावज से अनुचित संबंध रखनेवाला व्यक्ति।

दिन—पुं० [सं०√दो (खण्ड करना)+इनच्] १. उतना पूरा समय जितने में सूर्य हमारे ऊपर अर्थात् आकाश में रहता है। सूर्य के उदय से लेकर अस्त तक का अर्थात् सवेरे से सन्ध्या तक का सारा समय। दिवस।

मुहा०—दिन उतरना=दिन ढलना। **दिन को तारे दिखाई देना**=इतना अधिक मानसिक कष्ट पहुँचना या विह्वल होना कि बुद्धि ठिकाने न रहे। उदा०—तारे ही दिखायी दिये दिन में विपक्ष को।—मैथिलीशरण। **दिन को दिन और रात को रात जानना या न समझना**=कोई बड़ा काम करते समय अपने आराम, सुख, विश्राम आदि का कुछ भी ध्यान न रखना। **दिन चढ़ना**=सूर्य निकलने के उपरान्त कुछ और समय बीतना। **दिन छिपना या डूबना**=दिन का अंत होने पर सूर्य का अस्त होना। **दिन ढलना**=दोपहर बीत जाने पर दिन का अंत अर्थात् सूर्यास्त का समय पास आने लगना। **दिन दूना या रात चौगूना होना या बढ़ना**=बहुत जल्दी-जल्दी और बहुत अधिक बढ़ना। खूब उन्नति पर होना। **दिन निकलना**=सूर्य का उदय होना। दिन चढ़ना। **दिन बूड़ना या मुँदना**=दिन डूबना। (देखें ऊपर)

पद—दिन दहाड़े या दिन दोपहर=ऐसे समय जब कि दिन पूरी तरह से निकला हो और सब लोग जागते और देखते हों। **दिन धौले**=दिन दहाड़े।

दिन रात=(क) हर समय। सदा। (ख) उतना सब समय जितने में पृथ्वी एक बार अपने अक्ष पर पूरा घूमती है। एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक का समय। दिन और रात दोनों का सारा समय जो २४ घंटों का होता है।

विशेष—(क) ज्योतिष में दिन की गणना या क्विार दो प्रकार से होता है—एक तो नक्षत्र के विचार से, जिसे नाक्षत्र दिन कहते हैं और दूसरा सूर्य के विचार से जिसे सौर या सावन कहते हैं। नाक्षत्र दिन उतने समय का होता जितने में एक नक्षत्र याम्योतर रेखा पर से होता हुआ आगे बढ़ता और फिर याम्योतर रेखा पर आता है। यही समय पृथ्वी को एक बार अपने अक्ष पर घूमने में लगता है। नक्षत्र के याम्योत्तर रेखा पर दोबारा आने और पृथ्वी के अपने अक्ष पर घूमने में सदा एक-सा समय लगता है। उसमें कभी क्षणमात्र का भी अंतर नहीं पड़ता। सौर या सावन दिन उतने समय का होता है, जितना समय सूर्य को एक बार याम्योत्तर रेखा पर से होकर आगे बढ़ने और फिर दोबारा या याम्योत्तर रेखा पर आने में लगता है। यह समय बराबर थोड़ा-बहुत घटता-बढ़ता रहता है; इसी लिए चांद्र वर्ष और सौर वर्ष में कुछ अंतर पड़ता है जो किसी विशिष्ट युक्ति से दूर किया जाता है। हमारे यहाँ तथा अनेक प्राचीन जातियों में एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक का सारा समय एक पूरा दिन माना जाता था और आज-कल भी एशिया तथा यूरोप के अनेक देशों में ऐसा ही माना जाता है। परन्तु आज-कल पाश्चात्य देशों के प्रभाव के कारण नागर कार्यों के लिए और विधिक क्षेत्रों में एक मध्य रात्रि से दूसरी मध्य रात्रि तक का समय दिन माना जाता है। आधुनिक पाश्चात्य ज्योतिष एक मध्याह्न से दूसरे मध्याह्न तक के समय को पूरा दिन मानते हैं। (ख) दिनों की गिनती सप्ताह, महीनों और वर्ष के हिसाब से भी की जाती है।

पद—दिन-दिन या दिन पर दिन=नित्यप्रति। सदा। हर रोज। **दिन-ब-दिन**=दिन-दिन या दिन पर दिन।

३. वार। जैसे—आज कौन दिन है?

क्रि० प्र०—काटना।—गवाना।—बिताना।

४. प्रस्तुत परिस्थितियों या वर्तमान स्थितियों के विचार से बीतनेवाला काल या समय। समय। काल। वक्त। जैसे—उनके अच्छे दिन तो चले गये, अब बुरे दिन आ रहे हैं।

मुहा०—(किसी पर) दिन पड़ना=कष्ट या विपत्ति के दिन आना। **दिन पूरे करना**=जैसे तैसे कष्ट का समय बिताना। **दिन फिरना या बहुरना**=कष्ट या विपत्ति के दिन निकल या बीत जाने पर अच्छे और सौभाग्य के दिन आना। **दिन बिगड़ना**=कष्ट या विपत्ति के दिन आना। **दिन भरना या भुगतना**=दिन पूरे करना। (देखें ऊपर)

पद—दिनों का फेर=भाग्य बिगड़ हुए होने का समय। अच्छे दिनों के बाद बुरे दिन आना।

५. नियत या उपयुक्त काल। निश्चित या उचित समय।

मुहा०—(किसी काम या बात का) दिन आना=उचित या नियत समय आना। जैसे—मृत्यु का दिन आना; स्त्री के रजस्वला होने का दिन आना। **(किसी काम या बात के लिए) दिन धरना** = तिथि या दिन निश्चित करना।

६. ऐसा समय जिसमें कोई विशिष्ट घटना या बात हो अथवा होती हो। **मुहा०—(स्त्रियों के पक्ष में) दिन चढ़ना या लगना**=स्त्री का रजस्वला होने का समय निकल जाने पर भी कुछ और दिन बीतना जो उसके गर्भवती होने का सूचक होता है। जैसे—उसकी बहू को दिन चढ़े (या लगे) हैं। **दिनों से उतरना**=युवावस्था बीत जाना। जवानी ढलना।

*अव्य० १. नित्य-प्रति। हर रोज। २. निरंतर। बराबर। सदा।

उदा०—दिन दूलह मेरो कुंवर कन्हैया।—गदाधर भट्ट।

दिनअर*—पुं० = दिनकर (सूर्य)।

दिनकंत—पुं० [सं० दिन+हिं० कंत (कांत)] सूर्य।

दिनकर—पुं० [सं० दिन√कृ (करना) +ट्यच्] १. सूर्य। २. आक या मदार का पौधा।

दिनकर-कन्या—स्त्री० [ष० त०] यमुना।

दिनकर-कांति—स्त्री० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

दिनकर-सुत—पुं० [ष० त०] १. यम। २. शनि। ३. सुग्रीव। ४. कर्ण। ५. अश्विनीकुमार।

दिन-कर्त्ता (र्तृ)—पुं० [ष० त०] = दिनकर (सूर्य)।

दिन-कृत्—पुं० [सं० दिन√कृ (करना)+क्विप्] = दिनकर।

दिन-केसर—पुं० [ष० त०] अंधकार। अँधेरा।

दिन-क्षय—पुं० [ष० त०] तिथि-क्षय। (दे०)

दिनचर्या—स्त्री० [ष० त०] नित्य प्रति किये जानेवाले कार्यों का क्रमिक-रूप। नित्य किये जानेवाले सब काम। जैसे—नहाना-धोना, खाना-पीना, काम-धंधे या नौकरी पर जाना आदि।

दिनचारी (रिन्)—पुं० [सं० दिन्√चर् (गति) + णिनि] सूर्य।

दिन-ज्योति (स्)—स्त्री० [ष० त०] १. दिन का उजाला या प्रकाश। २. धूप।

दिन-दानी (निन्) —पुं० [ष० त०] प्रतिदिन दान करनेवाला। सदा या हमेशा देनेवाला।

दिन-दीप—पुं० [ष० त०] सूर्य।

दिन-दुःखित—पुं० [स० त०] चकवा (पक्षी)।

दिन-नाथ—पुं० [ष० त०] सूर्य।

दिन-नायक—पुं० [ष० त०] सूर्य।

दिननाह*—पुं० =दिननाथ (सूर्य)।

दिन-पंजी—स्त्री० [ष० त०] दे० 'दैनंदिनी'।

दिनप—पुं० [सं० दिन√पा (रक्षा करना) + क, उप० स०]=दिन-पति (सूर्य)।

दिन-पति—पुं० [ष० त०] १. दिन या वार के पति या स्वामी। २. सूर्य। ३. आक। मदार।

दिन-पत्र—पुं० [ष० त०] वह पत्र या पत्र-समूह जिसमें अलग-अलग दिन या वार, तिथियाँ, तारीखें, आदि क्रम से दी रहती हैं। तिथि-पत्र। (कैलेंडर)

दिन-पाकी अजीर्ण—पुं० [सं० दिन पाकी, दिन√पच् (पचना) +णिनि, दिनपाकी और अजीर्ण व्यस्त पद] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रोग जिसमें एक बार का किया हुआ भोजन आठ पहर में पचता है, बीच में भूख नहीं लगती।

दिन-पात—पुं० [ष० त०] तिथि-क्षय। (दे०)

दिन-पाल—पुं० [सं० दिन√पाल् (रक्षा) +णिच्+अण्] सूर्य।

दिन-बंधु—पुं० [ष० त०] १. सूर्य। २. आक। मदार।

दिन-बल—पुं० [ब० स०] दिन के समय सबल पड़नेवाली राशि। (ज्यों०)

दिन-भृति—स्त्री० [ष० त०] वह मजदूरी जो काम करने के दिनों के अनुसार मिले। (मासिक वेतन से भिन्न)

दिन-मणि—पुं० [ष० त०] १. सूर्य। २. आक। मदार।

दिन-मनि*—पुं०=दिन-मणि।

दिन-मयूख—पुं० [ब०स०] १. सूर्य। २. आक। मदार।

दिन-मल—पुं० [ष०त०] मास। महीना।

दिन-मान—पुं० [ष० त०] ज्योतिष में, काल-गणना के लिए, सूर्योदय से सूर्यास्त तक का समय अर्थात् पूरे दिन का मान, जो घड़ियों और पलों अथवा घंटों और मिनटों में निश्चित होता है। और बराबर कुछ न कुछ घटता-बढ़ता रहता है।

*पुं०=दिन-मणि (सूर्य)। उदा०—गिरि-शिखर पर थम गया है डूबता दिन-मान।—दिनकर।

दिनमाली (लिन्)—पुं० [सं० दिनमाला, ष० त०,+इनि] सूर्य।

दिन-मुख—पुं० [ष० त०] प्रभात। सवेरा।

दिन-रत्न—पुं० [ष० त०] १. सूर्य। २. आक। मदार।

दिनराई*—पुं०=दिन-राज (सूर्य)।

दिनराउ—पुं०=दिन-राज (सूर्य)।

दिन-राज—पुं० [ष० त०, टच् समा०] सूर्य।

दिनरी—स्त्री० [?] बुंदेलखंड में गाया जानेवाला एक प्रकार का गीत जो स्त्रियाँ चैती फसल काटते समय गाती हैं।

दिन-शेष—पुं० [ष० त०] सायंकाल। संध्या।

दिनांक—पुं० [दिन-अंक, ष० त०] वह क्रमिक संख्या जो किसी विशिष्ट वर्ष के विशिष्ट मास के दिन का ठीक-ठीक बोध कराती हो। तारीख। तिथि। (डेट)

दिनांकित—भू० कृ० [सं० दिनांक+इतच्] जिस पर दिनांक लिखा हुआ या लिखा गया हो।

दिनाँड—पुं० [सं० दिनांत] अंधकार। अँधेरा।

दिनांत—पुं० [दिन-अंत, ष० त०] सायंकाल। संध्या। शाम।

दिनांतक—पुं० [दिन-अंतक, ष० त०] अंधकार। अँधेरा।

दिनांध—वि० [दिन-अंध, स० त०] जिसे दिन में कुछ दिखलाई न पड़ता हो।

दिनांश—पुं० [दिन-अंश, ष० त०] १. दिन के अंश या विभाग। २. दिन के प्रातः काल, मध्याह्न और सायंकाल ये तीन अंश या विभाग।

दिनाइ—पुं० [देश०] दाद (रोग)।

दिनाई—स्त्री० [सं० दिन, हिं० आना] कोई ऐसी विषाक्त वस्तु जिसे खा लेने के कुछ समय उपरांत मृत्यु हो जाय। अंतिम दिन (मृत्यु-काल) लानेवाली चीज।

† स्त्री० = दाद (रोग)।

दिनागम—पुं० [दिन-आगम, ष० त०] प्रभात। तड़का।

दिनाती—स्त्री० [हिं० दिन + आती (प्रत्य०)] १. मजदूरों विशेषतः खेत में काम करनेवालों का एक दिन का काम। २. उक्त प्रकार के एक दिन का पारिश्रमिक या मजदूरी। दिहाड़ी।

दिनातीत—वि० [दिन-अतीत, द्वि० त०] १. जिसका चलन या प्रचलन न रह गया हो। जिसके दिन बीत चुके हों। २. रुचि, शैली आदि के विचार से पिछड़ा हुआ। (आउट ऑफ़ डेट)

दिनात्यय—पुं० [दिन-अत्यय, ष० त०] सूर्यास्त।

दिनादि—पुं० [दिन-आदि, ष० त०] = दिनागम।

दिनाधीश—पुं० [दिन-अधीश, ष० त०] १. सूर्य। २. आक। मदार।

दिनानुदिन—क्रि० वि० [दिन-अनुदिन, अव्य० स०] दिन पर दिन। नित्य प्रति। प्रति दिन।

दिनाप्त—वि० [दिन-आप्त, द्वि० त०] आज-कल या वर्तमान काल की आवश्यकता, रुचि, प्रचलन, शैली आदि के अनुसार ठीक। अद्यावधिक। (अपटुडेट)

दिनाय—स्त्री० = दाद (चर्मरोग)।

दिनार—पुं० = दीनार।

दिनारु—वि० [सं० दिनालु] बहुत दिनों का। पुराना।

दिनार्द्ध—पुं० [दिन-अर्द्ध, ष० त०] मध्याह्न। दोपहर।

दिनावा—स्त्री० [देश०] पहाड़ी नदियों में होनेवाली एक तरह की मछली।

दिनास्त—पुं० [दिन-अस्त, ष० त०] सूर्यास्त। संध्या।

दिनिआ*—पुं० [सं० दिनकर] सूर्य।

दिनिका—स्त्री० [सं० दिन+ठन्—इक,+टाप्] एक दिन का पारिश्रमिक या मजदूरी। दिनाती। दिहाड़ी।

नियर*—पुं० = दिनकर (सूर्य)।

दिनी—वि० [हिं० दिन+ई (प्रत्य०)] १. कई या बहुत दिनों का पुराना। २. बासी।

दिनेर*—पुं० = दिनकर (सूर्य)।

दिनेश—पुं० [दिन-ईश, ष० त०] १. सूर्य। २. किसी विशिष्ट दिन का अधिपति ग्रह। ३. आक। मदार।

दिनेशात्मज—पुं० [सं० दिनेशात्मन् (ष० त०)√जन् (उत्पन्न होना)+ड] १. शनि। २. कर्ण। ३. सुग्रीव। ४. यम।

दिनेशात्मजा—स्त्री० [सं० दिनेशात्मज+टाप्] १. यमुना। २. तापती।

दिनेश्वर—पुं० [दिन-ईश्वर, ष० त०] = दिनेश।

दिनेस—पुं० = दिनेश।

दिनौंधी—स्त्री० [हिं० दिन+अंध +ई (प्रत्य०)] एक रोग जिसमें रोगी को दिन के समय बहुत कम दिखलाई पड़ता है। दिवांधता।

दिप†—स्त्री० = दीप्ति (चमक)।

दिपति*—स्त्री० = दीप्ति।

दिपना*—अ० [सं० दीपन] चमकना। प्रकाशमान होना।

अ० [हिं० दीपा = मन्द] १. मंद पड़ना। २. बुझना। ३. धुँधला पड़ना या होना। उदा०—इस घने कुहासे के भीतर, दिप जाते तारे इन्दु पीत। —पन्त।

दिपाना—स० [हिं० दिपना] दीप्त करना। चमकाना।

† स० [हिं० दीपा = मन्द] १. बुझाना। २. धुंधला करना। ३. मंद करना।

†अ० = दिपना।

दिब—पुं० १. = दिव्य (परीक्षा)। २. = दिवस।

वि० =दिव्य।

दिमंकर सो†—वि० [सं० द्वि—उत्तर—शत] सौ और दो। एक सौ दो।

दिमाक†—पुं० = दिमाग।

दिमाकदार†—वि० = दिमागदार।

दिमाग—पुं० [अ०] १. सिर का गूदा। भेजा। २. सोचने-समझने आदि की शक्ति, जिसका निवास सिर के भीतरी भाग में माना गया है। मस्तिष्क।

मुहा०—दिमाग आसमान पर होना=ऐसा घमंड होना जो साधारण बातों, व्यक्तियों आदि की ओर प्रवृत्त न होने दे अथवा उन्हें उपेक्ष्य समझे। **दिमाग ऊँचा होना**= ऐसी मानसिक स्थिति होना, जिसमें केवल बड़ी-बड़ी बातों की ओर ही ध्यान रहे। **(किसी का) दिमाग खाना या चाटना**= व्यर्थ की बातें कहना जिससे किसी के सिर में दर्द होने लगे। बहुत बकवाद करना। **(किसी का) दिमाग खाली करना** = दिमाग चाटना। ऐसा काम करना, जिससे किसी की मानसिक शक्ति का बहुत अधिक व्यय हो। **(किसी काम में) दिमाग खाली करना**=सोच-विचार आदि में पड़कर अपनी मानसिक शक्ति का क्षय या व्यय करना। **दिमाग चढ़ना**= दिमाग आसमान पर होना। **(किसी का) दिमाग न पाया जाना या न मिलना**=किसी में इतना अधिक अभिमान होना कि वह साधारण लोगों से बात करना तक पसंद न करे। **दिमाग परेशान करना**= दे० ऊपर 'दिमाग खाली करना'। **दिमाग में खलल होना**= मस्तिष्क में ऐसा विकार होना, जिससे वह ठीक तरह से काम करने के योग्य न रह जाय। पागल होना।

(किसी काम में) दिमाग लड़ाना=कोई काम पूरा करने के लिए बहुत अधिक सोच-विचार से काम लेना।

३. मानसिक शक्ति। बुद्धि। समझ। जैसे—वह बहुत बड़े दिमाग का आदमी है।

पद—दिमागदार। (देखें)

४. अभिमान। घमंड। शेखी। जैसे—बस रहने दीजिए; बहुत दिमाग मत दिखलाइए।

मुहा०—दिमाग झड़ना= अभिमान या घमंड दूर हो जाना।

दिमाग-चट—वि० [अ० दिमाग+हिं० चट (चाटना)] बहुत अधिक बकवाद करके दूसरों का दिमाग चाटने अर्थात् उन्हें व्याकुल करने-वाला। बहुत बड़ा बकवादी।

दिमागदार—वि० [अ० दिमाग+फा० दार (प्रत्य०)] १. जिसका दिमाग या मानसिक शक्ति बहुत अच्छी हो। बहुत बड़ा समझदार। २. अभिमानी। घमंडी।

दिमाग रौशन—पुं० [अ० दिमाग+फा० रौशन] मगज-रौशन नास। सुँघनी। (परिहास और व्यंग्य)

दिमागी—वि० [अ० दिमाग] १. दिमाग या मस्तिष्क-संबंधी। दिमाग का। मानसिक। जैसे—दिमागी मेहनत। २. जिसे दिमाग हो। दिमागवाला। ३. घमंडी।

दिमात*—वि० [सं० द्विमातृ] दो माताओंवाला। जिसकी दो माताएँ हों।

वि० [सं० द्विमात्र] दो मात्राओंवाला।

दिमान†—पुं० = दीवान।

दिमाना †—वि० = दीवाना।

दिम्मस—स्त्री० [हिं० दुरभट] घासदार ढेलों में से घास अलग करने के लिए उन्हें दुरमद से पीटने की क्रिया।

दियट—स्त्री० = दीअट।

दियत—स्त्री० [हिं० देना] वह धन जो किसी अन्य व्यक्ति को मार डालने या अंग-भंग करने के बदले में दिया जाय।

दियना† —पुं० = दीया।

अ० दीप्त होना।

स० दीप्त करना।

दियरा—पुं० [हिं० दीया = दीपक] १. वह बड़ा-सा लुक जो शिकारी हिरनों को आकर्षित करने के लिए जलाया जाता है। उदा०—सुभग सकल अंग अनुज बालक संग देखि नरनारि रहैं ज्यों कुरंग दियरे।——तुलसी। २. [स्त्री० अल्पा० दियरी] दे० 'दीया'।

पुं० [?] एक तरह का पकवान।

दियरी—स्त्री० [हिं० दियरा का स्त्री० अल्पा०] छोटा दीया। दिअली।

दियला† —पुं० [स्त्री० अल्पा० दियली] = दीया।

दियवा † —पुं० = दीया।

दियाँर—स्त्री० = दीमक।

दिया † पुं० = दीया।

स० हिं० देना क्रिया का भूत० का० एक वचन रूप।

दियानत—स्त्री० = दयानत।

दियानतदार—वि० = दयानतदार।

दिया-बत्ती—स्त्री० = दीया-बत्ती।

दियारा†—पुं० [फा० दयार = प्रदेश] १. नदी के किनारे की जमीन। कछार। खादर। दरियाबरार। २. दयार। प्रदेश।

पुं० [सं० दिवाकर] १. मृगतृष्णा। २. रात के समय मैदान में दिखाई पड़नेवाला अगिया बैताल। छलावा। लुक।

दियासलाई—स्त्री० = दीया-सलाई।

दिर—पुं० [अनु०] सितार का एक बोल। जैसे—दिर दा दिर दारा।

दिरद*—पुं० = द्विरद।

दिरम—पुं० [अ० दरहम से फा०] १. मिश्र देश का चाँदी का एक पुराना सिक्का। दिरहम। २. साढ़े तीन माशे की एक तौल।

दिरमान—पुं० [फा० दरमानः] चिकित्सा। इलाज।

दिरमानी—पुं० [फा० दरमानः = चिकित्सा+ई (प्रत्य०)] इलाज करनेवाला व्यक्ति। चिकित्सक।

दिरहम—पुं० [फा० दर्हम] दिरम नाम का सिक्का और तौल।

दिरानी†—स्त्री० = देवरानी (देवर की पत्नी)।

दिरिस*—पुं० = दृश्य।

दिरेस—स्त्री०, पुं० = दरेस।

दिर्हम—पुं० = दिरम।

दिल—पुं० [फा०] १. शरीर के अंदर का हृदय नामक अंग, जिसकी सहायता से शरीर में रक्त का संचार होता है। कलेजा। (मुहा० के लिए दे० 'कलेजा' के मुहा०) २. लाक्षणिक रूप में चित्त। जी। मन। **पद**—**दिल की फाँस**=मन में खटकता रहने वाला कष्ट, दुःख या पीड़ा। **मुहा०**—(किसी से) **दिल अटकना**=शृंगारिक क्षेत्र में, प्रेम या स्नेह होना। (किसी पर) **दिल आना**= किसी के प्रति अनुराग या प्रेम होना। **दिल उमड़ना**= चित्त का दया, स्नेह आदि कोमल मनोविकारों के कारण द्रवीभूत होना। **दिल उलटना**=(क) जी घबराना। (ख) जी मिचलाना। **दिल कड़ा या कड़वा करना** =कोई काम या बात करने के लिए मन में साहस या हिम्मत करना। **दिल कबाब होना** = बहुत अधिक मानसिक कष्ट या संताप होना। जी जलना। (**किसी काम, चीज या बात के लिए**) **दिल करना**= मन में प्रवृत्ति उत्पन्न होना। जी चाहना। **दिल का कँवल या कमल खिलना**=चित्त या मन बहुत प्रसन्न होना। **दिल का गुबार या बुखार निकालना**=मन में दबा हुआ कष्ट कुछ कटु शब्दों में किसी के सामने प्रकट करना। **दिल की गाँठ या घुंडी खोलना**=(क) मन में छिपाकर रखी हुई बात किसी से कहना। (ख) मन में दबा हुआ द्वेष या वैर दूर करना। **दिल कुढ़ना** = चित्त या मन अन्दर ही अन्दर दुःखी होना। **दिल के फफोले फोड़ना** = दिल का गुबार या बुखार निकालना। (देखें ऊपर) **दिल को करार होना** = चित्त में शांति होना। चैन मिलना। (**कोई बात**) **दिल को लगना** = किसी बात का चित्त या मन पर ऐसा प्रभाव पड़ना जो सहज में भुलाया न जा सके। **दिल खोलकर** = (क) पूरी उदारता से। (ख) बिलकुल शुद्ध हृदय से। जैसे—दिल खोलकर किसी से बातें करना। (**किसी काम या बात में**) **दिल गवाही देना**= अंतःकरण या विवेक से किसी काम या बात का अनुमोदन या समर्थन होना। जैसे—जिस काम में दिल गवाही न दे, वह काम नहीं करना चाहिए। **दिल जमना** = (क) किसी काम में चित्त या मन लगना। जी लगना। (ख) किसी बात की ओर से मन संतुष्ट होना। **दिल ठिकाने होना**=चित्त शांत या स्थिर होना। **दिल ठोंककर** = चित्त या मन में दृढ़ता और साहस रखकर (कोई काम करना)। (**किसी का**) **दिल देखना** = किसी प्रकार यह पता लगाना कि इसके मनमें क्या बात या विचार है अथवा यह क्या करेगा। (**किसी को**) **दिल देना**=किसी से अत्यधिक प्रेम करना। पूरी तरह से अनुरक्त होना। **दिल दौड़ाना**=चित्त या मन को किसी ऐसे काम या बात की ओर प्रवृत्त करना, जिसकी प्राप्ति या सिद्धि दूर हो अथवा सहज न हो। (**हाथों में या से**) **दिल पकड़े फिरना**=ममता, मोह आदि के कारण बहुत ही विकल होकर इधर-उधर घूमना। (**कोई बात**) **दिल पर नक्श होना**—=मन में अच्छी तरह अंकित होना या बैठ जाना। **दिल में मैल लाना**= मन में दुर्भाव, द्वेष आदि को स्थान देना। मन ही मन बुरा मानना। **दिल पसीजना या पिघलना**=मन में उदारता, दया, स्नेह आदि कोमल वृत्तियों का आविर्भाव होना। **दिल फटना**=(क) आघात, कष्ट आदि के कारण मन में असह्य वेदना होना। (ख) पहले का सा-सद्‌भाव या स्नेह न रह जाना। (**किसी की ओर से**) **दिल फिरना या फिर जाना**=चित्त या मन हट जाना। विरक्ति होना। **दिल फीका होना**= जी खट्टा होना। पहले का-सा अनुराग या सद्‌भाव न रह जाना। **दिल भटकना**=चित्त का व्यग्र या चंचल होना। मन में इधर-उधर के विचार उठना। **दिल मसोसना या मसोसकर रह जाना**= क्रोध, दुःख आदि तीव्र मनोविकारों को मन में दबाकर रह जाना। (**किसी के**) **दिल पर घर या जगह करना**=किसी के अनुराग, आदर आदि का पात्र बनना। **दिल में बल पड़ना**=दिल में फरक आना। (देखें ऊपर) **दिल में फरक आना** =पहले का-सा अनुराग या सद्‌भाव न रह जाना। मन में दुर्भाव की सृष्टि होना। **दिल मैला करना**=मन में दुर्भाव, द्वेष आदि दूषित मनोविकार उत्पन्न करना। (**किसी का**) **दिल रखना**=किसी की इच्छा के अनुसार कोई काम करके उसे प्रसन्न या संतुष्ट करना। (**किसी का**) **दिल लेना**=(क) किसी के मन की बातों की थाह या पता लेना। (ख) किसी को पूरी तरह से अपनी ओर अनुरक्त करना। **दिल से**= अच्छी तरह, चित्त या मन लगाकर। (**कोई बात**) **दिल से उठना**= मन में किसी बात की प्रवृत्ति या स्फूर्ति होना। जैसे—जब तुम्हारा दिल ही नहीं उठता, तब तुम्हारा उनसे मिलने जाना व्यर्थ है। (**कोई बात**) **दिल से दूर करना**=उपेक्ष्य समझकर कुछ भी ध्यान न देना या बिल्कुल भूल जाना। (**किसी का**) **दिल हाथ में करना या लेना**= किसी को पूरी तरह से अपनी ओर अनुरक्त करके उसके विश्वास, स्नेह आदि के भाजन बनना। **दिल हिलना**=(क) चित्त या मन का दयार्द्र होना। (ख) मन में कुछ भय होना। जी दहलना। **दिल ही दिल में**=अन्दर ही अन्दर। मन ही मन। **दिलोजान से**= पूरी शक्ति और सामर्थ्य से; अथवा अच्छी तरह मन लगाकर।

३. ऐसा हृदय, जिसमें उत्साह, उदारता, उमंग, स्नेह आदि कोमल भाव यथेष्ट मात्रा में हों। जैसे—वह दिल और दिमाग का आदमी है।

पद—दिल का बादशाह=(क) बहुत बड़ा उदार या दानी। (ख) मनमौजी।

मुहा०—दिल टूटना=किसी दुःखद या विपरीत घटना के कारण मन का सारा उत्साह या उमंग का कम होना या दब जाना। (किसी का) दिल तोड़ना=ऐसा काम करना, जिससे किसी का सारा उत्साह या उमंग दब जाय या नष्ट हो जाय। दिल बढ़ना=अनुराग, उत्साह, उमंग आदि में ऐसी वृद्धि होना जो किसी काम या बात की ओर प्रवृत्त करे। दिल बुझना=मन में अनुराग, उत्साह, उमंग आदि बिलकुल न रह जाना। (किसी से) दिल मिलना=प्रकृति या स्वभाव की समानता के कारण परस्पर अनुराग और सद्भाव होना।

पद—दिल-चला, दिल-दार, दिलवर आदि।

विशेष—दिल के शेष मुहा० के लिए देखें 'चित्त', 'जी' और 'मन' के मुहा०।

दिलगीर—वि० [फा०] [भाव० दिलगीरी] १. उदास। २. खिन्न। दुःखी।

दिलगीरी—स्त्री० [फा० दिलगीर+ई(प्रत्य०)] १. उदासी। २. मानसिक खिन्नता या दुःख।

दिल-गुरदा—पुं० [फा० दिल+गुरदा] १. हिम्मत। सहारा। २. बहादुरी। वीरता।

दिल-चला—वि० [फा० दिल+हिं० चलना] १. हिम्मतवाला। दिलेर। साहसी। २. बहादुर। वीर। ३. मनमौजी। ४. रसिक।

दिलचस्प—वि० [फा०] [भाव० दिलचस्पी] (काम, चीज या बात) जिसमें दिल रमता या लगता हो। चित्ताकर्षक। मनोरंजक।

दिलचस्पी—स्त्री० [फा०] १. दिलचस्प होने की अवस्था या भाव। मनोरंजकता। २. किसी काम या बात के प्रति होनेवाला ऐसा अनुराग, जिसके फलस्वरूप कुछ सुख मिलता या स्वार्थ सिद्ध होता हो। रस। जैसे—इन बातों में हमारी कोई दिलचस्पी नहीं है।

दिल-चोर—वि० [फा० दिल+हिं० चोर] १. जो काम करने से जी चुराता हो। कामचोर। २. चित्त या मन हरण करनेवाला।

दिल-जमई—स्त्री० [फा० दिल+अ० जमअः+ई (प्रत्य०)] किसी काम या बात की ओर से मन में होनेवाली तसल्ली या सन्तोष। अच्छी तरह जी भरने की अवस्था या भाव। इतमीनान। जैसे—अच्छी तरह अपनी दिल-जमई करके तब मकान खरीदें।

दिल-जला—वि० [फा० दिल+हिं० जलना] जिसे बहुत अधिक मानसिक कष्ट पहुँचा हो। अत्यंत दुःखी।

दिल-दरिया—वि० =दरिया-दिल।

दिल-दरियाव—वि०=दरिया-दिल।

दिलदार—वि० [फा०] [भाव० दिलदारी] १. अच्छे दिल और स्नेहपूर्ण स्वभाववाला। २. जिसके प्रति अनुराग किया जाय और जिसे दिल या मन दिया जाय। ३. रसिक। ४. उदार। दाता। दानी।

दिलदारी—स्त्री० [फा० दिलदार+ई (प्रत्य०)] १. दिलदार होने की अवस्था या भाव। २. प्रेमिक होने की अवस्था या भाव। प्रेमिकता। ३. रसिकता।

दिलदौर*—वि०=दिलदार।

दिलपसंद—वि० [फा०] जो दिल को पसंद हो। चित्ताकर्षक।

दिल-फेंक—वि० [फा० दिल+हिं० फेंकना] (व्यक्ति) जो बिना समझे-बूझे जगह-जगह या कभी इस पर और कभी उस पर अनुरक्त या आसक्त होता फिरे। जो मिल जाय, उसी को अपना प्रेम-पात्र बनानेवाला।

दिलबर—वि० [फा०] प्यारा। प्रिय।
पुं० प्रेमपात्र।

दिलबस्त—वि० [फा०] [भाव० दिलबस्तगी] जिसका दिल या मन किसी ओर या किसी से बँधा अर्थात् लगा हो।

दिलबस्तगी—स्त्री० [फा०] ऐसी स्थिति, जिसमें दिल या मन किसी काम या बात में सुखद रूप से बँधा अर्थात् लगा हो या लगा रहे। जैसे—चार मित्रों के आ जाने से हमारी भी दिलबस्तगी रहती (या होती) है।

दिल-बहार—पुं० [फा० दिल+बहार] खशखाशी रंग का एक भेद।

दिलरुबा—वि० [फा०] मनोरंजक। रमणीय।
पुं० १. प्रेमी। माशूक। २. एक प्रकार का बाजा, जिसमें बजाने के लिए तार लगे होते हैं।

दिलवल—पुं० [देश०] एक प्रकार का पेड़।

दिलवाना—स०=दिलाना।

दिलवाला—वि० [फा० दिला+हिं वाला (प्रत्य०)] १. जिसमें दिल हो अर्थात् बहुत उदार और सहृदय। २. रसिक। ३. साहसी।

दिलवैया—वि० [हिं० दिलवाना+ऐया (प्रत्य०)] जो किसी को किसी दूसरे से कोई चीज दिलवाने में सहायक होता हो। दिलानेवाला।

दिलशाद—वि० [फा०] १. जिसका दिल सदा प्रसन्न रहे। प्रसन्नचित्त। २. चित्त या मन को प्रसन्न करने या रखनेवाला।

दिलहर*—वि० [फा० दिल+हिं० हरना] मन हरनेवाला। मनोहर।
†वि०=दिलेहेद (दिल्लेदार)।

दिलहा†—पुं०=दिल्ला।

दिलहेदार†—वि०=दिलहेदार।

दिलाना—स० [हिं० देना का प्रे०] १. किसी को किसी दूसरे से कुछ प्राप्त कराना। दिलवाना। २. किसी को कुछ प्राप्त करने में सहायता देना। संयो० क्रि०—देना।

दिलारा—वि० [फा०] १. दिल की प्रसन्नता बढ़ानेवाला। २. मनोहर। लुभावना। २. परमप्रिय। (शृंगारिक क्षेत्र में)
पुं० प्रेम-पात्र। माशूक।

दिलावर—वि० [फा०] [भाव० दिलावरी] १. बहादुर। वीर। २. हिम्मत या हौसलेवाला। साहसी।

दिलावरी—स्त्री० [फा०] १. बहादुरी। वीरता। २. साहस। हिम्मत।

दिलावेज—वि० [फा० दिलावेज़] सुन्दर। प्रियदर्शन।

दिलासा—पुं० [फा० दिल+हिं० आसा] क्षुब्ध या दुःखित हृदय को दिया जानेवाला आश्वासन। ढारस। तसल्ली। धैर्य।
क्रि० प्र०—दिलाना।—देना।

दिली—वि० [फा०] १. दिल या हृदय से संबंध रखनेवाला। हार्दिक। जिससे बहुत अधिक अभिन्नता और घनिष्ठता हो। घनिष्ठ। जैसे—दिली दोस्त।

दिलीप—पुं० [सं०] इक्ष्वाकु-वंशी एक प्रसिद्ध राजा जो अंशुमान् के पुत्र राजा सगर के परपोते तथा भगीरथ के पिता थे। (वाल्मीकि)

विशेष—कालिदास ने इन्हें रघु का पिता बतलाया है।
२. चंद्रवंशी राजा कुरु के वंशज एक राजा।

दिलीर—पुं०[सं०√दल् (नष्ट करना)+ईर, पृषो० सिद्धि] भुइँफोड़। ढिंगरी।

दिलेर—वि० [फा०] [भाव० दिलेरी] १. बहादुर। वीर। २. हिम्मत-वाला। साहसी। ३. उदारता-पूर्वक देनेवाला। दाता।

दिलेरी—स्त्री०[फा०] १. बहादुरी। वीरता। २. साहस। हिम्मत।
३. दानशीलता। उदारता।
क्रि० प्र०—दिखाना।

दिल्लगी—स्त्री०[फा० दिल+हिं० लगना] १. दिल लगने या लगाने की क्रिया या भाव। २. परिहास। मनोविनोद।
मुहा०—(किसी की) दिल्लगी उड़ाना=हास-परिहास की बातें कहकर तुच्छ सिद्ध करने का प्रयत्न करना। उपहास करना।
पद—दिल्लगी में=केवल दिल्लगी के विचार से। यों ही। हँसी में।
३. ऐसी घटना या बात, जिससे लोगों का मनोरंजन होने के सिवा उन्हें हँसी भी आवे। जैसे—कल सड़क पर एक दिल्लगी हो गई; एक आदमी के कन्धे पर कहीं से एक बन्दर आ कूदा। ४. ऐसा काम या बात, जो हास-परिहास की तरह सुगम हो या जो सब लोग कर सकें। जैसे—कविता करना क्या तुमने दिल्लगी समझ रखा है।

दिल्लगीबाज—पुं०[हिं० दिल्लगी+फा० बाज] [भाव० दिल्लगीबाजी] वह जो प्रायः दूसरों को हँसानेवाली बातें कहता हो। हँसी या दिल्लगी करनेवाला। ठठोल। हँसोड़।

दिल्लगीबाजी—स्त्री०[हिं० दिल्लगी+फा० बाजी] १. दिल्लगी करने की क्रिया या भाव। २. दे० 'दिल्लगी'।

दिल्ला—पुं०[देश०] दरवाजे के पल्ले के ढाँचे में कसा तथा जड़ा हुआ लकड़ी का चौकोर टुकड़ा, जो प्रायः उसे सुन्दर रूप देने के लिए होता है। दिलहा।

दिल्ली—स्त्री०[इन्द्रप्रस्थ के मयूरवंशी राजा दिलू के नाम पर ?] पश्चि-मोत्तर भारत की एक प्रसिद्ध नगरी जहाँ मध्ययुग में बहुत दिनों तक हिन्दू राजाओं तथा मुगल बादशाहों की राजधानी थी; और जिसे सन् १९१२ में अंगरेजों ने फिर से राजधानी बनाया था। इस समय स्वतन्त्र भारत की राजधानी भी यहीं है।

दिल्लीवाल—वि०[हिं० दिल्ली+वाल (प्रत्य०)] १. दिल्ली-संबंधी। दिल्ली का। २. दिल्ली का रहनेवाला। ३. दिल्ली में बनने या होनेवाला।
पुं० एक प्रकार का देशी जूता, जो पहले दिल्ली में बनता था।

दिल्लेदार—वि० [देश० दिलहा+फा० दार] (दरवाजे का पल्ला) जिसमें दिल्ले लगे हों।

दिव्—पुं०[सं०√दिव् (चमकना)+डिवि (बा०)]=दिव।

दिवंगत—वि० [सं० द्वि० त०] जिसकी आत्मा इस लोक को छोड़कर स्वर्ग चली गई हो, अर्थात् परलोकवासी। स्वर्गीय।

दिवंगम—वि०[सं० दिव√गम+खच्, मुम्] स्वर्गगामी।

दिव—पुं० [सं०√दिव्+क] १. स्वर्ग। २. आकाश। ३. दिन। ४. जंगल। वन।

दिवगृह—पुं०=देवगृह।

दिव-दाह—पुं०[ष०त०] १. आकाश का जलता हुआ-सा जान पड़ना। दिग्दाह। २. बहुत बड़ा आन्दोलन, उत्पात या क्रांति।

दिवराज—पुं०[ष०त० (टच् समा०)] स्वर्ग के राजा इंद्र।

दिवरानी—स्त्री०=देवरानी।

दिवला—पुं०[स्त्री० अल्पा० दिवली]=दीया।

दिवस—पुं०[सं०√दिव्+असच्] दिन। वासर। रोज।

दिवस-अंध—वि०, पुं० [सं० दिवसान्ध, स० त०]=दिवांध।

दिवस-कर—पुं०[ष०त०] १. सूर्य। दिनकर। २. आक। मदार।

दिवस-नाथ—पुं०[ष०त०] सूर्य।

दिवस-मणि—पुं०[ष०त०] सूर्य।

दिवस-मुख—पुं०[ष०त०] प्रातःकाल। सवेरा।

दिवस-मुद्रा—स्त्री०[मध्य०स०] एक दिन की मजदूरी या वेतन।

दिवस-स्वप्न—पुं०[स०त०] दिवास्वप्न। (दे०)

दिवसांतर—वि०[दिवस-अंतर ब०स०] जो सिर्फ एक दिन का हो।

दिवसेश—पुं०[दिवस-ईश, ष०त०] सूर्य।

दिवस्पति—पुं०[सं० दिव>दिवस-पति ष०त० (अलुक् समास)] १. सूर्य। २. तेरहवें मन्वन्तर के इन्द्र का नाम।

दिवस्पृश—पुं०[सं० दिव√स्पृश् (स्पर्श करना)+क्विन्] (वामनावतार में) पैर से स्वर्ग को छूनेवाले, विष्णु।

दिवांध—वि०[सं० दिवा-अंध, स०त०] जिसे दिन में दिखाई न देता हो। पुं० १. एक प्रकार का रोग, जिसमें मनुष्य को दिन के समय दिखाई नहीं देता। दिनौंधी। २. उल्लू जिसे दिन में दिखाई नहीं देता।

दिवांधकी—स्त्री०[सं० दिवान्ध+क (स्वार्थे)–ङीष्] छछूंदर।

दिवा—पुं०[सं०√दिव् (चमकना)+का] १. दिन। दिवस। २. एक वर्णवृत्त, जिसे मालिनी और मदिरा भी कहते हैं।
†पुं०=दीया।

दिवाकर—पुं०[सं० दिवा√कृ (करना)+टच्] १. सूर्य। २. आक। मदार। ३. कौआ। ४. एक प्रकार का पौधा और उसका फूल।

दिवा-कीर्ति—पुं० [ब०स०] १. नापित। नाई। हज्जाम। २. उल्लू। ३. चांडाल।

दिवा-कीर्त्य—पुं०[स०त०] गवानयन यज्ञ में विषुव संक्रान्ति के दिन गाया जानेवाला एक सामगान।

दिवाचर—वि०[सं० दिवा√चर् (गति)+ट] दिन में विचरण करने-वाला।
पुं० १. चिड़िया। पक्षी। २. चांडाल।

दिवाटन—पुं०[सं० दिवा√अट् (घूमना)+ल्यु—अन] काक। कौआ।

दिवातन—पुं० [सं० दिवा+ट्यु—अन, तुट् आगम] एक दिन काम करने पर मिलनेवाला पारिश्रमिक या मजदूरी।
वि० पूरे एक दिन का। दिन भर का।

दिवान†—पुं०=दीवान।

दिवाना†—स०=दिलाना।
पुं०=दिवाना (पागल)।

दिवा-नाथ—पुं०[ष०त०] दिन के स्वामी, सूर्य।

दिवानी—स्त्री०[देश०] एक प्रकार का पेड़, जो बरमा में अधिकता से

होता है। इसकी लकड़ी से मेज, कुर्सियाँ आदि बनती हैं।
स्त्री०=दीवानी।
दिवा-पुष्ट—पुं०[स०त०] सूर्य।
दिवाभिसारिका—स्त्री०[सं० दिवा-अभिसारिका, स०त०] साहित्य में वह नायिका जो दिन के समय श्रृंगार करके प्रिय से मिलने संकेत-स्थान पर जाय।
दिवा-भीत—वि०[स०त०] दिन (अर्थात् दिन के प्रकाश) से डरनेवाला।
पुं० १. चोर। २. उल्लू।
दिवा-मणि—पुं०[ष०त०] १. सूर्य। २. आक। मदार।
दिवा-मध्य—पुं० [ष०त०] मध्याह्न। दोपहर।
दिवार—स्त्री०=दीवार।
दिवा-रात्र—क्रि० वि०[द्व०स०,अच्] दिन-रात। हर समय।
दिवारी†—स्त्री०[हिं० दीवाली]१. कुआर-कार्तिक में विशेषतः दीवाली के अवसर पर गायेजानेवाले एक तरह के लोक-गीत। (बुंदेल)२. दीपमालिका। दीवाली।
दिवाल—वि०[हिं० देना+वाल (प्रत्य०)] देनेवाला। जो देता हो। जैसे—यह एक पैसे के दिवाल नहीं हैं। (बाजारू)
†स्त्री०=दीवार।
दिवालय†—पुं०=देवालय (मंदिर)।
दिवाला—पुं०[हिं० दिया +बालना=जलाना]१. महाजन या व्यापारी की वह स्थिति जिसमें वह विधिवत् यह घोषित करता है कि मेरे पास अब यथेष्ट धन नहीं बचा है और इसलिए मैं लोगों का ऋण चुकाने में असमर्थ हूँ।
क्रि० प्र०—बोलना।
विशेष—ऐसी स्थिति में लेनदार न्याय की दृष्टि से या तो उससे कुछ भी वसूल नहीं कर सकते या उसके पास जो थोड़ा-बहुत धन बचा होता है, वही सब लेनदार अपने-अपने हिस्से के मुताबिक बाँट लेते हैं।
मुहा०—**दिवाला निकालना या मारना**=दिवालिया बन जाना। ऋण चुकाने में असमर्थ हो जाना।
२. किसी पदार्थ का कुछ भी बचा न रह जाना। पूर्ण अभाव। जैसे—उनकी अक्ल का तो दिवाला निकल गया है।
दिवालिया—वि०[हिं०दिवाला+इया (प्रत्य०)]जिसने दिवाला निकाला हो। जिसके पास ऋण चुकाने के लिए कुछ भी न बच रहा हो।
दिवाली—स्त्री० [देश०] वह तस्मा या पट्टी, जिसे खींचकर खराद, सान आदि चलाई जाती है।
स्त्री०=दीवाली।
दिवा-स्वप्न—पुं०[स०त०] अकर्मण्य, निराश या विफल व्यक्ति का बैठे-बैठे तरह-तरह के हवाई किले बनाना या मंसूबे बाँधना और यह सोचना कि इस बार हम यह करेंगे, हम वह करेंगे अथवा आगे चलकर हमारा यों उत्थान होगा और हम यों सुखी होंगे आदि आदि। (डे ड्रीम)
दिवि—पुं०[सं०√दिव् (चमकना)+कि (बा०)] १. नीलकंठ पक्षी। २. दे० 'दिव'।
दिविज—पुं०[सं० दिवि√जन् (उत्पन्न होना)+ड, (अलुक् समास] देवता।
दिविता—स्त्री०[सं० दीप+इतच् (बा०), पृषो० सिद्धि] दीप्ति। चमक।
दिविदिवि—पुं०[देश०] एक प्रकार का छोटा पेड़, जो दक्षिण अमेरिका से भारतवर्ष में आया है। इसकी पत्तियाँ चमड़ा सिझाने और रंगने के काम में आती हैं।
दिविरथ—पुं०[सं०] महाभारत के अनुसार पुरुवंशी राजा भूमन्यु के पुत्र का नाम।
दिविषत्—पुं०[सं० दिवि√सद् (बैठना)+क्विप्, षत्व,(अलुक् समास)] देवता।
वि० स्वर्गवासी।
दिविष्ट—पुं०[सं० इष्ट, √यज् (देवपूजन)+क्त, दिव्-इष्ट, च०त०] यज्ञ।
दिविष्ठ—पुं०[सं० दिवि√स्था (स्थित होना)+क, षत्व] १. स्वर्ग में रहनेवाला, देवता। २. पुराणानुसार ईशान-कोण का एक देश।
दिविस्थ—पुं० [सं० दिविष्ठ] देवता।
दिवेश—पुं० [सं० दिव-ईश, ष०त०] दिक्पाल।
दिवैया—वि०[हिं० देना+वैया (प्रत्य०)] जो देता हो। देनेवाला। दाता।
वि०[हिं० दिवाना=दिलाना] दिलानेवाला। दिलवैया।
दिवोका (कस्)—पुं० [सं० दिव-ओकस, ब०स०] दिवौका (दे०)।
दिवोदास—पुं० [सं० दिवस् दास, ब०स०] १. चंद्र वंशी राजा भीमरथ के एक पुत्र, जो इंद्र के उपासक और काशी के राजा थे और धन्वन्तरि के अवतार माने जाते हैं। महादेव ने इन्हीं से काशी ली थी। कहते हैं कि देवताओं ने इन्हें आकाश से पुष्प, रत्न आदि दिये थे, इसी से इनका यह नाम पड़ा। २. हरिवंश के अनुसार ब्रह्मर्षि इंद्रसेन के पौत्र का नाम, जो मेनका के गर्भ से अपनी बहन अहल्या के साथ ही उत्पन्न हुए थे।
दिवोद्भवा—स्त्री० [सं० दिव-उद्√भू (पैदा होना)+अच्+टाप्] इलायची।
दिवोल्का—स्त्री० [सं०दिव-उल्का, मध्य०स०] दिन के समय आकाश से गिरनेवाला चमकीला पिंड या उल्का।
दिवौका (कस्)—पुं०[सं० दिव-ओकस, ब०स०] १. वह जो स्वर्ग में रहता हो। २. देवता। ३. चातक पक्षी।
दिव्य—वि०[सं० दिव्+यत्] [भाव० दिव्यता] १. स्वर्ग से संबंध रखनेवाला। स्वर्गीय। २. आकाश से संबंध रखनेवाला। आकाशीय। ३. अलौकिक। लोकोत्तर। ४. प्रकाशमान। चमकीला। ५. मनोहर। सुन्दर। ६. तत्त्वज्ञ।
पुं० [सं०] १. यव। जौ। २. गुग्गुल। ३. आँवला। ४. सतावर। ५. ब्राह्मी। ६. सफेद दूब। ७. लौंग। ८ हर्रे। ९. हरिचंदन। १० महामेदा नाम की औषधि। ११. कपूर कचरी। १२. चमेली। १३. जीरा। १४. सूअर। १५. धूप के समय बरसते हुए पानी में किया जानेवाला स्नान। १६. आकाश में होनेवाला एक प्रकार का दैवी उत्पात। १७. कसम। शपथ। सौगंध। १८. प्राचीन काल में, एक प्रकार की परीक्षा, जिससे किसी का अपराधी या निरपराध होना सिद्ध होता था।
क्रि० प्र०—देना।
१९. तांत्रिक उपासना के तीन भेदों में से एक, जिसमें पंच मकार,

श्मशान और चिता का साधन किया जाता है। २०. तीन प्रकार के केतुओं में से एक जिनकी स्थिति भूवायु से ऊपर मानी गई है। २१. साहित्य में, तीन प्रकार के नायकों में से एक। वह नायक जो स्वर्गीय या अलौकिक हो। जैसे—इंद्र, राम, कृष्ण आदि।

दिव्यक—पुं०[सं० दिव्य+कन्] १. एक प्रकार का साँप। २. एक प्रकार का जंतु।

दिव्य-कर—पुं०[सं० ब०स०?] पश्चिम दिशा का एक प्राचीन देश। (महाभारत)

दिव्य-कवच—पुं०[कर्म०स०] १. अलौकिक तनत्राण। देवताओं का दिया हुआ कवच। २. ऐसा स्तोत्र जिसका पाठ करने से सब अंगों की रक्षा होती है।

दिव्य-क्रिया—स्त्री०[मध्य०स०] दे० 'दिव्य' १८।

दिव्य-गंध—पुं०[ब०स०] १. लौंग। २. गंधक।

दिव्य-गंधा—स्त्री०[सं०] १. बड़ी इलायची। २. बड़ी चेंच का साग।

दिव्य-गायन—पुं०[ब०स०] स्वर्ग में गानेवाले, गंधर्व जाति के लोग।

दिव्य-चक्षु (स्)—पुं०[ब०स०] १. वह जिसे दिव्यदृष्टि प्राप्त हो। २. दे० 'तेजोन्वेष'। ३. एक प्रकार का गंध द्रव्य। ४. बंदर। ५. अंधा (परिहास और व्यंग्य)

दिव्य-तरंगिणी—स्त्री०[सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

दिव्यता—स्त्री० [सं० दिव्य+तल्+टाप्] १. दिव्य होने की अवस्था या भाव। २. देवता होने की अवस्था या भाव। देवत्व। ३. उत्तमता। श्रेष्ठता। ४. मनोहरता। सुन्दरता।

दिव्य-तेज (स्)—स्त्री०[ब०स०] ब्राह्मी बूटी।

दिव्य-देवी—स्त्री०[कर्म०स०] पुराणानुसार एक देवी का नाम।

दिव्य-दोहद—पुं०[कर्म०स०] मनोकामना की पूर्ति के हेतु किसी इष्टदेव को चढ़ाई जानेवाली भेंट या वस्तु।

दिव्य-दृष्टि—स्त्री०[कर्म०स०] १. ऐसी अलौकिक दृष्टि जिससे मनुष्य भूत, भविष्य और वर्तमान की अथवा परोक्ष की सब बातें प्रत्यक्ष की तरह देख सकता हो। जैसे—उन्होंने दिव्य-दृष्टि से देख लिया कि स्वर्ग में देवताओं की सभा हो रही है, अथवा कलियुग में कैसे-कैसे अनर्थ और पाप होंगे। २. ज्ञानदृष्टि।

दिव्य-धर्मी (र्मिन्)—वि० [सं० दिव्य-धर्म, कर्म०स० + इनि] १. जिसका आचरण, कर्म और व्यवहार बहुत ही निष्कलंक और पवित्र हो। परम शुभ धर्म का पालन करनेवाला। २. सदाचारी और सुशील।

दिव्य-नगर—पुं०[कर्म०स०] ऐरावती नगरी।

दिव्य-नदी—स्त्री०[कर्म०स०] १. आकाश गंगा। २. पुराणानुसार एक नदी का नाम।

दिव्य-नारी—स्त्री०[कर्म०स०] अप्सरा।

दिव्य-पंचामृत—पुं० [सं०दिव्यपंचामृत, कर्म०स०] घी, दूध, दही, मक्खन और चीनी इन पाँच चीजों को मिलाकर बनाया हुआ पंचामृत।

दिव्य-पुरुष—पुं०[कर्म०स०] अलौकिक या पारलौकिक व्यक्ति। जैसे—देवी, देवता, गंधर्व, यक्ष आदि।

दिव्य-पुष्प—पुं०[ब०स०] करबीर। कनेर।

दिव्य-पुष्पा—स्त्री०[सं०] बड़ा गूमा नामक वृक्ष, जिसमें लाल फूल लगते हैं। बड़ी द्रोणपुष्पी।

दिव्यपुष्पिका—स्त्री०[सं० दिव्यपुष्प+कन्+टाप्, इत्व] लाल रंग के फूलोंवाला मदार का पौधा।

दिव्य-यमुना—स्त्री०[कर्म०स०] कामरूप देश की एक नदी, जो बहुत पवित्र मानी गई है।

दिव्य-रत्न—पुं०[कर्म०स०] चिंतामणि नामक कल्पित रत्न, जो सब कामनाओं की पूर्ति करने में समर्थ माना जाता है।

दिव्य-रथ—पुं०[कर्म०स०] देवताओं का विमान।

दिव्य-रस—पुं०[कर्म०स०] पारद। पारा।

दिव्य-लता—स्त्री०[कर्म०स०] मूर्वा लता। मूरहरी। चुरनहार।

दिव्य-वस्त्र—पुं०[कर्म० स०] १. सुन्दर वस्त्र। बढ़िया कपड़ा। २. सूर्य का प्रकाश।

दिव्य-वाक्य—पुं०[कर्म०स०] देववाणी। आकाशवाणी।

दिव्य-श्रोत्र—वि० [कर्म०स०] जो अपने कानों से हर जगह की सब बातें सुन लेता हो।

पुं० ऐसा कान जिससे दूर-दूर तक की सब बातें सुनाई दें।

दिव्य-सरिता—स्त्री०[सं० दिव्य-सरित्] आकाश गंगा।

दिव्य-सानु—पुं०[ब०स०] एक विश्वदेव।

दिव्य-सार—पुं०[ब०स०] साखू का पेड़। साल वृक्ष।

दिव्य-सूरि—पुं०[कर्म० स०] रामानुज संप्रदाय के बारह आचार्य जिनके नाम ये हैं—कासार, भूत, महत्, भक्तसार, शठारि कुलशेखर, विष्णुचित्त, भक्ताघिरेणु, मुनिवाह, चतुष्कविन्द्र, रामानुज और गोदादेवा या मधुकर कवि।

दिव्य-स्त्री—स्त्री०[कर्म०स०] दिव्य नारी। अप्सरा।

दिव्यांगना—स्त्री०[दिव्य-अंगना, कर्म०स०] १. अप्सरा। २. देवता की स्त्री। देव-पत्नी।

दिव्यांबरी—स्त्री०[सं०] संगीत में कर्नाट की पद्धति की एक रागिनी।

दिव्यांशु—पुं०[दिव्य-अंशु, ब०स०] सूर्य।

दिव्या—स्त्री०[सं० दिव्य+टाप्] १. साहित्य में, तीन प्रकार की नायिकाओं में से एक। स्वर्गीय या अलौकिक नायिका। जैसे—पार्वती, सीता, राधिका आदि। २. महामेदा। ३. शतावर। ४. आँवला। ५. ब्राह्मी। ६. सफेद दूब। ७. हर्रे। ८. कपूरकचरी। ९. बड़ा जीरा। १०. बाँझककोड़ा।

दिव्यादिव्य—पुं०[दिव्य-अदिव्य, कर्म०स०] साहित्य में, तीन प्रकार के नायकों में से एक। वह मनुष्य या इहलौकिक नायक जिसमें देवताओं के भी गुण हों। जैसे—नल, पुरुरवा, अभिमन्यु आदि।

दिव्यादिव्या—स्त्री० [दिव्या-अदिव्या, कर्म०स०] साहित्य में, तीन प्रकार की नायिकाओं में से एक। वह इहलौकिक नायिका जिसमें स्वर्गीय स्त्रियों के भी गुण हों। जैसे—दमयंती, उर्वशी, उत्तरा आदि।

दिव्याश्रम—पुं०[दिव्य-आश्रम, कर्म०स०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ, जहाँ विष्णु ने तपस्या की थी। कुरुक्षेत्र का दर्शन करके बलदेव जी यहीं से होते हुए हिमालय गए थे।

दिव्यासन—पुं० [दिव्य-आसन, कर्म०स०] तंत्र के अनुसार एक प्रकार का आसन।

दिव्यास्त्र—पुं०[दिव्य-अस्त्र, कर्म०स०] १. देवताओं का दिया हुआ अस्त्र या हथियार। २. मंत्रों के प्रभाव से चलनेवाला अस्त्र या हथियार।

दिव्येलक—पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का साँप ।

दिव्योदक—पुं० [दिव्य-उदक, कर्म०स०] वर्षा का जल जो सबसे अधिक पवित्र और शुद्ध होता है।

दिव्योपपादुक—पुं० [दिव्य-उपपादुक (उप√पद् (गति) + उकञ्) कर्म० स०] देवता, जिनका जन्म बिना माता-पिता के माना जाता है।

दिव्यौषधि—स्त्री० [दिव्या-ओषधि कर्म०स०] मैनसिल।

दिश्—स्त्री० [सं०√दिश्+क्विन्] दिशा। दिक्।
पुं० [सं०√दिश् (बताना, देना) +क] एक देवता जो कान के अधिष्ठाता देवता माने जाते हैं।

दिशा—स्त्री० [सं० दिश+टाप्] १. क्षितिज वृत्त के चार मुख्य कल्पित विभागों में से प्रत्येक विभाग।
विशेष—ये चार कल्पित विभाग उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम कहलाते हैं। इनके निरूपण का मूल आधार वह है, जिधर से नित्य सूर्य निकलता हे। इन चारों दिशाओं के बीच के चार कोणों और ऊपर तथा नीचे की कुल छः दिशाएँ और भी मानी जाती हैं।
२. किसी नियत स्थान से उक्त चारों विभागों में से किसी ओर के विभाग का सारा विस्तार। जैसे—काशी के पूर्व की अथवा हिमालय के उत्तर की दिशा। ३. दिशाओं की उक्त संख्या के आधार पर १० की संख्या। ४. रुद्र की एक पत्नी का नाम। ५. पाखाने या शौच जाने की क्रिया जो पहले घर से निकलकर और किसी ओर अथवा दिशा में जाकर की जाती थी। (दे० 'दिसा')

दिशा-गज—पुं० [मध्य०स०] दिग्गज।

दिशा-चक्षु (स्)—पुं० [ब०स०] गरुड़ के एक पुत्र का नाम। (पुराण)

दिशाजय—पुं० [ष०त०] दिग्विजय।

दिशापाल—पुं० [सं० दिशा√ पाल् (पालना) +णिच्√अण् उप०स०] दिक्पाल।

दिशा-भ्रम—पुं० [ष०त०] दिशाओं का ठीक-ठीक ज्ञान न होना। दिक्-भ्रम।

दिशावकाश—पुं० [दिशा-अवकाश ष०त०] दो दिशाओं के बीच का अवकाश या विस्तार।

दिशावकाशक व्रत—पुं० [सं० दिशावकाश+क (स्वार्थ), दिशावकाशक-व्रत मध्य०स० ?] एक प्रकार का व्रत जिसमें यह निश्चित किया जाता है कि आज अमुक दिशा में इतनी दूर से अधिक नहीं जायँगे। (जैन)

दिशा-शूल—पुं० [स०त०] फलित ज्योतिष के अनुसार वह घड़ी, पहर या दिन जिसमें किसी विशिष्ट दिशा की ओर जाना बहुत अनिष्टकर माना जाता हो और इसी लिए उस दिशा में जाना वर्जित हो।

दिशासूल—पुं० =दिशा-शूल।

दिशि—स्त्री० =दिशा।

दिशि-नियम—पुं० दिशावकाशकव्रत (दे०)।

दिशेभ—पुं० [दिशा-इभ ष०त०] दिग्गज।

दिश्य—वि० [सं० दिश्+यत्] दिशा-सम्बन्धी। दिक् या दिशा का।
वि० दे० 'निर्दिष्ट'।

दिष्ट—वि० [सं०√दिश् बताना, दान) +क्त] १. निश्चित। निर्दिष्ट।
२. दिखलाया या बतलाया हुआ।
पुं० १. भाग्य। किस्मत। २. उपदेश। ३. काल। समय। ४. वैवस्वत मनु के एक पुत्र। ५. दारुहल्दी।

दिष्ट-बंधक†—पुं० =दृष्ट-बंधक।

दिष्टांत—पुं० [सं० दिष्ट-अंत ब०स०] मृत्यु। मौत।
†पुं० =दृष्टांत।

दिष्टि—स्त्री० [सं०√दिश्+क्तिन] १. भाग्य। २. उत्सव। ३. प्रसन्नता। ४. दे० 'दिष्ट'।
†स्त्री० =दृष्टि।

दिसंतर—पुं० [सं० देशांतर] १. देशांतर। विदेश। परदेश। २. देश-देशांतरों का पर्यटन। भ्रमण।
पुं० =दिशांतर।

दिसंबर—पुं० [अं० डिसेंबर] अँगरेजी वर्ष का बारहवाँ महीना।

दिस—स्त्री० =दिशा।

दिसना—अ० =दिखना (दिखाई देना)।

दिसा—स्त्री० [सं० दिशा=ओर] १. मल त्याग करने की क्रिया। पैखाने जाना। झाड़ा फिरना।
क्रि० प्र०—जाना।—फिरना।
२. दे० 'दिशा'।
†स्त्री० =दशा।

दिसाउर†—पुं० दिसावर।

दिसादाह—पुं० =दिक्दाह।

दिसावर—पुं० [सं० देशांतर] [वि० दिसावरी] १. दूसरा देश। परदेश। विदेश। २. व्यापारियों की बोलचाल में वह स्थान या देश जहाँ कोई माल भेजा जाता हो या जहाँ से आता हो।
पद—दिसावरी माल =ऐसा माल जो दिवासर से आया हो या दिसावर जाने को हो।

दिसावरी—वि० [हिं० दिसावर + ई (प्रत्य०)] १. दिसावर-संबंधी। दिसावर का। २. दिसावर से आया हुआ।

दिसाशूल—पुं० =दिशा-शूल।

दिसासूल†—पुं० =दिशा-शूल।

दिसि†—स्त्री० =दिशा।

दिसिटि*—स्त्री० = दृष्टि।

दिसिदुरद*—पुं० =दिग्गज।

दिसिनायक—पुं० =दिक्पाल।

दिसिप*—पुं० =दिक्पाल।

दिसिराज*—पुं० =दिक्पाल।

दिसैया—वि० [हिं० दिसना=दिखना+ऐया प्रत्य०)] १. देखनेवाला।
२. दिखानेवाला।

दिस्टि*—स्त्री० =दृष्टि।

दिस्टि-बंध*—पुं० [सं० दृष्टिबंध] इंद्रजाल। जादू। उदा०—राघव दिष्टिबंध कल्हि खेला। सभा माँझ चेटक अस मेला।—जायसी।

दिस्टिवंत—वि०]सं० दृष्टि-वंत] १. जिसे दिखाई देता हो। २. ज्ञानी। उदा०—दिस्टिवंत कहँ निअरे, अंध मूरुख कहँ दूरि।—जायसी।

दिस्ता†—पुं० =दस्ता।

दिहंदा—वि० [फा० दिहन्दः] देनेवाला।

दिहंरा—पुं० [सं० देव+हिं० घर=देवहर] १. देवालय। देवमंदिर। २. ग्राम-देवता, स्थान देवता आदि का स्मारक चिह्न।

दिहला—स्त्री०=दहलीज।

दिहाड़ा—पुं०[हिं० दिन+हार (प्रत्य०)] दिन। दिवस।

दिहाड़ी—स्त्री०[हिं० दिहाड़ा+ई (प्रत्य०)] १. दिन। दिवस। २. उतना पूरा समय जिसमें कोई मजदूर दैनिक पारिश्रमिक लेकर काम करता हो। ३. मजदूरों आदि को दिया जानेवाला दैनिक पारिश्रमिक या मजदूरी।

दिहात—पुं०=देहात।

दिहाती—वि०, पुं०=देहाती।

दिहातीपन—पुं०=देहातीपन।

दिहुढ़ी†—स्त्री०=ड्योढ़ी।

दिहुला†—पुं०[देश०] एक प्रकार का धान जो बिहार में होता है।

दिहेज†—पुं०=दहेज।

दी†—स्त्री०=दीमक।

दीअट—स्त्री०=दीयट।

दीआ—पुं०=दीया। (दीपक)

दीका—पुं०[देश०] एक प्रकार का तेल, जो काटू या हिजली के पेड़ की छाल से निकलता है और जाल में मांजा देने के काम आता है।

दीक्षक—पुं०[सं०√ दीक्ष् (शिष्य बनाना)+ण्वुल्—अक] १. दीक्षा देनेवाला। मंत्र का उपदेश करनेवाला। २. शिक्षक। गुरु।

दीक्षण—पुं०[सं०√दीक्ष+ल्यु—अन] [वि० दीक्षित] दीक्षा देने की क्रिया या भाव।

दीक्षणीय—वि०[सं०√दीक्ष+अनीयर्]१. दीक्षा दिये जाने या पाने के योग्य। २. (विशिष्ट तत्त्व या सिद्धान्त) जो उसी को बतलाया जा सके जो दीक्षा ग्रहण करके किसी समाज या संप्रदाय में सम्मिलित हो। (एसोटेरिक)

दीक्षांत—पुं०[सं० दीक्षा-अंत ष०त०] वह अवभृथ यज्ञ जो किसी यज्ञ के अन्त में उसकी त्रुटि, दोष आदि की शांति के लिए किया जाता है। २. किसी सत्र की पढ़ाई का सफलतापूर्ण अंत।
वि० दीक्षा के अंत में होनेवाला। जैसे—दीक्षांत भाषण।

दीक्षांत-भाषण—पुं०[स०त०] आज-कल विश्वविद्यालयों में किसी विद्वान् का वह भाषण जो उच्च परीक्षाओं में उत्तीर्ण होनेवाले विद्यार्थियों को उपाधि, प्रमाण-पत्र आदि देने के उपरान्त होता है। (कान्वोकेशन एड्रेस)

दीक्षा—स्त्री०[सं०√दीक्ष् (यज्ञ करना)+अ-टाप्] १. सोमयागादि का संकल्प-पूर्वक अनुष्ठान करना। २. यज्ञ करना। यजन। ३. किसी पवित्र मंत्र की वह शिक्षा जो आचार्य या गुरु से विधिपूर्वक शिष्य बनने अथवा किसी संप्रदाय में सम्मिलित होने के समय ली जाती है।
क्रि० प्र०—देना।—लेना।
४. उपनयन संस्कार, जिसमें विधिपूर्वक गुरु से मंत्रोपदेश लिया जाता है। ५. गुरुमंत्र। ६. पूजन।

दीक्षा-गुरु—पुं० [स० त०] वह गुरु जो धार्मिक दृष्टि से कान में मंत्र फूँकता हो। मंत्रोपदेश करनेवाला गुरु।

दीक्षा-पति—पुं० [ष० त०] दीक्षा या यज्ञ का रक्षक, सोम।

दीक्षित—वि० [सं०√दीक्ष् (यज्ञ करना) +क्त वा दीक्षा+इतच्] जिसने सोमयागादि का संकल्पपूर्वक अनुष्ठान करने के लिए दीक्षा ली हो।
पुं० कई प्रदेशों में ब्राह्मणों का एक भेद या वर्ग।

दीखना—अ० [हिं० देखना] दिखाई देना। देखने में आना। दृष्टिगोचर होना।
क्रि० प्र०—पड़ना।

दीगर—वि० [फ़ा०] अन्य। दूसरा।

दीघी—स्त्री० [सं० दीर्घिका] १. बड़ा तालाब। जैसे—कलकत्ते की लाल दीघी। २. बावली।

दीच्छा*—स्त्री०=दीक्षा।

दीच्छित* वि०=दीक्षित।

दीठ—स्त्री० [सं० दृष्टि, प्रा० दिट्ठि] १. देखने की वृत्ति या शक्ति। दृष्टि। निगाह।
क्रि० प्र०—डालना।—पड़ना।
पद—दीठबंद, दीठबंदी। (हिं०)
मुहा०—दीठ करना या फेंकना=देखना। दीठ फेरना =दृष्टि या निगाह हटाकर दूसरी तरफ कर लेना। दीठ बचाना=(क) इस प्रकार किसी के सामने से हट जाना कि उसकी निगाह न पड़ने पावे। (ख) इस प्रकार कोई चीज छिपा या दबा लेना कि उसे कोई देखने न पावे। (किसी को) दीठ बाँधना=इंद्रजाल, जादू-मंतर, टोने-टोटके आदि से ऐसा उपाय करना कि कोई विशिष्ट चीज किसी के देखने में न आवे। दीठ में आना या पड़ना=दिखाई पड़ना। (किसी ओर या किसी की ओर) दीठ लगाना=(क)दृष्टि या निगाह जमाकर देखना। अच्छी तरह या ध्यान से देखना (ख) किसी प्रकार की आशा से प्रवृत्त या युक्त होकर देखना। कुछ पाने या मिलने के विचार से देखना।
२. देखने की इंद्रिया। आँख। नेत्र।
मुहा०—(किसी की ओर) दीठ उठाना=देखने के लिए किसी की ओर आँखें या निगाह करना। दीठ गड़ाना या जमाना=कोई चीज देखने के लिए उस पर टक लगाना। स्थिर दृष्टि से देखना। दीठ चुराना=जहाँ तक हो सके किसी का सामना करने से बचना। (किसी से) दीठ जुड़ना या मिलना=(क)देखा-देखी या सामना होना।(ख) शृंगारिक क्षेत्र में, प्रेम या स्नेह होना। दीठ जोड़ना या मिलाना=आँखें मिलाना या सामना करना। दीठ भर देखना=अच्छी तरह या जी भर कर देखना। दीठ मारना=आँखें या पलकें हिलाकर इशारा या संकेत करना। (किसी से) दीठ लगना=शृंगारिक क्षेत्र में प्रेम या स्नेह का संबंध होना।
३. आँख या दृष्टि की वह वृत्ति या स्थिति, जिसमें कोई विशिष्ट उद्देश्य, क्रिया या फल अभीष्ट या निहित हो। ४. अनुग्रह, कृपा, स्नेह आदि से युक्त दृष्टि या मनोवृत्ति।
मुहा०—(किसी की)दीठ पर चढ़ना=किसी का ऐसी स्थिति में होना कि लोगों का ध्यान प्रायः या बराबर उसकी ओर बना या लगा रहे। निगाह पर चढ़ना (देखें 'निगाह' का मुहा०)। (किसी की ओर से) दीठ फेरना=पहले का-सा ध्यान, भाव या संबंध न रखना। आँखें फेरना। (किसी के आगे या रास्ते में) दीठ बिछाना=(क) अत्यंत आदरपूर्वक स्वागत करना। (ख) बहुत उत्सुकता से प्रतीक्षा करना। (किसी को)दीठ में समाना=बहुत अच्छा लगने के कारण बराबर किसी

के ध्यान पर चढ़ा रहना। नजरों में समाना। **(किसी की) दीठ से उतरना या गिरना**=ऐसी स्थिति में आना कि पहले का-सा अनुराग या आदर न रह जाय।

५. अच्छी या सुंदर चीज पर किसी की पड़नेवाली ऐसी दृष्टि, जिसका परिणाम या फल बहुत ही अनिष्टकारक या घातक सिद्ध हो। बुरा प्रभाव उत्पन्न करनेवाली दृष्टि। नजर। जैसे—इस बच्चे को तो उस बुढ़िया की दीठ खा गई। (स्त्रियाँ)

मुहा०—दीठ उतारना या झाड़ना=टोने-टोटके, मंत्र-यंत्र आदि के बल से किसी की उक्त प्रकार की दृष्टि या नजर का बुरा प्रभाव दूर या नष्ट करना। **दीठ जलाना**=टोना-टोटका करके कपड़े का टुकड़ा, राई नोन आदि इस उद्देश्य से जलाना कि बुरी दीठ या नजर का कुपरिणाम दूर या नष्ट हो जाय।

६. देख-भाल। देख-रेख। निगरानी। ७. गुण-दोष आदि समझने की योग्यता या शक्ति। परख। पहचान।

क्रि० प्र०—रखना।

विशेष—शेष मुहा० के लिए देखें 'आँख', 'नजर' और 'निगाह' के मुहा०।

दीठना*—अ० [हिं० दीठ] दिखाई देना।

स० देखना।

दीठबंद—पुं० =दीठबंदी।

दीठबंदी—स्त्री० [हिं० दीठ+सं० बंध] इंद्र-जाल, टोने-टोटके आदि की वह माया जिसमें लोगों की दृष्टि इस प्रकार बाँध दी जाती अर्थात् प्रभावित कर दी जाती है कि उन्हें और का और या कुछ का कुछ दिखाई पड़ने लगे। नजर-बंद।

दीठवंत—वि० [हिं० दीठ+वंत (प्रत्य०)] १. जिसे दिखाई पड़ता हो। २. जिसे दिव्य-दृष्टि प्राप्त हो।

दीठि*—स्त्री०=दीठ।

दीत*—पुं० [सं० आदित्य] सूर्य। (डिं०)

दीद—वि० [फा०] देखा हुआ।

स्त्री० देखने की क्रिया या भाव। दर्शन।

दीदबान—पुं० [फा०] १. बंदूक की नली पर का वह छोटा गोल टुकड़ा जिसकी सहायता से निशाना साधा जाता है। बंदूक की मक्खी। २. भेदिया। ३. निगरानी करनेवाला व्यक्ति।

दीदा—पुं० [फा० दीदः] १. आँख का डेला। २. आँख। नेत्र।

क्रि० प्र०—फूटना।—मटकाना।

मुहा०—दीदे का पानी ढल जाना=बुरा काम करने में लज्जा का अनुभव न होना। निर्लज्ज हो जाना। **दीदे-गोड़ों के आगे आना**=किसी किये हुए बुरे काम का बुरा फल मिलना। (स्त्रियों का शाप) जैसे—तू मेरे साथ जो-जो कर रही है, वह सब तेरे दीदे-गोड़ों के आगे आवेगी अर्थात् इसका बुरा फल तुझे इस रूप में मिलेगा कि तू अंधी और लूली-लँगड़ी हो जायगी या बहुत कष्ट भोगेगी। **(किसी की तरफ) दीदे निकालना**=क्रोध की दृष्टि से देखना। आँखें नीली-पीली करना। **दीदे पट्टम होना**=आँखों का फूट जाना। अंधा हो जाना। (स्त्रियाँ) **दीदे फाड़कर देखना**=अच्छी तरह आँखें खोलकर अर्थात् ध्यानपूर्वक देखना।

२. दृष्टि। नजर। ३. कोई काम करने के समय ध्यानपूर्वक उसकी ओर जमनेवाली दृष्टि या लगनेवाली नजर।

मुहा०—(किसी काम में) दीदा फोड़ना=दृष्टि जमाकर ऐसा बारीक काम करना जिससे आँखों को बहुत कष्ट हो। **(किसी काम में) दीदा लगना**=काम में जी या ध्यान जमना। जैसे—तुम्हारा दीदा तो किसी काम में लगता ही नहीं।

४. ऐसा अनुचित साहस जिसमें भय, लज्जा, संकोच आदि का कुछ भी ध्यान न रहे। ढिठाई। धृष्टता। जैसे—इस लड़की का दीदा तो देखो, किस तरह बढ़-बढ़कर बातें करती है। (स्त्रियाँ)

दीदा-धोई—स्त्री० [हिं०] ऐसी स्त्री जिसकी आँखों में शर्म न हो। बेशर्म। निर्लज्ज।

दीदाफटी—स्त्री०=दीदा-धोई।

दीदार—पुं० [फा०] १. दर्शन। देखा-देखी। साक्षात्कार। (प्रिय या बड़े के संबंध में प्रयुक्त) २. छवि। सौंदर्य।

दीदारबाजी—स्त्री० [फा०] किसी प्रिय व्यक्ति से आँखें लड़ाना।

दीदारू—वि० [फा० दीदार] दर्शनीय। देखने योग्य।

दीदा व दानिस्ता—अव्य० [फा० दीद व दानिस्तः] अच्छी तरह देखते हुए और जान-बूझ या सोच-समझकर।

दीदी—स्त्री० [हिं० दादा=(बड़ा भाई) का स्त्री०] बड़ी बहिन को पुकारने का शब्द। ज्येष्ठ भगिनी के लिए संबोधन का शब्द।

दीधिति—स्त्री० [सं०√दीधी (चमकना)+क्तिच्] १. सूर्य, चंद्रमा आदि की किरण। २. उँगली।

दीन—वि० [सं० √दी (क्षय होना)+क्त नत्व)] [भाव० दीनता] १. जो बहुत ही दयनीय तथा हीन दशा में हो। २. गरीब। दरिद्र। ३. जो बहुत दुःखी या संतप्त हो। ४. जिसमें उत्साह, प्रसन्नता आदि का अभाव हो। उदास। खिन्न। ५. जो दुःख, भय आदि के कारण बहुत नम्र हो रहा हो।

पुं० तगर का फूल।

पुं० [अ०] धार्मिक मत या संप्रदाय। धर्म। मजहब।

पद—दीन-दुनिया=धार्मिक विश्वास के कारण मिलनेवाला परम पद और यह लोक या संसार। जैसे—दीन-दुनिया दोनों से गये (रहित हुए)।

मुहा०—दीन-दुनिया दोनों से जाना=न इस लोक के काम का रह जाना और न पर-लोक सुधार सकना।

दीन-इलाही—पुं० [अ०] मुगल सम्राट् अकबर का चलाया हुआ एक धार्मिक संप्रदाय जो अधिक समय तक न चल सका था।

दीनक—वि० [सं० दीन+क (स्वार्थे)] दीन।

दीनता—स्त्री० [सं० दीन+तल—टाप्] १. दीन होने की अवस्था या भाव। २. कातरता। ३. उदासीनता। खिन्नता। ४. नम्रता। विनय।

दीनताई—स्त्री०=दीनता।

दीनत्व—पुं० [सं० दीन+त्व] दीनता।

दीनदयाल—वि०=दीनदयालु।

दीन-दयालु—वि० [सं० स० त०] दीनों पर दया करनेवाला।

पुं० ईश्वर। परमात्मा।

दीनदार—वि० [अ० दीन+फा० दार] [भाव० दीनदारी] जिसे अपने धर्म पर पूर्ण विश्वास हो, और जो उसके नियमों, शिक्षाओं आदि का ठीक तरह से पालन करता हो। धार्मिक। जैसे—दीनदार मुसलमान।

दीनदारी—स्त्री० [फा०] दीनदार होने की अवस्था या भाव। धार्मिकता।

दीनदुनी—स्त्री०=दीन-दुनिया (दे० 'दीन' के अन्तर्गत)।

दीन-बंधु—वि० [सं० ष० त०] दीनों और दुखियों का सहायक। पुं० ईश्वर। परमात्मा।

दीन-वास—पुं० [सं०] बहुत ही गरीबी में या गरीबों की तरह रहकर दिन बिताना।

दीना—स्त्री०[सं० दीन+टाप्] मूषिका। चुहिया।

दीनानाथ—पुं० [सं० दीन-नाथ ष० त० दीर्घ] १. वह जो दीनों का स्वामी या रक्षक हो। दुखियों का पालक और सहायक। २. ईश्वर। परमात्मा।

दीनार—पुं० [सं०√दी (क्षय करना)+आरक् (नुट्))] १. सोने का गहना। २. सोने का एक पुराना सिक्का जो ईरान में प्रचलित था। ३. एक निष्क की तौल।

दीनारी—पुं० [सं० दीनार] लोहारों का ठप्पा।

दीपंकार—पुं० [सं०] बुद्ध के अवतारों में से एक।

दीप—पुं० [सं०√दीप् (चमकना)+क] १. दीया। चिराग। २. दस मात्राओं का एक छंद जिसके अंत में तीन लघु फिर एक गुरु और फिर एक लघु होता है।
†पुं०=द्वीप (टापू)।

दीपक—वि० [सं० √दीप्+णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० दीपिका] १. उजाला या प्रकाश करनेवाला। २. कीर्ति, यश आदि बढ़ानेवाला। जैसे—कुल-दीपक। ३. दीप्त करने अर्थात् पाचन-शक्ति बढ़ानेवाला। जैसे— अग्निदीपक औषध। ४. शरीर में उमंग, ओज, तेज आदि बढ़ानेवाला।
पुं० [दीप+कन्] १. चिराग। दीया। २. साहित्य में,एक प्रकार का अलंकार जिसमें प्रस्तुत और अप्रस्तुत का एक ही धर्म कहा जाता है। अथवा बहुत सी क्रियाओं का एक ही कारक होता है। ३. संगीत में, छः मुख्य रागों में से एक। ४. संगीत में एक प्रकार का ताल। ५. अजवाइन, जो अग्नि-दीपक होती है। ६. केसर। ७. बाज नामक पक्षी। ८. मोर की चोटी या शिखा। ९. एक प्रकार की आतिशबाजी।

दीपक-माला—स्त्री०[ष० त०] १. एक प्रकार के वर्ण-वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में भगण, मगण, जगण और एक गुरु होता है। २. दीपक अलंकार का एक भेद।

दीप-कलिका—स्त्री० [ष० त०] दीये की टेम। चिराग की लौ।

दीप-कली—स्त्री० [सं० दीपकलिका] चिराग की टेम। दीपशिखा। दीए की लौ।

दीपक-वृक्ष—पुं० [ष० त०] वह बड़ा दीवट जिसमें दीए रखने के लिए कई शाखाएँ इधर-उधर निकलती हों। झाड़।

दीपक-सुत—पुं०[ष० त०] कज्जल। काजल।

दीप-काल—पुं० [मध्य स०] दीया जलाने का समय। संध्या।

दीपकावृत्ति—स्त्री० [दीपक-आवृत्ति] १. दीपक अलंकार का एक भेद। २. पनशाखा।

३—१०

दीप-किट्ट—पुं० [ष० त०] कज्जल। काजल।

दीप-कूपी—स्त्री० [सं० ष० त०] दीये की बत्ती।

दीपग*—पुं०=दीपक।

दीपगर†—पुं० [सं० दीपगृह] दीयट।

दीपत†—स्त्री० [सं० दीप्ति] १. चमक। दीप्ति। २. शोभायुक्त सौंदर्य। ३. कीर्ति। यश।

दीपता—वि० [सं० दीप्ति] १. प्रकाशित। चमकीला। २. शोभित। ३. प्रसिद्ध।

दीपति—स्त्री०=दीप्ति (प्रकाश)।

दीप-दान—पुं० [ष० त०] १. देवता के सामने दीपक जलाने का काम जो पूजन का एक अंग है। २. कार्तिक में राधा-दामोदर के उद्देश्य से बहुत से दीपक जलाने का कृत्य। ३. हिंदुओं में एक रसम जिसमें मरणासन्न व्यक्ति के हाथ से जलते हुए दीपक का दान कराया जाता है।

दीपदानी—स्त्री० [सं० दीप-आधान] पूजा के लिए घी, बत्ती आदि (दीपक जलाने की सामग्री) रखने की डिबिया।

दीप-ध्वज—पुं० [ष० त०] काजल।

दीपन—पुं० [सं० दीप् (प्रकाशित करना)+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० दीपनीय, दीपित, दीप्त, दीप्य] १. प्रकाश करने के लिए दीपक या और कोई चीज जलाना। २. जठराग्नि तीव्र और प्रज्वलित करना। पाचन-शक्ति बढ़ाना। ३. किसी प्रकार का मनोवेग उत्तेजित और तीव्र करना। उत्तेजन। ४. [√दीप्+णिच्+ल्यु—अन] एक संस्कार जो मंत्र को जाग्रत और सक्रिय करने के लिए किया जाता है। ५. पारा शोधने के समय किया जानेवाला एक संस्कार। ६. तगर की जड़ या लकड़ी। ७. मयूरशिखा नाम की बूटी। ८. केसर। ९. प्याज। १०. कसौंधा। कासमर्द।
वि० १. अग्नि को प्रज्वलित करनेवाला। आग भड़कानेवाला। २. जठराग्नि तीव्र करके पाचन-शक्ति बढ़ानेवाला।

दीपन-गण—पुं० [ष० त०] जठराग्नि को तीव्र करनेवाले पदार्थों का एक गण या वर्ग। भूख लगानेवाली ओषधियों का वर्ग।

दीपना*—अ० [सं० दीपन] प्रकाशित होना। चमकना। जगमगाना। स० तीव्र या प्रज्वलित करना।

दीपनी—स्त्री० [सं० दीपन+ङीष्] १. मेथी। २. पाठा। ३. अजवायन।

दीपनीय—वि० [सं०√दीप् (दीप्ति)+अनीयर्] १. जो दीपन के लिए उपयुक्त हो। जो जलाया या प्रज्वलित किया जा सके। २. जो उत्तेजित, तीव्र या प्रबल किये जाने के योग्य हो।

दीपनीयक—वि० [सं०]=दीपन।

दीपनीय-वर्ग—पुं० [ष० त०] चक्रदत्त के अनुसार एक ओषधि वर्ग जिसके अंतर्गत जठराग्नि तीव्र करनेवाली ये ओषधियाँ हैं—पिप्पली, पिप्पलामूल, चव्य, चीता और नागर।

दीप-पादप—पुं० [ष० त०] दीयट।

दीप-पुष्प—पुं० [ब० स०] चंपक-वृक्ष। चंपा।

दीप-माला—स्त्री० [ष० त०] १. जलते हुए दीपों की पंक्ति। जगमगाते हुए दीयों की श्रेणी। २. आरती या दीपदान के लिए जलाई जानेवाली बत्तियों की पंक्ति या समूह।

दीप-मालिका—स्त्री० [ष० त०] १. दीयों की पंक्ति। जलते हुए दीपों की श्रेणी। २. दीवाली का त्योहार जो कार्तिक की अमावास्या को होता है।

दीप-माली—स्त्री० [सं० दीपमालिका] दीवाली।

दीपवती—स्त्री० [सं० दीप+मतुप्–ङीप्] कालिका पुराण के अनुसार एक नदी जो कामाख्या में है और जिसके पूर्व में शृंगार नाम का प्रसिद्ध पर्वत है।

दीप-वृक्ष—पुं० [ष० त०] दीअट।

दीप-शत्रु—पुं० [ष० त०] पतंग या फतिंगा (जो दीपक को बुझा देता है)।

दीप-शिखा—स्त्री० [ष० त०] १. दीपक की लौ। टेम। २. दीपक से निकलनेवाला धूआँ।

दीप-सुत—पुं० [ष० त०] कज्जल। काजल।

दीप-स्तंभ—पुं० [ष० त०] १. वह आधार या स्तंभ जिसके ऊपर रखकर दीया जलाया जाता है। दीयट। २. समुद्र में जहाजों को रात के समय रास्ता दिखाने और उन्हें चट्टानों आदि से बचाने के लिए बना हुआ उक्त प्रकार का स्तंभ जिसके ऊपरी भाग में रात को बहुत तेज रोशनी होती है। (लाइट हाउस)

दीपांकुर—पुं० [दीप-अंकुर ष० त०] दीए की लौ।

दीपा—वि० [?] १. मंद। धीमा। २. फीका।

दीपाग्नि—पुं० [दीप-अग्नि ष० त०] १. दीये की लौ। २. उक्त की आँच या ताप।

दीपाधार—पुं० [दीप-आधार ष० त०] वह आधार या स्तंभ जिस पर रखकर दीये जलाये जायँ। दीयट।

दीपान्विता—स्त्री० [दीप-अन्विता तृ०त०] कार्तिक मास की अमावास्या। दीवाली की रात।

दीपाराधन—पुं० [दीप-आराधन तृ० त०] दीप जलाकर तथा उन्हें किसी के सम्मुख घुमाते हुए आराधन करना। आरती करना।

दीपालि, दीपाली—स्त्री० [सं० ष० त०] १. दीपमाला। २. दीपावली। दीवाली।

दीपावती—स्त्री० [सं० दीप+मतुप्—ङीष् (दीर्घ)] एक रागिनी जो दीपक और सरस्वती रागों के योग से बनी है।

दीपावली—स्त्री० [दीप-आवली ष० त०] १. दीप-श्रेणी। दीयों की पंक्ति। २. दीवाली।

दीपिका—स्त्री० [सं० दीप+क—टाप्, इत्व] १. छोटा दीया। २. [√दीप्+णिच्+ण्वुल्—अक, टाप्, इत्व] चाँदनी। ३. संध्या के समय गाई जानेवाली एक रागिनी जो हिंडोल राग की पत्नी कही गई है। ४. किसी कठिन ग्रंथ का सरल आशय बतानेवाली टीका या पुस्तक।

वि० स्त्री० [हिं० दीपक का स्त्री०] समस्त पदों के अंत में, दीपन अर्थात् उजाला या प्रकाश करनेवाली।

दीपिका-तैल—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार का आयुर्वेदोक्त तेल जो कान की पीड़ा दूर करता है।

दीपित—भू० कृ० [सं०√दीप्+णिच्+क्त] १. दीप्त किया अर्थात् जलाया हुआ। २. दीपों से युक्त। ३. उजाले या प्रकाश से युक्त किया हुआ। प्रकाशित। प्रज्वलित। ४. चमकता या जगमगाता हुआ। ५. जिसे उत्तेजना दी गई हो या मिली हो। उत्तेजित।

दीपी (पिन्)—वि० [सं०उत्तरपद में] १. जलता हुआ। २. चमकता हुआ। ३. दीपन करनेवाला।

दीपोत्सव—पुं० [दीप-उत्सव, ष० त०] १. दीप जलाकर मनाया जानेवाला उत्सव। २. दीवाली।

दीप्त—वि० [सं०√दीप्+क्त] [स्त्री० दीप्ता] १. जलता हुआ। प्रज्वलित। २. चमकता या जगमगाता हुआ। प्रकाशित।

पुं० १. सोना। स्वर्ण। २. हींग। ३. नींबू। ४. सिंह। शेर। ५. एक रोग जिसमें नाक में जलन होती है तथा उसमें से गरम हवा निकलती है।

दीप्तक—पुं० [सं० दीप्त+क (स्वार्थे)] १. सोना। सुवर्ण। २. दे० 'दीप्त' (नाक का रोग)।

दीप्त-किरण—पुं० [ब० स०] १. सूर्य। २. आक। मदार।

दीप्त-कीर्ति—पुं० [ब० स०] कार्तिकेय।

दीप्त-केतु—पुं० [ब० स०] दक्ष सावर्णि मनु के एक पुत्र का नाम। (भागवत)

दीप्त-जिह्वा—स्त्री० [ब० स०] १. मादा गीदड़। सियारिन। २. लाक्षणिक अर्थ में, झगड़ालू स्त्री।

दीप्त-पिंगल—पुं० [उपमि०स०] सिंह।

दीप्त-रस—पुं० [ब० स०] केंचुआ।

दीप्त-रोमा (मन्)—पुं० [ब० स०] एक विश्वदेव का नाम। (महाभारत)

दीप्त-लोचन—पुं० [ब० स०]। बिल्ला।

दीप्त-लौह—पुं० [कर्म० स०] काँसा।

दीप्त-वर्ण—वि० [ब० स०] चमकते या दमकते हुए वर्णवाला।

पुं० कार्तिकेय।

दीप्त-शक्ति—पुं० [ब० स०] कार्तिकेय।

दीप्तांग—वि० [दीप्त-अंग ब० स०] जिसका शरीर चमकता हो।

पुं० मोर पक्षी। मयूर।

दीप्तांशु—पुं० [दीप्त-अंशु ब० स०] १. सूर्य। २. आक। मदार।

दीप्ता—वि० स्त्री० [सं० दीप्त+टाप्] चमकती हुई। प्रकाशमान। जैसे—सूर्य के प्रकाश से दीप्ता दिशा।

स्त्री० १. ज्योतिष्मती। मालकंगनी। २. कलियारी। ३. सातला (थूहर)।

दीप्ताक्ष—वि० [दीप्त-अक्षि ब० स० (पच् समा०)] चमकती हुई आँखोंवाला।

पुं० बिल्ला। बिड़ाल।

दीप्ताग्नि—वि० [दीप्त-अग्नि ब० स०] १. जिसकी जठराग्नि बहुत तीव्र हो। जिसकी पाचन-शक्ति अत्यंत प्रबल हो। २. जिसे बहुत भूख लगी हो। भूखा।

पुं० अगस्त्य मुनि जो वातापि राक्षस को खाकर पचा गये थे और समुद्र का सारा जल पी गये।

स्त्री० प्रज्वलित अग्नि।

दीप्ति—स्त्री०[सं०√दीप्+क्तिन्] १. दीप्त होने की अवस्था या भाव। प्रकाश। उजाला। रोशनी। २. आभा। चमक। ३. छवि। शोभा।

४. योग में ज्ञान का प्रकाश जिससे हृदय का अंधकार दूर होता है। ५. लाक्षा। लाख। ६. कांसा। ७. थूहर। ८. एक विश्व-देव का नाम।

दीप्तिक—पुं० [सं० दीप्ति√कै (मालूम पड़ना)+क] शिरशोला। दुग्धपाषाण वृक्ष।

दीप्तिमान्(मत्)—वि० [सं० दीप्ति+मतुप्] [स्त्री० दीप्तिमती] १. दीप्तयुक्त। प्रकाशित। चमकता हुआ। २. कांति या शोभा से युक्त।

पुं० श्रीकृष्ण के एक पुत्र, जो सत्यभामा के गर्भ से उत्पन्न हुए थे।

दीप्तोद—पुं० [दीप्त-उदक ब० स०, उद आदेश] एक प्राचीन तीर्थ-क्षेत्र जिसमें बहनेवाली बधूसर नामक नदी में स्नान करके परशुराम ने अपना खोया हुआ तेज फिर से प्राप्त किया था। इसी क्षेत्र में महर्षि भृगु ने भी कठोर तपस्या की थी।

दीप्तोपल—पुं० [सं० दीप्त-उपल कर्म० स०] सूर्यकांत मणि।

दीप्य—वि० [सं०दीप्+यत्] १. जो जलाया जाने को हो। प्रज्वलित किया जानेवाला। २. जो जलाकर प्रकाश से युक्त किया जा सके। ३. जठराग्नि अर्थात् भूख बढ़ानेवाला।

पुं० १. अजवायन। २. जीरा। ३. मयूर-शिखा। ४. रुद्र-जटा।

दीप्यक—पुं० [सं० दीप्य+कन्] १. अजवायन। २. अजमोदा। ३. मयूरशिखा। ४. रुद्रजटा।

दीप्यमान—वि० [सं०+दीप् (चमकना) +शानच् (यक्)] चमकता हुआ। दीप्त।

दीप्या—स्त्री० [सं० दीप्य+टाप्] पिंड खजूर।

दीप्र—वि० [सं०√दीप्+र] दीप्तिमान।

दीबाचा—पुं० [फा० दीबाचः] ग्रंथ की भूमिका। प्रस्तावना।

दीबो†—पुं० [हिं० देना] देने की क्रिया या भाव। उदा०—दीनदयाल दीबो ई भावै जाचक सदा सोहाहीं।—तुलसी।

दीमक—स्त्री० [फा०] च्यूँटी की जाति का सफेद रंग का एक प्रसिद्ध छोटा कीड़ा जो समूहों में रहता है और लकड़ी, कागज, पौधों आदि को खा जाता है।

दीयट—स्त्री० [सं० दीवस्थ, प्रा दीवट्ठ] पुरानी चाल का धातु, लकड़ी आदि का बना हुआ वह छोटा स्तम्भ या आधार जिस पर दीया रखकर जलाया जाता है।

दीयमान—वि० [सं० दा (देना)+शानच् (यक्)] जो दिया जाने को हो या दिये जाने के लिए हो।

दीया—पुं० [सं० दीपक, प्रा० दीअ] १. बत्ती तथा तेल अथवा घी से युक्त छोटा पात्र।

क्रि० प्र०—जलना।—जलाना।—बलना।—बालना।—बुझना।—बुझाना।

मुहा०—**दीया जलाना**=दीवाला निकालना (पहले जो लोग दीवाला निकालते थे वे अपनी कोठी या दूकान का टाट उलटकर उस पर एक चौमुखा दीया जलाकर रख देते थे और काम-धंधा बंद कर देते थे)। **दीया ठंढा करना**=दीया बुझाना। **(किसी के घर का) दीया ठंढा होना**=किसी के मरने के फल-स्वरूप उसके परिवार में अँधेरा छा जाना। **दीया दिखाना**=मार्ग में प्रकाश करने के लिए दीया सामने करना। **दीया बढ़ाना**=दीया बुझाना। **दीया बत्ती करना**=संध्या होने पर दीया जलाना। **दीया संजोना**=दीया जलाकर प्रकाश करना। **दीये का हँसना**=दीये की बत्ती से फूल या गुल झड़ना। **दीये से फूल झड़ना**=दीये की जलती हुई बत्ती से चमकते हुए गोल फुचड़े या रवे निकलना। गुल झड़ना।

पद—**दीये बत्ती का समय**=संध्या का समय जब दीया जलाया जाता है।

२. [स्त्री० अल्पा० दियली] बत्ती जलाने का छोटी कटोरी के आकार का बरतन। वह बरतन जिसमें तेल भरकर जलाने के लिए बत्ती डाली जाती है। ३. उक्त प्रकार की कटोरी के आकार का मिट्टी का छोटा पात्र।

मुहा०—**दीये में बत्ती पड़ना**=संध्या का समय होने पर दीया जलाया जाना।

दीया-सलाई—स्त्री० [हिं० दीया+सलाई] लकड़ी की वह छोटी सलाई या सींक जिसके एक सिरे पर लगा हुआ मसाला रगड़ने से जल उठता है। आग जलाने की सींक या सलाई।

दीरघ†—वि०=दीर्घ।

दीर्घ—वि० [सं०+दृ (विदारण)+घञ्] १. काल-मान, दूरी आदि के विचार से अधिक विस्तारवाला। अधिक अवकाश या समय में व्याप्त। जैसे—दीर्घ काय, दीर्घ क्षेत्र। २. लंबी अवधि या भोगकालवाला। जैसे—दीर्घ आयु, दीर्घ निद्रा, दीर्घ श्वास। ३. (अक्षर या वर्ण) जो दो मात्राओं का अर्थात् गुरु हो। जिसका उच्चारण अपेक्षया अधिक खींचकर किया जाता हो। 'ह्रस्व' का विपर्याय। जैसे—'इ' का दीर्घ 'ई' और 'उ' का दीर्घ 'ऊ' है।

पुं० १. ऊँट। २. ताड़ का पेड़। ३. लता शाल नामक वृक्ष। ४. रामशर। नरकट। ५. ज्योतिष में, पाँचवीं, छठी, सातवीं और आठवीं अर्थात् सिंह, कन्या, तुला और वृश्चिक राशियों की संज्ञा।

दीर्घ-कंटक—पुं० [ब० स०] बबूल का पेड़।

दीर्घ-कंठ—वि० [ब० स०] [स्त्री०दीर्घ कंठी, दीर्घकण्ठ+ङीप्] जिसकी गरदन लंबी हो।

पुं० १. बगला पक्षी। २. एक राक्षस का नाम।

दीर्घ-कंद—पुं० [ब० स०] मूली।

दीर्घ-कंदिका—स्त्री० [ब० स०,कप्—टाप् (इत्व)] मुसली। ताल-मूली।

दीर्घ-कंधर—वि० [ब० स०] [स्त्री० दीर्घकंधरी] लंबी गरदनवाला।

पुं० बगला पक्षी।

दीर्घ-कणा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] सफेद जीरा।

दीर्घ-कर्ण—वि० [ब० स०] बड़े-बड़े कानोंवाला।

पुं० एक प्राचीन जाति का नाम।

दीर्घ-कांड—पुं० [ब० स०] १. गुंडतृण। गोदला। २. पाताल गारुड़ी लता। ३. तिक्तांगा।

दीर्घ-कांडा—स्त्री० [सं० दीर्घकांड+टाप्] दीर्घकांड। (दे०)

दीर्घ-काय—वि० [ब० स०] जिसकी काया अर्थात् शरीर दीर्घ या बहुत बड़ा हो। शारीरिक दृष्टि से बड़े डील-डौलवाला।

दीर्घ-कील—पुं० [ब० स०] दीर्घकीलक। (दे०)

दीर्घ-कीलक—पुं० [सं० दीर्घकील+कन्] अंकोल का पेड़।

दीर्घ-कुल्या—स्त्री० [ब० स०, टाप्] गजपिप्पली।

दीर्घ-कूरक—पुं० [कर्म० स०] आंध्र प्रदेश में होनेवाला एक तरह का धान। रजान्न।

दीर्घ-केश—वि० [ब० स०] [स्त्री० दीर्घकेशी, दीर्घकेश+ङीप्] जिसके केश दीर्घ अर्थात् बड़े या लंबे हों।
पुं० १. भालू। रीछ। २. बृहत्संहिता के अनुसार एक देश जो कूर्म विभाग के पश्चिमोत्तर में है।

दीर्घ-कोशिका—स्त्री० [ब० स०, कप्—टाप् (इत्व)] शुक्ति नामक जल-जंतु। सुतुही।

दीर्घ-गति—पुं० [ब० स०] ऊँट।
वि० तेज या बहुत चलनेवाला।

दीर्घ-ग्रंथिका—स्त्री० [ब० स०, कप्—टाप्] गजपिप्पली।

दीर्घ-ग्रीव—वि० [ब० स०] [स्त्री० दीर्घग्रीवी] जिसकी गरदन लंबी हो।
पुं० १. सारस पक्षी। २. बृहत्संहिता के अनुसार एक देश जो कूर्म विभाग के दक्षिण-पश्चिम में है।

दीर्घ-घाटिक—वि० [सं० दीर्घा—घाटा कर्म० स०,+ठन्—इक] लंबी गरदनवाला।
पुं० ऊँट।

दीर्घच्छद—वि० [ब० स०] जिसके लंबे-लंबे पत्ते हों।
पुं० ईख। ऊख। गन्ना।

दीर्घ-जंगल—पुं० [कर्म० स०] एक तरह की मछली। बड़ा झींगा।

दीर्घ-जंघ—वि० [ब० स०] जिसकी टाँगें लंबी हों।
पुं० १. बगला पक्षी। २. ऊँट।

दीर्घ-जिह्व—वि० [ब० स०] जिसकी जीभ लंबी हो।
पुं० १. साँप। २. एक राक्षस का नाम।

दीर्घजिह्वा—स्त्री० [सं० दीर्घ जिह्व+[टाप्] १. विरोचन की पुत्री एक राक्षसी जिसे इंद्र ने मारा था। २. कार्तिकेय की एक अनुचरी या मातृका।

दीर्घजीवी (विन्)—वि० [सं० दीर्घ√जीव् (जीना)+णिनि] बहुत दिनों तक जीनेवाला। दीर्घ जीवनवाला।

दीर्घतपा (पस्)—वि० [ब०स०] जिसने बहुत दिनों तक तपस्या की हो।
पुं० उतथ्य ऋषि के एक पुत्र का नाम।

दीर्घतरु—पुं० [कर्म०स०] ताड़ का पेड़।

दीर्घता—स्त्री० [सं० दीर्घ+तल्—टाप्] दीर्घ होने की अवस्था, गुण या भाव। लंबाई और चौड़ाई।

दीर्घ-तिमिषा—स्त्री० [तिमिषा, √तिम् (गीला होना)+किषन् (बा०) टाप् दीर्घ तिमिषा कर्म०स०] ककड़ी। कर्कटी।

दीर्घ-तुंडा—वि० स्त्री० [ब० स०, टाप्] जिसका मुँह लंबा हो।
स्त्री० छछूँदर।

दीर्घ-तृण—पुं० [कर्म०स०] एक प्रकार की घास जिसके खाने से पशु निर्बल हो जाते हैं। पल्लिवाह तृण। ताम्रपर्णी।

दीर्घ-दंड—पुं० [कर्म०स०] दीर्घदंडक। (दे०)

दीर्घदंडक—पुं० [सं० दीर्घदण्ड+क (स्वार्थे)] १. अंडी का पेड़। रेंड़। २. ताड़।

दीर्घ-दंडी—स्त्री० [सं० दीर्घदण्ड+ङीष्] गोरख इमली।

दीर्घदर्शी (शिन्)—वि० [सं० दीर्घ√दृश (देखना)+णिनि] [भाव० दीर्घदर्शिता] बहुत दूर तक की बातें सोचने-समझनेवाला। दूरदर्शी।
पुं० १. भालू। २. गीध।

दीर्घ-द्रु—पुं० [कर्म०स०] ताड़ का पेड़।

दीर्घ-द्रुम—पुं० [कर्म०स०] सेमल का पेड़। शाल्मली।

दीर्घ-दृष्टि—वि० [ब०स०] १. जिसकी दृष्टि दूर तक जाय। २. दूर-दर्शी।
स्त्री० दूरदर्शिता।
पुं० गिद्ध पक्षी।

दीर्घ-द्वार—पुं० [ब०स०] विशाल देश के अंतर्गत एक प्राचीन जनपद जो गंडकी नदी के किनारे कहा गया है।

दीर्घ-नाद—वि० [ब०स०] जिससे जोर का या भारी शब्द निकलता हो।
पुं० शंख।

दीर्घ-नाल—पुं० [ब० स०] १. रोहिस घास। २. गुंड तृण। गोंदला। ३. यवनाल। ज्वार।

दीर्घ-निद्रा—स्त्री० [कर्म०स०] मृत्यु। मौत। मरण।

दीर्घ निःश्वास—पुं० [कर्म०स०] चिंता, दुःख, भय आदि के कारण लिया जानेवाला गहरा या लंबा साँस।

दीर्घ-पक्ष—वि० [ब० स०] बड़े-बड़े परोंवाला।
पुं० कलिंग (पक्षी)।

दीर्घ-पत्र—वि० ब० स०] जिसके पत्ते बहुत लंबे होते हों।
पुं० १. हरिदर्भ जो कुश का एक भेद है। २. विष्णुकंद। ३. लाल प्याज। ४. कुचला। ५. एक प्रकार की ईख या ऊख।

दीर्घ-पत्रक—पुं० [सं० दीर्घपत्र+कन्] १. लाल लहसुन। २. एरंड। रेंड़। ३. बेंत। ४. समुद्र-फल। हिज्जल। ५. करील। टेंटी। ६. जलमहुआ।

दीर्घपत्रा—स्त्री० [सं० दीर्घपत्र+टाप्] १. केतकी। २. चित्रपर्णी। ३. जंगली जामुन। ४. शालपर्णी।

दीर्घपत्रिका—स्त्री० [सं० दीर्घपत्र+कन्—टाप् (इत्व)] १. सफेद बच। २. घीकुआँर। ३. शालपर्णी। सरिवन। ४. सफेद गदहपूरना। श्वेत पुनर्नवा।

दीर्घपत्री—स्त्री० [सं० दीर्घपत्र+ङीष्] १. पलाशी लता। बौंरिया पलाश। वह पलाश जो लता के रूप में फैलता है। २. बड़ा चेंच या चेना। (साग)

दीर्घ-पर्ण—वि० [ब० स०] लंबे-लंबे पत्तोंवाला।

दीर्घपर्णी—स्त्री० [सं० दीर्घपर्ण+ङीष्] पिठवन। पृश्निपर्णी।

दीर्घ-पल्लव—वि० [ब०स०] बड़े-बड़े फूलोंवाला।
पुं० सन का पौधा।

दीर्घ-पाद—वि० [ब० स०] लंबी टांगोंवाला।
पुं० १. कंक पक्षी। सफेद चील। २. सारस।

दीर्घ-पादप—पुं० [कर्म० स०] १. ताड़ का पेड़। २. सुपारी का पेड़।

दीर्घ-पृष्ठ—पुं० [ब० स०] सर्प। साँप।

दीर्घ-प्रज्ञ—वि० [ब०स०] दूरदर्शी।
पुं० पुराणानुसार द्वापर के एक राजा जो असुर के अवतार कहे गयेहैं।

दीर्घ-फल—पुं०[ब० स०] अमलतास।

दीर्घ-फलक—पुं०[सं० दीर्घफल+कन्] अगस्त का पेड़।

दीर्घफला—स्त्री० [सं० दीर्घफल +टाप्] १. जतुका लता। पहाड़ी नाम की लता। २. लंबे दाने का अंगूर।

दीर्घ-फलिका—स्त्री०[ब० स०, कप्–टाप् (इत्व)] १. कपिल द्राक्षा। लंबा अंगूर। २. जतुका लता।

दीर्घ-बाली—स्त्री०[ब० स०, ङीप्] चमरी। सुरागाय।

दीर्घ-बाहु—वि०[ब० स०] जिसकी भुजा लंबी हो।
पुं० १. शिव का एक अनुचर। २. धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

दीर्घ-मारुत्—पुं०[ब० स०] हाथी।

दीर्घ-मुख—वि०[ब० स०] बड़े मुँहवाला।
पुं०१. हाथी। २. शिव के एक अनुचर का नाम।

दीर्घ-मूल—पुं०[ब० स०] १. मोरट नाम की एक लता। २. लामज्जक तृण। ३. बिल्वांतर नामक वृक्ष।

दीर्घ मूलक—पुं०[ब० स०, कप्] मूलक। मूली।

दीर्घ-मूला—स्त्री०[सं० दीर्घमूल+टाप्]१. शालिपर्णी। सरिवन। २. श्यामा लता। कालीसर।

दीर्घ-मूली—स्त्री०[सं० दीर्घमूल+ङीप्] धमासा।

दीर्घयज्ञ—वि०[ब० स०] जिसने बहुत दिनों तक यज्ञ किया हो।
पुं० अयोध्या के एक राजा जो पुराणानुसार द्वापर युग में हुए थे।

दीर्घ-रत—वि० [ब० स०] अधिक समय तक मैथुन में रत रहनेवाला।
पुं० कुत्ता।

दीर्घ-रद—वि०[ब० स०] जिसके दाँत लंबे और बाहर निकले हुए हों।
पुं० सूअर। शूकर।

दीर्घ-रसन—पुं०[ब० स०] सर्प। साँप।

दीर्घ-रागा—स्त्री०[ब०स०, टाप्] हरिद्रा। हल्दी।

दीर्घ-रोमा (मन्)—पुं०[ब० स०] १. भालू। २. शिव का एक अनुचर।

दीर्घ-रोहिषक—पुं०[कर्म० स०+कन्] एक तरह का सुगंधित तृण।

दीर्घ-लोचन—वि० [ब० स०] बड़ी आँखोंवाला।
पुं०१. शिव का एक अनुचर। २. धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

दीर्घ-वंश—पुं० [कर्म० स०] नरसल। नरकट।

दीर्घ-वक्त्र—वि० [ब० स०] [स्त्री० दीर्घवक्त्रा, दीर्घवक्त्र–टाप्] लंबे मुँहवाला।
पुं० हाथी।

दीर्घवच्छिका—स्त्री०[सं० दीर्घवत्√शीक् (सींचना)+क–टाप्, पृषो० सिद्धि] कुंभीर। घड़ियाल।

दीर्घ-वल्ली—स्त्री०[कर्म० स०]१. बड़ा इंद्रायन। महेंद्रवारुणी। २. पाताल-गारुड़ी लता। छिरेटा। ३. पलाशी लता। बौरिया पलास।

दीर्घ-वृंत—पुं०[ब०स०] १. श्योनाक वृक्ष। सोनापाठा। २. लताशाल।

दीर्घवृंता—स्त्री०[सं० दीर्घवृंत+टाप्] इंद्रचिमिटी लता।

दीर्घवृंतिका—स्त्री०[सं० दीर्घ-वृंत+कन्–टाप् (इत्व)] एलापर्णी।

दीर्घ-शर—पुं०[कर्म० स०] ज्वार।

दीर्घ-शाख—पुं०[ब० स०] १. सन। २. शाल (वृक्ष)। साखू।

दीर्घ-शिंबिक—पुं० [ब० स०, कप् (ह्रस्वत्व)] एक तरह की राई। क्षव।

दीर्घ-शूक—पुं०[ब० स०] एक तरह का धान।

दीर्घश्रवा (वस्)—पुं० [ब० स०] एक ऋषिपुत्र जिन्होंने अनावृष्टि होने पर वाणिज्य वृत्ति स्वीकार की थी। (ऋग्वेद)

दीर्घ-सत्र—वि०[ब०स०] जिसने बहुत दिनों तक यज्ञ किया हो।
पुं० [कर्म० स०] १. जीवन भर किया जानेवाला अग्निहोत्र। २. एक प्रकार का यज्ञ। ३. एक प्राचीन तीर्थ।

दीर्घ-सुरत—वि०[ब० स०] बहुत देर तक रति करनेवाला।
पुं० कुत्ता।

दीर्घ-सूक्ष्म—पुं०[कर्म० स०] प्राणायाम का एक भेद।

दीर्घ-सूत्र—वि०[ब० स०] दीर्घसूत्री। (दे०)

दीर्घ-सूत्रता—स्त्री० [सं० दीर्घसूत्र+तल्–टाप्] दीर्घसूत्र या दीर्घसूत्री होने की अवस्था, भाव या स्थिति।

दीर्घ-सूत्री (त्रिन्)—वि०[सं० दीर्घ-सूत्र कर्म०स०,+इनि] [भाव० दीर्घ-सूत्रिता] (व्यक्ति) जो हर काम में आवश्यकता से बहुत अधिक देर लगाता हो। बहुत धीरे-धीरे और देर में काम करनेवाला।

दीर्घ-स्कंध—पुं०[ब० स०] ताड़ का पेड़।

दीर्घ-स्वर—पुं०[कर्म०स०] ऐसा स्वर जो साधारण से कुछ अधिक खींच-कर उच्चारित होता हो। दो मात्राओंवाला स्वर।

दीर्घा—स्त्री० [सं० दीर्घ+टाप्]१. पिठवन। पृश्निपर्णी। २. पुरानी चाल की वह नाव जो ८८ हाथ लंबी, ४४ हाथ चौड़ी और ४४ हाथ ऊँची होती थी। ३. आने-जाने के लिए कोई लंबा और ऊपर से छाया हुआ मार्ग। ४. आज-कल किसी भवन के अंदर कुछ ऊँचाई पर दर्शकों आदि के बैठने के लिए बना हुआ स्थान। (गैलरी)

दीर्घाकार—वि०[दीर्घ-आकार, ब० स०] दीर्घ आकारवाला। लंबा-चौड़ा।

दीर्घाध्वग—पुं०[दीर्घ-अध्वग कर्म०स०]१. दूत। २. हरकारा।

दीर्घायु (स्)—वि०[दीर्घ-आयुस् ब० स०] दीर्घजीवी। चिरजीवी।
पुं० १. मार्कंडेय ऋषि। २. जीवकवृक्ष। ३. सेमल का पेड़। ४. कौआ।

दीर्घायुध—पुं०[दीर्घ-आयुध कर्म० स०] १. कुंभास्त्र। २. [ब० स०] सूअर। शूकर।

दीर्घायुष्य—वि०, पुं० [दीर्घ-आयुष्य ब० स०]=दीर्घायु।

दीर्घालर्क—पुं०[दीर्घ-अलर्क कर्म० स०] सफेद मदार।

दीर्घास्य—वि०[दीर्घ-आस्य] बड़े मुँहवाला।
पुं० १. शिव का एक अनुचर। २. पुराणानुसार पश्चिमोत्तर दिशा का एक देश। ३. हाथी।

दीर्घाह (न्)—वि०[दीर्घ-अहन्] बड़े दिनवाला।
पुं० १. बड़ा दिन। २. ग्रीष्मकाल।

दीर्घिका—स्त्री०[सं० दीर्घ+कन्–टाप्, इत्व] १. छोटा जलाशय या तालाब। बावली। २. हिंगुपत्री। ३. एक प्रकार की पुरानी नाव जो ३२ हाथ लंबी, ४ हाथ चौड़ी और ३$\frac{1}{5}$ हाथ ऊँची होती थी।

दीर्घीकरण—पुं०[सं० दीर्घ+च्वि √कृ+ल्युट्–अन] किसी वस्तु को पहले से अधिक दीर्घ करना। विस्तार बढ़ाना। (एलगेशन)

दीर्घेर्वारु—पुं०[दीर्घा-इर्वारु कर्म० स०] लंबी ककड़ी। डँगरी।

दीर्ण—वि०[सं०√दृ (विदारण)+क्त] फटा हुआ। विदारित। दरका हुआ।

दीली—स्त्री० १.=दिल्ली। २.=दिली।

दीवँक—स्त्री०=दीमक।

दीवट†—स्त्री०=दीयट।

दीवला—पुं०[हिं० दिवाला (प्रत्य०)][स्त्री० दिवली, दिल्ली] दीया।

दीवा—पुं०=दीया।

पुं०=धव (वृक्ष)।

दीवान—पुं० [अ०] १. राजसभा। न्यायालय। कचहरी। २. मंत्री। वजीर। ३. अर्थ-मंत्री। ४. उर्दू में किसी कवि या शायर की रचनाओं का संग्रह। जैसे–गालिब का दीवान।

दीवान-आम—पुं०[अ०] १. ऐसा दरबार जिसमें राजा या बादशाह से सब लोग मिल सकते थे। आम दरबार। २. वह स्थान जहाँ उक्त प्रकार का दरबार लगता हो।

दीवान-खाना—पुं० [फा० दीवानखानः] १. बैठक। कमरा। २. बड़े-बड़े लोगों के बैठने का स्थान।

दीवान-खास—पुं० [फा०+अ०] १. ऐसी सभा जिसमें राजा या बादशाह, मंत्रियों तथा चुने हुए प्रधान लोगों के साथ बैठता है। खास दरबार। २. वह स्थान जिसमें उक्त दरबार लगता हो।

दीवाना—वि० [फा० दीवानः] [स्त्री० दीवानी] [भाव० दीवानापन] १. पागल। विक्षिप्त। २. जो किसी के प्रेम में पागल रहता हो। ३. किसी काम में तन्मय।

दीवानापन—पुं० [फा० दीवाना+पन (प्रत्य०)] दीवाने होने की अवस्था या भाव।

दीवानी—स्त्री०[फा०] १. दीवान का पद। दीवान का ओहदा।
वि०[फा०] १. दीवान-संबंधी। दीवान का। २. आर्थिक।
स्त्री० १. दीवान का कार्य और पद। २. न्याय का वह विभाग जिसमें केवल आर्थिक विवादों पर विचार होता है। ३. वह अदालत या कचहरी जिसमें उक्त प्रकार के विवादों का विचार होता है।
वि० हिं० दीवाना का स्त्री० रूप।

दीवार—स्त्री०[फा०] १. मिट्टी, ईंटों, पत्थरों आदि की प्रायः लंबी, सीधी और ऊँची रचना जो कोई स्थान घेरने के लिए खड़ी की जाती है। भीत।
क्रि० प्र०—उठाना।—खड़ी करना।
२. उक्त रचना का कोई पक्ष या पहलू। जैसे—दीवार पर चूना करना। ३. कोई ऐसी रचना, जो सुरक्षा के लिए बनी या बनाई गई हो। जैसे—लोहे की दीवार। ४. किसी वस्तु का घेरा जो ऊपर उठा हो। जैसे—जूते, टोपी या थाली की दीवार।

दीवारगीर—स्त्री०[फा०] १. दीया, मोमबत्ती, लम्प आदि रखने का आधार जो दीवार में जड़ा जाता है। २. उक्त प्रकार से जलनेवाला दीया, लम्प आदि। ३. दीवार पर टाँगा जानेवाला रंगीन विशेषतः छपा हुआ परदा।

दीवार-दंड—पुं० [फा० दीवर + हिं० दंड] एक प्रकार की दंड नाम की कसरत जो दीवार पर हाथ रखकर की जाती है।

दीवाल†—स्त्री०=दीवार।

दीवाला†—पुं० = दिवाला।

दीवाली—स्त्री० [सं० दीपावली] १. कार्तिक की अमावास्या को होनेवाला वैश्यों का एक प्रसिद्ध त्योहार जिसमें संध्या के समय घर में सब जगह बहुत से दीपक जलाये जाते और लक्ष्मी की पूजा की जाती है।
विशेष—(क) भगवान राम १४ वर्षों के बनवास के उपरांत कार्तिकी अमावास्या को अयोध्या लौटे थे, उन्हीं के आगमन के उपलक्ष्य में यह उत्सव आरंभ हुआ था। (ख) पुराणानुसार दीवाली वस्तुतः वैश्यों का त्योहार है, परन्तु अब इसे सभी वर्णों के लोग मनाते हैं।
२. लाक्षणिक अर्थ में, कोई ऐसा शुभ अवसर या घड़ी जिसमें लोग खुशियाँ मनायें।

दीवि—पुं० [सं० दे० दिवि] नीलकंठ (पक्षी)।

दीवी—स्त्री० [हिं० दीवा] दीयट। चिरागदान।

दीसना†—अ० [सं० दृश = देखना] दिखाई देना या पड़ना।

दीह†—पुं० [सं० दिवस] दिन। दिवस। उदा०—त्रिणि दीह लगन वेला घाड़ा तै। —प्रिथीराज।
वि० = दीर्घ।

दुंका—पुं० [सं० स्तोक](अनाज का) छोटा कण। कन। दाना।

दुंगरी—स्त्री० [देश०] पुरानी चाल का एक तरह का मोटा कपड़ा।

दुंडुक—वि० [सं० दुंडुभ√कै (मालूम होना)+क, पृषो० भलोप] १. व्यक्ति जो ईमानदार न हो। बेईमान। २. दुष्ट। ३. जालसाज।

दुंडुभ—पुं० [सं०√द्रुड् (डूबना)+उभ, नुम्, रलोप] एक तरह का विषहीन सर्प। डुंडुभ।

दुंद—पुं० [सं० द्वंद्व] १. दो मनुष्यों के बीच होनेवाला झगड़ा या युद्ध। द्वंद्व। २. उत्पात। उपद्रव। ऊधम। ३. हो-हल्ला। शोर-गुल।
क्रि० प्र० —मचना।—मचाना।
४. जोड़ा। युग्म।
†पुं०=दुंदुभि (नगाड़ा)।

दुंदका—पुं० [देश०] वह कोल्हू, जिसमें ऊख पेरी जाती है।

दुंदभ*—पुं० [सं० द्वंद्व] मरणादि का क्लेश।

दुंदम—पुं० [सं०दुंद√मण् (शब्द करना)+ड] एक तरह का नगाड़ा।

दुंदु—पुं० [सं०] १. एक तरह का नगाड़ा। २. भगवान् कृष्ण के पिता वसुदेव का एक नाम।
पु०* = दुंदभ।

दुंदुभ—पुं० [सं० दुंदु √भण् (शब्द) + ड] बड़ा नगाड़ा। धौंसा।

दुंदुभि—स्त्री० [सं० दुंदु√भा (शोभित होना)+कि] १. एक तरह का नगाड़ा। २. विष्णु। ३. कृष्ण। ४. वरुण। ५. एक प्राचीन पर्वत। ६. पुराणानुसार क्रौंच द्वीप का एक विभाग। ७. जूए में पासे का एक दाँव। ८. एक राक्षस जिसे बलि ने मारा था। ९. जहर। विष।

दुंदुभिक—पुं० [सं०] एक तरह का विषैला कीड़ा।

दुदुभि-स्वन—पुं० [सं० ब० स०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार की विष-चिकित्सा।

दुंदुभी—स्त्री०= दुंदुभि।

दुंदुमा—स्त्री० [सं०] दुंदुभि पर आघात लगने से होनेवाली ध्वनि।

दुंदुमार—पुं० दे० 'धुंधुमार'।

दुंडुह—पुं० [सं० डुंडुभ] पानी में रहनेवाला साँप। डेंड़हा।

दुंबक—पुं० [सं०] १. एक तरह का मेढ़ा। दुंबा।

दुंबा—पुं० [फा० दुंबालः] मेढ़ों की एक जाति जिनकी दुम चक्की की पाट की तरह गोल और भारी होती है। २. उक्त जाति का मेढ़ा।

दुंबाल—पुं० [फा० दुंबालः] १. चौड़ी पूँछ। २. नाव की पतवार। ३. जहाज या नाव का पिछला भाग।

दुंबुर—पुं० [सं० उदुंबर] गूलर की जाति का एक पेड़ जिसकी टहनियों पर कुछ विशिष्ट कीड़े लाख बनाते हैं।

दुःकुंत†—पुं० = दुष्यंत।

दुःख—पुं० [सं० √दुःख (क्लेश) +अच्] [भू० कृ० दुःखित, वि० दुःखी] १. मन में होनेवाली वह अप्रिय और अवांछित अनुभूति जो किसी प्रकार के अपकार, आघात, आपत्ति, दुर्घटना, दुष्कर्म, निराशा, व्याधि, हानि आदि के फलस्वरूप होती है। अनिष्ट, बुरी या विरोधी मानी जानेवाली बातों के कारण उत्पन्न होनेवाली मन की वह स्थिति जिससे आदमी छूटना या बचना चाहता है। 'सुख' का विपर्याय। (ग्रीफ, सॉरो)
विशेष—(क) शास्त्रों में 'दुःख' का विवेचन और स्वरूप-निर्धारण अनेक प्रकार से किया गया है; उसके कई प्रकार के वर्गीकरण किये गये हैं। और उसके निवारण के अलग-अलग उपाय बताये गये हैं। सांख्य ने उसे चित्त का धर्म माना है, पर न्याय और वैशेषिक ने उसे आत्मा का धर्म कहा है। योग के अनुसार वे सभी बातें दुःख हैं जो समाधि में बाधक होती हैं। गौतम बुद्ध ने तो जन्म से मृत्यु तक की सभी बातों को दुःख माना है; और उसे चार आर्य सत्यों में पहला स्थान दिया है। (ख) लौकिक दृष्टि से 'सुख' का अभाव या विनाश ही दुःख है और वह मानसिक तथा शारीरिक दोनों प्रकार का होता है। कारण या मूल के विचार से यह शास्त्रों में तीन प्रकार का कहा गया है—आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक। (ग) आर्थी दृष्टि से इसके कष्ट, क्लेश, खेद, पीड़ा, विषाद, वेदना, व्यथा, शोक, संताप आदि ऐसे भेद-विभेद हैं, जो मुख्यतः अलग-अलग प्रकार की मानसिक या शारीरिक परिस्थितियों के सूचक हैं और जिनमें यह अनुभूति या मनःस्थिति कभी कुछ हलकी, कभी कुछ तेज और कभी बहुत तेज होती है।
क्रि० प्र० —देना।—पहुँचना।—पाना।—भोगना।—मिलना। —सहना।
मुहा०—**दुःख उठाना** = दुःख भोगना या सहना। **(किसी का) दुःख बँटाना** = दुःख, विपत्ति आदि के समय किसी की सहायता करके उसका दुःख कम करना। **दुःख भरना**=कष्ट या दुःख भोगना या सहना।
२. आपत्ति। विपत्ति। संकट। जैसे—इधर बरसों से उन पर बराबर दुःख पर दुःख आते रहे हैं। ३. बीमारी। रोग। (क्व०)

दुःखकर—वि० [सं० दुःख√कृ (करना)+ट] दुःखद। दुःखदायक।

दुःख-ग्राम—वि० [ब० स०] दुःखों से भरा हुआ।
पुं० संसार।

दुःखजीवी (विन्)—वि० [सं० दुःख√जीव् (जीना) + णिनि] दुःखों में पलने तथा रहनेवाला।

दुःख-त्रय—पुं० [सं० ष० त०] आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक ये तीन प्रकार के दुःख।

दुःखद—वि० [सं० दुःख√दा (देना)+क] १. दुःख या कष्ट देनेवाला। २. जिसके कारण या फलस्वरूप मन को दुःख पहुँचे। जैसे—मृत्यु का दुःखद समाचार।

दुःख-दग्ध—वि० [तृ० त०] बहुत अधिक दुःखी।

दुःखदाता (तृ)—वि० [सं० ष० त०] दुःख पहुँचानेवाला (मनुष्य)।

दुःखदायक—वि० [ष० त०] १. =दुःखदायिन्। २. =दुःखद।

दुःखदायी (यिन्)—वि० [सं० दुःख√दा+णिनि] [स्त्री० दुःखदायनी] १. (व्यक्ति) जो दूसरों को दुःख देता हो। २. दुःखद।

दुःखदोह्या—वि०, स्त्री० [तृ० त०] गाय या भैंस जिसे कठिनता से दूहा जा सके।

दुःख-निवह—वि० [ब० स०] दुःसह।

दुःख-प्रद—वि० [ष० त०] = दुःखद।

दुःख-बहुल—वि० [ब० स०] जिसमें बहुत अधिक दुःख (कष्ट या क्लेश) हो। दुःखमय।

दुःखमय—वि० [सं० दुःख+मयट्] बहुत अधिक दुःख या दुःखों से भरा हुआ। दुःखों से परिपूर्ण। जैसे—दुःखमय जगत।

दुःख-लभ्य—वि० [तृ० त०] १. जो दुःख या कष्ट से प्राप्त होता हो। २. जो कठिनता से मिले।

दुःख-लोक—पुं० [ष० त०] संसार।

दुःख-वाद—पुं० [सं० ष० त०] यह मत या सिद्धांत कि यह सारा संसार और इसमें का जीवन दुःखमय है। 'सुखवाद' का विपर्याय।

दुःखवादी (दिन्)—वि० [सं० दुःखवाद+इनि] दुःखवाद-संबंधी। दुःखवाद का।
पुं० वह जो दुःखवाद का पोषक या समर्थक हो।

दुःख-सागर—पुं० [ष० त०] संसार, जो दुःखों का घर माना गया है।

दुःख-साध्य—वि० [तृ० त०] (कार्य) जिसके साधन में अनेक प्रकार के दुःख सहने पड़े हों।

दुःखांत—वि० [दुःख-अंत ब० स०] जिसका अंत या अंतिम अंश दुःखद, दुःखमय या दुःखों से परिपूर्ण हो। जैसे—दुःखांत नाटक या कहानी।
पुं० १. दुःख की समाप्ति। २. दुःख की पराकाष्ठा।

दुःखातीत—वि० [दुःख-अतीत द्वि० त०] दुःखों से जिसे मुक्ति मिली हो।

दुःखान्वित—वि० [दुःख-अन्वित तृ० त०] १. दुःखमय। २. बहुत अधिक दुःखी।

दुःखायतन—पुं० [दुःख-आयतन ष० त०] दुःखसागर। संसार।

दुःखार्त—वि० [दुःख-आर्त तृ० त०] बहुत अधिक दुःखी।

दुःखित—भू० कृ० [सं० दुःख+इतच्] जिसे बहुत अधिक दुःख (कष्ट या क्लेश) हुआ हो।

दुःखी (खिन्)—वि० [सं० दुःख+इनि] १. जिसे दुःख मिला या पहुँचा हो। २. जिसके मन में किसी प्रकार का दुःख हो। (विशेष दे० 'दुःखी')

दुःशकुन—पुं० [सं० प्रा० स०] बुरा शकुन।

दुःशला—स्त्री० [सं०] सिंधु देश के राजा जयद्रथ की पत्नी का नाम जो धृतराष्ट्र की पत्नी गांधारी के गर्भ से उत्पन्न हुई थी।

दुःशासन—वि० [सं० दुर्√शास् (शासन करना)+युच्-अन्] जिस पर शासन करना बहुत अधिक कठिन हो।
पुं० १. बुरा शासन। २. धृतराष्ट्र का एक पुत्र जो अपने बड़े भाई राजा दुर्योधन का मंत्री था। इसी ने द्रौपदी का वस्त्र खींचकर उसे नग्न करने का प्रयत्न किया था।

दुःशील—वि० [सं० ब० स०] [भाव० दुःशीलता] दुष्ट या बुरे स्वभाववाला।

दुःशीलता—स्त्री० [सं० दुःशील+तल्–टाप्] दुःशील होने की अवस्था या भाव। दुःस्वभाव।

दुःशोध—वि० [सं० दुर्√शुध् (शुद्धि)+खल्] १. जिसका सुधार कठिन हो। २. (धातु) जिसका शोधन बहुत कठिन हो।

दुःश्रव—पुं० [सं० दुर्√श्रु (सुनना)+खल्] काव्य में वह दोष जो उसमें कर्णकटु वर्णों के आने से होता है। श्रुतिकटु दोष।

दुःषम (स्)—पुं० [सं० अव्य० स०] निंदा।

दुःषेध—वि० [सं० दुर्√सिध् (गति)+खल्] जिसका निवारण कठिन हो।

दुःसंकल्प—वि० [सं० ब० स०] बुरा विचार या संकल्प करनेवाला। पुं० बुरा संकल्प।

दुःसंग—पुं० [सं० ब० स०] बुरी संगत या सोहबत। बुरा साथ। कुसंग।

दुःसंधान—पुं० [सं० ब० स०] १. दुःसाध्य कार्य का साधन। २. केशव के अनुसार काव्य में एक रस जो उस स्थल पर होता है जहाँ एक व्यक्ति तो अनुकूल होता है और दूसरा प्रतिकूल।

दुःसह—वि० [सं० दुर्√सह् (सहना)+खल्] जिसे सहन करना बहुत कठिन हो।

दुःसहा—स्त्री० [सं० दुःसह+टाप्] नागदमनी। नागदौन।

दुःसाध—वि० = दुःसाध्य।

दुःसाधी (धिन्)—पुं० [सं० दुर्√साध् (सिद्ध करना)+णिच्+णिनि] द्वारपाल।

दुःसाध्य—वि० [सं० सुप्सुपा समास] १. (कार्य) जिसका साधन या पूरा करना कठिन हो। जैसे—दुःसाध्य परिश्रम। २. जिसका उपाय या प्रतिकार करना बहुत कठिन हो। ३. (रोग) जिसका उपचार या चिकित्सा बहुत कठिनता से हो।

दुःसाहस—पुं० [सं० प्रा० स०] ऐसा साहस जो साधारणतः अनुचित हो या न किया जाने के योग्य हो।

दुःसाहसिक—वि० [सं० दुःसाहस+ठन्—इक] १. (कार्य) जिसे करने का साहस करना अनुचित या निष्फल हो। जैसे—दुःसाहसिक कार्य। २. दे० 'दुःसाहसी'।

दुःसाहसी (सिन्)—वि० [सं० दुःसाहस+इनि] दुःसाहस अर्थात् अनुचित साहस करनेवाला।

दुःस्थ—वि० [सं० दुर्√स्था (ठहरना)+क] १. जिसकी स्थिति बुरी हो। दुर्दशाग्रस्त। २. दरिद्र। निर्धन। ३. मूर्ख।

दुःस्थिति—स्त्री० [सं० प्रा० स०] बुरी अवस्था। दुरास्था। दुर्दशा।

दुःस्पर्श—वि० [सं० दुर्√स्पृश् (छूना)+खल्] जिसे छूना कठिन हो। २. जिसे पाना कठिन हो।
पुं० १. केवाँच। कौंछ। २. लता करंज। ३. कंटकारी। ४. आकाश-गंगा।

दुःस्पर्शा—स्त्री० [सं० दुःस्पर्श+टाप्] कँटेदार मकोय।

दुःस्फोट—पुं० [सं० दुर्√स्फुट (फूटना)+णिच्+अच्] प्राचीन काल का एक प्रकार का शस्त्र।

दुःस्वप्न—पुं० [सं० प्रा० स०] १. ऐसा स्वप्न जिसमें दुःखद घटनाएँ दिखलाई पड़ें। २. ऐसा स्वप्न जिसका परिणाम या फल बुरा हो।

दुःस्वभाव—वि० [सं० ब० स०] बुरे स्वभाववाला। बद-मिजाज। पुं० बुरा स्वभाव।

दुःस्वरनाम—पुं० [सं०] वह पाप कर्म जिसके उदय से प्राणियों के कंठ-स्वर कठोर और कर्कश होते हैं। (जैन)

दु—वि० [हिं० दो] दो का संक्षिप्त रूप जो उसे समस्त पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—दुभाषिया, दुसूती।

दुअ—अव्य० [सं० द्रुत] शीघ्र।
वि०=दो

दुअन—वि०, पुं०=दुवन।

दुअन्नी—स्त्री० [हिं० दो+आना] पुराने दो आने अर्थात् ८ पैसों के मूल्य का एक छोटा सिक्का जो पहिले चाँदी का होता था; पर बाद में निकल का बनने लगा था।

दुअरवा†—पुं० = दुआर (द्वार)।

दुअरा—पुं० = द्वार।

दुअरिया†—स्त्री० = दुआरी (छोटा दरवाजा)।

दुआ—स्त्री० [अ०] १. किसी बड़े अथवा ईश्वर से की जानेवाली प्रार्थना। निवेदन। विनती। २. किसी के कल्याण या मंगल के लिए ईश्वर से की जानेवाली प्रार्थना।
क्रि० प्र०—करना।—माँगना।
३. आशीर्वाद। असीस।
क्रि० प्र०—देना।
मुहा०—(किसी की) दुआ लगना=आशीर्वाद फलीभूत होना।
पुं० [हिं० दो] १. गले में पहनने का एक गहना। २. दे० 'दूआ'।

दुआदस*—पुं० = द्वादश।

दुआदसी†—स्त्री० = द्वादशी।

दुआब—†पुं० = दुआबा।

दुआबा—पुं० [फा० दोआबः] १. दो नदियों के बीच का प्रदेश। २. गंगा और यमुना के बीच का प्रदेश।

दुआर†—पुं० [स्त्री० दुआरी] = द्वार।

दुआरा†—पुं० = द्वार।

दुआरामती—स्त्री० [सं० द्वारावती] द्वारिका। उदा०—देव सु आ दुआरामती।—प्रिथीराज।

दुआरी—स्त्री० [हिं० दुआर] छोटा दरवाजा।

दुआल—स्त्री० [फा०] १. चमड़े का तसमा। २. रिकाब का तस्मा।

दुआला—पुं० [देश०] लकड़ी का एक बेलन जो सुनहरी छपी हुई छींटों के छापों को बैठने के लिए उन पर फेरा जाता है।

दुआली—स्त्री० [फा० द्वाल=तसमा] खराद का तसमा। सान की बद्धी।

दुआह—पुं० [हिं० दु+सं० विवाह] १. पहली पत्नी के मरने के उपरांत पुरुष का होनेवाला दूसरा विवाह। २. पहले पति के मरने पर स्त्री का होनेवाला दूसरा विवाह।

दुइ†—वि० = दो।

दुइज—स्त्री० = दूज (द्वितीया तिथि)।

दुई†—वि० [हिं० दु (दो)+ई (प्रत्य०)] १. दो। २. दोनों।

स्त्री० १. दो होने की अवस्था या भाव। २. अपने को ईश्वर से भिन्न समझने की अवस्था या भाव। द्वैत-भाव। †३. किसी को दूसरा या पराया समझकर उसी के अनुसार उससे व्यवहार करना। दुजायगी। भेद-भाव।

दुऊ†—वि० = दोनों।

दुऔ†—वि० =दोनों।

दुकड़हा—वि० [हिं० दुकड़ा + हा (प्रत्य०)] [स्त्री० दुकड़ही] १. जिसका मूल्य दुकड़े के बराबर हो, फलतः बहुत ही तुच्छ और हीन। २. बहुत ही तुच्छ और हीन प्रकृतिवाला। कमीना। नीच।

दुकड़ा—पुं० [सं० द्विक+ड़ा (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० दुकड़ी] १. एक में या एक साथ लगी हुई दो चीजों का जोड़ा। युग्म। जैसे—धोतियों का दुकड़ा, मोतियों की दुकड़ी। २. एक पैसे का चौथाई भाग।

दुकड़ी—स्त्री० [हिं० दुकड़ा] १. एक साथ जुड़ी या मिली हुई दो चीजें। २. चारपाई की वह बुनावट जिसमें दो-दो रस्सियाँ एक साथ बुनी जाती हैं। ३. ऐसी गाड़ी या बग्घी जिसमें दो घोड़े एक साथ जुतते हों। ४. घोड़ों का दोहरा साज। ५. दो कड़ियोंवाली लगाम। ६. एक साथ दिये या लिये जानेवाले दो रुपए। (दलाल) ७. दे० 'दुक्की'।

दुकना—अ० [देश०] लुकना। छिपना।

दुकम—वि० [सं० दुष्क्लम्प] १. जिस पर आक्रमण करना कठिन हो। २. जिसे पार करना या लाँघना कठिन हो।

दुकान—स्त्री० [फा०] १. वह कमरा या भवन जहाँ से किसी एक अथवा कई प्रकार की चीजें ग्राहकों के हाथ प्रायः फुटकर बेची जाती हैं। जैसे—घी की दुकान, मिठाई की दुकान। २. ऐसा स्थान जहाँ कोई व्यक्ति कुछ पारिश्रमिक प्राप्त करने के लिए दूसरों की सेवाएँ करता हो। जैसे—दरजी या हज्जाम की दुकान।

मुहा०—दुकान करना या खोलना = दुकान लेकर किसी चीज की बिक्री आरंभ करना। दुकान खोलना। **दुकान चलना** = दुकान में होनेवाले व्यवसाय की वृद्धि होना। **दुकान बढ़ाना** = दुकान में बाहर रखा हुआ माल उठाकर अंदर रखना और किवाड़े बंद करना। दुकान बंद करना। **दुकान लगाना**=(क) दुकान का सामान फैलाकर यथास्थान बिक्री के लिए रखना। (ख) बहुत-सी चीजें चारों ओर फैलाकर रखना।

दुकानदार—पुं० [फा०] १. वह जो दुकान करता हो। २. वह जो उस कमरे का स्वामी हो जिसमें कोई दुकान लगाये हो। ३. बहुत अधिक मोल-भाव करनेवाला व्यक्ति। (व्यंग्य) ४. वह जिसने अपनी आय का साधन बनाने के लिए कोई ढोंग रच रखा हो। ५. चालाक व्यक्ति।

दुकानदारी—स्त्री० [फा०] १. दुकान लगाकर सौदा आदि बेचने का काम। २. ऐसा ढोंग जो केवल अपनी आय का साधन बनाने के लिए रचा जाय। ३. बहुत अधिक मोल-भाव करना।

दुकाना—स० [हिं० दुकना] छिपाना। (बुंदेल०)

दुकाल—पुं० [सं० दुष्काल] अकाल। दुर्भिक्ष।

क्रि० प्र०—पड़ना।

दुकुल्ली—स्त्री० [देश०] पुरानी चाल का एक तरह का बाजा जिस पर चमड़ा मढ़ा होता है।

दुकूल—पुं० [सं०√दु+ऊलच्, कुक्] १. सन या तीसी के रेशे का बना हुआ कपड़ा। क्षौम-वस्त्र। २. बढ़िया और महीन कपड़ा। ३. कपड़ा। वस्त्र। ४. स्त्रियों के पहनने की साड़ी। ५. बौद्धों के अनुसार एक प्राचीन मुनि।

दुकेला—वि० [हिं० दुक्का+एला (प्रत्य०)] [स्त्री० दुकेली] जिसके साथ कोई दूसरा भी हो। जो अकेला न हो, बल्कि किसी के साथ हो।

पद—अकेला-दुकेला। (दे०)

दुकेले—अव्य० [हिं० दुकेला] किसी एक के साथ। दूसरे को साथ लिये हुए।

दुक्कड़—पुं० [हिं० दो+कूंड़] १. तबले की तरह का एक बाजा, जो शहनाई के साथ बजाया जाता है। २. एक प्रकार का छोटा नगाड़ा जो एक डुगी के साथ रखकर बजाया जाता है। ३. दो बड़ी नावों का एक साथ जोड़ या बाँधकर बनाया हुआ बेड़ा।

दुक्कना—अ० [सं० दोष] किसी को दोष देना। दोषी ठहराना।

दुक्का—वि० [सं० द्विक] [स्त्री० दुक्की] १. जिसके साथ कोई और भी हो। दुकेला। २. जो एक साथ दो हों। जोड़ा। युग्म।

पद—इक्का-दुक्का।

पुं० ताश का वह पत्ता जिस पर दो बूटियाँ होती हैं। दुक्की।

दुक्की—स्त्री० [हिं० दुक्का] ताश का वह पत्ता जिस पर दो बूटियाँ होती हैं। दुक्का।

दुखंडा—वि० [हिं० दो+खंड] १. जिसमें दो खंड या विभाग हों। २. (घर या मकान) जिसमें ऊपर एक और खंड या तल्ला भी हो। दो मरातिबवाला।

दुखंत*—पुं० = दुष्यंत।

वि० =दुःखांत

दुख—पुं० [सं० दुःख] १. दुःख। (दे०)

क्रि० प्र०—देना।—पहुँचाना।—पाना।— भोगना।—मिलना।

मुहा०—दुख उठाना=कष्ट या तकलीफ भोगना या सहना। ऐसी स्थिति में पड़ना जिसमें सुख या शांति न हो। **दुख बँटाना**=किसी के कष्ट या संकट के समय उसका साथ देना। **दुख भरना** = कष्ट या संकट के दिन जैसे-तैसे बिताना।

२. आपत्ति। विपत्ति। संकट।

मुहा०—(किसी पर) दुख पड़ना = आपत्ति आना। संकट उपस्थित होना।

३. मानसिक कष्ट। खेद। रंज। जैसे—उन्हें लड़के के मरने का बहुत दुख है।

मुहा०—दुख मानना = खिन्न या संतप्त होना। दुःखी होना।

४. पीड़ा। व्यथा। दर्द। ५. बीमारी। रोग।

मुहा०—दुख लगना = ऐसा रोग होना जो बहुत दिनों तक कष्ट देता रहे।

दुखड़ा—पुं० [हिं० दुख+ड़ा (प्रत्य०)] १. ऐसी विस्तृत बातें जिनमें अपने कष्टों, दुःखों, विपत्तियों आदि का उल्लेख या चर्चा हो। तकलीफों का हाल।

मुहा०—(अपना) दुखड़ा रोना = अपने दुःख का वृत्तांत दीन भाव से कहना। अपने कष्टों का हाल सुनाना।

२. कष्ट। तकलीफ। विपत्ति।

क्रि० प्र०—पड़ना।

मुहा०—दुखड़ा पीटना या भरना=बहुत कष्ट से जीवन बिताना।

दुखद—वि० = दुःखद।

दुखदाई†—वि० = दुःखदायी।

दुखदानि*—वि० स्त्री० [सं० दुःखदायिनी] दुःख देनेवाली। तकलीफ पहुँचानेवाली। उदा०—यह सुनि गुरु बानी धनु गुन तानी जानी द्विज दुखदानि।—केशव।

दुखदायक—वि० १.= दुःखद। २.= दुःखदाता।

दुख-द्वंद—पुं० [सं० दुःखद्वंद्व] अनेक प्रकार के दुःख, कष्ट और विपत्तियाँ।

दुखना—अ० [सं० दुःख] १. (किसी अंग का) पीड़ित होना। दर्द करना। पीड़ा युक्त होना। जैसे—आँखें या सिर दुखना। २. किसी पीड़ित अंग या व्रण पर आघात आदि लगने से उसकी पीड़ा बढ़ना। जैसे—घाव या फोड़ा दुखना।

दुखरा †—पुं० = दुखड़ा।

दुखवना †—स० = दुखाना।

दुखहाया †—वि० [हिं० दुःख + हाया (प्रत्य०)] [स्त्री० दुखहाई] दुःख से भरा हुआ। परम दुःखी।

दुखांत—वि० = दुःखांत।

दुखाना—स० [सं० दुःख] १. कष्ट या पीड़ा पहुँचाना। दुःखित या व्यथित करना। जैसे—किसी का जी या मन दुखाना। २. किसी के पीड़ित अंग पर कोई ऐसी क्रिया करना जिससे उसकी पीड़ा फिर से बढ़े। जैसे—किसी का घाव या फोड़ा दुखाना।

† अ० = दुखना।

दुखारा—वि० [हिं० दुख+आर (प्रत्य०)] [स्त्री० दुखारी] दुःखी। पीड़ित।

दुखारो†—वि० = दुखारा।

दुखित—वि० = दुःखित।

दुखिनी—वि० स्त्री० हिं० 'दुखिया' का स्त्री०।

दुखिया—वि० [हिं० दुख+इया (प्रत्य०)] [स्त्री० दुखिनी] १. जो दुःख या कष्ट में पड़ा हो। जिसे किसी प्रकार की व्यथा हो। २. जिसके मन में बराबर किसी तरह का दुःख बना रहता हो। ३. बीमार। रोगी।

दुखियारा—वि० = दुखिया।

दुखी—वि० [सं० दुःखिन्] [स्त्री० दुखिनी] १. जिसे बहुत दुःख हुआ हो। २. जिसे बहुत अधिक मानसिक या शारीरिक कष्ट पहुँचा हो। ३. जो अधिकतर या सदा कष्टों में रहता हो। दीनहीन। ४. बीमार। रोगी।

दुखीला—वि० [हिं० दुख+ईला (प्रत्य०)] १. दुःख से युक्त। दुःखी। २. मन में दुःख का अनुभव करनेवाला।

दुखौहाँ†—वि० [हिं० दुख+ओहीं] [स्त्री० दुखौहीं] १. दुःख देनेवाली। दुःखदायी। २. मन में बराबर दुःखी बना रहनेवाला।

दुगंछा †—स्त्री० [सं० दुः + कांक्षा ?] ग्लानि।

दुग†—स्त्री० =धुक।

वि० = दो।

दुगई †—स्त्री० [देश०] घर के आगे का ओसारा। दालान या बरामदा। (बुंदे०)

दुगदा †—वि० दुर्गम।

दुगदुगी—स्त्री० [अनु० धुक धुक] १. मनुष्य के शरीर में गरदन के नीचे और छाती के ऊपर बीचों-बीच में होनेवाला छोटा गड्ढा।

मुहा०—दुगदुगी में दम होना = प्राण का कंठगत होना। मरणासन्न होना।

२. गले में पहनने का धुकधुकी नाम का गहना। ३. दे० 'धुकधुकी'।

दुगध*—पुं० = दुग्ध (दूध)।

दुगध-नदीस—पुं० = क्षीर-सागर।

दुगधा†—स्त्री० = दुविधा।

दुगन—वि० = दूना।

दुगना—वि० [सं० द्विगुण] [स्त्री० दुगनी] = दूना।

† अ० [?] छिपाना।

दुगाड़ा—पुं० [दो+गाड़ = गड्ढा] १. दुनाली बंदूक। दोनली बंदूक। २. दोहरी गोली।

दुगाना—वि० उभय० [फा० दोगानः] जो दो एक में मिले हों। जुड़वाँ। युग्म। जैसे—दुगाना केला = ऐसा केला जिसमें दो फलियाँ एक साथ जुड़ी हों। दुगाना सिंघाड़ा = एक में जुड़े हुए दो सिंघाड़े।

स्त्री० १. मुसलमान स्त्रियों में एक विशिष्ट प्रकार का सहेलियों का-सा संबंध जो प्रायः बहुत आत्मीयता या घनिष्ठता का सूचक होता है। **विशेष**—यह संबंध इस प्रकार स्थापित होता था कि एक स्त्री भुलावा देकर अपनी सखी को कोई दुगाना चीज या फल देती थी। यदि वह चीज या फल लेने के समय। वह सखी कह देती — 'याद है' तब तो ठीक था। पर यदि वह 'याद है' कहना भूल जाती, तब चीज या फल देनेवाली स्त्री कहती —'फरामोश' अर्थात् तुम 'याद है' कहना भूल गई। उस दशा में फल या चीज देनेवाली स्त्री को वही चीज या फल गिनती में दो सौ गुनी या दो हजार गुनी देनी पड़ती थी जो संबंधियों और सहेलियों में बाँटी जाती थी और इस प्रकार दोनों में दुगाना का संबंध स्थापित होता था।

२. उक्त प्रकार का संबंध स्थापित हो जाने पर परस्पर किया जानेवाला संबोधन। ३. वे दो सखियाँ या सहेलियाँ जो आपस में अप्राकृतिक मैथुन करती अर्थात् भग-संघर्षण करती या चपटी लड़ाती हों।

† पुं० = दोगाना।

दुगासरा—पुं० [सं० दुर्ग+आश्रय] वह गाँव जो किसी दुर्ग के नीचे या पास हो और इसी लिए उसके आसरे या रक्षा में हो।

दुगुण †—वि० = द्विगुण।

दुगुन†—वि० = दुगना।

दुगून—वि० [सं० द्विगुण] दो-गुना। दूना।

स्त्री० गाने-बजाने में वह बढ़ी हुई लय जो आरंभिक लय से दूनी गतिवाली होती है और जिसमें आरंभिक लय में लगनेवाले समय से अपेक्षया लगभग आधा समय लगता है। गाने-बजाने की आरंभिक गति से कुछ और आगे बढ़ी हुई या तेज गति।

विशेष—यही गति और आगे बढ़ने या तीव्र होने पर क्रमात्, तिगून और चौगून कहलाती है।

दुगूल—पुं० = दुकूल।

दुग्ग*—पुं० = दुर्ग।

दुग्गम*—वि० = दुर्गम।

दुग्ध—वि० [सं० √दुह् (दुहना)+क्त] १. दूहा हुआ। २. भरा हुआ।
पुं० १. दूध। २. कुछ विशिष्ट पौधों, वृक्षों आदि में से निकलनेवाला दूध जैसा सफेद तथा लसीला पदार्थ। (दे० 'दूध')

दुग्ध-कल्प—पुं० [ष० त०] वैद्यक में, एक प्रकार की चिकित्सा जिसमें रोगी को केवल दूध पिलाकर नीरोग किया जाता है।

दुग्ध-कूपिका—स्त्री० [सं० दुग्ध-कूप ष० त०, + ठन्—इक, टाप्] एक प्रकार का पकवान जो पिसे हुए चावल और दूध के छेने से बनता था।

दुग्ध-तालीय—पुं० [सं० दुग्ध-ताल ष० त०, छ-ईय] १. दूध का फेन। झाग। २. मलाई।

दुग्ध-पाषाण—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का वृक्ष जिसे बंगाल की ओर शिरगोला कहते हैं।

दुग्ध-पुच्छी—स्त्री० [ब० स० ङीष्] एक प्रकार का वृक्ष।

दुग्ध-फेन—पुं० [ष० त०] १. दूध का फेन। झाग। २. [ब० स०] क्षीर हिंडीर नाम का पौधा।

दुग्ध-फेनी—पुं० [ब० स० ङीष्] एक प्रकार का छोटा पौधा। पयस्विनी। जाय।
स्त्री० दूध में भिगोई हुई फेनी।

दुग्ध-बीजा—स्त्री० [ब० स० टाप्] ज्वार।

दुग्ध-मापक—पुं० [ष० त०] शीशे की वह नली जिसमें भरे हुए पारे के उतार-चढ़ाव से पता चलता है कि दूध में पानी की कितनी मिलावट है। (लैक्टोमीर)

दुग्ध-शर्करा—स्त्री० [ष० त०] दूध में से चूर्ण के रूप में निकाला हुआ उसका मीठा सार भाग। (मिल्क-शूगर)

दुग्धशाला —स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ गौएं आदि रखकर बेचने के लिए दूध आदि तैयार किया जाता है।

दुग्ध-समुद्र—पुं० [ष० त०] पुराणानुसार सात समुद्रों में से एक। क्षीर-सागर।

दुग्धांक—पुं० [दुग्ध-अंक ब० स०] एक तरह का पत्थर जिस पर दूध के रंग के सफेद छोटे चिह्न होते हैं।

दुग्धाक्ष—पुं० [दुग्ध-अक्ष ब० स०] एक तरह का सफेद छींटोंवाला नग।

दुग्धाग्र—पुं० [दुग्ध-अग्र ष० त०] मलाई।

दुग्धाब्धि—पुं० [दुग्ध-अब्धि ष० त०] क्षीर समुद्र।

दुग्धाब्धि-तनया—स्त्री० [ष० त०] लक्ष्मी।

दुग्धाश्मा (श्मन्)—पुं० [दुग्ध-अश्मन् ब० स०] शिरगोला (वृक्ष)।

दुग्धिका—स्त्री० [सं० दुग्ध+उन्—इक, टाप्] १. दुद्धी नाम की घास या जड़ी। २. गंधिका नाम की घास।

दुग्धिनिका—स्त्री० [सं०] लाल चिचड़ा। रक्तापामार्ग।

दुग्धी (ग्धिन्)—वि० [सं० दुग्ध+इनि] जिसमें दूध हो। दूध से युक्त।
पुं० क्षीर वृक्ष।
स्त्री० [दुग्ध+अच्+ङीष्] दुद्धी नाम की घास या जड़ी। दूधिया।

दुग्धोद्योग—पुं० [दुग्ध-उद्योग, ष० त०] दूध या उससे विभिन्न पदार्थ (मक्खन, घी आदि) तैयार करने का उद्योग।

दुघ—वि० [सं०] १. दुहनेवाला। २. देनेवाला। (प्रायः समासांत में)

दुघड़िया—वि० [हिं० दो-घड़ी] दो घड़ियों का। दो घड़िया। जैसे—दुघड़िया मुहूर्त।

दुघड़िया मुहूर्त्त—पुं० [हिं० दो घड़ी+सं० मुहूर्त्त] दो घड़ियों का ऐसा मुहूर्त्त जो विशेष आवश्यकता पड़ने पर तत्काल काम चलाने के लिए निकाला जाता है। द्विघटिका मुहूर्त्त।
क्रि० प्र०—देखना।—निकालना।

दुघरी—स्त्री० = दुघड़िया मुहूर्त्त।

दुचंद—वि० [फा०] दूना। दुगना।

दुचल्ला—पुं० [हिं० दो +चाल] ऐसी छत जिसके दोनों ओर ढाल हों।

दुचित—वि० [हिं० दो+सं० चित्त] १. जिसका चित्त दो बातों में लगा हुआ हो। जो असमंजस या दुविधा में पड़ा हो। २. संदेह में पड़ा हुआ।

दुचितई—स्त्री० = दुचिताई।

दुचिताई—स्त्री० [हिं० दुचित] १. दुचित्ते होने की अवस्था या भाव। २. चित्त की अस्थिरता। असमंजस। दुविधा। ३. संदेह।

दुचित्ता—वि० [हिं० दो+चित्त] [स्त्री० भाव० दुचित्ती] १. जिसका चित्त या मन किसी एक बात पर स्थिर न हो। जो असमंजस या दुविधा में पड़ा हो। २. आशंका या खटके के कारण जिसका मन शांत या स्थिर न हो। ३. दो कठिनाइयाँ सामने होने पर जो कभी एक ओर और कभी दूसरी ओर ध्यान देता हो।

दुचित्ती—स्त्री० [हिं० दुचित्ता] दुचित्ते होने की अवस्था या भाव।

दुच्छक—पुं० [सं० दु (ताप) +क्विप्, तुक्, दुत्√शक् (सकना)+अच्] कपूरकचरी।

दुछण—पुं० [सं० द्वेषण= शत्रु] सिंह। (डिं०)

दुज†—पुं० = द्विज। (दुज के यौगिक शब्दों लिए दे० 'द्विज' के यौ०)

दुजड़—स्त्री० [देश०] [स्त्री० अल्पा० दुजड़ी] तलवार। (डिं०)

दुजड़ी—स्त्री० [देश०] कटारी। (डिं०)

दुजन्मा†—पुं० = द्विजन्मा।

दुजानू—क्रि० वि० [फा० दुज़ानू] दोनों घुटनों के बल।

दुजायगी—स्त्री० [हिं० दो+फा० जायगाह ?] १. जिनके साथ आपस-दारी का व्यवहार रहा हो, उनके साथ किया जानेवाला परायेपन का व्यवहार। २. जिनके प्रति समान व्यवहार करना आवश्यक या उचित हो उनमें से किसी एक के साथ किया जानेवाला भेद-भाव।

दुजिह्व—वि०, पुं० = द्विजिह्व।

दुजीह†—पुं० = द्विजिह्व।

दुजेश†—पुं० = द्विजेश।

दुज्ज†—पुं० = द्विज।

दुज्जन†—वि० = दुर्जन।

दुझारना*—स० [हिं० झाड़ना] झटकारना। झाड़ना।

दुटूक—वि० [हिं० दो+टूक] दो टुकड़ों में किया या तोड़ा हुआ।
पद—दुटूक बात = थोड़े में कही हुई ऐसी बात जिसमें साफ-साफ यह बतलाया गया हो कि हम या तो यह काम या बात करेंगे अथवा वह काम या बात करेंगे। (प्रश्न, विवाद आदि के प्रसंग में)

दुड़ि—स्त्री० [सं०] दुलि। कच्छपी।
†स्त्री० = दुक्की (ताश की)।

दुड़ियंद—पुं० [?] सूर्य। (डिं०)

दुड़ी†—स्त्री० = दुक्की (ताश की)।

दुत—अव्य० [अनु०] एक शब्द जो उपेक्षा, तिरस्कार या निरादर-पूर्वक दूर करने या हटाने के समय कहा जाता है। दुतकारने का शब्द। †स्त्री०=द्युति। उदा०—गुण भूषण भुरजालरो, जस मैं दुत जागंत।—बाँकीदास।

दुतकार—स्त्री० [अनु० दुत+कार] १. दुतकारने की क्रिया या भाव। २. वह बात जो किसी को उपेक्षा या तिरस्कारपूर्वक 'दुत' कहते हुए दूर करने या हटाने के लिए कही जाय।
क्रि० प्र०—बताना।

दुतकारना—स० [हिं० दुतकार] १. उपेक्षा या तिरस्कारपूर्वक दुत् दुत् शब्द करके किसी को अपने पास से अलग या दूर करना। बुरी तरह से अपमानित करके दूर हटाना। २. तिरस्कृत करना।

दुतर†—वि० = दुस्तर।

दुतरणि—वि० [सं० दुस्तरण] १. कठिन। २. दुःखदायक। (राज०)

दुतरफा—वि० [फा० दुतर्फ़ः] [स्त्री० दुतरफी] जो दोनों ओर हो। इधर भी और उधर भी होने या रहनेवाला। जैसे—कपड़े की दुतरफा छपाई। २. (आचरण या व्यवहार) जो निश्चित रूप से किसी एक ओर न हो, बल्कि आवश्यकतानुसार दोनों तरफ माना या लगाया जा सकता हो। जैसे—दुतरफा काट या चाल।

दुताबी—स्त्री० [हिं० दो+फा० ताव] पुरानी चाल की एक तरह की दुधारी तलवार।

दुतारा—पुं० [हिं० दो+तार] सितार की तरह का एक प्रकार का बाजा जिसमें दो तार लगे होते हैं और जो तर्जनी उँगली से बजाया जाता है।

दुति†—स्त्री० = द्युति।

दुतिमान—वि० = द्युतिमान्।

दुतिय†—वि० =द्वितीय।

दुतिया—वि० = द्वितीय।
स्त्री० = द्वितीया।

दुतिवंत*—वि० [हिं० दुति + वंत (प्रत्य०)] १. आभायुक्त। चमकीला। प्रकाशमान्। २. शोभायुक्त। सुंदर।

दुती†—वि० = द्वितीय।
स्त्री० = द्युति (चमक)।

दुतीय†—वि० = द्वितीय।

दुतीया†—वि० = द्वितीय।
स्त्री० = द्वितीया।

दुत्तर†—वि० = दुस्तर।

दुधन—स्त्री० [?] पत्नी। जोरू। (कुमाऊँ)

दुथरी—स्त्री० [देश०] एक तरह की मछली।

दुदल—वि० [सं० द्विदल] फूटने या टूटने पर जिसके दो बराबर दल या खंड हो जायँ। द्विदल।
पुं० १. एक प्रकार का पहाड़ी पौधा जिसे कान-फूल और बरन भी कहते हैं। २. दे० 'दाल'।

दुदलाना †—स० [अनु०] दुतकारना।

दुदहेंड़ी †—स्त्री० = दुधहेंड़ी।

दुदामी—स्त्री० [हिं० दो +दाम] पुरानी चाल का एक तरह का सूती कपड़ा। (मालवा)

दुदिला—वि० [हिं० दो +फा० दिल] १. असमंजस या दुविधा में पड़ा हुआ। २. जिसका मन कभी एक ओर कभी दूसरी ओर होता हो। दुचित्ता। ३. चिंतित और व्यग्र।

दुदुकारना†—स० = दुतकारना।

दुद्धी—स्त्री० [सं० दुग्धी] १. एक प्रकार की घास जिसके डंठलों में थोड़ी थोड़ी दूर पर गाँठें होती हैं और जिनके दोनों ओर एक-एक पत्ती होती है। २. थूहर की जाति का एक छोटा पौधा जो भारतवर्ष के सब गरम प्रदेशों में होता है। इसका दूध दमे या श्वास के रोग में दिया जाता है। ३. सारिवा नाम की लता। ४. जंगली नील। ५. एक प्रकार का बड़ा पेड़ जो मध्य प्रदेश और राजस्थान में होता है।
स्त्री० [हिं० दूध] १. दूधिया नाम की मिट्टी। खड़िया। २. एक प्रकार का धान।

दुद्रुम—पुं० [सं० दुर्-द्रुम प्रा० स, पृषो० रलोप] प्याज का हरा पौधा।

दुध—पुं० [हिं० दूध] १. 'दूध' का वह संक्षिप्त रूप जो उसे यौ० पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—दुध-मुँहाँ, दुध-हँड़ी।
† २. दूध। (पश्चिम)

दुध-कट्टू—वि० [हिं० दूध+काटना] वह शिशु जिसकी माँ को दूसरी संतान हो गई हो और इस कारण या अन्य कारण से जो माँ का दूध उचित अवधि तक न पी सका हो।

दुध-पिठवा—पुं० [सं० दुग्ध, हिं० दूध+सं० पिष्टक, हिं० पीठा] एक प्रकार का पकवान जो गुंधे हुए मैदे की लंबी-लंबी बत्तियों को दूध में उबाल कर बनाया जाता है।

दुधमुख—वि० = दुध-मुहाँ।

दुध-मुँहाँ—वि० [हिं० दूध +मुँह] (शिशु) जो अभी तक अपनी माँ का दूध पीता हो। माँ का दूध पीनेवाला (छोटा बच्चा)।

दुधहँड़ी—स्त्री० [हिं० दूध+हाँड़ी] मिट्टी की वह हाँड़ी जिसमें दूध गरम किया जाता है।

दुधाँड़ी†— स्त्री० = दुधहँड़ी।

दुधा—अव्य० [सं० द्विधा] दो प्रकार से। दो तरह से। उदा०—एकहि देव दुदेह दुदेहरे देव दुधायक देह दुहू मैं।—देव।
†स्त्री० = दुविधा।

दुधार—वि० [हिं० दूध+आर (प्रत्य०)] १. दूध देनेवाली। जो दूध देती हो। जैसे–दुधार गौ। २. जिसमें दूध रहता या होता हो।
† वि० = दुधारा।

दुधारा—वि० [हिं० दो + धार] [स्त्री० दुधारी] जिसमें दोनों ओर धार हो (तलवार, छुरी आदि)। जैसे—दुधारा खाँड़ा।
पुं० एक प्रकार का चौड़ा खाँड़ा जिसमें दोनों ओर धार होती है।

दुधारी—स्त्री० [हिं० दूध +आर (प्रत्य०)] एक प्रकार की कटार जिसमें दोनों और धार होती है।
वि० १. = दुधार। २. 'दुधारा' का स्त्री०।

दुधारु—वि०, स्त्री० = दुधार।

दुधित—वि० [सं०] १. पीड़ित। २. व्याकुल।

दुधिया—वि०, पुं०, स्त्री० = दूधिया।

विशेष—'दुधिया' के यौ० के लिए देखें 'दूधिया' के यौ०।

दुधेली†—स्त्री० [सं० दुग्धी] थूहर की जाति का दुद्धी नाम का पौधा।

दुधैल—वि० = दुधार।

दुध्र—वि० [सं० दुर्√ धृ (धारण)+क, पृषो० सिद्धि] हिंसक।

दुनया—पुं० [सं० द्वि०, हिं० दो+सं० नदी, प्रा० णई] दो नदियों का संगम-स्थान।

दुनरना—अ०, स० = दुनवना।

दुनवना—अ० [हिं० दो+नवना = झुकना] नरम या लचीली चीज का इस प्रकार झुकना कि उसके दोनों छोर एक दूसरे से मिल जायँ अथवा पास-पास हो जायँ। लचकर दोहरा हो जाना।

स० १. झुका या लचाकर दोहरा करना। २. कुचल या रौंदकर नष्ट-भ्रष्ट करना। उदा०—तरनि जवार नभवार नभतरनि जै तरनि दैव तरनि कै दुखत्तम दुने हैं। —देव। ३. धुनना।

दुनहुँ—वि० = दोनों।

दुनाली—वि० स्त्री० [हिं० दो +नाल] जिसमें दो नल या नलियाँ हों।

स्त्री० एक प्रकार की बंदूक जिसके आगे दो नलियाँ होती हैं और जिसमें से दो गोलियाँ एक साथ छूटती या निकलती हैं।

दुनावा—वि० [हिं० दो+नाव = खाँचा] [स्त्री० दुनावी] (कटार, तलवार आदि का फल) जिस पर दो खाँचे बने हों।

दुनियवी—वि० = दुनियावी (सांसारिक)।

दुनिया—स्त्री० [अ० दुन्या] १. जगत। संसार।

मुहा०—**दुनिया की हवा लगना**= (क) सांसारिक बातों का अनुभव होना। (ख) संसार में होनेवाले अनुचित कार्यों की ओर प्रवृत्त होना। **दुनिया से उठ जाना या चल बसना** = मर जाना।

पद—**दुनिया के परदे पर**=सारे संसार में। **दुनिया भर का** = बहुत अधिक परंतु व्यर्थ का अथवा इधर-उधर का।

२. संसार के लोग। लोक। जनता। जैसे—जरा यह तो सोचो कि दुनिया क्या कहेगी। ३. संसार और घर-गृहस्थी के झगड़े-बखेड़े।

दुनियाई—वि० [अ० दुन्या+हिं० ई० (प्रत्य०)] सांसारिक। लौकिक। †स्त्री० = दुनिया।

दुनियादार—पुं० [फा०] [भाव० दुनियादारी] १. सांसारिक प्रपंच में फँसा हुआ मनुष्य। संसारी। गृहस्थ। २. जो सांसारिक आचरण, व्यवहार आदि में कुशल या दक्ष हो।

दुनियादारी—स्त्री० [फा०] १. सांसारिक कार्यों और घर-गृहस्थी का निर्वाह। २. सांसारिक कार्यों और घर-गृहस्थी के झगड़े-बखेड़े या प्रपंच। ३. संसार में रहकर उचित ढंग से आचरण या व्यवहार करने का कौशल या योग्यता। ४. लोकाचार। ५. ऐसा आचरण या व्यवहार जो केवल लौकिक दृष्टि से या लोगों को दिखलाने भर के लिए किया जाय।

दुनियावी—वि० [अ० दुन्यवी] दुनिया का। संसार-संबंधी। सांसारिक।

दुनियासाज—पुं० [अ० दुन्या+फा० साज] [भाव० दुनियासाजी] लोगों के रंग-ढंग देखकर उन्हीं के अनुसार आचरण या व्यवहार करते हुए अपना काम चलाने या निकालनेवाला व्यक्ति।

दुनियासाजी—स्त्री० [हिं० दुनियासाज] १. दुनियासाज होने की अवस्था या भाव। २. लोगों के रंग-ढंग देखकर उन्हीं के अनुसार आचरण या व्यवहार करके अपना काम निकालने का कौशल।

दुनी—स्त्री० [अ० दुन्या] संसार। जगत।

दुनो (नों)ना—अ०, स० = दुनवना।

दुपटा—पुं० [स्त्री० अल्पा० दुपटी] = दुपट्टा।

दुपटी—स्त्री० [हिं० दुपटा] १. छोटा दुपट्टा। २. चादर।

दुपट्टा—पुं० [हिं० दो +पाट] [स्त्री० अल्पा० दुपट्टी] १. स्त्रियों के सिर पर ओढ़ने का वह कपड़ा जो दो पाटों को जोड़कर बना हो। दो पाट की ओढ़ने की चद्दर।

मुहा०—(**मुँह पर**) **दुपट्टा तान कर सोना** = निश्चित होकर सोना। बेखटके सोना। (**किसी से**) **दुपट्टा बदलना** = किसी को अपनी सहेली बनाना।

२. कंधे या गले पर डालने का लंबा कपड़ा।

दुपद†—पुं० = द्विपद।

दु-परता—वि० [हिं० दो + परत] [भाव० दुपरती] जिसमें दो परतें हों।

दुपर्दी—स्त्री० [हिं० दो +फा० पर्दा] एक तरह की बगलबंदी।

दु-पलिया†—वि० [हिं० दो +पल्ला] जिसमें दो पल्ले हों।

दु-पल्ला—वि० [हिं० दो +पल्ला] [स्त्री० दुपल्ली] जिसमें दो पल्ले एक साथ जुड़े या लगे हों। जैसे—दुपल्ला दरवाजा, दुपल्ली टोपी।

दुपहर†—स्त्री० = दोपहर।

दुपहरिया—स्त्री० [हिं० दो + पहर] १. मध्याह्न का समय। दोपहर। २. गुल-दुपहरिया नाम का पौधा और उसका फूल।

वि० जिसका गर्भाधान दोपहर को हुआ हो, अर्थात् बहुत दुष्ट या पाजी। (बाजारू)

दुपहरी—स्त्री० = दुपहरिया।

दु-पासिया—पुं० [हिं० दो +पाँसा] चौपड़ का वह खेल जो चार आदमियों के साथ बैठकर खेलने पर इस प्रकार खेला जाता है कि आमने-सामने के दोनों खेलाड़ी अपने-अपने पाँसों में एक दूसरे के साथी होते हैं।

दुपो—पुं० [सं० द्विप] हाथी। (डिं०)

दुफसला—वि० [हिं० दो+अ० फस्ल] [स्त्री० दुफसली] दोनों फसलों में उत्पन्न होनेवाला। जो रबी और खरीफ दोनों में हो।

दुफसली—वि० [हिं० दुफसला] १. जिसके दो रुख या पक्ष हों। दोनों तरह का। जैसे—तुम तो हमेशा दुफसली बातें करते हो। २. दे० 'दुफसला'।

दुबकना—अ० = दबकना।

दु-बगली—स्त्री० [हिं० दो +बगल] मालखंभ की एक कसरत।

दुब-ज्यौरा—पुं० [हिं० दूब+जेंवरी] गले में पहनने का एक गहना।

दुबड़ा—पुं० [हिं० दूब] एक तरह की घास।

दुबधा—स्त्री० = दुबिधा।

दुबधा†—पुं० दे० 'हुदहुद' (पक्षी)।

दुबरा†—वि० [भाव० दुबराई] = दुबला।

दुबराना†—अ०, स० = दुबलाना।

दुबराल गोला—पुं० [हिं० दो+अं० बैरल + हिं० गोला] तोप का लंबोतरा गोला।

दुबराल पलंग--पुं० [हिं० दुबराल+अं० पुलिंग] पाल की वह डोरी जिसे खींचकर पाल के पेट की हवा निकालते हैं।

दुबला—वि० [सं० दुर्बल] [स्त्री० दुबली, भाव० दुबलापन] १. क्षीण शरीरवाला। हलके और पतले बदनवाला। कृश। २. कम शक्ति वाला। निर्बल।

दुबलाना—अ० [हिं० दुबला] दुबला होना। जैसे—चार दिन के बुखार में लड़का दुबला गया है।

स० किसी को दुबला करना। जैसे—चिन्ता ने उन्हें दुबला दिया है।

दुबलापन—पुं० [हिं० दुबला +पन] दुबले होने की अवस्था या भाव।

दुबाँहिया—वि० [सं० द्विबाहु] जो दोनों हाथों से कोई काम समान रूप से कर सकता हो।

पुं० वह योद्धा जो दोनों हाथों से तलवार चलाता या चला सकता हो।

दुबाइन—स्त्री० [हिं० 'दूबे' का स्त्री०] १. दूबे जाति की स्त्री। २. 'दूबे' की पत्नी।

दुबागा—पुं० [हिं० दो+फा० बाग = लगाम] सन की बटी हुई मोटी रस्सी।

दुबारा—क्रि० वि० [फा० दुबार:] दोबारा। (दे०)

दुबाला†—वि० = दोबाला।

दुबिद—पुं० = द्विविद (वानर)।

दुबिध—स्त्री० = दुविधा।

दुबिधा—स्त्री० = दुबिधा।

दुबिसी—स्त्री० [हिं० दो+बीच] ऐसी स्थिति जिसमें मनुष्य कुछ निर्णय न कर पा रहा हो। दुविधा की स्थिति।

दुबीचा—पुं० [हिं० दो+बीच] १. दो परस्पर विरोधी बातों आदि के बीच की ऐसी स्थिति जिसमें सहसा किसी पक्ष में निर्णय न हो सके। असमंजस। दुबिधा। २. अनिष्ट की आशंका। खटका।

दुबे—पुं० = दूबे (द्विवेदी)।

दुभाखी—पुं० = दुभाषिया।

दुभालिया—पुं० [हिं० दो +भाला] एक तरह का दो फलोंवाला अस्त्र।

दुभाषिया—वि० [सं० द्विभाषी] दो भाषाएँ जानने और बोलनेवाला।

पुं० ऐसा व्यक्ति जो दो विभिन्न भाषा-भाषियों को एक दूसरे की बातें समझाता और उनके भावों के आदान-प्रदान का माध्यम बनता हो। मध्यस्थ।

दुभाषी—वि०, पुं० [सं० द्विभाषिन्] दुभाषिया।

दुभिख†—पुं० = दुर्भिक्ष।

दुभुज—वि० = द्विभुज।

दुमंजिला—वि० [फा०] [स्त्री० दुमंजिली] (घर या मकान) जिसमें दो मंजिल अर्थात् खंड या तल्ले हों।

दुम—स्त्री० [फा०] १. पशुओं तथा रीढ़वाले अन्य जंतुओं के पिछले भाग में लटकता रहनेवाला लचीला मांसल लंबा अंग जिस पर प्रायः बाल भी होते हैं। पूंछ। जैसे—हाथी या शेर की दुम, चूहे या नेवले की दुम।

विशेष—(क) पक्षियों का उक्त भाग कड़े तथा घने पंखों का बना होता है। (ख) सरी-सृपों आदि में उनका पिछला अंश दूसरे भाग की अपेक्षा पतला होता है। जैसे—साँप की दुम।

मुहा०—(किसी की) **दुम के पीछे लगे फिरना** = किसी के पीछे-पीछे लगे फिरना। **दुम दबाकर भागना** = डरपोक कुत्ते की तरह डरकर पीछे हटना या भागना। **दुम दबा जाना**=(क) डर के मारे पीछे हट जाना। डर से भाग जाना। (ख) डरकर चुपचाप जहाँ के तहाँ बैठे रहना। (**किसी के सामने**) **दुम हिलाना**=कुत्ते की तरह दीन बनकर किसी को प्रसन्न करने का प्रयत्न करना।

२. लाक्षणिक रूप में, किसी वस्तु का अंतिम या पिछला लंबा तथा लचीला सिरा जो देखने में दुम के समान जान पड़े। जैसे—गुड्डी या पतंग की दुम।

मुहा०—(**किसी बात का**) **दुम में घुसना**=गायब हो जाना। दूर हो जाना। जैसे—सारी शेखी दुम में घुस गई। (**किसी की**) **दुम में घुसा रहना** = खुशामद के मारे पीछे-पीछे घूमना या लगे रहना।

३. किसी बड़े तारे के पीछे के छोटे-छोटे तारे जो एक पंक्ति में हों। ४. किसी के पीछे-पीछे लगा रहनेवाला हीन व्यक्ति। ५. किसी काम या बात का अंतिम और तुच्छ अंश या भाग।

*पुं० = द्रुम (वृक्ष)।

दुमची—स्त्री० [फा०] १. घोड़े के साज में वह तसमा जो पूँछ के नीचे दबा रहता है। २. कमर के नीचे दोनों चूतड़ों के बीच की हड्डी। ३. पतली या हलकी डाल अथवा शाखा।

दुमदार—वि० [फा०] १. जिसे दुम हो। पूँछवाला। पुच्छल। २. जिसके पीछे या साथ दुम की तरह कोई पतली लंबी चीज लगी हो। जैसे—दुमदार तारा।

दुमन—वि० दे० 'दुचित्ता'।

दुमात†—स्त्री० = दुमाता।

दुमाता—स्त्री० [सं० दुर्मातृ] १. बुरी माता। २. सौतेली माँ। विमाता।

दुमाला—पुं० [हिं० दो+माला] पाश। फंदा।

दुमाहा—वि० [हिं० दो + माह] १. दो महीने की अवस्थावाला। २. हर दो महीने पर होनेवाला।

दुमुँहा—वि० [हिं० दो+मुँह] १. जिसके दो मुँह हों। २. जिसके दोनों ओर मुँह हों।

दुर्—उप० [सं०√दु (पीड़ित करना)+रुक् या सुक्] १. एक संस्कृत उपसर्ग जिसका प्रयोग शब्दों के आरंभ में नीचे लिखे अर्थ या भाव सूचित करने के लिए होता है—(क) अनुचित, दूषित या बुरा। जैसे—दुरात्मा, दुर्जन, दुर्भाव। (ख) जो सहज में न हो सके अर्थात् कठिन या कष्ट-साध्य। जैसे—दुर्गम, दुर्बोध, दुर्वह। (ग) अभावपूर्ण। जैसे—दुर्बल।

दुरंग—पुं० [सं० दुर्ग] किला। गढ़। (राज०) उदा०—लड़ नह लीधो जाय ओ दीधो जाय दुरंग।—बाँकीदास।

वि० = दुरंगा।

दुरंगा—वि० [हिं० दो + रंग] [स्त्री० दुरंगी, भाव० दुरंगापन] १. दो रंगोंवाला। जिसमें दो रंग हों। २. दो तरह या प्रकार का। ३. दो तरह का अर्थात् दोहरी चाल चलनेवाला।

दुरंगी—स्त्री० [हिं० दोरंगा] १. दो रंगों या प्रकारों के होने का भाव। दोरंगापन। २. दो तरह का अर्थात् कभी इस पक्ष के अनुकूल और कभी उस पक्ष के अनुकूल किया जानेवाला आचरण या व्यवहार।

दुरंत—वि० [सं० दुर्-अंत प्रा० ब० स०] १. जिसका अंत या पार पाना कठिन हो। अपार। उदा०—द्रौपदी का यह दुरंत दुकूल है।—पंत। २. बहुत कठिन। दुस्तर। ३. तीव्र। प्रचंड। ४. बहुत विकट। घोर। ५. खल। दुष्ट। ६. जिसका अंत या परिणाम बहुत बुरा हो या होने को हो।

दुरंतक—पुं० [सं० दुरंत+कन्] शिव।

दुरंतर—वि० [सं० दुरंत] १. कठिन। २. दुर्गम।

दुरंधा*—वि० [सं० द्विरंध्र] १. जिसमें दो छेद हों। २. जिसके दोनों ओर छेद हों। ३. आर-पार छिदा हुआ।

दुर—अव्य० [हिं० दूर] एक अव्यय जिसका प्रयोग किसी को तिरस्कार पूर्वक दूर हटाने के लिए होता है और जिसका अर्थ है–'दूर हो'।

पद—दूर दूर फिट फिट = बहुत बुरी तरह से या परम तुच्छ और हीन समझकर किया जानेवाला तिरस्कार।

मुहा०—(किसी को) दुर दुर करना = तिरस्कारपूर्वक कुत्ते की तरह हटाना या भगाना।

पुं० [फा०] १. मोती। मुक्ता। २. नाक में पहनने का मोती का लटकन। बुलाक। लोलक। ३. कान में पहनने की ऐसी छोटी बाली जिसमें मोती पिरोये हों।

दुरक्ष—वि० [सं० दुर्-अक्षि ब० स०] १. जिसे कम दिखाई पड़ता हो। २. बुरी या दूषित निगाहवाला।

पुं० [दुर्-अक्ष प्रा० स०] १. जूए में बेईमानी करने के लिए खास तौर से बनाया हुआ पासा। २. उक्त पासे पर खेला जानेवाला जूआ।

दुरखा—पुं० [देश०] [स्त्री० दुरखी] एक प्रकार का फतिंगा जो गेहूँ, तमाकू, नील, सरसों आदि की खेती को हानि पहुँचाता है।

दुरचुम—पुं० [देश०] दरी के ताने के दो-दो सूतों को इसलिए एक में बाँधना कि वे उलझ न जायँ।

दुरजन—पुं० = दुर्जन।

दुरजोधन—पुं० = दुर्योधन।

दुरति—स्त्री० [हिं० दु+सं० रति] १. दो परस्पर विरोधी या विभिन्न बातों के प्रति होनेवाली रति या अनुराग। २. द्वैध-भाव। उदा०—दुरति दूर करो नाथ, अशरण हूँ गहो हाथ।—निराला।

दुरतिक्रम—वि० [सं० दुर्-अति √क्रम (गति)+खल्] १. जिसका अतिक्रमण या उल्लंघन सहज में न हो सके अर्थात् प्रबल या विकट। २. जिसका या जिससे पार पाना बहुत कठिन हो।

दुरत्यय—वि० [सं० दुर्-अति√इ (गति)+खल्] १. जिसका या जिससे पार पाना कठिन हो। २. जिसका अतिक्रमण सहज न हो। दुस्तर।

दुरथल*—पुं० [सं० दुःस्थल] १. बुरा स्थान। २. कुठाँव। उदा०—दुरदिन परे रहीम कहि दुरथल जैयत भाग।—रहीम।

दुरद—पुं० = द्विरद।

दुरदाम*—वि० = दुर्दम।

दुरदाल†—पुं० [सं० द्विरद] हाथी।

दुरदुराना—स० [हिं० दुरदुर] दुरदुर कहते हुए तिरस्कारपूर्वक दूर करना। अपमान करते हुए भगाना या हटाना।

संयो० क्रि०—देना।

दुरदृष्ट—वि० [सं० दुर्-अदृष्ट प्रा० ब० स०] अभागा।

पुं० १. दुर्भाग्य। २. पाप।

दुरधिगम—वि० [सं० दुर्-अधि√गम् (जाना)+खल्] १. जिसके पास पहुँचना बहुत कठिन हो। २. जिसे प्राप्त करना बहुत कठिन हो। दुर्लभ। दुष्प्राप्य। ३. जो जल्दी समझ में न आवे। दुर्बोध।

दुरधिष्ठित—वि० [सं० दुर्-अधि√स्था (स्थिति)+क्त] १. बुरी तरह से किया हुआ। २. अव्यवस्थित।

दुरधीत—पुं० [सं० दुर्-अधीत प्रा० स०] वेदों का अशुद्ध उच्चारण तथा अशुद्ध स्वर से किया जानेवाला अध्ययन या पाठ।

वि० बुरी तरह से पढ़ा जानेवाला या पढ़ा हुआ।

दुरधुरा—स्त्री० [यू० दुरोधोरिया] बृहज्जातक के अनुसार जन्म कुंडली का एक योग जिसमें अनफा और सुनफा दोनों योगों का मेल होता है।

दुरध्व—वि० [सं० दुर्-अध्वन् प्रा० स०, अच्] जिस पर चलना कठिन हो।

पुं० १. कुमार्ग। १. विकट मार्ग। बीहड़ रास्ता। उदा०—चलना होगा कब तक दुरध्व पर हृदय बाल।—दिनकर।

दुरना—अ० [हिं० दूर] १. किसी का आँखों से दूर होना। आड़ या ओट में होना। २. प्रत्यक्ष या सामने न होना। छिपना।

संयो० क्रि०—जाना।

दुरन्वय—वि० [सं० दुर्-अनु√इ (गति)+खल्] दुष्प्राप्य।

पुं० अशुद्ध निष्कर्ष।

दुरपदी†—स्त्री० = द्रौपदी।

दुरपवाद—पुं० [सं० दुर्-अपवाद प्रा० स०] १. निंदा। २. बदनामी।

दुरबचा—पुं० [फा० दुर+हिं० बच्चा] ऐसी छोटी बाली जिसमें एक ही मोती हो।

दुरबल†—वि० = दुर्बल।

दुरबस*—पुं० = दुर्वासा।

दुरबार*—वि० [सं० दुर्वार] जिसका निवारण न किया जा सके।

दुरबास†—स्त्री० [सं० दुर्वास] बुरी गंध। दुर्गंध।

दुरबीन—स्त्री० = दूरबीन।

दुरबेस—पुं० = दरवेश।

दुरभिग्रह—वि० [सं० दुर्-अभि√ग्रह् (पकड़ना)+खल्] जो सरलता से पकड़ा न जा सके।

पुं० अपामार्ग। चिचड़ा।

दुरभिग्रहा—स्त्री० [सं० दुरभिग्रह+टाप्] १. केवाँच। कौंछ। २. धमासा।

दुरभिसंधि—स्त्री० [सं० दुर्-अभिसंधि प्रा० स०] दुष्ट उद्देश्य से की जानेवाली मंत्रणा या सलाह। कुमंत्रणा। षड्यंत्र।

दुरभेव—पुं० = दुर्भाव।

दुरमति†—वि० स्त्री० = दुर्मति।

दुरमुट—पुं० = दुरमुस।

दुरमुस—पुं० [सं० दुर (उप०)+मुस = कूटना] जमीन पीटकर समतल करने का पत्थर का गोल टुकड़ा जो लंबे डंडे में जड़ा रहता है।

दुरलभ—वि० = दुर्लभ।

दुरवग्रह—वि० [सं० दुर्-अव√ग्रह (पकड़ना) खल्] जिसे रोकना अथवा नियंत्रित करना कठिन हो।

दुरवधार्य—वि० [सं० दुर्-अव √धृ (धारण) +ण्यत्] १. जिसका अवधारण सहज में न हो सके। २. जो ठीक तरह से ठहरा या बना न रह सके। ३. (भार) जो सहज में सँभाला न जा सके।

दुरवस्थ—वि० [सं० दुर्-अवस्था प्रा०ब०स०] हीन अवस्था में पड़ा हुआ।

दुरवस्था—स्त्री० [सं० दुर्-अवस्था प्रा० स०] १. बुरी दशा। २. कष्ट, दरिद्रता आदि के कारण होनेवाली हीन अवस्था। ३. दुर्दशा।

दुरवाप—वि० [सं० दुर्-अव √आप् (प्राप्त)+खल्] दुष्प्राप्य।

दुरवार—वि० =दुर्वार।

दुरस†—पुं० [हिं० दो +औरस] सहोदर भाई।

दुराउ†—पुं० =दुराव।

दुराक—पुं० [सं०] १. एक प्राचीन म्लेच्छ जाति। २. एक प्राचीन देश जिसमें उक्त जाति रहती थी।

दुराक्रम—वि० [सं०] दुर्जय।

दुराक्रमण—पुं० [सं० दुर-आक्रमण प्रा० स०] १. कपटपूर्ण आक्रमण। २. ऐसा स्थान जहाँ जाना या पहुँचना कठिन हो।

दुरागम—पुं० [सं० दुर्-आ√गम् (जाना)+खल्] अनुचित या अवैध रूप से आना, मिलना या प्राप्त होना।

दुरागमन—पुं० = द्विरागमन।

दुरागौन—पुं० [सं० द्विरागमन] वधू का दूसरी बार अपनी ससुराल जाना। द्विरागमन। गौना।

क्रि० प्र० —करना।—कराना।—लाना।

मुहा०—**दुरागौन देना** = लड़की को दूसरी बार ससुराल भेजना।

दुराग्रह—पुं० [सं० दुर-आ√ग्रह (ग्रहण)+खल्] १. किसी काम या बात के लिए ऐसा आग्रह जो उचित या उपयुक्त न हो। अनुचित जिद या हठ। २. अपना कथन या मत ठीक न होने पर भी जिद करते हुए उसे ठीक कहते या मानते रहने की अवस्था या भाव।

दुराग्रही (हिन्)—वि० [सं० दुराग्रह+इनि] दुराग्रह या अनुचित हठ करनेवाला।

दुराचरण—पुं० [सं० दुर-आचरण प्रा० स०] = दुराचार।

दुराचार—पुं० [सं० दुर्-आचार प्रा० स०] अनुचित और निंदनीय आचरण। बुरा चाल-चलन।

दुराचारी(रिन्)—वि० [सं० दुराचार+इनि] [स्त्री० दुराचारिणी] दुराचरण या दुराचार करनेवाला। बदचलन।

दुराज—पुं० [सं० द्विराज्य] १. ऐसा राज्य या शासन जिसमें दो राजा मिलकर एक साथ शासन करते हों। २. ऐसा प्रदेश या स्थान जहाँ उक्त प्रकार का राज्य या शासन हो।

पुं० [सं० दुर+राज्य] १. बुरा राज्य। २. बुरा शासन।

दुराजी—वि० [सं० दुराज्य] १. जिस पर दो राजाओं का अधिकार हो। २. जिसमें दो राजे हों।

पुं० = दुराज।

दुरात्मा (त्मन्)—वि० [सं० दुर-आत्मन् प्रा० ब० स०] नीच। दुष्ट प्रकृतिवाला।

दुरादुरी—स्त्री० [हिं० दुरना=छिपना] छिपाव। दुराव।

दुराधन—पुं० [सं०] धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

दुराधर—पुं० [सं०] धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

दुराधर्ष—वि० [सं०. दुर्-आ√धृष् (दबाना)+अच्] १. जिसका दमन करना कठिन हो। २. जो बहुत कठिनाई से जीता जा सके। ३. उग्र। प्रचंड। प्रबल।

पुं० १. विष्णु का एक नाम। २. पीली सरसों।

दुराधर्षता—स्त्री० [सं० दुराधर्ष+तल्—टाप्] १. दुराधर्ष होने की अवस्था या भाव। २. प्रचंडता। प्रबलता।

दुराधर्षा—स्त्री० [सं० दुराधर्ष+टाप्] कुटुंबिनी का पौधा।

दुराधार—पुं० [सं० दुर्-आ √धृ (धारणा) +णिच् +खल्] महादेव।

दुरानम—वि० [सं० दुर्-आ √नम् (झुकना)+णिच्+ऋखल्] जिसे कठिनाई से झुकाया या दबाया जा सके।

दुराना—अ० [हिं० दूर] १. दूर होना। हटना। २. आड़ या ओट में होना। छिपना।

स० १. दूर करना। हटाना। २. गुप्त रखना। छिपाना। ३. छोड़ना। त्यागना।

दुराप—वि० [सं० दुर् √आप् (प्राप्ति) +खल्] जिसे प्राप्त करना कठिन हो। दुर्लभ। दुष्प्राप्य।

दुराबाध—पुं० [सं० दुर्-आ √बाध् (पीड़ा)+खल्] शिव।

दुराराध्य—वि० [सं० दुर् आ √राध् (सिद्धि)+ण्यत्] जिसे आराधन से प्रसन्न या संतुष्ट करना बहुत कठिन हो।

पुं० विष्णु।

दुरारुह—पुं० [सं० दुर्-आ √रुह् (चढ़ना)+क] १. बेल। २. नारियल।

दुरारुहा—स्त्री० [सं० दुरारुह +टाप्] खजूर का पेड़।

दुरारोह—वि० [सं० दुर्-आ +रुह +खल्] जिस पर कठिनता से चढ़ा जा सके।

पुं० ताड़ का पेड़।

दुरारोहा—स्त्री० [सं० दूरारोह+टाप्] १. सेमल का पेड़। २. खजूर का पेड़।

दुरालंभ—वि० [सं० दुर्-आ √लभ् (पाना)+खल्, नुम्] = दुरालभ।

दुरालभ—वि० [सं० दुर्-आ √लभ् +खल्] दुर्लभ। दुष्प्राप्य।

दुरालभा—स्त्री० [सं० दुरालभ+टाप्] १. जवासा। धमासा। हिंगुवा। २. कपास।

दुरालाप—पुं० [सं० दुर्-आलाप प्रा० स०] [वि० कर्ता दुरालापी] १. अनुचित या बुरी बातचीत। २. गाली। दुर्वचन।

दुरालापी (पिन्)—वि० [सं० दुरालाप+इनि] बुरी बातें या दुर्वचन कहनेवाला।

दुरालोक—वि० [सं० दुर्-आलोक प्रा० स०] जो सरलता से देखा न जा सके।

दुराव—पुं० [हिं० दुराना+आव(प्रत्य०)] १. कोई भेदपूर्ण बात अथवा मनोभाव गुप्त रखने की क्रिया या भाव। छिपाव। २. किसी के प्रति होनेवाली कपटपूर्ण भावना।

दुरावार—वि० [सं० दुर्-आ √वृ (वर्जन) +घञ्] जिसका वारण करना बहुत कठिन हो।

दुराश—वि० [सं० दुर्-आशा ब० स०] जिसे दुराशा हो।

दुराशय—पुं० [सं० दुर्-आशय प्रा० स०] [भाव० दुराशयता] दुष्ट या बुरा आशय। बुरी नीयत।

वि० दुष्ट या बुरे आशयवाला। बद-नीयत।

दुराशा—स्त्री० [सं० दुर्-आशा प्रा० स०] १. अनुचित या बुरी आशा। २. व्यर्थ की आशा।

दुरासद—वि० [सं० दुर्-आ√सद् (प्राप्ति)+खल्] १. दुष्प्राप्य। २. कठिन। दुस्साध्य।

दुरासा†—स्त्री० = दुराशा।

दुरित—पुं० [सं० दुर्-इत प्रा० ब० स०] १. पाप। २. पापी। ३. पातक। ४. पातकी।

दुरित-दमनी—स्त्री० [ष० त०] शमी वृक्ष।

दुरियाना—स० [सं० दूर] १. दूर करना या हटाना। २. दे० 'दुरदुराना'।

अ० दूर हटना या होना।

दुरिष्ट—पुं० [सं० दुर्-इष्ट प्रा० स०] १. पाप। पातक। २. उच्चाटन, मारण, मोहन आदि अभिचारों की सिद्धि के लिए किया जानेवाला यज्ञ।

दुरिष्टि—स्त्री० [सं० दुर्-इष्टि प्रा० स०] दुरिष्ट यज्ञ। अभिचारार्थ यज्ञ।

दुरी—स्त्री० [सं० ड:] बुरे दिन। दुर्दिन। उदा०—दिन नेड़द् आइयाँ दुरी।—प्रिथीराज।

वि० खराब। बुरा। (राज०)

दुरीषणा—स्त्री० [सं० दुर्-ईषणा प्रा० स०] १. किसी के अहित की कामना। अनुचित या बुरी इच्छा। २. शाप।

दुरुक्त—वि० [सं० दुर्-उक्त प्रा० स०] बुरी तरह से कहा हुआ।

स्त्री० = दुरुक्ति।

दुरुक्ति—स्त्री० [सं० दुर्-उक्ति प्रा० स०] १. खराब या बुरी युक्ति अथवा कथन। २. गाली। दुर्वचन।

दुरुखा—वि० [फा० दुरुख:] [स्त्री० दुरुखी] १. जिसके दो रुख या मुँह हों। २. जिसके दोनों ओर मुँह हों। ३. जिसके दोनों ओर किसी एक प्रकार का अंकन या चिह्न हो। जैसे—दुरुखी छींट, दुरुखा शाल। ४. जिसके दोनों ओर दो प्रकार के अंकन, चिह्न या रंग हों। जैसे—दुरुखा कपड़ा, दुरुखा किनारा, दुरुखी छपाई।

दुरुच्छेद—वि० [सं० दुर्-उद्√छिद् (काटना)+खल्] जिसका उच्छेदन कठिनता से हो सके।

दुरुत्तर—वि० [सं० दुर्-उद्√तॄ (पार होना)+खल्] जिसका पार पाना कठिन हो। दुस्तर।

पुं० [दुर्-उत्तर प्रा० स०] दुष्ट या बुरा उत्तर।

दुरुत्साहक—पुं० [सं० दुर्-उत्साह प्रा० ब० स०] वह जो किसी को किसी अनुचित या नियम के विरुद्ध कार्य में या किसी दुष्ट उद्देश्य से प्रवृत्त करे या लगावे। (एबेटर)

दुरुत्साहन—पुं० [सं० दुर्-उत्साहन प्रा० स०] किसी को कोई अनुचित या विधि-विरुद्ध कार्य के लिए उत्साहित या प्रवृत्त करना। (एबेटमेन्ट)

दुरुत्साहित—भू० कृ० [सं० दुर्-उद्√सह् (सहना)+णिच्+क्त] जिसे किसी ने किसी अनुचित कार्य के लिए उकसाया हो।

दुरुद्वह—वि० [सं० दुर्-उद्√वह् (ढोना)+खल्] जिसे वहन या सहन करना बहुत कठिन हो। दुर्वह।

दुरुपयोग—पुं० [सं० दुर्-उपयोग प्रा० स०] किसी चीज या बात का ठीक ढंग या प्रकार से अथवा उपयुक्त अवस्था या समय में उपयोग न करके अनुचित रूप से किया जानेवाला या बुरा उपयोग। जैसे—अधिकारों का दुरुपयोग।

दुरुपयोजन—पुं० [सं० दुर्-उप√युज् (योग)+णिच्+ल्युट्-अन] दुरुपयोग करने की क्रिया या भाव।

दुरुफ—पुं० [?] नीलकंठ ताजिक के मतानुसार फलित ज्योतिष में एक योग।

दुरुम—पुं० [देश०] एक प्रकार का गेहूँ जिसका दाना पतला और लंबा होता है।

पुं० = द्रुम (वृक्ष)।

दुरुस्त—वि० [फा०] [भाव० दुरुस्ती] १. जिसमें भूल, दोष या विकार न हो अथवा निकाल या दूर कर दिया गया हो। २. जो अच्छी या ठीक दशा में हो।

मुहा०—(किसी को) **दुरुस्त करना** = इस प्रकार किसी को दंडित करना कि वह सीधे रास्ते पर आ जाय।

३. उचित। उपयुक्त। ४. यथार्थ।

दुरुस्ती—स्त्री० [फा०] १. दुरुस्त होने की अवस्था या भाव। २. दुरुस्त करने की क्रिया या भाव। शुद्धि। संशोधन। सुधार।

दुरूह—वि० [सं० दुर्√ऊह् (वितर्क)+खल्] जो जल्दी समझ में न आ सके। दुर्बोध।

दुरेफ—पुं० = द्विरेफ।

दुरोदर—पुं० [सं०] १. जुआरी। २. जूआ। द्यूत। ३. पासा। ४. पासे से खेला जानेवाला खेल।

दुरौंधा—पुं० [सं० द्वारोर्द्ध] दरवाजे के ऊपर की लकड़ी। भरेठा।

दुर्कुल—पुं० = दुष्कुल।

दुर्गंध—स्त्री० [सं० दुर्-गंध प्रा० स०] १. बुरी गंध या महक। बदबू। २. लोक में, किसी बुराई का होनेवाला प्रसार।

पुं० [प्रा० ब० स०] १. आम का पेड़। २. प्याज। ३. काला नमक।

दुर्गंधता—स्त्री० [सं० दुर्गंध+तल्-टाप्] १. वह अवस्था जिसमें किसी वस्तु में से बदबू निकल रही हो। २. वह तत्त्व जिसके कारण दुर्गंध फैलती हो।

दुर्ग—वि० [सं० दुर्√गम् (जाना)+ड] (स्थान) जहाँ तक पहुँचना बहुत कठिन हो। दुर्गम।

पुं० १. दुर्गम पथ। २. बहुत बड़ा किला (विशेषत: किसी पहाड़ी पर स्थित)। ३. एक प्रसिद्ध राक्षस जिसका वध दुर्गा ने किया था।

दुर्ग-कर्म (न्)—पुं० [ष० त०] दुर्ग बनाने का काम।

दुर्ग-कारक—पुं० [ष० त०] १. दुर्ग बनानेवाला कारीगर। २. एक तरह का वृक्ष।

दुर्ग-कोपक—पुं० [स० त०] किले में बगावत फैलानेवाला विद्रोही।

दुर्गच्छा—स्त्री० [सं०] एक प्रकार का मोहनीय कर्म जिसके उदय से मलिन पदार्थों से ग्लानि उत्पन्न होती है। (जैन)

दुर्गत—वि० [सं० दुर्√गम्+क्त] १. जिसकी दुर्गति हुई हो। २. गरीब। दरिद्र।

†स्त्री० = दुर्गति।

दुर्ग-तरणी—स्त्री० [ष० त०] १. एक देवी का नाम। २. सावित्री।

दुर्गति—स्त्री० [सं० दुर्√गम्+क्तिन्] १. दुर्गम होने की अवस्था या भाव। २. दुर्दशाग्रस्त होने की अवस्था या भाव। ३. दुर्दशाग्रस्त करने की क्रिया या भाव।

दुर्ग-पाल—पुं० [सं० दुर्ग√पाल् (रक्षा)+णिच्+अण्] दुर्ग अर्थात् किले का प्रधान अधिकारी और रक्षक।। किलेदार।

दुर्ग-पुष्पी—पुं० [ब० स०, ङीष्] एक तरह का वृक्ष।

दुर्गम—वि० [सं० दुर्√गम्+खल्] [भाव० दुर्गमता] १. जिसमें गमन करना अर्थात् जाना, चलना या आगे बढ़ना बहुत कठिन हो। २. जिसे जानना या समझना कठिन हो। दुर्बोध। ३. कठिन। विकट। पुं० १. दुर्ग। किला। गढ़। २. जंगल। वन। ३. संकटपूर्ण स्थान या स्थिति। ४. विष्णु का एक नाम। ५. एक असुर का नाम।

दुर्गमता—स्त्री० [सं० दुर्गम+तल्—टाप्] दुर्गम होने की अवस्था, गुण या भाव।

दुर्गमनीय—वि० [सं० दुर्√गम्+अनीयर्] दुर्गम।

दुर्ग-रक्षक—पुं० [ष० त०] दुर्गपाल। किलेदार।

दुर्ग-लंघन—पुं० [ष० त०] (रेतीले दुर्गम पथ को पार करनेवाला) ऊँट।

दुर्गल—पुं० [सं०] एक प्राचीन देश।

दुर्ग-संचर—पुं० [ष० त०] वह जिसके द्वारा या माध्यम से दुर्गम पथ पार किया जाय। जैसे—पुल, बेड़ा, सीढ़ी इत्यादि।

दुर्गा—पुं० [सं० दुर्ग+टाप्] १. आदि शक्ति के रूप में मानी जानेवाली एक प्रसिद्ध देवी जिसका यह नाम दुर्ग राक्षस का वध करने के कारण पड़ा था। २. नौ वर्षों की अवस्थावाली कन्या। ३. नील का पौधा। ४. अपराजिता। ५. श्यामा पक्षी। ६. गौरी, मालश्री, सारंग और लीलावती के योग से बनी हुई एक संकर रागिनी।

दुर्गा-कल्याण—पुं० [सं०] ओडव संपूर्ण जाति का एक राग जो रात के पहले पहर में गाया जाता है।

दुर्गाढ, दुर्गाध,—वि० [सं० दुर्√गाह् (थाह लेना)+क्त दुर्-गाध प्रा० ब० स०] जिसकी थाह कठिनता से मिल सके।

दुर्गाधिकारी (रिन्)—पुं० [सं० दुर्ग-अधिकारिन् ष० त०] [स्त्री० दुर्गाधिकारिणी] दुर्ग का प्रधान अधिकारी। किलेदार।

दुर्गा-नवमी—स्त्री० [मध्य० स०] १. कातिक शुक्ल नवमी जिस दिन दुर्गा के पूजन का विधान है। २. चैत्र शुक्ल नवमी। ३. आश्विन शुक्ल नवमी।

दुर्गापाश्रया भूमि—स्त्री० [सं० दुर्ग-अपाश्रया ष० त०, दुर्गापाश्रया भूमि व्यस्त पद] वह भूमि जिसमें अनेक किले हों।

दुर्गा-पूजा—स्त्री० [ष० त०] १. दुर्गा का पूजन। २. चैत्र और आश्विन के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से नवमी तक के नौ दिन जिनमें लोग दुर्गा या देवी की प्रतिमा स्थापित करके उसका पूजन करते हैं।

दुर्गाष्टमी—स्त्री० [दुर्गा-अष्टमी मध्य० स०] १. आश्विन शुक्ल पक्ष की अष्टमी। २. चैत्र शुक्ल पक्ष की अष्टमी।

दुर्गाह्य—वि० [सं० दुर्√गाह्+ण्यत्] जिसका अवगाहन करना बहुत कठिन हो।

दुर्गाह्वा—पुं० [सं० दुर्गा-आ ह्वा ब० स०] भूमि गूगल।

दुर्गुण—पुं० [सं० दुर्-गुण प्रा० स०] १. व्यक्ति में होनेवाली ऐसी दूषित स्वभावजन्य क्रियाशीलता जिसके कारण वह बुरे कामों में प्रवृत्त होता है। ऐब। २. किसी पदार्थ में होनेवाला ऐसा दोष जिससे विकार उत्पन्न होता हो।

दुर्गुणी (णिन्)—वि० [सं० दुर्गुण+इनि] जिसमें दुर्गुण या ऐब हों।

दुर्गेश—पुं० [सं० दुर्ग-ईश ष० त०] १. दुर्ग का स्वामी। २. दुर्ग का प्रधान अधिकारी।

दुर्गोत्सव—पुं० [सं० दुर्गा-उत्सव मध्य० स०] चैत्र तथा आश्विन के नवरात्रों में मनाया जानेवाला उत्सव जिसमें दुर्गा का पूजन किया जाता है।

दुर्ग्रह—वि० [सं० दुर्√ग्रह (पकड़ना)+खल्] १. जिसे कठिनता से पकड़ा अर्थात् अधिकार में किया जा सके। २. कठिनता से समझ में आनेवाला। दुर्बोध।
पुं० १. अपामार्ग। चिचड़ा। २. [दुर्-ग्रह प्रा० स०] बुरा या अनिष्टकारक ग्रह।

दुर्ग्राह्य—वि० [सं० दुर्√ह+ण्यत्] दुर्ग्रह।

दुर्घट—वि० [सं० दुर्√घट् (घटित होना)+खल्] जिसका घटित होना प्रायः असंभव हो। बहुत कठिनता से घटित होनेवाला।

दुर्घटना—स्त्री० [सं० दुर्-घटना प्रा० स०] १. ऐसी घटना जिसके फलस्वरूप किसी व्यक्ति अथवा वस्तु को क्षति या हानि पहुँचे। २. आफत। विपत्ति।

दुर्घोष—वि० [सं० दुर्-घोष प्रा० ब० स०] जो बुरा स्वर निकाले। कटु, कर्कश या बुरा घोष अथवा शब्द करनेवाला।
पुं० भालू। रीछ।

दुर्जन—पुं० [सं० दुर्-जन प्रा० स०] [भाव० दुर्जनता] वह व्यक्ति जो दूसरों का अपकार, अपकीर्ति या हानि करता रहता हो। खराब या बुरा आदमी।

दुर्जनता—स्त्री० [सं० दुर्जन+तल्–टाप्] दुर्जन होने की अवस्था या भाव।

दुर्जय—वि० [सं० दुर्-जय प्रा० ब० स०] जिस पर विजय पाना बहुत कठिन हो।
पुं० १. विष्णु का एक नाम। २. एक राक्षस का नाम।

दुर्जय-व्यूह—पुं० [कर्म० स०] एक प्रकार का व्यूह जिसमें सेना चार पंक्तियों में खड़ी की जाती थी। (कौ०)

दुर्जर—वि० [सं० दुर्√जॄ (जीर्ण होना)+अच्] १. जो सदा तरुण या युवा बना रहे। २. (अन्न) जिसे सरलता से न पचाया जा सके।

दुर्जरा—स्त्री० [सं० दुर्जर+टाप्] ज्योतिष्मती लता। मालकँगनी।

दुर्जात—वि० [सं० दुर्-जात प्रा० स०] १. जिसका जन्म बुरी रीत से हुआ हो। जैसे—दोगला या वर्णसंकर। २. जिसका जन्म व्यर्थ हुआ हो। ३. नीच। कमीना। ४. अभागा। बद-किस्मत।
पुं० १. व्यसन। २. विपत्ति। संकट। ३. असमंजस। दुबिधा। ४. अनौचित्य।

दुर्जाति—स्त्री० [सं० दुर्-जाति प्रा० स०] बुरी जाति। नीच जाति।
वि० १. बुरी जाति या कुल का। २. जिसकी जातीयता बिगड़ गई या नष्ट हो चुकी हो।

दुर्जीव—वि० [सं० दुर्-जीव प्रा० ब० स०] १. दूसरे के दिये हुए अन्न पर पलनेवाला। २. बुरी तरह से जीविका उपार्जित करनेवाला।
पुं० [प्रा० स०] निंदनीय या बुरा जीवन।

दुर्जेय—वि० [सं० दुर्√जी (जीतना) +अच्] दुर्जय।

दुर्ज्ञेय—वि० [सं० दुर्√ज्ञा (जानना)+यत्] १. जिसे जानना बहुत कठिन हो। २. जो जल्दी समझ में न आ सके। दुर्बोध।

दुर्दम—वि० [सं० दुर्√दम् (दमन करना) +खल्] १. जिसका दमन करना बहुत कठिन हो। २. प्रचंड। प्रबल।
पुं० वसुदेव के एक पुत्र का नाम जो रोहिणी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

दुर्दमन—पुं० [सं० दुर्-दमन प्रा० ब० स०] जनमेजय के वंश में उत्पन्न शतानीक राजा का पुत्र।
वि० = दुर्दम।

दुर्दमनीय—वि० [सं० दुर्√दम् +अनीयर्] १. जिसका दमन करना बहुत कठिन हो। दुर्दम। २. प्रचंड। प्रबल।

दुर्दम्य—वि० [सं० दुर्√दम् +यत्] दुर्दम।
पुं० [सं०] गाय का बछड़ा।

दुर्दर *—वि० = दुर्धर।

दुर्दर्श—वि० [सं० दुर्√दृश् (देखना) +खल्] १. जिसका दर्शन करना या होना अत्यंत कठिन हो। २. जिसे देखने से डर लगे या घृणा हो। ३. देखने में खराब या बुरा। कुरूप। भद्दा। ४. जिसे देखने से कोई बुरा परिणाम या फल होता हो।

दुर्दर्शन—वि० [सं० दुर्-दर्शन प्रा० ब० स०] दुर्दर्श।
पुं० [सं०] कौरवों का एक सेनापति।

दुर्दशा—स्त्री० [सं० दुर्-दशा प्रा० स०] बुरी और हीन दशा। खराब हालत।

दुर्दांत—वि० [सं० दुर्√दम्+क्त] १. जिसका दमन या वश में करना कठिन हो। दुर्दमनीय। २. प्रचंड। प्रबल।
पुं० १. शिव का एक नाम। २. गौ का बछड़ा। ३. लड़ाई-झगड़ा। कलह।

दुर्दान—पुं० [?] चाँदी। (अनेकार्थ)

दुर्दिन—पुं० [सं० दुर्-दिन प्रा० स०] १. खराब या बुरा दिन। २. दुर्दशा के दिन या समय। ३. ऐसा दिन जिसमें प्रातःकाल से ही खूब बादल घिरे हों, पानी बरसता हो और कहीं आना-जाना कठिन हो।

दुर्दुरूढ़—पुं० [सं० √दुल् (फेंकना) +ऊढ़ पृषो० सिद्धि] नास्तिक।

दुर्दृष्ट—वि० [सं० दुर्-दृष्ट प्रा० स०] (व्यवहार) १. जिस पर ठीक और पूरा ध्यान न दिया गया हो। २. जिसका ठीक तरह से फैसला या न्याय न हुआ हो।

दुर्दैव—पुं० [सं० दुर्-दैव प्रा० स०] १. दुर्भाग्य। अभाग्य। बुरी किस्मत। २. बुरे दिन। बुरा समय।

दुर्द्धर—वि० [सं० दुर्√धृ (धारण)+खल्] १. जिसे कठिनता से पकड़ सकें। जो जल्दी पकड़ में न आ सके। २. प्रचंड। प्रबल। ३. जल्दी समझ में न आनेवाला। दुर्बोध।
पुं० १. पारा। २. भिलावाँ। ३. एक नरक का नाम। ४. महिषासुर का एक सेनापति। ५. शंबरासुर का एक मंत्री। ६. धृतराष्ट्र का एक पुत्र। ७. रावण की सेना का एक राक्षस जो हनुमान् को पकड़ने के लिए अशोक-वाटिका में भेजा गया था और वहीं उनके हाथ से मारा गया था। ८. विष्णु का एक नाम।

दुर्द्धर्ष—वि० [सं० दुर्√धृष् (दबाना) +खल्] १. जिसका दमन करना कठिन हो। जिसे जल्दी दबाया या वश में न किया जा सके। २. जिसे परास्त करना या हराना कठिन हो। ३. प्रचंड। प्रबल।
पुं० १. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। २. रावण की सेना का एक राक्षस।

दुर्द्धर्षा—स्त्री० [सं० दुर्द्धर्ष+टाप्] १. नागदौना। २. कंथारी नाम का पेड़।

दुर्द्धी—वि० [सं० दुर्-धी प्रा० ब० स०] १. बुरी बुद्धिवाला। २. मंद बुद्धिवाला।
स्त्री० बुरी बुद्धि।

दुर्द्धुरूढ़—पुं० [सं० दुर्+धुर्व् (हिंसा) +ढट्, पृषो० सिद्धि] वह शिष्य जो गुरु की आज्ञा का पालन सहज में न करता हो।

दुर्द्रिता—स्त्री० [सं०] एक प्रकार की लता।

दुर्द्रुम—पुं० [सं० दुर्-द्रुम प्रा० स०] हरित्पलांडु। हरा प्याज।

दुर्धर—वि० [सं० दुर्√धृ (धारण)+खल्] १. जिसे धारण करना कठिन हो। २. प्रचंड। विकट।

दुर्धर्ष—वि० = दुर्द्धर्ष।

दुर्नय—पुं० [सं० दुर्=नी (ले जाना)+अच्] १. निकृष्ट या बुरा आचरण। खराब चाल-चलन। २. अनीति। अनैतिकता। ३. अन्याय।

दुर्नाद—वि० [सं० दुर्-नाद प्रा० ब० स०] १. बुरे नाद या स्वरवाला। २. कर्कश ध्वनिवाला।
पुं० राक्षस।

दुर्नाम (न्)—वि० [सं० दुर्-नामन् प्रा० ब० स०] १. बुरे नामवाला। २. बदनाम।
पुं० [प्रा० स०] १. बुरा नाम। कुख्याति। बदनामी। २. गाली। दुर्वचन। ३. [प्रा० ब० स०] बवासीर नामक रोग। ४. शुक्ति। सीपी।

दुर्नामक—पुं० [सं० दुर्-नामन् प्रा० ब० स०, कप्] अर्श रोग। बवासीर।

दुर्नामारि—पुं० [सं० दुर्नामन्-अरि ष० त०] (बवासीर को दूर करनेवाला) सूरन। जिमीकंद।

दुर्नाम्नी—स्त्री० [सं० दुर्-नाम् प्रा० ब० स०, ङीप्] शुक्ति। सीप।

दुर्निग्रह—वि० [सं० दुर्-नि√ग्रह् (पकड़ना)+खल्] जिसे वश में करना बहुत कठिन हो।

दुर्निमित्त—पुं० [सं० दुर्-निमित्त प्रा० स] अपशकुन।

दुर्निरीक्ष—वि० [सं० दुर्-निर्√ईक्ष (देखना))+खल्] १. जिसे देखना या देखते रहना बहुत कठिन हो। २. भयंकर। भीषण। ३. कुरूप। भद्दा।

दुर्निवार—वि० [सं० दुर्-नि√वृ (वारण)+घञ्] =दुर्निवार्य।

दुर्निवार्य—वि० [सं० दुर्-नि√वृ+ण्यत्] १. जिसका निवारण कठिनता से होता हो। जो जल्दी रोका न जा सके। २. जो जल्दी दूर किया या हटाया न जा सके। ३. जिसका घटित होना प्रायः निश्चित हो। जो जल्दी टल न सके।

दुर्नीत—वि० [सं० दुर्√नी+क्त] नीति विरुद्ध आचरण करनेवाला। †स्त्री० =दुर्नीति।

दुर्नीति—स्त्री० [सं० दुर्-नीति प्रा० स०] १. निंदनीय और बुरी नीति। २. नीति विरुद्ध आचरण।

दुर्बल—वि० [सं० दुर्-बल प्रा० ब० स०] [भाव० दुर्बलता] १. जिसमें शारीरिक शक्ति की कमी हो। कमजोर। २. दुबला-पतला। कृश। ३. जो मानसिक, नैतिक आदि शक्तियों से रहित हो। जैसे–दुर्बल चरित्र।

दुर्बलता—स्त्री० [सं० दुर्बल+तल्–टाप्] १. दुर्बल होने की अवस्था या भाव। २. दुबलापन। ३. कमजोरी।

दुर्बला—स्त्री० [सं० दुर्बल+टाप्] जलसिरीस का पेड़।

दुर्बाल—पुं० [सं० दुर्-बाल प्रा० ब० स०] १. सिर का गंजापन। २. गंज नामक रोग।

दुर्बुद्धि—वि० [सं० दुर्-बुद्धि प्रा० ब० स०] नीच या हीन बुद्धिवाला। स्त्री० दुष्ट या नीच बुद्धि।

दुर्बोध—वि० [सं० दुर्-बोध प्रा० ब० स०] (विषय) जिसका बोध कठिनता से हो सकता हो। जो जल्दी समझ में न आवे।

दुर्भक्ष—वि० [सं० दुर्√भक्ष् (खाना)+खल्] १. (पदार्थ) जिसे खाना कठिन हो। जो जल्दी न खाया जा सके। २. जो खाने में खराब या बुरा लगे।
पुं० दुर्भिक्ष। अकाल।

दुर्भग—वि० [सं० दुर्-भग प्रा० ब० स०] [स्त्री० दुर्भगा] जिसका भाग्य बुरा हो। खराब किस्मत या प्रारब्धवाला। अभागा।

दुर्भगा—स्त्री० [सं० दुर्भग+टाप्] ऐसी स्त्री जो अपने पति का प्रेम या स्नेह न प्राप्त कर सकी हो।
वि० सं० 'दुर्भग' का स्त्री०।

दुर्भर—वि० [सं० दुर्√भृ (भरण) +खल्] १. जिसे उठाना बहुत कठिन हो। जो सहज में उठाया न जा सके। २. भारी। वजनी।

दुर्भाग—पुं०=दुर्भाग्य।

दुर्भागी—वि० =अभागा।

दुर्भाग्य—पुं० [सं० दुर्-भाग्य प्रा० स०] बुरा भाग्य। खराब किस्मत।

दुर्भाव—पुं० [सं० दुर्-भाव प्रा० स०] १. बुरा भाव। २. किसी के प्रति मन में होनेवाला द्वेष या बुरा भाव। दुर्भावना।

दुर्भावना—स्त्री० [सं० दुर्-भावना प्रा० स०] १. बुरी भावना या विचार। २. आशंका। खटका।

दुर्भाव्य—वि० [सं० दुर्√भू (होना)+ण्यत्] जो जल्दी ध्यान में न आ सके।

दुर्भृत्य—पुं० [सं० दुर्-भृत्य प्रा० स०] बुरा या दुष्ट नौकर।

दुर्भिक्ष—पुं० [सं० दुर्-भिक्षा अव्य० स०] १. ऐसा समय जिसमें भिक्षा या भोजन बहुत कठिनता से मिले। २. अकाल।

दुर्भिच्छ*—पुं० =दुर्भिक्ष।

दुर्भिद—वि० [सं० दुर्√भिद् (फाड़ना)+क] जिसका भेदन कठिनता से हो सके।

दुर्भेद—वि० [सं० दुर्√भिद्+खल्] =दुर्भेद्य।

दुर्भेद्य—वि० [सं० दुर्√भिद्+ण्यत्] १. जो जल्दी भेदा न जा सके। जो कठिनता से छिदे। २. जो जल्दी पार न किया जा सके। ३. जिसके अन्दर पहुँचना बहुत कठिन हो। जैसे—दुर्भेद्य किला।

दुर्मंत्रणा—स्त्री० [सं० दुर्-मंत्रणा प्रा० स०] बुरी मंत्रणा।

दुर्मति—वि० [सं० दुर्-मति प्रा० ब० स०] १. बुरी मति या बुद्धिवाला। २. खल। दुष्ट।
स्त्री० [प्रा० स०] बुरी या दुष्ट बुद्धि।
पुं० साठ संवत्सरों में से एक संवत्सर, जिसमें अकाल पड़ता है। (फलित ज्योतिष)

दुर्मद—वि० [सं० दुर्-मद प्रा० ब० स०] १. जो नशे में बुरी तरह से चूर हो। २. उन्मत्त। पागल। ३. जिसमें बहुत अधिक मद या घमंड हो। उदा०—दुर्मद दुरस्त धर्म दस्युओं की त्रासिनी।—प्रसाद।

दुर्मना (नस्)—वि० [सं० दुर्-मनस् प्रा० ब० स०] १. बुरे चित्त या मनवाला। २. दुष्ट। पाजी। ३. उदास। खिन्न।

दुर्मनुष्य—पुं० [सं० दुर्-मनुष्य प्रा० स०] दुष्ट मनुष्य। दुर्जन।

दुर्मर—वि० [सं० दुर्-मर प्रा० ब० स०] जिसकी मृत्यु सहज में न हो। बहुत कठिनता या कष्ट से मरनेवाला।

दुर्मरण—पुं० [सं० दुर्-मरण प्रा० ब० स०] बुरे प्रकार से होनेवाली मृत्यु।

दुर्मरा—स्त्री० [सं० दुर्मर+टाप्] दूर्वा। दूब।

दुर्मर्ष—वि० [सं० दुर√मृष् (सहना)+खल्] जिसे सहन करना कठिन हो। दुःसह।

दुर्मल्लिका—स्त्री० [सं०] चार अंकोंवाला एक तरह का हास्य-रस-प्रधान उपरूपक।

दुर्मल्ली—स्त्री० =दुर्मल्लिका।

दुर्मित्र—पुं० [सं० दुर्-मित्र प्रा० स०] बुरा मित्र।

दुर्मिल—वि० [सं० दुर्√मिल् (मिलना)+क] जो सहज में न मिल सके। दुष्प्राप्य।
पुं० १. भरत के सातवें लड़के का नाम। २. एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में १०, ८ और १४ के विराम से ३, २ मात्राएँ होती हैं।

दुर्मुख—वि० [सं० दुर्-मुख प्रा० ब० स०] १. खराब या बुरे मुँहवाला। २. कुरूप या भद्दे मुँहवाला। ३. कड़वी और बुरी बातें कहने या बोलनेवाला।
पुं० १. भगवान रामचन्द्र का वह गुप्तचर जो प्रजा के भीतरी समाचार उन्हें सुनाया करता था। २. रामचंद्र की सेना का एक बंदर। ३. महिषासुर के एक सेनापति का नाम। ४. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। ५. एक नाग का नाम। ६. शिव का एक नाम। ७. साठ संवत्सरों में से एक। ८, एक यक्ष का नाम। ९. गणेश के एक गण का नाम। १०. घोड़ा। ११. गुप्तचर। जासूस। १२. ऐसा घर या मकान जिसका दरवाजा उत्तर की ओर हो।

दुर्मुखी—स्त्री० [सं० दुर्मुख+ङीष्] एक राक्षसी जिसे रावण ने जानकी को बहकाने के लिए अशोक-वाटिका में रखा था।
वि० हिं० 'दुर्मुख' का स्त्री०।

दुर्मुट†—पुं० =दुर्मुस।

दुर्मुस—पुं० [सं० दूर्+मुस= कूटना] गदा के आकार का मिट्टी,

पत्थर, सड़क आदि पीटने का एक उपकरण जिसके लंबे डंडे के निचले सिरे में पत्थर का भारी गोल टुकड़ा लगा रहता है।

दुर्मुहूर्त—पुं० [सं० दुर्-मुहूर्त प्रा० ब० स०] अशुभ या बुरा मुहूर्त्त।

दूर्मूल्य—वि० [सं० दुर-मूल्य प्रा० ब० स०] बहुत अधिक मूल्यवाला। बहुमूल्य।

दुर्मेध (धस्)—वि० [सं० दुर्मेधस् प्रा० ब० स०] मंद बुद्धि। नासमझ।

दुर्मोह—पुं० [सं० दुर्√मुह् (मुग्ध होना)+घञ्] काकतुंडी। कौआ-ठोंठी।

दुर्मोहा—स्त्री० [सं० दुर्मोह+टाप्] १. कौआ-ठोंठी। २. सफेद घुंघची।

दुर्यस (स्)—पुं० [सं० दुर्-यशस् प्रा० स०] बुरा यश। अपयश।

दुर्योध—वि० [सं० दुर्√युध् (लड़ना)+खल्] जिससे युद्ध करना और विजय पाना बहुत कठिन हो।

दुर्योधन—पुं० [सं० दुर्√युध्+युच्-अन] एक प्रसिद्ध कुरुवंशीय राजा जो धृतराष्ट्र का ज्येष्ठ पुत्र था तथा जो महाभारत के युद्ध में मारा गया था।

दुर्योनि—वि० [सं० दुर्-योनि प्रा० ब० स०] जिसका जन्म निम्न या नीच कुल में हुआ हो।

दुर्रा—पुं० [फा०] कोड़ा। चाबुक। जैसे—मरे पर सौ दुर्रे। (कहा०)
पुं० [अ० दुर्रः] बड़ा मोती।

दुर्रानी—पुं० [फा०] १. अफगानों की एक जाति। २. उक्त जाति का व्यक्ति।

दुर्लंघ्य—वि० [सं० दुर्√लंघ् (लांघना)+ण्यत्] जिसे लाँघना बहुत कठिन हो।

दुर्लक्ष्य—वि० [सं० दुर्√लक्ष् (देखना)+ण्यत्] जो कठिनता से दिखाई पड़े या देखा जा सके।
पुं० दुष्ट अथवा बुरा लक्ष्य या उद्देश्य।

दुर्लभ—वि० [सं० दुर्√लभ् (पाना)+खल्] १. जो कठिनता से प्राप्त होता हो। दुष्प्राप्य। २. जो बहुत कम मात्रा में, कभी-कभी अथवा कहीं-कहीं मिलता हो। (रेयर) ३. जिसके जोड़ या तरह का दूसरा जल्दी मिलता न हो। बहुत बढ़िया और अनोखा। ४. प्रिय।
पुं० १. कचूर। २. विष्णु का एक नाम।

दुर्लभ-मुद्रा—स्त्री० [सं० दुर्लभा-मुद्रा कर्म० स०] आधुनिक अर्थशास्त्र में वह विदेशी मुद्रा जो कठिनाई से प्राप्त होती हो।
विशेष—जब एक देश दूसरे देश को अधिक मूल्य का सामान निर्यात करता है और उस देश से कम मूल्य का सामान आयात करता है तो उसके लिए तो दूसरे देश की मुद्रा सुलभ रहती है (क्योंकि इसका उधर पावना होता है) परंतु दूसरे देश के लिए उस देश की मुद्रा दुर्लभ होती है (क्योंकि उसे पहले ही देना अधिक होता है)।

दुर्ललित—वि० [सं० दुर्√लल् (चाहना)+क्त] १. जिसका बुरी तरह से लालन या लाड़-प्यार किया गया हो और इसीलिए वह बिगड़ गया हो। २. दुष्ट। नटखट। पाजी। ३. खराब। दूषित। बुरा। उदा०—उठती अंतस्तल से सदैव दुर्ललित लालसा जो कि कांत।—प्रसाद।
पुं० उद्धत या उद्दंड होने की अवस्था या भाव। उद्धतता।

दुर्लेख्य—वि० [सं० दुर्-लेख्य प्रा० स०] १. (लेख) जो खराब लिखा हुआ हो। जिसकी लिखावट बुरी हो। २. जो ऐसा लिखा हो कि जल्दी पढ़ा न जा सके। (स्मृति)
पुं० वह लेख्य जो विधिक व्यवहार में अप्रामाणिक तथा विधि-विरुद्ध माना जाय। (इनवैलिड डीड)

दुर्वच—वि० [सं० दुर्√वच् (बोलना)+खल्] १. (वचन) जो सहज में न कहा जा सके। जिसे कह सकना कठिन हो। २. जिसे कहने में कष्ट हो।
पुं० गाली। दुर्वचन।

दुर्वचन—पुं० [सं० दुर-वचन प्रा० स०] १. बुरा वचन। बुरी उक्ति या दूषित कथन। २. गाली।

दुर्वर्ण—वि० [सं० दुर्-वर्ण प्रा० ब० स०] बुरे या हेय वर्णवाला।
पुं० १. चाँदी। रजत। २. [प्रा० स०] बुरा वर्ण।

दुर्वर्णा—स्त्री० [सं० दुर्वर्ण+टाप्] १. चाँदी। २. एलुआ नामक औषधि।

दुर्वह—वि० [सं० दुर्√वह् (ढोना)+खल्] जिसे वहन करना बहुत कठिन हो।

दुर्वाक (च्)—पुं० [सं० दुर्-वाच् प्रा० स०] =दुर्वचन।

दुर्वाद—पुं० [सं० दुर्-वाद प्रा० स०] १. अपवाद। निंदा। बदनामी। २. अनुचित अथवा उपयुक्त विवाद। तकरार। हुज्जत। ३. ऐसी बात जो अच्छी होने पर भी बुरे ढंग से कही जाय।

दुर्वादी (दिन्)—वि० [सं० दुर्वाद+इनि] १. दूसरों की बदनामी करनेवाला। २. तकरार या हुज्जत करनेवाला। ३. दुर्वाद कहनेवाला।

दुर्वार—वि० [सं० दुर्√वृ (वारण) +णिच्+खल्] जिसका निवारण करना कठिन हो।

दुर्वारि—पुं० [सं० दुर्-वारि = वारण प्रा० ब० स०] कंबोज देश का एक योद्धा जो महाभारत की लड़ाई में लड़ा था।

दुर्वार्य—वि० [सं०दुर्√वृ+णिच्+यत्] =दुर्वार। (देखें)

दुर्वासना—स्त्री० [सं० दुर्-वासना प्रा० स०] १. बुरी इच्छा, कामना या वासना। २. ऐसी कामना या वासना जो कभी अथवा जल्दी पूरी न हो सके।

दुर्वासा (सस्)—पुं० [सं० दुर-वासस् प्रा० ब० स०] अत्रि और अनुसूया के पुत्र एक प्रसिद्ध ऋषि जो बहुत ही क्रोधी स्वभाव के थे और जराजरा-सी बात पर शाप दे बैठते थे।

दुर्वाहित—वि० [सं० दुर्-वाहित प्रा० स०] जिसका वहन करना बहुत मुश्किल हो।
पुं० भारी बोझ।

दुर्विगाह—वि० [सं० दुर्-वि√गाह् (थाह लेना)+खल्] जिसका अवगाहन करना अर्थात् थाह पाना बहुत कठिन हो।

दुर्विज्ञेय—वि० [सं० दुर्-वि√ज्ञा (जानना)+यत्] जिसका ज्ञान प्राप्त करना बहुत कठिन हो। जिसे जल्दी जान न सकें।

दुर्विद—वि० [सं० दुर्√विद् (जानना)+क] जिसे जानना तथा समझना बहुत कठिन हो।

दुर्विदग्ध—वि० [सं०दुर्-विदग्ध प्रा० स०] १. जो अच्छी तरह जला न

हो। अधजला। २. जो पूरी तरह से पका न हो ३. अभिमानी। घमंडी।

दुर्विदग्धता—स्त्री० [सं० दुर्विदग्ध तल्—टाप्] दुर्विदग्ध होने की अवस्था या भाव। पूरी निपुणता का अभाव। अधकचरापन।

दुर्विध—वि० [सं० दुर्-विधा प्रा० ब० स०] १. दरिद्र। धन-हीन। २. खल। दुष्ट। ३. बेवकूफ। मूर्ख।

दुर्विधि—स्त्री० [सं० दुर्-विधि प्रा० स०] खराब या बुरी विधि। दूषित या बुरा ढंग या रीति।

पुं० दुर्भाग्य।

दुर्विनय—वि० [सं० दुर्-विनय प्रा० ब० स०] १. जिसमें विनय का अभाव हो। २. उद्दंड।

स्त्री० [प्रा० स०] १. अविनय। २. उद्दंडता।

दुर्विनीत—वि० [सं० दुर्-विनीत प्रा० स०] जो विनीत न हो। अविनीत।

दुर्विपाक—पुं० [सं० दुर्-विपाक प्रा० स०] १. बुरा परिणाम। बुरा फल। २. बुरा संयोग। जैसे—दैव-दुर्विपाक से उन्हें पुत्र-शोक सहना पड़ा।

दुर्विभाव्य—वि० [सं० दुर्-वि√भू (होना)+ण्यत्] जिसका अनुमान कठिनता से हो सके।

दुर्विलास—पुं० [सं० दुर्-विलास प्रा० स०] भाग्य का विपरीत होना।

दुर्विवाह—पुं० [सं० दुर्-विवाह प्रा० स०] बुरा या निंदनीय विवाह।

दुर्विष—वि० [सं० दुर्-विष प्रा० ब० स०] दुराशय।

पुं० महादेव।

दुर्विषह—वि० [सं० दुर्-वि√सह (सहना)√खल्] जिसे सहना बहुत कठिन हो। दुःसह।

पुं० १. महादेव। शिव। २. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

दुर्वृत्त—वि० [सं० दुर्-वृत्त प्रा० ब० स०] [भाव० दुर्वृत्ति] १. जिसका आचरण बुरा हो। दुश्चरित्र। दुराचारी। २. जो दूषित या निंदनीय उपायों से जीविका चलाता हो। बुरी वृत्तिवाला।

पुं० [प्रा० स०] निन्दनीय और बुरा आचरण। बद-चलनी।

दुर्वृत्त-फलक—पुं० [ष० त०] दे० 'इति-वृत्तक'।

दुर्वृत्ति—स्त्री० [सं० दुर्-वृत्ति प्रा० स०] १. बुरी वृत्ति। २. बुरा आचरण या स्वभाव।

दुर्वृष्टि—स्त्री० [सं० दुर्-वृष्टि प्रा० स०] १. आवश्यक या उचित से कम वृष्टि। २. अनावृष्टि। सूखा।

दुर्वेद—वि० [सं० दुर्√विद् (जानना)+खल्] १. जिसे समझना बहुत कठिन हो। २. जो वेदों का अध्ययन न करता हो। ३. वेदों की निंदा करनेवाला।

दुर्व्यवस्था—स्त्री० [सं० दुर्-व्यवस्था प्रा० स०] खराब या बुरी व्यवस्था। अव्यवस्था।

दुर्व्यवहार—पुं० [सं० दुर्-व्यवहार प्रा० स०] १. अनुचित और बुरा व्यवहार। बुरा बरताव। २. अनुचित या बुरा आचरण। ३. ऐसा व्यवहार या मुकदमा जिसका फैसला (अनुचित प्रभाव, घूस आदि के कारण) ठीक न हुआ हो।

दुर्व्यसन—पुं० [सं० दुर्-व्यसन प्रा० स०] कोई बुरा या दूषित काम करने का चस्का जो बहुत कठिनता से छूट सके।

दुर्व्यसनी (निन्)—वि० [दुर्व्यसन+इनि] जिसे किसी प्रकार का दुर्व्यसन हो। जिसे बुरी तरह से कोई लत या कई लतें लगी हों।

दुर्व्रत—वि० [सं० दुर्-व्रत प्रा० ब० स०] जिसने कोई अनुचित या बुरा व्रत लिया हो। बुरे मनोरथों वाला। नीचाशय।

पुं० [प्रा० स०] निन्दनीय, नीच अथवा बुरा आशय, मनोरथ या व्रत।

दुर्हृद्—वि० [सं० दुर्-हृदय प्रा० ब० स०] जो सुहृद् न हो। बुरे हृदयवाला।

पुं० विरोधी या शत्रु।

दुर्हृदय—वि० [सं० दुर्-हृदय प्रा० ब० स०] खोटे हृदयवाला। कपटी।

दुर्हृषीक—वि० [सं० दुर्-हृषीक प्रा० ब० स०] जिसकी ज्ञानेंद्रियों में कुछ खराबी या विकार हो।

दुलकन—स्त्री० [हिं० दुलकना] दुलकने की क्रिया या भाव।

†वि० दुलकनेवाला।

दुलकना—अ० [हिं० दलकना] (घोड़ों आदि का) अलग-अलग हर पैर उठाकर कुछ उछलते हुए चलना।

अ०, स० =दुलखना।

दुलकी—स्त्री० [हिं० दुलकना] टट्टू, घोड़े आदि की एक प्रकार की चाल जिसमें वह हर पैर अलग-अलग उठाकर कुछ उछलता हुआ दौड़ता है।

क्रि० प्र० —चलना। —जाना।

दुलखना—स० [हिं० दो+लक्षण] १. बार-बार बतलाना। बार-बार कहना। बार-बार दोहराना। २. किसी की कही हुई ठीक बात पर भी आपत्ति करते हुए उसका तिरस्कार करना जो अविनय, उद्दंडता आदि का सूचक है।

अ० मुकर जाना।

दुलखी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का फतिंगा जो गेहूँ, ज्वार, तमाखू नील, सरसों आदि की खेती को नुकसान पहुँचाता है।

दुलड़ा—वि० [हिं० दो+लड़] [स्त्री० दुलड़ी] जिसमें दो लड़ या लड़ियाँ हों। दो-लड़ों का।

पुं० दो लड़ोंवाली माला या हार।

दुलड़ी—स्त्री० [हिं० दो+लड़] दो लड़ों की माला।

दुलत्ती—स्त्री० [हिं० दो+लात] १. गाय, घोड़े आदि का किसी पर प्रहार करने के लिए पिछली दोनों टाँगें एक साथ उठाने तथा झटकारने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—चलाना। —झाड़ना। —फेंकना। —मारना।

२. उक्त प्रकार से किया जाने या लगनेवाला आघात।

मुहा०—दुलत्ती झाड़ना=बहुत बिगड़ कर अलग या दूर होते हुए ऐसी बातें कहना मानों गधों या घोड़ों की तरह अथवा पशुओं का-सा आचरण या व्यवहार कर रहे हों। (परिहास और व्यंग्य)

३. मालखंभ की एक कसरत जिसमें दोनों पैरों से मालखंभ को लपेट-कर बाकी बदन मालखंभ से अलग झुलाकर ताल ठोंकते हैं।

दुलदुल—पुं० [अ०] १. वह खच्चरी (मादा खच्चर) जो इसकंदरिया (मिस्र) के हाकिम ने मुहम्मद साहब को भेंट की थी। २. मुहर्रम की आठवीं तारीख को जलूस के साथ निकाला जानेवाला वह कोतल घोड़ा जिसके साथ शीया मुसलमान मातम करते हुए चलते हैं।

विशेष—मुख्यतः यह उसी उक्त खच्चरी का प्रतीक होता है, जो मुहम्मद साहब को भेंट में मिली थी। पर लोग इसे भूल से खच्चर या घोड़ा समझते हैं, और इसी लिए इस शब्द का प्रयोग पुं० रूप में करते हैं।

दुलन†—पुं० = दोलन।

दुलना†—अ० = डुलना।

दुलभ*—वि० = दुर्लभ।

दुलरा†—वि० = दुलारा।

दुलराना—स० [हिं० दुलारना] १. बच्चों से दुलार करना। २. बहुत अधिक दुलार कर बच्चों को बिगाड़ना।

संयो० क्रि०—डालना।

अ० दुलारे बच्चों की-सी चेष्टा या व्यवहार करना। (परिहास और व्यंग्य)

दुलरी—स्त्री० = दुलड़ी।

दुलरुआ†—वि० = दुलारा।

दुलहन—स्त्री० [हिं० दुलहा का स्त्री०] १. वह स्त्री जो अभी ब्याह कर लाई गई हो। वधू। २. पत्नी। (पूरब)

दुलहा—पुं० [सं० दुर्लभ] [स्त्री० दुलहन] १. वर जिसका विवाह तुरंत होने को हो या हुआ हो। वर। २. पति। (पूरब) ३. रहस्य-संप्रदाय में, परमात्मा।

दुलहाई†—स्त्री० [हिं० दुलहा] विवाह के समय गाये जानेवाले एक प्रकार के गीत। (पूरब)

दुलहिन—स्त्री० = दुलहन।

दुलहिया†—स्त्री० = दुलहन।

दुलही†—स्त्री० = दुलहन।

दुलहेटा—पुं० [सं० दुर्लभ, प्रा० दुल्लह+हिं० बेटा] १. दुलहा। २. दुलारा बेटा।

दुलाई—स्त्री० [सं० तूल=रूई, हिं० तुलाई, तुराई] कपड़े की दो परतों-वाला सिला हुआ वह मोटा ओढ़ना जिसमें रूई भरी होती है। हलकी रजाई।

दुलाना†—स० = डुलाना।

दुलार—पुं० [हिं० दुलारना] १. छोटे बच्चों के प्रति किया जानेवाला ऐसा स्नेहपूर्ण व्यवहार जो उन्हें खूब प्रसन्न रखने के लिए किया जाता है। २. वह धृष्टतापूर्ण आचरण जो बच्चे उमंग में आकर बड़ों के प्रति करते हैं।

मुहा०—किसी का दुलार रखना=अपने से छोटे का आग्रह या हठ मानना। उदा०—राखा मोर दुलार गोसाईं।—तुलसी।

दुलारना—स० [सं० दुर्लल, प्रा० दुल्लाउन] १. बच्चों से दुलार करना। २. बहुत दुलार करके बच्चों को बिगाड़ना।

दुलारा—वि० [हिं० दुलार] [स्त्री० दुलारी] जिसका बहुत दुलार किया गया हो या किया जाता हो। लाड़ला।

दुलारी—वि० हिं० 'दुलारा' का स्त्री०।

† स्त्री० = दुलाई (ओढ़ने की)।

† स्त्री० = दुलारो (चेचक या माता)।

दुलारो—स्त्री० [हिं० दुलार ?] एक प्रकार की माता या चेचक।

दुलाल—पुं० [?] एक प्रकार का चंपा (फूल)।

† पुं० = दुलार।

दुलि—स्त्री० [सं०=डुलि] कच्छपी।

दुलीचा—पुं० [हिं० गलीचा का अनु०] १. गलीचा। कालीन। २.छोटा ऊनी आसन।

दुलेहटा†—पुं० =दुलहेटा।

दुलैचा—पुं० = दुलीचा।

दुलोही†—स्त्री० [हिं० दो+लोहा] एक प्रकार की तलवार जो लोहे के दो टुकड़ों को जोड़कर बनाई जाती है।

दुल्लभ†—वि० = दुर्लभ।

दुल्ली—स्त्री० = दुल्लो।

दुल्लो—स्त्री० [हिं० दो+ला (प्रत्य०)] लड़कों के खेल में वह गोली जो मीर या पहली गोली के बाद ठहरी या पड़ी हो। दूर तक जानेवाली गोलियों में पहली के बादवाली गोली।

दुल्हन, दुल्हैया†—स्त्री० = दुलहन।

दुव †—वि० [सं० द्वि] दो।

दुवन्—पुं० [सं० दुर्मनस्] १. दुष्ट चित्त का मनुष्य। खल। दुर्जन। २. दुश्मन। वैरी। शत्रु। ३. राक्षस।

दुवन्नी—स्त्री ० = दुअन्नी (सिक्का)।

दु-वरकी—स्त्री० [हिं० दो+वरक = पन्ना या पृष्ठ] स्त्री की भग। योनि। (बाजारू और अश्लील व्यंग्य)

मुहा०—दु वरकी का सबक पढ़ाना = (क) स्त्रियों का आपस में भग-संघर्ष के द्वारा मैथुन करना। चपटी लड़ना। (मुसलमान स्त्रियाँ) (ख) मैथुन या संभोग करना। (बाजारू)

दुवा—पुं० = दुआ (दुक्की)।

स्त्री० = दुआ (प्रार्थना)।

दुवाज—पुं० [?] एक प्रकार का घोड़ा।

दुवाद—वि० = द्वादश।

दुवादबानी—वि० [सं० द्वादश = सूर्य +वर्ण] स्वर्ण जो सूर्य के समान दमकता हुआ हो अर्थात् बिलकुल खरा। बारहबानी (सोना)।

दुवादसी †—स्त्री० = द्वादशी।

दुवार†—पुं० =द्वार।

दुवारिका†—स्त्री० = द्वारका।

दुवाल—स्त्री० [फा०] १. चमड़े का तसमा। २. रकाब का तसमा।

दुवालबंद—पुं० [फा०] १. चमड़े का चौड़ा तसमा जो कमर आदि में लपेटा जाय। चपरास या पेटी का तसमा। २. वह जो पेटी बाँधता हो अर्थात् सिपाही।

दुवाली—स्त्री० [देश०] रंगे या छपे हुए कपड़ों पर चमक लाने के लिए घोंटने का बेलन। घोंटा। २. वह परतला जिसमें तलवार या बन्दूक लटकाई जाती है।

दुवालीबंद—पुं० [फा०] परतला आदि लगाये हुए तैयार सिपाही।

दुविद†—पुं० = द्विविद।

दुविधा—स्त्री० [सं० द्विविधा] ऐसी मनःस्थिति जिसमें दो या कई बातों में से किसी बात का निश्चय न हो रहा हो। दुवधा।

दुवो†—वि० [हिं० दुव = दो + उ = ही] दोनों।

दुशमन—पुं० = दुश्मन।

दुशवार—वि० [फा० दुश्वार] [भाव० दुशवारी] १. कठिन। मुश्किल। २. दुःसह।

दुशवारी—स्त्री० [फा०] १. दुशवार होने की अवस्था या भाव। २. कठिन काम। ३. विपत्ति या संकट की अवस्था।

दुशाला—पुं० [फा० दोशालः] पशमीने की बढ़िया चादरों का जोड़ा जिसके किनारों पर पशमीने की रंग-बिरंगी बेल बनी रहती है।

मुहा०—**दुशाले में लपेटकर मारना या लगाना** = इस प्रकार आड़े हाथ लेना कि ऊपर से देखने में अनुचित न जान पड़े अथवा अप्रिय न लगे। मीठी-मीठी बातें कहते हुए कठोर व्यंग्य करना।

दुशाला-पोश—वि० [फा०] जो दुशाला ओढ़े हो। जो अच्छे कपड़े पहने हो।

पुं० अमीर। धनवान।

दुशासन—पुं० = दुःशासन।

दुश्चर—वि० [सं० दुर्√चर् (गति)+ खल्] [भाव० दुश्चरण]= दुष्कर।

दुश्चरित—वि० = दुश्चरित्र।

दुश्चरित्र—वि० [सं० दुर्-चरित्र प्रा० ब० स०] [स्त्री० दुश्चरित्रा] १. बुरे या खराब आचरण या चाल-चलनवाला। बद-चलन। २. जिस पर या जिसमें चलना कठिन हो।

पुं० [प्रा० स०] १. निंदनीय या बुरा आचरण। बद-चलनी। २. पाप। गुनाह।

दुश्चर्मा—(चर्मन्) पुं०[सं० दुर्-चर्म्मन, प्रा० ब० स०] वह पुरुष जिसकी लिंगेन्द्रिय के मुख पर ढाकनेवाला चमड़ा न हो।

दुश्चलन—पुं० [सं० दु: + हिं० चलन] दुराचरण। खोटी चाल।

दुश्चित्य—वि० [सं० दुर्√चिन्त् (ध्यान)+यत्] जिसका चिंतन कठिनता से हो सके।

दुश्चिकित्स—वि० = दुश्चिकित्स्य।

दुश्चिकित्सा—स्त्री० [सं० दुर्-चिकित्सा प्रा० स०] आयुर्वेद-संबंधी चिकित्सा के नियमों के विरुद्ध की जानेवाली चिकित्सा। दूषित चिकित्सा।

दुश्चिकित्स्य—वि० [सं० दुर्√कित्+सन्, द्वित्वादि, +यत्] १. जिसकी चिकित्सा करना बहुत कठिन हो। २. असाध्य। (रोग और रोगी दोनों के सम्बन्ध में)

दुश्चिक्य—पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार लग्न से तीसरा स्थान।

दुश्चित्—पुं० [सं० दुर्-चित् प्रा० स०] १. आशंका। खटका। २. घबराहट। विकलता।

दुश्चेष्टा—स्त्री० [सं० दुर्-चेष्टा प्रा० स०] [वि० दुश्चेष्टित] कुचेष्टा। बुरी चेष्टा।

दुश्चेष्टित—पुं० [सं० दुर्-चेष्टित प्रा० स०] १. निंदनीय या बुरा काम। दुष्कर्म। २. छोटा या नीच काम। ३. पाप। गुनाह।

दुश्च्यवन—वि० [सं० दुर्-च्यवन प्रा० ब० स०] १. जो जल्दी च्युत न हो सके। २. जो जल्दी विचलित न हो।

पुं० इन्द्र।

दुश्च्याव—वि० [सं० दुर्-च्याव प्रा० ब० स०] जो जल्दी च्युत न किया जा सके।

पुं० शिव। महादेव।

दुश्मन—पुं० [फा०] [भाव० दुश्मनी] वैरी। शत्रु।

दुश्मनी—स्त्री० [फा०] वैर। शत्रुता।

दुष्कर—वि० [सं० दुर्√कृ (करना)+खल्] (काम) जिसे करना कठिन हो। जो मुश्किल से हो सके। दुःसाध्य।

पुं० आकाश। आसमान।

दुष्कर्ण—पुं० [सं० दुर्-कर्ण प्रा० ब० स०] धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

दुष्कर्म (न्)—पुं० [सं० दुर्-कर्मन् प्रा०स०] [वि० दुष्कर्म्मा] १. ऐसा काम जिसे करना बहुत कठिन हो। २. अनुचित, निंदनीय, तथा बुरा काम।

दुष्कर्मा (मंन्)—वि०[सं० दुर्-कर्मन् प्रा० ब०स०] दुष्कर्म करनेवाला।

दुष्कर्मी (मिन्)—वि०[सं० दुष्कर्म+इनि]१. दुष्कर्म या बुरे काम करनेवाला। २. दुराचारी।

दुष्काल—पुं०[सं० दुर्-काल प्रा०स०] १. बुरा वक्त। कुसमय। २. अकाल। दुर्भिक्ष। ३. शिव का एक नाम।

दुष्काव्य—पुं०[सं० दुर्-काव्य प्रा०स०]१. ऐसा काव्य जिसकी रचना बहुत कठिन हो अथवा जो सहज में समझा न जा सके। २. घटिया दरजे का या बुरा काव्य।

दुष्कीर्ति—स्त्री०[सं० दुर्-कीर्ति प्रा०स०] बुरी कीर्ति। बदनामी।

दुष्कुल—वि०[सं० दुर-कुल प्रा० ब० स०] नीच कुल का। तुच्छ घराने का।

पुं०[प्रा०स०] नीच कुल। खराब खानदान या घराना।

दुष्कुलीन—वि० [सं० दुष्कुल+ख—ईन] निम्न कुल या नीच घराने का।

दुष्कुलेय—वि०[सं० दुष्कुला+ढक्—एय] दुष्कुलीन।

दुष्कृत—पुं०[सं० दुर्-कृत प्रा० स०] दुष्कर्म।

दुष्कृति—वि०[सं० दुर्-कृति प्रा० ब०स०] दुष्कृत्य करनेवाला। कुकर्मी।

पुं०[प्रा०स०] बुरा काम। कुकर्म। दुष्कृत्य।

दुष्कृती (तिन्)—वि०[सं० दुष्कृत+इनि] दुष्कर्म करनेवाला।

दुष्क्रम—पुं०[सं० दुर्-क्रम प्रा०स०] १. अनुचित या कठिन क्रम। २. साहित्य में, किसी उक्ति या रचना के अन्तर्गत लोक विहित या शास्त्र विहित क्रम की उपेक्षा या उल्लंघन जो अर्थ-संबंधी एक दोष माना गया है।

दुष्क्रीत—वि०[सं० दुर्√क्री (खरीदना)+क्त]१. जो बहुत कठिनाई से खरीदा गया हो। २. महँगा।

दुष्खदिर—पुं०[सं० दुर्-खदिर प्रा०स०] एक प्रकार का खैर का पेड़ जिसका कत्था घटिया दरजे का होता है। क्षुद्र खदिर।

दुष्ट—वि० [सं०√दुष् (विकृति)+क्त] [स्त्री० दुष्टा] १. जिसमें दोष हो। दूषित। २. जो जान-बूझकर दूसरों को कष्ट देता अथवा तंग या परेशान करता हो। दूषित मनोवृत्तिवाला। ३. पित्त आदि दोषों से युक्त (रोग या व्यक्ति)।

पुं० कुष्ठ या कोढ़ नाम का रोग।

दुष्टचारी (रिन्)—वि०[सं० दुष्ट√चर् (गति)+णिनि] [स्त्री० दुष्टचारिणी] १. बुरा आचरण करनेवाला। दुराचारी। २. खल दुर्जन।

दुष्ट-चेता (तस्)—वि०[सं० ब०स०]१. बुरी बात सोचनेवाला। २. दूसरों का अहित या बुरा चाहनेवाला। अशुभ-चिन्तक। ३. कपटी। छली। धोखेबाज।

दुष्टता—स्त्री०[सं० दुष्ट+तल्—टाप्]१. दुष्ट होने की अवस्था, गुण या भाव। २. दोष। ऐब। ३. खराबी। बुराई। ४. पाजीपन। शरारत। ५. बदमाशी।

दुष्टत्व—पुं०[सं० दुष्ट+त्व]=दुष्टता।

दुष्टपना—पुं०[हिं० दुष्ट+पन (प्रत्य०)] दुष्टता।

दुष्टर†—वि०=दुस्तर।

दुष्टव्रण—पुं०[कर्म०स०]१. वह व्रण या घाव जिसमें से दुर्गंध निकलती हो। २. असाध्य व्रण या घाव।

दुष्ट-साक्षी (क्षिन्)—पुं० [सं० कर्म० स०] वह गवाह जो गलत या झूठी गवाही दे। बुरा गवाह।

दुष्टा—वि०[सं० दुष्ट+टाप्] 'दुष्ट' का स्त्री०।

दुष्टाचार—पुं०[दुष्ट-आचार कर्म०स०]१. खराब या बुरा आचरण। २. अनुचित और निंदनीय काम। दुष्कर्म।
वि०=दुराचारी।

दुष्टाचारी (रिन्)—वि०[सं० दुष्टाचार+इनि] [स्त्री० दुष्टाचारिणी] १. अनुचित या बुरे काम करनेवाला। २. जिसका आचरण अच्छा न हो।

दुष्टात्मा (त्मन्)—वि०[दुष्ट-आत्मन् ब०स०] बुरे अन्तःकरण या विचारोंवाला।

दुष्टान्न—पुं०[दुष्ट-अन्न कर्म०स०]१. बिगड़ा हुआ या खराब अन्न। २. बासी या सड़ा हुआ अन्न अथवा भोजन। ३. कुत्सित उपायों से प्राप्त किया हुआ अन्न या भोजन। पाप की कमाई का अन्न या भोजन। ४. कुत्सित कमाई करनेवाले या नीच व्यक्ति का अन्न या भोजन।

दुष्टि—स्त्री०[सं०√दुष् (विकृति)+क्तिच्]=दोष।

दुष्पच—वि०[सं० दुर्√पच् (पाक)+खल्]१. (फल आदि) जो कठिनता से पके। २. (खाद्य पदार्थ) जो कठिनता से पचे।

दुष्पत्र—पुं०[सं० दुर्-पत्र प्रा० ब०स०] चोर या चोरक नामक गंध द्रव्य।

दुष्पद—वि०[सं० दुर्√पद् (गति)+खल्]=दुष्प्राप्य।

दुष्पराजय—वि०[सं० दुर्-पराजय प्रा० ब० स०] जिसे पराजित करना कठिन हो।
पुं० धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

दुष्परिग्रह—वि०[सं० दुर्-परि√ग्रह् (पकड़ना)+खल्] जिसे पकड़ना अर्थात् अधिकार या वश में करना कठिन हो।

दुष्परिमेय—वि०[सं० दुर्-परि√मा(नापना)+यत्] जिसे नापना सहज न हो।

दुष्पर्श—वि०[सं० दुर्-स्पृश् (छूना)+खल्] १. जिसे स्पर्श करना कठिन हो। जिसे छूना सहज न हो। २. जो जल्दी मिल न सके। दुष्प्राप्य।

दुष्पर्शा—स्त्री०[सं० दुष्पर्श+टाप्] जवासा।

दुष्पार—वि०[सं० दुर्√पार् (पार होना)+खल्]१. जिसे कठिनता से पार किया जा सके। २. (कार्य) जो बहुत कठिन या दुस्साध्य हो।

दुष्पूर—वि० [सं० दुर्√पूर (भरना)+खल्] १. जिसे भरना कठिन हो। २. जो जल्दी पूरा न हो सके। कठिनता से पूरा होनेवाला। ३. जिसका जल्दी या सहज में निवारण न हो सके।

दुष्प्रकृति—वि०[सं० दुर्-प्रकृति प्रा० बा० स०] बुरी प्रकृति या खराब स्वभाववाला (व्यक्ति)।
स्त्री० खराब या बुरी प्रकृति अथवा स्वभाव।

दुष्प्रधर्ष—वि०[सं० दुर्-प्र√धृष् (दबाना)+खल्] जिसे कठिनता से पकड़ा जा सके।
पुं० धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

दुष्प्रधर्षा—स्त्री०[सं० दुष्प्रधर्ष+टाप्]१. जवासा। हिंगुवा। २. खजूर।

दुष्प्रधर्षिणी—स्त्री० [सं० दुष्प्रधर्ष+इनि—ङीप्] १. कंटकारी। भटकटैया। २. बैंगन। भंटा।

दुष्प्रयोग—पुं०[सं० दुर्-प्रयोग प्रा० ब० स०] =दुरुप्रयोग।

दुष्प्रवृत्ति—स्त्री०[सं०दुर्-प्रवृत्ति प्रा०ब०स०] अनुचित या बुरी प्रवृत्ति।
वि० दुष्ट या बुरी प्रवृत्तिवाला।

दुष्प्रवेशा—स्त्री० [सं० दुर्-प्र√विश् (प्रवेश)+खल्–टाप्]) कंथारी वृक्ष।

दुष्प्राप्य—वि०[सं० दुर्-प्र√आप् (प्राप्त करना)+ण्यत्] जो कठिनता से प्राप्त किया जा सके। जो आसानी से या जल्दी प्राप्त न हो सकता हो।

दुष्प्रेक्ष—वि०[सं० दुर्-प्र√ईक्ष् (देखना)+खल्]=दुष्प्रेक्ष्य।

दुष्प्रेक्ष्य—वि०[सं० दुर्-प्र√ईक्ष्+ण्यत्] १. जिसे देखना कठिन हो। जो सहज में न देखा जा सके। २. जो देखने में बहुत बुरा लगे। कुरूप। भद्दा। ३. भीषण। विकराल।

दुष्मंत*—पुं०=दुष्यंत।

दुष्यंत—पुं०[सं०] महाभारत में वर्णित एक प्रसिद्ध पुरुवंशी राजा जो ऐति नामक राजा के पुत्र थे। महाकवि कालिदास ने 'अभिज्ञान शाकुन्तल' में इसी दुष्यंत तथा शकुन्तला की प्रेम-गाथा लिखी है।
*पुं०[सं० दुःख+अंत] दुःख का अंत।

दुष्योदर—पुं०[सं० दुष्य-उदर ब०स०] एक प्रकार का उदर रोग जो प्रायः असाध्य होता है।

दुसंत*—पुं०=दुष्यंत।

दुसट†—वि० [सं० दुष्ट] १. बुरा। खराब। २. नीच। उदा०—दुसट सासना भली दइ।—प्रिथीराज।

दुसराता—स०=दोहराना।

दुसरिहा†—वि०[हिं० दूसरा+ हा (प्रत्य०)] १. अन्य। दूसरा। २. संगी। साथी। ३. दूसरी बार होनेवाला। ४. अपर या विरोधी पक्ष का। प्रतिद्वंद्वी। प्रतियोगी। (पूरब)

दुसह—वि०[सं० दुःसह]जो सहज में सहा न जाय। दुस्सह।

दुसही—वि०[हिं० दुःसह+ई (प्रत्य०)] १. जिसे सहना बहुत कठिन हो। २. जो दूसरों की उन्नति, भलाई आदि देख या सह न सके; अर्थात् ईर्ष्या या डाह करनेवाला।

दुसाखा—पुं०=दोशाखा।

दुसाध—पुं०[सं० दोषाद वा दुःसाध्य] हिंदुओं में एक जाति जो सूअर पालती है।

†वि०[?] अधम। नीच।

दुसार—पुं०[हिं० दो+सालना] आर-पार किया या गया हुआ छेद। क्रि० वि० इस पार या सिरे से उस पार या दूसरे सिरे तक। वि०[सं० दुःशल्य] बहुत कष्ट देनेवाला।

दुसाल—पुं०, क्रि० वि०, वि०=दुसार।

दुसाला†—पुं०=दुशाला।

दुसासन†—पुं०=दुःशासन।

दुसाहा—पुं०[देश०] जिसमें दो फसलें होती हों। दो-फसला खेत।

दुसूती—स्त्री०[हिं० दो०+सूत] एक प्रकार का मोटा मजबूत कपड़ा जिसमें दो-दो तागों का ताना और बाना होता है।

दुसेजा—पुं०[हिं० दो+सेज] ऐसी बड़ी खाट या पलंग जिस पर दो आदमी एक साथ सो सकते हों।

दुस्तम*—वि०=दुस्तर।

दुस्तर—वि०[सं०]१. जिसे तैर कर पार करना कठिन हो। २. जिसे पूरा या संपन्न करना कठिन हो। कठिन। दुर्घट।

दुस्त्यज—वि०[सं० दुर्√त्यज् (छोड़ना)+खल्] जिसे छोड़ना या त्यागना कठिन हो।

दुस्थित—वि०[सं० दुर्√स्था (ठहरना)+क्त] [भाव० दुस्थिति] १. जो कठिन या बुरी स्थिति में हो। २. दुर्दशाग्रस्त।

दुस्स्पर्श—वि०[सं०] दुष्पर्श। (दे०)

दुस्स्पर्शा—स्त्री०[सं०]१. जवासा। केवाँच। २. भटकटैया।

दुस्स्पृष्ट—पुं०[सं० दुर्√स्पृश् (छूना)+क्त] १. हलका स्पर्श। २. जिह्वा का ईषत् स्पर्श जिससे य्, र्, ल् और व् ध्वनियों का उच्चारण होता है।

दुस्स्मर—वि०[सं० दुर्√स्मृ (स्मरण)+खल्] जिसे स्मरण करना या रखना कठिन हो।

दुस्सह—वि०[सं० दुर्√सह् (सहना)+खल्] जिसे सह सकना बहुत कठिन हो। दुःसह।

दुहकर*—वि०=दुष्कर।

दुहता—पुं०[सं० दौहित्र] [स्त्री० दुहती] बेटी का बेटा। दोहता। नाती।

दुहत्थड़—क्रि० वि०, पुं०=दोहत्थड़।

दुहत्था—वि०=दोहत्था।

दुहत्था शासन—पुं०=द्विदल शासन।

दुहत्थी—स्त्री०=दोहत्थी।

दुहना†—स०=दूहना।

दुहनी—स्त्री०=दोहनी। स्त्री०=दुहिता।

दुहरना—अ०[?] दोहराया जाना। स०=दोहराना।

दुहरा—वि०[स्त्री० दुहरी]=दोहरा।

दुहराना—स०=दोहराना।

दुहा—वि०, स्त्री०[सं०] जो दुही जा सके। स्त्री० गाय। गौ। †वि०=दोनों। उदा०—ऐके ठाहर दूहा बसेरा। †पुं०=दूहा या दोहा।

दुहाई—स्त्री०[सं० द्विधाकृतम् (दो टूकड़े कर डाला अर्थात् बचाओ मुझे मारडाला) का प्रा० रूप अथवा सं० द्वि=दो+आह्वाय=पुकार] १. ऐसी सूचना जो उच्च स्वर से पुकारते हुए सब लोगों को दी जाय। मुनादी।

मुहा०—(किसी की) **दुहाई फिरना**=(क) राजा के सिंहासन पर बैठने पर उसके राज्याधिकार की घोषणा होना। (ख) किसी के प्रताप, यश आदि की चारों ओर खूब चर्चा होना।

२. भारी कष्ट या विपत्ति आने पर दूसरों से सहायता पाने के लिए की जानेवाली पुकार। अपने बचाव या रक्षा के लिए दीनतापूर्वक चिल्लाकर की जानेवाली याचना।

क्रि० प्र०—देना।

३. शपथ। सौगंध।

स्त्री०[हिं० दूहना]दुहने की क्रिया, भाव और पारिश्रमिक।

दुहाग—पुं०[सं० दुर्भाग्य, प्रा० दुब्भाग]१. दुर्भाग्य। बदकिस्मती। २. वैधव्य। 'सुहाग' का विपर्याय।

दुहागिन—स्त्री०[हिं० दुहागी] विधवा स्त्री। 'सुगाहिन' का विपर्याय।

दुहागिल†—वि०=दुहागी।

दुहागी—वि०[हिं० दुहाग+ई (प्रत्य०)] १. अभागा। २. अना। ३. खाली। ४. निर्जन। सूना।

दुहाजू—वि० [सं० द्विभार्य] १. (पुरुष) जो पहली स्त्री के मर जाने पर दूसरा विवाह करे। २. (स्त्री) जो पहले पति के मरने पर दूसरा विवाह करे।

दुहाना—स०[हिं० दूहना का प्रे०] गाय आदि दुहने में किसी को प्रवृत्त करना। । दूहने का काम किसी से कराना ।

दुहाव—पुं०[हिं० दुहाना]१. गौ, भैंस आदि दुहने की क्रिया या भाव। २. एक प्राचीन प्रथा जिसके अनुसार जमींदार प्रति वर्ष जन्माष्टमी आदि त्योहारों पर किसानों की गाय-भैंसों का दूध दुहाकर ले लेता था। ३. उक्त प्रथा के अनुसार दिया या लिया जानेवाला दूध।

दुहावनी—स्त्री०[हिं० दुहाना]वह धन जो ग्वाले को गौ, भैंस आदि दुहने के बदले दिया जाता है। दूध दुहने की मजदूरी।

दुहिता (तृ)—स्त्री०[सं०√दुह+तृच्] बेटी। लड़की।

विशेष—प्राचीन काल में गौएँ आदि दुहने का काम प्रायः लड़कियाँ ही करती थीं, इसी से उनका यह नाम पड़ा था।

दुहितृका—स्त्री०[सं०] गुड़िया। पंचाली।

दुहितृ-पति—पुं०[सं० ष०त०] दुहिता अर्थात् बेटी का पति। जामाता। दामाद।

दुहिन—पुं०[सं० द्रुहण] ब्रह्मा।

दुहुँधा*—क्रि० वि०[हिं० दु=दो+धा=ओर] १. दोनों ओर। उदा०—मोटी पीर परम पुरुषोत्तम दुःख मेर्‌यौ दुहुँधा कौ।—सूर। २. दोनों तरह से।

दुहूँ—वि० [हिं० दो+हूँ (प्रत्य०)]१. दोनों। उदा०—दुहूँ भाँति असमंजसै, वाण चले सुखपाय।—केशव। २. दोनों को।

दुहेनू—स्त्री०[हिं० दुहना] दूध देनेवाली गाय।

दुहेरा—वि० १.=दुहेला। २.=दोहरा।

दुहेल†—पुं०[सं० दुर्हेल] दुःख। विपत्ति। मुसीबत।

दुहेलरा†—वि०[स्त्री० दुहेलरी]=दुहेला।

†पुं०=दुहेला।

दुहेला—वि०[सं० दुर्हेल= कठिन खेल] [स्त्री० दुहेली] १. कष्ट-प्रद। दुःखदायी। २. दुःसाध्य। कठिन। उदा०—भगति दुहेली राम की।—कबीर। ३. कष्ट या विपत्ति में पड़ा हुआ। दीन। दुखिया। उदा०—दरस बिनु खड़ी दुहेली।—मीराँ। ४. दुःखमय। दुःखपूर्ण।

पुं० विकट या दुःखदायक कार्य।

दुहैया†—वि०[हिं० दुहना] गौ, भैंस आदि दूहने का काम करनेवाला।

†स्त्री०=दुहाई।

दुहोतरा†—वि०[हिं० दो+सं० उत्तर] गिनती में दो से अधिक।

पुं०=दोहतरा (नाती)।

दुह्य—वि०[सं०] [स्त्री० दुह्या] १. जिसे दूहा जा सके। दूहे जाने के योग्य। २. जो दूहा जाने को हो।

दुह्यु—पुं०[सं०] शर्मिष्ठा के गर्भ से उत्पन्न ययाति राजा के एक पुत्र का नाम।

दूँगड़ा —पुं०=दौंगरा।

दूँगरा†—पुं०=दौंगरा।

दूँद—पुं०[सं० द्वंद्व]१. ऊधम। उपद्रव।

क्रि० प्र०—मचाना।

२. दे० 'द्वंद्व'।

दूँदना—अ०[हिं० दूँद]१. उपद्रव करना। ऊधम मचाना। २. जोर का शब्द करना।

दूँदर†—वि०[सं० द्वंद्व] बलवान्। शक्तिशाली।

दूँदि*—स्त्री०=दूँद।

दू†—वि०=दो।

दूआ—पुं०[हिं० दो+आ (प्रत्य०) १. ताश या गंजीफे में वह पत्ता जिस पर दो बूटियाँ या बिंदियाँ हों। दुक्की। २. पासे, सोलही आदि का ऐसा दाँव जिसमें दो बिंदियाँ ऊपर रहती अथवा दो कौड़ियाँ चित्त पड़ती हैं। (जुआरी)

†वि०=दूसरा।

पुं० [देश०] कलाई पर सब गहनों के पीछे की ओर पहना जानेवाला पिछेली नामक गहना।

†स्त्री०=दुआ।

दूइ†—वि०=दो।

दुइज—स्त्री०=दूज (द्वितीया तिथि)।

दूई—वि०=दो।

स्त्री०=दुई।

दूक—वि०[सं० द्वैक]दो एक, अर्थात् कुछ या थोड़े से।

दूकान—स्त्री०=दुकान।

दूकानदार—पुं०=दुकानदार।

दूकानदारी—स्त्री०=दुकानदारी।

दूख†—पुं०=दुःख।

दूखन†—पुं०=दूषण।

दूखना†—स० [सं० दूषण+ना (प्रत्य०)] किसी पर दोष लगाना। किसी को बुरा ठहराना या बताना।

अ०[?] नष्ट होना।

स० नष्ट करना।

अ०=दुखना।

दूखित†—वि०१.=दूषित। २.=दुःखित।

दूगला—पुं०[देश०] एक तरह का बड़ा टोकरा।

†वि०, पुं०=दोगला।

दूगुन—वि०=दूना (दुगुना)।

स्त्री०=दुगून।

दूगू—पुं०[देश०] एक तरह का पहाड़ी बकरा।

दूज—स्त्री० [सं० द्वितीया, प्रा० दुइय, दुइज], चांद्रमास के हर पक्ष की दूसरी तिथि। दुइज। द्वितीया।

पद—**दूज का चाँद**=ऐसा व्यक्ति जो बहुत दिनों पर दिखाई देता या मिलता हो। (परिहास और व्यंग्य)

दूजा—वि० [सं० द्वितीया, प्रा० दुइय] [स्त्री० दूजी] १. दूसरा। (पश्चिम) २. पराया।

दूझना†—स०[सं० दुःख] कष्ट या दुःख देना।

दूझा†—वि०=दूजा।

दूत—पुं०[सं०√दू(दुःखी होना)+क्त][स्त्री० दूती]१. वह व्यक्ति जो किसी का संदेश लेकर कहीं जाय। दूसरों के संदेश अभिप्रेत व्यक्ति तक पहुँचानेवाला। २. प्रेमी और प्रेमिका के संदेश एक दूसरे को पहुँचानेवाला व्यक्ति। ३. वह जो एक दूसरे की बातें इधर-उधर लगाकर दोनों पक्षों में लड़ाई-झगड़ा कराता हो। (क्व०) ४. दे० 'राजदूत'।

दूतक—पुं०[सं० दूत+कन्]१. प्राचीन भारत में, वह कर्मचारी जो राजा की दी हुई आज्ञा का सर्व-साधारण में प्रचार करता था। २. दूत।

दूतकत्व—पुं०[सं०दूतक+त्व]१. दूतक का काम, पद या भाव। २. दूत का काम, पद या भाव।

दूत-कर्म (न्)—पुं०[ष० त०] दूत का काम। दूतत्व।

दूत-काव्य—पुं०[मध्य०स०] ऐसा काव्य जिसमें मुख्यतः किसी दूत के द्वारा प्रिय के पास विरह निवेदन भेजा गया हो। जैसे—मेघदूत, पवनदूत।

दूतघ्नी—स्त्री० [सं० दूत√हन् (हिंसा)+टक्—ङीप्] गोरखमुंडी। कदंबपुष्पी।

दूतता—स्त्री० [सं० दूत+तल्—टाप्] दूत का काम, पद या भाव। दूतत्व।

दूतत्व—पुं०[सं० दूत+त्व] दूत का काम, पद या भाव। दूतता।

दूतपन—पुं०[सं० दूत+हिं० पन (प्रत्य०)] दूतत्व।

दूत-मंडल—पुं०[ष०त०] आधुनिक राजनीति में, एक देश से दूसरे देश को किसी काम के लिए भेजे हुए दूतों का दल या समूह।

दूतर†—वि०=दुस्तर।

दूतायन—पुं० दे० 'दूतावास'।

दूतावास—पुं० [दूत-आवास ष०त०] वह भवन या क्षेत्र जिसमें किसी

दूसरे राज्य के राजदूत तथा उसके साथ के कर्मचारी रहते तथा काम करते हों। राजदूत का कार्यालय। (लीगेशन)

दूति—स्त्री०[सं०√दू+ति]=दूती।

दूतिका—स्त्री०[सं० दूति+कन्—टाप्] दूती।

दूती—स्त्री० [सं० दूति+ङीष्] १. संदेश पहुँचानेवाली स्त्री। २. साहित्य में, वह स्त्री जो प्रेमिका का संदेश प्रेमी तक और प्रेमी का संदेश प्रेमिका तक पहुँचाती है। इसके उत्तमा, मध्यमा और अधमा तीन भेद हैं। ३. दे०'कुटनी'।

दूत्य—पुं०[सं० दूत+य] दूत का काम, पद या भाव।

दूद—पुं०[फा०] धूआँ।

दूदकश—पुं०[फा०]१. धूआँ बाहर निकालने की चिमनी। २. एक प्रकार का दमकला जिससे धूआँ देकर पौधों में लगे हुए कीड़े नष्ट किये जाते हैं।

दूदला—पुं०[देश०] एक तरह का पेड़। डुडला।

दूदुह—पुं०[सं० दुंडुभ] पानी का साँप। डेड़हा। (डिं०)

दूध—पुं०[सं० दुग्ध] १. सफेद या हल्के पीले रंग का वह पौष्टिक तरल पदार्थ जो मादा स्तनपायी जीवों के स्तनों में शिशु के जन्म लेने पर उत्पन्न होता है, तथा जिसे वे नवजात शिशुओं को पिलाकर उनका पालन-पोषण करती हैं।

मुहा०—**दूध उतरना**=संतान होने के समय मादा के स्तन में दूध का आविर्भाव होना। **(किसी के मुँह से) दूध की बू आना**=अवस्था या वय के विचार से दूध पीनेवाले बच्चों से कुछ ही बड़ा होना। अल्पवयस्क होना। **दूध चढ़ना**=दुहते समय गाय, भैंस आदि का अपने दूध को स्तनों में ऊपर की ओर खींच ले जाना जिससे दुहनेवाला उसको खींचकर बाहर न निकाल सके। **(बच्चे का दूध) छुड़ाना**=बच्चे की दूध पीने की प्रवृत्ति इस प्रकार धीरे-धीरे कम करना कि वह माता का दूध पीना छोड़ दे। **(बच्चे का) दूध टूटना**=स्तनों से निकलनेवाले दूध की मात्रा कम होना। **दूध डालना**=बच्चे का दूध पीते ही उसे उगलकर बाहर निकाल देना। जैसे—दो तीन दिन से यह बच्चा दूध डाल रहा है। **(माता का) दूध दुहना**=स्तनों को बार बार दबाते हुए उनमें से दूध बाहर निकालना। **दूध बढ़ाना**=दे० 'दूध छुड़ाना'। (देखें ऊपर)

पद—**दूध का बच्चा**=वह छोटा बच्चा जो केवल दूध पीकर रहता हो। **दूध के दाँत**=छोटे बच्चे के वे दाँत जो पहले-पहल दूध पीने की अवस्था में निकलते हैं और छः सात वर्ष की अवस्था में जिनके गिर जाने पर दूसरे नये दाँत निकलते हैं। **दूध-पीता बच्चा**=गोद में रहनेवाला वह छोटा बच्चा जिसका आहार अभी तक केवल दूध हो। **दूधों नहाओ, पूतों फलो**=धन-संपत्ति और संतान आदि की ओर से खूब सुखी रहो। (आशीष)

२. गाय, बकरी, भैंस आदि के थनों को दूहकर निकाला जानेवाला उक्त तरल पदार्थ।

मुहा०—**दूध उछालना**=खौलते हुए दूध को ठंढा करने के लिए कड़ाही आदि में से निकालकर बार-बार ऊपर से नीचे गिराना। **(किसी को) दूध की मक्खी की तरह निकालना या निकाल देना**=किसी मनुष्य को परम अनावश्यक और तुच्छ अथवा हानिकारक समझकर अपने साथ या किसी कार्य से बिलकुल अलग कर देना। **दूध तोड़ना**=गरम दूध खूब हिलाकर ठंढा करना। **(किसी चीज का) दूध पीना**=बहुत ही सुरक्षित अवस्था में बना रहना। जैसे —आपके रुपए दूध पीते हैं, जब चाहें तब ले लें। **दूध फटना**=दूध में किसी प्रकार का रासायनिक विकार होने अथवा विकार उत्पन्न किये जाने पर जलीय अंश का उसके सार भाग से अलग होना। **दूध फाड़ना**=खटाई आदि डालकर ऐसी क्रिया करना जिससे दूध का जलीय अंश और सार भाग अलग हो जाय।

पद—**दूध का दूध और पानी का पानी**=ऐसा ठीक और पूरा न्याय जिसमें उचित और अनुचित बातें एक दूसरे से बिलकुल अलग होकर स्पष्ट रूप से सामने आ जायँ। ठीक उसी तरह का न्याय जिस तरह पानी मिले हुए दूध में से दूध का अंश अलग और पानी का अंश अलग हो जाता हो। **दूध का-सा उबाल**=उसी प्रकार का कोई क्षणिक आवेग, आवेश या मनोविकार जो उबलते हुए दूध के उबाल की तरह बहुत थोड़ी देर में धीमा पड़ जाता या शांत हो जाता हो।

३. कई प्रकार के पत्तों, फलों, बीजों आदि में से निकलनेवाला गाढ़ा सफेद रस। जैसे—गेहूँ, बरगद या मदार का दूध।

मुहा०—**(किसी चीज में) दूध आना या पड़ना**=उक्त प्रकार से रस का आविर्भाव होना जो दानों, बीजों आदि के तैयार होने या पकने का सूचक होता है।

४. रासायनिक क्रिया से दूध का बना हुआ सूखा चूर्ण जो प्रायः डिब्बों में बंद किया हुआ मिलता है।

दूध-चढ़ी—वि०[हिं० दूध+चढ़ना] जो बहुत अधिक दूध देती हो।

दूध-पिलाई—स्त्री०[हिं० दूध+पिलाना]१. दूध पिलानेवाली दाई। २. दूसरे के बच्चे को अपने स्तन का दूध पिलाने के बदले में मिलनेवाला धन। ३. विवाह के समय की एक रसम जिसमें वर की माँ उसे (वर को) दूध पिलाने की-सी मुद्रा करती है। ४. उक्त रसम के समय माता को मिलनेवाला नेग।

दूध-पूत—पुं०[हिं० दूध+पूत=पुत्र] धन और संतति।

दूध-फेनी—स्त्री०[सं० दुग्धफेनी] एक प्रकार का पौधा जो दवा के काम में आता है।

स्त्री० [हिं० दूध+फेनी] दूध में भिगोई या पकाई हुई फेनी।

दूध-बहन—स्त्री०=दूध-भाई का स्त्री० (दे० 'दूध-भाई')।

दूध भाई—पुं०[हिं० दूध+भाई] [स्त्री० दूध-बहन] ऐसे दो बालकों में से कोई एक जो किसी एक स्त्री के स्तन का दूध पीकर पले हों फिर भी जो अलग-अलग माता-पिता से उत्पन्न हुए हों।

दूध-मलाई—स्त्री०[हिं०] पुरानी चाल की एक प्रकार की बूटीदार मलमल।

दूध-मसहरी—स्त्री० [हिं० दूध+मसहरी] एक तरह का रेशमी कपड़ा।

दूधमुँहाँ—वि०=दुध-मुँहाँ।

दूधमुख—वि०=दुध-मुँहाँ।

दूधराज—पुं०[देश०]१. एक प्रकार की बुलबुल जो भारत, अफगानिस्तान और तुर्किस्तान में पाई जाती है। इसे शाह बुलबुल भी कहते हैं। २. बहुत बड़े फनवाला एक प्रकार का साँप।

दूध-सार—पुं०[हिं० दूध+सं०सार]१. एक प्रकार का बढ़िया केला। २. रासायनिक क्रियाओं से बनाया हुआ दूध का सत जो सूखे चूर्ण के रूप में बाजारों में बिकता है।

दूध हंडी—स्त्री०[हिं० दूध+हंडी] वह हाँड़ी जिसमें दूध गरमाया अथवा रखा जाता हो।

दूधा—पुं०[हिं० दूध] १. एक प्रकार का धान जो अगहन में तैयार होता है और जिसका चावल वर्षों तक रह सकता है। २. अन्न के कच्चे दानों में से निकलनेवाला दूध की तरह का सफेद रस।

दूधाधारी—वि०=दूधाहारी।

दूधा-भाती—स्त्री०[हिं० दूध+भात] विवाह के उपरांत की एक रसम जिसमें वर और कन्या एक दूसरे को दूध और भात खिलाते हैं।

दूधाहारी —वि०[हिं० दूध+आहारी] जो केवल दूध पीकर निर्वाह करता हो, अन्न, फल आदि न खाता हो।

दूधिया—वि०[हिं० दूध+इया (प्रत्य०)] १. जिसमें दूध मिला हो अथवा जो दूध के योग से बना हो। जैसे—दूधिया भाँग, दूधिया हलुआ। २. जिसमें दूध होता हो। जैसे—दूधिया सिंघाड़ा। ३. जो दूध के रूप में हो। जैसे—दूधिया निर्यास। ४. दूध के रंग का। ५. ऐसा सफेद जिसमें कुछ नीली झलक हो। (मिल्की)

पुं०१. एक तरह का सोहन हलुआ जो दूध के योग से बनता है। २. एक प्रकार का सफेद रत्न। ३. एक प्रकार का सफेद तथा मुलायम पत्थर। ४. ऐसा सफ़ेद रंग जिसमें नीली झलक हो। ५. एक तरह का बढ़िया आम।

स्त्री० [सं० दुग्धिका]१. दुद्धी नाम की घास। २. एक प्रकार की चरी या ज्वार। ३. खड़िया या खड़ी नामक सफेद खनिज मिट्टी। ४. एक प्रकार की चिड़िया जिसे लटोरा भी कहते हैं।

दूधिया-कंजई—पुं०[हिं०] एक प्रकार का रंग जो नीलापन लिये हुए भूरा अर्थात् कंजे के रंग से कुछ खुलता होता है।

वि० उक्त प्रकार के रंग का।

दूधिया खाकी—वि०[हिं० दूधिया+खाकी] सफेद राख के से रंगवाला।

पुं० उक्त प्रकार का रंग।

दूधिया-पत्थर—पुं०[हिं० दूधिया+पत्थर] १. एक प्रकार का मुलायम सफेद पत्थर जिससे कटोरियाँ, प्याले आदि बनते हैं। २. एक प्रकार का बहुत चमकीला और चिकना बड़ा पत्थर जिसकी गिनती रत्नों में होती है।

दूधिया-विष—पुं०[हिं० दूधिया+विष] कलियारी की जाति का एक विष जिसके सुन्दर पौधे काश्मीर तथा हिमालय के पश्चिमी भाग में मिलते हैं। इसे 'तेलिया विष' और 'मीठा जहर' भी कहते हैं।

दूधी†—स्त्री०=दुद्धी।

दून—स्त्री०[हिं० दूना] १. दूने होने की अवस्था या भाव।

मुहा०—दून की लेना या हाँकना=अपनी शक्ति, सामर्थ्य आदि के संबंध में बहुत बढ़-बढ़कर बातें करना। शेखी हाँकना। **दून की सूझना**=ऐसी बात सूझना जो सहज में पूरी न हो सकती हो।

२. जितना समय लगाकर गाना या बजाना आरंभ किया जाय आगे चलकर लय बढ़ाते हुए उससे आधे समय में उसे पूरा करना। ३. ताश के खेल में, वह स्थिति जब कोई खिलाड़ी या पक्ष बदी हुई संख्या में सरें आदि न बना सकने के कारण दुगनी हार का भागी समझा जाता है।

वि० = दूना।

पुं०[देश०] दो पहाड़ों के बीच का मैदान। तराई। घाटी। जैसे—देहरादून।

दूनर—वि०[सं० द्विनम्र] जो लचकर दोहरा हो गया हो।

दून-सिरिस—पुं०[देश०] एक तरह का सफेद सुगंधित फूलोंवाला सिरिस का पेड़।

दूना—वि०[सं० द्विगुण] जितनी कोई संख्या या चीज हो, उससे उतने ही और अधिक अनुपात में होनेवाला। दुगना। दोगुना। जैसे—४ का दूना ८ होता है।

दूनौ†—वि०=दोनों।

दूब—स्त्री०[सं० दूर्वा] एक तरह की प्रसिद्ध घास जिसका व्यवहार हिंदू लोग लक्ष्मी, गणेश आदि के पूजन में करते हैं।

दू-बदू—क्रि० वि० [फा०] १. आमने-सामने। मुहाँ-मुँह। जैसे—उनसे मिलकर दू-बदू बातें कर लो। २. मुकाबले में। जैसे—तुम तो अपने बड़ों से भी दू-बदू कहा-सुनी करते हो।

दूबर†—वि०=दूबरा (दुबला)।

दूबरा—वि० [सं० दुर्बल] १. दुबला-पतला। क्षीण-काय। कृश। २. कमजोर। दुर्बल। ३. किसी की तुलना में कम योग्यता या शक्ति-वाला अथवा हीन।

दूबला†—वि०=दुबला।

दूबा†—स्त्री० =दूब।

दूबिया—पुं०[हिं० दूब+इया (प्रत्य०)] एक तरह का हरा रंग। हरी घास का-सा रंग।

वि० उक्त प्रकार के रंग का।

दूबे—पुं०[सं० द्विवेदी] द्विवेदी ब्राह्मण।

दूभर—वि० [सं० दुर्भर]१. जो कठिनता से सहन किया जा सके। २. कठिन। मुश्किल। जैसे—आज का दिन कटना दूभर हो रहा है।

दूमना—अ०[सं० द्रुम] हिलना-डोलना।

दूमा—पुं०[सं०] एक प्रकार का पुरानी चाल का चमड़े का छोटा थैला जिसमें तिब्बत से चाय भर कर आती थी।

दूमुहाँ —वि०=दुमुँहाँ।

दूरंग†—पुं०=दुर्ग (किला)। उदा०—सवा लष्य उत्तर सयल, कमऊँ गढ़ दूरंग।—चंदबरदाई।

दूरंगम—वि०[सं० दूर√गम् (जाना)+खच्, मुम्]=दूरगामी।

दूरंतरी—अव्य०[सं० दूरांतरे] दूर से। उदा०—दुरंतरी आवतौ देखि।—प्रिथीराज।

दूरंदेश—वि०[फा० दूरअंदेश] [भाव० दूरंदेशी] अग्र-शोची। दूरदर्शी।

दूरंदेशी—स्त्री०[फा०] दूरदर्शिता।

दूर—वि०[सं० दुर्√इ (गति)+रक्, धातु का लोप, रलोप, दीर्घ][फा० दूर] [भाव० दूरत्व, दूरी] जो देश, काल, संबंध, स्थिति आदि के विचार से किसी निश्चित वस्तु, विंदु, व्यक्ति आदि से बहुत अंतर या फासले पर हो। जो निकट, पास या समीप अथवा किसी से मिला हुआ न हो।

पद—दूर का=जो पास या समीप का न हो। जिससे घनिष्ठ लगाव या संबंध न हो। जैसे—(क) वे भी हमारे दूर के रिश्तेदार हैं। (ख) ये सब तो बहुत दूर की बातें हैं। **दूर की बात**=(क) बहुत आगे

चलकर आनेवाली बात। (ख) बहुत कठिन और प्रायः अनहोनी-सी बात। (ग) दूरदर्शिता और समझदारी की बात।

मुहा०—दूर की कहना=बहुत समझदारी की बात और दूरदर्शिता की बात कहना। **दूर की सूझना**=दूरदर्शिता की बात ध्यान में आना। (ख) ऐसी बात का ध्यान में आना जो प्रायः अनहोनी या असंभव हो। (व्यंग्य)

क्रि० वि० १. देश, काल, संबंध आदि के विचार से किसी निश्चित बिंदु से बहुत अंतर पर। बहुत फासले पर। 'पास' का विपर्याय। जैसे—उनका मकान यहाँ से बहुत दूर है। २. अलग। पृथक्। जैसे—वे झगड़ों से दूर रहते हैं।

मुहा०—दूर करना=(क) अलग या जुदा करना। अपने पास से हटाना। (ख) न रहने देना। नष्ट कर देना। जैसे—बीमारी दूर करना। **दूर खिचना, भागना या रहना**=उपेक्षा, घृणा, तिरस्कार आदि के कारण बिलकुल अलग रहना। पास न जाना। बचना। जैसे—इस तरह की बातों में सदा दूर रहना चाहिए। **दूर तक पहुँचना**=दूर की या बहुत बारीक बात सोचना। **दूर दूर करना**=उपेक्षा, घृणा आदि के कारण तिरस्कारपूर्वक अपने पास से अलग करना या हटाना। **दूर होना**=(क) पास से अलग हो जाना। लगाव या संबंध न रह जाना। जैसे—अब वे पुरानी आदतें दूर हो गई हैं। (ख) नष्ट हो जाना। मिट जाना। जैसे—बीमारी दूर हो गई है।

पद—दूर क्यों जायँ या जाइए=अपरिचित या दूर का दृष्टांत न लेकर परिचित और निकटवाले का ही विचार करें। जैसे—दूर क्यों जायँ, अपने भाई-बंदों को ही देख लीजिए।

दूरक—वि० [सं० दूर+णिच्+ण्वुल्—अक] १. दूर करने या हटानेवाला। २. दूर या अलग रखनेवाला; और फलतः विरोधी। उदा०—ये उभय परस्पर पूरक हैं अथवा दूरक यह कौन कहे।—मैथिलीशरण।

दूरगामी (मिन्)—वि० [सं० दूर√गम् (जाना)+णिनि] दूर तक गमन करनेवाला।

दूर-चित्र—पुं० [मध्य०स०] [वि० दूर-चित्री] वह चित्र या प्रतिकृति जो विद्युत् की सहायता से दूरी पर प्रस्तुत की जाती है। (टेलिफोटोग्राफ)

दूर-चित्रक—पुं० [सं० दूरचित्र+क्विप्+णिच्+ण्वुल्—अक] वह यंत्र जिसकी सहायता से दूरचित्र प्रस्तुत किये जाते हैं। (टेलिफोटोग्राफ)

दूर-चित्रण—पुं० [स० त०] दूर-चित्रक यंत्र की सहायता से दूर-चित्र प्रस्तुत करने की क्रिया या प्रणाली। (टेलिफ़ोटोग्राफी)

दूरता—स्त्री० [सं० दूर+तल्—टाप्]=दूरी।

दूरता-मापक—पुं० [ष०त०] एक प्रकार का यंत्र जिसकी सहायता से भू-मापन, युद्ध-क्षेत्र आदि में वस्तुओं की दूरी जानी जाती है। (टेलिमीटर)

दूरत्व—पुं० [सं० दूर+त्व] दूर होने की अवस्था या भाव। दूरी।

दूर-दर्श—पुं० [प०त०] रेडियो की तरह का एक उपकरण जिसमें अभिनय प्रसारण, भाषण आदि करनेवाले व्यक्तियों के कथन सुनाई पड़ने के साथ-साथ उनके चित्र भी दिखाई पड़ते हैं। (टेलीविजन)

दूर-दर्शक—वि० [ष०त०] १. दूरदर्शी। २. बुद्धिमान।

पुं० दूर-बीन। दूर-वीक्षक। (दे०)

दूरदर्शक-यंत्र—पुं० [कर्म०स०] दूर-बीन। दूर-वीक्षक।

दूर-दर्शन—पुं० [ष०त०] १. दूर की चीज देखना या बात सोचना, समझना। २. [ब०स०] गिद्ध। ३. वैज्ञानिक प्रक्रिया जिसमें विद्युत् तरंगों की सहायता से बहुत दूर के दृश्य प्रत्यक्ष रूप से सामने दिखाई देते हैं। ४. दे० 'दूर-दर्श'।

दूर-दर्शिता—स्त्री० [सं० दूरदर्शिन्+तल्—टाप्] दूरदर्शी होने की अवस्था, गुण या भाव। दूरंदेशी।

दूरदर्शी (र्शिन्)—वि० [सं०] बहुत दूर तक की बात पहले ही सोच तथा समझ लेनेवाला।

पुं० १. पंडित। विद्वान्। २. बुद्धिमान्। ३. गिद्ध नामक पक्षी।

दूर-दृष्टि—स्त्री० [स०त०] भविष्य की बातों के संबंध में पहले से ही सोचने-समझने की शक्ति।

दूर-पात—वि० [ब०स०] दूर से आने के कारण थका हुआ।

दूर-पार—अव्य० [हिं०] इसे दूर करो; और इसका नाम तक न लो। (स्त्रियाँ) उदा०—गाल पर ऊँगली को रखकर यूँ कहा। मैं तेरे घर जाऊँगी। ऐ दूर-पार।—रंगी।

दूर-प्रसर—वि० [ब०स०] दूर तक फैलनेवाला। उदा०—वे हैं समृद्धि की दूर-प्रसर माया में।—निराला।

दूर-प्रहारी (रिन्)—वि० [सं० दूर-प्र√हृ (हरण)+णिनि] १. दूर तक प्रहार करनेवाला। २. (तोप या बंदूक) जिसके गोले-गोलियों की उड़ान का पल्ला अधिक लंबा होता है; अर्थात् जो बहुत दूर तक मार करे।

दूरबा†—स्त्री०=दूर्वा।

दूरबीन—वि० [फ़ा०] दूर तक देखनेवाला।

स्त्री० दे० 'दूरवीक्षक' (यंत्र)।

दूर-बोध—पुं० [ष०त०] शारीरिक इंद्रियों की सहायता लिये बिना केवल आध्यात्मिक या मानसिक बल से दूसरे के मन की बातें या विचार जानने की क्रिया या विद्या। (टेलिपैथी)

दूर-बोधी (धिन्)—पुं० [सं० दूरबोध+इनि] वह जो दूरबोध की कला या विद्या जानता हो। (टेलिपैथिस्ट)

वि० दूर-बोध की कला या विद्या से संबंध रखनेवाला। (टेलिपैथिक)

दूर-भाषक—पुं० [ष०त०] [वि० दूर-भाषिक] एक प्रसिद्ध यंत्र जिसकी सहायता से दूर बैठे हुए लोग आपस में बात-चीत करते हैं। (टेलिफ़ोन)

दूर-भाषिक—वि० [सं०] दूर-भाषक यंत्र संबंधी या उसके द्वारा होने-वाला। (टेलीफोनिक) जैसे—दूर-भाषिक संवाद।

दूर-मुद्र—पुं० [सं०] दूर-मुद्रक यंत्र की सहायता से अंकित दूर-लेख। (टेलिप्रिंट)

दूर-मुद्रक—पुं० [सं०] एक आधुनिक यंत्र जिसकी सहायता से दूर-लेख (तार से आये हुए संदेश, समाचार आदि) कागज पर छपते चलते हैं। (टेलिप्रिंटर)

विशेष—वस्तुतः यह दूर-लेखक यंत्र के साथ लगा हुआ एक प्रकार का टंकन यंत्र होता है, जिससे आये हुए संदेश आदि हाथ से लिखने की आवश्यकता नहीं रह जाती, वे आप से आप कागज पर टंकित होते रहते या छपते चलते हैं।

दूर-मुद्रण—पुं० [सं०] दूर-मुद्रक यंत्र के द्वारा संदेश टंकित करने या छापने की प्रक्रिया या प्रणाली। (टेलीप्रिंटिंग)

दूर-मूल—पुं० [ब०स०] मूंज।

दूर-लेख—पुं०[ष० त०] दूर-लेखक यंत्र की सहायता से (अर्थात् तार द्वारा) आया हुआ संदेश या समाचार। (टेलिग्राम)

दूर-लेखक—पुं० [ष० त०] १. एक प्रकार का यंत्र जिसके द्वारा कुछ विशिष्ट संकेतों के द्वारा दूरी पर समाचार आदि भेजे जाते हैं। तार द्वारा समाचार भेजने का यंत्र। (टेलिग्राफ) २. वह जो उक्त यंत्र के द्वारा समाचार भेजने और प्राप्त करने की विद्या जानता हो। (टेलिग्राफिस्ट)

दूरलेखतः (तस्)—क्रि० वि० [सं० दूरलेख+तस्] दूर-लेखक यंत्र की प्रक्रिया अथवा सहायता से। (टेलिग्रफिकली) जैसे—उत्तर दूर-लेखतः भेजेंगे।

दूर-लेखी (खिन्)—वि०[सं० दूरलेख+इनि] दूर-लेख के द्वारा होने या उससे संबंध रखनेवाला। (टेलिग्राफिक) जैसे—दूर-लेखी धनादेश। (टेलिग्राफिक मनीआर्डर)

दूरवर्ती (तिन्)—वि०[सं० दूर√वृत (बरतना)+णिनि] जो अधिक दूरी पर स्थित हो। दूर का।

दूर-वाणी—स्त्री० दे० 'दूर-भाषक'।

दूर-विक्षेपक—पुं०दे० 'प्रेपित्र'।

दूर-वीक्षक—पुं०[ष०त०] नल के आकार का एक प्रसिद्ध उपकरण जिसे आँखों के सामने सटाकर रखने पर दूर की चीजें कुछ पास और फलतः स्पष्ट दिखाई देती हैं। दूर-बीन। (टेलिस्कोप)

दूर-वीक्षण—पुं०[ष० त०] दूर की चीजें दूर-वीक्षक की सहायता से देखने की क्रिया या भाव।

दूरस्थ—वि०[सं० दूर-√स्था (ठहरना)+क] १. जो दूरी पर स्थित हो। २. (घटना) जिसके वर्तमान में घटित होने की संभावना न हो।

दूरांतरित—वि०[दूर-अंतरित] १. दूर किया हुआ। २. दूरस्थ।

दूरागत—भू० कृ० [दूर-आगत पं० त०] दूर से आया हुआ। उदा०—'माँ'। फिर एक किलक दूरागत गूँज उठी कुटिया सूनी।—प्रसाद।

दूरान्वय—पुं०[दूर-अन्वय तृ० त०] रचना का वह दोष जो कर्त्ता और क्रिया, विशेष्य और विशेषण आदि के पास-पास न रहने अर्थात् परस्पर अनावश्यक रूप से दूर रहने के कारण उत्पन्न होता है।

दूरापात—पुं०[दूर-आपात ब०स०] वह अस्त्र जो दूर से फेंककर चलाया जाय।

दूरारूढ़—वि०[दूर-आरूढ़ स० त०] १. बहुत आगे बढ़ा हुआ। २. तीव्र। ३. बद्धमूल। ४. प्रगाढ़।

दूरि—वि०=दूर।
स्त्री०=दूरी।

दूरी—स्त्री०[सं० दूर+ई (प्रत्य०)] १. दूर होने की अवस्था या भाव। २. दो वस्तुओं, बिंदुओं आदि के बीच का पारस्परिक अंतर। ३. दो वस्तुओं, बिंदुओं आदि के बीच का अवकाश, विस्तार या स्थान।
स्त्री०[?] खाकी रंग की एक प्रकार की लवा (चिड़िया)।

दूरीकरण—पुं०[सं० दूर+च्वि√कृ (करना)+ल्युट्—अन] दूर करने या हटाने की क्रिया या भाव।

दूरे-अमित्र—पुं०[ब०स० अलुक् समास] उनचास मरुतों में से एक मरुत् का नाम।

दूरोह—पुं०[सं०दुर्√रुह् (चढ़ना)+खल्, दीर्घ] आदित्य लोक जहाँ चढ़कर जाना बहुत कठिन है।

दूरोहण—पुं०[सं० दुर्-रोहण प्रा० ब० स०] सूर्य।

दूर्य—पुं०[सं० दूर+यत्] १. छोटा कचूर। २. गुह। मल। विष्ठा।

दूर्वा—स्त्री० [सं०√दूर्व् (हिंसा)+अच्—टाप्] एक प्रसिद्ध पवित्र घास जो देवताओं को चढ़ाई जाती है। दूब।

दूर्वाक्षी—स्त्री० [सं०] वसुदेव के भाई वृक की स्त्री का नाम। (भागवत)

दूर्वा-क्षेत्र—पुं० [ष०त०] १. वह क्षेत्र जिसमें दूब होती हो। २. खेल का वह मैदान जिसमें छोटी-छोटी घास लगी हुई हो। (लान)

दूर्वाद्य घृत—पुं०[दूर्वा-आद्य ब०स०, दूर्वाद्य-घृत कर्म०स०] वैद्यक में, एक प्रकार की बकरी का घी जिसमें दूब, मजीठ, एलुआ, सफेद चंदन आदि मिलाया जाता है और जिसका व्यहार आँख, मुँह, नाक, कान आदि से रक्त जानेवाला रक्त रोकने के लिए होता है।

दूर्वाष्टमी—स्त्री०[दूर्वा-अष्टमी मध्य०स०] भादों सुदी अष्टमी जिस दिन हिंदू व्रत करते हैं।

दूर्वासोम—पुं० [सं०] एक तरह की सोमलता। (सुश्रुत)

दूर्वेष्टिका—स्त्री०[स० दूर्वा-इष्टिका मध्य०स०] एक तरह की ईंट जिससे यज्ञ की वेदी बनाई जाती थी।

दूलन†—पुं०=दोलन।

दूलभ†—वि०=दुर्लभ।

दूलह—पुं०[सं० दुर्लभ,प्रा० दुल्लह] [स्त्री० दुलहिन] १. वह मनुष्य जिसका विवाह अभी हाल में हुआ हो अथवा शीघ्र ही होने को हो। दुलहा। वर। नौशा। २. स्त्री की दृष्टि से उसका पति या स्वामी। ३. बहुत बना-ठना आदमी। ४. मालिक। स्वामी।
वि० जो दुलहे के समान बना-ठना हो। उदा०—दूलह मेरो कुँवर कन्हैया।—गदाधर भट्ट।

दूलिका—स्त्री०=दूली।

दूलित*—वि०=दोलित।

दूली—स्त्री०[सं०दूर+अच्—ङीप्, लत्व] नील का पेड़।

दूल्हा†—पुं०=दूलह।

दूवा†—पुं०=दूआ।

दूवौ—स्त्री० [अ० दुआ] १. दुआ। प्रार्थना। २. आज्ञा। हुकुम। उदा०—राणी तदि दूवौ दीध रुषमणी।—प्रिथीराज।
वि०=दोनों।

दूश्य—पुं० [सं०√दू(ताप)+क्विप्, दू√श्यै (दूर करना)+क] खेमा। तंबू।

दूषक—वि० [सं०√दूष् (विकार)+णिच्+ण्वुल्—अक] १. [स्त्री० दूषिका] १. दोष निकालने या लगानेवाला। २. आक्षेप या दोषारोपण करनेवाला। ३. दोष या विकार उत्पन्न करनेवाला।

दूषण—पुं०[सं०√दूष्+णिच्+ल्युट्—अन] १. दोष लगाने की क्रिया या भाव। २. दोष। ३. अवगुण। बुराई। ४. जैनियों के सामयिक व्रत में ३२ त्याज्य बातें या अवगुण जिनमें से १२ कायिक, १० वाचिक और १० मानसिक हैं। ५. रावण का एक भाई जिसका वध रामचन्द्र ने पंचवटी में किया था।
वि०[√दूष्+णिच्+ल्यु—अन] नष्ट करने या मारनेवाला। विनाशक।

संहारक। उदा०—लक्ष्मण अरु शत्रुघ्न रीह दानव-दल दूषण।—केशव।

दूषणारि—पुं०[सं० दूषण-अरि ष०त०] दूषण नामक राक्षस को मारनेवाले रामचंद्र।

दूषणीय—वि०[सं० √दूष+णिच्+अनीयर्] १. जिसमें दोष निकाला जा सके। २. जिस पर दोष लगाया जा सके।

दूषन†—पुं०=दूषण।

दूषना—स०[सं० दूषण] १. दोष लगाना। २. ऐब लगाकर निन्दा या बुराई करना।

अ० दोष या अवगुण से युक्त होना।

दूषि—स्त्री०[सं०√दूष्+इन्]=दूषिका।

दूषिका—स्त्री०[सं० दूषि+कन्—टाप्] १. चित्र बनाने की कूची। २. आँख में से निकलनेवाली मैल।

वि० सं० 'दूषक' का स्त्री०।

दूषित—वि०[सं०√दूष्+क्त]१. जिसमें दोष हो। दोष से युक्त। २. जिस पर दोष लगाया गया हो। ३. बुरा। खराब।

दूषीविष—पुं०[सं०√दूष्+ई, दूषी-विष कर्म०स०] शरीर में होनेवाला एक तरह का विष जो धातु को दूषित करता है। इसे हीन विष भी कहते हैं। (सुश्रुत)

दूष्य—वि०[सं०√दूष्+णिच्+यत्]१. जिस पर या जिसमें दोष लगाया जा सके। जो दूषित कहे जाने योग्य हो। २. निंदनीय। बुरा। ३. तुच्छ। हीन।

पुं०१. कपड़ा। वस्त्र। २. प्राचीन काल की एक प्रकार का ऊनी ओढ़ना या चादर। धुस्सा। ३. खेमा। तंबू। ४. हाथी बाँधने का रस्सा। ५. जहर। विष। ६. पूय। मवाद। ७. प्राचीन भारतीय राजनीति में, ऐसा व्यक्ति जो राज्य या शासन को हानि पहुँचानेवाला हो।

दूष्य-महामात्र—पुं०[कर्म०स०] ऐसा न्यायाधीश या महामात्र जो अंदर ही अंदर राज्य का शत्रु हो या शत्रु-पक्ष से मिला हो। (कौ०)

दूस्सना†—स०, अ०=दूपना।

दूसर†—वि०=दूसरा।

दूसरा—वि०[हिं० दो+सर (प्रत्य०)पु० हिं० दोसर] [स्त्री० दूसरी] १. जो क्रम या संख्या के विचार से दो के स्थान पर पड़ता हो। पहले के ठीक बादवाला। जैसे—(क) यह उनका दूसरा लड़का है। (ख) उसके दूसरे दिन वे भी चले गये। २. दो या कई में से कोई एक, विशेषतः प्रस्तुत अथवा उस एक से भिन्न जिसका उल्लेख या चर्चा हुई हो। जैसे—एक पुस्तक तो हमने छाँट ली है; दूसरी कोई आप भी ले लें। ३. प्रस्तुत से भिन्न। जैसे—यह तो दूसरी बात हुई। ४. अतिरिक्त। अन्य। और। जैसे—वह दूसरे साधनों से कहीं अधिक धन कमाता है।

सर्व० १. जिसकी चर्चा न हुई हो। बचा हुआ। जैसे—कोई दूसरा इसका आनन्द क्या जाने। २. जिसका दोनों पक्षों में से किसी के साथ कोई लगाव या संबंध न हो। जैसे—आपस की बात-चीत (या लड़ाई) में दूसरों को नहीं पड़ना चाहिए।

दूहना—स०[सं० दोहन] १. कुछ स्तनपायी मादा जीवों के स्तनों में से उन्हें निचोड़ते तथा दबाते हुए दूध निकालना। जैसे—गाय, भैंस या बकरी दूहना। २. अंदर का तरल पदार्थ खींचकर या दबाकर बाहर निकालना। जैसे—थूहर या पपीते का दूध दूहना। ३. किसी वस्तु में से पूरी तरह से या अधिक मात्रा में तत्त्व या सार निकालना। ४. किसी को धोखे में रखकर उससे खूब रुपए या कोई चीज वसूल करना। जैसे—किसी से रुपए दूहना। उदा०—सूर स्याम तब तैं नहिं आए, मन जब त लीन्हों दोही।—सूर।

विशेष—इसका प्रयोग (क) उस आधार या व्यक्ति के संबंध में भी होता है जिसे दूहते हैं और (ख) उस पदार्थ के संबंध में भी होता है जो दूहा जाता है।

दूहनी†—स्त्री०=दोहनी।

दूहा†—पुं०=दोहा।

दूहिया—पुं०[देश०] एक प्रकार का चूल्हा।

दृक—पुं०[सं०√दृ (विदारण)+कक्] छिद्र। छेद।

पुं०[?] हीरा।

दृकाण—पुं०=दृक्काण।

दृक्कर्ण—पुं०[सं० दृश्-कर्ण ब०स०] साँप।

दृक्कर्म (न्)—पुं० [सं० दृश्-कर्मन् मध्य० स०] वह संस्कार या क्रिया जो ग्रहों को अपने क्षितिज पर लाने के लिए की जाती है। यह संस्कार दो प्रकार का होता है, आक्षदृक् और आपनदृक्। (ज्यो०)

दृक्काण—पुं० [यू० डेकानस] फलित ज्योतिष में एक राशि का तीसरा भाग जो दस अंशों का होता है।

दृक्क्षेप—पुं० [सं० दृश्-क्षेप ष० त०] १. दृष्टिपात। अवलोकन। २. दशम लग्न के नतांश की भुज-ज्या जिसका विचार सूर्यग्रहण के स्पष्टीकरण में किया जाता है।

दृक्पथ—पुं० [सं० दृश्-पथिन् ष० त०] दृष्टि का मार्ग। दृष्टि-पथ।

मुहा०—दृक्पथ में आना=दिखाई देना। सामने होना।

दृक्पात—पुं० [सं० दृश्-पात ष० त०] दृष्टिपात। अवलोकन।

दृक्प्रसादा—स्त्री० [सं० दृश्-प्र √सद्+णिच् +अण्-टाप्] कुलत्था। कुलत्थांजन।

दृक्शक्ति—स्त्री० [दृश्-शक्ति ष० त०] १. देखने की शक्ति। २. प्रकाशरूप चैतन्य। ३. आत्मा।

दृक्श्रुति—पुं० [सं० दृश्-श्रुति ब० स०] साँप।

दृखत*—पुं० [सं० दृषत्] पत्थर।

†पुं० =दरख्त (वृक्ष)।

दृगंचल—पुं० [सं० दृश्-अंचल ष० त०] १. पलक। २. चितवन। उदा०—चंचल चारु दृगंचल सों।—केशव।

दृगंबु—पुं० [सं० दृश्-अंबु ष० त०] १. आँखों से निकलनेवाला पानी। २. अश्रु। आँसू।

दृग—पुं० [सं०] १. आँख। नेत्र। (मुहा० के लिए देखो 'आँख' के मुहा०) २. देखने की शक्ति। दृष्टि। ३. दो आँखों के आधार पर, दो की संख्या।

दृगध्यक्ष—पुं० [सं० दृश्-अध्यक्ष ष० त०] सूर्य।

दृग-मिचाव—पुं० [हिं० दृग +मीचना] आँख-मिचौली नाम का खेल।

दृग्गणित—पुं० [सं० दृश्-गणित मध्य० स०] ज्योतिष में गणित की वह क्रिया जो ग्रहों का वेध करके उनकी यथार्थ या वास्तविक स्थिति के आधार पर की जाती है।

दृग्गणितैक्य—पुं० [सं० दृग्गणित्-ऐक्य ष० त०] ग्रहों को किसी समय पर गणित से स्पष्ट करके फिर उसे वेधकर मिलाना और न्यूनता या अधिकता जान पड़ने पर उसमें ऐसा संस्कार करना जिससे ग्रहों के वेध और स्पष्ट स्थिति में फिर अंतर न पड़े।

दृग्गति—स्त्री० [सं० दृश्-गति ष० त०] १. दृष्टि की गति या पहुँच। २. दशम लग्न के नतांश की कोटि-ज्या।

दृग्गोचर—वि० [सं० दृश्-गोचर ष० त०] जो आँखों से दिखाई देता हो।

दृग्गोल—पुं० [सं० दृश्-गोल मध्य० स०] गणित ज्योतिष में, वह कल्पित वृत्त जो ऊर्ध्व स्वस्तिक और अधः स्वस्तिक में होता हुआ माना जाता है और जिसे ग्रहों के उदित होने की दिशा में रखकर उनकी यथार्थ स्थिति का पता लगाया जाता है।

दृग्ज्या—स्त्री० [सं० दृश्-ज्या मध्य० स०] दृक्-मंडल या दृग्गोल के खस्वस्तिक से किसी ग्रह के नतांश की ज्या। (देखें 'नतांश')

दृग्भू—पुं० [सं० दृश्√भू (होना)+क्विप्] १. वज्र। २. सूर्य। ३. साँप।

दृग्लंबन—पुं० [सं० दृश्-लंबन ब० स०] वह पूर्वापर संस्कार जो ग्रहण स्पष्ट करने में सूर्यचंद्र गर्भाभिप्राय से एक सूत्र में आ जाने पर उन्हें पृष्ठाभिप्राय से एक सूत्र में लाने के लिए किया जाता है।

दृग्विष—पुं० [सं० दृश्-विष ब० स०] ऐसा साँप जिसकी आँखों में विष होता हो, अर्थात् जिसके देखने मात्र से छोटे-मोटे जीव मर जाते या मूर्च्छित हो जाते हों।

दृग्वृत्त—पुं० [सं० दृश्-वृत्त ष० त०] क्षितिज।

दृङ्नति—स्त्री० [सं० दृश्-नति ष० त०] गणित ज्योतिष में याम्योत्तर संस्कार जो ग्रहण स्पष्ट करने के समय चंद्रमा और सूर्य को एक सूत्र में लाने के लिए किया जाता है।

दृङ्मंडल—पुं० [सं० दृश्-मंडल ष० त०] दृग्गोल।

दृढ़—वि० [सं०√दृह् (मजबूत होना)+क्त] १. जो शिथिल या ढीला न हो। प्रगाढ़। जैसे—दृढ़ आलिंगन, दृढ़ बंधन। २. जो जल्दी टूट-फूट न सकता हो। पक्का। मजबूत। ३. बलवान और हृष्ट-पुष्ट। ४. जो जल्दी अपने स्थान से इधर-उधर या विचलित न हो। जैसे—दृढ़ मनुष्य, दृढ़ विश्वास। ५. जिसमें किसी प्रकार का परिवर्तन या हेर-फेर न हो सकता हो। ध्रुव। जैसे—दृढ़ निश्चय।
पुं० १. लोहा। २. विष्णु। ३. धृतराष्ट्र का एक पुत्र। ४. तेरहवें मनु का एक पुत्र। ५. संगीत में, सात प्रकार के रूपकों में से एक। ६. गणित में, ऐसा अंक जिसे विभाजित करने पर पूरे या समूचे विभाग न हो सकें, केवल खंडित विभाग हों। ताक अदद। जैसे—३, १, ७, २५ आदि।

दृढ़-कंटक—पुं० [ब० स०] क्षुद्रफलक वृक्ष।

दृढ़-कर्मा (र्मन्)—वि० [ब० स०] जो अपना काम दृढ़ता-पूर्वक अर्थात् धैर्य और स्थिरता से करता हो।

दृढ़क-व्यूह—पुं० [सं० दृढ़+कन्, दृढ़क-व्यूह कर्म० स०] ऐसी व्यूह-रचना जिसमें पक्ष तथा कक्ष कुछ-कुछ पीछे हटे हों। (कौ०)

दृढ़-कांड—पुं० [ब० स०] १. बाँस। २. रोहिस घास।

दृढ़-कांडा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] पातालगारुड़ी लता। छिरेंटा।

दृढ़कारिता—स्त्री० [सं० दृढ़कारिन्+तल्—टाप्] किसी चीज या बात को दृढ़ या पक्का करने की क्रिया या भाव।

३—१४

दृढ़कारी (रिन्)—वि० [सं० दृढ़√कृ (करना)+णिनि] [भाव० दृढ़कारिता] १. दृढ़ता से काम करनेवाला। २. किसी चीज या बात को दृढ़ या मजबूत करनेवाला।

दृढ़क्षत्र—पुं० [सं०] धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

दृढ़-क्षुरा—स्त्री० [ब० स० टाप्] बल्वजा तृण। सागे-बागे।

दृढ़-गात्रिका—स्त्री० [ब० स०, कप्-टाप्, इत्व] १. राब। २. कच्ची चीनी। खाँड़।

दृढ़-ग्रंथि—वि० [ब० स०] जिसकी गाँठें मजबूत हों।
पुं० बाँस।

दृढ़-चेता (तस्)—वि० [ब० स०] दृढ़ या पक्के विचारों अथवा संकल्पों-वाला।

दृढ़च्छद—पुं० [ब० स०] दीर्घरोहिष तृण। बड़ी रोहिस।

दृढ़-च्युत्—पुं० [सं०] परपुरंजय नामक राजा की कन्या के गर्भ से उत्पन्न अगस्त्य मुनि के एक पुत्र।

दृढ़-तरु—पुं० [कर्म० स०] धव का पेड़।

दृढ़ता—स्त्री० [सं० दृढ़+तल्—टाप्] १. दृढ़ होने की अवस्था, गुण या भाव। २. पक्कापन। मजबूती। ३. अपने विचार, प्रतिज्ञा आदि पर जमे रहने का भाव।

दृढ़-तृण—पुं० [ब० स०] मूंज नाम की घास।

दृढ़-तृणा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] बल्वजा तृण।

दृढ़त्व—पुं० [सं० दृढ़+त्व]=दृढ़ता।

दृढ़-त्वच्—वि० [ब० स०] जिसकी त्वचा या छाल कड़ी हो।
पुं० ज्वार का पौधा।

दृढ़-दंशक—पुं० [कर्म० स०] एक प्रकार का जल-जंतु।

दृढ़-दस्यु—पुं० [सं०] एक ऋषि जो दृढ़च्युत के पुत्र थे।

दृढ़-धन—पुं० [ब० स०] शाक्य मुनि। बुद्ध।

दृढ़-धन्वा (न्वन्)—पुं० [ब० स०, अनङ् आदेश] वह जो धनुष चलाने में दृढ़ हो या जिसका धनुष दृढ़ हो।

दृढ़धन्वी (न्विन्)—वि० [कर्म० स०] जिसका धनुष दृढ़ हो।

दृढ़-नाभ—पुं० [ब० स०] वाल्मीकि के अनुसार अस्त्रों का एक प्रकार का प्रतिकार जो विश्वामित्र जी ने रामचन्द्र को बताया था।

दृढ़-निश्चय—वि० [ब० स०] अपने निश्चय अर्थात् विचार या संकल्प पर दृढ़तापूर्वक अड़ा या जमा रहनेवाला। जो अपने निश्चय से जल्दी न टलता हो।

दृढ़-नीर—पुं० [ब० स०] नारियल, जिसके भीतर का जल धीरे-धीरे जम जाता है।

दृढ़-नेत्र—पुं० [ब० स०] विश्वामित्र जी के चार पुत्रों में से एक। (वाल्मीकि)

दृढ़-नेमि—वि० [ब०स०] जिसकी नेमि दृढ़ हो। जिसकी धुरी मजबूत हो।
पुं० अजमीढ़ वंशीय एक राजा जो सत्यधृति के पुत्र थे।

दृढ़-पत्र—वि० [ब० स०] जिसके पत्ते दृढ़ या मजबूत हों।
पुं० बाँस।

दृढ़-पत्री—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] बल्वजा तृण। सागे-बागे।

दृढ़-पद—पुं० [ब० स०] तेइस मात्राओं का एक प्रकार का मात्रिक छंद। उपमान।

दृढ़-पाद—वि० [ब० स०] अपने विचारों का पक्का।

दृढ़-पादा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] यवतिक्ता।

दृढ़-पादी—स्त्री० [ब० स० ङीष्] भूम्यामलकी। भूआँवला।

दृढ़-प्रतिज्ञ—वि० [ब० स०] जो अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहे। अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेवाला।

दृढ़-प्ररोह—पुं० [ब० स०] वट। बरगद।

दृढ़-फल—पुं० [ब० स०] नारियल।

दृढ़-बंधिनी—स्त्री० [सं० दृढ़√बंध् (बाँधना) +णिनि–ङीप्] अनंत-मूल नाम की लता।

दृढ़-भूमि—स्त्री० [ब० स०] योग-साधन में ध्यान की वह भूमि या स्थिति जिसमें मन पूरी तरह से एकाग्र और स्थिर हो जाता है और जिसके उपरांत सहज में संसार से विरक्ति हो सकती है।

दृढ़-मुष्टि—वि० [ब० स०] १. जिसकी मुट्ठी की पकड़ में खूब मजबूती हो। मुट्ठी में कसकर पकड़नेवाला। २. कंजूस। कृपण। ३. वे अस्त्र जो मुट्ठी में पकड़ कर चलाये जाते हों। जैसे—तलवार, भाला आदि।

दृढ़-मूल—पुं० [ब० स०] १. मूंज। २. मंथानक या मथाना नाम की घास जो तालों में होती है। ३. नारियल।

दृढ़-रंगा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] फिटकरी।

दृढ़-रोह—पुं० [ब० स०] पाकर का पेड़।

दृढ़-लता—स्त्री० [कर्म० स०] पातालगारुड़ी लता। छिरेंटा।

दृढ़-लोम् (न्)—वि० [सं० ब० स०] [स्त्री० दृढ़लोम्नी, दृढ़लोमा] जिसके शरीर के रोएँ दृढ़, फलतः कठोर तथा खड़े हों।

पुं० सूअर।

दृढ़-वर्म्मा (र्मन्)—पुं० [ब० स०] धृतराष्ट्र के पुत्र का नाम।

दृढ़-वल्कल—वि० [ब० स०] जिसकी छाल कड़ी हो।

पुं० १. सुपारी का पेड़। २. लकुच का पेड़।

दृढ़-वल्का—स्त्री० [ब० स० टाप्] अवंष्ठा।

दृढ़-वीज—वि० [ब० स०] जिसके बीज कड़े हों।

पुं० १. चकवँड़। २. बेर। ३. कीकर। बबूल।

दृढ़वृक्ष—पुं० [कर्म० स०] नारियल।

दृढ़व्य—पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि।

दृढ़-व्रत—वि० [ब० स०] अपने व्रत या संकल्प पर दृढ़ रहनेवाला।

दृढ़-संध—वि० [ब० स०] अपनी प्रतिज्ञा या संकल्प पर दृढ़ रहनेवाला।

पुं० धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

दृढ़-सूत्रिका—स्त्री० [ब० स०, कप्-टाप्, इत्व] मूर्वा नाम की लता। मुर्रा।

दृढ़-स्कंध—पुं० [ब० स०] १. पिंडखजूर। २. खिरनी का पेड़।

दृढ़स्यु—पुं० [सं०] लोपामुद्रा के गर्भ से उत्पन्न अगस्त्य मुनि का एक पुत्र।

दृढ़-हस्त—वि० [ब० स०] १. जो हथियार आदि पकड़ने में पक्का हो। २. जो हर चीज मजबूती से पकड़ सकता हो।

पुं० धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

दृढ़ांग—वि० [दृढ़-अंग ब० स०] दृढ़ अर्थात् मजबूत अंगों या अवयवों-वाला। हृष्ट-पुष्ट।

पुं० जीरा।

दृढ़ाई—स्त्री० = दृढ़ता।

दृढ़ाना—स० [हिं० दृढ़ +ना (प्रत्य०)] १. दृढ़, मजबूत या कड़ा करना। २. निश्चित या स्थिर करना। उदा०—चले साथ अस मंत्र दृढ़ाई।—तुलसी।

अ० १. दृढ़, मजबूत या कड़ा होना। २. निश्चित या स्थिर होना। पक्का होना।

दृढ़ायन—पुं० [सं०] १. दृढ़ या पक्का करना। पुष्टि। २. किसी की कही हुई बात, किये हुए काम अथवा किसी की नियुक्ति आदि को पक्का या ठीक ठहराना। (कनफर्मेशन)

दृढ़ायु—पुं० [सं०] १. तृतीय मनु सावर्णि के एक पुत्र का नाम। २. राजा ऐल का एक पुत्र जो उर्वशी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

दृढ़ायुध—वि० [दृढ़-आयुध ब० स०] १. अस्त्र ग्रहण करने में पक्का। २. युद्ध में तत्पर।

पुं० धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

दृढ़ाश्व—पुं० [सं०] धुंधुमार के एक पुत्र का नाम।

दृढ़ीकरण—पुं० [सं० दृढ़+च्वि √कृ (करना)+ल्युट्-अन] = दृढ़ायन।

दृत—वि० [सं० √दृ (सम्मान, हिंसा)+क्त] [स्त्री० दृता] १. सम्मानित। २. आदृत।

दृता—स्त्री० [सं० दृत +टाप्] जीरा।

दृताग्रवेग—वि० [सं० दृत-अग्रवेग ब० स०] (सेना) जिसका अग्रभाग नष्ट हो गया हो। दे० 'प्रतिहत'।

दृति—स्त्री० [सं०√दृ (विदारण)+ति, ह्रस्वता] १. चमड़ा। खाल। २. खाल का बना हुआ थैला या पात्र। ३. पानी भरने की मशक। ४. गौओं, बैलों आदि के गले का झूलता हुआ चमड़ा। गल-कंबल। ५. बादल। मेघ। ६. एक प्रकार की मछली।

दृति-धारक—पुं० [ष० त०] एक प्रकार का पौधा जिसे आनंदी और वामन भी कहते हैं।

दृतिहरि—पुं० [सं० दृति √हृ(हरण) +इन्] (खाल या चमड़ा चुराने-वाला) कुत्ता।

दृतिहार—पुं० [सं० दृति √हृ +अण्] मशक से पानी भरनेवाला, भिश्ती।

दृन्भू—पुं० [सं० √दृम्फ् (कष्ट देना)+कू नि० सिद्धि] १. वज्र। २. सूर्य। ३. राजा। ४. साँप।

दृप्त—वि० [सं० √दृप् (गर्व) +क्त] १. इतराया हुआ। गर्वित। २. उग्र। प्रचंड। ३. हर्ष से फूला हुआ। प्रफुल्लित। ४. चमकता हुआ।

दृप्र—वि० [सं० √दृप् +रक्] १. प्रचंड। प्रबल। २. जो इतरा रहा हो। अभिमानी। घमंडी।

दृब्ध—वि० [सं० √दृभ् (गूथना) +क्त] १. गुथा हुआ। ग्रंथित। २. डरा हुआ। भयभीत।

दृश्—वि० [सं० √दृश् (देखना) +क्विप्] १. देखनेवाला। दर्शक। २. दिखानेवाला। प्रदर्शक।

पुं० देखने की क्रिया या भाव।

स्त्री० १. दृष्टि। २. आँख। ३. दो की संख्या। ४. ज्ञान।

दृशद्—स्त्री० = दृषद्।

दृशद्वती—स्त्री० = दृषद्वती।

दृशा—स्त्री० [सं० दृश +टाप्] आँख।

दृशाकांक्ष्य—पुं० [सं० दृश-आकांक्ष्य तृ० त०] कमल।

दृशान—पुं० [सं० √दृश् + आनच्] १. उजाला। प्रकाश। २. आभा। चमक। ३. गुरु। शिक्षक। ४. प्रजा का भली-भाँति पालन करनेवाला राजा। ५. ब्राह्मण। ६. विरोचन दैत्य का एक नाम।

दृशि—स्त्री० [सं० √दृश् +इन्] = दृशी।

दृशी—स्त्री० [सं० दृशि + ङीप्] १. दृष्टि। २. उजाला। प्रकाश। ३. शास्त्र। ४. शरीर के अंदर का चेतन पुरुष।

दृशोक—वि० [सं०] १. ध्यान देने योग्य। २. सुंदर।

दृशोपम—पुं० [सं० दृशा-उपमा ब० स०] सफेद। कमल। पुंडरीक।

दृश्य—वि० [सं० √दृश्+क्यप्] १. जो देखने में आ सके या दिखाई दे सके। जिसे देख सकते हों। चाक्षुस। (विजुअल) जैसे—दृश्य जगत् या पदार्थ। २. जो दिखाई देता हो। ३. जो ठीक तरह से जाना जाता या समझ में आता हो। ज्ञेय और स्पष्ट। ४. जो देखे जाने के योग्य हो। ५. दर्शनीय। मनोरम। सुंदर।

पुं० १. वह घटना, पदार्थ या स्थल जो आँखों से दिखाई देता हो। दिखाई देनेवाली चीज या बात।

विशेष—भारतीय श्रौत दर्शनों में दो तत्त्व माने गये हैं—द्रष्टा और दृश्य। ज्ञान स्वरूप चैतन्य को द्रष्टा और अचेतन अनात्मभूत जड़ को दृश्य कहा गया है। यह दृश्य तीन प्रकार का माना गया है— अव्याकृत, मूर्त और अमूर्त।

२. दिखाई देनेवाली घटना, वस्तु या स्थल। (व्यू) ३. ऐसी प्राकृतिक, कृत्रिम अथवा अंकित घटना या स्थल जो विशेष रूप से देखे जाने के योग्य हो। दर्शनीय स्थान। (सीनरी) ४. साहित्य में, ऐसा काव्य या रचना जिसका अभिनय हो सकता या होता हो। नाटक। ५. नाटक के किसी अंक का वह स्वतंत्र विभाग जिसमें कोई एक घटना दिखाई जाती है। (सीन) ६. कोई ऐसा तमाशा या मनोरंजक व्यापार जो आँखों के सामने हो रहा हो या होता हो। ७. गणित में वह ज्ञात संख्या जो अंकों के रूप में दी गई हो। ८. दे० 'दृश्य जगत्'।

दृश्य-जगत्—पुं० [कर्म० स०] वह जगत् या संसार जो हमें अपने सामने प्रत्यक्ष दिखाई देता है। वास्तविक जगत्। (फिनामेनल वर्ल्ड)

दृश्यता—स्त्री० [सं० दृश्य+तल्–टाप्] १. दृश्य होने या दिखाई देने की अवस्था या भाव। २. वह स्थिति जिसमें देखने की शक्ति अपना काम करती है। (विजिबिलिटी)

दृश्यमान—वि० [सं० √दृश्+शानच्, यक, मुक्] १. जो दिखाई पड़ रहा हो। २. प्रत्यक्ष या स्पष्ट रूप में दिखाई देनेवाला। ३. मनोहर। सुन्दर।

दृषत् (द्)—स्त्री० [सं० √दृ (विदारण)+अदि, पुक, ह्रस्व] १. पर्वत की चट्टान। शिला। २. मसाले आदि पीसने की सिल या चक्की।

दृषद्—स्त्री०=दृषत्।

दृषद्वती—स्त्री० [सं० दृषत् +मतुप्—ङीप्] १. थानेश्वर के पास की एक प्राचीन नदी जिसका नाम ऋग्वेद में आया है। इसे आज-कल घंघर और राखी कहते हैं। २. विश्वामित्र की एक पत्नी का नाम। वि० 'दृषद्वान्' का स्त्री०।

दृषद्वान (वत्)—वि० [सं० दृषद् +मतुप्] [स्त्री० दृषद्वती] पाषाण युक्त। शिलामय। पथरीला।

दृष्ट—वि० [सं० √दृश् (देखना) +क्त] १. देखा हुआ। २. दिखाई पड़नेवाला। ३. प्रकट या व्यक्त होनेवाला।

पुं० १. दर्शन। २. साक्षात्कार। ३. सांख्य में प्रत्यक्ष प्रमाण की संख्या।

दृष्ट-कूट—पुं० [कर्म० स०] १. पहेली। २. साहित्य में, ऐसी कविता जिसका अर्थ या आशय उसके शब्दों के वाच्यार्थ से नहीं, बल्कि रूढ़ अर्थों से निकलता हो और इसी लिए जिसे साधारणतः सब लोग नहीं समझ सकते।

दृष्ट-नष्ट—वि० [सं०] जो एक बार जरा-सा दिखाई देकर ही नष्ट या लुप्त हो जाय।

दृष्ट-फल—पुं० [कर्म० स०] दार्शनिक मत से, किसी काम या बात का वह फल जो स्पष्ट रूप से दिखाई देता या प्राप्त होता हो। जैसे—अध्ययन करने से हमें जो ज्ञान होता है, वह अध्ययन का दृष्ट-फल है।

विशेष—यदि कहा जाय कि अमुक ग्रंथ का पाठ करने से स्वर्ग मिलेगा, तो यह उसका अदृष्ट-फल माना जायगा।

दृष्टमान्—वि० [सं० दृश्यमान्] १. जो दिखाई दे रहा हो। २. प्रकट। व्यक्त।

दृष्टवत्—वि० [सं० दृष्ट +वति] १. जो प्रत्यक्ष के समान हो। २. लौकिक। सांसारिक।

दृष्टवाद—पुं० [प० त०] एक दार्शनिक सिद्धान्त जिसमें केवल प्रत्यक्ष क्रियाओं, घटनाओं, चीजों आदि की सत्ता मानी जाती है, आत्मा, परमात्मा, स्वर्ग आदि अदृश्य चीजों की सत्ता नहीं मानी जाती।

दृष्टवान्—वि० [सं० दृष्टवत्] प्रत्यक्ष के समान। प्रत्यक्षतुल्य।

दृष्टांत—पुं० [सं० दृष्ट-अन्त, ब० स०] १. किसी चीज या बात का अंतिम, निश्चित और प्रामाणिक रूप देखना। २. कोई नई बात कहने अथवा मत प्रकट करने के समय उसकी प्रामाणिकता या सत्यता के पोषण या समर्थन के लिए उसी से मिलती-जुलती कही जानेवाली कोई ऐसी पुरानी और प्रामाणिक घटना या बात जिसे प्रायः लोग जानते हों। मिसाल। (इन्स्टेन्स) जैसे—भाइयों के पारस्परिक प्रेम का उल्लेख करते हुए उन्होंने राम और लक्ष्मण का दृष्टांत दिया।

विशेष—उदाहरण और दृष्टांत में मुख्य अंतर यह है कि उदाहरण तो बौद्धिक और व्यावहारिक तथ्यों, पदार्थों, विचारों आदि के संबंध में नियम या परिपाटी के स्पष्टीकरण करने के लिए होता है, परन्तु दृष्टांत प्रायः आचरणों और कृतियों के संबंध में आदर्श और प्रमाण के रूप में होता है। 'उदाहरण' का क्षेत्र अपेक्षाया अधिक विस्तृत और व्यापक हैं, इसी लिए 'दृष्टांत' तो 'उदाहरण' के अन्तर्गत हो जाता है, पर 'उदाहरण' सर्वथा 'दृष्टांत' के अन्तर्गत नहीं होता। इसके सिवा उदाहरण का प्रयोग तो साधारण बातचीत के अवसर पर होता है, परन्तु दृष्टांत का प्रयोग नियम, मर्यादा, विधि, विधान आदि के पालन के प्रसंग में होता है।

३. उक्त के आधार पर साहित्य में, एक प्रकार का सादृश्य-मूलक अर्था-

लंकार जिसमें उपमेय और उपमान दोनों से संबंध रखनेवाले वाक्यों में से धर्म की पारस्परिक समानता और बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव दिखाया जाता है।

विशेष—(क) 'उदाहरण' और 'दृष्टांत' अलंकारों में यह अंतर है कि उदाहरण में तो साधारण का विशेष से और विशेष का साधारण से समर्थन होता है; पर 'दृष्टांत' से साधारण की समता साधारण से और विशेष की समता विशेष से होती है। इसके सिवा उदाहरण में मुख्य लक्ष्य उपमेय वाक्य (वाक्य का पूर्वार्ध) होता है; पर दृष्टांत में मुख्य लक्ष्य उपमान वाक्य (वाक्य का उत्तरार्ध) होता है। (ख) दृष्टांत और प्रतिवस्तूपमा में यह अन्तर है कि दृष्टांत में तो कही हुई बातों के सभी धर्मों में समानता होती है; परन्तु प्रतिवस्तूपमा में किसी एक ही धर्म की समानता का उल्लेख होता है। इसी लिए कुछ लोगों का मत है कि इन्हें एक ही अलंकार के दो भेद मानना चाहिए।

४. शास्त्र। ५. मरण। मृत्यु।

दृष्टार्थ—पुं० [दृष्ट-अर्थ ब० स०] १. किसी शब्द का वह अर्थ जो बिलकुल स्पष्ट हो और सबकी समझ में आता हो। २. ऐसा शब्द जिसका अर्थ बिलकुल स्पष्ट हो और सबकी समझ में आता हो। ३. ऐसा शब्द जिसका बोध करानेवाला तत्त्व या पदार्थ संसार में वर्तमान हो और प्रत्यक्ष दिखाई देता या देखा जा सकता हो। जैसे—गंगा, मनुष्य, सूर्य।

दृष्टि—स्त्री० [सं० √दृश्+क्तिन्] १. आँखों से देखकर ज्ञान प्राप्त करने या जानने-समझने का भाव, वृत्ति या शक्ति। अवलोकन। नजर। निगाह। २. देखने के लिए खुली हुई अथवा देखने में प्रवृत्त आँखें। जैसे—जहाँ तक दृष्टि जाती थी, वहाँ तक जल ही जल दिखाई देता था।

क्रि० प्र०—डालना।—देना।—फेंकना।—रखना।

मुहा०—**दृष्टि चलाना**=किसी ओर ताकना या देखना। **(किसी से) दृष्टि चुराना या बचाना**= लज्जा, संकोच आदि के कारण जान-बूझकर किसी के सामने न आना या न होना। जान-बूझकर अलग, दूर या पीछे रहना। **(किसी से) दृष्टि जुड़ना**=देखा-देखी होना। साक्षात्कार होना। **(किसी से) दृष्टि जोड़ना**=आँखें मिलाते हुए देखा-देखी या सामना करना। दिखाई देना। साक्षात्कार करना। **(किसी की) दृष्टि बाँधना**=ऐसा जादू करना कि लोगों को और का और दिखाई दे। **(किसी को) दृष्टि भर देखना**=जितनी देर इच्छा हो, उतनी देर खूब देखना। जी भरकर ताकना। **दृष्टि मारना**= आँख या पलकें हिलाकर इशारा या संकेत करना। **(किसी ओर) दृष्टि लगाना**= ध्यानपूर्वक या स्थिर दृष्टि से देखना।

३. मन में कोई विशेष उद्देश्य या विचार रखकर किसी की ओर देखने की क्रिया या भाव। जैसे—अच्छी या बुरी दृष्टि, आशा, कृपा या प्रेम की दृष्टि; अनुसंधान, निरीक्षण या रक्षा की दृष्टि।

क्रि० प्र०—रखना।

मुहा०—**(किसी की) दृष्टि पर चढ़ना** = (क) देखने में बहुत अच्छा लगने के कारण ध्यान में सदा बना रहना। भाना। जैसे—(क) यह किताब हमारी दृष्टि पर चढ़ी हुई है। (ख) दोष आदि के कारण आँखों में खटकना। निगाह पर चढ़ना। जैसे—जब पुलिस की दृष्टि पर चढ़ा है, तब उसका बचना कठिन है। **(किसी पर) दृष्टि रखना**=किसी को इस प्रकार देखते रहना कि वह इधर-उधर न हो जाय। निगरानी रखना। **(किसी की) दृष्टि लगना**= ईर्ष्या, द्वेष आदि की दृष्टि का बुरा प्रभाव पड़ना। नजर लगना।

४. अनुग्रह या कृपा के भाव से युक्त होकर देखने की क्रिया, भाव या वृत्ति। मेहरबानी की नजर। उदा०—कब सो दृष्टि करि बरसइ तन तरुवर होई जाम।—जायसी।

मुहा०—**(किसी से) दृष्टि फिरना**=पहले की-सी कृपा-दृष्टि न रहना। प्रीति या स्नेह न रहना। अप्रसन्न या खिन्न होना। **(किसी से) दृष्टि फेरना** = (किसी पर) पहले की-सी कृपा-दृष्टि न रखना। अप्रसन्न, खिन्न या विरक्त होना।

५. अनुराग या प्रेम के भाव से युक्त होकर देखने की क्रिया, भाव या वृत्ति।

मुहा०—**(किसी से) दृष्टि जुड़ना**=अनुराग या प्रेम का संबंध स्थापित होना। **(किसी से) दृष्टि फिरना**=पहले का-सा अनुराग या प्रेम न रह जाना। **(किसी से) दृष्टि लगना**=(किसी से) दृष्टि जुड़ना। अनुराग या प्रेम का संबंध स्थापित होना।

६. मन में कोई बात सोचने-समझने अथवा उस पर ध्यान देने या विचार करने की विशिष्ट वृत्ति या शक्ति। जैसे—अभी इस ग्रन्थ (या विषय) पर अनेक दृष्टियों से विचार होना चाहिए। ७. कोई चीज देखकर उसकी उपादेयता, गहराई, गुण-दोष, योग्यता, हेतु आदि जानने या समझने की शक्ति। किसी विषय में होनेवाली पैठ। जैसे—(क) साहित्य रचना का ठीक सौन्दर्य समीक्षक की पैनी दृष्टि ही देखती है। (ख) कला-कृतियों के संबंध में उनकी दृष्टि बहुत पैनी है। ८. फलित ज्योतिष में, ग्रहों की कुछ विशिष्ट प्रकार की वह स्थिति जिसके फल-स्वरूप एक राशि अथवा जन्म-कुंडली के एक घर में स्थित किसी ग्रह का दूसरी राशि अथवा जन्म-कुंडली के दूसरे घर में स्थित किसी ग्रह पर कुछ विशेष प्रकार का प्रभाव होना माना जाता है।

दृष्टि-कूट—पुं०=दृष्ट-कूट।

दृष्टिकृत्—पुं० [सं० दृष्टि√कृ (करना)+क्विप्] १. दर्शक। २. स्थल कमल।

दृष्टि-कोण—पुं० [ष० त०] किसी बात या विषय को किसी विशिष्ट दिशा या पहलू से देखने अथवा सोचने-समझने का ढंग या वृत्ति। (व्यू-प्वाइन्ट) जैसे—(क) चाहे भाषा के दृष्टि-कोण से देखिए चाहे भाव के दृष्टि-कोण से, रचना उत्तम है। (ख) इस विषय में हमारा दृष्टि-कोण कुछ और ही है।

दृष्टि-क्रम—पुं० [ष० त०] चित्रांकन आदि में ऐसी अभिव्यक्ति जिससे दर्शक को प्रत्येक वस्तु अपने उपयुक्त स्थान पर, ठीक तुलनात्मक मान में और यथा-क्रम स्थित दिखाई दे। मुनासिबत। (पर्सपेक्टिव) उदाहरणार्थ यदि एक वृक्ष और उस पर बैठा हुआ तोता अंकित किया जाय, तो तोते का आकार उतना ही होना चाहिए जितना साधारणतः एक वृक्ष के अनुपात में उसका आकार होता है। यदि वृक्ष तो दो बित्ते भर का और तोता हो आधे या चौथाई बित्ते का तो चित्र का दृष्टि-क्रम ठीक नहीं माना जायगा।

दृष्टि-क्षेप—पुं० [ष० त०] दृष्टिपात।

दृष्टि-गत—भू० कृ० [द्वि० त०] दृष्टि में आया हुआ। देखा हुआ।

पुं० १. वह जो देखने का विषय हो या जिसे देख सकें। २. आँखों का एक रोग। ३. सिद्धांत।

दृष्टि-गोचर—वि०[ष० त०] १. जिसे आँखों से देखा जा सके। २. जो दिखाई देता हो।

दृष्टि-दोष—पुं०[ष० त०] १. आँखों में होनेवाला कोई दोष या विकार। २. पढ़ने-लिखने, देखने-भालने या कोई काम करने में होनेवाला ऐसा अनवधान, असावधानी या जल्दी जिसके कारण कोई चूक या भूल हो जाय। (ओवर साइट) जैसे—इस पुस्तक में दृष्टि-दोष से छापे की बहुत-सी भूलें रह गई हैं।

दृष्टिधृक्—पुं०[सं०] राजा इक्ष्वाकु का एक पुत्र।

दृष्टि-निपात—पुं०=दृष्टिपात।

दृष्टि-पथ—पुं०[ष० त०] वह सारा क्षेत्र जहाँ तक निगाह जाती या पहुँचती हो। दृष्टि का प्रसार। नजर की पहुँच।

दृष्टि-परंपरा—स्त्री०=दृष्टि-क्रम।

दृष्टिपात—पुं०[ष०त०]१. देखने की क्रिया या भाव। २. सरसरी निगाह से देखना।

दृष्टि-पूत—वि०[स० त०] १. जो देखने में शुद्ध हो। २. जिसे देखने से आँखें पवित्र या सफल हों।

दृष्टि-फल—पुं०[ष० त०] फलित ज्योतिष में, वह फल जो एक राशि में स्थित किसी ग्रह की दृष्टि (दे० 'दृष्टि') किसी दूसरी राशि में स्थित किसी ग्रह पर पड़ने से होता हुआ माना जाता है।

दृष्टि-बंध—पुं०[ष०त०] १. इंद्रजाल, सम्मोहन आदि के द्वारा किया जानेवाला ऐसा अभिचार जिसके फल-स्वरूप लोगों को कुछ का कुछ दिखाई पड़ने लगता हो। २. हाथ की ऐसी चालाकी जो दूसरों को धोखा देने के लिए की जाय।

दृष्टि-बंधु—पुं०[ष० त०] खद्योत। जुगनूँ।

दृष्टि-भ्रम—पुं०[ष०त०] देखने के समय होनेवाला ऐसा भ्रम जिससे चीज कुछ हो, पर दिखाई पड़े और कुछ।

दृष्टिमान् (मत्)—वि० [सं० दृष्टि+मतुप्] [स्त्री० दृष्टिमती] १. जिसे दृष्टि हो। आँखवाला। २. समझदार। दृष्टिवंत। ३. ज्ञानी।

दृष्टि-रोध—पुं०[ष०त०] १. दृष्टि या देखने के कार्य में होनेवाली रुकावट। २. आड़। ओट। व्यवधान।

दृष्टिवंत—वि०[सं० दृष्टिमत्]१. जिसमें देखने की शक्ति हो। जिसे दिखाई देता हो। २. जिसमें किसी चीज या बात को अच्छी तरह जाँचने, परखने या समझने की शक्ति हो। जानकार। ३. ज्ञानी।

दृष्टि-वाद—पुं०[ष० त०] दृष्टवाद। (दे०)

दृष्टि-विष—पुं०[ब०स०] ऐसा साँप जिसके देखने से ही कुछ छोटे-मोटे जीव-जन्तु या तो मर जाते या मूर्च्छित हो जाते हों।

दृष्टि-स्थान—पुं०[सं०]कुंडली में वह स्थान जिस पर किसी दूसरे स्थान में स्थित ग्रह की दृष्टि पड़ती हो। (देखें 'दृष्टि')

देँवका†—स्त्री०=दीमक।

दे†—स्त्री० [सं० देवी] स्त्रियों के लिए एक आदर-सूचक शब्द। देवी। पुं० बंगाली कायस्थों के एक वर्ग की उपाधि।

देई—स्त्री०[सं० देवी]१. देवी। २. 'देवी' का वह विकृत रूप जो प्रायः स्त्रियों के नाम के अंत में लगता है। जैसे—हीरादेई।(पश्चिम)

देउ†—पुं०=देव।

देउर†—पुं०[स्त्री० देउरानी]=देवर।

देख—स्त्री०[हिं० देखना] देखने की क्रिया या भाव। अवलोकन। (यौ० पदों के आरम्भ में) जैसे—देख-भाल, देख-रेख।

मुहा०—**देख में**=(क) आँखों के सामने। (ख) निरीक्षण या देख-रेख में।

देखन—स्त्री०[हिं० देखना] देखने की क्रिया, ढंग या भाव।

देखनहारा—वि०[हिं० देखना+हारा (प्रत्य०)] [स्त्री० देखनहारी] देखनेवाला।

देखना—स०[सं० दृश का रूप द्रक्ष्यति प्रा० देक्खइ] १. किसी पदार्थ के रूप-रंग, आकार-प्रकार आदि का ज्ञान या परिचय कराने के लिए उसकी ओर आँखें करना। दृष्टि-शक्ति अथवा नेत्रों से किसी चीज की सब बातों का ज्ञान प्राप्त करना। अवलोकन करना। निहारना। जैसे—यह लड़का बहुत दूर तक की चीजें देख सकता है।

संयो० क्रि०—पाना।—लेना।—सकना।

पद—**देखते देखते**=(क) आँखों के सामने से। देखते रहने की दशा में। जैसे—देखते देखते किताब गायब हो गई। (ख) तत्काल। तुरंत। जैसे—देखते देखते उसके प्राण निकल गये। **(किसी के) देखते या देखते हुए**=किसी के उपस्थित या वर्तमान रहते हुए। विद्यमानता में। समक्ष। सामने। **देखने में**=(क) बाह्य लक्षणों के आधार पर या बाहरी चेष्टाओं से। जैसे— देखने में तो वह बहुत सीधा है। (ख) आकार-प्रकार, रूप-रंग आदि के विचार से। जैसे—यह फल देखने में तो बहुत अच्छा है।

मुहा०—**देखते रह जाना**=कोई अनोखी या विलक्षण बात होने पर चकित भाव से किंकर्तव्य-विमूढ़ होकर रह जाना। जैसे—सब लोग देखते रह गये, और चोर गठरी उठाकर चलता बना।

२. मानसिक शक्ति के द्वारा किसी बात या विषय के सब अंगों का ठीक और पूरा ज्ञान अथवा परिचय प्राप्त करना। बुद्धि से समझना और सोचना। जैसे—(क) आपने देख लिया होगा कि तर्क में कुछ भी दम (या सार) नहीं है। (ख) लाओ, जरा हम भी देखें कि यह पुस्तक कैसी है।

पद—**देखना चाहिए, देखा चाहिए या देखिये**=न जाने क्या होगा। कौन जाने। कह नहीं सकते कि ऐसा होगा या नहीं। जैसे—देखिए, आज भी उनका उत्तर आता है या नहीं।

३. पुस्तक, लेख, समाचार आदि ध्यान से पढ़ना। जैसे—आज का अखबार तो आप देख ही चुके होंगे। ४. त्रुटियाँ, भूलें आदि निकालने अथवा गुण, विशेषताएँ आदि जानने के लिए कोई चीज पढ़ना। जैसे—(क) जब तक हम देख न लें, तब तक अपना लेख छपने के लिए मत भेजना। (ख) परीक्षक परीक्षार्थियों की कापियाँ देखते हैं। ५. दर्शक के रूप में कहीं जाकर उपस्थित होना या पहुँचना अथवा किसी से मिलना या भेंट करना। जैसे—(क) आज घर के सभी लोग नाटक देखने गये हैं। (ख) डाक्टर रोगी देखने गये हैं। ६. किसी प्रकार की स्थिति में रहकर उसका अनुभव या ज्ञान प्राप्त करना अथवा उस स्थिति का भोग करना। जैसे—(क) उन्होंने अपने जीवन में कई बार बहुत अच्छे दिन देखे थे। (ख) हम लोगों ने दो-दो महायुद्ध

देखे हैं। (ग) आपस के वैर-विरोध का परिणाम तो तुम भी देख ही चुके हो। (घ) तुम्हारा जी चाहे तो तुम भी ऐसी एक दूकान कर देखो।
पद—देखा जायगा=अभी चिंता करने की आवश्यकता नहीं, जब जैसी स्थिति होगी तब वैसा किया जायगा।
७. जानकारी प्राप्त करना या पता लगाना। जैसे—ज़रा एक बार उनसे भी बातें करके देख लो कि वे क्या चाहते हैं। ८. जानकारी प्राप्त करने या पता लगाने के लिए कहीं या किसी के पास जाना या उससे मिलना। जैसे—इस बीमारी में उनके प्रायः सभी मित्र उन्हें देखने गये थे।
पद—देखना-सुनना=जानकारी प्राप्त करना। समझना-बूझना। पता लगाना। जैसे—बिना देखे-सुने मकान नहीं लेना चाहिए।
९. कार्य प्रणाली, गुण-दोष, स्थिति आदि का पता लगाने के लिए कहीं जाना या पहुँचना। जाँच या निरीक्षण करना। जैसे—निरीक्षक महोदय हर महीने यह विद्यालय देखने आते हैं। १०. पता लगाने या प्राप्त करने के लिए खोज या तलाश करना। ढूँढ़ना। जैसे—(क) व महीनों से अपने रहने के लिए किराये का एक अच्छा मकान (या कन्या के लिए वर) देख रहे हैं। (ख) सारा घर देख डाला पर किताब का कहीं पता न चला। ११. किसी प्रकार की प्रतियोगिता, मुकाबला या सामना होने पर प्रतिद्वंद्वी की सब बातें सहने और उनका पूरा जवाब देने में समर्थ होना। जैसे—हम भी देख लेंगे कि वे कितने बहादुर हैं। १२. बरदाश्त करना। सहन करना। जैसे—हम यह अंधेर (अथवा अत्याचार) नहीं देख सकते। १३. किसी काम, बात या स्थिति का ठीक और पूरा ध्यान रखना। जैसे—(क) देखना, लड़का कहीं भीड़ में खो या दब न जाय। (ख) हमारे पीछे यह मकान देखते रहिएगा।
पद—देखो=(क) ध्यान दो। विचार करो। जैसे—देखो, लोग अपना काम किस तरह निकालते हैं। (ख) ध्यान रखो। सावधान रहो। जैसे—देखो, वह हाथ से निकलने न पावे। (ग) सुनो। जैसे—देखो, कोई सड़ी-गली तरकारी मत उठा लाना। (घ) प्रतीक्षा करो। जैसे—देखो, वह कब घर लौटता है।

देखनि†—स्त्री०=देखन।

देख-भाल—स्त्री०[हिं० देखना+भालना] १. अच्छी तरह देखने या भालने की क्रिया या भाव। जैसे—रुपए देख-भालकर लेना, कोई खोटा न ले लेना। २. देखा-देखी। साक्षात्कार। ३. देख-रेख। हिफ़ाजत।

देखराना—स०=दिखलाना।

देखरावना†—स०=दिखलाना।

देख-रेख—स्त्री०[हिं० देखना+सं० प्रेक्षण] इस प्रकार किसी पर दृष्टि रखना कि (क) कोई किसी विशिष्ट अवस्था या स्थिति में रहे। जैसे—चोरों या कैदियों की देख-रेख रखना। और (ख) किसी की स्थिति अच्छी बनी रहे और बिगड़ने न पावे। जैसे—रोगी की देख-रेख करना।

देखाऊ†—वि०=दिखाऊ।

देखा-देखी—स्त्री०[हिं० देखना]१. आँखों से देखने की अवस्था या भाव। २. दर्शन। साक्षात्कार।
अव्य० दूसरों को कोई काम करते हुए देखने के फलस्वरूप। अनुकरणवश। जैसे—लड़के देखा-देखी गाली बकते हैं।

देखाना—स०=दिखाना।

देखा-भाली—स्त्री०=देख-भाल।

देखाव†—पुं०=दिखाव।

देखावट†—स्त्री०=दिखावट।

देखावना—स०=दिखाना।

देखौआ†—वि०=दिखौआ।

देग—पुं०[फ़ा०] [स्त्री० अल्पा० देगचा]१. चौड़े मुँह और चौड़े पेट का वह बहुत बड़ा बरतन जिसमें चावल, दाल आदि खाद्य पदार्थ पकाये जाते हैं। २. दे० 'देगचा'।
पुं०[?] एक प्रकार का बाज पक्षी।

देगचा—पुं०[फ़ा० देगचः] [स्त्री० अल्पा० देगची] छोटा देग।

देगची—स्त्री०[हिं० देगचा] छोटा देगचा।

देगला†—पुं०[सं० दृष्टि+लग्न]१. सामना। साक्षात्कार। उदा०—देगलौ द्रुवौ दलाँ दुँह।—प्रिथीराज। २. दिखावा।

देदीप्यमान—वि०[सं०√दीप्(चमकना)+यङ्+शानच्] जिसका स्वरूप प्रकाशपूर्ण हो। चमकता हुआ। दमकता हुआ।

देन—स्त्री०[हिं० देना]१. देने की क्रिया या भाव। २. वह जो दिया जाय। ३. कोई ऐसी महत्त्वपूर्ण चीज या बात जो किसी बड़े व्यक्ति, ईश्वर आदि से मिली हो तथा जिससे विशेष उपकार या हित होता हो। जैसे—(क) उनकी इस देन से हिन्दी जगत् सदा ऋणी रहेगा। (ख) पुत्र-पुत्रियाँ तो भगवान की देन हैं। ४. उक्त के आधार पर कोई ऐसी चीज या बात जो किसी दूसरे से प्राप्त हुई हो और जिसका कोई व्यापक परिणाम या फल हो। जैसे—राजकीय विभागों में घूस और पक्षपात ब्रिटिश शासन की देन है। ५. किसी प्रकार का देना चुकाने का दायित्व या भार। (लायबिलिटी)

देनदार—पुं०[हिं० देना+फ़ा० दार]१. ऋणी। कर्जदार। २. वह जिसके जिम्मे कुछ देना बाकी हो। वह जिससे किसी को आवश्यक रूप में कुछ मिलने को हो।

देनदारी—स्त्री०[हिं० देन+फ़ा० दारी] देनदार होने की अवस्था या भाव।

देन-लेन—पुं० [हिं० देना+लेना] १. किसी को कुछ देने और उससे कुछ लेने की क्रिया या भाव। २. विनिमय। ३. इष्ट-मित्रों या संबंधियों में प्रायः कुछ न कुछ एक दूसरे के यहाँ भेजते रहने का व्यवहार। ४. ब्याज पर रुपया उधार देने का व्यापार। महाजनी का व्यवसाय।

देनहार—वि०=देनहारा।

देनहारा—वि०[हिं० देना+हारा (प्रत्य०)] देनेवाला।

देना—स०[सं० दान] १. (अपनी) कोई चीज पूर्णतः और सदा के लिए किसी के अधिकार या नियंत्रण में करना। सुपुर्द करना। हवाले करना। जैसे—लड़की को ब्याह में मकान देना। २. बिना किसी प्रकार के प्रतिदान या प्रतिफल के किसी को कोई चीज अंतरित या हस्तांतरित करना। जैसे—प्रसाद देना। ३. श्रद्धापूर्वक अथवा किसी की सेवाओं आदि से प्रसन्न होकर उसे कुछ अर्पित या समर्पित करना। जैसे—(क) आशीर्वाद देना। (ख) भगवान का भक्त को दर्शन देना। ४. कोई चीज कुछ समय के लिए अपने पास से अलग करके दूसरे के हवाले करना। सौंपना। जैसे—उसने अपना सारा असबाब

कुली को (ढोने के लिए) दे दिया। ५. कोई चीज किसी के हाथ पर रखना। थमाना। पकड़ाना। जैसे—भिखमंगे को पैसा देना। ६. धन या और किसी पदार्थ के बदले में, अपनी चीज किसी के अधिकार में करना। जैसे—सौ रुपए देने पर भी ऐसी अँगूठी तुम्हें नहीं मिलेगी। ७. ऐसी क्रिया करना जिससे किसी को कुछ प्राप्त हो। पाने, मिलने या लेने में सहायक या साधक होना। जैसे—(क) किसी को उपाधि या मान-पत्र देना। (ख) नौकर को छुट्टी या तनख्वाह देना। (ग) गौ या भैंस का दूध देना। ८. किसी व्यक्ति, कार्य आदि के लिए उत्सृष्ट, निछावर या प्रदान करना। जैसे—(क) किसी संस्था को अपना जीवन, धन या समय देना। (ख) किसी को परामर्श, प्रमाण या सुझाव देना। (ग) किसी के लिए अपनी जान देना। ९. ऐसी क्रिया करना जिससे किसी को कुछ कष्ट या दंड मिले अथवा कोई दुष्परिणाम भोगना पड़े। जैसे—दुःख देना, सजा देना। १०. आघात या प्रहार करना। जड़ना। मारना। जैसे—थप्पड़ या मुक्का देना।

मुहा०—(किसी को) दे मारना=उठाकर जमीन पर गिरा या पटक देना।

११. पहनी जानेवाली कुछ चीजों के संबंध में, यथा-स्थान धारण करना। पहनना। जैसे—सिर पर टोपी या मुकुट देना। १२. कुछ विशिष्ट पदार्थों के संबंध में, बंद करना। जैसे—किवाड़ देना, अंगे का बंद या कुरते का बटन देना। १३. अंकन, लेखन आदि में, अंकित करना। चिह्न बनाना। जैसे—१ के आगे बिंदी देने से १० हो जाता है। उदा० —बंक बिकारी देत ज्यों दाम रुपैया होत।—बिहारी।

संयो० क्रि०—डालना।—देना।

विशेष—संयोज्य क्रिया के रूप में 'देना' का प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में होता है—(क) संप्रदान कारक में 'पड़ना' क्रिया की तरह; जैसे—उसे दिखाई नहीं देता। (ख) अकर्मक अवधारण-बोधक क्रियाओं के साथ सप्रत्यय कर्त्ता कारक में; जैसे—वह मुस्करा दिया। (ग) अनुमति-बोधक रूप में; जैसे—उसे भी यहाँ बैठने दो। (घ) 'चलना' क्रिया के साथ विकल्प से, कर्त्तरि या भावे प्रयोग में; जैसे—वह रुपए उठाकर चल दिया। (च) 'देना' क्रिया के साथ कार्य की पूर्ति सूचित करने के लिए। जैसे—उसने पुस्तक मुझे दे दी।

पुं० १. किसी से लिया हुआ वह धन जो अभी चुकाया जाने को हो। ऋण। कर्ज। जैसे—उन्हें बाजार के हजारों रुपए देने हैं। २. वह धन जो किसी को किसी रूप में चुकाना आवश्यक या कर्तव्य हो। देय धन। देन। जैसे—अभी तो घर का भाड़ा, नौकर की तनख्वाह, बिजली का हिसाब और न जाने क्या-क्या देना बाकी पड़ा है।

देमान†—पुं०=दीवान।

देय—वि०[सं०√दा (देना)+यत्] १. जो दिया जा सके। २. जो दिये या लौटाये जाने को हो।

देयक—पुं० [सं० देय+कन्] वह पत्र जिसमें किसी के नाम विशेषतः बंक के नाम यह लिखा हो कि अमुक व्यक्ति को हमारे खाते में से इतने रुपए दे दो। (चेक)

देय-धर्म—पुं०[ष० त०] दानधर्म।

देयादेय-फलक—पुं० [देय-अदेय द्व०स०, देयादेय-फलक ष०त०] दे० 'आय-व्यय फलक'।

देयादेश—पुं०[सं० देय-आदेश ष० त०] वह पत्र जिसमें यह लिखा हो कि अमुक व्यक्ति को इतना धन दिया जाय। (पे-आर्डर)

देयासी†—पुं०[सं० देवोपासिन्?] [स्त्री० देयासिन] झाड़-फूक करनेवाला ओझा।

देर—स्त्री०[फा०]१. किसी काम या व्यापार में आवश्यक, उचित या नियत समय से अधिक लगनेवाला समय। विलंब। जैसे—लड़का देर से घर लौटता है। २. समय। वक्त। जैसे—यह काम कितनी देर में होगा।

देरा†—पुं०=डेरा।

देरानी*—स्त्री०=देवरानी।

देरी—स्त्री०=देर।

देवँक—स्त्री०=दीमक।

देव—पुं० [सं०√दिव् (क्रीड़ा आदि)+अच्] [स्त्री० देवी] १. स्वर्ग में रहनेवाला अमर प्राणी। देवता। सुर। २. तेजोमय और पूज्य व्यक्ति। ३. बड़े और सम्मानित लोगों के लिए एक आदर-सूचक संबोधन। जैसे—देव, मैं तो आप ही आ रहा था। ४. ब्राह्मणों की एक उपाधि या संज्ञा। ५. प्रेमी। ६. विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसका देवर। पति का छोटा भाई। ७. बच्चा। बालक। ८. ऋत्विक्। ९. ज्ञानेंद्रिय। १०. दैत्य। राक्षस। ११. बादल। मेघ। १२. पारा। १३. देवदार का पेड़।

देव-अंशी (शिन्)—वि०[ष० त०] जो देवता के अंश से उत्पन्न हो। जो किसी देवता का अवतार हो।

देव-ऋण—पुं०[ष०त०] देवताओं के द्वारा किया हुआ ऐसा उपकार जिसका बदला तर्पण, दान-पुण्य, यज्ञ आदि धार्मिक कृत्य करके चुकाया जाता है।

देव-ऋषि—पुं० [ष०त०] देवताओं के लोक में रहनेवाला और उनका समकक्ष माना जानेवाला ऋषि। देवर्षि।

देवक—पुं०[सं०]१. देवता। २. एक यदुवंशी राजा जो उग्रसेन के छोटे भाई, देवकी के पिता और श्रीकृष्ण के नाना थे। ३. युधिष्ठिर के एक पुत्र का नाम।

देव-कन्या—स्त्री०[ष० त०] १. देवता की पुत्री। २. देवी।

देव-कपास—स्त्री०[देश०]नरमा या मनवा नाम की कपास। राम कपास।

देव-कर्दम—पुं०[मध्य० स०] एक प्रकार का गंध द्रव्य जो चंदन, अगर, कपूर और केसर को एक में मिलाने से बनता है।

देव-कर्म (न्)—पुं०[मध्य०स०] देवताओं को प्रसन्न करने के लिए किया जानेवाला कर्म। जैसे—यज्ञ, बलि, वैश्वदेव आदि।

देवकांडर—पुं०[सं० देव-कांड] जल-पीपल नामक क्षुप।

देव-कार्य—पुं०[मध्य० स०] देवताओं को प्रसन्न करने के लिए किये जानेवाले कार्य। जैसे—होम, पूजा आदि।

देव-काष्ठ—पुं०[मध्य० स०] एक प्रकार का देवदार।

देवकिरि—स्त्री० [सं० देव√कृ (बिखेरना)+क-ङीप्] एक रागिनी जो मेघ राग की भार्या मानी जाती है।

देवकी—स्त्री० [सं० देवक+ङीप्] वसुदेव की स्त्री और श्रीकृष्ण की माता।

देवकी-नंदन—पुं०[ष०त०] श्रीकृष्ण।

देवकी-पुत्र—पुं०[ष०त०] श्रीकृष्ण।

देवकी-मातृ—पुं०[ब०स०] श्रीकृष्ण (जिनकी माता देवकी हैं)।

देवकीय—वि०[सं० देव+छ—ईय, कुक्] देवता-संबंधी। देवता का।

देव-कुंड—पुं०[मध्य०स०]१. आप से आप बना हुआ पानी का गड्ढा या ताल। प्राकृतिक जलाशय। २. किसी तीर्थ या देव-मंदिर के पास का पवित्र कुंड, जलाशय या तालाब।

देव-कुरुंबा—स्त्री०[मध्य०स०] बड़ा गूमा। गोमा।

देवकुरु—पुं०[सं०] जैन पुराणों के अनुसार जम्बूद्वीप के छः खंडों में से एक जो सुमेरु और निषध के बीच में स्थित माना गया है।

देव-कुल—पुं०[सं०देव√कुल् (संघात)+क]१. वह देवमंदिर जिसका द्वार बहुत छोटा हो। २. देव-मंदिर। ३. देवताओं का वर्ग।

देव-कुल्या—स्त्री०[मध्य०स०]१. गंगा नदी। २. मरीचि की एक कन्या जो पूर्णिमा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी।

देव-कुसुम—पुं०[ब० स०] लौंग (वृक्ष और फल)।

देव-कुसुमावलि—स्त्री० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

देव-कूट—पुं०[सं०]१. कुबेर के आठ पुत्रों में से एक जो शिव पूजन के लिए सूँघकर कमल ले गया था और इसी लिए जो दूसरे जन्म में कंस का भाई हुआ और श्रीकृष्ण चंद्र के द्वारा मारा गया। २. एक प्राचीन पवित्र आश्रम जो वशिष्ठ मुनि के आश्रम के पास था।

देव-कृच्छ्—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार का व्रत जिसमें लपसी, शाक दूध, दही, घी में से क्रमशः एक-एक चीज तीन-तीन दिन खाने और उसके बाद तीन-तीन दिन निराहार रहने का विधान है।

देव-केसर—पुं०[ब०स०] एक प्रकार का पुन्नाग। सुरपुन्नाग।

देवक्रिय—पुं०[सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

देव-खात—पुं०[तृ० स०] प्राकृतिक गड्ढा या जलाशय।

देव-गंग—स्त्री०[सं०] असम प्रदेश की एक नदी। दिवंग।

देव-गंधा—स्त्री०[ब० स०, टाप्] महामेदा नामक ओषधि।

देवगढ़ी—स्त्री०[देवगढ़ (स्थान)] एक तरह की ईख।

देव-गण—पुं०[ष०त०]१. किसी जाति या धर्म के सभी देवी-देवताओं का वर्ग या समूह। (पैन्थिअन)२. अश्विनी, रेवती, पुष्य, स्वाती, हस्त, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा और श्रवण नक्षत्रों का समूह (फलित ज्यो०) ३. किसी देवता का अनुचर।

देव-गति—स्त्री०[ष०त०] मरने के उपरांत प्राप्त होनेवाली उत्तम गति। देव-योनि अथवा स्वर्ग की प्राप्ति।

देवगन—पुं० =देव-गण।

देव-गर्भ—पुं०[ब० स०] वह जिसका जन्म देवता के वीर्य से हुआ हो। जैसे—कर्ण।

देव-गांधार—पुं०[मध्य० स०] एक प्रकार का राग जो भैरव राग का पुत्र कहा गया है।

देव-गांधारी—स्त्री०[सं०] एक रागिनी जो श्रीराग की भार्या कही गई है। यह शिशिर ऋतु में तीसरे पहर से आधी रात तक गाई जाती है।

देव-गायक—पुं०[ष०त०]गंधर्व।

देव-गायन—पुं०[ष०त०] गंधर्व।

देव-गिरा—स्त्री०[ष०त०] देवताओं की भाषा अर्थात् संस्कृत। देववाणी।

देवगिरि—पुं०[सं०] १. रैवतक पर्वत जो गुजरात में है। गिरनार। २. दक्षिण भारत के आधुनिक प्रमुख नगर का पुराना नाम।

देवगिरी—स्त्री०[?]हेमंत ऋतु में दिन के पहले पहर में गाई जानेवाली षाड़व संपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

देव-गीर्वाणी—स्त्री०[सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

देव-गुरु—पुं० [ष० त०] १. देवताओं के गुरु अर्थात् बृहस्पति। २. देवताओं के पिता, कश्यप।

देवगुही—स्त्री०[सं०] सरस्वती।

देव-गृह—पुं०[ष०त०]१. देवताओं का घर। २. देवालय। मंदिर।

देवघन—पुं०[देश०] एक तरह का पेड़।

देव-घनाक्षरी—स्त्री०[सं०] ३३ वर्णों का एक वृत्त जो मुक्तक दण्डक का एक भेद है।

देव-चक्र—पुं०[ष०त०] गवामयन यज्ञ के एक अभिप्लव का नाम।

देवचाली—पुं०[सं०] इंद्रताल के छः भेदों में से एक।

देव-चिकित्सक—पुं०[ष०त०]१. अश्विनीकुमार। २. उक्त के अनुसार दो की संख्या।

देवच्छद—पुं०[सं० देव√छंद् (आकांक्षा)+घञ्] पुरानी चाल का एक तरह का बड़ा हार जिसमें ८१, १०० या १०८ लड़ियाँ होती थीं।

देवज—वि०[सं० देव√जन् (उत्पत्ति)+ड] देवता से उत्पन्न। देवसंभूत। पुं० एक प्रकार का साम गान।

देव-जग्ध—पुं०[तृ०त०] रोहिष तृण। रोहिस घास।

देव-जन—पुं०[मध्य०स०] गंधर्व।

देवजन-विद्या—स्त्री०[ष०त०] संगीत शास्त्र।

देव-जुष्ट—वि०[तृ०त०] देवता का जूठा किया हुआ अर्थात् उन्हें चढ़ाया हुआ।

देवट—पुं०[सं०√दिव् (क्रीड़ा आदि)+अटन्]कारीगर। शिल्पी।

देवठान†—पुं० दे० 'देवोत्थान'।

देवडोंगरी—स्त्री०[सं० देव+देश० डोंगरी] देवदाली लता। बंदाल।

देवढ़ी†—स्त्री०=ड्योढ़ी।

देव-तरु—पुं०[मध्य०स०] कल्पवृक्ष।

देव-तर्पण—पुं०[ष०त०] देवताओं के उद्देश्य से किया जानेवाला तर्पण।

देवता—पुं०[सं० देव+तल्—टाप्] १. स्वर्ग में रहनेवाले प्राणी जो पूज्य तथा जरा और मृत्यु से रहित माने गये हैं। २. देव-प्रतिमा। ३. ज्ञानेंद्रिय।

विशेष—संस्कृत में 'देवता' स्त्री० होने पर भी हिन्दी में पुंलिंग माना जाता है।

देवतागार—पुं०[सं० देवता-आगार ष०त०] देवागार। (दे०)

देव-ताड़—पुं० [सं० देव-ताल कर्म० स०, ल को ड] १. एक प्रकार का बड़ा तृण या पौधा जो देखने में घीकुँआर के पौधे की तरह होता है। इसे रामबाँस भी कहते हैं। २. दे० 'देव-ताड़ी'।

देवताड़ी—स्त्री० [सं० देव+हिं० ताड़] १. देवदाली लता। बंदाल। २. तुरई। तोरी।

देवतात्मा (त्मन्)—वि०[सं० देवता-आत्मन् ब०स०]१. पवित्र। पावन। २. देवताओं की तरह का। पुं० १. अलौकिक शक्ति। २. पीपल।

देवताधिप—पुं० [सं० देवता-अधिप ष० त०] देवताओं के राजा, इंद्र।

देवताध्याय—पुं० [सं० देवता-अध्याय ब० स०] सामवेद का एक ब्राह्मण।

देवता-मंगल—पुं० [सं०] रंग-मंच पर देवता को प्रसन्न करने के लिए होनेवाला मंगलात्मक नृत्य।

देव-तीर्थ—पुं० [ष० त०] १. देवपूजन का उपयुक्त समय। २. देव-पूजा का स्थान। ३. दाहिने हाथ को एक साथ सटी हुई चारों उँगलियों का अग्रभाग जिससे तर्पण का जल छोड़ा जाता है।

देवत्त—वि० [सं० देव-दत्त तृ० त०] देवता या देवताओं द्वारा दिया हुआ।

देव-त्रयी—पुं० [सं० त०] ब्रह्मा, विष्णु और शिव इन तीन देवताओं का वर्ग।

देवत्व—पुं० [सं० देव+त्व] देवता होने की अवस्था, गुण, पद और भाव।

देव-दंडा—स्त्री० [ब०स०] गँगेरन। नागबला।

देव-दत्त—वि० [सं० तृ० त०] १. देवता का दिया हुआ। देवता से प्राप्त। २. [च०त०] जो देवता के निमित्त अलग किया या निकाला गया हो।

पुं० १. ऐसी संपत्ति, जो किसी देवता के निमित्त अलग की गई हो। २. शरीर की पाँच वायुओं में से एक जिससे जँभाई आती है। ३. अर्जुन के शंख का नाम। ४. नागों के आठ कुलों में से एक कुल। ५. शाक्य वंशीय एक राजकुमार जो गौतम बुद्ध का चचेरा भाई था और उनसे बहुत द्वेष रखता था। यशोधरा के साथ यही विवाह करना चाहता था।

देव-दर्शन—पुं० [ष० त०] १. देवता का किया जाने या होनेवाला दर्शन। २. एक प्राचीन ऋषि।

देवदानी—स्त्री० [?] बड़ी तोरई।

देवदार—पुं० [सं० देवदारु] एक प्रसिद्ध सीधे तने वाला ऊँचा पेड़ जिसके पत्ते लंबे और कुछ गोलाई लिये होते हैं तथा जिसकी लकड़ी मजबूत किंतु हलकी और सुगंधित होती है, और इमारतों में काम आती है। इसके स्निग्ध और काष्ठ दो भेद हैं। काष्ठ दारु लोक में अशोक वृक्ष के नाम से प्रसिद्ध है। स्निग्ध देवदारु की लकड़ी और तैल दवा के काम भी आता है।

देव-दारु—पुं० [ष० त०] देवदार।

देवदार्वादि—पुं० [सं० देवदारु-आदि ब० स०] जच्चा अर्थात् प्रसूता स्त्री को दिया जानेवाला एक तरह का क्वाथ। (भाव प्रकाश)

देवदालिका—स्त्री० [सं० देवदाली√कै (प्रतीत होना) +क-टाप्, ह्रस्व] महाकाल वृक्ष।

देव-दाली—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] एक तरह की लता जो तोरी की बेल से मिलती-जुलती होती है। इसके फल ककोड़े (खेखसे) की तरह काँटेदार होते हैं। घघरबेल। बंदाल।

देवदासी—स्त्री० [सं० देव√दास् (हिंसा)+अण्-ङीप्] १. प्राचीन भारत में वह कन्या जो देवता को अर्पित कर दी जाती थी और उसके मंदिर में रहकर नाचती-गाती थी। २. नर्तकी। ३. रंडी। वेश्या। ४. बिजौरा नींबू।

देव-दीप—पुं० [मध्य० स०] १. किसी देवता के सम्मुख अथवा किसी देवता के निमित्त जलाया जानेवाला दीपक। २. आँख। नेत्र।

देव-दुंदुभि—पुं० [ष० त०] लाल तुलसी।

३—१५

देव-दूत—पुं० [ष० त०] [स्त्री० देवदूती] १. देवता या देवताओं का संदेश पहुँचानेवाला दूत। फरिश्ता। २. ऐसा व्यक्ति जो कु-समय में किसी का उद्धार या सहायता करे।

देव-दूती—स्त्री० [ष० त०] १. स्वर्ग की अप्सरा। २. बिजौरा नींबू।

देव-देव—पुं० [सं० त०] १. शिव। २. ब्रह्मा। ३. विष्णु। ४. गणेश। ५. इंद्र।

देवद्युर—पुं० [सं०] भरतवंशीय एक राजा जो देवाजित् के पुत्र थे। (भागवत)

देव-द्रुम—पुं० [ष० त०] १. कल्पवृक्ष। २. देवदार।

देव-द्रोणी—पं० [ष० त०] १. देवयात्री। २. शिवलिंग का अरघा।

देव-धन—पुं० [मध्य स०] देवता के निमित्त उत्सर्ग किया या अलग निकाला हुआ धन।

देव-धान्य—पुं० [मध्य० स०] ज्वार।

देव-धाम (न्)—पुं० [ष०त०] तीर्थस्थान। देवस्थान।

देव-धुनी—स्त्री० [ष० त०] १. गंगा नदी। २. कोई पवित्र नदी।

देव-धूप—पुं० [मध्य० स०] गुग्गुल। गूगुल।

देव-धेनु—स्त्री० [ष० त०] कामधेनु।

देवनंदी (दिन्)—पुं० [सं० देव√नन्द् (समृद्धि) +णिनि] इंद्र का द्वारपाल।

देवन—पुं० [सं० √दिव्+ल्युट्-अन] १. किसी से आगे बढ़ जाने की कामना। जिगीषा। २. क्रीड़ा। खेल। ३. उपवन। बगीचा। ४. कमल। पद्म। ५. कांति। चमक। ६. प्रशंसा। स्तुति। ७. गति। चाल। ८. जूआ। द्यूत। ९. खेद। रंज।

देव-नदी—स्त्री०]ष० त०] १. गंगा। २. दृषद्वती नदी। ३. सरस्वती नदी।

देव-नल—पुं० [उपमि० स०] एक तरह का सरकंडा। नरसल।

देवना—स्त्री० [सं० √दिव् +युच्-अन, टाप्] १. क्रीड़ा। खेल। २. जूआ। ३. टहल। परिचर्या। सेवा।

देव-नागरी—स्त्री० [सं०] आधुनिक भारत की प्रसिद्ध राष्ट्रीय लिपि, जिसमें संस्कृत, हिंदी, मराठी आदि भाषाएँ लिखी जाती हैं। हिंदी में इसके ४५ ध्वनि चिह्न हैं जिनमें ३२ व्यंजनों के और १३ स्वरों के हैं। संयुक्त ध्वनियों के चिह्न इनके अतिरिक्त हैं।

देव-नाथ—पुं० [ष० त०] शिव। महादेव।

देवनामा (मन्)—पुं० [सं०] कुश द्वीप के एक वर्ष का नाम।

देव-नायक—पुं० [ष० त०] देवताओं के नायक, इंद्र।

देवनाल—पुं० [उपमि० स०] एक तरह का सरकंडा। नरसल।

देव-निकाय—पुं० [ष० त०] १. देवताओं का समूह। २. देवताओं के रहने का स्थान; अर्थात् स्वर्ग।

देव-निर्मिता—स्त्री० [तृ० त०] गुड़ूची। गुरुच।

देव-पति—पुं० [ष० त०] इंद्र।

देवपत्तन—पुं० [सं०] काठियावाड़ का वह क्षेत्र जिसमें सोमनाथ का मंदिर है।

देव-पत्नी—स्त्री० [ष० त०] १. देवता की स्त्री। २. मधालु नाम का कंद।

देव-पथ—पुं० [ष० त०] १. देवताओं के चलने का मार्ग; आकाश।

२. देव-मन्दिर की ओर जाने का रास्ता। ३. प्राचीन भारत में, वह ऊँचा मार्ग जो किले की दीवार के ऊपर चारों ओर आने-जाने के लिए होता था। ४. दे० 'देव-यान'।

देवपथिनी—स्त्री० [सं०] आकाश में बहनेवाली गंगा का एक नाम।

देव-पर—पुं० [ब० स०] ऐसा भाग्यवादी पुरुष जो संकट पड़ने पर भी उद्यम न करता हो, बल्कि किसी देवता के भरोसे बैठा रहता हो।

देव-पर्ण—पुं० [ब० स०] माचीपत्र।

देव-पशु—पुं० [च० त०] १. वह पशु जो देवता को बलि चढ़ाया जाने को हो। २. देवता का उपासक।

देव-पात्र—पुं० [ष० त०] अग्नि, जिसमें देवताओं को अर्पित की जानेवाली चीजें डाली जाती हैं।

देव-पान—पुं० [ष० त०] सोमपान करने का एक प्रकार का पात्र।

देवपाल—पुं० [सं०] शाकद्वीप के एक पर्वत का नाम।

देव-पालित—वि० [तृ० त०] (क्षेत्र) जिसमें सिंचाई के अन्य साधन दुर्लभ होने पर भी केवल वर्षा के जल से अन्न उत्पन्न होता हो।

देव-पुत्र—पुं० [ष० त०] [स्त्री० देव-पुत्री] देवता का पुत्र।

देव-पुत्रिका—स्त्री० =देव-पुत्री।

देव-पुत्री—स्त्री० [ष० त०] १. देवता की पुत्री। २. इलायची। ३. कपूरी साग।

देव-पुर—पुं० [ष० त०] अमरावती।

देव-पुरी—स्त्री० [ष० त०] देवताओं की नगरी जो स्वर्ग में इन्द्र की राजधानी मानी गई है। अमरावती।

देव-पूजा—स्त्री० [ष० त०] देवताओं का किया जानेवाला पूजन।

देव-प्रयाग—पुं० [सं०] हिमालय में, गंगा और अलकनंदा नदियों के संगम पर स्थित एक तीर्थ।

देव-प्रश्न—पुं० [ष० त०] १. फलित ज्योतिष में, वह प्रश्न जो ग्रह, नक्षत्र, ग्रहण आदि के संबंध में हो। २. भविष्य-संबंधी प्रश्न।

देव-प्रस्थ—पुं० [सं०] एक प्राचीन नगरी जो कुरुक्षेत्र से पूर्व की ओर थी।

देव-प्रिय—पुं० [ष० त०] १. अगस्त (पेड़ और फूल)। २. पीली भँगरैया।

देवबंद—पुं० [सं० देववंद] घोड़ों की एक भँवरी जो उनकी छाती पर होती है और शुभ मानी जाती है।

देव-बला—स्त्री० [ब० स०, टाप्] सहदेई (बूटी)।

देवबाँस—पुं० [सं०] एक तरह का बाँस जिसके नरम हरे कल्लों का अचार डाला जाता है।

देव-ब्रह्मन्—पुं० [उपमि० स०] नारद।

देव-ब्राह्मण—पुं० [मध्य० स०] देवताओं का पूजन करके जीविका निर्वाह करनेवाला ब्राह्मण।

देव-भवन—पुं० [ष० त०] १. देवताओं का घर या स्थान। देव-मंदिर। २. स्वर्ग। ३. अश्वत्थ या पीपल जिसमें देवताओं का निवास माना जाता है।

देव-भाग—पुं० [ष० त०] किसी चीज विशेषतः संपत्ति का वह भाग जो किसी देवता के निमित्त अलग किया गया हो।

देव-भाषा—स्त्री० [ष० त०] संस्कृत भाषा।

देव-भिषक् (ज्)—पुं० [सं० ष० त०] अश्विनी कुमार।

देव-भू—स्त्री० [ष० त०] स्वर्ग।

देव-भूति—स्त्री० [ष० त०] १. देवताओं का ऐश्वर्य। २. मंदाकिनी।

देव-भूमि—स्त्री० [ष० त०] देवताओं की भूमि अर्थात् स्वर्ग।

देव-भृत्—पुं० [सं० देव√भृ (भरण)+क्विप्] देवताओं का भरण करनेवाले (क) इंद्र, (ख) विष्णु।

देव-भोज्य—पुं० [ष० त०] देवताओं का भोजन। अमृत।

देव-मंजर—पुं० [सं०] कौस्तुभ मणि।

देव-मंदिर—पुं० [ष० त०] देवता का मंदिर। देवालय।

देव-मणि—पुं० [स० त०] १. सूर्य। २. [कर्म० स०] कौस्तुभ मणि। ३. महामेदा। ४. घोड़ों की गरदन पर की एक प्रकार की भौंरी।

देव-मनोहरी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

देवमाता (तृ)—स्त्री० [ष० त०] देवताओं की माता (क) अदिति, (ख) दाक्षायणी।

देव-मातृक—वि० [ब० स०, कप्] दे० 'देवपालित'।

देव-मादन—वि० [ष० त०] देवताओं को मत्त करनेवाला। पुं० सोम।

देव-मान—पुं० [ष० त०] काल-गणना में वह मान जो देवताओं के संबंध में काम में लाया जाता है। जैसे—देव-मान के विचार से मनुष्यों का एक सौ वर्ष देवताओं का एक दिन होता है।

देव-मानक—पुं० [ब० स०, कप्] कौस्तुभ मणि। देवमणि।

देव-माया—स्त्री० [ष० त०] १. देवताओं की माया। २. वह ईश्वरीय या प्राकृतिक माया जो अविद्या के रूप में रहकर जीवों को सांसारिक बंधनों में फँसाये रखती है।

देव-मार्ग—पुं० [ष० त०] देवयान।

देव-मालवी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

देव-मास—पुं० [च० त०] १. गर्भ का आठवाँ महीना। २. तीन हजार वर्ष के बराबर का समय जो देवताओं की काल-गणना के अनुसार एक महीने के बराबर होता है।

देव-मित्र—पुं० [ब० स०] शाकल्य ऋषि का एक नाम।

देव-मीढ—पुं० [सं०] मिथिला के एक राजा जो महाराजा जनक के पूर्वजों में से थे।

देव-मीढुष—पुं० [सं०] वसुदेव के पितामह।

देव-मुखारी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

देव-मुख्या—स्त्री० [सं०] कस्तूरी।

देव-मुनि—पुं० [कर्म० स०] १. नारद ऋषि। २. सूर नामक ऋषि।

देवमूक—पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम। (गर्गसंहिता)

देव-मूर्ति—पुं० [ष० त०] किसी स्थान पर प्रतिष्ठित देवता की प्रतिमा या मूर्ति।

देव-यजन—पुं० [ष० त०] यज्ञ की वेदी।

देव-यजनी—स्त्री० [ष० त०] पृथिवी।

देव-यज्ञ—पुं० [ष० त०] होमादि कर्म जो पंचयज्ञों में से एक है तथा जिसे करना गृहस्थों का प्रतिदिन का कर्तव्य माना गया है।

देवयात्री-(त्रिन्)—पुं० [सं०] पुराणानुसार एक दानव।

देव-यान—पुं० [ष० त०] १. देवताओं की ओर ले जानेवाला मार्ग।

२. शरीर के अलग होने के उपरांत जीवात्मा के जाने के दो मार्गों में से एक जिसमें से होता हुआ वह ब्रह्म-लोक को जाता है। ३. उत्तरायण।

देवयानी—स्त्री० [सं०] राजा ययाति की पत्नी जो शुक्राचार्य की कन्या थी।

देव-युग—पुं० [मध्य० स०] सत्ययुग।

देव-योनि—स्त्री० [ब० स०] स्वर्ग, अंतरिक्ष आदि में रहनेवाले उन जीवों का वर्ग जो देवताओं के अंतर्गत माने जाते हैं। जैसे—अप्सरा, किन्नर, गंधर्व, यक्ष आदि।

देव-रंजनी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

देवर—पुं० [सं०, √दिव्+अर] [स्त्री० देवरानी] १. विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसके पति का छोटा भाई। २. पति का कोई भाई, चाहे उससे छोटा हो या बड़ा। (क्व०) ३. रहस्य संप्रदाय में (क) भ्रम या संशय, (ख) कामदेव।

देव-रक्षित—वि० [तृ० त०] जो देवताओं द्वारा रक्षित हो।
पुं० राजा देवक के एक पुत्र का नाम।

देवरक्षिता—स्त्री० [सं०] देवक राजा की एक कन्या।

देव-रथ—पुं० [ष० त०] १. देवताओं का रथ। विमान। २. सूर्य का रथ।

देवरा—पुं० [सं० देव] [स्त्री० अल्पा० देवरी] १. छोटा-मोटा देवता। २. उक्त प्रकार के देवता का मंदिर। ३. ऊँचे शिखरवाला देव-मंदिर। ४. किसी महापुरुष की समाधि।
पुं० [?] एक प्रकार का पटसन जिससे रस्सियाँ बनती हैं।

देवराज—पुं० [ष० त०] देवताओं के राजा, इंद्र।

देव-राज्य—पुं० [ष० त०] देवताओं का राज्य, स्वर्ग।

देव-रात—पुं० [तृ० त०] १. देवताओं द्वारा रक्षित राजा परीक्षित। २. शुनःक्षेप का वह नाम जो विश्वामित्र के आश्रम में पड़ा था। ३. याज्ञवल्क्य ऋषि के पिता का नाम। ४. निमि के वंश के एक राजा। ५. एक प्रकार का सारस।

देवरानी—स्त्री० [हिं० देवर] देवर अर्थात् पति के छोटे भाई की स्त्री।
†स्त्री० देवराज इंद्र की पत्नी शची। इंद्राणी।

देवराय†—पुं० =देवराज।

देवरी†—स्त्री० [हिं० देवरा] छोटी-मोटी देवी।

देवर्द्धि—पुं० [सं०] जैनों के एक प्रसिद्ध स्थविर जिन्होंने जैन सिद्धान्त लिपिबद्ध किये थे।

देवर्षि—पुं० [सं० देव-ऋषि ष० त०] देवताओं में ऋषि। जैसे—नारद।

देवल—पुं० [सं० देव√ला (लेना)+क] १. वह ब्राह्मण जो देवताओं पर चढ़ाई हुई चीजों से अपनी जीविका निर्वाह करे। पंडा। २. धार्मिक व्यक्ति। ३. नारद मुनि। ४. एक प्राचीन स्मृतिकार। ५. देवालय। मंदिर। ६. पति का छोटा भाई। देवर।
पुं० [देश०] एक प्रकार का चावल।
स्त्री० दीवार।

देवलक—पुं० [सं० देवल+कन्] =देवल। (दे०)

देव-लता—स्त्री० [मध्य० स०] नवमल्लिका। नेवारी।

देव-लांगुलिका—स्त्री० [सं० देव= व्याकारक लाङ्गूलिक =शूक ब० स०, टाप्] वृश्चिकाली लता।

देवला†—पुं० [हिं० दीवा] [स्त्री० अल्पा० देवली] मिट्टी का छोटा दीया।

देव-लोक—पुं० [ष० त०] स्वर्ग।

देव-वक्त्र—पुं० [ष० त०] अग्नि, जिसके द्वारा देवताओं का भाग उन तक पहुँचता है।

देववती—स्त्री० [सं०] ग्रामणी नामक गंधर्व की कन्या जो सुकेश राक्षस की पत्नी और माल्यवान, सुमाली तथा माली की माता थी।

देव-वधू—स्त्री० [ष० त०] १. देवता की स्त्री। २. देवी। ३. अप्सरा।

देव-वर्णिनी—स्त्री० [सं०] भरद्वाज की कन्या और कुबेर की माता जो विश्रवा मुनि की पत्नी थी।

देव-वर्त्म (न्)—पुं० [ष० त०] आकाश।

देववर्द्धकि—पुं० [ष० त०] विश्वकर्मा।

देव-वर्द्धन—पुं० [सं०] पुराणानुसार राजा देवक का एक पुत्र जो देवकी का भाई और श्रीकृष्ण का मामा था।

देव-वर्ष—पुं० [ष० त०] पुराणानुसार एक द्वीप का नाम।
पुं० = दैव वर्ष।

देव-वल्लभ—वि० [ष० त०] देवताओं को प्रिय लगनेवाला।
पुं० १. केसर। २. सुरपुन्नाग नामक वृक्ष।

देव-वाणी—स्त्री० [ष० त०] १. संस्कृत भाषा जो देवताओं की भाषा कही गई है। २. देवता के मुँह से निकली हुई बात। ३. देवताओं की ओर से होनेवाली आकाशवाणी।

देववात—पुं० [सं०] एक वैदिक ऋषि।

देववायु—पुं० [सं०] बारहवें मनु के एक पुत्र का नाम।

देव-वाहन—पुं० [सं० देव=हवि √वह्+णिच्+ल्यु—अन] अग्नि (जो देवताओं का हव्य उनके पास पहुँचाती है)।

देव-विद्या—स्त्री० [मध्य० स०] निरुक्त।

देव-विसर्ग—पुं० [च० त०] १. देवताओं के लिए विसर्ग या अर्पण करना। २. वह चीज जो देवताओं को समर्पित की गई हो।

देव-विहाग—पुं० [सं० देवविभाग] संगीत में, एक राग जो कल्याण और विहाग अथवा कुछ लोगों के मत से सारंग और पूरबी के योग से बना है।

देव-वृक्ष—पुं० [मध्य० स०] १. मंदार का पौधा। आक। २. गूगुल। ३. सतिवन।

देव-व्रत—पुं० [मध्य० स०] १. कोई धार्मिक संकल्प। २. एक प्रकार का सामगान। ३. [ब० स०] भीष्म पितामह। ४. कार्तिकेय।

देव-शत्रु—पुं० [ष० त०] देवताओं का शत्रु; राक्षस।

देव-शाक—पुं० [सं०] एक संकर राग जो शंकराभरण, कान्हड़ा और मल्लार के योग से बना है।

देव-शिल्पी (ल्पिन्)—पुं० [ष० त०] विश्वकर्मा।

देज-शुनी—स्त्री० [उपमि० स०] देवलोक की कुतिया, सरमा।

देव-शेखर—पुं० [ब० स०] दौने का पौधा। दमनक।

देव-श्रवा (वस्)—पुं० [सं०] १. विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम। २. वसुदेव के एक भाई का नाम।

देव-श्रुत—पुं० [सं० त०] १. ईश्वर। २. नारद ऋषि। ३. शुक्राचार्य के एक पुत्र। ४. एक जिन देव। ५. शास्त्र।

देव-श्रेणी—स्त्री० [ष० त०] १. देवताओं का वर्ग। २. मरोड़-फली। मूर्वा।

देव-श्रेष्ठ—वि० [स० त०] देवताओं में श्रेष्ठ।
पुं० बारहवें मनु के एक पुत्र का नाम।

देव-सखा—पुं० [सं०] उत्तर दिशा का एक पर्वत। (वाल्मीकि रा०)

देव-सत्र—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार का यज्ञ।

देव-सदन—पुं० [ष० त०] १. देवताओं के रहने का स्थान। स्वर्ग। २. देव-मन्दिर।

देव-सद् (-सस्)—पुं० [ष० त०] देवस्थान।

देव-सभा—स्त्री० [ष० त०] १. देवताओं की सभा या समाज। २. सुधर्मा नाम का वह सभास्थल जो मय दानव ने अर्जुन और युधिष्ठिर के लिए बनाया था। ३. राज-सभा। ४. जूआ खेलने का स्थान।

देव-समाज—पुं० [ष० त०] १. देवताओं का समाज। २. सुधर्मा नाम का सभास्थल।

देवसरि(त्)—स्त्री० [ष० त०] गंगा।

देव-सर्षप—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार की सरसों।

देवसहा—स्त्री० [सं० देव√सह् (सहना)+अच्–टाप्] सफेद फूलोंवाला दंडोत्पल।

देवसाक—पुं० =देवशाक (राग)।

देवसार—पुं० [सं०] संगीत में, इंद्रताल के छः भेदों में से एक।

देवसावर्णि—पुं० [सं०] भागवत के अनुसार तेरहवें मनु।

देव-सृष्टा—स्त्री० [च० त०] मदिरा। शराब।

देव-सेना—स्त्री० [ष० त०] १. देवताओं की सेना। २. देवताओं के सेनापति स्कंद की पत्नी जो सावित्री के गर्भ से उत्पन्न प्रजापति की कन्या मानी तथा मातृकाओं में श्रेष्ठ कही गई है।

देव-सेनापति—पुं० [ष० त०] कार्तिकेय। स्कंद।

देव-स्थान—पुं० [ष० त०] १. देवताओं के रहने की जगह या स्थान। २. देवमन्दिर। ३. एक ऋषि जिन्होंने पांडवों को वनवास के समय उपदेश दिया था।

देवस्व—पुं० [ष० त०] १. वह संपति जो किसी देवता को अर्पित की गई हो और उसकी संपत्ति मानी जाती हो। २. यज्ञ करनेवाले धर्मात्मा का धन।

देवहंस—पुं० [देश०] हंसों की एक जाति।

देवहरा†—पुं० [देव+सं० घर] देवालय। मंदिर। उदा०—गिरिस देव हरै उतरा सोई।—नूर मुहम्मद।

देवहरिया†—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की नाव।

देवहा—स्त्री० [सं० देववहा] सरयू नदी।
पुं० [?] एक प्रकार का बैल।

देवहूति—स्त्री० [सं०] १. देवताओं का आवाहन। २. कर्द्दम मुनि की पत्नी जो स्वयंभुव मनु की कन्या थी।

देव-हेति—स्त्री० [ष० त०] दिव्य अस्त्र। देवास्त्र।

देवह्रद—पुं० [सं०] एक सरोवर जो श्रीपर्वत पर स्थित माना गया है।

देवांगना—स्त्री० [देव-अंगना ष०त०] १. देवता की स्त्री। २. स्वर्ग में रहनेवाली स्त्री। ३. अप्सरा।

देवांतक—पुं० [देव-अंतक ष० त०] रावण का एक पुत्र जिसे हनुमान् ने युद्ध में मारा था।

देवांध (स्)—पुं० [देव-अंधस् ष०त०] १. अमृत। २. देवता का नैवेद्य या भोग।

देवांश—पुं० [देव-अंश ष०त०] १. किसी वस्तु का वह अंश जो देवताओं को समर्पित किया गया हो अथवा किया जाना चाहिए। २. ईश्वर का अंशावतार।

देवा—स्त्री० [सं० देव+टाप्] १. पद्मचारिणी लता। २. पटसन।
*पुं० =देव।
†वि० [हिं० देना] देनेवाला। देवैया।

देवाक्रीड़—पुं० [देव-आक्रीड ष०त०] देवताओं और इंद्र का बगीचा, नंदनवन।

देवागार—पुं० [देव-आगार ष०त०] १. देवताओं के रहने का स्थान; स्वर्ग। २. देवालय। मंदिर।

देवाजीव—पुं० [सं० देव,आ√जीव् (जीना)+अच्] =देवाजीवी।

देवाजीवी (विन्)—पुं० [सं० देव-आ√जीव्+णिनि] १: वह जिसकी जीविका देवताओं के द्वारा या उनके सहारे चलती हो। २. पंडा या पुरोहित।

देवाट—पुं० [सं० देव-आट ब० स०] हरिहर-क्षेत्र तीर्थ का पुराना नाम।

देवातिदेव—पुं० [सं० देव-अति√दिव+अच्] विष्णु।

देवात्मा (त्मन्)—पुं० [देव-आत्मन् ब०स०] १. वह जिसकी आत्मा देवताओं की तरह पवित्र और शुद्ध हो। २. अश्वत्थ। पीपल।

देवाधिदेव—पुं० [सं० देव-अधिदेव ष०त०] १. विष्णु। २. शिव।

देवाधिप—पुं० [सं० देव-अधिप ष०त०] १. परमेश्वर। २. देवताओं के अधिपति, इन्द्र। ३. द्वापर के एक राजा।

देवान†—पुं० =दीवान।

देवानां-प्रिय—वि० [सं० अलुक् स०] १. देवताओं को प्रिय। २. बड़ों के लिए प्रयुक्त होनेवाला एक आदर-सूचक विशेषण पद जो उनके परम भाग्यशाली और श्रेष्ठ होने का सूचक होता है। ३. मूर्ख। बेवकूफ।
पुं० बकरा, जो देवताओं को बलि चढ़ाया जाता था।

देवाना†—पुं० [?] एक प्रकार की चिड़िया।
वि० =दीवाना।
स० =दिलाना।

देवानीक—पुं० [देव-अनीक ष०त०] १. देवताओं की सेना। २. सावर्णि मनु के एक पुत्र का नाम। ३. सगर के वंशज एक राजा।

देवानुग—पुं० [देव-अनुग ष०त०] १. देवता का सेवक। २. विद्याधर, यक्ष आदि उपदेव जो देवताओं का अनुगमन करते हैं।

देवानुचर—पुं० [देव-अनुचर ष०त०] =देवानुग।

देवानुयायी (यिन्)—पुं० [देव-अनुयायिन् ष०त०] =देवानुग।

देवान्न—पुं० [देव-अन्न ष०त०] हवि। चरु।

देवाब—स्त्री० [देश०] धौंमर, गोंद, चूने, बीझन आदि के योग से बनाई जानेवाली एक तरह की लेई।

देवाभरण—पुं० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

देवाभियोग—पुं०[देव-अभियोग ष० त०] जैनों के अनुसार वह स्थिति जिसमें कोई देवता शरीर में प्रविष्ट होकर अनुचित कामों की ओर प्रवृत्त करता है।

देवाभीष्टा—स्त्री०[देव-अभीष्टा ष०त०] पान की लता। तांबूली।

देवायतन—पुं०[देव-आयतन ष०त०] १. देवता के रहने का स्थान; स्वर्ग। २. देवालय। मंदिर।

देवायु (स्)—स्त्री०[देव-आयुस् ष०त०] देवताओं का जीवनकाल जो बहुत लंबा होता है।

देवायुध—पुं०[देव-आयुध ष०त०]१. देवताओं का अस्त्र। दिव्य-अस्त्र। २. इन्द्र-धनुष।

देवारण्य—पुं०[देव-अरण्य ष०त०]१. देवताओं का वन या उपवन। २. एक प्राचीन तीर्थ। (महाभारत)

देवाराधन—पुं० [देव-आराधन ष०त०] देवताओं का आराधन, पूजन आदि।

देवारि—पुं०[देव-अरि ष०त०] देवताओं के शत्रु, असुर।
†स्त्री०=दीवार।

देवारी—स्त्री०[सं० दावाग्नि] कछारों में दिखाई देनेवाला लुक। छलावा। उदा०—जानहुँ मिरिग देवारी मोहे।—जायसी।
†स्त्री०=दीवाली।

देवार्पण—पुं०[देव-अर्पण च०त०] देवताओं के निमित्त किया जानेवाला अर्पण या उत्सर्ग।

देवार्ह—पुं०[सं०देव√अर्ह् (योग्य होना)+अण्] सुरपर्ण। माचीपत्र।

देवाल—वि०[हिं० देना] १. देनेवाला। देवैया। २. दूसरों को कुछ देने की प्रवृत्ति रखनेवाला।
†स्त्री०=दीवार।

देवालय—पुं०[देव-आलय ष०त०] १. देवताओं के रहने का स्थान; स्वर्ग। २. वह स्थान जहाँ किसी देवता की प्रतिमा प्रतिष्ठित हो। मंदिर।

देवाला—पुं० १. दिवाला। २. देवालय।

देवाली—स्त्री०=दीवाली।

देवा-लेई—स्त्री०[हिं० देना+लेना]१. किसी को कुछ देने और उससे कुछ लेने की क्रिया या भाव। २. बराबर परस्पर कुछ लेते-देते रहने का बरताव। लेन-देन का व्यवहार।

देवावसथ—पुं०[देव-आवसथ ष०त०]१. देवता के रहने का स्थान। २. मंदिर।

देवावास—पुं०[देव-आवास ष०त०]१. देवता का मंदिर। २. पीपल का पेड़।

देवावृध्—पुं० [सं० देव√वृध् (बढ़ना)+क्विप्] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

देवाश्व—पुं०[देव-अश्व ष०त०] इंद्र का घोड़ा। उच्चैःश्रवा।

देवाहार—पुं०[देव-आहार ष०त०]१. देवताओं का आहार या भोजन। २. अमृत।

देविक—वि०[सं० दैविक] १. देवताओं में होनेवाला। देवता-संबंधी। २. देवताओं द्वारा होनेवाला। दैवी। ३. दिव्य। स्वर्गीय।
पुं० धर्मात्मा।

देविका—स्त्री० [सं०√दिव्+ण्वुल्—अक, टाप, इत्व] घाघरा नदी।

देवी—स्त्री० [सं०देव+ङीप्] १. स्त्री देवता। २. देवता की पत्नी। ३. दुर्गा, सरस्वती, पार्वती आदि स्त्री-देवताओं का नाम। ४. श्रेष्ठ गुणोंवाली और सुशीला स्त्री। ५. प्राचीन भारत में राजा की वह पत्नी जिसका राजा के साथ अभिषेक होता था। पटरानी। ६. स्त्री के लिए एक आदरसूचक संज्ञा या संबोधन। ७. स्त्रियों के नाम के अंत में लगनेवाला शब्द। जैसे—शीला देवी, कृष्णा देवी। ८. सफेद इंद्रायन। ९. असबर्ग। पृक्का। १०. अड़हुल। आदित्यभक्ता। ११. लिंगनी नाम की लता। पँचगुरिया। १२. वन-ककोड़ा। १३. शालपर्णी। सरिवन। १४. महाद्रोणी। बड़ा गूमा। १५. पाठा। १६. नागरमोथा। १७. हरीतकी। हर्रे। १८. अलसी। तीसी। १९. श्यामा नाम की चिड़िया। २० सूर्य की संक्रांति।
पुं०[सं० देविन्] जूआ खेलनेवाला व्यक्ति। जुआरी।
स्त्री०[अं० डेविट्स]१. लकड़ी का वह चौखटा जिसमें दो खड़े खंभों के ऊपर आड़ा बल्ला लगा रहता है। २. जहाज के किनारे पर बाहर की ओर निकले या झुके हुए वे खंभे जिनमें घिरनियाँ लगी होती हैं।

देवीकोट—पुं०[सं०] बाणासुर की राजधानी। शोणितपुर।

देवी-गृह—पुं०[ष०त०]१. देवी या भगवती का मंदिर। २. राज-प्रासाद में राज-महिषी के रहने का निजी कमरा।

देवीदह—पुं०[सं०]१. देवी का कुंड। २. देवी का स्थान।

देवी-पुराण—पुं०[मध्य०स०] एक उपपुराण जिसमें दुर्गा का माहात्म्य वर्णित है।

देवीबीज—पुं०[सं० देवीवीर्य] गंधक।

देवी-भागवत—पुं०[मध्य०स०] एक पुराण जिसमें भगवती दुर्गा का माहात्म्य वर्णित है। कुछ लोग इसे उपपुराण मानते हैं।

देवी-भोया—पुं० [हिं० देवी+भोयना=भुलाना] वह ओझा जो देवी का ही उपासक हो और उसी के द्वारा सब काम करता-कराता हो।

देवी-वीर्य—पुं०[ष०त०] गंधक।

देवी-सूक्त—पुं० [मध्य०स०] ऋग्वेद शाकल संहिता का एक देवी विषयक सूक्त।

देवेंद्र—पुं०[देव-इंद्र ष०त०] देवताओं के अधिपति, इंद्र।

देवेज्य—पुं०[देव-इज्य ष०त०] बृहस्पति।

देवेश—पुं०[देव-ईश ष०त०] देवताओं के राजा इंद्र। २. ईश्वर। ३. शिव। ४. विष्णु।

देवेशय—पुं०[सं० देवे√शी (सोना)+अच्, अलुक् स०]१. परमेश्वर। २. विष्णु।

देवेशी—स्त्री०[देव-ईश ष०त०, ङीप्]१. पार्वती। २. देवी।

देवेष्ट—वि०[देव-इष्ट ष०त०] जिसे देवता चाहते हों।
पुं० गुग्गुल।

देवेष्टा—स्त्री०[सं० देवेष्ट+टाप्] बड़ा बिजौरा नींबू।

देवैया—वि०[हिं० देना]१. देनेवाला। २. दूसरों को कुछ देने की प्रवृत्ति रखनेवाला।

देवोत्तर—पुं०[देव-उत्तर ष०त०?]देवता को अर्पित अथवा उसके निमित्त उत्सर्ग की हुई संपत्ति।

देवोत्थान—पुं०[देव-उत्थान ष०त०] कार्तिक शुक्ला एकादशी (विष्णु का शेष की शय्या पर से सोकर उठना, जो पर्व का दिन माना जाता है)।

देवोद्यान—पुं०[देव-उद्यान ष०त०] नंदन, चैत्ररथ, वैभ्राज और सर्वतोभद्र देवताओं के उद्यान।

देवोन्माद—पुं०[सं०] एक प्रकार का उन्माद जिसमें रोगी, पवित्रता पूर्वक रहता है, सुगंधित फूलों की मालाएँ पहनता है और प्रायः मन्दिरों में दर्शन और परिक्रमा करता फिरता है।

देवौक (स्)—पुं०[देव-ओकस् ष०त०] देवताओं का वासस्थान।

देव्युन्माद—पुं०[सं०] एक प्रकार का उन्माद जिसमें शरीर सूख जाता है, मुँह और हाथ टेढ़े हो जाते हैं और स्मरण-शक्ति जाती रहती है।

देश—पुं०[सं०√दिश् (बताना)+अच्]१. सब ओर फैला हुआ वह विस्तृत अवकाश जिसके अंतर्गत दिखाई देनेवाली सभी चीजें रहती हैं। २. उक्त का कोई परिमित या सीमित अंश या भाग। जैसे—तारों का देश। ३. जगह। स्थान। ४. किसी अंग या पदार्थ के आस-पास का स्थान। जैसे—उदर देश, कटि देश, ललाट देश। ५. कोई विशिष्ट भू-भाग या खंड जिसका प्राकृतिक या कृत्रिम आधारों पर विभाजन हुआ हो तथा जहाँ कुछ विशिष्ट जातियाँ, कुछ विशिष्ट भाषा-भाषी तथा कुछ विशिष्ट परंपराओं और संस्कृतियोंवाले लोग रहते हैं। ६. उक्त लोग। ७. किसी का अथवा उसके पूर्वजों का जन्म स्थान। जैसे—छुट्टियों में वे देश चले जाते, हैं। ८. संगीत में संपूर्ण जाति का एक राग। ९. जैन शास्त्रानुसार चौथा पंचक जिसके द्वारा अर्थानुसंधानपूर्वक तपस्या अर्थात् गुरु, जन, गुहा, श्मशान, और रुद्र की वृद्धि होती है।

देशक—पुं०[सं०√दिश्+ण्वुल्—अक] १. देश का शासक। २. मार्ग दर्शक। ३. उपदेश करनेवाला। उपदेशक।

देश-कली—स्त्री०[सं०] एक रागिनी जिसमें गांधार, कोमल और बाकी सब स्वर शुद्ध लगते हैं।

देशकारी—स्त्री० [सं०] संगीत में, संपूर्ण जाति की एक रागिनी जो मेघराग की भार्या कही गई है। यह वर्षाऋतु में दिन के पहले पहर में गाई जाती है।

देशगांधार—पुं०[सं०] एक राग जो सबेरे एक दंड से पाँच दंड तक गाया जाता है।

देश-चरित्र—पुं० [ष०त०] देश की प्रथा। रवाज। (कौ०)

देश-चारित्र—पुं० [ष०त०] जैन शास्त्रानुसार गार्हस्थ्य धर्म जिसके बारह भेद हैं।

देशज—वि०[सं० देश√जन् (उत्पत्ति)+ड] (शब्द) जो देश में ही उपजा या बना हो। जो न तो विदेशी हो और न किसी दूसरी भाषा के शब्द से बना हो।

पुं० ऐसा शब्द जो न संस्कृत हो, न संस्कृत का अपभ्रंश हो और न किसी दूसरी भाषा के शब्द से बना हो, बल्कि किसी प्रदेश के लोगों ने बोल-चाल में यों ही बना लिया हो।

विशेष—यह शब्दों के तीन प्रकारों या विभागों में से एक है। शेष दो विभाग तत्सम और तद्भव हैं।

देशज्ञ—पुं० [सं० देश√ज्ञा (जानना)+क] किसी देश की दशा, रीति, नीति आदि सब बातें जाननेवाला।

देश-धर्म—पुं० [ष०त०] किसी विशिष्ट देश की रीति, नीति, आचार, व्यवहार आदि।

देशना—स्त्री०[सं०]१. उपदेश। (जैन) २. कोई ऐसी बात जिसके अनुसार कोई काम करने को कहा जाय। हिदायत।

देश-निकाला—पुं० [हिं० देश+निकालना]१. देश से निकालने की क्रिया या भाव। २. अपराधी विशेषतः देशद्रोही को दिया जानेवाला वह दंड जिसमें वह देश के बाहर निकाल दिया जाता है।

क्रि० प्र०—देना।—मिलना।

देश-पति—पुं० [ष०त०]१. देश का स्वामी; राजा। २. देश का प्रधान शासक। राष्ट्रपति।

देश-पाली—स्त्री०[सं०] देशकारी (रागिनी)।

देश-पीड़न—पुं०[ष०त०] सारी प्रजा पर होनेवाला अत्याचार। राष्ट्र को कष्ट पहुँचाना। (कौ०)

देश-भक्त—पुं०[ष०त०] वह व्यक्ति जिसे अपना देश परम प्रिय हो तथा जो उसकी स्वतन्त्रता और स्वार्थों को सर्वोपरि समझता हो। ऐसा व्यक्ति किसी अच्छे उद्देश्य या लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सब-कुछ उत्सर्ग करने को प्रस्तुत रहता है।

देश-भक्ति—स्त्री०[ष०त०] देशभक्त होने की अवस्था, गुण या भाव।

देश-भाषा—स्त्री०[ष०त०] वह भाषा जो किसी विशिष्ट देश या प्रांत में ही बोली जाती हो। जैसे—पंजाबी, बँगला, मराठी आदि।

देश-मल्लार—पुं०[सं०] संपूर्ण जाति का एक राग।

देशराज—पुं०[सं०] राजा परमाल (प्रमर्दि देव) के एक सामंत जो आल्हा और ऊदल के पिता थे।

देशस्थ—वि०[सं० देश√स्था (ठहरना)+क] १. देश में स्थिति। २. देश में रहनेवाला।

पुं० महाराष्ट्र ब्राह्मणों का एक भेद।

देशांकी—स्त्री०[?]एक प्रकार की रागिनी।

देशांतर—पुं०[सं० देश-अंतर; मयू० स०] [वि० देशांतरी, भू० कृ० देशांतरित]१. अपने अथवा प्रस्तुत देश से भिन्न, अन्य या दूसरा देश। परदेश। विदेश। २. दे० 'देशांतरण'। ३. भूगोल में, याम्योत्तर रेखा के विचार से निश्चित की हुई किसी स्थान की पूर्वी या पश्चिमी दूरी जो अक्षांश की तरह संख्या-सूचक अंशों में बताई जाती है। (लांगी-च्यूड)

देशांतरण—पुं०[सं० देशांतर+णिच्+ल्युट्—अन]१. एक देश को छोड़कर दूसरे देश में जाना तथा उसमें जाकर रहना। २. राज्य की ओर से दिया जानेवाला निर्वासन का दंड।

देशांतर सूचक यंत्र—पुं०[सं०] किसी स्थान का देशांतर सूचित करनेवाला एक प्रकार का यंत्र जिसका उपयोग मुख्यतः समुद्री जहाजों पर देशांतर जानने के लिए किया जाता है। (कोनोमीटर)

देशांतरित—भू० कृ०[सं० देशांतर+णिच्+क्त]१. जो किसी दूसरे देश में जा बसा हो। २. जिसे देश-निकाले का दंड मिला हो। ३. जो किसी दूसरे देश में पहुँचा या भेज दिया गया हो।

देशांतरित-पण्य—पुं०[कर्म०स०] दूर देश से आया हुआ माल। विदेशी माल। (कौ०)

देशांतरी (रिन्)—वि०, पुं०[सं० देशांतर+इनि] विदेशी।

देशांश—पुं०=देशांतर।

देशाका—पुं०[सं०] एक प्रकार की रागिनी।

देशाक्षी—स्त्री०[सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

देशाखी—स्त्री०[सं०] षाड़व जाति की एक रागिनी जो हनुमत् के मत से हिंडोल की दूसरी रागिनी है।

देशाचार—पुं०[सं० देश-आचार ष०त०] किसी विशिष्ट देश के रीति-रवाज।

देशाटन—पुं०[सं० देश-अटन स०त०] भिन्न-भिन्न देशों में घूम-घूमकर की जानेवाली यात्रा या पर्यटन।

देशावकाशिक (व्रत)—पुं० [सं०] जैन शास्त्रानुसार, एक प्रकार का शिक्षा-व्रत जिसमें स्वार्थ के लिए सब दिशाओं में आने-जाने के जो प्रतिबंध हैं उनको और भी कठोरता तथा दृढ़ता से पालन किया जाता है।

देशावली—स्त्री०[सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

देशिक—वि०[सं० देश+ठन्—इक] किसी विशिष्ट देश या प्रदेश से संबंध रखने या उसकी सीमा में होनेवाला। (इन्टरनल)
पुं० पथिक। बटोही।

देशित—भू० कृ०[सं० √दिश्+णिच्+क्त]१. जिसे आदेश दिया गया हो। आदिष्ट। २. जिसे उपदेश दिया गया हो। उपदिष्ट। ३. जिसे कोई बात बतलाई या समझाई गई हो।

देशिनी—स्त्री० [सं०√दिश्+णिनि—ङीप्] १. सूची। सूई। २. तर्जनी उँगली।

देशी—वि०[सं० देशीय]१. देश-संबंधी। देश का। जैसे—देशी भाषा। २. किसी व्यक्ति की दृष्टि से, स्वयं उसके देश में बनने, रहने या होनेवाला। स्वदेशी। जैसे—देशी माल।
पुं०१. संगीत के दो भेदों में से एक (दूसरा भेद 'मार्गी' कहलाता है)। २. एक प्रकार का ताण्डव नृत्य जिसमें अभिनय कम और अंग-विक्षेप अधिक होता है।
स्त्री० एक रागिनी जो हनुमत् के मत से दीपक राग की भार्या है और जो ग्रीष्मकाल में मध्याह्न के समय गाई जाती है।

देशी-राज्य—पुं० दे० 'रियासत'।

देशीय—वि०[सं० देश+छ—ईय] देश में होने अथवा उसके भीतरी भागों से संबंध रखनेवाला।

देश्य—वि०[सं०]१. किसी देश, प्रान्त या स्थान से संबंध रखने या उसमें होनेवाला। देशी। २. प्रान्तीय या स्थानीय। ३. [√दिश्+ण्यत्] (तथ्य) जो प्रमाणित किया जाने को हो।
पुं०१. देश का निवासी। २. ऐसा गवाह जिसने कोई घटना अपनी आँखों से देखी हो। प्रत्यक्षदर्शी। ३. न्याय में ऐसा कथन या तथ्य जो प्रमाणित किया जाने को हो। पूर्व-पक्ष।

देसंतर†—पुं०[सं० देशान्तर] दूसरा देश। विदेश।

देस†—पुं० देश।

देसकार†—पुं०=देशकार।

देसवाल—वि०[हिं० देस+वाला] स्वदेश का, दूसरे देश का नहीं (मनुष्य के लिए)। जैसे—देसवाल बनिया।
पुं० एक प्रकार का पटसन।

देसावर—पुं०[सं० देश+अपर] [वि० सावरी] अपने देश से भिन्न कोई दूसरा देश।

देसावरी—वि०[हिं० देसावर] देसावर अर्थात् अन्य देश का।

देसी†—वि०=देशी।

देहंभर—वि०[सं० देह√भृ (पोषण)+खच्, मुम्]१. अपने ही शरीर का पोषण करनेवाला। २. परम स्वार्थी।

देह—स्त्री०[सं०√दिह (वृद्धि)+घञ्] [वि० देही]१. शरीर। तन। बदन।
मुहा०—**देह छोड़ना या त्यागना**=मृत्यु होना। **देह धरना या लेना**=जन्म लेकर शरीर धारण करना। **देह बिसरना**=तन-बदन की सुध न रहना।
२. शरीर का कोई अंग। ३. जिंदगी। जीवन। ४. देवता आदि की मूर्ति। विग्रह।
पुं०[फा०]गाँव। खेड़ा।
विशेष—'देहात' वस्तुतः इसी 'देह' का बहु० है।

देहकान—पुं०=दहकान।

देहकानी—वि०=दहकानी।

देह-त्याग—पुं०[ष०त०] मरण। मृत्यु।

देहद—पुं०[सं० देह√दै (शोधन)+क] पारा।

देह-धारक—वि०[ष०त०] शरीर को धारण करनेवाला। देह-धारी।
पुं० अस्थि। हड्डी।

देह-धारण—पुं०[ष०त०]१. शरीर प्राप्त करना। जन्म लेना। २. शरीर प्राप्त होने पर उसका पालन और रक्षा करना। शरीर के धर्मों का निर्वाह करना।

देहधारी (रिन्)—वि०[सं० देह√धृ (धारण)+णिनि] [स्त्री० देहधारिणी]१. जन्म लेकर शरीर धारण करनेवाला। २. जिसे शरीर हो। शरीरी।
पुं० जीव। प्राणी।

देहधि—पुं०[सं० देह√धा+कि]चिड़ियों का पंख। डैना।

देहधृज्—पुं०[सं०देह√धृज् (संचरण)+क्विप्] वायु, जिससे शरीर बना रहता है।

देहनी—पुं०[सं०]१. जीवित व्यक्ति। प्राणी। २. मनुष्य।
स्त्री० पत्नी। (राज०)

देह-पात—पुं०[ष०त०]देह अर्थात् शरीर का नाश। मृत्यु।

देहभुज्—पुं०[सं० देह√भुज्(भोगना)+क्विप्] १. जीव। प्राणी। २. आत्मा। ३. सूर्य। ४. मरण। मृत्यु।

देहभृत्—पुं०[सं० देह√भृ (भरण) +क्विप्] जीव। प्राणी।

देह-यात्रा—स्त्री०[च० त०] १. भोजन। भरण-पोषण आदि ऐसे काम जिनसे शरीर चलता रहे। २. [ष०त०] मृत्यु। मौत।

देहर—स्त्री०[सं० देवह्रद] नदी के किनारे की वह नीची भूमि जो बाढ़ के समय जलमग्न रहती है।

देहरा—पुं०[हिं० देव+घर] [स्त्री० अल्पा० देहरी] देवालय। मंदिर।
†पुं०=देह (शरीर)।

देहरि*—स्त्री० =देहली।

देहरी—स्त्री०=देहली।

देहला—स्त्री०[सं०]मदिरा। शराब।

देहली—स्त्री०[सं० देह√ला (ग्रहण)+कि—ङीष्]१. दीवार में लगे हुए दरवाजे में चौखट के नीचे की लकड़ी। दहलीज। २. उक्त

लकड़ी के आस-पास का स्थान अथवा वह स्थान जहाँ पर उक्त लकड़ी रहती है।

देहली-दीपक—पुं०[मध्य० स०]१. देहरी पर रखा हुआ दीपक जो भीतर बाहर दोनों ओर प्रकाश फैलाता है। २. उक्त के आधार पर प्रचलित एक न्याय का सिद्धांत जिसका प्रयोग ऐसे अवसरों पर होता है, जहाँ एक ही चीज या बात दोनों पक्षों पर प्रकाश डालती हो। ३. साहित्य में, एक अर्थालंकार जिसमें किसी एक बीचवाले शब्द का अर्थ पहले और बाद के अर्थात् दोनों पदों में समान रूप से लगता है। जैसे—'हम न आप' में का 'न' जिसके कारण पद का अर्थ होता है—न हम और न आप।

देहवंत—वि०[सं० देहवान् का बहु०] जिसका देह हो। शरीरधारी।

देहवान् (वत्)—वि०[सं०देह+मतुप्] शरीरधारी।
पुं० जीव। प्राणी।

देह-शंकु—पुं०[सं०] पत्थर का खंभा।

देह-संचारिणी—स्त्री० [सं० देह-सम्√चर् (गति) +णिनि—ङीप्] कन्या। लड़की।

देह-सार—पुं०[ष०त०] शरीर में की मज्जा नामक धातु।

देहांत—पुं०[देह-अंत ष०त०] देह का अंत। शरीरांत। मृत्यु।

देहांतर—पुं०[देह-अंतर मयू० स०]एक शरीर छोड़ने पर प्राप्त होनेवाला दूसरा शरीर। जन्मांतर।

देहांतरण—पुं०[सं० देहांतर+णिच्+ल्युट्—अन][भू० कृ० देहांतरित] आत्मा का एक शरीर छोड़कर दूसरे शरीर में जाना। नया देह या शरीर धारण करना।

देहात—पुं०[फा० देह (गाँव) का बहु०] [वि० देहाती] १. गाँव। ग्राम। २. देश के वे विभाग जिनमें अनेक गाँव हों।

देहाती—वि० [हिं० देहात] [भाव० देहातीपन] १. देहात-संबंधी। २. देहात अर्थात् गाँव में रहनेवाला। ३. उक्त लोगों की प्रकृति, रुचि, व्यवहार आदि के अनुरूप। जैसे—देहाती पहनावा या रहन-सहन।
पुं० गँवार।

देहातीत—वि०[सं० देह-अतीत द्वि० त०] १. जो शरीर से परे या स्वतन्त्र हो। २. जिसे देह का अभिमान, ममता आदि न हो।

देहातीपन—पुं०[हिं० देहाती+पन (प्रत्य०)] देहाती होने की अवस्था या भाव।

देहात्म-ज्ञान—पुं०[ष०त०] देह और आत्मा के अभेद का ज्ञान।

देहात्म-वाद—पुं०[ष०त०] एक दार्शनिक सिद्धान्त जिसके अनुसार देह को ही आत्मा मानते हैं और देह से भिन्न आत्मा नाम का कोई पदार्थ नहीं मानते।

देहात्मवादी (दिन्)—पुं०[सं० देहात्मवाद+इनि] देहात्मवाद का अनुयायी और समर्थक।

देहात्मा (त्मन्)—पुं०[सं० देह-आत्मन् द्व०स०] देह और आत्मा।

देहाध्यास—पुं०[देह-अध्यास ष०त०] देह को ही आत्मा समझने का भ्रम।

देहावरण—पुं०[देह-आवरण ष०त०]१. शरीर पर पहनने के या उसे ढकने के कपड़े। २. जिरह। बक्तर।

देहावसान—पुं०[देह-अवसान ष०त०] देह का अवसान अर्थात् अंत या नाश। देहांत। मृत्यु।

देहिका—स्त्री०[सं०√दिह्+ण्वुल्—अक, टाप् इत्व] एक प्रकार का कीड़ा।

देही (हिन्)—वि०[सं० देह+इनि]देह को धारण करनेवाला। शरीरी।
पुं०जीवात्मा। आत्मा।

देहेश्वर—पुं०[देह-ईश्वर ष०त०] आत्मा।

देहोद्भव, देहोद्भूत—वि०[देह-उद्भव ब०स०, देह-उद्भूत पं० त०] १. देह से उद्भूत या प्राप्त होनेवाला। २. जन्मजात।

दैं†—अव्य०[अनु०]से। (किसी क्रिया के प्रकार का सूचक) जैसे—चपाक दैं।

दैंती—स्त्री०=दराँती।

दैअ*—पुं०=दैव।

दैआ*—स्त्री०=दैया।

दैउ*—पुं०=दैव।

दैजा—पुं०=दायजा (दहेज)।

दैतारि*—पुं०=दैत्यारि।

दैतेय—वि० [सं० दिति+ढक्—एय]दिति से उत्पन्न।
पुं० १. दिति का पुत्र। दैत्य। राक्षस। २. राहु का एक नाम।

दैत्य—पुं० [सं० दिति+ण्य] [स्त्री० दैत्या] १. कश्यप के वे पुत्र जो दिति नाम्नी स्त्री से पैदा हुए थे। असुर। राक्षस। २. लाक्षणिक रूप में, बहुत बड़े डील-डौलवाला और कुरूप या भद्दा आदमी। ३. राक्षसों के आकार-प्रकार और रंग-ढंग का व्यक्ति। ४. दुराचारी और नीच। ५. लोहा।

दैत्य-गुरु—पुं० [ष० त०] दैत्यों के गुरु; शुक्राचार्य।

दैत्यज—वि० [सं० दैत्य√जन् (उत्पत्ति)+ड [स्त्री० दैत्यजा] दैत्य से उत्पन्न।
पुं० दैत्य का वंशज।

दैत्य-देव—पुं० [ष० त०] १. दैत्यों के देवता। २. वरुण। ३. वायु।

दैत्यद्वीप—पुं० [सं०] गरुड़ का एक पुत्र। (महाभारत)

दैत्य-धूमिनी—स्त्री० [सं०] हथेलियों के पृष्ठ भागों को मिलाने तथा उँगलियों को एक दूसरे में फँसाने पर बननेवाली एक मुद्रा। (तंत्र)

दैत्य-पुरोधा (धस्)—पुं० [सं० ष० त०] दैत्यों के पुरोहित शुक्राचार्य।

दैत्य-माता (तृ)—स्त्री० [ष० त०] दैत्यों की माता, दिति।

दैत्य-मेदज्—पुं० [दैत्य-मेद ष० त०, दैत्यमेद√जन् (उत्पत्ति)+ड] १. पृथ्वी। २. गुग्गुल। गूगुल।

दैत्य-युग—पुं० [ष० त०] दैत्यों का युग जिसकी अवधि देवताओं के बारह हजार बरसों और मनुष्यों के चार युगों के बराबर मानी गई है।

दैत्य-सेना—स्त्री० [सं०] प्रजापति की कन्या जो देवसेना की बहन थी, जिसका विवाह केशव दानव से हुआ था।

दैत्या—स्त्री० [सं० दैत्य+टाप्] १. दैत्य जाति की स्त्री। २. कपूर कचरी। मुरा। ३. चंदौषधि। ४. मदिरा। शराब।

दैत्यारि—पुं० [दैत्य-अरि ष० त०] १. दैत्यों के शत्रु; विष्णु। २. देवता। ३. इंद्र।

दैत्याहोरात्र—पुं० [दैत्य-अहोरात्र ष० त०] दैत्यों का एक दिन और एक रात जो मनुष्यों के एक वर्ष के बराबर कहा गया है।

दैत्येंद्र—पुं० [दैत्य-इंद्र ष० त०] १. दैत्यों का राजा। २. गंधक।

दैत्येज्य—पुं० [दैत्य-इज्य ष० त०] दैत्यों के गुरु; शुक्राचार्य।

दैनंदिन—वि० [सं० दिनंदिन+अण् नि० सिद्धि] [स्त्री० दैनंदिनी] प्रतिदिन होनेवाला। नित्य का।
क्रि० वि० १. प्रतिदिन। नित्य। २. दिनों-दिन। लगातार।
पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्रकार का प्रलय जो ब्रह्मा के पचास वर्ष बीतने पर होता है। मोहरात्रि।

दैनंदिनी—वि० [सं० दैनंदिन] दैनिक।
स्त्री०=दैनिकी (देखें)।

दैन—वि० [सं० दिन+अण्] दिन संबंधी। दिन का।
पुं० [सं० दीन+अण्] दीन होने की अवस्था या भाव। दीनता।
†स्त्री०=देन।
†प्रत्य० [सं० दायिन्] देनेवाला। जैसे—सुखदैन।

दैनिक—वि० [सं० दिन+ठञ्–इक] १. दिन-संबंधी। दिन का। जैसे—दैनिक समाचार। २. एक दिन में होनेवाला। ३. प्रति दिन या हर रोज किया जाने या होनेवाला। जैसे—दैनिक चर्या। ४. नित्य या बराबर होता रहनेवाला। रोज-रोज का। जैसे—दैनिक चिंता, दैनिक झगड़ा।
पुं० १. एक दिन काम करने का पारिश्रमिक, मजदूरी या वेतन। २. वह समाचार-पत्र जो प्रति दिन या रोज प्रकाशित होता हो। (डेली)

दैनिक-पत्र—पुं० [कर्म० स०] वह समाचार-पत्र जो प्रति दिन या नित्य प्रकाशित होता हो। हर रोज छपनेवाला अखबार।

दैनिकी—स्त्री० [सं० दैनिक+ङीष्] जेब में रखी जानेवाली वह छोटी पुस्तिका जिसमें रोज के किये जानेवाले कामों का उल्लेख होता है। (डायरी)

दैन्य—पुं० [सं० दीन+ष्यञ्] १. दीन होने की अवस्था या भाव। दीनता। २. गरीबी। दरिद्रता। ३. नम्रता। ४. साहित्य में, एक प्रकार का संचारी भाव जिसमें कष्ट, दुःख आदि के कारण मनुष्य कातर, दीन और नम्र हो जाता है।

दैयत†—पुं०=दैत्य।

दैया—पुं० [हिं० दई] दई। दैव।
मुहा०—**दैयन कै**†=दैव दैव करते हुए। बहुत कठिनता से या किसी प्रकार।
†स्त्री० [हिं० दाई] १. माता। माँ। २. दाई।
अव्य० आश्चर्य, भय, दुःख आदि का सूचक शब्द। हे परमेश्वर! (स्त्रियाँ)

दैयागति†—स्त्री०=दैवगति।

दैर—पुं० [फा०] १. वह स्थान जहाँ लोग धार्मिक दृष्टि से पूजा, उपासना आदि करते हों। २. देव-मंदिर। बुतखाना। ३. गिरजा।

दैर्घ्य—पुं० [सं० दीर्घ+ष्यञ्] दीर्घ का भाव। दीर्घता। लंबाई।

दैव—वि० [सं० देव+अण्] [स्त्री० दैवी] १. देवता संबंधी। जैसे—दैव-कार्य। २. देवताओं की ओर से होनेवाला। जैसे—दैव-गति। ३. देवता को अर्पित किया हुआ।
पुं० १. अर्जित शुभ और अशुभ कर्म जो फल देनेवाले होते हैं। प्रारब्ध। होनी। २. विधाता। ईश्वर।
मुहा०—**(किसी को) दैव लगना**=(किसी पर) ईश्वर का कोप होना।
३. आकाश।
मुहा०—**दैव बरसना**=पानी बरसना।
४. योगियों के योग में होनेवाले पाँच प्रकार के विघ्नों में से एक जिसमें योगी उन्मत्तों की तरह आँखें बंद करके चारों ओर देखता है। (मार्कंडेय पु०)

दैव-कृत-दुर्ग—पुं० [सं० दैव-कृत तृ० त०, दैवकृत-दुर्ग कर्म० स०] वह स्थान जो चारों ओर से पर्वतों, नदियों आदि से घिरा होने के कारण सुरक्षित हो।

दैव-कोविद—पुं० [सं० ष० त०] १. देवताओं के विषय की सब बातें जाननेवाला। २. ज्योतिषी। दैवज्ञ।

दैव-गति—स्त्री० [कर्म० स०] १. ईश्वरीय या दैवी घटना। २. भाग्य। प्रारब्ध।

दैवग्य†—पुं० = दैवज्ञ।

दैव-चिंतक—पुं० [ष० त०] ज्योतिषी।

दैवज्ञ—वि० [सं० दैव√ज्ञा (जानना)+क] [स्त्री० दैवज्ञा] दैव-संबंधी सब बातें जाननेवाला।
पुं० १. ज्योतिषी। २. बंगाली ब्राह्मणों की एक जाति या वर्ग।

दैव-तंत्र—वि० [ब० स०] भाग्य पर आश्रित या उसके अधीन रहनेवाला।

दैवत—वि० [सं० देवता+अण्] देवता-संबंधी।
पुं० १. देवता। २. देवता की प्रतिमा या मूर्ति। विग्रह। ३. यास्क मुनि के निरुक्त का तीसरा कांड।

दैवत-पति—पुं० [ष० त०] देवताओं का राजा इंद्र।

दैव-तीर्थ—पुं० [मध्य० स०] उँगलियों के अग्रभाग या नोकें जिनसे आचमन किया जाता है।

दैवत्य—पुं० [सं० देवता+ष्यञ्] देवता।

दैवत्व—पुं० [सं० दैव+त्व] दैव होने की अवस्था, गुण या भाव।

दैव-दुर्विपाक—पुं० [ष० त०] १. ऐसी स्थिति जिसमें होनेवाली खराबी दैव के प्रतिकूल होने पर होती है। २. भाग्य की खोटाई या दोष।

दैव-प्रमाण—पुं० [ब० स०] ऐसा व्यक्ति जो पूर्णतः भाग्य के भरोसे रहे।

दैव-युग—पुं० [कर्म० स०] देवताओं का एक युग जो मनुष्यों के चारों युगों के बराबर होता है।

दैव-योग—पुं० [ष० त०] ईश्वरकृत संयोग। इत्तिफाक। जैसे—दैव-योग से आप ठीक समय पर यहाँ आ गये।

दैवल—पुं० [सं० देवल+अण्] देवल ऋषि का वंशज।

दैव-लेखक—पुं० [ष० त०] ज्योतिषी।

दैव-वर्ष—पुं० [कर्म० स०] देवताओं का वर्ष जो १३१५२१ सौ दिनों के बराबर होता है।

दैव-वश—अव्य० [ष० त०] १. दैवयोग से। २. संयोगवश।

दैव-वशात्—अव्य० = दैववश।

दैव-वाणी—स्त्री० [कर्म० स०] १. देवताओं की भाषा; संस्कृत। २. देवताओं द्वारा कही हुई बात जो आकाश से सुनाई पड़ती है। आकाशवाणी।

दैववादी (दिन्)—वि० [सं० दैव√वद् (बोलना)+णिनि] १. मुख्यतः दैव या भाग्य के भरोसे रहनेवाला। ३. आलसी।

दैवविद्—पुं०]सं० दैव√विद् (जानना)+क] ज्योतिषी।

दैव-विवाह—पुं० [कर्म० स०] स्मृतियों में वर्णित आठ प्रकार के विवाहों से एक जिसमें कन्या यज्ञ करानेवाले ऋत्विक् को ब्याह दी जाती थी।

दैव-श्राद्ध—पुं० [कर्म० स०] देवताओं के उद्देश्य से किया जानेवाला श्राद्ध।

दैव-सर्ग—पुं० [कर्म० स०] देवताओं की सृष्टि जिसके ब्राह्म, प्राजापत्य, ऐंद्र, पैत्र, गांधर्व, यक्ष, राक्षस और पैशाच ये आठ भेद माने गये हैं।

दैवाकरि—पुं० [सं० दिवाकर+इञ्] १. दिवाकर अर्थात् सूर्य के पुत्र; (क) यम। (ख) शनि।

दैवाकरी—स्त्री० [सं० दिवाकर+अण्-ङीप्] (सूर्य की पुत्री) जमुना नदी।

दैवागत—वि० [सं० दैव-आगत पं० त०] १. दैव-योग से होनेवाला। २. सहसा होनेवाला। आकस्मिक।

दैवात्—अव्य० [सं० विभक्तिप्रतिरूपक अव्यय] १. दैवयोग से। इत्तिफाक से। २. अकस्मात्। अचानक।

दैवात्यय—पुं० [दैव-अत्यय मध्य० स०] १. दैवी उपद्रव। २. आकस्मिक उत्पात या उपद्रव।

दैवाधीन—वि० [दैव-अधीन ष० त०] भाग्य के भरोसे रहनेवाला।

दैवायत्त —वि० [दैव-आयत्त ष० त०] दैवाधीन।

दैवारिप—पुं० [सं० देवारि√पा (रक्षा)+क, देवारिय = समुद्र+अण्] शंख।

दैवासुर—पुं० [सं० देवासुर+अण्] देवताओं और असुरों का पारस्परिक वैर।

दैविक—वि० [सं० देव+ठक—इक] १. देवता-संबंधी। देवताओं का। जैसे—दैविक श्राद्ध। २. देवताओं का किया हुआ। जैसे—दैविक ताप।

दैवी—वि० [सं० दैव+ङीप्] १. देवता-संबंधी। २. देवताओं की ओर से होनेवाला। ३. सात्त्विक। ४. आप से आप, प्रारब्ध या संयोगवश घटित होनेवाला। आकस्मिक। ५. दिव्य। स्वर्गीय।
स्त्री० १. दैव विवाह द्वारा ब्याही हुई पत्नी। २. एक प्रकार का दैविक छंद।
पुं० [सं०] ज्योतिषी।

दैवीगति—स्त्री० [सं० व्यस्त पद] १. ईश्वर की की हुई बात। २. भावी। होनहार।

दैवोपहत—वि० [दैव-उपहत तृ० त०] भाग्य का मारा हुआ। अभागा।

दैव्य—वि० [सं० देव+यञ्] देवता-संबंधी।
पुं० १. दिव्य होने की अवस्था या भाव। दिव्यता। २. दैव। ३. भाग्य।

दैशिक—वि० [सं० देश+ठञ्-इक] १. देश या स्थान-संबंधी। देश का। २. देश अर्थात् राज्य में होनेवाला। ३. राष्ट्रीय।

दैष्टिक—वि० [सं० दिष्ट+ठक्-इक] भाग्य में बदा हुआ।
पुं० भाग्यवादी।

दैहिक—वि० [सं० देह+ठञ्-इक] १. देह-संबंधी। शारीरिक। २. देह या शरीर से उत्पन्न।

दैहिकी—स्त्री० [सं० दैहिक+ङीप्] वह विद्या या शास्त्र जिसमें जीव-धारियों के भिन्न-भिन्न अंगों के कार्य, स्वरूप आदि का विवेचन होता है। शरीर-शास्त्र। (फिजियालोजी)

दैह्य—वि० [सं० देह+ष्यञ्] देह-संबंधी। शारीरिक।
पुं० आत्मा।

दोंकना—अ० [अनु०] गुर्राना।

दोंकी†—स्त्री० १. =धौंकनी। २. =गुर्राहट।

दोंच†—स्त्री० दोच।

दोंचना—स० = दोचना।

दोंर—पुं० [देश०] एक प्रकार का साँप।

दो—वि० [सं० द्वि] १. जो गिनती में एक से एक अधिक हो। तीन से एक कम।
पद—दो-एक=एक से एक या दो अधिक। कुछ। जैसे—उनसे दो-एक बातें कर लो। दो चार=दो, तीन अथवा चार। कुछ। थोड़ा। जैसे—दो-चार दिन बाद आना। **दो दिन का**=बहुत थोड़े समय का। हाल का। जैसे—यह तो अभी दो दिन की बात है। **किसके दो सिर हैं?**=किसे फालतू सिर है? कौन व्यर्थ अपने प्राण गवाना चाहता है।
मुहा०—(आँखें) दो-चार होना = सामना होना। (किसी से) **दो-चार होना** = भेंट या मुलाकात होना। **दो दो बातें करना**=संक्षिप्त परंतु स्पष्ट प्रश्नोत्तर करना। साफ-साफ कुछ बातें पूछना और कहना। **दो नावों पर पैर रखना**=दो आश्रमों या दो पक्षों का अवलंबन करना। ऐसी स्थिति में रहना कि जब जिधर चाहे, तब उधर मुड़ या हो सकें।
२. विभिन्न या परस्पर-विरोधी। जसे—देश की सुरक्षा के संबंध में दो राय हो ही नहीं सकती।
पुं० १. एक के ठीक बादवाली संख्या। एक और एक का जोड़। २. उक्त का सूचक अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—२ ३. जोड़ा। ४. दुक्की।

दो-आतशा—वि० [फा०] जो दो बार भभके से खींचा या चुआया गया हो। दो बार का उतारा हुआ। जैसे—दो आतशा अरक या शराब।

दोआब—पुं० = दोआबा।

दोआबा—पुं० [फा० दोआबः] दो नदियों के बीच का अथवा उनसे घिरा हुआ प्रदेश।

दोइ†—वि०, पुं० = दो।

दोउ†—वि० [हिं० दो] दोनों।

दोऊ—वि० [हिं० दो] दोनों।

दोक—पुं० [हिं० दो+का (प्रत्य०)] दो वर्ष की उम्र का बछेड़ा।

दोकड़ा†—पुं० [हिं० दो+टुकड़ा] टुकड़ा।

दो कला—वि० [हिं० दो +कल] दो कलों या पेचोंवाला।
पुं० १. वह ताला जिसके अंदर दो कलें या पेंच होते हैं। २. उक्त प्रकार की बेड़ी जो साधरण बेड़ी से अधिक मजबूत होती है।

दोका—पुं०=दोक।

दो-कोहा—पुं० [हिं० दो+कोह = कूबड़] वह ऊँट जिसकी पीठ पर दो कूबड़ होते हैं।

दो-खंभा—पुं० [हिं० दो+खंभा] एक प्रकार का नैचा जिसमें कुल्फी नहीं होती।

दोख†—पुं० =दोष।

दोखना—स० [हिं० दोष + ना (प्रत्य०)] किसी पर दोष लगाना।

दोखी†—वि० [हिं० दोष] १. अपराधी। दोषी। २. ऐबी। ३. दुष्ट। पाजी। ४. वैरी। शत्रु। (डिं०)

दो-गंग—पुं० [हिं० दो+गंगा] दो नदियों के बीच का प्रदेश। दोआबा।

दोगंडी—स्त्री० [हिं० दो+गंडी = गोल घेरा या चिह्न] १. वह चित्ती कौड़ी या इमली का चीआँ जिसे लड़के जूआ खेलने में बेईमानी करने के लिए दोनों ओर से घिस लेते हैं। २. उक्त प्रकार की कौड़ियों से खेलनेवाला अर्थात् बेईमान आदमी। ३. उपद्रवी या शरारती आदमी।

दोगर†—पुं० = डोंगरा।

दोगला—पुं० [फा० दोग़लः] [स्त्री० दोगली] १. ऐसा जीव जो दो विभिन्न जातियों या नस्लों के माता-पिता के योग से उत्पन्न हुआ हो। वर्ण-संकर। २. उक्त के आधार पर उत्पन्न होनेवाला ऐसा जीव जो प्रायः कुरूप तथा अशक्त होता है। ३. ऐसा मनुष्य जो अपनी माता के गर्भ से परन्तु उसके उपपति या यार के योग से उत्पन्न हुआ हो। जो ऐसे व्यक्ति की संतान हो जिससे उसकी माता का विवाह न हुआ हो। जारज।

पुं० [हिं० दो + कल] बाँस की कमाचियों का बना हुआ एक प्रकार का गोल और कुछ गहरा पात्र जिससे किसान खेतों में पानी उलीचते हैं।

दोगा—पुं० [सं० द्विक, हिं० दुक्का] १. लिहाफ के काम आनेवाला एक तरह का मोटा कपड़ा। २. पानी में घोला हुआ चूना, सीमेंट आदि जिसे दीवारों, छतों आदि पर पोतकर उन्हें चिकना बनाया जाता है।

दोगाड़ा—पुं० [हिं० दो+?] दोनली बंदूक।

दोगाना—पुं० [हिं० दो +गाना] एक तरह का गीत जिसके एक चरण में एक व्यक्ति कुछ प्रश्न करता है और दूसरे चरण में दूसरा व्यक्ति उसका उत्तर देता है।

† स्त्री० = दुगाना। (देखें)

दोगुना†—वि० = दुगना (दूना)।

दोग्ध्री—स्त्री० [सं० √दुह् (दुहना)+तृच्-ङीप्] १. दूध देनेवाली गाय। २. दूध पिलानेवाली दाई। धाय।

दोघ—वि० [सं०] गौ आदि दुहनेवाला।

दोघरा—वि० [हिं० दो+घर] १. जिसमें दो घर (खाने या विभाग) हों। २. दो घरों से संबंध रखनेवाला।

दोचंद—वि० [फा० दुचंद] दुगना। दूना।

दोच†—स्त्री० = दोचन।

दोचन—स्त्री० [हिं० दबोच] १. दुबधा। असमंजस। २. कष्ट। तकलीफ। दुःख। ३. विपत्ति। संकट। ४. किसी ओर से पड़नेवाला दबाव।

दोचना—स० [हिं० दोच] कोई काम करने के लिए किसी पर बहुत जोर देना। दबाव डालना।

दोचल्ला—पुं० [हिं० दो + चल्ला (पल्ला) ?] वह छाजन जो बीच में उभरी हुई और दोनों ओर ढालुई हो। दो-पलिया छाजन।

दो-चित्ता—वि० [हिं० दो + चित्त] [स्त्री० दोचित्ती] जिसका चित्त एकाग्र न हो, बल्कि दो कामों या बातों में बँटा या लगा हुआ हो।

दोचित्ती—स्त्री० [हिं० दो+चित्त] १. 'दो-चित्ता' होने की अवस्था या भाव। ध्यान का दो कामों या बातों में बँटा रहना। २. चित्त की उद्विग्नता या विकलता।

दो-चोबा—पुं० [हिं० दो+फा० चोब] वह बड़ा खेमा जिसमें दो दो चोबें लगती हों।

दोज—स्त्री० [हिं० दो] चांद्र मास के किसी पक्ष की द्वितीया तिथि। दूज।

पुं० [सं०] संगीत में, अष्टताल का एक भेद।

वि० [फा०] १. सिलाई करने या सीनेवाला। जैसे—जरदोज। २. किसी के साथ बिलकुल मिला या सटा हुआ। जैसे—जमीनदोज मकान, अर्थात् ऐसा मकान जो ढहकर जमीन के बराबर हो गया हो।

दोजई—स्त्री० [देश०] वह उपकरण जिससे नक्काश लोग वृत्त आदि बनाते हैं।

दोजख—पुं० [फा० दोजख] १. इस्लामी धर्म के अनुसार नरक जिसके सात विभाग कहे गये हैं और जिसमें दुष्ट तथा पापी मनुष्य मरने के उपरांत रखे जाते हैं। २. नरक।

†पुं० [?] सुंदर फूलोंवाला एक प्रकार का पौधा।

दोजखी—वि० [फा०] १. दोजख-संबंधी। दोजख का। २. दोजख में जाने या रहनेवाला। नारकी। ३. बहुत बड़ा दुष्ट और पापी।

दो-जरबा—वि० [फा०] दो बार भभके में खींचा या चुआया हुआ। दो-आतशी।

दोजर्बी—स्त्री० [फा०] १. दोनली बंदूक। २. दो बार चुआई हुई शराब।

दोजा—पुं० [हिं० दो] [स्त्री० दोजी] पुरुष जिसका दूसरा विवाह हुआ हो।

†वि० = दूजा (दूसरा)।

दोजानू—अव्य० [हिं० दो+सं० जानु (घुटना)] घुटनों के बल या दोनों घुटने टेककर।

दोजिया—स्त्री० = दोजीवा।

दोजी—स्त्री० [फा०] सीने का काम। सिलाई। जैसे-जरदोजी।

दोजीरा—पुं० [हिं० दो+जीरा] एक प्रकार का चावल।

दोजीवा—स्त्री० [हिं० दो+जीव] वह स्त्री जिसके पेट में एक और जीव या बच्चा हो। गर्भवती स्त्री।

दोढ़—वि० = डेढ़।

दोत†—पुं० = दूत।

स्त्री० = दवात।

दो-तरफा—वि० [फा० दुतर्फ़ः] [स्त्री० दोतरफी] दोनों तरफ का। दोनों ओर से संबंध रखनेवाला।

क्रि० वि० दोनों ओर। दोनों तरफ। इधर भी और उधर भी।

दोतर्फा—वि० = दो-तरफा।

दोतला†—वि० = दो-तल्ला।

दो-तल्ला—वि० [हिं० दो+तल्ला] (घर या मकान) जिसमें दो खंड या मंजिलें हों। दो-मंजिला।

दोतही—स्त्री० [हिं० दो+तह] एक प्रकार की देशी मे[illegible] दोहरी करके बिछाने के काम आती है। दोसूती।

दोता†—पुं० = दोहता (दौहित्र)।

दोतारा—पुं० [हिं० दो+तार] १. एक प्रकार का दु[illegible] की तरह का एक बाजा, जिसमें दो तार लगे होते

दोदना—स०[हिं० दो(दोहराना)] १. किसी की कही हुई बात सुनकर भी यह कहना कि तुमने ऐसा नहीं कहा था। २. किसी के सामने एक बार कोई बात कहकर भी बार-बार यह कहना कि हमने ऐसा नहीं कहा था।
वि० दोदने या मुकरनेवाला।

दोदरी—स्त्री० [नेपाली] एक तरह का सदाबहार पेड़ जो पूर्वी बंगाल, सिक्किम और भूटान में होता है।

दोदल—पुं० [सं० द्विदल] १. चने की दाल और उससे बनी हुई तरकारी। २. कचनार की कलियाँ जिनकी तरकारी बनती और अचार पड़ता है।

दोदस्ता—वि० [फा० दुदस्तः] १. दोनों हाथों से किया जानेवाला या होनेवाला।

दोदा—पुं० [देश०] एक तरह का डेढ़-दो हाथ लंबा कौआ।

दोदाना—स० [हिं० दोदना] किसी को दोदने में प्रवृत्त-करना। (दे० 'दोदना')

दोदामी†—स्त्री० = दुदामी।

दोदिन—पुं० [देश०] रीठे की जाति का एक प्रकार का पेड़ जिसके फलों की फेन से कपड़े साफ किये जाते हैं।

दोदिला—वि० [हिं० दो + फा० दिल] [भाव० दोदिली] दोचित्ता (दे०)।

दोध—पुं० [सं० √दुह् + अच, नि० सिद्धि] [स्त्री० दोधी] १. ग्वाला। अहीर। २. गौ का बच्चा। बछड़ा। ३. पुरस्कार के लोभ से कविता करनेवाला कवि।

दोधक—पुं० [सं०] एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसमें तीन भगण और अंत में दो गुरु वर्ण होते हैं। इसे 'बंधु' भी कहते हैं।
वि० दूहनेवाला।

दोधार (।)—वि० [हिं० दो+धार] [स्त्री० दोधारी] जिसके दोनों ओर धार या बाढ़ हो।
पुं० बरछा। भाला।
पुं० [देश०] एक प्रकार का थूहर।

दोन—पुं० [हिं० दो] १. दो पहाड़ों के बीच की नीची जमीन। दून। २. दो नदियों के बीच का प्रदेश। दो आबा। ३. दो नदियों का संगम स्थान। ४. दो वस्तुओं का एक में होनेवाला मेल या संगम।
पुं० [सं० द्रोण] काठ का वह खोखला लंबा टुकड़ा जिससे धान के खेतों में सिंचाई की जाती है।

दोनली—वि० [हिं० दो+नल] जिसमें दो नलियाँ या नल हों।
स्त्री० दो नलोंवाली बंदूक या तोप।

दोना—पुं० [सं० द्रोण] [स्त्री० अल्पा० दोनियाँ, दोनी] १. पलास, महुए आदि के पत्ते या पत्तों को सीकों से खोंसकर बनाया जानेवाला अंजली या कटोरे के आकार का पात्र। २. उक्त में रखी हुई वस्तु। जैसे—एक दोना उन्हें भी तो दो।
मुहा०—**दोना चढ़ाना**=समाधि आदि पर फूल-मिठाई चढ़ाना। **दोना या दोने चाटना**=बाजार से पूड़ी, मिठाई आदि खरीदकर पेट भरने का शौक होना। **दोना देना**=(क) किसी बड़े आदमी का अपने भोजन के थाल में से कुछ भोजन किसी को देना जिससे देनेवाले की प्रसन्नता और पानेवाले का सम्मान प्रकट होता है। (ख) दोना चढ़ाना। (देखें ऊपर) **दोना लगाना**=दोने में रखकर फूल-मिठाई आदि बेचने का व्यवसाय करना। **दोनों की चाट पड़ना या लगना**=बाजारी चीजें खाने का चस्का पड़ना।
†पुं०=दौना (पौधा)।

दोनों—वि० [हिं० दो+नों (प्रत्य०)] दो में से प्रत्येक। यह भी और वह भी। उभय। जैसे—दोनों भाई काम करते हैं।

दोपट्टा†—पुं०=दुपट्टा।

दोपलका—पुं० [हिं० दो+फलक या पलक] १. वह दोहरा नगीना जिसके अन्दर या नीचे नकली या हलका नग हो और ऊपर या चारों ओर असली या बढ़िया नग हो। दोहरा नगीना जो कम मूल्य का और घटिया होता है। २. एक प्रकार का कबूतर।

दोपलिया†—वि०=दोपल्ला।
स्त्री०=दोपल्ली।

दोपल्ला—वि० [हिं० दो+पल्ला] [स्त्री० दोपल्ली] १. जिसमें दो पल्ले हों। २. दो परतोंवाला। दोहरा।

दोपल्ली—वि० [हिं०दो+पल्ला+ई (प्रत्य०)] दो पल्लोंवाला। जिसमें दो पल्ले हों। जैसे-दोपल्ली टोपी।
स्त्री० मलमल आदि की पुरानी चाल की एक प्रकार की टोपी जो कपड़े के दो टुकड़ों या पल्लों को एक में सीकर बनाई जाती थी।

दोपहर—स्त्री० [हिं० दो+पहर] १. दिन के ठीक मध्य का समय। मध्याह्न। २. दिन के बारह बजे और उसके आस-पास का कुछ समय।
क्रि० प्र०—चढ़ना। —ढलना।

दोपहरिया†—स्त्री०=दोपहर।

दोपहरी—वि० स्त्री० [हिं० दो+पहर] हर दो पहरों पर होनेवाला। जैसे—दोपहरी नौबत।
†स्त्री०=दोपहर।

दो-पीठा—वि० [हिं० दो+पीठ] १. जो दोनों पीठों अर्थात् दोनों ओर समान रंग-रूप का हो। दोरुखा। २. (छापेखाने में, ऐसा कागज) जो दोनों ओर छपा हो।

दो-पौआ—पुं० [हिं० दो+पाव] १. किसी वस्तु का दो पाव, आधा अंश या भाग। २. दो पाव का बटखरा। अध-सेरा। ३. पान की आधी ढोली। (तमोली)

दो-प्याजा—पुं० [फा०] अधिक मात्रा में प्याज डालकर पकाया हुआ मांस।

दो-फसली—वि० [फा० दुफस्ली] १. (पौधा या वृक्ष) जो वर्ष में दो बार फलता और फूलता हो। २. दोनों फसलों से संबंध रखनेवाला। ३. (खेत या जमीन) जिसमें रबी और खरीफ दोनों फसलें होती हों। ४. (बात) जो दोनों पक्षों में लग सके। जिसका उपयोग दोनों ओर हो सके फलतः अनिश्चित और संदिग्ध।

दोबल—पुं० [?] दोष। अपराध। लांछन।
क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

दोबा†—पुं०=दुबिधा।

दो-बाजू—पुं० [हिं० दो+फा० बाज] १. वह कबूतर जिसके दोनों पैर सफेद हों। २. एक प्रकार का गिद्ध।

दोबारा—क्रि० वि० [फा० दुबारः] एक बार हो चुकने के उपरान्त फिर दूसरी बार। दूसरी दफा। पुनः। फिर।
वि० दूसरी बार होनेवाला।

पुं० १. वह अरक या शराब जो एक बार चुआने के बाद फिर दूसरी बार भी चुआई गई हो और फलतः बहुत तेज हो। दो-आतशा।

स्त्री० १. एक बार साफ करने के बाद फिर दूसरी बार साफ की हुई चीनी। २. एक बार तैयार करने के उपरान्त उसी तैयार चीज से फिर दूसरी बार तैयार या ठीक की हुई चीज।

दोबाला—वि० [फा० दुबाला] दूना। दुगना।

दोभाषिया †—पुं०=दुभाषिया।

दोमंजिला—वि० [फा० दुमंजिलः] (इमारत) जिसमें दो खंड या तल्ले हों।

पुं० दो खंडोंवाला मकान।

दोमट—स्त्री० [हिं० दो+मिट्टी] ऐसी जमीन जिसकी मिट्टी में बालू भी मिला हुआ हो। बलुई जमीन।

दो-मरगा—पुं० [हिं० दो+मार्ग] १. पुरानी चाल का एक प्रकार का देशी मोटा कपड़ा।

दो-महला—वि० दे० 'दोमंजिला'।

दोमुँहा—वि० [हिं० दो+मुँह] १. जिसके दो मुँह हों। २. जिसके दोनों ओर मुँह हों। जैसे—दो मुँहा साँप। ३. दो तरह की बातें करने-वाला। ४. दोहरी चाल चलनेवाला।

दोमुँहा साँप—पुं० [हिं० दो+मुँहा+साँप] १. एक प्रकार का साँप जो प्रायः हाथ भर लंबा होता है और जिसकी दुम मोटी होने के कारण मुँह के समान ही जान पड़ती है। इसमें न तो विष होता है और न यह किसी को काटता है। २. एक तरह का साँप जिसके संबंध में यह प्रसिद्ध है कि छः महीने इसके एक तरफ मुँह रहता है और छः महीने दूसरी तरफ। (चुकरैंड) ३. ऐसा व्यक्ति जो दोहरी चालें चलकर बहुत अधिक घातक सिद्ध होता हो।

दोमुँही—स्त्री० [हिं० दो+मुँह] नक्काशी करने का सुनारों का एक उपकरण।

दोय†—वि०, पुं०=दो।

वि०=दोनों।

दोयण—पुं० [फा० दुश्मन?] शत्रु। उदा०—दाटक अनड़ दंड नह दीघो, दोयण घड़ सिर दाव दियो।—दुरसाजी।

दोयम—वि० [फा०] १. जो क्रम या गिनती में दूसरे स्थान पर पड़े। दूसरा। २. जो महत्त्व, मान आदि के विचार से द्वितीय श्रेणी का हो।

दोयरी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का जंगली पेड़ जिसकी लकड़ी का कोयला बनाया जाता है।

दोयल—पुं० [देश०] बया पक्षी।

दोरंगा—वि० [हिं० दो+रंग] [स्त्री० दोरंगी] १. दो रंगोंवाला। जिसमें दो रंग हों। जैसे—दोरंगा कागज। २. जिसमें दोनों ओर दो रंग हों। ३. (कथन) जो दोनों पक्षों में समान रूप से लग सकें। ४. दे० 'दोगला'।

दोरंगी—स्त्री० [हिं० दोरंगा] १. दो रंगोंवाला होने की अवस्था या भाव। २. ऐसी बात या व्यवहार जो दोनों पक्षों में लग सके।

दोर—पुं० [सं० दोः या दोषा] हाथ। भुजा। (राज०) उदा०—दोर सु वरुण तंणा किरि डोर।—प्रिथीराज।

स्त्री० [हिं० दौड़] १. पहुँच। २. स्थान। उदा०—मेरे आसा चितवनि तुमरी, और न दूजी दोर।—मीराँ।

†पुं०=द्वार।

†पुं० [सं० द्वार] दरवाजा। (बुन्देल०) उदा०—रोको बीरन मोरे दोर बहिन तोरी कहाँ चली।—लोक-गीत।

स्त्री० [हिं० दो] दो बार जोती हुई जमीन। वह जमीन जो दो दफे जोती गई हो।

स्त्री०=डोर (रस्सी)।

दोरक—पुं० [सं०=डोरक नि० ड को द] ? वीणा के तारों को बाँधने की ताँत। २. डोरी।

दोरदंड †—वि०=दुर्दंड।

दोरस—स्त्री० [हिं० दो+रस] ऐसी जमीन जिसकी मिट्टी में बालू मिला हुआ हो।

दो-रसा—वि० [हिं० दो+रस] १. दो प्रकार के रस या स्वादवाला। जिसमें दो तरह के रस या स्वाद हों। जैसे—दो-रसा तमाकू (पीने का)। २. (दिन या समय) जिसमें थोड़ी-थोड़ी गरमी या सरदी दोनों पड़ती हों। ऋतु परिवर्तन के समय का। जैसे—दो-रसे दिन। ३. (स्त्रियों के संबंध में स्थिति) जिसमें दो अथवा अनेक प्रकार के भाव या विचार मन में उठते हों (अर्थात् गर्भवती होने के दिन)।

पुं० एक प्रकार का पीने का तमाकू जिसका धूआँ कुछ कड़ुआ और कुछ मीठा होता है।

दोरा—पुं० [देश०] हल की मुठिया के पास लगी हुई बाँस की वह नली जिसमें बोने के लिए बीज डाले जाते हैं।

दोराब—स्त्री० [देश०] एक तरह की छोटी समुद्री मछली।

दो-राहा—पुं० [हिं० दो+राह] वह स्थान जहाँ से दो मार्गों की ओर जाया जा सकता हो।

दोरी—स्त्री०=डोरी।

दो-रुखा—वि० [फा०] [स्त्री० दोरुखी] १. जिसके दोनों ओर समान रंग या बेल-बूटे हों। जैसे-कपड़े का दोरुखा छापा। २. जिसमें एक ओर एक रंग और दूसरी ओर दूसरा रंग हो। जैसे—ओढ़ने की दोरुखी चादर। ३. (आचरण या व्यवहार) जिसका आशय दोनों ओर या दोनों पक्षों में प्रयुक्त हो सकता हो।

पुं० सुनारों का एक उपकरण।

दो-रेजी—स्त्री० [फा० दोरेजी] नील की वह फसल जो एक फसल कट जाने के उपरान्त उसकी जड़ों से फिर होती है।

दोर्ज्या—स्त्री० [सं० दोस्-ज्या उपमि० स०] सूर्य सिद्धांत के अनुसार वह ज्या जो भुज के आकार की हो।

दोर्दंड—पुं० [सं० दोस्-दंड ष० त०] भुजदंड।

दोर्मूल—पुं० [सं० दोस्-मूल ष० त०] भुज-मूल।

दोर्युद्ध—पुं० [सं० दोस्-युद्ध तृ० त०] कुश्ती।

दोल—पुं० [सं०√दुल् (झुलाना)+घञ्] १. झूला। हिंडोला। २. डोली।

दो-लड़ा—वि० [हिं० दो+लड़] [स्त्री० दोलड़ी] जिसमें दो लड़े हों। दो लड़ोंवाला।

दोलत्ती—स्त्री०=दुलत्ती।

दोलन—पुं० [सं० दुल्+ल्युट्-अन] झूलना।

दोल-यात्रा—स्त्री० [मध्य० स०]=दोलोत्सव।

दोला—स्त्री० [सं० दोल+टाप्] १. झूला। १. हिंडोला। २. डोली

या पालकी। ३. ऐसी स्थिति जिसमें किसी विषय में मनुष्य का विचार कभी एक ओर, और कभी दूसरी ओर होता है। जैसे—विमर्श-दोला। ४. नील का पौधा

दोलाधिरूढ़—वि०[सं०दोला-अधिरूढ़ द्वि० त०] १.झूले पर चढ़ा हुआ। २. जिसके संबंध में अभी तक कोई निश्चय न हुआ हो।

दोला-यंत्र—पुं०[सं० मध्य० स०] वैद्यक में, औषधियों का अरक उतारने या निकालने का एक यंत्र।

दोलायमान—वि०[सं० दोला+क्यङ्+शानच्] झूलता हुआ। हिलता-डुलता हुआ।

दोलायित—वि० [सं० दोला+क्यङ्+क्त] दोलित।

दोला-युद्ध—पुं०[सं० उपमि० स०] वह युद्ध जिसमें कभी किसी एक पक्ष का पलड़ा भारी पड़ता हो और कभी दूसरे पक्ष का।

दोलावा—पुं०[?] वह कूआँ जिसमें दो ओर दो गराड़ियाँ लगी हों।

दोलिका—स्त्री०[सं० दोला+कन्-टाप्, इत्व] १. हिंडोला। झूला। २. डोली।

दोलित—वि०[सं० दुल्+णिच्+क्त] १. झूलता हुआ। २. हिलता-डुलता हुआ।

दोली—स्त्री०[सं०√दुल्+णिच्+इन्-ङीष्] १. डोली। २. पालना। ३. झूला।

दोलोही—स्त्री०=दुलोही।

दोलू—पुं० [?] दाँत। (डिं०)

दोलोत्सव—पुं०[सं० दोल-उत्सव मध्य० स०] फाल्गुन की पूर्णिमा को होनेवाला वैष्णवों का उत्सव जिसमें भगवान कृष्ण को हिंडोले पर झुलाते हैं।

दोवटी (वड़ी)—†स्त्री०[सं०द्विपट्ट, पुं० हिं० दोवटा] १. साधारण देशी मोटा कपड़ा। गजी। गाढ़ा। (राज०) उदा०—गौणों तो म्हारो माला दोवड़ी और चंदन की कुटकी।—मीराँ। २. चादर। दुपट्टा। उदा० पाँच राज दोवटी माँगी, चून लियौ सानि।-कबीर। ३. दो पाट की चादर।

दोवा†—पुं०=देवबाँस।

दोश—पुं०[देश०] एक प्रकार का लाख जिसका व्यवहार रंग बनाने में होता है।

पुं०[फा०] कंधा।

†पुं०=दोष।

दोशमाल—पुं०[फा०] वह अँगोछा या तौलिया जो कसाई अपने पास या कंधे पर रखते हैं।

दोशाखा—पुं०[फा० दुशाखः] १. वह शमादान जिसमें दो बत्तियाँ जलती हों। २. लकड़ी का वह उपकरण जिसमें दो छोटी लकड़ियों के बीच में कपड़ा लगा रहता है और जिससे पीसी हुई भंग, दूध आदि छानते हैं।

वि० दो शाखाओं या डालोंवाला।

दोशाला†—पुं०=दुशाला।

पुं०[फा०दुशालः]एक प्रकार की ओढ़ने की बढ़िया कामदार ऊनी चादर।

दोशीजगी—स्त्री०[फा० दोशीजगी] १. लड़कियों की कुमारावस्था। कौमार्य। २. अल्हड़पन।

दोशीजा—स्त्री०[फा० दोशीजः] १. कुमारी कन्या। २. अल्हड़ लड़की।

दोष—पुं०]सं०√दुष् (विकृति)+णिच्+घञ्] १. किसी चीज या बात में होनेवाली कोई ऐसी खराबी या बुराई जिसके कारण उसकी उपादेयता, महत्ता आदि में कमी या बाधा होती हो। ऐब। खराबी बुराई। (फॉल्ट)

विशेष—इसके अनेक प्रकार और रूप होते हैं। यथा—(क) पदार्थ या रचना में किसी अंग या अंश का अभाव या न्यूनता। जैसे—आँख या कान का दोष, जिससे ठीक तरह से दिखाई या सुनाई नहीं देता। (ख) पदार्थ या रचना में होनेवाला कोई प्राकृतिक या स्वाभाविक दुर्गुण या विकार। जैसे—नीलम या हीरे का दोष; औषध या खाद्य पदार्थ का दोष। (ग) कर्त्ता के रचना-कौशल की कमी के कारण होनेवाली कोई खराबी या त्रुटि। जैसे-वाक्य में होनेवाला व्याकरण-संबंधी दोष। (घ) रूप-रंग, शोभा, सौन्दर्य आदि में बाधक होनेवाला तत्त्व। जैसे—चन्द्रमा का दोष। सारांश यह कि किसी पदार्थ या वस्तु का अपने सम्यक् रूप में न होना अथवा आवश्यक गुणों से रहित होना ही उसका दोष माना जाता है। कुछ अवस्थाओं में परंपरा, परिपाटी, रीति-नीति आदि के आधार पर भी और कुछ क्षेत्रों में पारिभाषिक वर्ग की भी कुछ ऐसी बातें स्थिर हो जाती हैं जिनकी गणना दोषों में होती है।

२. किसी चीज या बात में होनेवाला कोई ऐसा अभाव जिससे उसका ठीक या पूरा उपयोग न हो सकता हो। अपूर्णता। कमी। त्रुटि। (डिफेक्ट) ३. न्याय शास्त्र में, मिथ्या ज्ञान के कारण उत्पन्न होनेवाले मनोविकार जो मनुष्य को अच्छे और बुरे कामों में प्रवृत्त करते हैं। जैसे—राग, द्वेष आदि हमारे मनोगत दोष हैं। ४. नव्य न्याय में, तर्क के अवयवों के प्रयोग में होनेवाली त्रुटि या भूल। ५.मीमांसा में, वह अदृष्ट फल जो विधियों का ठीक तरह से पालन न करने अथवा उनके विपरीत आचरण करने से प्राप्त होता है। ६. वैद्यक में, शरीर के अंतर्गत रहनेवाले कफ, पित्त और वात नामक तत्त्वों अथवा अन्यान्य रसों का प्रकोप या विकार जिससे अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। ७. साहित्य में, वे बातें जिनसे काव्य या रचना के निश्चित गुणों या स्वरूपों में कुछ कमी रहती या बाधा होती हो। जैसे—अर्थ-दोष, काव्य-दोष, रस-दोष। ८. आचार, चरित्र या व्यवहार में, कोई ऐसा काम, तत्त्व या बात जो धार्मिक, सामाजिक आदि दृष्टियों से अनुचित या निंदनीय मानी जाती हो। (गिल्ट)

मुहा०—(किसी को) दोष देना=यह कहना कि इसके कारण अमुक खराबी या बुराई हुई है। **(किसी में) दोष निकालना**=यह कहना कि इसमें अमुक दोष या बुराई है।

९. किसी पर लगाया जानेवाला ऐसा अभियोग, कलंक या लांछन जो नैतिक, विधिक आदि दृष्टियों से अपराध माना जाता या दंडनीय समझा जाता हो। अपराध। कसूर। जुर्म। (गिल्ट)

क्रि० प्र०—लगाना।

१०. पातक। पाप। ११. संध्या का समय। प्रदोष। १२. भागवत के अनुसार आठ वसुओं में से एक।

†पुं०=द्वेष। उदा०—सो जन जगत-जहाज है जाके राग न दोष। —तुलसी।

दोषक—पुं०[सं० दोष+कन्] गौ का बच्चा। बछड़ा।

दोषग्राही (हिन्)—पुं० [सं० दोष√ग्रह् (ग्रहण)+णिनि] १. वह जो केवल दूसरों के दोषों पर ध्यान दे। २. दुर्जन। दुष्ट।

दोषघ्न—पुं० [सं० दोष√हन् (मारना)+टक्] वह औषध जिससे शरीर के कुपित कफ, वात और पित्त का दोष शांत हो।

दोषज्ञ—पुं० [सं० दोष√ज्ञा (जानना)+क] पंडित।

दोषण—पुं० [सं०√दुष्+णिच्+ल्युट्-अन] दोषारोपण।

दोषता—स्त्री० [सं० दोष+तल्-टाप्] दोष का भाव।

दोषत्व—पुं० [सं० दोष+त्व] दोष का भाव।

दोषन—पुं० [सं० दूषण] १. दोष। २. दूषण।

दोषना—स० [हिं० दूषण+न (प्रत्य०)] किसी पर दोषारोपण करना। दोष लगाना।

दोष-पत्र—पुं० [ष० त०] वह पत्र जिसमें अपराधी के अपराधों, दोषों आदि का विवरण लिखा होता है।

दोष-प्रमाणित—वि० [ब० स०] जिसका दोष प्रमाणित हो चुका हो। जो दोषी सिद्ध हो चुका हो।

दोषल—वि० [सं० दोष+लच्] दोष या दोषों से भरा हुआ। दूषित।

दोषसिद्ध—वि० दे० 'दोष-प्रमाणित'।

दोषा—स्त्री० [सं०√दुष्+आ] १. रात्रि का अंधकार। २. रात्रि। रात। ३. सायंकाल। संध्या। ४. बाँह। भुजा।

दोषाकर—पुं० [सं० दोष-आकर ष० त०] १. दोषों का केन्द्र या भंडार। २. [दोषा√कृ+ट] चन्द्रमा।

दोषाक्लेशी—स्त्री० [सं० दोषा√क्लिश् (कष्ट देना)+अण्-ङीप्] बन-तुलसी।

दोषाक्षर—पुं० [सं० दोष-अक्षर ब० स०] किसी पर लगाया हुआ अपराध। अभियोग।

दोषा-तिलक—पुं० [ष० त०] दीपक। दीया।

दोषारोपण—पुं० [सं० दोष-आरोपण ष० त०] १. यह कहना कि इसमें अमुक दोष है। २. यह कहना कि इसने अमुक दोष किया है।

दोषावह—वि० [सं० दोष-आ√वह् (वहन)+अच्] जिसमें दोष हों। दोषपूर्ण।

दोषिक—पुं० [सं० दोष+ठन्-इक्] रोग। बीमारी।
वि० १=दोषी। २. दूषित।

दोषित†—वि०=दूषित।

दोषिता—स्त्री० [सं० दोषिन्+तल्-टाप्] दोषी होने की अवस्था या भाव। (गिल्ट)

दोषिन—स्त्री० [हिं० दोषी का स्त्री०] १. अपराधिनी। २. पापपूर्ण आचरणवाली स्त्री। ३. दुष्ट स्वभाववाली और दूसरों पर दोष लगाती रहनेवाली स्त्री। ४. वह कन्या जिसने विवाह से पहले ही किसी से संबंध स्थापित कर लिया हो।

दोषी (षिन्)—पुं० [सं० दोष+इनि] १. जिसने कोई अपराध या दोष किया हो। २. जिस पर कोई दोष लगा हो। ३. दोषपूर्ण। ४. दुष्ट। ५. पापी।
वि० [सं० द्वेष] द्वेष करनेवाला। उदा०—गुरु-दोषी सग की मृतु पाव।—गुरु गोविंद सिंह।

विशेष—यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि 'दोष' का प्रयोग 'द्वेष' के अर्थ में गोस्वामी तुलसीदास ने भी किया है। (दे० 'दोष')

दोस†—पुं०=दोष।

दोसदार†—पुं०=दोस्तदार (मित्र)।

दोसदारी—स्त्री०=दोस्ती।

दोसरता†—पुं० [हिं० दूसरा+ता (प्रत्य०)] द्विरागमन। गौना।
†पुं०=दुजायगी। (भेद-भाव)

दोसरा†—वि० [स्त्री० दोसरी] =दूसरा।

दोसरी†—स्त्री० [हिं० दो] दो बार जोती हुई जमीन।

दोसा—पुं० [देश०] जल में होनेवाली एक तरह की घास जिसमें एक प्रकार के दाने अधिकता से होते हैं।
†पुं० [?] मदरास देश में बननेवाला एक प्रकार का पकवान जो उलटे या चीले की तरह का होता है और जिसके अन्दर कुछ तरकारियाँ आदि भी भरी होती हैं।
स्त्री०=दोषा (रात)।

दोसाध—पुं०=दुसाध।

दोसाल—पुं० [?] एक तरह का हाथी।

दोसाला—वि० [हिं० दो+साल=वर्ष] १. जिसकी अवस्था दो वर्ष की हो। २. जिसके दो वर्ष बीत चुके हों। ३. (विद्यार्थी) जो दो वर्षों तक प्रायः अनुत्तीर्ण होने के कारण एक ही कक्षा में रहे।

दोसाही—वि० [हिं० दो+?] (जमीन) जिसमें साल में दो फसलें पैदा हों। दो-फसला।

दोसी†—पुं० [देश०] दही।
†पुं०=घोसी।
वि०=दोषी।

दोसूती—स्त्री०=दुसूती।

दोस्त—पुं० [फा०] १. प्रायः समान अवस्था का तथा संग रहनेवाला वह व्यक्ति जिससे किसी का स्नेहपूर्ण संबंध हो। मित्र। २. वह जिससे किसी का अनुचित संबंध हो। (बाजारू)

दोस्तदार—पुं०=दोस्त।

दोस्तदारी—स्त्री०=दोस्ती।

दोस्ताना—पुं० [फा० दोस्तानः] १. दोस्ती। मित्रता। २. मित्रता का आचरण या व्यवहार।
वि० दोस्तों या मित्रों का-सा। दोस्तों या मित्रों की तरह का। जैसे—दोस्ताना बरताव।

दोस्ती—स्त्री० [फा०] १. दोस्त अर्थात् मित्र होने की अवस्था या भाव। २. स्त्री और पुरुष का होनेवाला पारस्परिक अनुचित संबंध। (बाजारू)

दोस्तीरोटी—स्त्री० [फा० दोस्ती+हिं० रोटी] दो परतोंवाला एक तरह का पराठा जो दो लोइयाँ बेलकर और साथ मिलाकर बनाया जाता है। दुपड़ी।

दोह†—पुं०=द्रोह।

दोहग†—पुं०=दोहगा। (राज०)

दोहगा—स्त्री० [सं० दुर्भगा] पर-पुरुष के साथ पत्नी के रूप में रहनेवाली विधवा स्त्री।

दोहज—पुं० [सं०] दूध।

दोहड़ा†—वि०=दोहरा।

दोहता—पुं०[सं० दौहित्र] [स्त्री० दोहती] लड़की का लड़का। नाती। नवासा।

दोहती—स्त्री० १.=दोस्ती। २. =दोस्ती-रोटी।
स्त्री० हिं० 'दोहता' का स्त्री०।

दोहत्थड़—वि०[हिं० दो+हाथ] दोनों हाथों से किया जाने या होने वाला। जैसे—दोहत्थड़ मार पड़ना।
पुं० ऐसा आघात या प्रहार जो दोनों हाथों की हथेलियों से एक साथ हो।
क्रि० वि० दोनों हाथों की हथेलियों से एक साथ प्रहार करते हुए। जैसे—दोहत्थड़ छाती या सिर पीटना।

दोहत्था—वि०[हिं० दो+हाथ] [स्त्री० दोहत्थी] १. दोनों हाथों से किया जानेवाला। जैसे—दुहत्थी मार। २. जिसमें दो हत्थे या दस्ते लगे हों। दो मूठोंवाला।
क्रि० वि० दोनों हाथों से।

दोहत्थाशासन—पुं०=द्विदल शासन।

दोहत्थी—स्त्री०[हिं० दो+हाथ] मालखंभ की एक कसरत जिसमें मालखंभ को दोनों हाथों से कुहनी तक लपेटा जाता है और फिर जिधर का हाथ ऊपर होता है उधर की टाँग को उठाकर मालखंभ को पकड़ा जाता या उस पर सवारी की जाती है।

दोहद—पुं०[सं० दोह√दा (देना)+क] १. गर्भकाल में गर्भवती स्त्री के मन में उत्पन्न होनेवाली अनेक तरह की इच्छाएँ या कामनाएँ। २. वह काम, चीज या बात जिसकी उक्त अवस्था और रूप में इच्छा या कामना होती हो। ३. गर्भवती रहने या होने की दशा में होनेवाली मिचली या ऐसा ही कोई सामान्य शारीरिक विकार। डकौना। ४. गर्भवती होने की अवस्था या भाव। ५. गर्भवती होने के चिह्न या लक्षण। ६. भारतीय साहित्य में, कविसमय के अनुसार कुछ विशिष्ट पौधों, वृक्षों आदि के संबंध में यह मान्यता कि जब वे खिलने या फूलने को होते हैं, तब उनमें गर्भवती स्त्रियों की तरह कुछ इच्छाएँ और कामनाएँ होती हैं जिनकी पूर्ति होने पर वे जल्दी, समय से पहले और खूब अच्छी तरह खिलने या फूलने लगते हैं। जैसे—सुन्दरी स्त्री के पैरों की ठोकर से अशोक, पान की पीक थूकने से मौलसिरी, गाने से गम या नाचने से कचनार खिलने अथवा फलने-फूलने लगते हैं। (दे० 'वृक्ष दोहद') ७. फलित ज्योतिष के अनुसार यात्रा के समय कुछ ऐसी विशिष्ट चीजें खाने या पीने का विधान जिनसे तिथि, दिशा, वार आदि से संबंध रखनेवाले दोषों का परिहार या शांति होती है।

दोहदवती—स्त्री०[सं० दोहद+मतुप् ङीप्] गर्भवती स्त्री। गर्भिणी।

दोहदान्विता—स्त्री०[सं० दोहद+अन्विता तृ० त०]=दोहदवती।

दोहदी (दिन्)—वि० [सं० दोहद+इनि] जिसे प्रबल इच्छा हो।
स्त्री० गर्भवती स्त्री।

दोहदोहीय—पुं०[सं०] एक प्रकार का वैदिक गीत या साम।

दोहन—पुं० [सं०√दुह् (दुहना)+ल्युट्-अन] गाय-भैंस आदि के स्तनों से दूध निकालने की क्रिया या भाव।
†पुं०=दोहनी।

दोहना*—स०[सं० दोष+ना] १. दोष लगाना। दूषित ठहराना। २. तुच्छ या हीन ठहराना।
†स०=दूहना।

दोहनी—स्त्री०[सं० दोहन] १. दूध दुहने की क्रिया या भाव। २. [सं० दोहन+ङीप्] वह पात्र जिसमें दूध दूहा जाता हो।

दोहर—स्त्री०[हिं० दो+धड़ी=तह] दो पाटोंवाली चादर। दोहरी सिली हुई चादर।

दोहर-कम्मा—पुं०[हिं० दोहरा+काम] व्यर्थ परिश्रम करके दोबारा किया जानेवाला ऐसा काम जो पहली बार ही ठीक तरह से किया जा सकता था।

दोहरना—स०[हिं० दोहरा] १. दोहरा करना। २. दोबारा करना। दोहराना।
अ० १. दोहरा होना। २. दोबारा किया जाना। दोहराया जाना।

दोहरफ—पुं०[फा० दो+अ० हर्फ] धिक्कार। लानत।
क्रि० प्र०—भेजना।

दोहरा—वि०[हिं० दो+हरा (प्रत्य०)] [स्त्री० दोहरी] १. दो तहों, परतों या पल्लोंवाला। २. जो दो बार किया जाय या किया जाता हो। जैसे—दोहरी सिलाई। ३. दुगुना। दूना। ४. दो पक्षों पर लागू होनेवाला (कथन)।
पुं० १. लगे हुए पानों के दो बीड़े जो एक ही पत्ते में लपेटे हुए हों। २. कतरी हुई सुपारी।
†पुं० [दोहा] दोहे की तरह का एक छन्द जो दोहे के विषम पादों में एक एक मात्रा घटा देने से बनता है।

दोहराई—स्त्री०[हिं० दोहराना] १. दोहराने की क्रिया या भाव। दोबारा कोई काम करना। २. किसी काम को अधिक ठीक बनाने के लिए उसे अच्छी तरह से देखना। ३. दोहराने के बदले में मिलनेवाला पारिश्रमिक।

दोहराना—स०[हिं० दोहरा] १. किसी चीज को दो तहों या परतों में मोड़ना। दोहरा करना। २. कोई काम या बात फिर से उसी प्रकार करना या कहना। पुनरावृत्ति करना। ३. किये हुए काम को फिर से आदि से अंत तक इस दृष्टि से देखना कि उसमें कहीं कोई कसर या भूल तो नहीं रह गई है।
संयो० क्रि०—जाना।—डालना।—देना।

दोहरापाट—पुं०[हिं० दोहरी+पट] कुश्ती का एक पेंच।

दोहल—पुं०[सं० दोह√ला (लेना)+क] दोहद। (दे०)

दोहलवती—वि०[सं० दोहल+मतुप् ङीप्]=दोहदवती।

दोहला—वि० स्त्री०[हिं० दो+हल्ला] दो बार की ब्याई हुई (गाय या भैंस)। (गौ या भैंस) जो दो बार बच्चा दे चुकी हो।

दोहली—पुं०[सं०] १. अशोक वृक्ष। २. आक। मदार।
स्त्री०[?] ब्राह्मण को दान करके दी हुई जमीन।

दोहा—पुं०[सं० दोधक या द्विपदा] १. चार चरणोंवाला एक प्रसिद्ध छंद जिसके पहले और तीसरे चरणों में १३–१३ और दूसरे तथा चौथे चरणों में ११–११ मात्राएँ होती हैं। २. संगीत में, संकीर्ण राग का एक भेद।

दोहाई†—स्त्री०=दुहाई।

दोहाक†—पुं०=दोहाग।

दोहाग—पुं०[सं० दौर्भाग्य] दुर्भाग्य। बदनसीबी।

दोहागा—पुं०[हिं० दोहाग] [स्त्री० दोहागिन] अभागा। बदकिस्मत।

दोहान—पुं०[देश०] गौ का जवान बछड़ा।

दोहाव†—पुं०=दुहाव।

दोहित†—पुं०=दोहता (दौहित्र)।

दोही (हिन्)—वि०[सं०√दुह+घिनुण्] दुहनेवाला।

पुं० ग्वाला।

स्त्री०[हिं० दो] एक प्रकार का छंद जिसके पहले और तीसरे चरणों में १५-१५ और दूसरे तथा चौथे चरणों में ११-११ मात्राएँ होती हैं। इसके अंत में एक लघु होना आवश्यक है।

दोहिया—पुं०[?] एक प्रकार का पौधा।

वि०[हिं० दुहना] दुहनेवाला।

दोहुर—स्त्री[देश०] अधिक बलुई जमीन।

दोह्य—वि०[सं०√दुह+ण्यत्] जो दुहा जा सके। दुहे जाने के योग्य।

पुं० १. दूध। २. ऐसे मादा पशु जो दुहे जाते या दूध देते हों।

दोह्या—स्त्री०[सं० दोह्य+टाप्] गाय।

दौं—अव्य०[सं० अथवा] अथवा। या। वा। (दे० 'धौं')

†स्त्री० [सं० दव] १. आग। उदा०—हिरदै अंदर दौं लगी, धूआँ न परगट होय। २. गरमी के कारण लगनेवाली प्यास। ३. गरमी के कारण होनेवाली बेचैनी या विकलता। ४. जलन। क्रि० प्र०—लगना।

दौंकना†—अ०=दमकना।

दौंगरा—पुं०=दवँगरा।

दौंच—स्त्री०=दोच (दुविधा)।

दौंचना—स०[हिं० दबोचना] १. किसी पर दबाव डालकर उससे कुछ लेना। २. किसी न किसी प्रकार ले लेना। ३. लेने के लिए जोर से पकड़ना। ४. दबोचना।

दौंजा—पुं०[देश०] मचान।

दौंरी—स्त्री०[?] झुंड।

†स्त्री०=दँवरी।

दौःशील्य—पुं०[सं० दुःशील+ष्यञ्] दुःशील होने की अवस्था या भाव। स्वभाव की दुष्टता।

दौःसाधिक—पुं०[सं० दुर्-साध प्रा० स०,+ठक्-इक] १. द्वारपाल। २. ग्राम-निरीक्षक।

दौ—स्त्री० [सं० दव] १. जंगल की आग। दावानल। २. जंगल। वन। ३. दुःख। संताप। ४. दाह।

दौकूल—वि०[सं० दुकूल+अण्] १. दुकूल-संबंधी। २. दुकूल या कपड़े का बना हुआ।

दौड़—स्त्री०[हिं० दौड़ना] १. दौड़ने की क्रिया या भाव।

मुहा०—**दौड़ मारना या लगाना**=(क) दौड़ते हुए कहीं जाना। (ख) लंबी यात्रा करना। चलकर बहुत दूर पहुँचना।

२. ऐसी क्रीड़ा विशेषतः प्रतियोगिता जिसमें वेगपूर्वक आगे बढ़ा जाय। जैसे—घुड़दौड़। ३. किसी क्षेत्र में बहुत से लोगों का एक दूसरे से आगे बढ़ने के लिए किया जानेवाला प्रयत्न। ४. सिपाहियों का एकाएक किसी को पकड़ने अथवा तलाशी लेने के लिए किसी के घर पर वेगपूर्वक पहुँचना। ५. उक्त उद्देश्य से आने या पहुँचनेवाले सिपाही। ६. वेगपूर्वक किया जानेवाला आक्रमण। चढ़ाई। ७. गति, प्रयत्न आदि का वेग या सीमा। जैसे—मियाँ की दौड़ मसजिद तक। क्रि० प्र०—लगाना।

८. बुद्धि या समझ की गति या सीमा। जैसे—बस यहीं तक तुम्हारी दौड़ है। ९. लंबाई या विस्तार का वह अंश जिस पर कोई चीज चलती या लगती हो या कोई काम होता हो। जैसे—साड़ी में बेल या बूटे की दौड़। १०. किसी पदार्थ का लंबाई के बल का विस्तार। जैसे—इस दीवार की दौड़ ४० गज है। ११. जहाज पर की वह चरखी जिसमें लकड़ी डालकर घुमाने से वह जंजीर खिसकती है जिसमें पतवार बँधा रहता है।

दौड़-धपाड़—स्त्री०=दौड़-धूप।

दौड़-धूप—स्त्री० [हिं० दौड़ना+धूपना=धापना] ऐसा प्रयत्न जिसमें अनेक स्थानों पर बार-बार आना-जाना तथा अनेक आदमियों से मिलना और उनसे अनुनय करनी पड़े। जैसे—चुनाव के समय उम्मीदवारों को काफी दौड़-धूप करनी पड़ती है।

दौड़ना—अ०[सं० धोरण] [भाव० दौड़ाई] १. जैव या अजैव वस्तुओं का तीव्र गति से किसी दिशा की ओर या किसी पथ पर बढ़ना।—जैसे (क) मनुष्य, हाथी या इंजन दौड़ना। (ख) कागज पर कलम दौड़ना। **विशेष**—मनुष्य तो दौड़ने के समय जब एक पैर जमीन पर रख लेता है, तब दूसरा पैर उठाता है; परन्तु पशु प्रायः उछल-उछल कर जमीन पर से अपने चारों पैर ऊपर उठाते हुए दौड़ते हैं।

संयो० क्रि०—जाना।—पड़ना।

२. (व्यक्ति का) अपेक्षया अधिक तीव्र गति या वेग से किसी ओर जाना या बढ़ना। जैसे—दौड़कर मत चलो; नहीं तो ठोकर लगेगी। ३. किसी उद्देश्य की सिद्धि के लिए बार-बार कहीं आना-जाना। जैसे—अभी उसे दो-चार दिन दौड़ लेने दो, तब आप ही उसकी बुद्धि ठिकाने हो जायगी।

मुहा०—**दौड़ दौड़कर आना**=जल्दी-जल्दी और बार-बार आना। जैसे—हमारे यहाँ दौड़-दौड़ कर तुम्हारा आना व्यर्थ है। **दौड़ पड़ना**=एकाएक तीव्र गति या वेग से चलना आरंभ करना। जैसे—जहाँ तुम खेल-तमाशे का नाम सुनते हो, वहीं दौड़ पड़ते हो। **(किसी काम या बात के पीछे) दौड़ पड़ना**=बिना सोचे-समझे किसी ओर वेगपूर्वक प्रवृत्त होना। **(किसी पर) चढ़ दौड़ना**=आक्रमण या चढ़ाई करने के लिए बहुत तेजी से आगे बढ़ना। जैसे—गुंडे मार-पीट करने के लिए उनके मकान पर चढ़ दौड़े।

४. दौड़ की किसी प्रतियोगिता में सम्मिलित होना। ५. तरल पदार्थ के संबंध में, धारा का वेगपूर्वक किसी ओर बढ़ना। जैसे—(क) नसों में खून दौड़ना। (ख) नालियों में पानी दौड़ना। ६. किसी चीज का अंश या प्रभाव कार्यकारी, विद्यमान या व्याप्त होना। जैसे—(क) चेहरे पर लाली या स्याही दौड़ना। (ख) शरीर में जहर या विष दौड़ना।

दौड़हा†—पुं० [हिं० दौड़ना+हा (प्रत्य०)] वह जिसका काम दौड़कर समाचार या पत्र आदि ले आना और ले जाना हो। हरकारा।

दौड़ाई—स्त्री०[हिं० दौड़ना+आई (प्रत्य०)] १. दौड़ने की क्रिया या भाव। २. बार-बार इधर से उधर आते-जाते रहने का काम या भाव। ३. दौड़ने के बदले में मिलनेवाला पारिश्रमिक या पुरस्कार।

दौड़ा-दौड़—क्रि० वि०[हिं० दौड़+दौड़][भाव० दौड़ा-दौड़ी] बहुत तेजी से और बिना रुके। बेतहाशा। जैसे—सब लोग दौड़ा-दौड़ वहाँ जा पहुँचे।

†स्त्री०=दौड़ा-दौड़ी।

दौड़ा-दौड़ी—स्त्री०[हिं० दौड़ना] १. बहुत से लोगों के एक साथ दौड़ने की क्रिया या भाव। २. दौड़-धूप। ३. आतुरता। जल्दी। हड़बड़ी।

दौड़ान—स्त्री०[हिं० दौड़ना] १. दौड़ने की क्रिया या भाव। दौड़। २. गति की तीव्रता या वेग। झोंक। ३. क्रम। सिलसिला। ४. लंबाई। विस्तार।

दौड़ाना—स० [हिं० दौड़ना का सकर्मक रूप] १. किसी को दौड़ने में प्रवृत्त करना। जैसे—इंजन या घोड़ा दौड़ना। २. किसी को बहुत जल्दी या तुरन्त कोई काम कर आने के लिए भेजना। जैसे—रोगी की दशा खराब देखकर डाक्टर को लाने के लिए आदमी दौड़ाया गया।

संयो० क्रि०—देना।

३. किसी काम में ऐसी आनाकानी करना कि उसके लिए किसी को कई बार आना-जाना पड़े। जैसे—वे रुपए तो देते नहीं, बार-बार हमारे आदमी को दौड़ाते हैं। ४. किसी चीज को जमीन के साथ घसीटते हुए अथवा ऊपर कुछ दूर तक बढ़ाते हुए बराबर आगे ले जाना। जैसे—बिजली का तार उस कमरे तक दौड़ा दो। ५. किसी चीज को जल्दी जल्दी आगे बढ़ने में प्रवृत्त करना। जैसे—कागज पर कलम दौड़ाना।

संयो० क्रि०—देना।

दौत्य—वि०[सं० दूत+ष्यञ्] दूत-संबंधी।

पुं० दूत का काम, पद या भाव। दूतत्व।

दौन—पुं०=दमन।

दौना—पुं०[सं० दमनक] एक प्रकार का पौधा जिसकी पत्तियाँ कटावदार होती हैं और जिनमें तेज सुगंध निकलती है।

†स०[सं० दमन] दमन करना। दबाना।

पुं०=दोना (पत्तों का)।

दौनागिरि—पुं० [सं० द्रोणगिरि] द्रोणगिरि नामक पर्वत जो पुराणों में क्षीरोद समुद्र में स्थित कहा गया है। लक्ष्मण को शक्ति लगने पर हनुमान जी यहीं संजीवनी बूटी लेने गये थे।

दौनाचल—पुं०=द्रोणाचल।

दौनी†—स्त्री० १.=दावनी। २.=दँवरी।

दौर—पुं०[अ०] १. चक्कर। फेरा। २. वह क्रम, व्यवस्था अथवा समय जिसमें उपस्थित व्यक्ति कोई काम एक एक बार बारी-बारी से संपादित करें। जैसे—(क) शराब का पहला दौर। (ख) मुशायरे का दूसरा या तीसरा दौर। ३. अच्छे और बुरे अथवा सौभाग्य और दुर्भाग्य के दिनों का चलता रहनेवाला चक्र। ४. प्रताप और वैभव अथवा उसके फलस्वरूप चारों और फैलनेवाला आतंक या दबदबा।

पद—दौर-दौरा। (दे०)

†स्त्री०=दौड़।

दौर-दौरा—पुं०[फा०] किसी की ऐसी प्रधानता या प्रबलता जिसके सामने और बातें या लोग दबे रहते हों। जैसे—आज-कल राजनीतिक नेताओं का दौर-दौरा है।

दौरना†—अ०=दौड़ना।

दौरा—पुं०[अ० दौर] १. चारों ओर घूमने की क्रिया। चक्कर। भ्रमण। २. बराबर इधर-उधर या चारों ओर घूमते-फिरते रहने की अवस्था या दशा। ३. ऐसा आना-जाना जो समय-समय पर बराबर होता रहता हो। सामयिक आगमन। फेरा। जैसे—कभी-कभी इधर भी उनका दौरा हो जाता है। ४. जाँच-पड़ताल, निरीक्षण आदि के लिए अधिकारी का केन्द्र से चलकर आस-पास के स्थानों में घूमने या फेरा लगाने की क्रिया।

मुहा०—**दौरे पर रहना या होना**=जाँच-पड़ताल या देख-भाल के लिए केन्द्र से बाहर रहना या आस-पास के स्थानों में घूमना।

५. जिले के प्रधान न्यायाधीश या जज के द्वारा होनेवाली फौजदारी अभियोगों की वह सुनवाई जो प्रायः आदि से अंत तक बराबर एक साथ होती है।

मुहा०—**(किसी को) दौरा सुपुर्द करना**=निम्नस्थ अधिकारी का संगीन मुकदमे के अभियुक्त को विचार तथा निर्णय के लिए सेशन जज के पास भेजना।

६. बार-बार होती रहनेवाली बात का किसी एक बार होना। ऐसी बात होना जो समय-समय पर प्रायः होती रहती हो। ७. किसी ऐसे रोग का होनेवाला कोई उत्कट आक्रमण जो प्रायः या बीच-बीच में होता रहता हो। जैसे—पागलपन, मिरगी या सिर के दर्द का दौरा।

पुं०[सं० द्रोण] [स्त्री० अल्पा० दौरी] बाँस की पट्टियों, बेंत आदि का बुना हुआ टोकरा।

दौरा जज—पुं०[हिं० दौरा+अ० जज] किसी जिले का वह प्रधान न्यायाधिकारी (जज) जो फौजदारी के संगीन मुकदमे सुनता और उनका निर्णय करता हो। (सेशन्स जज)

दौरात्म्य—पुं०[सं० दुरात्मन्+ष्यञ्] १. दुरात्मा होने की अवस्था, भाव या वृत्ति। २. दुर्जनता।

दौरादौर—क्रि० वि०, स्त्री०=दौड़ा-दौड़।

दौरान—पुं०[फा०] १. दौर। चक्र। २. काल का चक्र। दिनों का फेर। ३. उतना समय जितने में कोई काम बराबर चलता या होता रहता हो। भोगकाल। जैसे—बुखार के दौरान में वे कभी-कभी बेहोश भी हो जाते थे। ४. दो घटनाओं के बीच का समय। ५. पारी। फेरा। बारी।

दौराना—स०=दौड़ना।

दौरित—पुं०[सं०?] क्षति। हानि।

दौरी—स्त्री०[हिं० दौरा का स्त्री० अल्पा०] १. बाँस या मूँज की छोटी टोकरी। छोटा दौरा। २. वह टोकरी जिसकी सहायता से खेतों में सिंचाई के लिए पानी डालते हैं। ३. खेतों में उक्त प्रकार से पानी सींचने की क्रिया।

दौर्गन्ध्य—पुं० [सं० दुर्गंध+ष्यञ्] दुर्गंध।

दौर्ग—वि० [सं० दुर्ग+अण्] १. दुर्ग-संबंधी। दुर्ग का। २. दुर्गा-संबंधी। दुर्गा का।

दौर्गत्य—पुं०[सं० दुर्गति+ष्यञ्] दुर्गति होने की अवस्था या भाव। दुर्दशा।

दौर्ग्य—पुं०[सं० दुर्ग+ष्यञ्] कठिनता।

दौर्ग्रह—पुं०[सं० दुर्ग्रह+अण्] अश्वमेध यज्ञ।

दौर्जन्य—पुं०[सं० दुर्जन+ष्यञ्] दुर्जनता।

दौर्बल्य—पुं०[सं० दुर्बल+ष्यञ्] दुर्बल होने की अवस्था या भाव। दुर्बलता।

दौर्भाग्य—पुं०[सं० दुर्भग+ष्यञ्] दुर्भाग्य।

दौर्भ्रात्र—पुं०[सं० दुर्भ्रातृ+अण्] भाइयों का परस्पर का झगड़ा या विवाद

दौर्मनस्य—पुं०[सं० दुर्मनस्+ष्यञ्] १. 'दुर्मनस' होने की अवस्था या भाव। २. दुर्जनता।

दौर्य—पुं०[सं० दूर+ष्यञ्] 'दूर' का भाव। दूरता। दूरी।

दौर्योधनि—पुं०[सं० दुर्योधन+इञ्] दुर्योधन के कुल में उत्पन्न व्यक्ति। दुर्योधन का वंशज।

दौर्वृत्य—पुं०[सं० दुर्वृत्त+ष्यञ्] १. दुर्वृत्त होने की अवस्था या भाव। २. दुराचार।

दौर्हार्द—पुं०[सं० दुर्हृद्+अण्] १. दुर्हृद होने की अवस्था या भाव। २. दुष्ट स्वभाव। ३. किसी के प्रति मन में होनेवाला दुर्भाव, द्वेष या वैर।

दौर्हृद—पुं०[सं० दुर्हृद्+अण्] दुर्हृदय होने की अवस्था या भाव। २. मन या हृदय की खोटाई। दुष्टता। ३. दे० 'दोहद'।

दौर्हृदय—पुं०[सं० दुर्हृदय+अण्] १. दुर्हृदय होने की अवस्था या भाव। २. शत्रुता।

दौर्हृदिनी—स्त्री०[सं० दौर्हृद+इनि-ङीप्] गर्भवती स्त्री। गर्भिणी।

दौलत—स्त्री०[अ०] १. वे अधिकृत सभी वस्तुएँ जिनका आर्थिक मूल्य हो। धन और संपत्ति। २. उक्त प्रकार की वे बहुत-सी वस्तुएँ जिनके अधिकार में होने पर कोई गरीब या धनी कहलाता है। ३. लाक्षणिक अर्थ में कोई अमूल्य तथा महत्त्वपूर्ण चीज। जैसे—लेखनी ही उनकी दौलत है।

दौलत-खाना—पुं०[फा० दौलतखानः] १. संपत्ति रखने का स्थान। २. निवास स्थान। (बड़ों के लिए आदर सूचक) जैसे—आपके दौलत-खाने पर हाजिर होऊँगा।

दौलत-मंद—वि० [फा०] [भाव० दौलतमंदी] अमीर। धनवान। मालदार।

दौलति†—स्त्री०=दौलत।

दौलताबादी—पुं०[दौलताबाद, दक्षिण भारत का नगर] एक प्रकार का बढ़िया कागज जो दौलताबाद (दक्षिण भारत का एक प्रदेश) में बनता है।

दौलेय—पुं०[सं० दुलि+ढक्—एय] कच्छप। कछुआ।

दौल्मि—पुं०[सं० दुल्म+इञ्] इंद्र।

दौवारिक—पुं०[सं० द्वार+ठक्—इक] [स्त्री० दौवारिकी] १. द्वारपाल। २. एक प्रकार के वास्तुदेव।

दौवालिक—पुं०[सं०] १. एक प्राचीन देश का नाम। २. उक्त देश का निवासी।

दौश्चर्म्य—पुं०[सं० दुश्चर्मन्+ष्यञ्] दुश्चर्मा होने की अवस्था या भाव। दे० 'दुश्चर्मा'।

दौश्चर्य—पुं०[सं० दुश्चर+ष्यञ्] १. दुराचरण। २. दुष्टता। ३. दुष्कर्म।

दौष्कुल—वि०[सं० दुष्कुल+अण्] बुरे या हीन कुल में उत्पन्न।

दौष्मंत—पुं०[सं० दुष्मंत+अण्] दुष्मंत के कुल में उत्पन्न व्यक्ति।

दौष्मंति—पुं०[सं० दुष्मंत+इञ्] =दौष्मंत।

दौष्यंति—पुं०[सं० दुष्यंत+इञ्] दुष्यंत का शकुंतला के गर्भ से उत्पन्न पुत्र, भरत।

दौहित्र—पुं०[सं० दुहितृ+अञ्] [स्त्री० दौहित्री] १, लड़की का लड़का। दोहता। नाती। २. तलवार। ३. तिल। ४. गौ का घी।

दौहित्रक—वि०[सं० दौहित्र+ठक्—क] दौहित्र-संबंधी।

दौहित्रायण—पुं०[सं० दौहित्र+फक्-आयन] दौहित्र का पुत्र।

दौहित्री—स्त्री०[सं० दौहित्र—ङीप्] बेटी की बेटी। नतनी।

दौहृद—पुं०[सं० दौर्हृद] गर्भवती की इच्छा। दोहद। (दे०)

दौहृदिनी—स्त्री०[सं० दौर्हृदिनी] गर्भवती स्त्री।

द्याना*—स०=दिलाना।

द्यावना*—स०=दिलाना।

द्यु—पुं०[सं०√दिव् (चमकना)+उन्] १. दिन। दिवस। २. आकाश। ३. स्वर्ग। ४. सूर्य लोक। ५. अग्नि। आग।

द्युक—पुं० [सं० द्यु+कन्] उल्लू।

द्युकारि—पुं०[सं० द्युक-अरि ष० त०] कौआ।

द्युग—वि० [सं० द्यु√गम् (गति)+ड] आकाश में गमन करनेवाला। पुं० चिड़िया। पक्षी।

द्यु-गण—पुं० [सं० ष० त०] दे० 'अहर्गण'।

द्युचर—वि० [सं० द्यु√चर (गति)+ट] आकाश में चलने या विचरण करनेवाला।
पुं० १. चिड़िया। पक्षी। २. ग्रह, नक्षत्र आदि आकाशस्थ पिंड।

द्यु-ज्या—स्त्री० [सं० उपमि० स०] अहोरात्र वृत्त की व्यासरूप ज्या।

द्युत—वि०[सं०√द्युत् (प्रकाश)+क] जिसमें द्युति या प्रकाश हो। चमकीला।
पुं० किरण।

द्युति—स्त्री०[सं०√द्युत्+इन्] १. प्रकाशमान होने की अवस्था, गुण या भाव। चमक। २. शारीरिक सौन्दर्य। शरीर की कांति। ३. लावण्य। छवि। ४. किरण।
पुं० चतुर्थ मनु के समय के एक ऋषि। (पुराण)

द्युति-कर—वि० [ष० त०] प्रकाश उत्पन्न करनेवाला। चमकनेवाला।
पुं० ध्रुव।

द्युतित—भू० कृ०=द्योतित।

द्युति-धर—वि०[ष० त०] प्रकाश या कांति धारण करनेवाला।
पुं० विष्णु।

द्युतिमंत—वि०=द्युतिमान्।

द्युतिमा—स्त्री०[हिं० द्युति+मा (प्रत्य०)] १. प्रकाश। रोशनी। २. चमक। द्युति। ३. तेज।

द्युतिमान (मत्)—वि०[सं० द्युति+मतुप्] [स्त्री० द्युतिमती] जिसमें चमक या आभा हो। प्रकाशवाला।
पुं० १. स्वायंभुव मनु के एक पुत्र। २. महाभारत काल में शाल्व देश के एक राजा जिन्हें क्रौंच द्वीप का राज्य मिला था।

द्युन—पुं०[सं०]जन्मकुंडली में लग्न से सातवाँ स्थान।

द्यु-निश—पुं०[सं० द्व० स०] दिन और रात।

द्यु-पति—पुं०[ष० त०] १. सूर्य। २. इन्द्र।

द्युपथ—पुं०[सं०] आकाशमार्ग।

द्यु-मणि—पुं०[सं० ष० त०] १. सूर्य। २. आक। मदार। ३. वैद्यक में शोधा हुआ तांबा।

द्युमत्सेन—पुं०[सं०] शाल्व देश के एक राजा जो सत्यवान् के पिता थे और दुर्भाग्य से अंधे हो गये थे।

द्युमद्गान—पुं०[सं०] एक प्रकार का सामगान।

द्युमयी—स्त्री०[सं०] विश्वकर्मा की कन्या जो सूर्य को ब्याही थी।

द्युमान् (मत्)—वि०[सं० दिव्+मतुप्, उत्व]=द्युतिमान्।

द्युम्न—पुं०[सं० द्यु√म्ना (अभ्यास)+क] १. सूर्य। २. अन्न। ३. धान ४. बल। शक्ति।

द्यु-लोक—पुं०[सं० कर्म० स०] स्वर्गलोक।

द्युवा (वन्)—पुं०[सं०√द्यु (आगे बढ़ना)+कनिन्] १. सूर्य। २. स्वर्ग।

द्युषद्—पुं०[सं०द्यु√सद्(गति)+क्विप्] १. देवता। २. ग्रह, नक्षत्र आदि आकाशचारी पिंड।

द्यु-सद्म (न्)—पुं०[सं० ब० स०] स्वर्ग।

द्यु-सरित्—स्त्री०[सं० ष० त०] स्वर्ग की मंदाकिनी नदी।

द्यू—पुं० [सं०√दिव् (क्रीड़ा)+क्विप्, ऊठ्] जूआ खेलनेवाला। जुआरी।

द्यूत—पुं० [सं०√दिव्+क्त, ऊठ्] ऐसा खेल जिसमें दाँव पर धन लगाया जाय और उसकी हार-जीत हो। जूआ।

द्यूत-कर, द्यूतकार—वि० [सं० ष०त०, द्यूत√कृ (करना)+अण्] जूआ खेलनेवाला। जुआरी।

द्यूत-दास—पुं०[मध्य० स०] [स्त्री० द्यूतदासी] जूए में जीतकर प्राप्त किया हुआ व्यक्ति, जिसे अपने विजेता का दास बनकर रहना पड़ता था।

द्यूत-पूर्णिमा—पुं०[च० त०] आश्विन की पूर्णिमा। कोजागरी। प्राचीन काल में लोग इस रोज रात भर जागकर जूआ खेलते थे।

द्यूत-फलक—पुं०[ष०त०] वह चौकी या तख्ता जिस पर बिसात बिछाई जाती थी और कौड़ी या पासा फेंका जाता था।

द्यूत-बीज—पुं०[ष० त०] जूआ खेलने की कौड़ी।

द्यूत-भूमि—स्त्री०[ष० त०] जूआ खेलने का स्थान। जुआरियों का अड्डा।

द्यूत-मंडल—पुं०[ष० त०] १. जुआरियों की मंडली। २. वह स्थान जहाँ बैठकर लोग जूआ खेलते हों। जूआखाना।

द्यूत-समाज—पुं०[ष० त०] जुआरियों का जमघट।

द्यूताध्यक्ष—पुं०[द्यूत-अध्यक्ष ष० त०] प्राचीन भारत में वह राजकीय अधिकारी जो जूए का निरीक्षण करता था और जुआरियों से राजकीय प्राप्य भाग लिया करता था। (कौ०)

द्यूताभियोग—पुं०[द्यूत-अभियोग ष० त०] जूआ खेलने के अपराध में चलाया जानेवाला अभियोग या मुकदमा।

द्यूतावास—पुं०[द्यूत-आवास ष० त०] जूआखाना।

द्यूति प्रतिपदा—स्त्री०[सं० द्यूतप्रतिपत्] कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा जिस दिन लोग जूआ खेलते हैं।

द्यून—पुं०[सं०√दिव्+क्त, ऊठ्, नत्व] जन्म-कुंडली में लग्न स्थान से सातवीं राशि।

द्यो—स्त्री०[सं०√द्युत्+डो] १. स्वर्ग।२. आकाश। ३. शतपथ ब्राह्मण के अनुसार आठ वसुओं में से एक।

द्योकार—पुं०[सं० द्यो०√कृ+अण्] भवन बनानेवाला राज।

द्योत—पुं०[सं०√द्युत् (चमकना)+घञ्] १. प्रकाश। २. धूप।

द्योतक—वि०[सं०√द्युत्+णिच्+ण्वुल्-अक] १. द्योतन करनेवाला। २. जो किसी चीज को प्रकाश में लावे। ३. प्रकट करनेवाला। ४. अभिव्यक्त या व्यक्त करनेवाला।

द्योतन—पुं०[सं०√द्युत्+णिच्+ल्युट्-अन] [भू० कृ० द्योतित] प्रकाश से युक्त करने की क्रिया या भाव। २. दिखाने की क्रिया या भाव। दिग्दर्शन। ३. प्रकट या व्यक्त करने की क्रिया या भाव। ४. [√द्युत्+युच्-अन] ४. दीआ। दीपक।
वि० चमकीला। प्रकाशमान।

द्योतनिका—स्त्री०[सं० द्योतन+ङीप्+कन्-टाप्, ह्रस्व] किसी ग्रन्थ की टीका या व्याख्या।

द्योतित—भू० कृ०[सं०√द्युत्+णिच्+क्त] १. द्युति या प्रकाश से युक्त किया हुआ। २. प्रकट या व्यक्त किया हुआ।

द्योतिरिंगण—पुं० [सं० ज्योतिरिंगण पृषो० सिद्धि] खद्योत। जुगनूँ।

द्यो-भूमि—पुं०[सं० ब० स०] पक्षी।

द्योषद्—पुं०[सं० द्यो√सन्+क्विप्] देवता।

द्योहरा†—पुं०=देवहरा (देवालय)।

द्यौ—स्त्री० [सं० द्यो] १. स्वर्ग। २. आकाश।

द्यौस—पुं०[सं० दिवस्] दिन।

द्यौसक—पुं०[हिं० द्योस=दिवस+एक] दो-एक दिन। कुछ ही दिन।

द्रंक्षण—पुं०[सं०√द्रांक्ष् (आकांक्षा)+ल्युट्-अन, पृषो० ह्रस्व] तौल का एक पुराना मान जो दो कर्ष अर्थात् एक तोले के बराबर होता था। इसे 'कोल' और 'वटक' भी कहते थे।

द्रंग—पुं०[सं०] वह नगर जो पत्तन से बड़ा और कर्बर से छोटा हो।

द्रग†—पुं०=दृग।

द्रगणा—पुं०[सं०] एक प्रकार का पुराना बाजा। दगड़ा।

द्रग्ग†—पुं०=दृग।

द्रढिमा—स्त्री० [सं० दृढ+इमनिच्] दृढ़ता।

द्रढिष्ठ—वि०[सं० दृढ+इष्ठन्] खूब दृढ़। बहुत मजबूत।

द्रप्पन†—पुं०=दर्पण।

द्रप्स—वि०[सं०√दृप् (गति)+क्स, र आदेश] तेज चलनेवाला।
पुं० १. वह तरल पदार्थ जो अधिक गाढ़ा न हो। २. तक्र। मठा। ३. रस। ४. वीर्य।

द्रप्स्य—पुं०=द्रप्स।

द्रब—पुं०=द्रव्य।

द्रमिल—पुं०[सं०] तमिल देश का पुराना नाम।

द्रम्म—पुं०[अ० फा० दिरम] १. एक प्रकार का पुराना सिक्का, जिसका मान या मूल्य भिन्न-भिन्न समयों में अलग-अलग था। २. उक्त सिक्के के बराबर की तौल।

द्रवंती—स्त्री०[सं०√द्रु (गति)+शतृ-ङीप्] १. नदी। २. मूसाकानी (वनस्पति)।

द्रव—वि०[सं०√द्रु+अप्] १. पानी की तरह पतला। तरल। २. आर्द्र। गीला। तर। ३. पिघला हुआ।

पुं० १. द्रव या तरल पदार्थ का चूना, बहना या रसना। द्रवण । २. आसव। ३. रस। ४. बहाव। ५. दौड़ने या भागने की क्रिया। पलायन। ६. तेज़ी। वेग। ७. हँसी-ठट्ठा। परिहास। ८. दे० 'द्रवत्व'।

द्रवक—वि०[सं०√द्रु+ण्वुल्-अक] १. भागनेवाला। भगेड़ू। भग्गू। २. चूने, बहने या रसनेवाला। ३. द्रवित करने या होनेवाला।

द्रवज—वि०[सं० द्रव√जन्(उत्पत्ति)+ड] द्रव पदार्थ से निकला या बना हुआ।

पुं० किसी प्रकार के रस से बनी हुई वस्तु। जैसे—गुड़, चीनी आदि।

द्रवड़ना *—अ०=दौड़ना। (राज०)

द्रवण—पुं०[सं०√द्रु+ल्युट्-अन] [वि० द्रवित] १. गमन। २. दौड़। ३. रसना या बहना। क्षरण। ४. पिघलना या पसीजना। ५. चित्त के द्रवित या दयापूर्ण होने की वृत्ति। ६. कामदेव का एक वाण जो हृदय को द्रवित करनेवाला कहा गया है। उदा०—परठि द्रविण सोखण सरपंच। —प्रिथीराज।

द्रवण-शील—वि०[ब० स०] [भाव० द्रवणशीलता] १. पिघलनेवाला। २. (व्यक्ति) जिसके हृदय में दूसरों का कष्ट देखकर दया उत्पन्न होती हो और फलतः जो उनके प्रति कठोर व्यवहार नहीं करता और दूसरों को वैसा करने से रोकता है। पसीजनेवाला।

द्रवणांक—पुं० [सं० द्रवण-अंक ष० त०] ताप का वह मान जिस पर कोई ठोस चीज पिघलने लगती है। (मेल्टिंग प्वाइंट)

विशेष—विभिन्न वस्तुओं का द्रवणांक विभिन्न होता है।

द्रवता—स्त्री०[सं० द्रव+तल्-टाप्] द्रवत्व।

द्रवत्पत्री—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्] चँगोनी नामक पौधा।

द्रवत्व—पुं० [सं० द्रव+त्व] द्रव होने की अवस्था, गुण या भाव।

द्रवना—अ० [सं० द्रवण] १. द्रवित होना अर्थात् पिघलना। २. प्रवाहित होना। बहना। ३. हृदय में किसी के प्रति दया उपजना। दयार्द्र होना।

द्रव-रसा—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] १. लाख। लाह। २. गोंद।

द्रवाधार—पुं० [सं० द्रव-आधार ष० त०] १. छोटा पात्र। २. अंजलि। ३. चुल्लू।

द्रविड़—पुं० [सं० द्रामिल ?] १. दक्षिण भारत के पूर्वी तट पर स्थित एक विस्तृत प्रदेश का पुराना नाम। आधुनिक आंध्र और मदरास इसी प्रदेश में है। २. उक्त प्रदेश का निवासी। ३. ब्राह्मणों का एक विभाग जिसके अंतर्गत आंध्र, कर्णाटक, गुर्जर, द्रविड़ और महाराष्ट्र ये पाँच वर्ग हैं।

वि० द्रविड़ प्रदेश अथवा उसके निवासियों से संबंध रखनेवाला। द्राविड़।

द्रविड़-नाशन—पुं० [ष० त०] सहिजन का पेड़। शोभांजन।

द्रविड़ी—स्त्री० [सं० द्रविड़+ङीष्] एक प्रकार की रागिनी।

द्रविण—पुं० [सं० √द्रु+इनन्] १. धन। द्रव्य। २. सोना। स्वर्ण। ३. पराक्रम। पौरुष। ४. पुराणानुसार कुश द्वीप का एक पर्वत। ५. क्रौंच द्वीप का एक वर्ष या देश। ६. राजा पृथु का एक पुत्र।

पुं० =द्रवण (अस्त्र)।

द्रविण-प्रद—पुं० [ष० त०] विष्णु।

द्रविणाधिपति—पुं० [द्रविण-अधिपति ष० त०] कुबेर।

द्रविणोदा (स्)—पुं० [सं०] १. वैदिक देवता। २. अग्नि।

द्रवीभवन—पुं० [सं०] [भू० कृ० द्रवीभूत] १. किसी घन पदार्थ का द्रव रूप धारण करना। २. भाप से पानी बनने की क्रिया जिसमें या तो भाप का घनत्व या ताप-क्रम कम हो जाता है।

द्रवीभूत—भू० कृ० [सं० द्रव+च्वि√भू+क्त] १. द्रव या तरल रूप में आया या लाया हुआ। २. पिघला या पिघलाया हुआ। ३. (व्यक्ति) जिसके हृदय में दया उत्पन्न हुई हो । ४. दया से विह्वल (हृदय)।

द्रव्य—वि० [सं० √द्रु+यत् नि० सिद्धि] १. द्रुम-संबंधी। पेड़ का। २. पेड़ से निकला हुआ। ३. पेड़ की तरह का।

पुं० १. चीज। पदार्थ। वस्तु। २. दार्शनिक क्षेत्र में, वह पदार्थ जिसमें किसी प्रकार की क्रिया या गुण अथवा दोनों हों और जो किसी का समवाय कारण हो, अर्थात् जिससे कोई चीज बनती हो।

विशेष—वैशेषिकों ने जो सात पदार्थ माने है, उनमें से द्रव्य भी एक है। रामानुजाचार्य ने इसे तीन प्रभेदों में से एक प्रभेद माना है; और इसके ये छः भेद कहे हैं—ईश्वर, जीव, नित्य, विभूति, ज्ञान, प्रकृति और काल।

३. लौकिक व्यवहार में, वह उपादान या सामग्री जिससे और चीजें बनती है। सामान। जैसे—चाँदी, ताँबा, मिट्टी, रूई आदि वे द्रव्य हैं जिनसे गहने, कपड़े, बरतन आदि बनते हैं। ४. धन-दौलत, रुपए आदि। जैसे—उन्होंने व्यापार में बहुत-सा द्रव्य कमाया था। ५. पीतल। ६. जड़ी-बूटी अथवा ओषधि। ७. मद्य। शराब। ८. गोंद। ९. लेप। १०. लाख। लाक्षा।

द्रव्यक—वि० [सं० द्रव्य+कन्] द्रव्य या कोई पदार्थ उठाने या वहन करनेवाला।

द्रव्यत्व—पुं० [सं० द्रव्य+त्व] 'द्रव्य' होने की अवस्था, गुण या भाव। द्रव्यता।

द्रव्य-पति—पुं० [ष० त०] १. बहुत से द्रव्यों या पदार्थों का स्वामी। २. धन का मालिक। धनवान्। ३. आकाशस्थ राशियाँ; जो विभिन्न पदार्थों की स्वामी मानी गई है। (फलित ज्योतिष)

द्रव्यमय—वि० [सं०द्रव्य+मयट्] १. द्रव्य अर्थात् पदार्थ से युक्त। २. पदार्थ संबंधी। ३. धन से परिपूर्ण। संपत्तिवान्।

द्रव्य-वन—पुं० [मध्य० स०] लकड़ियों के लिए रक्षित वन। (कौ०)

द्रव्यवन-भोग—पुं० [ष० त०] वह जागीर या उपनिवेश जिसमें लकड़ी तथा अन्य वन्य पदार्थों की अधिकता हो। (कौ०)

द्रव्यवान (वत्)—वि० [सं० द्रव्य+मतुप्] [स्त्री० द्रव्यवती] १. द्रव्य अर्थात् पदार्थ से युक्त। २. धनवान्। सम्पन्न।

द्रव्य-सार—पुं० [ष० त०] बहुमूल्य पदार्थ। उपयोगी पदार्थ।

द्रव्यांतर—पुं० [द्रव्य-अंतर मयू० स०] प्रस्तुत द्रव्य से भिन्न कोई और द्रव्य।

द्रव्याधीश—पुं० [द्रव्य-अधीश] १. धन के स्वामी, कुबेर। २. बहुत बड़ा धनवान्।

द्रव्यार्जन—पुं० [द्रव्य-अर्जन ष० त०] धन अर्जित करने की क्रिया या भाव।

द्रव्याश्रित—वि० [द्रव्य-आश्रित ष० त०] द्रव्य में वर्तमान या विद्यमान रहनेवाला।

द्रष्टव्य—वि० [सं०√दृश् (देखना)+तव्यत्] १. दिखाई देने या पड़नेवाला। दृष्टिगोचर। २. देखने में बहुत अच्छा लगनेवाला। दर्शनीय। ३. देखने, जानने अथवा निरीक्षण किये जाने के योग्य। ४. जो दिखाया, बतलाया या समझाया जाने को हो। ५. जिसे कुछ दिखाना, बतलाना या समझाना हो। ६. जो निश्चित और प्रत्यक्ष रूप से किया जाने को हो। कर्त्तव्य।

द्रष्टा (ष्टृ)—वि० [सं० √दृश् +तृच्] १. देखनेवाला। २. साक्षात् या सामना करनेवाला। ३. दिखलाने या बतलानेवाला।

पुं० १. साक्षी। २. सांख्य के अनुसार पुरुष और योग के अनुसार आत्मा जिसे दार्शनिक लोग सब प्रकार के सांसारिक कार्यों को केवल देखनेवाला मानते हैं, करने या भोगनेवाला नहीं मानते।

द्रष्टार—पुं० [सं०] विचारपति। न्यायाधीश।

द्रह—पुं० [सं० ह्रद, पृषो० सिद्धि] १. बहुत गहरी झील। २. जलाशय में वह स्थान जो बहुत गहरा हो। दह।

द्राक्ष-शर्करा—स्त्री० [सं० अंगूर के रस को रासायनिक प्रक्रिया से सुखा कर बनाई जानेवाली चीनी। (ग्लूकोज)

द्राक्षा—स्त्री० [सं० √द्रांक्ष् (चाहना)+अ—टाप्] अंगूर। दाख।

द्राघिमा (मन्)—स्त्री० [सं० दीर्घ+इमनिच्] १. दीर्घता। लंबाई। २. अक्षांश सूचित करनेवाली वे कल्पित रेखाएँ जो भूमध्य रेखा के समानांतर पूर्व-पश्चिम को मानी गई हैं। ३. किसी तरह की वह स्थिति जिसमें वह पृथ्वी से अधिकतर दूरी पर होता है। (एपेजी)

द्राण—भू० कृ० [सं०√द्रा (सोना, भागना)+क्त] भागा हुआ। २. सोया हुआ। सुप्त।

पुं० १. पलायन। भागना। २. स्वप्न। सपना।

द्राप—पुं० [सं० √द्रा+णिच्, पुक्+अच्] १. आकाश। २. कौड़ी। ३. शिव। ४. मूर्ख व्यक्ति।

द्रामिल—वि० [सं०द्राविड़] द्रामिल वा द्रविड़ देशवासी।

पुं० चाणक्य का एक नाम।

द्राव—पुं० [सं०√द्रु (गति)+घञ्] १. जाने या भागने की क्रिया या भाव। २. वेग। गति। ३. चूना, बहना या रसना। क्षरण। ४. गलना या पिघलना। ५. ताप। ६. अनुताप। पछतावा।

द्रावक—वि० [सं० √द्रु+णिच्+ण्वुल्—अक] १. द्रव रूप में करने या लानेवाला। ठोस चीज को पानी की तरह पतला करने और बहानेवाला। २. गलाने या पिघलानेवाला। ३. हृदय में दया आदि कोमल भाव उत्पन्न करनेवाला। ४. पीछा करनेवाला। ५. चुरानेवाला। ६. दौड़ाने या भगानेवाला। ७. चतुर। चालाक। ८. चालबाज। धूर्त्त। ९. दिवालिया।

पुं० १. चंद्रकांतमणि। २. बहुत बड़ा चालाक आदमी। ३. चोर। ४. व्यभिचारी व्यक्ति। ५. मोम। ६. सुहागा।

द्रावक-कंद—पुं० [ब० स०] तैलकंद। तिलकंदरा।

द्रावकर—वि० [सं० द्राव√कृ (करना)+ट] द्रवित करनेवाला।

पुं० सुहागा, जो सोने को गलाता या पिघलाता है।

द्रावण—पुं० [सं०√द्रु+णिच्+ल्युट्—अन्] १. द्रवीभूत करने का कार्य या भाव। गलाने या पिघलाने की क्रिया या भाव। २. दौड़ाने या भगाने की क्रिया। ३. रीठा।

द्राविका—स्त्री० [सं०√द्रु +ण्वुल्—अक्, टाप्, इत्व] १. थूक। लार। २. मोम।

द्राविड़—वि० [सं० द्रविड़+अण्] [स्त्री० द्राविड़ी] १. द्रविड़ देश-संबंधी। द्रविड़ का। २. द्रविड़ देश में रहने या होनेवाला।

पुं० १. कचूर। २. आँबा हलदी। ३. द्रविड़। ४. दक्षिण भारत की भाषाओं का सामूहिक परिवार।

द्राविड़क—पुं० [सं० द्राविड़+कन्] १. विट् लवण। सोंचर नमक। २. आँबा हलदी।

द्राविड़-गौड़—पुं० [कर्म० स०] रात्रि के समय गाया जानेवाला एक राग।

द्राविड़-प्राणायाम—पुं० [सं० कर्म० स०] कोई काम ठीक प्रकार से और सीधे रास्ते न करके वही काम घुमा-फिराकर तथा उलटे ढंग से करना।

द्राविड़ी—स्त्री० [सं० द्राविड़+ङीष्] छोटी इलायची।

वि० [सं०] द्रविड़-संबंधी।

स्त्री० १. द्रविड़ प्रदेश की स्त्री। २. छोटी इलायची।

द्राविड़ी-प्राणायाम—पुं० =द्राविड़-प्राणायाम।

द्रावित—भू० कृ० [सं०√द्रु+णिच्+क्त] १. द्रव किया हुआ। २. गलाया या पिघलाया हुआ। ३. दयार्द्र किया हुआ। ४. भगाया हुआ।

द्राह्यायण—पुं० [सं०द्रह+यंत्र+फक्—आयन] द्रह ऋषि के गोत्र में उत्पन्न एक ऋषि।

द्रिठि*—स्त्री० [सं० दृष्टि] नजर। दृष्टि। उदा०—वेलखि अणी मूठि द्रिठिबंधि—प्रिथीराज।

द्रिढ़*—वि० =दृढ़।

द्रिब*—पुं० = द्रव्य।

द्रिष्टि*—स्त्री० =दृष्टि।

द्रु—पुं० [सं०√द्रु +डु] १. वृक्ष। पेड़। २. वृक्ष की शाखा। पेड़ की डाल।

द्रु-किलिम—पुं० [सं०√किल् (श्वेत होना) +किमच्, द्रु-किलिम स० त०] देवदारु।

द्रुग†— पुं० =दुर्ग।

द्रुग्ध—भू० कृ० [सं० √द्रुह (दोह) +क्त] जिसके विरुद्ध षड्यंत्र रचा गया हो। ३. जिसे द्वेष आदि के कारण हानि पहुँचाई गई हो।

द्रुघण—पुं० [सं० द्रु√हन् (मारना)+अप्, घनादेश. णत्व] १. लोहे का मुग्दर। २. कुठार। कुल्हाड़ा। ३. परशु या फरसे की तरह का एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र। ४. भू-चंपा। ५. ब्रह्मा।

द्रुण—पुं० [सं०+द्रुण (हिंसा)+क] १. धनुष। कमान। २. खड्ग। तलवार। ३. बिच्छू। ४. भृंगी नाम का कीड़ा।

द्रुणा—स्त्री० [सं० द्रुण+अच्—टाप्] धनुष की डोरी। ज्या।

द्रुणी—स्त्री० [सं०√द्रुण+इन्—ङीष्] १. मादा कछुआ। कछुई। २. कन-खजूरा। ३. कठवत। कठौता।

द्रुत—वि० [सं०√द्रु+क्त] १. पिघला हुआ। २. शीघ्रतापूर्वक और वेग से आगे बढ़ने या कोई काम करनेवाला। ३. जो भागकर

बच निकला हो। ४. (संगीत में स्वर, लय आदि) जिसकी गति साधारण की अपेक्षा द्रुत हो। जैसे—द्रुत लय या द्रुत विलंबित।

क्रि० वि० जल्दी। शीघ्र। उदा०—फिर तुम तम में, मैं प्रियतम में हो जावें द्रुत अंतर्धान।—पंत।

पुं० १.* बिच्छू। २. बिल्ली। ३. वृक्ष। पेड़। ४. संगीत में, उतने समय का आधा जितना साधारणतः एक मात्रा का होता या माना जाता है। लेखन में इसका चिह्न है। ५. संगीत में, गाने की वह लय जो मध्यम से भी कुछ और तीव्र होती है।

द्रुत-गति—वि० [ब० स०] जल्दी या तेज चलनेवाला। शीघ्रगामी।

द्रुतगामी (मिन्)—वि० [सं० द्रुत√गम् (जाना) +णिनि] [स्त्री० द्रुतगामिनी] जल्दी या तेज चलनेवाला। शीघ्रगामी।

द्रुत-त्रिताली—स्त्री० = जल्द तिताला (ताल)।

द्रुत-पद—पुं० [कर्म० स०] १. शीघ्रगामी चरण। २. १२-१२ अक्षरों के चार चरणोंवाला एक प्रकार का छंद जिसका चौथा, ग्यारहवाँ और बारहवाँ अक्षर गुरु और शेष अक्षर लघु होते हैं।

द्रुत-मध्या—स्त्री० [ब० स०] एक अर्द्ध-सम-वृत्ति जिसके प्रथम और तृतीय पद में ३ भगण और दो गुरु होते हैं।

द्रुत-बिलंबित—पुं० [कर्म० स०] एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः १ नगण २ भगण और १ रगण होता है। इसे 'सुंदरी' भी कहते हैं।

द्रुति—स्त्री० [सं० √द्रु+क्तिन्– १. तरल पदार्थ। द्रव। २. द्रवित होने की अवस्था या भाव। ३. गति। चाल।

द्रुतै*—अव्य० [सं० द्रुत] शीघ्रता से। जल्दी।

द्रु-नख—पुं० [सं० ष० त०] काँटा।

द्रुपद—पुं० [सं०] उत्तर पांचाल के एक प्रसिद्ध राजा जिनकी कन्या कृष्णार्जुन आदि पांडवों को ब्याही गई थी। २. खंभे का आधार या पाया। ३. खड़ाऊँ।

द्रुपदा—स्त्री० [सं० द्रुपद+अच्–टाप्] एक वैदिक ऋचा जिसके आदि में द्रुपद शब्द है।

†स्त्री० = द्रौपदी।

द्रुपदात्मज—पुं० [द्रुपद-आत्मज ष० त०] [स्त्री० द्रुपदात्मजा] १. शिखंडी। २. धृष्ट-द्युम्न।

द्रुपदादित्य—पुं० [द्रुपदा-आदित्य मध्य० स०] काशी खंड के अनुसार सूर्य की एक प्रतिमा जो द्रौपदी द्वारा प्रस्थापित मानी जाती है।

द्रुम—पुं० [सं० द्रु+म] १. वृक्ष। पेड़। २. पारिजात। परजाता। ३. कुबेर। ४. रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण का एक पुत्र।

द्रुम-कंटिका—स्त्री० [ष० त०] सेमर का पेड़।

द्रुम-नख—पुं० [ष० त०] पेड़ का नाखून, काँटा।

द्रुम-मर—पुं० [सं० द्रुम√मृ० (मरना) +अप्] काँटा। कंटक।

द्रुम-व्याधि—स्त्री० [ष० त०] १. पेड़ों के होनेवाले रोग। २. लाख। लाक्षा। ३. गोंद।

द्रुम-शीर्ष—पुं० [ष० त०] १. पेड़ का ऊपरी भाग या सिरा। २. [ब० स०] वास्तु शास्त्र में गोल मंडप के आकार की एक प्रकार की छत।

द्रुम-श्रेष्ठ—पुं० [स० त०] ताड़ का पेड़।

द्रुम-सार—पुं० [ष० त०] अनार का पेड़।

द्रुम-सेन—पुं० [सं०] महाभारत का एक योद्धा जो धृष्टद्युम्न के हाथों मारा गया था।

द्रुमामय—पुं० [द्रुम-आमय ष० त०] १. पेड़ों को होनेवाले रोग। २. लाख। लाक्षा।

द्रुमारि—पुं० [द्रुम-अरि ष० त०] पेड़ का शत्रु, हाथी।

द्रुमालय—पुं० [द्रुम-आलय ष० त०] वृक्ष का घर। जंगल।

द्रुमाश्रय—वि० [द्रुम-आश्रय ब० स०] वृक्षों पर निवास करनेवाला। पुं० गिरगिट।

द्रुमिणी—स्त्री० [सं० द्रुम+इनि–ङीप्] १. वृक्षों का समूह। २. जंगल। वन।

द्रुमिल—पुं० [सं०] १. एक दानव जो सौभ देश का राजा था। २. नौ योगेश्वरों में से एक।

द्रुमिला—स्त्री० [सं०] एक प्रकार का छंद जिसके चरणों में ३२-३२ मात्राएँ होती हैं।

द्रुमेश्वर—पुं० [सं० द्रुम-ईश्वर ष० त०] १. चंद्रमा। २. पारिजात। परजाता। ३. ताड़ का पेड़।

द्रुमोत्पल—पुं० [सं० द्रुम-उत्पल ब० स०] कर्णिकार वृक्ष। कनकचंपा। कनियारी।

द्रुवय—पुं० [सं० द्रु+वय] लकड़ी की एक पुरानी माप।

द्रु-सल्लक—पुं० [सं० स० त०] चिरौंजी का पेड़।

द्रुह—पुं० [सं०√द्रुह् (अनिष्ट चाहना) +क] [स्त्री० द्रुही] १. पुत्र। बेटा २. वृक्ष। पेड़।

द्रुहण—पुं० [सं० द्रु√हन् (हिंसा) +अच्] ब्रह्मा।

द्रुहिण—पुं० [सं० √द्रुह+इनन्] ब्रह्मा।

द्रुही—स्त्री० [सं० द्रुह+ङीप्] कन्या।

द्रुह्यु—पुं० [सं०] १. एक वैदिक जाति। २. राजा ययाति का शर्मिष्ठा के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र।

द्रू—पुं० [सं०√द्रु (पिघलना) +क्विप्] सोना। स्वर्ण।

द्रूण—पुं० [सं० =द्रुण, पृषो० सिद्धि] बिच्छू।

द्रेका—स्त्री० [सं०] बकायन। महानिंब।

द्रेक्क—पुं० [यू० डेकनस] राशि का तृतीयांश।

वि० दे० 'दृक्काण'।

द्रेष्काण—पुं० [यू० डेकनस] ज्योतिष में, राशि का तृतीयांश।

द्रोण—पुं० [सं०√द्रु (गति) +न] १. लकड़ी का वह घड़ा या बरतन जिसमें वैदिक काल में सोम रखा जाता था। २. लकड़ी का बड़ा बरतन। कठवत। ३. एक प्रकार की पुरानी तौल जो चार आढ़क या सोलह सेर अथवा किसी-किसी के मत से बत्तीस सेर की होती थी। ४. नाव। नौका। ५. अरणी की लकड़ी। ६. रथ। ७. पत्तों का दोना। ८. डोम कौआ। ९. बिच्छू। १०. पेड़। वृक्ष। ११. नील का पौधा। १२. केला। १३. दीर्घिका और पुष्करिणी से बड़ा वह तालाब जो चार सौ धनुष लंबा और इतना ही चौड़ा होता था। १४ मेघों का एक नायक जिसके भोगकाल में खूब वर्षा होती है। १५. दे० 'द्रोणाचल'। १६. दे० 'द्रोणाचार्य'।

द्रोण-कलश—पुं० [उपमि० स०] यज्ञ आदि में सोम छानने का वैकंक लकड़ी का बना हुआ एक प्राचीन पात्र।

द्रोण-काक—पुं० [उपमि० स०] डोम कौआ।
द्रोण-गंधिका—स्त्री० [ब० स० टाप्, इत्व] रासना।
द्रोण-गिरि—पुं० [मध्य० स०] द्रोणाचल।
द्रोण-पदी—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] कुंभपदी।
द्रोण-पुष्पी—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] एक छोटा पौधा। गूमा।
द्रोण-मुख—पुं० [ब० स०] वह गाँव जो ४०० गाँवों में प्रधान हो।
द्रोण-मेघ—पुं० [ब० स०] बहुत अधिक जल बरसाने वाला मेघ।
द्रोण-शर्मपद—पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ। (महाभारत)
द्रोणस—पुं० [सं०] एक दानव का नाम।
द्रोणा—स्त्री० [सं० द्रोण+अच्—टाप्] गूमा। द्रोणपर्णी।
द्रोणाचल—पुं० [सं० द्रोण-अचल मध्य० स०] एक प्रसिद्ध पर्वत जहाँ से लक्ष्मण के लिए हनुमान संजीवनी बूटी लाये थे। रामायण के अनुसार यह क्षीरोद सागर के किनारे था। द्रोणगिरि।
द्रोणाचार्य—पुं० [सं० द्रोण-आचार्य मध्य स०] ऋषि भारद्वाज के पुत्र तथा परशुराम के शिष्य एक प्रसिद्ध योद्धा जो कौरवों और पांडवों के गुरु थे और महाभारत के युद्ध में कौरवों की ओर से लड़े थे। इनका वध राजा द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न ने किया था।
द्रोणायन—पुं० [सं० द्रोण+फ़क्-आयन, द्रोण+फिञ्—आयन] द्रोणाचार्य के पुत्र, अश्वत्थामा। २. आठवें मन्वंतर के एक ऋषि। स्त्री० = द्रोणी।
द्रोणिका—स्त्री० [सं० द्रोणि√कै (मालूम पड़ना)+क—टाप्] नील का पौधा।
द्रोणी—स्त्री० [सं० द्रोणि+ङीष्] १. छोटी नाव। डोंगी। २. पत्तों का छोटा दोना। दोनियाँ। ३. लकड़ी का बना हुआ गोल चौड़ा पात्र। कठवत। कठौता। ४. लकड़ी की छोटी कटोरी या प्याली। डोकी। ५. दो पर्वतों के बीच की भूमि। दून। ६. दो पर्वतों के बीच का मार्ग। गिरि-संकट। दर्रा। ७. एक प्राचीन नदी। ८. द्रोण की पत्नी, कृपी। ९. एक प्रकार का नमक। १०. एक प्रकार का पुराना परिमाण जो दो सूर्प या १२८ सेर का होता था। ११. शीघ्रता। जल्दी। १२. नील का पौधा। १३. केला। १४. इन्द्रायन।
द्रोणी-दल—पुं० [ब० स०] केतकी का फूल।
द्रोणी-लवण—पुं० [मध्य० स०] कर्णाटक देश के आस-पास होनेवाला एक तरह का नमक। बिरिया।
द्रोणोदन—पुं० [सं०] सिंहहनु के पुत्र, जो शाक्य मुनि बुद्ध के चाचा थे।
द्रोण्यामय—पुं० [सं० द्रोणी-आश्रम मध्य स०] शरीर के अंदर का एक प्रकार का रोग।
द्रोन—पुं० १.=द्रोण। २.=द्रोणाचार्य।
द्रोब†—स्त्री०=दूर्वा (दूब)। उदा० —हरी द्रोब केसर हलिद्र।—प्रिथीराज।
द्रोह—पुं० [सं० √द्रुह्+घञ्] [स्त्री० द्रोही] १. मन की वह वृत्ति जिसके फलस्वरूप मनुष्य किसी से असंतुष्ट और दुःखी होकर उसका अहित करते हुए उससे बदला चुकाना चाहता है। २. द्वेषवश षड्यंत्र रचकर किसी को हानि पहुँचाने की क्रिया या भाव।
द्रोहाट—पुं० [सं०द्रोह√अट् (गति)+अच्] १. ऐसा व्यक्ति जो ऊपर से देखने पर भला या सीधा-सादा जान पड़े, परन्तु जो अंदर से कपटी या दुष्ट हो। पाखण्डी। २. झूठा व्यक्ति। ३. शिकारी। ४. वेद की एक शाखा।
द्रोही(हिन्)—वि० [सं० √द्रुह्+घिनुण्] [स्त्री० द्रोहिणी] १. द्रोह करनेवाला। किसी के विरुद्ध षडयंत्र रचनेवाला।
पुं० वैरी। शत्रु।
द्रौणि—पुं० [सं० द्रोण+इञ्] अश्वत्थामा।
द्रौणिक—वि० [सं० द्रोण+ठक्—इक] द्रोण संबंधी। द्रोण का।
पुं० वह खेत जिसमें एक द्रोण (३८ सेर) बीज बोया जाय।
द्रौणिकी—स्त्री० [सं० द्रौणिक+ङीप्] १. १६ सेर की एक पुरानी तौल। २. नापने का वह पात्र जिसमें १६ सेर अनाज आता था।
द्रौपद—वि० [सं० द्रुपद+अण्] द्रुपद संबंधी।
पुं० [स्त्री० द्रौपदी] द्रुपद का पुत्र धृष्टद्युम्न।
द्रौपदी—स्त्री० [सं० द्रौपद+ङीष्] पांचाल देश के राजा द्रुपद की कन्या जिसका वरण स्वयंवर में अर्जुन ने किया था।
द्रौपदेय—पुं० [सं० द्रौपदी+ढक्—एय] द्रौपदी का पुत्र।
द्वंद—पुं० [द्वंद्व] दो चीजों का जोड़ा। युग्म।
पुं० [सं० द्वंद्वः] घड़ियाल जिस पर आघात करके समय सूचित किया जाता है।
पुं० [सं० द्वन्द्व] १. जोड़ा। युग्म। २. दो आदमियों में होनेवाली लड़ाई। ३. उत्पात। उपद्रव। ४. झगड़ा। बखेड़ा। ५. उलझन। झंझट।
क्रि० प्र०—खड़ा करना।—मचाना।
६. कष्ट। दुःख। ७. आशंका। खटका। ८. डर। भय। ९. असमंजस। दुबिधा। १०. दे० 'द्वंद्व'।
स्त्री०=दुंदुभी।
द्वंदज—वि०=द्वंद्वज।
द्वंद-युद्ध—पुं०=द्वंद्व-युद्ध।
द्वंदर—वि० [सं० द्वंद्वालु] झगड़ालू। लड़ाका।
द्वंद्व—पुं० [सं० द्वि शब्द से नि० सिद्धि] १. जोड़ा। युग्म। २. ऐसे दो गुण, पदार्थ या स्थितियाँ जो परस्पर विरोधी हों। जैसे—सुख और दुःख ताप और शीत। ३. प्राचीन काल में दो शस्त्र योद्धाओं में होनेवाला संघर्ष जिसमें पराजित को विजेता की आज्ञा माननी पड़ती थी अथवा उसके वश में होकर रहना पड़ता था। ४. दो विरोधी अथवा विभिन्न शक्तियों, विचार धाराओं आदि में स्वयं आगे बढ़ने और दूसरी को पीछे हटाने के लिए होनेवाला संघर्ष। ५. मानसिक संघर्ष। ६. उत्पात। उपद्रव। ७. झगड़ा। बखेड़ा।
क्रि० प्र०—मचना।—मचाना।
८. व्याकरण में एक प्रकार का समास जिसमें के दोनों अथवा सभी पदों की समान रूप से प्रधानता होती है और जिसका अन्वय एक ही क्रिया के साथ होता है। जैसे—सुख-दुःख यों ही आते-जाते रहते हैं। ९. गुप्त बात। रहस्य। १०. किला। दुर्ग।
द्वंद्वचर—वि० [सं० द्वंद्व√चर् (गति) +ट] (पशु या पक्षी) जो अपने जोड़े के साथ रहता हो।
पुं० चकवा या चक्रवाक पक्षी।

द्वंद्वचारी (रिन्)—पुं० [सं० द्वंद्व√चर्+णिनि] [स्त्री० द्वंद्वचारिणी] चकवा।

द्वंद्वज—वि० [सं० द्वंद्व√जन्(उत्पत्ति)+ड] किसी प्रकार के द्वंद्व से उत्पन्न। जैसे—(क) कफ और वात के प्रकोप से उत्पन्न द्वंद्वज रोग। (ख) राग-द्वेष से उत्पन्न द्वंद्वज कष्ट या दूषित मनोवृत्ति।

द्वंद्व-युद्ध—पुं० [ष० त०] १. वह युद्ध या लड़ाई जो दो दलों, व्यक्तियों आदि में हो और जिसमें कोई तीसरा सम्मिलित न हो। २. दो आदमिओं में होनेवाली हाथा-पाई या कुश्ती।

द्वंद्वी (द्विन्)—वि० [सं० द्वंद्व+इनि] १. परस्पर मिलकर युग्म बनानेवाले (दो)। २. परस्पर विरुद्ध रहनेवाले (दो)। ३. द्वंद्व (उपद्रव या झगड़ा) करने या मचानेवाला।
पुं० झगड़ालू व्यक्ति।

द्वय—वि० [सं० द्वि+तयप्] दो।
पुं० जोड़ा। युग। (समस्त पदों के अन्त में) जैसे—देवता-द्वय।

द्वयवादी (दिन्)—वि० [सं०द्वय√वद् (बोलना)+णिनि] दो तरह की या दोरंगी बातें कहनेवाला।
पुं० गणेश।

द्वय-हीन—वि० [सं० तृ० त०] जो न पुंलिंग हो और न स्त्री-लिंग; अर्थात् नपुंसक (शब्द)।

द्वयाग्नि—पुं० [सं० द्वय अग्नि ब० स०] लाल चीता।

द्वयाहित—वि० [सं०] (सिद्ध पुरुष) जिसके सत्त्वगुण ने शेष दोनों गुणों (रजः और तम) को दबा लिया हो।

द्वाः स्थ—पुं० [सं०] [द्वार√स्था (ठहराना)+क] १. द्वारपाल। २. नंदिकेश्वर।

द्वाचत्वारिंश—वि० [सं० द्वाचत्वारिंशत्+डट्] बयालीसवाँ।

द्वाचत्वारिंशत्—वि० [सं० द्वि० चत्वारिंशत् मध्य स०] बयालिस।
पुं० उक्त की सूचक संख्या या अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—४२।

द्वाज—पुं० [सं० द्वि√जन्+ड पृषो० सिद्धि] किसी स्त्री का वह पुत्र जो उसके पति से नहीं, बल्कि किसी दूसरे पुरुष से उत्पन्न हुआ हो। जारज। दोगला।

द्वात्रिंश—वि० [सं० द्वात्रिंशत्+डट्] बत्तीसवाँ।

द्वात्रिंशत्—वि० [सं० द्वि-त्रिंशत् मध्य स०] जो संख्या में तीस और दो हो। बत्तीस।
पुं० बत्तीस की संख्या या उसका सूचक अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—३२।

द्वादश—वि० [सं० द्वि-दशन् मध्य स०] १. जो संख्या में दस और दो हो। बारह। २. क्रम के विचार से बारह के स्थान पर पड़नेवाला। बारहवाँ।
पुं० बारह का सूचक अंक या संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—१२

द्वादशक—वि० [सं० द्वादस+कन्] बारहवें स्थान पर पड़नेवाला। बारहवाँ।

द्वादश-कर—वि० [ब० स०] जिसके बारह हाथ हों।
पुं० १. कार्तिकेय। २. कार्तिकेय के एक अनुचर। ३. बृहस्पति।

द्वादश-बानी—वि०=बारहवानी (खरा)।

द्वादश-भाव—पुं० [मध्य० स०] फलित ज्योतिष में जन्म कुंडली के बारह घर जिनके नाम क्रम से तनु, धन आदि फलानुसार रखे गये हैं।

द्वादश-रात्र—पुं० [द्विगु स०] बारह दिनों में पूरा होनेवाला एक यज्ञ।

द्वादस-लोचन—पुं० [ब० स०] कार्तिकेय।

द्वादश-वर्गी—स्त्री० [द्विगु स० ङीप्] क्षेत्र, होरा आदि बारह वर्गों का समूह जिसके आधार पर ग्रहों का बलाबल जाना जाता है। (फलित ज्यो०)

द्वादश-वार्षिक—वि० [सं० द्वादश-वर्ष द्विगु स०,+ठक्—इक] बारह वर्षों में होनेवाला।
पुं० एक तरह का व्रत जो ब्रह्म-हत्या लगने पर उसके पाप से मुक्ति पाने के लिए बारह वर्षों तक जंगल में रहकर किया जाता था।

द्वादश-शुद्धि—स्त्री० [मध्य० स०] वैष्णव संप्रदाय में तंत्रोक्त बारह प्रकार की शुद्धियाँ। जैसे—देवता की परिक्रमा करने से होनेवाली पदशुद्धि, देवता को स्पर्श करने से होनेवाली हस्त-शुद्धि, नाम कीर्त्तन से होनेवाली वाक्य-शुद्धि, देव-दर्शन से होनेवाली नेत्र-शुद्धि आदि।

द्वादशांग—वि० [द्वादश-अंग ब० स०] जिसके बारह अंग या अवयव हों।
पुं० एक तरह की धूप जो गुग्गल, चंदन आदि बारह गंध द्रव्यों के योग से बनती है।

द्वादशांगी—स्त्री० [द्वादश-अंग ब० स०; ङीप्] जैनों के द्वादश अंग ग्रंथों का समूह।

द्वादशांगुल—वि० [द्वादश-अंगुल ब० स०] १. जो नाप में बारह अंगुल हो। २. बारह उँगलियोंवाला।
पुं० बारह अंगुल की माप। बित्ता। बालिश्त।

द्वादशांशु—पुं० [द्वादस-अंशु ब० स०] बृहस्पति।

द्वादशाक्ष—पुं० [द्वादश-अक्षि ब० स०] १. कार्त्तिकेय।
वि० [सं०] जिसकी बारह आँखें हों।
पुं० १. कार्तिकेय। २. गौतम बुद्ध।

द्वादशाक्षर—पुं० [द्वादश-अक्षर ब० स०] विष्णु का एक मंत्र जिसमें बारह अक्षर हैं और जो इस प्रकार हैं—ओं नमो भगवते वासुदेवाय।

द्वादशाख्य—पुं० [द्वादश-आख्या ब० स०] बुद्धदेव।

द्वादशात्मा† (त्मन्)—पुं० [द्वादश-आत्मन् ब० स०] १. सूर्य। २. आक। मदार।

द्वादशायतन—पुं० [द्वादश-आयतन मध्य० स०] पाँच ज्ञानेंद्रियों, पाँच कर्मेंद्रियों तथा मन और बुद्धि इन बारह पूज्य स्थानों का समूह। (जैन)

द्वादशाह—पुं० [द्वादश-अहन् द्विगुस०] १. बारह दिनों का समूह। २. एक यज्ञ जो बारह दिनों में पूरा होता था। ३. मृतक के उद्देश्य से उसकी मृत्यु के बारहवें दिन किया जानेवाला श्राद्ध।

द्वादशी—स्त्री० [सं० द्वादश+ङीप्] चांद्रमास के किसी पक्ष की बारहवीं तिथि।

द्वादसबानी†—वि०=बारहवानी (खरा)।

द्वापर—पुं० [सं० द्वि पर=प्रकार ब० स०, पृषो० सिद्धि] पुराणानुसार त्रेता और कलियुग के बीच का युग जिसका मान ८६४००० वर्षों का कहा गया है। भगवान् कृष्ण ने इसी युग में अवतार लिया था।

द्वामुष्यायण—पुं० [सं०=द्वयामुष्यायण पृषो० सिद्धि] १. वह व्यक्ति जो दो पिताओं का (एक का औरस और दूसरे का दत्तक) पुत्र हो। २. वह व्यक्ति जो दो ऋषियों के गोत्र में हो। ३. उद्दालक मुनि का एक नाम। ४. गौतम बुद्ध का एक नाम।

द्वार—पुं० [सं०√दृ (विदारण)+णिच्+अच्] १. किसी घेरे, चहारदीवारी, दीवार आदि में आवागमन के लिए बना हुआ कोई खुला विशेषतः मुख्य स्थान जिसमें प्रायः खोलने और बंद करने के लिए दरवाजे, पल्ले आदि लगे होते हैं।
मुहा०—**द्वार द्वार फिरना**=(क) कार्य-सिद्धि के लिए अनेक प्रकार के लोगों के यहाँ पहुँचकर अनुनय करना। (ख) भीख माँगना। **(किसी का आकर) द्वार लगना**=किसी उद्देश्य या कार्य के लिए दरवाजे पर आकर पहुँचना। जैसे—संध्या को बरात द्वार लगेगी। **(किसी के) द्वार लगना**=किसी उद्देश्य या कार्य की सिद्धि के लिए किसी के दरवाजे पर (या किसी के यहाँ) जाकर बैठना। उदा०—यह जान्यो जिय राधिका द्वारे हरि लागे।—सूर।
२. उक्त स्थान या अवकाश को आवश्यकतानुसार बंद करने के लिए उसमें लगाये जानेवाले लकड़ी, लोहे आदि के पल्ले।
मुहा०—**द्वार लगना**=दरवाजा बंद होना। **(किसी बात के लिए) द्वार लगना**=दूसरों की बातें चुपके से या छिपकर सुनने के लिए दरवाजों की आड़ में छिपकर खड़े होना। **द्वार लगाना**=किवाड़ या दरवाजा बंद करना।
३. दो स्थानों के बीच में पड़नेवाला कोई ऐसा अवकाश या मार्ग जिससे होकर किसी प्रकार की आने-जाने की क्रिया होती हो। जैसे—किसी समय खैबर का दर्रा भारत वर्ष में आने-जाने का मुख्य द्वार था। ४. लाक्षणिक रूप में, काम करने का वह विधि-विहित या नियत मार्ग जो उपाय या साधन के अंग के रूप में हो। मार्ग-साधन। (चैनेल) जैसे—धन कमाने का एक ही द्वार है, पर गवाने के सैकड़ों।
मुहा०—**(किसी काम या बात के लिए) द्वार खुलना**=किसी काम या बात के होने के लिए मार्ग या साधन निकलना। जैसे—अब आपके लिए सरकारी नौकरी का द्वार खुल गया है।
५. शारीरिक इंद्रियों के विशिष्ट छिद्र या मार्ग जिनमें से होकर शरीर के विकार बाहर निकलते रहते हैं और जिनके द्वारा कुछ चीजें शरीर के अंदर जाती हैं। जैसे—आँख, कान, नाक, मुँह आदि।

द्वार-कंटक—पुं० [ष० त०] दरवाजे की कीली या सिटकिनी।

द्वार-कपाट—पुं० [ष० त०] दरवाजे का पल्ला।

द्वारका—स्त्री० [सं० द्वार+कै (प्रकाशित होना)+क—टाप्] गुजरात की एक प्राचीन नगरी जिसे कुशस्थली भी कहते हैं, और जो आज-कल एक प्रसिद्ध तीर्थ है। जरासंध के उत्पातों से दुःखी होकर श्रीकृष्ण मथुरा छोड़कर यहाँ जा बसे थे।

द्वारकाधीश—पुं० [द्वारका-अधीश ष० त०] १. श्रीकृष्णचंद्र। २. श्रीकृष्ण की वह मूर्ति जो द्वारका में है।

द्वारकानाथ—पुं० [ष० त०] =द्वारकाधीश।

द्वारकेश—पुं० [द्वारका-ईश ष० त०] =द्वारकाधीश।

द्वारचार—पुं० दे० 'द्वार-पूजा'।

द्वार-छेंकाई—स्त्री० [हिं० द्वार+छेंकना=रोकना] १. विवाह के समय की एक रीति, जो विवाह कर के वधू समेत अपने घर आने पर होती है। इसमें बहन वर और वधू का रास्ता रोककर खड़ी हो जाती और कुछ पाने पर रास्ता छोड़ती है। २. उक्त अवसर पर बहन को मिलनेवाला धन या नेग।

द्वार-ताल—पुं० दे० 'ताला-बंदी'।

द्वार-पंडित—पुं० [मध्य स०] मध्ययुग में, किसी राजा के यहाँ रहनेवाला प्रधान पंडित।

द्वारप—पुं० [सं० द्वार√पा (रक्षा)+क] १. द्वारपाल। २. विष्णु।

द्वार-पटी—स्त्री० [ष० त०] दरवाजे पर टाँगने का परदा। उदा०—आये सखि द्वारपटी हाथ से हटा के पिय।—तुलसी।

द्वारपाल—पुं० [सं० द्वार√पाल् (रक्षा)+णिच्+अण्] [स्त्री० द्वारपाली, द्वारपालिनी, द्वारपालिन] १. वह पुरुष जो दरवाजे पर पहरा देने के लिए नियुक्त हो। ड्योढ़ीदार। दरबान। २. किसी प्रधान देवता के द्वार का रक्षक कोई विशिष्ट देवता। (तंत्र) ३. सरस्वती नदी के तट पर का एक प्राचीन तीर्थ।

द्वार-पालक—पुं० [ष० त०] द्वारपाल।

द्वार-पिंडी—स्त्री० [ष० त०] दहलीज।

द्वार-पूजा—स्त्री० [मध्य० स०] १. पूजन आदि में वे धार्मिक कृत्य जो दरवाजे पर बरात आने के समय कन्या-पक्ष द्वारा होते हैं। द्वारचार। २. जैनों में एक प्रकार की पूजा।

द्वारमती—स्त्री०=द्वारका (पुरी)।

द्वार-यंत्र—पुं० [मध्य-स०] ताला।

द्वारवती*—स्त्री० [सं० द्वार+मतुप—ङीष् वत्व,] द्वारका (नगरी)।

द्वार-समुद्र—पुं० [सं०] दक्षिण भारत का एक पुराना नगर जहाँ कर्नाटक के राजाओं की राजधानी थी।

द्वारस्थ—वि० [सं० द्वार√स्था (ठहरना)+क] जो द्वार पर बैठा, लगा या स्थित हो।
पुं० द्वारपाल।

द्वारा—पुं० [सं० द्वार] १. द्वार। २. दरवाजा। †३. स्थान। जैसे—गुरुद्वारा।
अव्य० [सं० द्वारात्] १. किसी माध्यम के आधार पर। जरिये। जैसे—अब तो खबरें भी रेडियों के द्वारा भेजी जाने लगीं। २. किसी के हस्ते। हाथ से। जैसे—पत्र नौकर द्वारा भेजा गया था। ३. किसी कारण या प्रक्रिया के फलस्वरूप। जैसे—(क) उदाहरण के द्वारा समझाई हुई बात। (ख) रोग के द्वारा होनेवाला कष्ट। ४. किसी के कर्तृत्व या प्रयत्न से। जैसे—बच्चन द्वारा रचित मधुशाला। ५. किसी अभिकर्त्ता की मारफत।

द्वाराचार—पुं० [द्वार-आचार मध्य० स०] =द्वारचार (द्वार-पूजा)।

द्वारादेयशुल्क—पुं० [द्वार-आदेय स० त०, द्वारादेय-शुल्क कर्म० स०] किसी स्थान के प्रवेश-द्वार पर लिया जानेवाला शुल्क या महसूल। चुंगी। (कौ०)

द्वाराधिप—पुं० [द्वार-अधिप ष० त०] द्वारपाल।

द्वाराध्यक्ष—पुं० [द्वार-अध्यक्ष ष० त०] द्वारपाल।

द्वारावती—स्त्री० [सं० द्वार+मतुप, नि० दीर्घ] द्वारका (नगरी)।

द्वारिक—पुं० [द्वार+ठन्—इक] द्वारपाल।

द्वारिका†—स्त्री० [सं० द्वारिका+टाप्]=द्वारका।

द्वारी(रिन्)—पुं० [सं० द्वार+इनि] द्वारपाल।
†स्त्री० [सं० द्वार] छोटा दरवाजा।

द्वाल—स्त्री० [फा० दुआल] चमड़े का तसमा।

द्वालबंद—पुं०=दुआलबंद।

द्वाला—पुं० [सं० द्विधारा] डिंगल भाषा का एक प्रकार का छंद।

द्वाली†—स्त्री०=दुआली।

द्वाविंश—वि० [सं० द्वाविंशति+डट्] बाईसवें स्थान पर पड़नेवाला।

द्वाविंशति—वि० [सं० द्वि-विंशति मध्य० स०] जो संख्या में बीस और दो हो। बाईस।

स्त्री० उक्त की सूचक संख्या या अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—२२

द्वाषष्ठ—वि० [सं० द्वाषष्ठि+डट्] बासठवाँ।

द्वाषष्ठि—वि० [सं० द्वि-षष्ठि मध्य० स०] जो गिनती में साठ से दो अधिक हो। बासठ।

पुं० उक्त की सूचक संख्या या अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—६२

द्वासप्तत—वि० [सं० द्वासप्तति+डट्] बहत्तरवाँ।

द्वासप्तति—वि० [सं० द्वि-सप्तति मध्य० स०] जो गिनती में सत्तर और दो हो। बहत्तर।

पुं० उक्त की सूचक संख्या या अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—७२

द्वास्थ—पुं० [सं० द्वार्√स्था+क, विसर्गलोप] द्वारपाल।

द्वि—उप० [सं०√द्व (संवरण)+डि] दो।

द्विक—वि० [सं० द्वि+कन्] १ जिसमें दो अंग या अवयव हों। २. दोहरा।

पुं० [द्वि०-क ब० स०] १. कौआ। २. चकवा।

द्वि-ककार—पुं० [ब० स०] १. कौआ। २. चकवा।

द्वि-ककुद्—पुं० [ब० स०] ऊँट।

द्वि-कर्मक—वि० [ब० स०, कर्म] (क्रिया) १. दो कर्मोंवाला। (व्याकरण में, क्रिया) जिसके साथ दो कर्म लगे हों। ३. (व्याकरण में, क्रिया) जो अकर्मक और सकर्मक दोनों रूपों में चलती हो। जैसे—खुजलाना।

द्वि-कल—पुं० [हिं० द्वि+कला] दो मात्राओं का समूह। (पिंगल)

द्वि-क्षार—पुं० [द्विगु स०] शोरा और सज्जी का समूह।

द्विगु—वि० [ब० स०] जिसके पास दो गौएँ हों।

पुं० तत्पुरुष समास का एक भेद जिसमें पूर्वपद संख्या वाचक होता है। जैसे—त्रिभुवन, पंचकोण, सप्तदशी आदि।

विशेष—पाणिनि ने इसे कर्मधारय के अंतर्गत रखा है; पर और लोग इसे स्वतंत्र समास मानते हैं।

द्विगुण—वि० [सं० द्वि√गुण (गुणा करना)+अच् (कर्म में)] दुगना। दूना।

द्वि-गुणित—भू० कृ० [तृ० त०] १. दो से गुणा किया हुआ। २. जिसे दुगना किया हो। ३. दूना।

द्वि-गूढ़—पुं० [स० त०] नाट्यशास्त्र के अनुसार लास्य के दस अंगों में से एक, जिसमें सब पद सम और सुंदर होते हैं, संधियाँ वर्त्तमान होती हैं तथा रस और भाव सुसंपन्न होते हैं।

द्विघटिका—स्त्री० [द्विगुस-] दु-घड़िया मुहूर्त्त।

द्विचत्वारिंश—वि० [सं० द्विचत्वारिंशत+डट्] बयालीसवाँ।

द्विचत्वारिंशत्—वि० [मध्य० स०] जो चालीस से दो अधिक हो। बयालीस।

पुं० उक्त की सूचक संख्या या अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—४२

द्वि-चर्मा (र्मन्)—पुं० [ब० स०] १. वह जिसे कोई चर्म रोग हुआ हो। २. कोढ़ी।

द्विज—वि० [सं० द्वि√जन् (उत्पत्ति)+ड] जिसका जन्म दो बार हुआ हो। जो दो बार उत्पन्न हुआ हो।

पुं० १. अंडे से उत्पन्न होनेवाले जीव-जंतु जो एक बार अंडे के रूप में और दूसरी बार अंडे में से बाहर निकलने के समय (इस प्रकार दो बार) जन्म लेते हैं। २. चिड़िया। पक्षी। ३. हिंदुओं में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्ण के पुरुष जिनको शास्त्रानुसार यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार है और यज्ञोपवीत के समय जिनका दूसरा जन्म होना माना जाता है। ४. ब्राह्मण। ५. चंद्रमा, जिसका पुराणानुसार दो बार जन्म हुआ था। ६. दाँत, जो एक बार लड़कपन में टूट चुकने पर फिर दोबारा निकलते हैं। ७. नेपाली धनियाँ। तुंबुरु।

द्विज-दंपति—पुं० [सं० द्विज-दंपती] दान, पूजा आदि के लिए बना हुआ धातु का वह पत्तर जिस पर स्त्री और पुरुष या लक्ष्मी और नारायण की युगल मूर्तियाँ बनी होती हैं।

द्वि-जन्मा (न्मन्)—वि० [ब० स०] जिसका दो बार जन्म हुआ हो। पुं० = द्विज।

द्विज-पति—पुं० [ष० त०] १. ब्राह्मण। २. चंद्रमा। ३. गरुड़। ४. कपूर।

द्विज-प्रिया—स्त्री० [ष० त०] सोमलता।

द्विज-बंधु—पुं० [ष० त०] १. नाममात्र का वह द्विज जिसका जन्म तो द्विज माता-पिता से हुआ हो पर जो स्वयं द्विजों के संस्कार और कर्म न करता हो। २. नाम मात्र का ब्राह्मण।

द्विज-ब्रुव—पुं० [द्विज√ब्रू (बोलना)+क, उप० स०] =द्विज-बंधु।

द्विज-राज—पुं० [ष० त०] १. श्रेष्ठ ब्राह्मण। २. चंद्रमा। ३. गरुड़। ४. कपूर।

द्विजलिंगी (गिन्)—पुं० [सं० द्विज-लिंग ष० त०, +इनि] १. वह जो किसी हीन वर्ण का होने पर भी ब्राह्मणों की तरह या उनके वेश में रहता हो। २. क्षत्रिय।

द्विज-वाहन—पुं० [ब० स०] विष्णु; जिनका वाहन गरुड़ (पक्षी) है।

द्विज-व्रण—पुं० [ष० त०] दाँत का एक रोग। दंतार्बुद।

द्विज-शप्त—पुं० [तृ० त०] बर्बट या भटवाँस, जिसे खाना ब्राह्मणों के लिए वर्जित है।

द्विजांगिका—स्त्री० [सं० द्विज-अंग ब० स०, कप्-टाप्, इत्व] कुटकी।

द्विजांगी—स्त्री० [सं० द्विज-अंग ब० स०, ङीष्] कुटकी।

द्विजा—स्त्री० [सं० द्विज+टाप्] १.ब्राह्मण या द्विज की स्त्री। २. पालक का साग जो एक बार काट लिये जाने पर भी दोबारा बढ़ जाता है। ३. संभालू का बीज। रेणुका। ४. नारंगी।

द्विजाग्रज—पुं० [सं० द्विज-अग्रज ष० त०] श्रेष्ठ ब्राह्मण।

द्विजाति—पुं० [स० ब० स०] = द्विज। (देखें)

द्विजानि—पुं० [सं० द्वि-जाया ब० स०, नि आदेश] ऐसा व्यक्ति जिसकी दो पत्नियाँ हों।

द्विजायगी—स्त्री० = दुजायगी।

द्विजायनी—स्त्री० [सं० द्विज-अयन ष० त०, ङीप्] यज्ञोपवीत।

द्विजालय—पुं० [सं० द्विज-आलय ष० त०] १. द्विज का घर। २. घोंसला।

द्विजावंती—स्त्री० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

द्वि-जिह्व—वि० [सं० ब० स०] १. जिसे दो जीभें हों। २. इधर की बातें उधर और उधर की इधर कहने या लगानेवाला। ३. कठिन या दुःसाध्य।

पुं० १. साँप। २. खल। दुष्ट। ३. चोर। ४. एक प्रकार का रोग।

द्विजेंद्र—पुं० [सं० द्विज-इंद्र ष० त०] १. चंद्रमा। २. ब्राह्मण। ३. गरुड। ४. कपूर।

द्विजेश—पुं० [सं० द्विज-ईश ष० त०] = द्विजेंद्र।

द्विजोत्तम—पुं० [सं० द्विज-उत्तम स० त०] द्विजों में श्रेष्ठ, ब्राह्मण।

द्विट्(ष्)—वि० [सं०√द्विष् (शत्रुता)+क्विप] शत्रु-भाव रखनेवाला। पुं० दुश्मन। वैरी। शत्रु।

द्विट्सेवी (विन्)—पुं० [सं० द्विट्-सेवा ष० त०,+इनि] वह जो राजा के शत्रु से मिला हो या मित्रता रखता हो।

द्विठ—पुं० [सं० ब० स०] १. विसर्ग। २. स्वाहा।

द्वित—पुं० [सं०] १. एक देवता का नाम। २. एक प्राचीन ऋषि।

द्वितय—वि० [सं० द्वि+तयप्] १. दो अंगों या अवयवोंवाला। २. जो दो प्रकार की चीजों से मिलकर बना हो। ३. दोहरा।

द्वितीय—वि० [सं० द्वितीय] [स्त्री० द्वितीया] १. गिनती में दूसरा। २. महत्त्व, मान आदि की दृष्टि से दूसरी श्रेणी का। मध्यकोटि का।

पुं० पुत्र, जो अपनी आत्मा का ही दूसरा रूप माना जाता है।

द्वितीयक—वि० [सं० द्वितीय+कन्] १. दूसरा। २. किसी एक चीज के अनुकरण पर या अनुरूप बना हुआ वैसा ही दूसरा। (डुप्लिकेट)।

द्वितीय-त्रिफला—स्त्री० [सं० कर्म० स०] गंभारी।

द्वितीया—स्त्री० [सं० द्वितीय+टाप्] १. चांद्रमास के प्रत्येक पक्ष की दूसरी तिथि। दूज। २. वाम-मार्गियों की परिभाषा में, खाने के लिए पकाया हुआ मांस।

द्वितीयाकृत—वि० [सं० द्वितीय+डाच्] कृतके योग में (खेत) जो दो बार जोता गया हो।

द्वितीयाभा—स्त्री० [सं० द्वितीया-आ√भा (दीप्ति) + क-टाप्] दारुहल्दी।

द्वितीयाश्रम—पुं० [सं० द्वितीय-आश्रम कर्म० स०] गार्हस्थ्य आश्रम जो ब्रह्मचर्य आश्रम के बाद पड़ता है।

द्वित्व—पुं० [सं० द्वि+त्व] १. एक साथ दो होने की अवस्था या भाव २. दोहरे होने की अवस्था या भाव। ३. व्याकरण में एक ही व्यंजन का एक साथ दो बार या दोहरा होनेवाला संयोग। जैसे–'विपन्न' में का 'न्न' और 'सम्पत्ति' में का 'त्त' द्वित्व है। ४. भाषा विज्ञान में, जोर, देने के लिए किसी शब्द का दो बार होनेवाला उच्चारण। जैसे–जल्दी जल्दी काम पूरा करो।

द्वि-दल—वि० [सं० ब० स०] १. (अन्न) जिसमें दो दल या खंड हों। जैसे–अरहर, चना, आदि। २. दो दलों या पत्तोंवाला। ३. दो पटलों या पंखड़ियोंवाला।

पुं० १. वह जिसमें दो दल (खंड, पत्ते या पंखड़ियाँ) हों। २. ऐसा अन्न जिससे दाल बनती हो। जैसे—अरहर, चना, मूंग आदि। ३. दाल।

द्वि-दल-शासन-प्रणाली—स्त्री० [सं० द्वि-दल द्विगु स०; द्विदल-शासन ष० त०, द्विदल शासन-प्रणाली ष० त०] वह शासन प्रणाली जिसमें शासन-अधिकार दो व्यक्तियों (या दलों अथवा वर्गों) के हाथ में रहता है। दुहत्था-शासन। दे० 'द्वैधशासन प्रणाली'। (डायार्की)

द्वि-दाम्नी—स्त्री० [सं० द्वि-दामन् ब० स० ङीप्] वह नटखट गाय जो दो रस्सियों से बाँधी जाय।

द्वि-देवता—वि० [सं० ब० स०] १. दो देवताओं से संबंध रखनेवाला (चरु आदि) २. जिसके दो देवता हों। जो दो देवताओं के लिए हों। पुं० विशाखा नक्षत्र।

द्वि-देह—वि० [सं० ब० स०] दो देहों या शरीरोंवाला।

पुं० गणेश (जिनका सिर एक बार कट गया था, फिर हाथी का सिर जोड़ा गया था।)

द्वि-द्वादश—पुं० [सं० द्व० स०] फलित ज्योतिष में एक प्रकार का योग जो विवाह की गणना में अशुभ माना गया है।

द्विधा—क्रि० वि० [सं० द्वि-धाच्] १. दो प्रकार से। दो तरह से। २. दो खंडों, टुकड़ों या भागों में। ३. दोनों ओर।

स्त्री० = दुविधा।

द्विधा-करण—पुं० [ष० त०] दो भागों में विभाजित करना। दो खंड करना।

द्विधा-गति—पुं० [ब० स०] जल और स्थल दोनों में विचरण करनेवाला। प्राणी। जैसे—केकड़ा, मगर, मेढ़क आदि।

द्विधातविक—वि० [सं०द्विधातु+ठन्–इक] १. दो अलग-अलग धातुओं से संबंध रखनेवाला (बाइमेटेलिक)

द्वि-धातु—वि० [सं० ब० स०] जो दो धातुओं के योग से बना हो।

पुं० १. दो धातुओं के मेल से बनी हुई मिश्रित धातु। २. गणेश।

द्विधातुता—स्त्री० [सं० द्विधातु+तल्—टाप्] द्विधातु होने की अवस्था या भाव।

द्विधातुत्व—पुं० [सं० द्विधातु+त्व] = द्विधातुता।

द्विधातु-वाद—पुं० [ष० त०] अर्थशास्त्र का एक सिद्धांत जिसके अनुसार किसी देश में दो विभिन्न धातुओं के सिक्के चलते हैं और दोनों की गिनती वैध मुद्रा में होती है। (बाइमेटलिज्म)

द्विधात्मक—पुं० [सं० द्विधा-आत्मन् ब० स०, कप्] जायफल।

द्विधालेख्य—पुं० [सं० द्विधा√लिख्+ण्यत् (आधा के)] हिंताल का पेड़।

द्वि-नग्नक—पुं० [सं० द्वि= द्वितीय-नग्नक] वह व्यक्ति जिसकी सुन्नत हुई हो।

द्वि-नवति—वि० [सं० मध्य० स०] बानवे।

स्त्री० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—९२

द्वि-नेत्रभेदी (दिन्)—पुं० [सं० द्वि-नेत्र द्विगु स०, द्विनेत्र√भिद् (फाड़ना) +णिनि] वह जिसने किसी की दोनों आँखें फोड़ दी हों।

द्वि-पंचमूली—स्त्री० [सं० मध्य० स०] दशमूल।

द्वि-पंचाशत्—वि० [सं० द्विगु स०] बावन।

स्त्री० उक्त की सूचक संख्या; जो इस प्रकार लिखी जाती है—५२

द्विप—पुं० [सं० द्वि√पा (पीना)+क] १. हाथी। २. नागकेसर।

द्वि-पक्ष—वि० [सं० ब० स०] दे० 'द्विपक्षी'।

पुं० १. दो पक्षों का समय अर्थात् पूरा चांद्र मास। २. चिड़िया।

पक्षी ३. महीना। मास। ४. वह स्थान जहाँ दो रास्ते मिलते हों। दो-राहा।

द्विपक्षी (क्षिन्)—वि० [सं०द्वि-पक्ष द्विगु स०,+इनि] १. सौर मास के दो पक्षों अर्थात् एक महीने में होनेवाला। २. कुछ एक पक्ष में और कुछ दूसरे पक्ष में पड़नेवाला जैसे :—गया का द्विपक्षी श्राद्ध। ३. दो दलों, पक्षों या पार्श्वों से संबंध रखनेवाला। (बाई-लेटरल) जैसे—द्विपक्षी निर्णय या समझौता।

द्विपट-वान—पुं० [सं० पट-वान ष० त०, द्वि पटवान ब० स०] १. दोहरे अरज का कपड़ा। २. बड़े अरज का कपड़ा। (को०)

द्वि-पद —वि० [सं० ब० स०] १. जिसके दो पद या पैर हों। जैसे—मनुष्य, पक्षी आदि। २. जिसमें दो पद या शब्द हों। समस्त। यौगिक। ३. (गणित में ऐसी संख्या) जिसमें दो अलग-अलग अंक या संख्याएँ एक साथ मानी और ली जायँ। (बाईनेमिअल) जैसे—$\frac{3}{5}+\frac{1}{3}$।

पुं० १. दो पैरोंवाला जंतु या जीव। २. आदमी। मनुष्य। ३. ज्योतिष के अनुसार मिथुन, तुला, कुंभ, कन्या और धनु लग्न का पूर्व भाग। ४. वास्तु मंडल में का एक कोठा या घर।

द्वि-पदा—स्त्री० [सं० द्विपद+टाप्] दो पदोंवाली ऋचा।

द्वि-पदिक—पुं० [सं० द्विपदी+कन्, ह्रस्व] शुद्धराग का एक भेद।

द्वि-पदी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्] १. प्राकृत भाषा का एक प्रकार का छंद। २. दो चरणों की कविता या गीत। ३. एक तरह का चित्र काव्य।

द्वि-पर्णा—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] एक प्रकार के जंगली बेर का पेड़।

द्वि-पाद—पुं०, वि० = द्विपद।

द्विपाद-वध—पुं० [ष० त० या तृ० त०] अपराधी के दोनों पैर काट लेने का दंड।

द्वि-पायी (यिन्)—पुं० [सं० द्वि√पा (पीना)+णिनि] [स्त्री० द्विपायिनी] हाथी।

द्वि-पार्श्विक—वि० [सं० द्वि-पार्श्व द्विगु स०,+ठन्—इक] १. दो या दोनों पार्श्वों से संबंध रखनेवाला। २. दो या दोनों पक्षों की ओर से होने वाला। द्विपक्षी।

द्वि-पास्य—पुं० [सं० द्विप-आस्य ब० स०] गणेश (जिनका मुख हाथी के मुख के समान है)।

द्वि-पृष्ठ—पुं० [सं० ब० स०] जैनों के नौ वासुदेवों में से एक।

द्वि-बाहु—वि० [स० ब० स०] जिसके दो बाहु हों। द्विभुज।

पुं० दो हाथोंवाले जीव या प्राणी।

द्वि-भा—स्त्री० [सं० द्विगु० स०] १. प्रकाश। २. प्रभा। चमक। उदा०—जगत ज्योति तमस द्विभा।—पन्त।

द्वि-भाव—वि० [सं० ब० स०] १. जिसमें दो भाव हों। २. कपटी। छली।

पुं० १. किसी से रखा जानेवाला द्वेषभाव। २. दुराव। छिपाव। ३. कपट। छल।

द्वि-भाषी (षिन्)—पुं० [सं० द्वि√भाष् (बोलना)+णिनि] दो भाषाएँ जानने और बोलनेवाला। २. दे० 'दुभाषिया'।

द्वि-भुज—वि० [सं० ब० स०] १. जिसके दो हाथ हों। दो हाथोंवाला। २. (क्षेत्र या आकृति) जिसकी दो भुजाएँ हों।

पुं० मनुष्य।

द्वि-भूम—वि० [सं० ब० स० अच्] दो खंडोंवाला (मकान)।

द्वि-मातृ—वि० [सं० ब० स०] १. जिसकी दो माताएँ हों। २. जो दो माताओं के गर्भ से उत्पन्न हो।

पुं० १. जरासंध। २. गणेश।

द्विमातृज—वि० पुं० [सं० द्वि-मातृ द्विगु स०,√जन् (उत्पत्ति)+ड] = द्विमातृ।

द्वि-मात्र—वि० [सं० ब० स०] दो मात्राओंवाला।

पुं० दीर्घ स्वर और उसका चिह्न।

द्विमीढ—पुं० [सं०] हस्तिनापुर के राजा हस्ति का एक पुत्र जो अजमीढ़ का भाई था। (हरिवंश)

द्वि-मुख—वि० [सं० ब० स०] [स्त्री० द्विमुखी] जिसके दो मुख हों। दो मुँहोंवाला।

पुं० १. पेट में से निकलनेवाला एक प्रकार का सफेद कीड़ा। २. दो-मुँहा साँप।

द्वि-मुखा—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] जोंक।

द्वि-मुखी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्] १. वह गाय जो बच्चा दे रही हो। (अर्थात् जिसके एक ओर एक तथा दूसरी ओर दूसरा मुँह हो)।

वि० सं० 'द्विमुख' का स्त्री०।

द्वि-यजुष—स्त्री० [सं० ब० स०] यज्ञ-मंडप आदि बनाने की एक तरह की ईंट।

पुं० यजमान।

द्वि-रद—वि० [सं० ब० स०] [स्त्री० द्विरदा] दो दाँतोवाला।

पुं० १. हाथी। २. दुर्योधन के भाई का नाम।

द्विरदांतक—पुं० [सं० द्विरद-अंतक ष० त०] हाथी को मार डालनेवाला, सिंह।

द्विरदाशन—पुं० [सं० द्विरद-अशन ब० स०] सिंह।

द्वि-रसन—वि० [स० ब० स०] [स्त्री० द्विरसना] १. दो जिह्वाओं वाला। २. कभी कुछ और कभी कुछ कहनेवाला। जिसकी बात का विश्वास न किया जा सके।

पुं० साँप।

द्विरागमन—पुं० [सं० द्विर्-आगमन सुप्सुपा स०] १. दूसरी बार आना। पुनरागमन। २. वधू का अपने पति के साथ दूसरी बार अपनी ससुराल में आना। गौना।

द्विराज-शासन—पुं० [सं०] [मू० कृ० द्विराज-शासित] किसी देश या प्रदेश पर दो राज्यों या दो राष्ट्रों का होनेवाला सम्मिलित शासन। (कान्डोमीनियम)

द्वि-रात्र—पुं० [सं० द्विगु स०, अच्] दो रातों में पूर्ण होनेवाला एक तरह का यज्ञ।

द्विराप—पुं० [सं० द्विर्-आ√पा (पीना)+क] हाथी।

द्विरुक्त—वि० [सं० द्विर्-उक्त सुप्सुपा स०] [भाव० द्विरुक्ति] १. दो बार कहा हुआ। २. दुबारा कहा हुआ। ३. दो प्रकार से कहा हुआ और फलतः अनावश्यक या निरर्थक।

पुं० पुनर्कथन।

द्विरुक्ति—स्त्री० [सं० द्विर्-उक्ति सुप्सुपा स०] १. कोई बात दुबारा या दूसरी बार कहना। पुनरुक्ति। २. दे० 'द्वित्व'।

द्विरूढ़ा—स्त्री० [सं० द्विर्-ऊढ़ा सुप्सुपा स०] वह स्त्री जिसके एक विवाह के बाद दूसरा विवाह हुआ हो।

द्वि-रेता (तस्)—पुं० [सं० ब० स०] १. दो भिन्न जातियों के पशुओं से उत्पन्न पशु। जैसे—खच्चर। २. दोगला। वर्ण-संकर।

द्वि-रेफ—पुं० [सं० ब० स०] १. भ्रमर। भौंरा। २. बर्बर।

द्वि-वज्रक—पुं० [सं० मध्य० स०, +कन्] ऐसा घर जिसमें सोलह कोण हों। सोलह कोनोंवाला घर।

द्वि-बिंदु—पुं० [सं० ब० स०] विसर्ग।

द्विविद—पुं० [सं०] १. एक बंदर जो रामचंद्र जी की सेना का एक सेनापति था। २. पुराणानुसार एक बंदर जिसे बलदेव ने मारा था।

द्वि-विध—वि० [सं० ब० स०] दो प्रकार का। दो तरह का।

क्रि० वि० दो तरह या प्रकार से।

द्वि-विधा—पुं० [सं० द्विगु स०] दुबधा। असमंजस।

द्वि-विवाह—पुं० [सं० द्विगु स०] वह सामाजिक प्रथा जिसमें कोई स्त्री या पुरुष एक ही समय में एक साथ दो पुरुषों या स्त्रियों के साथ विवाह संबंध स्थापित करके दाम्पत्य जीवन बिताता हो। (बाइगैमी)

द्वि-वेद—वि० [सं० द्विगु स०,+अण्-लुक्] दो वेदों का ज्ञाता।

द्विवेदी (दिन्)—पुं० [सं० द्विवेद+इनि] १. दो वेदों का ज्ञाता। २. ब्राह्मणों की एक उपजाति। दूबे।

द्विवेशरा—स्त्री० [सं० द्वि-वेश द्विगु स०√रा (दान)+क—टाप्] दो पहियों की छोटी गाड़ी।

द्वि-व्रण—पुं० [सं० मध्य० स०] एक ही व्यक्ति को होनेवाले दो प्रकार के व्रण या घाव।

द्वि-शफ—पुं० [सं० ब० स०] ऐसा पशु जिसके खुर फटे हों। जैसे—गाय, हिरन आदि।

द्वि-शरीर—पुं० [सं० ब० स०] ज्योतिष के अनुसार कन्या, मिथुन, धनु और मीन राशियाँ, जिनका प्रथमार्द्ध स्थिर और द्वितीयार्द्ध चर माना जाता है।

द्विशिर—वि० [सं० द्विशिरस्] जिसके दो सिर हों। दो सिरोंवाला।

मुहा०— कौन द्विशिर = कौन अपनी जान देना चाहता है? किसे अपने मरने का भय नहीं है?

द्वि-शीर्ष—वि० [सं० ब० स०] जिसके दो सिर हों।

पुं० १. वैरी। शत्रु। २. अग्नि।

द्विसंतप—वि० [सं० द्विषत्√तप् (संताप)+णिच्+खच्, मुम्, ह्रस्व] अपने द्वेषियों या शत्रुओं को कष्ट पहुँचानेवाला।

द्विष्—वि० [सं०√द्विष् (शत्रुता)+क्विप्] द्वेष रखनेवाला।

द्विष्ट—वि० [सं० √द्विष्+क्त] १. जो द्वेष से युक्त हो। द्वेषपूर्ण। २. जिसके प्रति द्वेष किया जाय या हो।

पुं० ताँबा।

द्विसदनात्मक—वि० [सं०द्वि-सदन द्विगु स०, द्विसदन-आत्मन ब० स०, कप्] (शासन प्रणाली) जिसमें कानून, या विधान आदि बनानेवाली एक की जगह दो संस्थाएँ (विधानमंडल) होती है। (बाइकेमरल)

द्वि-सदस्य निर्वाचीक्षेत्र—पुं० [सं० द्वि-सदस्य, द्विगु स०, द्विसदस्य निर्वाचिन् ष० त०, क्षेत्र व्यस्त पद] ऐसा निर्वाचन-क्षेत्र जिसमें से एक साथ दो सदस्य निर्वाचित होते हों। (डबल मेंबर कांस्टिट्यूएन्सी)

द्वि-सप्तति—वि० [सं० मध्य० स०] १. बहत्तर। २. बहत्तरवाँ।

पुं० बहत्तर की संख्या या उसका सूचक अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—७२।

द्विसहस्राक्ष—पुं० [सं० द्वि-सहस्र द्विगु स०, द्विसहस्र-अक्षि ब० स०] शेषनाग।

द्विहन्—पुं० [सं० द्वि√हन्] (मारना)+क्विप्] हाथी (जो सूँड़ से मारता है)।

द्वि-हरिद्रा—स्त्री० [सं० मध्य० स०] दारुहल्दी।

द्वि-हृदया—वि०, स्त्री० [सं० ब० स०] गर्भवती (स्त्री)।

द्वीन्द्रिय—वि० [सं० द्वि-इंद्रिय ब० स०] (जंतु) जिसके शरीर में दो ही इंद्रियाँ हों।

द्वीप—पुं० [सं० द्वि-अप् ब० स०, अच्, ईत्व] १. चारों ओर समुद्र से घिरा हुआ कोई प्रदेश या भू-भाग। जल के बीच का स्थल। टापू।

विशेष—द्वीप कई प्रकार के होते और कई प्राकृतिक कारणों से बनते हैं। बहुत-से छोटे-छोटे द्वीपों के समूह को द्वीपपुंज और बहुत बड़े द्वीप को महाद्वीप कहते हैं।

२. पुराणानुसार पृथ्वी के सात बहुत बड़े-बड़े विभागों में से प्रत्येक विभाग, जिनके नाम इस प्रकार हैं—जंबू द्वीप, पक्ष द्वीप, शाल्मलि द्वीप, कुश द्वीप, क्रौंच द्वीप, शाक द्वीप और पुष्कर द्वीप। ३. वह जिसका अवलंबन किया जा सके। आधार। आश्रय। ४. बाघ का चमड़ा।

द्वीप-कर्पूर—पुं० [ष० त०]. चीनी कपूर।

द्वीप-पुंज—पुं० [ष० त०] समुद्र में होनेवाले बहुत-से छोटे-छोटे और पास पास के द्वीपों का समूह। (आर्की पैलेगो)

द्वीपवत्—पुं० [सं० द्वीप+मतुप्] १. समुद्र। २. मद।

द्वीपवती—स्त्री० [सं० द्वीपवत्+ङीप्] १. एक प्राचीन नदी का नाम। २. भूमि। जमीन।

द्वीपवान् (वत्)—वि० [सं० द्वीप+मतुप्] जिसमें द्वीप हों।

पुं० समुद्र।

द्वीप-शत्रु—पुं० [ष० त०] शतावरी। सतावर।

द्वीप-समूह—पुं० [सं० ब० त०] = द्वीप-पुंज।

द्वीपांतर—पुं० [सं० द्वीप-अंतर मयू० स०] प्रस्तुत से भिन्न कोई दूसरा द्वीप।

द्वीपांतरण—पुं० [सं० द्वीपांतर+क्विप् +ल्युट्—अन] १. एक द्वीप (अथवा देश) से दूसरे द्वीप में होनेवाला अंतरण। २. किसी भीषण अपराधी को दंड-स्वरूप किसी दूसरे और दूर के द्वीप में ले जाकर रखना। काले पानी की सजा।

द्वीपिका—स्त्री० [सं० द्वीप+ठन्—इक, टाप्] शतावरी। सतावर।

द्वीपि-नख—पुं० [सं० ष० त०] व्याघ्रनख एक गंधद्रव्य।

द्वीपि-शत्रु—पुं० [सं० ष० त०] शतमूली।

द्वीपी (पिन्)—वि० [सं० द्वीप्+इनि] १. द्वीप-संबंधी। द्वीप का। २. द्वीप में रहनेवाला

पुं० १. बाघ। व्याघ्र। २. चीता। ३. चित्रक नामक वृक्ष। चीता।

द्वीप्य—वि० [सं० द्वीप+यत्] १. द्वीप-सम्बन्धी। २. द्वीप में उत्पन्न। ३. द्वीप में रहने या होनेवाला।
पुं० १. व्यास। २. रुद्र।

द्वीश—वि० [सं० द्वि-ईश ष० त०] १. जो दो का स्वामी हो। २. [ब० स०] जिसके दो स्वामी हों। ३. (चरु) जो दो देवताओं के लिए हो।
पुं० विशाखा नक्षत्र।

द्वेष—पुं० [सं०√द्विष् (शत्रुता)+घञ्] १. किसी को दूसरा या पराया समझने और उससे पार्थक्य का व्यवहार करने का भाव। २. किसी के प्रति होनेवाले विरोध, वैमनस्य, शत्रुता आदि के फल-स्वरूप मन में रहनेवाला ऐसा भाव, जिसके कारण मनुष्य उसका बनता या होता हुआ काम बिगाड़ देता है अथवा उसे हानि पहुँचाने का प्रयत्न करता है।

द्वेषाग्नि—स्त्री० [सं० द्वेष-अग्नि कर्म० स०] = द्वेषानल।

द्वेषानल—पुं० [सं० द्वेष-अनल कर्म० स०] द्वेष या वैर रूपी अग्नि। द्वेष का उग्र या प्रबल रूप।

द्वेषी (षिन्)—वि० [सं०√द्विष्+घिनुण्] [स्त्री० द्वेषिणी] द्वेष करने या रखनेवाला।
पुं० वैरी। शत्रु।

द्वेष्टा (ष्टृ)—वि० [सं०√द्विष्+तृच्] [स्त्री० द्वेष्ट्री] = द्वेषी।

द्वेष्य—वि० [सं०√द्विष्+ण्यत्] १. जिससे द्वेष किया जाय। २. जिसके प्रति द्वेष रखना उचित हो।
पुं० वैरी। शत्रु।

द्वेष्य-पक्ष—पुं० [कर्म० स०] क्रोध, ईर्ष्या आदि जो द्वेष के अवांतर भेद हैं।

द्वै—वि० [सं० द्वय] १. दो। २. दोनों।

द्वैक*—वि० [हिं० द्वै+एक] दो-एक। थोड़े-से। कुछ।

द्वैगुणिक—वि० [सं० द्विगुण+ठक्-इक] दूना सूद खानेवाला (महाजन)।

द्वैगुण्य—पुं० [सं० द्विगुण+ष्यञ्] १. द्विगुण या दूने होने की अवस्था या भाव। २. दूनी रकम या परिमाण। ३. सत्त्व, रज और तम में से दो गुणों से युक्त होने की अवस्था या भाव। ४. दे०-'द्वैत'

द्वैज—स्त्री० [सं० द्वितीय, प्रा० दुइय] द्वितीया तिथि। दूज।

द्वैत—पुं० [सं० द्वि-इत तृ त०, +अण्] १. दो होने की अवस्था या भाव। २. जोड़ा। युग्म। ३. किसी को अन्य या पराया समझने का भाव ४. असमंजस। ५. अज्ञान। ६. एक वन का नाम। ७. 'द्वैतवाद' दे०।

द्वैत-चिंतामणि—पुं० [सं०] संगीत में, कर्नाट की पद्धति का एक राग।

द्वैत-परिपूर्णी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

द्वैतवन—पुं० [सं० द्वि= शोक, मोह—इत=नष्ट ब० स०,+अण्, द्वैत-वन कर्म स०] एक तपोवन, जिसमें युधिष्ठर वनवास के समय कुछ दिनों तक रहे थे।

द्वैत-वाद—पुं० [ष० त०] १. वह दार्शनिक सिद्धान्त, जिसमें आत्मा-परमात्मा अर्थात् जीव और आत्मा अथवा आत्मा और अनात्मा में भेद माना जाता है। अद्वैतवाद से भिन्न और उसका विरोधी मत या सिद्धांत। २. उक्त के अंतर्गत वह सूक्ष्म भेद, जिसमें और चित् शक्ति अथवा आत्मा और शरीर दो भिन्न पदार्थ माने जाते हैं।
विशेष—उत्तर मीमांसा या वेदांत का यह मत है कि आत्मा और पर-मात्मा दोनों एक हैं; परंतु शेष पाँचों दर्शन इस मत के विरोधी हैं। ३. दो स्वतंत्र और विभिन्न सिद्धान्त एक साथ माननेवाली विचार-शैली।

द्वैतवादी (दिन्)—वि० [सं० द्वैतवाद+इनि] [स्त्री० द्वैतवादिनी] ईश्वर और जीव में भेद मानने वाला। द्वैतवाद का अनुयायी।

द्वैतानंदी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाट की पद्धति की एक रागिनी।

द्वैती (तिन्)—वि० [सं० द्वैत+इनि] द्वैतवादी।

द्वैतीयीक—वि० [सं० द्वितीय+ईकक्] दूसरा।

द्वैध—पुं० [सं० द्वि+धमुञ् वा द्विधा+अण्] १. दो प्रकार के होने की अवस्था या भाव। २. दो में होनेवाली भिन्नता या भेद-भाव। ३. दो तरह की चालें चलने या नीतियाँ बरतने की अवस्था, गुण या भाव।
विशेष—प्रचीन भारतीय राजनीति में इसे छः गुणों के अंतर्गत माना गया है। ऊपर से कुछ और प्रकार का व्यवहार करने और अंदर-अंदर कुछ और प्रकार का व्यवहार करने की नीति ही द्वैध है। यह आधुनिक डिप्लो-मेसी के सम-कक्ष है।
३. वह शासन-प्रणाली-जिसमें कुछ विभाग सरकार के हाथ में और कुछ प्रजा के प्रतिनिधियों के हाथ में हों। (डायार्की)

द्वैधीकरण—पुं० [सं० द्वैध+च्वि √कृ० +ल्युट +अन] किसी चीज के दो टुकड़े करना।

द्वैधीभाव—पुं० [सं० द्वैध+च्वि√भू+घञ्] १. द्विधा भाव। अनिश्चय। दुबधा। २. ऊपर से कुछ और मन में कुछ और भाव रखने की अवस्था या गुण। ३. दोनों ओर मिलकर चलने या रहने की अवस्था या भाव।

द्वैप—वि० [सं० द्वीपिन्+अञ्] १. बाघ या व्याघ्र से संबध रखनेवाला। २. व्याघ्र के या बाघ के चमड़े का बना हुआ।
पुं० बाघ का चमड़ा। व्याघ्र-चर्म।
वि० दे० 'द्वैप्य'।

द्वैपायन—वि० [सं० द्वीप-अयन ब० स०,+अण्] द्वीप में जन्म लेनेवाला।
पुं० १. वेदव्यासजी का एक नाम। २. कुरुक्षेत्र के पास का एक ताल जिसमें युद्ध से भागकर दुर्योधन छिपा था।

द्वैप्य—वि० [सं० द्वीप्+यञ्] १. द्वीप संबंधी। टापू-का। २. द्वीप में उत्पन्न होने या रहनेवाला।

द्वैमातुर—वि० [सं० द्विमातृ+अण्, उत्व] जिसकी दो माताएँ हों।
पुं० १. गणेश। २. जरासंध।

द्वैमातृक—पुं० [सं० द्वि-मातृ ब० स० कप्,+अण] वह प्रदेश जहाँ खेती नदी के जल (सिंचाई) द्वारा भी की जाती है और वर्षा से भी होती है।

द्वैयह्निक—वि० [सं० द्वि-अहन् द्विगु स०,+ठञ्-इक] १. दो दिन की अवस्थावाला। २. दो दिन में किया जानेवाला।

द्वैराज्य—पुं० [सं० द्विराज+ष्यञ्] वह शासन-प्रणाली, जिसमें किसी एक दुर्बल या पराजित राज्य पर अन्य दो शक्तिशाली राज्य मिल-जुल कर शासन करते हों। (कॉन्डोमीनियम)

द्वैवार्षिक—वि० [सं० द्विवर्ष+ठञ्-इक] प्रति दो वर्षों पर होनेवाला। (बाईनियल)

द्वैविध्य—पुं० [सं० द्विविध+ष्यञ्] १. द्विविध अर्थात् दो प्रकार के होने की अवस्था या भाव। २. असमंजस। दुबधा।

द्वैषणीया—स्त्री० [सं० द्वेषण+अण्+छ-ईय, टाप्] नागवल्ली का एक भेद।

द्वैसमिक—वि० [सं० द्विसमा+ठक्-इक] दो वर्षों का।

द्वैहायन—पुं० [सं० द्विहायन+अण्] [वि० द्वैहायनिक] दो वर्ष का समय

द्वैहायनिक—वि० [सं० द्विहायन+ठक्-इक] १. दो वर्षों में होनेवाला। २. प्रति दो वर्षों पर (या में) होनेवाला।

द्वौ†—वि० [हिं० दो+ऊ, दोउ] दोनों।
 † स्त्री० =दव।

द्व्यक्ष—वि० [सं० द्वि-अक्ष ब० स०] दो नेत्रोंवाला। द्विनेत्र।

द्व्यणुक—वि० [सं० द्वि-अणु ब० स०, कप्] जिसमें दो अणु हों। दो अणुओंवाला।
 पुं० वह द्रव्य जो दो अणुओं के संयोग से उत्पन्न हो। वह मात्रा, जो दो अणुओं की हो।

द्व्यर्थ, द्व्यर्थक—वि० [सं० द्वि-अर्थ ब० स०] कप् विकल्प से जिसमें से दो या दो प्रकार के अर्थ निकलते हों।

द्व्यशीति—वि० [सं० द्वि-अशीति मध्य० स०] जो गिनती में अस्सी से दो अधिक हो। बयासी।
 स्त्री० उक्त की सूचक संख्या--८२

द्व्यष्ट—पुं० [सं० द्वि√अश् (व्याप्ति)+क्त] ताम्र। ताँबा।

द्व्याक्षायण—पुं० [सं०] एक ऋषि का नाम।

द्व्याग्नि—पुं० [सं०] लालचीता (वृक्ष)।

द्व्यातिग—वि० [सं० द्वि-आ-अति√गम् (जाना)+ड] जो रजोगुण तथा तमोगुण से रहित; परंतु सत्त्वगुण से युक्त हो।

द्व्यात्मक—पुं० [सं० द्वि आत्मन् ब० स०, कप्] दो स्वभाव की राशियाँ जो, जो ये हैं--मिथुन, कन्या, धनु और मीन।

द्व्यामुष्यायण—पुं० [सं० अमुष्य+फक्-आयन, द्वि-आमुष्यायण ष० त०] किसी व्यक्ति का वह पुत्र, जो दूसरे के द्वारा दत्तक के रूप में ग्रहण किया गया हो और जिसे दोनों पिता अपना, अपना पुत्र मानते हों।

ध

ध—देवनागरी वर्णमाला का उन्नीसवाँ व्यंजन जो व्याकरण तथा भाषा-विज्ञान की दृष्टि से दंत्य, घोष, महाप्राण और स्पर्शी है।
 पुं० धैवत स्वर का सूचक संक्षिप्त रूप। (संगीत)

धंका*—पुं० =धक्का।

धंगर—पुं० [देश०] १. चरवाहा। २. ग्वाला। अहीर।

धंगा†—पुं० [देश०] खाँसी।

धंदर—पुं० [देश०] पुरानी चाल का एक प्रकार का धारीदार कपड़ा।

धंध*—पुं० [सं० द्वंद्व] झंझट। बखेड़ा।

धंधक—पुं० [हिं० धंधा] झंझट। बखेड़ा।
 पुं० [?] एक प्रकार का ढोल।

धंधक-धेरी—पुं० = धंधक-धोरी।

धंधक-धोरी—पुं० [हिं० धंधक+धोरी] सांसारिक झंझटों या बखेड़ों में फँसा रहनेवाला व्यक्ति।

धँधका—पुं० [देश०] [स्त्री० अल्पा धँधकी] एक प्रकार का ढोल।

धँधरक—पुं० [हिं० धंधा] काम-धंधे का जंजाल, बखेड़ा या बोझ।

धँधरक-धोरी—पुं० = धंधक-धोरी।

धँधला—पुं० [हिं० धाँधल] १. कपटपूर्ण आचरण या व्यवहार। छल-छंद। २. आडंबर। ढोंग। ३. बहाना। मिस। हीला। (स्त्रियाँ) ४. दे० 'धांधली'।

धँधलाना—अ० [हिं० धँधला] १. छल छंद करना। ढंग रचना।
 अ० [हिं० धाँधली] १. धाँधली करना। २. जल्दी मचाना।

धंधा—पुं० [सं० धन-धान्य] १. वह उद्योग या कार्य जो जीविका-निर्वाह के लिए किया जाय। जैसे—अब उन्होंने वकालत (या वैद्यक) का धंधा छोड़ दिया है। २. व्यवसाय। व्यापार। ३. ऐसा काम जिसमें कुछ समय तक लगा रहना पड़े। जैसे--घर का भी कुछ धंधा किया करो। ३. दूसरों का चौका-बरतन करने की नौकरी।
 †पुं० = द्वंद्व। (राज०)

धँधार—स्त्री० [हिं० धूँआ] १. आग की लपट। २. बहुत अधिक मानसिक संताप।
 †वि० अकेला। एकाकी।
 पुं० भारी लकड़ियाँ, पत्थर आदि उठाने के काम आनेवाला लकड़ी का एक तरह का लंबा डंडा।

धंधारि*—स्त्री० १.=धँधार। २.=धंधारी।

धंधारी—स्त्री० [हिं० धंधा] गोरखपंथी साधुओं का गोरख धंधा।
 स्त्री० [?] १. अकेलापन। २. एकान्त या सुनसान स्थान। ३. निस्तब्धता। सन्नाटा।

धंधाला—स्त्री० [हिं० धंधा] कुटनी। दूती।

धंधालू—वि० [हिं० धंधा] जो किसी काम या धंधे में लगा रहता हो।

धँधेरा—पुं० [देश०] राजपूतों की एक जाति।

धँधोरा—पुं० [अनु० धाँय-धाँय=आग दहकने का शब्द] १. होलिका। होली। २. आग की लपट। ज्वाला।

धँवना*—स० [हिं० धौंकना] आग सुलगाने के लिए भाथी से हवा करना।
 उदा०—बिरहा पूत लोहार का धवैं हमारी देह।—कबीर।

धँवरख—स्त्री० [देश०] पंडुक (चिड़िया)।

धँस†—स्त्री० =धँसना।

धँसन—स्त्री० [हिं० धँसना] १. धँसने की क्रिया, ढंग या भाव। २. ऐसा स्थान जिसमें कोई धँस सकता हो। ३. दलदल।

धँसना—अ० [सं० दंशन] १. किसी नुकीली या भारी चीज का स्वयं अपने भार के कारण अथवा दाब आदि पड़ने के फलस्वरूप अपेक्षाकृत किसी नरम तल में नीचे की ओर जाना। जैसे—दल-दल में धँसना। २. दीवार, मकान आदि के संबंध में, उसके किसी पक्ष का जमीन में किसी प्रकार की कमजोरी होने के कारण प्रसम स्तर से नीचे जाना। ३. किसी प्रकार की कड़ी तथा नुकीली वस्तु का किसी तल में प्रविष्ट होना। गड़ना। जैसे—हाथ में सूई या पैर में काँटा धँसना। ४. नेत्रों के

संबंध में, उनका शारीरिक निर्बलता के कारण कुछ दबा हुआ या अंदर की ओर घुसा हुआ-सा प्रतीत होना। ५. व्यक्ति का भीड़-भाड़ में लोगों को दबाते या हटाते हुए आगे की ओर बढ़ना। ६. किसी चीज का वेगपूर्वक किसी दूसरी चीज में प्रविष्ट होना। जैसे—शरीर में गोली या तीर धँसना। ७. बात या विचार के संबंध में, समझ में आना। जैसे—उनके दिमाग में तो कोई बात धँसती ही नहीं।

†अ० [सं० ध्वंसन] ध्वस्त होना। नष्ट होना। मिटना।

†स० ध्वस्त या नष्ट करना। मिटाना।

धँसनि†—स्त्री० १. धँसन। २. धँसान।

धँसान—स्त्री० [हिं० धँसना] १. धँसने की क्रिया, ढंग या भाव। २. कीचड़ या दल-दल से भरी वह जमीन जिसमें सहज में कोई धँस सकता हो। ३. ढालुआँ स्थान। (क्व०) ४. भीड़-भाड़ में वेगपूर्वक लोगों को इधर-उधर ढकेलते या हटाते हुए आगे बढ़ने की क्रिया या भाव। जैसे—भेड़िया धँसान।

धँसाना—स० [हिं० धँसना] १. किसी चीज को धँसने में प्रवृत्त करना। २. गड़ाना। चुभाना। ३. जोर लगाकर अन्दर प्रविष्ट करना या कराना। ४. किसी तल पर ऐसा दबाव डालना कि वह नीचे की ओर धँसे।

धँसाव—पुं० [हिं० धँसना] १. धँसने की क्रिया या भाव। २. ऐसा स्थान, जिसमें कुछ या कोई सहज में धँस सके। ३. दे० 'धँसान'।

धई—स्त्री० [देश०] एक तरह का जंगली कंद, जिसे पहाड़ी जातियों के लोग खाते हैं।

धउरहर†—पुं० =धौरहर।

धक—स्त्री० [अनु०] १. भय आदि के कारण कलेजे के सहसा धड़कने से होनेवाला परिणाम। जैसे—चोर को देखते ही कलेजा धक-धक करने लगा।

मुहा०—जी धक-धक करना=कलेजा धड़कना। **जी धक होना**=(क) भय या उद्वेग से जी धड़क उठना। डर से जी दहल जाना। (ख) चौंक पड़ना।

२. मन की उमंग या भाव। ३. साहस। हिम्मत। उदा०—तौ भी सौ धक कंतरी, मूँछाँ भूह मिलाय।—कविराजा सूर्यमल। ४. तृष्णा। लालसा।

क्रि० वि० १. एक-बारगी। अचानक। सहसा। २. वेगपूर्वक। तेजी से। उदा०—दरैं कति कुप्पि धर धक दाव भरैं कति भूरि मरैं मृत भान।—कविराजा सूर्यमल।

स्त्री० [देश०] सिर में पड़नेवाली एक प्रकार की जूँ।

धकधकना—अ० =धक धकाना।

धकधकाना—अ० [अनु० धक] १. भय, उद्वेग आदि के कारण हृदय का धक-धक शब्द करना। कलेजा या हृदय धड़कना। २. (आग) दहकना। सुलगना।

स० (आग) दहकाना या सुलगाना।

धकधकाहट†—स्त्री० =धकधकी।

धक-धकी—स्त्री० [अनु० धक] १. कलेजे के धक-धक करने की अवस्था, क्रिया या भाव। हृदय की धड़कन। २. आशंका। खटका। ३. आगा-पीछा। असमंजस। दुबधा। ४. दे० 'धुकधुकी'।

धक-पक—स्त्री० [अनु०] १. कलेजे की धड़कन। धकधकी। २. मन में होनेवाली आशंका। खुटका।

क्रि० वि० १. धक-धक या धक-पक करते हुए। २. धड़कते हुए कलेजे से।

धकपकाना—अ० [अनु० धक] जी में दहलना। मन में डरना।

† स० किसी को डरने या दहलने में प्रवृत्त करना।

धकपेल—स्त्री० = धका-पेल।

धका—पुं० = धक्का।

†स्त्री० = धाक।

धका-धकी—स्त्री० =धका-पेल।

धका-धूम—स्त्री० =धका-पेल।

धकाना—स० [हिं० दहकाना] (आग) दहकाना। सुलगाना।

†अ० = (आग) दहकना। सुलगना।

धका-पेल—स्त्री० [हिं० धक्का+पेलना] भीड़भाड़ में होनेवाली धक्के-बाजी। धक्कमधुक्का।

क्रि० वि० दूसरों को धक्के देकर हटाते हुए। जैसे—सब लोग धका-पेल घुसते चले जा रहे थे।

धकार—पुं० [देश०] १. कान्यकुब्ज और सरजूपारी ब्राह्मणों के वर्ग का वह ब्राह्मण, जो उनकी दृष्टि में निम्न कुल का हो। २. एक राजपूत जाति। ३. कम या थोड़े पानी में होनेवाला एक तरह का धान। (पंजाब)

†स्त्री० = धिक्कार।

† वि० =दोगला।

धकारा—पुं० [अनु० धक] धकधकी। आशंका। खटका।

क्रि० प्र०—पड़ना।—लगना।

धकियाना—स० [हिं० धक्का] १. धक्का देना। ढकेलना। २. धक्का देकर बाहर निकालना। ३. आगे बढ़ने के लिए विशेष रूप से प्रेरित तथा प्रोत्साहित करना।

धकेलना—स० [हिं० धक्का] १. धक्का देना। ढकेलना। २. इस प्रकार किसी को धक्का देना कि वह गिर पड़े। ३. पशु यान आदि के संबंध में, पीछे से इस प्रकार धक्का देना कि वह आगे बढ़ने या चलने लगे। ४. आगे बढ़ने में प्रवृत्त करना। आगे बढ़ाना।

धकेलू—पुं० [हिं० धकेलना] १. ढकेलने या धक्का देनेवाला। २. स्त्री का उपपति या यार। (बाजारू)

धकैत—वि० [हिं० धक्का+ऐत (प्रत्य०)] धक्कम धक्का करनेवाला।

धकोना†—स० = धकियाना।

धक्क—स्त्री० = धक।

धक्क-पक्क—स्त्री०, क्रि० वि०= धक-धक।

धक्कम-धक्का—पुं० [हिं० धक्का] १. बार-बार बहुत अधिक या बहुत-से आदमियों का परस्पर धक्का देने की क्रिया या भाव। २. ऐसी भीड़, जिसमें लोगों को बार-बार उक्त प्रकार से धक्के लगते हों।

धक्का—पुं० [सं० धम, हिं० धमक या सं० धक्क=नष्ट करना] १. किसी को धकेलने या आगे बढ़ाने के लिए उसके पीछे की ओर से डाला जानेवाला दबाव या किया जानेवाला आघात। जैसे—दरवाजा धक्के से खुलेगा। २. किसी ओर से वेगपूर्वक आकर लगनेवाला वह आघात जो किसी

को ढकेलता या दबाता हुआ उसके स्थान से आगे बढ़ा, हटा या गिरा दे। जैसे—गाड़ी के धक्के से वह जमीन पर गिर पड़ा।
क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।
३. किसी को अनादर या उपेक्षापूर्वक कहीं से निकालने या हटाने के लिए किया जानेवाला उक्त प्रकार का आघात। जैसे—कुछ लोग तो वहाँ से धक्का देकर निकाले गये।
क्रि० प्र०—देना।—मारना।—सहना।
मुहा०—धक्के खाना = बार-बार धक्कों का आघात सहते हुए हटाया जाना। जैसे—बहुत दिनों तक वह जगह-जगह धक्के खाता रहा। **(किसी को) धक्का (या धक्के) देकर निकालना**=बहुत ही अनादर या तिरस्कारपूर्वक दूर करना या हटाना।
४. किसी को दुर्दशाग्रस्त करने या हीन स्थिति में पहुँचाने के लिए किया जानेवाला कोई कार्य। जैसे—अँगरेजी शासन को एक धक्का और लगा। ५. जन-समूह या भीड़ की वह स्थिति, जिसमें चारों ओर से लोगों को धक्के लगते हों। जैसे—मेले-तमाशों में धक्का बहुत होता है। ६. लाक्षणिक रूप में, किसी दुःखद बात के परिणामस्वरूप होनेवाला मानसिक आघात; जैसे—लड़के की मृत्यु के धक्के ने उन्हें बहुत दुर्बल कर दिया है।
क्रि० प्र०—पहुँचना।—लगना।
७. कोई ऐसा आघात जिसमें किसी प्रकार की विशेष क्षति हो। जैसे—(क) आप की बातों के फेर में हमें भी सौ रुपए का धक्का लगा। (ख) बाहर से माल आ जाने के कारण बाजार (या व्यापारियों) को बहुत धक्का लगा है।
क्रि० प्र०—बैठना।—लगना।
८. कुश्ती का एक पेंच, जिसमें बायाँ पैर आगे रखकर विपक्षी की छाती पर दोनों हाथों से धक्का देते हुए उसे नीचे गिराते हैं। द्राप। ठोंढ़।

धक्काड़—वि० [हिं० धाक] १. चारों ओर जिसकी महत्ता की खूब धाक जमी हो। २. अपने विषय का बहुत बढ़ा-चढ़ा विशेष ज्ञाता या पंडित। ३. बहुत बड़ा।

धक्का-मार—वि० [हिं०] १. धक्का देने या बल-प्रयोग करनेवाला। २. उद्दंडतापूर्ण आघात करनेवाला (आचरण या व्यवहार)।

धक्का-मुक्की—स्त्री० [हिं० धक्का+मुक्का] ऐसी लड़ाई, जिसमें एक दूसरे को धक्के देते हुए घूँसों से मारें। मुठ-भेड़।

धगड़—पुं० =धगड़ा।

धगड़बाज—वि० स्त्री० [हिं० धगड़ा+फा० बाज] धगड़ा या उपपति बनाने या रखनेवाली। कुलटा। व्यभिचारिणी।

धगड़ा—पुं० [सं० धव = पति] [स्त्री० धगड़ी] १. किसी स्त्री का जार। उपपति। २. वह जिसे किसी स्त्री ने बिना विवाह किये अपना पति बना लिया हो। ३. बदमाश। लुच्चा।

धगड़ी—स्त्री० [हिं० धगड़ा] १. व्यभिचारीणी स्त्री। कुलटा स्त्री। २. उपपत्नी। रखेली। ३. धाय। (पूरब)

धग-धगाना—अ० [हिं०] १. धड़कना। २. दहकना।
†स० (आग) दहकाना। सुलगाना।

धगरा—पुं० = धगड़ा।

धगरिन—स्त्री० [हिं० धाँगर] धाँगर जाति की स्त्री, जो तुरन्त के जनमें हुए बच्चे की नाल काटती है।
†स्त्री० = धगड़ी।

धगवरी†—वि० [हिं० धगड़ा=पति या यार] १. पति की दुलारी और मुँह-लगी। २. कुलटा। व्यभिचारिणी।

धगा†—पुं० = धागा (तागा)।

धगुला†—पुं० [देश०] हाथ में पहनने का एक आभूषण।

धग्गड़—पुं० [?] आटे आदि की वह टिकिया, जो फोड़े, सूजन आदि पर उन्हें दबाने के लिए बाँधी जाती है।
†पुं० =धगड़ा।

धचकचाना—स० [देश०] डराना। दहलाना।
†अ० धचकना।

धचकना—अ० [देश०] १. दलदल में धँसना। २. संकट में पड़ना।
स० हलका आघात करते हुए दबाना।

धचका—पुं० [हिं० धचकना] १. धचकने की क्रिया या भाव। २. धक्का। ३. क्षति। नुकसान। हानि।
क्रि० प्र०—उठाना।

धचकाना—स० [हिं० धचकना] १. दलदल में फँसाना। २. संकट में डालना। ३. दबाने के लिए हलका आघात करना।

धचना†—अ० [देश०] शान्त या स्थिर होना। ठहरना।

धज—स्त्री० [सं० ध्वज=चिह्न, पताका] १. मोहित करनेवाली सुंदर चाल-ढाल या रंग-ढंग। २. कोई काम करने का सुंदर ढंग या प्रकार। ३. बनाव-सिंगार। उदा०—वाह! क्या धज है मेरे भोले की। शक्ल कोले की हैट सोले की।—अकबर। ४. ठसक। नखरा। ५. शोभा।

धजबड़—स्त्री० [?] तलवार। (डिं०)

धजा—स्त्री० [सं० ध्वज] १. ध्वजा। पताका। २. कपड़े की कतरन या धज्जी।

धजीला†—स्त्री०=धव।
वि० [हिं० धज+ईला (प्रत्य०)] [स्त्री० धजीली] १. आकर्षक। मनोहर अथवा सुन्दर धजवाला। २. बनाव-सिंगार किया हुआ।

धज्जी—स्त्री० [सं० धटी] कपड़े, कागज, चादर, धातु पत्थर, लकड़ी, आदि का वह पतला लंबा टुकड़ा या पट्टी, जो उन्हें काटने, चीरने, फाड़ने आदि पर निकलती है।
मुहा०—(किसी चीज की) धज्जियाँ उड़ाना = काट, चीर, तोड़ या फाड़कर इतने छोटे-छोटे टुकड़े करना कि वे किसी काम के न रह जायँ। **(किसी व्यक्ति की) धज्जियाँ उड़ाना**=(क) बहुत अधिक मारना-पीटना। (ख) दोषों या बुराइयों की इतने जोरों से चर्चा करना कि लोग उसका वास्तविक स्वरूप समझकर उसके प्रति उपेक्षा या घृणा का व्यवहार करने लगें। **(किसी बात या सिद्धांत की) धज्जियाँ उड़ाना**= गलत या दोषपूर्ण सिद्ध करते हुए उसका सारा महत्त्व नष्ट करना। निरर्थक सिद्ध करना। **(किसी को) धज्जियाँ लगना** = इतना अधिक दीन-हीन या दरिद्र हो जाना कि चीथड़े लपेटकर रहना पड़े। **(किसी का) धज्जियाँ लेना**=(किसी की) धज्जियाँ उड़ाना। **(किसी व्यक्ति का) धज्जी हो जाना**=बहुत ही कृश, क्षीण या दुर्बल हो जाना।

घट—पुं० [सं० ध=धन√अट् (प्राप्ति) +अच्, पररूप] १. तुला। तराजू। २. तुला राशि। ३. तुलापरीक्षा। ४. धर्म।

घटकै—पुं० [सं० धट्√कै (प्रकाशित होना)+क] ४२ रत्तियों के बराबर की एक पुरानी तौल।

घटिका—स्त्री० [सं० धटी+कन्+टाप्, ह्रस्व] १. पाँच सेर की एक पुरानी तौल। पंसेरी। २. कपड़े की धज्जी। चीर। ३. कौपीन। लँगोटी।

घटी—पुं० [सं० धट्+ङीप्] १. तुला राशि। २. शिव।

वि० [सं० धटिन्] [स्त्री० धटिनी] तराजू की डंडी पकड़कर चीजें तौलनेवाला। तुला-धारक।

स्त्री० १. कपड़े की धज्जी। छीर। २. कौपीन। लँगोटी। ३. वे वस्त्र जो प्राचीन काल में स्त्रियों को गर्भवती होने पर पहनने के लिए दिये जाते थे।

धड़ंग—वि० [हिं० धड़+अंग] नंगा। जैसे—नंग-धड़ंग खड़े हो जाना।

धड़—पुं० [सं० धर+धारण करनेवाला] १. मनुष्य के शरीर का वह बीचवाला अंश, जिसके अंतर्गत छाती, पीठ और पेट होते हैं। सिर और हाथ-पैर को छोड़ शरीर का बाकी भाग। कमर से ऊपर और गले के नीचे का भाग। २. पशु-पक्षियों आदि में हाथ, पैर दुम, पर और सिर को छोड़कर शरीर के बीच का बाकी सारा भाग।

मुहा०—(कोई चीज) धड़ में डालना=निगल या खा जाना। पेट में उतारना। **(किसी का) धड़ रह जाना**=लकवे या ऐसे ही किसी रोग के कारण देह या शरीर निष्क्रिय और स्तब्ध हो जाना। **धड़ से सिर अलग करना**=सिर काट लेना, जिससे मृत्यु हो जाय।

३. पेड़ का वह सबसे मोटा और कड़ा भाग, जो जड़ से कुछ दूर ऊपर तक रहता है और जिसके ऊपरी भाग में से निकलकर डालियाँ इधर उधर फैलती रहती हैं। पेड़ी। तना।

पुं० [अनु०] एक प्रकार का बड़ा ढोल या नगाड़ा।

पुं० [अनु०] किसी चीज के जोर से गिरने का शब्द। धड़ाम। जैसे—वह धड़ से गिर पड़ा।

पद—धड़ से=चटपट। तुरंत। जैसे—तुम भी धड़ से नहा लो।

धड़क—स्त्री० [हिं० धड़कना] १. धड़कने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. अनाभ्यास, भय, संकोच आदि के कारण कोई काम करने से पहले या करते समय मन में होनेवाला असमंजस या आशंका।

मुहा०—(किसी काम या बात में) धड़क खुलना=पहले की-सी आशंका, भय या संकोच न रह जाना।

पद—बेधड़क= बिना किसी प्रकार के भय या संकोच के। भय रहित या निस्संकोच होकर।

३. दे० 'धड़कन'।

धड़कन—स्त्री० [हिं० धड़क] १. धड़कने की क्रिया या भाव। २. हृदय की गति बहुत तीव्र होने पर उसका तीव्र और स्पष्ट स्पंदन। ३. हृदय का एक रोग जिसमें वह प्रायः धड़कता रहता है। धड़की। ४. दे० 'धड़क'।

धड़कना—अ० [अनु०] १. धड़-धड़ शब्द उत्पन्न होना। २. आशंका, उद्वेग, आदि तीव्र मनोविकारों अथवा कुछ रोगों के कारण हृदय में इस प्रकार जोर की गति होना कि उसमें से धड़-धड़ या हलका शब्द होने लगे। कलेजा धक-धक करना। जैसे—डाकुओं को देखते ही स्त्रियों का कलेजा (या दिल) धड़कने लगा।

† अ०, स० = धड़धड़ाना।

धड़का—पुं० [अनु० धड़] १. दिल की धड़कन। २. दिल धड़कने से उत्पन्न होनेवाला शब्द। ३. आशंका। खटका। भय। जैसे—चलो मार खाने का धड़का छूटा। ४. खेतों में से चिड़ियों को उड़ाकर भगाने के लिए खड़ा किया जानेवाला वह पुतला या बाँस, जिसे खट-खटाने से धड़-धड़ शब्द होता है। धोखा।

† पुं० = धड़ाका।

धड़काना—स० [हिं० धड़क] १. किसी के दिल में धड़क पैदा करना। धड़कने में प्रवृत्त करना। २. किसी के मन में आशंका या खटका उत्पन्न करके उसे दहलाना।

संयो० क्रि०—देना।

३. धड़-धड़ शब्द उत्पन्न करना।

धड़क्का—पुं० १. धड़का। २. धड़ाका। ३. 'धूम' का निरर्थक अनुकरणात्मक शब्द।

धड़-टूटा—वि० [हिं० धड़+टूटना] १. कमर झुकने के कारण जिसका धड़ आगे की तरफ लटकता हो। २. कुबड़ा।

धड़-धड़—स्त्री० [अनु०] किसी भारी वस्तु के वेगपूर्वक या एक बारगी गिरने, फेंके जाने या छूटने से उत्पन्न होनेवाला धड़-धड़ शब्द। जैसे—गोलियों की धड़-धड़ सुनकर हम लोग घर से बाहर निकल आये।

क्रि० वि० १. धड़-धड़ शब्द करते या होते हुए। जैसे—उस पर धड़-धड़ मार पड़ने लगी। २. दे० 'धड़ाधड़'।

धड़धड़ाना—स० [अनु० धड़धड़] १. इस प्रकार कोई काम करना कि उससे धड़-धड़ शब्द हो। २. किसी प्रकार धड़-धड़ शब्द करना।

अ० धड़-धड़ शब्द होना।

धड़ल्ला—पुं० [अनु० धड़] १. वेग के साथ गिरने, पड़ने आदि का धड़-धड़ शब्द। धड़ाका। २. तेजी। वेग। ३. निर्भीकता तथा उत्साहपूर्वक कोई काम करने की उत्कट प्रवृत्ति।

पद—धड़ल्ले से=(क) बिना झिझके और खूब तेजी से। जैसे—वह ससुर से धड़ल्ले से बातें करती है। (ख) एक बारगी। जैसे—लड़के ने अपना सारा पाठ धड़ल्ले से सुना दिया। ४. धूम-धाम। ५. बहुत अधिक भीड़। कश-मकश।

धड़वा†—पुं० [देश०] मैना के आकार का एक तरह का पक्षी।

धड़वाई†—पुं० [हिं० धड़ा] अनाज आदि तौलनेवाला। बया।

धड़ा—पुं० [सं० धट] [स्त्री० धड़ी] १. एक प्रकार की पुरानी तौल जो कहीं चार सेर की और कहीं पाँच सेर की मानी जाती थी। २. तौलने का बटखरा। बाट। ३. तराजू। तुला।

मुहा०—धड़ा उठाना=तौलने के लिए तराजू उठाकर हाथ में लेना। **धड़ा करना**= तौलने से पहले तराजू उठाकर यह देखना कि दोनों पलड़े बराबर हैं या नहीं और यदि दोनों में कुछ अंतर हो, तो किसी ओर पासंग रखकर वह अंतर दूर करना। **धड़ा बाँधना**=(क) धड़ा करना। (देखें ऊपर) (ख) लाक्षणिक रूप में, ऐसी युक्ति करना कि कोई दूसरा आदमी दोषी सिद्ध हो।

पुं० जत्था। झुंड। दल।

मुहा०—धड़ा बाँधना=अपना अलग दल या वर्ग बनाना। दलबंदी करना।

धड़ाक†—क्रि० वि० [अनु०] १. धड़ शब्द करते हुए। जैसे—वह धड़ाक से गिर पड़ा। २. एकाएक। सहसा। जैसे—इतने में वह वहाँ धड़ाक से आ पहुँचा।

† पुं० = धड़ाका।

धड़ाका—पुं० [अनु० धड़] १. 'धड़' से होनेवाला जोर का शब्द धमाका। जैसे—तोप या बंदूक का धड़ाका।

क्रि० वि० चटपट। तुरंत। जैसे—वह धड़ाका उठकर चल खड़ा हुआ।

पद—धड़ाके से = चट पट। तुरंत। धड़ल्ले से।

धड़ा-धड़—क्रि० वि० [अनु० धड़] १. धड़-धड़ शब्द करते हुए। जैसे—धड़ा-धड़ ईंट-पत्थर फेंकना या गोलियाँ चलाना। २. जल्दी-जल्दी और बराबर। निरंतर लगातार। जैसे—धड़ाधड़ बोलते चलना।

धड़ाबंदी—स्त्री० [हिं० धड़ा+फा० बंदी] १. कोई चीज तौलने से पहले तराजू का धड़ा, पासंग आदि रखकर ठीक करने की क्रिया या भाव। २. किसी प्रकार की प्रतियोगिता, विरोध आदि के लिए प्रस्तुत होने के समय अपने सब अंग और पक्ष ठीक करना। ३. युद्ध के समय दोनों पक्षों का अपना सैनिक बल शत्रु के सैनिक बल के बराबर करना।

धड़ाम—पुं० [अनु० धड़] ऊँचाई से वेगपूर्वक नीचे आकर पड़ने, गिरने आदि का शब्द। धड़ या धम शब्द।

पद—धड़ाम से= जल्दी या वेगपूर्वक और धड़ या धड़ाम शब्द करते हुए। जैसे—वह धड़ाम से नदी में कूद पड़ा।

धड़िया†—पुं० [?] बच्चों की लँगोटी।

धड़ी—स्त्री० [सं० घटिका, धटी] १. चार या पाँच सेर की एक पुरानी तौल। धड़ा। २. मान, संख्या आदि की बहुलता या यथेष्टता।

मुहा०—धड़ी धड़ी करके लूटना = खूब अच्छी तरह या बहुत लूटना। ३. पाँच सौ रुपये की रकम। ४. ढेर। राशि। उदा०—सज्जाणिया सावण हुया, धड़ि उकती भंडार।—ढोला मारू। ५. मोटी रेखा या लकीर। जैसे—मिस्सी लगाने या पान खाने से होंठों पर धड़ी जम जाती है।

क्रि० प्र०—जमना।

मुहा०—धड़ी जमाना=मिस्सी करके होंठों पर काली या नीली मोटी रेखा बनाना।

धण—स्त्री० [सं० धन्या] १. स्त्री। नारी। उदा० —धण नागर देखे सधण।—प्रिथीराज। २. पत्नी। जोरू। ३. कन्या। बेटी।

पुं० [सं० धन्य; हिं० धणियों का पुं०] १. पति। २. प्रियतम। उदा०—धणियाँ धण सालण लगा। —ढोलामारू।

†पुं० =धन।

धणी †—पुं० = धनी।

धत—अव्य० [अनु०] १. दुतकारने या तिरस्कारपूर्वक हटाने का शब्द। दूर हो। हट्जा। २. हाथी को पीछे हटाने का शब्द। (महावत)

†स्त्री० लत (बुरी आदत या बान)।

क्रि० प्र०—पड़ना।—लगना।

धतकारना—स० १. दुतकारना। २. धिक्कारना।

धता—वि० [अनु० धत्] जो दूर हो गया हो या किया गया हो। हटा या हटाया हुआ।

मुहा०—धता बताना = अपना पीछा छुड़ाने के लिए इधर-उधर की बातें करके उपेक्षापूर्वक किसी को चलता करना या दूर हटाना। (बाजारू)

धतिया—वि० [हिं० धत] जिसे किसी बात की धत या बुरी लत पड़ गई हो

धतींगड़—वि० [देश०] १. बहुत बड़ा, भारी या मोटा ताजा। २. जारज। दोगला।

धतींगड़ा—वि० = धतींगड़।

धतूर—पुं० [अनु० धू + सं० तूर] नरसिंहा नाम का बाजा। धूतू। सिंहा। तुरही।

†पुं० =धतूरा।

धतूरा—पुं० [सं० धुस्तूर] १. दो-तीन हाथ ऊँचा एक प्रकार का पौधा, जिसके पत्ते पानके आकार के नोकदार तथा कोमल होते हैं तथा फल सेब की तरह गोल होते हैं; किन्तु ऊपर छोटे-छोटे कोमल काँटे होते हैं। इसके फल तथा बीज बहुत अधिक जहरीले तथा मादक होते हैं; इसी लिए फल शिवजी को चढ़ाये जाते हैं। २. उक्त पौधे का फल जो बहुत जहरीला होता है। ३. कोई जहरीली वस्तु।

मुहा०—धतूरा खाये फिरना = इस प्रकार उन्मत्त और नशे में चूर होकर घूमना, मानों धतूरे के बीज अथवा ऐसी ही कोई जहरीली चीज खा ली हो।

धतूरिया—पुं० [हिं० धतूर+इया (प्रत्य०)] ठगों का वह दल, जो पथिकों को धतूरे का बीज खिलाकर बेहोश करता और लूटता था।

धत्ताँ†—वि० [?] बहुत अधिक (गहरा या तेज) उदा०— ये तो रँग धत्ताँ लग्यों माय।—मीराँ।

धत्ता—पुं० [देश०] १. एक प्रकार का छंद, जिसके विषम चरणों में १८ और सम चरणों में १६ मात्राएँ होती हैं। अंत में तीन लघु होते हैं। २. थाली की बाढ़ का ढालुआँ अंश या भाग।

धत्तानंद—पुं० [सं०] एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में ११+७+१३ के विश्राम से ३१ मात्राएँ और अंत में एक नगण होता है।

धत्तूर—पुं० [सं०√धे (पीना) +उरच्, पृषो० सिद्धि] धतूरा।

धत्तूरक—पुं० [सं० धत्तूर+कन्] धतूरा।

धत्तूरका—स्त्री० [सं० धत्तूरक+टाप्] धतूरा।

धधक—स्त्री० [हिं० धधकना] १. धधकने की क्रिया, दशा या भाव। २. आग की लपट। ३. आँच। ताप।

क्रि० प्र०—उठना।—जाना।

धधकना—अ० [हिं० धधक] १. आग का लपटें छोड़ते तथा शब्द करते हुए जलना। दहकना। २. भड़कना।

धधकाना—स० [हिं० धधकना] ऐसी क्रिया करना जिससे आग धधकने लगे। दहकाना।

संयो० क्रि०—देना।

धधाना†—अ० = धधकना।

स० = धधकाना।

धनंजय—वि० [सं० धन√जि (जीतना)+खच्, मुम्] धन जीतने अर्थात् प्राप्त करनेवाला।
पुं० १. विष्णु। २. अग्नि। आग। ३. चित्रक या चीता नाम का वृक्ष। ४. पाँचों पांडवों में के अर्जुन का एक नाम। ५. अर्जुन वृक्ष। ६. एक नाग जो जलाशयों का अधिपति कहा गया है। ७. शरीर में रहनेवाली पाँच वायुओं में से एक, जिसकी गिनती उप-प्राणों में होती है और जिससे जँभाई आती है। ८. एक गोत्र का नाम। ९. सोलहवें द्वापर के व्यास का नाम।

धनंतर—पुं० [सं० धन्वंतरु = सोम का एक भेद] एक प्रकार का पौधा जिसकी पत्तियाँ मोटी और फूल नीले होते हैं।
†पुं० = धन्वंतरि।

धन—पुं० [सं० √धन् (शब्द)+अच्] १. वह मूल्यवान् पदार्थ, जिससे जीवन-निर्वाह में यथेष्ट सहायता मिलती हो और जिसे अर्जित या प्राप्त करने के लिए परिश्रम करना और पूँजी तथा समय लगाना पड़ता हो। जैसे—खेत, जमीन, मकान, रुपया-पैसा। २. यथेष्ट मात्रा या संख्या में उक्त प्रकार की कोई चीज। उदा०—गो-धन, गज-धन बाजि-धन और रतन-धन खान। जब आवै संतोष-धन सब धन धूरि समान।—तुलसी। ३. लोक-व्यवहार में मुख्य रूप से चाँदी, ताँबे, सोने आदि के सिक्के। रुपया-पैसा। जैसे—व्यापार में धन लगाना।
क्रि० प्र०—कमाना।—भोगना।—लगाना।
४. प्राणों के समान परम प्रिय व्यक्ति। जैसे—भगवान ही हमारे जीवन-धन हैं। ५. जन्म, कुंडली में जन्म-लग्न से दूसरा स्थान, जिसे देखकर यह विचार किया जाता है कि अमुक व्यक्ति धनी होगा या निर्धन। ६. लेन-देन में उधार दी हुई वह रकम, जिसमें अभी ब्याज का सूद न जोड़ा गया हो। मूल। ७. गणित में, जोड़ने या मिलाने का वह चिह्न, जो इस प्रकार लिखा जाता है—+। ८. व्यवहार में, वह स्थिति, जिसमें किसी विशिष्ट गुण, तथ्य, तत्त्व या वस्तु की सत्ता वर्तमान होती है, अभाव नहीं होता। 'ऋण' का विपर्याय। जैसे—धन विद्युत्। ९. खनकों की परिभाषा में, खान से निकली और बिना साफ की हुई कच्ची धातु।
वि० १. लेखे आदि में जो 'हाँ' के पक्ष का हो। २. हिसाब-किताब में जो जोड़ा या बढ़ाया जाने को हो। ३. किसी के यहाँ से अमानत या उधार के रूप में आया हुआ। जो हिसाब-किताब में किसी के नाम से जमा हो। (क्रेडिट) ४. दे० 'सहिक'।
†वि० =धन्य। उदा०—धन धन भारत की छत्रानी।—भारतेंदु।
स्त्री० [सं० धन्या] १. पत्नी या वधू। २. सुंदर या स्नेह-पात्र युवती या स्त्री।
†पुं० हिं० 'धान' का संक्षिप्त रूप जो उसे यौगिक शब्दों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—धन कटी, धन-कर, धन कुट्टी आदि-आदि।

धनई†—स्त्री० = धनुई (छोटा धनुष)।

धनक—पुं० [सं०] १. धन पाने की इच्छा। २. लालच। लोभ। ३. राजा कृतवीर्य के पिता का नाम।
†स्त्री० [सं० धनुष] स्त्रियों की एक प्रकार की ओढ़नी।
†पुं० १. धनुष। २. इंद्र धनुष।

धन-कटी—स्त्री० [हिं० धान+ कटना] १. धान की कटाई या उसका समय। २. पुरानी चाल का एक प्रकार का कपड़ा।

धन-कर—पुं० [हिं० धान+कर (प्रत्य०)] १. वह कड़ी मिट्टी, जिसमें धान बोया जाता है और जिसमें बिना अच्छी वर्षा हुए हल नहीं चल सकता। २. वह खेत जिसमें धान होता हो।

धन-कुट्टी—स्त्री० [हिं० धान+कूटना] १. धान कूटने की क्रिया, भाव या मजदूरी। २. धान कूटने का ऊखल या मूसल। ३. खूब अच्छी तरह मारने-पीटने की क्रिया या भाव। (परिहास और व्यंग ४. लाल रंग का एक तरह का फतिंगा जो अपना धड़ इस प्रकार ऊपर नीचे हिलाता है, जिस प्रकार धान कूटने की ढेकली हिलती है।

धन-कुबेर—पुं० [हिं० धन = कुबेर] बहुत बड़ा धनवान् और सम्पन्न व्यक्ति।

धन-केलि—पुं० [ब० स०] कुबेर।

धन-कोटा—पुं० [देश०] हिमालय के कुछ भागों में होनेवाला एक तरह का पौधा जो कागज बनाने के काम आता है। चमोई सतबखा। सतपुरा।

धनखर†—पुं० [हिं० धान] धान बोने का खेत। धनऊँ।

धन-चिड़ी—स्त्री० [हिं० धान+चिड़ी] एक तरह की चिड़िया।

धन-जन—पुं० [सं० धन+जन] १. वह व्यक्ति जिसके पास धन-दौलत हो। उदा०—करत रहत धन-जन के, चरन की गुलामी।—हरिश्चंद्र। २. धन-संपत्ति और व्यक्ति। जैसे—इस आँधी पानी में धन-जन का भी कुछ नाश हुआ है।

धन-तेरस—स्त्री० [सं० धन = हिं० तेरस (त्रयोदशी)] कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी। इस दिन धन की प्राप्ति के लिए लक्ष्मी का पूजन करने का विधान है।

धन-दंड—पुं० [तृ० त०] अर्थ-दंड। जुरमाना।

धनद—वि० [सं० धन√दा (देना)+क] [स्त्री० धनदा] १. धन देनेवाला। २. उदार तथा दानी (पुरुष)।
पुं० १. कुबेर। २. अग्नि। आग। ३. चित्रक या चीता नामक वृक्ष। ४. समुद्र-फल। हिज्जल। ५. धनपति नामक वायु। ६. हिमालय में उत्तरा खंड के अन्तर्गत एक प्राचीन तीर्थ।

धनद-तीर्थ—[सं० कर्म० स०] कुबेर तीर्थ जो ब्रज मंडल में है।

धनदा—स्त्री० [सं० धनद+टाप्] आश्विन कृष्ण एकादशी।
स्त्री० सं० 'धनद' का स्त्री०।

धनदाक्षी—स्त्री० [सं० धनद-अक्षि ब० स०, अच्+ङीप्] लता करंज।

धनदायन—पुं० [देश०] एक प्रकार का पौधा जिसके काढ़े से ऊनी कपड़ों पर माड़ी लगाते हैं।

धन-देव—पुं० [ष० त०] धन के स्वामी; कुबेर।

धन-धानी—स्त्री० [ष० त०] कोष। खजाना।

धन-धान्य—पुं० [द्व० स०] धन और खाद्य पदार्थ।

धन-धाम—पुं० [द्व० स०] घर-बार और धन-संपत्ति।

धन-धारी (रिन्)—पुं० [सं० धन्√धृ (धारण) +णिनि] १. कुबेर। २. धनवान।

धननंद—पुं० [सं०] सिंहल के महावंश (ग्रंथ) के अनुसार मगध के नंद वंश का अंतिम राजा, जिसका नाश चाणक्य ने किया था।

धन-नाथ—पुं० [ष० त०] कुबेर।

धन-नायकी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

धन-पक्ष—पुं० [ष० त०] १. बही-खाते आदि में का वह पक्ष या विभाग

जिसमें दूसरों से मिलनेवाले रुपये या अन्य चीजें और उनका मूल्य लिखा जाता है। जमावाला पक्ष। (क्रेडिट साइड) २. वह पक्ष जिसमें पूँजी, लाभ या उपयोगी बातों का विचार या उल्लेख हो।

धन-पति—पुं० [ष० त०] १. कुबेर। २. धनवान् व्यक्ति। ३. ३. पुराणानुसार एक वायु का नाम।

धन-पत्र—पुं० [ष० त०] १. शासन या सरकार द्वारा प्रचलित किया हुआ वह मुद्रित कागज का टुकड़ा जो सिक्कों के सदृश और उनके स्थान पर लेन-देन में काम आता है। (करेन्सी नोट)

† २. बही-खाता।

धन-पात्र—पुं० [ष० त०] धनवान्। धनी।

धनपाल—वि० [सं० धन√पाल् (रक्षा)+क] धन का रक्षक।

पुं०=कुबेर।

धन-पालिनी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

धन-प्रयोग—पुं० [ष० त०] व्यापार में धन लगाने या ब्याज पर उधार देने का कार्य। पूंजी का उपयोग।

धन-प्रिया—स्त्री० [उपमि० स०] एक प्रकार का छोटा जामुन।

धन-बहेड़ा—पुं० दे० 'अमलतास' (वृक्ष)।

धन-मद—पुं० [ष० त०] वह अभिमान या मद। जो पास में यथेष्ठ धन होने पर होता है।

धनमान—वि० = धनवान्।

धनमाली—पुं० [सं०] अस्त्रों का एक प्रकार का संहार।

धन-राशि—स्त्री० [ष० त०] १. धन का ढेर। २. बहुत अधिक धन। ३. लेन-देन आदि विशेष कार्यों के लिए देय या प्राप्य नियत धन। रकम। (एमाउन्ट, सम)

धनवंत—वि० [स्त्री० धनवंती] = धनवान्।

धनवती—स्त्री० [सं० धनवत्+ङीप्] धनिष्ठा नक्षत्र।

वि० सं० 'धनवान्' का स्त्री०।

धनवा—पुं० [हिं० धान] एक प्रकार की घास।

†पुं० = धन्वा (धनुष)।

धनवान् (वत्)—वि० [सं० धन+मतुप्] [स्त्री० धनवती] जिसके पास अत्यधिक या बहुत धन हो। धनी। दौलत-मंद।

धन-विधेयक—पुं० [ष० त०] वह अर्थ-संबंधी विधेयक, जो विधान सभा के समक्ष विचारार्थ रखा जाता है, और जिसमें किसी माँग की स्वीकृति के लिए अथवा कोई नया कर लगाने का प्रस्ताव होता है। (मनी बिल)

धनशाली (लिन्)—वि० [सं० धन√शाल् (शोभित होना)+णिनि] [स्त्री० धनशालिनी] धनवान्। धनी।

धन-संपत्ति—स्त्री० [द्व० स०] सभी प्रकार की वे वस्तुएँ जिनका कुछ अधिक मूल्य हो तथा जिनका क्रय-विक्रय हो सकता हो। रुपये-पैसे, जमीन-जायदाद आदि मूल्यवान वस्तुएँ। २. किसी व्यक्ति, समाज, राष्ट्र आदि के अधिकार में रहनेवाली उक्त वस्तुएँ।

धनसार—पुं० [हिं० धान+सार (शाला)] अनाज आदि रखने की ऐसी कोठरी जिसमें केवल दो खिड़कियाँ क्रमात् अनाज रखने और निकालने के लिए होती हैं।

धनसिरी—स्त्री० [सं० धन+श्री] एक प्रकार की चिड़िया।

धनसू—पुं० [सं०] धनेस नाम की चिड़िया।

धनस्यक—वि० [सं० धन+क्यच्, सुक्,+ण्वुल्—अक] जिसे धन की लालसा हो।

पुं० गोखरू (वनस्पति)।

धन-स्वामी (मिन्)—पुं० [ष० त०] कुबेर।

धनहर—वि० [सं० धन√हृ(हरण)+ट] धन का अपहरण करनेवाला।

पुं० १. चोर। २. डाकू। लुटेरा। ३. चोर नामक गंधद्रव्य।

†पुं० = धनखर।

धन-हीन—वि० [तृ० त०] जिसके पास धन न हो। निर्धन। गरीब।

धनांक—पुं० [सं० धन-अंक ष० त०] लेन-देन आदि के लिए किसी निश्चित धन राशि का सूचक शब्द। धन-राशि। रकम। (एमाउन्ट)।

धना—स्त्री० [सं० धनिका, हिं० धनिया = युवती] १. युवती। २. वधू।

स्त्री० [?] संगीत में एक प्रकार की रागिनी।

†पुं० = धनिया।

धनाग्र—पुं० [धन-अग्र ष० त०] विद्युत्-शास्त्र में धन दण्ड का वह भाग जिसमें विद्युत् निकलकर ऋणदंड में पहुँचती है। (एनोड)

धनाढ्य—वि० [धन-आढ्य तृ० त०] बहुत बड़ा धनी। धनवान्।

धनाणु—पुं० [सं० धन-अणु ष० त० ?] वह अणु जो सदा धनात्मक विद्युत् से आविष्ट रहता है। (पाजिटिव)

धनात्मक—वि० [धन-आत्मन् ब० स०, कप्] १. धन-पक्ष संबंधी। २. धनवाले तत्त्व से युक्त। विशेष दे० 'सहिक'।

धनादेश—पुं० [धन-आदेश ष० त०] १. किसी को कुछ धन देने का आदेश या आज्ञा। २. डाकखाने के द्वारा किसी अन्य स्थान पर रहनेवाले व्यक्ति को भेजा जानेवाला धन। (मनी आर्डर) ३. किसी बैंक (अधिकोष) को, जिसमें किसी व्यक्ति का हिसाब हो, दिया गया इस आशय का लिखित आदेश कि वाहक अथवा अमुक निर्दिष्ट व्यक्ति को लिखित रकम मेरे खाते से दे दें। (पे आर्डर)

धनाध्यक्ष—पुं० [धन-अध्यक्ष ष०, त०] १. कोषाध्यक्ष। खजानची। २. कुबेर।

धनाना—अ० [सं० धेनु = नवसूतिका गाय] साँड़ आदि के संयोग से गाय, भैंस आदि का गर्भवती होना।

स० गाय, भैंस आदि का गर्भाधान कराना।

धनापहार—पुं० [धन-अपहार, ष० त०] १. अर्थदंड। जुरमाना। २. लूट।

धनार्चित—वि० [धन-अर्चित तृ० त०] धन आदि की भेंट देकर सम्मानित या संतुष्ट किया हुआ।

धनार्थी—वि० [सं० धन√अर्थ (चाहना)+णिनि] धन का इच्छुक।

धनाश्री—स्त्री० [सं०] संगीत में ओड़व-संपूर्ण जाति की एक रागिनी जो हनुमत् के मत से श्रीराग की तीसरी पत्नी है। इसका प्रयोग प्रायः वीर रस में होता है।

धनासी*—स्त्री० [सं० धन्या+श्री] १. पत्नी। २. प्रेमिका।

धनि—स्त्री० [सं० धनी] १. युवती स्त्री। २. पत्नी। वधू।

वि०= धन्य। उदा०—धनि धनि भारत-की छत्रानी।—भारतेन्दु।

धनिक—वि० [सं० धन+ठन्—इक] [स्त्री० धनिका] जिसके पास धन हो। धनी।

पुं० १. धनवान् व्यक्ति। अमीर। २. स्त्री का पति। स्वामी।

३. वह जो लोगों को धन उधार देता हो। महाजन। ४. [धनिन् √कै +क] धनिया।

धनिक-तंत्र—पुं० [ष० त०] [वि० धनिक तंत्री] आधुनिक राजनीति में, ऐसी शासन-प्रणाली, जिसमें शासन का वास्तविक सूत्र प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से देश के बड़े-बड़े धनवानों के ही हाथ में रहता हो। (प्लुटो क्रैसी)

विशेष—(क) ऐसी प्रणाली राजसत्ताक देशों में भी हो सकती है और प्रजासत्ताक देशों में भी। (ख) इंगलैंड और अमेरिका की आधुनिक शासन-प्रणालियाँ मुख्यतः धनिक-तंत्री ही मानी जाती हैं।

धनिका—स्त्री० [सं० धनिक+टाप्] १. धनी स्त्री। २. युवती और सुंदर स्त्री। ३. पत्नी। वधू। ४. प्रियंगु वृक्ष।

धनिता—स्त्री० [सं० धनिन्+तल्—टाप्] धन-सम्पन्न होने की अवस्था या भाव।

धनियाँ †—पुं०, स्त्री० = धनिया।

धनिया—पुं० [सं० धन्याक, धनिका] एक प्रकार का छोटा पौधा, जिसके सुगंधित बीज मसाले के काम में आते हैं; और इसकी सुगंधित पत्तियों की चटनी बनाई जाती है। २. उक्त पौधे के बीज, जो मसाले के रूप में बाजार में मिलते हैं। वैद्यक में इसे त्रिदोषनाशक, तथा खाँसी और कृमिघ्न माना गया है।

मुहा०—(किसी को) **धनिये की खोपड़ी का पानी पिलाना** = बहुत तंग या परेशान करना। (स्त्रियाँ)

†स्त्री० [सं० धन्या] १. पत्नी। वधू। २. सुंदर और स्नेह पात्र स्त्री। प्रेमिका। उदा०—कोठवा पर से झाँकैली बारी से धनियाँ, से नासि अइलैना। (पूरबी लोकगीत)

धनिया-माल—स्त्री० [हिं० धनी+माला] गले में पहनने का एक तरह का गहना।

धनिष्ट—वि० [सं० धनिन्+इष्ठन्, इन—लोप] [स्त्री० धनिष्ठा] धनी। धनाढय।

धनिष्ठा—स्त्री० [सं० धनिष्ठ+टाप्] सत्ताईस नक्षत्रों में से तेइसवाँ नक्षत्र जो ९ ऊर्ध्वमुख नक्षत्रों में से एक है और जिसमें पाँच तारे हैं।

धनी (निन्)—पुं० [सं० धन+इनि] १. जिसके पास धन हो। धनवान्। मालदार। दौलतमंद। २. मालिक। स्वामी। ३. वह जो किसी चीज का मालिक हो अथवा उसे अपनी समझकर उसकी देख-रेख करता हो।

पद—**धनी-धोरी** = मालिक और रक्षक। जैसे—जान पड़ता है कि इस मकान का कोई धनी-धोरी ही नहीं है। **धनी सिर जोखिम** = दे० 'जोखिम' के अंतर्गत 'जोखिम धनी सिर'। **बात का धनी** = अपनी कही हुई बात या दिए हुए वचन पर दृढ़ रहनेवाला।

५. स्त्री का पति। शौहर। ६. वह जो किसी प्रकार के कौशल, गुण आदि में बहुत श्रेष्ठ हो। जैसे—तलवार का धनी = तलवार चलाने में बहुत कुशल। बात का धनी = अपनी बात या वचन का पक्का और पूरी तरह से पालन करनेवाला।

स्त्री० [सं० धन + अच्—ङीष्] १. पत्नी। वधू। २. स्नेह-पात्री युवती। प्रेमिका।

धनी-मानी—वि० [हिं०] जिसके पास यथेष्ट धन भी हो और जिसका अच्छा मान या प्रतिष्ठा भी हो।

धनीयक—पुं० [सं० धन+छ—ईय+कन्] धनिया।

धनुःपट—पुं० [सं० धनुस्-पट ब० स०] पयाल वृक्ष। चिरौंजी का पेड़।

धनुःशाखा—पुं० [सं० धनुस्-शाखा ब० स०] पयाल वृक्ष।

धनुःश्रेणी—स्त्री० [सं० धनुस्-श्रेणी, ष० त०] १. मूर्वा। मुर्रा। २. महेंद्र-वारुणी।

धनु—पुं० [सं० √धन (शब्द)+उ] १. धनुष। चाप। कमान। २. चार हाथ लंबी एक पुरानी नाप। ३. किसी गोलाकार क्षेत्र का आधे से कम भाग जो धनुष के आकार का होता है। ४. ज्योतिष की बारह राशियों में से नवीं राशि, जिसके अंतर्गत मूल और पूर्वाषाढ़ नक्षत्र तथा उत्तराषाढ़ा का एक चरण आता है। इसे तौक्षिक भी कहते हैं। ५. फलित ज्योतिष में एक लग्न। ६. हठ योग में, एक प्रकार का आसन। ७. पयाल वृक्ष। ८. नदी का रेतीला किनारा।

धनुआ—पुं० [सं० धन्वन्, धन्वा] [स्त्री० अल्पा० धनुई] १. धनुष। कमान। २. धनुष के आकार का वह उपकरण जिससे धुनिए रूई धुनते हैं। धुनकी। धन्वा।

धनुई†—स्त्री० [सं० धनु+ई(प्रत्य०)] १. छोटा धनुष। २. धुनकी।

धनुक†—पुं० [सं० धनुष] १. कमान। धनुष। उदा०—भौहैं धनुक साँधि सर फेरी।—जायसी। २. इंद्रधनुष।

धनुकना† —स० = धुनकना।

धनुक-बाई—स्त्री० [हिं० धनुक+बाई] लकवे की तरह का एक वायु रोग जिसमें जबड़े आपस में सट जाते हैं और मुँह नहीं खुलता।

धनु-पानि*—पुं० [सं० धनुष+पाणि = हाथ] १. वह जिसके हाथ में धनुष हो। २. धनुर्द्धर। ३. रामचन्द्र।

धनुर्गुण—पुं० [सं० धनुस्-गुण, ष० त०] धनु की डोरी। पतंचिका। चिल्ला।

धनुर्गुणा—स्त्री० [सं० धनुस्-गुण ब० स०, टाप्] मूर्वा। मरोड़-फली।

धनुर्ग्रह—पुं० [सं० धनुस्√ग्रह, (पकड़ना)+अच्] १. धनुष चलानेवाला योद्धा। २. धनुर्विद्या। ३. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

धनुर्द्धर—पुं० [सं० धनुस्√धृ (धारण)+अच्] १. धनुष धारण करनेवाला और चलानेवाला व्यक्ति। कमनैत। तीरंदाज। २. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम

धनुर्द्धारी (रिन्)—वि० [सं० धनुस्√धृ+णिनि] [स्त्री० धनुर्द्धारिणी] धनुष धारण करनेवाला।

पुं० [सं०] धनुष रखने और चलानेवाले योद्धा।

धनुर्द्रुम—पुं० [सं० धनुस्-द्रुम, ष० त०] बाँस।

धनुर्भृत्—पुं० [सं० धनुस्√भृ, (धारण)+क्विप्] धनुष धारण करनेवाला योद्धा।

धनुर्मुख—पुं० [सं० धनुस्-मख, मध्य० स०] धनुर्यज्ञ।

धनुर्माला—स्त्री० [सं० धनुस्-माला, ष० त०] मूर्वा। मरोड़फली।

धनुर्यज्ञ—पुं० [सं० धनुस्-यज्ञ, तृ० त०] १. प्राचीन भारत में एक प्रकार का उत्सव जिसमें धनुष का पूजन तथा उसे चलाने की प्रतियोगिता होती थी। २. उक्त प्रकार का वह समरोह जो जनक ने सीता के स्वयंवर के समय किया था।

धनुर्यासा—पुं० [सं० धनुस्-यास, उपमि० स०] जवासा।

धनुर्लता—स्त्री० [सं० धनुस्-लता, उपमि० स०] सोमलता।

धनुर्वक्त्र—पुं० [सं० धनुष्-वक्त्र, ब० स०] कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम।

धनुर्वात—पुं० [सं०] १. एक प्रकार का वायु रोग, जिसमें शरीर धनुष की तरह झुककर टेढ़ा हो जाता है। २. धनुक-बाई नामक रोग। ३. शरीर के घाव या व्रण के विषाक्त होने पर होनेवाला उक्त रोग। धनुष टंकार। (टिटैनस)

धनुर्विद्या—स्त्री० [सं० धनुस्-विद्या ष० त०] धनुष चलाने की विद्या। तीरंदाजी।

धनुर्वृक्ष—पुं० [सं० धनुष-वृक्ष ष० त०] १. धामिन का पेड़। २. बाँस। ३. भिलावाँ। ४. पीपल का वृक्ष।

धनुर्वेद—पुं० [सं० धनुष्-वद ष० त०] यजुर्वेद का उपवेद जिसमें विशेष रूप से धनुष चलाने की विद्या का निरूपण है।

धनुष (स्)—पुं० [सं०√धन् (शब्द)+उस्] १. अर्ध गोलाकार एक तरह का उपकरण जो बाँस या लोहे के लचीले डंडे को झुकाकर और उनके दोनों छोरों के बीच डोरी या ताँत बाँधकर बनाया जाता है। और जिस पर तान कर तीर दूर फेंका जाता है। कमान। २. दूरी की चार हाथ की एक पुरानी नाप। ३. रहस्य संप्रदाय में, परमात्मा का ध्यान। ४. हठ योग का एक आसन। ५. चिरौंजी का पेड़। पयाल।

धनुष-टंकार—पुं० [सं०] १. धनुष की प्रत्यंचा के हिलने से होनेवाला शब्द। २. एक घातक रोग जिसमें व्रण आदि के विषाक्त होने पर शरीर अकड़ कर धनुष के समान टेढ़ा हो जाता है। धनुर्वात। (टिटैनस)

धनुष-यज्ञ—पुं० = धनुयज्ञ।

धनुष्कोटि—पुं० [सं०] रामेश्वर से दक्षिण पूर्व का एक स्थान, जहाँ समुद्र में स्नान करने का माहात्म्य है।

धनुष्मान (ष्मत्)—पुं० [सं० धनुष+मतप्] उत्तर दिशा का एक पर्वत। (बृहत्संहिता)

धनुस—पुं० = धनुष।

धनुस्स्वन—पुं० [सं०] धनुष की टंकार।

धनुहाई—स्त्री० [हिं० धनु+हाई] १. धनुष से तीर चलाने की कला या विद्या। २. तीर-धनुष से होनेवाला युद्ध या लड़ाई।

धनुहिया†—स्त्री० = धनुही।

धनुही†—स्त्री० [हिं० धनु+ही (प्रत्य०)] लड़कों के खेलने की छोटी कमान।

धनू—स्त्री० [सं०√धन् (शब्द) +उ] धनुष।

पुं० अन्न का भंडार।

धनूयक—पुं० [सं०] धनिया।

धनेश—पुं० [सं० धन-ईश, ष० त०] १. धन का स्वामी। २. कुबेर। ३. विष्णु। ४. जन्म-कुंडली में लग्न से दूसरा स्थान जिसके अनुसार व्यक्ति की धन-संपन्नता का विचार होता है।

धनेश्वर—पुं० [सं० धन-ईश्वर, ष० त०] १. धन का स्वामी। २. कुबेर। ३. विष्णु।

धनेस—पुं० [देश०] लंबी गरदन तथा लंबी चोंचवाली एक तरह की बगले के आकार की चिड़िया।

धनैषणा—स्त्री० [सं० धन-एषणा ष० त०] धन पाने की इच्छा।

धनैषी (षिन्)—वि० [सं० धन√इष् (चाहना)+णिनि] धन पाने का इच्छुक। धन चाहनेवाला।

धनोष्मा (मन्)—स्त्री० [सं० धन-ऊष्मन्, ष० त०] धन की गरमी या घमंड।

धन्न*—वि० = धन्य।

धन्ना†—पुं० = धरना।

पुं० १. दे० 'धन्ना भगत'। २. दे० 'धन्ना सेठ।

धन्नाभगत—पुं० [?] राजस्थान के एक प्रसिद्ध जाट भक्त जो ई० १५वीं शताब्दी में हुए थे।

धन्नासिका—स्त्री० [सं०] एक रागिनी जिसका ग्रह षड़ज है और जिसमें ॠ वर्जित है।

धन्ना सेठ—पुं० [हिं० धन+सेठ] बहुत बड़ा धनवान् व्यक्ति। (परिहास और व्यंग्य

पद—धन्ना सेठ का नाती = अमीर घराने में पैदा व्यक्ति। (परिहास और व्यंग्य)

धन्नि †—स्त्री० = धन्या।

धन्नी—स्त्री० [सं० (गो) धन] १. गायों, बैलों की एक जाति जो पंजाब में होती है। २. घोड़ों की एक जाति।

†पुं० [?] वह आदमी जो किसी काम के लिए बेगार में पकड़ा गया हो।

धन्यमन्य—वि० [सं० धन्य√मन् (मानना)+खश्, मुम्] अपने को धन्य या भाग्यशाली माननेवाला।

धन्य—वि० [सं० धन+यत्] [स्त्री० धन्या] [भाव० धन्यता] १. जिसमें कोई ऐसी बहुत बड़ी योग्यता या विशेषता हो, जिसके कारण सब लोग उसका अभिनंदन और प्रशंसा करें। अच्छे काम करनेवाला और पुण्यवान्। सुकृति। २. कृतार्थ। जैसे—आपके इस कुटिया में पधारने से हम धन्य हुए। ३. धन देनेवाला। धनद।

पुं० १. विष्णु। २. नास्तिक। ३. धनिया। ४. अश्वकर्ण वृक्ष।

धन्यता—स्त्री० [सं० धन्य+तल्—टाप्] धन्य होने की अवस्था या भाव।

धन्य-वाद—पुं० [सं० ष० त०] १. किसी को धन्य कहना या मानना। प्रशंसा। वाह-वाही। साधुवाद। २. एक प्रकार का औपचारिक या हार्दिक कथन जिसमें किसी के प्रति उसके द्वारा किए हुए अनुग्रह, कृपा आदि के लिए कृतज्ञता का भाव निहित होता है। जैसे—(क) आपका पत्र मिला; एतदर्थ धन्यवाद। (ख) इस उपहार के लिए धन्यवाद।

धन्या—स्त्री० [सं० धन्य+टाप्] १. वन-देवी। २. उप-माता। विमाता। ३. ध्रुव की पत्नी जो मनु की कन्या थी। ४. धनिया। ५. छोटा आँवला।

वि० स्त्री० 'धन्य' का स्त्री रूप।

धन्याक—पुं० [सं० √धन्+आकन्, नि० सिद्धि] धनिया।

धन्वंग—पुं० [सं० धनु-अंग, ब० स०] धामिन का पेड़।

धन्वंतर—पुं० [सं०] चार हाथ की एक प्राचीन माप।

धन्वंतरि—पुं० [सं० धनु-अंत, ष० त०, धन्वत√ऋ (गति)+इ] १. देवताओं के प्रधान चिकित्सक जिनके संबंध में प्रसिद्ध है कि वे समुद्र मंथन के समय हाथ में अमृत का पात्र लिये हुए उसमें से प्रकट हुए थे। २. विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक।

धन्व—पुं० [सं०√धन् (शब्द)+वन्] १. धनुष। २. मरु-प्रदेश। रेगिस्तान।

धन्वज—वि० [सं० √जन् (उत्पत्ति)+ड] रेगिस्तान में उपजने या जनमनेवाला।

धन्व-दुर्ग—पुं० [सं० मध्य० स०] मरुभूमि में स्थित दुर्ग।

धन्वन—पुं० [सं०√धन्व्+ल्यु—अन] धामिन का पेड़।

धन्व-यवास—पुं० [सं० मध्य० स०] दुरालभा। जवासा।

धन्वा (न्वन्)—पुं० [सं०√धन्व् (गति)+कनिन्] १. धनुष। कमान। २. मरु भूमि। रेगिस्तान। ३. सूखी जमीन (स्थल)। ४. आकाश।

धन्वाकार—वि० [सं० धन्वन्-आकार, ब० स०] कमान या धनुष के आकार का। अर्द्ध चंद्राकार।

धन्वायी (यिन्)—वि० [सं० धन्वन्√इ (गति)+णिनि] धनुर्द्धर। पुं० रुद्र का एक नाम।

धन्विन्—पुं० [सं०√धन्व्+इनन्] शूकर। सूअर।

धन्वी (न्विन्)—वि० [सं० धनु+इनि] १. धनुष धारण करनेवाला। २. चतुर। होशियार।
पुं० १. पाँचों पांडवों में से अर्जुन का एक नाम। २. अर्जुन वृक्ष। ३. बकुल। मौलसिरी। ४. जवासा। ५. विष्णु। ६. शिव। तामस मनु का एक पुत्र।

धप—स्त्री० [अनु०] १. भारी चीज के मुलायम चीज पर गिरने से होने-वाला शब्द। २. सिर पर मारा जानेवाला थप्पड़। धौल।
क्रि० प्र०—जड़ना।—देना।—मारना।—लगाना।

धपना—अ० [सं० धावन, या हिं० धाप] १. जल्दी-जल्दी या तेजी से चलना। २. झपटना।
स० [हिं० धप+ना (प्रत्य०)] १. सिर पर थप्पड़ मारना। २. मारना। पीटना।

धपाड़†—स्त्री०[हिं० धपना] धपने की क्रिया या भाव। जैसे—दौड़-धपाड़।

धपाना—स० [हिं० धपना] १. जल्दी जल्दी या तेजी से चलाना। २. झपटने में प्रवृत्त करना। झपटाना।

धप्पड़†—पुं० = थप्पड़।

धप्पा—पुं० [अनु० धप] १. हाथ से किसी को किया जानेवाला हलका आघात। हलका थप्पड़। (पश्चिम) २. ऐसा आघात जिससे आर्थिक हानि हो।
क्रि० प्र०—बैठना।—लगना।

धप्पाड़†—स्त्री० = धपाड़।

धबकना*—अ० [अनु०] चमकना। उदा०—धड़ि धड़ि धबाकि धार धारू जलू।—प्रिथीराज।
स० (थप्पड़ आदि) जड़ना। मारना। जैसे—पीठ पर मुक्का या मुँह पर थप्पड़ धबकना।

धब-धब—स्त्री० [अनु०] १. भारी और मुलायम चीज के गिरने का शब्द। २. भारी और मोटे आदमी के चलने के समय जमीन पर पैर पड़ने का शब्द।

धबला—पुं० [देश०] १. कमर के नीचे के अंग ढकने का कोई ढीला-ढाला पहनावा। २. स्त्रियों का घाघरा। लहँगा।

धब्बा—पुं० [?] १. किसी तल पर लगा हुआ किसी रंग का ऐसा चिह्न, जिससे उस तल की शोभा बहुत कुछ घटे या नष्ट हो जाय। जैसे—कपड़े पर लगा हुआ स्याही का धब्बा, दीवार पर लगा हुआ तेल का धब्बा। २. प्रायः रँगे हुए कपड़े के संबंध में, ऐसा चिह्न जो कहीं अधिक और कहीं कम रंग चढ़ने के कारण बना हो। ३. कलंक। दाग।

धमंकना*—स०[हिं० धौंकना] १. न रहने देना। नष्ट करना। उदा०—काटित पातक व्यूह विकट जम-जूह धमंकति।—रत्नाकर। २. दे० 'धौंकना'।

धम—स्त्री० [अनु०] भारी चीज के गिरने का शब्द। धमाका। जैसे—धम से गिरना।
पद—धमसे=(क) धम शब्द करते हुए। धड़ाम से। (ख) धमाधम। (ग) निरंतर। लगातार।
पुं० [सं०] १. ब्रह्मा। २. यम। ३. चंद्रमा। ४. श्रीकृष्ण का एक नाम।

धमक—स्त्री० [हिं० धमकना] १. धमकने की क्रिया या भाव। २. किसी भारी चीज के जमीन पर गिरने के कारण होनेवाला वह धम शब्द जिसके साथ जमीन में हलका कंपन भी हो। जैसे—फर्श पर किसी चीज के गिरने या किसी के चलने से होनेवाली धमक। ३. वह कंप जो भारी चीज के गिरने, चलने आदि से आस-पास के स्तर पर होता है। जैसे—रेल के चलने से आस-पास की जमीन में होनेवाली धमक। ४. आघात। प्रहार। ५. रोग, विकार आदि के कारण शरीर के किसी अंग में होनेवाला हलका कष्ट-दायक कंप या संवेदन। जैसे—बुखार के कारण सिर में (या सारे शरीर में) होनेवाली धमक। ६. रास्ते में पड़नेवाला गड्ढा। (पालकी ढोने वाले कहारों की परिभाषा में)
वि० [सं०] [स्त्री० धमिका] धौंकनेवाला।
पुं० लोहार।

धमकना—अ० [हिं० धमक] १. गिरने आदि के कारण धम शब्द होना। २. उक्त प्रकार के शब्द के कारण कुछ-कुछ काँपना या हिलना। ३. सहसा भारी बोझ पड़ने से हिलते हुए दबना। उदा०—चरण भार से सुदृढ़ धरा कँप गई धमक कर।—मैथिली शरण। ४. यौगिक क्रिया के रूप में, आना और जाना क्रियाओं के साथ लगने पर वेगपूर्वक इस प्रकार गमन करना कि लोग कुछ डर या सहम जायँ। जैसे—इतने में पुलिसवाले वहाँ आ धमके। ५. रह-रहकर हलका आघात और उसके कुछ साथ कंप-सा होता हुआ जान पड़ना। जैसे—बुखार में सिर धमकना।
स० इस रूप में आघात करना या दंड देना कि वह कुछ अनुचित या उग्र-सा जान पड़े। जैसे—(क) उन्होंने बिना सोचे-समझे उसे एक मुक्का धमक दिया। (ख) अदालत ने उन्हें सौ रुपये जुरमाना धमक दिये।
†स०=धौंकना।

धमका—पुं० [सं० घमा] उमस। गरमी। उदा०—धमका विषम ज्यौं न पात खरकत हैं। —सेनापति।

धमकाना—स० [हिं० धमकी+आना (प्रत्य०)] यह कहना कि यदि तुम ऐसा काम करोगे (अथवा अमुक काम न करोगे) तो हम तुम्हें अमुक प्रकार का कष्ट या दंड देंगे।

धमकी—स्त्री० [हिं०] वह बात जो किसी को धमकाते हुए कही जाय।

इस प्रकार का कथन कि यदि तुम आगे से ऐसा करोगे (अथवा अमुक काम न करोगे) तो हम तुम्हें अमुक प्रकार का कष्ट या दंड देंगे।
क्रि० प्र०—देना।
मुहा०—(किसी को) **धमकी में आना**=किसी के धमकाने या धमकी देने पर उससे डरते हुए उसके अनुकूल आचरण या व्यवहार करना।

धमक्का†—पुं०=धमाका।

धम-गजर—पुं० [अनु० धम+सं० गर्जन] १. उत्पात। ऊधम। उपद्रव। २. ऐसी लड़ाई-झगड़ा, जिसमें मार-पीट भी हो।

धम-धम—पुं० [सं०] कार्तिकेय के गण जो पार्वती के क्रोध से उत्पन्न हुए थे। (हरिवंश)
क्रि० वि०=धमाधम।

धमधमाना—स० [अनु० धम] १. कूद-फांद या चल-फिर कर धम-धम शब्द उत्पन्न करना। २. धम-धम शब्द करते हुए थपड़ मुक्के आदि लगाना।
अ० धम-धम शब्द होना।

धम-धूसर—वि० [अनु० धम+सं० धूसर=मटमैला, या गंदला] बहुत भद्दा और मोटा। स्थूल और बेडौल।

धमन—पुं० [सं०√धम् (शब्द)+ल्युट्—अन] १. किसी चीज में हवा फूंककर भरना। २. भाथी से हवा करना। धौंकना। ३. उक्त काम के लिए बनी हुई पोली नली। ४. धौंकनी। ५. नरकट।

धमन-भट्ठी—स्त्री० [सं० धमन+हिं भट्ठी] धातुएँ आदि गलाने की एक विशेष प्रकार की भट्ठी, जिसमें आग सुलगाने के लिए हवा बहुत तेजी से पहुँचाई जाती है। (ब्लास्ट फर्नेस)

धमना†—स० [सं० धमन] १. धौंकना। २. नल आदि में भरकर हवा के जोर से कोई चीज अंदर पहुँचाना।

धमनि—स्त्री० [सं० धम्+अनि] १. प्रह्लाद के भाई ह्लाद की स्त्री जो वातापि और इल्वल की माता थी। २. वाक्-शक्ति। वाणी। ३. धमनी। नाड़ी।

धमनिका—स्त्री० [सं०] १. छोटी और पतली धमनी। (आर्टरी पोल) २. तुरही नाम का बाजा। (को०)

धमनी—स्त्री० [सं० धमनि+ङीष्] १. गर्दन। गला। २. शरीर के अन्दर की उन नलियों या नसों का समूह जिनके द्वारा हृदय से निकलकर चलनेवाला रक्त सारे शरीर में पहुँचता या फैलता है। (आर्टरी)
विशेष—सुश्रुत में इनकी संख्या २४ बतलाई गई है और कहा गया है कि इनकी छोटी-छोटी हजारों शाखाएँ सारे शरीर में फैली हुई हैं। इन छोटी-छोटी शाखाओं को धमनिका कहते हैं।
३. गमन या यातायात का कोई मुख्य मार्ग या साधन। जैसे—नदियाँ अथवा रेलें और सड़कें हमारे देश की धमनियाँ हैं।

धमसा†—पुं०=धौंसा।

धमाका—पुं० [अनु०] १. भारी वस्तु के गिरने से होनेवाला धम शब्द। वेगपूर्वक नीचे कूदने या गिरने का शब्द। २. बहुत जोर से होनेवाला 'धम' का सा शब्द। जैसे—बंदूक छूटने का धमाका। ३. धक्का। ४. आघात। प्रहार। ५. पथर कला बंदूक। ६. वह तोप जो हाथी पर लादकर चलती थी।

धमा-चौकड़ी—स्त्री० [अनु० धम+हिं० चौकड़ी] १. ऐसी उछल-कूद, उपद्रव या ऊधम जिसमें रह-रहकर धम-धम शब्द भी होता हो। २. ऐसी मार-पीट जिसमें उठा-पटक भी होती हो। ३. उपद्रव। ऊधम।
क्रि० प्र०—मचना।—मचाना।

धमा-धम—क्रि० वि० [अनु० धम] १. धम-धम शब्द करते हुए। (क) लड़के धमाधम नीचे कूद पड़े। (ख) उन पर धमाधम थप्पड़ और मुक्के पड़ने लगे। २. लगातार। निरंतर।
स्त्री० १. लगातार होनेवाला धमधम शब्द। लगातार गिरने, पड़ने आदि की आवाज। २. ऐसा आघात, प्रहार या मार-पीट जिसमें धम-धम शब्द भी होता हो।
क्रि० प्र०—मचना।—मचाना।

धमार—स्त्री० [अनु०] १. उछल-कूद। धमा-चौकड़ी। २. उत्पात। उपद्रव। ३. नटों की उछलकूद, कलाबाजी आदि। ४. एक विशेष प्रकार के लोकगीत, जो मुख्यतः फागुन में गाये जाते हैं। अब इनका प्रवेश शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में भी हो गया है।
मुहा०—**धमार खेलना**=आनंद-मंगल और क्रीड़-कौतुक करना।
५. उक्त गीत के साथ बजनेवाला ताल। ५. वह क्रिया, जिसमें कुछ लोग मंत्र-बल से दहकती हुई आग या जलते हुए कोयले पर चलते हैं।

धमारिया—पुं० [हिं० धमार] १. नट जो प्रायः उछल-कूद करते रहते हैं। २. उत्पाती या उपद्रवी व्यक्ति। ३. वह जो धमार गाने में निपुण हो। ४. वह जो मंत्र-बल आदि से जलती हुई आग या दहकते हुए अंगारों पर चलता हो।

धमारी—वि० [हिं० धमार]=धमारिया।
स्त्री०=धमा-चौकड़ी।

धमाल†—स्त्री० =धमार।

धमाला†—पुं० [सं० धूम्रनेत्र] [स्त्री० अल्पा० धमाली] दीवार में बना हुआ वह छेद, जिसका ऊपरी मुँह छत में खुलता है और जिसमें से धूआँ निकलकर बाहर जाता है।

धमाली—स्त्री० [हिं० धमार] जोगीड़े की तरह के एक प्रकार के अश्लील गीत।

धमासा—पुं० [सं० यवासा] एक हाथ ऊँचा एक तरह का क्षुप, जिसमें तीक्ष्ण कंटक होते हैं। इसकी जड़ ताम्रवर्ण होती हैं।

धमिका—स्त्री० [सं०] लोहार जाति की स्त्री। लोहारिन।

धमिल—पुं० [सं०] सिर के बालों का बँधा हुआ जूड़ा।

धमूका†—पुं० [अनु० धम] १. धमाका। २. घूँसा। मुक्का।

धमेख—स्त्री० [सं० धर्म चक्र] सारनाथ (काशी) के पास का वह स्तूप जो उस स्थान पर बनाया गया था, जहाँ बुद्धदेव ने अपना धर्मचक्र अर्थात् धर्मोपदेश आरंभ किया था।

धम्मन—पुं० [देश०] एक प्रकार की घास जिसे चरवा भी कहते हैं।

धम्माल—स्त्री०=धमार।

धम्मिल्ल—पुं० [सं०√धम् (शब्द)+विच्,√मिल् (मिलना)+क, पृषो० सिद्धि] सिर के बालों को लपेटकर बनाया जानेवाला जूड़ा।

धम्हा†—पुं० दे० 'धमन-भट्ठी'।

धमना—आ०=धाना (दौड़ना)।

धरंता—वि० [हिं० धरना=पकड़ना] १. धरने या पकड़नेवाला। २. दे० 'धरता'।

धर—वि० [सं०√धृ (धारण)+अच्] १. धारण करने या अपने ऊपर

लेनेवाला। २. समस्त पदों के अंत में; उठाने या धारण करनेवाला। हाथ में पकड़ने या रखनेवाला। जैसे—गिरिधर, चक्रधर, महीधर।
पुं० १. कच्छप जो पृथ्वी को अपने ऊपर धारण किये हुए हैं। २. विष्णु। ३. श्रीकृष्ण। ४. पर्वत। पहाड़। ५. एक वसु का नाम। ६. व्यभिचारी। ७. कपास का डोडा। ८. तलवार।
स्त्री० [हिं० धरना] धरने अर्थात् पकड़ने की क्रिया या भाव।
पद—धर-पकड़। (देखें)
†स्त्री० [सं० धरा] पृथ्वी। उदा०—मानहुँ शेष अशेष धर धरनहार बरिबंड।—केशव।
पद—धर-अंबर=पृथ्वी से आकाश तक।
†पुं०=धड़।

धरक—पुं० [सं०] अनाज तौलने का काम करनेवाला।
†स्त्री०=धड़क।

धरकना*—अ०=धड़कना।

धरका†—पुं०=धड़का।

धरकार—पुं० [?]एक जाति जो बाँसों आदि की टोकरियाँ बनाने का काम करती है।

धरण—पुं० [सं०√धृ+ल्युट्—अन] १. धारण करने की क्रिया या भाव। धारण। २. एक प्रकार की पुरानी तौल जो कहीं २४ रत्ती की, कहीं १६ मासे की और कहीं १० पल की कही गयी है। ३. जगत्। संसार। ४. सूर्य। ५. छाती। स्तन। ६. धान। ७. जलाशय का बाँध। ८. पुल। ९. एक नाग का नाम।
*स्त्री०=धरणी (पृथ्वी)।

धरणि—स्त्री० [सं०√धृ+अनि]=धरणी।

धरणि-धर—पुं० [ष० त०] धरणीधर।

धरणी—स्त्री० [सं० धरणि+ङीष्] १. पृथ्वी। २. नस। नाड़ी। ३. सेमल क पेड़। शाल्मली। ४. शहतीर।

धरणी-कंद—पुं० [मयू० स०]एक प्रकार का कंद जिसे बनकंद भी कहते हैं।

धरणी-कीलक—पुं० [ष० त०] पर्वत। पहाड़।

धरणी-धर—वि० [ष० त०] पृथ्वी को धारण करनेवाला।
पुं० १. शेषनाग। २. कच्छप। कछुआ। ३. विष्णु। ४. शिव। ५. पर्वत। पहाड़।

धरणी-पुत्र—पुं० [ष० त०] १. मंगल ग्रह। २. नरकासुर।

धरणीपूर—पुं० [सं० धरणी√पूर (पूर्ति)+अण्] समुद्र।

धरणीभृत्—पुं० [सं० धरणी+भृ (धारण)+क्विप्] १. शेषनाग। २. विष्णु। ३. पर्वत। पहाड़। ४. राजा।

धरणीय—वि० [सं० धृ+अनीयर] १. धारण किये जाने के योग्य। २. जिसे पकड़कर सहारा ले सकें।

धरणीश्वर—पुं० [सं० धरणी-ईश्वर, ष० त०] १. शिव। २. विष्णु। ३. राजा।

धरणी-सुत—पुं० [ष० त०] १. मंगल ग्रह। २. नरकासुर राक्षस।

धरणी-सुता—स्त्री० [ष० त०] सीता। जानकी।

धरता—वि० [हिं० धरना] [स्त्री० धरती] १. धारण करनेवाला। २. अपने ऊपर किसी कार्य का भार लेनेवाला।
पद—करता-धरता=सब-कुछ करने धरनेवाला।
पुं० १. वह जिसने किसी से कुछ धन उधार लिया हो। ऋणी। कर्जदार। २. वह बँधा हुआ अंश जो किसी को कोई रकम देने के समय धर्मार्थ अथवा किसी उद्देश्य से काट लिया जाता हो। कटौती।

धरति†—स्त्री०=धरती (पृथ्वी)।

धरती—स्त्री० [सं० धरित्री] १. पृथ्वी। जमीन।
मुहा०—धरती बहाना=(क) खेत जोतना। (ख) हल जोतने की तरह का बहुत अधिक परिश्रम करना।
पद—धरती का फूल=(क) खुमी। छत्रक। (ख) मेढक। (ग) ऐसा व्यक्ति जो अभी हाल में अमीर हुआ हो।
२. जगत्। संसार।

धरधर—पुं० [सं० धराधर] पर्वत। उदा०—धरधर शृंग सधर सुपनि पयोधर।—प्रिथीराज।
†स्त्री०=धड़-धड़।
†पुं०=धरहर।

धरधरा†—पुं० [अनु०] १. कलेजे की धड़कन। २. धड़की।

धरधराना—अ०, स०=धड़धड़ाना।

धरन—स्त्री० [हिं० धरना] १. धरने की क्रिया, ढंग या भाव। पकड़। २. अपनी बात पर दृढ़तापूर्वक अड़े रहने की अवस्था, क्रिया या भाव। हठ। जिद। टेक।
मुहा०—धरन धरना*=अपनी बात पर अड़े रहना। हठ या जिद न छोड़ना।
स्त्री० [सं० धरणी] १. आमने-सामने की दीवारों के सिरे पर रखा जानेवाला लकड़ी का वह मजबूत मोटा लट्ठा या छोटा शहतीर, जिसके सहारे पर ऊपर की छत टिकी रहती या पाटी जाती है। कड़ी। धरनी। २. स्त्रियों के गर्भाशय के ऊपरी भाग की वह नस, जो उसे इधर-उधर से रोके रखकर यथास्थान स्थित रखती है।
मुहा०—धरन खिसकना, टलना या सरकना=गर्भाशय की उक्त नस का अपने स्थान से कुछ इधर-उधर हो जाना, जिससे गर्भाशय के आस-पास बहुत पीड़ा होती है।
३. गर्भाशय।
†पुं०=धरना।
†स्त्री०=धरणी (पृथ्वी)।
†वि०=धरण (धारण करनेवाला)।

धरनहार†—वि० [हिं० धरना+हार (प्रत्य०)] धारण करनेवाला।
वि० [हिं० धरना=पकड़ना] धरने या पकड़नेवाला।

धरना—स० [सं० धारण] १. कोई चीज इस प्रकार दृढ़ता से पकड़ना या हाथ में लेना कि वह जल्दी छूट न सके अथवा इधर-उधर न हो सके। पकड़ना। थामना।
संयो० क्रि०—लेना।
२. ग्रहण या धारण करना। ३. अधिकार या रक्षा में लेना।
मुहा०—धर दबाना=(क) पकड़कर वश में कर लेना। आक्रांत करना। जैसे—बिल्ली ने कबूतर को धर दबाया। (ख) लाक्षणिक रूप में, वेगपूर्वक कोई ऐसी बात कहना जिससे विपक्षी दब जाय या चुप

हो जाय। धर दबोचना=धर पकड़ना।

पद—धर-पकड़कर=किसी की इच्छा न होते हुए भी उसके प्रति कुछ बल-प्रयोग करते हुए। जैसे—धर-पकड़कर मुझे भी लोग वहाँ ले ही गये।

४. किसी स्थान पर किसी चीज को रखना। जैसे—संदूक में कपड़े धरना।

संयो० क्रि० —देना।—लेना।

मुहा०—(किसी चीज या बात का) धरा रह जाना=इस रूप में व्यर्थ पड़ा रहना कि समय पर काम न आ सके। जैसे—उनके सामने जाते ही आपकी सारी चालाकी (या बहादुरी) धरी रह जायगी।

पद—धरा-ढका=समय पर काम करने के लिए बचाकर रखा हुआ। जैसे—ये सब कपड़े यों ही धरे ढके रहने दो; समय पर काम आवेंगे। ५. किसी के अधिकार में देना या किसी के पास रखना। जैसे—ये पुस्तकें किसी मित्र के पास धर दो। ६. निश्चित या स्थिर करना। जैसे—किसी काम के लिए कोई दिन धरना। ७. धारण करना। जैसे—बहुरूपिए तरह-तरह के रूप धरते हैं। ८. पत्नी (या पति) के रूप में किसी को अपने यहाँ रखना। उदा०—ब्याहौ लाख, धरौ दस कुबरी, अंतहि कान्ह हमारो।—सूर। ९. कोई चीज गिरवी या रहन रखना। बंधक रखना। जैसे—वह अँगूठी धरकर रुपये ले आया है। १०. फैलनेवाली वस्तु का किसी दूसरी वस्तु में लगना या उस पर प्रभाव डालना। जैसे—आग धरना।

पुं० अपनी प्रार्थना या बात मनवाने, अपनी माँग पूरी करने या किसी को कोई अनुचित काम करने से रोकने के लिए उसके दरवाजे पर, पास या सामने तब तक अड़कर बैठे रहना, जब तक वह प्रार्थना या माँग पूरी न हो जाय अथवा वह अनुचित काम बंद न हो जाय। (पिकेटिंग)

क्रि० प्र०—देना।

धरनि*—स्त्री० [हिं० धरना] जिद। टेक। हठ।

*स्त्री०=धरणी।

धरनी†—स्त्री०[हिं० धरना या सं० धारण] किसी बात पर दृढ़तापूर्वक अड़े रहने की क्रिया या भाव। जिद। टेक। हठ।

क्रि० प्र०—धरना।

स्त्री०=धरणी (पृथ्वी)।

धरनैत†—पुं०[हिं० धरना+एत (प्रत्य०)] किसी काम या बात के लिए अड़कर किसी स्थान पर बैठने या धरना देनेवाला।

धर-पकड़—स्त्री० [हिं० धरना+पकड़] १. धरने या पकड़ने की क्रिया या भाव। २. सिपाहियों आदि द्वारा अनेक संदिग्ध अभियुक्तों को पकड़कर थाने ले जाना।

धरबी—स० [सं० धारण] १. धारण करेगा। २. पकड़ेगा। (बुंदेल०)

धरम†—पुं०=धर्म।

धरमसार†—स्त्री० धर्मशाला।

धरमाई—स्त्री० =धार्मिकता। उदा०—होहि परिच्छा तौ कछु परहि जानि धरमाई।—रत्ना०।

धरमी—वि० [सं० धर्म्म] १. धर्म के अनुसार आचरण करनेवाला। २. किसी धर्म या मत का अनुयायी। ३. धर्म-संबंधी। धार्मिक। ४. दे० 'धर्मी'।

धरमेसुर†—वि०=धर्मेश्वर।

धरवाना—स० [हिं० धरना का प्रे०] १. धरने का काम किसी दूसरे से कराना। २. पकड़वाना। थमाना। ३. रखवाना।

धरषना—अ०, स०=धरसना।

धरसना—स० [सं० धर्षण] १. अच्छी तरह कुचलते या रौंदते हुए दबाना। मर्दन करना। २. अपमानित करना। ३. दुर्दशा करना।

अ० १. अच्छी तरह कुचला या दबाया जाना। २. अपमानित होना। ३. दुर्दशाग्रस्त होना। ४. डर या सहम जाना।

धरसनी†—स्त्री०=धर्षणी।

धरहर—स्त्री० [हिं० धरना+हर (प्रत्य०)] १. दो या अधिक लड़नेवालों को धर-पकड़कर अलग करने या लड़ाई बंद कराने का कार्य। बीच-बचाव। २. किसी को पकड़ जाने या मार खाने से बचाने के लिए किया जानेवाला काम। बचाव। रक्षा। ३. धीरज। धैर्य। ४. दृढ़ निश्चय। उदा०—जमकरि मुँह तर हरि पर्‌यौ, इहिं धरि हरि चित्त लाउ।—बिहारी। ५. दे० 'धर-पकड़'।

वि० रक्षक।

धरहरना*—अ० १. दे० 'धड़कना'। २. दे० 'धड़धड़ाना'।

स० दे० 'धड़धड़ाना'।

धरहरा—पुं० [हिं० धुर=ऊपर+घर] १. खंभे के सदृश ऐसी ऊँची वास्तु-रचना, जिस पर चढ़ने के लिए अंदर से सीढ़ियाँ बनी होती हैं। धौरहर। मीनार। २. 'जल-स्तंभ'।

धरहरि—स्त्री०, वि०=धरहर।

धरहरिया—पुं० [हिं० धरहरि] १. धर-पकड़कर बचानेवाला। बीच-बचाव करनेवाला। २. रक्षक।

धरा—स्त्री० [सं०√धृ+अप्+टाप्] १. पृथ्वी। जमीन। धरती। २. जगत। दुनिया। संसार। ३. गर्भाशय। ४. चरबी। मेद। ५. नस। नाड़ी। ६. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में एक तगण और एक गुरु होता है।

पुं०=धड़ा।

धराउर†—स्त्री०=धरोहर।

धराऊ—वि० [हिं० धरना+आऊ (प्रत्य०)] १. (ऐसा माल) जो बहुत दिन का पड़ा या रखा हुआ हो और फलतः बिका न हो। पुराना। २. जो अप्राप्य या दुर्लभ होने के कारण केवल विशेष अवसरों के लिए रखा रहे।

धरा-कदंब—पुं० [सं० मध्य० स०] एक प्रकार का कदंब।

धराका—पुं०=धड़ाका।

धरा-तल—पुं० [ष० त०] १. पृथ्वी का ऊपरी तल। जमीन। धरती। २. कोई ऐसा अलग या स्वतंत्र विस्तार जिसका विचार दूसरे तलों से बिलकुल अलग किया जाय। तल। सतह। जैसे—आपने अपनी मीमांसा से यह विषय एक नये धरातल पर ला रखा है। ३. किसी चीज की चौड़ाई और लंबाई का गुणन-फल। रकबा। ४. पृथ्वी।

धरात्मज—पुं० [धरा-आत्मज, ष० त०] १. मंगलग्रह। २. नरकासुर।

धरात्मजा—स्त्री० [धरा-आत्मजा ष० त०] सीता। जानकी।

धरा-धर—पुं० [ष० त०] १. वह जो पृथ्वी को धारण करे। २. शेषनाग। ३. विष्णु। ४. पर्वत। पहाड़।

धरा-धरन†—पुं० =धराधर ।
धरा-धरी—स्त्री० =धर-पकड़ ।
धराक्षर—पुं० [धरा-आधार ष० त०] शेषनाग ।
धराधिप, धराधिपति—पुं० [धरा-अधिप, ष०त०, धरा-अधिपति, ष० त०] राजा।
धराधीश—पुं० [धरा-अधीश ष० त०] राजा।
धराना—स० [हिं० 'धरना' का प्रे०] १. पकड़ाना । थमाना । २. पकड़वाना । ३. किसी को कहीं कुछ धरने या रखने में प्रवृत्त करना। जैसे—चोरों से माल धराना। ३. रखवाना। रखाना। ४. नियत, निश्चित या स्थिर कराना। जैसे—किसी काम या बात के लिए दिन धराना; अर्थात् निश्चित कराना। जैसे—मुहूर्त धराना।
धरा-पुत्र—पुं० [ष० त०] १. मंगल ग्रह । २. नरकासुर।
धराभृत—पुं० [सं० धरा√भृ (धारण)+क्विप्, तुक्—आगम] पर्वत। पहाड़।
धरामर—पुं० [सं०] ब्राह्मण।
धरावत—स्त्री० [हिं० धरना] १. धरने की क्रिया, ढंग या भाव। २. जमीन की वह माप या क्षेत्र-फल जो कूतकर मान लिया गया हो।
धरावना†—स० =धराना ।
धराशायी (यिन्)—वि० [सं० धरा+शी (सोना)+णिनि] [स्त्री० धराशायिनी] १. जमीन पर पड़ा, लेटा या सोया हुआ। जैसे—युद्ध में वीरों का धराशायी होना, अर्थात् गिर पड़ना या गिरकर मर जाना। २. गिर, ढह या टूटकर जमीन के बराबर हो जाना। जैसे—भवन या स्तूप धराशायी होना।
धरा-सुत—पुं० [ष० त०] १. मंगल ग्रह। २. नरकासुर ।
धरा-सुर—पुं० [सं० त०] ब्राह्मण।
धरास्त्र—पुं० [सं०] एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र, जिसका प्रयोग विश्वामित्र ने वशिष्ठ पर किया था।
धराहर†—पुं० [हिं० धुर=ऊपर+घर] =धौरहर (मीनार)।
धरिंगा—पुं० [देश०] एक तरह का चावल ।
धरित्री—स्त्री० [सं०]धरती। पृथ्वी ।
धरिमा (मन्)—स्त्री० [सं०√धृ(धारण)+इमनिच्] १. तराजू । २. रूप । शकल ।
धरी—स्त्री० [हिं० धरना] १. अवलंब। आश्रय। उदा०—अब मौकों धरि (धरी) रहीन कोऊ तातैं जाति भरी।—सूर। २. अर्थात् उपपत्नी के रूप में रखी हुई स्त्री । रखेली ।
स्त्री० [हिं० ढार] कान में पहनने का ढार या बिरिया नाम का गहना।
†स्त्री०=घड़ी ।
†स्त्री० [हिं० धार] १. जल की धार। २. वर्षा की झड़ी ।
धरीचा—वि० [हिं० धरना] धरा या पकड़ा हुआ ।
पुं० दे० 'धरेला'।
धरुण—वि० [सं०√धृ+उनन्] धारण करनेवाला। १. ब्राह्मण। २. स्वर्ण। ३. जल। ४. राय। ५. वह स्थान जहाँ कोई वस्तु सुरक्षित अस्वथा में रखी जा सके। ६. अग्नि। ७. दुधमुहाँ बछड़ा।
धरेचा—वि०, पुं० =धरेला।
धरेजा—पुं० [हिं० धरना=रखना+एजा (प्रत्य०)] किसी विधवा स्त्री को पत्नी की तरह घर में रखने की क्रिया या प्रथा ।
स्त्री० इस प्रकार रखी हुई स्त्री ।
धरेला—वि० [हिं० धरना] [स्त्री० धरेली] जो किसी रूप में धर या पकड़कर अपने पास रखा या अपने अधिकार में किया गया हो।
पुं० १. किसी स्त्री की दृष्टि से, वह पुरुष जिसे उसने अपना पति बनाकर अपने पास या साथ रखा हो। २. कुछ जातियों में प्रचलित वह प्रथा, जिसमें बिना विवाह किये ही लोग विधवा स्त्री को सगाई आदि करके अपनी पत्नी बनाकर रख लेते हैं; और उनके समाज में उनका ऐसा संबंध विधि-संगत माना जाता है ।
धरेली—स्त्री० [हिं० धरेला] रखेली। उपपत्नी ।
धरेवा—पुं० दे० 'करेवा'। (विवाह का एक प्रकार)।
धरेश—पुं० [सं० धरा-ईश, ष० त०] राजा।
धरेस—पुं०=धरेश ।
धरैया—वि० [हिं० धरना] १. धरने या पकड़नेवाला । २. धारण करनेवाला ।
पुं० कच्छप, शेषनाग आदि जो पृथ्वी को धारण करनेवाले कहे जाते हैं।
स्त्री० वह प्रथा जिसके अनुसार कोई व्यक्ति (पुरुष या स्त्री) किसी दूसरे व्यक्ति (स्त्री या पुरुष) को अपना जीवन-सहचर बनाकर रखता है ।
धरोड़†—स्त्री०=धरोहर।
धरोहर—स्त्री० [हिं० धरना] १. वह धन या संपत्ति, जो किसी विश्वस्त व्यक्ति के पास कुछ समय तक सुरक्षित रखने के लिए रखी जाय। अमानत ।
क्रि० प्र०—धरना।—रखना ।
२. वह वस्तु या गुण जो निधि के रूप में हमें पूर्वजों से मिला हो। थाती। जैसे—हमें यह संस्कृति अपने पूर्वजों से धरोहर के रूप में मिली है।
धरौआ—पुं० [हिं० धरना] बिना विधिपूर्वक विवाह किये स्त्री या पुरुष को पत्नी या पति बनाकर रखने की प्रथा। धरैया ।
वि० उक्त प्रथा के अनुसार अपने साथ या पास रखा हुआ (व्यक्ति)।
धरौना—पुं०=धरैया (प्रथा) ।
धरौली—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का छोटा पेड़, जो भारतवर्ष में प्रायः सब जगह विशेषतः हिमालय की तराई में पाया जाता है। इसमें सफेद, लाल या पीले फूल लगते हैं।
धर्ता (र्तृ)—वि० [सं०√धृ (धारण)+तृच्] १. धारण करनेवाला । २. अपने ऊपर किसी काम या बात का भार लेनेवाला।
पद—कर्ता-धर्ता । (दे० 'कर्ता' के अंतर्गत)
धर्ती—स्त्री०=धरती ।
धर्तूर—पुं० [सं० धुस्तुर पृषो० सिद्धि] धतूरा ।
धर्त्र—पुं० [सं०√धृ+त्र] १. घर। गृह । २. सहारा । टेक । ३. यज्ञ। ४. पुण्य। ५. नैतिकता।
धर्म—पुं० [सं०√धृ+मन्] [वि० धार्मिक] १. पदार्थ मात्र का वह प्राकृतिक तथा मूलगुण, विशेषता या वृत्ति, जो उसमें बराबर स्थायी रूप से वर्तमान रहती हो, जिससे उसकी पहचान होती हो और उससे कभी अलग न की जा सकती हो। जैसे—आग का धर्म जलना और

जलाना या जीव का धर्म जन्म लेना और मरना है। २. सामाजिक क्षेत्र में नियम, विधि, व्यवहार आदि के आधार पर नियत तथा निश्चित वे सब काम या बातें जिनका पालन समाज के अस्तित्व या स्थिति के लिए आवश्यक होता है और जो प्रायः सर्वत्र सार्विक रूप से मान्य होती हैं। जैसे—अहिंसा, दया, न्याय, सत्यता आदि का आचरण मनुष्य मात्र का धर्म है। ३. लौकिक क्षेत्र में वे सब कर्म तथा कृत्य, जिनका आचरण या पालन किसी विशिष्ट स्थिति के लिए विहित हो। जैसे—(क) माता-पिता की सेवा करना पुत्र का धर्म है। (ख) पढ़ना-पढ़ाना यज्ञ आदि करना, किसी समय ब्राह्मणों का मुख्य धर्म माना जाता है। ४. आध्यात्मिक क्षेत्र में, ईश्वर, देवी-देवता, देव-दूत (पैगम्बर) आदि के प्रति मन में होनेवाले विश्वास तथा श्रद्धा के आधार पर स्थित वे कर्तव्य कर्म अथवा धारणाएँ, जो भिन्न-भिन्न जातियों और देशों के लोगों में अलग-अलग रूपों में प्रचलित हैं और जो कुछ विशिष्ट प्रकार के आचार-शास्त्र तथा दर्शन-शास्त्र पर आश्रित होती हैं। जैसे—ईसाई-धर्म, बौद्ध-धर्म, हिंदू-धर्म आदि।

विशेष—साधारणतः ऐसे धर्म या तो किसी विशिष्ट महापुरुष द्वारा प्रवर्तित और संस्थापित होते हैं, या किसी मुख्य और परम मान्य ग्रंथ पर आश्रित होते हैं; जिसे धर्मग्रंथ कहते हैं। ऐसे ग्रंथों में उल्लिखित बातों का पालन, पारलौकिक सुख या स्वर्ग की प्राप्ति के उद्देश्य से उस धर्म के अनुयायियों के लिए आवश्यक या कर्तव्य समझा जाता है।

पद—धर्म-कर्म, धर्म-ग्रंथ, धर्म-चर्चा आदि।

मुहा०—धर्म कमाना=धर्म करके उसका फल संचित करना। **धर्म-खाना**=धर्म को साक्षी बनाकर या धर्म की शपथ करते हुए कोई बात कहना। **धर्म रखना**=धर्म के अनुसार आचरण या व्यवहार करना। **धर्म लगती या धर्म से कहना**=धर्म का ध्यान रखकर उचित और न्याय-संगत बात कहना। उचित, ठीक या सच बात कहना।

५. भारतीय नागर नीति में, वे सब नैतिक या व्यावहारिक नियम और विधान, जो समाज का ठीक तरह से संचालन करने के लिए प्राचीन ऋषि-मुनि समय-समय पर बनाते चले आये हैं और जो स्वर्गादि शुभ फल देनेवाले कहे गये हैं। जैसे—धर्म-शास्त्र क्षेत्र में उक्त प्रकार के तथ्यों या बातों से मिलती-जुलती वे सब धारणाएँ विचार और विश्वास, जिनका आचरण तथा पालन कुछ लोग अपने लिए आवश्यक और कर्तव्य समझते हैं। जैसे—मानवता (या राष्ट्रीयता) के सिद्धान्तों का पालन करना ही हमारा धर्म है। ७. सदाचार। ८. पुण्य। सत्कर्म। ९. अलंकार शास्त्र में वह गुण या वृत्ति, जो उपमेय और उपमान दोनों में समान रूप से वर्तमान रहती है और जिसके आधार पर एक वस्तु की उपमा दूसरी वस्तु से दी जाती है। १०. न्यायशीलता और विवेक-बुद्धि।

मुहा०—धर्म में आना=मन में उचित या ठीक जान पड़ना। जैसे—जो तुम्हारे धर्म में आवे, सो करो। ११. धर्मराज। यमराज। १२. कमान। धनुष। १३. सोमपान करनेवाला व्यक्ति। १४. वर्तमान अवसर्पिणी के १५ वें अर्हत का नाम। (जैन)

वि० संबंध सूचक शब्दों के आरंभ में, धर्म के अनुसार या धर्म को साक्षी करके बनाया या माना हुआ। जैसे—धर्म-पत्नी, धर्म-पिता।

धर्म-कर्म—पुं० [ष० त०] १. वे कार्य जो धर्म-ग्रंथों में मनुष्य मात्र के लिए कर्तव्य कहे गये हों। २. किसी विशिष्ट धर्म के अनुसार किये जानेवाले लौकिक कृत्य।

धर्म-काम—पुं० [सं० धर्म√कम् (चाहना)+णिङ+अण्] अपना कर्तव्य समझकर धार्मिक कृत्य करनेवाला व्यक्ति।

धर्म-काय—पुं० [च० त०] बौद्ध-दर्शन में बुद्ध का वह परमार्थ-भूत शरीर जो अनिवर्चनीय, अनंत, अपरिमेय और सर्वव्यापक माना गया है।

धर्म-कील—पुं० [ष० त०] १. राज्य का शासन। २. शासन करनेवाली सत्ता।

धर्मकेतु—[ब० स०] १. कश्यप वंशीय सुकेतु राजा के पुत्र का नाम। २. गौतम बुद्ध।

धर्म-क्षेत्र—पुं० [ष० त०] १. कुरुक्षेत्र। २. भारतवर्ष, जो भारतीय आर्यों की दृष्टि में धर्म-कार्य करने के लिए विशेष रूप से उपयुक्त माना गया है।

धर्म-खाता—पुं० [सं० धर्म+हिं० खाता] कार्य के विभाग या व्यय का वह मद जो केवल दान, परोपकार आदि के कामों में लगाने के लिये हो।

धर्म-गंडिका—स्त्री० [सं०] यज्ञ आदि में वह खूँटा, जिस पर बलि चढ़ाये जानेवाले जानवर का सिर रखा जाता था।

धर्मगुप्—पुं० [सं० धर्म√गुप् (रक्षा)+क्विप्] विष्णु।

धर्म-गुरु—पुं० [ष० त०] १. धार्मिक उपदेश या गुरु-मंत्र देनेवाला गुरु। २. किसी धर्म या सम्प्रदाय का प्रधान आचार्य। जैसे—कबीर, नानक, शंकराचार्य आदि।

धर्म-ग्रंथ—पुं० [ष० त०] किसी जाति या संप्रदाय का उसकी दृष्टि में पूज्य ग्रंथ, जिसमें मनुष्य के धार्मिक व्यवहारों, पूजन-विधियों तथा सामाजिक संबंधों का निर्देशन होता है।

धर्म-घट—पुं० [च० त०] १. दान के रूप में दिया जानेवाला सुगंधित जल से भरा हुआ घड़ा। २. बस्तियों में घर-घर रखा जानेवाला वह घड़ा, जिसमें दान-कार्य के लिये नित्य थोड़ा अनाज डालकर इकट्ठा किया जाता है।

धर्म-घड़ी—स्त्री० [सं० धर्म+हिं० घड़ी] वह बड़ी घड़ी, जो ऐसे स्थान पर लगी हो, जहाँ से उसे सब लोग देख सकें।

धर्म-चक्र—पुं० [ष० त०] १. धर्म का सारा क्षेत्र और उसके सब आचरण तथा व्यवहार। २. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र। ३. धर्मशिक्षा रूपी वह चक्र या पहिया, जो गौतम बुद्ध ने काशी में सबको धर्म की शिक्षा देने के लिए चलाया था। ४. गौतम बुद्ध, जो उक्त चक्र चलानेवाले थे।

धर्म-चर्या—स्त्री० [ष० त०] धार्मिक ग्रंथों में प्रतिपादित सिद्धान्तों के अनुसार किये जानेवाले सब आचरण और व्यवहार।

धर्मचारी (रिन्)—वि० [सं० धर्म√चर् (गति)+णिनि] धार्मिक नियमों तथा सिद्धांतों के अनुसार आचरण करनेवाला।

धर्म-चिंतन—पुं० [ष० त०] धर्म-संबंधी बातों पर किया जानेवाला चिंतन, मनन या विचार।

धर्म-च्युत—वि० [पं० त०] [भाव० धर्मच्युति] अपने धर्म से गिरा या हटा हुआ। जिसने अपना धर्म छोड़ दिया हो।

धर्मज—वि० [सं० धर्म√जन् (उत्पत्ति)+ड] धर्म से उत्पन्न। पुं० १. किसी का वह औरस पुत्र जो उसकी धर्म-पत्नी से पहले-पहल

उत्पन्न हुआ हो। २. धर्मराज युधिष्ठिर, जो धर्म के पुत्र माने गये हैं। ३. एक बुद्ध का नाम। ४. नर-नारायण।

धर्म-जन्मा (न्मन्)—पुं०[सं० ब०स०] युधिष्ठिर का एक नाम।

धर्मजीवन—पुं०[सं० ब०स०] धार्मिक कृत्य कराकर जीविका उपार्जित करनेवाला ब्राह्मण।

धर्मज्ञ—वि०[सं० धर्म√ज्ञा (जानना)+क] १. धर्म-संबंधी नियमों तथा सिद्धांतों का ज्ञाता। २. धर्मात्मा।

धर्मण—पुं० [सं० धर्म√नम् (झुकना)+ड] १. धामिन वृक्ष। २. धामिन साँप। ३. धामिन पक्षी।

धर्मणा—क्रि० वि०=धर्मतः।

धर्म-तंत्र—पुं०[ष०त०] ऐसी शासन-प्रणाली, जिसमें किसी विशिष्ट धर्म या मजहब का ही प्रभुत्व होता और शासन व्यवस्था प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से धर्म-पुरोहितों के हाथ में रहती है। (थियोक्रेसी)

धर्मतः (तस्)—अव्य०[सं० धर्म+तस्] १. धार्मिक सिद्धांतों के अनुसार। २. धर्म की दुहाई देते हुए। ३. धर्म के आधार पर।

धर्मद—वि०[सं० धर्म√दा (देना)+क] अपने धर्म का पुण्य या फल दूसरों को दे देनेवाला।

धर्म-दान—पुं०[मध्य०स०] बिना किसी प्रकार की फल-प्राप्ति के निहित उद्देश्य से और केवल परोपकार की दृष्टि से दिया जानेवाला दान।

धर्म-दारा—स्त्री०[मध्य०स०] धर्मपत्नी। ब्याहता स्त्री।

धर्म-देशक—पुं०[ष०त०] धर्मोपदेशक।

धर्मद्रवी—स्त्री०[ब०स०, ङीष्] गंगा नदी।

धर्म-धक्का—पुं०[सं०+हिं०] १. ऐसा कष्ट जो धर्मानुसार कोई कार्य संपादित करते समय अथवा उसके फलस्वरूप सहना या उठाना पड़े। ३. अच्छा काम करने पर भी मिलनेवाली आपत्ति या बुराई।

धर्म-धातु—पुं०[सं० धर्म√धा (धारण)+तुन्] गौतमबुद्ध।

धर्म-ध्वज—पुं०[ब०स०]१. ऐसा व्यक्ति जो धर्म की आड़ लेकर स्वार्थ-साधन तथा अनेक प्रकार के कुकर्म करता हो। २. मिथिला के एक ब्रह्मज्ञानी राजा जो राजा जनक के वंशजों में से थे।

धर्म-ध्वजता—स्त्री०[सं० धर्मध्वज+तल्—टाप्] १. धर्म-ध्वज होने की अवस्था या भाव। २. धर्म की आड़ में किया हुआ आडंबर।

धर्म-ध्वजी—पुं०=धर्मध्वज।

धर्म-नंदन—पुं०[ष०त०] युधिष्ठिर।

धर्मनंदी (दिन्)—पुं०[सं०] अनेक बौद्धशास्त्रों का चीनी भाषा में अनुवाद करनेवाले एक बौद्ध पंडित।

धर्म-नाथ—पुं०[ष०त०]१. न्यायकर्त्ता। २. जैनों के पन्द्रहवें तीर्थंकर।

धर्म-नाभ—पुं०[धर्म-नाभि ब०स०, अच्] १. विष्णु। २. एक प्राचीन नदी।

धर्म-निरपेक्ष—वि०[पं० त०] (राज्य अथवा शासन-प्रणाली) जहाँ अथवा जिसमें किसी धार्मिक सम्प्रदाय का पक्षपात या प्रभुत्व न हो। (सेक्युलर)

धर्म-निष्ठ—वि०[ब०स०] [भाव० धर्मनिष्ठा] जिसकी अपने धर्म में निष्ठा हो।

धर्म-निष्ठा—स्त्री०[स०त०] अपने धर्म के प्रति होनेवाली निष्ठा या दृढ़ विश्वास।

धर्मपट्ट—पुं०[ष०त०] शासन अथवा धर्माधिकारी की ओर से किसी को भेजा हुआ पत्र।

धर्म-पति—पुं० [ष० त०] १. धर्म पर अधिकार रखनेवाला पुरुष। धर्मात्मा। २. वरुण देवता।

धर्म-पत्तन—पुं०[सं०] १. बृहत्संहिता के अनुसार कूर्मविभाग में दक्षिण का एक जन-स्थान जो कदाचित् आधुनिक धर्मापटम (जिला मलाबार) के आस-पास रहा हो। २. श्रावस्ती नगरी। ३. काली या गोल मिर्च।

धर्म-पत्नी—स्त्री० [च० त०] संबंध के विचार से वह स्त्री, जिसके साथ धर्मशास्त्र द्वारा निर्दिष्ट रीति से विवाह हुआ हो।

धर्म-पत्र—पुं०[ब०स०] गूलर।

धर्म-परायण—वि० [धर्म-पर-अयन, ब०स०] [भाव० धर्म-परायणता] धर्म द्वारा निर्दिष्ट ढंग से काम करनेवाला। धर्म के विधानों के अनुसार निष्ठापूर्वक काम करनेवाला। (रेलिजस)

धर्मपरायणता—स्त्री०[सं० धर्मपरायण+तल्—टाप्] धर्म-परायण होने की अवस्था या भाव। (रेलिजसनेस)

धर्म-परिणाम—पुं०[ष०त०] १. योग-दर्शन के अनुसार सब भूतों और इंद्रियों के एक रूप या स्थिति से दूसरे रूप या स्थिति में प्राप्त होने की वृत्ति। एक धर्म की निवृत्ति होने पर दूसरे धर्म की प्राप्ति। २. धर्म।

धर्म-परिषद्—स्त्री०[ष०त०] न्याय करनेवाली सभा। धर्मसभा।

धर्म-पाठक—पुं० [ष०] धर्म-ग्रंथों का अध्ययन करनेवाला व्यक्ति।

धर्मपाल—वि०[सं० धर्म√पाल् (पालन)+णिच्+अण्] धर्म का पालन या रक्षा करनेवाला।

पुं० १. वह जो धर्म का पालन करता हो। २. दंड या सजा, जिसके आधार पर धर्म का पालन किया या कराया जाता है। ३. राजा दशरथ के एक मंत्री।

धर्म-पिता (तृ)—पुं०[तृ० त०] वह जो धार्मिक भाव से किसी का पिता या संरक्षक बन गया हो (जन्मदाता पिता से भिन्न)।

धर्म-पीठ—पुं०[ष०त०]१. वह स्थान, जो धार्मिक दृष्टि से प्रधान या मुख्य माना जाता हो। २. वह स्थान, जहाँ से लोगों को धर्म की व्यवस्था मिलती हो। ३. काशी नगरी का एक नाम।

धर्म-पीड़ा—स्त्री०[ष०त०]१. धर्म या न्याय का उल्लंघन। २. अपराध।

धर्म-पुत्र—पुं०[ष० त०]१. धर्म के पुत्र युधिष्ठिर। २. नर-नारायण। ३. वह जो अपना औरस पुत्र तो न हो, परन्तु धार्मिक रीति या विधि से अथवा धर्म को साक्षी रखकर अपना पुत्र बना लिया गया हो।

धर्म-पुरी—स्त्री० [ष०त०] १. धर्मराज या यमराज की यमपुरी, जहाँ शरीर छूटने पर प्राणियों के किये हुए धर्म और अधर्म का विचार होता है। २. कचहरी। न्यायालय।

धर्म-पुस्तक—स्त्री०[ष०त०]=धर्म-ग्रंथ।

धर्म-प्रतिरूपक—पुं०[ष०त०] मनु के अनुसार ऐसा दान, जो अपने सगे-सम्बन्धियों के दीन-दुःखी रहते हुए भी केवल नाम या यश कमाने के लिए दूसरों को दिया जाय। (ऐसा दान निन्दनीय और धर्म की विडम्बना करनेवाला कहा गया है।)

धर्म-प्रभास—पुं०[सं०] गौतम बुद्ध।

धर्म-प्रवचन—पुं० [धर्म-प्र√वच् (बोलना)+ल्युट्—अन] १. कर्तव्य-शास्त्र। २. बुद्धदेव।

धर्म-बुद्धि—स्त्री०[स०त०] धर्म-अधर्म का विवेक। भले-बुरे का विचार।

धर्म-भगिनी—स्त्री०[मध्य०स०]१. वह स्त्री जो धर्म को साक्षी करके बहन बनाई जाय। २. गुरु-कन्या।

धर्म-भागिनी—स्त्री०[स०त०]=धर्मपत्नी।

धर्म-भाणक—पुं०[ष०त०] धर्म का बखान करनेवाला व्यक्ति। कथा-वाचक।

धर्म-भिक्षुक—पुं०[च०स०] मनु के अनुसार नौ प्रकार के भिक्षुकों में से वह जो केवल धार्मिक कार्यों के लिए भिक्षा माँगता हो।

धर्म-भीरु—वि० [स०त०] [भाव०] धर्म भीहता (व्यक्ति) जो धर्म के भय के कारण अधर्म या दूषित काम न करता हो।

धर्मभृत्—पुं०[सं० धर्म√भृ (धारण)+क्विप्]१. राजा। २. धर्म-परायण व्यक्ति।

धर्म-भ्रष्ट—वि०[पं० त०] [भाव०धर्म भ्रष्टता] जो अपने धर्म से गिरकर भ्रष्ट हो गया हो। धर्म-च्युत।

धर्म-मत—पुं०[मयू० स०] धर्म के रूप में प्रचलित मत या संप्रदाय। मजहब (धर्म के व्यापक अर्थ और रूप से भिन्न)।

धर्म-मति—स्त्री०=धर्म-बुद्धि।

धर्म-मूल—पुं०[ष०त०] धर्म का मूल, वेद।

धर्ममेघ—पुं०[सं० धर्म√मिह् (बरसना)+अच्, घ आदेश] योग में वह स्थिति, जिसमें वैराग्य के अभ्यास से चित्त सब वृत्तियों से रहित हो जाता है।

धर्म-यज्ञ—पुं०[तृ०त०] ऐसा यज्ञ जिसमें पशुओं की बलि न दी जाती हो।

धर्म-युग—पुं०[मध्य०स०] सत्ययुग।

धर्म-युद्ध—पुं०[तृ०त०] १. ऐसा युद्ध जिसमें छल-कपट या धोखा-धड़ी न हो, बल्कि नैतिक दृष्टि से उच्च स्तर पर हो और किसी की दुर्बलता का अनुचित रूप से लाभ न उठाया जाय। २. धर्म की रक्षा के लिए अथवा किसी बहुत अच्छे उद्देश्य से किया जानेवाला युद्ध।

धर्म-योनि—पुं०[ष०त०] विष्णु।

धर्मराई†—पुं०=धर्मराज।

धर्मराज—पुं०[धर्म√राज् (शोभित होना)+अच्]१. धर्म का पालन करनेवाला, राजा। २. युधिष्ठिर। ३. यमराज। ४. जैनों के जिन देव। ५. न्यायाधीश।

धर्मराज परीक्षा—स्त्री०[ष०त०] स्मृतियों के अनुसार एक प्रकार की दिव्य परीक्षा,जिसमें यह जाना जाता था कि धर्म की दृष्टि में अभियुक्त दोषी है या निर्दोष।

धर्मराय†—पुं०=धर्मराज।

धर्म-लिपि—स्त्री०[ष०त०]१. वह लिपि जिसमें किसी धर्म की मुख्य पुस्तक लिखी हो। २. भिन्न-भिन्न स्थानों पर खुदे हुए सम्राट् अशोक के धार्मिक प्रज्ञापन।

धर्म-लुप्ता उपमा—स्त्री० [धर्म-लुप्ता तृ० त०, धर्म-लुप्ता और उपमा व्यस्त पद] उपमा अलंकार का एक भेद, जिसमें धर्म अर्थात् उपमान और उपमेय में समान रूप से पाई जानेवाली बात का कथन या उल्लेख नहीं होता।

धर्मवर्त्ती (र्तिन्)—वि०[सं० धर्म√वृत् (बरतना)+णिनि] धर्म के अनुकूल आचरण करनेवाला।

धर्म-वर्धन—पुं०[ष०त०] शिव।

धर्मवान् (वत)—वि०[सं० धर्म+मतुप्] धर्मात्मा। धर्मनिष्ठ।

धर्म-वासर—पुं०[ष०त०] पूर्णिमा तिथि।

धर्म-वाहन—पुं० [ष०त०]१. धर्म के संबंध में किया जानेवाला चिंतन या विचार। २. धर्मराज का वाहन, भैंसा।

धर्मविजयी (यिन्)—पुं०[तृ०त०] वह जो नम्रता या विनय से ही संतुष्ट हो जाय।

धर्म-विवाह—पुं०[तृ०त०] धार्मिक संस्कारों से किया हुआ विवाह।

धर्म-विवेचन—पुं०[ष० त०]१. धर्म के संबंध में किया जानेवाला चिंतन या विचार। २. धर्म और अधर्म का विचार। ३. इस बात का विचार कि अमुक काम अच्छा है या बुरा।

धर्म-वीर—पुं०[स०त०] वह जो धर्म करने में सदा तत्पर रहता हो।

धर्म-वृद्ध—वि०[तृ०त०] जो निरन्तर धर्माचरण करने के कारण श्रेष्ठ माना जाता हो।

धर्म-वैतंसिक—पुं०[स०त०] वह जो पाप के द्वारा धन कमाकर लोगों को दिखाने और धार्मिक बनने के लिए बहुत दान-पुण्य करता हो।

धर्म-व्याध—पुं०[मध्य०स०] मिथिला का निवासी एक प्रसिद्ध व्याध जिसने कौशिक नामक वेदाध्यायी ब्राह्मण को धर्म का तत्त्व समझाया था।

धर्मव्रता—स्त्री०[सं०] विश्वरूपा के गर्भ से उत्पन्न धर्म नामक राजा की कन्या, जिसने पातिव्रत्य की प्राप्ति के लिए घोर तप किया था; और मरीचि ने जिसे परम पतिव्रता देखकर अपनी पत्नी बनाया था।

धर्म-शाला—पुं०[च०त०]१. वह स्थान, जहाँ धर्म और अधर्म का निर्णय होता हो। न्यायालय। विचारालय। २. वह स्थान, जहाँ नियमपूर्वक धर्मार्थ के विचार से दीन-दुखियों को दान दिया जाता हो। ३. परोपकार की दृष्टि से बनवाया हुआ वह भवन, जिसमें हिंदू-यात्री आदि बिना किसी प्रकार का शुल्क दिये कुछ समय तक ठहर या रह सकते हों।

धर्म-शास्त्र—पुं० [ष०त०] प्राचीन भारतीय समाज तथा हिन्दुओं में, पारस्परिक व्यवहार से संबंध रखनेवाले वे सब नियम या विधान, जो समाज का नियंत्रण तथा संचालन करने के लिए बड़े-बड़े आचार्य तथा महापुरुष बनाते थे और जो लोक में धार्मिक दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण और मान्य समझे जाते थे। जैसे—मानव धर्म-शास्त्र।

धर्म-शास्त्री (स्त्रिन्)—पुं०[सं० धर्मशास्त्र+इनि] वह जो धर्मशास्त्र के अनुसार व्यवस्था देता हो।

धर्म-शील—वि०[ब०स०] [भाव० धर्मशीलता] जिसकी प्रवृत्ति धर्म में हो। धार्मिक।

धर्म-संकट—पुं०[ष०त०] असमंजस या दुबधा की ऐसी स्थिति जिसमें धर्म का अनुसरण करनेवाला व्यक्ति यह समझता है कि दोनों में से किसी पक्ष में जाने पर धर्म का कुछ न कुछ उल्लंघन करना पड़ेगा। उभय-संकट। (डिलेम्मा)

धर्म-संगीति—स्त्री०[ष०त०] दे० 'संगायन'।

धर्म-सभा—स्त्री०[ष०त०]१. वह सभा या संस्था जिसमें केवल धार्मिक बातों या विषयों का विचार और विवेचन होता हो। (सिनॉड) २. कचहरी। न्यायालय। ३. दे० 'संगायन'।

धर्मसारी†—स्त्री०=धर्मशाला।

धर्म-सावर्णि—पुं०[मय० स०] पुराणों के अनसार ग्यारहवें मन।

धर्म-सुत—पुं०[ष० त०] युधिष्ठिर।

धर्मसू—वि०[सं० धर्म√सू (प्रेरणा)+क्विप्] धर्म की प्रेरणा करने-वाला।

पुं० एक पक्षी।

धर्म-सूत्र—पुं०[ष०त०] जैमिनि प्रणीत धर्मनिर्णय-संबंधी एक ग्रंथ।

धर्म-सेतु—वि० [ष०त०] सेतु की तरह धर्म को धारण करने, अर्थात् धर्म का पालन करनेवाला।

धर्मसेन—पुं०[सं०]१. एक प्राचीन महास्थविर या बौद्ध महात्मा, जो ऋषिपत्तन (सारनाथ, काशी) संघ के प्रधान थे। २. जैनों के बारह अंगविदों में से एक।

धर्मस्कंध—पुं०[सं०] धर्मास्तिकाय पदार्थ। (जैन)

धर्म-स्थ—वि०[सं० धर्म√स्था (ठहरना)+क] धर्म में स्थित।

पुं० धर्माध्यक्ष। न्यायाधीश।

धर्मस्थीय—पुं०[सं०] न्यायालय।

धर्मस्व—वि०[च०त०] धर्मार्थ कामों में लगाया या समर्पित किया हुआ (धन आदि) पुण्यार्थ।

पुं० ऐसा समाज या संस्था, जिसकी स्थापना धार्मिक उद्देश्यों की सिद्धि के लिए हुई हो।

धर्मांग—पुं०[धर्म-अंग, ब० स०] बगला (शरीर के सफेद रंग के आधार पर)।

धर्मांतर—पुं०[धर्म-अंतर, मयू०स०] स्वकीय या प्रस्तुत धर्म से भिन्न कोई और धर्म।

धर्मांतरण—पुं०[सं० धर्मांतर+क्विप्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० धर्मांत-रित] अपना धर्म छोड़कर दूसरा धर्म ग्रहण करना।

धर्मांध—वि०[धर्म-अंध तृ० त०]१. (व्यक्ति) जो अपने धर्मशास्त्रों में बतलाई हुई बातों के अतिरिक्त दूसरी अथवा दूसरे धर्मों की अच्छी बातें भी मानने को तैयार न होता हो। २. स्वधर्म में अंध-श्रद्धा होने के फलस्व-रूप दूसरे धर्मों के प्रति तिरस्कार या द्वेष की भावना रखनेवाला। ३. धर्म के नाम पर दूसरों से लड़ने को अथवा अनुचित काम करने को तैयार होनेवाला।

धर्मागम—पुं०[धर्म-आगम, ष०त०] धर्म ग्रंथ।

धर्माचरण—पुं०[धर्म-आचरण, ष०त०] [कर्त्ता धर्माचारी] किया जाने-वाला पवित्र और शुद्ध आचरण।

धर्माचार्य—पुं० [धर्म-आचार्य, स०त०] किसी धर्म की शिक्षा देनेवाला गुरु विशेषतः प्रधान गुरु।

धर्मात्मज—पुं०[धर्म-आत्मज, ष०त०]१. धर्मपुत्र। २. धर्मराज। युधि-ष्ठिर।

धर्मात्मा (त्मन्)—वि०[धर्म-आत्मन्, ब०स०] १. धर्म-ग्रंथों द्वारा प्रति-पादित सिद्धांतों के अनुसार आचरण करनेवाला। २. बहुत ही नेक और भला (व्यक्ति)।

धर्मादा—पुं०[सं० धर्म-दाय]धर्मार्थ निकाला हुआ धन।

धर्माधर्म—पुं०[धर्म-अधर्म, द्व० स०]१. धर्म और अधर्म। २. धर्म और अधर्म का ज्ञान या विचार।

धर्माधिकरण—पुं०[धर्म-अधिकरण, ष०त०] वह स्थान, जहाँ राजा व्यव-हारों (मुकदमों) पर विचार करता है। विचारालय।

धर्माधिकरणिक—पुं०[सं० धर्माधिकरण+ठन्—इक] धर्म-अधर्म का निर्णय करनेवाला राज-कर्मचारी। न्यायाधीश।

धर्माधिकरणी (णिन्)—पुं० [सं० धर्माधिकरण+इनि] न्यायाधीश।

धर्माधिकारी (रिन्)—पुं० [सं० धर्म-अधि √कृ (करना) + णिनि] १. धर्म और अधर्म की व्यवस्था देनेवाला, विचारक। न्यायाधीश। २. भारतीय देशी रियासतों और बड़े-बड़े धनवानों के यहाँ का वह अधिकारी जो यह निश्चय करता था कि धर्म के किस काम में कितना धन व्यय किया जाय।

धर्माधिकृत—पुं०[धर्म-अधिकृत, स० त०]=धर्माध्यक्ष।

धर्माधिष्ठान—पुं०[धर्म-अधिष्ठान, ष०त०] न्यायालय।

धर्माध्यक्ष—पुं० [धर्म-अध्यक्ष, स०त०] १. धर्माधिकारी। २. विष्णु। ३. शिव।

धर्मानुष्ठान—पुं० [धर्म-अनुष्ठान, ष०त०]=धर्माचरण।

धर्मापेत—वि०[धर्म-अपेत] जो धर्म के अनुकूल न हो। अधार्मिक। अन्याय संगत।

पुं०१. अधर्म। २. अन्याय। ३. पाप।

धर्माभास—पुं०[सं० धर्म+आ√भास् (दीप्ति)+अच्] ऐसा असद् धर्म जो नाम-मात्र के लिए धर्म कहलाता हो; पर वस्तुतः श्रुति-स्मृतियों की शिक्षाओं के विपरीत हो।

धर्मारण्य—पुं०[धर्म-अरण्य, मध्य०स०]१. तपोवन। २. पुराणानुसार एक प्राचीन वन, जिसमें धर्म उस समय लज्जा के मारे जा छिपा था, जब चंद्रमा ने गुरुपत्नी तारा का हरण किया था। ३. गया के पास का एक तीर्थ। ४. पुराणानुसार कूर्म विभाग का एक प्रदेश।

धर्मार्थ—वि० [धर्म-अर्थ, ब०स०]१. धार्मिक कार्यों के लिए अलग किया या निकाला हुआ (धन)। २. (कार्य) जो धर्म, परोपकार, पुण्य आदि की दृष्टि से किया जाय।

क्रि० वि० केवल धर्म, अर्थात् परोपकार या पुण्य के उद्देश्य या विचार से। जैसे—वे हर महीने १०, धर्मार्थ देते हैं।

पुं० धार्मिक दृष्टि से किया हुआ दान।

धर्मार्थी (र्थिन्)—पुं०[धर्म-अर्थिन्, ष० त०] वह जो धर्म और उसके फल की इच्छा या कामना रखता हो।

धर्मावतार—पुं०[धर्म-अवतार ष० त०]१. वह जो इतना बड़ा धर्मात्मा हो कि धर्म का साक्षात् अवतार जान पड़े। परम धर्मात्मा। २. धर्म और अधर्म का निर्णय करनेवाला। न्यायाधीश। ३. युधिष्ठिर।

धर्मावस्थायी (यिन्)—पुं०[सं० धर्म-अव√स्था (ठहरना)+णिनि] धर्माधिकारी।

धर्मासन—पुं०[धर्म-आसन, च०त०] न्यायाधीश का आसन।

धर्मास्तिकाय—पुं०[धर्म-अस्तिकाय, ष०त०] जैन शास्त्रानुसार छः द्रव्यों में से एक जो अरूपी है और जीव तथा पुद्गल की गति का आधार या सहायक माना गया है।

धर्मिणी—स्त्री०[सं० धर्म+इनि+ङीप्]१. पत्नी। २. रेणुका।

वि० सं० 'धर्मी' का स्त्री०।

धर्मिष्ठ—वि०[सं० धर्म-इष्ठन्]१. धर्म पर आरूढ़ या स्थित रहनेवाला। २. पुण्यात्मा।

धर्मी (र्मिन्)—वि०[सं० धर्म+इनि] [स्त्री० धर्मिणी]१. किसी विशिष्ट

धर्म, गुण आदि से युक्त। जैसे—ताप-धर्मी, द्रव-धर्मी। २. धर्म की आज्ञाएँ और सिद्धान्त माननेवाला। ३. किसी विशिष्ट धर्म या मत का अनुयायी। जैसे—सनातन-धर्मी।

पुं०१. वह जो किसी विशिष्ट धर्म, गुण या तत्त्व का आधार हो। २. धर्मात्मा व्यक्ति। ३. विष्णु।

स्त्री० धर्म का भाव। जैसे—हठ-धर्मी।

धर्मीपुत्र—पुं० [सं०] १. नाटक का कोई पात्र या अभिनय कर्त्ता। २. नट।

धर्मेन्द्र—पुं० [धर्म-इन्द्र, स०त०] १. यमराज। २. युधिष्ठिर।

धर्मेयु—पुं० [सं०] पुरुवंशी राजा रौद्राश्व का एक पुत्र। (महाभारत)

धर्मेश, धर्मेश्वर—पुं० [धर्म-ईश ष०त०, धर्म-ईश्वर ष०त०] यमराज।

धर्मोत्तर—वि० [धर्म-उत्तर ब०स०] जो धर्म-अधर्म का बहुत ध्यान रखता हो। अति धार्मिक।

धर्मोन्माद—पुं० [धर्म-उन्माद, तृ० त०] १. वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का उन्माद या पागलपन, जिसमें मनुष्य दिन-रात धर्म-संबंधी कार्यों या विचारों में मग्न रहता है। २. मनुष्य की वह मानसिक अवस्था जिसमें वह धर्म के नाम पर अंधा होकर भले-बुरे का विचार छोड़ देता है। (थियोमेनिया)

धर्मोपदेश—पुं० [धर्म-उपदेश ष०त०] १. धर्म-संबंधी तत्त्वों, शिक्षाओं, सिद्धान्तों आदि से संबंध रखनेवाला वह उपदेश जो दूसरों को धर्मनिष्ठ बनाने के लिए दिया जाय। २. धर्मशास्त्र।

धर्मोपदेशक—पुं० [धर्म-उपदेशक, ष०त०] लोगों को धर्म-संबंधी उपदेश देनेवाला व्यक्ति।

धर्मोपाध्याय—पुं० [धर्म-उपाध्याय, ष०त०] पुरोहित।

धर्म्य—वि० [सं० धर्म+यत्] १. धर्म-संबंधी। २. धर्म-संगत। न्यायपूर्ण।

धर्म्य-विवाह—पुं० [कर्म०स०] =धर्म-विवाह।

धर्ष—पुं० [सं०√धृष् (झिड़कना, दबाना)+घञ्] १. ऐसा आचरण या व्यवहार जिसमें शिष्टता, शील आदि का पूरा अभाव हो। अविनय और धृष्टता का व्यवहार। गुस्ताखी। २. असहन-शीलता। ३. अधीरता। ४. अनादर। अपमान। ५. (किसी स्त्री का) सतीत्व नष्ट करने की क्रिया। ६. हिंसा। ७. अशक्तता। असमर्थता। ८. प्रतिबन्ध। रुकावट। रोक। ९. नपुंसकता। १०. नपुंसक। हिजड़ा।

धर्षक—वि० [सं०√धृष्+ण्वुल्—अक] दबानेवाला। दमन करनेवाला। २. अनादर या अपमान करनेवाला। ३. असहिष्णु। ४. स्त्रियों का सतीत्व नष्ट करनेवाला। व्यभिचारी। ५. अभिनेता। नट।

धर्षकारी (रिन्)—वि० [सं० धर्ष√कृ (करना)+णिनि] [स्त्री० धर्षकारिणी]=धर्षक।

धर्ष-कारिणी—वि० [सं० धर्षकारिन्+ङीप्] (स्त्री) जिसका सतीत्व नष्ट हो चुका हो। व्यभिचारिणी।

धर्षण—पुं० [सं०√धृष्+ल्युट्—अन] [वि० धर्षणीय, धर्षित] १. किसी को जोर से पकड़कर दबाने या दबोचने की क्रिया या भाव। २. किसी को परास्त करते हुए नीचा दिखाना। ३. अनादर। अपमान। ४. असहिष्णुता। ५. स्त्री के साथ किया जानेवाला प्रसंग। सम्भोग। ६. एक प्रकार का पुराना अस्त्र। ७. शिव का एक नाम।

धर्षणा—स्त्री० [सं०√धृष्+णिच्+युच्—अन, टाप्] १. धर्षण करने की क्रिया या भाव। धर्षण। २. अपमान। अवज्ञा। ३. स्त्री का सतीत्व नष्ट करना। ४. स्त्री-प्रसंग। संभोग।

धर्षणी—स्त्री० [सं० √कृष् (खींचना)+अणि—ङीप्, क— धः] असती स्त्री। कुलटा।

धर्षणीय—वि० [सं०√धृष्+अनीयर्] जिसका धर्षण किया जा सकता हो या किया जाना उचित हो।

धर्षित—भू०कृ० [सं०√धृष्+क्त] [स्त्री० धर्षिता] १. जिसका धर्षण किया गया हो। दबाया या दमन किया हुआ। २. पराभूत। हराया हुआ। ३. जिसे नीचा दिखाया गया हो।

पुं० प्रसंग। मैथुन।

धर्षिता—स्त्री० [सं० धर्षित+टाप्] १. व्यभिचारिणी स्त्री। २ वेश्या।

धर्षी (र्षिन्)—वि० [सं० √धृष् +णिनि] [स्त्री० धर्षिणी] १. धर्षण करनेवाला। २. दबाने या दबोचनेवाला। ३. अपमान या तिरस्कार करनेवाला। ४. परास्त करने या हरानेवाला। ५. नीचा दिखानेवाला।

धलंड—पुं० [सं०] अंकोल का पेड़। ढेरा।

धव—पुं० [सं०√धु (कंपन)+अच्] १. एक प्रकार का जंगली पेड़ जिसकी पत्तियाँ अमरूद या शरीफे की पत्तियों की-सी होती हैं। इन पत्तियों से चमड़ा सिझाया जाता है। इसकी पत्ती, फल और जड़ तीनों दवा के काम में आते हैं। धौ। २. स्त्री का पति या स्वामी। जैसे—माधव। ३. पुरुष। मर्द। चालाक। धूर्त। ५. एक वसु का नाम।

धवई—स्त्री० [सं० धातकी, धवनी] एक प्राकार का पेड़ जो उत्तरीय भारत में अधिकता से होता है। इसे धाय भी कहते हैं। इससे एक प्रकार का गोंद भी निकलता है।

धवनी—स्त्री० [सं०] शालिपर्णी। सरिवन।

†स्त्री० [सं० धवल] १. धौंकनी। भाथी। २. दे० 'धमनी'।

धवर—पुं० [सं० धवला] पंडुक की तरह का एक प्रकार का पक्षी जिसका गला लाल और सारा शरीर सफेद होता है।

†वि०=धवल (सफेद)।

धवरहर†—पुं० धौरहर।

धवरा†—वि० [सं० धवल] [स्त्री० धवरी] उजला। सफेद।

धवराहर†—पुं०=धौरहर।

धवरी—स्त्री० [हिं० धवर] १. धवर पक्षी की मादा। २. सफेद रंग की गौ।

वि० हिं० 'धवर' का स्त्री०।

धवल—वि० [सं०√धाव् (गति, शुद्धि)+कल, ह्रस्व] १. उजला। सफेद। २. निर्मल। कुफ। स्वच्छ। ३. मनोहर। सुन्दर।

पुं०१. सफेद कोढ़। २. श्वेत कुष्ठ। २. धौ का पेड़। ३. चिनिया कपूर। ४. सिंदूर। ५. सफेद गोल मिर्च। ६. अर्जुन वृक्ष। ७. सफेद परेवा या धौरा नामक पक्षी। ८. बहुत बड़ा बैल। ९. छप्पय छन्द का ४२ वाँ भेद। १०. एक राग जो भरत के मत से हिंडोल राग का ८ वाँ पुत्र है। ११. राजस्थान में गाये जानेवाले एक प्रकार के मंगल गीत।

धवल-गिरि—पुं० [कर्म०स०] हिमालय की एक प्रसिद्ध चोटी, जो सदा बरफ से ढकी रहती है।

धवल-गृह—पुं०[कर्म०स०]१. प्राचीन भारत में राजप्रासाद का वह ऊपरी और कुछ ऊँचा उठा हुआ खंड, जिसमें राजा और रानियाँ रहती थीं और जो प्रायः सफेद रंग का होता था। २. प्रासाद। महल।

धवलता—स्त्री०[सं० धवल+तल्+टाप्] धवल होने की अवस्था, गुण या भाव।

धवलत्व—पुं०[सं० धवल+त्व =धवलता।

धवलना—स०[सं० धवल] उज्ज्वल करना। चमकाना।
अ० उज्ज्वल होना।

धवल-पक्ष—पुं०[कर्म०स०] १. चांद्र मास का शुक्ल पक्ष। उजला पाख। २. हंस।

धवल-मृत्तिका—स्त्री०[कर्म०स०] सफेद अर्थात् खरिया मिट्टी। दुद्धी।

धवल-श्री—स्त्री०[कर्म०स०] ओड़व जाति की एक रागिनी जो संध्या समय गाई जाती है।

धवलहर—पुं० [सं० धवल-गृह] १. प्रासाद। महल। उदा०—धवला गिरि कि ना धवलहर। —प्रिथीराज। २. दे० 'धौरहर'।

धवलांग—वि० [धवल-अंग, ब० स०] धवल अर्थात् सफेद अंगोंवाला।
पुं० हंस।

धवला—स्त्री०[सं० धवल+टाप्] सफेद गाय।
पुं०[सं० धवल] सफेद बैल।
वि० सं० 'धवल' का स्त्री०।

धवलाई*—स्त्री०=धवलता।

धवलागिरि—पुं०[सं० धवल+गिरि]=धवलगिरि।

धवलित—भू०कृ० [सं० धवल+इतच्] १. जो धवल अर्थात् सफेद किया गया हो। उज्ज्वल। जैसे—तुषार धवलित 'पर्वत'। २. खूब साफ या स्वच्छ किया हुआ।

धवलिमा(मन्)—स्त्री०[सं० धवल+इमनिच्] १. श्वेता। सफेदी। २. उज्ज्वलता।

धवली—स्त्री०[सं० धवय+ङीष्]१. सफेद गाय। २. सफेद गोल मिर्च। ३. समय से पहले बाल सफेद होने का रोग।

धवलीकृत—भू० कृ०[सं० धवल+च्वि √कृ(करना)+क्त]जो धवल अर्थात् सफेद किया या बनाया गया हो।

धवलीभूत—भू०कृ०[सं० धवल+च्वि√भू (होना)+क्त] जो सफेद हो गया हो।

धवलोत्पल—पुं०[सं० धवल-उत्पल, कर्म०स०] सफेद कमल।

धवा†—पुं०=धव (वृक्ष)।

धवाना†—स०[हिं० धाना का प्रे०] किसी को धाने या दौड़ने में प्रवृत्त करना। दौड़ाना।
*अ०[सं० ध्वनि]१. ध्वनि या शब्द होना। २. ध्वनित होना।
स० ध्वनि या शब्द उत्पन्न करना।

धवित्र—पुं०[सं०√धू (कंपन)+इत्र] हिरन की खाल का बना हुआ पंखा, जिससे यज्ञ की आग सुलगाई जाती थी।

धस—स्त्री०[?] एक प्रकार की जमीन जिसकी मिट्टी भुरभुरी होती है।
†स्त्री०[हिं० धँसना] धँसने की क्रिया या भाव। धँसान।

धसक—स्त्री०[हिं० धसकना]१. धसकने की क्रिया या भाव। २. ईर्ष्या, द्वेष, भय आदि कारणों से कलेजा या दिल धँसने या बैठने की अवस्था या भाव। ३. कोई काम करने में झिझकने या दहलने की अवस्था या भाव।
स्त्री०[अनु०]१. खाँसने के समय गले में होनेवाला खस-खस या धस-धस शब्द। २. सूखी खाँसी।

धसकन—स्त्री०[हिं० धसकना] १. धसकने की क्रिया, भाव या स्थिति। २. धसक (डर या भय)।

धसकना—अ०[हिं० धँसना]१. नीचे की ओर धँसना या दबना। २. ईर्ष्या आदि के कारण मन का दुःखी होना। ३. (कलेजा या दिल) बैठना। उदा०—उठा धसक जिउ औ सिर धुन्न। —जायसी। ४. भय आदि के कारण झिझकना। ५. दहलना।

धसका—पुं०[हिं० धसक] चौपायों के फेफड़ों का एक संक्रामक रोग।

धसना—अ०[सं० ध्वंसन] ध्वस्त या नष्ट होना। मिटना।
स० ध्वस्त या नष्ट करना। मिटाना।
†अ०=धँसना।

धसनि—स्त्री०=धँसनि।

धसमसाना†—अ०=धँसना।
†स०=धँसाना।

धसान—स्त्री०[सं० दशार्ण] पूर्वी मालवा और बुंदेलखंड की एक छोटी नदी।
†स्त्री०=धँसान।

धसाना—स०=धँसाना।

धसाव—पुं०=धँवसा।

धाँक—पुं०[देश०] भीलों की तरह की एक जंगली जाति।
†स्त्री०=धाक।

धाँकना†—अ० स०=धाकना।

धाँगड़—पुं०[देश०]१. एक अनार्य जंगली जाति जो विंध्य और कैमोर की पहाड़ियों पर रहती है। २. एक जाति, जो कुएँ, तालाब आदि खोदने का काम करती है।

धाँगर—पुं०=धाँगड़।

धाँधना—स०[देश०]१. बन्द करना। भेड़ना। २. बहुत अधिक खाना। पेट में भोजन ठूँसना। ३. नष्ट-भ्रष्ट करना। ध्वस्त करना। ४. त्रस्त या परेशान करना। उदा०—धर कर धरा धूप ने धाँधी। धूल उड़ाती है यह आँधी।—मैथिलीशरण गुप्त।
†अ० दौड़-धूप करना।

धाँधल†—स्त्री०=धाँधली।

धाँधलपन—पुं०[हिं० धाँधल+पन (प्रत्य०)]१. पाजीपन। शरारत। २. दे० 'धाँधली'।

धाँधली—स्त्री०[अनु०]१. उत्पात। उपद्रव। ऊधम। २. पाजीपन। शरारत। ३. कपट। छल। धोखा। ४. ऐसा कार्य या प्रयत्न जो उचित या न्यायसंगत तथ्य या वास्तविकता का ध्यान न रखकर मनमाने ढंग से और बुरे उद्देश्य से किया जाय। ५. जबरदस्ती अपनी गलत बात भी ठीक ठहराने या सबसे ऊपर रखने का प्रयत्न करना। ६. शीघ्रतापूर्वक कोई काम करने अथवा किसी काम के लिए दूसरों को उद्यत करने के लिए की जानेवाली जल्दबाजी या ताकीद।
क्रि० प्र०—मचाना।

धांधा—स्त्री०[सं०] इलायची।

धाँय—स्त्री०[अनु०] बंदूक, तोप आदि के चलने से होनेवाला शब्द। धायँ।

धाँस—स्त्री०[अनु०] कटु तथा तीक्ष्ण वस्तुओं की वह उत्कट गंध, जिसके फलस्वरूप आँख, नाक, फेफड़े आदि में सुरसुराहट होने लगती है, या उनमें से कुछ पानी निकलने लगता है। जैसे—तमाकू या सुंघनी की धाँस; मिर्च या प्याज की धाँस।

धाँसना—अ०[अनु०]१. घोड़े आदि पशुओं का खाँसना। २. घोड़े आदि की तरह जोर-जोर से खाँसना। ढाँसना।

धाँसी—स्त्री०[अनु०]१. घोड़ों की खाँसी। २. दे० 'ढाँसी'।

धा—वि०[सं० √धा (धारण)+क्विप्] धारक। धारण करनेवाला।

पुं० १. ब्रह्मा। २. बृहस्पति।

प्रत्य० तरह का। प्रकार का। भाँति का। जैसे—नवधा भक्ति।

पुं०[सं० धैवत] संगीत में धैवत स्वर का वाचक शब्द।

पुं०[अनु०] तबले, मृदंग आदि का एक बोल। जैसे—कुड़ान धा।

†स्त्री०=धाप (दाई)।

†पुं०=धव (धौ वृक्ष)।

धाइ—स्त्री०=धाय (दाई)।

पुं०=धौ (वृक्ष)।

धाई—स्त्री०=धाय(दाई)।

धाउ†—पुं०=धाव।

धाऊ—पुं०[सं० धाना=दौड़ना] वह जो आवश्यक कामों के लिए इधर उधर दौड़ाया जाय। हरकारा।

†पुं०=धव (वृक्ष)।

धाक—पुं०[सं० √धा+क]१. वृष। साँड़। २. आहार। भोजन। ३. अन्न। अनाज। ४. खंभा। ५. आधार। सहारा। ६. पानी का हौज। ७. ब्रह्म।

स्त्री०[?]१. किसी व्यक्ति के ऐश्वर्य, गुण, पद आदि का वह प्रभाव जिससे और लोग दबे तथा भयभीत रहते और उसका सामना करने से डरते हों। आतंक। दबदबा। जैसे—आज-कल बाजार में उनकी धाक है।

मुहा०—धाक जमना या बँधना=रोब या दबदबा होना। आतंक छाना। **धाक जमाना या बाँधना**=ऐसा काम करना जिससे लोगों पर दबदबा या रोब छा जाय।

२. ख्याति। प्रसिद्धि। शोहरत।

†पुं०=ढाक (पलास)।

धाकड़—वि०[हिं० धाक] १. जिसकी धाक या दबदबा चारों ओर हो। २. ख्यात। प्रसिद्ध। ३. हृष्ट-पुष्ट। तगड़ा। बलवान।

पुं० १. साँड़। २. बैल।

†पुं०=धाकर।

धाकना*—अ०[हिं० धाक+ना (प्रत्य०)]१. धाक या रोब जमाना। २. किसी की धाक से प्रभावित होना।

धाकर—पुं०[?]१. कुलीन ब्राह्मण। २. राजपूतों की एक जाति। ३. एक तरह का गेहूँ जिसकी फसल को जल की आवश्यकता नहीं होती।

†वि०[?] वर्ण-संकर। दोगला।

†वि०, पुं०=धाकड़।

धाकरा—पुं०=धाकड़।

धाख†—पुं०[हिं० धाक] १. डर। भय। २. दुःख। उदा०—कि सखि कहब कहेते धाख।—विद्यापति।

*पुं०=ढाक (पलास)।

धाखा*—पुं०=ढाक। (पलास)।

धागा—पुं०[हिं० तागा]१. बटा हुआ महीन सूत जो प्रायः सीने-पिरोने के काम आता है। २. लाक्षणिक अर्थ में, दो पक्षों को जोड़नेवाली बात या वस्तु। सूत्र।

धाड़—स्त्री०[हिं० धार] १. डाकुओं का आक्रमण। २. आक्रमण। चढ़ाई। उदा०—महि अधण मेवाड़, राड़ धाड़ अकबर रचै।—दुरसा-जी।

क्रि० प्र०—पड़ना।

३. जीव-जन्तुओं का ऐसा दल या समूह जो दूर तक पंक्ति के रूप में चला गया हो। जैसे—चूँटियों या बन्दरों की धाड़।

†स्त्री० १. डाड़। २. ढाड़।

स्त्री०[हिं० दहाड़] जोर-जोर से चिल्लाकर रोने का शब्द।

क्रि० प्र०—मारना।

धाड़ना†—अ०=दहाड़ना।

धाड़स†—पुं०=ढारस।

धाड़ी—स्त्री०[हिं० धाड़]१. डाकुओं या लुटेरों का जत्था या दल। २. उक्त जत्थे का कोई व्यक्ति। डाकू। लुटेरा।

धाणक—पुं०[सं०√धा+आणक] एक प्राचीन परिमाण या मुद्रा।

†पुं० दे० 'धानुक'।

धात†—स्त्री०=धातु।

धातकी—स्त्री०[सं० धातु+णिच्, टिलोप + ण्वुल्—अक + ङीप्] १. एक प्रकार का झाड़ जिसके फूलों का व्यवहार रँगाई के काम में होता है। २. धव या धौ का पेड़ और उसका फूल।

धातविक—वि०[सं० धातु+ठक्—इक]=धातवीय।

धातवीय—वि० [सं० धातु+छ—ईय] १. धातु-संबंधी। धातु का। २. धातु का बना हुआ।

धाता (तृ)—वि० [सं०√धा+तृच्]१. धारण करनेवाला। २. पालन-पोषण करनेवाला। पालक। ३. रक्षक।

पुं०१. विधाता। ब्रह्मा। २. विष्णु। ३. शिव। ४. शेषनाग। ५. बारह सूर्यों में से एक। ६. ब्रह्मा के एक पुत्र का नाम। ८. भृगु मुनि के एक पुत्र का नाम। ८. उनचास वायुओं में से एक। ९. साठ संवत्सरों में से एक। १०. टगण का आठवाँ भेद। ११. सप्तर्षि। १२. उपपति।

धातु—स्त्री०[सं०√धा+तुन्]१. वह मूल तत्त्व जिससे कोई चीज बनी हो। पदार्थ या वस्तु का उपादान। २. पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँचों महाभूतों में से प्रत्येक जो अलग-अलग या मिलकर पदार्थों की रचना या सृष्टि करते हैं। ३. शरीर को धारण करने या बनाये रखनेवाले तत्त्व जिनकी संख्या वैद्यक में ७ कही गई है। यथा—रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र।

विशेष—कहा गया है कि जो कुछ हम खाते-पीते हैं, उन सबसे क्रमात्

उक्त सात धातुएँ बनती हैं, जिनसे हमारा शरीर बनता है। कुछ लोग वात, पित्त और कफ की गणना भी धातुओं में ही करते हैं। कुछ लोग इन सात धातुओं में केश, त्वचा और स्नायु को भी सम्मिलित करके इनकी संख्या १० मानते हैं।
४. कुछ विशिष्ट प्रकार के खनिज पदार्थ जिनकी संख्या हमारे यहाँ ७ कही गई है। यथा—चाँदी, जस्ता, ताँबा, राँगा, लोहा, सीसा, और सोना।
विशेष—उक्त सात धातुओं के सिवा हमारे यहाँ वैद्यक में सात उप-धातुएँ भी कही गई हैं—काँसा, तूतिया, पीतल, रूपामक्खी, सोनामक्खी शिलाजीत, और सिंदूर। इसके सिवा खड़िया, गंधक, मैनसिल, आदि सभी खनिज पदार्थों की गिनती हमारे यहाँ धातुओं में होती है। परन्तु आधुनिक विज्ञान की परिभाषा के अनुसार धातु उस खनिज पदार्थ को कहते हैं; जो चमकीला तो हो, परन्तु पारदर्शी न हो, जिसमें ताप, विद्युत् आदि का संचार होता हो, जो कूटने, खींचने, पीटने आदि पर बढ़ सके अर्थात् जिसके तार और पत्तर बन सकें। इन सात धातुओं के सिवा काँसा, पीतल आदि धातु ही हैं। समय-समय पर अनेक नई धातुएँ भी मिलती रहती हैं। खानों में ये धातुएँ अपने विशुद्ध रूप में नहीं निकलती, बल्कि उनमें अनेक दूसरे तत्त्व भी मिले रहते हैं। उन मिश्रित रूपों को साफ करने पर धातुएँ अपने बिलकुल शुद्ध रूप में आती हैं।
५. संस्कृत व्याकरण में, क्रियाओं के वे मूल रूप जिससे उनके भिन्न-भिन्न विकारी रूप बनते हैं। जैसे—अस्, कृ, धृ, भू आदि।
विशेष—इन्हीं के आधार पर अब हिन्दी में भी कर, खा, जा, आदि रूप धातु माने जाने लगे हैं। ६. गौतम बुद्ध अथवा अन्य बौद्ध महापुरुषों की अस्थियाँ जिनको उनके अनुयायी डिब्बों में बन्द करके स्मारक रूप में स्थापित करते थे। ७. बौद्ध-दर्शन में वे तत्त्व या शक्तियाँ जिनसे सब घटनाएँ होती हैं। ८. पुरुष का वीर्य। शुक्र।
मुहा०—**धातु गिरना या जाना**=पेशाब के रास्ते या उसके साथ वीर्य का पतला होकर निकलना जो एक रोग है।
९. परमात्मा। परब्रह्म। १०. आत्मा। ११. इंद्रिय। १२. अंश, खंड या भाग। १३. पेय पदार्थ।

धातु-काशीस (कसीस)—पुं०[मध्य०स०] दे० 'कसीस'।

धातु-क्षय—पुं०[ष०त०]१. खाँसी का रोग जिससे शरीर क्षीण होता है। २. प्रमेह आदि रोग जिनसे धातु अर्थात् वीर्य का क्षय होता है। ३. क्षयरोग।

धातु-गर्भ—पुं०[ब०स०] वह डिब्बा या पिटारी जिसमें बौद्ध लोग बुद्ध या अपने अन्य साधु महात्माओं के दांत या हड्डियाँ आदि सुरक्षित रखते हैं। देहगोप।

धातुगोप—पुं०=धातु-गर्भ।

धातुघ्न—वि०[सं० धातु√हन् (मारना)+टक्] धातु को नष्ट करने या मारनेवाला।
पुं० वह पदार्थ जिससे शरीर का धातु नष्ट हो। जैसे—काँजी, पारा आदि।

धातु-चैतन्य—वि० [ब०स०] धातु को जाग्रत तथा चैतन्य करनेवाला।

धातुज—वि०[सं० धातु√जन् (उत्पत्ति)+ड] धातु से उत्पन्न, अर्थात् निकला या बना हुआ।
पुं० खनिज या शैलज तेल।

धातु-द्रावक—वि०[ष०त०] धातु को गलाने या पिघलानेवाला।
पुं० सुहागा जिसके योग से सोना आदि धातुएँ गलाई जाती हैं।

धातु-नाशक—वि०, पुं०[ष०त०]=धातुघ्न।

धातुप—पुं०[सं० धातु√पा (रक्षा)+क] वैद्यक के अनुसार शरीर का वह रस या पतला धातु जो भोजन के उपरांत तुरन्त बनता है और जिससे शरीर की अन्य धातुओं का पोषण होता है।

धातु-पाठ—पुं० [ब०स०] पाणिनि कृत संस्कृत व्याकरण के अनुसार उन धातुओं अर्थात् क्रियाओं के मूलरूपों की सूची जो सूत्रों से भिन्न है। (यह सूची भी पाणिनि की ही प्रस्तुत की हुई मानी जाती है।)

धातु-पुष्ट—वि०[ब०स०] शरीर का वीर्य बढ़ाने तथा पुष्ट करनेवाला।

धातु-पुष्पिका—स्त्री०[ब०स०, ङीष्+कन्—टाप्, ह्रस्व] धव या धौ का फूल।

धातु-पुष्पी—स्त्री०[ब०स०, ङीष्]=धातु-पुष्पिका।

धातु-प्रधान—पुं०[स०त०] वीर्य। (डि०)

धातुबैरी—पुं० [सं० धातुवैरिन्] गंधक।

धातुभृत्—वि०[सं० धातु√भृ (पोषण)+क्विप्] जिससे धातु का पोषण हो।
पुं० पर्वत। पहाड़।

धातुमत्ता—स्त्री०[सं० धातुमत्+तल्—टाप्] धातुमान होने की अवस्था, गुण या भाव।

धातुमय—वि० [सं० धातु+मयट्] १. जिसमें धातु मिली हो। धातु से युक्त। २. (प्रदेश या स्थान) जिसमें धातुओं आदि की खानें हों।

धातु-मर्म—पुं०=धातुवाद। (देखें)

धातु-मल—पुं०[ष०त०]१. शरीरस्थ धातुओं के विकारी अंश जो कफ, नख, मैल आदि के रूप में शरीर से बाहर निकलते हैं। २. धातुओं आदि को गलाने पर उनमें से निकलनेवाला फालतू या रद्दी अंश। खेड़ी। (स्लैग)

धातु-माक्षिक—पुं०[मध्य०स०] सोनामक्खी नामक उपधातु।

धातु-मान्(मत्)—वि०[सं० धातु+मतुप्] जिसमें या जिसके पास धातुएँ हों।

धातुमारिणी—स्त्री०[सं० धातुमारिन्+ङीष्] सुहागा।

धातु-मारी (रिन्)—पुं०[सं० धातु√मृ(मरना)+णिच्+णिनि]गंधक।

धातुयुग—पुं० [ष०त०]मानव जाति के इतिहास में वह युग जब उसने पहले पहल धातुओं का उपयोग करना प्रारंभ किया था। और जो प्रस्तर-युग के बहुत बाद आया था। (मैटलिक एज)

धातुराग—पुं० [मध्य०स०] ऐसा रंग, जो धातुओं में से निकलता हो अथवा उनके योग से बनाया जाता हो। जैसे—ईंगुर, गेरू आदि।

धातु-राजक—पुं०[ष० त०+कन्] प्रधान या श्रेष्ठ शरीरस्थ धातु—शुक्र (वीर्य)।

धातु-रेचक—वि०[ष०त०] (वस्तु) जिसके सेवन से धातु का स्खलन हो।

धातु-वर्द्धक—वि०[ष०त०] धातु (वीर्य) का अभिवर्द्धन करनेवाला।

धातु-वल्लभ—पुं०[स०त०] सुहागा।

धातु-वाद—पुं०[ष०त०] १. वह कला या विद्या जिससे खान से निकली हुई कच्ची धातुएँ साफ की जाती और एक में मिली हुई कई धातुएँ अलग-अलग की जाती हैं। (इसकी गिनती ६४ कलाओं में की गई है) २. भिन्न-भिन्न धातुओं से सोना बनाने की विद्या। कीमियागरी। ३. रसायन शास्त्र।

धातुवादी (दिन्)—पुं०[सं० धातुवाद+इनि] १. वह जो धातुवाद का अच्छा ज्ञाता हो। २. रसायन शास्त्र का ज्ञाता।

धातु-विज्ञान—पुं०[षं० त०] वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि धातु में क्या-क्या गुण या विशेषताएँ होती हैं, उसकी भौतिक रचना कैसे हुई है, किस प्रकार परिष्कृत या शुद्ध की जाती हैं और उन्हें किस प्रकार मिलाकर भिन्न धातुएँ बनाई जाती हैं। (मेटलर्जी)

धातु-बैरी (रिन्)—पुं०[ष०त०] गंधक।

धातु-शेखर—पुं०[ष०त०] १. कसीस। २. सीसा।

धातु-संज्ञ—पुं०[ब०स०] सीसा।

धातु-स्तंभक—वि०[ष०त०] (औषध या पदार्थ) जो वीर्य को शरीर में रोक रखे और जल्दी से निकलने या स्खलित न होने दे।

धातुहन—पुं०[सं० धातु√हन् (नष्ट करना)+अच्] गंधक।

धातू—स्त्री०=धातु।

धातूपल—पुं० [धातु-उपल, मध्य०स०] घड़िया मिट्टी।

धातृका—स्त्री० [सं० धात्रिका] वह स्त्री जो रोगियों की सेवा-शुश्रूषा विशेषतः जच्चा और बच्चा की देख-रेख करती हो और ऐसे कार्य करने में प्रशिक्षित हो। (नर्स)

धातृ-पुत्र—पुं०[सं० ष०त०] ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार।

धातृ-पुष्पिका (पुष्पी)—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्, +कन्+टाप्, ह्रस्व] धवर्क या धौ के फूल।

धात्र—पुं०[सं०√धा+ष्ट्रन्] १. पात्र। बरतन। २. आधान।

धात्रिका—स्त्री०[सं० धात्री+कन्—टाप्, ह्रस्व] छोटा आँवला। आमलकी।

धात्री—स्त्री०[सं० धात्र+ङीष्] १. माता। माँ। २. बच्चे को दूध पिलानेवाली दाई। धाय। ३. गायत्री स्वरूपिणी भगवती और माता। ४. पृथ्वी जो सब की माता है। ५. गौ, जिसका दूध माता के दूध के समान होता है। ६. गंगा नदी। ७. आँवला। ८. फौज। सेना। ९. आर्या छन्द का एक भेद।

धात्री-पत्र—पुं०[ब०स०] १. तालीस-पत्र। २. आँवले की पत्ती।

धात्री-पुत्र—पुं०[ष०त०] धाय का लड़का।

धात्री-फल—पुं०[ष०त०] आँवला।

धात्री-विद्या—स्त्री० [ष०त०] वह विद्या जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि गर्भवती स्त्रियों को किस प्रकार प्रसव कराना चाहिए और प्रसूता तथा शिशु की किस प्रकार देख-रेख करनी चाहिए। (मिडवाइफ़री)

धात्रेयी—स्त्री० [सं० धात्री+ढक्—एय+ङीप्] १. धात्री की बेटी। २. धात्री। दाई।

धात्वर्थ—पुं०[सं० धातु-अर्थ] शब्द या वह पहला या मूल अर्थ जो उसकी धातु (पद या शब्द की प्रकृति) से निकलता हो। प्राथमिक अर्थ। जैसे—प्रभाकर का धात्वर्थ है—प्रभा या प्रकाश करनेवाला।

धात्वीय—वि०[सं० धातु+छ—ईय] १. धातु-संबंधी। धातु का। २. धातु का बना हुआ।

धाधना †—स०[?] देखना।

अ०, स०,=धाँधना।

धान—पुं०[सं० धान्य] १. तृण जाति का एक प्रसिद्ध पौधा जिसके बीजों का चावल होता है। व्रीहि। शालि। (इसकी सैंकड़ों जातियाँ या प्रकार होते हैं) २. चावल का वह रूप जिसमें उसके चारों ओर छिलका लगा रहता है।

विशेष—जब धान कूटा जाता है, तब उसका छिलका या भूसी उतर जाती है और अन्दर से चावल निकल आता है।

३. अन्न। अनाज। ४. किसी का दिया हुआ भोजन।

धानक—पुं०[सं० धन्याक, पृषो० सिद्धि] १. धनियाँ। २. एक रत्ती का चौथाई भाग।

पुं०[सं० धानुष्क] १. धनुर्धर। २. रूई धुननेवाला। धुनिया। ३. एक पहाड़ी जाति।

धानकी—पुं०[हिं० धानुक] १. धनुर्धर। धनुर्द्धारी। २. कामदेव। (डिं०)

धानजई—पुं०[हिं० धान+जई] धान की एक किस्म।

धान-पान—पुं०[हिं० धान+पान] विवाह से कुछ ही पहले होनेवाली एक रसम जिसमें वर-पक्ष से कन्या के घर धान और हल्दी भेजी जाती है।

वि० धान और पान की तरह बहुत ही कोमल अथवा दुबला-पतला। नाजुक। उदा०—चोटी का बोझ ऊई, उठाये जो यह कमर, बूता नहीं है इतना मुझ धान-पान में।—जान साहब।

धानमाली—पुं०[सं०?] दूसरे के चलाये हुए अस्त्र का प्रतिकार करने या उसे रोकने की एक क्रिया।

धाना—अ०[सं० धावन] १. दौड़ाना। २. बहुत तेजी से चलते हुए आगे बढ़ना।

मुहा०—**धाय पूजना**=(क) धाकर और दौड़ते हुए जाकर किसी को पूजना। (ख) बिलकुल अलग या बहुत दूर रहना। (परिहास और व्यंग्य)

३. किसी काम के लिए प्रयत्न करते समय इधर-उधर दौड़-धूप करना।

स्त्री०[सं०√धा (धारण)+न—टाप्] १. भुना हुआ जौ या चावल। बहुरी। २. अन्न का कण या छोटा दाना। ३. सत्तू। ४. धान। ५. अनाज। अन्न। ६. पौधों आदि का अंकुर। ७. धनियाँ।

धाना-चूर्ण—पुं०[ष०त०] सत्तू।

धाना-भर्जन—पुं०[ष०त०] अनाज भूनना।

धानी—स्त्री० [सं०√धा+ल्युट्—अन+ङीप्] १. जगह। स्थान। २. ऐसा स्थान जिसमें किसी का निवास हो या कोई रहे। जैसे—राजधानी। ३. ऐसी जगह जो किसी के लिए आधार या आश्रय का काम दे। उदा०—संका तैं सकानी, लंका रावन की राजधानी, पजरट पानी धूरि धानी भयो जात है।—सेनापति। ४. ऐसा आधार जिसमें या जिस पर कोई चीज रखी जाय। (स्टैंड) जैसे—शूकधानी। ५. धनियाँ। ६. पीलू वृक्ष।

वि० [सं० धारण] धरण करनेवाला।

स्त्री०[सं० धाना] भुना हुआ गेहूँ या जौ। जैसे—गुड़धानी।

स्त्री० [?] संपूर्ण जाति की एक रागिनी।

वि० [हिं० धान] धान की हरी पत्तियों के से रंग का। हलका हरा। जैसे—धानी दुपट्टी।

पुं० उक्त प्रकार का हलका हरा रंग जो धान की पत्तियों के रंग से मिलता-जुलता है।

धानुक—पुं०[सं० धानुष्क]१. धनुष चलाने में कुशल व्यक्ति। कमनैत। धनुर्द्धर। उदा०—धानुक आयु बेझ जग कीन्हा।—जायसी। २. एक जाति जो प्रायः कहारों की तरह सेवा-कार्य करती है। ३. इस जाति का व्यक्ति।

धानुक्की†—पुं०=धानुक (धनुर्धारी)।

धानुर्दंडिक—पुं० [सं० धनुर्दंड+ठक्—इक] =धानुष्क।

धानुष्क—पुं० [सं० धनुस्+ठक्—क] कमनैत। धनुर्धर।

धानुष्का—स्त्री० [सं० धानुष्क+टाप्] अपामार्ग। चिचड़ा।

धानुष्य—पुं० [सं० धनुस्+ष्यञ्] एक प्रकार का बाँस जिससे धनुष बनते थे।

धानेय—पुं० [सं० धाना+ढक्—एय] धनियाँ।

धान्य—पुं० [सं० धान+यत्] १. अनाज। अन्न। गल्ला। २. ऐसा चावल जिसका छिलका निकाला न गया हो। धान।

पद—धन-धान्य=आर्थिक संपत्ति और खाने-पीने के समस्त पदार्थ या साधन।

३. धनियाँ। ४. प्राचीन काल की चार तिलों के बराबर एक तौल या परिमाण। ५. केवटी मोथा। ६. एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र।

धान्यक—पुं० [सं० धान्य+कन्] १. धनियाँ। २. धान।

धान्य-कूट—पुं०=धान्य-कोष्ठक।

धान्य-कोष्ठक—पुं० [ष० त०] अनाज रखने के लिए बना हुआ बड़ा बरतन। कोठिला। गोला।

धान्य-चमस—पुं० [मयू० स०] चिड़वा।

धान्यचारी (रिन्)—पुं०[सं० धान्य√चर् (गति)+णिनि] चिड़िया। पक्षी।

धान्यजीवी (विन्)—वि० [सं० धान्य√जीव् (जीना)+णिनि] धान्य खाकर जीवन-निर्वाह करनेवाला।

पुं० चिड़िया। पक्षी।

धान्यतुषोद—पुं० [सं०] काँजी।

धान्य-धेनु—स्त्री० [मध्य० स०] अन्न की ढेरी जिसे गौ मानकर दान किया जाता था।

धान्य-पंचक—पुं० [ष० त०] १. शालि, व्रीहि, शूक, शिंबी, और क्षुद्र ये पाँच प्रकार के धान। २. वैद्यक में एक प्रकार का तैयार किया हुआ पानी जो पाचक कहा गया है। ३. वैद्यक में एक प्रकार का औषध।

धान्य-पति—पुं० [ष० त०] १. चावल। २. जौ।

धान्य-पानक—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार का पन्ना या पेय पदार्थ जो धनिये के योग से बनाया जाता है।

धान्य-बीज—पुं० [ष० त०] धनिये के बीज।

धान्य-भोग—पुं० [सं०] ऐसी उपजाऊ भूमि जिसमें अन्न बहुत अधिक मात्रा में उत्पन्न होता हो।

धान्यमालिनी—स्त्री० [सं०] रावण के दरबार की एक राक्षसी जिसे उसने जानकी को बहकाने के लिए नियुक्त किया था।

धान्यमाष—पुं० [सं०] अन्न मापने का एक प्राचीन परिमाण।

धान्य-मुख—पुं० [ब० स०] चीर-फाड़ करने का एक प्राचीन उपकरण। (सुश्रुत)

धान्य-मूल—पुं० [ब० स०] काँजी।

धान्य-यूष—पुं० [ष० त०] काँजी।

धान्य-योनि—स्त्री० [ब० स०] काँजी।

धान्य-राज—पुं० [ष० त०] जौ।

धान्य-वर्धन—पुं० [ब० स०] अन्न उधार देने की वह रीति जिसमें मूल और व्याज दोनों अन्न के रूप में ही लिया जाता था।

धान्य-वाप—पुं० [ब० स०] ऐसी उपजाऊ भूमि जहाँ अन्न बहुतायत से पैदा होता हो।

धान्य-वीज—पुं० [ष० त०] १. धान का बीज। २. [ब० स०] धनियाँ।

धान्य-वीर—पुं० [स० त०] उड़द। माष।

धान्य-शर्करा—स्त्री० [मध्य० स०] चीनी मिला हुआ धनिए का पानी जो अंतर्दाह शांत करने के लिए पीया जाता है।

धान्य-शीर्षक—पुं० [ष० त०] गेहूँ, धान आदि पौधों की बाल।

धान्य-शैल—पुं० [मध्य० स०] दान करने के निमित्त लगाई हुई अन्न की बहुत बड़ी ढेरी।

धान्य-सार—पुं० [ष० त०] चावल।

धान्या—स्त्री० [सं० धान्य+टाप्] धनिया।

धान्याक—पुं० [सं० धान्य√अक् (गति)+अण्] धनिया।

धान्याचल—पुं० [धान्य-अचल, मध्य० स०] =धान्य-शैल।

धान्याभ्रक—पुं०[सं०] १. वैद्यक में भस्म बनाने के लिए धान की सहायता से शोधा और साफ किया हुआ अभ्रक। २. उक्त प्रकार से अभ्रक शोधने की क्रिया।

धान्याम्ल—पुं० [धान्य-अम्ल, मध्य० स०] काँजी।

धान्याम्लक—पुं० [सं० धान्याम्ल+कन्] धान से बनी हुई काँजी।

धान्यारि—पुं० [धान्य-अरि, ष० त०] धान का शत्रु, चूहा।

धान्यार्थ—पुं० [धान्य-अर्थ, मध्य० स०] अन्न या धान के रूप में होनेवाली संपत्ति।

धान्याशय—पुं० [धान्य-आशय, ष० त०] अन्नशाला। अन्न का भंडार।

धान्यास्थि—स्त्री० [धान्य-अस्थि ष० त०] धान का छिलका। भूसी।

धान्योत्तम—पुं० [धान्य-उत्तम, स० त०] उत्तम प्रकार का धान; शालि।

धान्वंतर्य—पुं० [सं० धन्वन्तरि+ष्यञ्] धन्वंतरि देवता के उद्देश्य से होनेवाले होम आदि।

धान्व—वि० [सं० धन्व+अण्] १. धन्व से संबंध रखनेवाला। २. धन्व देश में होनेवाला। ३. मरुदेश संबंधी।

धान्वन—वि० [सं०]=धान्व।

धाप†—पुं० [हिं० धापना] १. धापने की क्रिया या भाव। २. दूरी की प्रायः एक अनिश्चित नाप। उतनी दूरी जितनी प्रायः एक साँस में दौड़कर पार की जा सके।

पद—धाप भर=थोड़ी दूर पर। पास ही में।

३. लंबा-चौड़ा मैदान।

पुं० [?] पानी की धार। (लश०)
स्त्री० [?] तृप्ति।

धापना—अ० [सं० धावन] १. दूर तक चलना। २. किसी काम के लिए इधर-उधर आना-जाना या दौड़-धूप करना। ३. दौड़ना। ४. परेशान या हैरान होना।
अ० [?] तृप्त होना। अघाना।
स० तुष्ट या तृप्त करना।

धाबरी—स्त्री० [देश०] कबूतरों का दरबा।

धाबा—पुं० [देश०] १. छत के ऊपर का कमरा। अटारी। २. वह स्थान जहाँ दाम देने पर पकी-पकाई कच्ची रसोई बैठकर खाने को मिलती हो। बासा।

धा-भाई—पुं० [हिं० धा=धाप+भाई] दो विभिन्न माताओं के गर्भ से उत्पन्न वे बच्चे जो एक ही धाय या धाई का दूध पीकर पले हों। दूध-भाई।

धाम(मन्)—पुं० [सं०√धा (धारण)+मनिन्] १. रहने का स्थान। २. घर। मकान। ३. कोई बहुत बड़ा तीर्थ, देवस्थान या पुण्य-स्थान। जैसे—चारों धाम।
पद—परम धाम=स्वर्ग।
४. ब्रह्मा। ५. परलोक। ६. स्वर्ग। ७. विष्णु। ८. आत्मा। ९. देह। शरीर १०. जन्म। ११. किरण। उदा०—धाम की है निधि, जाके आगे चंद मंद-दुति...।—सेनापति। १२. ज्योति। उदा०—भाल मध्य निकर दहन दिन धाय के।—सेनापति। १३. तेज। १४. शोभा। १५. प्रभाव। १६. अवस्था। दशा। १७. बागडोर। लगाम। १८. चारदीवारी। प्राचीर। १९. देवताओं का एक वर्ग। (महाभारत) २०. फौज। सेना। २१. समूह। २२. कुटुंब या परिवार का आदमी।
पुं० [देश०] फालसे की जाति का एक प्रकार का छोटा पेड़ जो मध्य और दक्षिण भारत में पाया जाता है।

धामक—पुं० [सं० धानक, पृषो० सिद्धि] माशा (तौल)।

धामक-धूमक†—स्त्री०=धूम-धाम।

धामन—पुं० [देश०] १. फासल से की एक जाति। २. एक प्रकार का बाँस।
स्त्री० रेतीली भूमि में होनेवाली एक प्रकार की घास।
स्त्री०=धामिन।

धामनिका—स्त्री०=धामनी।

धाम-निधि—पुं० [ष० त०] सूर्य।

धामनी—स्त्री० =धमनी।

धामभाज्—पुं० [सं० धामन्√भज् (पाना)+ण्वि] अपना भाग लेने के लिए यज्ञ में सम्मिलित होनेवाले देवता।

धामश्री—स्त्री० [सं०] एक रागिनी जिसके गाने का समय दिन में २५ दंड से २८ दंड तक माना गया है।

धामस-धूमस†—स्त्री०=धूम-धाम।

धामा—पुं० [हिं० धाम] १. ब्राह्मणों को मिलनेवाला भोजन का निमंत्रण। खाने का नेवता। २. बेंत का बुना हुआ एक प्रकार का टोकरा या बड़ी दौरी। ३. अनाज आदि रखने का बड़ा बरतन। (पश्चिम)

धामार्गव—पुं० [सं० धा-मार्ग ष० त०, धामार्ग√वा (गति)+क] १. लाल चिचड़ा। २. घीआ-तोरी।

धामासा†—पुं०=धमासा।

धामिन—स्त्री० [हिं० धाना=दौड़ना] हरे रंग की झलक लिये हुए सफेद रंग का साँप जो बहुत तेज चलने या दौड़ने के लिए प्रसिद्ध है।
पुं०=धामन।

धामिया—पुं० [हिं० धाम] १. एक आधुनिक पंथ या सम्प्रदाय। २. उक्त पंथ का अनुयायी व्यक्ति।

धायँ—स्त्री० [अनु०] १. बंदूक, तोप आदि चलने से होनेवाला भीषण शब्द। २. आग की लपटों से हवा के टकराने से होनेवाला शब्द।
पद—धायँ धायँ=धायँ धायँ शब्द करते हुए। जैसे—चिता धायँ धायँ जल रही थी।

धाय—स्त्री० [सं० धात्री] वह स्त्री जो किसी के बच्चे को दूध पिलाती हो। दूध पिलानेवाली दाई।
पुं० [सं०] पुरोहित।
पुं०=धव (वृक्ष)।

धायक—वि० [सं०√धा+ण्वुल्—अक] धारण करनेवाला।
वि० [हिं० धाना]=धावक (दौड़नेवाला)।

धयना—अ०=धाना (दौड़ना)।

धाया—स्त्री० [सं०] वह वेद मंत्र जो अग्नि प्रज्वलित करते समय पढ़ा जाता है।
स्त्री०=धाय (दाई)।

धार—पुं० [सं० धारा+अण्] १. जोरों से होनेवाली वर्षा। २. वर्षा का इकट्ठा किया हुआ जल। ३. उधार लिया हुआ धन या पदार्थ। ऋण। कर्ज। ४. प्रदेश। प्रांत। ५. विष्णु। ६. आमेला। ७. सीमा। ८. एक प्रकार का पत्थर।
वि० [√धृ (धारण)+अण्] १. धारण करनेवाला। २. सहारा देनेवाला। ३. बहता हुआ या बहनेवाला। ४. गहरा। गंभीर।
स्त्री० [सं० धारा] १. किसी तरल पदार्थ के किसी दशा में निरंतर बहते हुए होने की अवस्था। धारा। जैसे—पानी-कल की धार के नीचे बैठकर नहाना।
मुहा०—धार टूटना=धार का प्रवाह बीच में खंडित होना या रुकना। **(कोई चीज) धार पर मारना**=(किसी चीज पर) धार मारना। **धार बँधना**=तरल पदार्थ का इस प्रकार गिरना या बहना कि उसकी धार बन जाय। **(किसी चीज पर) धार मारना**=इतनी अधिक उपेक्षा सूचित करना कि मानों उस पर पेशाब कर रहे हों। जैसे—ऐसी नौकरी पर हम धार मारते हैं।
२. पानी का सोता। चश्मा। ३. जल-डमरू-मध्य। (लश०) ४. पशु आदि का स्तन दबाने पर उसमें से धारा के रूप में निकलने-वाला दूध।
मुहा०—धार चढ़ाना=पवित्र नदी, देवता आदि को दूध चढ़ाना। **धार देना**=धार चढ़ाना। **(मादा पशु का) धार देना**=दुहने पर दूध देना। **धार निकालना**=मादा पशुओं को दुहकर उसके स्तनों से दूध की धार निकालना।

५. काट करने वाले हथियार का वह तेज या पैना किनारा जिससे कोई चीज काटते हैं। बाढ़। जैसे—चाकू या तलवार की धार।

मुहा०—(किसी हथियार की) धार बाँधना=मंत्र बल से ऐसा प्रभाव उत्पन्न करना कि हथियार की धार काट करने में असमर्थ हो जाय।

६. किनारा। छोर। सिरा। ७. सेना। फौज। ८. बहुत से लोगों के द्वारा कुछ लोगों पर होनेवाला आक्रमण अथवा उक्त प्रकार के आक्रमण के लिए होनेवाला अभियान। धाड़।

मुहा०—धार पड़ना=उक्त प्रकार का आक्रमण होना।

९. बहुत बड़ा दल या समूह। जैसे—धार की धार बंदर आ गये। १०. ओर। तरफ। दिशा। ११. जहाज के फर्श पर तख्तों के बीच का जोड़ या संधि जो सीधी रेखा के रूप में होती है। कस्तूरा। (लश०) १२. पहाड़ों की श्रृंखला। पर्वत-माला। १३. रेखा। लकीर।

पुं० [सं० धारण] १. चोबदार या द्वारपाल। (डिं०) २. लकड़ी का वह टुकड़ा जो कच्चे कूएँ के मुँह पर इसलिए लगाया जाता है कि ऊपर की मिट्टी कूएँ में न गिरने पावे।

प्रत्य० [सं०] १. एक प्रत्यय जो कुछ संस्कृत शब्दों के अंत में लगकर 'धारण करनेवाला' का अर्थ देता है। जैसे—कर्ण-धार। २. एक प्रत्यय जो कुछ हिन्दी धातुओं के अंत में लगकर 'कर्ता', 'धारक' आदि का अर्थ देता है। जैसे—लिखधार=लिखनेवाला।

धारक—वि० [सं०√धृ+ण्वुल्—अक] १. धारण करनेवाला। धारनेवाला। २. रोकनेवाला। ३. उधार लेनेवाला। ४. (व्यक्ति) जो कोई चीज कहीं लेकर जाय। वाहक। जैसे—इस चेक या हुंडी के धारक को रुपए दे दें।

पुं० कलश। घड़ा।

धारका—स्त्री० [सं० धारक+टाप्] १. स्त्री की मूत्रेंद्रिय। २. भग। योनि।

धारण—पुं० [सं०√धृ+णिच्+ल्युट्—अन] १. कोई चीज ठीक तरह उठाना, पकड़ना या सँभालना। जैसे—शस्त्र धारण करना। २. आभूषण, वस्त्र आदि के संबंध में अंगों पर रखना, लपेटना या चढ़ाना। पहनना। ३. स्मृति में रखना। याद रखना। ४. कोई बात, विचार या संकल्प मन में स्थिर करना। जैसे—व्रत धारण करना। ५. अंगीकार करना। ६. खाद्य के रूप में सेवन करना। खाना। ७. उधार या ऋण लेना। ८. शिव। ९. कश्यप के एक पुत्र का नाम।

धारणक—पुं० [सं०] ऋणी। कर्जदार।

धारणा—स्त्री० [सं०√धृ+णिच्+युच्—अन, टाप्] १. धारण करने की अवस्था, क्रिया, गुण या भाव। २. वह आंतरिक शक्ति जिसके द्वारा जानी, देखी या सुनी हुई बात का ज्ञान या ध्यान मन में स्थायी रूप से रहता है। ३. किसी कार्य, विषय या प्रसंग के संबंध में मन में बना हुआ कोई व्यक्तिगत विचार या विश्वास। जैसे—हमारी तो अब तक यही धारणा है कि रुपए वही चुरा ले गया है। ४. मर्यादा। ५. याद। स्मृति। ६. योग के आठ अंगों में से एक जिसमें प्राणायाम करते हुए मन को सब ओर से हटाकर निर्विकार, शांत और स्थिर किया जाता है। ७. मन की दृढ़ता और स्थिरता। ८. बृहत्संहिता के अनुसार ज्येष्ठ मास की शुक्ला अष्टमी से एकादशी तक पड़नेवाला एक योग, जिसमें वायु की गति देखकर यह निश्चित किया जाता है कि इस वर्ष अच्छी वर्षा होगी या नहीं।

धारणावान् (वत्)—वि० [सं० धारण+मतुप्] [स्त्री० धारणावती] जिसकी धारणा-शक्ति बहुत प्रबल हो। मेधावी।

धारणिक—पुं० [सं० धारण+ठक्—इक] १. ऋणी। कर्जदार। २. धन जमा कर के रखने की जगह। खजाना। ३. वह व्यक्ति जिसके पास कोई चीज अमानत या धरोहर के रूप में जमा की जाय। महाजन।

धारणी—स्त्री० [सं०√धृ+णिच्+ल्युट्—अन, ङीष्] १. नाड़िका। नाड़ी। २. पंक्ति। श्रेणी। ३. सीधी रेखा या लकीर। ४. पृथ्वी जो सबको धारण किये रहती है। ५. बौद्ध-तंत्र का एक अंग।

धारणीमति—स्त्री० [सं०] योग में एक तरह की समाधि।

धारणीय—वि० [सं०√धृ+णिच्+अनीयर] [स्त्री० धारणीया] जो धारण किये जाने के योग्य हो। जिसे धारण करना आवश्यक या उचित हो।

पुं० १. धरणीकंद। २. तांत्रिकों का एक प्रकार का मंत्र।

धार-धूरा—पुं० [हिं० धार+धूरा (धूल)] नदी के उतरने पर निकलनेवाली जमीन। गंगबरार।

धारना—स० [सं० धारण] १. अपने ऊपर रखना या लेना। धारण करना। २. ग्रहण करना। लेना। उदा०—दंड छोड़ कोदंड-कमंडलु, धार चला था। —मैथिली शरण। ३. ऋण या कर्ज लेना। ४. मन में कुछ निश्चय करना। धारणा बनाना।

स० =ढारना या ढालना।

†स्त्री०=धारणा।

†स०[हिं० धरना] स्थापित करना। रखना। उदा०—जहँ जहँ नाथ पाउँ तुम धारा।—तुलसी।

धारयिता (तृ)—वि० [सं०√धृ+णिच्+तृच्] [स्त्री० धारयित्री] १. धारण करनेवाला। २. ऋण लेनेवाला।

धारयित्री—वि० स्त्री० [सं० धारयितृ+ङीप्] 'धारयिता' का स्त्री०।

स्त्री० पृथ्वी।

धारयिष्णु—वि० [सं०√धृणिच्+इष्णुच्] धारण करने में समर्थ। जो धारण कर सकता हो।

धारस†—पुं०=ढारस।

धारांकुर—पुं० [सं० धारा-अंकुर ष० त०] १. सरल का गोंद। २. आकाश से गिरनेवाला ओला। घनोपल।

धारांग—पुं० [सं० धारा-अंग ब० स०] १. एक प्राचीन तीर्थ का नाम। २. खड्ग।

धारा—स्त्री० [सं०√धृ+णिच्+अङ्—टाप्] १. पानी या किसी तरल पदार्थ की तेज और लगातार बहनेवाली धार। तरल पदार्थ का एक रेखा में निरंतर चलता रहनेवाला क्रम। जैसे—नदी की धारा, रक्त की धारा। २. पानी या तरल पदार्थ का रेखा के रूप में ऊपर से निरंतर गिरता रहनेवाला क्रम। जैसे—बादलों में धारा के रूप में जल बरस रहा था। ३. लाक्षणिक रूप में, किसी चीज या बात का निरंतर चलनेवाला क्रम। ४. किसी का निरंतर प्रवाह या स्रोत। जैसे—विद्युत् की धारा। ५. पानी का झरना। सोता। चश्मा। ६. घड़े आदि में पानी गिरने के लिए बनाया हुआ छेद। ७. किसी चीज

का किनारा या छोर। ८. हथियार की धार। बाढ़। ९. शब्दों की पंक्ति। वाक्यावली। १०. बहुत जोरों से होनेवाली वर्षा। ११. झुंड। दल। समूह। १२. सेना का अगला भाग। १३. औलाद। संतान। १४. उत्कर्ष। उन्नति। तरक्की। १५. रथ का पहिया। १६. कीर्ति। यश। १७. मध्य भारत की एक प्राचीन नगरी जो मालवा की राजधानी थी। १८. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ। १९. रेखा। लकीर। २०. पहाड़ की चोटी। २१. घोड़े की गति या चाल। २२. आज-कल किसी नियम, नियमावली, विधान आदि का वह स्वतंत्र अंश जिसमें किसी एक विषय से संबंध रखनेवाली सब बातों का एक अनुच्छेद में उल्लेख होता है और जिससे पहले क्रमात् संख्या-सूचक अंक लगे होते हैं। दफा। (सेक्शन) जैसे—भारतीय संविधान की १४४ वीं धारा।

धारा-कदंब—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार का कदम का पेड़।

धारा-गृह—पुं० [मध्य० स०] १. प्रासाद या महल का वह कमरा जिसमें राज-परिवार के लोगों के नहाने के लिए फुहारे आदि लगे रहते थे। २. स्नानागार।

धाराग्र—पुं० [सं० धार-अग्र ष० त०] तीर या बाण का आगेवाला चौड़ा सिरा।

धाराट—पुं० [सं० धारा√अट् (गति)+अच्] १. चातक पक्षी। २. बादल। मेघ। ३. घोड़ा। ४. मस्त हाथी।

धारा-धर—पुं० [ष० त०] १. धाराओं को धारण करनेवाला, बादल। २. तलवार।

धारा-पूप—पुं० [धारा-अपूप मध्य० स०] दूध में सने हुए मैदे का बना हुआ पूआ।

धारा-प्रवाह—पुं० [ष० त०] धारा का बहाव। धारा का वेग। क्रि० वि० नदी आदि की धारा के प्रवाह के रूप में या उसकी तरह। निरंतर तथा अटूट क्रम से। जैसे—वे संस्कृत में धारा-प्रवाह भाषण करते थे।

धारा-फल—पुं० [ब० स०] मदनवृक्ष। मैनफल वृक्ष।

धारा-यंत्र—पुं० [ष० त०] वह यंत्र जिसमें धारा के रूप में जल निकले। जैसे—पिचकारी, फुहारा।

धाराल—वि० [सं० धारा+लच्] (अस्त्र) जिसकी धार चोखी या तेज हो।

धाराली—स्त्री० [सं० धाराल] १. तलवार। २. कटार। (डिं०)

धारावनि—पुं० [सं० धारा-अवनिः ष० त०] वायु। हवा।

धारावर—पुं० [सं० धारा √वृ (आच्छादन) + अच्] मेघ। बादल।

धारा-वर्ष—पुं० [तृ० त०] धारा के रूप में होनेवाली बहुत तेज वर्षा।

धारावाहिक—वि० [सं० धारावाहिन्+कन्] १. जिसका क्रम धारा की तरह निरंतर चलता रहे। २. (पत्र, पत्रिकाओं आदि में प्रकाशित होने वाला लेख) जो क्रमशः खंडों के रूप में बराबर कई अंशों में प्रकाशित होता रहे।

धारावाही (हिन्)—वि० [सं० धारा√वह (वहना)+णिनि]=धारावाहिक।

धारा-विष—पुं० [ब० स०] खड्ग। तलवार।

धारा-संपात—पुं० [ब० स०] बहुत तेज और अधिक वृष्टि। जोरों की बारिश।

धारा-सभा—स्त्री० [ष० त० ?] आधुनिक लोक-तंत्री शासन में, प्रजा के प्रतिनिधियों की वह सभा जो विधान आदि बनाती है। विधान-सभा। विधायिका।

धारासार—वि० [धारा-आसार ष० त०] धारा के रूप में लगातार होता रहनेवाला। जैसे—धारासार वर्षा।

धारा-स्नुही—स्त्री० [सं० मध्य० स०] तिधारा थूहर।

धारि—स्त्री० [सं० धारा] १. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में एक रगण और एक लघु होता है। २. झुंड। समूह। ३. दे० 'धार'।

धारिणी—स्त्री० [सं०√धृ (धारण)+णिनि—ङीप्] १. पृथ्वी। २. सेमल का पेड़। ३. एक प्रकार की पुरानी नाव जो १६० हाथ लंबी, ३० हाथ चौड़ी और १६ हाथ ऊँची होती थी। ४. चौदह देवताओं की स्त्रियाँ जिनके नाम ये हैं—शची, वनस्पति, गार्गी, धूम्रोर्णा, रुचिराकृति, सिनीवाला, कुहू, राका, अनुमति, आयाति, प्रज्ञा, सेला और बेला। वि० सं० 'धारी' (धारण करनेवाला) का स्त्री०।

धारित—भू० कृ० [सं०√धृ+णिच्+क्त] १. धारण किया हुआ। २. अपने ऊपर लिया या सँभाला हुआ।

धारिता—स्त्री० [सं० धारिन्+तल्—टाप्] १. धारण करने का गुण योग्यता या सामर्थ्य। २. वस्तु, व्यक्ति आदि की उतनी पात्रता जितने में वह कुछ धारण कर सके। समाई। (कपैसिटी) जैसे—इस हंडे में एक मन पानी की धारिता है।

धारी (रिन्)—वि० [सं०√धृ+णिनि] १. धारण करनेवाला। जैसे—शस्त्रधारी। २. पहननेवाला। जैसे—खद्दर धारी। ३. जिसकी धारणा-शक्ति प्रबल हो। ४. ऋण लेनेवाला। ५. ग्रंथों आदि का तात्पर्य समझानेवाला।

†वि० [हिं० धार] १. किनारदार। २. तेज धारवाला।

स्त्री० [सं० धारा] १. एक ही सीध में दूर तक गई हुई रेखा या लकीर। २. किसी एक रंग के तल पर खींची हुई किसी दूसरे रंग की सीधी रेखा। जैसे—कपड़े या कागज पर की धारियाँ।

पद—धारीदार।

३. धातुओं, वनस्पतियों आदि में दिखाई देनेवाली (नसों की तरह की) लंबी रेखा। (वीन) ४. झुंड। दल। ५. फौज। सेना। ६. जलाशय के किनारे बना हुआ पुश्ता या बाँध।

पुं० १. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में पहले तीन जगण और तब एक यगण होता है। २. पीलू का पेड़। ३. दे० 'धारि'।

धारीदार—वि० [हिं० धारी+फा० दार] १. जिसमें कोई रेखाकार चिह्न बना हो। जैसे—धारीदार कागज। २. (कपड़ा) जिसकी जमीन एक रंग की और धारियाँ दूसरे रंग की हों।

धारूजल—स्त्री० [सं० धारा–जल] जल की तरह उज्ज्वल धारवाली तलवार। उदा०—धड़ि धड़ि धबकि धार धारू जल। —प्रिथीराज।

धारोष्ण—वि० [सं० धारा-उष्ण स० त०] (दूध) जो तुरंत का दूहा हुआ और इसी लिए कुछ गरम भी हो।

धार्त्तराष्ट्र—वि० [सं० धृतराष्ट्र+अण्] [स्त्री० धार्त्तराष्ट्री] १.

धृतराष्ट्र-संबंधी । धृतराष्ट्र का । २. धृतराष्ट्र के वंश का । पुं० १. एक नाग का नाम । २. एक प्रकार का हंस जिसकी चोंच और पैर काले होते हैं।

धार्त्तराष्ट्र-पदी—स्त्री० [सं० ब० स० ङीष्] हंसपदी लता। लाल रंग का लज्जालु।

धार्म—वि० [सं० धर्म+अण्] धर्म-संबंधी। धर्म का।

धार्मपत—वि० [सं० धर्मपति+अण्] धर्मपति-संबंधी।

धार्मिक—वि० [सं० धर्म+ठक्—इक] [भाव० धार्मिकता] १. (व्यक्ति) जो धर्म का सदा ध्यान रखता तथा पालन करता हो। धर्मशील। पुण्यात्मा। २. (कथन या विषय) जो धर्म से संबंध रखता हो। जैसे—धार्मिक ग्रंथ, धार्मिक भाषण। ३. (कार्य) जो धर्मशास्त्रों के अनुसार उचित और कर्तव्य हो। जैसे—धार्मिक कृत्य।

धार्मिकता—स्त्री० [सं० धार्मिक+तल्—टाप्] धार्मिक होने की अवस्था, गुण या भाव।

धार्मिक्य—पुं० [सं० धार्मिक+यक्] =धार्मिकता।

धार्मिण—पुं० [सं० धर्मिन्+अण्] धार्मिक व्यक्तियों की मंडली या समूह।

धार्मिणेय—पुं० [सं० धर्मिणी+ढक्—एय] [स्त्री० धार्मिणेयी] धर्मवती स्त्री का पुत्र।

धार्य—वि० [सं०√धृ+ण्यत्] [भाव० धार्यत्व] १. जो धारण किये जाने के योग्य हो। जिसे धारण कर सके। धारणीय। २. जिसे धारण करना उचित या आवश्यक हो। ३. जिसे धारणा-शक्ति ग्रहण कर सके।

पुं० पहनने का कपड़ा। पोशाक।

धार्यत्व—पुं० [सं० धार्य+त्व] १. धार्य होने का भाव। ऋण, देन आदि जिसका चुकाना आवश्यक हो। (लायबिलिटी)

धार्ष्ट, धार्ष्ट्य—पुं० [सं० धृष्ट+अण्, धृष्ट+ष्यञ्] धृष्टता।

धाव—पुं० [सं० धव] एक प्रकार का लंबा और बहुत सुंदर पेड़ जिसे गोलरा, धावरा और बकली भी कहते हैं।

धावक—वि० [सं०√धाव् (दौड़ना)+ण्वुल्—अक] दौड़कर चलनेवाला। पुं० १. हरकारा। २. कपड़े धोनेवाला। धोबी। ३. संस्कृत के एक प्राचीन आचार्य और कवि।

धावड़ा†—पुं० [हिं० धव] धव या धौ का पेड़।

धावण—पुं० [सं० धावन] दूत। हरकारा। (डिं०)

धावन—पुं० [सं०√धाव्+ल्युट्—अन] १. बहुत तेजी से या दौड़कर जाना। २. दूत। हरकारा। जैसे—धारा धर धावन। ३. कपड़े धोने और साफ करने का काम। कपड़ों की धुलाई। ४. धोबी। ५. वह चीज जिसकी सहायता से कोई चीज धोकर साफ की जाय।

धावना—अ० [सं० धावन=गमन] वेग से चलना। दौड़ना। धाना।

धावनि—स्त्री० [सं०√धाव्+अनि] पिठवन। पृश्निपर्णी लता। स्त्री० [हिं० धावना=दौड़ना] १. धावने अर्थात् दौड़ने की क्रिया या भाव। जल्दी-जल्दी चलना या दौड़ना। २. चढ़ाई। धावा। †स्त्री हिं० धावन (हरकारा) का स्त्री०।

धावनिका—स्त्री० [सं० धावनि+कन्—टाप्] १. कंटकारिका। कटेरी। २. पृश्निपर्णी। पिठवन। ३. कँटीदार मकोय।

धावनी—स्त्री० [सं० धावनि+ङीष्] १. पृश्निपर्णी लता। पिठवन। २. कंटकारी। ३. धौ का फूल।

धावमान—वि० [सं०√धाव्+लट्—शानच्] १. दौड़नेवाला। २. दौड़ता हुआ। ३. चढ़ाई करनेवाला।

धावरा—वि० [स्त्री० धावरी]=धौरा (धवल)।

पुं०=धव।

धावरी†—स्त्री०=धौरी (सफेद गाय)।

धावल्य—पुं० [सं० धवल+ष्यञ्] धवलता।

धावा—पुं० [हिं० धाना=तेजी से चलना] १. किसी काम के लिए बहुत तेजी से चलते हुए कहीं दूर जाने की क्रिया या भाव। द्रुत गमन।

मुहा०—धावा मारना=बहुत तेजी से चलते हुए कहीं दूर जाना अथवा दूर से आना। जैसे—हम तो चार कोस से धावा मार कर यहाँ आये, और आपने ऐसा कोरा जवाब दिया।

२. शत्रु पर आक्रमण करने के लिए दल-बल सहित उसकी ओर बढ़ने की क्रिया या भाव। आक्रमण या चढ़ाई के लिए जल्दी-जल्दी चलना या जाना। ३. हमला।

मुहा०—(किसी पर) धावा बोलना=अपने साथियों या सैनिकों को यह आज्ञा देना कि शत्रु पर चढ़ चलो और उसका नाश करो।

धावित—वि० [सं०√धाव्+क्त] १. बहुत तेज दौड़ता हुआ। २. धोया और साफ किया हुआ।

धाह—स्त्री० [अनु०] १. जोर से चिल्लाकर रोना। धाड़। २. जोर से चिल्लाना। चीत्कार करना।

मुहा०—धाह मेलना=जोर से आवाज करना। चिल्लाना। उदा०—धाह मेलि कै राजा रोवा।—जायसी।

३. आवाज। शब्द।

धाही†—स्त्री०=धाय (दाई)।

धिंग†—स्त्री०=धींगा-धींगी।

धिंगरा†—पुं०=धींगड़ा।

धिंगा—पुं० [सं० दृढांग] १. उपद्रवी। शरारती। २. दुष्ट। पाजी। बदमाश। ३. निर्लज्ज। बेशरम।

धिंगाई—स्त्री० [हिं० धिंगा] १. धींगापन। धींगा-मस्ती। २. उपद्रव। शरारत। ३. पाजीपन। बदमाशी। ४. निर्लज्जता। बेशरमी।

धिंगा-धिंगी—स्त्री०=धींगा-धींगी।

धिंगाना†—अ० [हिं० धिंगा] धींगा-धींगी करना।

स० किसी को धींगा-धींगी करने में प्रवृत्त करना।

धिंगी—स्त्री० [सं० दृढांगी] १. बदमाश स्त्री। दुश्चरित्रा। २. निर्लज्ज स्त्री। ३. दे० 'धिंगाई'।

धि—प्रत्य० [सं०√धा (धारण)+कि (उत्तर पद होने पर] जो समस्त पदों के अंत में लगकर निधि या भंडार का अर्थ देता है। जैसे—जलधि, वारिधि आदि।

धिआ—स्त्री० [सं० दुहिता, प्रा० धीआ] १. पुत्री। बेटी। २. कन्या। लड़की।

धिआन†—पुं०=ध्यान।

धिआना—स०=ध्याना (ध्यान करना)।

धिक्—अव्य० [सं०√धक्क् (धरण या नाश)+डिकन्] घृणा और

तिरस्कारपूर्वक भर्त्सना करने का शब्द। लानत है। जैसे—धिक् तुमने ऐसा दुष्कर्म किया।

धिक—अव्य०=धिक्।

धिकना—अ० [सं० दग्ध या हिं० दहकना] १. आग का अच्छी तरह जलना या दहकना। २. आग की गरमी से किसी चीज का तपकर लाल होना।

धिकलना—स०=धकेलना।

धिकाना—स० [हिं० धिकना का स०] १. आग को तेजी से जलाने की क्रिया करना। दहकाना। २. आग में तपाकर खूब लाल करना।

धिक्कार—स्त्री० [सं० धिक्-कार ष० त०] बहुत ही बुरा काम करनेवाले अथवा अपने कर्तव्य का निर्वाह न करनेवाले व्यक्ति का अपमान-सूचक शब्दों में की जानेवाली भर्त्सना। लानत।

विशेष—संस्कृत में धिक्कार पुं० है।

अव्य० दे० 'धिक्'।

धिक्कारना—स० [सं० धिक्कार] अनुचित या दूषित काम करनेवाले की कठोर तथा अपमान-सूचक शब्दों में निन्दा करना। जैसे—इस देश-द्रोही को देश एक-स्वर में धिक्कार रहा है।

धिक्कृत—भू० कृ० [सं० धिक्√कृ (करना)+क्त] जो धिक्कारा गया हो। जिसे 'धिक्' कहा गया हो।

धिक्-पारुष्य—पुं० [सं० व्यस्त पद] धिक्कार। भर्त्सना।

धिग—अव्य०='धिक्'।

पुं०=धिक्कार।

धिग्दंड—पुं० [सं०धिक्-दंड मध्य० स०] धिक्कारपूर्वक भर्त्सना के रूप में (किसी को) दिया जानेवाला दंड। जैसे—पंचों ने उसे धिग्दंड देकर छोड़ दिया।

धिग्वण—पुं० [सं०] ब्राह्मण पिता और अयोगवी माता से उत्पन्न एक प्राचीन संकर जाति।

धिठाई†—स्त्री०=ढिठाई।

धिमचा—पुं० [देश०] एक तरह का इमली का पेड़।

धिय—स्त्री० [सं० दुहिता] १. पुत्री। बेटी। २. कन्या। लड़की।

धियांपति—पुं० [सं०] बृहस्पति।

धिया—स्त्री०=धिय।

†स्त्री०=धिक्कार। (क्व०)

धियान*—पुं०=ध्यान।

धियाना—अ०=ध्याना (ध्यान करना)।

धियानी*—वि०=ध्यानी।

धियारी—स्त्री०=धी (पुत्री)।

धिरकार—स्त्री० =धिक्कार।

धिरयना* —स०=धिरवना।

धिरवना—स०=धिराना।

धिराना—स० [सं० धर्षण] १. भयभीत करना। डराना। २. धमकाना।

स० [सं० धैर्य्य] १. धीरज दिलाना। २. शांत करना।

अ० १. धीरज रखना। २. शांत होना।

अ०[सं० धीर] १. मंद पड़ना। धीमा होना। उदा०—यों कहि धिरई चढ़ाई भौंह....।—रत्नाकर। २. ठहरना। ३. शांत होना।

धिया-वसु—पुं० [सं०अलुक् समास] वैदिक युग के एक देवता जो 'धी' अर्थात् बुद्धि के अधिष्ठाता माने जाते थे, और 'सरस्वती' के वर्ग के थे।

धिषण—पुं० [सं०√धृष् (दवाना)+क्यु—अन, धिषादेश] १. बृहस्पति। २. ब्रह्मा। ३. विष्णु। ४. गुरु। शिक्षक।

धिषणा—स्त्री० [सं०धिषण+टाप्] १. बुद्धि। अक्ल। २. प्रशंसा। स्तुति। ३. वाक्शक्ति। वाणी। ४. पृथ्वी। ५. जगह। स्थान।

धिषणाधिप—पुं० [सं० धिषणा-अधिप ष० त०] बृहस्पति।

धिष्ट्य—पुं० [सं०=धिष्ण्य नि० ण को ट] १. स्थान। जगह। २. घर। मकान। ३. नक्षत्र। ४. अग्नि। आग। ५. बल। शक्ति। ६. शुक्राचार्य का एक नाम।

धिष्ण्य—पुं० [सं०√धृष्+ण्य नि० ऋ को इ] १. जगह। स्थान। २. घर। मकान। ३. अग्नि। आग। ४. नक्षत्र। ५. शक्ति। ६. शुक्र ग्रह। ७. शुक्राचार्य। ८. तारा। ९. एक प्रकार की उल्का।

धींग—वि० [सं० दृढांग] १. हट्टा-कट्टा। हृष्ट-पुष्ट। २. ताकतवर। बलवान। ३. दृढ़। पक्का। मजबूत। ४. दुष्ट। पाजी। ५. खराब। बुरा। ६. कुमार्गी। दुराचारी।

धींगड़—पुं०, वि०=धींगड़ा।

धींगड़ा—वि० [सं० डिंगर] [स्त्री० धींगड़ी] १. मोटा-ताजा। हट्टा-कट्टा। २. दुष्ट। पाजी। शरारती। ३. दोगला। वर्ण-संकर।

पुं० १. गुंडा। २. स्त्री का उपपति। जार। यार।

धींग-धुकड़ी—स्त्री० [हिं० धींग] १. धींगा-मस्ती। २. दुष्टता। पाजीपन। ३. शरारत।

धींगरा—पुं०=धींगड़ा।

धींगा—वि०, पुं०=धींगड़ा।

धींगा-धींगी—स्त्री० [हिं० धींग] १. ऐसी उठा-पटक या लड़ाई-झगड़ा जो उपद्रवी या दुष्ट हट्टे-कट्टे लोगों में होता है। २. उपद्रव। ऊधम। ३. दो पक्षों में होनेवाली ऐसी छीना-झपटी या लड़ाई-झगड़ा जिसमें जबरदस्ती या बल-प्रयोग होता हो। ४. अपना काम निकालने के लिए अनुचित रूप में की जानेवाली ऐसी जबरदस्ती जिसमें अपनी चालाकी या शक्ति का भी उपयोग किया जाता हो। जैसे—वे धींगा-धींगी करके हमारे हिस्से की चीजें भी उठा ले गये।

धींगा-मस्ती—स्त्री०=धींगा-मुश्ती।

धींगा-मुश्ती—स्त्री० [हिं० धींगा+फा० मुश्त=मुट्ठी] ऐसा उपद्रव या ऊधम जिसके साथ कुछ घूँसे-थप्पड़ भी चलें या मार-पीट भी हो। हाथा-बाहीं। उदा०—बस, चलो बैठो परे, वर्ना बुरी हो जायगी। धींगा-मुश्ती में मेरी अँगिया की चोली चल गई।—नजीम।

धींद्रिय—स्त्री०[सं० धी-इंद्रिय मध्य०स०] १. वह इंद्रिय जिससे चीजों और बातों का ज्ञान प्राप्त होता है। ज्ञानेंद्रिय। २. अक्ल। बुद्धि।

धींवर—पुं०=धीवर।

धी—स्त्री०[सं० √ध्यै (चिन्तन)+क्विप् सम्प्रसारण] १. बुद्धि। अकल। समझ। २. मन। ३. कर्म। ४. कल्पना। ५. विचार। ६. भक्ति।

७. यज्ञ। ८. न्याय-बुद्धि। ९. जन्म कुंडली में लग्न से पाँचवाँ स्थान।
†स्त्री०[सं० दुहिता, प्रा० धीया]पुत्री। बेटी।

धीआ†—स्त्री०=धी (पुत्री)।

धीग†—पुं०, वि०=धींगड़ा।

धीजना—स०[सं० धृ, धार्य, धैर्य]१. ग्रहण या स्वीकार करना। अंगीकार करना। २. प्रतीति या विश्वास करना। उदा०—उज्ज्वल देखिन धीजिए वग ज्यों माँडे ध्यान।—कबीर।
अ०१. धैर्य से युक्त होना। धीर बनना। २. बहुत प्रसन्न होना। ३. शांत या स्थिर होना। उदा०—चित भूल तो भूलत नाहिं सुजान जु चंचल ज्यौं कछु धीजत है।—घनानंद।

धीठ†—वि०=ढीठ।

धीत—भू० कृ०[सं०√धे(पीना)+क्त] [भाव० धीति]१. जो पिया गया हो। २. जिसका अनादर या तिरस्कार हुआ हो। ३. जिसका आराधन किया गया हो। ४. जो संतुष्ट किया गया हो।

धीति—स्त्री०[सं०√धे+क्तिन्]१. पान करने की क्रिया। पीना। २ पिपासा। प्यास। ३. विचार। ४. आराधन। ५. संतुष्ट करना। तोषण।

धीदा—स्त्री०[सं०] १. बुद्धि। २. कुँआरी लड़की। ३. पुत्री। बेटी। ४. कुमारी कन्या।

धीन—पुं०[डिं०] लोहा।

धी-पति—पुं०[सं० ष०त०] बृहस्पति।

धीम†—वि०=धीमा।

धीमर—पुं०=धीवर।

धीमा—वि०[सं० मध्यम से वर्ण व०] [स्त्री० धीमी]१. जिसकी गति में तेजी न हो। 'तेज' का विपर्याय। २. जो अपनी साधारण चाल या वेग की अपेक्षा धीरे-धीरे या कम वेग से चल रहा हो। ३. जिसमें तीव्रता, तेजी या प्रचंडता बहुत कम हो। जिसमें प्रखरता न हो। 'तेज' का विपर्याय। जैसे—आग (या बत्ती) धीमी कर दो। ४. जो अप्रतिभ या निस्तेज हो गया हो। जैसे—अब वे पहले से बहुत धीमे पड़ गये हैं।
क्रि० प्र०—पड़ना।

धीमा तिताला—पुं०[हिं० धीमा+तिताला] संगीत में १६ मात्राओं का एक ताल जिसमें तीन आघात और एक खाली होता है।

धीमान (मत्)—पुं०[सं० धी+मतुप्] [स्त्री० धीमती]१. बृहस्पति। २. बुद्धिमान्।

धीमे†—अव्य० [हिं० धीमा] १. धीरे-धीरे हलकी गति या वेग से। जैसे—गाड़ी धीमे चल रही है। २. मंद स्वर में। जैसे—धीमे बोलो।

धीय—स्त्री०[सं० दुहिता] पुत्री। बेटी।
†पुं० जामाता। दामाद। (डिं०)

धीयड़ी—स्त्री०=धी (बेटी)। उदा०—थारी धीयड़ी ने परदेस दीजो।—राज० लोक-गीत।

धीया—स्त्री०[सं० दुहिता, प्रा० धीदा, धीया] पुत्री। बेटी।

धीर—वि०[सं० धी√रा (देना)+क]१. (व्यक्ति) जो शांत स्वभाव-वाला हो तथा जो विपरीत परिस्थितियों में भी जल्दी उद्विग्न या विचलित न होता हो। २. ठहरा हुआ। ३. बलवान्। शक्तिशाली। ४. नम्र। विनीत। ५. गंभीर। ६. मनोहर। सुन्दर। ७. धीमा।
पुं०१. केसर। २. मंत्र। ३. समुद्र। ४. पंडित। विद्वान्। ५. ऋषभ नाम की औषधि। ६. राजा बलि का एक नाम। ७. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तीन तगण और दो गुरु होते हैं।
पुं० [सं० धैर्य] १. धैर्य। धीरज २. मन की शांति या स्थिरता। ३. संतोष। सब्र।
क्रि० प्र०—धरना।

धीरक*—पुं०=धीरज (धैर्य)।

धीर-चेता (तस्)—पुं०[ब० स०] दृढ़ तथा स्थिर चित्तवाला।

धीरज†—पुं०=धैर्य।

धीरजमान—पुं०=धैर्यवान्।

धीरट—पुं०[?] हंस पक्षी। (डिं०)

धीरता—स्त्री०[सं० धीर+तल्—टाप्]१. धीर होने की अवस्था, गुण या भाव। धैर्य। २. स्थिरता। ३. संतोष। सब्र। ४. चातुर्य। चालाकी। ५. पांडित्य। विद्वत्ता।

धीरत्व—पुं०[सं० धीर+त्व]=धीरता।

धीर-पत्री—स्त्री०[ब० स०, ङीष्] जमीकंद।

धीर-प्रशांत—पुं०=धीर-शांत।

धीर-ललित—पुं०[कर्म० स०]साहित्य में, वह नायक जो हँसमुख और कोमल स्वभाववाला हो, विभिन्न कलाओं से प्रेम करता हो और सुखी तथा संपन्न हो। जैसे—स्वप्नवासवदत्ता का नायक उदयन।

धीर-शांत—पुं०[कर्म० स०] साहित्य में, वह नायक जिसमें सभी सामान्य गुण हों अर्थात् जो दयालु, वीर, शांत और सुशील हो। जैसे—'मालती-माधव' का नायक माधव।

धीरा—स्त्री०[सं० धीर+टाप्] १. साहित्य में, वह नायिका जो अपने प्रेमी के शरीर पर पर-स्त्री-रमण के चिह्न देखकर शांत भाव से व्यंग्यपूर्ण शब्दों से कोप प्रकट करे। २. गिलोय। गुडुच। ३. काकोली। ४. मालकंगनी।
†वि०=धीमा।
†पुं०=धीरज।

धीराधीरा—स्त्री० [धीरा-अधीरा कर्म० स०] साहित्य में, वह नायिका जो अपने नायक के शरीर पर परस्त्री रमण के चिह्न देखकर कुछ गुप्त और कुछ प्रकट रूप से रोष प्रकट करती हो।

धीरावी—स्त्री० [सं० धीर√अव् (प्रसन्न करना)+अण्—ङीप्] शीशम का पेड़।

धीरी—स्त्री०[?]आँख की पुतली।

धीरे—क्रि० वि० [हिं० धीर] १. धीमी या मंद गति से। आहिस्ता। २. नीचे या हलके स्वर में। जैसे—बालिका धीरे बोलती है। ३. इस ढंग या प्रकार से कि जल्दी किसी को पता न चले। चुपके से। जैसे—वह धीरे से कपड़ा उठाकर चल दिया।

धीरे-धीरे—अव्य० [हिं०]१. हलकी चाल से। २. मंद स्वर में। ३. समीचीन गति से। जैसे—यह काम धीरे-धीरे करना चाहिए।

धीरोदात्त—पुं०[धीर-उदात्त कर्म० स०] १.साहित्य में, वह नायक जो अपनी

भावनाओं पर पूर्ण नियंत्रण रखता हो तथा जो क्षमावान्, गंभीर, दृढ़-प्रतिज्ञ और विनयी हो। जैसे—उत्तर रामचरित का नायक राम। २. वीर रस प्रधान नाटक का मुख्य नायक।

धीरोद्धत—पुं०[सं० धीर-उद्धत कर्म० स०] साहित्य में, वह नायक जो बहुत असहिष्णु, उग्र स्वभाव का तथा सदा अपने गुणों का बखान करता रहता हो।

धीरोष्णी (ष्णिन्)—पुं०[सं०] एक विश्वदेव।

धीर्य—पुं० [सं० धीर+यत्] कातर।

†पुं०=धैर्य।

धीलटि, धीलटी—स्त्री०[सं० धी√लट् (बच्चा बनना)+इन्] पुत्री। बेटी।

धीवर—पुं०[सं०√धा (धारण)+ष्वरच्] [स्त्री० धीवरी] १. एक जाति जो प्रायः नाव खेने, मछली पकड़ने और मछली बेचने का काम करती है। मछुआ। मल्लाह। केवट। २. पुराणानुसार एक प्राचीन देश। ३. उक्त देश का निवासी। ४. काले रंग का आदमी। ५. नौकर। सेवक।

धीवरी—स्त्री०[सं० धीवर+ङीष्] १. धीवर जाति की स्त्री। मल्लाहिन। २. मछली फँसाने की कटिया या बंसी।

धीहड़ी†—स्त्री०=धी (बेटी)। उदा०—माई कहै सुन धीहड़ी।—मीराँ।

धुंआँ—पुं०=धूआँ।

धुंआँस—स्त्री०=धुवाँस।

धुंआँसा†—पुं०[हिं० धूआँ]बहुत अधिक धूआँ लगने के कारण जमनेवाली कालिख।

वि० धूएँ की गंध या स्वाद से युक्त।

धुंआना—अ०[हिं० धूआँ+ना (प्रत्य०)] अधिक या निरंतर धूआँ लगने के कारण किसी चीज का रंग काला पड़ जाना और उसमें से धूएँ की गंध या स्वाद आना। जैसे—खीर या दूध का धुंआना।

स० अधिक धूआँ लगाकर किसी चीज का धूएँ की गंध या स्वाद से युक्त करना।

धुंआयँध—वि०[हिं० धुआँ+गंध] जिसमें धूएँ की महक आ गई हो। धूएँ की तरह महकनेवाला। जैसे—धुंआयँध डकार आना।

स्त्री०१. धूएँ के कारण उत्पन्न होनेवाली गंध। २. अन्न न पचने की दशा में, पेट के अंदर धूआँ-सा उठने की अनुभूति।

धुंआरा†—वि०[हिं० धूआँ] धूएँ के रंग का काला। धूमिल।

पुं० छत में धूआँ निकलने के लिए बना हुआ छेद या नल। चिमनी।

वि०=धुंधला।

धुंई†—स्त्री०=धूनी।

धुंकार—पुं० [सं० ध्वनि कार] जोर का शब्द। गड़गड़ाहट।

धुंकारना—अ०[हिं० धुंकार] हुंकारना।

धुंगार—स्त्री०=बघार (छौंक या तड़का)।

धुंगारना—स०[हिं० धुंगार]१. खाने की चीज में तड़का देना। छौंकना। बघारना। २. अच्छी तरह मारना-पीटना।

धुंज†—वि०=धुंधला।

पुं०=धुंध।

धुंद—पुं० १.=धुंध। २. दुंद (द्वन्द्व या द्वंद्व)।

धुंदुल—पुं०[देश०] एक तरह का मझोले कद का पेड़।

धुंध—पुं०[सं० धूम्र-अंध]१. वह स्थिति जिसमें धुंधलापन हो। २. गरदे और धूल से भरी हुई हवा चलने के कारण वातावरण में छानेवाला अंधेरा।

पद—अंधाधुंध। (देखें)

३. हवा में उड़ती हुई धूल। ४. आँख का एक रोग जिसमें दृष्टि या देखने की शक्ति कम हो जाती है और आकृतियाँ, चीजें आदि धुंधली दिखाई देने लगती हैं।

धुंधक†—पुं०=धुंध।

धुंधका—पुं०[हिं० धूआँ] दीवार, छत आदि में का वह छेद या मार्ग जिसमें होकर धूआँ कमरे आदि से बाहर निकलता हो।

धुंधकार—पुं०[हिं० धुंकार]१. गरज। गड़गड़ाहट। धुंकार। २. अंधकार। अँधेरा।

धुंधमार—पुं०=धुंधुमार।

धुंधमाल†—पुं०=धुंधुमार।

धुंधर—स्त्री० [हिं० धुंध] १. हवा के साथ उड़नेवाली धूल। गरदा। गुबार। २. उक्त प्रकार की धूल के कारण छानेवाला अँधेरा।

धुंधरा—वि०[स्त्री० धुंधरी]=धुंधला।

धुंधराना—अ०, स०=धुंधलाना।

धुंधरी—स्त्री०[हिं० धुंधरी]१. गर्द-गुबार से उत्पन्न अंधेरा। २. धुंधलापन। ३. आँख का धुंध नामक रोग।

धुंधलका—वि०[हिं० धुंधला]=धुंधला।

पुं० वह समय या स्थिति जिसमें धुंधला प्रकाश हो। जैसे—सायंकाल का धुंधलका।

पद—**धुंधलके का समय**=सबेरे या संध्या का ऐसा समय जिसमें चीजें स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं देतीं।

धुंधला—वि० [हिं० धुंध+ला] [स्त्री० धुंधली] १. धुंध से भरा हुआ।

२. धूएँ की तरह का, कुछ-कुछ काला। ३.(नेत्र) जिसमें धुंध नामक राग होने के कारण चीजें अस्पष्ट दिखाई पड़ती हों। ४. (दर्पण) जिसकी चमक खराब हो जाने के कारण प्रतिबिंब स्पष्ट न दिखाई पड़े। ५. लाक्षणिक अर्थ में, (बात) जो अब ठीक-ठीक स्मरण न हो। जैसे—धुंधली स्मृतियाँ।

धुंधलाई†—स्त्री०=धुंधलापन।

धुंधलाना—अ०[हिं० धुंधला]धुंधला पड़ना या होना।

स० धुंधला करना।

धुंधलापन—पुं०[हिं० धुंधला+पन]धुंधले या अस्पष्ट हाने की अवस्था या भाव।

धुंधली†—स्त्री०=धुंध।

धुंधाना—अ०[हिं० धुंध] धुंधला पड़ना या होना।

स० धुंधला करना।

धुंधार—वि०१.=धुंधला। २. धूआँधार।

धुंधि—स्त्री०=धुंध।

धुंधियारा—वि०=धुंधला।

धुंधु—पुं०[सं०] एक राक्षस जो मधु नामक राक्षस का पुत्र था।

धुँधुआना—अ०[सं० धूम्र, हिं० धूआँ] इस प्रकार जलना कि खूब धूआँ उठे। धूआँ देते हुए जलना।
स० इस प्रकार जलाना कि खूब धूआँ उठे।

धुंधकार—पुं०[हिं० धुंधु+कार]१. अंधकार। अँधेरा। २. धुँधलापन। ३. नगाड़ा बजने का शब्द। ४. आग के धू-धू करके जलने का शब्द।

धुंधुमार—पुं०[सं० धुंधु√मृ (मरना)+णिच्+अण्] १. राजा त्रिशंकु का पुत्र। २. कुवलयाश्व का एक नाम।

धुंधुरित—वि०[हिं० धुंधुर]१. धुंधला। २. धूमिल।

धुंधुरी†—स्त्री०=धुँधरी।

धुंधुराना†—अ०, स०=धुँधुआना।

धुंधेरी—स्त्री०=धुँधरी।

धुंधेला—वि० [हिं० धुंध+ऐला (प्रत्य०)]१. दुष्ट। पाजी। २. धोखेबाज।
†वि०=धुँधला।

धुंवाँ†—पुं०=धूआँ।

धुंवाँकश†—पुं०=धूआँकश।

धुंवाँदान†—पुं०=धूआँदान।

धुंवाधार—वि०, क्रि० वि०=धूआँधार।

धु—स्त्री० [सं०] कंपन

धुअ†—वि०, पुं०=ध्रुव।

धुआँ—पुं०=धूआँ।

धुआँकश—पुं०=धूआँकश।

धुआँदान—पुं०=धूआँदान।

धुआँधार—वि० क्रि०, वि०=धूआँधार।

धुआँना—अ०=धुँआना।

धुआँयँध—वि०, स्त्री० =धुँआयँध।

धुआँस—पुं०=धुवाँस।

धुआँ—पुं०=धूआँ (शव)।

धुकंता†—वि०[हिं० धुकना=दहकना] [स्त्री० धुकंती] धुकता अर्थात् दहकता हुआ।

धुकंती†—स्त्री०[हिं० धुकना=दहकना] मन में निरंतर होता रहनेवाला बहुत अधिक मानसिक कष्ट या संताप।

धुक—स्त्री०[देश०] कलाबत्तू बटने की सलाई।

धुकड़-पुकड़—स्त्री०[अनु०]१. भय आदि की आशंका से होनेवाली मन की वह स्थिति जिसमें रह-रहकर कलेजे में हलकी धड़कन होती हो। २. आगा-पीछा। असमंजस।

धुकड़ी—स्त्री०[देश०] छोटी थैली। बटुआ।
स्त्री०=धुकड़-पुकड़।

धुकधुकी—स्त्री०[अनु०] १. पेट और छाती के बीच का भाग जो कुछ गहरा-सा और छोटे गड्ढे की तरह होता है। २. कलेजा। हृदय। ३. भय, संकोच आदि के कारण होनेवाली कलेजे या हृदय की धड़कन। ४. डर। भय।
क्रि० प्र०—लगना।
५. गले में पहनने का एक प्रकार का गहना जिसका लटकन छाती के बीचवाले भाग पर पड़ता है।

धुकना—अ०[हिं० झुकना]१. नीचे की ओर ढलना। झुकना। २. गिरना। ३. वेगपूर्वक किसी ओर या किसी पर झपटना। टूट पड़ना।
अ०[हिं० धुकधुक] धुक-धुक करना। धड़कना।
†स०[सं० धूम+करना] धूनी देना।
अ०१.=दहकना। २=धुकरना।

धुकनी†—स्त्री०१.=धौंकनी। २.=धूनी।

धुकरना†—अ०[अनु०] धुक-धुक शब्द होना।

धुकान—स्त्री०[हिं० धुकना]१. धुकने की क्रिया या भाव। २. आक्रमण। चढ़ाई। उदा०—सैयद समर्थ भूप अली अकबर दल, चलत बजाय मारू दुंदुभी धुकान की।—गुमान।
†स्त्री०=धुकार।

धुकाना—स०[हिं० धुकना] १. झुकाना। नवाना। २. गिराना। ३. ढकेलना। ४. पछाड़ना। पटकना। ५. दहकाना। सुलगाना। ६. धूनी देना।

धुकार—स्त्री०[धू से अनु०]१. जोर का शब्द। २. नगाड़े का शब्द।

धुकारी—स्त्री०=धुकार।

धुक्कन†—स्त्री०=धुकार।

धुक्कना—अ०=धुकना।

धुक्कारना—स०=धुकाना।

धुगधुगी†—स्त्री०=धुकधुकी।

धुज†—पुं०=ध्वज।
†स्त्री०=ध्वजा।

धुजा†—स्त्री०=ध्वजा।

धुजानी†—स्त्री०[सं० ध्वजिनी]सेना।

धुजिनी—स्त्री०=धुजानी।

धुडंगा—वि०[हिं० धूर+अंगी][स्त्री० धुड़ंगी]१. जिसके शरीर पर धूल ही धूल हो, वस्त्र न हो। नंगा-धड़ंगा। २. जिस पर धूल पड़ी हो।

धुडंगी†—वि०=धुड़ंगा।

धुड़ी†—स्त्री०=धूल।

धुत†—अव्य०=दुत।

धुतकार—स्त्री०=दुतकार।

धुतकारना—स०=दुतकारना।

धुताई*—स्त्री०=धूर्तता।

धुतारा*—वि०[स्त्री० धुतारी]=धूर्त।

धुतू†—पुं०=धूतू।

धुतूरा†—पुं०=धतूरा।

धुत्त—वि०[अनु०] नशे में चूर। बेसुध।
†अव्य०=धुत (दुत)।

धुत्ता†—पुं०[सं० धूर्तता] १. धूर्तता। २. कपट। छल। दगाबाजी।
मुहा०—(किसी को) धुत्ता देना या बताना=कपट, छल या धूर्तता का व्यवहार करके किसी को दूर हटाना।
स्त्री०[?] एक प्रकार की मछली।

धुधुकार—स्त्री०[धू धू से अनु०]१. धू धू का-सा जोर का शब्द, जैसा आग जलने पर होता है। २. जोर का शब्द। गड़गड़ाहट। गरज। उदा०—सीमा पर बजनेवाले धौंसों की अब धुधुकार नहीं।—दिनकर।

धुधुकारी—स्त्री० = धुधुकार।

धुधुकी†—स्त्री० १. = धुधुकार। २. = धुकधुकी।

धुन—पुं० [सं०] १. आवाज या शब्द करना। २. रह-रहकर हिलना। काँपना। ३. संपूर्ण जाति का एक राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं। स्त्री० [हिं० धुनना, मि० सं० धुन] १. धुनने की क्रिया या भाव। २. कोई विशिष्ट काम प्रायः करते रहने की स्वभावजन्य प्रवृत्ति या मनोदशा। ऐसी लगन जिसमें उद्देश्य को छोड़कर और किसी बात का ध्यान न रहे। जैसे—(क) आज-कल उन्हें नई-नई पुस्तकें पढ़ने (या रुपए कमाने) की धुन है। (ख) रामधुन लागी, गोपाल-धुन लागी।—लोकगीत।

पद—धुन का पक्का = वह जो अपनी धुन से सहसा विरत न हो। कोई काम आरंभ करने पर उसे बिना पूरा किये न छोड़नेवाला अथवा बार बार करता रहनेवाला।

२. किसी काम या बात की ओर जाग्रत होनेवाली प्रबल प्रवृत्ति। मन की तरंग या मौज। जैसे—जब धुन आई (या उठी) तब घूमने निकल पड़े। ३. किसी काम या बात का ऐसा चिंतन या मनन जो और कामों या बातों की ओर से ध्यान बिलकुल अलग कर दे। जैसे—आज-कल न जाने वे किस धुन में रहते हैं कि जल्दी लोगों से बात ही नहीं करते।

क्रि० प्र०—चढ़ना।—लगना।—समाना।—सवार होना। (उक्त सभी अर्थों में)

४. संगीत में कोई चीज गाने या बजाने का वह विशिष्ट ढंग, प्रकार या शैली जिसमें स्वरों का उतार-चढ़ाव अन्य प्रकारों या शैलियों से बिलकुल अलग और निराला होता है। जैसे—(क) रामायण की चौपाइयाँ अनेक धुनों में गाई जाती हैं। (ख) यह गजल सोहिनी की धुन में भी गाई जाती है और भैरवी की धुन में भी।

धुनक—स्त्री० [हिं० धुनकना] धुनकने की क्रिया या भाव।
†पुं० = धनुष।

धुनकना—स० = धुनना।

धुनकी—स्त्री० [सं० धनुस्, हिं० धुनकना] १. लड़कों के खेलने का छोटा धनुष। २. धुनियों का एक प्रकार का प्रसिद्ध उपकरण, जिससे वे रूई धुनते हैं। पिंजा। फटका।

धुनना—स० [सं० धूनन] १. धुनकी की सहायता से रूई पर इस प्रकार बार बार आघात करना कि उसके तार या रेशे अलग-अलग हो जायँ और बिनौले निकल जायँ।

विशेष—अब मशीनों द्वारा भी रूई धुनी जाने लगी है।

२. लाक्षणिक अर्थ में, इस प्रकार निरन्तर आघात या प्रहार करना जिससे किसी को अत्यधिक शारीरिक कष्ट हो।

मुहा०—सिर धुनना = दे० 'सिर' के अंतर्गत।

संयो० क्रि०—डालना।—देना।

स० [हिं० धुन] १. धुन में आकर अपनी ही बात कहते चलना। २. कोई काम लगातार करते चलना।

अ० [?] १. अधिकता या बहुतायत होना। २. ऊपर या चारों ओर से घिर आना। आच्छादित होना। छाना। उदा०—धामधाम धूपनि कौ धूम धुनियतु है।—देव।

धुनवाई—स्त्री० [हिं० धुनवाना] १. धुनवाने की क्रिया, भाव या मजदूरी। २. दे० 'धुनाई'।

धुनवाना—स० [हिं० धुनना] १. धुनने का काम किसी दूसरे से कराना। जैसे—रूई धुनवाना। २. खूब पिटवाना। मार खिलवाना।

धुनवी†—स्त्री० = धुनकी।

धुना†—पुं० = धुनियाँ।

धुनाई—स्त्री० [हिं० धुनना] धुनने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

धुनि—स्त्री० [सं० √धु (कंपन) + नि] नदी।
†स्त्री० १. = ध्वनि। २. = धूनी।

धुनियाँ—पुं० [हिं० धुनना] [स्त्री० धुनियाइन] वह व्यक्ति जो धुनकी की सहायता से रूई धुनने का काम या पेशा करता हो। बेहना।

धुनिहाव†—पुं० [?] हड्डी में का दर्द।

धुनी—स्त्री० [सं० धुनि + ङीप्] नदी।
पद—सुर-धुनी। (दे०)
†स्त्री० १. = ध्वनि। २. = धूनी।

धुनी-नाथ—पुं० [ष० त०] धुनी (नदी) के स्वामी, सागर।

धुनेचा—पुं० [देश०] सन की जाति का एक पौधा, जो बंगाल में काली मिर्च की बेलों पर छाया रखने के लिए लगाया जाता है।

धुनेहा†—पुं० = धुनियाँ।

धुप-धुप—वि० [हिं० धूप] १. साफ। स्वच्छ। २. उज्ज्वल। चमकीला।

धुपना—अ० [हिं० धूप] धूप आदि के धूएँ से सुगंधित किया जाना या होना।
अ० [सं० धूपन = श्रांत होना] १. दौड़ना। २. हैरान होना। जैसे—दौड़ना-धुपना (धूपना)।
†अ० = धुलना। (पश्चिम)

धुपाना—स० [हिं० धूप = सुगंधित द्रव्य] धूप आदि के सुगंधित धूएँ से बासना।
स० [हिं० धूपना] किसी को धूपने में प्रवृत्त करना।
†स० [हिं० धूप] सुखाने के लिए धूप में रखना या धूप दिखाना।
†स० = धुलवाना।

धुपेना†—पुं० = धूपदानी।

धुपेली†—स्त्री० [हिं० धूप + एला (प्रत्य०)] धूप में अधिक घूमने अथवा गरमी के प्रभाव के कारण शरीर में निकलनेवाले छोटे-छोटे दाने। पित्ती।

धुप्पल—स्त्री० [हिं० धोपा = धोखा] १. अपना काम निकालने के लिए किसी को आतंकित करते हुए दिया जानेवाला धोखा। धुप्पस। (ब्लफ) २. छल। धोखा।

धुप्पस†—स्त्री० = धुप्पल।

धुबला—पुं० [?] घाघरा। लहँगा।

धुमई†—वि० [धूम्र + ई (प्रत्य०)] धूएँ के रंग का।
स्त्री० एक प्रकार का रंग जो देखने में धूएँ जैसा होता है।
पुं० उक्त रंग का बैल, जो प्रायः अन्य बैलों की अपेक्षा अधिक सशक्त होता है।

धुमरा†—वि० = धुआरा (धूमिल)।

धुमला†—वि० [सं० धूम्र + ला (प्रत्य०)] १. धूमिल। २. अंधा। (क्व०)

धुमलाई†—स्त्री०=धुमिलाई।

धुमारा †—वि०=धुआँरा।

धुमिलना*—स०[हिं० धूमिल+आना (प्रत्य०)]१. धूमिल करना। २. धुँधला करना।

अ० १. धूमिल होना। २. धुँधला होना। मंद पड़ना।

धुमिला†—वि०=धूमिल।

धुमिलाई†—स्त्री० [हिं० धूमिल+आई (प्रत्य०)]१. धूमिल होने की अवस्था या भाव। २. धुँधलापन। ३. अंधकार। अँधेरा।

धुमिलाना—अ०[हिं० धूमिल] १. धूमिल होना। २. काला पड़ना।

स०=धूमिल करना।

धुमैला†—वि०=धूमिल।

धुम्मर*—वि०=धूमिल।

पुं०=धूम्र (धूआँ)।

धुर्—स्त्री० [सं० धुर्व् (हिंसा)+क्विप्]१. बैलों आदि के कंधे पर रखा जानेवाला जूआ। २. बोझ। भार। ३. गाड़ी के पहियों का धुरा। अक्ष। ४. खूँटी। ५. ऊँचा और श्रेष्ठ स्थान। ६. उँगली। ७. चिनगारी। ८. अंश। भाग। ९. धन-संपत्ति। १०. गंगा का एक नाम। ११. रथ का अगला भाग।

धुरंधर—वि०[सं० धुर√धृ (धारण)+खच्, मुम्] १. धुर अर्थात् जूआ धारण करनेवाला। २. भार आदि से लदा हुआ। ३. जो बहुत अधिक अच्छे गुण या विद्याएँ धारण किए हो। किसी विषय में औरों से बहुत अधिक बढ़ा-चढ़ा या श्रेष्ठ। जैसे—धुरंधर पंडित। ४. प्रधान। मुख्य।

पुं० १. वह, जो बोझ ढोता हो। २. ऐसा पशु जिस पर बोझ लादा जाता हो। ३. एक राक्षस जो प्रहस्त का मंत्री था। ४. धौ का पेड़। धव।

धुर—पुं०[सं० √धुर्वी+क] १. गाड़ी या रथ आदि का धुरा। अक्ष। २. ऊँचा और श्रेष्ठ स्थान। ३. बोझ। भार। ४. गाड़ी का धुरा। ५. बैलों के कंधे पर रखने का जूआ। ६. जमीन की एक नाप, जो बिसवे के बीसवें भाग के बराबर होती है। धूर। बिस्वांसी।

अव्य०[सं० धुर् या ध्रुव] एक अव्यय जो कई प्रकार के प्रयोगों में किसी नियत स्थान की अंतिम सीमा या सिरा सूचित करता है। ठेठ। जैसे—धुर ऊपर की छत। उदा०—(क) मोती लादन पिय गये, धुर पाटन गुजरात। —गिरधर। (ख) हमको तो सोई लखे जो धुर पूरब का होय।—कबीर।

पद—धुर का=हद दरजे का। परम। **धुर सिर से**।=बिलकुल आरंभ से। **धुर से**=धुर सिर से

वि०[सं० ध्रुव]१. दृढ़। पक्का। २. ठीक। दुरुस्त।

पुं०[?]बीच। मध्य।

†स्त्री०=धरा (पृथ्वी)। उदा०—अज्ज गहौं प्रथिराज, बोल बुलंत गजंत धुर।—चंदवरदाई।

धुरई†—स्त्री०[हिं० धुर] कूएँ के खंभे आदि के बीच में आड़े टिकाए हुए वे दोनों बाँस या लकड़ियाँ, जिनके नीचेवाले सिरे आपस में सटाकर मजबूती से बँधे रहते थे।

धुरकट—पुं०[हिं० धुर=सिर(आरंभ)+कट=कटौती] वह लगान जो असामी अपने जमींदार को जेठ में पेशगी देते थे।

धुर-किल्ली—स्त्री० [हिं० धुरा+कील] गाड़ी में वह कील जो धुरी की आँक में अटकाने के लिए अन्दर की ओर धुरी के सिरे पर लगी रहती है।

धुरचुट† —स्त्री० [?] अधिकता। प्रचुरता।

धुरजटी—पुं०=धूर्जटी (शिव)।

धुरड्डी† —स्त्री०=धुलेंडी।

धुरना—स० [सं० धूर्वण] १. मारना-पीटना। २. बाजों आदि के संबंध में आघात करते हुए बजाना। ३. कोदों, धान आदि के सूखे डंठलों का भूसा बनाने के लिए उसे दाँना।

धुरपद† —पुं०=ध्रुपद।

धुरमुट†—पुं०=दुरमुस।

धुरवा†—पुं० [सं० धुर्+वाह] बहुत दूरी पर दिखाई पड़नेवाला धुँधला बादल। उदा०—धुरवा होहि न अलि इहै धुआँ धरनि चहुँ ओर।—बिहारी।

धुरा—पुं० [सं० धुर+टाप्] [स्त्री० धुरी] १. लकड़ी या लोहे का वह छड़ या डंडा जो पहियों की गराड़ी के बीचोंबीच रहता है और जिसके सहारे ठहरा रहकर पहिया चारों ओर घूमता है। अक्ष। (एक्सिस) २. वह मुख्य या मूल आधार जिसके सहारे कोई चीज ठहरी रहती और चक्कर लगाती या अपना काम करती है।

पुं० [सं० धुरः] १. बोझ ढोनेवाला पशु। २. बोझ। भार।

धुरिया-धुरंग—वि० [?] १. जिसके साथ और कोई न हो। अकेला। २. जिसके साथ उसके आवश्यक अंग-उपांग न हों। ३. (गीत) जिसके साथ कोई बाजा या साज न बजता हो।

धुरियाना—स० [हिं० धूर] १. किसी वस्तु को धूल से ढकना या युक्त करना। किसी वस्तु पर धूल डालना। २. ऊख का खेत पहले-पहल गोड़ना। ३. किसी कलंक, खराबी या बुराई पर धूल या मिट्टी डालना; अर्थात् उसे दबाना और फैलने न देना।

अ० १. किसी चीज का धूल पड़ने के कारण दबना या मैला होना। २. ऊख के खेत का पहले-पहल गोड़ा जाना। ३. कलंक, दोष आदि का छिपाया या दबाया जाना।

धुरिया मलार—पुं०=धूरिया मलार।

धुरी—स्त्री० हिं० 'धुरा' का स्त्री० अल्पा० रूप (दे० 'धुरा')।

धुरीण—वि० [सं० धुर+ख—ईन] १. जो बोझ या भार सँभालने या ले चलने के योग्य हो। २. प्रधान। मुख्य। ३. दे० 'धुरंधर'।

धुरीन† —वि०=धुरीण।

धुरीय—वि० [सं० धुर+छ—ईय] १. बोझ लादकर ले चलनेवाला। २. धुर या धुरे से संबंध रखनेवाला।

धुरी राष्ट्र—पुं० [हिं० धुरी+सं० राष्ट्र] दूसरे महायुद्ध से पहले सार्वराष्ट्रीय राजनीति में जरमनी, इटली और जापान ये तीनों राष्ट्र, जिनका एक गुट था।

धुरेंडी† —स्त्री०=धुलेंडी।

धुरेटना—अ० [हिं० धूर+एटना (प्रत्य०)] १. धूल में लेटना। २. इस प्रकार लेटकर वस्त्र, शरीर आदि गंदे करना। धूल से युक्त करना। स० धूल लगाना।

धुर्य—वि० [सं० धुर+यत्] १. जिस पर बोझ या भार लादा जा सके।

बोझ ढोने के योग्य। २. जो अपने ऊपर उत्तरदायित्व या भार ले सके। ३. दे० 'धुरंधर'।

पुं० १. भार ढोनेवाला पशु। २. बैल। ३. विष्णु। ४. ऋषभ नामक ओषधि।

धुर्रा—पुं० [हिं० धूर=धूल] १. धूल का कण। २. किसी चीज का छोटा या सूक्ष्म कण या टुकड़ा।

मुहा०—(किसी चीज के) धुर्रे उड़ाना=बहुत छोटे-छोटे खंड या टुकड़े करके बेकाम कर देना। छिन्न-भिन्न करना। (किसी के विचारों आदि के) धुर्रे उड़ाना=पूरी तरह से खंडन करके तुच्छ सिद्ध करना। (किसी व्यक्ति के) धुर्रे उड़ाना या उड़ा देना=बहुत अधिक मारना-पीटना।

धुलना—अ० [हिं० धोना] १. वस्त्र आदि के संबंध में; जल, साबुन आदि की सहायता से स्वच्छ किया जाना। धोया जाना। जैसे—सिर धुलना। २. गंदगी आदि के बह या हट जाने के फलस्वरूप किसी चीज का साफ होना। जैसे—वर्षा के जल से सड़क धुलना। ३. लगे हुए कलंक, दोष, बुराई आदि का छूटना, मिटना या न रह जाना। नष्ट होना। जैसे—पाप या बदनामी धुलना।

धुलवाना—स० [हिं० धोना का प्रे०] धोने का काम किसी दूसरे से कराना।

धुलवाई—स्त्री० [हिं० धुलवाना] १. धुलवाने की क्रिया, भाव या मजदूरी। २. दे० 'धुलाई'।

धुलाई—स्त्री० [हिं० धोना] १. धुलने या धोये जाने की क्रिया या भाव। २. धोने के बदले में मिलनेवाला पारिश्रमिक।

धुलाना—स०=धुलवाना।

धुलियापीर—पुं०=धूलिया-पीर।

धुलिया-मिटिया—वि० [हिं० धूल+मिट्टी] १. जिस पर धूल या मिट्टी पड़ी हो अथवा डाली गई हो और इसी लिए जो बिलकुल खराब या निकम्मा हो गया हो। जैसे—कपड़े धुलिया-मिटिया करना। २. दबाया या शांत किया हुआ (झगड़ा, बखेड़ा आदि)। ३. नष्ट, बरबाद या मटियामेट किया हुआ।

धुलेंडी—स्त्री० [हिं० धूल+उड़ाना] १. हिंदुओं का एक त्योहार जो होली जलने के दूसरे दिन चैत बदी १ को होता है और जिसमें सवेरे के समय लोगों पर कीचड़, धूल आदि और संध्या को अबीर, गुलाल आदि डालते हैं। २. उक्त त्योहार का दिन।

धुव—पुं० [?] कोप। क्रोध। गुस्सा। (डिं०)

† पुं०=ध्रुव।

धुवका—पुं० [सं० धुवक] गीत का पहला पद। टेक।

धुवन—वि० [सं०√धु+क्युन्—अन] १. चलानेवाला। २. कँपाने या हिलानेवाला।

पुं० अग्नि। आग।

धुवाँ†—पुं०=धूआँ।

धुवाँकश†—पुं०=धूआँकश।

धुवाँधार—वि० क्रि०, वि०=धूआँधार।

धुवाँधज*—पुं० [सं० धूमध्वज] अग्नि। (डिं०)

धुवाँरा—पुं० [हिं० धूआँ] छत में बना हुआ वह छेद जिसमें से रसोईघर का धूआँ बाहर निकलता है।

वि०=धुआँरा।

धुवाँस—स्त्री० [हिं० धूर+माष; या धूमसी] उरद का आटा जिससे पापड़, कचौड़ी आदि पकवान बनाते हैं।

धुवाना—स०=धुलाना।

धुवित्र—पुं० [सं०√धु+इत्र] प्राचीन काल का एक प्रकार का पंखा जो हिरन के चमड़े आदि से बनाया जाता था और जिसका व्यवहार यज्ञ की आग को सुलगाने में होता था।

धुस्तूर—पुं० [सं०√धु+उर, स्तुट् आगम] धतूरा।

धुस्स—पुं० [सं० ध्वंस] १. गिरे हुए मकान की मिट्टी, ईंटों, पत्थरों आदि का ढेर। ऊँचा ढेरा। टीला। २. जलाशय पर बाँधा हुआ बाँध। ३. मिट्टी की ऊँची और मोटी दीवार, जो किले की पक्की दीवारों के आगे सुरक्षा के लिए खड़ी की जाती थी।

धुस्सा—पुं० [सं० दूष्यम्, प्रा० दुस्स=कपड़ा, पाली०, दूस्स] घटिया किस्म के ऊन की बुनी हुई मोटी लोई।

धूँआँ—पुं०=धूआँ।

धूँका†—पुं०=धोखा।

धूँध†—स्त्री० १. =धुंध। २. =धोखा।

धूँधना—स० [हिं० धूंध] धोखा देना।

धूँधर†—स्त्री० [हिं० धुंध] १. धुंध। २. उक्त के फलस्वरूप होनेवाला अँधेरा।

वि०=धुँधला।

धूँधला†—वि०=धुँधला।

धूँसना*—अ० [?] जोर का शब्द करना। उदा०—प्रबल वेग सों धमकि धूँसि दसहूँ दिसि दूसहि।—रत्नाकर।

स० [सं० ध्वंसन] १. नष्ट या बरबाद करना। २. मारना-पीटना।

धूँसा†—पुं०=धौंसा।

धू†—वि० [सं० ध्रुव] स्थिर। अचल।

पुं० १. ध्रुव तारा। २. राजा उत्तानपाद का पुत्र जो प्रसिद्ध ईश्वर-भक्त था। ३. गाड़ी का धुरा।

धूआँ—पुं० [सं० धूम] १. काले या नीले रंग का वह वातीय पदार्थ जो किसी चीज के जलने पर उसमें से निकलकर ऊपर चढ़ता और हवा के साथ इधर-उधर फैलता है। धूम।

क्रि० प्र०—उठना।—देना।—निकलना।

पद—**धूएँ का धौरहर**=ऐसी चीज या बात जो धूएँ की तरह थोड़ी देर में नष्ट हो जाय। अस्थायी और क्षणभंगुर चीज या बात।

धूएँ के बादल=(क) ऐसे बादल जो देखने भर को हों पर जिनसे वर्षा न हो। (ख) कोई ऐसी चीज जो देखने में बहुत बड़ी जान पड़े पर जिसमें सार कुछ भी न हो।

मुहा०—(किसी चीज का) धूआँ देना=जलने पर किसी चीज का अपने अन्दर से धूआँ निकालना। जैसे—यह कोयला (या तेल) बहुत धूआँ देता है। (किसी चीज को किसी दूसरी चीज का) धूआँ देना=कोई चीज जलाकर उसका धूआँ किसी दूसरी चीज पर लगाना। धूएँ के प्रभाव से युक्त करना। जैसे—(क) सिर के बालों को गूगल (या धूप) का धूआँ देना। (ख) बवासीर के मस्सों को बायविडंग का धूआँ देना। (ग) किसी की नाक में

मिरचों का धूआँ देना। (अपने अन्दर का) **धूआँ निकालना**=(क) मन में दबा हुआ कष्ट या रोष अपनी बातों से प्रकट करना। मन की भड़ास निकालना। (ख) अपने संबंध में बहुत बढ़-बढ़कर बातें करना। डींग या शेखी हाँकना। **धूआँ रमना**=चारों ओर धूआँ छाना, फैलना या भरना। **धूएँ के बादल उड़ाना**=बिलकुल निरर्थक और व्यर्थ की बातें कहकर बहुत बड़ा आडम्बर खड़ा करना। झूठ-मूठ की बहुत बड़ी-बड़ी बातें खड़ी करना या बनाना। **धूएँ-सा मुँह होना या मुँह धूआँ होना**=ग्लानि, लज्जा आदि के कारण चेहरे का रंग काला या फीका पड़ना। चेहरे की रंगत उड़ जाना।

२. किसी चीज के उड़नेवाले ऐसे बहुत-से कण जो धूएँ की तरह चारों ओर फैलते हों।

पद—**धूआँ-धार**। (देखें स्वतंत्र शब्द)

३. किसी चीज या बात की उड़ती हुई धज्जियाँ या धुर्रे।

मुहा०—(**किसी चीज के**) **धूएँ उड़ाना या बिखेरना**=छिन्न-भिन्न या नष्ट-भ्रष्ट करना। धज्जियाँ या धुर्रे उड़ाना।

४. मृत शरीर। लाश। शव। उदा०—धूआँ देखि खर-दूषन केरा। जाइ सुपनखा रावन प्रेरा।—तुलसी।

धूआँ-कश—पुं० [हिं० धूआँ+फा० कश=खींचना] भाप के जोर से चलनेवाली नाव या जहाज। अगिनबोट। (स्टीमर)

धूआँदान—पुं० [हिं० धूआँ+फा० दान] छत आदि में बना हुआ वह छेद या नल जिसमें से होकर घर के अन्दर का धूआँ बाहर निकलता है। चिमनी।

धूआँधार—वि० [हिं० धूआँ+धार] १. धूएँ से भरा हुआ। २. धूएँ की तरह के गहरे काले रंगवाला। ३. तड़क-भड़कवाला। ४. खूब जोरों का। घोर। प्रचंड। ५. मान, मात्रा आदि में बहुत अधिक।

क्रि० वि० निरंतर और जोरों से। जैसे—धूआँधार गोले या पानी बरसना।

धूईं—स्त्री०=धूनी।

धूक—पुं० [सं०] १. वायु। २. काल।

वि० चालाक। धूर्त्त।

पुं०[फा०दूक=तकला] कलाबत्तू बटने की लोहे की पतली गोल सीख।

धूकना*—अ० [हिं० ढुकना] १. किसी ओर बढ़ना या झुकना। २. दे० 'ढुकना'।

धूजट*—पुं०=धूर्जटि (शिव)।

धूजना—अ० [सं० धूत] १. हिलना। २. काँपना।

धूत—वि० [सं०√धू (कंपन)+क्त] १. काँपता, थरथराता या हिलता हुआ। कंपित। २. जिसे डाँटा-डपटा या धमकाया गया हो। ३. छोड़ा या त्यागा हुआ। त्यक्त।

†वि०=धौत। उदा०—धो दिया श्रेष्ठ कुल-धर्म धूत।—निराला।

†वि०=धूर्त।

धूतना—स० [सं० धूर्त] १. किसी के साथ धूर्त्तता करना। २. किसी को ठगना। ३. धूर्ततावश किसी की कोई चीज नष्ट करना। उदा०—अवधू ह्वै कै या तन धूतौं, बधिका ह्वै मन मारूं।—कबीर।

धूत-पाप—वि० [ब० स०] जिसके पाप धुलकर दूर या नष्ट हो चुके हों।

धूत-पाया—स्त्री० [ब० स०, टाप्] काशी की एक प्राचीन नदी, जो पंचगंगा घाट के समीप गंगा में मिली थी।

धूता—स्त्री० [सं० धूत+टाप्] पत्नी। भार्या।

धूताई†—स्त्री०=धूर्तता।

धूतार (ा) —वि०=धूर्त।

धूति—स्त्री० [सं√धूं+क्तिन्] १. हिलते रहने या हिलने देने की अवस्था या भाव। २. हठयोग में शरीर शुद्ध करने की एक क्रिया।

धूती—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की चिड़िया।

धूतुक—पुं०=धूतू।

धूतू—पुं० [अनु०] १. कल-कारखाने आदि की सीटी का शब्द। २. तुरही। ३. नरसिंहा।

धूधू—पुं० [अनु०] वस्तुओं के जलने के समय होनेवाला धूधू शब्द।

धून—वि० [सं०√धू+क्त, नत्व] कंपित।

†पुं०=दून।

धूनक—वि० [सं०√धू+णिच्, नुक्+ण्वुल्—अक] १. हिलाने-डुलानेवाला। २. चालाक। धूर्त।

पुं० सरल या साल का गोंद। राल।

धूनन—पुं० [सं०√धू+णिच्, नुक्+ल्युट्—अन] १. हवा। २. कंपन। ३. क्षोभ।

धूनना—स० [हिं० धूनी] १. आग में कोई ऐसी वस्तु छोड़ना जिसके जलने से सुगंधित धूआँ निकले। २. उक्त प्रकार के धूएँ से कमरा, घर आदि सुवासित करना। धूनी देना।

स० दे० 'धुनना'।

धूना—पुं० [हिं० धूनी] आसाम आदि की पहाड़ियों पर होनेवाला एक तरह का गुग्गुल की जाति का बड़ा पेड़। इसकी छाल आदि से वारनिश बनाई जाती है।

धूनि—स्त्री० [सं०√धू+क्तिन्, नत्व] हिलने की क्रिया। कंपन।

धूनी—स्त्री० [हिं० धूआँ या धूईं] १. वह आग जो साधु लोग या तो ठंढ से बचने के लिए या शरीर को तपाकर कष्ट पहुँचाने के लिए अपने सामने जलाये रखते हैं।

मुहा०—**धूनी जगाना, रमाना या लगाना** =(क) साधुओं का अपने सामने धूनी जलाकर तपस्या करना। (ख) अपना शरीर तपाने या अपना वैराग्य प्रकट करने के लिए साधु होकर या साधुओं की तरह अपने सामने धूनी जलाये रखना।

२. सुगंधित धूआँ उठाने के लिए, गूगल, धूप, लोबान आदि गंध द्रव्य जलाने की क्रिया। जैसे—ठाकुर जी की मूर्ति के आगे की धूनी।

क्रि० प्र०—जलाना।—देना।

३. धूआँ उठाने के लिए कोई चीज जलाने की क्रिया। जैसे—मिरचों की धूनी देकर किसी के सिर पर चढ़ा हुआ भूत भगाना।

क्रि० प्र०—देना।

धूप—पुं०[सं०√धूप (तपाना)+अच्] १. कोई ऐसा गंध द्रव्य या सुगंधित पदार्थ जिसे जलाने पर सुगंधित धूआँ निकलता हो। जैसे—अगर, चन्दन का चूरा, लोबान आदि। २. देव-पूजन, वायु-शुद्धि, सुगंध-प्राप्ति आदि के लिए उक्त प्रकार के पदार्थों को जलाने पर उनमें से निकलनेवाला सुगंधित धूआँ।

मुहा०—धूप देना=उक्त उद्देश्यों की सिद्धि के लिए सुगंधित पदार्थ जलाना।

३. कई प्रकार के सुगंधित द्रव्यों को कूटकर कड़ी लेई के रूप में बनाया हुआ वह पदार्थ जो सुगंधित धूआँ उत्पन्न करने के लिए जलाने के काम आता है।

पद—धूप-बत्ती। (देखें)

क्रि० प्र०—जलाना।

४. चीड़ या धूप-सरल नामक वृक्ष जिसमें से गंधाबिरोजा निकलता है।

स्त्री०[सं० धूपः, प्रा० धुप्पा, पा० पं० धुप्प] दिन के समय होनेवाला सूर्य का वह प्रकाश जिसमें गरमी या ताप भी होता है। आतप। घाम।

मुहा०—धूप खाना या लेना=ऐसी स्थिति में होना कि शरीर पर धूप पड़े। शरीर में गरमाहट लाने के लिए धूप में बैठना। (किसी चीज को) धूप खिलाना, दिखाना या लगाना=कोई चीज ऐसी स्थिति में रखना कि उस पर धूप पड़े या लगे। जैसे—बरसात के बाद गरम कपड़ों को धूप खिलानी या दिखानी पड़ती है। धूप चढ़ना या निकलना=सूर्योदय होने पर प्रकाश का बढ़ना और फैलना। घाम निकलना। (किसी चीज पर) धूप पड़ना या लगना=सूर्य के प्रकाश में पहुँचने पर धूप के प्रभाव से युक्त होना। धूप में बाल या चूंड़ा सफेद करना= बिना कुछ अनुभव या जानकारी प्राप्त किये जीवन का बहुत-सा भाग बिता देना। (प्रायः नहिक या निषेधात्मक रूप में प्रयुक्त) जैसे—हमने धूप में बाल नहीं सफेद किये हैं जो तुम्हारी इन बातों में आ जायँ।

धूपक—पुं०[सं०]धूप, अगरबत्ती आदि बनाने तथा बेचनेवाला।

धूप-घड़ी—स्त्री०[हिं० धूप+घड़ी] एक प्रकार का यंत्र, जिसमें बने हुए गोल चक्कर के बीच में गड़ी हुई कील की परछाईं से समय जाना जाता है।

धूप-छाँह—स्त्री०[हिं० धूप+छाँह]वह रंगीन कपड़ा, जिसमें एक ही स्थान पर कभी एक रंग और कभी दूसरा रंग दिखाई देता है।

विशेष—जब किसी कपड़े का ताना एक रंग का और बाना दूसरे रंग का होता है, तब उसमें यह बात आ जाती है।

धूपदान—पुं०[सं० धूप-आधान] ।[स्त्री० अल्पा० धूपदानी] १. धूप नामक सुगंधित द्रव्य रखने का डिब्बा या बरतन। २. वह पात्र जिसमें धूप, राल आदि सुगंधित द्रव्य रखकर सुगंधित धूएँ के लिए जलाये जाते हैं। ३. वह पात्र जिसमें जलाने के लिए धूप-बत्ती खोंसी, रखी या लगाई जाती है।

धूपदानी—स्त्री०[हिं० धूपदान]छोटा धूपदान।

धूपन—पुं०[सं० √धूप+ल्युट्—अन] [वि० धूपित] धूप आदि के धूएँ से सुवासित करने की क्रिया या भाव।

धूपना—अ०[सं० धूप्=गरम होना] किसी काम के लिए इधर-उधर आने-जाने में परेशान होना। जैसे—दौड़ना-धूपना।

स०[सं० धूपन] सुगंधित धुएँ के लिए धूप या और कोई गंधद्रव्य जलाना।

धूप-पात्र—पुं०[ष०त०]१. धूप रखने का बरतन। २. दे० 'धूप-दान'।

धूप-बत्ती—स्त्री०[हिं० धूप+बत्ती] मसाला लगी हुई सींक या बत्ती जिसे जलाने से सुगंधित धूआँ उठकर फैलता है।

धूप-वास—पुं०[तृ० त०] [भू० कृ० धूप-वासित] स्नान कर चुकने के बाद सुगंधित धूएँ से शरीर, बाल आदि बासने का कार्य।

धूप-वासित—भू० कृ०[तृ०त०] धूप आदि सुगंधित द्रव्यों के धूएँ से बासा अर्थात् सुगंधित किया हुआ।

धूप-वृक्ष—पुं० [मध्य०स०] सलई या गुग्गुल का पेड़ जिसके गोंद से धूप आदि सुगंधित द्रव्य बनाये जाते हैं।

धूपायित—वि०[सं० √ धूप+आय्+क्त]=धूपित।

धूपित—वि०[सं०√धूप+क्त] १. धूप के सुगंधित धूएँ से सुवासित किया हुआ। धूप के धूएँ से बासा हुआ। २. दौड़ने-धूपने के कारण थका हुआ। शिथिल और श्रांत।

धूम—पुं०[सं०√धू (कंपन)+मक्]१. आग का धूआँ। २. कुछ विशिष्ट औषधियों आदि को जलाकर उत्पन्न किया हुआ वह धूआँ, जो कुछ रोगों में रोगियों के शरीर या पीड़ित अंग पर पहुँचाया जाता है। ३. अजीर्ण या अपच में आनेवाला धुँआयँध डकार। ४. धूमकेतु। पुच्छलतारा। ५. उल्कापात। ६. एक प्राचीन ऋषि का नाम।

स्त्री०[अनु०]१. वह स्थिति, जिसमें बहुत से लोग उत्साहपूर्वक प्रसन्नता व्यक्त करते हुए इधर-उधर आते-जाते, दौड़ते-फिरते और हो-हल्ला मचाते हों। उत्सवों, त्योहारों आदि के समय की जन-समूह की उल्लासपूर्ण चंहल-पहल। जैसे—आज सारे भारत में स्वराज्य दिवस की धूम है। २. उत्सवों, मेलों, समारोहों आदि के संबंध में पहले से होनेवाला उत्साहपूर्ण आयोजन, ठाठ-बाट और तैयारी। जैसे—शहर में अभी से राष्ट्रपति के आने की धूम है।

पद—धूम-धाम।

३. उक्त प्रकार के कामों या बातों के संबंध में लोगों में चारों ओर होने-वाली चर्चा। जैसे—आज शहर में उनकी बरात की सवेरे से ही धूम है।

मुहा०—(किसी बात की) धूम मचना=किसी बात की चर्चा चारों ओर फैल जाना।

४. ऐसा उत्पात, उपद्रव, उछल-कूद या धींगा-मस्ती, जिसमें हो-हल्ला भी हो। जैसे—लड़के दिन भर गलियों में धूम मचाते रहते हैं। ५. कोलाहल। शोर। हो-हल्ला। जैसे—निम्न कक्षाओं के लड़के बहुत धूम करते हैं।

क्रि० प्र०—मचना।—मचाना।

विशेष—पुरानी हिन्दी तथा स्थानिक बोलियों में कहीं कहीं इस शब्द के साथ 'डालना' क्रिया का भी प्रयोग होता है।

स्त्री०[देश०] तालों में होनेवाली एक प्रकार की घास।

धूमक—पुं०[सं० धूम+कन्]१. धूआँ। १. एक प्रकार का साग।

धूमक-धैया—स्त्री०[हिं० धूम] १. ऐसी उछल-कूद और उपद्रव या हो-हल्ला जो अशिष्टतापूर्ण हो और इसी लिए अच्छा न लगे।

क्रि० प्र०—मचना।—मचाना।

२. दे० 'धूम-धाम'।

धूम-केतन—पुं०[ब० स०]१. अग्नि। आग। २. धूमकेतु। पुच्छलतारा।

धूम-केतु—पुं०[ब०स०] १. अग्नि, जिसकी पताका धूआँ है। २. शिव का एक नाम। ३. रावण की सेना का एक राक्षस। ४. ऐसा घोड़ा जिसकी दुम पर भौंरी हो। (ऐसा घोड़ा ऐबी या दूषित समझा जाता है।) ५. एक प्रकार का केतु या तारा, जिसमें पीछे की ओर दूर तक झाड़ू की तरह बहुत लंबी दुम लगी हुई होती है। पुच्छलतारा। (कामेट)

धूम-गंधिक—पुं० [धूम-गंध, ब०स०, इत्व, धूमगन्धि+कन्] रोहिष तृण। रूसा घास।

धूम-ग्रह—पुं० [मध्य०स०] राहु नामक ग्रह।

धूमज—वि० [सं० धूम√जन् (उत्पत्ति)+ड] धूएँ से उत्पन्न।

पुं० १. बादल या मेघ जो धूएँ से उत्पन्न माना गया है। २. मुस्तक। मोथा।

धूम-जांगज—पुं० [सं० धूमज-अंग ष०त०, धूमजांग+जन्√ड] नौसादर।

धूम-दर्शी (र्शिन्)—पुं० [सं० धूम√दृश (देखना)+णिनि] वह व्यक्ति जिसे आँखों के दोष के कारण सब चीजें धुंधली दिखाई देती हैं।

धूम-धड़क्का—पुं० [हिं० धूम+अनु० धड़क्का] आनंद, प्रसन्नता, हर्ष आदि के कारण होनेवाली चहल-पहल और हो-हल्ला।

धूम-धर—पुं० [ष०त०] अग्नि। आग।

धूम-धाम—स्त्री० [हिं० धूम+धाम (अनु०)] उत्साह तथा उल्लास से युक्त होनेवाला ऐसा आयोजन या तैयारी, जिसमें खूब चहल-पहल और ठाठ-बाट हो।

पद—धूम-धाम से=ठाठ-बाट और सज-धज के साथ। जैसे—धूम-धाम से जलूस, बरात या सवारी निकलना।

धूमधामी—वि० [हिं० धूमधाम] १. धूम-धाम से काम करनेवाला। २. धूम-धाम या आडंबर से युक्त। जैसे—धूमधामी आयोजन या समारोह। ३. नटखट। उपद्रवी।

धूम-ध्वज—पुं० [ब०स०] अग्नि। आग।

धूम-नेत्र—पुं०=धूम्र-नेत्र।

धूम-पट—पुं० [ष०त०] १. धूएँ की वह दीवार, जो युद्ध-क्षेत्र में विपक्षियों की नजर से अपनी तोपें आदि छिपाने के निमित्त खड़ी की जाती थी। २. वास्तविक स्थिति या तथ्य छिपाने के लिए उसके सामने खड़ी की जानेवाली कोई आड़ या परदा। (स्मोक स्क्रीन)

धूम-पथ—पुं० [मध्य०स०] १. वह रास्ता जिससे किसी स्थान का धूआँ बाहर निकलता है। धुआँरा। २. दे० 'पितृयान'।

धूम-पान—पुं० [ष०त०] १. साधुओं आदि का आग के धूएँ में पड़े रहना। २. सुश्रुत के अनुसार कुछ विशिष्ट प्रकार की औषधियों का धूआँ जो नल द्वारा रोगी को सेवन कराया जाता था। ३. तमाकू, सुरती आदि को सुलगाकर (नशे आदि के लिए) बार-बार खींचकर मुंह में लेना और बाहर निकालना। तमाकू, बीड़ी, सिगरेट आदि पीना।

धूम-पोत—पुं० [मध्य०स०] धूएँ या भाप की सहायता से समुद्र में चलनेवाला आधुनिक ढंग का जहाज। धूआँ-कश।

धूम-प्रभा—स्त्री० [ब०स०] नरक, जो सदा धूएँ से भरा रहता है।

धूम-यान—पुं० [ब०स०] पुराणानुसार, पृथ्वी के नीचे की ओर का वह मार्ग जिससे होकर पापियों की आत्माएँ नीचे या अधःलोक की ओर जाती हैं।

धूम-योनि—पुं० [ब०स०] बादल, जिसकी उत्पत्ति धूएँ से मानी गई है।

धूमर—वि०=धूमिल।

धूम-रज (स्)—पुं० [ष०त०] १. घर का धूआँ। २. छतों और दीवारों में लगनेवाली धूएँ की कालिख।

धूमरा—वि०=धूमर (धूमिल)।

धूमरी†—स्त्री० १.=धूम। २.=धूम्र।

धूमल—वि० [सं० धूम√ला (लेना)+क] धूएँ के रंग का। लाली लिये काले रंग का।

†वि०=धूमिल।

धूमला†—वि०=धूमिल।

धूमवान् (वत्)—वि० [सं० धूमवत्] [स्त्री० धूमवती] जिसमें या जहाँ धूआँ हो। धूएँ से युक्त।

धूम-सार—पुं० [ष०त०] घर का धूआँ।

धूमसी—स्त्री० [सं०] उरद का आटा या चूर्ण। धुआँस।

धूमांग—वि० [धूम-अंग ब०स०] धूएँ के रंग के-से अंगोंवाला।

पुं० शीशम का पेड़।

धूमाक्ष—वि० [धूम-अक्षि ब०स०, अच्] [स्त्री० धूमाक्षी] जिसकी आँखें धूएँ के रंग जैसी हों।

धूमाग्नि—स्त्री० [धूम-अग्नि मध्य०स०] ऐसी आग जिसमें से धूआँ ही निकलता हो, लपट न उठती हो।

धूमाभ—वि० [धूम-आभा ब०स०] धूएँ के रंग जैसा।

धूमायन—पुं० [सं० धूम+क्यङ्+ल्युट्—अन] १. धूआँ उठाना या उत्पन्न करना। २. किसी चीज को ऐसा रूप देना कि वह भाप बनकर उड़ने लगे। ३. गरमी। ताप।

धूमायमान†—वि० [सं० धूम+क्यङ्+शानच्, मुक्] १. जो धूएँ के रूप में हो। २. धूएँ से भरा हुआ। धूएँ से युक्त या व्याप्त।

धूमाली—स्त्री० [सं० धूम+आली] आकाश में चारों ओर छाया हुआ धूआँ। उदा०—माली की मड़ई से उठ नभ के नीचे नभ सी धूमाली।

धूमावती—स्त्री० [सं० धूम+मतुप्—ङीप्, वत्व, दीर्घ] दस महाविद्याओं में से एक।

धूमिका—स्त्री० [सं० धूम+ठन्—इक, टाप्] कोहरा।

धूमित—वि० [सं० धूम+इतच्] १. धूएँ से ढका हुआ। २. जिसमें धूआँ लगा हो।

पुं० तंत्र शास्त्र में, सादे अक्षरों का मंत्र जो दूषित समझा जाता है।

धूमिता—स्त्री० [सं० धूमित+टाप्] वह दिशा जिसमें सूर्य पहले-पहल उन्मुख या प्रवृत्त होता हो।

धूमिनी—स्त्री० [सं० धूमिन्+ङीप्]=धूमी।

धूमिल—वि० [सं० धूम+इलच्] १. धूएँ के रंग का। लाली लिये काले रंग का। २. जिसमें इतना कम प्रकाश हो कि साफ दिखाई न पड़े। धुंधला। ३. मलिन। गंदा।

धूमी (मिन्)—वि० [सं० धूम+इनि] धूएँ से भरा हुआ।

स्त्री० १. अजमीढ़ की एक पत्नी का नाम। २. अग्नि की एक जिह्वा का नाम।

धूमोत्थ—वि० [सं० धूम-उद्√स्था (ठहरना)+क] धूएँ से निकला हुआ।

पुं० नौसादर। वज्रक्षार।

धूमोद्गार—पुं० [धूम-उद्गार ष०त०] अजीर्ण या अपच के कारण आने-वाला धूएँ का-सा खट्टा डकार।

धूमोपहत—भू० कृ० [धूम-उपहत तृ० त०] धूएँ के फलस्वरूप जिसका गला घुट गया हो।

पुं० एक तरह का रोग।

धूमोर्णा—स्त्री०[सं०]१. यम की पत्नी का नाम। २. मार्कण्डेय की पत्नी का नाम।

धूम्या—स्त्री०[सं० धूम+य—टाप्] १. धूम-पुंज। २. धूएँ का गहरा और घना बादल।

धूम्याट—पुं०[सं० धूम्या√अट (गति)+अच्] एक पक्षी । भृंग।

धूम्र—वि०[सं० धूम√रा (देना)+क, पृषो० सिद्धि] धूएँ के रंग का। लाली लिये काले रंग का।

पुं०१. धूएँ का या धूएँ का-सा रंग। लाली लिये काला रंग। २. मानिक या लाल का धुँधलापन जो एक दोष माना गया है। ३. महादेव। शिव। ४. कार्तिकेय का एक अनुचर। ५. राम की सेना का एक भालू। ६. फलित ज्योतिष में एक प्रकार का योग। ७. मेढ़ा। ८. शिलारस नामक गंध द्रव्य।

धूम्रक—पुं०[सं० धूम्र√कै (प्रकाशित होना)+क] ऊँट।

धूम्र-कांत—पुं०[कर्म० स०] एक प्रकार का रत्न या नग।

धूम्र-केतु—पुं०[ब०स०] राजा भरत के एक पुत्र का नाम। (भागवत)

धूम्र-केश—पुं०[ब०स०] १. राजा पृथु का एक पुत्र। २. कृष्णाश्व का एक पुत्र, जो उसकी अर्चि नाम की स्त्री से उत्पन्न हुआ था। (भागवत)

धूम्र-नेत्र—पुं०[ब०स०] छत या दीवार में से धूआँ निकलने का छेद। धुआँरा। धूआँदान।

धूम्र-पट—पुं०=धूमपट।

धूम्र-पत्रा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] एक प्रकार का पौधा जो आयुर्वेद में तीता, रुचिकारक, गरम, अग्निदीपक तथा शोथ, कृमि और खाँसी को दूर करनेवाला माना गया है। सुलभा। गृध्रपत्रा।

धूम्र-पान—पुं०=धूम-पान।

धूम्र-मूलिका—स्त्री०[ब०स०, कप्, टाप्, इत्व] शूली नामक तृण।

धूम्र-लोचन—पुं०[ब०स०] १. कबूतर। २. शुंभ दानव का एक सेनापति।

धूम्र-वर्ण—वि० [ब० स०] धूएँ के रंग का। ललाईपन लिये काला। धूमिल।

पुं० उक्त प्रकार का रंग।

धूम्रवर्णा—स्त्री०[सं० धूम्रवर्ण+टाप्] अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।

धूम्र-शूक—पुं०[ब०स०] ऊँट।

धूम्रा—स्त्री०[धूम्र+अच्—टाप्] एक प्रकार की ककड़ी।

धूम्राक्ष—वि०[धूम्र-अक्षि ब०स०, अच्] जिसकी आँखें धूएँ के रंग की हों।

पुं० रावण का एक सेनापति।

धूम्राट—पुं०[सं० धूम्र√अट् (गति)+अच्] धूम्याट पक्षी। भिंगराज।

धूम्राभ—पुं० [धूम्र-आभा ब०स०]१. वायु। २. वायुमंडल।

धूम्रार्चि (स्)—स्त्री०[धूम्र-अर्चिस ब०स०] अग्नि की दस कलाओं में से एक।

धूम्राश्व—पुं०[धूम्र-अश्व ब० स०] इक्ष्वाकु वंशीय एक राजा।

धूम्रिका—स्त्री० [सं० धूम्रा+कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व]शीशम की तरह का एक प्रकार का पेड़।

धूम्रीकरण—पुं० [सं० धूम्र+च्वि, ईत्व√कृ (करना)+ल्युट्—अन] (रोग के कीटाणुओं से मुक्त करने के लिए या हवा की गंदगी दूर करने के लिए) कमरे आदि में सुगंधित धूप, संक्रमणनाशक वाष्प आदि प्रसारित करना। (फ्युमिगेशन)

धूर—स्त्री० [सं० धुर] जमीन की एक नाप जो एक बिस्वांसी के बराबर होती है। बिस्वे का बीसवाँ भाग।

स्त्री० [?]एक प्रकार की घास।

†स्त्री०=धूल।

अव्य०=धुर।

पुं० [?]बादल।

धूरकट—पुं० दे० 'धुरकुट'।

धूरजटी—पुं०=धूर्जटि।

धूर डाँगर—पुं०[देश०] पशु, विशेषतः सींगोंवाला पशु।

धूरत†—वि०=धूर्त।

धूर-धान—पुं०=धूल-धानी।

धूर-धानी†—स्त्री०=धूल-धानी।

धूर-यात्रा†—स्त्री०=धूलियात्रा।

धूर-संझा—स्त्री०[सं० धूलि+संध्या] गोधूलि का समय।

धूरा—पुं०[हिं० धूर]१. धूल। गर्द। २. महीन चूर्ण। बुकनी। ३. रोगी के हाथ-पैर ठंढे हो जाने पर गरम राख या सोंठ आदि के चूर्ण से वे अंग धीरे-धीरे मलने की क्रिया, जिससे हाथ-पैर में फिर गरमाहट आ जाती है।

क्रि० प्र०—करना।—देना।

४. अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए की जानेवाली चापलूसी या मीठी-मीठी बातों से दिया जानेवाला भुलावा।

क्रि० प्र०—करना।—देना।

धूरि—स्त्री०=धूल। उदा०—जब आवत संतोष धन, सब धन धूरि समान।—तुलसी।

धूरि-छेत्र*—पुं०[सं० धूलि+क्षेत्र] जगत। संसार। उदा०—धूरि क्षेत्र में आइ कर्म करि हरिपद पावै।—नंददास।

धूरिया-बेला—पुं०[हिं०धूर+बेला]एक प्रकार का बेला (पौधा और फूल)।

धूरिया-मलार—पुं० [धूरिया ? +सं०मल्लार] संपूर्ण जाति का एक प्रकार का मल्लार जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

धूरे—अव्य० १. धौरे। २. धीरे।

धूर्जटि—पुं० [सं० धूर्—जटि ब० स०] शिव। महादेव।

धूर्त—वि० [सं०√धूर्व् (हिंसा)+तन्] [भाव० धूर्तता] १. जो कपट या छलपूर्ण आचरण करके अथवा चालाकी या दाँव-पेंच के द्वारा अपना काम इस प्रकार निकाल लेता हो कि लोगों को सहसा उसके वास्तविक स्वरूप का पता तक न चलने पाता हो। बहुत बड़ा चालाक। २. कपटी। छली। धोखेबाज। ३. दुष्ट। पाजी।

पुं० १. साहित्य में, शठ नायक का एक भेद। २. जुआरी जो तरह-तरह के दाँव-पेच करता है। ३. चोर नामक गंध-द्रव्य। ४. लोहे की मैल या मोरचा। ५. धतूरा। ६. विट् लवण।

धूर्तक—पुं [सं० धूर्त+कन्] १. जुआरी। २. गीदड़। ३. कौरव्य कुल का एक नाग।

धूर्त-चरित—पुं० [ष० त०] १. धूर्तों का चरित्र। २. [ब० स०] संकीर्ण नाटक का एक भेद।

धूर्त्तता—स्त्री० [सं० धूर्त+तल्—टाप्] धूर्त होने की अवस्था, गुण या भाव। दुष्ट उद्देश्य से की जानेवाली चालाकी।

धूर्त-मानुषा—स्त्री० [धूर्त=हिंसित-मानुष ब० स०, टाप्] रास्ना लता।

धूर्त-रचना—स्त्री० [ष० त०] छल-कपट।

धूर्धर—वि० [सं० धुर्-धर ष० त०] १. बोझ ढोनेवाला। भारवाही। २. दे० 'धुरंधर'।

धूर्य—पुं० [सं०=धुर्य पृषो० सिद्धि] विष्णु।

धूर्वह—वि० [सं० धुर्-वह ष० त०, पृषो० दीर्घ] १. भार वहन करनेवाला। २. कार्य का दायित्व अपने ऊपर लेनेवाला।

पुं० बोझ ढोनेवाला पशु।

धूर्वी—स्त्री० [सं० धुर्√अज् (गति)+क्विप्, वी आदेश] रथ का अग्र-भाग।

धूल—स्त्री० [सं० धूलि] १. सूखी मिट्टी के वे सूक्ष्म कण जो हवा या आँधी के समय वातावरण में उड़ते रहते हैं। गर्द। रज। जैसे—लड़के धूल उड़ाते हैं।

क्रि० प्र०—उड़ना।

मुहा०—(किसी जगह) **धूल उड़ना या बरसना**=ध्वस्त या नष्ट हो जाने के कारण या चहल-पहल न रहने के कारण बहुत उदासी छाना। तबाही या बरबादी के लक्षण स्पष्ट दिखाई देना। (किसी व्यक्ति की) **धूल उड़ाना**=(क) किसी की त्रुटियों, दोषों, बुराइयों आदि की खूब चर्चा करके उसे परम तुच्छ ठहराना। (ख) खूब उपहास करना। दिल्लगी उड़ाना। (किसी का) **धूल उड़ाते या फाँकते फिरना**=दुर्दशा भोगते हुए इधर-उधर मारे-मारे फिरना। **धूल की रस्सी बटना**=(क) बिना किसी आधार या तत्त्व के कोई बड़ा काम करने का प्रयत्न करना। (ख) अनहोनी या व्यर्थ की बात के लिए परिश्रम या प्रयत्न करना। (किसी के आगे) **धूल चाटना**=बहुत गिड़गिड़ाकर अपनी अधीनता या दीनता प्रकट करना। (जगह-जगह की) **धूल छानना**=किसी काम के लिए जगह-जगह दुर्दशा भोगते हुए या मारे-मारे फिरना। (किसी की) **धूल झड़ना**=मारे-पीटे जाने पर भी इस प्रकार ज्यों के त्यों रहना कि मानों कुछ हुआ ही न हो। (परिहास और व्यंग्य) जैसे—अच्छा जाने दो; तुम्हारे शरीर की धूल झड़ गई।

२. किसी वस्तु पर पड़े हुए उक्त कण। जैसे—कपड़े पर बहुत धूल पड़ी है।

क्रि० प्र०—पड़ना।

मुहा०—**धूल झाड़कर अलग या चलता होना**=अपमान, आघात आदि सहकर भी उसकी उपेक्षा करना। (किसी की) **धूल झाड़ना**=(क) (किसी को) मारना-पीटना। (विनोद) (ख) बहुत ही तुच्छ या हीनभाव से किसी की चापलूसी और सेवा-शुश्रूषा करना। (किसी बात पर) **धूल डालना**=(क) उपेक्ष्य या तुच्छ समझकर जाने देना। ध्यान न देना। (ख) अनुचित और निंदनीय समझकर किसी बुरी बात की चर्चा फैलने न देना। जान-बूझकर छिपाने या दबाने का प्रयत्न करना। **धूल फाँकना**=(क) दुर्दशा भोगते हुए व्यर्थ का प्रयत्न करना। (ख) जान-बूझकर सरासर झूठ बोलना। (अपने) **सिर पर धूल डालना**=कोई अनुचित काम हो जाने पर बहुत पछताना और सिर धुनना। (किसी के) **सिर पर धूल डालना**=बहुत ही तुच्छ या हीन समझकर उपेक्षा करना या दूर हटाना।

पद—**पैरों की धूल**=अत्यंत तुच्छ या हीन। परम उपेक्ष्य। जैसे—वह तो आपके पैरों की धूल है।

३. मिट्टी।

मुहा०—**धूल में मिलना**=(क) पूर्णतया नष्ट हो जाना कि नाम-निशान तक न रहे। (ख) चौपट हो जाना।

४. धूल के समान तुच्छ वस्तु। जैसे—इस कपड़े के सामने वह धूल है।

क्रि० प्र०—समझना।

धूलक—पुं० [सं० √धू (काँपना)+लक] जहर। विष।

धूल-कूप—पुं० [सं०] हिम-नदी के तल पर कहीं-कहीं दिखाई देनेवाले वे गहरे गड्ढे जो कड़ी धूप पड़ने से बनते हैं और जिनमें ऊपर पड़ी हुई धूल समाकर नीचे बैठ जाती है। (डस्ट वेल)

धूल-धक्कड़—पुं० [हिं० धूल+धक्का] १. चारों ओर उड़नेवाली धूल। २. चारों ओर मचनेवाला निंदनीय उत्पात या उपद्रव। जैसे—चुनाव के समय हर जगह एक-सा धूल-धक्कड़ दिखाई देता था।

धूल-धान—पुं०=धूल-धानी।

धूल-धानी—स्त्री० [हिं० धूल+धान?] १. गर्द या धूल का ढेर। २. चूर-चूर करके धूल की तरह बनाने की क्रिया या भाव। ३. ध्वंस। विनाश। ४. सर्वनाश।

धूल-यात्रा—स्त्री०=धूलि-यात्रा।

धूला†—पुं० [देश०] टुकड़ा। खंड। कतरा।

†पुं०=धूल।

धूलि—स्त्री० [सं०√धू+लि] धूल। गर्द।

धूलि-कदंब—पुं० [ब० सं०] एक प्रकार का कदंब का वृक्ष और उसका फल।

धूलिका—स्त्री० [सं० धूलि+कन्—टाप्] १. महीन जल-कणों की झड़ी। फुहार। २. कोहरा।

धूलि-गुच्छक—पुं० [ष० त०] अबीर-गुलाल आदि, जो होली में एक-दूसरे पर डाले जाते हैं।

धूलि-चित्र—पुं० [मध्य० स०] वे आकृतियाँ या कोष्ठक, जो रंगों के चूर्ण जमीन पर भुरक कर बनाये जाते हैं। साँझी। (देखें)

धूलि-धूसर—वि०=धूलि-धूसरित।

धूलि-धूसरित—वि० [तृ० त०] धूल पड़ने के कारण जिसका रंग धूसर या मटमैला हो गया हो।

धूलि-ध्वज—पुं० [ब० स०] वायु। हवा।

धूलि-पुष्पिका—स्त्री० [ब० स०, कप्—टाप्, इत्व] केतकी।

धूलि-यात्रा—स्त्री० [मध्य० स०?] किसी देवता के धाम में पहुँचने पर उसके मन्दिर में जाकर किया जानेवाला वह दर्शन जो रास्ते में पैरों पर पड़ी हुई धूल बिना धोये अर्थात् सीधे मन्दिर में पहुँचकर किया जाता है। (पैदल यात्री)

धूलिया-पीर—पुं० [हिं० धूल+फा० पीर] एक कल्पित पीर जिसका नाम बच्चे खेलों आदि में लिया करते हैं। जैसे—तुम्हें धूलिया-पीर की कसम है, वहाँ मत जाना।

धूवाँ—पुं०=धूआँ।

धूसना—स० [सं० ध्वंसन] १. खराब या निकम्मा करने के लिए कुचलना, दबाना या मलना-दलना। दलन या मर्दन करना। २. दे० 'ठूसना'।

धूसर—वि० [सं०√धू+सरन्] १. धूल के रंग का। भूरे या मटमैले रंग का। खाकी। २. जिसमें धूल लगी या लिपटी हो।

पुं० १. पीलापन लिये सफेद अर्थात् भूरा या मटमैला रंग। २. गधा। ३. ऊँट। ४. कबूतर। ५. एक व्यापारिक जाति, जिसे कुछ लोग वैश्यों में और कुछ लोग ब्राह्मणों में मानते हैं। ढूसर।

धूसरच्छदा—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] एक प्रकार का पौधा, जिसे बुहना या बोहना भी कहते हैं।

धूसर-पत्रिका—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्+कन्, टाप्, ह्रस्व] हाथीसूँड़ का पौधा।

धूसरा—वि० [सं० धूसर] [स्त्री० धूसरी] १. धूल के रंग का। मटमैला। खाकी। २. जिस पर धूल पड़ी या लगी हो। धूल से सना हुआ।

स्त्री० [सं०] पांडुफली।

धूसरित—वि० [सं० धूसर+इतच्] १. धूल लगने के कारण जो मैला-कुचैला हो गया हो। धूल से लिपटा हुआ। २. भूरे या मटमैले रंग का।

धूसरी—स्त्री० [सं०] किन्नरियों का एक वर्ग।

धूसला†—वि०=धूसरा।

धूस्तूर—पुं० [सं०√धूस् (कान्ति)+क्विप्,√तूर् (शीघ्रता)+क, धूस्-तूर कर्म० स०] धतूरा।

धूहा—पुं० [हिं० ढूह] १. ढूह। २. बाँस पर टाँगी जानेवाली काली हाँड़ी या पुतला, जो खेतों में पक्षियों को डराकर दूर रखने के लिए खड़ा किया जाता है।

धृक—अव्य०=धिक्।

धृग—अव्य०=धृक।

धृत—वि० [सं०√धृ (धारण)+क्त] १. हाथ से धरा या पकड़ा हुआ। २. गिरफ्तार किया हुआ। ३. धारण किया हुआ। ४. निश्चित या स्थिर किया हुआ। ५. पतित।

पुं० १. ग्रहण या धारण करने का भाव। २. कुश्ती लड़ने का एक ढंग। ३. तेरहवें मनु रौच्य के पुत्र का नाम। ४. पुराणानुसार द्रुह्यु-वंशीय धर्म का एक पुत्र।

धृतकेतु—पुं० [सं०] वसुदेव के बहनोई का नाम। (गर्ग संहिता)

धृत-दंड—वि० [ब० स०] १. जिसे दंड मिला हो। दंडित। २. दंड देनेवाला।

धृतदेवा—स्त्री० [सं०] देवक की एक कन्या।

धृतमाली—पुं० [सं०] अस्त्रों को निष्फल करनेवाला एक प्रकार का अस्त्र। अस्त्रों का एक संहार। (रामायण)

धृत-राष्ट्र—पुं० [ब० स०] १. ऐसा देश जिसे कोई अच्छा और योग्य राजा धारण करता अर्थात् अपने शासन में रखता हो। २. ऐसा राजा जिसका राज्य और शासन दृढ़ हो; अर्थात् जो देश को पूर्णतः अपने अधिकार या वश में रखता हो। ३. महाभारत काल के एक प्रसिद्ध राजा, जो विचित्रवीर्य के पुत्र और दुर्योधन के पिता थे। ये अन्धे थे। ४. एक नाग का नाम। ५. बौद्धों के अनुसार एक गंधर्व राजा। ६. जनमेजय के एक पुत्र। ७. एक प्रकार का हंस, जिसकी चोंच और पैर काले होते हैं।

धृतराष्ट्री—स्त्री० [सं० धृतराष्ट्र+ङीष्] १. कश्यप ऋषि की पत्नी ताम्रा से उत्पन्न ५ कन्याओं में से एक, जो हंसों की आदि माता थी। २. धृतराष्ट्र की पत्नी।

धृत-वर्मा (र्मन्)—वि० [ब० स०] जिसने वर्म अर्थात् कवच धारण किया हो।

पुं० त्रिगर्त्त का राजकुमार, जिसके साथ अर्जुन को उस समय युद्ध करना पड़ा था जब वे अश्वमेध के घोड़े की रक्षा के लिए उसके साथ गये थे।

धृत-विक्रय—पुं० [मध्य० स०] तौलकर चीजें बेचने का ढंग या प्रकार। (कौ०)

धृतव्रत—वि० [ब० स०] जिसने कोई व्रत धारण किया हो।

पुं० पुरुवंशीय जयद्रथ के पुत्र विजय का पौत्र।

धृतात्मा (त्मन्)—वि० [धृत-आत्मन् ब० स०] १. जो अपनी आत्मा या मन को अच्छी तरह वश में और स्थिर रखता हो। २. धीर।

पुं० विष्णु।

धृति—स्त्री० [सं०√धृ+क्तिन्] १. धारण करने की क्रिया या भाव। २. धारण करने का गुण या शक्ति। धारणा-शक्ति। ३. चित्त या मन की अविचलता, दृढ़ता या स्थिरता। ४. धीर होने की अवस्था या भाव। धैर्य। ५. साहित्य में, एक संचारी भाव जिसमें इष्टप्राप्ति के कारण इच्छाओं की पूर्ति होती है। ६. दक्ष की एक कन्या, जो धर्म की पत्नी थी। ७. अश्वमेध की एक आहुति। ८. सोलह मातृकाओं में से एक। ९. अठारह अक्षरोंवाले वृत्तों की संज्ञा। १०. चंद्रमा की सोलह कलाओं में से एक कला का नाम। ११. फलित ज्योतिष में, एक प्रकार का योग।

पुं० १. जयद्रथ राजा के पौत्र का नाम। २. एक विश्वेदेव का नाम। ३. यदुवंशी वभ्रु का पुत्र।

धृतिमान (मत्)—वि० [सं० धृति+मतुप्] [स्त्री० धृतिमती] १. धैर्यवान्। २. तुष्ट। तृप्त।

धृत्वरी—स्त्री० [सं०√धृ+क्वनिप्+ङीप्, र आदेश] पृथ्वी।

धृत्वा (त्वन्)—पुं० [सं०√धृ+क्वनिप्] १. विष्णु। २. ब्रह्मा। ३. धर्म। ४. आकाश। ५. समुद्र। ६. चतुर आदमी।

धृषित—वि० [सं०]=धृषु।

धृषु—वि० [सं०√धृष्+कु] १. पराजित करनेवाला। वीर। २. आक्रमण करनेवाला।

पुं० राशि। समूह।

धृष्ट—वि० [सं०√धृष्+क्त] [भाव० धृष्टता] १. बड़ों के समक्ष लज्जा या संकोच त्यागकर ओछा या बेहूदा काम करनेवाला। २. ऐसा काम करनेवाला जिससे बड़ों के सम्मान को कुछ धक्का लगता हो। ३. जो अनुचित काम करने से भयभीत या संकुचित न होता हो। दुस्साहसी।

पुं० १. साहित्य में, वह नायक जो बार-बार वही काम करता हो जिससे प्रेमिका खिन्न होती हो और मना किये जाने पर भी न मानता हो।

२. चेदिवंशीय कुंति का पुत्र। (हरिवंश) ३. सातवें मनु का एक पुत्र। ४. अस्त्रों का एक प्रकार का प्रतिकार या संहार।

धृष्टकेतु—पुं० [सं०] १. चेदि देश के राजा शिशुपाल का एक पुत्र जिसका वध द्रोणाचार्य ने महाभारत के युद्ध में किया था। २. नवें मनु रोहित के पुत्र। ३. जनक-वंशीय सुध्वति के पुत्र।

धृष्टता—स्त्री० [सं० धृष्ट+तल्—टाप्] १. धृष्ट होने की अवस्था या भाव। २. स्वभाव की ऐसी उद्दंडता जो शील-संकोच के अभाव के कारण होती है। ३. धृष्ट बनकर किया जानेवाला आचरण या व्यवहार। ४. बड़ों के सामने किया जानेवाला ओछा या बेहूदा आचरण। गुस्ताखी।

धृष्टद्युम्न—पुं० [सं०] राजा द्रुपद का एक पुत्र, जिसने पिता का बदला चुकाने के लिए महाभारत के युद्ध में द्रोणाचार्य का वध किया था।

धृष्टा—स्त्री० [सं० धृष्ट+टाप्] दुश्चरित्रा स्त्री।
वि० 'धृष्ट' का स्त्री०।

धृष्टि—पुं० [सं०√धृष्+क्तिच्] १. एक प्रकार का यज्ञ-पात्र। २ हिरण्याक्ष का एक पुत्र। ३. दशरथ का एक मंत्री।.

धृष्णक्—वि० [सं०√धृष्+नजिङ्]=धृष्ट।

धृष्णि—पुं० [सं०√धृष्+नि] प्रकाश की रेखा। किरण।

धृष्णु—वि० [सं०√धृष्+क्नु]=धृष्ट।
पुं० १. वैवस्वत मनु के एक पुत्र। २. सावर्णि मनु के एक पुत्र। ३. एक रुद्र का नाम।

धृष्णवोजा (जस्)—पुं० [सं०] कार्तवीर्य के एक पुत्र।

धृष्य—वि० [सं०√धृष्+क्यप्] १. जिसका धर्षण हो सके या होना उचित हो। धर्षणीय। २. जिस पर आक्रमण किया जा सके। आक्रमण किये जाने के योग्य। ३. जीते जाने के योग्य।

धेड़ी कौआ—पुं० [धेड़ी? +हिं० कौआ] बड़ा काला कौआ। डोम कौआ।

धेन—पुं० [सं०√धे (पान)+नन्] १. समुद्र। २. नद।
†स्त्री०=धेनु।

धेना—स्त्री० [सं० धेन+टाप्] १. नदी। २. वाणी। ३. दुधारू गाय।

धेनिका—स्त्री० [सं० धेन+कन्—टाप्, इत्व] धनिया।

धेनु—स्त्री० [सं०√धे+नु] १. दुधारू गाय। सवत्सा गौ। २. गाय। गौ। ३. पृथ्वी। ४. भेंट।

धेनुक—पुं० [सं० धेनु+कन्] १. एक प्राचीन तीर्थ। २. वह राक्षस जिसे बलदेव जी ने मारा था। ३. दे० 'धैनुक' (आसन)।

धेनुका—स्त्री० [सं० धेनुक+टाप्] १. धेनु। गौ। २. कोई मादा पशु। ३. कामशास्त्र में, हस्तिनी स्त्री। ४. पार्वती। ५. छोटी तलवार। कटार।

धेनु-दुग्ध—पुं० [ष० त०] १. गाय का दूध। २. [ब० स०] चिर्भिटा नामक वनस्पति।

धेनु-दुग्ध-कर—पुं० [ष० त०] गाजर, जिसे खाने से गौओं का दूध बढ़ता है।

धेनु-धूलि—स्त्री० दे० 'गो-धूलि'।

धेनु-मक्षिका—स्त्री० [मध्य० स०] बड़े मच्छड़, जो चौपायों को काटते हैं। डाँस। डंस।

धेनुमती—स्त्री० [सं० धेनु+मतुप्—ङीप्] गोमती नदी।

धेनु-मुख—पुं० [ब० स०] गोमुख नाम का बाजा। नरसिंहा।

धेनुष्या—स्त्री० [सं० धेनु+यत्, षुक्, टाप्] वह गाय जो बंधक या रेहन रखी गई हो।

धेय—वि० [सं०√धा (धारण)+यत्, ईत्व] १. जो धारण किये जाने के योग्य हो। जिसे धारण कर सकें। धार्य। २. जो पीया जा सके। पेय। ३. जिसका पालन-पोषण किया जा सके या किया जाने को हो। पाल्य।
प्रत्य० एक प्रत्यय जो संज्ञाओं के अन्त में लगकर अधिकारी, पात्र, वाला आदि का अर्थ देता है। जैसे—नामधेय, भागधेय।

धेयना*—अ०=ध्यान करना।

धेर—पुं० [देश०] एक अनार्य्य जाति; जो मरे हुए जानवरों का मांस खाती है।

धेरा—वि० [हिं० डेरा=भेंगा] भेंगा।
पुं० [हिं० धेरी] १. पुत्र। २. लड़की का पुत्र। नाती।

धेरी—स्त्री० [सं० दुहिता] पुत्री।

धेलचा†—पुं० [हिं० अधेला] आधा पैसा। अधेला। धेला।
वि० एक अधेले अथवा धेले के मूल्य का। उदा०—मानों कोई धेलचा कनकौआ गंडेवाले कनकौवे को काट गया हो।—प्रेमचन्द।

धेला—पुं०=अधेला। (पश्चिम)

धेली—स्त्री० [हिं० आधा] आधा रुपया या उसका सिक्का। अठन्नी।

धेवता† —पुं० [स्त्री० धेवती] दोहता (नाती)।

धैं† —अव्य० [हिं० दुहाई] दुहाई। जैसे—राम-धैं।

धैताल† —वि०=धौताल।

धैनव—वि० [सं० धेनु+अञ्] १. धेनु अर्थात् गौ से संबंध रखनेवाला। २. गौ से उत्पन्न या प्राप्त होनेवाला। जैसे—धैनव दुग्ध।
पुं० धेनु अर्थात् गौ का बच्चा। बछड़ा।

धैना† —पुं० [हिं० धरना=पकड़ना] १. पकड़ा या ग्रहण किया हुआ काम। २. पकड़ी या ग्रहण की हुई आदत। टेव। ३. जिद। हठ।
†स०=धरना (पकड़ना)।

धैनुक—पुं० [सं० धेनु+ठक्—क] १. गौओं का दल। २. कामशास्त्र में, एक प्रकार का आसन या रति-बंध।

धैर्य—पुं० [सं० धीर+ष्यञ्] १. मन का वह गुण या शक्ति जिसकी सहायता से मनुष्य कष्ट या विपत्ति पड़ने पर भी विचलित या व्यग्र नहीं होता और शान्त रहता है। संकट के समय भी उद्विग्नता, घबराहट, विकलता आदि से रहित होने की अवस्था या भाव। धीरज। सब्र।
क्रि० प्र०—धरना।

धैवत—पुं० [सं० धीमत्+अण्,पृषो० म को व] संगीत में, सात स्वरों में से छठा स्वर जो मदंती, रोहिणी और रम्या नाम की तीन श्रुतियों के योग से बनता है। पंचम और निषाद के बीच का स्वर। इसका संकेत-चिह्न 'ध' है।
विशेष—कहते हैं कि इस स्वर का उच्चारण मूलतः नाभि से होता है; और किसी के मत से घोड़े के हिनहिनाने और किसी के मत से मेंढक के टरटराने के समान होता है। यह षाड़व जाति का, क्षत्रिय वर्ण

का और पीले रंग का माना गया है और भयानक तथा वीभत्स रस के लिए उपयुक्त कहा गया है।

धैवत्य—पुं० [सं० धीवन्+ष्यञ्, न को त] चतुराई। चालाकी।

धोंकना†—अ० [?] काँपना, थरथराना या बार-बार हिलना। स०=धौंकना।

धोंडाल—वि० [हिं०] (जमीन या मिट्टी) जिसमें कंकड़-पत्थर आदि मिले हों।

धोंधवा†—पुं० [हिं० धूआँ] [स्त्री० अल्पा० धोंधकी] वह मार्ग जो घर का धूआँ बाहर निकालने के लिए छत या दीवार में बनाया जाता है।

धोंधा—पुं० [अनु०] १. मिट्टी आदि का बे-डौल पिंड। लोंदा। २. भद्दी और बे-डौल आकृति, पिंड या शरीर।

वि० १. बे-डौल। बे-ढंगा। २. मूर्ख। मूढ़।

पद—धोंधा बसंत=बहुत मोटा और वज्र मूर्ख। (व्यंग्य)

धो†—पुं० [हिं० धोना] एक बार किसी वस्त्र के धुलने या धोये जाने का भाव। धोव। जैसे—दो धो में धोती फट गई।

धोई—स्त्री० [हिं० धोना] १. वह दाल जो भिगो और धोकर छिलके से अलग कर ली गई हो। २. अफीम बनाने के बरतन की धोवन।

धोकड़ (१)†—वि० [देश०] मोटा-ताजा। हट्टा-कट्टा।

धोका†—पुं०=धोखा।

धोख†—पुं०=धोखा।

धोखा—पुं० [सं० द्रोघः प्रा० दोह] १. किसी को बहला या बहकाकर उसके स्वार्थ और अपने वचन के विरुद्ध किया जानेवाला अनैतिक आचरण। जैसे—आज भी वे समय पर धोखा देंगे।

मुहा०—धोखा खाना=ठगा जाना। **धोखा देना**=किसी के साथ छलपूर्ण व्यवहार करना।

२. पहचानने, समझने आदि में होनेवाली भूल। भ्रम। जैसे—आँखें धोखा खा गईं और रस्सी को साँप समझ बैठीं।

क्रि० प्र०—खाना।

३. भ्रम उत्पन्न करनेवाली कोई बात। ऐसी चीज जिसे देखकर धोखा होता हो।

पद—धोखे की टट्टी=(क) वह टट्टी या आवरण जिसकी आड़ से शिकारी शिकार करते हैं। (ख) दूसरों को भ्रम में डालनेवाली चीज या बात।

मुहा०—धोखा खड़ा करना=आडंबर रचना।

४. अनजान या अज्ञान से होनेवाली भूल।

पद—धोखे में या धोखे से=भूल से। जैसे—यह प्रश्न धोखे से छूट गया।

५. अनिष्ट की संभावना। जैसे—इस काम में धोखा है। ६. आशा या विश्वास के विरुद्ध होनेवाला कार्य या फल।

मुहा०—(किसी व्यक्ति का) धोखा दे जाना=असमय में ही मर जाना। जैसे—भाई साहब बहुत बुरे समय में धोखा दे गये।

७. बेसन, मैदे आदि का एक पकवान, जिसमें रूई आदि मिलाकर दूसरों को छकाने या बेवकूफ बनाने के लिए खिलाया जाता है। ८. दे० 'बिजूखा'। ९. दे० 'खट-खटा'।

धोखेबाज—वि० [हिं० धोखा+फा० बाज] [भाव० धोखेबाजी] जो प्रायः लोगों को धोखा देता रहता है। छली। धूर्त।

धोखेबाजी—स्त्री० [हिं० धोखेबाज] धोखेबाज होने की अवस्था, गुण या भाव। छल। धूर्तता।

धोटा †—पुं० [स्त्री० धोटी]=ढोटा (पुत्र या बालक)।

धोड़—पुं० [सं०] एक प्रकार का साँप।

धोतर—पुं० [सं०] १. एक प्रकार का मोटा कपड़ा जो गाढ़े की तरह का होता है। अधोतर। २. पहनने की धोती। (महाराष्ट्र)

धोतरा†—पुं० [?] १.=धोतर। २.=धतूरा।

धोती—स्त्री० [सं० अधोवस्त्र] प्रायः नौ-दस हाथ लम्बा और दो-ढाई हाथ चौड़ा कपड़ा, जो कमर और उसके नीचे के अंग ढकने के लिए पहना जाता है।

विशेष—स्त्रियाँ इससे कमर के नीचे के अंग ढकने के सिवा ऊपर के अंग भी ढक लेती हैं।

मुहा०—धोती ढीली होना=साहस छूट जाना।

स्त्री० दे० 'धौति'।

धोना—स० [सं० धावन=धोना] १. जल या कोई तरल पदार्थ डालकर गंदगी, धूल, मैल आदि दूर करना। जल की सहायता से साफ या स्वच्छ करना।

विशेष—इस क्रिया का प्रयोग उस आधार के संबंध में भी होता है जिस पर कोई अवांछित तत्त्व या पदार्थ पड़ा हो; जैसे—कपड़ा, बरतन, या हाथ-पैर धोना; और उस अवांछित तत्त्व या पदार्थ के संबंध में भी होता है, जिसे किसी आधार या चीज पर से हटाना अभीष्ट होता है; जैसे—कालिख, मैल या रंग धोना।

पद—धोया-धाया=(क) धोकर बिलकुल साफ या स्वच्छ किया हुआ। (ख) सब प्रकार के दोषों आदि से रहित।

२. कपड़ों आदि के संबंध में, खार, सज्जी, साबुन आदि की सहायता से अच्छी तरह मल या रगड़कर गंदगी, दाग, मैल आदि दूर करना। जैसे—यह धोबी कपड़े ठीक नहीं धोता। ३. जल या किसी तरल पदार्थ का किसी तल पर होते हुए चलना या बहना अथवा उसे स्पर्श करते हुए इधर-उधर होना। जैसे—(क) समुद्र हमारे देश के चरण धोता है। (ख) वह दिन-रात आँसुओं से मुँह धोती रहती थी। ४. इस प्रकार दूर करना या हटाना कि मानों जल से अच्छी तरह रगड़कर नष्ट या समाप्त कर दिया गया हो। जैसे—आपके अनुग्रह ने मेरे सब पाप धो दिये।

मुहा०—धो बहाना=पूरी तरह से दूर, नष्ट या समाप्त करना। नाम को भी न रहने देना। जैसे—आपने तो उनके सारे उपकार धो बहाये। **(किसी चीज से) हाथ धोना या धो बैठना** =सदा के लिए या स्थायी रूप से किसी चीज से रहित या वंचित होना। बिलकुल गवाँ देना। जैसे—अपनी जरा-सी भूल से वे इतनी बड़ी संपत्ति से हाथ धो बैठे। **हाथ धोकर (किसी काम या बात के) पीछे पड़ना**=और काम या बातें छोड़कर पूरी तरह से एक ही काम या बात में लग जाना। जैसे—आज-कल वह हाथ धोकर मुकदमे के पीछे पड़े हैं। **हाथ धोकर (किसी आदमी के) पीछे पड़ना**=किसी को पूरी तरह से अपमानित, दुःखी या पीड़ित करने के प्रयत्न में लग जाना। जैसे—तुम तो जिससे नाराज होते हो, हाथ धोकर उसी के पीछे पड़ जाते हो।

धोप—स्त्री० [?] तलवार। खंग।
पुं०=धो (धोव)।

धोपा—पुं० १=धोखा। २. =धोपेबाजी।

धोपेबाजी—स्त्री० [हिं० धोपा+फा० बाजी] किसी की आँख में धूल झोंककर या उसे मूर्ख बनाकर धोखा देने की क्रिया या भाव।

धोब†—पुं०=धो या धोव।

धोबइन†—स्त्री०=धोबिन।

धोबन—स्त्री०=धोबिन।

धोबिन—स्त्री० [हिं० धोबी का स्त्री०] १. कपड़े धोने का व्यवसाय करनेवाली अथवा धोबी जाति की स्त्री। २. दस-बारह अंगुल लंबी एक प्रकार की सुन्दर चिड़िया, जो जलाशयों के किनारे रहती है। इसकी बोली बहुत मीठी होती है। ३. बीर-बहूटी नाम का कीड़ा। ४. शीशम की जाति का एक प्रकार का बड़ा वृक्ष जिसकी लकड़ी परतदार होती और इमारत के काम में आती है।

धोबिया-पाट—पुं०=धोबीपाट।

धोबी—पुं० [हिं० धोना] [स्त्री० धोबिन] १. एक जाति जो मैले कपड़े धोकर साफ करने का काम करती है। २. उक्त जाति का व्यक्ति।
पद—धोबी का कुत्ता=ऐसा तुच्छ, निकम्मा और व्यर्थ का व्यक्ति, जिसका कहीं ठौर-ठिकाना न हो। (धोबी का कुत्ता, घर का न घाट का, वाली कहावत के आधार पर)

धोबी-घाट—पुं० [हिं० धोबी+घाट] वह घाट जहाँ धोबी कपड़े धोते हैं।

धोबी-घास—स्त्री० [हिं०] बड़ी दूब। दूबा।

धोबी पछाड़—पुं०=धोबीपाट।

धोबी-पाट—पुं० [हिं०] कुश्ती का एक पेंच जिसमें जोड़ का हाथ पकड़कर अपने कंधे की ओर खींचते हैं और उसे कमर पर लाद कर उसी तरह जमीन पर पटकते हैं जिस प्रकार धोबी कपड़े पछाड़ने के समय उन्हें पत्थर पर पटकता है।

धोम†—पुं०=धूम (धूआँ)।

धोमय†—वि० [सं० धूममय] १. धूसर। धूमिल। २. गंदा। मैला।

धोर†—पुं० [?] किनारा। तट। उदा०—अंड को धोर ह्याँ ते रहाई।—कबीर।
अव्य०=धौरे (पास)।

धोरण—पुं० [सं०√धोर् (गति)+ल्युट्—अन] १. सवारी। २. घोड़े की सरपट चाल। ३. दौड़। ४. कार्य करने का ढंग या नीति। (महाराष्ट्र)

धोरणि—स्त्री० [सं०√धोर्+नि] १. श्रृंखला। २. श्रेणी। ३. परंपरा।

धोरा†—वि०[स्त्री० धोरी]=धौरी (धवल या सफेद)।

धोरित—पुं०[सं० √सं० धोर्+क्त]१. गमन। चाल। २. घोड़े की दुलकी चाल।

धोरी—वि०[हिं० धुरा ?]१. धुरा अर्थात् मूल भार सँभालनेवाला। २. प्रधान। मुख्य।
पुं०१. वह जो स्वामी के रूप में पूरी तरह से देख-भाल, रक्षण आदि करता हो। जैसे—इस मकान का कोई धनी-धोरी नहीं है। उदा०—काहू को सरन है, कुबेर ऐसे धोरी को।—हठी। २. वह जो निरंतर कोई विशेष काम करता रहता हो। जैसे—धंधक-धोरी। ३. श्रेष्ठ व्यक्ति। ४. नेता। ५. बैल।

धोरे—अव्य०[सं० धार=किनारा] निकट। पास। समीप।

धोला—पुं०[सं० दुरालभा] जवासा। धमासा।

धोलाना†—स०=धुलाना।

धोव—पुं०[हिं० धोना] कपड़ा साफ करने के लिए होनेवाली उसकी प्रत्येक बार की धुलाई। वस्त्र के एक बार धुलाने का भाव। धो। जैसे—इस धोती पर अभी चार धोव भी नहीं पड़े कि यह फट गई।
क्रि० प्र०—पड़ना।

धोवत†—पुं०=धोवी।

धोवती†—स्त्री०=धोती।

धोवन—स्त्री०[हिं० धोवना=धोना]१. धोने की क्रिया या भाव। २. वह पानी जो कोई चीज धोने पर निकला हो। जैसे—चावलों की धोवन।

धोवना*—स०=धोना।

धोवा—पुं०[हिं० धोवना=धोना]१. कोई चीज धोने पर निकला हुआ गंदा या मैला पानी। धोवन। २. जल। पानी। ३. अरक।

धोवाना†—स०=धुलाना।
अ०=धुलना।

धोसा†—पुं०[?] गुड़ आदि का सूखा हुआ पिंड। भेली।

धौं—अव्य०[सं० अथवा]अवधी, ब्रज आदि बोलियों का एक अव्यय, जिसका प्रयोग नीचे लिखे अर्थों और रूपों में होता है—१. विकल्पात्मक कथन में, अनिश्चय या संशय के साथ किंचित् कुतूहल का भाव सूचित करने के लिए। ठीक कहा नहीं जा सकता कि ऐसा है या वैसा, अथवा यह है या वह। उदा०—सुनत सुदामा जात मनहिं मन चीन्हेंगे धौं नाहीं।—सूर। २. न जाने। पता नहीं। मालुम नहीं। उदा०—अब धौं कहा करिहि करतारा।—तुलसी। ३. 'तो' 'भला' आदि की तरह किसी बात या शब्द पर केवल जोर देने के लिए। उदा०—(क) जड़ पंच मिलै जेहि देह करी, करनी लखु धौं धरनीधर की।—तुलसी। (ख)तुम कौन धौं पाठ पढ़े हौ लला।—घनानंद। ४. तुम्हीं कहो या बताओ तो सही। उदा०—(क)अब धौं कहाँ कौन दर जाऊँ।—सूर। (ख) कृपा सो धौं कहाँ बिसारी राम।—तुलसी। ५. संयोजक अव्यय 'कि' की तरह या उसके स्थान पर। उदा०—हमहुँ न जानें धौं सो कहाँ।—जायसी। ६. खाली'तो' की तरह या उसके स्थान पर। जैसे—कि धौं या की धौं। ७. निश्चित या स्पष्ट रूप से। अच्छी तरह। उदा०—तिमि अवध तुलसीदास प्रभु बिनु समुझि धौं जियँ भामिनी।—तुलसी।

धौंक—स्त्री०[हिं० धौंकना]धौंकने की क्रिया या भाव।
†स्त्री०[हिं० धधकना] आग की लपट। लौ।

धौंकना—स०[सं० धमन या धम्?]१. आग दहकाने के लिए पंखे, भाथी आदि की सहायता से, उस पर निरन्तर जोर की हवा पहुँचाते रहना। (ब्लोइंग)२. उग्रता या कठोरतापूर्वक किसी पर कोई भार रखना या लादना। जैसे—तुमने भी तो छोटे-से लड़के पर मन भर का भार धौंक दिया। ३. दंड के संबंध में उग्रता या कठोरतापूर्वक आदेश देना। जैसे--किसी पर जुरमाना धौंकना।

धौंकनी—स्त्री०[हिं० धौंकना, सं० धमनिका] १. प्रायः चमड़े की थैली का बना हुआ एक उपकरण, जिसे बार-बार खोलकर बन्द करने और दबाने से उसके अंदर भरी हुई हवा नीचे लगी हुई नली के रास्ते आग तक पहुँचकर उसे दहकाने या उसे सुलगाने में सहायक होती है। भाथी।

विशेष—प्रायः लोहार, सुनार आदि अपनी भट्ठी सुलगाने के लिए इसका प्रयोग करते हैं।

२. धातु, बाँस आदि की वह पतली नली जिससे मुँह से हवा फूंककर आग आदि सुलगाई जाती है। फुकनी।

धौंका—पुं०[हिं० धौंकना] गरमी में चलनेवाली तेज गरम हवा का झोंका।

धौंकिया—पुं०[हिं० धौंकना] १. धौंकनी चलाने अर्थात् धौंकनेवाला आदमी। २. वह कारीगर जो बरतनों की मरम्मत या उन पर कलई करने के लिए धौंकनी साथ लेकर जगह-जगह घूमता हो।

धौंकी—पुं०=धौंकिया।

स्त्री०=धौंकनी।

धौंज—स्त्री०[हिं० धावना=धाना या दौड़ना] १. दौड़-धूप। २. दौड़-धूप करने के लिए होनेवाली घबराहट या परेशानी।

धौंजन—स्त्री०=धौंज।

धौंजना—अ०[हिं० धौंज]१. दौड़-धूप करना। २. परेशान या हैरान होना।

स०१. पैरों से कुचलना। रौंदना। २. परेशान या हैरान करना।

धौंटा—पुं०[?] नटखट पशुओं की आँखों पर बाँधा जानेवाला आवरण या पट्टी। अंधियारी।

†पुं०=धोटा (पुत्र या बालक)।

धौंताल—वि०[हिं० धुन?] १. जो काम करने में अपनी धुन का पक्का हो। २. चतुर। चालाक। ३. चंचल। चपल। ४. निपुण। पटु। ५. साहसी। ६. उजड्ड। गँवार। ७. उपद्रवी। शरारती। (संभवतः व्यंग्यात्मक)

धौं-धौं-मार—स्त्री०[अनु० धम-धम+हिं० मार] उतावली। जल्दी। शीघ्रता।

क्रि० प्र०—मचाना।

धौंर†—स्त्री०[सं० धवल] एक प्रकार की सफेद ईख।

धौंस—स्त्री०[सं० दंश या हिं० धौंकना]१. किसी को असमंजस में पड़ा हुआ या दुर्बल समझकर उसके साथ किया जानेवाला ऐसा आचरण या व्यवहार अथवा उससे कही जानेवाली ऐसी बात जिससे वह डरकर धोखे में पड़ जाय और प्रतिकूल या विरुद्ध आचरण न कर सके। (प्रायः बराबरवालों के लिए प्रयुक्त) जैसे—तुम भी उनकी धौंस में आकर सौ रुपए गँवा बैठे।

विशेष—यह शब्द धमकी का बहुत-कुछ समानक होने पर भी भाव-व्यंजन की दृष्टि से कुछ हलका तथा धोखेबाजी के भाव से युक्त है।

२. इस प्रकार दिखाया जानेवाला भय तथा जमाया जानेवाला आतंक। जैसे—अच्छा, अब आप बहुत धौंस मत दिखाइए।

क्रि० प्र०—दिखाना।—देना।—में आना।

३. स्वार्थ-साधन के लिए किसी को दिया जानेवाला चकमा। झाँसा-पट्टी। भुलावा। ४. अधिकार, प्रभुत्व आदि का आतंक। धाक।

क्रि० प्र०—जमना।—जमाना।—बँधना।—बाँधना।

मुहा०—धौंस की चलना=अपना आतंक जमाते या भय दिखाते हुए धूर्ततापूर्ण आचरण या व्यवहार करना अथवा गहरी चाल चलना।

५. ब्रिटिश भारत में वह रुपया जो लगान या मालगुजारी ठीक समय पर न देने के कारण दंड-स्वरूप असामी या जमींदार से वसूली के खर्च के रूप में लिया जाता था।

मुहा०—धौंस बाँधना=दंड आदि के रूप में किसी के जिम्मे कोई खर्च लगाना या उससे वसूल करना।

†स्त्री०=धुवाँस।

धौंसना—स०[सं०, दंशन, हिं० धौंस]१. दंड आदि के रूप में कोई काम, खरच या भार किसी के जिम्मे लगाना। धौंकना। २. अपना काम निकालने के लिए किसी तरह की जबरदस्ती या बल-प्रयोग करना। ३. डराना-धमकाना। ४. डाँटना-डपटना। ५. मारना-पीटना।

धौंस-पट्टी—स्त्री०[हिं० धौंस+पट्टी] १. ऐसी बात-चीत जिसमें कुछ धमकी भी हो और कुछ भुलावा भी दिया जाय। २. झाँसा-पट्टी।

क्रि० प्र०—देना।

मुहा०—(किसी की) धौंस-पट्टी में आना=किसी की धमकी से डरकर या बहकावे में आकर कोई काम कर बैठना।

धौंसा—पुं० [हिं० धौंसना] १. बड़ा नगारा। डंका।

मुहा०—धौंसा देना=सेना का आक्रमण या कूच करने के लिए डंका या नगाड़ा बजाना।

२. शक्ति। सामर्थ्य। जैसे—किसी का क्या धौंसा है जो इस काम में हाथ डाले।

धौंसिया—पुं०[हिं० धौंस]१. दूसरों पर केवल धौंस जमाकर अपना काम निकालनेवाला। २. चालाक। धूर्त। ३. मध्ययुग में, वह व्यक्ति जो कुछ पारिश्रमिक लेकर जमींदारों की बाकी मालगुजारी असामियों से वसूल करने का काम करता था।

पुं०[हिं० धौंसा] वह जो धौंसा बजाने का काम करता हो।

धौ—पुं०[सं० धव] एक ऊँचा झाड़ या सदाबहार पेड़, जिसकी पत्तियाँ और छाल चमड़ा सिझाने के काम में आती हैं और फूलों से लाल रंग बनाया जाता है। धव।

पुं०[सं० धव] समस्त पदों के अंत में, पति। उदा०—गिराधौ, रमाधौ, उमाधौ अनंता।—केशव।

धौकना—स०=धौंकना।

धौकनी—स्त्री०=धौंकनी।

धौकरा†—पुं०=धौरा (बाकली की तरह का वृक्ष)।

धौ-कांदव—पुं०[सं० धान्य-कर्दम] एक प्रकार का धान और उसका चावल।

धौत—वि० [सं०√धाव् (शुद्धि)+क्त]१. जो धोया या धोकर साफ किया जा चुका हो। २. उजला। सफेद। ३. जो नहा-धो चुका हो। स्नात।

पुं० चाँदी। रूपा।

धौतय—पुं०[सं० धौत√या (गति)+क]सेंधा नमक।

धौत-शिला—स्त्री०[कर्म०स०] बिल्लौर। स्फटिक।

धौतात्मा (त्मन्)—वि०[धौत-आत्मन्, ब० स०] जिसकी आत्मा पापों के धुल जाने के कारण पवित्र और शुद्ध हो गई हो। पवित्रात्मा।

धौताल—वि०=धौंताल।

धौति—स्त्री०[सं० √धाव्+क्तिन्]१. धोकर साफ करने की क्रिया। धुलाई। २. योग की एक क्रिया जिसमें दो अंगुल चौड़ी और आठ-दस हाथ लंबी कपड़े की धज्जी मुँह से पेट के नीचे उतारते हैं, और फिर पानी पीकर उसे धीरे-धीरे बाहर निकालते हैं। इस क्रिया से पेट और आँतें धुलकर साफ हो जाती हैं। ३. उक्त क्रिया के लिए काम में लाई जानेवाली कपड़े की धज्जी या पट्टी।

धौम्य—पुं०[सं० धूम+यभ्]१. एक ऋषि, जो देवल के भाई और पांडवों के पुरोहित थे। और जो अब पश्चिमी आकाश में स्थित एक तारे के रूप में माने जाते हैं। २. एक ऋषि जो महाभारत के अनुसार व्याघ्रपद नामक ऋषि के पुत्र और बहुत बड़े शिव-भक्त थे। और शिव के प्रसाद से अजर, अमर और दिव्य ज्ञान संपन्न हो गये थे। ३. एक ऋषि का नाम जिन्हें आयोद भी कहते थे। इनके आरुणि, उपमन्यु और वेद नामक तीन शिष्य थे। ४. एक ऋषि, जो पश्चिम दिशा में तारे के रूप में स्थित माने जाते हैं।

धौम्र—वि०[सं० धूम्र+अण्]धूएँ के रंग का।
पुं० उक्त प्रकार का रंग।

धौर—पुं०[हिं० धौरा=सफेद] सफेद परेवा।

धौरहर—पुं०[सं० धवलगृह]१. मकान का वह ऊपरी भाग, जो खंभे की तरह बहुत ऊँचा गया हो और जिस पर चढ़ने के लिए अन्दर-अन्दर सीढ़ियाँ बनी हों। धरहरा। २. उक्त में बना हुआ कमरा। ३. दे०'धरहरा'।

धौरा—वि०[सं० धवल] [स्त्री० धौरी]१. श्वेत। सफेद। २. उजला। साफ।
पुं०१. सफेद रंग का बाल। २. धौ का पेड़। ३. पंडुक की तरह की एक चिड़िया, जो उससे कुछ बड़ी और खुलते रंग की होती है।
†पुं०[सं० धव]बाकली की तरह का एक प्रकार का वृक्ष जो मध्यभारत में अधिकता से होता है।

धौरादित्य—पुं०[सं०] शिवपुराण के अनुसार एक तीर्थ।

धौराहर—पुं०=धौरहर।

धौरितक—पुं०[सं० धोरित+अण्+कन्] घोड़े की पाँच प्रकार की चालों में से एक।

धौरिय—पुं०[सं० धौरेय] बैल।

धौरी—स्त्री०[हिं० धौरा]१. सफेद रंग की गाय। कपिला। २. एक प्रकार की चिड़िया।
स्त्री०=बाकली।

धौरे—अव्य०= धोरे (निकट या पास)। उदा०—धरि रहै हाथ माथ के धौरे।—नन्ददास।

धौरेय—वि०[सं० धुरा+ढक्—एय] धुर (रथ आदि) खींचनेवाला।
पुं० रथ में जोता जानेवाला बैल।

धौर्तक—पुं०[सं० धूर्त+वुन्—अक]=धूर्तता।

धौर्त्य—पुं०[सं० धूर्त+ष्यञ्] धूर्तता।

धौर्य—पुं०[सं० धुर+ष्यत्] घोड़े की एक प्रकार की चाल।

धौल—स्त्री०[अनु०]१. हाथ के पंजे या हथेली से सिर पर किया जानेवाला आघात।
क्रि० प्र०—जड़ना।—जमाना।—देना।—पड़ना।—मारना।—लगाना।
पद—धौल-धप्पा या धौल-धप्पड़=परस्पर धौल और धप्पड़ मारना।
२. आर्थिक आघात या धक्का। जैसे—दस रुपए की धौल तुम्हें भी लगी।
क्रि० प्र०—पड़ना।—लगना।
स्त्री० [सं० धवल] कानपुर, बरेली आदि में होनेवाली एक प्रकार की ईख।
पुं० [सं० धवल] धौ का पेड़। धव।
वि० १. उजला। सफेद। २. बहुत बड़ा। जैसे—धौल धूर्त=बहुत बड़ा धूर्त।
†पुं=धवलगृह (धौरहर)।

धौलाई—स्त्री०=धवलता।

ध्मात—वि० [सं०√ध्मा (शब्द)+क्त] १. बजाया हुआ। २. क्षुब्ध किया हुआ।

ध्मान—पुं० [सं०√ध्मा+ल्युट्—अन] बजाने की क्रिया।

ध्मापन—पुं०[सं०√ध्मा+णिच्, पुक्+ल्युट्—अन][भू० कृ० ध्मापित] १. फूंककर कोई चीज फुलाने का कार्य। २. जलाकर राख करना।

ध्यात—भू० कृ० [सं०√ध्यै (चिंतन)+क्त] १. जिसका ध्यान किया गया हो। २. जो ध्यान में लाया गया हो। विचारा या सोचा हुआ।

ध्यान—पुं० [सं०√ध्यै+ल्युट्—अन] १. अंतःकरण या मन की वह वृत्ति या स्थिति जिसमें वह किसी चीज या बात के संबंध में चिंतन, मनन या विचार करने में अग्रसर या प्रवृत्त होता है। किसी विषय को मानस-क्षेत्र में लाने या प्रत्यक्ष करने की अवस्था, क्रिया या भाव। मन का किसी विशिष्ट काम या बात की ओर लगना या होना। खयाल। जैसे—(क) हमारी बात ध्यान से सुनो। (ख) अभी वे किसी और ध्यान में हैं, उन्हें मत छेड़ो।
क्रि० प्र०—आना।—जाना।—दिलाना।—देना।—लगना।—लगाना।
विशेष—मानसिक और शारीरिक क्षेत्रों के अधिकतर कामों में हम मुख्यतः ध्यान की प्रेरणा और बल से ही प्रवृत्त होते हैं। कभी तो बाह्य इंद्रियों का कोई व्यापार हमारा ध्यान किसी ओर लगाता है, (जैसे—कोई चीज दिखाई पड़ने पर उसकी ओर ध्यान जाना) और कभी मन स्वतः किसी प्रकार के ध्यान में लग जाता है; (जैसे—कोई बात याद आने पर उसकी ओर ध्यान जाना या लगना)। यह हमारे अंतःकरण या चेतना की जाग्रत अवस्था का ऐसा व्यापार है जिससे कोई बात, भाव या रूप हमारे विचार का केंद्र बन जाता या हमारे मन में सर्वोपरि हो जाता है।
मुहा०—(किसी चीज या बात पर) ध्यान जमना=चित्त का एकाग्र होकर किसी ओर उन्मुख होना। किसी काम या बात में मन का समुचित रूप से प्रवृत्त होकर स्थित होना। **ध्यान बँटना**=जब ध्यान एक ओर लगा हो, तब कोई दूसरा काम या बात सामने आने पर उसमें बाधा या विघ्न होना। **ध्यान बँधना या लगना**=(क) दे० ऊपर 'ध्यान जमना'। (ख) किसी प्रकार के मानसिक चिंतन का क्रम बराबर चलता रहना। जैसे—जब से उनकी बीमारी का समाचार मिला है, तब से हमारा ध्यान उन्हीं की तरफ बँधा (या लगा) है। **(किसी के)**

ध्यान में डूबना, मग्न होना या लगना=किसी के चिंतन, मनन या विचार में इस प्रकार प्रवृत्त या लीन होना कि दूसरी बातों की चिंता, विचार या स्मरण ही न रह जाय। उदा०—कब की ध्यान-लगी लखैं, यह घरु लगिहै काहि।—बिहारी। **(किसी को) ध्यान में लाना**=(क) किसी को अपने मानस-क्षेत्र में स्थान देना या स्थापित करना। बराबर मन में बनाये रखना। उदा०—(क) ध्यान आनि ढिग प्रान-पति रहति मुदित दिन राति।—बिहारी। (ख) किसी का कुछ महत्त्व समझाते या सम्मान करते हुए उसके संबंध में कुछ विचार करना या सोचना। चिंता या परवाह करना। जैसे—वह तुम्हारे भाई साहब को तो ध्यान में लाता ही नहीं, तुम्हें वह क्या समझेगा! **(किसी काम, चीज या बात का) ध्यान रखना**=इस प्रकार सतर्क या सावधान रहना कि कोई अनुचित या अवांछनीय काम या बात न होने पावे अथवा कोई क्रम इष्ट और यथोचित रूप में चलता रहे। जैसे—(क) ध्यान रखना; यहाँ से कोई चीज गुम न होने पावे। (ख) हमारी अनुपस्थिति में रोगी का ध्यान रखना।

पद—ध्यान से=तत्पर, दत्तचित्त या सावधान होकर। जैसे—चिट्ठी जरा ध्यान से पढ़ो।

२. अंतःकरण या मन की वह वृत्ति या शक्ति जो उसे किसी चीज या बात का बोध कराती, उसमें कोई धारणा उत्पन्न करती अथवा कोई स्मृति जाग्रत करती है। जैसे—हमने उन्हें एक बार देखा तो है, पर उनकी आकृति हमारे ध्यान में नहीं आ रही है।

मुहा०—ध्यान पर चढ़ना=किसी बात का चित्त या मन में कुछ समय के लिए अपना स्थान बना लेना। जैसे—अब तक वही दृश्य हमारे ध्यान पर चढ़ा है। **ध्यान से उतरना**=ध्यान के क्षेत्र से बाहर हो जाना। याद न रह जाना। जैसे—आपकी पुस्तक लाना मेरे ध्यान से उतर गया।

३. धार्मिक क्षेत्र में उपासना, पूजा आदि के समय अपने इष्टदेव अथवा अध्यात्म-संबंधी तत्त्वों या विषयों के संबंध में भक्ति और श्रद्धा से मन में शांतिपूर्वक किया जानेवाला चिंतन, मनन या विचार। उदा०—बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू।—तुलसी।

क्रि० प्र०—करना।—छूटना।—टूटना।—लगना।—लगाना।

विशेष—इसका मुख्य उद्देश्य यही होता है कि ध्याता अपने ध्येय के विचार में तन्मय और लीन होकर उसके साथ तादात्म्य स्थापित करने का प्रयत्न करे। श्रृंगारिक क्षेत्र में प्रिय का किया जानेवाला ध्यान भी बहुत-कुछ इसी प्रकार का होता है। यथा—पिय कै ध्यान गही गही, रही वही ह्वै नारि।—बिहारी।

मुहा०—(किसी का) ध्यान करना=अपने मन के सामने किसी की मूर्ति या रूप रखकर उसके चिंतन या मनन में लीन होना। परमात्मा-चिंतन के लिए मन एकाग्र करके बैठना। जैसे—अपने इष्टदेव या ईश्वर का ध्यान करना।

४. योगशास्त्र में, आत्मा और परमात्मा के स्वरूप का साक्षात्कार करने के लिए चित्त या मन पूरी तरह से एकाग्र और स्थिर करने की क्रिया या भाव।

विशेष—योग के आठ अंगों में 'ध्यान' सातवाँ अंग कहा गया है। यह 'धारणा' नामक अंग के बाद आनेवाली वह स्थिति है जिसमें धारणीय तत्त्व के साथ चित्त एक-रस हो जाता है। इसी की चरम तथा पूर्ण अवस्था 'समाधि' कहलाती है। जैन और बौद्ध में भी इस प्रकार के 'ध्यान' का विशेष महत्त्व है।

५. किसी अमूर्त तत्त्व को व्यक्ति के रूप में मानकर उसके कल्पित गुण, मुद्रा, स्थिति आदि के आधार पर स्थिर की हुई वह प्रतिकृति या मूर्त्ति जो हम अपने मानस-क्षेत्र में उसके प्रत्यक्ष दर्शन या साक्षात्कार के लिए कल्पित या निरूपित करते हैं।

विशेष—धार्मिक ग्रंथों में देवी-देवताओं, तांत्रिक ग्रंथों में मंत्र-यंत्रों, संगीतशास्त्र के ग्रंथों में राग-रागिनियों और साहित्यिक ग्रंथों में ऋतुओं, रसों आदि के इस प्रकार के विशिष्ट ध्यान छंदोबद्ध रूप में निरूपित हैं जिनके आधार पर उनके चित्र, मूर्तियाँ आदि बनाई जाती हैं।

ध्यान-योग—पुं० [मध्य० स०] योग अर्थात् कार्य-साधन का वह प्रकार जिसमें ध्यान की प्रधानता हो।

ध्यानस्थ—वि० [सं० ध्यान√स्था (ठहरना)+क] जो ध्यान करने में मग्न या लगा हुआ हो। ध्यान में लीन।

ध्याना—स० [सं० ध्यान] १. किसी विषय, व्यक्ति आदि का ध्यान करना। २. ईश्वर का चिंतन करना।

ध्यानावस्थित—वि० [ध्यान-अवस्थित, स०त०]=ध्यानस्थ।

ध्यानिक—वि० [सं० ध्यान+ठक्—इक] १. ध्यान-संबंधी। ध्यान का। २. जो ध्यान के द्वारा प्राप्त या सिद्ध हो सके। ध्यान-साध्य।

ध्यानिक बुद्ध—पुं० [सं०] एक प्रकार के अशरीरी बुद्ध जिनकी संख्या १० कही गई है।

ध्यानी (निन्)—वि० [सं० ध्यान+इनि] १. ध्यान करनेवाला। २. जो ध्यान लगाकर बैठता या बैठा हो। ३. समाधि लगानेवाला (योगी)।

ध्येय—वि० [सं०√ध्यै+यत्] १. जिसे ध्यान में लाया जा सके। २. जो ध्यान का विषय हो। जिसका ध्यान किया जा रहा हो।

पुं० वह तत्त्व, कार्य या बात जिसे ध्यान में रखकर उसकी सिद्धि के लिए प्रयत्न किया जाय।

ध्रगध्रगी†—स्त्री०=धगधगी (धुकधुकी)।

ध्रम, ध्रम्म*—पुं०=धर्म।

ध्रिग†—स्त्री०=धिक्कार।

ध्रुपद—पुं० [सं० ध्रुवपद] राग-रागिनियाँ गाने की एक विशिष्ट शैली या प्रकार जिसमें लय और स्वर बिलकुल बँधे हुए होते हैं और जिसमें नियत रूप से कुछ भी विचलन नहीं हो सकता। इसका प्रचलन ई० १५ वीं शती के अंत में ग्वालियर के राजा मान तोमर ने किया था।

ध्रुपदिया—पुं० [हिं० ध्रुपद+ईया (प्रत्य०)] वह गवैया जो ध्रुपद में गाने गाता हो।

ध्रुव—वि० [सं०√ध्रु (स्थिर होना)+क] [भाव० ध्रुवता] १. सदा एक स्थान पर अथवा ज्यों का त्यों बना रहनेवाला। अचल। अटल। २. सदा एक ही अवस्था या रूप में बना रहनेवाला। नित्य। शाश्वत। ३. जिसमें किसी प्रकार का अंतर न पड़ सके या परिवर्तन न हो सके। बिलकुल निश्चित और दृढ़ या पक्का।

पुं० १. आकाश। २. शंकु। ३. पर्वत। ४. खंभा। ५. वट वृक्ष। ६. आठ वसुओं में से एक। ७. विष्णु। ८. ध्रुपद नामक गीत।

९. नाक का अगला भाग। १०. फलित ज्योतिष में एक प्रकार का शुभ योग, जिसमें जन्म लेनेवाला बालक ज्योतिषियों के मत से बहुत ही बुद्धिमान्, विद्वान् और यशस्वी होता है। ११. भूगोल में, पृथ्वी के वे दोनों नुकीले सिरे जिनके बीच की सीधी रेखा अक्ष-रेखा कहलाती है।

विशेष—ये दोनों सिरे उत्तरी ध्रुव या सुमेरु और दक्षिणी ध्रुव या कुमेरु कहलाते हैं। इन ध्रुवों के आस-पास के प्रदेश बहुत अधिक ठंढे हैं। जब सूर्य उत्तरायण होता है तब उत्तरी ध्रुव में छः महीने तक दिन रहता है, और दक्षिणी ध्रुव में रात रहती है। सूर्य के दक्षिणायन होने पर दक्षिणी ध्रुव में छः महीने तक दिन रहता है; और उत्तरी ध्रुव में रात होती है।

१२. एक प्रसिद्ध तारा जो सदा उत्तरी ध्रुव या सुमेरु के ठीक ऊपर रहता है।

विशेष—वास्तव में यह तारा शिशुमार नामक तारकपुंज के सात तारों में से एक है। इस तारक-पुंज का जो तारा पृथ्वी के अक्ष-विंदु की सीध से परम निकट होता है, वही पृथ्वी के निवासियों की दृष्टि में ध्रुव (अर्थात् अचल और अटल) होता है। परंतु ज्योतिषियों का कहना है कि अयन वृत्त के चारों ओर नाड़ी मंडल के मेरु की जो गति होती है उसके फलस्वरूप बारह हजार वर्ष बीतने पर आज-कल का ध्रुव तारा मेरु की सीध से दूर हट जायगा और तब शिशुमार तारक-पुंज का अभिजित् नामक दूसरा तारा हम लोगों का ध्रुव तारा हो जायगा। आज-कल हमारे मेरु से वर्तमान ध्रुव का व्यवधान-अंतर केवल १ अंश ३ कला है; पर आज से दो हजार वर्ष पहले यह अंतर १२ अंश था। इसी आधार पर यह पता चलता है कि आज से ५ हजार वर्ष पहले कोई दूसरा तारा हमारा ध्रुव था। यह भी कहा जाता है कि उत्तरी ध्रुव तारे की तरह एक दक्षिणी ध्रुव तारा भी है जो कुमेरु की ठीक सीध में है।

१३. पुराणानुसार राजा उत्तानपाद के एक पुत्र, जो उनकी सुनीति नामक पत्नी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे।

विशेष—कहते हैं कि इनकी एक विमाता भी थी, जिसका नाम सुरुचि था; और जिसके पुत्र का नाम उत्तम था। एक दिन जब उत्तम अपने पिता की गोद में बैठा खेल रहा था तब ध्रुव भी पिता की गोद में जा बैठा। इस पर सुरुचि ने अवज्ञापूर्वक ध्रुव को वहाँ से हटा दिया। इससे खिन्न होकर ध्रुव घर से निकल गये और वन में जाकर तपस्या करने लगे। विष्णु ने इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर इन्हें वरदान दिया था कि तुम सब ग्रह-नक्षत्रों तथा लोकों के ऊपर और उनके आधार बनकर एक जगह अचल भाव से रहोगे और तुम्हारे रहने का स्थान ध्रुवलोक कहलायेगा। तभी से पृथ्वी के उत्तरी ध्रुव के ऊपर ये ध्रुव तारे के रूप में अचल और अटल भाव से स्थित हैं।

१४. फलित ज्योतिष में नक्षत्रों का एक गण, जिसमें उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद और रोहिणी नामक नक्षत्र हैं। १५. सोम रस का वह भाग जो सबेरे से सन्ध्या तक किसी देवता को अर्पित हुए बिना यों ही पड़ा रहे। १६. एक प्रकार का यज्ञ-पात्र। १७. मुँह का एक रोग, जिसमें तालू में पीड़ा, लाली और सूजन होती है। १८. छंदशास्त्र में, रगण का अठारहवाँ भेद, जिसमें पहले एक लघु, तब एक गुरु और तब फिर तीन लघु होते हैं। १९. घोड़ों के शरीर के कुछ विशिष्ट स्थानों में होनेवाली भौंरी या चक्र। दे० 'ध्रुवावर्त्त'

ध्रुवण—पुं० [सं०] १. किसी वस्तु की ध्रुवता का पता लगाना या उसकी ध्रुवता स्थिर करना। २. वैज्ञानिक प्रक्रियाओं में, विद्युत्, सूर्य आदि का प्रकाश ऐसी स्थिति में लाना कि क्षैतिज या बेड़े बल में फैलनेवाली किरणें भिन्न-भिन्न तत्त्वों में भिन्न-भिन्न प्रकार के निश्चित रूप धारण करें। (पोलराइजेशन)

विशेष—साधारणतः प्रकाश की किरणें सब ओर समान रूप से पड़ती हैं परंतु जब उन्हें एक निश्चित दिशा और निश्चित रूप में लाना अभीष्ट होता है तब उनका ध्रुवण किया जाता है।

ध्रुवता—स्त्री० [सं० ध्रुव+तल्—टाप्] १. ध्रुव होने की अवस्था, गुण या भाव। २. वैज्ञानिक क्षेत्रों में, पदार्थों, पिंडों आदि का वह गुण या स्थिति, जो उनके दो परस्पर-विरोधी अंगों या दिशाओं के बीच एक सीध में वर्तमान रहती और परस्पर विरोधी तत्त्वों, शक्तियों आदि से मुक्त रहती है। (पोलेरिटी)

ध्रुव-दर्शक—पुं० [ष० त०] १. सप्तर्षि मंडल। २. कुतुबनुमा।

ध्रुव-दर्शन—पुं० [ष० त०] १. वर-वधू को विवाह-संस्कार के उपरान्त ध्रुव तारे का कराया जानेवाला दर्शन। २. उक्त प्रथा या रीति।

ध्रुव धेनु—स्त्री० [कर्म० स०] बहुत ही सीधी गाय, जो दूहे जाने के समय हिले तक नहीं।

ध्रुवनंद—[सं०] राजा नंद का एक भाई।

ध्रुवपद—पुं०=ध्रुपद।

ध्रुवमत्स्य—पुं० [कर्म० स०] दिशाओं का बोध करानेवाला यंत्र। कुतुबनुमा।

ध्रुवरत्ना—स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की अनुचरी एक मातृका।

ध्रुव-लोक—पुं० [मध्य० स०] सत्यलोक के अंतर्गत एक प्रदेश जिसमें ध्रुव स्थित है। (पुराण)

ध्रुवा—स्त्री० [सं० ध्रुव+टाप्] १. एक प्रकार का यज्ञ-पात्र। २. मूर्वा। मरोड़फली। ३. शालपर्णी। सरिवन। ४. ध्रुपद नामक गीत। ५. सती और साध्वी स्त्री।

ध्रुवाक्ष—पुं० [ध्रुव-अक्ष, मध्य० स०] ज्योतिष्क यंत्रों का वह अक्ष जो आकाशस्थ ध्रुव की सीध में पड़ता अथवा उसकी ओर अभिमुख रहता है। (पोलर एक्सिस)

ध्रुवाक्षर—पुं० [ध्रुव-अक्षर, कर्म० स०] विष्णु।

ध्रुवावर्त्त—पुं० [ध्रुव-आवर्त्त, मध्य० स०] १. घोड़ों के शरीर के कुछ विशिष्ट अंगों में होनेवाली भौंरी या चक्र।

विशेष—घोड़ों के अपान, भाल, मस्तक, रंध्र या वक्षःस्थल पर होनेवाली भौंरियाँ 'ध्रुवावर्त्त' कहलाती हैं।

२. वह घोड़ा जिसके शरीर पर उक्त भौंरी हो।

ध्रुवीय—वि० [सं० ध्रुव+छ—ईय] [भाव० ध्रुवीयता] १. ध्रुव (तारा) संबंधी। २. ध्रुव-प्रदेश का। (पोलर)

ध्रुवीयक—पुं० [सं० ध्रुव से] वह उपकरण या तत्त्व जो ध्रुवीयण करता हो। (पोलराइजर)

ध्रुवीयण—पुं० [सं० ध्रुव से] ऐसी प्रक्रिया करना जिससे कहीं से आनेवाले ताप या प्रकाश का किसी लंब के दोनों सिरों पर भिन्न-भिन्न तत्त्वों का सूचक अलग-अलग प्रकार का प्रभाव या रूप दिखाई पड़े। (पोलराइजेशन)

ध्रू—पुं० [सं० धुर] मस्तक। सिर। उदा०—ध्रू माला संकर धरी। —प्रिथीराज।

ध्रौव्य—पुं० [सं० ध्रुव+ष्यञ्] = ध्रुवता।

ध्वंस—पुं० [सं०√ध्वंस् (नष्ट होना)+घञ्] १. इमारत, भवन आदि का गिर तथा ढहकर खंड-खंड हो जाना। मिट्टी में मिल जाना। २. पूरी तरह से होनेवाला विनाश। ३. न्याय में, अभाव का एक प्रकार का भेद।

ध्वंसक—वि० [सं०√ध्वंस्+ण्वुल्—क०] ध्वंस या विनाश करनेवाला। विध्वंसक।

ध्वंसन—पुं० [सं०√ध्वंस्+ल्युट्—अन्] १. ध्वंस करने की क्रिया या भाव। २. किसी चीज को दुष्ट उद्देश्य से इस प्रकार गिराना कि वह नष्टप्राय हो जाय। तोड़-फोड़। (सेबोटेज)

ध्वंसावशेष—पुं० [सं० ध्वंस-अवशेष, ष० त०] १. किसी चीज के टूट-फूट जाने पर उसके बचे हुए रद्दी टुकड़े या अंश। (रेकेज) २. इमारतों के वे अंश जो उनके टूटने या ढह जाने पर बच रहते हैं। खँडहर।

ध्वंसी (सिन्)—वि० [सं०√ध्वंस्+णिनि]=ध्वंसक।

ध्वज—पुं० [सं०√ध्वज् (गति)+अच्] १. बाँस आदि की तरह की कोई लंबी, सीधी लकड़ी। डंडा। २. वह डंडा जिसके सिरे पर कपड़ा लगाकर झंडा बनाया जाता है। ३. झंडा। ध्वजा। पताका। ४. किसी वस्तु या व्यक्ति का चिह्न या निशान। जैसे—देव-ध्वज, मकर-ध्वज, सीम-ध्वज आदि। ५. व्यापारियों आदि का परिचायक वह चिह्न या निशान, जो उनकी वस्तुओं आदि पर अंकित हो। (ट्रेड मार्क) ६. सन्तान उत्पन्न करने की इंद्रियाँ—भग और लिंग। ७. अपने कुल या वर्ग का ऐसा प्रधान या श्रेष्ठ व्यक्ति, जो उसका भूषण अथवा मान-मर्यादा बढ़ानेवाला हो। (यौ० पदों के अन्त में) जैसे—वंशध्वज। ८. वह जो ध्वजा या पताका लेकर राजा, सेना आदि के आगे-आगे चलता हो। ९. मद्य बनाने और बेचनेवाला व्यक्ति। शौंडिक। १०. वह घर या मकान जो किसी विशिष्ट पदार्थ या स्थान के पूर्व में स्थित हो। ११. वह डंडा जिस पर साधु आदि प्राचीन काल में खोपड़ी टाँग कर अपने साथ ले चलते थे। १२. खाट या चारपाई की पाटी। १३. आडंबर। ढोंग। १४. मिथ्या अभिमान।

ध्वजक—पुं० [सं० ध्वज+कन्] सैनिक या नौ-सैनिक झंडा। (स्टैंडर्ड)

ध्वज-दंड—पुं० [ष० त०] वह डंडा जिसके सिरे पर पताका का कपड़ा लगा रहता है।

ध्वज-पट—पुं० [ष० त०] झंडा। पताका।

ध्वज-पात—पुं० [ष० त०]=ध्वज-भंग।

ध्वज-पोत—पुं० [मध्य० स०] बेड़े का वह जहाज जिस पर उसका नौ-सेनापति यात्रा करता है और जिस पर उसका झंडा फहराता है। (फ्लैगशिप)

ध्वज-भंग—पुं० [ष० त०] १. वह स्थिति जिसमें पुरुष में स्त्री-संभोग की शक्ति नहीं रह जाती। २. क्लीवता। नपुंसकता। हिजड़ापन।

ध्वज-मूल—पुं० [ष० त०] चुंगीघर की सीमा। (कौ०)

ध्वज-यष्टि—स्त्री० [ष० त०]=ध्वज-दंड।

ध्वजांशुक—पुं० [ध्वज-अंशुक, ष० त०] दे० 'ध्वज-पट'।

ध्वजा—स्त्री० [सं० ध्वज] १. झंडा। पताका। २. मालखंभ की एक प्रकार की कसरत। ३. छन्दशास्त्र में ठगण का पहला भेद, जिसमें पहले लघु और तब गुरु होता है।

ध्वजादि—पुं० [ध्वज-आदि, ब० स०] फलित ज्योतिष में, एक प्रकार की गणना, जिसमें नौ कोष्ठकों का ध्वजा के आकार का एक चक्र बनाया जाता है और तब उसके आधार पर प्रश्नों के उत्तर या फल कहे जाते हैं।

ध्वजारोपण—पुं० [ध्वज-आरोपण, ष० त०] झंडा गाड़ना या लगाना।

ध्वजाहृत—पुं० [ध्वज-आहृत, तृ० त०] १. वह धन जो शत्रु को युद्ध में जीतकर प्राप्त किया गया हो। २. पंद्रह प्रकार के दासों में से वह दास जो लड़ाई में जीतकर प्राप्त किया या लाया गया हो।

ध्वजिक—पुं० [सं० ध्वज+ठन्—इक] ढोंगी। पाखंडी।

ध्वजिनी—स्त्री० [सं० ध्वजिन्+ङीप्] १. सेना की एक टुकड़ी जिसका परिमाण कुछ लोग 'वाहिनी' का दूना बताते हैं। २. पाँच प्रकार की सीमाओं में से वह सीमा, जिस पर वृक्षों आदि के रूप में चिह्न या निशान लगे हों।

ध्वजी (जिन्)—वि० [सं० ध्वज+इनि] [स्त्री० ध्वजिनी] १ जो हाथ में ध्वजा या पताका लिये हुए हो। २. जिस पर कोई चिह्न या निशान हो।

पुं० १. वह जो सेना के आगे ध्वजा लेकर चलता हो। २. युद्ध। लड़ाई। संग्राम। ३. ब्राह्मण। ४. घोड़ा। ५. मोर। ६. साँप। ७. पर्वत। पहाड़।

ध्वजोत्थान—पुं० [ध्वज-उत्थान, ष० त०] १. ध्वजा उठाना या फहराना। २. प्राचीन भारत का इन्द्रध्वज नामक महोत्सव।

ध्वन—पुं० [सं०√ध्वन् (शब्द)+अप्] १. शब्द। २. गुंजार।

ध्वनन—पुं० [सं०√ध्वन्+ल्युट्—अन] १. ध्वनि या शब्द करना। २. ध्वनि के रूप में कुछ अभिव्यक्त करने की क्रिया या भाव। ३. व्यंग्यार्थ के बोध कराने की क्रिया या भाव। ४. अस्पष्ट शब्द।

ध्वनि—स्त्री० [सं०√ध्वन्+इ] १. वह जो कानों से सुनाई पड़े या सुना जा सके। श्रवणेंद्रिय का विषय। आवाज। शब्द।

विशेष—किसी प्रकार का आघात होने से जो स्वर-लहरी उत्पन्न होकर वायु, जल आदि में से होती हुई हमारे कानों तक पहुँचती है, वही ध्वनि कहलाती है। कुछ आचार्य तो उसी को ध्वनि कहते हैं जो केवल अवर्णात्मक हो, अथवा जिसके वर्ण अलग-अलग और स्पष्ट न सुनाई पड़ते हों; और कुछ लोग वर्णात्मक तथा अवर्णात्मक दोनों प्रकार के शब्दों को ध्वनि कहते हैं। जो लोग केवल अवर्णात्मक शब्दों को ध्वनि मानते हैं, वे वर्णात्मक शब्दों से उत्पन्न होनेवाले परिणाम को 'स्फोट' कहते हैं।

२. ऐसी आवाज, नाद या शब्द जिसका कुछ भी अर्थ या आशय न हो। जैसे—पशु-पक्षियों के कंठ की ध्वनि; बादल गरजने से होनेवाली ध्वनि। ३. बाजे आदि बजने से उत्पन्न होनेवाले शब्द। जैसे—घंटे या घड़ियाल की ध्वनि। ४. किसी उक्ति या कथन का वह गूढ़ और व्यंग्यपूर्ण आशय, जो उसके वाच्यार्थ से भिन्न तथा स्वतंत्र हो और वक्ता का कोई विशिष्ट अभिप्राय या मनोभाव ऐसे रूप में व्यक्त करता हो, जो सहज में और साधारणतः सब लोगों की समझ में न आवे।

विशेष—कथन का जो आशय व्यंजना नामक शब्द-शक्ति से निकलता

है वही साहित्य के क्षेत्र में 'ध्वनि' कहलाता है। जैसे—यदि किसी झूठे या बहानेबाज आदमी से कहा जाय, 'आप बहुत सत्यवादी हैं।' तो इस वाक्य का व्यंग्यार्थ यही होगा कि 'आप बहुत झूठे हैं।' और इस प्रकार निकलनेवाला व्यंग्यार्थ ही 'ध्वनि' कहलाता है। साहित्य में इस प्रकार का व्यंग्यार्थवाला काव्य, बहुत ही चमत्कारपूर्ण होने के कारण, परम उत्कृष्ट और प्रथम श्रेणी का माना जाता है।

ध्वनिक—वि० [सं० ध्वनि से] ध्वनि-संबंधी। (फोनेटिक)

ध्वनि-क्षेपक—वि० [प० त०] ध्वनि को चारों ओर फैलानेवाला।

ध्वनि-क्षेपक-यंत्र—पुं० [कर्म० स०] एक प्रसिद्ध यंत्र जिसके माध्यम से वक्ता की ध्वनि दूर स्थित लोगों को सुनाई जाती है। (माइक्रोफोन)

ध्वनि-क्षेपण—पुं० [ष० त०] किसी स्थान पर उत्पन्न होनेवाली ध्वनि का एक विशेष प्रकार के वैद्युत्‌यंत्र की सहायता से चारों ओर बहुत दूर तक फैलाना या पहुँचाना।

ध्वनि-ग्राम—पुं० [प० त०] ध्वनि-विज्ञान में, मनुष्य के गले से निकलनेवाली ध्वनि के भिन्न-भिन्न रूप जो कुछ विशिष्ट अवस्थाओं में बनते हैं। (फोनीम) जैसे—का, की, कू, के आदि के उच्चारण में 'क' की ध्वनि के रूप कुछ अलग-अलग होते हैं।

ध्वनित—वि० [सं०√ध्वन्+क्त] १. जो ध्वनि के रूप में प्रकट हुआ हो। २. किसी वाक्य आदि में झलकता हुआ (कोई गूढ़ आशय)।

ध्वनि-तरंग—स्त्री० [ष० त०] हवा की वह लहर जिसमें किसी स्थान में होनेवाली ध्वनि के फलस्वरूप एक विशेष प्रकार का कंपन होता है तथा जो कानों को उस ध्वनि का ज्ञान कराती है। (साउंड वेव)।

ध्वनि-विज्ञान—पुं० [ष० त०] वह विज्ञान जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि बोलते समय मनुष्य के स्वर-यंत्र से किस प्रकार ध्वनियाँ या शब्द उत्पन्न होते हैं, उनके कैसे और कितने भेद-प्रभेद होते हैं। (फोनोटिक्स)

ध्वन्यात्मक—वि० [सं० ध्वनि-आत्मन्, ब० स०, कप्] ध्वनि से युक्त।

ध्वन्यार्थ—वि० [सं० ध्वन्यर्थ] किसी शब्द या पद का व्यंग्यार्थ।

ध्वन्यालेख—पुं० [सं० ध्वनि-आलेख, ष० त०] वह उपकरण जिसमें किसी की वक्तृता, गीत आदि अभिलिखित होता है और विशेष प्रक्रिया से उसी स्वर में फिर से बजाया जा सकता है। (रिकार्ड)

ध्वन्यालेखन—पुं० [सं० ध्वनि-आलेखन, ष० त०] किसी की ध्वनि को इस प्रकार किसी विशेष प्रक्रिया से सुरक्षित करना कि फिर उसकी पुनरावृत्ति की जा सके। (रिकार्डिंग)

ध्वांत—पुं० [सं०√ध्वन्+क्त] अंधकार।

ध्वांत-धाम—पुं० [ष० त०] नरक।

ध्वांताराति—पुं० [ध्वांत-अराति, ष० त०] १. सूर्य। २. चंद्रमा। ३. अग्नि। ४. श्वेत वर्ण।

ध्वांतोन्मेष—पुं० [ध्वांत-उन्मेष, ब० स०] खद्योत। जुगनूं।

ध्वान—पुं० [सं०√ध्वन्+घञ्] १. शब्द। आवाज। नाद। २. गुंजन।

न

न—देवनागरी वर्णमाला का २० वाँ वर्ण जो व्याकरण और भाषा-विज्ञान की दृष्टि से घोष, अल्पप्राण, अनुनासिक तथा वर्त्स्य व्यंजन है।

अव्य० एक अव्यय जिसका प्रयोग आज्ञा, विधि, हेतुहेतुमद्भाव आदि के प्रसंगों में नीचे लिखे अर्थों में होता है। १. नकारात्मक या निषेधात्मक कथनों में 'नहीं' की जगह। जैसे—(क) वहाँ न जाना ही ठीक है। (ख) यदि उसे कुछ भी न दिया जाय तो भी वह अपना काम चला लेगा। २. प्रश्नवाचक वाक्यों के अंत में, कि नहीं। या नहीं। जैसे—(क) तुम कल तो यहाँ आओगे न? (ख) वह चला जायगा न?

विशेष—ऐसे अवसरों पर इसमें किंचित् आशा, निश्चय या विश्वास का भाव भी निहित रहता है।

३. कहीं-कहीं एक ही क्रिया की पुनरावृत्ति के बीच में आने पर प्रायः उसी समय या तुरंत। थोड़े समय में। उदा०—चौंककर सोते न सोते उठ पड़ेंगे।—मैथिलीशरण।

प्रत्य० ब्रज भाषा में संज्ञाओं के अंत में लगकर उन्हें बहु व० का रूप देनेवाला प्रत्यय। जैसे—कटाछ से कटाछन।

पुं० १. सोना। स्वर्ण। २. मणि। रत्न। ३. उपमा। ४. गौतम बुद्ध।

नंग—वि० [हिं० नंगा] १. नंगा। २. बदमाश। लुच्चा।

पुं० १. नंगे होने की अवस्था या भाव। नंगापन। नग्नता। २. पुरुष अथवा स्त्री का गुप्त अंग।

पुं० [फा०] प्रतिष्ठा। इज्जत।

नंगटा—वि०=नंगा।

नंग-धड़ंग (।)—वि० [हिं० नंगा+धड़ंग (अनु०)] [वि० स्त्री० नंग-धड़ंगी] (व्यक्ति) जो सब वस्त्र उतारकर बिलकुल नंगा हो गया हो।

नंग-पैरा—वि० [हिं० नंगा+पैर+आ (प्रत्य०)] १. नंगे पैरोंवाला। २. नंगे पैर चलनेवाला।

क्रि० वि० बिना जूता या पादत्राण पहने। नंगे पैरों।

नंग-मनुंगा—वि०=नंग-धड़ंग।

नंगर†—पुं०=लंगर।

नंगर वारी—स्त्री० [हिं० लंगर+वाला] वह छोटी समुद्री नाव जो तूफान के समय किसी रक्षित स्थान पर लंगर डालकर ठहर जाती है। (लश०)

नंगा—वि० [सं० नग्न] [वि० स्त्री० नंगी] १. (व्यक्ति) जिसने गोप्य अंग वस्त्र आदि के द्वारा न ढके हुए हों। जो कोई कपड़ा न पहने हो। दिगंबर।

पद—नंगा उघाड़ा=जिसके शरीर पर कोई वस्त्र न हो। विवस्त्र। अलिफ नंगा=वैसा ही नंगा जैसा उर्दू या फारसी लिपि का अलिफ वर्ण होता है। मादरजाद-नंगा=वैसा ही नंगा, जैसा शिशु अपनी माता के गर्भ से जन्म लेने के समय रहता है। बिलकुल नंगा।

२. (शरीर का कोई अंग) जिस पर कोई आच्छादन या आलंकारिक वस्तु न हो। जैसे—नंगा गला या हाथ (आभूषण-रहित), नंगा सिर (टोपी या पगड़ी से रहित)। ३. (पदार्थ) जिस पर कोई आवरण न हो। आच्छादन-रहित। खुला हुआ। जैसे—दही या दूध कभी नंगा नहीं रखना चाहिए। ४. निर्लज्ज। बेहया। बेशर्म। ५. ऐसा दुष्ट, लुच्चा या पाजी जो कलंक, बदनामी आदि से कुछ भी न डरता हो।

पद—नंगा लुच्चा। (देखें)

६. (बात या विषय) जिसका वास्तविक स्वरूप स्पष्ट रूप से व्यक्त हो रहा हो।

पुं० १. शिव। महादेव। २. कश्मीर की सीमा पर का एक बड़ा पर्वत।

नंगा-झोरी—स्त्री०=नंगा-झोली।

नंगा-झोली—स्त्री० [हिं० नंगा+झोरना] खोई हुई चीज ढूँढ़ने के उद्देश्य से संदेहवश किसी के कपड़े आदि उतरवाकर अथवा यों ही अच्छी तरह यह देखना कि उसने कोई चीज अंदर छिपाकर रखी तो नहीं है। जामा-तलाशी।

क्रि० प्र०—देना।—लेना।

नंगा-धड़ंगा—वि० [हिं०] जिसके शरीर पर एक भी वस्त्र या आवरण न हो। बिलकुल नंगा।

नंगा-नाच—पुं० [हिं० नंगा+नाच] निर्लज्ज होकर किया जानेवाला परम दूषित और हेय आचरण।

नंगा-बुंगा—वि० [हिं० नंगा+बुंगा (अनु०)] १. जिसके शरीर पर कोई वस्त्र न हो। बिलकुल नंगा। २. जिस पर कोई आच्छादन या आवरण न हो।

नंगा-बुच्चा—वि०=नंगा-बूचा।

नंगा-बूचा—वि० [हिं० नंगा+बूचा=खाली] जिसके पास कुछ भी न हो। परम निर्धन।

नंगा-मुनंगा—वि०=नंगा-धड़ंगा।

नंगा-लुच्चा—वि० [हिं० नंगा+लुच्चा] (व्यक्ति) जो निर्लज्ज होकर दूसरों की प्रतिष्ठा पर आघात करता हो। निर्लज्ज। दुष्ट।

नंगियाना—स० [हिं० नंगा+इयाना] [भाव० नंगियावन] १. नंगा करना। शरीर पर वस्त्र न रहने देना। २. किसी का इस प्रकार सब-कुछ छीन लेना कि उसके पास कुछ भी न बच रहे। ३. वास्तविक रूप में प्रकट करना।

नंग्याना *—स०=नँगियाना।

नंचना—अ०=नाचना।

नंजन *—पुं०=नर्तन (नाचना)।

नंदंत—वि० [सं०√नन्द्+झच्—अन्त] प्रसन्न करनेवाला।

पुं० १. पुत्र। बेटा। २. मित्र। ३. राजा।

नंदंन—वि०, पुं०=नंदन।

नंद—वि० [सं०√नन्द्+अच्] [स्त्री० नंदा] १. आनंद या सुख देनेवाला। २. उत्तम श्रेष्ठ। ३. शुभ।

पुं० [सं०] १. आनंद। हर्ष। २. सच्चिदानंद परमात्मा। ३. विष्णु। ४. वासुदेव का एक पुत्र जो मदिरा के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। ५. कार्तिकेय का एक अनुचर। ६. एक नाग का नाम। ७. धृतराष्ट्र का एक पुत्र। ८. नंदन। पुत्र। बेटा। ९. क्रौंच द्वीप का एक वर्ष-पर्वत। १०. एक प्रकार का मृदंग। ११. चार प्रकार की बाँसुरियों में से एक जो ग्यारह अंगुल लंबी होती और श्रेष्ठ समझी जाती है। इसके देवता रुद्र कहे गये हैं। १२. संगीत में, एक प्रकार का राग जिसे कुछ लोग मालकोश राग का पुत्र मनते हैं। १३. पुराणानुसार नौ निधियों में से एक। १४. मेढक। १५. गोकुल में गौओं के नायक या मुखिया जिनके पास वासुदेव श्रीकृष्ण को जन्म के समय पहुँचा गये थे और जिनके यहाँ उनकी बाल्यावस्था बीती थी। १६. गौतम बुद्ध के एक भाई जो उनकी विमाता के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। १७. पिंगल में ढगण के दूसरे भेद का नाम जिसमें एक गुरु और एक लघु होता है और जिसे ग्वाल भी कहते हैं। जैसे—काम, नाम, लाभ। १८. मगध का एक प्रसिद्ध राजवंश। दे० 'नंद वंश'।

†स्त्री०=ननद (स्त्री के पति की बहन)।

नंदक—वि० [सं०] १. आनंद और सुख या संतोष देनेवाला। २. अपने कुल या परिवार का पालन करनेवाला।

पुं० १. श्रीकृष्ण का खड्ग। २. कार्तिकेय का एक अनुचर। ३. धृतराष्ट्र का एक पुत्र। ४. एक नाग का नाम। ५. श्रीकृष्ण के पालक नंद। ६. मेढक। ७. दे० 'नंद वंश'।

नंदकि—स्त्री० [सं०] पीपल।

नंद-किशोर—पुं० [सं०] नंद के पुत्र श्रीकृष्ण।

नंदकी (किन्)—पुं० [सं० नंदक+इनि] विष्णु।

नंद-कुँवर—पुं०=नंदकुमार।

नंद-कुमार—पुं० [ष० त०] नंद के पुत्र, श्रीकृष्ण।

नंद-गाँव—पुं० [सं० नंद+हिं० गाँव] वृंदावन के पास का एक गाँव जहाँ नंद-गोप रहते थे।

नंद-गोपिता—स्त्री० [च० त०] रास्ना या रायसन नामक वनस्पति।

नंद-ग्राम—पुं० [ष० त०] १.=नंद गाँव। २.=नंदि ग्राम।

नंदथु—पुं० [सं०√नन्द्+अथुच्] प्रसन्नता।

नंदद—वि० [सं० नंद√दा (देना)+क] आनंद देनेवाला।

पुं० पुत्र। बेटा।

नंद-नंद (न)—पुं० [ष० त०] नंद के पुत्र श्रीकृष्णचन्द्र।

नंद-नंदिनी—स्त्री० [ष० त०] नंद की कन्या। योगमाया।

विशेष—श्रीकृष्ण को नंद के घर रखकर इसी को उनके बदले में अपने साथ ले गए थे।

नंदन—वि० [सं० नन्द+णिच्+ल्यु—अन] आनंद देने या प्रसन्न करने-वाला।

पुं० १. पुत्र। बेटा। २. राजा। ३. दोस्त। मित्र। ४. नंदन कानन। (दे०) ५. कामाख्या देश का एक पर्वत जहाँ लोग इन्द्र की पूजा करते हैं। ६. कार्तिकेय का एक अनुचर। ७. शिव। महादेव। ८. विष्णु। ९. एक प्रकार का विष। १०. केसर। ११. चंदन। १२. बादल। मेघ। १३. मेढक। १४. एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र। १५. वह मकान जो षट्कोण हो, जिसका विस्तार बत्तीस हाथ हो और जिसमें सोलह शृंग हों। (वास्तु) १६. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रम से नगण, जगण, भगण, जगण और दो रगण होते हैं। १७. साठ संवत्सरों में से छब्बीसवाँ संवत्सर।

कहते हैं कि इस संवत्सर में अन्न खूब होता है, गौएँ खूब दूध देती हैं और लोग नीरोग रहते हैं।
नंदनक—पुं० [सं० नंदन+कन्] पुत्र।
नंदन-कानन—पुं० [मध्य० स०] स्वर्ग में स्थित इन्द्र का प्रसिद्ध उपवन या बगीचा जो परम सुन्दर और सुखद माना गया है। नंदन।
नंदनज—पुं० [सं० नंदन√जन् (उत्पत्ति)+ड] १. हरिचंदन। २. श्रीकृष्ण।
नंदन-प्रधान—पुं० [ष० त०] नंदन के प्रधान, इन्द्र।
नंदन-माला—स्त्री० [कर्म० स०] एक प्रकार की माला जो श्रीकृष्ण को बहुत प्रिय थी। (पुराण)
नंदन-वन—पुं० [मध्य० स०] १. नंदन-कानन। २. कपास।
नंदना—अ० [सं०√नंद्+णिच्+युच्—अन, टाप्] आनंदित होना। प्रसन्न होना।
स्त्री० [नंदन+टाप्] पुत्री। बेटी।
स० आनंदित या प्रसन्न करना।
स्त्री० [सं० नंद=बेटा] १. पुत्री। बेटी। २. लड़की।
नंदनी—स्त्री० [सं० नंदन+ङीष्] १.=नंदना। २.=नंदिनी।
नंदपाल—पुं० [सं० नंद√पाल् (रक्षा)+णिच्+अच्] वरुण।
नंद-पुत्री—स्त्री० [ष० त०] नंद नंदिनी।
नंदप्रयाग—पुं० [?] बदरिकाश्रम के निकट का एक तीर्थ जो सात प्रयागों में से एक है।
नंदरानी—स्त्री० [सं० नंद+हिं० रानी] नंद की स्त्री। कृष्ण की माता। यशोदा।
नंद रूख—पुं० [हिं० नंद+रुख=वृक्ष] अश्वत्थ की जाति का एक पेड़ जिसकी पत्तियाँ रेशम के कीड़े खाते हैं।
नंदलाल—पुं० [सं० नंद+हिं० लाल] नंद के पुत्र, श्रीकृष्ण।
नंद-वंश—पुं० [ष० त०] मगध का एक प्राचीन राजवंश जिसका नाश कौटिल्य ने किया था।
नंदा—वि० स्त्री० [सं०√नन्द्+अच्—टाप्] १. आनंद देनेवाली। २. शुभ।
स्त्री० [सं०] १. दुर्गा। २. गौरी। ३. धन-संपत्ति। ४. एक प्रकार की कामधेनु। ५. एक प्रकार की संक्रांति। ६. आनंद या प्रसन्नता की अधिष्ठात्री देवी जो हर्ष की पत्नी कही गई है। ७. संगीत में, एक मूर्च्छना। ८. स्वर्ग की एक अप्सरा। ९. विभीषण की कन्या। १०. पानी रखने का मिट्टी का घड़ा। ११. पुराणानुसार शाकद्वीप की एक नदी। १२. स्त्री के पति की बहन। ननद। १३. चांद्र मास के किसी पक्ष की प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी तिथियों की संज्ञा। १४. पुराणानुसार कुबेर की पुरी के पास बहनेवाली एक नदी। १५. जैन पुराणों के अनुसार वर्तमान अवसर्पिणी के दसवें अर्हत् की माता का नाम। १६. पिंगल में बरवै छंद का एक नाम। १७. एक मातृका या बाल-ग्रह जिसके विषय में यह माना जाता है कि इसके कारण बालक अपने जीवन के पहले दिन, पहले मास और पहले वर्ष में ज्वर से पीड़ित होकर बहुत रोता और अचेत हो जाता है। १८. दे० 'नंदा-तीर्थ'।
नंदातीर्थ—पुं० [सं०] हेमकूट पर्वत पर स्थित एक तीर्थ। (महाभारत)
नंदात्मज—पुं० [नंद-आत्मज, ष० त०] नंद के पुत्र, श्रीकृष्ण।
नंदात्मजा—स्त्री० [नंद-आत्मजा, ष० त०] नंद की पुत्री। योगमाया।
नंदा-देवी—[सं०] यमुनोत्तरी के पूर्व दक्षिणी हिमालय की एक चोटी जो समुद्र तल से २५००० फुट ऊँची है।
नंदा-पुराण—पुं० [सं०] एक उपपुराण जिसमें नंदा का माहात्म्य वर्णित है और जिसके वक्ता कार्तिक कहे गये हैं। मत्स्य और शिवपुराण के मत से यह तीसरा उपपुराण है।
नंदार्य—पुं० [सं०] शाकद्वीपी ब्राह्मणों की एक जाति।
नंदाश्रम—पुं० [नंद-आश्रम, ष० त०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ। (महाभारत)
नंदि—पुं० [सं०√नन्द्+इन्] १. आनंद। २. वह जो पूर्णतः आनंदमय हो। ३. सच्चिदानंद परमात्मा। ४. शिव। ५. दे० 'नंदिकेश्वर'।
नंदिक—पुं० [सं० नंद+ठन्—इक] १. नंदी वृक्ष। तुन का पेड़। २. धव का पेड़। धौ। ३. आनंद।
नंदिकर—पुं० [सं०] शिव।
नंदिका—स्त्री० [सं० नंदिका+टाप्] १. पानी रखने की मिट्टी की नाँद। २. चांद्रमास के प्रत्येक पक्ष की प्रतिपद, षष्ठी और एकादशी तिथियाँ। ३. हँसमुख स्त्री। ४. नंदनकानन।
नंदिकावर्त्त—पुं० [सं०] एक प्रकार का रत्न। (बृहत्संहिता)
नंदि-कुंड—पुं० [सं० मध्य० स०] एक प्राचीन तीर्थ। (महा०)
नंदिकेश—पुं० [सं०] नंदिकेश्वर।
नंदिकेश्वर—पुं० [सं०] १. शिव के द्वारपाल बैल का नाम। नंदि। २. नंदी द्वारा उक्त एक पुराण। ३. नंदि के स्वामी, शिव।
नंदिग्राम—पुं० [सं०] अयोध्या के निकट का एक प्राचीन गाँव जहाँ राम-वनवास के समय भरत १४ वर्षों तक रहे थे।
नंदि-घोष—पुं० [सं० ब० स०] अर्जुन का एक रथ जो उन्हें अग्निदेव से मिला था।
नंदित—वि० [सं०√नन्द्+क्त] आनंदित। सुखी। आनंदयुक्त। प्रसन्न।
वि० [हिं० नाद] नाद करता या बजाता हुआ।
नंदि-तरु—पुं० [सं० कर्म० स०] धव। धौ।
नंदि-तूर्य—पुं० [सं० मध्य० स०] एक पुराना बाजा।
नंदिन—स्त्री० [सं० नंदिनी] एक तरह की बड़ी मछली।
नंदिनी—स्त्री० [सं०√नन्द्+णिनि—ङीप्] १. पुत्री। बेटी। २. उमा। ३. गंगा। ४. दुर्गा। ५. कार्तिकेय की मातृका। ६. व्याड़ि मुनि की माता। ७. जोरू। पत्नी। ८. स्त्री के पति की बहिन। ९. जटामासी। बाल-छड़। १०. रेणुका नामक गन्ध द्रव्य। ११. वसिष्ठ की कामधेनु जो सुरभि के गर्भ से उत्पन्न हुई थी। १२. तेरह अक्षरों का एक वर्ण-वृत जिसके प्रत्येक चरण में एक सगण, एक जगण, फिर दो सगण और अंत में एक गुरु होता है। इसे कलहंस और सिंहनाद भी कहते हैं।
नंदि-मुख—पुं० [ब० स०] १. शिव। महादेव। २. एक प्रकार का चावल। ३. एक प्रकार का पक्षी।
†पुं०=नांदी मुख (श्राद्ध)।
नंदिमुखी—पुं० [?] ऐसा पक्षी जिसकी चोंच का ऊपरी भाग बहुत कड़ा और गोल हो। ऐसे पक्षी का मांस पित्तनाशक, चिकना, भारी, मीठा

और वायु, कफ, बल तथा शुक्रवर्धक कहा गया है। (भाव प्रकाश) स्त्री० तंद्रा।

नंदिरुद्र—पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

नंदि-वर्द्धन—पुं० [सं० नंदि√वृध् (बढ़ना)+णिच्+ल्यु—अन] नंदिवर्धन।

नंदि-वर्धन—वि० [सं०] आनंद बढ़ानेवाला।

पुं० १. शिव। २. पुत्र। बेटा। ३. दोस्त। मित्र। ४. एक तरह का प्राचीन विमान। ५. प्राचीन वास्तु शास्त्र के अनुसार कुछ विशिष्ट विस्तारवाला मंदिर। ६. बिंबसार का पुत्र।

नंदिवारलक—पुं० [सं०] एक तरह की समुद्री मछली। (सुश्रुत)

नंदिषेण—पुं० [सं०] कुमार के अनुचर का नाम।

नंदी (दिन्)—वि० [सं०√नंद्+णिनि] आनंदित रहनेवाला। प्रसन्न।

पुं० १. शिव के एक प्रकार के गण, जिनके ये तीन भेद कहे गये हैं—कनक नंदी, गिरिनंदी, और शिवनंदी। २. शिव के द्वारपाल बैल का नाम। ३. शिव के नाम पर उत्सर्ग किया हुआ सांड़। ४. वह बैल जिसके शरीर पर बहुत-सी गाँठें हों। ऐसा बैल खेती के काम का नहीं होता। इसे फकीर लोग लेकर घुमाते और लोगों को उसके दर्शन कराके पैसे माँगते हैं। ५. विष्णु। ६. जैनों के एक श्रुत पारग। ७. उड़द। ८. धौ का पेड़। धव। ९. गर्दभांड या पाखर नाम का पेड़। १०. बरगद। वट। ११. तुन नाम का पेड़। १२. बंगाल के कायस्थों, तेलियों आदि की कुछ जातियों की उपाधि।

नंदीगण—पुं० [सं० नंदिगण] १. शिव के द्वारपाल बैल। २. शिव के नाम पर दागकर खुला छोड़ा हुआ बैल। साँड़।

नंदीघंटा—पुं० [सं० नंदी+हिं० घंटा] बैलों के गले में बाँधने का बिना डाँड़ी का घंटा।

नंदीपति—पुं० [सं० नंदिपति] नंदि के स्वामी, शिव। महादेव।

नंदीमुख—पुं० [सं०] १.=नंदि-मुख। २.=नांदी-मुख।

नंदीवृक्ष—पुं० [सं०] १. मेढा-सिंगी। २. तुन नाम का पेड़।

नंदीश—पुं० [सं० नंदिन्-ईश ष० त०]=नंदीश्वर।

नंदीश्वर—पुं० [सं० नंदिन्-ईश्वर, ष० त०] १. शिव। २. संगीत में ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक। ३. वृंदावन का एक तीर्थ। ४. शिव का एक प्रसिद्ध गण जो पुराणानुसार काले रंग का, बौना, बंदर के-से मुँह और मुंडे हुए सिरवाला माना गया है।

नंदेऊ—पुं०=नंदोई।

नंदोई—पुं० [हिं० ननद+ओई (प्रत्य०)] संबंध के विचार से ननद का पति।

नंदोला*—पुं० [हिं० नाँद का अल्पा०] मिट्टी की छोटी नाँद।

नंदोसी—पुं०=नंदोई।

नंद्*—पुं० १.=नाद। २.=नद।

नंद्यावर्त्त—पुं० [सं० नंदि-आवर्त्त, ब० स०] १. ऐसा भवन जिसमें पश्चिम ओर द्वार न हो। २. तगर नाम का पेड़।

नंबर—वि० पुं० [अं०] [वि० नंबरी] १. संख्या-सूचक अंक।

क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

२. अदद। संख्या। ३. गणना। गिनती। ४. कपड़े आदि नापने का गज जो ३६ इंच लंबा होता है। ५. सामयिक पत्र या पत्रिका का कोई स्वतंत्र अंक।

नंबरदार—पुं० [अं०+फा०] ब्रिटिश शासन में गाँव का वह जमींदार जो अपनी पट्टी के दूसरे हिस्सेदारों से मालगुजारी आदि वसूल करने में सहायता देता था।

नंबरदारी—स्त्री० [अं०+फा०] नंबरदार होने की अवस्था, पद या भाव।

नंबरवार—क्रि० वि० [अं० नंबर+हिं० वार] १. अंक या संख्या के क्रम से। २. सिलसिलेवार।

नंबरी—वि० [अं० नंबर] १. जिस पर नंबर या अंक लगा हो। २. नंबर संबंधी। जैसे—नंबरी गज। ३. बहुत बड़ा और मशहूर। जैसे—नंबरी चोर, नंबरी गुंडा।

नंबरी गज—पुं० [अं०+हिं०] कपड़े आदि नापने का अंगरेज़ी गज जो ३६ इंच लंबा होता है।

नंबरी चोर—पुं० [हिं०] वह कुख्यात चोर जिसका उल्लेख पुलिस के अभिलेखों में विशेष रूप से हो।

नंबरी तह—स्त्री० [हिं०] कपड़े के थान की इस प्रकार लगी हुई तह कि उसकी प्रत्येक परत एक एक गज लंबी हो और क्रमात् एक दूसरी के ऊपर पड़ती हो।

विशेष—ऐसी तह उस तह से भिन्न होती है जो पहले दोहरी, तब चौहरी आदि करके लगाई जाती है।

नंबरी नोट—पुं० [हिं०] १. ब्रिटिश भारत में, सौ या इससे अधिक रुपयोंवाला कोई बड़ा नोट जिसका नंबर लेन-देन के समय बही खातों में लिख लेने की प्रथा थी। २. आज-कल सौ रुपयों का नोट।

नंबरी सेर—पुं० [हिं०] तौलने का वह सेर जो ब्रिटिश शासन में ८० अँगरेजी रुपयों के बराबर अर्थात् ८० भर होता था। अभी तक (अर्थात् दशमलव पद्धति प्रचलित होने के पहले तक) यही सेर मानक माना जाता था।

नंबूरी—पुं० [?] मालावार प्रांत के ब्राह्मणों की एक जाति।

नंशुक—वि० [सं०√नश् (नाश)+णुकन्, नुमागम] १. नाश करनेवाला। २. हानिकारक। ३. भटकनेवाला। ४. बहुत छोटा। ५. सूक्ष्म।

नंस*—पुं०=नाश।

वि०=नष्ट।

नंसना†—स० [सं० नाश] नष्ट करना।

अ० नष्ट होना।

नइया†—स्त्री०=नाव (नौका)।

नइहर—पुं० [सं० मातृगृह, पु० हिं० मैहर] विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसके माता-पिता का घर। पीहर। मैका।

नई†—वि० [सं० नयी=नयवान्] नीतिमान। नीतिज्ञ।

स्त्री०=नदी।

वि० हिं० 'नया' का स्त्री०।

नउंजी— स्त्री०=लीची (फल)।

नउ*—वि० १.=नव (नया)। २.=नौ (संख्या)।

नउआ—पुं० [स्त्री० नउनिया]=नाऊ (नापित या हज्जाम)।

नउका—स्त्री०=नौका (नाव)।

नउज †—अव्य०=नौज।

नउन †—वि०=नत (झुका हुआ)।

नउनियाँ—स्त्री० [हिं० नाऊ] नाई जाति की स्त्री। नाउन।

नउरंग—पुं० १.=नारंग। २.=नौरंग।
स्त्री०=नारंगी।

नउर—पुं०=नकुल (नेवला)।

नउरा†—पुं० [स्त्री० नेउरी]=नौकर।
†पुं०=नेवला।

नउलि†—वि०=नवल (नया या विलक्षण)।

नएपंज—पुं० [हिं० नया+पाँच] पाँच वर्ष की अवस्था का घोड़ा। जवान घोड़ा।

नओढ़†—वि०, पुं०=नवोढ़।
वि० स्त्री०=नवोढ़ा।

नओढा †—वि० स्त्री०=नवोढ़ा।

नक—पुं० [?] १. आकाश। नभ। २. स्वर्ग।
स्त्री० हिं० 'नाक' का वह संक्षिप्त रूप जो उसे यौ० पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—नक-कटा, नक-चढ़ा, नक-छिकनी, नक-बेसर आदि।
†स्त्री०=नख (नाखून)।

नक-कटा—वि० [हिं० नाक+कटना] [स्त्री० नक-कटी] १. जिसकी नाक कटी हुई हो। २. दूसरों द्वारा विदित होने पर भी जो लज्जा का अनुभव न करे। बहुत बड़ा निर्लज्ज।

नक-कटी—स्त्री० [हिं० नाक+कटना] १. नाक कटने की अवस्था या भाव। २. दुर्दशापूर्ण अपमान।

नक-घिसनी—स्त्री० [हिं० नाक+घिसना] १. जमीन पर नाक घिसने अर्थात् रगड़ने की क्रिया या भाव। २. बहुत अधिक दीनतापूर्वक की जानेवाली क्षमायाचना, प्रतिज्ञा अथवा प्रार्थना।

नक-चढ़ा—वि० [हिं० नाक+चढ़ना] १. जिसकी नाक हर समय चढ़ी रहती हो या बात-बात में चढ़ जाती हो। २. जो जल्दी अप्रसन्न या रुष्ट हो जाता हो। चिड़चिड़ा। बद-मिजाज।

नक-चोटी—स्त्री०=नख-चोटी।

नक-छिकनी—स्त्री० [हिं० नाक+छींकना] एक पौधा जिसके घुंडी के आकार के फूलों के सूँघने से छींकें आती हैं।

नकटा—वि० [हिं० नाक+कटना] [स्त्री० नकटी] १. जिसकी नाक कट गई हो। २. निर्लज्ज। बेशरम। ३. अपमानित और दुर्दशा-ग्रस्त। उदा०—नकट। जीया, बुरे हवाल।—कहा०।
पुं० [हिं० नटका से व० वि०] १. मंगल तथा शुभ अवसरों पर गाये जानेवाले एक तरह के गीत। २. बत्तख की जाति का एक तरह का पक्षी जिसके नर की चोंच पर काला दाना या मांस-खंड उभरा रहता है।

नकटेसर—पुं० [?] एक प्रकार का पौधा जिसमें सुगंधित सुन्दर फूल लगते हैं।

नकड़ा—पुं०[हिं० नाक] बैलों का एक रोग जिसमें उनकी नाक में सूजन आने के फल-स्वरूप उन्हें साँस लेने में कष्ट होता है।

नक-तोड़ा—पुं० [हिं० नाक+तोड़ना] ऐसा अभिमान या नखरा जो दूसरों का नाक तोड़नेवाला अर्थात् बहुत ही कष्टप्रद अथवा असह्य जान पड़े।
महा०—(किसी के) नक-तोड़े उठाना=बहुत ही अनुचित और अप्रिय जान पड़नेवाले नखरे भी बरदाश्त करना या सहना।

नकंद—पुं० [?] एक प्रकार का बढ़िया चावल जो काँगड़े में होता है।

नकद—वि०, पुं०=नगद।

नकदावा—पुं० [?] ऐसी पकी हुई दाल जिसमें बड़ियाँ भी पड़ी हों।

नकदी—वि०, स्त्री०=नगदी।

नकना—स० [सं० लंघन, हिं० नाकना] १. उल्लंघन करना। डाकना। लाँघना। २. छोड़ना। त्यागना।
अ० गमन करना। चलना।
अ० [हिं० नाक] इतना दुःखी और परेशान होना कि मानों नाक में दम आ गया या हो रहा हो।

नकन्याना†—अ० [हिं० नाक] नाक में दम होना। तंग या परेशान होना। उदा०—हाय बुढ़ापा तुम्हरे मारे हम तो अब नकन्याय गयन। —प्रतापनारायण मिश्र।
स० नाक में दम करना। तंग या परेशान करना।

नकपोड़ा—पुं० [हिं० नाक+पकौड़ा] बहुत बड़ी तथा फूली हुई नाक। (परिहास या व्यंग्य)

नकफूल—पुं० [हिं० नाक+फूल] नाक में पहनने का एक प्रकार का फूल। लौंग।

नकब—स्त्री० [अ० नक्ब] चोरी करने के उद्देश्य से दीवार में किया हुआ बड़ा छेद जिसमें से होकर मकान में घुसा जाता है। सेंध।
क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

नकबजनी—स्त्री० [अ० नक्ब+फा० जनी] चोरी करने के लिए किसी के घर में नकब या सेंध लगाने की क्रिया।

नकबानी—स्त्री० [हिं० नाक+बानी ?] नाक में दम करने अर्थात् बहुत तंग या परेशान करने की क्रिया या भाव।

नकबेसर—स्त्री० [हिं० नाक+बेसर] नाक में पहनने की छोटी नथ। बेसर।

नकमोती—पुं० [हिं० नाक +मोती] नाक में पहनने का मोती जिसे लटकन भी कहते हैं।

नकल—स्त्री० [अ० नक्ल] १. किसी को कुछ करते हुए देखकर उसी के अनुसार कुछ करने की क्रिया या भाव। अनुकरण। जैसे—अब तुम भी उनकी नकल करने लगे।
क्रि० प्र०—उतारना।
२. परीक्षा में, एक परीक्षार्थी का दूसरे परीक्षार्थी द्वारा लिखी हुई बात छल से देखकर अपनी पुस्तिका में लिखना।
क्रि० प्र०—मारना।
३. ऐसी कृति जो किसी दूसरी कृति को देखकर उसी के ढंग पर या उसी की तरह बनाई गई हो। अनुकृति। जैसे—यह खिलौना उसी विलायती खिलौने की नकल है।
क्रि० प्र०—उतारना।—बनाना।
४. किसी की रहन-सहन, वेश-भूषा, हाव-भाव आदि का ज्यों का त्यों किया जानेवाला अभिनयात्मक अनुकरण जो उसे उपहासास्पद सिद्ध करने अथवा लोगों का मनोरंजन करने के लिए किया जाय। स्वाँग। जैसे—अफीमची की नकल, गुंडे-बदमाशों की नकल।

क्रि० प्र०—उतारना।

५. किसी प्रकार की विलक्षण और हास्यास्पद कृति, रूप-रंग, व्यवहार आदि। जैसे—जब देखो तब आप एक नई नकल बनाकर आ पहुँचते हैं। ६. हास्यरस का कोई छोटा अभिनय, कथा, कहानी, चुटकुला आदि। ७. किसी प्रकार के अंकन, चित्र, लेख, लेख्य, साहित्यिक कृति आदि की ज्यों की त्यों की हुई प्रतिलिपि। जैसे—इस पत्र की एक नकल अपने पास रख लो।

विशेष—नकल में मुख्य भाव यही होता है कि इसमें नवीनता, मौलिकता, वास्तविकता, सजीवता आदि का अभाव है। केवल बाहरी रूप-रंग किसी के अनुकरण पर या उसे देखकर बनाया गया होता है।

नकलची—वि० [हिं० नकल+ची (प्रत्य०)] १. जो तुच्छतापूर्वक दूसरों का अनुकरण करता हो। नकल करनेवाला। २. (वह विद्यार्थी) जो अपने सहपाठी की पुस्तिका में लिखे हुए लेख आदि की नकल करता हो।

नकल-नवीस—पुं० [अ० नक्ल+फा० नवीस] [भाव० नकलनवीसी] कार्यालय आदि का वह लिपिक जो दस्तावेजों आदि की नकल तैयार करता हो।

नकलनोर—पुं० [?] मुनिया (चिड़िया)।

नकलपरवाना—पुं० [अ० +फा०] पत्नी का भाई। साला।

विशेष—इस पद का प्रयोग केवल परिहास और व्यंग्य के रूप में यह सूचित करने के लिए होता है, कि अमुक की पत्नी का जो रूप-रंग है, उसी की अनुकृति का परिचायक या सूचक उसका भाई है।

नकल बही—स्त्री० [हिं०] १. वह बही जिसमें भेजे जानेवाले पत्रों की नकल या प्रतिलिपि रखी जाती थी। २. वह पंजिका या फाइल जिसमें पत्रों की प्रतियाँ रखी जाती हैं।

नकली—वि० [अ० नक्ली] १. जो किसी की नकल भर हो। किसी के अनुकरण पर बना हुआ। २. उक्त के आधार पर जो मौलिक न हो। कृत्रिम। ३. (पदार्थ) जो महत्त्व, मान, मूल्य आदि के विचार से घटकर हो और प्रायः दूसरों को धोखा देने के उद्देश्य से बनाया गया हो। ४. काल्पनिक। ५. झूठ। मिथ्या।

नकलोल—वि० [हिं० नाक+लोल (प्रत्य०)] १. (ऐसा व्यक्ति) जिसकी जिधर चाहे नाक घुमाई जा सके। २. निर्बुद्धि। मूर्ख। पुं०=नकलनोर।

नकवा†—पुं० [हिं० नाक?] नया निकला हुआ अंकुर। कल्ला। पुं० १.=नाक। २. नाका (तराजू, सूई आदि का छेद)।

नकश—पुं० १. दे० 'नक्श'। २. दे० 'नकश-मार'।

नकश-मार—स्त्री० [अ० नक्श+हिं० मारना] ताश के पत्तों का एक प्रकार का खेल जिसकी गिनती जूए में होती है।

नकशा—पुं० [अ० नक्शः] १. रेखाओं आदि के द्वारा किसी वस्तु की अंकित की हुई वह आकृति या प्रतिकृति जो उस वस्तु के स्वरूप का सामान्य परिचय कराती हो।

क्रि० प्र०—उतारना।—खींचना।—बनाना।

मुहा०—(किसी चीज या बात का) **नकशा खींचना**=ऐसा यथातथ्य और सविस्तार वर्णन करना कि सारा रूप या स्थिति स्पष्ट हो जाय।

२. किसी आकृति, वस्तु आदि का परिचय या बोध करानेवाले चिह्न, रेखाएँ आदि जो उसके उतार-चढ़ाव, स्वरूप आदि का ज्ञान कराती हों। आकृति या ढाँचा। रूप-रेखा। जैसे—तोड़-फोड़ और नई बस्तियों से तो सारे शहर का नकशा ही बदल गया है।

पद—**नाक-नकशा**—किसी व्यक्ति के चेहरे की गठन। जैसे—भले ही उनका रूप साँवला हो, पर नाक-नकशा बहुत अच्छा है, अर्थात् रूप देखने में सुन्दर है।

३. पृथ्वी अथवा उसके किसी विशिष्ट अंश और उस पर स्थित मुख्य-मुख्य वस्तुओं आदि का परचायक चित्र। मानचित्र। (मैप)

क्रि० प्र०—खींचना।—बनाना।

विशेष—(क) ऐसे नकशों में जलाशय, नगर, नदियाँ, पहाड़, अनेक प्रकार के विभाजन (जैसे—खेती, जमीन, बाग, सड़कें आदि) सभी मुख्य बातें अंकित होती हैं। (ख) नकशे किसी जिले, तहसील, नगर, बस्ती, भवन आदि के भी बनते हैं। (ग) किसी देश के भिन्न-भिन्न भागों की आबादी, पैदावार, वर्ष-मान आदि के भी सूचक नकशे बनते हैं। (घ) पृथ्वी के सिवा समूचे आकाश या उसके किसी अंश के भी ऐसे नकशे बनते हैं, जिनमें भिन्न-भिन्न ग्रहों, तारों, नक्षत्रों आदि की स्थितियाँ दिखाई जाती हैं।

४. कोई ऐसा अंकन जो किसी प्रकार की स्थिति बतलाने या स्पष्ट करने में सहायक होता हो। जैसे—शतरंज के अच्छे खिलाड़ी शतरंज के ऐसे नये-नये नकशे बनाकर लोगों के सामने रखते हैं कि उनकी शर्तों के अनुसार चलकर विपक्षी को मात करना बहुत ही कठिन होता है।

विशेष—ऐसे नकशों में दोनों पक्षों के भिन्न-भिन्न मोहरे कुछ विशिष्ट घरों में रखे हुए दिखाए जाते हैं।

५. किसी चीज का आकार-प्रकार, रूप-रेखा आदि बतलानेवाला वह रेखा-चित्र जो वह चीज बनाने से पहले यह सूचित करने के लिए बनाया जाता है कि बनकर तैयार होने पर वह चीज कैसी होगी अथवा उसका रूप क्या होगा। जैसे—(क) जब तक कारखाने (या मकान) का नकशा अधिकारी मंजूर न कर लें, तब तक कारखाना (या मकान) बनाने का काम शुरू नहीं हो सकता। (ख) अच्छे कारीगर कोई चीज बनाने से पहले उसका नकशा तैयार करते हैं। ६. कोई ऐसी आकृति या क्रिया, घटना या स्थिति जिसका स्वरूप प्रत्यक्ष और स्पष्ट दिखाई देता हो। जैसे—उस दिन के जलसे का नकशा अभी तक हमारी आँखों के सामने है।

मुहा०—**नकशा जमाना**=ऐसे अच्छे ढंग से कोई काम कर दिखाना कि सब लोग उससे प्रभावित और मुग्ध होकर उसकी प्रशंसा करने लगें। जैसे—उस संगीत सम्मेलन में कई गवैयों ने अच्छा नकशा जमाया था।

७. किसी व्यक्ति के आचार-व्यवहार, चाल-चलन, रहन-सहन आदि का बाह्य रूप जो उसकी प्रवृत्ति, मनोवृत्ति, स्थिति आदि के सिवा उसके भविष्य का भी परिचायक होता है। जैसे—(क) आज-कल इस लड़के का नकशा अच्छा नहीं दिखाई देता। (ख) अब तो धीरे-धीरे आपके भाई साहब का नकशा भी बदलने लगा है। ८. दे० 'सारिणी'।

नकशानवीस—पुं० [अ० नक्श:+नवीस] वह व्यक्ति जो चीजों (देशों, घरों, कारखानों) आदि के नकशे बनाता हो।

नकशी—वि० [अ० नक्शी] जिस पर नक्श अर्थात् बेल-बूटे अंकित हों अथवा खुदे या बने हों।

नकशीदार—वि०=नकशी।

नकशीमैना—स्त्री० [अ०+हिं०] तेलिया नामक मैना।

नकस—पुं०=नकशा।

नकसमार—स्त्री०=नकश-मार।

नकसा—पुं०=नकशा।

नकसीर—स्त्री० [हिं० नाक+सं० क्षीर=जल] १. एक प्रकार का क्षुद्र रोग जिसमें गरमी आदि के कारण नाक में से खून बहता है। २. उक्त रोग के कारण नाक में से बहनेवाला खून।

क्रि० प्र०—फूटना।—बहना।

नका †*—पुं०=निकाह (विवाह)। उदा०—घण पड़ियाँ साँकड़िया घड़ियाँ ना धीहड़ियाँ पड़ी नका।—दुरसाजी।

नकाना—अ० [हिं० नाक] नाक में दम होना। बहुत परेशान होना।

स० नाक में दम करना। तंग या परेशान करना।

† स०=नकियाना।

नकाब—स्त्री० [अ० निक़ाब] १. अपने को छिपाये रखने के लिए चेहरे पर डाला जानेवाला जालीदार रंगीन कपड़ा। मुखावरण।

क्रि० प्र०—उठाना।—डालना।

विशेष—इसका प्रयोग प्रायः स्त्रियाँ अपना रूप दूसरों की दृष्टि में पड़ने से बचाने के लिए और चोर, डाकू आदि अपनी आकृति छिपाये रखने के लिए करते हैं।

२. स्त्रियों की साड़ी या चादर का वह भाग जिससे उनका मुख ढका रहता है। घूँघट।

मुहा०—**नकाब उलटना**=नकाब ऊपर उठाकर इस प्रकार पीछे उलटना या हटाना कि लोग आकृति देख सकें।

३. लोहे की वह जाली जो झिलम में नाक की रक्षा के लिए लगी रहती है।

नकाबपोश—वि० [अ० निक़ाब+फा० पोश] (व्यक्ति) जिसने अपने चेहरे पर नकाब अर्थात् जालीदार कपड़ा डाल रखा हो।

नकार—पुं० [सं० न+कार] १. 'न' अक्षर या वर्ण। २. न या नहीं का बोधक शब्द या वाक्य।

स्त्री० [हिं० नकारना] किसी काम या बात के लिए नहीं करने या कहने की क्रिया या भाव। इन्कार।

नकारची—पुं०=नक्कारची।

नकारना—अ० [हिं० न+कारना (प्रत्य०)] १. असहमति प्रकट करते हुए 'न' या 'नहीं' कहना। २. न मानना। अस्वीकृत करना।

नकारा—वि० [फा० नाकार:] [स्त्री० नकारी] १. जिसे कोई काम न हो। निष्कर्म। २. जो किसी काम का न हो। निकम्मा। ३. खराब। निष्प्रयोजन। व्यर्थ। ४. खराब। बुरा।

† पुं०=नक्कारा।

नकारात्मक—वि० [सं० नकार-आत्मन्, ब० स०, कप्] १. (उत्तर या कथन) जिसमें कोई बात न मानी गई हो या कुछ करने से इन्कार किया गया हो। 'सकारात्मक' का विपर्याय। २. दे० 'नहिक'।

नकाश—पुं०=नक्काश।

नकाशना—स० [अ० नक्श] किसी चीज पर नक्श करना या बनाना अर्थात् उस पर बेल-बूटे आदि खोदकर अंकित करना या उकेरना। नक्काशी करना।

नकाशी—स्त्री०=नक्काशी।

नकाशीदार—वि०=नकशी।

नकास—पुं० १.=नक्काश। २.=नखास।

नकासना—स०=नकाशना।

†स०=निकासना (निकालना)।

नकासी—स्त्री०=नक्काशी।

†स्त्री०=निकासी।

नकासीदार—वि० दे० 'नकशी'।

न-किंचन—वि० [सं० सहसुपा समास]=अकिंचन।

नकियाना—अ० [हिं० नाक] १. नाक से कुछ श्वास निकालते हुए शब्दों का इस प्रकार उच्चारण करना या बोलना कि मात्राएँ, वर्ण, आदि अनुनासिक से जान पड़ें। २. नाक में दम होना। बहुत ही तंग या परेशान होना।

स० किसी की नाक में दम करना। बहुत ही तंग या परेशान करना।

नकीब—पुं० [अ० नक़ीब] १. प्राचीन काल में राजा-महाराजा की सवारी के आगे-आगे चलनेवाला और उनके आगमन की उच्च स्वर में घोषणा करनेवाला चोबदार। २. भाट। चारण। ३. कड़खा गानेवाला व्यक्ति। कड़खैत।

नकुच—पुं० [?] मदार (पेड़)।

†पुं०=लकुच (वृक्ष और फल)।

नकुट—पुं० [सं० न√कुट् (कुटिल होना)+क]=नाक।

नकुड़ा—पुं० [सं० नकुल] नेवला (जन्तु)।

पुं० [हिं० नाक] १. नाक विशेषतः उसका अग्र भाग। २. नथना।

नकुल—पुं० [सं० ब० स०] १. नेवला। २. माद्री के गर्भ से उत्पन्न युधिष्ठिर, अर्जुन, और भीम के सौतेले भाई। ३. पुत्र। बेटा। ४. शिव। ५. एक प्रकार का पुराना बाजा।

†पुं०=दे० 'नुकल।'

नकुल-कंद—पुं० [मध्य० स०] गंधनाकुली या रास्ना (कंद)।

नकुलक—पुं० [सं० नकुल+कन्] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का गहना। २. रुपए आदि रखने की एक प्रकार की थैली।

नकुल-तैल—पुं० [मध्य० स०] वैद्यक में, एक प्रकार का तैल जो नेवले के मांस में बहुत सी दूसरी औषधियाँ मिलाकर बनाया जाता है। इसका उपयोग आमवात, अंगों का कंप और कमर, पीठ, जाँघ आदि के दर्द में होता है।

नकुलांध—पुं० [नकुल-अंध, उपमित स०] सुश्रुत के अनुसार आँख का एक रोग जिसमें आँखें नेवले की आँखों की तरह चमकने लगती हैं और चीजें रंग-बिरंगी दिखाई देने लगती हैं।

वि० जिसे उक्त प्रकार का रोग हो।

नकुलांधता—स्त्री० [सं० नकुलांध+तल्—टाप्] नकुलांध रोग होने की अवस्था या भाव।

नकुला—स्त्री० [सं० नकुल+टाप्] पार्वती।
वि० सं० 'नकुल' का स्त्री०।
†पुं०=नाक।

नकुलाढ्या—स्त्री० [सं० नकुल-आढ्या, तृ० त०] गंधनाकुली। नकुलकंद।

नकुली—स्त्री० [सं० नकुल+ङीष्] १. जटामासी। २. केसर। ३. शंखिनी। ४. नेवले की मादा।

नकुलीश—पुं० [सं०] नकुलेश।

नकुलेश—पुं० [सं०] तांत्रिकों के एक भैरव का नाम।

नकुलेष्टा—स्त्री० [सं० नकुल-इष्टा, ष० त०] रास्ना। रायसन।

नकुलौष्ठी—स्त्री० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा, जिसमें बजाने के लिए तार लगे हुए होते थे।

नकुवा—पुं० १.=नाक। २.=नाका।

नकेल—स्त्री० [हिं० नाक+एल (प्रत्य०)] १. ऊँट, बैल आदि के नथने में से आर-पार निकाली हुई वह रस्सी जो लगाम का काम देती है, और जिसके सहारे वह चलाया जाता है। मुहार। २. किसी को अपने अधिकार या वश में रखने की युक्ति या शक्ति।
मुहा०—(किसी की) **नकेल हाथ में होना**=किसी पर सब प्रकार का अधिकार होना। किसी से बलपूर्वक मनमाना काम करा लेने की शक्ति होना। जैसे—उनकी नकेल तो हमारे हाथ में है।

नक्कना†—स०[सं० लंघन] लाँघना।

नक्कल†—पुं० [अ० नुक्ल=गजक] जल-पान।

नक्का—पुं० [हिं० नाक] १. सूई का वह छेद जिसमें डोरा डाला जाता है। २. कौड़ी। ३. दे० 'नाका'। ४. दे० 'नक्कीमूठ'।

नक्कादूआ—पुं०=नक्कीमूठ।

नक्कार—पुं०=नकारा।

नक्कारखाना—पुं० [अ० नक्कार+फा० खानः] वह स्थान जहाँ नक्कारा या नौबत बजती है। नौबतखाना।
पद—**नक्कारखाने में तूती की आवाज**=(क) बहुत भीड़-भाड़ या शोर-गुल में कही गई कोई सामान्य-सी बात जो सुनाई नहीं पड़ती। (ख) बड़े-बड़े लोगों के सामने छोटे आदमियों की बात।

नक्कारची—पुं० [अ० नक्कारः+फा० ची (प्रत्य०)] नगाड़ा बजानेवाला। वह जो नक्कारा बजाता हो।

नक्कारा—पुं० [अ० नक्कारः] नगाड़ा नाम का बाजा। (दे० 'नगाड़ा')

नक्काल—पुं० [अ०] १. वह जो केवल नकल या अनुकरण करता हो अथवा जिसने किसी की नकल या अनुकरण मात्र किया हो। २. वह जो केवल दूसरों का मनोरंजन करने अथवा दूसरों को उपहासास्पद सिद्ध करने के लिए तरह-तरह की नकलें करता हो। जैसे—बहुरुपिये, भाँड़ आदि।

नक्काली—स्त्री० [अ०] १. नकल या अनुकरण करने की क्रिया या भाव। २. दूसरों की नकल उतारने की कला या विद्या। ३. भाँड़पन।

नक्काश—पुं० [अ०] नक्काशी का काम करनेवाला कारीगर। वह जो धातुओं आदि पर खोदकर बेल-बूटे बनाता हो।

नक्काशी—स्त्री० [अ०] १. धातु, पत्थर, लकड़ी आदि पर खोदकर बेल-बूटे आदि बनाने का काम या कला। २. उक्त प्रकार से बनाये हुए बेल-बूटे आदि।

नक्की—स्त्री० [हिं० नक्का=कौड़ी या एक?] १. जूए के खेल में वह दाँव जिसके लिए 'एक' का चिह्न नियत हो अथवा जिसकी जीत किसी प्रकार के 'एक' चिह्न से संबद्ध हो। २. दे० 'नक्की-मूठ'।
स्त्री० [हिं० नाक] मनुष्य के गले से होनेवाला ऐसा उच्चारण जिसमें श्वास का कुछ अंश नाक से भी निकलता हो और जिसका उच्चारण अनुनासिक-सा होता है। जैसे—यह लड़का इतना बड़ा हो गया; पर अभी तक नक्की बोलता है।
क्रि० प्र०—बोलना।
वि० [हिं० एक?] १. (काम) जो हर तरह से ठीक और पूरा हो चुका हो। २. (बात) जिसका दृढ़ निश्चय हो चुका हो। ३. (ऋण या देन) जो अदा या चुकता हो गया हो। जैसे—किसी का हिसाब नक्की करना।

नक्कीपूर—पुं०=नक्कीमूठ।

नक्कीमूठ—स्त्री० [हिं०] जूए का एक प्रकार का खेल जो प्रायः स्त्रियाँ और बालक कौड़ियों से खेलते हैं। इसमें एक दूसरे को काटती हुई दो सीधी लकीरें खींची जाती हैं। एक खिलाड़ी अपनी मुट्ठी में कुछ कौड़ियाँ लेकर अपने दाँव पर रख देता है। तब बाकी खिलाड़ी अपने अपने दाँव पर कौड़ियाँ लगाकर हार-जीत करते हैं।

नक्कू—वि० [हिं० नाक] १. बड़ी नाकवाला। जिसकी नाक बड़ी हो। २. अपने आपको बहुत प्रतिष्ठित या औरों से बढ़कर समझनेवाला। ३. जिसका कोई आचरण या कृत्य औरों से बिलकुल भिन्न और असाधारण हो; और इसी लिए जिसकी ओर लोग उपेक्षापूर्वक उँगलियाँ उठाते हों। जैसे—हम तुम्हारी सलाह मानकर नक्कू नहीं बनना चाहते।

नक्खय*—पुं०=नक्षत्र।

नक्तंदिन, नक्तंदिव—अव्य० [सं० नक्तम्-दिन, द्व० स०, नक्तम्दिवा, द्व० स०] रात-दिन।

नक्त—वि० [सं०√नज् (लजाना)+क्त] जो शरमा गया हो। लज्जित।
पुं० [सं०] १. वह समय जब दिन का केवल एक मुहूर्त बाकी रह गया हो। बिलकुल संध्या का समय। २. रात। रात्रि। ३. शिव। ४. राजा पृथु के एक पुत्र का नाम। ५. दे० 'नक्त व्रत'।
स्त्री० रात।

नक्तक—पुं० [सं० नक्त+कन्] फटा-पुराना और मैला कपड़ा।

नक्तचर—वि० [सं० नक्त√चर् (गति)+ट] १. रात को घूमने, चलने या विचरण करनेवाला।
पुं० १. शिव। २. राक्षस। ३. उल्लू। ४. बिल्ली।

नक्तचारी (रिन्)—वि०, पुं० [सं० नक्त√चर्+णिनि]=नक्तचर।

नक्तमाल—पुं० [सं० नक्तम्-आ√अल् (पर्याप्ति)+अच्] करंज वृक्ष। कंजे का पेड़।

नक्त-मुखा—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] रात।

नक्त-व्रत—पुं० [सं० मध्य० स०] एक प्रकार का व्रत जो अगहन के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को किया जाता है। इसमें दिन के समय बिलकुल

भोजन नहीं करते केवल रात को तारे देखकर और विष्णु की पूजा करके भोजन करते हैं।

नक्तांध—वि० [सं० नक्त-अंध, स० त०] जिसे रात को न दिखाई देता हो। जिसे रतौंधी हो।

पुं०=नक्तांध्य।

नक्तांधता—स्त्री० [सं० नक्तांध+तल्—टाप्]=नक्तांध्य।

नक्तांध्य—पुं० [सं० नक्त-अंध्य, स० त०] आँख का रतौंधी नामक रोग।

नक्ता—स्त्री० [सं० नक्त+टाप्] १. कलियारी नामक विषैला पौधा। २. हलदी। ३. रात। रात्रि।

नक्ताह—पुं० [सं०] करंज वृक्ष। कंजा।

नक्ति—स्त्री० [सं०√नज्+क्तिन्] रात।

नक्द—वि०, पुं०=नगद।

नक्दी—स्त्री० दे० 'नगदी'।

नक्र—पुं० [सं०न√क्रम् (गति)+ड] १. नाक नामक जल-जन्तु। मगर। २. कुंभीर या घड़ियाल नामक जल-जंतु।

नक्र-राज—पुं० [प० त०] १. घड़ियाल। २. मगर (जलजंतु)।

नक्रा—स्त्री० [सं० नक्र+टाप्] नाक।

नक्ल—स्त्री०=नकल।

विशेष—'नक्ल' के यौ० पदों के लिए दे० 'नकल' के यौ० पद।

नक्श—वि० [अ० नक़्श] जिस पर नक्काशी का काम हुआ हो।

पुं० १. वे चिह्न, बेल-बूटे आदि जो पत्थर, लकड़ी आदि पर खोदकर बनाये गये हों। २. छाप या मोहर जिस पर कोई अंक, चित्र, नाम आदि खुदा रहता है। ३. विभिन्न शारीरिक अंगों मुख्यतः चेहरे की सामूहिक गठन और उनसे अभिव्यक्त होनेवाला सौंदर्य। जैसे—लड़की का रंग तो साँवला है परन्तु नक्श ठीक है। ४. कागज, भोज-पत्र आदि पर सारिणी या कोष्ठक के रूप में लिखा हुआ एक तरह का यंत्र।

विशेष—यह अनेक रोगों का नाशक माना जाता है और इसे बाँह पर या गले में पहना जाता है।

५. जादू। टोना। ६. एक तरह के गीत। ७. 'ताश' से खेला जानेवाला एक तरह का खेल। नकश-मार।

नक्श-निगार—पुं० [अ० नक्श+फा० निगार] खोदकर बनाया हुआ चित्र या बेल-बूटा।

नक्शमार—पुं०=नकशमार।

नक्शा—पुं०=नकशा।

नक्शानवीस—पुं०=नकशानवीस।

नक्शानवीसी—स्त्री०=नकशानवीसी।

नक्शी—वि०=नकशी।

नक्षत्र—वि० [सं०√नक्ष् (गति)+अत्रन्] जो क्षत न हो।

पुं० १. रात के समय आकाश में दिखाई पड़नेवाले सभी चमकते हुए पिंड या तारे, अथवा उनमें से प्रत्येक तारा या सितारा। २. विशिष्ट रूप से, वे २७ तारक-पुंज जो पृथ्वी की परिक्रमा करते समय चंद्रमा के भ्रमण-मार्ग में पड़ते हैं; और जिनके रूप-रेखाओं के आधार पर कुछ विशिष्ट आकृतियाँ मानकर ये सत्ताइस नाम रखे गये हैं।—अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्लेषा, मघा, पूर्वा-फाल्गुनी, उत्तरा-फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तर भाद्रपद और रेवती।

विशेष—आधुनिक ज्योतिषियों का मत है कि इन २७ तारकपुंजों में सब मिलाकर लगभग सवा दो सौ तारे हैं जो वास्तव में हैं तो बहुत बड़े-बड़े, परन्तु वे हमारे सौर जगत् से बहुत दूर पर स्थिति होने के कारण हमें बहुत ही छोटे तारों के रूप में और बिलकुल स्थिर दिखाई देते हैं। इन्हीं नक्षत्रों में से कुछ नक्षत्रों के नाम पर हमारे यहाँ के १२ महीनों के नाम रखे गए हैं। पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर रहता है, उसी नक्षत्र के नाम पर उस महीने का नाम रखा गया है। यथा—महीने का चैत्र नाम इसलिए पड़ा है कि उसकी पूर्णिमा को चन्द्रमा प्रायः चित्रा नक्षत्र पर रहता है। इसी प्रकार पूर्णिमा के दिन उसके विशाखा, ज्येष्ठा आदि नक्षत्रों पर रहने के कारण वैशाख, ज्येष्ठ आदि नाम पड़े हैं। नक्षत्रों के संबंध में ध्यान रखने की एक बात और है। जिन उक्त तारों के बीच से होकर चंद्रमा परिक्रमा करता हुआ दिखाई देता है, उन्हीं में से होकर चलता हुआ सूर्य भी दिखाई देता है। सूर्य का भ्रमणमार्ग जिन १२ राशियों में विभक्त है, वे भी वस्तुतः उक्त तारों के ही वर्गीकरण हैं। अन्तर यही है कि नक्षत्र उन तारों के अपेक्षया छोटे वर्ग हैं; और राशियाँ उनके बड़े वर्गों के रूप में हैं, इसी-लिए राशियों में दो-दो, तीन-तीन नक्षत्र आ जाते हैं।

३. सत्ताइस मोतियों की माला। ४. मोती।

नक्षत्र-कल्प—पुं० [प० त०] अथर्ववेद का एक परिशिष्ट जिसमें चंद्रमा की स्थिति आदि का वर्णन है।

नक्षत्र-कांति-विस्तार—पुं० [सं० नक्षत्र-कांति, प० त०, नक्षत्रकांति-विस्तार, ब० स०] सफेद ज्वार।

नक्षत्र-गण—पुं० [ष० त०] कुछ विशिष्ट नक्षत्रों के अलग-अलग समूह या गण। (फलित ज्योतिष)

नक्षत्र-चक्र—पुं० [ष० त०] १. सत्ताइस नक्षत्रों का वह चक्र जिसमें से होकर चन्द्रमा २७-२८ दिनों में पृथ्वी की परिक्रमा करता है। २. राशिचक्र। ३. तांत्रिकों का एक प्रकार का चक्र जिसके अनुसार दीक्षा के समय नक्षत्रों आदि के विचार से गुरु यह निश्चय करता है कि शिष्य को कौन सा मंत्र दिया जाय।

नक्षत्र-चिंतामणि—पुं० [उपमि० स० ?] एक प्रकार का कल्पित रत्न जिसके संबंध में यह प्रसिद्ध है कि उससे माँगी हुई चीजें प्राप्त हो जाती हैं।

नक्षत्र-दर्श—पुं० [सं० नक्षत्र√दृश् (देखना)+अण्] १. वह जो नक्षत्र देखता हो। २. ज्योतिषी।

नक्षत्र-दान—पुं० [स० त०] पुराणानुसार भिन्न-भिन्न नक्षत्रों के उद्देश्य से किया जानेवाला भिन्न-भिन्न पदार्थों का दान।

नक्षत्र-नाथ—पुं० [ष० त०] चन्द्रमा।

नक्षत्र-पति—पुं० [ष० त०] चंद्रमा।

नक्षत्र-पत्र—पुं० [सं० नक्षत्र√पा (रक्षा)+क] चन्द्रमा।

नक्षत्र-पथ—पुं० [ष० त०] नक्षत्रों के चलने का मार्ग।

नक्षत्र-पद-योग—पुं० [ष० त० ?] जन्मकुंडली का वह योग जब सूर्य जन्म राशि से छठे स्थान पर या मेष राशि में होता है और चंद्रमा वृष राशि में।

नक्षत्र-पुरुष—पुं० [सुप्सुपा स०] विभिन्न नक्षत्रों को विभिन्न शारीरिक अंगों के रूप में मानकर उनके आधार पर बननेवाला कल्पित पुरुष।

नक्षत्र-माला—स्त्री० [मध्य० स०] वह हार जिसमें सत्ताइस मोती हों।

नक्षत्र-याजक—पुं० [ष०त०] ग्रहों और नक्षत्रों आदि के दोषों की मंत्र-जाप आदि की सहायता से शांति करानेवाला ब्राह्मण।

नक्षत्र-योग—पुं० [ष० त०] नक्षत्र के साथ ग्रहों का योग।

नक्षत्र-योनि—स्त्री० [ष० त०] वह नक्षत्र जो विवाह के लिए निषिद्ध हो।

नक्षत्र-राज—पुं० [ष० त०] नक्षत्रों के स्वामी, चंद्रमा।

नक्षत्र-लोक—पुं० [ष० त०] १. सितारों की दुनियाँ। २. पुराणानुसार एक लोक जो चंद्रलोक से ऊपर स्थित माना गया है।

नक्षत्र-वीथि—स्त्री० [ष० त०] नक्षत्रों में गति के अनुसार तीन-तीन नक्षत्रों के बीच का कल्पित मार्ग।

नक्षत्र-वृष्टि—स्त्री० [ष० त०] तारे का टूटना। उल्कापात।

नक्षत्र-व्यूह—पुं० [ष० त०] फलित ज्योतिष में वह चक्र जिसमें यह दिखलाया जाता है किन-किन पदार्थों, जातियों आदि का कौन-कौन नक्षत्र स्वामी है।

नक्षत्र-व्रत—पुं० [मध्य० स०] पुराणानुसार किसी विशिष्ट नक्षत्र के उद्देश्य से किया जानेवाला ऐसा व्रत जिसमें उसके स्वामी की आराधना की जाती है।

नक्षत्र-शूल—पुं० [उपमि० स०] कुछ विशिष्ट नक्षत्रों का किसी विशिष्ट दिशा में रहने का ऐसा काल या समय जिसमें यात्रा आदि निषिद्ध हो।

नक्षत्र-संधि—स्त्री० [ष० त०] ग्रहों का नक्षत्र के पूर्व पक्ष से उत्तर पक्ष में प्रविष्ट होने की संधि या समय।

नक्षत्र-सत्र—पुं० [मध्य० स०] वह यज्ञ जो नक्षत्रों के उद्देश्य से विशेषतः दुष्ट ग्रहों की शांति के लिए किया जाय।

नक्षत्र-साधन—पुं० [ष० त०] किसी नक्षत्र में किसी ग्रह के रहने का समय जानने के लिए की जानेवाली गणना।

नक्षत्र-सूचक—पुं० [ष० त०] ऐसा व्यक्ति जो बिना शास्त्रों का अध्ययन किये ही ज्योतिषी बन बैठा हो।

नक्षत्र-सूची (चिन्)—पुं० [सं० नक्षत्र√सूच् (बताना)+णिनि]=नक्षत्र-सूचक।

नक्षत्रामृत—पुं० [नक्षत्र-अमृत, स० त०] किसी विशिष्ट दिन में किसी विशिष्ट नक्षत्र का होनेवाला उत्तम योग जो यात्रा आदि के लिए शुभ माना जाता है।

नक्षत्रिय—वि० [सं० नक्षत्र+घ+इय] १. नक्षत्र-संबंधी। २. सत्ताइस (नक्षत्रों की संख्या के आधार पर)।

नक्षत्री—वि० [सं० नक्षत्र+हिं० ई (प्रत्य०)] १. जिसकी जन्मकुंडली में अच्छे नक्षत्र हों। अच्छे नक्षत्रों में जन्म लेनेवाला। २. बहुत बड़ा भाग्यवान।

पुं० [सं० नक्षत्रिन्] १. चंद्रमा। २. विष्णु।

नक्षत्रेश—पुं० [नक्षत्र-ईश, ष० त०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

नक्षत्रेश्वर—पुं० [नक्षत्र-ईश्वर, ष० त०] नक्षत्रों का स्वामी, चंद्रमा।

नक्षत्रेष्टि—पुं० [नक्षत्र-इष्टि, मध्य० स०] नक्षत्रों की तुष्टि के निमित किया जानेवाला यज्ञ।

नख—पुं० [सं०√नह् (बंधन)+ख, हलोप] १. हाथों तथा पैरों की उँगलियों के ऊपरी तल का वह सफेद अंश जो अधिक कड़ा तथा तेज धार या तेज नोकवाला होता है। २. उक्त का वह चन्द्राकार अगला भाग जो कैंची आदि से काटकर अलग किया जाता है। ३. घोंघे या सीप की जाति के कीड़ों का वह मुखावरण जो नाखून के समान चन्द्राकार होता है। ४. खंड। टुकड़ा।

स्त्री० [फा०] १. एक प्रकार का बटा हुआ महीन रेशमी तागा जिससे गुड्डी उड़ाते और कपड़ा सीते हैं। २. गुड्डी उड़ाने का डोरा या तागा जिस पर माँझा दिया होता है। डोर।

नख-कर्तनि—स्त्री० [ष० त०] नहरनी। (दे०)

नख-कुट्ट—वि० [सं० नख√कुट्ट् (काटना)+अण्] नाखून काटनेवाला।

पुं० नाई। हज्जाम।

नख-क्षत—पुं० [तृ० त०] १. वह क्षत या चिह्न जो शरीर में नाखून गड़ने या उसकी खरोंच लगने के कारण बना हो। २. शृंगारिक क्षेत्र में स्त्री के शरीर पर का विशेषतः स्तन आदि पर का वह चिह्न जो पुरुष के मर्दन आदि के कारण उसके नाखूनों से बन जाता है। और जो यह सूचित करता है कि पुरुष के साथ इसका संभोग हुआ है।

नखखादी (दिन्)—पुं० [सं० नख√खाद् (खाना)+णिनि] दाँतों से अपने नाखून काटनेवाला व्यक्ति (जो अभागा समझा जाता है)।

नखचारी (रिन्)—वि० [सं० नख√चर् (गति)+णिनि] पंजों के बल चलनेवाला (जीव या प्राणी)।

नखचीर—पुं० [फा० नख्चिर] १. आखेट। शिकार। २. वह जंगली जानवर जिसका शिकार किया गया हो। मारा हुआ शिकार।

नख-चोटी—स्त्री० [सं० नख=नाखून+चोटना=तोड़ना] हज्जामों का मोचना, जिससे बाल नोचे या उखाड़े जाते हैं।

नखच्छत†—पुं०=नख-क्षत।

नख-छोलिया—पुं०=नख-क्षत।

नखजाह—पुं० [सं० नख+जाहच्] नाखून का सिरा।

नखत—पुं०=नक्षत्र।

नखतर†—पुं०=नक्षत्र।

नखतराज*—पुं०=नक्षत्रराज (चंद्रमा)।

नखतराय*—पुं०=नक्षत्रराज (चन्द्रमा)।

नखता—पुं० [देश०] एक प्रकार की चिड़िया जो विभिन्न ऋतुओं में विभिन्न स्थानों पर रहती है।

नखतेस*—पुं०=नक्षत्रेश (चन्द्रमा)।

नख-दारण—पुं० [ष० त०] नहरनी। (दे०)

नखना—स० [सं० लंघन] १. उल्लंघन करना। लाँघना। २. पार उतरना या जाना। पारण।

अ० उल्लंघन होना। लाँघा जाना।

स० [सं० नाशन] नष्ट करना।

नखनिष्पाव—पुं० [सं० नख-निर्√पू (अनुकरण्)+अण्] एक तरह की सेम का पौधा।

नख-पर्णी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्] बिच्छू नामक घास।

नख-पुष्पी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्] पृक्का नामक गन्ध-द्रव्य।

नखपूविका—स्त्री० [सं०] हरी सेम।

नखबान*—पुं० [सं० नख+वाण] नख। नाखून।

नखमुच—पुं० [सं० नख√मुच् (छोड़ना)+क] चिरौंजी (वृक्ष)।

नख-रंजनी—स्त्री० [ष० त०] नहरनी। (दे०)

नखर—पुं० [सं० नख√रा (देना)+क] १. नख। नाखून। २. एक प्रकार का पुराना अस्त्र जिसका अगला भाग नाखूनों की तरह नुकीला होता था। ३. उक्त प्रकार की कोई पकड़नेवाली चीज। जैसे—चिमटी, सँड़सी आदि। ४. चीता, भालू, शेर आदि जन्तु।

नखरा—पुं० [फा० नखरः] १. खुशामद कराने की भावना। २. लाड़-प्यार आदि के कारण की जानेवाली ऐसी हठपूर्ण परन्तु सुकुमारतापूर्ण चेष्टा जिसमें किसी के आग्रह को न मानने या टालने का भाव निहित होता है।

विशेष—नखरा प्रायः स्त्रियाँ दूसरों को रिझाने अथवा उन्हें अपना अभिमान दिखाने के लिए करती हैं।

क्रि० प्र०—करना।—दिखाना।—निकालना।—बघारना।

३. किसी का आग्रह टालने के लिए झूठ-मूठ की बनाकर कही जानेवाली बात।

नखरा-तिल्ला—पुं० [फा०+हिं० (अनु०)] नखरा और इसी तरह की दूसरी चेष्टाएँ जो झूठा बड़प्पन दिखाने, रिझाने आदि के लिए की जाती हैं।

नखरायुध—पुं० [नखर-आयुध, ब० स०] १. शेर। २. चीता। ३. कुत्ता।

नखराह्व—पुं० [नखराह्वा, ब० स०] कनेर।

नखरी—स्त्री० [सं० नखर+अच्—ङीप्] नख नामक गंध-द्रव्य।

नखरीला—वि० [फा० नखरा+ईला (प्रत्य०)] [स्त्री० नखरीली] बहुत अधिक या हर काम में नखरा दिखानेवाला।

नख-रेखा—स्त्री० [ष० त०] १. शरीर में लगा हुआ नाखूनों का चिह्न जो साहित्य में संभोग का चिह्न माना जाता है। नखरौट। २. कश्यप ऋषि की एक पत्नी जो बादलों की माता थी।

नखरेबाज—वि० [फा०] [भाव० नखरेबाजी] प्रायः नखरे दिखानेवाला। नखरीला।

नखरेबाजी—स्त्री० [फा०] नखरा करने या दिखाने की क्रिया या भाव।

नखरौट—स्त्री० [सं० नख+हिं० खरोंट] शरीर पर होनेवाला वह घाव जो नाखून गड़ने से बना हो। नख-क्षत।

नख-विंदु—पुं० [मध्य० स०] नाखून पर महावर, मेंहदी आदि का बनाया हुआ चिह्न।

नख-विष—वि० [ब० स०] (जीव) जिसके नाखूनों में विष हो। जैसे—कुत्ता, छिपकली, बंदर आदि।

नख विष्कि—पुं० [सं० नख-वि√कृ+क, सुट्] ऐसे पशु-पक्षी जो अपना शिकार नाखून से फाड़कर खाते हैं। जैसे—शेर, बाज आदि।

नख-वृक्ष—पुं० [उपमि० स०] नील का पेड़।

नख-शंख—पुं० [उपमि० स०] छोटा शंख।

नख-शस्त्र—पुं० [मध्य० स०] नहरनी।

नख-शिख—पुं० [सं०] पैर के नाखून से लेकर सिर के बालों तक के सब अंग।

पद—**नख-शिख से**=सिर से पैर तक। ऊपर से नीचे तक। जैसे—वह नख-शिख से दुरुस्त है। **नख-शिख से ठीक या दुरुस्त**= आदि से अंत तक सब अंगों या बातों में ठीक और दुरुस्त।

२. साहित्य में वह कवित्वमय वर्णन जिसमें किसी के नख से शिख तक या नीचे से ऊपर तक के सब अंगों का सौंदर्य बतलाया गया हो। जैसे—किसी देवता या नायिका का नख-शिख।

नख-शूल—पुं० [ष० त०] एक रोग जिसके फल-स्वरूप नाखूनों में विकार होने के कारण कष्ट होता है।

नख-हरणी—स्त्री० [ष० त०]=नहरनी।

नखांक—पुं० [नख-अंक, ब० स०] १. व्याघ्र का नख। २. नख-क्षत।

नखांग—पुं० [नख-अंग, ब० स०] १. नख नामक गंध-द्रव्य। २. नलिका या नली नामक गन्ध-द्रव्य।

नखाघात—पुं० [नख-आघात, तृ त०] नख-क्षत।

नखानखि—स्त्री० [नख-नख, ब० सा०] ऐसा द्वन्द्व जिसमें विपक्षी पर नखों से प्रहार किया जाय।

नखायुध—पुं० [नख-आयुध, ब० स०] १. शेर। २. चीता। ३. कुत्ता।

नखारि—पुं० [नख-अरि, ष० त०] शिव का एक अनुचर।

नखालि—पुं० [सं०] छोटा शंख।

नखालु—पुं० [सं० नख+आलुच्] नील (वृक्ष)।

नखाशी (शिन्)—वि० [सं० नख√अश् (खाना)+णिनि] जो नाखूनों की सहायता से खाता हो।

पुं० उल्लू।

नखास—पुं० [अ० नख्खास] १. वह बाजार जिसमें दासों, पशुओं आदि का क्रय-विक्रय होता हो। जैसे—घर घोड़ा नखास मोल। (कहा०) २. बाजार।

मुहा०—कोई चीज नखास पर चढ़ाना या भेजना=बेचने के लिए कोई चीज बाजार भेजना।

पद—**नखास की घोड़ी या नखासवाली**=बाजार में बैठनेवाली स्त्री, अर्थात् कसबी।

नखित्र†—पुं०=नक्षत्र।

नखिद्†—वि० [सं० निषिद्ध] १. निषेध किया हुआ। २. तुच्छ कोटि या प्रकार का। निकृष्ट।

नखियाना—स० [हिं० नख] नख चुभाकर घाव करना।

नखी (खिन्)—पुं० [सं० नख+इनि] १. वह जानवर जो नाखूनों से किसी पदार्थ को चीर या फाड़ सकता हो। २. शेर। ३. चीता। ४. नख नामक गन्ध-द्रव्य।

नखेद*—पुं०=निषेध।

नखोटना—स० [हिं० नख] नाखून से खरोंचना या नोचना।

नखोरा†—पुं०=निमोना।

नख्खास—पुं०=नखास।

नग—वि० [सं० न√गम् (जाना)+ड] १. न गमन करनेवाला। न चलने-फिरनेवाला। २. अचल। स्थिर।

पुं० १. पर्वत। पहाड़। २. पेड़। वृक्ष। ३. साँप। ४. सूर्य।

पुं० १. अ० नगीना का संक्षिप्त रूप। २. अदद या संख्या का सूचक एक शब्द। जैसे—चार नग गाँठें आई हैं।

नग-चाना—अ०, स०=नगिचाना।

नगज—वि० [सं० नग√जन् (उत्पत्ति)+ड] जो पहाड़ से उत्पन्न हो। जैसे—गेरू, शिलाजीत आदि।

पुं० हाथी।

नगजा—स्त्री० [सं० नगज+टाप्] १. पार्वती। २. पाषाणभेदी लता। पखानभेद।

नगण—पुं० [सं० ष० त०] तीन लघु अक्षरों का एक गण। (पिंगल) जैसे—कमर, परम, मदन।

विशेष—इस गण से छन्द का आरंभ करना अशुभ माना गया है।

नगणा—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] मालकँगनी।

नगण्य—वि० [सं० अगण्य] १. जो गिनने या गिने जाने के योग्य न हो। जो किसी गिनती में न हो। २. बहुत ही तुच्छ या हीन।

नगदंती—स्त्री० [सं०] विभीषण की स्त्री का नाम।

नगद—पुं० [अ० नक्द] १. सोने-चाँदी का सिक्का। २. रुपया-पैसा। ३. सिक्कों आदि के रूप में होनेवाला खड़ा धन जो देन आदि के बदले में तुरंत चुकाया जाता हो। 'उधार' का विपर्याय।

वि० १. (रुपया) जो तैयार या सामने हो। २. जिसका मूल्य रुपए-पैसे आदि के रूप में तुरन्त दिया या चुकाया जाय। ३. बढ़िया।

क्रि० वि० तुरंत दिये हुए रुपए के बदले में।

नगद-नारायण—पुं० [हिं०+सं०] नगद रुपए।

नगदी—क्रि० वि० [हिं० नगद+ई (प्रत्य०)] नगद या सिक्के के रूप में। (इन्कैश)

पुं०, वि०=नगद।

नगधर—पुं० [सं०] पर्वत धारण करनेवाले, श्रीकृष्ण। गिरिधर।

नगधरन†—पुं०=नगधर।

नग-नंदिनी—स्त्री० [सं० ष० त०] हिमालय पर्वत की पुत्री, पार्वती।

नगन†—वि०=नग्न (नंगा)।

पुं०=नगण।

नग-नदी—स्त्री० [सं० मध्य० स०] पहाड़ी नदी (बरसाती नदी से भिन्न)।

नगना—स्त्री०=नग्ना।

नगनिका—स्त्री० [सं०] १. संकीर्ण राग का एक भेद। २. क्रीड़ा नामक वृत्त का दूसरा नाम जिसके प्रत्येक चरण में एक यगण और एक गुरु होता है।

नगनी—स्त्री० [सं० नग्न] १. ऐसी छोटी लड़की जिसमें अभी यौवन का कोई लक्षण न दिखाई देता हो और इसी लिए जो अपने शरीर का ऊपरी भाग नंगा रखकर घूम सकती हो। कन्या। लड़की। २. पुत्री। बेटी। ३. नंगी स्त्री।

नगन्निका—स्त्री०=नगनिका।

नग-पति—पुं० [सं० ष० त०] १. पर्वतों का राजा, हिमालय। २. शिव। ३. सुमेरु पर्वत। ४. चन्द्रमा।

नगपुंग—पुं० [सं० नागपाश] असमंजस की या विकट स्थिति। अंडस। उदा०—हाँ भले नगपुंग-परे गढीबै अब ए गढ़न महरि मुख जोए। —तुलसी।

नगफनी†—स्त्री०=नागफनी।

नगभिद्—पुं० [सं० नग√भिद् (विदारण)+क्विप्] १. पखानभेद-लता। २. इन्द्र।

वि० [सं०] पत्थर तोड़नेवाला।

नग-भू—वि० [सं० ब० स०] जो पहाड़ से उत्पन्न हुआ हो।

पुं० १. पहाड़ी जमीन। २. पाषाण-भेदी लता। पखान-भेद।

नगमा—पुं० [अ० नग्मः] १. सुरीली आवाज़। २. गाया जानेवाला किसी प्रकार का मनोहर और सुरीला गीत या राग-रागिनी।

नगर—पुं० [सं० नग+र] १. मनुष्यों की वह बस्ती जो गाँवों, कस्बों आदि की तुलना में बहुत बड़ी हो। शहर। २. उक्त बस्ती का कोई मुहल्ला जो एक स्वतंत्र बस्ती के रूप में हो। जैसे—कमलानगर, नेहरूनगर, राजेन्द्रनगर।

नगर-कीर्तन—पुं० [स० त०] नगर की गलियों, सड़कों आदि में घूम-घूमकर किया जानेवाला सामूहिक कीर्तन।

नगर-कोट—पुं० दे० 'परकोटा'।

नगरघात—पुं० [सं० नगर√हन् (नष्ट करना)+अण्] हाथी।

नगरतीर्थ—पुं० [सं०] गुजरात प्रदेश में स्थित एक प्राचीन तीर्थ जहाँ किसी समय शिव का निवास माना जाता था।

नगर-नायिका—स्त्री० [मध्य० स०] वेश्या। रंडी।

नगर-नारी—स्त्री० [मध्य० स०] रंडी। वेश्या।

नगर-निगम—पुं० [प० त०] दे० 'नगर-महापालिका'।

नगरपाल—पुं० [सं० नगर√पाल् (रक्षा)+णिच्+अण्] १. प्राचीन भारत में वह अधिकारी जिसका कर्तव्य नगर की शांति और सुरक्षा की देख-रेख करना होता था। २. आधुनिक भारत में किसी नगर की नगरपालिका का चुना हुआ सदस्य।

नगर-पालिका—स्त्री० [सं०] आधुनिक नगर व्यवस्था में नगर निवासियों के निर्वाचित प्रतिनिधियों की वह संस्था जो सारे नगर के यातायात, स्वास्थ्य, जल, नल, रोशनी आदि का प्रबन्ध करने के लिए बनाई जाती है। (म्यूनिस्पैलिटी)

नगर-पिता (तृ)—पुं०=नगर-प्रमुख।

नगर-प्रमुख—पुं० [ष० त०] नगरपालिका या नगर-महापालिका का प्रधान प्रशासनिक अधिकारी। (मेयर)

नगरमर्दी (दिन्)—पुं० [सं० नगर√मृद् (कुचलना)+णिच्+णिनि] मतवाला हाथी।

नगर-महापालिका—स्त्री० [सं०] किसी बड़े नगर की स्वायत्त संस्था जिसे नगरपालिका की अपेक्षा कुछ अधिक अधिकार प्राप्त होते हैं। (कारपोरेशन)

नगर-मार्ग—पुं० [ष० त०] नगर का सबसे बड़ा तथा चौड़ा बाजार।

नगर-मुस्ता—स्त्री० [सं०] नागरमोथा।

नगरवा—पुं० [?] ईख की एक प्रकार की बोआई जो मध्यप्रदेश के उन प्रान्तों में होती है जहाँ की मिट्टी काली या करैली होती है। इसमें खेतों को सींचने की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि बरसात के बाद जब ईख के अंकुर फूटते हैं तब जमीन पर इसलिए पत्तियाँ बिछा देते हैं कि उसका पानी सूख न जाय। पलवार।

नगरवासी (सिन्)—पुं० [सं० नगर√वस् (बसना)+णिनि] १. नगर या शहर में रहनेवाला। पुरवासी। २. नागरिक।

नगर-विवाद—पुं० [स० त०] घर-गृहस्थी और संसार के झगड़े-बखेड़े।

नगर-वृद्ध—पुं० [स० त०] आधुनिक भारत में किसी नगरमहापालिका या नगरनिगम का वह अधिकारी जिसका दरजा नगर-प्रमुख से कुछ छोटा और उसके चुने हुए सदस्यों से कुछ बड़ा होता है। (एल्डरमैन)

नगर-सन्निवेश—पुं० [ष० त०] नये नगर बनाने और उसके मार्ग, भवन, विभाग आदि निरूपित करने की कला या विद्या। (सिटी प्लैनिंग)

नगर-सेठ—पुं० [सं०+हिं०] नगर का सबसे बड़ा महाजन, सेठ या संपन्न व्यक्ति।

नगरहा—वि० [हिं० नगर+हा (प्रत्य०)] शहर में रहने या होनेवाला। पुं० नगर का निवासी। नागरिक। शहरी।

नगरहार—पुं० [सं०] उत्तर-पश्चिमी भारत के एक प्राचीन कपिश राज्य के अंतर्गत की एक नगरी जिसका वर्णन ह्वेन-सांग ने किया है।

नगराई—स्त्री० [हिं० नगर+आई (प्रत्य०)] १. नागरिकता। शहरातीपन। २. चतुराई। चालाकी।

नगराधिप—पुं० [नगर-अधिप, ष० त०] नगर का प्रधान शासक। प्रशासक।

नगराध्यक्ष—पुं० [नगर-अध्यक्ष, ष० त०] नगर का प्रधान शासक। प्रशासक।

नगरी—स्त्री० [सं० नगर+ङीप्] छोटा नगर या शहर। पुं० [सं० नगरिन्] नगर में होने या रहनेवाला व्यक्ति। नागरिक।

नगरी-काक—पुं० [ष० त०] बक।

नगरीय—वि० [सं० नगर+छ—ईय] १. नगर-संबंधी। २. नगर में बनने या होनेवाला।

नगरोत्था—स्त्री० [नगर-उत्थान, ब० स०] नागरमोथा।

नगरोपांत—पुं० [नगर-उपांत, ष० त०] नगर के आस-पास का क्षेत्र या स्थान। उप-नगर। (सबर्ब)

नगरौका (कस्)—पुं० [नगर-ओकस्, ब० स०] नागरिक। नगरवासी।

नगरौषधि—स्त्री० [नगर-ओषधि, मध्य० स०] केला।

नगवास†—पुं०=नाग-पाश।

नगवासी†—स्त्री०=नागपाश।

नग-वाहन—पुं० [ब० स०] शिव का एक नाम।

नग-स्वरूणी—स्त्री० [सं०] एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक जगण, एक रगण, एक लघु और एक गुरु होता है। इसे प्रमाणी और प्रमाणिका भी कहते हैं।

नगाटन—वि० [सं० नग√अट् (गति)+ल्युट्—अन] पहाड़ पर विचरण करनेवाला। पुं० बंदर।

नगाड़ा—पुं० [अ० नक्कारः] डुगडुगी की तरह का चमड़ा मढ़ा हुआ एक प्रकार का बहुत बड़ा प्रसिद्ध बाजा जो कभी तो अकेला और कभी ठीक उसी तरह के दूसरे छोटे बाजे के साथ प्रायः चोब (लकड़ी का छोटा डंडा) का आघात करके बजाया जाता है। डंका। धौंसा।

नगाधिप—पुं० [सं० नग-अधिप, ष० त०] १. पर्वतराज, हिमालय। २. सुमेरु पर्वत।

नगारा—पुं०=नगाड़ा।

नगारि—पुं० [सं० नग-अरि, ष० त०] इन्द्र।

नगावास—पुं० [सं० नग-आवास, ब० स०] मोर।

नगाश्रय—वि० [सं० नग-आश्रय, ब० स०] पहाड़ पर रहनेवाला। पुं० हस्तिकंद।

नगी—स्त्री० [सं०] १. पर्वतराज हिमालय की कन्या, पार्वती। २. पहाड़ पर रहनेवाली स्त्री। †स्त्री० [हिं० नग] छोटा नग या रत्न।

नगीच—क्रि० वि०=नजदीक।

नगीना—पुं० [सं० नग से फा० नगीनः] १. बहुमूल्य पत्थर आदि का वह रंगीन चमकीला टुकड़ा जो शोभा के लिए गहनों में जड़ा जाता है। मणि। रत्न।

पद—**नगीना-सा**=बहुत छोटा और सुंदर। **अँगूठी का नगीना**=किसी बड़ी चीज के साथ अथवा उसमें रहनेवाली कोई छोटी सुन्दर, बहुमूल्य और आदरणीय वस्तु (प्रायः व्यक्तियों के लिए भी प्रयुक्त)। २. पुरानी चाल का एक प्रकार का चारखानेदार कपड़ा।

नगीनागर—पुं० दे० 'नगीनासाज।'

नगीनासाज—पुं० [फा०] [भाव० नगीनासाजी] आभूषणों आदि में नगीने जड़नेवाला कारीगर।

नगेंद्र—पुं० [सं० नग-इन्द्र, ष० त०] पर्वतराज, हिमालय।

नगेश—पुं० [सं० नग-ईश, ष० त०]=नगेंद्र।

नगेसर†—पुं० १.=नागेश्वर। २. =नाग-केसर।

नगोड़ा—वि०=निगोड़ा।

नगौक (स्)—पुं० [सं० नग-ओकस्, ब० स०] १. पक्षी। चिड़िया। २. शेर। सिंह। ३. कौआ।

नग्न—वि० [सं०√नज् (लजाना)+क्त] [भाव० नग्नता] नंगा (सभी अर्थों में, देखें)। पुं० १. एक प्रकार के दिगम्बर जैन साधु जो कौपीन पहनते हैं। २. ऐसी साहित्यिक रचना जिसमें कोई अलंकार और चमत्कार न हो।

नग्नक—पुं० [सं० नग्न+कन्]=नग्न।

नग्नकरण—पुं० [सं० नग्न+च्वि√कृ+ल्युट्—अन, मुम्] किसी को नंगा करने की क्रिया या भाव।

नग्न-क्षपणक—पुं० [कर्म० स०] बौद्ध भिक्षुओं का एक भेद या संप्रदाय।

नग्नजित्—पुं० [सं०] १. वैदिककाल में, गान्धार के एक राजा। २. पुराणानुसार कोशल के एक राजा जिसकी सत्या नाम की कन्या श्रीकृष्ण को ब्याही थी।

नग्नता—स्त्री० [सं० नग्न+तल्—टाप्] १. नंगे होने की अवस्था या भाव। नंगापन। २. सब कुछ प्रकट कर देने की अवस्था या स्थिति।

नग्नपर्ण—पुं० [ब० स०] एक प्राचीन देश का नाम।

नग्न-वाद—पुं० [प० त०] वह सिद्धान्त या दृष्टिकोण जिसमें यह माना जाता है कि मनुष्य को नीरोग रहने के लिए कुछ समय तक अवश्य नंगे रहना चाहिए। (न्यूडिज्म)

नग्न-वादी (दिन्)—पुं० [सं० नग्नवाद+इनि] जो नग्नवाद का अनुयायी या समर्थक हो। (न्यूडिस्ट)

नग्नाट—पुं० [सं० नग्न√अट् (गति)+अच्] ऐसा जीव या प्राणी जो सदा नंगा रहता हो।

नग्निका—स्त्री० [सं० नग्न+कन्—टाप्, इत्व] १. निर्लज्ज स्त्री। २. वह लड़की जो रजस्वला न हुई हो।

नग्मा—पुं० दे० 'नगमा'।

नग्र—पुं०=नगर।

नग्रोध—पुं० [सं० न्यग्रोध] बरगद का पेड़। वट वृक्ष।

नघना—स०=लाँघना।

†अ०=लाँघना।

नघाना†—स०=लघाना।

नचना†—अ०=नाचना।

वि० [हिं० नाचना] [स्त्री० नचनी] १. नाचनेवाला। २. जो बराबर इधर-उधर घूमता रहे। (व्यंग्य) ३. बराबर हिलता-डुलता रहनेवाला।

नचनि—स्त्री० [हिं० नाचना] नाच। नृत्य।

नचनिया†—पुं० [हिं० नाचना] [स्त्री० नचनी] वह जो नाच दिखला-कर जीविका उपार्जित करता हो।

नचनी—स्त्री० [हिं० नाचना] करघे की वह दोनों लकड़ियाँ जिनके नीचे राछें बँधी रहती हैं। इन्हें चक भी कहते हैं।

वि० हिं० 'नचना' का स्त्री०।

नचवैया—पुं० [हिं० नाचना] १. वह जो नाचने की कला का पंडित हो; अथवा दूसरों को नाचना सिखाता हो। नर्तक। २. दूसरों को नचाने-वाला अथवा नाचने में प्रवृत्त करनेवाला।

नचाना—स० [हिं० नाचना का प्रेर०] १. किसी को नाचने में प्रवृत्त करना। जैसे—बंदर या रीछ नचाना। २. किसी को इस प्रकार हिलाना-डुलाना कि वह नाचता हुआ-सा जान पड़े। जैसे—आँखें या आँखों की पुतलियाँ नचाना। ३. किसी को बार-बार कहीं भेजना, बुलाना या उठाना-बैठाना कि वह परेशान हो जाय। जैसे—हमारे ये अतिथि महोदय नौकर को नचा मारते हैं।

क्रि० प्र०—डालना।—मारना।

४. किसी को कार्य-रत होने या अच्छी तरह चलने में प्रवृत्त करना।

उदा०—कपि उर अजिर नचावहिं बानी।—दीनदयालगिरि।

नचार†—क्रि० वि०, वि०=लाचार।

नचारी†—स्त्री०=लाचारी।

स्त्री० [हिं० नाचना] मिथिला प्रदेश में गाये जानेवाले एक तरह के गीत।

नचिंत†—वि०=निश्चित।

नचिकेता (तस्)—पुं० [?] १. वाजश्रवा ऋषि का पुत्र जिसने मृत्यु ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया था।

विशेष—इसने अपने पिता से पूछा था कि मुझे किसको प्रदान करते हैं। पिता ने खिजलाकर कह दिया कि मैं तुम्हें मृत्यु को अर्पित करता हूँ। इस पर वह मृत्यु के पास चला गया और वहाँ तीन दिन तक निरा-हार रहकर उससे उसने ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया था।

२. अग्नि। आग।

नचिर—वि० [सं० सहसुपा स०] जो अधिक समय तक स्थिर न रहे। अस्थायी।

नचीला—वि०=नचौहाँ।

नचौहाँ—वि० [हिं० नाचना+औंहा (प्रत्य०)] [स्त्री० नचौहीं] १. जो प्रायः नाचता रहता हो। २. जो दूसरे के कहे अनुसार चलता हो। ३. अस्थिर।

नछत्र—पुं०=नक्षत्र।

नछत्री—वि०=नक्षत्री।

नजदीक—क्रि० वि० [फा०] वक्ता अथवा किसी विशिष्ट प्रदेश, बिन्दु, स्थान आदि से थोड़ी ही दूरी पर। कम फासले पर। निकट। पास।

नजदीकी—वि० [फा० नज्दीक] १. निकट या पास का। जिसके साथ निकट या पास का संबंध हो।

स्त्री० सामीप्य।

नजर—स्त्री० [अ० नज़र] १. दृष्टि। निगाह।

मुहा०—नजर आना या पड़ना=दिखाई देना या पड़ना। दृष्टि-गोचर होना। **(किसी ओर या किसी पर) नजर करना, डालना या फेरना**=किसी की ओर आँखें करते हुए देखना। **नजर फेंकना**= देखने के लिए दूर तक निगाह दौड़ाना या डालना।

विशेष—'नजर' के शेष मुहा० के लिए दे० 'आँख' और 'निगाह' के मुहा०।

२. अनुग्रह या कृपा से युक्त दृष्टि। मेहरबानी की निगाह। जैसे—इस लड़के पर भी कुछ नजर हो जाती तो अच्छा था। ३. किसी की देख-रेख करने या उसका हाल-चाल लेने के लिए उसकी ओर रखा जानेवाला सतर्कतापूर्ण ध्यान। जैसे—आज-कल उस पर भी पुलिस की नजर है।

क्रि० प्र०—रखना।

४. ख्याल। ध्यान। विचार। जैसे—अभी इस बात पर मेरी नजर नहीं गई थी। ५. गुण-दोष, भले-बुरे आदि की परख या पहचान। जसे—इस चीज की नजर तो किसी जौहरी को ही हो सकती है। ६. देखने की वह कल्पित शक्ति जो अच्छे, दृष्ट अथवा सुंदर पदार्थों, व्यक्तियों, व्यवहारों आदि पर पड़ते ही उन पर अपना दूषित प्रभाव डालकर उन्हें खराब, रोगी या विकृत करने में समर्थ मानी जाती है।

क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।

विशेष—कहते हैं कि खाने-पीने की अच्छी चीजों पर यदि ऐसी नजर लग जाय तो या तो वे बिगड़ जाती हैं या खानेवाले को पचती नहीं। सुंदर बालकों को नजर लगने पर वे बीमार हो जाते हैं, और अच्छे कामों या बातों में नजर लगने पर वे बिगड़ जाती हैं। कहते हैं कि कुछ विशिष्ट व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनकी नजर या निगाह में ऐसा दूषित प्रभाव डालने की विशेष शक्ति होती है। परंतु कुछ अवसरों पर साधा-रण व्यक्तियों की नजर में भी ऐसा कुप्रभाव उत्पन्न करने की शक्ति आ जाती या आ सकती है।

मुहा०—नजर उतारना या झाड़ना=जादू-मंतर या टोने-टोटके के द्वारा नजर का प्रभाव दूर करना। **नजर खाना**=नजर के बुरे प्रभाव में पड़कर उसका परिणाम भोगना। **नजर जलाना**=नजर का बुरा प्रभाव दूर करने के लिए टोटके के रूप में नमक, मिर्च, राई आदि चीजें आग में डालना।

स्त्री० [अ० नज्र] १. वह चीज जो किसी बड़े को प्रसन्न करने अथवा उसके प्रति आदर-सम्मान का भाव प्रगट करने के लिए उसे उपहार या भेंट के रूप में दी जाय। उपहार। भेंट। २. अधीनता, नम्रता, श्रद्धा आदि प्रकट करने के लिए उक्त प्रकार से भेंट आदि देने की क्रिया या भाव।

विशेष—पुराने राज-दरबारों में राजाओं आदि को अपनी हथेली पर रुपया, अशरफी, तलवार आदि रखकर उनके आगे उपस्थित करने की प्रथा थी, जिसे कभी तो वे ले लेते थे और कभी केवल छूकर छोड़ देते थे।

महा०—नजर-गुजारना या देना=उक्त प्रकार से हथेली पर कोई चीज रखकर किसी बड़े के सामने उपस्थित करना।

पद-नजर-गुजर=नजर या इसी प्रकार की और कोई बात। जिसके संबंध में लोगों का यह विश्वास हो कि इसका बुरा प्रभाव पड़ता है।

नजरना—अ० [हिं० नजर+ना (प्रत्य०)] दृष्टिपात करना। देखना। स० १. नजर अर्थात् भेंट के रूप में कोई पदार्थ किसी को देना। २. बुरा प्रभाव उत्पन्न करनेवाली दृष्टि से देखना। नजर लगाना।

नजरबंद—वि० [अ० नज़र+फा० बंद] [भाव० नजरबंदी] किसी को इस प्रकार बंदी के रूप में कहीं रखना कि उसकी चेष्टाओं पर नजर रखी जा सके।

विशेष—ऐसी अवस्था में न तो नजरबंद व्यक्ति को घर या किसी नियत स्थान से बाहर जाने दिया जाता है और न लोगों को उससे स्वतंत्रतापूर्वक मिलने-जुलने दिया जाता है।

पुं० जादू या इन्द्रजाल का ऐसा खेल जिसके विषय में लोगों का यह विश्वास है कि वह लोगों की दृष्टि में ऐसा भ्रम उत्पन्न कर देता है कि उन्हें कुछ का कुछ दिखाई देने लगता है।

नज़रबंदी—स्त्री० [अ० नजर+फा० बंदी] १. नजरबंद होने की अवस्था या भाव। २. किसी को नज़रबंद करने का आदेश। ३. इंद्रजाल आदि के द्वारा लोगों की दृष्टि में भ्रम उत्पन्न करने की क्रिया या भाव।

नजरबाग—पुं० [अ०] प्रासाद या महल के आगे या चारों ओर का बाग।

नजरबाज—वि० [अ० नज़र+फा० बाज (प्रत्य०)] [भाव० नजरबाजी] १. शृंगारिक क्षेत्र में अनुराग प्रकट करने अथवा अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए आँखें लड़ानेवाला। २. ताक-झाँक करनेवाला। ३. पारखी।

नजरबाजी—स्त्री० [अ० नज़र+फा० बाज़ी] १. आँखें लड़ाने का व्यापार। २. ताकना-झाँकना। ३. परख।

नजर-सानी—स्त्री० [अ० नज़रेसानी] १. कोई किया हुआ काम इस दृष्टि से दोबारा देख जाना कि उसमें कहीं कोई त्रुटि या भूल तो नहीं रह गई है। २. विधिक क्षेत्र में किसी मुकदमे का उसी अदालत में होनेवाला पुनर्विचार। (रिवीजन)

नजरहाया†—वि० [हिं० नजर+हाया (प्रत्य०)] १. जिसकी कुदृष्टि से दुष्परिणाम होता हो। २. जिसे किसी की बुरी नजर लग गई हो। जो नजर के प्रभाव से पीड़ित हुआ हो।

नजरा—वि० [अ० नज़र] जिसमें अच्छाई-बुराई, गुण-दोष आदि पहचानने की शक्ति हो। पारखी।

पुं० [देश०] एक तरह का देशी आम जो आकार-प्रकार में बम्बई के आम जैसा परन्तु स्वाद में उससे घटकर होता है।

नजरानना—स० [अ० नजर] नज़र करना। भेंट स्वरूप देना। अ०=नजराना।

नजराना—अ० [अ० नजर] किसी की कुदृष्टि लगना जिसके फलस्वरूप कोई क्षति या हानि होती है।

स० १. नजर करना। भेंट स्वरूप देना। २. नजर लगाना।

पुं० १. वह चीज जो किसी को नजर की जाय अर्थात् भेंट-स्वरूप दी जाय। २. आज-कल वह धन जो कोई सुभीता प्राप्त करने के लिए उसे उचित के अतिरिक्त और काम होने से पहले दिया जाय। पगड़ी। जैसे—यह दुकान किराये पर लेने के लिए दस हज़ार नज़राना देना पड़ा।

नजरि—स्त्री०=नज़र।

नजला—पुं० [अ० नज़्लः] यूनानी हिकमत के अनुसार एक प्रकार का रोग जिसमें गरमी के कारण सिर का विकारयुक्त पानी ढलकर भिन्न-भिन्न अंगों की ओर प्रवृत्त होता; और जिस अंग की ओर ढलता है उसे खराब कर देता है। जैसे—अगर बालों पर नजला गिरे तो वे समय से बहुत पहले सफेद हो जाते हैं; और अगर आँखों पर गिरे तो दृष्टि मन्द पड़ जाती है।

क्रि० प्र०—उतरना।—गिरना।

मुहा०—(किसी पर किसी का) नजला गिरना=किसी के क्रोध, भर्त्सना आदि का पात्र होना।

२. जुकाम या प्रतिश्याय नामक रोग। सरदी।

नजलाबंद—पुं० [अ० नज्लः+फा० बंद] अफीम और चूने आदि का वह फाहा जो नजले को गिरने से रोकने के लिए कनपटी पर लगाया जाता है।

नजाकत—स्त्री [अ० नज़ाकत] १. शारीरिक कोमलता या सुकुमारता। २. सुकुमार अंगों की कोई मृदु चेष्टा।

नजात—स्त्री० [अ०] १. दृढ़ बंधनों, कठोर यातनाओं या कठिन दायित्वों से होनेवाली मुक्ति। २. ऐसी स्थिति जिसमें कोई अपने को हर प्रकार के कष्टों, झंझटों आदि से अलग या दूर समझे।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

नज़ामत—स्त्री० [अ० निज़ामत] १. शासन संबंधी प्रबंध या व्यवस्था। २. नाजिम का कार्य, पद या भाव। ३. नाजिम का कार्यालय या विभाग।

नजारत—स्त्री० [अ० नज़ारत] १. नाज़िर अर्थात् दर्शक या निरीक्षक होने की अवस्था पद, या भाव। २. नाजिर का कार्यालय या विभाग।

नजारा—पुं० [अ० नज्ज़ारः] १. वह जो दिखाई दे। २. अद्भुत और सुंदर दृश्य। ३. दृष्टि। नजर। ४. किसी (पराये पुरुष या स्त्री) को बार-बार दूर से अनुरागपूर्ण दृष्टि से अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए देखने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—मारना।—लड़ना।—लड़ाना।

५. तमाशा।

नजारेबाज—वि० [अ० फा० नज्ज़ारः बाज] जो पर-पुरुष या पर-स्त्री से आँखें लड़ाता हो।

नजारेबाजी—स्त्री० [अ० फा० नज्ज़ारः बाज़ी] स्त्री या पुरुष का पराये पुरुष या स्त्री को लालसा या प्रेम की दृष्टि से बार-बार देखना। आँखें लड़ाना।

नजासत—स्त्री० [अ०] १. नजिस होने की अवस्था या भाव। २. गंदगी। मैलापन। ३. अपवित्रता।

नजिकाना—स० [हिं० नजीक=नजदीक] नजदीक अर्थात् निकट या पास पहुँचना।

स० नजदीक अर्थात् निकट या पास पहुँचाना।

नजिस—वि० [अ०] १. अपवित्र। अशुद्ध। २. गंदा। मैला।

नजीक†—क्रि० वि०=नजदीक (निकट या पास)।

नजीब—वि० [अ०] श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न। कुलीन।

पुं० सिपाही। सैनिक।

नजीर—स्त्री० [अ० न ज़ीर] १. उदाहरण। दृष्टांत। मिसाल। २. विधिक क्षेत्र में, किसी पुराने मुकदमे के संबंध में किसी उच्च न्यायालय का वह निर्णय जो अपना पक्ष पुष्ट करने के उद्देश्य से न्यायालय के सम्मुख उपस्थित किया जाय।

क्रि० प्र०—दिखलाना।—देना।

३. कोई बारीक काम करने के समय देर तक उसकी ओर लगी रहने-वाली दृष्टि जो आँखों को जल्दी थका देती है।

क्रि० प्र०—लगाना।

नजूमी†—पुं० [अ० नुजूम] ज्योतिष विद्या।

नजूमी—पुं [अ० नुजूमी] ज्योतिषी।

नजूल—पुं० [अ० नुजूल] १. ऊपर से नीचे आने, उतरने या गिरने की क्रिया या भाव। अवतरण। २. सामने आकर उपस्थित होना। उपस्थिति। ३. वह भूमि जिसका कोई स्वामी न रह गया हो। और इसी लिए जो नगर-पालिका या सरकार के हाथ में आ गई हो। ४. नजला नामक रोग। ५. उक्त रोग के फल-स्वरूप होनेवाला मोतिया-बिंद।

नज्म—पुं० [अ०] आकाश का तारा या नक्षत्र।

स्त्री० [अ० नज़्म] १. कविता। २. पद्य।

नट—पुं० [सं०√नट् (नृत्य)+अच्] [स्त्री० नटी] १. अभिनय में वह व्यक्ति जो किसी का रूप धारण करके उसकी चेष्टाओं का अभिनय करता हो। २. सूत्रधार। ३. मनु के अनुसार क्षत्रियों की एक जाति जिसकी उत्पत्ति व्रात्य क्षत्रियों से कही गई है। ४. पुराणानुसार एक संकर जाति जिसकी उत्पत्ति मालाकार पिता और शूद्रा माता से कही गई है। ५. प्राचीन भारत की एक संकर जाति जिसकी उत्पत्ति शौचिकी स्त्री और शांडिक पुरुष से कही गई है और जिसका पेशा गाना-बजाना था। ६. [स्त्री० नटिन्, नटिनी] एक आधुनिक जाति जो गाने-बजाने और तरह-तरह के शारीरिक कौशल और बाजीगरी के खेल दिखाने का पेशा करती है। ७. एक नाग जिसे गौतम बुद्ध ने बौद्धधर्म की दीक्षा दी थी। ८. संपूर्ण जाति का एक राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं तथा जो रात के दूसरे पहर में गाया जाता है। ९. अशोक वृक्ष। १०. श्योनाक वृक्ष। सोनापाढ़ा।

नटई†—स्त्री० [?] १. गला। गरदन। २. गले के अंदर की श्वास-नली। ३. गले के अंदर की घंटी। कौआ।

नटक—पुं० [सं० नट+कन्] नट।

नटका—पुं० [सं० नट] [स्त्री० नटकी] नट जाति का पुरुष। (तुच्छता-सूचक) उदा०—मोती मानिक परत न पहरूँ मैं कब की नटकी।—मीराँ।

नट-कुंडल—पुं० [सं० नट+कुंडल] [स्त्री० अल्पा० नट-कुंडली] बेंत, धातु आदि का वह गोल चक्कर जिसमें से होकर नट एक ओर से दूसरी ओर कूद जाते हैं।

नट-खट—वि० [हिं० नट+खट (अनु०)] [भाव० नट-खटी] १. जो स्वभावतः या जान-बूझकर कुछ न कुछ शरारत करता रहता हो। २. जो दूसरों को तंग करने की नियत से कुछ ऊल-जलूल काम करता हो।

नट-खटी—स्त्री० [हिं० नट-खट] १. नटखट होने की अवस्था या भाव। २. बदमाशी। शरारत। पाजीपन।

नट-चर्या—स्त्री० [ष० त०] अभिनय।

नटता—स्त्री० [सं० नट+तल्—टाप्] १. नट होने की अवस्था या भाव। २. नट का काम।

नटन—पुं० [सं०√नट्+ल्युट्—अन] १. नाचना। २. अभिनय करना।

नटना—अ० [सं० नटन] १. नाट्य करना। अभिनय करना। २. कही हुई बात या की हुई प्रतिज्ञा निभाने से पीछे हटना या आना-कानी करना। प्रतिज्ञा, वचन आदि से मुकरना।

अ० [सं० नर्तन] नृत्य करना। नाचना।

अ० [सं० नष्ट] नष्ट या बरबाद होना।

स० नष्ट या बरबाद करना।

पुं० १. बाँस की बनी छलनी जिससे रस छाना जाता है। २. मछली पकड़ने का वह झावा या टोकरा जिसका पेंदा कटा हुआ होता है। टाप।

नट-नागर—पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

नट-नारायण—पुं० [ष० त०] संगीत में, एक प्रकार का राग जो हनुमत् के मत से मेघराग का तीसरा पुत्र और भरत के मत से दीपक राग का पुत्र है।

नटनि—स्त्री० [सं० नटन] १. नृत्य। नाच।

२ अपनी प्रतिज्ञा या बात में नटने अर्थात् पीछे हटने की क्रिया या भाव। मुकरना।

स्त्री० [हिं० नट] नट जाति की स्त्री। नटिन।

नटनी—स्त्री० [हिं० नट] १. अभिनेत्री। २. नट जाति की स्त्री।

नट-पत्रिका—स्त्री० [ब० स०, कप्—टाप्, इत्व] बैंगन। भाँटा।

नट बंदिनी—स्त्री० दे० 'नटनी'।

नट-भूषण—पुं० [ब० स०] हरताल।

नट-मंडक—पुं=नटमंडन।

नट-मंडन—पुं० [ष० त०] हरताल।

नटमल—पुं० [सं०] एक प्रकार का राग।

नट मल्लार—पुं० [सं०] नट और मल्लार के योग से बना हुआ संपूर्ण जाति का एक संकर राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

नट-राज—पुं० [ष० त०] १. नटों में प्रधान या श्रेष्ठ नट। कुशल और निपुण नट। २. शिव। महादेव। ३. शिव की एक विशिष्ट प्रकार की मूर्ति या रूप जिसमें वे तांडव नृत्य करते हुए दिखाई देते हैं। ४. श्रीकृष्ण।

नटवना—अ० [हिं० नट] १. नाचना। २. अभिनय करना।

स० १. नचाना। २. अभिनय कराना।

नट-वर—पुं० [स० त०] १. नाट्य-कला में बहुत कुशल और प्रवीण व्यक्ति। २. श्रीकृष्ण का एक नाम।

वि० बहुत अधिक चतुर या चालाक।

नटवा—पुं० [हिं० नाटा] छोटे कद या कम उमर का बैल।

पुं० [हिं० नट] एक प्रकार का गीत जिसे नट जाति के लोग ढोलक आदि के साथ नाचते हुए गाते हैं।

*वि०=नाटा।

†पुं०=नट।

नटवा सरसों—पुं० [हिं० नाटा+सरसों] साधारण सरसों।

नट-संज्ञक—पुं० [ब० स०, कप्] १. गोदंती हरताल। २. नट।

नटसार—स्त्री०=नाट्य शाला।

नटसाल—स्त्री० [हिं० नट?+सालना] १. काँटे का वह अंश जो धँसने पर टूटकर शरीर के अंदर रह जाता है और सालता या कसकता रहता है। २. तीर या बाण की गाँसी का वह अंश जो शरीर के अंदर टूटकर रह गया हो। ३. ऐसी मानसिक पीड़ा या व्यथा जो अन्दर ही रह-रहकर बहुत दुःखी करती हो। कसक।

नटांतिका—स्त्री० [नट-अंतिका, ष० त०] १. लज्जा। शरम। २. नम्रता। विनय।

नटाई—स्त्री० [हिं० नट] जुलाहों का वह उपकरण जिससे वे किनारे का ताना तानते हैं।

नटि—स्त्री० [हिं० नटना] नटने की क्रिया या भाव। नटनि।

स्त्री०=नटी।

नटित—पुं० [सं०√नट्+क्त] अभिनय।

नटिन—स्त्री० [हिं० नट] नट जाति की स्त्री।

नटी—स्त्री० [सं० नट+ङीष्] १. नाटक में, अभिनेत्री। २. सूत्रधार की स्त्री। ३. नर्तकी। ४. नट जाति की स्त्री। ५. रंडी। वेश्या। ६. नखी नामक गन्ध द्रव्य।

नटुआ—पुं० १.=नट। २.=नटई (गला)।

नटेश—पुं० [नट-ईश, ष० त०] १. नटों में सर्वश्रेष्ठ। २. महादेव। शिव।

नटेश्वर—पुं० [नट-ईश्वर, ष० त०]=नटेश।

नटैया*—स्त्री०=नटई (गरदन या गला)।

नट्ट—पुं०=नट।

नठना—अ० [सं० नष्ट] नष्ट होना।

स० नष्ट करना।

अ० [?] १. भागना। (पश्चिम) २. किसी बात या व्यक्ति से घबराना तथा दूर भागना।

नड—पुं० [सं०√नल् (महँकना)+अच् ल को ड] १. एक गोत्र प्रवर्त्तक ऋषि का नाम। २. नरकट। नरसल। ३. एक आधुनिक जाति जो चूड़ियाँ आदि बनाने का पेशा करती है।

†पुं०=नद।

नडक—पुं० [सं० नड+कन्] १. हड्डी के अंदर का छेद। २. कंधों के बीच की हड्डी।

नड़-मीन—पुं० [मध्य० स०] झींगा नाम की मछली।

नडिनी—स्त्री० [सं० नड+इनि—ङीष्] ऐसी नदी जिसमें सरपत (घास) बहुत अधिक उगी हुई हो।

नड़ी—स्त्री०[सं० नड़] नरकट के छोटे-छोटे टुकड़ों में मसाला भरकर बनाई जानेवाली आतिशबाजी जो आग लगाकर छोड़ने पर हवा में उड़ती है।

नड्वल—पुं० [सं० नड+ड्वलच्] १. सरपत की बनी हुई चटाई। २. ऐसा प्रदेश जहाँ सरपत अधिकता से होता हो। ३. एक वैदिक देवता का नाम।

स्त्री० पुराणानुसार वैराज मनु की पत्नी का नाम।

नड्वला—स्त्री० [सं०] १. वैराज मनु की पत्नी। २. नरकट का ढेर।

नढ़ना—स० [हिं० नाधना का स्था० रूप] १. गूँथना। पिरोना। २. कसकर बाँधना।

नत—वि० [सं०√नम् (झुकना)+क्त] [भाव० नति] १. झुका हुआ। २. जो किसी के सामने नम्र होकर झुक गया हो। ३. नम्र। विनीत। ४. कुटिल। टेढ़ा।

पुं० १. तगर-मूल। २. गणित ज्योतिष में मध्यंदिन रेखा से किसी ग्रह की दूरी।

*अव्य०=नतु।

नतइत—पुं०=नतैत।

नतकुर†—पुं० दे० 'नाती'।

नत-गुल्ला†—पुं० [?] घोंघा।

नत-नाड़ी—स्त्री० [सं०] फलित ज्योतिष में, मध्याह्न और मध्यरात्रि के बीच का जन्म-काल।

नतनी—स्त्री० [हिं० 'नाती' का स्त्री०] बेटी की बेटी।

नतपाल—पुं० [सं० नत√पाल् (रक्षा)+णिच्+अण्] वह जो अपने सामने आकर नत या विनीत होनेवाले अर्थात् शरण में आये हुए व्यक्ति का पालन या रक्षा करे।

नतम—वि० [सं० नत] टेढ़ा। बाँका।

नत-मस्तक—वि० [ब० स०] जिसने किसी के आगे सिर झुका दिया हो। नम्र या विनीत होनेवाला।

नतमी—स्त्री० [?] एक तरह का वृक्ष जिसकी लकड़ी बहुत चिकनी होती है।

नतर—क्रि० वि०=नतरु।

नतरक†—क्रि० वि०=नतरु।

नतरकु—क्रि० वि०=नतरु। उदा०—नतरकु इन विय लगत कत उपजत विरह-कृसानु।—बिहारी।

नतरु*—क्रि० वि० [सं० न+तु] नहीं तो। अन्यथा। उदा०—नतरु लखन सिय राम वियोगा।—तुलसी।

नतांग—वि० [नत-अंग, ब० स०] जिसका बदन झुका हुआ हो।

नतांगी—स्त्री० [सं० नतांग+ङीष्] स्त्री। औरत।

नतांश—पुं० [नत-अंश] ग्रहों आदि की स्थिति निश्चित करने में काम आनेवाला एक प्रकार का वृत्त जिसका केंद्र भूकेंद्र पर होता है और जो विषुवत् रेखा पर लंब होता है।

नताउल—पुं० [?] १. एक तरह का वृक्ष जिसकी लकड़ी मुलायम तथा चिकनी होती है। २. उक्त पेड़ की राल जो विषैली होती है और इसी लिए जिसे तीरों के फलों पर लगाया जाता था।

नति—स्त्री० [सं०√नम्+क्तिन्] १. नत होने अर्थात् झुकने की क्रिया या भाव। २. झुके हुए होने की अवस्था या भाव। ३. किसी ओर होनेवाली मन की प्रवृत्ति। (इन्क्लिनेशन) ४. ढालुएँ होने की अवस्था

या भाव। उतार। ढाल। ५. नमस्कार। प्रणाम। ६. नम्रता। विनयशीलता। ७. ज्योतिष में एक विशिष्ट प्रकार की गणना।

नतीजा—पुं० [अ० नतीजः] १. परिणाम। फल।

क्रि० प्र०—निकलना।—पाना।—मिलना।

२. परीक्षाफल। ३. जाँच का फल। ४. अंत। आखीर।

नतु—क्रि० वि० [सं० न-तु, द्व० स०] नहीं तो। अन्यथा।

नतैत—पुं० [हिं० नाता+ऐत (प्रत्य०)] वह जिसके साथ कोई नाता (अर्थात् रिश्ता या पारिवारिक संबंध) हो। नातेदार। रिश्तेदार। संबंधी।

नतोदर—वि० [सं० नत-उदर] जिसका ऊपरी भाग या तल कुछ नीचे या अंदर की ओर हो। अवतल। (कॉनकेव)

नत्थ—स्त्री०=नथ।

नत्थी—स्त्री० [हिं० नाथना] १. नाथने की क्रिया या भाव। २. छोटे-मोटे बहुत से कागजों आदि को एक साथ (आलपीन, डोरे, आदि से) नाथने की क्रिया। ३. उक्त प्रकार से नाथकर एक साथ किए हुए कागज आदि।

नत्यूह—पुं० [सं०] कठफोड़वा।

नत्वर्थक—वि० [सं० नतु-अर्थ ब० स०, कप्] १. जिसमें किसी वस्तु या बात का अस्तित्व न माना गया हो। २. जिसमें कोई प्रस्ताव या सुझाव न मान्य किया गया हो। नकारात्मक। नहिक। (नेगेटिव)

नथ—स्त्री० [हिं० नाथना] १. सोने के तार आदि का बना हुआ एक प्रकार का गोलाकार गहना जो स्त्रियाँ नाक में पहनती हैं। इसमें प्रायः गूँज के साथ चंदक, बुलाक या मोतियों की जोड़ी पहनाई रहती है। इसकी गिनती हिन्दुओं में सौभाग्य-चिह्नों में होती है। २. तलवार की मूठ पर लगा हुआ धातु का छल्ला। ३. दे० 'नथनी'।

नथना—पुं० [सं० नस्त+हिं० ना (प्रत्य०)] नाक का अगला भाग जिसमें दोनों ओर दो छेद होते हैं।

मुहा०—(किसी से) नथना फुलाना=आकृति से असंतोष, रोष आदि के लक्षण प्रकट करना।

अ० [हिं० नाथना का अ०] १. नाथा जाना। २. नत्थी होना। ३. किसी के साथ जोड़ा, बाँधा या लगाया जाना। ४. छेदा या भेदा जाना। छिदना। भिदना। जैसे—पैर में काँटा नथना।

नथनी—स्त्री० [हिं० नथ] १. नाक में पहनने की छोटी नथ।

मुहा०—नथनी उतरना=वेश्याओं की परिभाषा में वेश्या बननेवाली लड़की का पहले-पहल किसी वेश्यागामी से सम्पर्क या संबंध होना। **नथनी उतारना**=वेश्या बननेवाली स्त्री के साथ पहले-पहल संभोग करना।

२. बुलाक। बेसर। ३. नथ के आकार का वह छल्ला जो तलवार की मूठ पर लगा रहता है। ४. नथ के आकार की कोई गोलाकार छोटी चीज। ५. वह रस्सी जिससे बैल नाथे जाते हैं। नाथ।

नथि—स्त्री०=नथ।

नथिया†—स्त्री०=नथ।

नथी†—अव्य०=नहीं।

नथुना—पुं० [स्त्री० नथुनी]=नथना।

नथ्थ†—स्त्री०=नथ।

*पुं०=अनर्थ।

नद—पुं० [सं०√नद् (शब्द करना)+अच्] १. बहुत बड़ी नदी जिसका नाम प्रायः पुं० होता है। जैसे—दामोदर, ब्रह्मपुत्र, सिंधु, सोन आदि। २. एक प्राचीन ऋषि।

†पुं०=नाद।

नदन—पुं० [सं०√नद्+ल्युट्-अन] १. नाद या शब्द करना अथवा होना। २. नाद। शब्द।

नदना—अ० [सं० नाद] १. नाद अर्थात् आवाज या शब्द होना। २. बाजों आदि का बजना। ३. पशुओं आदि का नाद या शब्द करना। बोलना। ४. गरजना।

नदनु—वि० [सं०√नद्+अनुङ्] १. नाद या जोर का शब्द करने अर्थात् गरजनेवाला।

पुं० १. नाद। शब्द। २. शेर। सिंह। ३. बादल। मेघ।

नदम—स्त्री० [?] कपास की एक किस्म।

नदर—पुं० [सं० नद+र] नद या नदी का निकटवर्ती प्रदेश।

†वि०=निडर।

नद-राज—पुं० [सं० ष० त०] समुद्र।

नदान†—वि०=नादान।

नदारत—वि०=नदारद।

नदारद—वि० [फा० न+दारद=नदारद] १. जो न रह गया हो। २. गायब। लुप्त। ३. खाली।

नदि—स्त्री० [सं०√नद्+इ] स्तुति।

†स्त्री०=नदी।

नदिया—पुं० [सं० नवद्वीप] बंगाल का एक प्रसिद्ध नगर जो न्यायशास्त्र का विद्यापीठ माना जाता है।

†स्त्री०=नदी।

नदी—स्त्री० [सं० नद+ङीष्] १. जल का वह लंबा प्राकृतिक प्रवाह जो चौड़ाई में नाले, नहर आदि से अधिक बड़ा होता है और दूर तक चला जाता है।

पद—नदी नाव संयोग=संयोगवश होनेवाली मुलाकात।

२. वह भूमि जिसमें उक्त जल प्रवाहित होता है। ३. किसी तरल पदार्थ का बहाव। जैसे—रक्त की नदी। ४. रहस्य संप्रदाय में, आराधन के समय ध्यान और जप के समय नाम का होनेवाला प्रवाह।

नदी-कदंब—पुं० [ब० स०] बड़ी गोरखमुंडी।

नदी-कांत—पुं० [ष० त०] १. समुद्र। २. [ब० स०] समुद्र-फल। ३. सिंदुवार नामक वृक्ष।

नदी-कांता—स्त्री० [ब० स०, टाप्] १. जामुन का पेड़। २. काक-जंघा।

नदीकुकंठ—पुं० [सं० ?] नैपाल का एक तीर्थस्थल। (बौद्ध)

नदी-गर्भ—पुं० [ष० त०] नदी के दोनों किनारों के बीच का अवकाश।

नदी गूलर—पुं० [?] लिसोड़ा।

नदीज—वि० [सं० नदी√जन् (उत्पत्ति)+ड] जो नदी से उत्पन्न हुआ हो।

पुं० १. समुद्र-फल। २. अर्जुन वृक्ष। ३. सेंधा नमक। ४. सुरमा। ५. महाभारत के अनुसार गंगा के गर्भ से उत्पन्न एक राजा।

नदीजा—स्त्री० [सं० नदीज+टाप्] अरणी का वृक्ष।

नदी जामुन—स्त्री० [सं०+हिं०] छोटा जामुन।

नदी.तर—पुं० [सं० नदी√तृ (तैरना)+अच्] १. वह स्थान जहाँ से नदी पार की जाय। २. घाट।

नदी-तल—पुं० [ष० त०] पृथ्वी का वह गहरा भाग जिस पर होकर नदी बहती है। (बेसिन)

नदी-दत्त—पुं० [सं०] बुद्धदेव का एक नाम।

नदी-दुर्ग—पुं० [मध्य०स०] नदी के बीच में या द्वीप में बना हुआ दुर्ग। (कौ०)

नदी-दोह—पुं० [मध्य० स०] वह कर या महसूल जो नदी पार करने के समय देना पड़ता है।

नदी-धर—पुं० [ष० त०] गंगा नदी को मस्तक पर धारण करनेवाले, शिव। महादेव।

नदीन—पुं० [नदी–ईन ष० त०] १. समुद्र। २. वरुण देवता। ३. वरुण या बन्ना नामक जंगली वृक्ष जो प्रायः पलास की तरह का होता है।

नदी-निष्पाव—पुं० [मध्य० स०] बोरो नाम का धान जिसका चावल कवड़ा होता है।

नदी-पति—पुं० [ष० त०] १. समुद्र। २. वरुण।

नदीपत्र—पुं०=नदीतल।

नदी-भल्लातक—पुं० [मध्य० स०] भिलावें की जाति का एक वृक्ष और उसका फल।

नदीभव—वि० [सं० नदी√पू (होना)+अच्] जो नदी में उत्पन्न हुआ हो।
पुं० सेंधा नमक।

नदी-मातृक—वि० [ब० स०, कप्] ऐसा प्रदेश जिसमें नदियों के जल से खेतों की सिंचाई होती हो। 'देवमातृक' से भिन्न।

नदीमाषक—पुं० [सं०] मानदंड या मानकच्चू नामक कंद।

नदी-मुख—पुं० [ष० त०] वह स्थान जहाँ नदी समुद्र में गिरे। नदी का मुँहाना।

नदी-वट—पुं० [मध्य० स०] वट वृक्ष।

नदीश—पुं० [नदी–ईश, ष० त०] समुद्र।

नदीश-नंदिनी—स्त्री० [ष० त०] लक्ष्मी।

नदीश्वर—पुं० [नदी–ईश्वर, ष० त०]=नदीश।

नदीसर—पुं०=नदीश्वर (समुद्र)।

नदी-सर्ज—पुं० [ष० त०] अर्जुन वृक्ष।

नदेया—स्त्री० [सं० नदी+ढक्–एय, टाप्] छोटा जामुन।

नदेयी—स्त्री० [सं० नदी+ढक्–एय, ङीष्] छोटा जामुन।

नदोला—पुं० [हिं० नाँद] मिट्टी की छोटी नाँद।

नद्द—पुं० १.=नदी। २.=नाद।

नद्दी—स्त्री०=नदी।

नद्ध—वि० [सं०√नह (बंधन) क्त] १. नथा या नाथा हुआ। २. बँधा या बाँधा हुआ।

नद्धना—अ०=नदना।

नद्धी—स्त्री० [हिं० नांधना] १. चमड़े की डोरी। ताँत। २. दे० 'नत्थी'।

नद्य—वि० [सं० नदी+यत्] नदी-संबंधी। नदी का।

नद्याम्र—पुं० [नदी–आम्र, ष० त०] एक तरह का पौधा। कोकुआ। समष्ठिला।

नद्यावर्त्तक—पुं० [नदी–आवर्त्तक, ष० त०] एक योग जो यात्रा के लिए शुभ माना जाता है। (फलित ज्यो०)

नद्युत्सृष्ट—पुं० [नदी–उत्सृष्ट, तृ० त०] गंग बरार। (दे०)

नधना—अ० [हिं० नँधना] १. नाथा जाना। २. नाक में रस्सी डाल कर बाँधा जाना। जैसे—बैल नथना। ३. किसी के साथ जबरदस्ती जोड़ा, बाँधा या लगाया जाना। ४. तत्परतापूर्वक किसी काम में लगना या लगाया जाना। ५. किसी कार्य का अनुष्ठित या आरब्ध होना। काम का ठनना। जैसे—जब वह काम नध गया है तब उसे पूरा ही कर डालना चाहिए।

नधाव—पुं० [हिं० नधना] नाधे जाने की क्रिया या भाव।
पुं० [?] वह गड्ढा जिसमें से पानी उलीचकर सिंचाई के लिए ऊँचाई पर स्थित गड्ढे में फेंका जाता है।

ननंद—स्त्री०=ननद।

ननंदा—स्त्री० [सं० न√नन्द् (संतुष्ट होना)+ऋन्] ननद।

ननका†—वि० [हिं० नन्हा] [स्त्री० ननकी] अवस्था, आकार आदि में सबसे छोटा या बहुत छोटा। जैसे—ननका बबुआ।

ननकारना†—अ०=नकारना।

ननकिरवा†—वि०=ननका।
पुं० छोटा लड़का।

ननद—स्त्री० [सं० ननंदा] किसी विवाहिता स्त्री के संबंध के विचार से उसके पति की बहन।
पद—ननद के बीर या भैया=(क) पति। (ख) रहस्य संप्रदाय में, परमात्मा।

ननदी†—स्त्री०=ननद।

ननदोई—पुं० [हिं० ननद+ओई (प्रत्य०)] विवाहिता स्त्री के संबंध के विचार से वह व्यक्ति जिससे उसके पति की बहन ब्याही हुई हो। ननद का पति।

ननसार†—स्त्री०=ननिहाल (नाना का घर)।

नना—स्त्री० [सं० न√नम् (झुकना)+ड–टाप्] १. माता। २. पुत्री। बेटी। ३. कन्या। लड़की।

ननिअउरा(आउर)†—पुं०=ननिहाल।

ननिया—वि० [हिं० नाना] संबंध के विचार से नाना या नानी के स्थान पर पड़नेवाला। जैसे—ननिया ससुर, ननिया सास।

ननिया ससुर—पुं० [हिं०] [स्त्री० ननिया सास] १. पति की दृष्टि में, उसकी पत्नी का नाना। २. स्त्री की दृष्टि में, उसके पति का नाना।

ननिया सास—स्त्री० [हिं०] १. पति की दृष्टि में, उसकी पत्नी की नानी। २. स्त्री की दृष्टि में, उसके पति की नानी।

ननिहारी—स्त्री० [हिं० नन्हा] पुरानी चाल की एक प्रकार की छोटी ईंट।

ननिहाल—पुं० [हिं० नाना+सं० आलय] १. नाना का घर या घराना। ननसार। २. वह गाँव, नगर या प्रदेश जिसमें किसी के नाना का घर या मूल-निवास स्थान हो।

ननु—अव्य० [सं० न√नुद् (प्रेरणा)+डु] एक अव्यय जिसका व्यवहार

कुछ पूछने, कोई संदेह प्रकट करने अथवा वाक्य के आरंभ में यों ही किया जाता है। (क्व०)

ननु-नच—पुं० [द्व० स०] किसी बात में की जानेवाली छोटी-मोटी आपत्ति।

ननोई—स्त्री०=तिन्नी (धान और उसका चावल)।

नन्ना†—वि०=नन्हा।

†पुं०=नाना।

नन्यौरा†—पुं०=ननिअउरा (ननिहाल)।

नन्हा—वि० [प्रा० लण्हा] [स्त्री० नन्ही] १. अवस्था, आकार आदि में बहुत या सब से छोटा। जैसे—नन्हा बच्चा, नन्हें महाराज। २. पतला। महीन।

मुहा०—**नन्हा कातना**=(क) महीन सूत कातना। (ख) बहुत ही बारीक या कठिन काम करना।

पद—**नन्हा मुन्ना**=बहुत छोटा बच्चा।

नन्हाई—स्त्री० [हिं० नन्हा+ई (प्रत्य०)] १. 'नन्हा' अर्थात् 'छोटा' होने की अवस्था या भाव नन्हापन। २. तुच्छ या हीन होने की अवस्था या भाव। अप्रतिष्ठा। हेठी।

नन्हिया—स्त्री०=तिन्नी (धान और उसका चावल)।

नन्हैया†—वि०=नन्हा।

नपत—स्त्री० [हिं० नापना] नापे जाने की अवस्था, क्रिया या भाव। नपाई।

नपता—पुं० [देश०] एक प्रकार का पक्षी जिसके डैनों पर काली या लाल चित्तियाँ होती हैं।

†पुं० [सं० नप्तृ] लड़की का लड़का। नाती।

नपना—अ० [हिं० 'नापना' का अ०] नापा जाना।

पद—**नपा-तुला**। (दे०)

पुं० वह पात्र जिसमें डाल कर कोई चीज विशेषतः कोई तरल पदार्थ नापा जाय। जैसे—दूध या तेल का नपना।

नपरका—पुं० [देश०] एक तरह का पक्षी जिसकी गरदन तथा पेट लाल रंग का और पैर तथा चोंच पीले रंग की होती है।

न-पराजित—पुं० [सं० सहसुपा स०] शंकर। शिव।

नपाई—स्त्री० [हिं० नाप+अई (प्रत्य०)] १. नापने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

†२.=नाप।

नपाक—वि०=नापाक (अपवित्र)।

नपात्—पुं० [सं० न√पा (रक्षा)+शतृ] देवयान।

नपुंसक—वि० [सं० न स्त्री न पुमान्, नि० नपुंसक आदेश] [भाव० नपुंसकता] १. (वह व्यक्ति) जिसमें काम-वासना या स्त्री-संभोग की शक्ति बिलकुल न हो अथवा बहुत ही कम हो। क्लीव।

विशेष—वैद्यक में, नपुंसक पाँच प्रकार के माने गये हैं—आसेव्य, सुगंधी, कुंभीक, ईर्ष्यक और षंड।

२. कायर।

पुं० १. वह पुरुष जिसमें स्त्री-संभोग की शक्ति न हो। नामर्द। २. ऐसा मनुष्य जिसमें न तो पूर्ण पुरुषों के चिह्न हों न स्त्रियों के ही। हिजड़ा।

विशेष—वैद्यक के अनुसार जब पुरुष का वीर्य और माता का रज समान होता है तब नपुंसक संतान उत्पन्न होती है।

३. दे० 'नपुंसक लिंग'।

नपुंसकता—स्त्री० [सं० नपुंसक+तल्—टाप्] १. नपुंसक होने की अवस्था या भाव। हिजड़ापन। २. वैद्यक में, एक प्रकार का रोग जिसमें मनुष्य का वीर्य इस प्रकार नष्ट हो जाता है कि वह स्त्री के साथ संभोग करने के योग्य नहीं रह जाता। नामर्दी।

नपुंसकत्व—पुं० [सं० नपुंसक+त्व]=नपुंसकता।

नपुंसक-मंत्र—पुं० [सं० कर्म० स०] जैनों के अनुसार वह मंत्र जिसके अंत में 'नमः' हो।

नपुंसक-लिंग—पुं० [सं० मध्य० स०] १. संस्कृत व्याकरण में तीन प्रकार के लिंगों में से एक जिसमें ऐसे पदार्थों का अंतर्भाव होता है जो न तो पुंलिंग हों और न स्त्री लिंग।

विशेष—संस्कृत के सिवा अंग्रेजी, मराठी आदि भाषाओं में भी यह तीसरा लिंग होता है, परन्तु हिन्दी, पंजाबी आदि भाषाओं में नहीं होता।

पुंसक-वेद—पुं० [सं० मध्य० स०] जैनियों के अनुसार एक प्रकार का मोहनीय कर्म जिसके उदय होने पर स्त्री के सिवा बालक या पुरुष के साथ भी संभोग करने की इच्छा उत्पन्न होती है।

नपुआ†—पुं०=नपना।

नपुत्रा†—वि० [स्त्री० नपुत्री]=निपूता।

नप्ता (प्तृ)—स्त्री० [सं० न√पत् (गिरना)+तृच्] लड़के या लड़की की संतान।

नप्तृका—स्त्री० [सं० नप्तृ+कन्—टाप्] वैद्यक में ऐसा पक्षी जिसका मांस दोष नाशक माना जाता है।

नप्त्री—स्त्री० [सं० नप्तृ+ङीप्] १. पौत्री। २. नतनी।

नफर—पुं० [फा० नफ़र] १. आदमी। व्यक्ति। (विशेषतः संख्या सूचित करने के समय) जैसे—चार नफर मजदूर और बढ़ाओ। २. तुच्छ सेवाएँ करनेवाला सेवक। खिदमतगार। दास। ३. श्रमिक। मजदूर।

नफरत—स्त्री० [अ० नफ़्रत] १. किसी के प्रति होनेवाली अरुचिपूर्ण भावना या विरक्ति। २. घृणा।

नफरी—स्त्री० [फा० नफ़र=आदमी] १. नफर अर्थात् मजदूर का दिन भर का काम। २. काम या मजदूरी के दिनों की वाचक संज्ञा। जैसे—चार नफरी में यह दरवाजा बनेगा। ३. एक दिन काम करने का पारिश्रमिक। जैसे—इस राज की नफरी ३) है।

नफ़स—पुं० [अ० नफ़स] १. श्वास। साँस। २. क्षण। पल।

पुं० [अ० नफ़्स] १. अस्तित्व। २. सत्यता। ३. काम-वासना। ४. लिंगेन्द्रिय। ५. आत्मा के दो भेदों में से एक जो निम्नकोटि का माना जाता है। (सूफी-सम्प्रदाय)

नफसा-नफसी—स्त्री० [अ० नफ़्सी नफ़्सी] १. आपा-धापी। २. वैमनस्य।

नफसानी—वि० [अ० नफ्सानी] १. भौतिक और शारीरिक। २. काम-वासना या भोगेच्छा संबंधी।

नफा—पुं० [अ० नफ़अ] १. लाभ। हित। २. आर्थिक लाभ। ३. किसी प्रकार की प्राप्ति। ४. ब्याज। सूद।

नफ़ासत—स्त्री० [अ० नफ़ासत] १. नफीस (अर्थात् उत्तम कोटि का) और सुन्दर होने की अवस्था या भाव। २. कोमलता। ३. निर्मलता।

नफ़ीरी—स्त्री० [फा० नफ़ीरी] १. बाँसुरी की तरह का एक प्रकार का बाजा जो शहनाई के साथ बजता है। २. शहनाई।

नफ़ीस—वि० [फा० नफ़ीस] [भाव० नफ़ासत] १. जो उत्तम होने के सिवा देखने में भी बहुत प्रिय या मनोहर हो। २. निर्मल। स्वच्छ।

नफ़्फ़ेरी†—स्त्री०=नफीरी।

नफ़्स—पुं०=नफस।

नफ़्सा-नफ़्सी—स्त्री० [अ०] आपा-धापी।

नफ़्सानियत—स्त्री० [अ०] १. स्वार्थपरता। २. अभिमान।

नबी—पुं० [अ०] पैगंबरी धर्मों में ईश्वर का दूत। पैगंबर।

नबेड़ना—स०=निबेड़ना।

नबेड़ा—पुं०=निबेड़ा।

नबेरना—स० दे० 'निबेड़ना'।

नबेरा—पुं०=निबेड़ा।

नब्ज़—स्त्री० [अ० नब्ज़] हाथ की वह रक्तवाहिनी नलिका जिसके कलाई पर पड़नेवाले अंश की गति से शारीरिक आरोग्य, बल आदि की स्थिति जानी जाती है। नाड़ी।

क्रि० प्र०—चलना।—देखना।—दिखाना।

नब्दीगर—पुं० [फा० नमद+गर] शामियाना बनानेवाला कारीगर।

नब्बे—वि० [सं० नवति] जो गिनती में अस्सी से दस अधिक हो। सौ से दस कम।

पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—९०।

नभःकेतन—पुं० [सं० ब० स०] सूर्य।

नभः कांती (तिन्)—पुं० [सं० नभः क्रांत+इनि] सिंह।

नभः पांथ—पुं० [सं० ष० त०] सूर्य।

नभः प्रभेद—पुं० [सं०] एक वैदिक ऋषि जो विरूप के वंशज थे।

नभः प्राण—पुं० [सं० ष० त०] वायु। हवा।

नभः श्वास—पुं० [सं० ष० त०] वायु।

नभः सद्—वि० [सं० नभस्√सद् (नगति)+क्विप्] आकाश में विचरनेवाला।

पुं० १. देवता। २. पक्षी।

नभः सरित्—स्त्री० [सं० ष० त०] आकाश गंगा।

नभः सुत—पुं० [सं० ष० त०] पवन। हवा।

नभः स्थित—वि० [सं० स० त०] आकाश में स्थित।

पुं० एक नरक।

नभ (स्)—पुं० [सं०√नह् (बंधन)+असुन्, भ आदेश] १. आकाश। आसमान। २. बिलकुल खाली या शून्य स्थान। ३. शून्य का सूचक चिह्न। बिन्दु। सुन्ना। सिफर। ४. सावन और भादों के महीनें जिनमें आकाश से पानी बरसता है। ५. बादल। मेघ। ६. जल की वर्षा। ७. जल। पानी। ८. आधार। आश्रय। ९. पुराणानुसार चाक्षुष मनु के एक पुत्र का नाम। १०. शिव। ११. अबरक। १२. जन्मकुंडली में लग्न स्थान से दसवाँ स्थान। १३. कमल नाल। १४. राजा नल का एक पुत्र।

वि० हिंसक।

अव्य० निकट। पास।

नभग—वि० [सं० नभ√गम् (गति)+ड] १. आकाश में चलनेवाला। आकाशचारी। २. अभागा। बद-किस्मत।

पुं० १. चिड़िया। पक्षी। २. वायु। हवा। ३. बादल। मेघ। ४. भागवत के अनुसार वैवस्वत मनु के एक पुत्र का नाम।

नभग-नाथ—पुं० [सं०] पक्षियों के राजा, गरुड़।

नभगामी (मिन्)—वि० [सं० नभ√गम्+णिनि] आकाश में चलनेवाला। नभचर।

पुं० १. सूर्य। २. चन्द्रमा। ३. देवता। ४. चिड़िया। पक्षी।

नभगेश—पुं० [सं० नभग-ईश ष० त०] गरुड़।

नभचर—वि० [सं० नभश्चर] आकाश में चलनेवाला।

नभ-ध्वज—पुं० [सं० नभोध्वज] बादल। मेघ।

नभनीरप—पुं० [सं० नभोनीरप] चातक। पपीहा।

नभयान—पुं० [सं० नभोयान] आकाश में उड़नेवाला यान। वायुयान।

नभश्चक्षु (स्)—पुं० [सं० ष० त०] सूर्य।

नभश्चमस—पुं० [सं० ष० त०] १. चंद्रमा। २. इंद्रजाल।

नभश्चर—वि० [सं० नभस्√चर् (गति)+ट] आकाश में चलनेवाला। आकाशचारी।

पुं० १. देवता। २. पक्षी। ३. बादल। मेघ। ४. वायु। हवा। ५. ग्रह, नक्षत्र आदि।

नभसंगम—पुं० [सं० नभस√गम् (जाना)+खश्, मुम्] पक्षी।

नभस—पुं० [सं०√नभ् (शब्द)+असच्] दसवें मन्वंतर के एक सप्तर्षि। (हरिवंश)

नभस्थल—पुं० [सं० नभःस्थल] १. आकाश। २. शिव।

नभस्थित—वि० [सं० नभःस्थित] आकाश में स्थित।

पुं० पुराणानुसार एक नरक का नाम।

नभस्य—पुं० [सं० नभस्+यत्] १. हरिवंश के अनुसार स्वारोचिष मनु के एक पुत्र का नाम। २. भाद्रपद। भादों।

नभस्वान् (स्वत्)—वि० [सं० नभस्+मतुप्] कुहरे या बादलों से भरा हुआ।

पुं० वायु।

नभा—स्त्री० [सं०] पीकदान।

नभाक—पुं० [सं०√नभ्+आक] १. अँधेरा। अंधकार। २. राहु। ३. एक प्राचीन ऋषि।

नभि—स्त्री० [सं०] चक्र। पहिया।

नभोग—पुं० [सं० नभस्√गम् (जाना)+ड] १. आकाश में चलनेवाले देवता, पक्षी, ग्रह आदि। २. जन्म-कुंडली में लग्न से दसवाँ स्थान। ३. दसवें मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

नभोगज—पुं० [सं० नभोग√जन् (उत्पत्ति)+ड] बादल।

नभोगति—वि० [सं० नभस्-गति ब० स०] जिसकी गति या पहुँच आकाश में हो।

पुं० देवता, पक्षी, ग्रह आदि जो आकाश में चलते हैं।

नभोगामी (मिन्)—वि० [सं० नभस्√गम् (जाना)+णिनि] नभ में चलनेवाला।

नभोद—पुं० [सं०] एक विश्वदेव। (हरिवंश)

नभोदुह—पुं०[नभस्√दुह् (भरना)+क] बादल। मेघ।

नभोदृष्टि—वि०[सं० नभस्-दृष्टि, ब०स०]१. जिसकी दृष्टि आकाश की ओर हो। २. अंधा।

नभोद्वीप—पुं०[सं० नभस्-द्वीप, स०त०] बादल।

नभोधूम—पुं०[सं० स०त०] बादल।

नभोध्वज—पुं०[सं० नभस्-ध्वज, स०त०] बादल।

नभो नदी—स्त्री०[सं० नभस्-नदी, ष०त०] आकाश-गंगा।

नभोमंडल—पुं०[सं० नभस्-मंडल, ष०त०] मंडलाकार आकाश।

नभोमणि—पुं०[सं० नभस-मणि, ष०त०] सूर्य।

नभोयोनि—पुं०[सं० नभस्-योनि, ब०स०] महादेव। शिव।

नभोरज (स्)—पुं०[सं० नभस्-रजस्, ष०त०] अंधकार।

नभोरूप—वि०[सं० नभस्-रूप, ब०स०] नभ अर्थात् आकाश के रंग का। आसमानी या हल्का नीला।

नभोरेणु—पुं०[सं० नभस् -रेणु, स० त०] कुहासा। कोहरा।

नभोलय—वि०[सं०नभस्-लय, ब०स०] जो आकाश में लीन हो जाय। पुं० धूआँ।

नभोलिह—वि०[सं० नभस्√लिह् (चाटना)+क] गगनचुंबी।

नभोवट—पुं०[सं०] आकाश-मंडल

नभोवीथी—स्त्री०[सं० नभस्-वीथी, स०त०] छायापथ। (दे०)

नभौका (कस्)—पुं०[सं० नभ-ओकस, ब० स०]१. पक्षी। २. देवता। ३. ग्रह आदि जो आकाश में चलते हैं।

नभ्य—पुं०[सं० नाभि+यत् नभ्रादेश] १. पहिये के नीचे का भाग। २. पहियों में दी जानेवाली चिकनाई या तेल। ३. अक्ष। धुरी। वि० मेघाच्छन्न।

नभ्यसी—पुं०[सं० नभस]१. आकाश। २. सावन का महीना।

नभ्राट् (ज्)—पुं०[सं० न√भ्राज् (दीप्ति)+क्विप्, नि० सिद्धि] बादल। मेघ।

नम (स्)—पुं०[सं०√नम (झुकना)+असुन्]१. नमस्कार। २. त्याग। ३. अन्न। ४. वज्र। ५. यश। ६. स्तोत्र।
वि०[फा०] भींगा हुआ। आर्द्र। गीला।

नमक—पुं०[फा०] एक प्रसिद्ध क्षार पदार्थ जो मुख्यतः खारे जल से तैयार किया जाता है और कहीं-कहीं चट्टानों के रूप में भी मिलता है। लवण।
पद—नमक-हराम, नमक-हलाल। (देखें)
मुहा०—(किसी का) नमक अदा करना=किसी के किये हुए उपकारों का कृतज्ञतापूर्वक पूरा पूरा प्रतिफल देना। **(किसी का) नमक खाना**=किसी का दिया हुआ अन्न खाना। किसी के आश्रय में रहकर पलना। **(किसी का) नमक फूटकर निकलना**=स्वामी या आश्रयदाता के प्रति कृतघ्न होने या उसकी बुराई करने का दंड मिलना। कृतघ्नता का बुरा फल मिलना। **(किसी बात में) नमक-मिर्च मिलाना या लगाना**=कोई बात बहुत अधिक बढ़ा-चढ़ा कर और अतिरंजित तथा आकर्षक बनाकर कहना। **कटे पर नमक छिड़कना**=ऐसा काम करना या ऐसी बात कहना जिससे दुःखी व्यक्ति और अधिक दुःखी हो।
२. लावण्य। सलोनापन।

नमक-ख्वार—वि०[फा०] (व्यक्ति) जिसने किसी का नमक खाया हो। किसी के द्वारा पालित होनेवाला।

नमकदान—पुं०[फा०] [स्त्री० अल्पा० नमकदानी] पिसा हुआ नमक रखने का पात्र।

नमकसार—पुं०[फा०]१. वह स्थान जहाँ से नमक निकलता हो। २. वह खेत जिसमें समुद्र-जल से नमक तैयार किया जाता है।

नमक-हराम—वि०[फा०+अ०] [भाव० नमक-हरामी] जो अपने आश्रयदाता, उपकारक या स्वामी के प्रति कृतज्ञ न रहकर उसका अहित करता हो या चाहता हो। कृतघ्न।

नमक-हरामी—स्त्री०[फा० नमक+अ० हराम+ई (प्रत्य०)]१. नमक हराम होने की अवस्था या भाव। २. नमक हराम का अन्नदाता या आश्रयदाता के प्रति किया जानेवाला कोई द्रोहपूर्ण कार्य।
†वि०=नमक-हराम।

नमक-हलाल—वि०[फा०+अ०] [भाव० नमक-हलाली] जो अपने आश्रयदाता, उपकारक या स्वामी की कृपा के लिए उसका उपकार मानने और उसकी भलाई करने के लिए सदा तत्पर रहे।

नमक हलाली—स्त्री०[फा०नमक+हलाल +ई (प्रत्य०)]१. नमक-हलाल होने का भाव। स्वामिनिष्ठा। स्वामिभक्त। २. ऐसा कार्य जिससे उपकारक या स्वामी के प्रति कृतज्ञता और भक्ति प्रकट होती है।

नमकीन—वि० [फा०] [भाव० नमकीनी]१. जिसमें नमक पड़ा या मिला हो। जैसे—नमकीन समोसा। २. जो स्वाद में नमक के स्वाद जैसा हो। ३. (व्यक्ति) जो देखने में साँवला होने पर भी सुन्दर हो।

नमगीरा—पुं०[फा० नमगीरः]१. एक तरह का छोटा शामियाना जो ओस से बचने के लिए ताना जाता है। २. तिरपाल या पाल जो धूप, वर्षा आदि में रक्षित रहने के लिए किसी स्थान के ऊपर टाँगते या फैलाते हैं।

नमत—वि०[सं०√नम्+अतच्]१. झुका हुआ। २. नम।
पुं०१. नट। २. स्वामी। ३. बादल। ४. धूआँ।

नमदा—पुं०[फा० नमद] एक प्रकार का ऊनी कंबल जो गद्दे की तरह बिछाया जाता है।

नमन—पुं०[सं०√नम्+ल्युट्—अन] [वि० नमनीय, नमित]१. झुकने की क्रिया या भाव। २. नमस्कार। प्रणाम।

नमना—अ०[सं० नमन]१. नत होना। झुकना। २. नमस्कार या प्रणाम करना। ३. नम्र होना।

नमनि†—स्त्री०[हिं० नमना] १. नमन। २. नम्रता।

नमनीय—वि०[सं०√नम्+अनीयर्] [भाव० नमनीयता]१. जो झुक सके या झुकाया जा सके। २. जिसके आगे झुकना उचित हो, अर्थात् पूज्य या मान्य।

नमश—स्त्री०[फा०] दूध का वह फेन जो ठंडक के कारण जम-सा गया हो। निमस।

नमसित—भू० कृ०[सं० नमस्+क्यङ्+क्त, यलोप]१. जिसे नमस्कार किया गया हो। २. पूजित।

नमस्कार—पुं०[सं० नमस्√कृ (करना)+घञ्]१. किसी पूज्य व्यक्ति के आगे झुककर उसका अभिवादन करना। २. [नमस्-कार, ब०स०] एक प्रकार का विष।

नमस्कारी—स्त्री०[सं० नमस्कार+अच्—ङीप्] १. लज्जावंती। २. वराह-क्रान्ता। ३. खदरी या खदरिका नामक क्षुप।

नमस्कार्य—वि०[सं० नमस्√कृ+ण्यत्] १. जिसके सामने नमस्कार करना उचित हो। नमस्कार किये जाने के योग्य। २. पूज्य। वंदनीय।

नमस्क्रिया—स्त्री०[सं० नमस्√कृ+श—इयङ्, टाप्] नमस्कार।

नमस्ते—[सं० नमस् ते व्यस्त पद] एक पद जो अव्यय की तरह प्रयुक्त होता है और जिसका अर्थ है—मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

नमस्य—वि०[सं० नमस्+क्यङ्+यत्, अ और य् का लोप] नमस्कार करने के योग्य। पूज्य। वंदित।

नमस्या—स्त्री०[सं०√नमस्य+अ—टाप्] १. पूजा। २. नम्रता।

नमाज—स्त्री०[अ० नमाज़] मुसलमानों की एक विशिष्ट प्रकार और रूप की ईश्वर-प्रार्थना जो दिन में पाँच बार करने का विधान है।
क्रि०प्र०—अदा करना।—गुजारना।—पढ़ना।

नमाजगाह—स्त्री०[अ०+फ़ा०] १. नमाज पढ़ने का स्थान। २. मसजिद।

नमाजबंद—पुं०[अ० नमाज+फ़ा० बंद] कुश्ती का एक पेंच।

नमाजी—पुं०[अ० नमाज़ी] मुसलमानी धर्म के अनुसार समय पर नमाज पढ़नेवाला व्यक्ति। धर्मनिष्ठ मुसलमान।
पुं० वह वस्त्र जिस पर बैठकर नमाज पढ़ी जाय।

नमाना—स०[सं० नमन] १. झुकाना। २. अपने अधीन या वश में करना।

नमित—वि०[सं०√नम्र+णिच्+क्त] १. झुका हुआ। २. झुकाया हुआ।

नमिस—स्त्री०[फ़ा० नमश या नमिश्क] एक विशेष प्रकार से तैयार किया हुआ दूध का फेन जो प्रायः जाड़े में बनता और बहुत स्वादिष्ट होता है।

नमी—स्त्री०[फ़ा०] १. आर्द्रता। तरी। २. सीड़।
वि०[सं० नमिन्] १. झुकनेवाला। २. जो झुक सकता हो।

नमुचि—पुं०[सं० न √मुच् (छोड़ना)+इन्] १. एक ऋषि का नाम। २. एक दानव जिसे इन्द्र ने मारा था। ३. एक दैत्य जो शुंभ और निशुंभ का छोटा भाई था। ४. कामदेव।

नमुचि-रिपु—पुं० [ष० त०] इंद्र, जिन्होंने नमुचि का वध किया था।

नमुचिसूदन—पुं०[सं० नमुचि√सूद् (मारना)+ल्यु—अन] इंद्र।

नमूद—स्त्री०[फ़ा० नमूद] १. आविर्भाव। प्रकट होना। २. अस्तित्व। ३. धूम-धाम। तड़क-भड़क।

नमूदार—वि०[फ़ा० नुमूदार] [भाव० नमूदारी] आविर्भूत। प्रकट।

नमूना—पुं०[फ़ा० नमूनः] १. किसी वस्तु की बहुत-सी इकाइयों में से कोई इकाई जो उस वस्तु का स्वरूप बतलाने के लिए दिखाई जाती है। जैसे—पुस्तक की नमूने की प्रति आपको भेजी गयी थी। २. किसी पदार्थ का कोई ऐसा अंश जो उसके गुण और स्वरूप का परिचय कराने के लिए निकाला गया हो। बानगी। जैसे—चावल का नमूना। ३. वह जिसे देखकर उसके अनुसार वैसा ही कुछ और बनाया जाय। प्रतिमान। जैसे—इस बेल का नमूना कागज पर उतार लो। ढाँचा।
†पुं० दे० 'निमोना' (सालन)।

नमेरु—पुं०[√नम्+एरु] १. रुद्राक्ष का पेड़। २. एक तरह का पुन्नाग (वृक्ष)।

नम्र—वि०[सं० √नम्+र] १. (पदार्थ) जो झुका हो। २. (व्यक्ति) जिसमें नम्रता और विनय हो।

नम्रक—पुं०[सं० नम्र√कै (प्रतीत होना)+क] बेंत।

नम्रता—स्त्री०[सं० नम्र+तल्—टाप्] नम्र होने की अवस्था, गुण या भाव।

नम्रांग—वि०[सं० नम्र-अंग, ब०स०] १. झुका हुआ। २. झुके हुए अंगोंवाला।

नम्रित—वि०=नमित।

नय—वि०[सं०√नी (ले जाना)+अच्?] १. किसी को किसी ओर ले जानेवाला। २. मार्ग-दर्शक। ३. उचित। ठीक। वाजिब।
पुं०[√नी+अप्] १. बरताव। व्यवहार। २. जीवन बिताने का ढंग। आचरण। ३. अच्छा या श्रेष्ठ आचरण। सदाचार। ४. दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता। ५. नम्रता। विनय। ६. न्यायपूर्वक और समझदारी से उचित या ठीक काम करने का ढंग और योग्यता। नीति। ७. प्रबंध, व्यवस्था और शासन करने का कोई व्यक्तिगत और कौशलपूर्ण ढंग या नीति। राजनीति। ८. अच्छी तरह से काम करने के लिए बनाई हुई योजना। ९. दार्शनिक मत या सिद्धान्त। १०. एक प्रकार का खेल या जूआ। ११. विष्णु का एक नाम। १२. जैन दर्शन में, प्रमाणों द्वारा निश्चित अर्थ या तत्त्व ग्रहण करने की वृत्ति जो सात प्रकार की कही गई है। यथा—नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र शब्द, समाभिरूढ़ और एवंभूत।
स्त्री०[सं० नद या नदी] नदी। उदा०—केते औगुन जग करत नय वय चढ़ती बार।—बिहारी।

नय-ऋति*—पुं०=नैर्ऋत।

नयक—वि०[सं० नय+तुन्—अक] कुशल। चतुर।
पुं० १. कुशल कार्यकर्ता। २. राजनीति में निपुण व्यक्ति। कुशल राज-नीतिज्ञ। ३. नेता।

नयकारी—पुं०[?] १. नर्तकों के दल का नायक। नाचनेवालों का मुखिया। २. नाचनेवाला। नर्तक।

नयज्ञ—वि०=नीतिज्ञ।

नयण*—पुं०=नयन।

नयन—पुं०[सं०√नी+ल्युट्—अन] १. किसी को कहीं या किसी ओर ले जाने की क्रिया या भाव। २. प्रबन्ध, व्यवस्था या शासन करने की क्रिया या भाव। ३. समय बिताने या व्यतीत करने की क्रिया या भाव। ४. आँखें या नेत्र जो हमें कहीं या किसी ओर ले जाने में सहायक होते हैं।

नयन-गोचर—वि०[ष०त०] १. जो आँखों में दिखाई देता हो। दिखाई देनेवाला। २. जो आँखों के सामने हो। समक्ष।

नयनच्छद—पुं०[ष०त०] आँख को ढकनेवाली पलक।

नयन-जल—पुं०[ष०त०] आँखों से बहनेवाला पानी अर्थात् आँसू। अश्रु।

नयनता—स्त्री०[हिं०]'नयन' का भाव। उदा०—कुछ कुछ खुली नयनता से, कुछ रुकी मुस्कान से, छीनते किस भाँति हो तुम धैर्य को।—पंत।

नयन-पट—पुं०[ष०त०]=पलक।

नयन-पथ—पुं०[ष०त०] १. दृष्टि का मार्ग। २. वह सारा विस्तार जो किसी ओर देखने पर आँखों के सामने आता या होता है।

नयन-पुट—पुं०[ष०त०] वह कोटर या गड्ढा जिसमें आँख स्थित रहती है।

नयन-वारि—पुं०[ष०त०] नयन-जल। आँसू।

नयन-सलिल—पुं०[ष० त०] नयन-जल। आँसू।

नयनांबु—पुं०[नयन-अंबु, ष०त०] आँसू।

नयना—अ०[सं० नमन]१. झुकना। २. किसी के आगे नम्र या विनीत होना।

स०१. झुकना। २. लाक्षणिक अर्थ में न रहने देना या कम करना। उदा०—अंबर हरत द्रौपदी राखी ब्रह्म इन्द्र कौ मान नयौ।—सूर।

†पुं०=नयन (आँख)।

नय-नागर—वि०[सं० स०त०]१. नय अर्थात् नीतिशास्त्र में निपुण। नीतिज्ञ। २. चतुर। चालाक।

नयनाभिराम—वि०[सं० नयन-अभिराम, ब०स०] जो देखने में प्रिय तथा सुन्दर हो।

नयनिमा—स्त्री०[सं० नयन से]१. आँख का भाव । आँख पन। नेत्रता। २. चितवन। उदा०—कहाँ नयनिमा ने पाये ये फूलों के मादक शर।—पन्त।

नयनी—स्त्री०[सं० नयन] आँख की पुतली।

वि० स्त्री० नयनों या आँखोंवाली। (यौ० के अन्त में।) जैसे—मृग नयनी।

नयनू—पुं०[नवनीत] १. मक्खन। २. पुरानी चाल की एक प्रकार की बूटीदार मलमल।

नयनोत्सव—पुं०[सं० नयन-उत्सव, ब०स०] १. ऐसी सुन्दर वस्तु जिसे देखने से नेत्रों को बहुत सुख मिले। २. दीपक। दीया।

नयनौषध—पुं०[सं० नयन-औषध, ष०त०] पुष्पकसीस। पीला कसीस।

नयर—पुं०=नगर।

नय-वाद—पुं०[सं० ष०त०] एक दार्शनिक वाद या सिद्धान्त जिसमें यह माना जाता है कि आत्मा एक भी है और अनेक भी।

नयवादी (दिन्)—पुं०[सं० नयवाद+इनि]१. नयवाद का अनुयायी या ज्ञाता। २. नीतिज्ञ। ३. राजनीतिज्ञ।

नयशाली (लिन्)—वि०[सं० नय√शाल् (शोभित होना)+णिनि]= नय-शील।

नय-शास्त्र—पुं०[ष०त०]=राजनीति शास्त्र।

नय-शील—वि०[सं० ब०स०]१. जो झुक सकता या झुकाया जा सकता हो। २. बुद्धिमान। विचारशील। ३. नीतिज्ञ। ४. नम्र। विनीत। ५. विजयी।

नया—वि०[सं० नव] [स्त्री० नयी, नई] १. जिसका अस्तित्व पहले न रहा हो, बल्कि जो अभी हाल में निकला, बना या हुआ हो। जो कुछ ही समय पहले प्रस्तुत हुआ हो। नवीन। जैसे—शहर में बहुत से नये मकान बने हैं।

मुहा०—**(कोई पदार्थ) नया कर देना**=खराब या नष्ट कर डालना। निकम्मा या रद्दी बना देना। (मंगल-भाषित रूप में प्रायः स्त्रियों द्वारा प्रयुक्त) जैसे—इस लड़के को जो कपड़ा दो, वह दो दिन में नया करके रख देता है; अर्थात् जला देता, फाड़ डालता या मैला कर देता है।

२. जिसकी उत्पत्ति या उपज अभी हाल में हुई हो। नई पैदावार में का। जैसे—नया आलू, नया चावल, नया पान।

मुहा०—**(अनाज या फल) नया करना**=प्रस्तुत ऋतु में होनेवाला अनाज, तरकारी या फल पहले-पहल खाना। जैसे—इस साल हमने आज ही गोभी नई की है; अर्थात् पहले-पहल खाई है।

३. जिसका आविर्भाव, रचना या सृजन हुए अधिक समय न बीता हो। थोड़े दिनों का। हाल का। ताजा। जैसे—नई जवानी, नया नियम, नई सभ्यता। ४. जिसका अस्तित्व या सत्ता तो पहले से रही हो, परंतु जिसका अधिकार, ज्ञान या परिचय हाल में प्राप्त हुआ हो। जैसे—(क) वे यह मकान छोड़कर किसी नये मकान में चले गये हैं। (ख)—ज्योतिषी नित्य नये तारों का पता लगाते रहते हैं। (ग) हमारे लिए तो यह अनुभव (या विचार) नया ही है। ५. जो पहले किसी के उपयोग या व्यवहार में न आया हो। जिससे पहले किसी ने काम न लिया हो। जैसे—यह लड़का रोज नये कपड़े पहनना चाहता है। ६. जो पहले था, उससे भिन्न और उसके स्थान पर आनेवाला दूसरा। जैसे—(क) अब नये अधिकारी आकर इस विषय का निर्णय करेंगे। (ख) विद्यालय में कई नये अध्यापक आये हैं।

मुहा०—**(कोई पुराना पदार्थ) नया करना या कर देना**=टूट-फूट जाने अथवा निकम्मे या रद्दी हो जाने पर उसके स्थान पर दूसरा नया लाकर रखना। जैसे—आपका जो शीशा हमसे टूट गया है, वह हम नया कर देंगे।

७. परिवर्तन, मरम्मत, सुधार आदि करके ऐसे रूप में लाया हुआ जो पहले से बिलकुल भिन्न जान पड़े। नये अथवा हाल के बने हुए के समान। जैसे—(क) दो हजार रुपये खरच करो तो यह मकान बिलकुल नया हो जायगा। (ख) दस रुपए में घड़ी-साज ने घड़ी बिलकुल नई कर दी है। (ग) इस बार की धुलाई में यह कोट बिलकुल नया हो गया है। ८. जो किसी काम में अथवा किसी पद या स्थान पर पहले-पहल आकर लगा हो। जैसे—(क) नये आदमी को काम सँभालने और समझने में कुछ समय लगता ही है। (ख) इस यंत्र का नया पुरजा कुछ खड़खड़ करता है। ९. जो एक बार बहुत कुछ नष्ट या समाप्त होने की दशा में पहुँचकर भी फिर से बना या काम में आने के योग्य हुआ हो। जैसे—इस बीमारी में लड़के की नई जिंदगी हुई है या इसे नया जीवन मिला है। १०. जिसका क्रम या चक्र फिर से चलने लगा हो। जैसे—नया चंद्रमा, नया वर्ष। ११. जो अपने वर्ग के दूसरों की तुलना में अभी हाल का या औरों के बाद का हो और जिसका नामकरण किसी पूर्ववर्ती के अनुकरण पर हुआ हो। (प्रायः बस्तियों, महल्लों आदि के नामों के संबंध में) जैसे—नई दिल्ली, नई बस्ती, नया बाजार। १२. ऐसा अजनबी या पराया जो पहले कभी न देखा गया हो। जैसे—नये आदमी को देखकर कुत्ते भूँकने लगते हैं (या लड़के घबरा जाते हैं)।

विशेष—यह शब्द सभी अर्थों में 'पुराना' का विपर्याय है।

नयापन—पुं० [हिं० नया+पन (प्रत्य०)]१. नये होने की अवस्था या भाव। नवीनता। नूतनत्व। २. कोई ऐसा नवीन गुण या विशेषता, जिसके फलस्वरूप किसी चीज में कोई चमत्कार या सौंदर्य उत्पन्न हो जाय।

नयाम—पुं०[फा० नियाम] तलवार की म्यान। कोष।

नरंग—पुं०[सं० नारंग] नारंगी का पेड़।

नरंधि—पुं० [सं० नर√धा (धारण)+कि, पृषो० मुम्] लौकिक या सांसारिक जीवन।

नरंधिप—पुं० [सं०] विष्णु।

नर—वि० [सं०√नृ (नय)+अच्] १. जिसमें वे सब शारीरिक अवयव हों जो किसी विशिष्ट वर्ग के वीर्यवान् जीवों में होते हैं। (रज युक्त जीवों को मादा कहते हैं) जैसे—नर व्यक्ति, नर हाथी। २. बहादुर। वीर। ३. जो अपने वर्ग में सबसे बढ़कर, बड़ा या श्रेष्ठ हो। जैसे—नर हीरा।

पुं० [सं०] १. विष्णु। २. शिव। ३. अर्जुन। ४. एक प्रकार की देव-योनि। ५. पुराणानुसार एक ऋषि जिनके भाई का नाम नारायण था, और जो धर्मराज के पुत्र थे। ६. गय राक्षस का एक नाम। ७. पुरुष। मर्द। ८. नौकर। सेवक। ९. वह खूँटी जो छाया की दिशा, गति आदि जानने के लिए गाड़ी जाती है। लंब। शंकु। १०. दोहे का एक भेद जिसमें १५ गुरु और १८ लघु होते हैं। ११. छप्पय का एक भेद जिसमें १० गुरु और १३ लघु होते हैं। १२. एक प्रकार का क्षुप जिसे गंधैल, राय-कपूर, रोहिस और सेंधिया भी कहते हैं।

पुं० १.=नरकट। २=नल।

नरई—स्त्री० [?] १. वनस्पति का कोई ऐसा डंठल जो अंदर से खोखला या पोला हो। २. जलाशयों के पास होनेवाली एक प्रकार की घास।

नरकंत—पुं०=नरकांत (राजा)।

नरक—पुं० [सं०√नृ (क्लेश देना)+अच्] [वि० नारकीय] १. वह स्थान जहाँ मृत्यु के उपरांत दुष्ट जीवों की आत्माओं को रहना तथा यातनाएँ सहनी पड़ती हैं। (पुराण)

क्रि० प्र०—भोगना।

२. बहुत गंदा और दुर्गंधपूर्ण स्थान। ३. ऐसा स्थान जहाँ अनेक प्रकार के कष्ट होते हों। ४. किसी चीज का बहुत ही गंदा और मैला अंश। ५. पुराणानुसार कलि के पौत्र का नाम जो कलि के पुत्र भय और पुत्री मृत्यु के गर्भ से उत्पन्न हुआ था और जिसने अपनी बहन यातना के साथ विवाह किया था। ६. विप्रचित्त दानव के एक पुत्र का नाम। ७. 'नरकासुर'।

पुं० [सं०] राजा।

नरक-गति—स्त्री० [स० त०] वह दूषित कर्म जिसके फलस्वरूप नरक में वास होता है। (जैन)

नरकगामी (मिन्)—वि० [सं० नरक√गम् (जाना)+णिनि] जिसे अपने पापों का फल भोगने के लिए नरक जाना पड़े।

नरक-चतुर्दशी—स्त्री० [मध्य० स०] कातिक कृष्ण चतुर्दशी जिस दिन घर का सारा कूड़ा-कतवार निकालकर बाहर फेंका जाता है।

विशेष—नरकासुर इसी दिन मारा गया था।

नर-कचूर—पुं०=कचूर।

नरक-चौदस—स्त्री०=नरक-चतुर्दशी।

नरकट—पुं० [हिं०] बेंत की जाति का एक प्रसिद्ध पौधा जिसके डंठल मजबूत किंतु खोखले होते हैं और अनेक प्रकार के कामों में लाये जाते हैं।

नर-कटिया†—वि० स्त्री० [हिं० नार+काटना] नवजात शिशु को नाल काटनेवाली (स्त्री)।

स्त्री० चमारिन।

नरक-भूमिका—स्त्री० [ष० त०] नरक। (जैन)

३—२८

नरकल†—पुं०=नरकट।

नरकस—पुं० =नरकट।

नरकस्था—स्त्री० [सं० नरक√स्था (स्थित होना)+क—टाप्] वैतरणी नदी।

नरकांतक—पुं० [सं० नरक-अंतक ष० त०] विष्णु।

नरका—पुं० [सं० नरकट] हल के पीछे की वह नली जिसमें बोने के लिए बीज डाले जाते हैं।

नरकामय—पुं० [सं० नरक-आमय, ब० स०] प्रेत।

नरकारि—पुं० [सं० नरक-अरि, ष० त०] श्रीकृष्ण।

नरकावास—वि० [सं० नरक-आवास, ब० स०] नरक में रहनेवाला।

पुं० नरक में होनेवाला वास या निवास।

नरकासुर—पुं० [सं० नरक-असुर मध्य स०] एक प्रसिद्ध राक्षस जो पृथ्वी का एक पुत्र था तथा जिसे विष्णु ने प्रागज्योतिषपुर का राज्य दिया था। इसके अत्याचारों से क्षुब्ध होकर भगवान कृष्ण ने इसका सिर सुदर्शन से काटा था।

नरकी—वि०=नारकी।

वि० [सं० नारकिन्] बहुत बड़ा पापी जो नरक में जाने योग्य कर्म करता हो।

नरकुल—पुं०=नरकट।

नर-केशरी—पुं० [सं० मयू० स०] १. वह जो पुरुषों में सिंह के समान वीर और साहसी हो। २. विष्णु का नृसिंह अवतार।

नर-केसरी—पुं० =नरकेशरी।

नर-केहरि—पुं० [सं० नर +हिं केहरि] नर केशरी (नृसिंह)।

नर-कौतुक—पुं० [सं० ब० स०] कोई चमत्कारपूर्ण या जादू-भरा खेल।

नरखड़ा—पुं० [?] गला।

नर-गण—पुं० [सं० ब० स०] उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़, पूर्वभाद्रपद, रोहिणी, भरणी और आर्द्रा नक्षत्रों का एक गण जिसमें जन्म लेनेवाला बुद्धिमान् तथा सुशील होता है। (फलित ज्यो०)

नरगा—पुं० [यू० नर्ग] १. शिकारी पशुओं को घेरने के लिए बनाया जानेवाला मनुष्यों का घेरा। २. जन-समूह। ३. विपत्ति।

नरगिस—स्त्री० [फा० नर्गिस] १. एक प्रकार का पौधा जो ठीक प्याज के पेड़ का-सा होता है। २. उक्त पौधे का फूल जो कटोरी के आकार का गोल तथा काला धब्बा लिये सफेद रंग का होता है। ३. आँख जिसका उक्त फूल उपमान माना जाता है।

नरगिसी—वि० [फा० नर्गिस] १. नरगिस-संबंधी। २. नरंगिस के आकार-प्रकार, रूप-रंग आदि का।

पुं० १. पुरानी चाल का एक प्रकार का कपड़ा जिस पर नरगिस के फूलों के आकार की बूटियाँ होती थीं। २. एक तरह का कबाब जो अंडों पर कीमा चढ़ाकर बनाया जाता है।

नरचा—पुं० [सं०] पटसन की एक जाति।

नरजना—अ० [फा० नाराज] नाराज होना।

स० [अ० नज़र से वि०] कोई चीज नापना या तौलना।

नरजा—पुं० [हिं० नरजना] पलड़ा (तराजू का)।

नरजी—पुं० [हिं० नरजना] वह जो अनाज तौलने का काम करता हो। बया।

नरतक* —पुं०=नर्तक।

नर-तात—पुं० [सं० ष० त०] राजा।

नर-त्राण—पुं० [सं० ष० त०] १. मनुष्यों का रक्षक, राजा। २. श्रीकृष्ण।

नरत्व—पुं० [सं० नर+त्व] नर होने की अवस्था, गुण या भाव। नरता।

नरदंवा†—पुं०=नरदमा।

नरद—स्त्री० [फा० नर्द] १. चौसर का खेल। २. चौसर खेलने की गोटी।

पुं० [सं० नर्द] नाद। शब्द।

नरदन—पुं० [सं० नर्दन] शब्द करने की क्रिया या भाव।

नरदमा—पुं० [?] नाबदान। पनाला।

नरदा†—पुं०=नाबदान (पनाला)।

नर-दारा—पुं० [सं० नर और दारा] १. जनखा। हिजड़ा। २. वह जो पुरुष होने पर भी स्त्रियों के से हाव-भाव दिखाता या रूप-रंग रखता हो। जनाना। ३. डरपोक व्यक्ति।

†स्त्री०=नर-नारि (द्रौपदी)।

नर-देव—पुं० [सं० उपमि० स०] १. राजा। २. ब्राह्मण।

नर-नाथ—पुं० [सं० उपमि० स०] नरदेव। (दे०)

नर-नायक—पुं० [सं० उपमि० स०] राजा।

नर-नारायण—पुं० [सं० द्व० स०] नर और नारायण नामक दो भाई जो प्रसिद्ध ऋषि हुए हैं और विष्णु के अवतार माने जाते हैं। (महाभारत)

नर-नारि—स्त्री० [सं०] नर (अर्जुन) की स्त्री, द्रौपदी।

नरनाह—पुं० [सं० नरनाथ] राजा।

नर-नाहर—वि० [सं० नर+हिं० नाहर (सिंह)] जो पुरुषों में शेर के समान वीर और साहसी हो।

पुं० नृसिंह नामक अवतार।

नरनी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का पौधा।

नर-पति—पुं० [सं० ष० त०] राजा। नृपति।

नर-पद—पुं० [सं० ष० त०] १. जनपद। २. देश।

नर-पशु—वि० [सं० उपमि० स०] जो मनुष्य होने पर भी पशुओं का-सा आचरण करता हो।

पुं० १. आचार-विचार हीन व्यक्ति। २. नृसिंह नामक अवतार।

नरपाल—पुं० [सं० नर√पाल् (बचाना)+णिच्+अण्] राजा। भूपति।

नरपालि—पुं० [सं० नर√पाल्+णिच्+इन्] छोटा शंख।

नर-पिशाच—पुं० [सं० उपमि० स०] मनुष्य होने पर भी जो पिशाचों के-से निकृष्ट कर्म करता हो। परम क्रूरतापूर्ण और हेय कर्म करनेवाला व्यक्ति।

नर-पुर—पुं० [सं० ष० त०] मनुष्य-लोक। पृथ्वी।

नर-प्रिय—पुं० [सं० ष० त०] नील का पेड़।

नरबदा—स्त्री०=नर्मदा।

नरभक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० नर√भक्ष् (खाना)+इनि] मनुष्यों को खानेवाला।

पुं० दैत्य। राक्षस।

नर-भू, नर-भूमि—स्त्री० [सं० ष० त०] भारतवर्ष।

नरम—वि० [फा० नर्म] १. (पदार्थ) जिसमें कड़ापन न हो। जो दबाये जाने पर सहज में दब सके। मुलायम। २. जिसमें उग्रता या कठोरता न हो। जैसे—नरम स्वभाव। कोमल। मृदुल। ३. पिलपिला या लचीला। ४. मंद। धीमा। ५. जल्द पचनेवाला। ६. जिसमें पौरुष या पुंसत्व न हो।

पुं० [सं० नर्मन्] १. हँसी-दिल्लगी। २. साहित्य में, सखाओं का एक प्रकार या भेद। दे० 'नर्म-सचिव।'

नरमट—स्त्री० [हिं० नरम+मिट्टी] ऐसी जमीन, जिसकी मिट्टी नरम हो।

नरमदा—स्त्री०=नर्मदा।

नरम रोआँ—पुं० [हिं० नरम+रोआँ] बुनाई के लिए भेंड़-बकरियों का लाल या सफेद रंग का रोआँ जो प्रायः बहुत मुलायम होता है।

नरम लोहा—पुं० [हिं० नरम+लोहा] आग में तपाया हुआ लोहा, जिसे पीटकर सहज में दूसरा रूप दिया जा सकता है।

नरमा—स्त्री० [हिं० नरम] १. एक प्रकार का विदेशी पौधा जिसमें कपास होती है। २. उक्त पौधे की रूई। ३. सेमल की रूई।

पुं० कान के नीचे का कोमल अंश।

नरमाई—स्त्री०=नरमी।

नरमाना—स० [हिं० नरम+आना (प्रत्य०)] १. नरम अर्थात् कोमल या मुलायम करना। २. धीमा, मद्धिम या शांत करना।

अ० १. नरम अर्थात् कोमल या मुलायम होना। २. धीमा, मद्धिम या शांत होना।

नरमानिका—स्त्री०=नरमानिनी।

नरमानिनी—स्त्री० [सं० नर√मन् (मनना)+णिनि—ङीष्] ऐसी स्त्री जिसके चेहरे पर मूँछ और दाढ़ी के कुछ बाल हों।

नरमावड़ी—स्त्री० [हिं० नरमा] बन-कपास।

नरमाहट—स्त्री०=नरमी।

नरमी—स्त्री० [फा० नर्मी] १. नरम या नर्म होने की अवस्था, गुण या भाव। २. कठोरतापूर्ण व्यवहार न करने का गुण।

पद—**नरमी से**=शांति तथा ठंढे स्वभाव से।

नर-मेध—पुं० [सं० ब० स०] १. प्राचीन काल में होनेवाला एक प्रकार का यज्ञ जिसमें मनुष्य के मांस की आहुति दी जाती थी। २. बहुत अधिक मनुष्यों का प्रायः एक साथ होनेवाला संहार या हत्या।

नर-यंत्र—पुं० [सं०] ज्योतिष में एक प्रकार का शंकु-यंत्र जिसकी सहायता से धूप की छाया देखकर समय का बोध होता था।

नरर्षभ—पुं० [सं० नर-ऋषभ स० त०] राजा।

नर-लोक—पुं० [सं० ष० त०] मनुष्य-लोक। मृत्यु-लोक। संसार।

नर-वध—पुं० [सं० ष० त०] मनुष्य को मार डालना। नर-हत्या।

नरवरी—स्त्री० [?] क्षत्रियों की एक जाति।

नरवा—पुं० [देश०] एक प्रकार की चिड़िया।

नरवाई—स्त्री० [?] घास-फूस।

नर-वाहन—पुं० [सं० मयू० स०] १. ऐसी सवारी जिसे मनुष्य खींचता या ढोता हो। जैसे—डोली, पालकी आदि। २. [ब० स०] कुबेर। ३. किन्नर।

नरवै*—पुं०=नरपति (राजा)।

नर-व्याघ्र—पुं० [सं० उपमि० स०] १. वह जो मनुष्यों में व्याघ्र की तरह वीर और साहसी हो। २. वह जो मनुष्यों में परम श्रेष्ठ हो। ३. राजा। नृपति। ४. एक समुद्री जंतु जिसका निचला भाग मनुष्य के आकार का और ऊपरी भाग सिंह के आकार का होता है।

नर-शक्र—पुं० [सं० उपमि० स०] राजा।

नरसल†—पुं०=नरकट।

नर-सार—पुं० [सं० ब० स०] नौसादर।

नरसिंग—पुं० [?] एक प्रकार का विलायती फूल।

नरसिंगा—पुं०=नरसिंहा।

नरसिंघ—पुं०=नृसिंह।

नरसिंघा—पुं० [हिं० नर=बड़ा+सिंघा] तुरही के आकार का फूँककर बजाया जानेवाला ताँबे का एक बाजा।

नर-सिंह—पुं० [सं० उपमि० स०] =नृसिंह।

नरसिंह-ज्वर—पुं० [सं० मध्य० स०] एक प्रकार का ज्वर जो एक-एक दिन का नागा कर लगातार तीन-तीन दिन तक चढ़ा रहता है। (वैद्यक)

नरसिंह-पुराण—पुं० [सं० मध्य० स०] =नृसिंह पुराण।

नरसी मेहता—पुं०[?] गुजरात के एक प्रसिद्ध भक्त (संवत् १४७२–१५३८ वि०) जो दिन-रात भगवान का कीर्तन किया करते थे।

नरसेज—पुं० दे० 'तिधारा' (वृक्ष)।

नरसों—अव्य० [हिं० परसों का अनु०] १. परसों के बाद आनेवाले दिन में। २. (बीते हुए) परसों के पहलेवाले दिन में। दे० 'अतरसों'।

नर-हत्या—स्त्री० [ष० त०] १. मनुष्य की हत्या। २. विधिक क्षेत्र में, किसी के द्वारा अनजान में होनेवाली मनुष्य की ऐसी हत्या जो कानून की दृष्टि में विशेष अपराधपूर्ण नहीं होती। (होमीसाइड)

नरहर—स्त्री० [हिं० नल] पैर की वह हड्डी जो पिंडली के ऊपर होती है।

नर-हरि—पुं० [सं० उपमि० स०] नृसिंह भगवान जो दस अवतारों में से चौथे अवतार हैं। नृसिंह (अवतार)।

नरहरी—पुं० [सं०] एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में १४ और ५ के विराम से १९ मात्राएँ और अंत में एक नगण और एक गुरु होता है।

नरहा†—पुं० [देश०] एक प्रकार का जंगली वृक्ष जिसे चिल्ला (देखें) भी कहते हैं।

नर हीरा—पुं० [हिं० नर=बड़ा+हिं० हीरा] वह बड़ा हीरा जिसके छः या आठ पहल हों।

नरांतक—पुं० [सं० नर-अंतक, ष० त०] रावण का एक पुत्र जो युद्ध में अंगद के हाथों मारा गया था।

नरा—पुं० [हिं० नल या नरकट] १. नरकट की वह छोटी नली जिसके ऊपर सूत लपेटा जाता है। २. खेत का वह गड्ढा जिसमें पानी भरा हो।

नराच—पुं० [सं० नाराच] १. तीर। वाण। २. चार चरणों का एक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में जगण, रगण, जगण, रगण, जगण और अंत में एक गुरु होता है। इसे पंचचामर और नागराज भी कहते हैं।

नाराचिका—स्त्री० [सं०] छन्द शास्त्र में वितान वृत्त का एक भेद जिसके प्रत्येक चरण में नगण, रगण, लघु और गुरु होता है।

नराज—वि०=नाराज।

नराजगी†—स्त्री०=नाराजगी।

नराजना—स० [हिं० नराज] अप्रसन्न या नाराज करना। अ० अप्रसन्न या नाराज होना।

नराट—पुं० [सं० नरराट्] राजा।

नराधम—पुं० [सं० नर-अधम, स० त०] मनुष्यों में अधम या नीच व्यक्ति। बहुत बड़ा अधम या नीच।

नराधार—पुं० [सं० नर-आधार, ष० त०] महादेव। शिव।

नराधिप—पुं० [सं० नर-अधिप, ष० त०] राजा।

नरायन†—पुं०=नारायण (विष्णु)।

नराश, नराशन—वि० [सं० नर√अश् (खाना)+अण्, नर-अशन ब० स०] मनुष्यों को खानेवाला।

पुं० राक्षस।

नरिंद*—पुं०=नरेन्द्र (राजा)।

नरि†—स्त्री०=नदी। उदा०—दुसह जमुना नरि एलहुं भांगि।—विद्यापति।

नरियर—पुं०=नारियल।

नरियरि—स्त्री०=नरेली।

नरियल†—पुं०=नारियल।

नरिया—पुं० [हिं० नाली] मिट्टी का एक प्रकार का खपड़ा जो मकान की छाजन पर रखने के काम में आता है। यह अर्द्धवृत्ताकार और नली की तरह लंबा होता है और इसे "थपुआ" खपड़े की संधियों पर औंधाकर इसलिए रखते हैं कि उन संधियों में से पानी नीचे न चूने पावे।

नरियाना—अ०=नर्राना।

नरी—स्त्री० [?] १. बकरी या बकरे का रँगा हुआ चमड़ा। २. लाल रंग का चमड़ा। ३. सिझाया हुआ मुलायम चमड़ा।

स्त्री० [हिं० नल] १. नली। २. जुलाहों की ढरकी में की वह नली जिस पर सूत लपेटा रहता है। नार। ३. जलाशयों के किनारे होनेवाली एक प्रकार की घास।

स्त्री० [फा०] =नरपन।

स्त्री० [सं० नर=पुरुष] औरत। स्त्री।

पुं० [?] एक प्रकार का बगला।

नरु*—पुं० =नर (मनुष्य)।

नरुआ†—पुं० [हिं० नल] [स्त्री० अल्पा० नरुई] अनाज के पौधों का पतला डंठल जो अंदर से पोला होता है।

नरेंद्र—पुं० [सं० नर-इंद्र, ष० त०] १. राजा। नरेश। २. वह जो बिच्छू, साँप आदि का विष दूर करने की कला या विद्या जानता हो। विष-वैद्य। ३. श्योनाक। सोना-पाढ़ा। ४. सार नामक छंद का दूसरा नाम।

नरेन्द्र-मंडल—पुं० [ष० त०] अँगरेजी शासन-काल में देशी रियासतों के राजाओं की एक संस्था जो देशी रियासतों की हित-रक्षा के उद्देश्य से बनी थी। (चैम्बर ऑफ प्रिंसेज)

नरेतर—पुं० [सं० नर-इतर, पं० त०] मनुष्य से भिन्न श्रेणी का प्राणी अर्थात् जानवर या पशु।

नरेबी—स्त्री० [?] शिवसागर और सिलहट प्रदेशों में होनेवाला एक तरह का पेड़ जिसकी छाल से खाकी रंग निकलता है।

नरेली—स्त्री० [हिं० नारियल] १. छोटा नारियल। २. नारियल की खोपड़ी या उसका ऊपरी कड़ा आवरण। ३. नारियल की खोपड़ी का बना हुआ हुक्का।

नरेश—पुं० [सं० नर-ईश, ष० त०] मनुष्यों का स्वामी, राजा।

नरेश्वर—पुं० [सं० नर-ईश्वर, ष० त०] राजा।

नरेस—पुं०=नरेश।

नरों—अ० य०=नरसों (अतरसों)।

नरोत्तम—वि० [सं० नर-उत्तम, स० त०] नरों या मनुष्यों में उत्तम अर्थात् श्रेष्ठ।

पुं० ईश्वर।

नर्क—पुं० दे० 'नरक'।

नर्कुट†—पुं०=नरकट।

नर्कुटक—पुं० [सं०] नासिका। नाक।

नर्गिस—स्त्री० [फ़ा०] नरगिस।

नर्गिसी—वि० [फ़ा०] =नरगिसी।

नर्त—पुं० [सं०√नृत् (नाचना)+अच्] नर्तक।

नर्तक—पुं० [सं०√नृत्त+ण्वुन्—अक] [स्त्री० नर्तकी] १. वह जो नाचता या नृत्य करता हो। नाचनेवाला व्यक्ति। नचनियाँ। २. नट। ३. चारण। ४. खड्ग की धार पर नाचनेवाला व्यक्ति। केलक। ५. राजा। ६. महादेव। शिव। ७. पुराणानुसार एक संकर जाति जिसकी उत्पत्ति धोबी पिता और वेश्या माता से कही गई है। ८. हाथी। ९. महुआ। १०. नरकट।

नर्तकी—स्त्री० [सं० नर्तक+ङीष्] १. नाचने का पेशा करनेवाली स्त्री। २. नटी। ३. रंडी। वेश्या। ४. नली नामक गन्ध द्रव्य।

नर्तन—पुं० [सं० √नृत्+ल्युट्—अन] १. नाचने की क्रिया या भाव। २. नाच। नृत्य।

नर्तन-शाला—स्त्री० [सं० ष० त०] नृत्यशाला। नाचघर।

नर्तना*—अ० [सं० नर्तन] नाचना। उदा०—लरत कहूँ पायक सुभट कहुँ नर्तत नटराज।—केशव।

नर्तयिता (तृ)—पुं० [सं०√नृत्+णिच्+तृच्] १. नाचनेवाला। २. नाच सिखलानेवाला।

नर्तित—वि० [सं०√नृत+णिच्+क्त] १. नचाया हुआ। २. नाचता हुआ। ३. जो नाच चुका हो या नचाया जा चुका हो।

नर्तु—पुं० [सं०√नृत्+तुन्] वह जो तलवार की धार पर नाचता हो।

नर्तू—स्त्री० [सं नर्त्तु+ऊङ्] १. नर्तकी। २. अभिनेत्री।

नर्द—स्त्री० [फ़ा०] १. चौसर का खेल। २. चौसर की गोटी।

नर्दकी—स्त्री० [देश०] एक तरह की कपास। इसे कटील-निभरी और बगई भी कहते हैं।

नर्दन—पुं० [सं०√नर्द् (शब्द)+ल्युट्—अन] भीषण ध्वनि या नाद। गरज।

नर्दबाज—पुं० [फ़ा० नर्दबाज] चौसर का खिलाड़ी।

नर्दबाजी—स्त्री० [फ़ा०] १. चौसर का खेल। २. चौसर खेलने का व्यसन।

नर्दबान—पुं० [फ़ा०] १. सीढ़ी, विशेषतः काठ की सीढ़ी। २. मार्ग। रास्ता।

नर्दमा—पुं० [हिं० नल] वह नल जिसमें से कीचड़ और मैला पानी बहता हो। गंदा नाला।

नर्दा†—पुं०=नर्दमा।

नर्दित—वि० [सं०√नर्द+क्त] १. गरजा हुआ। २. गरजता हुआ। पुं० १. एक तरह का पासा। २. पासा फेंकने का एक ढंग।

नर्बदा—स्त्री०=नर्मदा।

नर्म (न्)—पुं० [सं०√नॄ (ले जाना)+मनिन्] १. परिहास। हँसी-ठट्ठा। मजाक। २. साहित्य, में नायक का ऐसा सखा जो हँसी-ठट्ठा करके उसे प्रसन्न रखता हो।

वि० दे० 'नरम'।

नर्मट—पुं० [सं० नर्मन्+अटन्, पृषो० सिद्धि] सूर्य।

नर्मठ—पुं० [सं० नर्मन्+ अठन्, पृषो० सिद्धि] १. वह जो परिहास आदि में कुशल हो। दिल्लगीबाज। ठठोल। २. स्त्री का उपपति या यार। ३. ठोढ़ी। ४. स्तन।

नर्मद—वि० [सं० नर्मन्√दा (देना)+क] १. आनंद देनेवाला। २. सुख देनेवाला।

पुं० १. परिहास-प्रिय। दिल्लगीबाज। ठठोल। मसखरा। २. भाँड़।

नर्मदा—स्त्री० [सं० नर्मद+टाप्] १. अमर-कंटक से निकलनेवाली एक प्रसिद्ध नदी जो भड़ौच के पास खंभात की खाड़ी में गिरती है। २. पुराणानुसार एक गन्धर्व स्त्री जो केतुमती, वसुदा और सुन्दरी की माता थी। ३. असवर्ग या पृक्का नामक गन्ध-द्रव्य।

नर्मदेश्वर—पुं० [सं० नर्मदा-ईश्वर, मध्य० स०] एक प्रकार के अंडाकार शिव-लिंग जो नर्मदा नदी में से निकलते हैं।

नर्म-द्युति—स्त्री० [सं०] नाट्यशास्त्र के अनुसार प्रतिमुख संधि के तेरह अंगों में से एक।

नर्म-सचिव, नर्म-सुहृद्—पुं० [सं० स० त०] राजा का वह सखा जो उसका मन बहलाने और उसे हँसाने के लिए उसके साथ-साथ रहता हो। विदूषक।

नर्मी—स्त्री० =नरमी।

नर्राना—अ० [हिं० नला (गले का)] गला फाड़कर चिल्लाना।

नर्री—स्त्री० [?] १. एक प्रकार की बारहमासी घास जो ऊसर जमीन में भी होती है। २. हिमालय में होनेवाला एक प्रकार का बाँस।

नल—पुं० [सं० नाल] [स्त्री० अल्पा० नली] १. ऐसा वर्तुलाकार लंबा खंड या रचना जिसका भीतरी भाग खोखला या पोला हो और जिसके अंदर एक सिरे से दूसरे सिरे तक चीजें आती-जाती हों। जैसे—घरों में पानी पहुँचाने का (धातु का) नल। २. जल-कल का वह सिरा जिसमें टोंटी लगी होती है और जिसका पेंच दबाने या घुमाने से पानी निकलता है। जैसे—नल के पानी से कूएँ का पानी अच्छा होता है।

पद—नल-कूप। (देखें)

३. आधुनिक नगरों आदि में उक्त आकार-प्रकार की वह वास्तु-रचना जिसमें से होकर घरों का मल-मूत्र और गंदा पानी नगर के बाहर कहीं दूर ले जाकर गिराया या पहुँचाया जाता है। नाला। ४. पेड़

के अंदर की वह नाली जिसमें होकर पेशाब नीचे उतरता है। नला।

मुहा०—नल टलना=किसी प्रकार के आघात आदि के कारण पेशाब की उक्त नाली में किसी प्रकार का व्यतिक्रम होना जिससे पेट में बहुत पीड़ा होती है।

पुं० [सं०√नल् (महँकना, बाँधना)+अच्] १. नरकट। २. कमल। ३. निषध देश के चंद्रवंशी राजा वीरसेन के एक पुत्र जिनका विवाह विदर्भ देश के राजा भीमसेन की पुत्री दमयंती से हुआ था। (साहित्य में, इन पति-पत्नी के संबंध में अनेक आख्यान और कथाएँ प्रसिद्ध हैं) ५. राम की सेना का एक बंदर जो विश्वकर्मा का पुत्र था तथा जिसने पत्थरों को तैराकर रामचंद्र की सेना के लिए समुद्र पर पुल बाँधा था। ६. एक दानव का नाम जो विप्रचित्ति का चौथा पुत्र था और सिंहिका के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। ७. यदु के एक पुत्र का नाम। ८. प्राचीन काल का (धौंसे की तरह का) एक प्रकार का बाजा जो युद्ध के समय घोड़े की पीठ पर रखकर बजाया जाता था।

*पुं० [सं० नर] आदमी। उदा०—कहहिं कबीर नल अजहुँ न जागा।—कबीर।

नलक—पुं० [सं० नल√कै (मालूम पड़ना)+क] शरीर की कोई लंबी हड्डी।

नलका†—पुं० [हिं० नल] १. एक प्रकार का यंत्र जिसकी सहायता से जमीन में से पानी ऊपर खींचा जाता है। (पश्चिम) २. वह नल जिसमें से नहाने, पीने आदि का पानी घरों में पहुँचता है। ३. बड़ी नली। नल।

नलकिनी—स्त्री० [सं० नलक+इनि—ङीप्] १. जाँघ। रान। २. घुटना। जानु।

नलकी—स्त्री० [हिं० नलका] १. छोटा नल। नली। २. हुक्के के पेचवान, सटक आदि का वह अगला भाग जिसे मुँह में लगाकर धूआँ खींचा जाता है।

नल-कूप—पुं० [हिं० नल+सं० कूप] एक विशेष प्रकार का आधुनिक यंत्र जिसके द्वारा सिंचाई के लिए जमीन के अंदर से पानी निकाला जाता है। (ट्यूबवेल)

नल कूबर—पुं० [सं०] १. कुबेर का एक पुत्र। (महाभारत) २. ताल का एक भेद जिसमें चार गुरु और चार लघु मात्राएँ होती हैं।

नलकोल—पुं० [देश०] एक तरह का बैल।

नल दंबु—पुं० [सं०] नीम (पेड़)।

नलद—पुं० [सं० नल√दो (टुकड़ा करना)+क] १. पुष्प रस। मकरंद। २. जटामासी। बालछड़। ३. उशीर। खस।

नलदा—स्त्री० [सं०] जटामासी। बालछड़।

नलनी*—स्त्री०=नलिनी।

नलनीरुह—पुं०=नलिनीरुह।

नलपुर—पुं० [सं०] बौद्ध ग्रंथों में उल्लिखित एक प्राचीन नगर।

नलबाँस—पुं० [हिं० नल+बाँस] हिमालय में होनेवाला एक प्रकार का बाँस जिसे बिधुली और देवबाँस (देखें) भी कहते हैं।

नलमीन—पुं० [सं०] झींगा मछली।

नलवा—पुं० [हिं० नल] १. बाँस की टोंटी जिससे बैलों को घी पिलाया जाता है। चोंगा। २. बाँस आदि की कोई बड़ी और मोटी नली।

नलवाही—वि० [सं० नाल+वाहिन्] बंदूक धारण करनेवाला। पुं० सिपाही।

नल-सेतु—पुं० [सं० मध्य० स०] नल नामक बंदर का बनाया हुआ वह पुल जिस पर से रामचंद्र की सेना ने लंका प्रवेश के समय समुद्र पार किया था।

नला—पुं० [हिं० नल] १. बहुत बड़ा नल। नाली। २. पेड़ू के अंदर की वह नाली जिसमें से होकर पेशाब नीचे उतरता है।

मुहा०—नला टलना=आघात आदि के कारण पेशाब की उक्त नाली का अपने स्थान से खिसक जाना जिसके फलस्वरूप पीड़ा होती है।

३. हाथ और पैर की वे लंबी हड्डियाँ जो बड़ी नली के आकार की होती हैं।

नलाना—स०=निराना।

नलाई—स्त्री०=निराई (खेत की)।

नलिका—स्त्री० [सं० नल+ठन्—इक, टाप्] १. नल के आकार की कोई वर्तुलाकार, पोली, लंबी चीज। चोंगी। नली। २. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र जिसके विषय में कुछ लोगों का अनुमान है कि यह आज-कल की बंदूक की तरह का होता था और इसके द्वारा लोहे की बहुत छोटी-छोटी गोलियाँ या तीर छोड़े जाते थे। ३. तीर रखने का तरकश। तूणीर। ४.करेमू नामक साग। ५. पुदीना। ६. प्राचीन भारतीय वैद्यक में एक प्रकार का यंत्र जिसकी सहायता से जलोदर के रोगी के पेट में का पानी बाहर निकाला जाता था। ७. मूँगे की तरह का एक प्रकार का गंध-द्रव्य जो वैद्यक में कृमि, अर्श और शूल रोग का नाशक तथा मलशोधक माना जाता है।

नलित—पुं० [सं०√नल् (बाँधना)+क्त] एक तरह का साग जो वैद्यक में पित्तनाशक और शुक्रवर्धक माना गया है।

नलिन—पुं० [सं०√नल्+इनच्] [स्त्री० अल्पा० नलिनी] १. पद्म। कमल। २. नीलिका। नील। ३. जल। पानी। ४. नीम। ५. करौंदा। ६. सारस पक्षी। ७. नाड़िका नामक साग।

नलिनी—स्त्री० [सं० नल+इनि—ङीप्] १. कमलिनी। कमल। २. वह देश या स्थान जहाँ कमल अधिकता से होते हों। ३. नदी। ४. पुराणानुसार गंगा नदी की एक धारा या शाखा। ५. एक प्रकार का गन्ध-द्रव्य। ५. नाक का बायाँ नथना। ७. नारियल की शराब। ८. सेमल की फली जो लाल रंग की और रूई से भरी हुई होती है। ९. एक तरह का वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में पाँच-पाँच सगण होते हैं।

नलिनीनंदन—पुं० [सं० नलिनी√नन्द् (प्रसन्न होना)+णिच्+ल्यु—अन] कुबेर का उपवन।

नलिनीरुह—पुं० [सं० नलिनी√रुह (उत्पत्ति)+क] १. कमल का नाल। मृणाल। २. ब्रह्मा, जो कमल की नाल से निकले हुए माने जाते हैं।

नलिनेशय—पुं० [सं० नलिने√शी (सोना)+अच्] ब्रह्मा।

नलिया—पुं० [हिं० नल] बहेलिया जो नली की सहायता से तोते आदि पक्षी पकड़ता है।

नली—स्त्री० [सं०√नल्+अच्—ङीप्] १. मैनसिल। २. नलिका नाम का गन्ध-द्रव्य।

स्त्री० [हिं० नल का स्त्री० अल्पा०] १. छोटा नल। २. शरीर में की वह मोटी गोल हड्डी जिसमें मज्जा होती है। ३. पिंडली में की बड़ी लंबी हड्डी। ४. धातु आदि का बना वह पोला भाग जो बंदूक के आगे लगा होता है और जिसमें से होकर गोली बाहर निकलती है। ५. जुलाहों की नाल।

नली मोज—पुं० [?] एक तरह का कबूतर जिसके लंबे पर पंजों तक लटके होते हैं।

नलुआ†—पुं० [हिं० नल] १. पशुओं का एक रोग। २. छोटा नल। ३. बाँस की पोर।

नलोत्तम—पुं० [सं० नल-उत्तम, स० त०] बड़ा नरसल। देव नरसल।

नलोपाख्यान—पुं० [सं० नल-उपाख्यान, ष० त०] १. राजा नल की कथा। २. महाभारत के वनपर्व का एक अवांतर पर्व।

नल्ला†—पुं० [स्त्री० अल्पा० नल्ली] १.=नल। २.=नाला।

नल्ली†—स्त्री० [देश०] एक तरह की घास जिसे पलवान भी कहते हैं।

नल्व—पुं० [सं०√नल्+व] चार सौ हाथ की एक पुरानी नाप।

नवंबर—पुं० [अं० नवेम्बर] अँगरेजी वर्ष का ग्यारहवाँ महीना जो ३० दिनों का होता है।

नव—वि० [सं०√नु (स्तुति)+अप्] १. नया। नवीन। २. आधुनिक।
वि० [सं० नवन्] १. जो गिनती में आठ से एक अधिक हो। नौ। २. नौ तरह या प्रकार का। जैसे—नवरत्न।
पुं० १. आठ और एक के योग की सूचक संख्या या अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—९
पुं० स्तोत्र। २. लाल गदहपूरना। ३. पुराणानुसार उशीनर का एक पुत्र।

नवक—वि० [सं० नव+कन्] जिसमें नौ हों।
पुं० नौ वस्तुओं का कुलक या समूह।
वि० [सं०] नया।
†स्त्री०=नौका।

नव-कलेवर—पुं० [सं० कर्म० स०] जगन्नाथपुरी में अधिमास के बाद पड़नेवाली रथ-यात्रा के समय होनेवाला वह उत्सव जिसमें जगन्नाथ की पुरानी मूर्ति के स्थान पर नई मूर्ति स्थापित की जाती है।

नव-कल्प—पुं० [सं० कर्म० स०] भू-तत्त्व विज्ञान के अनुसार पृथ्वी-रचना के इतिहास में मध्य कल्प के बाद का वह पाँचवाँ और आधुनिक कल्प जिसका आरंभ लगभग छः करोड़ वर्ष पहले हुआ था तथा जिसमें स्तनपायी जीवों और मनुष्यों की सृष्टि आरंभ होने लगी थी। (सेनोजोइक एरा)
विशेष—इसके पहले के चार कल्प ये हैं—आदि कल्प, उत्तर कल्प, पुरा कल्प और मध्य कल्प।

नवका†—वि०=नया (नवीन)।

नवकार—पुं० [सं०] जैनों का एक प्रकार का मंत्र।

नव-कारिका—स्त्री० [सं० कर्म० स०] १. नई विवाहिता स्त्री। २. बालिका, जो पहली बार रजस्वला हुई हो।

नवकालिका—स्त्री०=नवकारिका।

नव-कुमारी—स्त्री० [सं० मध्य० स०] कुमारिका, त्रिमूर्ति, कल्याणी, रोहिणी, काली, चंडिका, शांभवी, दुर्गा और सुभद्रा ये नौ कुमारियाँ जिनकी पूजा नौरात्र में की जाती है।

नव-खंड—पुं० [सं० द्विगु स०] पुराणानुसार पृथ्वी के ये नौ खंड या ये विभाग, भारत, इलावृत, किंपुरुष, भद्र, केतुमाल, हरि, हिरण्य, रम्य और कुश।

नव-ग्रह—पुं० [सं० द्विगु स०] सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु तथा केतु, ये नौ ग्रह (फ० ज्यो०)
विशेष—कर्मकांड के अनुसार इन्हीं नौ ग्रहों का पूजन होता है।)

नवग्रही—वि० [सं० नव ग्रह+हिं० ई (प्रत्य०)] नवग्रह-संबंधी।
स्त्री० नौ ग्रहों के प्रतीक नौ रत्नों से जड़ा हुआ कोई गहना। जैसे—नवग्रही पहुँची, नवग्रही माला आदि। उदा०—गजरा नवग्रही प्रोंचिया प्रोंचे।—प्रिथीराज।

नवछावरि†—स्त्री०=निछावर।

नव-जात—वि० [सं० कर्म० स०] (जीव) जिसका जन्म कुछ ही समय पहले हुआ हो।

नव-ज्वर—पुं० [सं० कर्म० स०] वह बुखार जिसका अभी आरंभ हुआ हो। कुछ ही दिनों से आनेवाला ज्वर।

नवड़ा†—पुं० [?] मरसा नामक साग।

नवतंतु—पुं० [सं०] विश्वामित्र का एक पुत्र। (महा०)

नवत—पुं० [सं०√नु+अतच्] १. कंबल। २. हाथी की झूल। ३. आवरण।

नवतन†—वि०=नूतन (नया)।

नवता†—स्त्री० [सं० नव+तल्—टाप्] नवीनता। नयापन।
पुं० [हिं० नवना] ढालुई जमीन। उतार। (कहार)

नवति—वि० [सं० नवन्+डति] जो संख्या में अस्सी से दस अधिक हो। नब्बे।
स्त्री० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—९०।

नवतिका—स्त्री० [सं० नव√तिक् (गति)+क—टाप्] तूलिका।

नव-दंडक—पुं० [सं० ब० स० ?] पुरानी चाल का एक तरह का राज-छत्र।

नव-दल—पुं० [सं० कर्म० स०] १. नया दल (पत्ता)। कल्ला। २. कमल की वह पंखड़ी जो उसके केसर के पास होती है।

नव-दीधिति—पुं० [सं० ब० स०] मंगल ग्रह।

नव-दुर्गा—स्त्री० [सं० मध्य० स०] शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चित्रघंटा, कुष्मांडा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धिदा जो दुर्गा के नौ रूप या विग्रह हैं।

नव-द्वार—पुं० [सं० द्विगु स०] शरीर में के ये नौ द्वार, दो आँखें, दो कान, दो नाक, दो गुप्तेंद्रियाँ, और एक मुख, लोगों का विश्वास है कि जब मनुष्य मरने लगता है तब उसके प्राण इन्हीं नौ द्वारों में से किसी एक द्वार से होकर निकलते हैं।

नवद्वीप—पुं० [सं०] बंगाल प्रदेश में गंगा तट पर बसी हुई एक प्रसिद्ध प्राचीन नगरी जो राजा लक्ष्मण सेन की राजधानी थी।
विशेष—पहले यहाँ छोटे-छोटे नौ गाँव थे, जिनके समूह को नवद्वीप कहते थे।

नवधा—अव्य० [सं० नवन्+धाच्] १. नौ प्रकार से। २. नौ भागों में। नौ टुकड़ों या खंडों में।

नवधा-अंग—पुं० [सं० सहसुपा स०] शरीर के ये नौ अंग, दो आँखें, दो कान, दो हाथ, दो पैर, और एक नाक।

नवधा-भक्ति—स्त्री० [सं० सहसुपा स०] १. भक्ति के ये नौ प्रकार—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, सख्य, दास्य और आत्मनिवेदन। २. उक्त नवों प्रकारों से की जानेवाली भक्ति।

नवन†—पुं०=नमन।

नवना—अ० [सं० नमन] १. नत होना। झुकना। २. किसी के सामने नम्र या विनीत होना।

नवनि*—स्त्री० [सं० नमन] १. झुकने की क्रिया या भाव। २. नम्रता। विनय।

नव-निधि—स्त्री० [सं० द्विगु स०] कुबेर की ये नौ निधियाँ—पद्म, महापद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुंद, कुंद, नील और खर्व।

नवनी—स्त्री० [सं० नव√नी (ले जाना)+ड—ङीष्] नवनीत।

नवनीत—पुं० [सं०√नी+क्त, नव-नीत, ष० त०] १. मक्खन। २. श्रीकृष्ण।

नवनीतक—पुं० [सं० नवनीत+कन्] १. घृत। घी। २. मक्खन।

नवनीत-गणप—पुं० [सं० उपमि० स०] एक गणपति। (पुराण०)

नवनीत-धेनु—स्त्री० [सं० मध्य० स०] मक्खन की वह ढेरी जो धेनु के रूप में मान कर दान दी जाती है।

नव-पत्रिका—स्त्री० [सं० मध्य० स०] केले, अनार, धान, हलदी, मानकच्चू, कच्चू, बेल, अशोक और जयंती इन नौ वृक्षों की पत्तियाँ।

नव-पद—पुं० [सं० ब० स०] जैनों की एक उपास्य मूर्ति।

नवपदी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्] चौपाई या जनकरी छंद का एक नाम।

नव-प्रसूत—वि० [सं० कर्म० स०] नव-जात।

नव-प्राशन—पुं० [सं० ष० त०] नई फसल का अन्न या फल पहली बार खाना।

नवफलिका—स्त्री० [सं० ब० स०, कप्, टाप्, इत्व] नवकलिका।

नव-भक्ति—स्त्री० [सं० मध्य० स०] दे० 'नवधा-भक्ति'।

नवम—वि० [सं० नवन्+डट्—मट्] नौ के स्थान पर पड़नेवाला। नवाँ।

नव-मल्लिका—स्त्री० [सं० कर्म० स०] १. चमेली (पौधा और उसका फूल)। २. नेवारी (पौधा और फूल)।

नवमांश—पुं० [सं० नवम-अंश, कर्म० स०] १. किसी पदार्थ का नवाँ अंश या भाग। २. दे० 'नवांश'।

नव-मालिका—स्त्री० [सं० कर्म० स०] १. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक एक नगण, जगण, भगण, और यगण होता है। इसे 'नव-मालिनी' भी कहते हैं। २. नेवारी (पौधा और फूल)।

नव-मालिनी—स्त्री० [सं० कर्म० स०]=नवमल्लिका।

नव-युवक—पुं० [सं० कर्म० स०] [स्त्री० नवयुवती] जो अभी हाल में युवक हुआ हो। नौजवान। तरुण।

नव-युवती—स्त्री० [सं० कर्म० स०] नौजवान स्त्री। तरुणी।

नव-युवा (वन्)—पुं०=नवयुवक।

नव-योनिन्यास—पुं० [सं०] तंत्र में एक प्रकार का न्यास।

नव-यौवन—पुं० [सं० कर्म० स०] नई जवानी।

नव-यौवना—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] वह स्त्री, जिसमें युवावस्था के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे हों। नौजवान स्त्री।

नव रंग—वि० [सं० नव और रंग] १. नवीन अथवा निराली शोभा-वाला। सुंदर। २. नये ढंग का। नवेला।
पुं०=नारंगी।

नवरंगी—वि० [हिं० नवरंग] १. सुंदर। २. रंगीला।
स्त्री०=नारंगी।

नव-रत्न—पुं० [सं० द्विगु स०] १. मोती, पन्ना, मानिक, गोमेद, हीरा, मूँगा, लहसुनियाँ, पद्मराग और नीलम ये नौ रत्न। २. गले में पहनने का एक प्रकार का हार जिसमें उक्त नौ प्रकार के अथवा अनेक प्रकार के रत्न जड़े होते हैं। ३. धन्वंतरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, वेताल भट्ट, घटखर्पर, कालिदास, वराहमिहिर और वररुचि इन नौ महान् व्यक्तियों की सामूहिक संज्ञा।
विशेष—किवदंती के अनुसार ये महाराज विक्रमादित्य की सभा के सदस्य माने जाते हैं। परंतु ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार यह बात अप्रामाणिक सिद्ध होती है।
४. एक प्रकार की मीठी चटनी जो कई तरह के मसालों के योग से बनती है।

नव-रस—पुं० [सं०] हिन्दी साहित्य में, शृंगार, करुण, हास्य, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शांत ये नौ प्रकार के रस।

नवरा†—वि०=नेवला।
वि०=नवल।

नवराता†—पुं०=नौराता (नवरात्र)।

नवरात्र—पुं० [सं० नवन्-रात्रि, द्विगु स०,+अच्] १. नौ दिनों का समय। २. नौ दिनों में समाप्त होनेवाला एक तरह का यज्ञ। ३. चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक के नौ दिन। वसंती नवरात्र। ४. आश्विन शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक के नौ दिन। शारदीय नवरात्र।
विशेष—उक्त वसंती और शारदीय नवरात्रों में दुर्गा का व्रत तथा पूजन किया जाता है।

नवल—वि० [सं०] १. नया। नवीन। २. ऐसा नया या नवीन जिसमें कोई नया आकर्षण या नई विशेषता हो। अनोखा और बढ़िया। ३. नव-युवक। जवान। ४. उज्ज्वल।। स्वच्छ।
पुं० [अं० नैवेल] वह भाड़ा जो सामान ढोने के बदले में जहाज के अधिकारी लेते हैं।

नवल-अनंगा—स्त्री० [सं०] मुग्धा नायिका का एक भेद। (केशव)

नवल-किशोर—पुं० [सं०] श्रीकृष्णचंद्र।

नवल-वधू—स्त्री० [सं०] दे० 'नवल-अनंगा'।

नवला—स्त्री० [सं०] जवान स्त्री। तरुणी। युवती।

नवलेवा—पुं० [सं० नव+हिं० लेवा=कीचड़ का लेप] वह कीचड़ जो बढ़ी हुई नदी के उतरने पर बच रहता है। नदी के किनारे की दलदल।

नववरि (री)*—स्त्री० दे० 'निछावर'।

नव-वर्ष—पुं० [सं० कर्म० स०] १. नया वर्ष। २. नये वर्ष के आरंभिक दिन।

नव-वल्लभ—पुं० [सं०] अगर नामक गन्ध-द्रव्य का एक भेद।

नव-वासुदेव—पुं० [सं० मध्य० स०] त्रिपृष्ठ, द्विपष्ट, स्वयंभू, पुरुषोत्तम, सिंहपुरुष, पुंडरीक, दत्त, लक्ष्मण और श्रीकृष्ण ये नौ वासुदेव। (जैन)

नव-वास्तु—पुं० [सं० ब० स०] वैदिक काल के एक राजर्षि।

नव-विंश—वि० [सं० नवविंशति+डट्] उन्तीसवाँ।

नव-विंशति—वि०[सं० मध्य०स०] बीस और नौ। तीस से एक कम। पुं० उक्त के सूचक अंक या संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—२९।

नव-विष—पुं०[सं० द्विगु स०] वत्सनाभ, हारिद्रिक, सक्तुक, प्रदीपन, सौराष्ट्रिक, श्रृंगक, कालकूट, हलाहल और ब्रह्मपुत्र ये नौ प्रकार के विष।

नव-शक्ति—स्त्री०[सं० मध्य०स०] प्रभा, माया, जया, सूक्ष्मा, विशुद्धा, नंदिनी, सुप्रभा, विजया और सर्वसिद्धिदा ये नौ शक्तियाँ। (पुराण)

नव-शायक—पुं०[सं० मध्य०स०] ग्वाला, माली, तेली, जुलाहा, हलवाई, बरई, कुम्हार, लोहार और हज्जाम ये नौ जातियाँ। (पाराशर संहिता)

नव-शिक्षित—वि०[सं० कर्म०स०] [स्त्री० नव-शिक्षिता] १. जिसने अभी हाल में कुछ पढ़ना-लिखना सीखा हो। २. नवीन शिक्षा पद्धति के अनुसार जिसे शिक्षा मिली हो।

नव-शोभ—वि०[सं० ब०स०] नई शोभावाला।

नव-संगम—पुं०[सं० कर्म०स०]१. नया मिलन। २. पति और पत्नी की प्रथम भेंट या समागम।

नवसत—वि०[हिं० नव=नौ+सात] जो गिनती में नौ और सात अर्थात् १६ हो।
पुं० स्त्रियों के होनेवाले सोलहो श्रृंगार।

नव-सप्त (न्)—पुं०[सं० द्व०स०]=नवसत।

नवसर—पुं०[हिं० नौ+सर=लड़ी] एक प्रकार का हार जिसमें नौ लड़ियाँ होती हैं।
वि०[सं० नव-वत्सर] नई उमर का। नव वयस्क।
†पुं०=नौसर।

नवससि*—पुं०[सं० नव-शशि] नया अर्थात् दूज का चंद्रमा।

नवसिखा*—वि०, पुं०= नौसिखुआ।

नवाँ—वि०[सं० नव] नौ के स्थान पर पड़नेवाला।

नवांग—पुं०[सं० नवन-अंग, मध्य०स०] सोंठ, पीपल, मिर्च, हड़, बहेड़ा आँवला, चाब, चीता और बायबिडंग ये नौ पदार्थ।

नवांगा—स्त्री०[ब०स०] काकड़ासिंगी।

नवांश—पुं०[सं० नव-अंश, कर्म० स०]१. किसी पदार्थ का नवाँ भाग। नवमांश। २. फलित ज्योतिष, में एक राशि का नवाँ भाग जिसका विचार किसी नवजात बालक के चरित्र, आकार और चिह्न आदि निश्चित करने में होता है।

नवा—वि०[स्त्री० नवी]=नया।
पुं०[फा०]१. आवाज। शब्द। २. गाना-बजाना। संगीत।

नवाई—स्त्री०[हिं० नवना]१. नवने अर्थात् झुकने की क्रिया या भाव। नमन। २. किसी के आगे नम्र या विनीत होना।
स्त्री०[सं० नव=नया] नयापन। नवीनता।
वि०=नवा (नया)।

नवागत—वि०[सं० नव-आगत, कर्म०स०]१. नया आया हुआ। २. जो अभी आया हो। जैसे—नवागत अतिथि। ३. जिसका आविर्भाव अभी हाल में हुआ हो। जो कुछ ही पहले अस्तित्व में आया हो। जैसे—नवागत सेना अर्थात् नई भरती की हुई सेना।

नवाजना—स० [फा० नवाजिश] अनुग्रह या कृपा करना।

नवाजिश—स्त्री०[फा० नवाजिश] अनुग्रह। कृपा। मेहरबानी।

नवाड़ा—पुं०[हिं० नाव]१. एक प्रकार की छोटी नाव। २. बीच धारा में नाव को इस प्रकार खेना कि वह चक्कर खाने लगे।

नवान†—पुं०=नवान्न।

नवाना—स०[सं० नवन्]१. झुकाना। जैसे—किसी के आगे सिर नवाना। २. किसी को नम्र या विनीत होने में प्रवृत्त करना।

नवान्न—पुं०[सं० नव-अन्न, कर्म०स०]१. फसल का नया आया हुआ अनाज। २. ताजा पका या बना हुआ अन्न। ३. एक प्रकार का श्राद्ध जिसमें नया उपजा हुआ अन्न पितरों के नाम पर दिया या बाँटा जाता था। ४. पहले-पहल नई फसल का अन्न मुँह लगाने अर्थात् खाने की क्रिया या भाव।

नवाब—पुं०[अ०नव्वाब]१. बादशाह की ओर से नियुक्त किसी प्रदेश का प्रधान शासक। २. किसी प्रदेश का मुसलमान शासक। जैसे—रामपुर के नवाब। ३. मुसलमान रईसों को अँगरेजी शासन की ओर से मिलनेवाली एक उपाधि। ४. आवश्यकता से अधिक अपना अधिकार, ठाठ-बाट या प्रभुत्व दिखलानेवाला व्यक्ति। (व्यंग्य)

नवाबजादा—पुं०[अ० नव्वाब+फा० जादः] १. नवाब का पुत्र। नवाब का बेटा। २. वह जो बहुत बड़ा शौकीन हो तथा रईसों की तरह रहता हो।

नवाबपसंद—पुं०[फा०]१. भादों के अंतिम और क्वार के आरंभिक दिनों में होनेवाला एक प्रकार का धान। २. उक्त धान का चावल जो बढ़िया होता है।

नवाबी—वि०[हिं० नवाब+ई]१. नवाबों का। जैसे—नवाबी शासन। २. नवाबों के रंग-ढंग जैसा। नवाबों के अनुकरण पर किया हुआ। जैसे—नवाबी शान।
स्त्री०१. नवाब होने की अवस्था या भाव। २. नवाब का कार्य या पद। ३. नवाबों का शासन-काल। ४. नवाबों की तरह ठाठ-बाट से रहने और खूब खरच करने की अवस्था या भाव। ५. नवाबों का सा मनमाना आचरण और ठसक या हुकूमत।
पुं० पुरानी चाल का एक प्रकार का बढ़िया कपड़ा।

नवाभ्युत्थान—पुं०[सं० नव-अभ्युत्थान, कर्म०स०] नया अर्थात् दोबारा होनेवाला उत्थान।

नवार†—वि०=नया।

नवारना—अ०[?]१. चलना। टहलना। २. यात्रा या सफर करना।
स०=निवारना (निवारण करना)।

नवारा—पुं०=नवाड़ा।

नवारी—स्त्री०=नेवारी (पौधा और उसका फूल)।

नवार्चि (स्)—पुं०[सं०] मंगल ग्रह।

नवासा—पुं०[फा० नवासः] बेटी का बेटा। नाती।

नवासी—वि०[सं० नवा शीति] जो संख्या में अस्सी से नौ अधिक हो।

पुं० उक्त की सूचक संख्या, जो इस प्रकार लिखी जाती है—८९

†स्त्री० हिं० 'नवासा' का स्त्री०।

नवाह—पुं०[सं०] चांद्र मास के किसी पक्ष का नया दिन।

पुं० [सं० नवाह्न] नौ दिनों का समूह।

वि० नौ दिनों तक चलता रहने या नौ दिनों में पूरा होनेवाला। जैसे—भागवत या रामायण का नवाह पाठ।

पुं०[अ०] आस-पास या चारों ओर का क्षेत्र, प्रदेश या स्थान।

नवि—अव्य०=नहीं। उदा०—मारूँ नवि काढ़ूँ मगर, यही भाव मन आणिया।—जटमल।

नविश्ता—वि०[फा० नविश्तः] लिखा हुआ। लिखित।

नवी†—स्त्री०=नोई (बछड़े के गले में बाँधने की रस्सी)।

वि०[फा०]१. नवीन। २. आधुनिक। ३. पाश्चात्य।

नवीन—वि०[सं० नव+ख—ईन] [भाव० नवीनता]१. जो अभी का या थोड़े समय का हो। नया। नूतन। 'प्राचीन' का विपर्याय। २. जो पहले-पहल या मूल रूप में बना हो। जैसे—नवीन आदर्श। ३. अपूर्व और विचित्र या विलक्षण। अनोखा। ४. तरुण। नव-युवक।

नवीनता—स्त्री०[सं० नवीन+तल्—टाप्] नया होने की अवस्था या भाव। नूतनता।

नवीनीकरण—पुं०[सं० नवीन+च्वि, ईत्व√कृ (करना)+ल्युट्—अन] १. नवीन रूप देने की क्रिया या भाव। २. किसी चीज या बात की अवधि समाप्त होने पर उसे फिर से नियमित तथा वैध नया रूप देना या उसकी अवधि बढ़ाना। (रिन्यूअल)

नवीस—वि०[फा०] समस्त पदों के अंत में, लिखनेवाला। लिपिक। जैसे—अर्जी नवीस।

नवीसी—स्त्री०[फा०] लिखने की क्रिया या भाव। लिखाई।

नवेद—पुं०[सं० निवेदन से फा०]१. शुभ सूचना। २. निमंत्रण। ३. निमंत्रण-पत्र।

नवेरड़ा†—वि०[स्त्री० नवेरड़ी] नवेला।

नवेला—वि०[सं० नव] [स्त्री० नवेली] १. नवीन और सुन्दर। २. जिसमें औरों से अधिक कोई विशेषता हो और इसी लिए जो दूसरों से अच्छा या बढ़ा-चढ़ा समझा जाता हो।

नवैयत—स्त्री०[अ०] किसी वस्तु की विशिष्टता सूचित करनेवाला प्रकार या भेद। जैसे—इस बैनामें में खेत (या जमीन) की नवैयत तो लिखी ही नहीं है; अर्थात् यह नहीं लिखा है कि वह किस प्रकार या वर्ग की है।

नवोढ़—वि०[सं० नव-ऊढ, कर्म० स०] [स्त्री० नवोढ़ा] जिसका विवाह हाल में हुआ हो।

पुं०१. विवाहित पुरुष। २. नौजवान आदमी। नवयुवक।

नवोढ़ा—स्त्री०[सं० नवा-ऊढा, कर्म०स०]१. नव-विवाहिता स्त्री। वधू। २. नौजवान स्त्री। नव-युवती। ३. साहित्य में नव-विवाहिता लज्जा-शीला नायिका, जिसे आचार्यों ने मुग्धा का और कुछ ने ज्ञातयौवना का एक स्वतन्त्र भेद माना है।

नवोदक—पुं०[सं० नव-उदक, कर्म०स०]१. नया जल अर्थात् पहली वर्षा का जल अथवा नया कूआँ खोदने पर उसमें से पहले-पहल निकाला जाने-वाला जल।

नवोद्धृत—वि०[सं० नव-उद्धृत, कर्म० स०] नया उद्धृत किया हुआ। पुं० मक्खन।

नव्य—वि०[सं० नव+यत्] १. नया। नवीन। २. आधुनिक। ३. जिसके आगे नमन करना उचित हो।

पुं० लाल गदहपूरना।

नव्वाब—पुं०=नवाब।

नव्वाबी—वि०, स्त्री०=नवाबी।

नशन—पुं०[सं०√नश(नाश होना)+ल्युट्—अन] नष्ट होना। नाश। विनाश।

नशना—अ०[सं० नशन] नष्ट होना।

स०=नाशना (नष्ट करना)।

नशा—पुं०[फा० नश्शः]१. वह मानसिक विकृति जो अफीम, गांजा, भाँग, शराब आदि मादक द्रव्यों का सेवन करने से उत्पन्न होती है। मादक द्रव्यों का उपयोग या व्यवहार करने पर उत्पन्न होनेवाली ऐसी स्थिति जिसमें मनुष्य बदहवास हो जाता है।

विशेष—ऐसी स्थिति में मनुष्य थोड़े समय के लिए प्रायः कष्ट और दुःख भूलकर निश्चित और मस्त हो जाता है; ज्ञान अथवा बुद्धि पर उसका नियंत्रण शिथिल पड़ जाता है; मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है; वह ऐसे काम या बातें करने लगता है, जो साधारण स्थिति में नहीं होते। नशे की मात्रा बढ़ने पर आदमी बेहोश हो जाता है और कुछ अवस्थाओं में मर भी सकता है। यह कुछ समय के लिए शारीरिक क्लांति दूर करके मन में नई-नई उमंगें पैदा करता है।

क्रि० प्र०—उतरना।—चढ़ना।—जमना।—टूटना।

मुहा०— **नशा किरकिरा होना**= कोई अप्रिय घटना या बात होने पर नशे के आनंद या मस्ती में बाधा पड़ना। **नशा हिरन हो जाना**= कोई विकट घटना या बात होने पर नशा बिलकुल दूर हो जाना।

२. वह पदार्थ जिसके सेवन से मनुष्य की उक्त प्रकार की मानसिक स्थिति होती हो। मादक द्रव्य। ३. कोई मादक पदार्थ सेवन करते रहने की प्रवृत्ति या बान। ४. किसी प्रकार के अधिकार, प्रवृत्ति, बल मनोविकार आदि की अधिकता, तीव्रता या प्रबलता के कारण उत्पन्न होनेवाली उक्त प्रकार की अनियंत्रित अथवा असंतुलित मानसिक अवस्था। मद। जैसे—जवानी, दौलत या मुहब्बत का नशा!

मुहा०—**(किसी का) नशा उतारना**=कष्ट, दंड आदि देकर घमंड या मद दूर करना।

५. ऐसी स्थिति जिसमें मनुष्य आनन्दपूर्वक किसी धुन में लगा रहना चाहता हो। मस्ती।

नशाखोर—पुं०[फा० नश्शः+खोर][भाव० नशाखोरी] वह जो किसी मादक पदार्थ का सेवन करता हो।

नशाना—स०[सं० नाशन] नष्ट करना। बरबाद करना।

अ०१. नष्ट होना। २. खो जाना। गुम होना।

†पुं०=निशाना।

नशावन—वि०[सं० नाश] नष्ट या नाश करनेवाला।

नशीन—वि०[फा० नशीं] [भाव० नशीनी]१. समस्त पदों के अंत में,

बैठनेवाला। जैसे—तख्तनशीन (तख्त पर बैठनेवाला)। २. स्थित।

नशीनी—स्त्री०[फा०] नशीन अर्थात् बैठे हुए या स्थित होने की अवस्था, क्रिया या भाव। जैसे—तख्तनशीनी।

नशीला—वि०[फा० नश्शः+हिं० ईला (प्रत्य०)] [स्त्री० नशीली]१. (पदार्थ) जिसके सेवन से नशा चढ़ता हो। मादक। २. (व्यक्ति) जो किसी मादक पदार्थ के प्रभाव से बेसुध या मस्त हो। ३. (शारीरिक अंग) जिसमें मादक वस्तु के सेवन के फलस्वरूप कोई विकार दृष्टि-गोचर हो रहा हो। जैसे—नशीली आँखें।

नशेड़ी†—वि०[हिं० नशा, भँगेड़ी का अनु०] नशेबाज।

नशेब—पुं०[फा० निशेब]१. नीची भूमि। २. निचाई।

नशेबाज—पुं०[अ० नश्शः+फा० बाज] [भाव० नशेबाजी] जो अभ्यास-वश कोई नशा किया करता हो। जिसे कोई मादक पदार्थ सेवन करने की आदत पड़ी हो।

नशोहर—वि०[सं० नाश+हिं० ओहर] नाश करनेवाला। नाशक।

नश्तर—पुं०[फा० निश्तर]१. वह उपकरण जिससे शारीरिक अंगों की चीर-फाड़ की जाती है।

क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

२. लोहे की वह बड़ी धारदार पट्टी जिसकी सहायता से दफ्तरी लोग कागज काटते हैं।

नश्यत्प्रसूतिका—स्त्री०[सं० नश्यन्ती-प्रसूति, ब० स०, कप्, टाप्, इत्व] वह प्रसूता या जच्चा जिसका बच्चा मर गया हो।

नश्र—पुं०[अ०]१. मृतक का पुनः जीवित होना। २. किसी बात का चारों ओर फैलाया जाना। प्रसार।

नश्वर—वि०[सं० √नश्+क्वरप्] [भाव० नश्वरता] जिसका किसी दिन नाश होने को हो। जो सदा बना न रह सकता हो। नाशवान्।

नश्वरता—स्त्री०[सं० नश्वर+तल्—टाप्] नश्वर होने की अवस्था या भाव।

नष†—पुं०=नख।

नषत*—पुं०=नक्षत्र।

नषना—स०[सं० नक्ष]१. फेंकना। २. डालना। ३. रोकना।

नष-शिष*—पुं०=नख-शिख।

नष्ट—वि०[सं० √नश्+क्त]१. जो आँखों से ओझल हो गया हो। २. जो दिखाई न देता हो। अदृश्य। ३. जो इस तरह टूट-फूट या बिगड़ गया हो कि फिर काम में न आ सके। चौपट। बरबाद। जैसे—बाढ़ में बहुत से गाँव नष्ट हो गये। ४. जो मर या मिट चुका हो। जैसे—हमारी कई पीढ़ियाँ गुलामी में नष्ट हो चुकी हैं। ५. जो पूरी तरह से निष्फल या व्यर्थ हो गया हो। जैसे—तुमने हमारा सारा परिश्रम नष्ट कर दिया। ६. (व्यक्ति) जिसका चरित्र बहुत अधिक भ्रष्ट हो चुका हो। पतित और हीन। ७. धन-हीन। दरिद्र।

पुं०१. नाश। विनाश। २. अदृश्य या तिरोहित होना।

नष्ट-चंद्र—पुं०[कर्म० स०] भादों के दोनों पक्षों की चतुर्थी तिथियों के चंद्रमा जिनके दर्शन का निषेध है। कहते हैं कि उक्त तिथियों में चन्द्रमा का दर्शन करने पर कलंक लगता है।

नष्ट-चित्त—वि०[ब०स०]१. जिसका विवेक नष्ट हो चुका हो। २. मद से उन्मत्त या बेसुध।

नष्ट-चेत (स्)—वि०[ब०स०] बे-सुध। बे-होश।

नष्ट-चेष्ट—वि०[ब०स०] जिसकी चेष्टाएँ करने की शक्ति नष्ट हो चुकी हो। जो कोई चेष्टा न कर सकता हो। चेष्टाहीन। निश्चेष्ट।

नष्टचेष्टता—स्त्री०[सं० नष्टचेष्ट+तल्—टाप्]१. नष्टचेष्ट होने की अवस्था या भाव। २. बेहोशी। मूर्च्छा। ३. साहित्य में, एक प्रकार का सात्त्विक भाव जिसमें व्यक्ति ध्यान या प्रेम में लीन होकर निश्चेष्ट हो जाता है।

नष्ट-जन्मा (न्मन्)—पुं०[ब०स०] जारज। दोगला।

नष्ट-जातक—पुं०[सं० कर्म०स०]=नष्ट-जन्मा।

नष्टता—स्त्री०[सं० नष्ट+तल्—टाप्]१. नष्ट होने की अवस्था या भाव। नाश। २. चरित्र आदि की भ्रष्टता।

नष्ट-दृष्टि—वि०[ब०स०] जिसमें देखने की शक्ति न रह गई हो।

नष्ट-निधि—वि०[ब०स०]१. जो अपनी संपत्ति गँवा चुका हो। २. जो अपने जीवन की सबसे प्रिय वस्तु खो चुका हो।

पुं० दिवालिया।

नष्ट-प्रभ—वि०[ब०स०] जिसकी प्रभा नष्ट हो चुकी हो। जो कांति या तेज से रहित हो चुका हो।

नष्ट-प्राय—वि०[सुप्सुपा स०] जो बहुत-कुछ नष्ट हो चुका हो। जो पूरी तरह से नष्ट होने के पास पहुँच चुका हो।

नष्ट-बुद्धि—वि०[ब०स०]१. जिसकी बुद्धि नष्ट हो चुकी हो। २. जिसकी बुद्धि बहुत बुरी हो।

नष्ट-भ्रष्ट—वि० [कर्म० स०] १. जो कट-फट या टूट-फूटकर किसी काम के लायक न रह गया हो। २. सब तरह से खराब और बरबाद।

नष्ट-राज्य—पुं०[ब०स०] एक प्राचीन देश।

नष्ट-रूपा—स्त्री०[ब०स०, टाप्] अनुष्टुप् छन्द का एक भेद।

नष्ट-विष—वि० [ब०स०] (जीव) जिसमें विष न रह गया हो। जिसका विष नष्ट हो चुका हो।

नष्ट शुक्र—वि०[ब०स०](व्यक्ति) जिसका शुक्र (वीर्य) नष्ट हो चुका हो।

नष्टा—स्त्री०[सं० नष्ट+टाप्] (स्त्री) जिसका चरित्र या सतीत्व नष्ट हो चुका हो।

स्त्री०१. कुलटा। दुराचारिणी। २. रंडी। वेश्या।

नष्टाग्नि—पुं०[नष्ट-अग्नि, ब०स०] वह साग्निक ब्राह्मण या द्विज जिसके यहाँ की अग्नि आलस्य, प्रमाद आदि के कारण बुझ चुकी हो।

नष्टात्मा (त्मन्)—वि०[नष्ट-आत्मन्, ब०स०]१. जिसकी आत्मा नष्ट हो चुकी हो। २. बहुत बड़ा दुष्ट तथा नीच।

नष्टाप्तिसूत्र—पुं० [नष्ट-आप्ति, ष०त०, नष्टाप्ति-सूत्र, ष०त०] वह सूत्र या सुराग जिससे खोई या चोरी गई हुई चीज की खोज की जाती है।

नष्टार्तव—पुं०[सं० नष्ट-आर्तव, ब०स०] एक रोग जिसमें स्त्री का मासिक धर्म-बन्द हो जाता है।

वि० [स्त्री०] जिसे मासिक-धर्म न होता हो या जिसका मासिक-धर्म होना बंद हो चुका हो।

नष्टार्थ—वि०[नष्ट-अर्थ, ब०स०]१. (व्यक्ति) जिसका धन नष्ट हो चुका हो। २. (शब्द) जिसका कोई अर्थ उससे बिलकुल छूट चुका हो।

नष्टाश्वदग्धरथन्याय—पुं० [नष्ट-अश्व, ब०स०, दग्ध रथ, ब०स०, नष्टाश्व-दग्धरथ द्व०स०, रथ-न्याय ष०त०] घोड़ों के खोने और रथ के जलने की एक कथा पर आधारित एक न्याय जिसका आशय यह है कि दो व्यक्ति आपसी सहयोग से किसी काम में सफल हो सकते हैं।

विशेष—दो व्यक्ति अपने अपने रथों पर कहीं जा रहे थे। किसी पड़ाव पर एक व्यक्ति के घोड़े खो गये और दूसरे का रथ जल गया। तब एक के रथ में दूसरे के घोड़े जोतकर वे दोनों गंतव्य स्थान पर पहुँचने में समर्थ हुए थे।

नष्टि—स्त्री०[सं०नश्+क्तिन्] नष्ट होने की अवस्था या भाव। नाश।

नष्टेन्द्रिय—वि०[नष्ट-इंन्द्रिय, ब०स०] जिसकी इंद्रियाँ नष्ट अर्थात् अचेष्ट हो चुकी हों।

नष्टेंदुकला—स्त्री०[नष्टा-इन्दुकला, ब० स०]१. प्रतिपदा। २. अमावस्या की रात।

नसंक—वि०=निःशंक।

नस—स्त्री०[सं० स्नायु]१. शरीर-शास्त्र की परिभाषा में, शरीर के अंदर का वह तंतु-जाल जिसकी सहायता से मांसपेशियाँ आपस में भी और हड्डियों के साथ भी बँधी या सटी रहती हैं। २. साधारण बोल-चाल में, शरीर के अंदर की कोई रक्त-वाहिनी नली या नाड़ी।

मुहा०—**नस चढ़ना**=खिचाव, तनाव, दबाव आदि के कारण किसी नस का अपने स्थान से कुछ इधर-उधर हो जाना, जिससे कुछ पीड़ा और कभी-कभी कुछ सूजन भी होती है। **(किसी की) नस ढीली होना**=(क) अधिक परिश्रम करने के कारण शरीर इस प्रकार शिथिल होना कि मन में कुछ उत्साह या उमंग बाकी न रह जाय। (ख) किसी के द्वारा दंडित या पीड़ित होने पर अथवा संकट की स्थिति में पड़ने पर ओज, तेज आदि का ऐसा ह्रास होना कि मनुष्य निराश और हतोत्साह हो जाय। जैसे—इस मुकदमे में उनकी नस ढीली हो गई है। **नस नस फड़क उठना**=कोई अच्छी चीज या बात देख या सुनकर सारे शरीर में प्रसन्नता की लहर दौड़ जाना। **नस पर नस चढ़ना**=दे० ऊपर 'नस-चढ़ना'। **नस भड़कना**=(क) दे० ऊपर 'नस-चढ़ना'। (ख) उन्मत्त या पागल हो जाना (जो मस्तिष्क की किसी नस के विकृत होने का परिणाम माना जाता है)।

पद—**घोड़ा नस**–(दे० स्वतन्त्र पद) **नस नस में**=सारे शरीर और उसके सब अंगों तथा उपांगों में। जैसे—पाजीपन तो उसकी नस नस में भरा है।

३. पुरुष या स्त्री की जननेंद्रिय। लिंग या भग।

मुहा०—**नस ढीली पड़ना या होना**=काम-वासना, संभोग-शक्ति आदि का अभाव या ह्रास होना।

४. पत्तों आदि में चारों ओर फैले हुए वे मोटे तन्तु या रेशे जो उसके तल पर उभरे हुए दिखाई देते हैं।

†पुं०=नसवार या नस्य।

स्त्री०[अ०]१. कुरान की वह सूक्ति जिसका आशय स्पष्ट हो। २. ऐसी बात जिससे किसी प्रकार का भ्रम या संदेह न होता हो।

नस-कट—वि०[हिं० नस+काटना]१. नस या नसें काटनेवाला। २. जिससे नस कटती हो।

पद—**नस-कट खाट**=ऐसी छोटी खाट जिससे एड़ी के ऊपर की नस में रगड़ लगे।

नस-कटा—पुं०[हिं० नस+काटना]१. जिसकी नस अर्थात् लिंगेंद्रिय काट ली गई हो। बखोजा। २. नपुंसक। हीजड़ा।

नस-तरंग—पुं०[हिं०नस+तरंग]पुरानी चाल का शहनाई की तरह का एक बाजा।

नसतालीक—वि०, पुं०=नस्तालीक।

नसना—अ०[सं० नशन]१. नष्ट होना। बरबाद होना। २. खराब होना। बिगड़ना।

†अ०[हिं० नटना]भागना। (पश्चिम)

नस-फाड़—पुं०[हिं० नस+फाड़ना] हाथियों के पैर सूजने का एक रोग।

नसब—पुं०[अ०]१. कुल। खानदान। वंश। २. वंशावली।

नसर—स्त्री०[अ० नस्र] गद्य।

नसरी—स्त्री०[?]१. एक तरह की मधुमक्खी। २. उक्त मक्खी के छत्ते का मोम।

नसल—स्त्री०[अ० नस्ल]१. वंश। २. संतति।

नसवार—स्त्री०[हिं० नास+वार (प्रत्य०)] तमाकू के पत्तों की बुकनी जो प्रायः सूँघी जाती है। सूँघनी।

नसहा—वि०[हिं० नस+हा (प्रत्य०)] जिसमें नसें हों। नसोंवाला।

नसा—स्त्री०[सं०] नासिका। नाक।

†पुं०=नशा।

नसाना—स०[सं० नाशन]१.नष्ट करना। २.खराब करना। बिगाड़ना।

†अ०१. नष्ट होना। २. खराब होना। बिगड़ना।

स० [हिं० नसना]१. दूर करना या हटाना। २. भगाना।

नसावन—वि०[हिं० नसाना]१. नसाने अर्थात् भगानेवाला। दूर या नष्ट करनेवाला।

नसावना—स०, अ०=नसाना।

नसी—स्त्री० [?] १. हल की कुसी या फार की नोक। २. हल।

पद—**नसी-पूजा** (दे०)।

नसीठ—पुं० [देश०] बुरा शकुन। असगुन।

नसीत* †—स्त्री०=नसीहत।

नसीनी †—स्त्री०=निसेनी (सीढ़ी)।

नसी-पूजा—स्त्री० [हिं० नसी+सं० पूजा] हल की वह पूजा जो खेत में बीज बोने के उपरांत की जाती है।

नसीब—पुं० [अ०] १. भाग्य। प्रारब्ध। किस्मत। तकदीर। २. हिस्सा।

मुहा०—**नसीब आजमाना**=भाग्य की परीक्षा के भरोसे कोई काम करना। **नसीब खुलना, चमकना, जागना या सीधा होना**=भाग्य का उदय होना। किस्मत चमकना। **नसीब टेढ़ा होना**=बुरे दिन आना। **नसीब पलटना**=भाग्य की स्थिति बदलना।

वि० अच्छे भाग्य के कारण मिला हुआ। सौभाग्य से प्राप्त। (प्रायः नहिक वाक्यों में प्रयुक्त) जैसे—भला ऐसा मकान हमें कहाँ नसीब होगा।

नसीब-जला—वि० [अ० नसीब+हिं० जलना] [स्त्री० नसीब-जली] अभागा।

नसीबवर—वि० [अ०] भाग्यवान्। खुशकिस्मत।

नसीबा—पुं० [अ० नसीबः] नसीब। भाग्य।

नसीम—स्त्री० [अ०] धीमी और ठंढी हवा। समीर।

नसीर—पुं० [अ०] १. वह जो दूसरों की सहायता करता हो। २. ईश्वर।

नसीला†—वि० [स्त्री० नसीली] १.=नशीला। २.=नसहा।

नसीहत—स्त्री० [अ०] १. अच्छी सम्मति। सत्परामर्श। २. सदुपदेश। ३. ऐसा दंड जिससे आगे के लिए कोई अच्छी शिक्षा मिलती हो। ४. उक्त दंड के फल-स्वरूप होनेवाला ज्ञान या मिलनेवाली शिक्षा। क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

नसीहा—पुं० [देश०] एक प्रकार का हलका हल जिससे नरम जमीन जोती जाती है।

नसूड़िया—वि० [हिं० नासूर+इया (प्रत्य०)] १. नासूर-संबंधी। २. बहुत ही उग्र और भीषण। ३. अमांगलिक। ४. जिसकी उपस्थिति या संपर्क से काम बिगड़ जाता हो। जैसे—नसूड़िया हाथ मत लगाओ।

नसूर†—पुं०=नासूर।

नसेनी†—स्त्री०=निसेनी (सीढ़ी)।

नस्त—पुं० [सं०√नस् (टेढ़ा होना)+क्त] १. नाक। २. नसवार। सुंघनी।

नस्तक—पुं० [सं० नस्त+कन्] १. पशुओं की नाक में किया हुआ छेद जिसमें रस्सी डाली जाती है। २. नाक में का छेद।

नस्त-करण—पुं० [ष० त०] नाक में दवा डालने का एक प्राचीन उपकरण।

नस्तन—पुं० [फा०] १. सेवती (सफेद गुलाब) का पौधा और उसका फूल। २. पुरानी चाल का एक प्रकार का कपड़ा।

नस्ता—पुं० [सं० नस्त+टाप्] नस्तक (दे०)।

नस्तालीक—वि० [अ० नस्तऽलीक] जिसकी चाल-ढाल या रूप-रंग बहुत आकर्षक तथा सुन्दर हो।
पुं० अरबी और फारसी लिपि लिखने का वह ढंग या प्रकार जिसमें अक्षर बहुत ही साफ, सुडौल और सुपाठ्य रूप में लिखे जाते हैं। (उर्दू पुस्तकों की छपाई इसी लिपि में होती है)।

नस्तित—वि० [सं० नस्त+इतच्] १. (पशु) जिसे नाथ पहनाया गया हो। २. नत्थी में लगाया हुआ। (फाइल्ड)
पुं० एक तरह का बैल।

नस्य—पुं० [सं० नासिका+यत्, नस् आदेश] १. सुंघनी। नसवार। नास। २. वह औषधि जिसे नाक के रास्ते दिमाग में चढ़ाया जाता है। ३. बैलों की नाक में बाँधी जानेवाली रस्सी। नाथ।

नस्या—स्त्री० [सं० नस्य+टाप्] १. नाक। २. नाक का छेद। नथना।

नस्याधार—पुं० [सं० नस्य-आधार ष० त०] सुंघनी रखने का पात्र। नासदानी।

नस्ल—स्त्री० दे० 'नसल'।

नस्वर†—वि०=नश्वर।

नहँ—पुं० [देश०] उत्तर प्रदेश में होनेवाला एक प्रकार का बढ़िया चावल।
पुं०=नख (नाखून)।
†अव्य०=नहीं।

नह—पुं०=नख (नाखून)।

नहछू—पुं० [सं० नखक्षौर] १. एक प्रथा जिसमें विवाह से पहले वर के बाल, नाखून आदि काटे जाते हैं और उसे मेंहदी आदि लगाई जाती है। २. द्वार-पूजा के बाद की एक रीति जिसमें कन्या के नाखून काटे जाते और उसे नहलाया जाता है।

नहट्टा—पुं० [हिं० नहँ=नाखून] नख-क्षत।

नहन—पुं० [हिं० नाँधना] मोट या पुरवट खींचने की मोटी रस्सी। नार।

नहना—स० [हिं० नाँधना] १. नाधना। २. बैलों आदि को हल में जोतना। ३. किसी को काम में लगाना।

नहन्नी†—स्त्री०=नहरनी।

नहर—स्त्री० [फा०] [वि० नहरी] १. सिंचाई और यातायात के निमित्त बनाया हुआ कृत्रिम जल-मार्ग। २. कोई ऐसी नाली जिसमें से द्रव पदार्थ चलता या बहता हो।

नहरनी—स्त्री० [हिं० नँह=नख] १. नाखून काटने का धारदार एक छोटा उपकरण। २. उक्त के आकार जैसा एक उपकरण जिससे पोस्ते की ढोंढी चीरते हैं।

नहरम—स्त्री० [देश०] एक तरह की मछली।

नहरी—वि० [फा० नहर+हिं० ई(प्रत्य०)] नहर-संबंधी। नहर का। जैसे—नहरी पानी।
स्त्री० वह जमीन जिसकी सिंचाई नहर के पानी से होती हो।

नहरुआ†—पुं०=नारू (रोग)।

नहरू†—पुं०=नारू (रोग)।

नहला—पुं० [हिं० नौ] ताश का वह पत्ता जिसमें नौ बूटियाँ होती हैं।
पुं० [?] धातु, लकड़ी आदि का करनी की तरह का एक औजार जिससे राज मिस्तरी, दीवारों पर बेल-बूटे का काम बनाने में सहायता लेते हैं।

नहलाई—स्त्री० [हिं० नहलाना+ई] १. नहलाने की क्रिया या भाव। २. नहलाने के बदले में मिलनेवाला पारिश्रमिक या पुरस्कार। ३. नहलानेवाली दाई या दासी। जैसे—खिलाई, दाई और नहलाई अलग अलग नियुक्त थीं।

नहलाना—स० [हिं० नहाना का स० रूप] [भाव० नहलाई] किसी को नहाने में प्रवृत्त करना।

नहवाना†—स०=नहलाना।

नहस—वि० [अ० नह्‌स] अमांगलिक। अशुभ।

नहसुत—पुं० [सं० नख+सूत्र] नख की रेखा। नखक्षत।
पुं० [सं० नख (वृक्ष)] पलास की तरह का एक पेड़। फरहद।

नहाँ—पुं० [सं० नख, हिं० नँह] १. पहिए के ठीक बीच का वह गोल छेद जिसमें धुरी पहनाई जाती है। २. घर के आगे का आँगन। ३. नख। नाखून।
वि० नहँ अर्थात् नाखूनोंवाला या नाखूनों की तरह का। जैसे—बघनहाँ।

नहान—पुं० [हिं० नहाना] १. नहाने की क्रिया या भाव। २. नहाने का शुभ अवसर या पर्व। जैसे—छठी का नहान, संक्रान्ति का नहान। ३. किसी शुभ अवसर पर बहुत से लोगों का एक साथ नहाना।

नहाना—अ० [सं० स्नान, प्रा० हारण, बुंदे० हनाना] १. खुले जल से पूरे शरीर को तर करना और धोना। स्नान करना।

विशेष—(क) शरीर को स्वच्छ रखने के निमित्त नहाया जाता है। (ख) नहाने से आलस्य और थकान दूर होती है।

पद—दूधों नहाओ पूतों फलो=धन और परिवार से समृद्ध होओ। (आशीर्वाद)

२. रजोधर्म से निवृत्त होने पर स्त्री का स्नान करना। ३. किसी तरल पदार्थ से शरीर का लथ-पथ होना। जैसे—पसीने या लहू से नहाना।

नहानी—स्त्री० [हिं० नहाना] १. रजस्वला स्त्री, जिसे चौथे दिन नहाकर शुद्ध होना पड़ता है। २. स्त्री के रजस्वला होने की स्थिति।

नहार—वि० [सं० निराहार से फा० नाहार] १. निराहार। २. बासी मुँह।

मुहा०—नहार तोड़ना=सबेरे के समय जलपान या हल्का भोजन करना। नहार रहना=निराहर या भूखे रहना।

पद—नहार-मुँह=सबेरे के समय बिना कुछ खाये या जलपान किये। जैसे—नहार-मुँह उठकर चल पड़े थे।

नहारी—स्त्री० [हिं० नहार] १. वह हल्का भोजन जो एक दिन निराहार रहने पर दूसरे दिन बासी मुँह किया जाता है। २. जलपान। नाश्ता। ३. वह धन जो नौकरों-मजदूरों आदि को जल-पान कराने के बदले में दिया जाता है। ४. घोड़ों को खिलाया जानेवाला गुड़ मिला हुआ आटा। ५. एक प्रकार का शोरबेदार गोश्त।

नहिं*—अव्य०=नहीं।

नहिअन—पुं० [हिं० नहँ=नख] पैर की छोटी उँगली में पहनने का बिछिया के आकार का एक गहना।

नहिक—वि० [सं० नहि =नहीं+हिं० क (प्रत्य०)] १. अस्वीकृत करने या न माननेवाला। 'नहीं' कहने या करनेवाला। नकारात्मक। २. जिसमें किसी विशेष वस्तु का अभाव हो। किसी विशिष्ट वस्तु, तत्त्व या बात से रहित। ३. जो किसी तत्त्व या बात का अवरोधक, बाधक या मारक हो। ४. (प्रतिकृति या मूर्ति) जिसमें मूल की छाया के स्थान पर प्रकाश और प्रकाश के स्थान पर छाया हो। 'सहिक' का विपर्याय। (अपोजिट; उक्त सभी अर्थों के लिए)

पुं० १. वह कथन या बात जिसमें कोई दूसरी बात न मानी गई हो या किसी बात से इनकार किया गया हो। असम्मति-सूचक बात। २. किसी विषय, निश्चय आदि का वह अंश, अंग या पक्ष जिसमें उसके सहिक या सकारात्मक पक्ष का खंडन या विरोध हो। ३. किसी की वह प्रतिकृति या मूर्ति जिसमें मूल की छाया के स्थान पर प्रकाश और प्रकाश के स्थान पर छाया हो। ४. छाया-चित्र में, वह शीशा जिस पर किसी वस्तु का उलटा प्रतिबिंब या आकृति अंकित होती है और जिससे कागज पर उसकी सही प्रतियाँ छापी जाती हैं। 'सहिक' का विपर्याय। (नेगेटिव, उक्त सभी अर्थों के लिए)

नहियाँ—स्त्री० दे० 'नहिअन'।

नहिरनी†—स्त्री०=नहरनी।

नहीं—अव्य० [सं० नहि] एक अव्यय जिसका प्रयोग असहमति, अस्वीकृति, विरोध आदि प्रकट करने के लिए होता है।

मुहा०—नहीं तो=अमुक काम या बात न होने पर। अन्य या विपरीत अवस्था में।

नहुष—पुं० [सं०√नह् (बन्धन)+उषच्] १. अयोध्या के एक इक्ष्वाकु वंशी राजा जो अंबरीष का पुत्र और ययाति का पिता था। महाभारत में इसे चंद्रवंशी आयु राजा का पुत्र कहा गया है। २. एक प्राचीन ऋषि जो मनु के पुत्र कहे गए हैं और जो ऋग्वेद के कुछ मंत्रों के द्रष्टा हैं। ३. एक नाग का नाम। ४. कुशिक वंशी एक ब्राह्मण राजा का नाम। ५. वैदिक काल के एक राजर्षि। ६. पुराणानुसार एक मरुत् का नाम। ७. विष्णु का एक नाम।

नहुषाख्य—पुं० [सं० नहुष-आख्या, ब० स०] तगर पुष्प।

नहुषात्मज—पुं० [सं० नहुष-आत्मज, ष० त०] ययाति।

नहूर—स्त्री० [देश०] एक तरह की तिब्बती भेड़।

नहूसत—स्त्री० [अ०] नहस या मनहूस होने की अवस्था या भाव। मनहूसियत।

नाँउँ*—पुं०=नाम।

नाँखना—सं० [सं० नक्ष्] १. फेंकना। २. नष्ट करना।

स० [सं० रक्षण ?] १. रखना। २. डालना। (डिं०) उदा०—रजतिणि सिर नाँखे गज-राज। —प्रिथीराज।

नाँगा†—वि० [स्त्री० नाँगी] =नंगा।

पुं० [हिं० नंगा] वह साधु जो नंगा रहता हो। दे० 'नागा'।

नाँघना†—स०=लाँघना।

नाँठना—अ० [सं० नष्ट] नष्ट होना।

नाँद—स्त्री० [सं० नंदक] चौड़े मुँह तथा गोल पेंदेवाला मिट्टी का एक प्रकार का पात्र जिसमें गाय, भैंस आदि को चारा खिलाया जाता है।

नाँदना—अ० [सं० नंदन] १. आनंदित या प्रसन्न होना। २. दीपक का बुझने के पहले कुछ भभककर जलना। ३. दीपक की लौ का रह-रहकर नाचना या हिलना।

अ० [सं० नाद] १. नाद या शब्द करना। २. शोर मचाना। चिल्लाना। ३. छींकना।

नांदिकर—पुं० [सं० नांदी√कृ+ट, ह्रस्व] सूत्रधार जो नांदी का पाठ करता है।

नांदी—स्त्री० [सं० √नन्द् (समृद्धि) +घञ्, पृषो० सिद्धि] १. अभ्युदय। समृद्धि। २. नाटक में वह आशिर्वादात्मक पद्य जो सूत्रधार अभिनय आरंभ करने से पहले मंगलाचरण के रूप में उच्च स्वर में गाता या पढ़ता है। मंगलाचरण।

नांदीक—पुं० [सं० नांदी√कै (प्रकाशित होना)+क] १. तोरण स्तंभ। २. दे० 'नांदीमुखश्राद्ध'।

नांदी-पट—पुं० [ष० त०] लकड़ी की वह रचना जिससे कूएँ का ऊपरी भाग ढका जाता है।

नांदी-मुख—पुं० [ब० स०] १. कूएँ के ऊपर का ढकना। २. परिवार में किसी प्रकार की वृद्धि होने के शुभ अवसर पर पितरों का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए किया जानेवाला श्राद्ध। वृद्धि श्राद्ध।

वि० (पितर) जिनके उद्देश्य से नांदी-मुख श्राद्ध किया जाता है।

नांदीमुखी—स्त्री० [सं०] एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण, दो तगण और दो गुरु होते हैं।

नाँघना—सं०=लाँघना।

नाँब—पुं० [सं०] अपने आप उगनेवाला धान।

नाँयँ†—पुं०=नाम।

† अव्य०=नहीं।

नाँवँ†—पुं०=नाम।

नाँवगर—पुं० [सं० नौका+घर] मल्लाह।

नाँवाँ—पुं० [हिं० नाम] १. नाम। २. बही-खाते में किसी के नाम पड़ी हुई चीज या रकम। ३. नगद रुपए-पैसे जो दिये या लिये जाने को हों। ४. दाम। मूल्य।

नाँह†—पुं० [सं० नाथ] पति। स्वामी।

अव्य०=नहीं।

ना—अव्य० [सं० न] एक प्रत्यय जिसका प्रयोग किसी को कोई काम करने से या निषेध करने के लिए 'न' या 'नहीं' की तरह होता है। जैसे—ना, ऐसा मत करो।

विशेष—कुछ अवस्थाओं में लोग इसका प्रयोग भी 'न' की तरह केवल आग्रह करने या जोर देने के लिए करते हैं। जैसे—अभी बैठो ना, अर्थात् बैठो न।

*पुं० [सं० नाभि] नाभि।

*पुं०=नर (मनुष्य)।

उप० [सं० न से फा०] एक उपसर्ग जिसका प्रयोग विशेषणों और संज्ञाओं से पहले अभाव, नहिकता अथवा विरोधी भाव प्रकट करने के लिए होता है। जैसे—ना-लायक, ना-समझी आदि।

ना इत्तिफाकी—स्त्री० [फा०] १. इत्तिफाक अर्थात् मैत्रीपूर्ण एकता का अभाव होना। २. मतभेद।

नाइन—स्त्री० [हिं० नाई] १. नाई जाति की स्त्री। २. नाई की पत्नी।

नाइब—पुं०=नायब

नाइँ—स्त्री० [सं० न्याय] समान दशा।

अव्य० १. तुल्य। समान। २. की तरह। जैसे। उदा०—कीन्ह प्रनामु तुम्हारिहि नाईं।—तुलसी। ३. लिए। वास्ते। उदा०—अल्लह राम जिवउं तेरे नाईं।—कबीर।

नाई—पुं० [सं० नापित] वह जो लोगों के बाल काटता और हजामत बनाता हो। नापित। हज्जाम।

स्त्री० [?] नाकुलीकंद।

स्त्री० [हिं० नखना=डालना] =नरका (हल के पीछे की नली)।

नाउ—स्त्री०=नाव।

†पुं०=नाम।

नाउत—पुं० [देश०] ओझा। सयाना।

नाउन†—स्त्री०=नाइन।

ना-उमेद—वि० =ना-उम्मीद।

ना-उम्मीद—वि० [फा०] [भाव० ना-उम्मीदी] जिसे आशापूर्ण होने की संभावना न दिखाई पड़ती हो।

नाऊ†—पुं०=नाई।

नाकंद—वि० [फा० ना+कंद] १. (बछड़ा) जिसके दूध के दाँत अभी न टूटे हों। २. मूर्ख।

नाक—स्त्री० [सं० नासिका] १. जीव-जंतुओं या प्राणियों के चेहरे पर का वह उभरा हुआ लंबोतरा अंग जो आँखों के नीचे और मुख-विवर के ऊपर बीचो-बीच रहता है और जिसमें दोनों ओर वे दो नथने या छिद्र रहते हैं; जिनसे वे साँस लेते और सूँघते हैं। साँस लेने और सूँघने की इंद्रिय।

विशेष—(क) नाक से बोलने और स्वरों आदि का उच्चारण करने में भी सहायता मिलती है। (ख) मस्तक या मस्तिष्क के अंदर के मल का कुछ अंश प्रायः कफ आदि के रूप में दोनों नथनों के रास्ते बाहर निकलता है। (ग) लोक व्यवहार में, नाक को प्रायः प्रतिष्ठा, मर्यादा, सौंदर्य आदि के प्रतीक के रूप में भी मानते हैं, जिसके आधार पर इसके अधिकतर मुहावरे बने हैं।

पद—**नाक का बाँसा**=नाक के दोनों नथनों के बीच का भीतरी परदा। **(किसी की) नाक का बाल**=ऐसा व्यक्ति जो किसी बड़े आदमी का घनिष्ठ समीपवर्ती हो और साथ ही उस बड़े आदमी पर अपना यथेष्ट प्रभाव रखता हो। जैसे—उन दिनों वही खवास राजा साहब की नाक का बाल हो रहा था। **नाक की सीध में**=बिना इधर-उधर घूमे या मुड़े हुए और ठीक सामने या सीधे। जैसे—नाक की सीध में चले जाओ, सामने ही उनका मकान मिलेगा। **बैठी हुई नाक**=चिपटी नाक।

मुहा०—**नाक कटना**=प्रतिष्ठा या मर्यादा नष्ट होना। इज्जत जाना। **(किसी की) नाक काटना**=(क) प्रतिष्ठा या मर्यादा नष्ट करना। इज्जत बिगाड़ना। (ख) अपनी तुलना में किसी को बहुत ही तुच्छ या हीन प्रमाणित अथवा सिद्ध करना। जैसे—यह मकान मुहल्ले भर के मकानों की नाक काटता है। **नाक-कान (या नाक-चोटी) काटना**=बहुत अधिक अपमानित और दंडित करने के लिए शरीर के उक्त अंग काटकर अलग कर देना। **(किसी के आगे या सामने) नाक घिसना या रगड़ना**=बहुत ही दीन-हीन बनकर और गिड़गिड़ाते हुए किसी प्रकार की प्रार्थना प्रतिज्ञा या याचना करना। **नाक (अथवा नाक भौं) चढ़ाना या सिकोड़ना**=आकृति से अरुचि, उपेक्षा, क्रोध, घृणा, विरक्ति आदि के भाव प्रकट या सूचित करना। जैसे—आप तो दूसरों का काम देखकर यों ही नाक (अथवा नाक-भौं) चढ़ाते या सिकोड़ते हैं। **नाक तक खाना**=इतना अधिक खाना या भोजन करना कि पेट में और कुछ भी खा सकने की जगह न रह जाय। **(किसी स्थान पर) नाक तक न दी जाना**=इतनी अधिक दुर्गंध होना कि आदमी से वहाँ खड़ा न रहा जा सके। **नाक पकड़ते दम निकलना**=इतना अधिक दुर्बल होना कि छू जाने से गिर पड़ने या मर जाने का डर हो। अधिक अशक्त या क्षीण होना। **नाक पर उँगली रख कर बातें करना**=स्त्रियों या हिजड़ों की तरह नखरे से बातें करना। **नाक पर गुस्सा रहना या होना**=ऐसी चिड़चिड़ी प्रकृति होना कि बात-बात पर क्रोध प्रकट होता रहे। जैसे—तुम्हारी तो नाक पर गुस्सा रहता है; अर्थात् तुम जरा सी बात पर बिगड़ जाते हो। **(कोई चीज) किसी की नाक पर रख देना**=किसी की चीज उसके मांगते ही तुरंत या ठीक समय पर उसे लौटा या दे देना। तुरंत दे देना। जैसे—हम हर महीने किराया उनकी नाक पर रख देते हैं। **नाक पर दीया बाल कर आना**=यशस्वी, विजयी या सफल होकर आना। **(अपनी) नाक पर मक्खी न बैठने देना**=इतनी खरी या साफ प्रकृति का होना कि किसी को भी कुछ भी कहने-सुनने का अवसर न मिले। **(किसी की) नाक पर सुपारी तोड़ना या**

फोड़ना=बहुत अधिक तंग या परेशान करना। **नाक फटना या फटने लगना**=कहीं इतनी अधिक दुर्गंध होना कि आदमी से वहाँ खड़ा न रहा जा सके। **नाक-भौं चढ़ाना या सिकोड़ना**=दे० ऊपर 'नाक चढ़ाना या सिकोड़ना'। **नाक में तीर करना या डालना**=खूब तंग या हैरान करना। बहुत सताना। **नाक रगड़ना**=दे० ऊपर 'नाक घिसना'। **नाक में बोलना**=इस प्रकार बोलना कि श्वास का कुछ अंश नाक से भी निकले, और उच्चारण सानुनासिक हो। नकियाना। **नाक लगाकर बैठना**=अपने आपको बहुत प्रतिष्ठित या बड़ा समझते हुए औरों से बहुत-कुछ अलग या दूर रहना। **(किसी का) नाक में दम करना या लाना**=बहुत अधिक तंग या हैरान करना। बहुत सताना। जैसे—इस लड़के ने हमारी नाक में दम कर दिया है। **नाक मारना**=दे० ऊपर 'नाक चढ़ाना या सिकोड़ना'। **नाक सिकोड़ना**=दे० ऊपर। 'नाक चढ़ाना या सिकोड़ना। **(किसी से) नाकों चने चबवाना**=किसी को इतना अधिक तंग या दुःखी करना कि मानों उसे नाक के रास्ते चने चबाकर खाने के लिए विवश किया जा रहा हो। **नाकों दम करना**=दे० ऊपर 'नाक में दम करना'।

२. मस्तिष्क का वह तरल मल जो नाक के नथनों से होकर बाहर निकलता है। नेटा। रेंट।

मुहा०—नाक छिनकना या सिनकना=नाक के रास्ते इस प्रकार जोर से हवा बाहर निकालना कि उसके साथ अंदर का कफ दूर जा गिरे। **नाक बहना**=सरदी आदि के कारण नाक से पतला कफ या पानी निकलना।

३. गौरव, प्रतिष्ठा या सम्मान की चीज, बात या व्यक्ति। जैसे—वही तो इस समय हमारे महल्ले की नाक हैं। उदा०—नाक पिनाकहिं संग सिधाई।—तुलसी। ४. किसी चीज के अगले या ऊपरी भाग में आगे की ओर निकला हुआ कुछ मोटा, नुकीला और लंबा अंग या अंश। ५. चरखे में लगी हुई वह खूँटी या हत्था जिसकी सहायता से उसे घुमाते या चलाते हैं। ६. लकड़ी का वह डंडा जिस पर रखकर पीतल आदि के बरतन खरादे जाते हैं।

पुं० [सं० न-अक=दुःख, ब० स०] १. स्वर्ग। २. अंतरिक्ष। आकाश। ३. अस्त्र चलाने का एक प्रकार का ढंग।

पुं० [सं० नक्र] मगर की तरह का एक प्रकार का जल-जंतु। घड़ियाल।

वि० [फा०] १. भरा हुआ। पूर्ण। (प्रत्यय के रूप में यौगिक शब्दों के अंत में) जैसे—खौफनाक, दर्दनाक।

नाक-कटैया†—स्त्री० [हिं० नाक+काटना] १. नाक कटने या काटे जाने की अवस्था या भाव। २. रामलीला का वह प्रसंग जिसमें लक्ष्मण ने शूर्पणखा की नाक काटी थी और जिसके स्वाँग प्रायः राम-लीला के समय निकलते हैं।

नाक-चर—पुं० [सं०] देवता।

नाकड़ा—पुं० [हिं० नाक] नाक के पकने का एक रोग।

ना-कदर—वि० [फा० ना+अ० क़द्र] [भाव० ना-कदरी] १. जिसकी कोई कदर न हो। जिसकी कोई प्रतिष्ठा न हो। २. जो किसी की कदर या आदर करना न जानता हो। जो गुण-ग्राही न हो।

ना-कदरी—स्त्री० [फा० ना+अ० क़द्र] ऐसी स्थिति जिसमें किसी का पूरा-पूरा या उचित आदर या सम्मान न हुआ या न किया गया हो।

नाक-नटी—स्त्री० [सं०] स्वर्ग की नटी। अप्सरा।

नाकना—स० [सं० लंघन, हिं० नाँघना] १. उल्लंघन करना। डाँकना। लाँघना। २. दौड़, प्रतियोगिता आदि में किसी से आगे बढ़ जाना। स० [हिं० नाक+ना (प्रत्य०)] १. चारों ओर से नाके या रास्ते रोकना। नाकाबंदी। करना। २. आने-जाने के सब द्वार या रास्ते बंद करके किसी को घेरना। ३. कठिनता या बाधा को दूर या पार करना। उदा०—मैं नहिं काहू कौ कछु घाल्यों पुन्यनि करवर नाक्यो।—सूर।

नाक-नाथ—पुं० [सं० ष० त०]=नाक-पति।

नाक-पति—पुं० [सं० ष० त०] स्वर्ग के स्वामी, इन्द्र।

नाक-पृष्ठ—पुं० [सं० ष० त०] स्वर्ग।

नाक-बुद्धि—वि० [हिं० नाक+बुद्धि] १. जो नाक से सूँघकर या गंध द्वारा ही भक्ष्याभक्ष्य, भले-बुरे आदि का विचार कर सके, बुद्धि द्वारा नहीं। अर्थात् क्षुद्र या तुच्छ बुद्धिवाला।

स्त्री० उक्त प्रकार की क्षुद्र या तुच्छ बुद्धि।

नाक-वनिता—स्त्री० [सं० ष० त०] अप्सरा।

नाक-वास—पुं० [सं० ष० त०] स्वर्ग में होनेवाला वास।

नाक-षेधक—पुं० [सं० ष० त०] इन्द्र।

नाका—पुं० [हिं० नाकना] १. रास्ते आदि का वह छोर जिससे होकर लोग किसी ओर जाते, बढ़ते या मुड़ते हैं। प्रवेश-द्वार। मुहाना। २. वह स्थान जहाँ से दुर्ग, नगर आदि में प्रवेश किया जाता है। जैसे—नाके पर पहरेदार खड़े थे।

क्रि० प्र०—छेंकना।—बाँधना।

पद—नाकेबंदी। (दे०)

३. उक्त के अंतर्गत वह स्थान जहाँ चौकी, पहरे आदि के लिए रक्षक या सिपाही रहते हों, अथवा जहाँ प्रवेश-कर आदि उगाहे जाते हों। ४. चौकी। थाना। ५. सूई के सिरे का वह छेद जिसमें डोरा या तागा पिरोया जाता है। ६. करघे का वह अंश जिसमें तागे के ताने बँधे रहते हैं।

†पुं० [सं० नक्र] घड़ियाल या मगर की तरह का एक जल-जंतु।

स्त्री० [अ० नाक] मादा ऊँट। ऊँटनी।

नाकादार—वि०, पुं०=नाकेदार।

नाका-बंदी—स्त्री०=नाकेबंदी।

ना-काबिल—वि० [फा० ना+अ० काबिल] [भाव० ना-काबिलियत] जो काबिल अर्थात् योग्य न हो। अयोग्य।

ना-काम—वि० [फा०] [भाव० नाकामी] जिसे अपने प्रयत्न में सफलता न मिली हो। ना—कामयाब।

ना-कामयाब—वि० [फा०] [भाव० ना-कामयाबी]=ना-काम।

नाकारा—वि० [फा० नाकारः] १. निष्कर्म। २. (व्यक्ति) जो किसी काम का न हो। निकम्मा। ३. (पदार्थ) जो काम में न आ सके। निष्प्रयोजन।

†पुं०=नकुल (नेवला)।

नाकिस—वि० [अ० नाक़िस] १. जिसमें कोई नुक्स या दोष हो; अर्थात् खराब या बुरा। २. जिसमें अपूर्णता या त्रुटि हो। ३. निकम्मा। रद्दी।

पुं० अरबी भाषा में वह शब्द जिसका अंतिम वर्ण अलिफ, वाव या ये हो।
नाकी (किन्)—वि० [सं० नाक+इनि] स्वर्ग में वास करनेवाला।
पुं० देवता।
†स्त्री०=नक्की।
नाकु—पुं० [सं०√नम् (झुकना)+उ, नाक् आदेश] १. दीमकों की मिट्टी का ढूह। बिभौट। बल्मीक। २. टीला। भीटा। ३. पर्वत। पहाड़। ४. एक प्राचीन ऋषि।
नाकुल—वि० [सं० नकुल+अण्] १. नकुल-संबंधी। नेवले का। २. नेवले की तरह का।
पुं० १. नकुल के वंशज या सन्तान। २. चव्य। चाब। ३. यव-तिक्ता। ४. सेमल का मूसला। ५. रास्ना।
नाकुलक—वि० [सं० नकुल+ठञ्—क] नेवले की पूजा करनेवाला।
नाकुलि—पुं० [सं० नकुल+इञ्] १. नकुल का पुत्र। २. नकुल गोत्र का मनुष्य।
नाकुली—वि० [सं०] नकुल-संबंधी। नकुल का। नाकुल।
स्त्री० [सं० नकुल+अण्—ङीप्] १. एक प्रकार का कंद जो सब प्रकार के विषों, विशेषकर सर्प के विष को दूर करनेवाला कहा गया है। नाकुली दो प्रकार की होती है। एक नाकुली, दूसरी गंध-नाकुली जो कुछ अच्छी होती है। २. यवतिक्ता। ३. रास्ना। ४. चव्य। चाब। ५. सफेद भटकटैया।
नाकू†— पुं० [सं० नक्र] घड़ियाल। मगर।
नाकेदार—वि० [हिं० नाका+फा० दार] जिसमें कोई चीज पहनाने या पिरोने के लिए नाका या छेद हो।
पुं० १. वह रक्षक या सिपाही जो किसी नाके पर चौकी, पहरे आदि के लिए नियुक्त हो। २. वह अफसर या कर्मचारी जो आने-जाने के मुख्य स्थानों पर किसी प्रकार का कर, महसूल आदि वसूल करने के लिए नियत रहता हो।
नाकेबंदी—स्त्री० [हिं० नाका+फा० बंदी] १. ऐसी व्यवस्था जो नाका अर्थात् कहीं आने-जाने का मार्ग रोकने के लिए हो। २. आधुनिक राजनीति में, विपक्षी या शत्रु के किसी तट, बंदरगाह अथवा स्थान को इस प्रकार घेरना कि न तो उसके अंदर कोई प्रवेश करने पावे और न वहाँ से कोई बाहर निकलने पावे। (ब्लाकेड)
नाकेश—पुं० [सं० नाक-ईश, ष० त०] इंद्र।
नाक्षत्र—वि० [सं० नक्षत्र+अण्] १. नक्षत्र-संबंधी। २. नक्षत्रों की गति आदि के विचार से जिसका मान निश्चित हो। जैसे—नाक्षत्र दिन, नाक्षत्र मास।
पुं० चांद्र मास।
नाक्षत्र-दिन—पुं० [कर्म० स०] उतना समय जितना चंद्रमा को एक नक्षत्र से दूसरे नक्षत्र तक पहुँचने अथवा एक नक्षत्र को एक बार याम्योत्तर रेखा से होकर फिर वहीं आने में लगता है। नाक्षत्र-मास का पूरा एक दिन।
विशेष—यह ठीक उतना ही समय है जितना पृथ्वी को एक बार अपने अक्ष पर घूमने में लगता है। यह समय कभी घटता-बढ़ता नहीं; सदा एक-सा रहता है; इसलिए ज्योतिषी लोग दिन-मान का ठीक और पूरा विचार करने के समय इसी का व्यवहार करते हैं।
नाक्षत्र-मास—पुं० [कर्म० स०] वह समय जितने में चंद्रमा को एक नक्षत्र से चल कर क्रमशः सब नक्षत्रों पर होते हुए फिर उसी नक्षत्र पर आने में लगता है और जो प्रायः २७-२८ दिनों का होता है।
नाक्षत्र-वर्ष—पुं० [कर्म० स०] १२ नाक्षत्र मासों का समूह।
नाक्षत्रिक—वि० [सं० नक्षत्र+ठक्—इक] [स्त्री० नाक्षत्रिकी] नक्षत्र संबंधी। नाक्षत्र।
पुं० १. नाक्षत्र अर्थात् चांद्रमास। २. छंद शास्त्र में २७ मात्राओं के छंदों की संज्ञा।
नाख—स्त्री० [फा० नाख] एक प्रकार की बढ़िया नाशपाती और उसका वृक्ष।
नाखना—स० [सं० नाशन] १. नष्ट करना। २. बिगाड़ना। ३. गिराना, डालना, फेंकना या रखना। ४. (शस्त्र) चलाना।
स०=नाकना।
नाखुदा—वि० [फा० नाखुदा] खुदा को न माननेवाला। नास्तिक।
पुं० १. मल्लाह। नाविक। २. कर्णधार।
नाखुन†—पुं०=नाखून।
नाखुना—पुं० [फा० नाखुनः] १. आँख का एक रोग जिसमें उसके तल पर खून की बिंदी या दाग पड़ जाता है। २. घोड़ों का एक रोग जिसमें उनकी आँखों में लाल डोरे या धारियाँ पड़ जाती हैं। ३. एक प्रकार का अंगुश्ताना जिसे पहनकर चीराबंद लोग चीरा बनाते या बाँधते थे।
पुं०=नाखूना (कपड़ा)।
नाखुर—पुं०=नहछू।
ना-खुश—वि० [फा०] [भाव० ना-खुशी] जो खुश या प्रसन्न न हो। अप्रसन्न। नाराज।
नाखून—पुं० [फा० नाखुन] १. हाथों तथा पैरों की उँगलियों के ऊपरी तल का वह सफेद अंश जो अधिक कड़ा तथा तेज धारवाला होता है। २. उक्त का वह चंद्राकार अगला भाग जो कैंची आदि से काटकर अलग किया जाता है। ३. चौपायों के पैरों का वह अगला भाग जो मनुष्य के नखों के समान कड़ा होता है।
मुहा०—**नाखून लेना**=नाखून काटकर अलग करना। (घोड़े का) **नाखून लेना**=चलने में घोड़े का ठोकर खाना।
नाखूना—पुं० [हिं० नाखून] एक तरह का कपड़ा जिसका ताना सफेद होता है और बाने में कई रंगों की धारियाँ होती हैं। यह आगरे में बहुत बनता था।
पुं०=नाखुना।
नाग—पुं० [सं० नग=पर्वत+अण्] [स्त्री० नागिन] १. सर्प। साँप। २. काले रंग का, बड़ा और फनवाला साँप। करैत।
मुहा०—**नाग खेलाना**=नागों या साँपों को खेलाने की तरह का ऐसा विकट काम करना जिसमें प्राण जाने का भय हो।
३. पुराणानुसार पाताल में रहनेवाला एक उप-देवता जिसका ऊपरी आधा भाग मनुष्य का और नीचेवाला आधा भाग साँप का कहा गया है। ४. कद्रु से उत्पन्न कश्यप की संतान जिनका निवास पाताल में माना गया है। इनके वासुकि, तक्षक, कुलक, कर्कोटक, पद्म, शंख चूड़, महा-पद्म और धनंजय ये आठ कुल हैं। ५. एक प्राचीन देश। ६. उक्त देश में बसनेवाली एक प्राचीन जाति।

विशेष—नाग जाति संभवतः भारत के उत्तर में और हिमालय के उस पार रहती थी, क्योंकि तिब्बतवाले अपने आपको नाग-वंशी कहते हैं। महाभारत काल तक ये लोग भारत में आ गये थे। और उत्तर भारतीय आर्यों से इनका बहुत वैमनस्य था। इसी लिए जनमेजय ने बहुत से नागों का नाश किया था। बाद में ये लोग मध्यभारत में आ कर फैल गए थे; जहाँ नागपुर, छोटा नागपुर आदि नगर और प्रदेश इनके नाम की स्मृति के रूप में अब तक अवशिष्ट हैं। ये लोग नागों (बड़े बड़े फनदार साँपों) की पूजा करते थे। इसी से इनका यह नाम पड़ा था। बंगाल में अब तक हिंदुओं में 'नाग' एक जाति का नाम मिलता है।

७. एक प्राचीन पर्वत। ८. हाथी। ९. एक प्रकार की घास। १०. नागकेसर। ११. पुन्नाग। १२. नागर-मोथा। १३. तांबूल। पान। १४. सीसा नामक धातु। १५. ज्योतिष के करणों में से तीसरा करण, जिसे 'ध्रुव' भी कहते हैं। १६. बादल। मेघ। १७. दीवार में लगी हुई खूँटी। १८. कुछ लोगों के मत से 'सात' की और कुछ के मत से 'आठ' की संख्या। १९. आश्लेषा नक्षत्र का एक नाम। २०. शरीर में रहनेवाले पाँच प्राणों या वायुओं में से एक जिससे डकार आता है।

वि० १. (व्यक्ति) जो बहुत अधिक क्रूर, घातक और दुष्ट हो।

२. यौ० के अंत में, सब में श्रेष्ठ। जैसे—पुरुष नाग।

नाग-कंद—पुं० [ब० स०] हस्तिकंद।

नाग-कन्या—स्त्री० [ष० त०] नाग जाति की बालिका या स्त्री।

नाग-कर्ण—पुं० [ष० त०] १. हाथी का कान। २. एरंड या रेंड जिसका पत्ता हाथी के कान के आकार का होता है।

नाग-किंजल्क—पुं० [ब० स०] नागकेसर।

नाग-कुमारिका—स्त्री० [ष० त०] १. गुरुच। गिलोय। २. मजीठ। ३. नाग-कन्या।

नाग-केसर—पुं० [ब० स०] एक सदाबहार वृक्ष और उसके सुगंधित फूल। इसके बीजों की गिनती गंध द्रव्यों में होती है।

नाग-खंड—पुं० [मध्य० स०] पुराणानुसार जंबू द्वीप के अंतर्गत भारतवर्ष के नौ खंडों में से एक खंड।

नाग-गंधा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] नकुलकंद।

नाग-गति—स्त्री० [सं०] किसी ग्रह की अश्विनी, भरणी और कृत्तिका नक्षत्रों से होकर निकलने की अवस्था या गति।

नाग-गर्भ—पुं० [ब० स०] सिंदूर।

नाग-चंपा—पुं० [सं०] नागकेसर (पेड़ और उसका फूल)।

नाग-चूड़—पुं० [ब० स०] शिव।

नागच्छत्रा—स्त्री० [सं०] नागदंती (वृक्ष)।

नागज—वि० [सं० नाग√जन् (उत्पत्ति)+ड] नाग से उत्पन्न।

पुं० १. सिंदूर। २. राँगा।

नाग-जिह्वा—स्त्री० [सं० ष० त०] १. अनंतमूल। २. सारिवा।

नाग-जिह्विका—स्त्री० [ब० स०, कप्, टाप्, इत्व] मैनसिल नामक खनिज द्रव्य।

नाग-जीवन—पुं० [ब० स०] फूँका हुआ राँगा।

नाग-झाग—पुं० [सं० नाग+हिं० झाग] १. साँप की लार। अहिफेन। २. अफीम।

नाग-दंत—पुं० [ष० त०] १. हाथी दाँत। २. [नागदन्त+अच्] दीवार पर गड़ी हुई खूँटी।

नाग-दंतिका—स्त्री० [ब० स०, कप्, टाप्, इत्व] वृश्चिकाली नामक पौधा।

नाग-दंती—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] कुंभा नामक औषधि।

नाग-दमन—पुं० [ष० त०] नागदौना (पौधा)।

नाग-दमनी—स्त्री०=नागदमन (नागदौना)।

नागदला—पुं० [सं० नाग-दल] एक प्रकार का बड़ा पेड़ जिसकी लकड़ी बहुत कड़ी और मजबूत होती है और पानी में भी जल्दी नहीं सड़ती। इसलिए इसकी लकड़ी से नावें बनती हैं। इसके बीजों का तेल जलाने के काम आता है।

नागदुमा—वि० [सं० नाग+फा० दुम] जिसकी दुम या पूँछ नाग के फन के समान हो।

पुं० उक्त प्रकार की दुमवाला हाथी जो ऐबी माना जाता है।

नागदौन (ा)—पुं० [सं० नागदमन] १. छोटे आकार का एक पहाड़ी पेड़। २. एक प्रकार का पौधा जिसमें डालियाँ नहीं होतीं, केवल हाथ-हाथ भर लंबे-लंबे पत्ते होते हैं जो देखने में साँप के फन की तरह होते हैं। कहते हैं कि इसके पास भी साँप नहीं आता। ३. एक प्रकार का कँटीला पेड़ जिसकी सूखी पत्तियाँ लोग कागजों और कपड़ों की तहों में उन्हें कीड़ों से बचाने के लिए रखते हैं।

नाग-द्रु (द्रुम)—पुं० [मध्य० स०] १. सेहुड़। थूहर। २. नागफनी।

नाग-द्वीप—पुं० [मध्य० स०] भारतवर्ष के नौ खंडों में से एक खंड। (विष्णु पुराण)

नाग-धर—वि० [ष० त०] नाग को धारण करनेवाला।

पुं० शिव।

नाग-ध्वनि—स्त्री० [सं०] मल्लार और केदार या सूहा अथवा कान्हड़े और सारंग के योग से बनी हुई एक संकर रागिनी।

नाग-नक्षत्र—पुं० [मध्य० स०] आश्लेषा नक्षत्र।

नाग-नग—पुं० [सं० नाग+हिं० नग]=गज मुक्ता।

नाग-नामक—पुं० [ब० स०, कप्] राँगा।

नाग-नामा (मन्)—पुं० [ब० स०] तुलसी।

नाग-पंचमी—स्त्री० [मध्य स०] श्रावण शुक्ला पंचमी जिस दिन नागों की पूजा करने का विधान है।

नाग-पति—पुं० [ष० त०] १. सर्पों के राजा, वासुकि। २. हाथियों के राजा, ऐरावत।

नाग-पत्रा—स्त्री० [ब० स०, टाप्]=नागदमनी (नागदौना)।

नाग-पत्री—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] लक्ष्मणा (कंद)।

नाग-पद—पुं० [सं०] एक प्रकार का रतिबंध जो सोलह रतिबंधों में से दूसरा माना जाता है।

नाग-पर्णी—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] पान।

नाग-पाश—पुं० [उपमि० स०] १. वरुण का एक अस्त्र जिससे वे शत्रुओं को लपेटकर उसी प्रकार बाँध लेते थे जिस प्रकार नाग या साँप किसी चीज को अपने शरीर से लपेटकर बाँध लेता है। २. सर्पों का फंदा।

जो वे किसी चीज के चारों ओर अपना शरीर लपेटकर बनाते हैं। ३. डोरी आदि का ढाई फेर का फंदा। नाग-बंध।

नाग-पुर—पुं० [ष० त०] १. नागों का पुर, पाताल। २. हस्तिना नामक पुर जहाँ पर्वत के रूप में स्वलील दानव ने गंगा का मार्ग रोका था।

नाग-पुष्प—पुं० [ब० स०] १. नागकेसर। २. पुन्नाग। ३. चंपा।

नाग-पुष्पिका—स्त्री० [ब० स०, कप्, टाप्, इत्व] १. पीली जूही। २. नागदौन।

नाग-पुष्पी—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] १. नागदौन। २. मेढ़ा सींगी।

नागपूत—पुं० [सं० नागपुत्र] कचनार की जाति की एक प्रकार की लता।

नागफनी—स्त्री० [हिं० नाग+फन] १. थूहर की जाति का एक प्रसिद्ध पौधा जिसमें टहनियाँ नहीं होती, केवल साँप के फन के आकार के गूदेदार मोटे दल एक दूसरे के ऊपर निकलते चले जाते हैं। इन दलों में बहुत से काँटे होते हैं जिनसे किसी स्थान को घेरने के लिए इसकी बाढ़ लगाई जाती है। २. नागफनी के दल के आकार की एक प्रकार की कटार जिसका फल आगे की ओर चौड़ा और पीछे की ओर पतला होता है। ३. नरसिंघे की तरह का एक प्रकार का नेपाली बाजा। ४. कान में पहनने का एक प्रकार का गहना। ५. वह कौपीन या लँगोटी जो नागा साधु पहनते या बाँधते हैं।

नाग-फल—पुं० [ब० स०] परवल।

नागफाँस—पुं० [सं० नाग+हिं० फाँस] नाग-पाश। (दे०)

नाग-फेन—पुं० [ष० त०] १. साँप की लार। २. अफीम।

नाग-बंध—पुं० [उपमि० स०] किसी चीज को लपेटकर बाँधने का वह विशेष प्रकार जो प्रायः वैसा ही होता है जैसा नाग का किसी जीव-जंतु या वृक्ष आदि को अपने शरीर से लपेटने का होता है। उदा०—सेस नाग कौ नाग-बंध तापर कसि बाँध्यौ।—रत्ना०।

नाग-बंधु—पुं० [ष० त०] पीपल का पेड़।

नाग-बल—वि० [ब० स०] हाथी की तरह बलवान्।
पुं० भीम।

नाग-बला—स्त्री० [ब० स०, टाप] गँगेरन।

नागबेल—स्त्री० [सं० नागवल्ली] १. पान की बेल। पान। २. किसी चीज पर बनाई जानेवाली वह लहरियेदार बेल जो देखने में साँप की चाल की तरह जान पड़े। ३. घोड़े आदि पशुओं की टेढ़ी-तिरछी चाल।

नाग-भगिनी—स्त्री० [ष०त०] जरत्कारु (वासुकि की बहन)।

नाग-भिद्—पुं० [नाग√भिद् (विदारण)+क्विप्] १. सर्पों की एक जाति। २. उक्त जाति का सर्प, जो बहुत ही जहरीला और भीषण होता है।

नाग-भूषण—पुं० [ब०स०] शिव।

नागमंडलिक—पुं० [सं० नाग-मंडल, ष०त०,+ठन्-इक] सँपेरा।

नागमरोड़—पुं० [हिं० नाग+मरोड़ना] कुश्ती का एक पेंच जिसमें प्रतिद्वंद्वी को अपनी गर्दन के ऊपर से या कमर से एक हाथ से घसीटते हुए गिराते हैं।

नाग-मल्ल—पुं० [स० त०] ऐरावत।

नाग-माता (तृ)—स्त्री० [ष०त०] १. नागों की माता, कद्रू। २. सुरसा नाम की राक्षसी। ३. मनसा देवी। ४. मैनसिल।

नाग-मार—पुं० [नाग√मृ (मरना)+णिच्+अण्] काला भँगरा।

नाग-मुख—पुं० [ब०स०] गणेश।

नाग-यष्टि—स्त्री० [मध्य०स०] तालाब के बीचोबीच गड़ा हुआ लकड़ी या पत्थर का खंभा।

नाग-रंग—पुं० [ब०स०] नारंगी।

नागर—वि० [सं० नगर+अण्] [स्त्री० नागरी, भाव० नागरता] १. नगर-संबंधी। नगर का। (अर्बन) २. नगरवासियों में होने अथवा उनसे संबंध रखनेवाला। (सिविल) जैसे—नागर अधिकार। (सिविल राइट) ३. नगरपालिका, महापालिका या नगर परिषद् से संबंध रखनेवाला। (म्युनिस्पल) जैसे—नागर निधि। (म्युनिस्पल फंड) ४. नागरिकों और उनके अधिकारों तथा कर्तव्यों से संबंध रखनेवाला। (सिविक) ५. चतुर। होशियार।
पुं० १. नगर में रहनेवाला व्यक्ति। नागरिक। २. चतुर, शिष्ट और सभ्य व्यक्ति। ३. विवाहिता स्त्री का देवर। ४. सोंठ। ५. नागर मोथा। ६. नारंगी। ७. गुजरात प्रदेश में रहनेवाले ब्राह्मणों की एक जाति। ८. नागरी लिपि का कोई अक्षर।
पुं० [?] दीवार का टेढ़ापन।

नागरक—पुं० [सं० नगर+वुञ्—अक] १. नगर का प्रबंध या शासन करनेवाला अधिकारी। २. कारीगर। शिल्पी। ३. चोर। ४. कामशास्त्र में एक प्रकार का आसन या रतिबंध। ५. सोंठ।
वि०=नागर।

नाग-रक्त—पुं० [मध्य०स०] १. सर्प का रक्त। २. हाथी का रक्त। ३. सिंदूर।

नागर-घन—पुं० [मयू० स०] नागर मोथा।

नागरता—स्त्री० [सं० नागर+तल्—टाप्] नागर होने की अवस्था, गुण या भाव। (सिटिज़नशिप) २. आचार, व्यवहार आदि का वैसा सभ्यतापूर्ण और शिष्ट प्रकार जैसा साधारणतः शिक्षित और सभ्य नगरवासियों में प्रचलित हो। (सिविलिटी) ३. चतुरता। ४. दे० 'नागरिकता'।

नागरनट—पुं०=नटनागर।

नागर बेल—स्त्री० [सं० नागवल्ली] पान की बेल।

नागर-मुस्ता—स्त्री० [उपमि०स०] =नागरमोथा।

नागरमोथा—पुं० [सं० नागरोत्थ] एक प्रकार का तृण जिसकी पत्तियाँ मूंज या शर की पत्तियों की तरह होती और दवा के काम आती हैं।

नाग-राज—पुं० [ष०त०] १. बहुत बड़ा सर्प। २. शेषनाग। ३. ऐरावत। ४. नराच या पंचामर छंद का एक नाम।

नागराह्वन—पुं० [सं० नागर-आह्वा ब०स०] सोंठ।

नागरिक—वि० [सं० नगर+ठञ्—इक] [भाव नागरिकता] १. (व्यक्ति) जिसने नगर में जन्म लिया हो और नगर में ही जिसका पालन-पोषण हुआ हो। २. चतुर। चालाक।
पुं० किसी राज्य में जन्म लेनेवाला वह व्यक्ति जिसे उस राज्य में रहने, नौकरी या व्यापार करने, संपत्ति रखने तथा स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचार आदि प्रकट करने के अधिकार जन्म से ही स्वतः प्राप्त होते हैं। (सिटिजन)

विशेष—अन्य राज्यों में जन्म लेनेवाले व्यक्ति भी कुछ विशिष्ट

अवस्थाओं में तथा कुछ विशिष्ट शर्तें पूरी करने पर किसी दूसरे राज्य के नागरिक बन सकते हैं।

नागरिकता—स्त्री० [सं० नागरिक+तल्—टाप्] १. नागरिक होने की अवस्था, पद या भाव। २. नागरिक होने पर प्राप्त होनेवाले अधिकार तथा सुविधाएँ।

नागरिक-शास्त्र—पुं० [ष०त० या मध्य०स०] वह शास्त्र जिसमें नागरिकों के अधिकारों और कर्तव्यों का उल्लेख और उसके देश, जाति आदि के परस्पर संबंधों पर विचार होता है। (सिविक्स)

नाग-रिपु—पुं० [ष० त०] शेर। सिंह।

नाग-रिपुछाला—स्त्री० दे० 'बाघंबर'।

नागरी—स्त्री० [सं० नागर+ङीप्] १. नगर की रहनेवाली स्त्री। शहर की औरत। २. चतुर या होशियार स्त्री। ३. पशु आदि की मादा। जैसे—नाग-नागरी=हथिनी। ४. थूहर। ५. पत्थर की मोटाई नापने की एक नाप। ६. पत्थर का बहुत बड़ा और मोटा चौकोर टुकड़ा। ७. देव-नागरी नाम की लिपि। दे० 'देवनागरी'।

नागरीट—पुं० [सं० नागरी√इट् (गति)+क] १. कामुक और व्यसनी पुरुष। २. स्त्री का उपपति। जार। ३. विवाह करानेवाला व्यक्ति। घटक।

नागरुक—पुं० [सं० नाग√रु (गति)+क बा०] नारंगी (वृक्ष और फल)।

नाग-रेणु—पुं० [ष०त०] सिंदूर।

नागरेयक—वि० [सं० नगर+ठकञ्—एय] १. जो नगर में उत्पन्न हुआ हो। २. नागरिक संबंधी। जैसे—नागरेयक अधिकार।

नागरोत्थ—पुं० [सं० नागर-उद्√स्था (स्थिति)+क] नागरमोथा।

नागर्य्य—पुं० [सं० नागर+ष्यञ्] १. नागरता। २. नगरवासियों की-सी चतुराई या चालाकी।

नागल—पुं० [देश०] १. हल। २. वह रस्सी जिससे बैल जूए में जोड़े या बाँधे जाते हैं।

नाग-लता—स्त्री० [उपमि०स०] पान की बेल।

नाग-लोक—पुं० [ष०त०] नागों का देश, पाताल।

नाग-वंश—पुं० [ष०त०] १. नागों का वंश। २. शक जाति की एक शाखा।

नागवंशी (शिन्)—वि० [सं० नागवंश+इनि] १. नागवंश में उत्पन्न। २. नागवंश-संबंधी।

नाग-वल्लरी—स्त्री० [उपमि०स०] पान।

नाग-वल्ली—स्त्री० [उपमि० स०] पान की लता।

ना-गवार—वि० [फा० ना+गवार=अच्छा लगनेवाला] [भाव० नागवारी] अच्छा न लगनेवाला। अप्रिय या अरुचिकर।

ना-गवारा—वि०=नागवार।

नाग-वारिक—पुं० [सं० नाग-वार, ष०त० +ठक्—इक] १. राज-कुंजर। २. हाथियों का झुंड। ३. महावत। ४. गरुड़। ५. मोर।

नाग-वीथी—स्त्री० [ष०त०] १. चन्द्रमा के मार्ग का वह अंश जिसमें अश्विनी, भरणी और कृत्तिका नक्षत्र पड़ते हैं। २. कश्यप की एक पुत्री।

नाग-वृक्ष—पुं० [मध्य०स०] नागकेसर नामक पेड़।

नाग-शत—पुं० [ब०स०] एक प्राचीन पर्वत। (महाभारत)

नाग-शुंडी—स्त्री० [सं० नाग-शुंड ष०त०,+अच्—ङीप्] एक प्रकार की ककड़ी।

नाग-शुद्धि—स्त्री० [ष०त०] मकान की नींव रखते समय इस बात का रखा जानेवाला ध्यान कि कहीं पहला आघात सर्प के मस्तक या पीठ पर न पड़े।

विशेष—फलित ज्योतिष में, विशिष्ट समयों में सर्प का मुख निश्चित दिशाओं में माना जाता है। भादों, कुआर और कातिक में पूरब की ओर, अगहन, पूस और माघ में दक्षिण की ओर आदि आदि सर्प का मुख होता है। कहते हैं कि सर्प के मस्तक पर पहला आघात लगने से स्वामिनी की मृत्यु होती है। पेट पर होनेवाला आघात शुभ माना जाता है।

नाग-संभव—पुं० [ब०स०] १. सिंदूर। २. एक प्रकार का मोती।

नाग-संभूत—पुं० [पं० त०]=नाग-संभव।

नाग-साह्वय—पुं० [ब०स०] हस्तिनापुर।

नाग-सुगंधा—स्त्री० [ब०स०, टाप्] एक प्रकार की रास्ना।

नाग-स्तोकक—पुं० [सं०] वत्सनाभ नामक विष।

नाग-स्फोता—स्त्री० [उपमि०स०] १. नागदंती। २. दंतीवृक्ष।

नाग-हनु—पुं० [ष०त०] नख नामक गंध द्रव्य।

ना-गहाँ—क्रि० वि० [फा०] १. अचानक। अकस्मात्। एकाएक। २. कुसमय में।

ना-गहानी—वि० [फा०] अकस्मात् या अचानक आकर उपस्थित होनेवाला। जैसे—नागहानी आफत, बला या मौत।

नागांग—पुं० [नाग-अंग, ब०स०] हस्तिनापुर।

नागांगना—स्त्री० [ना-गअंगना ष०त०] हथिनी।

नागांचला—स्त्री० [नाग-अंचल, ब०स०, टाप्] नाग-यष्टि।

नागांजना—स्त्री० [नाग-अंजन, ब० स०, टाप्] १. नाग-यष्टि। २. हथिनी।

नागांतक—वि० [नाग-अंतक, ष०त०] नागों का अंत या नाश करनेवाला। पुं० १. गरुड़। २. मोर। ३. सिंह।

नागा—वि० [सं० नग्न] १. नंगा। २. खाली। रहित। रीता। उदा०—नागे हाथे ते गए जिनके लाख करोड़।—कबीर।

पुं० १. शैव साधुओं का एक प्रसिद्ध संप्रदाय। २. उक्त संप्रदाय के साधु जो प्रायः बिलकुल नंगे रहते हैं।

पुं० [सं० नाग] १. असम देश की एक पर्वत-माला। २. एक प्रकार की अर्द्ध-सभ्य जंगली जाति जो उक्त पर्वत-माला में रहती है।

पुं० [तु० नागः] १. वह दिन जिसमें कोई व्यक्ति अपने काम पर उपस्थित न हुआ हो। जैसे—नौकर ने इस महीने में चार नागे किये हैं। २. वह दिन जिसमें परम्परा आदि के कारण कोई काम नहीं किया जाता अथवा काम पर उपस्थित नहीं हुआ जाता। जैसे—रविवार को प्रायः नौकर नागा करते हैं। ३. वह दिन जिसमें कोई नित्य किया जानेवाला काम छूट या रह जाय। जैसे—पढ़ाई का नागा, दूकान का नागा। ४. अनवधान के कारण होनेवाली चूक या व्यतिक्रम। उदा०—नागा करमन कौ करत दुरि छिपि छिपि।—सेनापति।

क्रि० प्र०—करना।—देना।—पड़ना।

नागाख्य—पुं० [नाग-आख्या, ब०स०] नागकेसर।

नागानंद—पुं० [सं०] हर्ष का एक प्रसिद्ध नाटक।

नागानन—पुं०[नाग-आनन, ब०स०] गणेश।

नागाभिभू—पुं०[सं०] महात्मा बुद्ध।

नागाराति—वि०, पुं०[नाग-आराति, ष०त०]=नागांतक।

नागारि—पुं०[नाग-अरि, ष०त०]=नागांतक।

नागार्जुन—पुं०[सं०] एक प्रसिद्ध बौद्ध चिंतक जो माध्यमिक शाखा के प्रवर्तक और बौद्ध धर्म के प्रचारक थे और जिन्होंने बौद्ध धर्म को दार्शनिक रूप दिया था। इनका समय ईसा से लगभग १०० वर्ष अथवा ईसवी पहली शती के आस-पास माना गया है।

नागार्जुनी—स्त्री०[सं०] दुद्धी नाम की घास।

नागालाबु—पुं०[नाग-अलाबु, उपमि०स०] गोल कद्दू।

नागाशन—वि०[नाग-अशन, ष०त०] नागों का नाशक।

पुं०१. गरुड़। २. मोर। ३. सिंह। शेर।

नागाश्रय—पुं० [नाग-आश्रय, प०त०] हस्तिकंद।

नागाह्व—पुं०[ब०स०] नागकेसर (वृक्ष और फूल)।

नागाह्वा—स्त्री० [सं० नाग-आह्वे √ ह्वे (स्पर्धा) + अच्—टाप्] लक्ष्मणकंद।

नागिन—स्त्री०[सं०]१. नाग जाति की स्त्री। २. नाग (सर्प) की मादा। ३. बोलचाल में दूसरों का अपकार, अहित आदि करनेवाली दुष्ट और निष्ठुर स्त्री। ४. मनुष्यों, पशुओं आदि की गरदन या पीठ पर होनेवाली एक प्रकार की भौंरी या लंबी रोमावली जो बहुत ही अशुभ मानी जाती है।

नागिनी—स्त्री०=नागिन।

नागी (गिन्)—पुं०[नाग+इनि] शिव। महादेव।

स्त्री०सं० ['नाग' की स्त्री०] हथिनी।

नागुला—पुं०[सं० नकुल]१. नेवला। २. नाकुली नाम की वनस्पति।

नागेंद्र—पुं०[नाग-इंद्र, ष०त०]१. बहुत बड़ा साँप। २. वासुकि, शेष आदि नाग। ३. बहुत बड़ा हाथी। ४. ऐरावत।

नागेश—पुं० [नाग-ईश, ष० त०] १. शेष नाग। २. एक संस्कृत व्याकरण का नाम।

नागेश्वर—पुं० [नाग-ईश्वर, ष०त०] १. नागेश। शेषनाग। २. वैद्यक में एक प्रकार का रसौषध।

नागेसर—पुं० १.=नागकेसर। २.=नागेश्वर।

नागेसरी—वि०[हिं० नागेसर] नागकेसर के रंग का।

पुं० उक्त प्रकार का रंग।

नागोद—पुं०[सं०] लोहे का तवे के आकार का वह उपकरण, जिसे प्राचीन काल में योद्धा छाती पर बाँधते थे।

पुं०=नागौद।

नागोदर—पुं०[नाग-उदर, ब०स०] दे० 'नागोद'।

नागोदरिका—स्त्री०[नाग-उदर, ब०स०, कप-टाप् इत्व] एक प्रकार का दस्ताना जो युद्ध में हाथ की रक्षा के लिए पहना जाता था। (कौ०)

नागोद्भेद—पुं०[नाग-उद्भेद, ब०स०] मेरु पर्वत का एक स्थान जहाँ सरस्वती की गुप्त धारा ऊपर देखाई पड़ती है।

नागौद—पुं०[हिं० नव+नगर] मारवाड़ के अंतर्गत एक नगर जहाँ की गौएँ और बैल बहुत प्रसिद्ध हैं।

नागौर—पुं०=नागौद।

वि०=नागौरा।

नागौरा—वि०[हिं० नागौद] [स्त्री० नागौरी] १. नागौद या नागौर नामक नगरी से संबंध रखनेवाला। २. अच्छी या बढ़िया जाति या नसल का (चौपाया)।

नागौरी—वि०[हिं० नागौद]१. नागौर का। २. अच्छी जाति या नसल का (चौपाया)। जैसे नागौरी जाति का बैल।

पुं० नागौर का बैल।

स्त्री० १. नागौर की गाय। २. छोटी टिकिया की तरह की एक प्रकार की फूली हुई पूरी। (पकवान)

नाच—पुं०[सं० नृत्य, प्रा० नच्च या नाच्च] १. नाचने की क्रिया जो संगीत का एक प्रसिद्ध अंग है और जिसमें अनेक प्रकार के हावभाव कलात्मक ढंग से प्रदर्शित करने के लिए पैर थिरकाते हुए शरीर के भिन्न-भिन्न अंग आकर्षक तथा मनोहर रूप से और ताल-लय आदि से युक्त रखकर संचालित किये जाते हैं। (दे० 'नाचना')

विशेष—नाच का आरम्भ मुख्यतः अपने मन का उल्लास और निश्चिततापूर्ण प्रसन्नता प्रकट करने के प्रसंग में हुआ था; और अब तक जंगली तथा अर्द्धसभ्य जातियों के लोग तथा अनेक पशु-पक्षी इसी प्रकार नाचते हैं; पर बाद में जब इसका कला-पक्ष विशेष विकसित हुआ, तब दूसरों के मनोरंजन के लिए भी लोग नाच दिखाने लगे और कुछ पशुओं को अपने ढंग पर नाच सिखाने लगे।

मुहा०—**नाच काछना**=नाचने के लिए तैयार होना।

२. लाक्षणिक रूप में अनेक प्रकार के कौतुकों से युक्त कुछ विलक्षण प्रकार की होनेवाली क्रियाएँ और गतियाँ।

मुहा०—**(किसी को) तरह-तरह के नाच नचाना**=मनमाने ढंग से किसी को अनेक प्रकार के ऐसे असंगत और विलक्षण कार्य में प्रवृत्त करना, जिससे वह तंग, दुःखी या परेशान हो।

३. किसी प्रकार की कौतुकपूर्ण क्रिया या गति, जो देखने में क्रीड़ा या खेल की तरह जान पड़े। जैसे—वह बहुत तरह के नाच नाच चुका है।

नाच-कूद—स्त्री० [हिं० नाच+कूद] १. रह-रहकर नाचने और कूदने की क्रिया या भाव। २. ऐसा कृत्य जो दूसरों की दृष्टि में तमाशे का-सा मनोरंजक और हास्यास्पद हो। ३. ऐसा बड़ा उद्योग या प्रयत्न जो अंत में प्रायः निरर्थक सिद्ध हो।

नाच-घर—पुं०[सं० नाच+घर] वह स्थान जहाँ नाचना-गाना आदि होता हो। नृत्यशाला।

नाचना—अ०[सं० नर्तन, हिं० नाच]१. उमंग में आकर और विशुद्ध हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करने के लिए पैरों को थिरकाते हुए और अनेक प्रकार से शरीर के भिन्न-भिन्न अंग हिलाते हुए मनमाने ढंग से उछलना-कूदना। जैसे—सरदार को सकुशल लौटते देखकर सब भील नाचने लगे।

मुहा०—**नाच उठना**=बहुत अधिक प्रसन्नता के आवेग में उछल पड़ना। जैसे—पिताजी के हाथ में खिलौने और मिठाइयाँ देखकर बच्चे नाच उठे।

२. उक्त प्रकार के अंग-संचालन और शारीरिक गतियों का वह कलात्मक विकसित रूप, जो आज-कल शिक्षित और सभ्य समाजों में प्रचलित है, और जिसके साथ ताल और लय का मेल तथा गाना-बजाना भी सम्मि-

लित हो गया है। ३. किसी पदार्थ का बहुत-कुछ उसी प्रकार की चक्राकार गति में आना या होना, जैसी चक्राकार गति नाच के समय मनुष्यों की होती है। जैसे—आतिशबाजी की चरखी या लट्टू का नाचना। ४. किसी वस्तु या व्यक्ति का रह-रहकर जल्दी-जल्दी इधर-उधर आना-जाना, हिलना-डुलना या किसी प्रकार की गति में होना। जैसे—(क) यह लड़का दिन भर इधर-उधर नाचता रहता है; कहीं स्थिर होकर नहीं बैठता। (ख) जब हवा चलती है, तब दीए की लौ नाचती रहती है। (ग) शिकारी का तीर नाचता हुआ सामने से निकल गया।

मुहा०—(किसी अशुभ बात का) **सिर पर नाचना**=इतना पास आ पहुँचना कि तुरन्त कोई बुरा परिणाम दिखाई पड़ सकता हो। जैसे—(क) ऐसा जान पड़ता है कि उसके सिर पर मौत नाच रही है। (ख) अब तुम्हारा पाप तुम्हारे सिर पर नाचने लगा है। **आँखों के सामने नाचना**=उपस्थित या प्रस्तुत न होने पर भी रह-रहकर सामने आता या होता हुआ दिखाई देना। जैसे—वह भीषण दृश्य अब तक मेरी आँखों के सामने नाच रहा है।

५. किसी प्रकार के तीव्र मनोवेग के फलस्वरूप उग्र या विकट रूप से इधर-उधर होना। जैसे—क्रोध से नाच उठना। ६. अनेक प्रकार के ऐसे सांसारिक प्रपंचों और प्रयत्नों में लगे रहना जिनका कोई विशेष सुखद परिणाम न हो। उदा०—अब मैं नाच्यौं बहुत गोपाल।—सूर। ७. दूसरों के कहने पर चलना अथवा उसके इंगितों का अनुसरण करते चलना। जैसे—तुम जिस तरह नचाते हो, मैं उसी तरह नाचता हूँ।

नाच-महल—पुं० नाचघर।

नाच-रंग—पुं० [हिं० नाच+रंग] १. वह उत्सव या जलसा जिसमें नाच-गाना हो। २. आमोद-प्रमोद।

ना-चाकी—स्त्री० [फा० ना+तु० चाकी] १. वैमनस्य। २. अनबन। ३. रोग।

ना-चार—वि० [फा०] [भाव० नाचारी] १. जिसका कोई चारा या प्रतिकार न हो सकता हो। २. लाचार। विवश। ३. तुच्छ। निरर्थक। व्यर्थ। (क्व०)

क्रि० वि० लाचार या विवश होकर।

नाचिकेत—पुं० [सं० नचिकेतस्+अण्] १. अग्नि। २. नचिकेता (ऋषि)।

ना-चीज—वि० [फा० नाचीज] १. जिसकी गिनती किसी चीज में न हो अर्थात् तुच्छ और हीन। २. निकम्मा या रद्दी।

विशेष—कभी-कभी वक्ता इसका प्रयोग अति नम्रता प्रदर्शित करने के लिए अपने संबंध में भी करता है।

नाचीन—पुं० [सं०] १. एक प्राचीन देश। २. उक्त देश का निवासी।

नाज—पुं० [हिं० अनाज] १. अनाज। अन्न। २. भोजन की सामग्री। खाद्य पदार्थ।

पुं० [फा० नाज़] १. आकृष्ट करने या लुभाने के लिए दिखाये जानेवाले कोमल हाव-भाव। चोचला। ठसक। नखरा।

मुहा०—(किसी के) **नाज उठाना**=किसी को प्रसन्न रखने के लिए बिना रुष्ट हुए उसके चोचले या नखरे सहना।

पद—नाज-अदा, नाज-नखरा।

२. किसी की वह देख-रेख जो बहुत दुलार, प्यार, लाड़ या सम्मान से की जाय। जैसे—यह लड़का बहुत नाज (या नाजों) से पाला हुआ है। ३. ऐसा अभिमान या गर्व जो साधारण होने के सिवा प्रशंसनीय या वांछनीय भी हो। जैसे—हमें अपने मुल्क पर नाज है।

नाज-अदा—स्त्री० [फा०] अंगभंगी। (दे०)

नाज-नखरा—पुं० [फा०] किसी को आकृष्ट करने के लिए कुछ कुछ मानपूर्वक की जानेवाली मोहक चेष्टाएँ।

नाजनी—वि० [फा०] सुंदर।

स्त्री०=सुंदर स्त्री।

नाज-बरदारी—स्त्री० [फा०] किसी के चोचले या नखरे सहन करना।

नाजबू—स्त्री० [फा०] मरुआ (पौधा और फूल)।

नाजरीन—पुं० बहु० [अ० नाज़िर (=दर्शक) का बहु०, शुद्ध रूप नाज़िरीन] उपस्थित दर्शक-गण।

नाजाँ—वि० [फा० नाज़ाँ] किसी प्रकार के गुण, विशेषता आदि का अभिमान या गर्व करनेवाला।

ना-जायज—वि० [फा० नाजायज] १. जो जायज अर्थात् उचित न हो।

२. जो नियम, विधि आदि के विरुद्ध हो। अवैध।

नाजिम—पुं० [फा० नाज़िम] १. मुसलमानी शासन में किसी प्रदेश या प्रान्त का प्रबन्ध करनेवाला अधिकारी। २. आज-कल कचहरी या न्यायालय के किसी विभाग के लिपिकों आदि का प्रधान अधिकारी। २. मंत्री। सेक्रेटरी।

नाजिर—वि० [अ० नाज़िर] १. देखनेवाला। दर्शक। २. देख-रेख करनेवाला। निरीक्षक।

पुं० १. वह जो किसी विभाग के लिपिकों आदि का प्रधान अधिकारी हो। २. मुसलमानी शासन में अन्तःपुर, या महल की रक्षा करनेवाला अधिकारी जो हिजड़ा होता था। ३. नाचने-गानेवाली वेश्याओं का दलाल।

नाजिरात—स्त्री० [हिं० नाजिर+आत (प्रत्य०)] १. नाजिर का काम, पद या भाव। २. नाजिर का कार्यालय। ३. वह दलाली जो नाजिर को नाचने-गानेवाली वेश्याओं आदि से मिलती है।

नाजिरीन—पुं०=नाजरीन।

नाजिल—वि० [अ० नाज़िल] १. जो ऊपर से (अर्थात् ईश्वर की ओर से) नीचे आया या उतरा हो। अवतरित। २. आया हुआ।

नाजी—पुं० [जर० नात्सी] १. जर्मनी का एक प्रसिद्ध राजनीतिक दल, जो अपने आप को राष्ट्रीय साम्यवादी कहता था, और जिसका पराभव दूसरे महायुद्ध में हुआ था। २. उक्त दल का सदस्य।

वि० बहुत ही क्रूर।

नाजीवाद—पुं० [हिं०+सं०] यह सिद्धान्त कि जो प्रबल या सबल हों, उन्हीं को राष्ट्र और फलतः संसार का शासन-सूत्र बलपूर्वक अपने हाथों में लेकर चलाना चाहिए। यह सिद्धांत व्यक्ति-स्वातंत्र्य और जनतंत्र का परम विरोधी है।

नाजुक—वि० [फा० नाज़ुक] [भाव० नज़ाकत] १. कोमल। सुकुमार। २. पतला। बारीक। महीन। ३. गूढ़ और सूक्ष्म (भाव या विचार)।

४. इतना कोमल कि सहज में टूट-फूट जाय या बिगड़ जाय। ५. (समय) जिसमें अनिष्ट, अपकार, हानि की विशेष संभावना हो।

नाजुक-दिमाग—वि० [फा०+अ०] १. जिसका दिमाग या मस्तिष्क इतना कोमल हो कि अपनी इच्छा, रुचि आदि के विपरीत होनेवाली छोटी-सी बात भी न सह सके। २. बात-बात पर चिड़चिड़ाने या बिगड़नेवाला व्यक्ति।

नाजुक-बदन—वि० [फा०] सुकुमार शरीरवाला। कोमलांग।
पुं० १. डोरिए की तरह की एक प्रकार की (पुरानी चाल की) मलमल। २. गुल्लाला नामक पौधे और फूल का एक प्रकार।

नाजुक-मिजाज—वि० [फा०+अ०] १. बहुत ही कोमल और मृदु प्रकृतिवाला। २. दे० 'नाजुक दिमाग'।

ना-जेब—वि० [फा० नाजेबा] १. जो देखने में उपयुक्त या ठीक न जान पड़े। अनुपयुक्त। बेमेल। २. भद्दा। भोंड़ा। ३. अश्लील।

नाजो—स्त्री० [फा० नाज] १. चटक-मटक से रहने और नाज-नखरे दिखानेवाली स्त्री। २. कोमल और प्यारी या लाड़ली स्त्री।

नाट—पुं० [सं०√नट् (नाचना)+घञ्] १. नृत्य। नाच। २. नकल। स्वाँग। ३. कर्नाटक के पास का एक प्राचीन देश। ४. उक्त देश का निवासी। ५. संगीत में, एक प्रकार का राग, जो किसी के मत से मेघराग का और किसी के मत से दीपक राग का पुत्र है।
†पुं० [?] काँटे, कील आदि की नोक जो चुभने पर शरीर के अंदर टूट कर रह जाती है। उदा०—चुंबक साँवरे पीय बिनु क्यों निकसहिं ते नाट।—नंददास।

नाटक—पुं० [सं०√नट्+ण्वुल्—अक] १. नाट्य या अभिनय करनेवाला। नट। २. नटों या अभिनेताओं के द्वारा रंगमंच पर होनेवाला ऐसा अभिनय, जिसमें दूसरे पात्रों का रूप धरकर उनके आचरणों, कार्यों, चरित्रों, हाव-भावों, आदि का प्रदर्शन करते हैं। अभिनय। (ड्रामा) ३. वह साहित्यिक रचना, जिसमें किसी कक्ष या घटना का ऐसे ढंग से निरूपण हुआ हो कि रंग-मंच पर सहज में उसका अभिनय हो सके। ४. कोई ऐसा आचरण या व्यवहार जो शुद्ध हृदय से नहीं, बल्कि केवल दूसरों को दिखलाने या धोखे में रखने के उद्देश्य से किया जाय। जैसे—यह पंचायत क्या हुई है, उसका नाटक भर हुआ है।

नाटक-शाला—स्त्री०=नाट्यशाला।

नाटका-देवदारु—पुं० [नाटक+देवदारु] दक्षिण भारत में होनेवाला एक प्रकार का छोटा पेड़, जिसकी लकड़ी से एक प्रकार का तेल निकलता है। इसकी फलियों का साग बनता है और फल गरीब लोग दुर्भिक्ष के समय खाते हैं।

नाटकावतार—पुं० [सं० नाटक-अवतार, ष० त०] किसी नाटक में अभिनय के अंतर्गत होनेवाला दूसरे नाटक का अभिनय।

नाटकिया—पुं० [सं० नाटक+हिं० ईया (प्रत्य०)] १. नाटक में अभिनय करनेवाला। २. बहुरूपिया।

नाटकी—स्त्री० [सं०] इंद्रसभा।
पुं० [सं० नाटक] नाटक करके जीविका उपार्जन करनेवाला व्यक्ति। नाटकिया।
वि०=नाटकीय।

नाटकीय—वि० [सं० नाटक+छ—ईय] १. नाटक-संबंधी। नाटक का। २. बहुत ही आकस्मिक रूप से, परन्तु कुशलता और चतुरतापूर्वक किया जानेवाला।

नाटना—अ०=नटना (पीछे हटना या मुकरना)।

नाट वसंत—पुं० [सं०] संगीत में एक प्रकार का संकर राग।

नाटा—वि० [सं० नत=नीचा] [स्त्री० नाटी] १. जिसकी ऊँचाई या डील साधारण से कम हो। छोटे कद या डील का। कम ऊँचा या कम लंबा। जैसे—नाटा आदमी, नाटा पेड़।
पुं० कम ऊँचा या छोटे डील का बैल।

नाटा करंज—पुं० [हिं० नाटा+करंज] एक प्रकार का करंज।

नाटाभ्र—पुं० [सं०] तरबूज।

नाटार—पुं० [सं० नटी+आरक्] अभिनेत्री का पुत्र।

नाटिका—स्त्री० [सं० नाटक+टाप्, इत्व] कल्पित कथावाला एक प्रकार का दृश्य-काव्य जिसका नायक राजा, नायिका कनिष्ठा तथा अधिकतर पात्र राज-कुल के होते हैं। इसमें स्त्री-पात्रों और नृत्य-गीत आदि की बहुलता होती है।

नाटित—भू० कृ० [सं०√नट्+णिच्+क्त] (नाटक) जिसका अभिनय हो चुका हो। अभिनीत।
पुं० अभिनय।

नाट्य—पुं० [सं० नट+ञ्य] १. नट का काम या भाव। २. नाचने-गाने, बाजे आदि बजाने और अभिनय करने का काम। ३. अभिनय आदि के रूप में किसी की नकल करने या स्वाँग भरने की क्रिया या भाव। ४. ऐसा नक्षत्र जिसमें नाट्य या नाटक का आरंभ शुभ माना जाता हो।

नाट्यकार—पुं० [सं० नाट्य√कृ (करना)+अण्] १. नाटक करनेवाला। नट। २. नाटक में अभिनय करनेवाला व्यक्ति। अभिनेता। ३. नाटककार।

नाट्यधर्मिका—स्त्री० [सं० नाट्य-धर्म, ष० त०+ठन्—इक] वह पुस्तिका जिसमें अभिनय-संबंधी निर्देश हों।

नाट्य-प्रिय—पुं० [ब० स०] महादेव।

नाट्य-मंदिर—पुं० [ष० त०] नाट्यशाला।

नाट्य-रासक—पुं० [सं०] एक प्रकार का उपरूपक दृश्य-काव्य जिसमें एक ही अंक होता है। इसका नायक उदात्त, नायिका वासक-सज्जा और उपनायक पीठमर्द होता है। इसमें अनेक प्रकार के गीत और नृत्य होते हैं।

नाट्य-शाला—स्त्री० [सं० ष० त०] विशिष्ट आकार-प्रकार का बना हुआ वह भवन या मकान जिसमें एक ओर अभिनय या नाटक करने का मंच और दूसरी ओर दर्शकों के बैठने के लिए स्थान होता है। रंग-शाला।

नाट्य-शास्त्र—पुं० [ष० त०] वह शास्त्र जिसमें नाचने-गाने और अभिनय आदि करने की कलाओं का विवेचन होता है।

नाट्यागार—पुं० [नाट्य-आगार, ष० त०] नाट्यशाला।

नाट्यालंकार— [पुं० नाट्य-अलंकार, ष० त०] अभिनय या नाटक का सौंदर्य बढ़ानेवाली वे विशिष्ट बातें, जिन्हें साहित्यकारों ने उनके अलंकार के रूप में माना है।
विशेष—साहित्य-दर्पण में ये ३३ नाट्यालंकार कहे गए हैं—आशीर्वाद, अक्रंद, कपट, अक्षमा, गर्व, उद्यम, आश्रय, उत्प्रासन, स्पृहा, क्षोभ, पश्चात्ताप, उपपति, आशंसा, अध्यवसाय, विसर्प,

उल्लेख, उत्तेजन, परीवाद, नीति, अर्थ विशेषण, प्रोत्साहन, सहाय्य, अभिमान, अनुवृत्ति, उतकीर्तन, यांचा, परिहार, निवेदन, पवर्तन, आख्यान, युक्ति, प्रहर्ष और शिक्षा।

नाट्योक्ति—स्त्री० [नाट्य-उक्ति, स० त०] भारतीय नाट्यशास्त्र में विशिष्ट पात्रों के लिए बतलाई हुई कुछ विशिष्ट रूप की उक्तियाँ या कथन-प्रकार; यथा—ब्राह्मणों को 'आर्य', राजा को 'देव', पति को 'आर्यपुत्र' आदि कहकर संबोधित करने का विधान।

नाट्योचित—वि० [नाट्य-उचित, ष० त०] १. जो नाट्य या नाटक के लिए उचित या उपयुक्त हो। २. जिसका अभिनय हो सके।

नाठ—पुं० [सं० नष्ट, प्र० नट्ठ] १. नाश। ध्वंस। २. अभाव। कमी। ३. ऐसी संपत्ति, जिसका कोई अधिकारी या स्वामी न रह गया हो।

मुहा०—**नाठ पर बैठना**=ऐसी संपत्ति का अधिकार पाना, जिसका कोई स्वामी न रह गया हो।

नाठना—स० [सं० नष्ट, प्रा० नष्ट] नष्ट करना, ध्वस्त करना।

अ० नष्ट होना।

अ० दे० 'नटना'।

नाठा—पुं० [हिं० नाठ] वह जिसके आगे-पीछे कोई वारिस न रह गया हो।

†पुं० [सं० नासिका] नाक।

नाड़—स्त्री० [सं० नाल, डस्म लः] १. ग्रीवा। गर्दन। २. दे० 'नार'। ३. दे० 'नाल'।

नाड़क—वि० [सं०] नली या नल के आकार का और लंबा।

पुं० एक प्रकार की बड़ी और बहुत लंबी मछली।

नाड़ा—पुं० [सं० नाड़] १. सूत की वह मोटी डोरी, जिससे स्त्रियाँ घाघरा बाँधती हैं। इजारबंद। नीबी।

मुहा०—**नाड़ा खोलना**=किसी के साथ संभोग करने के लिए उद्यत होना। (बाजारू)

२. वह पीला या लाल रँगा हुआ गंडेदार सूत जिसका उपयोग देव-पूजन आदि में होता है। मौली।

मुहा०—**नाड़ा बाँधना**=किसी को कोई कला या विद्या सिखलाने के लिए अपना शिष्य बनाना।

३. पेट की अंदर की वह नली जिससे होकर मल आँतों की ओर आता है।

मुहा०—**नाड़ा उखड़ना**=उक्त नली का अपने स्थान से कुछ खिसक जाना, जिसके फलस्वरूप दस्त आने लगते हैं। **नाड़ा बैठाना**=झटके आदि से उक्त नली को फिर अपने स्थान पर लाना।

नाडिंधम—वि० [सं० नाडी√ध्मा (शब्द)+खश्, मुम् धमादेश ह्रस्व] १. नली के द्वारा हवा फूंकनेवाला। २. नाड़ियों को हिला देनेवाला। ३. श्वास-प्रश्वास की क्रिया को तीव्र करनेवाला।

पुं० सुनार।

नाडिंधय—पि० [सं० नाडी√धे (पीना)+खश्, मुम्, ह्रस्व] नाड़ी के द्वारा पान करनेवाला।

नाडि—स्त्री० [सं०√नड्+णिच्+इन्] १. नाड़ी। २. नली।

नाड़िक—पुं० [सं० नाडि+कन्] १. एक प्रकार का साग जिसे पटुआ भी कहते हैं। २. समय का घटिका या दंड नामक मान। ३. दे० नाड़ी।

नाड़िका—स्त्री० [सं० नाड़ी+कन्.-टाप्, ह्रस्व] एक घड़ी का समय। घटिका।

नाड़िकेल—पुं० [सं०=नारिकेल+रस्य ड:] नारियल।

नाड़िपत्र—पुं० [सं०] एक प्रकार का साग। पटुआ नामक साग।

नाड़िया—पुं० [हिं० नाड़ी] नाड़ी देखकर रोग का पता लगानेवाला अर्थात् वैद्य।

नाड़ी—स्त्री० [सं० नाड़ि+ङीष्] १. नली। २. शरीर के अंदर मांस और तंतुओं से मिलकर बनी हुई बहुत-सी नालियों में से कोई या हर एक जो हृदय से शुद्ध रक्त लेकर सब अंगों में पहुँचाती हैं। धमनी। ३. कलाई पर की वह नाड़ी, जिसकी गति आदि देखकर रोगी की शारीरिक अवस्था विशेषतः ज्वर आदि का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। (वैद्य)

मुहा०—**नाड़ी चलना**=कलाई की नाड़ी में स्पंदन या गति होना, जो जीवित रहने का लक्षण है। **नाड़ी छूटना**=उक्त नाड़ी का स्पंदन बंद हो जाना जो मृत्यु हो जाने का सूचक होता है। **नाड़ी देखना**=कलाई की नाड़ी पर उंगलियां रखकर उनकी गति देखना और उसके आधार पर रोग का निदान करना। (वैद्यों की परिभाषा) **नाड़ी धरना या पकड़ना**=नाड़ी देखना। **नाड़ी बोलना**=नाड़ी में गति या स्पंदन होता रहना। जैसे—अभी नाड़ी बोल रही है, अर्थात् अभी शरीर में प्राण हैं।

४. बंदूक की नली। ५. काल का एक मान जो ६ क्षणों का होता है। ६. गाँडर दूब। ७. वंशपत्री। ८. कपट। छल। ९. फोड़े आदि का मुंह। १०. फलित ज्योतिष में, वैवाहिक गणना में काम आनेवाले चक्रों में बैठाये हुए नक्षत्रों का समूह। ११. तृण या वनस्पति का पोला डंठल।

नाड़ीक—पुं० [सं० नाड़ी√कै (मालूम पड़ना)+क] एक प्रकार का साग। पटुआ साग।

नाड़ी-कलापक—पुं० [सं० ब० स०, कप्] सर्पाक्षी या भिड़नी नाम की घास।

नाड़ीका—स्त्री० [सं० नाड़ी+कन्—टाप्] श्वास-नलिका।

नाड़ी-कूट—पुं० [सं० ब० स०] नाड़ी-नक्षत्र।

नाड़ी-केल—पुं० [सं०=नारिकेल, पृषो० सिद्धि] नारियल।

नाड़ीच—पुं० [सं० नाड़ी√चि (चयन)+ड] पटुआ (साग)।

नाड़ी-चक्र—पुं० [सं०] १. हठयोग के अनुसार नाभिदेश में कल्पित एक अंडाकार गाँठ, जिससे निकलकर सब नाड़ियाँ फैली हुई मानी गई हैं। २. फलित ज्योतिष में वह चक्र जो वैवाहिक गणना के लिए बनाया जाता है और जिसके भिन्न-भिन्न कोष्ठों में भिन्न-भिन्न नक्षत्रों के नाम लिखे होते हैं।

नाड़ी-चरण—पुं० [सं० ब० स०] पक्षी।

नाड़ी-जंघ—पुं० [सं० ब० स०] १. महाभारत के अनुसार एक बगला जो कश्यप का पुत्र, ब्रह्मा का अत्यंत प्रिय-पात्र और दीर्घ-जीवी था। २. एक प्राचीन ऋषि। ३. कौआ।

नाड़ी-तरंग—पुं० [सं० ब० स०] १. काकोल। २. हिंडक।

नाड़ी-तिक्त—पुं॰ [तृ॰ त॰] नेपाली नीम। नेपाल निंब।

नाड़ी-देह—वि॰ [ब॰ स॰] अत्यंत दुबला-पतला।
पुं॰ शिव का एक द्वारपाल।

नाड़ी-नक्षत्र—पुं॰ [मध्य॰ स॰] फलित ज्योतिष में, वैवाहिक गणना के काम के लिए बनाए हुए कल्पित चक्रों में स्थित नक्षत्र।

नाड़ी मंडल—पुं॰ [सं॰] विषुवत् रेखा। (दे॰)

नाड़ी-यंत्र—पुं॰ [उपमि॰ स॰] एक प्रकार का प्राचीन उपकरण, जिससे नाड़ियों की चीर-फाड़ की जाती थी और उनमें घुसी हुई चीजें निकाली जाती थीं। (सुश्रुत)

नाड़ी-वलय—पुं॰ [ष॰ त॰] समय का ज्ञान करानेवाली एक प्रकार का प्राचीन उपकरण।

नाड़ी-व्रण—पुं॰ [मध्य॰ स॰] एक प्रकार का घाव जो नली के छेद के समान होता है तथा जिसमें से मवाद निकलता रहता है। नासूर। (साइनस)

नाड़ी-शाक—पुं॰ [मध्य॰ स॰] पटुआ (साग)।

नाड़ी-हिंगु—पुं॰ [मध्य॰ स॰] १. एक तरह का वृक्ष जिसके गोंद में हींग की सी गंध होती है। २. उक्त वृक्ष का गोंद जो ओषधि के काम आता है।

नाडूवाना—पुं॰ [देश॰] मैसूर राज्य में होनेवाले एक तरह के बैल, जो कद में छोटे होने पर भी अधिक परिश्रमी होते हैं।

नाणाक—पुं॰ [सं॰√अण् (शब्द)+ण्वुल्—अक, न॰ त॰] १. धातु। २. निष्क नाम का पुराना सिक्का। ३. सिक्का।

नात—स्त्री॰ [अ॰ नअत] १. मुहम्मद साहब की छंदोबद्ध स्तुति। २. प्रशंसा। स्तुति।
†पुं॰ १.=नाता (संबंध)। २.=नातेदार (संबंधी)।

नातका—पुं॰ [अ॰ नातिक] बोलने की शक्ति। वाक्-शक्ति।
मुहा॰—(किसी का) नातका बंद करना=वाद-विवाद में निरुत्तर और परास्त करना।

ना-तमाम—वि॰ [फा॰] १. जो अभी पूरा न हुआ हो। अपूर्ण। २. जिसका कुछ अंश अभी पूरा होने को बाकी हो। अधूरा।

नातरि—अव्य॰=नातरु।

नातरु—अव्य॰ [हिं॰ न+तो+अरु] नहीं तो। अन्यथा।

नातवाँ—वि॰ [फा॰ नातुवाँ] [भाव॰ नातवानी] शारीरिक दृष्टि से अशक्त। दुर्बल।

नातवानी—स्त्री॰ [फा॰ नातुवानी] शारीरिक अशक्तता। दुर्बलता।

नाता—पुं॰ [सं॰ ज्ञाति, प्रा॰, णाति, हिं॰, नात] १. मनुष्यों में होनेवाला वह पारिवारिक लगाव या संबंध जो रक्त-संबंध के कारण अथवा विवाह आदि सूत्रों के कारण स्थापित होता है। रिश्ता। जैसे—वे नाते में हमारे भतीजे होते हैं।
पद—नाता-गोता, नातेदार। (दे॰)
२. वैवाहिक संबंध का निश्चय। जैसे—अभी उनके लड़के का नाता कहीं पक्का नहीं हुआ है। ३. किसी प्रकार का लगाव या संबंध। जैसे—प्यार या मुहब्बत का नाता, दोस्ती का नाता।
क्रि॰ प्र॰—जोड़ना।—तोड़ना।—लगाना।

ना-ताकत—वि॰ [फा॰ ना॰+अ॰ ताकत] [भाव॰ नाताकती] जिसमें ताकत न हो। अशक्त।

ना-ताकती—स्त्री॰ [फा॰ ना+अ॰ ताकत+ई (प्रत्य॰)] नाताकत होने की अवस्था या भाव। कमजोरी। दुर्बलता।

नाता-गोता—पुं॰ [हिं॰ नाता+गोता] वंश और गोत्र के कारण होनेवाला पारस्परिक संबंध।

नातिन†—स्त्री॰ हिं॰ 'नाती' का स्त्री॰।

नातिनी—स्त्री॰=नातिन।

नाती—पुं॰ [सं॰ नप्तृ] [स्त्री॰ नतिनी, नातिन] १. लड़की का लड़का। बेटी का बेटा। †२. लड़के का लड़का। उदा॰—उत्तम कुल पुलस्त्य कर नाती।—तुलसी।

नाते—अव्य॰ [हिं॰ नाता] १. लगाव या संबंध के विचार से। २. किसी प्रकार के संबंध के विचार से। व्याज से। जैसे—चलो इसी नाते उनका आना-जाना तो शुरू हुआ। ३. वास्ते। हेतु।
पद—किस नाते=किस उद्देश्य से। किस लिए।

नातेदार—वि॰ [हिं॰ नाता+दार] [भाव॰ नातेदारी] (व्यक्ति) जिससे कोई नाता हो। रिश्तेदार। संबंधी।

नात्र—पुं॰ [सं॰√नम् (प्रणाम करना)+ष्ट्रन्, आत्व] शिव।

नाथ—पुं॰ [सं॰√नाथ (ऐश्वर्य)+अच्] १. प्रभु। स्वामी। जैसे—दीनानाथ, विश्वनाथ। २. अधिपति। मालिक। ३. विवाहिता स्त्री का पति। ४. शिव। ५. आदिनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ के अनुयायियों या गोरखपंथियों का संप्रदाय। ६. उक्त संप्रदाय के अनुयायी साधुओं के नाम के अंत में लगनेवाली उपाधि। ७. उक्त संप्रदाय के अनुयायियों के अनुसार वह सबसे बड़ा योगीश्वर जो सब बातों से अलिप्त रहकर मोक्ष का अधिकारी हो चुका हो। ८. साँप पालनेवाले एक प्रकार के मदारी।
स्त्री॰ [सं॰ नाथ या हिं॰ नाथना] १. नाथने की क्रिया या भाव। २. वह रस्सी जो ऊँटों, बैलों, आदि के नथनों में उन्हें वश में रखने के लिए डाली या बाँधी जाती है।
†स्त्री॰=नथ (नाक में पहनने की)।

नाथता—स्त्री॰ [सं॰ नाथ+तल्—टाप्] 'नाथ' होने की अवस्था या भाव। नाथत्व।

नाथत्व—पुं॰ [सं॰ नाथ+त्व] =नाथता।

नाथ-द्वारा—पुं॰ [सं॰ नाथद्वार] उदयपुर के अंतर्गत वल्लभ-संप्रदाय के वैष्णवों का एक प्रसिद्ध तीर्थ, जहाँ श्रीनाथजी की मूर्ति स्थापित है।

नाथना—स॰ [सं॰ नस्तन] १. कुछ विशिष्ट पशुओं के नथने में छेद करना। जैसे—ऊँट या बैल नाथना। २. इस प्रकार किए हुए छेद में लंबी रस्सी पहनाना जो लगाम का काम करती है तथा जिससे पशु को वश में रखा जाता है।
मुहा॰—नाक पकड़कर नाथना=बलपूर्वक वश में करना।
३. किसी चीज के सिरे में छेद करके उसे डोरे, रस्सी आदि से बाँधना। ४. कई चीजें एक साथ रखने की लिए उन में उक्त प्रकार की क्रिया करना। नत्थी करना। ५. लड़ी के रूप में गूँथना, जोड़ना या पिरोना।
संयो॰ क्रि॰—डालना।—देना।

नाथ-पंथ—पुं॰ [सं॰] गुरु गोरखनाथ और उनके शिष्यों का चलाया हुआ

एक संप्रदाय जिसकी ये बारह शाखाएँ हैं—सत्यनाथी, धर्मनाथी, रामपंथ, नटेश्वरी, कन्हण, कपिलानी, वैरागी, माननाथी, आईपंथ, पागलपंथ, धजपंथ, और गंगानाथी। ये सभी शिव के भक्त हैं।

नाथपंथी—पुं० [सं०] नाथ पंथ का अनुयायी।

नाथवान् (वत्)—वि० [सं० नाथ+मतुप्] पराधीन।

नाथ-हरि—पुं० [सं०नाथ√हृ (हरण)+इन्] पशु।

नाद—पुं० [सं०√नद् (शब्द)+घञ्] १. आवाज। शब्द। २. जोर की वह आवाज या ध्वनि, जो कुछ समय तक बराबर होती रहे। ३. वेदांत में, विश्व में उत्पन्न होनेवाला वह क्षोभ जो उपाधियुक्त चैतन्य से उपाधियुक्त शक्ति का संयोग होने के समय होता है। इसे 'परनाद' भी कहते हैं। ४. हठयोग में, अंतरात्मा में होती रहनेवाली एक प्रकार की सूक्ष्म ध्वनि या शब्द जो एकाग्र चित्त होकर अभ्यास करने पर सुनाई पड़ती है और जिसे सुनते रहने से चित्त अंत में नाद-रूपी ब्रह्म में लीन हो जाता है। ५. वर्णों का अव्यक्त मूल-रूप। ६. भाषा-विज्ञान और व्याकरण में वर्णों के उच्चारण में होनेवाला एक विशेष प्रकार का प्रयत्न जिसमें कंठ से वायु का स्वर निकालने के लिए न तो उसे बहुत फैलाना ही पड़ता है और न बहुत सिकोड़ना ही पड़ता है। ७. गाना-बजाना। संगीत।

पद—नाद-विद्या=संगीत शास्त्र।

८. कुछ-कुछ अनुस्वार के समान उच्चरित होनेवाला वर्ण या स्वर जो अर्द्ध-चंद्र पर विंदु देकर इस प्रकार लिखा जाता है ँ। ९. सिंगी नामक बाजा। उदा०—सेली नाद बभूत न बटवो अजूँ मुनी मुख खोल।—मीराँ।

नादना—अ० [सं० नाद] १. ध्वनि या शब्द होना। २. बजना। ३. गरजना, चिल्लाना या शोर मचाना।

स० १. ध्वनि या शब्द उत्पन्न करना। २. बजाना।

अ० [सं० नंदन] १. दीए की लौ का हवा लगने से रह-रहकर हिलना। २. प्रसन्नतापूर्वक इधर-उधर हिलना-डोलना। उदा०—उठति दिया लौ, नादि हरि लिये तिहारो नाम।—बिहारी। ३. लह-राना।

नाद-मुद्रा—स्त्री० [सं० मध्य० स०] तंत्र में हाथ की वह मुद्रा जिसमें दाहिने हाथ का अँगूठा सीधा और खड़ा रखा जाता है और मुट्ठी बंधी रहती है।

नादली—स्त्री० [अ० नादे अली] संग यशब नामक पत्थर की वह चौकोर टिकिया जिसे रोग या बाधा दूर करने के लिए गले में या बाँह पर पहनते हैं। हौल-दिली। (दे०)

नादान—वि० [फा०] [भाव० नादानी] १. अवस्था में कम होने के कारण जिसे समझ न आई हो। ना-समझ। २. जो अकुशल या अनाड़ी हो। ३. मूर्ख।

ना-दानिस्ता—क्रि० वि० [फा० नादानिस्तः] १. बिना जाने या समझे हुए। २. अनजान में।

नादानी—स्त्री० [फा०] १. नादान होने की अवस्था या भाव। २. अकुशलता। अनाड़ीपन। ३. मूर्खता या मूर्खतापूर्ण कोई कार्य।

नादार—वि० [फा०] [भाव० नादारी] जिसके पास कुछ न हो। परम निर्धन। कंगाल।

पुं० गंजीफे के खेल में; बिना रंग या बिना मीर की बाजी।

नादारी—स्त्री० [फा०] 'नादार' होने की अवस्था या भाव। निर्धनता। गरीबी।

नादि—वि० [सं० नादिन] १. शब्द करनेवाला। २. गरजनेवाला।

नादित—भू० कृ० [सं० नाद+इतच्] १. जो नाद से युक्त किया गया हो अथवा हुआ हो। २. शब्द करता हुआ। बजता हुआ। ३. गूंजता हुआ।

नादिम—वि० [अ०] [भाव० नदामत] १. लज्जित। शर्मिंदा। २. पश्चात्ताप करनेवाला।

नादिया—पुं० [सं० नंदी] १. नंदी। २. वह विकृत, विलक्षण, या अधिक अंग या अंगोंवाला साँड़, जिसे जोगी अपने साथ लेकर भीख माँगने निकलते हैं।

नादिर—वि० [फा० नादिर] १. विचित्र। विलक्षण। २. उत्तम। श्रेष्ठ।

नादिरशाह—पुं० [अ०] पारस (फारस) देश का एक प्रसिद्ध राजा जिसने मुहम्मद शाह के समय में भारत पर आक्रमण किया था।

विशेष—यह अपनी क्रूरता के लिए प्रसिद्ध है। इसने एक छोटी-सी बात पर क्रुद्ध होकर दिल्ली के लाखों निवासियों की हत्या करवा डाली थी।

नादिरशाही—स्त्री० [हिं० नादिरशाह] १. नादिरशाह का वह बर्बरता पूर्ण व्यवहार जो उसने दिल्ली में किया था और जिसके फल-स्वरूप लाखों आदमी मारे गए थे। २. ऐसा आचरण, व्यवहार या शासन, जो बहुत ही निर्दयतापूर्वक और मनमाने ढंग से किया जाय।

वि० वैसा ही उग्र, कठोर और मनमाना, जैसा दिल्ली में नादिरशाह का आचरण या व्यवहार था। नादिरी।

नादिरी—वि० [अ०] १. नादिरशाह-संबंधी। २. अत्याचार और क्रूरतापूर्ण।

स्त्री० १. एक प्रकार की कुरती या सदरी जो मुगल बादशाहों के समय में पहनी जाती थी।

पुं० गंजीफे का वह पत्ता जो खेल के समय निकालकर अलग रख दिया जाता है।

मुहा०—(किसी पर) नादिरी चढ़ाना=बहुत बुरी तरह से मात करना या हराना।

नादिहंद—वि० [फा०] जो किसी की चीज या धन लेकर जल्दी लौटाता न हो। देन लौटाने में बराबर टाल-मटोल करता रहनेवाला।

नादिहंदी—स्त्री० [फा०] नादिहंद होने की अवस्था या भाव। देन लौटाने में टाल मटोल करना।

नादी—वि० [सं० नादिन्] [स्त्री० नादिनी] १. नाद या शब्द-संबंधी। २. नाद या शब्द करनेवाला। ३. बजानेवाला।

नादेअली—स्त्री० दे० 'नादली'।

नादेय—वि० [सं० नदी+ढक्—एय] [स्त्री० नादेयी] १. नदी-संबंधी। २. नदी में होनेवाला।

पुं० १. सेंधा नमक। २. सुरमा। ३. जलबेंत। ४. काँस नामक घास।

नादेयी—स्त्री० [सं० नादेय+ङीष्] १. जलबेंत। २. भुइँ जामुन।

३. नारंगी। ४. वैजयन्ती। ५. जपा। अड़हुल। ६. अग्निमंथ। अँगेथू।

वि० सं० 'नादेय' का स्त्री०।

नादेहंद—वि०=नादिहंद।

नाद्य—वि० [सं० नदी+ढ्यण्] नदी-संबंधी।

†कमल।

नाधन—स्त्री० [हिं० नाधना] १. नाधने की क्रिया या भाव। २. चरखे के तकले में लगा हुआ गत्ते, चमड़े आदि का वह गोल टुकड़ा जो तागे को इधर-उधर होने से रोकता है।

नाधना—स० [सं० नद्ध] १. कोई कार्य अनुष्ठित या आरंभ करना। ठानना। २. दे० 'नाथना' (सभी अर्थों में)।

नाधा—पुं० [हिं० नाधना] वह रस्सी या चमड़े की पट्टी जिससे जुए में कोल्हू, हल आदि बाँधे जाते हैं।

पुं० [?] वह स्थान जहाँ जलाशय से पानी निकाल कर फेंका जाता है और जहाँ से नालियों में होता हुआ वह सिंचाई के लिए खेतों में जाता है।

नान—स्त्री० [फा०] १. मोटी बड़ी रोटी।

पद—**नान-नुफ़का**=रोटी और कपड़ा; अर्थात् खाने-पीने और पहनने आदि की सामग्री।

२. तंदूर में पकाई जानेवाली एक प्रकार की मोटी खमीरी रोटी। ३. खमीरी रोटी।

नानक—वि० [पं० नानका=ननिहाल] [स्त्री० नानकी] जो ननिहाल में उत्पन्न हुआ हो।

पुं० कबीर के समकालीन एक प्रसिद्ध निर्गुण ज्ञानी भक्त जो सिक्ख संप्रदाय के आदि गुरु माने जाते हैं। (वि० सं० १५२६-९७)

नानक-पंथ—पुं० [हिं०] गुरु नानक का चलाया हुआ सिक्ख-संप्रदाय।

नानक-पंथी—वि० [हिं० नानक+पंथ] १. नानक पंथ-संबंधी। २. नानक का अनुयायी।

नानकशाह—पुं०=नानक (महात्मा)।

नानकशाही—वि०=नानकपंथी।

नानकार—स्त्री० [फा० नान=रोटी+कार (प्रत्य०)] वह जमीन जो सेवक को पुरस्कार रूप में जीविका-निर्वाह के लिए दी जाती थी।

नानकीन—पुं० [चीनी नानकिङ] चीन के नानकिङ नगर में बननेवाला एक तरह का बढ़िया सूती कपड़ा, जो अब सभी देशों में बनने लगा है और 'मारकीन' के नाम से प्रसिद्ध है।

नान-खताई—स्त्री० [फा० नान=रोटी+खता (एक प्रदेश का नाम)] १. खता नामक प्रदेश में बननेवाली एक प्रकार की मीठी खस्ता रोटी। २. मैदे, सूजी आदि का बना हुआ एक तरह का मीठा खस्ता पकवान।

नानबाई—पुं० [फा० नान+बा=बेचनेवाला] वह जो नान अर्थात् रोटियाँ बेचता हो।

नानस—स्त्री० [?] ननिया सास का संक्षिप्त रूप।

नाना—वि० [सं० न+नाञ्] [भाव० नानत्व] १. अनेक प्रकार के। बहुत तरह के। विविध। (बहु०) २. अनेक। बहुत।

पुं० [देश०] [स्त्री० नानी] माता का पिता या मातामह।

†स० [सं० नमन] १. नवाना। झुकाना। २. प्रविष्ठ करना। घुसाना। ३. अन्दर रखना। डालना। ४. संयो० क्रि० के रूप में, पूरा करना। उदा०—अस मनमथ महेश कै नाई।—तुलसी।

पुं० [अ० नऽनऽ] पुदीना। जैसे—अर्कनाना=पुदीने का अरक।

नानाकंद—पुं० [सं०] पिंडालू।

नानात्मवादी (दिन्)—वि० [सं० नाना-आत्मन्, कर्म० स०, नानात्मन् √वद् (बोलना)+णिनि] सांख्य दर्शन का अनुयायी जो यह मानता हो कि व्यक्ति की आत्मा विश्वात्मा से अलग अस्तित्व रखती है।

नानार्थ—वि० [सं० नाना-अर्थ, ब० स०] १. (शब्द) जिसके अनेक अर्थ हों। २. (वस्तु) जो अनेक कामों में प्रयुक्त हो सके।

नानिहाल—पुं०=ननिहाल (नाना का घर)।

नानी—स्त्री० [हिं० नाना का स्त्री०] माँ की माँ। माता की माता। मातामही।

मुहा०—**नानी मरना या मर जाना**=(क) इतना उदास, खिन्न या दुःखी हो जाना कि मानों नानी मर गई हो। (ख) बहुत अधिक विपत्ति या झंझट में पड़ना। **नानी याद आना**=ऐसी विपत्ति या संकट में पड़ना कि मानों बच्चों की तरह नानी की सहायता या संरक्षण की अपेक्षा कर रहे हो। (परिहास और व्यंग्य)

पद—**नानी की कहानी**=पुरानी और व्यर्थ की लंबी-चौड़ी बातें।

ना-नुकर—पुं० [हिं० न+करना] 'नहीं', 'नहीं' कहने की क्रिया या भाव। इन्कार।

नानुसारी—वि० [हिं० न+अनुसारी] अनुसरण न करनेवाला।

नान्ह†—वि० [प्रा० लान्हा] १. नन्हा। छोटा। २. तुच्छ या हीन कुल अथवा वंश का। ३. पतला। बारीक। महीन।

मुहा०—**नान्ह कातना**=ऐसा बारीक या सूक्ष्म काम करना जिसमें बहुत अधिक परिश्रम और समझदारी की आवश्यकता हो।

नान्हक—पुं०=दे० 'नानक'।

नान्हरिया—वि०=नान्हा (नन्हा)।

नान्हा—वि० दे० 'नन्हा'। २. दे० 'नान्ह'।

नाप—स्त्री० [हिं० नापना] १. नापने की क्रिया या भाव। किसी पदार्थ के विस्तार का निर्धारण। जैसे—यह थान नाप में पूरा बीस गज उतरेगा।

पद—**नाप-जोख, नाप-तौल**। (दे०)

२. किसी चीज की ऊँचाई, लंबाई, चौड़ाई, गहराई-मोटाई आदि के विस्तार का वह परिमाण जो उसे नापने पर जाना जाता या निकलता है। माप। जैसे—इस जमीन की नाप १०० गज लंबी और चौड़ाई ५० गज है। ३. वह निर्दिष्ट परिमाण जिसे इकाई मानकर कोई चीज नापी जाती है। जैसे—कपड़े के गज की नाप ३६ इंच की और लकड़ी के गज की नाप २४ इंच की होती है। ४. वह उपकरण जो उक्त प्रकार की इकाई का मानक प्रतीक हो और जिससे चीजें नापी जाती हों। जैसे—कपड़ा या लकड़ी नापने का गज, तेल या दूध नापने का नपना या नपुआ।

नापत†—स्त्री० १.=नाप। २. =नपत।

नाप-जोख—स्त्री० [हिं० नापना+जोखना] १. किसी चीज की लंबाई-चौड़ाई आदि नापने अथवा किसी चीज या बात का गुरुत्व, मान, शक्ति आदि आँकने अथवा समझने की क्रिया या भाव। जैसे—(क) आज-कल

देहातों में खेतों की नाप-जोख हो रही है। (ख) किसी से लड़ाई छेड़ने (या ठानने) से पहले उसके बल, साधनों आदि की नाप-जोख कर लेनी चाहिए। २. दे० 'नाप-तौल'।

विशेष—साधारण बोल-चाल में 'नाप-जोख' पद का प्रयोग मूर्त पदार्थों के सिवा अमूर्त तत्त्वों या बातों के संबंध में भी देखने में आता है, जैसा कि ऊपर के (ख) उदाहरण से स्पष्ट है। अतः कहा जा सकता है कि अर्थ की दृष्टि से 'नाप-तौल' की तुलना में 'नाप-जोख' पद अधिक व्यंजक तथा व्यापक है।

नाप-तौल—स्त्री० [हिं० नापना+तौलना] १. कोई चीज नापने या तौलने की क्रिया या भाव। २. दे० 'नाप-जोख' और उसके अंतर्गत विशेष टिप्पणी।

नापना—स० [सं० मापन] १. नियत या निर्धारित नाप, मान या माप-दंड की सहायता से किसी चीज की लंबाई-चौड़ाई, गहराई-ऊँचाई आदि अथवा किसी प्रकार के आयत या विस्तार का ठीक ज्ञान प्राप्त करना या पता लगाना। मापने की क्रिया करना। जैसे—गज, बित्ते, हाथ आदि से कपड़ा नापना। (गरदन नापना, रास्ता नापना आदि मुहावरों के लिए देखें गरदन, रास्ता आदि के मुहा०)।

संयो० क्रि०—डालना।—देना।—लेना।

विशेष—चीजें नापने के लिए सुभीते के अनुसार अलग-अलग प्रकार की इकाइयाँ स्थिर कर ली जाती हैं। जैसे—अँगुल, बित्ता, हाथ, गज आदि, और तब उन्हीं इकाइयों के आधार पर चीजों की नाप की जाती है। जैसे—यह धोती नापने पर पौने पाँच गज निकली; अथवा यह रस्सी नापने पर बीस हाथ ठहरी।

२. कुछ विशिष्ट तरल पदार्थों के संबंध में, किसी नियत इकाई की सहायता से उसके परिमाण, भार आदि का पता लगाना या स्थिर करना। जैसे—नपने से तेल या दूध नापना।

विशेष—वास्तव में इस क्रिया का उद्देश्य किसी पदार्थ को तौलना ही होता है; परंतु इसके लिए कोई ऐसा पात्र स्थिर कर लिया जाता है, जिसमें कोई चीज तौल के हिसाब से किसी विशिष्ट इकाई के बराबर आती हो, और तब वही पात्र (जिसे नपना या नपुआ कहते हैं) बार-बार भरकर उस चीज की तौल या मान स्थिर करते हैं। इससे तौलने की झंझट से बचत होती है। आज-कल अधिकतर तरल पदार्थ इसी प्रकार नापे (वस्तुतः तौले) जाते हैं। कुछ ही दिन पहले अनाज आदि भी इसी तरह नाप (वस्तुतः तौल) कर बेचे जाते थे।

३. अंदाज करना।

नाप-मान—पुं०=मान-दंड।

ना-पसन्द—वि० [फा०] जो पसन्द न आवे। जो अच्छा न जान पड़े। जो पसन्द न हो। अप्रिय। अरुचिकर।

नापाक—वि० [फा०] [भाव० नापाकी] १. अपवित्र। अशुचि। २. गंदा या मैला।

नापाकी—स्त्री० [फा०] १. अशुचिता। २. गंदगी।

ना-पायदार—वि० [फा० नापाइदार] [भाव० नापायदारी] १. जो अधिक समय तक ठहरने या चलनेवाला न हो। जो टिकाऊ न हो। क्षण भंगुर। २. जो दृढ़ या मजबूत न हो। ३. जिस पर भरोसा न किया जा सके। जैसे—नापायदार जिंदगी।

ना-पास—वि० [हिं० ना+अ० पास] १. जो पास अर्थात् स्वीकृत न किया गया हो। २. जो परीक्षा में पास या उत्तीर्ण न हुआ हो। अनुत्तीर्ण।

नापित—पुं० [सं० न√आप् (व्यक्ति)+तन्, इट् आगम] नाई। हज्जाम।

नापित्य—पुं० [सं० नापित+ष्यञ्] १. नापित होने की अवस्था या भाव। २. नापित का लड़का। ३. नापित का काम या पेशा।

नापैद—वि० [फा० ना+पैदा] १. जो कभी पैदा ही न हुआ हो। २. जो अब पैदा न होता हो। ३. जो इतना अप्राप्य या दुर्लभ हो कि मानों कहीं पैदा ही न होता हो।

नाफ—स्त्री० [सं० नाभि से फा० नाफ़] १. नाभि। २. किसी चीज का केंद्र या मध्य-भाग।

ना-फरमाँ—पुं० [फा०] गुले लाला का एक भेद जो कुछ नीले रंग का होता है।

वि० दे० 'ना-फरमान'।

ना-फरमान—वि० [फा०] [भाव० नाफरमानी] जो बड़ों की आज्ञा न मानता हो।

ना-फरमानी—स्त्री० [फा०] बड़ों की आज्ञा न मानने की वृत्ति।

नाफा—पुं० [सं० नाभि से फा० नाफः] मृगनाभि।

नाब-दान—पुं० [फा०] मकान की मोरी। पनाला।

मुहा०—नाबदान में मुँह मारना=बहुत ही घृणित और निंदनीय काम करना।

ना-बालिग—वि० [अ०+फा०] [भाव० नाबालिगी] १. जो बालिग अर्थात् वयस्क न हो। २. विधिक क्षेत्र में, जो अभी उस नियत अवस्था या वय तक न पहुँचा हो, जिस अवस्था या वय तक पहुँचने पर कोई सब बातें समझने और अपना घर-बार सँभालने के योग्य समझा जाता हो। (साधारणतः २१ वर्ष से कम की अवस्था का व्यक्ति ना-बालिग माना जाता है)।

ना-बालिगी—स्त्री० [फा०] नाबालिग होने की अवस्था या भाव।

नाबूद—वि० [फा०] १. जो अस्तित्व में न रह गया हो। २. बरबाद। विध्वस्त। ३. गायब। लुप्त।

नाभ—पुं० [सं०] नाभि का वह संक्षिप्त रूप जो उसे समस्त पदों के अन्त में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पद्मनाभ। २. शिव का एक नाम। ३. भगीरथ के एक पुत्र। ४. अस्त्रों का एक संहार।

नाभक—पुं० [सं० √नभ् (नष्टकरना)+ण्वुल्—अक] हर्रे।

नाभस—वि० [सं० नभस्+अण्] [स्त्री० नाभसी] १. नभ-संबंधी। २. स्वर्गीय।

नाभा—पुं०=नाभादास।

नाभाग—पुं० [सं०] १. वाल्मीकि के अनुसार इक्ष्वाकुवंशीय एक राजा जो ययाति के पुत्र थे और जिनके पुत्र अज थे। परन्तु रामायण के अनुसार नाभाग के पुत्र अंबरीष थे। २. कारुपवंशीय राजा दिष्टि के एक पुत्र। ३. वैवस्वत मनु के एक पुत्र।

नाभादास—पुं० सत्रहवीं शताब्दी के छठे और सातवें दशक में वर्तमान एक प्रसिद्ध वैष्णव भक्त जो जाति के डोम थे। उन्होंने अपने गुरु अग्रदास की आज्ञा से 'भक्तमाल' नामक प्रसिद्ध ग्रंथ लिखा था।

नाभारत—स्त्री०[सं० नाम्यावर्त] घोड़े की नाभि के नीचे की भौंरी जो अशुभ मानी जाती है।

नाभारिष्ट—पुं०[सं०] वैवस्वत मनु के एक पुत्र

नाभि—स्त्री०[सं०√नह (बंधन)+इञ्, भ आदेश] १. जरायुज जंतुओं के पेट के बीचो-बीच वह छोटा गड्ढा, जिससे गर्भावस्था में जरायु नाल जुड़ा रहता है। ढोंटी। धुन्नी। तुन्नी। तुंदी। २. कस्तूरी। ३. उक्त प्रकार का कोई छोटा गड्ढा। ४. पहिए के बीच का वह गड्ढा जिसमें धुरा पहनाया या बैठाया जाता है। नाह।

विशेष—यद्यपि संस्कृत में नाभि इस अंतिम या तीसरे अर्थ में पुं० है, फिर भी हिंदी में इस अर्थ में यह स्त्री० रूप में ही प्रयुक्त होता है।

पुं०१. किसी चीज का केंद्र या मध्य-भाग। ऐसा भाग जिसके चारों ओर वस्तुएँ आकर इकट्ठी होती या हुई हों। २. प्रधान या मुख्य व्यक्ति। नेता। मुखिया। ३. परम स्वतन्त्र और बहुत बड़ा राजा। ४. वह पारस्परिक संबंध जो एक ही कुल, गोत्र या परिवार में उत्पन्न होने पर होता है। ५. क्षत्रिय। ६. महादेव। शिव। ७. भागवत के अनुसार आग्नीध्र राजा के पुत्र जिनकी पत्नी मेरु देवी के गर्भ से ऋषभ देव की उत्पत्ति हुई थी। ८. राजा प्रियव्रत के एक पौत्र का नाम।

नाभि-कंटक—पुं०[ष०त०] नाभि का उभरा हुआ या मांसल अंश। निकली हुई तुंदी।

नाभिका—स्त्री०[सं० नाभि√कै (मालूम पड़ना)+क—टाप्] १. नाभि के आकार का छोटा गड्ढा। २. कटभी (वृक्ष)।

नाभिगुलक—पुं०[सं०]नाभिकंटक।

नाभि-गोलक—पुं०[ष०त०] नाभिकंटक। (दे०)

नाभि-छेदन—पुं० [ष० त०] गर्भ से निकले हुए जरायुज जीवों का जरायु नाल काटने की क्रिया या भाव। नाल काटना।

नाभिज—वि०[सं० नाभि√जन् (उत्पत्ति)+ड] नाभि से उत्पन्न। पुं० ब्रह्मा।

नाभि-नाड़ी—स्त्री०[ष०त०] नाभि की नाड़ी जो गर्भ काल में माता की रसवहा नाड़ी से जुड़ी रहती है।

नाभि-पाक—पुं०[ष०त०] नाभि पकने का राग।

नाभिल—वि०[सं० नाभि+लच्]१. नाभि से युक्त। जिसमें नाभि हो। २. (जीव) उभरी हुई नाभिवाला।

नाभि-वर्द्धन—पुं०[ष०त०] नाभि बढ़ाना अर्थात् काटना।(मंगलभाषित)

नाभि-वर्ष—पुं०[ष०त०] जंबूद्वीप का वह भाग (आधुनिक भारत) जो राजा नाभि को उनके पिता राजा आग्नीध्र ने दिया था।

विशेष—नाभि के पौत्र भरत हुए जिसके नाम से हमारे देश का नाम भारत हुआ।

नाभि-संबंध—पुं०[ष०त०] व्यक्तियों का वह पारस्परिक संबंध जो उनके किसी एक गोत्र में जन्म लेने पर होता है।

नाभी—स्त्री०[सं० नाभि+ङीष्]=नाभि।

नाभील—पुं० [सं० नाभी√ला (लेना)+क] १. स्त्रियों की कमर के नीचे का भाग। उरु-संधि। २. नाभि का गड्ढा। ३. कष्ट तकलीफ।

नाभ्य—वि०[सं० नाभि+यत्] नाभि-संबंधी।
पुं० महादेव। शिव।

ना-मंजूर—वि०[फा० ना+अ० मंजूर] [भाव० ना-मंजूरी] जो मंजूर या स्वीकृत न हुआ हो।

ना-मंजूरी—स्त्री०[फा०+अ०] ना-मंजूर या अस्वीकृत होने की अवस्था या भाव।

नाम (न्)—पुं०[सं०√म्ना (अभ्यास)+मनिन्] १. वह शब्द या पद जिसका प्रयोग किसी तत्त्व, प्राणी या वस्तु अथवा उसके किसी वर्ग या समूह का परिज्ञान अथवा बोध कराने के लिए उसके वाचक के रूप में किया जाता है और जिससे वह लोक में प्रसिद्ध होता है। आख्या। संज्ञा। जैसे—(क) इस रंग का नाम लाल है। (ख) इस फल का नाम आम है। (ग) इस लड़के का नाम मोहनलाल है।

विशेष—हर चीज का कुछ न कुछ नाम इसी लिए रख लिया जाता है कि उसकी पहचान हो सके तथा औरों को सहज में उसका ज्ञान या बोध कराया जा सके। किसी वस्तु या व्यक्ति का नाम लेते ही उसका स्वरूप अथवा उसके संबंध की सब बातें सुननेवाले के ध्यान में आ जाती हैं। प्रयोगों तथा मुहावरों के विचार से नाम कई विशिष्ट तत्त्वों और स्थितियों का भी बोधक होता है। यथा—(क) जब कोई व्यक्ति कुछ अच्छा या बुरा काम करता है, तब लोग उसका नाम लेकर ही कहते हैं कि उसने अमुक काम किया है। इसलिए 'नाम' किसी की ख्याति अथवा प्रसिद्धि (अथवा कुख्याति या कुप्रसिद्धि) का भी प्रतीक या वाचक हो गया है। (ख) विशिष्ट प्रसंगों में लोग ईश्वर या उपास्य देव का नाम लेते हैं, इसलिए कभी-कभी यह ईश्वर या देवता का भी वाचक या सूचक होता है। (ग) नाम किसी तत्त्व, वस्तु या व्यक्ति का वाचक मात्र होता है ; स्वयं उस तत्त्व, वस्तु या व्यक्ति से उसका कोई आधारिक या तात्त्विक संबंध नहीं होता, इसलिए कुछ अवस्थाओं में यह केवल बाह्य आकृति या रूप अथवा अस्तित्व या सत्ता का ही बोधक होता है; अथवा यह सूचित करता है कि उसे कुछ कहा या किया गया है, वह नामधारी के उद्देश्य या हेतु-मात्र से है। इसी आधार पर लेन-देन आदि व्यवहारों में उस अंश या पक्ष का भी वाचक हो गया है जिसमें किसी को दी हुई या किसी के जिम्मे लगाई हुई कोई चीज या रकम लिखी जाती है। यहाँ जो पद और मुहावरे दिए जाते हैं, वे उक्त सब आशयों के मिले-जुले रूपों से संबद्ध हैं।

पद—(किसी के)नाम=किसी के उद्देश्य या हेतु से अथवा किसी के प्रति या उसे लक्ष्य करके। जैसे—(क) पितरों के नाम दान करना। (ख) विधिक क्षेत्र में, किसी के अधिकार या स्वामित्व में। जैसे—उसके कई मकान तो उसकी स्त्री के नाम हैं। **नाम का (या को)**=दे० 'नाम मात्र का' (या को)। **नाम-चार का (या को)**=दे० 'नाम मात्र का' (या को)। **नाम पर**=(क) किसी का नाम लेते हुए उसके उद्देश्य या हेतु से। जैसे—बड़ों के नाम पर (या भगवान के नाम पर) कोई काम करना या किसी को कुछ देना। **नाम मात्र**=नाम लेने या कहने भर के लिए, अर्थात् यथेष्ट और वास्तविक रूप में नहीं, बल्कि जरा-सा या बहुत थोड़ा। जैसे—उनके कथन में नाम मात्र सत्यता है। **नाम मात्र का (या को)**=उचित, पूर्ण या वास्तविक रूप में नहीं, बल्कि यों ही कहने-सुनने या दिखलाने भर के लिए, और फलतः जरा-सा या थोड़ा-सा। जैसे—दाल में घी तो नाम मात्र का (या को) था। **नाम मात्र के लिए**=नाममात्र का (या को)। **(किसी का) नाम लेकर**=

नाम का उच्चारण करके। जैसे—जब तुम्हारा नाम लेकर कोई पुकारे तब यहाँ आना। (ईश्वर, देवी-देवता का) **नाम लेकर**=श्रद्धापूर्वक नाम का उच्चारण और स्मरण करते हुए और शुद्ध हृदय से। जैसे—भगवान का नाम लेकर चल पड़ो। **नाम से**=(क) नामधारी को जिम्मेदार ठहराते या बतलाते हुए और उसके नाम का उपयोग करते हुए। जैसे—(क) किसी के नाम से खाता खोलना या मकान खरीदना। (ख) नाम का उच्चारण होते ही। नाम भर लेने पर। जैसे—अब तो वह तुम्हारे नाम से काँपता है। (ग) दे० ऊपर 'नाम पर'।

मुहा०—(किसी का) **नाम उछलना**=बहुत अपकीर्ति, निंदा या बदनामी होना। (अपना या बड़ों का) **नाम उछालना**=ऐसा घृणित या निंदनीय काम करना कि अपनी या पूर्वजों की बदनामी हो। **नाम उठ जाना**=अस्तित्व या सत्ता न रह जाना। जैसे—आज-कल संसार से भलमनसत का नाम ही उठ गया है। **नाम कमाना**=कीर्ति या यश संपादित करते हुए ख्यात या प्रसिद्ध होना। **नाम करना**=कीर्ति या यश संपादित करते हुए प्रसिद्ध या मशहूर होना। ऐसी उत्कृष्ट स्थिति में होना कि लोग बहुत दिनों तक याद रखें। जैसे—यह धर्मशाला बनवाकर वह भी अपना नाम कर गए। (किसी बात में किसी दूसरे का) **नाम करना**=दे० नीचे '(किसी दूसरे का) नाम लगाना।' (किसी के) **नाम का कुत्ता न पालना**=किसी को इतना घृणित, तुच्छ या नीच समझना कि उसका नाम तक लेना या सुनना भी बहुत अप्रिय या बुरा लगे। जैसे—हम तो उसके नाम का कुत्ता भी ना पालें। (कोई काम अपने) **नाम के लिए करना**=कोई काम केवल कीर्त्ति या प्रसिद्धि प्राप्त करने अथवा मर्यादा की रक्षा के उद्देश्य से करना। (कोई काम) **नाम के लिए या नाम मात्र के लिए करना**=मन लगाकर या वास्तव में नहीं, बल्कि केवल कहने-सुनने या दिखलाने भर के लिए थोड़ा-सा या यों ही करना। **नाम को मरना**=नाम की मर्यादा या लज्जा रखने अथवा कीर्ति या यश बनाये रखने के लिए यथासाध्य प्रयत्न करते रहना। (किसी का) **नाम चमकना**=चारों ओर कीर्ति या यश फैलाना। प्रसिद्धि होना। (किसी का) **नाम चलना**=कीर्ति परंपरा, वंश आदि का अस्तित्व या क्रम चलता या बना रहना। **नाम जगना**=(क) ख्याति या प्रसिद्धि होना। (ख) फिर से किसी के नाम की ऐसी चर्चा या प्रचार होना कि लोगों में उसकी स्मृति जाग्रत हो। (किसी का) **नाम जगाना**=ऐसा काम करना जिससे किसी की याद या स्मृति बनी रहे। (किसी का) **नाम जपना**=प्रेम, भक्ति श्रद्धा आदि से प्रेरित होकर बराबर किसी का नाम लेते रहना या उसे याद करते रहना। (कोई चीज या रकम किसी के) **नाम डालना**=बही-खाते में, किसी के नाम के आगे लिखना। यह लिखना कि अमुक चीज या रकम अमुक व्यक्ति के जिम्मे है या उससे ली जाने को है। जैसे—यह रकम हमारे नाम डाल दो। **नाम डुबाना**=कलंक या लांछन के पात्र बनकर प्रतिष्ठा, मर्यादा आदि नष्ट करना। **नाम तक मिटना या मिट जाना**=कहीं कुछ भी अवशेष या चिह्न बाकी न रह जाना। (किसी के) **नाम देना**=खाते में किसी के नाम लिखकर कुछ देना। (किसी को कोई) **नाम देना**=किसी का नामकरण करना। नाम रखना। (दे० नीचे) (किसी को किसी देवता का) **नाम देना**=धार्मिक क्षेत्रों में, गुरु बनकर किसी को किसी देवता के नाम या मंत्र का उपदेश देना। (किसी वस्तु या व्यक्ति का) **नाम धरना**=(क) नाम रखना या स्थिर करना। नामकरण करना। (ख) कोई ऐब या दोष लगाकर बुरा ठहराना या बतलाना। निंदा या बदनामी करना। **नाम धराना**=(क) नाम स्थिर कराना। (ख) लोगों में निंदा या बदनामी कराना। **नाम न लेना**=अरुचि, घृणा, दुःख, भय आदि के कारण चर्चा तक न करना। बिलकुल अलग या दूर रहना। मन में विचार न करना। जैसे—अब वह कभी वहाँ जाने का नाम न लेगा। **नाम निकलना या निकल जाना**=किसी बात के लिए नाम प्रसिद्ध हो जाना। किसी विषय में ख्याति हो जाना। (अच्छी और बुरी सभी प्रकार की बातों के लिए युक्त) **नाम निकलवाना**=(क) किसी प्रकार की ख्याति या प्रसिद्धि कराना। (ख) कोई चीज चोरी जाने पर टोने-टोटके, मंत्र-यंत्र आदि की सहायता से यह पता लगाना कि वह चीज किसने चुराई है। **नाम निकालना**=(क) किसी काम या बात के लिए नाम प्रसिद्ध करना (ख) टोने-टोटके, मंत्र-यंत्र आदि की सहायता से अपराधी या दोषी के नाम का पता लगाना। **नाम पड़ना**=नाम निश्चित होना या रखा जाना। नामकरण होना। (कोई चीज या रकम किसी के) **नाम पड़ना**=बही-खाते आदि में यह लिखा जाना कि अमुक चीज या रकम अमुक व्यक्ति को दी गई है और वह चीज या उसका मूल्य उससे लिया जाने को है। (किसी के) **नाम पर बैठना**=(क) किसी के भरोसे या विश्वास पर संतोष करके चुपचाप तथा धैर्य-पूर्वक पड़े रहना या बैठे रहना। जैसे—हम तो ईश्वर के नाम पर बैठे ही हैं, जो चाहेगा सो करेगा। (ख) किसी की प्रतिष्ठा की रक्षा के विचार से शांत स्थिर भाव से दिन बिताना। जैसे—उसे विधवा हुए दस वर्ष हो गए; पर आज तक वह अपने पति के नाम पर बैठी है। (किसी के) **नाम पर मरना या मिटना**=किसी की प्रतिष्ठा या मान-रक्षा के लिए अथवा किसी के प्रेम के आवेग में बहुत-कुछ कष्ट या हानि सहना। जैसे—जाति या देश के नाम पर मरना या मिटना। **नाम पाना**=कोई अच्छा काम करके ख्यात या प्रसिद्ध होना। **नाम बद या बदनाम करना**=ऐब या कलंक लगाना। बदनामी करना। (किसी का) **नाम बिकना**=ख्याति या प्रसिद्धि हो चुकने पर आदर, प्रचार आदि होना। **नाम भर बाकी रहना**=और सब बातों का अंत हो जाने पर भी कीर्ति, यश आदि के रूप में केवल नाम की याद या स्मृति बच रहना। जैसे—अब तो इंद्रप्रस्थ का नाम भर बाकी है। (किसी का) **नाम रखना**=(क) नाम निश्चित करना। नामकरण करना। कीर्ति या यश सुरक्षित रखना। (ग) किसी चीज या बात में कोई कलंक या दोष निकालना या लगाना। बदनाम करना। (अपकार, अपराध आदि के संबंध में, किसी का) **नाम लगना**=झूठ-मूठ यह कहा जाना कि अमुक व्यक्ति ने यह अपकार या अपराध किया है। किसी के सिर झूठा कलंक मढ़ा जाना। जैसे—किताब फाड़ी तो उस लड़के ने और नाम लगा तुम्हारा। (किसी का) **नाम लगाना**=किसी अपराध या दोष के संबंध में किसी के सिर झूठा कलंक मढ़ना। अपराध का कलंक लगाना। जैसे—तुम्हीं ने सारा काम बिगाड़ा, और अब दूसरों का नाम लगाते हो। (कोई चीज या रकम किसी के) **नाम लिखना**=दे० ऊपर (कोई चीज या रकम किसी के) नाम डालना। (किसी का) **नाम लेना**=(क) नाम का उच्चारण करना। नाम जपना या रटना। जैसे—सबेरे-संध्या कुछ देर तक

ईश्वर का नाम लिया करो। (ख) किसी के उपकार आदि के बदले में कृतज्ञतापूर्वक उसके नाम का उल्लेख या चर्चा करना। जैसे—अब तो उनका घर भर तुम्हारा ही नाम लेता है। (ग) यों ही साधारण रूप से उल्लेख या चर्चा करना। जैसे—अब अगर तुमने उनके घर जाने का नाम लिया, तो ठीक न होगा। **नाम से पुजना या बिकना**=केवल सुनाम प्राप्त हो चुकने अथवा कीर्ति या यश फैल जाने के कारण आदर या सम्मान का भाजन बनना। **नाम होना**=(क) खूब ख्याति या प्रसिद्धि होना। (ख) दे० ऊपर 'नाम लगना'। . . .**तो मेरा नाम नहीं**=तो समझ लेना कि मैं कुछ भी नहीं हूँ। तो मुझे बिलकुल अकर्मण्य, तुच्छ या हीन समझ लेना। जैसे—यदि मैं उसे हराकर न छोड़ूँ तो मेरा नाम नहीं।

नामक—वि० [सं०] उत्तर पद में, . . .नाम का या. . .नाम वाला। जैसे—यहाँ कोई राम नामक लड़का रहता है?

नाम-करण—पुं० [सं० त०] १. किसी का नाम रखने या किसी को नाम देने की क्रिया या भाव। जैसे—इस नाटक का नाम-करण उसके नायक के नाम पर हुआ है। २. हिंदुओं में एक संस्कार, जिसमें विधि-वत् पूजा-पाठ करके बच्चे का नाम रक्खा जाता है।

नाम-कर्म (न्)—पुं० [ष० त०] नामकरण (संस्कार)।

नाम-कीर्तन—पुं० [ष० त०] कीर्तन का वह प्रकार जिसमें भगवान के किसी एक नाम का कुछ समय तक बराबर उच्च स्वर में जाप किया जाता है।

नाम-कोश—पुं० [ष० त०] ऐसा कोश जिसमें नामवाचक संज्ञाओं का संकलन और उनके अर्थ या व्याख्याएँ हों। (नामेक्लेचर)

नाम-चढ़ाई—स्त्री० [हिं० नाम+चढ़ाना] वह क्रिया जिसमें सरकारी कागज-पत्रों आदि पर संपत्ति आदि के स्वामित्व पर से एक व्यक्ति का नाम हटाकर दूसरे का नाम चढ़ाया जाता है। दाखिल खारिज। (म्यूटेशन)

नाम-जद—वि० [फा० नामज़द] [भाव० नामजदगी] १. नामांकित। २. मनोनीत। ३. प्रसिद्ध। ४. (बालिका) जिसकी मंगनी हो चुकी हो।

नाम-जदगी—वि० [फा० नामज़दगी] नामजद अर्थात् नामांकित या मनो-नीत करने या होने की क्रिया या भाव।

नामतः (तस्)—अव्य० [सं० नामन्+तस्] नाम से। नाम के द्वारा।

नामदार—वि० [फा०] नामवर। प्रसिद्ध।

नामदेव—पुं० १. वामदेव के दौहित्र एक प्रसिद्ध भक्त जो भगवान कृष्ण (मूर्ति) के दूध न पीने पर आत्म-हत्या करने पर उतारू हो गए थे। कहते हैं कि अंत में भगवान ने स्वयं प्रकट होकर दूध पीया और उन्हें आत्म-हत्या करने से रोका। २. महाराष्ट्र के एक प्रसिद्ध वैष्णव भक्त कवि। (संवत् १३२६—१४०७ वि०)

नाम-द्वादशी—स्त्री० [सं०] देवी पुराण के अनुसार अगहन सुदी तीज को रखा जानेवाला व्रत, जिसमें गौरी, काली, उमा, भद्रा, कांति, सरस्वती मंगला, वैष्णवी, लक्ष्मी, शिवा और नारायणी इन बारह देवियों की पूजा की जाती है।

नामधन—पुं० [सं०] एक प्रकार का संकर राग जो मल्लार, शंकराभरण, बिलावल, सूदे और केदारे के योग से बना है।

नाम-धरता† —पुं० [हिं० नाम+धरना=रखना] जो किसी का कोई नाम रखे या स्थिर करे। नामकरण करनेवाला।

नाम-धराई—स्त्री० [हिं० नाम+धराना] १. नाम विशेषतः चिढ़ धरने की क्रिया या भाव। २. बदनामी।

नाम-धाम—पुं० [हिं० नाम+धाम] व्यक्ति का नाम और उसका निवास-स्थान। नाम और पता-ठिकाना।

नाम-धारक—वि० [सं० ष० त०] जो केवल नाम के लिए हो, पर जिससे कोई काम न निकल सकता हो। नाम मात्र का।

नामधारी (रिन्)—वि० [सं० नामन्√धृ (धारण)+णिनि] नाम धारक।

पुं० [हिं० नाम+धारना] १. सिक्खों का एक संप्रदाय, जिसके संस्था-पक थे रामसिंह। २. उक्त संप्रदाय का अनुयायी सिक्ख।

नामधेय—वि० [सं० नामन्+धेय] नामवाला।

पुं० १. नाम। २. नामकरण।

नाम-निक्षेप—पुं० [सं० ष० त०] नाम स्मरण। (जैन)

नाम-निर्देशन—पुं० [सं० ष० त०]=नामांकन।

नाम-निर्देश पत्र—पुं० [सं० नाम-निर्देश, ष० त०, नामनिर्देश-पत्र, ष० त०] =नामांकन पत्र।

नाम-निवेश—पुं० [सं० ष० त०] १. खाते, रजिस्टर आदि में नाम चढ़ाया जाना। (एन्‌रोलमेंट) २. दे० 'नाम-चढ़ाई'।

नाम-निशान—पुं० [फा०] किसी वस्तु का नाम और उसके सूचक शेष चिह्न या पता-ठिकाना। ऐसा चिह्न या लक्षण जिससे किसी चीज या बात के अस्तित्व का पता चलता या प्रमाण मिलता हो। जैसे—अब तो उस गाँव का नाम-निशान भी नहीं रह गया है।

नाम-पट्ट—पुं० [सं० ष० त०] वह पट्ट या तख्ता जिस पर व्यक्ति, संस्था, दुकान आदि का नाम लिखा होता है। (साइनबोर्ड)

नाम-पत्र—पुं० [सं० ष० त०] कागज की वह चिप्पी जो जिस पर लगाई जाती है उसका विवरण बताती है। (लेबल)

नामपत्रित—भू० कृ० [सं० नामपत्र+इतच्] जिस पर नामपत्र लगाया गया हो।

नाम-बोला—पुं० [हिं० नाम+बोलना] ऐसा व्यक्ति, जो ईश्वर या देवता के नाम का उच्चारण या जप करता हो।

नाम-माला—स्त्री० [सं० ष० त०] १. बहुत से नामों की अवली, माला या शृंखला। २. दे० 'नाम-कोश'।

नाम-यज्ञ—पुं० [सं० मध्य० स०] ऐसा यज्ञ जो नाम कमाने के लिए किया जाय।

नाम-रासी—वि० [हिं० नाम+सं० राशि] किसी की दृष्टि से उसी के नाम और राशिवाला। हम-नाम।

नाम-रूप—पुं० [सं० द्व० स०] १. किसी वस्तु या व्यक्ति का वह नाम और रूप जिससे उसका परिज्ञान होता हो। २. मन से युक्त दृश्यमान् शरीर। ३. बौद्ध दर्शन में, गर्भ में स्थित एक महीने के भ्रूण की संज्ञा।

नामर्द—वि० [फा०] [भाव० नामर्दी] १. जो मर्द अर्थात् पुरुष न हो। २. जिसमें पुरुष की शक्ति न हो। नपुंसक। ३. जिसमें पुरुषों जैसा हौसला न हो। भीरु।

नामर्दी—स्त्री० [फा०] १. नामर्द होने की अवस्था या भाव। २. वह रोग या स्थिति जिसमें पुरुष स्त्री से संभोग करने में असमर्थ होता है। नपुंसकता। ३. कायरता। भीरुता।

नाम-लिखाई—स्त्री० [हिं० नाम+लिखना] १. किसी संस्था आदि के सदस्य बनने पर उसकी पंजी, तालिका आदि में नाम लिखा जाना। २. वह धन या शुल्क जो उक्त अवसर पर देना पड़ता है।

नाम-लेवा—पुं० [हिं० नाम+लेवा=लेनेवाला] १. ऐसा व्यक्ति जो किसी का विशेषतः उसके मरने पर उसका स्मरण करे। २.औलाद। संतान।

नामवर—वि० [फा०] [भाव० नामवरी] जिसका नाम आदर से लिया जाता हो। अति प्रसिद्ध।

नामवरी—स्त्री० [फा०] प्रसिद्धि।

नाम-शेष—वि० [सं० ब० स०] १. जो अस्तित्व में न रह गया हो, बल्कि जिसका केवल नाम ही लोग जानते हों। २. ध्वस्त। ३. मृत।

ना-महरम—वि० [फा०+अ०] १. अनजान। अपरिचित। २. पराया। गैर। ३. (व्यक्ति) जिसके सामने स्त्रियाँ न हो सकती हों और जिनसे बात-चीत करना उनके किए धर्म-शास्त्रानुसार निषिद्ध हो। जिससे परदा करना स्त्रियों के लिए उचित तथा विहित हो। (मुसल०)

नाम-हँसाई—स्त्री० [हिं० नाम+हँसना] लोगों में किसी के नाम की हँसी उड़ना या उपहास होना। उपहास करानेवाली बदनामी।

नामांक—पुं० [सं० नामन्-अंक, ब० स०] वह संख्या जो किसी सूची में लिखित नामों पर क्रमशः लगाई गई हो।
वि०=नामांकित।

नामांकन—पुं० [सं० नामन्-अंकन, ष० त०] १. नाम अंकित करने की क्रिया या भाव। २. किसी का किसी पद, स्थान, निर्वाचन आदि के लिए आधिकारिक रूप से नाम प्रस्तावित किया जाना। ३. वह स्थिति जिसमें किसी को किसी पद, सेवा आदि के लिए आधिकारिक रूप से नियुक्त किया जाता है। (नामिनेशन, उक्त सभी अर्थों में)

नामांकन-पत्र—पुं० [सं० ष० त०] वह पत्र जिसमें संबद्ध अधिकारी को यह सूचित किया जाता है कि अमुक पद के लिए अमुक व्यक्ति उम्मेदवार के रूप में खड़ा हो गया है, और उस अधिकारी से तत्संबंधी स्वीकृति की प्रार्थना की जाती है। (नामिनेशन पेपर)

नामांकित—वि० [सं० नामन्-अंकित ब०, स०] १. जिस पर नाम अंकित किया अर्थात् लिया या खुदा हो। २. जिसका किसी काम या पद के लिए नामांकन हुआ हो। नामजद। (नामिनेटेड) ३. प्रसिद्ध।

नामांकित—पुं०[सं० नामांकित] वह जो किसी चुनाव, पद, कार्य में नामांकित किया गया हो। (नामिनी)

नामांतर—पुं० [सं० नामन्-अंतर, मयू०स०] १. किसी एक ही व्यक्ति का दूसरा नाम। २. उपनाम। ३. पर्याय।

नामांतरण—पुं० [सं० नामान्तर+णिच्+ल्युट्—अन] १. नाम बदलने की क्रिया या भाव। २. किसी संपत्ति पर स्वामी के रूप में लिखा हुआ पुराना नाम हटाकर उसकी जगह किसी दूसरे नये व्यक्ति का स्वामी के रूप में नाम चढ़ाया जाना। दाखिल खारिज। (म्यूटेशन)

नामांतरित—भू० कृ० [सं० नामांतर+णिच्+क्त] १.जिसका नामांतरण हुआ हो। २. जिसका नाम किसी पुराने स्वामी के नाम की जगह नये सिरे से चढ़ा या लिखा गया हो।

नामा—वि० [सं० नाम] नामधारी।
पुं० प्रसिद्ध भक्त नामदेव का संक्षिप्त रूप।
†पुं० [हिं० नाम (पड़ी हुई रकम)] १. किसी से प्राप्य धन। पावना। २. रुपया-पैसा। नाँवाँ।
पुं० [फा० नामः] पत्र। चिट्ठी।

ना-माकूल—वि० [फा० ना+अ० माकूल] [भाव० नामाकलियत] १. जो माकूल अर्थात् उचित, उपयुक्त या ठीक न हो। २. अपूर्ण। अधूरा। ३. बेढंगा। बेढब। ४. अयोग्य। ५. नालायक।

नामानुशासन—पुं० [सं० नामन्-अनुशासन, ष० त०] शब्दकोश।

नामाभिधान—पुं० [सं० नामन्-अभिधान, ष० त०] शब्दकोश।

ना-मालूम—वि० [फा० ना+अ० मालूम] जो मालूम अर्थात् ज्ञात न हो। अज्ञात।

नामावली—स्त्री० [सं० नामन्-आवली, ष० त०] १. ऐसी सूची जिसमें चीजों या व्यक्तियों के नाम दिए हुए हों। २. भक्तों के ओढ़ने-पहनने का वह कपड़ा जिसपर कृष्ण, राम, शिव आदि देवताओं के नाम छपे होते हैं।

नामि—पुं० [सं०] विष्णु।

नामिक—वि० [सं०] १. नाम या संज्ञा-संबंधी। २. जो केवल नाम के लिए या संकेत रूप में हो और जिसका वास्तविक तथ्य से कोई विशेष संबंध न हो। नाम भर का। (नॉमिनल)

नामित—वि० [सं०√नम् (झुकना)+णिच्+क्त] झुकाया हुआ।

नामी—वि० [फा०] १. नामवाला। २. जिसका नाम या प्रसिद्धि हो। नामवर। प्रसिद्ध। मशहूर।

नामी-गिरामी—वि० [फा०] प्रसिद्ध और पूजनीय।

ना-मुआफिक—१. [फा० नामुआफ़िक] जो मुआफिक या अनुकूल न हो। २. प्रतिकूल। विरुद्ध। ३. जो किसी से सहमत न हो। अ-सहमत।

ना-मुनासिब—वि० [फा०+अ०] जो मुनासिब अर्थात् उचित न हो। अनुचित।

ना-मुमकिन—वि० [फा० ना+अ० मुम्किन] जो मुमकिन अर्थात् संभव न हो। असंभव।

ना-मुराद—वि० [फा०] [भाव० ना-मुरादी] १. जिसकी मुराद अर्थात् कामना पूरी न हुई हो। विफल मनोरथ। २. अभागा। बद-नसीब।

ना-मुवाफिक—वि०=ना-मुआफिक।

नामूद—स्त्री० [फा० नमूद] १. आविर्भाव। २. धूम-धाम। तड़क-भड़क। ३. ख्याति। प्रसिद्धि।
†वि० प्रसिद्ध। मशहूर। (अशुद्ध प्रयोग)

नामूसी—स्त्री० [अ० नामूस=इज्जत] १. बेइज्जती। अप्रतिष्ठा। २. बदनामी। निंदा।

ना-मेहरबान—वि० [फा० नामेह्रबाँ] [भाव० नामेह्रबानी] जो मेहरबान अर्थात् अनुकूल या प्रसन्न न हो।

नामोल्लेख—पुं० [सं० नामन्-उल्लेख, ष० त०] किसी प्रसंग या विषय में किसी के नाम का होनेवाला उल्लेख।

ना-मौजूँ—वि० [फा०] १. जो मौजूँ या उपयुक्त न हो। अनुपयुक्त।

२. अनुचित। ना मुनासिब। ३. (शेर का पद अर्थात् चरण) जो वजन से खारिज हो अर्थात् जिसमें मात्राएँ या वर्ण कम-बेशी हों।

नाम्ना—वि० [सं० नामन् शब्द के तृतीया विभक्ति का एक वचन रूप ?] [स्त्री० नाम्नी] नामवाला। नायक।

नाम्य—वि० [सं०√नम्+णिच्+यत्] १. झुकाये जाने के योग्य। २. जो झुकाया जा सके। लचीला।

नायँ*—पुं०=नाम।
अव्य० नहीं।

नाय—पुं० [सं०√नी(ले जाना)+घञ्] १. नय। नीति। २. उपाय। युक्ति। ४. अगुआ। नेता। ४. नेतृत्व।
†स्त्री०=नाव।

नायक—पुं० [सं०√णी+ण्वुल्—अक] १. लोगों को अपनी आज्ञा के अनुसार चलानेवाला व्यक्ति। जैसे—सामाजिक या राजनैतिक नेता। २. अधिपति। स्वामी। जैसे—गण-नायक। ३. प्रधान अधिकारी। जैसे—सेनानायक। ४. साहित्य-शास्त्र के अनुसार किसी साहित्यिक रचना का प्रधान पुरुष पात्र। धीरललित, धीरशांत, धीरोदात्त और धीरोद्धत इसके ये चार प्रमुख भेद हैं। ५. श्रृंगार रस की कविताओं या पद्यों में आलंबन विभाव। इसके पति, अनुकूल पति, दक्षिणनायक शठनायक, धृष्टनायक, उपपति, वैशिक, मानी, वचन-चतुर, क्रियाचतुर, प्रेषित आदि अनेक भेद हैं। ६. बंजारा। ७. हार के मध्य की मणि या रत्न। ८. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त। ९. एक राग जो दीपक राग का पुत्र माना जाता है। १०. संगीत-कला में निपुण व्यक्ति। ११. एक जाति जिसके पुरुष नाचने-गाने आदि की शिक्षा देते हैं और स्त्रियाँ वेश्यावृत्ति भी करती हैं।

नायका—स्त्री० [सं० नायिका] १. वह वयस्क या वृद्धा स्त्री, जो युवती स्त्रियों को अपने पास रखकर उनसे गाने-बजाने का पेशा और व्यभिचार कराती हो। २. कुटनी। ३. दे० 'नायिका'।

नायकी—वि० [सं० नायक] नायक संबंधी। नायक या नायकों का। जैसे—नायकी कान्हड़ा।
स्त्री० नायक होने की अवस्था, पद या भाव। नायकत्व।

नायकी कान्हड़ा—पुं० [हिं० नायकी+कान्हड़ा] एक प्रकार का कान्हडा (राग) जिसमें सब कोमल स्वर लगते हैं।

नायकी मल्लार—पुं० [सं० नायक+मल्लार] संपूर्ण जाति का एक प्रकार का मल्लार (राग) जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

नायत—पुं० [?] वैद्य। (डिं०)

नायन—स्त्री० [हिं० नाई का स्त्री० रूप] १. नाई जाति की स्त्री। २. नाई की पत्नी।

नायब—वि० [अ० नाइब] १. (अधिकारी) जो किसी प्रधान अधिकारी का सहायक हो। जैसे—नायब तहसीलदार। २. स्थानापन्न। ३. किसी का प्रतिनिधि बनकर काम करनेवाला।

नायबी—स्त्री० [हिं० नायब+ई (प्रत्य०)] नायब होने की अवस्था, पद या भाव।

नायाब—वि० [फा०] [भाव० नायाबी] १. जो न मिलता हो। अप्राप्य। २. जो सहज में न मिलता हो। दुष्प्राप्य। ३. बहुत बढ़िया या श्रेष्ठ।

नायिका—स्त्री० [सं० नायक+टाप्, इत्व] १. स्वामिनी। २. पत्नी। ३. साहित्य शास्त्र में, किसी नाटक की प्रधान पात्री। ४. श्रृंगार रस में पुरुष से संबंध रखनेवाली पात्री जिसके धर्म के विचार से स्वकीया, परकीया और सामान्या ये तीन प्रमुख भेद। स्वभाव के अनुसार उत्तमा, मध्यमा और अधमा तथा अन्य अनेक दृष्टियों से दूसरे बहुत-से भेद माने गए हैं। ४. कहानी उपन्यास आदि की मुख्य पात्री।

नायिकाधिप—पुं० [सं० नायिका-अधिप, ष० त०] राजा।

नारंग—पुं० [सं०√नृ (ले जाना)+अंगच्, वृद्धि] १. नारंगी। २. गाजर। ३. पिप्पलिरस। ४. यमज प्राणी।

नारंगी—स्त्री० [सं० नागरंग, अ० नारंज] १. नीबू की जाति का एक प्रकार की मझोला पेड़, जिसमें मीठे सुगंधित और रसीले फल लगते हैं। २. उक्त पेड़ का फल।
वि० नारंगी (फल) के छिलके की तरह के पीले रंग का।
पुं० उक्त प्रकार का रंग।

नार—वि० [सं० नर+अण्] १. नर या मनुष्य-संबंधी। नर का। २. आध्यात्मिक।
पुं० १. गौ का बछड़ा। २. जल। पानी। ३. मनुष्यों का झुंड, दल या समूह। ४. सोंठ।
स्त्री० [सं० नाल] १. गला। २. गरदन। ग्रीवा।
मुहा०—नार नवाना या नीची करना=लज्जा संकोच आदि से अथवा आदर-सम्मान प्रकट करने के लिए किसी के आगे गरदन या सिर झुकाना।
३. वह नाड़ी या नली जिससे नव-जात शिशु माता के गर्भ से बँधा रहता है। नाल। (दे०)
पद—नार-बेवार। (दे०)
४. छोटा रस्सा। ५. वह डोरी जो घाघरे, पाजामे आदि के नेफे में पिरोई रहती है और जिसकी सहायता से वे कमर में बाँधे जाते हैं। नाड़ा। नाला। ६. पौधों के वे डंठल जो बालें काट लेने के बाद बच रहते हैं। ७. मैदानों में चरनेवाले चौपायों का झुंड।
†स्त्री०=नारि (स्त्री)। उदा०—नीके है छींके छुए ऐसे ही रह नार। —बिहारी।

नारक—पुं० [सं० नरक+अण्] १. नरक। २. नरक में रहनेवाला प्राणी।

नारकिक—वि०=नारकी।

नारकी—वि० [सं० नारकिन्] १. नरक में पड़ा हुआ। जो नरक भोग रहा हो। २. जिसका नरक में जाना निश्चित हो; अर्थात् परम दुराचारी या पापी।

नारकीट—पुं० [सं०] १. एक प्रकार का कीड़ा। अश्मकीट। २. वह जो किसी को आशा में रखकर निराश करे; फलतः अधम या नीच।

नारकीय—वि० [सं० नरक+छण्—ईय] १. नरक-संबंधी। २. नरक में रहने या होनेवाला। ३. बहुत ही अधम या पापी (व्यक्ति)।

नारद—पुं० [सं० नार=आत्मज्ञान√दा (देना)+क] १. एक प्रसिद्ध देवर्षि और भगवान के परम भक्त जो ब्रह्मा के पुत्र कहे गए हैं, और जिनका नाम अनेक आख्यानों, कथाओं आदि में आता है। २. उक्त के आधार पर ऐसा व्यक्ति जो प्रायः लोगों में लड़ाई-झगड़े कराता

रहता हो। ३. विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम। ४. एक प्रजापति। ५. चौबीस बुद्धों में से एक बुद्ध। ६. कश्यप ऋषि की संतान, एक गन्धर्व। ७. शाक द्वीप का एक पर्वत।

नारद-पुराण—पुं० [सं० मध्य स०] १. अठारह महापुराणों में से एक जिसमें सनकादिक ने नारद को संबोधन करके अनेक कथाएँ कही हैं और उपदेश दिए हैं। इसमें तीर्थों और व्रतों के माहात्म्य बहुत अधिक हैं। २. एक-उपपुराण, जिसे बृहन्नारदीय भी कहते हैं।

नारदी (दिन्)—पुं० [सं० नारद+इनि] विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम।

नारदीय—वि० [सं० नारद+छ—ईय] नारद का। नारद-संबंधी। जैसे—नारदीय पुराण।

नारन—पुं० [सं० नार+हिं० न (प्रत्य०)] नर-समूह। मनुष्यों का समुदाय। उदा०—मनौं तज्यो तारन विरद, बारक नारन तारि। —विहारी।

नारना—स० [सं० ज्ञान, प्रा० णाण+हिं० न] थाह लगाना। पता लगाना। भाँपना। ताड़ना।

नारफ़िक—पुं० [अं० नारफ़िक] इंग्लैण्ड के नारफॉक प्रदेश में होनेवाले घोड़ों की एक जाति।

नार-बेवार—पुं० [हिं० नार+सं० विवार=फैलाव] तुरंत के जनमे हुए बच्चे की नाल, खेड़ी आदि।

नारमन—पुं० [अं०] १. फ्रांस के नारमंडी प्रदेश का निवासी, व्यक्ति या इन व्यक्तियों की जाति। २. जहाज पर का वह खूँटा जिसमें रस्सा बाँधा जाता है।

स्त्री० फ्रांस के नारमंडी प्रदेश की बोली या भाषा!

ना-रसा—वि० [फ़ा०] [भाव० ना-रसाई] १. जो पहुँच न सके। २. जिसकी पहुँच न हो।

ना-रसाई—स्त्री० [फ़ा०] पहुँच न होने की अवस्था या भाव।

नारसिंह—पुं० [सं० नरसिंह+अण्] १. नरसिंह रूपधारी विष्णु। २. एक उप-पुराण जिसमें नृ-सिंह अवतार की कथा है। ३. एक तांत्रिक ग्रंथ।

नारसिंही—वि० [सं० नारसिंह] १. नारसिंह-संबंधी। नारसिंहका। २. बहुत उग्र, प्रबल या विकट। जैसे—नरसिंही टोना-टोटका।

नारांतक—पुं० [सं०] रावण का एक पुत्र।

नारा—पुं० [सं० नाल, हिं० नार] १. घाघरे, पाजामे आदि के नेफे में की वह मोटी डोरी जो पहनावे पहनते समय कमर में बाँधी जाती है। २. रँगा हुआ लाल रंग का वह सूत जो प्रायः पूजन के अवसर पर देवताओं को चढ़ाया जाता है। ३. हल के जूए में बँधी हुई रस्सी।

पुं० [स्त्री० नारी] बड़ी नाली। नारा।

पुं० [अ० नडारः] १. जोर का शब्द। २. किसी दल, समुदाय आदि की तीव्र अनुभूति और इच्छा का सूचक कोई पद या गठा हुआ वाक्य जो लोगों को आकृष्ट करने के लिए उच्च स्वर से बोला और सब को सुनाया जाता है। जैसे—भारत माता की जय।

नाराइन—पुं०=नारायण।

नाराच—पुं० [सं० नार-आ√चम् (खाना)+ड] १. ऊपर से नीचे तक लोहे का बना हुआ तीर या वाण। २. ऐसा दिन जिसमें बादल घिरे रहें। मेघों से आच्छादित दिन। दुर्दिन। ३. एक प्रकार का मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में २४ मात्राएँ होती हैं। ४. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में दो नगण और चार रगण होते हैं। इसे महामालिनी और नारका भी कहते हैं।

नाराच घृत—पुं० [सं०] चीते की जड़, त्रिफला, भटकटैया, बायविडंग आदि एक साथ मिलाकर तथा घी में पकाकर तैयार किया हुआ एक औषध जो मालिश, लेप आदि के काम आता है।

नाराचिका—स्त्री० [सं० नाराच+ठन्—इक,टाप्] सुनारों आदि का छोटा काँटा या तराजू।

नाराची—स्त्री० [सं० नाराच+अच्—ङीष्] सुनारों आदि का छोटा काँटा।

नाराज—वि० [फ़ा० नाराज़] [भाव० नाराजगी] अप्रसन्न। रुष्ट। नाखुश। खफा।

नाराजगी—स्त्री० [फ़ा०] नाराज होने की अवस्था या भाव।

नाराजी†—स्त्री०=नाराजगी।

नारायण—पुं० [सं० नार-अयन, ब० स०] १. ईश्वर। परमात्मा। भगवान। २. विष्णु। ३. कृष्ण यजुर्वेद के अंतर्गत एक उपनिषद्। ४. एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र। ५. 'अ' अक्षर की संज्ञा। ६. पूस का महीना। पौष मास।

नारायण-क्षेत्र—पुं० [ष० त०] गंगा के प्रवाह से चार हाथ तक की भूमि।

नारायण तैल—पुं [सं०] आयुर्वेद में एक तरह का तेल जो मालिश करने के काम आता है।

नारायण-प्रिय—पुं० [ष० त० या ब० स०] १. महादेव। शिव। २. पाँचों पांडवों में के सहदेव। ३. पीला चंदन।

नारायण-बलि—स्त्री० [मध्य० स० या च० त०] आत्म-हत्या आदि करके मरे हुए व्यक्ति की आत्मा की शांति तथा शुद्धि के लिए उसके दाह-संस्कार से पहले प्रायश्चित्त के रूप में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, यम और प्रेत के उद्देश्य से दी जानेवाली बलि।

नारायणी—स्त्री० [सं० नारायण+अण्—ङीप्] १. दुर्गा। २. लक्ष्मी। ३. गंगा। ४. मुद्‌गल ऋषि की पत्नी का नाम। ५. श्रीकृष्ण की वह प्रसिद्ध सेना जो उन्होंने महाभारत के युद्ध में दुर्योधन को उसकी सहायता के लिए दी थी। ६. शतावर। ७. संगीत में, खम्माच ठाठ की एक रागिनी।

†वि०=नारायणी। जैसे—नारायणी माया।

नारायणीय—वि० [सं० नारायण+छ—ईय] नारायण-संबंधी। नारायण का।

पुं० महाभारत के शांति-पर्व का एक उपाख्यान जिसमें नारद और नारायण ऋषि की कथाएँ हैं।

नाराशंस—वि० [सं० नर-आ√शंस् (स्तुति)+घञ्, नाराशंस=पितर+अण्] मनुष्यों की प्रशंसा या स्मृति से संबंध रखनेवाला।

पुं० १. वेद में के रुद्र दैवत्य मंत्र, जिनमें मनुष्यों की प्रशंसा की गई है। २. ऊम, और्व और काव्य, ये तीन पितृगण। ३. उक्त पितृगणों के निमित्त यज्ञ आदि में छोड़ा जानेवाला सोमरस। ४. एक तरह का पात्र जिससे यज्ञ में उक्त उद्देश्य से सोमरस छोड़ा जाता था। ५. पितर।

नाराशंसी—स्त्री० [सं० नार-आशंसी, ष० त०] १. मनुष्यों की प्रशंसा

या स्तुति । २. वेदों का वह मंत्र-भाग जिसमें अनेक राजाओं के दानों आदि का प्रशंसात्मक उल्लेख है।

नारि—स्त्री० [हिं० नाल] १. बड़ी तोप, विशेषतः हाथी पर रखकर चलाई जानेवाली तोप। २. दे० 'नाड़' । ३. गरदन। उदा०—अति अधीन सुजान कनौड़े गिरिधर नारि बनावति।—सूर।

स्त्री० [सं० नार] १. समूह। झुंड। २. आगार। भंडार।

स्त्री०=नारी (स्त्री)।

नारिक—वि० [सं० नार+ठक्—इक] १. जल का। जल-संबंधी। २. जल से युक्त। आध्यात्म-संबंधी। आध्यात्मिक।

पुं० [?] पीतल, फूल आदि के वे पुराने बरतन जो दूकानदार लोग मरम्मत करके फिरसे नये के रूप में बेचते हैं। (कसेरे)

नारिकेर—पुं०=नारिकेल (नारियल)।

नारिकेरी—स्त्री० =नारिकेली।

नारिकेल—पुं० [सं०√किल् (क्रीड़ा)+घञ्, नारी-केल, ष० त०, पृषो० ह्रस्व] नारियल नामक वृक्ष और उसका फल।

नारिकेल-क्षीरी—स्त्री० [सं०] दूध में गरी डालकर बनाई जानेवाली खीर।

नारिकेल-खंड—पुं० [सं०] नारियल की गरी से बनाई जानेवाली एक तरह की ओषधि। (वैद्यक)

नारिकेली—स्त्री० [सं० नारिकेल+अण्—ङीष्] नारियल के पानी से बनाई जानेवाली एक तरह की मदिरा।

नारिदान†—पुं०=नाबदान (पनाला)।

नारि-माला†—स्त्री० [हिं० नली+माला] हल के पीछे लगी हुई वह नली और उसके ऊपर बना हुआ कटोरी के आकार का पात्र जिसमें बीज बोने के लिए छोड़े जाते हैं। नली को नारि और उसके मुँह पर के पात्र को माला कहते हैं।

नारियल—पुं० [सं० नारिकेल] १. समुद्र के किनारे और उसके आस-पास की भूमि में होनेवाला खजूर की जाति का एक तरह का ऊँचा बड़ा पेड़ जिसके फल की ऊपरी खोपड़ी को तोड़ने पर अंदर से गरी निकलती है। २. उक्त पेड़ का फल।

पद—नारियल की जटा=नारियल के फल के ऊपर के कड़े और मोटे रेशे जिनसे रस्से आदि बनाये जाते और गद्दे भरे जाते हैं।

मुहा०—नारियल तोड़ना=मुसलमानों की एक रीति जो गर्भ रहने पर की जाती है। नारियल तोड़कर उससे लड़का या लड़की होने का शकुन निकालते हैं।

३. नारियल की खोपड़ी से बनाया हुआ हुक्का।

नारियल पूर्णिमा—स्त्री० [हिं०+सं०] बम्बई प्रदेश में मनाया जानेवाला एक उत्सव जिसमें समुद्र में नारियल फेंकते हैं।

नारियली—स्त्री० [हिं० नारियल+ई (प्रत्य०)] १. नारियल की खोपड़ी। २. उक्त खोपड़ी का बना हुआ हुक्का। ३. नारियल की ताड़ी।

नारी—स्त्री० [सं० नृ+अञ्—ङीन्] [भाव० नारीत्व] १. सं० 'नर' का स्त्री० रूप। मनुष्य जाति का लिंग के विचार से वह वर्ग जो गर्भधारण करके प्राणियों को जन्म देता है। २. विशेषतः वह स्त्री जिसमें लज्जा, सेवा, श्रद्धा आदि गुणों की प्रधानता हो। ३. युवती तथा वयस्क स्त्रियों की सामूहिक संज्ञा। ४. धार्मिक क्षेत्र में तथा साधकों की परिभाषा में (क) प्रकृति और (ख) माया। ५. तीन गुरु वर्णों की एक वृत्ति।

स्त्री० [हिं० नार] वह रस्सी जिससे जुए में हल बाँधा जाता है।

*स्त्री० [सं० नारीष्टा] चमेली। मल्लिका।

†स्त्री० [?] जलाशयों के किनारे रहनेवाली एक तरह की भूरे रंग की चिड़िया।

†स्त्री० १.=नाड़ी। २.=नाली।

नारी-कवच—पुं० [ब० स०] एक सूर्यवंशी राजा जिसे स्त्रियों ने अपने बीच में घेर कर परशुराम से वध किये जाने से बचा लिया था। क्षत्रियों का वंश विस्तार इन्हीं से माना जाता है।

नारीकेल—पुं०=नारिकेल (नारियल)।

नारीच—पुं० [सं० नाडीच, ड=र] नालिता नाम का शाक।

नारी-तरंगक—पुं० [ष० त०] १. वह व्यक्ति जो नारी का हृदय तरंगित करे। २. प्रेमी। ३. व्यभिचारी व्यक्ति।

नारी-तीर्थ—पुं० [मध्य० स०] एक तीर्थ जहाँ अर्जुन ने ब्राह्मण के शाप से ग्राह बनी हुई पाँच अप्सराओं का उद्धार किया था।

नारी-मुख—पुं० [ब० स०] पुराणानुसार कूर्म विभाग से नैर्ऋत् की ओर का एक देश।

नारीष्टा—स्त्री० [नारी-इष्टा, ष० त०] चमेली। मल्लिका।

नारुंतुद—वि० [सं० न-अरुन्तुद] जिसके शरीर पर कोई आघात न लगता हो।

नारू—पुं० [देश०] १. जूँ। ढील। २. एक प्रसिद्ध रोग जिसमें शरीर में होनेवाली फुंसियों में से सफेद रंग के सूत के समान लंबे-लंबे कीड़े निकलते हैं। ये कीड़े त्वचा के तंतु-जाल में से निकलते हैं, रक्त में से नहीं।

पुं० [हिं० नाली, पु० हिं० नारी] क्यारियों में की जाने या होनेवाली बोआई।

नार्दल†—पुं० [देश०] पुरानी चाल का एक प्रकार का बाजा।

नार्पत्य—वि० [सं० नृपति+ष्यञ्] नृपति अर्थात् राजा से संबंध रखने-वाला।

नार्मद—वि० [सं० नर्मदा+अण्] नर्मदा-संबंधी। नर्मदा नदी का।

पुं० नर्मदा में से निकलनेवाले एक प्रकार के शिव लिंग।

नार्मर—पुं० [सं०] ऋग्वेद में वर्णित एक असुर जिसका वध इन्द्र ने किया था।

नार्यंग—पुं० [सं० नारी-अंग, ब० स०] नारंगी।

नार्य्यतिक्त—पुं० [सं०] चिरायता।

नालंदा—पुं० [सं०] मगध में स्थित एक जगत्-विख्यात प्राचीन विश्व-विद्यालय जो पाटलिपुत्र से ३० कोस दक्षिण में था।

नालंब—*वि० [स्त्री० नालंबा] निरवलंब। उदा०—पर हाय आज वह हुई निपट नालंबा।—मैथिलीशरण गुप्त।

नालंबी—स्त्री० [सं०] शिव की वीणा।

नाल—स्त्री० [सं०√नल् (बंधन)+ण] १. कमल, कुमुद आदि फूलों की पोली लंबी डंडी। डांडी। २. पौधों में डंठल। कांड। ३. गेहूँ, जौ आदि की वह डंडी जिसमें बालें निकलती हैं। ४. नल या नली। ५. बंदूक के आगे निकला हुआ पोला लंबा अंश जिसमें से गोली निकलती है। ७. जुलाहों की नली जिसमें वे सूत लपेटकर रखते हैं। छूंछा। कँडा। छुज्जा। ८. वह रेशा जो कलम बनाते समय छीलने पर निक-

लता है। ९. रस्सी के आकार की वह नली जो एक ओर गर्भ के बच्चे की नाभि से और दूसरी ओर गर्भाशय से मिली होती है। आँवला।
मुहा०—**नाल काटना**=बच्चे का जन्म होने पर नाल काटकर उसे माता के शरीर से अलग करना। (**किसी की कहीं) नाल गड़ी होना**=(क) किसी स्थान से अति घनिष्ठ प्रेम या संबंध होना। (ख) किसी स्थान पर कोई स्वत्व होना।
१०. बाँस या मोटे कागज की वह नली जो आतिशबाजी की चरखियों में लगी रहती है और जिसमें विस्फोटक मसाले भरे रहते हैं। ११. छोटा नाला या पनाला।
स्त्री० [अ० नअल] १. लोहे का वह अर्द्ध-चंद्राकार टुकड़ा जो घोड़ों की टाप में नीचे की ओर जड़ा जाता है।
क्रि० प्र०—जड़ना।
२. उक्त आकार का लोहे का पतला टुकड़ा जो जूतों के नीचे उनकी एड़ीं घिसने से बचाने के लिए लगाया जाता है। ३. पत्थर का वह भारी कुंडलाकार टुकड़ा जिसे कसरत करनेवाले अभ्यास के लिए उठाते हैं। ४. लकड़ी का वह कुंडलाकार घेरा या चक्कर जिसके ऊपर कूएँ की जोड़ाई की जाती है। ५. वह धन जो जूआ खेलनेवाला व्यक्ति हर बार जीतनेवाले व्यक्ति से वसूल करता है।
क्रि० वि० [?] संग या साथ में। (पश्चिम)
नालक—पुं० [देश०] १. पीतल की एक किस्म। २. उक्त किस्म के पीतल का बना हुआ पात्र। ३. एक प्रकार का बाँस।
नाल-कटाई—स्त्री० [हिं०] तुरन्त के जन्मे हुए बच्चे की नाक काटने की क्रिया, भाव या मजदूरी।
नालकी—स्त्री० [सं० नाल=डंडा] एक तरह की लंबी पालकी जिसमें वर को बैठाकर बरात निकाली जाती है।
विशेष—कुछ नालकियाँ खुली होती हैं और कुछ पर मेहराबदार छाजन होती है।
नालकेर—पुं० [सं० नारिकेल] नारियल।
नालबंद—पं० [अ०+फा०] [भाव० नालबंदी] १. वह व्यक्ति जो घोड़ों के खुर में नाल जड़ता हो। २. ऐस मोची जो जूतों में नाल लगाता हो।
नालबंदी—स्त्री० [अ० नाल+फा० वंदी] जूतों की एड़ी अथवा घोड़ों के खुर में नाल जड़ने का काम।
पुं० मुसलिम शासन-काल में एक प्रकार का कर जो जमींदार और छोटे राजा अपनी प्रजा से, उनकी रक्षा के लिए घुड़सवार रखने के बदले में लिया करते थे।
नाल-बाँस—पुं० [सं० नल+हिं० बाँस] एक तरह का बढ़िया और मजबूत बाँस।
नालबंश—पुं० [सं० उपमि० स०] नरसल। नरकट।
नाल-शतीरी—पुं० [अ० नाल+फा० शहतीर] लकड़ी की एक तरह की मेहराब जिसमें अनेक छोटी-छोटी मेहराबें कटी होती हैं।
नाल-शाक—पुं० [सं०] सूरन की नाल जिसकी तरकारी बनाई जाती है।
नाला—पुं० [सं० नाल] [स्त्री० अल्प० नाली] १. वह गहरा तथा लंबा कृत्रिम जल-मार्ग जो नहर आदि की अपेक्षा कम चौड़ा होता है तथा जिसमें बरसाती, गंदा या फालतू पानी बहकर किसी नदी आदि में जा गिरता है। २. रंगीन गंडेदार सूत। ३. दे० 'नाड़ा'।
स्त्री० [सं० नाल+टाप्] १. कमलदंड। २. पौधे का कोमल तना।
पुं० [अ० नालः] आर्तनाद। चीत्कार।
नालायक—वि० [फा० ना+अ० लाइक] १. जिसमें योग्यता का अभाव हो। २. जो मूर्खतापूर्वक दुष्ट आचरण या व्यवहार करता हो।
नालायकी—स्त्री० [हिं० नालायक+ई (प्रत्य०)] १. नालायक होने की अवस्था या भाव। अयोग्यता। २. मूर्खतापूर्वक किया हुआ कोई दुष्ट आचरण।
नालि—स्त्री० [सं० √नल्+णिच्+इन्] १. नालिका। नली। उदा०—जुआलि नालि तसु गरम चेहवी।—पृथ्वीराज। २. बंदूक।
नालिक—पुं० [सं० नाल+ठन्—इक] १. कमल। २. बाँसुरी। ३. भैंसा। ४. प्राचीन काल का एक अस्त्र जिसकी नली में कुछ चीजें भरकर चलाई या फेंकी जाती थीं।
नालिका—स्त्री० [सं० नाला+कन्—टाप्, इत्व] १. छोटी नाल या डंठल। २. नली। ३. पानी आदि बहने की नाली। ४. करघे में की वह नली जिसके अंदर लपेटा हुआ सूत रहता है। ५. पटुआ नाम का साग। ६. एक प्रकार का गन्ध-द्रव्य।
नालिकेर—पुं०=नारिकेल (नारियल)-
नालि-केरी—स्त्री० [सं० नालिकेर+ङीप्] एक तरह का शाक।
नालि-जंघ—पुं० [सं० ब० स०] डोम कौआ।
नालिता—स्त्री० [सं०] १. पटसन। पटुआ। २. उक्त के कोमल पत्तों का बनाया जानेवाला शाक।
नालिनी—स्त्री० [सं०] तंत्र में नाक का छेद।
नालिश—स्त्री० [फा०] १. किसी के संबंध में की जानेवाली फरियाद। २. किसी के विरुद्ध दायर किया जानेवाला मुकदमा।
नाली—स्त्री० [हिं० नाला का स्त्री० अल्पा० रूप] १. गंदा पानी बहने का घर, गली आदि में का पतला और छिछला मार्ग। छोटा नाला। मोरी। २. जल-मार्ग जो प्रायः कम चौड़ा और छिछला होता है। जैसे—खेत में की नाली। ३. वह गहरी लकीर जो तलवार की बीचो बीच पूरी लंबाई तक गई होती है। ४. पतला। नल। नली। ५. पुरानी चाल की बंदूक। उदा०—बान नालि हथनाल, तुपक तीरह सब सज्जिय।—चंदबरदाई। ६. कुम्हार के आँवे का वह नीचे की ओर गया हुआ छेद जिससे आग डालते हैं। ७. घोड़े की पीठ पर का गड्ढा। ८. चोंगा। ढरका।
स्त्री० [सं० नालि+ङीष्] १. नाड़ी। २. करेमू का साग। ३. कमल का डंठल। ४. एक उपकरण जिससे हाथी का कान छेदा जाता है। ५. एक तरह का बाघ। ६. घड़ी।
नालीक—पुं० [सं० नाली√कै (शब्द)+क] १. पुरानी चाल का एक तरह का तीर जो बाँस की नली में रखकर चलाया जाता था। तुफंग। २. भाला। ३. कमलों का जाल या समूह। ४. कमल-नाल। ५. कमंडलु।
नालीकिनी—स्त्री० [सं० नालीक+इनि—ङीप्] १. पद्म समूह। २. कमलों से पूर्ण जलाशय।
नालीदार—वि० [हिं० नाली+फा० दार] जिसमें नाली या नालियाँ बनी या लगी हों।
नालीप—पुं० [सं०] कदंब।

नाली-व्रण—पुं० [सं० मध्य० स०] नासूर।

नालूक—वि० [सं०] कृश। दुबला।
पुं० एक प्रकार का गन्ध-द्रव्य।

नालौट—वि० [हिं० ना+लौटना] बात कहकर पलट जानेवाला। मुकरनेवाला।

नालौर—वि०=नालौट।

नावँ†—पुं०=नाम।

नाव—स्त्री०[सं० नौ से फा०] १. नदी से पार उतरने की एक प्रसिद्ध सवारी जिसे मल्लाह डाँड़ों या पतवारों से खेते हैं। किश्ती। नौका। २. तलवार आदि में रेखाकार बना हुआ चिह्न। खाँचा। नाली। जैसे—दुनावी तलवार या चौनावा खाँचा।

नावक—पुं० [फा०] १. पुरानी चाल का एक तरह का तीर जो बहुत गहरी चोट करता था। २. मधुमक्खी का डंक।
†पुं०=नाविक।

नाव का पुल—पुं० [हिं०] नदी के एक किनारे से दूसरे किनारे तक लगा हुआ आपस में बँधी हुई नावों का क्रम या शृंखला, जो पुल का काम देती है। (बोट ब्रिज)

ना-वक्त—अव्य० [फा०+अ०] १. अनुपयुक्त समय में। २. देर करके।

नाव-घाट†—पुं० [हिं०] नदी, झील आदि का वह स्थान जहाँ नावें रहती हैं।

नावण†—पुं०=नहान।

नावना—स० [सं० नामन] १. किसी के अंदर कुछ गिराना, डालना या रखना। २. प्रविष्ट करना। घुसाना।
†स०=नवाना (झुकाना)।

नावनीत—वि० [सं० नवनीत+अण्] १. नवनीत-संबंधी। २. मुलायम।

नावर—स्त्री० [हिं० नाव] १. नाव। नौका। २. नाव को नदी के बीच में जाकर चक्कर खेलाने की क्रीड़ा।

नावरा—पुं० [देश०] दक्षिण भारत में होनेवाला एक तरह का पेड़ जिसकी लकड़ी चिकनी तथा मजबूत होती है।

नावरि—स्त्री०=नावर।

नावाँ—पुं०=नाँवाँ।

ना-वाकिफ—वि० [फा० ना+अ० वाक़िफ़] [भाव० नावाकिफीयत] १. जिसे किसी से वाकिफीयत अर्थात् जान-पहचान न हो। २. अनजान। ३. अज्ञात।

ना-वाजिब—वि० [फा० ना+अ० वाजिब] जो वाजिब अर्थात् उचित न हो। अनुचित।

नावाधिकरण—पुं०[सं० नौ-अधिकरण, ष० त०=नावधिकरण] १. राज्य या राष्ट्र का वह विभाग जो जहाजी बेड़ों से संबंधित हो और नौ-सेना आदि का संचालन करता हो। २. उक्त विभाग के अधिकारियों का वर्ग। ३. राज्य के जहाजी बेड़े। (एडमिरलटी; उक्त सभी अर्थों में)

नाविक—पुं० [सं० नौ+ठन्—इक] वह जो नौका खेता हो। मल्लाह। माँझी।

नावी (विन्)—पुं० [सं० नौ+इनि] नाविक। मल्लाह।

नावेल—पुं० [अं० नावेल] उपन्यास। (देखें)

नाव्य—वि० [सं० नौ+यत्] १. जिसे नाव से पार किया जा सके। २. नाव से पार करने योग्य। ३. प्रशंसनीय।

नाव्य-जलमार्ग—पुं० [सं० कर्म० स०] वह जल मार्ग जिसमें नावें चलती या चल सकती हों। नावों के यातायात के लिए उपयुक्त जल-मार्ग। (नैविगेबुल)

नाश—पुं० [सं०√नश् (नष्ट होना)+घञ्] [कर्ता० नाशक, भू० कृ० नष्ट] १. ऐसी स्थिति जिसमें किसी वस्तु की सत्ता मिल चुकी होती है। २. सत्ता से च्युत या रहित करने या होने की अवस्था, क्रिया या भाव। ३. रचनाओं का टूट-फूटकर ध्वस्त होना। ४. चौपट होने की अवस्था या भाव।

नाशक—वि० [सं०√नश्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. ध्वंस या नाश करनेवाला। मिटाने या दूर करनेवाला। २. मारने या बध करनेवाला।

नाशकारी (रिन्)—वि० [सं० नाश√कृ (करना)+णिनि] [स्त्री० नाश कारिणी] नाश करनेवाला। नाशक।

नाशन—पुं० [सं०√नश्+णिच्+ल्युट्—अन] नाश करना।
वि० [स्त्री० नाशिनी] नाश करनेवाला।

नाशना†—स० [सं० नाश] नाश करना।

नाशपाती—स्त्री० [फा० नाशपाती] सेब की जाति का एक प्रसिद्ध पेड़ और उसका फल जो कश्मीर में बहुत होता है।

नाश-वाद—पुं० [सं० ष० त०] १. यह वाद या सिद्धान्त कि संसार में जो कुछ है, उसका नाश अवश्य होगा। २. एक आधुनिक पाश्चात्य सिद्धांत जिसके अनुसार सभी धार्मिक, राजनीतिक और सामाजिक मान्यताएँ तथा व्यवस्थाएँ बुरी समझी जाती हैं। (निहिलिज्म)

ना-शाइस्ता—वि० [फा० नाशाइस्तः] १. अनुचित। नामुनासिब। २. अशिष्ट। ३. असभ्य। ४. अश्लील।

ना-शाद—वि० [फा०] १. जो शाद अर्थात् खुश या प्रसन्न न हो। दुःखी। २. अभागा। बदनसीब।

नाशित—भू० कृ० [सं०√नश्+णिच्+क्त] जिसका नाश हो चुका हो। नष्ट।

नाशी (शिन्)—वि० [सं० नाश+इनि] [स्त्री० नाशिनी] १. नाश करनेवाला। नाशक। २. नष्ट होनेवाला। नश्वर।

नाशुक—वि० [सं०√नश्+उकञ्] नष्ट होनेवाला। नश्वर।

ना-शुदनी—वि० [फा०] १. (घटना या बात) जो कभी न हो सके। असंभव। २. (व्यक्ति) जो बहुत ही अभागा या बुरा हो।
स्त्री० ऐसी अनिष्टकारी या अप्रिय घटना जो असंभाव्य होने पर भी अचानक घटित हो जाय।

नाश्ता—पुं० [फा० नाश्तः] सबेरे अथवा दोपहर के भोजन से कुछ समय पहले बासी मुँह किया जानेवाला जल-पान। कलेवा।

नाश्य—वि० [सं०√नश्+णिच्+यत्] १. जिसका नाश हो सके या होने को हो। २. जिसका नाश किया जाना उचित हो।

नाष्टिक—वि० [सं० नष्ट+ठञ्+इक] १. जो नष्ट हो चुका हो।
पुं० वह व्यक्ति जिसकी कोई चीज नष्ट हो चुकी हो।

नाष्टिक—वि० [सं० नष्ट+ठञ्—इक] जो नष्ट हो चुका हो।

पुं० वह व्यक्ति जिसकी कोई चीज नष्ट हो चुकी हो।
नाष्टिक-धन—पुं० [सं० कर्म० स०] खोया हुआ धन। (स्मृति)
नास—स्त्री० [सं० नासा] १. वह चूर्ण जो नाक में डाला जाय। वह औषध जो नाक से सूँघी जाय। नस्य।
क्रि० प्र०—लेना।—सूंघना।
२. नसवार। सुंघनी।
†पुं०=नाश।
नासत्य—पुं० [सं० नअसत्य, नञ्समास, प्रकृतिवद्भाव] अश्विनीकुमार।
नासत्या—स्त्री० [सं० नासत्य+टाप्] अश्वनी नक्षत्र।
नासदान—पुं० [हिं० नास+फा० दान] सुंघनी रखने की डिबिया।
नासना—स० [सं० नाशन्] १. नष्ट या बरबाद करना। २. न रहने देना। अन्त कर देना। ३. मार डालना।
नासपाली—पुं० [?] अनारी रंग। (टार्टन गोल्ड)
वि० उक्त प्रकार के रंग का।
नास-पीटा—वि० [सं० नाश+हिं० पीटना] [स्त्री० नास-पीटी] ऐसा परम नीच और हीन, जिसका कष्ट हो जाना ही अभीष्ट हो। (ब्रज में, स्त्रियों की गाली या शाप)
ना-समझ—वि० [हिं० ना+समझ] [भाव० ना-समझी] १. (व्यक्ति) जिसे समझ न हो। मूर्ख। २. कम समझवाला। नादान।
ना-समझी—स्त्री० [हिं० ना-समझ] ना-समझ होने की अवस्था या भाव।
नासा—स्त्री० [सं०√नास्+अ—टाप्] [वि० नास्य] १. नासिका। नाक। २. नाक के दोनों छेद। नथना। ३. दरवाजे में चौखट के ऊपर की लकड़ी। ३. अजूसा। वासक।
नासाखत*—पुं० दे० 'नक-घिसनी'।
नासाग्र—पुं० [सं० नासा+अग्र ष० त०] नाक का अगला नुकीला अंश या भाग।
ना-साज—वि० [फा० नासाज] [भाव० नासाजी] (शारीरिक स्थिति) जिसमें किसी प्रकार की बेचैनी, रोग या शिथिलता न हो।
नासा-ज्वर—पुं० [मध्य० स०] नाक में एक प्रकार की गाँठ होने के फल-स्वरूप चढ़नेवाला बुखार।
नासानाह—पुं० [सं०] एक तरह का रोग जिसमें कफ से नथने रुँधे रहते हैं।
नासा-परिशोष—पुं० [ष० त०] नासाशोष रोग।
नासा-पाक—पुं० [ष० त०] नाक के पकने का एक रोग।
नासा-पुट—पुं० [ष० त०] नाक का वह चमड़ा जो छेदों के किनारे परदे का काम देता है। नथना।
नासा-योनि—पुं० [ब० स०] वह नपुंसक जिसे घ्राण करने पर उद्दीपन हो। सौगंधिक नपुंसक।
नासालु—पुं० [सं०] कायफल।
नासा-वंश—पुं० [उपमि० स०] नाक की हड्डी।
नासा-वेध—पुं० [ष० त०] १. नथ आदि पहनने के लिए नाक में छेद करने की रसम। २. उक्त काम के लिए नाक के अगले भाग में किया हुआ छेद।
नासामणि—पुं० [सं०] संगीत में, कर्नाट की पद्धति का एक राग।
नासा-शोष—पुं० [ष० त०] एक रोग जिसमें नाक में कफ जम तथा सूख जाता है।
नासा-स्राव—पुं० [ष० त०] नाक में से कफ या पानी निकलना।
नासिकंधम—वि० [सं० नासिका√ध्मा (शब्द)+खश्, मुम्, ह्रस्व] बोलते समय जिसके नाक से भी ध्वनि निकलती हो।
नासिक—स्त्री० [सं० नासिक्य] बम्बई राज्य में गोदावरी के तट पर की एक प्रसिद्ध नगरी जो तीर्थ मानी जाती है।
नासिका—स्त्री० [सं०√नास्+ण्वुल्—अक, टाप्, इत्व] १. नाक। नासा। २. नाक की तरह आगे निकली हुई कोई लंबी चीज। ३. हाथी की सूँड़। ४. दरवाजे में, चौखट के ऊपर की लकड़ी।
नासिका-भूषणी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।
नासिक्य—वि० [सं० नासिका+ष्यञ्] नासिका से उत्पन्न।
पुं० १. नासिका। नाक। २. अश्विनीकुमार। ३. दक्षिण भारत का नासिक नामक तीर्थ। ४. अनुनासिक स्वर।
नासिर—पुं० [अ०] नस्र अर्थात् गद्य लिखनेवाला लेखक। गद्य-लेखक।
नासी—वि०=नाशी।
नासीर—वि० [सं०√नास्+क्विप्, नास√ईर् (गति)+क] आगे आगे चलनेवाला।
पुं० सेना का अगला भाग।
नासूत—पुं० [अ०] इहलोक। मर्त्यलोक। (सूफी संप्रदाय)
नासूर—पुं० [?] एक प्रकार का घाव जिसका मुँह नली के आकार का होता है और जिसमें से बराबर मवाद निकलता रहता है। नाड़ी व्रण। (साइनस)
क्रि० प्र०—पड़ना।
मुहा०—(किसी के) कलेजे या छाती में नासूर डालना=किसी को बहुत अधिक दुःखी करना।
नास्तिक—पुं० [सं० नास्ति+ठक्—क] [भाव० नास्तिकता] ईश्वर, परलोक, मत-मतांतरों आदि को न माननेवाला। 'आस्तिक' का विपर्याय।
नास्तिकता—स्त्री० [सं० नास्तिक+तल्—टाप्] नास्तिक होने की अवस्था या भाव।
नास्तिक्य—पुं० [सं० नास्तिक+ष्यञ्] नास्तिकता।
नास्तिद—पुं० [सं०] आम का पेड़।
नास्तिवाद—पुं० [सं० मध्य०स०] १. नास्तिकों का तर्क। २. नास्तिकता।
नास्य—वि० [सं० नासा+यत्] १. नासिका-संबंधी। नाक का। २. नासिका से उत्पन्न।
पुं० बैल के नथनों में नाथी या बाँधी जानेवाली रस्सी। नाथ।
नाह—पुं० [सं० नाथ] १. नाथ। स्वामी। मालिक। २. स्त्री का पति। ३. बन्धन। ४. हिरन आदि फँसाने का जाल या फंदा।
†पुं० [सं० नाभि] पहिए के बीच का छेद। नाभि।
†अव्य०=नहीं।
नाहक—क्रि० वि० [फा० ना+अ० हक़] अनुचित रूप से और अकारण। व्यर्थ।
नाहट—वि० [देश०] १. बुरा। २. नटखट।
नाह-नूंह—स्त्री० [हिं० नाहीं] १. कई बार किया जानेवाला 'ना' 'ना' या 'नहीं' 'नहीं' शब्द। २. कुछ-कुछ दबी जबान से किया जानेवाला इन्कार।

नाहर—पुं० [सं० नरहरि] १. सिंह। शेर। २. बाघ। ३. बहुत बड़ा वीर और साहसी पुरुष।
पुं० [?] टेसू का पौधा और फूल।

नाहर-मुखी—पुं० दे० 'शेर-मुखी'।

नाहर साँस—पुं० [हिं० नाहर+साँस] घोड़ों के साँस फूलने का एक रोग।

नाहरू†—पुं० १.=नाहर। २.=नारू (रोग)।

नाहिन*—अव्य० [हिं० नाहीं] नहीं।

नाहीं—अव्य० दे० 'नहीं'।
स्त्री० [हिं० नहीं] नहीं करने या कहने की क्रिया या भाव।

नाही†—पुं० [सं० नाथ] स्वामी।

नाहुष—वि० [सं० नहुष+अण्] नहुष-संबंधी। नहुष का।
पुं० नहुष के पुत्र ययाति।

नाहुषि—पुं०=नाहुष।

नित—क्रि० वि०=नित्य।

निंद†—वि०=निंद्य।

निंदक—वि० [सं०√निंद (कलंक लगाना)+ण्वुल्—अक] निंदा-करनेवाला।

निंदना—स० [सं० निंदन] निंदा करना। बुरा कहना।

निंदनीय—वि०[सं०√निंद्+अनीयर] (व्यक्ति अथवा उसका आचरण) जिसकी निंदा की जानी चाहिए। निंदा किए जाने के योग्य।

निंदरना—स० [सं० निंदा] १. निंदा करना। बुरा कहना। २. बदनाम करना।

निंदरा—स्त्री०=निद्रा।

निंदरिया—स्त्री०=निद्रा।

निंदा—स्त्री० [सं०√निंद्+अ—टाप्] [भू० कृ० निंदित, वि० निंदनीय] १. किसी के दोषों, बुराइयों आदि का दूसरों के समक्ष किया जानेवाला वह बखान जो उसे दूसरों की नजरों में गिराने या हेय सिद्ध करने के लिए किया जाय। २. व्यक्ति अथवा उसके किसी कार्य की इस उद्देश्य से की जानेवाली कटु आलोचना कि लोग उसे बुरा समझने लगें। ३. अपकीर्ति। बदनामी।

निंदाई—स्त्री०=निराई (खेतों की)।

निंदाना—स०=निराना।

निंदा-प्रस्ताव—पुं० [सं० ष० त०] किसी सभा में उपस्थित किया जानेवाला वह प्रस्ताव जिसमें किसी अधिकारी, कार्यकर्ता या सदस्य के किसी काम के संबंध में अपना असंतोष प्रकट करते हुए उसकी निंदा का उल्लेख किया जाता है। (सेन्सर मोशन)

निंदारा—वि०=निंदासा।

निंदासा—वि० [हिं० नींद] १. (जीव) जिसे नींद आ रही हो। २. (आँखें) जिनमें नींद भरी हुई हो।

निंदा-स्तुति—स्त्री०=व्याज स्तुति।

निंदित—भू० कृ० [सं०√निंद्+क्त] १. जिसकी निंदा हुई हो या की गई हो। २. दे० 'निंदनीय'।

निंदिया— स्त्री०=नींद।

निंदु—स्त्री०[सं०√निंद्+उ]वह स्त्री जिसे मरा हुआ बच्चा पैदा हुआ हो।

निंद्य—वि० [सं०√निंद्+ण्यत्] निंदा किये जाने के योग्य। निंदनीय।

निंब—स्त्री० [सं० निम्व् (सींचना)+अच्, बवयोरभेदात् नस्य मः] नीम का पेड़।

निंबकौरी†—स्त्री०=निमकौड़ी।

निंबरिया†—स्त्री० [हिं० नीम+बरी] वह उपवन जिसमें नीम के बहुत से पेड़ हों।

निंबादित्य—पुं० [सं०] दे० 'निंबार्काचार्य'।

निंबार्क—पुं० [सं०] १. निंबादित्य का चलाया हुआ वैष्णव संप्रदाय। २. निंबार्काचार्य।

निंबार्काचार्य—पुं० [सं०] भक्तमाल में उल्लिखित एक प्रसिद्ध कृष्णभक्त जो निंबार्क संप्रदाय के संस्थापक थे। कुछ लोग इन्हें श्री राधिका जी के कंकण का अवतार और कुछ लोग इन्हें सूर्य के अंश से उत्पन्न मानते हैं। [सं० ११७१-१२१९ वि०]

निंबू†—पुं०=नींबू (पौधा और उसका फल)।

निः—उप० [सं० निस्] एक उपसर्ग जो शब्दों के पहले लगकर उन्हें नहिक भाव या राहित्य का सूचक बनाता है। जैसे—निःशुल्क, निःशेष आदि।

निःकपट—वि०=निष्कपट।

निःकाम—वि०=निष्काम।

निःकारण—वि०=निष्कारण।

निःकासन—पुं० [वि० निः कासित]=निष्कासन।

निःकासित—वि० [सं०] निष्कासित। (दे०)

निःक्षत्र—वि० [सं० निर्-क्षत्र, ब० स०] (स्थान) जिसमें क्षत्रिय न रहते हों। क्षत्रिय रहित। क्षत्रिय शून्य।

निःक्षेप—पुं० [सं० निर्√क्षिप् (प्रेरणा)+घञ्] निक्षेप। (दे०)

निःक्षोभ—वि० [सं०] जिसमें क्षोभ अर्थात् खलबली या घबराहट न हो।

निःछल—वि० [सं० निर्-क्षोभ, ब० स०] निश्छल। (दे०)

निःपक्ष—वि० [सं०] निष्पक्ष। (दे०)

निःपाप—वि० [सं०] निष्पाप।

निःप्रभ—वि० [सं०] निष्प्रभ। (दे०)

निःप्रयोजन—वि० [सं०] निष्प्रयोजन। (दे०)

निःफल—वि० [सं०] निष्फल। (दे०)

निःशंक—वि०[सं० निर्-शंका, ब० स०] १. जिसे किसी प्रकार की शंका न हो। २. निधड़क।
क्रि० वि० बिना किसी प्रकार की शंका या डर के।

निःशत्रु—वि० [सं० निर्-शत्रु, ब० स०] जिसका कोई शत्रु न हो।

निःशब्द—वि० [सं० निर्-शब्द, ब० स०] १. (स्थान) जिसमें शब्द न हो रहा हो। २. जो शब्द न करता हो।

निःशब्दक—पुं० [सं० निःशब्द+णिच्+ण्वुल्—अक] यंत्रों में रहनेवाला एक उपकरण जो यंत्रों के कुछ पुरजों को अधिक जोर का शब्द या शोर नहीं करने देता। (साइलेन्सर)

निःशम—पुं० [सं० निर्-शम, प्रा० स०] १. असुविधा। २. चिंता।

निःशरण—वि० [सं० निर्-शरण, ब० स०] जिसे कोई शरण देनेवाला न हो। असहाय।

निःशलाक—वि० [सं० निर्-शलाका, ब० स०] एकांत। निर्जन।

निःशल्य—वि० [सं० निर्-शल्य, ब० स०] [स्त्री० निःशल्या] १. जिसके पास शल्य अर्थात् तीर न हों। २. जिसमें शल्य न हो। कंटक रहित। ३. जिसमें कोई खटकनेवाली बात न हो। ४. जिसमें कोई बाधा या रुकावट न हो। निष्कंटक।

निःशाख—वि० [सं० निर्-शाखा, ब० स०] जिसमें शाखाएँ न हों। बिना शाखाओं का।

निः शुक्र—वि० [सं० निर्-शुक्र, ब० स०] १. शक्तिहीन। २. निरुत्साह।

निःशुल्क—वि० [सं० निर्-शुल्क, ब० स०] १. जिस पर कोई शुल्क न लगता हो या न लगा हो। २. (व्यक्ति) जो नियत शुल्क न देता हो या जिसका शुल्क क्षमा कर दिया गया हो।

निःशूक—पुं० [सं० निर्-शूक, ब० स०] एक तरह का धान।

निःशून्य—वि० [सं० निर्-शून्य, प्रा० स०] बिलकुल खाली।

निःशेष—वि० [सं० निर्-शेष, ब० स०] १. जिसका कुछ भी अंश बाकी न बचा हो। जिसका कुछ भी न रह गया हो। २. पूरा। समूचा। ३. पूरी तरह से समाप्त या सम्पन्न किया हुआ (काम)।

निःशोक—वि० [सं० निर्-शोक, ब० स०] शोक रहित।

निःशोध्य—वि० [सं० निर्-शोध्य, ब० स०] जिसका शोधन न किया जा सके।

निःश्रयणी(यिणी)—स्त्री० [सं० निर्√श्रि+ल्युट्–अन, ङीप्; निर्√श्रि+णिनि–ङीप्] निःश्रेणी।

निःश्रीक—वि० [सं० निर्-श्री, ब० स०, कप्] श्री से रहित। कांतिहीन।

निःश्रेणी—स्त्री० [सं० निर्–श्रेणी, ब० स०] सीढ़ी विशेषतः काठ या बाँस की बनी हुई सीढ़ी।

निःश्रेयस—पुं० [सं० निर्–श्रेयस्, प्रा० स०, अच्] १. मोक्ष। मुक्ति। २. कल्याण। मंगल। ३. विज्ञान। ४. भक्ति।

निःश्वसन—पुं० [सं० निर्√श्वस् (साँस लेना)+ल्युट्–अन] साँस बाहर निकालने की क्रिया।

वि० [स्त्री० निःश्वसना] साँस बाहर निकालने या फेंकनेवाला। उदा०—जीवन-समीर शुचि निःश्वसना।—निराला।

निःश्वास—पुं० [सं० निर्√श्वस्+घञ्] वह हवा जो साँस लेने पर नाक के रास्ते बाहर निकाली जाती है।

पद—दीर्घ निःश्वास=गहरा और ठंडा साँस।

निःशील—वि० [सं०]=निश्शील।

निःसंकोच—अव्य० [सं० निर्–संकोच, ब० स०] संकोच बिना। बे-धड़क।

निःसंख्य—वि० [सं० निर्–संख्या, ब० स०] जो गिना न जा सके। अनगिनत। बे-शुमार।

निःसंग—वि० [सं० निर्–संग, ब० स०] १. जिसका किसी से संग न हो। किसी से संबंध न रखनेवाला। निर्लिप्त। २. जिसके साथ और कोई न हो। अकेला।

निःसंचार—वि० [सं० निर्–संचार, ब० स०] १. संचरण न करनेवाला २. घर के अन्दर ही पड़ा रहनेवाला।

निःसंज्ञ—वि० [सं० निर्–संज्ञा, ब० स०] जिसमें संज्ञा न हो या न रह गई हो। संज्ञा-रहित।

निःसंतान—वि०=निस्संतान।

निःसंदेह—वि० [सं० निर्–संदेह, ब०स०] जिसमें कुछ भी संदेह न हो। संदेह-रहित।

क्रि० वि० बिना किसी प्रकार के सन्देह के। २. निश्चित रूप से। अवश्य। बेशक।

निःसंधि—वि० [सं० निर्–संधि, ब० स०] १. संधि-से रहित। २. जिसमें कहीं छेद दरज या ऐसा ही और कोई अवकाश न हो। ३. जिसमें कहीं जोड़ न हो या न लगा हो। ४. दृढ़। पक्का। मजबूत। ५. अच्छी तरह कसा य गठा हुआ।

निःसंपात—वि० [सं०निर्–संपात, ब० स०] जिसमें आना-जाना न हो सके।

पुं० रात का अंधकार।

निः संबल—वि० [सं० निर्–संबल, ब० स०] १. जिसके पास संबल न हो। जिसे कोई संबल या सहायता देनेवाला न हो।

अव्य० बिना किसी संबल या सहारे के।

निःसंबाध—वि० [सं० निर्–संबाधा, ब० स०] १. विस्तृत। २. बड़ा।

निःसंशय—वि० [सं० निर्–संशय, ब० स०] जिसमें या जिसे कुछ भी संशय न हो।

अव्य० किसी प्रकार के संशय के बिना।

निःसत्व—वि० [सं० निर्–सत्व, ब० स०] १. जिसमें सत्व या सार न हो। थोथा। २. निःसार। जिसमें कुछ भी बल या शक्ति न रह गई हो। ३. जो अस्तित्व में न रह गया हो।

निः सपत्न—वि० [सं० निर्–सपत्न, ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसका कोई प्रतिद्वंद्वी या शत्रु न हो। २. (वस्तु) जिसका केवल एक अधिकारी हो। ३. (स्त्री) जिसकी कोई सपत्नी या सौत न हो।

निःसरण—पुं० [सं० निर्√सृ (गति)+ल्युट्–अन] १. बाहर आना या निकलना। २. बाहर निकलने का मार्ग या रास्ता। निकास। ३. कठिनाई से निकलने का मार्ग या युक्ति। ४. मोक्ष। निर्वाण। ५. मरण। मृत्यु। मौत।

निःसार—वि० [सं० निर्–सार, ब० स०] १. (पदार्थ) जिसमें कुछ भी सार न हो। थोथा। २. जिसका कुछ भी महत्त्व न हो। महत्त्वहीन। ३. जिससे कोई प्रयोजन सिद्ध न हो सके। निरर्थक। व्यर्थ।

पुं० १. शाखोट या सिहोर नामक वृक्ष। २. सोनपाढा।

निःसारण—पुं० [सं० निर्√सृ+णिच्+ल्युट्–अन] [भू० कृ० निःसारित] १. कोई चीज निकालने, विशेषतः बाहर निकालने की क्रिया या भाव। २. निकलने का मार्ग। निकास। ३. वनस्पतियों की गाँठों या शरीर की गिल्टियों का अपने अंदर से कोई तत्त्व या तरल अंश बाहर निकालना जो अंगों को विशुद्ध और ठीक दशा में रखने या ठीक तरह से चलाने के लिए आवश्यक होता है। ४. इस प्रकार निकलनेवाला कोई पदार्थ। (सीक्रेशन)

निःसारा—स्त्री० [सं निर्–सार, ब० स०, टाप्] कदली। केला।

निःसारित—भू० कृ० [सं० निर्√सृ+णिच्+क्त] १. निकला हुआ। २. बाहर किया हुआ।

निःसारु—पुं० [सं० निर्–सीमन्, ब० स०] ताल के साठ भेदों में से एक।

निःसीम (न्)—वि० [सं० निर्-सीमन्, ब० स०] १. जिसकी कोई सीमा न हो। २. बहुत अधिक।

निःसुकि—पुं० [सं०] १. एक तरह का गेहूँ का पौधा, जिसकी बालों में टूँड़ (बाल का ऊपरी नुकीला भाग) नहीं लगता। २. उक्त पौधे में से निकलनेवाला गेहूँ।

निःसृत—भू० कृ० [सं० निर्√सृ (गति)+क्त] जिसका निःसरण हुआ हो। बाहर निकला हुआ।

निःस्नेह—वि० [सं० निर्-स्नेह, ब० स०] जिसमें स्नेह (क) तेल या (ख) प्रेम न हो।

निःस्नेहा—स्त्री० [सं० निःस्नेह+टाप्] अलसी। तीसी।

निःस्पंद—वि० [सं० निर्-स्पंद, ब० स०] स्पंदनहीन। निश्चल।

निःस्पृह—वि० [सं० निर्-स्पृहा, ब० स०] १. जिसे किसी बात की स्पृहा अर्थात् आकांक्षा न हो। कामनाओं, वासनाओं आदि से रहित। २. स्वार्थ आदि की दृष्टि से जो किसी के प्रति उदासीन हो। निः स्वार्थ भाववाला। जैसे—निःस्पृह सेवक।

निःस्रव—पुं० [सं० निर्√स्रु (गति)+अप्] १. निकलने का मार्ग। निकास। २. बचा हुआ अंश। अवशेष। ३. बचत।

निःस्राव—पुं० [सं० निर्√स्रु+अण्] १. बहकर निकला हुआ। अंश। २. मांड़।

निःस्व—पुं० [सं० निर्-स्व, ब० स०] १. जो स्व अर्थात् आपा या अपनापन छोड़ या भूल चुका हो। २. जिसे सुध-बुध न रह गई हो। ३. दरिद्र। धनहीन।

निःस्वादु—वि० [सं० निर्-स्वाद, ब० स०] बिना स्वाद का। जिसमें कुछ भी स्वाद न हो।

निःस्वार्थ—वि० [सं० निर्-स्वार्थ, ब० स०] १. जिसमें स्वार्थ-साधन की भावना न हो। २. जो बिना किसी स्वार्थ के कोई काम विशेषतः परोपकार करता हो। ३. (काम) जो बिना किसी स्वार्थ से किया जाय।

अव्य० बिना किसी प्रकार के स्वार्थ के।

नि—उप० [सं०√नी (ले जाना)+डि] एक उपसर्ग जो कुछ शब्दों के आरंभ में लगकर निम्नलिखित अर्थ देता है—(क) नीचे की ओर। जैसे—निपात। (ख) संग्रह या समूह। जैसे—निकर, निकाय। (ग) आदेश। जैसे—निदेश (घ) नित्यता। जैसे—निवेश। (ङ) कौशल। जैसे—निपुण। (च) बंधन। जैसे—निबंधन। (छ) अंतर्भाव। जैसे—निपीत। (ज) सामीप्य। जैसे—निकट। (झ) अपमान। जैसे—निकार। (ञ) दर्शन। जैसे—निदर्शन। (ट) आश्रम। जैसे—निकुंज, निलय, निकेतन। (ठ) अलग होने का भाव। जैसे—निधन, निवृत्ति। (ड) संपूर्ण। जैसे—निखिल। (ढ) अच्छी तरह से। जैसे—निगूढ़, निग्रह। (त) बहुत अधिक। जैसे—नितांत, निपीड़ना।

पुं० संगीत में, निषाद स्वर का सूचक संक्षिप्त रूप।

उप० [हिं०] रहित। हीन। जैसे—निकम्मा, निछोह,

निअर—अव्य० [सं० निकट, प्रा० निअड] निकट। पास। समीप।

वि० तुल्य। बराबर। समान।

निअराना—स० [हिं०निअर] निकट या समीप पहुँचाना या ले जाना।

अ० निकट या पास जाना अथवा पहुँचना।

निअरे†—अव्य०=निकट (पास)।

निआउ†—पुं० =न्याय।

निआथि†—स्त्री० [सं० नि+अर्थता] निर्धनता। गरीबी। उदा०—साथी आथि निआथि भै, सकेसि न साथ निवाहि।—जायसी।

वि० निर्धन।

निआन†—पुं० [सं० निदान] निदान। अन्त। उदा०—देखेन्हि बूझि निआन न साथां।—जायसी।

अव्य० अन्त में। आखिर।

निआना*—वि०=१. निआरा (न्यारा)। उदा०—अनुराजा सो जरै निआना।—जायसी। २. अनजान।

निआमत—स्त्री० [अ० नेअमत] १. ईश्वर द्वारा प्रदत्त अथवा उसकी कृपा से प्राप्त होनेवाली धन-संपत्ति या कोई बहुमूल्य गुण अथवा पदार्थ। २. किसी के द्वारा प्रदत्त बहुत ही बहुमूल्य पदार्थ।

निआरा†—वि० [स्त्री० निआरी]=न्यारा।

निआर्थी*—स्त्री० [सं० निः+अर्थता] १. अर्थहीनता। २. दरिद्रता। गरीबी।

वि० धन-हीन। दरिद्र।

निउँजी†—स्त्री०=न्योंजी (लीची का वृक्ष और फल)।

निऋति—स्त्री० [सं० निर्-ऋति,] दक्षिण-पश्चिम कोण की अधिष्ठात्री देवी। २. अधर्म की पत्नी। ३. अधर्म की कन्या। ४. लक्ष्मी की बहन अलक्ष्मी। दरिद्रा देवी। ५. भारी विपत्ति। ६. मृत्यु।

निकंटक†—वि० [सं० निष्कंटक] १. कंटक रहित। २. अबाध।

निकंदन—पुं० [सं०नि√कंद् (विकलता)+णिच्+ल्युट्-अन] १. नाश। २. संहार।

निकंदना*—स० [सं० निकंदन] १. नष्ट करना। न रहने देना। २. संहार करना।

अ० १. नष्ट होना। २. संहार होना।

निकंद रोग—पुं० दे० 'योनि कंद'।

निकट—अव्य० [नि√कट् (जाना)+अच्] १. कुछ या थोड़ी दूरी पर। पास ही में। २. किसी की दृष्टि या विचार में। ३. किसी के लेखे या हिसाब से। जैसे—तुम्हारे निकट भले ही यह काम बहुत बड़ा न हो, पर सब लोग ऐसा नहीं कर सकते।

वि० लगाव या संबंध के विचार से समीप-स्थित। पास का। जैसे—निकट-संबंधी।

निकटता—स्त्री० [सं० निकट+तल्—टाप्] १. 'निकट' होने की अवस्था या भाव। २. ऐसी स्थिति जिसमें किसी से निकट संबंध हो।

निकटपना—पुं०=निकटता।

निकट-पूर्व—पुं० [सं० कर्म०स०] योरपवालों की दृष्टि से, एशिया महाद्वीप का पश्चिमी भाग, जो भारत की दृष्टि से 'निकट पश्चिम' होगा।

निकटवर्ती (तिन्)—वि० [सं० निकट√वृत् (रहना)+णिनि]=निकटस्थ।

निकटस्थ—वि० [सं० निकट√स्था (ठहरना)+क] १. (वह) जो

किसी के निकट रहता या होता हो। २. संबंध आदि के विचार से ग्रास का।

निकती—स्त्री० [सं० निष्क+मिति ?] छोटा तराजू। काँटा।

निकम्मा—वि० [सं० निष्कर्ष, प्रा० निकम्मा] १. जिसके हाथ में कोई काम न हो। काम-धन्धे से खाली या रहित। जैसे—आज-कल वे निकम्मे बैठे हैं। २. जो कोई काम-धंधा करने के योग्य न हो। अयोग्य। जैसे—ऐसा निकम्मा आदमी लेकर हम क्या करेंगे। ३. (पदार्थ) जो किसी काम में आने के योग्य न हो। रद्दी। जैसे—निकम्मी बातें।

निकर—पुं० [सं० नि√कृ (व्याप्ति)+अच्] १. झुंड। समूह। जैसे—रवि-कर-निकर। २. ढेर। राशि। ३. निधि। खजाना।

क्रि० वि० निकट।

पुं० [अ०] कमर में पहनने का एक प्रकार का चौड़ी मोहरीवाला अँगरेजी पहनावा जो घुटनों तक लंबा होता है।

निकरना†—अ०=निकलना।

निकर्तन—पुं० [सं० नि√कृत् (छेदन)+ल्युट्—अन] काटना।

निकर्मा—वि० [सं० निष्कर्मा] १. जो कोई कर्म या काम न करे। जो कुछ उद्योग-धंधा न करे। २. आलसी। ३. दे० 'निकम्मा'।

नि-कर्षण—पुं० [सं० ब० स० ?] १. खेल का मैदान। २. परती जमीन। ३. आँगन। ४. पड़ोस।

निकलंक—वि० [सं० निष्कलंक] जिसे या जिसमें कोई कलंक न हो।

निकलंकी—वि०=निष्कलंक।

पुं०=कल्कि (अवतार)।

निकल—स्त्री० [अं०] एक तरह की सफेद मिश्रित धातु, जिसके सिक्के आदि ढाले जाते हैं।

निकलना—अ० [हिं० 'निकालना' का अ०] १. अंदर या भीतर से बाहर आना या होना। निर्गत होना। जैसे—आज हम सवेरे से ही घर से निकले हैं।

संयो० क्रि०—आना।—जाना।—पड़ना।

मुहा०—(**किसी व्यक्ति का घर से) निकल जाना**=इस प्रकार कहीं दूर चले जाना कि लोगों को पता न चले। जैसे—कई बरस हुए, उनका लड़का घर से निकल गया था। (**किसी स्त्री का घर से) निकल जाना**=पर-पुरुष के साथ अनुचित संबंध होने पर उसके साथ चले या भाग जाना। (**कोई चीज कहीं से) निकल जाना**=इस प्रकार दूर या बाहर हो जाना कि फिर से आने या लौटने की संभावना न रहे। जैसे—गली, मुहल्ले या शहर की गंदगी निकल जाना।

२. कहीं छिपी, दबी या रुकी हुई चीज प्राप्त होना या सामने आना। पाया जाना। मिलना। जैसे—(क) उसके घर चोरी का माल निकला था। (ख) जंगलों और पहाड़ों में से बहुत-सी चीजें निकलती हैं। (ग) इस प्रणाली में बहुत से दोष निकले, इसलिए इसका परित्याग कर दिया गया।

संयो० क्रि०—आना।

३. किसी प्रकार की परिधि, मर्यादा, सीमा आदि में से छूटकर या और किसी प्रकार बाहर आना या होना। जैसे—(क) जेल में से कैदी निकलना। (ख) कूएँ में से पानी निकलना। (ग) किसी प्रकार के दोष आदि के कारण दल, बिरादरी, संस्था आदि से निकलना।

मुहा०—(**कोई चीज हाथ से) निकल जाना**=खोने, चोरी जाने आदि के कारण अधिकार, स्वामित्व आदि से इस प्रकार बाहर हो जाना कि फिर से प्राप्त होने की संभावना न रहे। जैसे—अँगूठी या कलम हाथ से निकल जाना। (**कोई अवसर, कार्य या बात हाथ से) निकल जाना**=असावधानता, प्रमाद, भूल आदि के कारण अधिकार, कृतित्व आदि से इस प्रकार बाहर हो जाना कि फिर उसके संबंध से कुछ किया न जा सके। जैसे—अब तो वह बात हमारे हाथ से निकल गई; हम उसके लिए कुछ नहीं कर सकते।

४. किसी प्रकार के अधिकार, नियंत्रण, बंधन आदि से रहित होने पर किसी ओर प्रवृत्त होने के लिए बाहर आना। जैसे—(क) कमान में से तीर या बंदूक में से गोली निकलना। (ख) फंदे से गला निकलना।

५. किसी चीज में पड़ी, मिली या लगी हुई अथवा व्याप्त वस्तु का उससे छूटकर या और किसी प्रकार अलग, दूर या बाहर होना। जैसे—(क) कपड़े में से मैल या रंग निकलना। (ख) पत्तियों या फलों में से रस अथवा बीजों में से तेल निकलना। (ग) दूध या मलाई में से घी या मक्खन निकलना।

संयो० क्रि०—आना।—जाना।

६. उत्पत्ति या निर्माण के स्थान अथवा उद्गम के स्थान से बाहर होकर प्रकट या प्रत्यक्ष होना। सामने आना। जैसे—(क) अंडे या गर्भ में से बच्चा निकलना। (ख) पेड़ में से डालियाँ या डालियों में से पत्तियाँ अथवा मसूड़ों में से दाँत निकलना। (ग) विश्वविद्यालय में से योग्य स्नातक निकलना।

संयो० क्रि०—आना।—पड़ना।

७. किसी अज्ञात स्थान, स्थिति आदि से बाहर होकर सामने आना। आगे आकर उपस्थित होना या दिखाई देना। जैसे—आज न जाने कहाँ से इतनी च्यूँटियाँ (या मक्खियाँ) निकल आई (या निकल पड़ी) हैं।

संयो०क्रि०—आना।—पड़ना।

८. किसी पदार्थ या स्थान में से कोई नई रचना, वस्तु या स्थिति उत्पन्न अथवा प्राप्त होना। जैसे—(क) इस कपड़े में से दो कुर्तों के सिवा एक टोपी भी निकलेगी। (ख) यह दालान तोड़ दिया जाय तो इसमें तीन दूकानें निकलेंगी। (ग) जंगल कट जाने पर खेती-बारी और बस्ती के लिए जगह निकल आती है।

संयो० क्रि०—आना।—जाना।

९. शरीर में छिपे या दबे हुए विकार या विष का रोग के रूप में प्रकट या प्रत्यक्ष होना। जैसे—गरमी, चेचक, या मुँहासा निकलना।

विशेष—इस अर्थ में इस क्रिया का प्रयोग कुछ विशिष्ट प्रकार के ऐसे ही रोगों या विकारों के संबंध में ही होता है जो किसी प्रकार के विस्फोट के रूप में होते हैं।

१०. शरीर अथवा उसके किसी अंग से कोई तरल पदार्थ बाहर आना। जैसे—(क) शरीर से पसीना निकलना। (ख) फोड़े में से पीब या मवाद निकलना। (ग) नाक या मुँह से खून निकलना।

११. किसी बड़ी राशि में से कोई छोटी राशि कम होना या घटना। जैसे—(क) इस रकम में से तो सौ रुपए ब्याज के निकल गए। (ख) सेर भर घी तो टीन में से चूकर निकल गया।

संयो० क्रि०—जाना।

१२. किसी गूढ़ तत्त्व, बात या विषय के आशय, उद्देश्य, रहस्य या रूप का स्पष्टीकरण होना। कोई बात खुलना या प्रकट होना। जैसे—(क) किसी पद, वाक्य या श्लोक का अर्थ निकलना। (ख) किसी काम के लिए मुहूर्त निकलना।
संयो० क्रि०—आना।
१३. किसी ऐसी चीज या बात का नये सिरे से आविर्भूत, प्रगट या प्रत्यक्ष होना जो पहले न रही हो या सामने न आई हो। जैसे—(क) किसी प्रदेश में ताँबे या सोने की खान निकलना। (ख) नया कानून, कायदा, प्रथा या हुकुम निकलना। (ग) उपाय तरकीब या युक्ति निकलना।
संयो० क्रि—आना। —जाना।
१४. किसी नई वास्तु-रचना का प्रस्तुत होकर उपयोग में आने के योग्य होना। जैसे—(क) कहीं से कोई नहर या सड़क निकलना। (ख) दीवार में नई खिड़की निकलना। (ग) यातायात के सुभीते के लिए किसी प्रदेश या प्रांत में रेल निकलना। १५. किसी चीज के किसी अंग या अंश का असाधारण रूप से आगे या बाहर की ओर बढ़ा हुआ होना अथवा सब की दृष्टि के सामने होना। जैसे—(क) उस मकान में दाहिनी तरफ एक बरामदा निकला है। (ख) उनकी दीवार में एक नई खिड़की निकली है।
संयो० क्रि०—आना।
१६. अपने कर्तव्य, निश्चय, वचन आदि का ध्यान छोड़कर अलग या दूर हो जाना। लगाव या संपर्क बाकी न रहने देना। जैसे—तुम तो यों ही दूसरों का गला फँसाकर (या वादा करके) निकल जाते हो।
संयो० क्रि०—जाना।—भागना।
१७. पुस्तकों, विज्ञापनों, समाचार-पत्रों आदि के संबंध में छपकर प्रकाशित होना या सर्वसाधारण के सामने आना। जैसे—(क) किसी विषय की कोई नई पुस्तक निकलना। (ख) समाचार-पत्रों में विज्ञापन या सूचना निकलना। (ग) कहीं से कोई नया मासिक-पत्र निकलना। १८. बिकनेवाली चीजों के संबंध में, खपत या बिक्री होना। जैसे—उनकी दूकान पर जितना माल आता है, सब निकल जाता है। १९. किसी स्थान पर स्थित किसी तत्त्व या बात का अपने पूर्व में बना न रहना। अलग, दूर या नष्ट हो जाना। जैसे—इस एक दवा से ही हमारे कई रोग निकल गए।
संयो० क्रि०—जाना।
२०. कुछ पशुओं के संबंध में सधाये या सिखाये जाने पर इस योग्य होना कि जुताई, ढुलाई, सवारी आदि के काम में ठीक तरह से आ सकें। जैसे—यह घोड़ा अच्छी तरह निकल गया है; अर्थात् गाड़ी में जोते जाने या सवारी के काम में आने के योग्य हो गया है। २१. हिसाब-किताब होने पर कोई रकम किसी के जिम्मे बाकी ठहरना। जैसे—अभी सौ रुपए और तुम्हारे नाम निकलते हैं। २२. कोई अभिप्राय या उद्देश्य सफल या सिद्ध होना। मनोरथ पूर्ण होना। जैसे—किसी से कोई काम या मतलब निकलना।
संयो० क्रि०—आना।—जाना।
२३. किसी जटिल प्रश्न या समस्या की ठीक मीमांसा होना। हल होना। जैसे—गणित के ऐसे प्रश्न सब लोगों से नहीं निकल सकते।
संयो० क्रि०—आना।—जाना।—सकना।
२४. कंठ से उच्चरित होना। जैसे—गले से स्वर निकलना, मुँह से आवाज या बात निकलना।
संयो० क्रि०—आना।—जाना।
विशेष—उक्त के आधार पर लाक्षणिक रूप में इस क्रिया का प्रयोग बाजों आदि के संबंध में भी होता है। जैसे—मृदंग में से शब्द या सारंगी में से राग अथवा स्वर निकलना।
मुहा०—(कोई बात मुंह से) निकल जाना=असावधानी के कारण या आकस्मिक रूप से उच्चरित होना। जैसे—मुँह से कोई अनुचित बात निकल जाना।
२५. चर्चा, प्रसंग या बात के संबंध में, आरंभ होना। छिड़ना। जैसे—(क) बात-चीत या व्याख्यान में वहाँ और भी कई प्रसंग निकले। (ख) बात निकलने पर मुझे भी कुछ कहना ही पड़ा।
संयो० क्रि०—आना। —जाना।
२६. ग्रह, नक्षत्र आदि का आकाश में उदित होकर क्षितिज से ऊपर और आँखों के सामने आना। जैसे—चंद्रमा, तारे या सूर्य निकलना।
संयो० क्रि० : आना।—जाना।
२७. किसी व्यक्ति या कुछ लोगों का किसी मार्ग से होते हुए किसी ओर चलना, जाना या बढ़ना। जैसे—जलूस, बरात या यात्रियों का दल (किसी ओर से) निकलना। २८. समय के संबंध में, व्यतीत होना। गुजरना। बीतना। जैसे—(क) हमारे दिन भी जैसे-तैसे निकल ही रहे हैं। (ख) अब बरसात निकल जायगी।
संयो० क्रि०—जाना।
२९. निर्विवाद और स्पष्ट रूप से ठीक ठहरना। प्रमाणित या सिद्ध होना। जैसे—(क) उनका यह लड़का तो बहुत लायक निकला। (ख) आपकी भविष्यद्वाणी ठीक निकली।

निकलवाना—स०[हिं० निकालना का प्रे०] १. किसी को कुछ निकालने में प्रवृत्त करना। २. जोर या जबरदस्ती से किसी को छिपाकर रखी हुई कोई चीज उपस्थित करने के लिए बाध्य करना।

निकलाना†—स०=निकलवाना।

निकष—पुं०[सं० नि √कष् (पीसना)+घ] १. कसने, घिसने, रगड़ने आदि की क्रिया या भाव। २. सान, जिस पर रगड़कर हथियारों की धार तेज की जाती है। ३. कसौटी, जिस पर परखने के लिए सोना कसा या रगड़ा जाता है।

निकषण—पुं०[सं० नि√कष्+ल्युट्—अन] १. कसने, घिसने, रगड़ने आदि की क्रिया या भाव। २. हथियारों की धार तेज करने के लिए उन्हें सान पर चढ़ाना। ३. परखने के लिए कसौटी पर सोना कसना या रगड़ना। ४. गुण, योग्यता, शक्ति आदि परखने की क्रिया या भाव।

निकषा—स्त्री०[सं० नि √कष् (हिंसा)+अच्—टाप्] रावण की माता।

निकषात्मज—पुं०[सं० निकषा+आत्मज, ष० त०] १. राक्षस। २. रावण अथवा उसका कोई भाई।

निकषोपल—पुं०[सं० निकष-उपल. मध्य०स०] १. कसौटी (पत्थर)। २. कोई ऐसा साधन जिससे कोई चीज परखी जाय।

निकस—पुं०[सं०]=निकष।

निकसना—अ०=निकलना।

निका†—पुं०=निकाह।

निकाई—स्त्री०[हिं० नीका=अच्छा]१. अच्छापन। २. अच्छाई।
३. खूबसूरती। सुन्दरता।
स्त्री०[हिं० निकाना] खेत में से घास-पात काटकर अलग करने की क्रिया, भाव या मजदूरी। निराई।
पुं०=निकाय।

निकाज—वि०[हिं० नि+काज]=निकम्मा।

निकाना—स०[?] नाखून गड़ाना या चुभाना।
स०=निराना (खेत)।

निकाम—वि०[हिं० नि+काम]१. जिसे कोई काम न हो। २. निकम्मा।
वि०=निष्काम।
*क्रि० वि० व्यर्थ।
*वि० [?] प्रचुर।

निकाय—पुं०[सं० नि√चि (चयन)+घञ्, कुत्व]१. झुंड। समूह।
२. प्राचीन भारत में कुछ विशिष्ट संप्रदाय, विशेषतः बौद्ध धर्म के वे संप्रदाय जिनकी संख्या अशोक के समय में १८ तक पहुँच चुकी थी।
३. दे० 'समुदाय'। ४. एक ही प्रकार की वस्तुओं का ढेर या राशि।
५. रहने का स्थान। निवास स्थान। निलय। ६. परमात्मा।

निकाय्य—पुं०[सं० नि √चि+ण्यत् नि० सिद्धि]घर। गृह।

निकार—पुं०[सं० नि √कृ (करना)+घञ्] १. पराभव। हार।
२. अपकार। ३. अपमान। ४. तिरस्कार। ५. ईख या गन्ने का रस पकाने का कड़ाहा। ६. दे० 'निकासी'।

निकारण—पुं०[सं०नि√कृ(मारना)+णिच्+ल्युट्—अन] मारण। वध।

निकारना—स०=निकालना।

निकारा—†वि०[फा० नाकार] [स्त्री० निकारी] १. तुच्छ। निकम्मा।
२. खराब। बुरा। उदा०—हरी चंद काहु नहिं जान्यों मन की रीति निकारी।—भारतेन्दु।

निकाल—पुं०[हिं० निकालना]१. निकलने की क्रिया, ढंग या भाव।
२. निकलने का मार्ग। निकास। ३. कठिनाई, संकट आदि से निकलने का ढंग या युक्ति। जैसे—कुश्ती में किसी दाँव या पेंच का निकाल।
४. विचार, विवेचन आदि के फलस्वरूप निकलनेवाला परिणाम या सिद्धान्त।

निकालना—स०[सं० निष्कासन, पु० हिं० निकासना]१. जो अंदर हो, उसे बाहर करना या लाना। निर्गत या बहिर्गत करना। जैसे—अलमारी में से किताबें, बरतन में से घी या संदूक में से कपड़े निकालना।
संयो० क्रि०—देना।—लेना।
२. किसी को किसी क्षेत्र, परिधि, मर्यादा, सीमा आदि में से किसी प्रकार या रूप में अलग, दूर या बाहर करना। जैसे—किसी को दल, बिरादरी, संस्था, समाज आदि से निकालना।
संयो० क्रि०—देना।
मुहा०—(किसी को कहीं से) निकाल ले जाना =किसी प्रकार के घेरे, बंधन सीमा आदि में से छल या बल-पूर्वक अपने अधिकार में करके अपने साथ ले जाना। जैसे—(क) किसी स्त्री को उसके घर से निकाल ले जाना। (ख) कैदी को जेल से निकाल ले जाना। (ग) किसी के यहाँ से कुछ माल निकाल ले जाना।
३. कहीं छिपी, ठहरी, दबी या रुकी हुई चीज किसी प्रकार वहाँ से हटाकर अपने हाथ में लाना या लेना। बाहर करना या लाना। जैसे—(क) कूएँ में से पानी, खान में से सोना, फोड़े में से मवाद या म्यान में से तलवार निकालना। (ख) किसी के यहाँ से चोरी का माल निकालना।
४. किसी चीज में पड़ी या मिली हुई अथवा उसके साथ जुड़ी, बंधी या लगी हुई कोई दूसरी चीज अलग या दूर करना अथवा हटाना। जैसे—(क) चावल या दाल में से कंकड़ियाँ निकालना। (ख) कान में से बाली या नाक में से नथ निकालना। ५. किसी वस्तु में से कोई ऐसी दूसरी वस्तु किसी युक्ति से अलग या दूर करना, जो उसमें ओत-प्रोत रूप में मिली हुई या व्याप्त हो। जैसे—(क) कपड़ों में की मैल, बीजों में से तेल या पत्तियों में से रस निकालना। ६. किसी को किसी कठिन, विकट या संकटपूर्ण स्थिति आदि से बाहर करके उसका उद्धार करना। जैसे—आपने ही मुझे इस विपत्ति से निकाला है।
मुहा०—(किसी को या कोई चीज कहीं से) निकाल ले जाना=चुरा-छिपाकर या युक्ति-पूर्वक संकटों आदि से बचाते हुए सुरक्षित रूप में कहीं ले जाना। जैसे—शिवाजी के साथी उन्हें औरंगजेब की कैद से निकाल ले गये।
७. किसी चीज, तत्त्व या बात को उसके स्थान से इस प्रकार हटाकर अलग या दूर करना कि उसका अंत, नाश या समाप्ति हो जाय। न रहने देना। अस्तित्व मिटाना। जैसे—(क) दवा से शरीर का रोग या विकार निकालना। (ख) शहर से गंदगी निकालना। (ग) किसी वस्तु या व्यक्ति के दुर्गुण या दोष निकालना। (घ) किसी की चालाकी या शेखी निकालना। ८. किसी कार्य या पद पर नियुक्त व्यक्ति को वहाँ से हटाकर अलग या दूर करना। पद, नौकरी, सेवा आदि से हटाना। जैसे—छँटनी में दस आदमी इस विभाग से भी निकाले गये हैं। ९. एक में मिली हुई बहुत-सी चीजों में से कोई चीज या कुछ चीजें किसी विशिष्ट उद्देश्य से बाहर करना या सामने लाना। जैसे—दूकानदार अपने यहाँ की तरह-तरह की चीजें निकाल कर ग्राहकों को दिखाते हैं।
संयो० क्रि०—देना।—लाना।—लेना।
१०. किसी बड़ी राशि में से कोई छोटी राशि अलग, कम या पृथक् करना। जैसे—इसमें से सेर भर दूध (या गज भर कपड़ा) निकाल दो।
संयो० क्रि०—डालना।—देना।—लेना।
११. कहीं रखी हुई अपनी कोई चीज या उसका कुछ अंश वहाँ से उठा या लेकर अपने अधिकार या हाथ में करना। जैसे—(क) किसी के यहाँ से अपनी धरोहर निकालना। (ख) बंक से रुपए निकालना।
१२. देन, प्राप्य आदि के रूप में किसी के जिम्मे कोई रकम ठहराना। बाकी लगाना। जैसे—वे तो अभी और सौ रुपए तुम्हारी तरफ निकालते हैं। १३. कोई चीज बेचकर या और किसी रूप में अपने अधिकार, नियंत्रण, वश आदि से अलग या बाहर करना। जैसे—(क) वे यह मकान भी निकालना चाहते हैं। (ख) यह दूकानदार अपने यहाँ की पुरानी और रद्दी चीजें निकालने में बहुत होशियार है। १४. कोई ऐसी चीज या बात नये सिरे से आरंभ करके प्रचलित या प्रत्यक्ष करना, जो पहले न रही हो। नवीन रूप में जारी या प्रचलित करना। जैसे—नया कानून, कायदा या रीति निकालना। १५. आविष्कार, उपज्ञा, सूझ आदि के फलस्वरूप कोई नई चीज या बात बनाकर या और

किसी प्रकार प्रस्तुत करना या सबके सामने लाना। जैसे—(क) आज-कल के वैज्ञानिक नित्य नये यंत्र (या सिद्धांत) निकालते रहते हैं। (ख) आपके तर्क (या मत) में उसने बहुत-से दोष निकाले हैं। १६. उपाय, युक्ति आदि के संबंध में, सोच-विचारकर नये सिरे से और ऐसे रूप में कोई बात सामने रखना या लाना जो पहले अपने आपको या औरों को न सूझी हो। जैसे—उद्देश्य पूरा करने की कोई नई तरकीब या नया रास्ता निकालना। १७. किसी गूढ़ तत्त्व, बात या विषय का आशय, रहस्य या रूप स्पष्ट करना, सामने रखना या लाना। खोलकर प्रकट करना। जैसे—(क) किसी वाक्य या शब्द का अर्थ निकालना। (ख) कहीं जाने के लिए मुहूर्त निकालना।
संयो० क्रि०—देना।—लेना।
१८. किसी प्रश्न या समस्या का ठीक उत्तर या समाधान प्रस्तुत करना। मीमांसा या हल करना। जैसे—(क) गणित के प्रश्नों के उत्तर निकालना। (ख) किसी मामले का कोई हल निकालना। १९. अपना उद्देश्य, कार्य या मनोरथ सफल या सिद्ध करना। जैसे—अभी तो किसी तरह उनसे अपना काम निकालो, फिर देखा जायगा।
संयो० क्रि०—लेना।
२०. कोई ऐसी नई वास्तु-रचना प्रस्तुत करना, जो किसी दिशा में दूर तक चली गई हो। जैसे—कहीं से कोई नई नहर, रेल की लाइन या सड़क निकालना। २१. किसी प्रकार की रचना करने के समय उसका कोई अंग इस प्रकार प्रस्तुत करना कि वह अपने प्रसम या साधारण रूप अथवा नियत रेखा से कुछ आगे बढ़ा हुआ हो। जैसे—मिस्तरी ने इस दीवार का एक कोना कुछ आगे निकाल दिया है। २२. किसी पदार्थ को छेदते या भेदते हुए कोई चीज एक दिशा या पार्श्व से उसकी विपरीत दिशा या पार्श्व में पहुँचाना या ले जाना। किसी के आर-पार करना। जैसे—पेड़ के तने पर तीर (या गोली) चलाकर उसे दूसरी ओर निकालना। २३. पुस्तकों, समाचार-पत्रों, सूचनाओं आदि के संबंध में छापकर अथवा और किसी प्रकार प्रचारित करना या सब के सामने लाना। जैसे—अखबार या विज्ञापन निकालना। २४. शब्द या स्वर कंठ या मुँह (अथवा वाद्य-यंत्रों आदि) से उत्पन्न या बाहर करना। जैसे—(क) गले से आवाज या मुँह से बात निकालना। (ख) तबले, सारंगी या सितार से बोल निकालना। २५. किसी प्रकार की चर्चा, प्रसंग या विषय आरंभ करना। छेड़ना। जैसे—अपने भाषण में उन्होंने यह प्रसंग भी निकाला था। २६. सलाई, सूई आदि से बनाये जानेवाले कामों के संबंध में, कढ़ाई, बुनाई आदि के रूप में बनाकर तैयार या प्रस्तुत करना। जैसे—(क) दिन भर में एक गुलूबंद या मोजा निकालना। (ख) कसीदे के काम में बेल-बूटे निकालना। २७. दल आदि के रूप में कुछ लोगों को साथ करके किसी ओर से या कहीं ले जाना। जैसे—जलूस या बरात निकालना। २८. जुताई, सवारी आदि के कामों में आनेवाले पशुओं के सम्बन्ध में उन्हें सधा या सिखाकर इस योग्य बनाना कि वे जुताई, ढुलाई, सवारी आदि के काम में ठीक तरह से आ सकें। जैसे—यह घोड़ा (या बैल) अभी निकाला नहीं गया है, अर्थात् अभी सवारी (या हल में जोते जाने) के योग्य नहीं हुआ है। २९. समय, स्थिति आदि के सम्बन्ध में किसी प्रकार निर्वाह करते हुए उसे पार या व्यतीत करना। जैसे—यह जाड़ा तो हम इसी कोट से निकाल ले जायँगे।
संयो० क्रि०—देना।—ले जाना।—लेना।

निकाला—पुं०[हिं० निकालना] १. निकलने या निकालने की क्रिया, ढंग या भाव। जैसे—अब घर से जल्दी निकाला नहीं होता। २. किसी स्थान से बाहर निकाले जाने का दंड या सजा। जैसे—देश-निकाला।
क्रि० प्र०—देना।—मिलना।

निकाश—पुं०[सं० नि√काश् (चमकना)+घञ्] १. दृश्य। २. क्षितिज। ३. समीपता। ४. अनुरूपता।

निकाष—पुं०[सं० नि √कष् (खरोंचना)+घञ्] १. खुरचना। २. रगड़ना।

निकास—पुं०[सं० निष्कास, हिं० निकसना] १. निकसने अर्थात् निकलने की क्रिया या भाव। २. वह उद्गम स्थान जहाँ से कोई चीज निकल या बढ़कर पूर्णतया प्रकट रूप में सामने आती हो। ३. वह मार्ग या विस्तार जिसमें से होकर कोई चीज जाती हो। ४. घर आदि से निकलने का द्वार, विशेषतः मुख्य द्वार। ५. खुला हुआ स्थान। मैदान। ६. आमदनी या आय का रास्ता। ७. आमदनी। ८. विपत्ति, संकट आदि से बचने की युक्ति। ९. दे० 'निकासी'।
पुं०[सं० निकाश] समानता। उदा०—सनीर जीमूत-निकाश सोभहिं।—केशव।

निकासना†—स०=निकालना।

निकास-पत्र—पुं० [हिं० निकास+सं० पत्र] वह पत्र जिसमें किसी दुकान, संस्था आदि के जमा खरच, बचत आदि का विवरण दिया हो। रवन्ना।

निकासी—स्त्री०[हिं० निकास] १. निकलने या निकालने की क्रिया, ढंग या भाव। २. व्यक्ति का घर से बाहर निकलने विशेषतः काम-काज या यात्रा के लिए बाहर निकलने का भाव। ३. दुकान में रखे हुए अथवा कारखानों आदि में तैयार होनेवाले माल का बिकना और बाहर आना। ४. वह माल जितना उक्त रूप में निकलकर बाहर जाय। खपता। बिक्री। ५. आय। आमदनी। ६. ब्रिटिश शासन में, वह धन जो सरकारी मालगुजारी देने के उपरांत जमींदार के पास बच रहता था। बचत। ७. चुंगी। ८. दे० 'निकासी-पत्र'।

निकासी-पत्र—पुं०[हिं० निकासी+सं० पत्र] वह अधिकार-पत्र जिसके अनुसार कोई व्यक्ति या वस्तु कहीं से निकल कर बाहर जा सके। (ट्रानजिट पास)

निकाह—पुं०[अ०] इस्लाम की धार्मिक पद्धति से होनेवाला विवाह।

निकाही—वि०[अ० निकाह] (स्त्री०) जो निकाह अर्थात् धार्मिक पद्धति से विवाह करके घर में लाई गई हो। मुसलमान की विवाहिता (पत्नी)।

निकियाई—स्त्री०[हिं० निकियाना] निकियाने की क्रिया, भाव और मजदूरी।

निकियाना—स०[देश०] किसी चीज को इस प्रकार से नोचना कि उसका अंश या अवयव अलग हो जाय। जैसे—पक्षी के पर या पशु के बाल निकियाना।

निकिष्ट—वि०=निकृष्ट।

निकुंच—पुं०[सं० नि√कुंच् (कुटिलता)+अच्] १. कुंजी। ताली।

निकुंचक—पुं०[सं० नि√कुंच्+ण्वुल्—अक]१. एक तरह का पुराना माप जो कुड़व के चौथाई अंश के बराबर होता था। २. जल-बेंत।

निकुंचन—पुं०[सं० नि√कुंच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० निकुंचित] संकुचन।

निकुंज—पुं०[सं० नि-कु√जन्(उत्पत्ति)+ड, पृषो० सिद्धि] उपवन, वन, वाटिका आदि में का वह प्राकृतिक स्थल जो वृक्षों तथा लताओं द्वारा आच्छादित तथा कुछ पार्श्वों से घिरा होता है। कुंज।

निकुंभ—पुं०[सं० नि√कुंभ (ढाँकना)+अच्] १. कुंभकरण का एक पुत्र जो रावण का मंत्री था। २. भक्त प्रह्लाद के एक पुत्र का नाम। ३. शतपुर का एक असुर राजा जिसने कृष्ण के मित्र ब्रह्मदत्त की कन्याओं का हरण किया था इसी लिए कृष्ण ने इसे मार डाला था। ४. हरिवंश के अनुसार, हर्यश्व राजा का एक पुत्र। ५. एक विश्वेदेव। ६. कौरवों की सेना का एक सेनापति। ७. कुमार का एक गण। ८. महादेव का एक गण। ९. दंती (वृक्ष)। १०. जमालगोटा।

निकुंभित—पुं०[सं० नि√कुम्भ+क्त] नृत्य का एक विशेष प्रकार या मुद्रा।

निकुंभिला—स्त्री० [सं०] १. लंका के पश्चिम भाग में की एक गुफा। २. उस गुफा की अधिष्ठात्री देवी (कहते हैं कि युद्ध करने से पहले मेघनाद इसी देवी का पूजन किया करता था)।

निकुंभी—स्त्री०[सं० निकुंभ+ङीप्] १. कुंभकरण की कन्या का नाम। २. दंती वृक्ष।

निकुटना—अ०[हिं० निकोटना का अ०] निकोटा जाना। स०=निकोटना।

निकुही—स्त्री०[देश०] एक तरह की चिड़िया।

निकुरंब—पुं०[सं० नि√कुर् (शब्द)+अम्बच् (बा०)]समूह।

निकुलीनिका—स्त्री०[सं०]१. वह कला जो किसी ने अपने पूर्वजों से सीखी हो। २. वह कला जिसमें किसी जाति विशेष के लोग निपुण तथा सिद्धहस्त समझे जाते हैं।

निकूल—पुं०[सं०] वह देवता जिसके निमित्त नरमेध और अश्वमेध यज्ञों में छठे यूप में बलि चढ़ाया जाता है।

निकृंतन—पुं०[सं० नि √ कृत्+ल्युट्—अन]१. काटना। २. नष्ट करना।

निकृत—भू० कृ०[सं० नि √ कृ+क्त]१. अपमानित या तिरस्कृत किया हुआ। २. जो दूसरों द्वारा ठगा गया हो। प्रतारित। ३. अधम। नीच। ४. दुष्ट।

निकृति—स्त्री०[सं० नि √ कृ+क्तिन्]१. अपमान। तिरस्कार। २. दूसरों को ठगने की क्रिया या भाव। ३. दुष्टता। ४. दीनता। ५. पृथ्वी। ६. धर्म का पुत्र एक वसु जो सीघ्या के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

निकृत्त—वि०[सं० नि √ कृत्+क्त] १. जड़ या मूल से कटा हुआ। २. छिन्न। विदीर्ण।

निकृष्ट—वि०[सं० नि √ कृष् (खींचना)+क्त] [भाव० निकृष्टता] जो महत्व, मान आदि की दृष्टि से निम्न कोटि का और फलतः तिरस्कृत हो। जैसे—निकृष्ट विचार, निकृष्ट व्यक्ति।

निकृष्टता—स्त्री०[सं० निकृष्ट+तल्—टाप्] निकृष्ट होने की अवस्था या भाव।

निकेत—पुं०[सं० नि √कित् (बसना)+घञ्] रहने का स्थान। घर।

निकेतन—पुं०[सं० नि √कित्+ल्युट्—अन]=निकेत।

निकोचक—पुं०[सं० नि√कुच् (शब्द)+वुन्—अक] अंकोल (वृक्ष)।

निकोचन—पुं०[सं० नि √ कुच्+ल्युट्—अन] सिकुड़ने की क्रिया या भाव।

निकोटना—स०[हिं० बकोटना का अ०]१. नाखूनों की सहायता से तोड़ना। २. नोचना। ३. दे० 'बकोटना'।
स०[हिं० नि+कृत] कोई चीज गढ़ने या बनाने के लिए खोदना, तराशना आदि। (राज०)

निकोठक—पुं०[सं० निकोचक, पृषो० सिद्धि] अंकोल (वृक्ष)।

निकोसना—सं० १. दाँत निकालना। २. दाँत किटकिटाना या पीसना।

निकौड़िया—पुं०[हिं० नि+कौड़ी] [स्त्री० निकौड़ी]१. व्यक्ति, जिसके पास कौड़ी भी न हो। २. परम निर्धन या दरिद्र व्यक्ति।

निकौनी†—स्त्री० [हिं० निकाना=निराना] निराई (खेत की)।

निक्का—वि०[सं० न्यक्क=नत, नीचा] [स्त्री० निक्की]१. (व्यक्ति) जो वय में अपने सभी भाइयों से छोटा हो। २. अवस्था में बहुत छोटा। जैसे—निक्का काका। (पश्चिम)

निक्रीड़—पुं०[सं० नि√क्रीड़ (खेलना)+घञ्] क्रीड़ा। खेल।

निक्वण—पुं०[सं० नि√क्वण् (शब्द)+अप्]१. वीणा की झंकार या शब्द। २. किन्नरों का शब्द या स्वर।

निक्षण—पुं०[सं० निक्ष् (चूमना)+ल्युट्—अन] चुंबन। चुम्मा।

निक्षा—स्त्री०[सं०√निक्ष्+अच्—टाप्] जूँ का अंडा। लीख।

निक्षिप्त—भू० कृ०[सं० नि√क्षिप् (प्रेरणा)+क्त] १. फेंका हुआ। २. डाला या रखा हुआ। ३. छोड़ा या त्यागा हुआ। त्यक्त। ४. अमानत या धरोहर के रूप में किसी के पास जमा किया या रखा हुआ। (डिपाजिटेड) ५. भेजा हुआ। (कन्साइंड) ६. बंधनों आदि से छूटा हुआ।

निक्षिप्तक—पुं०[सं० निक्षिप्त+कन्]१. वह वस्तु जो कहीं भेजी जाय। (कन्साइनमेंट) २. वह धन जो किसी कोश, खाते या मद में इकट्ठा किया जाय।

निक्षिप्ति—स्त्री०[सं० नि√क्षिप्+क्तिन्] निक्षेप। (दे०)

निक्षिप्ती—पुं०[सं० निक्षिप्त]वह व्यक्ति जिसके नाम कोई वस्तु, विशेषतः पारसल के रूप में भेजी गई हो। (कनसाइनी)

निक्षुभा—स्त्री०[सं० निक्षुभ (हलचल)+क—टाप्] १. ब्राह्मणी। २. सूर्य की एक पत्नी।

निक्षेप—पुं०[सं० नि√क्षिप् (प्रेरणा)+घञ्] [भू० कृ० निक्षिप्त]१. फेंकने, डालने, चलाने, छोड़ने आदि की क्रिया या भाव। २. किसी के पास कोई चीज भेजने की क्रिया या भाव। ३. इस प्रकार भेजी जाने-वाली वस्तु। ४. वह धन या वस्तु जो किसी के यहाँ अमानत या धरोहर के रूप में रखी गई हो। ५. वह धन जो कहीं जमा किया गया हो। (डिपाजिट) ६. कोई चीज कहीं जमा करने अथवा किसी के पास अमानत या धरोहर के रूप में रखने की क्रिया या भाव।

निक्षेपक—वि०]सं० नि√क्षिप्+ण्वुल्—अक] फेंकने, चलाने या छोड़ने-वाला।

पुं० १. वह जो किसी को कोई वस्तु विशेषतः पारसल करके भेजता हो। (कन्साइनर) २. वह जो किसी के पास धन जमा करे। ३. धरोहर के रूप में रखा हुआ पदार्थ। (कौ०)

निक्षेपण—पुं०[सं० नि√क्षिप्+ल्युट्—अन] [वि० निक्षिप्त, निक्षेप्य] १. कोई चीज चलाना, छोड़ना, डालना या फेंकना। २. धन आदि किसी के पास जमा करना। ३. अमानत या धरोहर के रूप में कोई चीज किसी के पास रखना।

निक्षेप-निर्णय—पुं०[सं० तृ० त०] सिक्का आदि उछालकर उसके चित या पट गिरने के आधार पर किया जानेवाला किसी प्रकार का निर्णय। (टॉस)

निक्षेपित—भू० कृ० [सं० निक्षिप्त] जिसका निक्षेपण हुआ हो। निक्षिप्त।

निक्षेपी (पिन्)—वि०[सं० नि√क्षिप्+णिनि]१. चलाने, छोड़ने, डालने या फेंकनेवाला। २. अमानत या धरोहर के रूप में किसी के पास कोई चीज रखनेवाला।

निक्षेप्ता (प्तृ)—पुं०[सं० नि√क्षिप्+तृच]=निक्षेपी।

निक्षेप्य—वि०[सं० नि√क्षिप्+णिनि]१. चलाये, छोड़े, डाले या फेंके जाने के योग्य। २. अमानत या धरोहर के रूप में रखे जाने के योग्य। ३. जमा किये जाने के योग्य।

निखंग†—पुं०=निषंग (तरकश)।

निखंगी—वि०=निषंगी (तरकश धारण करनेवाला)।

निखंड—वि० दो बिन्दुओं या कालों के ठीक बीच में होनेवाला। जैसे—निखंड बेला।

निखटक—क्रि० वि०=बेखटके।

निखट्टर—वि०[हिं० नि+कट्टर=कड़ा] कठोर हृदयवाला। निर्दय और निष्ठुर।

निखट्टू—वि०[हिं० नि+खटना=कमाना]१. (व्यक्ति) जो कुछ भी कमाता न हो। २. बेकार।

निखनन—पुं० [सं० नि√खन् (खोदना)+ल्युट्—अन] १. खनना। खोदना। २. खोदने पर निकलनेवाली मिट्टी। ३. गाड़ना।

निखरक—क्रि० वि०=निखटक (बेखटके)।

निखरचे—क्रि० वि० [हिं० नि+खरच] बिना किसी प्रकार का खरच विशेषतः माल आदि का दलाली, ढुलाई, रेल-भाड़ा, डाक-व्यय आदि जोड़े या मिलाये हुए। जैसे—आपको यह माल ५०) मन निखरचे मिलेगा। अर्थात् ऊपरी खरच विक्रेता के जिम्मे होंगे।

निखरना—अ०[सं० निक्षरण=छँटना] १. ऊपर की मैल आदि हट जाने के कारण खरा या साफ होना। २. स्वच्छ करनेवाली किसी क्रिया के फल-स्वरूप वास्तविक तथा अधिक सुन्दर रूप प्रकट होना। ३. रंगत, रूप आदि का खिलना या साफ होना। ४. कला-पूर्ण ढंग से संपादित होने के कारण किसी कार्य या वस्तु का ऐसे उत्कृष्ट या निर्दोष स्थिति या रूप में सामने आना कि वह यथेष्ट सजीव तथा सौंदर्यपूर्ण जान पड़े। जैसे—दूसरे संस्करण में जो संशोधन तथा सुधार हुए हैं उनके कारण यह ग्रंथ और भी निखर गया है। (दे० 'निखार' और 'निखारना')

संयो० क्रि०—आना।—उठना।—जाना।

निखरवाना—स० [हिं० निखारना] किसी को कुछ निखारने में प्रवृत्त, करना। निखारने का काम दूसरे से कराना।

निखरी—स्त्री०[हिं० निखरना] घी की पकी हुई रसोई। पक्की रसोई। 'सखरी' का विपर्याय।

निखर्व—वि०[सं०]१. जो गिनती में दस हजार करोड़ हो। 'खर्व' का सौ-गुना। २. बौना। वामन।

पुं० दस हजार करोड़ या सौ खर्व की सूचक संख्या या अंक।

निखवख*—वि०, क्रि० वि० [सं० न्यक्ष=सारा, सब] बिलकुल। निरा।

निखात—भू० कृ०[सं० नि√खन्+क्त]१. (जमीन या गड्ढा) खोदा हुआ। २. खोदकर निकाला हुआ। ३. गाड़ा हुआ।

निखाद—पुं०=निषाद।

निखार—पुं० [हिं० निखरना] १. निखरने की क्रिया या भाव। २. निर्मलता। स्वच्छता। ३. सजावट।

निखारना—स० [हिं० खारना] १. ऐसी क्रिया करना जिससे कोई चीज निखर उठे। २. निर्मल, पवित्र या शुद्ध करना।

विशेष—प्रायः कई विशिष्ट प्रकार के कारीगर चीज तैयार कर लेने पर उसे कई तरह के खारों (क्षारों) आदि के घोल में डालकर उसे सुन्दर और स्वच्छ बनाते हैं। यही क्रिया कहीं 'खारना' और कहीं 'निखारना' कहलाती है।

निखारा—पुं० [हिं० निखारना] वह बड़ा कड़ाहा जिसमें ऊख का रस उबाल कर निखारा जाता है।

निखालिस—वि०=खालिस। (असिद्ध रूप)

निखिउ*— वि०=निक्षिप्त।

निखिद्ध†—वि०=निषिद्ध।

निखिल—वि० [सं० नि-खिल=शेष, ब० स०] १. अखिल। संपूर्ण। २. समस्त। सारा।

निखुटना—अ० [सं० निक्षित ?] १. उपयोग में लाई जानेवाली वस्तु का कोई काम पूरा होने से पहले ही समाप्त हो जाना। बीच में ही समाप्त हो जाना। जैसे—पत्र भी न लिखा गया और स्याही निखुट गई। २. बाकी न बचना।

निखेद—पुं०=निषेध।

निखेधना—स० [सं० निषेध] निषेध या वर्जन करना। मना करना।

निखोट—वि० [हिं० नि०+खोटा] १. (वस्तु) जो बिलकुल शुद्ध, खरी या खालिस हो। जिसमें कोई खोट न हो। खरा। साफ। २. (व्यक्ति) जो खोटा अर्थात् दुष्ट-प्रकृति का न हो। खरा। साफ। ३. (बात) छल-कपट से रहित और स्पष्ट।

क्रि० वि० खुलकर और स्पष्ट रूप से।

निखोड़ना†—स० [हिं० नि+खोदना] १. खोदना, विशेषतः नाखून से खोदना। २. नोचकर अलग करना।

निखोड़ा—वि० [हिं० नि+खोड़=आवेश] [स्त्री० निखोड़ी] १. बहुत जल्दी या अधिक आवेश में आनेवाला। २. आवेशयुक्त होकर काम करनेवाला। ३. क्रूर। निर्दय।

निखोरना†—स०=निखोड़ना।

निगंद—पुं० [सं० निर्गंध] ओषधि के काम आनेवाली एक रक्त-शोधक बूटी।

निगंदना—स० [हिं० निगंदा] रूई भरे हुए कपड़े के दोनों परतों में सूई-धागे से इसलिए बड़े-बड़े टाँके लगाना कि उसके अंदर की रूई इधर-उधर न होने पाये।

निगंदा—पुं० [फा० निगंदः] उक्त प्रकार के कपड़ों में लगा हुआ बड़ा टाँका। बखिया।

निगंध—वि०=निर्गंध (गंध हीन)।

निगड़—स्त्री० [सं० नि√गल् (बंधन)+अच्, लस्य डः] १. जंजीर, जिससे हाथी के पैर बाँधे जाते हैं। आँदू। २. अपराधियों के पैरों में पहनाई जानेवाली बेड़ी।

निगड़न—पुं० [सं० नि√गल्+ल्युट्—अन, लस्य डः] निगड़ पहनाने या बाँधने की क्रिया या भाव।

निगड़ित—वि० [सं० निगड+इतच्] निगड़ से बाँधा हुआ।

निगण—पुं० [सं० निगरण, पृषो० सिद्धि] यज्ञाग्नि या आहुति के जलने से उत्पन्न होनेवाला धूआँ।

निगति—वि० [हिं० नि+सं० गति] १. जिसकी गति अर्थात् मुक्ति न हुई हो। २. जिसकी गति या मुक्ति न हो सकती हो; अर्थात् बहुत बड़ा पापी।

निगद—पुं० [सं० नि√गद् (कहना)+अप्] १. कहना या बोलना। भाषण। २. उक्ति। कथन। ३. ऐसा जप जिसका उच्चारण जोर-जोर से किया जाय। ४. पढ़ने का वह ढंग जिसमें कोई पाठ बिना अर्थ समझे हुए पढ़ा या रटा जाता है।

निगदन—पुं० [सं० नि√गद्+ल्युट्—अन] १. कहना। २. रटा, सीखा या स्मरण किया हुआ पाठ दोहराना।

निगदित—भू० कृ० [सं० नि√गद्+क्त] जिसका निरादर किया गया हो।

निगना†—अ० [सं० निगमन्] चलना। (राज०)

निगम—पुं० [सं० नि√गम् (जाना)+अप्] १. पथ। मार्ग। रास्ता। २. प्राचीन भारत में, वह पथ या रास्ता जिस पर होकर व्यापारी लोग अपना माल लाते और ले जाते थे। ३. उक्त के आधार पर रोजगार या व्यापार। ४. वेद जिसकी, शिक्षाएँ सब के चलने के लिए सुगम मार्ग के रूप में हैं। ५. वेद का कोई शब्द, पद या वाक्य अथवा इनमें से किसी की टीका या व्याख्या। ६. ऐसा ग्रंथ जिसमें वैदिक मतों का निरूपण या प्रतिपादन हो। ७. विधि या विधान के अनुसार अस्तित्व में आई हुई ऐसी संस्था जो शरीरधारी व्यक्ति की तरह काम करती है और जिसके कुछ निश्चित अधिकार, कृत्य तथा कर्तव्य होते हैं। ८. दे० 'नगर महापालिका'। ९. मेला। १०. कायस्थों की एक शाखा।

निगमन—संज्ञा—[सं० नि√गम्+ल्युट्—अन] १. किसी संस्था या को निगम का रूप देने की क्रिया या भाव। २. न्याय में, वह कथन प्रतिज्ञा, जो हेतु, उदाहरण और उपनय तीनों से सिद्ध हुई या होती हो। (डिडक्शन)

निगमनिवासी (सिन्)—पुं० [सं० निगम नि√वस् (बसना)+णिनि] विष्णु।

निगमपति—पुं० [सं० ष० त०] १. निगम का प्रधान अधिकारी। २. दे० 'नगर-प्रमुख'।

निगम-बोध—पुं० [सं० ब० स०] पृथ्वीराज रासों में उल्लिखित एक पवित्र स्थान जो यमुना नदी के तट पर तथा दिल्ली के पास था।

निगम-संचारी—पुं० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

निगमागम—पुं० [सं० निगम-आगम, द्व० स०] वेद और शास्त्र।

निगमित—वि० [सं०] जिसे निगम का रूप दिया गया हो। (इन्कार-पोरेटेड)

निगमी (मिन्)—वि० [सं० निगम+इनि] वेदज्ञ।

निगमीकरण—पुं० [सं० निगम+च्वि, ईत्व√कृ (करना)+ल्युट्—अन] किसी संस्था को निगम का रूप देना। (इन्कारपोरेशन)

निगमीकृत—भू० कृ० [सं० निगम+च्वि, ईत्व√कृ+क्त]=निगमित।

निगर—पुं० [सं० नि√गृ (निगलना)+अप्] १. निगलने की क्रिया या भाव। २. भोजन। ३. गला। ४. एक प्रकार की पुरानी तौल जो ५५ मोतियों के बराबर होती थी।
†वि० [सं० निकर] कुल। सब।
†पुं० समूह।

निगरण—पुं० [सं० नि√गृ+ल्युट्—अन] १. खाना या निगलना। २. गला। ३. यज्ञाग्नि का धूआँ।

निगरना†—स०=निगलना।

निगरभर—वि० [सं० नि+गह्वर] बहुत ही घना।
क्रि० वि० घने रूप में।

निगराँ—वि० [फा०] १. निगरानी करनेवाला। जो चौकस होकर किसी की देखभाल करे। २. निरीक्षक।

निगरा—स्त्री० [सं० निगर] ५५ मोतियों की वह लड़ी जो तौल में ३२ रत्ती हो।
वि० [हिं० नि+गरण] (ऊख का रस) जिसमें पानी न मिलाया गया हो।

निगराना—स० [सं० नय+करण] १. निर्णय करना। २. छाँट कर अलग या पृथक् करना। ३. स्पष्ट करना।
अ० १. अलग होना। २. स्पष्ट होना।

निगरानी—स्त्री० [फा०] १. व्यक्ति के संबंध में उसके कार्य, गति-विधि आदि पर इस प्रकार ध्यान रखना कि कोई अनौचित्य या सीमा का उल्लंघन न होने पाये। २. वस्तु के संबंध में, इस प्रकार ध्यान रखना कि उसे किसी प्रकार की क्षति या व्यतिक्रम न होने पाये।

निगरू—वि० [हिं० नि+सं० गुरु] जो गुरु अर्थात् भारी न हो। हलका।
†वि०=निगुरा।

निगलन—पुं० [सं०]=निगरण।

निगलना—स० [सं० निगरण, निगलन] कोई कड़ी या ठोस चीज बिना चबाये ही गले के अंदर उतार लेना।
संयो० क्रि०—जाना।

निगह—स्त्री०=निगाह।

निगहबान—वि० [फा०] १. निगाह रखने अर्थात् देख-रेख करनेवाला। २. रक्षक।

निगहबानी—स्त्री० [फा०] निगहबान होने की अवस्था या भाव। देख-रेख। रक्षण।

निगाद—पुं० [सं० नि√गद्+घञ्] निगद। (दे०)
वि० वक्ता।

निगार—पुं० [सं० नि√गॄ+घञ्] १. निगलने की क्रिया या भाव। २. भक्षण।
पुं० [फा०] १. प्रतिमा। मूर्ति। २. ऐसा चित्रण जिसमें बेल-बूटे भी हों। ३. फारस देश का एक राग।
वि० १. अंकित करनेवाला। २. लिखनेवाला।

निगाल—पुं० [देश०] १. एक प्रकार का पहाड़ी बाँस जिसे रिंगाल भी कहते हैं। २. [सं०निगार, रस्य लः] घोड़े की गरदन।
स्त्री०=निगाली।

निगालवान (वत्)—पुं० [सं० निगाल+मतुप्] घोड़ा।

निगालिका—स्त्री० [सं०] आठ अक्षरों का एक वर्ण-वृत्त, जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, रगण और लघु-गुरु होते हैं। इसे 'प्रमाणिक' और 'नाग स्वरूपिणी' भी कहते हैं।

निगाली—स्त्री० [हिं० निगार] १. बाँस की पतली नली। २. हुक्के की वह नली जिसे मुँह में लगाकर धूआँ खींचा जाता है।

निगाह—स्त्री० [फा०] १. दृष्टि। नजर। २. कृपा-दृष्टि। ३. किसी बात की देख-रेख के लिए उस पर रखा जानेवाला ध्यान। ४. किसी काम, चीज या बात के संबंध में होनेवाली परख। सूक्ष्म दृष्टि।

निगिभ—वि० [सं० निगुह्य] अत्यंत गोपनीय।

निगीर्ण—भू० कृ० [सं० नि√गॄ+क्त] १. निगला हुआ। २. अंतर्भूत। समाविष्ट।

निगुंफ—पुं० [सं० नि√गुम्फ (गूँथना)+घञ्] १. समूह। २. गुच्छा।

निगुण†—वि०=निर्गुण।

निगुना†—वि० १.=निर्गुण। २.=निगुनी।

निगुनी—वि० [हिं० नि+गुनी] जिसमें कोई गुण न हो।

निगुरा†—वि० [हिं० नि+गुरु] जिसने धार्मिक दृष्टि से किसी को अपना गुरु न बनाया हो, जिसने किसी से दीक्षा न ली हो। फलतः गुण-रहित और हीन।
विशेष—संतों के समाज में, और उसके आधार पर लोक में भी ऐसा व्यक्ति अपटु, अयोग्य और निकृष्ट माना जाता है।

निगूढ़—वि० [सं० नि√गुह् (छिपाना)+क्त] १. जिसका अर्थ छिपा हो। २. अत्यंत गुप्त।

निगूढ़ार्थ—वि० [सं० निगूढ़-अर्थ, ब० स०] जिसका अर्थ छिपा हो।
पुं० [कर्म० स०] छिपा हुआ अर्थ।

निगूहन—पुं० [सं० नि√गुह्+ल्युट्—अन] गुप्त रखने या छिपाने की क्रिया या भाव।

निगृहीत—भू० कृ० [सं० नि√ग्रह् (पकड़ना)+क्त] [भाव० निगृहीति] १. धरा, पकड़ा या रोका हुआ। २. जिस पर आक्रमण हुआ हो। आक्रमित। ३. तर्क-वितर्क या वाद-विवाद में हारा हुआ। ४. जिसे दंड मिला हो। दंडित। ५. जिसे कष्ट पहुँचा हो। पीड़ित।

निगृहीति—स्त्री० [सं० नि√ग्रह+क्तिन्] १. धरने, पकड़ने या रोकने का भाव। २. आक्रमण। ३. तर्क-वितर्क या वाद-विवाद में होनेवाली हार। ४. दंड। ५. कष्ट।

निगोड़ा—वि० [हिं० नि+गोड़=पैर] [स्त्री० निगोड़ी] जिसके गोड़ अर्थात् पैर न हों अथवा टूटे हुए हों। फलतः अकर्मण्य। (स्त्रियों की एक प्रकार की गाली)
वि० दे० 'निगुरा'।

निगोल—स्त्री० [?] किसी मकान के ऊपरी भाग में सीढ़ियों के ऊपर की वह छायादार रचना जो आस-पास की छतों और रचनाओं में सबसे ऊँची हो।

निग्रह—पुं० [सं० नि√ग्रह+अप्] १. नियंत्रण, बंधन, रोक आदि के द्वारा किसी आवेग, क्रिया, वस्तु या व्यक्ति को स्वतंत्रतापूर्वक आचरण न करने देना। २. उक्त का इतना अधिक उग्र या कठोर रूप कि किसी बात या वृत्ति का दमन हो जाय। ३. रोककर या वश में रखनेवाली चीज या बात। अवरोध। रोक। ४. चिकित्सा, जिससे रोग आदि दबाये या रोके जाते हैं। ५. दंड। सजा। ६. पीड़ित करना। सताना। ७. बाँधनेवाली चीज या बात। बंधन। ८. डाँट-डपट। ९. भर्त्सना। १०. सीमा हद। १०. शिव। ११. विष्णु।

निग्रहण—पुं० [सं० नि√ग्रह+ल्युट्—अन] १. निग्रह करने की क्रिया या भाव। (दे० 'निग्रह') २. पराजय। ३. युद्ध। लड़ाई।

निग्रहना—स० [सं० निग्रहण] १. निग्रह करना। २. नियंत्रण, बंधन या रोक में रखना। ३. दमन करना। ४. दंडित करना।

निग्रह-स्थान—पुं० [सं० ष० त०] तर्क में वह स्थल या स्थान जहाँ वादी के अतर्क-संगत बातें कहने पर वाद-विवाद बंद कर देना पड़े।

निग्रही (हिन्)—वि० [सं० निग्रह+इनि] १. निग्रह करनेवाला। २. नियंत्रण, बंधन या रोक में रखनेवाला। दमन करनेवाला। ३. दंड देनेवाला।

निग्राह—पुं० [सं० नि√ग्रह+घञ्] १. आक्रोश। शाप। २. दंड। सजा।

निग्राहक—वि० [सं० नि√ग्रह+ण्वुल्—अक] निग्रह करनेवाला।
पुं० वह प्राचीन शासनिक अधिकारी जो अपराधियों, आततायियों आदि को दंड देता था।

निग्रोध—पुं० [सं० न्यग्रोध] राजा अशोक के भाई का पुत्र।

निघंटिका—स्त्री० [सं० नि√घंट् (शोभित होना)+ण्वुल्—अक, टाप्, इत्व] गुलंचा नाम का कंद।

निघंटु—पुं० [सं० नि√घंट्+कु] १. शब्दों की सूची, विशेषतः यास्क द्वारा उल्लिखित वैदिक शब्दों की सूची। २. कोई ऐसा कोश, जिसमें किसी प्राचीन भाषा के अथवा बहुत पुराने और अप्रचलित शब्दों के अर्थ और विवेचन हों (लेक्सिकन)। ३. शब्द-संग्रह अथवा शब्द-कोश।

निघ—वि० [सं० नि√हन् (जानना)+क नि० सिद्धि] जो लंबाई और चौड़ाई में बराबर हो।
पुं० १. गेंद। २. पाप।

निघटना—स० [हिं० नि+घटना] न घटे हुए के समान करना।
अ० १. उत्पन्न होना। २. घटित होना। ३. युक्त या संपन्न होना।

निघर-घट—वि० [हिं० नि+घर घाट] १. जिसका कहीं घर-घाट या ठौर-ठिकाना न हो। २. निर्लज्ज। बेहया।
मुहा०—(किसी को) निघर-घट देना=बुरी तरह से झिड़कते या फटकारते हुए लज्जित करना। उदा०—दुरै न निघर-घटौ दियें, यह रावरी कुचाल।—बिहारी।

निघरा—वि० [हिं० नि+घर] १. जिसका घर-द्वार न हो। २. जिसकी घर-गृहस्थी न हो अर्थात् तुच्छ और हीन।

निघर्ष—पुं० [सं० नि√घृष् (घिसना)+घञ्] १. घर्षण। रगड़। २. पीसने का भाव।

निघस—पुं० [सं० नि√अद् (खाना)+अप्, घस् आदेश] आहार। भोजन।

निघात—पुं० [सं० नि√हन्+घञ्] १. आघात। प्रहार। २. संगीत में, अनुदात्त स्वर।

निघाति—स्त्री० [सं० नि√हन्+इञ्, कुत्व] १. लोहे का डंडा। २. हथौड़ा। ३. निहाई जिस पर धातु के टुकड़े रखकर पीटते हैं।

निघाती (तिन्)—वि० [सं० निघात+इनि] [स्त्री० निघातिनी] १. आघात या प्रहार करनेवाला। २. वध या हत्या करनेवाला।

निघृष्ट—भू० कृ० [सं० नि√घृष्+क्त] १. रगड़ खाया हुआ। २. पराजित।

निघोर—वि० [सं० नि-घोर, प्रा० स०] अत्यंत या परम। घोर।

निघ्न—वि० [सं० नि√हन्+क] १. अधीन। २. अवलंबित। ३. आश्रित। ४. गुणा किया हुआ। गुणित।

निचंत†—वि०=निश्चिंत।

निचंद्र—पुं० [सं०] एक दानव का नाम।

निचक्र—पुं० [सं०] हस्तिनापुर के एक राजा जिन्होंने बाद में कौशांबी में राजधानी बनाई थी।

निचय—पुं० [सं० नि√चि (चयन)+अच्] १. ढेर। राशि। २. समूह। ३. संचय। ४. निश्चय। ५. किसी विशेष कार्य के लिए इकट्ठा किया जानेवाला धन। निधि। (फंड)

निचयन—पुं० [सं० नि√चि+ल्युट्—अन] १. निचय अर्थात् किसी काम के लिए धन जमा या इकट्ठा करने की क्रिया या भाव। २. किसी के हिसाब या खाते में उसकी ओर से या उसके लिए कुछ धन जमा करना। (फंडिंग)

निचर†—वि०=निश्चल।

निचल†—वि०=निश्चल।

निचला—वि० [हिं० नीचा] [स्त्री० निचली] अवस्था, पद, स्थिति आदि के विचार से निम्न स्तर पर या नीचे होनेवाला। नीचेवाला। जैसे—(क) मकान का निचला (अर्थात् नीचेवाला) खंड। (ख) निचला अधिकारी।

†वि० [सं० निश्चल] जो निश्चल या शांत भाव से एक जगह बैठ न सके। चंचल और चिलबिल्ला।

क्रि० वि० निश्चल और शांत भाव से। जैसे—बहुत हो चुका, अब निचले बैठो।

निचाई—स्त्री० [हिं० नीचा] १. निम्न स्थल पर होने की अवस्था या भाव। २. निम्न स्थल की ओर का विस्तार।

*स्त्री० नीचता।

निचान—स्त्री० [हिं० नीचा+आन (प्रत्य०)] १. नीचेवाले स्तर पर होने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. ऐसी भूमि जो अपेक्षया नीचे की ओर हो। ३. भूमि आदि की नीचे की ओर होनेवाली प्रवृत्ति। ढाल।

निचाय—पुं० [सं० नि√चि+घञ्] ढेर। राशि।

निचिंत†—वि० [स्त्री० निचिंतता]=निश्चिंत।

निचिकी—स्त्री० [सं० नि√चि+डि=निचि=शिरोभाग, निचि√कै (शोभा)+क—ङीप्] अच्छी गाय।

निचित—भू० कृ० [सं० नि√चि+क्त] १. ढका या छाया हुआ। २. इकट्ठा किया हुआ। संचित। ३. पूरित। व्याप्त। ४. बनाया हुआ। निर्मित। ५. संकीर्ण।

निचुड़ना—अ० [हिं० निचोड़ना का अ० रूप] आर्द्र या रस से भरी वस्तु में से तरल अंश का दबाकर निकाला जाना। निचोड़ा जाना।

निचुल—पुं० [सं० नि√चुल् (ऊँचा होना)+क] १. बेंत। २. हिज्जल नामक वृक्ष। ३. ओढ़ने या ढकने का वस्त्र। आच्छादन।

निचुलक—पुं० [सं० निचुल+कन्] १. युद्ध के समय छाती पर बाँधा जानेवाला लोहे का तवा। २. छाती ढकने का कपड़ा।

निचेत—वि०=अचेत।

निचै†—पुं०=निचय।

निचोड़—पुं० [हिं० निचोड़ना] १. निचोड़ने की क्रिया या भाव। २. वह अंश जो निचोड़ने पर निकले। ३. किसी लंबी-चौड़ी बात का संक्षिप्त और सार अंश। सारांश।

निचोड़ना—स० [हिं० नि+सं० च्यवन] १. आर्द्र वस्तु का जल अथवा रस से भरी हुई वस्तु में से उसका तरल अंश या रस निकालने के लिए उसे ऐंठना, घुमाना, दबाना या मरोड़ना। जैसे—गीली धोती निचोड़ना, आम का रस निचोड़ना। २. उक्त प्रकार से पीड़ित करते हुए किसी चीज का सार भाग निकालना। ३. लाक्षणिक अर्थ में, किसी की जमा-पूंजी या सार-भाग पूरी तरह से लेकर उसे खोखला या निःसार करना।

संयो० क्रि०—डालना।—देना।

निचोना†—स०=निचोड़ना।

निचोर†—पुं० १.=निचोड़। २.=निचोल।

निचोरना†—स०=निचोड़ना।

निचोल—पुं० [सं० नि√चुल्+घञ्] १. शरीर ढाँकने का कपड़ा। आच्छादन। २. स्त्रियों की ओढ़नी या चादर। ३. उत्तरीय वस्त्र। ४. स्त्रियों का घाघरा या लहँगा। ५. कपड़ा। वस्त्र।

निचोलक—पुं० [सं० निचोल√कै (मालूम पड़ना)+क] १. प्राचीन भारत का कंचुकी या चोली नाम का पहनने का कपड़ा जो अंगे की तरह का होता था। २. बख्तर। सन्नाह।

निचोवना†—स०=निचोड़ना।

निचौंहाँ—वि० [हिं० नीचा+औहाँ (प्रत्य०)] १. नीचे की ओर झुका हुआ या प्रवृत्त। नत। नमित। २. जिसकी नीचे की ओर जाने की प्रवृत्ति हो।

निचौहैं—अव्य० [हिं० निचौहाँ] नीचे की ओर।

निच्छंद—वि० [सं० निश्छंद] स्वच्छंद।

निच्छवि—स्त्री० [सं० नि-छवि, ब० स०] तिरहुत।

पुं० एक प्रकार के व्रात्य क्षत्रिय।

निच्छह*—अव्य० [?] १. पूरी तरह से। २. एक-दम से। बिलकुल।

निच्छिवि—पुं० [सं०] एक वर्ण-संकर जाति।

निछक्का—पुं० [सं० निस्+चक्र=मंडली] १. ऐसी स्थिति जिसमें परम आत्मीय के सिवा और कोई पास न हो। २. एकांत या निर्जन स्थान।

निछत्र—वि०[सं० निश्छत्र]१. जिसके सिर पर छत्र न हो। छत्र-हीन। बिना छत्र का। २. जिसके पास राज्य अथवा उसका कोई चिह्न न हो या न रह गया हो।

वि०[सं० निः क्षत्र] जिसमें या जहाँ क्षत्रिय न रह गये हों। क्षत्रियों से रहित।

निछद्दम†—पुं० दे० 'निछक्का'।

निछनियाँ*—क्रि० वि०=निच्छत।

निछल†—वि०=निश्छल।

निछला†—वि०=निछल (निश्छल)।

वि०[?]निरा। खालिस।

निछावर—स्त्री० [सं० न्यास+अवर्त्त=न्यासावर्त, मि० अ० निसार] १. किसी के गुण, रूप, सुख-समृद्धि आदि को सुरक्षित रखने की कामना से तथा उसे नजर आदि के दूषित प्रभावों से बचाने के लिए उसके ऊपर से कोई चीज घुमाकर उत्सर्ग करना। २. इस प्रकार उत्सर्ग की हुई वस्तु।

विशेष—वस्तु के सिवा ऐसे प्रसंगों में स्वयं अपने आप को अथवा अपने प्राण को निछावर करने के भी प्रयोग होते हैं।

निछावरि†—स्त्री०=निछावर।

निछोह—वि०=निछोही।

निछोही—वि०[हिं० नि+छोह]१. जिसे किसी के प्रति छोह या प्रेम न हो। निर्मम। २. निर्दय। निष्ठुर।

निज—वि०[सं० नि √जन् (उत्पत्ति)+ड]१. किसी की दृष्टि से स्वयं उसका।

पद—निज का=निजी।

२. प्रधान। मुख्य। ३. ठीक। यथार्थ।

अव्य० १. निश्चित रूप से। २. पूरी तरह से। ३. विशेष रूप से। ४. अंत में। उदा०—आई उघरि कनक कलई सी, दे निज गए दगाई।—सूर।

निजकाना—अ०[फा० नजदीक] नजदीक या निकट पहुँचना।

निजकारी—स्त्री०[हिं० निज+कर]१. ऐसी फसल जिसका कुछ अंश दूसरों को बाँटना भी पड़ता हो। २. वह जमीन जिसमें उत्पन्न वस्तु का कुछ अंश लगान के रूप में लिया या दिया जाता था।

निजता—स्त्री०[सं० निज+तल—टाप्]'निज' का भाव। निजत्व।

निजन†—वि०=निर्जन (जन-रहित)।

निजरि†—स्त्री०=नजर।

निजा—पुं०[अ० निज़ाअ] झगड़ा। विवाद।

निजाई—वि०[अ०] जिसके विषय में दो पक्षों में कोई झगड़ा या विवाद चल रहा हो। जैसे—निजाई-जमीन, निजाई-जायदाद।

निजात—स्त्री०=नजात (छुटकारा या मोक्ष)।

निजाम—पुं०[अ० निज़ाम] १. प्रबंध। व्यवस्था। २. प्रबंध या व्यवस्था का क्रम। ३. किसी प्रकार का चक्र या मंडल। ४. ब्रिटिश तथा मराठा शासन-काल में हैदराबाद (दक्षिण) के शासकों की उपाधि।

निजामशाही—पुं० [अ+फा०] १. निजाम का शासन। २. मध्ययुग में, निजामाबाद आंध्र में बननेवाला एक प्रकार का बढ़िया कागज।

निजी—वि०[सं० निज]१.किसी की दृष्टि से स्वयं उससे संबंध रखनेवाला। निज का। जैसे—निजी बात। २. किसी विशिष्ट वर्ग के लोगों से ही संबंधित। जिससे औरों का कोई संबंध न हो। जैसे—वह दोनों भाइयों का निजी झगड़ा है। ३. अपने अधिकार में होनेवाला। व्यक्तिगत (सार्वजनिक से भिन्न)।

निजी सहायक—पुं०[सं०] वह सहायक जो किसी उच्च अधिकारी या बड़े आदमी के व्यक्तिगत कार्यों में हाथ बँटाता हो। (पर्सनल असिस्टेन्ट)

निजु—अव्य०[?] निश्चित रूप से। निश्चयपूर्वक। उदा०—निजु ये अविकारी, सब सुखकारी।—केशव।

निजू†—वि०=निजी।

निजूठा—वि०[हिं० नि+जूठा] [स्त्री० निजूठी]१. (खाद्य पदार्थ) जिसे किसी ने जूठा न किया हो। २. (उक्ति, भावना या विचार) जो पहले किसी को न सूझा हो या जो पहले किसी के मुख से न निकला हो। उदा०—कवि की निजूठी कल्पना सी कोमल।

निजोर†—वि० [हिं० नि+फा० जोर] जिसमें जोर या शक्ति न हो। अशक्त। दुर्बल।

निज्ज—*वि०=निज (निजी)।

निझरना—अ० [हिं० नि+झरना] १. अच्छी तरह झड़ जाना। जैसे—पेड़ से फलों का निझरना। २. (किसी अवलंब या आश्रय का) अंगों के झड़ जाने के कारण रहित और शोभा रहित होना। जैसे—फलों के झड़ जाने के कारण पेड़ का निझरना। ३. सार-भाग से वंचित या रहित होना। ४. अच्छी और सुखद बातों या वस्तुओं के निकल जाने के कारण उनसे रहित हो जाना। ५. पल्ला या हाथ झाड़कर इस प्रकार अलग हो जाना कि मानों कोई अपराध या दोष किया ही न हो।

संयो० क्रि०—जाना।

निझाटना†—स० [हिं० नि+झपटना ?] झपटकर कोई चीज किसी से ले लेना।

निझोटना†—स०=निझाटना।

निझोल†—पुं०[हिं० नि+झोल] हाथी का एक नाम।

पुं०[हिं० नि+झूल] वह जिस पर झूल पड़ी हो अर्थात् हाथी।

निटर—वि०[देश०]१. (भूमि) जो उपजाऊ न हो। २. अशक्त। बेदम। ३. मृत।

निटल—पुं० [सं० नि√टल् (बेचैन होना)+अच्] मस्तक। माथा।

निटलाक्ष—पुं०[सं० निटल-अक्षि, ब०स०] महादेव। शंकर।

निटिया†—पुं०[हिं० नाटा?] एक तरह का छोटे कद का बैल।

निटिलाक्ष—पुं०=निटलाक्ष।

निटोल—वि०[हिं० नि+टोल] जो अपने टोल (जत्थे या झुंड) से अलग हो गया हो।

†पुं०=टोला (महल्ला)।

निट्ठ, निट्ठि*—अव्य०[हिं० नीठि] ज्यों-त्यों करके। कठिनाई से।

निठ, निठि—अव्य०=निट्ठ।

निठल्ला—वि०[हिं० उप० नि=नहीं+टहल=काम या हिं० ठाला?] १. (व्यक्ति) जिसके हाथ में कोई काम-धंधा या रोजगार न हो। प्रायः खाली बैठा रहनेवाला। २. समय बिताने के लिए जिसके पास कोई काम या साधन न हो।

क्रि० प्र०—बैठना।

निठल्लू†—वि०=निठल्ला।

निठाला†—पुं०=ठाला।

निठुर—वि०[सं० निष्ठुर] [भाव० निठुरई, निठुरता] जिसके हृदय में दया, प्रेम, सहानुभूति आदि कोमल या मधुर भाव बिलकुल न हों। जिसे दूसरों के कष्ट, पीड़ा आदि की अनुभूति न होती हो। कठोर-हृदय। निष्ठुर।

निठुरई†—स्त्री०=निठुरता (निष्ठुरता)।

निठुरता†—स्त्री० [हिं० निठुर+सं० ता (प्रत्य०), असिद्ध रूप] निठुर अर्थात् कठोर हृदय होने की अवस्था या भाव। निष्ठुरता।

निठुराई—स्त्री०=निठुरई (निष्ठुरता)।

निठुराव†—पुं०=निठुरई (निष्ठुरता)।

निठौर—वि०[हिं० नि+ठौर] जिसका कोई ठौर या ठिकाना न हो। पुं० १. अनुचित या बुरा स्थान। २. जोखिम या संकट का स्थान।

निडर—वि०[हिं० नि+डर] [भाव० निडरपन]१. जो डरता या भय-भीत न होता हो। जिसे किसी आदमी या बात से कुछ भी डर न लगता हो। निर्भय। २. साहसी। ३. जो बड़ों के समक्ष धृष्टतापूर्ण आचरण करता हो। ढीठ।
पुं० निर्भयता।

निडरपन(ा)—पुं०[हिं० निडर+पन (प्रत्य०)] निडर होने की अवस्था या भाव।

निडीन—पुं० [सं० नि√डी (उड़ना)+क्त] ऊपर से नीचे की ओर आना।

निडै—अव्य०[हिं० नियर] निकट। समीप।

निढाल—वि०[हिं० नि+ढाल=गिरा हुआ] १. अधिक चलने या परिश्रम करने के फलस्वरूप जिसके अंग चूर-चूर हो गये हों। बहुत अधिक थका हुआ। २. जो विफल मनोरथ होने पर उत्साह-हीन हो गया हो।

निढिल—वि०[हिं० नि+ढीला]१. चुस्त। जो ढीला न हो। कसा या तना हुआ। २. जो ढिलाई न करता हो। चुस्त। ३. कड़ा। कठोर।

नितंत—वि०[सं० निद्रित] १. सोया हुआ। २. बसा हुआ। ३. उपस्थित। वर्तमान। उदा०—सबकर करम गोसाई जानइ जो घट घट महँ नितंत।—जायसी।
अव्य०=नितांत।

नितंब—पुं०[सं० नि√तम्ब् (पीड़ित करना)+अच्] १. कूल्हे (टाँग और कमर का जोड़) के ऊपर का वह उभरा हुआ पिछला मांसल और प्रायः गोलाकार भाग जिसे टेककर जमीन आदि पर आदमी बैठते हैं। चूतड़। २. कंधा। ३. तट। तीर। ४. पर्वत का ढालुवाँ किनारा।

नितंबिनी—स्त्री०[सं० नितम्ब+इनि—ङीप्] सुन्दर नितंबोंवाली स्त्री। सुन्दरी।

नितंबी (बिन्)—वि०[सं० नितम्ब+इनि][स्त्री० नितंबिनी] बड़े तथा भारी नितंबोंवाला।

नित*—अव्य०=निमित्त। उदा०—नित सेवा नित धावैं, कै परनाम।—नूर मोहम्मद।
†अव्य०=नित्य।

नितराम्—अव्य०[सं० नि+तरप्, अमु]१. सदा। हमेशा। निरंतर। २. अवश्य।

नितल—पुं०[सं० नि+तल, ब०स०] पुराणानुसार पृथ्वी के नीचे स्थित सात लोकों में पहला लोक।

नितांत—वि०[सं० नि√तम् (चाहना)+क्त, दीर्घ]१. बहुत अधिक। २. हद दर्जे का। असाधारण। ३. बिलकुल।

निति*—अव्य०=नित्य।

नित्तह*—अव्य०=नित्य।

नित्य—वि०[सं० नि+त्यप्] [भाव० नित्यता] जो निरंतर या सदा बना रहे। अविनाशी। शाश्वत।
अव्य० १. प्रतिदिन। हर रोज। २. हर समय। सदा। हमेशा।

नित्य-कर्म (न्)—पुं०[कर्म०स०]१. वह काम जो प्रतिदिन करना पड़ता हो। रोज का काम। २. वे धार्मिक कृत्य जो प्रतिदिन आवश्यक रूप से किये जाते हों। जैसे—तर्पण, पूजन, संध्या, वंदन आदि।

नित्य-क्रिया—स्त्री० दे० 'नित्य-कर्म'।

नित्य-गति—वि०[ब०स०] जो सदा गतिशील रहता हो।
पुं० वायु। हवा।

नित्यता—स्त्री०[सं० नित्य+तल्—टाप्] नित्य अर्थात् शाश्वत होने या सदा वर्तमान रहने की अवस्था या भाव।

नित्यत्व—पुं०[सं० नित्य+त्व] दे० 'नित्यता'।

नित्यदा—अव्य०[सं० नित्य+दाच्] सदा से।

नित्य-नर्त—पुं० [ब० स०] महादेव। शंकर।

नित्य-नियम—पुं०[कर्म०स०] ऐसा निश्चित या नियत नियम जिसका पालन प्रतिदिन करना पड़ता हो या किया जाता हो।

नित्य-नैमित्तिक-कर्म (न्)—पुं०[कर्म०स०] नित्य अर्थात् नियमित रूप से तथा किसी विशिष्ट उद्देश्य की सिद्धि के निमित्त किये जानेवाले सब कर्म।

नित्य-प्रति—अव्य० [सं० अव्य०स०] प्रतिदिन। हररोज।

नित्य-प्रलय—पुं०[कर्म०स०] वेदांत के अनुसार जीवों की नित्य होती रहनेवाली मृत्यु।

नित्य-बुद्धि—वि०[ब०स०] (व्यक्ति) जो यह समझता हो कि हर चीज नित्य या शाश्वत है।

नित्य-भाव—पुं०[ष०त०] दे० 'नित्यता'।

नित्य-मित्र—पुं०[कर्म०स०] निःस्वार्थ-भाव से सदा मित्र बना रहनेवाला व्यक्ति। शाश्वत मित्र।

नित्य-मुक्त—पुं०[कर्म०स०] परमात्मा।

नित्य-यज्ञ—पुं०[मध्य०स०] प्रतिदिन का कर्तव्य यज्ञ। जैसे—अग्निहोत्र।

नित्य-यौवना—वि० स्त्री०[सं०] (स्त्री) जिसका यौवन सदा बना रहे। चिरयौवना।
स्त्री० द्रौपदी।

नित्यर्तु—वि०[नित्य-ऋतु, ब०स०]१. जो सब मौसमों में और सदा बना रहे। २. निरंतर अपनी ऋतु में होनेवाला।

नित्यशः(शस्)—अव्य० [सं०नित्य+शस्] १. प्रतिदिन। रोज। नित्य। २. सदा। सर्वदा।

नित्य-संबंध—पुं० [कर्म०स०]१. दो वस्तुओं में परस्पर होनेवाला नित्य

या स्थायी संबंध। २. व्याकरण में, दो शब्दों का वह पारस्परिक संबंध जिससे वाक्यांशों में दोनों शब्दों का आगे-पीछे आना अनिवार्य तथा आवश्यक होता है। जैसे—'जब मैं कहूँ तब तुम वहाँ जाना। में 'जब' और 'तब' में नित्य-संबंध है।

नित्य-संबंधी (धिन्)—वि० [सं० नित्यसंबंध+इनि] (व्याकरण में ऐसे शब्द) जिनमें परस्पर नित्य-संबंध हो।

नित्यसम—पुं० [तृ०त०] तर्क या न्याय में, यह दूषित सिद्धांत कि सभी चीजें वैसी ही या वही बनी रहती हैं। (इसकी गणना २४ जातियों अर्थात् दूषित तर्कों में की गई है।)

नित्या—स्त्री० [सं० नित्य+टाप्] १. पार्वती। २. मनसादेवी। ३. एक शक्ति का नाम।

नित्याचार—पुं० [नित्य-आचार, कर्म०स०] ऐसा आचार या सदाचार जिसके निर्वाह या पालन में कभी त्रुटि न हुई हो।

नित्यानंद—पुं० [सं० नित्य-आनन्द, कर्म०स०] मन में निरन्तर या सदा बना रहनेवाला आनंद, जो सर्वश्रेष्ठ कहा गया है।

नित्यानध्याय—पुं० [नित्य-अनध्याय, कर्म० स०] धर्मशास्त्र के अनुसार ऐसी स्थिति जिसके उपस्थित होने पर सदा अनध्याय रखना आवश्यक है। मनु के अनुसार—पानी बरसते समय, बादल के गरजने के समय अथवा ऐसे ही अन्य अवसरों पर सदा अनध्याय रखना चाहिए।

नित्यानित्य—वि० [नित्य-अनित्य, द्व०स०] नित्य और अनित्य। नश्वर और अनश्वर।

नित्यानित्य वस्तु-विवेक—पुं० [सं०] ऐसा विवेक जिसके फल-स्वरूप ब्रह्म, सत्य और जगत् मिथ्या भासित होता है।

नित्याभियुक्त—वि० [नित्य-अभियुक्त, कर्म०स०] (योगी) जो देह की रक्षा के निमित्त हल्का और थोड़ा भोजन करता हो।

नित्योद्युत—पुं० [सं०] एक बोधिसत्व।

नियंब (थंभ)†—पुं०=स्तंभ (खंभा)।

नियरना—अ० [सं० निस्तरण] तरल पदार्थ का ऐसी स्थिति में रहना या होना कि उसमें घुली या मिली हुई चीज अपने भारीपन के कारण उसके नीचे या तल में बैठ जाय।

नियरवाना—स० [हिं० नियारना का प्रे०] किसी को कुछ नियारने में प्रवृत्त करना।

नियार—पुं० [हिं० नियारना] १. नियरने की क्रिया या भाव। तरल पदार्थ में घुली या मिली हुई वस्तु का नीचे बैठना। २. इस प्रकार नीचे या तल में बैठी हुई कोई वस्तु। ३. वह तरल पदार्थ जिसमें घुली या मिली हुई चीज नीचे तल में बैठ गई हो।

नियारना—स० [हिं० निस्तारण] कोई तरल पदार्थ इस प्रकार स्थिर करना कि उसमें घुली या मिली हुई कोई वस्तु उसके तल में बैठ जाय। (डिकैन्टेशन)

नियालना†—स०=नियारना।

निद—वि० [सं०√निद (निंदा करना)+क, नलोप] निंदा करनेवाला। पुं० [सं०] विष।

निदई†—वि०=निर्दय।

निदद्रु—वि० [सं० नि-दद्रु, ब०स०] जिसे दाद रोग न हुआ हो।

निदय—वि० [सं० निर्दय] १. जिसमें दया न हो। दयाहीन। २. निष्ठुर। निर्दय। उदा०—निदय हृदय में हूक उठी क्या।—प्रसाद।

निदरना—स० [हिं० निरादर] १. अनादर या तिरस्कार करना। २. तुच्छ या हेय ठहराना या सिद्ध करना।

स० [हिं० नि+दलन] १. दलन करना। २. पराजित करना।

निदरसना—अ० [हिं० नि+दरसना] अच्छी तरह दिखलाई देना या पड़ना।

स० अच्छी तरह देखना।

निदर्शक—वि० [सं० नि√दृश् (देखना)+णिच्+ण्वुल्—अक] निदर्शन करने अर्थात् दिखाने या प्रदर्शित करनेवाला।

निदर्शन—पुं० [सं० नि√दृश+ल्युट्—अन्] १. दिखाने या प्रदर्शित करने की क्रिया या भाव। २. किसी कथन या सिद्धान्त की पुष्टि के लिए उदाहरण-स्वरूप कही जानेवाली ऐसी बात जो बहुधा कल्पित या स्वरचित परन्तु सादृश्य के तत्त्व या भाव से युक्त होती है। ३. भौतिक विज्ञान, रेखागणित आदि में किसी मूल कथन को सिद्ध करने के लिए खींची या बनाई जानेवाली आकृतियाँ। (इलस्ट्रेशन, उक्त दोनों अर्थों में)

निदर्शना—स्त्री० [सं० नि√दृश+णिच्+ल्यु—अन, टाप्] साहित्य में, एक अलंकार जिसमें उपमान और उपमेय में सादृश्य का आरोप करके इस प्रकार संबंध स्थापित किया जाता है कि दोनों में बिंब-प्रतिबिंब का भाव प्रकट होता है। जैसे—यह मुख चंद्रमा की शोभा धारण कर रहा है।

निदलन—पुं०=निर्दलन।

निदहना—स० [सं० निदहन] जलाना।

अ० जलना।

निदाघ—पुं० [सं० नि√दह् (जलाना)+घञ्] १. गरमी। ताप। २. धूप। ३. रोग का निदान।

निदान—पुं० [सं० नि√दा (देना वा√ दो (छेदन)+ल्युट्—अन] १. किसी क्रिया का कारण विशेषतः कोई मूल और प्रमुख कारण। २. चिकित्सा-शास्त्र में, यह निश्चय करना कि (क) रोगी को कौन रोग है। और (ख) इस रोग का मूल और प्रमुख कारण क्या है। (डायग्नोसिस) ३. उक्त विषय की विद्या या शास्त्र। निदानशास्त्र। (इटियॉलाजी) ४. अंत। अवसान। ५. घर। ६. स्थान। जगह।

अव्य० १. अंत में। २. इसलिए।

निदान-गृह—पुं० [ष०त०] वह चिकित्सालय, जहाँ रोगियों के रोगों का निदान होता या पहचान की जाती है। (क्लीनिक)

निदानज्ञ—पुं० [सं० निदान√ज्ञा (जानना)+क] वह चिकित्सक जो निदान-शास्त्र का ज्ञाता हो; और फलतः रोगों का ठीक निदान करता हो। (पैथालोजिस्ट)

निदान-शास्त्र—पुं० [ष० त०] वह शास्त्र जिसमें रोगों के निदान या पहचान का विवेचन होता है। (इटियॉलोजी)

निदारा*—वि० [सं० निर्दार] जिसकी दारा अर्थात् पत्नी न हो। बिन-ब्याहा हुआ या रँडुवा।

निदारुण—वि० [सं० नि-दारुण, प्रा० स०] १. घोर और भयानक या भीषण। २. दुःसह। ३. निर्दय। निष्ठुर।

निदाह—पुं०=निदाघ।

निदिग्ध—वि० [सं० नि√दिह् (उपचय)+क्त] छोपा या लीपा हुआ।

निदिग्धा—स्त्री० [सं० निदिग्ध+टाप्] इलायची।

निदिग्धिका—स्त्री० [सं० निदिग्धा+कन्, इत्व]=निदिग्धा।

निदिध्यास—पुं० [सं० नि√ध्यै (चिन्तन)+सन्+घञ्]=निदिध्यासन।

निदिध्यासन—पुं० [सं० नि√ध्यै+सन+ल्युट्—अन्] १. अनवरत चिंतन। २. निरंतर या सदा किसी का स्मरण करना।

निदिया†—स्त्री०=निंदिया (नींद)।

निदिष्ट—वि०=निर्दिष्ट।

निदेश—पुं० [सं० नि√दिश् (बताना)+घञ्] १. दे० 'निर्देश'। २. शासन। ३. किसी आज्ञा, नियम, निश्चय आदि के संबंध में लगाई हुई कोई शर्त या बंधन। (प्रॉविजन) ४. उक्ति। कथन। ५. बात-चीत। ६. पड़ोस। ७. सान्निध्य।

निदेशक—पुं० [सं०] वह जो दूसरों को कोई काम कैसे, कहाँ और कब करने के संबंध में सूचनाएँ या आदेश देता हो। (डाइरेक्टर)

निदेशालय—पुं० [सं] निदेशक का कार्यालय।

निदेशिनी—स्त्री० [सं० नि√दिश्+ल्युट्—अन, ङीप्] दिशा।

निदेशी (शिन्)—वि० [सं० नि√दिश्+णिनि] निर्देशक। (दे०)

निदेष्टा (ष्टृ)—पुं० [सं० नि√दिश्+तृच] निर्देशक। (दे०)

निदेस—पुं०=निदेश।

निदोष—वि०=निर्दोष।

निद्धि†—स्त्री०=निधि।

निद्र—पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र जिसे चलाने पर शत्रुओं को नींद आ जाती थी।

निद्रा—स्त्री० [सं०√निद+रक्, नलोप टाप्] प्राणियों की वह स्थिति जिसमें वे सुस्ताने तथा आरोग्य लाभ करने के निमित्त प्रकृतिशः कुछ समय तक चुपचाप निश्चेष्ट होकर पड़े रहते हैं। नींद। (साहित्य में यह एक संचारी भाव माना गया है।)

निद्रा-गति—स्त्री० [स०त०] एक प्रकार का रोग जिसमें रोगी निद्रा की अवस्था में ही उठकर चलने-फिरने या कोई काम करने लगता है। (स्लीप वाकिंग) २. वनस्पतियों आदि का निद्रित अवस्था में भी बराबर बढ़ते या इधर-उधर होते रहना। (स्लीपिंग मूवमेन्ट)

निद्राण—वि० [सं० नि√द्रा (सोना)+क्त, तस्य न, णत्व] १. जो सो रहा हो। २. मुदा हुआ। मीलित।

निद्रायमान—वि० [सं० नि√द्रा+यक्+शानच्, मुक्] जो निद्रित अवस्था में हो। सोया हुआ।

निद्रालस—वि० [निद्रा-अलस, तृ० त०] १. जो नींद आने के कारण शिथिल हो रहा हो। २. गहरी नींद में सोया हुआ।

निद्रालु—वि० [सं० नि√द्रा+आलुच्] १. जो निद्रा में हो या सो रहा हो। २. जिसे बहुत नींद आ रही हो। ३. जिससे नींद आने का परिचय मिल रहा हो। जैसे—निद्रालु आँखें।

स्त्री० १. बन-तुलसी। २. बैंगन। ३. नली नामक गंध-द्रव्य।

निद्रासेजन—पुं० [सं० निद्रा-समुजन् (उत्पत्ति)+णिच्+ल्यु ट्—अन्] कफ निकलने का रोग (जिसके कारण बहुत नींद आती है)।

निद्रित—भू० कृ० [सं० निद्र+क्त] जो सोया या निद्रा से भरा हो।

निधड़क—क्रि० वि० [हिं० नि+धड़क]=बेधड़क।

निधन—पुं० [सं० नि√धा (धारण)+क्यु—अन] १. नाश। २. मरण। मृत्यु। (प्रायः बड़े आदमियों के संबंध में प्रयुक्त) जैसे—महामना मालवीय जी का निधन। ३. जन्म-कुण्डली में लग्न से आठवाँ स्थान। (फलित ज्यो०) ४. जन्म-नक्षत्र से सातवाँ, सोलहवाँ और तेइसवाँ नक्षत्र। ५. कुल। वंश। ६. कुल का अधिपति। ७. विष्णु।

वि० [सं०] निर्धन। (दे०)

निधनक्रिया—स्त्री० [ष०त०] १. शवदाह। २. अन्त्येष्टि।

निधनपति—पुं० [ष० त०] प्रलय करनेवाले, शिव।

निधनी—वि० [हिं० नि+धनी] जिसके पास धन न हो। निर्धन। उदा०—धन मुझ निधनी का लोचनों का उजाला।—हरिऔध।

निधरक—क्रि० वि०=निधड़क (बेधड़क)। उदा०—निधरक तूने ठुकराया तब, मेरी टूटी मृदु प्याली।—प्रसाद।

निधातव्य—वि० [सं० नि√धा+तव्यत्] जिसका निधान किया जा सके।

निधान—पुं० [सं० नि√धा+ल्युट्—अन] १. रखने या स्थापित करने की क्रिया या भाव। स्थापन। २. सुरक्षित रखना। ३. वह पात्र या स्थान जिसमें कुछ स्थापित या स्थित हो। आधार। आश्रय। जैसे—दया-निधान। ४. भंडार। ५. निधि। ६. वह स्थान, जहाँ कोई पहुँचकर नष्ट या समाप्त होता हो।

निधि—स्त्री० [सं० नि√धा+कि] १. वह आधार, पात्र या स्थान जिसमें कोई गुण या पदार्थ व्याप्त अथवा स्थित हो। आश्रय-स्थान। जैसे—दयानिधि, गुणनिधि, क्षीरनिधि, जलनिधि। २. जमीन में गड़ी हुई धनराशि। ३. किसी विशेष कार्य के लिए अलग रखा या जमा किया हुआ धन। जैसे—नागर-निधि। ४. कुबेर के नौ रत्न, यथा—पद्म, महापद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुंद, कुंद, नील और बर्च्च। ५. उक्त के आधार पर नौ की संख्या। ६. विष्णु। ७. शिव। ८. जीवक नामक ओषधि। ८. नली नामक गंधद्रव्य।

निधिनाथ—पुं० [ष०त०] १. निधियों (जो गिनती में नौ हैं) के स्वामी, कुबेर। २. वह व्यक्ति जिसकी देख-रेख में कोई निधि, संपत्ति या कुछ वस्तुएँ रखी गई हों।

निधिप—पुं० [सं० निधि √पा (रक्षा)+क] निधिनाथ। (दे०)

निधि-पति—पुं० [ष०त०] निधिनाथ। (दे०)

निधिपाल—पुं० [निधि √पाल् (रक्षा)+णिच्+अच्] निधिनाथ। (दे०)

निधिबन—पुं० [सं०] वृन्दावन के पास का एक कुंज। उदा०—निधिबन करि दंडौत, बिहारी कौ मुख जोवै।—भगवत रसिक।

निधीश, निधीश्वर—पुं० [सं० निधि-ईश, ष०त०, निधि-ईश्वर, ष०त०] निधिनाथ। (दे०)

निधुवन—पुं० [सं० नि-धुवन, ब०स०] १. मैथुन। २. केलि-कर्म। ३. हँसी-ठट्ठा। परिहास। ४. कंप।

निधेय—वि० [सं० नि√धा+यत्] १. निधान अर्थात् रखे या स्थापित किये जाने के योग्य। २. (धन या पदार्थ) जो निधान (या धरोहर) रूप में कहीं रखा जा सके या रखा जाने के योग्य हो। ३. स्थापित किये जाने के योग्य।

निध्यात—भू० कृ० [सं० नि√ध्या (चिन्तन)+क्त] जिस पर मनन या विचार किया गया हो।

निध्यान—पुं० [सं० नि√ध्या+ल्युट्—अन्] १. ध्यान करना। २. देखना। ३. दृश्य। ४. निदर्शन।

निध्रुव—पुं० [सं०] एक गोत्र प्रवर्तक ऋषि।

निध्वान—पुं० [सं० नि√ध्वन् (शब्द)+घञ्] ध्वनि। शब्द।

निनद*—पुं० [सं० नि√नद् (शब्द)+अप्]=निनाद (शब्द)।

निनदी—वि०=निनादी।

निनयन—पुं० [सं० नि√नी (ले जाना)+ल्युट्—अन] १. संपादित करना। २. जल छिड़कना। ३. अभिषेक करना।

निनरा*—वि० [स्त्री० निनरी]=न्यारा।

निनर्द—पुं० [सं० नि√नर्द् (शब्द)+घञ्] वेद के मंत्रों का विशेष प्रकार का उच्चारण।

निनाद—पुं० [सं० नि√नद्+घञ्] शब्द, विशेषतः उच्च या घोर शब्द।

निनादना— स० [सं० निनाद] उच्च या घोर शब्द करना।

निनादित—वि० [सं० निनाद+इतच्] १. शब्द से भरा हुआ। गुंजायमान। २. शब्द करता हुआ। शब्दित।

पुं० शब्द।

निनादी (दिन्)—वि० [सं० निनाद+इनि] [स्त्री० निनादिनी] १. जिसमें से शब्द निकल रहा हो। २. जो शब्द उत्पन्न कर रहा हो।

निनान*—पुं०, अव्य०=निदान।

निनानबे—वि०, पुं०=निन्यानबे।

निनाया†—पुं० [?] खटमल।

निनार—वि०=निनारा (न्यारा)।

निनारना†—स०=निकालना (अलग करना)।

निनारा†—वि० [हिं० निनारना=निकालना] [स्त्री० निनारी] १. अलग किया या निकाला हुआ। २. न्यारा।

निनावाँ—पुं० [?] एक रोग जिसमें जीभ, तालू आदि में छोटे-छोटे दाने निकल आते हैं तथा जिनमें फरफराहट और पीड़ा होती है।

वि० [हिं० नि+नाँव (नाम)] १. जिसका कोई नाम न हो। बे-नाम। २. जिसका नाम अमांगलिक या अशुभ होने के कारण न लिया जाता हो या न लिया जाय। (स्त्रियों में प्रचलित भूत-प्रेत, साँप आदि के लिए सांकेतिक शब्द।)

निनौना†—स०=नवाना (झुकाना)।

निनौरा†—पुं०=ननिहाल।

निन्यानबे—वि० [सं० नवनवतिः] जो गिनती में नब्बे से नौ अधिक हो।

पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—९९।

मुहा०—निन्यानबे के फेर में आना या पड़ना=धन या रुपया कमाने, जमा करने या बढ़ाने की धुन में होना। धन बढ़ाने की चिंता में पड़ना।

विशेष—एक कहानी है कि किसी अपव्ययी को मितव्ययी बनाने के उद्देश्य से किसी ने निन्यानबे रुपए दे दिये थे। उसने सोचा कि इसमें एक और रुपया मिलाकर इसे पूरा सौ रुपया कर लेना चाहिए। तब से उसे धन एकत्र करने का चस्का लग गया और वह धनी हो गया। इसी कहानी के आधार पर यह मुहा० बना है।

निन्यारा†—वि०=न्यारा।

निन्हियाना†—अ० [अनु० ना ना] बहुत अधिक दीनता प्रकट करना। गिड़गिड़ाना।

निपंग—वि० [सं० नि-पंगु] १. पंगु। २. निकम्मा।

निप—पुं० [सं० नि√पा (पीना)+क] १. कलस। २. [नीप पृषो० सिद्धि] कदम (वृक्ष)।

निपज—स्त्री० [हिं० उपज का अनु०] वह सारा माल जो किसी कारखाने में कुछ निश्चित समय के अंदर बनकर बिक्री के लिए तैयार होता है। (आउट-पुट)

निपजना—अ० [सं० निष्पद्यते, प्रा० निपज्जइ] १. उत्पन्न होना। उपजना। २. पुष्ट होते हुए बढ़ना। ३. बनकर तैयार होना।

निपजी—स्त्री० [हिं० निपजना] १. लाभ। मुनाफा। २. दे० 'उपज'।

निपट—स्त्री० [हिं० निपटना] निपटने की अवस्था, क्रिया या भाव।

अव्य० [हिं० नि+पट] १. जिसमें किसी एक साधारण तत्त्व या अस्तित्व के सिवा और कुछ भी गुण या विशेषता न हो। निरा। जैसे—निपट गँवार या देहाती। २. एकदम से। सरासर। बिलकुल। जैसे—निपट झूठ बोलना। ३. बहुत। अधिक नितांत।

निपटना—अ० [सं० निवर्त्तन, प्रा० निवट्टना, पुं० हिं० निवटना] १. कार्य आदि के संबंध में, पूर्ण और संपन्न होना। २. (व्यक्ति का) कोई काम पूर्ण या संपन्न करने के उपरांत निवृत्त होना। ३. शौच, स्नान आदि नित्य के आवश्यक कार्यों से निवृत्त होना। (बाजारू) ४. झगड़े, विवाद आदि का निपटारा होना। ५. निपटारा करने के लिए किसी से भिड़ना, जूझना या लड़ना। जैसे—तुम रहने दो, हम उनसे निपट लेंगे। ६. किसी चीज का खतम या समाप्त होना। जैसे—दीए का तेल निपटना।

पद—निपटी रकम=ऐसा व्यक्ति जो विशेष समर्थ या काम का न रह गया हो।

७. ऋण, देन आदि का चुकता होना।

निपटाना—स० [हिं० निपटना का स०] १. कार्य आदि पूर्ण या संपादित करना। २. दो व्यक्तियों का अथवा परस्पर का झगड़ा तै या खतम करना। ३. ऋण, देन आदि चुकाना।

निपटारा—पुं० [हिं० निपटना] १. निपटने या निपटाने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. झगड़े, विवाद आदि का ऐसा अंत जिससे दोनों पक्ष संतुष्ट रहें। ३. अंत। समाप्ति। ४. निर्णय। फैसला।

निपटावा†—पुं०=निपटारा।

निपटेरा—पुं०=निपटाना।

निपठ—पुं० [सं० नि√पठ् (पढ़ना)+अप्] पाठ। अध्ययन।

निपठन—पुं० [सं० नि√पठ्+ल्युट्—अन] १. पढ़ना। २. किसी की कविता या पद कंठस्थ करके सुंदर रूप में पढ़कर लोगों को, उनके मनोविनोद के लिए सुनाना। (रेसिटेशन)

निपतन—पुं० [सं० नि√पत् (गिरना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० निपतित] नीचे की ओर गिरना। निपात। पतन।

निपतित—भू० कृ० [सं० नि√पत्+क्त] जिसका निपतन हुआ हो। गिरा हुआ।

निपत्र—वि० [सं० निष्पत्र] (पौधा या वृक्ष) जिसमें पत्ते न हों। पत्रहीन।

निपना†—अ० [सं० निष्पन्न] पूरा या संपन्न होना।

†अ०=निपजना।

वि० [सं० निपुण] १. चतुर। चालाक। होशियार। २. भोला-भाला। सीधा-सादा।

निपत्ता†—वि० [सं० नि+हिं० पता] जिसका पता-ठिकाना न हो।
†वि० [सं० निष्पत्र] पत्र-हीन।

निपत्या—स्त्री० [सं० नि√पत्+क्यप्—टाप्] १. रण-क्षेत्र। युद्ध की भूमि। २. गीली, चिकनी जमीन। ३. फिसलन।

निपाँगुर—वि० [हिं० नि+पंगु] १. लँगड़ा। २. अपाहिज। पंगु।

निपाक—पुं० [सं० नि√पच् (पकाना)+घञ्] १. परिपक्व होना। २. पकना या पकाया जाना। ३. पसीना। ४. किसी बुरे काम का परिणाम।

निपात—पुं० [सं० नि√पत्+घञ्] [वि० नैपातिक] १. नीचे गिरने की अवस्था, क्रिया या भाव। पतन। २. अधःपतन। ३. विनाश। ४. मरण। मृत्यु। ५. नहाने का स्थान। स्नानागार। (कौ०) ६. भाषा-विज्ञान और व्याकरण में; ऐसा शब्द जो व्याकरण के नियमों के अनुसार न बने होने पर भी प्रायः शुद्ध माना जाता हो। ७. अव्यय (शब्द)।
†वि०=निपत्र (पत्र-हीन)।

निपातक—पुं० [सं० नि-पातक प्रा० स०] दूषित या बुरा कर्म। पाप।

निपातन—पुं० [सं० नि√पत्+णिच्+ल्युट्—अन] १. गिराने की क्रिया या भाव। २. ध्वंस। विनाश। ३. मार डालने या वध करने की क्रिया या भाव। हत्या।

निपातना—स० [सं० निपातन] १. काट या मारकर अथवा और किसी प्रकार नीचे गिराना। २. ध्वस्त या नष्ट करना।

निपातित—भू० कृ० [सं० नि√पत्+णिच्+क्त] १. गिराया हुआ। २. नष्ट या वध किया हुआ। ३. अनियमित रूप से बना हुआ।

निपाती (तिन्)—वि० [सं० निपात+इनि] १. गिराने या फेंकनेवाला। २. ध्वस्त या नष्ट करनेवाला। ३. मार गिरानेवाला।
पुं० महादेव। शिव।
†वि०=निपत्र (बिना पत्रों का)।

निपान—पुं० [सं० नि√पा+ल्युट्—अन] १. जल पीना। २. ऐसा गड्ढा जिसमें पानी जमा हो या जमा होता हो। ३. कूआँ। ४. दोहनी। ५. आश्रय-स्थान।

निपीड़क—वि० [सं० नि√पीड् (दुःख देना)+ण्वुल्—अक] १. पीड़ा देनेवाला। दुःखदायक। २. दबाने या मलने-दलनेवाला। ३. निचोड़नेवाला। ४. पेरनेवाला।

निपीड़न—पुं० [सं० नि√पीड्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० निपीड़ित] १. कष्ट पहुँचाने या पीड़ित करने की क्रिया या भाव। पीड़ित करना। कष्ट या तकलीफ देना। २. खूब मलना-दलना। ३. निचोड़ना। ४. पसेव निकालना। पसाना। ५. पेरना।

निपीड़ना†—स० [सं० निपीड़न] १. खूब अच्छी तरह दबाना या मलना-दलना। २. बहुत कष्ट या तकलीफ देना। ३. निचोड़ना। ४. पेरना।

निपीड़ित†—भू० कृ० [सं० नि√पीड्+क्त] १. जिसका निपीड़न हुआ हो। २. जिसे कष्ट पहुँचाया गया हो। पीड़ित। ३. जिस पर आक्रमण हुआ हो। आक्रांत। ४. कुचल या दबाकर, जिसका रस निकाला गया हो। पेरा हुआ। ५. निचोड़ा हुआ।

निपीत—भू० कृ० [सं० नि√पा (पीना)+क्त] १. पीया हुआ। २. सोखा हुआ। शोषित।

निपीति—स्त्री० [सं० नि√पा+क्तिन्] पीने की क्रिया या भाव। पान।

निपुड़ना†—अ० [सं० निष्पुट, प्रा० निप्पुड] १. खुलना। २. उघरा होना।
स० १. खोलना। २. उघरा करना।

निपुण—वि० [सं० नि√पुण् (अच्छा कार्य करना)+क] [भाव० निपुणता] (कला, विद्या आदि में) अनुभव, अभ्यास आदि के कारण जो कोई काम विशेष अच्छी तरह से करता हो। दक्ष। प्रवीण।

निपुणता—स्त्री० [सं० निपुण+तल्—टाप्] निपुण होने की अवस्था, गुण या भाव।

निपुणाई†—स्त्री०=निपुणता।

निपुत्र†—वि० [स्त्री० निपुत्री] दे० 'निपूता'।

निपुन†—वि०=निपुण।

निपुनई†—स्त्री०=निपुणाई (निपुणता)।

निपुनता†—स्त्री०=निपुणता।

निपुनाई—स्त्री०=निपुणता।

निपूत—वि० [स्त्री० निपूती]=निपूता।

निपूता—वि० [हिं० नि+पूत] [स्त्री० निपूती] जिसके आगे पुत्र न हो या न हुआ हो। निःसंतान। (प्रायः गाली के रूप में प्रयुक्त)

निपेटा†—वि० [हिं० नि+पेट] [स्त्री० निपेटी] १. जिसका पेट खाली हो अर्थात् जिसने कुछ खाया न हो। २. भुक्खड़।

निपोड़ना—स०=निपोरना।

निपोरना—स० [सं०] खोलना।

निफन—वि० [सं० निष्पन्न, प्रा० निष्फन्न] १. पूरा या समाप्त किया हुआ। २. पूरा। सब। सारा।
क्रि० वि० पूरी तरह से। पूर्ण रूप से।

निफरना—अ० [हिं०=निफारना का अ०] चुभकर या धँसकर इस पार से उस पार होना। छिद कर आरपार होना।
अ० [सं० नि+स्फुट] १. खुलना। २. खुल कर उघारा या स्पष्ट होना।

निफल†—वि०=निष्फल।

निफला—स्त्री० [सं० नि-फल, ब० स०, टाप्] ज्योतिषमती लता।

निफ़ाक़—पुं० [अ० निफ़ाक़] १. एकता का अभाव। २. द्वेषपूर्ण या विरोधजन्य स्थिति। वैमनस्य। फूट।
क्रि० प्र०—डालना।—पड़ना।—होना।

निफारना†—स० [हिं० न+फारना] १. इस पार से उस पार तक छेद करना। आरपार करना। बेधना। २. इस पार से उस पार निकालना या ले जाना। ३. उद्घाटित या प्रकट करना। खोलना। ४. स्पष्ट या साफ करना।

निफालन—पुं० [सं०] देखने की क्रिया या भाव। देखना।

निफोट—वि० [सं० नि+स्फट] व्यक्त। स्पष्ट।

निबंध—पुं० [सं० नि√बन्ध् (बाँधना)+घञ्] १. कोई चीज किसी के साथ जोड़ने, बाँधने या लगाने की क्रिया या भाव। २. अच्छी तरह गठा या बँधा हुआ पदार्थ। ३. वह जिससे कोई चीज किसी के साथ

जोड़ी, बाँधी या लगाई जाय। बंधन। ४. प्राचीन भारत में, राज्य या शासन की ओर से निकलनेवाली आज्ञा या आदेश। (कौ०) ५. किसी के साथ बाँधकर रखनेवाला अनुराग या संपर्क। ६. ग्रंथ, लेख आदि लिखने की क्रिया या भाव। ७. आज-कल साहित्यिक क्षेत्र में, वह विचारपूर्ण विवरणात्मक और विस्तृत लेख जिसमें किसी विषय के सब अंगों का मौलिक और स्वतंत्र रूप से विवेचन किया गया हो। (एसे)

विशेष—हमारे यहाँ के प्राचीन साहित्यिक ऐसी व्याख्या को निबंध कहते थे, जिसमें सब प्रकार के मतों का उल्लेख और गुण-दोष आदि की आलोचना या विवेचन होता था। आज-कल पाश्चात्य साहित्यशास्त्र के आधार पर उसकी व्याख्या और स्वरूप का कुछ परिमार्जन हुआ है। ८. गीत। ९. ऐसी चीज जिसे किसी दूसरे को देने का वचन दिया जा चुका हो। १०. आनाह नामक रोग जिसमें पेशाब बंद हो जाता है। ११. नीम का पेड़।

निबंधक—पुं० [सं० नि√बंध्+ण्वुल्—अक] १. निबंधन करनेवाला व्यक्ति। २. वह अधिकारी जो लेख आदि की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए उन्हें राजकीय पंजी में प्रतिलिपि के रूप में निबंधित करता या लिखता है। (रजिस्ट्रार, न्याय और शासन विभाग का) ३. इसी से मिलता-जुलता वह अधिकारी जो किसी विभाग या संस्था के सब प्रकार के लेख रखता या निबंधित करता है। जैसे—विश्वविद्यालय या सहयोग-समितियों का निबंधक।

निबंधन—पुं० [सं० नि√बंध्+ल्युट्—अन्] [वि० निबद्ध] १. निबंध के रूप में लाने की क्रिया या भाव। २. बाँधने की क्रिया या भाव। ३. वह जिससे कोई चीज बाँधी जाय। बंधन। ४. नियमों आदि में बाँध कर रखना। व्यवस्था। ५. कर्तव्य आदि के रूप में होनेवाला बंधन। ६. कारण। हेतु। ७. लेखों आदि के प्रामाणिक होने के लिए किसी राजकीय पंजी में लिखा या चढ़ाया जाना। (रजिस्ट्रेशन) ८. वीणा, सारंगी, सितार आदि की खूटियाँ जिनमें तार बँधे होते हैं। उपनाह। कान।

निबंधनी—स्त्री० [सं० निबंधन+ङीप्] १. बाँधने की वस्तु। २. बेड़ी।

निबंधी (धिन्)—वि० [सं० निबंध+इनि] १. बाँधनेवाला। २. किसी के साथ जुड़ा हुआ। संबद्ध। ३. कारण के रूप में रहकर कुछ करने या बनानेवाला।

पुं०=निबंधक।

निब—स्त्री० [अं०] लोहे आदि का वह छोटा तथा चोंच के आकार का उपकरण जो कलम के अगले भाग में लगा रहता है और जिसे स्याही में डुबोकर लोग लिखते हैं।

निबकौरी—स्त्री०=निमकौड़ी।

निबटना—अ०=निपटना।

निबटाना†—स०=निपटाना।

निबटारा—पुं०=निपटारा।

निबटाव—पुं०=निपटारा।

निबटेरा—पुं०=निपटारा।

निबड़ना—अ०=निपटना।

निबड़ा—पुं० [?] एक तरह का घड़ा।

निबद्ध—भू० कृ० [सं० नि√बंध्+क्त] १. बँधा हुआ। २. रुका हुआ। निरुद्ध। ३. गुथा हुआ। गुंफित। ४. कहीं जड़ा, बैठाया या किसी में लगाया हुआ। ५. किसी पर अच्छी तरह ठहरा या लगा हुआ। जैसे—भगवान पर दृष्टि निबद्ध होना। ६. (आज-कल लेख या लेख्य) जो प्रामाणिक या यथार्थ सिद्ध करने के लिए सरकारी पंजी में विधिवत् चढ़वा या लिखवा दिया गया हो। जिसका निबंधन हो चुका हो। (रजिस्टर्ड)

पुं० ऐसा गीत जो संगीत-शास्त्र के नियमों के अनुसार हर तरह से ठीक हो और जिसमें ताल, पद, रस, समय आदि के विधानों का पूरा पालन हुआ हो।

निबर—वि०=निर्बल।

निबरना—अ० [सं० निवृत्त, प्रा० निबिड्ड] १. बँधी, फँसी या लगी हुई वस्तु का अलग होना। छूटना। २. एक में मिली हुई वस्तुओं का अलग होना। ३. कष्ट, बंधन आदि से मुक्त होना। उबरना। ४. समाप्त होना। ५. दूर होना। न रह जाना। ६. दे० 'निपटना'।

संयो० क्रि०—जाना।

निबर्हण—पुं० [सं० नि√बर्ह् (हिंसा)] १. नष्ट करने की क्रिया या भाव। २. मारना। वध।

निबल—वि० [सं० निर्बल] [भाव० निबलाई] १. निर्बल। दुर्बल। २. दूसरों की तुलना में घटिया और कम मूल्य या योग्यता का।

निबह*—पुं० [?] समूह। झुंड। उदा०—मनहु उड़गन निबह आए मिलत तम तजि द्वेषु।—तुलसी।

†पुं० १.=निर्वह। २.=निबाह।

निबहना†—अ०=निभना।

निबहुर†—पुं० [हिं० नि+बहुरना=लौटना] ऐसा स्थान जहाँ से कोई लौटकर न आता हो। यम-द्वार।

निबहुरा—वि० [हिं० नि+बहुरना] १. जो जाकर लौटा न हो। २. ऐसा, जिसका लौटकर आना अभीष्ट न हो। (गाली)

निबारना—स० [सं० निवारण] निवारण करना। छोड़ना।

निबाह—पुं० [सं० निर्वाह] १. निभने या निभाने की अवस्था, क्रिया या भाव। निर्वाह। २. ऐसी स्थिति में काम चलाना या दिन बिताना जिसमें साधारणतः निश्चिंतता से और सुख-पूर्वक काम न चलता हो या दिन न बीतते हों। कठिनता से, परंतु सहनशीलता-पूर्वक किया जानेवाला निर्वाह। ३. किसी चले आए हुए क्रम या परंपरा का अथवा अपनी प्रतिज्ञा, वचन आदि का जैसे-तैसे परंतु बराबर किया जानेवाला पालन। जैसे—प्रीति या बड़ों की चलाई हुई रीति का निबाह।

विशेष—यद्यपि आज-कल 'निबहना' और 'निबाहना' की जगह 'निभना' और 'निभाना' रूप ही अधिक प्रशस्त तथा शिष्ट-सम्मत माने जाते हैं, फिर भी इन क्रियाओं का भाव-वाचक रूप 'निबह' ही अधिक प्रचलित है, 'निभाव' नहीं।

निबाहक—वि० [सं० निर्वाहक] निबाहने या निभानेवाला। निबाह करनेवाला।

निबाहना—स० [सं० निर्वहण] १. निर्वाह या निबाह करना।

*२. निस्तार करना। छुड़ाना। उदा०—आजु स्वामि साँकरे निवाहौं।—जायसी। ३. दे० 'निभाना'।

निबिड़†—वि०=निविड़।

निबुआ†—पुं०=नीबू।

निबुकना†—अ०=निपटना।

निबेड़ना—स० [सं० निवृत्त, प्रा० निविड्ड] १. बँधी, फँसी या लगी हुई वस्तु को अलग करना। मुक्त करना। छुड़ाना। २. आपस में मिली हुई चीजें अलग-अलग करना। छाँटना। ३. अलग या दूर करना। हटाना। ४. छोड़ना। त्यागना। ५. (काम या झगड़ा) निपटाना। ६. उलझन दूर करना। सुलझाना। ७. निर्णय या फैसला करना। झगड़ा निपटाना।

निबेड़ा—पुं० [हिं० निबेड़ना] १. निबेड़ने की क्रिया या भाव। २. कष्ट, विपत्ति आदि से होनेवाला उद्धार। ३. एक में मिली हुई चीजें चुन या छाँटकर अलग-अलग करना। ४. छोड़ देना। त्याग। ५. झगड़े का निर्णय या फैसला। ६. दे० 'निपटारा'।

निबेरना—स० १.=निबेड़ना। २. =निपटाना।

निबेरा—पुं०=निबेड़ा (निपटारा)।

निबेहना†—स० १.=निबेड़ना (निपटारा करना)। २.=निबाहना।

निबेही*—वि० [सं० निर्वेध] १. जिसका वेधन न किया जा सके। वेधरहित। २. छल-कपट आदि से रहित। उदा०—कोउ न मान मद तजेउ निबेही।—तुलसी।

निबोधन—पुं० [सं० नि√बुध् (जानना)+ल्युट्—अन] १. कोई काम समझने और सीखने की अवस्था या भाव। २. [नि√बुध्+णिच्+ल्युट्—अन] कोई काम सिखलाने और समझाने की क्रिया या भाव।

निबौरी (बौली)—स्त्री०=निमकौड़ी (नीम का फल)।

निभ—वि० [सं० नि√भा (दीप्ति)+क] अनुरूप, तुल्य या समान प्रतीत होनेवाला। (समस्त पदों के अंत में)

पुं० १. प्रकाश। २. अभिव्यक्ति। ३. धूर्ततापूर्ण चाल।

निभना—अ० [हिं० निबहना का पश्चिमी रूप] १. कार्य के संबंध में, किसी तरह पूरा या संपादित होना। २. आज्ञा, आदेश, प्रतिज्ञा, वचन आदि के संबंध में, चरितार्थ और फलित होना। ३. व्यक्ति के संबंध में, पारस्परिक संबंध न बिगड़ते हुए बरताव, व्यवहार या सौहार्द बना रहना। जैसे—दोनों भाइयों में नहीं निभेगी। ४. स्थिति के संबंध में, उसके अनुरूप अपने को बनाते हुए रहना या समय बिताना।

क्रि० प्र०—जाना।

५. व्यक्ति का अपने कार्य, व्यवहार आदि में खरा और पूरा उतरना। उदा०—निभें युधिष्ठिर से नर-रत्न, एक साथ हैं तीन प्रयत्न।—मैथिलीशरण गुप्त। ६. छुट्टी या छुटकारा पाना।

विशेष—यद्यपि यह शब्द मूलतः 'निर्वहण' से ही व्युत्पन्न है, अतः इसका रूप 'निबहना' ही अधिक संगत है, फिर भी पश्चिमी हिन्दी में इसका 'निभना' रूप ही प्रचलित है और वही प्रशस्त तथा शिष्ट-सम्मत है।

निभरम—वि० [सं० निर्भ्रम] जिसे या जिसमें किसी प्रकार का भ्रम या शंका न हो।

क्रि० वि० बिना किसी खटके, डर या शंका के। बेधड़क।

३—३५

निभरमा—वि० [सं० निर्भ्रम] १. जिसका रहस्य खुल या प्रकट हो गया हो। २. जिसका विश्वास उठ गया हो।

निभरोस (सी)—वि० [हिं० नि+भरोसा] [भाव० निभरोसा] १. जिसे किसी का भरोसा न हो। असहाय। निराश्रय। २. जिस पर भरोसा या विश्वास न किया जा सके।

निभाउ†—वि० [हिं० नि+भाव] १. जिसमें कोई भाव न हो। भाव-रहित। २. अच्छे भावों या गुणों से रहित।—उदा० असरन सरन नाम तुम्हारौ हौं कामी कुटिल निभाउ।—सूर।

पुं०=निबाह।

निभागा—वि०=अभागा।

निभाना—स० [हिं० निभना का स० रूप] १. उत्तरदायित्व, कार्य आदि का निर्वाह करना। २. आज्ञा, आदेश, प्रतिज्ञा, वचन आदि चरितार्थ या पालित करना। ३. थोड़ा-बहुत कष्ट सहते या त्याग करते हुए भी इस प्रकार आचरण, बरताव या व्यवहार करते चलना जिससे परस्पर संबंध बना रहे और कटुता न उत्पन्न होने पावे। ४. किसी दशा या स्थिति के अनुरूप अपने आपको ढाल या बनाकर समय बिताना।

निभालन—पुं० [सं० नि√भल (देखना)+णिच्+ल्युट्—अन] १. देखना। दर्शन। २. ज्ञान प्राप्त करना। परिचित होना। मालूम करना।

निभाव—पुं० [हिं० निभना] निभने या निभाने की क्रिया या भाव। निर्वाह। निबाह। (देखें)

निभूत—वि० [सं० नि-भूत प्रा० स०] बीता हुआ। गत।

निभृत—वि० [सं० नि√भृ (धारण)+क्त] १. धरा या रखा हुआ। २. छिपा हुआ। गुप्त। ३. अटल। निश्चित। ४. निश्चित। स्थिर। ५. बंद किया हुआ। ६. विनीत। नत। ७. धीर। शांत। ८. एकांत। निर्जन। सूना। ९. भरा हुआ। पूर्ण। १०. अस्त होने के समय या स्थिति के पास पहुँचा हुआ। ११. विश्वसनीय और सच्चा।

निभृतात्मा (त्मन्)—वि० [सं० निभृत-आत्मन्, ब० स०] १. धीर। २. दृढ़।

निभ्रांत†—वि०=निर्भ्रान्त।

निमंत्रण—पुं० [सं० नि√मंत्र (बुलाना)+ल्युट्—अन] [वि० निमंत्रित] १. किसी को किसी काम के लिए आदरपूर्वक बुलाने की क्रिया या भाव। आग्रहपूर्वक यह कहना कि आप अमुक कार्य के लिए अमुक समय पर हमारे यहाँ पधारें। २. ब्राह्मणों को भोजन कराने के लिए अपने यहाँ बुलाने की क्रिया या भाव। ३. विवाह आदि शुभ अवसरों पर लोगों को आदरपूर्वक अपने यहाँ बुलाने की क्रिया या भाव। न्योता।

क्रि० प्र०—देना।—भेजना।—मानना।

निमंत्रण-पत्र—पुं० [ष० त०] वह पत्र जिसमें यह लिखा रहता है कि आप अमुक समय पर हमारे यहाँ आने की कृपा करें।

निमंत्रना—स० [सं० निमंत्रण] निमंत्रण देना। समादर बुलाना।

निमंत्रित—भू० कृ० [सं० नि√मंत्र+क्त] जिसे किसी काम या बात के लिए निमंत्रण दिया गया हो या मिला हो। बुलाया हुआ। आहूत।

निम—पुं० [सं०] शलाका। शंकु।

†स्त्री०=नीम (पेड़)।

निमक†—पुं०=नमक।

निमकी—स्त्री०[फा० नमक]१. नींबू का अचार। २. छोटी टिकिया के आकार का एक प्रकार का नमकीन मोयनदार पकवान।
†वि०=नमकीन।

निमकौड़ी—स्त्री०[हिं० नीम+कौड़ी] नीम का फल जिसमें उसका बीज रहता है और जो देखने में प्रायः कौड़ी की तरह का होता है।

निमग्न—वि०[सं० नि √मग्न् (डूबना)+क्त] [स्त्री० निमग्ना]१. डूबा हुआ। मग्न। २. कार्य, विचार आदि में पूर्ण रूप से तन्मय। लीन।

निमछड़ा—पुं०[हिं० छाँड़ना]१. ऐसा समय जिसमें कोई काम न हो। २. छुट्टी।

निमज्जक—वि०[सं० नि√मज्ज्+ण्वुल्—अक]गोता या डुबकी लगाकर स्नान करनेवाला।

निमज्जन—पुं० [सं० नि√मज्ज्+ल्युट्—अन]१. गोता लगाकर किया जानेवाला स्नान। २. किसी वस्तु को किसी तरल पदार्थ में डुबाने की क्रिया या भाव। (इम्मर्शन)३. किसी बात या विषय में अच्छी तरह मग्न या लीन होना।

निमज्जना—अ०[सं० निमज्जन] गोता लगाकर स्नान करना।

निमज्जित—भू० कृ०[सं० नि√मज्ज्+क्त]१. जो नहा चुका हो; विशेषतः गोता लगाकर नहाया हुआ। २. डूबा हुआ। ३. डुबाया हुआ।

निमटना†—अ०=निपटना।

निमटाना†—स०=निबटाना।

निमटेरा†—पुं०=निपटारा।

निमत—वि०[हिं० नि+सं० मत्त] १. जो मत्त न हो। २. जिसका होश ठिकाने हो।

निमता—वि० [हिं० नि+सं० मत्त] १. जो मत्त न हो। २. जो उन्मत्त न हो। फलतः धीर और शांत।

निमद—पुं० [सं० नि√मद् (हर्ष)+अप्]स्पष्ट किन्तु मंद उच्चारण।

निमय—पुं०[सं० नि√मि (फेंकना)+अच्]१. अदला-बदली। २. विनिमय।

निमरी—स्त्री०[देश०] मध्यभारत में होनेवाली एक तरह की कपास।

निमाज—स्त्री०=नमाज (देखें)।
पुं०=नवाज।

निमाजी—वि०=नमाजी। (देखें)

निमान—वि०[सं० निम्न=गड्ढा]१. नीचा। २. ढालुआँ।
पुं० १. नीचा या ढालुआँ स्थान। २. जलाशय।
†वि०[सं०] निमग्न।

निमाना—वि०[सं० निम्न] [स्त्री० निमानी]१. जो नीचे की ओर हो। नीचा। २. जिसकी नति या प्रवृत्ति नीचे की ओर हो। ३. ढालुआँ। ४. नम और विनीत स्वभाववाला। ५. सबसे डर और दबकर रहनेवाला। दब्बू।
†स०=नवाना।
स०[सं० निर्माण] निर्माण करना। बनाना। रचना। उदा०—माझ खीनिम निमाइ।—विद्यापति।

निमानिया—वि०[हिं० न मानना] [भाव० निमानी] १. न माननेवाला। २. जो नियम, मर्यादा, विनय आदि का पालन न करता हो। मनमानी करनेवाला। निरंकुश।

निमानी—वि०[हिं० नि+मानना]निमानिया। (दे०)
स्त्री० मनमाना आचरण या व्यवहार। स्वेच्छाचार।

निमाल—वि०, पुं०=निर्माल्य।

निमि—पुं०[सं०]१. आँखों की पलकें झपकाने की क्रिया या भाव। निमेष। २. महाभारत के अनुसार एक ऋषि जो दत्तात्रेय के पुत्र थे। ३. राजा इक्ष्वाकु के एक पुत्र जिनसे मिथिला का विदेह-वंश चला था।

निमिख—पुं०=निमिष।

निमित्त—पुं० [सं० नि√मिद् (स्नेह)+क्त] [वि० नैमित्तिक] १. वह कार्य या बात जिससे किसी दूसरे कार्य या बात का साधन हो। २. व्यक्ति, जो नाम-मात्र के लिए कोई काम कर रहा हो, जब कि वह कार्य करवाने या प्रेरणाशक्ति देनेवाला और कोई होता है। ३. हेतु। ४. चिह्न। लक्षण। ५. शकुन। ६. उद्देश्य। लक्ष्य। ७. बहाना। मिस।
अव्य० किसी काम या बात के उद्देश्य या विचार से। लिए। वास्ते। जैसे—पितरों के निमित्त दान देना।

निमित्तक—वि०[सं० निमित्त+कन्] जो निमित्त मात्र हो।
पुं०=चुंबन।

निमित्त-कारण—पुं०[सं० कर्म०स०] न्याय में, वह चीज, बात या व्यक्ति जो किसी के घटित होने, बनने आदि का आधार या मूल कारण हो।

निमि-राज—पुं०[सं०ष०त०] निमिवंशीय राजा जनक।

निमिष—पुं०[सं० नि√मिष् (आँख खोलना)+क] १. पलकों का गिरना या बंद होना। आँखें मिचना। निमेष। २. काल या समय का उतना मान जितना एक बार पलक गिरने या झपकने में लगता है। ३. सुश्रुत के अनुसार पलकों में होनेवाला एक प्रकार का रोग। ४. खिले हुए फूलों का मुँह बन्द होना। ५. विष्णु।

निमिष-क्षेत्र—पुं०[सं० मध्य० स० या ष० त०] नैमिषारण्य।

निमिषांतर—पुं० [सं० निमिष-अंतर, ष०त०] पलक गिरने या मारने का समय।

निमिषित—भू० कृ०[सं० नि√मिष्+क्त]निमीलित। मिचा या मुँदा हुआ।

निमीलन—पुं०[सं० नि√मील् (बन्द करना)+ल्युट्—अन] १. पलक गिराना या झपकाना। २. उतना समय जितना एक बार पलक गिरने में लगता है। निमिष। ३. मनुष्य की आँखें सदा के लिए बंद होना। अर्थात् मरना। मौत।

निमीला—स्त्री० [सं० नि√मील्+अ—टाप्] निमीलिका। (दे०)

निमीलिका—स्त्री०[सं० निमीला+कन्, टाप्, ह्रस्व, इत्व] १. आँख झपकने या बंद करने की क्रिया या भाव। २. [नि√मील् +णिच्+वुल् अक, टाप्, इत्व।] छल। व्याज।

निमीलित—भू० कृ० [सं० नि√मील्+क्त]१. झपका, झपकाया या बंद किया हुआ। २. छिपा या छिपाया हुआ। ३. मरा हुआ। मृत।

निमुँहा†—वि०[हिं० नि+मुँह] [स्त्री० निमुँही] १. जिसका या जिसे मुँह न हो। बिना मुँह का। २. जो कुछ कहने या बोलने के समय भी चुप रहता हो। ३. लज्जा आदि के कारण जिसे कुछ कहने का साहस न होता हो। ४. जो बिना कुछ कहे-सुने अत्याचार, कष्ट आदि सह लेता हो। उदा०—निमुँही जानके वो मुझको मार लेते हैं।—जान साहब।

निमूंद—वि० [हिं० नि+मुंदना] १. जो मुंदा या बंद किया हुआ न हो। २. मुदित। बंद। उदा०—कौड़ा आँसू मूँदि कसि, साँकर बरुनी सजल। कीने बदन निमूँद, दृग-मलिग डारे रहत।—बिहारी।

निमूल†—वि०=निर्मूल।

निमूहा†—वि० [स्त्री० निमुँही]=निमुँहा।

निमेख—पुं०=निमेष।

निमेखना—स० [सं० निमेष] पलकें गिराना, झपकाना या मूँदना।

निमेट*—वि० [हिं० नि+मिटना] जिसे मिटाया न जा सके। न मिटनेवाला। अमिट। उदा०—काह कहौं हौं ओहि सों जेई दुख कीन्ह निमेट।—जायसी।

निमेष—पुं० [सं० नि√मिष्+घञ्] १. आँख की पलक का गिरना या झपकना। २. उतना समय जितना एक बार पलक गिराने या झपकाने में लगता है। ३. आँख की पलकें फड़कने का रोग। ४. एक प्रकार का चना।

निमेषक—पुं० [सं० निमेष+कन्] १. पलक। २. जुगनूँ।

निमेषकृत—स्त्री० [सं० निमेष√कृ (करना)+क्विप्, तुक्] बिजली। विद्युत्।

निमेषण—पुं० [सं० नि√मिष्+ल्युट्—अन] पलकें गिरना या गिराना।

निमोना—पुं० [सं० नवान्न] हरे चने या मटर को पीसकर बनाया जानेवाला एक प्रकार का सालन या रसेदार तरकारी।

निमोनिया—पुं० [अं०] अत्यधिक सरदी लगने के कारण होनेवाला एक प्रसिद्ध रोग, जिसमें फेफड़े में सूजन आ जाती है।

निमौनी—स्त्री० [सं० नवान्न] ऊख की फसल की कटाई आरंभ करने का दिन।

निम्न—वि० [सं० नि√म्ना (अभ्यास)+क] १. जो प्रसम, धरातल या स्तर से नीचा हो। २. जो अपेक्षाकृत कम ऊँचे स्तर पर हो। ३. जिसमें तीव्रता, वेग आदि साधारण से कम हो। जैसे—निम्न रक्त-चाप।

पुं० चित्र-कला में दिखाया जानेवाला ऐसा स्थान, जो आसपास के स्थानों से नीचा या गहरा हो।

निम्नग—वि० [सं० निम्न√गम् (जाना)+ड] [स्त्री० निम्नगा] जो नीचे की ओर जाता हो। जिसकी प्रवृत्ति नीचे की ओर हो।

निम्नगा—स्त्री० [सं० निम्नगा+टाप्] १. नदी। २. रहस्य संप्रदाय में, नाड़ी।

निम्नयोधी (धिन्)—वि० [सं० निम्न√युध् (लड़ना)+णिनि] किले के नीचे से या नीची जमीन पर से लड़नेवाला। वि० दे० 'स्थल योधी'।

निम्नांकित—वि० [सं० निम्न-अंकित, स०त०] १. जिसका अंकन नीचे हुआ हो। २. निम्नलिखित।

निम्नारण्य—पुं० [सं० निम्न-अरण्य, कर्म०स०] पहाड़ की घाटी। (कौ०)

निम्नोन्नत—वि० [सं० निम्न-उन्नत, द्व०स०] (स्थल आदि) जो कहीं से नीचा और कहीं से ऊँचा हो। ऊबड़-खाबड़।

पुं० चित्र-कला में आवश्यकतानुसार दिखाई जानेवाली ऊँचाई और निचाई। नतोन्नत। उच्चित्र (रिलीफ)

निम्मन†—वि० [देश०] बढ़िया।

निम्लुक्ति—स्त्री० [सं० नि√म्लुच् (गति)+क्तिन्] सूर्यास्त।

निम्लोच—पुं० [सं० नि√म्लुच्+घञ्] सूर्य का अस्त होना।

निम्लोचनी—स्त्री० [सं०] मानसरोवर के पश्चिम में स्थित वरुण की नगरी।

निम्लोचा—स्त्री० [सं०] एक अप्सरा का नाम।

नियंतव्य—वि० [सं० नि√यम् (नियंत्रण)+तव्यत्] जिसे नियंत्रित या नियमित किया जा सके अथवा करना हो।

नियंता (तृ)—वि० [सं० नि√यम्+तृच्] [स्त्री० नियंत्री] १. नियंत्रण करने या रखनेवाला। दूसरों को दबाकर और वश में रखनेवाला। २. किसी कार्य का उचित रूप से प्रबंध या व्यवस्था करनेवाला। प्रबंधक और शासक।

पुं० १. विष्णु। २. वह जो घोड़े फेरने या निकालने अर्थात् उन्हें चलना आदि सिखाने का काम करता हो। चाबुक-सवार।

नियंत्रक—पुं० [सं० नि√यंत्र् (निग्रह)+ण्वुल्—अक]=नियंता।

नियंत्रण—पुं० [सं० नि√यंत्र्+ल्युट्—अन] १. किसी प्रकार के नियम या बंधन में बाँधना। २. किसी को मनमाने क्रिया-कलाप आदि करने से रोकने के लिए उस पर कड़े बंधन लगाना। ३. व्यापारिक क्षेत्र में, शासन की किसी वस्तु का मूल्य स्वयं निश्चित करना और वह वस्तु समान मान या मात्रा में सब को अथवा किसी की आवश्यकता के अनुसार उसे देने का प्रबंध करना। (कंट्रोल, उक्त सभी अर्थों में)

नियंत्रित—भू० कृ० [सं० नि√यंत्र्+क्त] १. जिस पर नियंत्रण किया गया हो या हुआ हो। २. जिसे नियम आदि से बाँधकर ठीक रास्ते पर चलायी या लाया गया हो। ३. अधिकार या वश में किया या लाया हुआ। वश और शासन में रखा हुआ।

निय*—वि० [सं० निज] अपना। निजी। उदा०—तिय निय हिय जु लगी चलत...।—बिहारी।

नियत—वि० [सं० नि√यम्+क्त] १. जो बाँध या रोककर रखा गया हो। बंधा हुआ। पाबंद। २. जो नियंत्रण या वश में किया या रखा गया हो। ३. ठीक किया या ठहराया हुआ। निश्चित। जैसे—किसी काम के लिए समय नियत करना। ४. आज्ञा, विधान आदि के द्वारा स्थित किया हुआ। (प्रेस्क्राइब्ड) ५. (व्यक्ति) जिसे किसी कार्य या पद पर नियुक्त या मुकर्रर किया गया हो। काम पर लगाया हुआ। (पोस्टेड) जैसे—किसी काम की देख-रेख के लिए अधिकारी नियत करना।

पुं० महादेव। शिव।

नियत-श्रावा—पुं० [तृ०त०] नाटक में किसी पात्र का ऐसा कथन, जो सब लोगों को सुनाने के लिए न हो, बल्कि कुछ विशिष्ट पात्रों को सुनाने के लिए ही हो।

नियतांश—पुं० [नियत-अंश, कर्म०स०] किसी बड़ी राशि में से कुछ लोगों के लिए अलग-अलग नियत या निश्चित किया हुआ अंश। (कोटा) जैसे—सब लोगों के लिए कपड़े या खाद्य पदार्थों का नियतांश स्थिर करना।

नियतात्मा (त्मन्)—वि० [नियत-आत्मन्, ब०स०] अपने आपको वश में रखनेवाला। जितेंद्रिय। संयमी।

नियताप्ति—स्त्री० [नियता-अप्ति, कर्म०स०] नाटक में वह स्थिति जिसमें अन्य उपायों को छोड़कर एक ही उपाय से कार्य सिद्ध होने पर विश्वास

प्रकट किया या रखा जाता है। जैसे—अब तो ईश्वर ही हमारा उद्धार कर सकता है।

नियति—स्त्री०[सं० नि√यम्+क्तिन्] १. नियत होने की अवस्था या भाव। २. बद्ध होने की अवस्था या भाव। ३. कोई ऐसा बँधा हुआ नियम जिसमें कुछ या कोई भी परिवर्तन न होता या न हो सकता हो। ४. ईश्वर या प्रकृति का विधान जो पहले से नियत होता है और जिसके अनुसार सब कार्य अपने समय पर बिना किसी व्यतिक्रम के और अवश्य-म्भावी रूप से आप से आप होते चलते हैं। दैव। (डेस्टिनी) ५. प्रारब्ध या भाग्य जो उक्त का अथवा पूर्वकाल में अपने किये हुए कर्मों का परिणाम या फल माना जाता है और जिस पर मनुष्य का कोई वश नहीं चलता। अदृष्ट। ६. निश्चित या स्थिर होने की अवस्था या भाव। मुकर्ररी। ७. दुर्गा या भगवती का एक नाम।

नियतिवाद—पुं०[ष०त०] वह सिद्धांत जिससे यह माना जाता है कि (क) संसार में जो कुछ होता है, वह सब परंपरागत कारणों के अवश्यं-भावी परिणाम या फल के रूप में होता है, और (ख) लौकिक कार्यों में मनुष्य का पुरुषार्थ गौण तथा ईश्वर की इच्छा या प्रकृति की प्रेरणा और विधान ही सबसे अधिक प्रबल होता है। (डिटरमिनिज्म)

विशेष—प्राचीन काल में इसकी गणना नास्तिक मतों में की जाती थी।

नियतिवादी (दिन्)—वि०[सं० नियति√वद्(बोलना)+णिनि] नियति-वाद-संबंधी।

पुं० वह जो नियतिवाद का सिद्धांत मानता हो अथवा उसका अनुयायी हो। (डिटरमिनिस्ट)

नियतेंद्रिय—वि०[सं० नियत-इंद्रिय, ब०स०] जितेंद्रिय।

नियम—पुं०[सं० नि√यम्+अप्] १. ठीक तरह से चलाने के लिए बाँध या रोक कर रखना। २. प्रतिबंध। रुकावट। रोक। ३. आचार-व्यवहार, रीति-नीति आदि के संबंध में प्रणाली या प्रथा के रूप में निश्चित की हुई वे बातें, जिनका पालन आवश्यक कर्तव्य के रूप में होता है। कायदा। (रूल) जैसे—संस्था या समाज का नियम; राज्यशासन के नियम। ४. ऐसा निश्चित सिद्धान्त जो परम्परा से चला आ रहा हो और जिसका पालन किसी काम या बात में सदा एक-सा होता रहता हो। दस्तूर। परंपरा। जैसे—प्रकृति का नियम। ५. अनुशासन। नियंत्रण। ६. कोई काम या बात नियमित रूप से अथवा किसी विशेष ढंग से करने या करते रहने का क्रम। जैसे—उनका नियम है कि वे रोज सवेरे उठकर टहलने जाते हैं। ७. योग के आठ अंगों में से एक जिसके अन्तर्गत तपस्या, दान, शुचिता, संतोष, स्वाध्याय आदि बातें आती हैं।(योग के यम नामक अंग की तुलना में नियम नामक अंग का पालन उतनी कठोरता या दृढ़ता से करना आवश्यक नहीं होता।) ८. मीमांसा में वह विधि जिससे अप्राप्त अंश की पूर्ति होती है। ९. साहित्य में, एक प्रकार का अर्थालंकार, जिसमें किसी काम या बात के एक ही व्यक्ति में या स्थान पर स्थित होने का उल्लेख होता है। जैसे—अब तो इस विषय के आप ही एक-मात्र ज्ञाता (या पंडित) हैं। १०. किसी प्रकार की लगाई हुई शर्त। ११. विष्णु। १२. शिव।

नियम-तंत्र—वि०[ष०त०] जो किसी नियम के द्वारा चलता या चलाया जाता हो।

नियमतः (तस्)—अव्य० [सं० नियम+तस्] नियम के अनुसार।

नियमन—पुं०[सं० नि√यम्+ल्युट्—अन] [वि० नियमित, नियम्य] १. कोई काम ठीक तरह से चलाने अथवा लोगों को ठीक तरह से रखने के लिए नियम आदि बनाने और उनकी व्यवस्था करने की क्रिया या भाव। ठीक तरह से काम चलाने के लिए कायदे-कानून बनाना। (रेगुलेटिंग) २. नियम, बंधन आदि के द्वारा रोकना। निरोध। (रेस्ट्रिक्शन) ३. नियंत्रण। ४. शासन। ५. दमन। निग्रह।

नियम-पत्र—पुं०[ष०त०] प्रतिज्ञा-पत्र। शर्त-नामा।

नियम-पर—वि०[स०त०] नियम के अनुसार चलने, चलाया जाने या होनेवाला।

नियम-बद्ध—वि०[तृ० त०] १. नियम या नियमों से बंधा हुआ। २. दे० 'नियमित'।

नियम-स्थिति—स्त्री०[ब०स०] तपस्या।

नियमापत्ति—स्त्री०[नियम-आपत्ति, स०त०] आधुनिक राजनीति में किसी सभा-समिति में बने हुए नियमों या विधानों अथवा परंपराओं या रूढ़ियों के विरुद्ध कोई आचरण, कार्य या व्यवहार होने पर उसके संबंध में की जानेवाली आपत्ति जिसके संबंध में अंतिम निर्णय करने का अधिकार सभापति को होता है। (प्वाइंट ऑफ आर्डर)

नियमावली—स्त्री०[नियम-आवली, ष० त०] १. किसी संस्था आदि से संबंध रखनेवाले नियमों की विवरण पुस्तिका। २. किसी कार्य-क्षेत्र या विभाग के कार्य-संचालन अथवा कार्यकर्ताओं का पथ-प्रदर्शन करने-वाले नियमों आदि की पुस्तिका। (मैनुअल)

नियमित—भू० कृ० [सं० नियम+णिच्+क्त] १. नियमों के अनुसार बँधा या स्थिर किया हुआ। नियम-बद्ध। २. जो नियम, विधान आदि के अनुकूल हो। ३. जो बराबर या सदा किसी नियम के रूप में होता आ रहा हो। (रेगुलर) जैसे—नियमित रूप से अपने समय पर कार्यालय में उपस्थित होना।

नियमी (मिन्)—वि०[सं० नियम+इनि] १.नियम के अनुसार होनेवाला। २. नियम-संबंधी। ३. (व्यक्ति) जो नियम या नियमों का पालन करता हो।

नियम्य—वि०[सं० नि√यम्+यत्] १. जिसके संबंध में नियम बनाया जा सकता हो। जो नियम बनाकर बाँधा जा सकता हो या बाँधा जाने को हो। नियमों के क्षेत्र में आने या लाये जाने के योग्य। २. जो नियं-त्रण या शासन में रखा जा सकता हो या रखा जाने को हो।

नियर—अव्य०[सं० निकट, प्रा० निअड्] समीप। पास। नजदीक।

नियराई—स्त्री०[हिं० नियर=निकट+आई (प्रत्य०)] निकटता। सामीप्य।

नियराना—अ०[हिं० नियर+आना] पास या समीप आना या पहुँचना। स० पास या समीप पहुँचाना।

नियरे—अव्य०=नियर (नजदीक)।

नियाज—स्त्री०[फा० नियाज़] १. प्रार्थना। २. इच्छा। ३. जान-पहचान। परिचय। ४. आज्ञा। ५. मृतक के उद्देश्य से दरिद्रों को दिया जाने-वाला भोजन। (मुसल०)

नियाजमंद—वि०[फा०] [भाव० नियाज़मंदी] १. प्रार्थना करने-वाला। २. इच्छुक। ३. परिचित। ४. आज्ञाकारी।

नियान—अव्य०, पुं०=निदान।

नियाम—पुं०[सं० नि√यम्+घञ्] नियम।
पुं०[फा०] तलवार का कोश। मियान।

नियामक—वि०[सं० नि√यम्+णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० नियामिका] १. नियम या विधान बनानेवाला। २. नियमों के क्षेत्र या बंधन में रखने या लानेवाला। ३. प्रबंध या व्यवस्था करनेवाला।
पुं० मल्लाह। माँझी।

नियामक-गण—पुं०[ष०त०] पारे को मारनेवाली औषधियों का समूह। (रसायन)

नियामत—स्त्री०[अ०] १. ईश्वर का दिया हुआ धन या वैभव। २. धन। संपत्ति। ३. अलभ्य या दुर्लभ पदार्थ। ऐसी बहुत बढ़िया चीज जो जल्दी न मिलती हो।

नियार—पुं०[हिं० न्यारा?]जौहरियों, सुनारों आदि की दुकान का वह कूड़ा-करकट जो न्यारिये लोग ले जाकर साफ करते हैं और जिसमें से कभी-कभी बहुमूल्य धातुओं, रत्नों आदि के कण निकालते हैं।

नियारना*—स० [हिं० नियार]जौहरियों, सुनारों आदि का कूड़ा-करकट साफ करके उसमें से बहुमूल्य धातुओं, रत्नों आदि के कण अलग करना।

नियारा†—वि०=न्यारा।
पुं०=नियार।

नियारिया—पुं०=न्यारिया।

नियारे†—अव्य०=न्यारे।

नियाव†—पुं०=न्याय।

नियुक्त—भू० कृ० [सं० नि√युज्(जोड़ना)+क्त]१. जिसका नियोग या नियोजन किया गया हो अथवा हुआ हो। २. जो किसी काम या पद पर नियत किया या लगाया गया हो। तैनात या मुकर्रर किया हुआ। ३. जो किसी काम के लिए उद्यत, तत्पर या प्रेरित किया गया हो। ४. ठहराया या निश्चित किया हुआ। स्थिर। जैसे—समय नियुक्त करना।

नियुक्ति—स्त्री०[सं० नि√युज्+क्तिन्] १. नियुक्त होने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. किसी व्यक्ति को किसी काम या पद पर लगाने की क्रिया या भाव। तैनाती। मुकर्ररी। (एप्वाइंटमेंट)

नियुत—वि०[सं० नि√यु (मिलाना)+क्त] दस लाख।
पुं० १. दस लाख की संख्या। २. पुराणानुसार वायु के घोड़े का नाम।

नियुत्वत्—पुं०[सं० नियुत+मतुप्, मस्य वः] वायु। हवा।

नियुद्ध—पुं०[सं० नि√युध् (लड़ना)+क्त]१. हाथा-बाँही। २. कुश्ती।

नियोक्तव्य—वि० [सं०नि√युज्+तव्यत्] जिसका नियोजन किया जाने को हो या किया जा सकता हो।

नियोक्ता (क्तृ)—वि०[सं० नि√युज+तृच्]१. नियुक्त या नियोजित करनेवाला। २. लोगों को अपने यहाँ काम पर नियुक्त करनेवाला। (एम्पलायर)

नियोग—पुं०[सं० नि√युज्+घञ्] १. नियुक्त या नियोजित करने की अवस्था, क्रिया या भाव। नियत या मुकर्रर करना। २. किसी पदार्थ का उपयोग या व्यवहार। काम में लाना। ३. आज्ञा। आदेश। ४. निश्चय। ५. प्रेरणा। ६. अवधारण। ७. आयास। प्रयत्न। ८. प्राचीन भारतीय राजनीति में, कोई आपत्ति टालने या दूर करने का कोई विशिष्ट उपाय। ९. प्राचीन भारतीय आर्यों में प्रचलित एक प्रथा जिसके अनुसार किसी निःसंतान विधवा से संतान उत्पन्न कराने के लिए उसके देवर या पति के किसी उपयुक्त सगोत्री को उस विधवा के साथ संभोग करने के लिए नियत या नियुक्त किया जाता था। (धर्म-शास्त्रों ने बाद में यह प्रथा वर्जित कर दी थी)

नियोगस्थ—वि० [सं० नियोग√स्था (ठहरना)+क] जिसका नियोग हुआ हो।

नियोगी (गिन्)—वि० [सं० नियोग+इनि] १. नियुक्त। २. (किसी स्त्री के साथ) नियोग करनेवाला।

नियोग्य—वि०[सं० नि√युज्+ण्यत्](पुरुष या स्त्री) जिसका या जिससे नियोग हो सकता हो।
पुं० प्रभु। मालिक। स्वामी।

नियोजक—पुं० [सं० नि√युज्+णिच्+ण्वुल्—अक] वह जो दूसरों को किसी काम पर लगाता हो।

नियोजन—पुं०[सं० नि√युज्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० नियोजित, नियोज्य, नियुक्त] १. दूसरों को किसी काम में लगाने या नियुक्त करने की क्रिया या भाव। २. दे० 'आयोग'।

नियोजना*—स० [सं० नियोजन] किसी को काम पर नियुक्त करना या लगाना। नियोजन करना।

नियोजनालय—पुं०[सं० नियोजन-आलय, ष०त०] वह कार्यालय जो बेकारों को नौकरी आदि पर लगाने की व्यवस्था करता है। (एम्प्लायमेंट एक्सचेंज)

नियोजित—भू० कृ०[सं० नि√युज्+णिच्+क्त] जिसका कहीं नियोजन हुआ हो। काम पर लगाया हुआ।

नियोज्य—वि०[सं० नि√युज्+णिच्+यत्] जिसका नियोजन होने को हो या किया जाने को हो।

नियोद्धा (द्धृ)—पुं०[सं० नि√युध+तृच्]कुश्ती लड़नेवाला, पहलवान।

निर्—अव्य०[सं०√नृ(ले जाना)+क्विप्, इत्व] एक अव्यय जो स्वरों या कोमल व्यंजनों से आरम्भ होनेवाले शब्दों से पहले (निस् के स्थान पर) लगकर नीचे लिखे अर्थ देता है—अलग, दूर, बाहर, रहित, हीन आदि।
जैसे—निरंकुश, निरंतर, निरक्ष, निरर्थक, निराहार, निरुत्तर, निरुपाय आदि।

निरंक—वि० [सं० निर्-अंक, ब० स०] (कागज) जिस पर कोई अंक (अक्षर या चिह्न) न हो। कोरा। (ब्लैंक)

निरंकार—वि०, पुं०=निराकर।

निरंकुश—वि० [सं० निर्-अंकुश, ब० स०] [भाव० निरंकुशता] १. जिस पर किसी प्रकार का अंकुश या नियंत्रण न हो। २. (व्यक्ति) जो स्वेच्छापूर्वक मनमाना आचरण या व्यवहार करता हो। ३. (शासक) जो मनमाना और अत्याचारपूर्ण शासन करता हो। (डेस्पॉट)

निरंकुशता—स्त्री० [सं० निरंकुश+तल्—टाप्] १. निरंकुश होने की अवस्था या भाव। २. मनमाना और अत्याचारपूर्ण आचरण या व्यवहार।

निरंकुश-शासन—पुं० [सं० ष० त०] वह राज्य जिसका सारा अधिकार किसी एक व्यक्ति(राजा) के हाथ में हो और जिस पर प्रजा के प्रतिनिधियों का कोई नियंत्रण न हो। (एब्सोल्यूट मॉनर्की)

निरंग—वि० [सं० निर्-अंग, ब० स०] जिसका या जिसमें कोई अंग न हो। अंग-हीन।
पुं० रूपक अलंकार का एक भेद। (साहित्य)
वि० [हिं० नि+रंग] १. जिसका कोई एक रंग न हो। २. बेमेल। ३. खालिस। विशुद्ध।
अव्य० निपट। निरा।

निरंजन—वि० [सं० निर्-अंजन ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसने अंजन न लगाया हो। २. (नेत्र) जिसमें अंजन न लगा हो। ३. सब प्रकार के दुर्गुणों और दोषों से रहित। ३. माया, मोह आदि से निर्लिप्त या रहित।
पुं० १. निर्गुण ब्रह्म। परमात्मा। २. महादेव। शिव। ३. वह परम शक्ति जो सृष्टि, स्थिति और प्रलय करती हैं। (कबीर पंथी)

निरंजना—स्त्री० [सं० निरंजन+टाप्] १. पूर्णिमा। २. दुर्गा।

निरंजनी—वि० [सं० निरंजन] १. निरंजन संबंधी। २. निरंजनी संप्रदायवालों का।
पुं० १. निर्गुण ब्रह्म की उपासना करनेवाला एक प्रसिद्ध धार्मिक संप्रदाय जिसके प्रवर्तक स्वामी निरंजन भगवान थे। २. उक्त संप्रदाय का अनुयायी साधु।

निरंतर—वि० [सं० निर्-अंतर, ब० स०] १. अंतर रहित। जिसमें या जिसके बीच अंतर या दूरी न हो। २. जिसका क्रम बराबर चला गया हो। जिसकी परंपरा बीच में कहीं टूटी न हो। ३. घना। निविड़। ४. सदा एक-सा बना रहनेवाला। स्थायी। जैसे—निरंतर नियम। ५. जिसमें कोई अंतर या भेद न हो। तुल्य। समान। ६. जो अंतर्धान या आँखों से ओझल न हो।
क्रि० वि० १. बराबर। लगातार। २. सदा। हमेशा।

निरंतराभ्यास—पुं० [सं० निरंतर-अभ्यास, कर्म० स०] १. किसी काम या बात का निरंतर (नित्य या बराबर) किया जानेवाला अभ्यास। २. स्वाध्याय। (देखें)

निरंतराल—वि० [सं० निर्-अंतराल, ब० स०] जिसमें अंतराल (अवकाश) न हो।

निरंध—वि० [सं० निर्-अंध, प्रा० स०] १. बहुत अधिक या पूरा अन्धा। निरा अंधा। २. ज्ञान, बुद्धि आदि से बिलकुल रहित। ३. बहुत अधिक या घोर अंधकार से युक्त। उदा०—जाका गुरु भी अंधला, चेला खरा निरंधा।—कबीर।
वि० [सं० निरंधस्] बिना अन्न का। निरन्न।

निरंबर—वि० [सं० निर्-अंबर, ब० स०]=दिगंबर (नंगा)।

निरंबु—वि० [सं० निर्-अंबु, ब० स०] १. जिसमें जल या उसका कोई अंश न हो। निर्जल। २. जो बिना जल पीये रहता हो। ३. जिसमें जल का उपयोग या संपर्क न हो सकता हो। निर्जल। जैसे—निरंबु व्रत।

निरंभ—वि० [सं० निरंभस्] १. निर्जल। २. जो बिना पानी पीये रहता या रह सकता हो।

निरंश—वि० [सं० निर्-अंश, ब० स०] (व्यक्ति) जिसे अपना प्राप्य अंश न मिला हो या न मिल सकता हो।

निरकार*—वि०, पुं०=निराकर।

निरकेवल—वि० [सं० निस्+और केवल] १. जिसमें किसी तरह का मेल न हो। खालिस। विशुद्ध। २. साफ। स्वच्छ।
अव्य०=केवल।

निरक्ष—वि० [सं० निर्-अक्ष, ब० स०] १. बिना पासे का। २. जो पृथ्वी के मध्य भाग में हो।
पुं० पृथ्वी की भूमध्य रेखा। (ईक्वेटर)

निरक्ष-देश—पुं० [ष० त०] भूमध्य रेखा के आसपास के प्रदेश जिनमें रात-दिन का मान प्रायः बराबर रहता है।

निरक्षन†—पुं०=निरीक्षण।

निरक्षर—वि० [सं० निर्-अक्षर ब० स०] १. जिसमें अक्षर का प्रयोग न हो। २. जिसका अक्षर से कोई संबंध न हो, अर्थात् जो कुछ भी पढ़ा-लिखा न हो। ३. जो एक अक्षर भी न बोल रहा हो। अर्थात् बिलकुल चुप।

निरक्ष-रेखा—स्त्री० [ष० त०] नाड़ी-मंडल।

निरखना—स० [सं० निरीक्षण] १. ध्यानपूर्वक देखना। २. निरीक्षण करने के लिए देखना।

निरग—पुं०=नृग।

निरगुन†—वि०=निर्गुण।

निरगुनिया†—वि०=निरगुनी।

निरगुनी—† वि० [सं० निर्गुण] १. जिसमें कोई गुण या विशेषता न हो। २. दे० 'निर्गुण'।

निरग्नि—वि० [सं० निर्-अग्नि, ब० स०] अग्निहोत्र न करनेवाला।

निरघ—वि० [सं० निर्-अघ, ब० स०] जिसने अघ या पाप न किया हो निष्पाप।

निरचू—वि० [सं० निश्चित] १. जिसे अपने काम से अवकाश या छुट्टी मिल गई हो। २. जो हाथ में काम न होने के कारण खाली हो। ३. निश्चित।

निरच्छ—वि० [सं० निरक्षि] १. जिसे आँखें न हों। २. जिसे दिखाई न दे। अंधा।

निरजर*—वि०, पुं०=निर्जर।

निरजल—वि०=निर्जल।

निरजी—स्त्री० [देश०] संगमर्मर तराशने की संगतराशों की एक तरह की टाँकी।

निरजोस—पुं० [सं० निर्यास] १. निचोड़। २. निर्णय। ३. दे० 'निर्यास'।

निरजोसी—वि० [हिं० निरजोश] १. निचोड़ निकालनेवाला। २. निर्णय करनेवाला।

निरझर†—पुं०=निर्झर।

निरझरनी—स्त्री०=निर्झरणी।

निरझरी—स्त्री०=निर्झरी।

निरण†—पुं०=निर्णय।

निरत—वि० [सं० नि√रम् (रमना)+क्त] किसी काम में लगा हुआ। रत। लीन।
†पुं० [सं० नृत्य] नाच।

निरतना—स० [सं० नर्तन] नाचना।

निरति—स्त्री० [सं० नि√रम्+क्तिन्] १. अच्छी तरह किसी काम या बात में रत होने की अवस्था, क्रिया या भाव। अत्यंत रति। २. किसी काम में लिप्त या लीन होने की अवस्था या भाव।
†स्त्री० [?] सुध।

निरतिशय—वि० [सं० निर्—अतिशय, प्रा० स०] जिससे बढ़कर या अतिशय और कुछ न हो सके। हद दरजे का।
पुं० परमात्मा।

निरत्यय—वि० [सं० निर्—अत्यय, ब० स०] १. जो खतरे, भय आदि से अलग, दूर या परे हो। २. दोषरहित।

निरदई†—वि०=निर्दय।

निरदोषी—वि०=निर्दोष।

निरधण*—वि० [सं० निः+धन्या] स्त्री-रहित। उदा०—नैरंति प्रसरि निरधण गिरि नीझर।—प्रिथीराज।
†वि०=निर्धन।

निरधातु—वि० [सं० निर्धातु] १. जो या जिसमें धातु न हो। २. जिसके शरीर में धातु (वीर्य या शक्ति) न हो। बहुत ही कमजोर या दुर्बल।

निरधार—क्रि० वि० [सं० निर्धारण] निश्चित रूप से। उदा०—पाती पीछे-पीछे हम आवत हूँ निरधार।—सेनापति।
वि०=निराधार।
पुं०=निर्धारण।

निरधारना—स० [सं०निर्धारण] १. निश्चित या स्थिर करना। ठहराना। २. मन में धारण करना या समझना।

निरधिष्ठान—वि० [सं० निर्—अधिष्ठान, ब० स०] १. जिसका अधिष्ठान न हुआ हो। २. जिसका कोई आधार या आश्रय न हो। निराधार।

निरध्व (न्)—वि० [सं० निर्—अध्वन्, ब० स०] १. जो रास्ता भूल गया हो। २. भटकनेवाला।

निरनउ (य)†—पुं०=निर्णय।

निरना—वि०=निरन्ना।

निरनुग—वि० [सं० निर्—अनुग, ब० स०] जिसका कोई अनुग या अनुयायी न हो।

निरनुनासिक—वि० [सं० निर्—अनुनासिक, ब० स०] (वर्ग) जिसका उच्चारण करते समय नाक से ध्वनि निकलती हो। अनुनासिक का विपर्याय।

निरनुबंध—पुं० [सं० निर्—अनुबंध, ष० स०] प्राचीन भारतीय राजनीति में, ऐसी कार्रवाई जिसके द्वारा निःस्वार्थ भाव से किसी दूसरे राजा या राष्ट्र का कोई उद्देश्य या कार्य सिद्ध कराया जाय। यह अर्थनीति का एक भेद कहा गया है।

निरनुरोध—वि० [सं० निर्—अनुरोध, ब० स०] १. अनुरोध से रहित। २. सद्भावशून्य। अमैत्रीपूर्ण।

निरनै†—पुं० =निर्णय।

निरन्न—वि० [सं० निर्—अन्न, ब० स०] १. अन्न-रहित। बिना अन्न का। २. जिसने अभी तक अन्न न खाया हो। निराहार।

निरन्ना—वि० [सं० निरन्न] जिसने अभी तक अन्न न खाया हो। निराहार।
पद—निरन्ने मुँह=बिना कुछ खाये हुए। जैसे—यह दवा निरन्ने मुँह खाइयेगा।

निरन्वय—वि० [सं० निर्—अन्वय, ब० स०] १. जिसके आगे संतान न हो। २. जिसका किसी से लगाव या संबंध न हो। ३. जिसका ठीक या पूरा पता न चला हो।

निरपमय—वि० [सं० निर्—अपमय, ब० स०] १. निर्लज्ज। २. धृष्ट।

निरपना—वि० [हिं० निर+अपना] जो अपना न हो अर्थात् पराया या बेगाना।

निरपराध—वि० [सं० निर्—अपराध, ब० स०] जिसने कोई अपराध न किया हो। निर्दोष।
क्रि० वि० बिना किसी अपराध के। बिना अपराध किये।

निरपराधी†—वि०=निरपराध।

निरपवर्त्त—पुं० [सं० निर्-अपवर्त्त ब० स०] पीछे न मुड़नेवाला।

निरपवाद—वि० [सं० निर्—अपवाद, ब० स०] १. जिसमें कोई अपवाद न हो। बिना अपवाद का। २. जिसमें अपवाद, अर्थात् निंदा या बुराई की कोई बात न हो। अच्छा। भला। ३. निरपराध। निर्दोष।

निरपाय—वि० [सं० निर्—अपाय, ब० स०] १. जिसमें दोष या बुराई न हो। अच्छा। भला। २. जो नश्वर न हो। अविनश्वर।

निरपेक्ष—वि० [सं० निर्—अपेक्षा, ब० स०] [भाव० निरपेक्षी] १. जिसे किसी चीज की अपेक्षा न हो। २. जिसे किसी की चिंता या परवाह न हो। बे-परवाह। ३. जो किसी के अवलंब, आधार या आश्रय पर न हो। ४. जो किसी से कुछ लगाव या संपर्क न रखता हो। तटस्थ। ५. किसी से बचकर या अलग रहनेवाला। जैसे—भागवत-निरपेक्ष=वैष्णव भागवतों से दूर या बचकर रहनेवाला। ६. दे० 'निष्पक्ष'।
पुं० १. अनादर। २. अवज्ञा। अवहेला।

निरपेक्षा—स्त्री० [सं० निर्—अपेक्षा, प्रा० स०] १. वह स्थिति जिसमें किसी चीज या बात की अपेक्षा न हो। २. लगाव या संपर्क का अभाव। ३. अवज्ञा। ४. ला-परवाही। ५. निराशा।

निरपेक्षित—वि० [सं० निर्—अपेक्षित, प्रा० स०] १. जिसको किसी की अपेक्षा न हो। २. जिससे कोई लगाव असंपर्क न रखा गया हो।

निरपेक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० निर्—अप√ईक्ष् (देखना)+णिनि] निरपेक्ष। (दे०)

निरफल—वि०=निष्फल।

निरबंध—वि० = निर्बंध।

निरबंसिया—वि० = निरबंसी।

निरबंसी—वि० [सं० निर्वंश] जिसके आगे वंश चलानेवाली संतान न हो। (गाली या शाप)

निरबर्ती—पुं० [सं० निवृत्ति] १. त्यागी। २. विरक्त।

निरबल—वि०=निर्बल।

निरबहना—अ०=निबहना (निभना)।

निरबान—पुं०=निर्वाण।

निरबाहना—सं०=निबाहना (निभाना)।

निरबिसी—स्त्री०=निर्विषी (ओषधि)।

निरबेरा—पुं०=निबेड़ा (निपटारा)।

निरभय—वि०=निर्भय।

निरभर—वि०=निर्भर।

निरभिमान—वि० [सं० निर्–अभिमान, ब० स०] जिसमें या जिसे अभिमान या घमंड न हो। अहंकार-रहित।

निरभिलाष—वि० [सं० निर्–अभिलाष, ब० स०] जिसे किसी काम या बात की अभिलाषा या इच्छा न हो।

निरभेद—वि० [सं० निर्+भेद] जो किसी प्रकार का भेद-भाव न रखता हो। भेद-भावशून्य।

निरभ्र—वि० [सं० निर्–अभ्र, ब० स०] (आकाश) जिसमें अभ्र या बादल न हों।

निरमना—स० [सं० निर्माण] निर्मित करना। बनाना।

निरमर—वि० [हिं० निर+मरना] १. जो कभी मरे नहीं। अमर। २. जो जल्दी नष्ट न हो।
वि०=निर्मल।

निरमल—वि०=निर्मल।

निरमली—स्त्री०=निर्मली। (देखें)

निरमसोर—पुं० [निरम ?+सोर=जड़] एक प्रकार की जड़ी जिससे अफीम का मादक प्रभाव दूर हो जाता है। (पंजाब)

निरमान†—पुं०=निर्माण।

निरमाना—स० [सं० निर्माण] निर्मित करना। बनाना। रचना।

निरमायल†—पुं०=निर्माल्य।

निरमित्र—वि० [सं० निर्–अमित्र, ब० स०] जिसका कोई अमित्र अर्थात् शत्रु न हो।
पुं० १. त्रिगर्तराज का एक पुत्र जिसने कुरुक्षेत्र में वीरगति प्राप्त की थी। २. नकुल (पांडव) का एक पुत्र।

निरमूल†—वि०=निर्मूल।

निरमूलना—स० [सं० निर्मूलन] १. निर्मूल करना। जड़ से उखाड़ना। २. इस प्रकार पूरी तरह से नष्ट करना कि फिर से पनपने या बढ़ने की संभावना न रह जाय। समूल नष्ट करना।

निरमोल—वि०=अनमोल।

निरमोलिक—वि०=निरमोल (अनमोल)।

निरमोही—वि०=निर्मोही।

निरय—पुं० [सं० निर्√इ (गति)+अच्] नरक।

निरयण—वि० [सं० निर्–अयन, ब० स०] १. अयन-रहित। २. (ज्योतिष में काल-गणना) जो अयन अर्थात् राशि-चक्र की गति पर अवलंबित या आश्रित न हो।
पुं० भारतीय ज्योतिष में काल-गणना और पंचांग बनाने की वह विधि (सायन से भिन्न) जो अयन अर्थात् राशि-चक्र की गति पर अवलंबित या आश्रित नहीं होती, बल्कि जिसमें किसी स्थिर तारे या विंदु से सूर्य के भ्रमण का आरंभ स्थान माना जाता है।
विशेष—सूर्य राशि-चक्र में बराबर घूमता या चक्कर लगाता रहता है। प्राचीन ज्योतिषी रेवती नक्षत्र को सूर्य के चक्कर का आरंभ स्थान मानकर काल-गणना करते थे, और वहीं से वर्ष का आरंभ मानते थे। पर आगे चलकर पता चला कि इस प्रकार की गणना में एक दूसरी दृष्टि से त्रुटि है। वसंत संपात और शारद संपात के समय दिन और रात दोनों बराबर होते हैं, इसलिए वसंत-संपात के दिन से गणना करने पर जो वर्ष-मान स्थिर होता था, वह उक्त पुरानी विधि के वर्ष-मान से ८.६ पल बड़ा होता था। यह नई गणना-विधि अयन अर्थात् राशि-चक्र की गति पर आश्रित थी; इसलिए इसे सायन गणना कहने लगे, और इसके विपरीत पुरानी गणना-विधि निरयण कही जाने लगी। फिर भी बहुत दिनों से प्रायः सारे भारत में ग्रहलाघव आदि ग्रंथों के आधार पर पंचांगों में काल-गणना उसी पुरानी निरयण विधि से होती आई है; परंतु और आगे चलने पर पता चला कि सायन गणना-विधि में भी कुछ वैसी ही त्रुटि है, जैसी निरयण गणना-विधि में है, क्योंकि दोनों में दृश्य या प्रत्यक्ष गणित से कुछ न कुछ अंतर पड़ता है; इसलिए अनेक आधुनिक विचारशील ज्योतिषियों का आग्रह है कि किसी प्रकार दोनों विधियों की त्रुटियाँ दूर करके पंचांग दृश्य अर्थात् नक्षत्रों, राशियों आदि की ठीक और वास्तविक स्थिति के आधार पर और उसी प्रकार बनने चाहिएँ, जिस प्रकार उन्नत पाश्चात्य देशों में नॉटिकएक, मेनक आदि बनते हैं।

निरर्गल—वि० [सं० निर्–अर्गल, ब० स०] १. जिसमें अर्गल न हो। २. जिसमें या जिसके मार्ग में कोई बाधा या रुकावट न हो।

निरर्थ—वि० [सं० निर्–अर्थ, ब० स०]=निरर्थक।

निरर्थक—वि० [सं० निर्–अर्थ, ब० स०, कप्] १. (पद या शब्द) जिसका कोई अर्थ न हो। अर्थरहित। २. (कार्य या प्रयत्न) जिससे प्रयोजन सिद्ध न होता हो। ३. व्यर्थ। निष्फल।
पुं० न्याय के २२ निग्रह-स्थानों में से एक जो उस दशा में माना जाता है, जब वादी के कथन का उत्तर इतना उलटा-पुलटा होता है कि उसका कुछ अर्थ ही न निकले।

निरबुद्धि—पुं० [सं०] एक नरक का नाम।

निरलस—वि० [सं० निरालस्य] जिसमें आलस्य न हो। आलस्य से रहित। उदा०—निरलसरेवे स्वयं, अहर्निशि रहते जाग्रत।—पन्त।

निरवकाश—वि० [सं० निर्–अवकाश ब० स०] १. (स्थान) जिसमें अवकाश या खाली जगह न हो। २. (व्यक्ति) जिसे अवकाश या फुरसत न हो।

निरवग्रह—वि० [सं० निर्–अवग्रह, ब० स०] १. प्रतिबंध से रहित। स्वतंत्र। स्वच्छंद। २. जो किसी दूसरे की इच्छा पर अवलंबित या आश्रित न हो। ३. जिसमें कोई बाधा या विघ्न न हो। निर्विघ्न।

निरवच्छिन्न—वि० [सं० निर्–अवच्छिन्न, प्रा० स०] १. जिसका क्रम या सिलसिला न टूटा हो। अनवच्छिन्न। २. निर्मल। विशुद्ध।
क्रि० वि० १. निरंतर। लगातार। २. निपट। निरा।

निरवद्य—वि० [सं० निर्–अवद्य, प्रा० स०] [स्त्री० निरवद्या] जिसमें कोई ऐब या दोष न हो और इसी लिए जिसे कोई बुरा न कह सके। अनिंद्य।

निरवधि—वि० [सं० निर्–अवधि, ब० स०] १. जिसकी अवधि नियत न हो। २. सीमा-रहित।
क्रि० वि० निरंतर। लगातार।

निरवलंब—वि० [सं० निर्–अवलंब, ब० स०] १. जिसका कोई अवलंब, आश्रय या सहारा न हो। २. जिसका कोई ठौर-ठिकाना या रहने का स्थान न हो।

निरवशेष—वि० [सं० निर्–अवशेष, ब० स०] संपूर्ण। समग्र।

निरवसाद—वि० [सं० निर्–अवसाद, ब० स०] अवसाद से रहित।

निरवसित—वि० [सं० निर्–अवसित, प्रा० स०] १. (व्यक्ति) जिसके स्पर्श से खाने-पीने की चीजें और उनके पात्र अपवित्र या अशुद्ध हो जायँ अर्थात् छोटी जाति का। २. जाति से निकाला हुआ। जैसे—चांडाल।

निरवस्कृत—वि० [सं० निर्–अवस्कृत, प्रा० स०] साफ किया हुआ। परिष्कृत।

निरवहलिका—स्त्री० [सं० निर्-अव√हल् (जोतना)+ण्वुल्—अक, टाप्, इत्व] १. चहारदीवारी। प्राचीर। २. चहारदीवारी से घिरा हुआ स्थान। बाड़ा।

निरवाना—स० [हिं० निराना का प्रे०] निराने का काम दूसरे से कराना। †पुं०=निवारना।

निरवार—पुं० [हिं० निरवारना] १. निरवारने की क्रिया या भाव। २. छुटकारा। निस्तार।

निरवारना—स० [सं० निवारण] १. निवारण करना। २. झंझट, बखेड़ा अथवा बाधक तत्त्व या बात दूर करना या हटाना। ३. बंधन आदि से मुक्त या रहित करना। ४. कष्ट या संकट दूर करना। ५. छोड़ना। त्यागना। ६. सुलझाना। ७. झगड़ा या विवाद निपटाना।

निरवाह†—पुं०=निर्वाह।

निरवाहना—स० [सं० निर्वाह] निर्वाह करना।

निरवेद—पुं०=निर्वेद।

निरव्यय—वि० [सं० निर्-अव्यय, प्रा० स०] नित्य। शाश्वत।

निरशन—वि० [सं० निर्-अशन, ब० स०] १. जिसने खाया न हो या जो न खाय। २. जिसमें भोजन करना मना हो।
पुं० भोजन न करने अर्थात् निराहार रहने की अवस्था या भाव। उपवास।

निरसंक†—वि०=निःशंक।

निरस—वि० [हिं० नि+रस] १. जिसमें रस न हो। रस से रहित। २. जिसमें कोई स्वाद न हो। फीका। ३. किसी की तुलना में घटकर या हीन। ४. रूखा। सूखा। ५. विरक्त।
*पुं०=निरसन।

निरसन—पुं० [सं० निर्√अस् (फेंकना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० निरसित, निरस्त, वि० निरस्य] १. दूर करना। हटाना। २. साधिकार पहले का निश्चय या आज्ञा आदि रद करना। (कैन्सिलेशन, रिपील, रिसाइंडिंग)। ३. रद करने का अधिकार या शक्ति। ४. निराकरण। परिहार। ५. नाश। ६. वध। ७. बाहर करना। निकालना। (डिसचार्ज)

निरसा—स्त्री० [सं० नि-रस, ब० स०, टाप्] एक प्रकार की घास जो कोंकण देश में होती है।
†वि०=निरस।

निरसित—भू० कृ०=निरस्त।

निरस्त—भू० कृ० [सं० निर्√अस्+क्त] जिसका निरसन हुआ हो। (सभी अर्थों में)

निरस्त्र—वि० [सं० निर्-अस्त्र, ब० स०] १. जिसके पास अस्त्र न हो। अस्त्ररहित। उदा०—प्रेम शक्ति से चिर निरस्त्र हो जावेगी पाशवता।—पंत। २. जिससे अस्त्र छीन या ले लिया गया हो। (अन-आर्मड)

निरस्त्रीकरण—पुं० [सं० निरस्त्र+च्वि, इत्व, दीर्घ√कृ+ल्युट्—अन] [भू० कृ० निरस्त्रीकृत] १. अस्त्रों से रहित करना। २. आधुनिक राजनीति में, परस्पर युद्ध की संभावना कम करने के लिए आविष्कृत एक उपाय जिसके अनुसार देश की सेना या सैनिक बल कम किया जाता है जिससे उसमें युद्ध करने की समर्थता घट जाय। (डिस-आर्मामेंट)

निरस्त्रीकृत—भू० कृ० [सं० निरस्त्र+च्वि,√कृ+क्त] (देश या सैनिक) जो अस्त्रहीन कर दिया गया हो।

निरस्थि—वि० [सं० निर्-अस्थि, ब० स०] जिसमें हड्डी न हो अथवा जिसमें से हड्डी निकाल दी गई हो।

निरस्य—वि० [सं० निर्√अस्+यत्] जिसका निरसन होने को हो या किया जा सके।

निरहंकार—वि० [सं० निर्-अहंकार, ब० स०] जिसमें या जिसे अहंकार न हो।

निरहंकृत—वि० [सं० निर्-अहंकृत, प्रा० स०] अहंकार-शून्य।

निरहम्—वि० [सं० निर्-अहम्, ब० स०] जिसमें अहं, भाव न हो।

निरहेतु—वि०=निर्हेतु।

निरहेल—वि० [सं० हेय] अधम। तुच्छ।

निरा—वि० [सं० निरालय, पु० हिं० निराल] [स्त्री० निरी] १. (व्यक्ति) जिसमें कोई एक ही (उल्लिखित) गुण या अवगुण हो। जैसे—निरा पाजी, निरा मूर्ख। २. (पदार्थ) जिसमें कोई ऐसा तत्त्व न मिलाया गया हो, जिससे उसकी उपयोगिता या महत्त्व घटता हो। विशुद्ध। ३. केवल। सिर्फ। जैसे—निरी दाल के साथ रोटी खाना।

निराई—स्त्री० [हिं० निराना] निराने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

निराक—पुं० [सं० निर्√अक् (वक्र गति)+घञ्] १. पाचन क्रिया। २. पसीना। ३. बुरे कर्म का विपाक।

निराकरण—पुं० [सं० निर्-आ√कृ+ल्युट्—अन] [वि० निराकरणीय, निराकृत] १. अलग या पृथक् करना। २. निकालना, दूर करना या हटाना। ३. निर्वासन। ४. अस्वीकृत या निरस्त करना। ५. उठाये या किए हुए प्रश्न, आपत्ति आदि का तर्कपूर्वक खंडन, निवारण या परिहार करना। ६. दे० 'निरसन'।

निराकांक्ष—वि० [सं० निर्-आकांक्षा, ब० स०] जिसे कोई आकांक्षा या इच्छा न हो।

निराकांक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० निर्-आ√कांक्ष् (चाहना)+णिनि] [स्त्री० निराकांक्षिणी]=निराकांक्ष।

निराकार—वि० [सं० निर्-आकार, ब० स०] १. जिसका कोई आकार न हो। आकार-रहित। २. कुरूप। बेडौल। भद्दा।
पुं० १. ब्रह्म। २. विष्णु। ३. शिव। ४. आकाश।

निराकाश—वि० [सं० निर्-आकाश, ब० स०] जिसमें आकाश अर्थात् कुछ भी खाली स्थान न हो या गुंजाइश न हो।

निराकुल—वि० [सं० निर्-आकुल, प्रा० स०] १. जो आकुल या विकल न हो। २. किसी के अंदर भरा हुआ या व्याप्त। ३. बहुत अधिक आकुल या विकल।

निराकृत—वि० [सं० निर्-आ√कृ+क्त] [भाव० निराकृति] १. जिसका निराकरण हो चुका हो। २. रद्द या व्यर्थ किया हुआ। ३. जिसका खंडन हो चुका हो। ४. जो घबराया न हो।

निराकृति—वि० [सं० निर्-आकृति, ब० स०] १. आकृति-रहित। निराकार। २. जो वेद-पाठ या स्वाध्याय न करता हो। ३. जो पंच महायज्ञ न करता हो।

पुं० १. रोहित मनु के एक पुत्र का नाम। २. [निर्-आ√कृ+क्तिन्] निराकरण।

निराकृती (तिन्)—वि० [सं० निराकृत+इनि] निराकरण करनेवाला।

निराक्रंद—वि० [सं० निर्-आक्रंद, ब० स०] १.जो चिल्लाता या शिकायत न करता हो। २. (ऐसा स्थान) जहाँ किसी प्रकार का शब्द न सुनाई पड़ता हो।

निराखर†—वि०=निरक्षर।

निराग—वि० [सं० नि-राग, ब० स०] १. रागहीन। २. विरक्त।

निरागस्—वि० [सं० निर्-आगस्, ब० स०] पाप-रहित। निष्पाप।

निराचार—वि०[सं० निर्-आचार, ब० स०] १. (व्यक्ति) जो आचार-हीन हो। २. (चाल या रीति) जिसे समाज से मान्यता या स्वीकृति न मिली हो।

निराजी—स्त्री० [?] करघे में, हत्थे और तरौंछी के सिरों को मिलानेवाली लकड़ी। (जुलाहे)

निराट—वि० [हिं० निराल] १. दे० 'निराला'। २. दे० 'निरा'।

निराटा—वि० [स्त्री० निराटी]=निराला। उदा०—सोच है यहै कै संग ताके रंग भौन माँहिँ कौन धौं अनोखो ढंग रचत निटारी है।—रत्नाकर।

निराडंबर—वि० [सं० निर्-आडंबर, ब० स०] आडंबरहीन।

निरातंक—वि० [सं० निर्-आतंक, ब० स०] १. जो आतंकित न हो। २. जो आतंक न उत्पन्न करे। ३. रोग-रहित। नीरोग।

निरातप—वि० [सं० निर्-आतप, ब० स०] १. जो तपता न हो। २. छायादार। ३. जो ताप से सुरक्षित हो।

निरातपा—वि० स्त्री० [सं० निरातप+टाप्] जो तपती न हो।
स्त्री० रात।

निरात्म—वि० [सं० निर्-आत्मन्, ब० स०] [भाव० नैरात्य] आत्मा से रहित या हीन।

निरादर—पुं० [सं० निर्-आदर, प्रा० स०] १. आदर का अभाव। २. अपमान।

निरादान—वि० [सं० निर्-आदान, ब० स०] जो कुछ भी प्राप्त न कर रहा हो।

पुं० [प्रा० स०] १. आदान या लेने का अभाव। २. (ब० स०) एक बुद्ध का नाम।

निरादेश—पुं० [सं० निर्-आ√दिश्+घञ्] चुकता करना। भुगताना॥

निराधार—वि० [सं० निर्-आधार, ब० स०] १. जिसका कोई आधार (अवलंब या आश्रय) न हो। २. जिसकी कोई जड़ या बुनियाद न हो। निर्मूल। ३. (कथन) जिसका कोई प्रमाण न हो और इसी लिए जो ठीक या वास्तविक न हो; फलतः अमान्य। ४. जिसे अभी तक कुछ या कोई सहारा न मिला हो।

निराधि—वि० [सं० निर्-आधि, ब० स०] आधि अर्थात् रोग, चिंताओं आदि से मुक्त या रहित।

निरानंद—वि० [सं० निर्-आनंद, ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसके मन में या जिसे आनंद अथवा प्रसन्नता न हो। २. (काम या बात) जिसमें कुछ भी आनंद न मिल सकता हो।

पुं० १. आनंद का अभाव। २. दुःख।

निराना—स० [सं० निराकरण] [भाव० निराई] खेत में फसल के साथ आप से आप उगे हुए और फसल को हानि पहुँचानेवाले निरर्थक पौधों तथा वनस्पतियों को उखाड़ना या खोदकर निकालना।

निरापद—वि० [सं० निर्-आपदा, ब० स०] १. जिसके लिए कोई आपदा या संकट न हो। २. जिसमें कोई आपदा या संकट न हो। ३. जिससे किसी प्रकार की आपदा या संकट की संभावना न हो।

क्रि० वि० बिना किसी प्रकार की आपत्ति या संकट के।

निरापन—वि० [हिं० निर+मरा० आपन] १. जो अपना न हो। २. पराया। बेगाना।

निरापुन—वि०=निरापन।

निराबाध—वि० [सं० नि्-आबाधा, ब० स०] जिसके साथ छेड़-छाड़ न हो। बाधा-रहित।

निरामय—वि० [सं० निर्-आमय, ब० स०] १. जिसे रोग न हो, फलतः नीरोग और स्वस्थ। २. कुशल।

पुं० १. जंगली बकरा। २. सूअर।

निरामिष—वि० [सं० निर्-आमिष, ब० स०] १. (खाद्य पदार्थ या भोजन) जिसमें आमिष अर्थात् मांस या उसका कोई अंश अथवा रूप (अंडा या मछली) न मिला हो। २. (व्यक्ति) जो मांस (अंडा, मछली आदि) न खाता हो।

निरामिष भोजी (जिन्)—वि० [सं० निरामिष√भुज् (खाना) +णिनि] जो मांस न खाता हो; फलतः शाकाहारी। (वेजिटेरियन)

निराय—वि० [सं० निर्-आय, ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसे आय न हो रही हो। २. (व्यापार) जिससे आय न हो रही हो।

निरायत—वि० [सं० निर्-आयत, प्रा० स०] जो फैलाया या बढ़ाया हुआ न हो, फलतः सिकोड़ा हुआ।

निरायास—वि० [सं० निर्-आयास, ब० स०] बिना आयास या परिश्रम के होनेवाला।

क्रि० वि० बिना आयास या परिश्रम किये।

निरायुध—वि० [सं० निर्-आयुध, ब० स०] निरस्त्र।

निरार (ा)—वि० [स्त्री० निरारी] १.=निराला। २. =न्यारा।

निरालंब—वि० [सं० निर्-आलंब, ब० स०] १. जिसका कोई आलंब या सहारा न हो। २. जिसे कोई आश्रय या सहायता देनेवाला न हो। ३. आधार-हीन।

निरालंबा—स्त्री० [सं० निरालंब+टाप्] छोटी जटामासी

निराल—वि० [हिं० निराला] १. निराला। २. निपट। निरा। ३. विशुद्ध।

निरालक—पु० [सं०] एक तरह की समुद्री मछली।

निरालभ*—वि०=निरालंब।

निरालय—वि० [?] अपवित्र। उदा०—ऐसन देह निरालय बौरे मुए छुवै नहिं कोई हो।—कबीर।

निरालस—वि०, पुं०=निरालस्य।

निरालस्य—वि० [सं० निर्-आलस्य, ब० स०] जिसे आलस्य न हो, फलतः फुर्तीला।

पुं० आलस्य का अभाव।

निराला—वि० [सं० निरालय] [स्त्री० निराली] १. (स्थान) जहाँ कोई आदमी या बस्ती न हो। २. एकांत और निर्जन। ३. (बात, वस्तु या व्यक्ति) जो अपनी बनावट, रूप, विशिष्टताओं आदि के कारण सबसे अलग तरह का और अनोखा हो। अनूठा।

पुं० ऐसा स्थान जहाँ लोगों की भीड़-भाड़ या आना-जाना न हो। एकांत और निर्जन स्थान।

निरालोक—वि० [सं० निर्-आलोक, ब० स०] १. आलोक अर्थात् प्रकाश से रहित। २. अंधकारपूर्ण। अँधेरा।

पुं० शिव।

निरावना†—स०=निराना।

निरावरण—वि० [सं० निर्-आवरण, ब० स०] जिसके आगे या सामने कोई परदा न पड़ा हो। आवरण-रहित। खुला हुआ।

पुं० [भू० कृ० निरावृत] १. आगे या सामने का परदा हटाने की क्रिया या भाव। २. दे० 'अनावरण'।

निरावलंब—वि० [सं० निरवलंब] जिसका कोई अवलंब या सहारा न हो। अवलंब-रहित।

निरावृत—भू० कृ० [सं० निर्-आवृत, प्रा० स०] जिस पर से आवरण हटाया गया हो।

निराश—वि० [सं० निर्-आशा, ब० स०] [भाव० निराशा] जिसे आशा न रह गई हो, अथवा जिसकी आशा नष्ट हो चुकी हो। हताश।

निराशक—वि० दे० 'निराश'।

निराशा—स्त्री० [सं० निर्-आशा, प्रा० स०] १. आशा का अभाव। २. निराश होने की अवस्था या भाव।

निराशावाद—पुं० [प०त०] वह लौकिक सिद्धांत जिसमें यह माना जाता है कि संसार दुःखों से भरा है और इसलिए अच्छी बातों की ओर से मनुष्य को निराश रहना चाहिए, उनकी आशा नहीं करनी चाहिए। (पेसिमिज्म)

निराशावादी (दिन्)—वि० [सं० निराशावाद+इनि] निराशावाद-संबंधी।

पुं० वह जो निराशावाद के सिद्धांत को ठीक मानता हो। (पेसिमिस्ट)

निराशिष्—वि० [सं० निर्-आशिष्, ब० स०] १. आशीर्वाद शून्य। २. तृष्णा, वासना आदि से रहित।

निराशी—वि०=निराश।

निराश्रय—वि० [सं० निर्-आश्रय, ब० स०] १. जिसे कहीं कोई आश्रय या सहारा न मिल रहा हो। आश्रय-रहित। आधारहीन। बिना सहारे का। २. जिसका कोई संगी-साथी न हो।

निरास—पुं० [सं०] निरसन। (देखें)

†वि०=निराश।

निरासन—वि० [सं० निर्-आसन, ब० स०] आसन-रहित।

पुं०=निरसन।

निरासा—स्त्री०=निराशा।

निरासी—वि०=निराश।

निरास्वाद—वि० [सं० निर्-आस्वाद, ब० स०] जिसका या जिसमें स्वाद न हो। स्वाद-रहित।

निराहार—वि० [निर्-आहार, ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसने भोजन का समय बीत जाने पर भी अभी तक खाया न हो। जिसने अभी तक भोजन न किया हो। २. (कर्म या व्रत) जिसके अनुष्ठान में भोजन न करने का विधान हो।

क्रि० वि० बिना भोजन किये। भूखे रह कर।

पुं० कुछ न खाने-पीने अर्थात् भूखे रहने की अवस्था या भाव।

निरिंग—वि० [सं० निर्-इंग, ब० स०] निश्चल। अचल।

निरिंगिणी—स्त्री० [सं० निर्√इंग् (गति)+इनि—ङीप्] चिक। झिलमिली। परदा।

निरिंद्रिय—वि० [सं० निर्-इंद्रिय, ब० स०] १. जिसे कोई इंद्रिय न हो। इन्द्रियों से रहित। २. जिसकी इंद्रियाँ ठीक तरह से काम न देती हों।

निरिच्छ—वि० [सं० निर्-इच्छा, ब० स०] जिसे कोई इच्छा न हो। इच्छा रहित।

निरिच्छन*—पुं० निरीक्षण।

निरिच्छना—स० [सं० निरीक्षण] निरीक्षण करना।

निरीक्षक—वि० [सं० निर्√ईक्ष् (देखना)+ण्वुल्—अक] १. देखने-वाला। २. निरीक्षण करनेवाला।

पुं० वह अधिकारी जो किसी काम का निरीक्षण या देख-भाल करने के लिए नियुक्त हो। (इन्सपेक्टर)

निरीक्षण—पुं० [सं० निर्√ईक्ष्+ल्युट्—अन] [वि० निरीक्षित, निरीक्ष्य] १. देखना। दर्शन। २. यह देखना कि सब काम ठीक तरह से हुए हैं या नहीं अथवा सब बातें ठीक हैं या नहीं। (इन्सपेक्शन)। ३. देखने की मुद्रा। ४. नेत्र। आँख।

निरीक्षा—स्त्री० [सं० निर्√ईक्ष्+आ—टाप्] १. देखना। दर्शन। २. निरीक्षण।

निरीक्षित—भू० कृ० [सं० निर्√ईक्ष्+क्त] १. देखा हुआ। २. जिसका निरीक्षण हुआ हो।

निरीक्ष्य—वि० [सं० निर्√ईक्ष्+ण्यत्] १. जो देखा जा सके। जो दिखाई दे सके। २. जिसका निरीक्षण करना उचित हो। ३. जिसका निरीक्षण होने को हो।

निरीक्ष्यमाण—वि० [सं० निर्√ईक्ष्+यक्+शानच्] जो देखा जाता हो।

निरीति—वि० [सं० निर्-ईति, ब० स०] ईति अर्थात् अति-वृष्टि से रहित।

निरीश—वि० [सं० निर्-ईश, ब० स०] १. जिसका कोई ईश या स्वामी न हो। बिना मालिक का। २. जो ईश्वर को न मानता हो। निरीश्वर-वादी। नास्तिक।

पुं० हल का फाल।

निरीश्वर—वि० [सं० निर्-ईश्वर, ब० स०] १. (मत या सिद्धांत) जिसमें ईश्वर का अस्तित्व न माना जाता हो। २. (व्यक्ति) जो ईश्वर का अस्तित्व न मानता हो। नास्तिक।

निरीश्वरवाद—पुं० [ष० त०] यह विचारधारा या सिद्धांत कि विश्व का नियामक या स्रष्टा कोई ईश्वर नहीं है। ईश्वर को न माननेवाला मत या सिद्धांत।

निरीश्वरवादी (दिन्)—वि० [सं०निरीश्वरवाद+इनि] निरीश्वरवाद-संबंधी। पुं० निरीश्वरवाद का अनुयायी।

निरीष—पुं० [सं० निर्-ईषा, ब० स०] हल का फाल।

निरीह—वि० [सं० निर्-ईहा, ब० स०] [भाव० निरीहता, निरीहत्व] १. जिसे किसी काम या बात की ईहा (अर्थात् इच्छा या कामना) न हो। जिसे किसी तरह की चाह या वासना न हो। २. जो कुछ भी करना न चाहता हो और इसी लिए कुछ भी न करता हो। ३. उदासीन। विरक्त। ४. जो इतना नम्र और शांत हो कि किसी का अपकार या अहित न करता हो या न कर सकता हो। ५. सुकुमार। सुकोमल। जैसे—निरीह रूप।

निरीहा—स्त्री० [सं० निर्-ईहा, प्रा० स०] १. ईहा या चाह का अभाव। २. ईहा के अभाव के कारण होनेवाली निश्चेष्टता।

निरुआर—पुं०=निरुवार (छुटकारा)।

निरुआरना†—स०=निरवारना।

निरुक्त—भू० कृ० [सं० निर्√वच् (कहना)+क्त] [भाव० निरुक्ति] १. ठीक, निश्चित और स्पष्ट रूप से कहा, बतलाया या समझाया हुआ। जिसका उच्चारण, कथन या निरूपण उचित और यथेष्ट रूप में हुआ हो। सन्देह-रहित और स्पष्ट। २. जिसका निर्देश या विधान स्पष्ट रूप से हुआ हो। ३. चिल्लाकर या जोर से कहा हुआ। उद्घोषित।

पुं० १. शब्द का ऐसा अर्थ या विश्लेषण जिससे उसके मूल या व्युत्पत्ति का भी पता चलता हो। २. वह ग्रन्थ या शास्त्र जिसमें शब्दों के अर्थ, पर्याय और व्युत्पत्तियाँ बतलाई गई हों। शब्दों की व्युत्पत्ति और विकारी रूपों के तत्त्व या सिद्धांत बतलानेवाला ग्रंथ या शास्त्र। शब्द-शास्त्र। (एटिमॉलोजी)

विशेष—हमारे यहाँ इस शास्त्र का आरंभ ऐसे वैदिक शब्दों के विवेचन से हुआ था, जो पुराने पड़ चुके थे और जिनके अर्थों के संबंध में मत-भेद या संदेह होता था। शब्दों के ठीक अर्थ और आशय समझने-समझाने के लिए उनके व्युत्पत्तिक आधार का निरूपण या विवेचन करना आवश्यक होता था। यह काम वैदिक साहित्य के ही सम्बन्ध में हुआ था; अतः इसे छः वेदांगों में चौथा स्थान मिला था।

३. उक्त विषय का यास्काचार्य कृत वह ग्रंथ जो वैदिक निघंटु की व्याख्या के रूप में है और जिसमें यह बतलाया गया है कि शब्दों में वर्ण-लोप, वर्ण-विपर्यय, वर्णागम आदि किस प्रकार के और कैसे होते हैं।

विशेष—यास्काचार्य का स्थान उस समय के निरुक्तकारों में चौदहवाँ था। इसी से पता चल जाता है कि हमारे यहाँ इस विषय का विवेचन कितने प्राचीन काल में आरंभ हुआ था।

निरुक्ति—स्त्री० [सं० निर्√वच्+क्तिन्] १. निरुक्त होने की अवस्था या भाव। २. शब्दों का ऐसा निरूपण या विवेचन जो यह बतलाता हो कि शब्द किस प्रकार और किन मूलों से बने हैं और उनके रूपों में किस प्रकार परिवर्तन या विकार होते हैं। शब्दों की व्युत्पत्ति और विकारी रूपों के तत्त्व या सिद्धान्त बतलानेवाली विद्या या शास्त्र। शब्द-शास्त्र। (एटिमॉलाजी) ३. किसी शब्द का मूल रूप। व्युत्पत्ति। (डेरिवेशन) ४. साहित्य में, एक प्रकार का गौण अर्थालंकार जिसमें किसी शब्द के व्युत्पत्तिक विश्लेषण के आधार पर कोई अनूठी और कौशलपूर्ण बात कही जाती है; अथवा किसी नाम या संज्ञा का साधारण से भिन्न कोई विलक्षण व्युत्पत्तिक अर्थ निकालकर उक्ति में चमत्कार उत्पन्न किया जाता है। यथा—(क) ताप करत अबलान को, दया न चित कछु आतु। तुम इन चरितन साँच ही दोषाकर विख्यातु। यहाँ 'दोषाकर' शब्द के कारण निरुक्ति अलंकार हुआ है। चंद्रमा को दोषाकर इसलिए कहते हैं कि वह दोषा (रात) करता है। पर यहाँ दोषाकर का प्रयोग दोषों का आकार या भंडार के अर्थ में किया गया है। (ख) रूप आदि गुण सों भरी तजिकै व्रज-बनितान। उद्धव कुब्जा बस भये निर्गुण वहै निदान। यहाँ 'निर्गुण' शब्द की दो प्रकार की निरुक्तियों या व्युत्पत्तियों का आधार लेकर चमत्कार उत्पन्न किया गया है। आशय यह झलकाया गया है कि जो कृष्ण निर्गुण (अर्थात् सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों से परे या रहित) कहे जाते हैं, वे कुब्जा जैसी निर्गुण (अर्थात् सब प्रकार के अच्छे गुणों या बातों से रहित या हीन) स्त्री के फेर में पड़कर अपना 'निर्गुण' वाला विशेषण चरितार्थ या सार्थक कर रहे हैं। इसी प्रकार के कथनों की गिनती निरुक्ति अलंकार में होती है।

निरुच्छ्वास—वि० [सं० निर्-उच्छ्वास, ब०स०] १. (स्थान) जहाँ बहुत से लोग इस प्रकार भरे हों कि उन्हें साँस तक लेने में बहुत कठिनता हो। २. (स्थान) जहाँ बैठने से दम घुटता हो।

निरुज—वि०=नीरुज (नीरोग)।

निरुत्तर—वि० [सं० निर्-उत्तर, ब०स०] १. (व्यक्ति) जो किसी प्रश्न का उत्तर न दे सकने के कारण मौन हो गया हो। २. (प्रश्न) जिसका उत्तर न दिया गया हो या न दिया जा सके।

निरुत्साह—वि० [सं० निर्-उत्साह, ब०स०] १. जिसमें उत्साह न हो। २. जिसका उत्साह न रह गया हो।

पुं० [प्रा०स०] उत्साह का न होना।

निरुत्साहित—भू० कृ० [सं० निरुत्साह+इतच्] जिसका उत्साह नष्ट हो गया हो या नष्ट कर दिया गया हो।

निरुत्सुक—वि० [सं० निर्-उत्सुक, प्रा०स०] [भाव० निरुत्सुकता] जो (किसी काम या बात के लिए) उत्सुक न हो।

निरुदक—वि० [सं० निर्-उदक, ब०स०] १. बिना जल का। २. (स्थान) जिसमें या जहाँ जल न हो।

निरुदन—पुं० [सं०] [भू० कृ० निरुदित]=निर्जलीकरण।

निरुद्देश्य—वि० [सं० निर्-उद्देश्य, ब० स०] जिसका कोई उद्देश्य न हो। अव्य० बिना किसी उद्देश्य के। यों ही।

निरुद्ध—वि० [सं० नि√रुध् (रोकना)+क्त] [भाव० निरोध] १. जिसका निरोध किया गया हो। २. रुका या रोका हुआ। ३. बन्धन में डाला या पड़ा हुआ।

पुं० योग में वर्णित पाँच प्रकार की मनोवृत्तियां में से एक, जिसमें चित्त अपनी कारणीभूत प्रकृति में मिलकर निश्चेष्ट हो जाता है।

निरुद्धकंठ—वि० [ब०स०] १. जिसका दम घुट गया हो। २. जिसका गला (आवेश, मनोवेग आदि के कारण) रुँध गया हो और इसी लिए जिससे स्पष्ट उच्चारण न निकलता हो।

निरुद्धगुद—पुं० [ब०स०] पेट में मल जमा होने या रुकने का एक रोग।

निरुद्ध-प्रकाश—पुं० [ब०स०] एक प्रकार का रोग, जिसमें मूत्रद्वार बंद-सा हो जाता है और पेशाब बहुत रुक-रुककर होता है।

निरुद्यम—वि० [सं० निर्-उद्यम, ब०स०] [भाव० निरुद्यमता] १. जो उद्यम या उद्योग न करता हो। २. जिसके पास कोई उद्यम या उद्योग न हो।

निरुद्यमी (मिन्)—वि० [सं० निरुद्यम+इनि] (व्यक्ति) जो उद्यम न करता हो, फलतः आलसी और कामचोर।

निरुद्योग—वि० [सं० निर्-उद्योग, ब०स०] १. जो उद्योग या प्रयत्न न करता हो। २. जिसके हाथ में कोई उद्योग या काम न हो।

निरुद्योगी—वि०=निरुद्योग।

निरुद्वेग—वि० [निर्-उद्वेग, ब०स०] जिसमें उद्वेग न हो। उत्तेजना और क्षोभ से रहित, फलतः धीर और शांत।

निरुपकार-आधि—स्त्री० [सं०] वह पूँजी, जो किसी आमदनी वाले काम में न लगी हो, बल्कि यों ही व्यर्थ पड़ी हो।

निरुपजीव्य भूमि—स्त्री० [सं० निर्-उपजीव्या, प्रा० स०] ऐसी भूमि जिस पर किसी का गुजर या निर्वाह न हो सकता हो। (कौ०)

निरुपद्रव—वि० [सं० निर्-उपद्रव, ब०स०] [भाव० निरुपद्रवता] १. (स्थान) जहाँ उपद्रव न होता हो। २. (व्यक्ति) जो उपद्रवी न हो।

निरुपद्रवता—स्त्री० [सं० निरुपद्रव+तल्—टाप्] निरुपद्रव होने की अवस्था या भाव।

निरुपद्रवी (विन्)—वि० [सं० निर्-उपद्रविन्, प्रा०स०] जो कुछ भी उपद्रव न करे; फलतः धीर और शांत।

निरुपपत्ति—वि० [सं० निर्-उपपत्ति, ब०स०] १. जिसकी कोई उपपत्ति न हो। २. जो उपयुक्त या युक्त न हो।

निरुपभोग—वि० [सं० निर् उपभोग, ब०स०] १. (पदार्थ) जिसका किसी ने उपभोग न किया हो। २. (व्यक्ति) जिसने किसी विशिष्ट वस्तु का भोग या उपभोग कर आनंद प्राप्त न किया हो।
पुं० [प्रा० स०] उपभोग का अभाव।

निरुपम—वि० [सं० निर्-उपमा, ब०स०] जिसकी कोई उपमा न हो; अर्थात् बहुत बढ़िया और बेजोड़।
पुं० राष्ट्रकूट-वंश के एक राजा का नाम।

निरुपमा—स्त्री० [सं० निरुपम+टाप्] गायत्री का एक नाम।

निरुपमित—वि० [सं० निर्-उपमित, प्रा०स०] [स्त्री० निरुपमिता] जिसकी उपमा किसी से न दी जा सकती हो। निरुपम। उदा०—वह खड़ी शीर्ण प्रिय-भाव-मग्न निरुपमिता।—निराला।

निरुपयोग—वि० [सं० निर्-उपयोग, ब०स०] (पदार्थ) जिसका कोई उपयोग न हो अथवा जो अभी तक उपयोग में न लाया गया हो।

निरुपयोगी (गिन्)—वि० [सं० निर्-उपयोगिन्, प्रा०स०] जो उपयोग में आने के योग्य न हो। निकम्मा।

निरुपस्कृत—वि० [सं० निर्-उपस्कृत, प्रा०स०] १. जो उपस्कृत न हो। अलंछित। २. जो बदला न गया हो। ३. जिसमें मिलावट न हुई हो। बेमेल। विशुद्ध।

निरुपहत—वि० [सं० निर्+उपहत, प्रा० स०] १. जो उपहत या आहत न हुआ हो। २. शुभ।

निरुपाख्य—वि० [सं० निर्-उपाख्या, ब०स०] १. जिसकी व्याख्या न हो सके। २. जो कभी हीन हो सकता हो। असंभव और मिथ्या।
पुं० ब्रह्म।

निरुपाधि—वि० [सं० निर्-उपाधि, ब०स०] १. जिसमें किसी प्रकार की उपाधि न हो। २. जो कुछ भी उपद्रव न करता हो। धीर और शांत। ३. जिसमें बंधन, बाधा, रुकावट या विघ्न न हो। ३. माया, मोह आदि से रहित।
पुं० ब्रह्म की एक संज्ञा।

निरुपाधिक—वि०=निरुपाधि।

निरुपाय—वि० [सं० निर्-उपाय, ब०स०] १. (व्यक्ति) जो कोई उपाय न कर रहा हो या न कर सकता हो। २. (कार्य या विषय) जिसका या जिसके लिए कोई उपाय न हो सके।
अव्य० उपाय न रहने की दशा में। लाचारी की हालत में।

निरुपेक्ष—वि० [सं० निर्-उपेक्षा, ब० स०] जिसकी उपेक्षा न की जा सकती हो।

निरुवरना—अ० [सं० निवारण] निवारण या निवारित होना। दूर होना।
स०=निरुवारना।

निरुवार—पुं० [सं० निवारण] १. निवारण करने या होने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. छुटकारा। बचाव। ३. निपटारा। निराकरण। ४. निर्णय। फैसला। ५. निश्चय।

निरुवारना—स० [हिं० निरुवार] १. निवारण करना। २. बंधन आदि से मुक्त करना। छुड़ाना। ३. उलझी हुई चीज को सुलझाना। ४. निपटारा करना। ५. निर्णय या निश्चय करना।

निरूढ़—वि० [सं० निर्√रुह् (उत्पत्ति)+क्त] [स्त्री० निरूढ़ा] १. उत्पन्न। २. प्रसिद्ध। विख्यात। ३. अविवाहित। कुँआरा। ४. (शब्द का अर्थ) जो उसके व्युत्पत्तिक अर्थ से भिन्न होता है और परम्परा से स्वीकृत होता है।
पुं० एक प्रकार का पशु यज्ञ।

निरूढ़-लक्षणा—स्त्री० [सं० कर्म०स०] लक्षणा का एक भेद, जो उस अवस्था में माना जाता है, जब किसी शब्द का गृहीत अर्थ (व्युत्पत्तिक अर्थ से भिन्न) प्रचलित और रूढ़ हो जाता है।

निरूढ़वस्ति—स्त्री० [सं० कर्म०स०] पिचकारी के आकार का एक प्रकार का उपकरण जिसके द्वारा रोगी के गुदा-मार्ग से ओषधि पहुँचाई जाती है। (वैद्यक)

निरूढ़ा—स्त्री० [सं निरूढ़+टाप्] निरूढ़-लक्षणा। (दे०)

निरूढ़ि—स्त्री० [सं० नि√रुह्+क्तिन्] १. ख्याति। प्रसिद्धि। २. दे० 'निरूढ़-लक्षणा'।

निरूप—वि० [हिं० नि+सं० रूप] १. जिसका कोई रूप न हो। २. कुरूप। बद-शकल। भद्दा।
पुं० [सं०] १. वायु। हवा। २. देवता। ३. आकाश।

निरूपक—वि० [सं० नि√रूप् (विचार करना)+णिच्+ण्वुल्—अक] किसी बात या विषय का निरूपण करनेवाला।

निरूपण—पुं० [सं० नि√रूप्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० निरूपित, वि० निरूप्य] १. छान-बीन तथा सोच-विचार कर किसी बात या विषय का विवेचन करना। २. अपना मत दूसरों को समझाते हुए उनके सम्मुख रखना। ३. निर्णय। ४. निदर्शन।

निरूपना—अ० [सं० निरूपण] १. निरूपण करना। २. निर्णय या निश्चय करना।

निरूपम—वि०=निरुपम।

निरूपित—भू०कृ० [सं० नि√रूप्+णिच्+क्त] (बात या विषय) जिसका निरूपण हो चुका हो।

निरूपिति—स्त्री० [सं० नि√रूप+णिच्+क्तिन्] निरूपण।

निरूप्य—वि० [सं० नि√रूप्+णिच्+यत्] जिसका निरूपण होने को हो या किया जाना चाहिए।

निरूह—पुं० [सं० निर्√ऊह (वितर्क)+घञ्] १. वस्ति का एक भेद। २. तर्क। ३. निश्चय। ४. पूर्ण वाक्य।

निरूहण—पुं० [सं० निर् ऊह+ल्युट्—अन] १. वस्ति का प्रयोग। २. तर्क करना। ३. निश्चय करना।

निरूह-वस्ति—स्त्री० [सं० मयू०स०] निरूढ़वस्ति। (दे०)

निरेखना—स०=निरखना।

नि-रेभ—वि० [सं० ब०स०] शब्द-हीन। निःशब्द।

निरै—पुं० [सं० निरय] नरक।

निरैठा*—पुं० [सं० निर्+ईहा या इष्ट] [स्त्री० निरैंठी] मनमौजी। मस्त। उदा०—रूप गुन ऐंठी सु अमैंठी, उर पैठी बैठी ताड़नि निरैठी मति बोलनि हरैं हरी।—घनानंद।

निरोग(गी)—वि०=नीरोग।

निरोठा—वि० [?] कुरूप। बद-सूरत।

निरोद्धव्य—वि० [सं० नि√रुध् (रोकना)+तव्यत्] जिसका निरोध किया जा सकता हो या किया जाने को हो।

निरोध—पुं० [सं० नि√रुध् +घञ्] [भू० कृ० निरुद्ध] १. रोकने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. अवरोध। रुकावट। रोक। ३. किसी के चारों ओर डाला जानेवाला घेरा। ४. आज-कल, किसी उपद्रवी या संदिग्ध व्यक्ति को (उसे उपद्रव करने से रोकने के लिए) किसी घिरे हुए स्थान में शासन द्वारा रोक रखने की क्रिया या भाव। (डिटेंशन) ५. योग में, चित्त की वृत्तियों को रोकना। ६. नाश।

निरोधक—वि० [सं०नि√रुध्+ण्वुल्—अक] निरोध करने या रोकनेवाला।

निरोधन—पुं० [सं० नि√रुध्+ल्युट्—अन] १. निरोध करने की क्रिया या भाव। बंधन या रोक में रखना। २. रुकावट। रोक। ३. वैद्यक में पारे का एक संस्कार, जो उसका शोधन करने के समय किया जाता है।

निरोधना—स० [सं०] १. निरोध या निरोधन करना। २. अपने अधिकार या वश में करना।

निरोध-परिणाम—पुं० [सं० मयू०स०] योग में, चित्तवृत्ति की एक विशेष अवस्था जो व्युत्थान और निरोध के मध्य में होती है।

निरोधा—स्त्री० [सं०] किसी ऐसे स्थान से जहाँ संक्रामक रोग फैला हो, आये हुए व्यक्तियों आदि को नये प्रदेश के लोगों में मिश्रित होने से रोकना जिससे रोग उस प्रदेश में फैलने और बढ़ने न पाये। २. वह स्थान जहाँ उक्त उद्देश्य से रोके हुए व्यक्तियों को स्थायी रूप से रोक रखा जाता है। (क्वारेंटीन)

निरोधाचार—पुं० [सं० निरोध-आचार, ष०त०] सब कामों में होने या डाली जानेवाली रुकावट।

निरोधाज्ञा—स्त्री० [सं० निरोध-आज्ञा, ष०त०] ऐसी आज्ञा जिसे किसी को कोई कार्य करने से रोका जाता है।

निरोधी (धिन्)—वि० [सं० नि√रुध्+णिनि] निरोधक। (दे०)

निर्ऋत—भू० कृ० [सं० निर√ऋ (क्षयकरना)+क्त] जिसका क्षय हुआ हो।

निर्ऋति—स्त्री० [सं० निर् (निर्गत) ऋति=अशुभ, ब०स०] १. नैऋत्य कोण की देवी। २. पृथ्वी के नीचे का तल। ३. [निर्√ऋ+क्तिन्] क्षय। नाश। ४. मृत्यु। मौत। ५. दरिद्रता। निर्धनता। ६. विपत्ति। संकट।

निर्ख—पुं० [फा०] वह भाव जिस पर कोई चीज बिकती हो। दर। भाव।

निर्ख-दरोगा—पुं० [फा०] मध्ययुग में वह अधिकारी, जो चीजों के भावों पर निगरानी रखता था।

निर्ख-नामा—पुं० [फा०] मध्ययुग में वह सूची, जिसमें वस्तुओं के बाजार-भाव लिखे होते थे।

निर्ख-बंदी—स्त्री० [फा०] वस्तुओं के बाजार भाव निश्चित करने या बाँधने की क्रिया या भाव।

निर्गंध—वि० [सं० निर्-गंध, ब०स०] [भाव० निर्गंधता] गंधहीन।

निर्गंध-पुष्पी—पुं० [सं० ब०स०, ङीष्] सेमर का पेड़।

निर्ग—पुं० [सं० निर्√गम् (जाना)+ड] प्रदेश। स्थल।

निर्गत—भू० कृ० [सं० निर√गम्+क्त] १. बाहर निकला या आया हुआ। २. दूर गया हुआ। ३. हटाया हुआ।

निर्गम—पुं० [सं० निर्√गम्+अप्] [वि० निर्गमित] १. बाहर निकलने की अवस्था, क्रिया या भाव। निकासी। २. वह मार्ग जिससे बाहर कोई चीज निकलती हो। निकाल। ३. आज्ञा, आदेश आदि का निकलना या प्रकाशित होना। ४. किसी वस्तु विशेषतः धन आदि का किसी स्थान या देश से बहुत अधिक मात्रा में बाहर जाना। (ड्रेन) ५. विधिक क्षेत्र में, किसी व्यवहार या दीवानी मुकदमे की वह विचारणीय बात जिसका एक पक्ष स्थापन करता हो और जिसे दूसरा पक्ष न मानता हो और फलतः जिसके आधार पर उस व्यवहार या मुकदमे का निर्णय होने को हो। वादपद। साध्या। (इश्यू)

विशेष—यह दो प्रकार का होता है—(क) विधिक या कानूनी प्रश्नों से संबंध रखनेवाला निर्गम (इश्यू ऑफ़ ला) और (ख) वास्तविक घटनाओं या तथ्यों से संबंध रखनेवाला अर्थात् तथ्यक निर्गम (इश्यू ऑफ़ फैक्ट्स)।

निर्गमन—पुं० [सं० निर्√गम्+ल्युट्—अन] १. बाहर आने या निकलने की क्रिया या भाव। निकासी। २. वह द्वार जिससे होकर कुछ या कोई बाहर निकले। ३. प्रतिहार।

निर्गमना—अ० [सं० निर्गमन] बाहर निकलना।

निर्गम-मूल्य—पुं०[सं० मध्य०स०] (वास्तविक मूल्य से भिन्न) वह मूल्य जो कुछ विशेष अवसरों पर किसी चीज की निकासी के समय कुछ घटाकर निश्चित किया जाता है। (इश्यू प्राइस)

निर्गमित पूँजी—स्त्री०[सं० निर्गमित+हि० पूँजी] वह पूँजी या रकम जो कारखाने, व्यापार आदि की दैनिक आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए बाहर निकाली गई हो। (इश्यू कैपिटल)

निर्गर्व—वि०[सं० निर्-गर्व, ब०स०] जिसे गर्व न हो। निरभिमान।

निर्गवाक्ष—वि०[सं० निर्-गवाक्ष, ब०स०] (कमरा या घर) जिसमें खिड़की न हो।

निर्गुंठी—स्त्री०=निर्गुंडी।

निर्गुंडी—स्त्री०[सं० निर्-गुंड=वेष्टन, ब० स०, ङीष्] एक प्रकार का क्षुप जिसके प्रत्येक सींके में अरहर की पत्तियों के समान पाँच-पाँच पत्तियाँ होती हैं। इसका उपयोग औषधों आदि में होता है।

निर्गुण—वि०[सं० निर्-गुण, ब०स०] [भाव० निर्गुणता] १. जिसमें कोई गुण न हो। सत्त्व, रज और तम इन तीनों प्रकार के गुणों से रहित। २. जिसमें कोई अच्छा गुण या खूबी न हो। गुणरहित।
पुं० परमात्मा का वह रूप जो सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों से परे तथा रहित माना जाता है।

निर्गुणता—स्त्री० [सं० निर्गुण+तल्—टाप्] निर्गुण होने की अवस्था या भाव।

निर्गुण-धारा—स्त्री० [सं० ष०त०] हिन्दी साहित्य की वह ज्ञानाश्रयी धारा या शाखा जिसमें मुख्यतः निर्गुण ब्रह्म की उपासना आदि के काव्य और पद हैं।

निर्गुण-भूमि—स्त्री० [सं० कर्म०स०] वह भूमि जिसमें कुछ भी पैदा न होता हो। ऊसर या बंजर जमीन। (कौ०)

निर्गुण-संप्रदाय—पुं०[सं०ष०त०] भारतीय धार्मिक क्षेत्र में, ऐसे एकेश्वरवादी संतों और साधुओं का संप्रदाय, जो निर्गुण ब्रह्म में विश्वास रखते और उसकी उपासना करते हैं। (कहते हैं कि मूलतः इस्लाम धर्म की देखा-देखी जाति-पाँति का भेद मिटाने और लोगों को सगुणोपासना से हटाकर एकेश्वरवाद की ओर लाने के लिए स्वामी रामानंद, कबीर आदि ने इसका समर्थन किया था।)

निर्गुणिया—वि०=निर्गुणी।

निर्गुणी—वि० [सं० निर्गुण] (व्यक्ति) जिसमें कोई गुण या खूबी न हो।

निर्गुन—पुं०[सं० निर्गुण] पूर्वी हिन्दी के एक प्रकार के लोक-गीत, जिनमें मुख्यतः निर्गुण ब्रह्म की भक्ति और रहस्यवादी भावनाओं की चर्चा रहती है।
वि०=निर्गुण।

निर्गूढ़—वि० [सं० निर्√गुह् (छिपना)+क्त] जो बहुत ही गूढ़ हो।
पुं० वृक्ष का कोटर।

निर्ग्रंथ—वि०[सं० निर्-ग्रंथ, प्रा० स०] १. निर्धन। गरीब। २. मूर्ख। बेवकूफ। ३. असहाय। ४. दिगंबर। नंगा।
पुं०१. वह जो किसी धार्मिक ग्रंथ का अनुयायी न हो ; अथवा जिसके पंथ में कोई सर्वमान्य धार्मिक ग्रंथ न हो। २. बौद्ध क्षपणक या भिक्षु। ३. एक प्राचीन मुनि।

निर्ग्रंथक—वि०[सं० निर्ग्रंथ+कन्] १. चतुर। २. एकाकी। ३. परित्यक्त। ४. फलहीन।
पुं०[स्त्री० निर्ग्रंथिका] १. बौद्ध क्षपणक या संन्यासी। २. जुआरी।

निर्ग्रंथन—पुं०[सं० निर्√ग्रंथ (कौटिल्य)+ल्युट्—अन] वध करना। मारना।

निर्ग्रंथिक—वि०[सं० निर्-ग्रंथि, ब०स०, कप्] क्षपणक।
वि०, पुं०[सं०] निर्ग्रंथक।

निर्ग्राह्य—वि०[सं० निर्-√ग्रह् (ग्रहण)+ण्यत्] १. देखने योग्य। २. ग्रहण करने योग्य।

निर्घंट—पुं०[सं० निर्√घंट् (दीप्ति)+घञ्] १. शब्द-संग्रह। शब्द-संपद। २. दे० 'निघंटु'।

निर्घट—पुं० [सं० निर्-घट, ब०स०] वह हाट या बाजार जहाँ कोई राज-कर न लगता हो।

निर्घात—पुं०[सं० निर्√हन् (हिंसा)+घञ्] १. तेज हवा के चलने से होनेवाला शब्द। २. बिजली की कड़क। ३. बहुत जोर का शब्द। ४. आघात। प्रहार। ५. उत्पात। उपद्रव। ६. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र।

निर्घातन—पुं० [सं० निर्√हन्+णिच्+ल्युट्—अन] शल्य-चिकित्सा में, अस्त्रों से किया जानेवाला एक प्रकार का उपचार। (सुश्रुत)

निर्घृण—वि०[सं० निर्-घृणा, ब०स०] १. जिसे घृणा न हो। घृणा से रहित। २. जिसे गंदी चीजों से घृणा न होती हो। ३. जिसे बुरे काम करने से घृणा न हो ; अर्थात् बहुत ही नीच। ४. जिसमें करुणा या दया न हो। निर्दय। ५. बेहया।

निर्घृणा—स्त्री० [सं० निर्-घृणा, प्रा०स०] १. निष्ठुरता। २. धृष्टता।

निर्घोष—वि०[सं० निर्√घुष् (शब्द)+घञ्] जिसमें घोष या शब्द न हो अथवा न होता हो। घोष-रहित।
पुं०१. शब्द। आवाज। २. घोर शब्द।

निर्चा—पुं०[सं०] चंचु (साग)।

निर्छल†—वि०=निश्छल।

निर्जन—वि०[सं० निर्-जन, ब०स०] (स्थान) जहाँ जन या मनुष्य न हों। एकांत।

निर्जय—स्त्री०[सं० निर्-जय, प्रा० स०] पूर्ण विजय।

निर्जर—वि०[सं० निर्-जरा, ब०स०] [स्त्री० निर्जरा] जरा अर्थात् वृद्धावस्था से रहित। जो कभी बुड्ढा न हो।
पुं० १. देवता। २. अमृत।

निर्जरा—स्त्री०[सं० निर्जर+टाप्] १. तपस्या करके संचित कर्मों का क्षय या नाश करने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. तालपर्णी। ३. गिलोय। गुडूची।

निर्जल—वि०[सं० निर-जल, ब०स०] [स्त्री० निर्जला] १. (आधान या पात्र) जिसमें जल न हो। २. (व्यक्ति) जिसने जल न पीया हो। ३. (नियम या व्रत) जिसमें जल तक पीने का निषेध हो। ४. (क्रिया या प्रयोग) जिसमें जल की अपेक्षा न होती हो, बल्कि उसका काम रासायनिक पदार्थों से किया जाता हो। (ड्राई) जैसे—निर्जल खेती, निर्जल धुलाई।

पुं० १. वह स्थान, जहाँ जल बिलकुल न हो। २. ऐसा उपवास या व्रत जिसमें जल न पीया जाता हो।

निर्जल खेती—स्त्री० [सं०+हिं०] ऐसी खेती जिसमें वर्षा के जल की अपेक्षा न हो, बल्कि वैज्ञानिक प्रक्रियाओं से फसल तैयार कर ली जाय। (ड्राई फारमिंग)

निर्जल धुलाई—स्त्री० [सं०+हिं०] कपड़ों आदि की ऐसी धुलाई, जिसमें बिना जल का उपयोग किये वे वैज्ञानिक प्रक्रियाओं से साफ किये जाते हैं। (ड्राई वाशिंग)

निर्जल प्रतिसारण—पुं० [सं० कर्म०स०] घावों आदि के धोने की वह प्रक्रिया जिसमें उन्हें साफ करके उनमें केवल रूई भरी जाती है, तरल औषधों का प्रयोग नहीं होता। (ड्राई ड्रेसिंग)

निर्जला एकादशी—स्त्री० [सं० व्यस्त पद] जेठ सुदी एकादशी, जिस दिन निर्जल व्रत रखने का विधान है।

निर्जलित—भू०कृ० [सं० निर्√जल् (ढकना)+क्त] जिसके अंदर का जल निकाल या सुखा दिया गया हो। (डिहाइड्रेटेड)

निर्जलीकरण—पुं० [सं० निर्जल+च्वि, ईत्व√कृ+ल्युट्—अन] रासायनिक प्रक्रिया द्वारा किसी वस्तु में से उसका जलीय अंश निकाल लेना या उसे सुखा देना। (डिहाइड्रेशन) जैसे—तरकारियों या फलों का निर्जलीकरण।

निर्जात—वि० [सं० निर्√जन (उत्पत्ति)+क्त] जो आविर्भूत या प्रकट हुआ हो।

निर्जित—भू० कृ० [सं० निर्√जि (जीतना)+क्त] [भाव० निर्जिति] १. पूरी तरह से जीता हुआ। २. वश में किया हुआ।

निर्जिति—स्त्री० [सं० निर्√जि+क्तिन्] पूर्ण विजय।

निर्जीव—वि० [सं० निर्-जीव, ब०स०] १. जिसमें जीवन या प्राण न हो। २. मरा हुआ। मृत। ३. जिसमें जीवनी-शक्ति का अभाव या कमी हो। ४. जिसमें ओज, दम या सजीवता न हो। जैसे—निर्जीव कहानी। ५. उत्साहहीन।

निर्झर—पुं० [सं० निर्√झॄ (झरना)+अप्] झरना।

निर्झरिणी, निर्झरी—स्त्री० [सं० निर्झर+इनि—ङीप्, निर्झर+ङीष्] झरने से निकलनेवाली नदी।

निर्णय—पुं० [सं० निर्√नी (ले जाना)+अच्] १. कहीं से कुछ ले जाना या हटाना। २. किसी बात या विषय की ठीक और पूरी जानकारी प्राप्त करके अथवा किसी सिद्धान्त पर विचार करके कोई मत स्थिर करना। निष्कर्ष या परिणाम निकालना। ३. उक्त प्रकार से स्थिर किया हुआ मत या निकाला हुआ निष्कर्ष। ४. किसी प्रकार के मतभेद, विवाद आदि के संबंध में दोनों पक्षों की सब बातों पर विचार करके यह निश्चय करना कि कौन-सा पक्ष या मत ठीक है। ५. विधिक क्षेत्र में, वादी और प्रतिवादी के सब आरोपों, उत्तरों, प्रमाणों आदि पर अच्छी तरह विचार करते हुए न्यायाधिकारी या न्यायालय का यह निश्चित या स्थिर करना कि किस पक्ष की बातें ठीक हैं, अथवा इस विषय का उचित रूप क्या होना चाहिए। ६. न्यायाधिकारी का लिखा हुआ वह लेख्य जिसमें उक्त विषय की सब बातों का विवेचन करते हुए अपना अंतिम निष्कर्ष या मत प्रकट करता है। फैसला। (डिसीजन)

निर्णयन—पुं० [सं० निर्√नी+ल्युट्—अन] निर्णय करने की क्रिया या भाव।

निर्णयात्मक—वि० [सं० निर्णय-आत्मन्, ब०स०, कप्] १. निर्णय-संबंधी। २. निर्णय के रूप में होनेवाला। ३. (तत्त्व या बात) जिससे किसी विवादास्पद बात का निर्णय होता हो। (दे० 'निर्णायक')

निर्णयोपमा—स्त्री० [सं० निर्णय-उपमा, मध्य० स०] एक अर्थालंकार जिसमें उपमेय और उपमान के गुणों और दोषों का विवेचन करते हुए कुछ निष्कर्ष निकाला या निर्णय किया जाता है।

निर्णर—पुं० [सं०] सूर्य का एक घोड़ा।

निर्णायक—वि० [सं० निर्√नी+ण्वुल्—अक] १. निर्णय करनेवाला। २. (घटना या बात) जिससे किसी झगड़े या विषय का निर्णय होता हो। (डिसाइसिव)

पुं० १. वह व्यक्ति जो किसी प्रकार के विवाद का निर्णय करता हो। २. खेल में, वह व्यक्ति जो खेलाड़ियों को खेल के नियमों के अनुसार खिलाता है और जिसका निर्णय अंतिम होता है। (अम्पायर)

निर्णायक-मत—पुं० [सं० ष०त०] सभा-समितियों आदि में किसी विवादात्मक प्रश्न के संबंध में होनेवाले मत-दान के समय उस प्रश्न के पक्ष और विपक्ष में बराबर-बराबर मत आने पर सभापति का वह अंतिम मत जिसके आधार पर उस प्रश्न का निर्णय होता है। (कास्टिंग वोट)

निर्णिक्त—वि० [सं० निर्√निज् (शुद्धि)+क्त] [भाव० निर्णिक्ति] १. धुला हुआ। २. शोधित। ३. जिसके लिए प्रायश्चित्त किया गया हो।

निर्णिक्ति—स्त्री० [सं० निर्√निज्+क्तिन्] १. धोना। २. शोधन। ३. प्रायश्चित्त।

निर्णीत—भू० कृ० [सं० निर्√नी+क्त] १. जिसका निर्णय हो चुका हो या किया जा चुका हो। २. (विवाद) जिसके संबंध में निर्णय हो चुका हो। ३. (खेल) जिसमें हार-जीत का फैसला हुआ हो।

निर्णेक—पुं० [सं० निर्√निज्+घञ्] १. धोना। साफ करना। २. स्नान। ३. प्रायश्चित्त।

निर्णेजक—वि० [सं० निर्√निज्+ण्वुल्—अक] १. धोने या साफ करनेवाला। २. प्रायश्चित्त करनेवाला।

पुं० धोबी। रजक।

निर्णेजन—पुं० [सं० निर्√निज्+ल्युट्—अन]=निर्णेक।

निर्णेता (तृ)—वि०, पुं० [सं० निर्√नी+तृच्] निर्णायक।

निर्त†—पुं०=नृत्य।

निर्त्तक†—पुं०=नर्तक।

निर्तना†—अ०=नाचना।

निर्तास†—पुं०=निर्यास।

निर्दंड—वि० [सं० निर्-दंड, ब० स०] जिसे सब प्रकार के दण्ड दिए जा सकें।

पुं० शूद्र, जिसे सब प्रकार के दंड दिये जाते थे या दिये जा सकते थे।

निर्दंत—वि० [सं० निर्-दंत, ब० स०] (मुँह या व्यक्ति) जिसमें या जिसे दाँत न हों।

निर्दंभ—वि० [सं० निर्-दंभ, ब० स०] दंभ-हीन।

निर्दई— वि०=निर्दय।

निर्दग्ध—वि० [सं० निर्√दह् (जलाना)+क्त] जो जला हुआ न हो।

निर्दय—वि० [सं० निर्-दया, ब० स०] [भाव० निर्दयता] १. दया-हीन। २. (व्यक्ति) जो बहुत ही कठोर होकर अत्याचारपूर्ण काम करता हो और इस प्रकार दूसरों को सताता हो।

निर्दयता—स्त्री० [सं० निर्दय+तल्—टाप्] निर्दय होने की अवस्था या भाव।

निर्दयी†—वि०=निर्दय।

निर्दर—वि० [सं० निर्-दर=छिद्र, ब० स०] १. कठिन। कठोर। २. निर्दय।

पुं० [सं० निर्√दृ (विदारण)+अप्] १. निर्झर। २. गुफा। ३. सार।

निर्दल—वि० [सं० निर्-दल, ब० स०] १. जिसमें दल न हों। दल-रहित। २. जो किसी दल (पक्ष या वर्ग) में न हो। सब दलों से अलग।

निर्दलन—पुं० [सं० निर्√दल् (फाड़ना)+णिच्+ल्युट्—अन] १. नाश करना। २. भंग करना।

वि० दलन करनेवाला।

निर्दहन—पुं० [सं० निर्√दह्+ल्युट्—अन] १. अच्छी तरह जलाना। २. भिलावाँ।

निर्दहना*—स० [सं० दहन] दहन करना। जलाना।

निर्दहनी—स्त्री० [सं० निर्दहन+ङीप्] मरोड़फली। मूर्वा लता।

निर्दाता (तृ)—पुं० [सं० निर्√दा (देना)+तृच्] १. खेत निराने या निराई का काम करनेवाला व्यक्ति। २. कृषक। किसान। ३. दाता।

निर्दारण—पुं० [सं०] [भू० कृ० निर्दारित]=विदारण।

निर्दिष्ट—भू० कृ० [सं० निर्√दिश (बताना)+क्त] १. जिसके प्रति या जिसकी ओर निर्देश हुआ हो। २. कहा, बतलाया या समझाया हुआ। वर्णित। ३. नियत या निश्चित किया हुआ। ठहराया हुआ। जैसे—निर्दिष्ट समय पर काम करना। ४. निर्णीत। ५. (बात या नियम) जिसके लिए कोई व्यवस्था की गुंजाइश निकाली गई या शर्त लगाई गई हो। (प्रोवाइडेड)

निर्दूषण—वि०=निर्दोष।

निर्देश—पुं० [सं० निर्√दिश्+घञ्] १. स्पष्ट रूप से कहकर कुछ बतलाना या समझाना। (इन्स्ट्रक्शन) २. किसी चीज या बात की ओर ध्यान दिलाते या संकेत करते हुए यह बतलाना कि यही अभीष्ट अथवा अमुक है। इस प्रकार का उल्लेख या कथन कि यही वह है अथवा वही यह है। (रेफरेन्स)

पद—निर्देश-ग्रंथ। (देखें)

३. यह कहना, बतलाना या समझाना कि अमुक काम या बात इस प्रकार अथवा इस रूप में होनी चाहिए। (डाइरेक्शन) ४. निश्चित करना। ठहराना। ५. आज्ञा। आदेश। ६. उल्लेख। चर्चा। जिक्र। ७. नाम। संज्ञा। ८. आस-पास का स्थान। पड़ोस।

निर्देशक—वि० [सं० निर्√दिश्+ण्वुल्—अक] निर्देश या निर्देशन करनेवाला।

पुं० वह व्यक्ति जिसका काम किसी प्रकार का निर्देश करना हो। (डाइरेक्टर)

निर्देश-ग्रंथ—पुं० [ष० त०] वह ग्रंथ या पुस्तक जो सामान्यतः अध्ययन के लिए न लिखी गई हो; वरन् जिसका उपयोग विशेष अवसरों पर कुछ बातों की जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता हो। (रेफरेन्सबुक)

निर्देशन—पुं० [सं० निर्√दिश्+ल्युट्—अन] १. निर्देश करने की क्रिया या भाव। २. यह कहना या बतलाना कि अमुक कार्य इस प्रकार या इस रूप में होना चाहिए। ३. वह स्थिति जिसमें कोई कार्य किसी की पूर्ण देख-रेख में और उसके निर्देशानुसार हुआ हो। (डाइरेक्शन) ४. कोई ग्रंथ लिखने के समय उसमें आये हुए उद्धरणों, प्रसंगों आदि के संबंध में यह बतलाना कि इनकी विशेष जानकारी अमुक ग्रंथ में अमुक स्थान पर मिलेगी। (रेफरेंस)

निर्देष्टा—वि० पुं०, [सं० निर्-√दिश्+तृच्]=निर्देशक।

निर्दैन्य—वि० [सं० निर्-दैन्य, ब० स०] दैन्य या दीनता से रहित अर्थात् निश्चित और सुखी रहने की अवस्था या भाव।

निर्दोष—वि० [सं० निर्-दोष, ब० स०] [भाव० निर्दोषता] १. जिसमें कोई अवगुण, दोष या बुराई न हो। बेएब। २. (व्यक्ति) जिसने कोई दोष या अपराध न किया हो। निरपराध। ३. (कार्य) जो दोष से युक्त न हो।

निर्दोषता—स्त्री० [सं० निर्दोष+तल्—टाप्] निर्दोष होने की अवस्था या भाव।

निर्दोषी†—वि०=निर्दोष।

निर्द्रव्य—वि० [सं०]=निर्धन।

निर्द्वंद्व—वि० [सं० निर्+द्वंद्व, ब० स०] १. जो सब प्रकार के द्वंद्वों से परे या रहित हो। द्वन्द्व-हीन। २. जो सुख-दुःख, राग-द्वेष आदि से रहित हो। ३. जिसका कोई प्रतिद्वंद्वी या विरोधी न हो। ४. सब प्रकार से स्वच्छंद।

क्रि० वि० १. बिना किसी प्रकार के द्वंद्व या विघ्न-बाधा के। २. बिलकुल मनमाने ढंग से और स्वच्छंदतापूर्वक।

निर्धन—वि० [सं० निर्-धन] १. (व्यक्ति) जिसके पास धन न हो। धन-हीन। २. जिसने कोई अमूल्य वस्तु खो दी हो।

निर्धनता—स्त्री० [सं० निर्धन+तल्—टाप्] धनहीनता। गरीबी।

निर्धर्म्य—वि० [सं० निर्-धर्म्य, ब० स०] १. जो धर्म से रहित हो। २. (व्यक्ति) जिसका कोई धर्म न हो।

निर्धातु—वि० [सं० निर्-धातु, ब० स०] १. (पदार्थ) जो धातु के योग से न बना हो। २. (व्यक्ति) जिसकी धातु या वीर्य क्षीण हो गया हो।

निर्धार—पुं०=निर्धारण।

निर्धारण—पुं० [सं० निर्√धृ (धारण)+णिच्+ल्युट्—अन] १. किसी विचार को कार्य का रूप देने से पहले मन में उसे करने की दृढ़ धारणा बनाना। तै या निश्चित करना। २. निश्चय के रूप में सभा, समितियों आदि का कोई प्रस्ताव पारित करना। ३. अर्थ-शास्त्र में, निर्मित वस्तुओं के विक्रय-मूल्य निश्चित करना अथवा माँग और पूर्ति के आधार पर स्वयं मूल्य निश्चित होना। ४. यह निश्चय करना कि अमुक काम से कितनी आय या कितना व्यय होना चाहिए। (एसेस्मेंट) ५. न्याय में, किसी एक जाति के पदार्थों में से गुण, कर्म आदि के विचार से कुछ को अलग करना। जैसे—यदि कहा जाय कि 'अमुक जाति के आम बहुत अच्छे होते हैं' तो यह उस जाति के आमों का निर्धारण होगा

निर्धारना—स० [सं० निर्धारण] निर्धारित या निश्चित करना। ठहराना।

निर्धारित—भू० कृ० [सं० निर्√धृ+णिच्+क्त] १. (बात) जिसे कार्य का रूप देने के लिए निश्चय कर लिया गया हो। २. (वस्तु) जिसका मूल्य निश्चित हो चुका हो। ३. (व्यापार या संपत्ति) जिसकी आय तथा व्यय आँका जा चुका हो।

निर्धारिती—पुं० [सं०] वह जिसके संबंध में यह निर्धारित किया जाय कि इसे इतना कर आदि देना चाहिए। (एसेसी)

निर्धार्य—वि० [सं० निर्√धृ+ण्यत्] १. जिसके संबंध में निर्धारण होने को हो अथवा हो सकता हो। २. दृढ़। पक्का। ३. उत्साही। ४. निर्भीक।

निर्धूत—भू० कृ० [सं० निर्√धू (काँपना)+क्त] १. निकाला या हटाया हुआ। २. त्यक्त। ३. नष्ट किया हुआ। ४. टूटा हुआ। वि०=धौत (धोया हुआ)।

निर्धूम—वि० [सं० निर्-धूम, ब० स०] १. (स्थान) जिसमें धूआँ न हो। २. (उपकरण) जो धूआँ न छोड़ता हो। जैसे—निर्धूम गाड़ी।

निर्धौत—वि० [सं० निर्√धाव् (शुद्धि)+क्त] १. जो धुल चुका हो। २. चमकाया हुआ।

निर्नर—वि० [सं० निर्-नर, ब० स०] १. जिसमें नर या मनुष्य न हों। मनुष्यों से रहित। २. मनुष्यों द्वारा छोड़ा या त्यागा हुआ।

निर्नाथ—वि० [सं० निर्-नाथ, ब० स०] [भाव० निर्नाथता] जिसका कोई नाथ अर्थात् स्वामी न हो। अनाथ।

निर्निमित्त—वि० [सं० निर्-निमित्त, ब० स०] जिसका कोई निमित्त या कारण न हो।
अव्य० बिना किसी निमित्त या कारण के।

निर्निमित्तक—वि०=निर्निमित्त।

निर्निमेष—अव्य० [सं० निर्-निमेष, ब० स०] बिना पलक झपकाये। टक लगाकर। एकटक।
वि० १. जिसकी पलक न गिरे। २. जिसमें पलक न गिरे। जैसे—निर्निमेष दृष्टि।

निर्पक्ष—वि०=निष्पक्ष।

निर्फल—वि०=निष्फल।

निर्बंध—वि० [सं० निर्-बंध, ब० स०] जो बंधन या बंधनों से रहित हो। पुं० १. अड़चन। बाधा। २. रुकावट। रोक। ३. जिद। हठ। ४. आग्रह। ५. काव्य का वह प्रकार या भेद, जिसमें कोई क्रमबद्ध कथा न हो, बल्कि स्वच्छंद रूप से किसी तथ्य, भाव या रस का विवेचन हो।

निर्बंधन—पुं० १.=निर्बंध। २.=निबंधन।

निर्बद्ध—भू० कृ० [सं० निर्√बंध् (बाँधना)+क्त] जिसके संबंध में किसी प्रकार का निबंध लगा या हुआ हो। (रेस्ट्रिक्टेड)

निर्बल—वि० [सं० निर्-बल, ब० स०] [भाव० निर्बलता] १. (व्यक्ति) जिसमें बल न हो। २. जिसमें सहनशक्ति का अभाव हो। जैसे—निर्बल हृदय। ३. जिसमें यथेष्ट ओज या सजीवता न हो। जैसे—निर्बल विचारधारा।

निर्बलता—स्त्री० [सं० निर्बल+तल्—टाप्] निर्बल होने की अवस्था या भाव। कमजोरी।

निर्बर्हण—पुं०=निर्वहण।

निर्बहना—अ० [सं० निर्वहन] १. निर्वाह होना। निभना। २. अलग या दूर होना।
स० १. निर्वाह करना। निभाना। २. अलग या दूर करना।

निर्बाध—वि० [सं० निर्-बाधा, ब० स०] जिसमें कोई बाधा न हो या न लगाई गई हो।
अव्य० १. बिना किसी बाधा के। २. निरंतर। लगातार।

निर्बाधित—वि०=निर्बाध।

निर्बान*—पुं०=निर्वाण।

निर्बीज—वि० [सं० निर्-बीज, ब० स०] जिसका बीज या जनन-शक्ति बिलकुल नष्ट हो गई हो या नष्ट कर दी गई हो।

निर्बीजन—पुं० [सं०] [भू० कृ० निर्बीजित] १. निर्बीज करना। २. ऐसी प्रक्रिया करना जिससे कोई वस्तु या प्राणी अपनी वंश-वृद्धि करने में असमर्थ हो जाय।

निर्बीर—वि०=निर्वीर्य।

निर्बुद्धि—वि० [सं० निर्-बुद्धि, ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसे बुद्धि न हो। २. मूर्ख।

निर्बोध—वि० [सं० निर्-बोध, ब० स०] जिसे बोध या ज्ञान न हो। अज्ञान। अनजान।

निर्भग्न—वि० [सं० निर्-भग्न, प्रा० स०] १. अच्छी तरह टूटा या तोड़ा हुआ। २. झुकाया हुआ।

निर्भट—वि० [सं० निर्√भट् (पोषण)+अच्] दृढ़। पक्का।

निर्भय—वि० [सं० निर्-भय, ब० स०] [भाव० निर्भयता] जिसे भय न हो। पुं० १. बढ़िया घोड़ा, जो जल्दी डरता न हो। २. रौच्य मनु का एक पुत्र।

निर्भयता—स्त्री० [सं० निर्भय+तल्—टाप्] निर्भय होने की अवस्था या भाव। निर्भीकता।

निर्भर—वि० [सं० निर्-भर, ब० स०] १. अच्छी या पूरी तरह से भरा हुआ। २. किसी के साथ मिला या लगा हुआ। युक्त। ३. आज-कल बँगला के आधार पर (कार्य, बात या व्यक्ति) जो किसी दूसरे पर अवलंबित या आश्रित हो। किसी पर ठहरा हुआ।
पुं० ऐसा सेवक जिसे वेतन न दिया जाता हो।

निर्भर्त्सन—पुं० [सं० निर्√भर्त्स (दुतकारना)+ल्युट्—अन] १. भर्त्सन। डाँट-डपट। २. निंदा।

निर्भर्त्सना—स्त्री० [सं० निर्√भर्त्स+णिच्+युच्—अन, टाप्]=भर्त्सना।

निर्भाग्य—वि० [सं० निर्-भाग्य, ब० स०] अभागा।
पुं०=दुर्भाग्य।

निर्भास—पुं० [सं०] प्रकट या भासित होना।

निर्भिन्न—वि० [सं० निर्√भिद् (विदारण)+क्त] १. छिदा हुआ। २. फाड़ा हुआ।

निर्भीक—वि० [सं० निर्-भी, ब० स०, कप्] [भाव० निर्भीकता] (व्यक्ति) जो बिना डरे या बिना किसी के दबाव में आये और बहादुरी से कोई काम करता हो।

निर्भीकता—स्त्री० [सं० निर्भीक+तल्—टाप्] निर्भीक होने की अवस्था या भाव।

निर्भीत—वि०=निर्भीक।

निर्भूति—स्त्री० [सं० निर्√भू (होना)+क्तिन्] ओझल या लुप्त होना। अंतर्धान होना।

निर्भृति—वि० [सं० निर्-भृति, ब० स०] जो वेगार में या अपेक्षया बहुत कम पारिश्रमिक पर किसी की सेवा करता हो।

निर्भेद—पुं० [सं० निर्√भिद् (विदारण)+घञ्] १. छेदना। २. फाड़ना। ३. भेद या रहस्य खोलना।

वि० [निर्-भेद, ब० स०] भेद-रहित।

निर्भ्रम—वि० [सं० निर्-भ्रम, ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसे भ्रम न हो। २. (बात या विषय) जिसमें भ्रम के लिए अवकाश न हो।

क्रि० वि० १. बिना किसी प्रकार के भ्रम के। २. बेखटके। बेधड़क।

निर्भ्रांत—वि० [सं० निर्√भ्रम (घूमना)+क्त] १. (व्यक्ति) जिसे भ्रांति न हो। २. (बात या विषय) जिसमें किसी प्रकार की भ्रांति के लिए अवकाश न हो।

निर्मक्षिक—वि० [सं० निर्-मक्षिका, अव्य० स०] १. (स्थान) जहाँ मक्खियाँ न हों। मक्खियों से रहित। २. जिसमें कोई विघ्न-बाधा न हो। निर्विघ्न।

निर्मत्सर—वि० [सं० निर्-मत्सर, ब० स०] दूसरों से द्वेष न करनेवाला। मत्सर-रहित।

निर्मथ—पुं० [सं० निर्√मथ् (रगड़ना)+घञ्] १. रगड़ना। २. वह लकड़ी जिसे रगड़ने पर आग निकले।

निर्मथ्या—स्त्री० [सं० निर्√मथ्+ण्यत्, टाप्] नालिका या नली नामक गंध-द्रव्य।

निर्मद—वि० [सं० निर्-मद, ब० स०] १. मद से रहित। २. अभिमान-रहित।

पुं० संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

निर्मना—स० [सं० निर्माण] निर्माण करना। बनाना। रचना।

निर्मनुज—वि० [सं० निर्-मनुज, ब० स०] (स्थान) जिसमें मनुष्य वास न करते हों।

निर्मनुष्य—वि० [सं० निर्-मनुष्य, ब० स०] निर्मनुज।

निर्मम—वि० [सं० निर्-मम, ब० स०] [भाव० निर्ममता] १. जिसमें ममत्व की भावना न हो। २. जो अपने मन की कोमल भावनाओं को नष्ट कर कोई कठोर आचरण करता हो। ३. (काम) जो निर्दयता-पूर्वक किया जाय। जैसे—निर्मम हत्या।

निर्मल—वि० [सं० निर्-मल, ब० स०] [भाव० निर्मलता] १. (वस्तु) जिसमें मल या मलिनता न हो। साफ। स्वच्छ। २. (व्यक्ति) जिसके चरित्र पर कोई धब्बा न लगा हो। ३. (हृदय) जिसमें दूषित या बुरी भावनाएँ न हों। शुद्ध।

पुं० १. अभ्रक। अबरक। २. दे० 'निर्मली'।

निर्मलता—स्त्री० [सं० निर्मल+तल्—टाप्] निर्मल होने की अवस्था या भाव।

निर्मलांगी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

निर्मला—पुं० [सं० निर्मल] १. एक नानकपंथी त्यागी संप्रदाय, जिसके प्रवर्त्तक गुरु रामदास थे। इस संप्रदाय के लोग गेरुए वस्त्र पहनते और साधु-संन्यासियों की तरह रहते हैं। २. उक्त संप्रदाय का अनुयायी साधु।

निर्मली—स्त्री० [सं० निर्मल] १. एक प्रकार का मझोला सदाबहार पेड़ जिसकी लकड़ी इमारत और खेती के औजार बनाने के काम में आती है। २. रीठे का वृक्ष और उसका फल।

निर्मलोत्पल—पुं० [सं० निर्मल-उत्पल, कर्म० स०] स्फटिक।

निर्मलोपल—पुं० [सं० निर्मल-उपल, कर्म० स०] स्फटिक।

निर्मल्या—स्त्री० [सं० निर्मल+यत्—टाप्] असबरग। स्पृक्का।

निर्मास—वि० [सं० निर्-मांस, ब० स०] १. जिसमें मांस न हो। मांस-रहित। २. (व्यक्ति) जो भोजन आदि के अभाव या रोग आदि के कारण बहुत दुबला हो गया हो और जिसके शरीर का अधिकतर मांस गल-पच गया हो।

निर्माण—पुं० [सं० निर्√मा (मापना)+ल्युट्—अन] १. गढ़ या ढालकर अथवा किसी चीज के सब अंगों, उपांगों, उपादानों आदि के योग से कोई नई चीज तैयार करना या बनाना। रचना। जैसे—भवन या सेतु का निर्माण; कपड़े, कागज आदि का निर्माण; ग्रंथ या पुस्तक का निर्माण। २. उक्त प्रकार से बनकर तैयार होनेवाली चीज। ३. किसी चीज को उच्चतम या उत्कृष्टतम रूप देना। जैसे—चरित्र का निर्माण करना। ४. नापना। मापन। ५. रूप। शकल। ६. अंश। हिस्सा। ७. सार-भाग। ८. मज्जा।

निर्माण-विद्या—स्त्री० [ष० त०] इमारत, नहर, पुल आदि बनाने की विद्या। वास्तु-विद्या। वास्तु-कला।

निर्माता (तृ)—वि० [सं०निर्√मा+तृच्] जो किसी चीज का निर्माण करता हो। बनाने या रचनेवाला।

निर्मात्रिक—वि० [सं० निर्-मात्रिक, प्रा०स०] बिना मात्रा का। जिसमें मात्रा न हो। जैसे—निर्मात्रिक पद्य-रचना।

निर्मान*—वि० [सं० निर्+मान] १. जिसका मान या परिमाण न हो। बेहद। अपार। उदा०—नित्य निर्मय नित्य युक्त निर्मान हरि ज्ञान धन सच्चिदानंद मूल।—तुलसी। २. जिसका मान या प्रतिष्ठा न हो।

†पुं०=निर्माण।

निर्माना—स० [सं० निर्माण] निर्माण करना। बनाना। रचना।

निर्मायक—वि० [सं० निर्√मा+ण्वुल्—अक] निर्माण करनेवाला। निर्माता।

निर्मार्जन—पुं० [सं० निर्√मार्ज् (शुद्धि)+ल्युट्—अन] १. साफ करना। २. धोना।

निर्माल्य—वि० [सं० निर् √मल् (ग्रहण)+ण्यत्] निर्मल। शुद्ध।

पुं० १. निर्मलता। २. देवता पर चढ़े या चढ़ाये हुए पदार्थ।

निर्माल्या—स्त्री०=निर्माल्य।

निर्मित—भू० कृ० [सं० निर्+मा+क्त] [भाव० निर्मिति] जिसका निर्माण हुआ हो या किया गया हो। बनाया या रचा हुआ।

निर्मिति—स्त्री०[सं० निर्√मा+क्तिन्] १. निर्माण करने की क्रिया या भाव। २. निर्माण करके तैयार की हुई चीज।

निर्मुक्त—वि०[सं० निर्+मुच् (छोड़ना)+क्त] [भाव० निर्मुक्ति] १. जो मुक्त हुआ हो या जिसे निर्मुक्ति मिली हो। २. जो सब प्रकार

के बंधनों से रहित हो। ३. (साँप) जो अभी निर्मोक या केंचुली छोड़कर अलग हुआ हो।

निर्मुक्ति—स्त्री० [सं० निर्+मुच्+क्तिन्] १. मुक्ति। छुटकारा। २. २. मोक्ष। ३. बंदियों विशेषतः राजनैतिक बंदियों को एक साथ क्षमा करके छोड़ देना। (एन्मेस्टी)

निर्मूल—वि० [सं० निर्-मूल, ब० स०] १. जिसमें जड़ न हो। बिना जड़ का। २. जड़ के पूर्ण रूप से नष्ट हो जाने के कारण जो न बच रहा हो। पूरी तरह से विनष्ट। जैसे—रोग निर्मूल करना। ३. जिसका कोई मूल अर्थात् आधार या बुनियाद न हो। बेसिर-पैर का। जैसे—निर्मूल दोषारोपण।

निर्मूलक—वि० [सं० ब० स०, कप्] निर्मूल।

निर्मूलन—पुं० [सं० निर्मूल+णिच्=ल्युट्-अन] १. जड़ से उखाड़ना। निर्मूल करना। २. पूर्ण रूप से नष्ट करने की क्रिया या भाव। पूर्ण विनाश। ३. निराधार या बेबुनियाद सिद्ध करना।

निर्मृष्ट—भू० कृ० [सं० निर्√मृज् (शुद्धि)+क्त] १. धुला या साफ किया हुआ। २. मिटाया हुआ।

निर्मेघ—वि० [सं० निर्-मेघ, ब० स०] मेघ या बादलों से रहित। निरभ्र।

निर्मेध—वि० [सं० निर्-मेधा, ब० स०] मेधाशक्ति से रहित। मूर्ख।

निर्मोक—पुं० [सं० निर्+मुच्+(छोड़ना) घञ्] १. स्वतंत्र या स्वाधीन करना। २. साँप की केंचुली। ३. शरीर के ऊपर की पतली खा या झिल्ली। ४. आकाश। ५. सावर्णि मनु के एक पुत्र। ६. तेरहवें मनु के सप्तर्षियों में से एक।

निर्मोक्ष—पुं० [सं० निर्-मोक्ष, प्रा० स०] १. त्याग। २. धर्मशास्त्रों के अनुसार ऐसा मोक्ष या मुक्ति जिसमें आत्मा के साथ कोई संस्कार लगा न रह जाय। पूर्ण मोक्ष।

निर्मोचन—पुं० [सं० निर्√मुच्+ल्युट्-अन] छुटकारा। मुक्ति।

निर्मोल—वि०=अमूल्य।

निर्मोह—वि० [सं० निर्-मोह, ब० स०] १. जिसे या जिसमें मोह न हो। मोह-रहित। २. दे० 'निर्मोही'। ३. रैवत मनु के एक पुत्र का नाम। ४. सावर्णि मनु के एक पुत्र का नाम।

निर्मोही—वि० [सं० निर्मोह] [स्त्री० निर्मोहिनी] जिसे या जिसमें मोह या ममत्व न हो। किसी के प्रति अनुराग स्नेह न रखनेवाला।

निर्यंत्रण—पुं० [सं० निर्√यंत्र् (निग्रह)+ल्युट्-अन] यंत्रण से रहित करने की क्रिया या भाव।

निर्याण—पुं० [सं० निर्√या (जाना)+ल्युट्—अन] १. बाहर निकलना या जाना। प्रयाण। प्रस्थान। २. सेना का युद्ध-क्षेत्र की ओर होनेवाला प्रस्थान। ३. नगर या बस्ती से बाहर की ओर जानेवाला मार्ग या सड़क। ४. अदृश्य या गायब होना। अंतर्धान। ५. शरीर का आत्मा से बाहर निकलना। ६. मुक्ति। मोक्ष। ७. गति में लाना। ८. जहाज आदि का ठीक ढंग से संचालन करना। (पाइलॉटिंग) ९. पशुओं के पैरों में बाँधी जानेवाली रस्सी। १०. हाथी की आँख का बाहरी कोना।

निर्यात—पुं० [सं० निर्√या+क्त] १. माल बाहर भेजने की क्रिया या भाव। २. किसी देश की दृष्टि में उसका वह माल जो विदेशों में बिक्री के लिए भेजा जाय। (एक्सपोर्ट)

निर्यातक—वि० [सं० निर्यात+णिच्+ण्वुल्—अक] जो वस्तुओं का निर्यात करता हो। बिक्री के लिए माल विदेश भेजनेवाला। (एक्सपोर्टर)

निर्यात-कर—पुं० [ष० त०] निर्यात शुल्क। (दे०)

निर्यातन—पुं० [सं० निर्√यत (प्रयत्न)+णिच्+ल्युट्—अन] १. निर्यात करने की क्रिया या भाव। २. प्रतिकार करना। बदला चुकाना। ३. ऋण चुकाना। ४. मार डालना। वध।

निर्यात-शुल्क—पुं० [सं० ष० त०] वह शुल्क जो देश से वस्तुओं का निर्यात करने के समय चुकाना पड़ता हो। (एक्सपोर्ट ड्यूटी)

निर्याति—स्त्री० [सं० निर्√या+क्तिन्] १. बाहर जाने या निकलने की क्रिया या भाव। २. मृत्यु।

निर्यामक—पुं० [सं निर्√यम् (नियंत्रण) +णिच्√ण्वुल्—अक] १. नाविक। मल्लाह। २. हवाई जहाज आदि चलानेवाला। (पाइलॉट)

निर्यास—पुं० [सं० निर्√यस् (प्रयत्न)+घञ्] १. निकलना या बहना। २. वह तरल पदार्थ जो पौधे, वृक्ष आदि के तने, शाखा, पत्ते आदि में से निकले। ३. गोंद। ४. जड़ी-बूटियों, वनस्पतियों को उबालकर निकाला हुआ रस। काढ़ा। क्वाथ।

निर्युक्तिक—वि० [सं० निर्-युक्ति, ब० स०, कप्] जिसमें कोई युक्ति न हो। युक्ति-रहित।

निर्यूथ—वि० [सं० निर्-यूथ, ब० स०] जो अपने यूथ या दल से अलग हो गया हो।

निर्यूष—पुं० [सं० निर्-यूष, प्रा०स०] निर्यास। (दे०)

निर्यूह—पुं० [सं० निर्√ऊह् (तर्क)+क, पृषो० सिद्धि] १. ओषधियों का काढ़ा। क्वाथ। २. दरवाजा। द्वार। ३. सिर पर पहनने की कोई चीज। जैसे—टोपी, पगड़ी, मुकुट आदि। ४. दीवार में लगा हुआ वह तख्ता जिस पर चीजें रखी जाती हैं।

निर्लज्ज—वि० [सं० निर्-लज्जा, ब० स०] [भाव० निर्लज्जता] १. (व्यक्ति) जिसे किसी बात में लज्जा न आती हो। बेशरम। २. (कार्य) जो निर्लज्ज होकर किया गया हो।

निर्लज्जता—स्त्री० [सं० निर्लज्ज+तल्—टाप्] निर्लज्ज होने की अवस्था या भाव। बेशरमी। बेहयाई।

निर्लिंग—वि० [सं० निर्-लिंग, ब० स०] जिसमें कोई लिंग अर्थात् परिचायक चिह्न न हो।

निर्लिप्त—वि० [सं० निर्√लिप् (लीपना)√क्त] [भाव० निर्लिप्ता] १. जो किसी के साथ या किसी में लिप्त न हो। जो किसी से लगाव या संबंध न रखता हो। २. सांसारिक माया-मोह, राग-द्वेष आदि से परे और रहित।

निर्लुंचन—पुं० [सं० निर्-√लुंच् (फाड़ना)√ल्युट्-अन] १. फाड़ना। २. छिलके या भूसी अलग करना।

निर्लुंठन—पुं० [सं० निर्√लुंठ् (स्तेय) +ल्युट्-अन] १. लूटना। २. फाड़कर अलग करना।

निर्लेखन—पुं० [सं० निर्√लिख् (लिखना)+ल्युट्-अन] १. किसी चीज पर जमी हुई मैल आदि खुरचना। २. वह चीज जिससे मैल खुरची जाय। खुरचने का उपकरण।

निर्लेप—वि० [सं० निर्-लेप, ब० स०] १. जिस पर किसी प्रकार का लेप न हो। २. दोष आदि से रहित। ३. दे० 'निर्लिप्त'।

निर्लोभ—वि० [सं० निर्-लोभ, ब० स०] [भाव० निर्लोभता] जिसे किसी प्रकार का लोभ न हो। लोभ-रहित।

निर्लोभी—वि०=निर्लोभ।

निर्वंश—वि०[सं० निर्-वंश, ब० स०] [भाव० निर्वंशता] १. जिसके वंश में और कोई न बच रहा हो। २. (व्यक्ति) जिसे संतान न हो और इसी लिए जिसके वंश की वृद्धि न हो सके।

निर्वक्तव्य—वि० [सं० निर्√वच् (कहना)+तव्यत्] जो कहा न जा सके।

निर्वचन—वि० [सं० निर्-वचन, ब० स०] जो कुछ बोल न रहा हो। चुप। मौन।

पुं० [निर्-√वच्+ल्युट्-अन] १. उच्चारण करना। कहना। बोलना। २. समझाकर और निश्चित रूप से कोई बात कहना या बतलाना। ३. अपने दृष्टि-कोण से किसी शब्द, पद या वाक्य की विवेचना या व्याख्या करना। (इंटरप्रेटेशन)

निर्वचनीय—वि० [सं० निर्√वच्+अनीयर] (शब्द, पद या वाक्य) जिसका निर्वचन किया जाने या होने को हो।

निर्वपण—पुं० [सं० निर्√वप्-(बोना)√ल्युट्-अन] १. पितृ-तर्पण। २. दान।

निर्वपणी—स्त्री०[सं० निर्√वे (बुनना)+ल्युट्-अन, ङीप्] साँप की केंचुली।

निर्वर—वि० [सं० निर्-वर, ब० स०] १. निर्लज्ज। बेशरम। २. निडर। निर्भीक।

निर्वर्णन—पुं० [सं० निर्√वर्ण (वर्णन)+ल्युट्-अन] अच्छी तरह या ध्यान से देखना।

निर्वर्तन—पुं०[सं० निर्√वृत् (बरतना)+ल्युट्-अन] [भू० कृ० निर्वर्त्तित] निष्पत्ति। (दे०)

निर्वर्तित—वि० [सं० निर्वृत्त] निष्पन्न। (दे०)

निर्वसन—वि० [सं० निर्-वसन, ब० स०] [स्त्री० निर्वसना] जिसने वस्त्र धारण न किये हों। नंगा।

निर्वसु—वि० [सं० निर्-वसु, ब० स०] दरिद्र। गरीब।

निर्वहण—पुं०[निर्√वह (ढोना)+ल्युट्-अन] १. निबाह। निर्वाह। गुजर। २. अन्त। समाप्ति।

निर्वहण-संधि—स्त्री०[सं० प० त०] नाटक में पाँच संधियों में से एक जो उस स्थिति की सूचक होती है जहाँ प्रमुख प्रयोजन में कार्य और फलागम के साथ अन्यान्य अर्थों का भी पर्यवसान होता है।

निर्वहना—अ०[सं० निर्वहन] निभना।

स० निभाना।

निर्वाक (च्)—वि० [सं० निर्-वाच्, ब० स०] १. जिसकी वाक्शक्ति अवरुद्ध हो। २. जो बोल न रहा हो। चुप। मौन।

निर्वाक्य—वि० [सं० निर्-वाक्य, ब० स०] निर्वाक्।

निर्वाचक—पुं० [सं० निर्√वच्+णिच्+ण्वुल्—अक] निर्वाचन करनेवाला।

पुं० निर्वाचन में खड़े हुए उम्मीदवारों को मत देनेवाला व्यक्ति। (एलेक्टरेट)

निर्वाचक-मंडल—पुं० [सं० प० त०] जो अप्रत्यक्ष रूप से जनता का प्रतिनिधित्व करते हुए विशिष्ट अधिकारी या अधिकारियों का चुनाव करता है। (एलेक्टोरल कालेज)

निर्वाचक-सूची—स्त्री० [सं० ष० त०] वह सूची जिसमें किसी क्षेत्र के मतदाताओं के नाम, उम्र, पेशे आदि लिखे होते हैं।

निर्वाचन—पुं० [सं० निर्√वच्+णिच्+ल्युट्—अन] १. बहुत-सी चीजों में से अपने काम की या अपने पसन्द से कुछ चीजें चुनना या छाँटना। २. आज-कल लोकतंत्र प्रणाली में, विशिष्ट अधिकार-प्राप्त मतदाताओं का कुछ लोगों को इसलिए अपना प्रतिनिधि चुनना कि वे उस संस्था के सदस्य बनकर उसका सारा प्रबंध, व्यवस्था या शासन करें। चुनाव। (इलेक्शन)

निर्वाचन-अधिकारी (रिन्)—पुं० [सं० ष० त०] वह अधिकारी जिसकी देख-रेख में किसी संस्था के लिए सदस्यों का निर्वाचन होता है। (रिटनिंग आफिसर)

निर्वाचन-क्षेत्र—पुं० [सं० ष० त०] वह क्षेत्र या भू-भाग जिसके निवासी या नागरिक किसी विशिष्ट चुनाव में मत देने के अधिकारी होते हैं। (कान्स्टीच्यूएन्सी)

निर्वाचित—भू० कृ० [सं० निर्√वच्+णिच्+क्त] १. जिसका निर्वाचन हुआ हो। २. (उम्मीदवार) जो निर्वाचन में सबसे अधिक मत प्राप्त करने के कारण सफल घोषित हो। (इलेक्टेड)

निर्वाच्य—वि० [सं० निर्√वच्+ण्यत्] १. (कथन या शब्द) जो कहा न जा सके; अथवा जिसका उच्चारण करना ठीक न हो। २. जिसमें कोई दोष न निकाला जा सके। ३. (व्यक्ति) जिसका निर्वाचन होने को हो अथवा हो सकता हो।

निर्वाण—भू० कृ० [सं० निर्√वा (गति)+क्त] १. (आग या दीया) बुझा हुआ। २. (ग्रह या नक्षत्र) डूबा हुआ। अस्त। ३. धीमा या मंद पड़ा हुआ। ४. मरा हुआ। मृत। ५. निश्चल। शांत। ६. शून्य स्थिति में पहुँचा हुआ।

वि० बिना वाण का। जिसमें वाण न हो।

पुं०√[निर् वा+ल्युट्—अन] १. आग या दीए का बुझना। २. नष्ट या समाप्त होना। न रह जाना। ३. अंत। समाप्ति। ४. अस्त होना। डूबना। ५. शांति। ६. मुक्ति। मोक्ष। ७. शरीर से जीवन या प्राण निकल जाना। मृत्यु। ८. धार्मिक क्षेत्रों में, वह अवस्था जिसमें जीव परमपद तक पहुँचता या उसे प्राप्त करता है।

विशेष—यद्यपि प्राचीन भारतीय साहित्य में 'निर्वाण' का प्रयोग मुक्ति या मोक्ष के अर्थ में ही हुआ है; परन्तु बौद्ध-दर्शन में यह एक स्वतंत्र पारिभाषिक शब्द हो गया था; और उस परमपद की प्राप्ति का वाचक हो गया था; जिसके लिए साधक लोग साधना करते थे, परवर्ती संत सम्प्रदायों में भी इसकी यही अथवा बहुत कुछ इसी प्रकार की व्याख्या गृहीत हुई है। यह वही अवस्था है जिसमें जीव सब प्रकार के संस्कारों से रहित या शून्य हो जाता है और जन्म-मरण के बंधन से छूट जाता है।

निर्वाणी—वि० [सं० निर्वाण] निर्वाण-संबंधी। निर्वाण का। जैसे—निर्वाणी अखाड़ा।

पुं० जैनों के एक देवता।

निर्वात—वि० [सं० निर्-वात, ब० स०] १. (अवकाश या स्थान)

जिसमें वात या वायु न रह गई हो। (वक्यूम) वातरहित। २. शांत। स्थिर।

निर्वाद—पुं० [सं० निर्√वद् (बोलना)+घञ्] १. अपवाद। निंदा। २. अवज्ञा। ला-परवाही।

निर्वाप—पुं० [सं० निर्√वप्+घञ्] १. दान। २. पितरों के उद्देश्य से किया हुआ दान।

निर्वापण—पुं० [सं० निर्√वा+णिच्, पुक्+ल्युट्—अन] १. बुझाना। २. मारना। वध करना। ३. (अधिकार या स्वत्व) अन्त या समाप्त करना। (एक्स्टेंक्शन)

निर्वापित—भू० कृ० [सं० निर्√वा+णिच्, पुक+क्त] १. बुझाया हुआ। २. हत। ३. अन्त या समाप्त किया हुआ। ४. विनष्ट। बरबाद।

निर्वार†—पुं०=निवारण। उदा०—प्रभु, उसका निर्वार करो हे।—निराला।

निर्वार्य—वि० [सं० निर्√व (वारण)+ण्यत] १. जो निःशंक होकर परिश्रमपूर्वक कर्म करे। २. जिसका वारण या निवारण न हो सके। जो रोका न जा सके।

निर्वास—वि० [सं० निर्-वास, ब० स०] १. वास अर्थात् गंध से रहित। २. वास-स्थान से रहित। जिसके रहने के लिए कोई जगह न हो। पुं० १. निर्वासन। २. विदेश-यात्रा। प्रवास।

निर्वासक—वि० [सं० निर्√वस (बासना)+णिच+ण्वुल्—अक] निर्वासन या देश-निकाले का दंड देनेवाला।

निर्वासन—पुं० [सं०निर्√वस्+णिच+ल्युट्—अन्] [भू० कृ० निर्वासित] १. बलपूर्वक किसी को किसी राज्य या भू-भाग से निकालना। २. देश-निकाले का दंड। ३. मार डालना।

निर्वासित—भू० कृ० [सं० निर्√वस्+णिच्+क्त] १. जो किसी राज्य या भू-भाग से निकाल दिया गया हो। २. जिसे देश-निकाले का दंड मिला हो।

निर्वास्य—वि० [सं० निर्√वस्+णिच्+यत्] जो निर्वासित किये जाने के योग्य हो या किया जाने को हो।

निर्वाह—पुं० [सं० निर्√वह् (वहन)+घञ्] १. अच्छी तरह वहन करना। २. इस प्रकार आचरण या प्रयत्न करना जिससे कोई क्रम, परम्परा या संबंध बराबर बना रहे। ३. अधिकारों, कर्त्तव्यों आदि का किया जानेवाला पालन। ४. अन्त। समाप्ति।

निर्वाहक—वि० [सं० निर्√वह्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. निर्वाह करनेवाला। निभानेवाला। २. आज्ञा, निश्चय आदि का निर्वाहण या पालन करनेवाला। (एक्जिक्यूटर)

निर्वाहण—पुं० [सं० निर्√वह्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० निर्वाहणिक, निर्वाहणीय] १. निर्वाह करना। निभाना। २. किसी की आज्ञा या निश्चय के अनुसार ठीक तरह से काम करना। ३. कुछ समय के लिए किसी का काम या भार अपने ऊपर लेना।

निर्वाहणिक—वि० [सं० नैर्वाहणिक] १. निर्वाह-संबंधी। २. निर्वाह करनेवाला। ३. किसी के पद पर अस्थायी रूप से रहकर उसके कार्य का निर्वाहण करनेवाला। स्थानापन्न। (आफिशिएटिंग)

निर्वाहना—अ० [सं० निर्वाह] निर्वाह करना। निभाना।

निर्वाह-निधि—स्त्री० [सं० मध्य० स०] दे० 'संभरण-निधि'।

निर्वाह-भृति—स्त्री० [सं० मध्य० स०] उतना वेतन जितने में किसी परिवार का भरण-पोषण अच्छी तरह हो सके। (लिविंग वेज)

निर्विकल्प—वि० [सं० निर्-विकल्प, ब० स०] १. जिसमें विकल्प, परिवर्तन या भेद न हो। सदा एक-रस और एक-रूप रहनेवाला। २. निश्चल। स्थिर।
पुं०=निर्विकल्प समाधि।

निर्विकल्पक—पुं० [सं० ब० स०, कप्] १. वेदांत के अनुसार वह अवस्था, जिसमें ज्ञाता और ज्ञेय में भेद नहीं रह जाता। दोनों मिलकर एक हो जाते हैं। २. न्याय में, वह अलौकिक और प्राकृतिक ज्ञान जो इंद्रियजन्य ज्ञान से भिन्न होता और वास्तविक माना जाता है। (बौद्ध-दर्शन में इसी प्रकार का ज्ञान प्रमाण माना जाता है।)

निर्विकल्प-समाधि—स्त्री० [सं० कर्म० स०] समाधि का वह भेद या रूप जिसमें ज्ञेय और ज्ञाता आदि का कोई भेद नहीं रह जाता।

निर्विकार—वि० [सं० निर्-विकार, ब० स०] जिसमें विकार न हो या न होता हो। अविकारी।

निर्विकास—वि० [सं० निर्-विकास, ब० स०] १. विकास से रहित। २. अविकसित।

निर्विघ्न—वि० [सं० निर्-विघ्न, ब० स०] जिसमें कोई विघ्न न हो। विघ्न या बाधा से रहित।
अव्य० बिना किसी प्रकार के विघ्न या बाधा के।

निर्विचार—वि० [सं० निर्-विचार, ब० स०] विचार-शून्य।
पुं० योग में, समाधि का एक भेद।

निर्विण्ण—वि० [सं० निर्√विद् (ज्ञान)+क्त] १. जिसके मन में निर्वेद उत्पन्न हुआ हो। विरक्त। २. खिन्न या दुःखी। ३. नम्र। ४. शांत। ५. निश्चित। स्थिर।

निर्वितर्क—वि० [सं० निर्-वितर्क, ब० स०] जिसके संबंध में तर्क-वितर्क न किया जा सके या न किया जाता हो।

निर्वितर्क समाधि—स्त्री० [सं० कर्म० स०] योग में, समाधि की वह स्थिति जिसमें योगी स्थूल आलंबन में तन्मय हो जाता है।

निर्विद्य—वि० [सं० निर्-विद्या, ब० स०] विद्याहीन। अपढ़।

निर्विधायन—पुं० [?] यह निश्चय करना कि जो अमुक बात हुई है वह वस्तुतः निर्विध या विधान-विरुद्ध है। (नलिफिकेशन) जैसे—विवाह या संविदा का निर्विधायन।

निर्विधायित—भू० कृ० [सं०] जिसका निर्विधायन हुआ हो। निर्विध। हटाया हुआ। (नलिफाइड)

निर्विधि—वि० [सं० निर्-विधि, ब० स०] [भाव० निर्विधिता] जिसे विधि या कानून का आधार या बल प्राप्त न हो। विधिक दृष्टि से अमान्य। (नल)

निर्विधिता—स्त्री० [सं० निर्विधि+तल्—टाप्] निर्विधि होने की अवस्था या भाव। (नलिटी)

निर्विरोध—वि० [सं० निर्-विरोध, ब० स०] १. जिसका कोई विरोध न करे; अथवा कोई विरोध न हो। २. जिसमें किसी प्रकार की बाधा या रुकावट न हो।
अव्य० बिना किसी प्रकार के विरोध के।

निर्विवाद—वि० [सं० निर्-विवाद, ब० स०] (बात या सिद्धान्त) जिसके सही होने के संबंध में कोई विवाद न हो।
अव्य० बिना किसी प्रकार का विवाद किये।

निर्विवेक—वि० [सं० निर्-विवेक, ब० स०] [भाव० निर्विवेकता] विवेक-रहित।

निर्विशेष—वि० [सं० निर्-विशेष, ब० स०] १. तुल्य। समान। २. सदा एक रूप रहनेवाला।
पुं० परब्रह्म।

निर्विष—वि० [सं० निर्-विष, ब० स०] विष-हीन।

निर्विषा—स्त्री० [सं० निर्विष+टाप्] निर्विषी। (दे०)

निर्विषी—स्त्री० [सं० निर्विष+ङीप्] एक तरह की घास या बूटी जो विष का प्रभाव नष्ट करनेवाली मानी गई है।

निर्विष्ट—वि० [सं० निर्√विश् (प्रवेश)+क्त] १. जो भोग कर चुका हो। २. जो विवाह कर चुका हो। विवाहित। ३. जो अग्नि-होत्र कर चुका हो। ४. जो मुक्त हो चुका हो।

निर्वीज—वि० [सं० निर्-बीज, ब० स०] १. जिसमें बीज न हो। बीज-रहित। २. जिसका बीज या मूल न रह गया हो; अर्थात पूर्ण-रूप से विनष्ट। ३. जिसका कोई मूल या कारण न हो। कारण-रहित।

निर्वीज-समाधि—स्त्री० [सं० कर्म० स०] योग में, समाधि की वह अवस्था, जिसमें चित्त का निरोध करते-करते उसका अवलंबन या बीज विलीन हो जाता है।

निर्वीजा—स्त्री० [सं० निर्वीज+टाप्] किशमिश।

निर्वीर—वि० [सं० निर-वीर, ब० स०] वीर-विहीन।

निर्वीरा—वि० स्त्री० [सं० निर्वीर+टाप] पति और पुत्र से विहीन (स्त्री)।

निर्वीर्य—वि० [सं० निर-वीर्य, ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसमें वीर्य न हो; फलतः नपुंसक। २. बल, तेज आदि से रहित; फलतः अशक्त। ३. (भूमि) जिसमें उर्वरा-शक्ति न हो।

निवृत्त—वि० [सं० निर्√वृत् (बरतना)+क्त] [भाव० निर्वृत्ति] १. वापस आया या लौटा हुआ। २. निष्पन्न।

निर्वृत्ति—स्त्री० [सं० निर√वृत्+क्तिन] वापस आना। लौटना।

निर्वेक्ष—पुं० [सं०] भृत्ति। वेतन।

निर्वेग—वि० [सं० निर्-वेग, ब० स०] वेग-हीन।

निर्वेद—पुं० [सं० निर्√विद्+घञ्] १. ग्लानि। घृणा। २. मन में स्वयं अपने संबंध में होनेवाली खेदपूर्ण ग्लानि और निराशा। ३. उक्त के फलस्वरूप सांसारिक बातों से होनेवाली विरक्ति। वैराग्य। ४. उक्त के आधार पर साहित्य में, तैंतीस संचारी भावों में से पहला भाव जिसकी गणना कुछ आचार्यों ने स्थायी भावों में भी की है। **विशेष**—कहा गया है कि कष्ट, दरिद्रता, प्रियजनों के विरोध, रोग आदि के कारण मन में जो खेद तथा ग्लानि होती है, वही साहित्य का निर्वेद है। प्रायः इसके मूल में आध्यात्मिक और तात्त्विक विचार होते हैं; इसलिए कुछ आचार्य इसे शांत रस का स्थायी भाव मानते हैं। पर अधिकतर लोग इसे भरत के आधार पर संचारी भाव ही कहते हैं। यह वही मनोवृत्ति है जो मनुष्य को सांसारिक विषयों की ओर से उदासीन करके परमात्म-चिंतन में प्रवृत्त करती है, और इस दृष्टि से रति या श्रृंगार रस के बिलकुल विपरीत है।

निर्वेश—पुं० [सं० निर्√विश्+घञ्] १. भोग। २. वेतन। तनख्वाह। ३. विवाह। ४. मोक्ष। ५. मूर्च्छा। बेहोशी। ६. बदला लेना।

निर्वेष्टन—पुं० [सं० निर्-वेष्टन, ब० स०] जुलाहों की सूत लपेटने की ढरकी।

निर्वैर—वि० [सं० निर्-वैर, ब० स०] वैर, द्वेष आदि से रहित।
पुं० वैर का अभाव।

निर्व्यथन—पुं० [सं० निर्√व्यथ् (पीड़ा)+ल्युट्—अन] १. तीव्र पीड़ा या वेदना। २. पीड़ा से होनेवाला छुटकारा।

निर्व्यलीक—वि० [सं० निर्-व्यलीक, ब० स०] १. छल आदि से रहित। निष्कपट। २. जो किसी को कष्ट न पहुँचाये। निरीह। ३. प्रसन्न। ४. सुखी।

निर्व्याज—वि० [सं० निर्-व्याज, ब० स०] १. व्याज अर्थात् कपट या छल से रहित। २. बाधा या विघ्न से रहित। निर्विघ्न।

निर्व्याधि—वि० [सं० निर्-व्याधि, ब० स०] व्याधि या रोग से मुक्त या रहित।

निर्व्यापार—वि० [सं० निर्-व्यापार, ब० स०] व्यापार-हीन।

निर्व्यूढ़—वि० [सं० निर्-वि√वह्+क्त] [भाव० निर्व्यूढि] १. पूरा बनाया हुआ। २. बढ़ा हुआ। विकसित। ३. त्यक्त। ४. भाग्यवान्। ५. सफल। ६. धकेला या निकाला हुआ।

निर्व्यूढ़ि—स्त्री० [सं० निर्-वि√वह्+क्तिन्] १. अन्त। समाप्ति। २. कलगी। ३. चोटी। ४. खूँटी। ५. काढ़ा।

निर्व्रण—वि० [सं० निर्-व्रण, ब० स०] जिसे व्रण, या घाव न हो या न लगा हो।

निर्हरण—पुं० [सं० निर्√हृ (हरण)+ल्युट्—अन] १. जलाने के लिए शव को अर्थी पर ले जाना। २. शव जलाना। ३. नष्ट करना।

निर्हार—पुं० [सं० निर्√हृ+घञ्] १. गाड़ी या धँसी हुई चीज को निकालना। २. मल-मूत्र आदि का त्याग करना। 'आहार' का विपर्याय। ३. धन, संपत्ति आदि जोड़ना।

निर्हारक—वि० [सं० निर्√हृ+ण्वुल्—अक] मुरदे उठाने या ढोने-वाला।

निर्हारी (रिन्)—वि० [सं० निर्√हृ+णिनि] १. वहन करनेवाला। २. फैलानेवाला।
पुं०=निर्हारक।

निर्हेतु—वि० [सं० निर्-हेतु, ब० स०] हेतु-रहित।
क्रि० वि० बिना किसी हेतु के।

निलंबन—पुं०=अनुलंबन।

निल—पुं० [सं०] विभीषण का एक मंत्री जो माली राक्षस का पुत्र था।

निलज†—वि०=निर्लज्ज।

निलजई, निलजता †—स्त्री०=निर्लज्जता।

निलज्ज—वि०=निर्लज्ज।

निलय—पुं० [सं० नि√ली (छिपना)+अच्] १. छिपने का स्थान।

जैसे—पशुओं की माँद या पक्षियों का घोंसला। २. अपने को छिपाने की क्रिया या भाव। ३. रहने का स्थान। घर। ४. शरीर-शास्त्र में हृदय के उन दोनों अवकाशों में से हर एक जिनके द्वारा सारे शरीर में रक्त का संचार होता है। (वेन्ट्रिकल)

निलयन—पुं० [सं० नि√ली+ल्युट्—अन] १. छिपना। २. वास-करना। रहना। ३. =निलय।

निलहा—वि० [हिं० नीला+हा (प्रत्य०)] १. नीले रंगवाला। २. नीले रंग में रँगा हुआ। ३. नील-संबंधी। नीलवाला। जैसे—निलहा साहब=वह अंगरेज जो नील की खेती करता और व्यापार करता था।

निलाज†—वि०=निर्लज्ज।

निलाट—पुं०=ललाट।

निलाम†—पुं०=नीलाम।

निलिंप—पुं० [सं० नि√लिप्+श, मुम्] देवता।

निलिंप-निर्झरी—स्त्री० [सं० ष० त०] आकाश-गंगा।

निलिंपा—स्त्री० [सं० निलिम्प+टाप्] गाय।

निलीन—वि० [सं० नि√ली+क्त, तस्य नः] १. छिपा हुआ। २. विनष्ट। ३. गला या पिघला हुआ।

निलोह—वि० [हिं० नि+लोह?] १. जिसमें मिलावट न हो। विशुद्ध। २. जिस पर किसी प्रकार की आँच न आई हो।

निवछरा*—वि० [सं० निवृत्त] (ऐसा समय) जिसमें करने के लिए कोई काम-काज न हो।

निवछावर†—स्त्री०=निछावर।

निवड़िया—स्त्री० [हिं० नावर] छोटा नवाड़ा (नाव)।

निवत्त†—वि०=निवृत्त।

निवना†—अ०=नवना (झुकना)।

निवपन—पुं० [सं०] १. पितरों आदि के उद्देश्य से दान करना। २. वह पदार्थ जो पितरों के उद्देश्य से दान किया जाय।

निवर—वि० [सं० नि√वृ (रोकना)+अच्] १. निवारण करने-वाला। २. रोकनेवाला।

पुं० आवरण। परदा।

निवरा—वि० स्त्री० [सं० नि√वृ (वरण)+अप्—टाप्] जिसका वर या पति न हो; अर्थात् कुँआरी।

निवर्तक—वि० [सं० नि√वृत् (बरतना)+णिच्+ण्वुल्—अक] निवर्तन करनेवाला।

निवर्तन—पुं० [सं० नि√वृत्+णिच्—ल्युट्—अन] १. घूम-फिरकर अपने पहले स्थान पर आना। वापस आना। लौटना। २. फिर घटित न होना। अन्त या समाप्ति न होना। ३. किसी काम या बात से अलग या दूर रहना। बचना। ४. कार्य अथवा क्रिया से रहित या शून्य होना। ५. आगे न बढ़ने देना। रोक रखना। ६. आज-कल न्यायालय की वह प्रक्रिया, जो किसी बने हुए विधान को रद या समाप्त करने के लिए होती है। कानून या विधान रद करना। (रिपील) ७. अन्दर की ओर घूमना या मुड़ना। ८. वह अंग या पदार्थ जो अन्दर की ओर घूम या मुड़कर बना हो। ९. कोई ऐसी क्रिया, जो अन्त या ह्रास की ओर ले जाती हो। अन्त या समाप्ति निकट लाने-वाली क्रिया। १०. अरविंद-दर्शन में, चेतना का क्रमशः अन्तर्निहित या तिरोभूत होना जिसके द्वारा अनन्त भागवत चेतना का अन्त होता है। 'विवर्तन' का विपर्याय। (इन्वोल्यूशन; अंतिम चारों अर्थों के लिए) ११. जमीन की एक पुरानी नाप जो २० लट्ठों की होती थी।

निवर्तित—भू० कृ० [सं० नि√कृत+णिच्+क्त] १. लौटा या लौटाया हुआ। २. जिसका निवर्तन हुआ हो। रद।

निवर्ती (तिन्)—पुं० [सं० नि√वृत्+णिनि] १. वह जो पीछे की ओर हट आया हो। २. वह जो युद्ध क्षेत्र से भाग आया हो।

वि०=निर्लिप्त।

निवसति—स्त्री० [सं० नि√वस् (बसना)+अतिच्] रहने का स्थान। घर।

निवसथ—पुं० [सं० नि√वस्+अथच्] १. गाँव। २. सीमा। हद।

निवसन—पुं० [सं० नि√वस्+ल्युट्—अन] १. निवास करने की क्रिया या भाव। २. निवास के योग्य अथवा निवास का स्थान। जैसे—गाँव का घर। ३. वसन। वस्त्र। कपड़ा। ४. स्त्रियों के पहनने का अधोवस्त्र।

निवसना—अ० [सं० निवास] निवास करना। रहना।

निवह—पुं० [सं० नि√वह्+घ] १. समूह। यूथ। २. सात वायुओं में से एक वायु।

निवाई—वि० [सं० नव] १. नवीन। नया। २. अनोखा। विल-क्षण।

†स्त्री० नयापन। नवीनता।

†स्त्री० [?] १. गरमी। ताप। २. ज्वर। बुखार।

निवाक्—वि० [सं०नि√वच् (बोलना)+घुण्] चुप। मौन।

निवाज—वि०=नवाज। (देखें)

†स्त्री०=नमाज।

निवाजना—स० [फा० निवाज] अनुग्रह या प्रार्थना करना।

निवाजिश—स्त्री० [फा०] १. अनुग्रह। कृपा। २. दया। मेहर-बानी।

निवाड़†—स्त्री०=निवार।

निवाड़ा—पुं० १. =नवाड़ा। २. =नावर (नावों की क्रीड़ा)।

निवाड़ी—स्त्री०=निवारी।

निवाण—स्त्री० [सं० निम्न] नीची या ढालुई जमीन।

निवात—पुं० [सं० नि√वा (गति)+क्त] १. रहने का स्थान। घर। २. ऐसा कवच या वर्म जो शस्त्रों से छेदा न जा सके। ३. सुरक्षित स्थान। ४. शांति।

वि०=निर्वात।

निवान—पुं० [सं० निम्न] १. नीची जमीन जहाँ सीड़, कीचड़ या पानी भरा रहता हो। २. झील या तालाब।

†पुं०=नवान्न।

निवाना—वि० [स्त्री० निवानी] =निमाना। उदा०—हरीचन्द नित रहत दिवाने, सूरज अजब निवानी के।—भारतेन्दु।

स०=नवाना (झुकाना)।

निवान्या—स्त्री० [सं० नि√वा+क=निव (पीनेवाला)—अन्य ब० स०, टाप्] वह मृतवत्सा गौ जो दूसरी गाय के बछड़े को लगाकर दूही जाय।

निवार—स्त्री० [फा० नवार] मोटे सूत की बनी हुई तीन-चार अंगुल चौड़ी वह पट्टी जिससे पलंग बुने जाते हैं।
स्त्री० [सं० नेमि+आर] पहिए की तरह का लकड़ी का वह गोल चक्कर जो कूएँ की नींव में धँसाया जाता है और जिसके ऊपर कोठी की जोड़ाई होती है। जमवट।
पुं० [सं० नीवार] तिन्नी का धान।
स्त्री० [?] एक प्रकार की बड़ी और मोटी मूली।

निवारक—वि० [सं० नि√वृ (रोकना)+णिच्+ण्वुल्—अक] १. निवारण करनेवाला। २. दूर करने, रोकने या हटानेवाला।

निवारण—पुं० [सं० नि√वृ+णिच्+ल्युट्—अन] १. किसी को बढ़ने या फैलने से रोकना। २. दूर करना। हटाना। ३. आनेवाली बाधा या संकट को बीच में ही रोकने के लिए किया जानेवाला प्रयत्न। रोक-थाम। (प्रिवेन्शन) ४. निषेध। मनाही। ५. छुटकारा। निवृत्ति।

निवारन†—पुं०=निवारण।

निवारना—स० [सं० निवारण] १. निवारण करना। २. संकट आदि दूर करना, रोकना या हटाना। ३. संकट आदि से किसी को बचाना या उसकी रक्षा करना। ४. कोई काम या बात टालते या रोकते हुए समय बिताना। ५. निषेध करना। मना करना।

निवार-बाफ—पुं० [फा० नवार+बाफ=बुननेवाला] [भाव० निवार-बाफी] निवार अर्थात पलंग बुनने की सूत की पट्टी बुननेवाला जुलाहा।

निवारी—स्त्री० [सं० नेपाली या नेमाली] १. चैत में फूलनेवाला जूही की जाति का सुगंधित फूलोंवाला एक पौधा। २. इस पौधे के फूल जो सफेद और सुगंधित होते हैं।
वि० [हिं० निवार] १. निवार-संबंधी। निवार का। २. निवार से बुना हुआ। जैसे—निवारी पलंग।

निवाला—पुं० [फा० निवालः] कौर। ग्रास।

निवास—पुं० [सं० नि√वस+घञ्] १. किसी स्थान को अपना घर बनाकर वहाँ बसने या रहने की क्रिया या भाव। वास। जैसे—आज-कल आप प्रयाग में निवास करते हैं। २. उक्त प्रकार से बसकर रहने का स्थान। ३. विश्राम करने का स्थान। ४. घर। मकान। ५. भौगोलिक दृष्टि से ऐसा स्थान, जहाँ किसी जाति के जीव रहते या कोई वनस्पति होती हो। ६. पहनने के वस्त्र। पोशाक।

निवासन—पुं० [सं० निवसन] १. किसी स्थान पर निवास करना या बसकर रहना। २. घर। मकान। ३. समय बिताने की क्रिया या भाव।

निवास-स्थान—पुं० [सं० ष० त०] १. वह स्थान जहाँ कोई व्यक्ति निवास करता या रहता हो। रहने की जगह। २. घर। मकान।

निवासित—भू० कृ० [सं० नि√वस्+णिच+क्त] १. (स्थान) जो आबाद किया गया हो। बसाया हुआ। २. बसा हुआ।

निवासी (सिन्)—वि० [सं० नि√वस्+णिनि] (स्थान-विशेष में) रहने या निवास करनेवाला। जैसे—भारत निवासी या लंका निवासी।

निवास्य—वि० [सं० नि√वस्+ण्यत] (स्थान) जहाँ निवास किया जा सकता हो या किया जाने को हो। रहने के योग्य। निवास-स्थान के रूप में काम आने के योग्य।

निविड़—वि० [सं० नि√विड् (संघात)+क] [भाव० निविड़ता] १. जिसमें अवकाश या स्थान न हो। २. घना। सघन। ३. गंभीर। ४. भारी डील-डौलवाला। ५. चिपटी, टेढ़ी या दबी हुई नाकवाला।

निविड़ता—स्त्री० [सं० निविड़+तल—टाप्] १. निविड़ होने की अवस्था या भाव। घनापन। २. गंभीरता। ३. वंशी के पाँच गुणों में से एक जो उसके स्वर की गंभीरता पर आश्रित होता है।

निविद्धान—पुं० [सं० निविद√धा (धारण)+ल्युट्—अन] एक दिन में समाप्त होनेवाला यज्ञ।

निविरीश—वि० [सं० नि+विरीसच्] १. घना। २. गहरा। ३. भद्दा।
स्त्री० १. घनता। २. गहराई। ३. भद्दापन।

निविल—वि०=निविड़।

निविशमान—वि० [सं०] जिसने कहीं निवास किया हो या जो कहीं निवास कर रहा हो।
पुं० वह लोग जो किसी उपनिवेश में बसाये गये हों।

निविशेष—वि० [सं० निर्विशेष] १. जिसमें दूसरों से कोई विशेषता न हो। साधारण। सामान्य। २. तुल्य। समान।
पुं० १. समानता। २. एक-रूपता।

निविष†—वि०=निर्विष (विषहीन)।

निविष्ट—वि० [सं० नि√विश् (प्रवेश)+क्त] [भाव० निविष्टता] १. बैठा हुआ। आसीन। २. जो कहीं निवेश बनाकर या डेरा डालकर ठहरा हो। ३. किसी काम या बात के लिए तत्पर या तुला हुआ। ४. (मन) एकाग्र करके नियंत्रित किया हुआ। ५. क्रम या व्यवस्था से लगाया हुआ। ६. जिसका प्रवेश हुआ हो। प्रविष्ट। ७. कहीं लिखा, दर्ज किया या चढ़ाया हुआ। (एन्टर्ड) ८. बाँधा या लपेटा हुआ। ९. ठहरा या ठहराया हुआ। स्थित। १०. किसी के अन्दर भरा या रखा हुआ।

निविष्टि—स्त्री० [सं० नि√विश्+क्तिन्] १. मैथुन या संभोग करना। २. विश्राम करना। ३. खाते आदि में लिखने, दर्ज करने या चढ़ाने की क्रिया या भाव। ४. इस प्रकार चढ़ी, चढ़ाई या लिखी हुई बात या रकम। (एन्ट्री)

निवीत—पुं० [सं० नि√व्ये (आच्छादन)+क्त] १. यज्ञोपवीत, जो गले में पहना हुआ हो। २. ओढ़ने का कपड़ा। चादर। ओढ़नी।

निवीती (तिन्)—वि० [सं० निवीत+इनि] १. जो यज्ञोपवीत पहने हो। २. जो चादर ओढ़े हो।

निवीर्य—वि०=निर्वीर्य।

निवृत्त—भू० कृ० [सं० नि√वृत+क्त्] १. वापस आया या लौटाया हुआ। २. जिसकी सांसारिक विषयों में प्रवृत्ति न रह गई हो। ३. जो कोई काम करके उससे छुट्टी पा चुका हो। जो अपना काम कर चुका हो। ४. (कार्य) जो पूरा हो चुका हो। मुक्त।
पुं० १. आवरण। २. परदा। ३. लपेटने का कपड़ा। बेठन।

निवृत्ति—स्त्री० [सं० नि√वृत्+क्तिन्] १. निवृत्त होने की क्रिया या भाव। २. वापस आना या लौटना। ३. किसी काम की प्रवृत्ति का अभाव होना। ४. सांसारिक विषयों का किया जानेवाला त्याग। ५. 'प्रवृत्ति' का विपर्याय। ६. छुटकारा। मुक्ति। ७. अपने कार्य

या पद से अवकाश पाकर अथवा अवधि पूरी हो जाने पर सदा के लिए हट जाना। (रिटायरमेंट) ८. एक प्राचीन तीर्थ।

निवृत्तिक—वि० [सं०] निवृत्ति-संबंधी। जैसे—निवृत्तिक मार्ग या साधना।

निवेद†—पुं० [सं० नैवेद्य] देवता को चढ़ाया हुआ पदार्थ।

निवेदक—वि० [सं० नि√विद् (जानना)+णिच्+ण्वुल्—अक] (व्यक्ति) जो नम्रतापूर्वक किसी से कोई बात कहे। निवेदन करने-वाला।

निवेदन—पुं० [सं० नि√विद्+णिच+ल्युट्—अन] १. नम्रतापूर्वक किसी से कोई बात कहना। २. इस प्रकार कही हुई कोई बात जो प्रायः सुझाव के रूप में होती है। ३. समर्पण। ४. आहुति।

निवेदन-पत्र—पुं० [सं० ष० त०] वह पत्र जिसमें किसी एक या कई व्यक्तियों ने निवेदन लिखा हो। (लेटर आफ रिक्वेस्ट)

निवेदना—स० [सं० निवेदन] १. विनती, निवेदन या प्रार्थना करना। २. सेवा में भेंट आदि के रूप में उपस्थित करना।

निवेदित—भू० कृ० [सं० नि√विद्+णिच्+क्त] १. (बात) जो निवेदन या प्रार्थना के रूप में कही गई हो। २. (पदार्थ) जो भेंट आदि के रूप में अर्पित या समर्पित किया गया हो।

निवेद्य—पुं० [सं० नि√विद्+ण्यत्] नैवेद्य। (दे०)

निवेरना—स०=निबेड़ना (निपटाना)।

निवेरा—वि० [हिं० नि+सं० वरण] [स्त्री० निवेरी] १. चुना या छाँटा हुआ।

वि० [सं० नवल] १. नवेला। २. अनोखा।

पुं०=निवेड़ा।

निवेश—पुं० [सं० नि√विश्+घञ्] [वि० नैवेशिक, भू० कृ० निवे-शित, निविष्ट] १. डेरा। शिविर। २. प्रवेश। पैठ। ३. घर। मकान। ४. विवाह। ५. ठहराया या रखा जाना। स्थापन। ६. किसी निश्चय, विधि आदि में पड़नेवाली कठिनता या होनेवाली बाधा से बचने के लिए निकाला हुआ मार्ग या निश्चित किया हुआ विधान। (प्रॉविजन)

निवेशन—पुं० [सं० नि√विश्+ल्युट्—अन] १. डेरा। २. घर। ३. नगर।

निवेशनी—स्त्री० [सं० निवेशन+ङीप्] पृथ्वी।

निवेष्ट—पुं० [सं० नि√वेष्ट् (लपेटना)+घञ्] १. वह कपड़ा जिसमें कोई चीज ढकी या लपेटी जाय। बेठन। २. सामवेद का एक प्रकार का मंत्र।

निवेष्टन—पुं० [सं० नि√वेष्ट्+ल्युट्—अन] १. ढकने या लपे-टने की क्रिया या भाव। २. ढकने या लपेटनेवाली चीज। बेठन।

निवेष्य—पुं० [सं० नि√विष् (व्याप्ति)+ण्यत्] १. व्याप्ति। २. बरफ का पानी। ३. जल-स्तंभ। (देखें)

निव्याधी (धिन्)—पुं० [सं० नि√व्यध् (मारना)+गिनि] एक रुद्र का नाम।

निव्यूढ़—पुं० [सं० नि-वि√ऊह् (वितर्क)+क्त] १. अध्यवसाय। २. शक्ति। ३. उत्साह।

निशंक—वि०=निःशंक।

निशंग—पुं०=निषंग।

निश—स्त्री०=निशा (रात्रि)।

निशचर—वि०, पुं०=निशाचर।

निशठ—पुं० [सं०] बलदेव के एक पुत्र का नाम। (पुराण)

निशतर—पुं० [फा०] वह उपकरण जिससे चीर-फाड़ की जाय। नश्तर। (शल्य-चिकित्सा)

निशब्द—वि० [सं० निःशब्द] १. (स्थान) जो शब्द से रहित हो। २. (व्यक्ति) जो चुप या मौन हो।

निशब्दक—वि० [सं० निःशब्दक] शब्द न करनेवाला। (साइलें-सर)

निशमन—पुं० [सं० नि√शम् (शान्ति)+णिच्+ल्युट्—अन] १. दर्शन। देखना। २. श्रवण। सुनना।

निशरण—पुं० [सं० नि√शृ (हिंसा)+ल्युट्—अन] मारण। वध।

निशल्या—स्त्री० [सं०] दंती (वृक्ष)।

निशांत—वि० [सं० नि-शांत, प्रा० स०] १. (व्यक्ति) पूर्ण रूप से या बहुत अधिक शांत। २. (वातावरण या स्थान) जिसमें शांति न हो।

पुं० १. निशा अर्थात् रात्रि का अंत। पिछली रात। रात का चौथा प्रहर। २. तड़का। प्रभात। ३. घर। मकान।

निशांध—वि० [सं० निशा-अन्ध, स० त०] जिसे रात को दिखाई न दे। जिसे रतौंधी हो।

निशांधा—स्त्री० [सं० निशा√अन्ध् (दृष्टि-विघात)+अच—टाप्] जतुका लता।

निशांधी—स्त्री० [सं० निशा√अन्ध्+अच्—ङीप्] १. जतुका या पहाड़ी नामक लता। २. राजकुमारी।

निशा—स्त्री० [सं० नि√शो (क्षीण करना)+क—टाप्] १. रात्रि। रजनी। रात। २. हलदी। ३. दारु हलदी। ४. फलित ज्योतिष में, इन छः राशियों का समूह—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धनु और मकर।

निशाकर—वि० [सं० निशा√कृ (करना)+ट] निशा करने-वाला।

पुं० १. चन्द्रमा। २. महादेव। शिव। ३. कुक्कुट। मुरगा। ४. कपूर।

निशा-केतु—पुं० [सं० ष० त०] चन्द्रमा।

निशाखातिर—स्त्री० [फा० निशा+अ० खातिर] किसी काम या बात के संबंध में मन में होनेवाला वह पूरा विश्वास जो किसी दूसरे के समझाने पर उत्पन्न होता है।

निशाख्या—स्त्री० [सं० निशा-आख्या, ब० स०] हलदी।

निशा-गृह—पुं० [सं० मध्य० स०] शयनागार।

निशाचर—वि० [सं० निशा√चर् (गति)+ट] रात के समय चलने या विचरण करनेवाला।

पुं० १. राक्षस। २. गीदड़। ३. उल्लू। ४. साँप। ५. चकवा-पक्षी। चक्रवाक। ६. भूत, प्रेत आदि। ७. चोर। ८. महादेव। शिव। ९. चनेर नामक गंध-द्रव्य। १०. बिल्ली। ११. एक प्रकार की ग्रंथिपर्णी या गठिवन।

निशाचर-पति—पुं० [सं० ष० त०] १. रावण। २. शिव।

निशाचरी—वि० [सं० निशाचर+ङीष्] १. निशाचर-संबंधी। निशाचर का। जैसे—निशाचरी माया। २. निशाचरों की तरह का।

स्त्री० १. राक्षसी। २. कुलटा या व्यभिचारिणी। ३. अभिसारिका नायिका। ४ केशिनी नामक गंध-द्रव्य।

निशा-चर्म—पुं० [सं० स०त०] अंधकार। अंधेरा।

निशा-जल—पुं० [सं० मध्य०स०] १. हिम। पाला। २. ओस।

निशाट—पुं० [सं० निशा√अट् (भ्रमण)+अच्] १. उल्लू। २. निशाचर।

निशाटक—पुं० [सं० निशा√अट्+ण्वुल्—अक] गूगल।

निशाटन—वि० [सं० निशा√अट्+ल्यु—अन] रात्रि को चलनेवाला। निशाचर।

पुं० उल्लू।

निशात—वि० [सं० नि√शो (तेज करना)+क्त] १. सान पर चढ़ाकर तेज किया हुआ। २. ओप आदि लगाकर चमकाया हुआ।

वि० [फा० नशात] १. आनंद। सुख। २. सुखभोग।

निशातिक्रम, निशात्यय—पुं० [सं० निशा-अतिक्रम, निशा-अत्यय, ष०त०] १. रात का बीतना। २. प्रातःकाल।

निशाद—वि० [सं० निशा√अद् (खाना)+अच्] रात को खानेवाला। पुं० निषाद। (दे०)

निशादि—पुं० [सं० निशा-आदि, ब०स० या ष०त०] सायं। संध्या।

निशान—पुं० [फा०] १. चिह्न। लक्षण। २. ऐसा प्राकृत या आकस्मिक चिह्न या लक्षण जिससे कोई चीज पहचानी जाय या जिससे किसी घटना या बात का परिचय, प्रमाण या सूत्र मिले। ३. मोहर आदि की छाप। ४. झंडा या पताका जिससे किसी संप्रदाय, राज्य आदि की पहचान होती है। ५. प्राचीन काल में वह झंडा जो राजाओं की सवारियों के आगे चलता था। ६. कलंक। धब्बा। ७. वह चिह्न जो लेख्यों आदि पर अशिक्षित लोग अपने हस्ताक्षर के बदले बनाते हैं। जैसे—अगूंठे का निशान। ८. पता। ठिकाना।

मुहा०—**निशान देना**=सम्मन आदि तामील करने के लिए यह बताना कि यही असामी है।

९. निशाना। १०. दे० 'निशानी'।

निशान-कोना—पुं० [सं० ईशान+हिं० कोना] उत्तर और पूर्व का कोण।

निशानची—वि० [फा०] १. बढ़िया निशाना लगानेवाला।

पुं० जलूस या राजा आदि की सवारी के आगे-आगे झंडा लेकर चलनेवाला व्यक्ति।

निशान-देही—स्त्री० [फा० निशाँ देही] १. किसी का पता-ठिकाना बतलाना। २. न्यायालय के सम्मन आदि की तामील के लिए चपरासी के साथ जाकर यह बतलाना कि यही वह आदमी है जिसे सम्मन दिया जाना चाहिए। प्रतिवादी की पहचान कराना।

निशान-पट्टी—स्त्री० [फा० निशान+हिं० पट्टी] १. चेहरे की गठन और रूप रंग का वर्णन। हुलिया।

निशान-बरदार—पुं० [फा०] झंडा हाथ में लेकर जुलूस, सवारी आदि के आगे चलनेवाला व्यक्ति।

निशाना—पुं० [फा० निशानः] १. वह वस्तु या बिंदु जिस पर शस्त्र से आघात किया जाय।

क्रि० प्र०—करना।—बनाना।

२. किसी पदार्थ को लक्ष्य बनाकर उसकी ओर किसी प्रकार का वार करने की क्रिया। वार।

मुहा०—**निशाना बाँधना**=निशाना साधना। (देखें नीचे) **निशाना मारना या लगाना**=ताक कर अस्त्र-शस्त्र आदि का वार करना। **निशाना साधना**=(क) ठीक लक्ष्य पर वार करना। (ख) ठीक लक्ष्य पर वार करने का अभ्यास करना।

३. मिट्टी आदि का वह ढेर या और कोई पदार्थ, जिस पर निशाना साधा जाय। ४. वह जिसे लक्ष्य बनाकर कोई उग्र या विकट आघात या क्रिया की जाय। जैसे—किसी की नजर का निशाना, किसी के ताने या व्यंग्य का निशाना।

निशा-नाथ—पुं० [सं० ष०त०] १. चंद्रमा। ३. कपूर।

निशानी—स्त्री० [फा०] १. वह चीज जो किसी घटना या व्यक्ति का स्मरण करनेवाली हो। स्मृति-चिह्न। यादगार। जैसे—(क) यही लड़का भाई साहब की निशानी है। (ख) विधवा के पास यही अँगूठी उसके पति की निशानी बच रही है।

क्रि० प्र०—देना।—रखना।

२. पहचान का चिह्न। निशान।

निशा-पति—पुं० [ष०त०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

निशा-पुत्र—पुं० [ष०त०] नक्षत्र आदि आकाशीय पिंड।

निशापुष्प—पुं० [सं० निशा√पुष्प् (खिलना)+अच्] कुमुदनी। कोईं।

निशा-बल—पुं० [ब० स०] मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धन और मकर ये छः राशियाँ जो रात के समय अधिक बलवती मानी जाती हैं। (फलित ज्योतिष)

निशा-भंगा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] दुग्धपुच्छी नामक पौधा।

निशा-मणि—पुं० [ष० त०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

निशामन—पुं० [सं० नि√शम् (शांति)+णिच्+ल्युट्—अन] १. दर्शन। देखना। २. आलोचना। ३. श्रवण। सुनना।

निशा-मुख—पुं० [ष० त०] संध्या काल।

निशा-मृग—पुं० [मध्य०स०] गीदड़। शृगाल।

निशा-रत्न—पुं० [ष०त०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

निशा-रुक—पुं० दे० 'निशासक'।

निशा-वन—पुं० [ब० स०] सन का पौधा।

निशावसान—पुं० [निशा-अवसान, ष०त०] निशा के समाप्त होने का समय। प्रभात का समय।

निशा-विहार—पुं० [ब०स०] राक्षस।

निशासक—पुं० [सं०] संगीत में एक प्रकार का रूपक ताल जिसमें दो लघु और दो गुरु मात्राएँ होती हैं।

निशास्ता—पुं० [फा० नशास्तः] १. गेहूँ का सार। २. कपड़ों में लगाया जानेवाला कलफ या माड़ी।

निशाहस—पुं० [सं० निशा√हस् (हँसना)+अच्] कुमुदनी।

निशा-हासा—स्त्री० [ब०स०, टाप्] शेफालिका।

निशाह्वा—स्त्री० [सं० निशा-आह्वा, ब० स०, टाप्] १. हलदी। २. जतुका नामक लता।

निशि—स्त्री० [सं० नि√शो+इन्?] १. रात्रि। रात। २. स्वप्न।

३. हलदी। ४. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में एक भगण और एक लघु होता है।

निशिकर—पुं० [सं० निशि√कृ+ट] १. चंद्रमा। शशि।

निशिचर—पुं० [सं० निशि√चर् (गति)+ट]=निशाचर।

निशिचर-राज—पुं० [सं० ष०त०] राक्षसों का राजा, विभीषण।

निशित—वि० [सं० नि√शो (तीक्ष्ण करना)+क्त] जो सानपर चढ़ा हो अर्थात् चोखा या तेज।
पुं० लोहा।

निशिता—स्त्री० [सं० निशित+टाप्] रात्रि। निशा। रात।

निशिदिन—अव्य० [सं० निशि+दिन] १. रात-दिन। २. सदा। सर्वदा।

निशिनाथ—पुं०=निशानाथ।

निशि-नायक—पुं० =निशिनाथ (चंद्रमा)।

निशि-पति—पुं० [ष० त०] चंद्रमा।

निशिपाल—पुं० [सं० निशि√पाल् (बचाना)+णिच्+अच्] १. चंद्रमा। २. एक छन्द जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः भगण, जगण, नगण और रगण होते हैं।

निशि-पुष्पा—स्त्री० [ब० स०] शेफालिका।

निशिपुष्पिका, निशिपुष्पी—स्त्री० [ब० स०, कप्, टाप्, इत्व; ब०स०, ङीष्] शेफालिका।

निशि-वासर—अव्य० [द्व०स०] १. रात-दिन। २. सदा। सर्वदा।

निशीत—पुं०=निशीथ।

निशीथ—पुं० [सं० नि√शी (सोना)+थक्] १. रात। २. आधी रात। ३. पुराणानुसार रात्रि का एक कल्पित पुत्र। ४. छाल या रेशे से बना हुआ कपड़ा।

निशीथ-नाथ—पुं० [ष० त०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

निशीथ्या—स्त्री० [सं०] रात्रि।

निशुंभ—पुं० [सं० नि√शुम्भ् (हिंसा)+घञ्] १. वध। २. हिंसा। दनु का पुत्र एक राक्षस जिसका वध दुर्गा ने किया था। (पुराण)

निशुंभन—पुं० [सं० नि√शुम्भ्+ल्युट्—अन] मार डालना। वध करना।

निशुंभ-मर्दिनी—स्त्री० [सं० ष० त०] दुर्गा

निशुंभी (मिन्)—पुं० [सं० निशुंभ=मोहनाश+इनि] एक बुद्ध का नाम।

निशेश—पुं० [सं० निशा-ईश, ष०त०] निशा के पति, चंद्रमा।
†वि०=निःशेष।

निशैत—पुं० [सं० निशा-एत=(गमन), ब०स०] बगुला।

निशोत्सर्ग—पुं० [सं० निशा-उत्सर्ग, ष० त०] प्रभात।

निश्कुल—वि० दे० 'निष्कुल'।

निश्चक्रिक—वि० [सं०] छल-छद्म से रहित, फलतः ईमानदार या सच्चा।

निश्चक्षु—वि० [सं० निर्-चक्षुस्, ब० स०] नेत्रहीन। अंधा।

निश्चंद्र—वि० [सं० निर्-चंद्र, ब० स०] १. चंद्रमा रहित। २. जिसमें आभा या चमक न हो। फीका।

निश्चय—पुं० [सं० निर्√चि (चयन)+अप्] १. कोई कार्य करने का अंतिम निर्णय या संकल्प करना। ३. इस प्रकार ठीक की हुई बात या प्रस्ताव। (रिजोल्यूशन) ३. निर्णय। ४. एक अर्थालंकार जिसमें एक बात का निषेध करके प्रकृत या यथार्थ बात के स्थापन का उल्लेख होता है। (सर्टेन्टी) ५. विश्वास।
अव्य० निश्चित रूप से। अवश्य।

निश्चयात्मक—वि० [सं० निश्चय-आत्मन्, ब० स०, कप्] [भाव० निश्चयात्मकता] निश्चय के रूप में होने वाला।

निश्चर—पुं० [सं०] एकादश मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।
†पुं०=निशाचर।

निश्चयेन—अव्य० [सं० निश्चय का विभक्त्यन्त रूप] निश्चित रूप से। निश्चयपूर्वक।

निश्चल—वि० [सं० निर्√चल (गति)+अच्] [भाव० निश्चलता] १. जो अपने स्थान से जरा भी इधर-उधर चलता या हिलता-डोलता न हो। अचल। स्थिर। २. अपरिवर्तनशील।

निश्चलता—स्त्री० [सं० निश्चल+तल्+टाप्] निश्चल होने की अवस्था या भाव।

निश्चलांग—वि० [सं० निश्चल-अंग, ब० स०] जिसके अंग हिलते-डुलते न हों। सदा अचल या स्थिर रहनेवाला।
पुं० १. पवत २. बगुला।

निश्चायक—वि० [सं० निर्√चि+ण्वुल्—अक] १. निश्चय या प्रतीति करानेवाला २. जिसके कारण या द्वारा किसी बात का निश्चित ज्ञान होता हो। जैसे—निश्चायक प्रमाण।

निश्चारक—पुं० [सं० निर्√चर् (गति)+ण्वुल्—अक] १. एक रोग जिसमें बहुत दस्त आते हैं। २. वायु। हवा।

निश्चिंत—वि० [सं० निर्-चिन्ता, ब० स०] [भाव० निश्चिंतता] (व्यक्ति) जिसे कोई चिंता न हो। बेफिक्र।

निश्चिंतता—स्त्री० [सं० निश्चिंत+तल्+टाप्] निश्चिंत होने की अवस्था या भाव। बे-फिक्री।

निश्चित—भू० कृ० [सं० निर्√चि+क्त] १. (बात या प्रस्ताव) जिसके संबंध में निश्चय हो चुका हो। २. जो अटल या स्थिर हो। ३. जो यथार्थ या सत्य हो। ४. जिसमें कोई परिवर्तन न हो सके।

निश्चितई—स्त्री०=निश्चितता।

निश्चिति—स्त्री० [सं० निर्√चि+क्तिन्] १. निश्चित करने की क्रिया या भाव। २. निश्चय।

निश्चिरा—स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी। (महाभारत)

निश्चिला—स्त्री० [सं०] १. शालपर्णी। २. पृथ्वी। ३. पुराणानुसार एक नदी।

निश्चिवकण—पुं० [सं० निर्-चुक्कण, ब० स०] मिस्सी।

निश्चेतन—वि० [सं० निर्-चेतन, ब० स०] चेतना या संज्ञा रहित।
पुं० चेतना से रहित करना।

निश्चेष्ट—वि० [सं० निर्-चेष्टा, ब० स०] जो चेष्टा न करता हो या न कर रहा हो।

निश्चेष्ट-करण—पुं० [ष०त०] १. निश्चेष्ट करने की क्रिया या भाव। २. कामदेव का एक वाण। ३. वैद्यक में, एक प्रकार का औषध।

निश्चेष्टीकरण—पुं० [सं० निश्चेष्ट+च्वि, ईत्व √कृ+ल्युट्—अन]=निश्चेष्ट-करण।

निश्चै—पुं०, अव्य०=निश्चय।

निश्च्यवन—पुं० [सं०] १. वैवस्वत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक ऋषि का नाम (पुराण)। २. एक प्रकार की अग्नि। (महाभारत)

निश्छंद (स्)—वि०[सं० निर्-छंदस्, ब० स०] जिसने वेद न पढ़ा हो।

निश्छल—वि०[सं० निर्-छल, ब०स०] १. (व्यक्ति) छल-कपट से रहित। २. (हृदय) जिसमें छल-कपट न भरा हो।

निश्छाय—वि०[सं० निर्-छाया, ब०स०] छाया रहित।

निश्छेद—पुं०[सं० निर्-छेद, ब० स०] गणित में वह राशि, जिसका किसी गुणक के द्वारा भाग न दिया जा सके। अविभाज्य।

निश्रम—पुं०[सं० निःश्रम] न थकना।

निश्रयणी—स्त्री०[सं० निःश्रयणी] सीढ़ी।

निश्रीक—पुं०[सं० निःश्रीक] सीढ़ी।

निश्रेणिका तृण—पुं०[सं० निःश्रेणिकातृण] एक तरह की घास, जिसके खाने से पशु निर्बल हो जाते हैं।

निश्रेणी—स्त्री०[सं० निःश्रेणी] १. सीढ़ी। जीना। २. वह साधन जिसके द्वारा एक विन्दु से दूसरे विन्दु तक पहुँचा जाय। ३. मुक्ति। ४. खजूर का पेड़।

निश्रेयस—पुं०[सं० निःश्रेयस्] १. दुःख का अत्यन्त अभाव। २. मोक्ष। ३. कल्याण। मंगल।

निश्वास—पुं० [सं० निःश्वास] १. अन्दर खींचा हुआ साँस बाहर निकालना या छोड़ना। २. नाक या मुँह से बाहर निकलनेवाला श्वास। ३. गहरी या ठंडा साँस।

निश्शंक—वि०=निःशंक।

निश्शक्त—वि०=निःशक्त।

निश्शर—वि०[सं० निःशर] शर या वाण से रहित।

निश्शील—वि०[सं० निःशील] [भाव० निश्शीलता] १. जिसका शील या स्वभाव अच्छा न हो। २. जिसमें शील या संकोच न हो। बे-मुरौवत।

निश्शेष—वि०=निःशेष।

निषंग—पुं० [सं० नि√सञ्ज् (लगाव)+घञ्] १. विशेष रूप से होनेवाला आसंग या आसक्ति। लगाव। २. तरकश। ३. खड्ग। तलवार। ४. पुरानी चाल का एक तरह का बाजा जो मुँह से फूंककर बजाया जाता था।

निषंगथि—वि० [सं० नि√सञ्ज्+घथिन्] १. आलिंगन करने या गले लगानेवाला। २. धनुष धारण करनेवाला।
पुं० १. आलिंगन। २. रथ। ३. सारथी। ४. कंधा।

निषंगी (गिन्)—वि०[सं० निषंग+इनि] १. जो किसी पर आसक्त हो। २. धनुषधारी। तीर चलानेवाला। ३. खड्गधारी।
पुं० धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

निष†—अव्य०=तनिक।

निषक-पुत्र—पुं०[सं०] असुर। राक्षस।

निषकर्श—पुं०[सं०] संगीत में स्वर साधन की एक प्रणाली, जिसमें प्रत्येक स्वर का आलाप दो-दो बार करना पड़ता है।

निषक्त—वि०[सं० नि√सञ्ज्+क्त] जो किसी पर विशेष रूप से आसक्त हो।

निषण्ण—वि० [सं० नि√सद् (बैठना)+क्त] १. बैठा हुआ। २. आश्रित।

निषण्णक—पुं०[सं० निषण्ण+कन्] १. बैठने की जगह। २. आसन।

निषत्र—पुं०=नक्षत्र।

निषद्—स्त्री०[सं० नि√सद्+क्विप्] यज्ञ की दीक्षा।

निषद—पुं०=निषाद (स्वर)।

निषद्या—स्त्री० [सं० नि√सद्+कप्+टाप्] १. बैठने की छोटी चौकी या खाट। २. व्यापारी की दूकान की गद्दी। ३. बाजार। हाट।

निषद्यापरीषत्—पुं० [सं०] जैन भिक्षुओं का एक आचार जिसमें ऐसे स्थान पर रहना वर्जित है, जहाँ स्त्रियाँ और हिजड़े आते-जाते हों; और यदि वहाँ रहना ही पड़े, तो चित्त को चंचल न होने देना।

निषद्वर—पुं०[सं० नि√सद्+ष्वरच्] १. कीचड़। २. कामदेव।

निषद्वरी—स्त्री०[सं० निषद्वर+ङीष्] रात्रि।

निषध—वि०[सं०] १. पुराणानुसार एक पर्वत। २. कुश के एक पौत्र का नाम। ३. जनमेजय का एक पुत्र। ४. कुरु का एक पुत्र। ५. ५. विन्ध्य की पहाड़ियों पर का एक प्राचीन देश, जहाँ राजा नल राज करते थे। ६. निषाद (स्वर)।

निषधाभास—पुं०[सं०] 'आक्षेप' अलंकार के ५ भेदों में से एक।

निषधावती—स्त्री०[सं०] विंध्य पर्वत से निकलनेवाली एक प्राचीन नदी। (मारकण्डेय पुराण)

निषधाश्व—पुं०[सं०] कुरु का एक पुत्र।

निषाद—पुं०[सं० नि √सद्+घञ्] १. एक प्राचीन अनार्य जंगली जाति; अथवा उक्त जाति का कोई व्यक्ति। २. शृंगवेरपुर के पास का एक प्राचीन देश।
विशेष—निषाद जाति के लोग मूलतः इसी प्रदेश के निवासी माने गये हैं और इनकी भाषा की गिनती मुंडा भाषाओं के वर्ग में होती है।
३. नीच जाति का व्यक्ति। ४. ऐसा व्यक्ति जो शूद्रा माता और ब्राह्मण पिता से उत्पन्न हुआ हो। ५. संगीत में, सरगम का सातवाँ स्वर, जो अन्य सब स्वरों से ऊँचा होता है। इसका संक्षिप्त रूप 'नि' है।
विशेष—यह हाथी के स्वर के समान गंभीर और ललाट से उच्चरित होनेवाला स्वर माना गया है। यह वैश्य जाति, विचित्र वर्ण का और गणेश के स्वरूपवाला कहा गया है। इसका देवता सूर्य और छंद जगती है। यह उग्रा और क्षोभिणी नाम की दो श्रुतियों के योग से बना है।

निषादकर्षु—पुं० [सं०] एक प्राचीन देश।

निषाद-प्रिय—पुं०[सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

निषादित—भू०कृ०[सं० नि √सद्+णिच् +क्त] १. बैठाया हुआ। २. पीड़ित।

निषादी (दिन्)—वि०[सं० नि√सद्+णिनि] १. बैठनेवाला। २. जो आराम कर रहा या सुस्ता रहा हो।
पुं० महावत। हाथीवान।

निषिक्त—भू० कृ०[सं० नि√सिच् (छिड़कना)+क्त] १. (स्थान) जिस पर जल छिड़का गया हो। २. (खेत) जो सींचा गया हो। ३. भीतर पहुँचाया हुआ। ४. जिसके अंदर या गर्भ में कोई चीज पहुँचाई गई हो।
पुं० वीर्य से उत्पन्न गर्भ।

निषिद्ध—भू०कृ०[सं० नि√सिध् (गति)+क्त] [भाव० निषिद्धि] १. जिसे उपयोग, प्रयोग, या व्यवहार में लाने का निषेध किया गया हो। २. रोका हुआ। २. बहुत ही बुरा और परम त्याज्य।

निषिद्धि—स्त्री० [सं० नि√सिध्+क्तिन्] १. निषिद्ध होने की अवस्था या भाव। २. निषेध।

निषूदन—वि० [सं० नि√सूद् (वध करना)+णिच्+ल्युट्—अन] समस्त पदों के अंत में, मारने या वध करनेवाला। जैसे—अरिनिषूदन।

निषेक—पुं० [सं० नि√सिच् (सींचना)+घञ्] [वि० निषिक्त] १. जल छिड़कने या जल से सिंचाई करने की क्रिया या भाव। २. चूने, टपकने या रसने की क्रिया या भाव। ३. वीर्य। ४. गर्भ धारण कराना। ५. किसी के अंदर कोई चीज या शक्ति भरना। ६. इस प्रकार भरी हुई वस्तु या शक्ति। (इम्प्रेगनेशन)

निषेचन—पुं० [सं० नि√सिच्+णिच्+ल्युट्—अन] १. छिड़कना। सींचना।

निषेध—पुं० [सं० नि√सिध्+घञ्] १. अधिकारपूर्वक और कारणवश यह कहना कि ऐसा मत करो। मना करने की क्रिया या भाव। मनाही। (फारबिडिंग) २. वह कथन या आज्ञा, जिसमें कोई बात न मानी गई हो या न किये जाने का विधान हो। (नेगेशन) ३. अपवाद। ४. अड़चन। बाधा। रुकावट। ५. अस्वीकृति। इन्कार।

निषेधक—वि० [सं० नि√सिध्+ण्वुल्—अक] १. (व्यक्ति) निषेध या मनाही करनेवाला। २. (आज्ञा या कथन) जिसके द्वारा निषेध या मनाही की जाय। ३. बाधक।

निषेधन—पुं० [सं० नि√सिध्+ल्युट्—अन] निषेध करने की क्रिया या भाव।

निषेध-पत्र—पुं० [ष०त०] वह पत्र जिसमें किसी को कोई काम न करने के लिए आदेश दिया गया हो।

निषेध-विधि—स्त्री० [सं० स०त०] वह आज्ञा, कथन या बात, जिससे किसी काम का निषेध किया जाय। जैसे—यह काम नहीं करना चाहिए। यह निषेध-विधि है।

निषेधाक्षेप—पुं० [सं० निषेध-आक्षेप, ब० स०] साहित्य में आक्षेप अलंकार के तीन भेदों में से एक, जिसमें कोई बात इस ढंग से मना की जाती है कि ध्वनि से उसे करने का विधान सूचित होता है।

निषेधात्मक—वि० [सं० निषेध-आत्मन्, ब०स०+कप्] १. (कथन या विधान) जो निषेध के रूप में हो। २. दे० 'नहिक्'।

निषेधाधिकार—पुं० [सं० निषेध-अधिकार, ष० त०] १. ऐसा अधिकार जिससे किसी को कोई काम करने से रोका जा सके। २. राज्य, संस्था आदि के प्रधान के हाथ में होनेवाला वह अधिकार, जिससे वह विधायिका सभा द्वारा पारित प्रस्ताव को कानून या विधि बनने से रोक सकता है। ३. किसी संस्था के सदस्यों के हाथ में रहनेवाला उक्त प्रकार का वह अधिकार, जिससे कोई स्वीकृत प्रस्ताव व्यवहार में आने से रोका जा सकता है (वीटो)

निषेधित—भू० कृ० [सं० नि√सिध्+णिच्+क्त] जिसके या जिसके लिए निषेध किया गया हो। मना किया हुआ।

निषेवण—पुं० [सं० नि√सेव् (सेवा)+ल्युट्—अन, णत्व] १. सेवा करना। २. आराधन या पूजा करना। ३. अनुष्ठान। ४. प्रयोग या व्यवहार में लाना। ५. बसना। रहना।

निषेवा—स्त्री० [सं० नि√सेव्+अङ—टाप्, षत्व] =सेवा।

निषेवित—भू० कृ० [सं० नि√सेव्+क्त, षत्व] जिसका निषेवण हुआ हो।

निषेवी (विन्)—वि० [सं० नि√सेव्+णिनि] [स्त्री० निषेविनी] १. निषेवण करनेवाला। २. सेवक। ३. आराधक।

निषेव्य—वि० [सं० नि√सेव्+ण्यत्] जिसका निषेवण या सेवन करना उचित हो या किया जाने को हो। सेवनीय।

निष्कंटक—वि० [सं० निर्-कंटक, ब० स०] १. जिसमें काँटे न हों। २. जिसमें कोई बाधा या बखेड़ा न हो। ३. (राज्य) जिसमें शासक का कोई वैरी शत्रु न हो।

अव्य० १. बिना किसी प्रकार की बाधा या रुकावट के। २. बिना किसी प्रकार के वैर या शत्रुता की संभावना के। बेखटके।

निष्कंठ—पुं० [सं० निर्-कंठ, ब० स०] वरुण (पेड़)।

निष्कंप—वि० [सं० निर्-कंप, ब० स०] जिसमें कंपन न हो रहा हो। जो काँप न रहा हो; फलतः स्थिर।

निष्कंभ—पुं० [सं०] गरुड़ के एक पुत्र।

निष्कंभु—पुं० [सं०] देवताओं के एक सेनापति। (पुराण)

निष्क—पुं० [सं० निस्√कै (शोभा)+क] १. वैदिक काल का एक प्रकार का सोने का सिक्का जिसका मान समय-समय पर घटता-बढ़ता रहता था। फिर भी साधारणतः यह १६ माशे का माना जाता था। २. उक्त सिक्के के बराबर की तौल। ३. सोना। ४. सोने का पात्र या बरतन। ६. चांडाल।

निष्कपट—वि० [सं० निर्—कपट, ब० स०] [भाव० निष्कपटता] कपट-रहित।

निष्कपटी—वि० [सं० निष्कपट] कपट-रहित।

निष्कर—वि० [सं० निर्—कर, ब० स०] जिस पर कर या शुल्क न लगता हो।

स्त्री० भूमि जिस पर कर न लगता हो। माफी।

निष्करुण—वि० [सं० निर्—करुण, ब० स०] जिसके हृदय में या जिसमें करुणा न हो। करुणा-रहित।

निष्कर्तन—पुं० [सं० निर्√कृत् (काटना)+ल्युट्—अन] काट या फाड़ कर अलग करना।

निष्कर्म—वि० [सं० निर्—कर्मन्, ब०स०] १. जो कोई कर्म न करता हो। २. जो कर्म करने पर भी उसमें आसक्ति न रखता या लिप्त न होता हो। अकर्मा।

निष्कर्मण्य—वि० [सं० निर्—कर्मण्य, प्रा० स०] अकर्मण्य। निकम्मा।

निष्कर्मा (र्मन्)—वि० [सं० निर्—कर्मन्, ब० स०] १. जो कर्मों में लिप्त न हो। २. जो किसी काम का न हो। निकम्मा।

निष्कर्ष—पुं० [सं० निस्√कृष् (खींचना)+घञ्] १. खींचकर निकालना या बाहर करना। २. खींच या निकालकर बाहर की हुई चीज या तत्त्व। ३. विचार-विमर्श, सोच-विचार आदि के उपरांत निकलनेवाला परिणाम या स्थिर होनेवाला सिद्धांत। (कन्क्लूजन) ४. निश्चय। ५. इस बात का विचार कि कोई चीज कितनी या कैसी है। ६. राजा या शासन का प्रजा को कष्ट देते हुए उससे धन खींचना या लेना।

निष्कर्षक—वि० [सं० निस्√कृष्+ण्वुल्—अक] निष्कर्ष या निष्कर्षण करनेवाला।

निष्कर्षण—पुं० [सं० निस्√कृष्+ल्युट्—अन] १. खींचकर निकालना या बाहर करना। २. दूर करना। ३. मिटाना। ४. घटाना।

निष्कर्षी (षिन्)—पुं० [सं० निस्√कृष्+णिनि] एक प्रकार का मरुत्।
वि०=निष्कर्ष।

निष्कलंक—वि० [सं० निर्-कलंक, ब० स०] जिस पर या जिसमें कलंक न हो।
पुं० पुराणानुसार एक तीर्थ जिसमें स्नान करने से कलंक या दोष नष्ट हो जाते हैं।

निष्कलंकित—वि०=निष्कलंक।

निष्कलंकी—वि०=निष्कलंक।

निष्कल—वि० [सं० निर्-कला, ब० स०] [स्त्री० निष्कला] १. (व्यक्ति) जो कोई कला या हुनर न जानता हो। २. (कार्य) जो कलापूर्ण ढंग से न किया गया हो। ३. अंगहीन। ४. जिसका वीर्य नष्ट हो चुका हो। जैसे—नपुंसक या वृद्ध। ५. पूरा। समूचा।
पुं० ब्रह्म।

निष्कला—स्त्री० [सं० निष्कल+टाप्] ऐसी स्त्री जिसे मासिक-धर्म होना बंद हो गया हो।

निष्कली—स्त्री० [सं० निष्कल+ङीष्] =निष्कला।

निष्कलुष—वि० [सं० निर्-कलुष, ब० स०] कलुष-रहित। निर्मल या पवित्र।

निष्कषाय—वि० [सं० निर्-कषाय, ब० स०] १. विशुद्ध चित्तवाला। २. मुमुक्षु।
पुं० एक जिन देव।

निष्काम—वि० [सं० निर्-काम, ब० स०] [भाव० निष्कामता] १. (व्यक्ति) जिसके मन में कामनाएँ या वासनाएँ न हों, फलतः जो सब बातों से निर्लिप्त रहता हो। २. (कार्य) जो बिना किसी प्रकार की कामना के किया जाय।

निष्कामी—वि०=निष्काम (व्यक्ति)।

निष्कारण—वि० [सं० निर्-कारण, ब० स०] जिसका कोई कारण या सबब न हो।
अव्य० १. बिना किसी कारण या वजह के। २. व्यर्थ।
पुं० १. कहीं ले जाना या हटाना। २. मारण। वध।

निष्कालक—वि० [सं०निर्√कल् (गति)+णिच्+ण्वुल्—अक] जिसके बाल, रोएँ आदि मूँड़े गए हों।

निष्कालन—पुं० [सं० निर्√कल्+णिच्+ल्युट्—अन] १. चलाने की क्रिया या भाव। २. पशुओं आदि को निकालना या भगाना। ३. मार डालना। वध।

निष्कालिक—वि० [सं० निर्-कालिक, प्रा० स०] १. जो कुछ ही दिन और जीने को हो। २. जिसका अंत निकट हो। ३. अजेय।

निष्काश—पुं० [सं० निर्√काश् (शोभित होना)+अच्] १. किसी पदार्थ का बाहर निकला हुआ भाग। (प्रोजेक्शन) जैसे—मकान का बरामदा।

निष्काशन—पुं० निष्कासन। (दे०)

निष्काशित—भू० कृ०=निष्कासित।

निष्काष—पुं० [सं० निर्√कष् (खरोचना)+घञ्] दूध का वह भाग जो उसके अधिक औटाये जाने के कारण बरतन में ही लगकर रह गया हो और खुरचकर निकाला जाय।

निष्कास—पुं० [सं० निर्√कास् (खाँसना)+घञ्] १. बाहर निकालने की क्रिया या भाव। २. किसी पदार्थ का आगे या बाहर निकला हुआ भाग। ३. वह अंश या स्थान जहाँ से कोई चीज बाहर निकलकर आगे जाती हो। (आउट-फॉल)

निष्कासन—पुं० [सं० निर्√कास्+ल्युट्—अन] १. किसी क्षेत्र या स्थान में निवास करनेवाले व्यक्ति को वहाँ से स्थायी रूप से और अधिकार या बल-पूर्वक बाहर करना। २. किसी कर्मचारी को उसके पद से हटाना और उसे नौकरी से छुटाना। ३. देश से बाहर निकाले जाने का दंड।

निष्कासित—भू० कृ० [सं० निर्√कास्+क्त] जिसका निष्कासन हुआ हो। किसी क्षेत्र, पद, स्थान आदि से निकाला या हटाया हुआ।

निष्कासिनी—स्त्री० [सं० निर्√कास्+णिनि+ङीप्] वह दासी जिस पर स्वामी ने कोई प्रतिबंध न लगाया हो।

निष्किंचन—वि० [सं०निर्-किञ्चन, ब० स०] जिसके पास कुछ भी न हो। अकिंचन। दरिद्र।

निष्किल्विष—वि० [सं० निर्-किल्विष, ब० स०] किल्विष (दोष या पाप) से रहित।

निष्कीटक—वि० [सं० निर्-कीट, ब० स०] १. कीटाणुओं आदि से रहित। २. कीटाणुओं का नाश करनेवाला।
पुं० वह प्रक्रिया या यंत्र जिसकी सहायता से कीटाणु नष्ट किये जाते हों। (स्टर्लाईज़र)

निष्कीटन—पुं० [सं० निष्कीट+णिच्+ल्युट्—अन] १. किसी वस्तु को तपाकर अथवा रासायनिक प्रक्रियाओं से कीटों या कीटाणुओं से रहित करना। २. उत्पादन करनेवाले कीटाणु नष्ट करके अनुर्वर, नपुंसक या बाँझ करना। (स्टर्लाइजेशन)

निष्कीटित—भू० कृ० [सं० निष्कीट+णिच्+क्त] जो कीटाणुओं से रहित किया गया हो। (स्टर्लाइज्ड)

निष्कुंभ—वि० [सं० निर्-कुंभ, ब० स०] कुंभ रहित।
पुं० [निस्√कुंभ् (ढाँकना)+अच्] दंती वृक्ष।

निष्कुट—पुं० [सं० निस्√कुट् (टेढ़ा होना)+क] १. घर के पास का उद्यान। नजर-बाग। २. खेत। ३. किवाड़ा। दरवाजा। ४. अंतः पुर। जनानखाना। ५. एक प्राचीन पर्वत। ६. खोखला वृक्ष।

निष्कुटि—स्त्री० [सं० निस्√कुट्+इन्] बड़ी इलायची।

निष्कुटिका—स्त्री० [सं०] कुमार की अनुचरी एक मातृका। (पुराण)

निष्कुटी—स्त्री० [सं० निष्कुटि+ङीष्] बड़ी इलायची।

निष्कुल—वि० [सं० निर्-कुल, ब० स०] [स्त्री० निष्कुला] १. जिसके कुल में कोई न रह गया हो। २. जो अपने किसी दोष या पाप के कारण अपने कुल या परिवार से अलग कर दिया या निकाल दिया गया हो।

निष्कुलीन—वि० [सं० निर्-कुलीन, प्रा० स०] अ-कुलीन।

निष्कुषित—भू० कृ० [सं० निस्√कुष् (खींचना)+क्त] १. छीला हुआ। २. जिसकी खाल उतार ली गई हो। ३. जहाँ-तहाँ काटा या खाया हुआ। (जैसे—कीटनिष्कुषित) खुरचकर निकाला हुआ। ४. निष्कासित।

निष्कुह—पुं० [सं० निर्√कुह् (विस्मित करना)+अच्] पेड़ का खोखला अंश। कोटर। खोंड़रा।

निष्कूज—वि० [सं० निर्-कूज, ब० स०] ध्वनि या शब्द से रहित।

निष्कूट—वि० [सं० निर्-कूट, ब० स०] कूट या छल-कपट से रहित।

निष्कृत—भू० कृ० [सं० निर्√कृष् (खींचना)+क्त] [भाव० निष्कृति] १. हटाया हुआ। २. मुक्त। ३. उपेक्षित। तिरस्कृत। ४. जिसे क्षमा मिली हो।
पुं० १. मिलन-स्थान। २. प्रायश्चित्त।

निष्कृति—स्त्री० [सं० निर्√कृष्+क्तिन्] १. हराने की क्रिया या भाव। २. छुटकारा। मुक्ति। ३. उपेक्षा। तिरस्कार। ४. क्षमा। ५. प्रायश्चित्त।

निष्कृति-धन—पुं० [सं० मध्य० स०] वह धन जो किसी को अपने वश में से निकालकर मुक्त करने के बदले में अथवा किसी को किसी के वश से मुक्त कराने के बदले में लिया या दिया जाय। (रैन्सम)

निष्कृप—वि० [सं० निर्-कृपा, ब० स०] १. दूसरों पर कृपा न करनेवाला। २. तेज। धारदार।

निष्कृष्ट—वि० [सं० निर्√कृष्+क्त] १. निचोड़कर निकाला हुआ। २. सारभूत

निष्कैतव—वि० [सं०] निश्छल।

निष्कैवल्य—वि० [सं० निर्-कैवल्य, ब० स०] १. विशुद्ध। २. पूर्ण। ३. मोक्ष-रहित।

निष्कोषण—पुं० [सं० निर्√कुष् (छीलना)+ल्युट्-अन] १. छीलना। २. शरीर पर से खाल उतारना। ३. काट या फाड़कर छिन्न-भिन्न या नष्ट-भ्रष्ट करना। ४. खुरचना। ५. निष्कासन।

निष्क्रम—वि० [सं० निर्-क्रम, ब० स०] क्रम-हीन। बे-तरतीब।
पुं० १. मन की तृप्ति। किसी को जाति से बाहर निकालना। ३. दे० 'निष्क्रमण'।

निष्क्रमण—पुं० [सं० निर्√क्रम् (गति)+ल्युट्-अन] [वि० निष्क्रांत] १. बाहर निकालना। २. हिन्दुओं में एक संस्कार जिसमें चार महीने के शिशुओं को पहले-पहल घर से बाहर निकालकर सूर्य के दर्शन कराते हैं।

निष्क्रमणार्थी(र्थिन्)—पुं० [सं० निष्क्रमण-अर्थिन्, ष० त०] १. कहीं से निकलने की इच्छा रखनेवाला। २. दे० 'निष्क्रमिती'।

निष्क्रमणिका—स्त्री० [सं०] हिन्दुओं का निष्क्रमण नामक संस्कार।

निष्क्रमिती—पुं० [सं० निष्क्रमी] वह जो किसी संकट आदि से बचने के लिए अपना निवास स्थान छोड़कर दूसरी जगह जाय या जाना चाहे। (इवैकुई)

निष्क्रय—पुं० [सं० निर्√क्री (विनिमय)+अच्] १. वह धन जो किसी को कोई काम या सेवा करने के बदले या किसी वस्तु का उपयोग करने के बदले में दिया जाय। जैसे—भाड़ा, मजदूरी, वेतन आदि। २. इनाम। पुरस्कार। ३. किसी चीज का दाम। मूल्य। ४. चीजों की अदला-बदली। विनिमय। ५. बेचने की क्रिया या भाव। बिक्री। ६. किसी काम या बात से छुटकारा पाने के लिए उसके बदले में दिया जानेवाला धन। जैसे—(क) यदि गौ दान न कर सके, तो उसका कुछ निष्क्रय दे दो। (ख) ओल में रखा हुआ व्यक्ति प्रायः निष्क्रय देकर छुड़ाया जाता है। ७. शक्ति। सामर्थ्य। ८. उचित धन देकर दूसरे के हाथ में पड़ी हुई चीज अपने हाथ में करना या लेना। (रिडेम्पशन)

निष्क्रयण—पुं० [सं० निर्√क्री+ल्युट्-अन] १. निष्क्रय करने की क्रिया या भाव। २. निष्क्रय के रूप में दिया जानेवाला धन या रकम।

निष्क्रांत—भू० कृ० [सं० निर्√क्रम्+क्त] १. निकला या निकाला हुआ। २. जिसका निष्क्रमण हो चुका हो। ३. (संपत्ति) जिसका स्वामी जिसे छोड़कर दूसरे देश में चला गया हो।

निष्क्रामित—वि०=निष्क्रांत।

निष्क्राम्य—वि० [सं० निर्√क्रम्+ण्यत्] (माल) जो बाहर भेजा जाने को हो या भेजा जाता हो। चलानी (माल)।

निष्क्रिय—वि० [सं० निर्-क्रिया, ब० स०] [भाव० निष्क्रियता] १. जिसमें किसी किसी प्रकार की क्रिया या व्यापार न हो। निश्चेष्ट। जैसे—निष्क्रिय प्रतिरोध। २. जो किसी किसी प्रकार की क्रिया या चेष्टा न करता हो अथवा जिसकी क्रिया या गति बीच में कुछ समय के लिए ठहर या रुक गई हो। ३. जो विहित कर्म न करता हो।
पुं० ब्रह्म जो सब प्रकार की क्रियाओं, चेष्टाओं और व्यापारों से रहित माना जाता है।

निष्क्रियता—स्त्री० [सं० निष्क्रय+तल्+टाप्] निष्क्रिय होने की अवस्था या भाव।

निष्क्रिय-प्रतिरोध—पुं० [सं० कर्म० स०] किसी अनुचित आज्ञा या आदेश का किया जानेवाला ऐसा प्रतिरोध या विरोध जिसमें मिलनेवाले दंड, या होनेवाली हानि की परवाह नहीं की जाती। (पैसिव रेजिस्टेन्स)

निष्क्रीत—वि० [सं० निर्√क्री+क्त] १. जिससे या जिसके लिए निष्क्रय दिया गया हो। (कम्पेन्सेटेड) २. (ऋण या देन) जो चुका दिया गया हो। (रिडीम्ड)

निष्क्लेश—वि० [सं० निर्+क्लेश, ब० स०] १. जिसे किसी प्रकार का क्लेश न हो। सब प्रकार के क्लेशों से मुक्त या रहित। २. बौद्धधर्म में, दस प्रकार के क्लेशों से मुक्त।

निष्क्वाथ—पुं० [सं० निर्-क्वाथ, ब० स०] मांस आदि का रसा। शोरबा।

निष्टानक—पुं० [सं० निर्-तानक, प्रा० स०, षत्व, ष्टुत्व] १. गर्जन। २. कलरव।

निष्टि—स्त्री० [सं०√निश् (एकाग्र होना)+क्तिच्] दिति का एक नाम।

निष्टिग्री—स्त्री० [सं०] अदिति का एक नाम।

निष्ट्य—वि० [सं० निस्+त्यप्, षत्व, ष्टुत्व] परकीय। बाहरी।
पुं० १. चांडाल। २. वैदिक काल में एक प्रकार के म्लेच्छ।

निष्ठ—वि० [सं० नि√स्था (ठहरना)+क] १. ठहरा हुआ। स्थित। २. किसी काम या बात में पूरी तरह से लगा रहनेवाला। जैसे—कर्म-निष्ठ। ३ किसी के प्रति निष्ठा (भक्ति और श्रद्धा) रखनेवाला। ४. विश्वास रखनेवाला। जैसे—धर्म-निष्ठ। ५. किसी कार्य या विषय में बराबर मन से लगा रहनेवाला। जैसे—कर्तव्य-निष्ठ। (प्रायः यौगिक पदों के अंत में प्रयुक्त)

निष्ठांत—वि० [सं० निष्ठा (नाश)+अन्त, ब० स०] नश्वर।

निष्ठा—स्त्री० [सं० नि√स्था+अङ+टाप्] १. अवस्था। दशा। स्थिति। २. आधार। नींव। ३. दृढ़ता-पूर्वक टिके या ठहरे रहने की अवस्था या भाव। ४. मन में होनेवाला दृढ़ निश्चय या विश्वास ५. किसी बात, या व्यक्ति के संबंध में होनेवाली वह भावुकतापूर्ण

मनोवृत्ति जो हमारी आंतरिक पूज्य बुद्धि, विश्वास, श्रद्धा आदि से उत्पन्न होती है और जो हमें उस (बात, विषय या व्यक्ति) के प्रति विशिष्ट रूप से आसक्त, प्रवृत्त तथा संलग्न रखती है। किसी के प्रति होनेवाली मन की ऐसी एकांत अनुरक्ति या प्रवृत्ति जो बहुत-कुछ भक्ति की सीमा तक पहुँचती हुई होती है। जैसे—अपने कर्त्तव्य, गुरु, धर्म या नेता के प्रति होनेवाली निष्ठा। ६. धार्मिक क्षेत्र में, ज्ञान की वह अंतिम या चरम अवस्था, जिसमें आत्मा पूर्ण रूप से ब्रह्म में लीन हो जाती है। ७. विष्णु जिनमें प्रलय के समय समस्त भूतों का विलय हो जाता है। ८. किसी चीज या बात का नियत समय पर होनेवाला अंत या समाप्ति। ९. विनाश । १०. दक्षता । प्रवीणता । ११. विपत्ति। संकट।

निष्ठान—पुं० [सं० नि√स्था+ल्युट्—अन] चटनी आदि चटपटी चीजें।

निष्ठानक—पुं० [सं० निष्ठान+कन्] =निष्ठान।

निष्ठावान् (वत्)—वि० [सं० निष्ठा+मतुप्] जिसकी किसी के प्रति निष्ठा हो। निष्ठा रखनेवाला।

निष्ठित—भू० कृ० [सं० नि√स्था+क्त] १. अच्छी तरह टिका या ठहरा हुआ। जमकर लगा हुआ। दृढ़ रूप से स्थिति। २. (व्यक्ति) जिसमें निष्ठा हो। निष्ठावान्।

निष्ठीव—पुं० [सं० नि√ष्ठिव् (थूकना)+घञ्, दीर्घ] =निष्ठीवन (थूक)।

निष्ठीवन—पुं० [सं० नि√ष्ठिव्+ल्युट्—अन, दीर्घ] १. मुँह से थूक या कफ निकालकर बाहर फेंकना। २. खखार। थूक। ३. वैद्यक में, एक औषध, जिसका व्यवहार गले या फेफड़े से कफ निकालने में किया जाता है।

निष्ठुर—वि० [सं० नि√स्था+उरच्] [स्त्री० निष्ठुरा] [भाव० निष्ठुरता] १. कठिन। कड़ा। सख्त। २. उग्र। तेज। ३. जिसके हृदय में दया, ममता, मोह आदि न हो। दूसरों के कष्टों की परवाह न करनेवाला।

निष्ठुरता—स्त्री० [सं० निष्ठुर+तल्—टाप्] १ निष्ठुर होने की अवस्था या भाव। २. आचरण व्यवहार आदि की निर्दयता-पूर्ण कठोरता।

निष्ठुरिक—पुं० [सं०] एक नाग जिसका उल्लेख महाभारत में है।

निष्ठैवन—पुं०=निष्ठीवन (थूक)।

निष्ठ्यूत—वि० [सं० नि√ष्ठिव्+क्त, ऊठ्] १. थूका हुआ। २. उगला हुआ। ३. बाहर निकाला हुआ। ४. कहा हुआ। उक्त।

निष्ण—वि० [सं० नि√स्ना (नहाना)+क, षत्व, णत्व] =निष्णात। वि० [सं०] (काम) जो संपन्न या पूरा किया जा चुका हो। (एक्-म्पिलश्ड)

निष्णात—वि० [सं० नि√स्ना+क्त, षत्व, णत्व] १. किसी विषय का बहुत अच्छा ज्ञाता या जानकार। २. किसी बात में बहुत अधिक-निपुण। ३. ठीक तरह से पूरा या समाप्त किया हुआ। ४. उत्तम। श्रेष्ठ।

निष्पंक—वि० [सं० निर्-पंक, ब० स०] १. (भूमि) जिसमें कीचड़ न हो। २. (वस्तु) जिसे कीचड़ न लगा हो। ३. साफ-सुथरा। स्वच्छ।

निष्पंद—वि० [सं० नि-स्पन्द, ब० स०] जिसमें स्पंदन न हो या न होता हो। स्पंदन-हीन।

निष्पक्व—वि० [सं० निस्-पक्व, प्रा० स०] [भाव० निष्पक्वता] अच्छी तरह पका या पकाया हुआ।

निष्पक्ष—वि० [सं० निर्-पक्ष, ब० स०] [भाव० निष्पक्षता] १. (व्यक्ति) जो किसी पक्ष या दल में सम्मिलित न हो। २. जिसकी किसी पक्ष से विशेष सहानुभूति न हो। तटस्थ। ३. बिना पक्षपात के होने-वाला। पक्षपात-रहित। जैसे—निष्पक्ष न्याय।

निष्पक्षता—स्त्री० [सं० निष्पक्ष+तल्+टाप्] १. निष्पक्ष होने की अवस्था या भाव। २. निष्पक्ष होकर किया जानेवाला आचरण।

निष्पताक—वि० [सं० निर्-पताक, ब० स०] बिना पताका का। पताका-रहित।

निष्पत्ति—स्त्री० [सं० निर्√पद् (गति)+क्तिन्] १. आविर्भाव। उत्पत्ति। जन्म। २. परिपाक या पूर्णता। ३. आज्ञा, आदेश, निश्चय आदि के अनुसार किसी कार्य का किया जाना। (एक्जिक्यूशन) ४. उद्देश्य, कार्य आदि की सिद्धि। ५. निर्वाह। ६. मीमांसा। ८. निश्चय। ९. हठयोग में, नाद की चार अवस्थाओं में से अंतिम अवस्था।

निष्पत्ति लेख—पुं० [प० त०] इस बात का सूचक लेख कि अमुक कार्य या व्यवहार से हमारा कोई संबंध नहीं रह गया। फारखती।

निष्पत्ति-विधि—स्त्री० [प० त०] दे० 'प्रत्ययवृत्ति'।

निष्पत्र—वि० [सं० निर्-पत्र, ब० स०] १. जिसमें पत्ते न हों। पत्र-हीन। २. जिसे पंख न हों।

निष्पत्रिका—स्त्री० [सं० निष्पत्र+क+टाप्, इत्व] करील (पेड़)।

निष्पद—वि० [सं० निर्-पद, ब० स०] १. जिसके पद या पैर न हों। पुं० बिना पहियोंवाला यान या सवारी।

निष्पन्न—वि० [सं० निर्√पद+क्त] १. जन्मा हुआ। उत्पन्न। २. भली-भाँति पूरा किया हुआ। ३. जो आज्ञा, आदेश, निश्चय आदि के अनुसार पूरा किया गया हो। (एकजिक्यूटेड)

निष्पराक्रम—वि० [सं० निर्-पराक्रम, ब० स०] पराक्रमहीन।

निष्परिकर—वि० [सं० निर्-परिकर, ब० स०] जिसने कोई तैयारी न की हो।

निष्परिग्रह—वि० [सं० निर्-परिग्रह, ब० स०] १. जिसके पास कुछ न हो। २. जो दान आदि न ले। ३. जिसकी पत्नी न हो; अर्थात् कुँवारा या रँडुआ। ४. विषय-वासना आदि से अलग रहनेवाला। पुं० १. यह प्रतिज्ञा या व्रत कि हम किसी से दान न लेंगे। २. यह प्रतिज्ञा या व्रत कि हम विवाह न करेंगे। या गृहस्थी बनाकर न रहेंगे।

निष्परुष—वि० [सं० निर्-परुष, ब० स०] जो सुनने में परुष अर्थात् कर्कश न हो। कोमल। और मधुर।

निष्पर्यन्त—वि० [सं० निर्-पर्यंत, ब० स०] पर्यंत या सीमा से रहित। अपार। असीम।

निष्पलक—अव्य० [सं० निर्+हिं० पलक] बिना पलक गिराये या झपकाये।

निष्पवन—पुं० [सं० निस्√पू (पवित्र करना)+ल्युट्—अन] धान आदि की भूसी निकालना। कूटना। दाँना।

निष्पात—पुं० [सं० निस्√पत् (गिरना)+घञ्] १. न गिरना। २. पूरी तरह से गिरना।

निष्पाद—पुं० [सं० निर्√पद्+घञ्] १. अनाज की भूसी निकालने का काम। दाँना। २. मटर। ३. सेम। ४. बोड़ा। लोबिया।

निष्पादक—वि० [सं० निर्√पद्+णिच्+ण्वुल्—अक] निष्पत्ति या निष्पादन करनेवाला।

पुं० १. आज्ञा, आदेश, निश्चय आदि के अनुसार कोई काम करनेवाला व्यक्ति। २. वह जो किसी की वसीयत में उल्लखित बातों का पालन या व्यवस्था करने का अधिकारी बनाया गया हो। (एकजिक्यूटर)।

निष्पादन—पुं० [सं० निर्√पद्+णिच्+ल्युट्—अन] आज्ञा, आदेश, नियम, निश्चय आदि के अनुसार कोई काम ठीक तरह से पूरा करना। तामील। (एकजिक्यूशन)

निष्पादित—भू० कृ० [सं० निर्√पद्+णिच्+क्त] जिसकी निष्पत्ति या निष्पादन हो चुका हो। निष्पन्न।

निष्पाप—वि० [सं० निर्-पाप, ब० स०] १. (व्यक्ति) जिसने पाप न किया हो। २. (कार्य) जिसके करने से पाप न लगता हो।

निष्पार—वि० [सं०] =अपार।

निष्पाव—पुं० [सं० निर्√पू+घञ्] १. अनाज के दानों आदि की भूसी निकालना। २. उक्त काम के लिए सूप से की जानेवाली हवा। ३. सेम।

निष्पीड़न—पुं० [सं० निस्√पीड् (दबाव)+ल्युट्—अन] निचोड़ने की क्रिया या भाव।

निष्पुत्र—वि० [सं० निर्-पुत्र, ब० स०] पुत्र-हीन।

निष्पुरुष—वि० [सं० निर्-पुरुष, ब० स०] १. पुरुषहीन। २. जहाँ आबादी न हो।

निष्पुलाक—वि० [सं० निर्-पुलाक, ब० स०] (अन्न) जिसमें से सारहीन दाने निकाल दिए गए हों। २. भूसी निकाला हुआ।

पुं० आगामी उत्सर्पिणी के १४ वें अर्हत् का नाम।

निष्पेषण—पुं० [सं० निर्√पिष् (पीसना)+ल्युट्—अन] १. पेरना। २. पीसना। ३. रगड़ना।

निष्पेषित—भू० कृ० [सं० निर्√पिष्+णिच्+क्त] १. पेरा हुआ। २. पीसा हुआ।

निष्पौरुष—वि० [सं० निर्-पौरुष, ब० स०] पौरुष-हीन।

निष्प्रकंप—पुं० [सं० निर्-प्रकंप, ब० स०] तेरहवें मन्वतर के सप्तर्पियों में से एक।

निष्प्रकारक—वि० [सं० निर्-प्रकार, ब० स०, कप्] जो किसी विशिष्ट प्रकार का न हो, अर्थात् साधारण या सामान्य। जैसे—निष्प्रकारक ज्ञान।

निष्प्रकाश—वि० [सं० निर्-प्रकाश, ब० स०] अंधकार-पूर्ण।

निष्प्रचार—वि० [सं० निर्-प्रचार, ब० स०] जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर न जा सके। जिसमें गति न हो। न चल सकने योग्य।

पुं० गति न होने की अवस्था या भाव।

निष्प्रताप—वि० [सं० निर्-प्रताप, ब० स०] प्रताप-रहित।

निष्प्रतिघ—वि० [सं० निर्-प्रतिघ, ब० स०] जिसमें कोई बाधा या रुकावट न हो। अबाध।

निष्प्रतिभ—वि० [सं० निर्-प्रतिभा, ब० स०] जिसमें प्रतिभा न हो या न रह गई हो।

निष्प्रतीकार—वि० [सं० निर्-प्रतीकार, ब० स०] जिसका प्रतिकार न किया जा सके या न हो सके।

निष्प्रभ—वि० [सं० निर्-प्रभा, ब० स०] प्रभा-हीन।

निष्प्रयोजन—वि० [सं० निर्-प्रयोजन, ब० स०] १. जिसमें कोई प्रयोजन या मतलब न हो। जैसे—निष्प्रयोजन प्रीति। २. जिससे कोई प्रयोजन सिद्ध न होता हो। व्यर्थ का। निरर्थक। फजूल।

अव्य० बिना किसी प्रयोजन या मतलब के।

निष्प्राण—वि० [सं० निर्-प्राण, ब० स०] १. जिसमें प्राण न हों। निर्जीव। २. मरा हुआ। मृत। ३. जिसमें कोई महत्त्वपूर्ण गुण न हो। जैसे—निष्प्राण साहित्य।

निष्प्रेही—वि०=निष्पृह।

निष्फल—वि० [सं० निर्-फल, ब० स०] १. (कार्य या वात) जिससे किसी फल की प्राप्ति या सिद्धि न हो। जैसे—निष्फल प्रयत्न। २. (पौधा या वृक्ष) जिसमें फल न लगता हो या न लगा हो। ३. (व्यक्ति) जिसे अंड-कोश न हो या जिसका अंड-कोश निकाल लिया गया हो।

पुं० धान का पयाल।

निष्फला—वि० [सं० निष्फल+टाप्] (स्त्री) जिसका रजोधर्म होना बंद हो गया हो।

निष्फलि—पुं० [सं०] अस्त्रों को काटने या निष्फल करनेवाला अस्त्र।

निष्यंद—पुं० =निस्यंद।

निसंक—वि०=निःशंक।

निसंकी—वि० [सं० निःशंक] १. निःशंक। २. निःशंक हो कर बुरे काम करनेवाला। उदा०—नीच, निसील, निरीस निसंकी।—तुलसी।

निसंग*—वि०=निस्संग।

निसँठ†—वि० [हिं० नि+सँठ=पूँजी] जिसके पास धन या पूँजी न हो। निर्धन। गरीब।

निसंस†—वि० [हिं० नि+साँस] जो साँस न ले रहा हो; अर्थात् मरा हुआ या मरे हुए के समान।

निसंस†—वि०=नृशंस (क्रूर)।

निसंसना—अ० [सं० निःश्वास] १. निःश्वास लेना। २. हाँफना।

निस†—स्त्री०=निशा (रात्रि)।

निसक†—वि० [सं० निः+शक्त] अशक्त। कमजोर। दुर्बल।

निसकर†—पुं०=निशाकर (चंद्रमा)।

निसचय*—पुं०=निश्चय।

निसत—वि० [हिं० नि+सं० सत्य] असत्य। मिथ्या।

वि० [हिं० नि+सत] जिसमें कुछ भी सत्त्व या सार न हो। निःसत्व।

निसतरना—अ० [सं० निस्तार] निस्तार अर्थात् छुटकारा पाना।

स० निस्तार या उद्धार करना।

निसतार—पुं०=निस्तार।

निसतारना*—स० [सं० निस्तार+ना (प्रत्य०)] निस्तार करना। छुटकारा देना।

निसद्द†—वि०=निःशब्द।

निस-द्योस—अव्य० [सं० निशि+दिवस] रात-दिन। नित्य। सदा।

निसनेही—स्त्री०=निः स्नेहा (अलसी)।

निसबत—स्त्री० [अ० निस्वत] १. संबंध। लगाव। ताल्लुक।

२. वैवाहिक संबंध की ठहरौनी या पक्की बात-चीत। मँगनी। सगाई।
३. तुलना। मुकाबला।
क्रि० प्र०—देना।

निसबती—वि० [अ०] १. 'निसबत' का। २. जिससे निसबत (रिश्ता या संबंध) हो।
पद—निसबती भाई=बहनोई या साला।

निसयाना†—वि० [हिं० नि+सयाना?] १. जिसकी सुध-बुध खो गई हो। २. अनजान।

निसरना†—अ०=निकलना।

निसराना†—स० १.=निकालना। २.=निकलवाना।

निसर्ग—पुं० [सं० नि√सृज् (छोड़ना)+घञ्] [वि० नैसर्गिक] १. उपहार, भेंट, दान, दक्षिणा आदि के रूप में किसी को कुछ देना। २. छोड़ना या त्यागना। उत्सर्ग करना। ३. बाहर निकालना। ४. मल त्याग करना। ५. आकृति या रूप। ६. विनिमय। ७. सृष्टि। ८. वह तत्त्व या शक्ति जिससे सृष्टि के समस्त कार्य या व्यापार संपन्न होते हैं। प्रकृति। ९. स्वभाव। प्रकृति। (नेचर, अंतिम दोनों अर्थों में)

निसर्गज—वि० [सं० निसर्ग√जन् (उत्पत्ति)+ड] निसर्ग से उत्पन्न। नैसर्गिक। प्राकृतिक।

निसर्गतः (तस्)—अव्य० [सं० निसर्ग+तस्] निसर्ग या प्रकृति के अनुसार; अथवा उसकी प्रेरणा से। प्राकृतिक या स्वाभाविक रूप से। प्रकृतिशः। स्वभावतः।

निसर्गवाद—पुं०=प्रकृतिवाद।

निसर्गवादी—पुं०=प्रकृतिवादी।

निसर्ग-विज्ञान—पुं०=प्रकृति-विज्ञान।

निसर्गविद्—पुं०=प्रकृतिवेत्ता।

निसर्गवेत्ता—पुं०=प्रकृतिवेत्ता।

निसर्ग-सिद्ध—वि० [सं० पं० त०] १. प्राकृतिक। २. स्वभाव-सिद्ध। स्वाभाविक।

निसर्गायु (स्)—स्त्री० [सं० निसर्ग-आयुस्, मध्य०स०] फलित ज्योतिष में आयु निकालने की एक गणना।

नि-सवाद—वि० [सं० निः स्वाद] जिसमें कोई स्वाद न हो। स्वाद-रहित। बे-सवादी।

निसवासर—पुं० [सं० निशिवासर] रात और दिन।
अव्य० नित्य। सदा।

निसस—वि०=निसँस (क्रूर)।

निसहाय—वि०=निस्सहाय (असहाय)।

निसांक—अव्य०, वि०=निश्शंक।

निसाँस—पुं० [सं० निःश्वास] ठंढा साँस। लंबा साँस।
वि०=निसाँसा।

निसाँसा—वि० [हिं० नि+साँस] [स्त्री० निसाँसी] जो साँस न ले रहा हो या न ले सकता हो; अर्थात् मरा हुआ या मरे हुए के समान।
उदा०—अब हौं भरौं निसाँसी, हिए न आवै साँस।—जायसी।

निसाँसी—वि०=निसाँसा।

निसा—स्त्री० [हिं० निशाखातिर] १. तृप्ति। तुष्टि।
पद—निसा भर=जी भर के। खूब अच्छी तरह।
२. संतोष।
†पुं०=नशा।
†स्त्री०=निशा (रात)।

निसाकर*—पुं०=निशाकर (चंद्रमा)।

निसाचर†—वि०, पुं०=निशाचर।

निसाथा†—वि० [हिं० नि+साथ] जिसके साथ और कोई न हो। अकेला।

निसाद—पुं० [सं० निषाद] १. भंगी। मेहतर। २. दे० 'निषाद'।

निसान—पुं० [फा० निशान] १. निशान। चिह्न। २. धौंसा। नगाड़ा।

निसानन—पुं० [सं० निशानन] संध्या का समय। प्रदोष काल।

निसाना†—पुं०=निशाना।

निसानाथ—पुं०=निशानाथ (चंद्रमा)।

निसानी—स्त्री०=निशानी।

निसापति—पुं०=निशापति (चंद्रमा)।

निसाफ†—पुं०=इंसाफ (न्याय)।

निसार—पुं० [सं० नि√सृ (गति)+घञ्] १. समूह। २. सोनापाढा।
पुं० [अ०] १. कुरबान। बलि। २. निछावर। सदका। ३. मुगल शासन काल का एक सिक्का जो रुपये के चौथाई मूल्य का होता था।
†वि०=निस्सार।

निसारक—पुं० [सं०] शालक राग का एक भेद।
†वि० [हिं० निसारना=निकालना] निकालनेवाला।

निसारना—स० [सं० निःसरण] निकालना। बाहर करना।
स० [अ० निसार] निछावर करना।

निसारा—स्त्री० [सं० निः सारा] केले का पेड़।
पुं० [अ०] ईसाई। मसीही।

निसावारा—पुं० [देश०] कबूतरों की एक जाति।

निसास—पुं०=निसाँस (निःश्वास)।
वि०=निसाँसा (बेदम)।

निसासी—वि०=निसाँसा।

निसिथ—पुं० [सं०] सँभालू नामक पेड़।

निसि—स्त्री०=निशि।

निसिकर—पुं०=निशाकर (चंद्रमा)।

निसिचर—वि०, पुं०=निशाचर।

निसिचारी—वि०, पुं०=निशाचर।

निसिदिन—अव्य० [सं० निशिदिन] १. रात-दिन। आठों पहर। २. हर समय। सदा।
पुं० रात और दिन।

निसिनाथ—पुं०=निशिनाथ (चंद्रमा)।

निसिनाह—पुं०=निशिनाथ (चंद्रमा)।

निसि-निसि—स्त्री० [सं० निशि निशि] अर्ध-रात्रि। निशीथ। आधी रात।

निसिपति—पुं०=निशिपति (चंद्रमा)।

निसिपाल—पुं०=निशिपाल (चंद्रमा)।

निसिमणि—पुं०=निशामणि (चंद्रमा)।

निसियर—पुं०=निशिकर (चंद्रमा)।

निसिवासर—पुं०=निसिदिन (रात-दिन)।

निसीठा—वि० [सं० निः+हिं० सीठी] [स्त्री० निसीठी] १. जिसमें कुछ तत्त्व न हो। निःसार। २. नीरस।

निसीथ—पुं०=निशीथ (अर्द्ध रात्रि)।

निसुंद—पुं० [सं०] प्रह्लाद के भाई ह्लाद के पुत्र का नाम।

निसुंभ†—पुं०=निशुंभ।

निसु†—स्त्री०=निशा (रात्रि)।

निसुका*—वि० [सं० निःस्वक] १. निर्धन। दरिद्र। गरीब। २. गुण, विशेषता आदि से रहित। उदा०—हौं कषु कै रिस के करों ये निस के हंसि देत।—बिहारी।

निसुग्गा†—वि०=निसोग।

निसुर—वि० [सं० निःस्वर] १. शब्द-रहित। २. चुप। मौन।

निसूदक—वि० [सं० नि√सूद् (हिंसा)+णिच्+ण्वुल्—अक] मारने या वध करनेवाला।

निसूदन—पुं० [सं० नि√सूद्+णिच्+ल्युट्—अन] १. वध करना। २. नष्ट करना।

निसृत—भू० कृ० [निः सृत] निकाला हुआ।

निसृता—स्त्री० [सं० नि√सृ (गति)+क्त+टाप्] निसोथ।

निसृष्ट—भू०, कृ० [सं० नि√सृज् (छोड़ना)+क्त] १. उपहार, भेंट, दान, दक्षिणा आदि के रूप में दिया हुआ। २. त्यागा या छोड़ा हुआ। ३. भेजा हुआ। प्रेषित। ४. जिसे स्वीकृति दी गई हो। ५. जलाया हुआ।

वि० मध्यस्थ।

पुं० प्रतिदिन के हिसाब से दी जानेवाली मजदूरी या वेतन। दैनिक भृति। (कौ०)

निसृष्टार्थ—पुं० [सं० निसृष्ट-अर्थ, ब० स०] १. वह धीर और बुद्धिमान् व्यक्ति जिसे किसी महत्त्वपूर्ण कार्य के प्रबंध या व्यवस्था का भार सौंपा जाय या सौंपा जा सके। २. सन्देशवाहक। दूत। ३. साहित्य में, तीन प्रकार के दूतों (या दूतियों) में से एक जो प्रेमिका और प्रेमी का पारस्परिक स्नेह देखकर स्वयं उनके मिलन या संयोग की व्यवस्था करे।

निसेनी,—स्त्री० [सं० निःश्रेणी] सीढ़ी। जीना। सोपान।

निसेष—वि०=निःशेष।

निसेस—पुं० [सं० निशेश] चंद्रमा।

निसैनी—स्त्री०=निसेनी (सीढ़ी)।

निसोग—वि० [सं० निः शोक] १. जिसे कोई शोक या चिंता न हो। २. जिसे किसी बात की चिंता या फिक्र न हो। लापरवाह।

निसोच—वि० [सं० निः शोच] जिसे सोच या चिंता न हो।

निसोत (१)—वि० [सं० निःसंयुक्त] [वि० स्त्री० निसोती] जिसमें और किसी चीज का मेल न हो। शुद्ध। निरा।

स्त्री०=निसोथ।

निसोत्तर—पुं०=निसोत।

निसोथ—स्त्री० [सं० निसृता] १. एक प्रकार की लता जिसके पत्ते गोल और नुकीले होते हैं और जिसमें गोल फल लगते हैं। २. उक्त लता का फल।

निसोधु—स्त्री० [हिं० सोध या सुध] १. सुध। खबर। २. सन्देश। सँदेसा।

निस्की—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का रेशम का कीड़ा।

निस्केवल†—वि०=निष्केवल।

निस्तंतु—वि० [सं० निर्-तंतु, ब० स०] १. तंतुओं से रहित। २. जिसके आगे कोई संतान न हो।

निस्तंद्र—वि० [सं० निर्-तंद्रा, ब० स०] १. जिसे तंद्रा न हो। २. जिसमें आलस्य न हो। निरालस्य। ३. बलवान। शक्तिशाली।

निस्तत्त्व—वि० [सं० निर्-तत्त्व, ब०स०] जिसमें तत्त्व न हो। तत्त्व-हीन।

निस्तनी—स्त्री० [सं० नि-स्तन, ब० स०, ङीष्] औषध की वटिका। गोली।

निस्तब्ध—वि० [सं० नि√स्तम्भ् (रोकना)+क्त] [भाव० निस्तब्धता] १. जो हिलता-डोलता न हो। जिसमें गति या व्यापार न हो। २. निश्चेष्ट।

निस्तमस्क—वि० [सं० निर्-तमस्, ब० स०, कप्] जिसमें अँधेरा न हो।

निस्तरंग—वि० [सं० निर्-तरंग, ब० स०] जिसमें तरंगें न उठ रही हों; फलतः शांत और स्थिर। उदा०—उड़ गया मुक्त नभ निस्तरंग।—निराला।

निस्तर†—पुं०=निस्तार। उदा०—निस्तर पाइ जाइँ इक बारा।—जायसी।

निस्तरण—पुं० [निर्√तॄ (पार होना)+ल्युट्—अन] १. पार उतरना या होना। २. झंझटों-बखेड़ों, भव-बंधनों आदि से छुटकारा मिलना या पाना।

निस्तरना—अ० [सं० निस्तरण] १. पार होना। २. मुक्त होना। छुटकारा पाना।

स० १. पार उतराना। २. मुक्त करना। उदा०—अजहूँ सूर पतित पदतज तौ जौ औरहू निस्तरतौ।—सूर।

निस्तरी—स्त्री० [देश०] रेशम के कीड़ों की एक जाति जिनका रेशम कुछ कम चमकदार और कुछ कम मुलायम होता है। इसकी तीन उपजातियाँ—मदरासी, सोनामुखी और कृमि हैं।

निस्तर्क्य—वि० =अतर्क्य।

निस्तल—वि० [सं० निर्-तल, ब० स०] [भाव० निस्तलता] १. बिना तल का। जिसका तल न हो। २. जिसके तले का पता न हो। बहुत गहरा। अंतहीन। उदा०—प्रेयसी के, प्रणय के, निस्तल विभ्रम के।—निराला।

निस्तला—स्त्री० [सं० निस्तल+टाप्] वटिका। गोली।

निस्तार—पुं० [सं० निर्√तॄ+घञ्] १. तर या तैर कर पार होने की क्रिया या भाव। २. बंधन, संकट आदि से बचकर निकलने की क्रिया या भाव। उद्धार। छुटकारा। ३. काम पूरा करके उससे छुट्टी पाना। ४. अभीष्ट की प्राप्ति या सिद्धि।

निस्तारक—वि० [सं० निर्√तॄ+णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० निस्तारिका] १. पार उतारनेवाला। २. झंझटों, बंधनों आदि से छुड़ानेवाला।

निस्तारण—पुं० [सं० निर्√तॄ+णिच्+ल्युट्—अन] १. नदी आदि के पार करना या ले जाना। २. बंधनों आदि से छुड़ाना। मुक्त करना। ३. जीतना। ४. सामने आये हुए कार्य, व्यवहार आदि को नियमित

रूप से पूरा करना अथवा उसका निराकरण करना। (डिस्पोजल) ५. रसायनशास्त्र में, निथारने की क्रिया या भाव।

निस्तारन—पुं०=निस्तारण।

निस्तारना—स० [सं० निस्तर+ना (प्रत्य०)] १. पार उतारना। २. उद्धार करना। छुड़ाना।

निस्तार-बीज—पुं० [सं० ष० त०] वह बीज या तत्त्व जिसकी सहायता से मनुष्य भव-सागर से पार उतरता हो। (पुराण)

निस्तारा†—पुं०=निस्तार।

निस्तिमिर—वि० [सं० निर्-तिमिर, ब० स०] तिमिर या अंधकार से रहित।

निस्तीर्ण—भू० कृ० [सं० निर्√तॄ+क्त] १. जो पार उतर चुका हो। २. जिसका निस्तार या छुटकारा हो चुका हो। मुक्त। ३. पूरा किया हुआ। निष्ण।

निस्तुष—वि० [सं० निर्-तुष, ब० स०] १. जिसमें भूसी न हो या जिसकी भूसी निकाल ली गई हो। बिना भूसी का। २. निर्मल। साफ।

निस्तुष-क्षीर—पुं० [सं० ब० स०] गेहूँ।

निस्तुष-रत्न—पुं० [सं० कर्म० स०] स्फटिक मणि।

निस्तुषित—भू० कृ० [सं० निस्तुष+णिच्+क्त] १. जिसका छिलका या भूसी अलग कर दी गई हो। २. छीला हुआ। ३. त्यागा हुआ। त्यक्त। ४. छोटा या पतला किया हुआ।

निस्तेज—वि० [सं० निर्-तेज, ब० स०] जिसमें तेज न हो। तेज-हीन।

निस्तैल—वि० [सं० निर्-तैल, ब० स०] जिसमें तेल न हो अथवा जिस पर तेल न लगा हो।

निस्तोद—पुं० [सं० निस्√तुद् (व्यथित करना)+घञ्] १. चुभाने की क्रिया या भाव। २. डंक मारना।

निस्त्रप—वि० [सं० निर्-त्रपा, ब० स०] निर्लज्ज। बेशर्म।

निस्त्रिंश—वि० [सं० नृशंस] जिसमें दया न हो। निर्दय।
पुं० [सं० निर्-त्रिंशत्, प्रा० स०] १. खड्ग। २. एक प्रकार का तांत्रिक मंत्र।

निस्त्रिंश-पत्रिका—स्त्री० [सं० ब० स०,+कप्,+टाप्, इत्व] थूहर।

निस्त्रुटी—स्त्री० [सं०] बड़ी इलायची।

निस्त्रैगुण्य—वि० [सं० निर्-त्रैगुण्य, ब० स०]जो तीनों गुणों से रहित या हीन हो।
पुं० सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों से परे या रहित होने की अवस्था या भाव।

निस्त्रैणपुष्पिक—पुं० [?] धतूरा।

निस्नेह—वि० [सं० निर्-स्नेह, ब० स०] १. जिसमें स्नेह या प्रेम न हो। २. जिसमें स्नेह या तेल न हो।
पुं० एक प्रकार का तांत्रिक मंत्र।

निस्नेह-फला—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] भटकटैया। कटेरी।

निस्पंद—वि० [सं० निर्-स्पंद, ब० स०] जिसमें स्पंदन न हो। स्पंदनरहित।
पुं०=स्पंदन।

निस्पृह—वि० [सं० निर्-स्पृह, ब० स०,] जिसे किसी प्रकार की स्पृहा या इच्छा न हो। इच्छा या स्पृहा से रहित।

निस्पृहता—स्त्री० [सं० निस्पृह+तल्+टाप्] निस्पृह होने की अवस्था या भाव।

निस्पृहा—स्त्री० [सं० निस्पृह+टाप्] अग्निशिखा या कलिहारी नामक पेड़।

निस्पृही—वि०=निस्पृह।

निस्प्रेही*—वि०=निस्पृह।

निस्फ—वि० [फा० निस्फ़] अर्द्ध। आधा।

निस्फल†—वि०=निष्फल।

निस्फी—वि० [फा० निस्फ़] निस्फ या आधे के रूप में होनेवाला। जैसे—निस्फी बँटाई=ऐसी बँटाई जो दो बराबर भागों में अर्थात् आधी आधी हो।

निस्बत—स्त्री० [अ०] निसबत। (दे०)
स्त्री० दे० 'दो-सखुना'।

निस्बती—वि०=निसबती।

निस्यंद—पुं० [सं० नि√स्यन्द् (चूना)+घञ्] १. चूना या रिसना। क्षरण। २. परिणाम। ३. प्रकट करना।

निस्यंदी (दिन्)—वि० [सं० नि√स्यन्द्+णिनि] बहने या रसनेवाला।

निस्यों*—वि० [सं० निश्चित] निश्चिन्त। बे-फिक्र।
पद*—**निस्यो करि**=निश्चिन्त होकर।

निस्राव—पुं० [सं० नि√स्रु (बहना)+घञ्] १. वह जो चू, बह या रसकर निकला हो। २. भात की पीच। माँड़।

निस्व—वि० [सं० निःस्व] जिसके पास 'स्व' अर्थात् अपना कुछ भी न हो; अर्थात् दरिद्र।

निस्वन—पुं० [सं० नि√स्वन् (शब्द)+अप्] शब्द। ध्वनि।

निस्वान—पुं० [सं० नि√स्वन्+घञ्] १. शब्द। ध्वनि। निस्वन। २. तीर के चलने से होनेवाली हवा में सुरसुराहट।
†पुं०=निश्वास।

निस्संकोच—वि० [सं० निर्-संकोच, ब० स०] जिसमें संकोच या लज्जा न हो। संकोचरहित।
अव्य० बिना किसी संकोच के। बे-धड़क।

निस्संग—वि० [सं० निर्-संग, ब० स०] १. जिसका किसी से संग या साथ न हो। २. अकेला। ३. विषय वासनाओं से रहित। ४. एकांत। निर्जन।

निस्संतान—वि० [सं० निर्-संतान, ब० स०] जिसे कोई सन्तान न हो।

निस्संदेह—वि० [सं० निर्-संदेह, ब० स०] जिसमें कोई या कुछ भी संदेह न हो। असंदिग्ध।
अव्य० १. बिना किसी प्रकार के सन्देह के। २. निश्चित रूप से। अवश्य।

निस्सत्त्व—वि० [सं० निर्-सत्त्व, ब० स०] सत्त्वहीन।

निस्सरण—पुं० [सं० निर्-सरण, ब० स०] निकलने की क्रिया या भाव। २. निकलने का मार्ग या स्थान।

निस्सहाय—वि० [सं० निर्-सहाय, ब० स०] जिसकी सहायता करने-वाला कोई न हो। असहाय।

निस्सार—वि० [सं० निर्-सार, ब० स०] सारहीन।

निस्सारक—वि० [सं० निर्√सृ (गति)+णिच्+ण्वुल्—अक] निकालनेवाला।

निस्सारण—पुं० [सं० निर्√सृ+णिच्+ल्युट्—अन] निकालने की क्रिया या भाव।

निस्सारित—भू० कृ० [सं० निर्√सृ+णिच्+क्त] निकाला हुआ। बाहर किया हुआ।

निस्सीम—वि० [सं० निर्-सीम, ब० स०] १. जिसकी कोई सीमा न हो। असीम। २. बहुत अधिक।

निस्सृत—भू० कृ० [सं० निर्√सृ+क्त] बाहर निकला हुआ। पुं० तलवार के ३२ हाथों में से एक।

निस्स्नेह—वि० [सं० निर्-स्नेह, ब० स०] स्नेहरहित।

निस्स्नेह-फला—स्त्री० [ब० स०, टाप्] सफेद भटकटैया।

निस्स्पंद—वि० =निस्पंद।

निस्स्वक—वि० [सं० निर्-स्व, ब० स०, कप्] दरिद्र। धनहीन।

निस्स्वादु—वि० [सं० निर्-स्वादु, ब० स०] १. जिसका या जिसमें कोई स्वाद न हो। २. जिसका स्वाद अच्छा न हो।

निस्स्वार्थ—वि० [सं० निर्-स्वार्थ, ब० स०] (कार्य) जो बिना किसी निजी स्वार्थ के और विशेषतः परमार्थ की भावना से किया गया हो। जैसे—निस्स्वार्थ सेवा।

अव्य० बिना किसी स्वार्थ या मतलब के।

निहंग—वि० [सं० निःसंग] १. एकाकी। अकेला। २. जो घर-गृहस्थी की झंझटों में न पड़ा हो; अर्थात् अविवाहित और परिवार-हीन। ३. नंगा। ४. निर्लज्ज। बेशरम।

पुं० १. एक प्रकार के वैष्णव साधु। २. अकेला रहनेवाला विरक्त या साधु। ३. सिक्खों का एक संप्रदाय, जो 'कूका' भी कहलाता है।

निहंगम—वि०=निहंग।

निहंग-लाडला—वि० [हिं० निहंग+लाडला] जो माता-पिता के दुलार के कारण बहुत ही उद्दंड और लापरवाह हो गया हो।

निहंता (तृ)—वि० [सं० नि√हन् (मारना)+तृच्] [स्त्री० निहंत्री] १. विनाशक। नाश करनेवाला। २. मार डालने या हत्या करने-वाला।

निह*—उप० [सं० निस्] नहिक भाव का सूचक एक उपसर्ग या पूर्व प्रत्यय। जैसे—निहकर्मा, निहकलंक, निहपाप आदि।

निहकर्मा—वि० [सं० निष्कर्म] कर्म न करनेवाला।

निहकलंक—वि०=निष्कलंक।

निहकाम—वि०=निष्काम।

निहकामी—वि०=निष्काम।

निहचक—पुं० [सं० नेमि+चक्र] पहिए के आकार का काठ का वह गोल चक्कर जिसके ऊपर कूएँ की कोठी खड़ी की जाती है। निवार। जमवट। जाखिम।

निहचय—पुं०=निश्चय।

निहचल—वि०=निश्चल।

निहचिंत†—वि०=निश्चिंत।

निहठ, निहठा—स्त्री० [सं० निष्ठा] लकड़ी का वह टुकड़ा जिस पर रखकर बढ़ई गढ़ने की चीज़ें बसूले से गढ़ते हैं।

निहत—भू० कृ० [सं० नि√हन्+क्त] १. चलाया या फेंका हुआ। २. नष्ट किया हुआ। विनष्ट। ३. जो मार डाला गया हो।

निहतार्थ—पुं० [सं० निहत-अर्थ, ब० स०] काव्य में एक प्रकार का दोष।

निहत्था—वि० [हिं० नि+हाथ] १. जिसके हाथ में कोई अस्त्र न हो। शस्त्रहीन। २. जिसके हाथ में कुछ या कोई साधन न हो।

निहनन—पुं० [सं० नि√हन्+ल्युट्—अन] वध। मारण।

निहनना—स० [सं० निहनन] मारना। मार डालना।

निहपाप†—वि०=निष्पाप।

निहफल†—वि०=निष्फल।

निहल†—पुं० दे० 'गंग-बरार'।

निहव—पु० [सं० नि√ह्वे (बुलाना)+अप्] पुकारना। बुलाना।

निहषरना—अ० [सं० निः+क्षरण] बाहर आना या निकलना। (राज०) उदा०—निहषरता नखरै नर।—प्रिथीराज।

निहस—पुं० [?] चोट। प्रहार। (डिं०) उदा०—नीसाने पड़ती निहस।—पृथीराज।

निहसना—स० [सं० निघोषण] शब्द करना।

अ० शब्द होना।

अ० [सं० विलसन] सुशोभित होना। लसना। उदा०—नासा अग्रि मुताहल निहसति।—प्रिथीराज।

निहाई—स्त्री० [सं० निघाति, मि० फा० निहाली] लोहारों और सुनारों का जमीन में गड़ा या लकड़ी आदि में जड़ा हुआ लोहे का वह टुकड़ा जिस पर वे धातु के टुकड़ों को रखकर हथौड़े से कूटते या पीटते हैं।

निहाऊ—पुं० [सं० निघाति] लोहे का घन।

निहाका—स्त्री० [सं०] १. गोह नामक जंतु। २. घड़ियाल।

निहाना—स० [सं० नि+घात] १. नष्ट करना। मारना। २. दबाना।

निहानी—स्त्री० [सं० निखनित्री] नक्काशी करने का एक उपकरण।

निहाय†—पुं०=निहाई।

निहायत—अव्य० [अ०] बहुत अधिक। अत्यन्त।

निहार—स्त्री० [हिं० निहारना] निहारने की क्रिया या भाव।

पुं० [सं० निस्सरण] निकलने का मार्ग। निकास।

पुं० [?] लट्टू।

पुं०=नीहार। (देखें)

वि०=निहाल।

निहारना—स० [सं० निभालन=देखना] १. अच्छी तरह और ध्यान-पूर्वक अथवा टक लगाकर देखना। २. ताकना।

निहारनि—स्त्री० [हिं० निहारना] निहारने की क्रिया या भाव। निहार।

निहारिका—स्त्री०=नीहारिका।

निहारुआ—पुं०=नहरुआ (रोग)।

निहाल—वि० [फा०] १. जिस पर किसी की बहुत अधिक या विशेष कृपा हुई हो और इसी लिए जो प्रफुल्लित तथा संतुष्ट हो। २. धन, दौलत आदि मिलने पर जो मालामाल या समृद्ध हुआ हो। पूर्ण-काम। सफल-मनोरथ।

पुं० पौधा।

निहालचा—पुं० [फा० निहालचः] बच्चों के सोने की छोटी गद्दी।

निहालना*—स०=निहारना।

निहाल लोचन—पुं० दे० 'निहालचा'।

निहाली—स्त्री [फा०] बिस्तर पर बिछाने का गद्दा।
स्त्री०=निहाई।

निहाव—पुं० [सं० निघाति] निहाई।

निहिंसन—पुं० [सं० नि√हिस् (मारना)+ल्युट्—अन] मार डालना। वध करना।

निहि—उप० सं० 'निस्' उपसर्ग का एक विकृत रूप। जैसे—निहिचय, निहिचित।

निहिचय†—पुं०=निश्चय।

निहिचित†—वि०=निश्चित।

निहित—वि० [सं० नि√धा (धारण)+क्त, हि आदेश] १ (चीज) जो किसी दूसरी चीज के अन्दर स्थित हो और बाहर से न दिखाई देती हो। अन्दर छिपा या दबा हुआ। (लेटेन्ट) २. स्थापित किया हुआ। ३. दिया या सौंपा हुआ।

निहीन—वि० [सं० नि-हीन, प्रा० स०] परमहीन। बहुत क्षुद्र या तुच्छ।

निहुँकना—अ०=निहुरना (झुकना)।

निहुड़ना—अ०=निहुरना (झुकना)।
स०=निहुराना (झुकाना)।

निहुरना—अ० [हिं० नि+होड़न] १. झुकना। नवना। २. नम्र होना।

निहुराई—स्त्री० [हिं० निहुरना] झुकने की क्रिया या भाव।
†स्त्री०=निठुराई (निष्ठुरता)।

निहुराना—स० [हिं० निहुरना का प्रे०] १. झुकाना। नवाना। २. नम्र होने के लिए विवश करना।

निहोर†—पुं०=निहोरा।

निहोरना—अ० [हिं० निहोरा] प्रार्थना या विनती करना।
स० किसी पर अनुग्रह करके उसे उपकृत या कृतज्ञ करना। उदा०—सोइ कृपालु केवटहि निहोरे।—तुलसी।

निहोरा—पुं० [सं० मनोहार, हिं० मनुहार] १. किसी के किए हुए अनुग्रह या उपकार के बदले में प्रकट की या मानी जानेवाली कृतज्ञता। एहसान।
क्रि० प्र०—मानना।
मुहा०—**(किसी का) निहोरा लेना**=ऐसी स्थिति में होना कि कोई उपकार करे और इसके लिए उसका कृतज्ञ होना पड़े।
२. निवेदन। प्रार्थना। ३. विनती। विनय। ४. आसरा। भरोसा।
क्रि० प्र०—लगना।
अव्य० के लिए। वास्ते। दे० 'निहोरे'।

निहोरे—अव्य० [हिं० निहोरा] किसी के किये हुए अनुग्रह या उपकार के आधार पर अथवा उसके कारण। जैसे—हम किस निहोरे उनके यहाँ जायँ; अर्थात् उन्होंने हमारी कौन सी भलाई या कौन-सा सद्-व्यवहार किया है, जिसके लिए हम उनके यहाँ जायँ। उदा०—घरहुँ देह नहि आन निहोरे।—तुलसी।

निह्नव—पुं० [सं० नि√ह्नु (छिपाना)+अप्] १. निहित अर्थात् छिपे हुए होने की अवस्था या भाव। २. अविश्वास। ३. शुद्धता। पवित्रता। ४. एक प्रकार का साम-गान।

निह्नुवन—पुं० [सं० नि√ह्नु+ल्युट्—अन] १. इनकार। २. बहाना।

निह्नवोत्तर—पुं० [सं० निह्नव-उत्तर-मध्य० स०] टाल, मटोलवाला उत्तर। बहानेबाजी।

निह्नुत—भू० कृ० [सं० नि√ह्नु+क्त] [भाव० निह्नुति] १. अस्वीकृत किया हुआ। २. छिपाया हुआ।

निह्नुति—स्त्री० [सं० नि√ह्नु+क्तिन्] अस्वीकार। इन्कार। २. छिपाव। दुराव। गोपन।

निह्राद—पुं० [सं० नि√ह्रद (शब्द)+घञ्] ध्वनि। शब्द।

नींद—स्त्री० [सं० निद्रा] १. प्राणियों की वह प्राकृतिक स्थिति जिसमें वे थोड़े-थोड़े समय पर और प्रायः नियमित रूप से अपनी बाह्य चेतना और ज्ञान से रहित होकर पड़े रहते हैं और जिसमें उनके मन, मस्तिष्क तथा शरीर को पूर्ण विश्राम मिलता है। जागते रहने के विपरीत की अर्थात् सोने की अवस्था, क्रिया या भाव।
क्रि० प्र०—आना।—टूटना।—लगना।
मुहा०—**नींद उचटना या उचाट होना**=किसी विघ्न या बाधा के कारण नींद में भंग पड़ना। **नींद करना**=(क) सोना। (ख) उदासीन, निश्चित या लापरवाह होना। उदा०—संतों जागत नींद न कीजै।—कबीर। **नींद खुलना या टूटना**=ठीक समय पर नींद पूरी हो जाने पर उसका अन्त होना। **नींद पड़ना**=कष्ट, चिंता आदि की दशा में किसी प्रकार नींद आना। **नींद भर सोना**—जितनी इच्छा हो, उतना सोना। इच्छा भर सोना। **नींद लेना**=निद्रा की अवस्था में होना। सोना। **नींद सचरना**=नींद आना। **नींद हराम होना**=ऐसे कष्ट या चिंता की स्थिति में होना कि नींद बिलकुल न आवे या बहुत कम आवे।

नींदड़ा (ड़ी)—स्त्री०=नींद।

नींदना—अ०=सोना (नींद लेना)।
स०=निराना।

नींदर†—स्त्री०=नींद। (पश्चिम)

नींदाला—वि० [सं० निद्रालु] [स्त्री० नींदाली] १. जिसे नींद आ रही हो। २. सोया हुआ।

नींन†—स्त्री०=नींद।

नींब †—स्त्री०=नीम (पेड़)।

नींबू—पुं० [सं० निम्बू, अ० लेमूं] १. एक पौधा जिसके गोलाकार या लंबोतरे छोटे फल खट्टे रस से भरे होते हैं। २. उक्त पौधे का फल।

नींबू-निचोड़—वि० [हिं० नींबू+निचोड़ना] १. (व्यक्ति) जो किसी का सारा तत्त्व उसी प्रकार निकाल लेता हो जिस प्रकार नींबू का रस निकाला जाता है। २. (व्यक्ति) जो थोड़ा-सा परिश्रम या सहायता करके उसी प्रकार यथेष्ठ लाभ उठाता हो जिस प्रकार कोई व्यक्ति किसी तरकारी या दाल में अपनी तरफ से नींबू का थोड़ा-सा रस डालकर उसमें साझेदार बन बैठता है।

नींव—स्त्री० [सं० निमि; प्रा० नेह] १. मकान, महल, आदि की दीवार का वह निचला हिस्सा जो जमीन के अन्दर रहता है।

२. उक्त अंश बनाने से पहले जमीन में खोदा जानेवाला गड्ढा। ३. लाक्षणिक अर्थ में, वह आरंभिक तथा मौलिक कार्य जिसे आगे चलकर बहुत अधिक उत्कृष्ट या उन्नत रूप मिला हो।

पद—नींव का पत्थर=वह तत्त्व, बात या व्यक्ति जो किसी बहुत बड़े कार्य का आधार या मूल हो।

नीअर†—अ० दे० 'निकट'।

नीक†—पुं० [सं० निक्त] १. अच्छापन। उत्तमता। २. कल्याण। भलाई। उदा०—आपन, मोर नीक जौ चहहू।—तुलसी।

वि०=नीका।

नीका—वि० [सं० निक्त=साफ, स्वच्छ] १. उत्तम। बढ़िया। २. अच्छा। भला। उदा०—काकपच्छ सिर सोहत नीके।—तुलसी।

क्रि० प्र०—लगना।

नीके—अव्य० [हिं० नीक] अच्छी तरह।

नीको—वि०=नीका।

नीखर†—वि०[सं० नि+क्षरण] १. निखरा हुआ। २. स्वच्छ। साफ।

नीगना†—वि० [हिं० न+गिनना]=अनगिनत (अगणित)।

नीग्रो—पुं०=दे० 'हबशी'।

नीच—वि०[सं० भाव० नीचता] १. आचार, व्यवहार, गुण-कर्म, जाति-पाँति आदि के विचार से बहुत ही छोटा; और फलतः तुच्छ या हीन।

पद—नीच ऊँच=(क) बुराई और अच्छाई। (ख) हानि और लाभ। (ग) दुःख और सुख।

२. नैतिक, धार्मिक आदि दृष्टियों से बहुत ही निंदनीय, बुरा या हीन।

पद—नीच कमाई=अनुचित या दूषित ढंग से प्राप्त किया जानेवाला धन।

पुं० १. चोरनामक गंध द्रव्य। २. दशार्ण देश का एक पर्वत। ३. फलित ज्योतिष में, किसी ग्रह के उच्च स्थान से सातवें घर में होने की स्थिति। नीच-ग्रह। ४. किसी ग्रह के भ्रमण मार्ग में वह स्थान जो पृथ्वी से सबसे अधिक दूर हो।

नीचक—वि० [सं० नीच+कन्] १. बहुत ही छोटे कदवाला। ठिंगना। २. धीमा। मंद। ३. क्षुद्र। कमीना। नीच।

नीच-कदंब—पुं० [सं० ब० स०] गोरखमुंडी।

नीचका—स्त्री० [सं० नि-ई√चक् (प्रतिघात)+अच्—टाप्] अच्छी और बढ़िया गौ।

नीचकी (किन्)—वि० [सं० नि-ई√चक्+इनि] [स्त्री० नीचकिनी] १. उच्च। ऊँचा। २. उत्तम। श्रेष्ठ।

पुं० १. ऊपरी भाग। २. वह जिसके पास अच्छी गौएँ हों।

नीचग—वि० [सं० नीच√गम् (जाना)+ड] [स्त्री० नीचगा] १. नीचे की ओर जानेवाला। २. ओछा। तुच्छ। नीच। ३. नीच कुल की स्त्री के साथ संभोग करनेवाला।

पुं० १. जल। पानी। २. फलित ज्योतिष के अनुसार वह ग्रह जो अपने उच्च स्थान के सातवें पड़ा हो।

नीचगा—स्त्री० [सं० नीचग+टाप्] १. नदी। २. नीच कुल के पुरुष के साथ संभोग करनेवाली स्त्री।

नीचगामी (मिन्)—वि० [सं० नीच√गम्+णिनि] [स्त्री० नीचगामिनी] १. नीचे की ओर जानेवाला। २. ओछा। तुच्छ।

पुं० जल। पानी।

नीच-गृह—पुं० [सं० ब० स०] कुंडली में वह ग्रह जो अपने घर से सातवें घर में स्थित हो।

नीचट—वि० [सं० निश्चय] दृढ़। पक्का।

नीचता—स्त्री० [सं० नीच+तल्+टाप्] १. नीच होने की अवस्था या भाव। २. बहुत ही हेय आचरण या व्यवहार।

नीचत्व—पुं० [सं० नीच+त्व] नीचता।

नीच-वज्र—पुं० [सं० कर्म० स०] वैक्रांत मणि।

नीचा—वि० [सं० नीच] [स्त्री० नीची, भाव० नीचाई] १. जो किसी प्रसम धरातल या स्तर से निम्न स्तर पर स्थित हो। जैसे—नीची जमीन, नीची सड़क।

पद—नीचा-ऊँचा=कहीं से नीचा और कहीं से ऊँचा। ऊबड़-खाबड़।

२. जो किसी की तुलना में कम ऊँचा हो अथवा जिसका विस्तार ऊपर की ओर कम हो। जैसे—नीची दीवार, नीची टोपी। ३. झुका हुआ। नत। जैसे—नीचा सिर। ४. जिसका झुकाव या विस्तार नीचे की ओर हो। जैसे—नीची धोती, नीचा पाजामा।

मुहा०—नीचा देना=पक्षी का झोंके या तेजी से सीधे नीचे की ओर आना। गोतना। उदा०—उठि ऊँचै नीचौ दयौ मनु कलिंग झपि झौर।—बिहारी।

†५. अधिकार, पद, मर्यादा आदि के विचार से जो औरों से घटकर हो। छोटा। जैसे—नीची अदालतें, नीची जाति।

मुहा०—नीचा दिखाना=(क) तुच्छ ठहराना। (ख) परास्त करना। (ग) लज्जित करना। **नीचा देखना**=(क) तुच्छ ठहरना। (ख) परास्त होना। (ग) लज्जित होना।

६. स्वर आदि के संबंध में, धीमा या मद्धिम।

नीचाई—स्त्री० [हिं० नीचा] अपेक्षाकृत नीचे होने की अवस्था या भाव। निचान।

नीचान—स्त्री०=नीचाई।

नीचाशय—वि० [सं० नीच-आशय, ब० स०] तुच्छ विचार का। क्षुद्र। ओछा।

नीचू—वि० [हिं० नि+चूना] जो चूता न हो। न चूनेवाला।

वि०=नीचा।

क्रि० वि०=नीचे।

नीचे—क्रि० वि० [हिं० नीचा] १. किसी की तुलना में, निम्न धरातल पर या में। जसे—ऊपर मकान मालिक और नीचे किरायेदार रहता है। २. ऐसी स्थिति में जिसमें उसके ठीक ऊपर भी कुछ हो। जैसे—(क) कुरते के नीचे गंजी पहन लो। (ख) मोटी किताब के नीचे पतली किताब रखना।

पद—नीचे ऊपर=उलट-पलट। अस्त-व्यस्त। अव्यवस्थित। जैसे—सब चीजें ज्यों की त्यों रहने दो; नीचे-ऊपर मत करो। **नीचे से ऊपर तक**=(क) एक सिरे से दूसरे सिरे तक। (ख) सब अंगों या भागों में। सर्वत्र।

मुहा०—नीचे उतारना=मरते हुए व्यक्ति को खाट, पलंग आदि पर से हटाकर नीचे जमीन पर लेटाना। (हिंदू) **नीचे गिरना**=आचार-विचार, मान-मर्यादा आदि की दृष्टि से पतित या हीन होना। जैसे—हम नहीं जानते थे कि तुम इतना नीचे गिरोगे। **नीचे लाना**=

(क) जमीन पर गिराना और पछाड़ना। (ख) नीचे उतारना। (ऊपर देखें)
३. किसी की अधीनता या वश में। जैसे—उसके नीचे पाँच कर्मचारी काम करते हैं।

नीज—पुं० [?] रस्सी।

नीजन—वि०, पुं०=निर्जन।

नीजू—स्त्री० [?] रस्सी।

नीझर†—पुं०=निर्झर।

नीठ—वि०=नीठा।
अव्य०=नीठि।

नीठा*—वि० [सं० अनिष्ट; प्रा० अनिट्ठ] [भाव० नीठि] १. जो अच्छा न लगे। अरुचिकर। २. अनिष्टकारक। बुरा।

नीठि—स्त्री० [हि० नीठ] अरुचि। अनिच्छा।
अव्य० बहुत कठिनता या मुश्किल से। ज्यों-त्यों करके। जैसे-तैसे।
पद—नीठि नीठि=ज्यों-त्यों करके। बहुत कठिनता से। किसी न किसी प्रकार। जैसे-तैसे। उदा०—नीठि नीठि भीतर गई, डीठि डीठि सो जोरि।—बिहारी।

नीड़—पुं० [सं० नि√ईड् (स्तुति)+घञ्] १. बैठने या ठहरने का स्थान। २. चिड़ियों का घोंसला। ३. रथ में रथी के बैठने का स्थान।

नीड़क—पुं० [सं० नीड√कै (शोभित होना)+क] १. पक्षी। चिड़िया। २. घोंसला।

नीड़ज—पुं० [सं० नीड√जन् (उत्पत्ति)+ड] पक्षी।

नीड़ोद्भव—पुं० [सं० नीड-उद्भव, ब० स०] पक्षी। चिड़िया।

नीत—भू० कृ० [सं०√नी (ले जाना)+क्त] १. कहीं पहुँचाया या लाया हुआ। २. ग्रहण किया हुआ। गृहीत। ३. पाया या मिला हुआ। प्राप्त। ४. स्थापित।

नीति—स्त्री० [सं०√नी+क्तिन्] [वि० नैतिक] १. ले जाने या ले चलने की क्रिया, ढंग या भाव। २. उचित या ठीक रास्ते पर ले चलने की क्रिया या भाव। ३. आचार, व्यवहार आदि का ढंग, पद्धति या रीति। ४. आचार, व्यवहार आदि का वह प्रकार या रूप जो बिना किसी का उपकार किये या किसी को कष्ट पहुँचाये अपने लिए भी और दूसरों के लिए भी मंगलकारी, शुभ तथा सम्मानजनक हो। ५. ऐसा आचार-व्यवहार जो सबकी दृष्टि में लोक या समाज के कल्याण के लिए आवश्यक और उचित ठहराया गया हो या माना जाता हो। सदाचार, सद्व्यवहार आदि के नियम और रीतियाँ। ६. राज्य या शासन की रक्षा और व्यवस्था के लिए अथवा शासक और शासित का संबंध ठीक तरह से बनाये रखने के लिए स्थिर किये हुए तत्त्व या सिद्धान्त। ७. अपना उद्देश्य सिद्ध करने या काम निकालने के लिए कौशल तथा चतुरता से किया जानेवाला आचरण या व्यवहार। तरकीब। युक्ति। हिम्मत। (पॉलिसी) ८. किसी काम या बात की उपलब्धि, प्राप्ति या सिद्धि। ९. दे० 'नीति-शास्त्र'। १०. दे० 'राजनीति'।

नीति-कुंतली—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

नीतिज्ञ—वि० [सं० नीति√ज्ञा (जानना)+क] नीति का जाननेवाला। नीतिकुशल।

नीतिमान् (मत्)—वि० [सं० नीति+मतुप्] [स्त्री० नीतिमती] १. नीति परायण। २. सदाचारी।

नीतिवाद—पुं० [सं० मध्य० स०] वह वाद या सिद्धान्त जिसमें व्यवहार और आचार संबंधी नीति की प्रधानता हो।

नीतिवादी (दिन्)—वि० [सं० नीतिवाद+इनि] १. नीतिवाद—संबंधी। २. नीतिवाद का अनुयायी। ३. जो नीति-शास्त्र के सिद्धांतों के अनुसार सब काम करता हो।

नीति-शास्त्र—पुं० [सं० ष०त०] वह शास्त्र जिसमें देश, काल और पात्र के अनुसार समाज के कल्याण के लिए उचित और ठीक आचार-व्यवहार करने के नियमों, सिद्धांतों आदि का विवेचन होता है। (इथिक्स) २. उक्त विषय पर लिखा हुआ कोई प्रामाणिक और मान्य ग्रंथ।

नीदना—अ०=नींदना।

नीधना†—वि०=निर्धन।

नीध्र—पुं० [सं० नि√धृ (धारण)+क, पूर्वदीर्घ] १. छाजन की ओलती। वलीक। २. जंगल। वन। ३. पहिए का धुरा। नेमि। ४. चंद्रमा। ५. रेवती नक्षत्र।

नीप—पुं० [सं०√नी+प] १. कदंब। २. भू-कदंब। ३. गुलदुपहरिया। बन्धूक। ४. नीला अशोक। ५. पहाड़ के नीचे का तल या भाग। ६. एक प्राचीन देश।
पुं० [अं० निपर] कोई चीज बाँधने के लिए लगाया जानेवाला डोरी या रस्सी का फंदा।
क्रि० प्र०—देना।—लगाना।—लेना।

नीपजना†—अ०=निपजना।

नीपना†—स०=लीपना।

नीपर—पुं० [अं० निपर] १. लंगर में बँधी हुई रस्सियों में से एक। २. वह डंडा जिससे उक्त रस्सी कसी जाती है।

नीपातिथि—पुं० [सं०] एक वैदिक ऋषि।

नीपाना—स० [सं० निष्पन्न?] १. पूरा करना। २. उत्पन्न करना। उदा०—गिरि नीपायौ तदि निकुटी ए।—पृथीराज।

नीब†—स्त्री०=नीम।

नीबर—वि०=निर्बल (कमजोर)।

नीबी†—स्त्री०=नीवि।

नीबू—पुं०=नींबू।

नीम—स्त्री० [सं० निंब] छोटी-छोटी पत्तियोंवाला एक प्रसिद्ध पेड़ जिसकी पतली शाखाओं की दतुअन बनती है। इस पेड़ की पत्तियाँ और छाल अनेक प्रकार के कृमियों की नाशक मानी गई हैं।
मुहा०—**नीम की टहनी हिलाना**=उपदंश या गरमी की बीमारी से युक्त होना।
विशेष—उक्त रोग के रोगी प्रायः नीम की टहनी से पीड़ित अंग पर हवा करते हैं। इसी से यह मुहावरा बना है।
वि० [फा०] १. आधा। अर्द्ध। २. आधे के लगभग या थोड़ा-बहुत। जैसे—नीम पागल, नीम राजी, नीम हकीम। ३. रंग के संबंध में, जो साधारण से हलका हो। जैसे—नीम प्याजी।

नीम गिर्दा—पुं॰ [?] बढ़इयों का एक उपकरण।

नीमच—पुं॰ [हिं॰ नदी+मच्छ] एक तरह की मछली।

नीमचा—पुं॰ [फा॰ नीमचः] खाँड़ा।

नीमजाँ—वि॰ [फा॰] अध-मुआ। मृतप्राय।

नीम-टर—वि॰ [फा॰ नीम+हिं॰ टरटर] अर्द्धशिक्षित। (परिहास और व्यंग्य)

नीमन—वि॰ [सं॰ निर्मल] १. उत्तम। बढ़िया। २. रोगरहित। तन्दुरुस्त। नीरोग। ३. हर तरह से ठीक और काम में आने योग्य।

नीमर—वि॰=निर्बल।

नीम-रजा—वि॰ [फा॰ नीम+अ॰ रज़ा] जो किसी काम या बातके लिए आधा अर्थात् थोड़ा-बहुत राजी या सहमत हो गया हो।

नीमवर—पुं॰ [फा॰] कुश्ती का एक पेंच जिससे पीछे खड़े हुए जोड़ को चित गिराया जाता है।

नीमषारण, नीमवारन—पुं॰=नैमिषारण्य।

नीमस्तीन—स्त्री॰ दे॰ 'नीमास्तीन।'

नीमा—पुं॰, वि॰ [हिं॰ नीव] नीचा।

वि॰ [फा॰ नीम] अर्ध। आधा।

पुं॰ एक तरह का पाजामा।

नीमावत—पुं॰ [हिं॰ निंब] निंबार्काचार्य का अनुयायी एक वैष्णव संप्रदाय

नीमास्तीन—स्त्री॰ [फा॰ नीम+आस्तीन] एक प्रकार की कुरती या फतुही जिसकी आस्तीन आधी अर्थात् कोहनी तक होती है।

नीयत—स्त्री॰ [अ॰] कोई काम करने या कोई चीज पाने के संबंध में मन। में बनी रहनेवाली स्वभावजन्य वृत्ति अथवा होनेवाला विचार। आंतरिक आशय, उद्देश्य या लक्ष्य। भावना। मनशा। (इन्टेन्शन)

मुहा॰—नीयत डिगना=अच्छा या उचित संकल्प दृढ़ न रहना। मन में विकारपूर्ण भावना या विचार उत्पन्न होना। बुरा संकल्प होना। **नीयत बदल जाना**= अच्छे विचार या संकल्प के स्थान पर दूषित या बुरा विचार अथवा संकल्प होना। **नीयत बाँधना**=मन में दृढ़ विचार या संकल्प करना। **नीयत बिगड़ना**=नीयत डिगना। (दे॰ ऊपर) **नीयत भरना**=मन तृप्त होना। इच्छा पूरी होना। जी भरना। जैसे—अभी इस लड़के की नीयत भरी नहीं है, इसे थोड़ी मिठाई और दो। **नीयत में फरक आना**=नीयत डिगना या बिगड़ना। **(किसी काम, चीज या बात में) नीयत लगी रहना**= किसी काम की सिद्धि या वस्तु की प्राप्ति की ओर ध्यान लगा रहना।

नीर—पुं॰ [सं॰√नी +रक्] १. जल। पानी। २. जल की तरह का कोई तरल पदार्थ। जैसे—नयनों का नीर=आँसू, शीतला का नीर=चेचक के फफोलों में से निकलनेवाला चेप या रस।

मुहा॰— (किसी की आँखों का) नीर ढल जाना= आँखों में लज्जा या शील-संकोच न रह जाना। **(आँखों से) नीर ढलना**=मरने के समय आँखों से जल निकलना या बहना।

३. आब। कांति। चमक। उदा॰—आड़ हू भुलावै नख-सिख भरी नीर की।—सेनापति। ४. नीम के पेड़ से निकलनेवाला स्राव। ५. सुगंधवाला। ६. रहस्य संप्रदाय में, सहस्रार चक्र से झरनेवाला वह रस जो परम आवश्यक कहा गया है। उदा॰—आगामी सरुभरिआ नीर। ता यहि केवल बहु बिस्थीर।—नानक।

नीर-क्षीर-विवेक—पुं॰ [सं॰ नीर-क्षीर, द्व॰ स॰, नीरक्षीर-विवेक, ष॰त॰] ऐसा विवेक या ज्ञान जो भले-बुरे, न्याय-अन्याय आदि में ठीक, पूरा और स्पष्ट भेद या विभाग कर सके।

विशेष—कहा जाता है कि हंस में इतना ज्ञान होता है कि वह पानी मिले हुए दूध में से दूध तो पी लेता है और पानी छोड़ देता है। इसी आधार पर यह पद बना है।

नीरछ*—पुं॰=नीरद (मेघ)।

नीरज—वि॰ [सं॰ नीर√जन् (उत्पत्ति)+ड] जो जल या जल से उत्पन्न हुआ हो। जलीय।

पुं॰ १. कमल। २. मोती। ३. कुट नामक ओषधि। ४. एक प्रकार का तृण।

नीरण—पुं॰ [सं॰ नीर से] १. जल देना या पहुँचाना। २. नल आदि की सहायता से जल या कोई तरल पदार्थ एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाना। (पाइपिंग)

नीरत—वि॰ [सं॰ निर्-रत, प्रा॰ स॰] विरत।

नीरद—वि॰ [सं॰ नीर√दा (देना)+क] नीर अर्थात् जल देनेवाला।

पुं॰ १. बादल। मेघ। २. उत्तराधिकारी या वंशज जो अपने पितरों या पूर्वजों को जल देता अर्थात् उनका तर्पण करता हो।

वि॰ [सं॰ निः+रद] जिसे दाँत न हों। बिना दाँतोंवाला। दंतहीन।

नीरधर—वि॰ [सं॰ नीर√धृ (धारण)+अच्] जल धारण करनेवाला।

पुं॰ मेघ।

नीरधि—पुं॰ [सं॰ नीर√धा+कि] समुद्र। सागर।

नीरना—स॰ [हिं॰ नीर] १. जल छिड़कना। २. सींचना। ३. पोषक द्रव्य, भोजन आदि देकर जीवित रखना। पालना-पोसना।

स॰ [?] छितराना। बिखेरना।

नीर-निधि—पुं॰ [सं॰ ष॰त॰] समुद्र।

नीर-पति—पुं॰ [सं॰ ष॰त॰] वरुण देवता।

नीर-प्रिय—पुं॰ [सं॰ ब॰स॰] जल-बेंत।

नीरम—पुं॰ [देश॰] वह बोझ जो जहाज पर केवल उसका संतुलन ठीक रखने के लिए रखा जाता है।

नीरव—वि॰ [सं॰ निर्-रव, ब॰स॰] १. जिसमें से रव अर्थात् ध्वनि या शब्द न निकलता हो। २. जिसमें रव या शब्द न होता हो। ३. जो बोल न रहा हो। चुप। मौन।

नीरस—वि॰ [सं॰ निर्-रस, ब॰स॰] [भाव॰ नीरसता] १. जिसमें रस न हो। रस-हीन। २. जिसके स्वाद में मिठास न हो। फीका। ३. जिससे या जिसमें मन को रस अर्थात् आनन्द न मिलता हो। ४. जिसमें कोई आकर्षक, मनोरंजक या रुचिकर तत्त्व या बात न हो। ५. सूखा हुआ। शुष्क।

नीराँजन—पुं॰ दे॰ 'नीराजन'।

नीराँजनी—स्त्री॰ [सं॰ नीराजन] वह आधार या पात्र जिसमें आरती के लिए दीप जलाये जाते हैं। आरती।

नीरा—स्त्री॰ [सं॰ नीर] खजूर या ताड़ के वृक्ष का वह रस जो प्रातःकाल उतारा जाता है और जो पीने में बहुत स्वादिष्ट और गुणकारी होता है।

अव्य० [हिं० नियर] समीप। पास। उदा०—दूरि बात खत पाया नीरा।—कबीर।

नीराखु—पुं०[सं० नीर-आखु, ष०त०] ऊदबिलाव।

नीराजन—पुं०[सं० निर्√राज (शोभित होना)+ल्युट्—अन]१. देवता को दीपक दिखाने की क्रिया। आरती। दीप-दान।

क्रि० प्र०—उतारना।—वारना।

२. हथियारों को साफ करके चमकाने की क्रिया या भाव। ३. मध्य युग में, वर्षाकाल बीतने पर और प्रायः आश्विन मास में राजाओं के यहाँ होनेवाला एक पर्व जिसमें युद्ध से पहले सब हथियार साफ करके चमकाये जाते थे।

नीराजना—स०[सं० नीरांजन]१. नीराजन में दीप जलाकर किसी देवी या देवता की आरती करना। २. हथियार माँजकर साफ करना और चमकाना।

नीराशय—पुं०=जलाशय।

नीरिंडु—पुं०[सं० नि√ईर्+क्विप्, नीर√इन्द्+उण्] सिहोर (वृक्ष)।

नीरुज—वि०[सं० निर्-रुज, ब०स०, रलोप, दीर्घ] रोग-रहित।

पुं० कुट नामक ओषधि।

नीरे†—अव्य०=नियरे (निकट)।

नीरोग—वि०[सं० निर्-रोग, ब०स०, रलोप, दीर्घ] १. (व्यक्ति) जिसे कोई रोग न हो। स्वस्थ। २. जिसमें दोष, विकार आदि न हों। जैसे—नीरोग वातावरण।

नीरोवर—पुं०[सं०नीरवर]समुद्र। (सरोवर के अनुकरण पर) उदा०—नीरोवरि प्रवसंति नई।—पृथीराज।

नीलिंगु—पुं०[सं० नि√लंग् (गति)+कु, नि० पूर्वदीर्घ]१. एक तरह का कीड़ा। २. गीदड़। शृगाल। ३. भौंरा। भ्रमर। ४. फूल।

नील—वि०[सं०√नील् (रंग होना)+अच्]गहरे आसमानी रंग का।

पुं० १. नीला रंग। २. एक प्रसिद्ध पौधा जो २३/३ हाथ लंबा होता तथा जिसमें नीले रंग के छोटे छोटे फूल लगते हैं, जिनसे नीला रंग तैयार किया जाता है।

विशेष—यह पौधा मूलतः भारतीय है और इसकी लगभग ३०० जातियाँ हैं। बहुत प्राचीन काल से इस पौधे का रंग भारत से विदेशों को जाता रहा है। ईस्ट इंडिया कंपनी ने इसके पौधों की खेती की व्यापारिक दृष्टि से विस्तृत व्यवस्था की थी। अब भी इसके रंग का उपयोग अनेक औद्योगिक कार्यों में होता है। अपने रंग के नीलेपन के कारण यह शब्द कलंक या लांछन का भी वाचक हो गया है।

पद—नील का खेत=ऐसा स्थान जहाँ जाने पर कलंक या लांछन लगना निश्चित हो।

३. उक्त पौधे से निकाला हुआ नीला रंग जो प्रायः धुलाई, रंगाई आदि के कार्यों में आता है। (इंडिगो)

पद—नील का टीका=कलंक या लांछन का काम या बात।

मुहा०—(किसी की आँखों में) नील की सलाई फिरवा देना=अंधा कर देना। (यह प्राचीन काल का एक प्रकार का दंड था, जिसमें नील गरम करके सलाई से आँखों में लगा दिया जाता था।) **नील घोटना**=व्यर्थ का ऐसा झगड़ा या बखेड़ा बढ़ाना जिससे कलंक या लांछन लगने के सिवा और कोई प्राप्ति या सिद्धि न हो। **नील जलाना**=पानी बरसने के लिए नील जलाने का टोटका करना। **नील बिगड़ना**=(क) आचरण, चाल-चलन या रंग-ढंग खराब होना। (ख) किसी काम, चीज या बात का बुरी तरह से खराब होना या बिगड़ना। (ग) खराबी या दुर्दशा के दिन या समय आना। (घ) बहुत बड़ी खराबी या हानि होना। (नील के पौधों से नील (रंग) निकालने के लिए उन्हें पानी में भिगोकर सड़ाया और मथा जाता था। यदि इस प्रक्रिया में कोई त्रुटि होती थी तो नील (रंग) तैयार नहीं होता था। इसी आधार पर उक्त मुहावरा बना है; और उसमें कई प्रकार के अर्थ लग गए हैं।)

४. शरीर पर चोट लगने या मार पड़ने के कारण होनेवाला दाग जो बहुत-कुछ नीले रंग का होता है।

क्रि० प्र०—पड़ना।

मुहा०—नील डालना=इतना पीटना या मारना कि शरीर पर नीले रंग का दाग पड़ जाय।

५. राम की सेना का एक बंदर। ६. एक नाग का नाम। ७. राजा अजमीढ़ का एक पुत्र जो नीलनी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। ८. महाभारत के अनुसार माहिष्मती का एक राजा जिसकी एक अत्यन्त सुन्दरी कन्या थी। उस पर मोहित होकर अग्नि देवता ब्राह्मण के वेश में राजा से कन्या माँगने आये। कन्या पाकर अग्नि देवता ने राजा को वर दिया था कि तुम पर जो चढ़ाई करेगा वह भस्म हो जायगा। जब राजसूद के समय सहदेव ने महिष्मती पर चढ़ाई की थी, तब उसकी सेना भस्म होने लगी थी, पर सहदेव के प्रार्थना करने पर अग्निदेव ने प्रकट होकर बीच-बचाव किया और दोनों को संतुष्ट करके युद्ध बंद कराया था। ९. यम का एक नाम। १०. मंजुश्री का एक नाम। ११. इंद्रनील मणि। नीलम। १२. मांगलिक घोष या शब्द। १३. वटवृक्ष। बरगद। १४. तालीशपत्र। १५. जहर। विष। १६. एक प्रकार का विजय साल। १७. काच लवण। १८. नृत्य में एक प्रकार का करण। १९. पुराणानुसार इलावृत्त खंड का एक पर्वत जो रम्यक वर्ष की सीमा पर है। २०. पुराणानुसार नौ निधियों में से एक। २१. एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में २१ वर्ण होते हैं। २२. दस हजार अरब या सौ खरब की संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—१००००००००००००००।

नील-कंठ—वि०[सं० ब०स०] जिसका कंठ या गला नीला हो।

पुं० १. शिव का एक नाम जो इसलिए पड़ा था कि समुद्र-मंथन से निकला हुआ विष उन्होंने अपने गले में रख लिया था, जिससे उनका गला नीला हो गया था। २. मयूर। मोर। ३. एक प्रकार की छोटी चिड़िया जिसका गला और डैने नीले होते हैं। ४. गौरा पक्षी। चटक। ५. मूली। ६. पिया-साल।

नीलकंठाक्ष—पुं० [सं० नीलकंठ-अक्ष, ब०स०] रुद्राक्ष (वृक्ष)।

नीलकंठी—स्त्री०[सं०] १. एक प्रकार की पहाड़ी छोटी चिड़िया, जिसकी बोली बहुत ही मधुर और सुरीली होती है। २. एक प्रकार का सुन्दर छोटा पौधा जो बगीचों में शोभा के लिए लगाया जाता है।

नीलकंठीर*—पुं०=नील-कंठ।

नील-कंद—पुं०[सं० ब०स०] भैंसा कंद। महिष्कंद। शुभ्रालु।

नीलक—पुं०[सं० नील+कन्]१. काच लवण। २. बीदरी लोहा।

३. बीजगणित में, एक प्रकार की अव्यक्त राशि। ४. मटर। ५. भ्रमर। भौंरा। ६. पिया-साल। ७. काला घोड़ा।

नील-कण—पुं०[सं० ष०त०] १. नीलम का कण या टुकड़ा। २. गोदे हुए गोदने का छोटा चिह्न या बिंदु।

नीलकणा—स्त्री०[सं० ब०स०, टाप्] काला जीरा।

नील-कांत—पुं०[ब०स०] १. विष्णु। २. इन्द्रनील मणि। नीलम। ३. एक प्रकार की पहाड़ी चिड़िया जिसका सिर, पैर और कंठ के नीचे का भाग काला होता है और पूँछ नीली होती है। दिगदल।

नील-केशी—स्त्री०[ब०स०, ङीष्] नील का पौधा।

नील-क्रांता—स्त्री०[तृ०त०] कृष्णा पराजिता (लता)।

नील-क्रौंच—पुं०[कर्म०स०] काले रंग का बगला।

नील-गंगा—स्त्री०[सं०] एक प्राचीन नदी।

नील-गाय—स्त्री०[हिं० नील+गाय] गाय के आकार का एक तरह का नीलापन लिये भूरे रंगा का वन्य-पशु। गवय। रोझ।

नीलगिरि—पुं०[सं०] दक्षिण भारत का एक पर्वत।

नील-ग्रीव—पुं०=नील कंठ (शिव)।

नील-चक्र—पुं०[कर्म०स०] १. जगन्नाथजी के मंदिर के शिखर पर स्थित एक चक्र। २. दंडक वृत्त का एक भेद।

नील-चर्मा (र्मन)—वि० [ब०स०] जिसका चमड़ा नीले रंग का हो।

पुं० फालसा।

नीलच्छद—वि०[नील-छद, ब०स०] जिसके ऊपर नीले रंग का आवरण हो।

पुं० १. गरुड़। २. खजूर।

नीलज—वि०[सं० नील√जन् (उत्पत्ति)+ड] नील से उत्पन्न।

पुं० एक तरह का लोहा। वर्मलोह।

नीलजा—स्त्री०[सं० नीलज+टाप्] नील पर्वत से उत्पन्न वितस्ता (झेलम) नदी।

नीलज्ज†—वि०=निर्लज्ज।

नील-झिंटी—स्त्री०[कर्म०स०] नीली कठसरैया।

नील तरा—स्त्री०[सं०] गांधार देश की एक प्राचीन नदी जो उरुवेलारण्य से होकर बहती थी। यहीं पहुँचकर बुद्धदेव ने उरुवेल काश्यप, गया काश्यप और नदी काश्यप नामक तीन भाइयों का अभिमान दूर किया था। (बौद्ध)

नील-तरु—पुं०[कर्म०स०] नारियल।

नीलता—स्त्री० [सं० नील+तल्+टाप्] १. रंग के विचार से नीले होने की अवस्था या भाव। नीलापन। नीलिमा। २. कालापन। स्याही।

नील-ताल—पुं०[कर्म०स०] १. स्याम तमाल। हिंताल। २. तमालवृक्ष।

नील दूर्वा—स्त्री०[कर्म०स०] हरी दूब।

नील-द्रुम—पुं०[कर्म०स०] असन वृक्ष।

नील-ध्वज—पुं०[उपमि०स०] १. तमाल वृक्ष। २. [ब०स०] एक राजा।

नील-निर्यासक—पुं०[ब०स०, कप्] पियासाल का पेड़।

नील-निलय—पुं०[ष०त०] आकाश।

नील-पंक—पुं० [उपमि०स०] १. काला कीचड़। २. अंधकार। अँधेरा।

नील-पत्र—पुं०[ब०स०] १. नील कमल। २. गोनरा नामक घास, जिसकी जड़ में कसेरू होता है। ३. अनार। ४. विजयसाल। (वृक्ष)

नीलपत्रिका, नीलपत्री—स्त्री० [ब० स०,+कप्+टाप्, इत्व, ब०स०, ङीष्] १. नील का पौधा। २. कृष्णतालमूली।

नील-पद्म—पुं०[कर्म०स०] नीले रंग का कमल।

नील-पर्ण—पुं०[ब०स०] बृंदार वृक्ष।

नील-पिच्छ—पुं०[ब०स०] बाज (पक्षी)।

नील-पुष्प—पुं०[कर्म०स०] १. नीला फूल। २. [ब०स०] नीली भंगरैया। ३. काला कोराठा। ४. गठिवन।

नील-पुष्पा—स्त्री०[ब०स०, टाप्] १. नील का पौधा। २. अलसी। तीसी।

नील-पुष्पिका—स्त्री०=नील-पुष्पा।

नील-पृष्ठ—पुं०[ब०स०] अग्नि।

नील-फला—स्त्री०[ब०स०, टाप्] १. जामुन। २. बैंगन। भंटा।

नीलबरी—स्त्री० [सं० नील+हिं० बरी] कच्चे नील की बट्टी।

नील बिरई—स्त्री०[हिं० नील+बिरई] सनाय का पौधा।

नील-भृंगराज—पुं०[कर्म०स०] नीला भँगरा।

नीलम—पुं०[फा०, मिलाओ सं० नीलमणि] १. नीले रंग का एक प्रसिद्ध रत्न। (सैफायर) २. एक प्रकार का बढ़िया आम।

स्त्री० पुरानी चाल की एक तरह की तलवार।

नील-मणि—पुं०[कर्म०स०] नीलम (रत्न)।

नील-माष—पुं०[कर्म०स०] काला उड़द।

नील-मीलिका—स्त्री० [सं० नील-मील, मध्य० स०,+ठन्—इक, टाप्] जुगनूं।

नील-मृत्तिका—स्त्री०[कर्म०स०] काली मिट्टी।

नीलमोर—पुं०[हिं० नील+मोर] कुरही (पक्षी)।

नील-लोह—पुं०[कर्म०स०] बीदरी लोहा।

नील-लोहित—वि०[कर्म०स०] नीलापन लिये लाल। बैंगनी।

पुं० महादेव। शिव।

नाल-लोहिता—स्त्री०[कर्म०स०] १. जामुन की एक जाति। २. पार्वती।

नील-वर्ण—वि० [ब०स०] नीले रंग का।

नाल-वल्ली—स्त्री०[कर्म० स०] बदाक। बाँदा। परगाछा।

नील-वसन—वि० [ब० स०] जिसने नीले रंग के वस्त्र पहने हों।

पुं० १. [कर्म० स०] नीला कपड़ा। २. [ब० स०] शनिग्रह। ३. बलराम।

नील-वानर—पुं०[कर्म०स०] दक्षिण भारत के पश्चिमी तट पर रहनेवाले एक तरह के बंदर जिनके चेहरे पर चारों ओर लंबे और घने बाल होते हैं।

नीलवासा (सस्)—वि०=नील वसन।

पुं० शनिग्रह।

नील-बीज—पुं०[ब०स०] पिया-साल।

नील-वृंत—पुं०[ब०स०] तूल। रूई।

नील-वृष—पुं०[कर्म०स०] लाल रंग का ऐसा साँड़ जिसका मुँह, सिर, पूँछ और खुर सफेद हो।

विशेष—ऐसा साँड़ श्राद्ध में उत्सर्ग करने के लिए प्रशस्त माना गया है।

नील-वृषा—स्त्री०[सं० नील√वृष् (उत्पादन)+क+टाप्]बैंगन।

नील-वेणी—स्त्री०[सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

नील-शिखंड—पुं०[ब०स०] रुद्र का भेद।

नील-शिग्रु—पुं०[कर्म०स०] सहिंजन का पेड़। शोभांजन।

नील-संध्या—स्त्री०[उपमि०स०] कृष्णा पराजिता।

नील-सार—पुं०[ब०स०] तेंदू का पेड़।

नील-सिर—स्त्री०[हिं० नील+सिर]एक तरह की वत्तख जिसके सिर का रंग नीला होता है।

नील-स्वरूप (क)—पुं०[ब०स०, कप्] एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तीन तीन भगण और दो दो गुरु अक्षर होते हैं।

नीलांग—वि०[नील-अंग, ब०स०] जिसके अंग नीले रंग के हों। नीले अंगोंवाला।

पुं० सारस (पक्षी)।

नीलांजन—पुं०[नील-अंजन, कर्म०स०]१. नीला सुरमा। २. तूतिया।

नीलांजना—स्त्री० [सं० नील√अंज् (मिलाना)+णिच्+ल्यु—अन, टाप्]१. बिजली। नीलांजनी। २. काली कपास।

नीलांजनी—स्त्री०[सं० नीलांजन+ङीप्]=नीलांजना।

नीलांजसा—स्त्री० [सं०] १. बिजली। विद्युत्। २. एक अप्सरा का नाम। ३. एक प्राचीन नदी।

नीलांबर—वि०[सं० नील-अंबर, ब०स०] नीले कपड़ेवाला। नीला वस्त्र धारण करनेवाला।

पुं०१. नीले रंग का कपड़ा। २. बलदेव। ३. शनैश्चर। ४. राक्षस। ५. तालीशपत्र।

नीलांबरी—स्त्री० [सं० नीलांबर+ङीप्] संगीत में, एक प्रकार की रागिनी।

नीलांबुज—पुं०[नील-अंबुज, कर्म० स०] नील कमल।

नीला—वि०[सं० नील][स्त्री० नीली] आकाश या नील की तरह के रंग का। नील वर्ण का। आसमानी। (ब्ल्यू)

विशेष—राजस्थान में प्रायः हरा (रंग) ही नीला कहलाता है।

मुहा०—**(किसी को नीला करना)**=मारते मारते शरीर पर नीले दाग डालना। बहुत मार मारना। **(किसी का) नीला-पीला होना**=सहसा किसी बड़े मानसिक आघात या रोग के कारण सारे शरीर का रंग इस प्रकार बदल जाना कि मानों मृत्यु बहुत पास आ गई है। **(किसी पर) नीले-पीले होना**=बहुत अधिक क्रोध या रोष प्रगट करना। खूब बिगड़ना। **चेहरा नीला पड़ जाना**=भय आदि के कारण चेहरे का रंग उतर जाना। **चेहरा या हाथ पैर नीले पड़ना**=चेहरे या शरीर का रंग इस प्रकार बदल जाना कि मानों शरीर में रक्त ही न रह गया हो।

पुं०१. इंद्र नील मणि। नीलम। २. एक प्रकार का कबूतर।

स्त्री०१. नीली मक्खी। २. नीली पुनर्नवा। ३. नील का पौधा। ४. एक प्रकार की लता। ५. एक प्राचीन नदी। ६. संगीत में, एक प्रकार की रागिनी जो मल्लार राग की भार्या कही गई है।

नीलाक्ष—वि०[नील-अक्षि, ब०स०] नीली आँखोंवाला। जिसकी आँखें नीले रंग की हों।

पुं० राजहंस।

नीलाचल—पुं०[नील-अचल, कर्म०स०]१. नील गिरि पर्वत। २.जगन्नाथ पुरी के पास की एक छोटी पहाड़ी।

नीलाणी—स्त्री०[हिं० नीला=हरा]हरियाली। (डिं०)

नीला थोथा—पुं०[सं० नील तुत्थ] ताँबे की एक उपधातु जो कृत्रिम और खनिज दो प्रकार की होती है। तूतिया।

नीलाम—पुं०[पुर्त० लेलम् या लेइलम्]१. वस्तुओं की होनेवाली वह सार्वजनिक बिक्री जिसमें सबसे अधिक या बढ़कर दाम लगानेवाले के हाथ वस्तुएँ बेची जाती हैं। २. इस प्रकार चीजें बेचने की क्रिया, ढंग या भाव।

विशेष—हमारे यहाँ इस प्रकार की विक्रय-प्रथा को 'प्रतिक्रोश' कहते थे।

मुहा०—**(किसी चीज का) नीलाम पर चढ़ना**=किसी चीज का ऐसी स्थिति में आना कि उसकी बिक्री नीलाम के रूप में हो। जैसे—अदालत की आज्ञा से उसका मकान नीलाम पर चढ़ा है।

नीलामघर—पुं०[हिं० नीलाम+घर] वह स्थान जहाँ चीजें नीलाम की जाती हों।

नीलामी—वि० [हिं० नीलाम] नीलाम के रूप में बिकनेवाला या बिका हुआ। जैसे—नीलामी घड़ी।

स्त्री० दे० 'नीलाम'।

नीलाम्ला—स्त्री०[नीला-अम्ला, कर्म०स०?] नीली कठसरैया।

नीलाम्लान—पुं०[नील-आम्लान, कर्म०स०] १. एक प्रकार का पौधा जिसमें सुन्दर फूल लगते हैं। काला कोराठा। २. उक्त पौधे का फूल।

नीलारुण—पुं०[नील-अरुण, कर्म०स०] ऊषा।

नीलालक—वि०[सं० नील-अलक, ब०स०][स्त्री० नीला लका] नीले या काले बालोंवाला। उदा०—घन नीलालका दामिनी जित ललना वह। —निराला।

नीलालु—पुं०[नील-आलु, कर्म०स०] एक तरह का कंद।

नीलालेप—पुं०[सं०] बालों में लगाया जानेवाला खिजाब।

नीलावती—स्त्री०[सं० नीलवती] एक तरह का चावल।

नीलाशी—स्त्री०[सं० नील्√अश् (व्याप्ति)+अण्+ङीप्] नीला सिंदुवार।

नीलाश्म (न्)—पुं०[नील-अश्मन्, कर्म०स०] नीलम।

नीलाश्व—पुं०[सं०] एक प्राचीन देश।

नीलासन—पुं० [नील-असन, कर्म०स०]१. पियासाल का पेड़। २. काम-शास्त्र में, एक प्रकार का आसन या रति-बंध।

नीलाहट†—स्त्री०[हिं० नीला+आहट (प्रत्य०)] किसी चीज में दिखाई पड़नेवाली हलके नीले रंग की झलक।

नीलि—स्त्री०[सं०√नील् +इन्]१. नील का पौधा। २. नीलिका रोग। ३. एक प्रकार का जल-जंतु। ४. नीलिका अर्थात् आँखें तिलमिलाने का रोग।

वि०=नीला।

नीलिका—स्त्री०[सं० नीली+कन्+टाप्, ह्रस्व] १. नीलबरी। २. नीला संभालू। नीली निर्गुंडी। ३. आँखें तिलमिलाने का रोग। लिंग-नाश। ४. आघात, चोट आदि लगने पर शरीर पर पड़ा हुआ नीला दाग। नील।

नीलिका-मुद्रण—पुं० [मध्य०स०] १. एक प्रकार की छपाई जिसमें नीली जमीन पर सफेद अक्षर और सफेद रेखाएँ अंकित होती हैं। (ब्ल्यू प्रिंटिंग) २. उक्त प्रकार से छापा हुआ कागज। (ब्ल्यू प्रिन्ट) **विशेष**—प्रायः जमीनों, मकानों आदि के नकशे आज-कल इसी रूप में छपते या बनते हैं।

नीलिनी—स्त्री० [सं० नील+इनि+ङीप्] १. नील का पौधा। २. नील।

नीलिमा—स्त्री० [सं० नील+इमनिच्] १. नीले होने की अवस्था, गुण या भाव। नीलापन। २. कालापन। श्यामलता। स्याही।

नीली—स्त्री० दे० 'नीलि' और 'नीलिका'।
वि० हिं० 'नीला' का स्त्री०।

नीली-कर्म—पुं० [सं०] सिर के बाल रँगने की क्रिया। खिजाब लगाना।

नीली घोड़ी—स्त्री० [हिं० नीली+घोड़ी] एक प्रकार का स्वाँग जिसमें जामे के साथ सिली हुई कागज की ऐसी घोड़ी होती है जिसे पहन लेने से जान पड़ता है कि आदमी घोड़े पर सवार है। पहले डफाली इसे पहन कर गीत गाते हुए भीख माँगने निकलते थे।

नीली चकरी—स्त्री० [हिं० नीली+चकरी] एक तरह का पौधा।

नीली चाय—स्त्री० [हिं० नीली+चाय] अगिया घास या यज्ञकुश।

नीली-राग—पुं० [सं० नील+अच्+ङीष्, नीली-राग उपमि० स० ?] १. प्रगाढ़ प्रेम। २. [ब० स०] घनिष्ठ मित्र।

नीली-संधान—पुं० [ष० त०] नील का खमीर।

नीलू—स्त्री० [हिं० नील] एक तरह की घास। पलवान।

नीलोत्पल—पुं० [नील-उत्पल, कर्म० स०] नील कमल।

नीलोत्पली (लिन्)—पुं० [सं० नीलोत्पल+इनि] १. शिव का एक अंश। २. बौद्ध महात्मा मंजुश्री का एक नाम।

नीलोफर—पुं० [सं० नीलोत्पल से फा०] १. नील कमल। २. कुमुदनी। कोई।

नीवँ—स्त्री०=नींव।

नीवर—पुं० [?] १. परिव्राजक। संन्यासी। २. बौद्ध भिक्षु। ३. रोजगार। वाणिज्य। ४. रोजगारी। वणिक। ५. कीचड़। ६. जल। पानी।

नीवाक—पुं० [सं० नि√वच् (बोलना)+घञ्, कुत्व, दीर्घ] १. अकाल के समय किसी चीज की होनेवाली अत्यधिक माँग। २. अकाल। दुर्भिक्ष।

नीवानास—वि० [हिं० नींव+सं० नाश] चौपट। बरबाद। विनष्ट।
पुं० जड़-मूल से होनेवाला नाश। बरबादी।

नीवार—पुं०[सं० नि√वृ (स्वीकार)+घञ्, दीर्घ] जलीय भूमि में आप से आप होनेवाला धान। तीनी।
स्त्री०=निवार।

नीवि (वी)—स्त्री० [सं० नि√व्ये (आच्छादन करना)+इञ्, यलोप, उपसर्ग-दीर्घ] १. कमर में लपेटी हुई धोती में की वह गाँठ जो स्त्रियाँ यों ही अथवा उसके ऊपर डोरी से बाँधती हैं। २. वह डोरी जिसे स्त्रियाँ कमर में धोती के ऊपर लपेट कर बाँधती हैं। फुबती। ३. लहँगे के नेफे में पड़ी हुई डोरी। इजारबंद। नाला। ४. जनानी धोती या साड़ी। (क्व०)। ५. लँगोटी। ६. मूलधन। पूँजी। ७. वह जमा किया हुआ मूलधन जिसका केवल व्याज दूसरे कामों में लगता हो। (कौ०)

नीवी-ग्राहक—पुं० [सं० ष० त०] वह व्यक्ति जिसके पास चन्दे का अथवा और किसी प्रकार का धन जमा हो और जो उस धन का प्रबंध करता हो। (कौ०)

नीव्र—पुं० [सं० नि√वृ+क, पूर्वदीर्घ] दे० 'नीव्र'।

नीशार—पुं० [सं० नि√शॄ (नष्ट करना)+घञ्, दीर्घ] १. सरदी, हवा आदि के बचाव के लिए टाँगा जानेवाला परदा या कनात। २. मसहरी। ३. सरदी से बचने के लिए ओढ़ा जानेवाला कपड़ा। जैसे—कंबल, लोई आदि।

नीस†—पुं० [?] सफेद धतूरा।

नीसक†—वि०=निःशक्त।
अव्य०=निश्शंक।

नीसरणी†—स्त्री०=निसेनी (सीढ़ी)।

नीसाण†—पुं०=निशान।

नीसानी—स्त्री० [?] एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में २३ मात्राएँ होती हैं और १३वीं और १०वीं मात्रा पर विराम होता है।
†स्त्री०=निशानी।

नीसार*—पुं०=नीशार।

नीसू—पुं० [?] जमीन में गड़ा हुआ लकड़ी का ठीहा जिस पर रखकर गन्ना, चारा आदि काटा जाता है।

नीहँ†—स्त्री०=नींव। (पश्चिम)

नीहार—पुं० [सं० नि√हृ (हरण)+घञ्, दीर्घ] १. कोहरा। २. तुषार। पाला।

नीहार-जल—पुं० [सं० ष० त०] ओस।

नीहारिका—स्त्री० [सं० नीहार+कन्+टाप्, इत्व] रात के समय आकाश में दिखाई पड़नेवाले घने कोहरे की तरह के प्रकाश-पुंज। (नेब्युला)

नुकता—पुं० [अ० नुक्तः] १. लेखन में अक्षरों के साथ लगाई जानेवाली बिंदी। २. शून्य का सूचक चिह्न। ३. किसी प्रकार की बिंदी या विंदु।
पुं० १. ऐसी छिपी हुई या रहस्यपूर्ण बात जो सहसा सब की समझ में न आ सके। २. ऐब। दोष।
क्रि० प्र०—निकालना।
पद—नुकता-चीनी। (देखें)
३. चटपटी और मजेदार बात। चुटकुला।
क्रि० प्र०—छोड़ना।
४. वह झालर जो घोड़ों की आँखों पर उन्हें मक्खियों से बचाने के लिए बाँधी जाती है। तिल्हरी।

नुकता-चीन—वि० [अ० नुक्तः+फा० चीन] [भाव० नुकताचीनी] दूसरे के दोष या बुराइयाँ ढूँढ़नेवाला। छिद्रान्वेषी।

नुकता चीनी—स्त्री० [अ० नुक्तः+फा० चीनी] १. दूसरे के दोष या बुराइयाँ ढूँढ़ना। छिद्रान्वेषण। २. दूसरों के दोषों की ओर इंगित करना। दोष दरशाना।

नुकती—स्त्री० [फा० नखुदी] महीन और मीठी बुँदिया जिसके प्रायः लड्डू बनाये जाते हैं।

नुकना†—अ०=लुकना (छिपना)।

नुकरा—पुं० [फा० नुक़ः] १. चाँदी। २. घोड़ों का सफेद रंग। ३. सफेद रंग का घोड़ा।
वि० (घोड़ा) जिसका रंग सफेद हो।

नुकरी—स्त्री० [अ० नुक़ः] जलाशयों के किनारे रहनेवाली एक छोटी चिड़िया जिसके पैर सफेद और चोंच काली होती है।

नुकसान—पुं० [फा० नुक्सान] १. कमी। छीज। २. किसी काम या व्यापार में होनेवाला घाटा। हानि।
क्रि० प्र०—उठाना।
३. ऐसी क्षति जिससे किसी काम, बात या व्यवहार में कमी पड़ती या बाधा होती है। जैसे—भूकंप से कई मकानों का नुकसान हुआ है।
क्रि० प्र०—पहुँचना।—पहुँचाना।
मुहा०—(किसी का) नुकसान भरना=किसी की क्षति या हानि होने पर उसकी पूर्ति करना।
४. किसी प्रकार होनेवाली खराबी या विकार। जैसे—बुखार में नहाना नुकसान करता है।

नुकसानी—स्त्री० [फा० नुक्सान] १. नुकसान। हानि। २. हानि पूरी करने के लिए दिया जानेवाला धन। क्षति-पूर्ति।
†वि० (पदार्थ) जिसका कुछ अंश टूट-फूट या बिगड़ गया हो। जैसे—नुकसानी माल।

नुकाई—स्त्री० [हिं० नुकाना] खुरपी से निराने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

नुकाना†—स० [देश०] खुरपी से निराना।
स०=लुकाना (छिपाना)।

नुकीला—वि० [हिं० नोक+ईला (प्रत्य०)] [स्त्री० नुकीली] १. जिसमें नोक हो। ३. तेज नोकवाला। ३. नोंक-झोंक अर्थात् सज-धजवाला। बाँका तिरछा। जैसे—नुकीला जवान।

नुक्कड़—पुं० [हिं० नोंक] १. नोक की तरह आगे निकला हुआ कोना या सिरा। २. कोना। ३. मकान, गली या रास्ते का वह अंत या सिरा जहाँ कोई मोड़ पड़ता हो।

नुक्का—पुं० [हिं० नोक] १ नोक। २. गेड़ी खेलने की छोटी लकड़ी या डंडा।
क्रि० प्र०—मारना।—लगाना।

नुक्का टोपी—स्त्री० [हिं० नोक+टोपी] एक तरह की पतली दोपलिया नोकदार टोपी।

नुक्स—पुं० [अ० नुक्स] १. किसी चीज में होनेवाली कोई ऐसी कमी या त्रुटि जिससे उस वस्तु में अपूर्णता रहती हो। २. चारित्रिक दोष।

नुखरना—अ० [देश०] भालू का चित लेटना। (कलंदर)

नुखार—स्त्री० [देश०] छड़ी से भालू के मुँह पर किया जानेवाला आघात। (कलंदर)
†पुं०=लुकाट (लकुट का पेड़ और फल)।

नुगदी†—स्त्री० १.=नुकती। २.=लुगदी।

नुचना—अ० [हिं० 'नोचना' का अ०] नोचा जाना। (दे० 'नोचना')
†पुं०=नोचना (बाल नोचने की चिमटी)।

नुचवाना—स० [हिं० नोचना का प्रे०] नोचने का काम दूसरे से कराना। किसी को कुछ नोचने में प्रवृत्त करना।

नुचित*—वि० [सं० लुंचित] १. नोचा हुआ। २. जिसके सिर के बाल नुचे हुए हों। (जैन साधु)

नुजट—पुं० [?] संगीत में, २४ शोभाओं में से एक।

नुजूम—पुं० [अ०] ज्योतिष।

नुजूमी—वि० [अ०] नुजूम-संबंधी।
पुं० ज्योतिषी।

नुत—भू० कृ० [सं०√नु (स्तुति)+क्त] १. वंदित। २. स्तुत। ३. पूजित।

नुति—स्त्री० [सं०√नु+क्तिन्] १. वंदना। २. स्तुति। ३. पूजन।

नुत्त—भू० कृ० [सं०√नुद् (प्रेरणा)+क्त] १. चलाया या फेंका हुआ। क्षिप्त। २. हटाया हुआ। ३. प्रेरित।

नुत्फा—पुं० [अ० नुत्फः] १. पुरुष का वीर्य। शुक्र।
मुहा०—नुत्फा ठहरना=स्त्री संभोग के फलस्वरूप गर्भ रहना।
२. औलाद। संतान।

नुत्फा हराम—वि० [अ०] जिसका जन्म व्यभिचार से हुआ हो।

नुनखरा—वि० [हिं० नून+खारा] जिसमें कुछ कुछ खारापन हो।

नुनना—स० [सं० लवण, लून] खेत काटना। लुनना।
वि०=नुनखरा।

नुनाई*—स्त्री० १.=लुनाई (लावण्य)। २=लुनाई। (लुनने की क्रिया या भाव)।

नूनी—स्त्री० [देश०] शहतूत की जाति का एक पेड़।

नुनेरा—पुं० [हिं० नून+एरा] १. नमक बनानेवाला, विशेषतः नोना मिट्टी में से नमक निकालनेवाला। २. अमलोनी या नोनी नामक साग। नोनिया।

नुमा—प्रत्य० [फा०] १. दूसरों को कुछ दिखलाने या प्रदर्शित करनेवाला। जैसे—राहनुमा=मार्ग प्रदर्शक। २. दिखाई देने या प्रकट होनेवाला। जैसे—खुशनुमा। ३. देखने में किसी के अनुरूप या सदृश्य या समान जान पड़ने या होनेवाला। जैसे—सन्दूक-नुमा मकान। ४. किसी की ओर संकेत करनेवाला। जैसे—कुतुबनुमा=दिग्दर्शक यंत्र। (समस्त पदों के अंत में प्रयुक्त)।

नुमाइंदगी—स्त्री० [फा०] नुमाइंदा अर्थात् प्रतिनिधि होने की अवस्था या भाव। प्रतिनिधित्व।

नुमाइंदा—पुं० [फा० नुमाइंदः] वह जो दूसरों का प्रतिनिधित्व करता हो।

नुमाइश—स्त्री० [फा०] [वि० नुमाइशी] १. ऊपर या बाहर से सब लोगों को दिखाने की क्रिया या भाव। दिखावट। प्रदर्शन। २. ऊपरी ठाठ-बाट या तड़क-भड़क। सज-धज। ३. अनोखी, उपयोगी, नई या इसी तरह की बहुत-सी चीजें इस प्रकार एक जगह रखना कि सब लोग उन्हें देख सकें और उनका परिचय प्राप्त कर सकें। ४. वह स्थान जहाँ उक्त प्रकार से बहुत-सी चीजें इकट्ठी कर के लोगों को दिखाने के लिए रखी जाती हैं। प्रदर्शनी (एग्जिबिशन)
क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।

नुमाइशगाह—स्त्री० [फा०] वह स्थान जहाँ अनेक प्रकार की उत्तम और अद्भुत वस्तुएँ इकट्ठी कर के दिखाई जाती हैं।। प्रदर्शनी-स्थल।

नुमाइशी—वि० [फा० नुमाइश] १. नुमाइश-संबंधी। २. (वस्तु) जो

नुमाइश में रखी गई हो या रखी जाने को हों। ३. सुंदर। ४. जिसके अंदर या नीचे विशेष तत्त्व न हो। दिखावटी। दिखौआ।

नुमाई—स्त्री० [फा०] ऊपर से दिखाने की क्रिया या भाव। प्रदर्शन। (समस्त पदों के अंत में प्रयुक्त) जैसे—खुद-नुमाई=आत्म-प्रदर्शन या अभिमानपूर्वक यह दिखलाना कि हम ऐसे हैं।

नुमाया—वि० [फा०] जो साफ दिखाई देता हो। जाहिर प्रकट।

नुसखा—पुं० [अ० नुस्खः] १. कागज का ऐसा टुकड़ा जिस पर कुछ लिखा हो। २. छपी अथवा हाथ की लिखी हुई पुस्तक की प्रति। ३. वह कागज जिस पर रोगी के लिए औषध और उसका सेवन विधि लिखी हो।

मुहा०—नुसखा बाँधना=वैद्य या हकीम के लिखे अनुसार औषधियों की पुड़िया बाँधकर रोगियों को देना।

४. व्यय का अवसर या योग। जैसे—वहाँ जाना भी ५) का नुसखा है।

नुहरना†—अ०=निहुरना (झुकना)।

नू—विभ० व्रज, पंजाबी, राजस्थानी आदि भाषाओं में कर्मकारक की विभक्ति, को।

नूका—पुं० [?] कज्जल नामक छंद।

नूत†—वि० नूतन।

नूतन—वि० [सं० नव+तनप्, नू-आदेश] [भाव० नूतनता, नूतनत्व] १. नया। नवीन। २. तुरंत या हाल का। ताजा। ३. अनूठा। अनोखा।

नूतन-चंद्रिक—पुं० [सं०] संगति में, कर्नाटकी पद्धति का एक रोग।

नूतनता—स्त्री० [सं० नूतन+तल्+टाप्] नूतन होने की अवस्था या भाव।

नूतनत्व—पुं० [सं० नूतन+त्व] नूतनता।

नूत्न—वि० [सं० नव+त्नप्, नू आदेश]=नूतन।

नूद—पुं० [सं०√नुद्+क, पृषो० दीर्घ] शहतूत।

नूधा—पुं० [देश०] एक तरह का देशी तंबाकू।

नून—पुं० [?] १. आल। २. आल की जाति की एक प्रकार की लता।

पुं० [सं० लवण] नमक।

पद—नून-तेल=घर-गृहस्थी के निर्वाह के लिए आवश्यक खाद्य पदार्थ और शेष सामग्री।

नून ताई— स्त्री०=न्यूनता।

नूनी—स्त्री० [सं० न्यून हिं० नूनी] लिंगेंद्रिय, विशेषतः बच्चों की।

नूपुर—पुं० [सं०√नू (प्रशंसा)+क्विप् नू√पुर् (आगे जाना)+क] १. स्त्रियों के पैर का एक आभूषण। पैंजनी। २. घुंघरू। ३. नगण का पहला भेद। ४. इक्ष्वाकु वंश के एक राजा।

नूर—पुं० [अ०] १. ज्योति। प्रकाश।

पद—नूर का तड़का=(क) प्रभात का समय। (ख) आभा। चमक। (ग) शोभा। श्री।

खुदा का नूर=दाढ़ी पर के बढ़ाये हुए बाल। (मुसल०) उदा०—और तो मैं क्या कहूँ, बन आये हो लंगूर-से। दाढ़ी मुड़वाओ, मैं बाज आई खुदा के नूर से।—जान साहब।

मुहा०—नूर बरसना=बहुत अधिक शोभा या श्री चारों ओर फैलना।

४. सूफी संप्रदाय में, ईश्वर का एक नाम। ५. फारसी संगीत में; बारह मुकामों या गायन-प्रकारों में से एक।

नूरबाफ—पुं० [अ० नूर+फा० बाफ] जुलाहा। ताँती।

नूरा—पुं० [अ० नूर] १. ऐसी कुश्ती जिसमें दोनों पहलवानों में पहले से तै होता है कि एक दूसरे को चित नहीं गिरायेंगे। २. दवाओं का वह चूर्ण जो स्त्रियाँ अपने गुप्त अंग के बाल साफ करने के लिए लगाती हैं। (मुसल० स्त्रियाँ)

वि० १. चमकता हुआ। प्रकाशमान। २. तेजस्वी।

नूरानी—वि० [अ०] १. जिसमें नूर या प्रकाश हो। २. चमक-दमक-वाला।

नूरी—वि० [अ०] नूर-संबंधी।

पुं० [फा०] लाल रंग की एक तरह की चिड़िया।

नूह—पुं० [अ०] शामी या इबरानी मतों के अनुसार एक पैगंबर जिनके समय में भयंकर तूफान आया था और जिसके फलस्वरूप सारी सृष्टि जलमग्न हो गई थी। कहते हैं कि उस समय जो थोड़े से लोग बचे थे उन्हीं की संतान इस समय है। (यह तूफान भारतीय खंड प्रलय के समान माना गया है।)

नृ—पुं० [सं०√नी (ले जाना)+ऋन्, डित्] १. नर। मनुष्य। २. शतरंज का मोहरा।

नृ-कपाल—पुं० [ष० त०] मनुष्य की खोपड़ी।

नृ-केशरी (रिन्)—पुं० [कर्म० स०] १. ऐसा व्यक्ति जो सिंह या शेर के समान पराक्रमी और श्रेष्ठ हो। २. नृसिंह अवतार।

नृग—पुं० [सं०] १. मनु के एक पुत्र का नाम। २. उशीनर का पुत्र जो यौधेय वंश का मूल पुरुष था।

नृगा—स्त्री० [सं०] राजा उशीनर की पत्नी का नाम।

नृघ्न—वि० [सं० नृ√हन् (हिंसा)+टक्] मनुष्य घातक।

नृतक—पुं०=नर्त्तक।

नृतना—अ० [सं० नृत] नृत्य करना। नाचना।

नृति—स्त्री० [सं०√नृत् (नाँचना)+इन्] नाच। नृत्य।

नृतु (तू)—पुं० [सं०√नृत्+कु] नर्त्तक।

नृत्त—पुं० [सं०√नृत्+क्त] वह नाच जिसमें अंगों का विक्षेप भी किया जाता है।

नृत्तांग—पुं० [सं०] नृत्य के अंग।

नृत्य—पुं० [सं०√नृत्+क्यप्] ताल, लय आदि के अनुसार मन-बहलाव के लिए शरीर के अंगों का किया जानेवाला संचालन। विशेष दे० 'नाच'।

नृत्यकी†—स्त्री०=नर्त्तकी।

नृत्य-गीत—पुं० [सं०] धार्मिक, सामाजिक आदि अवसरों पर होनेवाला ऐसा नृत्य जिसमें नर्त्तक साथ ही साथ गाते भी हैं। जैसे—गुजरात का गरबा प्रसिद्ध नृत्य-गीत है।

नृत्य-नाट्य—पुं० [सं०] ऐसा अभिनय या नाट्य जिसमें नृत्यों की अधिकता हो।

नृत्य-प्रिय—पुं० [ब० स०] १. महादेव। २. कार्तिकेय का एक अनुचर।

नृत्य-शाला—स्त्री० [ष० त०] नाचघर।

नृ-दुर्ग—पुं० [सं० मध्य० स०] वह दुर्ग जिसके चारों ओर मनुष्यों विशेषतः सैनिकों का घेरा हो।

नृ-देव—पुं० [सं० स० त०] १. राजा। २. ब्राह्मण।

नृ-धर्मा (मंन्)—पुं० [सं० ब० स०, अनिच्] कुबेर।

नृपंजय—पुं० [सं० नृप√जि (जीतना)+खश्, मुम्] एक पुरुवंशी नरेश।

नृप—वि० [सं० नृ√पा (रक्षा)+क] [भाव० नृपता] मनुष्यों की रक्षा करनेवाला।

पुं० राजा।

नृप-कंद—पुं० [मध्य० स०] लाल प्याज।

नृप-जय—पुं० [सं०] एक पुरुवंशीय राजा।

नृपता—स्त्री० [सं० नृप+तल्+टाप्] नृप अर्थात् राजा होने की अवस्था, गुण या भाव। राजत्व।

नृप-पति—पुं० [सं० ष० त०] १. राजा। २. कुबेर।

नृप-द्रुम—पुं० [मध्य० स०] १. अमलतास। २. खिरनी का पेड़।

नृप-द्रोही (हिन्)—पुं० [सं० नृप√द्रुह् (द्रोह करना)+णिनि] परशुराम।

नृप-प्रिय—पुं० [ष० त०] १. लाल प्याज। २. राम शर। सरकंडा। ३. एक प्रकार का बाँस। ४. जड़हन धान। ५. आम का पेड़। ६. पहाड़ी तोता।

नृप-प्रिय-फला—स्त्री० [ब० स०, टाप्] बैंगन।

नृप-प्रिया—स्त्री० [सं० नृपप्रिय+टाप्] १. केतकी। २. पिंडखजूर।

नृपमांगल्य (क)—पुं० [ब० स०, कप्] तरवट का पेड़। आहुल।

नृप-मान—पुं० [ष० त०] पुरानी चाल का एक तरह का बाजा जो राजाओं के भोजन के समय बजाया जाता था।

नृप-वल्लभ—पुं० [ष० त०] १. आम। २. राजा का सखा।

नृप-वल्लभा—स्त्री० [ष० त०] १. रानी। २. केतकी।

नृप-वृक्ष—पुं० [मध्य० स०] सोनालु का पेड़।

नृप-शासन—पुं० [ष० त]० राजा की आज्ञा।

नृ-पशु—पुं० [उपमि० स०] वह जो मनुष्य होने पर भी पशुओं का-सा आचरण करता हो।

नृप-सुत—पुं० [ष० त०] [स्त्री० नृप-सुता] राजकुमार।

नृप-सुता—स्त्री० [ष० त०] १. राजकन्या। राजकुमारी। २. छछूंदर।

नृपांश—पुं० [नृप-अंश, ष० त०] आय, उपज आदि का वह अंश जो राजा को दिया जाता हो।

नृपात्मज—पुं० [नृप-आत्मज, ष० त०] [स्त्री० नृपात्मजा] राजकुमार।

नृपाध्वर—पुं० [नृप-अध्वर, मध्य० स०] राजसूय यज्ञ।

नृपान्न—पुं० [नृप-अन्न, ष० त०] १. राजा का अन्न। २. राजभोग धान।

नृपाभीर—पुं० [सं० अभि√ईर् (सूचना)+क, नृप-अभीर, ष० त०] एक तरह का बाजा। विशेष० दे० 'नृपमान'।

नृपामय—पुं० [आमय-नृप, ष० त०, पूर्वनिपात] यक्ष्मा राजरोग।

नृपाल—पुं० [सं० नृ√पाल् (रक्षा)+णिच्+अण्] राजा।

नृपावर्त्त—पुं० [सं० नृप+आ√वृत् (बरतना)+अच्] एक तरह का रत्न। राजावर्त्त।

नृपासन—पुं० [नृप-आसन, ष० त०] राजसिंहासन। तख्त।

नृपाह्व—पुं० [नृप-आह्वा, ब० स०] लाल प्याज।

नृपाह्वय—वि० [सं० नृप-आ√ह्वे (स्पर्धा)+अच्] राजा कहलानेवाला। राजा नामधारी।

नृपोचित—वि० [नृप-उचित, ष० त०] राजाओं के लिए उचित या उपयुक्त। राजाओं के योग्य। जैसे—नृपोचित व्यवहार।

पुं० एक प्रकार का काला बड़ा उरद। राज-माष। २. लोबिया।

नृमणा—स्त्री० [सं० नृ-मन, ब० स०, टाप्, णत्व] प्लक्षद्वीप की एक महानदी। (भागवत)

नृमणि—पुं० [सं०] एक पिशाच जिसके संबंध में प्रसिद्ध है कि वह बच्चों को तंग किया करता है।

नृ-मर—वि० [सं० ष० त०] मनुष्यों को मारनेवाला।

पुं० राक्षस।

नृमल—वि०=निर्मल।

नृ-मियुन—पुं० [सं० ष० त०] १. स्त्री-पुरुष का जोड़ा। २. मिथुन राशि।

नृ-मेध—[सं० ष० त०] नरमेध। (दे०)

नृ-यज्ञ—पुं० [सं० मध्य० स०] गृहस्थ के लिए आवश्यक माने हुए पंचयज्ञों में से एक जिसमें अतिथि का सत्कार उचित ढंग से करने को कहा गया है।

नृ-लोक—पुं० [सं० ष० त०] मनुष्यों का लोक। मर्त्यलोक।

नृ-वराह—पुं० [सं० कर्म० स०] वाराह रूपीधारी विष्णु भगवान्।

नृ-वाहन—पुं० [सं० ब० स०] कुबेर।

नृ-वेष्टन—पुं० [सं० ब० स०] शिव।

नृशंस—वि० [सं० नृ√शंस् (हिंसा)+अण्] [भाव० नृशंसता] १. क्रूर। निर्दय। २. अत्याचारी। ३. बहुत बड़ा अनिष्ट या अपकार करनेवाला।

नृशंसता—स्त्री० [सं० नृशंस+तल्+टाप्] नृशंस होने की अवस्था, गुण या भाव।

नृ-शृंग—पुं० [सं० ष० त०] मनुष्य के सींग के समान अस्तित्वहीन और कल्पित वस्तु।

नृ-सिंह—पुं० [सं० कर्म० स०] वह जो मनुष्यों में उसी प्रकार प्रधान और श्रेष्ठ हो, जिस प्रकार पशुओं में सिंह होता है। सिंह-जैसे पराक्रम वाला व्यक्ति। २. पुराणानुसार विष्णु का चौथा अवतार जो आधे मनुष्य और आधे सिंह के रूप में हुआ था।

विशेष—विष्णु का यह रूप भक्त प्रह्लाद की रक्षा करने के लिए हुआ था; और इसी अवतार में उन्होंने राक्षसों के राजा हिरण्यकश्यप को मारा था।

३. कामशास्त्र में, एक प्रकार का आसन या रति बंध।

नृसिंह-चतुर्दशी—स्त्री० [मध्य० स०] वैशाख शुक्ल चतुर्दशी, इसी तिथि को भगवान नृसिंह अवतरित हुए थे।

नृसिंह-पुराण—पुं० [मध्य० स०] एक उपपुराण।

नृसिंह-पुरी—पुं० [सं०] मुलतान (पश्चिमी पाकिस्तान) में स्थित एक प्राचीन तीर्थ-स्थान।

नृसिंह-वन—पुं० [सं०] एक प्राचीन देश। (बृहत्संहिता)

नृ-सोम—पुं० [उपमि० स०] ऐसा मनुष्य जो चंद्रमा के समान प्रकाशमान हो। बहुत बड़ा आदमी।

नृ-हरि—पुं० [कर्म० स०] नृसिंह। (दे०)

ने—विभ० [सं० एन] १. हिन्दी में, सकर्मक भूतकालिक क्रिया के कर्ता के साथ लगनेवाली एक विभक्ति। जैसे—राम ने खाया, कृष्ण ने

मारा। २. गुजराती तथा राजस्थानी में कर्म तथा संप्रदान कारकों की विभक्ति। 'को' के स्थान पर प्रयुक्त।

नेअमत—स्त्री० [अ०]=नियामत (देन)।

नेईं, नेई— स्त्री०=नींव।

नेउछाउरि†—स्त्री०=निछावर।

नेउतना— स० [हिं० न्योता] निमंत्रण देना। बुलाना।

नेउतहरि (री)—वि० [हिं० न्योता] १. जिसे न्योता (निमंत्रण) दिया गया हो। निमंत्रित। २. (वह) जो निमंत्रण पर आया हो।

नेउता†—पुं०१.=न्योता (निमंत्रण)। २. नौरता (त्योहार)।

नेउर—पुं०[सं० नूपुर] १. पैंजनी । २. घुंघरू। उदा०—सूँधा वास ऊनै नेउर सद।—प्रिथीराज।

नेउला—पुं०=नेवला।

नेक—वि०[सं० निक्त (=नीका, अच्छा) से फा०] १. अच्छा। भला। २. उत्तम। श्रेष्ठ। जैसे—नेक-चलन। ३. शिष्ट। सज्जन। सदाचारी। जैसे—नेक आदमी। ४. मांगलिक। शुभ। जैसे—नेक सायत। ५. जिसमें केवल उपकार या भलाई हो। सद्। जैसे—नेक सलाह।

वि० [हिं० न+एक] जरा-सा। थोड़ा-सा।

अव्य० किंचित्। कुछ। जरा। उदा०—नेकु हँसौंही बानि तजि, लखौ परत मुख नीठि।—बिहारी।

नेक-चलन—वि०[फा० नेक+हिं० चलन] [भाव० नेक-चलनी] जिसका आचरण उत्तम हो।

नेकचलनी—स्त्री०[हिं० नेक चलन+ई (प्रत्य०)] अच्छा आचरण।

नेक-नाम—वि०[फा०] [भाव० नेकनामी] जिसकी किसी अच्छे काम या बात के लिए प्रसिद्धि हो। सुख्यात।

नेकनामी—स्त्री०[फा०] नेकनाम होने की अवस्था या भाव। सुख्याति।

नेक-नीयत—वि०[फा० नेक+अ० नीयत] [भाव० नेकनीयता] १. जिसकी नीयत (उद्देश्य, विचार या संकल्प) अच्छी हो। सदाशय। २. ईमानदार और सच्चा।

नेक-नीयती—स्त्री०[फा०+अ०]१. नेक-नीयत होने की अवस्था या भाव। सदाशयता। २. ईमानदारी और सचाई।

नेक-बख्त—वि०[फा०] [भाव० नेक-बख्ती]१. भाग्यवान। सौभाग्यशाली। २. सुशील। ३. भोला-भाला।

नेक-बख्ती—स्त्री०[फा०]१. अच्छा भाग्य। सौभाग्य। २. सुशीलता। ३. भलमंसत।

नेकरी—स्त्री०[?] समुद्र की लहर का थपेड़ा। हांक। (लश०)

नेकी—स्त्री० [फा०] १. नेक होने की अवस्था या भाव। २. अच्छाई, भलाई। ३. शिष्टता और सौजन्य। सदाशयता। ४. दूसरे के साथ किया जानेवाला नेक कार्य अर्थात् किसी के उपकार या हित का काम। परोपकार।

पद—नेकी और पूछ पूछ=किसी का उपकार करने के लिए उससे पूछने की क्या आवश्यकता है? किसी का उपकार उसके कुछ कहे बिना ही करना चाहिए। **नेकी बदी**=(क) भलाई और बुराई। (ख) पाप-पुण्य। (ग) शुभ और अशुभ घटनाएँ।

नेकु†—अव्य० [हिं० न+एक] जरा। थोड़ा-सा। उदा०—जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।—घनानन्द।

नेख†—पुं० [?] शस्त्र। हथियार।

नेग—पुं० [सं० नैयमिक ?] १. मांगलिक और शुभ अवसरों पर संबंधियों, नौकरों-चाकरों तथा अन्य आश्रितों (जैसे—नाई, धोबी, चमार आदि) को कुछ धन आदि देने की प्रथा। २. इस प्रकार दिया जानेवाला धन या वस्तु। ३. उक्त के आधार पर किसी प्रकार का परम्परागत अधिकार या स्वत्व। दस्तूर। ४. कोई शुभ कार्य। जैसे—सौ रुपए खर्च करके तुमने कोई नेग तो किया नहीं। ५. अनुग्रह। कृपा।

*पुं० [सं० निकट?] १. निकटता। सामीप्य। २. संबंध। सम्पर्क।

मुहा०—किसी के नेग लगना=(क) संबंध या संपर्क में आना। (ख) किसी में लीन होना। समाना। **(किसी चीज या बात का) नेग लगना**=सार्थक या सफल होना। जैसे—चलो, ये रुपए तो नेग लगे; अर्थात् इनका व्यय होना सफल हुआ।

नेग-चार—पुं० [हिं० नेग+सं० चार] १. मांगलिक अवसरों पर होनेवाले सामाजिक उपचार, क्रियाएँ, विधान आदि। २. उक्त अवसरों पर नेग के रूप में, लोगों को थोड़ा-थोड़ा धन देने की क्रिया या भाव। ३. दे० 'नेग-जोग'।

नेग-जोग—पुं० [हिं० नेग+अनु० जोग] १. शुभ अवसरों पर संबंधियों तथा काम करनेवालों को कुछ धन दिये जाने की प्रथा। २. ऐसा मांगलिक या शुभ अवसर जिस पर लोगों को नेग देने की प्रथा हो।

नेगटी—पुं० [हिं० नेग+टा (प्रत्य०)] नेग या परम्परागत रीति का पालन करनेवाला। दस्तूर पर चलनेवाला।

नेगी—पुं० [हिं० नेग] १. शुभ अवसरों पर नेग पाने का अधिकारी। जैसे—धोबी, नाई, भाट, आदि। २. किसी की उदारता, दया आदि से लाभ उठाकर बराबर उसकी आकांक्षा और आशा रखनेवाला व्यक्ति। उदा०—गरलामृत शिव आशुतोष बलविश्व सकल नेगी।—निराला।

नेगी-जोगी—पुं० [हिं० नेग जोग]=नेगी।

नेचर—पुं० [अं०] निसर्ग। प्रकृति।

नेचरिया—वि० [अं० नेचर+इया (अप्र०)] जो केवल प्रकृति को सृष्टि का कर्ता मानता हो, ईश्वर को न मानता हो। प्रकृतिवादी। नास्तिक।

नेचवा†—पुं० [देश०] पलंग का पाया।

नेछावर†—स्त्री०=निछावर।

नेज†—पुं०=नेजा (भाला)। उ०—हयौ नेज चामंड, वीर दो सहस लरै मर।—चंदबरदाई।

नेजक—पुं [सं०√निज् (साफ करना)+ण्वुल्—अक] रजक। धोबी।

नेजन—पुं० [सं०√निज्+ल्युट्—अन] १. कपड़े धोने की क्रिया या भाव। २. सफाई करना।

नेजा—पुं० [फा० नेज़ः] १. भाला। बरछा। २. साँग।

पुं० [देश०] चिलगोजा नाम का सूखा मेवा। (पश्चिम)

नेजा-बरदार—वि० [फा० नेज़ः बरदार] भाला लेकर चलनेवाला।

नेजाल†—पुं० [फा० नेज़ः] भाला। बरछा।

नेजोछना†—स०=अँगोछना या अंग पोंछना। (मिथिला)

नेटा†—पुं० [हिं० नाक+टा] नाक से निकलनेवाला कफ या बलगम।
, क्रि० प्र०—निकलना।—बहना।

नेठना—अ०, स०=नाठना (नष्ट होना या करना)।

नेड़उ—अव्य० [सं० निकट, पं० नेड़े] समीप। नजदीक। उदा०—दिन नेड़उ आइयो दुरी।—प्रिथीराज।

नेड़ी†—स्त्री० =लेंडी।

नेड़े— अव्य० [सं० निकट, प्रा० निअड़] नजदीक। निकट। पास। (पश्चिम)

नेत—पुं० [सं० नेत्रम्] १. वह रस्सी जिससे मथानी चलाई जाती है। नेती। २. एक तरह का बढ़िया रेशमी कपड़ा। ३. झंडे में लगा हुआ फहरानेवाला कपड़ा। पताका। ४. बिछाने की चादर। उदा०—पुनि गज हस्ति चढ़ावा, नेत, बिछावा बाट।—जायसी।

पुं० [सं० नियति=ठहराव] १. किसी बात का स्थिर होना। ठहराव। निर्धारण। २. दृढ़ निश्चय या संकल्प। ३. प्रबंध। व्यवस्था।

†स्त्री० दे० 'नीयत'।

नेतली—स्त्री० [सं० नेत्रम्] १. मथानी चलाने की डोरी। २. एक प्रकार की पतली डोरी। (लश०)

नेता (तृ)—पुं० [सं०√नी (ले जाना)+तृच्] [स्त्री० नेत्री] १. वह पशु जो अपने झुंड के आगे आगे चलता हो। २. मनुष्यों में, वह जो लोगों को मार्ग दिखलाता हुआ आगे चलता हो और दूसरों को अपने साथ ले जाता हो। अगुआ। नायक। ३. आज-कल किसी धार्मिक संप्रदाय अथवा किसी राजनैतिक या सामाजिक दल का वह व्यक्ति जो आवश्यक बातों में लोगों का मार्ग-प्रदर्शन करता हो और लोगों को अपना अनुयायी बनाकर रखता हो। (लीडर) ४. प्रभु। मालिक। स्वामी। ५. कार्य का निर्वाह या संचालन करनेवाला अधिकारी। ६. नीम का पेड़। ७. वह जो दूसरों को दंड आदि देता हो। ८. नाटक का नायक। ९. विष्णु का एक नाम।

पुं० [हिं० नेत] मथानी की रस्सी। नेती।

नेतागिरी—स्त्री० [हिं० नेता+फा० गीरी] नेता बनकर दूसरों का मार्ग-प्रदर्शन करने का काम।

नेति—अव्य० [सं० न+इति, व्यस्तपद] इसका कहीं अन्त नहीं है। यह अनन्त है। (प्रायः ईश्वर, ब्रह्म आदि की महिमा में प्रयुक्त) स्त्री०=नेती।

नेती—स्त्री० [सं० नेत्रम्] १. मथानी चलाने की रस्सी। २. दे० 'नेती धोती'।

नेती धोती—स्त्री० [सं० नेत्र, हिं० नेता+सं० धौति] आँतों और पेट का मल साफ करने की हठयोग की एक क्रिया, जिसमें कपड़े की लंबी पट्टी मुँह के रास्ते पेट में उतारी जाती है और तब इसे बाहर खींचने पर इसके साथ मल बाहर निकलता है।

नेतुल्ली—पुं० [हिं० नेता+उल्ली (प्रत्य०)] छोटा या तुच्छ नेता। (उपहास और व्यंग्य)

नेतृत्व—पुं० [सं० नेतृ+त्व] नेता बनाकर किसी सम्प्रदाय या दल का मार्ग-दर्शन तथा उसके कार्यों का संचालन करना।

नेत्र—पुं० [सं०√नी+ष्ट्रन्] १. आँख। २. दोनों आँखों के आधार पर दो की संख्या। ३. मथानी की रस्सी। ४. पेड़ की जड़। ५. जटा। ६. रथ। ७. नाड़ी। ८. एक तरह का रेशमी कपड़ा। ९. वैद्यक में, वस्ति-कर्म में काम आनेवाली सलाई। १०. दे० 'नेता'।

नेत्र-कनीनिका—स्त्री० [ष० त०] आँख की पुतली।

नेत्रच्छद—पुं० [सं० नेत्र√छद् (ढंकना)+णिच्+क, ह्रस्व] पलक।

नेत्रज—पुं० [सं० नेत्र√जन् (उत्पत्ति)+ड] आँसू।

नेत्र-जल—पुं० [ष० त०] आँसू।

नेत्रण—पुं० [सं० नेत्र से] किसी को ठीक मार्ग दिखलाते हुए ले चलना।

नेत्र-पर्यंत—पुं० [ष० त०] आँख का कोना।

नेत्र-पाक—पुं० [ष० त०] आँख का एक रोग।

नेत्र-पिंड—पुं० [ष० त०] १. आँख का डेला। २. [ब०स०] बिल्ली।

नेत्र-पुष्करा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] रुद्र जटा नामक लता।

नेत्र-बंध—पुं० [ब० स०] आँख-मिचौली का खेल। (महाभारत)

नेत्र-बाला—स्त्री० [सं०] सुगंधबाला नामक वनौषधि।

नेत्र-भाव—पुं० [ष० त०] नृत्य और संगीत में वे भाव जो केवल आँखों की मुद्रा से प्रकट किये जाते हैं।

नेत्र-मंडल—पुं० [ष० त०] आँख का डेला।

नेत्र-मल—पुं० [ष० त०] आँख में से निकलनेवाला कीचड़ या मल। गिद्।

नेत्र-मार्ग—पुं० [ष० त०] हठयोग में माना जानेवाला अन्तःकरण के पास का वह नेत्र-गोलक जिसका एक सूत्र के द्वारा मस्तिष्क तक संबंध होता है।

नेत्र-मीला—स्त्री० [ब० स०, पृषो० ल—न] यवतिक्ता लता।

नेत्र-योनि—पुं० [ब० स०] १. इंद्र (गौतम के शाप से इनके शरीर पर योनि के आकार के चिह्न निकल आये थे)। २. चन्द्रमा।

नेत्र-रंजन—पुं० [ष० त०] कज्जल। काजल।

नेत्र-रोग—पुं० [ष० त०] आँखों में होनेवाले रोग।

नेत्ररोगहा (हन्)—पुं० [सं० नेत्ररोग√हन् (हिंसा)+क्विप्] वृश्चिकाली (वृक्ष)।

नेत्र-रोम (न्)—पुं० [ष० त०] बरौनी।

नेत्रवस्ति—स्त्री० [ष० त०] एक प्रकार की छोटी पिचकारी।

नेत्र-वारि—पुं० [ष० त०] आँसू।

नेत्रविट् (ष्)—पुं० [ष० त०] आँख का कीचड़।

नेत्र-विष—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का साँप जिसकी आँखों में विष होना माना जाता है। कहते हैं कि इसके देखने मात्र से प्राणियों पर विष का प्रभाव पड़ता है।

नेत्रा-संधि—स्त्री० [ष० त०]आँख का कोना।

नेत्र-स्तंभ—पुं० [ष० त०] वह स्थिति जिसमें आँखों की पलकों का उठना और गिरना बन्द हो जाता है।

नेत्र-स्राव—पुं० [ष० त०] आँखों से पानी बहना।

नेत्रहा (हन्)—पुं० [सं० नेत्र√हन्+क्विप्] वृश्चिकाली (वृक्ष)।

नेत्रांत—पुं० [ष० त०] आँख का बाहरी कोना।

नेत्रांबु—पुं० [नेत्र-अंबु, ष० त०] आँसू।

नेत्रांभ (स्)—पुं० [नेत्र-अंभस्, ष० त०] आँसू।

नेत्राभिष्यंद—पुं० [नेत्र-अभिष्यंद, ष० त०] छूत से फैलनेवाला एक नेत्र-रोग।

नेत्रामय—पुं० [नेत्र-आमय, ष० त०] आँख का रोग।

नेत्रारि—पुं० [नेत्र-अरि, ष० त०] थूहर। सेंहुड़।

नेत्रिक—पुं० [सं० नेत्र+ठन्—इक] १. एक प्रकार की छोटी पिचकारी। (सुश्रुत) २. कलछी।

नेत्री—स्त्री० [सं० नेतृ+ङीप्] १. सं० 'नेता' का स्त्री०। स्त्री नेता। २. लक्ष्मी। ३. नाड़ी। ४. नदी।

नेत्रोत्सव—पुं० [नेत्र-उत्सव, ष० त०] १. नेत्रों का आनन्द। देखने का मजा। २. दर्शनीय और सुन्दर वस्तु।

नेत्रोपमफल—पुं० [नेत्र-उपमा, ब० स०, नेत्रोपम-फल, कर्म०स०] बादाम। (भाव प्रकाश)

नेत्रौषध—पुं० [नेत्र-औषध, ष० त०] १. आँख की दवा। २. पुष्प कसीस।

नेत्रौषधि (धी)—स्त्री० [नेत्र-औषधि, ष० त०] मेढ़ासिंगी (पौधा)।

नेत्र्य—वि० [सं०] १. नेत्र-संबंधी। २. नेत्रों को सुख देनेवाला।

नेत्र्य-गण—पुं० [सं० नेत्र+यत्, नेत्र्य-गण, कर्म० स०] रसौत, त्रिफला, लोध, ग्वालपाठा, बनकुलथी आदि ओषधियों का वर्ग।

नेदिष्ठ—वि० [सं० अन्तिक+इष्ठन्, नेद-आदेश] १. निकट का। पास का। २. दक्ष। निपुण।

पुं० १. अंकोट या ढेरे का वृक्ष।

नेदिष्ठी (ठिन्)—वि० [सं० नेदिष्ठ+इनि] समीप का। निकटस्थ।

पुं० सगा या सहोदर भाई।

नेनुआ†—पुं० [देश०] १. एक प्रसिद्ध लता। २. उक्त का लंबोतरा फल जिसकी तरकारी बनाई जाती है। वैद्यक में यह वात तथा पित्त नाशक माना गया है। घिया-तरोई।

नेप—पुं० [सं०√नी+प] १. पुरोहित। २. जल।

नेपचून—पुं० [फ्रांसीसी] सूर्य की परिक्रमा करनेवाला एक नक्षत्र। एक ग्रह जिसका पता कुछ ही दिन पहले लगा है। वरुण।

नेपथ्य—पुं० [सं०√नी+विच्, ने(नेता)+पथ्य, ष० त०] १. सजावट। सज्जा। २. पहनने के कपड़े। पोशाक। (विशेषतः अभिनेताओं की) ३. वेष-भूषा। ४. रंग-मंच का वह भाग जो दर्शकों की दृष्टि से ओझल रहता है और जिसमें अभिनेता या नट उपयुक्त वेश-भूषा आदि से सज्जित होते हैं। ५. रंग-भूमि। रंगशाला।

नेपाल—पुं० [देश०] उत्तर प्रदेश के उत्तर और हिमालय के तल में स्थित एक पहाड़ी देश तथा राज्य।

नेपालक—पुं० [सं० नेपाल+कन्] ताँबा।

नेपालजा—स्त्री० [सं० नेपाल√जन् (उत्पत्ति)+ड+टाप्] मनःशिला। मैनसिल।

नेपाल-निंब—पुं० [मध्य० स०] एक तरह का चिरायता।

नेपाल-मूलक—पुं० [सं०] हस्तिकंद (कंद)।

नेपालिका—स्त्री० [सं० नेपालक+टाप्, इत्व] मनःशिला। मैनसिल।

नेपाली—वि० [हिं० नेपाल] १. नेपाल राज्य से संबंध रखनेवाला। २. नेपाल में बसने, होने या रहनेवाला।

पुं० नेपाल देश का नागरिक या निवासी।

स्त्री० नेपाल देश की भाषा।

†स्त्री०=निवारी (पौधा और उसका फूल)।

नेपुर†—पुं०=नूपुर।

नेफा—पुं० [फा० नेफ़ः] पायजामे, लहँगे आदि का नेफा जिसमें नाला डाला जाता है।

पुं० [अ० नार्थ, ईस्ट फ्रंटियर एजेंसी के आरंभिक अक्षरों का समूह] वे पहाड़ी प्रदेश जो भारत के उत्तर पूर्व में पड़ते हैं।

नेब†—पुं०=नायब।

नेबू†—पुं०=नींबू।

नेम—वि० [सं०√नी+मन्] १. अर्ध। आधा। २. अन्य। दूसरा।

पुं० [सं०] १. काल। समय। २. अवधि। ३. खंड। टुकड़ा। ४. दीवार। ५. धोखेबाजी। छल। ६. गड्ढा। गर्त। ७. संध्या का समय। ८. जड़। मूल।

पुं० [सं० नियम] १. नियम। कायदा। २. नियमित रूप से या बराबर होती रहनेवाली बात।

पद—नेम-धरम=पूजा-पाठ, देव-दर्शन आदि धार्मिक-कृत्य।

३. प्रथा। रीति।

नेमत—स्त्री०=नियामत।

नेमता—स्त्री० [सं०] नाचने-गाने का व्यवसाय करनेवाली स्त्री। नर्तकी।

नेमि—स्त्री० [सं०√नी+मि] १. पहिए का चक्कर या घेरा। चक्र-परिधि। २. किसी प्रकार का चक्कर या घेरा। ३. कूएँ के ऊपर का चबूतरा। जगत। ४. कूएँ की जमवट। ५. किनारा। तट। ६. तिनिश वृक्ष। ७. वज्र। ८. पुराणानुसार एक दैत्य। ९. दे० 'नेमि नाथ'।

नेमिचक्र—पुं० [सं०] एक राजा जो परीक्षित के वंशजों में से था।

नेमी (मिन्)—पुं० [सं० नेम+इनि] तिनिश वृक्ष।

स्त्री०=नेमि।

वि० [सं० नियम] किसी प्रकार के नियम, विशेषतः धार्मिक कृत्य-संबंधी नियम का दृढ़तापूर्वक और सदा पालन करनेवाला। जैसे—गंगा-स्नान या देव-दर्शन का नेमी।

पद—नेमी-धरमी।

नेमी-धरमी—वि० [सं० नियम-धर्मी] १. धार्मिक नियमों और सिद्धांतों का दृढ़तापूर्वक पालन करनेवाला। २. नित्य पाठ-पूजा, देव-दर्शन आदि धार्मिक कृत्य करनेवाला।

नेयार्थ—पुं० [सं० नेय-अर्थ, कर्म० स०] एक पद-दोष जो उस समय माना जाता है जब किसी शब्द से उसके ऐसे लाक्षणिक अर्थ का बोध कराया जाता है जो साधारणतः उससे अभिव्यंजित नहीं होता।

नेयार्थता—स्त्री० [सं० नेयार्थ+तल्+टाप्] नेयार्थ दोष होने की अवस्था या भाव।

नेर†—क्रि० वि० दे० 'नियर'।

नेरता—स्त्री० [सं० नैर्ऋत] नैर्ऋत्य दिशा। पश्चिम-दक्षिण का कोना।

नेरवाती—स्त्री० [देश०] एक तरह की नीले रंग की पहाड़ी भेंड़।

नेरा†—वि० [हिं० नेक?] [स्त्री० नेरी] जरा-सा। थोड़ा-सा।

उदा०—अब ऐसी अनेरी पत्याति न नेरी।—घनानन्द।

नेराना—अ०, स०=नियराना।

नेरुआ†—पुं० [सं० नल,हिं नाली, नारी] वह नाली जिसमें से कोल्हू में का तेल बाहर निकलता है।

नेरे†—अव्य० [हिं० नियर] निकट। पास। समीप।

नेव†*—वि०=नायब।
†स्त्री०=नींव।

नेवग†—पुं०=नेग। (डिं०)

नेवगी—पुं०=नेगी। (डिं०)

नेवछावर†—स्त्री०=निछावर।

नेवज†—पुं०=नैवेद्य।

नेवजा—पुं०=नेजा (चिलगोजा)।

नेवजी†—स्त्री०=नेवारी (पौधा और फूल)।

नेवत†—पुं०=न्यौता। (निमंत्रण)।

नेवतना†—स० [हिं० न्योता] न्योता या निमंत्रण देना।

नेवतहरी—पुं० [हिं० न्योता] वह व्यक्ति जिसे किसी मांगलिक अवसर पर न्योता दिया गया हो या जो न्योता देने पर आया हो।

नेवता†—पुं०=न्योता।

नेवती†—पुं० दे० 'नेवतहरी'। उदा०—नेवती भएउँ बिरह की आगी। —जायसी।

नेवना*—अ० [सं० नमन] १. झुकना। २. नम्र होना।
स० झुकाना।

नेवर—पुं० [सं० नूपुर] १. पैरों में पहनने का नूपुर नाम का गहना। पैंजनी। २. घुंघरू। ३. घोड़ों के पैर में होनेवाला वह घाव जो दूसरे पैर की रगड़ या ठोकर लगने से होता है।
क्रि० प्र०—लगना।
†वि० [सं० निर्बल] १. कमजोर। २. खराब। बुरा।

नेवरना*—अ० [सं० निवारण] निवारण होना। दूर होना।
स० १. निवारण करना। २. निपटाना। भुगताना।

नेवरा—पुं० [देश०] लाल कपड़े की वह खोली जो झारी पर चढ़ाई जाती है।
†पुं०=नेवला।

नेवल—पुं० १. =नेवर। २. =नेवला।

नेवला—पुं० [सं० नकुल;प्रा० नउल] चूहे के आकार का भूरे रंग का चार पैरोंवाला एक प्रसिद्ध जंतु जो साँप को मार डालता है।

नेवा—पुं० [सं० नियम] १. प्रथा। दस्तूर। रवाज। २. कहावत। लोकोक्ति।
वि० [?] चुप। मौन।
†पुं०=लेवा।
†अव्य०=नाईं (तरह या समान)।

नेवाज—वि०=निवाज (दयालु)।

नेवाजना—स० निवाजना (दया करना)।

नेवाड़ा†—पुं०=निवाड़ा।

नेवाड़ी†—स्त्री०=नेवारी।

नेवाना*†—स०=नवाना। (झुकाना)।

नेवार—पुं० [देश०] नेपाल की एक आदिम जाति।
स्त्री०=निवार।

नेवारना* †—स० [सं० निवारण] निवारण करना। हटाना। दूर करना।

नेवारी—स्त्री० [सं० नेपाली] १. चमेली की जाति का सुगंधित फूलों का एक प्रसिद्ध पौधा जो चैत में फूलता है। २. उक्त पौधे का फूल।

नेष्टा (ष्टृ)—पुं० [सं०√नी+तृन्, नि० सिद्धि] १. एक ऋत्विक्। २. त्वष्टा देवता।

नेष्टु—पुं० [सं० निश् (एकाग्रता)+तुन्] मिट्टी का ढेला।

नेस—पुं० [फा० नेश] १. जंगली सूअर के आगे निकला हुआ दाँत। सींग। २. दंश। डंक।

नेसकुन—पुं० [देश०] बंदरों का जोड़ा। (कलंदर)

नेसुक†—अव्य०, वि०=नेक या नेकु। (जरा या थोड़ा)

नेसुहा†—पुं० दे० 'ठीहा'।

नेस्त—वि० [फा०] [भाव० नेस्ती] १. जो न हो। २. नष्ट। बरबाद।

नेस्त-नाबूद—वि० [फा०] जड़-मूल से नष्ट। समूल नष्ट।

नेस्ती—स्त्री० [सं० नास्ति से फा०] १. न होने की अवस्था या भाव। अनस्तित्व। २. आलस्य। सुस्ती। ३. नाश। बरबादी।
वि० चौपट या सर्वनाश करनेवाला।

नेह—पुं० [सं० स्नेह] १. स्नेह। प्रीति। प्यार। मुहब्बत। २. घी, तेल या ऐसा ही कोई चिकना और तरल पदार्थ।

नेहाल—वि०=निहाल।

नेही*—वि०=स्नेही।

नै—स्त्री० [सं० नदी, प्रा० णई] नदी।
स्त्री० [फा०] १. नरकट। नरसल। २. बाँस की नली। ३. हुक्के की निगाली। ४. बाँसुरी।
*विभ०=ने (कर्मकारक की विभक्ति)। (व्रज०)

नैॠत— वि०=नैॠत्य।

नैक—वि० [सं० न-एक, सहसुपा स०] १. जो एक नहीं, बल्कि उससे कुछ अधिक हो। अनेक। २. जो अकेला न हो।
पुं० विष्णु।
वि०, अव्य०=नेक (जरा या थोड़ा)।

नैकचर—वि० [सं० नैक√चर् (गति)+ट] जो अकेला न चलता हो। फलतः झुंडों में रहनेवाला। जैसे—भेंड़, हाथी, हिरन आदि।

नैकटिक—वि० [सं० निकट+ठक—इक] निकटवर्ती। पास का।

नैकट्य—पुं० [सं० निकट+ष्यञ्] निकटता। नजदीकी।

नैकधा—अव्य० [सं० नैक+धाच्] अनेक प्रकारों से। अनेक रूपों में।

नैक-भेद—वि० [सं० ब० स०] विभिन्न प्रकार का। अलग तरह का।

नैक-शृंग—पुं० [सं० ब० स०] विष्णु।

नैकषेय—पुं० [सं० निकषा+ढक्—एय] रावण की माता, निकषा के वंशज।

नैकृतिक—वि० [सं० निकृति+ठक्—इक] दूसरों की हानि करके

निष्ठुरतापूर्वक जीविका चलानेवाला। २. कटु बातें कहनेवाला। कटु-भाषी।

नैगम—वि० [सं० निगम+अण्] १. निगम-संबंधी। निगम का। २. वेदों अथवा अन्य धर्म ग्रन्थों में लिखा हुआ। ३. जिसमें ब्रह्म के स्वरूप आदि का प्रतिपादन हो। आध्यात्मिक।
पुं० १. उपनिषद्। २. नय। नीति।

नैगम-नय—पुं० [सं० कर्म० स०] जैन दर्शन का यह तर्क या सिद्धान्त कि सामान्य के बिना विशेष और विशेष के बिना सामान्य नहीं रह सकता।

नैगमिक—वि० [सं० निगम+ठक्—इक] १. जिसका संबंध वेदों से हो। २. वेदों से निकला हुआ।

नैगमेय—पुं० [सं०] १. कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम। २. दे० 'नैगमेष।'

नैगमेष—पुं० [सं०] बालकों का एक ग्रह जिसका प्रकोप होने पर बच्चे रोते हैं, उनके मुँह से फेन गिरता है तथा ज्वर आदि विकार भी होते हैं।

नैघंटुक—पुं० [सं० निघंटु+ठक्—क] वैदिक शब्दों की वह शब्दावली, जिसकी व्याख्या यास्क ने अपने निरुक्त में की है।

नैचा—पुं० [फा० नैचः] नरकट की नलियों का वह ढाँचा जो हुक्के में लगा होता है और जिसके द्वारा तमाखू का धूआँ खींचा जाता है।

नैचाबंद—पुं० [फा० नैचः, बन्द] हुक्कों के नैचे बनानेवाला।

नैचाबंदी—स्त्री० [फा० नैचः बन्दी] नैचा बनाने का काम और पारिश्रमिक।

नैचिक—पुं० [सं० नीचा+ठक्—इक] बैल का माथा।

नैचिकी—स्त्री० [सं० नीचि=गोशिरोभाग+कन्+अण्+ङीप्] अच्छी गाय।

नैची—स्त्री० [हिं० नीचा] कूएँ के पास की वह ढालुई जमीन जिस पर से बैल मोट खींचते समय नीचे आते-जाते रहते हैं।

नैचुल—वि० [सं० निचुल+अण्] निचुल-संबंधी। हिज्जल वृक्ष-संबंधी।
पुं० निचुल या हिज्जल का बीज या फल।

नैज—वि० [सं० निज+अण्] निज का। निजी।

नैटी†—स्त्री० [देश०] दुद्धी या दुधिया घास।

नैड़ी*—क्रि० वि०=नेड़े (नजदीक)।

नैड़ों*—क्रि० वि०=नेड़े।

नैतल—पुं० [सं० नितल+अण्] नीचे का लोक।

नैतल-सद्म (न्)—पुं० [सं० ब० स०] नैतल में रहनेवाले यम।

नैतिक—वि० [सं० नीति+ठक्—इक] [भाव० नैतिकता] १. नीति का। नीति-संबंधी। जैसे—नैतिक विचार। २. नीति के अनुसार होनेवाला। जैसे—नैतिक उत्तरदायित्व। ३. नीति युक्त आचरण या व्यवहार से संबंध रखनेवाला। जैसे—नैतिक पतन।

नैतिकता—स्त्री० [सं० नैतिक+तल्—टाप्] नीति शास्त्र के सिद्धान्तों का होनेवाला ज्ञान और उनके अनुसार किया जानेवाला अच्छा आचरण।

नैत्य—वि० [सं० नित्य+अण्] १. नित्य-संबंधी। नित्य का। २. नित्य या रोज होनेवाला। दैनिक।
पुं० नियमित रूप से और नित्य किये जानेवाले काम। नित्य-कर्म।

नैत्यक—वि० [सं० नैत्य+कन्] नित्य होने या किया जानेवाला। नैत्य।
पुं० व्यापारिक अथवा कार्यालय संबंधी कार्यों का नित्य का बँधा हुआ क्रम। (रुटीन)

नैत्र—वि० [सं०] नेत्रों या आँखों से संबंध रखनेवाला।

नैत्रिकी—स्त्री० [सं० नेत्र से] आधुनिक चिकित्सा की वह शाखा जिसमें नेत्र-संबंधी रोगों और उनकी चिकित्सा-प्रणाली की विवेचना होती है। (आप्थेलमॉलोजी)

नैदाघ—वि० [सं० निदाघ+अण्] १. निदाघ-संबंधी। निदाघ का। २. गरमी या ग्रीष्म ऋतु में होनेवाला।
पुं० गरमी का मौसम। ग्रीष्म ऋतु।

नैदाघिक—वि० [सं० निदाघ+ठञ्—इक] नैदाघ।

नैदाघीय—वि० [सं० निदाघ+छण्—ईय] निदाघ-संबंधी। नैदाघ।

नैदानिक—वि० [सं० निदान+ठक्—इक] निदान संबंधी। रोगों के निदान से संबंध रखनेवाला। (क्लिनिकल)
पुं० वह जो विशिष्ट रूप से रोगों का निदान करता हो।

नैदानिकी—स्त्री० [सं० नैदानिक से] रोगों का निदान करने की विद्या या शास्त्र।

नैदेशिक—वि० [सं० निदेश+ठक्—इक] १. निदेश-संबंधी। २. निदेश का पालन करनेवाला।
पुं० नौकर। सेवक।

नैद्र—वि० [सं० निद्रा+अण्] निद्रालु।

नैधन—वि० [सं० निधन+अण्] जिसका निधन या नाश होने को हो। नश्वर।
पुं० जन्मकुंडली में लग्न से आठवाँ घर जिसके आधार पर मृत्यु का विचार होता है। (ज्यो०)

नैधानी—स्त्री० [सं० निधान+अण्+ङीप्] भू-भाग अलग अलग दरसाने के लिए बनाई जानेवाली ऐसी सीमा जिसमें कोयले, भूसी आदि से भरे हुए घड़े गड़े हों। (स्मृति)

नैधेय—वि० [सं० निधि+ढक्—एय] निधि-संबंधी। निधि का।

नैन†—पुं० [सं० नयन] १. आँख। नयन। २. दीवार में से धूआँ निकलने का छेद। धूम-नेत्र। धमाला।
*पुं० [सं० नवनीत] मक्खन।
*पुं० अन्याय।

नैन-पटी—स्त्री० [सं० नयन+पट] आँख या आँखों पर बाँधी जानेवाली पट्टी।

नैनसुख—पुं० [सं० नयन+सुख] एक प्रकार का सफेद चिकना। सूती कपड़ा।

नैना*—पुं०[सं० नयन] आँख। नेत्र।
†अ०=नवना।
†स०=नवाना।

नैनू—पुं० [हिं० नैन=आँख] पुरानी चाल की एक प्रकार की बूटीदार मलमल।
†पुं० [सं० नवनीत] मक्खन।

नैपातिक—वि० [सं० निपात+ठक्—इक] निपात-संबंधी।

नैपाल—वि०[सं० नेपाल+अण्] नेपाल देश-संबंधी। नेपाल का।
पुं०१. नेपाल निंब। २. एक प्रकार की ईख। ३. नेपाल देश।

नैपालिक—वि० [सं० नेपाल+ठक्—इक] नेपाल में बनने, होने या रहने वाला।
पुं० ताँबा।

नैपाली—वि०[हिं० नैपाल] नैपाल देश का।
पुं०१. नेपाल देश का निवासी।
स्त्री० [सं०] १. नव-मल्लिका। निवारी। २. मैनसिल। ३. नील का पौधा। ४. एक प्रकार की निर्गुंडी।
स्त्री०[हिं० नैपाल] नैपाल देश की बोली या भाषा।

नैपुण्य—पुं०[सं०निपुण+ष्यञ्] १. निपुणता। २. ऐसा कार्य या विषय जिसके लिए निपुणता आवश्यक हो।

नैभृत्य—पुं० [सं० निभृत+ष्यञ्] १. नम्रता। विनय। २. छिपाव। दुराव। ३. स्थिरता।

नैमंत्रणक—पुं०[सं० निमंत्रण+वुञ्—अक] बहुत से लोगों को बुलाकर कराया जानेवाला भोजन। भोज। दावत।

नैमय—पुं०[सं०] व्यवसायी। रोजगारी।

नैमित्त—वि०[सं० निमित्त+अण्]१. निमित्त-संबंधी। २. निमित्त से उत्पन्न। ३. चिह्न-संबंधी।

नैमित्तिक—वि०[सं० निमित्त+ठक्—इक]१. जो किसी निमित्त से किया जाय। २. जो किसी प्रयोजन की सिद्धि के लिए हो। जैसे—नैमित्तिक कर्म। ३. आकस्मिक। अप्रायिक।
पुं० ज्योतिषी।

नैमित्तिक प्रलय—पुं०[सं०] वेदांत के अनुसार प्रत्येक कल्प के अंत में होनेवाला तीनों लोकों का क्षय या पूर्ण विनाश। ब्राह्म प्रलय।

नैमित्तिक लय—पुं०[सं०कर्म०स०] एक प्रकार का प्रलय जिसमें बारहों सूर्य उदित होते हैं और १०० वर्ष अनावृष्टि होती है। (गरुड़ पुराण)

नैमिश—पुं०=नैमिष।

नैमिष—वि०[सं० निमिष+अण्]१. निमिष-संबंधी। २. क्षणिक।
पुं०१. नैमिषारण्य तीर्थ। २. एक प्राचीन जाति जो महाभारत के समय यमुना के किनारे बसी थी।

नैमिषारण्य—पुं०[सं०नैमिष-अरण्य, कर्म०स०] एक प्राचीन वन जो आजकल के सीतापुर जिले में पड़ता है और एक प्रसिद्ध तीर्थ है। नीमखार।

नैमिषि—पुं० [सं० नि√मिष्+क, निमिष+इञ्] नैमिषारण्य का निवासी।

नैमिषीय—वि०[सं० निमिष+छण्—ईय] निमिष-संबंधी। निमिष का।

नैमिषेय—वि० [निमिष+ढक्—एय] १. नैमिष-संबंधी। २. नैमिषारण्य का।

नैमेय—पुं०[सं० नि√मि (लेनदेन)+यत्+अण्]१. वस्तुओं का अदला-बदला। विनिमय। २. रोजगार। वाणिज्य।

नैयग्रोध—पुं०[सं० न्यग्रोध+अण्, ऐ—आगम] वट वृक्ष का फल।

नैयत्य—वि०[सं० नियत+ष्यञ्] नियत, प्रतिष्ठित या स्थिर होने की अवस्था, क्रिया या भाव।

नैयमिक—वि०[सं० नियम+ठक्—इक]१. नियम-संबंधी। २. नियम के अनुसार होने या किया जानेवाला।

नैया†—स्त्री०=नाव।

नैयायिक—पुं०[सं० न्याय+ठक्—इक]न्याय दर्शन का ज्ञाता। न्याय-वेत्ता।

नैरंग—पुं०[फा०]१. अद्भुत या विलक्षण चीज या बात। २. इंद्रजाल। जादू। ३. कपट। छल। धोखा।

नैरंगबाज—वि०[फा०] [भाव० नैरंगबाजी]१. मायावी। जादूगर। २. कपटी। छली।

नैरंगी—स्त्री० [फा०] १. दे० 'नैरंग।' २. चालबाजी। धूर्तता। ३. चित्र की चंचलता।

नैरंजना—स्त्री० [सं०] फल्गु नदी का प्राचीन नाम।

नैरंतर्य—पुं० [सं० निरंतर+ष्यञ्] निरंतरता।

नैरंति—स्त्री०[सं०नैर्ऋत्य]दक्षिण-पश्चिम के बीच की दिशा। नैर्ऋत्य कोण।

नैर*—पुं० [सं० नगर]१. नगर। शहर। २. जनपद। देश।

नैरपेक्ष्य—पुं०[सं० निरपेक्ष+ष्यञ्] १. निरपेक्षता। २. उपेक्षा।

नैरयिक—वि०[सं० निरय+ठक्—इक] नरक-संबंधी। २. नरक में रहने या होनेवाला।

नैरर्थ्य—पुं०[सं० निरर्थ+ष्यञ्] निरर्थकता।

नैरात्म्य—पुं०[सं० निरात्मन्+ष्यञ्] १. निरात्म होने की अवस्था या भाव। २. एक दार्शनिक सिद्धांत जिसमें यह प्रतिपादित किया जाता है कि वास्तव में आत्मा का कोई अस्तित्व नहीं है। (निहिलिज्म)

नैरात्म्यवाद—पुं०=अनात्मवाद।

नैराश्य—पुं०[सं० निराश+ष्यञ्]१. निराश होने की अवस्था या भाव। ऐसी स्थिति जिसमें मनुष्य निराश हो जाता हो। ना-उम्मेदी। २. निराश होने के फलस्वरूप होनेवाली उदासी।

नैरास्य—पुं०[सं०] बाण चलाने का एक मंत्र।

नैरिक—वि०[सं० नीर+ठक्—इक]नीर या जल संबंधी। जैसे—नैरिक चिह्न, नैरिक रेखा।

नैरिकेय—पुं०[सं०] वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें जल विशेषतः भूतल के नीचे के जल के गुणों, नियमों, प्रवाहों विभाजनों आदि का विचार होता है। (हाइड्रॉलाजी)

नैरुक्त—वि०[सं० निरुक्त+अण्]१. शब्दों की निरुक्ति या व्युत्पत्ति से संबंध रखनेवाला। २. निरुक्त शास्त्र से संबंध रखनेवाला।
पुं०१. वह व्यक्ति जो शब्दों की निरुक्ति या व्युत्पत्ति जानता हो। २. वह ग्रंथ जिसमें शब्दों की निरुक्ति या व्युत्पत्ति बतलाई गई हो।

नैरुक्तिक—वि०, पुं० [सं० निरुक्त+ठक्—इक]=नैरुक्त।

नैरुज्य—पुं०[सं० निरुज+ष्यञ्]निरुज या निरोग होने की अवस्था या भाव। आरोग्य। तंदुरुस्ती। स्वस्थता।

नैरूहिक—पुं०[सं० निरूह+ठक्—इक] एक तरह की वस्ति। (सुश्रुत)

नैर्ऋत—वि०[सं० निर्ऋति+अण्] निर्ऋति-संबंधी।
पुं०१. निर्ऋति की संतान अर्थात् राक्षस। २. नैर्ऋत्य अर्थात् पश्चिम-दक्षिण कोण का स्वामी राहु। ३. मूल नक्षत्र।

नैर्ऋती—स्त्री० [सं० नैर्ऋत+ङीप्]१. दक्षिण-पश्चिम के मध्य की दिशा वा कोण। २. दुर्गा।

नैर्ऋतेय—वि०[सं० निर्ऋति+ढक्—एय] निर्ऋति संबंधी।
पुं० निर्ऋति देवता के वंशज।

नैर्ऋत्य—वि० [सं०] निर्ऋति संबंधी।
पुं० १. निर्ऋति का वंशज। निशाचर। २. दक्षिण पश्चिम की दशा। ३. मूल नक्षत्र।

नैर्गुण्य—पुं० [सं० निर्गुण+ष्यञ्] १. निर्गुणता। २. कला-कौशल आदि के ज्ञान का अभाव। ३. सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों से रहित होने की अवस्था या भाव।

नैर्देशिक—वि० [सं० निर्देश+ठक्—इक] १ निर्देश-संबंधी। २. निर्देश के रूप में होनेवाला। ३. निर्देश का पालन करनेवाला।
पुं० नौकर। भृत्य।

नैर्मल्य—पुं० [सं० निर्मल+ष्यञ्] १. निर्मलता। २. विषय-वासना आदि से रहित होना।

नैर्लज्य—पुं० [सं० निर्लज्ज+ष्यञ्] निर्लज्जता। बेहयाई।

नैर्वाहिक—वि० [सं० निर्वाह+ठक्—इक] १. निर्वाह-संबंधी। २. जो निर्वाह के लिए हो। ३. जिसका या जिससे निर्वाह हो सके।

नैल्य—पुं० [सं० नील+ष्यञ्] नीले होने की अवस्था या भाव। नीलापन।

नैवासिक—वि० [सं० निवास+ठक्—इक] १. निवास-संबंधी। २. निवास के अनुकूल या योग्य (स्थान।

नैवेद्य—पुं० [सं० निवेद+ष्यञ्] देवता या मूर्ति को भेंट की या चढ़ाई हुई खाद्य वस्तु। भोग।
क्रि० प्र०—लगाना।

नैवेशिक—वि० [सं० निवेश+ठक्—इक] निवेश-संबंधी।
पुं० १. गृहस्थी के उपकरण या पात्र। २. ब्राह्मण को दी जानेवाली भेंट।

नैश—वि० [सं० निशा+अण] १. निशा-संबंधी। निशा का। २. रात में किया जाने या होनेवाला। ३ अंधकार-पूर्ण।

नैशिक—वि० [सं० निशा+ठञ्—इक]=नैश।

नैश्चल्य—पुं० [सं० निश्चल+ष्यञ्] निश्चल होने की अवस्था या भाव। निश्चलता। स्थिरता।

नैश्चित्य—पुं० [सं० निश्चित+ष्यञ्] १. निश्चित होने की अवस्था या भाव। निश्चिति। २. निश्चय।

नैश्श्रेयस (सिक)—वि० [सं० निश्श्रेयस्+अण्, निश्श्रेयस्+ठक्—इक] १. कल्याणकारक। २. मोक्ष दायक।

नैषध—वि० [सं० निषध+अण्] निषध-देश संबंधी। निषध देश का।
पुं० १. निषध देश का राजा। २. राजा नल। ३. निषध देश का निवासी। ४. श्री हर्षकृत एक प्रसिद्ध संस्कृत काव्य जिसमें निषध देश के राजा नल की कथा है।

नैषधीय—वि० [सं० नैषध+छ—ईय] १. नैषध-संबंधी। २. राजा नल के संबंध का।

नैषध्य—पुं० [सं० निषध+ण्य] राजा नल का वंशज।

नैषाद, नैषादि—पुं० [सं० निषाद+अण्, निषाद+इञ्] निषाद का वंशज।

नैषेचनिक—पुं० [सं० निषेचन+ठक्-इक] राज्याभिषेक के अवसर पर दिया जानेवाला उपहार। (कौ०)

नैष्कर्म्य—पुं० [सं० निष्कर्मन्+ष्यञ्] १. निष्कर्म होने की अवस्था या भाव। २. कर्मों का परित्याग। निष्क्रियता। ३. आसक्ति और फल की कामना छोड़कर कार्य करना। ४. अकर्मण्यता और आलस्य। ५. आत्मज्ञान।

नैष्किक—वि० [सं० निष्क+ठक्—इक] १. निष्क-संबंधी। निष्क का। २. निष्क देकर खरीदा या मोल लिया हुआ।
पुं० टकशाल या टकसाल का प्रधान अधिकारी।

नैष्कृतिक—वि० [सं० निष्कृति+ठक्—इक] दूसरे की हानि करके अपना प्रयोजन सिद्ध करनेवाला। स्वार्थी।

नैष्क्रमण—पुं० [सं० निष्क्रमण+अण्] निष्क्रमण नामक कृत्य या संस्कार।

नैष्ठिक—वि० [सं० निष्ठा+ठक्—इक] [स्त्री० नैष्ठिकी] १. निष्ठा-वान्। निष्ठायुक्त। २. अंतिम और निश्चित रूप में किया जानेवाला। (डेफिनिट) ३. निश्चित। ४. दृढ़। पक्का। ५. सर्वोत्तम। ६. परिपूर्ण।
पुं० ऐसा ब्रह्मचारी जो उपनयन संस्कार होने पर आजीवन गुरु के आश्रम में रहकर ब्रह्मचर्य का पालन करे।

नैष्ठुर्य—पुं० [सं० निष्ठुर+ष्यञ्]=निष्ठुरता।

नैष्ठ्य—वि० [सं० निष्ठा+ण्य] निष्ठायुक्त। आचरणशील।

नैसर्गिक—वि० [सं० निसर्ग+ठक्—इक] [स्त्री० नैसर्गिकी] १. निसर्ग या प्रकृति से संबंध रखने या उससे होनेवाला। प्राकृतिक। २. निसर्ग से उत्पन्न। ३. स्वाभाविक।

नैसर्गिकी—स्त्री० [सं० नैसर्गिक से] १. वे बातें या विचार जो निसर्ग से संबंध रखती या उससे उत्पन्न होती हों। २. दार्शनिक क्षेत्रों में, यह धारणा या विश्वास कि सारी सृष्टि वास्तविक है और इसमें कोई अलौकिक या दैवी तत्त्व अथवा भाव नहीं है। ३. कला-पक्ष और साहित्य में यह सिद्धांत कि संसार में नैसर्गिक या प्राकृतिक रूप में जो कुछ वस्तुतः होता हुआ दिखाई देता है उसका अंकन या चित्रण ज्यों का त्यों उसी रूप में होना चाहिए; और उसमें आदर्शों, नैतिक विचारों आदि का आरोप नहीं किया जाना चाहिए। ४. आधुनिक धार्मिक क्षेत्र में, यह धारणा या विश्वास कि मनुष्यों में धर्म तत्त्व का आविर्भाव किसी अलौकिक या दैवी शक्ति की प्रेरणा से नहीं हुआ है, और मनुष्य ने धर्मसंबंधी सभी भावनाएँ तथा विचार नैसर्गिक या प्राकृतिक जगत से ही लिये हैं। (नैचुरलिज्म, उक्त सभी अर्थों में)

नैसर्गिकी दशा—स्त्री० [सं० व्यस्त पद] फलित ज्योतिष में ग्रहों की एक प्रकार की दशा।

नैसना†—स० [सं० नाशन] नष्ट करना।

नैसा†—वि० [सं० अनिष्ट] [स्त्री० नैसी] अनैसा। बुरा। खराब।

नैसुक†—वि०=नेसुक (थोड़ा)।

नैहर—पुं० [सं० ज्ञाति, प्रा० णाति, णाई=पिता+हिं० घर] विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसके पिता का घर। माँ-बाप का घर। पीहर। मायका। 'ससुराल' का विपर्याय।

नोआ†—पुं० [हिं० नोवना] [स्त्री० अल्पा० नोइनी, नोई] दूध दूहते समय गाय के पिछले पैरों में बाँधी जानेवाली रस्सी। बंधी।

नोइनी, नोई†—स्त्री० हिं० 'नोआ' का स्त्री० रूप।

नोक—स्त्री० [फा०] [वि० नुकीला] १. किसी कड़ी चीज का वह सिरा जो बराबर पतला होता हुआ इतना सूक्ष्म हो गया हो कि सहज में दूसरी चीज के तल में गड़ या धँस सके। शंकु की

तरह का अगला सिरा। अनी। जैसे—छुरी, पेंसिल या सूई की नोक।
मुहा०—**नोक दुम भागना**=(क) बहुत तेजी से सीधे भागना। (ख) बेतहाशा भागना।
२. किसी चीज का आगेवाला वह सिरा जो शेष अंशों की तुलना में पतला हो। जैसे— पानी में निकली हुई जमीन की नोक। ३. कोण बनानेवाली दो रेखाओं के मिलने का स्थान या बिंदु। जैसे—चबूतरे या दीवार की नोक।
मुहा०—**नोक बनाना**=(क) ऐसा रूप देना कि सुन्दर और सुडौल जान पड़े। (ख) बनाव-सिंगार करना।
४. मान-मर्यादा। इज्जत। प्रतिष्ठा। ५. ऐसी टेक या प्रतिज्ञा जिसका निर्वाह या पालन आवश्यक समझा जाता हो। आन। जैसे—चलिए, किसी तरह आपकी नोक तो रह गई।
मुहा०—**नोक की लेना**=बहुत बढ़-बढ़कर बातें बघारना। शेखी हाँकना। उदा०—फकीर हाँके न ले नोक की अमीरों से। ये तुझको करती है ऐ जान आन-बान खराब। —जान-साहब।

नोक-झोंक—स्त्री०[फा० नोक+हिं० झोंक] १. बनाव-सिंगार। सजावट। २. ठाठ-बाट। शान। जैसे—उनका हर काम नोक-झोंक से होता है। ३. तपाक। तेज। दर्प। जैसे—उस दिन तो वह बहुत नोक-झोंक से बातें करते थे। ४. खटकने या चुभनेवाली व्यंग्यपूर्ण बात। ताना। ५. आपस में होनेवाली ऐसी कहा-सुनी या वाद-विवाद जिसमें कटुता की मात्रा कम और आक्षेप तथा व्यंग्य की मात्रा अधिक हो। जैसे—आज-कल उन लोगों में खूब नोक-झोंक चल रही है।
क्रि० प्र०—चलना।

नोक-दम—अव्य० [हिं० नोक+फा० दम] ठीक सामने की ओर। बिल्कुल सीधे। जैसे—नोक-दम भागना।

नोकदार—वि०[फा०]१. जिसमें नोक हो। नोकवाला। २. मन में चुभने या भला लगनेवाला। ३. तड़क-भड़कवाला। सजीला।

नोकना—अ०[हिं० नोक] अनुराग, लोभ आदि के कारण आगे की ओर प्रवृत्त होना या बढ़ना। उदा०—रीझि रहे उत हरि इति राधा, अरस-परस दोउ नोकत।—सूर।

नोक-पलक—स्त्री०[हिं० नोक+पलक]१. चेहरे की गठन या बनावट। २. बनावट या रचना के विचार से किसी चीज के भिन्न-भिन्न अंग या अवयव। जैसे—यह जूता नोक पलक से ठीक है। उदा०—इस संस्करण में मैंने 'मधुबाला' की नोक-पलक सुधार दी है।—बच्चन। ३. पहनावे आदि के विचार से व्यक्ति का रूप-रंग। (व्यंग्य) जैसे—वकील साहब नोक-पलक से दुरुस्त थे।

नोक-पान—पुं०[हिं०] १. पान के आकार का वह चमड़ा जो जूते की नोक और ऐड़ी पर लगा रहता है। २. देशी जूतों की बनावट में काट-छाँट, सुन्दरता या मजबूती।

नोका-झोंकी—स्त्री०=नोक-झोंक।

नोकीला—वि०=नुकीला।

नोखा†—वि०[स्त्री० नोखी]=अनोखा।

नोच—स्त्री० [हिं० नोचना] १. नोचने की क्रिया या भाव। २. झपटकर जबरदस्ती छीन लेने या छीनकर भागने की क्रिया या भाव।

पद—**नोच-खसोट**। (देखें)

नोच-खसोट—स्त्री०[हिं० नोचना+अनु० खसोटना] १. दो जीवों का परस्पर लड़ते समय अपने-अपने दाँतों, नाखूनों आदि से दूसरे के अंगों में से बाल, मांस आदि नोचना। २. दे० 'छीना-झपटी'।

नोचना—स०[सं० लुंचन ?]१. किसी जमी या लगी हुई वस्तु को निर्दयता-पूर्वक झटके से खींचकर अलग करना। जैसे—पेड़ के पत्ते या सिर के बाल नोचना।
संयो० क्रि०—डालना।—देना।—लेना।
२. नाखून, दाँत, पंजे आदि से पकड़कर झटके से कुछ अंश निकालना। जैसे—गीदड़ ने बच्चे को जगह-जगह से नोच डाला था। ३. किसी के हाथ में पकड़ी हुई वस्तु बलात् उससे छीनने का प्रयत्न करना।
संयो० क्रि०—लेना।
४. किसी को किसी काम या बात के लिए इस प्रकार बार-बार तंग या परेशान करना कि ऐसा जान पड़े कि उसका अंग नोचा जा रहा है। जैसे—(क) नालायक लड़के रुपए-पैसे के लिए माँ-बाप को नोचते रहते हैं। (ख) दिवालिए को तगादा करनेवाले नोचते हैं।
पुं० वह छोटी चिमटी जिससे शरीर के फालतू बाल आदि खींचकर उखाड़े जाते हैं। मोचना।

नोचा-नोची†—स्त्री०=नोच-खसोट।

नोचू—वि० [हिं० नोचना]१. नोचनेवाला। २. छीना-झपटी करने-वाला। ३. किसी काम या बात के लिए बार-बार बहुत तंग करनेवाला।

नोट—पुं०[अं०]१. वह छोटा लेख जो किसी बात का ध्यान रखने-रखाने के लिए उसके संबंध में कहीं टाँक या लिख लिया गया हो। २. लिखी हुई संक्षिप्त चिट्ठी या परचा। ३. अभिप्राय, आशय, विचार आदि प्रकट करनेवाला छोटा लेख। टिप्पणी। ४. राज्य या शासन की ओर से निकाला या प्रचलित किया हुआ कागज का वह टुकड़ा जिस पर धन की संख्या या अंकित मूल्य लिखा रहता है, और यह भी लिखा रहता है कि इसे लानेवाले को राज्य या शासन इतना धन देगा। इसका प्रचलन सिक्कों की ही तरह और उनके स्थान पर होता है। जैसे—एक रुपये, पाँच रुपये, दस रुपये और सौ रुपये के नोट आज-कल चलते हैं।

नोट-बुक—स्त्री०[अं०] वह छोटी कापी अथवा बही जिस पर कुछ बातें स्मरण रखने के लिए लिखी जाती हैं।

नोटिस—स्त्री०[अं०] १. विज्ञप्ति। सूचना। २. इश्तहार। विज्ञापन।

नोदन—पुं०[सं० √नुद्(प्रेरणा)+णिच्+ल्युट्—अन]१. पशुओं को चलाने या हाँकने की क्रिया या भाव। २. वह कोड़ा या छड़ी जिससे पशु चलाये या हाँके जाते हैं। औंगी। पैना। प्रतोदन। ३. खंडन।

नोदना—स्त्री०[सं०√नुद्+णिच्+युच्—अन, टाप्] प्रेरणा।

नोदयिता (तृ)—वि०[सं०√ नुद्+णिच्+तृच्] प्रेरित करने या आगे बढ़ानेवाला।

नोन—पुं०[सं० लवण, हिं० लोन] नमक।

नोनचा—पुं०[हिं० नोन+फा० अचार]१. नमकीन अचार। २. आम की फाँकों का वह अचार जो केवल नमक डालकर बनाया गया हो। ३. नमक मिली हुई बादाम की गिरी। ४.ऐसी भूमि जिसमें नोना अधिक हो।

नोनछी—स्त्री० [हिं० नोन+छार] लोनी मिट्टी।

नोनहरा—पुं० [हिं० नोन] पैसा। (गंधर्वों की बोली)

नोनहरामी†—वि०=नमक-हराम।

नोना†—वि० [हिं० नोन=नमक] [स्त्री० नोनी, भाव० नोनाई] १. खार या नमक के स्वादवाला। खारा। जैसे—इस कूएँ का पानी नोना है। नमकीन। ३. अच्छा। बढ़िया। ४. सलोना। सुन्दर।

पुं० १. वह खारा या नमकीन अंश या क्षार जो मिट्टी की पुरानी दीवारों या सीड़वाली जमीन में प्राकृतिक रूप से निकलकर ऊपर आता है।

क्रि० प्र०—लगना।

२. नोनी मिट्टी। ३. शरीफा। सीताफल। ४. प्रायः नावों आदि के पेंदे में लगनेवाला एक प्रकार का कीड़ा। उधई।

†स० दे० 'नोवना'।

नोना चमारी—स्त्री० [हिं०] एक प्रसिद्ध कल्पित जादूगरनी जिसकी दोहाई मंत्रों में रहती है।

नोनिया—पुं० [हिं० नोना] लोनी मिट्टी से नमक निकालने का काम करने-वाली एक जाति।

स्त्री० अमलोनी या लोनिया नामक पौधा जिसके पत्तों का साग बनता है।

नोनी†—स्त्री० [सं० लवण] १. खारी या लोनी मिट्टी। नोना। २. अमलोनी या लोनिया नाम का पौधा।

वि० हिं० 'नोना' का स्त्री०।

नोबुल पुरस्कार—पुं० [नोबुल (व्यक्ति का नाम)+सं० पुरस्कार] एक जगत् प्रसिद्ध बहुत बड़ा और सम्मानास्पद पुरस्कार जो प्रति वर्ष नीचे लिखे पाँच विषयों में काम करनेवाले सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों को दिया जाता है—भौतिक विज्ञान, रसायन शास्त्र, चिकित्सा शास्त्र, साहित्य और शांति-रक्षा।

विशेष—यह पुरस्कार एक लाख रुपयों से कुछ ऊपर का होता है; और स्वीडन के सुप्रसिद्ध व्यापारी, धनकुबेर और दानशील एल्फ्रैड बर्नहार्ड नोबुल (सन् १८३३-१८९६ई०) द्वारा स्थापित एक बहुत बड़े दान-खाते से दिया जाता है।

नोर*—वि० [सं० नवल] नवीन। नया।

नोल—वि०=नोर (नवल)।

स्त्री० [देश०] चिड़िया की चोंच।

नोवना—स० [सं० नद्ध, हिं० नद्‌ना, नहना] (गाय के पिछले पैरों में) नोआ बाँधना। बंधी बाँधना।

नोहर†—वि० [सं० नोपलभ्य, प्रा० नोल्लह, या मनोहर] १. जल्दी न मिलनेवाला। अलभ्य। दुर्लभ। २. अद्‌भुत। अनोखा।

नौं-धरई†—स्त्री०=नाम-धराई।

नौं-धराई†—स्त्री०=नाम-धराई।

नौं-धरी†—स्त्री०=नाम-धराई।

नौ—वि० [सं० नव] जो गिनती में आठ से एक अधिक हो। जैसे—नौखंडा महल।

मुहा०—*नौ दो ग्यारह होना*=चुपचाप या धीरे से खिसक जाना या चल देना। निकल या हट जाना।

वि० [सं० नव (नया) से फा०] हाल का। नया। (प्रायः यौगिक पदों के आरंभ में प्रयुक्त) जैसे—नौ-जवान, नौ-सिखुआ।

पुं० [सं०√नुद+डौ] १. समुद्र में चलनेवाला जहाज। जल-यान। २. उक्त पर चलनेवाला आदमी। ३. नाविक। मल्लाह।

स्त्री० [अ० नौअ] १. ऐसी जाति या वर्ग जिसमें एक ही तरह की चीजें या जीव सम्मिलित हों। २. तरह। प्रकार।

नौकड़ा†—वि० [हिं० नौ=नव या नया+कड़ा (प्रत्य०)] [स्त्री० नौकड़ी] १. अभी हाल का। ताजा। २. नव-युवक। नौ-जवान।

पद—**नौकड़ा वीर**=हनुमान जी।

पुं० [हिं० नौ+कौड़ी] एक प्रकार का जूआ जो तीन आदमी हाथ में तीन-तीन कौड़ियाँ लेकर खेलते हैं।

नौकर—पुं० [तु०] [स्त्री० नौकरानी, भाव० नौकरी] १. वह जो घर-गृहस्थी के दौड़-धूप के छोटे-मोटे काम या सेवाएँ करने के लिए वेतन देकर नियुक्त किया जाता है। भृत्य। सेवक। जैसे—नौकर भेजकर बाजार से सब चीजें मँगा लो। २. वह जो लिखा-पढ़ी, व्यवस्था आदि के कामों में सहायता देने या उन्हें संपन्न करने के लिए वेतन पर नियुक्त किया जाता या होता है। कर्मचारी। (सर्वेन्ट) जैसे—अब कार्यालय में कई नए लिपिक नौकर रखे गए हैं।

क्रि० प्र०—रखना।—लगाना।

नौकरशाह—पुं० [तु०+फा०] वह कर्मचारी जिसके हाथ में पूर्ण शासन की सत्ता हो। जो नौकर होते हुए भी अपने को मालिक या शाह समझता हो।

नौकरशाही—स्त्री० [तु० नौकर+फा० शाही=शासन] १. शासन द्वारा नियुक्त कर्मचारी-वृन्द। २. एक आधुनिक शासन-प्रणाली जिसमें यह माना जाता है कि देश का वास्तविक शासन राजा या निर्वाचित प्रतिनिधियों के द्वारा नहीं हो रहा है, बल्कि उनके सहायकों तथा अन्य बड़े-बड़े सरकारी कर्मचारियों के द्वारा हो रहा है। (ब्यूरोक्रेसी)

नौकराना—पुं० [तु० नौकर+हिं० आना (प्रत्य०)] वह धन जो नौकर को उसके वेतन के अतिरिक्त और किसी रूप में दिया जाता या मिलता हो। जैसे—बाजार से सौदा लाने की दस्तूरी, विशिष्ट अवसरों पर दिया जानेवाला पुरस्कार।

नौकरानी—स्त्री० [तु० नौकर+हिं० आनी (प्रत्य०)] घर-गृहस्थी के काम करनेवाली दासी।

नौकरी—स्त्री० [तु० नौकर+हिं० ई० (प्रत्य०)] १. नौकर बनकर किसी की सेवा करने अथवा उसके निर्देशानुसार काम करते रहने की अवस्था या भाव। २. वह पद या काम जिसके लिए वेतन मिलता हो। ३. किसी के कृपा-पात्र बने रहने के लिए किये जानेवाले कार्य।

मुहा०—**(किसी की) नौकरी बजाना**=(क) किसी की तरह-तरह की सेवाएँ करना। (ख) आदेश पालन करना। **(किसी काम या बात के लिए) नौकरी लिखाना**=किसी प्रकार की सेवा या भार अपने ऊपर लेना। जैसे—हमने तुम्हारे सब काम करने की नौकरी नहीं लिखाई है।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।—लगना।—लगाना।

नौकरी-पेशा—पुं० [हिं० नौकरी+पेशा] वह जो नौकरी करके जीविका चलाता हो।

नौ-कर्ण—पुं० [सं० ष० त०] जहाज या नाव की पतवार।

नौ-कर्णी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीप्] कार्तिकेय की अनुचरी एक मातृका।

नौ-कर्म(र्मन्)—पुं० [सं० ष० त०] जहाज या नाव चलाने का पेशा या वृत्ति। मल्लाही।

नौका—स्त्री० [सं० नौ+कन्+टाप्] १. नाव। २. जहाज।

नौकाधिकरण—पुं० =नावाधिकारण।

नौका-विहार—पुं० [सं० तृ० त०] नौका पर बैठकर नदी आदि की की जानेवाली सैर।

नौ-क्रम—पुं० [सं० ष० त०] नावों का पुल।

नौ-खंडा—वि० [हिं० नौ+सं० खंड] [स्त्री० नौखंडी] नौ खंडों या मंजिलोंवाला (मकान)।

नौगमन—पुं० दे० 'नौतरण'।

नौगरही—स्त्री०=नौग्रही।

नौगरी—स्त्री०=नौग्रही।

नौग्रही—स्त्री० [सं० नवग्रह] १. एक प्रकार का हार जिसमें नौग्रहों की शांति के लिए नौ प्रकार के रत्न या नग जड़े रहते हैं। २. उक्त प्रकार का कंगन।

नौचर—वि० [सं० नौ√चर् (गति)+ट] जहाज पर जानेवाला।
पुं० मल्लाह। माँझी।

नौचा—पुं० [फा० नौचः] [स्त्री० नौची] नवयुवक।

नौची—स्त्री० [फा०] १. नवयुवती। २. पेशा कमाने के उद्देश्य से कुटनी या वेश्या द्वारा पाली हुई लड़की या युवती स्त्री।

नौज—अव्य० [सं० नव द्य, प्रा० नवज्ज] १. ईश्वर न करे कि कभी ऐसा हो। (शुभाकांक्षा के रूप में) २. न हो तो न सही। (उपेक्षा सूचक) ३. ऐसा कभी न हो। (कामना-सूचक)

नौ-जवान—वि० [फा०] [भाव० नौजवानी] १. जिसमें युवावस्था का आरंभ हुआ हो। २. जवान। युवक।

नौजवानी—स्त्री० [फा०] नौजवान होने की अवस्था या भाव। युवावस्था।

नौजा—पुं० [अ० लौजः] १. बादाम। २. चिलगोजा। ३. गले के अंदर का कौआ या घंटी।

नौजी—स्त्री० [फा० लौज ?] लीची।

नौजीवक—पुं० =नौजीविक।

नौ-जीविक—पुं० [सं० ब० स०] मल्लाह। माँझी।

नौटंका—वि० [हिं० नौ+टंक (तौल)] [स्त्री० नौटंकी] १. तौल में बहुत ही हलका। २. बहुत ही कोमल तथा सुकुमार अंगोंवाला।

नौटंकी—स्त्री० [हिं० नौटंका (तौल में बहुत हलका) स्त्री०] साधारण जनता में अभिनीत होनेवाला एक प्रकार का लोक-नाट्य जिसका कथानक प्रायः श्रृंगार और वीर रस से युक्त होता है। और जिसके संवाद प्रायः प्रश्नोत्तरात्मक तथा पद्य प्रधान होते हैं। इसमें संगीत की प्रधानता होती है और दुक्कड़ या नगाड़े पर विशेष रूप से चौबोले गाये जाते हैं।

नौड़ी†—स्त्री०=लौंड़ी।

नौढ़ा*—स्त्री०=नवोढ़ा।

नौतन†—वि०=नूतन।

नौतना—स०=न्योतना (न्योता या निमंत्रण देना)।

नौतनी—स्त्री० [हिं० न्योतना] वर-वधू को उनके संबंधियों द्वारा अपने-अपने घर बुलाकर उन्हें भोजन कराने तथा धन, वस्त्र आदि देने की एक प्रथा।

नौतम—वि० [सं० नवतम] १. अत्यंत नवीन। बिलकुल नया। २. हाल का। ताजा।
†पुं० [हिं० नवना] नम्रता।

नौ-तरण—पुं० [सं० तृ० त०] [वि० नौतरणीय, भू० कृ० नवतरित] जल-मार्ग से यात्रा करना।

नौ-तरणीय—वि० [सं० तृ० त०] (नदी, समुद्र) जिसमें नौका, जहाज आदि चल सकते हों। (नैविगेबुल)

नौ-तल—पुं० [सं० ष० त०] वह लंबा शहतीर या लोहे की पटरी जो नाव या जहाज के सबसे नीचे रहती है और जिस पर उसका सारा ढाँचा खड़ा होता है। (कील)

नौता†—वि० [सं० नव या नूतन] हाल का। ताजा। नया।
*स्त्री० [सं० नौ] नम्रता।
स्त्री०=नवत्ता (नवीनता)।
†पुं० [?] जादूगर।
पुं०=न्योता (निमंत्रण)।

नौ-तेरही—स्त्री० [हिं० नौ+तेरह] १. पुरानी चाल की वह छोटी ईट जो नौ जौ चौड़ी और तेरह जौ लंबी होती थी। ककई या लखौरी ईट। २. पासे से खेला जानेवाला एक प्रकार का जूआ।
पुं०=न्योतहरी (निमंत्रित पुरुष)।

नौतोड़—वि० [हिं० नौ=नया+तोड़ना] नया तोड़ा हुआ। जो पहले-पहल जोता गया हो। जैसे—नौतोड़ जमीन।

नौदर†—पुं० [हिं० नौ+दर=दाँत] वह बैल जिसके नौ दाँत हों।

नौदसी—स्त्री० [हिं० नौ+दस] महाजनी व्यवहार में, ऋण चुकाने की वह रीति जिसमें हर नौ रुपए के बदले दस रुपए देने पड़ते हैं।

नौधा†—पुं० [हिं० नौ (नया)+पौधा] १. बीजों या पौधों में निकलनेवाला नया कल्ला। २. वर्षारंभ में बोई जानेवाली नील की फसल। ३. नया बाग।
वि०=नवधा।

नौन*—पुं० [सं० लवण] नमक।

नौनगा—वि० [हिं० नौ+नग] जिसमें नौ नग या रत्न हों। जैसे—नौनगा हार।
पुं० एक प्रकार का हार जिसमें नौ नग जड़े रहते हैं।

नौना—अ० [सं० नमक] १. नवना। झुकना। २. किसी के आगे नम्र या विनीत होना।
†पुं०=नोना।

नौ-निहाल—पुं० [फा०] १. नया पौधा। २. बालक। बच्चा।
वि० नया परंतु होनहार शिशु।

नौनी†—स्त्री०=नवनीत (मक्खन)।
†स्त्री०=नोई।

नौ-नेता (तृ)—पुं० [सं० ष० त०] जहाज की पतवार पकड़नेवाला। पतवरिया।

नौप्रभार—पुं० [सं० मध्य० स०] अधिक से अधिक भार का वह मान जो किसी जहाज पर लादा जा सकता हो। (टनेज)

विशेष—आज-कल जहाज की पात्रता या भार ढोने का सामर्थ्य पहले से नाप-जोखकर स्थिर कर लिया जाता है; और निश्चित हो जाता है कि इसमें इतने टन (१ टन=लगभग २७$\frac{1}{2}$ मन) से अधिक भार नहीं लदेगा।

नौ-बंधन—पुं० [सं० ब० स०] हिमालय का वह सर्वोच्च शृंग जिस पर मनु ने प्रलय के समय अपनी नाव बाँधी थी।

नौ-बढ़—वि० [हिं० नौ+बढ़ना] जो अभी हाल में आगे बढ़ा अर्थात् हीन से उच्च अवस्था में पहुँचा हो।

नौबत—स्त्री० [अ०] [वि० नौबती] १. किसी काम या बात की पारी। बारी। २. किसी अनिष्ट या अवांछनीय घटना के घटित होने की पारी या स्थिति। जैसे—सँभलकर रहो; नहीं तो भूखों मरने (या मार खाने) की नौबत आवेगी।

क्रि० प्र०—आना।—पहुँचना।

३. दुर्गति। दुर्दशा। जैसे—(क) इसी लिए तो तुम्हारी यह नौबत हो रही है। (ख) सीधी तरह से रहो; नहीं तो कोई नौबत बाकी न रखूँगा। ४. नगाड़ा, शहनाई आदि मांगलिक बाजे जो मंदिरों, महलों आदि में नित्य कुछ नियमित अवसरों या समयों पर बजा करते हैं।

क्रि० प्र०—बजना।—बजाना।

पद—**नौबत-खाना**। (दे०) **नौबत बजाकर**=डंके की चोट। खुले आम।

मुहा०—**नौबत झड़ना**=नियत समय पर नौबत या मांगलिक बाजे बजना। **(किसी के यहाँ) नौबत बजना**=(क) खूब आनंद-मंगल होना। (ख) प्रताप और वैभव की खूब वृद्धि होना। **नौबत बजाना**=ऐश्वर्य, प्रभुत्व या शान दिखलाना।

नौबत-खाना—पुं० [अ० नौबत+फा० खानः] द्वार या फाटक के ऊपर का वह स्थान जहाँ नौबत बजती है। नक्कार-खाना।

नौबती—वि० [अ०] १. बारी से होनेवाला। जैसे—नौबती बुखार। २. जिसके घटित होने की संभावना हो।

पुं० १. नौबत बजानेवाला। नक्कारची। २. महलों के फाटक पर का पहरेदार। ३. बिना सवार का सजा हुआ घोड़ा। कोतल घोड़ा। ४. बहुत बड़ा तंबू। शामियाना।

नौबतीदार—पुं० [अ० नौबत+फा० दार] राजा-महाराजाओं के महलों और शामियानों का पहरेदार।

नौबलाध्यक्ष—पुं०=नौसेनाध्यक्ष।

नौबहार—स्त्री० [फा०] वसंत ऋतु।

नौमासा—वि० [सं० नवमास] नौ महीने का।

पुं० १. स्त्री के गर्भ का नवाँ महीना। २. उक्त अवसर पर होनेवाली रसम या संस्कार।

नौमि*—अव्य० [सं० नमामि का अपभ्रंश] मैं प्रणाम करता हूँ।

स्त्री० =नवमी या नौमी (तिथि)।

नौरंग—पुं० [सं० नव-रंग] एक प्रकार की चिड़िया।

पुं० औरंग (औरंगजेब बादशाह) का अपभ्रष्ट रूप।

नौरंगा—पुं० [हिं नौरंग] वह स्थान जहाँ नये पौधे उगाये, रोपे या लगाये जाते हैं। केड़वारी। (नर्सरी)

नौरंगी†—स्त्री०=नारंगी।

नौ-रतन—पुं० [सं० नव-रत्न] १. नौ प्रकार के रत्नों का समूह। २. नौ-नगा नाम का गले में पहनने का गहना। ३. एक प्रकार की बढ़िया मीठी चटनी जिसमें नौ तरह की चीजें पड़ती हैं।

नौरता—पुं० [सं० नवरात्र] १. नवरात्र। २. बुंदेलखंड, व्रज आदि में मनाया जानेवाला एक प्रकार का त्योहार जिसमें कुमारी लड़कियाँ गौरी या दुर्गा की पूजा करती हैं।

नौरमा—पुं० [देश०] एक तरह का साग।

नौरस—वि० [सं० नव=नया+रस] १. (फलों, फूलों आदि के संबंध में) जिसमें नया रस आया हो अर्थात् हाल का। ताजा। २. नई उमर का। नौ-जवान। युवा।

नौरातर—पुं०=नवरात्र।

नौरूप—पुं० [हिं० नौ+रोपना] नील की फसल की पहली कटाई।

नौरोज—पुं० [फा० नौरोज़] १. नया दिन। २. साल का नया दिन विशेषतः ईरानियों में फर्वरदीन मास का पहला दिन।

विशेष—ईरानी लोग इस दिन बहुत बड़ा उत्सव मनाते हैं।

नौल—पुं० [अ० नॅवेल] जहाज पर माल लादने का भाड़ा।

†वि०=नवल।

नौ-लखा—वि० [स्त्री० नौ-लखी] १. जिसका मूल्य नौ-लाख रुपयों के बराबर हो। २. जड़ाऊ और बहुमूल्य।

नौलखी—स्त्री० [?] करघे में ताने को दबाने के लिए उस पर रखी जानेवाली वह लकड़ी जिसमें भारी पत्थर बँधे रहते हैं। (जुलाहे)

नौला†—पुं० =नेवला।

नौलासी—वि० [सं० नवल] कोमल। नरम। मुलायम।

नौलेवा—पुं० [हिं० नौ=नया+लेवा=मिट्टी] वह मिट्टी जो बाढ़ आने पर नदी के किनारों पर जमा हो जाती है।

नौवाब—पुं० [भाव० नौवाबी]=नवाब।

नौ-विज्ञान—पुं० [सं० ष० त०] वह विज्ञान जिसमें समुद्र में जहाज आदि चलाने की कला या विद्या का विवेचन होता है। (नॉटिकल सायन्स)

नौशा—पुं० [फा० नौशः] [स्त्री० नौशी] दूल्हा। वर।

नौशी—स्त्री० [फा०] नववधू। दुलहिन।

नौशेरवाँ—पुं० [फा०] ईरान देश का एक सम्राट जो अपनी न्यायप्रियता के लिए विश्व में प्रसिद्ध है। (५३१-५७९ ई०)

नौसत—वि० [हिं० नौ+सात] सोलह।

पुं० सोलहो शृंगार। उदा०—नौसत साजे चली गोपिका गिरवर पूजा हेत।—सूर।

नौ-सफर—वि० [फा०+अ०] जो पहले-पहल सफर या यात्रा कर रहा हो।

नौसर—वि० [हिं० नौ+सर=लड़ी] नौ-लड़ों या लड़ियोंवाला। उदा०—यो तो म्हाँरे नौसर हार।—मीराँ।

पुं० [हिं०नौ+सर=बाजी] १. ताश के कुछ विशिष्ट खेलों में ऐसे पत्ते या सर जिसके आने पर नौ-गुना दाँव दिया या लिया जाता है। २. बहुत बड़ी चालबाजी, धूर्तता और धोखेबाजी।

नौसरा—पुं० [हिं० नौ+सर] नौ लड़ियोंवाला बड़ा हार।

नौसरिया—वि० [हिं० नौसर] १. बहुत बड़ा धूर्त और धोखेबाज। २. जालसाज। जालिया।

नौशादर—पुं० [फा० नौशादर] एक प्रकार का तीक्ष्ण झालदार क्षार या नमक, जिसका उपयोग औषधों में होता है।

नौसार—स्त्री० [हिं० नोन+सार, सं० लवणशाला] वह स्थान जहाँ नोनी मिट्टी से नमक बनाया जाता हो।

नौसिख†—वि०=नौसिखिया।

नौसिखिया—वि० [सं० नवशिक्षित प्रा० नवसिक्खिअ] जिसने अभी हाल में कोई काम सीखा हो और फलतः जो अभी तक उस काम में कुशल या निपुण न हुआ हो।

नौसिखुआ†—वि०=नौसिखिया।

नौ-सेना—स्त्री० [मध्य० स०] वह सेना जो जहाजों पर रहती और समुद्र में रहकर शत्रुओं से युद्ध करती है। (नेवी)

नौसेनाध्यक्ष—पुं० [सं० नौसेना-अध्यक्ष, ष०त०] नौ सेना का सबसे बड़ा अधिकारी। (एडमिरल)

नौसेनापति—पुं०=नौसेनाध्यक्ष।

नौ-सेवा—स्त्री० [सं० मध्य० स०] १. नौ सेना में की जानेवाली सेवा या नौकरी। २ नौसेना में काम करनेवालों का समूह। (नॉवल सर्विस)

नौसैनिक—वि० [सं० नौसेना+ठक—इक्] नौसेना संबंधी।

नौहँड़—पुं० [सं० नव=नया+हिं० हाँड़ी] मिट्टी की नई हाँड़ी। कोरी हँड़िया।

नौहँड़ा—पुं० [सं० नव+भाँड़] पितृपक्ष जिसमें मिट्टी के पुराने बरतन फेंककर उनके स्थान पर नये बरतन रखे जाते हैं।

नौहर—स्त्री० [?] अँगड़ाई।

न्यंक—पुं० [सं०] रथ का एक अंग।

न्यंकु—वि० [सं०] बहुत तेज चलने या दौड़नेवाला।
पुं० १. एक प्रकार का बारहसिंघा या हिरन। २. वह शिष्य जो गुरु के पास रहकर विद्यार्जन करता हो।

न्यंकु-भूरुह—पुं० [सं० उपमि० स०] श्योनाक नामक वृक्ष। सोनापाठा।

न्यंकुसारिणी—स्त्री० [सं०] एक प्रकार का वैदिक छंद।

न्यंग—पुं० [सं० नि√अंज् (स्पष्ट होना)+घञ्] १. चिह्न। निशान। २. जाति। प्रकार।

न्यंचन—पुं० [सं० नि०+अंचन, प्रा० स०] १. नीचे की ओर मुड़े हुए होने की अवस्था या भाव। २. नीचे फेंकना। ३. छिपने का स्थान। ४. विवर। बिल।

न्यंचनी—स्त्री० [सं० न्यंचन+ङीष्] गोद।

न्यंचित—भू० कृ० [सं० नि√अंच्+णिच्+क्त] १. नीचे की ओर झुकाया हुआ। २. नीचे फेंका हुआ।

न्यंजलिका—स्त्री० [सं० नि-अंजलिका, प्रा० स०] नीचे झुकाई हुई अंजली।

न्यक्करण—पुं० [सं० न्यक्√कृ (करना)+ल्युट्-अन] (किसी को) नीचा दिखाना।

न्यक्कार—पुं० [सं० न्यक्√कृ+घञ्] तिरस्कार।

न्यक्ष—वि० [सं० नि-अक्षि, ब० स०, षच्] १. अधम। निकृष्ट। २. समग्र।
पुं० १. भैंसा। २. परशुराम।

न्यग्भाव—पुं० [सं० न्यक्-भाव, ष० त०] [भू० कृ० न्यग्भावित] नीची अवस्था में लाये जाने अथवा तिरस्कृत किये जाने का भाव।

न्यग्रोध—पुं० [सं० न्यक्√रुध् (रोकना)+अच्] १. बड़ का पेड़। बरगद। २. शमी वृक्ष। ३. मोहनौषधि। ४. मूसाकानी। मूषिकर्णी। ५. विष्णु। ६. शिव। ७. बाँह। ८. लंबाई की एक नाप जो उतने विस्तार की होती है जितना विस्तार पूरी तरह से दोनों हाथ फैलाने पर एक हाथ की उँगलियों के सिरे से दूसरे हाथ की उँगलियों के सिरे तक होता है।

न्यग्रोध-परिमंडल—पुं० [सं० ब० स०] वह जिसकी लंबाई-चौड़ाई एक व्याम या पुरसा हो। (मत्स्यपुराण)

न्यग्रोध-परिमंडला—स्त्री० [सं० ब० स०,+टाप्] कठोर स्तनों, विशाल नितंबों और क्षीण कटिवाली फलतः सुंदरी स्त्री। (स्त्रियों का एक प्रकार या भेद)

न्यग्रोधा—स्त्री० [सं० न्यग्रोध+टाप्]=न्यग्रोधी।

न्यग्रोधादिगण—पुं० [सं० न्यग्रोध-आदि, ब० स०, न्यग्रोधादि-गण, ष० त०] वैद्यक में वृक्षों का एक गण जिसके अन्तर्गत बरगद, पीपल, गूलर आदि कई वृक्ष सम्मिलित हैं।

न्यग्रोधिक—वि० [सं० न्यग्रोध+ठन्-इक] (स्थान) जहाँ बहुत से वट-वृक्ष हों।

न्यग्रोधिका—स्त्री० [सं० न्यग्रोधी+कन्—टाप्, ह्रस्व] विषपर्णी।

न्यग्रोधी—स्त्री० [सं० न्यग्रोध+ङीप्] विषपर्णी।

न्यच्छ—पुं० [सं० नि-अच्छ, प्रा० स०] एक प्रकार का चर्मरोग जिसमें शरीर पर सफेद रंग के चकत्ते पड़ जाते हैं।

न्यय—पुं० [सं० नि√इ (गति)+अच्] क्षय। नाश।

न्यर्बुद—वि० [सं० नि+अर्बुद, प्रा० स०] दस अरब।

न्यर्बुदि—पुं० [सं० नि-अर्बुदि, ब० स०] एक रुद्र का नाम।

न्यसन—पुं० [सं० नि√अस् (फेंकना)+ल्युट्—अन] १. किसी के पास कोई चीज जमा करना। २. अपने अधिकार से जाने देना। ३. उल्लेख करना।

न्यस्त—भू० कृ० [सं० नि√अस्+क्त] १. किसी स्थान पर विशेषतः नीचे धरा या रखा हुआ। २. जमाया, बैठाया या स्थापित किया हुआ। ३. चुनकर रखा या सजाया हुआ। ४. चलाया या फेंका हुआ। (अस्त्र) ५. छोड़ा या त्यागा हुआ। परित्यक्त। ६. न्यास के रूप में या अमानत रखा हुआ। जमा किया हुआ। ७. (धन) जो किसी विशिष्ट कार्य की सिद्धि के लिए अलग किया या निकाला गया हो। ८. छिपा या दबा हुआ। निहित।

न्यस्तलिंग—पुं० दे० 'लिंग' (न्याय-शास्त्रवाला विवेचन)।

न्यस्त-शस्त्र—वि० [सं० ब० स०] १. जिसने डर या हारकर हथियार रख दिये हों। २. जिसने हथियार न चलाने की प्रतिज्ञा कर ली हो।
पुं० पितृ लोक।

न्यस्य—वि० [सं० नि√अस्+यत् बा०] १. न्यास के रूप में रखे जाने के योग्य। २. चलाये या छोड़े जाने के योग्य। ३. छिपा या दबाकर रखे जाने के योग्य।

न्यांकव—वि० [सं० न्यंकु+अण्] रंकु या बारहसिंघे से संबंध रखने या उससे होनेवाला।

पुं० रंकु या बारहसिंघे की खाल।

न्याइ†—पुं० न्याय।

†अव्य०=नाईं (तरह)।

न्याउ†—पुं०=न्याय।

न्याव्य—पुं० [सं० नि√अक् (टेढ़ी चाल)+ण्यत्] भूना हुआ चावल। फरुही।

न्यात—पुं० [हिं० न्याति] जाति के लोग। नातेदार। संबंधी। उदा० —न्यात कहँ कुल नासी रे।—मीराँ।

न्याति*—स्त्री० [सं० ज्ञाति, प्रा० णाति] जाति।

न्याद—पुं० [सं० नि√अद् (खाना)+ण] १. भक्षण करना। खाना। २. आहार। भोजन।

न्यान—स्त्री० [?] लद्दाख, सिक्किम, तिब्बत आदि में होनेवाली भूरे रंग की एक तरह की भेड़।

न्याना†—वि० [सं० अज्ञान] १. जो कुछ न जानता हो। अनजान। निर्बोध। २. छोटी उमर का। अल्प-वयस्क। (पश्चिम)

न्याय—पुं० [सं० नि√इ (गति)+घञ्] १. कोई काम ठीक तरह से पूरा करने का ढंग, नियम या योजना। २. उचित, उपयुक्त या ठीक होने की अवस्था या भाव। ३. ऐसा आचरण या व्यवहार जिसमें नैतिक दृष्टि से किसी प्रकार का अनौचित्य, पक्षपात या बेईमानी न हो। ४. प्रमाणों द्वारा विषयों का किया जानेवाला परीक्षण। ५. विवाद आदि के प्रसंगों में, आधिकारिक अथवा प्रामाणिक रूप से निष्पक्ष होकर यह निर्णय या निश्चय करना कि कौन-सा पक्ष उचित और कौन-सा अनुचित है; अथवा भविष्य में कार्य का निर्वाह किस प्रकार होना चाहिए और किसे कौन-सी वस्तु अथवा क्या दंड मिलना चाहिए। ६. उक्त के संबंध में आधिकारिक रूप से होनेवाला निर्णय या निश्चय। ७. व्याकरण में, ऐसा नियम या सिद्धांत जिसका पालन सब जगह समान रूप से होता हो। ८. तुल्यता। समानता। ९. प्रायः कहावत या लोकोक्ति के रूप में प्रचलित वह दृष्टांत वाक्य जो किसी ऐसे तथ्य का सूचक हो जो प्रस्तुत घटना या प्रसंग में ठीक बैठता या लगता हो। जैसे—आपकी यह बात तो देहली-दीपक न्याय से दोनों तरफ ठीक बैठती है।

विशेष—हमारे यहाँ संस्कृत में इस प्रकार के बहुत से न्याय या दृष्टांत-वाक्य प्रचलित थे जिनमें से कुछ का अब भी उपयुक्त अवसरों पर प्रयोग होता है। जैसे—अंध-गज न्याय, अरण्य-रोदन न्याय, कपिथ्य न्याय, घुणाक्षर न्याय, पिष्ट पेषण न्याय, बीजांकुर न्याय आदि। इस प्रकार के न्याय या तो कुछ प्रसिद्ध तथ्यों पर आश्रित होते हैं या प्रचलित लोक-कथाओं पर, और संस्कृत साहित्य में प्रायः प्रयुक्त होते हुए दिखाई देते हैं। इनमें से कुछ प्रसिद्ध न्यायों के आशय यथा-स्थान देखे जा सकते हैं।

१०. हमारे यहाँ के छः मुख्य आस्तिक दर्शनों में से एक प्रसिद्ध दर्शन-या शास्त्र जिसके कर्ता गौतम मुनि हैं और जिसमें इस बात का विवेचन है कि किस प्रकार किसी पदार्थ या विषय का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिए तार्किक दृष्टि से उसके सब अंगों या पक्षों के विकारों का निरूपण या योजना होनी चाहिए।

विशेष—उक्त दर्शन में, तर्क-वितर्क के नियमों के निरूपण के सिवा आत्मा, इंद्रिय, पुनर्जन्म, सुख-दुःख आदि के स्वरूपों का भी विवेचन है; और कहा जाता है कि इन बातों का यथार्थ ज्ञान होने पर ही मनुष्य को अपवर्ग या मोक्ष मिल सकता है।

११. तर्कशास्त्र। १२. तर्कशास्त्र में, वह सम्यक् तर्क जो प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, अनय और निगमन नामक पाँचों अवयवों से युक्त हो। १३. विष्णु का एक नाम।

*वि० १. उचित। ठीक। वाजिब। २. तुल्य। समान।

अव्य० की तरह। के समान।

न्यायकर्ता (र्तृ)—वि० [सं० ष० त०] (विवाद आदि का) न्याय करनेवाला। पुं० न्यायालय का वह अधिकारी जो विवादों का न्याय या फैसला करता है।

न्यायज्ञ—पुं० [सं० न्याय√ज्ञा (जानना)+क] न्याय-शास्त्र का ज्ञाता।

न्यायतः (तस्)—अव्य० [सं० न्याय+तस्] न्याय की दृष्टि या विचार से। अर्थात् उचित और संगत रूप से। न्यायपूर्वक।

न्याय-पथ—पुं० [सं० ष० त०] न्याय का मार्ग।

न्याय-पर—वि० [सं० ब० स०] [भाव० न्यायपरता] १. न्यायपूर्ण आचरण करनेवाला। २. न्याय के अनुसार ठीक।

न्याय-परता—स्त्री० [सं० न्यायपर+तल्+टाप्] न्याय पर या न्याय-परायण होने की अवस्था या भाव। न्याय-परायणता।

न्याय-परायण—वि० [सं० स० त०] [भाव० न्याय-परायणता] न्याय-पूर्ण आचरण करनेवाला।

न्याय-प्रिय—वि० [सं० ब० स०] [भाव० न्याय-प्रियता] जिसे न्याय प्रिय हो। न्यायपूर्ण पक्ष का समर्थन करनेवाला।

न्याय-मूर्ति—पुं० [सं० ष० त०] राज्य के मुख्य न्यायालय के न्यायज्ञ की उपाधि। (जस्टिस)

न्यायवान् (वत्)—पुं० [सं० न्याय+मतुप्, वत्व] न्यायपूर्ण आचरण करनेवाला।

न्याय-शास्त्र—पुं० [सं० कर्म० स०] भारतीय आर्यों के दर्शनों में से एक दर्शन या शास्त्र जिसमें किसी तथ्य या बात का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिए तार्किक दृष्टि से उसके विवेचन के नियम और सिद्धांत निरूपित हैं। (इसके कर्ता गौतम ऋषि हैं)

न्याय-शुल्क—पुं० [सं० मध्य० स०] वह शुल्क जो न्यायालय में कोई प्रार्थना-पत्र उपस्थित करने के समय अंकपत्र (स्टाम्प) के रूप में देना पड़ता है। (कोर्ट फी)

न्याय-संगत—वि० [सं० तृ० त०] १. (आचरण) जो न्याय की दृष्टि से ठीक हो। २. (निर्णय) जिसमें पूरा पूरा न्याय हो। (जस्ट)

न्याय-सभा—स्त्री० [ष० त०] अदालत। वह सभा जहाँ न्याय होता हो अर्थात् कचहरी।

न्याय-सभ्य—पुं० [सं०मध्य० स०] फौजदारी के कुछ खास-खास मुकदमों का विचार करते समय दौरा जज की सहायता करने के लिए नियुक्त सभ्यगण, जिनकी संख्या प्रायः ३ से ७ तक होती है। इनसे न्याया-धीश का मत-भेद होने पर मामला उच्च न्यायालय में भेज दिया जाता है। (जूरी)

न्यायाधिकरण—पुं० [सं० न्याय-अधिकरण, ष० त०] विवाद-ग्रस्त विषयों पर निर्णय देनेवाला न्यायालय या अधिकारी वर्ग। (ट्रिब्यूनल)

न्यायाधिपति—पुं० [सं० न्याय-अधिपति, ष०त०] दे० 'न्यायमूर्ति'।

न्यायाधीश—पुं० [सं० न्याय-अधीश, ष०त०] न्यायालय का वह अधिकारी जो विवादग्रस्त विषयों पर अपना निर्णय देता है।

न्यायालय—पुं० [सं० न्याय-आलय, ष० त०] वह स्थान जहाँ पर न्यायाधीश न्याय करता हो। अदालत। कचहरी। (कोर्ट)

न्यायिक-अधिकारी—पुं० [सं० न्याय से] न्याय विभाग का प्राधिकारी। (जूडिशियल अथॉरिटी)

न्यायिक-निर्णय—पुं० [सं० न्याय से] १. न्यायासन पर बैठकर किसी मामले के संबंध में निर्णय देना। २. इस तरह दिया हुआ निर्णय। (एडजुडिकेशन)

न्यायी (यिन्)—पुं० [सं० न्याय+इनि] वह जो न्याय करता हो। बिना पक्षपात के निर्णय करनेवाला।
वि०=न्यायशील।

न्यायोचित—वि० [सं० तृ०त०] जो न्यायतः उचित हो। न्याय-संगत।

न्याय्य—वि० [सं० न्याय+यत्] न्यायोचित। न्याय-संगत।

न्यार—पुं० [हिं० निवार] पसही धान। मुन्यन्न।
पुं०=नियार। (देखें)
वि०=न्यारा।

न्यारा—वि० [सं० निर्निकट, प्रा० निन्निअड़, पु० हिं० निन्यार] [स्त्री० न्यारी] १. जो पास न हो। २. अलग। जुदा। पृथक्। ३. अन्य। दूसरा। भिन्न। जैसे—यह बात न्यारी है। ४. जो अपने किसी विलक्षण गुण या विशेषता के कारण औरों से भिन्न और श्रेष्ठ हो। निराला। जैसे—मथुरा तीन लोक से न्यारी। (कहा०)

न्यारिया—पुं० [हिं० नियार] वह व्यक्ति जो जौहरियों, सुनारों आदि की दुकानों में से निकाला हुआ नियार (कूड़ा-करकट) साफ करके उसमें से रत्नों, सोने-चाँदी आदि के कण निकालने का काम करता हो।

न्यारे—क्रि० वि० [हिं० न्यारा] १. अलग। पृथक्। २. दूर।

न्याव—पुं० [सं० न्याय] १. न्याय। इन्साफ। २. विवेक। ३. उचित और कर्तव्य का पक्ष।
मुहा०—**न्याव चुकाना**=दो पक्षों के विवाद का न्याय करना।

न्यास—पुं० [सं० नि√अस् (फेंकना)+घञ्] [वि० न्यस्त] १. कोई चीज कहीं जमा या बैठाकर रखना। स्थापित करना। २. चीजें चुन या सजाकर यथा-स्थान रखना। ३. किसी चीज के कहीं रखे जाने के फल-स्वरूप उस स्थान पर बननेवाला चिह्न या निशान। जैसे—चरण-न्यास, नख-न्यास, शस्त्र-न्यास। ४. वह द्रव्य या धन जो किसी के पास धरोहर के रूप में रखा जाय। अमानत। थाती। धरोहर। ५. कोई चीज किसी को देना या सौंपना। अर्पण। भेंट। ६. अंकित या चित्रित करना। ७. सामने लाकर उपस्थित करना या रखना। ८. छोड़ना। त्यागना। ९. पूजन, वंदन आदि में धार्मिक विधि के अनुसार भिन्न भिन्न देवताओं का ध्यान करते हुए इस प्रकार अपने शरीर के भिन्न भिन्न अंगों का स्पर्श करना कि मानों उन अंगों में देवता स्थापित किये जा रहे हों। १०. रोगी का रोग आदि शांत करने के लिए मंत्र पढ़ते हुए उक्त प्रकार से रोगी के भिन्न-भिन्न अंगों पर हाथ रखना या उन्हें स्पर्श करना। ११. चढ़ा हुआ स्वर उतारना या मंद करना। १२. संन्यास। १३. आज-कल किसी विशिष्ट कार्य के लिए अलग किया या निकाला हुआ वह धन या संपत्ति जो कुछ विश्वस्त व्यक्तियों को इस दृष्टि से सौंपी गई हो कि वे दाता की इच्छानुसार उसका उचित उपयोग और व्यवस्था करेंगे। (ट्रस्ट) १४. उक्त प्रकार के धन की व्यवस्था करनेवाले लोगों की समिति।

न्यास-भंग—पुं० [ष० त०] किसी के द्वारा स्थापित किये हुए न्यास का उसके प्रबंध करनेवालों द्वारा किया जानेवाला कुप्रबंध और दुरुपयोग। (ब्रीच आफ ट्रस्ट)

न्यास-स्वर—पुं० [ष०त०] उतारा या मन्द किया हुआ वह स्वर जिस पर गीत या राग-रागिनियों का अंत या समाप्ति होती है।

न्यासिक—वि० [सं० न्यास+ठन्—इक] =न्यासी।

न्यासी (सिन्)—पुं० [सं० न्यास+इनि] वह जिसे किसी विशेष कार्य के लिए कुछ धन या संपत्ति सौंपी गई हो। (ट्रस्टी)

न्युब्ज—वि० [सं० नि√उब्ज (झुकना)+अच्] १. अधोमुख। औंधा। २. कुब्ज। कुबड़ा। ३. रोग आदि के कारण जिसकी कमर झुक गई हो।
पुं० १. वट वृक्ष। बरगद। २. कुश। कुशा। ३. कुश की बनी हुई स्रुवा। ४. कमरख (वृक्ष और फल)। ५. माला।

न्यून—वि० [सं० नि√ऊन् (घटाना)+अच्] [भाव० न्यूनता] १. आवश्यक या उचित से कम। थोड़ा। २. किसी की तुलना में घटकर या हल्का। ३. क्षुद्र। नीच। ४. जिसमें कुछ विकार आ गया हो। विकृत।

न्यून-कोण—पुं० [कर्म०स०] ज्यामिति में, वह कोण जो समकोण से छोटा होता है। (एक्यूट ऐंगिल)

न्यून-तम—वि० [न्यून+तमप्] जो सबसे कम, थोड़ा घटकर या संक्षिप्त हो।

न्यूनता—स्त्री० [सं० न्यून+तल्+टाप्] १. न्यून होने की अवस्था या भाव। २. अल्पता। कमी। ३. हीनता। ३. साहित्य में अर्थालंकारों का एक दोष जो उस समय माना जाता है जब वर्णन में उपमेय से उपमान में कोई जातिगत, धर्मगत या प्रमाणगत कमी या त्रुटि दिखाई देती है।

न्यूनन—पुं० [सं० नि√ऊन्+ल्युट्—अन] कम, थोड़ा या संक्षिप्त करना। घटाना।

न्यून-पद—पुं० [सं०ब०स०] साहित्य में ऐसा कथन जिसमें कोई आवश्यक शब्द या पद अज्ञान या भूल से छूट गया हो।

न्यूनांग—वि० [सं० न्यून-अंग, ब०स०] जिसमें कोई अंग कम हो।

न्यूनाधिक—वि० [सं० न्यून-अधिक, द्व० स०] [भाव० न्यूनाधिक्य] १. जो कुछ बातों में कहीं कुछ कम और कुछ बातों में कहीं कुछ अधिक हो। २. उक्त प्रकार से कम या अधिक हो सकनेवाला। (मार्जिनल)

न्यूनी*—पुं० [सं० नवनीत] मक्खन।

न्यों—अव्य०=यों (इस तरह)।

न्योछावर—स्त्री०=निछावर।

न्योजी—स्त्री० [?] लीची नामक फल। उदा०—कोई नारंग कोई झाड़ चिरौंजी। कोई कटहर बड़हर कोई न्योजी।—जायसी।
स्त्री०=नेजा (चिलगोजा)।

न्योतना—स० [हिं० न्योता+ना (प्रत्य०)] १. न्योता या निमंत्रण देना। २. जान-बूझकर अपने पास बुलाना।

न्योतनी—स्त्री० [हिं० न्योतना] मंगल अवसरों पर दिया जानेवाला भोज।

न्योतहरी—पुं० [हिं० न्योता] वह व्यक्ति जिसे निमंत्रण दिया गया हो। न्योता मिलने पर आया हुआ अतिथि।

न्योता—पुं० [सं० निमन्त्रण] १. घर में होनेवाले किसी मांगलिक उत्सव और विशेषतः भोज में सम्मिलित होने के लिए किसी से कहना। निमंत्रण। २. वह धन जो शुभ अवसरों पर इष्ट-मित्रों के यहाँ से न्योता आने पर भेजा जाता है।

न्यौजी†—स्त्री०=न्योजी।

न्यौरता†—पुं०=नौरता (त्योहार)।

न्यौरा†—पुं०१. दे० 'नेवला'। २. दे० 'नूपुर'।

न्यौला—पुं०=नेवला।

न्यौली—स्त्री० [सं० नली] नेती, धोती की तरह हठयोग की एक क्रिया।

न्रिमल*—वि०=निर्मल।

न्रीजन*—वि०=निर्जन।

न्वैंनी*—स्त्री० दे० 'नोई'।

न्हान*—पुं०=नहान।

न्हाना†—अ०=नहाना।
वि० दे० 'नन्हा'।

न्हावना†—स०=नहलाना।

न्हास†—पुं०=नाश।

न्हैरना†—स०[हिं० निहारना का पुराना रूप] देखना। उदा०—बाँझ केरा बालूड़ा चषि बिन न्हैरेलो पिंगुल तरवर चढ़िया।—गोरखनाथ।

प

प—देवनागरी वर्णमाला में पवर्ग का पहला वर्ण, जो भाषा-विज्ञान तथा व्याकरण के विचार से ओष्ठ्य, स्पर्शी, अघोष, अल्पप्राण व्यंजन है।
पुं० संगीत में यह पंचम स्वर का संक्षिप्त रूप माना जाता है।
प्रत्य० कुछ शब्दों के अंत में लगकर यह निम्नलिखित अर्थ देता है—(क) पीनेवाला। जैसे—मद्यप, द्विप। (ख) पालन, रक्षा या शासन करनेवाला। जैसे—गोप, नृप।

पं०—सं० 'पंडित' का संक्षिप्त रूप।

पंक—पुं० [सं०√पंच् (विस्तार)+घञ्, कुत्व] १. मिट्टी मिला हुआ गँदला पानी। कीचड़। कर्दम। २. लेप आदि के काम में आनेवाला उक्त प्रकार का और कोई गाढ़ा गीला पदार्थ। जैसे—चंदन-पंक। ३. बहुत बड़ी राशि। ४. कलुषित या गन्दा करनेवाली कोई चीज। जैसे—पाप-पंक।

पंक-कीर—पुं० [मध्य० स०] टिटिहरी नाम की चिड़िया।

पंक-क्रीड़—वि०[ब०स०] कीचड़ में क्रीड़ा करने या खेलनेवाला।
पुं० सूअर।

पंक-क्रीड़नक—पुं० [ब० स०] सूअर।

पंक-गड़क—पुं०[मध्य०स०] एक प्रकार की छोटी मछली।

पक-ग्राह—पुं०[सं० सप्त० त० मध्य०स०] मगर।

पंकच्छिद—पुं०[सं० पंक√छिद् (काटना)+क] निर्मली।

पंकज—वि० [सं० पंक√जन् (पैदा होना)+ड] कीचड़ में उत्पन्न होनेवाला
पुं० कमल।

पंक-जन्मा (न्मन्)—पुं०[ब०स०]१. कमल। २. सारस पक्षी।

पंकज-नाभ—पुं०[ब०स०] विष्णु।

पंकज-योनि—पुं०[ब०स०] ब्रह्मा।

पंकज-राग—पुं०[ब०स०] पद्मराग-मणि।

पंकज-वाटिका—स्त्री०[सं०] तेरह अक्षरों का एक वर्ण-वृत्त, जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक भगण, एक नगण, दो जगण और अंत में एक लघु होता है। इसे 'एकावली' और 'कंजावली' भी कहते हैं।

पंक-जात—पुं०[पं० त०] कमल।

पंकजासन—पुं०[पंकज-आसन, ब० स०] ब्रह्मा।

पंकजित्—पुं०[सं० पंक√जि (जीतना)+क्विप्] गरुड़ के एक पुत्र का नाम।

पंकजिनी—स्त्री०[सं० पंकज+इनि—ङीप्] १. कमल के पौधों और फूलों से भरा हुआ जलाशय। कमलाकर। २. कमलिनी।

पंकण—पुं०[सं० पक्वण, पृषो० सिद्धि] चांडाल का घर।

पंक-दिग्ध—वि० [तृ०त०] (स्थान) जिस पर मिट्टी का लेप किया गया हो।

पंकदिग्ध-शरीर—पुं०[ब०स०] एक दानव का नाम।

पंकदिग्धांग—पुं० [पंकदिग्ध-अंग, ब० स०] कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम।

पंक-धूम—पुं०[ब०स०] जैनों के अनुसार एक नरक का नाम।

पंक-पर्पटी—स्त्री०[ष०त०] सौराष्ट्रमृत्तिका। गोपी-चंदन।

पंक-प्रभा—पुं०[ब०स०] एक नरक का नाम जो कीचड़ से भरा हुआ माना गया है।

पंक-भारक—वि०[ब०स०, कप्]१. कीचड़ से भरा हुआ। २. मिट्टी से पुता हुआ।

पंक-मंडूक—पुं०[स०त०]१. घोंघा। २. सीपी।

पंक-रस—पुं०[सं० पंकज-रस] पराग। उदा०—पुहुप पंक-रस अंब्रित साँधे।—जायसी।

पंकरुह—पुं०[सं० पंक√रुह (उत्पन्न होना)+क] कमल।

पंक-वारि—स्त्री० [ब०स०] काँजी।

पंक-वास—पुं०[ब०स०] केकड़ा।

पंक-शुक्ति—स्त्री०[मध्य०स०]१. ताल में होनेवाली सीपी। २. घोंघा।

पंकार—पुं०[सं० पंक√ऋ (गति)+अण्] १. कीचड़ और गड्ढों में होनेवाली कुकुरमुत्ते की जाति की एक वनस्पति। २. सिंघाड़ा। ३. जल-कुब्जक। ४. सिवार। ५. नदी का बाँध। ६. नदी का पुल।

पंकिल—वि०[सं० पंक+इलच्] [भाव० पंकिलता]१. जिसमें कीचड़ हो। कीचड़ से युक्त। जैसे—पंकिल जल, पंकिल ताल। २. गन्दा। मैला।

पंकिलता—स्त्री० [सं० पंकिल+तल्—टाप्]१. १. पंकिल होने की अवस्था या भाव। २. गन्दगी। मैल। ३. कलुष। कालिमा।

पंकेज—पुं०[सं० पंके√जन् (उत्पत्ति)+ड, अलुक स०] कमल।

पंकेरुह—पुं०[सं० पंके√रुह (उत्पत्ति)+क, अलुक् स०] कमल।

पंकेशय—वि०[सं० पंके√शी (सोना)+अच्, अलुक् स०] [स्त्री० पंकेशया] कीचड़ में रहनेवाला।

पंकेशया—स्त्री० [सं० पंकेशय+टाप्] जोंक।

पंक्ति—स्त्री०[सं० √पंच्+क्तिन्] १. एक ही वर्ग की बहुत-सी चीजों का एक सीध में एक दूसरी से सटकर अथवा कुछ अंतर पर स्थित होने का क्रम या शृंखला। जैसे—पेड़ों या मकानों की पंक्ति। २. आज-कल किसी काम या बात की प्रतीक्षा में एकत्र होनेवाले लोगों की वह परंपरा या शृंखला, जो चढ़ा-ऊपरी, धक्कम-धक्का आदि रोकने के लिए दूर तक एक सीध में बनाई जाती है। (क्यू) ३. बिरादरी आदि के विचार से एक साथ बैठकर भोजन करनेवालों का समूह। ४. उक्त आधार पर कुलीन और सम्मानित ब्राह्मणों का वर्ग या श्रेणी। ५. एक ही वर्ग के जंतुओं, पशुओं आदि का समूह। जैसे—च्यूँटियों या बंदरों की पंक्ति। ६. एक ही सीध में दूर तक बनी हुई रेखा। लकीर। ७. पुस्तकों, पत्रों आदि में लिखे या छपे हुए अक्षरों की एक सीध में पढ़ने के क्रम से लगी हुई शृंखला। ८. प्राचीन भारत में दस-दस सैनिकों का एक वर्ग। ९. छंदशास्त्र में दस अक्षरोंवाले छंदों की संज्ञा। १०. उक्त के आधार पर दस की सूचक संख्या। ११. जीवों या प्राणियों की वर्तमान पीढ़ी। १२. पृथ्वी। १३. गौरवपूर्ण ख्याति या प्रसिद्धि। १४. परिपक्व, पुष्ट या पूर्ण होना।

पंक्ति-कंटक—वि०[ष० त०]=पंक्ति-दूषक।

पंक्तिका—स्त्री०[सं० पंक्ति+कन्—टाप्]=पंक्ति।

पंक्ति-कृत—वि०[स० त०] श्रेणीबद्ध।

पंक्ति-ग्रीव—पुं०[ब०स०] रावण।

पंक्तिचर—पुं०[सं० पंक्ति√चर् (गति)+ट] कुरर पक्षी।

पंक्ति-च्युत—वि०[पं०त०] [भाव० पंक्ति-च्युति] (व्यक्ति) जिसे उसकी बिरादरी के लोग अपने साथ बैठाकर भोजन न करते हों। बिरादरी से बहिष्कृत।

पंक्ति-दूषक—वि०[ष०त०] १. जिसके साथ एक पंक्ति में बैठकर भोजन न कर सकते हों; अर्थात् जाति-च्युत या नीच। २. (ब्राह्मण) जिसे भोजन के लिए निमंत्रित करना या दान देना निषिद्ध हो।

पंक्ति-पावन—पुं०[स०त०] १. ऐसा ब्राह्मण, जिसे स्मृतियों के अनुसार यज्ञादि में बुलाना, भोजन कराना और दान देना श्रेष्ठ माना गया हो। २. अग्निहोत्र करनेवाला गृहस्थ।

पंक्ति-बद्ध—वि०[तृ०त०] जो पंक्ति अर्थात् एक सीध में खड़े या लगे हों अथवा खड़े किये या लगाये गये हों।

पंक्ति-बाह्य—वि० [पं०त०] जाति से निकाला हुआ। बिरादरी से बहिष्कृत।

पंक्ति-रथ—पुं०[ब०स०] राजा दशरथ।

पंख—पुं०[सं० पक्ष, प्रा० पक्ख] १. मनुष्य के हाथ के अनुरूप पक्षियों का तथा कुछ जंतुओं का वह अंग, जिसके द्वारा वे हवा में उड़ते हैं। पर।

मुहा०—पंख जमना या निकलना=(क) बंधन में से निकलकर इधर-उधर घूमने की इच्छा उत्पन्न होना। बहकने या बुरे रास्ते पर जाने का रंग-ढंग दिखाई देना। जैसे—इस लड़के को भी अब पंख जम रहे हैं। (ख) अंत या मृत्यु के लक्षण प्रकट होना या समय पास आता हुआ दिखाई देना।

विशेष—बरसात के अंत में कुछ कीड़ों के पंख निकल आते हैं और वे प्रायः अग्नि या दीपक के प्रकाश के पास मँडराते हुए उसी में जल मरते हैं। इसी आधार पर यह मुहावरा बना है।

मुहा०—(किसी को) पंख लगना=बहुत वेगपूर्वक दौड़ना।

२. बिजली के पंखे का हाथ के आकार का वह अंग जिसके घूमने से हवा आती है।

पंखड़ी—स्त्री०[सं० पक्ष्म] फूल के अंग के रूप में रहनेवाले और पत्तियों के आकार-प्रकारवाले वे कोमल दल (या उनमें से प्रत्येक) जिनके संयोग से उसका ऊपरी और मुख्य रूप बनता है। पुष्प-दल।

पंखा—पुं०[हिं० पंख] [स्त्री० अल्पा० पंखी] १. पक्षियों के पंखों या परों के आकार का ताड़ आदि का वह उपकरण जिसे हवा में उसका वेग बढ़ाने के लिए डुलाया जाता है।

क्रि० प्र०—झलना।

२. उक्त के आधार पर कोई ऐसा उपकरण, जिससे हवा का वेग बढ़ाया जाता हो। जैसे—बिजली का पंखा।

क्रि० प्र०—खींचना।—चलाना।—झलना।—डुलाना।

विशेष—आरंभ में पंखे ताड़ की पत्तियों, बाँस की पट्टियों आदि से बनते थे, जिन्हें हाथ से बार-बार हिलाकर लोग या तो गरमी के समय शरीर में हवा लगाने के अथवा आग सुलगाने के काम में लाते थे; और अब तक इनका प्रायः व्यवहार होता है। बड़े आदमी प्रायः काठ के चौखटों पर कपड़ा मढ़वाकर उसे छत में टाँगते थे, और किसी आदमी के बार-बार खींचते और ढीलते रहने पर उस पंखे से हवा निकलती थी, जिससे उसके नीचे बैठे हुए लोगों को हवा लगती थी। आज-कल प्रायः बिजली की सहायता से चलनेवाले अनेक प्रकार के पंखे बनने लगे हैं।

३. किसी चीज में लगा हुआ कोई ऐसा चिपटा लंबा टुकड़ा, जो पानी या हवा की सहायता से अथवा किसी यांत्रिक क्रिया से बार-बार हिलता या चक्कर लगाता रहता हो। जैसे—जहाज या पनचक्की के चक्कर में का पंखा।

पंखा-कुली—पुं० [हिं० पंखा+तु० कुली] वह कुली या नौकर जो विशेषतः छत में लगा हुआ पंखा खींचने के लिए नियत हो।

पंखाज—पुं० =पखावज।

पंखा-पोश—पुं० [हिं० पंखा+फा० पोश] पंखे के ऊपर लगाया जानेवाला गिलाफ।

पंखि—पुं०=पक्षी।

स्त्री०=पंखी।

पंखिया*—स्त्री० [हिं० पंख] १. भूसी के महीन टुकड़े। २. पंखड़ी। पंखी।

पंखी—पुं० [हिं० पंख] चिड़िया। पक्षी।

स्त्री० १. उड़नेवाला कोई छोटा कीड़ा या फतिंगा। २. करघे में कबूतर के पंख या पर से बँधी सूत की वह डोरी जो ढरकी के छेद में फँसाकर लगाई जाती है। ३. गढ़वाल, शिमले आदि की पहाड़ी भेड़ों पर से उतरनेवाला एक प्रकार का बढ़िया मुलायम और हल्का ऊन। ४. उक्त प्रकार के ऊन से बनी हुई चादर। ५. वह पतली हलकी पत्तियाँ जो साखू के फल के सिरे पर होती हैं।

स्त्री० हिं० 'पंखा' का स्त्री० अल्पा० रूप।

†स्त्री०=पंखड़ी।

पंखुड़ा† —पुं० [सं० पक्ष, हिं० पंख] कंधे और बाँह का जोड़। पँखौरा।

पंखुड़ी—स्त्री०=पंखड़ी।

पंखुरा†—पुं०=पँखुड़ा।

पंखेरू† —पुं०=पखेरू (पक्षी)।

पंग—वि० [सं० पंगु] १. लँगड़ा। २. गति-हीन। निश्चल। ३. परम चकित और स्तब्ध। उदा०—सूर हरि की निरखि सोभा, भई मनसा पंग।—सूर।

पुं० [?] एक प्रकार का विलायती नमक, जो पहले लिवरपूल से आता था।

पंगत, पंगति—स्त्री० [सं० पंक्ति] १. पंक्ति। पाँति। २. बहुत-से लोगों का साथ बैठकर भोजन करना। भोज। ३. भोज के समय भोजन करने के लिए एक साथ बैठनेवालों की पंक्ति या समूह। जैसे—संध्या से दो पंगतें तो बैठ चुकी हैं अभी दो पंगतें और बैठेंगी।

क्रि० प्र०—बैठना।—बैठाना।—लगना।—लगाना।

४. एक ही जाति या प्रकार के बहुत-से लोगों का समाज या समूह। ५. जुलाहों का एक औजार जो दो सरकंडों को एक में बाँधकर बनाया जाता है।

पंगला—वि०=पंगुल।

पंगा—वि०=पंगु।

पंगायत †—स्त्री० [हिं० पग] पैताना। (देखें)

पंगी—स्त्री० [सं० पंक, हिं० पाँक] धान के खेत में लगनेवाला एक प्रकार का कीड़ा।

स्त्री० [?] कीर्ति। यश। उदा०—पूगी समंदाँ पार, पंगी राण प्रतापसी।—दुरसाजी।

पंगु—वि० [सं०√खंज् (लँगड़ा होना)-कु-पंगदेश, नुक्] [भाव० पंगुता, पंगुत्व] १. जो पैर या पैरों के टूटे हुए होने के कारण चल न सकता हो। लँगड़ा। उदा०—जौ संग राखत ही बनै तौ करि डारहु पंगु।—रहीम। २. लाक्षणिक अर्थ में, (व्यक्ति) जो ऐसी स्थिति या स्थान में लाया गया हो, जिसमें या जहाँ वह कुछ काम न कर सके।

पुं० १. एक प्रकार का वात रोग जिसमें घुटने जकड़ जाते हैं और आदमी चल-फिर नहीं सकता। २. मध्य युग में एक प्रकार के साधु, जो केवल मल-मूत्र का त्याग करने या भिक्षा माँगने के लिए कुछ दूर तक जाते थे, और शेष सारा समय अपनी जगह पर बैठे-बैठे बिताते थे। ३. शनि ग्रह, जिसकी गति अपेक्षया बहुत मंद होती है।

पंगुक—वि०=पंगु या पंगुल।

पंगु-गति—स्त्री० [कर्म० स०] वार्णिक छंदों का एक दोष जो उस समय माना जाता है, जब किसी छंद में लघु के स्थान में गुरु अथवा गुरु के स्थान में लघु आ जाता है। जैसे—'फूटि गये श्रुति ज्ञान के केशव आँखि अनेक विवेक की फूटी।' में 'के' और 'की' को लघु होना चाहिए।

पंगु-ग्राह—पुं० [कर्म० स०] १. मगर। २. मकर राशि।

पंगु-पीठ—पुं० [ब० स०] वह सवारी जिसपर किसी पंगु व्यक्ति को बैठाकर कहीं ले जाया जाता है।

पंगल—वि० [सं० पंगु+लच्] १. जिसके हाथ-पैर टूटे हुए हों और इसी लिए जो कहीं आ-जा न सकता हो या काम-धंधा न कर सकता हो। २. बहुत बड़ा अकर्मण्य और आलसी।

पुं० १. अंडी या रेंड का पेड़। २. सफेद रंग का घोड़ा।

पंगो—स्त्री० [हिं० पाँक] बरसाती नदी द्वारा किनारों पर छोड़ी हुई मिट्टी।

पँच—वि० [हिं० पाँच] हिं० पाँच का वह संक्षिप्त रूप, जो उसे यौगिक पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पँच-तोलिया, पंच-लड़ी आदि।

पंच—पुं० [सं०] १. पाँच या अधिक मनुष्यों का समाज या समुदाय। जनता। लोक। जैसे—पंच कहै सो कीजै काज। (कहा०)

पद—पंच की दुहाई=सब लोगों से अन्याय दूर करने या सहायता पाने के लिए की जानेवाली पुकार। **पंच की भीख**=सब लोगों का अनुग्रह। सब का आशीर्वाद। **पंच-परमेश्वर**=लोक या समाज जो ईश्वर या देवता के समान पवित्र और पूज्य माना जाता है।

२. वह व्यक्ति या कुछ लोगों का वर्ग जो आपस के झगड़ों आदि का निर्णय करने के लिए चुना या नियत किया गया हो। (आर्बीट्रेटर)

विशेष—प्राचीन भारतीय समाज में ऐसे लोगों की संख्या प्रायः पाँच होती थी। जब बहुत-सी जातियाँ या बिरादरियाँ बनने लगीं, तब प्रायः हर बिरादरी या समाज में कुछ लोग पंच बना दिये जाते थे, जो सब प्रकार के सामाजिक विवादों का निर्णय करते थे।

३. वह व्यक्ति जो फौजदारी के दौरे के मुकदमे में दौरा जज की अदालत में मुकदमे के फैसले में जज की सहायता के लिए नियत हो। (ज्यूरी या असेसर) ४. एक संज्ञा जो दलाल लोग प्रायः (मैं या हम के स्थान पर) स्वयं अपना व्यक्तित्व सूचित करने के लिए प्रयुक्त करते हैं। ५. खेल, विवाद आदि में हार-जीत, औचित्य-अनौचित्य आदि का निर्णय करने के लिए नियत किया हुआ व्यक्ति। ६. वह व्यक्ति जिसने किसी विषय में मुख्यता प्राप्त की हो। ७. रहस्य-संप्रदाय में, वह व्यक्ति जिसने पूरा आत्मज्ञान प्राप्त कर लिया हो। सिद्ध। ८. हास्य और व्यंग्य की बातों से संबंध रखनेवाला सामयिक पत्र। जैसे—अवध-पंच, गुजराती-पंच, हिन्दू-पंच आदि। इस अर्थ में यह अँगरेजी के 'पंच' का समध्वनिक है।

पंचक—वि० [सं० पंचन्+कन्] जिसके पाँच अंग अवयव या भाग हों।

पुं० १. एक ही तरह की पाँच वस्तुओं का वर्ग, संग्रह या समूह। जैसे—इंद्रिय-पंचक, पद्य-पंचक। २. पाँच रुपये प्रति सैकड़े के हिसाब से दिया या लिया जानेवाला ब्याज या सूद। ३. फलित ज्योतिष में धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती ये पाँचों नक्षत्र जिनमें किसी नये या शुभ कार्य का आरंभ निषिद्ध है तथा कोई दुर्घटना होना बहुत ही अशुभ माना जाता है। पचखा।

विशेष—साधारण लोक में इस अर्थ में 'पंचक' का प्रयोग स्त्री० में होता है।

४. शकुन शास्त्र। ५. पाशुपत दर्शन में गिनाई हुई ये ८ वस्तुएँ जिनमें से प्रत्येक के पाँच-पाँच भेद किये गये हैं। यथा—लाभ, मल, उपाय, देश, अवस्था, विशुद्धि, दीक्षा कारिक और बल।

पंच कन्या—स्त्री० [द्विगु स०] पुराणानुसार ये पाँच स्त्रियाँ जो विवाहिता

होने पर भी कन्याओं के समान ही पवित्र मानी गई हैं—अहल्या, द्रौपदी, कुन्ती, तारा और मंदोदरी।

पंच-कपाल—पुं० [द्विगु स०+अण्-लुक्] यज्ञ का वह पुरोडाश जो पाँच कपालों से पृथक्-पृथक् पकाया जाता था।

पंच-कर्पट—पुं० [ब० स०] महाभारत के अनुसार एक पश्चिमी देश जिसे नकुल ने राजसूय यज्ञ के समय जीता था।

पंच-कर्म (न्)—पुं० [द्विगु स०] १. वैशेषिक दर्शन के अनुसार ये पाँच प्रकार के कर्म—उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुंचन, प्रसारण और गमन। २. चिकित्सा की ये पाँच क्रियाएँ—वमन, विरेचन, नस्य, निरूहवस्ति और अनुवासन।

पंच-कल्याण—पुं० [ब० स०] वह घोड़ा, जिसका सिर (माथा) और चारों पैर सफेद हों और शेष शरीर लाल, काला या किसी और रंग का हो।

पंच-कवल—पुं० [द्विगु स०] पाँच ग्रास जो स्मृति के अनुसार भोजन आरंभ करने के पहले कुत्ते, पतित, कोढ़ी, रोगी, कौए आदि के लिए अलग निकाल दिये जाते हैं। अग्रासन।

पंच-कषाय—पुं० [ष० त०] जामुन, सेमर, खिरैंटी, मौलसिरी और बेर इन पाँचों वृक्षों का कषाय (कसैला) रस।

पंच-काम—पुं० [मध्य० स०] तंत्रसार के अनुसार पाँच कामदेव जिनके नाम ये हैं—काम, मन्मथ, कन्दर्प, मकरध्वज और मीनकेतु।

पंच-कारण—पुं० [सं० द्विगु स०] जैन-शास्त्र के अनुसार वे पाँच कारण, जिनसे किसी कार्य की उत्पत्ति होती है। यथा—काल, स्वभाव, नियति, पुरुष और कर्म।

पँचकुर—स्त्री० [हिं० पाँच+कूरा] एक प्रकार की बँटाई, जिसमें खेत की उपज के पाँच भागों में से एक भाग जमींदार लेता था।

पंच-कृत्य—पुं० [द्विगु स०] १. ईश्वर या शिव के ये पाँच प्रकार के कर्म—सृष्टि, स्थिति, ध्वंस, विधान और अनुग्रह। (सर्व-दर्शन) २. पखौते का पेड़।

पंच-कृष्ण—पुं० [ष० त०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का कीड़ा।

पंच-कोण—वि० [द्विग स०] पाँच कोनोंवाला।
पुं० जन्म-कुंडली में लग्न से पाँचवाँ और नवाँ स्थान।

पंच-कोल—पुं० [द्विगु स०] पीपल, पिपरामूल, चव्य, चित्रक, और सोंठ इन पाँचों का वर्ग या समूह।

पंच-कोश—पुं० [द्विगु० स०] उपनिषद् और वेदान्त के अनुसार शरीर संघटित करनेवाले पाँच कोश—अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश और आनन्दमय कोश।

पंच-कोष—पुं० दे० 'पंच-कोश'।

पंच-कोस†—पुं०=पंच-क्रोश (काशी)।

पंच-कोसी—स्त्री०=पंच-क्रोशी।

पंच-क्रोश—पुं० [सं० पंच-क्रोश] काशी नगरी जो पहले पाँच कोस की लंबाई और चौड़ाई में बसी हुई थी।

पंच-क्रोशी—स्त्री० [पंच-क्रोश, ब० स०—ङीष्] १. पाँच कोस की लंबाई और चौड़ाई में बसी हुई काशी। २. उसकी परिक्रमा जो साधारणतः पाँच या छः दिनों में पूरी की जाती है। ३. इसी प्रकार की प्रयाग तीर्थ की होनेवाली परिक्रमा।

पंच-क्लेश—पुं० [द्विगु स०] योगशास्त्रानुसार अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश ये पाँच क्लेश।

पंचक्षार-गण—पुं० [पंच-क्षार, द्विगु स०, पंचक्षार-गण, ष० त०] वैद्यक के अनुसार ये पाँच मुख्य क्षार या लवण—काच, सैंधव, सामुद्र, विट् और सौवर्चल।

पंच-गंगा—स्त्री० [समा० द्वि०] १. पाँच नदियों का समूह—गंगा, यमुना, सरस्वती, किरणा और धूतपापा। २. काशी का एक प्रसिद्ध घाट जहाँ पहले गंगा में किरणा और धूतपापा नदियाँ मिलती थीं और जो एक तीर्थ के रूप में माना जाता है। (किरणा और धूतपापा दोनों अब लुप्त हो गई हैं।)

पंच-गण—पुं० [ष० त०] विदारी गंधा, बृहती, पृश्निपर्णी, निदिग्धिका और भूकूष्मांड इन पाँच ओषधियों का गण या समूह। (वैद्यक)

पंच-गत—वि० [ब० स०] (राशि) जिसमें पाँच वर्ण हों। (बीजगणित)

पंच-गव्य—पुं० [द्विगु० स०] गौ से प्राप्त होनेवाले पाँच द्रव्य—दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र जो बहुत पवित्र माने जाते हैं।

पचगव्य-घृत—पुं० [मध्य० स०] आयुर्वेद के अनुसार बनाया हुआ एक प्रकार का घृत जो अपस्मार (मृगी) और उन्माद में दिया जाता है।

पंच-गीत—पुं० [द्विगु स०] श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध के अन्तर्गत पाँच प्रसिद्ध प्रकरण—वेणुगीत, गोपीगीत, युगलगीत, भ्रमरगीत और महिषीगीत।

पंच-गुटिया—स्त्री०=लिंगिनी (लता)।

पंच-गुण—वि० [द्विगु स०] पाँच गुना।
पुं० शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध ये पाँच गुण।

पंचगुणी—स्त्री० [ब० स०+ङीष्] पृथ्वी।

पंचगुना—वि० [सं० पंचगुण] जो अनुपात, मान या मात्रा में किसी जैसे पाँच के बराबर हो। पाँच गुना।

पंच-गुप्त—पुं० [ब० स०] १. चार्वाक दर्शन, जिसमें पंचेन्द्रिय का गोपन प्रधान माना गया है। २. कछुआ, जो अपना सिर और चारों पैर सिकोड़कर अन्दर कर लेता या छिपा लेता है।

पंच-गोटिया—स्त्री० [हिं० पाँच+गोट] एक प्रकार का खेल जो जमीन पर रेखाएँ खींचकर पाँच गोटियों से खेला जाता है।

पंच-गौड़—पुं० [ष० त०] सारस्वत, कान्यकुब्ज, गौड़, मैथिल और उत्कल इन पाँच देशों के ब्राह्मणों का वर्ग।

पंच-ग्रह—पुं० [द्विगु स०] मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन पाँच ग्रहों का समूह।

पंच-घात—पुं० [ब० स०] संगीत में एक प्रकार का ताल।

पंच-चक्र—पुं० [द्विगु० स०] तंत्रशास्त्रानुसार ये पाँच प्रकार के चक्र—राजचक्र, महाचक्र, देवचक्र, वीरचक्र और पशुचक्र।

पंच-चक्षु—पुं० [ब० स०] गौतम बुद्ध।

पंच-चत्वारिंश—वि० [सं० पंचचत्वारिंशत्+डट्] पैंतालीसवाँ।

पंच-चत्वारिंशत—स्त्री० [मध्य० स०] पैंतालीस की संख्या।

पंच-चामर—पुं० [द्विगु स०] नाराच नामक छन्द का दूसरा नाम।

पंच-चीर—पुं० [ब० स०] एक बुद्ध का नाम।

पंच-चूड—वि० [ब० स०] [स्त्री० पंचचूडा] पाँच शिखाओंवाला।

पंच-चूड़ा—स्त्री० [ब० स०] एक अप्सरा। (रामायण)

पंच-चोल—पुं० [ब० स०] हिमालय पर्वत-श्रेणी का एक भाग।

पंच-जन—पुं० [द्विगु स०] १. पाँच या पाँच प्रकार के जनों या लोगों का समूह। २. गंधर्व, पितर, देव, असुर और राक्षस इन पाँचों का समूह। ३. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद इन पाँचों वर्गों का समूह। ४. जन-समुदाय। ५. प्राण। ६. एक प्रजापति। ७. पाताल में रहनेवाला एक राक्षस, जिसकी हड्डी से श्रीकृष्ण का पांचजन्य नामक शंख बना था। ८. राजा सगर का एक पुत्र।

पंचजनी—स्त्री० [सं० पंचजन+ङीप्] पाँच मनुष्यों की मंडली। पंचायत।

पंचजनीन—पुं० [सं० पंचजन+ख—ईन] वे लोग जो अभिनय, परिहास, आदि के द्वारा लोगों का मनोविनोद करते हैं। जैसे—नट, भाँड़, विदूषक आदि।

पंचजन्य—पुं० [सं० पांचजन्य] श्रीकृष्ण का प्रसिद्ध शंख, जो पंचजन नामक राक्षस की हड्डी से बना था।

पंच-तंत्र—पुं० [ब० स०] संस्कृत का एक प्रसिद्ध गन्थ, जिसमें नीतिशास्त्र के उपदेश दिये गये हैं।

पंच-तंत्री—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] पाँच तारों की बनी वीणा।
स्त्री० एक प्रकार की वीणा, जिसमें पंच तार होते हैं।

पंच-तत्व—पुं० [द्विगु स०] १. पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश ये पाँचों तत्त्व या भूत। २. मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन इन पाँचों का समुदाय। (वाममार्ग) ३. गुरुतत्त्व, मंत्रतत्त्व, मनस्तत्त्व, दैवतत्त्व और ध्यानतत्त्व। (तंत्र)

पंच-तन्मात्र—पुं० [मध्य० स०] शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध—ये पाँच तत्त्व, जिनसे पंच महाभूतों की उत्पत्ति होती है।

पंच-तप—वि०=पंचतपा।

पंच-तपा (पस्)—वि० [सं० पंचन्√तप् (तपना)+असुन्] पंचाग्नि तापनेवाला।

पंच-तरु—पुं० [द्विगु स०] मंदार, पारिजात, संतान, कल्पवृक्ष और हरिचन्दन, इन पाँचों वृक्षों का वर्ग।

पंचता—स्त्री०=पंचत्व।

पंच-ताल—पुं० [द्विगु स०] संगीत में अष्टताल का एक भेद।

पंचतालेश्वर—पुं० [पंचताल-ईश्वर, ष० त०] शुद्ध जाति का एक भाग।

पंच-तिक्त—पुं० [द्विगु स०] गुरुच, भटकटैया, सोंठ, कुट और चिरायता इन पाँच कड़वी ओषधियों का वर्ग।

पंच-तीर्थ—पुं० [द्विगु स०] पाँच तीर्थों का समूह। पंचतीर्थी।

पंच-तीर्थी—स्त्री० [सं० पंचतीर्थ+ङीप्] विश्रांति, शौकर, नैमिष, प्रयाग और पुष्कर (वराह) ये पाँच तीर्थ।

पंच-तृण—पुं० [द्विगु स०] कुश, क्षर, डाभ और ईख ये पाँच तृण।

पंचतोरिया—स्त्री०=पंचतोलिया।

पंचतोलिया—स्त्री० [हिं० पाँच+तोला] पाँचतोले का बाटखरा।
वि० जो तौल में पाँच तोले का हो।
पुं० [हिं० पाँच+तार ?] पुरानी चाल का एक प्रकार का बहुत झीना कपड़ा।

पंचत्रिंश—वि०, [सं० पंचत्रिंशत्+डट्] पैंतीसवाँ।

पंचत्रिंशत—वि० [मध्य० स०] पैंतीस।

पंचत्व—पुं० [सं० पंचन्+त्व] १. 'पंच' होने की अवस्था या भाव। पंचता। २. शरीर की वह स्थिति जिसमें उसका निर्माण करनेवाले पाँचों तत्त्व या भूत एक दूसरे से बिलकुल अलग हो जाते हैं; अर्थात् मृत्यु।
क्रि० प्र०—प्राप्त करना। —प्राप्त होना।

पंच-दश (शन्)—वि० [सं० मध्य० स०] पंद्रह।
पुं० पंद्रह की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—१५।

पंच-दशाह—पुं० [पंचदशन्-अहन्, कर्म० स०] पंद्रह दिनका समय।

पंचदशी—स्त्री० [सं० पंचदशन्+डट्–ङीप्] १. पूर्णमासी। २. अमावस्या। ३. वेदान्त का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ।

पंच-दीर्घ—वि० [ब० स०] (व्यक्ति) जिसके बाहु, नेत्र, कुक्षि, नासिका और वक्षस्थल दीर्घ हों।
पुं० उक्त पाँचों अंग।

पंच-देव—पुं० [द्विगु स०] स्मार्त हिंदुओं के अनुसार ये पाँच देव—विष्णु, शिव, सूर्य, गणेश और दुर्गा।

पंच-द्रविड़—पुं० [द्विगु स०] विंध्याचल के दक्षिण में बसनेवाले ब्राह्मणों के ये पाँच भेद—महाराष्ट्र, तैलंग, कर्णाट, गुर्जर और द्रविड़।

पंच-धा—अव्य० [सं० पंचन्+धा] पाँच तरह से।

पंच-नख—वि० [ब० स०] पाँच नखोंवाला।
पुं० १. हाथी। २. कछुआ। ३. शेर। ४. बंदर।

पंच-नद—पुं० [द्विगु स०] १. पंजाब की वे पाँच प्रधान नदियाँ, जो सिंधु में मिलती हैं—सतलज, व्यास, रावी, चनाब और झेलम। २. (ब० स०) पंजाब देश जिसमें से होकर ये पाँचों नदियाँ बहती हैं। ३. काशी का पंचगंगा नामक घाट और तीर्थ।

पंच-नवत—वि० [सं० पंचनवति+डट्] पंचानबेवाँ।

पंच-नवति—स्त्री० [मध्य० स०] पंचानवे की संख्या।

पंच-नाथ—पुं० [द्विगु स०] ये पाँच देवता, जिनके नाम के अन्त में 'नाथ' पद है—बदरीनाथ, द्वारकानाथ, जगन्नाथ, रंगनाथ और श्रीनाथ।

पंच-नामा—पुं० [हिं० पंच+फा० नाम] १. पत्र, जिसके अनुसार दो विरोधी पक्षों ने अपना निर्णय कराने के लिए किसी को पंच चुना हो। २. वह पत्र जिस पर पंचों का निर्णय लिखा हो।

पंच-निंब—पुं० [द्विगु स०] पत्ती, छाल, फूल, फल और मूल; नीम के उक्त पाँचों अंग।

पंच-निर्णय—पुं० [सं० ष० त०] पंचों द्वारा किया हुआ निर्णय।

पंचनी—स्त्री० [सं०√पंच्+ल्युट्—अन, ङीप्] चौपड़, शतरंज आदि की बिसात।

पंच-नीराजन—पुं० [मध्य० स०] दीपक, कमल, आम, वस्त्र और पान से की जानेवाली आरती।

पंच-पक्षी (क्षिन्)—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का शकुन शास्त्र, जिसमें अ, इ, उ, ए और ओ इन पाँच वर्णों को पक्षी मानकर शुभाशुभ फलों का विचार किया जाता है।

पंच-पत्र—पुं० [ब० स०] एक पेड़। चंडाल कंद।

पंच-पदी—स्त्री० [पंच-पाद, ब० स० ङीष् पद्भाव] १. एक प्रकार की ऋचा। २. चलने में पाँच कदम या डग। ३. पाँच पदों का समूह।

४. ऐसा संबंध जिसमें वैसी ही साधारण जान-पहचान हो, जैसी दस-पाँच कदम साथ चलने पर होती है।

पंच-पनड़ी—स्त्री० 'दे० पँचौली' (पौधा)।

पंच-पर्णिका—स्त्री० [ब० स०, कप्,—टाप् इत्व] गोरक्षी नाम का पौधा।

पंच-पर्व (न्)—पुं० [द्विगु स०] अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावस्या और रवि संक्रान्ति—ये पाँचों पर्व।

पंच-पल्लव—पुं० [द्विगु स०] पीपल, गूलर, पाकड़ और बड़ अथवा आम, जामुन, कैथ, बेल और बिजौरा के पत्ते, जिनका उपयोग शुभकर्मों में पूजन के समय होता है।

पंच-पात—पुं० [सं० पंचपत्र] पँचौली नाम का पौधा। पँचपनड़ी।

पंच-पात्र—पुं० [समा०] १. पाँच पात्रों का समाहार। २. एक तरह का श्राद्ध, जिसमें पाँच पात्र रखे जाते हैं। ३. गिलास की तरह का एक पात्र जिसमें पूजन आदि के लिए जल रखा जाता है।

पंच-पाद—वि० [ब० स०, अन्तलोप] पाँच पैरोंवाला।

पुं० एक संवत्सर।

पंचपिता (तृ)—पुं० [द्विगु० स०] पिता, आचार्य, श्वसुर, अन्नदाता और भयत्राता इन पाँचों का समाहार।

पंच-पित्त—पुं० [द्विगु स०] सूअर, बकरे, भैंसे, मछली और मोर इन पाँचों जीवों का पित्ता, जो वैद्यक में काम आता है।

पंच-पीरिया—वि० [हिं० पाँच+फा० पीर] (व्यक्ति) जो पाँच पीरों की पूजा करता हो।

पंच-पुष्प—पुं० [द्विगु स०] चंपा, आम, शमी, कमल और कनेर—इन पाँचों वृक्षों के फूलों का समाहार।

पंच-प्राण—पुं० [द्विगु स०] शारीरिक वात के इन पाँच भेदों का समाहार—प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान।

पंच-प्यारे—पुं०=पंज-प्यारे।

पंच-प्रासाद—पुं० [ब० स०] वह मंदिर जिसके चारों कोणों पर एक एक शृंग और बीच में एक गुंबद हो।

पंच-बटी—स्त्री० दे० 'पंचवटी'।

पंच-बला—स्त्री० [द्विगु स०] बला, अतिबला, नागबला, राजबला और महाबला नामक ओषधियों का समाहार। (वैद्यक)

पंच-बाण—पुं०=पंचवाण।

पंच-बाहु—पुं० [ब० स०] शिव।

पंच-भद्र—वि० [ब० स०] १. पाँच गुणों वाला (खाद्य पदार्थ या व्यंजन)। २. दुष्ट।

पुं० [द्विगु स०] १. वैद्यक में ओषधियों का एक गण, जिसमें गिलोय, पित्तपापड़ा, मोथा, चिरायता और सोंठ हैं। २. दे० 'पंच-कल्याण'।

पंच-भर्तारी—वि० [हिं० पंच+भर्तार+ई (प्रत्य०)] जिसके पाँच पति हों।

स्त्री० द्रौपदी।

पंच-भुज—वि० [ब० स०] जिसकी पाँच भुजाएँ हों।

पुं० ज्यामिति में पाँच भुजाओंवाले क्षेत्र की संज्ञा। (पेन्टागन)

पंच-भूत—पुं० [द्विगु स०] भारतीय दर्शन के अनुसार आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी ये पाँच भूत या मूलतत्त्व जिनसे सृष्टि की रचना हुई है।

पंचम—वि० [सं० पंचन्+डट्, मट्] १. पाँचवाँ। २. मनोहर। सुंदर। ३. दक्ष। निपुण।

पुं० [सं०] १. संगीतशास्त्र में, सरगम का पाँचवाँ स्वर, जिसका संक्षिप्त रूप 'प' है।

विशेष—कहा गया है कि इसके उच्चारण में प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान नामक पाँचों प्राणों या वायुओं का उपयोग होता है; इसी लिए इसे 'पंचम' कहते हैं। यह ठीक कोकिल के स्वर के समान होता है और इसके उच्चारण में क्षिति, रक्ता, संदीपनी और आलापिनी नाम की चार श्रुतियाँ लगती हैं।

२. छः प्रधान रागों में तीसरा राग, जिसे कुछ लोग हिंडोल और कुछ लोग भैरव का पुत्र मानते हैं। ३. व्यंजनों में प्रत्येक वर्ग का अंतिम वर्ण। जैसे—ङ, ञ, ण आदि। ४. चमार, डोम आदि जातियाँ। अन्त्यज। हरिजन। ५. मैथुन, जो तांत्रिकों के अनुसार पाँचवाँ मकार है।

पंच-मकार—पुं० [ब० स०] 'म' अक्षर से आरंभ होनेवाली ये पाँच वस्तुएँ—मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन।

पंच-महापातक—पुं० [द्विगु स०] ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुरुपत्नी से गमन और उक्त पातक करनेवालों से किया जानेवाला मेल-जोल या संसर्ग—ये पाँच बहुत बड़े पाप।

पंच-महायज्ञ—पुं० [द्विगु स०] गृहस्थ के लिए अनिवार्य ये पाँच यज्ञ—ब्रह्मयज्ञ (स्वाध्याय), देवयज्ञ (होम), भूतयज्ञ (बलि वैश्वदेव), पितृयज्ञ (पिंडक्रिया) और नृयज्ञ (अतिथिसत्कार)।

पंच-महाव्याधि—स्त्री० [द्विगु स०] अर्श, यक्ष्मा, कुष्ठ, प्रमेह और उन्माद—ये पाँच कठिन और दुःसाध्य व्याधियाँ। (वैद्यक)

पंच-महाव्रत—पुं० [द्विगु स०] योगशास्त्र के अनुसार इन पाँच आचरणों की प्रतिज्ञा या व्रत—अहिंसा, सूनृता, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। इन्हें 'यम' भी कहते हैं।

पंच-महाशब्द—पुं० [द्विगु स०] शृंग (सींग), तम्मट (खँजड़ी), शंख, भेरी और जया घंटा—इन पाँच बाजों का समाहार।

पंचमांग—पुं० [सं० पंचम-अंग, कर्म० स०] १. किसी काम चीज या बात का पाँचवाँ अंग। २. आधुनिक राजतंत्र में राज्य या शासन का वह पाँचवाँ अंग या विभाग जो गुप्त रूप से दूसरे देशों के देश-द्रोहियों से मिलकर और उन्हें अपनी ओर मिलाकर उन देशों को हानि पहुँचाता है। राज्य या शासन के शेष चार अंग ये हैं—स्थल-सेना, जल-सेना, वायु सेना और समाचार-प्रकाशन विभाग। (फिफ्थ कालम)

पंचमांगी (गिन्)—वि० [सं० पंचमांग+इनि] पंचमांग-संबंधी। पंचमांग का।

पुं० किसी देश या राज्य का वह निवासी जो दूसरे देशों के साथ गुप्त संबंध स्थापित करके अपने देश को हानि पहुँचाता हो। शत्रुओं के साथ मिला हुआ देश-द्रोही। (फिफ्थ कालमिस्ट)

पंचमाक्षर—पुं० [सं० पंचम-अक्षर, कर्म० स०] वर्णमाला में किसी वर्ग का पाँचवाँ व्यंजन। जैसे—ङ, ञ, ण आदि।

पंचमास्य—वि० [सं० पंच-मास, कर्म० स०+यत्] हर पाँच महीने होने वाला।

पुं० [पंचम-आस्य, ब० स०] कोकिल या कोयल, जो पंचम स्वर में बोलती है।

पंचमी—स्त्री० [सं० पंचम+ङीप्] १. चांद्र मास के प्रत्येक पक्ष की

पाँचवी तिथि। २. द्रौपदी, जिसके पांच पति थे। ३. संगीत में एक प्रकार की रागिनी। ४. व्याकरण में अपादान कारक और उसकी विभक्ति। ५. वैदिक युग में एक प्रकार की ईंट, जो एक पुरुष की लंबाई के पाँचवें भाग के बराबर होती थी और यज्ञ में वेदी बनाने के काम आती थी। ६. तंत्र में एक प्रकार की मंत्र-विधि।

पंच-मुख—वि० [सं० ब० स०] पाँच मुँहोंवाला। जैसे—पंचमुख गणेश। पंचमुख शिव।
पुं० १. शिव। २. सिंह। शेर। ३. एक प्रकार का रुद्राक्ष, जिस पर पाँच लकीरें होती हैं।

पंचमुखी—वि० [सं० पंचमुख] जिसके पाँच मुख हों। पंच-मुख।
स्त्री० [पंचमुख+ङीष्] १. पार्वती। २. मादा सिंह। शेरनी। ३. अड़ूसा। ४. गुड़हल। जपा या जवा।

पंच-मुद्रा—पुं० [मध्य० स०] तंत्र के अनुसार पूजनविधि की ये पाँच प्रकार की मुद्राएँ—आवाहनी, स्थापनी, सन्निधापनी, संबोधनी और सम्मुखीकरणी।

पंच-मूत्र—पुं० [द्विगु स०] गाय, बकरी, भेड़, भैंस और गधी इन पाँचों पशुओं के मूत्रों का मिश्रण।

पंच-मूर्ति—पुं० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

पंच-मूल—पुं० [ब० स०] वैद्यक में एक पाचन औषध जो पाँच प्रकार की वनस्पतियों की जड़ या मूल से बनती है।

पंच-मेल—वि० [हिं० पाँच+मेल] १. जिसमें पाँच तरह की चीजें मिली हों। जैसे—पँचमेल मिठाई। २. जिसमें कई या सब तरह की चीजें मिली-जुली हों।

पँच-मेवा—पुं० [हिं० पाँच+मेवा] किशमिश, गरी, चिरौंजी, छुहारा और बादाम ये पाँच प्रकार के मेवे, अथवा इन सब का मिश्रण।

पंचमेश—पुं० [पँचम-ईश, ष० त०] फलित ज्योतिष के अनुसार जन्म-कुंडली में पाँचवें घर का स्वामी।

पंच-यज्ञ—पुं० =पंच-महायज्ञ।

पंच-याम—पुं० [ब० स०] दिन।

पंच-रंग—पुं० [हिं० पांच+रंग] मेंहदी का चूरा, अबीर, बुक्का, हल्दी और सुरवाली के बीज, जिन्हें मिलाकर शुभ कार्यों के समय चौक पूरते हैं।
वि०=पँच-रंगा।

पँच रंगा—वि० [हिं० पाँच+रंग] [स्त्री० पँच रंगी] १. जिसमें पाँच भिन्न रंग हों। पाँच रंग का या पाँच रंगोंवाला। २. पाँच प्रकार के रंगों से बना हुआ। ३. जिसमें बहुत-से रंग मिले हों।
पुं० पंच-रंग से पूरा या बनाया हुआ चौक।

पंच-रक्षक—पुं० [ब० स०] पखौड़ा वृक्ष।

पंच-रत्न—पुं० [द्विगु स०] नीलम, पद्मराग मणि, मूंगा, मोती और हीरा—ये पाँच प्रकार के रत्न।

पंच रश्मि—पुं० [ब० स०] सूर्य।

पंच-रसा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] आँवला।

पंच-रात्र—वि० [द्विगु स०, अच्] पाँच रातों में होनेवाला।
पुं० १. पाँच रातों का समूह। २. एक प्रकार का यज्ञ, जो पाँच दिनों में पूरा होता था।

पंच-राशिक—पुं० [ब० स०, कप्] गणित में एक प्रकार की प्रक्रिया, जिसमें चार ज्ञात राशियों की सहायता से पाँचवीं अज्ञात राशि का पता लगाया जाता है।

पंच-रीक—पुं० [ब० स०, कप्] संगीत में एक प्रकार का ताल।

पंचल—पुं० [सं०√पंच्+अलच्] शकरकंद।

पंच-लक्षण—पुं० [द्विगु स०] ये पाँच बातें, जिनके समुचित विवेचन से किसी ग्रन्थ को पुराण की संज्ञा प्राप्त होती थी—सृष्टि की उत्पत्ति, प्रलय, देवताओं की उत्पत्ति और वंश-परम्परा, मन्वन्तर तथा मनु के वंश का विस्तार।

पँचलड़ा—वि० [हिं० पाँच+लड़] [स्त्री० पँचलड़ी] पाँच लड़ों-वाला। जैसे—पँचलड़ा हार।
पुं० [स्त्री० अल्पा० पँचलड़ी] गले में पहनने का पाँच लड़ोंवाला हार।

पंच-लवण—पुं० [मध्य० स०] दे० 'पंच क्षारगण'।

पँच-लोना—वि० [हिं० पाँच+लोन (लवण)] जिसमें पाँच प्रकार के नमक पड़े या मिले हों।
पुं०=पंच-लवण।

पंच-लौह—पुं० [द्विगु स०] १. कांची, पांडि, कांत, कालिंग और वज्रक; लोहे के उक्त पाँच भेद। २. सोना, चाँदी, ताँवा, सीसा और राँगा इन पाँच धातुओं के योग से बनी हुई एक मिश्र धातु।

पंचवई†—स्त्री०=पँचवाई (एक तरह की देशी शराब)।

पंच-वक्त्र—पुं० [ब० स०] दे० 'पँचमुख'।

पंचवक्त्रा—स्त्री० [पंचवक्त्र+टाप्] दुर्गा।

पंच-वट—पुं० [कर्म० स०] यज्ञोपवीत।

पंच-वटी—स्त्री० [पंच-वट, द्विगु स०+ङीष्] १. पीपल, बेल, वट, हड़ और अशोक—ये पाँच वृक्ष। २. दंडकारण्य में गोदावरी के तट का एक प्रसिद्ध स्थान (आधुनिक नासिक से दो मील दूर स्थित) जहाँ श्रीरामचन्द्र ने वन-वास के समय कुछ दिनों तक निवास किया था।

पंच-वदन—पुं० [ब० स०] शिव।

पंचवर्ग—पुं० [द्विगु स०] एक ही प्रकार की पाँच वस्तुओं का समूह।

पंच-वर्ण—पुं० [द्विगु स०] १. प्रणव के ये पाँच वर्ण—अ, उ, म, नाद और विंदु। २. एक प्राचीन वन। ३. उक्त वन के पास का एक प्राचीन पर्वत।

पंच-वल्कल—पुं० [द्विगु स०] वट, गूलर, पीपल, पाकर और बेंत इन पाँच वृक्षों की छालें।

पंचवाँसा—पुं० [हिं० पाँच+मास] गर्भवती स्त्री के गर्भ के पाँचवें महीने होनेवाला एक संस्कार।

पंचवाई—स्त्री० [हिं० पाँच+वाई (प्रत्य०)] चावल, जौ आदि से बनाई जानेवाली एक प्रकार की देशी शराब।

पंच-वाण—पुं० [द्विगु स०] १. कामदेव के ये पाँच वाण—द्रवण, शोषण, तापन, मोहन और उन्मादन। २. कामदेव के ये पाँच पुष्प-वाण—कमल, अशोक, आम, नवमल्लिका और नीलोत्पल। ३. [ब० स०] कामदेव। मदन।

पंचवातीय—पुं० [सं० पंच-वात, द्विगु स०+छ—ईय] राजसूय के अन्तर्गत एक प्रकार का होम।

पंच-वाद्य—पुं० [द्विगु स०] युद्धक्षेत्र में, बजनेवाले ये पाँच प्रकार के वाद्य—तंत्र, आनद्ध, सुशिर और घन के शब्द तथा वीरों का गर्जन।

पंच-वार्षिक—वि० [सं० पंचवर्ष+ठक्—इक] हर पाँचवें वर्ष होनेवाला।

पँचवाह (हिन्)—वि० [सं० पंचवाह+इनि] पुरानी चाल की एक सवारी जिसमें पाँच घोड़े जोते जाते थे।

पंचविंश—वि० [सं० पंचविंशति+डट्] पचीसवाँ।

पंचविंशति—वि० [मध्य० स०] पचीस।

पंच-वृक्ष—पुं० [द्विगु स०] मंदार, पारिजात, संतान, कल्पवृक्ष और हरिचन्दन—ये पाँच वृक्ष।

पंच-शब्द—पुं० [द्विगु स०] १. तंत्री, ताल, झाँझ, नगाड़ा और तुरही—ये पाँच प्रकार के बाजे और इनसे निकलनेवाला स्वर। २. पाँच प्रकार की ध्वनियाँ। ३. व्याकरण के अनुसार सूत्र, वार्तिक, भाष्य, कोष और महाकवियों के प्रयोग—जो प्रामाणिक माने जाते हैं।

पंच-शर—पुं० दे० 'पंच-बाण'।

पंच-शस्य—पुं० [द्विगु स०] धान, मूँग, तिल, उड़द और जौ—इन पाँच प्रकार के अन्नों की सामूहिक संज्ञा।

पंच-शाख—पुं० [ब० स०] १. हाथ, जिसमें उंगलियों के रूप में पाँच शाखाएँ होती हैं। २. दे० 'पंजशाखा'। ३. हाथी।

पँच-शाखा—स्त्री०=पंज-शाखा।

पंच-शारदीय—पुं० [पंचशरद+छण्—ईय] एक प्रकार का यज्ञ।

पंच-शिख—पुं० [ब० स०] १. कपिल मुनि की शिष्य-परंपरा में से एक आचार्य, जो सांख्य-शास्त्र के बहुत बड़े पंडित थे। २. सिंह। ३. नरसिहा (बाजा)।

पंचशीर्ष—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का साँप।

पंचशील—पुं० [मध्य० स०] १. बौद्धधर्म में शील या सदाचार की ये पाँच मुख्य बातें, जिनका आचरण तथा पालन प्रत्येक सत्पुरुष के लिए आवश्यक कहा गया है—अस्तेय (चोरी न करना); अहिंसा (हिंसा न करना), ब्रह्मचर्य (व्यभिचार न करना), सत्य (झूठ न बोलना) और मादक पदार्थों का परित्याग (नशा न करना)। २. एशिया और अफ्रीका के प्रमुख देशों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय तनातनी कम करने तथा शांति बनाये रखने के उद्देश्य से बाँदुंग सम्मेलन (१९५४) में उक्त के आधार पर स्थिर किये हुए ये पाँच राजनीतिक सिद्धान्त—पारस्परिक सम्मान (एक दूसरे को सम्मान की दृष्टि से देखना), अनाक्रमण (एक दूसरे की सीमा का उल्लंघन न करना), अ-हस्तक्षेप (एक दूसरे की आंतरिक बातों में दखल न देना), समानता (किसी को अपने से बड़ा या छोटा न समझना) और सह-अस्तित्व (अपना अस्तित्व भी बनाये रखना और दूसरों का अस्तित्व भी बना रहने देना)।

पंच-शूरण—पुं० [मध्य० स०] सूरन के ये पाँच प्रकार—अत्यम्ल पर्णी मालकंद, सूरन, सफेद सूरन और काडवेल।

पंचशैल—पुं० [मध्य० स०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

पंच-षष्टि—वि० [मध्य० स०] जो संख्या में साठ से पाँच अधिक हो। पैंसठ।

स्त्री० पैंसठ की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—६५।

पंच-संधि—स्त्री० [द्विगु स०] व्याकरण में ये पाँच संधियाँ—स्वर-संधि, व्यंजन-संधि, विसर्ग-संधि, स्वादि-संधि और प्रकृति भाव।

पंच-सप्तति—वि० [मध्य० स०] पचहत्तर।

स्त्री० पचहत्तर की संख्या, जो इस प्रकार लिखी जाती है—७५।

पँचसर(ा)—पुं०=पंचशर (कामदेव)।

पंचसिद्धौषधि—स्त्री० [सिद्ध-ओषधि, कर्म० स०, पंच-सिद्धौषधि, द्विगु स०] वैद्यक की ये पाँच ओषधियाँ—सालिब मिश्री, वराही कन्द, रोदंती, सर्पाक्षी और सरहटी।

पंच-सुगंधक—पुं० [ब० स०, कप्] वैद्यक की ये पाँच सुगंधित ओषधियाँ—लौंग, शीतल चीनी, अगर, जायफल और कपूर। कुछ लोग अगर के स्थान पर सुपारी भी मानते हैं।

पंच-सूना—स्त्री० [मध्य०] गृहस्थी की ये पाँच वस्तुएँ जिनके द्वारा अनजान में जीव-हत्याएँ होती हैं—चूल्हा, चक्की, सिलबट्टा, झाड़ू, ओखली और कुंभ (घड़ा)।

पंच-स्कंध—पुं० [ब० स०] बौद्ध दर्शन में ये पाँच स्कंध या गुणों की समष्टियाँ—रूपस्कंध, वेदनास्कंध, संज्ञास्कंध, संस्कारस्कंध और विज्ञानस्कंध।

पंच-स्नेह—पुं० [द्विगु स०] घी, तेल, मज्जा, चरबी और मोम—ये पाँचों चिकने या स्निग्ध पदार्थ।

पंच-स्रोत (स्)—पुं० [ब० स०] १. एक प्रकार का यज्ञ। २. एक प्राचीन तीर्थ। ३. हठयोग में इड़ा, पिंगला, वज्जा, चित्रिणी और ब्रह्म नाड़ी नामक पाँचों नाड़ियाँ।

पंच-स्वेद—पुं० [द्विगु स०] वैद्यक में ये पाँच प्रकार के स्वेद—लोष्ट स्वेद, वालुका स्वेद, बाष्प स्वेद, घट स्वेद और ज्वाला स्वेद।

पँचहजारी—पुं०=पंज-हजारी।

पँचहरा—वि० [हिं० पाँच+हरा(प्रत्य०)] १. पाँच परतों या तहोंवाला। पाँच बार मोड़ा हुआ। जैसे—पँचहरा कपड़ा या कागज। २. पाँच बार किया हुआ। जैसे—पँचहरा काम।

पंचांग—वि० [पंचन्-अंग, ब० स०] पाँच अंगोंवाला।

पुं० १. किसी चीज के पाँच अंग। २. पाँच अंगोंवाली चीज या वस्तु। ३. वह पंजी या पुस्तिका जिसमें आकाशस्थ ग्रह-नक्षत्रों की दैनिक स्थिति बतलाई गई हो। ४. वह पंजी या पुस्तिका जिसमें प्रत्येक मास या वर्ष के वारों, तिथियों, नक्षत्रों, योगों और करणों का समुचित निरूपण या विवेचन होता हो। जंत्री। पत्रा। ५. प्रणाम करने का वह प्रकार, जिसमें दोनों घुटने, दोनों हाथ और मस्तक पृथ्वी पर टेककर प्रणम्य की ओर देखते हुए मुँह से प्रणाम-सूचक शब्द कहा जाता है। ६. वनस्पतियों, वृक्षों आदि के पाँच अंग—जड़, छाल, पत्ती, फूल और फल। ७. तंत्र में जप, होम, तर्पण, अभिषेक और ब्राह्मण-भोजन जो पुरश्चरण के समय आवश्यक होते हैं। ८. तांत्रिक उपासना में किसी इष्टदेव का कवच, स्तोत्र, पद्धति, पटल और सहस्रनाम। ९. राजनीति-शास्त्र के अन्तर्गत सहाय, साधन, उपाय, देश, काल, भेद और विपद् प्रतीकार—ये पाँच मुख्य कार्य। १०. पंच-कल्याण। घोड़ा। ११. कच्छप या कछुआ जो अपने चारों पैर और सिर खींचकर अन्दर छिपा लेता है।

पंचांग-मास—पुं० [मध्य० स०] पहली से अन्तिम तिथि या तारीख

तक का वह पूरा महीना जो पंचांग में प्रत्येक महीने के अन्तर्गत दिखलाया जाता है। (कैलेंडर मन्थ)

पंचांग-वर्ष—पुं॰ [मध्य स॰] किसी पंचांग में दिखाया हुआ आदि से अन्त तक कोई सम्पूर्ण या पूरा वर्ष (संवत् या सन्)। (कैलेंडर ईयर)

पंचांग-शुद्धि—स्त्री॰ [ष॰ त॰] पंचांग के पाँचों अंगों (तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण) का शुद्ध निरूपण।

पंचांगिक—वि॰ [सं॰ पंचांग+ठन्—इक] जिसके या जिसमें पाँच अंग हों।

पंचांगी—वि॰ [सं॰ पंचांग] पाँच अंगोंवाला।

स्त्री॰ [पंचांग+ङीप्] हाथी की कमर में बाँधने का रस्सा।

पंचांगुल—वि॰ [पंच-अंगुलि, ब॰ स॰, अच्] १. (हाथ या पैर) जिसमें पाँच उँगलियाँ हों। २. जो पाँच अंगुल लम्बा हो।

पुं॰ १. अंडी या रेंड़ का वृक्ष। २. तेज-पत्ता। ३. भूसा बटोरने का पाँचा नामक उपकरण।

पंचांगुलि—वि॰ [ब॰ स॰] जिसे पाँच उँगलियाँ हों।

पंचांतरीय—पुं॰ [सं॰ पंचन्-अंतर, द्विगु स॰,+छ—ईय] बौद्धमत के अनुसार ये पाँच प्रकार के घातक—माता, पिता, अर्हत (ज्ञानी पुरुष) और बुद्ध का घात तथा यज्ञ करनेवालों से विवाद।

पंचांश—पुं॰ [पंचन्-अंश, कर्म॰ स॰] किसी वस्तु के पाँच बराबर भागों में से कोई एक भाग। पंचमांश।

पंचाइत†—स्त्री॰ [वि॰ पंचाइती]=पंचायत।

पंचाक्षर—वि॰ [पंच-अक्षर, ब॰ स॰] जिसमें पाँच अक्षर हों। पाँच अक्षरोंवाला। जैसे—पंचाक्षर मंत्र, पंचाक्षर शब्द।

पुं॰ १. प्रतिष्ठा नामक वृत्ति जिसमें पाँच अक्षर होते हैं। २. शिव का 'नमः शिवाय' मंत्र जिसमें पाँच अक्षर होते हैं।

पंचाग्नि—वि॰ [पंचन्-अग्नि, ब॰ स॰] पाँच प्रकार की अग्नियों का आधान करनेवाला।

स्त्री॰ [द्विगु स॰] १. अन्वाहार्यपचन या दक्षिण, गार्हपत्य, आहवनीय, आवसथ्य और सभ्य अग्नि के उक्त पाँच प्रकार। २. छांदोग्य उपनिषद् के अनुसार सूर्य, पर्जन्य, पृथ्वी, पुरुष और योषित्—जो अग्नि के रूप माने गये हैं। ३. आयुर्वेद के अनुसार चीता, चिचिड़ी, भिलावाँ, गंधक और मदार नामक औषधियाँ जो बहुत गरम होती हैं। ४. एक प्रकार की तपस्या जिसमें तपस्वी अपने चारों ओर आग जलाकर दिन-भर धूप में बैठता और ऊपर से सूर्य का जलता हुआ ताप भी सहता है।

क्रि॰ प्र॰—तापना।

५. सब ओर से पहुँचनेवाला कष्ट, दुःख या सन्ताप। उदा॰—पलता था पंचाग्नि बीच व्याकुल आदर्श हमारा—मैथिलीशरण गुप्त।

पंचाग्नि-विद्या—स्त्री॰ [सं॰] छांदोग्य उपनिषद् में सूर्य, बादल, पृथ्वी, पुरुष और स्त्री-संबंधी तात्त्विक ज्ञान या विज्ञान।

पंचाज—पुं॰ [पंचन्-आज, द्विगु स॰] अजा अर्थात् बकरी से प्राप्त होनेवाले ये पाँच पदार्थ—दूध, दही, घी, लेंड़ी और मूत्र।

पंचाट—पुं॰ [सं॰ पंच से] विवाद के संबंध में पंचों का किया हुआ निर्णय या फैसला। परिनिर्णय। (अवार्ड)

पंचातप—पुं॰ [सं॰ पंचन्-आ√तप् (तपना)+अच्] पंचाग्नि तापने की क्रिया या भाव। चारों ओर आग जलाकर तथा धूप में बैठकर की जानेवाली तपस्या।

पंचात्मा (त्मन्)—स्त्री॰ [पंचन्-आत्मन्, द्विगु स॰] शरीर में रहनेवाले ये पाँच प्राण—प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान।

पंचानन—वि॰ [पंचन्-आनन, ब॰ स॰] जिसके पाँच आनन या मुँह हों। पंचमुखी।

पुं॰ १. शिव। २. शेर। सिंह। ३. किसी विषय का बहुत बड़ा पंडित या विद्वान्। जैसे—तर्क पंचानन। ४. संगीत में स्वर-साधन की एक प्रणाली जो इस प्रकार की होती है, आरोही—सा रे ग म प। रे ग म प ध। ग म प ध नि। म प ध नि सा। अवरोही—सा नि ध प म। नि ध प म ग। ध प म ग रे। प म ग रे सा।

पंचाननी—स्त्री॰ [सं॰ पंचानन+ङीष्] १. दुर्गा। २. शेर की मादा। शेरनी।

पंचानबे—वि॰ [सं॰ पंचनवति, पा॰ पंचनवइ] जो गिनती में नब्बे से पाँच अधिक हो। पाँच कम सौ।

पुं॰ उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—९५।

पंचाप्सर—पुं॰=पंपासर। (देखें)

पंचामरा—स्त्री॰ [पंचन्-अमरा, द्विगु स॰+टाप्] दूर्वा, विजया, बिल्व-पत्र, निर्गुंडी और काली तुलसी—इन पाँच पौधों का वर्ग।

पंचामृत—पुं॰ [पंचन्-अमृत, द्विगु स॰] १. दूध, दही, घी, मधु और चीनी के मिश्रण से बना हुआ घोल जिसे हिंदू लोग देवताओं को चढ़ाते हैं तथा स्वयं प्रसाद के रूप में पीते हैं। २. वैद्यक में ये पाँच परम गुणकारी ओषधियाँ—गिलोय, गोखरू, मुसली, गोरखमुंडी और शतावरी।

पंचाम्ल—पुं॰ [पंचन्-अम्ल, द्विगु स॰] ये पाँच खट्टे फल—बेर, अनार, अमलबेत, चूक और बिजौरा।

पंचायत—स्त्री॰ [सं॰ पंचायतन] १. पंचों की सभा। २. प्राचीन भारतीय समाज में चुने हुए थोड़े-से (प्रायः पाँच) आदमियों का वह दल जो आपस के सामाजिक अर्थात् जाति-बिरादरी के झगड़ों या विवादों का निर्णय करता था और जिसका निर्णय बिरादरी या समाज को मान्य होता था। ३. बिरादरी या समाज के लोगों की वह सभा जिसमें पंच लोग बैठकर उक्त प्रकार के झगड़ों का विचार और निर्णय करते थे। जैसे—अग्रवालों या खत्रियों की पंचायत।

विशेष—'पंचायत' और 'मध्यस्थता' के अंतर के लिए दे॰ 'मध्यस्थता' का विशेष।

पद—पंचायत-घर। **(देखें)**

क्रि॰ प्र॰—बैठना।—बैठाना।

मुहा॰—पंचायत बटोरना=अपने किसी विवाद का निर्णय कराने के लिए पंचों और बिरादरी या समाज के सब लोगों को बुलाकर इकट्ठा करना।

४. उक्त प्रकार के समाज या समुदाय में होनेवाला पारस्परिक वाद-विवाद। ५. आज-कल, दो दलों में होनेवाले आर्थिक विवाद के संबंध में दोनों दलों या पक्षों के चुने हुए लोगों का वह वर्ग या समूह जो दोनों पक्षों की बातें सुनकर उनका निर्णय करता है। ६. कुछ लोगों का वह समाज जिसमें वे बैठकर तरह-तरह के और प्रायः व्यर्थ के झगड़े-बखेड़ों की बातें करते हैं। ७ झगड़ा। विवाद।

पंचायत-घर—पुं० [हिं०] वह स्थान जहाँ गाँव, बिरादरी या समाज के लोग बैठकर पंचायत या वाद-विवाद करते और पंचों से उनका निर्णय कराते हैं।

पंचायतन—पुं० [पंचन्-आयतन, द्विगु स०] किसी देवता और उसके साथ रहनेवाले चार व्यक्तियों का वर्ग या समूह। जैसे—शिव-पंचायतन, राम-पंचायतन आदि।

पंचायत-बोर्ड—पुं० [हिं०+अं०] वर्तमान भारत में ग्रामीण लोगों की वह विचार-सभा जिसमें गाँव के प्रतिनिधि आपसी विवादों आदि का निर्णय करते हैं। ग्राम-पंचायत।

पंचायती—वि० [हिं० पंचायत] १. पंचायत-संबंधी। पंचायत का। २. पंचायत द्वारा किया या दिया हुआ। जैसे—पंचायती निर्णय, पंचायती हुकुम। ३. (वस्तु) जिस पर पंचायत या सारे समाज का अधिकार या नियंत्रण हो। जैसे—पंचायती धर्मशाला, पंचायती मंदिर। ४. जिसे सब लोग समान रूप से प्रामाणिक मानते हों। जैसे—पंचायती तौल। ५. दोगला। वर्णसंकर। (बाजारू)

पंचायती राज्य—पुं०=गणतंत्र।

पंचायुध—पुं० [पंचन्-आयुध, ब० स०] विष्णु, जिनके पाँच आयुध माने जाते हैं।

पंचारी—स्त्री० [सं० पंच√ऋ (जाना)+अण्–ङीष्, उप० स०] चौसर, शतरंज आदि की बिसात।

पंचार्चि (स्)—पुं० [पंचन्-आर्चिस्, ब० स०] बुध ग्रह।

पंचाल—पुं० [सं०√पंच+कालन्] [वि० पांचाल] १. पंचमुख महादेव। २. पाँचों ज्ञानेंद्रियों के पाँच विषय। ३. क्षत्रियों की एक प्राचीन शाखा। ४. उक्त शाखा के क्षत्रियों का देश जो हिमालय और चंबल के बीच में गंगा के दोनों ओर स्थित था। ५. उक्त देश का निवासी। ६. बाभ्रव्य गोत्र के एक ऋषि। ७. शिव। ८. एक प्रकार का छन्द जिसके प्रत्येक चरण में एक तगण (ऽऽ।) होता है। ९. दक्षिण भारत की एक जाति जो लकड़ी और लोहे का काम करती है। १०. एक प्रकार का जहरीला कीड़ा।

पंचालिका—स्त्री० [सं० पंच=प्रपंच+अल् (शोभा)+ण्वुल्—अक, टाप्, इत्व] १. गुड़िया। २. साहित्य में पांचाली रीति का दूसरा नाम।

पंचालिस†—वि०, पुं=पैंतालीस।

पंचाली—वि० [सं० पंचाल+इन्] १. पंचाल देश में रहनेवाला। २. पंचाल का।

स्त्री० १. द्रौपदी। २. गुड़िया। ३. चौपड़ या चौसर की बिसात। ४. एक प्रकार का गीत जिसे पांचाली भी कहते हैं। दे० 'पांचाली'।

पंचावयव—वि० [पंचन्-अवयव, ब० स०] जिसके पाँच अवयव या अंग हों। पंचांगी।

पुं० १. प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन—इन पाँच अवयवोंवाला न्याय-वाक्य। २. न्याय के पाँच अवयव।

पंचावस्थ—वि० [पंचन्-अवस्था, ब० स०] पाँचवीं अवस्था में पहुँचा हुआ अर्थात् मरा हुआ। मृत।

पुं० लाश। शव।

पंचाविक—पुं० [पंचन्-आविक, द्विगु स०] भेड़ का दूध, दही, घी, लेंड़ी और मूत्र ये पाँचों पदार्थ।

पंचाश—वि० [सं० पंचाशत्+डट्] पचासवाँ।

पंचाशत्—वि० [सं० पंचदशन्, नि० सिद्धि] जो गिनती में चालीस से दस अधिक हो। पचास।

पुं० उक्त को सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—५०।

पंचाशिका—स्त्री० [सं० पंचाशत्+डिनि+क—टाप्] पचास श्लोकों या कवित्तों का संग्रह या समूह।

पंचाशीत—वि० [सं० पंचाशीति+डट्, टिलोप] क्रम या गिनती में पचासी के स्थान पर पड़नेवाला। पचासीवाँ।

पंचाशीति—स्त्री० [पंचन्-अशीति, मध्य०स०] पचासी की सूचक संख्या, जो इस प्रकार लिखी जाती है—८५।

पंचास्य—वि०, पुं० [पंचन्-आस्य, ब० स०]=पंचानन। (दे०)

पंचाह—पुं० [पंचन्-अहन्, द्विगु स०] १. पाँच दिनों का समूह। २. पाँच दिनों में होनेवाला एक तरह का यज्ञ। ३. सोमयाग के अन्तर्गत वह कृत्य जो सुत्या के पाँच दिनों में किया जाता था।

पंचिका—स्त्री० [सं० पंचन+ठन्—इक, टाप्] १. वह पुस्तक, जिसमें पाँच अध्याय हों। २. पाँच गोटियों से खेला जानेवाला एक प्रकार का जूआ।

पंचीकरण—पुं० [सं० पंचन्+च्वि, नलोप, ईत्व√कृ+ल्युट्—अन] १. वेदांत में एक पद जो उस क्रिया का सूचक होता है जिसमें से पंचभूतों के द्वारा किसी चीज का संघटन होता है। (किसी चीज के संघटन में आधा अंश एक तत्त्व से बना होता है और शेष आधे अंश में बाकी चारों तत्त्वों का समान रूप से अस्तित्व माना जाता है।) २. हठयोग की एक सिद्धि, जिसके संबंध में यह माना जाता है कि इससे साधक जब चाहे तब अपने पंचभौतिक शरीर को पाँचों भूतों में विलीन करके अदृश्य या तिरोहित हो सकता है और फिर जब चाहे तब अपना पहले वाला शरीर धारण कर सकता है।

पंचीकृत—भू० कृ० [सं० पंचन्+च्वि, नलोप, ईत्व√कृ+क्त√कृ (करना)—कर्मणि क्त] (तत्त्व या भूत) जिसका पंचीकरण हुआ हो या किया गया हो।

पंचूरा—पुं० [हिं० पानी+चूना] बच्चों के खेलने का एक प्रकार का मिट्टी का खिलौना जिसके पेंदे में बहुत से छेद होते हैं और जिसमें पानी भरने से बूँदें टपकती हैं।

पंचेंद्रिय—स्त्री० [पंचन्-इंद्रिय, द्विगु स०] १. पाँच ज्ञानेंद्रियाँ। २. पाँच कर्मेंद्रियाँ।

पंचेषु—पुं० [पंचन्-इषु, ब० स०] पंचशर। कामदेव।

पंचैया†—स्त्री० [सं० पंचमी]=नागपंचमी।

पंचो—पुं० [देश०] गुल्ली-डंडे के खेल में, बाएँ हाथ से गुल्ली को उछाल कर दाहिने हाथ में पकड़े हुए डंडे से उस पर किया जानेवाला आघात।

पंचोतर सौ—पुं० [सं० पंचोत्तर शत] सौ और पाँच की संख्या या अंक। एक सौ पाँच की संख्या जो अंकों में इस प्रकार लिखी जाती है—१०५।

पंचोतरा—पुं० [सं० पञ्चोत्तर] कन्या-पक्ष के पुरोहित का एक नेग जिसमें उसे दायज में विशेषकर तिलक के समय वर-पक्ष को मिलनेवाले रुपयों आदि में से सैंकड़े पीछे पाँच मिलते हैं।

पंचोपचार—पुं० [पंचन्-उपचार, द्विगु स०] हिंदुओं में देव-पूजन के अवसर पर षोडशोपचार के साधन में किसी कारणवश असमर्थ होने पर केवल गंध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य (इन पाँच उपचारों) से किया जानेवाला पूजन।

पंचोपविष—पुं० [पंचन्-उपविष, द्विगु स०] थूहड़, मंदार, कनेर, जलपीपल और कुचला—ये पाँच प्रकार के उपविष।

पंचोपसिना—स्त्री०=पंचोपचार।

पंचोली—स्त्री० [सं० पंच-आवलि] एक पौधा जो पश्चिमी और मध्य भारत में होता है। इसकी पत्तियों और डंठलों से सुगन्धित तेल निकलता है।

पुं० [सं० पंचकुल, पंचकुली] कुछ जातियों में वंश-परम्परा से चली आती हुई एक उपाधि।

पंचोषण—पुं० [पंचन्-उषण, द्विगु स०] पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, मिर्च और चित्रक ये पाँच ओषधियाँ।

पंचोष्मा (ष्मन्)—पुं० [पंचन्-ऊष्मन्, द्विगु स०] शरीर के अन्दर की वे पाँच प्रकार की अग्नियाँ जो भोजन पचाती हैं।

पंचौदन—पुं० [पंचन्-ओदन, ब० स०] एक प्रकार का यज्ञ।

पंचौली—स्त्री०=पंचोली।

पँचौवर†—वि० [हिं० पाँच+सं० आवर्त ?] जिसकी पाँच तहें की गई हों। पाँच परतों का। पँचहरा।

पंछा—पुं० [हिं० पंछाला] १. शरीर पर होनेवाले छाले या फुन्सी के फूटने पर उसमें से निकलनेवाला सफेद स्राव। २. वनस्पतियों, पौधों, वृक्षों आदि का कोई अंग छिलने पर उसमें से निकलनेवाला पानी की तरह का स्राव।

क्रि० प्र०—निकलना।—बहना।

पंछाला—पुं० [हिं० पानी+छाला] १. फफोला। छाला। २. =पंछा।

†पुं० दे० 'पुछल्ला'।

पंछी—पुं० [सं० पक्षी] चिड़िया। पक्षी।

पंज—वि० [सं० पंच से फा०] पंच की तरह का पाँच का संक्षिप्त रूप। जैसे—पंज-प्यारे। पंज-हजारी।

पंजक—पुं० [हिं० पंजा] १. पंजे का निशान। २. मांगलिक अवसरों पर दीवारों पर लगाई जानेवाली हाथ के पंजे से किसी रंग की छाप। ३. चित्रकला में, वह अंकन जिसमें पाँच-पाँच दल या शाखाएँ (हाथ की उँगलियों की तरह) दिखाई गई हों। (पामेट)

पंज-कल्यान†—पुं०=पंच कल्यान।

पँजड़ी—स्त्री० [हिं० पंज+ड़ी (प्रत्य०)] चौसर के खेल में एक दाँव।

पंज-तन—पुं० [फा०] हजरत मुहम्मद, हजरत अली, फातिमा और उनके दोनों पुत्र हसन तथा हुसैन ये पाँच व्यक्ति जिन्हें मुसलमान परम-पूज्य मानते हैं।

पँजना—अ० [सं० पंज=दृढ़ होना, रुकना] बरतनों में जोड़ या टाँका लगाना।

पंज-प्यारे—पुं० [हिं० पंज+प्यारा] गुरु गोविन्दसिंह के वे पाँच प्रिय भक्त जिन्हें उन्होंने खालसा-पंथ की स्थापना के समय परीक्षा के रूप में मार डालने के लिए बुलाया था, पर जिन्हें मारा नहीं था।

पंजर—पुं० [सं०√पंज् (रोकना)+अरन्] १. शरीर। देह। २. हड्डियों आदि का वह ढाँचा जिस पर मांस, त्वचा आदि होते हैं और जिनके आधार पर शरीर ठहरा रहता है। कंकाल। ठठरी। ३. किसी चीज का वह भीतरी ढाँचा, जिस पर कुछ आवरण रहते हैं और जिनसे उसका अस्तित्व बना रहता है।

मुहा०—अंजर-पंजर ढीला होना=आघात, प्रहार, भार आदि के कारण ऐसी स्थिति उत्पन्न होना कि कार्यों या शरीर का ठीक तरह निर्वाह न हो सके।

४. पिंजड़ा। ५. कलियुग। ६. कोल नामक कन्द। ७. गाय या गौ का एक संस्कार।

पंजरक—पुं० [सं० पंजर+कन्] डंठलों आदि का बुना हुआ बड़ा टोकरा। खाँचा। झाबा।

पंजरना—अ०=पजरना।

पँजरी—स्त्री० [सं० स्त्रीत्वात्-ङीप्, पंजर=ठठरी] अर्थी। टिकठी। वि० [सं० पंजर] जो पंजर के रूप में या पंजर मात्र हो।

पंज-रोजा—वि० [फा० पंजरोज़ः] १. पाँच दिनों का। २. पाँच दिनों में पूरा या समाप्त होनेवाला। ३. अस्थायी और नश्वर।

पंज-हजारी—पुं० [फा०] १. पाँच हजार सैनिकों का सेनापति। २. मुगल शासनकाल में एक प्रकार का सैनिक पद जो बड़े-बड़े अमीरों, दरबारियों और सरदारों को उनके सम्मान के लिए प्रदान किया जाता था।

पंजा—पुं० [सं० पंचक से फा० पंजः] १. एक ही तरह की पाँच चीजों का वर्ग या समूह। गाही। जैसे—चार पंजे आम। २. हाथ (या पैर) का वह अगला भाग जिसमें हथेली (या तलवा) और पाँचों उँगलियाँ होती हैं। ३. उँगलियों और हथेली का संपुट जिससे चीजें उठाई, पकड़ी या ली जाती हैं; अथवा जिनसे पशु-पक्षी आदि प्रहार या वार करते हैं। चंगुल।

पद—पंजे में=अधिकार या वश में। चंगुल में। जैसे—उनके पंजे में फँसकर निकलना सहज नहीं है।

मुहा०—पंजा फैलाना या बढ़ाना=(क) कुछ लेने के लिए हाथ आगे करना। हाथ पसारना या बढ़ाना। (ख) अपने अधिकार या वश में करने के लिए उद्यत या तत्पर होना। हथियाने का प्रयत्न करना। **पंजा मारना**=(क) झपट कर आघात या प्रहार करना। (ख) लेने के लिए झपटकर आगे बढ़ना या लपकना। **पंजे झाड़कर (किसी से) चिमटना या (किसी के) पीछे पड़ना**=जी-जान से या सारी शक्ति लगाकर किसी से कुछ लेने, उसे तंग करने या हानि पहुँचाने पर उतारू होना। **पंजों के बल चलना**=बहुत अधिक अभिमान या मद के कारण इस प्रकार उछलते हुए चलना कि पूरे पैर जमीन पर न पड़ने पायें।

४. जूते का वह अगला भाग जिसमें पैर का पंजा रहता है। जैसे—इस जूते का पंजा कुछ ज्यादा चौड़ा है। ५. एक प्रकार की शारीरिक बल-परीक्षा जिसमें दो व्यक्ति अपने दाहिने हाथ की उँगलियाँ आपस में फँसाकर एक-दूसरे का हाथ उमेठने या मरोड़ने का प्रयत्न करते हैं।

क्रि० प्र०—लड़ाना।—लेना।

मुहा०—(किसी से) पंजा लड़ाना=सामने आकर बल-परीक्षा करना। उदा०—मृत्यु लड़ाएगी तुमसे पंजा।—दिनकर।

६. कुछ ऐसे यंत्र जिनका अगला भाग या तो हाथ के पंजे के आकार का

होता है या बहुत-कुछ वही काम करता है जो साधारणतः पंजे से लिया जाता है। जैसे—पीठ खुजलाने का पंजा, मल आदि उठाने या हटाने का भंगियों और मेहतरों का पंजा, भट्ठी में की आग हटाने-बढ़ाने का लोहारों या हलवाइयों का पंजा। ७. धातु का वह खंड जिसका अगला भाग हाथ के पंजे और हथेली के आकार का होता है और जो ताजिए आदि के साथ झंडे या निशान के रूप में चलता है। ८. ताश का वह पत्ता अथवा पासे का वह पार्श्व जिस पर पाँच बिंदियाँ या बूटियाँ होती हैं। ९. जूए का वह दाँव जिसकी जीत-हार पाँच की संख्या पर आश्रित होती है। (जुआरी) जैसे—दो पंजे तो मार चुके; अब एक पंजा और मारो तो सब लोग ठंडे हो जायँ।

पद—छक्का-पंजा=छल-कपट, दाँव-पेंच।

१०. कोई ऐसी चीज जिसमें उँगलियों की तरह के बहुत से अंग या अंश इधर-उधर निकले हों। जैसे—केले के इस पंजे में तो दस ही केले हैं; दो केले और ले लो तो पूरे एक दरजन हो जायँ। ११. पुट्ठे के ऊपर का मांस जो हाथ के पंजे की तरह विस्तृत होता है। (कसाई या बूचड़)

पंजा-तोड़—पुं० [हिं०] कुश्ती का एक प्रकार का पेंच, जिसमें विपक्षी से हाथ मिलाकर उसका पंजा पकड़कर उमेठते हुए अपनी कोहनी उसके पेट में लगाकर उसे अपनी पीठ पर ले आते हैं और तब झटके से उसे जमीन पर चित गिरा देते हैं।

पंजाब—पुं० [फा०] १. अविभाजित भारत का उत्तर-पश्चिम का एक प्रसिद्ध प्रदेश जिसमें सतलज, व्यास, रावी, चनाब और झेलम—ये पाँच नदियाँ बहती हैं। २. उक्त प्रदेश का वह अंश, जो पाकिस्तान बनने के बाद अब भी भारत का एक राज्य है।

पंजा-बल—पुं० [हिं० पंजा+बल] पालकी ढोनेवाले कहारों की बोली में, यह सूचित करने का पद कि आगे की भूमि ऊँची है। (अगला कहार पिछले कहार को इसी के द्वारा सचेत करता है।)

पंजाबी—वि० [हिं० पंजाब] १. पंजाब-संबंधी। पंजाब का। २. पंजाब में बनने, होने या रहनेवाला। ३. गुरुमुखी भाषा-संबंधी। जैसे—पंजाबी सूबा।

पुं० १. पंजाब का नागरिक। २. ढीली बाँह का कुरता जिसका प्रचलन पंजाब में हुआ था।

स्त्री० पंजाब की भाषा जो गुरुमुखी लिपि में लिखी जाती है।

पंजारा†—पुं०=पिंजारा (धुनिया)।

पंजिका—स्त्री० [सं०√पंज्+इन्+कन्—टाप्] १. वह टीका जिसमें प्रत्येक शब्द का अर्थ स्पष्ट किया गया हो। २. यमराज की वह लेखा-बही, जिसमें मनुष्यों के शुभाशुभ कर्मों का लेखा लिखा जाता है। ३. हिसाब या विवरण लिखने की पुस्तिका। (रजिस्टर)

पंजियाड़†—पुं०=पंजीकार।

पंजी—स्त्री० [सं०√पंज्+इन्—ङीप्] हिसाब, विवरण आदि लिखने की पुस्तिका। रजिस्टर। बही।

पंजीकरण—पुं० [सं० पंजी+च्वि√कृ (करना)+ल्युट्—अन] १. किसी लेख या लेखे का पंजी में लिखा जाना। २. नाम-सूची में नाम लिखा या चढ़ाया जाना।

पंजीकार—पुं० [सं० पंजी√कृ+अण्] १. वह जो पंजी या बही-खाता लिखने का काम करता हो। आय-व्यय आदि का लेखक। मुनीम। २. वह ज्योतिषी जो पंचांग बनाने का काम करता हो। ३. मिथिला में वह पंडित जिसके पास भिन्न-भिन्न गोत्रों के लोगों की वंशावलियाँ रहती हैं; और जो यह व्यवस्था देता है कि अमुक-अमुक परिवारों में वैवाहिक संबंध स्थापित हो सकता है या नहीं।

पंजीकृत—भू० कृ० [सं० पंजी√कृ+क्त] (लेख) जिसका पंजीकरण हुआ हो।

पंजी-बंधन—पुं० [सं० त० त०]=पंजीयन।

पंजीबद्ध—भू० कृ० [सं० स० त०]=पंजीकृत।

पंजीयक—पुं० [सं० पंजीकार] १. वह जो पंजी पर लेख, विवरण आदि लिखता हो। २. किसी संस्था अथवा विभाग के अभिलेख सुरक्षित रखनेवाला प्रधान अधिकारी। (रजिस्ट्रार)

पंजीयन—स्त्री० [सं० पंजीकरण] किसी लेख या लेखे का किसी कार्यालय की पंजी में (विशेषतः राजकीय पंजी में) लिखा जाना। (रजिस्ट्रेशन)

पंजीरी—स्त्री० [हिं० पाँच+ईरी (प्रत्य०)] कई तरह की चीजों और मसालों को भूनकर बनाया जानेवाला एक प्रकार का मीठा चूर्ण जो खाने के काम में आता है। कसार। जैसे—सत्यनारायण की पूजा के लिए बननेवाली पँजीरी; प्रसूता अथवा दुर्बलों को खिलाने के लिए बनाई जानेवाली पौष्टिक पँजीरी।

स्त्री० [देश०] दक्षिण भारत में होनेवाला एक प्रकार का पौधा जिसके कुछ अंगों का उपयोग औषध के रूप में होता है। अज-पाद। इन्दुपर्णी।

पंजेरा—पुं० [हिं० पाँजना] १. बरतन झालने का काम करनेवाला। बरतन में टाँके आदि देकर जोड़ लगानेवाला। २. दे० 'पिंजारा'।

पंड—वि० [सं०√पंड् (जाना)+अच्] फल-रहित। निष्फल।

पुं० १. नपुंसक। हिजड़ा। २. (वृक्ष) जो कभी फलता न हो।

स्त्री० [सं० पिंड] बड़ी और भारी गठरी। (पश्चिम)

पंडग—पुं० [सं० पंड√गम् (जाना)+ड?] १. नपुंसक। हिजड़ा। २. खोजा।

पंडत†—वि०, पुं०=पंडित। (पश्चिम)

पंडत-खाना—पुं० [हिं०] १. जेलखाना। बंदीगृह। २. जूआखाना। (पश्चिम)

पंडरा†—पुं० [हिं० पानी+ढरना (ढरा)] पनाला। नाबदान।

पुं०=पड़वा (भैंस का बच्चा)।

पँडरी—स्त्री० [हिं० पड़ना] वह परती भूमि जिसमें ऊख बोया जाने को हो।

क्रि० प्र०—छोड़ना।—रखना।

पँड़रू—पुं०=पड़वा।

पंडल—वि० [सं० पांडुर] पांडु वर्ण का। पीला।

पुं० [सं० पिंड] बदन। शरीर।

†पुं०=पांडव।

पँड़वा—पुं० [?] भैंस का बच्चा। पड़वा।

पंडवा†—पुं०=पांडव।

पंडा—पुं० [सं० पंडित] [स्त्री० पंडाइन] १. वह ब्राह्मण जो तीर्थ यात्रियों को मंदिरों आदि के दर्शन कराता तथा उनसे प्राप्त होनेवाले

धन से अपनी जीविका चलाता हो। २. रसोई बनानेवाला ब्राह्मण। ३. रहस्य सम्प्रदाय में, बुद्धि।

पँडाइन—स्त्री० हि० 'पाँड़े' का स्त्री०।

पंडाइन—स्त्री० हि० 'पंडा' का स्त्री०।

पंडापूर्व—पुं० [सं० पंड-अपूर्व, सुप्सुपा० स०] धर्म और अधर्म से उत्पन्न वह अदृष्ट जो कर्म के अनुसार फल न दे सकता हो अथवा ऐसे फल की प्राप्ति में बाधक हो। (मीमांसा)

पंडाल—पुं० [तमिल पेंडल] कनातों आदि से घिरा और तंबुओं से छाया हुआ वह बहुत बड़ा मंडप, जिसके नीचे संस्थाओं, सभाओं आदि के अधिवेशन होते हैं।

पंडित—वि० [सं० पंडा+इतच्] [स्त्री० पंडिता, पंडिताइन, पंडितानी] कुशल। दक्ष। निपुण।

पुं० १. वह जो किसी विद्या या शास्त्र का बहुत अच्छा ज्ञाता हो। विद्वान्। २. शास्त्रों आदि का ज्ञाता ब्राह्मण। ३. ब्राह्मणों के नाम के पहले लगनेवाली आदरसूचक उपाधि। ४. सार्वराष्ट्रीय सांकेतिकी में वह बहुत चमकीला और तेज प्रकाश जो समुद्री और हवाई जहाजों को उनका मार्ग और ठहरने का स्थान बतलाता है।

पंडितक—पुं० [सं० पंडित+कन्] धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

पंडित-जातीय—वि० [सं० पंडित-जाति, ष० त०+छ—ईय] १. जो पंडित न होने पर भी किसी रूप में पंडितों के वर्ग में आ सकता हो। २. साधारण या सामान्य रूप से कुशल या दक्ष।

पंडितमानिक—वि०=पंडितमानी।

पंडितमानी (निन्)—वि० [सं० पंडित√मन (मानना)+णिनि] ऐसा दंभी जो पंडित न होने पर भी अपने आप को पंडित समझता हो।

पंडितम्मन्य—वि० [सं० पंडित√मन् खश्, मुम्, श्यन्]=पंडितमानी।

पंडितराज—पुं० [ष० त०] १. बहुत बड़ा पंडित या विद्वान्। २. संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान् जगन्नाथ की उपाधि।

पंडितवादी (दिन्)—वि० [सं० पंडित√वद् (बोलना)+णिनि] =पंडितमानी।

पंडिता—वि० स्त्री० [सं० पंडित+टाप्] पंडित (स्त्री)। विदुषी।

पंडिताइन†—स्त्री०=पंडितानी।

पंडिताई—स्त्री० [हिं० पंडित+आई (प्रत्य०)] १. पांडित्य। विद्वत्ता। **मुहा०—पंडिताई छाँटना**=अनावश्यक रूप से कुअवसर पर अपने पांडित्य का व्यर्थ परिचय देना। २. पंडितों की वृत्ति या व्यवसाय।

पंडिताऊ—वि० [सं० पंडित] १. पंडितों जैसा। पंडितों की तरह का। २. विद्वत्तापूर्ण। ३. पंडितों में प्रचलित और मान्य। †४. आडम्बरपूर्ण।

पंडितानी—स्त्री० [सं० पंडित] १. पंडित की स्त्री। २. ब्राह्मणी।

पंडितिमा (मन्)—स्त्री० [सं० पंडित+इमनिच्] पांडित्य। विद्वत्ता।

पंडु—वि० [सं०√पंड् (गति)+कु] १. पीलापन लिये हुए मटमैला। २. पीला। ३. सफेद।

पंडुक—पुं० [सं० पांडु] [स्त्री० पंडुकी] फाख्ता नामक पक्षी। पेंडकी।

पंडुर—पुं० [सं० पंडु √ रा (देना)+क] पानी में रहनेवाला साँप। वि०=पांडुर।

पंडोह†—पुं० [हिं० पानी+दह] पनाला।

पंडौ*—पुं०=पांडव।

पंड्रक—वि० [सं०] १. पंगु। २. नपुंसक।

पंत—पुं०=पंथ।

पुं० [?] पश्चिमी उत्तरप्रदेश में रहनेवाले पहाड़ी ब्राह्मणों की एक जाति।

पंति*—स्त्री०=पंक्ति।

पंती*—स्त्री०=पंक्ति।

पँतीजना†—स०=पींजना (रूई आदि ओटना)।

पँतीजी—स्त्री० [हिं० पँतीजना] रूई पींजने का उपकरण। धुनकी।

पँत्यारी*—स्त्री०=पंक्ति।

स्त्री० [सं० पंक्ति] पंक्ति। कतार। उदा०—धूप-दीप फल-फूल द्रव्य की लगी पँत्यारी।—रत्ना०।

पंथ—पुं० [सं० पथ] १. मार्ग। रास्ता। उदा०—पंथ रहने दो अपरिचित।—महादेवी।

क्रि० प्र०—गहना।—दिखाना।—पकड़ना।—लगना।—लगाना।

मुहा०—(किसी का) पंथ जोहना, निहारना या सेना=रास्ता देखना। प्रतीक्षा करना।

२. आचार-व्यवहार या रहन-सहन का ढंग या प्रणाली।

मुहा०—पंथ पर या पंथ में पाँव देना=(क) चलने में प्रवृत्त होना। चलना आरंभ करना। (ख) कोई आचार, व्यवहार ग्रहण करना। **(किसी के) पंथ लगना**=(क) किसी का अनुयायी बनना। (ख) किसी को दंग या परेशान करने के लिए उसके कार्य या मार्ग में बाधक होना। **(किसी को) पंथ पर लगाना या लाना**=अच्छे और ठीक रास्ते पर लगाना या लाना।

३. कोई ऐसा धार्मिक मत या सम्प्रदाय जिसमें किसी विशिष्ट प्रकार की उपासना या साधना-पद्धति प्रचलित हो। (कल्ट) जैसे—कबीर या नानक पंथ। ४. सिक्खों का एक सम्प्रदाय।

पंथक—वि० [सं० पथिन्+कन्, पंथ आदेश] मार्ग में उत्पन्न होनेवाला।

पंथकी† —वि०=पथिक।

पंथाई*—पुं०=पंथी।

पंथान*—पुं०=पंथ।

पंथिक†—वि०=पथिक।

पंथी—पुं० [सं० पथिन्] १. पंथ या पथ पर चलनेवाला। पथिक। बटोही। राही। २. किसी पंथ या सम्प्रदाय का अनुयायी। जैसे—कबीर-पंथी। ३. सिक्खों के पंथ नामक दल का सदस्य।

स्त्री० [हिं० पंथ] १. पंथ होने की अवस्था या भाव। २. एक पद जो कुछ शब्दों के अन्त में लगकर भाववाचक प्रत्यय 'ता' या 'पन' का अर्थ देता है। जैसे—अवारापंथी, गधापंथी।

पंद—स्त्री० [फा०] [कर्त्ता पंदगर] १. सदुपदेश। नसीहत। २. परामर्श।

पंद्रह—वि० [सं० पंचदश, पा० पण्णरस, प्रा० पण्णरस, पण्णरह] जो गिनती में दस से पाँच अधिक हो।

पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—१५।

पंद्रहवाँ—वि० [हिं० पंद्रह] [स्त्री० पंद्रहवीं] क्रम या गिनती में पंद्रह के स्थान पर पड़ने या होनेवाला।

पंद्रहियों—अव्य० [हिं० पंद्रह] लगभग पन्द्रह या इनसे भी कुछ अधिक दिनों का समय। जैसे—जरा से काम में तुमने पन्द्रहियों लगा दिये।

पंप—पुं० [अं०] १. पानी का नल; विशेषतः ऐसा नल जिसमें हवा के जोर से पानी किसी नीचे स्तर से ऊँचे स्थान पर चढ़ाया जाता हो। २. पिचकारी। ३. साइकलों आदि की ट्यूबों में हवा भरने का उपकरण। ४. एक प्रकार का जूता।

पंपा—स्त्री० [सं०√पा (रक्षा)+मुट्, नि० सिद्धि] १. दक्षिण भारत की एक प्राचीन नदी। २. इस नदी के किनारे का एक नगर। ३. उक्त नगर के पास का एक तालाव या सर। यहीं शातकर्णि मुनि तप करते थे।

पंपाल†—वि०=पापी।
वि० [सं० पाप] १. पाप करनेवाला। २. दुष्ट। उदा०—बुरो पेट पंपाल है...।—गंग।

पंबकी—वि० [हि पंबा] सूती। (पश्चिम)

पंबा—पुं० [फा० पुंबः] १. कपास। २. रूई।
पुं० [देश०] एक प्रकार का पीला रंग जिससे ऊन रँगा जाता है।

पँवर†—स्त्री०=पँवरी।

पँवरना†—अ० [सं० प्लवन] १. पौड़ना या तैरना। २. गहराई की थाह लेना या पता लगाना।
अ० [हिं० पँवारना का अ०] पँवारा या फेंका जाना।

पँवरि†—स्त्री०=पँवरी।

पँवरिया—पुं० [हिं० पँवाड़ा] पुत्र-जन्म आदि अवसरों पर मंगल गीत गानेवाला याचक।
†पुं०=पौरिया (द्वारपाल)।

पँवरी—स्त्री० [हिं० पाँव] पाँवों में पहनने का खड़ाऊँ नामक उपकरण। पाँवरी।
†स्त्री० [सं० प्रतोली, प्रा० पओली, पवरी] १. ड्योढ़ी। पौरी। २. दरवाजा। द्वार।

पँवाड़ा—पुं० दे० 'पवाड़ा'।

पँवार—पुं०=परमार (क्षत्रियों का एक वर्ग)।

पँवारना—स० [सं० प्रवारण] १. कोई काम करने से रोकना। २. उपेक्षापूर्वक दूर करना या हटाना। ३. फेंकना।

पँवारी—स्त्री० [?] एक प्रसिद्ध उपकरण जिससे लोहार लोहे में छेद करते हैं।

पंशाखा†—पुं०=पनसाखा।

पँसरहट्टा—पुं० [हिं० पंसारी+हट्ट, हाट] पंसारियों का बाजार। पसरहट्टा।

पँसरहट्टी—स्त्री० [हिं० पँसरहट्टा] पंसारी की दुकान।

पंसारी—पुं० [सं० प्रसार या प्रसारी?] वह बनिया जो मुख्यतः जीरा, धनियाँ, मिर्च, लौंग, हल्दी आदि मसाले और साधारण जड़ी-बूटियाँ आदि बेचता हो।

पंसा-सार—पुं० [हिं० पासा+सं० सारि=गोटी] पासे का खेल। चौसर।

पँसियाना†—स० [हिं० पाँसा] १. पाँसा या पासा फेंकना। २. पासे से मारना।

पँसुरी†—स्त्री०=पसली।

पँसुली†—स्त्री०=पसली।

पँसेरा†—पुं० १. =पंसारी। २. =पसरहट्टा।
पुं० [हिं० पाँच सेर] [स्त्री० अल्पा० पँसेरी] पाँच सेर का बटखरा। पसेरी।

पँहा†—अव्य० [सं० पार्श्व] १. निकट। समीप। २. से।

पइ*—विभ०=पै (पर)।

पइग†—पुं०=पग (डग)।

पइज†—स्त्री०=पैज (१. टेक। २. होड़)।

पइठ†—स्त्री०=पैठ (पहुँच)।

पइठना†—अ०=पैठना (बैठना)।

पइत—पुं०=पाइता (छन्द)।

पइना†—वि०=पैना।

पइलइ†—वि०=परला। उदा०—सरवर पइलइ तीर=सरोवर का परला तट।

पइला†—पुं० [?] अनाज नापने का एक तरह का पुरानी चाल का पाँच सेर की तौल का बड़ा बरतन।
† वि०=परला।

पइसना†—अ०=पैठना।

पइसार—पुं० [हिं० पइसना] पैठ। पहुँच।

पई—स्त्री० [?] पौधों में से डांडे, फूल आदि चुनने या तोड़ने का काम। जैसे—कपास या कुसुम की पई।

पउआ—पुं०=पौआ।

पउनार†—स्त्री०=पौनार।

पउला†—पुं०=पौला।

पकठोस—वि० [हिं० पक्का+ठोस] १. पक्का और ठोस। २. (व्यक्ति) जो जवानी की उमर पार कर चुका हो।

पकड़—स्त्री० [हिं० पकड़ना] १. पकड़ने की क्रिया या भाव। २. पकड़ने का ढंग या तरीका। ३. पकड़ या रोककर रखने की शक्ति। उदा०—मैं एक पकड़ हूँ जो कहती ठहरो कुछ सोच-विचार करो।—प्रसाद। ४. किसी काम या बात का वह अंग या पक्ष जिससे उसकी त्रुटि या दोष का पता चल सकता हो। ५. प्राप्ति या लाभ का डौल या सुभीता। जैसे—कचहरी के मामूली चपरासियों की भी रोज दो-चार रुपयों की पकड़ हो जाती है। ६. दो व्यक्तियों में होनेवाला, कोई ऐसा काम जिसमें दोनों एक दूसरे को पकड़कर गिराने, दबाने आदि का प्रयत्न करते हों। भिड़ंत। जैसे—(क) आओ, एक पकड़ कुश्ती और हो जाय। (ख) इस विषय में दोनों में कई पकड़ कहा-सुनी (या थुक्का-फजीहत) हो चुकी है।

पकड़-धकड़†—स्त्री०=धर-पकड़।

पकड़ना—स० [सं० प्रक्रमण या पर्क (मधुपर्क की तरह)?] १. कोई चीज इस प्रकार दृढ़तापूर्वक हाथ में थामना कि वह गिरने, छूटने

या इधर-उधर न होने पावे। थामना। धरना। २. वेगपूर्वक आती हुई चीज को आगे बढ़ने से रोकना। जैसे—(क) गेंद पकड़ना। (ख) मारनेवाले का हाथ पकड़ना। ३. जो छिपा या भागा हुआ हो, छिप या भाग सकता हो अथवा छिपने या भागने को हो, उसे इस प्रकार अधिकार या वश में करना कि वह छिप, बच, भाग न सके। गिरफ्तार करना। जैसे—चोर या डाकू को पकड़ना; नादिहन्द आसामी को पकड़ना। ४. जो छिपा हुआ हो या सबके सामने न हो, उसे ढूँढ़कर इस प्रकार निकालना कि वह सबके सामने आ जाय। जैसे—किसी की चोरी या भूल पकड़ना। ५. किसी प्रकार के जाल या फंदे में फँसाकर पशु-पक्षियों आदि को अपने अधिकार या वश में करना। जैसे—चिड़िया, मछली या हिरन पकड़ना। ६. जो आगे चलता या बढ़ता जा रहा हो, अथवा आगे निकल जाने को हो, उसकी बराबरी या साथ करने के लिए ठीक समय पर उसके पास तक पहुँचना। जैसे—(क) घुड़-दौड़ में एक घोड़े का दूसरे घोड़े को पकड़ना। (ख) स्टेशन पर पहुँचकर रेलगाड़ी पकड़ना। ७. अनुचित अथवा अवैध काम करते हुए किसी व्यक्ति को ढूँढ़ निकालना। जैसे—किसी को जूआ खेलते या शराब पीते हुए पकड़ना। ८. किसी को कोई काम करने से रोकना। जैसे—बोलनेवाले की जबान पकड़ना। ९. ठीक तरह से किसी चीज को जानना और पहचानना। जैसे—अक्षर पकड़ना, स्वर पकड़ना। १०. एक वस्तु का दूसरी वस्तु से चिपक जाना। जैसे—दफ्ती का कागज को पकड़ना। ११. रोग या विकार का ऐसा उग्र रूप धारण करना कि शरीर अथवा उसका कोई अंग ठीक तरह से काम न कर सके। जैसे—(क) महीनों से उसे बुखार ने पकड़ रखा है। (ख) गठिया ने उसका घुटना पकड़ लिया है। (ग) जुकाम में कफ बढ़कर कलेजा (या सिर) पकड़ लेता है। १२. किसी फैलनेवाली वस्तु के सम्पर्क में आकर उसके प्रभाव से युक्त होना। जैसे—(क) पत्थर का कोयला देर में आँच पकड़ता है। (ख) रसोई बनाते समय उसकी साड़ी के आँचल ने आग पकड़ ली। (ग) कोरा और खुरदुरा कपड़ा जल्दी रंग नहीं पकड़ता। १३. किसी का आचार-विचार, रंग-ढंग, रीति-वृत्ति आदि ग्रहण करके उसके अनुरूप बनना या होना। जैसे—(क) बाजारू लड़कों के साथ रहकर तुमने यह नई चाल पकड़ी है। (ख) खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग पकड़ता है।

अ० अच्छी तरह या ठीक रूप में स्थायी या स्थिर होना। जैसे—(क) हवा करने से किसी चीज में आग जल्दी पकड़ती है। (ख) यह पौधा इस जमीन में जड़ नहीं पकड़ेगा।

पकड़वाना—स० [हिं० पकड़ना का प्रे०] १. किसी को कुछ पकड़ने में प्रवृत्त करना। किसी के पकड़े जाने में सहायक होना। २. दे० 'पकड़ाना'।

संयो० क्रि०—देना।—लेना।

पकड़ाना—स० [हिं० पकड़ना का प्रे० रूप] १. किसी के हाथ या अधिकार में कोई चीज देना। २. दे० 'पकड़वाना'।

अ० पकड़ लिया जाना। पकड़ा जाना।

पकना—अ० [सं० पक्व, हिं० पक्का, पका+ना (प्रत्य०)] १. पक्का या परिपक्व होना। २. अनाज आदि का आँच पर रखे जाने से उबल या तपकर इस प्रकार कोमल होना या गलना कि वह खाया जा सके या खाने पर सहज में पच सके। जैसे—कढ़ी या खीर पकना। ३. कच्ची मिट्टी से बनी हुई चीजों के संबंध में, आँच से तपकर इस प्रकार कड़ा होना कि सहज में टूट न सकें। जैसे—ईंटें या मटके पकना। ४. फलों आदि के संबंध में, वृक्षों में लगे रहने की दशा में अथवा उनसे तोड़ लिए जाने पर किसी विशिष्ट क्रिया से इस प्रकार कोमल, पुष्ट और स्वादिष्ट होना कि वे खाये जाने के योग्य हो सकें। जैसे—अमरूद या बेल पकना। ५. घाव, फोड़े आदि का ऐसी स्थिति में आना या होना कि उनमें मवाद आ जाय या भर जाय। जैसे—पुलटिस बाँधने से फोड़ा पक जाता है। ६. शरीर के किसी अंग का छोटे-छोटे घावों, फुंसियों आदि से इस प्रकार भरना कि उनमें कोई विषाक्त तरल पदार्थ भर जाय। जैसे—कान पकना, जीभ या मुँह पकना।

मुहा०—कलेजा पकना=कष्ट या दुःख सहते-सहते किसी ऐसी स्थिति में पहुँचना कि प्रायः मानसिक व्यथा बनी रहे।

७. लेन-देन या व्यवहार आदि में, कोई बात निश्चित या स्थिर होना। पक्का होना। जैसे—(क) सलाह पकना। (ख) यह सौदा पक जाय तो सौ रुपये मिलेंगे। ८. चौसर की गोट के संबंध में चलते-चलते सब घर पार करके ऐसी स्थिति में पहुँचना जहाँ वह मर न सके। ९. बालों के संबंध में, वृद्धावस्था अथवा किसी प्रकार के रोग के कारण सफेद होना। १०. ऐसी अवस्था में पहुँचना जहाँ से पतन, ह्रास आदि आरंभ होता है। जैसे—दादा जी अब अधिक पक चले हैं। ११. (बात) अच्छी तरह से स्मरण या याद हो जाना। जैसे—कविता कहानी या पहाड़ा पकना। (पश्चिम)

पकरना†—अ०, स०=पकड़ना।

पकरिया†—स्त्री० हिं० 'पाकर' का स्त्री० अल्पा०।

पकला†—पुं० [हिं० पकना] फोड़ा।

पकली—स्त्री० [हिं० पकड़ना] चारा बाँधने का एक प्रकार का जाल।

पकवान—पुं० [सं० पक्वान] घी में तला या घी से पकाया हुआ खाद्य पदार्थ। जैसे—कचौरी, समोसा आदि।

पकवाना—स० [हिं० पकाना का प्रे०] पकाने का काम किसी दूसरे से कराना। किसी को कुछ पकाने में प्रवृत्त करना।

पकसना†—अ० [अनु०] ऊमस या गर्मी की अधिकता के कारण किसी चीज का सड़ने लगना। बजब जाना। जैसे—पके हुए आम दो दिन में पकसने लगते हैं।

पकसालू—पुं० [देश०] एक प्रकार का बाँस।

पकाई—स्त्री० [हिं० पकाना] १. पकाने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक। २. पक्कापन। दृढ़ता। ३. किसी काम या बात का कौशल या निपुणता।

†स्त्री० दे० 'पक्कापन'।

पकाना—स० [हिं० पकना का स०] १. ऐसी क्रिया करना जिससे कुछ पके। पकने में प्रवृत्त करना। २. अन्न आदि आँच पर चढ़ाकर उन्हें इस प्रकार उबालना, गरमाना या तपाना कि वे गलकर मुलायम हो जायँ और खाये जाने के योग्य हो जायँ। पाक करना। राँधना। जैसे—तरकारी, दाल या रोटी पकाना। ३. कच्चे फलों आदि के संबंध में, ऐसी क्रिया करना कि वे मीठे और मुलायम होकर खाये जाने

के योग्य हो जायँ। जैसे—आम या केला पकाना। ४. कच्ची मिट्टी से बनाये हुए बरतनों तथा दूसरी चीजों के संबंध में, उन्हें आग पर चढ़ाकर इस प्रकार कड़ा और मजबूत करना कि वे सहज में टूट या पानी में गल न सकें। जैसे—ईंटें, खपड़े, घड़े आदि पकाना। ५. फोड़ों आदि के सम्बन्ध में, उन पर पुलटिस आदि बाँधकर इस प्रकार मुलायम करना कि उनके अन्दर का मवाद या विषाक्त अंश ऊपर का चमड़ा फाड़कर बाहर निकल सके।

सुहा०—(किसी का) कलेजा पकना=किसी को इतना अधिक कष्ट या दुःख पहुँचाना कि उसके हृदय में बहुत अधिक मानसिक व्यथा होने लगे।

६. पाठ आदि रटकर याद करना। ७. कार्यों आदि के संबंध में, अभ्यास करके पक्का करना। ८. कोई बात या विषय इस प्रकार निश्चित, दृढ़ या पक्का करना कि उसमें सहज में उलट-फेर न हो। जैसे—लेन-देन की बात या सौदा पकाना। ९. सिर के बालों के संबंध में, किसी प्रकार की क्रिया अथवा कालयापन के द्वारा उन्हें ऐसी स्थिति में लाना कि उनका रंग भूरा पड़ जाय। जैसे—(क) बाजारू तेल बहुत जल्दी बाल पका देते हैं। (ख) हमने धूप में ही बाल नहीं पकाये हैं; अर्थात् बिना अनुभव प्राप्त किये इतना जीवन नहीं बिताया है। संयो० क्रि०—डालना।—देना।—लेना।

१०. चौसर की गोट सब घरों में आगे बढ़ाते हुए ऐसी स्थिति में पहुँचाना कि वह मारी न जा सके।

पकार—पुं० [सं० प+कार] 'प' अक्षर।

पकारांत—वि० [सं० पकार-अंत, ब० स०] (शब्द) जिसके अन्त में 'प' अक्षर हो।

पकाव—पुं० [हिं० पकना] १. पके हुए होने की अवस्था या भाव। परिपाक। २. पीब या मवाद जो फोड़ा पक जाने पर उसमें से निकलता है।

पकावन*—पुं०=पकवान।

पकौड़ा—पुं० [हिं० पाक+बरी, बड़ी] [स्त्री० अल्पा० पकौड़ी] घी, तेल आदि में तलकर फुलाई हुई बेसन या पीठी की ऐसी बड़ी जिसके अन्दर प्रायः कोई और चीज भी भरी रहती है। जैसे—आलू, गोभी या साग का पकौड़ा।

पकौड़ी—स्त्री०='पकौड़ा' का स्त्री० अल्पा०।

पक्कटी—स्त्री० [सं० पक्=√पच् (पकाना)+क्विप्; कटी=√कट् आवरण)+अच्—ङीष्; पक्-करी, द्व० स०] पाकर का पेड़।

पक्कण—पुं० [सं० पक्,√पच्+क्विप्; कण=√कण् (संकुचित करना) +अच्; पक्-कण, कर्म० स०] १. चांडाल का घर। २. चांडालों की बस्ती।

पक्का—वि० [सं० पक्व] [स्त्री० पक्की, भाव० पक्कापन] १. जो अच्छी तरह से और पूरा पक चुका हो या पकाया जा चुका हो। २. (खाद्य पदार्थ या भोजन) जो आँच पर उबाल, गला, भून या सेंककर खाने के योग्य बना लिया गया हो। पका या पकाया हुआ।

पद—पक्का खाना या पक्की रसोई=सनातनी हिंदुओं में अन्न का बना हुआ ऐसा भोजन जो घी में तला या पकाया हुआ हो; और फलतः जिसे ग्रहण करने में छूत-छात का विशेष विचार न किया जाता हो। 'कच्ची रसोई' से भिन्न और उसका विपर्याय। सखरा। जैसे—हमारे यहाँ दिन में कच्ची रसोई बनती है और रात में पक्की। **पक्का पानी**=(क) आग पर औटाया हुआ पानी। (ख) शुद्ध और स्वास्थ्यवर्धक पानी।

३. फलों आदि के संबंध में, जो या तो पेड़ पर रहकर अच्छी तरह पुष्ट, मधुर और स्वादिष्ट हो चुका हो अथवा पेड़ से अलग करके कुछ विशिष्ट क्रियाओं के द्वारा पुष्ट, मधुर तथा स्वादिष्ट कर लिया गया हो। जैसे—पक्का आम, पक्का केला, पक्का पान। ४. जो अच्छी तरह विकसित होकर पुष्ट तथा पूर्ण हो चुका हो अथवा पूरी बाढ़ पर पहुँच चुका हो। जैसे—पक्की उमर, पक्की बुद्धि, पक्की लकड़ी। ५. जो आँच पर पकाकर या और किसी क्रिया से खूब कड़ा और मजबूत कर लिया गया हो और फलतः जल्दी टूट-फूट या नष्ट न हो सकता हो। जैसे—पक्की ईंट, मिट्टी का पक्का घड़ा, पक्का रंग।

पद—पक्का घर या मकान=पकाई हुई ईंटों, गारे, चूने, पत्थरों आदि से बना मजबूत मकान।

६. हर तरह से निश्चित और पूरा। जैसे—पक्के बारह (चौपड़ का एक दाँव)। ७. जिसमें किसी प्रकार की खोट या मिलावट न हो और इसी लिए जिसका महत्त्व या मूल्य सहसा घट न सकता हो अथवा जिसके रूप-रंग में जल्दी किसी प्रकार का विकार न हो सकता हो। जैसे—पक्की जरी का काम; पक्के सोने का गहना। ८. जो पककर किसी विशिष्ट क्रिया के लिए उपयुक्त अथवा योग्य हो गया हो। जैसे—पक्का फोड़ा=जो चीरे जाने के योग्य हो गया हो अथवा पूरी तरह से मवाद से भर जाने के कारण फूटकर बह निकलने को हो। ९. जो पूरी तरह से इतना निश्चित और स्थिर हो चुका हो कि उसमें सहसा कोई परिवर्तन या हेर-फेर न हो सकता हो। जैसे—पक्की नौकरी, पक्का भरोसा, पक्का मत या विचार, पक्की सलाह।

१०. जिसमें किसी प्रकार का दोष या त्रुटि न हो। जैसे—पक्का चिट्ठा=आय-व्यय आदि बतलाने वाला वह कागज जिसकी सब मदें अच्छी तरह जाँच ली गई हों और जिसमें कोई भूल न रह गई हो। पक्की बही=वह बही जिस पर अच्छी तरह जँचा हुआ और बिलकुल ठीक हिसाब लिखा जाता है। ११. जो साधारणतः सब जगह समान रूप से प्रामाणिक और मानक माना जाता हो। जैसे—पक्की तौल। १२. जिसका अच्छी तरह संशोधन और संस्कार हो चुका हो। जैसे—पक्की चीनी, पक्का शोरा। १३. (क) यथेष्ट अभ्यास आदि के कारण जिसमें निपुणता या प्रौढ़ता आ गई हो अथवा (ख) जिसमें कोई कोर-कसर या त्रुटि न रह गई हो। जैसे—(क) पक्का चोर, पक्का धूर्त। (ख) पक्के अक्षर या पक्की लिखावट। १४. चतुर, दक्ष या प्रवीण। जैसे—अब वह अपने काम में पक्का हो गया है। १५. सिर के बाल के संबंध में, जो वृद्धावस्था के कारण भूरा या सफेद हो गया हो। जैसे—मूँछों के पक्के बाल निकाल दो। १६. जो बढ़ते-बढ़ते अपने अन्त या विनाश के बहुत पास पहुँच चुका हो। जैसे—वृद्ध लोग तो पक्के आम (या पक्के पान) होते हैं अर्थात् अधिक दिनों तक जी या ठहर नहीं सकते।

पक्काइत†—स्त्री०=पक्कापन।

पक्का कागज—पुं० [हिं०] १. ऐसा कागज या लेख्य जो विधिक दृष्टि से निश्चित और प्रामाणिक माना जाता हो।

मुहा०—पक्के कागज पर लिखना=कोई ऐसा दस्तावेज या पत्र लिखना जो विधिक दृष्टि से मान्य हो।

२. कुछ निश्चित और विशिष्ट मूल्य का वह सरकारी कागज जिस पर विधिक दृष्टि से अनुबंध आदि लिखे जाते हैं। (स्टाम्प पेपर)

पक्का गवैया—पुं० [हिं०] पक्के गाने अर्थात् शास्त्रीय संगीत या राग-रागिनियाँ आदि गानेवाला गवैया।

पक्का गाना—पुं० [हिं०] शास्त्रीय गाना जो राग-रागिनियों के रूप में बँधा हुआ होता है।

पक्का चिट्ठा—पुं० [हिं०] तलपट। तुलनपत्र। (बैलेन्स शीट)

पक्का पानी—पुं० [हिं०] १. पकाया अर्थात् औटाया हुआ पानी। २. स्वास्थ्यकर जल।

पक्की गोट—स्त्री० [हिं०] चौसर के खेल में, वह गोट जो सब घरों में होती हुई अन्त में पूगकर कोठे में पहुँच गई हो।

पक्की निकासी—स्त्री० [हिं०] किसी संपत्ति में से होनेवाली ऐसी आय जिसमें से व्यय आदि निकाला जा चुका हो। कुल आय में से होनेवाली बचत। (नेट एसेट्स)

पक्की रसोई—स्त्री० [हिं०] घी में तले या पकाये हुए खाद्य पदार्थ। (कच्ची रसोई से भिन्न)

पक्के बारह—पुं० दे० 'पौ बारह'।

पक्खर†—वि०=पक्का।

*स्त्री०=पाखर (युद्ध के समय हाथी को पहनाई जानेवाली लोहे की झूल)।

पक्खा†—पुं०=पाखर।

†पुं० [स्त्री० अल्पा० पक्खी]=पंखा। (पश्चिम)

पक्ता (क्तृ)—वि० [सं०√पच्+तृच्] [भाव० पक्ति] १. पकाने-वाला। २. पचानेवाला।

पुं० १. रसोइया। २. जठराग्नि।

पक्ति—स्त्री० [सं०√पच्+क्तिन] १. पकने की क्रिया या भाव। २. शरीर के अन्दर के वे अंग जिनमें भोजन पकता है। ३. ख्याति। प्रसिद्धि। ४. कीर्ति। यश।

पक्ति-शूल—पुं० [मध्य० स०] अजीर्ण के कारण पेट में होनेवाला दर्द।

पक्व—वि० [सं०√पच्+क्त, तस्य वः] [भाव० पक्वता, पक्वत्व] १. पका हुआ। २. पक्का। ३. दृढ़। पुष्ट। ४. वयस्कता तक पहुँचा हुआ। जैसे—पक्व वय।

पक्व-केश—वि० [ब० स०] जिसके बाल पककर सफेद हो गये हों।

पक्वता—स्त्री० [सं० पक्व+तल्—टाप्] पक्व होने का भाव। पक्का-पन।

पक्वत्व—पुं० [सं० पक्व+त्व] पक्वता।

पक्व-रस—पुं० [कर्म० ब० स०] पकाया हुआ रस अर्थात् मदिरा।

पक्व-वारि—पुं० [सं० ब० स० त०] काँजी।

पक्वश—पुं० [सं० पुक्वश, पृषो० सिद्धि] १. एक असम्य और अंत्यज जाति। २. चांडाल।

पक्वातीसार—पुं० [पक्व-अतीसार, कर्म० स०] अतिसार के पाँच भेदों में से एक।

पक्वाधान—पुं० [पक्व-आधान, ष० त०] पक्वाशय।

पक्वान—पुं० [पक्व-अन्न, कर्म० स०] १. पका हुआ अन्न। २. दे० पकवान।

पक्वाशय—पुं० [पक्व-आशय, ष० त०] पेट का वह भीतरी भाग जहाँ पहुँचकर खाया हुआ अन्न पचता है।

पक्ष—पुं० [सं०√पक्ष् (ग्रहण)+अच्] १. पक्षियों का डैना और उस पर के पंख या पर जिनके कारण वे 'पक्षी' कहलाते हैं। २. वे पर जो तीर के सिरे पर उसकी गति ठीक रखने या बढ़ाने के लिए बाँधे या लगाये जाते हैं। ३. जीव-जन्तुओं और मनुष्यों की दाहिनी या बाईं ओर का पार्श्व। ४. किसी वस्तु का वह किनारा या पार्श्व या सिरा जो उसके आगे, पीछे, ऊपर और नीचेवाले भागों से भिन्न हो और किसी बगल में पड़ता हो। पार्श्व। जैसे—सेना का दाहिना पक्ष कुछ दुर्बल पड़ता था। ५. किसी चीज या बात के दो भागों में से प्रत्येक भाग। जैसे—वाम पक्ष और दक्षिण पक्ष। ६. चन्द्रमास के दो बराबर भागों में से प्रत्येक भाग जो प्रायः १५ दिनों का होता है।

विशेष—पूर्णिमा से अमावस तक के दिन 'कृष्ण पक्ष' और अमावस से पूर्णिमा तक के दिन 'शुक्ल पक्ष' में गिने जाते हैं।

७. किसी बात या विषय के ऐसे दो या अधिक अंग या पहलू जो आमने-सामने या अगल-बगल पड़ते हों और इसी लिए जिनमें किसी प्रकार का विभेद या विरोध हो। जैसे—(क) पहले आप दोनों पक्षों की बातें सुन लें, तब कुछ निर्णय करें। (ख) इस प्रश्न के कई पक्ष हैं, जिन पर अच्छी तरह विचार होना चाहिए।

मुहा०—पक्ष गिरना=वाद-विवाद, परीक्षण आदि में युक्तिसंगत सिद्ध न होने पर किसी पक्ष का अप्रामाणिक और अमान्य सिद्ध होना।

८. किसी प्रकार की प्रतियोगिता, विरोध, विवाद आदि में सम्मिलित होनेवाले दलों या व्यक्तियों में से प्रत्येक दल या व्यक्ति।

मुहा०—(किसी का) पक्ष करना=औचित्य, न्याय सत्य आदि का विचार किये बिना ही इस प्रकार का आग्रह करना कि अमुक व्यक्ति जो कहता है, वही ठीक है या वही होना चाहिए। पक्षपात करना। **(किसी का) पक्ष लेना**=वाद-विवाद या वैर-विरोध में किसी एक दल या पक्ष की ओर होकर उसके कथन या मत का समर्थन करना।

९. तर्कशास्त्र में वह कथन, बात या विचार जो प्रमाणों, युक्तियों आदि के द्वारा ठीक सिद्ध किया जाने को हो। ऐसी बात जिसे सिद्ध करना अपेक्षित हो। जैसे—पूर्व पक्ष और उत्तर पक्ष। १०. किसी चीज या बात का कोई विशिष्ट अंग, पार्श्व या स्थिति। ११. किसी मत या सिद्धांत के अनुयायियों और समर्थकों का दल, वर्ग या समुदाय। १२. किसी चीज या बात का कोई ऐसा अंग, तल या पार्श्व जो विशिष्ट रूप से सामने हो अथवा आया हो अथवा जिस पर विचार होता हो। १३. समर्थक, सहायक और साथी। १४. घर। मकान। १५. चूल्हे का वह गड्ढा या मुँह जिसमें राख इकट्ठी होती है। १६. राजा की सवारी का हाथी। १७. हाथ में पहनने का कड़ा। वलय। १८. महाकाल। १९. अवस्था। दशा। २०. शरीर का कोई अंग। २१. फौज। सेना। २२. दीवार। २३. उत्तर। जवाब। २४. पड़ोस। २५. चिड़िया। पक्षी। २६. परस्पर विरोधी तत्त्वों के आधार पर,

'दो' की सूचक संज्ञा। २७. 'बाल' या उसके पर्यायों के साथ प्रयुक्त होने पर, राशि या समूह। जैसे—केश-पक्ष।

पक्षक—पुं० [सं० पक्ष+कन्] किसी पक्ष या पार्श्व में पड़नेवाली खिड़की या दरवाजा।

पक्षका—स्त्री० [सं० पक्षक+टाप्] किसी पक्ष या पार्श्व में की दीवार। बगल की दीवार।

पक्षकार—पुं० [सं०] १. कोई ऐसा व्यक्ति जो किसी काम या बात में सम्मिलित रहता हो या हुआ हो। जैसे—मैं इस निश्चय में पक्षकार नहीं बन सकता। २. झगड़ा करने या मुकदमा लड़नेवाले दलों या पक्षों में से प्रत्येक। (पार्टी) जैसे—यह भी उस मुकदमे में एक पक्षकार थे।

पक्षगम—वि० [सं० पक्ष√गम् (जाना)+अच्] पंखों की सहायता से जानेवाला। उड़नेवाला।

पक्ष-ग्रहण—पुं० [ष० त०] किसी पक्ष में मिलना अथवा उसका समर्थन करना।

पक्षघात—पुं०=पक्षाघात।

पक्षचर—पुं० [सं० पक्ष√चर् (गति)+ट] १. चंद्रमा। २. यूथ से बहका हुआ हाथी। ३. सेवक।

पक्षच्छिद्—पुं० [सं० पक्ष√छिद् (काटना) क्विप्] इन्द्र।

पक्षज, जन्मा (न्मन्)—पुं० [सं० पक्ष√जन् (उत्पत्ति)+ड] [ब० स०] चन्द्रमा।

पक्षति—स्त्री० [सं० पक्ष+ति] १. पंख की जड़। २. शुक्ल पक्ष की पहली तिथि।

पक्ष-द्वार—पुं० [सप्त० त०] चोर दरवाजा।

पक्ष-धर—वि० [ष० त०] विवाद आदि में किसी का पक्ष लेनेवाला। पक्षपाती।
पुं० चिड़िया। पक्षी।

पक्ष-नाड़ी—स्त्री० [ष० त०] पक्ष का मोटा पर जिसकी कलम बनाई जाती है।

पक्षपात—पुं० [सप्त० त०] [भाव० पक्षपातिता, पक्षपातित्व] न्याय के समय, राग, संबंध आदि के कारण अनुचित रूप से किसी पक्ष के प्रति होनेवाली अनुकूल प्रवृत्ति।

पक्ष-पाती (तिन्)—वि० [सं० पक्षपात+इनि] पक्षपात करनेवाला।

पक्षपालि—पुं० [ष० त०] खिड़की।

पक्ष-पुट—पुं० [ष० त०] चिड़ियों का पंख। डैना।

पक्ष-प्रद्योत—पुं० [ब० स०] नृत्य में हाथ की एक प्रकार की मुद्रा।

पक्ष-बिंदु—पुं० [ब० स०] कंक पक्षी।

पक्ष-भाग—पुं० [ष० त०] हाथी का पार्श्व।

पक्ष-भुक्ति—स्त्री० [ष० त०] एक पक्ष भर में सूर्य द्वारा तै की जानेवाली दूरी।

पक्ष-मूल—पुं० [ष० त०] १. डैना। पर। २. प्रतिपदा तिथि जो चन्द्रमास के पक्ष के आरंभ में पड़ती है।

पक्ष-रचना—स्त्री० [ष० त०] १. पक्ष साधन के लिए किया हुआ आयोजन। २. षड्यंत्र। चक्र।

पक्ष-रूप—पुं० [ब० स०] महादेव।

पक्ष-वध—पुं० दे० 'पक्षाघात'।

पक्ष-वर्द्धिनी—स्त्री० [ष० त०] एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक रहनेवाली द्वादशी तिथि।

पक्ष-वाद—पुं० [ष० त०] किसी एक पक्ष की कही हुई बात या दिया हुआ बयान।

पक्षवान् (वत्)—वि० [सं० पक्ष+मतुप्, वत्व] [स्त्री० पक्षवती] १. जिसके पक्ष या पर हों। परोंवाला। २. उच्च कुल में उत्पन्न। कुलीन।
पुं० पर्वत, जो पुराणानुसार पहले पंख या पर से युक्त होते और उड़ते थे।

पक्ष-वाहन—पुं० [ब० स०] पक्षी।

पक्ष-विंदु—पुं० [ब० स०] कंक पक्षी।

पक्ष-सुन्दर—पुं० [स० त०] लोध्र। लोध।

पक्ष-हत—वि० [ब० स०] जिसका एक पार्श्व टूट-फूट या बेकाम हो गया हो।

पक्ष-होम—पुं० [मध्य० स०] एक पक्ष या १५ दिनों तक चलता रहनेवाला यज्ञ।

पक्षांत—पुं० [पक्ष-अन्त, ष० त०] १. अमावस्या। २. पूर्णिमा।

पक्षांतर—पुं० [पक्ष-अन्तर, मयू० स०] दूसरा पक्ष।

पक्षाघात—पुं० [पक्ष-आघात, ब० स०] एक प्रसिद्ध वात रोग जिसमें शरीर का बायाँ या दाहिना पार्श्व पूर्णतः बेकाम और शिथिल हो जाता है। लकवा।

पक्षाभास—पुं० [पक्ष-आभास, ष० त०] सिद्धांताभास।

पक्षालिका—स्त्री० [सं०] कुमार की अनुचरी मातृका।

पक्षालु—पुं० [सं० पक्ष+आलुच्] पक्षी।

पक्षावसर—पुं० [पक्ष-अवसर, ब० स०] पूर्णिमा।

पक्षाहार—पुं० [पक्ष-आहार, स० त०] पक्ष में केवल एक बार भोजन करने का नियम या व्रत।

पक्षिणी—स्त्री० [सं० पक्षिन्+ङीप्] १. मादा चिड़िया। मादा पक्षी। २. पूर्णिमा तिथि। ३. दो दिनों और एक रात का समय।
स्त्री० सं० 'पक्षी' का स्त्री०।

पक्षि-तीर्थ—पुं० [मध्य० स०] दक्षिण भारत का एक प्राचीन (आधुनिक तिरुक्कडुकुनरम) तीर्थ।

पक्षि-राज—पुं० [ष० त०] गरुड़।

पक्षिल—पुं० [सं० पक्ष+इलच्] गौतम के न्याय-सूत्र का भाष्य लिखनेवाले वात्स्यायन मुनि का एक नाम।

पक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० पक्ष+इनि] १. पर या परों से युक्त। परोंवाला। २. किसी का पक्ष लेनेवाला। तरफदार। ३. पक्षपात करनेवाला।
पुं० १. चिड़िया। २. वाण। ३. शिव।

पक्षी-पति—पुं० [सं० पक्षि-पति] जटायु का भाई, संपाति।

पक्षी-पालन—पुं० [सं०] व्यापारिक दृष्टि से चिड़ियों के पालने और उनका वंश बढ़ाने का धंधा या पेशा। (एवीकल्चर) जैसे—अंडे बेचने के लिए बत्तखें या मुरगियाँ पालना।

पक्षी-पुंगव—पुं० [सं० पक्षि-पुंगव] जटायु।

पक्षी-प्रवर—पुं० [सं० पक्षि-प्रवर] गरुड़।

पक्षीय—वि० [सं० पक्ष+छ+ईय,] समस्त पदों के अन्त में, किसी पक्ष, दल आदि से संबंध रखनेवाला। जैसे—कुरुपक्षीय।

पक्षी-राज—पुं० [सं० पक्षि-राज] पक्षियों के राजा, गरुड़।

पक्षी-विज्ञान—पुं० [सं० पक्षि-विज्ञान] वह विज्ञान जिसमें पक्षियों के प्रकारों, उनकी जातियों, रहन-सहन के ढंगों, प्रकृति, स्वभाव आदि का विवेचन होता है। (आर्निथालोजी)

पक्षी-शाला—स्त्री० [सं० पक्षि-शाला] पक्षियों के रहने का स्थान। जैसे—घोंसला, पिंजरा, चिड़िया-घर आदि।

पक्षेष्टि—वि० [सं० पक्ष-इष्टि, ब० स०] पाक्षिक।
पुं० [मध्य० स०] चन्द्रमास के प्रत्येक पक्ष में किया जानेवाला एक प्रकार का यज्ञ।

पक्ष्म (न्)—पुं० [सं०√पक्ष् (ग्रहण)+मनिन्] १. आँख की बरौनी। २. फूल का केसर। ३. फूल की पंखड़ी। ४. पंख। पर। ५. बाल।

पक्ष्मकोप—पुं० [सं० ष० त०] आँख की पलकों का एक रोग।

पक्ष्मल—वि० [सं० पक्ष्मन्+लच्] १. (व्यक्ति अथवा उसकी आँख) जिसकी सुन्दर बरौनी हो। २. बालोंवाला।

पक्ष्य—वि० [सं० पक्ष+यत्] १. पक्ष या पखवारे में होने अथवा उससे संबंध रखनेवाला। २. किसी पक्ष या दल का तरफदार। पक्षपाती।

पखंड—पुं०=पाखंड।

पखंडी—वि०=पाखंडी।
† पुं० कठपुतलियाँ नचानेवाला व्यक्ति।

पख—पुं० [सं० पक्ष] पक्ष। पखवारा।
स्त्री० १. अलग या ऊपर से जोड़ी या लगाई हुई ऐसी बात या शर्त जो या तो बिलकुल व्यर्थ हो या जिससे कोई अड़चन या बाधा खड़ी होती हो। अड़ंगा।
क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।
२. व्यर्थ ही तंग या परेशान करनेवाला काम या बात। झंझट। बखेड़ा।
३. व्यर्थ का छिद्रान्वेषण या दोष-दर्शन। जैसे—तुम तो यों ही हर बात में एक पख निकाला करते हो।
क्रि० प्र०—निकालना।

पखड़ी†—स्त्री०=पंखड़ी।

पखनारी†—स्त्री० [सं० पक्ष+नाल] चिड़ियों के पंखों की डंठी जो ढरकी के छेद में तिल्ली रोकने के लिए रखी जाती है।

पख-पान—पुं०=पाँवदान।

पखरना—अ० [हिं० पखारना का अ० रूप] पखारा या धोया जाना।
†स०=पखारना।

पखराना—स० [हिं० पखारना का प्रे०] किसी को पखारने में प्रवृत्त करना।

पखरिया—पुं० [हिं० पखारना] वह जो पखारने का काम करता हो
†स्त्री०=पखरी।

पखरी—स्त्री० [हिं० पख+री (प्रत्य०)] गद्दी, कुरसी आदि आसनों में दोनों तरफ के वे स्थान जो बगल में पड़ते हैं। उदा०—गाधी पखरी पीठि लगे लोने लचकीले।—रत्ना०।
†स्त्री०=पंखड़ी।

पुं० [हिं० पाखर] १. वह घोड़ा या हाथी जिस पर पाखर पड़ी हो। २. ऐसे घोड़े या हाथी का सवार योद्धा।

पखरैत—पुं० [हिं० पाखर+ऐत (प्रत्य०)] वह घोड़ा, बैल या हाथी जिस पर पाखर अर्थात् लोहे की झूल पड़ी हो।

पखरौटा†—पुं० [हिं० पखड़ी+औटा (प्रत्य०)] पान का बीड़ा जिस पर सोने या चाँदी का वरक लगा हो।

पखवाड़ा†—पुं० [सं० पक्ष=आधा चांद्रमास+हिं० वाड़ा (प्रत्य०)] १. चांद्रमास का कोई पक्ष। २. पूरे १५ दिनों का समय। जैसे—तुमने जरा-से काम में एक पखवाड़ा लगा दिया।

पखवारा†—पुं०=पखवाड़ा।

पखा*—पुं० [?] दाढ़ी।
पुं० १. =पक्ष। २. =पंख (जैसे —मोर-पखा)।

पखाउज†—पुं० =पखावज।

पखाटा—पुं० [सं० पक्ष] धनुष का कोना।

पखान*—पुं०=पाषाण (पत्थर)।
*पुं० [सं० उपाख्यान] किसी घटना या बात का लम्बा-चौड़ा ब्यौरा।
मुहा०—पखान बखानना=बहुत ही विस्तार-पूर्वक किसी की त्रुटियों, दोषों आदि का उल्लेख करना। (पश्चिम)

पखाना—पुं० [सं० उपाख्यान] कहावत। लोकोक्ति।
†पुं०=पाखाना।

पखा-पखी—स्त्री० [सं० पक्ष] कई पक्षों की आपस में होनेवाली खींचा-तानी या विरोध। उदा०—पषा-पषी के पेषणैं सब जगत भुलाना।—कबीर।

पखारना—स० [सं० प्रक्षालन, प्रा० पक्खाड़न] किसी चीज पर पानी डालकर उस पर की धूल, मैल आदि छुड़ाना। धोकर साफ करना। धोना। जैसे—पाँव या बरतन पखारना।

पखाल—स्त्री० [सं० पक्ष+खल्ल] १. बैल आदि के चमड़े की बनी हुई पानी भरने की मशक। २. धौंकनी।

पखाल-पेटिया—वि० [हिं० पखाल+पेट+ईया (प्रत्य०)] १. पखाल अर्थात् मशक की तरह बहुत बड़े पेटवाला। २. बहुत खानेवाला। पेटू।

पखाली—वि० [हिं० पखाल] पखाल अर्थात् मशक-संबंधी।
पुं० मशक से पानी भरनेवाला। भिश्ती।

पखावज—स्त्री० [सं० पक्षावाद्य, प्रा० पक्खाउज्ज] मृदंग के आकार-प्रकार का परन्तु उससे कुछ छोटा एक प्रकार का बाजा।

पखावजी—वि० [हिं० पखावज + ई (प्रत्य०)] पखावज-संबंधी।
पुं० वह जो पखावज बजाकर अपनी जीविका चलाता हो अथवा पखावज बजाने में निपुण हो।

पखिया—वि० [हिं० पख] १. हर बात में पख या व्यर्थ का दोष निकालनेवाला। २. व्यर्थ का झगड़ा-बखेड़ा खड़ा करनेवाला झगड़ालू। बखेड़िया।

पखी†—वि०=पखिया।
†पुं०=पक्षी।

पखीरा†—पुं० [स्त्री० पखीरी]=पक्षी (चिड़िया)।

पखुआ†—पुं०=पखुरा।

पखड़ी†—स्त्री०=पंखड़ी।

पखुरा†—पुं० [सं० पक्ष] १. बाँह का कंधे और कोहनी के बीच का अंश या अवयव। (पूरब) २. पाखा।

पखुरी—स्त्री०=पंखड़ी।

पखेरू*—पुं० [सं० पक्षालु, प्रा० पक्खाडु] पक्षी। चिड़िया।

पखेव—पुं० [देश०] उड़द, गुड़, सोंठ आदि का वह मिश्रण जो गायों-भैंसों को प्रसव के बाद ६ दिनों तक खिलाया जाता है।

पखौड़ा—पुं०=पखुरा (वृक्ष)।

पखौआ†—पुं० [सं० पक्ष] किसी पक्षी विशेषतः मोर का पर जो टोपी या सिर के बालों में शोभा आदि के लिए लगाया जाता था। उदा०—क्रीट-मुकुट सिर जाँड़ि पखौआ मोरन कौ क्यों धार्यौ।—भारतेन्दु।

पखौटा—पुं० [हिं० पंख] १. डैना। पर। २. मछली का पक्ष या पर।

पखौड़ा—पुं०=पखुरा।

पखौरा—पुं०=पखुरा।

पख्तून—पुं० [फा० पुख्तोन] पुख्तो अर्थात् पश्तो भाषा बोलनेवाला व्यक्ति।

पख्तूनिस्तान—पुं० [फा० पुख्तोनिस्तान] अविभाजित भारत का और अब पाकिस्तान की उत्तर पश्चिमी सीमा पर स्थित अफगानिस्तान से सटा हुआ वह प्रदेश, जहाँ की भाषा पुख्तो अर्थात् पश्तो है।

पख्तो—स्त्री० [फा० पुख्तो] पश्तो भाषा जो पख्तूनिस्तान में बोली जाती है।

पग—पुं० [सं० पदक, प्रा० पऊक, पक] १. पैर। पाँव।

मुहा०—**पग रोपना**=कोई प्रतिज्ञा करके किसी जगह दृढ़ता पूर्वक पैर जमाना।

२. उतना अन्तर या दूरी जितनी चलने में एक पैर से दूसरे पैर तक होती है। फाल। ३. चलने के समय हर बार पैर उठाकर आगे रखने की क्रिया। डग।

पद—**पग-पग पर**=(क) बहुत ही थोड़ी-थोड़ी दूरी पर। (ख) बराबर। लगातार।

पगडंडी—स्त्री० [हिं० पग+डंडा] १. खेतों आदि के बीच का पतला या संकीर्ण मार्ग। २. जंगल या मैदान की संकीर्ण राह जो आने-जाने के कारण बन गयी हो।

पगड़ी—स्त्री० [सं० पटक, हिं० पाग+ड़ी (प्रत्य०)] १. सिर पर लपेटकर बाँधा जानेवाला लंबा कपड़ा। उष्णीष। पाग। साफा।

क्रि० प्र०—बँधना।—बाँधना।

विशेष—मध्ययुग में पगड़ी प्रतिष्ठा और मान-मर्यादा की सूचक होती थी; इसी से इसके कई अर्थों और मुहावरों का विकास हुआ है।

मुहा०—**(किसी की) पगड़ी उतारना या उतार लेना**=छीन या ठगकर किसी से बहुत-कुछ धन ले लेना। **(किसी के सिर) पगड़ी बँधना**=(क) महत्त्वपूर्ण या शीर्ष स्थान प्राप्त होना। (ख) किसी का उत्तराधिकारी या स्थानापन्न बनाया जाना। **(किसी से) पगड़ी बदलना**=किसी से भाई-चारे और घनिष्ठ मित्रता का संबंध स्थापित करना।

विशेष—मध्ययुग में जब किसी से बहुत अधिक या घनिष्ठ मित्रता का संबंध हो जाता था, तब उस मित्रता को स्थायी बनाये रखने के प्रतीक के रूप में अपनी पगड़ी उसके सिर पर रख दी जाती थी और उसकी पगड़ी आप पहन ली जाती थी।

२. पगड़ी बाँधनेवाले अर्थात् वयस्क पुरुष का वाचक शब्द या संज्ञा। जैसे—गाँव भर से पगड़ी पीछे एक रुपया ले लो; अर्थात् प्रत्येक वयस्क पुरुष से एक रुपया ले लो। ३. व्यक्ति की प्रतिष्ठा या मान-मर्यादा।

मुहा०—**(किसी से) पगड़ी अटकना**=किसी के साथ ऐसा मुकाबला, विरोध या स्पर्धा होना कि उसकी हार-जीत पर प्रतिष्ठा की हानि या रक्षा अवलंबित हो। **(आपस में) पगड़ी उछलना**=एक के हाथों दूसरे की दुर्दशा और बेइज्जती होना। जैसे—आज-कल उन दोनों में खूब पगड़ी उछल रही है। **(किसी की) पगड़ी उछालना**=किसी को अपमानित करके उपहासास्पद बनाना। दुर्दशा करना। **(किसी की) पगड़ी उतारना**=अपमानित या दुर्दशा-ग्रस्त करना। **(किसी के सिर किसी बात की) पगड़ी बँधना**=किसी काम या बात का यश या श्रेय प्राप्त होना। जैसे—इस काम के लिए प्रयत्न चाहे जिसने किया हो, पर इसकी पगड़ी तो तुम्हारे ही सिर बँधी है। **(किसी की) पगड़ी रखना**=प्रतिष्ठा या मान-मर्यादा की रक्षा करना। **(किसी के आगे) पगड़ी रखना या रख देना**=किसी से दीनता और नम्रतापूर्वक यह कहना कि हमारी प्रतिष्ठा या लाज की रक्षा आप ही कर सकते हैं।

४. आज-कल, दुकान, मकान आदि किराये पर लेने के समय उसके मालिक को अनुकूल तथा संतुष्ट करने के लिए अवैध रूप से पेशगी दिया जानेवाला धन। जैसे—इस दुकान का किराया तो ५०) महीना ही है; पर दुकान का मालिक हजार रुपये पगड़ी माँगता है।

पगतरा—पुं० [हिं० पग+तरा (निचला भाग)] [स्त्री० अल्पा० पगतरी] जूता।

पग-तल—पुं० [हिं० पग+सं० तल] पैर का नीचेवाला भाग। पैर का तलवा।

पगदासी—स्त्री० [हिं० पग+दासी] १. जूता। २. खड़ाऊँ। (साधुओं की परिभाषा)

पगना—अ० [सं० पाक, हिं० पाग] १. हिं० पागना का अ०। पागा जाना। २. शरबत, शीरे आदि के पाग में किसी खाद्य पदार्थ का पड़कर उसके रस में भीगना। मीठे रस से ओत-प्रोत होना। जैसे—मुरब्बा बनाने के समय आँवले या आम का शीरे में पगना। ३. किसी प्रकार के गाढ़े तरल पदार्थ या रस से ओत-प्रोत होना। ४. लाक्षणिक रूप में, बात के रस में अथवा किसी व्यक्ति के प्रेम में पूर्णतः डूबना या मग्न होना।

संयो० क्रि०—जाना।

पगनियाँ†—स्त्री०=पगनी (जूती)।

पगनी†—स्त्री० [सं० पग] १. जूता। २. खड़ाऊँ।

स्त्री० [हिं० पगना] पगने या पागने की क्रिया या भाव।

पग-पान—पुं० [हिं० पग+पान] पैर में पहनने का एक आभूषण। पलानी। गोड़संकर।

पगरना†—पुं० [देश०] सोने, चाँदी आदि के आभूषणों, बरतनों आदि पर नक्काशी करनेवालों का एक उपकरण।

पगरा—पुं० [हिं० पग+रा (प्रत्य०)] पग। डग। कदम।

पुं० [फा० पगाह=सवेरा] प्रभात या प्रातःकाल जो यात्रा आरंभ करने के लिए सबसे अच्छा समय माना गया है।

*वि०=पागल।

पगरी—स्त्री०=पगड़ी।

पगला†—वि०=पागल।

पगहा—पुं० [सं० प्रग्रह, प्रा० पग्गह] [स्त्री० पगही] पशुओं के गले में बाँधी जानेवाली वह रस्सी जिससे उन्हें खूँटे से बाँधा जाता है। पघा।

पगा†—पुं० १.=पाग (पगड़ी)। २.=पघा (पगहा)। ३.=पगरा।

पगाना—स० [हिं० पगना] १. पागने का काम किसी दूसरे से कराना। किसी को पागने में प्रवृत्त करना। २. (पदार्थ) ऐसी स्थिति में रखना कि वह पगे। ३. किसी को किसी ओर या किसी काम में अनुरक्त या पूर्ण रूप से प्रवृत्त करना।

पगार—पुं० [सं० प्राकार] १. चहारदीवारी। परकोटा। २. घेरा। ३. दीवार।

पुं० [हिं० पग+गारना] १. पैरों से कुचलकर जोड़ाई के काम के लिए तैयार किया हुआ गारा। २. कीचड़।

पुं० [फा० पायाब] वह नाला या नदी जिसे पैदल चलकर पार किया जा सके। उदा०—जल कै पगार, निज दल के सिंगार आदि. . .। —केशव।

स्त्री० [पुर्त० पागा से मराठी] वेतन।

पगारना†—स०=फैलाना।

स० [हिं० पग+गारना] १. पैरों से मिट्टी को रौंदकर गारा बनाना। २. फैलाना।

पगाह—पुं० [फा०] १. यात्रा आरंभ करने का उपयुक्त समय अर्थात् तड़का या प्रभात। २. प्रातःकाल। सवेरा।

पगिआना—स०=पगियाना।

पगिया†—स्त्री०=पगड़ी।

पगियाना†—स० [हिं० पाग=पगड़ी] पगड़ी बाँधना।

स०=पगाना।

पगु*—पुं०=पग।

पगुराना†—अ० [हिं० पागुर] १. चौपायों का पागुर करना। जुगाली करना। २. पचा जाना। हजम कर लेना।

पगोडा—पुं० [बर्मी] बुद्ध भगवान का मन्दिर।

पग्ग—पुं०=पग।

पग्गड़—पुं० [हिं० पाग=पगड़ी] बहुत बड़ी और भारी पगड़ी।

पग्घा†—पुं० [हिं० पागना या पकाना] पीतल, ताँबा आदि गलाने की घरिया। पागा।

पघरना—अ०=पिघलना। (पश्चिम) उदा०—मैन तुरंग चढ़े पावक बिच, नाहीं पघरि परेंगे।—नागरीदास।

पघराना—स०=पिघलाना।

पघा—पुं० [सं० प्रग्राहः] वह रस्सी जिससे पशु खूँटे पर बाँधे जाते हैं। पगहा।

पघिलना†—अ०=पिघलना।

पघिलाना—स०=पिघलाना।

पचैया—वि० [हिं० पग+ऐया (प्रत्य०)] पैदल चलनेवाला।

पुं० वह व्यापारी जो गाँवों आदि में घूम-घूमकर चीजें बेचता हो।

पच—वि०=पँच (पाँच का संक्षिप्त रूप)। (पंच के यौ० के लिए दे० 'पँच' और 'पंच' के यौ०)

पचक—पुं० [सं०] कट नामक गुल्म।

स्त्री० [हिं० पचकना] १. पिचकने की अवस्था या भाव। २. पिचकने के कारण पड़ा हुआ गड्ढा या निशान।

†पुं०=पाचक (रसोइया)।

पचकना—अ०=पिचकना।

पचकल्यान—पुं०=पंचकल्याण।

पचकाना—स०=पिचकाना।

पचखना—वि० [हिं० पाँच+सं० खंड] (मकान) जिसमें पाँच खंड या मंजिलें हों।

अ०=पिचकना।

पचखा†—पुं० दे० 'पंचक' (पाँच अशुभ तिथियाँ)।

पचड़ा—पुं० [हिं० पाँच (प्रपंच)+ड़ा (प्रत्य०)] १. व्यर्थ की झंझट। बखेड़े का काम या बात।

क्रि० प्र०—निकालना।—फैलाना।

२. खयाल या लावनी की तरह का एक प्रकार का लोक-गीत जिसमें पाँच चरण या पद होते हैं। ३. एक प्रकार का गीत जो ओझा लोग देवी आदि के सामने गाते हैं।

पचतावा—पुं०=पछतावा (पश्चात्ताप)।

पचतूरा—पुं० [देश०] एक प्रकार का बाजा।

पचतोरिया—पुं०=पँच-तोरिया (कपड़ा)।

पचतोलिया—पुं०, वि०=पँच-तोलिया।

पचन—वि० [सं०√पच् (पाक) ल्युट—अन] पकानेवाला।

पुं० १. भोजन आदि पकने या पकाने की क्रिया या भाव। २. पेट में पहुँचने पर भोजन आदि पचने की क्रिया या भाव। पाचन। ३. अग्नि। आग। ४. जठराग्नि।

पचन-संस्थान—पुं० [ष० त०] शरीर के अन्दर के वे सब अंग और यंत्र जो भोजन पचाते हैं। (एलिमेन्टरी सिस्टम)

पचना—अ० [सं० पचन] १. खाने पर पेट में पहुँचे हुए खाद्य-पदार्थ का जठराग्नि की सहायता से गलकर रस आदि में परिणति होना।

विशेष—जो चीज पच जाती है उसका फोक या सीठी गुदा मार्ग से मल के रूप में बाहर निकल जाती है और जो चीज ठीक तरह से नहीं पचती, वह प्रायः उसी रूप में गुदा मार्ग से या मुँह के रास्ते बाहर निकल जाती है और यदि पेट में रहती भी है, तो कई प्रकार के विकार उत्पन्न करती है।

२. किसी दूसरे का धन आदि इस प्रकार अधिकार में आना या भोगा जाना कि उसके पहले स्वामी के हाथ में न जाय और उसका कोई दुष्परिणाम भी न भोगना पड़े। जैसे—हराम की कमाई किसी को नहीं पचती (अर्थात् उसे उसका दुष्परिणाम भोगना पड़ता है)। ३. किसी चीज या बात का कहीं इस प्रकार छिपा या दबा रहना कि औरों को उसका पता न लगने पाये। जैसे—तुम्हारे पेट में तो कोई बात पचती ही नहीं। ४. किसी चीज या बात का इस प्रकार अंत या

समाप्त होना कि उसके फिर से उभरने की संभावना न रह जाय। जैसे—रोग या विकार पचना, घमंड या शेखी पचना। संयो० क्रि०—जाना।
५. किसी व्यक्ति का परिश्रम, प्रयत्न आदि करते-करते थककर चूर या परम शिथिल हो जाना। मेहनत करते-करते हार जाना या बहुत हैरान होना।
पद—पच-पचकर=बहुत अधिक परिश्रम या प्रयत्न करके। उदा०—काँचो दूध पियावत पचि-पचि देत न माखन रोटी।—सूर।
मुहा०—पच मरना या पच हारना=कोई काम करते-करते थककर बैठ या हार जाना। उदा०—पचि हारी कछु काम न आई, उलटि सबै विधि दीन्हीं।—भारतेन्दु।
६. एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में पूर्ण रूप से लीन होना। खप या समा जाना। जैसे—सेर भर खीर में पाव भर घी तो सहज में पच जाता है।

पचनागार—पुं० [पचन-आगार, ष० त०] पाकशाला। रसोईघर।

पचनाग्नि—पुं० [पचन-अग्नि, मध्य० स०, ष० त०] पेट की आग जिससे खाया हुआ पदार्थ पचता है। जठराग्नि।

पचनिका—स्त्री० [सं० पचनी+कन्, टाप्, ह्रस्व] कड़ाही।

पचनी—स्त्री० [सं० पचन+ङीप्] बिहारी नींबू।

पचनीय—वि० [सं०√पच्+अनी, यर्] जो पच सकता हो या पचाया जा सकता हो। पचने के योग्य।

पचपच—पुं० [सं०√पच्+अच्, द्वित्व] शिव का एक नाम।

पचपचा—वि० [हिं० पचपच] (अध-पका खाद्य पदार्थ) जिसमें डाला हुआ पानी अभी सूखा न हो।

पचपचाना—अ० [हिं० पचपच] १. किसी पदार्थ का आवश्यकता से अधिक इतना गीला होना कि उसे हिलाने-डुलाने से पच-पच शब्द निकले। २. जमीन का कीचड़ से युक्त होना।
स० ऐसी क्रिया करना जिससे किसी गाढ़े तरल पदार्थ में से पच-पच शब्द निकलने लगे।

पचपन—वि० [सं० पंचपंचाश, पा० पंचपण्णासा] जो गिनती में पचास और पाँच हो, पाँच कम साठ।
पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—५५।

पचपनवाँ—वि० [हिं० पचपन] पचपन के स्थान पर आने, पड़ने या होनेवाला।

पचपल्लव†—पुं०=पंचपल्लव।

पचमेल—वि०=पँच-मेल।

पचरा—पुं०=पचड़ा।

पचलड़ी—स्त्री० [हिं० पाँच+लड़ी]=पँच-लड़ी।

पच-लोना—वि०, पुं०=पंच-लोना।

पचवना*—स०=पचाना।

पचहत्तर—वि० [सं० पञ्चसप्तति, प्रा० पंचहत्तरि] गिनती या संख्या में जो सत्तर से पाँच अधिक हो।
पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—७५।

पचहत्तरवाँ—वि० [हिं० पचहत्तर+वाँ (प्रत्य०)] क्रम या गिनती में पचहत्तर के स्थान पर आने, पड़ने या होनेवाला।

पचानक—पुं० [देश०] एक प्रकार का पक्षी।

पचाना—स० [हिं० पचना का स० रूप] १. खाई हुई वस्तु को पक्वाशय की जठराग्नि से रस में परिणत करना। २. दूसरों का माल हजम करना। ३. परिश्रम करा के या कष्ट देकर किसी के शरीर, मस्तिष्क आदि का क्षय करना। ४. अच्छी तरह अन्त या समाप्त कर देना। जैसे—किसी की मोटाई पचाना। ५. एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ को अपने में विलीन कर या समा लेना।

पचारना—स० [सं० प्रचारण] कोई काम करने के पहले उन लोगों के सामने उसकी घोषणा करना जिनके विरुद्ध वह काम किया जाने को हो। ललकारना। जैसे—हाँक-पचारकर लड़ाई छेड़ना।

पचाव—पुं० [हिं० पचना+आव (प्रत्य०)] पचने या पचाने की क्रिया या भाव। पाचन।

पचास—वि० [सं० पंचाशत, प्रा० पचासा] जो गिनती या संख्या में चालीस से दस अधिक हो।
पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—५०।

पचासवाँ—वि० [हिं० पचास+वाँ (प्रत्य०)] क्रम या गिनती में पचास के स्थान में आने, पड़ने या होनेवाला।

पचासा—पुं० [हिं० पचास] १. एक ही जाति की पचास वस्तुओं का कुलक या समूह। २. पचास रुपये। जैसे—सैर करने में पचासा लगेगा। ३. वह बटखरा या बाट जो तौल में पचास रुपयों या पचास भरी के बराबर हो। ४. संकटसूचक वह घड़ियाल जो लगातार कुछ समय तक बराबर टन-टन करते हुए बजाया जाता है और जिसका उद्देश्य आस-पास के सिपाहियों को केन्द्र में बुलाना होता है।

पचासी—वि० [सं० पंचाशीति, प्रा० पंचासाई, पच्चासी] जो गिनती या संख्या में अस्सी से पाँच अधिक हो।
पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—८५।

पचासीवाँ—वि० [हिं० पचासी+वाँ (प्रत्य०)] क्रम या गिनती में पचासी के स्थान पर आने, पड़ने या होनेवाला।

पचासों—वि० [हिं० पचास] बहुत अधिक विशेषतः पचास से अधिक। जैसे—लड़की के घर त्योहारों पर पचासों रुपये नकद या मिठाइयों के रूप में भेजने पड़ते हैं।

पचि—स्त्री० [सं०√पच्+इन्] १. पकाने की क्रिया या भाव। पाचन। २. अग्नि। आग।

पचित—भू० कृ० [सं०] १. अच्छी तरह पचा हुआ। २. अच्छी तरह घुला या मिला हुआ।
वि० [हिं० पच्ची] जिस पर पच्चीकारी का काम किया हुआ हो। (क्व०)

पची†—स्त्री०=पच्ची।

पचीस—वि० [सं० पंचविंशति, पा० पंचवीसति, अपभ्रंश, प्रा० पच्चीस] क्रम या गिनती में बीस से पाँच अधिक।
पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—२५।

पचीसवाँ—वि० [हिं० पचीस+वाँ (प्रत्य०)] क्रम या गिनती में पचीस के स्थान पर आने, पड़ने या होनेवाला।

पचीसी—स्त्री० [हिं० पचीस] १. एक ही प्रकार की पचीस वस्तुओं का समूह। जैसे—बैताल पचीसी (पचीस कहानियों का संग्रह)। २. व्यक्ति की आयु के आरंभिक २५ वर्षों का समय, जिसे व्यंग्य से 'गदह-

पचीसी' भी कहते हैं। ३. गणना का वह प्रकार जिसमें पचीस चीजों की एक इकाई मानी जाती है। जैसे—अमरूद, आम आदि की गिनती पचीसी गाही (१२५ फलों) की होती है। ४. चौसर का वह खेल जो पासों के स्थान पर सात कौड़ियाँ फेंककर खेला जाता है और जिसमें दाँवों का संकेत चित्त और पट्ट पड़नेवाली कौड़ियों की संख्या के विचार से होता है। ५. चौसर खेलने की बिसात।

पचूका†—पुं०=पिचकारी।

पचेलिम—वि०[सं०√पच्+केलिमर्]आसानी से और जल्दी पचनेवाला। पुं० १. अग्नि। २. सूर्य।

पचेलुक—पुं०[सं०√पच्+एलुक] रसोइया।

पचोतर—वि०[सं० पञ्चोत्तर] (किसी संख्या से) पाँच अधिक। पाँच ऊपर। जैसे—पचोतर सौ।

पचोतर सौ—पुं०=पंचोतर सौ।

पचोतरा†—पुं०=पँचोतरा।

पचोआ—पुं०[हिं० पचना] कपड़े पर छींट की छपाई करने के बाद उसे १०-१२ दिनों तक धूप में रखने की क्रिया, जिससे छपाई के समय कपड़े पर पड़े हुए दाग या धब्बे छूट जाते हैं।

पचौनी—स्त्री०[सं० पाचन]१. पचने या पचाने की क्रिया या भाव। २. अँतड़ी। आँत।

पचौर—पुं०[हिं० पंच या पचौली] गाँव का मुखिया। सरदार।

पचौली—पुं०[हिं० पंच+कुली]१. गाँव का मुखिया। सरदार। पंच। २. दे० 'पंचोली'।

पुं०[?] एक प्रकार का पौधा जिसकी पंक्तियों से सुगंधित तेल निकलता है।

पचौवर—वि०=पंचौवर (पंचहरा)।

पच्चड़—पुं०=पच्चर।

पच्चर—पुं०[सं० पचित या पच्ची]१. बाँस, लकड़ी आदि का वह छोटा तथा पतला टुकड़ा जो काठ की चीजों के जोड़ कसने के लिए उनकी दरारों या संधियों में जड़ा, ठोंका या लगाया जाता है।

क्रि० प्र०—जड़ना।—ठोंकना।—लगाना।

२. लाक्षणिक रूप में व्यर्थ खड़ी की जानेवाली अड़चन, बाधा या रुकावट।

क्रि० प्र०—अड़ाना।—लगाना।

मुहा०—पच्चर ठोंकना या मारना—तंग या परेशान करने के लिए बहुत बड़ी अड़चन या बाधा खड़ी करना। ऐसा उपाय करना कि काम किसी तरह आगे बढ़ ही न सके।

पच्ची—स्त्री०[सं० पचित]१. पचने या पचाने की क्रिया या भाव। २. खपाने की क्रिया या भाव। जैसे—माथा पच्ची, सिर पच्ची। ३. धातुओं, पत्थरों आदि पर नगीने या धातु पत्थर, आदि के छोटे-छोटे टुकड़े जड़ने की वह क्रिया या प्रकार, जिसमें जड़ी जानेवाली चीज गड्ढों में इस प्रकार जमाकर जड़ी या बैठाई जाती है कि उसका ऊपरी तल उभरा हुआ नहीं रह जाता। जैसे—सोने के कंगन में हीरों की पच्ची, ताँबे के लोटे पर चाँदी के पत्तरों की पच्ची, संगमरमर की पटिया पर रंग-बिरंगे पत्थरों के टुकड़ों की पच्ची।

पद—पच्चीकारी। (देखें)

मुहा०—(किसी में) पच्ची हो जाना=किसी से बिलकुल मिल जाना या उसी के रूप का हो जाना। लीन हो जाना। जैसे—यह कबूतर जब उड़ता है, तब आसमान में पच्ची हो जाता है।

वि०[हिं० पक्ष] किसी का पक्ष लेकर उसकी ओर से झगड़ा या विवाद करनेवाला।

पच्चीकारी—स्त्री०[हिं० पच्ची+फा० कारी=करना]१. पच्ची की जड़ाई करने की क्रिया या भाव। २. पच्ची करके तैयार किया हुआ काम।

पच्छताई*—स्त्री०[सं० पक्ष]१. किसी का पक्ष ग्रहण करने का भाव। २. पक्षपात। तरफदारी।

पच्छम—वि०, पुं०=पश्चिम।

पच्छाघात—पुं०=पक्षाघात।

पच्छि*—पुं०=पक्षी।

पच्छिनी—स्त्री०=पक्षिणी (चिड़िया)।

पच्छिम—पुं०=पश्चिम (दिशा)।

†वि०=पिछला।

पच्छिराज*—पुं०=पक्षिराज (गरुड़)।

पच्छिवँ†—पुं०=पश्चिम।

पच्छी—पुं०=पक्षी।

पछँही—वि० [सं० पश्चिम] पश्चिम में होने या रहनेवाला।

पछ†—वि० हिं० पाछे (पीछे) का वह संक्षिप्त रूप जो उसे यौ० पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पछलगा (पिछलगा)। पुं०=पक्ष।

पछइ—अव्य०=पीछे।

पछटी—स्त्री०[देश०] तलवार। (डिं०)

पछड़ना—अ०[हिं० 'पछाड़ना' का अ०] १. कुश्ती आदि लड़ने में पछाड़ा या पटका जाना। २. प्रतियोगिता आदि में बुरी तरह से परास्त होना या हराया जाना।

†अ०=पिछड़ना।

पछताना—अ०[हिं० पछताव] पश्चात्ताप करना।

पछतानि—स्त्री०=पछतावा (पश्चात्ताप)।

पछताव—पुं०=पछतावा।

पछतावना†—अ०=पछताना।

पछतावा—पुं० [सं० पश्चाताप]पछताने की क्रिया या भाव। मन में होनेवाला इस बात का दुःखजन्य विचार कि मैंने ऐसा अनुपयुक्त या अनुचित काम क्यों किया अथवा अमुक उचित या उपयुक्त काम क्यों न किया। पश्चात्ताप।

पछना—अ० [हिं० पाछना का अ० रूप] पाछा अर्थात् छुरे के आघात से हलका चीरा लगाया जाना।

पछमन†—अव्य०=पीछे।

पछरना†—अ० १. =पछड़ना। २. =पिछड़ना।

पछरा†—पुं०=पछाड़।

पछलगा—पुं०=पिछलगा।

पछलत्त†—स्त्री०=पिछलत्ती।

पछ-लागा—पुं०=पिछलगा।

पछवत—स्त्री०[हिं० पीछे+वत]ऐसी फसल जिसकी बोआई उपयुक्त ऋतु के अंत में या ठीक समय के बाद हुई हो।

पछवाँ—वि०[सं० पश्चिम]१. पश्चिम-दिशा संबंधी। २. पश्चिम की ओर से आनेवाला। जैसे—पछवाँ हवा।
स्त्री० पश्चिम की ओर से आनेवाली हवा।
पुं०[हिं० पीछे] अँगिया, कुरती आदि का वह भाग जो पीछे की ओर रहता है।
पुं० दे० 'पछुआ'।
अव्य०=पीछे।

पछवारा†—पुं०[हिं० पीछा]१. पिछला भाग। २. पीठ। पृष्ठ। ३. दे० 'पिछवाड़ा'।
†वि०=पिछल्ला।

पछाँह—पुं०[सं० पश्चात्, प्रा० पच्छ] किसी प्रदेश की दृष्टि से, उसके पश्चिम विशेषतः सुदूर पश्चिम में स्थित प्रदेश।

पछाँहिया—वि०=पछाँही।

पछाँहीं—वि० [हिं० पछाँह+ई (प्रत्य०)] १. पछाँह-संबंधी। २. जो पछाँह में रहता या होता हो।

पछाड़—स्त्री०[हिं० पछाड़ना]१. पछाड़ना की क्रिया या भाव। २. पछाड़े जाने की अवस्था या भाव। ३. वह अवस्था जिसमें मनुष्य बहुत बड़े शोक का आघात होने पर खड़ा-खड़ा एक दम से जमीन पर गिर जाता और प्रायः बेसुध-सा हो जाता है।
मुहा०—पछाड़ खाकर गिरना=बहुत अधिक शोकाकुल होने के कारण खड़े-खड़े बेसुध होकर गिरना।

पछाड़ना—स०[सं० प्रक्षालन]धोकर साफ करने के लिए कपड़ों को जोर जोर से जमीन या पत्थर पर पटकना।
स० [हिं० पीछे+ढकेलना]१. कुश्ती आदि में किसी को जमीन पर चित गिराना और उसे जीतना। २. किसी प्रकार की प्रतियोगिता, वादविवाद आदि में किसी को बुरी तरह से नीचा दिखाना, परास्त करना या हराना।
संयो० क्रि०—डालना।—देना।

पछाड़ी†—स्त्री०=पिछाड़ी (पिछला भाग)।

पछानना†—स०=पहचानना। (पश्चिम)

पछाया—पुं० दे० 'पिछाड़ी'।

पछार—स्त्री०=पछाड़।
अव्य०=पछवाँ (पीछे)।

पछारना—स०=पछाड़ना।

पछावर (रि)—स्त्री० [हिं० पीछे?] छाछ आदि का बना हुआ एक प्रकार का पेय जो भोजन के अंत में पिया जाता है।

पछाहँ†—पुं०=पछाँह।

पछाह†—वि०, पुं०=पछाँही।
†स्त्री०=परछाइँ।

पछिआना—स०[हिं० पाछे+आना]१. किसी भागते हुए व्यक्ति को पकड़ने या पाने के लिए उसके पीछे-पीछे तेजी से बढ़ना। पीछा करना। २. किसी के पीछे-पीछे अनुगामी बनकर चलना। अनुकरण करना।

पछिउँ†—पुं०=पश्चिम।

पछिताना—अ०=पछताना।

पछितानि—स्त्री०=पछतावा।

पछितावा†—पुं०[देश०] पशुओं का एक प्रकार का रोग।
पुं०=पछतावा।

पछियाँव†—स्त्री०[सं० पश्चिम+वायु] पश्चिम दिशा से आनेवाली हवा।
क्रि० प्र०—चलना।—बहना।

पछियाना—स०=पछिआना (पीछा करते हुए दौड़ाना)।

पछियाव—स्त्री० [हिं० पच्छिम+वायु] पश्चिम की हवा।
पुं०=पीछा (पिछला भाग)।

पछियावर—स्त्री०=पछावर।

पछिलना†—अ०१.=पिछड़ना। २.=फिसलना।

पछिला—वि०[स्त्री० पछिली]=पिछला।

पछिवाँ—वि०, स्त्री०=पछवाँ।

पछिवाई†—स्त्री०[सं० पश्चिम+वायु]पश्चिम दिशा से आनेवाली हवा।

पछीत—स्त्री०[सं० पश्चात्, प्रा० पच्छा]१. घर का पिछवाड़ा। मकान के पीछे का भाग। २. घर या मकान के पीछेवाली दीवार।
†अव्य०=पीछे।

पछुआँ—वि०, पुं०, स्त्री०=पछवाँ।

पछुआ—पुं० [हिं० पीछा] पैरों में पहनने का कड़े के आकार का एक गहना।

पछेड़ा†—पुं०[हिं० पीछे] किसी को तंग करने के लिए उसके पीछे पड़ने की क्रिया या भाव। उदा०—पतवार पुरानी, पवन प्रलय का कैसा किये पछेड़ा है।—प्रसाद।

पछेलना—स० [हिं० पीछे+एलना (प्रत्य०)] १. चलते, दौड़ते अथवा कोई काम करते समय किसी को पीछे छोड़ या डालकर स्वयं उससे आगे निकलना या बढ़ना। २. पीछे की ओर ढकेलना या हटाना।

पछेला—वि०[स्त्री० पछेली]=पिछला।
पुं०=पिछेला (गहना)।

पछेलिया†—स्त्री०=पिछेली (गहना)।

पछेली†—स्त्री०=पिछेली (गहना)।

पछोड़न—स्त्री० [हिं० पछोड़ना] अनाज पछोड़ने पर निकलनेवाला कूड़ा-करकट।

पछोड़ना—स०[सं० प्रक्षालन, प्रा० पच्छाड़ना] अन्न आदि सूप में रखकर इस प्रकार उछालना और हिलाना कि उसमें का कूड़ा-करकट निकलकर अलग हो जाय। (अनाज) फटकना।
संयो० क्रि०—डालना।—देना।
पद—फटकना-पछोड़ना=उलट-पुलटकर परीक्षा करना। अच्छी तरह देखना-भालना। उदा०—सूर जहाँ तौ स्याम गत हैं देखे फटकि पछोरी।—सूर।

पछोरना—स०=पछोड़ना।

पछोरा†—पुं०=पिछौरा (दुपट्टा)।

पछ्यावर—स्त्री०[देश०]=पछावर।

पजर—पुं०[सं० प्रक्षरण]१. चूने या टपकने की क्रिया या भाव। २. पानी का झरना या सोता।
स्त्री०[हिं० पजरना] पजरने अर्थात् जलने का भाव।

पजरना—अ० [सं० प्रज्वलन] १. प्रज्वलित होना। २. जलना। ३. तपना।
स०=पजारना।

पजरे†—क्रि० वि०=पास (निकट)।

पजहर—पुं० [फा०] पीलापन या हरापन लिए हुए सफेद रंग का एक तरह का बढ़िया पत्थर जिस पर नक्काशी की जाती है।

पजाना—स० [हिं० पंजा ?] चोखा या तेज करना। उदा०—तो भी पंजा पजा रहा है, साइबेरिया का भालू।—दिनकर।

पजामा†—पुं०=पाजामा। (पश्चिम)

पजारना—स० [हिं० पजरना] १. प्रज्वलित करना। २. जलाना। ३. तपाना। ४. पीड़ित या संतप्त करना।

पजावा—पुं० [फा० पजावः] ईटें, चूना, आदि पकाने का भट्टा। आँवाँ।

पजूसण—पुं० [सं०] जैनों का एक व्रत।

पजोखा—पुं० [?] किसी के मरने पर उसके संबंधियों के सामने किया जानेवाला शोक-प्रकाश। मातम-पुरसी।

पजोड़ा†—वि०=पाजी (दुष्ट)।

पज्ज—पुं० [सं० पद्√जन् (उत्पत्ति)+ड] शूद्र।

पज्जर—पुं०=पाँजर।

पज्झलिका—स्त्री० [सं० पद्धटिका] १. छोटी घंटी। २. एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ होती हैं तथा आठवीं और छठी मात्रा पर एक एक गुरु होता है। इसमें जगण का निषेध है।

पटंतर†—पुं०=पटतर।

पटंबर—पुं० [सं० पट-अंबर] रेशमी कपड़ा। कौषेय।

पट—पुं० [सं० पट् (लपेटना)+क] १. पहनने के कपड़े। पोशाक। २. कपड़ा। वस्त्र। ३. आवरण। परदा। जैसे—चित्र-पट। ४. उक्त के आधार पर दरवाजा। द्वार। जैसे—पालकी का पट, दरवाजे का पट।

मुहा०—**(मंदिर का) पट उखड़ना या खुलना**=नियत समय पर मंदिर का दरवाजा इसलिए खुलना (या उसके आगे पड़ा हुआ परदा इसलिए हटना) कि दर्शनार्थी लोग देव-मूर्ति के दर्शन कर सकें।

५. कोई ऐसी चीज जो खूब, अच्छी तरह और सुन्दर बनी हो।

पुं० [सं० परम्] फूस, सरकंडे आदि से छाया हुआ छप्पर। छानी। जैसे—नाव या बैलगाड़ी के ऊपर का पट।

पुं० [सं० चित्र-पट में का पट] १. कपड़े, कागज, धातु आदि का वह टुकड़ा, जिस पर हाथ से कोई चित्र अंकित किया हुआ हो। चित्र-पट। २. जगन्नाथपुरी, बदरिकाश्रम आदि तीर्थों में दर्शनार्थियों को प्रसाद के रूप में मिलनेवाला उक्त देवताओं का चित्रपट।

वि० [सं० चित्र-पट में का पट अर्थात् नीचे वाला भाग] १. जिसका मुँह नीचे की ओर तथा पीठ ऊपर की ओर हो। उलटा पड़ा हुआ। औंधा। 'चित' का विपर्याय। जैसे—(क) कुश्ती में, पट पड़े हुए पहलवान को चित करने से ही जीत होती है। (ख) तलवार उस पर पट पड़ी थी, इसलिए उसे अधिक चोट नहीं आई।

विशेष—प्राचीन काल में कपड़े पर अंकित किये जानेवाले चित्र को चित्र-पट कहते थे। उसका चित्रवाला ऊपरी भाग तो 'चित्र' होता ही था, जिससे हिन्दी का 'चित' विशेषण बना है; नीचेवाला कपड़ा 'पट' होता था, जिससे हिन्दी का उक्त अर्थवाला 'पट' विशेषण बना है। यहाँ इसके (विशेषण रूप में) जो और अर्थ दिये जाते हैं, वे सब उक्त पहले अर्थ के विकसित रूप हैं।

२. बिलकुल खाली पड़ा हुआ। जिसमें या जिसपर कुछ भी न हो। जैसे—खेत (या रास्ता) बिलकुल पट पड़ा था। ३. धीमा या मन्द। मद्धिम या सुस्त। जैसे—आज-कल कपड़े का बाजार बिलकुल पट है। ४. चौपट। बरबाद। जैसे—तुमने तो सारा काम ही पट कर दिया।

पद—चौपट। (देखें)

पुं० १. किसी वस्तु का चिपटा और चौरस तल। २. चौरस जमीन।

पुं० [?] चिरौंजी का पेड़। पयाल। २. कपास। ३. गंध-तृण। ४. टाँग। पैर। ५. कुश्ती का एक पेंच।

पुं० [सं० पट्ट] राज-सिंहासन।

पद—पट-रानी। (देखें)

पुं० [अनु०] छोटी चीज के धीरे से गिरने पर होनेवाला 'पट' शब्द।

अव्य० [हिं० चट का अनु०] तत्काल। तुरंत। जैसे—चटपट यह काम खत्म करो।

पटइन—स्त्री० [हिं० पटना] पटवा जाति की स्त्री जो गहने गूँथने का काम करती है।

पटई†—स्त्री० दे० 'बहँगी'।

पटक—पुं० [सं० पट+कन्] १. सूती कपड़ा। २. [पट√कै+क] खेमा। तंबू।

स्त्री० [हिं० पटकना] पटकने की क्रिया या भाव। पटकान। जैसे—दोनों में उठा-पटक होने लगी।

पटकन†—स्त्री०=पटकान।

पटकना—स० [सं० पतन+करण] १. किसी को या कोई चीज उठाकर या हाथ में लेकर जोर से जमीन पर डालना या गिराना। जोर के साथ ऊँचाई से भूमि की ओर फेंकना। जैसे—(क) किसी लड़के को जमीन पर पटकना। (ख) गिलास या थाली पटकना।

संयो० क्रि०—देना।

मुहा०—(कोई काम) किसी के सिर पटकना=किंचित उग्र रूप से या जबरदस्ती किसी के जिम्मे लगाना। मढ़ना। जैसे—तुम तो सब काम यों ही मेरे सिर पटक देते हो।

२. अपना कोई अंग जोर से किसी तल पर गिराना या रखना। जैसे—जमीन पर सिर या हाथ टपकना। ३. किसी खड़े या बैठे हुए व्यक्ति को उठाकर जोर से नीचे गिराना। दे मारना। ४. कुश्ती में प्रतिद्वन्द्वी को जमीन पर गिराना या पछाड़ना।

अ० १. ऊपरी तल का दबकर कुछ नीचे हो जाना। पचकना। २. (अनाज आदि का) सूखकर सिकुड़ना। ३. (सूजन आदि का) दबकर कम होना। ४. 'पट' शब्द करते हुए किसी चीज का चटक, टूट या फूट जाना। जैसे—मिट्टी का बरतन पटकना।

पटकनिया—स्त्री० [हिं० पटकना] १. पटकने का ढंग, भाव अथवा युक्ति। २. दे० 'पछाड़'।

पटकनी—स्त्री० [हिं० पटकना] १. पटकने की क्रिया या भाव। पटकान।

क्रि० प्र०—देना।

२. पटके जाने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—खाना।

३. पछाड़ खाकर जमीन पर गिरने और लोटने की क्रिया या भाव।

पटकरी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की बेल।

पटकर्म (मन्)—पुं० [प० त०] कपड़े बुनने का काम, धंधा या पेशा। वयन।

पटका—पुं० [सं० पट्टक] १. कमर में बाँधने का दुपट्टा या बड़ा रूमाल। कमरबन्द।

मुहा०—(किसी का) पटका पकड़ना=(क) किसी काम या बात के लिए किसी को उत्तरदायी ठहराना। (ख) किसी से कुछ पाने या लेने के लिए आग्रह करना। (किसी काम के लिए) पटका बाँधना=किसी काम के लिए तैयार होना। कमर कसना।

२. गले में डालने का दुपट्टा। ३. एक प्रकार का चारखाना या धारीदार कपड़ा। ४. दीवार के ऊपर की वह पट्टी जो शोभा के लिए कमरे में अन्दर की ओर बनाई जाती है। कँगनी। कारनिस।

पटकान—स्त्री० [हिं० पटकना] १. पटकने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—देना।

२. झटके या झोंके से किसी के द्वारा नीचे गिराये जाने का भाव।

क्रि० प्र०—खाना।

३. पटके जाने के कारण होनेवाली पीड़ा। ४. छड़ी। डंडा।

पटकार—पुं० [सं० पट√कृ (करना)+अण्] १. कपड़ा बुननेवाला। जुलाहा। २. चित्रपट बनानेवाला। चित्रकार।

स्त्री० [हिं० पटकना] १. वह लंबी रस्सी, जिसे जमीन पर पटककर किसान लोग खेत की चिड़ियाँ उड़ाते हैं। २. उक्त रस्सी के पटके जाने पर होनेवाला शब्द।

पटकी†—स्त्री०=पटकान।

पट-कुटी—स्त्री० [मध्य० स०] रावटी। खेमा। (डिं०)

पट-कूल—पुं० [सं०] कपड़ा। वस्त्र।

पट-चित्र—पुं० [सप्त० त०] १. कपड़े पर बना हुआ वह चित्र, जो लपेटकर रखा जा सके। २. दे० 'चित्र-पट'।

पटच्चर—पुं० [सं० पटत्√पट्+अति, पटच्चर पटत्√चर् (गति)+अच्] १. फटा-पुराना कपड़ा। चीथड़ा। २. चोर। ३. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन देश।

पटझोल*—पुं० [सं० पट=कपड़ा+झोल] १. पहने हुए कपड़े में पड़नेवाला झोल। २. आँचल। पल्ला।

पटड़ा†—पुं० [स्त्री० पटड़ी]=पटरा।

पटण*—पुं०=पत्तन (नगर)।

पटतर—पुं० [सं० पट्ट-तल] १. तुल्यता। बराबरी। समानता। २. उपमा जो तुल्यता या सादृश्य के आधार पर दी जाती है। ३. तुलना। उदा०—सुरपति-सदन न पटतर पावा।—तुलसी।

क्रि० प्र०—देना।— *लहना।

†वि० चौरस। समतल।

क्रि० वि० तुल्य। बराबर। समान। उदा०—राम नाम पटतरै देवै को कछु नाहिं।—कबीर।

पटतरना—स० [हिं० पटतर] १. किसी को किसी दूसरे के तुल्य या बराबर ठहराना। २. किसी के साथ उपमा देना। ३. तुलना करना। ४. (जमीन आदि को) पटतर या समतल बनाना।

अ० १. तुल्य या बराबर ठहराया जाना। २. उपमित किया जाना। ३. तुलना किया जाना। ४. पटतर या समतल बनाया जाना।

पटतारना—स० [हिं० पटा+तारना=अंदाजना] खड्ग, भाला आदि इस रूप में पकड़ना कि उससे वार किया जा सके।

स० [हिं० पटतर] ऊँची-नीची भूमि चौरस या बराबर करना।

पटताल—पुं० [सं० पट्ट-ताल] मृदंग का एक ताल जो एक दीर्घ या दो ह्रस्व मात्राओं का होता है।

पटद—पुं० [सं० पट√दा (देना)+क] कपास जिससे पट या कपड़ा बनता या मिलता है।

पट-दीप—पुं० [सं०] एक प्रकार का राग।

पटधारी (रिन्)—वि० [सं० पट√धृ (धारण करना)+णिनि] जो कपड़ा पहने हो।

पुं० राजाओं के तोशाखाने का प्रधान अधिकारी।

पटन—पुं० दे० 'पट्टन'।

पटना—अ० [हिं० पाटना का अनु०] १. पाटा जाना। २. गड्ढे आदि का भरे जाने के कारण आस-पास के तल के बराबर होना। ३. किसी स्थान का किसी चीज से बहुत अधिक भर जाना। जैसे—आजकल बाजार आम (या खरबूजों) से पट गया है। ४. दीवारों के ऊपर इस प्रकार छत या छाजन बनना कि उनके बीच की भूमि पर छाया हो जाय। पाटन पड़ना या बनना। ५. खेतों आदि का पानी से सींचा जाना। ६. रुचि, विचार, स्वभाव आदि में समानता होने के कारण आपस में एक-रसता, निर्वाह या सौजन्यपूर्ण संबंध होना। जैसे—दोनों भाइयों में अब फिर पटने लगी है। ७. उक्त प्रकार की अवस्था में किसी पर विश्वास होना। उदा०—मीराँ कहै प्रभु हरि अबिनासी तन-मन ताहि पटै रे।—मीराँ। ८. लेन-देन, व्यवहार आदि में दोनों पक्षों में ब्यौरे की बातों में सहमति होना। खरीद-बिक्री आदि के संबंध की सब बातें तय या निश्चित होना। जैसे—सौदा पटना। ९. ऋण, देन आदि का चुकता हो जाना। जैसे—अब उनका सारा ऋण पट गया।

पुं० [सं० पट्टन] भारत की प्राचीन प्रसिद्ध नगरी पाटलिपुत्र का आधुनिक नाम जो आधुनिक बिहार राज की राजधानी है।

पटनिया†—वि० [हिं० पटना+इया (प्रत्य०)] पटना नगर का। पटना नगर से संबंध रखनेवाला।

पटनिहा—वि०=पटनिया।

पटनी—स्त्री० [हिं० पटना=तै होना] १. पटने की अवस्था या भाव। २. पाटने की क्रिया या भाव। ३. छत। ४. वह कमरा जिसके ऊपर कोई और कमरा भी हो। ५. चीजें आदि रखने के लिए दीवार में लगा हुआ तख्ता या पटरी। ६. जमीन या जमींदारी का वह अंश जो किसी को निश्चित लगान पर सदा के लिए दे दिया गया हो। ६. मध्ययुग की वह पद्धति, जिसके अनुसार जमीनों का बंदोबस्त उपर्युक्त रूप से सदा के लिए कर दिया जाता था।

पट-पट—स्त्री॰ [अनु॰] प्रायः हलकी वस्तुओं के गिरने से उत्पन्न होनेवाला 'पट' शब्द।

पद—पट-पट की नाव=बैलगाड़ी।

क्रि॰ वि॰ पट-पट शब्द करते हुए।

पटपटाना—अ॰ [हिं॰ पटकना] १. किसी चीज से पट-पट शब्द होना। २. भूख-प्यास, सरदी-गरमी आदि के कारण बहुत कष्ट पाना। ३. दुःख या शोक करना।

स॰ १. पट-पट शब्द उत्पन्न करना। २. ऐसा काम करना, जिससे कोई भूख-प्यास, सरदी-गरमी, आदि के कारण बहुत कष्ट पावे और तड़पे।

पटपर—वि॰ [हिं॰ पट+अनु॰ पर] १. चौरस। सम-तल। २. पूरी तरह से नष्ट या बरबाद। जिसमें कहीं कुछ भी न हो। बिलकुल खाली। जैसे—सारा घर पटपर पड़ा है।

पुं॰ १. बिलकुल उजाड़ और सुनसान जगह। २. नदी के किनारे की वह भूमि जो वर्षा ऋतु में प्रायः डूबी रहती है। ऐसी जमीन में केवल रबी की फसल होती है।

पट-परिवर्तन—पुं॰ [सं॰ ष॰ त॰] १. रंग-मंच का परदा बदलना। २. एक दृश्य या स्थिति के स्थान पर दूसरा दृश्य या स्थिति उत्पन्न होना।

पट-बंधक—पुं॰ [हिं॰ पटना+सं॰ बंधक] कोई संपत्ति बंधक या रेहन रखने का वह प्रकार जिसमें संपत्ति की सारी आय महाजन ले लेता है; और उस आय में से सूद निकाल लेने के बाद जो धन बच रहता है, वह मूल ऋण में जमा करता चलता है। सारा ऋण पट जाने पर संपत्ति महाजन के हाथ से निकलकर उसके वास्तविक स्वामी के हाथ में चली जाती है।

वि॰ (मकान या स्थान) जो उक्त प्रकार से रेहन रखा गया हो।

पट-बीजना—पुं॰ [हिं॰ पट=बराबर+विज्जु=बिजली ?] जुगनूँ। खद्योत।

पट-भाक्ष—पुं॰ [सं॰ पट√भा (दीप्ति)+क, पटभ√अक्ष् (व्याप्ति)+अच्] प्राचीन काल का एक यंत्र जिससे आँख को देखने में सहायता मिलती थी। एक तरह का प्रकाश-यंत्र।

पट-मंजरी—पुं॰ [सं॰] संगीत में, संपूर्ण जाति की एक प्रकार की रागिनी जो हिंडोल राग की भार्या कही गई है और जो वसंत ऋतु में आधी रात के समय गाई जाती है।

पट-मंडप—पुं॰ [मध्य॰ स॰] कपड़े का मंडप अर्थात् तंबू।

पटम—वि॰ [हिं॰ पटपटाना] १. जिसकी आँखें भूख से पटपटा या बैठ गई हों। जो भूख के मारे अंधा हो गया हो। २. (आँख) जिससे दिखाई न दे।

पटमय—वि॰ [सं॰ पट+मयट्] कपड़े का बना हुआ।

पुं॰ खेमा। तंबू।

पटरक—पुं॰ [सं॰√पट्+अरन्+कन्] पटेर। गोंद पटेर।

पटरा—पुं॰ [सं॰ पट्ट+हिं॰ रा (प्रत्य॰) अथवा सं॰ पटल] [स्त्री॰ अल्पा॰ पटरी] १. काठ का लम्बा, चौकोर और चौरस चीरा हुआ टुकड़ा। तख्ता। पल्ला।

मुहा॰—(कोई चीज) पटरा कर देना=(क) कोई चीज काटकर इस प्रकार गिरा देना कि वह जमीन पर पड़े हुए पटरे के समान हो जाय। (ख) बिलकुल नष्ट या बरबाद कर देना। (किसी व्यक्ति को) **पटरा कर देना**=मार डालकर या अध-मरा करके जमीन पर गिरा देना।

२. धोबी का पाट। ३. बैठने के लिए बना हुआ काठ का पीढ़ा। पाटा। ४. खेत की मिट्टी बराबर करने का पाटा। हेंगा।

मुहा॰—(किसी चीज पर) पटरा फेरना=पूरी तरह से नष्ट या बरबाद कर देना।

पट-रानी—स्त्री॰ [सं॰ पट्ट+रानी] वह स्त्री जिसके साथ किसी राजा का पहला विवाह होता था।

विशेष—पट-रानी को ही राजा के साथ सिंहासन पर बैठने का अधिकार होता था; शेष रानियों को नहीं।

पटरी—स्त्री॰ [हिं॰ पटरा का स्त्री॰ अल्पा॰] १. काठ का छोटा पतला और लंबोतरा टुकड़ा। छोटा पटरा। २. वह तख्ती या पट्टी जिस पर बच्चे लिखने का अभ्यास करते हैं। ३. वह चौड़ा खपड़ा जिसकी संधियों पर नरिया औंधी करके रखी जाती है। थपुआ। ४. सड़क के दोनों किनारों का वह कुछ ऊँचा और कम चौड़ा पथ जो पैदल चलनेवालों के लिए सुरक्षित रहता है। ५. उक्त प्रकार के वे दोनों छोटे रास्ते जो नहरों आदि के दोनों किनारों पर बने रहते हैं। ६. उक्त के आधार पर लोहे के वे लंबे छड़ या टुकड़े जो समानान्तर लगे रहते हैं और जिनके ऊपर से रेल-गाड़ी चलती है। जैसे—रेल-गाड़ी के दो डब्बे पटरी से उतर गये। ७. बगीचे में क्यारियों के इधर-उधर के पतले रास्ते जिनके दोनों ओर सुन्दरता के लिए घास लगा दी जाती है और जिन पर से होकर लोग आते-जाते हैं। ८. हाथ में पहनने की एक तरह की नक्काशीदार चौड़ी चूड़ी। ९. गले में पहनने की चौकी, जंतर या तावीज। १०. लाक्षणिक रूप में, पारस्परिक व्यवहार में वह स्थिति जिसमें परस्पर सौहार्दपूर्वक निर्वाह होता है।

मुहा॰—(किसी से) पटरी बैठना=प्रकृति, रुचि आदि की समानता होने के कारण सहज में और सुगमतापूर्वक निर्वाह होना। जैसे—दोनों बहुत दुष्ट हैं; इसी लिए उनमें खूब पटरी बैठती है।

११. घोड़े की सवारी में वह स्थिति जिसमें सवार की दोनों जाँघें घोड़े की पीठ या जीन पर ठीक तरह से और उपयुक्त स्थान पर बैठती या रहती हैं।

मुहा॰—पटरी जमाना या बैठाना=घुड़सवारी में सवार का अपनी रानों को इस प्रकार जीन पर चिपकाना कि घोड़े के बहुत तेज चलने या शरारत करने पर भी उसका आसन स्थिर रहे।

पटल—पुं॰ [सं॰√पट्+कलच्] १. छप्पर। २. छत। ३. आड़ करने का आवरण। परदा। ४. तह। परत। ५. पक्ष। पहल। पार्श्व। ६. आँख का मोतियाबिन्द नामक रोग। ७. लकड़ी का तख्ता या पटरा। ८. पुस्तक का विशिष्ट खंड या भाग। परिच्छेद। ९. टीका। तिलक। १०. ढेर। राशि। ११. बड़े आदमियों के साथ रहनेवाले बहुत-से लोग। परिच्छंद। लवाजमा।

पटलक—पुं॰ [सं॰ पटल+कन्] १. आवरण। परदा। २. वह कपड़ा जिसपर इत्र या सुगंधित द्रव्य लगा हो। ३. झाबा। डलिया। ४. पिटारी या सन्दूक। ५. ढेर। राशि।

पटलता—स्त्री॰ [सं॰ पटल+तल्—टाप्] अधिकता।

पटल-प्रांत—पुं० [ष० त०] छप्पर का सिरा या किनारा।

पटली—स्त्री० [सं० पटल+ङीप्] १. छप्पर। २. छत।
† स्त्री०=पटरी।

पटवा—पुं० [हिं० पाट+वाह (प्रत्य०)] [स्त्री० पटइन] वह जो दानों, मनकों आदि को सूत या रेशम की डोरी में गूँथने या पिरोने का काम करता हो। पटहार।
पुं० [?] १. पीले रंग का एक प्रकार का बैल जो खेती के लिए अच्छा समझा जाता है। २. पटसन। पाट।

पटवाद्य—पुं० [सं० तृ० त०] झाँझ के आकार का एक प्राचीन बाजा जिससे ताल दिया जाता था।

पटवाना—स० [हिं० पाटना का प्रे०] पाटने का काम दूसरे से कराना। किसी को कुछ पाटने में प्रवृत्त करना। जैसे—खेत, गड्ढा या छत पटवाना ; करज या देन पटवाना।
स० [हिं० 'पटाना' का प्रे०] किसी को पटाने (कम होने, दबने, बैठने आदि) में प्रवृत्त करना। जैसे—दरद या सूजन पटवाना। वि० दे० 'पटाना'।

पट-वाप—पुं० [ब० स०] खेमा। तंबू।

पटवारगिरी—स्त्री० [हिं० पटवारी+फा० गरी] पटवारी का काम, पद या भाव।

पटवारी—पुं० [सं० पट्ट+हिं० वारी (प्रत्य०)] खेती-बारी की जमीनों तथा उसकी उपज, मालगुजारी आदि का लेखा रखनेवाला एक सरकारी कर्मचारी। लेख-पाल।
स्त्री० [सं० पट=कपड़ा+हिं० वारी (प्रत्य०)] मध्ययुग में, वह दासी जो रानियों अथवा अन्य बड़े घरों की स्त्रियों को कपड़े, गहने आदि पहनाती थी।

पट-वास—पुं० [मध्य० स०] १. कपड़े का बना हुआ घर अर्थात् खेमा या तंबू। २. छावनी। शिविर। ३. लँहगा।
पुं० [सं० पट√वास् (सुगंधित करना)+णिच्+अण्] वह सुगंधित वस्तु जिससे कपड़े बसाये या सुगंधित किये जाते हों।

पटवासक—पुं० [सं० पटवास+कन्] सुगंधित वस्तुओं का वह चूर्ण जिससे वस्त्र आदि बसाये या सुगंधित किये जाते थे।

पट-विहाग—पुं० [सं० पट+विहाग] संगीत में, बिलावल ठाठ का एक संकर राग।

पट-वेश्म(न्)—पुं० [मध्य० स०] तंबू। खेमा।

पटसन—पुं० [सं० पाट+हिं० सन] १. सन या सनई नामक प्रसिद्ध पौधा जिसके डंठलों के रेशों को बट या बुनकर रस्सियाँ, बोरे आदि बनाये जाते हैं। २. उक्त रेशे। जूट। पटुआ। पाट।

पटसार†—स्त्री० [सं० पटशाला] खेमा। तंबू।

पटसाली—पुं० [सं० पट्टशाली] वस्त्र बुननेवालों की एक जाति। (मध्यप्रदेश)

पटहंसिका—स्त्री० [सं० ष० त०] संपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

पटह—पुं० [सं० पट√हन् (चोट करना)+ड] १. डुगडुगी। २. ढोल। ३. नगाड़ा। ४. क्षति या हानि पहुँचाना। ५. हिंसा। ६. किसी काम में हाथ डालना या लगाना।

पटह-घोषक—पुं० [ष० त०] डुगडुगी, ढोल या नगाड़ा बजानेवाला व्यक्ति।

पटह-भ्रमण—पुं० [ब० स०] १. लोगों को इकट्ठा करने के लिए घूम-घूमकर ढिंढोरा या ढोल पीटनेवाला व्यक्ति। २. [तृ० त०] डुगडुगी, ढोल आदि बजाते हुए चलना।

पटहार (१)—पुं० [सं० पाट+हिं० हारा (प्रत्य०)] [स्त्री० पटहारिन, पटहारी] सूत, रेशम आदि के तागों में गहनों के दाने, मनके आदि गूँथनेवाला व्यक्ति। पटवा।

पटा—पुं० [सं० पट] १. प्रायः दो हाथ लोहे की वह पट्टी जिससे तलवार से वार करने और दूसरों के वार रोकने की कला का अभ्यास किया जाता है।
विशेष—इसका अभ्यास प्रायः बनेठी के साथ होता है ; और प्रायः लोग अपना कौशल दिखलाने के लिए खेल के रूप में इसका प्रदर्शन भी करते हैं।
२. लंबी धारी या लकीर। ३. लगाम की मोहरी। ४. चटाई।
पुं० [सं० पट्ट] १. पीढ़ा। पटरा।
पद—पटा-फेर=विवाह की एक रसम जिसमें कन्यादान हो चुकने पर वर और वधू के आसन परस्पर बदल दिये जाते हैं।
विशेष—जब तक कन्यादान नहीं होता, तब तक वधू को वर की दाहिनी ओर बैठना पड़ता है। कन्यादान हो चुकने पर वधू को वर के बाएँ बैठाते हैं। उस समय परस्पर आसन का जो परिवर्तन होता है, वही पटाफेर कहलाता है।
मुहा०—(राजा का किसी रानी को) पटा बाँधना=पट-रानी या प्रधान महिषी बनाना। उदा०—चौदह सहस तिया मैं तो कौं पटा बँधाऊँ आज।—सूर।
२. अधिकार-पत्र। सनद। पट्टा। (देखें)
पुं० [सं० पट] १. कपड़ा। वस्त्र। २. दुपट्टा। ३. पगड़ी।
पुं० [सं० पटना=तै होना] क्रय-विक्रय, विनिमय आदि के रूप में होनेवाला पारस्परिक लेन-देन या व्यवहार। सौदा।
*वि० [हिं० पट=औंधा] १. औंधाया हुआ। २. मारकर गिराया हुआ। उदा०—कीजै कहा बिधि की बिधि कौ दियो दारुन लोट पटा करिबे कौ।—पद्माकर।

पटाई—स्त्री० [हिं० पाटना] १. पाटने की क्रिया या भाव। २. पाटने का पारिश्रमिक या मजदूरी।
स्त्री० [हिं० पटाना] १. ऋण, देन आदि पटाने या चुकता करने की क्रिया या भाव। २. क्रय-विक्रय, लेन-देन अथवा समझौता आदि के लिए किसी को राजी करने की क्रिया या भाव। ३. सौदा आदि पटाने पर मिलनेवाला पुरस्कार।

पटाक—स्त्री० [अनु०] किसी भारी चीज के गिरने, अथवा किसी चीज पर कठोर आघात लगने या लगाने से होनेवाला शब्द। जैसे—किसी के मुँह पर जोर से चपत लगाने से होनेवाला शब्द।
पद—पटाक-पटाक=निरंतर पटाक शब्द करते हुए।

पटाका—पुं० [हिं० पटाक] १. पट या पटाक से होनेवाला जोर का शब्द। २. तमाचा। थप्पड़।
क्रि० प्र०—जड़ना। —देना। —लगाना।

३. आतिशबाजी की एक प्रकार की गोली जिसे जमीन पर पटकने से जोर का शब्द होता है।

क्रि० प्र०—छूटना। —छोड़ना।

४. किसी प्रकार की आतिशबाजी में होनेवाला उक्त प्रकार का शब्द।

५. युवा तथा सुन्दर स्त्री। (बाजारू)

स्त्री० [सं०√पट् (गति)+आक नि०, टाप्] झंडा। ध्वजा। पताका।

पटाक्षेप—पुं० [सं० पट-आक्षेप, ष०त०] १. परदा गिरना या गिराना। २. रंगमंच पर अभिनय के समय नाटक का एक अंग पूरा हो जाने पर कुछ समय के लिए परदा गिरना, जो थोड़ी देर के अवकाश का सूचक होता है। ३. लाक्षणिक अर्थ में किसी घटना या बात की होनेवाली समाप्ति। जैसे—चार वर्ष बाद युद्ध का पटाक्षेप हुआ।

पटाखा†—पुं०=पटाका।

पटान—स्त्री० [हिं० पाटना] १. पाटने की क्रिया या भाव। २. =पाटन।

स्त्री० [हिं० पटाना] (ऋण, देन आदि) पटाने अर्थात् चुकता करने की क्रिया या भाव। पटाई।

पटाना—स० [हिं० पाटना का प्रे०] [भाव० पटाई] १. गड्ढा आदि पाटने में किसी को प्रवृत्त करना। २. किसी से छाजन आदि डलवाना।

†अ० १. पाटा जाना। पटना। २. कम होना। घटना। जैसे—रोग या सूजन पटाना। ३. शांत और स्थिर होना। (पूरब)

स० [हिं० पटना का स०] १. ऐसा काम करना जिससे कोई क्रिया संपन्न होती हो अथवा कोई बात तय या हल होती हो। जैसे—(क) ऋण पटाना। (ख) सौदा पटाना। २. बात-चीत के द्वारा किसी को अपने अनुकूल करके क्रय-विक्रय, लेन-देन, समझौता आदि करने के लिए राजी करना। जैसे—ग्राहक या यजमान पटाना।

पटापट—अव्य० [अनु० पट] १. लगातार पट-पट शब्द करते हुए। जैसे—पटापट थप्पड़ पड़ना। २. बहुत जल्दी-जल्दी। चट-पट। तुरन्त। जैसे—पटापट दूकानें बन्द होने लगीं।

स्त्री० निरंतर 'पटपट' होनेवाली ध्वनि या शब्द।

पटापटी—स्त्री० [अनु०] वह वस्तु जिस पर कई रंगों की आकृतियाँ, बेल-बूटे, फूल-पत्तियाँ आदि बनी हों। उदा०—बाँधी बँदनवार विविध बहु पटापटी की।—रत्नाकर।

पटार†—पुं० [सं० पिटक] १. पिटारा। मंजूषा। २. पिंजड़ा।

पुं० [सं० पट] १. रेशम की डोरी या रस्सी।

† पुं०=कनखजूरा।

पटालुका—स्त्री० [सं० पट√अल् (पर्याप्ति) उक-टाप्] जोंक। जलौंका।

पटाव—पुं० [हिं० पाटना] १. पाटने की क्रिया, ढंग या भाव। २. वह कूड़ा-करकट, मिट्टी आदि जिससे गड्ढे आदि पाटे गये हों। पाटकर बराबर किया हुआ स्थान। ३. पाटकर बनाई गई छत। पाटन। ४. दरवाजे में चौखट के ऊपर रखी जानेवाली वह लकड़ी, जिस पर दीवार की चुनाई की जाती है। भरेठा।

पटास—स्त्री० [हिं० पाटना+आस (प्रत्य०)] पटाने या पाटने की क्रिया या भाव।

पटासन—पुं० [सं० पट-आसन, मध्य० स०] कपड़े आदि का बना हुआ आसन।

पटि—स्त्री० [सं०√पट्+इन्] १. रंगीन कपड़ा या वस्त्र। २. जल-कुंभी। ३. रंगमंच का परदा। यवनिका। ४. कनात।

पटिआ†—स्त्री०=पटिया।

पटिका—स्त्री० [सं० पटि+कन्—टाप्] १. कपड़ा। वस्त्र। २. कपड़े का टुकड़ा। वस्त्र खंड।

पटि-क्षेप—पुं०=पटाक्षेप।

पटिमा (मन्)—स्त्री० [सं० पटु+इमनिच्] १. पटुता। दक्षता। २. कर्कशता। ३. रूखापन। ४. तेजी। उग्रता। ५. अम्लता।

पटिया—स्त्री० [सं० पट्टिका] १. पत्थर का आयताकार, चौरस या लंबा टुकड़ा जो साधारणतः डेढ़-दो इंच से मोटा नहीं होता।

विशेष—यह फरश बनाने के लिए जमीन पर बिछाई जाती है और इससे छतें भी पाटी जाती हैं।

२. लकड़ी का आयताकार चौरस छोटा टुकड़ा जिस पर बच्चे आदि लिखने का अभ्यास करते हैं। तख्ती। पाटी। ३. छोटा हेंगा। ४. लंबा किंतु कम चौड़ा खेत का टुकड़ा। ५. सीधी लंबी रेखा या विभाग। उदा०—आठ हाथ की बनी चुनरिया पँच रंग पटिया पारी।—कबीर।

स्त्री० १. माँग या सीमन्त निकालकर झाड़े हुए बाल। पाटी।

क्रि० प्र०—सँवरना।

२. दे० 'पाटी'।

पटी—स्त्री० [सं० पटि+ङीप्] १. कपड़े का पतला लंबा टुकड़ा। पट्टी। २. पगड़ी। साफा। ३. कमरबन्द। पटका। ४. आवरण। परदा। ५. नाटक या रंग-मंच का परदा।

पटीमा—पुं० [हिं० पट्टी] पटिया के आकार का अधिक लंबा और कम चौड़ा छीपियों का तख्ता जिस पर रखकर वे कपड़े आदि छापते हैं।

पटीर—पुं० [सं०√पट्+ईरन्] १. एक प्रकार का चन्दन। २. कत्था। खैर। ३. कत्थे या खैर का पेड़। खदिर वृक्ष। ४. मूली। ५. बड़ का पेड़। वटवृक्ष। ६. क्यारी। ७. उदर। पेट। ८. क्षेत्र। मैदान। ९. जुकाम या प्रतिश्याय नामक रोग। १०. चलनी। छाननी। ११. बादल। मेघ।

पटीलना—स० [हिं० पटाना] १. किसी को फुसलाकर किसी काम के लिए राजी कर लेना। किसी को समझा-बुझाकर अपने अर्थ-साधन के अनुकूल करना। २. छलना। ठगना। ३. सफलतापूर्वक कोई काम पूरा उतारना। ४. परास्त करना। हराना। ५. पीटना। मारना। (बाजारू)

पटु—वि० [सं०√पट्+उन्] [भाव० पटुता] १. किसी काम या बात में कुशल अथवा दक्ष। निपुण। प्रवीण। २. चतुर। चालाक। ३. धूर्त। मक्कार। ४. कठोर हृदयवाला। निष्ठुर। ५. नीरोग। स्वस्थ। ६. तीक्ष्ण। तेज। ७. उग्र। प्रचंड। ८. जो स्पष्ट रूप से सामने आया हुआ हो। प्रकाशित। व्यक्त। ९. मनोहर। सुन्दर। १०. कर्कश (स्वर)। ११. विकसित।

पुं० १. नमक। २. पांशु लवण। पाँगा नमक। ३. चीनी कपूर। ४. नक-छिकनी। ५. परवल (लता और फल)। ६. करेला। ७. चिरमिटा नामक लता। ८. जीरा। ९. बच।

पटुआ—पुं० [सं० पाट] १. पाट या सन का पौधा। जूट। पटसन। २. करेमू। ३. वह डंडा जिसके सिरे पर गून या डोरी बँधी रहती है और जिसे पकड़कर मल्लाह लोग नाव खींचते हैं।

†पुं० [?] तोता (पक्षी)।

पटुक—पुं० [सं० पटु+कन्] परवल।

पुं० [सं० पट] कपड़ा। वस्त्र।

पटुका—पुं०=पटका।

पटुता—स्त्री० [सं० पटु+तल्—टाप्] पटु होने की अवस्था या भाव। प्रवीणता। निपुणता। होशियारी।

पटु-तूलक—पुं०=पटुतृणक।

पटु-तृणक—पुं० [सं० पटु-तृण, मध्य० स०,+कन्] लवणतृण (घास)।

पटु-त्रय—पुं० [सं० ष० त०] काला, बिड़ और सेंधा इन तीन प्रकार के लवणों का समाहार।

पटुत्व—पुं० [सं० पटु+त्व] पटुता।

पटु-पत्रिका—स्त्री० [सं० पटु-पत्र, ब० स०, कप्—टाप्, इत्व] चेंच नामक साग।

पटु-पर्णिका—स्त्री० [सं० पटु-पर्ण, ब० स०,+कप्—टाप्, इत्व] मकोय।

पटु-पर्णी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्] मकोय।

पटु-रूप—वि० [सं० पटु+रूपप्] जो किसी काम में बहुत अधिक पटु हो।

पटुली—स्त्री० [सं० पट्ट] १. काठ की वह पटरी जो झूले के रस्सों पर रक्खी जाती है। पाटा। २. चौकी। ३. छकड़े या बैल-गाड़ी के बगल में जड़ी हुई लंबी पटरी।

पटुवा†—पुं० १. =पटुआ। २. =पटवा।

पटूका†—पुं०=पटका।

पटे—वि० [हिं० पटना] (ऋण, देन आदि) जो पट या पटाया जा चुका हो।

पद—बर पटे=पूरी तरह से या बिलकुल चुकता।

पटेबाज—पुं० [हिं० पटा+फा० बाज़] [भाव० पटेबाजी] १. वह जो पटा-बनेठी आदि खेलता या पटा हाथ में लेकर लड़ता हो। पटैत। २. मनुष्य के आकार का एक प्रकार का खिलौना जो डोरी खींचने से दोनों हाथों से पटा खेलता है। ३. उक्त प्रकार की एक आतिशबाजी।

वि० १. दुश्चरित्रा और पुंश्चली। छिनाल (स्त्री)। २. बहुत चालाक या धूर्त्त (पुरुष या स्त्री)।

पटेबाजी—स्त्री० [हिं० पटेबाज] १. पटेबाज का कार्य और कौशल। २. व्यभिचार। छिनाला। ३. धूर्तता।

पटेर—स्त्री० [सं० पटेरक] जलाशयों में होनेवाला सरकंडे की जाति का एक पौधा जिसके पत्तों की चटाइयाँ, टोकरियाँ आदि बनाई जाती हैं।

पटेरा†—पुं० १.=पटेला। २.=पटरा।

पटेल—पुं० [सं० पट्ट+हिं० वाल (प्रत्य०)] १. गाँव का नंबरदार। (म० प्र०) २. गाँव का चौधरी या मुखिया।

पटेलना—स०=पटीलना।

पटेला—पुं०=पटैला।

पटैत—पुं० [हिं० पटा+ऐत (प्रत्य०)] पटा खेलने या लड़नेवाला खिलाड़ी। पटेबाज।

पुं० [हिं० पट्टा+ऐत (प्रत्य०)] १. वह जिसके नाम किसी जमीन या जायदाद का पट्टा लिखा गया हो। २. गाँव भर का पुरोहित जिसे पौरोहित्य का पट्टा मिला करता था।

पुं० [हिं० पटाना] वह जिसे सहज में पटाया अथवा अपने अनुकूल बनाया जा सकता हो, फलतः मूर्ख या सीधा-सादा।

पटैला—पुं० [हिं० पाटना] [स्त्री० अल्पा० पटैली] १. एक प्रकार की बड़ी नाव जिसका बीचवाला भाग ऊपर से पटा या छाया हुआ रहता है।

मुहा०—किसी के पटैले के साथ अपनी पनसुइया बाँधना=किसी बहुत बड़े कार्य या व्यक्तित्व के साथ अपना तुच्छ कार्य या व्यक्तित्व संबद्ध करना।

२. पटेर नाम का पौधा जिससे चटाइयाँ आदि बनती हैं। ३. हेंगा। ४. पत्थर की पटिया। ५. कुश्ती का एक प्रकार का पेंच।

पुं० [हिं० पाटा] दरवाजा बंद करते समय अंदर से लगाया जानेवाला डंडा। ब्योंड़ा। अर्गल।

पटैली—स्त्री० [हिं० पटेला] छोटी पटेला नाव।

पटोटज—पुं० [सं० पट-उटज, मध्य० स०] १. खेमा। २. [पट-उट ष० त०, पटोट √ जन् (उत्पत्ति)+ड] कुकुरमुत्ता। ३. छत्रक।

पटोर—पुं० [सं० पटोल] १. पटोल। परवल। २. रेशमी कपड़ा। उदा०—मैं कोरी सँग पहिरि पटोरा।—जायसी। ३. स्त्रियों के पहनने की अंगिया या चोली।

पद—लहरा पटोर। (देखें)

पटोरी—स्त्री० [सं० पाट्+ओरी (प्रत्य०)] १. रेशमी धोती या साड़ी २. रेशमी किनारे की धोती या साड़ी।

पटोल—पुं० [सं० √पट्+ओलच्] १. गुजरात में बननेवाला एक तरह का रेशमी कपड़ा। २. परवल की लता और उसका फल।

पटोलक—पुं० [सं० पटोल √कै (चमकना)+क] सीपी। शुक्ति।

पटोल-पत्र—पुं० [ब० स०] एक तरह की पोई।

पटोला—पुं० [हिं० पटोल] १. एक तरह का रेशमी कपड़ा। २. कपड़े का वह छोटा टुकड़ा जिससे बच्चे खेलते हैं और विशेषतः जिसे गुड़िया को पहनाते हैं। (पश्चिम)

पटोलिका—स्त्री० [सं० पटोल+कन्—टाप्, इत्व] १. एक तरह का पट्टा। २. कोई लिखित विधिक मत। ३. पेटी। मंजूषा। उदा०—पटोलिका में अलाक्तक (महावर) मनःशिला, हरिताल, हिंगुल और राजावर्त्त का चूर्ण रखा हुआ था।—हजारीप्रसाद द्विवेदी। ४. एक तरह की तरोई।

पटोली*—स्त्री० पटोलिका।

पटोसिर†—पुं० [हिं० पट+सिर] पगड़ी। साफा।

पटौंधन—पुं० [हिं० पटाना] रेहन रखी हुई चीज का रुपया किसी प्रकार या रूप में चुकाकर वह चीज फिर से अपने हाथ में कर लेने की क्रिया या भाव।

पटौतन—पुं०=पटौनी।

पटौनी—पुं० [देश०] माँझी। मल्लाह।
स्त्री० [हिं० पटाना] १. ऋण आदि चुकाने या पटाने की क्रिया या भाव। २. दे० 'पटौंधन'।

पटौहाँ—वि० [हिं० पाटना] १. पाटकर बनाया हुआ। २. पाटा हुआ।
पुं० १. पटा हुआ स्थान। २. पाटन। छत। ३. ऐसा कमरा जिसके ऊपर कोई और कमरा भी हो। ४. पटबंधक।
वि० [हिं० पटाना] (ऋण) जो पटाकर पूरा किया जा सकता हो।

पट्ट—पुं० [सं० √पट्+क्त] १. बैठने की चौकी या पीढ़ा। पाटा। २. लिखने का अभ्यास करने की तख्ती। पटिया। ३. लकड़ी का वह बड़ा टुकड़ा, जिस पर नाम आदि लिखा अथवा सूचनाएँ आदि लगाई जाती हैं। जैसे—नाम-पट्ट, सूचना-पट्ट। ४. पट्टा। (दे०) ५. पत्थर, लकड़ी, लोहे आदि का चौकोर या बड़ा टुकड़ा। ६. ताँबे आदि धातुओं का पत्तर, जिस पर राजकीय आज्ञाएँ, दान-पत्र आदि उकेरे या खोदे जाते थे। ७. घाव पर बाँधने की कपड़े की पट्टी। ८. ढाल। ९. पगड़ी। १०. दुपट्टा। ११. नगर। शहर। १२. चौमुँहानी। चौराहा। १३. राजसिंहासन।
पद—पट्ट-महिषी। (देखें)
१४. रेशम। १५. पटसन। पाट। १६. टसर का बना हुआ कपड़ा।
वि० [अनु०]=पट (चित्त का विपर्याय)।
पुं० दे० 'पट्टा' (ठीके आदि का लेख्य)।

पट्टक—पुं० [सं० पट्ट+कन्] १. लिखने की तख्ती या पट्टी। २. घाव, चोट, सूजन आदि पर बाँधने की पट्टी। ३. एक प्रकार का रेशमी लाल कपड़ा, जिसकी पगड़ियाँ बनती थीं। ४. ताँबे आदि का वह पत्तर जिस पर राजकीय आज्ञाएँ, दान-लेख आदि उकेरे या खोदे जाते थे।

पट्टकीट—पुं० [ष०त०] रेशम का कीड़ा।

पट्टज—पुं० [पट्ट√जन् (उत्पन्न होना)+ड] रेशम के कीड़ों की एक जाति।

पट्ट-देवी—स्त्री० [मध्य०स०] प्राचीन काल में राजा की वह प्रथम ब्याही हुई स्त्री, जो उसके साथ सिंहासन पर बैठती थी।

पट्टदोल—स्त्री० [मध्य०स०] एक तरह का झूला जो कपड़े का बना होता था।

पट्टन—पुं० [सं०√पट्ट+तनप्] नगर। शहर।

पट्टनी—स्त्री० [सं० पट्टन्+ङीप्] १. छोटा नगर। नगरी। २. रेशमी कपड़ा।

पट्ट-महिषी—स्त्री० [मध्य०स०] पट-रानी। (दे०)

पट्ट-रंग—पुं० [ष०त०] पतंग या बक्कम जिसकी लकड़ी से रंग निकलता है।

पट्ट-रंजक, पट्ट-रंजन—पुं०=पट्ट-रंग।

पट्ट-राज—पुं० [मध्य०स०] पुजारी। (महाराष्ट्र)

पट्ट-राज्ञी—स्त्री० [मध्य०स०] पट-रानी।

पट्टला—स्त्री० [सं० पट्ट √ ला (लेना)+क—टाप्] १. आधुनिक जिले की तरह की एक प्राचीन शासनिक इकाई। २. उक्त इकाई में रहनेवाला जन-समूह। (कम्यूनिटी)

पट्ट-लेख्य—पुं० [ष०त०] वह लेख्य जिसमें पट्टे की शर्तें आदि लिखी हों। (लीज़ डीड)

पट्ट-वस्त्र, पट्ट-वासा (सस्)—वि० [ब०स०] जो रंगीन या रेशमी वस्त्र पहनता हो।

पट्टशाक—पुं० [कर्म०स०] पटुआ

पट्टह घोषक—पुं० [सं० पटहघोषक] ढिंढोरा पीटने या मुनादी करनेवाला व्यक्ति।

पट्टांशुक—पुं० [सं० पट्ट-अंशुक, कर्म०स०] १. रेशमी कपड़ा। २. शरीर के ऊपरी भाग में पहनने या ओढ़ने का कपड़ा।

पट्टा—पुं० [सं० पट्ट] १. वह अधिकार-पत्र जो भूमि या स्थावर संपत्ति का स्वामी किसी असामी, किरायेदार या ठेकेदार को इसलिए लिखकर देता है कि वह उस भूमि या स्थावर संपत्ति का कुछ समय के लिए उचित उपयोग कर सके; उससे होनेवाली आय वसूल कर सके अथवा उसकी पैदावार बेच सके; और उसका कुछ अंश भूमि या संपत्ति के स्वामी को भी देता रहे।
क्रि० प्र०—देना।—लिखना।
२. वह पत्र या लेख्य जो मध्ययुग में असामी या काश्तकार किसी जमींदार की जमीन जोतने-बोने के लिए लेते समय उसे इसलिए लिखकर देता था कि नियत समय के उपरांत जमींदार को उस जमीन का फिर से मनमाना उपयोग करने का अधिकार हो जायगा।
विशेष—इसकी स्वीकृति का सूचक जो लेख्य जमींदार लिख देता था, उसे 'कबूलियत' कहते थे।
क्रि० प्र०—लिखना।—लिखाना।
३. कुछ स्थानों में वे नियम, जो लगान वसूल करनेवाले कर्मचारियों के लिए बनाये जाते थे। ४. उक्त के आधार पर कहार, धोबी, नाई, भाट आदि का वह नेग, जो उन्हें वर-पक्ष से दिलवाया जाता था।
क्रि० प्र०—चुकवाना।—चुकाना।—दिलाना।—देना।
५. चमड़े आदि का वह तस्मा या पट्टी जो कुछ पशुओं के गले में उन्हें बाँधकर रखने के लिए पहनाई जाती है। जैसे—कुत्ते, बंदर या बिल्ली के गले का पट्टा। ६. उक्त के आधार पर, कमर में बाँधने का चमड़े आदि का वह तस्मा, जिसमें चपरास टँगी रहती या तलवार लटकाई जाती है। ७. उक्त के आधार पर, दक्षिण भारत या महाराष्ट्र देश की एक प्रकार की तलवार, जो कमर में लटकाई जाती थी। ८. किसी चीज का कोई कम चौड़ा और अधिक लंबा टुकड़ा, जिससे कोई विशेष काम लिया जाता हो। जैसे—कामदार जूते या टोपी का पट्टा=मखमल आदि का वह लंबा टुकड़ा जिसपर सलमें-सितारे का काम बना हो। ९. कुछ चौड़ी पटरी के आकार का, कलाई पर पहना जानेवाला एक प्रकार का गहना। १०. कोई ऐसा चिह्न या निशान जो कुछ कम चौड़ा और अधिक लंबा हो। जैसे—घोड़े या बैल के माथे का पट्टा। ११. एक प्रकार का लंबोतरा गहना जो घोड़ों के माथे पर लटकाया जाता है। १२. पुरुषों के सिर के दोनों ओर के बाल जो मध्ययुग में बड़ी पट्टी के रूप में, सँवारकर दोनों ओर लटकाये जाते थे।
विशेष—स्त्रियों के इस प्रकार सँवारकर बाँधे हुए बाल 'पट्टी' कहलाते हैं।
१३. बैठने के लिए बना हुआ काठ का पटरा। पीढ़ा।

पुं०[?]कोई ऐसा अनाज, फली या दानों की बाल जो अभी पूरी तरह से पककर तैयार न हुई हो। (पूरब)
पुं०[सं० पट्टी] [स्त्री० अल्पा० पट्टी]१. एक प्रकार का प्राचीन शस्त्र। २. लड़ाई-भिड़ाई के समय का पैंतरा।

पट्टाधारी—पुं०[हिं० सं०] वह व्यक्ति जिसने किसी निश्चित अवधि के लिए कुछ शर्तों पर किसी से कोई जमीन या संपत्ति भोग्यार्थ प्राप्त की हो। पट्टे पर जमीन आदि लेनेवाला। (लीज-होल्डर)

पट्टा-पछाड़—पुं०=पट्टे-पछाड़।

पट्टा-बैठक—स्त्री०=पट्टे-बैठक।

पट्टाभिषेक—पुं०[सं० पट्ट-अभिषेक, स० त०] १. राज्याभिषेक। २. वे विशिष्ट कृत्य जो जैन विद्वानों को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करने के समय होते हैं। ३. वह साहित्यिक रचना, जिसमें उक्त कृत्यों का वर्णन होता है।

पट्टार—पुं०[सं० पट्ट√ऋ (गति)+अण्] [वि० पट्टारक] एक प्राचीन देश।

पट्टारक—वि०[सं० पट्टार+वुन् —अक] पट्टार देश का।

पट्टाही—स्त्री०[पट्ट-अही, स० त०] पटरानी।

पट्टिका—स्त्री०[सं० पट्ट+कन्—टाप्, इत्व]१. छोटी तख्ती। पटिया। २. छोटा चित्र-पट या ताम्र-पट। ३. कपड़े की छोटी पट्टी। ४. रेशमी फीता। ५. पठानी लोध। ६. दस्तावेज। पट्टा।

पट्टिकाख्य—पुं०[सं० पट्टिका-आख्या, ब०स०]पठानी-लोध। रक्त-लोध्र।

पट्टिका-बैठक—स्त्री०=पट्टे-बैठक।

पट्टिकार—पुं०[सं० पट्टिका √ऋ+अण्] रेशमी वस्त्र बनानेवाला कारीगर।

पट्टिका-लोध्र—पुं०[मयू०स०] पठानी लोध।

पट्टिका-वायक—पुं०[प०त०]=पट्टिकार।

पट्टिय*—स्त्री०[सं० पट्टिका]केश-विन्यास।

पट्टिल—पुं०[सं० पट्ट+इलच्] पूतिकरंज। पलंग।

पट्टिलोध्र (क)—पुं०=पट्टिका-लोध्र।

पट्टिश—पुं०[सं० √पट (गति)+टिशच्] आधुनिक पटा नामक अस्त्र के आकार का एक प्राचीन अस्त्र।

पट्टिशी (शिन्)—वि०[सं० पट्टिश+इनि]१. पट्टिश बाँधनेवाला। २. पट्टिश हाथ में लेकर लड़नेवाला। पटेबाज।

पट्टिस—पुं०[सं० पट्टिश] पटा नामक शस्त्र।

पट्टी—स्त्री०[सं० पट्टिका]१. लकड़ी की वह लंबोत्तरी, चौरस और चिपटी पटरी जिस पर बच्चों को अक्षर लिखने का अभ्यास कराया जाता है। तख्ती। पटिया। पाटी। २. अभ्यास आदि के लिए पट्टी पर दिया जानेवाला पाठ। सबक। ३. आदेश। शिक्षा। ४. उक्त के आधार पर लाक्षणिक रूप में कोई ऐसी उलटी-सीधी बात जो किसी को अपने अनुकूल बनाने के लिए अथवा किसी अन्य दुष्ट उद्देश्य से अच्छी तरह समझा-बुझाकर किसी के मन में बैठा दी गई हो। बुरी नियत से दी जाने-वाली सलाह।

मुहा०—(किसी को) पट्टी पढ़ाना=किसी को उलटी-सीधी बातें समझा-बुझा या सिखा-पढ़ाकर अपने अनुकूल करना अथवा गलत रास्ते पर लगाना या बहकाना। उदा०—मीत सुजान अनीति की पाटी इतै पै न जानिये कौन पढ़ाई।—घनानंद। (किसी की) पट्टी में आना=किसी के द्वारा सिखलाई उलटी-सीधी अथवा अनुचित बात सही मानकर उसके अनुसार आचरण या कार्य करना।

४. कपड़े, काठ, धातु आदि का वह लंबा किंतु कम चौड़ा और पतला टुकड़ा, जो किसी बड़े अंश से काट, चीर या फाड़ कर अलग किया या निकाला गया हो। ५. कपड़े का उक्त आकार का ऐसा टुकड़ा, जो घाव, चोट आदि पर बाँधा जाता है। ६. बुना हुआ ऐसा कपड़ा जिसकी चौड़ाई सामान्य माप के अन्य कपड़ों से अपेक्षाकृत कम या बहुत कम होती है। जैसे—(क) घुटने और टखने के बीचवाले अंश में बाँधी जानेवाली पट्टी। (ख) इस साड़ी पर कला बत्तू की पट्टी लग जाय तो अच्छा हो। ७. उक्त आकार का टाट का वह टुकड़ा जो वैसी ही और टुकड़ों के साथ जोड़ या सीकर जमीन पर बिछाया जाता है। ८. ऊन का बुना हुआ देशी गरम कपड़ा, जिसकी चौड़ाई अन्य सूती कपड़ों की चौड़ाई से कम होती। जैसे—इस कोट में पट्टू की एक पूरी पट्टी लग जायगी। ९. कपड़े की बुनावट में उसकी लंबाई के बल में कुछ मोटे सूतों से बना हुआ किनारा। १०. लकड़ी के वे लंबे टुकड़े, जो खाट या चारपाई के ढाँचे में लंबाई के बल लगे रहते हैं। पाटी। ११. उक्त आकार-प्रकार की वह लकड़ी, जो छत या छाजन के नीचे लगाई जाती है। बल्ली। १२. छाजन में लगी हुई कड़ियों की पंक्ति। १३. नाव के बीचो-बीच का तख्ता। १४. पत्थर का लंबा, कम चौड़ा और पतला आयताकार टुकड़ा। पटिया। १५. किसी रचना का ऐसा विभाग, जो एक सीध में दूर तक चला गया हो। जैसे—खेमों, झोंपड़ियों या दुकानों की पट्टी। १६. स्त्रियों के सिर के बालों की वह रचना जो कंघी की सहायता से बना-सँवारकर माँग के दोनों ओर प्रस्तुत की जाती है। पाटी।

पद—माँग-पट्टी। (देखें)

मुहा०—पट्टी जमाना=माँग के दोनों ओर के बालों को गोंद या चिपचिपे पदार्थ की सहायता से इस प्रकार बैठाना कि ये सिर के साथ बिलकुल चिपक जायँ और जमी हुई पट्टी की तरह मालूम होने लगें।

१७. मध्ययुग में, किसी संपत्ति अथवा उससे होनेवाली आय का वह अंश जो उसके किसी हिस्सेदार को मिलता था। पत्ती।

पद—पट्टी का गाँव=मध्ययुग में, ऐसा गाँव जिसके बहुत से मालिक होते थे और इसी कारण जहाँ प्रायः अव्यवस्था या कुप्रबंध रहता था।

१८. वह अतिरिक्त कर जो जमींदार किसी विशिष्ट कार्य के लिए धन एकत्र करने के उद्देश्य से अपने असामियों या खेतिहरों पर लगाता था। अबवाब। नेग। १९. एक प्रकार की मिठाई जो चाशनी में चने की दाल, तिल आदि पागकर पतली तह के रूप में जमाकर बनाई जाती है। जैसे—तिल-पट्टी, दाल-पट्टी। २०. घोड़े की दौड़ का वह प्रकार जिसमें वह एक सीध में दूर तक सरपट दौड़ता हुआ चला जाता है।

स्त्री० [सं०]१. पठानी-लोध। २. पगड़ी में लगाई जानेवाली कलगी या तुर्रा। ३. घोड़ों आदि के मुँह पर बाँधा जानेवाला तोबड़ा। ४. घोड़े की पीठ और पेट में बाँधा जानेवाला तसमा। तंग।

पट्टीदार—पुं०[हिं० पट्टी=पत्ती+फा० दार] [भाव० पट्टीदारी]१. वह व्यक्ति जिसका किसी जमीन, संपत्ति आदि में हिस्सेदारी हो।

हिस्सेदार। २. एक हिस्सेदार के संबंध के विचार से दूसरा हिस्सेदार। ३. बराबर का अधिकारी।

†वि०[हिं० पट्टी+फा० दार] (वस्त्र) जिसमें पट्टी आदि टँगी या लगी हुई हो।

पट्टीदारी—स्त्री० [हिं० पट्टीदार] १. पट्टीदार होने की अवस्था या भाव। २. दो या कई पट्टीदारों में होनेवाला पारस्परिक संबंध।

मुहा०—(किसी से) पट्टीदारी अटकना=ऐसा झगड़ा उपस्थित होना, जिसका कारण पट्टी या हिस्सेदारी हो। पट्टीदारी के कारण विरोध होना।

३. किसी के साथ किया जानेवाला बराबरी का दावा। यह कहना कि हम भी अमुक काम या बात में तुम्हारे बराबर या बराबरी के हिस्सेदार हैं। ४. मध्ययुग में वह जमींदारी, जिसके पट्टीदार या मालिक कई अदमी संयुक्त रूप से होते थे।

पट्टीवार—अव्य० [हिं० पट्टी+फा० वार] हर पट्टी या हिस्से के विचार से। अलग-अलग। जैसे—यह हिसाब पट्टीवार बना है।

वि० (ऐसी बही या लिखा-पढ़ी) जिसमें पट्टियों का हिसाब अलग-अलग रखा जाता हो। जैसे—पट्टीवार जमाबंदी।

पट्टू—पुं०[हिं० पट्टी] १. एक प्रकार मोटा ऊनी देशी कपड़ा, जो साधारण सूती कपड़ों की अपेक्षा कम चौड़ा और प्रायः लम्बी पट्टी के रूप में बुना हुआ होता है। २. एक प्रकार का चारखानेदार कपड़ा।

†पुं०[?] तोता (पक्षी)।

पट्टे-पछाड़—पुं०[हिं० पट+पछाड़ना] कुश्ती का एक पेंच।

पट्टे-बैठक—स्त्री०[हिं० पट+बैठक] कुश्ती का एक पेंच।

पट्टैत—पुं०[हिं० पट्टा+ऐत (प्रत्य०)] काले, नीले या लाल रंग का वह कबूतर जिसके गले में सफेद कंठी हो।

†पुं०=पटैत (पटेबाज)।

पट्टोला—पुं०[सं० पट्टदुकूल] १. रेशमी वस्त्र। २. कपड़े की वह कतरन या धज्जी जिससे बच्चे खेलते हैं। (पश्चिम)

पट्टोलिका—स्त्री०[सं०=पट्टालिका, पृषो० सिद्धि] १. पट्टा। अधिकार-पत्र। २. दे० 'पटोलिका'।

पट्ठमान—वि० [सं० पठ्यमान्] (ग्रंथ) जिसे पढ़ना उचित हो या जो पढ़ा जाने को हो।

पट्ठा—वि०[सं० पुष्ट, प्रा० पुट्ठ] [स्त्री० पट्ठी, पठिया] १. (व्यक्ति) जो हृष्ट-पुष्ट तथा नौजवान हो। २. जीवों या प्राणियों का ऐसा बच्चा जिसमें यौवन का आगमन हो चुका हो; पर पूर्णता न आई हो। नवयुवक।

पद—उल्लू का पट्ठा=बहुत बड़ा मूर्ख। (गाली)

पुं० १. कुश्ती लड़नेवाला या पहलवान। २. किसी प्रकार का दलदार, मोटा और लंबा पत्ता। जैसे—घी-कुआर या सुरती का पट्ठा। ३. शरीर के अंदर के वे तन्तु या नसें, जो मांस-पेशियों को हड्डियों के साथ बाँधे रखती हैं।

मुहा०—पट्ठा चढ़ना=किसी नस का तन कर दूसरी नस पर चढ़ जाना जो एक आकस्मिक और कष्टकर शारीरिक विकार है। (किसी के) पट्ठों में घुसना=किसी से गहरी दोस्ती या मेल-जोल पैदा करना।

४. एक प्रकार का चौड़ा गोटा, जो रुपहला और सुनहला दोनों प्रकार का होता है। ५. उक्त के आकार-प्रकार की वह गोट जो अतलस आदि पर बुनकर बनाई जाती है। ६. पेड़ू के नीचे क़मर और जाँघ के जोड़ का वह स्थान, जहाँ छूने से गिल्टियाँ मालूम होती हैं।

पट्ठा-पछाड़—वि० स्त्री० [हिं० पट्ठा+पछाड़ना] (स्त्री) जो पुरुष को पछाड़ सकती हो; अर्थात् खूब हृष्ट-पुष्ट और बलवती।

पठ†—स्त्री० [हिं० पट्ठा] वह जवान बकरी जो ब्यायी न हो। पाठ।

पठक—वि०[सं०] पढ़नेवाला।

पढ़त—स्त्री० [हिं० पढ़ना] १. पढ़ने की क्रिया, ढंग या भाव।

पद—लिखत-पढ़त। (देखें)

२. दे० 'वाचन'।

पठन—पुं०[सं० √पठ् (पढ़ना)+ल्युट्—अन] पढ़ने की क्रिया या भाव। पढ़ना।

पद—पठन-पाठन=पढ़ना और पढ़ाना।

पठनीय—वि०[सं०√पठ्+अनीयर्] (ग्रंथ या पाठ) जो पढ़ने के योग्य हो या पढ़ा जाने को हो। पाठ्य।

पठनेटा—पुं०[हिं० पठान+एता = बेटा (प्रत्य०)] पठान का बेटा। पठान जाति का पुरुष।

पठवना†—स०=पठाना (भेजना)।

पठवाना—स०[हिं० पठाना का प्रे०] पठाने या भेजने का काम दूसरे से कराना। दूसरे को पठाने या भेजने में प्रवृत्त करना। भेजवाना।

पठान—पुं०[फा० पुश्तोन] [स्त्री० पठानिन, पठानी] १. पुश्तो या पश्तो भाषा बोलनेवाला व्यक्ति। २. उक्त भाषा बोलनेवाली एक प्रसिद्ध जाति जो अफगानिस्तान-पख्तूनिस्तान प्रदेश में रहती है। ३. पख्तूनिस्तान का नागरिक या निवासी।

पठाना—स० [सं० प्रस्थान, प्रा० पट्ठान] रवाना करना। भेजना।

पठानिन—स्त्री०हिं० 'पठान' का स्त्री०।

पठानी—वि०[हिं० पठान] १. पठानों का। पठान-संबंधी। जैसे—पठानी राज्य।

स्त्री० पठान होने की अवस्था या भाव।

स्त्री० 'हिं० 'पठान' का स्त्री०।

पठानी लोध—स्त्री०[सं० पट्टिका लोध्र] कुमाऊँ, गढ़वाल आदि प्रदेश में होनेवाला एक जंगली वृक्ष जिसकी लकड़ी और फूल औषध और पत्तियाँ तथा छाल रंग बनने के काम में आती हैं।

पठार—पुं०[देश०] एक पहाड़ी जाति।

पुं०[सं० पृष्ट+धार] भूगोल में, वह ऊँचा विस्तृत मैदान जो समीपवर्ती निचले प्रदेशों में ढालुएँ अंश से मिला रहता है तथा जिसका ऊपरी भाग बहुत अधिक चौड़ा तथा चपटा होता है। (प्लेटो)

पठावन—पुं०[हिं० पठाना] १. पठाने अर्थात् भेजने की क्रिया या भाव। २. व्यक्ति, जो इस प्रकार भेजा जाय। ३. संदेशवाहक। दूत।

पठावनी—स्त्री०[हिं० पठाना] १. किसी को कहीं पठाने अर्थात् भेजने की क्रिया या भाव। किसी को कहीं कोई वस्तु या संदेश पहुँचाने के लिए भेजना।

क्रि० प्र०—आना।—जाना।—भेजना।

पठावर—स्त्री०[देश०] एक प्रकार की घास।

पठित—भू० कृ०[सं० √पठ्+क्त] १. (ग्रंथ या पाठ) जो पढ़ा जा चुका हो। २. (व्यक्ति) जो पढ़ा-लिखा हो। शिक्षित। (असिद्ध प्रयोग)

पठियर†—स्त्री०[हिं० पाटी] वह बल्ली या पटिया जो कूएँ के मुँह पर बीचोबीच या किसी एक ओर इसलिए रख दी जाती है कि पानी खींचनेवाला उसी पर पैर रखकर पानी खींचे।

पठिया—स्त्री०[हिं० पट्ठा+इया (प्रत्य०)] १. हिं० पट्ठा का स्त्री०। २. हृष्ट-पुष्ट तथा नौजवान स्त्री। (बाजारू)

पठोर—स्त्री०[हिं० पट्ठा+ओर (प्रत्य०)] १. जवान परन्तु बिना ब्याई हुई बकरी। २. मुरगी, जो जवान तो हो गई हो, पर जो अभी अंडे न देती हो।

पठौना†—स०=पठाना (भेजना)।

पठौनी†—स्त्री०=पठावनी।

पठ्यमान*—वि० [सं०√पठ्+लट् (कर्म में), यक्+शानच्, मुक्] (ग्रंथ या पाठ) जो पढ़ा जाने को हो या पढ़ा जा सके।

पड़—पुं०[सं० पट=चित्रपट] वह चित्रपट जिसमें किसी व्यक्ति से संबंध रखनेवाली घटनाएँ अंकित हों। (राज०)

पड़की—स्त्री०=पंडुक।

पड़कुलिया†—स्त्री०[सं० पंडुक] एक प्रकार की चिड़िया।

पड़छत्ती†—स्त्री०=परछत्ती।

पड़त—स्त्री०=पड़ता।

पड़ता—पुं०[हिं० पड़ना] १. व्यापारिक क्षेत्र में, खरीदी हुई और बेची जानेवाली चीज या माल की वह आर्थिक स्थिति, जो इस बात की सूचक होती है कि वह चीज या माल कितने दाम पर खरीदा गया है अथवा उस पर कितनी लागत आई है और उसके संबंध में कितने अनिवार्य तथा आवश्यक व्यय करने पड़ते हैं या करने पड़ेंगे।

विशेष—व्यापारी लोग जब कोई माल कहीं से मँगाते या अपने यहाँ तैयार कराते या बनवाते हैं, तब पहले हिसाब लगाकर यह समझ लेते हैं कि इस पर वास्तविक रूप से हमारा इतना धन लगा है, और तब उस पर अपना मुनाफा रखकर उसे बेचते हैं।

मुहा०—पड़ता खाना=ऐसी स्थिति होना कि उचित मूल्य या लागत निकालने के बाद कुछ मुनाफा या लाभ हो सके। जैसे—(क) आज-कल देहात से गेहूँ मँगाकर बाजार में बेचने से हमारा पड़ता नहीं खाता। (ख) बारह रुपए जोड़े पर यह धोती बेचने में हमारा पड़ता नहीं खाता। पड़ता निकालना, फैलाना या बैठाना=भाड़े, मूल्य, लागत, सूद आदि का हिसाब लगाकर यह देखना कि किसी चीज पर सब मिलाकर वस्तुतः हमारा कितना व्यय हुआ है।

२. आर्थिक दृष्टि से आय-व्यय आदि का औसत या माध्यम। जैसे—इस दूकान से उन्हें दस रुपए रोज मुनाफे का पड़ता पड़ जाता है।

क्रि० प्र०—पड़ना।—बैठना।

३. भू-कर की दर। लगान की शरह।

पड़ताल—स्त्री०[सं० परितोलन] १. कोई काम या चीज आदि से अंत तक अच्छी तरह जाँचते हुए यह देखना कि उसमें कहीं कोई कसर या भूल तो नहीं है। अच्छी तरह की जानेवाली छान-बीन या देख-भाल। २. पटवारियों (आधुनिक लेखपालों) के द्वारा अपने खातों या पत्रियों की वह जाँच, जो यह जानने के लिए की जाती है कि खेतों को जोतने-वालों के नापों और उसमें होनेवाली फसलों का ब्योरा कहीं गलत तो नहीं लिखा गया है। ३. उक्त के फलस्वरूप किया जानेवाला संशोधन या सुधार। ४. तुलना। बराबरी। मुकाबला। (क्व०)

पड़तालना—स०[हिं० पड़ताल+ना (प्रत्य०)] आदि से अंत तक सब बातें देखते हुए पड़ताल अर्थात् अनुसंधान या जाँच करना।

पड़ती—स्त्री०[हिं० पड़ना] वह खेत जो जमीन की उर्वरा-शक्ति बढ़ाने के लिए किसी विशिष्ट ऋतु में जोता-बोया न गया हो।

क्रि० प्र०—छोड़ना।—पड़ना।—रखना।

मुहा०—पड़ती उठना=(क) पड़ती का जोता जाना। पड़ती पर खेती होना। पड़ती उठाना=पड़ती पड़ी हुई जमीन किसी खेतिहर को जोतने-बोने के लिए लगान पर देना।

पड़-दादा—पुं०=परदादा।

पड़ना—अ०[सं० पतन, प्रा० पड़न] १. किसी चीज का किसी आधान या पात्र में छोड़ा, डाला या पहुँचाया जाना। अन्दर प्रविष्ट किया जाना या होना। जैसे—(क) कान में दवा पड़ना; (ख) तरकारी (या दाल में) नमक पड़ना, (ग) पेट में भोजन पड़ना, (घ) पेटी में मत-पत्र पड़ना। २. किसी चीज का ऊपर से गिरकर या बाहर से आकर किसी दूसरी चीज पर (या में) विद्यमान या स्थित होना। जैसे—आँख में कंकड़ी या दूध में मक्खी पड़ना। ३. इधर-उधर या ऊपर से आकर किसी प्रकार का आघात या प्रहार या वार होना। जैसे—(क) किसी पर घूँसा, थप्पड़ या लात पड़ना। (ख) गरदन पर तलवार या सिर पर लाठी पड़ना। ४. एक चीज का किसी दूसरी चीज पर ठीक ढंग या तरह से डाला, फैलाया, बिछाया या रखा जाना। जैसे—(क) आँगन में (या छत पर) पलंग पड़ना। (ख) खंभों (या दीवारों) पर छत पड़ना। (ग) जूएखाने में जूए का फ़ड़ पड़ना। ५. किसी आपा-तिक रूप में आकर उपस्थित, प्राप्त या प्रत्यक्ष होना। जैसे—(क) इस साल बहुत गरमी (या सरदी) पड़ी है। (ख) आज चार दिन से बराबर पानी (या ओला) पड़ (बरस) रहा है। (ग) अंत में यही बदनामी हमारे पल्ले पड़ी है। ६. कोई अनिष्ट, अवांछित या कष्टदायक घटना घटित होना अथवा ऐसी ही कोई विकट परिस्थिति या बात सामने आना। जैसे—(क) सिर पर आफत या बला पड़ना। (ख) किसी के घर डाका पड़ना।

विशेष—विपत्ति, संकट आदि के प्रसंगों में इस क्रिया का प्रयोग बिना किसी संज्ञा के भी होता है। जैसे—जब तुम पर पड़ेगी, तब तुम्हें मालूम होगा।

७. आकस्मिक रूप अथवा संयोग से उपस्थित होना या सामने आना अथवा पहुँचना। जैसे—(क) एक दिन घूमता-फिरता मैं भी वहाँ जा पड़ा। (ख) बात (या मौका) पड़ने पर तुम भी सारा हाल साफ-साफ कह देना। (ग) अब की विजया दशमी (या होली) रविवार को पड़ेगी। ८. आलस्य, थकावट, रोग आदि के कारण अथवा विश्राम करने के लिए चुपचाप लेटे रहने की स्थिति में होना। जैसे—(क) नींद खुल जाने पर भी वे घंटों बिस्तर पर पड़े रहते हैं। (ख) इधर महीनों से वे बिस्तर पर पड़े हैं। (अर्थात् बीमार हैं)। (ग) थोड़ी देर यों ही पड़े रहो; तबियत ठीक हो जायेगी। ९. बिना किसी उद्देश्य, कार्य या प्रयोजन के कहीं रहकर दिन काटना। यों ही या व्यर्थ रहकर दिन काटना। यों ही या व्यर्थ रहकर समय गुजारना या बिताना। जैसे—(क) दिन भर सब लोग धर्मशाले में पड़े रहे। (ख) महीनों

से वह अपने मैके में पड़ी है। १०. कुछ काम-धंधा न करते हुए हीन अवस्था में कहीं रहकर दिन बिताना। जैसे—आजकल तो वह कलकत्ते में अपने भाई के यहाँ पड़े हैं।

मुहा०—पड़ रहना=जैसे-तैसे हीन अवस्था में लेटकर सोना। 'शयन' के लिए उपेक्षासूचक पद। उदा०—मसजिद में पड़े रहेंगे जो मैखाना बंद है।—कोई शायर। **पड़े रहना**=(क) लेटे रहना। (ख) हीन अवस्था में कहीं रहकर दिन बिताना। जैसे—अभी दो-चार दिन तुम यहीं पड़े रहो। (ग) रोगी होने की दशा में लेटे रहना। जैसे—आज दिन भर चुपचाप पड़े रहो। संध्या तक तबियत ठीक हो जायगी।

११. किसी के किसी काम या बात के बीच में इस प्रकार सम्मिलित होना कि उससे कोई विशिष्ट संबंध सूचित हो अथवा किसी प्रकार अथवा किसी प्रकार का हस्तक्षेप होता हुआ जान पड़े। जैसे—मैं इस मामले में पड़ना नहीं चाहता हूँ। १२. किसी काम, चीज या बात का ऐसी स्थिति में रहना या होना कि आवश्यक या उचित उपयोग अथवा कार्य न हो रहा हो। जैसे—(क) सारा मकान खाली पड़ा है। (ख) आधे से ज्यादा काम बाकी पड़ा है। (ग) मुकदमा वर्षों से हाईकोर्ट में पड़ा है। (घ) ये पुस्तकें यहाँ यों ही पड़ी हैं। १३. किसी विशिष्ट प्रकार की परिस्थिति या स्थिति में अवस्थित या वर्तमान रहना या होना। जैसे—(क) आजकल वह धन कमाने के फेर में पड़े हैं। (ख) उनका मकान अभी तक बंधक पड़ा है। (ग) चार दिन में इसका रंग काला पड़ जायगा। (घ) दो कौड़ियाँ चित और तीन कौड़ियाँ पट पड़ी हैं। १४. टिकने ठहरने आदि के लिए कुछ समय तक कहीं अवस्थान होना। कुछ समय तक रहने के लिए डेरा या पड़ाव डाला जाना। जैसे—चार दिन से तो वे हमारे यहाँ पड़े हैं। १५. डेरे, पड़ाव आदि के संबंध में, नियत या स्थित किया जाना। बनाया जाना। जैसे—आज संध्या को रामनगर में डेरा (या पड़ाव) पड़ेगा। १६. यात्रा आदि के मार्ग में प्रत्यक्ष या विद्यमान होना। ऐसी स्थिति में होना कि रास्ते में दिखाई दे या सामने आवे। जैसे—उनके मकान के रास्ते में एक पुल (या मंदिर) भी पड़ता है। १७. किसी प्रकार अथवा रूप में उत्पन्न होकर या यों ही उपस्थित, प्रस्तुत या विद्यमान होना। जैसे—(क) फल में कीड़े पड़ना। (ख) घाव में मवाद पड़ना। (ग) मन में कल (या चैन) पड़ना। १८. किसी प्रकार की विशेष आवश्यकता या प्रयोजन होना। गरज या जरूरत होना। जैसे—जब उसे गरज (या जरूरत) पड़ेगी, तब वह आप ही आवेगा।

विशेष—कभी-कभी इस अर्थ में बिना संज्ञा के भी इसका प्रयोग होता है। जैसे—हमें क्या पड़ी है, जो हम उनके बीच में बोलने खड़े हों।

१९. बहुत अधिक या उत्कट अभिलाषा, चिंता अथवा प्रवृत्ति होना। किसी काम या बात के लिए छटपटी, बेचैनी या विकलता होना। (प्रायः बिना संज्ञा के ही प्रयुक्त) जैसे—तुम्हें तो बस तमाशे (या बरात) में जाने की पड़ी है। २०. तारतम्य, तुलना आदि के विचार से अपेक्षया कुछ घटी या बढ़ी हुई अथवा किसी विशिष्ट स्थिति में आना, रहना या सिद्ध होना। जैसे—(क) यह कपड़ा कुछ उससे अच्छा पड़ता है। (ख) अब तो वह पहले से कुछ नरम पड़ रहा है। (ग) यह लड़का दरजे (या पढ़ने) में कमजोर पड़ता है। (घ) पाव भर आटा उसके खाने के लिए कम पड़ता है। २१. तौल, दूरी, नाप आदि के प्रसंग में, किसी विशिष्ट परिमाण या मान का ठहरना या सिद्ध होना। जैसे—(क) उनका मकान यहाँ से कोस भर पड़ता है। (ख) यह धोती नापने पर नौ हाथ ही पड़ती है। २२. आर्थिक प्रसंगों में, किसी काम, चीज या बात का हानि-लाभ की दृष्टि या विचार से किसी विशिष्ट स्थिति में आना, रहना या होना। जैसे—(क) इकट्ठा लिया हुआ सौदा सस्ता पड़ता है। (ख) शहरों में रहने पर खर्च अधिक पड़ता है। (ग) आजकल यहाँ के मिस्तरियों को चार-पाँच रुपए रोज पड़ जाता है। (घ) इस काम में इतना खरच (या घाटा) पड़ता है। २३. व्यापारिक क्षेत्रों में, किसी चीज की दर, भाव, मूल्य, लागत आदि के विचार से किसी स्थिति में आना, रहना या होना। जैसे—यह थान घर आकर २० का पड़ता है। २४. किसी काम, चीज या बात का अनुकूल, उपयुक्त या बराबरी का ठहरना या सिद्ध होना। जैसे—तुम्हें तो दस रुपया रोज भी पूरा नहीं पड़ेगा। २५. बही-खाते, लेन-देन, हिसाब-किताब आदि में किसी खाते या विभाग में अथवा किसी व्यक्ति के नाम लिखा जाना। जैसे—(क) यह खरच प्रकाशन खाते में पड़ेगा। (ख) महीनों से १००) तुम्हारे नाम पड़े हैं। २६. आकार-प्रकार, रूप-रंग आदि में शिशु या संतान का किसी के अनुरूप या अनुसार होना। जैसे—लड़का तो अपने बाप पर पड़ा है और लड़की माँ पर। २७. अनुभूत या ज्ञात होना। लगना। जैसे—जान पड़ना, दिखाई पड़ना। २८. कुछ विशिष्ट पशुओं के संबंध में, नर या मादा के साथ मैथुन या संभोग करना। जैसे—जब यह घोड़ा (या साँड़) किसी घोड़ी (या गाय) पर पड़ता है, तब-तब कुछ न कुछ बीमार हो जाता है।

विशेष—इस क्रिया में मुख्य तीन भाव वही हैं, जो ऊपर आरंभ (संख्या १, २ और ३) में बतलाये गये हैं। अधिकतर शेष अर्थ इन्हीं तीनों भावों में से किसी-न-किसी भाव के परिवर्त्तित, विकसित या विकृत रूप हैं। सैद्धांतिक दृष्टि से यह हिंदी की स० क्रिया 'डालना' का अकर्मक रूप है। अनेक अकर्मक क्रियाओं के साथ इसका प्रयोग संयो० क्रि० के रूप में भी होता है। कहीं तो वह किसी क्रिया का आकस्मिक आरंभ सूचित करती है; जैसे—चल पड़ना, चौंक पड़ना, जाग पड़ना, हँस पड़ना आदि और कहीं इससे किसी क्रिया या व्यापार का घटित, पूर्ण या समाप्त होना सूचित होता है। जैसे—कूद पड़ना, गिर पड़ना, घुस पड़ना, घूम पड़ना आदि। क्रियार्थक संज्ञाओं के साधारण रूप के साथ लगकर यह कहीं-कहीं किसी प्रकार की बाध्यता या विवशता भी सूचित करती है। जैसे—(क) मुझे रोज उनके यहाँ जाकर घंटों बैठना पड़ता था। (ख) तुम्हें भी उनके साथ जाना पड़ेगा। अवधारण बोधक क्रियाओं के साथ लगकर यह बहुत कुछ 'जाना' या 'होना' की तरह का अर्थ देती और उन सकर्मक क्रियाओं को अकर्मक का-सा रूप देती है। जैसे—जान पड़ना, दिखाई (या देख) पड़ना। कुछ संज्ञाओं के साथ लगकर यह बहुत कुछ 'आना' या 'होना' की तरह का भी अर्थ देती हैं। जैसे—खयाल पड़ना, याद पड़ना, समझ पड़ना। कभी-कभी इसके योग से कुछ पदों में मुहावरे का तत्त्व भी आ लगता है। जैसे—(क) ऐसी समझ पर पत्थर पड़े। (ख) आजकल रुपया तो मानो उनके घर फटा पड़ता है। (ग) बहुत बोलने (या सरदी लगने) से गला पड़ (अर्थात् बैठ) जाना। (घ) यह अकेला ही दो

आदमियों पर भारी पड़ता है। (ङ) इस तरह हाथ धोकर किसी के पीछे पड़ना ठीक नहीं है। कुछ अवस्थाओं में यह शक्यता, संभावना, सामर्थ्य आदि की भी सूचक होती है। जैसे—बन पड़ा तो मैं भी किसी दिन आऊँगा। कभी-कभी यह तुल्यता या समकक्षता की भी सूचक होती है। जैसे—(क) तुम तो आदमी के ऊपर गिर पड़ते हो। (ख) उसकी आँखों में आँसू उमड़े पड़ते थे।

पड़-नाना—पुं०=पर-नाना।

पड़-पड़—स्त्री० [अनु०] १. निरंतर पड़-पड़ होनेवाला शब्द।
क्रि० वि० पड़-पड़ शब्द करते हुए।
पुं० [?] मूल धन। पूँजी। (डिं०)

पड़पड़ाना—स० [अनु०] [भाव० पड़पड़ाहट] पड़-पड़ शब्द होना।
स० पड़-पड़ शब्द उत्पन्न करना।
†अ०=परपराना।

पड़पड़ाहट—स्त्री० [हिं० पड़पड़ाना] पड़-पड़ शब्द करने या होने की क्रिया या भाव।
†स्त्री०=परपराहट।

पड़-पोता—पुं०=पर-पोता।

पड़म—पुं० [देश०] एक प्रकार का मोटा सूती कपड़ा, जो प्रायः कनातें, खेमें आदि बनाने में काम आता है।

पड़या†—पुं० [?] वह ब्राह्मण जो शनिवार के दिन तेल आदि काले पदार्थ शनि के दान के रूप में लेता है।

पड़रू†—पुं०=पड़वा।

पड़वा—स्त्री० [सं० प्रतिपदा, प्रा० पड़िवआ] प्रत्येक पक्ष की प्रथम तिथि। परिवा।
पुं० [?] [स्त्री० पड़िया] भैंस का नर बच्चा।

पड़वाना—स० [हिं० 'पड़ना' का प्रे०] पड़ने का काम किसी से कराना। किसी को पड़ने में प्रवृत्त करना।

पड़वी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की ईख।

पड़ह—पुं० [सं० पटह] ढोल। दुंदुभी।

पड़ा—पुं०=पड़वा (भैंस का बच्चा)।

पड़ाइन—स्त्री०=पँड़ाइन।

पड़ाका—पुं०=पटाका।

पड़ाना—स०=पड़वाना।

पड़ापड़—क्रि० वि०, स्त्री०=पटापट।

पड़ाव—पुं० [हिं० पड़ना+आव (प्रत्य०)] १. मार्ग में पड़नेवाला वह स्थान जहाँ यात्री रात बिताने, विश्राम आदि करने के लिए ठहरते या रुकते हैं।
मुहा०—**पड़ाव मारना**=(क) पड़ाव पर ठहरे हुए यात्रियों को लूटना। (ख) बहुत अधिक वीरता या साहस का काम करना। (व्यंग्य)
२. वह स्थान जहाँ यात्रा करनेवाला सैनिक तंबू-कनातें आदि लगाकर कुछ समय के लिए ठहरा हो।
विशेष—यह स्थान प्रायः शहरों से दूर और जंगलों में होता था।

पड़िया—स्त्री० हिं० पड़वा का स्त्री० रूप।
वि० पुं० दे० 'परिया'। (जाति)

पड़ियाना—अ० [हिं० पड़िया+आना (प्रत्य०)] भैंस का भैंसे से संयोग हो जाना। भैंसाना।
स० भैंस का भैंसे से संभोग कराना।

पड़िवा—स्त्री०=पड़वा (प्रतिपदा)।

पड़ी†—स्त्री० [हिं० पड़ना=लेटना] चुपचाप पड़े या सोये रहने की अवस्था या भाव। (बाजारू)
मुहा०—पड़ी साधना=सो जाना।

पड़ेरू†—पुं०=पड़रू (पड़वा)।

पड़ोस—पुं० [सं० प्रतिवेश या प्रतिवास, प्रा० पड़िवेस पड़िवास] १. वह स्थान जो किसी के निवास-स्थान के बगल या समीप में हो।
मुहा०—(किसी का) **पड़ोस करना**=किसी के पड़ोस में जाकर बसना।
२. किसी प्रदेश, स्थान आदि से सटा हुआ अथवा उसके आस-पास का स्थान।
पद—**पास-पड़ोस**=समीपवर्ती स्थान।

पड़ोसी—पुं० [हिं० पड़ोस+ई (प्रत्य०)] [स्त्री० पड़ोसिन] वह जिसका घर पड़ोस में हो। एक मकान के पासवाले दूसरे मकान में रहनेवाला। प्रतिवासी। प्रतिवेशी। हमसाया।

पड्डा†—पुं० [?] ढोलक, तबले आदि पर लगाई जानेवाली चाँटी।

पढ़ंत—स्त्री० [हिं० पढ़ना+अंत (प्रत्य०)] १. पढ़ने की क्रिया या भाव। जैसे—लिखत-पढ़ंत होना। २. पढ़ा हुआ पाठ। ३. जादू या टोने-टोटके के लिए मंत्र पढ़ने की क्रिया या भाव। ४. उक्त प्रकार से पढ़ा जानेवाला मंत्र।
वि० (समाज) जिसमें दूसरों की कृतियाँ पढ़कर सुनाई जाती हों। जैसे—पढ़ंत कवि-सम्मेलन।

पढ़त—स्त्री० [हिं० पढ़ना] पढ़ने की क्रिया, ढंग या भाव। पठन। वाचन। (रीडिंग) जैसे—विधेयक की तीसरी पढ़त।
पद—**लिखत-पढ़त-लिखा-पढ़ी**।

पढ़ना—स० [सं० पठन] [भाव० पढ़ाई] १. (क) किसी लिपि या वर्णमाला के अक्षरों या वर्णों के उच्चारण, रूप आदि का ज्ञान या परिचय प्राप्त करना। (ख) उक्त के आधार पर किसी भाषा के शब्दों, पदों आदि के अर्थ का ज्ञान या परिचय प्राप्त करना। जैसे—अँगरेजी या हिन्दी पढ़ना। २. अंकित, मुद्रित या लिखित चिह्नों, वर्णों आदि को देखते हुए मन-ही-मन उनका अभिप्राय, अर्थ या आशय जानना और समझना। यह जानना कि जो कुछ छपा या लिखा हुआ है, उसका मतलब क्या है। जैसे—अखबार या पुस्तक पढ़ना।
क्रि० प्र०—जानना। —डालना। —लेना।
३. छपे या लिखे हुए शब्दों, पदों, वाक्यों आदि का कुछ ऊँचे स्वर से उच्चारण करते चलना। जैसे—(क) किसी को सुनाने-समझाने आदि के लिए चिट्ठी या दस्तावेज पढ़ना। (ख) सभा या समिति के सामने उसका कार्य-विवरण पढ़ना। (ग) कवि-सम्मेलन में कविता पढ़ना।
संयो० क्रि०—जाना।—डालना।—देना।
४. कोई चीज या बात स्थायी रूप से स्मरण रखने के लिए उसके पदों, शब्दों आदि का बार बार उच्चारण करते हुए अभ्यास करना। जैसे—गिनती, पहाड़ा या पाठ पढ़ना। ५. किसी कला, विद्या, विषय या शास्त्र

की सब बातें जानने के लिए उसका विधिवत् अध्ययन करना। जैसे—(क) आज-कल वह इतिहास (दर्शन शास्त्र या व्याकरण) पढ़ रहा है। (ख) ब्याह की अभी क्या चिंता है, लड़का तो अभी पढ़ ही रहा है। ६. ग्रंथ,लेख आदि का ठीक-ठीक अभिप्राय या आशय जानने और समझने के लिए उनका अध्ययन और मनन करना। जैसे—(क) यह पुस्तक लिखने के लिए आपको सैकड़ों बड़े बड़े ग्रंथ पढ़ने पड़े थे। (ख) किसी विषय पर प्रामाणिक पुस्तक लिखने से पहले उस विषय का सारा साहित्य पढ़ना पड़ता है।
क्रि०प्र०—जाना। —डालना। —लेना।
७. कोई याद की हुई चीज (पद या बात) गुनगुनाते हुए या बहुत धीमे स्वर से उच्चरित करना। जैसे—(क) जप, पूजन, संध्या-वंदन आदि के समय मंत्र या श्लोक पढ़ना। (ख) टोना-टोटका करने के समय किसी पर जादू या मंतर पढ़ना। ८. उक्त के आधार पर किसी प्रकार का जादू या टोना-टोटका करना। मंत्र फूँकना। जैसे—ऐसा जान पड़ता है कि मानों इस लड़के पर किसी ने कुछ पढ़ दिया है।
संयो० क्रि०—देना।
मुहा०—(**किसी पर**) **कुछ पढ़कर मारना**=मंत्र पढ़कर प्रभावित करने के लिए किसी पर कोई चीज फेंकना। जैसे—मूँग पढ़कर मारना।
९. किसी प्रकार के अंकन, चिह्न,लक्षण आदि देखते हुए उनका आशय, परिणाम या फल इस प्रकार जानना और समझना मानों कोई पुस्तक या लेख पढ़ रहे हों। जैसे—सामुद्रिक शास्त्र की सहायता से किसी की हस्तरेखाएँ पढ़ना। १०. मनुष्यों की बोली की नकल करनेवाले पक्षियों का ऐसे पद या शब्द बोलना जिनका उच्चारण उन्हें सिखाया गया हो। जैसे—यह तोता 'राम राम' पढ़ता है।
† पुं०=पढ़िना (मछली)।

पढ़नी—पुं० [देश०] एक प्रकार का धान।

पढ़नीउड़ी—स्त्री० [हिं० पढ़नी (?)+उड़ी=उड़ाना] कसरत में एक प्रकार का अभ्यास जिसमें कोई ऊँची चीज उड़ अर्थात् उछलकर लाँघी जाती है।

पढ़वाना—स० [हिं० पढ़ना तथा पढ़ाना का प्रे०] १. किसी को पढ़ने में प्रवृत्त करना। बँचवाना। २. किसी से (पाठ आदि) पढ़ाने की क्रिया कराना। किसी को पढ़ाने में प्रवृत्त करना।

पढ़वैया—वि० [हिं० पढ़ना+ऐया (प्रत्य०)] १. पढ़नेवाला। २. पढ़ानेवाला।

पढ़ाई—स्त्री० [हिं० पढ़ना+आई (प्रत्य०)] १. पढ़ने की क्रिया या भाव। २. वह विषय जिसका कक्षा, विद्यालय आदि में विद्यार्थी अध्ययन करते हों। ३. पढ़ने के बदले में दिया जानेवाला पारिश्रमिक।
स्त्री० [हिं० पढ़ाना] १. पढ़ाने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक। २. कक्षा, विद्यालय आदि में पढ़ाया जानेवाला विषय या सिखलाई जानेवाली कला। ३. पढ़ाने का ढंग, प्रकार या शैली। ४. पढ़ाने के बदले में मिलनेवाला धन।

पढ़ाना—स० [सं० पाठन] १. हिं० 'पढ़ना' क्रिया का प्रे०। ऐसा काम करना जिससे कोई पढ़े। किसी को पढ़ने में प्रवृत्त करना। २. (क) वर्णमाला या लिपि के अक्षरों के उच्चारणों और रूपों का परिचय कराना। (ख) किसी भाषा के शब्दों या पदों के अर्थ, आशय आदि का ज्ञान या बोध कराना; अथवा तत्संबंधी अध्ययन, अभ्यास आदि कराना। जैसे—अरबी, फारसी, बँगला या मराठी पढ़ाना। ३. अंकित, मुद्रित या लिखित बातों का ज्ञान प्राप्त करने या आशय समझने के लिए किसी से उसका पाठ या वाचन कराना। जैसे—किसी से चिट्ठी पढ़ाना। ४. किसी को भाषा, विषय, शास्त्र आदि का ज्ञान कराने के लिए सम्यक् रूप से शिक्षा देना। जैसे—पंडित जी संस्कृत तो पढ़ाते ही हैं, साथ ही दर्शन (या साहित्य) भी पढ़ाते हैं। ५. कोई काम या बात अच्छी तरह बतलाना, समझाना या सिखाना। अच्छी तरह किसी के ध्यान में बैठाना। जैसे—मालूम होता है कि किसी ने तुम्हें ये सब बातें पढ़ाकर यहाँ भेजा है। ६. किसी विशिष्ट क्रिया, संस्कार आदि से संबंध रखनेवाले मंत्रों, वाक्यों आदि का विधिपूर्वक उच्चारण सम्पन्न कराना। जैसे—(क) ब्राह्मण से मंत्र पढ़ाकर दान (या संकल्प) कराना। (ख) काजी (या मुल्ला) को बुलाकर निकाह पढ़ाना। ७. मनुष्य की बोली का अनुकरण या नकल करनेवाले पक्षियों के सामने किसी पद या शब्द का इस उद्देश्य से उच्चारण करते रहना कि वे भी इसी तरह बोलना सीख जायँ। जैसे—तुम भी बुड्ढे तोते को पढ़ाने चले हो।
संयो० क्रि०—देना।

पढ़िना—पुं० [सं० पाठीन] एक प्रकार की बिना सेहरे की मछली। पढ़ना। पहिना।

पढ़ैया—वि० [हिं० पढ़ना+ऐया (प्रत्य०)] पढ़नेवाला।
स्त्री० पढ़ने या पढ़े जाने की क्रिया या भाव। जैसे—कुल-पढ़ैया= ऐसी नमाज जो बस्ती के सब मुसलमान एक साथ मिलकर पढ़ते हों।

पण—पुं० [सं०√पण् (व्यवहार)+अप्] १. वह खेल जो पासों से खेला जाता हो। २. वह खेल जिसकी हार-जीत में दाँव पर कुछ धन लगाया जाता हो। जूआ। द्यूत। ३. किसी काम या बात के लिए लगाई जानेवाली बाजी। शर्त। ४. वह धन जो जूए के दाँव अथवा बाजी या शर्त बदने के समय लगाया जाता हो। ५. दो व्यक्तियों में पारस्परिक होनेवाला निश्चय या प्रतिज्ञा। कौल। करार। ६. ६. वह धन जो उक्त प्रकार के निश्चय, प्रतिज्ञा आदि के फलस्वरूप दिया या लिया जाता हो। जैसे—पारिश्रमिक, भाड़ा, सूद आदि। ७. किसी चीज का दाम। कीमत। मूल्य। ८. फीस। शुल्क। ९. धन-दौलत। सम्पत्ति। १०. वह चीज जो खरीदी और बेची जाती हो। माल। सौदा। ११. रोजगार। व्यापार। १२. प्रशंसा। स्तुति। १३. प्राचीन काल की एक नाप जो एक मुट्ठी अनाज के बराबर होती थी। १४. किसी के मत से ११ और किसी के मत से २० माशे के बराबर ताँबे का टुकड़ा जिसका व्यवहार सिक्के की भाँति होता था।

पण-क्रिया—स्त्री० [ष० त०] दाँव, बाजी या शर्त लगाने का काम।

पण-ग्रंथि—स्त्री० [ब० स०] बाजार। हाट।

पणता—स्त्री०, पुं० [सं० पण+तल्—टाप्, पण+त्वल्] मूल्य।

पणत्व—पुं० [सं० पण+त्व]=पणता।

पण-दंड—पुं० [ष० त०] अर्थ-दंड।

पण-धर—वि० [ष० त०] प्रण रखनेवाला। उदा०—कोड़ी दै नहं काढ़, पणधर राण प्रताप सी।—दुरसाजी।

पणन—पुं० [सं०√पण्+ल्युट्—अन] १. खरीदने की क्रिया या भाव। क्रय करना। मोल लेना। २. बेचने की क्रिया या भाव। विक्रय। ३. बाजी या शर्त लगाने की क्रिया या भाव। ४. व्यवहार, व्यापार आदि करने की क्रिया या भाव।

पणनीय—वि० [सं०√पण्+अनीयर्] १. जो खरीदा या बेचा जा सके। पणन के योग्य। २. जिससे धन के लोभ से कोई काम कराया जा सके। भाड़े का टट्टू।

पण-बंध—पुं० [ष० त०] बाजी बदना। शर्त लगाना।

पणव—पुं० [सं० पण√वा (गति)+क] १. छोटा ढोल या नगाड़ा। २. एक प्रकार का वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक मगण, एक नगण, एक भगण और अन्त में एक गुरु होता है।

पणवा—स्त्री०=पणव।

पणवानक—पुं० [पणव-आनक, कर्म० स०] नगाड़ा।

पणवी (विन्)—पुं० [सं० पणव+इनि] शिव।

पणस—पु० [सं०√पण्+असच्] वस्तु, विशेषतः बेची जानेवाली वस्तु।

पण-सुन्दरी—स्त्री० [मध्य० स०] वेश्या। रंडी।

पण-स्त्री—स्त्री० [मध्य० स०] रंडी। वेश्या।

पणांगना—स्त्री० [पण-अंगना, मध्य० स०] रंडी। वेश्या।

पणाया—स्त्री० [सं०√पण्+आय+अ—टाप्] १. व्यापारियों का एक माल किसी को देकर उसके बदले में दूसरा माल लेना। विनिमय। २. चीजें ले या देकर उनका दाम चुकाना या वसूल करना। आर्थिक क्षेत्र में लेन-देन आदि करना। (ट्रैन्जैक्शन) ३. रोजगार। व्यापार। ४. रोजगार या व्यापार में होनेवाला लाभ। ५. बाजार। ६. जूआ। ७. स्तुति।

पणायित—भू० कृ० [सं०√पण्+आय+क्त] १. (पदार्थ) जो खरीदा या बेचा जा चुका हो। २. जिसकी स्तुति की गई हो।

पणार्पण—पुं० [पण-अर्पण, ष० त०] क्रय-विक्रय के लिए दो पक्षों में होनेवाला निश्चय या पक्की बात।

पणाशी*—वि०=प्रनाशी (नाश करनेवाला)।

पणास्थि—स्त्री० [पण०अस्थि, ष० त०] कौड़ी। कपर्दक।

पणि—स्त्री० [सं०√पण्+इन्] बाजार। हाट।
पुं० १. पणन अर्थात् क्रय-विक्रय करनेवाला व्यक्ति। २. कंजूस। ३. पापी।

पणित—भू० कृ० [सं०√पण्+क्त] १. (पदार्थ) जिसका पणन अर्थात् क्रय-विक्रय हो चुका हो। २. जिसके संबंध में बाजी लगाई गई हो। ३. जिसके संबंध में कोई प्रतिबंध या शर्त लगा हो। (कन्डिशन्ड) ४. प्रशंसित। स्तुत।
पुं० १. बाजी। शर्त। २. जूआ। ३. जुआरी। ४. अग्रिम या पेशगी दिया जानेवाला धन। बयाना।

पणितव्य—वि० [सं०√पण्+तव्यत्] १. जिसका क्रय-विक्रय हो सके। २. जिसका लेन-देन या व्यवहार हो सके। ३. जिसके साथ लेन-देन या व्यवहार किया जा सके। ४. जिसकी प्रशंसा या स्तुति की जा सके।

पणिता (तृ)—पुं० [सं०√पण्+तृच्] पणन अर्थात् क्रय-विक्रय करनेवाला व्यक्ति।

पणिहारा*—पुं० [स्त्री० पणिहारी]=पनिहारा।

पणी (णिन्)—पुं० [सं० पण+इनि] क्रय-विक्रय करनेवाला रोजगारी।

पण्य—वि० [सं० पण्+यत्]=पणितव्य।
पुं० १. वह चीज जो खरीदी और बेची जाती हो। माल। सौदा। २. रोजगार। व्यापार। ३. बाजार। हाट। ४. दूकान।

पण्य-क्षेत्र—पुं० [ष० त०]=पण्य-भूमि।

पण्य-चरित्र—पुं० [ष० त०] किसी मंडी या हाट के बँधे हुए नियम या प्रथाएँ।

पण्य-चिह्न—पुं० [ष० त०] दे० 'वाणिज्य चिह्न'।

पण्य-दास—पुं० [कर्म० स०] [स्त्री० पण्यदासी] वह दास जो धन लेकर उसके बदले में दास्यवृत्ति करता हो।

पण्य-निचय—पुं० [ष० त०] बेचने के लिए माल इकट्ठा करके रखना।

पण्य-निर्वाहण—पुं० [ष० त०] चुंगी या महसूल दिये बिना ही चोरी से माल निकाल ले जाना। (कौ०)

पण्य-पति—पुं० [ष० त०] १. बहुत बड़ा रोजगारी या व्यापारी। २. बहुत बड़ा साहूकार। नगर-सेठ।

पण्य-पत्तन—पुं० [ष० त०] १. वह नगर जिसमें अनेक मंडियाँ हों। २. मंडी। ३. बाजार। हाट।

पण्य-परिणीता—स्त्री० [कर्म० स०] रखेली स्त्री।

पण्य-फल—पुं० [ष० त०] व्यापार करने से प्राप्त होनेवाली आय या लाभ।

पण्य-भूमि—स्त्री० [ष० त०] १. वह स्थान जहाँ वस्तुओं का व्यापार होता हो। २. मंडी। हाट। ३. गोदाम।

पण्य-योषित—स्त्री० [मध्य० स०] रंडी। वेश्या।

पण्य-वस्तु—स्त्री० [कर्म० स०] वे पदार्थ या वस्तुएँ जो बाजारों में बेंचने के उद्देश्य से बनाई जाती हैं। खरीद और बिक्री का माल। पण्य-द्रव्य। (कमोडिटी, मर्चेन्डाइज) जैसे—कपड़ा, कागज, गेहूँ, जौ आदि।

पण्य-विलासिनी—स्त्री० [कर्म० स०] वेश्या।

पण्य-वीथि (का)—स्त्री० [ष० त०] १. बाजार। २. छोटी दुकान।

पण्य-शाला—स्त्री० [ष० त०]=पण्य-वीथि (का)।

पण्य-समवाय—पुं० [ष० त०] व्यापारिक वस्तुओं का संग्रह।

पण्य-स्त्री—स्त्री० [कर्म० स०] वेश्या।

पण्यांगना—स्त्री० [पण्या-अंगना कर्म० स०] वेश्या।

पण्यांधा—स्त्री० [सं० पण्य√अंध् (अंधा करना)+अच्—टाप्] कँगनी नाम का कदन्न।

पण्या—स्त्री० [सं० पण्य+टाप्] मालकंगनी।

पण्याजीव—पुं० [सं० पण्य-आ√जीव् (जीना)+क] १. ऐसा व्यक्ति जिसकी जीविका पण्य अर्थात् रोजगार से चलती हो। रोजगारी। व्यापारी।

पण्याजीवक—पुं० [सं० पण्याजीव+कन्] १. =पण्याजीव। २. [पण्याजीव√कै (चमकना)+क] बाजार।

पण्यावर्त्त—पुं० [सं०] क्रय-विक्रय, लेन-देन आदि का व्यवहार।

(ट्रैन्जैक्शन)

पतंखा—पुं० =पतोखा।

पतंग—वि० [सं०√पत् (गिरना)+अंगच्] १. जो गिरता हुआ जाता हो। २. उड़नेवाला।

पुं० १. सूर्य। २. मकड़ी। ३. पतिंगा। शलभ। ४. चिड़िया। पक्षी। ५. कंदुक। गेंद। ६. एक गंधर्व का नाम। ७. एक प्राचीन पर्वत। ८. बदन। शरीर। ९. नाव। नौका। १०. जैनों के एक देवता जो वाणव्यंतर नामक देवगण के अन्तर्गत हैं। ११. चिनगारी। १२. जड़हन धान। १३. जलमछुआ। १४. एक प्रकार का वृक्ष जिसकी लकड़ी रक्त चन्दन की लकड़ी जैसी परन्तु निर्गन्ध होती है।

स्त्री० [सं० पतंग=उड़नेवाला] कागज की वह बहुत बड़ी गुड्डी जो डोर की सहायता से हवा में उड़ाई जाती है। कन-कौआ। चंग। तुक्कल।

क्रि० प्र०—उड़ाना।—लड़ाना।

मुहा०—**पतंग काटना**=पेंच लड़ाकर किसी की पतंग की डोरी काट देना। **पतंग बढ़ाना**=डोर ढीलते हुए पतंग और अधिक ऊँचाई या दूरी पर पहुँचाना।

पुं० [सं० पत्रंग] एक तरह का बड़ा वृक्ष जिसकी लकड़ी से बढ़िया लाल रंग निकाला जाता है। (सपन)

पुं० [फा०] १. रोशनदान। २. खिड़की।

पतंग-छुरी—वि० [सं० पतंग=उड़ानेवाला अथवा चिनगारी+हिं० छुरी] पीठ पीछे बुराई करनेवाला। चुगलखोर।

पतंगबाज—पुं० [हिं० पतंग+फा० बाज] [भाव० पतंगबाजी] वह जिसको पतंग उड़ाने का शौक या व्यसन हो।

पतंगबाजी—स्त्री० [हिं० पतंगबाज+ई (प्रत्य०)] पतंग उड़ाने की क्रिया, भाव या शौक।

पतंगम—पुं० [सं० पतद्√गम्+खच्, नि० सिद्धि] १. पक्षी। चिड़िया। २. पतिंगा। शलभ।

पतंगा—पुं० [सं० पतंग] १. परोंवाला वह कीड़ा जो हवा में उड़ता हो। २. एक तरह का साधारण कीड़ों से बड़ा कीड़ा जो पेड़ों की पत्तियाँ, फसलें आदि खाता तथा नष्ट-भ्रष्ट करता है। ३. दीये का फूल। ४. चिनगारी।

पतंगिका—स्त्री० [सं० पतंग+कन्—टाप्, इत्व] १. छोटा पक्षी। २. एक तरह की मधुमक्खी।

पतंगी (गिन्)—पुं० [सं० पतंग+इनि] पक्षी।

पतंगेंद्र—पुं० [सं० पतंग-इंद्र, ष० त०] पक्षियों के स्वामी, गरुड़।

पतंचल—पुं० [सं०] एक गोत्र प्रवर्तक ऋषि।

पतंचिका—स्त्री० [सं० पतम्+चिक्क् (पीड़ा) पृषो० सिद्धि] धनुष का चिल्ला। प्रत्यंचा।

पतंजलि—पुं० [सं० पतत्-अंजलि, ब० स०, शक० पर रूप] पाणिनि के सूत्रों पर महाभाष्य नामक टीका लिखनेवाले एक प्रसिद्ध ऋषि जो योगदर्शन के प्रतिपादक भी कहे जाते हैं।

पत—स्त्री० [सं० प्रतिष्ठा?] प्रतिष्ठा। आवरू। इज्जत। लाज।

क्रि० प्र०—जाना।—रखना।—रहना।

मुहा०—(**किसी की) पत उतारना**=किसी को अपमानित करना। (**किसी की) पत रखना**=अपमानित होनेवाले की अथवा अपमानित होते हुए की इज्जत बचाना। लाज रखना। **पत लेना**=पत उतारना।

पुं० [सं० पति] १. पति। २. स्वामी।

पुं० [हिं० पत्ता] 'पत्ता' का संक्षिप्त रूप जो उसे यौगिक पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पत-झड़।

पतई—स्त्री० १. =पत्ती। २. =पताई।

पतउड़—पुं० [सं० पति+उड्] चन्द्रमा। (डिं०)

पत-खोवन—वि० [हिं० पत+खोवन=खोनेवाला] अपनी अथवा दूसरों की प्रतिष्ठा नष्ट करनेवाला।

पतग—पुं० [सं० पत√गम् (गति)+ड] पक्षी। चिड़िया। पखेरू।

पतगेंद्र—पुं० [सं० पतग-इन्द्र ष० त०] पक्षिराज। गरुड़।

पतचौली—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का पौधा।

पत-झड़—पुं० [हिं० पत्ता+झड़ना] १. पेड़ों के पत्तों का झड़ना। २. शिशिर ऋतु जिसमें अधिकांश पेड़ों के पत्ते झड़ जाते हैं। ३. उन्नति के उपरांत होनेवाला ह्रास। विशेषतः ऐसी स्थिति जिसमें वैभव, संपत्ति आदि नष्ट हो चुकी होती है।

पतझर—पुं०=पत-झड़।

पतझल—स्त्री०=पत-झड़।

पतझाड़—स्त्री०=पत-झड़।

पतझार—स्त्री० =पत-झड़।

पतता—स्त्री० [सं० पतिता]=पतित्व। उदा०—परी है विपत्ति पति लागि पतता नहीं।—सेनापति।

पतत्—वि०[सं०√पत्+शतृ] १. नीचे की ओर आता, उतरता या गिरता हुआ। २. उड़ता हुआ।

पुं० चिड़िया।

पतत्पतंग—पुं० [सं० पतत्-पतंग, कर्म० स०] अस्त होता हुआ सूर्य।

पतत्प्रकर्ष—वि० [सं० पतत्-प्रकर्ष, ब० स०] जो प्रकर्ष से गिर चुका हो।

पुं० साहित्यिक रचना का एक दोष जो उस समय माना जाता है जब कोई बात आरंभ में तो उत्कृष्ट रूप में कही जाती है परन्तु आगे चलकर वह उत्कृष्टता कुछ घट या नष्टप्राय हो जाती है। जैसे—पहले तो किसी को चन्द्रमा कहना और बाद में जुगनूँ कहना। (एन्टीक्लाइमैक्स)

पतत्र—पुं० [√पत्+अत्रन्] १. पक्ष। डैना। २. पंख। पर। ३. वाहन। सवारी।

पतत्रि—पुं० [सं०√पत्+अत्रिन्] पक्षी। चिड़िया।

पतत्रि-केतन—पुं० [ब० स०] विष्णु।

पतत्रि-राज—पुं० [ष० त०] गरुड़।

पतत्रि-वर—पुं० [स० त०] गरुड़।

पतत्री (त्रिन्)—पुं० [सं० पतत्र+इनि] १. पक्षी। २. वाण। ३. घोड़ा।

पतद्ग्रह—पुं० [सं० पतद्√ग्रह् (पकड़ना)+अच्] १. उगालदान। पीकदान। २. भिक्षा-पात्र। ३. संरक्षित सेना।

पतद्-भीरु—पुं० [सं० ब० स०] बाज पक्षी।

पतन—पुं० [सं०√पत्+ल्युट्—अन] १. ऊपर से नीचे आने या

गिरने की क्रिया या भाव। २. नीचे बैसने या बैठने की क्रिया या भाव। ३. व्यक्ति का, उच्च आदर्श, स्तुत्य आचरण आदि छोड़कर निन्दनीय और हीन आचरण या कार्य करने में प्रवृत्त होना। ४. जाति, राष्ट्र आदि का ऐसी स्थिति में आना कि उसकी प्रभुता और महत्ता नष्ट प्राय हो जाय। ५. मृत्यु। ६. पाप। पातक। ७. उड़ने की क्रिया या भाव। उड़ान। ८. किसी नक्षत्र का अक्षांश।

वि० [√पत्+ल्यु-अन] १. गिरता हुआ या गिरनेवाला। २. उड़ता हुआ या उड़नेवाला।

पतन-शील—वि० [सं० ब० स०] [भाव० पतनशीलता] जिसका पतन हो रहा हो; अथवा जिसकी प्रवृत्ति पतन की ओर हो। गिरता हुआ या गिरनेवाला।

पतना—पुं० [?] योनि का किनारा।

†अ० [सं० पतन] १. गिरना। २. पतन होना।

†स०=पाथना।

पतनारा—पुं० [?] नाबदान। पनाला। मोरी।

पतनीय—वि० [सं०√पत्+अनीयर्] जिसका पतन होने को हो अथवा जिसका पतन होना संभावित या स्वाभाविक हो।

पतनोन्मुख—वि० [सं० स० त० पतन उन्मुख] जो पतन की ओर उन्मुख हो।

पत-पानी—पुं० [हिं० पत+पानी] प्रतिष्ठा। मान। इज्जत। आबरू।

पतम—पुं० [सं०√पत्+अम] १. चन्द्रमा। २. चिड़िया। पक्षी। ३. पतिंगा। शलभ।

पतयालु—वि० [सं०√पत्+णिच्+आलु] पतनशील।

पतयिष्णु—वि० [सं०√पत्+णिच्+इष्णुच्] पतनशील।

पतर—वि०=पातर (पतला)।

पुं०=पत्र।

स्त्री०=पत्तल।

पतरा—पुं० [सं० पत्र] १. वह पत्तल जो तँबोली लोग पान रखने के टोकरे या डलिये में बिछाते हैं। २. सरसों का साग या पत्ता।

†पुं०=पत्रा (पंचांग)।

†वि० [स्त्री० पतरी]=पतला।

पतराई—स्त्री०=पतलाई।

पतरिंगा—पुं० [?] गोरैया के आकार का लंबी चोंच तथा लंबी पूँछ-वाला एक पक्षी जिसका रंग सुनहलापन लिये हरे रंग का होता है तथा आँखें लाल रंग की तथा नुकीली चोंच काले रंग की होती है।

पतरी†—स्त्री०=पत्तल।

पतरेंगा—पुं०=पतरिंगा (पक्षी)।

पतरौल—पुं० [अं० पेट्रोल] गश्त लगानेवाला सैनिक।

पतला—वि० [सं० पत्रालः] [स्त्री० पतली; भाव० पतलापन] १ तीन विमाओंवाली ठोस वस्तु के संबंध में, जिसमें मोटाई या गहराई उसकी लंबाई तथा चौड़ाई की अपेक्षा कम हो। जैसे—पतला डंडा, पतली बाँह। २. व्यक्ति, जिसका शरीर हृष्ट-पुष्ट न हो, बल्कि कृश या क्षीण हो।

पद—दुबला-पतला।

३. कपड़े, कागज आदि के संबंध में, जो तल की मोटाई के विचार से झीना या महीन हो। ४. जिसका घेरा अपेक्षया बहुत कम हो। जैसे—पतली कमर। ५. जिसकी चौड़ाई बहुत कम हो। जैसे—पतली गली। ६. तरल पदार्थ के संबंध में, जिसमें गाढ़ापन न हो। जिसमें तरलता अधिक हो। जैसे—पतला दूध, पतला रसा। ७. लाक्षणिक अर्थ में, जिसमें शक्ति या समर्थता न हो अथवा जिस रूप में या जितनी होनी चाहिए, उस रूप में अथवा उतनी न हो।

पद-**पतला हाल**=निर्धनता और विपत्ति की अवस्था। **पतली फसल**=ऐसी फसल जिसमें अन्न बहुत कम हुआ हो। **पतले कान**=ऐसे कान (फलतः उन कानों से युक्त व्यक्ति) जिनमें सुनी-सुनाई बातें बिना विचार किये मान लेने की विशेष प्रवृत्ति हो। जैसे—उनके कान पतले हैं; उनसे जो कुछ कहा जाय, उसे वे सच मान लेते हैं।

पतलाई—स्त्री०=पतलापन।

पतलापन—पुं० [हिं० पतला+पन (प्रत्य०)] 'पतला' होने की अवस्था या भाव।

पतली—स्त्री० [लश०] जूआ। द्यूत।

वि० स्त्री० हिं० पतला का स्त्री० रूप।

पतलून—पुं० [अं० पैंटलून] खुली मोहरियों, सीधे पायँचों तथा जेबों-वाला एक तरह का विदेशी पायजामा जिसमें मियानी नहीं होती।

पतलूननुमा—वि० [हिं० पतलून+फा० नुमा=दर्शक] जो देखने में पतलून की तरह हो।

पुं० वह पाजामा जो देखने में पतलून से मिलता-जुलता हो।

पतलो—स्त्री० [देश०] १. सरकंडे या सरपत की पताई। २. सरकंडा। सरपत।

पतवर—क्रि० वि० [सं० हिं० पाँती+वार (प्रत्य०)] १. पंक्तिक्रम से। २. बराबर-बराबर।

पतवा—पुं० [हिं० पत्ता+वा (प्रत्य०)] जंगली जानवरों का शिकार करने के लिए बनाई हुई एक तरह की ऊँची मचान।

†पुं० १=पत्ता। २.=पता।

पतवार—स्त्री० [सं० पत्रबाल, पात्रपाल, प्रा० पात्तवाड़] १. बड़ी नावों और विशेषतः पुराने देशी समुद्री जहाजों का वह तिकोना पिछला अंग या उपकरण जो आधा जल में और आधा जल के बाहर रहता है और जिसके संचालन से नाव का रुख दूसरी ओर घुमाया जाता है। कर्ण। २. ऐसा सहारा या साधन जो कठिन समय में भवसागर से पार उतारे।

पुं० [हिं० पत्ता] १. पौधों विशेषतः सरकंडों आदि की सूखी पत्तियाँ। २. कूड़ा-करकट। जैसे—खर-पतवार।

पतवारी—स्त्री० [हिं० पता, पत्ता] ऊख का खेत।

†स्त्री०=पतवार।

पतवाल†—स्त्री०=पतवार।

पतवास—स्त्री० [सं० पतत्=चिड़िया+वास] पक्षियों का अड्डा। चिक्कस।

पतस—पुं० [सं०√ पत्+असच्] १. पक्षी। चिड़िया। २. पतिंगा। शलभ। ३. चंद्रमा।

पतस्वाहा—पुं० [हिं०] अग्नि।

पता—पुं० [सं० प्रत्यय, प्रा० पत्तय=ख्याति] १. किसी काम, चीज, जगह या बात का परिचायक वह विवरण जिसकी सहायता से उसके पास तक

पहुँचा जा सके या उसके रूप, स्थिति आदि का ज्ञान प्राप्त किया जा सके।
पद—पता-ठिकाना (दे०)।
२. चिट्ठी आदि के ऊपर का वह विवरणात्मक लेख जो सूचित करता है कि यह पत्र किस स्थान के निवासी किस व्यक्ति का है अथवा किसके पास पहुँचना चाहिए। ३. किसी अज्ञात विषय, व्यक्ति आदि के संबंध की ऐसी जानकारी जो अभी तक प्राप्त न हुई हो और जिसे प्राप्त करना अभीष्ट या आवश्यक हो। जैसे—चोर (या मुजरिम) का अभी तक पता नहीं है।
क्रि० प्र०—चलना।—चलाना।—लगना।—लगाना।
पद—पते का=वास्तव में उस स्थान का जिसका सब को परिचय न हो।
४. किसी बात या विषय के गूढ़ तत्त्व या रहस्य की ऐसी जानकारी जो प्राप्त की जाने को हो। जैसे— यह पता लगाना चाहिए कि उसके पास रुपया कहाँ से आता है।
पद—पते की बात=ऐसी बात जिससे कोई भेद खुल जाता या रहस्य स्पष्ट हो जाता है। जैसे—वाह! तुमने भी क्या पते की बात कही है।
विशेष—इस अर्थ में इसका प्रयोग केवल 'पते की' के रूप में भी होता है।
स्त्री०[लता का अनु०] लता या उसी तरह की और चीज। लता के साथ प्रयुक्त। जैसे—लता-पता।

पताई—स्त्री०[हिं० पत्ता (वृक्ष का)]१. वृक्ष या पौधे की ऐसी पत्तियाँ जो सूखकर झड़ गई हों।
मुहा०—पताई लगाना=चूल्हे, भट्ठी आदि में सूखी पत्तियाँ झोंकना। (किसी के मुँह में) पताई लगाना=मुँह फूंकना। (स्त्रियों की गाली)
२. कूड़ा-करकट।
स्त्री०[हिं० पत्ता (कान का)] गहना। जेवर। जैसे—गहना-पताई कुछ नहीं मिला।

पताकरा—पुं०[देश०] एक प्रकार का वृक्ष जो बंगाल, आसाम और पश्चिमी घाट में होता है। इसके फल खाए जाते हैं।

पताकांक—पुं०[सं० पताका-अंक ष०त०, ब०स०] दे० 'पताका स्थान'।

पताकांशु—पुं०[सं० पताका-अंशु, ष०त०]झंडा। झंडी। पताका।

पताका—स्त्री०[सं०√पत्+आकन्—टाप्]१. लकड़ी आदि के डंडे के सिरे पर पहनाया हुआ वह तिकोना या चौकोना कपड़ा जिस पर कभी कभी किसी राजा या संस्था का विशिष्ट चिह्न भी अंकित रहता है। झंडा। झंडी। फरहरा। २. झंडा। ध्वजा। (मुहा० के लिए दे० 'झंडा' के मुहा०)
पद—विजय की पताका=युद्ध आदि में किसी स्थान पर विजयी पक्ष की वह पताका जो विजित पक्ष की पताका गिराकर उसके स्थान पर उड़ाई जाती है। विजय-सूचक पताका।
३. वह डंडा जिसमें पताका पहनाई हुई होती है। ध्वज। ४. सौभाग्य। ५. तीर चलाने में उँगलियों की एक विशिष्ट प्रकार की स्थिति। ६. दस खर्ब की संख्या जो अंकों में इस प्रकार लिखी जायगी—१०००००००००००। ७. पिंगल के नौ प्रत्ययों में से आठवाँ जिसके द्वारा किसी निश्चित गुरु, लघु वर्ण के छंद अथवा छंदों का स्थान जाना जाय। ८. साहित्य में, नाटक की प्रासंगिक कथा के दो भेदों में से एक। वह कथा जो रूपक (या नाटक की) आधिकारिक कथा की सहायतार्थ आती और दूर तक चलती है। इसका नायक अलग होता है और पताका नायक कहलाता है। जैसे—प्रसाद के स्कंद गुप्त नाटक में मालव की कथा 'पताका' है और उसका नायक बभ्रुवर्मा पताका नायक है। (दूसरा भेद प्रकरी कहलाता हैं।)
पताका-दंड—पुं०[सं०ष०त०] बाँस आदि जिसमें पताका लगी होती है।

पताका वेश्या—स्त्री०[सं०] बहुत ही निम्न कोटि की वेश्या। टकाही रंडी।

पताका स्थानक—पुं०[सं०मध्य०स०] साहित्य में, नाटक के अंतर्गत वह स्थिति जिसमें किसी प्रसंग के द्वारा आगे की या तो अन्योक्ति पद्धति पर या समासोक्ति पद्धति पर सूचित की जाती है।

पताकिक—पुं०[सं० पताका+ठन्—इक] वह जो आगे आगे झंडा या पताका लेकर चलता हो।

पताकित—वि०[सं० पताका+इतच्](स्थान) जिस पर पताका लगाई गई हो।

पताकिनी—स्त्री०[सं० पताका+इनि—ङीप्]१. सेना। फौज। २. एक देवी का नाम।

पताकी (किन्)—वि०[सं० पताका+इनि] [स्त्री० पताकिनी] झंडा लेकर चलनेवाला।
पुं०१. रथ। २. फलित ज्योतिष में, राशियों का एक विशेष वेध जिससे जातक के अरिष्ट काल की अवधि जानी जाती है।

पताग्री—स्त्री०[देश०] एक तरह की नाव।

पतार—पुं०[सं० पाताल] १. घना जंगल। सघन वन। २. नीची भूमि। ३. दे० 'पाताल'।

पतारी—स्त्री०[देश०] जलाशयों के किनारे रहनेवाली एक तरह की चिड़िया जिसका शिकार किया जाता है।

पताल†—पुं०=पाताल।

पताल-आँवला—पुं०[सं० पाताल-आमलकी] औषध के काम में आनेवाला एक पौधा।

पताल-कुम्हड़ा—पुं०[सं० पाताल-कुष्मांड]एक तरह का जंगली पौधा।

पताल-दंती†—पुं०=पातालदंती।

पतावर—पुं०[हिं० पत्ता] पेड़ के सूखे झड़े हुए पत्ते।

पतासा†—पुं०=पताशा।

पतासी—स्त्री०[देश०] एक तरह की छोटी रुखानी (बढ़ई)।

पतिंग—पुं०=पतंगा।

पतिंगा—पुं०=पतंगा।

पतिंवरा—वि०[सं० पति√वृ (वरण करना)+खच्, मुम्]१. (स्त्री) जो अपना पति स्वयं चुने। स्वेच्छा से पति का वरण करनेवाली (स्त्री)। स्वयंवरा।
स्त्री० काला जीरा।

पति—पुं०[सं०√पा (रक्षा)+डति] [स्त्री० पत्नी]१. किसी वस्तु का मालिक या स्वामी। अधिपति। प्रभु। जैसे—गृहपति। २. स्त्री की दृष्टि से वह पुरुष जिसके साथ उसका विधिवत् विवाह हुआ हो। खाविंद। दूल्हा। शौहर।

विशेष—साहित्य में शृंगार रस का आलम्बन वह नायक 'पति' माना जाता है, जिसने नायिका का विधिवत् पाणि-ग्रहण किया हो।
३. पाशुपत दर्शन के अनुसार सृष्टि, स्थिति और संहार का वह कारण जिसमें निरतिशय, ज्ञान-शक्ति और क्रियाशक्ति होती है और ऐश्वर्य से जिसका नित्य संबंध होता है। ईश्वर। ४. जड़। मूल।
†स्त्री०[हिं० पत=प्रतिष्ठा]१. प्रतिष्ठा। सम्मान। २. लज्जा। शर्म। उदा०—जो पति संपति हूँ बिना, जदुपति राखे जाह।—बिहारी।

पतिआना†—स०=पतियाना।

पतिआर—वि०[हिं० पतियाना] जिस पर विश्वास किया जा सके।
पुं०=विश्वास।

पतिक—पुं०[सं० प्रतिकः] कार्षापण नाम का पुराना सिक्का।

पति-कामा—वि०[सं० ब०स०, टाप्] (स्त्री) जिसके मन में किसी पुरुष से विधिवत् विवाह करने की इच्छा हो।

पतिघातिनी—स्त्री० [सं० पति√हन् (हिंसा)+णिनि—ङीप्]१. पति की हत्या करनेवाली स्त्री। पति को मार डालनेवाली स्त्री। २. फलित ज्योतिष में, ऐसी स्त्री जिसका ग्रहों के प्रभाव के कारण विधवा हो जाना अवश्यम्भावी या निश्चित हो। ३. सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार स्त्रियों के हाथ में होनेवाली एक रेखा जिसके प्रभाव से उनका विधवा हो जाना निश्चित माना जाता है।

पतिघ्न—वि०[सं० पति √ हन्+ठक्]पति को मार डालनेवाला या वाली।
पुं० स्त्रियों में होनेवाला वह अशुभ चिह्न या लक्षण जिससे उसके पति के शीघ्र ही मर जाने की संभावना सूचित होती है।

पतिघ्नी—स्त्री०[सं० पतिघ्न+ङीप्]=पतिघातिनी।

पतिजिया—स्त्री०[सं० पुत्रजीवा] जीया पोता नामक वृक्ष।

पतित—भू० कृ० [सं०√पत्+(गिरना)+क्त] [स्त्री० पतिता, भाव० पतितता] १. ऊपर से नीचे आया या गिरा हुआ। २. नीचे की ओर झुका हुआ। नत। ३. (व्यक्ति) जिसका नैतिक दृष्टि से पतन हो चुका हो। ४. ऊपरी जाति या वर्ग के धर्म या धार्मिक प्रथाओं, विश्वासों आदि को न माननेवाला, उनका उल्लंघन करनेवाला अथवा उन्हें हेय समझनेवाला। ५. बहुत बड़ा अधम, नीच या पापी। ६. जो अपनी जाति, धर्म या समाज से किसी हीन आचरण के कारण निकाला या बहिष्कृत किया गया हो। ७. जो युद्ध आदि में गिरा, दबा या हरा दिया गया हो। ८. अपवित्र। मलिन। ९. गिराया या फेंका हुआ।

पतित-उधारन—वि० [सं० पतित+हिं० उधारना (सं० उद्धरण)] पतितों का उद्धार करनेवाला तथा उन्हें सद्गति देनेवाला।
पुं० ईश्वर।

पतितता—स्त्री०[सं० पतित+तल्—टाप्] १. पतित होने की अवस्था या भाव। २. जाति या धर्म से च्युत होने का भाव। ३. अपवित्रता। ४. अधमता। नीचता।

पतित-पावन—वि० [पतित√पाव+ल्युट्—अन] [स्त्री० पतितपावनी] पतित को भी पवित्र करनेवाला। पतितों को शुद्ध करनेवाला।
पुं० परमेश्वर।

पतित-वृक्ष—वि० [कर्म० स०] पतित दशा में रहनेवाला। जातिच्युत होकर जीवन बितानेवाला।

पतितव्य—वि०[सं० √पत्+तव्यत्] जो पतित होने को हो या पतित होने के योग्य हो।

पतित-सावित्रीक—वि० [ब०स० कप्] (ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा शूद्र) जिसका यज्ञोपवीत विधिवत् न हुआ हो अथवा हुआ ही न हो।

पतित्व—पुं०[सं० पति+त्व]१. प्रभुत्व। स्वामित्व। २. पति या पाणि-ग्राहक होने की अवस्था, भाव या समर्थता।

पति-देवा—वि०[ब०स०] (ऐसी स्त्री) जो अपने पति या स्वामी को ही सबसे बड़ा देवता मानती हो; अर्थात् पतिव्रता।

पति-धर्म—पुं० [ष०त०]१. पति या स्वामी का कर्तव्य और धर्म। २. पति के प्रति पत्नी का कर्तव्य और धर्म।

पतिधर्मवती—वि० [सं० पतिधर्म+मतुप्, वत्व, ङीप्] (स्त्री) जो पति के प्रति अपने कर्तव्य करने के लिए सचेत हो।

पतिनी†—स्त्री०=पत्नी।

पतिपारना—स०[सं० प्रतिपालन]१. प्रतिपालन करना। पूरा करना। २. पालन-पोषण करना।

पति-प्राणा—स्त्री०[सं० ब०स०, टाप्] पति को प्राणों के समान समझने-वाली अर्थात् पतिव्रता स्त्री।

पतिया*—स्त्री० =पाती (चिट्ठी या पत्री)।

पतियाना—स०[सं० प्रत्यय+हिं० आना (प्रत्य०)]१. किसी की कही हुई बात आदि पर विश्वास करना। सच समझना। २. किसी व्यक्ति को विश्वसनीय या सच्चा समझना।

पतियार (ा)†—वि०[हिं० पतियाना] विश्वसनीय।
पुं० प्रत्यय। विश्वास।

पति-रिपु—वि०[सं० ब०स०] पति से द्वेष या शत्रुता करनेवाली। पति से वैर रखनेवाली (स्त्री)।

पति-लंघन—पुं०[सं० ष०त०] स्त्री का दूसरे पति से विवाह करके पहले मृत-पति का तिरस्कार करना।

पति-लोक—पुं०[सं० ष०त०]पुराणानुसार वह लोक जिसमें स्त्री का मृत पति रहता है और जहाँ अच्छी स्त्री भी मरने पर भेजी जाती है।

पतिवंती—वि०[सं० पति-मती] (स्त्री) जिसका पति जीवित या वर्तमान हो। सधवा।

पतिवती—वि०=पतिवंती।

पतिवत्नी—वि० स्त्री०[सं० पति+मतुप्, वत्व, ङीप्, नुक्]=पतिवंती।

पतिवर्त्ता—स्त्री०=पतिव्रता।

पतिवाह—पुं०[?] उत्तर प्रदेश के कुछ पूर्वी जिलों में रहनेवाली अहीरों की एक जाति।

पति-वेदन—वि०[सं० ष०त०] जो पति प्राप्त करावे। पति प्राप्त कराने-वाला।
पुं० महादेव। शिव।

पति-वेदना—स्त्री०[सं० ष०त०] तंत्र-मंत्र या और किसी उपचार से पति को प्राप्त करनेवाली स्त्री।

पति-व्रत—पुं०[सं० ष०त०] विवाहिता स्त्री का यह व्रत कि मैं सदा पति

में अनन्य भक्ति रखूँगी, आज्ञाकारिणी बनकर सेवा करूँगी और पर-पुरुष की ओर कभी कुदृष्टि से नहीं देखूँगी। पातिव्रत्य।

पतिव्रता—वि० [सं० ब०स०, टाप्] पति-धर्म ही जिसका व्रत हो। अर्थात् पति में पूर्ण निष्ठा रखनेवाली तथा उसका अनुसरण करनेवाली सच्चरित्रा (स्त्री)।

पतिष्ठ—वि० [सं० पतितृ+इष्ठन् 'तृ' का लोप] पूरी तरह से पतन की ओर प्रवृत्त रहने या होनेवाला। अत्यन्त पतन-शील।

पती†—पुं०=पति।

पतीआ*—स्त्री०=प्रतिज्ञा।

पतीजना—अ० [हिं० प्रतीत+ना (प्रत्य०)] प्रतीति या एतबार करना। भरोसा या विश्वास करना। उदा०—इहौ राहु भा भानहिं, राघौ मनहिं पतीजु।—जायसी।

पतीणना*—स०=पतीतना।

पतीतना—स०=पतीजना (विश्वास करना)।

पतीना*—स०=पतीतना (विश्वास करना)।

पतीर—स्त्री० [सं० पंक्ति] कतार। पंक्ति।
†वि०=पतला।

पतीरी—स्त्री० [हिं० पात=पत्ता] एक प्रकार की चटाई।

पतील†—वि०=पतला।

पतीला—पुं० [सं० पतिली] [स्त्री० अल्पा० पतीली] ताँबे, पीतल आदि का ऊँचे तथा खड़े किनारेवाला और गोल घेरेवाला एक प्रसिद्ध बरतन।
†वि०=पतील (पतला)।

पतीली—स्त्री० हिं० पतीला का स्त्री० अल्पा० रूप।

पतुका†—पुं० [सं० पात्र] [स्त्री० अल्पा० पतुकी] १. बड़ी हाँड़ी। मटका। उदा०—पतुकी धरी श्याम खिसाई रहे उत ग्वारि हंसी मुख आँचल कै।—केशव। २. पतीला। (बुंदे०)

पतुरिया—स्त्री० [सं० पतिली=स्त्री विशेष] १. वेश्या, विशेषतः नाचने, गाने का पेशा करनेवाली वेश्या। पातुरी। २. दुश्चरित्रा और व्यभिचारिणी स्त्री। पुंश्चली। (दे० पातुरी)

पतुली†—स्त्री० [देश०] कलाई में पहनने का एक गहना। (अवध)

पतुही†—स्त्री० [हिं० पत्ता] मटर की वह हरी फली जिसमें पूरे तथा पुष्ट दाने न हों।

पतूखी†—स्त्री०=पतोखी (पतोखा का स्त्री० रूप)।

पतेना†—स्त्री० [?] हरे सुनहले रंग की एक चिड़िया जिसकी गरदन और पेट नीला होता है। इसकी चोंच नीचे की ओर झुकी हुई, नुकीली और लंबी होती है।

पतेई—स्त्री० [देश०] ईख का रस खौलाते समय उसमें से निकलनेवाली मैली झाग।

पतोखर†—स्त्री० [सं० हिं० पत्ता] वह ओषधि जो किसी वृक्ष, पौधे, तृण, पत्ते, फूल आदि के रूप में हो। खर-बिरई।
पुं० [सं० ओषधिपति] चंद्रमा।

पतोखरी—स्त्री०=पतोखा।

पतोखा—पुं० [हिं० पत्ता] [स्त्री० अल्पा० पतोखी] १. पत्ते अथवा पत्तों का बना हुआ अंजुली या कटोरे के आकार का पात्र। २. पत्तों का बना हुआ छाता। ३. एक प्रकार का बगला पक्षी। पतंखा।

पतोखी—स्त्री० [हिं० पतोखा] १. एक पत्ते का बना हुआ छोटा दोना। २. पत्तों का बना हुआ छोटा छाता।

पतोरा—पुं०=पत्योरा (एक तरह का पकवान)।

पतोह (हू)—स्त्री० [सं० पुत्रवधू, प्रा० पुत्रबहू] पुत्र की स्त्री। पुत्रवधू।

पतौआ†—पुं०=पत्ता।

पतौखा (षा)—पुं० [स्त्री० अल्पा० पतौखी (षी)]=पतोखा।

पत्तंग—पुं० [सं० पत्रांग, पृषो० सिद्धि] पतंग नामक लकड़ी। बक्कम।

पत्त†—पुं०=पत्र।

पत्तन—पुं० [सं० √पत्+तनन्] १. छोटा नगर। कस्बा। २. मृदंग।

पत्तन-आयुध—पुं० [सं० ष० त०] वे आयुध जिनसे नगर की रक्षा की जाती हो।

पत्तन-क्षेत्र—पुं० [सं० ष०त०] वह पत्तन या कस्बा जिसका शासन तथा व्यवस्था वहाँ के निर्वाचित लोग करते हों। (टाउन-एरिया)

पत्तन-पाल—पुं० [सं० पत्तन√पाल् (रक्षा)+णिच्+अण्] पत्तन या कस्बे का प्रधान शासक।

पत्तर—पुं० [सं० पत्र] धातु आदि का कागज के समान लचीला तथा पतला टुकड़ा।
†स्त्री०=पत्तल।

पत्तल—स्त्री० [सं० पत्र, हिं० पत्ता] १. पलाश, महुए आदि के पत्तों को छोटी-छोटी सींकों की सहायता से जोड़कर थाली के सदृश बनाया हुआ गोलाकार आधार।

कहा०—जिस पत्तल में खाना, उसी में छेद करना=अपने उपकारक, पालक, संरक्षक आदि का भी अपकार करना।

पद—एक पत्तल के खानेवाले=परस्पर घनिष्ठ सामाजिक संबंध रखनेवाले। परस्पर रोटी-बेटी का व्यवहार करनेवाले। सजातीय। **जूठी पत्तल**=किसी की जूठी की हुई भोजन सामग्री। उच्छिष्ट।

मुहा०—पत्तल खोलना=जिस काम की प्रतिज्ञा की या शर्त रखी गई हो, उसके पूरे होने पर ही भोजन करना। (दे० नीचे 'पत्तल बाँधना') **पत्तल पड़ना**=भोजन के समय खानेवालों के लिए पत्तलें क्रम से बिछाई या रखी जाना। **पत्तल परसना**= (क) खानेवालों के सामने पत्तलें रखना। (ख) उक्त पत्तलों पर भोजन की सामग्री रखना। **पत्तल बाँधना**=यह प्रतिज्ञा करना या लगाना कि जब तक अमुक काम न हो जायगा, तब तक भोजन नहीं किया जायगा। **(किसी की) पत्तल में खाना**=(किसी के साथ) खान-पान का संबंध करना या रखना। **पत्तल लगाना**=पत्तल परसना (दे० ऊपर)।

२. पत्तल पर परोसे हुए खाद्य पदार्थ।

क्रि० प्र०—लगाना।

३. उतना भोजन जितना एक साधारण आदमी करता हो। जैसे—जो खाने के लिए न आवे, उसके घर पत्तल भेज देना।

पत्ता—पुं० [सं० पत्र] [स्त्री० पत्ती] १. पेड़-पौधों आदि के तनों, शाखाओं आदि में लगनेवाले प्रायः हरे रंग के चिपटे लचीले अवयवों में से हर एक जो हवा में लहराता या हिलता-डुलता रहता है। पर्ण।

मुहा०—पत्ता खड़कना=(क) किसी प्रकार की गति आदि की आहट मिलना। (ख) किसी प्रकार की आशंका या खटका होना। **पत्ता तक न हिलना**=हवा का इतना बंद रहना या बिल्कुल न चलना कि वृक्षों

के पत्ते तक न हिल रहे हों। पत्तातोड़ भागना=जान बचाने या मुँह छिपाने के लिए बहुत तेजी से भागकर दूर निकल जाना। (फल आदि में) पत्ता लगना=पत्ते से सटे रहने के कारण फल में दाग पड़ जाना या उसके कुछ अंश सड़ जाना। पत्ता हो जाना=बहुत तेजी से भागकर अदृश्य या गायब हो जाना।

२. उक्त के आधार पर, चाट आदि वे वस्तुएँ जो पत्तों पर रखकर बेची जाती हैं। जैसे—एक पत्ता दही बड़ा इन्हें भी दो।

मुहा०—पत्ते चाटना=बाजारी चीजें खाना।

३. पत्ते के आकार का वह चिह्न जो कपड़े, कागज आदि पर छापा, बनाया या काढ़ा जाता है। ४. कान में पहनने का एक प्रकार का गहना जो बालियों में लटकाया जाता है। ५. ताश की गड्डी में का कोई एक कागज का खंड। ६. सरकारी चलनसार नोट। जैसे—दस रुपए का पत्ता, सौ रुपए का पत्ता।

वि० पत्ते की तरह का बहुत पतला और हलका।

पत्ता-फेर—पुं०=पटा-फेर।

पत्ति—पुं०[सं० √पद् (जाना)+क्तिन्]१. पैदल चलनेवाला व्यक्ति। २. पैदल सिपाही। प्यादा। ३. योद्धा। वीर। ४. नायक।

स्त्री० प्राचीन भारतीय सेना की एक इकाई जो सेनामुख की एक तिहाई होती थी।

पत्तिक—वि०[सं० पत्ति+कन्] पैदल चलनेवाला।

पत्ति-काय—पुं०[ष०त०]१. पैदल सेना। २. पैदल चलनेवाला सिपाही।

पत्तिगण—पुं०=पत्ति-गणक।

पत्ति-गणक—पुं०[ष०त०] प्राचीन भारत में, वह सैनिक अधिकारी जो पत्ति अर्थात् पैदल सेना की गणना करता था।

पत्तिपाल—पुं० [सं० पत्ति √पाल् (रक्षा)+णिच्=अण्, ष० त०] पत्ति का नायक।

पत्ति-व्यूह—पुं०[ष०त०] वह सैनिक व्यूह-रचना जिसमें आगे कवचधारी सैनिक हों और पीछे धनुर्धर।

पत्ति-सैन्य—पुं०[कर्म०स०] दे० 'पत्ति-काय'।

पत्ती—स्त्री०[हिं० पत्ता+ई (प्रत्य०)]१. पेड़-पौधों का बहुत छोटा पत्ता। जैसे—गेंदे, नीम या बेले की पत्ती। *२. भाँग नामक पौधे में लगनेवाले छोटे-छोटे पत्ते जो नशीले होते हैं। (पूरब) *३. तमाकू के बड़े-बड़े पत्तों का विशेष प्रक्रिया से बनाया हुआ चूरा जिसे लोग पान आदि के साथ खाते हैं। (पूरब)४. फूल की पंखड़ी। ५. लकड़ी, धातु आदि का छोटा टुकड़ा। ६. लोहे का तेज धार वाला वह छोटा पतला टुकड़ा जिसकी सहायता से दाढ़ी बनाई जाती है। (ब्लेड) ७. ताश का कोई पत्ता। ८. रोजगार, व्यवसाय आदि में होनेवाला साझे का अंश। जैसे—इस व्यापार में इनकी भी दो आना पत्ती है।

पत्तीदार—वि० [हिं० पत्ती+फा० दार=रखनेवाला] १. (पौधा या वृक्ष) जिसमें पत्तियाँ हों। २. (व्यक्ति) जिसकी किसी व्यापार या सम्पत्ति में पत्ती (भाग या हिस्सा हो)।

पत्तूर—पुं० [सं०√पत्+ऊर, नि० सिद्धि] १. शांति या शालिंच नामक शाक। २. जल-पीपल। ३. पाकर का पेड़। ४. शमी का पेड़। ५. पतंग या बक्कम नामक वृक्ष की लकड़ी।

पत्य—पुं० १.=पथ्य। २.=पथ।

पत्थर—पुं० [सं० प्रस्तर, प्रा० पत्थर] [वि० पथरीला, क्रि० पथराना] १. धातुओं से भिन्न वह कड़ा, ठोस और भारी भू-द्रव्य जो खानों के नीचे बनता है। भू-कम्प आदि के कारण यही भू-द्रव्य ऊपर उठकर पर्वतों का रूप धारण करता है। २. खानों में से खोदकर या पर्वतों में से काटकर निकाला हुआ उक्त भू-द्रव्य का कोई खंड या पिंड।

पद—पत्थर का कलेजा, दिल या हृदय=अत्यन्त कठोर हृदय। किसी के कष्ट से न पसीजनेवाला दिल या हृदय। पत्थर का छापा=पुस्तकों आदि की एक प्रकार की छपाई जिसमें छापे जानेवाले लेख की एक प्रतिलिपि पत्थर पर उतारी जाती है और उसी पत्थर पर कागज रखकर छापते हैं। लीथो की छपाई। पत्थर की छाती=(क) ऐसा हृदय जो बहुत बड़े-बड़े कष्ट भी सहज में और चुपचाप सह लेता हो। (ख) 'दे० ऊपर पत्थर का कलेजा'। पत्थर कील कीर=ऐसी प्रतिज्ञा या बात, जो उसी प्रकार दृढ़ और स्थायी हो, जैसी पत्थर के ऊपर छेनी आदि से खींची हुई लकीर होती है।

मुहा०—पत्थर को (या में) जोंक लगाना=बिलकुल अनहोनी या असंभव बात करना। ऐसा काम करना जो औरों के लिए असंभव या बहुत अधिक कठिन हो। (शस्त्र आदि को) पत्थर चटाना=छुरी, कटार आदि की धार पत्थर पर घिसकर तेज करना। पत्थर तले हाथ आना या दबना=ऐसे संकट में पड़ना या फँसना जिससे छूटने का कोई उपाय न सूझता हो। बुरी तरह फँस जाना। पत्थर तले से हाथ निकालना=बहुत बड़े संकट या विकट स्थिति में से किसी प्रकार बचकर निकलना। पत्थर निचोड़ना=(क) अनहोनी बात या असंभव काम कर दिखाना। (ख) ऐसे व्यक्ति से कुछ प्राप्त कर लेना जिससे प्राप्त करना औरों के लिए बिलकुल असंभव हो। पत्थर पिघलना या पसीजना=(क) बिलकुल अनहोनी या असंभव बात होना। (ख) परम कठोर हृदय का भी द्रवित होना। पत्थर सा खींच या फेंक मारना=बहुत ही रुखाई से उत्तर देना या बात करना। पत्थर से सिर फोड़ना या मारना=असंभव काम या बात के लिए प्रयत्न करना। व्यर्थ सिर खपाना।

३. सड़कों पर लगा हुआ वह पत्थर जिस पर वहाँ से विशिष्ट स्थान की दूरी अंकित होती है। ४. ओला। बिनौला।

क्रि० प्र०—गिरना। पड़ना।

पद—पत्थर पड़े=चौपट हो जाय। नष्ट हो जाय, मारा जाय। ईश्वर का कोप पड़े। (अभिशाप या गाली) जैसे—पत्थर पड़े तुम्हारी इस करनी (या बुद्धि) पर।

मुहा०—(किसी चीज या बात पर) पत्थर पड़ना=बुरी तरह से चौपट या नष्ट-भ्रष्ट हो जाना। जैसे—तुम्हारी बुद्धि पर पत्थर पड़ गया है। पत्थर-पानी पड़ना=बहुत जोरों की वर्षा होना और उसके साथ ओले गिरना।

५. नीलम, पन्ना, लाल, हीरा आदि रत्न जो वस्तुतः बहुमूल्य पत्थर ही होते हैं। जवाहिर। ६. ऐसी चीज जो पत्थर की ही तरह कठोर, जड़, ठोस या भारी हो। जैसे—(क) यह गठरी क्या है, पत्थर है। (ख) तुम्हारा कलेजा क्या है, पत्थर है। ७. ऐसा अन्न आदि जो जल्दी गलता या पचता न हो।

अव्य० नाम को भी कुछ नहीं। बिलकुल नहीं। जैसे—वहाँ क्या रखा है, पत्थर!

पत्थर-कला—स्त्री० [हिं० पत्थर+कल] एक तरह की पुरानी चाल की बन्दूक जिसमें लगे हुए चकमक पत्थर की सहायता से बारूद दागा जाता था।

पत्थर-चटा—पुं० [हिं० पत्थर+अनु० चट चट] एक प्रकार की घास जिसकी टहनियाँ नरम और पतली होती हैं।

पुं० [हिं० पत्थर+चाटना] १. एक प्रकार का साँप जो प्रायः पत्थर चाटता हुआ दिखाई देता है। २. एक प्रकार की समुद्री मछली जो प्रायः चट्टानों से चिपटी रहती है। ३. वह जो प्रायः घर के अन्दर रहता हो और जल्दी घर से बाहर न निकलता हो। ४. वह जो बहुत बड़ा कंजूस या मक्खीचूस हो।

पत्थर-चूर—पुं० [हिं० पत्थर+चूर] एक तरह का पौधा।

पत्थर-फूल—पुं० [हिं०पत्थर+फूल] दवा तथा मसाले के काम में आनेवाला एक तरह का पौधा जो प्रायः पथरीली भूमि में होता है। छरीला। शिलापुष्प।

पत्थर-फोड़—पुं० [हिं० पत्थर+फोड़ना] १. पत्थर तोड़ने का पेशा करनेवाला। संगतराश। २. छरीला या शैलाख्य नामक पौधा जो पत्थरों की संधियों में उत्पन्न होता है। ३. दे० 'हुदहुद पक्षी'।

पत्थरबाज—वि० [हिं० पत्थर+फा० बाज] [भाव० पत्थरबाजी] पत्थर फेंक-फेंककर लोगों को मारनेवाला।

पुं० वह जिसे ढेलवाँस से कंकड़-पत्थर फेंकने का अभ्यास हो। ढेलवाह।

पत्थरबाजी—स्त्री० [हिं० पत्थरबाज] दूसरों पर पत्थर फेंकने की क्रिया या भाव। ढेलेबाजी।

पत्थल†—पुं०=पत्थर।

पत्नी—स्त्री० [सं० पति+ङीप्, नुक्] किसी पुरुष के संबंध के विचार से वह स्त्री जिसके साथ उस पुरुष का विधिवत् पाणि-ग्रहण या विवाह हुआ हो। भार्या। जोरू।

पत्नी-व्रत—पुं० [सं० ष० त०] पत्नी के अतिरिक्त अन्य किसी स्त्री से गमन न करने का व्रत या संकल्प।

पत्नीव्रती (तिन्)—वि० [सं० पत्नीव्रत+इनि] जिसने पत्नी-व्रत धारण किया हो, अथवा जो पत्नी-व्रत का पालन करता हो।

पत्नी-शाला—स्त्री० [सं० ष०त०] यज्ञ में वह गृह जो पत्नी के लिए बनाया जाता था। यह यज्ञशाला के पश्चिम की ओर होता था।

पत्य—पुं० [सं० पति+यत्] पति होने की अवस्था, धर्म या भाव। जैसे—पातिव्रत्य।

पत्याना—स०=पतियाना।

पत्यारा वि०, पुं०=पतियारा।

पत्यारी—स्त्री० [सं० पंक्ति] पंक्ति। कतार।

पत्योरा—पुं० [हिं० पत्ता+ओर (प्रत्य०)] अच्चू के पत्ते का रिकवंछ।

पत्रंग—पुं० [सं० पत्र-अंग, ष० त०, शक० पररूप] पतंग नाम की लकड़ी या पेड़। बक्कम।

पत्र—पुं० [सं०√पत् (गिरना)+ष्ट्रन्] १. वृक्ष का पत्ता। पत्ती। पर्ण। २. वह कागज जिस पर किसी को भेजने के लिए कोई संदेश या समाचार लिखा हो। खत। चिट्ठी।

विशेष—प्राचीन काल में, जब कागज नहीं होता था, संदेश, समाचार आदि प्रायः वृक्षों के बड़े पत्तों पर ही लिखकर भेजे जाते थे; इसीलिए यह शब्द अब खत या चिट्ठी का वाचक हो गया है।

३. वह कागज या धातु-पट जिस पर विशेष व्यवहार के प्रमाण-स्वरूप कुछ लिखा गया हो। जैसे—दान-पत्र, प्रतिज्ञा-पत्र आदि। ४. वह लेख जो किसी व्यवहार या घटना के प्रमाण-स्वरूप लिखा गया हो। कोई पट्टा या दस्तावेज। ५. समाचार-पत्र। अखबार। ६. समाचार-पत्रों या सामयिक पत्रों का वर्ग या समूह। (प्रेस) ७. पुस्तक आदि का पृष्ठ। पन्ना। ८. धातु आदि का पत्तर। जैसे—स्वर्ण-पत्र। ९. पक्षियों का वह पर जो तीर में बाँधा या लगाया जाता है। पंख। १०. सौंदर्य-वृद्धि के लिए रंगों, सुगंधित द्रव्यों आदि से बनाई जानेवाली आकृतियाँ या अंकन। ११. तेजपात। १२. पक्षी। चिड़िया। १३. वाहन। सवारी। १४. छुरी, तलवार आदि का ?ल।

†पुं० [सं० पात्र] बरतन। उदा०—ऊँधा पत्र बुदबुद जल आकृति।—प्रिथीराज।

पत्रक—पुं० [सं० पत्र+कन्] १. पत्ता। २. पत्तियों की शृंखला। पत्रावली। ३. शांति नामक साग। ४. तेजपत्ता। ५. वह पत्र जिस पर स्मृति के लिए सूचना आदि के रूप में कोई बात लिखी हो। स्मृति-पत्र। (मेमो, नोट)

वि० १. पत्र-संबंधी। २. पत्र या कागज का बना हुआ या पत्र के रूप में होनेवाला। जैसे—पत्रक-धन।

पत्रक-धन—पुं० [सं० मध्य० स०] निश्चित मान का वह धन जो छपे हुए कागज या पत्र अर्थात् धन-पत्र के रूप में हो। (पेपर मनी)

पत्र-कर्तक—पुं० [सं० ष० त०] उपकरण जिससे कागज काटे जाते हैं। (पेपर कटर)

पत्रकार—पुं० [सं० पत्र√कृ (करना)+अण्] वह व्यक्ति जो समाचार पत्रों को नित्य नये समाचारों की सूचना देता, उन पर टीका-टिप्पणी करता अथवा दूसरों द्वारा भेजे हुए समाचारों को सम्पादित करता हो। (जरनलिस्ट)

पत्रकारिता—स्त्री० [सं० पत्र√कृ+णिनि+तल्+टाप्] १. पत्रकार होने की अवस्था या भाव। २. पत्रकार का काम। ३. वह विद्या जिसमें पत्रकारों के कार्यों, कर्तव्यों, उद्देश्यों आदि का विवेचन होता है। (जरनलिज्म)

पत्र-कारी†—स्त्री०=पत्रकारिता।

पत्र-काहला—स्त्री० [सं० ष० त०] पक्षी के परों के फड़फड़ाने अथवा पत्तों के हिलने से होनेवाला शब्द।

पत्र-कृच्छ्र—पुं० [मध्य० स०] एक व्रत जिसमें पत्तों का काढ़ा पीकर रहना पड़ता है।

पत्र-गुप्त—पुं० [सं० ब० स०] तिधारा। थूहर। त्रिकंटक।

पत्र-घना—स्त्री० [ब० स०, टाप्] सातला नाम का पौधा।

पत्रघ्न [स्त्री० [सं० पत्र√हन् (हिंसा)+टक्] सेंहुँड़। थूहर।

पत्रज—पुं० [सं० पत्र√जन् (उत्पन्न होना)+ड] तेजपत्ता।

पत्र-जात—पुं० [ष० त०] १. किसी संस्था, सभा अथवा किसी विषय

से संबंध रखनेवाले सभी आवश्यक कागज। कागज-पत्तर। (पेपर्स) २. इस प्रकार के पत्रों की नत्थी। (फाइल)

पत्रणा—स्त्री० [सं० पत्र√नम् (झुकना)+ड, णत्व, टाप्] १. पत्र-रचना। २. बाण में पंख लगाना।

पत्र-तंडुली—स्त्री० [सं० पत्रतंडुल, ब० स०, ङीष्] यवतिक्ता लता।

पत्र-तरु—पुं० [मध्य० स०] दुर्गन्ध खैर।

पत्र-दारक—पुं० [सं०√दृ (विदारण)+णिच्+ण्वुल्—अक, पत्र-दारक, ष० त०] लकड़ी चीरने का आरा।

पत्र-द्रुम—पुं० [मध्य० स०] ताड़ का पेड़।

पत्र-नाड़िका—स्त्री० [ष० त०] पत्ते की नस।

पत्र-पंजी—स्त्री० [ष० त०] वह पंजी या रजिस्टर जिसमें आनेवाले पत्रों और उनके दिये जानेवाले उत्तरों का विवरण रखा जाता है। (लेटरबुक)

पत्र-परशु—पुं० [स० त०] सुनारों की छेनी।

पत्र-पाल—पुं० [ब० स०] १. बड़ी छुरी। २. दे० 'डाकपाल'।

पत्रपाली—स्त्री० [सं० पत्रपाल+ङीष्] १. बाण का पिछला भाग। २. कैंची।

पत्र-पाश्या—स्त्री० [ष० त०] पुरानी चाल का एक तरह का आभूषण जो स्त्रियाँ माथे पर बाँधती थी।

पत्र-पिशाचिका—स्त्री० [सुप्सुपा समास] पत्तियों की बनी हुई छतरी।

पत्र-पुट—पुं० [ष० त०] पत्ते का बना हुआ पात्र। दोना।

पत्र-पुरा—स्त्री० [सं०] पुरानी चाल की एक तरह की नाव जिसकी लम्बाई ९६ हाथ और चौड़ाई तथा ऊँचाई ४८-४८ हाथ होती थी।

पत्र-पुष्प—पुं० [ब० स०] १. लाल तुलसी। २. एक विशेष प्रकार की तुलसी जिसकी पत्तियाँ छोटी-छोटी होती हैं। ३. सत्कार या पूजा की बहुत ही साधारण सामग्री। ४. सामान्य या तुच्छ उपहार।

पत्र-पुष्पक—पुं० [सं० पत्रपुष्प+कन्] भोजपत्र।

पत्र-पुष्पा—स्त्री० [सं० पत्रपुष्प+टाप्] १. तुलसी। २. छोटी पत्तियों वाली तुलसी।

पत्रपेटिका—स्त्री० =पत्र-पेटी।

पत्र-पेटी—स्त्री० [ष० त०] १. पत्र रखने की पेटी। २. डाक-विभाग द्वारा विभिन्न स्थानों पर स्थापित किया हुआ वह बड़ा डिब्बा जिसमें बाहर भेजे जानेवाले पत्र छोड़े जाते हैं। ३. उक्त के आधार पर वह डिब्बा जो किसी के घर पर लगा होता अथवा जिस पर किसी का नाम लिखा होता है और जिसमें डाकिये आदि उस विशिष्ट व्यक्ति की डाक डाल जाते हैं। (लेटरबाक्स, उक्त तीनों अर्थों में)

पत्र-बंध—पुं० [ब० स०] १. फूलों से बाँधना अथवा सजाना। २. फूलों से किया जानेवाला एक तरह का शृंगार।

पत्र-भंग—पुं० [ब० स०] पत्तियाँ, फूलों आदि के आकार का वह रेखांकन जो विशिष्ट अवसरों पर स्त्रियों के मुख की शोभा बढ़ाने के लिए कस्तूरी, केसर आदि के लेप से किया जाता है।

पत्र-भंगी—स्त्री० [सं० पत्रभंग+ङीष्] दे० 'पत्रभंग'।

पत्र-भद्र—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का पौधा।

पत्र-मंजरी—स्त्री० [ष० त०] पत्रयक्त मंजरी के आकार का एक तरह का तिलक।

पत्र-माल—पुं० [ब० स०] बेंत।

पत्र-मित्र—पुं० [मध्य० स०] एक दूसरे से दूर रहनेवाले ऐसे व्यक्ति जिनका कभी साक्षात्कार तो न हुआ हो, फिर भी जो केवल पत्र-व्यवहार के द्वारा आपस में मित्र बन गये हों। (पेन फ्रेंड)

पत्र-यौवन—पुं० [ब० स०] नया और कोमल पत्ता। किसलय।

पत्र-रचना—स्त्री० पत्रभंग। (दे०)

पत्र-रथ—पुं० [ब० स०] पक्षी।

पत्र-रेखा—स्त्री० पत्रभंग। (दे०)

पत्र-लता—स्त्री० [मध्य० स०] १. सजावट के लिए बनाई जाने-वाली फूल-पत्तियाँ या बेल-बूटे। पत्रावली। २. पत्रभंग। साटी।

पत्र-लवण—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार का नमक जो एरंड, मोरवा, अंडूसा, कुंज, अमिलतास और चीते के हरे पत्तों से निकाला जाता है।

पत्र-लेखा—स्त्री० [सं०] १. =पत्रभंग। २. चित्रों में सजावट के लिए फूल-पत्तियाँ या बेल-बूटे आदि अंकित करना।

पत्र-वल्लरी—स्त्री० [मध्य० स०] पत्रभंग। (दे०)

पत्र-वल्ली—स्त्री० [ष० त० या मध्य० स०] १. शंकरजटा। २. तांबूल। पान। ३. पलाशी नाम की लता। ४. पर्ण-लता।

पत्र-वाज—पुं० [ब० स०] १. पक्षी। चिड़िया। २. तीर। बाण।

पत्रवाह—पुं० [सं० पत्र√वह् (ढोना)+अण्] १. वह जो पत्र लेकर कहीं जाय। पत्रवाहक। २. वह सरकारी कर्मचारी जिसका काम पत्र आदि लोगों के यहाँ पहुँचाना होता है। चिट्ठीरसाँ। डाकिया। ३. चिड़िया। पक्षी। ४. तीर। बाण।

पत्र-वाहक—वि० [ष० त०] पत्र ले जानेवाला।

पुं० वह व्यक्ति जिसके हाथ कोई पत्र किसी के पास भेजा जाय।

पत्रवाह-पंजी—स्त्री० [ष० त०] वह पंजी जिसमें पत्रवाहक द्वारा भेजे हुए पत्रों का विवरण होता है और जिस पर पत्र पानेवाले व्यक्ति के हस्ताक्षर भी कराये जाते हैं। (पियन बुक)

पत्र-विशेषक—पुं० [ब० स०, कप्] १. तिलक। २. पत्रभंग। साटी।

पत्र-विष—पुं० [मध्य० स०] पत्रों से निकलनेवाला विष।

पत्र-वृश्चिक—पुं० [उपमि० स०] एक प्रकार का उड़नेवाला छोटा कीड़ा जिसके काटने से बड़ी जलन होती है। पतबिछिया। पनबिछिया।

पत्र-वेष्ट—स्त्री० [ब० स०] एक तरह का करनफूल।

पत्र-व्यवहार—पुं० [ष० त०] पत्राचार। (दे०)

पत्र-शबर—पुं० [मध्य० स०] प्राचीन काल की एक अनार्य जाति।

पत्र-शाक—पुं० [मध्य० स०] वह पौधा जिसके पत्तों का साग बनाया जाता हो। जैसे—चौलाई, पालक आदि।

पत्र-शिरा—स्त्री० [ष० त०] पत्ते की नस।

पत्र-शृंगी—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] मूसाकानी लता।

पत्र-श्रेणी—स्त्री० [ष० त०] १. पत्तों की श्रेणी। पत्रावली। २. मूसाकानी।

पत्र-श्रेष्ठ—पुं० [स० त०] बेल का पत्ता। बिल्वपत्र।

[ब० स०] बिल्ववृक्ष।

पत्र-साहित्य—पुं० [सं०] ऐसा साहित्य जिसमें किसी बड़े आदमी के लिखे हुए पत्रों (चिट्ठियों आदि) का संग्रह हो।

पत्र-सूची—स्त्री० [ष० त०] १. काँटा। कंटक। २. बाहर भेजे जाने-वाले अथवा बाहर से आये हुए पत्रों की सूची।

पत्रांग—पुं० [पत्र-अंग, ब० स०] १. लाल चन्दन। २. पतंग या बक्कम नाम का वृक्ष। ३. भोजपत्र। ४. कमलगट्टा।

पत्रांगुलि—स्त्री० [पत्र-अंगुलि, ब० स०] केसर, चन्दन आदि के लेप से किसी के ललाट, मुख, कंठ आदि पर बनाये जानेवाले चिह्न या अलंकरण।

पत्रांजन—पुं० [पत्र-अंजन, ष० त०] स्याही।

पत्रा—पुं० [सं० पत्र] १. तिथिपत्र। २. पुस्तक का पन्ना। पृष्ठ।

पत्राख्य—पुं० [पत्र-आख्या, ब० स०] १. तेजपात। २. तालीशपत्र।

पत्राचार—पुं० [पत्र-आचार, ष० त०] १. परस्पर एक दूसरे को पत्र लिखना; अथवा आये हुए पत्रों के उत्तर देना। २. इस प्रकार लिखे हुए पत्र।

पत्राढ्य—पुं० [पत्र-आढ्य, तृ० त०] १. पीपलामूल। २. पर्वत नामक तृण। ३. लाल चन्दन। ४. पतंग। बक्कम। ५. नरसल। ६. तालीशपत्र।

पत्रान्य—पुं० [सं० पत्रंग, पृषो० सिद्धि] १. पतंग। बक्कम। २. लाल चन्दन।

पत्रालय—पुं० [पत्र-आलय, ष० त०] डाकखाना। डाकघर।

पत्रालाप—पुं० [पत्र-आलाप, तृ० त०] पत्राचार (दे०)।

पत्राली—स्त्री० [पत्र-आली, ष० त०] १. पत्रों की शृंखला। २. एक आकार के कटे हुए कोरे या निरंक कागज की वह गड्डी जिसके पत्रों पर चिट्ठियाँ लिखी जाती हैं। (पैड)

पत्रालु—पुं० [सं० पत्र+आलुच्] १. कासालु। २. इक्षुदर्भ।

पत्रावली—स्त्री० [पत्र-आवली, ष० त०] १. सजावट के लिए बनाई जानेवाली फूल-पत्तियाँ या बेल-बूटे आदि। पत्र-लता। २. सुगंधित द्रव्यों और रंगों से चेहरे पर की जानेवाली पत्र-रचना। (देखें) ३. गेरू।

पत्राहार—पुं० [पत्र-आहार, ष०त०] पत्तों का किया जानेवाला भोजन।

पत्राहारी (रिन्)—वि० [सं० पत्राहार+इनि] वृक्षों के पत्ते खाकर ही रहनेवाला।

पत्रिका—स्त्री० [सं० पत्री+कन्+टाप्, ह्रस्व] १. चिट्ठी। खत। पत्र। २. कोई छोटा लेख। जैसे—लग्न-पत्रिका। ३. जन्मपत्री। ४. प्रायः नियमित रूप से निकलनेवाली ऐसी पुस्तिका जिसमें विभिन्न विषयों पर लेख, कहानियाँ, कविताएँ आदि होती हैं। जैसे—सम्मेलन पत्रिका।

पत्रिकाख्य—पुं० [सं० पत्रिका-आख्या, ब० स०] एक प्रकार का कपूर। पानकपूर।

पत्रिणी—स्त्री० [सं० पत्र+इनि, ङीष्] बड़ा पत्ता।

पत्री (त्रिन्)—वि० [सं० पत्र+इनि] जिसमें पत्ते हों। पत्रयुक्त। पत्तोंवाला।

पुं० १. बाण। तीर। २. चिड़िया। पक्षी। ३. बाज पक्षी। ४. पेड़। वृक्ष। ५. पर्वत। पहाड़। ६. ताड़ का पेड़। ७. रथ का सवार। रथी।

स्त्री० [सं० पत्र+ङीष्] १. चिट्ठी। खत। २. कोई छोटा लेख। पत्रिका। जैसे—जन्मपत्री, लग्नपत्री। ३. पत्तों का बना हुआ दोना। ४. धमासा। ५. खैर का पेड़। ६. ताड़ का पेड़। ७. महातेज पत्र।

स्त्री० [हिं० पत्तर] हाथ में पहनने का जहाँगीरी नाम का गहना।

पत्रोपस्कर—पुं० [सं० पत्र-उपस्कर, ब० स०] कसौंदी। कासमर्द।

पत्रोर्ण—पुं० [सं० पत्र-ऊर्ण मध्य० स०,+अच्] १. रेशमी वस्त्र। २. सोनापाठा।

पत्रोल्लास—पुं० [सं० पत्र-उल्लास, ष० त०] अँखुआ। कोपल।

पथ—पुं० [सं०√पथ् (गति)+क] १. मार्ग। रास्ता। राह। २. कार्य-सम्पादन, आचार, व्यवहार आदि का निश्चित और प्रकाशित रीति। ३. ऐसा द्वार या साधन जिसमें होकर कुछ आगे बढ़ता हो। जैसे—कर्ण-पथ, दृष्टि-पथ।

†पुं०=पथ्य।

पथक—वि० [सं० पथ+कन्] पथ या मार्ग बतलानेवाला। पथ-दर्शक।

पुं० प्रांत। देश।

पं०=पथिक।

पथ-कर—पुं० [ष० त०] =मार्ग-कर।

पथ-कल्पना—पुं० [ब० स०] जादू के खेल। बाजीगरी।

पथगामी (मिन्)—पुं० [सं० पथ√गम् (जाना)+णिनि] पथ या रास्ते पर चलनेवाला।

पथचारी (रिन्)—पुं० [सं० पथ√चर् (गति)+णिनि] पथिक।

पथ-दर्शक—पुं० [ष० त०] रास्ता दिखानेवाला। मार्ग-दर्शक।

पथ-दर्शन—पुं० दे० 'मार्ग-दर्शन'।

पथना—अ० [हिं० पाथना का अ० रूप] पाथा जाना।

स० १. खूब मारना-पीटना। २. दे० 'पाथना'।

वि०=पथेरा (पाथनेवाला)।

पथ-प्रदर्शक—पुं० [ष० त०] दे० 'मार्गदर्शक'।

पथर—पुं० [हिं० पत्थर] 'पत्थर' का वह संक्षिप्त रूप जो उसे समस्त पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पथरकला, पथर-चटा।

पथर-कला—स्त्री० [?] पुरानी चाल की एक तरह की बंदूक जिसमें लगे हुए चकमक पत्थर की सहायता से रगड़ उत्पन्न कर उसमें का बारूद जलाया जाता था।

पथर-चटा—पुं० [?] पखान भेद-नाम की वनस्पति।

पथरना—स० [हिं० पत्थर+ना (प्रत्य०)] औजारों को पत्थर पर रगड़कर तेज करना।

†अ० पत्थर की तरह कठोर तथा ठोस होना।

पथराना—अ० [हिं० पत्थर+आना (प्रत्य०)] १. सूखकर पत्थर की तरह कड़ा हो जाना। पत्थर की तरह कठोर तथा ठोस होना। २. सूखकर निष्प्रभ या शुष्क हो जाना। ३. पत्थर की तरह स्तब्ध और स्थिर हो जाना। जैसे—आँखें पथराना।

स० १. ऐसी क्रिया करना जिससे कोई चीज पत्थर की तरह कठोर, जड़ या नीरस हो जाय। २. किसी को आघात पहुँचाने के लिए उस पर पत्थर के टुकड़े आदि फेंकना।

पथराव—पुं० [हिं० पथराव=पत्थर की तरह होना] पत्थर की तरह कठोर और स्तब्ध होने की क्रिया, दशा या भाव। जैसे—आँखों का पथराव।

पुं० [हिं० पथराना=पत्थरों से मारना] किसी पर बार-बार पत्थर के टुकड़े फेंकते रहने की क्रिया। जैसे—वह उसकी कामनाओं के शीश-महल पर इसी प्रकार पथराव करती रही।

पथरी—स्त्री० [हिं० पत्थर+ई (प्रत्य०)] १. पत्थर का बना हुआ कटोरी या कटोरे के आकार का पात्र। २. पत्थर का वह टुकड़ा जिस पर रगड़कर छुरे आदि की धार तेज करते हैं। सिल्ली। ३. कुरंड पत्थर जिसके चूर्ण को लाख आदि में मिलाकर औजार तेज करने की सान बनाते हैं। ४. चकमक पत्थर। ५. एक प्रकार का रोग जिसमें मत्राशय में पत्थर के टुकड़ों के समान कोई चीज उत्पन्न हो जाती है, जिसके फलस्वरूप पेशाब रुक-रुककर और बहुत कष्ट से होता है और कभी कभी बन्द भी हो जाता है। ६. पक्षियों के पेट का वह पिछला भाग जिसमें अनाज आदि के बहुत कड़े दाने जाकर पचते हैं। ७. एक प्रकार की मछली। ८. जायफल की जाति का एक वृक्ष जो कोंकण आदि के जंगलों में होता है।

पथरीला—वि० [हिं० पत्थर+ईला (प्रत्य०)] [स्त्री० पथरीली] १. जिस जमीन में पत्थर के कण मिले हों। २. जिसमें पत्थर हों, अथवा जो पत्थर या पत्थरों से बना हो। जैसे—पथरीला रास्ता। ३. पत्थर के समान कठोर, ठोस अथवा शुष्क।

पथरौटा—पुं० [हिं० पत्थर+औटा (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० पथरौटी] पत्थर का बना हुआ कटोरे की तरह का एक प्रकार का बड़ा पात्र। बड़ी पथरी।

पथरौड़ा—पुं० [हिं० पाथना] वह स्थान जहाँ पर गोबर (अथवा कंडे) पाथे जाते हों।

पथ-शुल्क—पुं० पथ-कर (दे०)।

पथ-सुन्दर—पुं० [सं० स० त०] एक प्रकार का पौधा।

पथस्थ—वि० [सं० पथ√स्था (ठहरना)+क] जो पथ या मार्ग में स्थित हो। मार्गस्थ।

पथारना†—स० [सं० प्रस्तार]=पसारना।
†अ०=पथराना।

पथिआ†—स्त्री० [?] टोकरी।

पथिक—पुं० [सं० पथिन्+कन्] १. वह जो पथ पर चल रहा हो। बटोही। राही। २. वह जो किसी लक्ष्य तक पहुँचने के लिए प्रयत्नशील हो।

पथिक-चत्वर—पुं० [च० त०] पथिकों के बैठकर सुस्ताने के लिए रास्ते में बना हुआ चबूतरा।

पथिका—स्त्री० [सं० पथिक+टाप्] १. मुनक्का। २. एक प्रकार की शराब जो पहले मुनक्के या अंगूर से बनाई जाती थी।

पथिकाश्रय—पुं० [सं० पथिक-आश्रय, ष० त०] १. विशेष रूप से निर्मित पथिकों के लिए आश्रय-स्थान। २. धर्मशाला।

पथिकृत्—पुं० [सं० पथिन्√कृ (करना)+क्विप्, तुक्] मार्गदर्शक।

पथिचक्र—पुं० [सं० √पथ्+इन्, पथि-चक्र, कर्म० स०] फलित ज्योतिष में, एक प्रकार का चक्र जिससे यात्रा का शुभ और अशुभ फल जाना जाता है।

पथि-देय—पुं० [सं० अलुक् स०] पथ-कर (दे०)।

पथिद्रुम—पुं० [सं० पथि,√पथ्,+इन, पथिद्रुम, कर्म०स०] खैर का पेड़।

पथि-प्रिय—पुं० [सं० अलुक् स०] साथ यात्रा करनेवाला मित्र। हमराही। हमसफर।

पथिया—स्त्री० [?] टोकरी।

पथिल—पुं० [सं०√पथ्+इलच्] पथिक।

पथि-वाहक—वि० [सं० अलुक् स०] निष्ठुर। निर्दय।
पुं० १. शिकारी। बहेलिया। २. बोझ ढोनेवाला मजदूर। मोटिया।

पथिस्थ—वि० [सं० पथि√स्था+क] जो पथ पर चल रहा हो। जाता हुआ।

पथी (थिन्)—पुं० [सं० पथ+इनि] १. रास्ता चलनेवाला मुसाफिर। यात्री। पथिक। २. मार्ग। रास्ता। ३. यात्रा। ४. मत। सम्प्रदाय। ५. एक नरक का नाम।

पथीय—वि० [सं० पथ+छ—ईय] १. पथ-सम्बन्धी। पथ या मार्ग का। २. किसी मत या सम्प्रदाय से संबंध रखनेवाला। पंथी।

पथु*—पुं०=पथ।

पथेय*—पुं०=पाथेय।

पथेरा—वि० [हिं० पाथना+एरा (प्रत्य०)] पाथनेवाला।
पुं० १. गोबर को पाथकर कंडे बनानेवाला व्यक्ति। २. वह व्यक्ति जो भट्ठे में पकाने के लिए कच्ची ईंटें ढालता हो। ३. कुम्हार।

पथौड़ा—पुं०=पथौरा।

पथौरा†—पुं०=पथौड़ा।
†पुं० महाराज पृथ्वीराज चौहान का एक नाम जो उर्दू-फारसी के ग्रंथों में मिलता है।

पत्यार†—पुं०=विस्तार।

पथ्य—वि० [सं० पथिन्+यत्] १. पथ-संबंधी। पथ का। २. (आहार, व्यवहार) जो स्वास्थ्य विशेषतः रोगी की स्वास्थ्य-रक्षा के विचार से आवश्यक या उचित हो। ३. गुणकारी। लाभदायक। हितकर। उदा०—पूत पथ्य गुरु आयसु अहई। —तुलसी। ४. अनुकूल। मुआफिक।
पुं० १. वह हलका भोजन जो रोगी अथवा अस्वस्थ व्यक्ति को दिया जाय। २. स्वास्थ्य के लिए हितकर खान-पान और रहन-सहन। मुहा०—पथ्य से रहना=संयम से रहना। परहेज से रहना। ३. सेंधा नमक। ४. छोटी हर्रे। ५. कल्याण। मंगल।

पथ्यका—स्त्री० [सं० पथ्य+कन्+टाप्] मेथी।

पथ्य-शाक—पुं० [सं० कर्म० स०] चौलाई का साग।

पथ्या—स्त्री० [सं० पथ्य+टाप्] १. हरीतकी। हड़। २. बन-ककोड़ा। ३. सेंधनी। ४. चिरमिटा। ५. गंगा। ६. आर्या छन्द का एक भेद जिसके कई उपभेद हैं।

पथ्यादिक्वाथ—पुं० [सं० पथ्या-आदि ब०, स० पथ्यादिक्वाथ कर्म० स०] त्रिफला, गुड़ुच, हलदी, चिरायते, नीम आदि का काढ़ा जो पाचक माना जाता है।

पथ्यापंक्ति—पुं० [सं० ब० स०] पाँच चरणोंवाला वैदिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में आठ-आठ वर्ण होते हैं।

पथ्यापथ्य—पुं० [सं० पथ्य-अपथ्य, द्व० स०] पथ्य और अपथ्य। रोग की अवस्था में हितकर और अहितकर चीज। जैसे—तुम्हें पथ्यापथ्य का सदा ध्यान रखना चाहिए।

पथ्याशन—पुं० [सं० पथ्य-अशन, कर्म० स०] पाथेय। संबल।

पथ्याशी (शिन्)—वि० [सं० पथ्य√अश् (खाना)+णिनि] जो पथ्य (रोग के अनुकूल भोजन) खाकर रहता हो।

[**पद**—पुं० [सं०√पद् (गति)+अच्] १. कदम। पाँव पैर। मुहा०—पद टेकना=किसी जगह पैर जमाकर रखना। (किसी के आगे) पद टेकना=दीनतापूर्वक घुटने टेककर बैठना। उदा०—भरद्वाज राखे पद टेकी।—तुलसी।

२. चलते समय दो पैरों के बीच में होनेवाली दूरी। डग। पग। ३. चलने के समय पैरों से बननेवाले चिह्न। ४. चिह्न। निशान। ५. जगह। स्थान। ६. प्रदेश। जैसे—जन-पद। ७. त्राण। रक्षा। ८. निर्वाण। मोक्ष। ९. चीज। वस्तु। १०. आवाज। शब्द। ११. किसी चीज का चौथाई अंश या भाग। पाद। १२. छंद, श्लोक आदि का चतुर्थांश। चरण। १३. एक प्रकार की पुरानी नाप। १४. शतरंज आदि की बिसात में बना हुआ चौकोर खाना। १५. व्याकरण में, किसी वाक्य में आया हुआ वह शब्द या शब्द-वर्ग जिसका कुछ अर्थ हो। वाक्य का अंश या खंड। १६. वह स्थान जिस पर रहकर कोई विशिष्ट कार्य करता हो। ओहदा। जगह। जैसे—उन्हें भी कार्यालय में एक पद मिल गया। १७. सम्मानजनक उपाधि या स्थान। १८. ऐसा गीत या भजन जिसमें ईश्वर की महिमा आदि वर्णित हों। जैसे—तुलसी या सूर के पद। १८. पुराणानुसार दान के लिए जूते, छाते, कपड़े, अँगूठी, आसन, बरतन और भोजन का समूह। जैसे—विवाह के समय ब्राह्मणों को तीन पद दिये जाते हैं।

पद-कंज—पुं० [उपमि० स०] ऐसे चरण जो कमल के समान सुन्दर अथवा कमल के रूप में हों।

पदक—पुं० [सं० पद+वुन्—अक] १. गहने के रूप में पहना जानेवाला वह धातु-खंड जिस पर किसी देवता के चरण-चिह्न अंकित हों। २. पूजन आदि के लिए बनाया हुआ किसी देवता का चरण-चिह्न। ३. वह जो वेदों के पद-पाठ का ज्ञाता हो। ४. एक प्राचीन गोत्र-प्रवर्तक ऋषि। ५. आजकल, सोने-चाँदी या किसी और धातु का बना हुआ वह गोल या चौकोर टुकड़ा जो किसी व्यक्ति अथवा समाज को कोई विशिष्ट योग्यतापूर्ण कार्य करने पर उसका सम्मान करने के लिए दिया जाता है। तमगा। (मेडल)

पदकधारी (रिन्) पुं० [सं० पदक√धृ (धारण)+णिनि] वह जिसे पदक मिला हो।

पद-कमल—पुं०=पद-कंज।

पद-क्रम—पुं० [ष० त०] १. चलना। डग भरना। २. वेद-मंत्रों के पदों को एक दूसरे से अलग करने का कार्य।

पदग—वि० [सं० पद√गम् (जाना)+ड] पैदल चलनेवाला।

पुं० पैदल चलनेवाला सिपाही। प्यादा।

पद-गति—स्त्री० [ष० त०] चलने का ढंग।

पद-ग्रहीता (तृ)—वि० [ष० त०] (वह) जो किसी का पद ग्रहण करे और इस प्रकार उसे अपने पद से कुछ समय के लिए हटने का अवसर दे। (रिलीविंग) जैसे—पद-ग्रहीता अधिकारी।

पद-चतुरूर्ध्व—पुं० [सं० ?] एक तरह का विषम वर्णवृत्त जिसके पहले चरण में ८, दूसरे में १२, तीसरे में १६ और चौथे में २० वर्ण होते हैं। इसमें गुरु, लघु का नियम नहीं होता।

पद-चर—वि० [सं० पद√चर् (गति)+ट] १. पैरों से चलनेवाला। २. पैदल चलनेवाला।

पुं० पैदल। प्यादा।

पद-चार (णि)—पुं० [तृ० त०] १. पैदल चलना। २. घूमना-फिरना। टहलना।

पदचारी (रिन्)—वि० [सं० पद√चर्+णिनि] [स्त्री० पदचारिणी] पैदल चलनेवाला।

पद-चिह्न—पुं० [ष० त०] १. जमीन पर पड़नेवाली पैर की छाप। २. दूसरों विशेषतः बड़ों द्वारा बतलाये हुए आदर्श अथवा कार्य करने के ढंग। जैसे—भारत को गांधी जी के पद-चिह्नों का अनुसरण करना चाहिए।

पदच्छेद—पुं० [ष० त०] व्याकरण में प्रत्येक पद को नियमों के अनुसार अलग-अलग करने की क्रिया।

पद-च्युत—वि० [ष० त०] [भाव० पद-च्युति] १. जो अपने पद से हट चुका हो अथवा हटा दिया गया हो। २. नौकरी से बरखास्त किया हुआ। (डिस्मिस्ड)

पद-च्युति—स्त्री० [ष० त०] अपने पद से हटने या गिरने की अवस्था या भाव। पदच्युत होना। (डिस्मिसल)

पदज—वि० [सं० पद√जन् (उत्पत्ति)+ड] जो पैर से उत्पन्न हुआ हो।

पुं० १. शूद्र। २. पैर की उँगली या उँगलियाँ।

पद-जात—वि० [ष० त०] पैरों से उत्पन्न।

पुं० परस्पर संबद्ध पदों और वाक्यों का समूह।

पद-तल—पुं० [ष० त०] पैर का तलवा।

पद-त्याग—पुं० [ष० त०] अपने पद से त्याग-पत्र देकर हट जाना।

पदत्र—पुं० [सं० पद√त्रा (रक्षा)+क] १. ढालुआँ स्थान। २. किले आदि की ऐसी दीवार जो नीचे अधिक चौड़ी या मोटी और ऊपर कम चौड़ी या पतली हो। (टैलस)

पद-त्राण—पुं० [ब०स०] पैरों की रक्षा करनेवाला अर्थात् जूता।

पद-त्रान—पुं०=पद-त्राण।

पद-त्वरा—स्त्री० [ब०स०] जूता।

पद-दलित—वि० [तृ० त०] १. पैरों से कुचला या रौंदा हुआ। २. (व्यक्ति या जाति) जिसे समाज ने दबाकर बहुत हीन अवस्था में रखा हो और उन्नति का अवसर न दिया हो। (डीप्रेस्ड)

पद-दारिका—स्त्री० [ष० त०] बिवाई (पैर फटने का एक रोग)।

पदधारी (रिन्)—पुं० [सं० पद√धृ (धारण करना)+णिनि] १. वह जो कोई पद धारण करता हो। २. किसी पद पर रहकर काम करनेवाला अधिकारी।

पद-नाम—पुं० [ष० त०] १. किसी पदाधिकारी के पद का सूचक नाम। जैसे—कुलपति, तहसीलदार, मजिस्ट्रेट आदि। २. किसी कार्य, व्यवहार, संस्था आदि का वह मुख्य नाम जिससे वह प्रसिद्ध हो। (डेजिग्नेशन)

पद-न्यस्त—वि० [सं० न्यस्तपद] (वह अधिकारी) जो अपना अधिकार किसी दूसरे (पदग्रहीता) को सौंपकर किसी कारणवश कुछ समय के

लिए अपने पद से हटा हो। (रिलीव्ड) जैसे—पदन्यस्त अधिकारी।

पदन्यास—पुं०[ष० त०]१. पैर रखना। गमन करना। चलना। २. चलने में पैर रखने की एक विशिष्ट प्रकार की मुद्रा। ३. चलने का ढंग। ४. पदों को यथास्थान रखने या पद बनाने का काम। ५. गोखरू। ६. कुछ समय के लिए किसी कारणवश अपने पद से किसी का हटना।

पद-पंक्ति—पुं०[ष० त०] १. पद-चिह्न। पद-श्रेणी। २. पाँच चरणों-वाला एक प्रकार का छंद जिससे प्रत्येक चरण में पाँच-पाँच वर्ण होते हैं।

पद-पद्धति—स्त्री०[ष०त०] पद-चिह्नों की पंक्ति या श्रेणी।

पद-पलटी—स्त्री०[सं० पद+हिं० पलटना] एक प्रकार का नाच।

पद-पाठ—पुं० [ष० त०] १. वेद-मंत्रों आदि का इस प्रकार लिखा जाना कि उनका प्रत्येक पद अपने मूल रूप में रहे। (संहिता-पाठ से भिन्न) २. वह ग्रंथ जिसका संपादन उक्त दृष्टिकोण से हुआ हो।

पद-पूरण—पुं०[ष० त०]१. किसी वाक्य में छूटे अथवा विशेष रूप से छोड़े हुए शब्दों की पूर्ति करना। (फिल-इन-ब्लैंक्स)

पद-प्रवर—पुं०[स० त०] किसी कार्यालय का सबसे बड़ा अधिकारी।

पद-बंध—पुं०[ष० त०] पग। डग।

पद-भंजन—पुं०[ष०त०] व्याकरण में, समस्त-पदों के पूर्व और उत्तर पद आदि अलग-अलग करने की क्रिया या भाव।

पद-भंजिका—स्त्री०[ष० त०] टिप्पणी, टीका या व्याख्या।

पद-भार—पुं० [ष०त०] वह उत्तरदायित्व या भार जिसका निर्वहण करना किसी पद पर रहने के नाते आवश्यक और कर्तव्य होता है। (चार्ज)

पद-भ्रंश—पुं०[ष० त०] पद-च्युति। (दे०)

पदम—पुं० [सं० पद्मकाष्ठ] १. बादाम की जाति का एक जंगली पेड़ जो कहीं-कहीं लगाया भी जाता है। इसका फल शराब बनाने के लिए विदेशों में जाता है। अमलगुच्छं। पद्माख। २. उक्त वृक्ष का फल। †पुं०=पद्म।

पदमकाठ—पुं०[हिं०] पदम वृक्ष की लकड़ी। पद्मकाष्ठ।

पदमचल—पुं०[देश०] रेवंद चीनी।

पदमणि—स्त्री० =पद्मिनी।

पदमनाभ—पुं०[सं० पद्मनाभ] १. विष्णु। २. सूर्य। (डिं०) ३. दे० 'पद्म-नाभ'।

पदमाकर†—पुं०=पद्माकर।

पद-माला—स्त्री० [ष० त०] १. पद-श्रेणी। २. मोहिनी विद्या।

पद-मुद्रा—स्त्री० [ष० त०]१. वह मुद्रा या मोहर जो कोई उच्च अधिकारी महत्वपूर्ण मानपत्रों पर अपने हस्ताक्षर के साथ यह सूचित करने के लिए अंकित करता है कि यह लेख आधिकारिक और प्रामाणिक है। २. उक्त मुद्रा या मोहर की छाप। (सील ऑफ ऑफिस)

पद-मूल—पुं०[ष० त०] १. पैर का तलवा। २. आश्रय। ३. शरण।

पद-मैत्री—स्त्री०[स० त०]किसी चरण, वाक्य आदि के पदों में होनेवाला वर्णों का साम्य। अनुप्रास।

पदम्मी—पुं०[सं० पद्मी]हाथी। (डिं०)

३—४९

पद-योजना—स्त्री०[ष० त०] किसी चरण, पद, वाक्य आदि में शब्दों का बैठाया जाना।

पदर—पुं०[देश०[१. एक प्रकार का पेड़। २. महल के फाटक के पास का वह स्थान जहाँ द्वारपाल बैठते हैं। पौर। (डिं०)

पद-रिपु—पुं० [ष० त०] पैर का शत्रु अर्थात् काँटा।

पद-रोगी (गिन्)—वि०[स० त०] जिसे प्रायः छोटे-छोटे रोग होते रहते हों।

पद-वाद्य—पुं०[तृ० त०] एक प्रकार का पुरानी चाल का ढोल।

पदवाना—स०[हिं० पदाना का प्रे०] पदाने का काम किसी दूसरे से कराना।

पद-विक्षेप—पुं०[ष० त०] डग भरना।

पद-विच्छेद—पुं०[ष०त०] पदच्छेद। (दे०)

पद-विज्ञान—पुं० [सं०] दे० 'रूप-विधान' के अंतर्गत।

पद-विन्यास—पुं०[ष० त०] पदों या शब्दों को वाक्य में ठीक स्थान पर बैठाने या रखने की क्रिया या भाव।

पद-विराम—पुं०[स० त०] पदों या चरणों के अंत में लगाया जानेवाला विराम-चिह्न।

पदवी—स्त्री०[सं०√पद्+अवि+ङीष्]१. पंथ। रास्ता। २. पद्धति। प्रणाली। ३. राजकीय, सैनिक आदि सेवाओं में कोई ऊँचा पद। (रैंक) ४. किसी बहुत बड़ी संस्था अथवा राज्य द्वारा प्रदत्त किसी को सम्मानित उपाधि। (टाइटिल)

पदवी-पत्र—पुं०[ष० त०] वह पत्र जिस पर यह लिखा हो कि अमुक व्यक्ति को अमुक काम करने अथवा अमुक विषय में योग्यता प्राप्त करने के उपलक्ष्य में अमुक पदवी या उपाधि दी जाती है। (डिप्लोमा)

पद-वृद्धि—स्त्री०[ष० त०] ऊँचे पद पर जाना या पहुँचना। पद, स्थिति आदि के विचार से होनेवाली उन्नति।

पद-वेदी (दिन्)—पुं० [सं० पद√विद् (जानना)+णिनि] शब्दों का ज्ञाता। शब्द-शास्त्री।

पद-शब्द—पुं०[ष० त०] किसी के चलने पर उसके पैरों की धमक से होने-वाला शब्द। पग-ध्वनि।

पद-संघात—पुं० [ष० त०]१. संहिता में वियुक्त पदों को जोड़ने या मिलाने का कार्य। २. लेखक। ३. संकलनकर्ता।

पद-समय—पुं०[ष० त०] दे० 'पद-पाठ'।

पदस्थ—वि० [सं० पद√स्था (ठहरना)+क] १. पैदल चलनेवाला। २. जो अपने पैरों के बल खड़ा हो या चल रहा हो। ३. जो किसी पद या ओहदे पर स्थित हो।

पद-स्थान—पुं०[ष० त०] १. वह स्थान जहाँ पैर रखा गया हो। २. उक्त स्थान पर बननेवाला चिह्न।

पदांक—पुं०[पद-अंक, ष०त०] पैर का अंक अर्थात् चिह्न या छाप। पद-चिह्न।

पदांगी—स्त्री०[पद-अंग, ब०स०, ङीष्] हंसपदी लता।

पदांत—पुं०[पद-अंत, ष० त०]१. किसी पद का अंतिम अंश। २. श्लोक आदि का अंतिम भाग।

पदांतर—पुं०[पद-अंतर, मयू० स०]१. दो पैरों के बीच की दूरी। २. दूसरा पैर। ३. दूसरा स्थान।

पदांभोज—पुं० [पद-अंभोज, कर्म० स०] कमलरूपी या-कमलवत् चरण।

पदाक्रांत—भू० कृ० [पद-आक्रांत, तृ० त०] १. जो पैरों से कुचला, दबाया या रौंदा गया हो। २. दे० 'पद-दलित'।

पदाघात—पुं० [पद-आघात, तृ० त०] पैर से लगाई जानेवाली ठोकर। (किक)

पदाजि—पुं० [सं० पद√अज् (गति)+इण्] पैदल सिपाही।

पदात—पुं० [सं० पद√ अत् (गति)+अच्] पदाति। (दे०)

पदाति—पुं० [सं० पद√अत्+इण्] १. वह जो पैदल चलता हो। प्यादा। २. पैदल सिपाही। ३. नौकर। सेवक। ४. जनमेजय के एक पुत्र का नाम।

पदातिक—पुं० [सं० पदाति+कन्] पदाति। (दे०)

पदादपि—अव्य० [सं० पदात् अपि] १. पद से भी। २. पद की तुलना में भी। उदा०—ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी।—तुलसी।

पदादि—पुं० [पद-आदि, ष० त०] १. पद का आरंभिक अंश (पदांत का विपर्याय)। २. छंद के चरण का आरंभिक भाग।

पदादिका—स्त्री० [सं० पदातिक] पैदल सेना।

पदाधिकार—पुं० [पद-अधिकार, ष० त०] किसी पद पर काम करनेवाले को प्राप्त होनेवाला अधिकार।

पदाधिकारी (रिन्)—पुं० [पद-अधिकारिन्, ष० त०] किसी पद पर रह-कर अधिकारपूर्वक काम करनेवाला अधिकारी। ओहदेदार।

पदाध्ययन—पुं० [पद-अध्ययन, ष०त०] वेदों का वह अध्ययन जो पद-पाठ की दृष्टि से किया जाय।

पदाना—स० [हिं० पादना का प्रे०] १. किसी दूसरे को पादने में प्रवृत्त करना। २. बहुत अधिक दौड़ाना तथा तंग या परेशान करना। ३. खेल में, एक दल के खेलाड़ियों का दूसरे दल के (हारेहुए) खेलाड़ियों को बहुत अधिक दौड़ाना-धुपाना। (पश्चिम)

पदानुग—वि० [पद-अनुग, ष० त०] किसी का अनुसरण करनेवाला। पुं० अनुयायी।

पदानुराग—पुं० [पद-अनुराग, ष० त०] १. किसी के चरणों में होनेवाला अनुराग। २. नौकर। सेवक। ३. सेना।

पदानुशासन—पुं० [पद-अनुशासन, ष० त०] शब्दानुशासन। व्याकरण।

पदानुस्वार—पुं० [पद-अनुस्वार, ब० स०] एक प्रकार का सामगान।

पदाब्ज—पुं० [पद-अब्ज, कर्म० स०] चरण-कमल।

पदायता—स्त्री० [मध्य०स०] जूता।

पदार—पुं० [सं० पद√ऋ (गति)+अण्] १. पैर की धूल। चरण-रज। २. पैर का ऊपरी भाग।

पदारथ†—पुं० =पदार्थ।

पदारविंद—पुं० [पद-अरविंद, उपमि० स०] चरण-कमल।

पदार्घ्य—पुं० [पद-अर्घ्य, मध्य० स०] वह जल जिससे पूज्य व्यक्तियों के चरण धोये जाते हैं।

पदार्थ—पुं० [सं० पद-अर्थ, ष० त०] १. वाक्यों आदि में आनेवाले पद (या शब्द) का अर्थ। (वर्ड-मीनिंग) २. वह वस्तु, जिसका ज्ञान या बोध किसी विशिष्ट पद (या शब्द) से होता है। अभिधेय वस्तु। जैसे—'चावल' शब्द से चावल नामक पदार्थ का बोध होता है। ३. जिसका कोई दृश्य अथवा कोई बाह्य आकार या रूप हो अथवा जो पिंड, शरीर आदि के रूप में मूर्त हो। चीज। वस्तु। (मेटीरियल आब्जेक्ट) जैसे—किताब, घड़ी, पंखा आदि। ४. वह आधारिक, तात्त्विक या मौलिक अंश या वस्तु जिससे कोई दूसरी वस्तु बनी हो। (मेटीरियल) जैसे—धातु और मिट्टी वे पदार्थ हैं, जिनसे बरतन बनते हैं। ५. वह जिसका कुछ नाम हो और जिसका ज्ञान प्राप्त किया जा सके, भले ही वह अमूर्त हो। ज्ञान या बोध का विषय।

विशेष—इसी व्याख्या के आधार पर न्यायसूत्र में प्रमाण, प्रमेय, संशय, सिद्धांत आदि की गणना सोलह पदार्थों में की गई है।

६. प्राचीन भारतीय दार्शनिक क्षेत्रों में वे आधारिक और मौलिक बातें या विषय जिनका सम्यक् ज्ञान मोक्ष की प्राप्ति के लिए आवश्यक कहा गया है।

विशेष—वैशेषिक दर्शन में द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय नाम के छः पदार्थ माने हैं। न्याय-सूत्र में प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टांत, सिद्धांत, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल, जाति और निग्रह-स्थान ये सोलह पदार्थ माने गये हैं। सांख्य दर्शन में पुरुष, प्रकृति, महत् आदि और इनके विकारों के आधार पर २५ पदार्थ माने गये हैं। परन्तु वेदांत दर्शन में आत्मा और अनात्मा यही दो पदार्थ माने गये हैं। जैन दर्शनों में भी पदार्थ माने तो गये हैं, पर उनकी संख्या आदि में बहुत मतभेद है। प्राचीन दार्शनिकों ने मोक्ष-प्राप्ति के लिए पदार्थों का ज्ञान आवश्यक माना था; इसलिए पौराणिकों ने अपने दृष्टिकोण से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पदार्थ माने थे। इसी परंपरा के अनुसार वैद्यक में रस, गुण, वीर्य, विपाक और शक्ति ये पाँच पदार्थ माने गये हैं।

पदार्थवाद—पुं० [सं० ष०त०] १. वह वाद या सिद्धांत जिसमें भौतिक पदार्थों को ही वास्तविक तथा सब-कुछ माना जाता है और आत्मा अथवा ईश्वर का अस्तित्व नहीं माना जाता। (अध्यात्मवाद से भिन्न) २. आज-कल अधिक प्रचलित अर्थ में, यह सिद्धांत कि धन-संपत्ति के भोग में ही मनुष्य को आनन्द या सुख मिलता है, आत्म-चिंतन आदि व्यर्थ की बातें हैं। (मेटीरियलिज्म)

पदार्थवादी—वि० [सं० पदार्थ√वद् (बोलना)+णिनि] पदार्थवाद संबंधी।

पुं० पदार्थवाद का अनुयायी या समर्थक। (मेटीरियलिस्ट)

पदार्थ-विज्ञान—पुं० [ष० त०] भौतिक-विज्ञान। (दे०)

पदार्थ-विद्या—स्त्री० [ष० त०] १. वह विद्या जिसमें विशिष्ट संज्ञाओं द्वारा सूचित पदार्थों का तत्त्व बतलाया गया हो। जैसे—वैशेषिक। २. दे० 'भौतिक विज्ञान'।

पदार्पण—पुं० [पद-अर्पण, ष० त०] किसी स्थान में होनेवाला प्रवेश। आना। (बहुत बड़े लोगों के संबंध में आदरसूचक पद) जैसे—महाराज का यहाँ पदार्पण ही हम लोगों के लिए विशेष सम्मानजनक है।

पदालिक—पुं० [पद-अलिक, ष० त०] पैर का ऊपरी भाग।

पदावधि—स्त्री० [पद-अवधि, ष० त०] किसी पद पर किसी व्यक्ति के काम करते रहने की अवधि। (टेन्योर)

पदावनत—वि० [पद-अवनत, स० त०] १. जो पैरों पर झुका हो। २. जो झुककर प्रणाम कर रहा हो। ३. नम्र। विनीत। ४. जो अपने पद से अवनत कर दिया गया हो या निम्न पद पर नियुक्त कर दिया गया हो।

पदावली—स्त्री० [पद-आवली, ष० त०] १. पदों की अवली, क्रम, शृंखला या समूह। २. लेख या साहित्यिक रचना में प्रयुक्त होनेवाले सब शब्दों और पदों का (उनके रूप और विन्यास दोनों के विचार से) वर्ग या समूह। ३. शब्द-योजना का ढंग या प्रकार। ४. किसी विशिष्ट विषय के पारिभाषिक पदों और शब्दों का संग्रह या सूची। (फ्रेजियॉलोजी) ५. गाये जानेवाले गीतों, पदों या भजनों का संग्रह। जैसे—सूर-पदावली।

पदावास—पुं० [पद-आवास, मध्य० स०] राज्य की ओर से मिला हुआ निवासस्थान। पदाधिकारी के रहने का निवासस्थान। (आफिशल-रेसिडेंस)

पदाश्रित—वि० [पद-आश्रित, स० त०] १. जिसने पैरों में आश्रय लिया हो। शरण में आया हुआ। शरणागत। २. जो किसी के आश्रय में रहता हो।

पदास—स्त्री० [हिं० पादना+आस (प्रत्य०)] पादने की क्रिया, भाव या प्रवृत्ति।

पदासन—पुं० [पद-आसन, ष० त०] वह आसन या चौकी जिसपर पैर रखे जाते हैं।

पदासा—वि० [हिं० पदास] १. जिसकी पादने की इच्छा या प्रवृत्ति हो। २. बहुत अधिक पादनेवाला।

पदाहत—भू० कृ० [पद-आहत, तृ० त०] पैर से ठुकराया हुआ।

पदिक—पुं० [सं० पद+ष्ठन्—इक, पद् आदेश] पैदल सेना।

पुं० [सं० पदक] १. गले में पहनने का वह गहना जिस पर किसी देवता आदि के चरण-चिह्न अंकित हों। २. गले में पहनने का जुगनूं नाम का गहना। ३. हीरा। ४. जवाहर। रत्न।

पद—पदिक हार=मणिमाला।

†पुं०=पदक।

पदी (दिन्)—वि० [सं० पद+इनि] १. जिसमें पैर हों। पदवाला। जैसे—एक पदी, बहु-पदी। २. (रचना) जिसमें पद हों।

पुं० पैदल। प्यादा।

पदु*—पुं०=पद।

पदुम—पुं० [सं० पद्म] १. घोड़ों का एक चिह्न या लक्षण जो भारत में शुभ, परन्तु ईरान में अशुभ माना जाता है। २. दे० 'पद्म'।

पदुमिनी*—स्त्री०=पद्मिनी।

पदेक—पुं० [पद-एक, ब० स०] बाज।

पदेन—अव्य० [सं० तृ० विभक्ति का रूप] किसी पद पर आरूढ़ होने के अधिकार से। पद पर रहने के नाते से। (एक्स-ऑफीशियो, बाइ वरचू ऑफ आफिस)

पदोड़ा—वि० [हिं० पाद+ओड़ा (प्रत्य०)] १. जो बहुत पादता हो। अधिक पादनेवाला। २. कायर। डरपोक। (क्व०)

पदोत्तार—पुं० [पद-उत्तार, मध्य०स०] वह छोटा पुल जिसे पैदल चलकर ही पार करना पड़ता हो।

पदोदक—पुं० [पद-उदक, मध्य०स०] १. वह जल जिससे (प्रायः पूज्य व्यक्तियों के) चरण धोये जायँ। २. चरणामृत।

पदोन्नति—स्त्री० [पद-उन्नति, ष०त०] किसी पद पर काम करनेवाले को उससे ऊँचे पद पर नियुक्त किया जाना। तरक्की। (प्रमोशन)

पदौक—पुं० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष जो बरमा में अधिकता से होता है। इसकी लकड़ी मजबूत और कुछ लाली लिये सफेद रंग की होती है।

पद्ग—पुं० [सं० पद√ गम् (जाना)+ड] पैदल सिपाही।

पद्दू—वि० [हिं० पादना] बहुत अधिक पादनेवाला। पदोड़ा।

पद्धटिका—स्त्री० [सं०] एक मात्रिक छंद, जिसके प्रत्येक चरण में १६-१६ मात्राएँ होती हैं और अंत में जगण होता है।

पद्धड़ी—स्त्री०=पद्धटिका।

पद्धति—स्त्री० [सं० पद √ हन् (गति)+क्तिन्, पद् आदेश] १. पथ। मार्ग। रास्ता। २. कोई काम करने का विशिष्ट प्रकार, प्रणाली या विधि। ३. परिपाटी। रवाज। रीति।

विशेष—परिपाटी, पद्धति और प्रथा का अंतर जानने के लिए दे० 'प्रथा' का विशेष।

४. ढंग। तरीका। ५. पंक्ति। श्रेणी। ५. वह पुस्तक जिसमें किसी प्रकार की प्रथा या कार्य-प्रणाली लिखी हो। कर्म या संस्कार विधि की पोथी। जैसे—विवाह-पद्धति। ६. वह पुस्तक जिसमें किसी दूसरी पुस्तक का आशय, तात्पर्य या भाव समझाया गया हो।

पद्धती—स्त्री०=पद्धति।

वि० पद्धति के अनुसार कार्य करनेवाला।

पद्धरि—स्त्री०=पद्धटिका।

पद्धिम—पुं० [पाद-हिम, पद् आदेश, ष०त०] पैर का ठंढापन।

पद्धी—स्त्री० [देश०] खेल में किसी लड़के का जीतने पर, दाँव लेने के लिए हारनेवाले लड़के की पीठ पर चढ़ना।

क्रि० प्र०—देना।—लेना।

पद्म—पुं० [सं०√पद् (गति)+मन्] १. कमल का पौधा और फूल। २. सामुद्रिक के अनुसार कमल के आकार का एक प्रकार का चिह्न जो किसी के पैर के तलुओं में होता और शुभ तथा सौभाग्य-सूचक माना जाता है। ३. विष्णु का एक आयुध जो कमल के आकार का है। ४. तंत्र और हठयोग के अनुसार शरीर के अंदर के षट् चक्रों में से हर एक जो कमल के आकार का और बहुत ही चमकीले सुनहले रंग का कहा गया है। ५. गणित की इकाई, दहाईवाली गिनती में सोलहवें स्थान पर पड़नेवाली संख्या की संज्ञा जो १०० नील होती है। ६. कुबेर की नौ निधियों में एक निधि की संज्ञा। ७. वास्तु-कला में, खंभे या स्तम्भ के सातवें भाग की संज्ञा। ८. वास्तु-कला में, आठ हाथ लंबा और इतना ही चौड़ा वह घर जो एक ही कुरसी पर बना हो और जिसके ऊपर एक ही शिखर हो। ९. गले में पहनने का एक प्रकार का पुरानी चाल का गहना या हार। १०. शरीर पर होनेवाला श्वेत कुष्ठ या सफेद दाग। ११. वह चित्रकारी जो हाथी के मस्तक और सूँड़ पर तरह-तरह के रंगों से की जाती है। १२. साँप के फन पर बने हुए तरह-तरह के चिह्न। १३. काम शास्त्र में, १६ प्रकार के रतिबंधों में से एक। १४. पुराणानुसार जंबूद्वीप के दक्षिण-पश्चिम का एक देश। १५. पुराणानुसार एक नरक का नाम। १६. पुराणानुसार एक कल्प का नाम। १७. बौद्धों के अनुसार एक नक्षत्र का नाम। १८. जैनों के अनुसार भारत के नवें चक्रवर्ती का नाम। १९. बलदेव का एक नाम। २०. एक नाग का नाम। २१. कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम। २२. कश्मीर का एक प्राचीन राजा जिसने पद्मपुर नामक नगर बसाया था। २३.

पद्मा नदी का एक नाम। २४. सीसा। २५. पद्माख वृक्ष। २६. पुष्करमूल। २७. एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक नगण, एक सगण, और अंत में लघु गुरु होते हैं। २८. दे० 'पद्मपुराण'। २९. दे० 'पद्मव्यूह'। ३०. दे० 'पद्मासन'।

पद्मकंद—पुं० [ष०त०] कमल की जड़। भसीड़।

पद्मक—पुं० [सं० पद्म√ (चमकना)+क] १. पदम या पदमकाठ नाम का पेड़। २. हाथी की सूँड़ पर का चिह्न या दाग। ३. सेना का पद्मव्यूह। ४. सफेद कोढ़। ५. कुट नाम की ओषधि। ६. पद्मासन।

पद्म-कर—वि० [ब०स०] जिसके हाथ में कमल हो।
पुं० १. विष्णु। २. सूर्य। ३. [उपमि०स०] हाथ जो पद्मवत् हो।

पद्म-करा—स्त्री० [ब०स०, टाप्] लक्ष्मी।

पद्म-कर्णिका—स्त्री० [ष०त०] १. कमल का बीजकोश। २. पद्म-व्यूह के मध्य में स्थित सेना।

पद्म-कांति—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

पद्म-काष्ठ—पुं० [ब०स०] १. पद्म काठ (वृक्ष)। २. उक्त वृक्ष की सुगंधित लकड़ी जो ओषधि के काम आती है।

पद्म-काह्वय—पुं० [पद्मक-आह्वय, ब०स०] पद्माख या पदम नाम का वृक्ष।

पद्म-किंजल्क—पुं० [ष०त०] कमल का केसर।

पद्मकी (किन्)—पुं० [सं० पद्मक+इनि] १. हाथी। २. भुर्ज नाम का वृक्ष जिसके पत्ते भोज-पत्र नाम से प्रसिद्ध हैं।

पद्म-कीट—पुं० [सं० उपमि०स०] एक जहरीला कीड़ा।

पद्म-केतन—पुं० [ब०स०] गरुड़ का एक पुत्र।

पद्म-केतु—पुं० [उपमि०स०] एक तरह का पुच्छलतारा। (बृहत्संहिता)

पद्म-केशर—पुं० [ष०त०] कमल का केसर।

पद्म-कोश—पुं० [ष०त०] १. कमल का संपुट। २. कमल का वह छत्ता या बीज-कोश जिसमें उसके बीज (कमल-गट्टा) रहते हैं। ३. उँगलियों की एक मुद्रा जो कमल के संपुट के आकार की होती है।

पद्म-क्षेत्र—पुं० [ष०त०] उत्कल राज्य का एक तीर्थ।

पद्म-गंध—स्त्री० [ष०त०] कमल के फूल में से निकलनेवाली गंध।

पद्म-गंधि—पुं० [ब०स०, इत्व] पद्माख या पदम नाम का वृक्ष।

पद्म-गर्भ—पुं० [ष०त०] १. कमल का वह अंश जिसमें बीज होते हैं। २. ब्रह्मा। ३. सूर्य। ४. गौतम बुद्ध। ५. एक बोधिसत्त्व।

पद्मगुणा—स्त्री० [सं० पद्म√गुण् (मंत्रणा)+क+टाप्] १. लक्ष्मी। २. लौंग।

पद्म-गुरु—पुं० [मध्य०स०] रहस्य संप्रदाय में, शरीर के अंदर के कमलों या चक्रों में विद्यमान माना जानेवाला सत्-गुरु या परमात्मा का अंश।

पद्म-गृहा—स्त्री० [ब०स०, +टाप्] १. लक्ष्मी। २. लौंग।

पद्मचारिणी—स्त्री० [सं० पद्म√चर् (गति)+णिनि+ङीप्] १. गेंदा। २. शमी वृक्ष। ३. हलदी। ४. लाक्षा। लाख।

पद्मज—वि० [सं० पद्म√जन्+ड] कमल में से उत्पन्न।
पुं० ब्रह्मा।

पद्मजात—वि०, पुं०=पद्मज।

पद्म-तंतु—पुं० [ष० त०] कमल की नाल। मृणाल।

पद्म-दर्शन—पुं० [ब० स०] लोहबान।

पद्म-नाभ—पुं० [ब० स०, अच्] १. विष्णु। २. जैनों के अनुसार भावी उत्सर्पिणी के पहले अर्हत् का नाम। ३. धृतराष्ट्र का एक पुत्र। ४. एक नाग। ५. शत्रु के चलाये हुए अस्त्र को निष्फल करने के उद्देश्य से पढ़ा जानेवाला एक मंत्र।

पद्म-नाभि—पुं० [ब० स०] विष्णु।

पद्म-नाल—स्त्री० [ष० त०] कमल की नाल। मृणाल।

पद्म-निधि—स्त्री० [ष० त०] कुबेर की नौ निधियों में से एक निधि।

पद्म-नेत्र—वि० [ब० स०] जिसके नेत्र कमलवत् हों।
पुं० १. एक बुद्ध का नाम। २. एक प्रकार का पक्षी।

पद्म-पत्र, पद्म-पर्ण—पुं० [ष० त०] १. कमल की पँखड़ी। २. पुष्कर-मूल।

पद्म-पाणि—वि० [ब० स०] जिसके हाथ में कमल का फूल हो।
पुं० १. ब्रह्मा। २. सूर्य। ३. गौतम बुद्ध की एक विशिष्ट प्रकार की मूर्ति। ४. एक बोधिसत्त्व जो अभिताभ बुद्ध के पुत्र थे।

पद्म-पुराण—पुं० [सं० ब० स०] अठारह पुराणों में से एक पुराण।

पद्म-पुष्प—पुं० [सं० ब० स०] १. कनेर का पेड़। २. एक प्रकार की चिड़िया।

पद्म-प्रभ—पुं० [ब० स०] एक बुद्ध जिनका अवतार अभी होने को है।

पद्म-प्रिया—स्त्री० [ब० स०,+टाप्] वासुकि नाग की बहन मनसा।

पद्म-बंध—पुं० [ब० स०] चित्र काव्य का एक प्रकार जिसमें अक्षरों को इस प्रकार सजाया जाता है कि पद्म या कमल का आकार बन जाता है।

पद्म-बीज—पुं० [ष० त०] कमलगट्टा।

पद्म-भवानी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

पद्म-भास—पुं० [ब० स०] शिव।

पद्मभू—पुं० [सं० पद्म√भू (होना)+क्विप्] ब्रह्मा।

पद्म-भूषण—पुं० [मध्य० स०] स्वतंत्र भारत में सुयोग्य देश-सेवियों, राजकर्मचारियों, विद्वानों आदि को भारत सरकार की ओर से सम्मानार्थ मिलनेवाला एक प्रकार का अलंकरण जो तृतीय श्रेणी का माना गया है।

पद्ममालिनी—स्त्री० [सं० पद्म-माला, ष० त०,+इनि+ङीप्] लक्ष्मी।

पद्ममाली (लिन्)—पुं० [सं० पद्ममाला+इनि] एक राक्षस का नाम।

पद्म-मुखी—स्त्री० [ब० स०, ङीष्] १. दूब। २. संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

पद्म-मुद्रा—स्त्री० [मध्य० स०] तांत्रिक उपासना और पूजन में एक मुद्रा जिसमें दोनों हथेलियों को सामने करके उँगलियाँ नीचे रखते हैं और अँगूठे मिला देते हैं।

पद्म-योनि—पुं० [ब० स०] १. ब्रह्मा। २. गौतम बुद्ध का एक नाम।

पद्म-राग—पुं० [ब० स०] १. मानिक या लाल नामक प्रसिद्ध रत्न। २. संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

पद्म-रेखा—स्त्री० [मध्य० स०] सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार हाथ की हथेली में होनेवाली कमल के आकार की एक रेखा, जो धनवान होने का लक्षण मानी जाती है।

पद्म-लांछन—पुं० [ब० स०] १. ब्रह्मा। २. कुबेर। ३. सूर्य।

पद्म-लांछना—स्त्री० [ब० स०,+टाप्] १. सरस्वती का एक नाम। २. तारा देवी का एक नाम।

पद्म-लोचन—वि० [ब० स०] जिसके नेत्र कमल के समान बड़े और सुन्दर हों।

पद्म-वर्ण—पुं० [ब० स०] १. यदु के एक पुत्र। २. पुष्करमूल।

पद्मवर्णक—पुं० [ब० स०, कप्] पुष्करमूल।

पद्मवासा—स्त्री० [ब० स०+टाप्] लक्ष्मी।

पद्म-विभूषण—पुं० [मध्य० स०] स्वतंत्र भारत में, सुयोग्य देश-सेवियों, राजकर्मचारियों, विद्वानों आदि को भारत सरकार की ओर से सम्मानार्थ मिलनेवाला एक प्रकार का अलंकरण जो द्वितीय श्रेणी का माना गया है।

पद्म-बीज—पुं० [प० त०] कमल गट्टा।

पद्म-बीजाभ—पुं० [पद्मबीज-आभा, ब० स०] मखाना।

पद्म-वृक्ष—पुं० [मध्य० स०] पद्मकाठ नामक वृक्ष।

पद्म-व्याकोश—पुं० [ष० त०] संपुटित कमल के आकार की (दीवारों में लगाई जानेवाली) सेंध।

पद्म-व्यूह—पुं० [मध्य० स०] १. प्राचीन भारत में एक तरह की सैनिक व्यूह-रचना जिसमें सैनिक इस प्रकार खड़े किये जाते थे कि कमल की आकृति बन जाती थी। २. एक तरह की समाधि।

पद्म-श्री—पुं० [ब० स०] १. एक बोधिसत्त्व का नाम। २. स्वतंत्र भारत में सुयोग्य देश-सेवियों, राजकर्मचारियों, विद्वानों आदि को भारत सरकार की ओर से सम्मानार्थ मिलनेवाला एक प्रकार का अलंकरण जो चतुर्थ श्रेणी का माना गया है।

पद्म-संभव—पुं० [ब० स०] ब्रह्मा।

पद्म-सद्मा (द्मन्)—पुं० [ब० स०] ब्रह्मा।

पद्म-सूत्र—पुं० [ष० त०] कमल के फूलों की माला।

पद्म-स्नुषा—स्त्री० [ष० त०] १. गंगा का एक नाम। २. दुर्गा का एक नाम।

पद्म-स्वस्तिका—पुं० [मध्य० स०] वह स्वस्तिक चिह्न जिसमें कमल भी बना हो।

पद्म-हस्त—वि०, पुं०=पद्म-कर।

पद्महास—पुं० [ब० स०] विष्णु।

पद्मांतर—पुं० [पद्म-अंतर, मयू० स०] कमल-दल।

पद्मा—स्त्री० [सं० पद्म+टाप्] १. लक्ष्मी। २. मनसा देवी का एक नाम। ३. बंगाल में होनेवाली गंगा की दो शाखाओं में से पूर्वी शाखा की संज्ञा। ४. गेंदे का पौधा। ५. कुसुम का फूल। ६. लौंग। ७. पद्मचारिणी लता।

पद्माक—पुं० दे० 'पद्माख'।

पद्माकर—पुं० [पद्म-आकर, ष० त०] वह जलाशय जिसमें कमल खिले हों।

पद्माक्ष—पुं० [पद्म-अक्षि, ष० त०] १. कमल-गट्टा। कमल के बीज। २. विष्णु का एक नाम।

पद्माख—पुं० [सं० पद्मकम्] पर्वतीय प्रदेश में होनेवाला एक तरह का ऊँचा पेड़ जिसके पत्ते लकुच के पत्तों की तरह और फूल कदम के फूलों जैसे होते हैं।

पद्माचल—पुं० [पद्म-अचल, मध्य० स०] एक पर्वत। (पुराण)

पद्माट—पुं० [सं० पद्म√अट् (गति)+अच्] चकवँड़।

पद्माधीश—पुं० [पद्म-अधीश, ष० त०] विष्णु।

पद्मालय—पुं० [पद्म-आलय, ब० स०] ब्रह्मा।

पद्मालया—स्त्री० [सं० पद्मालय+टाप्] १. लक्ष्मी। २. लौंग।

पद्मावती—स्त्री० [सं० पद्म+मतुप्, वत्व, दीर्घ] १. पटना नगर का प्राचीन नाम। २. पन्ना नगर का पुराना नाम। ३. उज्जयिनी का पुराना नाम। ४. जरत्कारु ऋषि की पत्नी लक्ष्मी का दूसरा नाम। ५. मनसा देवी का एक नाम। ६. पुराणानुसार एक अप्सरा। ७. युधिष्ठिर की एक रानी। ८. एक प्राचीन नदी। ९. लोक-कथा के अनुसार सिंहल की एक राजकुमारी जिसे चित्तौड़ के राजा रत्नसेन ब्याह कर लाये थे। १०. एक मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में ३२ मात्राएँ १०,८ और १४ की यति पर होती हैं।

पद्मासन—पुं० [पद्म-आसन, उपमि० स०] १. कमल का आसन। २. योग-साधना के समय पलथी मारकर तथा तनकर बैठने की एक विशेष मुद्रा। ३. वह जो उक्त आसन लगाकर बैठा हो। ४. कामशास्त्र के अनुसार स्त्री के साथ संभोग करने का एक आसन या रतिबंध। ५. ब्रह्मा। ६. शिव। ७. सूर्य।

पद्माह्वा—स्त्री० [पद्म-आह्व, ब० स०,+टाप्] १. गेंदा। २. लौंग।

पद्मिनी—स्त्री० [सं० पद्म+इनि—ङीप्] १. कमल का पौधा। २. कमल की नाल। ३. कमलों का समूह। ४. ऐसा तालाब जिसमें बहुत से कमल खिले हों। ५. मादाहाथी। हथिनी। ६. काम शास्त्र में रूप, शील और स्वभाव की दृष्टि से नायिकाओं के चार वर्गों में से पहला और सर्वश्रेष्ठ वर्ग। ७. उक्त वर्ग की नायिका जिसका शरीर चम्पा की तरह गौर वर्ण होता है, कमल-दल की तरह कोमल होता है और जिसके अंग अंग से सुरभित गंध निकलती है। यह अत्यन्त लज्जाशीला किंतु बहुत मानिनी भी होती है।

पद्मिनी-कंटक—पुं० [ष० त०] एक प्रकार का क्षुद्र रोग जो कुष्ठ के अन्तर्गत माना जाता है।

पद्मिनी-कांत—पुं० [ष० त०] सूर्य।

पद्मिनी-खंड—पुं० [ष० त०] वह प्रदेश जहाँ कमलों की प्रचुरता हो।

पद्मिनी-वल्लभ—पुं० [ष ० त०] सूर्य।

पद्मिनी-षंड—पुं० [ष० त०] पद्मिनी-खंड।

पद्मी (द्मिन्)—वि० [सं० पद्म+इनि] १. जिसमें कमल होता हो। २. कमल से युक्त।

पुं० १. वह प्रदेश जहाँ पद्म या कमल बहुत होते हों। २. पद्मों या कमलों का समूह। ३. विष्णु। ४. बौद्धों के अनुसार एक लोक का नाम। ५. उक्त लोक में रहनेवाले एक बुद्ध जिनका अवतार आगे चलकर होगा।

पद्मेशय—पुं० [सं० पद्मे√शी (सोना)+अच्, अलुक् स०] पद्मों पर सोनेवाले, विष्णु।

पद्मोत्तर—पुं० [सं० पद्म-उत्तर, ष० त०] १. कुसुम। बर्रे। २. एक बुद्ध का नाम।

पद्मोद्भव—पुं० [सं० पद्म-उद्भव, ब० स०] ब्रह्मा।

पद्मोद्भवा—स्त्री० [सं० पद्मोद्भव+टाप्] वासुकि नाग की बहन, मनसा।

पद्य—वि० [सं० पद्+यत्] १. पद (पैर अथवा चरण) संबंधी। २. जो पदों अर्थात् काव्य के रूप में हों।
पुं० १. पद अर्थात् गण, मात्रा आदि के नियमों के अनुसार होनेवाली साहित्यिक रचना। छंदो-बद्ध रचना।(वर्स) २. काव्य। ३. शूद्र जिनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के चरणों से मानी जाती है। ४. शठता।

पद्या—स्त्री० [सं० पद्य+टाप्] १. पैदल चलने से बननेवाला रास्ता। पगडंडी। २. पटरी। ३. शर्करा।

पद्यात्मक—वि० [पद्य-आत्मन्, ब० स०+कप्] पद्य के रूप में होनेवाला। छंदोबद्ध।

पद्र—पुं० [सं०√पद्+रक्] गाँव।

पद्रथ—पुं० [सं० पद्-रथ, ब० स०] प्यादा। पैदल सिपाही।

पद्व—पुं० [सं०] १. मनुष्य-जगत्। २. पृथ्वी। ३. मार्ग। सड़क। ४. रथ।

पद्वा (द्वन्)—पुं० [सं०√पद्+वनिप्] मार्ग।

पधरना†—अ०=पधारना।

पधराना—स० [हिं०, पधारना] १. अपने यहाँ आये हुए व्यक्ति का सत्कार करना और आदरपूर्वक आसन देना। २. प्रतिष्ठित या स्थापित करना।

पधरावनी—स्त्री० [हिं० पधराना] १. पधारने की क्रिया या भाव। २. किसी देवता की स्थापना।

पधारना—अ० [हिं० पग+धारना] १. किसी की दृष्टि में उसके यहाँ किसी पूज्य व्यक्ति का आना। २. किसी बड़े आदमी का किसी उत्सव, समारोह आदि में सम्मिलित होने के लिए पहुँचना। ३. आ पहुँचना। आना। ४. गमन करना। चलना। (परिहास और व्यंग्य)
स० आदरपूर्वक बैठाना। पधराना। प्रतिष्ठित करना। उदा०—तिल पिंडिन में हरिहि पधारैं। बिबिध भाँति पूजा अनुसारैं।—रघुनाथ।

पनंग—पुं० [सं० पन्नग] सर्प। साँप। (डिं)

पन—पुं० [सं० पर्वन्] आयु अथवा जीवन-काल की कोई अवस्था या स्थिति। जैसे—उन्हें चौथे पन में कुछ आराम मिला।
प्रत्य० एक प्रत्यय जो कुछ संज्ञाओं और गुणवाचक विशेषणों के अन्त में लगकर उनका भाववाचक रूप बनाता है। जैसे—बचपन, लड़कपन, पीलापन, हरापन आदि।
पुं० [हिं० पान] पान का वह संक्षिप्त रूप जो उसे यौगिक पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पनवाड़ी।
पुं० [हिं० पानी] पानी का वह संक्षिप्त रूप जो उसे यौ० पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पन-चक्की, पन-डुब्बी, पन-बिजली, पन-भरा आदि।
†पुं०=प्रण।
क्रि० प्र०—रोपना। —लेना।
†पुं०=पण्य (मूल्य)।

पन-कटा—पुं० [हिं० पानी+काटना] वह मनष्य जो खेतों में नालियाँ काटकर इधर-उधर पानी ले जाता या सींचता हो।

पन-कपड़ा—पुं० [हिं० पानी+कपड़ा] चोट, घाव आदि पर बाँधा जानेवाला गीला कपड़ा।

पन-काल—पुं० [हिं० पानी+काल या अकाल] १. पानी का अकाल। २. अत्यधिक वर्षा तथा उसके फल-स्वरूप खेती आदि नष्ट होने के कारण पड़नेवाला अकाल।

पन-कुकड़ी—स्त्री०=पनकौआ।

पन-कुट्टी—स्त्री० [हिं० पान+कूटना] पान कूटने का छोटा खरल।

पन-कौआ—पुं० [हिं० पानी+कौआ] एक प्रकार का जल-पक्षी। जल-कौआ।

पनखट—पुं० [हिं० पनहा+काठ] जुलाहों की वह लचीली धुनकी जिस पर उनके सामने बुना कपड़ा फैला रहता है।

पनग*—पुं० [स्त्री० पनगनि] पन्नग (साँप)।

पनगाचा—पुं० [हिं० पानी+गाछी (बाग)] वह खेत जिसमें पानी भरा या सींचा गया हो।

पनगोटी—स्त्री० [हिं० पानी+गोटी] मोतिया शीतला।

पनघट—पुं० [हिं० पानी+घाट] १. वह घाट जहाँ से लोग पानी भरते हों। २. कोई ऐसा स्थान जहाँ से पानी घड़े आदि में भरकर ले जाया जाता हो। जैसे—कूआँ।

पनच—स्त्री० [सं० पतंचिका] प्रत्यंचा।

पन-चक्की—स्त्री० [हिं० पानी+चक्की] आटा आदि पीसने की ऐसी चक्की जो पानी के बहाव के जोर से चलती हो।

पनची—स्त्री० [देश०] गेड़ी के खेल में खेलने के लिए पतली लकड़ी या गेड़ी।

पनचोरा—पुं० [हिं० पानी+चोर] जल भरने का एक तरह का बरतन जिसका पेट चौड़ा और मुँह सँकरा हो।

पनडब्बा—पुं० [हिं० पान+डब्बा] [स्त्री० अल्पा० पनडब्बी] पान-दान।

पनडब्बी—स्त्री० [हिं० पन+डब्बी] पानों के लगे हुए बीड़े रखने की छोटी डिबिया।

पनडुब्बा—पुं० [हिं० पानी+डूबना] १. पानी में गोता लगानेवाला। गोताखोर। २. [स्त्री० पनडुब्बी] काले रंग का एक प्रसिद्ध पक्षी जो जलाशय में गोता लगाकर मछलियाँ पकड़ता हो। ३. मुरगाबी। ४. एक प्रकार का कल्पित भूत जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि वह जलाशय में नहानेवालों को डुबा देता है।

पनडुब्बी—स्त्री० [हिं० पानी+डूबना] १. जलाशयों में डुबकी लगाकर मछलियाँ पकड़नेवाली एक चिड़िया। २. पानी के अन्दर डूबकर चलनेवाली एक प्रकार की आधुनिक नाव। (सब-मेरीन)

पनदनियाँ†—स्त्री० [हिं० पानदान का स्त्री० अल्पा०] पानों के लगे हुए बीड़े रखने की छोटी डिब्बी। पन-डब्बी।

पनपना—अ० [सं० पर्ण+पर्ण=पत्ता; या पर्णय=हरा होना] १. पेड़-पौधों के सम्बन्ध में, उनका भली-भाँति विकास और वृद्धि होना। २. रोजगार आदि के संबंध में, उसका उन्नति पर होना। चमकना। ३. व्यक्ति के संबंध में, उसका नये सिरे से या फिर से तन्दुरुस्त, सम्पन्न अथवा सशक्त होने लगना। अच्छी स्थिति में आने लगना।

पनपनाहट—स्त्री० [अनु०] बार-बार होनेवाले पन-पन शब्द का भाव।

पनपाना—स० [हिं० पनपना का स० रूप] किसी को पनपने में प्रवृत्त करना या सहायता करना।

पनपिआइ†—स्त्री० [हिं० पानी+पिलाना] नाश्ता।

पन-बट्टा—पुं० [हिं० पान+बट्टा (डिब्बा)] वह छोटा डिब्बा जिसमें लगे हुए पानों के बीड़े रखे जाते हैं।

पन-बदरा—पुं० [हिं० पानी+बादल] ऐसी वातावरणिक स्थिति जिसमें पानी और बादल के साथ धूप भी निकली होती है।

पनबिच्छी—स्त्री० [हिं० पानी+बीछी] बिच्छी की तरह का डंक मारनेवाला एक जल-जंतु।

पन-बिछिया—स्त्री०=पनबिच्छी।

पन-बिजली—स्त्री० [हिं० पानी+बिजली] झरनों और नदियों के बहाववाले पानी से तैयार की जानेवाली बिजली।

पनबिजली-शक्ति—स्त्री० दे० 'जलविद्युत्-शक्ति'।

पनबुड़वा—पुं०=पनडुब्बा।

पनबुड़िया—स्त्री०=पनडुब्बी।

पनभता†—पुं० [हिं० पानी+भात] केवल पानी में उबाले हुए चावल। साधारण भात।

पन-भरा—पुं० [हिं० पानी+भरना] वह जो घरों में पानी भरकर पहुँचाने या ले जाने का काम करता हो। पनहरा।

पन-मँड़िया—स्त्री० [हिं० पानी+माँड़ी] एक तरह की पतली माँड़ जिससे जुलाहे बुनाई के समय टूटे हुए तागों को जोड़ते हैं।

पनरंगा—वि० [हिं० पानी+रंग] [स्त्री० पनरंगी] पानी के रंग जैसा अर्थात् मटमैलापन लिये सफेद। उदा०—कटि धोती पनरंगी धरे गमछा-कल काँधे।—रत्ना०।

पनलगवा, पनलगा—पुं० [हिं० पानी+लगाना] खेतों में पानी लगाने या सींचनेवाला व्यक्ति। पनकटा।

पनलोहा—पुं० [हिं० पानी+लोहा] एक प्रकार का जल-पक्षी जो हर ऋतु में रंग बदलता है।

पनव—पुं०=प्रणव।

पनवाँ—पुं० [हिं० पान+वाँ (प्रत्य०)] हुमेल आदि में लगी हुई बीचवाली चौकी जो पान के आकार की होती है। टिकड़ा। पान।

पनवाड़ी—स्त्री० [हिं० पान+वाड़ी] वह खेत या भूमि जिसमें पान पैदा होता है।
पुं० दे० 'तमोली'।

पनवार—स्त्री० [सं० पर्ण] पत्तों की बनी हुई पत्तल।

पनवारा—पुं० [हिं० पान=पत्ता+वार (प्रत्य०)] १. पत्तों की बनी हुई पत्तल जिस पर रखकर लोग भोजन करते हैं।
मुहा०—पनवारा लगाना=पत्तल पर भोजन परोसना।
२. पत्तल पर परोसा हुआ उतना भोजन जितना एक आदमी खा सके। (दे० 'पत्तल')
पुं० [?] एक प्रकार का साँप।

पनवारी—स्त्री०=पनवाड़ी।
पुं०=तमोली।

पनस—पुं० [सं०√पन् (स्तुति)+असच्] १. कटहल का वृक्ष। २. कटहल का फल। ३. राम की सेना का एक बंदर। ४. विभीषण का एक मंत्री।

पन-सखिया—स्त्री० [हिं० पाँच+शाखा] १. एक प्रकार का पौधा। २. उक्त पौधे का फूल।

पनसतालिका—स्त्री० [सं० पनस-ताल, कर्म०स०,+ठन्—इक,+टाप्] कटहल।

पनसनालका—पुं० [सं०] कटहल।

पनसल्ला†—पुं०=पनसाल (प्याऊ)।

पनसाखा—पुं० [हिं० पाँच+शाखा] एक प्रकार की मशाल जिसमें तीन या पाँच बत्तियाँ साथ जलती हैं।

पनसार—पुं० [हिं० पानी+सं० आसार=धार बाँधकर पानी गिराना] पानी से किसी स्थान को तर करने या सींचने की क्रिया या भाव। भरपूर सिंचाई।

पनसारी—पुं०=पंसारी।

पनसाल—स्त्री० [हिं० पानी+सं० शाला] १. वह स्थान जहाँ सर्वसाधारण को पानी पिलाया जाता है। पौसरा। प्याऊ। २. नदी आदि में नावों के चलने के समय पानी की गहराई नापने की क्रिया। ३. वह उपकरण जिससे उक्त अवसरों पर पानी की गहराई नापी जाती है।

पनसिगा—पुं० [देश०] जलपीपल।

पनसिका—स्त्री० [सं० पनस+ठन्—इक, +टाप्] कान में होनेवाली एक तरह की फुंसी जो कटहल के काँटों की तरह नोकदार होती है।

पनसी—स्त्री० [सं० पनस+ङीष्] १. कटहल का फल। २. पनसिका।

पनसुइया—स्त्री० [हिं० पानी+सूई] एक तरह की पतली तथा छोटी नाव।

पनसूर—पुं० [देश०] एक तरह का बाजा।

पनसेरी—स्त्री०=पंसेरी।

पनसोई—स्त्री०=पनसुइया।

पनसोह—वि० [हिं० पानी+सुहाना] १. जिसका स्वाद जल जैसा हो। २. फीका। ३. नीरस।

पनस्यु—वि० [सं० पन+क्यच्, सुगागम,+ड] प्रशंसा या तारीफ सुनने का इच्छुक। जिसे प्रशंसित होने की लालसा हो।

पनह†—स्त्री०=पनाह (शरण)।

पनहड़ा—पुं० [हिं० पान+हाँड़ी] वह पात्र जिसमें तमोली पान आदि धोने के लिए पानी रखते हैं।

पनहरा—पुं० [हिं० पानी+हरा (प्रत्य०)] [स्त्री० पनहारन, पनहारिन] १. वह व्यक्ति जो दूसरों के यहाँ पानी भरता हो और इस प्रकार प्राप्त होनेवाले पारिश्रमिक से अपनी जीविका चलाता हो। पन-भरा।
२. वह पात्र जिसमें सोनार गहने धोने आदि के लिए पानी रखते हैं।

पनहा—पुं० [सं० परिणाह=विस्तार, चौड़ाई] १. कपड़े, दीवार आदि की चौड़ाई। अरज। २. गूढ़ आशय। तात्पर्य। मर्म। भेद।
पुं० [सं० पण=रुपया-पैसा+हार] १. चोरी का पता लगानेवाला। २. वह पुरस्कार जो चुराई हुई वस्तु लौटा या दिला देने के लिए दिया जाय।
†स्त्री०=पनाह।

पनहारा—पुं०=पनहरा।

पनहिया†—स्त्री० =पनही।

पनहिया-भद्र†—पुं० [हिं० पनही+भद्र=मुंडन] सिर पर इतने जूते पड़ना कि बाल उड़ जायँ। जूतों की मार।

पनही—स्त्री० [सं० उपानह] जूता।

पना—पुं० [सं० प्रपानक या पानीय] भुने हुए आम, इमली आदि का बनाया जानेवाला एक तरह का खट-मीठा शरबत। पन्ना।
प्रत्य०=पन। जैसे—पाजीपना।

पनाती—पुं० [सं० प्रनप्तृ] [स्त्री० पनातिन] पुत्र अथवा कन्या का नाती। पोते अथवा नाती का पुत्र। परनाती।

पनार(रा)†—पुं०=पनारा।

पनारि—स्त्री० [हिं०प=पर+नारि] पराई स्त्री। उदा०—जौ पनारि कौ रसिक...। मतिराम।

पनाला†—पुं०[स्त्री० अल्पा० पनाली]=परनाला।

पनालिया†—वि० [हिं० पनाला=परनाला] पनाले या परनाले के समान गंदा और त्याज्य। जैसे—पनालिया पग।

पनालिया-पत्र—पुं० [हिं० पनालिया+सं० पत्र] वह समाचार-पत्र (या समाचार-पत्रों का वर्ग) जिसमें अधिकतर बातें अशिष्टतापूर्ण और अश्लील ढंग से कही जाती हैं और दूषित भाव से लोगों पर कीचड़ उछाला जाता है। (गटर प्रेस)

पनास—पुं० [हिं० पनासना] १ पालन-पोषण। २. दे० 'पोस'।

पनासना—स० [सं० पानाशन] पोषण करना। पालना-पोसना।

पनाह—स्त्री० [फा०] १. शत्रु के उपद्रव या दूसरे संकटों से प्राण-रक्षा या अपना बचाव करने की क्रिया या भाव। त्राण। २. उक्त आशय से किसी की रक्षा या शरण में जाने की क्रिया या भाव।
मुहा०—(किसी काम, बात या व्यक्ति से) पनाह माँगना=किसी बहुत ही अप्रिय या अनिष्ट वस्तु अथवा विकट व्यक्ति से दूर रहने की कामना करना। किसी से बहुत बचने की इच्छा करना। जैसे—मैं आप से पनाह मागता हूँ।
३. ऐसा स्थान जहाँ छिप या रहकर कोई शत्रु, संकट आदि से बचता हो। बचाव या रक्षा की जगह।
क्रि० प्र०—देना।—पाना।—माँगना।
मुहा०—पनाह लेना=विपत्ति से बचने के लिए रक्षित स्थान में पहुँचना। शरण लेना।

पनिक—पुं० [देश०] दो बाँसों की कैंचीनुमा रचना। (जुलाहे)
विशेष—ऐसी ही दो रचनाओं के बीच में पाई करने के उद्देश्य से ताना फैलाया जाता है।

पनिख†—पुं०=पनिक।

पनिगर†—वि०=पानीदार।

पनिघट†—पुं०=पनघट।

पनिच*—स्त्री०=पनच (प्रत्यंचा)।

पनिड़ो—स्त्री०=पुंडरीक (ईख का एक भेद)।

पनियाँ†—वि० [हिं० पानी+इया (प्रत्य०)] १. जल-संबंधी। पानी का। २. पानी में रहने या होनेवाला। जैसे—पनियाँ साँप। ३. जिसमें पानी हो या मिला हो। जैसे—पनियाँ दूध। ४. पानी के रंग का।
†पुं० दे० 'पनुआ'।

पनियाना—स० [हिं० पानी+आना (प्रत्य०)] खेत आदि को पानी से सींचना।
स०=पनिहाना।

पनियार—पुं० [हिं० पानी+यार (प्रत्य०)] १. वह स्थान जहाँ पानी ठहरता या रुकता हो। २. वह दिशा जिधर ढाल होने के कारण पानी बहता हो।

पनियारा†—पुं० [हिं० पानी] १. पानी की बाढ़।
वि०, पुं०=पनियाला।

पनियाला—पुं० [?] एक प्रकार का वृक्ष और उसका फल।
वि०=पनियाँ।

पनियाव†—पुं० [हिं० पानी+इयाव (प्रत्य०)] कूआँ खोदते समय मिलनेवाला वह स्थान जहाँ पानी यथेष्ट होता है।

पनिया-सोत—वि० [हिं० पानी+सोता] (तालाब या खाईं) जिसके तल में से पानी का प्राकृतिक सोता निकला हो। अर्थात् बहुत गहरा। जैसे—पनिया-सोत खाईं।

पनिवा—पुं०=पनुआँ।

पनिसिगा†—पुं० दे० 'जल पीपल'।

पनिहरा †पुं=पनहरा।

पनिहा—पुं० [?] चोर पकड़ने अथवा उनका पता बतलानेवाले तांत्रिक।
पुं० दे० 'पनुआ'।
†वि०=पनियाँ।

पनिहाना†—स० [हिं० पनही=जूता] १. जूतों से मारना।
२. बहुत अधिक मारना-पीटना।

पनिहार†—पुं० [स्त्री० पनिहारिन] =पनहरा।

पनिहारिन—स्त्री० [हिं० पनिहरा=पानी भरनेवाला] १. वह स्त्री जो लोगों के घर पानी भर कर पहुँचाने का काम करती हो। २. गाँव-देहातों में कहरवा की तरह के एक प्रकार के गीत जो उक्त अथवा कहार जाति की स्त्रियाँ पानी भरने और लोगों के घर पानी पहुँचाने के समय गाती हैं।

पनी—वि० [सं० पण] जिसने प्रण या व्रत धारण किया हो।
†स्त्री०=पत्नी।

पनीर—पुं० [फा०] १. दही का वह घन अंश जो उसमें से पानी निकाल देने पर बच रहे। २. फटे या फाड़े हुए दूध का घन अंश। छेना।
मुहा०—(किसी को) पनीर चटाना=काम निकालने के उद्देश्य से किसी को कुछ खिलाना-पिलाना और खुशामद करना। **पनीर जमाना**=ऐसी बात करना जिससे आगे चलकर कोई बहुत बड़ा उद्देश्य या स्वार्थ सिद्ध हो।

पनीरी—वि० [फा०] १. पनीर-संबंधी। २. पनीर का बना हुआ। जैसे—पनीरी मिठाई।
स्त्री० [देश०] १. फूल-पत्तोंवाले वे छोटे पौधे जो दूसरी जगह रोपने के लिए उगाये गये हों। फूल-पत्तों के बेहन।
क्रि० प्र०—जमाना।
२. वह क्यारी जिसमें उक्त प्रकार के पौधे उगाये जाते हैं। ३. गलगल नींबू की फाँक का गूदा।

पनीला†—वि०=पनियाँ।
पुं० [?] एक तरह का सन।
पनु*—पुं०=प्रण।
पनुआँ—पुं० [हिं० पानी+उआँ (प्रत्य०)] १. वह शरबत जो गुड़ के कड़ाहे से पाग निकाल लेने के बाद उसे धोकर तैयार किया जाता है। पनियाँ। २. तरबूज। (पूरब)
पनेथी†—स्त्री० [हिं० पानी+पोथी] वह रोटी जिसमें पलेथन के स्थान पर पानी लगाया गया हो।
पनेरी—स्त्री०=पनीरी।
पुं०=पनवाड़ी (तँबोली)।
पनेवा†—पुं० [?] एक प्रकार की चिड़िया।
पनेहड़ी†—स्त्री० दे० 'पनहड़ी'।
पुं०=पनहरा।
पनेहरा—पुं०=पनहरा।
पनैला—वि०=पनियाँ।
पुं०=पनीला।
पनौआ—पुं० [हिं० पान+औआ (प्रत्य०)] पान के पत्तों का पकौड़ा या पकौड़ी।
पनौटी—स्त्री० [हिं० पान+औटी (प्रत्य०)] पान रखने की पुरानी चाल की पिटारी।
पन्न—वि० [सं०√पद्+क्त] १. गिरा या पड़ा हुआ। जैसे—शरणा-पन्न। २. जो नष्ट या समाप्त हो चुका हो।
पुं० खिसकते या सरकते हुए चलना। रेंगना।
†पुं०=पर्ण (पत्ता)।
पन्नई†—वि० [हिं० पन्ना+ई (प्रत्य०)] पन्ने के रंग का। फिरोजी या गहरे हरे रंग का।
पन्नग—पुं० [सं० पन्न√गम् (जाना)+ड] [स्त्री० पन्नगी] १. सर्प। साँप। २. एक प्रकार की जड़ी या बूटी। ३. सीसा।
†पुं०=पन्ना (मरकत)।
पन्नग-केसर—पुं० [ब० स०] नागकेसर।
पन्नगारि—पुं० [पन्नग-अरि, ष० त०] गरुड़।
पन्नगाशन—पुं० [पन्नग-अशन, ब० स०] गरुड़।
पन्नगिनि*—स्त्री०=पन्नगी।
पन्नगी—स्त्री० [सं० पन्नग+ङीष्] १. सर्पिणी। साँपिन। २. सर्पिणी नाम की जड़ी या बूटी।
पन्नद्धा, पन्नध्री—स्त्री० [सं० पद्-नद्धा, स० त०, पद्-नध्री, ष० त०] जूता।
पन्ना—पुं० [सं० पर्ण] एक तरह का गहरे हरे या फिरोजी रंग का बहु-मूल्य रत्न।
पुं० [हिं० पान] १. पृष्ठ। वरक। २. भेड़ों के कान का वह भाग जहाँ का ऊन काटा जाता है। ३. पान के आकार का जूते का वह अंग जिसे 'पान' कहते हैं।
पन्निक†—पुं०=पनिक।
पन्नी—स्त्री० [हिं० पन्ना] १. राँगे, पीतल आदि का पत्तर जिसे सौंदर्य और शोभा के लिए छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर अन्य वस्तुओं पर चिपकाया जाता है। २. एक तरह का रंगीन चमकीला कागज। ३. सुनहला या रुपहला कागज।
स्त्री० [हिं० पना] इमली, कच्चे आम आदि से बनने वाला एक पेय।
स्त्री० [?] १. बारूद की एक तौल जो आध सेर के बराबर होती है। २. एक तरह की घास जो छप्पर छाने के काम आती है।
पन्नीसाज—पुं० [हिं० पन्नी+फा० साज=बनानेवाला] [भाव० पन्नी-साजी] पन्नी बनानेवाले कारीगर।
पन्नीसाजी—स्त्री० [हिं० पन्नीसाज] पन्नी बनाने का काम या व्यव-साय।
पन्नू—पुं० [देश०] १. एक प्रकार का पौधा। २. उक्त पौधे का फूल।
पन्यारी—स्त्री० [देश०] एक तरह का जंगली वृक्ष, जिसकी लकड़ी चमकदार तथा मजबूत होती है।
पन्हाना†—स० १.=पहनाना। २.=पनिहाना।
अ०=पेन्हाना (थन में दूध उतरना)।
पन्हारा—पुं० [हिं० पानी+हारा] एक प्रकार का तृण धान्य जो गेहूँ के खेतों में आप से आप होता है। अँकरा।
पन्हीं—स्त्री० [देश०] एक तरह की घास। गाँडरा। बीरन।
पन्हैया—स्त्री०=पनही।
पपटा—पुं० [?] छिपकली।
†पुं०=पपड़ा।
पपड़ा—पुं० [सं० पर्पट] [स्त्री० अल्पा० पपड़ी] १. लकड़ी का रूखा, करकरा और पतला छिलका। चिप्पड़। २. किसी चीज के ऊपर का पतला किंतु कड़ा और सूखा छिलका। जैसे—रोटी का पपड़ा।
पपड़िया—वि० उभय० [हिं० पपड़ी+इया (प्रत्य०)] जो आकार, रूप आदि में पपड़ी की तरह का हो। जैसे—पपड़िया कत्था, पपड़िया लाख आदि।
पपड़िया कत्था—पुं० [हिं० पपड़ी+कत्था] सफेद कत्था। श्वेतसार।
पपड़ियाना—अ० [हिं० पपड़ी+आना (प्रत्य०)] १. किसी चीज पर पपड़ी जमना। २. पपड़ी की तरह सूखकर कड़ा हो जाना।
स० ऐसी क्रिया करना जिससे कोई चीज सूखकर पपड़ी के रूप में हो जाय।
पपड़ी—स्त्री० [हिं० पपड़ा] १. प्रायः किसी गीली वस्तु के सूखने पर उसकी ऊपरी परत की वह स्थिति जब वह सूखकर कुछ चिटक, सिकुड़ और ऐंठ जाती है। जैसे—होंठों पर की पपड़ी।
क्रि० प्र०—जमना। —पड़ना।
मुहा०—(किसी चीज का) पपड़ी छोड़ना=मिट्टी की तह का सूख और सिकुड़कर चिटक जाना। पपड़ी पड़ना। (किसी व्यक्ति का) पपड़ी छोड़ना=बहुत सूखकर बिलकुल दुबला और क्षीण हो जाना।
२. घाव का खुरंड।
क्रि० प्र०—जमना। —पड़ना।
३. सोहन-पपड़ी या अन्य कोई मिठाई जिसकी तह जमाई गई हो।
४. पापड़ की तरह का कोई छोटा पकवान। ५. वृक्ष की छाल पर सूखने के कारण बनी दरारें।

पपड़ीला—वि० [हिं० पपड़ी+ईला (प्रत्य०)] जिसमें पपड़ी की तरह की तह या परत हो। पपड़ीदार।

पपनी—स्त्री० [देश०] पलक के बाल। बरौनी।

पपरी—स्त्री० [सं० पर्पट] १. एक प्रकार का पौधा, जिसकी जड़ दवा के काम में आती है। २. दे० 'पपड़ी'।

पपहा—पुं० [देश०] १. धान की फसल को हानि पहुँचानेवाला एक प्रकार का कीड़ा। २. गेहूँ, जौ आदि में लगनेवाला एक प्रकार का घुन।

पपि—पुं० [सं०√पा (पीना)+कि, द्वित्व] चन्द्रमा।

पपिहा†—पुं०=पपीहा।

पपी—पुं० [सं०√पा+ईक्, द्वित्व] १. सूर्य। २. चन्द्रमा।

पपीता—पुं० [मला० पपाया] १. एक प्रसिद्ध पौधा जिसमें बड़े मीठे लंबोतरे फल लगते हैं। २. उक्त पौधे का फल जो मीठा तथा रेचक होता है।

पपीतिया—पुं० [हिं० पपीता] १. एक तरह का पौधा। २. उक्त पौधे का बीज जो प्लेग से रक्षा के लिए किसी अंग में बाँधा जाता है। (इग्नेटियसबीन)

पपीती—स्त्री० [हिं० पपीता] मादा पपीता (पौधा) जिसमें फल नहीं लगते।

पपीलि—स्त्री०=पिपीलिका (च्यूँटी)।

पपीहरा†—पुं०=पपीहा।

पपीहा—पुं० [देश०] १. एक प्रसिद्ध पक्षी जिसकी आँखें, चोंच तथा टाँगें पीली होती हैं और डैने सिलेटी रंग के होते हैं तथा जो बसंत और वर्षा में बहुत ही मधुर स्वर में 'पी-कहाँ' 'पी-कहाँ' की तरह का शब्द बोलता है। २. सितार के छः तारों में से एक जो लोहे का होता है। ३. आल्हा के पिता के घोड़े का नाम। ४. दे० 'पपैया'।

पपु—वि० [सं०√पा+कु, द्वित्व] १. पालन करनेवाला। २. रक्षक। स्त्री० दाई। धाय।

पपैया—पुं० [अनु०] आम की गुठली को घिसकर बनाई जानेवाली सीटी।

पपोटन—स्त्री० [देश०] एक पौधा जिसके पत्ते फोड़े पर उसे पकाने के उद्देश्य से बाँधे जाते हैं।

पपोटा—पुं० [सं० प्र+पट] पलक। दृगंचल।

पपोरना—स० [देश०] अपनी बाहों को हिलाना-डुलाना और उनकी पुष्टता देखना।

पपोलना—अ० [हिं० पोपला] पोपले का चुभलाना।

पप्पील*—स्त्री० [सं० पिपीलिका] च्यूँटी।

पबई—स्त्री० [देश०] मैना की जाति की मधुर स्वर में बोलनेवाली एक चिड़िया।

पबना*—स०=पाना।

पबलिक—स्त्री० [अं० पब्लिक] जन-साधारण। जनता। वि० जन-साधारण-संबंधी।

पबारना†—स०=पँवारना (फेंकना)।

पबि*—पुं०=पवि (वज्र)।

पब्बय*—पुं० [सं० पर्वत] १. पहाड़। पर्वत। २. पत्थर। †पुं० [?] एक प्रकार की चिड़िया।

पब्बि—पुं०=पवि (वज्र)।

पब्लिक—स्त्री०, वि० [अं०]=पबलिक।

पमरा—स्त्री० [देश०] शल्लुकी नामक सुगंधित पदार्थ।

पमाना*—अ० [?] डींग मारना। उदा०—कायर बहुत पमावही बड़क न बोलै सूर।—कबीर।

पमार—पुं० [सं० पामारि] चकवँड़। चक्रमर्दक।

पमूँकना—स० [सं० प्र+मुक्त] छोड़ना। त्यागना।

पम्मन—पुं० [देश०] बड़े दानोंवाला एक प्रकार का गेहूँ। कठिया गेहूँ।

पयःकंदा—स्त्री० [सं० ब० स०,+टाप्] क्षीरविदारी। भूकुम्हड़ा।

पयः पयोष्णी—स्त्री० [सं० मध्य० स०] एक प्राचीन नदी।

पयःपुर—पुं० [सं० ष० त०] छोटा तालाब। पुष्करिणी।

पयःपेटी—स्त्री० [सं० ष० त०] नारियल।

पयःफेनी—स्त्री० [सं० ब० स०,+ङीष्] दुग्धफेनी।

पय (स्)—पुं० [सं०√पय् (पीना)+असुन्] १. दूध। दुग्ध। २. जल। पानी। ३. अनाज। अन्न। †पुं०=पद।

पयज—वि० [सं०] पय या दूध से उत्पन्न अथवा बना हुआ। †स्त्री०=पैंज।

पयठ†—स्त्री०=पैठ।

पयद—पुं० [सं० पयोद] १. बादल। मेघ। २. छाती। स्तन।

पयधि—पुं०=पयोधि।

पयना†—वि०, पुं०=पैना।

पयनिधि*—पुं०=पयोनिधि।

पयपूर—पुं० [सं० पय] समुद्र। उदा०—तप्यौ तपनीय पयपूर ज्यौं बहत है।—सेनापति।

पयम्मर†—पुं०=पैगंबर।

पयल्ल†—वि०=पहला। (राज०)

पयश्चय—पुं० [सं० पयस्-चय, ब० स०] जलाशय।

पयस्य—वि० [सं० पयस्+यत्] १. जल-संबंधी। २. दूध-संबंधी। पुं० दूध से बनी हुई चीजें। जैसे—घी, दही, मक्खन आदि।

पयस्या—स्त्री० [सं० पयस्य+टाप्] १. दुग्धिका या दुधिया नाम की घास। २. अर्क-पुष्पी। क्षीर-काकोली।

पयस्वती—स्त्री० [सं० पयस्+मतुप्, वत्व, ङीप्] नदी।

पयस्वल—वि० [सं० पयस्+वलच्] १. जलयुक्त। पनीला। २. जिसमें दूध हो। दूध से युक्त। पुं० [स्त्री० पयस्वली] बकरा।

पयस्वान् (स्वत्)—वि० [सं० पयस्+मतुप्, वत्व] [स्त्री० पयस्वती] १. जल से युक्त। २. दूध से युक्त।

पयस्विनी—स्त्री० [सं० पयस्+विनि+ङीप्] १. ऐसी गौ जो प्रस्तुत समय में दूध दिया करती हो। दुधारी गाय। २. गाय। गौ। ३. बकरी। ४. नदी। ५. चित्रकूट की एक विशिष्ट नदी। ६. क्षीर-काकोली। ७. दूध-बिदारी। ८. दूध-फेनी।

पयस्वी (स्विन्)—वि० [सं० पयस्+विनि] [स्त्री० पयस्विनी] १. जिसमें जल हो। २. दूध से युक्त।

पयहारी—पुं०[सं० पयोहारी] केवल जल या दूध पीकर रहनेवाला साधु।

पया—पुं०[देश०] दस सेर अनाज की तौल का एक बरतन। उदा०—अपने यहाँ पया से तौल नहीं की जाती।—वृन्दावन लाल वर्मा।

पयाण†—पुं०=प्रयाण।

पयादा†—वि०, पुं०=प्यादा।

पयान—पुं०[सं० प्रयाण] कहीं जाने या पहुँचने के लिए यात्रा आरम्भ करना। प्रस्थान। रवानगी।

पयाम—पुं०[फा०] सन्देश। संदेसा।

पयामबर—पुं०[फा०] सन्देश ले जानेवाला व्यक्ति। सन्देशवाहक।

पयार—पुं०=पयाल।

पयाल—पुं०[सं० पलाल] १. धान, कोदों आदि के सूखे हुए ऐसे डंठल जिनमें से दाने झाड़ लिये गये हों। पुराल। पुआल। पियरा। मुहा०—पयाल गाहना या झाड़ना=(क) ऐसा श्रम करना जिसका कुछ फल न हो। व्यर्थ मेहनत करना। उदा०—फिरि फिरि कहा पयारहि गाहे।—सूर। (ख) ऐसे व्यक्ति की सेवा करना जिससे कुछ लाभ न हो सकता हो।

२. एक तरह का वृक्ष जिसके फल खट-मीठे होते हैं। ३. उक्त वृक्ष का फल।

पुं०[सं० प्रियाल] चिरौंजी का पेड़।

†वि०=प्यारा।

पयूख†—पुं०=पीयूष (अमृत)।

पयोगड़—पुं०=पयोगल।

पयोगल—पुं०[सं० पयस्√गल् (गलना)+क] १. ओला। २. टापू। द्वीप।

पयोग्रह—पुं०[सं० पयस्√ग्रह् (ग्रहण करना)+अच्] एक प्रकार का यज्ञ-पात्र।

पयोघन—पुं [सं० पयस्-घन, तृ० त०] ओला।

पयोज—पुं०[सं० पयस्√जन् (उत्पन्न होना)+ड] कमल।

पयोजन्मा (न्मन्)—पुं०[सं० पयस्-जन्मन्, ब० स०] १. मेघ। बादल। २. नागरमोथा।

पयोद—पुं०[सं० पयस्√दा (देना)+क] १. बादल। मेघ। २. मुस्तक। मोथा।

पयोदन—पुं०[सं० पयस्-ओदन] १. दूध में मिलाया हुआ भात। २. खीर।

पयोदा—स्त्री०[सं० पयोद+टाप्] कुमार की अनुचरी एक मातृका।

पयोदानिल—पुं०[सं०] बरसाती हवा।

पयोदेव—पुं०[सं० पयस्-देव, ष० त०] वरुण।

पयोधर—पुं० [सं० पयस्-धर, ष० त०] १. जल धारण करनेवाला—(क) बादल, (ख) तालाब, (ग) समुद्र। २. दूध धारण करनेवाला अर्थात् स्तन। ३. गौ का थन। ४. नारियल। ५. नागरमोथा। ६. कसेरू। ७. आक। मदार। ८. एक प्रकार की ईख। ९. पर्वत। पहाड़। १०. ऐसा पौधा या वृक्ष जिसके तने, पत्रों आदि से दूध की तरह का सफेद तरल पदार्थ निकलता हो। ११. दोहा छंद का ११वाँ भेद। १२. छप्पय छन्द का २७ वाँ भेद।

पयोधा (धस्)—पुं० [सं० पयस्√धा (धारण करना)+असुन्] १. जलाधार। २. समुद्र।

पयोधार†—पुं०=पयोधर।

पयोधारागृह—पुं०[सं० पयस्-धारा-गृह, ष० त०] वह स्नानागार जिसमें जल धारा के रूप में गिरता हो।

पयोधि—पुं०[सं० पयस्√धा+कि] समुद्र।

पयोधिक—पुं०[सं० पयोधि√कै (चमकना)+क] समुद्रफेन।

पयोनिधि—पुं०[सं० पयस् निधि, ष० त०] समुद्र।

पयोमुख—वि०[सं० पयस्-मुख, ब० स०] दुधमुँहा (बच्चा)।

पयोमुच्—पुं०[सं० पयस्√मुच् (छोड़ना)+क्विप्] १. बादल। मेघ। २. नागरमोथा।

पयोर—पुं०[सं० पयस्√रा (दान)+क] खैर का पेड़।

पयोराशि—पुं०[सं० पयस्-राशि, ष० त०] समुद्र।

पयोलता—स्त्री०[सं० पयस्-लता, मध्य० स०] दूधविदारी कंद।

पयोवाह—पुं०[सं० पयस्√वह् (ढोना)+अण्] १.मेघ। बादल। २. मोथा।

पयोव्रत—पुं०[सं० पयस्-व्रत, मध्य० स०] १. मत्स्य पुराण के अनुसार एक प्रकार का व्रत जिसमें एक दिन रात या तीन रात केवल जल पीकर रहना पड़ता है। २. भागवत के अनुसार कृष्ण का एक व्रत जिसमें बारह दिन दूध पीकर रहने और कृष्ण का स्मरण और पूजन करने का विधान है।

पयोष्णी—स्त्री० [सं० पयस्-उष्ण, ब० स०,+ङीष] विंध्य प्रदेश की एक प्राचीन नदी।

पयोष्णी-जाता—स्त्री०[ब० स०] सरस्वती नदी।

पयोहर*—पुं०=पयोधर।

परंच—अव्य०[सं० द्व० स०] १. और भी। २. तो भी। ३. परंतु। लेकिन।

परंज—पुं०[सं० पर √जि (जीतना)+ड, मुम्] १. तेल पेरने का कोल्हू। २. छुरी आदि का फल। ३. फेन।

परंजन—पुं०[सं० पर√जन्+अच्, मुम्] (पश्चिमी दिशा के स्वामी) वरुण।

परंजय—वि०[सं० पर√जि (जीतना)+अच्, मुम्] शत्रु को जीतनेवाला। पुं० वरुण देवता।

परंजा—स्त्री०[सं० परंज+टाप्] उत्सव आदि में होनेवाली अस्त्रों, उपकरणों आदि की ध्वनि।

परंतप—वि०[सं० पर√तप् (तपना)+णिच्+खच्, मुम्] १. तपस्या द्वारा इंद्रियों को वश में करनेवाला। २.अपने ताप या तेज से शत्रुओं को कष्ट देनेवाला।

पं० १. चिंतामणि। २. तामस मनु के एक पुत्र का नाम।

परंतु—अव्य०[सं० द्व० स०] १. इतना होने पर भी। जैसे—जी तो नहीं चाहता है परंतु जाना पड़ा। २. इसके विरुद्ध। जैसे—वह गरीब है परंतु अभिमानी है।

परंदा—पुं०[फा० परंद=चिड़िया] १. एक प्रकार की हवादार नाव जो काश्मीर की झीलों में चलती है। २. चिड़िया। पक्षी।

परंपद—पुं०[सं० परमपद] १. बैकुंठ। २. मोक्ष। ३. उच्च पद।*

परंपर—पुं० [सं० परम्परा+अच्] १. एक के पीछे दूसरा चलनेवाला क्रम। चला आता हुआ सिलसिला। अनुक्रम। २. पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र आदि के रूप में चलनेवाला क्रम या परंपरा। ३. वंशज। ४. कस्तूरी।

परंपरया—अव्य० [सं० परम्परा शब्द के तृ० का रूप] परंपरा के अनुसार। परंपरा से।

परंपरा—स्त्री० [सं० परम्√पृ (पूर्ण करना)+अच्+टाप्] १. वह व्यवहार जिसमें पुत्र पिता की, वंशज पूर्वजों की और नई पीढ़ीवाले पुरानी पीढ़ीवालों की देखा-देखी उनके रीति-रिवाजों का अनुकरण करते हैं। २. वह रीति-रिवाज जो बड़ों, पूर्वजों या पुरानी पीढ़ीवालों की देखा-देखी किया जाय। ३. नियम या विधान से भिन्न अथवा अनुल्लिखित वह कार्य जो बहुत दिनों से एक ही रूप में होता चला आ रहा हो और इसी लिए जो सर्व-मान्य हो। (ट्रेडिशन) ४. संतति। ५. हिंसा।

परंपराक—पुं० [सं० परम्परा√अक् (कुटिल गति)+घञ्] यज्ञ के लिए पशुओं का वध, जो पहले परंपरा से होता आ रहा था।

परंपरागत—वि० [सं० परम्परा-आगत, तृ० त०] (कार्य रीति या रिवाज) जो बड़ों, पूर्वजों या पुरानी पीढ़ीवालों की देखादेखी किया जाय। परंपरा से प्राप्त होनेवाला। (ट्रेडिशनल)

परंपरावाद—पुं० [सं०] वह मत या सिद्धान्त कि जो चीजें या बातें परंपरा से चली आ रही हैं, वही ठीक या सत्य हैं; और नई बातें ठीक या सत्य नहीं हैं। (ट्रेडिशनलिज्म)

परंपरावादी—वि० [सं०] परंपरावाद-संबंधी। परंपरावाद का।
पुं० वह जो परंपरावाद का अनुयायी और समर्थक हो।

परंपरित—भू० कृ० [सं० परम्परा+इतच्] जो परंपरा के रूप में हो अथवा जो किसी प्रकार की परंपरा से युक्त हो। जैसे—परंपरित रूपक।

परंपरित-रूपक—पुं० [कर्म० स०] साहित्य में रूपक अलंकार का एक भेद जिसमें एक आरोप किसी दूसरे आरोप का कारण बनकर आरोपों की परंपरा बनाता है। यह परंपरा शब्दों के साधारण अर्थ के द्वारा भी स्थापित हो सकती है; और श्लिष्ट शब्दों के द्वारा भी। साधारण अर्थ के आधार पर स्थित परंपरित रूपक का उदाहरण है—बाड़व ज्वाला सोती इस प्रणय-सिंधु के तल में। प्यासी मछली सी आँखें थीं विकल रूप के जल में।—प्रसाद।

परंपरीण—वि० [सं० परम्परा+ख–ईन] १. वंशक्रम से प्राप्त। २. परंपरा-गत।

परःपुंसा—स्त्री० [सं० सह सुपा स०, सुट् का आगम] अपने पति से असंतुष्ट होने पर, पर-पुरुष से प्रेम करनेवाली स्त्री।

परःपुरुष—वि० [सं० सहसुपा स०, सुट् का आगम] जो साधारण मनुष्यों से बढ़कर या श्रेष्ठ हो।

परःशत—वि० [सं० सहसुपा स०, सुट् का आगम] सौ से अधिक। शताधिक।

परःश्व (स्)—अव्य० [सं० पं० त०] परसों।

परई—स्त्री० [सं० पार=कटोरा, प्याला] सिकोरे की तरह का मिट्टी का कुछ बड़ा पात्र।

परक—प्रत्य० [सं० समास में] एक प्रत्यय जो शब्दों के अंत में लगाकर निम्नलिखित अर्थ देता है; (क) पीछे या अंत में लगा हुआ। जैसे—विष्णु-परक नामावली=अर्थात् ऐसी नामावली जिसके अंत में विष्णु या उसका वाचक और कोई शब्द हो। (ख) संबंध रखनेवाला। जैसे—अध्यात्म-परक, प्रशंसा-परक।

पर—वि० [सं०] १. अपने से भिन्न। अन्य। दूसरा। जैसे—पर-देश। २. दूसरे का। पराया। जैसे—पर-पुरुष, पर-स्त्री। ३. किसी के पीछे या बाद में आने या होनेवाला। जैसे—परवर्ती। ४. इस ओर या सिरे के विपरीत। उस ओर का। जैसे—पर-लोक, पर-पार। ५. वर्तमान से ठीक पहले या ठीक बाद का। जैसे—पर-सर्ग, पर-साल। ६. विरुद्ध पड़नेवाला। ७. आगे बढ़ा हुआ। बाकी बचा हुआ। ९. अवशिष्ट।
अव्य० [सं० परम] १. उपरान्त। बाद। जैसे—इतः पर। २. परन्तु। लेकिन। जैसे—मैं जाता तो सही पर तुमने मुझे रोक दिया। ३. निरंतर। लगातार। जैसे—तीर पर तीर चलाओ, तुम्हें डर किसका है।
प्रत्य० [सं०] एक प्रत्यय जो कुछ शब्दों के अन्त में लगाकर उद्यत, रत, नली लगा हुआ आदि अर्थ सूचित करता है। जैसे—तत्पर, स्वार्थपर, आहारपर।
उप० [हिं०] एक उपसर्ग जो ऊपर या नीचे की कुछ पीढ़ियों का सम्बन्ध बतलानेवाले शब्दों के पहले लगता है। जैसे—पर-दादा, पर-नाना, पर-पोता।
विभ० १. सप्तमी या अधिकरण का चिह्न। जैसे—इस पर।
विशेष—'ऊपर' और 'पर' का अंतर जानने के लिए देखें 'ऊपर' का विशेष।
२. के बदले में। जैसे—१०० रु० महीने पर नया नौकर रख लो।
पुं० [फा०] १. कीड़े-मकोड़ों, पक्षियों आदि के दोनों ओर के वे अंग जिनकी सहायता से हवा में उड़ते हैं। डैना। पंख। जैसे—कबूतर के पर, मक्खी के पर।
मुहा०—**पर जमना**=किसी में कोई नई अनिष्टकारक वृत्ति उत्पन्न होना। जैसे—तुम्हें भी पर जमने लगे हैं, तुम आवारा लड़कों के साथ घूमने लगे हो। **पर न मार सकना**=किसी जगह या किसी के पास न आ सकना। जैसे—वहाँ फरिश्ते भी पर नहीं मार सकते थे। **बेपर की उड़ाना**=बिलकुल बेसिर-पैर की और मन-गढ़ंत बात कहना।
२. वे विशिष्ट उपांग जो ऐसे लम्बे सींके के रूप में होते हैं जिसके दोनों ओर आपस में जुड़े हुए बहुत से बाल होते हैं। जैसे—मोर या सुरखाब का पर।

पर-कटा—वि० [फा० पर+हिं० कटना] [स्त्री० पर-कटी] १. (पक्षी) जिसके पर काट दिये गये हों। जैसे—पर-कटा सुग्गा। २. लाक्षणिक अर्थ में, (ऐसा व्यक्ति) जिससे अधिकार छीन लिये गये हों या जिसकी शक्ति नष्ट कर दी गई हो।

परकना—अ० [?] न रह जाना या दूर हो जाना। उदा०—ढोंग जात्यो ढरकि परकि उर सोग जात्यो जोग जात्यो सरकि सकंप कखियान तें।—रत्नाकर।
अ०=परचना।

परकलत्र—पुं० [सं० ष० त०] दूसरे व्यक्ति की विवाहिता स्त्री। पर-स्त्री।

परकसना—अ० [हिं० परकासना] १. प्रकाशित होना। जगमगाना। २. प्रकट या जाहिर होना।

पर-काजी—वि० [हिं० पर+काज] १. जो दूसरों का काम करता रहता हो। २. परोपकारी।

परकान—पुं० [हिं० पर+कान] तोप का वह भाग जहाँ बत्ती दी जाती है (लश०)

परकाना—स० [हिं० परकाना] किसी को परकने में प्रवृत्त करना। परचाना।

परकाय-प्रवेश—पुं० [सं० परकाय, ष०त०, परकाय प्रवेश, स०त०] अपनी आत्मा को दूसरे के शरीर में प्रविष्ट करने की क्रिया जो योग की एक सिद्धि मानी जाती है।

परकार—पुं० [फा०] वृत्त या गोलाई बनाने का एक प्रसिद्ध औजार जो पिछले सिरों पर परस्पर जुड़ी हुई दो शलाकाओं के रूप में होता है। इसकी एक शलाका केन्द्र में रखकर दूसरी शलाका चारों ओर घुमाने से पूर्ण वृत्त बन जाता है।

†पुं०=प्रकार।

परकारना†—स० [फा० परकार+हिं० ना (प्रत्य०)] परकार से वृत्त बनाना।

†स०=परकाना।

परकाल—पुं०=परकार।

परकाला—पुं० [सं० प्राकार या प्रकोष्ठ] १. सीढ़ी। जीना। २. चौखट। ३ दहलीज।

पुं० [फा० परगाल] १. शीशे का टुकड़ा। २. चिनगारी।

पद—आफत का परकाला=वह जो बड़े-बड़े विकट काम कर सकता हो।

परकास†—पुं०=प्रकाश।

परकासना—स० [सं० प्रकाशन] १. प्रकाशित करना। २. प्रकाशमान करना। चमकाना। ३. प्रकट करना। सामने लाना।

अ० १. प्रकाशित होना। २. चमकना। ३. प्रकट होना। सामने आना।

परकिति—स्त्री०=प्रकृति।

परकीकरण—पुं० [सं० परकीयकरण] किसी चीज को परकीय बनाने की क्रिया। (असिद्ध रूप)

परकीय—वि० [सं० पर+छ-ईय, कुक्-आगम] [स्त्री० परकीया] १. जिसका संबंध दूसरे से हो। २. दूसरे का। पराया।

परकीया—स्त्री० [सं० परकीय+टाप्] साहित्य में, वह नायिका जो पर-पुरुष से प्रेम करती और अपने पति की अवहेलना करती हो।

परकीरति†—स्त्री०=प्रकृति।

पर-कृति—स्त्री० [सं० ष०त०] १. दूसरे की कृति। दूसरे का किया हुआ काम। २. दूसरे के काम या वृत्ति का वर्णन। ३. कर्मकांड में दो परस्पर विरुद्ध वाक्यों की स्थिति।

†स्त्री०=प्रकृति।

परकोटा—पुं० [सं० परकोटि] १. किसी गढ़ या स्थान की रक्षा के लिए चारों ओर उठाई हुई ऊँची और बड़ी दीवार। कोट। २. किसी प्रकार की बहुत ऊँची और बड़ी चहारदीवारी। ३. पानी की बाढ़ रोकने के लिए बनाया हुआ बाँध।

परकोसला†—पुं०=ढकोसला (अन-मिल कविता)।

पर-क्षेत्र—पुं० [सं० ष०त०] १. पराया खेत। २. पराया शरीर। ३. पराई स्त्री।

परख—स्त्री० [हिं० परखना] १. परखने की क्रिया या भाव। २. गुण-दोष, भलाई-बुराई, आदि परखने की क्रिया या भाव। ३. वह दृष्टि या मानसिक शक्ति जिससे आदमी गुण-दोष, भलाई-बुराई आदि पहचानने और समझने में समर्थ होता है। ठीक-ठीक पता लगाने या वस्तु-स्थिति जानने की योग्यता या सामर्थ्य।

परखचा—पुं० [?] टुकड़ा। खंड।

मुहा०—परखचे उड़ाना=टुकड़ा-टुकड़ा कर देना। छिन्न-भिन्न करना।

परखना—स० [सं० परीक्षण, प्रा० परीक्खण] १. ठोक-बजाकर तथा अन्य परीक्षणों द्वारा किसी चीज का गुण, दोष, महत्त्व, मान आदि जानना। २. अच्छे बुरे की पहचान करना। ३. कार्य-व्यवहार आदि देखकर समझना कि यह क्या अथवा कैसा है।

संयो० क्रि०—लेना।

अ० [हिं० परेखना] प्रतीक्षा करना। उदा०—जेवत परखि लियौ नहिं हम कौ तुम अति करी चँडाई।—सूर।

परखनी†—स्त्री०=परखी।

परखवाना—स०=परखाना।

परखवैया—पुं० [हिं० परख+वैया (प्रत्य०)] १. परखनेवाला व्यक्ति। २. दे० 'परखैया'।

परखाई—स्त्री० [हिं० परख] १. परखने की क्रिया या भाव। परखाव। २. परखने की मजदूरी या पारिश्रमिक।

परखाना—स० [हिं० 'परखना' का प्रे०] १. परखने का काम दूसरे से कराना। जाँच या परीक्षा करवाना। २. कोई चीज देने के समय अच्छी तरह ध्यान दिलाते हुए उसकी पहचान कराना। सहेजना।

परखी—स्त्री० [हिं० परखना] लोहे का एक तरह का नुकीला लंबोतरा उपकरण जिसकी सहायता से अन्न के बंद बोरों में से नमूने के तौर पर उसके कण या बीज निकाले जाते हैं।

पुं० दे० 'पारखी'।

परखुरी†—स्त्री०=पखड़ी।

परखैया—पुं० [सं०] परखने या जाँचनेवाला व्यक्ति।

परग—पुं० [सं० पदक] पग। डग। कदम।

परगट—वि०=प्रकट।

परगटना—अ० [हिं० प्रकट] प्रकट या जाहिर होना।

स० प्रकट या जाहिर करना।

पर-गत—वि० [सं० द्वि० त०] १. दूसरे या पराये में गया या मिला हुआ अथवा उससे संबंध रखनेवाला। २. दे० 'वस्तुनिष्ठ'।

†स्त्री० [सं० प्रकृति] मनुष्य की प्रकृति और स्वभाव।

मुहा०—पर-गत मिलना=प्रकृति या स्वभाव अनकूल होने के कारण मेल-जोल होना। जैसे—उससे उनकी खूब पर-गत मिली।

परगन†—पुं०=परगना।

परगना—पुं० [फा० मि० सं० परिगण=घर] किसी जिले का वह भू-भाग जिसके अंतर्गत बहुत से ग्राम हों।

परगनी—स्त्री०=परगहनी।

परगसना†—अ० [सं० प्रकाशन] प्रकाशित होना। प्रकट होना।

परगह—पुं०=पगहा (पघा)।

परगहनी—स्त्री० [सं० प्रग्रहण] सुनारों का नली के आकार का एक औजार जिसमें करछी की-सी डाँड़ी लगी होती है। परगनी।

परगहा†—पुं० [सं० प्रग्रहण] वास्तु-कला में एक प्रकार का अलंकरण या साज जो खंभों पर बनाया जाता है।

परगाछा—पुं० [हिं० पर+गाछा=पेड़] १. एक प्रकार की परजीवी वनस्पति जो प्रायः गरम देशों में दूसरे पेड़ों पर उग आती है और उन्हीं पेड़ों के रस से अपना पोषण करती है। बंदाक। बाँदा। २. परजीवी पौधों का वर्ग।

परगाछी—स्त्री० [हिं० परगाछा] अमरबेल। आकाशबौंर।

परगाढ़†—वि०=प्रगाढ़।

परगास†—पुं०=प्रकाश।

परगासना†—अ० [हिं० परगसना] प्रकाशित होना।

स० प्रकाशित करना।

पर-गुण—वि० [सं० ब०स०] जो दूसरों के लिए हितकर हो।

पर-ग्रंथि—स्त्री० [सं० ब०स०] (उँगली की) पोर।

परघट†—वि०=प्रकट।

परघनी†—स्त्री०=परगहनी।

परचंड†—वि०=प्रचंड।

परचई†—स्त्री० [सं० परिचय] १. परिचय। २. ऐसी पुस्तक जो किसी विषय का सामान्य ज्ञान कराती हो। ३. परिचय-पत्र।

पर-चक—स्त्री० [?] हलकी मारपीट या धौल-धप्पड़। जैसे—आज उन्होंने नौकर की अच्छी परचक ली।

क्रि० प्र०—लेना।

पर-चक्र—पुं० [सं० ष०त०] १. शत्रुओं का दल या वर्ग। २. शत्रु-दल का क्षेत्र। ३. शत्रु की सेना और उसके द्वारा होनेवाला आक्रमण या उपद्रव।

परचत†—स्त्री०] =परिचय।

परचना—अ० [सं० परिचयन] १. किसी से इतना अधिक परिचित होना या हिल-मिल जाना कि उससे व्यवहार करने में कोई संकोच या खटका न रहे। जैसे—यह कुत्ता अभी घर के लोगों से परचा नहीं है।

मुहा०—मन परचना=मन का इस प्रकार किसी ओर प्रवृत्त होना कि उसे दुःख, शोक आदि का ध्यान न आये।

२. जो बात एक या अनेक बार अपने अनुकूल हो चुकी हो; जिसमें कोई बाधा या रोक-टोक न हुई हो, उसकी ओर फिर किसी आशा से उन्मुख या प्रवृत्त होना। जैसे—दो-तीन बार इस भिखमंगे को यहाँ से रोटी मिल चुकी है; अतः यह यहाँ आने के लिए परच गया है।

संयो० क्रि०—जाना।

†अ० १.=सुलगना (आग का)। २. =जलाना (दीपक आदि का)।

परचर—पुं० [देश०] बैलों की एक जाति जो अवध के खीरी जिले के आस-पास पाई जाती है।

परचा—पुं० [फ़ा० पर्चः] १. कागज का टुकड़ा। चिट। २. कागज के टुकड़े पर लिखी हुई छोटी चिट्ठी या सूचना।

मुहा०—(किसी बड़े की सेवा में) परचा गुजरना=निवेदन-पत्र या सूचना-पत्र उपस्थित किया जाना।

३. विद्यार्थियों की परीक्षा में आनेवाला प्रश्न-पत्र। जैसे—हिंदी का परचा बिगड़ गया है। ४. अखबार। समाचार-पत्र। ५. कोई ऐसा सूचना-पत्र जो छाप या लिखकर लोगों में बाँटा जाता हो। (हैंड-बिल)

†पुं० [सं० परिचय] १. जानकारी। परिचय।

मुहा०—परचा देना=ऐसा लक्षण या चिह्न बताना जिससे लोग जान जायँ। नाम-ग्राम बताना। परचा माँगना=किसी देवी-देवता से अपना प्रभाव या शक्ति दिखाने के लिए आग्रहपूर्ण प्रार्थना करना।

२. प्रमाण। सबूत। ३. जाँच। परख। ४. रहस्य संप्रदाय में, किसी बात का निश्चित प्रत्यय या पहचान। प्रत्यभिमान। उदा०—साईं के परचे बिना अंतर रह गई रेख।—कबीर।

पुं० [फ़ा० पर्चः] जगन्नाथजी के मंदिर का वह प्रधान पुजारी जो मंदिर की आमदनी और खर्च का प्रबंध करता और पूजा-सेवा आदि की देख-रेख करता है।

परचाना—स० [हिं० परचना का स०] १. किसी को परचने में प्रवृत्त करना। ऐसा काम करना जिससे कोई परच जाय। २. किसी से हेल-मेल बढ़ाकर या लोभ दिखाकर उससे घनिष्ठता स्थापित करना। उसके मन का खटका या भय दूर करना। जैसे—किसी को दो-चार बार कुछ खिला या देकर परचाना।

संयो० क्रि०—लेना।

स० १.=चलाना। २.=सुलगाना।

परचार†—पुं०=प्रचार।

परचारना—पुं०=प्रचारना।

परची—स्त्री० [हिं० परचा] १. कागज का छोटा टुकड़ा। छोटा परचा। २. कागज का ऐसा छोटा टुकड़ा जिसमें कोई सूचना या ज्ञातव्य बात लिखी गई हो।

परचून—पुं० [सं० पर=अन्य,+चूर्ण=आटा] आटा, चावल, दाल, नमक, मसाला आदि भोजन का फुटकर सामान। जैसे—परचून की दूकान।

वि०, पुं० दे० 'खुदरा'।

परचूनिया—वि० [हिं० परचून] परचून-संबंधी।

पुं०=परचूनी।

परचूनी—पुं० [हिं० परचून] आटा, दाल, नमक आदि बेचनेवाला बनिया। मोदी।

स्त्री० परचून बेचने का काम या रोजगार।

परचै†—पुं०=परिचय।

परच्छंद—वि० [ब० स०] जो दूसरे के छंद अर्थात् शासन में हो। परतंत्र।

परछत्ती—स्त्री० [सं० परि=अधिक, ऊपर+हिं० छत=पटाव] १. कमरे में सामान आदि रखने के लिए, छत के नीचे छाई हुई छोटी पाटन या टाँड़। मियानी। २. वह हलका छप्पर जो दीवारों पर यों ही अटका, बाँध या रख दिया जाता है। फूस आदि की छाजन।

परछन—स्त्री० [सं० परि+अर्चन] द्वार पर वर के पहुँचने पर होनेवाली

एक रीति जिसमें स्त्रियाँ दही और अक्षत का टीका लगातीं, उसकी आरती करतीं तथा उसके ऊपर से मूसल, बट्टा आदि घुमाती हैं।

परछना—स० [हिं० परछन] द्वार पर बरात लगने पर कन्या-पक्ष की स्त्रियों का वर की आरती आदि करना। परछन करना।

परछाँवाँ—पुं० [सं० प्रतिच्छाय] १. छाया। परछाईं। २. किसी व्यक्ति की पड़नेवाली ऐसी छाया या परछाईं जो कुछ स्त्रियों की दृष्टि में अनिष्टकर या अशुभ होती है।

मुहा०—(किसी का) परछाँवाँ पड़ना=उक्त प्रकार की छाया के कारण कोई बुरा प्रभाव पड़ना।

३. किसी व्यक्ति की ऐसी छाया या परछाईं जो स्त्रियों के विश्वास के अनुसार गर्भवती स्त्री पर पड़ने से गर्भ के शिशु को उस पुरुष के अनुरूप आकार-प्रकार, स्वभाव आदि बनानेवाली मानी जाती है।

परछाँहीं—स्त्री०=परछाईं।

परछा—पुं० [सं० प्रणिच्छद] १. वह कपड़ा जिससे तेली कोल्हू के बैल की आँखों में अँधोटी बाँधते हैं। २. जुलाहों की वह नली या फिरकी जिस पर बाने का सूत लपेटा रहता है। घिरनी।

पुं० [सं० परिच्छेद] १. बहुत सी घनी वस्तुओं के घने समूह में से कुछ के निकल जाने से पड़ा हुआ अवकाश। विरलता। २. मनुष्यों की वह विरलता जो किसी स्थान की भीड़ छँट जाने पर होती है। ३. अंत। समाप्ति। ४. निपटारा। ५. निर्माण।

पुं० [?] [स्त्री० अल्पा० परछी] १. बड़ी बटलोई। देगची। २. कड़ाही। ३. मँझोले आकार का मिट्टी का एक बरतन।

परछाईं—स्त्री० [सं० प्रतिच्छाया] १. प्रकाश के सामने आने से पीछे की ओर अथवा पीछे की ओर प्रकाश होने पर आगे की ओर बननेवाली किसी वस्तु की छायामय आकृति।

मुहा०—(किसी की) परछाईं से डरना या भागना=किसी से इतना अधिक डरना कि उसके सामने जाने की हिम्मत न पड़े।

२. दे० 'परछावाँ'।

क्रि० प्र०—पड़ना।

३. दे० 'प्रतिबिंब'।

परछ्या†—स्त्री०=परीक्षा।

परजंक*—पुं०=पर्यंक।

परज—वि० [सं० पर√जन् (उत्पत्ति)+ड] दूसरे या पराये से उत्पन्न। परजात।

पुं० कोकिल। कोयल।

पुं० [सं० पराजिका] ओड़व-संपूर्ण या षाड़व-संपूर्ण जाति का एक राग जो रात के अंतिम पहर में गाया जाता है।

परजन—पुं०=परिजन।

परजन्म (न्)—पुं० [सं० कर्म०स०] [वि० पारजन्मिक] इस जीवन के बाद होनेवाला दूसरा जन्म।

परजन्य—पुं०=पर्जन्य।

परजरना†—अ० [सं० प्रज्वलन] १. प्रज्वलित होना। जलना। दहकना। सुलगना। २. बहुत क्रुद्ध होना। बिगड़ना। ३. मन ही मन कुढ़ना या जलना।

स० १. प्रज्वलित करना। दहकाना। सुलगाना। २. क्रुद्ध करना। ३. संतप्त करना। जलाना।

परजलना—अ० [सं० प्रज्वलन] जलना।

परजवट†—पुं०=परजौट।

परजा†—स्त्री० [सं० प्रजा] १. प्रजा। रैयत। २. देहातों में गृहस्थों के अनेक प्रकार के काम तथा सेवाएँ करनेवाले लोग। जैसे—कुम्हार, चमार, धोबी, नाई आदि। ३. ब्रिटिश शासन के समय, वे खेतिहर जो जमींदार की जमीन लगान पर लेकर खेती-बारी करते थे। असामी। काश्तकार।

परजात—वि० [पं० त०] दूसरे से उत्पन्न।

पुं० कोयल।

पुं० [सं० पर+जाति] दूसरी या भिन्न जाति का व्यक्ति। दूसरी बिरादरी का आदमी।

वि० दूसरी जाति से संबंध रखनेवाला।

परजाता—पुं० [सं० परिजात] १. मझोले आकार का एक पेड़ जिसमें शरद् ऋतु में छोटे-छोटे सुगंधित फूल लगते हैं। हर-सिंगार। २. उक्त पेड़ का फूल।

पर-जाति—स्त्री० [कर्म० स०] दूसरी जाति।

परजाय—पुं०=पर्याय।

परजित—वि० [तृ० त०] १. दूसरे के द्वारा पाला-पोसा हुआ। २. जिसे किसी ने जीत लिया हो। विजित।

पुं० कोयल।

परजीवी (विन्)—वि० [सं० पर√जीव् (जीना)+णिनि] जिसका जीवित रहना दूसरों पर अवलंबित हो। दूसरों पर आश्रित रहनेवाला।

पुं० वे वनस्पतियाँ या कीड़े-मकोड़े जो दूसरे वृक्षों या जीव-जंतुओं के शरीर पर रहकर और उनका रस या खून चूसकर जीते तथा पलते हैं। (पैराज़ाइट)

परजौट—पुं० [हिं० परजा (प्रजा) +औट (प्रत्य०)] घर आदि बनाने के निमित्त किसी से वार्षिक कर या देन पर जमीन लेने की प्रथा या रीति।

परजौटी—वि० [हिं० परजौट] १. परजौट-संबंधी। २. जो परजौट पर दिया या लिया गया हो। जैसे—परजौटी जमीन।

परज्वलना*—अ० [सं० प्रज्वलन] प्रज्वलित होना।

परट्ठना*—स०=पठाना (भेजना)।

परठना—स० [सं० प्र+स्था] १. स्थापित करना। उदा०—परठि द्रविड़ सोखण सर पंच।—प्रिथीराज। २. दे० 'पाना'।

परठित—भू० कृ० [सं० प्र+स्थित] १. प्रतिष्ठित। २. सुशोभित।

परणना—स० [सं० परिणयन] ब्याह करना। विवाह करना। उदा०—पर दल पिण जीवि पदमणी परणे।—प्रिथीराज।

अ० विवाहित होना। ब्याहा जाना।

परणाना†—स०=परणना।

परणी—स्त्री० [सं० परिणीता] वह स्त्री जिसका परिणय या विवाह हो चुका हो।

परतंगण—पुं० [सं०] एक प्राचीन देश। (महाभारत)

परतंगा†—स्त्री० [सं० प्रतिज्ञा] १. प्रसिद्धि। २. प्रतिष्ठा। मान। ३. पातिव्रत्य। सतीत्व।

परतंचा*—स्त्री०=प्रत्यंचा (धनुष की डोरी)।

परतंत्र—वि० [ब० स०] १. जो दूसरे के तंत्र या शासन में हो। २. पराधीन। परवश।

पुं० १. उत्तम शास्त्र। २. उत्तम वस्त्र।

परतः (तस्)—अव्य० [सं० पर+तस्] १. दूसरे से। अन्य से। २. पीछे। बाद में। ३. आगे। परे। ४. पहले या मुख्य के बाद। दूसरे स्थान पर। (सेकन्डरिली)

परतः प्रमाण—पुं० [ब० स०] जो स्वतः प्रमाण न हो, बल्कि दूसरे प्रमाणों के आधार पर ही प्रमाण के रूप में दिखाया या माना जा सके।

परत—स्त्री० [सं० परिवर्त्त=दोहराया जाना] १. किसी प्रकार के तल या स्तर का ऐसा विस्तार जो किसी दूसरी चीज के तल या स्तर पर कुछ मोटे रूप में चढ़ा, पड़ा या फैला हुआ हो। तह। जैसे—सफाई न होने के कारण पुस्तकों पर धूल की एक परत चढ़ चुकी थी।

क्रि० प्र०—चढ़ना। —पड़ना।

२. किसी लचीली वस्तु को दोहरा, चौहरा आदि करने पर, उसके बननेवाले खंडों या विभागों में से हर-एक।

क्रि० प्र०—लगाना।

३. ऐसा कोई तल या विस्तार जो उसी तरह के कोई और तलों या विस्तारों के ऊपर या नीचे फैला हुआ हो। जैसे—(क) हर युग में बालू, मिट्टी आदि की एक नई परत चढ़ते-चढ़ते कुछ दिनों में ऊँची चट्टानें बन जाती हैं। (ख) खानों में से कोयले की एक परत निकाल लेने पर उसके नीचे दूसरी परत निकल आती है।

स्त्री० [हिं० परतना] परतने की क्रिया या भाव।

परतख*—वि०=प्रत्यक्ष।

परतच्छ*—वि०=प्रत्यक्ष।

परतछ्छ—वि०=प्रत्यक्ष।

परतना—अ० [सं० परावर्तन] १. कहीं जाकर वहाँ से वापस आना। लौटना। २. पीछे की ओर घूमना। जैसे—परतकर देखना।

मुहा०—**परतकर कोई काम न करना**=भूल कर भी कोई काम न करना। उदा०—मोती मानिक परत न पहरूँ।—मीराँ।

३. किसी ओर घूमना। मुड़ना। जैसे—दाहिनी ओर परत जाना। ४. उलटना।

स० [हिं० परत] परत के रूप में करना, रखना या लगाना।

परतर—वि० [सं० पर-तरप्] [भाव० परतरता] क्रम के विचार से जो ठीक किसी के बाद हुआ हो।

परतरा—वि०=परतर।

परतल—पुं० [सं० पट=वस्त्र+तल=नीचे] घोड़े की पीठ पर रखा जानेवाला वह बोरा जिसमें सामान भरा या लादा जाता है। गून।

परतला—पुं० [सं० परितन=चारों ओर खींचा हुआ] कपड़े या चमड़े की वह चौड़ी पट्टी जो कंधे से कमर तक छाती और पीठ पर से तिरछी होती हुई आती है तथा जिसमें तलवार लटकाई जाती है।

परतषि*—वि०=प्रत्यक्ष।

परता†—पुं०=पड़ता।

परताजना—पुं० [देश०] सुनारों का एक औजार जिससे वे गहनों पर मछली के सेहरे की तरह की नक्काशी करते हैं।

परताना—स० [हिं० परतना] १. वापस भेजना। लौटाना। २. २. घुमाना। मोड़ना।

परताप†—पुं०=प्रताप।

परतारना†—स० [सं० प्रतारण] ठगना।

स्त्री०=प्रतारणा।

परताल†—स्त्री०=पड़ताल।

परतिंचा†—स्त्री०=प्रत्यंचा (धनुष की डोरी)।

परतिज्ञा†—स्त्री०=प्रतिज्ञा।

परती—स्त्री० [?] वह चादर जिससे हवा करके अनाज के दानों का भूसा उड़ाते हैं।

मुहा०—**परती लेना**=चादर से हवा करके भूसा उड़ाना। बरसाना। ओसाना।

† स्त्री०=पड़ती (भूमि)।

परतीछा*—स्त्री०=प्रतीक्षा।

परतीति—स्त्री०=प्रतीति।

परतेजना*—स० [सं० परित्यजन] परित्याग करना। छोड़ना।

परतेला—वि० [हिं० पड़ना] उबाले हुए रंग का घोल। (रंगरेज)

परतो—पुं० [फा०] १. प्रकाश। रोशनी। २. किरण। रश्मि। ३. किसी पदार्थ या व्यक्ति की पड़नेवाली छाया। परछाईं। ४. प्रतिच्छाया। प्रतिबिम्ब।

परतोली—स्त्री० [सं० प्रतोली] गली।

परत्त—अव्य० [सं० पर+त्रल्] १. अन्य या भिन्न स्थान पर दूसरी जगह। २. परकाल में। दूसरे समय। ३. परलोक में। मरने पर।

परत्र-भीरु—वि० [सं० स० त०] जिसे परलोक का भय हो।

परत्व—पुं० [सं० पर+त्व] १. पर अर्थात् अन्य या गैर होने का भाव। २. पहले या पूर्व में होने का भाव।

परथन—स्त्री० दे०='पलेथन'।

परथाव†—पुं०=प्रस्ताव। (पूरब) उदा०—की दहु हो इति एहि परथाव।—विद्यापति।

परद†—पुं०=परद (पारा)।

परदच्छिना†—स्त्री०=प्रदक्षिणा।

परदा—पुं० [फा० पर्दः] १. कोई ऐसा कपड़ा या इसी तरह की और चीज जो आड़ या बचाव करने के लिए बीच में फैलाकर टाँगी या लटकायी जाय। पट। (कर्टेन) जैसे—खिड़की या दरवाजे का परदा।

क्रि० प्र०—उठाना। —खोलना। —डालना। —हटाना।

पद—**ढका परदा**=ऐसी स्थिति जिसमें अन्दर की त्रुटियाँ, दोष आदि बाहरवालों की जानकारी या दृष्टि से बचे रहें। **ढके परदे**=बिना औरों पर भेद प्रकट हुए।

मुहा०—**(किसी का) परदा खोलना**=किसी की छिपी बात, भेद या रहस्य प्रकट करना। **परदा डालना**=ऐसी स्थिति उत्पन्न करना कि दोष या भेद औरों पर प्रकट न होने पावे। **(किसी चीज पर) परदा पड़ना**=ऐसी स्थिति उत्पन्न होना कि औरों की दृष्टि न पड़ सके। **(किसी का) परदा रहना**=(क) प्रतिष्ठा या मान-मर्यादा बनी रहना। (ख) भेद या रहस्य छिपा रहना।

२. अभिनय, खेल-तमाशों आदि में, वह लंबा-चौड़ा कपड़ा जो दर्शकों के सामने लटका रहता और जिस पर या तो कुछ दृश्य अंकित होते हैं या प्रतिबिंबित होते हैं। यवनिका। पट। (कर्टेन) जैसे—रंग-मंच का परदा, चल-चित्र या सिनेमा का परदा। ३. बीच में पड़कर आड़ खड़ा करनेवाली कोई चीज या बात। ओट। व्यवधान। ४. कोई ऐसी चीज या बात जो गति, दृष्टि आदि के मार्ग में बाधक हो। जैसे—उस समय हमारी बुद्धि पर न जाने कैसा परदा पड़ गया था कि मैंने तुम्हारी बात नहीं मानी। ५. मुसलमानों और उनकी देखा-देखी हिंदुओं में भी प्रचलित वह प्रथा जिसके अनुसार भले घर की स्त्रियाँ आड़ में रहती हैं और पर-पुरुषों के सामने नहीं होतीं।

पद—परदा-नशीन। (दे०)

क्रि० प्र०—करना।—रखना।—होना।

मुहा०—परदा लगाना=स्त्रियों का ऐसी स्थिति में आना या होना कि पर-पुरुषों की दृष्टि उन पर न पड़ सके। जैसे—जब से वह ब्याही गई है, तब से हमसे भी परदा करने लगी है। **परदे में बैठना**=किसी स्त्री का पर-पुरुषों की दृष्टि से ओझल होकर घर के अन्दर रहना। जैसे—पहले तो वह वेश्या थी पर बाद में एक नवाब के यहाँ परदे में बैठ गई। **परदे में रहना**=घर के अन्दर सब लोगों की दृष्टि से बचकर रहना।

६. मकान आदि की कोई दीवार। जैसे—इस मकान का पूरबवाला परदा बहुत कमजोर है या गिरने को है। ७. किसी प्रकार का तल। या परत। तह। जैसे—(क) आसमान के सात परदे कहे गये हैं। (ख) मैंने दुनिया के परदे पर ऐसी बात नहीं देखी। ८. शरीर के किसी अंग की कोई ऐसी झिल्ली या परत जो किसी तरह की आड़ या व्यवधान करती हो। जैसे—आँख का परदा, कान का परदा। ९. अँगरखे कोट, शेरवानी आदि की वह परत जो आगे की ओर और छाती पर रहती है। १०. बीन, सितार, हारमोनियम आदि बाजों में स्वरों के विभाजक स्थानों की सूचक किसी प्रकार की रचना। ११. फारसी संगीत में बारह प्रकार के रागों में से हर राग। १२. नाव की पतवार।

परदाख्त—स्त्री० [फा० पर्दाख्त] १. देख-भाल। २. संरक्षण। ३. पालन-पोषण।

परदाज—पुं० [फा० पर्दाज़] १. शौर्य। वीरता। २. ढंग। तरीका ३. सजावट। ४. कामों में लगे रहने का भाव। ५. चित्र में अंकित की जानेवाली महीन रेखाएँ।

पर-दादा—पुं० [हिं० पर+ दादा] [स्त्री० परदादी] संबंधी के विचार से पिता का दादा।

परदा-दार—वि०=परदेदार।

परदा-नशीन—वि० स्त्री० [फा० पर्दःनशीं] १. (स्त्री) जो बड़ों तथा पर-पुरुषों से परदा करती हो। २. लाक्षणिक अर्थ में, जो घर में ही रहे, बाहर न निकले।

परदापोश—वि० [फा० पर्दःपोश] [भाव० परदापोशी] दूसरों के अव-गुणों, दोषों आदि को छिपानेवाला।

परदा-प्रथा—स्त्री० [हिं०+सं०] कुछ एशियाई देशों और समाजों में प्रचलित वह प्रथा जिसके अनुसार स्त्रियों को घर के अन्दर, परदे में रखा जाता है और पर-पुरुषों के सामने नहीं होने दिया जाता।

परदुम्न*—पुं०=प्रद्युम्न।

परदेदार—वि० [हिं० परदा+फा० दार] १. जिसके आगे, जिसमें या जिसपर किसी प्रकार का परदा लगा हो। जैसे—परदेदार एक्का या बहली। २. जो घर के अन्दर परदे में रहती हो, और पर-पुरुषों के सामने न होती हो।

परदेदारी—स्त्री० [फा० पर्दःदारी] १. परदेदार होने की अवस्था या भाव। २. स्त्रियों के घर के अन्दर रहने और पर-पुरुषों के सामने न आने की अवस्था या भाव। ३. वह स्थिति जिसमें किसी से कोई बात छिपाई जाती हो। उदा०—कुछ तो है जिसकी परदेदारी है।—कोई शायर।

परदेश—पुं० [ष० त०] १. अपने देश से भिन्न दूसरा देश। २. वह देश जहाँ कोई व्यक्ति अपना देश छोड़कर आया हो। विदेश।

परदेशी (शिन्)—वि० [सं० परदेश+इनि] परदेश-संबंधी।
पुं० वह व्यक्ति जो अपना देश छोड़कर किसी दूसरे देश में आया या रहता हो।

परदेस—पुं०=परदेश।

परदेसिया—पुं० [हिं० परदेसी] पूरब में गाये जानेवाले एक प्रकार के गीत जिनमें परदेस गये हुए पति के संबंध में उसकी प्रियतमा के उद्गारों का उल्लेख होता है और जिनके प्रत्येक चरण के अंत में 'परदेसिया' शब्द होता है। (विदेसिया के अनुकरण पर) जैसे—घरी राति गइसी पहर राति गइसी, ते दुअरा करेला ठाढ़ भोर परदेसिया।

परदेसी—वि०, पुं०=परदेशी।

परदोस*—पुं०=प्रदोष।

परद्दा—पुं०=परदा।

परधान—वि०=प्रधान।
पुं०=परिधान।

पर-धाम—पुं० [कर्म० स०] १. परलोक। बैकुंठ-धाम। २. ईश्वर।

परन—पुं० [सं० पर्ण?] मृदंग आदि बाजों को बजाते समय मुख्य बोलों के बीच-बीच में बजाये जानेवाले बोलों के खंड।
†पुं०=प्रण (प्रतिज्ञा)।
*पुं०=पर्ण।
*स्त्री०=परनि (आदत)।

परना—पुं० [सं० उपरना] अँगोछा। गमछा।
*अ०=पड़ना।

पर-नाद—पुं० [कर्म० स०] वेदांत में, नाद का दूसरा नाम।

पर-नाना—पुं० [हिं० पर+नाना] [स्त्री० पर-नानी] नाना का पिता।

पर-नाती—पुं० [हिं० पर+नाती] [स्त्री० पर-नातिनी] नाती का लड़का।

परनाम†—पुं०=प्रणाम।

परनाल—पुं० [स्त्री० अल्पा० परनाली]=पनाला (बड़ा नाला)।

परनाली—स्त्री० [?] अच्छे घोड़ों की पीठ के मध्य भाग का (पुट्ठों और कंधों की अपेक्षा) नीचापन जो उनके तेज और बढ़िया होने का सूचक होता है।
क्रि० प्र०—पड़ना।
†स्त्री०=प्रणाली।
स्त्री० हिं० 'परनाला' (पनाला) का स्त्री० अल्पा०।

परनि, परनी—स्त्री० [हिं० पड़ना] पड़ी हुई आदत। अभ्यास। टेव। बान।

उदा०—राखौं हरकि उतै को धावै उनकी वैसिय परनि परी री।—सूर।
स्त्री० [हिं० आ पड़ना] आक्रमण। धावा। उदा०—अहे परनि मरि प्रेम की पहरुय पारि न प्रान।—बिहारी।

परनापरनी—स्त्री०=पन्नी (पतला वरक)।

परनै*—पुं०=परिणय।

परनौत†—स्त्री०=प्रणाम।

परपंच—पुं०=प्रपंच।

परपंचक—वि०=परपंची।

परपंची—वि०[सं० प्रपंची] १. बखेड़िया। फसादी। २. चालाक। धूर्त। ३. मायावी।

पर-पक्ष—पुं० [कर्म० स०] १. विपरीत या विरुद्ध पक्ष। २. अन्य या दूसरा पक्ष। ३. अन्य अथवा विपरीत पक्ष का कथन या मत।

परपट—पुं० [हिं० पर+सं० पट=चादर] चौरस या समतल भूमि।
वि०=चौपट।

परपटी—स्त्री०=पपंटी।

परपरा*—वि०[अनु० पर-पर] 'पर-पर' आवाज के साथ टूटनेवाला। कुरकुरा।
वि०[हिं० पर-पराना] जिससे मुँह या कोई और अंग परपराये।

परपराना—अ०[अनु०] [भाव० परपराहट] अंग में मिर्च अथवा किसी अन्य कड़वी या तीखी वस्तु का संयोग होने पर उसमें जलन होना। जैसे—मिर्च लगने से आँख या मुँह परपराना।

परपाक—पुं०[सं० मध्य० स०] दूसरे के उद्देश्य से अथवा पंच यज्ञ के लिए भोजन बनाना।

पर-पाजा—पुं०[हिं० पर+आजा] [स्त्री० परपाजी] आजा या दादा का बाप। पर-दादा।

पर-पार—पुं०[कर्म० स०] उस ओर का तट। दूसरी तरफ का किनारा।

परपिंडाद—वि०[सं० परपिण्ड, ष० त०, परपिण्ड√अद् (खाना)+अण्] दूसरों का अन्न खाकर जीवन बितानेवाला।
पुं० दास। भृत्य।

पर-पीड़क—वि०[सं० ष० त०] १. दूसरों को सतानेवाला। २. दूसरों की पीड़ा या कष्ट का सहानुभूतिपूर्वक अनुभव करनेवाला। पराई पीड़ा समझनेवाला। (क्व०)

पर-पुरुष—पुं०[कर्म० स०] १. विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसके पति से भिन्न कोई और पुरुष। २. साहित्य में वह नायक जो परकीया से प्रेम करता हो। ३. परम पुरुष (परमात्मा)।

पर-पुष्ट—वि० [तृ० त०] [स्त्री० पर-पुष्टा] जिसका पोषण दूसरे ने किया हो।
पुं० कोयल।

परपुष्टा—स्त्री०[सं० परपुष्ट+टाप्] १. वेश्या। रंडी। २. परगाछा। बाँदा।

परपूठा—वि०[सं० परिपुष्ट, प्रा० परिपुष्ट] [स्त्री० परपूठी] पक्का। प्रौढ़।
स्त्री०=परपुष्टा।

पर-पूर्वा—स्त्री०[सं० ब० स०, टाप्] वह स्त्री जिसने अपने पहले पति के मर जाने अथवा उसे छोड़कर दूसरा पति कर लिया हो।

परपोता—पुं० हिं० परपौत्र] [स्त्री० परपोती] पोते का लड़का।

परपौत्र—पुं० [सं० प्रपौत्र] [स्त्री० परपौत्री] परपोता।

पर-प्रत्यय—पुं०[सं० कर्म० स०] व्याकरण में वह प्रत्यय जो शब्द के अन्त में कोई विशेषता लाता हो। (टरमिनेशन, सफिक्स) जैसे—सरलता में 'ता' पर-प्रत्यय है।

परफुल्ल†—वि०=प्रफुल्ल।

परफुल्लित†—भू० कृ०=प्रफुल्लित।

परबंचकता*—स्त्री०=प्रवंचकता।

परबंद—पुं०[सं० पटबंध] नाच की एक गति जिसमें नाचने वाला एड़ियों के बल पैर खड़े करके खड़ा रहता है और उसकी दोनों कोहनियाँ कमर से सटी रहती हैं।

परबंध†—पुं०=प्रबंध।

परब—स्त्री०[हिं० पोर] १. पोर। २. जवाहिर या रत्न का छोटा टुकड़ा।
पुं०=पर्व।

परबत†—पुं०[सं० पर्वत] १. पर्वत। पहाड़। २. पहाड़ पर बना हुआ किला या दुर्ग। ३. किला। दुर्ग। उदा०—परबत कहँ जो चला परबता।—जायसी। ४. दे० 'परबत्ता'। ५. दे० 'पर्वत'।

परबता—पुं०=परबत्ता। उदा०—कहुँ परबते जो गुन तोहिं पाहाँ।—जायसी।

परबतिया—वि० [हिं० परबत+इया (प्रत्य०)] पर्वत संबंधी। पर्वत पर होनेवाला। पहाड़ी।
स्त्री० पूर्वी नेपाल की बोलियों का वर्ग।

परबत्ता—पुं०[सं० पर्वत] पहाड़ी तोता जो साधारण देशी तोते से बड़ा होता है। करमेल।

परबल†—पुं०=प्रबल।
पुं०=परवल।

परबस—वि०[भाव० परबसताई]=परवश।

परबाल—पुं० [हिं० पर=दूसरा+बाल=रोयाँ] आँख की पलक पर निकलनेवाला बाल या बिरनी जिसके कारण बहुत पीड़ा होती है।
†पुं०=प्रवाल।

परबी—स्त्री०[सं० पर्व] १. पर्व का दिन। २. पर्व का समय। पुण्य-काल।

परबीन†—वि०[भाव० परबीनता]=प्रवीण।

परबेस†—पुं०=प्रवेश।

परबोध†—पुं०=प्रबोध।

परबोधना—स०[सं० प्रबोधन] १. प्रबोधन करना। २. जगाना। अच्छी तरह समझना-बूझना। ४. ज्ञान प्राप्त कराना। ५. तसल्ली या दिलासा देना। धैर्य या सान्त्वना देना।

पर-ब्रह्म—पुं०[सं० कर्म० स०] १. निर्गुण या निरुपाधि ब्रह्म। २. दादू दयाल द्वारा स्थापित एक सम्प्रदाय।

परभंजन†—पुं०=प्रभंजन।

परभव—पुं० [कर्म स०] दूसरा जन्म। जन्मांतर।

परभा†—स्त्री०=प्रभा।

परभाइ, परभाउ†—पुं०=प्रभाव।

पर-भाग—पुं०[सं० कर्म० स०] १. दूसरी ओर का भाग या हिस्सा। २. [ष०

त०] कपड़ों की कढ़ाई, छपाई में वह नीचेवाली पहली तह जिसके ऊपर रंग के सूतों से अथवा रंग से आकृतियाँ बनाकर सौंदर्य लाया जाता है। ३. चित्र-कला में, चित्र की भूमिका या पृष्ठ भाग का दृश्य। (बैक-ग्राउंड)
पुं०[कर्म० स०] १. पश्चिमी भाग। २. अवशिष्ट या बचा हुआ भाग। ३. उत्तम संपदा। ४. उत्तम या श्रेष्ठ गुण अथवा उसका उत्कर्ष।

परभाग्योपजीवी (बिन्)—वि० [सं० पर-भाग्य, ष० त०, परभाग्य+उप√जीव् (जीना)+णिनि] दूसरे की कमाई खाकर रहनेवाला।

परभात—पुं०=प्रभात।

परभाती—स्त्री०=प्रभाती।

परभारा—वि०[?] [स्त्री० परभारी] १. ऊपरी या बाहरी। २. तटस्थ या पराया (व्यक्ति)।

परभारे—अव्य० [?] १. ठीक मार्ग या साधन छोड़कर। २. अलग, दूसरे या बाहरी रास्ते से। (बुंदेल०) जैसे—तुम बिना हमसे पूछे परभारे उनसे रुपए माँग लाये, यह तुमने ठीक नहीं किया।

परभाव—†पुं०=प्रभाव।

पर-भुक्त—वि०[सं० तृ० त०] [स्त्री० पर-भुक्ता] जिसका भोग कोई और कर चुका हो। दूसरे का भोगा हुआ।

परभुक्ता—स्त्री० [सं० परभुक्त+टाप्] ऐसी स्त्री जिसके साथ पहले कोई और समागम कर चुका हो।

पर-भृत—वि०[तृ० त०] जिसका पालन किसी दूसरे ने किया हो।
स्त्री० कोयल।
पुं० कार्तिकेय।

परम—वि०[सं० पर√मा (मान)+क] १. जो किसी क्षेत्र या वर्ग में सबसे अधिक उन्नत, महत्त्वपूर्ण या योग्य हो। २. किसी दिशा या सीमा में सबसे आगे बढ़ा हुआ। अत्यंत। ३. जिसके हाथ में कुल या सब अधिकार या शक्तियाँ निहित हो। (एब्सोल्यूट) ४. मुख्य। प्रधान। ५. आरंभिक या आदिम।
पुं० १. शिव। २. विष्णु।

परम-आज्ञा—स्त्री० [सं० कर्म० स०] ऐसी आज्ञा जो अंतिम हो और जिसमें किसी प्रकार का परिवर्तन न हो सकता हो। (एब्सोल्यूट आर्डर)

परमक—वि० [सं० परम+कन्] १. सर्वोच्च। सर्वोत्तम। सर्वश्रेष्ठ। २. चरम सीमा का। परले सिरे का।

परम-गति—स्त्री०[सं० कर्म०स०] वह उत्तम गति जो मरने पर सत्पुरुषों को प्राप्त होती है। मोक्ष।

परमजा—स्त्री०[सं० परम√जन् (उत्पन्न होना)+ड+टाप्] प्रकृति।

परमट—पुं०[देश०] संगीत में एक प्रकार का ताल।
†पुं०=परमिट।

परमटा—पुं०[?]एक प्रकार का चिकना रंगीन कपड़ा जो प्रायः कोट के अस्तर के काम आता है। पनैला।

परमत—स्त्री०[सं० परमता?] १. साख। २. ख्याति। प्रसिद्धि।

परम-तत्त्व—पुं० [कर्म० स०] १. दर्शन-शास्त्र और विज्ञान के अनुसार, वह मूलतत्त्व जो सृष्टि की समस्त वस्तुओं का सृष्टिकर्त्ता माना गया है। पदार्थ। २. ब्रह्म।

पर-मतिया—वि० [हिं० पर +मत] जो अपनी समझ से नहीं बल्कि दूसरों के सिखाने पर सब काम करता हो। दूसरों की मत से चलने-वाला।

पर-मद—पुं०[सं० ब० स०]बहुत अधिक मद्य पीने से होनेवाला एक प्रकार का रोग जिसमें शरीर भारी हो जाता है और बहुत अधिक प्यास लगती है।

परम-धाम—पुं०[कर्म० स०] बैकुंठ। स्वर्ग।

परमन†—पुं०=परिमाण।

परमन्न—पुं० [सं० परम+अन्न] खाने-पीने की बहुत बढ़िया बढ़िया चीजें।

परमन्यु—पुं०[ब० स०] यदुवंशी कक्षेयु के एक पुत्र का नाम।

परम-पद—पुं०[सं० कर्म स०] १. सबसे श्रेष्ठ पद वा स्थान। २. सांसारिक बंधनों से मिलनेवाला मोक्ष।

परम-पिता—पुं०[सं० कर्म० स०] ईश्वर। परमेश्वर।

परम-पुरुष—पुं०[सं० कर्म० स०] १. परमात्मा। २. विष्णु।

परम-फल—पुं० [कर्म० स०] १. सबसे उत्तम फल या परिणाम। २. मुक्ति। मोक्ष।

परम-ब्रह्म (न्)—पुं०[कर्म० स०]=परब्रह्म।

परम-ब्रह्मचारिणी—स्त्री०[कर्म० स०] दुर्गा।

परम-भट्टारक—पुं० [कर्म० स०] [स्त्री० परम भट्टारिका] प्राचीन भारत में एक-छत्र राजाओं की एक उपाधि।

परम-भट्टारिका—स्त्री०[सं० कर्म० स०] प्राचीन भारत में परम भट्टारक की रानी की उपाधि।

परम-रस—पुं०[कर्म० स०] पानी मिला हुआ मट्ठा।

परमर्द्धिदेव—पुं०[सं० परम-ऋद्धि, ब० स०, परमर्द्धि-देव, कर्म० स०] महोबे के एक चंदेलवंशी राजा जो परमाल के नाम से भी प्रसिद्ध हैं।

परमर्षि—पुं०[सं० परम-ऋषि, कर्म० स०] वह जो ऋषियों में परम हो। सर्वश्रेष्ठ ऋषि।

परमल—पुं०[सं० परिमल=कूटा य मला हुआ] ज्वार या गेहूँ का हरा या भिगोकर भुनाया हुआ चबेना।
†पुं०=परिमल।

परमवीर-चक्र—पुं०[सं० परमवीर, कर्म० स०, परमवीरचक्र, ष० त०] विशिष्ट सैनिक अधिकारियों को असाधारण वीरता प्रदर्शित करने पर भारत सरकार द्वारा प्रदान किया जानेवाला एक अलंकरण।

परम-सत्ता—स्त्री०[सं० कर्म० स०] वह सत्ता जो सबसे बढ़कर हो और जिसके ऊपर कोई और सत्ता न हो। (एब्सोल्यूट पावर)

परमसत्ताधारी (रिन्)—पुं०[सं० परमसत्ता√धृ (धारण)+णिनि] वह जिसे परम सत्ता प्राप्त हो।

परम-हंस—पुं० [कर्म० स०] १. परमात्मा। परमेश्वर। २. ज्ञान मार्ग में बहुत आगे बढ़ा हुआ संन्यासी। ३. संन्यासियों का एक भेद जिन्हें दंड, शिखा, सूत्र आदि धारण करना आवश्यक नहीं होता।

परमांगना—स्त्री० [सं० परमा-अंगना, कर्म० स०] अच्छी और सुंदरी स्त्री।

परमा—स्त्री०[सं० परम+टाप्] बहुत बढ़ी-चढ़ी हुई छवि या शोभा।
†स्त्री०=प्रमा (यथार्थ ज्ञान)।

†पुं०=प्रमेह (रोग)।

परमाक्षर—पुं०[सं० परम-अक्षर, कर्म० स०] ओंकार।

परमाटा—पुं०[देश०] १. संगीत में एक प्रकार का ताल। २. पनैला या परमटा नाम का कपड़ा।

परमाणवीय—वि० दे० 'पारमाणविक'।

परमाणविक—वि०=पारमाणविक।

परमाणु—पुं० [सं० परम-अणु, कर्म०स०] [वि० पारमाणविक, परमाणवीय] १. अत्यंत सूक्ष्म कण। २. विज्ञान में किसी तत्व का वह सबसे छोटा टुकड़ा या खण्ड जिसके टुकड़े हो ही न सकते हों। (एटम)

विशेष—अनेक परमाणुओं के योग से ही अणु बनते हैं।

परमाणु-परीक्षण—पुं०[सं०] नये बने हुए पारमाणिक शस्त्रों की शक्ति आदि का परीक्षण। (एटामिक टेस्ट)

परमाणु-बम—पुं० [सं० परमाणु+अं० बाम्ब] एक प्रकार का बम (गोला) जिसमें रासायनिक क्रियाओं द्वारा अणु का विस्फोट होता है तथा जिसके फल-स्वरूप भीषण तथा व्यापक संहार होता है। (एटम बाम्ब)

परमाणुवाद—पुं०[सं० ष० त०] १. यह मत या सिद्धान्त कि परमाणुओं से ही जगत् की सृष्टि हुई है। (न्याय या वैशेषिक) (एटमिज्म) २. परमाणुओं को उपयोग में लाने का काम।

परमाणुवादी (दिन्)—वि० [सं० परमाणुवाद+इनि] परमाणुवाद-संबंधी।

पुं० वह जो परमाणुवाद का सिद्धांत मानता हो। (एटॉमिस्ट)

परमाण्विकी—स्त्री० [सं०] भौतिक विज्ञान की वह शाखा जिसमें परमाणुओं की रचना, शक्ति, आदि का विवेचन होता है। (एटमिस्टिक)

परमात्मा (त्मन्)—पुं०[सं० परम-आत्मन्, कर्म० स०] ब्रह्म। परब्रह्म। ईश्वर।

परमादेश—पुं० [सं० परम-आदेश, कर्म० स०] उच्च न्यायालय की ऐसी आज्ञा या आदेश जिसके द्वारा कोई काम करने अथवा न करने के लिए कहा गया हो। (रिट, रिट ऑफ़ मेंडामेस)

परमाद्वैत—पुं०[सं० परम-अद्वैत, कर्म० स०] १. परमात्मा, जो सब प्रकार के भेदों आदि से रहित है। २. विष्णु।

परमाधिकार—पुं० [सं० परम-अधिकार, कर्म० स०] वह सबसे बड़ा अधिकार जो किसी को उसके पद, लिंग, विशिष्ट गुण आदि के कारण प्राप्त होता है। (प्रेरोगेटिव) जैसे—(क) राजा या राज्यपाल को शासन का, (ख) मनुष्यों को सोच-समझकर काम करने का, (ग) स्त्रियों को संतान उत्पन्न करने का परमाधिकार होता है।

परमानंद—पुं० [सं० परम-आनंद, कर्म० स०] १. वह उच्चतम आनंद जो आत्मा को परमात्मा में लीन करने पर प्राप्त होता है। २. आनंद स्वरूप ब्रह्म।

परमान†—पुं० [सं० प्रमाण] १. प्रमाण। सबूत। २. यथार्थ या सत्य बात।

पुं०[सं० परिमाण] १. नियत, अवधि मान या सीमा। जैसे—थाह, यह सदा १० हाथ लंबा ही होता है। २. सीमा। हद।

परमानना—स० [सं० प्रमाण] १. प्रमाण के द्वारा ठीक सिद्ध करना। २. प्रामाणिक या बिलकुल ठीक मानना या समझना। ३. मान लेना। स्वीकृत करना।

परमान्न—पुं०[सं० परम-अन्न, कर्म० स०] खीर। पायस।

परमामुद्रा—स्त्री० [सं० व्यस्त पद] त्रिपुरदेवी की पूजा में एक प्रकार की मुद्रा।

परमायु (युस्)—स्त्री० [सं० परम-आयुस्, कर्म० स०] जीवनकाल की चरम सीमा।

विशेष—हमारे यहाँ उक्त सीमा १०० वर्ष मानी गई है।

परमायुष—पुं०[सं० ब० स०, अच्] विजयसाल का पेड़। असन।

परमार—पुं०[सं० पर=शत्रु+हिं० मारना]अग्निकुल के अन्तर्गत राजपूतों का एक वंश। पँवार।

परमारथ†—पुं०=परमार्थ।

परमाराध्य—वि०=परम आराध्य।

परमार्थ—पुं०[सं० परम-अर्थ, कर्म० स०] [वि० परमार्थी, परमार्थिक] १. ऐसा पदार्थ या वस्तु जो सबसे बढ़कर हो। जैसे—ब्रह्म पद या मोक्ष। २. वह परम तत्त्व जो नाम, रूप आदि से परे और सबसे बढ़कर वास्तविक माना गया है।

विशेष—न्याय में ऐसा सुख परमार्थ माना गया है जिसमें दुःख का सर्वथा अभाव हो।

३. बौद्ध दर्शन में, वस्तु का वास्तविक रूप और ज्ञान। ४. मोक्ष। ५. दूसरों का उपकार या भलाई। परोपकार।

परमार्थता—स्त्री०[सं० परमार्थ+तल्+टाप्] वास्तविक और सच्चे रूप में होनेवाली आध्यात्मिक यथार्थता।

परमार्थवाद—पुं०[सं० ष० त०] यह मत या सिद्धांत कि परमार्थ या परमतत्त्व का चिंतन और प्राप्ति ही मनुष्य का सबसे बड़ा कर्त्तव्य है।

परमार्थवादी (दिन्)—वि० [सं० परमार्थ√वद्+णिनि] परमार्थवाद संबंधी।

पुं० १. परमार्थवाद का अनुयायी या पोषक। २. बहुत बड़ा ज्ञानी और तत्त्वज्ञ।

परमार्थी (र्थिन्) वि० [सं० परमार्थ+इनि] १. परमार्थ संबंधी ज्ञान का उपासक और चिन्तक। यथार्थ या वास्तविक तत्त्व को ढूंढ़नेवाला। २. मोक्ष चाहनेवाला। मुमुक्षु। ३. दूसरों की भलाई करनेवाला। परोपकारी।

परमावधि—स्त्री०[सं० परमा-अवधि, कर्म० स०] किसी काम या बात की अंतिम अवधि या चरम सीमा।

परमाह—पुं० [सं० परम-अहन्, कर्म० स०, +टच्] १. सबसे बड़ा दिन। २. शुभ दिन।

परमिट—पुं०[अं०] १. वह अधिकारिक लिखित अनुमति, जिसमें कोई काम करने अथवा कोई चीज खरीदने की अनुमति दी गई हो। २. कागज का वह टुकड़ा जिस पर उक्त अनुमति लिखी होती है।

परमिति—स्त्री०[कर्म० स०] १. परिमित। २. परम सीमा। ३. मर्यादा।

परमिन—पुं०[?] एक प्रकार का साँप। कहते हैं कि इसकी फुफकार या हवा लगने से फोड़े निकल आते हैं।

परमीकरण मुद्रा—स्त्री०[सं० परमीकरण, परम+च्वि√कृ(करना)+ल्युट्—अन परमीकरण-मुद्रा, ष० त०] दे० 'महामुद्रा'।

परसीन—वि०=पराया। (पूरब) उदा०—कर कुटुम्ब सब मेलइ परसीन। —मैथिली लोकगीत।

पर-मुख—वि०[ब० स०] १. जिसका मुँह दूसरी ओर या फिरा हुआ हो। विमुख। २. जो उपेक्षा कर रहा हो और ध्यान न दे रहा हो। †वि०=प्रमुख।

पर-मृत्यु—पुं० [ब० स०] कौआ, जिसके संबंध में प्रसिद्ध है कि आप से आप नहीं मरता।

परमेव†=प्रमेह (रोग)।

परमेश—पुं०[सं० परम-ईश, कर्म० स०] परमेश्वर।

परमेश्वर—पुं०[सं० परम-ईश्वर, कर्म० स०] १. सगुण ब्रह्म जो सारी सृष्टि का रचयिता और संचालक है। २. विष्णु। ३. शिव।

परमेश्वरी—वि०[सं० परमा-ईश्वरी, कर्म० स० ङीप्] परमेश्वर-संबंधी। स्त्री० दुर्गा।

परमेष्ट—वि०[सं० परम-इष्ट, कर्म० स०] [भाव० परमेष्टि] परम इष्ट।

परमेष्टि—स्त्री०[सं० परम-इष्टि, कर्म० स०] १. अंतिम अभिलाषा। २. मुक्ति। मोक्ष।

परमेष्ठ—पुं०[सं० परमे√स्था (ठहरना)+क, अलुक् स०] चतुर्मुख ब्रह्मा। प्रजापति। (यजु०)

परमेष्ठिनी—स्त्री० [सं० परमेष्ठिन्+ङीप्] १. परमेष्ठी की शक्ति। देवी। २. श्री। ३. वाग्देवी। सरस्वती। ४. ब्राह्मी नाम की वनस्पति।

परमेष्ठी (ष्ठिन्)—पुं०[सं० परमे√स्था+इनि, अलुक् स०] १. ब्रह्मा, अग्नि आदि देवता। २. तत्त्व। भूत। ३. प्राचीन काल का एक प्रकार का यज्ञ। ४. शालिग्राम की एक विशिष्ट प्रकार की मूर्ति। ५. विराट् पुरुष जो परम-ब्रह्म का एक रूप है। ६. चाक्षुष मनु का एक नाम। ७. गरुड़। ८. जैनों के एक जिन देव। परमेसर।

परमेसुर—पुं०=परमेश्वर।

परमेसरी—वि०, स्त्री०=परमेश्वरी।

परमोक*—पुं० [सं० परिमोक्ष]=मोक्ष।

परमोद†—पुं०=प्रमोद।

परमोदना†—स०=परमोधना।

परमोधना—स०[सं० प्रबोधन] १. प्रबोधन करना। परबोधना। २. मीठी-मीठी बातें करके किसी को अपनी ओर मिलाना।

परयंक†—पुं०=पर्यंक।

परयस्तापह्नुति—स्त्री० दे० 'पर्यस्तापह्नुति'।

परयाग†—पुं०=प्रयाग।

पर-राष्ट्र—पुं०[सं० कर्म० स०] एक राष्ट्र की दृष्टि में दूसरा राष्ट्र। अपने राष्ट्र से भिन्न दूसरा राष्ट्र। अन्य राष्ट्र।

परराष्ट्र-नीति—स्त्री०[ष० त०] अन्य राष्ट्रों के प्रति किये जानेवाले व्यवहार के समय बरती जानेवाली नीति। (फारेन पालिसी)

परराष्ट्र-मंत्रालय—पुं०[ष० त०] पर-राष्ट्र मंत्री का मंत्रालय।

परराष्ट्र-मंत्री (त्रिन्)—पुं०[सं० ष० त०] किसी राष्ट्र के मंत्री-मंडल का वह सदस्य जिस पर विभिन्न राष्ट्रों से होनेवाले व्यवहारों, संबंधों आदि के निर्वाह का भार रहता है। (फारेन मिनिस्टर)

परराष्ट्रीय—वि० [सं० परराष्ट्र+छ—ईय] जिसका संबंध परराष्ट्र से हो।

पररु—पुं०[सं०√पॄ(पूर्ण करना)+अरु] नीली भँगरैया।

परलउ—पुं०[?] पत्थर।

परलय†—स्त्री०=प्रलय।

परला—वि०[सं० पर=उधर का, दूसरा+हिं० ला (प्रत्य०)][स्त्री० परली] १. उधर का या उस ओरवाला। २. बहुत ही बढ़ा-चढ़ा। जैसे—परले सिरे का।

पद—परले सिरे का=अंतिम सीमा तक पहुँचा हुआ।

मुहा०—परले पार होना=(क) बहुत दूर तक जाना। (ख) समाप्त होना।

परलै†—स्त्री०=प्रलय।

पर-लोक—पुं०[सं० कर्म० स०] १. इस लोक से भिन्न दूसरा लोक। २. वह सर्वश्रेष्ठ लोक, जहाँ मृत्यु के उपरान्त पवित्र आत्माएँ निवास करती हैं। (हिंदू)

पद—परलोक-वास=मृत्यु।

मुहा०—परलोक सिधारना=परलोक जाना। स्वर्ग में जाना।

३. मृत्यु के उपरान्त आत्मा की दूसरी स्थिति की प्राप्ति।

परलोक-गमन—पुं०[स० त०] १. परलोक जाना। २. स्वर्ग सिधारना। मरना।

परलोक-प्राप्ति—स्त्री०[ष० त०] परलोक की प्राप्ति अर्थात् मृत्यु।

पर-वंचक—वि० [सं० ष० त०] [भाव० परवंचकता] दूसरों को ठगने या धोखा देनेवाला।

परवर†—पुं०=परवल।

†पुं०=परवाल (आँख का रोग)।

†पुं०=प्रवर।

वि०[फा० पर्वर] परवरिश या पालन-पोषण करनेवाला। जैसे—गरीब परवर।

परवर-दिगार—वि० [फा० पर्वरदिगार] सबका पालन करनेवाला। पुं० परमेश्वर।

परवरना†—अ०[सं० प्रवर्तन] चलना-फिरना।

परवरिश—स्त्री०[फा० पर्वरिश] पालन-पोषण।

परवर्त्त*—वि०=प्रवर्तित। उदा०—विष्णु की भक्ति परवर्त्त जग मैं करी।—सूर

परवर्ती (तिन्)—वि० [सं० पर √वृत् (रहना) +णिनि] १. काल-क्रम या घटना-क्रम की दृष्टि से बाद में या पीछे होनेवाला। (लेटर) २. बाद के समय का। (सबसीक्वेन्ट) ३. जो पहले एक बार या एक रूप में हो चुकने पर बाद में कुछ और रूप में हो। (सेकेन्डरी) जैसे—पौधों की परवर्ती वृद्धि।

परवल—पुं०[सं० पटोल] १. एक प्रसिद्ध लता। २. उक्त लता का फल जिसकी तरकारी बनाई जाती है। ३. चिचड़ा जिसके फलों की तरकारी होती है।

पर-वश—वि०[सं० ब० स०] [भाव० परवशता] १. जो दूसरे के वश में हो और इसी लिए जो स्वतंत्रतापूर्वक आचरण न कर सकता हो। २. जो दूसरे पर निर्भर करता हो।

पर-वश्य—वि०[ष० त०] [भाव० परवश्यता] =परवश।

परवस्ती†—स्त्री० दे० 'परवरिश'।

परवा†—पुं०=पुरवा।
†स्त्री०[देश०] एक प्रकार की घास।
स्त्री०=प्रतिपदा (तिथि)।
†स्त्री०=परवाह।

परवाई†—स्त्री०=परवाह।

पर-वाच्य—वि०[तृ० त०] दूसरों द्वारा निंदित।

परवाज—वि०[फा० पर्वाज़] [भाव० परवाजी] समस्त पदों के अंत में; उड़नेवाला। जैसे—बलंदपरवाज=ऊँचा उड़नेवाला।
स्त्री० उड़ने की क्रिया या भाव। उड़ान।

परवाणि—पुं० [सं० पर√वण् (शब्द करना)+णिच्+इन्] १. धर्माध्यक्ष। २. कार्तिकेय का वाहन, मोर। ३. वत्सर। वर्ष।

परवान् (वत्) [सं० पर+मतुप्, वत्व] १. पराश्रयी। २. पराधीन। ३. असहाय।

परवान—पुं० [सं० प्रमाण] १. प्रमाण। सबूत। २. ठीक, वास्तविक या सत्य बात। ३. सीमा। हद।
वि० १. उचित। ठीक। वाजिब। २. प्रमाणिक और विश्वसनीय।
पुं० [फा० परवाल] १. उड़ान।
मुहा०—**परवान चढ़ना**=(क) बहुत अधिक उन्नति करते हुए परम सुखी और सौभाग्यशाली होना। (स्त्रियाँ) (ख) पूर्णता तक पहुँचना। (ग) सफल होना।
२. जहाजों के ठहरने की जगह। बन्दरगाह।
†पुं०=प्रमाण।

परवानगी—स्त्री० [फा० पर्वानगी] आज्ञा। अनुमति।

परवानना*—स०[सं० प्रमाण] किसी बात को ठीक और प्रामाणिक मानना या समझना।

परवाना—पुं०[फा० पर्वान] १. प्राचीन काल में वह लिखित आज्ञा जो राजा की ओर से किसी को भेजी जाती थी। २. किसी प्रकार के अधिकार या अनुमति का सूचक पत्र। जैसे—तलाशी का परवाना, राहदारी का परवाना। ३. पतिंगा, विशेषतः वह पतिंगा जो दीपक की लौ के चारों ओर मंडराता हो और अंत में उसी से जल मरता हो। शलभ। ४. लाक्षणिक अर्थ में, वह व्यक्ति जो किसी पर अत्यन्त मुग्ध हो और उसके प्रेम में अपने आप को बलिदान कर दे अथवा आत्म-बलिदान के लिए प्रस्तुत रहे। जैसे—देश का परवाना। ५. प्रेमिका के रूप-सौंदर्य पर अत्यधिक मुग्ध व्यक्ति। ६. लोमड़ी के आकार का एक वन्य पशु जो शेर के आगे-आगे चलता है।

परवाना राहदारी—पुं० दूसरे क्षेत्र या दूसरे देश में जाने अथवा कोई चीज ले आने के लिए अधिकारी की ओर से मिलनेवाला स्वीकृति-पत्र।

परवाया—पुं०[हिं० पैर+पाया] ईंट, पत्थर या लकड़ी का वह टुकड़ा जो चारपाई के पाये के नीचे रखा जाय।

परवाल—पुं० १.=परबाल। २.=प्रवाल।

परवास*—पुं०[सं० प्रवास] १. प्रवास। २. आच्छादन।

पर-वासिका, पर-वासिनी—स्त्री०[स० त०] बाँदा। बंदाक। परगाछा।

परवाह—स्त्री०[फा० पर्वा] १. कोई काम (विशेषतः अनुपयुक्त या अनुचित काम) करते समय मन को होनेवाला यह औचित्यपूर्ण विचार कि इस काम से बड़ों के मान को ठेस तो न लगेगी।
विशेष—यह शब्द इस अर्थ में प्रायः नहिक रूप में ही प्रयुक्त होता है। जैसे—हमें इस बात को परवाह नहीं है।
२. आसरा। भरोसा। उदा०—जग में गति जाहि जगत्पति की परवाह सो ताहि कहा नर की। —तुलसी। ३. चिंता। फिक्र।
†पुं०=प्रवाह।

परवाहना—स०[सं० प्रवाह+हिं० ना (प्रत्य०)] प्रवाहित करना।

पर-विंदु—पुं०[कर्म० स०] वेदांत में विंदु का दूसरा नाम।

परवी—स्त्री०[सं० पर्व] पर्व-काल।

परवीन†—वि०=प्रवीण।

परवेख†—पुं०=परिवेश।

परवेज—पुं०[फा० पर्वेज़] १. विजयी। २. नौशेरवाँ का पोता जो शीरीं का आशिक था।

परवेश†—पुं०=प्रवेश।

पर-वेश्म (श्मन)—पुं०[ब० स०?] स्वर्ग।

पर-व्रत—पुं०[ब० स०] धृतराष्ट्र का एक नाम।

परश—पुं०[सं० स्पर्श, पृषो० सिद्धि] स्पर्शमणि। पारस पत्थर।
पुं०=स्पर्श।

परशु—पुं०[सं० पर√शृ (हिंसा)+कु, डित्व] कुल्हाड़ी की तरह का पर उससे बड़ा एक अस्त्र जिससे प्राचीन काल में योद्धा लोग एक दूसरे पर प्रहार करते थे।

परशु-धर—वि०[ष० त०] परशु नामक अस्त्र धारण करनेवाला।
पुं० परशुराम।

परशु-मुद्रा—पुं०[मध्य० स०] तंत्र में एक प्रकार की मुद्रा।

परशु-राम—पुं०[ब० स०] रेणुका के गर्भ से उत्पन्न जमदग्नि ऋषि के पुत्र जिन्होंने २१ बार क्षत्रिय वंश का नाश किया था।
विशेष—ये विष्णु के छठव अवतार कहे गये हैं। इनका यह नाम 'परशु' धारण करने के कारण पड़ा था।

परशु-वन—पुं० [सं० मध्य० स०] एक नरक का नाम।

परश्वध—पुं० [सं० पर√श्वि (वृद्धि)+ड=परश्व, ष० त०,√धे (पान)+क] परशु नामक अस्त्र।

परसंग†—पुं०=प्रसंग।

परसंसा†—स्त्री०=प्रशंसा।

परस†—पुं० [सं० स्पर्श] परसने की क्रिया या भाव। स्पर्श।
पुं० [सं० परश] पारस पत्थर।

परसन—पुं० [सं० स्पर्शन] परसने की क्रिया या भाव। छूना। स्पर्श। जैसे—दरसन-परसन।

परसना—स० [सं० स्पर्शन] १. स्पर्श करना। छूना। २. अनुभूत करना। उदा०—कछु भेदियाँ पीर हिये परसो।—घनानन्द। ३. भोजन करनेवालों की थालियों, पत्तलों आदि में खाद्य पदार्थ रखना। ५. भोजन कराना। परोसना।
अ० खाद्य पदार्थों का पत्तलों आदि में रखा या लगाया जाना।

परसन्न—वि० [भाव० परसन्नता]=प्रसन्न।

परसमनि—पुं०=स्पर्शमणि (पारस पत्थर)।

परसर्ग—पुं० [सं० ब० स०] आधुनिक भाषा-विज्ञान में, ने, को, के, से, में आदि संज्ञा-विभक्तियाँ जिनके संबंध में यह कहा जाता है कि ये

प्रकृति के साथ सटाकर नहीं बल्कि प्रकृति से हटाकर लिखी जानी चाहिए।

पर-सवर्ण—पुं० [सं० समान-वर्ण, कर्म० स०, स—आदेश, पर-सवर्ण, तृ० त०] पर या उत्तरवर्ती वर्ण के समान वर्ण।

परसा—पुं०=परशु। २. =फरसा।
†पुं०=परोसा।

परसाद—पुं०=प्रसाद।
†अव्य० [सं० प्रसादात्] १. प्रसाद या कृपा से। २. वजह से। कारण।

परसादी—स्त्री०=परसाद (प्रसाद)।

परसाना—स० [हिं० परसना] १. स्पर्श कराना। छुआना। २. भोजन परसने या परोसने का काम किसी से कराना।

पर-साल—अव्य० [सं० पर+फा० साल] १. गत वर्ष। पिछले साल। २. आगामी वर्ष। अगले साल।
†स्त्री० पास सारी नामक घास।

परसिद्ध†—वि०=प्रसिद्ध।

परसिया—पुं० [देश०] एक तरह का पेड़ जिसकी लकड़ी मेज, कुरसियाँ आदि बनाने के काम आती है।
स्त्री० [सं० परशु, हिं० परसा] १. छोटा परशु। २. हँसिया।

परसी—स्त्री० [देश०] एक तरह की छोटी मछली।

परसु†—पुं०=परशु।

पर-सूक्ष्म—पुं० [सं० कर्म० स०] आठ परमाणुओं के बराबर की एक तौल।

परसूत†—वि०=प्रसूत।

परसेद†—पुं०=प्रस्वेद।

परसों—अव्य० [सं० परश्व] १. बीते हुए दिन से ठीक पहलेवाला दिन। २. आगामी कल के बादवाला दूसरा दिन।

परसोतम†—पुं०=पुरुषोत्तम।

परसोर†—पुं० [देश०] एक तरह का अगहनी धान।

परसौहाँ*—वि० [हिं० परसना+औहाँ (प्रत्य०)] स्पर्श करने या छूनेवाला।

पर-स्त्री—स्त्री० [ष० त०] दूसरे की स्त्री। विशेषतः अपनी पत्नी से भिन्न दूसरे की पत्नी।

परस्त्री-गमन—पुं० [सं० परस्त्रीगमन, स० त०] पराई स्त्री के साथ संभोग करना जो विधिक दृष्टि से अपराध और धार्मिक दृष्टि से पाप है।

परस्पर—अव्य० [सं० पर, द्वित्व, सकार का आगम] १. एक दूसरे के साथ। जैसे—दोनों रेखाओं को परस्पर मिलाओ। २. दो या दो से अधिक पक्षों में। जैसे—बच्चे परस्पर मिठाई बाँट लेंगे। ३. एक दूसरे के प्रति। जैसे—इन लोगों में परस्पर बैर है।

परस्पर-व्यापी—वि० [सं०] (चीजें, बातें या स्थितियाँ) जो आपस में आंशिक रूप में एक दूसरे के क्षेत्र का अतिक्रमण करके उनमें व्याप्त हों। अतिच्छादित। (ओवरलैपिंग)

परस्परोपमा—स्त्री० [सं० परस्पर-उपमा, ष० त०] उपमेयोपमा। (दे०)

परस्मैपद—पुं० [सं० अलुक स०] संस्कृत धातुओं का एक वर्ग जिनसे बननेवाली क्रियाएँ कर्त्ता की अनुसारी होती है। 'आत्मनेपद' से भिन्न।

परस्व—पुं० [सं०] १. दूसरे की संपत्ति। २. पराधीनता।

पर-हथ—अव्य० [हिं० पर+हाथ] दूसरे के हाथ में। दूसरे की अधीनता में।

परहरना*—स० [सं० परिहास] छोड़ना। तजना।

परहार†—पुं०=प्रहार।
†पुं०=परिहार।

परहारी—पुं० [सं० प्रहरी] जगन्नाथ जी के मंदिर के वे पुजारी जो मंदिर ही में रहते हैं।

परहेज—पुं० [फा० पर्हेज] १. ऐसी वस्तुओं का सेवन न करना अथवा ऐसे कार्य न करना जिनसे स्वास्थ्य बिगड़ता हो अथवा सुधरती हुई शारीरिक स्थिति में बाधा पहुँचती हो। २. संयमपूर्वक रहना। ३. बुरी बातों से दूर रहना या बचना।

परहेजगार—पुं० [फा० पर्हेजगार] [भाव० परहेजगारी] १. परहेज करनेवाला। २. इंद्रियों को वश में रखनेवाला। संयमी। ३. धार्मिक दृष्टि से दोषों, पापों आदि से बचकर रहनेवाला। धर्म-निष्ठ।

परहेजगारी—स्त्री० [फा०] परहेजगार होने की अवस्था या भाव।

परहेलना—स० [सं० अवहेलना] अवहेलना या उपेक्षा करना। उदा०—तेहि रिस हौं परहेलिउँ।—जायसी।

परांग—पुं० [सं० पर-अंग, ष० त०] १. दूसरे का अंग। [कर्म० स०] २. श्रेष्ठ अंग।

परांगद—पुं० [सं० परांग√दा (देना)+क] शिव।

परांगभक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० परांग√भक्ष् (खाना)+णिनि] १. वह जो दूसरों के अंग खाता हो। २. परजीवी।

परांगव—पुं० [सं० परांग√वा (गति)+क] समुद्र।

परांचा—पुं० [फा० प्रांचः] १. तख्ता। २. तख्तों की पाटन। ३. नावों का बेड़ा।

परांज—पुं० [सं० पर√अञ्ज् (चिकना करना)+अच्] १. तेल निकालने का यंत्र। कोल्हू। २. फेन। ३. छुरी, तलवार आदि का फल।

परांजन—पुं०=परांज।

पराँठा—पुं० [हिं० पलटना] [स्त्री० अल्पा० पराँठी] तवे पर घी लगाकर सेंकी हुई रोटी।

परांत—पुं० [सं० पर-अंत, कर्म० स०] मृत्यु।

परांतक—पुं० [सं० पर-अंतक, कर्म० स०] शिव।

परांत-काल—पुं० [ष० त०] १. मृत्यु का समय। २. वह समय जब कोई आवागमन के चक्र से छूटने के लिए अंतिम बार शरीर छोड़ रहा हो।

पराँदा†—पुं० [फा० परंद] [स्त्री० अल्पा० पराँदी] स्त्रियों के बाल गूँथने की चोटी।

परा—उप० एक संस्कृत उपसर्ग जो निम्नलिखित अर्थों में प्रयुक्त होता है—(क) दूरी पर। परे। जैसे—पराकरण। (ख) आगे की ओर। जैसे—पराक्रमण। (ग) विपरीतता। जैसे—पराजय, पराभव।
वि० [सं० पर का स्त्री०] १. जो सब से परे हो। २. उत्तम। श्रेष्ठ।
स्त्री० [सं०√पृ (पूर्ति)+अच्+टाप्] १. चार प्रकार की वाणियों में पहली जो नाद स्वरूपा और मूलाधार से निकली हुई मानी गई है।

२. वह विद्या जो ऐसी वस्तु का ज्ञान कराती है जो सब गोचर पदार्थों से परे हो। ब्रह्मविद्या। ३. एक प्रकार का साम-गान। ४. एक प्राचीन नदी। ५. गंगा। ६. बाँझ-ककोड़ा।
पुं० [हिं० पारना] रेशम फेरनेवाला का लकड़ी का एक औजार।
†पुं० [?] कतार। पंक्ति। जैसे—फौजें परा बाँधकर खड़ी थीं।
क्रि० प्र०—बाँधना।

पराई*—वि० हिं० 'पराया' का स्त्री०।

पराक—पु० [सं० पर-आक, ब० स०] १. दे० 'कृच्छ्रापराक'। २. खड्ग। ३. एक प्रकार का रोग। ४. एक प्रकार का छोटा कीड़ा या जंतु।

परा-करण—पुं० [सं० परा√कृ (करना)+ल्युट्—अन] १. दूर करना या परे हटाना। २. अस्वीकृत कराना। ३. तिरस्कृत करना।

पराकाश—पुं० [सं० परा√काश् (चमकना) +घञ्] १. शतपथ ब्राह्मण के अनुसार दूर-दर्शिता। दूर की सूझ। २. दूरवर्ती आशा। ३. दूर का दृश्य।

पराकाष्ठा—स्त्री० [सं० व्यस्तपद] १. चरम सीमा। सीमांत। हद। अन्त। २. लाक्षणिक अर्थ में किसी कार्य या बात की ऐसी स्थिति जहाँ से और आगे ले जाने की कल्पना असंभव हो। जैसे—झूठ की पराकाष्ठा। ३. ब्रह्मा की आधी आयु की संख्या। ४. गायत्री का एक भेद।

पराकोटि—स्त्री०=पराकाष्ठा।

पराक्पुष्पी—स्त्री० [सं० ब० स०,+ङीप्] आपामार्ग। चिचड़ी।

पराक्रम—पुं० [सं० परा√क्रम् (गति)+घञ्] [वि० पराक्रमी] १. आगे की ओर अथवा किसी के विरुद्ध गमन करना या चलना। २. आगे बढ़कर किसी पर आक्रमण करना। ३. वह गुण या शक्ति जिसके द्वारा मनुष्य कठिनाइयों को पार करता हुआ आगे बढ़ता है और उत्साह, वीरता आदि के अच्छे और बड़े काम करता है। ४. उद्योग। पुरुषार्थ।
मुहा०—पराक्रम चलना=शारीरिक सामर्थ्य के आधार पर पुरुषार्थ या उद्योग हो सकना। जैसे—जब तक हमारा पराक्रम चलता है, तब तक हम कुछ न कुछ काम करते ही रहेंगे।

पराक्रमण—पुं० [सं० परा√क्रम्+ल्युट्—अन] आगे की ओर अथवा किसी के विरुद्ध बढ़ना।

पराक्रमी (मिन्)—वि० [सं० पराक्रम+इनि] १. जिसमें यथेष्ट पराक्रम हो। २. पराक्रम करने या दिखानेवाला अर्थात् बलवान या वीर। ३. पुरुषार्थी।

पराक्रांत—वि० [सं० परा√क्रम्+क्त] १. पीछे की ओर मोड़ा हुआ। २. जिसमें उत्साह और वीरता हो। ३. आक्रांत।

पराग—पुं० [सं० परा√गम् (जाना)+ड] १. वह रज या धूल जो फूलों के बीच लम्बे केसरों पर जमा रहती है। पुष्पराज। (पोलेन) २. धूलि। रज। ६. चन्दन। ४. कपूर के छोटे कण। ५. एक प्राचीन पर्वत। ६. उपराग। स्वच्छन्द रूप में होनेवाली गति। ८. प्राचीन भारत में नहाने से पहले शरीर पर लगाने का एक सुगंधित चूर्ण।

पराग-केसर—पुं० [मध्य० स०] फूलों के बीच का वह केसर (गर्भ केसर से भिन्न) या सींगा जो उसका पुंलिंग अंग माना जाता है। (स्टैमेन)

परागजज्वर—पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग जो कुछ घासों और वृक्षों का पराग शरीर में पहुँचने से उत्पन्न होता है। इसमें आँखें और ऊपरी स्वास संस्थान में सूजन होती है जिससे छींकें आने लगती हैं और कभी-कभी ज्वर तथा दमा भी हो जाता है।

परागण—पुं० [सं० परागकरण] पेड़-पौधों का पराग या पुष्परज से युक्त होना या किया जाना। (पोलिनेशन)

परागत—भू० कृ० [सं० परा√गम् (जाना)+क्त] १. दूर गया हुआ। २. मरा हुआ। मृत। ३. घिरा हुआ। ४. फैला हुआ। विस्तृत।

परागति—स्त्री० [सं० परा√गम्+क्तिन्] गायत्री।

परागना—अ० [सं० उपराग=विषयाशक्ति] आसक्त होना।
अ० [सं० पराग+हिं० ना (प्रत्य०)] पराग से युक्त होना।
स० पराग से युक्त करना।

पराङ्मुख—वि० [सं० ब० स०] १. जो पीछे की ओर मुँह फेरे हुए हो। विमुख। २. जो किसी की ओर ध्यान न देकर उसकी ओर से मुँह फेर ले। ४. उदासीन। ४. विपरीत। विरुद्ध।

पराच्—वि० [सं० परा√अञ्च् (गति)+क्विप्] १. प्रतिलोमगामी। उलटा चलने या जानेवाला। ऊर्ध्वगामी। ३. परोक्ष में जानेवाला। ३. जिसका मुँह बाहर की ओर हो।

पराचीन—वि० [सं० पराच्+ ख—ईन] १. पराङ्मुख। २. दूसरी ओर स्थित।
†वि०=प्राचीन।

पराछित*—पुं०=प्रायश्चित। उदा०—मार्याँ परछित लागसी म्हाँने दीजो पीहर मेल।—मीराँ।

पराजय—स्त्री० [सं० परा√जि (जीतना)+अच्] प्रतियोगिता, युद्ध आदि में होनेवाली हार। शिकस्त। 'जय' का विपर्याय।

पराजिका—स्त्री० [सं० उपराजिका या हिं० परज]संगीत में एक प्रकार की रागिनी।

पराजित—भू० कृ० [सं० परा√जि+क्त] हराया या हारा हुआ।

पराणसा—स्त्री० [सं० परा√अन् (जीना)+अस+टाप्] चिकित्सा। औषधोपचार। इलाज।

परात—स्त्री० [सं० पात, मि० पुर्त्त० प्राट] थाली के आकार का ऊँचे किनारोंवाला एक बड़ा बरतन।

परात्पर—वि० [सं० अलुक् स०] जिसके परे या जिससे बढ़कर कोई दूसरा न हो। सर्वश्रेष्ठ।
पुं० १. परमात्मा। २. विष्णु।

परात्प्रिय—पुं० [सं० अलुक् स०] कुश की तरह की एक प्रकार की घास जिसमें जौ या गेहूँ के से दाने पड़ते हैं। उलपतृण।

परात्मा (त्मन्)—पुं० [सं० पर-आत्मन्, कर्म० स०] परमात्मा। परब्रह्म।

परादन—पुं० [सं० पर-अदन, ब० स०] अरब या फारस देश का एक प्रकार का घोड़ा।

पराधि—स्त्री० [सं० पर-आधि, कर्म० स०] तीव्र मानसिक व्यथा।

पराधीन—वि० [सं० पर-अधीन, ष० त०] [भाव० पराधीनता] जो दूसरे या दूसरों के अधीन हो। जिसपर किसी दूसरे का अंकुश या शासन हो।

पराधीनता—स्त्री० [सं० पराधीन+तल्+टाप्] पराधीन होने की अवस्था या भाव।

परान†—पुं०=प्राण।

पराना—अ० [सं० पलायन] १. भागना। २. दूर होना।
स० १. भगाना। २. दूर करना।
*वि० [स्त्री० परानी]=पुराना।
†स०=पिराना।

परानी†—पुं०=प्राणी।

परान्न—पुं० [सं० पर-अन्न, ष० त०] दूसरे का दिया हुआ अन्न या भोजन। पराया धान्य।

परान्नभोजी (जित्)—वि० [सं० परान्न√भुज् (खाना)+णिनि] जो दूसरों का दिया हुआ अन्न खाकर पलता हो।

परापति†—स्त्री०=प्राप्ति।

परापर—वि० [सं० पर+अपर] १. पर और अपर। २. जिसमें परत्व और अपरत्व दोनों गुण हों। (वैशेषिक) ३. अच्छा और बुरा
पुं० फालसा।

परापरज्ञ—वि० [सं०] १. पर और अपर का ध्यान रखनेवाला। २. ऊँच-नीच या भला-बुरा समझनेवाला।

पराभक्ति—स्त्री० [सं० व्यस्त पद] मनुष्य के मन में ईश्वर के प्रति होनेवाली वह विशुद्ध भक्ति जिसमें अपने स्वार्थ या हित की कुछ भी कामना नहीं होती। साध्या भक्ति।

पराभव—पुं० [सं० परा√भू (होना)+अप्] १. व्यक्ति, जाति देश आदि का होनेवाला पतनोन्मुखी तथा ह्रासमय अंत। २. नाश। विनाश। ३. पराजय। हार। ४. अपमान। बेइज्जती।

पराभिक्ष—पुं० [सं० पर-आ√भिक्ष् (माँगना)+अण्] एक प्रकार का वानप्रस्थ जो थोड़ी सी भिक्षा से निर्वाह करता हो।

पराभूत—भू० कृ० [सं० परा√भू+क्त] १. जिसका पराभव किया गया हो, या हुआ हो। हराया या हारा हुआ। पराजित। परास्त। २. ध्वस्त। विनष्ट।

पराभूति—स्त्री० [सं० परा√भू+क्तिन्] दे० 'पराभव'।

परा-मनोविज्ञान—पुं० [सं०] आधुनिक खोजों और प्रयोगों के आधार पर स्थित एक नया विज्ञान जिसमें यह सिद्ध होता है कि मनुष्य में अथवा उसकी आत्मा या मन में कुछ ऐसी आध्यात्मिक और मानसिक शक्तियाँ हैं जो काल, देश तथा शरीर की सीमाओं में बद्ध नहीं हैं और जो ऐसे अद्भुत कार्य करती हैं जिनका साधारण बुद्धि या विज्ञान से किसी प्रकार का समाधान नहीं होता। (पैरा-साइकोलाजी)

परा-मनोवैज्ञानिक—वि० [सं०] परा-मनोविज्ञान-संबंधी।
पुं० परा-मनोविज्ञान का ज्ञाता या पंडित।

परामर्श—पुं० [सं० परा√मृश् (छूना)+घञ्] १. पकड़ना। खींचना। जैसे—केश-परामर्श। २. विवेचन। विचार। ३. विवेचन या विचार के लिए आपस में होनेवाली सलाह। ४. किसी विषय में दूसरे से ली जानेवाली सलाह। ५. निर्णय।
क्रि० प्र०—करना। देना।—माँगना।—लेना।
६. अनुमान। अन्दाज। अटकल। ७. याद। स्मृति। ८. तरकीब युक्ति।

परामर्श-दाता (तृ)—पुं० [सं० ष० त०] [स्त्री० परामर्शदात्री] दूसरों को परामर्श या सलाह देनेवाला।

परामर्शदात्री-परिषद्—स्त्री० [सं० व्यस्तपद]=परामर्श-समिति।

परामर्शन—पुं० [सं० परा√मृश्+ल्युट्—अन] १. खींचना। २. परामर्श अथवा सलाह करने की क्रिया या भाव। ३. चिन्तन, ध्यान या स्मरण।

परामर्श-समिति—स्त्री० [सं० व्यस्त पद] वह समिति जो किसी विषय के संबंध में अपनी राय देने के लिए नियुक्त की जाती है।

परामृत—वि० [सं० पर-अमृत, कर्म० स०] जिसने मृत्यु को जीत लिया हो।

परामृष्ट—भू० कृ० [सं० परा√मृश्+क्त] १. पकड़कर खींचा हुआ। २. पीड़ित। ३. जिसके संबंध में परामर्श हो चुका हो। ४. जिसके विषय में विचार के उपरांत निर्णय या निश्चय हो चुका हो।

परापर्चा—पुं० [फा० पार्चः] १. कपड़ों के कटे टुकड़ों की टोपियाँ आदि बनाकर बेचनेवाला। २. सिले-सिलाये कपड़े बेचनेवाला रोजगारी।

परायण—वि० [सं० पर-अयन, ब० स०] [स्त्री० परायणा] १. गया या बीता हुआ। गत। २. किसी काम या बात में अच्छी तरह लगा हुआ। निरत। जैसे—कर्त्तव्यपरायण। ३. किसी के प्रति पूर्ण निष्ठा या भक्ति रखनेवाला। जैसे—धर्मपरायण स्त्री।
पुं० १. वह स्थान जहाँ शरण मिली हो। शरण का स्थान। २. विष्णु।

परायत्त—वि० [सं० पर-आयत्त, ष० त०] पराधीन।

पराया—वि० पुं० [सं० पर+हिं० आया (प्रत्य०) [स्त्री० पराई] १. जिसका संबंध दूसरे से हो। अपने से भिन्न। 'अपना' का विपर्याय। २. आत्मीय या स्वजन से भिन्न।
पद—पराया समझकर=आत्मीयता के भाव से रहित या विमुख होकर।

परायु (युस्)—पुं० [सं० पर-आयुस्, ब० स०] ब्रह्मा, जिनकी आयु सब से अधिक कही गई है।

परारा†—वि०=पराया।

परारध†—पुं०=परार्द्ध।

परारबध†—पुं०=प्रारब्ध।

परारि—अव्य० [सं० पूर्वतर+अरि, नि० पर—आदेश] पूर्वतर वर्ष में। परियार साल।

परारु—पुं० [सं० परा√ऋ (गति)+उण्] करेला।

परारुक—पुं० [सं० परा√ऋ+उक] १. चट्टान। २. पत्थर।

परार्थ—वि० [सं० पर-अर्थ, नित्य स०] [भाव० परार्थता] जो दूसरे के निमित्त हो।
पुं० १. दूसरों का ऐसा काम जो उपकार की दृष्टि से किया जाता हो। २. दे० 'परमार्थ।'

परार्थवाद—पुं० [सं० ष० त०] यह सिद्धांत कि जहाँ तक हो सके, दूसरों का उपकार करते रहना चाहिए। (एल्ट्रूइज्म)

परार्थवादी (दिन्)—वि० [सं० परार्थ√वद् (बोलना)+णिनि] परार्थवाद-संबंधी।
पुं० १. परार्थवाद का अनुयायी। २. वह जो सदा दूसरों का उपकार करता हो।

परार्द्ध—पुं० [सं० अर्ध,√ऋधे (वृद्धि)+अच्, पर-अर्ध, कर्म० स०] १. बादवाला आधा अंश। उत्तरार्द्ध। २. वह संख्या जिसे लिखने में अठारह अंक होते हैं। एक शंख। १०००००००००००००००००। ३. ब्रह्मा की आयु का परवर्ती आधा अंश।

परार्द्धि—पुं० [सं० परा-ऋद्धि, ब० स०] विष्णु।

परार्ध्य—वि० [सं० परार्ध+यत्] १. श्रेष्ठ। २. उत्तम।
पुं० १. असीम संख्या। २. सबसे बड़ी वस्तु।

परालब्ध†—पुं०=प्रारब्ध।

पराव—पुं०=परायापन।
† वि०=पराया।
पुं० [हिं० पराना] भागने की क्रिया या भाव।

परावत—पुं० [सं० परा√अव् (रक्षण आदि)+अतच्] फालसा।

परावन—पुं० [सं० पलायन, हिं० पराना] १. एक साथ बहुत से लोगों का भागना। भगदड़। पलायन।
वि० भागनेवाला। भग्गू।
पुं० [हिं० पड़ना, पड़ाव] गाँववालों का गाँव के बाहर डेरा डालकर उत्सव मनाना।

परावर—वि० [सं० पर-अवर, कर्म० स०] [स्त्री० परावरा] १. पहले और पीछे का। २. निकट और दूर का। ३. सर्वश्रेष्ठ।
पुं० १. कारण और कार्य। २. विश्व। ३. अखिलता।

परावर्त—पुं० [सं० परा√वृत् (बरतना)+घञ्] १. लौटकर पीछे आना। प्रत्यावर्तन। २. अदला-बदली। विनिमय। ३. दे० 'प्रति-वर्त'।

परावर्तक—वि० [सं० परा√वृत्+ण्वुल्—अक] १. लौटकर पीछे आने या जानेवाला। २. अदल-बदल जानेवाला।

परावर्तन—पुं० [सं०परा√वृत्+ल्युट्—अन] १. लौटकर पीछे आना। प्रत्यावर्तन। २. उलटने पर फिर ज्यों का त्यों हो जाना। ३. उल-टाया जाना। ४. दे० 'अंतरण'। ५. धार्मिक ग्रंथों का पुनर्पठन। (जैन)

परावर्त-व्यवहार—पुं० [सं० ष० त०] किसी निर्णय पर होनेवाला पुनर्विचार।

परावर्तित—भू० कृ० [सं० परा√वृत्+णिच्+क्त] पलटाया हुआ। पीछे फेरा हुआ। पीछे की ओर लौटाया हुआ।

परावर्ती (तिन्)—वि० [सं० परा√वृत्+णिनि] १. लौटकर पुनः अपने स्थान पर आने या पहुँचनेवाला। २. फिर से पहलेवाली स्थिति में आनेवाला।

परा-वसु—पुं० [सं० प्रा० ब० स०] १. असुरों का पुरोहित। २. रैभ्य मनु के एक पुत्र का नाम। ३. विश्वामित्र के एक पौत्र का नाम।

परावह—पुं० [सं० परा√वह् (ढोना)+अच्] वायु के सात भेदों में से एक।
विशेष—अन्य छः भेद आवह, उदह, परिवह, प्रवह, विवह और संवह हैं।

परावा†—वि०=पराया।

पराविद्ध—पुं० [सं० परा√व्यध् (ताड़न करना) +क्त] कुबेर।

परावृत्त—वि० [सं० परा√वृत्+क्त] [भाव० परावृत्ति] १. पलटा या पलटाया हुआ। फेरा हुआ। परावर्तित। २. बदला हुआ।

परावृत्ति—स्त्री० [सं० परा√वृत्+क्तिन्] १. पलटने या पलटाने का भाव। पलटाव। परावर्तन। २. व्यवहार या मुकदमे पर फिर से होनेवाला विचार।

परावेदी (दिन्)—स्त्री० [सं० परा-आ√विद्+णिनि] भटकटैया।

पराव्याध—पुं० [सं० परा√व्यध्+घञ्] परास।

पराशय—वि० [सं० परा√शी (सोना)+अच्] बहुत अधिक।

पराशर—पुं० [सं० पर-आ√शृ (हिंसा)+अच्] १. वशिष्ठ के पौत्र और कृष्ण द्वैपायन व्यास के पिता जो पराशर स्मृति के रचयिता माने जाते हैं। २. एक ज्योतिष ग्रंथ (पराशरी संहिता) के रचयिता। ३. आयुर्वेद के एक प्रधान आचार्य।

पराशरी (रिन्)—पुं० [सं० पाराशर्य+णिनि, यलोप, पृषो० ह्रस्व] १. भिक्षुक। २. संन्यासी।

पराश्रय—पुं० [सं० पर-आश्रय, ष० त०] १. दूसरे का अवलंब या आश्रय। २. परवशता। पराधीनता।

पराश्रया—स्त्री० [सं० पर-आश्रय, ब० स०+टाप्] बाँदा। परगाछा।

पराश्रयी (यिन्)—वि० [सं० पराश्रय+इनि] १. दूसरे के आश्रय और सहारे पर रहनेवाला। २. दे० 'पर-जीवी'।
पुं० ऐसे कीटाणुओं, वनस्पतियों आदि का वर्ग जो दूसरे जंतुओं, वन-स्पतियों आदि के अंगों पर रहकर जीवन-निर्वाह करते हों। (पैरे-साइट)

पराश्रित—वि० [सं० पर-आश्रित, ष० त०] १. जो किसी दूसरे के आश्रय में रहता हो। २. जो दूसरे के आसरे पर या भरोसे चलता या रहता हो।

परास—पुं० [सं० परा√अस् (फेंकना)+घञ्] १. उतना अवकाश या दूरी जितनी कोई चलाई या फेंकी जानेवाली चीज उड़ते-उड़ते पार करती हो। जैसे—बंदूक की गोली या तीर का परास। २. उतना क्षेत्र जहाँ तक किसी क्रिया का प्रभाव या फल होता हो। ३. उतना प्रदेश जितने में कोई चीज पाई जाती हो। (रेंज)

परासन—पुं० [सं० परा√अस्+ल्युट्—अन] १. जान से मारना। २. वध करना।

परासी—स्त्री० [सं० परास+ङीष्] पलाश्री नाम की रागिनी।

परासु—वि० [सं० परा-असु, ब० स०] [भाव० परासुता] मरा हुआ। मृत।

परास्कंदी (दिन्)—पुं० [सं० पर-आ√स्कन्द् (गति, शोषण)+णिनि] चोर।

परास्त—वि० [सं० परा√अस्+क्त] १. द्वंद्व, प्रतियोगिता आदि में हारा या हराया हुआ। पराजित। २. किसी के सामने झुका या दबा हुआ। ३. ध्वस्त। विनष्ट।

पराह—पुं० [सं० पर-अहन्, कर्म० स०, टच्] अन्य या दूसरा दिन।

पराहत—वि० [सं० परा-आ√हन् (हिंसा)+क्त] १. जो आघात के द्वारा गिराया या पीछे हटाया गया हो। २. आक्रांत। ३. नष्ट किया या मिटाया हुआ। ध्वस्त। ४. जिसका खंडन हुआ हो। खंडित। ५. जोता हुआ।

पराहति—स्त्री० [सं० परा-आ√हन्+क्तिन्] १. खंडन। २. विरोध।

पराह्ण—पुं० [सं० पराह्ण] दोपहर के बाद का समय। अपराह्ण।

पराहृत—भू० कृ० [सं० परा-आ√हृ (हरण करना)+क्त] हटाया हुआ।

परिंदगी—स्त्री० [फा०] १. पक्षियों का जीवन। २. परिन्दों की उड़ान।

परिंदा—पुं० [फा० परिंदः] चिड़िया। पक्षी।

परि—उप० [सं० √पृ (पूर्ति) +इन्] एक संस्कृत उपसर्ग जो प्रायः क्रियाओं से बनी हुई संज्ञाओं के पहले लगकर नीचे लिखे अर्थ देता है। १. आस-पास या चारों ओर। जैसे—परिक्रमण, परिभ्रमण आदि। २. अच्छी या पूरी तरह अथवा हर तरह। जैसे—परिकल्पन, परिवर्द्धन, परिरक्षण आदि। ३. अतिरिक्त रूप से, बहुत अधिक या बहुत जोरों से। जैसे—परिकंप, परिताप, परित्याग, परिश्रम आदि। ४. दोष दिखलाते या निंदनीय ठहराते हुए। जैसे—परिवाद, परिहास आदि। ५. किसी विशिष्ट क्रम या नियम से। जैसे—परिच्छेद। विशेष—(क) कुछ अवस्थाओं में यह विशेषणों और अन्य प्रकार की संज्ञाओं तथा प्रत्ययों के पहले भी लगता और बहुत-कुछ उक्त प्रकार के अर्थ देता है। जैसे—परिपूर्ण=अच्छी तरह भरा हुआ; परिलघु=बहुत ही छोटा; परितः=चारों ओर; परिधि=चारों ओर का घेरा; पर्यग्नि=चारों ओर जानेवाली अग्नि से घिरा हुआ; पर्यश्रु=उमड़ते हुए आंसुओंवाला। (ख) जुए के दाँव, पासे, संख्या आदि के प्रसंग में यह कुछ शब्दों के अन्त में लगकर 'हारा हुआ' का भी अर्थ देता है। जैसे—अक्षपरि=पासे के खेल में हारा हुआ। (ग) कहीं-कहीं इसके रूप 'परी' भी हो जाता है; परन्तु अर्थ ज्यों का त्यों रहता है। जैसे—परिवाह और परीवाह; परिहास और परीहास आदि।

अव्य० [?] १. तरह या प्रकार से। उदा०—पिड़ि पहिर तै नवी परि।—प्रिथीराज। २. के तुल्य। के बराबर। समान। उदा०—पेखि कली पदमिणी परी।—प्रिथीराज।

विशेष—उक्त अर्थों में यह शब्द राजस्थानी के अतिरिक्त गुजराती और मराठी में भी इसी रूप में प्रचलित है।

परि-कंप—पुं० [सं० परि√कम्प् (काँपना)+घञ्] बहुत जोरों का कंपन।

परिक—स्त्री० [देश०] बहुत अधिक खोटी या मिलावटवाली चाँदी।

परि-कथा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. बौद्धों के अनुसार, कोई धार्मिक कथा या विवरण। २. कहानी।

परि-कर—पुं० [सं० परि√कृ (विक्षेप)+अप्] १. पर्यंक। पलंग। २. घर या परिवार के लोग। ३. किसी के आस-पास या संग-साथ रहनेवाले लोग। जैसे—राजाओं का परिकर। ४. वृन्द। समूह। ५. तैयारी। समारंभ। ६. कमरबन्द। पटका। ७. विवेक। ८. एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें किसी विशेष्य से पहले किसी विशिष्ट अभिप्राय से विशेषण लगाये जाते हैं। जैसे—हिमकर वदनी (ताप हरण करनेवाली नायिका)।

परिकरमा†—स्त्री०=परिक्रमा।

परिकरांकुर—पुं० [सं० परिकर-अंकुर, ष० त०] वह अर्थालंकार जिसमें विशेष्य का कथन किसी विशिष्ट अभिप्राय से किया जाता है।

परिकर्तन—पुं० [सं० परि√कृत् (काटना)+ल्युट्—अन] १. चारों ओर से काटना। २. गोलाकार काटना। ३. शूल।

परिकर्तिका—स्त्री० [सं० परि√कृत्+ण्वुल्—अक+टाप्, इत्व] शूल।

परिकर्म (कर्मन्)—पुं० [सं० परि√कृ (करना)+मनिन्] १. देह को सजाने का काम। २. शरीर का शृंगार या सजावट।

परिकर्मा (कर्मन्)—पुं० [सं० प्रा० ब० स०] नौकर। सेवक।

परिकर्षण—पुं० [सं०] खेती-बारी के काम के लिए जमीन जोतना, बोना आदि।

परिकलक—पुं० [सं० परि√कल् (गिनना)+णिच्+ण्वुल्—अक] १. परिकलन करने अर्थात् हिसाब लगाने या लेखा करनेवाला व्यक्ति। २. एक तरह का आधुनिक यंत्र जो कई प्रकार का काम जल्दी और सहज में करता है। ३. वह पुस्तक जिसमें अनेक प्रकार के लगे हुए हिसाबों के बहुत से कोष्ठक होते हैं। (कैलकुलेटर, उक्त दोनों अर्थों में)

परिकलन—पुं० [सं० परि√कल्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिकलित] १. गणित में वह गणना जो कुछ जटिल होती है तथा जिसमें कुछ विशिष्ट तथा निश्चित क्रियाओं की सहायता लेनी पड़ती है। (कैलकुलेशन)

परिकलित—भू० कृ० [सं० परि√कल्+णिच्+क्त] जिसका परिकलन हो चुका हो।

परिकल्पन—पुं० [सं० परि√कृप् (सामर्थ्य)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिकल्पित] १. परिकल्पना करने की क्रिया या भाव। २. किसी विषय पर होनेवाला चिंतन या मनन। ३. बनावट। रचना। ४. विभाजन। ५. दे० 'परिकल्पना'।

परिकल्पना—स्त्री० [सं० परि√कृप्+णिच्+युच्—अन+टाप्] १. जिस बात की बहुत-कुछ संभावना हो उसे पहले ही मान लेना या उसके नाम, रूप आदि की कल्पना कर लेना। २. केवल तर्क के लिए कोई बात मान लेना। ३. कुछ विशिष्ट आधारों पर कोई बात ठीक या सही मान लेना। ४. गणित में कोई विशिष्ट मान या राशि निकलने से पहले उसके लिए कोई निश्चित मान राशि या चिह्न अवधारित करना। (प्रिज़म्पशन)

परिकल्पित—भू० कृ० [सं० परि√कृप्+क्त] १. (बात या विषय) जिसकी परिकल्पना की गई हो। २. (पदार्थ या रूप) जो परिकल्पना के फल-स्वरूप बना या प्रस्तुत हुआ हो। ३. जो केवल तर्क के लिए मान लिया गया हो। ४. जो कुछ विशिष्ट आधारों पर ठीक या सही मान लिया गया हो। ५. कल्पित। मन-गढ़न्त। ६. ठहराया या ठीक किया हुआ। निश्चित। ७. बनाया हुआ। रचित।

परिकांक्षित—पुं० [सं० परि√काङ्क्ष् (चाहना)+क्त] १. भक्त। २. तपस्वी।

परिकीर्ण—भू० कृ० [सं० परि√कृ+क्त, इत्व, नत्व] १. फैला या फैलाया हुआ विस्तृत। २. छितरा या छिटकाया हुआ। ३. समर्पित।

परिकीर्तन—पुं० [सं० परि√कृत् (जोर से शब्द करना)+ल्युट्—अन] १. खूब ऊँचे स्वर से कीर्तन करना। २. किसी के गुणों के बहुत अधिक और विस्तारपूर्वक किया जानेवाला वर्णन।

परिकीर्तित—भू० कृ० [सं० परि√कृत्+क्त] जिसका परिकीर्तन हुआ हो या किया गया हो।

परि-कूट—पुं० [सं० मध्य० स०] १. नगर या दुर्ग के फाटक को घेरनेवाली खाईं। २. एक नागराज का नाम।

परिकूल—पुं० [सं० प्रा० स०] कूल अर्थात् किनारे के पास का स्थान।

परिकेंद्र—पुं० [सं० प्रा० स०] ज्यामिति में परिवृत्त (देखें) का केन्द्र।

परिकोप—पुं० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक या प्रचंड क्रोध।

परिक्रम—पुं० [सं० परि√क्रम् (गति)+घञ्] १. चारों ओर घूमना। २. घूमना। ३. सैर करने के लिए घूमना। टहलना। ४. किसी काम की जाँच या निरीक्षण के लिए जगह-जगह जाना या घूमना। (टूर) ५. प्रवेश। ६. दे० 'क्रम'। ७. दे० 'परिक्रमा'।

परिक्रमण—पुं० [सं० परि√क्रम्+ल्युट्—अन्] १. चारों ओर चलने अथवा घूमने, टहलने या सैर करने की क्रिया या भाव। २. किसी काम की देख-रेख के लिए जगह-जगह जाना। दौरा करना। ३. परिक्रमा करना।

परिक्रम-सह—पुं० [सं० परिक्रम√सह् (सहना)+अच्] बकरा।

परिक्रमा—स्त्री० [सं० परि√क्रम्+अ+टाप्] १. चारों ओर चक्कर लगाना या घूमना। २. किसी तीर्थ, देवता या मंदिर के चारों ओर भक्ति और श्रद्धा से तथा पुण्य की भावना से चक्कर लगाने की क्रिया। प्रदक्षिणा। ३. इस प्रकार लगाया जानेवाला चक्कर या फेरा। प्रदक्षिणा। ४. उक्त प्रकार का चक्कर लगाने के लिए नियत किया या बना हुआ मार्ग।

परिक्रय—पुं० [सं० परि√क्री (खरीदना)+अच्] १. खरीदने की क्रिया या भाव। खरीद। २. भाड़ा। ३. मजदूरी। ४. पारिश्रमिक या मजदूरी तै करके किसी को किसी कार्य पर लगाना। ५. व्यापारिक कार्यों के लिए माल आदि का होनेवाला विनिमय। ६. इस प्रकार दिया या लिया हुआ माल।

परिक्रांत—वि० [सं० परि√क्रम्+क्त] जिसके चारों ओर चला या चक्कर लगाया जा सके।

परिक्रामी—वि० [सं०] १. परिक्रमा करने अर्थात् चारों ओर घूमनेवाला। २. बराबर एक स्थान से दूसरे पर जाता या घूमता रहनेवाला।

परिक्रिया—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. किसी चीज को चारों ओर से दीवार, खाईं आदि से घेरने की क्रिया या भाव। २. स्वर्ग की कामना से किया जानेवाला एक प्रकार का यज्ञ। ३. आनन्द, मोह आदि के लिए की जानेवाली कोई क्रिया या आयोजन।

परिक्लांत—वि० [सं० परि√क्लम् (थकना)+क्त] जो थककर चूर हो गया हो।

परिक्लिष्ट—वि० [सं० परि√क्लिश् (कष्ट सहना)+क्त] १. बहुत अधिक क्लिष्ट। २. तोड़ा-फोड़ा और नष्ट-भ्रष्ट किया हुआ।

परिक्लेद—पुं० [सं० परि√क्लिद् (गीला होना)+घञ्] आर्द्रता। नमी।

परिक्वणन—वि० [सं० परि√क्वण् (शब्द करना)+ल्युट्+अन] बहुत ऊँचा (स्वर)।

पुं० बादल जो बहुत ऊँचा स्वर करता है।

परिक्षत—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० परिक्षति] १. जिसे बहुत अधिक क्षति पहुँची हो। २. जिसे बहुत अधिक चोट लगी हो। आहत। ३. नष्ट-भ्रष्ट।

परिक्षय—पुं० [सं० प्रा० स०] पूरा और सामूहिक विनाश।

परिक्षव—पुं० [सं० परि+क्षु (शब्द करना)+अप्] अशुभ सगुनवाली छींक।

परिक्षा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] कीचड़।

†स्त्री०=परीक्षा।

परिक्षाम—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक क्षीण या दुर्बल।

परिक्षालन—पुं० [सं० √क्षल् (धोना)+णिच्+ल्युट्—अन] १. वस्त्र आदि धोने की क्रिया या भाव। २. धोने का काम।

परिक्षित्—पुं० [सं० परि√क्षि (नाश)+क्विप्, तुक्-आगम] १. एक प्रसिद्ध प्रतापी राजा जो अभिमन्यु के पुत्र और जनमेजय के पिता थे। २. अग्नि।

परिक्षिप्त—भू० कृ० [सं० परि√क्षिप् (प्रेरणा)+क्त] १. जो चारों ओर से घिरा या घेरा गया हो। २. फेंका और त्यागा हुआ।

परिक्षीण—वि० [सं० प्रा० स०] १. बहुत अधिक दुर्बल। २. निर्धन। ३. दे० 'शोधाक्षय'।

परिक्षेत्रिक—वि० [सं०] दे० 'परिनागर'।

परिक्षेप—पुं० [सं० परि√क्षिप्+घञ्] १. गदा को चारों ओर घुमाते हुए प्रहार करना। २. अच्छी तरह से चलना-फिरना या घूमना टहलना। ३. वह पट्टी या सीमा जिससे कोई चीज घिरी हुई हो। ४. फेंकना। ५. परित्याग करना।

परिखन—वि० [हिं० परिखना] १. परखनेवाला। २. प्रतीक्षा करनेवाला।

†स्त्री०=परख।

परिखना—अ० १.=परखना। २.=परेखना (प्रतीक्षा करना)।

परिखा—स्त्री० [सं० परि√खन् (खोदना)+ड+टाप्] १. दुर्ग, नगरी आदि के चारों ओर बनी हुई गहरी खाईं। २. गहराई।

परिखात—पुं० [सं० प्रा० स०] १. किसी चीज के चारों ओर बना हुआ गड्ढा। २. खाईं। परिखा।

परिखान—स्त्री० [सं० परिखात] कच्ची सड़क या जमीन पर बना हुआ गाड़ी के पहिए का चिह्न।

परिखिन्न—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक खिन्न या दुःखी।

परिखेद—पुं० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक थकावट।

परिख्यात—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० परिख्याति] जिसकी यथेष्ट ख्याति हो।

परिख्याति—स्त्री० [प्रा० स०] चारों ओर फैली हुई यथेष्ट ख्याति।

परिगंतव्य—वि० [सं० परि√गम् (जाना)+तव्यत्] १. जिसे प्राप्त

किया जा सके। २. जिसे जाना जा सके। ३. जिस तक पहुँचा जा सके।

परिगणक—पुं० [सं० परि√गण्+ण्वुल्–अक] परिगणन करनेवाला अधिकारी या कर्मचारी। (इन्युमेरेटर)

परिगणन—पुं० [सं० परि√गण् (गिनना)+ल्युट्–अन] १. अच्छी तरह गिनना। २. किसी विशिष्ट उद्देश्य से किसी स्थान पर होनेवाली वस्तुओं आदि को एक-एक करके गिनना। (इन्युमेरेशन) जैसे—जन-संख्या का परिगणन, पुस्तकालय की पुस्तकों का परिगणन।

परिगणना—स्त्री० [सं० प्रा० स०] =परिगणन।

परिगणनीय—वि० [सं० परि√गण्+अनीयर्] परिगणन किये जाने के योग्य। २. जिसका परिगणन होने को हो या हो सके।

परिगणित—वि० [सं० परि√गण्+क्त] १. जिसका परिगणन हो चुका हो। २. जिसका उल्लेख या गणन किसी अनुसूची में हुआ हो। अनुसूचित। जैसे—परिगणित जन-जतियाँ। (शेड्यूल्ड)

परिगण्य—वि० [सं० परि√गण्+यत्] परिगणनीय।

परिगत—भू०कृ० [सं०प्रा०स०] १. चारों ओर से घिरा हुआ। (सर्कम-स्क्राइब्ड) २. गुजरा या बीता हुआ। गत। ३. मरा हुआ। मृत। ४. भूला हुआ। विस्तृत। ५. जाना हुआ। ज्ञात। मिला हुआ। प्राप्त।

परिगमन—पुं० [सं० प्रा० स०] १. किसी के चारों ओर जाना। २. जानना। ३. प्राप्त करना।

परिगर्भिक—पुं० [सं० परिगर्भ, प्रा०स०, +ठन्—इक] गर्भवती माता का दूध पीने से बच्चों को होनेवाला एक प्रकार का रोग।

परिगर्वित—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक गर्व या घमंड करनेवाला। बहुत बड़ा अभिमानी।

परिगर्हण—पुं० [सं० प्रा० स०] अतिनिंदा।

परिगलित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. गिरा हुआ। च्युत। २. अच्छी तरह गला हुआ। ३. पिघला हुआ। तरल। ४. गायब। लुप्त। ५. डूबा हुआ।

परिगह—पुं० [सं० परिग्रह] घर या परिवार के अथवा आपसदारी के लोग। आत्मीय और कुटुंबी।

परिगहन—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक गहन।

परिगहना*—स० [सं० परिग्रहण] ग्रहण करना। अंगीकार या स्वीकार करना।

परिगीत—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] जिसका बहुत अधिक गुण-कीर्तन हुआ या किया गया हो।

परिगीति—स्त्री० [सं० प्रा० स०] एक प्रकार का वर्ण-वृत्त।

परिगुंठन—पुं० [सं०प्रा०स०] [भू० कृ० परिगुंठित] अच्छी तरह ढकना।

परिगुण—पुं० [सं० प्रा० स०] [वि० परिगुणी] शिक्षा, प्रशिक्षा आदि के द्वारा प्राप्त किया हुआ वह गुण या योग्यता जिससे मनुष्य ज्ञान आदि के किसी नियत और मान्य मानक तक पहुँच जाता है। और प्रायः उसका प्रमाण-पत्र प्राप्त कर लेता है। (क्वालिफिकेशन)

परिगुणन—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० परिगुणित] किसी चीज को बढ़ाकर या संख्या को गुणा करके कई गुना अधिक बढ़ाना। (मल्टी-प्लिकेशन)

परिगुणित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] जिसका परिगुणन हुआ हो।

परिगुणी (णिन्) वि० [सं० परिगुण]+इनि] जिसने कोई परिगुण अर्जित या प्राप्त किया हो। (क्वालिफायड)

परिगूढ़—वि० [सं० प्रा० स०] परिगहन। (दे०)

परिगृद्ध—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत बड़ा लालची। अतिलोभी।

परिगृहीत—भू० कृ० [सं० परि√ग्रह् (स्वीकार)+क्त] १. अंगीकार ग्रहण या स्वीकार किया हुआ। गृहीत। स्वीकृत। २. प्राप्त। ३. किसी के साथ मिला या मिलाया हुआ। सम्मिलित।

परिगृह्या—स्त्री० [सं० प्रा० स०] वह जिसे ग्रहण किया गया हो अर्थात् पत्नी।

परिग्रह—पुं० [सं० परि√ग्रह्+अप्] १. दान लेना। प्रतिग्रह। २. प्राप्ति ३. धन आदि का संग्रह। ४. मंजूरी। स्वीकृति। ५. अनुग्रह। दया। मेहरबानी। ६. किसी स्त्री को पत्नी के रूप में ग्रहण करना। पाणि-ग्रहण। ७. पत्नी। भार्या। ८. परिवार के लोग। परिजन। ९. उपहार, भेंट आदि के रूप में ग्रहण की जानेवाली वस्तु। १०. सेना का पिछला भाग। ११. सूर्य या चंद्र का ग्रहण। १२. कंद। मूल। १३. शाप। १४. कुसुम। शपथ। १५. विष्णु का एक नाम। १६. कुछ विशिष्ट वस्तुएँ संग्रह करने का व्रत। १७. जैन शास्त्रों के अनुसार तीन प्रकार के प्रगति निबंधन कर्म—द्रव्य परिग्रह, भाव परिग्रह और द्रव्यभाव परिग्रह।

परिग्रहण—पुं० [सं० प्रा० स०] १. पूरी तरह से ग्रहण करना। २. कपड़े पहनना।

परिग्रहीता (तृ)—पुं० [सं० परी√ग्रह्+तृच्] १. वह जिसने किसी को अंगीकार या ग्रहण किया हो। २. पति। ३. किसी को दत्तक बनाने या गोद लेनेवाला व्यक्ति।

परिग्राम—पुं० [सं० अव्य० स०] गाँव के चारों ओर या सामने का भाग।

परिग्राह—पुं० [सं० प्रा० स०] १. एक विशेष प्रकार की यज्ञ वेदी। २. बलि चढ़ाने के स्थान पर बना हुआ चारों ओर का घेरा।

परिग्राह्य—वि० [सं० प्रा० स०] जो आदरपूर्वक ग्रहण किये जाने के योग्य हो।

परिघ—पुं० [सं०परि√हन् (हिंसा)+अप्, घ—आदेश] १.लकड़ी, लोहे आदि का व्योंड़ा। अर्गल। २. आड़ या रुकावट के लिए खड़ी की हुई कोई चीज। ३. कोई ऐसा तत्त्व या बात जो किसी काम को यथा-साध्य पूरी तरह से रोकने में समर्थ हो। (बेरियर) ४. वह डंडा जिसके सिरे पर लोहा जड़ा हुआ हो। लोहाँगी। ५. बरछा। भाला। ६. मुद्गर। ७. कलश। घड़ा। ८. गोपुर। फाटक। ९. घर। मकान। १० तीर। बाण। ११. पर्वत। पहाड़। १२. वज्र। १३. जल का घड़ा। १४. चंद्रमा। १५. सूर्य। १६. नदी। १७. स्थल। १८. एक प्रकार का मूढ़ गर्भ। १९. कार्तिकेय का एक अनुचर। २०. ज्योतिष के २७ योगों में से १९वाँ योग। २१. शेषनाग। २२. अविद्या जो मनुष्य को आनंद और सुख से दूर रखती है। २३. वे बादल जो सूर्य के उदय या अस्त होने के समय उसके सामने आ जायँ।

परिघट्टन—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० परिघट्टित] तरल पदार्थ को चलाना।

परिघ-मूढ़-गर्भ—पुं० [सं० मूढ़-गर्भ कर्म० स०, परिघ-मूढ़ा—गर्भ, उपमि०

स०] वह बालक जो प्रसव के समय अर्गल या परिघ की तरह अटक जाय।

परिघर्म—पुं०[सं० परि√घृ (बहना)+ मन्] एक तरह का यज्ञ-पात्र जिसमें मदिरा आदि बनाई जाती थी।

परिघर्म्य—पुं०[सं० परिघर्म+यत्] यज्ञ में काम आनेवाला एक प्रकार का पात्र।

परिघात—पुं०[सं०परि+हन् (मारना)+घञ्, वृद्धि—न, त] १. मार-डालना। हत्या। हनन। २. ऐसा अस्त्र जिससे किसी की हत्या हो सकती हो।

परिघातन—पुं०[सं० परि√हन्+णिच्+ल्युट्-अन] मार डालने की क्रिया या भाव। वध। हत्या।

परिघाती(तिन्)—वि०[सं० परि√हन्+णिच्+णिनि] हत्यारा।

परिघृष्ट—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक या चारों ओर से घिरा हुआ।

परिघृष्टिक—पुं०[सं० परिघृष्ट+तन्—इक] एक प्रकार का वानप्रस्थ।

परिघोष—पुं०[सं० प्रा० स०] १. जोर का शब्द। घोर आवाज। २. [प्रा० ब० स०] बादल की गरज। मेघ-गर्जन।

परिचक्रा—स्त्री०[सं० ब० स०, टाप्] एक प्राचीन नगरी।

परिचना—अ०=परचना।

परिचपल—वि०[सं० प्रा० स०] बहुत अधिक चंचल या चपल।

परिचय—पुं०[सं० परि√चि (इकट्ठा करना)+अच्] १. ऐसी स्थिति जिसमें दो व्यक्ति एक दूसरे को प्रायः प्रत्यक्ष भेंट के आधार पर जानते और पहचानते हों। जैसे—पंडित जी से मेरा परिचय रेल में हुआ था। २. किसी व्यक्ति के नाम-धाम या गुण-कर्म आदि से संबंध रखनेवाली सब या कुछ बातें जो किसी को बतलाई जायँ। जैसे—गोष्ठी में आये हुए कवि अपना अपना परिचय स्वयं देंगे। ३.किसी विषय, रचना, साहित्य आदि का थोड़ा-बहुत अध्ययन करने पर उसके संबंध में होनेवाला ज्ञान। जैसे—बंगला साहित्य से उनका कुछ परिचय है। ४.गुण, धर्म शक्ति आदि जतलाने या प्रदर्शित करने की क्रिया या भाव। जैसे—उसने अपनी योग्यता या हठवादिता का खूब परिचय दिया। ५. हठ योग में, नाद की चार अवस्थाओं में से तीसरी अवस्था।

परिचय-पत्र—पुं० [ष० त०] १. ऐसा पत्र जिसमें किसी का नाम, पता, ठिकाना, पद आदि लिखा होता है और जो किसी को किसी का परिचय देने के लिए दिया जाता है। २. किसी वस्तु अथवा संस्था विषयक वह पत्रक या पुस्तिका जिसमें उस वस्तु की सब बातों अथवा संस्था के उद्देश्यों, कार्य-क्षेत्रों और कार्य-प्रणालियों आदि का परिचय या विवरण दिया हो। (मेमोरैन्डम)

परिचर—पुं०[सं० परि√चर् (गति)+अच्] [स्त्री० परिचरी] १. सेवा-शुश्रूषा करनेवाला सेवक। टहलुआ। २. रोगी की सेवा शुश्रूषा करनेवाला व्यक्ति। ३. वह सैनिक जो रथ और रथी की रक्षा करने के लिए रथ पर रहता था। ४. सेनापति। ५. दंडनायक।

परिचरजा†—स्त्री०=परिचर्या।

परिचरण—पुं० [सं० परि√चर्+ल्युट्-अन] [वि० परिचरणीय, परिचारितव्य] परिचर्या करना।

परिचरता†—स्त्री०[?] प्रलय। कयामत।

परिचरिता (तृ)—पुं०[सं० परि√चर्+तृच्] सेवा-शुश्रूषा करनेवाला व्यक्ति।

परिचरी—स्त्री०[सं० परिचर+ङीष्] दासी। लौंडी।

परिचर्चा—स्त्री० [सं०] किसी तथ्य, विषय, पुस्तक आदि की विशेष तथा विस्तृत रूप से की जानेवाली चर्चा।

परिचर्जा†—स्त्री०=परिचर्या।

परिचर्मण्य—पुं०[सं० परिचर्मन्+यत्] चमड़े का फीता।

परिचर्या—स्त्री० [सं० परि√चर्+श, यक्, नि०] १. किसी की की जानेवाली अनेक प्रकार की सेवाएँ। खिदमत। २. रोगी की सेवा-शुश्रूषा। ३. किसी संघटित गोष्ठी या सभा-समिति में होनेवाली ऐसी बात-चीत जिसमें किसी विशिष्ट विषय का विचार या विवेचन होता है। (सिम्पोज़ियम)

परिचायक—वि०[सं० परि√चि+ण्वुल्-अक] १. जिसके द्वारा किसी का परिचय प्राप्त होता हो। जैसे—यह चिह्न धर्म-ध्वजता का परिचायक है। २. अच्छी तरह से जतलाने, बतलाने या सूचित करनेवाला। परिचय करानेवाला।

परिचाय्य—पुं०[सं० परि√चि+ण्यत्] १. यज्ञ की अग्नि। २. यज्ञकुंड।

परिचार—पुं० [सं० परि√चर्+घञ्] १. सेवा। टहल। खिदमत। २. ऐसा स्थान जहाँ लोग टहलने के लिए जाते हों। ३. ऐसी देख-रेख या सेवा-शुश्रूषा जिससे कम अवस्थावाले बच्चों, पौधों, आदि का भरण-पोषण, लालन-पालन तथा अभिवर्द्धन ठीक क्रम तथा ढंग से हो सके। (नर्सिंग) ४. अशक्त, रुग्ण तथा पंगु व्यक्तियों की की जानेवाली टहल। सेवा।

परिचारक—वि०[सं० परि√चर्+ण्वुल्-अक] [स्त्री० परिचारिका] जो परिचार करता हो। परिचार करनेवाला।

पुं० १. नौकर। सेवक। २. परिचर्या करनेवाला व्यक्ति। ३. देव-मंदिर का प्रबंध करनेवाला व्यक्ति।

परिचार-गाड़ी—स्त्री०[सं०+हिं०] वह गाड़ी जिस पर घायल, रुग्ण लोगों को उठाकर चिकित्सा-स्थल आदि पर ले जाया जाता है। (एम्ब्युलेंस कार)

परिचारण—पुं० [सं० परि√चर्+णिच्+ल्युट्-अन] १. सेवा या टहल करना। २. संग या साथ रहना।

परिचारना—सं०[सं० परिचरण] परिचार या सेवा करना।

परिचारिका—स्त्री०[सं० परिचारक+टाप्, इत्व] १. दासी। सेविका। परिचार करनेवाली स्त्री।

परिचारित—वि०[सं० परि√चर्+णिच्+क्त] जिसका परिचारण किया गया हो या हुआ हो।

पुं० १. क्रीड़ा। खेल। २. मनोविनोद।

परिचारी (रिन्)—वि०[सं०परि√चर्+इन्] टहलनेवाला। भ्रमण करने वाला।

पुं० टहल या सेवा करनेवाला। सेवक। टहलुआ।

परिचार्य—वि०[सं० परि√चर्+ण्यत्] जिसका परिचार या सेवा करना उचित हो। सेव्य।

परिचालक—वि०[सं० परि+चल् (चलना)+णिच्+ण्वुल्-अक] [भाव. परिचालकता] १. परिचालन करनेवाला। २. बहुत बड़ा चालाक।

परिचालकता—स्त्री० [सं० परिचालक+तल्-टाप्] परिचालक होने की अवस्था, गुण या भाव।

परिचालन—पुं० [सं० परि√चल्+णिच्+ल्युट्-अन] [भू० कृ० परिचालित] १. ठीक तरह से गति में लाना। चलाना। जैसे—नौका या रथ का परिचालन। २. उचित रूप में किसी कार्य का निर्वाह करना। संचालन। जैसे—किसी संस्था या सभा अथवा उसके कार्यों का परिचालन करना। ३. हिलाना।

परिचालित—भू० कृ० [सं० परि√चल्+णिच्+क्त] जिसका परिचालन किया गया हो। जो चलाया गया हो।

परिचिंतन—पुं० [सं० परि√चिन्त् (स्मरण करना)+ल्युट्-अन] अच्छी तरह से चिंतन करना।

परिचित—वि० [सं० परि√चि० (चयन करना)+क्त] [भाव० परिचिति] १. जिसका या जिसके साथ परिचय हो चुका हो। जिसे जान लिया गया हो या जिसकी जानकारी हो चुकी हो। जाना-बूझा या समझा हुआ। ज्ञात। जैसे—वे मेरे परिचित हैं। २. जिसे परिचय मिल चुका हो या जानकारी हो चुकी हो। जैसे—मैं उनसे भली-भाँति परिचित हूँ। ३. जिससे जान-पहचान और मेल-जोल हो। जैसे—वहाँ हमारे कई परिचित हैं। ४. इकट्ठा किया हुआ। संचित।

पुं० जैन दर्शन के अनुसार वह स्वर्गीय आत्मा जो दोबारा किसी चक्र में आ चुकी हो।

परिचिति—स्त्री० [सं० परि√चि+क्तिन्] १. परिचित होने की अवस्था या भाव।

†वि०=परिचित। (पूरब)

परिचित्र—पुं० [सं० परि+चित्र] दे० 'चार्ट'।

परिचिह्नित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. जिसे अच्छी तरह से चिह्नित किया गया हो। २. जिस पर हस्ताक्षर किये जा चुके हों। (स्मृति)

परिचेय—वि० [सं० परि√चि+यत्] १. जिसका परिचय प्राप्त किया जा सके, या किया जाने को हो। २. जिसका परिचय प्राप्त करना उचित या कर्त्तव्य हो। ३. जिसका चयन (संग्रह या संचय) किया जा सके या किया जाने को हो। संग्राह्य।

परिचौ*—पुं० [सं० परिचय]=परिचय।

परिच्छद—पुं० [सं० परि√छद् (ढाँकना)+णिच्+ घ, ह्रस्व] १. किसी चीज को चारों ओर से ढकनेवाला कपड़ा। जैसे—तकिये की खोली या गिलाफ। २. शरीर पर पहने जानेवाले कपड़े। पहनावा। पोशाक। (ड्रेस) ३. वह विशिष्ट पहनावा जो किसी दल, वर्ग या सेवा विशेष के लोगों के लिए नियत या निर्धारित होता है। (यूनिफार्म) ४. राज-चिह्न। ५. राजा-महाराजाओं के साथ रहनेवाले लोग। परिचर। ६. कुटुंब या परिवार के लोग। ६. असबाब। सामान।

परिच्छन्न—भू० कृ० [सं० परि√छद्+क्त] १. जो चारों ओर से अथवा अच्छी तरह ढका हुआ हो। २. छिपा या छिपाया हुआ। ३. जो परिच्छद तथा वस्त्र पहने हुए हो। ४. साफ या स्वच्छ किया हुआ।

परिच्छा†—स्त्री०=परीक्षा।

परिच्छित्ति—स्त्री० [सं० परि√छिद् (काटना) +क्तिन्] १. सीमा। हद। २. विभाग करने के लिए सीमा का निर्धारण। ३. किसी प्रकार का पृथक्करण या विभाजन।

परिच्छिन्न—भू० कृ० [सं० परि√छिद्+क्त] १. जिसका परिच्छेद (अलगाव या विभाजन) किया गया हो। २. जो ठीक प्रकार से मर्यादित या सीमित किया गया हो। ३. घिरा हुआ। ४. छिपा या ढका हुआ।

परिच्छेद—पुं० [सं० परि√छिद्+घञ्] १. कोई चीज या बात इस प्रकार अलग-अलग या विभक्त करना कि उसका अच्छापन एक तरफ आ जाय और बुराई दूसरी तरफ। २. बँटवारा। ३. खंड। भाग। ४. ग्रन्थों आदि का ऐसा विभाग जिसमें किसी विषय या उसके किसी अंग का स्वतंत्र रूप से प्रतिपादन, वर्णन या विवेचन किया गया हो। ५. अध्याय। प्रकरण। ६. सीमा। हद। ७. निर्णय।

परिच्छेदक—वि० [सं० परि√छिद्+ण्वुल्—अक] १. सीमा निर्धारित करनेवाला। हद बतलाने या मुकर्रर करनेवाला।

पुं० १. सीमा। हद। २, नाप, परिमाण आदि।

परिच्छेदकर—पुं० [सं० ष० त०] एक प्रकार की समाधि।

परिच्छेदन—पुं० [सं० परि√छिद्+ल्युट्—अन] १. परिच्छेद अर्थात् खंड या विभाग करना। २. अच्छाई और बुराई अलग अलग कर दिखलाना। ३. अध्याय। प्रकरण। ४. निर्णय।

परिच्छेद्य—वि० [सं० परि√छिद्+ण्यत्] १. जिसे गिन, तौल या नाप सकें। परिमेय। २. जिसे काटकर या और किसी प्रकार अलग कर सकें। ३. जिसका बँटवारा या विभाजन हो सके। विभाज्य। ४. जिसकी परिभाषा ठीक प्रकार से की जा सके।

परिच्युत—वि० [सं० परि√च्यु (गति)+क्त] [भाव० परिच्युति] १. सब प्रकार से गिरा हुआ। २. पतित और भ्रष्ट। ३. जाति या बिरादरी से निकाला हुआ। जातिबहिष्कार।

परिच्युति—स्त्री० [सं० परि√च्यु+क्तिन्] परिच्युत होने की अवस्था या भाव।

परिछत्र—पुं० [सं० प्रा० स०] एक तरह की बहुत बड़ी छतरी जिसकी सहायता से हवाबाज उड़ते हुए जहाजों से कूदकर नीचे उतरते हैं। (पैराशूट)

परिछत्रक—वि० [सं० परिछत्र] परिछत्र की सहायता से उतरनेवाला। जैसे—परिछत्रक सेना।

परिछन†—पुं०=परछन।

परिछाहीं—स्त्री०=परछाईं।

परिछिन्न—वि०=परिच्छिन्न।

परिजटन—पुं०=पर्यटन।

परिजन—पुं० [सं० प्रा० स०] [भाव० परिजनता] १. चारों ओर के लोग विशेषतः परिवार के सदस्य। २. अनुगामी और अनुचर वर्ग।

परजनता—स्त्री० [सं० परिजन+तल्+टाप्] १. परिजन होने की अवस्था या भाव। २. अधीनता।

परिजन्मा (न्मन्)—पुं० [सं० परि√जन् (उत्पत्ति)+मन्, नि०] १. चंद्रमा। २. अग्नि।

परिजप्त—वि० [सं० परि√जप् (जपना)+क्त] मंद स्वर में कहा हुआ।

परिजय्य—वि० [सं० परि√जि (जीतना)+यत् नि० या आदेश] जो चारों ओर जय करने में समर्थ हो। सब ओर जीत सकनेवाला।

स्त्री० चारों दिशाओं में होनेवाली विजय।

परिजल्पित—पुं० [सं० परि√जल्प् (बोलना)+क्त] १. दूसरों के अवगुण,दोष, धूर्तता आदि दिखलाते हुए अप्रत्यक्ष रूप से अपनी उच्चता, श्रेष्ठता, सच्चाई आदि दिखलाना। २. अवमानित या उपेक्षित नायिका। ३. अवमानित या उपेक्षित नायिका का व्यंग्यपूर्ण शब्दों द्वारा नायक की निर्दयता का वर्णन करना।

परिजा—स्त्री० [सं० परि√जन्+ड+टाप्] १. उद्भव। २. जन्म आदि का मूल स्थान।

परिजात—वि० [सं० प्रा० स०] जन्मा हुआ। उत्पन्न।

परिजीवन—पुं० [सं० प्रा० स०] १. अपने चारों ओर रहनेवालों विशेषतः अपनी जाति, वर्ग आदि के सदस्यों के न रह जाने पर भी प्राप्त होनेवाला दीर्घ जीवन। २. नियत काल से अधिक चलनेवाला जीवन। (सर्वाइवल, उक्त दोनों अर्थों में)

परिजीवित—वि० [सं० प्रा० स०] जो अपने चारों ओर रहनेवालों। आदि के न रहने पर भी बचा हुआ और जीवित हो।

परिजीवी (विन्)—पुं० [सं० प्रा० स०] वह जो दूसरों की अपेक्षा अधिक समय तक जीता या बचा रहे। (सर्वाइवर)

परिज्ञप्ति—स्त्री० [सं० परि√ज्ञप् (जतलाना)+क्तिन्] १. बात-चीत। कथोपकथन। वार्त्तालाप। २. परिचय। ३. पहचान।

परिज्ञा—स्त्री० [सं० परि√ज्ञा (जानना)+अङ्—टाप्] १. ज्ञान। २. निश्चयात्मक, विशुद्ध और संशय-रहित ज्ञान।

परिज्ञात—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] अच्छी तरह या विशेष रूप से जाना हुआ।

परिज्ञाता (तृ)—पुं० [सं० परि√ज्ञा+तृच्] वह जिसे परिज्ञान हो।

परिज्ञान—पुं० [सं० प्रा० स०] १. किसी चीज या बात का ठीक और पूरा ज्ञान। पूर्ण या सम्यक् ज्ञान। २. ऐसा ज्ञान जिसका भरोसा किया जा सके। निश्चयात्मक और सच्चा ज्ञान। ३. अंतर, भेद आदि के संबंध में होनेवाला सूक्ष्म ज्ञान।

परिज्वा (ज्वन्)—पुं० [सं० परि√जु (गति)+कनिन्] १. चंद्रमा। २. अग्नि। ३. नौकर। ४. इन्द्र। ५. वह जो यज्ञ करता हो। याजक।

परिठना†—अ० [?] देखना। उदा०—नारकेलि फल परिठ दुज, चौक पूरी मनि मुत्ति।—चंदबरदाई।

परिडीन—पुं० [सं० परि√डी (उड़ना)+क्त] पक्षी की वृत्ताकार उड़ान। पक्षी का चक्कर काटते हुए उड़ना।

परिणत—भू०कृ० [सं० परि√नम् (झुकना)+क्त] [भाव० परिणति] १. बहुत अधिक झुका या झुकाया हुआ। बहुत अधिक नत। २. बहुत अधिक नम्र या विनीत। ३. जिसमें किसी प्रकार का परिवर्तन, रूपान्तर या विकार हुआ हो। जैसे—दूध जमाने पर दही के रूप में परिणत हो जाता है। ४. जो ठीक प्रकार से पका, बना या विकसित हुआ हो। ५. पचाया हुआ। ६. समाप्त।

परिणति—स्त्री० [सं० परि√नम्+क्तिन्] १. परिणत होने की अवस्था या भाव। २. झुकाव। नति। ३. किसी प्रकार के परिवर्तन या विकार के कारण बननेवाला नया रूप। ४. अच्छी तरह पकने या पचने की क्रिया दशा या भाव। परिपाक। ५. पुष्टता। प्रौढ़ता। ६. वृद्धावस्था। ७. अंत। समाप्ति।

परिणद्ध—वि० [सं० परि√नह् (बाँधना)+क्त] १. दूर तक फैला हुआ। लंबा-चौड़ा। विस्तृत। २. बहुत बड़ा, भारी या विशाल।

परिणमन—पुं० [सं० परि√नम्+ल्युट्—अन] १. परिवर्तन या रूपांतर होना। ३. किसी रूप में परिणत होना।

परिणय—पुं० [सं० परि√नी (ले जाना)+अच्] विवाह। शादी।

परिणयन—पुं० [सं० परि√नी+ल्युट्—अन] पाणी-ग्रहण। विवाह।

परिणहन—पुं० [सं० परि√नह् (बाँधना)+ल्युट्—अन] =परिणाह।

परिणाम—पुं० [सं० परि√नम्+घञ्] १. किसी पदार्थ की पहली या प्रकृत अवस्था, गुण, रूप आदि में होनेवाला ऐसा परिवर्तन या विकार जिससे वह पदार्थ कुछ और ही हो जाय अथवा किसी अन्य अवस्था, गुण या रूप से युक्त प्रतीत होने लगे। एक रूप के स्थान पर होनेवाले दूसरे रूप की प्राप्ति। तबदीली। रूपांतरण। जैसे—घड़ा गीली मिट्टी का, दही जमे हुए दूध का या राख जलती हुई लकड़ी का परिणाम है।

विशेष—सांख्य दर्शन के अनुसार परिणाम वस्तुतः प्रकृति का मुख्य गुण या स्वभाव है। सभी चीजें अपनी एक अवस्था या रूप छोड़कर दूसरी अवस्था या रूप धारण करती रहती हैं। यही अवस्थांतरण या रूपांतरण उनका 'परिणाम' कहलाती है। जब सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों की साम्यावस्था नष्ट या भग्न हो जाती है, तब उसके परिणाम-स्वरूप सृष्टि के सब पदार्थों की रचना होती है; और जब यही क्रम उलटा चलने लगता है, तब उसके परिणाम के रूप में सृष्टि का नाश या प्रलय होता है। इसी रूपांतरण के आधार पर पतंजलि ने योग-दर्शन में चित्त के ये तीन परिणाम माने हैं—निरोध, समाधि और एकाग्रता। अन्य पदार्थों में भी धर्म, लक्षण और अवस्था के विचार से तीन प्रकार के परिणाम होते हैं। जैसे—मिट्टी से घड़े का बनना धर्म-परिणाम है। देखी-सुनी हुई चीजों या बातों में भूत और वर्तमान का जो अन्तर होता है, वह लक्षण-परिणाम है, और उनमें स्पष्टता तथा अस्पष्टता का जो अन्तर होता है, वह अवस्था-परिणाम है।

२. किसी काम या बात का तर्क-संगत रूप में अंत होने पर उससे प्राप्त होनेवाला फल। नतीजा। (रिजल्ट) जैसे—(क) इस वाद-विवाद का परिणाम यह हुआ कि काम जल्दी और अच्छे ढंग से होने लगा। (ख) धर्म, न्याय और सत्य का परिणाम सदा सुख ही होता है। किसी कार्य के उपरांत क्रियात्मक रूप से पड़नेवाला उसका प्रभाव। (कांसीक्वेन्स) जैसे—आपस के लड़ाई-झगड़े का परिणाम यह हुआ कि दोनों घर चौपट हो गये। ४. बहुत-सी बातें सुन-समझकर उनसे निकाला हुआ निष्कर्ष। नतीजा। (कन्क्लुजन) जैसे—उनकी बातें सुनकर हम इसी परिणाम पर पहुँचे हुए हैं कि वे पूरे नास्तिक हैं। ५. अन्न आदि का पेट में पहुँचकर पचना। परिपाक। ६. किसी पदार्थ का अच्छी तरह पुष्ट, प्रौढ़ या विकसित होकर पूर्णता तक पहुँचना। ७. अंत। अवसान। समाप्ति। ८. वृद्धावस्था। बुढ़ापा। ९. साहित्य में एक अर्थालंकार जिसमें किसी कार्य के होने पर उसके साथ उस कार्य के परिणाम का भी उल्लेख होता है। (कम्यूटेशन) जैसे—मुख चंद्र के दर्शनों से मन का सारा संताप शांत हो जाता है।

विशेष—यह अलंकार अभेद और सादृश्य पर आश्रित होता है, फिर भी इसमें आरोपण का तत्त्व प्रधान है। परवर्ती साहित्यकारों ने इस अलंकार का लक्षण या स्वरूप बहुत-कुछ बदल दिया है। 'चंद्रालोक' के मत से जहाँ उपमेय के कार्य का उपमान द्वारा किया जाना वर्णित होता है अथवा उपमान का उपमेय के साथ एक रूप होकर कोई काम करने का उल्लेख होता है, वहाँ परिणाम अलंकार होता है। जैसे—यदि कहा जाय—राष्ट्रपति जी ने अपने कर-कमलों से प्रदर्शनी का उद्घाटन किया।' तो यहाँ इसलिए परिणाम अलंकार हो जायगा कि उन्होंने अपने करों से नहीं, बल्कि कर रूपी कमलों से उद्घाटन किया। रूपक अलंकार से इसमें यह अंतर है कि रूपक में तो उपमेय पर उपमान का आरोप मात्र कर दिया जाता है; परंतु परिणाम अलंकार में यह विशेषता होती है कि उपमेय का काम उपमान से कराकर अर्थ में चमत्कार लाया जाता है।

१०. नाट्य-शास्त्र में कथावस्तु, की वह अंतिम स्थिति जिसमें संघर्ष की समाप्ति होने पर उसका फल दिखलाया जाता है। जैसे—हरिश्चंद्र नाटक के अंत में रोहिताश्व का जी उठना और राजा हरिश्चंद्र का अपनी पत्नी को पाकर फिर से परम सुखी और वैभवशाली होना 'परिणाम' कहा जायगा। इसी 'परिणाम' के आधार पर नाटकों के दुःखांत और सुखांत नामक दो भेद हुए हैं।

परिणामक—वि० [सं० परि√नम्+णिच्+ण्वुल्—अक] जिसके कारण कोई परिणाम हो।

परिणामदर्शी (शिन्)—वि० [सं० परिणाम√दृश् (देखना) +णिनि] १. जिसे होनेवाले परिणाम का पहले से भान हो। २. जो परिणाम या फल का ध्यान रखकर काम करता हो।

परिणाम-दृष्टि—स्त्री० [सं० स० त०] वह दृष्टि या शक्ति जिससे मनुष्य किसी काम या बात का परिणाम अथवा फल पहले से जान या समझ लेता है।

परिणामन—पुं० [सं० परि√नम्+णिच्+ल्युट्—अन] १. अच्छी तरह पुष्ट करना और बढ़ाना। २. जातीय या संघीय वस्तुओं का किया जाने-वाला व्यक्तिगत उपभोग। (बौद्ध)

परिणामवाद—पुं० [सं० प० त०] सांख्य का यह मत या सिद्धान्त कि जगत् की उत्पत्ति और विनाश दोनों सदा नित्य परिणाम के रूप में होते रहते हैं।

परिणामवादी (दिन्)—वि० [सं० परिणामवाद—इनि] परिणामवाद-संबंधी।

पुं० वह जिसका परिणामवाद में विश्वास हो।

परिणाम-शूल—पुं० [सं० ब० स०] एक प्रकार का रोग जिसमें भोजन करने के उपरांत पेट में पीड़ा होने लगती है।

परिणामिक—वि० [सं० पारिणामिक] १. परिणाम के रूप में होनेवाला। जैसे—दुष्कर्मों का परिणामिक भोग। २. (भोजन) जो शीघ्र या सहज में पच जाय।

परिणामित्र—पुं० [सं०] आधुनिक यंत्र-विज्ञान में एक प्रकार का यंत्र जो एक प्रकार की विद्युत्-धारा को दूसरे प्रकार की विद्युत-धारा (अर्थात् निम्न को उच्च अथवा उच्च को निम्न) के रूप में परिवर्तित करता है। (ट्रान्सफार्मर)

परिणामित्व—पुं० [सं० परिणामिन्+त्व] परिणामी अर्थात् परिवर्तनशील होने की अवस्था या भाव।

परिणामि-नित्य—वि० [सं० कर्म० स०] जो नित्य होने पर भी बदलता रहे। जिसकी सत्ता तो स्थिर रहे, पर रूप बराबर बदलता रहे। जो एक रस न होकर भी अविनाशी हो।

परिणामी (मिन्)—वि० [सं० परिणाम+इनि] [स्त्री० परिणामिनी] १. परिणाम के रूप में होनेवाला। २. परिणाम-संबंधी। ३. जो बराबर बदलता रहे। रूपांतरित होता रहनेवाला। परिवर्तनशील। ४. जो परिवर्तन मान या सह ले। ५. परिणाम-दर्शी।

परिणाय—पुं० [सं० परि√नी (ले जाना)+घञ्] १. किसी वस्तु को जिस दिशा में चाहे उस दिशा में चलाना। सब ओर चलाना। २. चौसर, शतरंज आदि की गोटियाँ एक घर से दूसरे घर में ले जाना या ले चलना। ३. ब्याह। विवाह।

परिणायक—पुं० [सं० परि√नी+ण्वुल्—अक] १. परिणय या विवाह करनेवाला, अर्थात् पति। २. पथप्रदर्शक। अगुआ। नेता। ३. सेनापति।

परिणायक-रत्न—पुं० [सं० कर्म० स०] बौद्ध चक्रवर्ती राजाओं के सप्तधन अथवा सात कोषों में से एक।

परिणाह—पुं० [सं०परि√नह् (बाँधना)+घञ्] १. विस्तार। फैलाव। २. घेरा। परिधि। ३. दीर्घ निश्वास।

परिणाहवान (वत्)—वि० [सं० परिणाह+मतुप्, वत्व] फैला हुआ। प्रशस्त। विस्तृत।

परिणाही (हिन्)—वि० [सं० परिणाह+इनि] फैला हुआ। प्रशस्त। विस्तृत।

परिंणिसक—वि० [सं० परि√निंस् (चूमना)+ण्वुल्—अक] १. खाने या भक्षण करनेवाला। २. चुंबन करनेवाला।

परिंणिसा—स्त्री० [सं० परि√निंस्+अ+टाप्] १. भक्षण। खाना। २. चुंबन।

परिणीत—भू० कृ० [सं० परि√नी+क्त] [स्त्री० परिणीता] १. जिसका परिणय हो चुका हो। ब्याहा हुआ। विवाहित। २. उक्त के आधार पर, जिसका किसी के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित हो चुका हो। उदा०—तुम परिणीत नहीं इन थोथे विश्वासों से।—पंत। ३. (कार्य) जो पूरा या संपन्न हो चुका हो। संपादित।

परिणीत-रत्न—पुं० [सं० कर्म० स०]=परिणायकरत्न। (दे०)

परिणीता—वि० [सं० परिणीत+टाप्] (स्त्री) जिसका किसी के साथ विधिवत् परिणय या विवाह हो चुका हो। विवाहिता।

स्त्री० विवाहिता स्त्री या पत्नी।

परिणेता (तृ)—पुं० [सं० परि√नी+तृच्] परिणय या विवाह करनेवाला व्यक्ति। पति।

परिणेया—वि० [सं० परि√नी+अच्+टाप्] (स्त्री) जो पत्नी या भार्या बनाने के लिए उपयुक्त हो। २. जिसका परिणय या विवाह होने को हो या हो सकता हो।

परितः—अव्य० [सं० परि+तस्] १. सब ओर। चारों ओर। २. पूरी तरह से। सब प्रकार से।

परितच्छ†—वि०=प्रत्यक्ष।

परितप्त—भू० कृ० [सं० परि√तप् (तपना)+क्त] १. अच्छी तरह तपा या तपाया हुआ। बहुत गरम। २. जिसे बहुत अधिक परिताप या दुःख हुआ हो। बहुत अधिक दुःखी और संतप्त।

परितप्ति—स्त्री० [सं० परि√तप्+क्तिन्] १. परितप्त होने की अवस्था या भाव। परिताप। २. जलन। डाह। ३. बहुत विकट। मानसिक व्यथा। मनस्ताप।

परितर्कण—पुं० [सं० परि√तर्क (दीप्ति, विचार)+ल्युट्—अन] अच्छी तरह तर्क या विचार करना।

परितर्पण—पुं० [सं० परि√तृप् (संतुष्ट करना)+ल्युट्—अन] अच्छी तरह प्रसन्न या संतुष्ट करना।

परिताप—पुं० [सं० परि√तप्+घञ्] १. बहुत अधिक ताप जिससे चीजें जलने या झुलसने लगे। २. घोर व्यथा। संताप। ३. पछतावा। पश्चात्ताप। ४. डर। भय। ५. कँप-कँपी। कंप। ६. एक नरक का नाम।

परितापी (पिन्)—वि० [सं० परि√तप्+णिनि] १. परिताप-संबंधी। २. परिताप उत्पन्न करनेवाला। ३. दे० 'परितप्त'।

परितिक्त—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक तीता। पुं० निंब। नीम।

परितुलन—पुं० [सं० परि√तुल् (तुलना करना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परितुलित] साहित्य में किसी ग्रंथ की लिखित और मुद्रित प्रतियों और उनके भिन्न भिन्न संस्करणों आदि का यह जानने के लिए मिलान करना कि उनका ठीक और मूल रूप क्या है अथवा क्या होना चाहिए। (कोलेशन) जैसे—सूर सागर का सम्पादन करते समय रत्नाकर जी ने उसकी पचीसों हस्त-लिखित प्रतियों का परितुलन किया था।

परितुष्ट—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० परितुष्टि] १. जिसका परितोष हो चुका हो या किया जा चुका हो। अच्छी तरह से तथा सब प्रकार से तुष्ट। २. जो बहुत खुश या प्रसन्न हो।

परितुष्टि—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. पूरी तरह से की जानेवाली तुष्टि। परितोष। २. खुशी। प्रसन्नता।

परितृप्त—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० परितृप्ति] जो अच्छी तरह तृप्त हो चुका हो। पूर्ण रूप से तृप्त।

परितृप्त—स्त्री० [सं० प्रा०स०] परितृप्त करने या होने की अवस्था या भाव।

परितृप्ति—पुं०=परितोष।

परितोलन—पुं० [सं०] [भू० कृ० परितौलित] दे० 'परितुलन'।

परितोष—पुं० [सं० परि√तुष् (प्रीति)+घञ्] १. निश्चिन्तता युक्त सुख जो कामना या साध पूरी होने पर होता है। अच्छी तरह होनेवाला तोष। पूर्ण तृप्ति। २. खुशी। प्रसन्नता।

परितोषक—वि० [सं० परि√तुष्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. परितोष करनेवाला। संतुष्ट करनेवाला। २. प्रसन्न या खुश करनेवाला।

परितोषण—पुं० [सं० परि√तुष्+णिच्+ल्युट्—अन] १. परितुष्ट करने की क्रिया या भाव। ऐसा काम करना जिससे किसी का परितोष हो। २. वह धन जो किसी को परितुष्ट करने के लिए दिया गया हो।

परितोषवान् (वत्)—वि० [सं० परितोष+मतुप्, वत्व] जो सहज में परितोष प्राप्त कर लेता है।

परितोषी (षिन्)—वि० [सं० परितोष+इनि] १. जिसे परितोष हो। २. जल्दी या सहज में परितुष्ट होनेवाला।

परितोस†—पुं०=परितोष।

परित्यक्त—भू० कृ० [सं० परि√त्यज् (छोड़ना)+क्त] जिसे पूर्ण रूप से अथवा उपेक्षापूर्वक छोड़ दिया गया हो। (एबन्डन्ड)

परित्यक्ता—पुं० [सं० परित्यक्त+टाप्] त्यागने या छोड़नेवाला। वि० सं० 'परित्यक्त' का स्त्री०। स्त्री० वह स्त्री जिसे उसके पति ने त्याग या छोड़ दिया हो।

परित्यजन—पुं० [सं० परि√त्यज्+ल्युट्—अन] परित्याग करने की क्रिया या भाव। त्यागना। छोड़ना।

परित्यज्य—वि० [सं० परित्याज्य] =परित्याज्य।

परित्याग—पुं० [सं० परि√त्यज्+घञ्] अधिकार स्वामित्व, संबंध, आधिकृत वस्तु, निजी संपत्ति, संबंधी आदि का पूर्ण रूप से तथा सदा के लिए किया जानेवाला त्याग। पूरी तरह से छोड़ देना। (एबन्डनिंग)

परित्यागना—स० [सं० परित्याग] पूरी तरह से या सदा के लिए परित्याग करना।

परित्यागी (गिन्)—वि० [सं० परि√त्यज्+घिनुण्] परित्याग करने अर्थात् पूरी तरह से या सदा के लिए छोड़नेवाला।

परित्याजन—पुं० [सं० परि√त्यज्+णिच्+ल्युट्—अन] परित्याग।

परित्याज्य—वि० [सं० परि√त्याज्+ण्यत्] जिसका परित्याग करना उचित हो या किया जाने को हो। जो पूरी तरह से या सदा के लिए छोड़े जाने के योग्य हो।

परित्रस्त—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक त्रस्त या डरा हुआ।

परित्राण—पुं० [सं० परि√त्रै (बचाना)+ल्युट्—अन] १. कष्ट, विपत्ति आदि से की जानेवाली पूर्ण रक्षा। २. शरीर पर के बाल या रोएं। रोम।

परित्रात—भू० कृ० [सं० परि√त्रै+क्त] जिसका परित्राण या रक्षा की गई हो। रक्षा-प्राप्त।

परित्राता (तृ)—वि० [सं० परि√त्रै+तृच्] जो दूसरों का परित्राण करता हो। पूरी रक्षा करनेवाला।

परित्रायक—वि० [सं० परि√त्रै+ण्वुल्—अक] =परित्राता।

परित्रास—पुं० [सं० परि√त्रस् (डरना)+घञ्] अत्यधिक त्रास।

परिदंशित—भू० कृ० [सं० परिदंश, प्रा० स०],+इतच्] जो पूर्ण रूप से अस्त्रों से सुसज्जित हो या किया गया हो।

परिदत्त—भू० कृ० [सं० परि√दा (देना)+क्त] १. (व्यक्ति) जिसे परिदान मिला हो। २. (धन) जो परिदान के रूप में दिया गया हो।

परिदर—पुं० [सं० परि√दृ (फाड़ना)+अप्] मसूड़ों में से खून और मवाद निकलने या बहने का एक रोग। (पायरिया)

परिदर्शन—पुं० [सं० प्रा० स०] १. बहुत अच्छी तरह से किया जानेवाला या होनेवाला दर्शन। पूर्ण दर्शन। २. निरीक्षण। ३. न्यायालय में किसी मुकद्दमे की होनेवाली सुनवाई। (ट्रायल)

परिदष्ट—भू० कृ० [सं० परि√दंश+क्त] १. जो काटकर टुकड़े-टुकड़े

कर दिया गया हो। २. जिसे डंक या दाँत लगा हो। डंका या दाँत से काटा हुआ। दंशित।

परिदहन—पुं०[सं० परि√दह् (जलाना)+ल्युट्—अन] अच्छी तरह या पूर्ण रूप से जलाना।

परिदान—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० परिदत्त] १. लौटा देना। वापस कर देना। फेर देना। २. अदला-बदली। ३. अमानत लौटाना। ४. आज-कल वह आर्थिक सहायता जो राज्य सरकार व्यक्तियों, संस्थाओं आदि को उद्योगीकरण में प्रोत्साहित करने के लिए देती है। (सब्साइडी)

परिदाव—पुं०[सं० परि√दा (देना)+घञ्] सुगंधि। खुशबू।

परिदायी (यिन्)—वि०[सं० परि√दा+णिनि] जो ऐसे वर से अपनी कन्या का विवाह करता हो जिसका बड़ा भाई अभी तक कुँआरा हो।

परिदाह—पुं०[सं० प्रा० स०] १. अत्यंत जलन या दाह। २. मानसिक कष्ट। दुःख या संताप।

परिदिग्ध—वि०[सं० प्रा० स०] जिस पर कोई वस्तु बहुत अधिक मात्रा में लगी या पुती हो।

परिदीन—वि०[सं० प्रा० स०] बहुत अधिक दीन या दुःखी।

परिदृढ़—वि०[सं० प्रा० स०] बहुत दृढ़।

परिदृष्टि—स्त्री०[सं०] किसी वस्तु का ऐसा दृश्य या रूप जिसमें दूर से देखने पर उसके सब अंग अपने ठीक अनुपात में और एक दूसरे से उचित दूरी पर दिखाई दें। संदर्श। (परस्पेक्टिव)

परिदेव—पुं०[सं० परि√दिव् (गति)+घञ्] रोना-धोना। विलाप।

परिदेवन—पुं०[सं० परि√दिव्+ल्युट्—अन] १. कष्ट पहुँचने या हानि होने पर की जानेवाली चीख-पुकार। २. उक्त स्थिति में की जानेवाली फ़रियाद या शिकायत। परिवाद। (कम्प्लेन्ट)

परिदेवना—स्त्री०=परिदेवन।

परिद्रष्टा (ष्टृ)—वि०[सं०परि√दृश् (देखना)+तृच्] परिदर्शन करनेवाला।

परिद्वीप—पुं०[सं० ब० स०] गरुड़ का एक पुत्र।

परिध—स्त्री०=परिधि।

परिधन—पुं०[सं० परिधान]कमर और उससे निचला भाग ढकने के लिए पहना जानेवाला कपड़ा। अधोवस्त्र।

परिधर्षण—पुं० [सं० परि√धृष् (झिड़कना)+ल्युट्—अन] १.आक्रमण। २. अपमान। तिरस्कार। ३. दूषित या बुरा व्यवहार।

परिधान—पुं०[सं० परि√धा (धारण करना)+ल्युट्—अन] १. शरीर पर वस्त्र आदि धारण करना। कपड़े ओढ़ना या पहनना। २. वे कपड़े जो शरीर पर धारण किये या पहने जायँ। पोशाक। ३. कमर के नीचे पहनने या बाँधने का कपड़ा। जैसे—धोती, लुंगी आदि। ४. प्रार्थना स्तुति आदि का अंत या समाप्ति।

परिधानीय—वि०[सं० परि√धा+अनीयर्] [स्त्री० परिधानीया] जो परिधान के रूप में धारण किया जा सके। पहने जाने के योग्य (वस्त्र)।

परिधाय—पुं० [सं० परि√धा+घञ्] १. कपड़ा। वस्त्र। २. पहनने के कपड़े। परिधान। पोशाक। ३. वह स्थान जहाँ जल हो।

परिधायक—वि०[सं० परि√धा+ण्वुल्—अक] १. ढकने, लपटने या चारों ओर से घेरनेवाला।

पुं० १. घेरा। २. चहारदीवारी। प्राचीर।

परिधायन—पुं० [सं० परि√धा+णिच्+ल्युट्—अन] १. पहनना। २. पोशाक।

परिधारण—पुं०[सं० प्रा० स०] [वि० परिधार्य, परिधृत] १. अच्छी तरह किया जानेवाला धारण। २. अपने ऊपर उठाना, लेना या सहना। ३. बचाकर या रक्षित रूप में रखना।

परिधावन—पुं०[सं० प्रा० स०] बहुत अधिक या बहुत तेज दौड़ना।

परिधावी (विन्)—वि० [सं० परि√धाव् (गति)+णिनि] बहुत अधिक या बहुत तेज दौड़नेवाला।

पुं० ज्योतिष में साठ संवत्सरों में से छियालीसवाँ संवत्सर।

परिधि—स्त्री०[सं०परि√धा+कि] १. वृत्त की रेखा। २. किसी गोलाकार वस्तु के चारों ओर खिंची हुई वृत्ताकार रेखा। (सरकम्फरेन्स) ३. वह गोलाकार मार्ग जिस पर कोई चीज चलती,घूमती या चक्कर लगाती हो। ४. प्रायः गोलाकार माना जानेवाला कोई ऐसा वास्तविक या कल्पित घेरा, जो दूसरे बाहरी क्षेत्रों से अलग हो। कुछ विशेष लोगों या कार्यों का स्वतंत्र क्षेत्र। वृत्त। (सर्किल) ५. सूर्य या चन्द्रमा के आस-पास दिखाई पड़नेवाला घेरा। परिवेश। मंडल। ६. किसी वस्तु की रक्षा के लिए बनाया हुआ घेरा। बाड़ा। चहारदीवारी। नियत या नियमित मार्ग। ८.वे तीन खूँटे जो यज्ञ-मंडप के आस-पास गाड़े जाते थे। ९. क्षितिज। १०. परिधान। ११. दे० 'परिवेश'।

परिधिक—वि०[सं०] १. परिधि-संबंधी। २. जिसका कार्य-क्षेत्र किसी विशेष परिधि में हो। जैसे—परिधिक निरीक्षक। (सर्किल इंस्पेक्टर)

परिधिस्थ—वि०[सं० परिधि√स्था (ठहरना)+क] जो किसी परिधि में स्थित हो।

पुं०१. नौकर। सेवक। २. वह सेना जो रथ और रथी की रक्षा के लिए नियुक्त रहती थी।

परिधीर—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक धीरजवाला। परम धीर।

परिधूपित—भू०कृ० [सं० प्रा० स०] धूप से अच्छी तरह बसाया या सुगंधित किया हुआ।

परिधूमन—पुं०[सं० परिधूम, प्रा० स०,+क्विप्+ल्युट्—अन] १. डकार। २. सुश्रुत के अनुसार तृष्णा रोग का एक उपद्रव जिसमें एक विशेष प्रकार की कै होती है।

परिधूसर—वि०[सं० प्रा० स०] १. धूल से भरा हुआ। जिसमें खूब धूल लगी हो। २. धूल के रंग का। मटमैला।

परिधेय—वि०[सं०परि√धा (धारण)+यत्] जो परिधान के रूप में काम आ सके। जो पहना जा सके या पहने जाने के योग्य हो।

पुं० १. पहनने के कपड़े। परिधान। पोशाक। २. अंदर या नीचे पहनने का कपड़ा। जैसे—गंजी, लहँगा या साया।

परिध्वंस—पुं०[सं० प्रा० स०] १. पूरी तरह से होनेवाला ध्वंस या नाश। सर्व-नाश। २. ध्वंस। नाश।

परिध्वस्त—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] जिसका पूरी तरह से ध्वंस या नाश हो चुका हो या किया जा चुका हो।

परिनगर—पुं०[सं० प्रा० स०] नगर से कुछ हटकर बनी हुई बस्ती जो शासकीय दृष्टि से उसकी सीमा के अंतर्गत मानी जाती हो। (सबर्ब)

परिनय†—पुं०=परिणय।

परिनागर—वि०[सं० पारिनगर] परिनगर-संबंधी। (सबर्बन)

परिनाम*—पुं०=परिणाम।

परिनामी†—वि० =परिणामी।

परिनिर्णय—पुं०[सं० प्रा० स०] १. किसी विवाद के संबंध में दिया हुआ पंचों का निर्णय। २. वह पत्र जिसमें पंचों का निर्णय लिखा हुआ हो। पंचाट। (अवार्ड)

परिनिर्वाण—पुं०[सं० प्रा० स०] पूर्ण निर्वाण। पूर्ण मोक्ष।

परिनिर्वाति—स्त्री०[सं०परि-निर्√वा (गति)+क्तिन्]=परिनिर्वाण।

परिनिर्वृत्त—वि० [सं०प्रा० स०] [भाव० परिनिर्वृत्ति] १. जो मुक्त हो चुका हो। छूटा हुआ। २. जिसे मोक्ष मिल चुका हो।

परिनिर्वृत्ति—स्त्री०[सं० प्रा० स०] १. मोक्ष। २. छुटकारा। मुक्ति।

परिनिष्ठा—स्त्री०[सं० प्रा० स०] १. चरमसीमा या अवस्था। अंतिम सीमा। पराकाष्ठा। २. पूर्णता। ३. अभ्यास या ज्ञान की पूर्णता।

परिनिष्ठित—वि० [सं० परि–नि√स्था+क्त] १. (कार्य) जो पूरा या सम्पन्न किया जा चुका हो। निपटाया हुआ। २. जो किसी काम में पूरी तरह से कुशल या दक्ष हो।

परिनिष्पन्न—वि० [सं० प्रा० स०] १. (काम) जो अच्छी तरह पूरा हो चुका हो। २. जो भाव-अभाव और सुख-दुःख की कल्पना से बिलकुल दूर या परे हो। (बौद्ध)

परिनैष्ठिक—वि०[सं० प्रा० स०] सर्वश्रेष्ठ। सर्वोत्कृष्ट।

परिन्यास—पुं० [सं० प्रा०स०] १. किसी पद, वाक्य आदि के भाव में पूर्णता लाना जो साहित्य में एक विशिष्ट गुण माना गया है। २. साहित्यिक रचना में उक्त प्रकार का स्थल। ३. नाटक में आख्यान बीज अर्थात् मुख्य कथा की मूलभूत घटना का संकेत करना।

परिपंच†—पुं०=प्रपंच।

परिपंथ—वि०[सं० परि√पंथ् (गति)+अच्] जो रास्ता रोके हुए हो।

परिपंथक—वि०[सं० परि√पंथ्+ण्वुल्—अक] मार्ग या रास्ता रोकने वाला।

पुं० १. वह जो प्रतिकूल या विरुद्ध आचरण या व्यवहार करता हो। २. दुश्मन। शत्रु। उदा०—पार भई परिपंथि गंजिमय।—गोरखनाथ। ३. लुटेरा। डाकू।

परिपंथिक—वि०, पुं०=परिपंथक।

परिपंथी (न्थिन्)—वि०, पुं०[सं० परि√पंथ्+णिनि]=परिपंथक।

परिपक्व—वि०[सं० प्रा० स०] [भाव० परिपक्वता] १. जो अभिवृद्धि, विकास आदि की दृष्टि से पूर्णता तक पहुँच चुका हो। जैसे—परिपक्व अन्न, फल आदि। २. अच्छी तरह पचा हुआ (भोजन)। ३. जिसका उपयुक्त या नियत समय आ गया हो। (मैच्योर) ४. अच्छा अनुभवी, ज्ञाता और बहुदर्शी। ५. कुशल। दक्ष। निपुण।

परिपक्वता—स्त्री०[सं०परिपक्व+तल्+टाप्] परिपक्व होने की अवस्था या भाव।

परिपण—पुं०[सं० परि√पण् (व्यवहार करना)+घ] मूलधन। पूँजी।

परिपणन—पुं० [सं० परि√पण्+ल्युट्—अन] १. बाजी या शर्त लगाना। २. प्रतिज्ञा या वादा करना।

परिपणित—भू० कृ०[सं० परि√पण्+क्त] १. (कार्य या बात) जिस पर शर्त लगी या लगाई गई हो। २. (धन) जो बाजी या शर्त में लगाया गया हो। ३. (बात) जिसके संबंध में वादा किया गया हो।

परिपणित-काल-संधि—स्त्री०[सं० काल-संधि, ष० त० परिपणित-काल संधि, कर्म० स०] प्राचीन भारत में मित्र देशों में होनेवाली एक तरह की संधि, जिसमें यह नियत किया जाता था कि कितने-कितने समय तक कौन-कौन सदस्य लड़ेगा।

परिपणित-देश-संधि—स्त्री०[सं० देश-संधि, ष० त०, परिपणित-देशसंधि, कर्म० स०] प्राचीन भारत में मित्र देशों में होनेवाली वह संधि, जिसमें यह नियत होता था कि कौन किस देश पर आक्रमण करेगा।

परिपणित-संधि—स्त्री०[सं० कर्म० स०] वह संधि जिसमें कुछ शर्तें स्वीकार की गई हों।

परिपणितार्थ-संधि—स्त्री०[सं० अर्थ-संधि, ष० त० परिपणितअर्थसंधि, कर्म० स०] ऐसी संधि जिसके अनुसार किसी को पूर्व निश्चय के अनुसार कुछ काम करना पड़ता हो।

परिपतन—पुं०[सं० प्रा० स०] किसी के चारों ओर उड़ना, चक्कर लगाना या मँडराना।

परिपति—वि०[सं० परि√पत् (गिरना)+इन्] जो सब का स्वामी हो।

पुं० परमात्मा।

परिपत्र—पुं०[सं० प्रा० स०] १. वह आधिकारिक पत्र जो विशिष्ट या संबद्ध पदाधिकारियों, सदस्यों आदि को सूचनार्थ भेजा जाता है। गश्ती चिट्ठी। (सरक्यूलर) २. वह पत्र जिसमें किसी को कुछ स्मरण करने के लिए कुछ लिखा गया हो। स्मृतिपत्र। (मैमोरैण्डम)

परिपथ—पुं० [सं०] १. किसी वृत्ताकार वस्तु के किनारे-किनारे बना हुआ पथ। २. अनेक नगरों, देशों, स्थलों आदि में पारी-पारी से होते हुए जाने के लिए पहले से नियत किया हुआ मार्ग। (सरकिट)

परिपर—पुं०[सं० परि√पृ (पूर्ति)+अप्]=परिपथ।

परिपवन—पुं० [सं० परि√पू (पवित्र करना)+ल्युट्—अन] १. अनाज ओसाना या बरसाना। २. अन्न ओसाने का सूप।

परिपांडिमा (मन्)—स्त्री० [सं० पांडिमन, पांडु+इमनिच्, परिपांडिमन्, प्रा० स०] बहुत अधिक सफेदी या पीलापन।

परिपांडु—वि०[सं० प्रा० स०] १. बहुत हलका पीला। सफेदी लिए हुए पीला। २. दुबला-पतला। कृश और क्षीण।

परिपाक—पुं०[सं० परि√पच् (पकाना)+घञ्] १. अच्छी तरह या ठीक पकना या पकाया जाना। २. पेट में भोजन अच्छी तरह पचना। ३. किसी विषय या बात की ऐसी पूर्ण अवस्था तक पहुँचना जिसमें कुछ भी त्रुटि न रह जाय। ४. परिणाम। फल। ५. निपुणता। दक्षता।

परिपाकिनी—स्त्री०[सं० परिपाक+इनि+ङीप्] निसोथ।

परिपाचन—पुं०[सं० परि√पच्+णिच्+ल्युट्—अन] अच्छी तरह पचाना। भली भाँति पचाना।

परिपाचित—भू० कृ०[सं० परि√पच्+णिच्+क्त] अच्छी तरह पकाया हुआ।

परिपाटल—वि०[सं० प्रा० स०] पीलापन लिए लाल रंगवाला।
पुं० उक्त प्रकार का रंग।

परिपाटलित—भू० कृ०[सं० परिपाटल+क्विप्+क्त] परिपाटल रंग में रँगा हुआ।

परिपाटि—स्त्री० [सं० परि√पट् (गति)+णिच्+इन्] =परिपाटी।

परिपाटी—स्त्री० [सं० परिपाटि+ङीष्] १. किसी जाति, समाज आदि में कोई काम करने का कोई विशिष्ट बँधा हुआ ढंग अथवा शैली। २. विशिष्ट अवसर पर कोई विशिष्ट काम करने की प्रथा। ३. उक्त प्रकार से काम करने का ढंग या प्रथा।
विशेष—परिपाटी, पद्धति और प्रथा का अन्तर जानने के लिए देखें 'प्रथा' का विशेष।

परिपाठ—पुं०[सं० परि√पठ्(पढ़ना)+घञ्] १. वेदों का पुनर्पठन। २. विस्तार के साथ उल्लेख या पाठ करना।

परिपार (रि)†—स्त्री०[सं० पाली=मर्यादा] मर्यादा। उदा०—किहिं नर किहिं सर राखियै खैर बढ़ै परिपारि।—विहारी।

परिपार्श्व—वि०[सं० प्रा० स०] पार्श्व या बगल का। बहुत पास का।
पुं० १. पार्श्व। २. सामीप्य।

परिपालक—वि०[सं०परि√पाल् (रक्षा करना)+णिच्+ण्वुल्—अक] परिपालन करनेवाला।

परिपालन—पुं०[सं० परि+पाल+णिच्+ल्युट्—अन] १. रक्षा। बचाव २. बहुत ही सावधानी से किया जानेवाला पालन-पोषण या लालन-पालन।

परिपालना—स्त्री०[सं० परि√पाल्+णिच्+युच्—अन] रक्षण। बचाव।
स०[सं० परिपालन] परिपालन करना।

परिपालनीय—वि०[सं० परि√पाल्+णिच्+अनीयर्] जिसका परि-पालन करना या होना चाहिए।

परिपालयिता (तृ)—वि०[सं० परि√पाल्+णिच्+ तृच्] परिपालन करनेवाला व्यक्ति। परिपालक।

परिपाल्य—वि० [सं० परि√पाल्+ण्यत्] जिसका परिपालन करना उचित हो या किया जाने को हो।

परिपिंजर—वि०[सं० प्रा० स०] हलके लाल रंग का।

परिपिच्छ—पुं०[सं० प्रा० स०] एक प्रकार का आभूषण, जो मोर की पूँछ के परों का बना होता था।

परिपिष्टक—पुं०[सं० परि√पिष् (चूर्ण करना)+क्त+कन्] सीसा।

परिपीड़न—पुं०[सं० प्रा० स०] १. अत्यंत पीड़ा पहुँचाना। बहुत कष्ट देना। २. अच्छी तरह दबाना या पीसना। ३. अनिष्ट, अपकार या हानि करना।

परिपीड़ित—भू० कृ०[सं० प्रा० स०] जो बहुत अधिक पीड़ित किया गया हो या हुआ हो।

परिपीवर—वि०[सं० प्रा० स०] बहुत अधिक मोटा या स्थूल।

परिपुष्करा—स्त्री०[सं० प्रा० ब० स०] गोड़ुंब ककड़ी। गोंडुबा।

परिपुष्ट—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. जिसका पोषण भली भाँति हुआ हो। पूर्ण रूप से पुष्ट।

परिपुष्टि—स्त्री० [सं० प्रा० स०] परिपुष्ट होने की अवस्था या भाव।

परिपूजन—पुं०[सं० प्रा० स०] सम्यक् प्रकार से किया जानेवाला पूजन या उपासना।

परिपूत—वि०[सं० प्रा० स०] अति पवित्र।
पुं० ऐसा अन्न जिसमें से कूड़ा-करकट, भूसी आदि निकाल दी गई हो। साफ किया हुआ अन्न।

परिपूरक—वि०[सं० प्रा० स०] १. परिपूर्ण करनेवाला। भर देनेवाला। २. धन-धान्य आदि से युक्त या संपन्न करनेवाला। ३. पूरा। संपूर्ण। सारा।

परिपूरणीय—वि०[सं० प्रा० स०] परिपूर्ण किये जाने के योग्य।

परिपूरन†—वि०=परिपूर्ण।

परिपूरित—भू० कृ०[सं० प्रा० स०] १. अच्छी तरह या पूरा-पूरा भरा हुआ। लबालब। २. पूरा या समाप्त किया हुआ।

परिपूर्ण—वि०[सं० प्रा० स०] १. जो सब प्रकार से पूर्ण हो। २. अच्छी तरह तृप्त किया हुआ। ३. जो पूरा या समाप्त हो चुका हो या किया जा चुका हो।

परिपूर्णेन्दु—पुं०[सं०परिपूर्ण-इंदु, कर्म० स०] सोलहों कलाओं से युक्त चंद्रमा। पूर्णिमा का पूरा चाँद।

परिपूर्ति—स्त्री०[सं० प्रा० स०]परिपूर्ण होने की अवस्था, क्रिया या भाव। परिपूर्णता।

परिपृच्छक—वि०[सं० परिप्रच्छक] जिज्ञासा या प्रश्न करनेवाला। पूछनेवाला।

परिपृच्छनिका—स्त्री०[सं० प्रा० स०] वह बात जिसके संबंध में वाद-विवाद किया जाय। वाद का विषय।

परिपृच्छा—स्त्री०[सं० प्रा० स०] १. पूछने की क्रिया या भाव। पूछ-ताछ। २. जिज्ञासा।

परिपेल—पुं० [सं० परि√पेल् (कंपन)+अच्] केवटी मोथा। कैवर्त मुस्तक।

परिपेलव—वि०[सं० ब० स०] सुन्दर तथा सुकुमार।
पुं० केवटी मोथा।

परिपोट(क)—पुं० [सं० परि√पुट् (फोड़ना)+घञ्] [परिपोट+कन्] कान का एक रोग जिसमें उसकी त्वचा गल या छिल जाती है।

परिपोटन—पुं०[सं० परि√पुट्+ल्युट्—अन] किसी चीज का छिलका अथवा ऊपरी आवरण हटाना।

परिपोषण—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० परिपोषित] अच्छी तरह किया जानेवाला पोषण। भली भाँति पुष्ट करना।

परिप्रश्न—पुं०[सं० प्रा० स०] कोई बात जानने के लिए किया जाने-वाला प्रश्न। (एन्क्वायरी)

परि-प्रश्नक—पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ विशेष रूप से किसी विशिष्ट विभाग या विषय से संबंध रखनेवाली बातों की पूछ-ताछ की जाती है। (एन्क्वायरी आफिस)

परिप्रेक्ष्य—पुं०[सं०] चित्रकला में, दृश्यों, पदार्थों, व्यक्तियों का ऐसा अंकन या चित्रण जिसमें उनका पारस्परिक अन्तर ठीक उसी रूप में दिखाई देता हो, जिस रूप में वह साधारणतः आँखों से देखने पर दिखाई देता है। (पर्स्पेक्टिव)

परिप्रेषण—पुं०[सं० प्रा० स०] [भू० कृ० परिप्रेषित] १. चारों ओर

भेजना। २. किसी को दूत या हरकारा बनाकर कहीं भेजना। २. देश-निकाला। निर्वासन। ३. परित्याग।

परिप्रेषित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. भेजा हुआ। प्रेषित। २. निकाला हुआ। निष्कासित। ३. छोड़ा या त्यागा हुआ। परित्यक्त।

परिप्रेष्टा (ष्टृ)—वि०[सं० प्रा० स०] जो भेजा जाने को हो या भेजे जाने के योग्य हो।

पुं० नौकर। सेवक।

परिप्लव—वि० [सं० परि√प्लु (गति)+अच्] १. तैरता या बहता हुआ। २. जो गति में हो। ३. हिलता-काँपता हुआ।

पुं० १. तैरना। २. पानी की बाढ़। ३. अत्याचार। ४. नाव। नौका।

परिप्लावित—भू० कृ० [सं०] (स्थान) जो बाढ़ के कारण जलमग्न हो चुका हो।

परिप्लुत—वि० [सं० परि√ प्लु+क्त] १. जिसके चारों ओर जल ही जल हो। २. भीगा हुआ। आर्द्र। गीला। तर। ३. काँपता या हिलता हुआ।

पुं० कहीं पहुँचने के लिए उछलकर आगे बढ़ने की क्रिया। छलाँग।

परिप्लुता—स्त्री०[सं० परिप्लुत+टाप्] १. मदिरा। शराब। २. ऐसी योनि जिसमें मैथुन या मासिक रजःस्राव के समय पीड़ा होती हो। (वैद्यक)

परिप्लुष्ट—वि०[सं० परि√प्लुष् (दाह)+क्त) १. जला या जलाया हुआ। २. झुलसा हुआ।

परिप्लोष—पुं० [सं० परि√प्लुष्+घञ्] १. तपना। ताप। २. जलन। दाह। ३. शरीर के अन्दर का ताप।

परिफुल्ल—वि०[सं० प्रा० स०] १. अच्छी तरह खिला हुआ। खूब खिला हुआ। २. अच्छी तरह खुला हुआ। ३. बहुत अधिक प्रसन्न। ४. जिसके रोएँ खड़े हो गये हों। जिसे रोमांच हुआ हो।

परिबंधन—पुं०[सं० प्रा० स०] [वि० परिबद्ध] ऐसा बंधन जिसमें चारों ओर से किसी को जकड़ा जाय।

परिबर्ह—पुं०[सं० परि√बर्ह् (दान)+घञ्] १. राजाओं के हाथी-घोड़ों पर डाली जानेवाली झूल। २. राजा के छत्र, चँवर आदि राज-चिह्न। राजा का साज-सामान। ३. घर-गृहस्थी में नित्य काम आनेवाली चीजें। घर का सामान। ४. धन-सम्पत्ति। दौलत।

परिबर्हण—पुं०[सं० परि√बर्ह्+ल्युट्-अन] १. पूजा। उपासना। २. सब प्रकार से होनेवाली वृद्धि। ३. सम्पन्नता। समृद्धि।

परिबल—पुं०[सं० प्रा० स०] यंत्रों आदि का वह बल या शक्ति जिसकी प्रेरणा से उसका कोई अंग या पहिया किसी अक्ष या बिन्दु पर घूमता या चक्कर लगाता है। (मोमेन्टम)

परिबाधा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. बहुत बड़ी या विकट बाधा। २. कष्ट। पीड़ा। ३. परिश्रम। ४. थकावट। श्रांति।

परिबृंहण—पुं० [सं० परि√बृंह् (वृद्धि)+ल्युट्-अन] [भू०कृ० परिबृंहित] १. चारों ओर या हर तरफ से बढ़ना। वर्धन। २. पूरक ग्रंथ जो किसी मुख्य ग्रंथ में प्रतिपादित विचारों की पुष्टि और समर्थन करता हो।

परिबेख†—पुं०=परिवेष।

परिबेठना—स० [सं० प्रतिवेष्ठन] आच्छादित करना। लपेटना। ढकना। उदा०—ग्रीष्म द्वैपहरी मिस जोन्ह महा विष ज्वालन सों परिबेठी।—देव

परिबोध—पुं०[सं० प्रा० स०] १. ज्ञान। २. तर्क। ३. वे प्रतिबंध या विघ्न जो दुर्बल चित्तवाले साधकों को समाधिस्थ नहीं होने देते।

परिबोधन—पुं०[सं० परि√बुध्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० परिबोधनीय] १. ठीक प्रकार से बोध कराना। २. दंड की धमकी देकर कोई विशेष कार्य करने से रोकना। चेतावनी देना। ३. चेतावनी।

परिबोधना—स्त्री०[सं० परि√बुध्+णिच्+युच् -अन, टाप्] चेतावनी।

परिभंग—पुं०[सं० प्रा० स०] टुकड़े-टुकड़े करना।

परिभक्ष—वि०[सं० परि√भक्ष् (खाना)+अच्] परिभक्षण करनेवाला।

परिभक्षण—पुं०[सं० परि√भक्ष्+ल्युट्-अन] [भू० कृ० परिभक्षित] १. पूरी तरह से खाना। २. खूब खाना।

परिभक्षा—स्त्री०[सं० परि√भक्ष्+अ+टाप्] आपस्तंब सूत्र के अनुसार एक प्रकार का विधान।

परिभर्त्सन—पुं०[सं० प्रा० स०] चारों ओर से होनेवाली भर्त्सना।

परिभव—पुं०[सं० परि√भू (होना)+अप्] अनादर। अपमान। तिरस्कार। उदा०—चिर परिभव से श्रेष्ठ है मरण।—पंत।

परिभवनीय—वि०[सं० परि√भू+अनीयर्] १. जो अनादर या अपमान का पात्र हो। २. जिसकी पराजय निश्चित-प्राय हो।

परिभवी (विन्)—वि० [सं० परि√भू+इनि] दूसरों का अनादर या अपमान करनेवाला।

परिभाव—पुं०[सं० परि√भू+घञ्] १. अनादर। अपमान। परिभव। २. मात करना। हराना। पराभव।

परिभावन—पुं०[सं० परि√भू+णिच्+ल्युट्-अन] [भू० कृ० परिभावित] १. मिलाप। संयोग। मिलन। २. चिंता। फिक्र।

परिभावना—स्त्री०[सं० परि√भू+णिच्+युच्-अन+टाप्] १. चिन्तन। विचार। २. चिंता। फिक्र। ३. साहित्य में ऐसा वाक्य या पद जिससे अतिशय उत्सुकता उत्पन्न हो।

परिभावित—भू० कृ०[सं० परि√भू+णिच्+क्त] १. मिला या मिलाया हुआ। मिश्रित। २. व्याप्त। ३. जिस पर विचार किया जा चुका हो। विचारित।

परिभावी (विन्)—वि०[सं० परि√भू+णिच्+णिनि] अनादर, अपमान या तिरस्कार करनेवाला।

परिभावुक—वि०=परिभावी।

परिभाषक—वि०[सं० परि√भाष् (बोलना)+ण्वुल—अक] १. निंदा के द्वारा किसी का अपमान करनेवाला। २. निंदक।

परिभाषण—पुं०[सं० परि√भाष्+ल्युट्—अन] १. बात-चीत। वार्तालाप। २. दोषारोपण तथा निंदा करना। ३. नियम।

परिभाषा—स्त्री०[सं० परि√भाष्+अ+टाप्] १. बात-चीत। २. निंदा। ३. व्याकरण में वह व्याख्यापक सूत्र जो पाणिनी के सूत्रों के साथ रहता और उनके प्रयोग की रीति बतलाता है। ४. किसी वाक्य में आये हुए पद या शब्द का अर्थ अथवा आशय निश्चित रूप से स्पष्ट करने की

क्रिया या प्रकार। ५. ऐसा कथन या वाक्य जो किसी पद या शब्द का अर्थ या आशय स्पष्ट रूप से बतलाता या व्यक्त करता हो। व्याख्या से युक्त अर्थापन। (डेफिनेशन) ६. ऐसा शब्द जो किसी विज्ञान या शास्त्र में किसी विशिष्ट अर्थ में चलता या प्रयुक्त होता हो। परिभाषिक शब्द। (टेक्निकल टर्म)

परिभाषित—भू० कृ० [सं० परि√भाष्+क्त] (शब्द या पद) जिसकी परिभाषा की गई या हो चुकी हो। (डिफाइन्ड)

परिभाषी (षिन्)—वि० [सं० परि√भाष्+णिनि] बोलने या भाषण करनेवाला।

परिभाष्य—वि० [सं० परि√भाष्+ण्यत्] १. जो स्पष्ट रूप से कहा जा सकता हो या कहा जाने को हो। २. जिसकी परिभाषा की जा रही हो या की जाने को हो।

परिभिन्न—वि० [सं० प्रा० स०] १. टूटा-फूटा या फटा हुआ। २. विकृत।

परिभुक्त—भू० कृ० [सं० परि√भुज् (भोगना)+क्त] जिसका परिभोग किया गया हो या हो चुका हो।

परिभुग्न—वि० [सं० परि√भुज् (चूर्ण करना)+क्त] टेढ़ा।

परिभू—वि० [सं० परि√भू+क्विप्] १. जो चारों ओर से घेरे या आच्छादित किये हुए हो। २. नियम, बंधन आदि में रहनेवाला। ३. नियामक। परिचालक।

परिभूत—भू० कृ० [सं० परि√भू+क्त] [भाव० परिभूति] १. जिसका परिभव हुआ हो। २. अनादृत। तिरस्कृत। ३. हारा हुआ। परास्त।

परिभूति—स्त्री० [सं० परि+भू+क्तिन्] अपमानित होने या हारने की अवस्था या भाव।

परिभूषण—पुं० [सं० परि√भूष् (सजाना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिभूषित] १. अच्छी तरह से भूषित करना। अलंकृत करना। २. प्राचीन भारत में, वह संधि जो आक्रमक को अपने देश का राजस्व देकर की जाती थी।

परिभूषित—भू० कृ० [सं० परि√भूष्+क्त] जिसका परिभूषण किया गया हो या हुआ हो।

परिभेद—पुं० [सं० परि√भिद् (फाड़ना)+घञ्] १. अच्छी तरह से भेदन करना। २. शस्त्रों आदि से किया जानेवाला आघात। ३. उक्त प्रकार के आघात से होनेवाला क्षत। घाव। जखम।

परिभेदक—वि० [सं० परि√भिद्+ण्वुल्—अक] १. अच्छी तरह भेदन करने अर्थात् काटने या फाड़नेवाला। २. गहरा घाव करनेवाला। पुं० यथेष्ट क्षत या घात करनेवाला शस्त्र।

परिभोक्ता (क्तृ)—वि० [सं० परि√भुज्+तृच्] १. परिभोग करनेवाला। २. दूसरे के धन का उपभोग करनेवाला।
पुं० गुरु के धन का उपभोग करनेवाला व्यक्ति।

परिभोग—पुं० [सं० प्रा० स०] [वि० परिभोग्य] १. बहुत अधिक किया जानेवाला भोग। २. स्त्री के साथ किया जानेवाला मैथुन। संभोग।

परिभ्रंश—पुं० [सं० परि√ भ्रंश् (अधःपतन)+घञ्] १. गिरना या गिराना। पतन। स्खलन। २. पलायन। भगदड़।

परिभ्रम—पुं० [सं० परि√भ्रम् (घूमना)+घञ्] १. चारों ओर घूमना। पर्यटन। २. भ्रम। ३. सीधी तरह से कोई बात न कहकर उसे घुमा-फिराकर चक्करदार ढंग या सांकेतिक रूप से कहना। जैसे—'नाक पर मक्खी न बैठने देना।' के बदले में कहना—सूँघने की इन्द्रिय पर घर में उड़ते फिरने वाले कीड़े या पतंगे को आसन न लगाने देना।

परिभ्रमण—पुं० [सं० परि√भ्रम्+ल्युट्—अन] १. चारों ओर घूमना। २. विज्ञान में, किसी एक वस्तु का किसी दूसरी वस्तु को केन्द्र मानकर उसके चारों ओर घूमना या चक्कर लगाना। (रोटेशन) जैसे—चंद्रमा पृथ्वी का और पृथ्वी सूर्य का परिभ्रमण करता है। ३. घेरा। परिधि।

परिभ्रष्ट—भू० कृ० [सं० परि√ भ्रंश् +क्त] १. गिरा हुआ। च्युत। पतित। २. स्खलित। भागा हुआ।

परिभ्रामी (मिन्)—वि० [सं० परि √भ्रम्+णिनि] परिभ्रमण करनेवाला।

परिमंडल—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० परिमंडलता] १. गोल। वर्तुलाकार। २. जो तौल में एक परमाणु के बराबर हो।
पुं० १. चक्कर। २. घेरा। विशेषतः वृत्ताकार घेरा। परिधि। ३. एक तरह का जहरीला कीड़ा। ३. चंद्रमा अथवा सूर्य के चारों ओर की प्रकाशमान वृत्ताकार रेखा। ४. चंद्रमा या सूर्य का प्रभामंडल। (कारोना)

परिमंडल कुष्ठ—पुं० [सं० कर्म० स०] कुष्ठ का एक भेद।

परिमंडलता—स्त्री० [सं० परिमंडल+तल्+टाप्] गोलाई।

परिमंडलित—भू० कृ० [सं० परिमंडल+इतच्] चारों ओर से गोल किया हुआ। गोलाकृति बनाया हुआ।

परिमंथर—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक मंथर।

परिमंद—वि० [सं० प्रा० स०] १. अत्यधिक मंद बुद्धि। २. बहुत ही शिथिल या सुस्त।

परिमन्यु—वि० [सं० अत्या० स०] जिसे बहुत अधिक क्रोध आता हो। क्रोधी स्वभाव का। गुस्सैवर।

परिमर—पुं० [सं० परि√मृ (मरना)+अप्] १. पूर्ण नाश। २. किसी के पूर्ण नाश के लिए किया जानेवाला एक तांत्रिक प्रयोग। ३. वायु।

परिमर्द—पुं० [सं० परि√मृद् (मर्दन)+घञ्] बहुत अधिक या अच्छी तरह से किया जानेवाला मर्दन।

परिमर्श—पुं० [सं० परि√मृश् (छूना, विचारना)+घञ्] १. छू जाना। लग जाना। २. लगाव होना। ३. अच्छी तरह किया जानेवाला विचार। परामर्श।

परिमर्ष—पुं० [सं० परि√मृष् (सहना)+घञ्] १. ईर्ष्या। २. कुढ़न। ३. क्रोध।

परिमल—पुं० [सं० परि √मल् (धारण)+अच्] १. अच्छी तरह मलना। २. शरीर में सुगंधित द्रव्य मलना या लगाना। ३. उक्त प्रकार से शरीर में मले या लगाये हुए पदार्थों से निकलनेवाली सुगंध। ४. खुशबू। सुगंध। सुवास। ५. पुष्पों आदि से निकलनेवाली वह सुगंध जो चारों ओर दूर तक फैलती हो। ६. मैथुन। संभोग। ७. पंडितों या विद्वानों की मंडली या समुदाय।

परिमलज—वि० [सं० परिमल√जन् (उत्पन्न होना)+ड] परिमल अर्थात् मैथुन से प्राप्त होनेवाला (सुख)।

परिमलित—भू० कृ० [सं० परिमल+इतच्] फूलों आदि की सुगंध से सुगंधित किया हुआ।

परिमा—स्त्री० [सं० परि√मा (मापना)+अङ्+टाप्] १. सीमा। हद। २. ज्यामिति में, किसी क्षेत्र की सीमा सूचित करनेवाली रेखा। (बाउंड)

परिमाण—पुं० [सं० परि √मा+ल्युट्—अन] १. गिनने, तौलने, मापने आदि पर प्राप्त होनेवाला फल। २. नाप, जोख तौल आदि की दृष्टि से किसी वस्तु की लंबाई, चौड़ाई, भार, घनत्व विस्तार आदि। मान। (क्वान्टिटी) ३. चारों ओर का विस्तार। घेरा।

परिमाणक—पुं० [सं० परिमाण+कन्] १. परिमाण। २. तौल। भार।

परिमाण-मंडल—पुं० [सं०] भूगर्भ-शास्त्र में पृथ्वी के तीन मुख्य पटलों या विभागों में बीच का पटल या विभाग जो अनेक प्रकार की धातु-मिश्रित चट्टानों का बना हुआ बहुत गरम और ठोस है और जिसके ऊपरी पटल पर मनुष्य बसते और वनस्पतियाँ उगती हैं। (बैरिस्फीयर)

परिमाणी (णिन्)—वि० [सं० परिमाण+इनि] परिमाण युक्त। परिमाण विशिष्ट।

परिमाता (तृ)—वि० [सं० परि√मा+तृच्] परिमाण का पता लगानेवाला। परिमाण स्थिर करनेवाला।

परिमाथी (थिन्)—वि० [सं० परि√ मथ् (मथना)+णिनि] कष्ट देनेवाला।

परिमान—पुं०=परिमाण।

परिमाप—पुं० [सं० परि√ मा+णिच्, पुक्+ल्युट्—अन] १. मापने या नापने की क्रिया या भाव। २. लंबाई, चौड़ाई आदि की नाप या लेखा। (डाइमेंशन) ३. वह उपकरण जिससे कोई चीज मापी या नापी जाय। (स्केल) ४. ज्यामिति में किसी आकृति, क्षेत्र या तल को चारों ओर से घेरनेवाली बाहरी रेखा अथवा ऐसी रेखा की लंबाई या विस्तार। (पेरिमीटर)

परिमार्ग—पुं० [सं० प्रा०स०] किसी चीज के चारों ओर बना हुआ पथ या मार्ग। परिपथ।

परिमार्गन—पुं० [सं० परि √ मार्ग (खोजना)+ल्युट्—अन] १. टोह या पता लगाने के लिए चारों ओर जाना। २. अन्वेषण। ३. मन-बहलाव या सैर-सपाटे के लिए घूमना। (एक्सकर्शन)

परिमार्गी (गिन्)—वि० [सं० परि√मार्ग+णिनि] टोह या पता लगाने वाला।

परिमार्जक—वि० [सं० परि√मृज् (शुद्धि करना)+ण्वुल्—अक] परि-मार्जन करनेवाला।

परिमार्जन—पुं० [सं० परि√मृज्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिमार्जित] १. साफ करने के लिए अच्छी तरह धोना। २. अच्छी तरह साफ करना। ३. साहित्य में, उनकी त्रुटियों, कमियों आदि को दूर करना और इस प्रकार उन्हें उज्ज्वल बनाना। ४. भूलें आदि सुधा-रना। ५. प्राचीन भारत में एक प्रकार की मिठाई जो शहद में पागकर बनाई जाती थी।

परिमार्जित—भू० कृ० [सं० परि√ मृज्+णिच्+क्त] जिसका परिमार्जन किया गया हो या हुआ हो। स्वच्छ किया या सुधारा हुआ।

परिमित—वि० [सं० परि√मा+क्त] [भाव० परिमिति] १. जो मापा जा चुका हो। २. परिमाण या मात्रा में जो किसी विशिष्ट बिंदु, संख्या आदि से कम हो, कम किया गया हो अथवा उससे अधिक न बढ़ सकता हो। (लिमिटेड)

परिमितकथी (थिन्)—वि० [सं० परिमित √ कथ् (कहना)+णिनि] कम बोलनेवाला। नपे-तुले शब्द या बातें कहनेवाला। अल्प-भाषी।

परिमितायु (स्)—वि० [सं० परिमित-आयुस्, ब०स०] जिसकी आयु परिमित अर्थात् थोड़ी हो।

परिमिताहार—पुं० [सं० परिमित-आहार, ब० स] अल्प भोजन। कम खाना।

वि० कम भोजन करनेवाला। अल्पाहारी।

परिमिति—स्त्री० [सं० परि√मा+क्तिन्] १. परिमित होने की अवस्था या भाव। २. परिमाण। ३. सीमा। हद। ४. क्षितिज। ५. प्रतिष्ठा। मर्यादा।

परिमिलन—पुं० [सं० परि√ मिल् (मिलना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिमिलित] १. मिलन। २. संपर्क। ३. स्पर्श। ४. संयोग।

परिमीढ—भू० कृ० [सं० परि√ मिह् (सींचना)+क्त] मूत्र से सिक्त।

परिमुक्त—वि० [सं० परि√ मुच् (छोड़ना)+क्त] [भाव० परिमुक्ति] बिलकुल स्वतन्त्र।

परिमृज्य—वि० [सं० परि √मृज्+क्विप्] १. परिमार्जित किये जाने के योग्य। २. जिसका परिमार्जन होने को हो।

परिमृष्ट—भू० कृ० [सं० परि √ मृज् (शुद्ध करना)+क्त] १, धोया हुआ। २. साफ किया हुआ। ३. अधिकार में किया या लिया हुआ। अधिकृत। ४. (व्यक्ति) जिससे परामर्श किया गया हो। ५. (विषय) जिसके संबंध में परामर्श हो चुका हो। ६. आलिंगित।

परिमृष्टि—स्त्री० [सं० परिमृज्+क्तिन्] परिमृष्ट होने की अवस्था या भाव।

परिमेय—वि० [सं० परि√ मा+यत्] १. जिसका परिमाण जाना जा सके अथवा जाना जाने को हो। २. घनत्व, मान, विस्तार, संख्या आदि में कम।

परिमोक्ष—पुं० [सं० प्रा० स०] १. पूर्ण मोक्ष। निर्वाण। २. परित्याग। छोड़ना। ३. सब को मोक्ष देनेवाले, विष्णु। ४. मल-त्याग करना। हगना।

परिमोक्षण—पुं० [सं० परि√मोक्ष (छोड़ना)+ल्युट्—अन] १. मुक्त करना या होना। २. मुक्ति या मोक्ष देना। ३. परित्याग करना। छोड़ना। ४. मल-त्याग करना। हगना। ५. हठयोग की धौति क्रिया से आँतें साफ करना।

परिमोष—पुं० [सं० परि √मुष् (चोरी करना)+घञ्] १. चोरी। २. डाका।

परिमोषक—पुं० [सं० परि √मुष्+ण्वुल्—अक] १. चोर। डाकू।

परिमोषण—पुं० [सं० परि√ मुष्+ल्युट्—अन] चुराने या डाका डालने का काम। किसी को मूसना; अर्थात् उसका सब-कुछ ले लेना।

परिमोषी (षिन्)—पुं० [सं० परि√मुष्+णिनि] १. चोर। २. डाकू।

परिमोहन—पुं० [सं० प्रा०स०] सम्मोहन। (दे०)

परिम्लान—वि० [सं० प्रा०स०] १. कुम्हलाया या मुरझाया हुआ। २. निस्तेज। हतप्रभ।

परियंक†—पुं०=पर्यंक।

परियंत†—अव्य०=पर्यंत।

परियज्ञ—पुं०[सं०ब०स०] किसी बड़े यज्ञ के पहले या पीछे किया जानेवाला छोटा यज्ञ।

परियत्त—भू० कृ० [सं० परि √ यत् (प्रयत्न)+क्त] चारों ओर से घिरा हुआ।

परियष्टा (ष्टृ)—पुं०[सं० परि√ यज् (देवपूजन)+तृच्] अपने बड़े भाई से पहले सोम-याग करनेवाला व्यक्ति।

परिया—पुं०[तामिल परैयान] दक्षिण भारत की एक प्राचीन अछूत या अस्पृश्य जाति।

वि० १. अछूत। अस्पृश्य। २. क्षुद्र। तुच्छ।

स्त्री०[देश०] वे लकड़ियाँ जिससे ताना ताना जाता है।

परियाण—पुं०[सं० परि √ या (जाना)+ल्युट्—अन] १. चारों ओर घूमना। २. पर्यटन।

परियाणिक—पुं०[सं० परियाण+ठन्—इक्] १. वह जो परियाण या पर्यटन कर रहा हो। २. वह गाड़ी जिस पर बैठकर घूमा-फिरा जाता हो।

परियात—वि०[सं० परि√या +क्त] १. जो घूम-फिरकर लौट आया हो।

परियाना—अ०[सं० प्र-याति] जाना। उदा०—केन कार्य परियासि कुत्र।—प्रिथीराज।

स०[?] अलग अलग करना। छाँटना।

परियार—पुं०[देश०] बिहारी शाकद्वीपीय ब्राह्मणों की एक उपजाति। २. मदरास में बसनेवाली एक छोटी जाति।

परियुक्ति—स्त्री०[सं० परि√युज्(लगाना)+क्तिन्] १. काम, बात, समय आदि निश्चित या नियत करने अथवा इनके लिए किसी व्यक्ति को नियत या नियुक्त करने की क्रिया या भाव। २. वह स्थिति जिसमें किसी काम या बात के लिए कोई किसी से वचन-बद्ध हो। ठहराव। (एंगेजमेंट)

परियुद्धक—पुं०[सं०] युद्ध-काल में वह देश जो अपने हितों के रक्षार्थ दूसरे देश या देशों से लड़ रहा हो। (बेलीगरेन्ट)

परियोजना—स्त्री०[सं०] कार्य-रूप में लायी जानेवाली योजना के संबंध में नियमित और व्यवस्थित रूप से स्थिर किया हुआ विचार और स्वरूप। (स्कीम)

परिरंभ, परिरंभण—पुं०[सं० परि√ रम् (मलना)+घञ्, मुम्] [सं० परि√ रभ्+ल्युट्—अन] [वि० परिरंभित, परिरंभी] अच्छी तरह से गले लगाना। कसकर गले मिलना। गाढ़ आलिंगन।

परिरंभना—स०[सं० परिरंभ+ना(प्रत्य०)] किसी को गले से लगाना। आलिंगन करना।

परिरक्षक—वि०[सं० परि√रक्ष् (बचाना)+ण्वुल्—अक] जो सब ओर से रक्षा करता हो। हर तरफ से बचानेवाला।

परिरक्षण—पुं०[सं० परि√ रक्ष्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिरक्षित] हर तरह से रक्षा करना।

परिरथ्या—स्त्री० [सं० प्रा०स०] चौड़ा रास्ता जिस पर रथ चलते थे।

परिरब्ध—वि०[सं० परि √रभ्+क्त] १. घिरा हुआ। गले लगाया हुआ।

परिरमित—वि०[सं० परिरत] (काम, क्रीड़ा आदि में) लीन।

परिराटी (टिन्)—वि०[सं० परि√ रट् (रटना)+घिनुण्] १. चीखने-चिल्लानेवाला। २. कर्कश ध्वनि करनेवाला।

३—५४

परिरूप—पुं०[सं० प्रा०स०] १.कला, शिल्प आदि के क्षेत्र में, वह कलापूर्ण रेखा-चित्र जिसे आधार मानकर तथा जिसके अनुकरण पर कोई काम किया या रचना खड़ी की जाय। भाँत। २. उक्त के अनुकरण पर बनी हुई चीज। (डिज़ाइन, उक्त दोनों अर्थों में) जैसे—शहरों में कपड़ों और मकानों के नये-नये परिरूप देखने में आते हैं।

परिरूपक—पुं०[सं० परि√ रूप् (रूपान्वित करना)+णिच्+ण्वुल्—अक]वह शिल्पी जो विभिन्न वस्तुओं के नये-नये परिरूप बनाता हो। (डिज़ाइनर)

परिरेखा—स्त्री०[सं० प्रा०स०] किसी तिकोने, चौकोर अथवा बहुभुजी क्षेत्र के सब ओर पड़नेवाली रेखा। (पेरिफेरी) जैसे—किसी टापू या पहाड़ की परिरेखा।

परिरोध†—पुं०[सं० परि √ रुध् (रोकना)+घञ्] चारों ओर से छेंकना।

परिलंघन—पुं० [सं० परि√लङ्घ् (लाँघना) +ल्युट्—अन] लाँघना।

परिलघु—वि० [सं० अत्या० स०] १. बहुत छोटा। २. बहुत जल्दी पचनेवाला। लघुपाक।

परिलिखन—पुं०[सं० परि√लिख् (लिखना)+ल्युट्—अन][भू० कृ० परिलिखित] घिस या रगड़ कर किसी चीज को चिकना बनाना।

परिलिखित—भू० कृ० [सं० परि√लिख्+क्त] घिस या रगड़कर चिकना किया हुआ।

परिलीढ—भू० कृ० [सं० परि√ लिह् (चाटना)+क्त] अच्छी तरह चाटा हुआ।

परिलुप्त—भू० कृ० [सं० परि√लुप् (काटना)+क्त] १. जो लुप्त हो चुका हो। खोया हुआ। २. क्षतिग्रस्त।

परिलुप्त-संज्ञ—वि० [सं० ब० स०] जिसकी संज्ञा न रह गई हो। बेहोश।

परिलून—भू० कृ० [सं० परि√ लू+क्त] कटा अथवा काटकर अलग किया हुआ।

परिलेख—पुं०[सं० परि√लिख्+घञ्] १. चित्र का ढाँचा। रेखा-चित्र। खाका। २. चित्र। तसवीर। ३. चित्र अंकित करने की कूँची या कलम। ४. उल्लेख। वर्णन। ५. बड़े अधिकारियों के पास भेजा जानेवाला विवरण। (रिटर्न)

परिलेखन—पुं०[सं० परि√ लिख्+ल्युट्—अन] १. किसी वस्तु के चारों ओर रेखाएँ बनाना। २. लिखना। ३. चित्र अंकित करना।

परिलेखना*—स० [सं० परिलेख] कुछ महत्त्व का मानना या समझना। किसी लेखे में गिनना।

परिलेही (हिन्)—पुं०[सं० परि√लिह्+णिनि] एक रोग जिसमें कान की लोलक पर फुंसियाँ निकल आती हैं।

परिलोप—पुं०[सं० परि√लुप् (छेदन)+घञ्] १. लुप्त हो जाना। २. क्षति। हानि। ३. विनाश। विलोप।

परिवंचन—पुं०[सं० परि√ वञ्च् (ठगना)+ल्युट्—अन] धोखा देना ठगना।

परिवक्रा—स्त्री०[सं० प्रा० स०] वृत्ताकार गड्ढा।

परिवत्सर—पुं०[सं० प्रा० स०] १. आदि से अंत तक का पूरा वर्ष या

साल। २. ज्योतिष के पाँच विशेष संवत्सरों में से एक जिसका अधिपति सूर्य होता है।

परिवत्सरीय—वि० [सं० परिवत्सर+छ—ईय] परिवत्सर-संबंधी।

परिवदन—पुं० [सं० परि√ वद् (बोलना)+ल्युट्—अन] दूसरे की की जानेवाली निंदा या बुराई।

परिवपन—पुं० [सं० परि√वप् (काटना)+ल्युट्—अन] १. कतरना। २. मूँड़ना।

परिवर्जन—पुं० [सं० परि√वृज् (निषेध)+ल्युट्—अन] [वि० परिवर्जनीय, भू० कृ० परिवर्जित] परित्याग करना। त्यागना। छोड़ना। तजना। २. मार डालना। वध या हत्या करना।

परिवर्जनीय—वि० [सं० परिवृज+अनीयर्] परित्याज्य।

परिवर्जित—भू० कृ० [सं० परि√वृज्+णिच्+क्त] जिसका परिवर्जन हुआ हो। त्यागा हुआ।

परिवर्णी—वि० [सं० परिवर्ण+हि० ई (प्रत्य०)] (शब्द) जो कई शब्दों के आरंभिक वर्णों या अक्षरों के योग से अथवा कुछ शब्दों के आरंभिक तथा कुछ शब्दों के अंतिम वर्णों या अक्षरों के योग से बना हो। (ऐक्रास्टिक) जैसे—भारतीय+युरोपीय के योग से 'भारोपीय' अथवा चानब और जेहलम (झेलम) नदियों के बीचवाले प्रदेश का नाम 'चज' परिवर्णीशब्द है। इसी प्रकार चांद्रमास के पक्षों के 'बदी' (देखें) और 'सुदी' (देखें) भी परिवर्णी शब्द हैं।

परिवर्त—पुं० [सं० परि√वृत् (बरतना)+घञ्] १. घुमाव। चक्कर। फेरा। २. अदला-बदली। विनिमय। ३. वह चीज जो किसी दूसरी चीज के बदले में दी या ली जाय। ४. किसी काल या युग का अंत होना या बीतना। ५. ग्रंथ का अध्याय या परिच्छेद। ६. संगीत में स्वर-साधन की एक प्रणाली।

परिवर्तक—वि० [सं० परि√वृत+ण्वुल्—अक] घूमनेवाला। चक्कर खानेवाला।

वि० [परि√वृत्+णिच्+ण्वुल्] १. घुमानेवाला। फिरानेवाला। चक्कर देनेवाला। २. अदला-बदली या विनिमय करनेवाला। ३. किसी प्रकार का परिवर्तन करनेवाला। ४. युग का अंत करनेवाला। पुं० मृत्यु के पुत्र दुस्सह का एक पुत्र।

परिवर्तन—पुं० [सं० परि√ वृत्+ल्युट्—अन] [वि० परिवर्तनीय, परिवर्तित, परिवर्ती] १. इधर-उधर घूमना-फिरना। २. चक्कर या फेरा लगाना। ३. घुमाव। चक्कर। फेरा। ४. किसी काल या युग का अंत या समाप्ति। ५. एक चीज के बदले में दूसरी चीज देना। विशेषतः किसी की पसंद या सुभीते की चीज उसे देकर उसके बदले में अपनी पसंद या सुभीते की चीज लेना। (कम्यूटेशन) जैसे—नोटों का रुपये में और रुपये का रेजगी में परिवर्तन। ६. वह चीज जो इस प्रकार बदले में दी या ली जाय। ७. किसी की आकृति, गुण, रूप, स्थिति आदि में होनेवाला फेर-फार, सुधार, ह्रास आदि। जैसे—रंग, स्वास्थ्य या हृदय का परिवर्तन। ८. वह क्रिया जो किसी चीज या बात का रूप बदलने अथवा उसे नया रूप देने के लिए की जाय। (चेंज) ९. एक के स्थान पर दूसरे के आने का भाव। जैसे—ऋतु का परिवर्तन, पहनावे का परिवर्तन। १०. भारतीय युद्ध-कला में शत्रु पर प्रहार करने के लिए उसके चारों ओर घूमना।

परिवर्तनीय—वि० [सं० परि√ वृत्+अनीयर्] जिसमें परिवर्तन किया जाने को हो।

परिवर्तिका—स्त्री० [सं०परि√वृत्+ण्वुल्—अक+टाप्,इत्व] एक प्रकार का क्षुद्र रोग जिसमें अधिक खुजलाने, दबाने या चोट लगने के कारण लिंगचर्म उलट कर सूज आता है।

परिवर्तित—भू० कृ० [सं० परि√वृत्+णिच्+क्त] १. जिसमें परिवर्तन किया गया हो या हुआ हो। जिसका आकार या रूप बदला गया हो। बदला हुआ। रूपांतरित। २. जो किसी के परिवर्तन या बदले में मिला हो।

परिवर्तिनी—स्त्री० [सं० परिवर्तिन्+ङीप्] भादों के शुक्ल पक्ष की एकादशी।

परिवर्ती (तिन्)—वि० [सं० परि√वृत्त+णिनि] १. बराबर घूमता रहनेवाला। २. जिसमें परिवर्तन या फेर-बदल होता रहता हो। बराबर बदलता रहनेवाला। परिवर्तनशील। ३. परिवर्तन या विनिमय करनेवाला।

परिवर्तुल—वि० [सं० प्रा० स०] ठीक और पूरा गोल या वर्त्तुल।

परिवर्त्यता—स्त्री० [सं०] परिवर्त्य होने की अवस्था, गुण या भाव।

परिवर्द्धन—पुं० [सं० परि√ वृध् (बढ़ना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिवर्द्धित] १. आकार-प्रकार, विषय-वस्तु आदि में की जानेवाली वृद्धि। (एनलार्जमेंट) जैसे—पुस्तक का परिवर्द्धन। २. इस प्रकार बढ़ाया हुआ अंश। ३. जोड़।

परिवर्द्धित—भू० कृ० [सं० परि√ वर्ध्+णिच्+क्त] जिसका परिवर्द्धन किया गया हो या हुआ हो। बढ़ा या बढ़ाया हुआ। (एनलार्जड)

परिवर्म (वर्मन्)—वि० [सं० ब० स०] वर्म से ढका हुआ। बख्तर से ढका हुआ। जिरहपोश।

परिवर्ष—पुं० [सं०] उतना समय जितना किसी एक ग्रह को रवि-वीच से चलकर फिर दोबारा वहाँ तक पहुँचने में लगता है। (अनोमेलस्टिक ईयर)

परिवर्ह—पुं० [सं० परि√वर्ह (उत्कर्ष)+घञ्] १. चँवर, छत्र आदि राजत्व की सूचक वस्तुएँ। २. राजाओं के दास आदि। ३. घर, कमरे आदि को सजाने के लिए उसमें रखी जानेवाली वस्तुएँ। सजावट की चीजें। ४. गृहस्थी में काम आनेवाली वस्तुएँ। ५. सम्पत्ति।

परिवर्हण—पुं० [सं० परि√वर्ह+ल्युट्—अन] १. अनुचर वर्ग। २. वेश-भूषा। पोशाक। ३. वृद्धि। ४. पूजा।

परिवसथ—पुं० [सं० परि√वस् (बसना)+अथच्] गाँव। ग्राम।

परिवह—पुं० [सं० परि√वह् (बहना)+अच्] १. सात पवनों में से छठा पवन; जो आकाश गंगा, सप्तऋषियों आदि को वहन करता है। २. अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक जिह्वा की संज्ञा।

परिवहन—पुं० [सं० परि√वह्+ल्युट्—अन] माल, यात्रियों आदि को एक स्थान से ढोकर दूसरे स्थान पर ले जाने का कार्य, जो आज-कल रेलों, मोटरों, जहाजों, नावों आदि अनेक साधनों द्वारा किया जाता है। (ट्रान्सपोर्ट)

परिवहन तंत्र—पुं० [सं०] दे० 'रक्तवह-तंत्र'।

परिवाँण†—पुं०=प्रमाण।

परिवा†—स्त्री०=प्रतिपदा।

परिवाद—पुं० [सं० परि√वद् (बोलना)+घञ्] १. निंदा। बुराई। शिकायत। २. बदनामी। ३. झूठी निन्दा या शिकायत। मिथ्या दोषारोपण। ४. कोई असुविधा या कष्ट होने पर अधिकारियों के सामने की जानेवाली किसी काम, बात, व्यक्ति आदि की शिकायत। (कम्प्लेन्ट) ५. लोहे के तारों का वह छल्ला जिसे उँगली पर पहनकर वीणा, सितार आदि बजाई जाती है। मिजराब।

परिवादक—वि० [सं० परि√वद्+ण्वुल्—अक] १. परिवाद या निंदा करनेवाला। निंदक। २. शिकायत करनेवाला।

पुं० वह जो वीणा, सितार या इसी तरह का और कोई बाजा बजाता हो।

परिवादिनी—स्त्री० [सं० परिवादिन्+ङीप्] एक तरह की वीणा जिसमें सात तार होते हैं।

परिवादी (दिन्)—वि० [सं० परि√वद् + णिनि] =परिवादक।

परिवान*—पुं० =प्रमाण।

परिवानना—स० [सं० प्रमाण] प्रमाण के रूप में या ठीक मानना।

परिवाप—पुं० [सं० परि√वप् (काटना)+घञ्] १. बाल आदि मूंड़ना। २. बोना। ३. जलाशय। ४. घर का उपयोगी सामान। ५. अनुचरवर्ग। ६. भूना हुआ चावल। लावा। फरुही। ७. छेना।

परिवापित—भू० कृ० [सं० परि√वप्+णिच्+क्त] मूंड़ा हुआ। मुंडित।

परिवार—पुं० [सं० परि√वृ (ढकना)+घञ्] १. एक ही पूर्व पुरुष के वंशज। २. एक घर में और विशेषतः एक कर्ता के अधीन या संरक्षण में रहनेवाले लोग। ३. किसी विशिष्ट गुण, संबंध आदि के विचार से चीजों का बननेवाला वर्ग। जैसे—आर्य-भाषाओं का परिवार। (फेमिली) ४. किसी राजा, रईस आदि के आगे-पीछे चलने या साथ रहनेवाले लोग।

परिवारण—पुं० [सं० परि√वृ+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० परिवारित] १. ढकने या छिपाने की क्रिया। २. आवरण। आच्छादन। ३. तलवार की म्यान। कोष।

परिवार नियोजन—पुं० [सं०] आज-कल देश अथवा संसार की दिन पर दिन बढ़ती हुई जन-संख्या को नियंत्रित करने या सीमित रखने के उद्देश्य से गार्हस्थ्य जीवन के संबंध में की जानेवाली वह योजना जिससे लोग आवश्यकता अथवा औचित्य से अधिक संतान उत्पन्न न करें। (फैमिली प्लानिंग)

परिवारित—भू० कृ० [सं० परि√वृ+णिच्+क्त] घिरा या घेरा हुआ। आवेष्टित।

परिवारी—पुं० [सं० परिवार] १. परिवार के लोग। २. नाते-रिश्ते के लोग।

वि० पारिवारिक।

परिवार्षिक—वि० [सं० प्रा० स०] १. जो पूरे वर्ष भर चलता या होता रहे। जैसे—परिवार्षिक नाला—ऐसा नाला जो बराबर बहता रहे, गरमियों में सूख न जाय; परिवार्षिक वृक्ष=ऐसा वृक्ष जो बराबर हरा रहता हो, और जिसके पत्ते किसी ऋतु में झड़ते न हों। २. बराबर या बहुत दिन तक स्थायी रूप से बना रहनेवाला। (पेरीनियल)

परिवास—पुं० [सं० परि√वस्+घञ्] १. टिकना। ठहरना। २. घर। मकान। ३. खुशबू। सुगन्ध। ४. संघ से किसी भिक्षु का होनेवाला बहिष्करण। (बौद्ध)

परिवासन—पुं० [सं० परि√वस्+णिच्+ल्युट्—अन] खंड। टुकड़ा।

परिवाह—पुं० [सं० परि√वह् (बहना)+घञ्] १. ऐसा बहाव जिसके कारण पानी ताल, तालाब आदि की समाई से अधिक हो जाता हो। पानी का खूब भर जाने के कारण बाँध, मेंड़ आदि के ऊपर से होकर बहना। २. वह नाली जिसके द्वारा आवश्यकता से अधिक पानी बाहर निकलता या निकाला जाता हो। जल की निकासी का मार्ग। ३. किसी प्रदेश की ऐसी नदियां की व्यवस्था जिनमें नावों आदि से माल भेजे जाते हों।

परिवाही (हिन्)—वि० [सं० परि√वह+णिनि] [स्त्री० परिवाहिनी] (तरल पदार्थ) जो आधान या पात्र में या किनारों पर से इधर-उधर भर जाने पर ऊपर से बहता हो।

परिविंदक—पुं० [सं० परि√विद् (प्राप्त करना)+ण्वुल्—अक, नुम्] वह व्यक्ति जो बड़े भाई का विवाह होने से पहले अपना विवाह कर ले। परवेत्ता।

परिविंदत्—पुं० [परि√विन्द्+शतृ, नुम्] परिविंदक। (दे०)

परिविण्ण (न्न)—पुं० [सं० परि√विद् (लाभ)+क्त]=परिवित्त।

परिवितर्क—पुं० [सं० प्रा० स०] १. विचार। २. परीक्षा। (बौद्ध)

परिवित्त—पुं० [सं० परि√विद्+क्त] परिविंदक। (दे०)

परिवित्ति—पुं० [सं० परि√विद्+क्तिन्] परिवित्त। परिविंदक।

परिविद्ध—वि० [सं० परि√व्यध् (बेधना)+क्त] भली भांति या चारों ओर से बिंधा हुआ।

पुं० कुबेर।

परिविविदान—पुं० [सं० परि√विद्+लिट्+कानच्] परिविंदक। (दे०)

परिविष्ट—भू० कृ० [सं० परि√विष् (व्याप्ति)+क्त], [भाव० परिविष्टि] १. घिरा अथवा घेरा हुआ। २. परोसा हुआ (भोजन)।

परिविष्टि—स्त्री० [सं० परि√विष्+क्तिन्] घेरा। वेष्टन। २. सेवा। टहल। ३. भोजन परोसना।

परिविहार—पुं० [सं० प्रा० स०] जी भरकर या भली-भाँति किया जानेवाला विहार।

परिवीक्षण—पुं० [सं० परि-वि√ईक्ष् (देखना)—ल्युट्—अन] १. भली भाँति देखना। २. चारों ओर ध्यानपूर्वक देखना।

परिवीजित—वि० [सं० परि√वीज् (पंखा झलना)+क्त] जिस पर पंखे से हवा की गई हो।

परिवीत—भू० कृ० [सं० परि√व्य (बुनना)+क्त] १. घिरा हुआ। लपेटा हुआ। २. छिपाया हुआ। ३. ढका हुआ। आच्छादित।

परिवृत्त—वि० [सं० परि√वृ+क्त] १. घेरा, छिपाया या ढका हुआ। २. उलटा-पलटा हुआ।

पुं० कार्य, घटना आदि के संबंध में, दूसरों की जानकारी के लिए प्रस्तुत किया जानेवाला संक्षिप्त विवरण। (स्टेटमेंट)

परिवृत्ति—स्त्री० [सं० परि√वृ+क्तिन्] १. ढकने, घेरने या छिपानेवाली वस्तु। घेरा। वेष्टन। २. घुमाव। चक्कर। ३. विनिमय। ४. अंत। समाप्ति। ५. दोबारा कोई काम करने की क्रिया या भाव। ६. किसी के किये हुए काम को देखकर वैसा ही और कोई काम

करना। ७. व्याकरण में, एक शब्द या पद को दूसरे ऐसे शब्द या पद से बदलना जिससे अर्थ वही बना रहे। जैसे—'कमललोचन' के 'कमल' के स्थान पर पद्म' अथवा 'लोचन के स्थान पर 'नयन' रखना। ८. साहित्य में, एक अलंकार जिसमें किसी को अनुपात में कम या सस्ती वस्तु देकर अधिक या महंगी वस्तु लेने का वर्णन होता है।

परिवृद्ध—वि० [सं० परि√वृध् (बढ़ना)+क्त] [भाव० परिवद्धि] १. जिसका परिवर्द्धन हुआ हो। २. चारों ओर से बढ़ा हुआ।

परिवृद्धि—स्त्री० [सं० परि√वृध्+क्तिन्] परिवृद्ध होने की अवस्था या भाव।

परिवेता (तृ)—पुं०[सं० परि√विद्+तृच्] परिविंदक। (दे०)

परिवेद—पुं० [सं० परि√विद्+घञ्] १. पूर्ण ज्ञान। २. अनेक विषयों की होनेवाली जानकारी। ३. परिवेदन।

परिवेदन—पुं० [सं० परि√विद्+ल्युट्—अन] १. पूर्ण ज्ञान। परिवेद। २. बड़े भाई के विवाह से पहले छोटे भाई का होनेवाला विवाह। ३. विवाह। शादी। ४. उपस्थिति। विद्यमानता। ५. प्राप्ति। लाभ। ६. वाद-विवाद। बहस। ७. कष्ट। विपत्ति।

परिवेदना—स्त्री० [सं० परि√विद् (ज्ञान)+णिच्+युच्—अन, टाप्] १. पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने की विवेक-शक्ति। २. चतुराई।

परिवेदनीया—स्त्री० [सं० परि√विद्+अनीयर+टाप्] परिविंदक की पत्नी। आविवाहित व्यक्ति की अनुज वधू।

परिवेदिनी—स्त्री० [सं० परिवेद+इनि—ङीष्] =परिवेदनीया।

परिवेध—पुं० [सं० परि√विध्+घञ्] १. प्रायः दो चीजों को जोड़ने के लिए उनमें किया जानेवाला ऐसा छेद जिसमें कील, पेच आदि लगाये अथवा चूल कसी जाती है। ३. इस प्रकार का बनाया जानेवाला छेद। (बोर)

परिवेधन—पुं० [परि√विध्+ल्युट्] परिवेध करने की क्रिया या भाव। (बोरिंग)

परिवेश—पुं० [सं० परि√विश् (प्रवेश)+घञ्] १. वेष्टन। परिधि। घेरा। २. बदली के समय सूर्य या चंद्रमा के चारों ओर दिखाई देनेवाला घेरा। ३. प्रकाशमान पिंडों के चारों ओर कुछ दूरी तक दिखाई देनेवाला प्रकाश जो मंडलाकार होता है। ४. तेजस्वी पुरुषों, देवताओं आदि के चित्रों में उनके मुखमंडल के चारों ओर दिखलाया जानेवाला प्रकाशमान घेरा। प्रभा-मंडल। भा-मंडल। (हेलो)

परिवेष—पुं० [सं० परि√विष् (व्याप्ति)+घञ्] १. भोजन परसना या परोसना। २. चारों ओर से घेरकर रक्षा करनेवाली रचना या वस्तु। ३. परकोटा। प्राचीर। ४. दे० 'परिवेश'। ५. दे० 'प्रभावमंडल'।

परिवेषक—पुं० [सं० परि√विष्+ण्वुल्—अक] वह व्यक्ति जो भोजन आदि परसता या परोसता हो।

परिवेषण—पुं० [सं० परि√विष्+ल्युट्—अन] १. भोजन आदि परसने या परोसने का काम। २. घेरा। परिधि। ३. दे० 'परिवेष'।

परिवेष्टन—पुं० [सं० परि√वेष्ट् (घेरना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिवेष्टित] १. किसी चीज को घेरना अथवा उसके चारों ओर घेरा बनाना। २. घेरा। परिधि। ३. छिपाने या ढकनेवाली चीज। आच्छादन। आवरण।

परिवेष्टा (ष्टृ)—पुं० [सं० परि√विष्+तृच्] परिवेषक। (दे०)

परिवेष्टित—भू० कृ० [सं० परि√वेष्ट्+क्त] १. जो चारों ओर से घिरा या घेरा हुआ हो। २. ढका हुआ। आच्छादित।

परिव्यक्त—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] जो अच्छी तरह से व्यक्त हो चुका हो।

परिव्यय—पुं० [सं० प्रा० स०] १. किसी चीज के निर्माण में होनेवाला व्यय। २. वह मूल्य जिस पर बिक्री के लिए उत्पादित की हुई अथवा मँगाई हुई वस्तु का घर पर परता बैठता हो। (कॉस्ट) ३. मूल्य। ४. किसी चीज की मरम्मत आदि करने पर बदले में दिया जानेवाला धन। पारिश्रमिक। ५. शुल्क।

परिव्ययनीय—वि० [सं० परि√व्यय् (खर्च करना)+अनीयर्] जो परिव्यय के रूप में किसी से लिया या किसी को दिया जा सके। जिस पर परिव्यय जोड़ा या लगाया जा सके। (चार्जेबुल)

परिव्याध—वि० [सं० परि√व्यध् (ताड़ना)+ण] चारों ओर से वेधने या छेदनेवाला।

पुं० १. जलबेंत। २. कनेर। ३. एक प्राचीन ऋषि।

परिव्याप्त—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] अच्छी तरह और सब अंगों या स्थानों में फैला या समाया हुआ।

परिव्रज्या—स्त्री० [सं० परि√व्रज् (जाना)+क्यप्, टाप्] १. इधर-उधर घूमना-फिरना। भ्रमण। २. तपस्या। ३. सदा घूमते-फिरते रहकर और भिक्षा माँग कर जीवन बिताने का नियम, वृत्ति या व्रत।

परिव्राज (क)—पुं० [सं० परि√व्रज्+घञ् (संज्ञा में), परि√व्रज्+ण्वुल्—अक] १. वह संन्यासी जो परिव्रज्या का व्रत ग्रहण करके सदा इधर-उधर भ्रमण करता रहे। २. संन्यासी। ३. बहुत बड़ा यती और परम हंस।

परिव्राजी—स्त्री० [सं० परि√व्रज्+णिच्+इन्, ङीष्] गोरखमुंडी। मुंडी।

परिव्राट (ज्)—पुं० [सं० परि√व्रज्+क्विप्] परिव्राजक। (दे०)

परिशंकी (किन्)—वि० [सं० पर√शङ्क् (आशंका करना)+णिनि] अत्यधिक आशंका करने या सशंकित रहनेवाला।

परिशयन—पुं० [सं० प्रा० स०] १. बहुत अधिक सोना। २. कुछ पशुओं और जीव-जंतुओं की वह निद्रा या तंद्रा वाली निष्क्रिय अवस्था जिसमें वे जाड़े के दिनों में शीत के प्रभाव से बचने के लिए बिना कुछ खाये-पीये चुप-चाप एक जगह दबे-दबाये रहते हैं। (हाइबरनेशन)

परिशिष्ट—वि० [सं० परि√शिष् (बचना)+क्त] छूटा या बाकी बचा हुआ। अवशिष्ट।

पुं० १. पुस्तकों आदि के अंत में दी जानेवाली वे बातें जो मूल में आने से रह गई हों, अथवा जो मूल में आई हुई बातों के स्पष्टीकरण के लिए हों। (एपेंडिक्स) २. अनुसूची। (दे०)

परिशीलन—पुं० [सं० परि√शील् (अभ्यास)+ल्युट्—अन] १. मननपूर्वक किया जानेवाला गंभीर अध्ययन। २. स्पर्श।

परिशीलित—भू० कृ० [सं० परि√शील्+क्त] (ग्रंथ या विषय) जिसका परिशीलन किया गया हो।

परिशुद्ध—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० परिशुद्धता, परिशुद्धि] १. बिलकुल शुद्ध। विशेषतः जिसमें किसी दूसरी चीज का कुछ भी मेल न

हो। खरा। २. जिसमें कुछ भी कमी-बेशी या भूल-चूक न हो। बिलकुल ठीक। (एक्योरेट) ३. चुकता किया हुआ। ४. छोड़ा या बरी किया हुआ।

परिशुद्धता—स्त्री० [सं० परिशुद्ध+तल्+टाप्]=परिशुद्ध।

परिशुद्धि—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. पूर्ण शुद्धि। सम्यक् शुद्धि। २. किसी बात या विषय की वह स्थिति जिसमें किसी प्रकार की कमी-बेशी या कोई भूल-चूक न हो। (एक्योरेसी)। ३. छुटकारा। मुक्ति।

परिशुष्क—वि० [सं० प्रा० स०] १. बिलकुल सूखा हुआ। २. अत्यंत रसहीन। ३. रसिकता आदि से बिलकुल रहित।
पुं० तला हुआ मांस।

परिशून्य—वि० [सं० प्रा० स०] जो बिलकुल शून्य हो।
पुं० विज्ञान में, वह स्थान जिसमें वायु आदि कुछ भी न हो या जिसमें वायु निकाल ली गई हो। (वायड)

परिशेष—वि० [सं० परि√शिष्+घञ्] [भाव० परिशेषण] जो अब भी शेष हो। जो पूर्णतः अब भी नष्ट या समाप्त न हुआ हो।
पुं० १. वह अंश या तत्त्व जो बाकी बच रहा हो। २. अंत। समाप्ति। ३. दे० 'परिशिष्ट'।

परिशोध—पुं० [सं० परि√शुध् (शुद्ध करना)+घञ्] १. अच्छी तरह शुद्ध करना या बनाना। २. ऋण, देन आदि का चुकाया जाना। (रिपेमेंट) ३. किसी से चुकाया जानेवाला बदला। उपकार के बदले में किया जानेवाला अपकार। प्रतिशोध।

परिशोधन—पुं० [सं० परि√शुध्+ल्युट्—अन] [वि० परिशोधनीय, भू० कृ० परिशोधित] १. ऐसी क्रिया करना जिससे कोई चीज अच्छी तरह शुद्ध हो कर श्रेष्ठ अवस्था में आजा वे। (रेक्टिफिकेशन) २. ऋण देन आदि चुकता करने की क्रिया या भाव। ३. प्रतिशोधन।

परिशोष—पुं० [सं० परि√शुष् (सूखना)+घञ्] १. किसी चीज को अच्छी तरह से सुखाना। २. पूरी तरह से सूखे हुए होने की अवस्था या भाव।

परिश्रम—पुं० [सं० परि√श्रम् (आयास करना)+घञ्] कोई कठिन, बड़ा या दुस्साध्य काम करने के लिए विशेष रूप से तथा मन लगाकर किया जानेवाला मानसिक या शारीरिक श्रम। मेहनत।

परिश्रमी (मिन्)—वि० [सं० परिश्रम+इनि] १. जो परिश्रमपूर्वक कोई काम करता हो। २. हर काम अपनी पूरी शक्ति लगाकर करने-वाला। मेहनती।

परिश्रय—पुं० [सं० परि√श्रि (सेवन)+अच्] १. परिषद्। सभा। २. आश्रय या शरण-स्थल।

परिश्रांत—वि० [सं० परि√श्रम्+क्त] [भाव० परिश्रांति] बहुत अधिक थका हुआ। थका-माँदा।

परिश्रांति—स्त्री० [सं० परि√श्रम्+क्तिन्] परिश्रांत होने की अवस्था या भाव। बहुत अधिक थकावट।

परिश्रित्—वि० [सं० परि√श्रि+क्विप्] आश्रय देनेवाला।
पुं० यज्ञ में काम आनेवाला पत्थर का एक विशिष्ट टुकड़ा।

परिश्रुत—वि० [सं० प्रा० स०] १. (बात आदि) जो ठीक प्रकार से या भली-भाँति सुनी गई हो। २. ख्यात। प्रसिद्ध।

परिश्लेष—पुं० [सं० परि√श्लिष् (आलिंगन करना)+घञ्] आलिंगन। गले लगाना।

परिषत्—स्त्री०=परिषद्।

परिषत्त्व—पुं० [सं० परिषद्+त्व] परिषद् का भाव या धर्म।

परिषद्—स्त्री० [सं० परि√सद् (गति)+क्विप्] १. चारों ओर से घेर कर या घेरा बनाकर बैठना। २. वैदिक युग में विद्वानों की वह सभा जो राजा किसी विषय पर व्यवस्था देने के लिए बुलाता था। ३. बौद्ध-काल में वह निर्वाचित राजकीय संस्था या सभा जो राज्य या शासन से संबंध रखनेवाली सब बातों पर विचार तथा निर्णय करती थी।
विशेष—प्राचीन काल में परिषदें तीन प्रकार की होती थीं —(क) शिक्षा-संबंधी। (ख) सामाजिक गोष्ठी-सम्बन्धी। और (ग) राज-शासन-सम्बन्धी।
४. आधुनिक राजनीति विज्ञान में, निर्वाचित या मनोनीत विधायकों की वह सभा जो स्थायी या बहुत-कुछ स्थायी होती है। (काउंसिल) ५. सभा। जैसे—संगीत परिषद्।

परिषद—पुं० [सं० परि√सद्+अच्] १. सवारी या जुलूस में चलनेवाले वे अनुचर जो स्वामी को घेर कर चलते हैं। परिषद। २. दरबारी। मुसाहब। ३. सदस्य। सभासद।
स्त्री०=परिषद्।

परिषद्य—पुं० [सं० परिषद्+यत्] १. परिषद् का सदस्य। २. सभासद। सदस्य। ३. दर्शक। प्रेक्षक।

परिषद्वल—पुं० [सं० परिषद्+वलच्] सभासद। सदस्य।

परिषिक्त—भू० कृ० [सं० परि√सिच् (सींचना)+क्त] १. जो अच्छी तरह से सींचा गया हो। २. जिस पर छिड़काव हुआ हो।

परिषीवण—पुं० [सं० परि√सिव् (सीना)+ल्युट्—अन] १. चारों ओर से सीना। २. गाँठ लगाना। बाँधना।

परिषेक—पुं० [सं० परि√सिच्+घञ्] १. पानी से तर करने की क्रिया। सिंचाई। २. छिड़काव। ३. स्नान।

परिषेचक—वि० [सं० परि√सिच्+ण्वुल्—अक] १. सींचनेवाला। २. छिड़कनेवाला।

परिषेचन—पुं० [सं० परि√सिच्+ल्युट्—अन] [वि० परिषिक्त] सींचना। छिड़कना।

परिष्कंद—पुं० [सं० परि√स्कन्द् (गति)+घञ्] वह जिसका पालन-पोषण माता-पिता द्वारा नहीं बल्कि किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा हुआ हो।

परिष्कर—पुं० [सं० परि√कृ (करना)+अप्, सुट्] सजावट। सज्जा।

परिष्करण—पुं० [सं०] [भू० कृ० परिष्कृत] परिष्कार करने अर्थात् साफ और सुंदर बनाने की क्रिया या भाव। (एम्बेलिशमेन्ट)

परिष्करण शाला—स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ खनिज, तैल, धातुएँ आदि परिष्कृत या साफ की जाती हैं। (रिफाइनरी)

परिष्करणी—स्त्री० [सं० परि√कृ+ल्युट्—अन, सुट्] वह कारखाना या स्थान जहाँ यंत्रों आदि की सहायता से तेलों, धातुओं आदि में की मैल निकालकर उन्हें परिष्कृत या साफ किया जाता हो। (रिफाइनरी)

परिष्कार—पुं० [सं० परि√कृ+घञ्, सुट्] [भू० कृ० परिष्कृत] १. अच्छी तरह ठीक और साफ करने की क्रिया या भाव। गंदगी,

मिलावट, मैल आदि निकालकर किसी चीज को स्वच्छ बनाना। (रिफाइनिंग) २. त्रुटियाँ, दोष आदि दूर करके सुंदर, सुरुचिपूर्ण और स्वच्छ बनाना। (एम्बेलिशमेंट) ३. निर्मलता। स्वच्छता। ४. अलंकार। गहना। ५. शोभा। श्री। ६. बनाव-सिंगार। सजावट। ७. सजाने की सामग्री। उपस्कर। (फरनीचर) ८. संयम। (बौद्ध दर्शन)

परिष्कृति—स्त्री० [सं० परि√कृ+क्तिन्, सुट्] १. परिष्कृत होने की अवस्था, गुण या भाव। २. परिष्कार। ३. आचार-व्यवहार की वह उन्नत स्थिति जिसमें अशिष्ट, उद्धत, ग्राम्य, परुष, रुक्ष आदि बातों का अभाव और कोमल, नागर, विनम्र, शिष्ट तथा स्निग्ध तत्त्वों की अधिकता और प्रबलता होती है। (रिफाइनमेंट)

परिष्क्रिया—स्त्री० [सं० परि√कृ+सुट्,+टाप्] परिष्कार। (दे०)

परिष्कृत—भू० कृ० [सं० परि√कृ+क्त, सुट्] [भाव० परिष्कृति] १. जिसका परिष्कार किया गया हो। अच्छी तरह ठीक और साफ किया हुआ। २. सवाँरा या सजाया हुआ। अलंकृत। ४. सुधारा हुआ।

परिष्कृति—स्त्री० [सं० परि√कृ+क्तिन्, सुट्] परिष्कृत होने की अवस्था या भाव। परिष्कार।

परिष्टवन—पुं० [सं० प्रा० स०] प्रशंसा। स्तुति।

परिष्टोम—पुं० [सं० अत्या० स०] १. एक प्रकार का सामगान जिसमें ईश्वर की स्तुति होती है। २. घोड़े, हाथी आदि की झूल।

परिष्ठल—पुं० [सं० परि-स्थल, प्रा० स०] आस-पास की भूमि।

परिष्यंद—पुं० [सं० परि√ष्यंद् (बहना)+घञ्, षत्व]=परिस्यंद।

परिष्यंदी (दिन्)—वि० [सं० परिष्यंद+इनि] बहानेवाला।

परिष्वंग—पुं० [सं० परि√स्वञ्ज् (आलिंगन)+घञ्] गले लगाना। आलिंगन।

परिष्वंजन—पुं० [सं० परि√स्वञ्ज् (चिपकना)+ल्युट्—अन] [वि० परिष्वक्त] गले लगाना। आलिंगन।

परिष्वक्त—भू० कृ० [सं० परि√स्वञ्ज्+क्त] जिसे गले लगाया गया हो। आलिंगित।

परिसंख्या—स्त्री० [सं० परि—सम्√ख्या (प्रसिद्ध करना)+अङ्+टाप्] १. गणना। गिनती। २. साहित्य में, एक अलंकार जिसमें किसी स्थान में होनेवाली बात या वस्तु का प्रश्न या व्यंग्यपूर्वक निषेध करके अन्य स्थान पर प्रतिष्ठापन करने का वर्णन होता है। ३. कुछ स्थानों पर होनेवाली वस्तुओं के संबंध में यह कहना कि अब वे वहाँ नहीं रह गईं केवल अमुक जगह में रह गई हैं। जैसे—रामराज्य की प्रशंसा करते हुए यह कहना कि उसमें स्त्रियों के नेत्रों को छोड़कर कुटिलता और कहीं नहीं दिखाई देती थी।

परिसंख्यान—पुं० [सं० परि—सम्√ख्या+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिसंख्यात] अनुसूची। (दे०)

परिसंघ—पुं० [सं० प्रा० स०] पारस्परिक तथा सामूहिक हितों के रक्षार्थ बननेवाला वह अंतरराष्ट्रीय संघटन जिसके सदस्य स्वतंत्र राष्ट्र होते हैं। (कनफेडरेशन)

परिसंचर—पुं० [सं० परि-सम्√चर् (गति)+अच्] प्रलय-काल।

परिसंचित—भू० कृ० [सं० परि—सम्√चि (इकट्ठा करना) +क्त] इकट्ठा या संचित किया हुआ।

परिसंतान—पुं० [सं० अत्या० स०] १. तार। २. तंत्री।

परिसंपद्—स्त्री० [सं० प्रा० स०] व्यक्ति, संघटन, संस्था आदि का वह निजी या अधिकृत धन तथा संपत्ति जिसमें से उसका ऋण, देय आदि चुकाया जाता हो या चुकाया जा सके। (असेट्स)

परिसंवाद—पुं० [सं० परि-सम्√वद् (बोलना)+घञ्] १. दो या अधिक व्यक्तियों में किसी बात, विषय आदि के संबंध में होनेवाला तर्क संगत या विचारपूर्ण वादविवाद। (डिस्कशन) २. दे० परिचर्चा।

परिसंहत—वि० [सं०] १. अच्छी तरह उठा हुआ। २. (कथन या लेख) जिसमें फालतू या व्यर्थ की बातें अथवा शब्द न हों। (टर्स)

परिसंहित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] बहुत अच्छी तरह गठा या गाँठा हुआ। २. (साहित्य में ऐसी गठी हुई तथा संक्षिप्त रचना) जिसमें ओज, प्रसाद आदि गुण भी यथेष्ट मात्रा में हों।

परिसभ्य—पुं० [सं० प्रा० स] सभासद।। सदस्य।

परिसमंत—पुं० [सं०प्रा०स०] वृत्त के चारों ओर की रेखा या सीमा।

परिसमापक—पुं० [परि-सम्√आप् (व्याप्ति)+ण्वुल्—अक] परिसमापन करनेवाला अधिकारी। (लिक्वीडेटर)

परिसमापन—पुं० [परि-सम्√आप्+ल्युट्—अन्] १. समाप्त करना। २. किसी चलते हुए काम का समाप्त होना। (टरमीनेशन) ३. किसी ऋणग्रस्त संस्था का कार-बार बंद करते समय किसी सरकारी अधिकारी या आदाता द्वारा उसकी परिसंपद लहनेदारों में किसी विशिष्ट अनुपात से बाँटा जाना। (लिक्वीडेशन) ३. दे० 'अपाकरण'।

परिसमाप्त—भू० कृ० [सं० परि-सम्√आप+क्त] १. जो पूरी तरह से समाप्त हो चुका हो। २. (संस्था) जिसका परिसमापन हो चुका हो।

परिसमाप्ति—स्त्री० [सं० परि-सम्√आप्+क्तिन्] परिसमापन।

परिसमूहन—पुं० [सं० परि-सम्√ऊह् (वितर्क)+ल्युट्—अन] १. एकत्र करना। २. यज्ञ की अग्नि में समिधा डालना। ३. तृण आदि आग में डालना। ४. यज्ञाग्नि के चारों ओर जल छिड़कने की क्रिया।

परिसर—वि० [सं० परि√सृ (गति)+अप्] [स्त्री० परिसरा] १. किसी के चारों ओर बहने (अथवा चलने) वाला। २. किसी के साथ जुड़ा, मिला, लगा या सटा हुआ। ३. फैला हुआ। विस्तृत। उदा०—खुली रूप कलियों में परभर स्तर स्तर सु-परिसरा। —निराला।

पुं० १. किसी स्थान के आस-पास की भूमि या खुला मैदान। २. प्रांत भूमि। ३. मृत्यु। ४. ढंग। तरीका। विधि। ५. शरीर की नाड़ी या शिरा।

परिसरण—पुं० [सं० परि√सृ+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिसृत] १. किसी के चारों ओर बहना (या चलना)। २. पर्यटन। ३. पराजय। हार। ४. मृत्यु। मौत। ५. दे० रसाकर्षण।

परिसर्प—पुं० [सं० परि√सृप् (गति)+घञ्] १. किसी के चारों ओर घूमना। परिक्रिया। परिक्रमण। २. घूमना-फिरना या टहलना। ३. ढूँढ़ने या तलाश करने के लिए निकलना। ४. चारों ओर से घेरना। ५. साहित्य दर्पण के अनुसार नाटक में किसी का किसी की

खोज और केवल मार्गचिह्नों आदि के सहारे उसका पता लगाने का प्रयत्न करना। जैसे—सीता-हरण के उपरान्त, राम का सीता को बन में ढूंढ़ते फिरना। ६. सुश्रुत के अनुसार ११ प्रकार के क्षुद्र कुष्ठों में से एक जिसमें छोटी-छोटी फुंसियाँ निकलती हैं और उन फुंसियों से पंछा या मवाद निकलता है। ७. एक प्रकार का साँप।

परिसर्पण—पुं० [सं० परि√सृप्+ल्युट्—अन] १. घूमना-फिरना। टहलना। २. साँप की तरह टेढ़े-तिरछे चलना या रेंगना।

परिसर्या—स्त्री० [सं० परि√सृ (गति)+क्यप्+टाप्] १. मृत्यु। २. हार।

परिसांत्वन—पुं० [सं० परि√सान्त्व् (ढाढस देना)+ल्युट्—अन] १. बहुत अधिक सांत्वना देना। २. उक्त प्रकार से दी हुई सान्त्वना।

परिसाम (मन्)—पुं० [सं० प्रा० स०] एक विशेष साम।

परिसार—पुं० [सं० परि√सृ+घञ्] =परिसरण।

परिसारक—वि० [सं० परि√सृ+ण्वुल्—अक] जो परिसरण करे। चारों ओर चलने, जाने या बहनेवाला।

परिसारी (रिन्)—वि० [सं० परि√सृ+णिनि] १. परिसरण-संबंधी। २. परिसारक। (दे०)

परिसिद्धिका—स्त्री० [सं० प्रा० स०] वैद्यक में, चावल की एक प्रकार की लपसी।

परिसीमन—पुं० [सं० परिसीमा से] [भू० कृ० परिसीमित] किसी क्षेत्र, विषय आदि की सीमाएँ निर्धारित करना। (डिलिमिटेशन)

परिसीमा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. अंतिम या चरम सीमा। २. वह मर्यादा या रेखा जहाँ आगे किसी विषय का विस्तार न हो।

परिसीमित—भू० कृ० [सं० परिसीमा+इतच्] जिसका परिसीमन हुआ या किया जा चुका हो। २. (संस्था) जिसकी पूँजी, हिस्सेदारी आदि कुछ विशिष्ट नियमों या सीमाओं के अन्दर रखी गई हो। (लिमिटेड)

परिसून—पुं० [सं० अत्या० स०] बिना अधिकार के और बूचड़खाने से बाहर मारा हुआ पशु।

परिसेवन—पुं० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक सेवा करना।

परिसेवित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. जिसकी बहुत अच्छी तरह सेवा की गई हो। २. जिसका बहुत अच्छी तरह सेवन किया गया हो।

परिस्कंद—पुं० =परिष्कंद।

परिस्तरण—पुं० [सं०परि√स्तृ (आच्छादन)+ल्युट्—अन] १. इधर-उधर फेंकना या डालना। छितराना। २. फैलाना। ३. ढकना या लपेटना।

परिस्तान—पुं० [फा०] १. परियों अर्थात् अप्सराओं का जगत् या देश। २. ऐसा स्थान जहाँ बहुत-सी सुन्दर स्त्रियों का जमघट या निवास हो।

परिस्तोम—पुं० [सं० प्रा० ब० स०] चित्रित या अनेक रंगोंवाली (हाथी की पीठ पर डाली जानेवाली) झूल।

परिस्थान—पुं० [सं० प्रा० स०] १. वासस्थान। २. दृढ़ता।

परिस्थिति—स्त्री० [सं० प्रा० स०] [वि० परिस्थितिक] किसी व्यक्ति के चारों ओर होनेवाली वे सब बातें या उनमें से कोई एक जिससे बाध्य या प्रेरित होकर वह कोई कार्य करता हो। (सर्कम्स्टैंसेज)

परिस्थिति विज्ञान—पुं० [सं०] आधुनिक जीव विज्ञान की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि देश, काल आदि की परिस्थितियों का जीव-जंतुओं पर क्या प्रभाव पड़ता है। (इकालोजी)

परिस्पंद—पुं० [सं० परि√स्पंद् (हिलना)+घञ्] १. काँपने की क्रिया या भाव। कंप। कँपकँपी। २. दबाना या मलना। ३. ठाट-बाट। तड़क-भड़क। ४. फूलों आदि से सिर के बाल सजाना। ५. निर्वाह का साधन। ६. परिवार। ७. धारा। प्रवाह। ८. नदी। ९. द्वीप। टापू।

परिस्पंदन—पुं० [सं० परि√स्पंद्+ल्युट्—अन] ८. बहुत अधिक हिलना। खूब काँपना। २. काँपना।

परिस्पर्द्धा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] =प्रतिस्पर्धा।

परिस्पर्द्धी (द्धिन्)—पुं० [सं०परि√स्पर्ध् (जीतने की इच्छा)+णिनि] =प्रतिस्पर्धी।

परिस्फुट—वि० [सं० प्रा० स०] १. भली-भाँति व्यक्त। सब प्रकार से प्रकट या खुला हुआ। २. अच्छी तरह खिला हुआ। पूर्ण विकसित।

परिस्फुरण—पुं० [सं० परि√स्फुर् (गति)+ल्युट्—अन] १. कंपन। २. कलियों, कल्लों आदि का निकलना या फूटना।

परिस्मापन—पुं० [सं० परि√स्मि (विस्मय करना)+णिच्, पुक्+ल्युट्—अन] बहुत अधिक चकित या विस्मित करना।

परिस्यंद—पुं० [सं० परिष्यंद] चूना। रसना।

परिस्यंदी (दिन्)—वि० [सं० 'परिष्यंदी] जिसमें प्रवाह हो। बहता हुआ।

परिस्रव—पुं [सं० परि√स्रु (बहना)+अप्] बहुत अधिक या चारों ओर से चूना या रसना।

परिस्राव—पुं० [सं० परि√स्रु+घञ्] १. चू या रसकर अधिक परिमाण में निकलनेवाला तरल पदार्थ। २. एक रोग जिसमें रोगी को ऐसे बहुत अधिक दस्त होते हैं जिनमें कफ और पित्त मिला होता है।

परिस्रावण—पुं० [सं० परि√स्रु+णिच्+ल्युट्—अन] वह पात्र जिसमें कोई चीज चुआ या रसाकर इकट्ठी की जाय।

परिस्रावी (विन्)—वि० [सं० परि√स्रु+णिनि] चूने, रसने या बहनेवाला।

पुं० ऐसा भगंदर रोग जिसमें फोड़े में से बराबर गाढ़ा मवाद निकलता रहता है।

परिस्रुत—वि० [सं० परि√स्रु+क्त] १. जिससे कुछ टपक या चू रहा हो। स्रावयुक्त। २. चुआया या टपकाया हुआ।

पुं० फूलों का सुगंधित सार। (वैदिक)

स्त्री० मदिरा। शराब।

परिस्रुत-दधि—पुं० [सं० कर्म० स०] ऐसा दही जिसे निचोड़कर उसमें का जल निकाल दिया गया हो।

परिस्रुता—स्त्री० [सं० परिस्रुत+टाप्] १. चुआई या टपकाई हुई तरल वस्तु। २. मद्य। शराब। ३. अंगूरी शराब।

परिहँस*—पुं० [सं० परिहास] १. हँसी-दिल्लगी। परिहास। २. लोक में होनेवाली हँसी। उपहास। उदा०—परहँसि मरसि कि कौनेहु लाजा—जायसी। ३. खेद। दुःख। रंज। (मुख्यतः लोक-निंदा, उपहास आदि के भय से होनेवाला) उदा०—कंठ बचन न बोलि आवै हृदय परिहँस करि, नैन जल भरि रोई दीन्हों, ग्रसति आपद दीन।—सूर।

परिहत—भू० कृ० [सं० परि√हन् (हिंसा)+क्त] १. जो मार डाला गया

हो। २. मरा हुआ। मृत। ३. पूरी तरह से नष्ट किया हुआ। ४. ढीला किया हुआ।

स्त्री० हल की वह लकड़ी जो चौभी में ठुकी रहती है, तथा जिसके ऊपरी भाग में लगी हुई मुठिया को पकड़कर हलवाहा हल चलाता है।

परिहरण—पुं० [सं० परि√हृ (हरण करना)+ल्युट्–अन] [वि० परिहरणीय] १.किसी की चीज पर बिना उसके पूछे और बलपूर्वक किया जानेवाला अधिकार। २. परित्याग। ३. दोष आदि दूर करने का उपचार या प्रयत्न। निवारण।

परिहरणीय—वि० [सं० परि√हृ+अनीयर्] १. जो छीना जा सके या छीने जाने के योग्य हो। २. त्याज्य। ३. जिसका उपचार या निवारण हो सके। निवार्य।

परिहरना—स० [सं० परिहरण] १. छीनना। २. त्यागना। छोड़ना।

परिहस*—पुं०=परिहँस।

परिहस्त—पुं० [सं० अव्य० स०] हाथ में बाँधा जानेवाला एक तरह का तावीज या यंत्र।

परिहाण—पुं० [सं० परि√हा (त्याग)+क्त] नुकसान या हानि उठाना।

परिहाणि, परिहानि—स्त्री० [सं० परि√हा+क्तिन्] नुकसान। हानि।

परिहार—पुं० [सं० परि√हृ+घञ्] १. बलपूर्वक छीनने की क्रिया या भाव। २. युद्ध में जीतकर प्राप्त किया हुआ धन या पदार्थ। ३. छोड़ने, त्यागने या दूर करने की क्रिया या भाव। ४. त्रुटियों, दोषों, विकारों आदि का किया जानेवाला अंत या निराकरण। ५. पशुओं के चरने के लिए खाली छोड़ी हुई जमीन। चरागाह। ६. प्राचीन भारत में, कष्ट या संकट के समय राज्य की ओर से प्रजा के साथ की जानेवाली आर्थिक रिआयत। ७. कर या लगान की छूट। माफी। ८. खंडन। ९. अवज्ञा। तिरस्कार। १०. उपेक्षा। ११. मनु के अनुसार एक प्राचीन देश। १२. नाटक में किसी अनुचित या अविधेय कर्म का प्रायश्चित्त करना। (साहित्य दर्पण)

पुं० [?] अवध, बुंदेलखंड आदि में बसे हुए राजपूतों की एक जाति जिनके पूर्वज तीसरी शताब्दी में कालिंजर के शासक थे।

परिहारक—वि० [सं० परि√हृ+ण्वुल्–अक] परिहार करनेवाला।

परिहारना*—स० [सं० परिहार] १. परिहरण करना। २. परिहार करना।

परिहारी (रिन्)—वि० [सं० परि√हृ+णिनि] परिहरण करनेवाला।

परिहार्य—वि० [सं० परि√हृ+ण्यत्] जिसका परिहरण होने को हो या हो सकता हो।

परिहास—वि० [सं० परि√हस् (हँसना)+घञ्] १. बहुत जोरों की हँसी। २. हँसी-मजाक।

परिहासापह्नुति—स्त्री० [सं० परिहास-अपह्नुति, मध्य० स०] साहित्य में, अपह्नुति अलंकार का एक भेद जिसमें पूर्वपद तो किसी अश्लील भाव का द्योतक होता है परंतु उत्तर-पद से उस अश्लीलत्व का परिहार हो जाता है और श्रोता हँस पड़ता है। उदा०—तुमको लाजिम है पकड़ो अब मेरा। हाथ में हाथ बामुहब्बतो प्यार।-कोई शायर।

परिहास्य—वि० [सं० परि√हस्+ण्यत्] १. जिसके संबंध में परिहास किया जा सके या हो सके। २. हास्यास्पद।

परिहित—भू० कृ० [सं० परि√धा (धारण करना)+क्त, हि–आदेश] १. चारों ओर से छिपाया या ढका हुआ। आवृत्त। आच्छादित। २. ओढ़ा या पहना हुआ। (कपड़ा)

परिहीण—वि० [सं० प्रा० स०] १. सब प्रकार से दीन-हीन। अत्यंत हीन। २. छोड़ा, निकाला या फेंका हुआ।

परिहृति—स्त्री० [सं० परि+हृ+क्तिन्] ध्वंस। नाश।

परिहेलना—स० [सं० प्रा० स०] अनादर या तिरस्कारपूर्वक दूर हटाना। उदा०—कै ममता करु राम-पद कै ममता परिहेलु।—तुलसी।

परी—स्त्री० [फा०] १. वह कल्पित रूपवती स्त्री जो अपने परों की सहायता से आकाश में उड़ती है। अप्सरा।

विशेष—फारसी साहित्य में इसका वास-स्थान काफ या काकेशस पर्वत माना गया है।

परीक्षक—पुं० [सं० परि√ईक्ष् (देखना)+ण्वुल्–अक] [स्त्री० परीक्षिका] १. वह जो किसी की परीक्षा करता या लेता हो। २. किसी के गुण, योग्यता आदि का परीक्षण करनेवाला अधिकारी, विशेषतः परीक्षार्थियों के लिए प्रश्न-पत्र बनाने तथा उनकी उत्तर-पुस्तिकाएँ जाँचनेवाला अधिकारी। (इग्जामिनर) ३. जाँच-पड़ताल करनेवाला व्यक्ति। निरीक्षक।

परीक्षण—पुं० [सं० परि√ईक्ष्+ल्युट्–अन] [भू० कृ० परीक्षित, वि० परीक्ष्य] १. परीक्षा करने या लेने की क्रिया या भाव। २. वैज्ञानिक क्षेत्रों में; किसी विशिष्ट पद्धति, प्रक्रिया या रीति से किसी चीज के वास्तविक गुण, योग्यता, शक्ति, स्थिति आदि जानने का काम। ३. न्यायालय में इस प्रकार किसी से प्रश्न करना जिससे वस्तु-स्थिति पर प्रकाश पड़ता हो। (इग्जामिनेशन) ४. उपयोग, व्यवहार आदि में लाकर किसी चीज के गुण-दोष जानना या परखना। ५. व्यक्ति को किसी काम या पद पर स्थायी रूप से नियुक्त करने से पहले, कुछ समय तक उससे वह काम करवा कर देखना कि उसमें यथेष्ट योग्यता या सामर्थ्य है या नहीं। (प्रोबेशन)

परीक्षण-काल—पुं० [ष० त०] उतना समय जितने में यह देखा जाता है, कि जो व्यक्ति किसी काम पर लगाया जाने को है, उसमें वह काम करने की पूरी योग्यता या समर्थता भी है या नहीं। (प्रोबेशन पीरियड)

परीक्षण-नलिका—स्त्री० [ष० त०] वैज्ञानिक क्षेत्रों में शीशे की वह नली जिसमें कोई द्रव पदार्थ किसी प्रकार के परीक्षण के लिए भरा जाता है। परख-नली। (टेस्ट ट्यूब)

परीक्षण-शलाका—स्त्री० [ष० त०] किसी धातु का वह छड़ जो इस बात के परीक्षण के काम में आता है कि इस धातु में भार आदि सहने की कितनी शक्ति है। (टेस्ट पीस)

परीक्षणिक—वि० [सं० पारीक्षणिक] १. परीक्षण-संबंधी। २. नियुक्त किये जाने से पहले जिसकी समर्थता की परीक्षा ली जा रही हो। अस्थायी रूप से और केवल परीक्षण के लिए रखा हुआ कर्मचारी। (प्रोबेशनरी)

परीक्षना*—स० [सं० परीक्षण] किसी की परीक्षा करना या लेना। परखना।

परीक्षा—स्त्री० [सं० परि√ईक्ष्+अ+टाप्] १. किसी के गुण, धैर्य, योग्यता, सामर्थ्य आदि की ठीक-ठीक स्थिति जानने या पता लगाने की क्रिया या भाव। (एग्जामिनेशन) २. वह समुचित उपाय, विधि

या साधन जिससे किसी के गुणों आदि का पता लगाया जाता है। ३. वस्तुओं के संबंध में, उनकी उपयोगिता, टिकाऊपन आदि जानने के लिए उनका उपयोग या व्यवहार किया जाना। जैसे—हमारे यहाँ अमुक वस्तुएँ मिलती हैं, परीक्षा प्रार्थित है। ४. वह प्रक्रिया जिससे प्राचीन न्यायालय किसी अभियुक्त अथवा साक्षी के सच्चे या झूठे होने का पता लगाते थे। विशेष दे० 'दिव्य'। ५. जाँच—पड़ताल। ६. देख-भाल।

परोक्षार्थ—अव्य०[सं० परीक्षा-अर्थ, नित्य स०] परीक्षा के उद्देश्य से।

परीक्षार्थी(र्थिन्)—पुं०[सं० परीक्षा√अर्थ (चाहना)+णिनि] १. वह जो किसी प्रकार की परीक्षा देना चाहता हो। २. वह जिसकी परीक्षा ली जा रही हो अथवा जो परीक्षा दे रहा हो। (एग्ज़ामिनी)

परीक्षित्—पुं०[सं० परि√क्षि (क्षय)+क्विप्, तुक्] १. हस्तिनापुर के एक प्रसिद्ध प्राचीन राजा जो अभिमन्यु के पुत्र और जनमेजय के पिता थे। कहा जाता है कि इन्हीं के राज्य-काल में द्वापर का अंत और कलियुग का आरंभ हुआ था। तक्षक नामक साँप के काटने पर इनकी मृत्यु हुई थी। २. कंस का एक पुत्र।

परीक्षित—भू० कृ०[परि√ईक्ष्+क्त] १. (व्यक्ति) जिसका परीक्षण किया जा चुका हो। जो परीक्षा में सफल उतरा हो। ३. (वस्तु) जिसे उपयोग, व्यवहार आदि में लाकर उसके गुण-दोष आदि देखे जा चुके हों। (इग्जैमिन्ड)

पुं०=परीक्षित्।

परीक्षितव्य—वि०[सं० परि√ईक्ष्+तव्यत्] १. जिसकी परीक्षा, आजमाइश या जाँच की जा सके या की जाने को हो। २. जिसे जाँच या परख सकें। ३. जिसकी परीक्षा (जाँच या परख) करना आवश्यक या उचित हो।

परीक्षिती—पुं०[सं०]=परीक्षार्थी।

परीक्ष्य—वि०[सं० परि√ईक्ष्+ण्यत्] परीक्षितव्य। (दे०)

परीक्ष्यमाण—वि०[सं०परि√ईक्ष्+यक्, शानच्, मुक्] परीक्षणिक।(दे०)

परीख†—स्त्री०=परख।

परीखना†—स०=परखना।

परीछत—भू० कृ०=परीक्षित।

पुं०=परिक्षित्।

परीछन†—पुं० [हिं० परी+छमछम(अनु०)] पैर में पहनने का एक तरह का चाँदी का गहना।

परीछा†—स्त्री०=परीक्षा।

परीछित—भू० कृ०=परीक्षित।

पुं०=परीक्षित्।

परीजाद (1)—वि० [फा० परीज़ादः] १. जो परी की संतान हो। २. लाक्षणिक रूप में, परम सुन्दर व्यक्ति।

परीणाह—पुं०[सं०परि√नह् (बंधन)+घञ्, दीर्घ] १. दे० 'परिणाह'। २. शिव। ३. गाँव के आस-पास तथा चारों ओर की वह भूमि जो सार्वजनिक संपत्ति के अन्तर्गत हो, अथवा जिसका उपयोग सब लोग कर सकते हों।

परीत†—स्त्री०=प्रीति।

†पुं०=प्रेत।

परीताप—पुं०=परिताप।

परीति (ती)—स्त्री०=प्रीति।

परीतोष†—पुं०=परितोष।

परीदाह†—पुं=परिदाह।

परीधान†—पुं०=परिधान।

परीप्सा—स्त्री०[सं० परि√आप् (व्याप्ति)+सन्+अ+टाप्] १. किसी चीज को प्राप्त करने अथवा उसे अधिकार में किये रखने की इच्छा या लालसा। २. जल्दी। शीघ्रता।

परीबंद—पुं०[फा०] कलाई पर पहनने का एक आभूषण। बाजूबंद। २. बच्चों के पैरों का एक घुँघरूदार गहना। ३. कुश्ती का एक पेंच।

परीभव—पुं०=परिभव।

परीभाव—पुं०=परिभाव।

परीमाण—पुं०=परिमाण।

परीरंभ—पुं०=परिरंभ।

परीर—पुं०[सं०√पृ (पूर्ति करना)+ईरन्] वृक्ष का फल।

परीरू—वि०[फा०] परी की तरह सुन्दर आकृतिवाला। परम रूपवान या अति सुन्दर।

परीवर्तन—पुं०=परिवर्तन।

परीवाद—पुं०=परिवाद।

परीवार—पुं०=परिवार।

परीवाह—पुं०=परिवाह।

परीशान—वि०[फा० परीशाँ] [भाव० परीशानी] =परेशान। (देखें)

परीशेष—पुं०=परिशेष।

परीषह—पुं०[सं० परि√सह् (सहना)+अच्, दीर्घ] जैन शास्त्रों के अनुसार त्याग या सहन।

परीष्ट—वि०[सं० परि√ईष् (चाहना)+क्त] [भाव० परीष्टि] चाहने योग्य।

परीष्टि—स्त्री०[सं०] १. इच्छा। २. खोज। छान-बीन। ३. सेवा।

परीसयर्पा—स्त्री०=परिसयर्पा।

परीसार—पुं०=परिसार।

परीहन†—पुं०=परिधान।

परीहार—पुं०=परिहार।

परीहास—पुं०=परिहास।

परु—पुं०[सं०√पृ+उन्] १. गाँठ। जोड़। २. अवयव। ३. समुद्र। ४. स्वर्ग। ५. पर्वत। पहाड़।

अव्य०[हिं० पर] १. बीता हुआ वर्ष। पर साल। २. आनेवाला वर्ष।

परुआ†—पुं०=पड़वा(भैंस का बच्चा)।

वि० १. (बैल) जो काम करने के समय बैठ जाय या पड़ा रहे। २. काम-चोर।

स्त्री०[?] एक तरह की जमीन।

परुई—स्त्री०[देश०] वह नाँद जिसमें भड़भूँजे अनाज के दाने भूँजते हैं।

परुख†—वि०[भाव० परुखता] परुष।

परुत्—अव्य०[सं०परस्मिन्, नि० सिद्धि] बीता हुआ वर्ष। गत वर्ष।

परुष—वि० [सं०√पृ+उषन्] [भाव० परुषता] १. (वचन, वस्तु या

व्यक्ति) जो गुण, प्रकृति, स्वभाव आदि की दृष्टि से कड़ा, रुक्ष तथा मृदुता-हीन हो। कठोर और कर्कश। २. उग्रतापूर्ण। तीव्र। ३. हृदयहीन। कठोर हृदयवाला। ४. रसहीन। नीरस। ५. खुरदरा। पुं० १. नीली कटसरैया। २. फालसा। ३. तीर। वाण। ४. सरकंडा। सरपत। ५. खर-दूषण का एक सेनापति। ६. अप्रिय और कठोर बात या वचन।

परुषता—स्त्री०[सं० परुष+तल्+टाप्] १. परुष होने की अवस्था या भाव। २. कठोरता। कड़ापन। सख्ती। ३. (वचन या स्वर की) कर्कशता। ४. निर्दयता। निष्ठुरता।

परुषत्व—पुं०[सं० परुष+त्वन्]=परुषता।

परुषा—स्त्री०[सं० परुष+टाप्] साहित्य में शब्द-योजना की एक विशिष्ट प्रणाली जिसमें टवर्गीय, द्वित्व, संयुक्त, रेफ, श, ष आदि वर्णों तथा लंबे समासों की अधिकता होती है। २. रावी नदी। ३. फालसा।

परुसना†—स०=परोसना।

परूँगा—पुं०[देश०] एक प्रकार का वलूत (वृक्ष)।

परूष, परूषक—पुं०[सं०√पृ+ऊषन्] [परुष+कन्] फालसा।

परेंद्रिय ज्ञान—पुं० [सं०] कुछ विशिष्ट मनुष्यों में माना जानेवाला वह अतींद्रिय ज्ञान जिसकी सहायता से वे बहुत दूर के लोगों के साथ भी मानसिक संबंध स्थापित करके विचार-विनिमय आदि कर सकते हैं। (टेलिपैथी)

परे—अव्य० [सं० पर] १. वक्ता अथवा किसी विशिष्ट व्यक्ति से कुछ दूर हटकर या दूर रहकर। जैसे—परे हटकर खड़े होना।

मुहा०—परे परे करना=उपेक्षा, घृणा आदि के कारण यह कहना कि दूर रहो या दूर हट जाओ।

२. किसी क्षेत्र की सीमा से बाहर या दूर। जैसे—गाँव से परे पहाड़ है। ३. पहुँच, पैठ आदि से दूर या बाहर। जैसे— ईश्वर बुद्धि से परे है। ४. अलग, असंबद्ध या वियुक्त स्थिति में। जैसे वह तो जाति से परे है। ५. तुलना आदि के विचार से ऊँची स्थिति में या बढ़कर। आगे, ऊपर या बढ़कर। जैसे—इससे परे और क्या बात हो सकती है।

मुहा०—परे बैठाना=अपनी तुलना में तुच्छ ठहराना। अयोग्य या हीन सिद्ध करना। जैसे—यह घोड़ा तो तुम्हारे घोड़े को परे बैठा देगा।

६. पीछे। बाद। (क्व०)

परेई—स्त्री०[हिं० परेवा] १. पंडुकी। फाखता। २. मादा कबूतर। कबूतरी।

परेखना—स०[सं० परीक्षण] १. परीक्षा करना। २. दे० 'परखना'। अ०[सं० प्रतीक्षा] प्रतीक्षा करना। राह देखना। अ०[?] पश्चात्ताप करना। पछताना।

परेखा—पुं०[सं० परीक्षा] १. परीक्षा। जाँच। २. परखने की योग्यता या शक्ति। परख। ३. प्रतीति।

पुं०[?] १. मन में होनेवाला खेद या विषाद। २. चिंता। फिक्र। ३. पश्चात्ताप।

पुं०=प्रतीक्षा।

परेग—स्त्री०[अं० पेग] लोहे की छोटी कील।

परेड—स्त्री०[अं०] १. वह मैदान जहाँ सैनिकों को सैनिक शिक्षा दी जाती है। २. सिपाहियों या सैनिकों को दी जानेवाली सैनिक शिक्षा और उनसे संबंध रखनेवाले कार्यों का कराया जानेवाला अभ्यास। सैनिकों की कवायद।

परेत—पुं०[सं० प्रेत] १. दे० 'प्रेत'। २. मृत शरीर। लाश। शव।

परेता—पुं०[सं० परित=चारों ओर] १. बाँस की पतली चिपटी तीलियों का बना हुआ बेलन के आकार का एक उपकरण जिसके दोनों ओर पकड़ने के लिए दो लंबी डंडियाँ होती हैं और जिस पर जुलाहे लोग सूत या रेशम लपेट कर रखते हैं। २. उक्त की तरह का वह उपकरण जिस पर पतंग उड़ाने की डोर लपेटी जाती है।

परेर*—पुं०[सं० पर=दूर, ऊँचा+हिं० एर] आकाश। आसमान।

परेला†—वि०[हिं० पड़ना] १. बैल जो चलते चलते पड़ या लेट जाता हो। २. निकम्मा और सुस्त।

परेली—स्त्री०[?] तांडव नृत्य का एक भेद जिसमें अंग-संचालन अधिक और अभिनय या भाव-प्रदर्शन कम होता है। इसे 'देसी' भी कहते हैं।

परेव—पुं०=परेवा।

परेवा†—पुं०[सं० पारावत] [स्त्री० परेई] १. पंडुकी पक्षी। पेंडुकी। फाखता। २. कबूतर। ३. कोई तेज उड़नेवाला पक्षी।

*पुं० दे० 'पत्रवाहक'।

परेश—पुं०[सं०पर-ईश, कर्म० स०] १. वह जो सब का और सबसे बढ़कर मालिक या स्वामी हो। २. परमेश्वर। ३. विष्णु।

परेशान—वि०[फा०] [भाव० परेशानी] १. बिखरा हुआ। विशृंखल। २. कार्याधिक्य, अथवा चिंता, दुःख आदि के भार से जो बहुत अधिक व्यस्त अथवा विकल और बदहवास हो। ३. दूसरों द्वारा तंग किया अथवा सताया हुआ। जैसे—बच्चों से वह परेशान रहता था।

परेशानी—स्त्री०[फा०] १. परेशान होने की अवस्था या भाव। उद्वेग-पूर्ण विकलता। हैरानी। २. वह बात या विषय जिससे कोई परेशान हो। काम में होनेवाला कष्ट या झंझट।

क्रि० प्र०—उठाना।

परेषणी—पुं०[सं० प्रेषणी] वह व्यक्ति जिसके नाम रेल-पार्सल अथवा उसकी बिल्टी भेजी जाय। (कनसाइनी)

परेषित—भू० कृ०[सं० प्रेषित] (माल या सामग्री) जो रेल पार्सल द्वारा किसी के नाम भेजी जा चुकी हो। (कनसाइन्ड)

परेष्टुका—स्त्री०[सं० पर√इष्+तु+क+टाप्]ऐसी गाय जो प्रायः बच्चे देती हो।

परेस†—पुं०=परेश (परमेश्वर)।

परेह—पुं०[?] बेसन आदि का पकाया हुआ वह घोल जिसमें पकौड़ियाँ डालने पर कढ़ी बनती है।

परेहा†—पुं०[देश०] जोती और सींची हुई भूमि।

परैधित—वि०[सं० पर-एधित, तृ० त०] अन्य द्वारा पालित। पुं० कोकिल।

परैना†—पुं०[हिं० पैना] बैल आदि हाँकने की छड़ी या डंडा।

परों†—अव्य०=परसों।

परोक्त-दोष—पुं० [सं० पर-उक्त, तृ० त०, परोक्त-दोष, कर्म० स०?] न्यायालय में ऊट-पटाँग या गलत बयान देने का अपराध।

परोक्ष—वि०[सं० अक्षि-पर अव्य० स०, टच्] [भाव० परोक्षत्व] १.

जो दृष्टि के क्षेत्र या पथ से बाहर हो और इसी लिए दिखाई न देता हो। आँखों से ओझल। २. जो सामने उपस्थिति या मौजूद न हो। अनुपस्थित। गैर-हाजिर। ३. छिपा हुआ। गुप्त। 'प्रत्यक्ष' का विपर्याय। ४. किसी काम या बात से अनभिज्ञ। अनजान। अपरिचित। ५. जिसका किसी से प्रत्यक्ष या सीधा संबंध न हो, बल्कि किसी दूसरे के द्वारा हो। ६. जो उचित और सीधी या स्पष्ट रीति से न होकर किसी प्रकार के घुमाव-फिराव या हेर-फेर से हो। जो सरल या स्पष्ट रास्ते से न होकर किसी और या दूर के रास्ते से हो। (इनडाइरेक्ट) जैसे—परोक्ष रूप से आग्रह या संकेत करना।

पुं० १. आँखों के सामने न होने की अवस्था या भाव। अनुपस्थिति। २. बीता हुआ समय या भूतकाल जो इस समय सामने न हो। 'प्रत्यक्ष' का विपर्याय। ३. व्याकरण में पूर्ण भूतकाल। ४. वह जो तीनों कालों की बातें जानता हो; अर्थात् त्रिकालज्ञ या परम ज्ञानी। ५. ऐसी दशा, स्थान या स्थिति जो आँखों के सामने न हो, बल्कि दृष्टि-पथ के बाहर या इधर-उधर छिपी हुई हो। जैसे—परोक्ष से किसी के रोने का शब्द सुनाई पड़ा।

अव्य० किसी की अनुपस्थिति या गैर हाजिरी में। पीठ-पीछे। जैसे—परोक्ष में किसी की निंदा करना।

परोक्ष-कर—पुं०[कर्म०स०] अर्थशास्त्र में, दो प्रकार के करों में से एक (प्रत्यक्ष कर से भिन्न) जो लिया तो किसी और व्यक्ति (उत्पादक, आयातक आदि) से जाता है परंतु जिसका भार दूसरों (अर्थात् उपभोक्ताओं) पर पड़ता है। (इनडाइरेक्ट टैक्स) जैसे—उत्पादनकर, आयात-निर्यात कर।

परोक्षत्व—पुं०[सं०परोक्ष+त्वन्]परोक्ष या अदृश्य होने की दशा या भाव।

परोक्ष-दर्शन—पुं०[ष० त०] विशिष्ट प्रकार की आत्मिक शक्ति की सहायता से ऐसी घटनाओं, वस्तुओं, व्यक्तियों आदि के दृश्य या रूप दिखाई देना जो बहुत दूरी पर हों और साधारण मनुष्यों के दृश्य के बाहर हों। अतीन्द्रिय दृष्टि। (क्लेरवायंस)

परोक्ष-निर्वाचन—पुं०[स० त०] निर्वाचन की वह पद्धति जिसमें उच्च-पदों के लिए अधिकारी या प्रतिनिधि सीधे जनता द्वारा नहीं चुने जाते हैं, बल्कि जनता के प्रतिनिधियों, निर्वाचन मंडलों आदि के द्वारा चुने जाते हैं। (इनडाइरेक्ट इलेक्शन)

परोक्ष-श्रवण—पुं०[ष० त०] विशिष्ट प्रकार की आत्मिक शक्ति की सहायता से ऐसे शब्द सुनाई देना या ऐसे कथनों का परिज्ञान होना जो बहुत दूर पर हो रहे हों और साधारण मनुष्यों के श्रवण-क्षेत्र के बाहर हों। अतींद्रिय-श्रवण। (क्लेअर ऑडिएन्स)

परोजन†—पुं०[सं० प्रयोजन] १. प्रयोजन। २. कोई ऐसा पारिवारिक उत्सव या कृत्य जिसमें इष्ट-मित्रों, संबंधियों आदि की उपस्थिति आवश्यक हो।

परोढा—स्त्री०[सं० पर-ऊढा, तृ०त०]=ऊढ़ा (नायिका)।

परोता—पुं०[देश०] [स्त्री० परोती] गेहूँ के पयाल से बनाया जानेवाला एक तरह का टोकरा। (पंजाब)

पुं०[?] आटा, गुड़, हल्दी, पान आदि जो किसी शुभ कार्य में हज्जाम, भाँट आदि को दिये जाते हैं।

† पुं०=पर-पोता।

परोद्वह—वि०[सं० पर-उद्वह, ब० स०] अन्य द्वारा पालित।

पुं० कोयल।

परोना† स०=पिरोना।

परोपकार—पुं०[सं० पर-उपकार, ष० त०] [भाव० परोपकारिता] ऐसा काम जिससे दूसरों का उपकार या भलाई होती हो। दूसरों के हित का काम।

परोपकारक—पुं०[सं० पर-उपकारक, ष० त०] परोपकारी।

परोपकारिता—पुं०[सं० परोपकारिन्+तल्+टाप्] १. परोपकार करने की क्रिया या भाव। २. परोपकार।

परोपकारी (रिन्)—पुं०[सं० परोपकार+इनि] [स्त्री० परोपकारिणी] वह जो दूसरों का उपकार या हित करता हो। दूसरों की भलाई या हित का काम करने अथवा ऐसी बातें बतलानेवाला जिनसे दूसरों का हित हो सकता हो।

परोपकृत—भू०कृ०[सं० पर-उपकृत, तृ० त०] जिसका दूसरों ने उपकार किया हो। जिसके साथ परोपकार हुआ हो।

परोपजीवी (विन्)—वि०[सं०]दूसरों के भरोसे जीवन निर्वाह करनेवाला। पुं० ऐसे कीड़े-मकोड़े या वनस्पतियाँ जो दूसरे जीव-जंतुओं या वृक्षों के अंगों पर रहकर जीवन निर्वाह करते हों। (पैरीसाइट)

परोपदेश—पुं० [सं० पर-उपदेश,ष० त०] दूसरों को दिया जानेवाला उपदेश।

परोपसर्पण—पुं०[सं० पर-उपसर्पण, ष० त०] भीख माँगना।

परोरजा (जस्)—वि० [सं० रजस्-पर पं० त०, सुट् नि०] जो राग, द्वेष आदि भावों से परे हो। विरक्त। विमुक्त।

परोरना—स०[?]मंत्र पढ़कर फूँकना। अभिमंत्रित करना। जैसे—रोगी को परोरकर पानी पिलाना।

परोल—पुं० दे० 'पैरोल'।

परोष्णी—स्त्री० [सं० पर-उष्ण, ब० स०, ङीप्] १. तेल चाटनेवाला एक कीड़ा। तेल-चटा। २. पुराणानुसार कश्मीर की एक नदी।

परोस†—स्त्री०[हिं० परोसना] परोसने की क्रिया या भाव।

†पुं०=पड़ोस।

परोसना—स०[सं० परिवेषण] खानेवाले की थाली या पत्तल में खाद्य पदार्थ रखना। जैसे—दाल, पूरी और मिठाई परोसना।

परोसा—पुं०[हिं० परोसना] प्रायः एक आदमी के खाने भर का वह भोजन जो उसे अपने साथ ले जाने के लिए दिया अथवा उसके यहाँ भेजा जाता है।

परोसी—पुं०[स्त्री० परोसिन]=पड़ोसी।

परोसैया—पुं०[हिं० परोसना+ऐया (प्रत्य०)] वह व्यक्ति जो पंगत आदि में बैठे हुए लोगों के लिए भोजन परोसता हो।

परोहन—पुं०[सं० प्ररोहण] वह पशु जिस पर चढ़कर सवारी की जाय या जिस पर बोझ लादा जाय।

परोहा†—पुं०[सं० प्ररोहण] १. खेतों की सिंचाई का वह प्रकार जिसमें कम गहरे जलाशय में बाँस आदि से झूलती हुई दौरी की सहायता से पानी उठाकर खेतों में डाला जाता है। २. उक्त दौरी जिसमें पानी निकाला जाता है। ३. कूएँ से पानी निकालने का चरसा। मोट।

परौं†—अव्य०=परसों।

परौका†—स्त्री० [देश०] बाँझ भेड़।

परौठा†—पुं०=पराँठा।

परौता—स्त्री० [देश०] वह चादर जिससे हवा करके अनाज ओसाया जाता है। परती।

परौती†—स्त्री०=पड़ती।

पर्कट—पुं० [देश०] बगला।

पर्कटी—स्त्री० [सं०√पृच् (जोड़ना)+अटि, कुत्व, ङीप्] १. पाकर वृक्ष। २. नई सुपारी।
स्त्री० हिं० पर्कट (बगला) का स्त्री०।

पर्कार—पुं० [फा०] परकार। (दे०)

पर्काला†—पुं०=परकाला।

पर्गना†—पुं०=परगना।

पर्गार—पुं० [फा०] परकारा। (दे०)

पर्चा—पुं०=परचा।

पर्चाना—स०=परचाना।

पर्चून—पुं०=परचून।

पर्छा—पुं०=परछा।

पर्जंक†—पुं०=पर्यंक।

पर्ज—स्त्री०=परज।

पर्जनी—स्त्री० [सं०√पृज् (स्पर्श करना)+अन्, ङीप्] दारू हल्दी।

पर्जन्य—पुं० [सं०√पृष् (सींचना)+अन्य, ष—ज] १. गरजता तथा बरसता हुआ बादल। मेघ। २. इंद्र। ३. विष्णु। ४. कश्यप ऋषि के एक पुत्र जिसकी गिनती गंधर्वों में होती है।

पर्जन्या—स्त्री० [सं० पर्जन्य+टाप्] दारू हल्दी।

पर्ण—पुं० [सं०√पृ+न] १. पेड़ का पत्ता। पत्र। जैसे—पर्ण-कुटी=पत्तों से छाकर बनाई हुई कुटी। २. पान का पत्ता। ताम्बूल। ३. ३. पलाश। ढाक। ४. पुस्तक, पंजी आदि का पृष्ठ। (लीफ) ५. कागज का वह टुकड़ा या परत जिसमें से वैसा ही दूसरा टुकड़ा या परत प्रतिलिपि के रूप में काटकर अलग करते हैं। (फायल)

पर्णक—पुं० [सं० पर्ण+कन्] पार्णकि गोत्र के प्रवर्तक एक ऋषि।

पर्णकार—पुं० [सं० पर्ण√कृ (करना+)अण्] १. पान बेचनेवाला व्यक्ति तमोली। २. पान बेचनेवालों की एक पुरानी जाति।

पर्ण-कुटी—स्त्री० [मध्य० स०] वह झोपड़ी जिसकी छाजन पत्तों की बनी हो।

पर्ण-कूर्च—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का व्रत जिसमें तीन दिन तक ढाक, गूलर, कमल और बेल के पत्तों का काढ़ा पीया जाता है।

पर्ण-कृच्छ्र—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का पाँच दिनों का व्रत जिसमें पहले दिन ढाक के पत्तों का, दूसरे दिन गूलर के पत्तों का, तीसरे दिन कमल के पत्तों का, चौथे दिन बेल के पत्तों का पीकर पाँचवे दिन कुश का काढ़ा पीया जाता था।

पर्ण-खंड—पुं० [ब० स०] वह वृक्ष जिसमें फूल, पत्ते आदि न लगते हों।

पर्ण-ग्रंथि—स्त्री० [ष० त०] वनस्पति विज्ञान में, पेड़-पौधों के तने या स्तंभ का वह स्थान जहाँ से पत्ते निकलते हैं। (नोड)

पर्ण-चोरक—पुं० [ष० त०] चोरक नाम का गंध द्रव्य।

पर्ण-नर—पुं० [मध्य० स०] किसी अज्ञात स्थान में मरनेवाले व्यक्ति का घास-फूस आदि का बनाया हुआ वह पुतला जो उसका शव न मिलने की दशा में उसका शव मानकर जलाया जाता है।

पर्णभेदिनी—स्त्री० [सं० पर्ण√भिद् (फाड़ना) +णिनि+ङीप्] प्रियंगु लता।

पर्ण-भोजन—पुं० [ब० स०] १. वह जिसका पत्ता ही भोजन हो। वह जो केवल पत्ते खाकर जीता हो। २. बकरी।

पर्णभोजनी—स्त्री० [सं० पर्णभोजन+ङीप्] बकरी।

पर्ण-मणि—स्त्री० [मध्य० स०] १. पन्ना या मरकत नामक रत्न। २. एक प्रकार का अस्त्र।

पर्णमाचल—पुं० [सं० पर्ण-आ√चल्+णिच्+अण्, मुम्] कमरख का पेड़।

पर्णमुक (च्)—पुं० [सं० पर्ण√मुच् (छोड़ना)+क्विप्] पतझड़।

पर्ण-मृग—पुं० [मध्य० स०] पेड़ों पर रहनेवाले जंगली जीव-जंतु। जैसे—गिलहरी, बंदर आदि।

पर्णय—पुं० [सं०] एक असुर जिसे इंद्र ने मारा था।

पर्णरुह—पुं० [सं० पर्ण√रुह् (जनमना)+क] वसंत (ऋतु)।

पर्णल—वि० [सं० पर्ण+लच्] १. (वृक्ष) जिसमें बहुत अधिक पत्ते लगे हों। २. पत्तों से बनाया हुआ। पत्तों से युक्त।

पर्ण-लता—स्त्री० [मध्य० स०] पान की बेल या लता।

पर्णवल्क—पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि।

पर्ण-वल्ली—स्त्री० [मध्य० स०] पालाशी नामक लता।

पर्ण-वाद्य—पुं० [मध्य० स०] १. पत्ते का बना हुआ बाजा। २. उक्त बाजे को बजाने से होनेवाला शब्द।

पर्ण-वीटिका—स्त्री० [ष० त०] पान का बीड़ा।

पर्ण-शब्द—पुं० [ष० त०] पत्तों के खड़खड़ाने का शब्द।

पर्ण-शय्या—स्त्री० [मध्य० स०] पत्तों का बिछावन या बिस्तर।

पर्ण-शबर—पुं० [ब० स०] १. पुराणानुसार एक देश का नाम। २. उक्त देश में रहनेवाली आदिम अनार्य जाति जो संभवतः अब नष्ट हो गई है।

पर्ण-शाला—स्त्री० [मध्य० स०] पर्णकुटी।

पर्णशालाग्र—पुं० [पर्णशाला-अग्र, ब० स०] पुराणानुसार भद्राश्व वर्ष का एक पर्वत।

पर्ण-संपुट—पुं० [ष० त०] पत्ते या पत्तों का बना हुआ दोना।

पर्ण-संस्तर—वि० [ब० स०] पर्णशय्या पर सोनेवाला।

पर्णसि—पुं० [सं० √पृ+असि, नुक्] १. कमल। २. साग। ३. पानी में बनाया हुआ घर या मकान।

पर्णांग—पुं० [पर्ण-अंग, ब० स०] एक विशिष्ट प्रकार के पौधों का वर्ग जिसमें केवल बड़े-बड़े सुंदर पत्ते होते हैं, फूल नहीं लगते। (फर्न)

पर्णाटक—पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि।

पर्णाद—पुं० [सं० पर्ण√अद् (खाना)+अण्] १. वह जो पत्तों का भक्षण करता हो। २. एक प्राचीन ऋषि।

पर्णाशन—पुं० [सं० पर्ण+अश् (खाना)+ल्यु—अन] १. वह जो केवल पत्ते खाकर रहता हो। २. बादल। मेघ।

पर्णास—पुं० [सं० पर्ण√अस् (फेंकना)+अच्] तुलसी।

पर्णाहार—पुं०—पर्णाशन। (दे०)

पर्णिक—पुं०[सं० पर्ण+ठन-इक] पत्तों का व्यवसाय करनेवाला। पत्ते बेचनेवाला।

पर्णिका—स्त्री० [सं० पर्णिक+टाप्] १. मानकंद। शालपंजी। सरिवन। २. पिठवन। पृश्णिपर्णी। ३. अग्निमंथ। अरणी। ४. कागज का वह छोटा कटा या काटा हुआ टुकड़ा जो कहीं दिखलाने पर कुछ निश्चित धन या पदार्थ मिलता है, कोई काम होता है अथवा कोई सहायता या सेवा प्राप्त होती है। (कूपन)

पर्णिनी—स्त्री० [सं० पर्ण+इनि-ङीप्] १. माषपर्णी। २. एक अप्सरा।

पर्णिल—वि०[सं० पर्ण+इलच] पत्तों से युक्त।

पर्णी (र्णिन्)—पुं०[सं० पर्ण+इनि] १. वृक्ष। पेड़। २. शालपर्णी। सरिवन। ३. पिठवन। ४. तेजपत्ता। ५. एक प्रकार की अप्सराएँ, कदाचित् परियाँ।

पर्णीर—पुं०[सं० पर्ण+ईरच्] सुगंधवाला।

पर्णोटज—पुं०[सं० पर्ण-उटज, मध्य० स०] पर्ण-कुटी।

पर्त†—स्त्री०=परत।

पर्द—पुं० [सं०√पृ (पूर्ति करना)+द]। १. सिर के बालों का समूह। २. गुदामार्ग से निकलनेवाली वायु। पाद।

पर्दन—पुं०[सं०√पर्द्+ल्युट्-अन] पादने की क्रिया। पादना।

पर्दनी—स्त्री०[सं० परिधानी] धोती।

पर्दा† —पुं०=परदा।

पर्धा—वि०[हिं० आधा का अनु०] आधे से कुछ कम या अधिक। आधे के लगभग। उदा०—वह पूरा कभी वसूल नहीं हो पाता था—कभी आधा कभी पर्धा।—वृन्दावन लाल वर्मा।

पर्ना—पुं०[फा०] एक तरह का बूटीदार रेशमी कपड़ा।
पुं०=परना।

पर्प—पुं०[सं० पृ+प] १. हरी घास। २. वह पहियेदार छोटी गाड़ी जिस पर पंगुओं को बैठाकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते हैं। ३. घर। मकान।

पर्पट—पुं० [सं०√पर्प् (गति)+अटन्] १. पित-पापड़ा। २. दाल आदि का बना हुआ पापड़।

पर्पट-द्रुम—पुं०[सं० उपमि० स०] कुंभी वृक्ष।

पर्पटी—स्त्री० [सं० पर्पट+ङीष्] १. सौराष्ट्र आदि प्रदेशों में होने-वाली एक तरह की मिट्टी जो सुगंधित होती है। २. उक्त मिट्टी में से निकलनेवाली गंध। ३. गंध। महक। ४. पानड़ी। ५. पापड़ी। ६. वैद्यक की स्वर्ण-पर्पटी नाम की रसौषधि।
† स्त्री०=कनपटी। उदा०—माथे पर और पर्पटी पर मल दिया। —अज्ञेय।

पर्परी—स्त्री०[सं०पर्प√रा (देना)+क+ङीष्] स्त्रियों की कवरी। जूड़ा।
स्त्री०[सं० पर्पट] १. पापड़ के छोटे छोटे टुकड़े। २. कचरी।

पर्परीक—पुं०[सं०√पृ+ईकन्, द्वित्व, रुक्] १. सूर्य। २. अग्नि। ३. जलाशय।

पर्परीण—पुं०[सं०√पृ+यङ्, लुक्,+इनन्] पत्ते की नस।

पर्पिक—पुं०[सं० पर्प+ठन्—इक] पर्प में बैठनेवाला पंगु व्यक्ति।

पर्फरीक—पुं०[सं०√स्फुट् (संचलन)+ईकन्, नि० सिद्धि] नया और कोमल पत्ता।

पर्ब†—पुं०[सं० पर्व] १.=पर्व। २. वह शुभ दिन जिस दिन सिक्ख लोग उत्सव मनाते हैं। जैसे—गुरुपर्व=नानक के जन्म लेने का दिन।

पर्बत† —पुं०=पर्वत।

पर्बती—वि०[हिं० पर्वत] पर्वत-संबंधी। पहाड़ी।

पर्यंक—पुं०[सं० परि-अंक, प्रा० स०] १. पलंग। २. योग में एक प्रकार का आसन। ३. वीरों के बैठने का एक प्रकार का आसन या ढंग। ४. नर्मदा नदी के उत्तर ओर में स्थित पर्वत जो विन्ध्य पर्वत का पुत्र माना गया है।

पर्यंक-पदिका—स्त्री०[सं० पर्यंक-पाद, ब०स०, ठन्—इक, टाप्] एक तरह का सेम जिसकी फलियाँ काले रंग की होती हैं।

पर्यंत—भू० कृ०[सं० परि-अंत, प्रा० स०] घिरा हुआ।
स्त्री० किसी क्षेत्र के विस्तार की समाप्ति सूचित करनेवाली रेखा। चौहद्दी। सीमा। (बाउण्डरी)
अव्य० तक। लौं।

पर्यंतिका—स्त्री०[सं० परि-अंतिका, प्रा०स०] नैतिकता तथा सद्गुणों का होनेवाला नाश।

पर्यग्नि—पुं० [सं० परि-अग्नि, प्रा०स०] १. हाथ में अग्नि लेकर यज्ञ के लिए छोड़े हुए पशु की परिक्रमा करना। २. वह अग्नि जो उक्त अवसर पर हाथ में ली जाती थी।

पर्यटक—पुं०[सं० परि√अट् (गति)+ण्वुल्—अक] पर्यटन करनेवाला। दूसरे देशों में घूमने-फिरनेवाला।

पर्यटन—पुं० [सं० परि√ अट्+ल्युट्—अन] अनेक महत्त्वपूर्ण स्थल देखने तथा मन-बहलाव के लिए अधिक विस्तृत भूभाग में किया जानेवाला भ्रमण।

पर्यनुयोग—पुं० [सं० परि-अनुयोग, प्रा० स०] १. कोई बात मिथ्या सिद्ध करने अथवा किसी तथ्य का खण्डन करने के उद्देश्य से की जानेवाली पूछ-ताछ। २. निंदा।

पर्यन्य†—पुं०=पर्जन्य।

पर्यय—पुं०[सं० परि√इ (जाना)+अच्] १. चारों ओर चक्कर लगाना। २. समय का बीतना। ३. समय का अपव्यय। ४. किसी लौकिक या शास्त्रीय बन्धन, मर्यादा आदि का उल्लंघन।

पर्ययण—पुं०[सं०परि√इ+ल्युट्—अन] १. किसी के चारों ओर चक्कर लगाना। २. घोड़े की जीन। काठी।

पर्यवदात—वि०[सं० परि-अवदात, प्रा० स०] १. पूर्ण रूप से निर्मल और शुद्ध। २. निपुण। ३. ज्ञात और परिचित।

पर्यवरोध—पुं०[सं० परि-अवरोध, प्रा०स०] चारों ओर से होनेवाली बाधा।

पर्यवलोकन—पुं०[सं० परि-अवलोकन, प्रा० स०] १. चारों ओर देखना। २. चारों ओर इस तरह निरीक्षणात्मक दृष्टि से देखना कि समूचे क्षेत्र या उसमें होनेवाली चीजों का चित्र मस्तिष्क में उतर आये। (सर्वे)

पर्यवसान—पुं०[सं० परि-अव √सो (समाप्ति)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० पर्यवसित] १. अंत। समाप्ति। २. अंतर्भाव। ३. क्रोध। गुस्सा। ४. अर्थ, आशय आदि के संबंध में होनेवाला ठीक ज्ञान या निश्चय।

पर्यवस्था—स्त्री० [सं० परि-अव√स्था (ठहरना)+अङ्—टाप्] १. विरोध। २. खंडन।

पर्यवस्थान—पुं०[सं० परि-अव√स्था+ल्युट्—अन] १. विरोध करना। २. खंडन करना।

पर्यवेक्षक—वि०[परि-अव√ईक्ष्+ण्वुल्—अक] पर्यवेक्षण करनेवाला। वह अधिकारी जो किसी काम के ठीक तरह से होते रहने की देख-रेख करने पर नियुक्त हो। (सुपरवाइजर)

पर्यवेक्षण—पुं० [परि—अव√ईक्ष्+ल्युट्—अन] बराबर यह देखते रहना कि कोई काम ठीक तरह से चल रहा है या नहीं। (सुपरवाइजिंग)

पर्यश्रु—वि०[सं० परि—अश्रु, ब० स०] १. आँसुओं से नहाया या भींगा हुआ। २. जिसकी आँखों में आँसू भरे हों।

पर्यसन—पुं०[सं० परि√अस् (फेंकना) +ल्युट्—अन] [भू० कृ० पर्यस्त] १. दूर करना। बाहर करना। निकालना। २. भेजना। ३. नष्ट करना। ४. रद्द करना।

पर्यस्त—भू० कृ० [सं० परि√ अस्+क्त] जिसका पर्यसन हुआ हो।

पर्यस्तापह्नुति—स्त्री० [सं० पर्यस्ता-अपह्नुति, कर्म० स०] अपह्नुति अलंकार का एक भेद जिसमें किसी उपमान के धर्म का निषेध करके उस धर्म की स्थापना उपमेय में की जाती है।

पर्यस्ति—स्त्री०[सं० परि√ अस्+क्तिन्] १. दूर करना। २. वीरासन लगाकर बैठना।

पर्यस्तिका—स्त्री० [सं० पर्यस्ति+कन्+टाप्] १. वीरासन। २. पलंग।

पर्याकुल—वि०[सं० परि-आकुल, प्रा०स०] गंदला, क्षुब्ध (पानी)। २. डरा और घबराया हुआ। ३. अस्त-व्यस्त। ४. उत्तेजित। ५. मरा हुआ।

पर्यागत—वि०[सं० परि-आ√ गम्(जाना)+क्त] १. जो पूरा चक्कर लगा चुका हो। २. जो अपने सांसारिक जीवन का अंत कर चुका हो।

पर्याचांत—पुं०[सं० परि-आ√चम् (खाना)+क्त] आचमन करने के बाद छोड़ा जानेवाला परोसा हुआ भोजन। (धार्मिक दृष्टि से ऐसा भोजन जूठा माना जाता है)

पर्याण—पुं०[सं० परि√ या (गति)+ल्युट्, पृषो०सिद्धि] घोड़े की जीन। काठी।

पर्याप्त—वि०[सं० परि√ आप् (व्याप्ति)+क्त] [भाव० पर्याप्ति] १. जितना आवश्यक हो उतना सब। पूरा। यथेष्ट। काफ़ी। (सफिशिएन्ट) २. मिला हुआ। प्राप्त।

विशेष—यथेष्ट की तरह इसका प्रयोग भी केवल ऐसी चीजों या बातों के संबंध में होना चाहिए जो आवश्यक हों या जिनसे हमें तृप्ति या संतोष प्राप्त होता हो। जैसे—पर्याप्त धन, पर्याप्त सुख। यह कहना ठीक न होगा—मुझे वहाँ पर्याप्त कष्ट मिला था।

३. जोड़, तुल्यता आदि की दृष्टि से उपयुक्त, अधिक बलवान या सशक्त। ४. परिमित। सीमित।

पुं० १. पर्याप्ति या यथेष्ट होने की अवस्था या भाव। २. तृप्ति। ३. शक्ति। ४. सामर्थ्य। ५. योग्यता।

पर्याप्ति—स्त्री०[सं० परि√ आप्+क्तिन्] १. पर्याप्त होने की अवस्था या भाव। यथेष्टता। २. प्राप्ति। मिलना। ३. अन्त। समाप्ति। ४. योग्यता या सामर्थ्य। ५. तृप्ति। संतुष्टि। ६. निवारण। ७. रक्षा करना। रक्षण।

पर्याप्लाव—पुं०[सं० परि-आ√प्लु (गति)+घञ्] १. चक्कर। फेरा। २. घेरा।

पर्याप्लुत—भू० कृ० [सं० परि-आ√ प्लु+क्त] घिरा या घेरा हुआ।

पर्याय—पुं०[सं०परि√ई (गति)+घञ्] १. पारस्परिक संबंध की दृष्टि से वे शब्द जो सामान्यतः किसी एक ही चीज, बात या भाव का बोध कराते हों। साधारणतः पर्यायों के अभिधेयार्थ समान होते हैं, लक्ष्यार्थों में भिन्नता हो सकती है। (सिनामिन) २. क्रम। सिलसिला। ३. एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें अनेक आश्रय ग्रहण करने का वर्णन होता है। ४. प्रकार। भेद। ५. अवसर। मौका। ६. बनाने या रचने की क्रिया। निर्माण। ७. द्रव्य का गुण या धर्म। ८. समय का व्यतीत होना। ९. दो व्यक्तियों में होनेवाला ऐसा नाता या संबंध जो एक ही कुल में जन्म लेने के कारण माना जाता या होता है।

पर्यायकी—स्त्री० [सं०] भाषा विज्ञान का एक अंग, जिसमें पर्याय शब्दों के पास्परिक सूक्ष्म अंतरों और भेद-प्रभेदों का अध्ययन किया जाता है। (सिनॉनिमी)

पर्याय-कोश—पुं० [ष० त०] वह शब्द-कोश जिसमें शब्दों के पर्याय बतलाये गये हों तथा उनमें होनेवाली परस्पर आर्थी अंतरों का विवेचन किया गया हो।

पर्याय-क्रम—पुं०[ष०त०] १.पद, मान आदि के विचार से स्थिर किया जानेवाला क्रम। बड़ाई-छोटाई आदि के विचार से लगाया हुआ क्रम। २. उत्तरोत्तर होती रहनेवाली वृद्धि।

पर्यायज्ञ—पुं० [सं० पर्याय √ ज्ञा (जानना)+क] पर्यायों के सूक्ष्म अंतर जानने वाला विद्वान् व्यक्ति। (सिनानिमिस्ट)

पर्यायवाचक—वि० [सं०] १. पर्याय के रूप में होनेवाला। २. जो संबंध के विचार से पर्याय हो।

पर्यायवाची(चिन्)—वि० [सं०]=पर्यायवाचक।

पर्याय-वृत्ति—स्त्री० [सं० ष० त०] ऐसा स्वभाव जिसके कारण एक छोड़कर दूसरे को, फिर उसे छोड़कर किसी और को अपनाते चलने का क्रम चलता रहता है।

पर्याय-शयन—पुं० [तृ० त०] एक के बाद दूसरे का या पारी पारी से सोना।

पर्यायिक—वि० [सं० पर्याय+ठन्—इक] १. पर्याय-संबंधी। पर्याय का। २. पर्याय के रूप में होनेवाला।

पुं० नृत्य और संगीत का एक अंग।

पर्यायी—वि०[सं०] पर्यायवाचक।

पर्यायोक्ति—स्त्री०[सं० पर्याय-उक्ति, तृ०त०] एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें (क) कोई बात सीधी तरह से न कहकर चमत्कारिक और विलक्षण ढंग से कही जाती है। जैसे—नायक के बिछुड़ने के समय रोती हुई नायिका का अपने आँसुओं से यह कहना कि जरा ठहरो, और मेरे प्राण भी अपने साथ लेते जाओ। (ख) किसी बहाने या युक्ति से कोई काम करने का उल्लेख होता है। जैसे—पक्षियों और हिरनों को देखने के बहाने सीता जी बार-बार श्रीराम की ओर देखती थीं।

पर्यालोचन—पुं० [सं० परि-आ√लोच् (देखना)+ल्युट्—अन] १.

अच्छी तरह की जानेवाली देख-भाल। २. दुबारा या फिर से की जानेवाली देख-भाल। ३. दे० 'पुनरीक्षण'।

पर्यालोचना—स्त्री०[सं० परि-आ√लोच्+णिच्+युच्—अन,+टाप्]= पर्यालोचन।

पर्यावरण—पुं०[सं० परि + आवरण] किसी व्यक्ति या विषय की परिस्थिति। वातावरण। उदा०—कवि पर किसी एक समाज के पर्यावरण का विशेष प्रभाव पड़ता है।—डा० सम्पूर्णानन्द।

पर्यावर्त्त—पुं०[सं० परि-आ√वृत् (बरतना)+घञ्] १. वापस आना। लौटना। २. मृत आत्मा का फिर से इस संसार में आकर जन्म लेना या शरीर धारण करना।

पर्यावर्तन—पुं०[सं० परि+आ√वृत्+ल्युट्—अन] १. वापस आना। लौटना। २. अदला-बदली। विनिमय।

पर्याविल—वि०[सं० परि-आविल, प्रा० स०] गँदला (जल)।

पर्यास—पुं०[सं० परि√अस् (फेंकना)+घञ्] १. पतन। गिरना। २. वध। हत्या। ३. नाश।

†पुं०=प्रयास।

पर्यासन—पुं०[सं० परि√अस् (बैठना)+ल्युट्—अन] १. किसी को घेर कर बैठना। किसी के चारों ओर बैठना। २. परिक्रमा करना।

पर्याहार—पुं०[सं० परि-आ √ हृ (हरण करना)+घञ्] १. जूआ। २. ढोने की क्रिया। ३. बोझ। ४. घड़ा। ५. अन्न जमा करना।

पर्युक्षण—पुं० [सं० परि√ उक्ष् (सींचना)+ल्युट्—अन] श्राद्ध, होम, पूजा आदि के बिना मंत्र पढ़े छिड़का जानेवाला जल।

पर्युक्षणी—स्त्री०[सं० पर्युक्षण+ङीप्] पर्युक्षण के लिए जल से भरा पात्र।

पर्युत्थान—पुं०[सं० परि-उद्√स्था (ठहरना)+ल्युट्—अन] उठ खड़ा होना।

पर्युत्सुक—वि०[सं० परि-उत्सुक, प्रा० स०] १. बहुत अधिक उत्सुक। २. उदास। खिन्न। ३. विकल। खिन्न।

पर्युदय—पुं० [सं० अत्या० स०] सूर्योदय से कुछ पहले का समय। तड़का।

पर्युदस्त—वि०[सं० परि-उद्√अस्+क्त] १. निषिद्ध। २. जिसके संबंध में या जिस पर आपत्ति की गई हो।

पर्युदास—पुं०[सं० परि-उद्√अस्+घञ्] नियम आदि के विरुद्ध अपवाद के रूप में कही जानेवाली बात।

पर्युपस्थान—पुं०[सं० परि-उप√स्था+ल्युट्—अन] सेवा।

पर्युपासक—पुं०[सं० परि-उपासक, प्रा० स०] १. उपासक। २.सेवक।

पर्युपासन—पुं०[सं० परि-उपासन, प्रा० स०] १. उपासना। २. सेवा।

पर्युपासिता (तृ), पर्युपासी (सिन्)—पुं०[सं० परि-उप√ आस+तृच्, सं० परि-उप√ अस्+णिनि] पर्युपासक। (दे०)

पर्युप्त—भू० कृ०[सं० परि√वप् (बोना)+क्त] [भाव० पर्युप्ति] जो बोया गया हो।

पर्युप्ति—स्त्री०[सं० परि√वप्+क्तिन्] बीज बोने की क्रिया या भाव। बोआई।

पर्युषण—पुं०[सं० परि√उष्+ल्युट्—अन] १. जैनियों के अनुसार तीर्थंकरों की पूजा या सेवा। २. जैनों का एक विशिष्ट पर्व जिसमें कई प्रकार के व्रतों का पालन किया जाता है।

पर्युषित—वि०[सं० परि√वस्+क्त] १. जो ताजा न हो। एक दिन पहले का। बासी। (फूल या भोजन के लिए प्रयुक्त) २. मूर्ख।

पर्यूहण—पुं०[सं० परि√ ऊह्+ल्युट्—अन] अग्नि के चारों ओर जल छिड़कना।

पर्येषणा—स्त्री०[सं० परि-एषणा, प्रा० स०]१. तर्कपूर्वक की जानेवाली पूछ-ताछ। २. छान-बीन। जाँच-पड़ताल। ३. पूजा।

पर्येष्टि—स्त्री०[सं० परि-आ√ इष्+क्तिन्]। पर्येषणा (दे०)

पर्व (र्वन्)—पुं०[सं०√ पृ (पूर्ण करना)+वनिप्] १. दो चीजों के जुड़ने का संधि-स्थान। जोड़। गाँठ। जैसे—ऊँगली या गन्ने का पर्व (पोर)। २. शरीर का ऐसा अंग जो किसी जोड़ के आगे हो और घुमाया फिराया या मोड़ा जा सकता हो। ३. अंश। खंड। भाग। ४. ग्रंथ का कोई विशिष्ट अंश, खंड या विभाग। जैसे—महाभारत में अठारह पर्व हैं। ५. सीढ़ी का डंडा। ६. कोई निश्चित या सीमित काल। अवधि, विशेषतः अमावास्या, पूर्णिमा और दोनों पक्षों की अष्टमियाँ। ७. वे यज्ञ जो उक्त तिथियों में किये जाते थे। ८. आनन्द और उत्सव का दिन या समय। ९. वह दिन जब विशिष्ट रूप से कोई धार्मिक या पुण्य-कार्य किया जाता हो। १०. कोई विशिष्ट अच्छा अवसर या समय। आनन्द या त्योहार मनाने का दिन। ११. उत्सव। १२. चंद्रमा या सूर्य का ग्रहण। १३. सूर्य का किसी राशि में संक्रमण काल। संक्रांति। १४. चातुर्मास्य।

पर्वक—पुं०[सं० पर्वन्√ कै (प्रकाशित होना)+क]घुटना।

पर्वकार—पुं०[सं० पर्वन्√ कृ (करना)+अण्] वह ब्राह्मण जो धन के लोभ से पर्व के दिन का काम छोड़ दे, और फिर सुभीते से किसी दूसरे दिन करे।

पर्व-काल—पुं०[सं० ष०त०] १. वह समय जब कोई पर्व हो। पुण्य-काल। २. चंद्रमा के क्षय के दिन, अर्थात् पूर्णमासी से अमावास्या तक का समय।

पर्वगामी (मिन्)—पुं०[सं० पर्वन्√गम् (जाना)+णिनि] शास्त्रों द्वारा वर्जित तिथि या पर्व पर स्त्री-गमन करनेवाला व्यक्ति।

पर्वण—पुं०[सं० √ पर्व् (पूर्ति)+ल्युट्—अन]१. कोई काम पूरा करने की क्रिया या भाव। २. एक राक्षस का नाम।

पर्वणिका—स्त्री० [सं० पर्वणी+कन्+टाप्,ह्रस्व] पर्वणी नाम का आँख का रोग।

पर्वणी—स्त्री०[सं० पर्वन्+ङीप्]१. सुश्रुत के अनुसार आँख की संधि में होनेवाला एक प्रकार का रोग जिसमें जलन और सूजन होती है। २. पूर्णिमा। ३. दे० 'पर्विणी'।

पर्वत—पुं०[सं०√पर्व+अतच्]१. पत्थरों आदि का बना हुआ, मालाओं या श्रेणियों के रूप में फैला हुआ तथा ऊँची चोटियोंवाला वह भूखंड जो आस-पास की भूमि से सैकड़ों-हजारों फुट ऊँचा होता है तथा जो भूगर्भ की प्राकृतिक शक्तियों से निकलनेवाले मल से बनता है। पहाड़।

विशेष—पर्वत प्रायः ढालुएँ होते हैं और उनके ऊपरी भाग निचले भागों की अपेक्षा बहुत कम विस्तृत होते हैं और उनके ऊपरी भाग चौड़े तथा चिपटे होते हैं।

२. बहुत-सी चीजों का बना हुआ बहुत ऊँचा ढेर। ३. लाक्षणिक अर्थ में, अत्यधिक मात्रा में होने की अवस्था या भाव। जैसे—बातों का पहाड़।

४. पुराणानुसार एक देवर्षि जो नारद मुनि के बहुत बड़े मित्र थे। ५. एक प्रकार की मछली। ६. पेड़। वृक्ष। ७. एक प्रकार का साग। ८. दशनामी संप्रदाय के संन्यासियों का एक भेद या वर्ग; और उनके नाम के साथ लगनेवाली एक उपाधि। ९. मरीचि का एक पुत्र। १०. एक गंधर्व का नाम। ११. रहस्य-संप्रदाय में (क) पाप, (ख) प्रेम, (ग) मन या ध्यान की ऊँची अवस्था, (घ) परमात्मा।

पर्वतक—पुं० [सं० पर्वत+कन्] छोटा पहाड़।

पर्वत-काक—पुं० [मध्य०स०] डोम कौआ।

पर्वत-कीला—स्त्री० [ब०स०, टाप्] पृथ्वी।

पर्वतखंड—पुं० [सं०] १. पर्वत का टुकड़ा। २. पर्वतीय प्रदेश। ३. तटवर्ती प्रदेश में ऊँची तथा अति तीव्र ढालवाली चट्टान की दीवार।

पर्वतज—वि० [सं० पर्वत्√जन् (उत्पन्न होना)+ड] जो पर्वत से उत्पन्न हुआ हो। पहाड़ से पैदा होने या निकलनेवाला।

पर्वतजा—स्त्री० [सं० पर्वतज+टाप्] १. नदी। २. पार्वती।

पर्वत-जाल—पुं० [ष०त०] पर्वत-माला।

पर्वत-तृण—पुं० [सं० मध्य०स०] एक तरह की घास जिसे पशु खाते हैं।

पर्वत-दुर्ग—पुं० [मध्य०स०] पहाड़ पर बना हुआ किला।

पर्वत-नंदिनी—स्त्री० [ष०त०] पार्वती।

पर्वत-पति—पुं० [ष०त०] पर्वतों का राजा, हिमालय।

पर्वत-प्रदेश—पुं० [सं०] ऐसा प्रदेश जिसमें प्रायः पर्वत ही पर्वत हों।

पर्वत-माला—स्त्री० [ष०त०] भूगोल शास्त्र में, पहाड़ों की ऐसी शृंखला जो दूर तक समानांतर चली गई हो। (चेन)

पर्वत-मोचा—स्त्री० [मध्य०स०] एक तरह के पहाड़ी केले का पौधा और उसका फल।

पर्वत-राज—पुं० [ष० त०] १. बहुत बड़ा पहाड़। २. हिमालय पर्वत।

पर्वतवासिनी—स्त्री० [सं० पर्वत√ वस् (बसना)+णिनि+ङीप्] १. काली देवी। २. गायत्री। ३. छोटी जटामासी।

पर्वतवासी (सिन्)—पुं० [सं० पर्वत√वस्+णिनि] [स्त्री० पर्वतवासिनी] पहाड़ पर वास करनेवाला प्राणी।

पर्वतस्थ—वि० [सं० पर्वत√स्था (ठहरना)+क] पर्वत पर स्थित।

पर्वतात्मज—पुं० [सं० पर्वत-आत्मज, ष० त०] मैनाक (पर्वत)।

पर्वतात्मजा—स्त्री० [पर्वत-आत्मजा, ष० त०] पार्वती।

पर्वताधारा—स्त्री० [पर्वत-आधार, ब०स०, टाप्] पृथ्वी।

पर्वतारि—पुं० [पर्वत्-अरि, ष० त०] इंद्र।

पर्वताशय—पुं० [सं० पर्वत-आ √शी (सोना)+अच्] मेघ। बादल।

पर्वताश्रय—पुं० [सं० पर्वत-आश्रय, ब० स०] १. शरभ। २. पर्वतवासी।

पर्वताश्रयी (यिन्)—पुं० [सं० पर्वत-आ√श्रि (सेवा)+णिनि] पर्वतवासी।

पर्वतासन—पुं० [सं० पर्वत-आसन, मध्य०स०] हठ योग में एक प्रकार का आसन।

पर्वतास्त्र—पुं० [सं० पर्वत-अस्त्र, मध्य०स०] प्राचीन काल का एक प्रकार का कल्पित अस्त्र जिसके संबंध में कहा जाता है कि इनके फेंकते ही शत्रु की सेना पर बड़े बड़े पत्थर बरसने लगते थे अथवा अपनी सेना के चारों ओर पहाड़ खड़े हो जाते थे, जिससे शत्रु के प्रभंजनास्त्र विफल हो जाते थे।

पर्वतिया—पुं० [सं० पर्वत+इया (प्रत्य०)] १. नैपालियों की एक जाति। २. एक प्रकार का कद्दू। ३. एक प्रकार का तिल।

†वि०=पर्वतीय (पहाड़ी)।

पर्वती—वि०=पर्वतीय।

पर्वतीय—वि० [सं० पर्वत√छ—ईय] १. पर्वत-संबंधी। पहाड़ का' पहाड़ी। २. पहाड़ पर रहने या होनेवाला। पहाड़ी। जैसे—पर्वतीय पावस।

पर्वतेश्वर—पुं० [पर्वत-ईश्वर, ष०त०] हिमालय।

पर्वतोद्भव—पुं० [पर्वत-उद्भव, ब०स०] १. पारा। २. शिंगरफ।

पर्वतोद्भूत—पुं० [पर्वत्-उद्भूत, पं० त०] अबरक।

पर्वतोर्मि—पुं० [पर्वत-उर्मि, ब०स०] एक तरह की मछली।

पर्वधि—पुं० [सं० पर्वन√धा (धारण करना)+कि] चंद्रमा।

पर्वपुष्पी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीप्] १. नागदंती नामक क्षुप। २. रामदूती नाम की तुलसी।

पर्व-भाग—पुं० [ष०त०] हाथ की कलाई।

पर्व-भेद—पुं० [सं० ब०स०] संधिभंग नामक रोग का एक भेद।

पर्व-मूल—पुं० [ष० त०] किसी पक्ष की चतुर्दशी और अमावस्या (अथवा पूर्णिमा) के संधिकाल का समय।

पर्व-मूला—स्त्री० [ब०स०+टाप्] सफेद दूब।

पर्व-योनि—पुं० [ब० स०] ऐसी वनस्पति जिसमें जगह जगह पर्व अर्थात् गाँठें या पोर हों। जैसे— ऊख, बांस आदि।

पर्वर—प्रत्य० [फा०] पालन करनेवाला। परवर।

पुं०=परवल (पौधा और उसका फल)।

पर्वाना—पुं० [फा० पर्वानः] परवाना। (दे०)

पर्वानगी—स्त्री० [फा०] आज्ञा। अनुमति।

पर्वरुट (ह्)—पुं० [सं० पर्वन्√ रुह् (उत्पत्ति)+क्विप्] अनार।

पर्वरिश—स्त्री०=परवरिश।

पर्वरीण—पुं० [सं० =पर्परीण, पृषो० सिद्धि०] १. पर्व। २. मृत शरीर। लाश। ३. अभिमान। घमंड।

पर्व-वल्ली—स्त्री० [मध्य०स०] एक तरह की दूब। माला दूर्वा।

पर्व-संधि—पुं० [ष० त०], १. पूर्णिमा (या अमावास्या) और प्रतिपदा का संधिकाल। २. चंद्रमा अथवा सूर्य के ग्रहण का समय। ३. घुटनों का जोड़। ४. दो अवस्थाओं के बीच में पड़नेवाला समय या स्थान।

पर्वा—स्त्री०= परवाह।

स्त्री०=प्रतिपदा।

पर्वानगी—स्त्री०=परवानगी।

पर्वाना—पुं०=परवाना।

पर्वावधि—स्त्री० [सं० पर्वन्-अवधि, ष० त०] गाँठ। जोड़।

पर्वास्फोट—पुं० [सं०पर्वन्-आस्फोट, ष० त०] १. उँगलियाँ चटकाने की क्रिया या भाव। २. उँगलिया चटकाने पर होनेवाला शब्द।

पर्वाह—पुं० [पर्वन्-अहन्, ष० त०, टच्] वह दिन जिसमें उत्सव मनाया जाय। पर्व का दिन।

स्त्री० [फा० पर्वा] परवाह। (दे०)

पर्विणी—स्त्री० [सं०] १. छोटा और कम महत्त्वपूर्ण पर्व। २. पर्व का समय।

पर्वित—पुं० [सं०√पर्व् (पूर्ति)+क्त] एक प्रकार की मछली।

पर्वेश—पुं० [सं० पर्वन्-ईश, ष० त०] फलित ज्योतिष में ब्रह्मा, इंद्र, चंद्र, कुबेर, वरुण अग्नि और यम देवता जो ग्रहण के अधिपति माने जाते हैं। इन सभी का भोगकाल छः छः महीने का होता है।

पर्श—पुं० [सं०] एक प्राचीन योद्धा जाति जिसके वंशज अफगानिस्तान के एक प्रदेश में रहते थे।

†पुं०=स्पर्श।

पर्शनीय—वि० [सं० स्पर्शनीय] स्पर्श किये जाने के योग्य। स्पृश्य।

पर्शु—पुं० [सं०√स्पृश् (छूना)+शुन्—पृ, आदेश] १. आयुध। अस्त्र। २. परशु। फरसा। ३. पसली।

पर्शुका—स्त्री० [सं० पर्शु√कै (चमकना)+क+टाप्] पसली।

पर्शु-पाणी—पुं० [ब० स०] १. गणेश। २. परशुराम।

पर्शुराम—पुं० [मध्य० स०] परशुराम।

पर्शु-स्थान—पुं० [ष० त०] अफगानिस्तान का एक प्रदेश जिसमें पर्शु जाति के लोग रहते थे।

पश्वध—पुं० [सं०=परश्वध, पृषो० सिद्धि] कुठार।

पर्षद्—स्त्री०=परिषद्।

पर्षद्वल—पुं० [सं० पर्षद्+वलच्] परिषद् का सदस्य।

पर्हेज—पुं०=परहेज।

पर्हेजगार—वि०=परहेजगार।

पलंकट—वि० [सं० पल√कट् (छिपाना)+खच्, मुम्] डरपोक। भीरु।

पलंकर—पुं० [सं० पल√कृ (करना)+खच्, मुम्,] पित्त।

पलंकष—पुं० [सं० पल√कष् (मारना)+खच्, मुम्] १. गुग्गुल। गूगल। २. राक्षस। ३. पलाश।

पलंकषा—स्त्री० [सं० पलंकष+टाप्]=पलंकषी।

पलंकषी—स्त्री० [सं० पलंकष+ङीष्] १. गोखरू। रास्ना। २. टेसू। पलास। ३. गुग्गुल। ४. लाख। ५. गोरखमुंडी।

पलंका—स्त्री० [हिं० पर+लंका] लंका से भी और आगे का अर्थात् बहुत दूर का स्थान। अति दूरवर्ती देश। जैसे—लंका छोड़ पलंका जाय। (कहा०)

पलंग—पुं० [सं० पल्यंक से फा०] [स्त्री० अल्पा० पलंगड़ी] एक तरह की बड़ी तथा मजबूत चारपाई जो प्रायः निवार से बुनी होती है।

क्रि० प्र०—बिछाना।

मुहा०—(स्त्री का) **पलंग को लात मार खड़ा होना**=छठी, बरही आदि के उपरांत सौरी से किसी स्त्री का भली-चंगी बाहर आना। सौरी के दिन पूरे करके बाहर निकलना। (बोल-चाल) **(व्यक्ति का) पलंग को लात मारकर खड़ा होना**=बहुत बड़ी बीमारी झेलकर अच्छा होना। कड़ी बीमारी से उठना। **पलंग तोड़ना**=बिना कोई काम किये यों ही पड़े या सोये रहना। निठल्ला रहना। **पलंग लगाना**=किसी के सोने के लिए पलंग पर बिछौना बिछाना। बिस्तर ठीक करना।

पलंग-कस—पुं० [हिं० पलंग+कसना] एक प्रकार की ओषधि जिसे खाने से स्त्रियों की संभोग शक्ति का बढ़ना माना जाता है। (पलंगतोड़ के जोड़पर)

पलंगड़ी—स्त्री० [हिं० पलंग+ड़ी (प्रत्य०)] छोटा पलंग।

पलंग-तोड़—वि० [हिं०] १. वह जो प्रायः पलंग पर पड़े-पड़े समय बिताता हो अर्थात् आलसी तथा निकम्मा। २. एक प्रकार का औषध जिसे खाने से पुरुष की संभोग शक्ति का बढ़ना माना जाता है। (पलंग-कस के जोड़पर)

पलंग-दंत—पुं० [फा० पलंग=चीता+हिं० दांत] जिसके दांत चीते के दांतों की तरह कुछ कुछ टेढ़े हों।

पलंगपोश—पुं० [हिं० पलंग+का० पोश] पलंग पर बिछाई जानेवाली चादर।

पलंगरी†—स्त्री०=पलंगड़ी।

पलंगिया—स्त्री० [हिं० पलंग+इया (प्रत्य०)] छोटा पलंग। पलंगड़ी।

पलंजी—स्त्री० [देश०] एक तरह की घास।

पलंडी—स्त्री० [देश०] मल्लाहों का वह बाँस जिससे वे पाल खड़ा करते हैं।

पल—पुं० [सं०√पल् (गति, रक्षा)+अच्] १. समय का एक बहुत प्राचीन विभाग जो ६० विपल अर्थात् २४ सेकेंड के बराबर होता है। घड़ी या दंड का ६० वाँ भाग।

पद—**पल के पल में**=बहुत थोड़े समय में। क्षण भर में। तुरंत।

२. एक प्रकार की पुरानी तौल जो ४ कर्ष के बराबर होती थी। ३. चलने की क्रिया। गति। ४. धोखेबाजी। प्रतारणा। ५. तराजू। तुला। ६. गोश्त। मांस। ७. धान का पयाल। ८. मूर्ख व्यक्ति। ९. लाश। शव।

†पुं० [सं० पलक] पलक। दृगंचल।

मुहा०—**पल मारते या पल भर में**=बहुत ही थोड़े समय में। तुरंत। जैसे—पल मारते वह अदृश्य हो गया।

पलई†—स्त्री० [सं० पल्लव] १. पेड़ की पतली और नरम डाली। २. पेड़ का ऊपरी सिरा।

†स्त्री० [हिं० पसली] बच्चों को होनेवाला एक रोग जिसमें उनकी पसलियाँ जोर जोर से फड़कने या ऊपर-नीचे होने लगती हैं।

पलक—स्त्री० [फा०] १. आँख के ऊपर का वह पतला आवरण जिसके अगले भाग में बालों की पर्त या बरौनी होती है और जिसके गिरने से आँख बंद होती और उठने से आँख खुलती हैं।

क्रि० प्र०—उठना।—गिरना।

मुहा०—**पलक झपकना**=पलक का क्षण भर के लिए या एक बार नीचे की ओर गिरना। **पलक (या पलकों) पर पानी फिरना**=आँखों में जल भर आना। उदा०—रोषिहि रोष भरे दृग तरै फिरै पलक भर पानी।—सूर। **पलक पसीजना**=(क) आँखों में आँसू आना। (ख) किसी के प्रति करुणा या दया उत्पन्न होना। **पलक भाँजना**=(क) पलक गिराना या हिलाना। (ख) पलकें हिलाकर इशारा या संकेत करना। **पलक मारना**=(क) पलक झपकाना या गिराना। (ख) पलक हिलाकर इशारा या संकेत करना। **पलक लगना**=हलकी-सी नींद आना या निद्रा का आरंभ होना। झपकी आना। जैसे—दो दिन से रोगी की पलक नहीं लगी है। **पलक से पलक न लगना**=नाम को भी कुछ नींद न आना। **पलक से पलक न लगाना**=देखने के लिए टकटकी लगाना या आँख बंद न होने देना। **(किसी के रास्ते में या किसी के लिए) पलकें बिछाना**=किसी का अत्यंत आदर और प्रेम से स्वागत तथा सत्कार

करना। **पलकें मुंदना**=मृत्यु होना। मरना। **पलकों से जमीन झाड़ना या तिनके चुनना**=(क) अत्यंत श्रद्धा तथा भक्ति से किसी की सेवा करना। (ख) किसी को संतुष्ट और सुखी करने के लिए पूर्ण मनोयोग से प्रयत्न करना। जैसे—मैं आप के लिए पलकों से तिनके चुनूंगा। **विशेष**—इस मुहावरे का मुख्य आशय यह है कि चलने-फिरने, उठने-बैठने की जगह या रास्ते में कुछ भी कष्ट न होने पावे।

पद—पलक झपकते या मारते=अत्यंत अल्प समय में। निमेष मात्र में। जैसे—पलक झपकते ही कुछ दूसरा दृश्य दिखाई पड़ा।

पुं० [हिं० पल+एक] १. एक ही पल या क्षण भर का समय। उदा०—कोटि करम फिरे पलक में, जो रंचक आये नाँव।—कबीर।

पलक-दरिया—वि० [हिं० पलक+दरिया] बहुत बड़ा दानी। अति उदार।

पलक-दरियाव—वि० =पलक-दरिया।

पलकनेवाज†—वि० [हिं० पलक+फा० निवाज] क्षण भर में निहाल कर देनेवाला। बहुत बड़ा दानी। पलक-दरिया।

पलक-पीटा—पुं० [हिं० पलक+पीटना] १. बरौनियां झड़ने का एक रोग। २. वह जिसे उक्त रोग हो।

पलकर्ण—पुं० [सं०] धूपघड़ी के शंकु की उस समय की छाया की लंबाई जब मेष संक्रांति के मध्याह्नकाल में सूर्य ठीक विषुवत् रेखा पर होता है।

पलका†—पुं० [स्त्री० अल्पा० पलकी]=पलंग।

पलकिया—स्त्री० [हिं० पलकी] १. पालकी। २. हाथी पर रखने का एक प्रकार का छोटा हौदा। उदा०—पलकिया में बहुत मुलायम गद्दी तकिए लगा दिए गए हैं और हाथी बहुत धीमे चलाया जायगा। —वृंदावनलाल वर्मा।

पलक्या—स्त्री० [सं० पलक+यत्+टाप्] पालक।

पलक्ष—वि० [सं०=वलक्ष, पृषो० सिद्धि] श्वेत। सफेद। पुं० सफेद रंग।

पल-क्षार—पुं० [ष० त०] रक्त। खून। लहू।

पलखन—पुं० [सं० पलक्ष] पाकर का पेड़।

पलगंड—पुं० [सं० पल√गण्ड् (लीपना)+अण्] कच्ची दीवार में मिट्टी का लेप करनेवाला लेपक। मजदूर।

पलटन—स्त्री० [अं० प्लैटून] १. सैनिकों का बहुत बड़ा ऐसा दस्ता जिसका नायक लेफ्टीनेंट होता है। २. किसी प्रकार के प्राणियों का बहुत बड़ा झुंड। जैसे—चींटियों, बंदरों या बच्चों की पलटन।

† स्त्री० [हिं० पलटना] पलटने की क्रिया या भाव।

पलटना—अ० [सं० प्रलोटन] १. ऐसी स्थिति में आना या होना कि ऊपरी अंश या तल नीचे हो जाय और निचला अंश या तल ऊपर हो जाय। उलटा या औंधा होना। २. दशा, परिस्थिति आदि में होनेवाला इस प्रकार का बहुत बड़ा परिवर्तन कि उसका प्रवाह, रुख या रूप बिलकुल उलट जाय। अच्छी से बुरी या बुरी से अच्छी स्थिति को प्राप्त होना। ३. अपेक्षाकृत अधिक अवनत स्थिति,को प्राप्त होना। ४. राज्य की सत्ता का एक के हाथ से निकलकर दूसरे के हाथ में जाना। जैसे—शासन पलटना। ५. पीछे या विपरीत दिशा की ओर जाना, घूमना या मुड़ना। ६. जहाँ से कोई चला हो, उसका उसी स्थान की ओर लौटना। वापस आना। ७. कही हुई या मानी हुई बातें मानने से पीछे हटना। मुकरना। जैसे—उन्हें पलटते देर नहीं लगती।

संयो० क्रि०—जाना।

स० १. उलटा या औंधा करना। २. आकार, रूप, दशा, स्थिति आदि को प्रयत्नपूर्वक बदल देना। बदलना। ३. अवनत को उन्नत या उन्नत को अवनत करना। ४. किसी को लौटने में प्रवृत्त करना। फेरना। ५. अदल-बदल करना।

विशेष—यह उलटना के साथ उसका अनुकरण-वाचक रूप बनकर भी प्रयुक्त होता है। जैसे—उलटना-पलटना।

पलटनिया—वि० [हिं० पलटन] पलटन-संबंधी।

पुं० सैनिक।

पलटा—पुं० [हिं० पलटना] १. पलटने की क्रिया या भाव। २. चक्कर के रूप में अथवा यों ही उलटकर पीछे की ओर आने अथवा किसी ओर घूमने या प्रवृत्त होने की क्रिया या भाव।

मुहा०—पलटा खाना=(क) पीछे अथवा किसी और दिशा में प्रवृत्त होना या मुड़ना। जैसे—भागते हुए चीते ने पलटा खाया और वह शिकारी पर झपटा। (ख) एक दशा से दूसरी, मुख्यतः अच्छी दशा की ओर प्रवृत्त होना। जैसे—दस बरस बाद उसके भाग्य ने फिर पलटा खाया और उसने व्यापार में लाखों रुपये कमाये। **पलटा देना**=(क) उलटना। (ख) किसी दूसरी दशा या दिशा में प्रवृत्त करना या ले जाना। ३. किसी काम या बात के बदले किया जाने या होनेवाला काम या बात। बदला। जैसे—उसे उसकी करनी का पलटा मिल गया। ४. संगीत में वह स्थिति जिसमें बड़ी और लंबी तानें लेते समय ऊँचे स्वरों से पलटकर नीचे स्वरों पर आते हैं। जैसे—गवैये ने ऐसी-ऐसी तानें पलटीं कि सब लोग प्रसन्न हो गये।

क्रि० प्र०—लेना।

५. लोहे या पीतल की बड़ी खुरचनी जिसका फल चौकोर न होकर गोलाकार होता है। ६. नाव की वह पटरी जिस पर उसे खेनेवाला मल्लाह बैठता है। ७. कुश्ती का दाँव या पेच।

पलटाना†—स० [हिं० पलटना] १. पलटने में प्रवृत्त करना। २. लौटाना। ३. बदलना। विशेष दे० 'पलटना' स०।

पलटाव—पुं० [हिं० पलटा] पलटे जाने की क्रिया या भाव।

पलटावना—स० [हिं० पलटना का प्रे०] पलटने का काम किसी दूसरे से कराना।

पलटी†—स्त्री०=पलटा।

पलटे—अव्य० [हिं० पलटा] बदले में। एवज में। प्रतिफल स्वरूप।

पलड़ा—पुं० [सं० पटल] १. तराजू के दोनों लटकते हुए भागों में से एक। २. शक्ति, समर्थता आदि की दृष्टि से दो पक्षों, दलों आदि में से कोई एक। जैसे—समाज-वादियों की अपेक्षा कांग्रेसियों का पलड़ा भारी है।

मुहा०—(किसी का) पलड़ा भारी होना=अपने विरोधी की अपेक्षा शक्ति का संतुलन अधिक होना।

† पुं०=पल्ला (धोती आदि का आँचल)।

पलया—पुं० [हिं० पलटना] १. कलाबाजी, विशेषतः पानी में कलैया मारने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—मारना।

२. दे० 'पलथी'।

पलथी—स्त्री० [सं० पर्यस्त, प्रा० पल्लत्थ] दाहिने पैर का पंजा बाएँ पट्ठे के नीचे और बाएँ पैर का पंजा दाहिने पट्ठे के नीचे दबाकर बैठने का एक आसन।

क्रि० प्र०—मारना।—लगाना।

पलद—वि० [सं० पल√दा (देना)+क] जिसके सेवन से मांस बढ़े।

पलना—अ० [हिं० पालना] १. विशिष्ट परिस्थितियों में रहकर बड़े होना। जैसे—प्रकृति की गोद में पलना। २. खा-पीकर खूब हृष्ट पुष्ट होना। ३. कर्त्तव्य, धर्म आदि के निर्वाह के रूप में पूरा उतरना। पालित होना। उदा०—पर भूलो तुम निज धर्म भले, मुझसे मेरा अधिकार पले।—मैथलीशरण।

†स०=देना। (दलाल)

†पुं०=पालना।

पलनाना—स० [हिं० पलान=जीन,+ना (प्रत्य०)]=पलानना।

पल-प्रिय—वि० [ब० स०] मांस खाकर प्रसन्न होनेवाला। जिसे मांस अच्छा लगता हो।

पुं० डोम कौआ। द्रोण काक।

पलभक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० पल√भक्ष् (खाना)+णिनि] [स्त्री० पलभक्षिणी] मांसाहारी। मांस-भक्षी।

पल-भरता—स्त्री० [हिं० पल+भर+ता (प्रत्य०)] पल भर या बहुत थोड़ी देर तक अस्तित्व बने रहने या होने की अवस्था या भाव। क्षण-भंगुरता।

पलभा—स्त्री० [ब० स०] धूप-घड़ी के शंकु की उस समय की छाया की चौड़ाई जब मेष संक्रांति के मध्याह्न में सूर्य ठीक विषुवत रेखा पर होता है, पलविभा। विषुवत् प्रभा।

पलरा†—पुं०=पलड़ा।

पलल—वि० [सं०√पल् (गति)+कलच्] बहुत मुलायम। पिलपिला।

पुं० १. मांस। गोश्त। २. शव। लाश। ३. राक्षस। ४. पत्थर। ५. बल। शक्ति। ६. दूध। ७. कीचड़ ८. तिल का चूर्ण। ९. वह मीठा पकवान या मिठाई जो तिल के चूर्ण से बनी हो। १०. मल। गन्दगी। ११. सेवार। शैवाल।

पलल-ज्वर—पुं० [ष० त०] पित्त (धातु)।

पलल-प्रिय—वि० [ब० स०] जिसे मांस खाना अच्छा लगता हो।

पुं० १. राक्षस। २. डोम कौआ। द्रोण काक।

पललाशय—पुं० [सं० पलल-आ√शी (सोना)+अच्] गलगंड या घेघा नामक रोग।

पलव—पुं० [सं०√पल्+अच्, पल√वा (हिंसा)+क] १. मछलियाँ फँसाने का एक तरह का बाँस की खपाचियों का बना हुआ झाबा। २. मछलियाँ पकड़ने का जाल।

पलवल†—स्त्री० [?] १. पारस्परिक आत्मीयता या घनिष्ठता। २. सामंजस्य।

मुहा०—**पलवल मिलाना**=किसी प्रकार की संगति या सामंजस्य स्थापित करना।

†पुं०=परवल।

पलवा†—पुं० [सं० पल्लव] १. ऊख के पौधे की ऊपरी कुछ पोरें जो प्रायः कम मीठी या फीकी होती हैं। अगौरा। कौंचा। २. पंजाब के कुछ प्रदेशों में होनेवाली एक घास जिसे भैंसे चाव से खाती हैं। ३. अंजलि। चुल्लू।

पलवान—पुं०=पलवा (घास)।

पलवाना—स० [हिं० पालना] १. किसी को पालने में प्रवृत्त करना। २. किसी से पालन कराना। पालन करने के लिए प्रवृत्त करना।

पलवार—पुं० [हिं० पल्लव] कुछ विशिष्ट जातियों के ऊख के गंडों में अँखुएँ निकलने पर उन्हें बबूल के काँटों, अरहर के डंठलों आदि से ढकने की एक रीति।

पुं० [हिं० पाल+वार (प्रत्य०)] पाल आदि की सहायता से चलनेवाली एक प्रकार की बड़ी नाव जिस पर माल लादा जाता है। पटैला।

पलवारी—पुं० [हिं० पलवार] नाविक। मल्लाह।

पलवाल—वि० [सं० पल=मांस+वाल (प्रत्य०)] १. मांस-भक्षी। २. हृष्ट-पुष्ट।

पलवैया†—वि० [हिं० पालन+वैया (प्रत्य०)] पालन-पोषण करनेवाला।

वि० [हिं० पलवाना] पालन-पोषण करनेवाला।

पलस्तर—पुं० [सं० प्लास्टर] १. मजबूती तथा सुरक्षा के लिए दीवारों, छतों आदि पर किया जानेवाला बरी, बालू, सीमेंट अथवा मिट्टी का मोटा लेप।

मुहा०—**(किसी का) पलस्तर ढीला होना या बिगड़ना**=कष्ट, रोग आदि के कारण बहुत-कुछ जर्जर या शिथिल होना।

२. किसी चीज के ऊपर लगाया जानेवाला कोई मोटा लेप। जैसे—शरीर के रुग्ण अंग पर लगाया जानेवाला औषध या पलस्तर।

पलस्तरकारी—स्त्री० [हिं० पलस्तर+फा० कारी] १. दीवारों, छतों आदि पर पलस्तर करने की क्रिया या भाव।

पलहना*—अ०=पलुहना (पल्लवित होना)।

स० पल्लवित करना।

पलहा*—पुं० [सं० पल्लव] नया हरा पत्ता। कोंपल।

पलाँग—स्त्री०=फलाँग (छलाँग)।

पलांग—पुं० [सं० पल-अंग, ब० स०] सूँस। शिशुमार।

पलांडु—पुं० [सं० पल-अण्ड, ष० त०, पलाण्ड+क्विप्+कु] प्याज।

पला—स्त्री० [सं० पल] पल। निमिष।

†पुं० [हिं० 'पली' का पुं०] बड़ी पली।

†पुं०=पल्ला।

पलाग्नि—पुं० [सं० पल-अग्नि, ष० त०] पित्त।

पलाण—पुं०=पलान।

पलातक—वि० [सं० पलायन] भगोड़ा।

पुं० १. वह किसान जो अपना खेत छोड़कर भाग गया हो। २. वह जो अपना उत्तरदायित्व, कार्य, पद आदि छोड़कर भाग गया हो।

पलाद, पलादन—पुं० [सं० पल√अद् (खाना)+अण्] [सं० पल-अदन, ब० स०] राक्षस।

पलान—पुं० [फा० पालान] १. सवारी करने से पहले घोड़े, टट्टू आदि की पीठ पर डाला जानेवाला टाट या कोई और मोटा कपड़ा जिसे रस्सी आदि से कस दिया जाता है। २. काठी। जीन।

†पुं०=पलान।

पलानना—स०[हिं० पलान+ना (प्रत्य०)] १. घोड़े आदि पर पलान कसना या बाँधना। २. किसी पर चढ़ाई या धावा करने की तैयारी करना।

पलाना—अ०[सं० पलायन] पलायन करना। भागना।

स० [हिं० पलान] घोड़े की पीठ पर काठी का पलान रखना।

पलानि*—स्त्री० =पलान।

पलानी—स्त्री०[हिं० पलान] १. पान के आकार का पैर के पंजों में पहनने का एक गहना। २. छप्पर।

स्त्री०=पलाव।

पलान्न—पुं० [सं० पल-अन्न, मध्य० स०] वह पुलाव जिसमें मांस की बोटियाँ मिली हों।

पलाप—पुं० [सं० पल√ आप् (प्राप्ति)+घञ्] हाथी का गंडस्थल।

†पुं० दे० 'पगहा'।

पलायक—पुं०[सं० परा√अय् (गति)+ण्वुल्—अक, लत्व] १. वह जो पकड़े जाने या दंडित होने के भय से भागकर कहीं चला गया या छिप गया हो। २. भागा हुआ वह व्यक्ति जिसे शासन पकड़ना चाहता हो। भगोड़ा। (एब्सकांडर) ३. वह जो वाद-विवाद, तर्क-वितर्क में बराबर पीछे हट जाता हो।

पलायन—पुं०[सं० परा√अय्+ल्युट्—अन, लत्व] १. भागने की क्रिया या भाव। भागना। २. आज-कल वैज्ञानिक क्षेत्रों में, यह तत्त्व कि सृष्टि का प्रत्येक प्राणी और प्रत्येक वनस्पति अपने वर्तमान रूप से असंतुष्ट होकर प्राकृतिक रूप से अथवा स्वभावतः किसी न किसी प्रकार की उत्क्रान्ति या उन्नति अथवा विकास की ओर प्रवृत्त होती है। दार्शनिक दृष्टि से इसे सब प्रकार के बन्धनों और सीमाओं से मुक्त होकर अनंत और असीम ब्रह्म की ओर अग्रसर होने की प्रवृत्ति कह सकते हैं। कला, साहित्य आदि के क्षेत्रों में प्राचीन के प्रति असंतोष और नवीन के प्रति उत्साह या उमंग की भावना इसी प्रवृत्ति के फलस्वरूप होती है।

पलायनवाद—पुं० [ष०त०] आजकल का यह वाद या सिद्धांत कि संसार की सभी चीजें और बातें अपने प्रस्तुत रूप और स्थिति से विरक्त होकर किसी न किसी प्रकार की नवीनता और विशिष्टता की ओर प्रवृत्त होती रहती हैं। (एस्केपइज़्म)

विशेष—इस वाद का मुख्य आशय यह है कि जो कुछ है, उससे ऊबकर हर एक चीज उसको ओर बढ़ती है, जो नहीं है—पदास्ति से यन्नास्ति की ओर प्रवृत्त होती है। आधुनिक हिंदी क्षेत्र में छायावाद, निराशावाद आदि की जो प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं, वे भी इसी पलायनवाद के फल के रूप में मानी जाती हैं। कुछ लोग इसे एक प्रकार की विकृति भी मानते हैं।

पलायनवादी (दिन्)—वि०[सं०पलायनवाद+इनि]पलायनवाद-संबंधी।

पुं० वह जो पलायनवाद का सिद्धांत मानता हो या उसका अनुयायी हो।

पलायमान—वि०[सं०परा√अय्+शानच्, मुक्, लत्व] जो भाग रहा हो। भागता हुआ।

पलायित—भू० कृ० [सं० परा√ अय्+क्त, लत्व] जो कहीं भागकर चला गया हो।

पलायी (यिन्)—पुं०[सं० परा√अय्+णिनि, लत्व] पलायक। (दे०)

पलाल—पुं०[सं०√ पल् (रक्षा)+कालन] १. धान का सूखा डंठल। पयाल। २. किसी पौधे या वनस्पति का सूखा डंठल।

पलाल-दोहद—पुं०[ब०स०] आम का पेड़।

पलाला—स्त्री०[सं० पल+आ √ला (लेना)+क+टाप्] उन सात राक्षसियों में से एक जो छोटे बच्चों को रुग्ण कर देती है।

पलालि, पलाली—स्त्री० [सं० पल-आलि, ष० त०] गोश्त या मांस की ढेरी।

पलाव—पुं०[सं० पल√अव् (हिंसा)+अच्] वह काँटा जिससे मछलियाँ फँसाई जाती हैं। बंसी।

पलाश—पुं०[सं०√ पल् (गति)+क, पल√अश् (व्याप्ति)+अण्] १. ऊँचे स्थानों विशेषतः ऊसर तथा बालुका मिश्रित भूमि में होनेवाला एक पेड़ जिसमें बसंत काल में लाल रंग के फूल लगते हैं। इसके पत्तों की पत्तलें बनाई जाती हैं। ढाक। टेसू। २. उक्त वृक्ष का फूल। ३. पत्ता। पर्ण। ४. मगध देश का पुराना नाम। ५. हरा रंग। ६. कचूर। ७. शासन। ८. परिभाषण। ९. विदारी कंद।

वि०[सं० पल√अश् (खाना) +अण्]१. मांसाहारी। २. कठोर-हृदय। निर्दय।

पुं० १. राक्षस। २. एक प्रकार का मांसाहारी पक्षी।

पलाशक—पुं०[सं० पलाश+कन]१. पलास का पेड़ और फूल। ढाक। टेसू। २. कपूर। ३. लाख। लाक्षा।

पलाशगंधजा—स्त्री०[सं० पलाश-गंध, ष० त०, √जन् (उत्पन्न होना)+ड+टाप्] एक प्रकार का वंशलोचन।

पलाशच्छदन—पुं०[सं० ब०स०] तमालपत्र।

पलाशतरुज—पुं०[सं० पलाश-तरु, ष०त०, √जन्+ड]पलाश की कोंपल।

पलाशन—पुं०[सं० पल-अशन, ब०स०] मैना। सारिका।

पलाशपर्णी—स्त्री०[सं० पलाश-पर्ण, ब०स०, ङीप्] अश्वगंधा। असगंध।

पलाशांता—स्त्री०[सं० पलाश-अंत, ब० स०, टाप्] बनकचूर।

पलाशाख्य—पुं० [सं० पलाश-आख्या, ब०स०] नाड़ी हींग।

पलाशिका—स्त्री० [सं० पलाश+कन्+टाप्, इत्व] एक लता जो वृक्षों पर भी चढ़ती है।

पलाशी (शिन्)—वि० [सं० पलाश+इनि] १. मांस खानेवाला। मांसाहारी। २. पत्तों से युक्त। जिसमें पत्ते हों।

पुं०[पल√अश् (खाना)+णिनि] राक्षस।

पलाशी—स्त्री०[सं० पलाश+ङीष्] १. क्षीरिका। खिरनी। २. कचूर। ३. कचरी। ४. लाख।

पलाशीय—वि०[सं० पलाश+छ—ईय] (वृक्ष) जिसमें पत्ते लगे हों। पत्तोंवाला।

पलास—पुं०[सं० पलाश]१. एक प्रसिद्ध वृक्ष जिसमें गहरे लाल रंग के अर्द्धचंद्राकार फूल लगते हैं, इसके सूखे लचीले पत्तों के दोने, पत्तलें, बीड़ियाँ आदि और रेशों से रस्सियाँ, दरियाँ आदि बनाई जाती हैं। इसकी फलियाँ औषध के काम आती हैं। टेसू। ढाक। २. उक्त वृक्ष का फूल। ३. गिद्ध की जाति का एक मांसाहारी पक्षी।

पलासना—स०[देश०] नये बनाये हुए जूतों में फालतू बढ़े हुए चमड़े के अंशों को काटना और इस प्रकार जूता सुडौल बनाना। (मोची)

पलास पापड़ा—पुं० [हिं० पलास+पापड़ा] [स्त्री० अल्पा० पलास पपड़ी] पलास की फलियाँ जिसका उपयोग दवा के रूप में किया जाता है।

पलिंजी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की घास जिसके दाने पक्षी तथा निर्धन लोग खाते हैं।

पलिक—वि० [सं० पल+ठन्—इक] १. पल-संबंधी। २. जो तौल में एक पल हो।

पलिका—पुं०=पलका।
स्त्री० [?] एक तरह का ऊनी कालीन।
पुं०=पलका (पलंग)।

पलिक्नी—स्त्री० [सं० पलित+क्न, ङीप्] १. वह बूढ़ी स्त्री जिसके बाल पक गये हों। सफेद या पके हुए बालोंवाली स्त्री। २. ऐसी गौ जो पहली बार गाभिन हुई हो। बाल-गर्भिणी।

पलिघ—स्त्री० [सं०=परिघ, लत्व] १. काँच का घड़ा। करावा। २. उक्त के आधार पर, शीशे आदि की वह बोतल जो चमड़े, टीन आदि से मढ़ी रहती है तथा जिसमें यात्रा के समय लोग पानी, शराब आदि रखकर चलते हैं। (थर्मस) ३. घड़ा। मटका। ४. चहार-दीवारी। प्राचीर। ५. गाय बाँधने का घर। गो-गृह। ६. फाटक। ७. अर्गल। अगरी।

पलितंकरण—वि० [सं० पलित+च्वि, √ कृ (करना)+ख्युन्—अन, मुम्] (बाल आदि) पकाने या सफेद करनेवाला।

पलित—वि० [सं० √ पल्+क्त] [स्त्री० पलिता] १. वृद्ध। बुड्ढा। २. पका हुआ या सफेद (बाल)।
पुं० १. सिर के बालों का पकना या सफेद होना। २. असमय में बाल पकने का एक रोग। ३. गरमी। ताप। ४. छरीला नामक वनस्पति। ५. कीचड़। ६. गुग्गल। ७. मिर्च।

पलिती (तिन्)—पुं० [सं० पलित+इनि] पलित रोग से पीड़ित व्यक्ति। वह जिसके बाल पक गये हों।

पलिया—पुं० [देश०] एक रोग जिसमें पशुओं का गला सूज आता है।

पलिहर—पुं० [सं० परिहर=छोड़ देना] ऐसा खेत जिसमें भदई और अगहनी फसलों की बोआई न की गई हो और इस प्रकार उन्हें परती छोड़ दिया गया हो। ऐसे खेत में चैती फसल की बोआई होती है।

पली—स्त्री० [सं० पलिघ] १. तेल नापने की एक तरह की एक छोटी गहरी कटोरी।
मुहा०—पली पली जोड़ना=थोड़ा-थोड़ा करके संगृहीत करना।
२. उक्त में भरे हुए तेल या किसी और पदार्थ की मात्रा।

पलीत—वि०, पुं०=पलीद।

पलीता—पुं० [फा० फतीलः या फलीता (अशुद्ध किंतु उर्दू में प्रचलित रूप)] [स्त्री० अल्पा० पलीती] १. चिराग की बत्ती। २. बत्ती के आकार का बारूद लगा हुआ एक छोटा डोरा जो पटाखों आदि में लगा रहता है, और जिसके सुलगाये जाने पर पटाखा चलता है।
मुहा०—पलीता लगाना=ऐसी बात कहना जिससे लोग परस्पर झगड़ने या लड़ने-भिड़ने लग जायँ।
३. नारियल, वट आदि की छाल या रेशों को कूट और बटकर बनाई हुई वह बत्ती जिससे बंदूक या तोप के रंजक में आग लगाई जाती है।
क्रि० प्र०—दागना।—देना।—लगाना।
मुहा०—पलीता चटाना=तोप या बंदूक में उक्त प्रकार का पलीता रखकर जलाना।
४. बत्ती के आकार में लपेटा हुआ वह कागज़ जिस पर कोई मंत्र लिखा हो। यह प्रायः भूत-प्रेत आदि की बाधा दूर करने के लिए टोने के रूप में जलाया जाता है।
क्रि० प्र०—जलाना।

पलीती—स्त्री० [हिं० पलीता] छोटा पलीता।

पलीद—वि० [फा० मि० सं० प्रेत [भाव० पलीदी] १. अपवित्र। अशुचि। २. गंदा। ३. घृणास्पद। ४. दुष्ट। नीच। ५. बहुत ही घृणित आचरण तथा विचारवाला।
पुं० प्रेत। भूत।

पलुआ—पुं० [देश०] सन की जाति का एक पौधा।
†वि० [हिं० पालना] पाला हुआ।

पलुटाना—स० [हिं० पलोटना का प्रे०] (पैर) पलोटने का काम दूसरे से कराना। (पैर) दबवाना।

पलुवाँ†—पुं०, वि०=पलुआ।

पलुहना—अ० [सं० पल्लव] १. पौधे, वृक्ष आदि का पल्लवित होना। २. हरा होना। ३. व्यक्ति के संबंध में फूलना-फलना और उन्नति करना।

पलुहाना—स० [हिं० पलुहना] पल्लवित करना।
अ०= पलुहना।

पलूचना—स०=पलना।

पलेट—स्त्री० [अं० प्लेट] १. तश्तरी। रकाबी। २. कपड़े की वह लंबी पट्टी जो प्रायः जनाने और बच्चों के पहनने के कपड़ों में सुन्दरता लाने या कुछ विशिष्ट अंशों को कड़ा करने के लिए लगाई जाती है। पट्टी।

पलेटन—पुं० [अं० प्लेटेन] छापे के यंत्र में लोहे का वह चिपटा या वर्तुलाकार भाग जिसके दबाव से कागज आदि पर अक्षर छपते हैं।

पलेटना—स०=लपेटना।

पलेड़ना—स० [सं० प्रेरण] धक्का देना। ढकेलना।

पलेथन—पुं० [सं० परिस्तरण=लपेटना] १. वह सूखा आटा जिसे रोटी बेलने के समय पाटे या बेलन पर इसलिए बिखेरते हैं कि गीला आटा हाथ में या बेलन आदि में चिपकने न पावे। परथन।
क्रि० प्र०—लगाना।
मुहा०—(किसी का) पलेथन निकालना=(क) बहुत अधिक मार-पीटकर अधमरा करना। (ख) बहुत अधिक परेशान करना।
२. किसी बड़े व्यय या हानि के बाद तथा उसके फलस्वरूप होनेवाला अतिरिक्त व्यय। जैसे—तुम्हारे फेर में पचासों रुपयों की हानि तो हुई ही, आने-जाने में पाँच रुपया और पलेथन लग गया।
क्रि० प्र०—लगना।

पलेनर—पुं० [अं० प्लेन] काठ का वह छोटा चिपटा टुकड़ा जिससे दबाकर किसी चीज का ऊपरी स्तर चौरस या बराबर किया जाता है। जैसे—छापेखाने में सीसे के अक्षर बराबर करने या दीवार के पलस्तर पर फेरने का पलेनर।

पलेना—स० [?] बोने के पूर्व खेत सींचना।
†पुं०=पलेनर।

पलेव—पुं० [देश०] १. पलिहर खेत में चैती की फसल बोने से पहले की जानेवाली सिंचाई। २. जूस। रसा। शोरबा।

पलेंहड़ा—पुं० [हिं० पानी+आला=स्थान] १. पानी के घड़े आदि रखने का चबूतरा या चौखटा। २. पानी का घड़ा या मटका।

पलोटना—स० [सं० प्रलोठन] १. सेवा-भाव से किसी के पैर दबाना। २. सेवा करना।
अ०=लोटना।
अ०=पलटना।

पलोथन†—पुं०=पलेथन।

पलोवना†—स० [सं० प्रलोठन] १. सेवा-भाव से किसी के पैर दबाना। २. किसी को प्रसन्न करने के लिए मीठी-मीठी बातें कहना या तरह तरह के उपाय करना।

पलोसना—स० [सं० स्पर्श? हिं० परसना] १. धोना। २. अपना काम निकालने के लिए मीठी-मीठी बातें करके किसी को अपने अनुकूल करना।

पलौ*—पुं०=पल्लव।

पलौठा†—वि०=पहलौठा।

पल्टन—स्त्री०=पलटन।

पल्टा†—पुं०=पलटा।

पल्थी†—स्त्री०=पलथी।

पल्यंक—पुं०=पर्यंक (पलंग)।

पल्ययन—पुं० [सं० परि√ अय् (गति)+ल्युट्—अन, लत्व] घोड़े के पीठ पर बिछाई जानेवाली गद्दी। पलान।

पल्ल—पुं० [सं० पाद्√ला (लेना)+क, पद्—आदेश] १. वह आगार जिसमें अन्न संचित करके रखा जाता है। बखार। २. फल आदि पकाने के लिए विशिष्ट प्रकार से उन्हें रखने का ढंग या युक्ति। पाल।

पल्लड़—पुं० [हिं० पल्ला?] झुंड। समूह। उदा०—पूर्व की ओर से अंधकार के पल्लड़ के पल्लड़ नदी के स्वर्णरेखा पर मानों आवरण डालनेवाले थे। —वृंदावनलाल वर्मा।

पल्लव—पुं० [सं०√पल्+क्विप्,√लू+अप्, पल्—लव, कर्म० स०] १. पौधे, वृक्ष आदि का कोमल, छोटा तथा नया पत्ता पत्ते की तरह की आगे की ओर निकली हुई। चिपटी गोलाकार चीज। जैसे—कर पल्लव। ३. गले में पहनने का एक तरह का कोई आभूषण जो पत्ते के आकार का होता है। ४. एक तरह का कंगन। ५. नृत्य में हाथ का एक विशिष्ट प्रकार की मुद्रा। ६. बल। शक्ति। ७. चंचलता। ८. आल का रंग। ९. पहने जानेवाले वस्त्र का पल्ला। १०. विस्तार। ११. पल्लव देश। १२. पल्लव देश का निवासी। १३. दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध राजवंश जिसका राज्य किसी समय उड़ीसा से तुंगभद्रा नदी तक था। वराहमिहिर के अनुसार इस वंश के लोग पहिले दक्षिण-पश्चिम बसते थे। अशोक के समय में गुजरात में इनका राज्य था।

पल्लवक—पुं० [सं० पल्लव√कै (चमकना)+क] १. वेश्यागामी २. किसी वेश्या का प्रेमी। ३. अशोक (वृक्ष)। ४. नया, हरा पत्ता। पल्लव। ५. एक तरह की मछली।

पल्लव ग्राहिता—स्त्री० [सं० पल्लवग्राहिन्+तल्+टाप्] पल्लवग्राही होने की अवस्था या भाव।

पल्लवग्राही (हिन्)—पुं० [सं० पल्लव√ग्रह् (ग्रहण करना)+णिनि] वह जिसने किसी विषय को ऊपरी या बाहरी छोटी-मोटी बातों का ही सामान्य ज्ञान प्राप्त किया हो। किसी विषय को स्थूल रूप से जाननेवाला।

पल्लव-द्रु—पुं० [सं० मध्य० स०] अशोक (वृक्ष)।

पल्लवना—अ० [सं० पल्लव+हिं० ना (प्रत्य०)] १. पौधों, वृक्षों आदि में नये नये पत्ते निकलना। पल्लवित होना। २. व्यक्तियों का फलना-फूलना और उन्नत अवस्था को प्राप्त होना।
स० पल्लवित करना। पनपाना।

पल्लवाद—पुं० [सं० पल्लव√अद् (खाना)+अण्] हिरन।

पल्लवाधार—पुं० [सं० पल्लव-आधार, ष० त०] डाली या शाखा जिसमें पत्ते लगते हैं।

पल्लवास्त्र—पुं० [सं० पल्लव-अस्त्र, ब० स०] कामदेव।

पल्लविक—पुं०=पल्लवक।

पल्लवित—भू० कृ० [सं० पल्लव+इतच्] १. (पेड़ या पौधा) जो नये नये पत्तों से युक्त हुआ हो अथवा जिसमें नये-नये पत्ते निकल रहे हों। २. हरा-भरा तथा लहलहाता हुआ। ३. जिसे नई-नई चीजों, रचनाओं आदि से युक्त किया गया हो और इस प्रकार उसका अभिवर्द्धन तथा विकास हुआ हो। जैसे— लेखक अपनी रचनाओं से साहित्य को पल्लवित करते हैं। ३. लाख के रंग में रंगा हुआ। ४ जिसे रोमांच हुआ हो। रोमांचित।

पल्लवी (विन्)—वि० [सं० पल्लव+इनि] जिसमें पल्लव हों। पत्तों से युक्त।
पुं० पेड़। वक्ष।

पल्ला—पुं० [सं० पल्लव=कपड़े का छोर] १. ओढ़े या पहने हुए कपड़े का अंतिम विस्तार। आँचल। छोर। जैसे—धोती या चादर का पल्ला। **मुहा०—(किसी से) पल्ला छूटना**=पीछा छूटना। छुटकारा मिलना। जैसे—चलो, किसी तरह इस दुष्ट से पल्ला छूटा। **पल्ला छुड़ाना**=बचाव या रक्षा करने के लिए किसी की पकड़ या बंधन से निकलना। जैसे—तुम तो पल्ला छुड़ाकर भागे, पर पकड़ गए हम। **(किसी का) पल्ला पकड़ना**= रक्षा, सहायता, स्वार्थ-साधन आदि के लिए किसी को पकड़ना या उसके साथ होना। जैसे—उसने एक भले आदमी का पल्ला पकड़ लिया था; इसी लिए उसकी जिंदगी अच्छी तरह बीत गई। **(किसी का) पल्ला पकड़ना**= किसी को किसी की अधीनता, संरक्षण आदि में रखना। **(किसी के आगे या सामने) पल्ला पसारना या फैलाना**=अनुग्रह, भिक्षा आदि के रूप में किसी से प्रार्थी होना। **पल्ले पड़ना**=(प्रायः तुच्छ, हेय या भार स्वरूप वस्तु का) प्राप्त होना या मिलना। जैसे—यह बदनामी हमारे पल्ले पड़ी। **(लड़की या स्त्री का किसी के) पल्ले बंधना**=विवाह आदि के द्वारा किसी की पत्नी बनकर उसके साथ रहना या होना, किसी के जिम्मे होना। **(अपने) पल्ले बाँधना**=अधिकार संरक्षण आदि में लेना। **(किसी के) पल्ले बाँधना**=(क) किसी के अधिकार, संरक्षण आदि में देना। जिम्मे करना। सौंपना। (ख) लड़कियों, स्त्रियों आदि के संबंध में, किसी के साथ विवाह कर देना। **(बात को) पल्ले बाँधना**=बहुत अच्छी तरह से उसे स्मरण रखना तथा उसके अनुसार आचरण करना।

२. स्त्रियों की ओढ़नी चादर, साड़ी आदि का वह अंश जो उनके सिर पर रहता है और जिसे खींचकर वे घूँघट करती हैं।
मुहा०—(किसी से) पल्ला करना=पर-पुरुष के सामने स्त्री का घूँघट करना। पल्ला लेना= मुँह पर घूँघट करके और सिर झुकाकर किसी मृतक के शोक में रोना।
३. अनाज आदि बाँधने का कपड़ा या चादर। ४. अपेक्षया अधिक दूरी या विस्तार। जैसे—(क) कोसों के पल्ले तक मैदान ही मैदान दिखाई देता था। (ख) उनका मकान यहाँ से मील भर के पल्ले पर है।
पुं०[फा० पल्लः] १. तराजू की डंडी के दोनों सिरों पर रस्सियों, शृंखलाओं आदि की सहायता से लटकनेवाली दोनों आधारों या पात्रों में से हर एक जिसमें से एक पर बटखरे रखे जाते हैं और दूसरी पर तौली जानेवाली वस्तु। २. कुछ विशिष्ट वस्तुओं के दो विभिन्न परन्तु प्रायः समान आकार-प्रकारवाले अवयवों या खंडों में से हर एक। जैसे—(क) दरवाजे का पल्ला। (ख) कैंची का पल्ला। (ग) दुपलिया टोपी का पल्ला। ३. बराबर के दो प्रतियोगी या विरोधी पक्षों में से हर एक।
मुहा०—पल्ला दबना=पक्ष कमजोर या हलका पड़ना। पल्ला भारी होना= पक्ष प्रबल या बलवान होना।
४. ओर। तरफ। दिशा। ५. पहल। पार्श्व।
पुं० [सं० पल?] तीन मन का बोझ।
पद—पल्लेदार। (दे०)
†वि०=परला (उस ओर का)।

पल्लि—स्त्री०=पल्ली।

पल्लिका—स्त्री०[सं० पल्लि+कन्+टाप्] छोटा गाँव। छोटी बस्ती।

पल्लिवाह—पुं०[सं० पल्लि√वह् (ढोना)+अण्] लाल रंग की एक प्रकार की घास।

पल्ली—स्त्री० [सं० पल्लि+ङीष्] १. छोटा गाँव। पुरवा। खेड़ा। २. कुटी। झोंपड़ी। ३. छिपकली।

पल्लू—पुं० [हिं० पल्ला] १. आँचल। छोर। २. स्त्रियों का घूँघट। ३. चौड़ी गोट या पट्टी।

पल्ले—अव्य०[हिं० पल्ला] प्राप्ति, स्थिति आदि के विचार से अधिकार, वश या स्वत्व में। पास या हाथ में। जैसे—उसके पल्ले क्या रखा है! अर्थात् उसके पास कुछ भी नहीं है।
†पुं०=प्रलय।

पल्लेदार—वि०[हिं० पल्ला+फा० दार] १. जिसमें पल्ले लगे हुए हों। २. (आवाज या स्वर) जो अपेक्षाकृत अधिक ऊँचा, अधिक विस्तृत या अधिक जोरदार हो।
पद—पल्लेदार आवाज=ऐसी ऊँची आवाज जो दूर तक पहुँचती हो।
पुं०[हिं० पल्ला+फा० दार] [भाव० पल्लेदारी] १. वह जो गल्ले के बाजार में दूकानों पर अनाज तौलने का काम करता है। बया। २. अनाज ढोनेवाला मजदूर।

पल्लेदारी—स्त्री० [हिं० पल्लेदार+ई (प्रत्य०)] पल्लेदार का काम, पद, भाव या मजदूरी।

पल्लौ†—पुं० १. =पल्लव। २.=पल्ला।

पल्वल—पुं०[सं० √पल्+वल्] छोटा जलाशय।

पल्वलावास—पुं०[सं० पल्वल-आवास, ब० स०] कछुआ।

पल्हवना—अ०स०=पलुहना।

पवंग—पुं०[सं० प्लवंग] १. बंदर। २. हिरन। ३. घोड़ा। (डिं०)

पवँरि (री)—स्त्री०=पँवरी (ड्योढ़ी)।

पव—पुं० [सं०√ पू (पवित्र करना)+अप्] १. गोबर। २. वायु। हवा। ३. अनाज की भूसी अलग करना। अनाज ओसाना या बरसाना।
†पुं०=पौ।

पवई—स्त्री०[देश०] खाकी रंग की एक चिड़िया जिसका निचला भाग खैरे रंग का और चोंच पीली होती है।

पवन—पुं०[सं०√पू (पवित्र करना)+ युच्—अन] १. वायु। हवा। २. विशेषतः वायु की वह हलकी धारा जो पृथ्वी के प्राणियों के आस-पास रहकर कभी कुछ तेज और कभी कुछ धीमी चलती है और जिसका ज्ञान हमारी त्वगिंद्रिय को होता है। (विंड)
विशेष—हमारे यहाँ पुराणों में ४९ प्रकार के पवन कहे गये हैं। परन्तु लोक में पवन उसी अर्थ में प्रचलित है जो ऊपर बतलाया गया है।
३. हवा की सहायता से अनाज के दाने में से भूसा अलग करना। ओसाना। बरसाना। ४. श्वास। साँस।
मुहा०—पवन का भूसा होना=उसी प्रकार अदृश्य या नष्ट हो जाना जिस प्रकार हवा में भूसा उड़ जाता है। ५. प्राण-वायु। ६. जल। पानी। ७. कुम्हार का आँवा। ८. विष्णु। ९. पुराणानुसार उत्तम मनु के एक पुत्र का नाम। १०. रहस्य संप्रदाय में, प्राणायाम। उदा०—आसनु पवनु दूरि कर बवरे।—कबीर।

पवन-अस्त्र—पुं०=पवनास्त्र।

पवन-कुमार—पुं० [ष०त०] १. हनुमान। २. भीमसेन।

पवनचक्की—स्त्री०[सं० पवन+हिं० चक्की] पवन के वेग से चलनेवाली चक्की। (विंडमिल)
विशेष—ऐसी चक्की में ऊपर के ढाँचे में बड़ा सा पंखेदार चक्कर लगा रहता है। यह चक्कर हवा के जोर से घूमता है जिससे नीचे की चक्की का यंत्र चलने लगता है।

पवन-चक्र—पुं०[ष०त०] चक्कर खाती हुई चलनेवाली जोर की हवा। चक्रवात। बवंडर।

पवनज—वि०[सं० पवन√ जन्+ड] जो पवन से उत्पन्न हुआ हो। पुं०१. हनुमान। २. भीमसेन।

पवन-तनय—पुं०[ष०त०] १. हनुमान। २. भीमसेन।

पवन-नन्द—पुं०[ष० त०] पवन-पुत्र। (दे०)

पवन-नन्दन—पुं०[सं० ष०त०]=पवन-तनय।

पवन-परीक्षा—स्त्री० [ष०त०] १. असाढ़ शुक्ल पूर्णिमा को होनेवाली ज्योतिषियों की एक क्रिया जिसमें वायु की गति आदि की जाँच करके ऋतु-संबंधी विशेषतः वर्षा संबंधी भविष्य का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। (कुछ स्थानों में देहातों में इस दिन मेले लगते हैं।) २. वह क्रिया जिससे यह जाना जाता है कि वायु की गति किस दिशा की ओर है। हवा देखना।

पवन-पुत्र—पुं०[ष०त०] १. हनुमान। २. भीमसेन।

पवन-पूत—पुं०=पवन-पुत्र।

पवन-प्रचार—पुं०[सं०] एक प्रकार का यंत्र जो यह सूचित करता है कि वायु का प्रवाह किस दिशा में हो रहा है।

पवन-भट्ठी—स्त्री० [सं० पवन+हिं० भट्ठी] धातुएँ आदि गलाने की एक विशेष प्रकार की आधुनिक यांत्रिक भट्ठी जिसमें नीचे से हवा पहुँचाकर आँच तेज की जाती है। (विंड फर्नेस)

पवन-बाण—पुं०[मध्य०स०]वह बाण जिसके चलाये जाने पर पवन का वेग बहुत अधिक बढ़ जाता था। (पुराण)

पवन-वाहन—पुं०[ब०स०] अग्नि।

पवन-व्याधि—स्त्री०[ष०त०] वायु रोग।

पुं०[ब०स०] श्रीकृष्ण के सखा उद्धव।

पवन-संघात—पुं०[ष०त०] किसी विशिष्ट स्थान पर दो विभिन्न दिशाओं से पवनों का एक साथ आना तथा परस्पर टकराना जो पुराणानुसार अकाल, शत्रुओं के आक्रमण आदि अशुभ लक्षणों का सूचक माना गया है।

पवन-सुत—पुं०[ष०त०] १. हनुमान। २. भीमसेन।

पवना—पुं०[स्त्री० पवनी] पौना (झरना)।

पवनात्मज—पुं० [सं० पवन-आत्मज, ष०त०] १. हनुमान। २. भीमसेन। ३. अग्नि।

पवनाश—पुं०[सं० पवन√ अश् (खाना)+अण्] साँप।

पवनाशन—पुं०[सं० पवन-अशन, ब० स०] साँप।

पवनाशनाश—पुं०[सं० पवनाशन√ अश्+अण्] १. गरुड़। २. मोर।

पवनाशी(शिन्)—वि० [सं० पवन√अश्+णिनि] जो वायु पीकर जीता हो।

पुं० साँप।

पवनास्त्र—पुं० [सं० पवन-अस्त्र, मध्य०स०] एक प्राचीन अस्त्र जिसके द्वारा वायु का वेग तीव्रतम किया जाता था। (पुराण)

पवनी—स्त्री०[सं०√पू (पवित्र करना)+ल्युट्—अन, ङीप्] झाड़ू।

स्त्री०[हिं० पाना=प्राप्त करना] गाँव में रहनेवाली वह प्रजा या कुछ जातियाँ जो अपने निर्वाह के लिए क्षत्रियों ब्राह्मणों अथवा गाँव के दूसरे रहनेवालों से नियमित रूप से कुछ नेग, पारिश्रमिक, पुरस्कार आदि के रूप में अन्न-धन पाती हैं। जैसे—कुम्हार, चमार, नाऊ, बारी, धोबी आदि।

स्त्री० हिं० 'पौना' का स्त्री० अल्पा०।

पवनेष्ट—पुं० [सं० पवन-इष्ट, स० त०] बकायन।

पवनोंबुज—पुं० [सं० पवन-अंबुज उपमि० स०, पृषो० सिद्धि] फालसा।

पवमान—पुं० [सं०√पू+शानन्, मुक्—आगम्] १. पवन। वायु। हवा। २. गार्हपत्य अग्नि। ३. चंद्रमा। ४. अग्नि की पत्नी स्वाहा के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र का नाम। ५. एक प्रकार का स्तोत्र।

पवर—स्त्री०=पँवरी (ड्योढ़ी)।

पवरिया†—पुं०=पौरिया (१. द्वारपाल। २. मंगल-गीत गानेवाला याचक)।

पवरी—स्त्री०=पँवरी (ड्योढ़ी)।

पवर्ग—पुं० [सं० ष०त०] व्याकरण में प, फ, ब, भ और म इन पाँच अक्षरों या वर्णों की सामूहिक संज्ञा। ये सभी ओष्ठ्य तथा स्पर्श हैं, किन्तु प, फ अघोष और ब, भ, म घोष है तथा प, ब, म अल्पप्राण और फ, भ महाप्राण हैं।

पवाँड़ा†—पुं०=पँवाड़ा।

पवाँर—पुं०[देश०] पमार। चकवड़।

†पुं०=प्रमार।

पवाँरना—स०=पँवारना (फेंकना)।

पवाँरी—स्त्री[?] लोहा छेदने का लोहारों का एक औजार।

पवाई—स्त्री०[हिं० पाँव] १. जूतों की जोड़ी में से प्रत्येक जूता। २. चक्की के दोनों पाटों में से प्रत्येक पाट।

पवाका—स्त्री०[सं०√पू+आक—टाप्] चक्रवात। बवंडर।

पवाड़—पुं०[देश०] चकवँड़।

पवाड़ा—पुं० [मरा० पवाड़ (कीर्ति, महत्त्व), अथवा सं० प्रवाद?] १. मराठी भाषा का एक प्रसिद्ध लोक छंद जिसमें प्रायः किसी बहुत बड़े या वीर पुरुष की कीर्ति, गुण, पराक्रम आदि का प्रशंसात्मक वर्णन होता था। २. मध्य-युगीन राजस्थान में वह लोककाव्य जिसे परवर्ती चारणों ने विरुदावली शैली के समस्त तत्त्वों से युक्त करके प्रचलित किया था और जो प्रायः लोकगीत के रूप में गाया जाता था। ब्रज में इसी को 'पमारा' और मालवे में 'पँवारा' कहते हैं। ३. किसी काम या बात का ऐसा व्यर्थ विस्तार जिसमें झगड़े-झमेले की बहुत-सी बातें हों; और इसीलिए जिनसे सहज में जी ऊब जाय।

पवाना—स०[हिं० पाना का प्रे० रूप] १. प्राप्त करना। २. खिलाना।

पवार†—पुं०=परमार (राजपूतों की एक जाति)।

पवि—पुं०[सं०√पू+इ] १. वज्र। २. बाण अथवा बाण की नोक। ३. वाणी। ४. वाक्य। ५. अग्नि। ६. थूहर। सेहुँड़। ६. मार्ग। रास्ता। (डिं०)

पवित†—वि०[सं०] पवित्र।

पुं० मिर्च।

पविताई†—स्त्री०=पवित्रता।

पवित्तर†—वि०=पवित्र।

पवित्र—वि०[सं०√ पू +इत्र] [भाव० पवित्रता] १. (पदार्थ) जो धार्मिक उपचारों से इस प्रकार शुद्ध किया गया हो अथवा स्वतः अपने गुणों के कारण इतना अधिक शुद्ध माना जाता हो कि पूजा-पाठ, यज्ञ-होम आदि में काम में लाया या बरता जा सके। जैसे—पवित्र अग्नि, पवित्र जल। ३. (व्यक्ति) जो निश्छल, धार्मिक तथा सद्वृत्तिवाला होने के कारण पूज्य, मान्य तथा श्रद्धा का पात्र हो। जैसे—पवित्रात्मा। ३. (विचार) जो शुद्ध अंतःकरण से सोचा गया हो और जिसमें किसी प्रकार का मल या विकार न हो। ४. साफ। स्वच्छ। निर्मल। ५. दोष, पाप आदि से रहित।

पुं०१. वह वस्तु या साधन जिससे कोई चीज निर्दोष, निर्मल या स्वच्छ की जाय। २. कुश या कुशा जिससे घी, जल आदि छिड़ककर चीजें पवित्र की जाती हैं। ३. कुश का वह छल्ला जो तर्पण, श्रद्धा आदि के समय उँगलियों में पहना जाता है। पवित्री। पैंती। ४. यज्ञोपवीत। जनेऊ। ५. ताँबा। ६. मेह। वर्षा। ७. जल। पानी। ८. दूध। ९. घी। १०. अर्घ्य देने का पात्र। ११. अरघा। १२. मधु।

शहद। १३. विष्णु। १४. शिव। १५. कार्तिकेय। १६. तिल का पौधा। १७. पुत्र-जीवी नामक वृक्ष। १७. घर्षण। रगड़।

पवित्रक—पुं०[सं० पवित्र√कै+क] १. कुशा। २. दौना (पौधा)। ३. गूलर का पेड़। ४. पीपल। ५. क्षत्रियों का यज्ञोपवीत।

पवित्रता—स्त्री०[सं० पवित्र+तल्+टाप्] पवित्र होने की अवस्था या भाव।

पवित्र-धान्य—पुं०[कर्म०स०] जौ।

पवित्र-पाणि—वि०[ब०स०] जिसके हाथ में कुश हो।

पवित्रवति—स्त्री०[सं०] क्रौंच द्वीप में होनेवाली एक प्रकार की वनस्पति। (पुराण)

पवित्रा—स्त्री०[सं० पवित्र+टाप्]१. तुलसी। २. हल्दी। ३. पीपल। ४. श्रावण के शुक्ल पक्ष की एकादशी। ५. एक प्राचीन नदी। ६. रेशमी धागों से बने हुए मनकों की एक तरह की माला।

पवित्रात्मा (त्मन्)—वि०[सं० पवित्र-आत्मन्, ब० स०] जिसकी आत्मा पवित्र हो। शुद्ध तथा स्तुत्य आचरण और विचारवाला।

पवित्रारोपण—पुं० [सं० पवित्र-आरोपण, ष० त०] १. यज्ञोपवीत धारण करना। २. [ब० स०] श्रावण शुक्ला द्वादशी को भगवान श्रीकृष्ण को सोने, चाँदी, ताँबे या सूत आदि का यज्ञोपवीत पहनाने की एक रीति या उत्सव।

पवित्रारोहण—पुं०। पवित्रारोपण। (दे०)

पवित्राश—पुं०[सं० पवित्र√ अश् (व्याप्ति)+अण्] सन का बना हुआ डोरा, जो प्राचीन भारत में बहुत पवित्र माना जाता था।

पवित्रित—भू० कृ० [सं० पवित्र+णिच्+क्त] पवित्र या शुद्ध किया हुआ।

पवित्री—वि०[सं० पवित्र+ङीप्] पवित्र करने या बनानेवाला।
स्त्री० १. कुश का बना हुआ एक प्रकार का छल्ला जो कर्मकांड के समय अनामिका में पहना जाता है। पैंती। २. संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

पविद्ध—पुं०[सं०] एक प्राचीन ऋषि।

पवि-धर—वि०[सं० ष०त०] वज्र धारण करनेवाला।
पुं० इंद्र।

पवीनव—पुं०[सं०] अथर्ववेद के अनुसार एक प्रकार के असुर जो स्त्रियों का गर्भ गिरा देते हैं।

पवीर—पुं०[सं०]१. हल को फाल। २. शस्त्र। हथियार। ३. वज्र। ४. हथियार।

पवेरना—स० [हिं० पँवारना=फेंकना] [भाव० पवेरा] जोते हुए खेतों में बीज छिड़कना।

पवेरा—पुं० [हिं० पवेरना] खेतों में बीज छिड़कने की क्रिया, ढंग या भाव।

पव्य—पुं० [सं०√पू+यत्] यज्ञ-पात्र।

पशम—स्त्री० [फा० पश्म] १. ऊन, विशेषतः बढ़िया ऊन जिसके दुशाले, पशमीने आदि बनाये जाते हैं। २. पुरुष या स्त्री की मूत्रेंद्रिय पर के बाल।
मुहा०—पशम उखाड़ना=(क) झूठ-मूठ का काम करके व्यर्थ समय नष्ट करना। (व्यंग्य और हास्य) **पशम तक न उखड़ना**=(क) कुछ भी काम न हो सकना। (ख) बहुत प्रयत्न करने पर भी कोई कष्ट या हानि न पहुँचा सकना। **पशम पर मारना या समझना**=बिलकुल तुच्छ या हीन समझना।

३—५७

पशमीना—पुं० [फा० पश्मीनः] १. पशम। २. पशम का बना हुआ बहुत बढ़िया या मुलायम कपड़ा।

पशव्य—वि० [सं० पशु+यत्] १. पशु-संबंधी। पशुओं का। २. पशुओं की तरह का। जानवरों का-सा। पाशव।
पुं० पशुओं का झुंड।

पशु—पुं० [सं०√दृश् (देखना)+कु, पशादेश] [भाव० पशुता, पशुत्व] १. चार पैरों से चलनेवाला कोई दुमदार जंतु। जानवर। जंतु। जैसे—ऊँट, घोड़ा, बैल, हाथी, कुत्ता, बिल्ली, आदि। २. प्राणधारी जीव। जंतु। ३. वह जिसे कुछ भी ज्ञान या बुद्धि न हो, अथवा जिसमें सहृदयता का पूरा अभाव हो। ४. वह जिसका कोई धार्मिक संस्कार न हुआ हो। ५. परमात्मा। ६. ऐसा धार्मिक कृत्य जिसमें जानवर की बलि चढ़ाई जाती हो। ७. वह पशु जिसे बलि चढ़ाते हों। ८. अग्नि। ९. शिव के अनुचर या गण।

पशुकर्म (कर्मन्)—पुं० [ष० त०] १. यज्ञ आदि में पशुओं का होनेवाला बलिदान। २. मैथुन।

पशुका—स्त्री० [सं० पशु+कन्+टाप्] कोई छोटा पशु।

पशु-क्रिया—स्त्री० [ष० त०]=पशुकर्म।

पशु-गायत्री—स्त्री० [मध्य० स०] तंत्र की रीति से बलिदान करने के समय बलि पशु के कान में कहा जानेवाला एक प्रकार का मंत्र।

पशुचर—पुं० [सं० पशु√चर्+ट] वह स्थान जो पशुओं के चरने-चराने के लिए सुरक्षित हो। गोचर भूमि। (पास्चर)

पशु-चर्या—स्त्री० [ष० त०] १. पशुओं के समान विवेकहीन आचरण। जानवरों की-सी चाल या व्यवहार। २. मैथुन।

पशु-चिकित्सक—पुं० [सं०] वह जो रोगी पशु, पक्षियों आदि की चिकित्सा करता हो। (वेटेरिनरी सर्जन)

पशु-चिकित्सा—स्त्री० [सं०] चिकित्सा शास्त्र की वह शाखा जिसमें पशु-पक्षियों आदि के रोगों के निदान और चिकित्सा का विवेचन होता है। (वेटेरिनरी)

पशुजीवी (विन्)—वि० [सं० पशु√जीव् (जीना)+णिनि] १. पशुओं का मांस खाकर जीनेवाला। २. वह जो पशुओं का पालन करके उनसे प्राप्त होनेवाली वस्तुओं से अपनी जीविका चलाता हो।

पशुता—स्त्री० [सं० पशु+तल्+टाप्] १. पशु होने की अवस्था या भाव। २. पशुओं का-सा व्यवहार या स्वभाव। ३. वह गुण जिसके कारण किसी व्यक्ति की गिनती पशुओं में की जाती हो।

पशुत्व—पुं० [सं० पशु+त्व] पशुता। (दे०)

पशुदा—स्त्री० [सं० पशु√दा (देना)+क+टाप्] कार्तिकेय की अनुचरी एक मातृका देवी।

पशु-देवता—स्त्री० [मध्य० स०] वह देवता जिसके उद्देश्य से किसी पशु को बलि चढ़ाया जाय।

पशु-धन—पुं० [मयू० स०] वे पालतू पशु जो किसी व्यक्ति, समाज या राज्य के आर्थिक उत्पादन, सुरक्षा आदि में योग देते हों। (लिवस्टाक)

पशु-धर्म—पुं० [ष० त०] पशुओं का-सा आचरण या व्यवहार अर्थात् मनुष्यों के लिए निंद्य व्यवहार।

पशु-नाथ—पुं० [ष० त०] १. शिव। २. सिंह। शेर।

पशुनिरोधिका—स्त्री० [ष० त०] वह सरकारी या अर्द्ध सरकारी स्थान जहाँ पर लोगों के खुले तथा छूटे हुए पालतू पशु पकड़कर ले जाये जाते हैं। कांजीहाउस। (कैटिलपाउंड)

पशुप—वि० [सं० पशु√पा (रक्षा करना)+क] पशुओं का पालन करनेवाला या स्वामी।

पशुपतास्त्र—पुं० [सं० पाशुपतास्त्र] महादेव का शूलास्त्र।

पशु-पति—पुं० [ष० त०] १. पशुओं का स्वामी। २. जीवमात्र का स्वामी अर्थात् ईश्वर या परमात्मा। ३. महादेव। शिव। ४. अग्नि। ५. ओषधि। दवा।

पशु-पल्वल—पुं० [ब० स०] कैवर्तमुस्तक। केवटी माथा।

पशुपाल—वि० [सं० पशु√पाल् (पोषण)+णिच्+अण्] पशुओं को पालनेवाला।

पुं० १. अहीर। ग्वाला। २. ईशान कोण का एक प्राचीन देश।

पशु-पलाक—वि० [ष० त०] [स्त्री० पशुपालिका] पशुओं को पालनेवाला।

पशु-पालन—पुं० [ष० त०] जीविका-निर्वाह के लिए पशुओं को पालने की क्रिया या भाव। (एनिमल हस्बैंडरी)

पशु-पाश—पुं० [ष० त०] १. वह फंदा या रस्सी जिससे पशु विशेषतः यज्ञ-पशु बाँधा जाता था। २. शैवदर्शन के अनुसार चार प्रकार के वे बंधन जिनसे सब जीव बँधे रहते हैं।

पशुपाशक—पुं० [सं० पशुपाश √कै+क] एक प्रकार का रतिबंध। (काम-शास्त्र)

पशु-भाव—पुं० [ष० त०] १. पशुता। जानवरपन। २. तंत्र में, मंत्रों आदि के तीन प्रकार के साधन-भेदों में से एक।

पशु-यज्ञ—पुं० [मध्य० स०] ऐसा यज्ञ जिसमें पशु या पशुओं की बलि चढ़ाया जाय।

पशु-याग—पुं० [मध्य० स०] पशु-यज्ञ। (दे०)

पशु-रक्षण—पुं० [ष० त०] पशुपालन। (दे०)

पशु-रति—स्त्री० [सं०] १. पशुओं की तरह की जानेवाली वह रति जो विशुद्ध काम-वासना की तृप्ति के लिए की जाती हो। २. पशु-वर्ग के किसी प्राणी के साथ मनुष्य द्वारा की जानेवाली रति। जैसे—पुरुष पक्ष में, गौ या बकरी के साथ की जानेवाली रति; अथवा स्त्री पक्ष में, कुत्ते के साथ की जानेवाली रति।

पशु-राज—पुं० [ष० त०] पशुओं के स्वामी, सिंह। शेर।

पशुलंब—पुं० [सं०] एक देश का प्राचीन नाम।

पशु-हरीतकी—स्त्री० [ष० त०] अम्रातक फल। आमड़े का फल।

पशू—पुं०=पशु।

पश्च—वि० [सं० पश्चात्, पृषो० सिद्धि] [भाव० पश्चता] १. प्रस्तुत या वर्तमान से पहले का। पिछला। (बैक) जैसे—सामयिक पत्र का पश्च अंक। (बैक नम्बर) २. 'अग्र' का विपर्याय। जैसे—पश्चस्वर (बैक वावेल) आदि। ३. बाद का। परवर्त्ती। ४. पश्चिम का। पश्चिमी।

विशेष—'पश्च' और 'पश्चा' शब्द का प्रयोग वेद में ही होता है। लौकिक संस्कृत में इसका प्रयोग चिन्त्य है। फिर भी हिन्दी में इसके प्रयोग के चल पड़ने के कारण यहाँ इसके कुछ यौगिक शब्द रखे जा रहे हैं।

पश्च-गमन—पुं० [सं० स० त०] १. पीछे की ओर चलना या हटना। 'अग्र-गमन' का विपर्याय। (रिग्रेशन) २. अवनति, दुरवस्था, ह्रास आदि की ओर प्रवृत्त होना। 'पुरोगमन' का विपर्याय। (रिट्रोग्रेशन)

पश्च-गामी (मिन्)—वि० [सं० पश्च√गम् (जाना)+णिनि] १. पीछे की ओर चलता या हटता रहनेवाला। २. अवनति। दुरवस्था, ह्रास आदि की ओर प्रवृत्त रहनेवाला। 'पुरोगामी' का विपर्याय। (रिग्रेसिव)

पश्च-ज्ञान—पुं० [सं० ष० त०] विशिष्ट आत्मिक शक्ति की सहायता से इस जन्म या किसी पूर्व जन्म की ऐसी बीती हुई घटनाओं या बातों का होनेवाला ज्ञान जो कभी पहले जानी, देखी, पढ़ी या सुनी न हों। 'पूर्व-ज्ञान' का विपर्याय।

पश्च-दर्शन—पुं० [सं० स० त०] १. पीछे की ओर मुड़कर देखना। २. पिछली या बीती हुई बातें याद करके उन पर विचार करना। (टिट्रस्पेक्शन) ३. विशिष्ट आत्मिक शक्ति की सहायता से ऐसी पुरानी घटनाएँ, बातें, व्यक्तियों की आकृतियाँ आदि आँखों के सामने देखना जो कभी देखी न हों। 'पूर्व दर्शन' का विपर्याय। (रिट्रो-कॉग्निशन)

पश्चदर्शिक—वि० [सं०] १. जिसका संबंध पश्च-दर्शन से हो। पश्च-दर्शन का । २. जिसका परिणाम या प्रभाव पिछली या बीती हुई बातों पर भी पड़ता हो। पूर्व-व्यापित। (रिट्रास्पेक्टिव) जैसे—इस निर्णय का प्रभाव पश्च-दर्शिक होगा, अर्थात् पिछली या बीती हुई घटनाओं या बातों पर भी पड़ेगा।

पश्च-दर्शी (र्शिन्)—वि० [सं० पश्च √ दृश् (देखना)+णिनि] पश्च-दर्शन करनेवाला।

पश्च-परिणाम—पुं०=पश्च-प्रभाव।

पश्च-प्रभाव—पुं० [सं० मध्य० स०] किसी कार्य या वस्तु का वह परिणाम या प्रभाव जो कुछ समय बीतने पर दिखाई देता हो। (आफ्टरएफेक्ट)

पश्च-लेख—पुं० [सं०] कोई पत्र, लेख आदि लिखे जाने के उपरांत बाद में याद आने पर उसके अंत में बढ़ाकर लिखी जानेवाली कोई और बात या लेखांश। (पोस्टस्क्रिप्ट)

पश्चात्—अव्य० [सं० अपर+आति, पश्च-आदेश] किसी अवधि, क्रम, घटना आदि के बीतने अथवा कुछ समय व्यतीत होने पर। उपरांत। पीछे। बाद।

पुं० १. पश्चिम दिशा। २. अंत। समाप्ति। ३. अधिकार।

पश्चात् कर्म (र्मन्)—पुं० [सं० मध्य० स०] वैद्यक के अनुसार वह कर्म जिससे किसी रोगी के स्वस्थ होने के उपरान्त उसके शरीर के बल, वर्ण और अग्नि की वृद्धि होती हो। भिन्न-भिन्न रोगों से मुक्त होने पर भिन्न-भिन्न पश्चात् कर्म बतलाये गये हैं।

पश्चात्ताप—पुं० [सं० मध्य० स०] अपने किसी कर्म के अनौचित्य का भान होने पर मन में होनेवाला दुःख जो यह सोचने को विवश करता है कि मैंने यह काम क्यों किया। २. किसी किये हुए अनुचित कर्म के पाप से मुक्त होने के लिए अथवा अपनी आत्मा को शांति देने के लिए किया जानेवाला तप।

पश्चात्तापी (पिन्)—वि० [सं० पश्चात्ताप+इनि] जो पश्चात्ताप करता हो।

पश्चाद्भाग—पुं०[सं० ष० त०] १. पीछे का हिस्सा। २. पश्चिमी भाग।
पश्चाद्वर्ती (र्तिन्)—वि० [सं० पश्चात् √वृ (बरतना)+णिनि] १. पीछे रहनेवाला। २. अनुसरण करनेवाला।
पश्चानुताप—पुं०[सं० पश्च-अनुताप, स०त०] पश्चाताप।
पश्चापी (पिन्)—पुं०[सं० पश्चा√ आप् (लाभ)+ णिनि] नौकर। सेवक।
पश्चारुज—पुं०[सं० कर्म०स०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रोग जो कदन्न खानेवाली स्त्रियों का दूध पीनेवाले बालकों को होता है। इसमें बालकों को हरे-पीले रंग के दस्त आने लगते हैं और तेज ज्वर होता है।
पश्चिम—वि०[सं० पश्चात्+डिमच्] १. जो पीछे से या बाद में उत्पन्न हुआ हो। २. अंतिम। पिछला।
पुं०[वि० पश्चिमी] वह दिशा जिसमें सूर्य अस्त होता है। पूर्व दिशा के सामनेवाली दिशा। प्रतीची। वारुणी। पश्चिम।
पश्चिम-घाट—पुं०=पश्चिमी घाट।
पश्चिम-प्लव—पुं०[ब० स०] वह भूमि जो पश्चिम की ओर झुकी हो।
पश्चिम-याम-कृत्य—पुं०[सं० पश्चिम-याम, कर्म०स०, पश्चिम परम-कृत्य, प० त०] बौद्धों के अनुसार रात के पिछले पहर में किया जानेवाला धार्मिक कृत्य।
पश्चिम-वाहिनी—वि०स्त्री०[कर्म०स०] जो पश्चिम दिशा की ओर बहती हो।
पश्चिम-सागर—पुं०[कर्म०स०] आयरलैंड और अमेरिका के बीच का समुद्र। एटलांटिक या अतलांतक महासागर।
पश्चिमांचल—पुं०[पश्चिम-अंचल, कर्म० स०] अस्ताचल। (दे०)
पश्चिमा—स्त्री०[सं० पश्चिम+टाप्] पश्चिम दिशा।
पश्चिमार्द्ध—पुं०[पश्चिम-अर्द्ध, कर्म० स०] पीछेवाला आधा भाग। अपरार्द्ध।
पश्चिमी—वि०[सं० पश्चिम]१. पश्चिम दिशा संबंधी। २. पश्चिम की ओर अर्थात् पश्चिमी देशों में होनेवाला। ३. पश्चिम से आनेवाला। पछवाँ।
पश्चिमी-घाट—पुं०[हिं० पश्चिमी+घाट] केरल और आधुनिक महाराष्ट्र राज्य के बीच में समुद्र के किनारे-किनारे गई हुई पर्वतमाला।
पश्चिमी हिंदी—स्त्री० [हिं०] भाषा-विद् ग्रियर्सन के मत से, पश्चिमी भारत में बोली जानेवावी खड़ी बोली, बाँगड़, ब्रजभाषा, कन्नौजी और बुंदेली बोलियों का एक वर्ग (पूर्वी हिन्दी से भिन्न) जो संभवतः शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुआ था।
पश्चिमोत्तर—वि० [सं० पश्चिम-उत्तर, ब० स०] पश्चिम और उत्तर दिशाओं के बीच में स्थित।
पुं० वायव्य कोण।
पश्चिमोत्तरा—स्त्री०[सं० पश्चिमोत्तर+टाप्] उत्तर और पश्चिम के बीच की विदिशा। वायव्य कोण।
पश्त—पुं०[लश०] खंभा।
पश्ता—पुं०[फा० पुश्तः]१. बाँध। २. किनारा। तट। (लश०)
पश्तो—स्त्री०[फा० पुश्तो] आधुनिक पाकिस्तान के उत्तर पश्चिमी प्रदेशों तथा अफ़गानिस्तान की भाषा जिसकी गिनती आर्यभाषाओं में होती है।
पुं०[देश०] ३॥ मात्राओं का एक ताल जिसमें दो आघात होते हैं।

पश्म—पुं०[फा०] बकरी, भेड़ आदि का रोयाँ। ऊन। पशम। (देखें)
पश्मीना—पुं०=पशमीना।
पश्यंती—स्त्री०[सं०√दृश् (देखना)+शतृ+ङीप्] हठ योग में, वह सूक्ष्म ध्वनियाँ नाद जो वाक् को उत्पन्न करनेवाली वायु के मूलाधार से हटकर नाभि में पहुँचने पर होता है।
पश्यतोहर—वि० [सं० पश्यतः√हृ (हरण करना)+अच्, अलुक् स०] जो दूसरों को देखते रहने पर भी चतुरता से उनकी चीजें चुरा लेता हो।
पुं० सुनार।
पश्ववदान—पुं०[सं० पशु-अवदान, ष०त०] बलि-पशु के अंग विशेष का छेदन।
पश्वाचार—पुं०[सं० पशु-आचार,प० त०] तंत्र में,वैदिक रीति से तथा कामना और संकल्पपूर्वक किया जानेवाला देवी का पूजन।
पश्वाचारी (रिन्)—वि०[सं० पश्वाचार+इनि] पश्वाचार-संबंधी।
पुं० वह जो पश्वाचार की रीति से पूजन करता हो।
पष—पुं०[सं० पक्ष]१. पंख। डैना। २. ओर। तरफ। ३. चांद्र मास का आधा भाग। पक्ष।
पषा†—पुं०=पंखा।
पषाण(न्)†—पुं०=पाषाण (पत्थर)।
पषारना†—स०=पखारना (धोना)।
पष्य†—पुं०=पक्ष।
पष्षान†—पुं०=पाषाण।
पसंग (ा)†—पुं०=पासंग।
पसंघ (ा)†—पुं०=पासंग।
पसंती—स्त्री०=पश्यंती।
पसंद—वि०[फा०] आकार-प्रकार, गुण, रूप आदि के विचार से जो मन को भला तथा रुचिकर प्रतीत हुआ हो और इसलिए जिसे अनेकों या बहुतों में से वरण किया या उसे वरीयता दी गई हो।
प्रत्य० उत्तर पद के रूप में प्रत्यय की तरह प्रयुक्त—(क) पसंद आनेवाला। जैसे—दिल-पसंद=दिल को पसंद आनेवाला। (ख) पसंद करनेवाला। जैसे—हक-पसंद।
स्त्री० १. मन को भला तथा रुचिकर प्रतीत होनेवाला कार्य, वस्तु या व्यक्ति। २. वरण करने, चुनने या वरीयता देने की क्रिया, प्रवृत्ति या भाव। ३. इस प्रकार चुनी या वरण की हुई वस्तु।
पसंदा—पुं०[फा० पसन्द] १. मांस के एक प्रकार के कुचले हुए टुकड़े का गोश्त। २. उक्त प्रकार के मांस से बननेवाला एक प्रकार का कबाब।
पसंदीदा—वि० [फा०] [भाव० पसंददीदगी] पसंद आनेवाला या पसंद किया हुआ।
पसंदेश—वि० [फा०] [भाव० पसंदेशी] १. जो बीती हुई बातों के विषय में विचार करता रहता हो। २. फलतः संकुचित बुद्धि।
पस—पुं०[अं०] घाव, फोड़े आदि में से निकलनेवाला लसीला तरल पदार्थ। मवाद।
अव्य० [फा०] १. अंत या बाद में। पीछे। २. पुनः। फिर। ३. निस्संदेह। बेशक। ४. अतः। इसलिए।
पसई—स्त्री०[देश०] तराई में होनेवाली एक तरह की राई और उसका पौधा।

स्त्री०=पसही (तिन्नी)।

पसकरण—वि०[सं० पश्च-करण] कायर। डरपोक। (डिं०)

पस-गैबत—क्रि० वि०[फा० पस+अ० गैबत] किसी के पीठ पीछे। अनुपस्थिति में।

पसघ—पुं० दे० 'पासंग'।

पसताल—पुं०[देश०] जलाशयों के किनारे होनेवाली एक तरह की घास जिसे पशु और जिसके दाने गरीब लोग भी खाते हैं।

पसनी†—स्त्री० दे० 'अन्न-प्राशन'।

पसपा—वि०[फा०] पराजित।

पसम*—स्त्री०=पशम।

पस-माँदा—वि०[फा० पसमांदः] [भाव० पसमांदगी] १. बचा हुआ। शेष। २. (काफिले या जत्थे का वह व्यक्ति) जो यात्रा करते समय पीछे छूट या रह गया हो।

पसमीना*—पुं०=पशमीना।

पसर—पुं०[सं० प्रसर] १. हथेली का कटोरी या दोने के आकार का बनाया हुआ वह रूप जिसमें कोई चीज भर कर किसी को दी जाती है। २. उक्त में भरी हुई वस्तु या उसकी मात्रा। ३. मुट्ठी।
पुं० [देश०] १. रात के समय पशुओं को चराने का काम। उदा०—वह रात को कभी कभी पसर भी चराता था।—वृन्दावनलाल वर्मा। २. पशुओं के चरने की भूमि। चरागाह। ३. पशु चराते समय एक तरह के गाये जानेवाले गीत। ४. आक्रमण। चढ़ाई। धावा।
†पुं०=प्रसार।

पसर-कटाली—स्त्री०[सं० प्रसर कटाली] भटकटैया। कटाई।

पसरन—स्त्री०[सं० प्रसारिणी] वृक्षों पर चढ़नेवाली एक जंगली लता।
स्त्री० [हिं० पसरना] पसरने की क्रिया, दशा या भाव।

पसरना—अ०[सं० प्रसरण] १. आगे की ओर बढ़ना। फैलना। २. हाथ-पैर फैलाकर तथा अधिक जगह घेरते हुए बैठना या लेटना। ३. अपना आग्रह या इच्छा पूरी कराने के लिए तरह-तरह की बातें करना।
संयो० क्रि०—जाना।

पसरहट्टा—पुं०[हिं० पंसारी+हाट] वह बाजार या हाट जिसमें पंसारियों की बहुत-सी दूकानें होती हैं।

पसरहा—पुं०=पसरहट्टा।

पसराना—स० [हिं० पसराना का प्रे०] किसी को पसरने में प्रवृत्त करना।

पसरी—स्त्री०=पसली।

पसरौहाँ†—वि०[हिं० पसरना+औहाँ (प्रत्य०)] १. पसरनेवाला। २. जिसमें अधिक पसरने की प्रवृत्ति हो।

पसली—स्त्री० [सं० पर्शुका] स्तनपायी जीवों की छाती के दोनों ओर की गोलाकार हड्डियों में से हर एक।
पद—पसली का रोग=एक रोग जिसमें बच्चों का साँस जोरों से चलने लगता है।
मुहा०—पसली फड़कना या फड़क उठना=मन में उत्साह या उमंग उत्पन्न होना। जोश आना। **पसली ढीली करना या तोड़ना**=बहुत अधिक मारना।

पसवपेश†—पुं०=पशोपेश।

पसवा†—वि०[देश०] हलके गुलाबी रंग का।
पुं० हलका गुलाबी रंग।

पसवाड़ा†—पुं०=पिछवाड़ा (पृष्ठ-भाग)।

पसही—स्त्री०[देश०] तिन्नी नाम का धान या उसका चावल।

पसा†—पुं०=पसर। (दे०)

पसाइ—पुं०=पसाउ (प्रसाद)।

पसाई—स्त्री० [सं० प्रसातिका, प्रा० पसाइआ] पसताल नाम की घास जो तालों में होती है।
†पुं०=पसही (तिन्नी)।
स्त्री०[हिं० पसाना] (मोड़ आदि) पसाने की क्रिया या भाव।
†स्त्री० पिसाई।

पसाउ—पुं०[सं० प्रसाद, प्रा० पसाव] १. प्रसाद। २. कृपा। अनुग्रह। ३. प्रसन्नता।

पसाना—स०[सं० प्रस्रवण, हिं० पसावना] [भाव० पसाई] १. पकाये हुए चावलों में से माँड़ निकालना। २. किसी वस्तु में से उसका जलीय अंश निकालना।
अ[सं० प्रसादन] अनुग्रह आदि करने के लिए किसी पर प्रसन्न होना।

पसार—पुं०[सं० प्रसार] १. पसरने की क्रिया या भाव। २. प्रसार। फैलाव। विस्तार। ३. दालान। (पश्चिम)
पुं०[सं० प्रसाद] प्राप्त होने पर मिलनेवाली चीज। उदा०—दुहुँ कुल अपजस पहिल पसार।—विद्यापति।

पसारना—स०[सं० प्रसारण, हिं० पसारना का स०] १. अधिक विस्तृत करना। २. फैलाना। जैसे—झोली पसारना। ३. आगे बढ़ाना। जैसे—हाथ पसारना।

पसारा†—पुं०=पसार।

पसारी—पुं०[देश०] १. तिन्नी का धान। पसवन। पसही।
†पुं०=पंसारी।

पसाव—पुं०[हिं० पसाना+आव (प्रत्य०)] १. माँड़ आदि पसाने की क्रिया या भाव। २. पसाने पर निकलनेवाला गाढ़ा तरल पदार्थ। पीच।
†पुं०=पसाउ (प्रसाद)।

पसावन†—पुं०=पसाव।

पसिजर—पुं०[अं० पैसेंजर] १. यात्री, विशेषतः रेल या जहाज का यात्री। २. यात्रियों की वह रेल-गाड़ी जो कुछ धीमी चाल से चलती और प्रायः सभी स्टेशनों पर ठहरती है।

पसित†—वि०[सं० पायश] बँधा या बाँधा हुआ।

पसीजना—अ०[सं० प्र√स्विद्, प्रस्विद्यति, प्रा० पसिज्ज] १. अधिक गरमी या ताप के प्रभाव के कारण किसी घन या ठोस पदार्थ में से जल-कण निकलना। २. दूसरे के घोर कष्ट, दुःख आदि को देखने पर चित्त में (प्रायः कठोर चित्त में) दया की भावना उमड़ना। ३. पसीने से तर होना।

पसीना—पुं०[सं० प्रस्वेदन, हिं० पसीजना] ताप, परिश्रम आदि के कारण शरीर या उसके अंग में से निकलनेवाले जल-कण। स्वेद।
क्रि० प्र०—आना।—छूटना।—निकलना।

पद—पसीने की कमाई=वह धन जो परिश्रमपूर्वक अर्जित किया गया हो, योंही अथवा मुफ्त में न मिला हो।
मुहा०—किसी का पसीना छूटना=कोई काम करते-करते बहुत अधिक परेशान हो जाना। पसीने पसीने होना=पसीने से बिलकुल भीग जाना।

पसु†—पुं०=पशु।

पसुरी, पसुली —स्त्री०=पसली।

पसू†—पुं०=पशु।

पसूज—स्त्री०[?] कपड़ों की सिलाई में सूई-डोरे से भरे या लगाये जानेवाले एक प्रकार के सीधे टाँके।

पसूजना—स०[?] कपड़ों की सिलाई में एक विशेष प्रकार के टाँके लगाना।

पसूता†—स्त्री०=प्रसूता।

पसूस—वि०[हिं०] कठोर।

पसेउ (ऊ)*—पुं०=पसेव।

पसेरी—स्त्री०[हिं० पाँच+सेर+ई (प्रत्य०)]१. पाँच सेर का बाट। पंसेरी। २. उक्त बाट से तौली हुई वस्तु की मात्रा या मान। जैसे—चार पसेरी गेहूँ।

पसेव—पुं०[सं० प्रस्राव] १. वह तरल पदार्थ जो कच्ची अफीम को सुखाने के समय उसमें से निकलता है। इस अंश के निकल जाने पर अफीम सूख जाती है और खराब नहीं होती।
†पुं०[सं० प्रस्वेद]पसीना।

पसोपेश—पुं०[फा० पसवपेश]१. कोई काम करने के समय मन में होनेवाला यह भाव कि आगे बढ़ें या पीछे हटें। असमंजस। आगा-पीछा। सोच-विचार। २. इस बात का विचार कि यह काम करने पर क्या लाभ अथवा क्या हानि होगी। ऊँच-नीच।

पसो†—पुं०=पशु।

पस्त—वि०[फा०] [भाव० पस्ती]१. हारा हुआ। २. थका हुआ। शिथिल। ३. किसी की तुलना में झुका या दबा हुआ। जैसे—हिम्मत पस्त होना। ४. छोटे आकार का। छोटा। (यौ० के आरंभ में) जैसे—पस्तकद। ५. कमीना। नीच। ६. तुच्छ। हीन। जैसे—पस्त खयाल। ७. पिछड़ा या हारा हुआ। जैसे—पस्त-हिम्मत। ८. मंद। जैसे—पस्त - किस्मत।

पस्त-कद—वि०[फा०] ठिंगना। नाटा।

पस्त-हिम्मत—वि०[फा०] [भाव० पस्तहिम्मती]१. जो विफल होकर के हिम्मत हार चुका हो। जिसका साहस छूट गया हो। हतोत्साह। २. कमहौसला। भीरु।

पस्तहौसला—वि०[फा ०] पस्त-हिम्मत।

पस्ताना†—अ०=पछताना।

पस्तावा —पुं०=पछतावा।

पस्ती—स्त्री०[फा०]१. पस्त होने की अवस्था या भाव। २. निचाई। ३. विचारों, व्यवहारों आदि की नीचता। कमीनापन।

पस्तो†—स्त्री०=पश्तो।

पस्त्य—पुं०[सं०√ पस् (बाधा)+क्तिन्+यत्]१. घर। वास-स्थान। २. कुल। परिवार।

पस्सर—पुं०[अं० परसर] जहाज पर खलासियों आदि को बर्तन, रसद आदि बाँटनेवाला कर्मचारी।
†पुं०=पसर।

पस्सी बबूल—पुं०[हिं० पस्सी ?+हिं० बबूल] एक प्रकार का बढ़िया कलमी बबूल का वृक्ष जिसके फूलों से कई प्रकार के सुगंधित द्रव्य बनाये जाते हैं।

पहँ—अव्य०[सं० पार्श्व] निकट। पास।
विभ० से।

पहँसुल—स्त्री०[सं० प्रह्व=झुका हुआ+शूल] हँसिया की तरह का तरकारी काटने का एक छोटा उपकरण।

पह*—स्त्री०=पौ (प्रातःकाल का प्रकाश)।
†पुं०=प्याऊ।

पहचनवाना—स० [हिं० पहचानना का०] किसी से पहचानने का काम कराना।

पहचान—स्त्री०[सं० प्रत्यभिज्ञान या परिचयन] १. पहचानने की क्रिया, भाव या शक्ति। २. कोई ऐसा चिह्न या लक्षण जिससे पता चले कि यह अमुक व्यक्ति या वस्तु है। जैसे—अपने कपड़े (या लड़के) की कोई पहचान बतलाओ। ३. किसी वस्तु की अच्छाई, बुराई, टिकाऊपन, स्वाद आदि देख-भाल कर जान लेने की शक्ति। जैसे—आम, कपड़े, घी आदि की पहचान। ४. जीव या व्यक्ति के संबंध में, उसके आकार, चेष्टाओं, बातों आदि से उसका वास्तविक रूप अनुमानित करने की समर्थता। जैसे—आदमी या घोड़े की पहचान। ४.दे०'जानपहचान'।

पहचानना—स०[हिं० पहचान]१. किसी वस्तु या व्यक्ति को देखते ही उसके चिह्नों, लक्षणों, रूप-रंग के आधार पर यह जान या समझ लेना कि यह अमुक व्यक्ति या वस्तु है। यह समझना कि वह यही वस्तु या व्यक्ति है जिसे मैं पहले से जानता हूँ। जैसे—मैं उसके कपड़े पहचानता हूँ।
संयो० क्रि०—जानना।—लेना।
२. एक वस्तु का दूसरी वस्तु या वस्तुओं से भेद करना। अंतर समझना या जानना। बिलगाना। जैसे—असल या नकल को पहचानना सहज नहीं है। ३. किसी वस्तु या व्यक्ति के गुण-दोषों, योग्यताओं आदि से भली-भाँति परिचित रहना। जैसे—तुम भले ही उनकी बातों में आ जाओ; पर मैं उन्हें अच्छी तरह पहचानता हूँ।

पहटना†—स०=पहेटना।

पहटा—पुं० १. दे० 'पाटा'। २. दे० 'पेठा'।

पहड़िया—वि०=पहाड़ी।
पुं०[हिं० पहाड़] संथाल परगने में रहनेवाली एक जाति।

पहन—पुं०[फा०] वह दूध जो बच्चे को देखकर वात्सल्य भाव के कारण माँ की छातियों में भर आवे और टपकने लगे या टपकने को हो।
पुं०= पाहन (पाषाण)।

पहनना—स०[सं० परिधान] (कपड़े, गहने आदि) शरीर पर धारण करना। परिधान करना। जैसे—कुरता या धोती पहनना; अँगूठी या हार पहनना; खड़ाऊँ, चप्पल या जूता पहनना।

पहनवाना—स०[हिं० 'पहनना' का प्रे०]१. किसी को कुछ पहनाने में प्रवृत्त करना। जैसे—नौकर से लड़के को कपड़े पहनवाना। २. किसी को कुछ पहनने के लिए विवश करना। (पहनाना से भिन्न)। जैसे—माता ने बच्चे को कुरता पहनवाकर छोड़ा।

पहना—पुं० [फा० पहन] वह दूध जो बच्चे को देखकर वात्सल्य भाव के कारण माँ के स्तनों में भर आया हो और टपकता-सा जान पड़े।

†पुं०=पनहा।

पहनाई—स्त्री० [हिं० पहनाना] १. पहनने की क्रिया, ढंग या भाव। जैसे—जरा आपकी पहनाई देखिये। २. पहनने या पहनाने के बदले में दिया या लिया जानेवाला पारिश्रमिक।

*स्त्री० [हिं० पाहन=पत्थर] १. पाहन या पत्थर होने की अवस्था या भाव। २. पाहन या पत्थर की-सी कठोरता, गुरुता या और कोई गुण। उदा०—पाहन ते न कठिन पहनाई।—तुलसी।

पहनाना—स० [हिं० पहनना] १. दूसरे को अपने हाथों से कपड़े, गहने आदि धारण कराना। जैसे—कोट या जूता पहनाना। २. मारना-पीटना। (बाजारू)

पहनाव†—पुं०=पहनावा।

पहनावा—पुं० [हिं० पहनना] १. पहनने के कपड़े। पोशाक। २. किसी जाति, देश आदि के लोगों द्वारा सामान्यतः तन ढकने के उद्देश्य से पहने जानेवाले कपड़े। जैसे—अँगरेजों का पहनावा पैंट, कोट, कमीज तथा हैट है और भारतीयों का धोती, कुरता और टोपी है। ३. विशिष्ट आकार, प्रकार या रंग के वे कपड़े जो किसी विद्यालय, संस्था आदि के कर्मचारियों, विद्यार्थियों, सदस्यों आदि को पहनने पड़ते हों। जैसे—स्कूली पहनावा।

पहपट—पुं० [देश०] १. स्त्रियों द्वारा गाये जानेवाले एक तरह के गीत। २. शोर-गुल। हल्ला। ३. चारों ओर फैलनेवाली निन्दात्मक चर्चा या बदनामी। ४. छल। धोखा। बदनामी। (क्व०)

पहपटबाज—पुं० [हिं० पहपट+फा० बाज़] [भाव० पहपटबाजी] १. शोर-गुल करने या हल्ला मचानेवाला। २. उपद्रवी। फसादी। शरारती। झगड़ालू। ३. चारों ओर लोगों की निंदा फैलानेवाला। ४. छलिया। धोखेबाज।

पहपटहाया—वि० [स्त्री० पहपटहाई] =पहपटबाज।

पहमिनि†—स्त्री०=पद्मिनी। उदा०—कंवल करी तू पहमिनी मैं निसि भएहु विहान।—जायसी।

पहर—पुं० [सं० प्रहर] १. समय के विचार से दिन-रात के किये हुए आठ समान भागों में से हर एक जो तीन-तीन घंटों का होता है। २. समय। ३. युग।

पहरना—स० [सं० प्र+हरण] नष्ट करना। उदा०—जिड़ि पहरंतँ नवी परि।—प्रिथीराज।

†स०=पहनना।

पहरा—पुं० [हिं० पहर] १. ऐसी अवस्था या स्थिति जिसमें किसी आदमी, चीज या जगह की रखवाली करने अथवा अपघात, हानि आदि रोकने के लिए एक या अधिक आदमी नियुक्त किये जाते हैं। इस बात का ध्यान रखने का प्रबंध कि कहीं कोई अनुचित रूप से आ-जा न सके अथवा आज्ञा, नियम, विधान आदि के विरुद्ध कोई काम न करने पावे। चौकी। रखवाली।

विशेष—(क) पहले प्रायः इस प्रकार की देख-रेख करनेवाले लोग एक एक पहर के लिए नियुक्त किये जाते थे; इसी से उक्त अर्थ में 'पहरा' शब्द प्रचलित हुआ था। (ख) पहरे का काम प्रायः एक स्थान पर खड़े होकर, थोड़ी-सी दूरी में इधर-उधर आ-जाकर अथवा किसी विशिष्ट क्षेत्र में चारों ओर घूम-घूमकर किया जाता है।

मुहा०—पहरा देना=घूम-घूमकर बराबर यह देखते रहना कि कहीं कोई अनुचित रूप से आ तो नहीं रहा है या कोई अनुचित काम तो नहीं कर रहा है। **पहरा पड़ना**=ऐसी व्यवस्था होना कि कहीं कुछ लोग पहरा देते रहें। जैसे—रात के समय शहरों में जगह-जगह पहरा पड़ता है। **पहरा बदलना**=एक पहरेदार के पहरे का समय बीत जाने पर उसके स्थान पर दूसरे पहरेदार का आना। **पहरा बैठना**=किसी वस्तु या व्यक्ति के पास पहरेदार या रक्षक बैठाया जाना। चौकीदार को पहरे के काम पर लगाना। **पहरा बैठाना**—पहरा देने के काम पर किसी को लगाना। **(किसी को) पहरे में देना**=किसी को इस उद्देश्य से पहरेदारों की देख-रेख में रखना कि वह कहीं भागने, किसी से मिलने-जुलने या कोई अनुचित काम न करने पावे।

२. उतना समय जितने में एक रक्षक अथवा रक्षक-दल को रक्षा-कार्य करना पड़ता है। जैसे—तुम्हारे पहरे में तो कोई यहाँ नहीं आया था। ३. कोई पहरेदार या पहरेदारों का कोई दल। जैसे—जब तक नया पहरा न आवे, तब तक तुम (या तुम लोग) यहीं रहना। ४. वह जोर की आवाज जो पहरेदार लोगों को सावधान करने या रहने के लिए रह-रहकर देता या लगाता रहता है। जैसे—कल रात को इस महल्ले में पहरा नहीं सुनाई पड़ा। ५. कुछ विशिष्ट प्रकार का काल या समय। जमाना। युग। जैसे—अभी क्या है! अभी तो इससे भी बुरा पहरा आवेगा।

†पुं० [हिं० पौरा का विकृत रूप] किसी विशेष व्यक्ति के अस्तित्व, आगमन, सत्ता आदि का काल या समय। पौरा। जैसे—जब से इस लड़की का पहरा (पौरा) इस घर में आया है, तब से इस घर में लहर-बहर दिखाई देने लगी है।

पहराइत†—पुं०=पहरेदार। उदा०—पीला भमर किया पहराइत।—प्रिथीराज।

पहराना†—स०=पहनाना।

पहरावनी—स्त्री० [हिं० पहरावना] १. पहनावा। २. वे कपड़े जो किसी शुभ अवसर पर प्रसन्नतापूर्वक छोटों को दिये या पहनाये जाते हैं।

पहरावा†—पुं०=पहनावा।

पहरी—पुं०=प्रहरी (पहरेदार)।

पहरुआ—पुं०=पहरेदार।

पहरू†—पुं०=पहरेदार।

पहरेदार—पुं० [हिं० पहरा+फा० दार] [भाव० पहरेदारी] १. वह जिसका काम कहीं खड़े-खड़े या घूम-घूमकर पहरा देना हो। चौकीदार। संतरी। २. वह जो किसी की रक्षा के लिए कटिबद्ध तथा प्रस्तुत हो। जैसे—हम देश के पहरेदार हैं।

पहरेदारी—स्त्री० [हिं० पहरा+फा० दारी] १. पहरा देने का काम या भाव। २. पहरेदार का पद।

पहल—पुं० [फा० पहलू, मि० सं० पटल] १. किसी घन पदार्थ के तीन या अधिक कोनों अथवा कोरों के बीच का तल या पार्श्व। २. बगल। पहलू। जैसे—(क) पासे में छः पहल होते हैं। (ख) इस नगीने में बारह पहल कटे हैं।

क्रि० प्र०—काटना।—तराशना।—बनाना।

मुहा०—पहल निकालना= किसी पदार्थ के पृष्ठ देश या बाहरी सतह को तराश या छीलकर उसमें त्रिकोण, चतुष्कोण, षट्कोण आदि पहल बनाना।

२. ऊन, रूई आदि की कुछ कड़ी और मोटी तह या परत। गाला। उदा०—तूल के पहल किधौं पवन अधार के।—सेनापति। ३. किसी तरह की तह या परत।

स्त्री०[हिं० पहला] १. किसी नये कार्य का पहली बार होनेवाला आरंभ। २. किसी कार्य, बात आदि का किसी एक पक्ष की ओर होनेवाला आरंभ जिसके पश्चप्रभाव का उत्तरदायित्व उसी पक्ष पर माना जाता है। छेड़। (इनीशिएटिव) जैसे—झगड़े में पहले तो उसने पहल की थी।

मुहा०—पहल करना= किसी काम या अपनी ओर से या आगे बढ़कर आरंभ करना।

पहलदार—वि०[हिं० पहल+फा० दार] जिसमें पहल कटे या बने हों। जिसमें चारों ओर अलग-अलग तल या सतहें हों।

पहलनी—स्त्री०[हिं० पहल] सुनारों का एक औजार जिससे कोंढ़ा या घुंडी गोल करते हैं।

पहलवान—पुं०[फा० पहलवान] [भाव० पहलवानी] १. वह व्यक्ति जो स्वयं दूसरों से कुश्ती लड़ता हो अथवा दूसरों को कुश्ती लड़ना सिखलाता हो। २. मोटा-ताजा। तगड़ा। हट्टा-कट्टा।

वि० खूब बलवान और मोटा-ताजा।

पहलवानी—वि०[फा० पहलवानी] १. पहलवानों से संबंध रखनेवाला। २. पहलवानों की तरह का।

स्त्री० १. पहलवान होने की अवस्था या भाव। २. पहलवान का पेशा, वृत्ति या शौक। ३. बलवान और सशक्त होने की अवस्था या भाव। जैसे—वह तुम्हारी सारी पहलवानी निकालकर रख देगा।

पहलवी—पुं०, स्त्री०[फा०]=पह्लवी।

पहला—वि०[सं० प्रथम, प्रा० पहिले] [स्त्री० पहली] १. समय के विचार से जो और सब से आदि में हुआ हो। जैसे—यह उनका पहला लड़का है। २. किसी चीज विशेषतः किसी वर्गीकृत चीज के आरंभिक या प्रारंभिक अंश या वर्ग से संबंध रखनेवाला। जैसे—पुस्तक का पहला अध्याय, विद्यालय का पहला दरजा। ३. तुलना, प्रतियोगिता आदि में जो सब से आगे निकल पहुँच या बढ़ गया हो। जैसे—दौड़, परीक्षा आदि में पहला आना। ४. वर्तमान से पूर्व का। विगत। जैसे—पहला जमाना कुछ और ही तरह का था। ५. जो अत्यधिक उपयोगी, महत्त्वपूर्ण या मूल्यवान हो।

पहलाम†—स्त्री०[हिं०पहला+म(प्रत्य०)] लड़ाई-झगड़े के संबंध में की जानेवाली छेड़। पहल। जैसे—इस बार तो तुम्हीं ने पहलाम की थी।

पहलू—पुं०[फा० पहलू] १. किसी वस्तु का कोई विशिष्ट पार्श्व या किसी दिशा में पड़नेवाला अंग या विस्तार। २. व्यक्ति के शरीर का दाहिना या बायाँ अंग। पार्श्व। बगल। जैसे—जो जल उठता है यह पहलू तो वह पहलू बदलते हैं।—कोई कवि।

मुहा०—(किसी का) पहलू गरम करना=किसी के शरीर से विशेषतः प्रेयसी या प्रेमपात्र का प्रेमी के शरीर से सटकर बैठना। किसी के पास या साथ बैठकर उसे सुखी करना। **(किसी से) पहलू गरम करना**=किसी को विशेषतः प्रेयसी या प्रेमपात्र को शरीर से सटाकर बैठाना। मुहब्बत में बैठाना। **(किसी के) पहलू में रहना**=किसी के बहुत पास या बिलकुल साथ में रहना।

३. करवट। बल। जैसे—किसी पहलू से चैन नहीं मिलता। ४. पड़ोस।

मुहा०—पहलू बसाना= किसी के पड़ोस में जाकर रहना।

५. किसी समूह का कोई पार्श्व या भाग। जैसे—फौज का दाहिना पहलू ज्यादा मजबूत था।

मुहा०—पहलू दबना=किसी अंग या पार्श्व का दुर्बल होने या हारने के कारण पीछे हटना। **(किसी के) पहलू पर होना**=विकट अवसर पर सहायता करने के लिए प्रस्तुत रहना।

६. किसी बात या विषय का अच्छाई-बुराई, गुण-दोष आदि की दृष्टि से कोई पक्ष। जैसे—मुकदमे के सब पहलू पहले से सोच रखो।

मुहा०—(किसी बात का) पहलू बचाना=इस बात का ध्यान रखना या युक्ति करना कि किसी अंग, पक्ष या पार्श्व से किसी प्रकार का अनिष्ट अथवा कोई अप्रिय घटना या बात न होने पावे। **(अपना) पहलू बचाना**= कोई काम करने से जी चुराना या टाल-मटोल करके पीछे हटना।

७. अगल-बगल या आस-पास का स्थान। पार्श्व। जैसे—पहाड़ के पहलू में एक घना जंगल था।

पद—पहलूनशी= (क) पास बैठनेवाला। (ख) पास बैठा हुआ।

मुहा०—(किसी का) पहलू बसाना= किसी के पड़ोस या समीप में जा रहना। पड़ोस आबाद करना।

८. किसी पदार्थ के किसी पार्श्व का कोई समतल पृष्ठ-देश। पहल। जैसे—इस नगीने का कोई पहलू चौकोर नहीं है। ९. गूढ़ अर्थ। १०. युक्ति। ११. बहाना। १२. रुख।

पहलूदार—वि०[फा०] जिसके कई पहलू (पक्ष या पहल) हों।

पहले—अव्य०[हिं० पहला] १. आदि आरंभ या शुरू में। सर्वप्रथम। जैसे—पहले यहाँ कोई दूकान नहीं थी। २. काल, घटना, स्थिति आदि के क्रम के विचार से आगे या पूर्व। जैसे—उनके मकान के पहले एक पुल पड़ता है। ३. बीते हुए समय में। पूर्वकाल में। अगले जमाने में। जैसे—पहले की-सी सस्ती अब फिर क्यों होने लगी।

पहलेज—पुं० [देश०] एक प्रकार का लंबोतरा खरबूजा।

पहले-पहल—अव्य० [हिं० पहले] १. आदि या आरंभ में। सर्वप्रथम। सबसे पहले। २. जीवन में पहली बार। जैसे—वह पहले-पहल दिल्ली गया है।

पहलौठा—वि० [हिं० पहल+औठा (प्रत्य०)] [स्त्री० पहलौठी] (माता-पिता का वह पुत्र) जिसे (उन्होंने) सबसे पहले जन्म दिया हो। अथवा जो सबसे पहले जन्मा हो। प्रथम प्रसव।

पहाड़—पुं० [सं० पाषाण] [स्त्री० अल्पा० पहाड़ी] १. पृथ्वी तल के ऊपर प्राकृतिक रूप से उठा या उभरा हुआ वह बहुत बड़ा अंश जो प्रायः चूने, पत्थर, मिट्टी आदि की बड़ी-बड़ी चट्टानों से बना होता है और जिसका तल प्रायः असम या ऊबड़-खाबड़ रहता है। पर्वत।

मुहा०—पहाड़ खोदकर चूहा निकालना=बहुत अधिक परिश्रम करके बहुत ही तुच्छ परिणाम तक पहुँचना।

२. किसी वस्तु का बहुत बड़ा और भारी ढेर। बहुत ऊँची राशि या ढेर। जैसे—पहले बाजारों में अनाज के बोरों के पहाड़ लगे रहते थे। ३. पत्थरों की ढेर की तरह की कोई बहुत बड़ी या भारी चीज या बात अथवा कोई बहुत ही विकट काम या स्थिति। जैसे—(क) मुझे पत्र लिखना तो पहाड़ हो जाता है। (ख) तुम्हें तो मामूली काम भी पहाड़ मालूम होता है।

मुहा०—पहाड़ उठाना=कोई बहुत बड़ा, भारी या विकट काम अपने ऊपर लेना या पूरा कर दिखाना। **पहाड़ काटना**=(क) बहुत ही कठिन या विकट काम कर डालना। (ख) किसी प्रकार कोई बहुत बड़ी विपत्ति या संकट दूर करना। **(किसी पर) पहाड़ टूटना या टूट पड़ना**=अचानक कोई बहुत बड़ी विपत्ति आना। जैसे—उस पर तो आफत का पहाड़ टूट पड़ा है। **पहाड़ से टक्कर लेना**=अपने से बहुत अधिक बलवान व्यक्ति या शक्तिशाली से प्रतियोगिता करना या वैर उठाना। बहुत जबरदस्त या बहुत बड़े से भिड़ना।

४. कोई ऐसा कठिन या विकट कार्य, वस्तु या स्थिति जिसका निर्वाह बहुत ही कठिन हो अथवा सहज में जिससे छुटकारा या निस्तार न हो सके। जैसे—पहाड़ को तरह विवाह के योग्य चार-चार लड़कियाँ उसके सामने बैठी थीं।

पहाड़ा—पुं० [सं० प्रस्तार या क्रमात् पहाड़ को तरह ऊँचे होते जाने का क्रम] १. किसी अंक के गुणनफलों के क्रमात् आगे बढ़ती चलनेवाली संख्याओं की स्थिति। जैसे—तीन एकम तीन, तीन दूने छः; तीन तियाँ नौ, तीन चौके बारह आदि। २ उक्त प्रकार की क्रमात् बढ़ती रहनेवाली संख्याओं को सूची। गुणन-सारणी। (मल्टिप्लिकेशन टेबुल) जैसे—पहाड़े की पुस्तक।

क्रि० प्र०—पढ़ना।—पढ़ाना।—लिखना।— लिखाना।

पहाड़िया†—वि०=पहाड़ी।

पहाड़ी—वि० [हिं० पहाल+ई (प्रत्य०)] १. पहाड़-संबंधी। जैसे—पहाड़ी रास्ता। २. पहाड़ पर मिलने, रहने या होनेवाला। जैसे—पहाड़ी वृक्ष, पहाड़ी व्यक्ति। ३. जिसमें पहाड़ हो। जैसे—पहाड़ी देश। ४. पहाड़ पर रहनेवाले लोगों से संबंध रखनेवाला। जैसे—पहाड़ी पहनावा, पहाड़ी बोली।

पुं० १. पहाड़ पर रहनेवाले व्यक्ति। जैसे—आज-कल शहर में बहुत से पहाड़ी आये हुए हैं। २. एक प्रकार का बड़ा खीरा।

स्त्री० १. छोटा पहाड़। २. कांगड़े, कुमाऊँ, गढ़वाल आदि पहाड़ी प्रदेशों की बोलियों का वर्ग या समूह। ३. भारत के उत्तर-पश्चिमी पहाड़ों में गाई जानेवाली एक प्रकार की धुन या संगीत-प्रणाली। ४. संगीत में, संपूर्ण जाति की एक रागिनी जो साधारणतः रात के पहले या दूसरे पहर में गाई जाती है। ५. एक सुगंधित वनस्पति।

पहान†—पुं०=पाषाण (पत्थर)।

पहार—पुं० [स्त्री० अल्पा० पहारी]=पहाड़।

पहारना—स०=प्रहारना (प्रहार करना)।

पहारी† — स्त्री०=पहाड़ी।

पहारू† —पुं०=पहरेदार।

पहासरा—पुं० [?] १. पौ फटने का समय। तड़का। २. प्रकाश। रोशनी। उदा०—चंद के पहासरे में आँगन में ठाढ़ी भई, आली तेरी जोति किधौं चाँदनी छिपाई है।—गंग।

पहि—अव्य० [सं० परं] पर। परंतु। उदा०—पहि किम पूजै पांगुलौ।—प्रिथीराज।

पहिआ†—पुं० [हिं० पाह=पथ] १. रास्ता चलनेवाला। पथिक। बटोही। २. अतिथि। अभ्यागत। मेहमान। उदा०—आवत पहिआ खूधै जाहि।—कबीर। ३. जामाता। दामाद।

पुं०=पहिया।

पहिचान—स्त्री०=पहचान।

पहिचानना—स०=पहचानना।

पहिती†—स्त्री० [सं० प्रहति=सालन] पकाई हुई दाल।

पहिनना—स०=पहनना।

पहिना—स्त्री० [सं० पाठीन] एक प्रकार की मछली।

पहिनाना† स०=पहनाना।

पहिनावा—पुं०=पहनावा।

पहिप†—पुं०=पथिक।

पहियाँ†—अव्य०='पहँ' (पास)।

पहिया—पुं० [सं० पथ्य, प्रा० पह्य से पहिय] १. गाड़ी, यान आदि का वह नीचेवाला मुख्य आधार जो गोलाकार होता और धुरी पर घूमता है तथा जिसके धुरी पर घूमने पर गाड़ी या यान आगे बढ़ता है। २. यंत्रों आदि में लगा हुआ उक्त प्रकार का गोलाकार चक्कर जिसके घूमने से उस यंत्र को कोई क्रिया सम्पन्न होती है। चक्कर। (ह्वील)

पुं० पहिआ (पथिक)।

पहिरना†—स०=पहनना।

पहिराना†—स०=पहनाना।

पहिरावना†—स०=पहनाना।

पहिरावनी—स्त्री०=पहरावनी।

पहिल†—वि०=पहला।

क्रि० वि०=पहले।

स्त्री०=पहल।

पहिला†—वि०=पहला।

पहिले—अव्य०=पहले।

पहिलौठा—वि० [स्त्री० पहिलौठी]=पहलौठा।

पहीत—स्त्री०=पहिती।

पहुँ—पुं० [सं० पिय ?] १. पति। २. प्रियतम।

पहुँच—स्त्री० [हिं० पहुँचना] १. पहुँचने की क्रिया या भाव। २. किसी के कहीं पहुँचने को भेजी जानेवाली सूचना। जैसे—अपनी पहुँच तुरंत भेजना। ३. ऐसा स्थान जहाँ तक किसी की गति हो सकती हो या कोई पहुँच सकता हो। जैसे—यह तसवीर बहुत ऊँची टँगी है, तुम्हारे हाथ की पहुँच उस तक नहीं होगी (या न हो सकेगी)। ४. किसी स्थान तक पहुँचने की योग्यता, शक्ति या सामर्थ्य। पकड़। जैसे—वह स्थान बड़े बड़ों की पहुँच के बाहर है। ५. किसी विषय का होनेवाला ज्ञान या परिचय। ६. अभिज्ञता की सीमा। ज्ञान की सीमा।

पहुँचना—अ० [सं० प्रभूत, प्रा० पहुँच्च] १. (वस्तु अथवा व्यक्ति का) एक बिंदु से चलकर अथवा और किसी प्रकार दूसरे बिन्दु पर (बीच का

अवकाश पार करके) उपस्थित, प्रस्तुत या प्राप्त होना। जैसे—(क) रेलगाड़ी का दिल्ली पहुँचना। (ख) बड़ी की छोटी सूई का १२ पर पहुँचना। (ग) आदमी का घर या स्वर्ग पहुँचना। २. किसी से भेंट आदि करने के लिए उसके यहाँ जाकर उपस्थित होना।

पद-पहुँचा हुआ=(क) जिसके संबंध में यह माना जाता हो कि वह सिद्धि प्राप्त करके ईश्वर तक पहुँच गया है। (ख) किसी काम या बात में पूर्ण रूप से दक्ष या पारंगत। किसी बात के गूढ़ रहस्यों या मूल तत्त्वों तक का पूरा ज्ञान रखनेवाला।

३. किसी के द्वारा भेजी हुई चीज का किसी व्यक्ति को मिलना या प्राप्त होना। जैसे—पत्र या संदेश पहुँचना। ४. (किसी चीज का) किसी रूप में मिलना या प्राप्त होना। जैसे—आघात या दुःख पहुँचना, फायदा पहुँचना। ५. फैलने या फैलाये जाने पर किसी चीज का किसी सीमा तक जाना या किसी दूसरी चीज को छूना अथवा पकड़ लेना। जैसे—(क) आग का जंगल की एक सीमा से दूसरी सीमा तक पहुँचना। (ख) हाथ का छीके तक पहुँचना। ६. मान, मात्रा, संख्या आदि में बढ़ते-बढ़ते या घटते-घटते किसी विशिष्ट स्थिति को प्राप्त होना। जैसे—(क) हमारे यहाँ गेहूँ की उपज ५० मन प्रति बीघे तक जा पहुँची है। (ख) लड़का आठवें दरजे में पहुँच गया है। (ग) ताप मान अभी ११० तक ही पहुँचा है। ७. बढ़कर किसी के तुल्य या बराबर होना। जैसे—अब तुम भी उनके बराबर पहुँचने लगे हो। ८. एक दशा या रूप से दूसरी दशा या रूप को प्राप्त होना। जैसे—जान जोखिम में पहुँचना। ९. प्रविष्ट होना। घुसना। जैसे—वह भी किसी न किसी तरह अंदर पहुँच गया। १०. किसी चीज का किसी दूसरी चीज से प्रभावित होना। जैसे—कपड़ों में सील पहुँचना। ११. लाक्षणिक अर्थ में, किसी प्रकार के तत्त्व, भाव, मनःस्थिति, रहस्य आदि को ठीक-ठीक जानने में समर्थ होना। जैसे—यह बहुत गंभीर विषय है, इस तक पहुँचना सहज नहीं है।

पहुँचा—पुं० [सं० प्रकोष्ठ अथवा हिं० पहुँचना] १. हाथ की कुहनी के नीचे और हथेली के बीच का भाग। कलाई। गट्टा। मणिबंध।

मुहा०—**(किसी का) पहुँचा पकड़ना**=बलपूर्वक किसी को कोई काम करने के लिए उसे रोक रखने के लिए उसकी कलाई पकड़ना। जैसे—वह तो राह-चलते लोगों से पहुँचा पकड़कर माँगने (या लड़ने) लगता है।

कहा०—**उँगली पकड़ते, पहुँचा पकड़ना**=किसी को जरा-सा अनुकूल या प्रसन्न देखकर अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए उसके पीछे पड़ जाना।

२. टखने के कुछ ऊपर तथा पिंडली से कुछ नीचे का भाग। ३. पाजामे आदि की मोहरी का विस्तार। (पश्चिम)

पहुँचाना—स० [हिं० पहुँचा का स०] १. किसी चीज को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना। जैसे—(क) उनके यहाँ मिठाई (या पत्र) पहुँचा दो। (ख) यह ताँगा हमें स्टेशन तक पहुँचायेगा। २. किसी व्यक्ति के संग चलकर उसे कहीं तक छोड़ने जाना। जैसे—नौकर का बच्चे को स्कूल पहुँचाना। ३. किसी को किसी विशिष्ट स्थिति में प्राप्त कराना। किसी विशेष अवस्था या दशा तक ले जाना। जैसे—उन्हें इस उच्च पद तक पहुँचानेवाले आप ही हैं। ४. किसी रूप में उपस्थित, प्राप्त या विद्यमान कराना। जैसे—किसी को कष्ट या लाभ पहुँचाना; आँखों में ठंडक पहुँचाना; कहीं कोई खबर पहुँचाना। ५. प्रविष्ट करना।

पहुँची—स्त्री० [हिं० पहुँचा] १. कलाई पर पहनने का एक तरह का गहना। जिसमें बहुत से गोल या कँगूरेदार दाने कई पत्तियों में गूँथे हुए होते हैं। २. प्राचीन काल में युद्ध के समय कलाई पर पहना जानेवाला एक तरह का आवरण। ३. पायल। पाजेब। (पश्चिम)

पहु†—पुं०=प्रभु।

स्त्री०=पौ (प्रातःकाल का हलका प्रकाश)।

पहुड़ना†—अ० १.=पौड़ना (तैरना)। २.=पौढ़ना (लेटना)।

पहुतना—अ०=पहुँचना। (राज०)

पहुनई—स्त्री०=पहुनाई।

पहुना†—पुं०=पाहुना।

पहुनाई—स्त्री० [हिं० पाहुना+आई (प्रत्य०)] १. पाहुने के रूप में कहीं ठहरने तथा सेवा-सत्कार आदि कराने की क्रिया या भाव।

मुहा०—**पहुनाई करना**=बराबर दूसरों के यहाँ पाहुन या अतिथि बनकर खाते और रहते फिरना। दूसरों के आतिथ्य पर चैन से दिन बिताना।

२. अतिथि का भोजन आदि से किया जानेवाला सत्कार। आतिथ्य-सत्कार।

पहुनी—स्त्री० [हिं० पाहुना का स्त्री०] १. रखेली स्त्री। २. समधी की स्त्री। समधिन। ३. दे० 'पहुनाई'।

पहुन्नी—स्त्री० [देश०] वह पच्चर जो लकड़ी चीरते समय चिरे हुए अंश के बीच में इसलिए लगाया जाता है कि आरा चलाने के लिए बीच में यथेष्ट अवकाश रहे।

पहुप†—पुं०=पुष्प।

पहुमि (मी)*—स्त्री०=पुहमी (पृथ्वी)।

पहुरना—पुं० [स्त्री० पहुरनी]=पाहुना।

पहुरी†—स्त्री० [देश०] संगतराशों की एक तरह की चिपटी टाँकी जिससे वे गड़े हुए पत्थर चिकने करते हैं। मठरनी।

पहुला†—पुं० [सं० प्रफुल] १. कुमुद। कोईं। उदा०—पहुला हारु हियैं लसै सन की बेंदी भाल।—बिहारी। २. गुलाब का फूल।

पहुवी*=पुहमी (पृथ्वी)। (राज०)

पहेटना—स० [सं० प्रखेट, प्रा० पहेट=शिकार] १. किसी को पकड़ने के लिए उसका पीछा करना। २. कोई कठिन काम परिश्रम-पूर्वक समाप्त करना। ३. औजारों की धार तेज करने के लिए उन्हें पत्थर या सान पर रगड़ना। ४. अच्छी तरह या डटकर खाना। खूब भर-पेट भोजना करना। ५. अनुचित रूप से ले लेना।

पहेरी†—स्त्री०=पहेली।

पुं०=प्रहरी।

पहेली—स्त्री० [सं० प्रहेलिका] १. प्रस्ताव के रूप में होनेवाली एक प्रकार की प्रश्नात्मक उक्ति या कथन जिसमें किसी चीज या बात के लक्षण बतलाते हुए अथवा घुमाव-फिराव से किसी प्रसिद्ध बात या वस्तु का स्वरूप मात्र बतलाते हुए यह कहा जाता है कि बतलाओ कि वह कौन सी बात या वस्तु है। (रिडल)

क्रि० प्र०—बुझाना।—बूझना।

विशेष—पहेलियाँ प्रायः दूसरों के ज्ञान या बुद्धि की परीक्षा के लिए होती हैं, और सभी जातियों तथा देशों में प्रचलित होती हैं। यह आर्थी और शाब्दी दो प्रकार की होती हैं। यथा—'फाट्यो पेट, दरिद्री नाम। उत्तम घर में वाको ठाम।' शंख की आर्थी पहेली है, और 'उस आधा आधा रफि होई। आधा-साधा समझै सोई।' अशरफी की शाब्दी पहेली है। हमारे यहाँ वैदिक युग में पहेली को 'ब्रह्मोदय' कहते थे; और अश्वमेध आदि यज्ञों में बलि कर्म से पहले ब्राह्मण तथा होता लोगों से ब्रह्मोदय के उत्तर पूछते अर्थात् पहेलियाँ बुझाते थे। भारत की कई (आदिम) जातियों में अब भी विवाह के समय पहेलियाँ बुझाने की प्रथा प्रचलित है।

२. कोई ऐसी कठिन या गूढ़ बात अथवा समस्या जिसका अभिप्राय, आशय, तत्त्व या निराकरण सहज में न होता हो और जिसे सुनकर लोगों की बुद्धि चकरा जाती हो। दुर्ज्ञेय और विकट प्रश्न या बात। (रिडल, उक्त दोनों अर्थों में) ३. अधिक विस्तार में घुमा-फिराकर तथा अस्पष्ट रूप में कही हुई कोई बात।

मुहा०—पहेली बुझाना=बहुत घुमाव-फिराव से ऐसी बात कहना जो लोगों को चक्कर में डाल दे। जैसे—अब पहेलियाँ बुझाना छोड़ो, और साफ-साफ बतलाओ कि तुम क्या चाहते हो (या वहाँ क्या हुआ)।

पह्लव—पुं० [सं०] १. ईरान या फारस देश का प्राचीन निवासी। २. ईरान या फारस में रहनेवाली एक प्राचीन जाति। ३. ईरान या फारस देश।

पह्लवी—स्त्री० [फा०] आर्य-परिवार की एक प्राचीन भाषा जिसका प्रचलन ईरान या फारस देश में ईसवी तीसरी, चौथी और पाँचवीं शताब्दियों में था।

पह्लिका—स्त्री० [सं० अप√ह्+ड+कन्, इत्व, अकार-लोप] जल-कुंभी।

पाँ†—पुं०=पाँव।

पाँइ—पुं०=पाँव।

मुहा०*—पाँइ पारना=दे० 'पाँव' के अंतर्गत 'पाँव पारना' मुहा०।

पाँइता†—पुं०=पायँता (पैताना, चारपाई का)।

पाँउ*—पुं०=पाँव।

पाँउरी—*स्त्री०=पाँवड़ी।

पाँओं†—पुं०=पाँव।

पाँक (ा)†—पुं०=पंक (कीचड़)।

पांक्त—वि० [सं० पंक्ति+अञ्] १. पंक्ति-संबंधी। पंक्ति का। २. पंक्ति के रूप में होनेवाला।

पांक्तेय—वि० [सं० पंक्ति+ढक्—एय] [पंक्ति+ष्यञ्] (व्यक्ति) जो अपने अथवा किसी विशिष्ट वर्ग के लोगों के साथ एक पंक्ति में बैठकर भोजन कर सकता हो।

पांक्त्य—वि० [सं० पंक्ति+ष्यञ्]=पांक्तेय।

पाँख (ड़ा)†—पुं०=पंख (पक्षियों के)।

†पुं०=पख (पखवाड़ा)।

पाँखड़ी†—स्त्री०=पंखड़ी।

पाँखी—वि० [हिं० पंख] पंख या पंखोंवाला।

स्त्री० १. पक्षी। २. फतिगा। ३. काठ का एक उपकरण जिससे खेतों में क्यारियाँ बनाई जाती हैं। ४. दे० 'पाँचा'।

पाँखुरी—स्त्री०=पंखड़ी।

पाँग—पुं० [सं० पंक] वह नई जमीन जो किसी नदी के पीछे हट जाने से उसके किनारे पर निकलती है। कछार। खादर। गंग-बरार।

†पुं० [?] जुलाहों के करघे का ढाँचा।

पाँगल—पुं० [सं० पांगुल्य] ऊँट। (डिं०)

पाँगा—पुं०=पाँगा नमक।

पाँगा नमक—पुं० [सं० पंक, हिं० पाँग+नोन]=समुद्री नमक।

पाँगा नोन—पुं०=पाँगा नमक।

पाँगुर—स्त्री० [हिं० पाँव+उँगली] पैर की कोई उँगली।

†वि०=पंगुल।

पाँगुरना—अ० [?] पनपना।

पाँगुरा—वि०=पांगुर (पंगुल)।

पाँगुल—वि०=पंगुल।

पांगुल्य—पुं० [सं० पंगुल+ष्यञ्] पंगुल होने की अवस्था या भाव। लंगड़ापन।

पाँच—वि० [सं० पंच] जो गिनती में चार से एक अधिक अथवा छः से एक कम हो।

मुहा०—(किसी की) पाँचों उँगलियाँ घी में होना=हर काम में किसी को सफलता मिलना या लाभ होना। **पाँचों सवारों में नाम लिखाना या पाँचवें सवार बनना**=जबरदस्ती अपने को अपने से श्रेष्ठ मनुष्यों की पंक्ति या श्रेणी में गिनना या समझना। औरों के साथ अपने को भी श्रेष्ठ गिनना। बड़ा बतलाने या समझने लगना।

पद—पाँच जने की जमात=घर-गृहस्थी और परिवार।

पुं० [सं० पंच] १. पाँच का सूचक अंक या संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—५। २. जात-बिरादरी या समाज के अच्छे या मुख्य लोग। ३. सब अच्छे आदमी। उदा०—जो पाँचहिं मत लागै नीका।—तुलसी।

वि० बहुत अधिक चालाक या होशियार। उदा०—मेरे फंदे में एक भी न फँसा। पाँच वल्लो थी जिससे चार उलझे।—जान साहब।

पाँचक—पुं०, स्त्री०=पंचक।

पांचकपाल—वि० [सं० पंचकपाल+अण्] पंचकपाल संबंधी।

पांचजनी—स्त्री० [सं० पंचजन+अण्—ङीप्] भागवत के अनुसार पंचजन नामक प्रजापति की असिकी नामक कन्या का दूसरा नाम।

पांचजन्य—पुं० [सं० पचंजन+ण्य] १. पंचजन राक्षस का वह शंख जो भगवान कृष्ण उठाकर ले गये थे और स्वयं बजाया करते थे। २. विष्णु के शंख का नाम। ३. जम्बू द्वीप का एक नाम।

पांचदश्य—पुं० [सं० पंचदशन्+ण्य] पंद्रह की संख्या।

पांचनद्—वि० [सं० पंचनद+अण्] पंचनद या पंजाब-संबंधी।

पुं० १. पंजाब का निवासी। २ पंजाब।

पाँचपंच—पुं० बहु० [हिं०] सब या मुख्य मुख्य लोग। जैसे—पाँच पंच जो कुछ कहें, वह हम मानने को तैयार हैं।

पांच-भौतिक—वि० [सं० पंचभूत+ठक्—इक] १. जिसका संबंध

पंचभूतों से हो। २. पंच-भूतों से मिलकर बना हुआ। जैसे—पांच भौतिक शरीर।

पांचयज्ञिक—वि० [सं० पंचयज्ञ+ठक्—इक] पंच यज्ञ-संबंधी। पुं० पाँच प्रकार के यज्ञों में से प्रत्येक।

पांचर—पुं० [सं० पंजर] कोल्हू के बीच में जड़े हुए लकड़ी के वे छोटे टुकड़े जो गन्ने के टुकड़ों को दबाने के लिए लगाये जाते हैं। पुं०=पच्चर।

पांचरात्र—पुं० [सं० पंचरात्रि+अण्] आधुनिक वैष्णव मत का एक प्राचीन रूप जिसमें परम, तत्त्व मुक्ति, मुक्ति योग और विषय (संसार) इन पाँच रात्रों (ज्ञानों) का निरूपण होता था। यह भागवत धर्म की दो प्रधान शाखाओं में से एक था।

पांचवर्षिक—वि० [सं० पंचवर्ष+ठञ्—इक] पाँच वर्षों में होनेवाला। पंचवर्षीय।

पाँचवाँ—वि० [हिं० पाँच+वाँ (प्रत्य०)] [स्त्री० पाँचवीं] क्रम या गिनती में पाँच के स्थान पर पड़नेवाला।

पांचशाब्दिक—पुं० [सं० पंचशब्द+ठक्—इक] करताल, ढोल, वीन, घंटा और भेरी ये पाँच प्रकार के बाजे।

पाँचा—पुं० [हिं० पाँच] खेत का एक उपकरण जिसमें एक डंडे के साथ छोटी छोटी फूलकड़ियां लगी रहती हैं। यह प्रायः कटी हुई फसल या घास-भूसा इकट्ठा करने के काम आता है।

पांचार्थिक—पुं० [सं० पंचार्थ+ठन्—इक, वृद्धि (बा०)] शैव।

पांचाल—वि० [सं० पंचाल+अण्] १. पंचाल देश से संबंध रखनेवाला। पंचाल का। २. पंचाल देश में होनेवाला।
पुं० १. पंचाल जाति के लोगों का देश जो भारत के पश्चिमोत्तर खंड में था। २. पंचाल जाति के लोग। ३. प्राचीन भारत में, बढ़इयों, नाइयों, जुलाहों, धोबियों और चमारों के पाँचों वर्गों का समूह।

पांचालक—वि० [सं० पांचाल+कन्] पंचालवासियों के संबंध का। पुं० पंचाल देश का राजा।

पांचाल-मध्यमा—स्त्री० [सं०] भारतीय नाट्य कला में, एक प्रकार की प्रवृत्ति या बात-चीत, वेश-भूषा आदि का ढंग, प्रकार या रूप जो पांचाल शूरसेन, कश्मीर, वाह्लीक, मद्र आदि जनपदों की रहन-सहन आदि के अनुकरण पर होता था।

पांचालिका—स्त्री० [सं० पांचाली+कन्+टाप्, ह्रस्व] =पंचालिका।

पांचाली—स्त्री० [सं० पंचाल+अण्—ङीप्] १. पंचाल देश की स्त्री। २. पाँचों पांडवों की पत्नी द्रौपदी जो पांचाल देश की राजकुमारी थी। ३. साहित्यिक रचनाओं की एक विशिष्ट रीति या शैली जो मुख्यतः माधुर्य, सुकुमारता आदि गुणों से युक्त होती है। इसमें प्रायः छोटे-छोटे समास और कर्ण-मधुर पदावलियाँ होती हैं। किसी किसी के मत से गौड़ी और वैदर्भी वृत्तियों के सम्मिश्रण को भी पांचाली कहते हैं। ४. संगीत में (क) स्वर-साधन की एक प्रणाली; और (ख) इन्द्र ताल के छः भेदों में से एक। ५. छोटी पीपल।

पांची†—स्त्री० [हिं० पच्ची का पुराना रूप] रत्नों आदि के जड़ाव का काम। पच्चीकारी। उदा०—जाग्रत सपनु रहत ऊपर मनि, ज्यों कंचन संग पांची।—हित हरिवंश।
स्त्री० [देश०] एक तरह की घास।

पाँचेक†—वि० [हिं० पाँच+एक] १. पाँच के लगभग। २. थोड़े-से। जैसे—वहाँ पाँचेक आदमी आये थे।

पाँचैं—स्त्री० [हिं० पंचमी] किसी पक्ष की पाँचवीं तिथि। पंचमी।

पाँछना—स० १=पाछना। २. पोंछना का अनु०।

पाँज†—स्त्री० [सं० पाश] बाहु-पाश।
वि० [हिं० पाँव] (जलाशय या नदी) जिसमें इतना कम पानी हो कि यों ही पाँव पाँव चलकर पार किया जा सके।
स्त्री० छिछला जलाशय या नदी।
पुं० पुल। सेतु। उदा०—जनक-सुता हितु हत्यो लंक-पति, बाँध्यों सागर पाँज।—सूर।
पुं० [हिं० पाँजना] पाँजने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

पाँजना—स० [सं० प्रण द्रध, प्रा० पणज्झ पंज्झ] धातुओं के टुकड़ों को जोड़ने के लिए उनमें टाँका लगाना। झालना।

पाँजर—अव्य० [सं० पंजा] पास। समीप।
पुं० १. निकटता। सामीप्य। २. दे० 'पंजर'।

पांजी†—स्त्री० १.=पाँज। २. =पंजी।

पाँझ—स्त्री०=पाँज।

पाँडक—पुं०=पंडुक (पेंडुकी)।

पांडर—पुं० [सं०√पण्ड् (गति)+अर, दीर्घ] १. कुंद का वृक्ष और फूल। २. सफेद रंग। ३. सफेद रंग की कोई चीज। ४. मरुआ। ५. पानड़ी। ६. एक प्रकार का पक्षी। ७. महाभारत के अनुसार ऐरावत के कुल में उत्पन्न एक हाथी। ८. पुराणानुसार एक पर्वत जो मेरु पर्वत के पश्चिम में स्थित कहा गया है।

पांडर-पुष्पिका—स्त्री० [सं० ब० स०, कप्, टाप्, इत्व] सातला वृक्ष।

पाँडरा—पुं० [देश०] एक प्रकार की ईख।

पांडव—वि० [सं० पांडु+अण्] पांडु संबंधी। पांडु का।
पुं० १. कुंती और माद्री के गर्भ से उत्पन्न राजा पांडु के ये पाँचों पुत्र—युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव। २. प्राचीन काल में पंजाब का एक प्रदेश जो वितस्ता (झेलम) नदी के किनारे था। ३. उक्त प्रदेश का निवासी। ४. रहस्य संप्रदाय में, पाँचों इंद्रियाँ।

पांडव-नगर—पुं० [सं० ष० त०] हस्तिनापुर।

पांडवाभील—पुं० [सं० पांडव-अभी, ष० त०,√ला (लेना)+क] श्रीकृष्ण।

पांडवायन—पुं० [सं० पांडव-अयन, ब० स०] श्रीकृष्ण।

पांडविक—पुं० [सं० पांडु+ठञ्—इक] एक तरह की गौरैया।

पांडवीय—वि० [सं० पांडव+छ—ईय] पांडु के पुत्रों से संबंध रखनेवाला। पांडवों का।

पांडवेय—पुं० [सं० पांडु+अण्+ङीप्+ढक्—एय] १. पांडव। २. राजा परीक्षित का एक नाम।

पांडित्य—पुं० [सं० पंडित+ष्यञ्] १. पंडित होने की अवस्था या भाव। २. पंडित या विद्वान् को होनेवाला ज्ञान। विद्वत्ता।

पांडोस—स्त्री० [?] तलवार। (डिं०)

पांडु—वि० [सं०√पंड् (गति)+कु, नि० दीर्घ] [भाव० पांडुता] हलके पीले रंग का।
पुं० १. पांडु फली। २. सफेद रंग। ३. कुछ लाली

लिये पीला रंग। ४. त्वचा के पीले पड़ने का एक रोग। पीलिया। ५. हस्तिनापुर के प्रसिद्ध राजा जिनके युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव ये पाँच पुत्र थे। ६. सफेद हाथी। ७. एक नाग का नाम। ८. परवल।

पाँडुआ†—पुं० [सं०] वह जमीन जिसकी मिट्टी में बालू भी मिला हो। दोमट जमीन।

पांडु-कंटक—पुं० [ब० स०] अपामार्ग। चिचड़ा।

पांडु-कंबल—पुं० [कर्म० स०] एक प्रकार का सफेद रंग का पत्थर।

पांडुकंबली (लिन्)—स्त्री० [सं० पांडुकंबल+इनि] ऊनी कंबल से आच्छादित गाड़ी।

पाँडुक†—पुं०=पंडुक (पेंडकी)।

पांडुक†—पुं० [सं० पाण्डु+कन्] १. पीला रंग। २. पीलिया रोग। ३. पांडुराजा।

पांडु-कर्म (र्मन्)—पुं० [ष० त०] सुश्रुत के अनुसार व्रण-चिकित्सा का एक अंग जिसमें फोड़े के अच्छे हो जाने पर उसके काले वर्ण को औषधि के प्रयोग से पीला बनाते हैं।

पांडु-क्षमा—स्त्री० [ब० स० ?] हस्तिनापुर का एक नाम।

पांडु-चित्र—पुं० [सं०] आलेख।

पांडु-तरु—पुं० [कर्म० स०] धौ का पेड़।

पांडुता—स्त्री० [सं० पांडु+तल्+टाप्] पांडु होने की अवस्था या भाव। पीलापन।

पांडु-तीर्थ—पुं० [ष० त०] पुराणानुसार एक तीर्थ।

पांडु-नाग—पुं० [उपमि० स०] १. पुन्नाग वृक्ष। २. [कर्म० स०] सफेद हाथी। ३. सफेद साँप।

पांडु-पत्री—स्त्री० [ब० स०, ङीप्] रेणुका नामक गंध-द्रव्य।

पांडु-पुत्र—पुं० [ष० त०] राजा पांडु का पुत्र। पाँचों पांडवों में से प्रत्येक।

पांडु-पृष्ठ—वि० [ब० स०] १. जिसकी पीठ सफेद हो। २. लाक्षणिक अर्थ में, (वह व्यक्ति) जिसके शरीर पर कोई शुभ लक्षण न हो। ३. अकर्मण्य। निकम्मा।

पांडु-फला—पुं० [ब० स०, टाप्] परवल।

पांडु-फली—स्त्री० [ब० स०, ङीप्] एक तरह का छोटा क्षुप।

पांडु-मृत्तिका—स्त्री० [कर्म० स०] १. खड़िया। दुधिया मिट्टी। २. राम-रज नाम की पीली मिट्टी।

पांडु-रंग—पुं० [सं० पांडुर-अंग, ब० स०, शक०, पररूप] १. एक प्रकार का साग जो वैद्यक के अनुसार स्वाद में तिक्त और कृमि, श्लेष्मा, कफ आदि का नाश करनेवाला माना जाता है। २. पुराणानुसार विष्णु के एक अवतार।

पांडुर—वि० [सं० पांडु+र] १. पीला। जर्द। २. सफेद। श्वेत। पुं० १. धौ का पेड़। २. सफेद ज्वार। ३. कबूतर। ४. बगला। ५. सफेद खड़िया। ६. कामला रोग। ७. सफेद कोढ़। ८. कार्तिकेय के एक गण का नाम। ९. सर्प। साँप। १०. साधु-संतों की आध्यात्मिक परिभाषा में, अज्ञान।

पांडुरक—वि० [सं० पाण्डुर+कन्] पांडु रंग का। पीला। पुं० १. पीला रंग। २. पीलिया।

पांडुर-द्रुम—पुं० [सं० कर्म० स०] कुटज। कुड़ा। कुरैया।

पांडु-पृष्ठ—पुं०=पांडुपृष्ठ।

पांडुर-फली—स्त्री० [ब० स०, ङीप्] एक प्रकार का छोटा क्षुप।

पांडुरा—स्त्री० [सं० पांडुर+टाप्] १. मषवन। माषपर्णी। २. ककड़ी। ३. बौद्धों की एक देवी या शक्ति।

पांडु-राग—पुं० [ब० स०] दौना नाम का पौधा। पुं० [कर्म० स०] सफेद रंग। सफेदी।

पांडुरिमा—स्त्री० [सं० पांडुर+इमनिच्] हलका पीलापन।

पांडुरेक्षु—पुं० [सं० पांडुर-इक्षु, कर्म० स०] हलके पीले रंग की ईख।

पांडुलिपि—स्त्री० [सं०] १. पुस्तक, लेख आदि की हाथ की लिखी हुई वह प्रति जो छपने को हो। (मैनस्क्रिप्ट) २. दे० 'पांडुलेख'।

पांडु-लेख—पुं० [कर्म० स०] १. हाथ से लिखा हुआ वह आरंभिक लेख जिसमें काँट-छाँट, परिवर्तन आदि होने को हो। २. उक्त का काट-छाँट कर तैयार किया हुआ वह रूप जो प्रकाशित किये या छापा जाने को हो। (ड्राफ्ट) ३. पांडुलिपि।

पांडु-लेखक—पुं० [ष० त० ?] वह जो लेख आदि की पांडु-लिपि लिखकर तैयार करता हो। (ड्राफ्ट्समन)

पांडु-लेखन—पुं० [ष० त० ?] लेख्य आदि की पांडुलिपि तैयार करने का काम। (ड्राफ्टिंग)

पांडु-लेख्य—पुं० [कर्म० स०] १.=पांडुलिपि। २.=पांडुलेख।

पांडु-लोमश—वि० [कर्म० स०,+श] [स्त्री० पांडुलोमशा] सफेद रोएँ-वाला। जिसके रोएँ या बाल सफेद हों।

पांडु-लोमशा—स्त्री० [सं० पांडुलोमश्+टाप्] मषवन। माषपर्णी।

पांडु-लोमा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] पांडु-लोमशा। (दे०)

पांडु-शर्करा—स्त्री० [ब० स०] प्रमेह रोग का एक भेद।

पांडुशर्मिला—स्त्री० [सं०] द्रौपदी।

पांडू—स्त्री० [सं० पांडु=पीला] १. हलके पीले रंग की मिट्टी। २. ऐसा कीचड़ जिसमें बालू भी मिला हो। ३. ऐसी भूमि जिसमें वर्षा के जल से ही उपज होती हो। बारानी।

पाँड़े—पुं० [सं० पंडा या पंडित] १. दे० 'पाण्डेय'। २. अध्यापक। शिक्षक। ३. भोजन बनानेवाला ब्राह्मण। रसोइया। ४. पंडित। विद्वान्। (क्व०)

पांडेय—पुं० [सं० पंडा या पंडित] १. कान्यकुब्ज और सरयूपारी ब्राह्मणों की शाखाओं का अल्ल या उपाधि। २. कायस्थों की एक शाखा। ३. दे० 'पाँड़े'।

पाँत†—स्त्री०=पंक्ति।

पाँतरना—अ० [सं० पीत्रल] १. गलती या भूल करना। २. मूर्खता करना। उदा०—प्रमणै पित मात पूत मत पांतरि।—प्रिथीराज।

पाँतरिया—वि० [सं० पत्रल] जिसकी बुद्धि ठिकाने न हो। उदा०—पांतरिया माता इ पिता।—प्रिथीराज।

पाँति—स्त्री० [सं० पांक्ति] १. अवली। कतार। पंगत। २. बिरादरी के वे लोग जो साथ बैठकर भोजन कर सकते हों।

पांथ—वि० [सं० पथिन्+अण्, पन्थ-आदेश] १. पथिक। २. वियोगी। विरही। पुं० सूर्य।

*पुं०=पंथ (रास्ता)।

पांथ-निवास—पुं० [ष० त०] =पांथ-शाला।

पांथ-शाला—स्त्री० [ष० त०] पथिकों और यात्रियों के ठहरने के लिए रास्ते में बनी हुई जगह (इमारत या घर)। जैसे—धर्मशाला, सराय, होटल आदि।

पाँपणि*—स्त्री० [हिं० पश्चिमी हिं० पपनी] पलक। उदा०—पाँपणि पंख सँवारि नवी परि।—प्रिथीराज।

पाँय—पुं०=पाँव।

पाँयचा—पुं० [फा०] १. पाखानों आदि में बना हुआ पैर रखने के वे ईंटें या पत्थर जिन पर पैर रखकर शौच से निवृत्त होने के लिए बैठते हैं। २. पाजामें की मोहरी का वह अंश जो घुटनों के नीचे तक रहता है।

पाँयता†—पुं०=पैंताना।

पाँव—पुं० [सं० पाद, प्रा० पाय, पाव] १.जीव-जंतुओं, पशुओं और विशेषतः मनुष्य के नीचेवाले वे अंग जिनकी सहायता से वे चलते-फिरते अथवा जिनके आधार पर वे खड़े होते हैं। पैर।

पद—**पाँव का खटका**=दे० 'पैर' में 'पैर की आहट।' **पाँव की जूती**=बहुत ही तुच्छ या हीन वस्तु या व्यक्ति। **पाँव की बेड़ी**=ऐसा बंधन जो किसी की स्वच्छंद गति या रहन-सहन में बाधक हो।

मुहा०—(**किसी काम या बात में**) **पाँव अड़ाना**=दे० 'टाँग' के अंतर्गत 'टाँग अड़ाना।' **पाँव उखड़ जाना**=दे० 'पैर' के अंर्तगत 'पैर उखड़ना या उखड़ जाना'। **पाँव उखाड़ना**=दे० 'पैर' के अंतर्गत। **पाँव उठाना**=दे० 'पैर' के अंतर्गत। **पाँव खींचना**=व्यर्थ इधर-उधर आना-जाना या घूमना-फिरना छोड़ देना। **पाँव गाड़ना**=दे० नीचे 'पाँव रोपना'। **पाँव घिसना**=(क) बार-बार कहीं बहुत अधिक आना-जाना। (ख) दे० नीचे 'पाँव रगड़ना'। (**किसी स्त्री के**) **पाँव छुड़ाना**=उपचार, औषध आदि की सहायता से ऐसा उपाय करना कि रुका हुआ मासिक रज-स्राव फिर से होने लगे। (**किसी स्त्री के**) **पाँव छूटना**=(क) स्त्री का मासिकधर्म से या रजस्वला होना। (ख) रोग आदि के कारण असाधारण रूप से और अपेक्षया अधिक समय तक रज-स्राव होता रहना। (**किसी के**) **पाँव छूना**=किसी बड़े का आदर या सम्मान करने के लिए उसके पैरों पर हाथ रखकर नमस्कार या प्रणाम करना। **पाँव ठहरना**=दृढ़तापूर्वक या स्थिर भाव से कहीं खड़े होना। ठहरना या रुकना। **पाँव तोड़कर बैठना**=स्थायी रूप और स्थिर भाव से एक जगह पर रहना और व्यर्थ इधर-उधर आना-जाना बंद कर देना (**किसी के**) **पाँव दबाना या दाबना**=थकावट दूर करने या आराम पहुँचाने के लिए टाँगे दबाना। (**किसी काम या बात में**) **पाँव धरना**= किसी काम में अग्रसर या प्रवृत्त होना। (**किसी के**) **पाँव धरना या पकड़ना**=किसी प्रकार का आग्रह, विनती आदि कहते मनाने के लिये किसी के पाँव पर हाथ रखना। उदा०—अब यह बात यहाँ जानि ऊधौ, पकरति पाँव तिहारे।—सूर। (**किसी जगह**) **पाँव धरना या रखना**=कहीं जाना या जाकर पहुँचना। पैर रखना। जैसे—अब कभी उन के यहाँ पाँव न रखना। (**किसी जगह**) **पाँव धारना**=कृतज्ञतापूर्वक पदार्पण करना। उदा०—धन्य भूमि वन पंथ पहारा। जँह जँह नाथ पाँव तुम धारा।—तुलसी। (**किसी के**) **पाँव धोकर पीना**=(क) चरणामृत लेना। (ख) बहुत अधिक पूज्य तथा मान्य समझकर परम आदर, भक्ति और श्रद्धा के भाव प्रकट करना। **पाँव निकालना**=(क) कहीं चलने या जाने के लिए पैर उठाना या बढ़ाना। (ख) नियंत्रण आदि की उपेक्षा करते हुए कोई नई प्रवृत्ति विशेषतः अनिष्ट या अवांछित प्रवृत्ति के लक्षण दिखलाना। जैसे—तुम तो अभी से पाँव निकालने लगे। (**किसी का**) **पाँव पड़ना**=आगमन होना। आना। जैसे—आपके पाँव पड़ने से यह घर पवित्र हो गया। (**किसी के**) **पाँव पड़ना**=(क) झुककर या पैर छूकर नमस्कार करना। (ख) अपनी प्रार्थना या विनती मनवाने के लिए बहुत ही दीनतापूर्वक आग्रह करना। (**किसी के**) **पाँव पर गिरना**=दे० ऊपर '(किसी के) पाँव पड़ना'। **पाँव पर पाँव रखकर बैठना**=काम-धंधा छोड़ बैठना या पड़े रहना। निठल्ले की तरह बैठना। (**किसी के**) **पाँव पर पाँव रखना**=दूसरे के चरण चिह्नों का अनुकरण करना। किसी का अनुगामी या अनुयायी बनना। (**किसी के**) **पाँव पर सिर रखना**=दे० ऊपर '(किसी के) पाँव पड़ना'। **पाँव पलोटना**=दे० 'पैर' के अंतर्गत 'पैर दबाना'। **पाँव पसारना**=दे० 'पैर' के अंतर्गत 'पैर फैलाना'। **पाँव-पाँव चलना**=पैदल चलना। जैसे—अब कुछ दूर पाँव-पाँव भी चलो। (**किसी को**) **पाँव पारना**=पैरों पड़ने के लिए विवश करना। उदा०—कहाँ तौ ताकों तृन गहाइ कै, जीवत पाइनि पारौं।—सूर। **पाँव पीटना**=(क) बेचैनी या यंत्रणा से पैर पटकना। छटपटाना। (ख) बहुत अधिक दौड़-धूप या प्रयत्न करना। (**किसी के**) **पाँव पूजना**=बहुत अधिक भक्ति या श्रद्धा दिखाते हुए आदर-सत्कार करना। (**वर के**) **पाँव पूजना**=विवाह में कन्या कुल के लोगों का वर का पूजन करना और कन्यादान में योग देना। (**किसी के**) **पाँव फूलना**=भय, शंका आदि से ऐसी मनोदशा होना कि आगे बढ़ने का साहस न हो। (**प्रसूता का**) **पाँव फेरने जाना**=बच्चा हो जाने पर शुभ शकुन में प्रसूता का अपने मायके में कुछ दिनों तक रहने के लिए जाना। (**वधू का**) **पाँव फेरने जाना**=विवाह होने पर ससुराल आने के बाद वधू का पहले-पहल कुछ दिनों तक अपने मायके में रहने के लिए जाना। **पाँव फैलाना**=दे० 'पैर' के अंतर्गत। **पाँव बढ़ाना**=दे० 'पैर' के अंतर्गत। **पाँव बाहर निकालना**=पाँव निकालना। **पाँव रगड़ना**=(क) बहुत दौड़-धूप करना। (ख) कष्ट या पीड़ा से छटपटाना। (**किसी काम या बात के लिए**) **पाँव रोपना**=(क) दृढ़तापूर्वक प्रण या प्रतिज्ञा करना। (ख) हठ करना। अड़ना। (**किसी के**) **पाँव लगना**=पैरों पर सिर रखकर नमस्कार या प्रणाम करना। (**किसी स्थान का**) **पाँव लगा होना**=किसी स्थान से इस रूप में ज्ञात या परिचित होना कि उस पर चल-फिर चुके हों। जैसे—वहाँ का रास्ता हमारे पाँव लगा है, आप से आप ठीक जगह पहुँच जाता हूँ। (**किसी काम या बात से**) **पाँव समेटना**=अलग, किनारे या दूर हो जाना। संबंध न रखना। छोड़ देना। जैसे—अब काम से हमने पाँव समेट लिये।

विशेष—यों 'पाँव' और 'पैर' एक दूसरे के पर्याय या समानक ही हैं, फिर भी 'पाँव' पुराना और पूर्वी शब्द है, तथा 'पैर' अपेक्षया आधुनिक और पश्चिमी शब्द है। अधिकतर पुराने प्रयोग या मुहावरे 'पैर' से संबद्ध हैं, और 'पाँव' की तुलना में 'पैर' अधिक प्रचलित तथा शिष्ट-सम्मत हो गया है। फिर भी बोल-चाल में लोग यह अंतर न जानने या न समझने के कारण दोनों शब्दों के मिले-जुले प्रयोग करते हैं जिससे

दोनों के मुहावरे भी बहुत कुछ मिल-जुल गये हैं। यहाँ दोनों के कुछ विशिष्ट प्रयोगों और मुहावरों से कुछ अंतर रखा गया है। अतः पाँव के शेष प्रयोगों और मुहावरों के लिए 'पैर' के मुहावरे देखने चाहिए। २. कोई ऐसा आधार जिस पर कोई चीज या बात टिकी या ठहरी रहे।
मुहा०—पाँव कट जाना=आधार या आश्रय नष्ट हो जाना। **(किसी के) पाँव न होना**=(क) ऐसा कोई आधार या आश्रय न होना जिस पर कोई टिक या ठहर सके। जैसे—इस बात का न कोई सिर है न पाँव। (ख) खड़े रहने या ठहरने की शक्ति न होना। जैसे—चोर के पाँव नहीं होते, अर्थात् उसमें ठहरने या सामने आने का साहस नहीं होता।

पाँव-चप्पी—स्त्री० [हिं० पाँव+चापना=दबाना] पैर दबाने की क्रिया या भाव।

पाँवचा—पुं०=पायँचा।

पाँवड़ा—पुं० [हिं० पाँव+ड़ा (प्रत्य०)] [स्त्री० पाँवड़ी] १. वह कपड़ा जो किसी बड़े और पूज्य व्यक्ति के मार्ग में इस उद्देश्य से बिछाया जाता है कि वह इस पर से हो कर चले। २. वह कपड़ा या ऐसी ही और कोई चीज जो पैर पोंछने के लिए कहीं पड़ा या बिछा रहता हो। पाँवदान। ३. दे० 'पाँवड़ी'।

पाँवड़ी—स्त्री० [हिं० पाँव+ड़ी (प्रत्य०)] १. खड़ाऊँ। २. जूता। ३. सीढ़ी। सोपान। ४. ऐसी चीज या जगह जिस पर प्रायः पैर रखे जाते या पड़ते हों। ५. गोटा-पट्ठा बिननेवालों का एक औजार जो बुनते समय पैरों से दबाकर रखा जाता है और जिससे ताने के तार ऊपर उठते और नीचे गिरते रहते हैं।
स्त्री० [हिं० पौरि, पौरी] १. वह कोठरी जो किसी घर के भीतर घुसते ही रास्ते में पड़ती हो। ड्योढ़ी। पौरी। २. बैठने का ऊपरी कमरा। बैठक। ३. दे० 'पौरी'।

पाँवर—वि०=पामर।
पुं०=पाँवड़ा।
स्त्री०=पाँवड़ी।

पाँवरी—स्त्री०=पाँवड़ी।

पांशन—वि० [सं०√पंस् (नाश करना)+ल्यु—अन, दीर्घ, पृषो०] १. कलंकित करनेवाला। भ्रष्ट करनेवाला। २. दुष्ट। ३. हेय। (प्रायः समास में व्यवहृत) जैसे—पौलस्त्य-कुल-पांशन।
पुं० १. अपमान। २. तिरस्कार।

पांशव—पुं० [सं० पांशु+अण्] रेह का नमक।

पांशु—स्त्री० [सं०√पंस् (श्)+उ, दीर्घ] १. धूलि। रज। २. बालू। ३. गोबर की खाद। पाँस। ४. पित्त पापड़ा। ५. एक प्रकार का कपूर। ६. भू-संपत्ति। जमीन। जायदाद।

पांशु-कसीस—पुं० [उपमि० स०] कसीस।

पांशुका—स्त्री० [सं० पांशु√कै (चमकना)+क+टाप्] केवड़े का पौधा।

पांशुकुली—स्त्री० [सं० पांशु√कुल् (इकट्ठा होना)+क+ङीष्] राजमार्ग।

पांशु-कूल—पुं० [ष० त०] १. धूल का ढेर। २. चीथड़ों आदि को सीकर बनाया हुआ बौद्ध भिक्षुओं के पहनने का वस्त्र। ३. गुदड़ी। ४. वह दस्तावेज या लेख्य जो किसी विशिष्ट व्यक्ति के नाम न लिखा गया हो।

पांशु-कृत—वि० [तृ० त०] १. धूल से ढका हुआ। २. पीला पड़ा हुआ। ३. मैला-कुचैला।

पांशु-क्षार—पुं० [उपमि० स०] पाँगा नमक।

पांशु-चंदन—पुं० [ब० स०] शिव।

पांशु-चत्वर—पुं० [तृ० त०] ओला।

पांशुज—पुं० [सं० पांशु√जन् (उत्पन्न होना)+ड] नोनी मिट्टी से निकाला हुआ नमक।

पांशु-धान—पुं० [ष० त०] धूल का ढेर।

पांशु-पटल—पुं० [ष० त०] किसी चीज पर जमी हुई धूल की तह या परत।

पांशु-पत्र—पुं० [ब० स०] बथुआ (साग)।

पांशु-मर्दन—पुं० [ब० स०] १. थाला। २. क्यारी।

पांशुर—पुं० [सं० पांशु√रा (देना)+क] १. डाँस। २. खंज। ३. पंगु व्यक्ति।

पांशु-रागिनी—स्त्री० [सं० पांशु√रञ्ज् (रंगना)+घिनुण्+ङीप्] महामेदा।

पांशु-राष्ट्र—पुं० [सं० मध्य० स०] एक प्राचीन देश। (महाभारत)

पांशुल—वि० [सं० पांशु+लच्] [स्त्री० पांशुला] १. जिस पर गर्द या धूल पड़ी हो। मैला-कुचैला। २. पर-स्त्री-गामी। व्यभिचारी।
पुं० १. पूतिकरंज। २. शिव।

पांशुला—स्त्री० [सं० पांशुल+टाप्] १. कुलटा या व्यभिचारिणी स्त्री। २. रजस्वला स्त्री। ३. जमीन। भूमि। ४. केतकी।

पाँस—स्त्री० [सं० पांशु] १. राख, गोबर, मल, मूत्र आदि, सड़ी-गली चीजें जो खेतों को उपजाऊ बनाने के लिए उसमें डाली जाती हैं। खाद।
क्रि० प्र०—डालना।—देना।
२. कोई चीज सड़ाकर उठाया जानेवाला खमीर। ३. विशेषतः मधु आदि का वह खमीर जो शराब बनाने के लिए उठाया जाता है।
क्रि० प्र०—उठाना।

पाँसना—स० [हिं० पाँस+ना (प्रत्य०)] खेत में पाँस या खाद डालना।

पाँसा—पुं०=पासा।

पाँसी—स्त्री० [सं० पाश] घास, भूसा आदि बाँधने के लिए रस्सियों की बनी हुई बड़ी जाली। जाला।

पांसु—स्त्री० [√पंस्+उ, दीर्घ]=पांशु।

पांसु-क्षार—पुं० [उपमि० स०] पांगा नमक।

पांसु-खुर—पुं० [ब० स०] घोड़ों के खुरों का एक रोग।

पांसु गुंठित—वि० [तृ० त०] धूल से ढका हुआ।

पांसु-चंदन—पुं० [ब० स०] शिव। महादेव।

पांसु-चत्वर—पुं० [तृ० त०] ओला।

पांसु-चामर—पुं० [ब० स०] १. बड़ा खेमा। तंबू। २. नदी का ऐसा किनारा जिस पर दूब जमी हो। ३. धूल। ४. प्रशंसा।

पांसुज—वि० [सं० पांसु√जन्+ड] पाँगा नमक।

पांसु-पत्र—पुं० [ब० स०] बथुए का साग।

पांसु-भव—पुं० [ब० स०] पाँगा नमक।

पांसु-भिक्षा—स्त्री० [सं० पांसु √भिक्ष् (याचना)+अङ्—टाप्] धौ का पेड़।

पांसु-मर्दन—पुं० [ब० स०] १. थाला। २. क्यारी।

पांसुर—पुं० [सं० पांसु√रा (देना)+क] १. एक प्रकार का बड़ा मच्छड़। दंश। डाँस। २. लूला-लँगड़ा जीव या प्राणी।

पांसुरागिणी—स्त्री० [सं० दे० 'पांसुरागिनी'] महामेदा।

पाँसुरी—स्त्री०=पसली।

पांसुल—वि० [सं० पांसु+लच्] १. धूल से लथ-पथ। २. मलिन। मैला। ३. पापी। ४. पर-स्त्रीगामी।

पुं० शिव।

पांसुला—वि० [सं० पांसुल+टाप्] १. व्यभिचारिणी (स्त्री)। २. रजस्वला (स्त्री)।

स्त्री० १. पृथ्वी। २. केतकी।

पाँसू—पुं० [हिं० पाँस+ऊ (प्रत्य०)] कुम्हारों का एक उपकरण जिससे वे गीली मिट्टी चलाते और सानते हैं।

पाँही—अव्य० [हिं० पँह] १. निकट। पास। समीप। २. प्रति।

पा—पुं० [सं० पाद से फा०] पैर। पाँव।

वि० १. दृढ़ पैरोंवाला। २. अधिक समय तक टिकने या ठहरनेवाला। टिकाऊ। (यौ० के अंत में) जैसे—देर-पा=देर तक ठहरनेवाला।

पा-अंदाज—पुं० [फा० पाअंदाज] वह छोटा विछावन जो कमरों के दरवाजों पर पैर पोंछने के लिए रखा जाता है। पावदान। उदा०—दृग-पग पोंछन कौं कियो भूषण पायन्दाज (पा-अंदाज)।—बिहारी।

पाइ†—पुं०=पा (पैर)।

मुहा०—**पाइ न पारना**=पाँव पारना। (दे०)

*स्त्री० [?] किरण।

पाइक—वि०, पुं०=पायक।

स्त्री०=पताका।

पाइका—पुं० [अं०] आकार के विचार से टाइपों का एक भेद जिसका मुद्रित रूप १।६ इंच के बराबर होता है।

पाइट—स्त्री० [अं० फ्लाइट] बाँसों, तख्तों आदि को रस्सियों से बाँधकर खड़ा किया हुआ वह ढाँचा जिस पर खड़े होकर राज-मजदूर दीवारें आदि बनाते तथा उन पर पलस्तर, चूना, रंग आदि करते हैं।

पाइतरी—स्त्री०=पायँता (खाट या बिस्तर का)।

पाइदेल—वि०, पुं०=पैदल।

पाइप—पुं० [अं०] १. नल या नली। २. किसी प्रकार का नल जिसके अंदर से होकर कोई चीज एक जगह से दूसरी जगह जाती हो। जैसे—पानी का पाइप, गैस का पाइप। ३. तमाकू पीने की एक प्रकार की पाश्चात्य नली। ४. बांसुरी की तरह का एक प्रकार का पाश्चात्य बाजा।

पाइपोस—पुं०=पापोश (जूता)।

पाइमाल—वि०=पायमाल।

पाइरा—पुं० [हिं० पाँव+रा (प्रत्य०)] घोड़े की जीन-सवारी के साज में की रकाब।

पाइरिल्ला—पुं० [सं०] भूरे रंग का एक तरह का थूथनदार कीड़ा जो गन्ने के पौधों की पत्तियाँ खाता है।

पाइल—स्त्री०=पायल।

पाइलट—पुं० [अं०] वायुयान चालक।

पाईं—वि० [फा० पाईन] १. सामनेवाला। २. नीचेवाला। ३. अंतिम।

पाईबाग—पुं० [फा०+अ०] घर के साथ लगा हुआ बाग। नजरबाग।

पाई—स्त्री० [सं० पाद, पुं० हिं० पाय] १. खड़ी या सीधी लकीर। २. वह छोटी खड़ी रेखा जो वाक्य के अंत में पूर्णविराम सूचित करने के लिए लगाई जाती है। लेखों आदि में पूर्णविराम का सूचक चिह्न। ३. पाँव। पैर। ४. घेरा बाँध कर चलने या नाचने की क्रिया या भाव। ५. पतली छड़ियों या बेंतों का बना हुआ। जुलाहों का एक ढाँचा जिस पर ताने का सूत फैलाकर उन्हें मांजते हैं। टिकटी। अट्ठा।

मुहा०—**ताना-पाई करना**=बार-बार इधर से उधर और उधर से इधर आते-जाते रहना।

६. ताने का सूत माँजने की क्रिया। ७. घोड़ों के पैर सूजने का एक रोग। ८. ताँबे का एक पुराना छोटा सिक्का जो एक पैसे के तिहाई मूल्य का होता था और जिसका चलन अब उठ गया है। ९. ताँबे का पैसा। (पूरब) १०. वह पिटारी जिसमें देहाती स्त्रियाँ साधारण गहने-कपड़े रखती हैं।

स्त्री० [हिं० पाना=प्राप्त करना] प्राप्त करने अर्थात् पाने की क्रिया या भाव। जैसे—भर-पाई की रसीद।

स्त्री० [हिं० पाया=पाई कीड़ा] एक प्रकार का छोटा लंबा कीड़ा जो घुन की तरह अन्न में लगकर उसे खा जाता है और उसे अंकुरित होने के योग्य नहीं रहने देता।

क्रि० प्र०—लगना।

स्त्री० [अं०] १. ढेर के रूप में मिले हुए छापे के टाइप। २. छापेखाने में सीसे के वे अक्षर या टाइप जो घिस-पिस अथवा टूट-फूट जाने के कारण निकम्मे या रद्दी हो गये हों, और ढेर के रूप में अलग रख दिये गये हों। ३. छापेखाने में सीसे के अक्षरों या टाइपों का वह ढेर जो अव्यवस्थित रूप से कहीं पड़ा हो।

पाईगाह†—स्त्री० [फा० पाएगाह] १. अश्वशाला। तबेला। २. किसी बड़े आदमी के प्रासाद या महल की ड्योढ़ी।

पाईता—पुं० [देश०] एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में एक मगण, एक भगण और एक सगण होता है।

पाउँ†—पुं०=पाँव।

पाउंड—पुं० [अ०] १. सोने का एक अंगरेजी सिक्का। २. सात या साढ़े सात छटाँक के लग-भग की एक तौल।

पाउंड पावना—पुं० [अं० पाउँड+हिं० पावना] पाउंडों के रूप में प्राप्त विदेशी मुद्रा। विशेषतः ब्रिटेन से किसी देश के पावने की वह रकम जो बैंक आफ इंग्लैंड में जमा रहती है और उसके साथ हुए समझौते की शर्तों के अनुसार क्रमशः चुकाई जाती है। (स्टर्लिंग बैलेन्स)

पाउ—पुं०=पाँव।

†पुं०=पाव।

पाउडर—पुं० [अं०] १. कोई ऐसी चीज जो पीसकर बहुत महीन कर दी गई हो। चूर्ण। बुकनी। २. वह सुगंधित चूर्ण या बुकनी जो स्त्रियाँ अपने चेहरे तथा अन्य अंगों पर उन की रंगत चमकाने और सुन्दर बनाने के लिए लगाती हैं।

पाउस—पुं० =पावस (वर्षा ऋतु)।

पाक—पुं० [सं०√पच् (पकाना)+घञ्] १. भोजन आदि पकाने की क्रिया या भाव। रींधना। २. किसी चीज के ठीक तरह से पके या पचे हुए होने की अवस्था या भाव। ३. पकाया हुआ भोजन। रसोई। ४. वह औषध या फल जो शीरे में पकाया गया हो। जैसे—बदाम पाक, मेवा पाक, सुपारी पाक। ५. खाये हुये पदार्थ के पचने की क्रिया या भाव। पचन। ६. श्राद्ध में पिंडदान के लिए पकाया हुआ चावल या खीर। ७. किसी चीज या बात का अपने पूर्ण रूप में पहुँचना, अथवा उचित और यथेष्ट रूप से परिपुष्ट तथा परिवृद्ध होना। ८. एक दैत्य जो इंद्र के हाथों मारा गया था।

वि० १. छोटा। २. प्रशंसनीय। ३. परिपुष्ट तथा पूर्ण अवस्था में पहुँचा हुआ। ४. ईमानदार। सच्चा। ५. अनजान।

वि० [फा०] १. पवित्र। निर्मल। विशुद्ध। जैसे—पाक नजर, पाक मुहब्बत।

पद—पाक-साफ=(क) पवित्र और स्वच्छ। (ख) निष्कलंक। २. साफ। स्वच्छ। ३. दोषों आदि से रहित। निर्दोष। ४. धार्मिक दृष्टि से पवित्र, सदाचारी और पूज्य। ५. किसी आवांछित अंश या तत्त्व से रहित। जैसे—यह जायदाद सब तरह के झगड़ों से पाक है।

मुहा०—(जानवर) पाक करना=जबह किये हुए पशु या पक्षी के पर, रोएँ आदि काटकर अलग करना। **झगड़ा पाक करना**=(क) झगड़ा तै करना या निपटाना। (ख) झंझट, बाधा आदि दूर, नष्ट या समाप्त करना। (ग) (विरोधी, वैरी आदि का) अंत या नाश करना।

पुं० पाकिस्तान का संक्षिप्त रूप। जैसे—भारत-पाक में समझौता।

पाक-कर्म—पुं०=पाक-क्रिया।

पाक-कृष्ण—पुं० [ब० स०] १. जंगली करौंदा। २. पानी आँवला।

पाक-क्रिया—स्त्री० [ष०त०] १. भोजन आदि पकाने की क्रिया या भाव। २. पाचन क्रिया।

पाकज—वि० [सं० पाक√जन्+ड] पाक से उत्पन्न।

पुं० १. कचिया नमक। २. भोजन के ठीक प्रकार से न पचने पर पेट में होनेवाला शूल।

पाकजाद—वि० [फा० पाकज़ाद:] शुद्ध तथा स्वच्छ प्रकृतिवाला। शुद्धात्मा।

पाकट—पुं०=पाकेट।

वि०=पाकठ।

वि०=पाकठा।

पाकठ—वि० [हिं० पकना] १. अच्छी तरह पका हुआ। २. यथेष्ट चतुर या चालाक। दक्ष। होशियार। जैसे—अब यह लड़का दूकानदारी के काम में पाकठ हो गया है। ३. दृढ़। मजबूत।

पाकड़—पुं० [सं० पर्कटी] बरगद की जाति का एक बड़ा पेड़। पाकढ़।

पाक-दामन—वि० [फा०] [भाव० पाकदामनी] जिसका चरित्र पवित्र और निष्कलंक हो। (विशेष रूप से स्त्रियों के लिए प्रयुक्त)

पाकदामिनी—स्त्री० [फा०] 'पाकदामन' होने की अवस्था। (स्त्री का) सदाचार या सच्चरित्रता।

पाक द्विष—पुं० [सं० पाक√द्विष् (शत्रुता करना)+क्विप्] इंद्र।

पाकना—अ०=पकना।

स०=पकाना।

पाकबाज—वि० [फा० पाक+बाज] [भाव० पाकबाजी] सदाचारी।

पाक-पात्र—पुं० [मध्य० स०] ऐसा बरतन जिसमें भोजन पकाया या बनाया जाता हो।

पाक-पुटी—स्त्री० [च० त०] कच्ची मिट्टी के बरतन पकाने का आँवाँ।

पाक-फल—पुं० [ब० स०] १. करौंदा। २. पानी अमला।

पाक-भांड—पुं०=पाक-पात्र। (दे०)

पाक-यज्ञ—पुं० [मध्य० स०] १. वृषोत्सर्ग, गृह-प्रतिष्ठा आदि के समय किया जानेवाला होम जिसमें खीर की आहुति दी जाती है। २. पंच महायज्ञ में ब्रह्मयज्ञ के अतिरिक्त अन्य चार यज्ञ—वैश्वदेव होम, बलि-कर्म, नित्य श्राद्ध और अतिथि-भोजन।

पाक-याज्ञिक—वि० [सं० पाक-यज्ञ+ठञ्—इक] १. पाकयज्ञ-संबंधी। पाक-यज्ञ का। २. पाक यज्ञ करनेवाला ३. पाक यज्ञ से उत्पन्न।

पुं० वह ग्रंथ जिसमें पाक-यज्ञ के विधान आदि बतलाये गये हों।

पाक-रंजन—पुं० [सं० पाक√रञ्ज्+णिच्+ल्यु—अन] तेजपत्ता।

पाकर—पुं० [सं० पर्कटी] बरगद की तरह का एक प्रकार का बड़ा वृक्ष।

पाकरिपु—पुं० [ष० त०] इंद्र।

पाकरी—स्त्री० [हिं० पाकर का स्त्री० अल्पा० रूप] छोटा पाकर।

पाकल—पुं० [सं० पाक√ला (लेना)+क] १. वह दवा जिससे कुष्ठ अच्छा होता हो। कुष्ठ रोग की दवा। २. फोड़ा पकानेवाली दवा। ३. अग्नि। आग। ४. एक प्रकार का सन्निपात ज्वर जिसमें पित्त प्रबल, वात मध्य और कफहीन अवस्था में होता है। वैद्यक के अनुसार इसका रोगी प्रायः तीन दिन में मर जाता है। ५. हाथी को आने-वाला ज्वर या बुखार।

पाकलि, पाकली—स्त्री० [सं० √पा (पीना)+क्विप् √कल् (गिनती करना)+इन्] [सं० पाकलि+ङीष्] काकड़ासीगी। कर्कटी।

पाक-शाला—पुं० [ष० त०] वह स्थान जहाँ भोजन पकाया या बनाया जाता हो। रसोई-घर।

पाकशासन—पुं० [सं० पाक√शास् (शासन करना)+ल्यु—अन] इंद्र।

पाक-शास्त्र—पुं० [ष० त०] वह शास्त्र जिसमें विभिन्न खाद्य पदार्थों या व्यंजन बनाने की कला, प्रक्रियायों आदि का विवेचन होता है।

पाक-शुक्ला—स्त्री० [स० त०] खड़िया मिट्टी।

पाक-स्थली—स्त्री० [ष० त०] पक्वाशय।

पाकहंता (तृ)—पुं० [ष० त०] इंद्र।

पाका†—पुं० [हिं० पकाना] १. शरीर के विभिन्न अंगों के पकने की क्रिया या भाव। २. फोड़ा।

वि०=पक्का।

पाकागार—पुं० [सं० पाक-आगार, ष० त०] पाकशाला।

पाकात्यय—पुं० [सं० पाक-अत्यय, ब० स०] आँख का एक रोग जिसमें उसका काला भाग सफेद हो जाता है। पुतली का सफेद हो जाना।

पाकाभिमुख—वि० [सं० पाक-अभिमुख, स० त०] जो पक रहा हो अथवा पूर्ण रूप से पकने को हो।

पाकारि—पुं० [पाक-अरि, ष० त०] १. इंद्र। २. सफेद कचनार।

पाकिट—पुं० १. =पाकेट। २. =पैकेट।

वि०=पाकठ।

पाकिस्तान—पुं० [फा०] भारत का विभाजन करके बनाया हुआ वह मुसलमानी राज्य जिसका कुछ अंश भारत के पश्चिम में और कुछ पूर्व में है। पश्चिमी पाकिस्तान में सिंध, पश्चिमी पंजाब, पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत तथा पूर्वी पाकिस्तान में पूर्वी बंगाल नामक प्रदेश है।

पाकिस्तानी—वि० [फा०] १. पाकिस्तान देश संबंधी। पाकिस्तान का। २. पाकिस्तान में होनेवाला।

पुं० पाकिस्तान में रहनेवाला व्यक्ति।

पाकी—स्त्री० [फा०] १. पाक होने की अवस्था या भाव। २. निर्मलता। शुद्धता। ३. पवित्रता। पावनता।

मुहा०—पाकी लेना=उपस्थ पर के बाल साफ करना।

पाकीजा—वि० [फा० पाकीजः] [भाव० पाकीजगी] १. पाक। पवित्र। शुद्ध। २. सब प्रकार के दोषों, विकारों आदि से रहित। जैसे—पाकीजा धूरत।

पाकु—वि० [सं०√पच्+उण्] १. पकानेवाला। २. [√पच्+उकञ्] पचानेवाला। पाचकी।

पुं० बावरची। रसोइया।

पाकेट—पुं० [अं० पाकेट] जेब। खीसा।

मुहा०—पाकेट गरम होना=(क) पास में धन होना। (ख) अनुचित या अवैध रूप से किसी प्रकार की प्राप्ति या लाभ होना।

†पुं०=पैकेट।

पुं० [?] ऊँट। (डिं०)

पाक्य—वि० [सं०√पच्+ण्यत्] १. जो पकाया जाने को हो। २. पचने योग्य।

पुं० १. काला नमक। २. साँभर नमक। ३. जवाखार। ४. ४. शोरा।

पाक्य-क्षार—पुं० [कर्म० स०] १. जवाखार नमक। २. शोरा।

पाक्यज—पुं० [सं० पाक्य√जन्+ड] कचिया नमक।

पाक्या—स्त्री० [सं० पाक्य+टाप्] १. सज्जी। २. शोरा।

पाक्ष—वि०=पाक्षिक।

†पुं०=पक्ष।

पाक्षपातिक—वि० [सं० पक्षपात+ठक्—इक] १. पक्षपात करनेवाला। फूट डालनेवाला। २. पक्षपात के रूप में होनेवाला।

पाक्षायण—वि० [सं० पक्ष+फक्—आयन] १. जो पक्ष (१५ दिन) में एक बार हो या किया जाय। पाक्षिक। २. पक्ष (१५ दिन) का।

पाक्षिक—वि० [सं० पक्ष+ठञ्—इक] १. चांद्र मास के पक्ष से संबंध रखनेवाला। २. जो एक पक्ष (१५ दिन) में एक बार होता हो। जैसे—पाक्षिक अधिवेशन, पाक्षिक पत्र या पत्रिका। (फोर्टनाइटली)। ३. किसी प्रकार का पक्षपात करनेवाला। पक्षपाती। तरफदार। ४. (पिंगल में छंद) जिसमें (पक्ष के रूप में) दो मात्राएँ हों। ५. वैकल्पित।

पुं० १. पक्षियों को फँसा या मारकर जीविका चलानेवाला व्यक्ति। बहेलिया। २. व्याध। शिकारी। ३. विकल्प।

पाखंड—पुं० [सं०√पा (रक्षा करना)+क्विप् पा√खंड (खंडन करना)+अण्] [वि० पाखंडी] १. वेदों की आज्ञा, मत या सिद्धांत के विरुद्ध किया जानेवाला आचरण। २. धार्मिक क्षेत्र में, अपने धर्म पर सच्ची निष्ठा और भक्ति रखते हुए केवल लोगों को दिखलाने के लिए झूठ-मूठ बढ़ा-चढ़ाकर किया जानेवाला पाठ-पूजन तथा अन्य धार्मिक आचार-व्यवहार। ३. लौकिक क्षेत्र में, वे सभी आचार-व्यवहार जो झूठ-मूठ अपने आपको धर्म-परायण, नीति-परायण और सत्यनिष्ठ सिद्ध करने के लिए किये जाते हैं। अपना छल-कपट, धूर्तता, स्वार्थ-परता आदि छिपाने के लिए किया जानेवाला आचार-व्यवहार। आडंबर। ढकोसला। ढोंग (हिपोक्रिसी)

मुहा०—पाखंड फैलाना=दूसरों को ठगने और धोखे में रखने के लिए आडंबरपूर्ण थोथे उपाय रचना। दुष्ट उद्देश्य से ऐसा दिखावटी काम करना जो अच्छे इरादे से किया हुआ जान पड़े। ढकोसला खड़ा करना। जैसे—बाबाजी ने गाँव में खूब पाखंड फैला रखा था। ४. वह व्यय जो किसी को धोखा देने के लिए किया जाय। ५. दुष्टता। पाजीपन। शरारत। ६. नीचता।

वि०=पाखंडी।

पाखंडी (डिन्)—वि० [सं० पाखंड+इनि] १. वेद-विरुद्ध आचार करनेवाला। २. वेदाचार का खंडन या निंदा करनेवाला। ३. बनावटी धार्मिकता, सदाचार आदि दिखलानेवाला। ४. दूसरों को ठगने या धोखा देने के लिए आडंबर या ढोंग रचनेवाला।

पाख—पुं० [सं० पक्ष] १. चांद्रमास का कोई पक्ष। २. महीने का आधा समय। पंद्रह दिन का समय। पखवाड़ा। ३. कच्चे मकानों की दीवारों के वे ऊँचे भाग जिन पर बँडेर रहती है। ४. पंख। पर।

पाखर—स्त्री० [सं० पक्षर, प्रक्खर] १. युद्धकाल में, घोड़ों या हाथियों पर डाली जानेवाली एक तरह की लोहे की झूल। २. उक्त झूल के वे भाग जो दोनों ओर झूलते रहते हैं। ३. जीन। ४. ऐसा टाट या और कोई मोटा कपड़ा जिस पर मोम, राल आदि का लेप किया हुआ हो। (ऐसा कपड़ा जल्दी भींगता या सड़ता-गलता नहीं है।)

†पुं०=पाकर।

पाखरी—स्त्री० [हिं० पाखर=झूल] टाट का बिछावन जिसे गाड़ी में बिछाते हैं तब उसमें अनाज भरते हैं।

पाखा—पुं० [सं० पक्ष, प्रा० पक्ख] १. कोना। छोर। २. कुछ दीवारों में, ऊपर की ओर की वह रचना जो बीच में सबसे ऊँची और दोनों ओर ढालुई होती है। (ऐसी रचना इसलिए होती है कि उसके ऊपर ढालुई छत या छाजन डाली जा सके।) ३. दरवाजों के दोनों ओर के वे स्थान जिनके साथ, दरवाजे के खुले होने की अवस्था में किवाड़ लगे या सटे रहते हैं। ४. पाख।

पाखान†—पुं०=पाषाण (पत्थर)।

पाखान भेद—पुं०=पाषाण भेद।

पाखाना—पुं० [फा० पाखानः] १. विशिष्ट रूप से बनाया हुआ वह स्थान जहाँ मलत्याग किया जाय। शौचालय। २. शरीर का वह मल जो भोजन आदि पचने के उपरांत गुदा के रास्ते बाहर निकलता है। गुह। पुरीष।

मुहा०—पाखाने जाना=मलत्याग के लिए पाखाने में या और कहीं

जाना। (मारे डर के) पाखाना निकलना=मारे भय के बुरा हाल होना। बहुत अधिक भयभीत होना। **पाखाना फिरना**=मलत्याग करना। **पाखाना फिर देना**=डर से बहुत अधिक घबरा जाना। भय से अत्यंत विकल हो जाना। **पाखाना लगना**=मल-त्याग करने की आवश्यकता होना। यह प्रवृत्ति होना कि अब मल त्याग करना चाहिए।

पाग—पुं० [सं० पाक] १. वह खाद्य पदार्थ जो चाशनी या शीरे में पकाकर तैयार किया गया हो। जैसे—कोंहड़ा-पाग, बादाम-पाग। २. वह शीरा जिसमें रसगुल्ला, गुलाबजामुन आदि मिठाइयाँ भीगी पड़ी रहती हैं। ३. पागी हुई कोई ओषधि या फूल। पाक।

पागड़†—पुं०=पाइरा (रकाब)।

पागना—स० [सं० पाक] १. खाने की किसी चीज को चाशनी या शीरे में कुछ समय तक डुबाकर रखना। २. ऐसी क्रिया करना जिससे किसी चीज पर शीरे का लेप चढ़े।

†अ०=पगना।

पागर†—स्त्री० [देश०] वह लंबी रस्सी जिसका एक सिरा नाव के मस्तूल में बँधा रहता है और दूसरा सिरा किनारे पर खड़ा आदमी, खींचते हुए किसी दिशा में नाव को ले जाता है।

पागल—वि० [सं०√पा (रक्षा)+क्विप्, पा√गल् (स्खलित होना)+अच्] [स्त्री० पगली] [भाव० पागलपन] १. जिसका मस्तिष्क उन्माद रोग के कारण इतना विकृत हो गया हो कि ठीक तरह से कोई काम या बात न कर सके। जिसके मस्तिष्क का संतुलन नष्ट हो चुका या बिगड़ गया हो। बावला। विक्षिप्त। २. जो कष्ट, क्रोध, प्रेम या ऐसे ही किसी तीव्र मनोविकार से अभिभूत होने के कारण सब प्रकार का ज्ञान या विवेक खो बैठा हो। जैसे—वह क्रोध (या प्रेम) में पागल हो रहा था। ३. जो किसी काम में इतना अनुरक्त, आसक्त या लीन हो रहा हो कि उसे और कामों या बातों की सुध-बुध न रह गई हो। जैसे—आज-कल तो वह चुनाव के फेर में पागल हो रहा है। ४. जो इतना ना-समझ या मूर्ख हो कि प्रायः पागलों या विक्षिप्तों का-सा आचरण या उन जैसी बातें करता हो। जैसे—यह लड़का भी निरा पागल है।

पागलखाना—पुं० [हिं० पागल+फा० खाना] वह स्थान जहाँ विक्षिप्त व्यक्तियों को रखकर उनकी चिकित्सा की जाती है तथा जहाँ पर उनके रहने का भी प्रबंध रहता है।

पागलपन—पुं० [हिं० पागल+पन (प्रत्य०)] १. पागल होने की अवस्था या भाव। २. वह आचरण, कार्य या बात जो पागल लोग साधारणतया करते हों। जैसे—बच्चे को रह-रहकर मारने लगना उनका पागलपन है। ३. बेवकूफी।

पागलिनी—स्त्री०=पागल (स्त्री)।

पागली—स्त्री०=पगली।

पागुर†—पुं० दे० 'जुगाली'।

पाघ†—स्त्री०=पाग (पगड़ी)।

पाचक—वि० [सं० √पच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० पाचिका] किसी प्रकार का पाचन करने (पकाने या पचाने) वाला। पाचन की क्रिया करनेवाला।

पुं० १. वह जो भोजन पकाता या बनाता हो। बावर्ची। रसोइया। २. वह दवा जो खाई हुई चीज पचाती या पाचन शक्ति बढ़ाती हो। ३. कुछ विशिष्ट प्रक्रियाओं से बनाया हुआ वह अवलेह या चूर्ण जो प्रायः क्षारीय ओषधियों से बनाया जाता है और जिसका स्वाद खट-मीठा, नमकीन या मीठा होता है। ४. वैद्यक के अनुसार शरीर के अंदर रहनेवाले पाँच प्रकार के पित्तों में से एक जिसकी सहायता से भोजन पचता है। ५. वह अग्नि जिसका उक्त पित्त में अधिष्ठान माना जाता है।

पाचन—पुं० [सं०√पच्+णिच्+ल्युट्—अन] १. आग पर चढ़ाकर खाने-पीने की सामग्री पकाना। भोजन बनाना। २. पेट में पहुँचने पर खाये हुए पदार्थों के पचने या हजम होने की क्रिया। खाद्य पदार्थों के पेट में पहुँचने पर शारीरिक धातुओं के रूप में होनेवाला परिवर्तन। ३. पेट के अंदर की वह शक्ति जो एक प्रकार की अग्नि के रूप में मानी गई है और जिसकी सहायता से खाई हुई चीज पचती या हजम होती है। जठराग्नि। हाजमा। ४. कोई ऐसा अम्ल या खट्टा रस जो भोजन के पचने में सहायक होता हो अथवा जिससे पेट के अंदर का मल या अपक्व दोष दूर करता हो। ५. कोई पाचक औषध। ६. लाक्षणिक रूप में, किसी प्रकार के दोष या विकार का धीरे-धीरे कम होकर नष्ट या शमित होना। जैसे—पाप या रोग का पाचन। ७. प्रायश्चित्त, जिससे पापों का शमन होता है। ८. आग या अग्नि जिसकी सहायता से खाने-पीने की चीजें पकाई जाती हैं। ९. लाल रेंड।

वि० १. खाई हुई चीजें पचाने या हजम करनेवाला। हाजिम। २. किसी प्रकार के अजीर्ण या आधिक्य का नाश या शमन करनेवाला।

पाचनक—पुं० [सं०√पच्+णिच्+ल्यु—अन+कन्] सुहागा।

पाचन-गण—पुं० [ष० त०] पाचन ओषधियों का वर्ग।

पाचन-शक्ति—स्त्री० [ष० त०] १. खाये हुए पदार्थों को पचाने की शक्ति या समर्थता। २. हाजमा।

पाचना—स० १.=पकाना। २. पचाना।

पाचनी—स्त्री० [सं० पाचन+ङीष्] हड़।

पाचनीय—वि० [सं०√पच्+णिच्+अनीयर्] १. जो पकाया जा सके। २. जो पचाया जा सके।

पाचयिता (तृ)—वि० [सं०√पच्+णिच्+तृच्] १. पाक करनेवाला। २. पचानेवाला।

पाचर—पुं०=पच्चर।

पाचल—वि० [सं०√पच्+णिच्+कलन्] १. पकानेवाला। २. पचानेवाला।

पुं० १. रसोइया। २. अग्नि। ३. वायु। ४. पकाई जानेवाली वस्तु। ५. पचानेवाली वस्तु।

पाचा—पुं० [सं० पाक] १. भोजन पकने या पकाने की क्रिया। पाक। २. भोजन पचने या पचाने की क्रिया। पाचन।

पाचा-पाड़—पुं० [हिं० पाँच+पाड़=किनारा] जनानी धोतियों का वह प्रकार जिसमें लम्बाई के बल ऊपर और नीचे जैसे दो किनारे बुने हुए होते हैं, वैसे ही तीन किनारे बीच में भी बुने रहते हैं।

स्त्री० वह जनानी धोती या साड़ी जिसमें उक्त प्रकार के पाँच (तीन) किनारे बुने हुए हों।

पाचिका—स्त्री० [सं० पाचक+टाप्, इत्व] रसोई बनानेवाली स्त्री।

पाची—वि० [सं०√पच्+णिच्+इन्+ङीष्] पाचन करनेवाला।
स्त्री० पच्ची या मर्कतपत्री नाम की लता।

पाच्छा, पाच्छाह†—पुं०=बादशाह।

पाच्य—वि० [सं०√पच्+ण्यत्, कुत्वाभाव] १. जो पच या पक सकता हो। २. पकाने या पचाने योग्य।

पाछ—स्त्री० [हिं० पाछना] १. पाछने अर्थात् जंतु या पौधे के शरीर पर छूरी की तीखी धार लगाकर उसका रक्त या रस निकालने की क्रिया या भाव।
क्रि० प्र०—देना।—लगाना।
२. उक्त कार्य के लिए लगाया हुआ क्षत या किया हुआ घाव। ३. पोस्ते के डोंडे पर छुरी से किया जानेवाला वह क्षत जिसमें से गोंद के रूप में अफीम बाहर निकलती है।
पुं० [सं० पश्चात्,प्रा० पच्छा] किसी चीज का पिछला भाग। पीछा।
अव्य०=पीछे।

पाछना—स० [हिं० पंछा] किसी जीव या पौधे की त्वचा या खाल पर इस प्रकार हलका घाव करना जिससे उसका रक्त या रस थोड़ा थोड़ा करके बाहर निकलने लगे।

पाछल, पाछुल†—वि०=पिछला।
अव्य०=पीछे।

पाछा†—पुं० १. दे० 'पाछ'। २. दे० पीछा'।

पाछिल—वि०=पिछला।

पाछी—अव्य० [हिं० पाछ] पीछे की ओर। पीछे।

पाछू†—अव्य०=पीछे।

पाछें, पाछे—अव्य०=पीछे।

पाज—पुं० [सं० पाजस्य] १. पार्श्व। पार्श्वभाग। २. पंजर।
पुं० १. सेतु। पुल। २. आधार। ३. जड़। ४. ढेर। राशि। ५. वज्र।

पाजरा—पुं० [देश०] एक प्रकार की वनस्पति जिसकी पत्तियों से एक प्रकार का रस निकाला जाता है।

पाजस्य—पुं० [सं०√पा+असुन्, जुट्+यत्] पार्श्व। बगल।

पाजा†—पुं०=पायजा।

पाजामा—पुं० [फा० पाजामः या पाएजामः] एक तरह का सिला हुआ वस्त्र जो कमर से एड़ी तक का भाग ढकने के लिए पहना जाता है और जो ऊपरी भाग के नेफे में नाला डालकर कमर में बाँधा जाता है।

पाजी—पुं० [सं० पत्ति, प्रा० पडित से फा०] १. पैदल चलनेवाला व्यक्ति। २.पैदल सेना का सिपाही। प्यादा। ३.चौकीदार। पहरेदार। ४. साथ चलने या रहनेवाला व्यक्ति। साथी। ५. तुच्छ सेवाएँ करनेवाला नौकर। खिदमतगार। टहलुआ।
वि० [फा०] [भाव० पाजीपन] जो प्रायः अपने दुष्ट आचरण या व्यवहार से सबको तंग या परेशान करता रहता हो। दुष्ट। लुच्चा।

पाजीपन—पुं० [हिं० पाजी+पन (प्रत्य०)] पाजी या दुष्ट होने की अवस्था या भाव।

पाजेब—स्त्री० [फा० पाजेब] पैरों में पहनने का स्त्रियों का एक प्रसिद्ध आभूषण। मंजीर। नूपुर।

पाटंबर—पुं० [सं० पट्ट+अम्बर] रेशमी वस्त्र। रेशमी कपड़ा।

पाट—पुं० [सं० पट्ट,पाट] १. रेशम। २. रेशम का बटा हुआ महीन डोरा। नख। ३. एक प्रकार का रेशम का कीड़ा। ४. पटसन। ५. कपड़ा। वस्त्र।
पद—पाट पटंबर=अच्छे अच्छे और कई तरह के कपड़े।
६. बैठने का पाटा या पीढ़ा। ७.राज-सिंहासन। ८.चौड़ाई के बल का विस्तार। जैसे—नदी का पाट। ९. किसी प्रकार का तख्ता, पटिया या शिला। १०. पत्थर की वह पटिया जिस पर धोबी कपड़े धोते हैं। ११. चक्की के दोनों पल्लों में से हर एक। १२. लकड़ी के वे तख्ते जो छत पाटने के काम आते हैं। १३. वह चिपटा शहतीर जिस पर कोल्हू हाँकनेवाला बैठता है। १४. वह शहतीर जो कूएँ के मुंह पर पानी निकालनेवाले के खड़े होने के लिए रखा जाता है। १५. बैलों का एक रोग जिसमें उनके रोमकूपों में से रक्त निकलता है।
क्रि० प्र०—फूटना।
१६. मृदंग के चार वर्णों में से एक।

पाटक—पुं० [सं०√पट्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. एक तरह का बाजा। २. गाँव या बस्ती का आधा भाग। ३. तट। किनारा। ४. पासा। ५. एक तरह की बड़ी कलछी।

पाट-करण—पुं० [सं० ब० स०] शुद्ध जाति के रोगों का एक भेद।

पाटच्चर—वि० [सं० पटच्चर+अण्] चुरानेवाला।

पाटदार—वि०=पल्लेदार (आवाज)।

पाटन—पुं० [सं०√पट्+णिच्+ल्युट्—अन] चीरने-फाड़ने अथवा तोड़ने-फोड़ने की क्रिया या भाव।
स्त्री० [हिं० पाटना] १. पाटने की क्रिया या भाव। पटाव। २. वह छत जो दीवारों को पाटकर बनाई गई हो। ३. घर के ऊपर का दूसरा खंड या मंजिल। ४. साँप का जहर झाड़ने का एक प्रकार का मंत्र।
पुं० [सं० पत्तन] नगर या बस्ती के नाम के अंत में लगनेवाली 'पत्तन' सूचक संज्ञा। जैसे—झालरापाटन।
स्त्री० [अं० पैटर्न] पुस्तक की जिल्द के रूप में बँधी हुई वे दफ्तियाँ जिन पर ग्राहकों या व्यापारियों को दिखाने के लिए कपड़ों आदि के नमूने के टुकड़े चिपकाये रहते हैं।

पाटना—स० [सं० पाट] १. खाई, गड्ढे आदि में इतना भराव भरना जिससे वह आस-पास की जमीन के बराबर और समतल हो जाय। २. कमरे के संबंध में उसकी चारों ओर की दीवारों के ऊपरी भाग के खुले अवकाश को बंद करने के लिए उस पर छत या पाटन बनाना। ३. लाक्षणिक अर्थ में, किसी स्थान पर किसी चीज की बहुतायत या भरमार करना। जैसे—माल से बाजार पाटना। ४. लाक्षणिक रूप में, (क) ऋण आदि चुकाना, (ख) पारस्परिक दूरी, मत-भेद, विरोध आदि का अंत या समाप्ति करना। ५. दे० 'पटाना'।

पाटनि—स्त्री० [सं० पट्ट] १. सिर के बालों की पट्टी। २. दे० 'पाटना'।

पाटनीय—वि० [सं०√पट्+णिच्+अनीयर्] चीरे-फाड़े या तोड़े-फोड़े जाने के योग्य।

पाटप†—वि० [हिं० पाट] सबसे बड़ा। उत्तम। श्रेष्ठ। (राज०)

पाट-महिषी—स्त्री० [सं० पट्ट=सिंहासन,+महिषी=रानी] किसी राजा की वह विवाहिता और बड़ी रानी जो उसके साथ सिंहासन पर बैठती अथवा उस पर बैठने की अधिकारिणी हो। पटरानी।

पाटरानी—स्त्री०=पटरानी।

पाटल—पुं० [सं०√पट्+णिच्+कलप्] १. पाडर या पाढर नामक पेड़, जिसके पत्ते आकार-प्रकार में बेल वृक्ष के पत्तों के समान होते हैं। २. गुलाब।

वि० १. गुलाब-संबंधी। २. गुलाब के रंग का। उदा०—कर लै प्यौ पाटल बिसल प्यारी।—विहारी।

पाटलक—वि० [सं० पाटल+कन्] पाटल के रंग का। गुलाबी रंग का।

पुं० गुलाबी रंग।

पाटलकीट—पुं० [सं० मध्य० स०] एक प्रकार का कीड़ा।

पाटल-द्रुम—पुं० [सं० उपमि० स०] पुन्नाग वृक्ष। राज-चंपक।

पाटला—स्त्री० [सं० पावल+टाप्] १. पाडर का वृक्ष। २. लाल-लोध। ३. जलकुंभी। ४. दुर्गा का एक रूप।

पुं० [सं० पटल] एक प्रकार का बढ़िया और साफ सोना।

पाटलावती—स्त्री० [सं० पाटला+मतुप्, वत्व,+ङीष्] १. दुर्गा। २. एक प्राचीन नदी।

पाटलि—स्त्री० [सं०√पट्+णिच्+अलि] १. पाडर का वृक्ष। २. पांडुफली।

पाटलिक—वि० [सं० पाटलि+कन्] १. जो दूसरों के भेद या रहस्य जानता हो। २. जिसे देश और काल का ज्ञान हो।

पुं० १. चेला। शिष्य। २. पाटलिपुत्र नगर।

पाटलित—भू० कृ० [सं० पाटल+णिच्+क्त] गुलाबी रंग में रँगा हुआ।

पाटलि-पुत्र—पुं० [सं० ष० त० ?] अज्ञातशत्रु द्वारा बसाई हुई प्राचीन मगध की एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगरी जो आधुनिक पटना नगर के पास थी। पुष्पपुर। कुसुमपुर।

विशेष—कुल लोग वर्तमान पटने को ही पाटलिपुत्र समझते हैं परंतु पटना शेरशाह सूरी का बसाया हुआ है।

पाटलिमा (मन्)—स्त्री० [सं० पाटल+इमनिच्] १. गुलाबी रंग। २. गुलाबी रंगत। ३. गुलाबी होने की अवस्था या भाव। गुलाबीपन।

पाटली—स्त्री० [सं० पाटलि+ङीष्] =पाटलि।

पाटली-तैल—पुं० [सं० ष० त०] एक प्रकार का औषध तैल जिसके लगाने से जले हुए स्थान की जलन, पीड़ा और चेप बहना दूर होता है।

पाटलीपुत्र—पुं०=पाटलिपुत्र।

पाटव—पुं० [सं० पटु+अण्] १. पटुता। २. दृढ़ता। मजबूती। ३. जल्दी। शीघ्रता। ४. आरोग्य। ५. शक्ति।

पाटविक—वि० [सं० पाटव+ठन्—इक] १. पटु। कुशल। २. चालाक। धूर्त।

पाटवी—वि० [हिं० पाट+वी (प्रत्य०)] १. रेशम का बना हुआ। रेशमी। २. पटरानी संबंधी। पटरानी का। ३. पटरानी से उत्पन्न ४. सर्वश्रेष्ठ।

पुं० पटरानी का पुत्र।

पाटसन—पुं०=पटसन।

पाटहिक—पुं० [सं० पटह+ठञ्—इक] नगाड़ा बजानेवाला व्यक्ति।

पाटहिका—स्त्री० [सं० पटह+अण्, पाटह+ठञ्—इक+टाप्] गुंजा। घुँघची।

पाटा—पुं० [हिं० पाट] [स्त्री० अल्पा० पाटी] १. बैठने का काठ का पीढ़ा।

मुहा०—**पाटा फेरना**=विवाह में कन्यादान के उपरांत वर के पीढ़े पर कन्या को और कन्या के पीढ़े पर वर को बैठाना।

२. राज-सिंहासन। ३. लंबी धरन की तरह की वह आयताकार लकड़ी जिसकी सहायता से जोते हुए खेत की मिट्टी के ढेले तोड़कर उसे समतल करते हैं। ४. उक्त प्रकार का लकड़ी का वह छोटा टुकड़ा जिसके द्वारा राज लोग दीवारों का पलस्तर बराबर या समतल करते हैं।

क्रि० प्र०—चलाना।—फेरना।

५. दो दीवारों के बीच में तख्ता, पटिया आदि लगाकर बनाया हुआ आधार स्थान।

पाटि—स्त्री० १.=पाट। २.=पाटी।

पाटिका—स्त्री० [सं० पाटक+टाप्, इत्व] १. एक दिन की मजदूरी। २. एक पौधा। ३. छाल। छिलका।

पाटित—भू० कृ० [सं०√पट्+णिच्+क्त] जो चीरा-फाड़ा अथवा तोड़ा-फोड़ा गया हो।

पाटी—स्त्री० [सं०√पट्+इन्+ङीप्] १. परिपाटी। अनुक्रम। रीति। २. गणित-शास्त्र। हिसाब। ३. श्रेणी। पंक्ति। ४. बला नामक क्षुप। खरैंटी।

स्त्री० [हिं० पाटा का स्त्री० रूप] १. लकड़ी की वह तख्ती या पट्टी जिस पर विद्यारंभ करनेवाले बच्चों को लिखना-पढ़ना सिखाया जाता है। २. बच्चों को पढ़ाया जानेवाला पाठ। सबक।

मुहा०—**पाटी पढ़ना**=(क) पाठ पढ़ना। सबक लेना। (ख) किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करना; विशेषतः ऐसी शिक्षा प्राप्त करना जो दुष्ट उद्देश्य से दी गई हो और जिसमें शिक्षा प्राप्त करनेवाले ने अपनी बुद्धि या विवेक का उपयोग न किया हो।

३. माँग के दोनों ओर गोंद, जल, तेल आदि की सहायता से कंघी द्वारा बैठाये हुए बाल जो देखने में पटरी की तरह बराबर मालूम हों। पट्टी। पटिया।

मुहा०—**पाटी पारना या बैठाना**=कंघी फेरकर सिर के बालों को समतल करके बैठना। उदा०—पाटी पारि अपने हाथ बेनी गुथि बनावे।—भारतेंदु।

४. खाट, पलंग आदि के चौखट की लंबाई के बल की लकड़ी। ५. चौड़ाई। ६. चट्टान। शिला। ७. मछली पकड़ने के लिए एक विशिष्ट प्रकार की क्रिया जिसमें बहते हुए पानी को मिट्टी के बाँध या वृक्षों की टहनियों आदि से रोक कर एक पतले मार्ग से निकलने के लिए बाध्य करते हैं, और उसी मार्ग पर उन्हें पकड़ते हैं। ८. खपरैल की नरिया का प्रत्येक आधा भाग। ९. जंती।

पाटीगणित—पुं० [सं०] गणित की वह शाखा जिसमें ज्ञात अंकों या संख्याओं की सहायता से अज्ञात अंक या संख्याएँ जानी जाती हैं। (एरिथमेटिक)

पाटीर—पुं० [सं० पटीर+अण्] १. चंदन का वृक्ष और उसकी लकड़ी। २. खेत जोतने का हल। ३. खेत।

पाटूनी—पुं० [देश०] वह मल्लाह जो किसी घाट का ठीकेदार भी हो घटवार।

पाट्य—पुं० [सं० √पट्+णिच्+यत्] पटसन।

पाठ—पुं० [सं० √पठ् (पढ़ना)+घञ्] १. पढ़ने की क्रिया या भाव। पढ़ाई। २. वह विषय जो पढ़ा जाय। ३. किसी ग्रंथ का उतना अंश जितना एक दिन या एक बार में गुरु या शिक्षक से पढ़ा जाय। सबक। (लेसन)

मुहा०—(किसी को) पाठ पढ़ाना=दुष्ट उद्देश्य से किसी को कोई बात अच्छी तरह समझना। पट्टी पढ़ाना। (व्यंग्य)। **पाठ फेरना**=बार-बार दोहराना। उद्धरणी करना। **उलटा पाठ पढ़ाना**=कुछ का कुछ समझा देना। उलटी-पुलटी बातें कहकर बहका देना।

४. नियमपूर्वक अथवा श्रद्धा-भक्ति से और पुण्य-फल प्राप्त करने के उद्देश्य से कोई धर्मग्रंथ पढ़ने की क्रिया या भाव। जैसे—गीता या रामायण का पाठ। ५. किसी पुस्तक के वे अध्याय जो प्रायः एक दिन में या एक साथ पढ़ाये जाते हैं; और जिनमें एक ही विषय रहता है। ६. किसी ग्रंथ या लेख के किसी स्थल पर शब्दों या वाक्यों का विशिष्ट क्रम वा योजना। (टैक्स्ट) जैसे—अमुक पुस्तक में इस पद का पाठ कुछ और ही है।

†पुं०=पाठा।

†वि०=पट्ठा।

पाठक—वि० [सं० √पठ्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० पाठिका] १. पाठ पढ़नेवाला। २. पाठ करनेवाला। ३. पाठ पढ़ानेवाला।
पुं० १. विद्यार्थी। २. अध्यापक। ३. धर्मोपदेशक। ४. ब्राह्मणों की एक जाति। ५. आज-कल समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं आदि की दृष्टि में वे लोग जो समाचार-पत्र आदि पढ़ते हों।

पाठच्छेद—पुं० [ष० त०] एक पाठ की समाप्ति होने पर और अगले पाठ के आरंभ किये जाने से पहले होनेवाला विराम।

पाठ-दोष—पुं० [ष० त०] किसी ग्रंथ के शब्दों के वर्णों तथा वाक्यों के शब्दों की अशुद्ध या भ्रामक योजना।

पाठन—पुं० [सं० √पठ्+णिच्+ल्युट्—अन] १. पाठ पढ़ाना। २. पढ़कर सुनाना। ३. वक्तृता देना।

पाठना—स० [सं० पाठन] पढ़ाना।

पाठ-निश्चय—पुं० [ष० त०] किसी ग्रंथ के पाठ के अनेक रूप मिलने पर विशिष्ट आधारों पर उसके शुद्ध पाठ का किया जानेवाला निश्चय।

पाठ-पद्धति—स्त्री० [ष० त०] पढ़ने की रीति या ढंग।

पाठ-प्रणाली—स्त्री० [ष० त०] पढ़ने की रीति या ढंग।

पाठ-भू—स्त्री० [ष०त०] १. वह स्थान जहाँ वेदादि ग्रंथों का पाठ होता या किया जाता हो। २. ब्रह्मण्य।

पाठ-भेद—पुं० [ष० त०] वह भेद या अंतर जो एक ही ग्रंथ की दो प्रतियों के पाठ में कहीं-कहीं मिलता हो। पाठांतर।

पाठ-मंजरी—स्त्री० [ष० त०] मैना। सारिका।

पाठ-शाला—स्त्री० [ष० त०] वह स्थान जहाँ विद्यार्थियों को पढ़ना-लिखना सिखाया जाता है।

पाठशालिनी—स्त्री० [सं० पाठ√शल् (गति)+णिनि+ङीप्] मैना। सारिका।

पाठशाली (लिन्)—वि० [सं० पाठशाला+इनि] पाठ पढ़नेवाला।
पुं० विद्यार्थी।

पाठशालीय—वि० [सं० पाठशाला+छ—ईय] पाठशाला-संबंधी। पाठशाला का।

पाठांतर—पुं० [सं० पाठ-अंतर, मयू० स०] किसी एक ही पुस्तक की विचित्र हस्तलिखित प्रतियों में अथवा विभिन्न संपादकों द्वारा संपादित प्रतियों में होनेवाला शब्दों अथवा उनके वर्णों के क्रम में होनेवाला भेद।

पाठा—स्त्री० [सं० √पठ्+घञ्+टाप्] पाढ़ा नाम की लता।
वि० [सं० पुष्ट] [स्त्री० पाठी] १. हृष्ट-पुष्ट। २. पट्ठा। जवान।
पुं० जवान बकरा, बैल या भैंसा। २. गाय-बैलों की एक जाति। (बुंदेलखंड)

पाठागार—पुं० सं० [पाठ-आगार, ष० त०] वह स्थान जहाँ बैठकर किसी विषय का अध्ययन, या ग्रंथों का पाठ किया जाता हो। (स्टडी रूम)

पाठालय—पुं० [पाठ—आलय, ष० त०] पाठशाला।

पाठालोचन—पुं० [सं० पाठ—आलोचन, ष० त०] आज-कल साहित्यिक क्षेत्र में, इस बात का वैज्ञानिक अनुसंधान या विवेचन कि किसी साहित्यिक कृति के संदिग्ध अंश का मूलपाठ वास्तव में कैसा और क्या रहा होगा। किसी ग्रंथ के मूल और वास्तविक पाठ का ऐसा निर्धारण जो पूरी छान-बीन करके किया जाय। (टेक्सचुअल क्रिटिसिज्म)

विशेष—इस प्रकार का पाठालोचन मुख्यतः प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की अनेक प्रतिलिपियों अथवा ऐसी साहित्यिक कृतियों के संबंध में होता है जिनका प्रकाशन तथा मुद्रण स्वयं लेखक की देख-रेख में न हुआ हो।

पाठिक—वि० [सं० पाठ+ठन्—इक] जो मूल पाठ के अनुसार हो।

पाठिका—वि० [सं० पाठक+टाप्, इत्व] पाठक का स्त्रीलिंग रूप।
स्त्री० पाठा। पाढ़ा।

पाठित—भू० कृ० [सं० √पठ्+णिच्+क्त] (पाठ) जो पढ़ाया जा चुका हो।

पाठी (ठिन्)—वि० [सं० पाठ+इनि] समस्त पदों के अंत में, पाठ करनेवाला या पाठक। जैसे—वेद-पाठी, सह-पाठी।
पुं० [पाठा+इनि] चीते का पेड़। चित्रक वृक्ष।

पाठीकुट—पुं० [सं० पाठा√कुट् (टेढ़ा होना)+क, पृषो० सिद्धि] चीते का पेड़।

पाठीन—वि० [सं० पाठि√नम् (झुकना)+ड, दीर्घ] पढ़ानेवाला।
पुं० १. पहिना (मछली)। २. गूगल का पेड़।

पाठ्य—वि० [सं० √पठ्+ण्यत् या √पठ्+णिच्+यत्] १. जो पढ़ा या पढ़ाया जाने को हो। २. पढ़ने या पढ़ाये जाने के योग्य।

पाठ्य-क्रम—पुं० [ष०त०] वे सब विषय तथा उनकी पुस्तकें जो किसी विशिष्ट परीक्षा में बैठनेवाले परीक्षार्थियों के लिए निर्धारित हों। (कोर्स)

पाठ्य-ग्रंथ—पुं० [सं०] पाठ्य-पुस्तक। (दे०)

पाठ्य-चर्या—स्त्री० [सं०] वह पुस्तिका जिसमें विभिन्न परीक्षाओं के लिए निर्धारित विषयों तथा तत्संबंधी पाठ्य-क्रमों का उल्लेख होता है। (करिक्यूलम)

पाठ्य-पुस्तक—स्त्री० [कर्म० स०] वह पुस्तक जो पाठशालाओं में

विद्यार्थियों को नियमित रूप से पढ़ाई जाती हो। पढ़ाई की पुस्तक। (टेक्स्ट बुक)

पाड़—पुं० [हिं० पाठ] १. धोती, साड़ी आदि का किनारा। २. मचान। ३. लकड़ी की वह जाली या ठठरी जो कूएँ के मुँह पर रखी रहती है। कटकर। चह। ४. पानी आदि रोकने का पुश्ता या बाँध। ५. वह तख्ता जिस पर अपराधी को फाँसी देने के समय खड़ा करते हैं। टिकठी। ६. इमारत बनाने के लिए खड़ा किया जानेवाला बांसों का ढाँचा। पाइट। उदा०—बाँसे की गर हविस हो तो गिर्द उसके पाड़ बाँध।—कोई शायर। ७. दो दीवारों के बीच पटिया देकर या पाटकर बनाया हुआ आधार। पाटा। दासा।

पाडल†—पुं०=पाटल।

पाडलीपुर—पुं०=पाटलीपुत्र।

पाडशालो—पुं० [देश०] १. दक्षिण भारत के जुलाहों की एक जाति। २. उक्त जाति का जुलाहा।

पाड़ा—पुं० [सं० पट्टन] १. किसी बस्ती में कुछ घरों का अलग विभाग या समूह। टोला। मुहल्ला। जैसे—धोबी पाड़ा, मोची पाड़ा। २. खेत की सीमा या हद।

पुं० [हिं० पाठा] [स्त्री० पड़िया, पाड़ी] भैंस का बच्चा। पँड़वा।

पुं० [देश०] एक तरह की बड़ी समुद्री मछली।

पाडिनी—स्त्री० [सं०√पड् (इकट्ठा होना)+णिनि+ङीप्] हाँड़ी। हँड़िया।

पाढ़—पुं० [सं० पाट, हिं० पाटा] १. पीढ़ा। २. पाटा। ३ गहनों पर नक्काशी करने का सुनारों का एक उपकरण। ४. लकड़ी की एक प्रकार की सीढ़ी। ५. मचान।

†पुं०=पाड़।

पाढ़त—स्त्री० [हिं० पढ़ना] १. पढ़ने की क्रिया या भाव। पढ़त। २. वह जो पढ़ा जाय। वह जिसका पाठ किया जाय। ३. मंत्र जो पढ़कर फूंका जाता है। ४. कोई पवित्र पद या वाक्य जिसका जप किया जाता हो। उदा०—स्वाय जात जब आवत, पाढ़त जाय।—नूर मुहम्मद।

पाढर—पुं० [सं० पाटल] १. पाडर का पेड़। २. एक प्रकार का टोना।

पाढल—पुं०=पाटल।

पाढ़ा—पुं० [देश०] एक प्रकार का छोटा बारहसिंघा जिसकी खाल भूरे या हलके बादामी रंग की होती है और जिस पर सफेद चित्तियाँ होती हैं। चित्रमृग।

†पुं०=पाठा।

पाढ़ित†—वि० [हिं० पढ़ना] १. पढ़ा हुआ। २. जिसे पढ़ा जाय।

पाढ़ी—स्त्री० [देश०] १. सूत की लच्छी। २. यात्रियों को नदी के पार पहुँचानेवाली नाव।

पाण—पुं० [सं०√पण् (व्यवहार)+घञ्] १. व्यापार। व्यवसाय। २. व्यापारी। ३. दाँव। बाजी। ४. संधि। समझौता। ५. हाथ। ६. प्रशंसा।

पाणही†—स्त्री०=पनही (जूता)।

पाणि—पुं० [सं०√पण्+इण] हाथ। कर।

पाणिक—वि० [सं० पण+ठक्—इक] १. व्यापार या व्यापारी-संबंधी। २. दाँव या बाजी लगाकर जीता हुआ।

पुं० १. व्यापारी। २. सौदा। ३. हाथ। ४. कार्तिकेय का एक गण।

पाणि-कच्छपिका—स्त्री० [मध्य० स०] कूर्ममुद्रा।

पाणि-कर्मा (र्मन्)—पुं० [ब० स०] १. शिव। २. वह जो हाथ से कोई बाजा बजाता हो; या ऐसा ही और कोई काम करता हो। ३. हाथ का कारीगर, । दस्तकार।

पाणिकर्ण—पुं०=पाणिकर्मा (शिव)।

पाणिका—स्त्री० [सं० पाणि+कन्+टाप्] एक प्रकार का गीत।

पाणि-गृहीता—वि० [ब० स०, टाप्] (स्त्री) जिसका पाणिग्रहण किया गया हो। विवाहिता (पत्नी)।

पाणि-गृहीती—वि० [ब० स०, ङीष्] (स्त्री) जिसका पाणिग्रहण संस्कार हो चुका हो। विवाहिता।

पाणि-ग्रह—पुं० [सं०√ग्रह् (पकड़ना)+अप्, ष० त०] पाणिग्रहण। (दे०)

पाणि-ग्रहण—पुं० [ष० त०] १. किसी स्त्री को पत्नी रूप में रखने और उसका निर्वाह करने के लिए उसका हाथ पकड़ना। २. हिंदुओं में विवाह की एक रसम जिसमें वर उक्त उद्देश्य से अपनी भावी पत्नी का हाथ पकड़ता है।

पाणिग्रहणिक—वि० [सं० पाणिग्रहण+ठक्—इक] पाणिग्रहण या विवाह-संबंधी। विवाह के समय का। जैसे—पाणिग्रहणिक उपहार, पाणिग्रहणिक मंत्र।

पाणिग्रहणीय—वि० [सं० पाणिग्रहण+छ—ईय] =पाणिग्रहणिक।

पाणिग्राह, पाणि-ग्राहक—वि० [सं० पाणि√ग्रह्+अण्] [ष० त०] किसी का हाथ पकड़नेवाला। पाणिग्रहण करनेवाला।

पुं० वर जो विवाह के समय कन्या का हाथ पकड़ता है।

पाणि-ग्राह्य—वि० [तृ० त०] १. जो मुट्ठी में आ सके या प्राप्त किया जा सके। २. जिसका पाणिग्रहण किया जा सके। जिसके साथ विवाह किया जा सके।

पाणिघ—पुं० [सं० पाणि√हन् (हिंसा)+ट] १. हाथ से बजाये जानेवाले बाजे। जैसे—ढोल, मृदंग आदि। २. हाथ का कारीगर। दस्तकार। शिल्पी। ३. हाथ से बाजा बजानेवाला।

पाणि-घात—पुं० [तृ० त०] १. हाथ से किया जानेवाला आघात। २. थप्पड़।

पाणिघ्न—पुं० [सं०पाणि√हन्+टक्] १. हाथ से आघात करनेवाला। २. ताली बजानेवाला। ३. शिल्पी।

पाणिज—वि० [सं० पाणि√जन्+ड] जो हाथ से उत्पन्न हुआ हो।

पुं० १. उँगली। २. नाखून। ३. नखी।

पाणि-तल—पुं० [ष० त०] १. हाथ की हथेली। २. वैद्यक में लगभग दो तोले की एक तौल या परिमाण।

पाणिताल—पुं० [मध्य० स०] संगीत में एक प्रकार का ताल।

पाणि-धर्म—पुं० [मध्य० स०] विवाह संस्कार।

पाणिन—पुं० [पणिन्+अण्]=पाणिनि।

पाणिनि—पुं० [सं० पणिन्+अण्+इञ्] संस्कृत भाषा के व्याकरण को

चार हजार सूत्रों में बाँधनेवाले एक प्रसिद्ध प्राचीन मुनि। (ई० पू० चौथी शताब्दी)

पाणिनीय—वि० [सं० पाणिनि+छ—ईय] १. पाणिनि-संबंधी। पाणिनि का। जैसे—पाणिनीय व्याकरण या सूत्र। २. पाणिनि का अनुयायी या भक्त। ३. पाणिनि का व्याकरण पढ़नेवाला।

पाणि-पल्लव—पुं० [ष० त०] हाथ की उँगलियाँ।

पाणि-पात्र—वि० [ब० स०] १. हाथ में लेकर अर्थात् अंजलि से पानी पीनेवाला। २. जो अंजलि से पात्र या बरतन का काम लेता हो।

पाणि-पीड़न—पुं० [ष० स०] १. पाणिग्रहण। विवाह। २. [ष० त०] पश्चात्ताप आदि के कारण हाथ मलना। पछताना।

पाणि-पुट (क)—पुं० [मध्य० स०] चुल्लू।

पाणि-प्रणयिनी—स्त्री० [ष० त०] विवाहिता स्त्री। धर्मपत्नी।

पाणिबंध—पुं० [ब० स०] पाणिग्रहण। विवाह।

पाणिभुक् (ज्)—पुं० [सं० पाणि√भुज् (खाना)+क्विप्] [पाणि√भुज्+क] गूलर वृक्ष।

पाणिमर्द—पुं० [सं० पाणि√मृद् (मलना)+अण्] करमर्द। करौंदा।

पाणिमुक्त—वि० [तृ० त०] हाथ से फेंककर चलाया जानेवाला (अस्त्र)। पुं० भाला।

पाणि-मुख—वि० [ब० स०] हाथ से खानेवाला।
पुं० बहु० मृतपूर्वज। पितर।

पाणि-मूल—पुं० [ष० त०] कलाई।

पाणिरुह—पुं० [सं० पाणि√रुह (उगना, निकलना)+क] १. उँगली। २. नाखून।

पाणि-रेखा—स्त्री० [ष० त०] हथेली की रेखा। हस्त-रेखा।

पाणिवाद—वि० [सं० पाणि√वद् (बोलना)+णिच्+अच्] १. मृदंग, ढोल आदि बजानेवाला। २. ताली बजानेवाला।
पुं० १. ढोल, मृदंग आदि बाजे २. ताली बजाने की क्रिया। ताली पीटना।

पाणि-वादक—वि० [सं० पाणि√वद्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. हाथ से मृदंग आदि बजानेवाला। २. ताली बजानेवाला।

पाणि-हता—स्त्री० [तृ० त०] ललित विस्तार के अनुसार एक छोटा तालाब जो देवताओं ने बुद्ध भगवान के लिए तैयार किया था।

पाणी—पुं०=पाणि (हाथ)।

पाणीकरण—पुं० [सं० अलुक् स०] विवाह। पाणिग्रहण।

पाण्य—वि० [सं०√पण् (स्तुति)+ण्यत्] प्रशंसा और स्तुति के योग्य।

पाण्याश—वि० [सं० पाणि√अश् (खाना)+अण्] हाथ से खानेवाला।
पुं० मृत पूर्वज या पितर जो अपने वंशजों के हाथ का दिया हुआ अन्न ही खाते हैं।

पातंग—वि० [सं० पतंग+अण्] १. फतिंगे या फतिंगों से संबंध रखनेवाला। २. फतिंगों के रंग का। भूरा।

पातंगि—पुं० [सं० पतंग+इञ्] १. शनिग्रह। २. यम। ३. कर्ण। ४. सुग्रीव।

पातंजल—वि० [सं० पतंजलि+अण्] १. पतंजलि-संबंधी। २. पतंजलिकृत।
पुं० १. पतंजलिकृत योगसूत्र। २. वह जो उक्त योग-सूत्र के अनुसार योगसाधन करता हो। ३. पतंजलिकृत महाभाष्य।

पातंजल-दर्शन—पुं० [कर्म० स०] योगदर्शन।

पातंजल-भाष्य—पुं० [कर्म० स०] महाभाष्य नामक प्रसिद्ध व्याकरण ग्रंथ।

पातंजल-सूत्र—पुं० [कर्म० स०] योगसूत्र।

पातंजलीय—वि०[सं० पातंजल] १. पतंजलि-संबंधी। २. पतंजलिकृत।

पात—पुं० [सं०√पत् (गिरना)+घञ्] १. अपने स्थान से हटकर, टूटकर या और किसी प्रकार गिरने या नीचे आने की क्रिया या भाव। पतन। जैसे—उल्का-पात। [√पत्+णिच्+घञ्] २. गिराने की क्रिया या भाव। पतन। जैसे—रक्तपात। ३. अपने उचित या पूर्व स्थान से नीचे आने की क्रिया या भाव। जैसे—अधःपात। ४. ध्वस्त, नष्ट या समाप्त होकर गिरने की क्रिया या भाव। जैसे—शरीर-पात। ५. किसी वस्तु की वह स्थिति जिसमें वह सारी शक्ति प्रायः नष्ट हो जाने के कारण सहसा गिर, ढह या विनष्ट हो जाती है। सहसा किसी चीज का गिरकर बेकाम हो जाना। (कोलैप्स) ६. किसी प्रकार जाकर कहीं गिरने, पड़ने या लगने की क्रिया या भाव। जैसे—दृष्टि-पात। ७. आघात। चोट। उदा०—चलै फटि पात गदा सिर चीर, मनौं तरबूज हनेकर कीर।—कविराजा सूर्यमल। ८. गणित ज्योतिष में, वह विंदु या स्थान जिस पर किसी ग्रह या नक्षत्र की कक्षा क्रांतिवृत्त को काटती है। ९. वह विंदु या स्थान जहाँ एक वृत्त दूसरे वृत्त को काटता हो। १०. ज्यामिति में वह विंदु जहाँ कोई वक्र रेखा मुड़कर अपने किसी अंश को काटती हो। (नोड)
११. ज्योतिष में, (क) वह विंदु जहाँ कोई ग्रह सूर्य की कक्षा को पार करता हुआ आगे बढ़ता है; अथवा कोई उपग्रह अपने ग्रह की कक्षा को पार करता हुआ आगे बढ़ता है। (नोड)

विशेष—साधारणतः ग्रहों, नक्षत्रों की कक्षाएँ जहाँ क्रांतिवृत्त को काटती हुई ऊपर चढ़ती या नीचे उतरती हैं, उन्हें पात कहते हैं। ये स्थान क्रमात् आरोह-पात और अवरोह-पात कहलाते हैं। चंद्रमा के कक्ष में जो आरोह-पात और अवरोहपात पड़ते हैं वे क्रमात् राहु और केतु कहलाते हैं। इसी आधार पर पुराणों और परवर्ती भारतीय ज्योतिष में राहु और केतु दो स्वतंत्र ग्रह माने गये हैं।

पुं० [√पत्+णिच्+अच्] राहु।
पुं० [सं० पत्र] १. वृक्ष का पत्ता। पत्र।

मुहा०—पातों आ लगना=पतझड़ होना या उसका समय आना।
२. वृक्ष के पत्ते के आकार का एक गहना जो कान में पहना जाता है। पत्ता। ३. चाशनी। शीरा।
पुं० [सं० पात्र] कवि। (डिं०)

पातक—वि० [सं०√पत्+णिच्+ण्वुल्—अक] पात करने अर्थात् गिरानेवाला।
पुं० ऐसा बड़ा पाप जो उसके कर्ता को नरक में गिरानेवाला हो। ऐसा पाप जिसका फल भोगने के लिए नरक में जाना पड़ता हो।

विशेष—हमारे यहाँ के धर्मशास्त्रों में अति-पातक, उप-पातक, महा-पातक आदि अनेक भेद किये गये हैं। साधारण पातकों के लिए उनमें प्रायश्चित्त का भी विधान है।

पातकी (किन्)—वि० [सं० पातक+इनि] पातक माने जानेवाले कर्मों के फल भोग के लिए नरक में जानेवाला; अर्थात् बहुत बड़ा पापी।

पातघबरा—वि० [हिं० पात+घबराना] १. पत्तों की आहट तक से भयभीत और विकल होनेवाला। २. बहुत जल्दी घबरा जानेवाला। ३. बहुत बड़ा कायर या डरपोक।

पातन—पुं० [सं०√पत्+णिच्+ल्युट्—अन] १. गिराने या नीचे ढकेलने की क्रिया या भाव। २. फेंकने की क्रिया या भाव। ३. वैद्यक में, पारा शोधने के आठ संस्कारों में से पाँचवाँ संस्कार।

पातनीय—वि० [सं०√पत्+णिच्+अनीयर्] १. जिसका पात हो सके या किया जाने को हो। २. जो गिराया जा सके या गिराया जाने को हो।

पातबंदी—स्त्री० [सं० पात या हिं० पाँति ?+बंदी] वह विवरण जिसमें किसी की संपत्ति और देय तथा प्राप्य धन का उल्लेख हो।

पातयिता (तृ)—वि० [सं०√पत्+णिच्+तृच्] १. गिरानेवाला। २. फेंकनेवाला।

पातर—वि० [सं० पात्रट, हिंदी पतला का पुराना रूप] १. जिसका दल मोटा न हो। पतला। २. क्षीणकाय। ३. बहुत ही संकीर्ण और तुच्छ स्वभाववाला। ४. नीच कुल का। अप्रतिष्ठित। उदा०—मयला अकलें मूल पातर खाँड खाँड करैं भूखा।—सूर।

स्त्री०=पत्तल।

स्त्री० [सं० पातिली=एक विशेष जाति की स्त्री] १. वेश्या। २ तितली।

पातरा†—वि० [स्त्री० पातरी]=पतला।

पातराज—पुं० [देश०] एक तरह का साँप।

पातरि (री)—स्त्री०=पातर (वेश्या)।

पातल†—वि०=पतला।

†स्त्री०=पत्तल।

†स्त्री०=पातर (वेश्या)।

पातला†—वि० [स्त्री० पातली] =पतला।

पातव्य—वि० [सं०√पा (रक्षा करना)+तव्यत्] १. जिसकी रक्षा की जानी चाहिए। २. पीये जाने योग्य।

पातशाह—पुं० [फा० बादशाह] [भाव०पातशाही] बादशाह। महाराज।

पाता (तृ)—वि० [सं०√पा+तृच्] १. रक्षा करनेवाला। २. पीनेवाला।

†पुं०=पत्ता।

पाताखत—पुं० [सं० पत्र+अक्षत] १. पत्र और अक्षत। २. देव पूजने की साधारण या स्वल्प सामग्री। ३. तुच्छ भेंट।

पाताबा—पुं० [फा०पाताबः] १. मोजे या जुराब के ऊपर पहना जानेवाला एक प्रकार का जूते का खोल। २.बूट, सैंडल आदि कुछ विशिष्ट जूतों के तलों के ऊपरी भाग में उसी नाप या आकार-प्रकार का लगाया जानेवाला चमड़े का टुकड़ा। ३. जुराब। मोजा।

पातार† —पुं०=पाताल।

पाताल—पुं० [सं०√पत्+आलञ्]१.पृथ्वी के नीचे के कल्पित सात लोकों में से एक जो सबसे नीचे है और जिसमें नाग लोग वास करते हुए माने गये हैं। नागलोक। अन्य ६ लोक ये हैं—अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल और महातल। २. पृथ्वी के नीचे के सातों लोकों में से प्रत्येक लोक। ३. बहुत अधिक गहरा और नीचा स्थान। ४. गुफा। ५. बिल। विवर। ६. बड़वानल। ७. जन्म-कुंडली में जन्म के लग्न से चौथा स्थान। ८. पाताल यंत्र। (दे०)

पाताल-केतु—पुं० [ब० स०] पाताल में रहनेवाला एक दैत्य।

पाताल-खंड—पुं० [ष० त०] पाताल (लोक)।

पाताल-गंगा—स्त्री० [मध्य० स०] १. पाताल लोक की एक नदी का नाम। २. भूगर्भ के अंदर बहनेवाली कोई नदी।

पाताल-गारुड़ी—स्त्री० [ष० त०]छिरिहटा नामक लता।

पाताल-तुंबी—स्त्री० [ष० त०] एक तरह की लता। पातालतोंबी।

पाताल-तोंबी—स्त्री०=पाताल-तुंबी।

पाताल-निलय—वि० [ब० स०] जिसका घर पाताल में हो। पाताल में रहनेवाला।

पुं० १. नाग जाति का व्यक्ति। २. साँप। ३. दैत्य। राक्षस।

पाताल-निवास—पुं० =पाताल-निलय।

पाताल-यंत्र—पुं० [मध्य० स०] वैद्यक में, एक प्रकार का यंत्र जिसके द्वारा धातुएँ गलाई, ओषधियाँ पिघलाई तथा अर्क, तेल आदि तैयार किये जाते हैं।

पाताल-वासिनी—स्त्री० [सं० पाताल√वस् (बसना)+णिनि+ङीप्] नागवल्ली लता। पान की लता।

पाताली—स्त्री० [देश०] ताड़ के फल के गूदे की बनाई तथा सुखाकर खाई जानेवाली टिकिया।

†वि०[सं० पाताल] १. पाताल-संबंधी। २. पाताल में रहने या होनेवाला। ३. पृथ्वी के नीचे होनेवाला। (अंडर ग्राउंड) जैसे—वृक्ष के पाताली तने।

पाताली पत्ती—स्त्री० [हिं०] वनस्पति विज्ञान में, उत्पत्ति-भेद से पत्तियों के चार प्रकारों में से एक। प्रायः भूमि पर अपने तने फैलानेवाले पौधों की पत्तियाँ जो प्रायः बहुत छोटी होती हैं। (स्केल लीफ) जैसे—आलू की पाताली पत्ती।

पातालीय—वि० [सं०] १. पाताल-संबंधी। २. पाताल का। २. पाताल में अर्थात् पृथ्वी-तल के नीचे या भूगर्भ में रहने या होनेवाला।

पातालौका (कस्)—वि० [सं० पाताल-ओकस् ब० स०] पाताल लोक में रहनेवाला।

पुं० १. नाग जाति का व्यक्ति। २. साँप।

पाति—स्त्री० १=पाती (चिट्ठी)। २=पत्ती।

पुं० [सं०√पा+अति] १. स्वामी। २. पति। २. पक्षी।

पातिक—वि० [सं० पात+ठन्—इक्] १. फेंका हुआ। २. नीचे गिराया या ढकेला हुआ।

पुं० सूँस नामक जल-जंतु।

पातिग†—पुं०=पातक। उदा०—अनेक जनम ना पातिग छूटें।—गोरखनाथ।

पातित—भू० कृ० वि० [सं०√पत्+णिच+क्त] १. गिराया हुआ। २. फेंका हुआ। ३. झुकाया हुआ।

पातित्य—पुं० [सं० पतित+ष्यञ्] १. पतित होने की अवस्था या भाव। गिरावट। २. अधः पतन।

पातिल—स्त्री० [सं० पातिली] एक तरह की मिट्टी की हँड़िया जिसमें विवाह आदि के समय दीया जलाया जाता है तथा हँड़िया का आधा मुँह ढक्कन से ढक दिया जाता है।

वि०=पतला।

पातिली—स्त्री० [सं० पाति√ली (लीन होना) +ड+अण्+ङीष्] १. जाल। फंदा। २. मिट्टी की पातिल नामक हँड़िया। ३. किसी विशिष्ट जाति की स्त्री।

पातिव्रत—पुं०=पातिव्रत्य।

पातिव्रत्य—पुं० [सं० पतिव्रता+ष्यञ्] पतिव्रता होने की अवस्था, गुण और भाव। पति के प्रति होनेवाली पूर्ण निष्ठा की भावना।

पातिसाह*—पुं०=पातशाह (बादशाह)।

पाती—स्त्री० [सं० पत्री, प्रा० पत्ती] १. चिट्ठी। पत्री। पत्र। २. निशान। पता। ३. वृक्ष का पत्ता या पत्ती।

स्त्री० [हिं० पति] १. प्रतिष्ठा। सम्मान। २. लोक-लज्जा।

पातुक—वि० [सं०√पत्+उकञ्] १. गिरनेवाला। २. पतनोन्मुख।

पुं० १. झरना। २. पहाड़ की ढाल। ३. एक स्तनपायी दीर्घाकार जल-जंतु। जल-हस्ती।

पातुर—स्त्री० [सं० पातिली=स्त्री विशेष] वेश्या।

पातुरनी†—स्त्री०=पातुर (वेश्या)।

पात्य—वि० [सं०√पत्+णिच्+यत्] १. जो गिराया जा सकता हो। २. दंडित किये जाने के योग्य। ३. प्रहार करने योग्य। ४. [√पत्+ण्यत्] गिरने योग्य।

पुं० [पति+यक] पति होने का भाव। पतित्व।

पात्र—पुं० [सं०√पा (पीना, रक्षा करना)+ष्ट्रन्] [स्त्री० पात्री] [भाव० पात्रता] १. वह आधान जिसमें कुछ रखा जा सके। बरतन। भाजन। २. ऐसा बरतन जिसमें पानी पीया या रखा जाता हो। ३. यज्ञ में काम आनेवाले उपकरण या बरतन। यज्ञ-पात्र। ४. जल का कुंड या तालाब। ५. नदी की चौड़ाई। पाट। ६. ऐसा व्यक्ति जो किसी काम या बात के लिए सब प्रकार से उपयुक्त या योग्य समझा जाता हो। अधिकारी। जैसे—किसी को कुछ देने से पहले यह देख लेना चाहिए कि वह उसे पाने या रखने का पात्र है या नहीं। ७. उपन्यास, कहानी, काव्य, नाटक आदि में वे व्यक्ति जो कथा-वस्तु की घटनाओं के घटक होते हैं और जिनके क्रिया-कलाप या चरित्र से कथा-वस्तु की सृष्टि और परिपाक होता है। ८. नाटक में, वे अभिनेता या नट जो उक्त व्यक्तियों की वेष-भूषा आदि धारण कर के उनके चरित्रों का अभिनय करते हैं। अभिनेता। जैसे—इस नाटक में दस पुरुष और छः स्त्रियाँ पात्र हैं। ९. राज्य का प्रधान मंत्री। १०. वृक्ष का पत्ता। पत्र। ११. वैद्यक में, चार सेर की एक तौल। आढ़क। १२. आज्ञा। आदेश।

वि० [स्त्री० पात्री] जो किसी कार्य या पद के लिए उपयुक्त होने के कारण चुना या नियुक्त किया जा सकता हो। (एलिजिबुल)

पात्रक—पुं० [सं० पात्र+कन्] १. प्याली, हाँड़ी आदि पात्र। २. भिखमंगों का भिक्षापात्र।

पात्रट—पुं० [सं० पात्र√अट्+अच्] १. पात्र। प्याला। २. फटा-पुराना कपड़ा। चिथड़ा।

पात्रटीर—पुं० [सं० पात्र√अट्+ईरन्] १. योग्य मंत्री या सचिव। २. चाँदी। ३. किसी धातु का बना हुआ बरतन। ४. अग्नि। ५. कौआ। ६. कंक (पक्षी)। ७. लोहे में लगनेवाला जंग या मोरचा। ८. नाक से बहनेवाला मल।

पात्रता—स्त्री० [सं० पात्र+तल्+टाप्] पात्र (अर्थात् किसी कार्य, पद, दान-दक्षिणा आदि का योग्य अधिकारी) होने की अवस्था, गुण और भाव।

पात्रत्व—पुं० [सं० पात्र+त्व] पात्रता।

पात्र-दुष्ट-रस—पुं० [सं० दुष्ट-रस, कर्म० स०, पात्र-दुष्ट-रस, स० त०] कविता में परस्पर विरोधी बातें कहने का एक दोष। (कवि केशवदास)

पात्र-पाल—पुं० [सं० पात्र√पाल्+णिच्+अण] १. तराजू की डंडी। २. पतवार।

पात्रभृत्—पुं० [सं० पात्र√भृ (धारण करना)+क्विप्] बरतन माँजने-धोनेवाला नौकर।

पात्र-वर्ग—पुं० [ष० त०] १. किसी साहित्यिक रचना के कुल पात्र। २. अभिनय करनेवालों का समूह।

पात्र-शुद्धि—स्त्री० [ष० त०] बरतन माँजने-धोने की क्रिया, भाव और पारिश्रमिक।

पात्र-शेष—पुं० [स० त०] बरतनों में छोड़ा जानेवाला उच्छिष्ट या जूठा भोजन। जूठन।

पात्रासादन—पुं० [सं० पात्र-आसादन, ष० त०] यज्ञपात्रों को यथास्थान या यथाक्रम रखना।

पात्रिक—वि० [सं० पात्र+ष्ठन्—इक] जो पात्र (आढ़क नामक तौल) से तौला या मापा गया हो

पुं० [स्त्री० अल्पा० पात्रिका] छोटा पात्र या बरतन।

पात्रिकी—स्त्री० [सं० पात्रिक+ङीष्] १. छोटा पात्र। २. थाली।

पात्रिय—वि० [सं० पात्र+घ—इय] [पात्र+यत्] [illegible]के साथ बैठकर एक ही पात्र में भोजन किया जाय या किया जा सके। सह-भोजी।

पात्री (त्रिन्)—वि०, पुं० [सं० पात्र+इनि] १. जिसके पास बरतन हो। पात्रवाला। २. जिसके पास सुयोग्य पात्र या अधिकारी व्यक्ति हो।

स्त्री० १. पात्र का स्त्री रूप। (दे० 'पात्र') २. छोटा पात्र या बरतन। ३. एक प्रकार की अँगीठी या छोटी भट्ठी। ४. साहित्यिक रचना का कोई स्त्री पात्र। ५. नाटक आदि में अभिनय करनेवाली स्त्री। अभिनेत्री।

पात्रीय—वि० [सं० पात्र+छ—ईय] पात्र-संबंधी। पात्र का।

पुं० एक प्रकार का यज्ञ-पात्र।

पात्रीर—पुं० [सं० पात्री√रा (देना)+क] वह पदार्थ जिसकी यज्ञ आदि में आहुति दी जाती हो।

पात्रे-बहुल—वि० [सं० अलुक् स०] दूसरों का दिया हुआ भोजन करनेवाला। परान्न-भोजी।

पात्रे-समित—वि० [सं० अलुक् स०] पात्रेबहुल। (दे०)

पात्रोपकरण—पुं० [सं० पात्र-उपकरण, ष० त०] अलंकरण के छोटे-मोटे साधन।

पाथ्य—वि० [सं० पात्र+यत्] जिसके साथ बैठकर एक ही पात्र में भोजन किया जाय या किया जा सके।

पाथ—पुं० [सं०√पा (पीना, रक्षा)+थ] १. जल। २. सूर्य। ३. अग्नि। ४. अन्न। ५. आकाश। ६. वायु।

†पुं०=पथ (मार्ग)।

पाथना—स० [सं० प्रथन या थापना का वर्ण-विपर्यय] १. गीली मिट्टी, ताजे गोबर आदि को थपथपाते हुए या साँचों में ढालकर छोटे छोटे पिंड बनाना। २. मारना-पीटना।

पाथ-नाथ—पुं० [ष० त०] समुद्र।

पाथ-निधि—पुं० [ष० त०] दे० 'पाथोनिधि'।

पाथर†—पुं०=पत्थर।

पाथरण†—पुं० [सं० प्रस्तरण, प्रा० पत्थरण] बिछौना। (राज०)

पाथ-राशि—पुं० [ष० त०] समुद्र।

पाथस्—पुं० [सं०√पा (पीना या रक्षा)+असुन्, थुक्] १. जल। २. अन्न। ३. आकाश।

पाथस्पति—पुं० [सं० ष० त०] वरुण।

पाथा—पुं० [सं० प्रस्थ] १. एक तौल जो कच्चे चार सेर की होती है। २. उतनी भूमि जितनी में उक्त मान का अन्न बोया जा सके। ३. अनाज नापने का एक प्रकार का बड़ा टोकरा। ४. हल की खोंपी जिसमें फाल जड़ा रहता है।

पुं० [?] १. कोल्हू हाँकनेवाला व्यक्ति। २. अनाज में लगनेवाला एक प्रकार का कीड़ा।

†पुं० दे० 'पाटा'।

पाथी† (थिस्)—पुं० [सं०√पा (पीना)+इसिन्, थुक्] १. समुद्र। २. आँख। ३. घाव पर का खुरंड या पपड़ी। ४. दूध, मट्ठे का वह मिश्रण जिससे प्राचीन काल में पितृ-तर्पण किया जाता था।

पाथी†—पुं० [हिं० पथ] पथिक। बटोही।

मुहा०—पाथी होना=कहीं से चुपचाप चल देना। चलते बनना। उदा०—साथी पाथी भये जाग अजहूँ निसि बीती।—दीन दयाल गिरि।

पाथेय—वि० [सं० पथिन्+ढञ्—एय] पथ-संबंधी। पथ का।

पुं० १. वे खाद्य पदार्थ जो यात्रा के समय यात्री रास्ते में खाने-पीने के लिए ले जाते हैं। रास्ते का भोजन। २. वह धन जो रास्ते के खर्च के लिए पास रखा जाता है। ३. वह साधन या सामग्री जिसकी आवश्यकता कोई काम करने के समय पड़ती हो और जिसमें उस काम में सहायता या सहारा मिलता हो। संबल। ४. कन्या राशि।

पाथोज—पुं० [सं० पाथस्√जन् (उत्पन्न होना)+ड] कमल।

पाथोद—पुं० [सं० पाथस्√दा (देना)+क] बादल। मेघ।

पाथोधर—पुं० [सं० पाथस्√धृ (धारण करना)+अच्] बादल। मेघ।

पाथोधि—पुं० [सं० पाथस्√धा+कि] समुद्र।

पाथोन—पुं० [यू० पथेनस] कन्या राशि।

पाथोनिधि—पुं० [सं० पाथस्-निधि, ष० त०] समुद्र।

पाथ्य—वि० [सं० पाथस्+ड्यन्] १. आकाश में रहनेवाला। २. हृदयाकाश में रहनेवाला। ३. वायु या हवा में रहनेवाला।

पाद—पुं० [सं०√पद् (गति)+घञ्] १. चरण। पैर। पाँव। २. किसी चीज का चौथाई भाग। चतुर्थांश। जैसे—चिकित्सा के चार पाद हैं। ३. छंद, श्लोक, आदि का चौथाई भाग जो एक चरण या पद के रूप में होता है। ४. ज्यामिति में, किसी क्षेत्र या वृत्त का चौथाई अंश। (क्वाड्रेन्ट) ५. कोई ऐसी चीज जिसके आधार पर कोई दूसरी चीज खड़ी या ठहरी हो। ६. किसी वस्तु का नीचेवाला भाग। तल। जैसे—पर्वत या वृक्ष का पाद भाग। ७. ग्रंथ या पुस्तक का कोई विशिष्ट अंश। खंड या भाग। ८. किसी बड़े पर्वत के पास का कोई छोटा पर्वत। ९. किरण। रश्मि। १०. चलने की क्रिया या भाव। गति। गमन। ११. शिव।

पुं० [सं० पर्द] मलद्वार से निकलनेवाली वायु। अपानवायु।

पादक—वि० [सं०√पद्+ण्वुल्—अक] १. जो खूब चलता हो। चलनेवाला। २. किसी चीज का चौथाई अंश।

पुं० छोटा पैर।

पाद-कटक—पुं० [ष० त०] नूपुर।

पाद-कमल—पुं० [कर्म० स०] चरण-कमल।

पाद-कीलिका—स्त्री० [ष० त०] नूपुर।

पाद-कृच्छ्र—पुं० [ष० त०] प्रायश्चित्त करने के लिए चार दिन तक रखा जानेवाला एक तरह का व्रत।

पादक्रमिक—वि० [सं० पद-क्रम, ष० त०,+ठक्—इक] वेदों का पद-क्रम जानने या पढ़नेवाला।

पाद-क्षेप—पुं० [ष० त०] चलने के समय पैर रखना। चलना।

पाद-गंडीर—पुं० [सं० पाद-गण्डि+ई, ष० त०,+र] फीलपाँव या श्लीपद नामक रोग।

पाद-ग्रंथि—स्त्री० [ष० त०] टखना।

पाद-ग्रहण—पुं० [ष० त०] पैर छूकर प्रणाम करने का एक प्रकार।

पाद-चतुर—वि० [स० त०] निंदा करनेवाला।

पुं० १. बकरा। २. पीपल का पेड़। ३. बालू का भीटा। ४. ओला।

पादचत्वर—वि०, पुं० [सं०] पाद-चतुर।

पादचारी (रिन्)—वि० [सं० पाद√चर् (गति)+णिनि] १. पैरों से चलनेवाला। २. पैदल चलनेवाला।

पुं० प्यादा।

पादज—वि० [सं० पाद√जन्+ड] जो पैरों से उत्पन्न हुआ हो।

पुं० शूद्र।

पाद-जल—पुं० [सं० मध्य० स०] १. वह जल जिसमें किसी के पैर धोए गये हों। चरणोदक। २. मट्ठा जिसमें चौथाई अंश पानी मिला हो।

पादजाह—पुं० [सं० पाद+जाहच्] १. पैर की एड़ी। २. पैर का तलवा। ३. टखना। ४. वह भूमि जहाँ पहाड़ शुरू होता हो। ५. चरणों का सान्निध्य।

पाद-टिप्पणी—स्त्री० [मध्य० स०] वह टिप्पणी जो किसी ग्रंथ में पृष्ठ के निचले भाग में सूचना, निर्देश आदि के लिए लिखी गई हो। तल-टीप। (फुटनोट)

पाद-टीका—स्त्री०=पाद-टिप्पणी। (दे०)

पाद-तल—पुं० [ष० त०] पैर का तलवा।

पादत्र—पुं० [सं० पाद√त्रा (रक्षा)+क] पाद-त्राण।

पाद-त्राण—वि० [ब० स०] पैरों की रक्षा करनेवाला।
पुं० पैरों की रक्षा के लिए पहनी जानेवाली चीज। जैसे—खड़ाऊँ, चप्पल, जूता आदि।

पाद-त्रान+—पुं०=पाद-त्राण।

पाद-दलित—वि० [तृ० त०] पद-दलित।

पाद-दारिका—स्त्री० [ष० त०] बिवाई (रोग)।

पाद-दाह—पुं० [सं० पाद√दह् (जलाना)+अण्] १. वात रोग के कारण पैर में होनेवाली जलन। २. उक्त जलन पैदा करनेवाला वात रोग।

पाद-धावन—पुं० [ष० त०] १. पैर धोने की क्रिया। २. वह बालू या मिट्टी जिससे मलकर पैर धोते हैं।

पाद-धावनिका—स्त्री० [ष० त०] वह बालू जिससे पैर रगड़कर धोये जाते हैं।

पाद-नख—पुं० [ष० त०] पैरों की उँगलियों के नाखून।

पादना—अ० [हिं० पाद] १. मलद्वार से वायु विशेषतः शब्द करती हुई वायु निकालना। २. खेल में, विपक्षी द्वारा अधिक दौड़ाया, भगाया तथा परेशान किया जाना।

पाद-नालिका—स्त्री० [ष० त०] नूपुर।

पाद-निकेत—पुं० [ष० त०] पैर रखने की छोटी चौकी। पाद-पीठि।

पाद-न्यास—पुं० [ष० त०] १. बराबर पैर रखते हुए चलना। २. नाचना।

पाद-पंकज—पुं० [उपमि० स०] चरण-कमल।

पादप—पुं०[सं० पाद√पा (पीना)+क] १. वृक्ष। पेड़। २. पाद निकेत। पाद पीठ।

पादप-खंड—पुं० [ष० त०] १. वृक्षों का समूह। २. जंगल। वन।

पाद-पथ—पुं० [ष० त०] पैदल चलने का छोटा और सँकरा मार्ग। पैदल का रास्ता, जिस पर सवारी न जा सकती हो। (फुटपाथ)

पाद-पद्धति—स्त्री० [ष० त०] १. रास्ता। २. पगडंडी।

पादपा—स्त्री० [सं० पाद√पा (रक्षा करना)+क+टाप्] १. खड़ाऊँ। २. जूता।

पाद-पालिका—स्त्री० [ष० त०] नूपुर।

पाद-पाश—पुं० [ष० त०] १. वह रस्सी जिससे घोड़ों के पिछले दोनों पैर बाँधे जाते हैं। पिछाड़ी। २. नूपुर।

पादपाशी—स्त्री० [सं० पादपाश+ङीष्] १. पैर में बाँधने की जंजीर या सिकड़ी। २. बेड़ी। ३. एक लता।

पाद-पीठ—पुं० [ष० त०] वह पीढ़ा या छोटी चौकी जिस पर ऊँचे आसन पर बैठनेवाले पैर रखकर बैठते हैं। (पेडेस्टल)

पाद-पीठिका—स्त्री० [ष० त०] १. नाई का पेशा। २. सफेद पत्थर।

पाद-पूरण—पुं० [ष० त०] १. किसी श्लोक या पद के किसी चरण को पूरा करना। पादपूर्ति। २. वह अक्षर या शब्द जिससे किसी श्लोक या पद की पूर्ति होती हो।

पाद-पूर्ति—स्त्री० [ष० त०] कविता में, छंद का चरण पूरा करने के लिए उसमें कोई अक्षर या शब्द जोड़ना या बढ़ाना। चरणपूर्ति।

पाद-प्रक्षालन—पुं० [ष० त०] पैर धोना।

पाद-प्रणाम—पुं० [स० त०] साष्टांग दंडवत्। पाँव पड़ना।

पाद-प्रतिष्ठान—पुं० [ष० त०] पाद-पीठ। (दे०)

पाद-प्रधारण—पुं० [ब० स०] १. खड़ाऊँ। २. जूता।

पाद-प्रसारण—पुं० [ष० त०] पैर फैलाने की क्रिया या भाव।

पाद-प्रहार—पुं० [तृ० त०] पैर से किया जानेवाला आघात या प्रहार। लात मारना। ठोकर मारना।

पाद-बंध—पुं० [ष० त०] १. कैदियों, पशुओं आदि के पैरों में बाँधी जानेवाली जंजीर। २. बेड़ी।

पाद-बंधन—पुं० [ष० त०] पाद-बंध।

पाद-भट—पुं० [मध्य० स०] पैदल सिपाही। प्यादा।

पाद-भाग—पुं० [ष० त०] १. पैर का निचला भाग। २. चौथा हिस्सा। चौथाई।

पाद-मुद्रा—स्त्री० [ष० त०] चरण-चिह्न।

पाद-मूल—स्त्री० [ष० त०] १. पैर का निचला भाग। २. पर्वत की तराई।

पादरक्ष (क)—पुं० [सं० पाद√रक्ष् (रक्षा करना)+अण्; पाद-रक्षक, ष० त०] वह जिससे पैरों की रक्षा की जाय। जैसे—जूता, खड़ाऊँ आदि।

पाद-रज (जस्)—स्त्री० [ष० त०] चरण-धूलि।

पाद-रज्जु—स्त्री० [ष० त०] वह रस्सी या सिक्कड़ जिससे पैर, विशेषतः हाथी के पैर बाँधे जाते हैं।

पादरथी—स्त्री० [सं० रथ+ङीष्, पाद-रथी, ष० त०] खड़ाऊँ।

पादरी—पुं० [पुर्त० पैड्रे] मसीही धर्मावलंबियों का धर्मगुरु या पुरोहित।

पादरोह, पादरोहण—पुं० [सं० पाद√रुह् (उत्पत्ति)+अच्] [सं० पाद√रुह्+ल्यु—अन] बड़ का पेड़।

पाद-लग्न—वि० [स० त०] जो पैरों से आ लगा हो; अर्थात् शरण में आया हुआ।

पाद-लेप—पुं० [ष० त०] पैरों में किया जानेवाला आलते, महावर आदि का लेप।

पाद-वंदन—पुं० [ष० त०] १. पैर पकड़कर प्रणाम करना। २. चरणों की पूजा, सेवा या स्तुति।

पाद-वल्मीक—पुं० [स० त०] फीलपाँव (रोग)।

पादविदु—पुं० [सं०]=अधःस्वस्तिक।

पादविक—पुं० [सं० पदवी+ठक्—इक] पथिक।

पाद-वेष्टनिक—पुं० [ष० त०] पाताबा। मोजा।

पाद-शब्द—पुं० [ष० त०] किसी के चलने से होनेवाला शब्द। पैर की आहट।

पाद-शाखा—स्त्री० [ष० त०] १. पैर की उँगली। २. पैर की नोक।

पादशाह—पुं० [फा०] [भाव० पादशाही] बादशाह। सम्राट्।

पादशाहजादा—पुं० [फा०] बादशाहजादा। महाराजकुमार।

पादशाही—वि० [फा०] बादशाह का।
स्त्री० १. राज्य। २. शासन।

पादशिष्ट-जल—पुं० [सं० पाद-शिष्ट, तृ० त०; पादशिष्ट-जल, कर्म० स०] ऐसा जल जो औटाकर चौथाई कर लिया गया हो। (वैद्यक)

पादशुश्रूषा—स्त्री० [ष० त०] चरण-सेवा। पैर दबाना।

पाद-शैल—पुं० [मध्य० स०] बड़े पहाड़ के नीचे या पास का कोई छोटा पहाड़।

पाद-शोथ—पुं० [ष० त०] १. पैर में होनेवाली सूजन। २. पैरों में सूजन होने का रोग। फीलपाँव।

पाद-शौच—पुं० [ष० त०] पैर धोना।

पाद-श्लाका—स्त्री० [ष० त०] पैर की नली।

पाद-सेवन—पुं०=पाद-सेवा।

पाद-सेवा—स्त्री० [ष० त०] चरण दबाना।

पाद-स्तंभ—पुं० [ष० त०] वह लकड़ी जो किसी चीज को गिरने से रोकने के लिए उसके नीचे लगाई जाती है।

पाद-स्फोट—पुं० [ष० त०] वैद्यक के अनुसार ग्यारह प्रकार के क्षुद्र कुष्ठों में से एक।

पाद-स्वेदन—पुं० [ष० त०] पैरों विशेषतः पैरों के तलवों में पसीना आना।

पाद-हत—भू० कृ० [तृ० त०] जिस पर पैर का आघात किया गया हो। जिसे पैर से मारा गया हो।

पाद-हर्ष—पुं० [ष० त०] एक वात रोग जिसमें पैरों में झुनझुनी होती है।

पाद-हीन—वि० [तृ० त०] १. पाद या पैर से रहित। २. जिसका चौथा चरण न हो।

पादांक—पुं० [सं० पाद-अंक, ष० त०] पद-चिह्न।

पादांकुलक—पुं० दे० 'पादाकुलक'।

पादांगद—पुं० [सं० पाद-अंगद, ष० त०] नूपुर।

पादांगुलि (ली)—स्त्री० [पाद-अंगुलि, ष० त०] पैर की उँगली।

पादांगुष्ठ—पुं० [सं० पाद-अंगुष्ठ, ष० त०] पैर का अँगूठा।

पादांत—पुं० [सं० पाद-अंत, ष० त०] पद का अंतिम भाग।

पादांतस्थित—वि० [सं० पादांत-स्थित स० त०] पद के अन्त में होनेवाला।

पादांबु—पुं० [सं० पाद-अंबु, मध्य० स०] १. पैरों के धोने पर निकला हुआ जल। २. [ब० स०] मट्ठा।

पादांभ (स्)—पुं० [सं० पाद-अंभस्, मध्य० स०] पैर धोने का जल।

पादाकुल—पुं०=पादाकुलक।

पादाकुलक—पुं० [सं० पाद-आकुल, तृ० त०,+कन्] एक प्रकार का मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ होती हैं।

विशेष—भानु कवि के मत से वह छंद पादाकुलक कहलाता है जिसके प्रत्येक चरण में चार चौकल हों। यथा—गुरु-पद मृदु रज मंजुल अंजन नयन अमिय दृग दोष विभंजन।—तुलसी। परन्तु अन्य आचार्यों के मत से १६ मात्राओंवाले सभी छंद पादाकुलक कहलाते हैं। परन्तु उनके आरंभ में द्विकल अवश्य होना चाहिए; पर त्रिकल कभी नहीं होना चाहिए। इस दृष्टि से अटिल्ल, डिल्ला और पद्धति या छंद भी पादाकुलक वर्ग में आ जाते हैं। ऐसे छंदों की चाल त्रोटक वृत्त की चाल से मिलती-जुलती होती है।

पादाक्रांत—वि० [सं० पाद-आक्रांत, तृ० त०] पैरों से कुचला या रौंदा हुआ। पद-दलित।

पादाग्र—पुं० [सं० पाद-अग्र, ष० त०] पैर का अगला भाग।

पादाघात—पुं० [पाद-आघात, ष० त०] पैर से किया जानेवाला प्रहार। पाद-प्रहार।

पादात—पुं० [सं० पदाति+अण्] १. पैदल सिपाही। २. पैदल सेना।

पादाति (क)—पुं० [सं० पाद√अत् (गमन)+इण्] [पादाति+कन्] पैदल सिपाही।

पादानत—भू० कृ० [पाद-आनत, स० त०] पैरों पर झुका या पड़ा हुआ।

पादा-नोन—पुं० [देश०] काला नमक।

पादाभ्यंजन—पुं० [पाद-अभ्यंजन, ष० त०] १. पैरों में कोई स्निग्ध पदार्थ मलने या रगड़ने की क्रिया या भाव। २. इस प्रकार रगड़ा जानेवाला स्निग्ध पदार्थ।

पादायन—पुं० [सं० पाद+फक्—आयन] पाद ऋषि का वंशज।

पादारक—पुं० [सं० पाद√ऋ (गति)+ण्वुल्—अक] १. नाव के पार्श्वों में लंबाई के बल लगी हुई दोनों पटरियों में से हर एक जिस पर आरोही बैठते हैं। २. मस्तूल।

पादारघ*—पुं०=पादार्घ।

पादारविंद—पुं० [सं० पाद-अरविन्द, उपमि० स०] चरण रूपी कमल। चरण-कमल।

पादार्पण—पुं० [सं० ष० त०] =पदार्पण।

पादालिंद—पुं० [सं० पाद-अलिंद, ब० स०] [स्त्री० अल्पा० पादालिंदा, पादालिंदी] नाव। नौका।

पादावर्त—पुं० [सं० पाद-आ√वृत् (बरतना)+अच] पैरों से चलाया जानेवाला एक तरह का पुराना चक्र या यंत्र जिसके द्वारा कूएँ में से सिंचाई के लिए पानी निकाला जाता था।

पादावसेचन—पुं० [सं० पाद-अवसेचन, ष० त०] १. चरण धोना। २. पैर धोने का पानी।

पादाविक—पुं० [सं०=पादातिक, पृषो० साधु] पदल सिपाही। प्यादा।

पादावृत्ति—स्त्री० [सं०] साहित्य में, यमक अलंकार का एक भेद जिसमें पूरे पाद की आवृत्ति होती है। यथा—नगन जड़ातीं ते वे नगन जड़ाती हैं।—भूषण।

पादाष्ठील—पुं० [सं०] पैर का टखना।

पादासन—पुं० [सं० पाद-आसन, ष० त०] वह आसन जिस पर पैर रखे जायँ। पाद-पीठ।

पादाहत—भू० कृ० [सं० पाद-आहत, तृ० त०] [भाव० पादाहति] जिसे पैर से ठोकर लगाई गई हो।

पादाहति—स्त्री० [तृ० त०] पैर से लगाई जानेवाली ठोकर।

पादिक—वि० [सं० पाद+ठक्—इक] जो किसी पूरी वस्तु या एक इकाई के चौथाई अंश के बराबर हो।

पुं० १ किसी पूरी वस्तु या एक इकाई का चतुर्थांश। २. पादकृच्छ्र नामक व्रत।

पादी (दिन्)—वि० [सं० पाद+इनि] १. जिसे पाद या पैर हों। पैरोंवाला। २. चार चरणोंवाला। ३. चौथाई अंश का हिस्सेदार। पुं० पैरोंवाला कोई जीव। विशेषतः कछुआ, घड़ियाल मगर आदि जल-जन्तु। २. चौथाई अंश का स्वामी या मालिक।

पादीय—वि० [सं० पाद+छ—ईय] १. पद या मर्यादावाला। २. किसी विशिष्ट पद या स्थान पर रहनेवाला। जैसे—कुमार-पादीय=कुमार पद पर प्रतिष्ठित।

पादुक—वि० [सं०√पद् (गति)+उकञ्] १. पैरों से चलनेवाला। २. पैदल चलनेवाला।

पादुका—स्त्री० [सं० पादू+क+टाप्, ह्रस्व] १. खड़ाऊँ। २. जूता। ३. पैरों में पहनने का कोई उपकरण। पदत्राण। (फूट वियर) जैसे—खड़ाऊँ, चप्पल, जूता आदि।

पादू—स्त्री० [सं० पद्+ऊ, णित्व—चि वृद्धि] जूता।

वि० [हिं० पादना] बहुत पादनेवाला। पदोड़ा।

पादोदक—पुं० [पाद-उदक, मध्य० स०] १. वह जल जिसमें पैर धोया गया हो। चरणोदक। २. चरणामृत।

पादोदर—वि० [सं० पाद-उदर, ब० स०] जिसके पैर उदर में अर्थात् अंदर हों।

पुं० सर्प। साँप।

पाद्म—वि० [सं० पद्म] पद्म-सम्बन्धी। पद्म का।

पाद्म-कल्प—पुं० [कर्म० स०] पुराणानुसार वह महाकल्प जिसमें भगवान् की नाभि से वह पद्म या कमल निकला था, जिस पर ब्रह्मा अधिष्ठित थे।

पाद्य—वि० [सं० पाद+यत्] १. पाद (पैर, चरण आदि) से संबंध रखनेवाला। पाद का। २. पाद्य संबंधी। पाद्यात्मक।

पुं० वह जल जिससे किसी आये हुए पूज्य व्यक्ति या देवता के पैर धोते हैं अथवा जिसे पैर धोने के लिए आदर-पूर्वक उनके आगे रखते हैं।

पाद्य-दान—पुं० [सं० ष० त०] १. पैर धोने के लिए जल देना। २. पूज्य या बड़े व्यक्तियों का कहीं पधारना। कहीं पदार्पण करना या जाना। (आदर-सूचक) जैसे—गुरु का शिष्यों के घर पाद्य-दान।

पाद्यार्घ—पुं० [सं०पाद्य-अर्घ, कर्म० स०] १. पैर तथा हाथ धोने या धुलाने का जल। २. देव-पूजन की सामग्री। ३. पूजन, सत्कार आदि के अवसर पर दिया जानेवाला धन या सामग्री। नजर। भेंट। ४. प्राचीन काल में ब्राह्मण को दान रूप में दी हुई वह भूमि जिस पर राजकर नहीं लगता था। माफी।

पाधरा—वि०=पाधरा।

पाधरा—वि० [?] १. अच्छा। बढ़िया। उदा०—घर बाँकी दिन पाधरा, मरद न मूकै माण।—प्रिथीराज। २. अनुकूल। ३. सम, सरल या सीधा।

पाधा—पुं० [सं० उपाध्याय] १. आचार्य। उपाध्याय। २. पुरोहित। ३. पंडित। ४. कर्म-कांड करानेवाला पंडित। ५. छोटे बच्चों को आरंभिक शिक्षा देनेवाला गुरु या पंडित। (पश्चिम)

पान—पुं० [सं०√पा (पीना, रक्षा करना)+ल्युट्—अन्] १. तरल पदार्थ को चुस्की भरते हुए, चूसते हुए अथवा घूँट-घूँट करके पीने की क्रिया या भाव। जैसे—जल-पान, दुग्धपान, रक्त-पान, स्तन-पान आदि। २. मद्य या शराब पीना। ३. मद्य या शराब बनाने और बेचनेवाला व्यक्ति। कलवार। ४. पीने का कोई तरल पदार्थ। ५. जल। पानी। ६. पौसरा। प्याऊ। ७. आब। चमक। ८. कटोरा, गिलास आदि पात्र जिसमें रखकर कोई तरल पदार्थ पीया जाता हो। ९. नहर। १०. रक्षण। रक्षा। ११. निःश्वास। १२. जीत। विजय।

पुं० [सं० पर्ण, प्रा० पण्ण; फा० पान] १. वृक्ष का पत्ता। उदा०—उपजे एकही खेत में, बोये एक किसान। होनहार बिरवान के होत चीकने पान। २. एक प्रसिद्ध पौधा या लता जिसके पत्तों पर कत्था, चूना आदि लगाकर मुँह का स्वाद बदलने और उसे सुगंधित रखने के लिए गिलौरी या बीड़ा बनाकर खाते हैं। ताम्बूल। नागबेल। ३. लगा हुआ पान का पत्ता। गिलौरी। बीड़ा।

पद—पान-इलायची=किसी सामाजिक आयोजन या समारोह में आमंत्रित व्यक्तियों का पान-इलायची आदि से किया जानेवाला सत्कार। **पान-पत्ता**=(क) लगा या बना हुआ पान। (ख) तुच्छ उपहार या भेंट। **पान-फूल**=(क) सामान्य उपहार या भेंट। (ख) पान और फूलों की तरह बहुत ही कोमल या सुकुमार वस्तु। **पान-सुपाड़ी (री)**=दे० ऊपर 'पान-इलायची'।

मुहा०—पान उठाना=दे० 'बीड़ा' के अन्तर्गत 'बीड़ा उठाना'। **पान कमाना**=पान के पत्तों को पाल में रखकर पकाना, और बीच-बीच में उन्हें उलट-पलटकर देखते रहना और उनके सड़े-गले अंश काटते या निकालते रहना। **(किसी को कुछ धन) पान खाने को देना**=(क) घूस या रिश्वत देना। (ख) इनाम, पुरस्कार आदि के रूप में धन देना। **पान खिलाना**=कन्या पक्षवालों का विवाह के विषय में वर पक्षवालों को वचन देना। **पान चीरना**=व्यर्थ का काम करना। ऐसा काम करना जिससे कोई लाभ न हो। **पान देना**=दे० 'बीड़ा' के अन्तर्गत 'बीड़ा देना'। **पान फेरना**=पाल में अथवा यों ही रखे हुए पानों को उलट-पलटकर देखना और उनके सड़े-गले अंश काट या निकालकर अलग करना। **पान बनाना**=(क) पान में चूना, कत्था, सुपारी आदि रखकर बीड़ा तैयार करना। गिलौरी बनाना। पान लगाना। (ख) दे० ऊपर 'पान कमाना'। **पान लगाना**=दे० ऊपर '... बनाना'। **पान लेना**=बीड़ा उठाना। (दे० 'बीड़ा' के अन्तर्गत)

४. पान नामक लता के पत्ते के आकार की कोई रचना जो प्रायः कई तरह के गहनों में शोभा के लिए जड़ी या लगी रहती है। ५. जूते में पान के आकार का चमड़े का वह टुकड़ा जड़ी के पीछे लगता है।

पद—नोक-पान=(देखें 'नोक' के अन्तर्गत स्वतंत्र पद)

६. ताश के पत्तों पर बनी हुई पान के आकार की लाल रंग की बूटियाँ। ७. उक्त आकार तथा रंग की बनी हुई बूटियोंवाले पत्तों की सामूहिक संज्ञा। जैसे—उन्होंने पान रंग बोला है। ८. स्त्रियों की भग। योनि।

पुं० [?] नाव खींचने की गून या रस्सी। (लश०)

पुं० [?] सूत को माँड़ी से तर करके ताना कसने की क्रिया। (जुलाहे)

*पुं० १.=प्राण। २.=पाणि (हाथ)।

पानक—पुं० [सं० पान+कन्] आम, इमली आदि के कच्चे फलों को भूनकर बनाया जानेवाला कुछ खट-मीठा पेय पदार्थ। पना। पन्ना।

पान-गोष्ठी—स्त्री० [च० त०] मित्रों की वह मंडली जो शराब पीने के लिए एकत्र हुई हो। (कॉकटेल पार्टी)

पानड़ी—स्त्री० [हिं० पान+ड़ी (प्रत्य०)] एक प्रकार की लता जिसकी

सुगंधित पत्तियाँ प्रायः मीठे पेय पदार्थों तथा तेल और उबटन आदि में उन्हें सुगंधित करने के लिए डाली जाती हैं।

पानदान—पुं० [हिं० पान+फा० दान (प्रत्य०)] वह डिब्बा जिसमें पान की सामग्री—कत्था, सुपारी आदि रखी जाती है। पनडब्बा।

पद—पानदान का खर्च=वह रकम जो बड़े घरों की स्त्रियों को पान तथा दूसरी निजी आवश्यकताओं के लिए दी जाती है। स्त्रियों का हाथ-खरच।

पान-दोष—पुं० [ष० त०] शराब पीने की लत या व्यसन।

पानन—पुं० [हिं० पान] मँझोले आकार का एक प्रकार का पेड़ जो हिमालय की तराई और उत्तर भारत में होता है।

पानप—पुं० [सं० पान√पा (पीना)+क] जिसे शराब पीने का व्यसन हो। मद्यप। शराबी।

पान-पर—वि० [स० त०] पानप। शराबी।

पान-पात्र—पुं० [ष० त०] १. वह पात्र जिसमें मद्यपान किया जाता हो। २. कटोरा या गिलास जिसमें पानी पीते हैं।

पान-बणिक (ज्)—पुं० [ष० त०] मद्य बेचनेवाला व्यक्ति। कलवार।

पानभांड—पुं० [ष० त०] पान-पात्र।

पान-भोजन—पुं० [ष० त०] पान-पात्र।

पान-भूमि—स्त्री० [ष० त०] वह स्थान जहाँ बैठकर लोग शराब पीते हैं। मद्यशाला।

पान-भोजन—पुं० [द्व० स०] १. खाना-पीना। २. पीना-खाना।

पान-मंडल—पुं०=पान-गोष्ठी।

पान-मत्त—वि० [तृ० त०] जो शराब पीकर नशे में चूर हो।

पान-मद—पुं० [ष०त०] शराब का नशा।

पानरा—पुं०=पनारा (पनाला)।

पान-विभ्रम—पुं० [तृ० त०] शराब का अत्यधिक सेवन करने के फलस्वरूप होनेवाला एक रोग जिसमें सिर में पीड़ा होती रहती है, कै और मतली आती है, और रोगी बीच-बीच में मूर्छित हो जाता है।

पान-शौंड—वि० [स० त०] बहुत अधिक शराब पीनेवाला।

पानस—वि० [सं० पनस+अण्] पनस अर्थात् कटहल से सम्बन्ध रखनेवाला।

पुं० वह शराब जो कटहल को सड़ाकर बनाई जाती थी।

पानहीं—स्त्री० [सं० उपानह]=पनही।

पाना—स० [सं० प्रायण, प्रा० पायण, पुं० हिं० पावना] १. ऐसी स्थिति में आना या होना कि कोई चीज अपने अधिकार, वश या हाथ में आवे या हो जाय। कोई चीज या बात प्राप्त करना। हासिल करना। जैसे—(क) तुमने ईश्वर के घर से अच्छा भाग्य पाया है। (ख) उन्होंने अपने पूर्वजों से अच्छी सम्पत्ति पाई थी। २. ऐसी स्थिति में आना या होना कि किसी की दी या भेजी हुई चीज या और कुछ अपने तक पहुँच या मिल जाय। जैसे—(क) किसी का पत्र, संदेशा या समाचार पाना। (ख) पदक या पुरस्कार पाना। ३. आकस्मिक रूप से या अपने प्रयत्न के फलस्वरूप कुछ प्राप्त या हस्तगत करना। जैसे—(क) कल मैंने सड़क पर पड़ा हुआ एक बटुआ पाया था। (ख) यह पुस्तक मैंने बहुत कठिनता से पायी थी। ४. ऐसी स्थिति में आना या होना कि किसी चीज तक हाथ पहुँच सके। उदा०—मैं बालक बहिँयन को छोटो छींका केहि बिधि पायो।—सूर। ५. किसी प्रकार के ज्ञान, परिचय आदि की मानसिक उपलब्धि करना। जैसे—(क) मैंने उन्हें बहुत ही चतुर और योग्य पाया। (ख) विदेश में रहकर उन्होंने अच्छी शिक्षा पाई थी। ६. गूढ़ तत्त्व, भेद, रहस्य आदि की गहनता, विस्तार, सीमा आदि का ज्ञान या परिचय प्राप्त करना। जानकारी हासिल करना। जैसे—(क) किसी के पांडित्य की थाह पाना। (ख) चोरी या चोरों का पता पाना। ७. अचानक सामना होने या सामने पहुँचने पर किसी को किसी विशिष्ट स्थिति में देखना। जैसे—(क) मैंने लड़कों को गली में खेलते हुए पाया। (ख) उसने अपना खेत (या घर) उजड़ा हुआ पाया। ८. किसी प्रकार के परिणाम या फल के रूप में अधिकारी या भोक्ता बनना या बनने की स्थिति में होना। जैसे—(क) दुःख या सुख पाना। (ख) छुट्टी या सजा पाना। ९. ईश्वर अथवा देवता के प्रसाद के रूप में कोई खाद्य या पेय पदार्थ ग्रहण या प्राप्त करना। आदर-पूर्वक शिरोधार्य करके कुछ खाना या पीना। (भक्तों की परिभाषा) जैसे—मैं उनके यहाँ से भोजन पाकर आया हूँ। १०. कोई काम या बात ठीक तरह से पूरी करने में समर्थ होना। कर सकना। जैसे—तुम उसे नहीं जीत पाओगे। ११. प्रतियोगिता आदि में किसी के तुल्य या समान हो सकना। जैसे—बराबरी कर सकना। जैसे—चालाकी (या दौड़) में तुम उसे नहीं पाओगे।

पानागार—पुं० [सं० पान-आगार, ष०त०] वह स्थान जहाँ बहुत से लोग मिलकर शराब पीते हों। शराब पीने की जगह।

पानात्यय—पुं० [सं० पान-अत्यय, तृ०त०] पान-विभ्रम। (दे०)

पानि†—पुं०=पानी।

पानिक—पुं० [सं० पान+ठक्—इक] वह जो शराब बनाता और बेचता हो। शौंडिक। कलवार।

पानिग्रहण—पुं०=पाणिग्रहण।

पानिप—पुं० [हिं० पानी+प (प्रत्य०)] १. ओप। द्युति। कांति। चमक। आब। २. शोभा। ३. पानी।

पानि-पतंग*—पुं० [हिं० पानी+पतंगा] जल-भौंरा या भौंतुआ नाम का कीड़ा।

पानिय—पुं० =पानी। उदा०—प्यासी तजौं तनु रूप सुधा बिनु, पानिय पी-कौ पपीहे पिआओ।—भारतेन्दु।

†वि०=पानीय।

वि० [?] रक्षित होने के योग्य। (क्व०)

पानिल—पुं० [सं० पान+इलच्] पानपात्र।

पानी—पुं० [सं० पानीय] १. वह प्रसिद्ध निर्गंध पारदर्शी और वर्ण-हीन तरल या द्रव पदार्थ जो झील, नदियों, समुद्रों आदि में भरा रहता है। तथा बादलों से वर्षा के रूप में पृथ्वी पर बरसता है और जो नहाने-धोने, पीने, खेत सींचने आदि के काम में आता है। जल।

विशेष—वायु के उपरांत जल या पानी जीव-जंतुओं वनस्पतियों आदि के पालन-पोषण तथा वर्धन के लिए सबसे अधिक आवश्यक है; इसलिए संस्कृत में इसे 'जीवन' भी कहते हैं। भारतीय दर्शन में इसकी गणना पंच महाभूतों में होती है; परन्तु आधुनिक रासायनिक अनुसंधान के अनुसार यह दो तिहाई हाइड्रोजन तथा एक तिहाई आक्सिजन का मिश्रण

है। अधिक सरदी पड़ने पर यह जमकर बरफ बन जाता है। और अधिक ताप पाकर उबलने या खौलने लगता है अथवा भाप बनकर उड़ जाता है। वर्षा के प्रसंग में इसके साथ आना, गिरना, पड़ना, बरसना आदि जलाशयों के तल के विचार से उतरना, चढ़ना आदि और कूएँ के मूल सोते के विचार से आना, टूटना, निकलना आदि क्रियाओं का प्रयोग होता है। किसी तल के छोटे छोटे छिद्रों से आने या निकलने के प्रसंग में इसके साथ आना, चूना, छूटना, टपकना, निकलना, रसना आदि क्रियाएँ लगती हैं। किसी आधान में या स्थल पर एकत्र राशि के संबंध में प्रसंग के अनुसार ठहरना, बहना, रुकना आदि क्रियाओं का भी प्रयोग होता है। कुछ अवस्थाओं में इसकी कोमलता, तरलता, शीतलता, सरसता आदि गुणों के आधार पर भी इसके कई मुहावरे बनते हैं।

पद—पानी का आसरा=नांव की बारी पर लगा हुआ कुछ झुका हुआ वह तख्ता जिस पर छाजन की ओलती का पानी गिरता है। बारी। (लश०) **पानी का बताशा**=(क) बुलबुला। बुद्बुद। (ख) दे० नीचे 'पानी का बुलबुला'। **पानी का बुलबुला**=बुलबुले की तरह क्षण भर में नष्ट हो जानेवाला। क्षण-भंगुर। नाशवान्। विनाशशील। **पानी की तरह पतला**=(क) अत्यन्त तुच्छ या हीन। (ख) बहुत कम महत्त्व का। **पानी की पोट**=ऐसा पदार्थ जिसमें अधिकतर पानी ही पानी हो। जिसमें पानी के सिवा और तत्त्व बहुत कम हो। (ख) ऐसी तरकारियाँ, साग आदि जिनमें जलीय अंश बहुत अधिक हो। **पानी के मोल**=प्रायः उतना ही सस्ता जितना पीने का पानी होता है। बहुत अधिक सस्ता। **पानी देवा**=वंशज जो पितरों को पानी देता अर्थात् उनका तर्पण करता है। **पानी भरी खाल**=मनुष्य का क्षणभंगुर और सारहीन शरीर। **पानी से पतला**=(क) बहुत ही तुच्छ या हीन। (ख) बहुत ही सहज या सुगम। **कच्चा पानी**=ऐसा पानी जो औटाया या पकाया हुआ न हो। **नरम पानी**=(क) ऐसा पानी जिसके बहाव में अधिक वेग न हो। (ख) ऐसा पानी जिसमें खनिज तत्त्व अपेक्षया कम हों। **पक्का पानी**= औटाया, गरम किया या पकाया हुआ पानी। **भारी पानी**= वह पानी जिसमें खनिज पदार्थ अधिक मात्रा में मिले हों। **हलका पानी**= ऐसा पानी जिसमें खनिज पदार्थ बहुत थोड़े हों। नरम पानी।

मुहा०—**पानी काटना**=(क) पानी की नाली या बाँध काट देना। एक नाली में से दूसरी में पानी ले जाना। (ख) तैरते समय हाथों से आगे का पानी हटाना। पानी चीरना। **पानी की तरह बहाना**=बहुत ही लापरवाही से और बहुत अधिक मात्रा या मान में व्यय करना।—जैसे (क) उन्होंने लाखों रुपए पानी की तरह बहा दिए। (ख) युद्ध क्षेत्र में सैनिकों ने पानी की तरह खून बहाया। **पानी के रेले में बहाना**=दे० ऊपर 'पानी की तरह बहाना'। **पानी चढ़ाना**=सिंचाई के काम के लिए खेत तक पानी पहुँचाना। **(किसी चीज पर) पानी चलाना**=चौपट या नष्ट करना। (दे० 'पानी फेरना') **पानी छानना**=बच्चे को पहले-पहल माता निकलने के बाद तथा उसका जोर कम होने पर किया जानेवाला एक प्रकार का मांगलिक उपचार या टोटका जिसमें माता उस बच्चे को इस प्रकार गोद में लेकर बैठती है कि भिगोये हुए चने का पानी जब बच्चे के सिर पर डाला जाता है, तब वह गिरकर माता की गोद में पड़ता है। (कहते हैं कि यह उपचार माता की गोद सदा भरी-पूरी रखने के लिए किया जाता है)। **पानी छूना**=मल-त्याग के उपरांत जल से गुदा को धोना। आबदस्त लेना। (ग्राम्य) **पानी टूटना**=कूएँ, ताल आदि में इतना कम पानी रह जाना कि काम में लाया या निकाला न जा सके। **पानी तोड़ना**=नाव खेने के समय डाँड़ या बल्ली से पानी चीरना या हटाना। पानी काटना। (मल्लाह)। **पानी थामना**= धार या प्रवाह के विरुद्ध नाव ले जाना। धार पर चढ़ाना। (लश०) **(पशुओं को) पानी दिखाना**=घोड़े, बैल आदि को पानी पिलाने के लिए उनके सामने पानी भरा बरतन रखना या उन्हें जलाशय तक ले जाना। **पानी देना**=(क) सींचने के लिए क्यारियों, खेतों आदि में पानी डालना। (ख) पितरों का तर्पण करना। **पानी न माँगना**= भीषण आघात लगने पर ऐसी स्थिति में आना या होना कि पीने के लिए पानी तक माँगने की शक्ति न रह जाय। **पानी पढ़ना**=मंत्र पढ़कर पानी फूंकना। जल अभिमंत्रित करना। **पानी पर नींव (या बुनियाद) होना**=बहुत ही अनिश्चित या दुर्बल आधार होना। **पानी परोरना**= दे० ऊपर 'पानी छानना'। **पानी पी पीकर**=बार बार शक्ति संचित करके। जैसे—पानी पी पीकर किसी को कोसना।

विशेष—बहुत अधिक बोलने से गला सूखने लगता है, जिसे तर करने के लिए बोलनेवाले को रह-रहकर पानी का घूंट पीना पड़ता है। इसी आधार पर यह मुहा० बना है।

(किसी चीज या बात पर) पानी फिरना या फिर जाना=पूरी तरह से चौपट, नष्ट या निरर्थक हो जाना। बिलकुल तत्वहीन या निःसार हो जाना। **पानी फूंकना**=खौलते हुए पानी में उबाल आना। **(किसी चीज या बात पर) पानी फेरना या फेर देना**=(क) पूरी तरह से नष्ट या चौपट करना। (ख) सारा किया-धरा विफल या व्यर्थ कर देना। जैसे—जरा सी भूल से तुमने मेरे सारे परिश्रम पर पानी फेर दिया। **पानी बराना**=(क) छोटी नालियाँ बनाकर और क्यारियाँ काटकर खेत सींचना। (ख) ऐसी व्यवस्था करना जिसमें नालियों का पानी इधर-उधर बहने न पावे। **(किसी का किसी के सामने) पानी भरना**= किसी की तुलना में बहुत ही तुच्छ या हीन सिद्ध होना। उदा०—फूले शफक तो जर्द हों गालों के सामने। पानी भरे घटा तेरे बालों के सामने। —कोई शायर। **(कहीं) पानी मरना**=किसी स्थान पर पानी का एकत्र होकर सोखा जाना या किसी संधि में प्रविष्ट होकर वास्तु-रचना को हानि पहुँचाना। जैसे—इस दरज से छत (या दीवार) में पानी मरता है। **(किसी के सिर) पानी मरना**= किसी का ऐसी स्थिति में आना या होना कि उस पर किसी प्रकार का आक्षेप, आरोप या कलंक हो या लग सके या उसे किसी बात से लज्जित होना पड़े। **पानी में आग लगाना**= (क) असंभव बात संभव कर दिखलाना। (ख) जहाँ लड़ाई-झगड़े की कोई संभावना न हो, वहाँ भी लड़ाई-झगड़ा खड़ा कर देना। **पानी में फेंकना या बहाना**=व्यर्थ नष्ट या बरबाद करना। **(कहीं) पानी लगना**= किसी स्थान पर पानी इकट्ठा होना। पानी जमा होना। **(दाँतों में) पानी लगना**=पानी की ठंढक से दाँतों में टीस होना। **पानी लेना**= दे० ऊपर 'पानी छूना'। **पानी सिर से (या पैर से) गुजरना**=दे० 'सिर' के अंतर्गत। **पानी से पहले पाड़, पुल या बाँध बाँधना**=किसी प्रकार के अनिष्ट की संभावना न होने पर भी केवल आशंकावश बचाव का प्रयत्न या प्रयास करना। **गले गले पानी में**=लाख कठिनाइयाँ होने पर भी। जैसे—तुम्हारा रुपया तो हम गले गले पानी में भी चुका देंगे।

विशेष—बाढ़ आने पर आदमी का धड़ डूबता है और गले तक पानी आता है तब मृत्यु या विनाश समीप दिखाई देता है। इसी आधार पर यह मुहा० बना है।

२. उक्त तत्त्व का कोई ऐसा रूप जो किसी दूसरे पदार्थ में से आपसे आप या उबालने आदि पर निकला हो या उस पदार्थ के अंश से युक्त हो। जैसे—दही या नारियल का पानी, चूने या नमक का पानी, दाल या नीम का पानी।

क्रि० प्र०—आना।—निकलना।—रसना।

मुहा०—**(किसी वस्तु का) पानी छोड़ना**=किसी चीज में से थोड़ा-थोड़ा पानी या और कोई तरल पदार्थ रस-रसकर निकलना। जैसे—पकाने पर किसी तरकारी का पानी छोड़ना।

३. किसी विशिष्ट प्रकार के गुण या तत्व से युक्त किया हुआ कोई ऐसा तरल पदार्थ जिसके योग से किसी दूसरी चीज में कोई गुण या तत्त्व सम्मिलित किया जाता है अथवा किसी प्रकार का प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। जैसे—जहर का पानी, मुलम्मे का पानी।

पद—**खारा पानी**=सोडा मिला हुआ वह पानी जो बंद बोतलों में पीने के लिए बिकता है। **मीठा पानी**=उक्त प्रकार का वह पानी जिसमें नीबू आदि का सत्त मिला रहता है। **विलायती पानी**=यंत्र की सहायता से और वाष्प के जोर से बोतलों में भरा हुआ पानी जो सम्मिश्रण, स्वाद आदि के विचार से अनेक प्रकार का होता है।

मुहा०—**(किसी चीज पर) पानी चढ़ाना, देना या फेरना**=किसी तरल पदार्थ या घोल के योग से किसी वस्तु में चमक लाना। ओप लाना। जिला करना। जैसे—चाँदी की अँगूठी पर सोने का पानी चढ़ाना। (किसी चीज से) **पानी बुझाना**=ईंट, धातु-खंड या ऐसी ही और कोई चीज आग में अच्छी तरह तपाकर और लाल करके इसलिए तुरंत पानी में डालना कि उसका कुछ गुण या प्रभाव पानी में आ जाय। (चिकित्सा आदि के प्रसंग में ऐसे पानी का उपयोग होता है।) **(कोई चीज किसी) पानी में बुझाना**=किसी विशिष्ट क्रिया से तैयार किये हुए पानी में कोई चीज गरम करके इसलिए डालना कि उस चीज में उस पानी का कोई विशिष्ट गुण या प्रभाव आ जाय। जैसे—जहर के पानी से तलवार बुझाना।

४. उक्त के आधार पर काट करनेवाली चमकदार और बढ़िया तलवार या ऐसा ही और कोई बड़ा अस्त्र। ५. किसी प्रकार की प्रक्रिया में हरबार होनेवाला पानी का उपयोग या प्रयोग। जैसे—(क) तीन पानी का गेहूँ अर्थात् ऐसा गेहूँ जिसकी फसल तीन बार सींची गई हो। (ख) कपड़ों की दो पानी की धुलाई; अर्थात् दो बार धोया जाना।

६. आकाश से जल की होनेवाली वृष्टि। वर्षा। मेह।

क्रि० प्र०—आना।—गिरना।—पड़ना।—बरसना।

मुहा०—**पानी उठना**=आकाश में घटाओं या बादलों का आकर छाना जो वर्षा का सूचक होता है। **पानी टूटना**=लगातार होनेवाली वर्षा बन्द होना या रुकना। **पानी बाँधना**=जादू या टोना-टोटका करके बरसते या बहते हुए पानी की धार रोकना।

७. प्रतिवर्ष होनेवाली वर्षा के विचार से, पूरे एक वर्ष का समय। जैसे—अभी तो यह पेड़ तीन ही पानी का है; अर्थात् इसने तीन ही बरसातें देखी हैं, या यह तीन ही वर्ष का पुराना है। ८. उक्त के आधार पर कोई काम एक बार या हर बार होने की क्रिया या भाव। दफा। जैसे—(क) वहाँ मुसलमानों और राजपूतों में कई पानी भिड़ंत हुई थी। (ख) दोनों में एक पानी कुश्ती हो तो अभी फैसला हो जाय। ९. शरीर के किसी अंग के क्षत में से विकार आदि के रूप में निकलने या रसनेवाला तरल अंश या पदार्थ। जैसे—आँख या नाक से पानी जाना।

मुहा०—**पानी उतरना**=आँतों या पेट का पानी उतर कर नीचे अंडकोश में आना और एकत्र होना जो एक प्रकार का रोग है।

१०. किसी स्थान का जल-वायु अथवा प्राकृतिक या सामाजिक परिस्थिति जिसका प्रभाव प्राणियों के शारीरिक स्वास्थ्य अथवा आचार-विचार, रहन-सहन आदि पर पड़ता है। जैसे—अच्छे पानी का घोड़ा।

पद—**कड़ा पानी**=ऐसा जलवायु जिसमें उत्पन्न या पले हुए प्राणी ढीले और निर्बल होते हैं।

मुहा०—**(किसी व्यक्ति को कहीं का) पानी लगना**=(क) किसी स्थान के जलवायु का शरीर पर दूषित या हानिकारक परिणाम या प्रभाव होना। जैसे—(क) जब से उन्हें पहाड़ का पानी लगा है, तब से वे बराबर बीमार ही रहते हैं। (ख) कहीं के दूषित वातावरण या परिस्थितियों का प्रभाव पड़ना। जैसे—देहात से आते ही तुम्हें शहर का पानी लगा।

११. वह जो पानी की तरह कोमल, गीला, ठंडा, नरम या सरस हो। जैसे—तुमने आटा क्या गूँधा है, बिलकुल पानी कर दिया है।

मुहा०—**(काम को) पानी करना**=बहुत ही सरल, सहज, साध्य या सुगम कर डालना। जैसे—मैंने इस काम को पानी कर दिया। **(किसी व्यक्ति को) पानी करना या कर देना**=कठोरता, क्रोध आदि दूर करके शांत या सरस कर देना। **(किसी व्यक्ति को) पानी पानी करना**=अत्यन्त लज्जित करना। **(किसी का) पानी पानी होना**=(क) मन की कठोर वृत्ति का सहसा बदलकर बहुत ही कोमल हो जाना। (ख) किसी घटना या बात के प्रभाव या फल से बहुत ही लज्जित होना। **(किसी का) पानी होना या हो जाना**=उग्रता, क्रोध आदि का पूरी तरह से शमन होना; और उनके स्थान पर दया, नम्रता आदि का आविर्भाव होना।

१२. पानी की तरह फीका या स्वादहीन पदार्थ। जैसे—दूध क्या है, निरा पानी है। १३. मद्य। शराब। (बोल-चाल)

पद—**गरम पानी**=शराब।

१४. पुरुष का वीर्य या शुक्र।

मुहा०—**पानी गिराना**=स्त्री के साथ उदासीनता या उपेक्षापूर्वक अथवा विशिष्ट सुख का बिना अनुभव किये यों ही मैथुन या संभोग करना। (बाजारू)

१५. पुरुषत्व, मान-प्रतिष्ठा आदि के विचार से मनुष्य में होनेवाला अभिमान, वीरता या ऐसा ही और कोई तत्त्व या भावना। जैसे—ऐसा आदमी किस काम का जिसमें कुछ भी पानी न हो।

१६. मान। प्रतिष्ठा। इज्जत। आबरू।

क्रि० प्र०—जाना।—बचना।—बचाना।—रखना।—रहना।

पद—**पत-पानी**=प्रतिष्ठा और सम्मान। इज्जत-आबरू।

मुहा०—**(किसी का) पानी उतारना या उतार लेना**=अपमानित करना।

इज्जत उतारना। (किसी को) बे-पानी करना=अपमानित या अप्रतिष्ठित करना।

१७. किसी पदार्थ का वह गुण या तत्त्व जिसके फल-स्वरूप उसमें किसी तरह की आभा, चमक या पारदर्शकता आती हो। जैसे—मोती या हीरे का पानी।

वि०[?] बहुत सरल और सुगम। उदा०—गुलिस्ताँ के बाद फारसी की और किताबें पानी हो गई थीं।—मिरजा रुसवा (उमराव जान में)

पानी आँवला—पुं०[सं० पानीयामलक] आँवले की तरह का एक क्षुप जो जलाशयों के किनारे होता है।

पानी आलू—पुं०[सं० पानीयालु] जलाशय के किनारे होनेवाला एक प्रकार का कंद। जलालु।

पानी-फल—पुं०=जल-कल।

पानी-तराश—पुं०[हिं० पानी+तराशना] जहाज या नाव के पेंदे में वह बड़ी लकड़ी जिससे वह पानी को चीरता हुआ आगे बढ़ता है।

पानीदार—वि०[हिं० पानी+फा० दार (प्रत्य०)] १. जिसमें पानी अर्थात् आभा या चमक हो। जैसे—पानीदार हीरा। २. (धातु का कोई उपकरण) जिस पर किसी रासायनिक प्रक्रिया से चमक लाने के लिए किसी तरह का पानी चढ़ाया गया हो। जैसे—पानीदार तलवार। ३. (व्यक्ति) जिसे अपने गौरव, प्रतिष्ठा, मान आदि का पूरा-पूरा ध्यान हो। अपने गौरव, प्रतिष्ठा, मान आदि पर आँच न आने देनेवाला। स्वाभिमानी।

पानी-देवा—वि०[हिं० पानी+देवा=देनेवाला] पितरों को पानी देने अर्थात् उनका तर्पण, पिंडदान, श्राद्ध आदि करनेवाला, फलतः वंशज या संतान।

पुं०१. पुत्र। बेटा। २. अपने कुल या वंश का व्यक्ति।

पानीपत—पुं०[हिं०]१. दिल्ली से ५५ मील उत्तर की ओर स्थित एक प्रसिद्ध नगर। २. उक्त नगर के समीप स्थित एक प्रसिद्ध क्षेत्र या बहुत बड़ा मैदान जहाँ अनेक बड़े-बड़े युद्ध हो चुके हैं।

पानीफल—पुं०[हिं० पानी+फल] सिंघाड़ा (फल)।

पानीबेल—स्त्री०[हिं०] एक प्रकार की लता जो प्रायः साल के जंगलों में पाई जाती और गरमी में फूलती तथा बरसात में फलती है। इसके फल खाये जाते हैं और जड़ दवा के काम आती है।

पानीय—वि०[सं०√पा (पीना, रक्षा करना)+अनीयर्] १. जो पीया जा सके अथवा जो पीये जाने के योग्य हो। २. जिसकी रक्षा की जा सके या जिसकी रक्षा करना आवश्यक अथवा उचित हो।

पुं० कोई ऐसा तरल स्वादिष्ठ पदार्थ जो पीने के काम में आता हो। (ड्रिंक, बीवरेज)

पानीय-चूर्णिका—स्त्री०[ष० त०] बालू। रेत।

पानीय-नकुल—पुं०[स० त०] पानी में रहनेवाला नेवला अर्थात् ऊदबिलाव।

पानीय-पृष्ठज—पुं०[सं० पानीय-पृष्ठ, ष०त०,√ जन् +ड] जलकुम्भी नामक पौधा।

पानीय-फल—पुं०[ष०त०] मखाना।

पानीय-मूलक—पुं०[ब०स०, कप्] बकुची।

३—६१

पानीय-शाला—स्त्री०[ष०त०] १. वह स्थान जहाँ सार्वजनिक रूप से राह-चलनेवालों को पानी पिलाने की व्यवस्था हो। पौसरा। प्याऊ।

पानीय शालिका—स्त्री०[ष०त०] पानीय-शाला।

पानीयामलक—पुं०[सं० पानीय-आमलक, मध्य०स०] पानी आँवला।

पानीयालु—पुं०[सं० पानीय-आलु, मध्य०स०] पानी आलू नामक कंद। जलालु।

पानीयाश्ना—स्त्री०[सं० पानीय√अश् (खाना)+न+टाप्] एक प्रकार की घास। बल्वजा।

पानूस†—पुं०=फानूस।

पानौरा—पुं०[हिं० पान+बरा] [स्त्री० अल्पा० पानौरी] पीठी, बेसन आदि से लपेटकर तला हुआ पान के पत्ते का पकौड़ा।

पान्यो*—पुं०=पानी।

पान्हर—पुं०[देश०] एक प्रकार का सरपत।

पाप—पुं० [सं०√पा (रक्षा करना)+प] [वि० पापी] १. धर्म और नीति के विरुद्ध किया जानेवाला ऐसा निंदनीय आचरण या काम जो इस लोक में भी और पर-लोक में भी सब तरह से बुरा और हानिकारक हो और जिसके फलस्वरूप मनुष्य को नरक भोगना पड़ता हो। 'पुण्य' का विपर्याय। गुनाह।

विशेष—हमारे यहाँ पाप का क्षेत्र दुष्कर्मों की तुलना में बहुत विस्तृत माना गया है। धर्म-शास्त्रों के अनुसार दुष्कर्म करना तो पाप है ही, उचित और कर्त्तव्य कर्म न करना भी पाप माना गया है। साधारणतः दुष्कर्मों का फल तो इसी लोक में मिलता है; पर पाप के फलस्वरूप मनुष्य को मरने के बाद भी नरक में रहकर उसका दंड भोगना पड़ता है। यह कायिक, मानसिक और वाचिक तीनों प्रकार का माना गया है। पापों के फल-भोग से बचने के लिए शास्त्रों में प्रायश्चित्त का विधान है।

पद—पाप की गठरी या मोट=किसी व्यक्ति के जन्म भर के सब पाप।

मुहा०—पाप कटना= पापों के दुष्परिणामों या प्रभाव का प्रायश्चित्त या दंड-भोग से क्षीण या नष्ट होना। **पाप कमाना**= ऐसे दुष्कर्म करना जो पाप समझे जाते हों और जिनका फल भोगने के लिए नरक में जाना पड़े। **पाप काटना**=किसी प्रकार पापों के दुष्परिणामों का अंत या नाश करना। **पाप बटोरना**= दे० ऊपर 'पाप कमाना'।

२. पूर्व जन्म में किये हुए पापों के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाली वह बुरी अवस्था जिसमें उन पापों का दंड या बहुत अधिक कष्ट भोगने पड़ते हों। जैसे—ईश्वर करे, हमारे पाप शांत हों।

मुहा०—पाप उदय होना=ऐसी बुरी अवस्था या समय आना जब अनेक प्रकार के कष्ट ही कष्ट मिलते हों। दुर्दशा के अथवा बुरे दिन आना। जैसे—न जाने हमारे कब के पापों का उदय हुआ था कि ऐसा नालायक लड़का मिला। **पाप पड़ना**=ऐसी बुरी स्थिति उत्पन्न होना जिससे बहुत अधिक कष्ट या दुःख भोगना पड़े। उदा०—सीरैं जतननु सिसिर रितु, सहि बिरहिनि तनु-ताप। बसिबै कौं ग्रीषम दिननु पर्‌यो परोसिनि पापु।—बिहारी।

३. ऐसी अवस्था, जिसमें किसी काम का वैसा ही दुष्परिणाम भोगना पड़ता हो जैसा पापपूर्ण कर्म का। जैसे—मैं देखता हूँ कि यहाँ तो सच बोलना भी पाप है।

मुहा०--पाप लगना=ऐसी स्थिति आना या होना कि जिसमें मनुष्य पापों के फलभोग का भागी बनता हो। जैसे—पापी के संसर्ग से भी मनुष्य को पाप लगता है।

४. कोई ऐसा काम या बात जिससे मनुष्य को बहुत कष्ट भोगना अथवा दुःखी होना पड़ता हो। जैसे—तुमने तो जान-बूझकर यह मुकदमेबाजी का पाप अपने साथ लगा रखा है।

मुहा०--पाप काटना=बहुत बड़ी झंझट या बखेड़ा दूर करना।

५. अपराध। कसूर। ६. बुरी बुद्धि या बुरा विचार। ७. अनिष्ट। अहित। खराबी। ८. दे० 'पापग्रह'।

वि० १. पाप करनेवाला। पापी। २. दुराचारी। ३. कमीना। नीच। ४. दुष्ट। पाजी। ५. अमांगलिक। अशुभ। जैसे—पाप-ग्रह।

पापक—वि० [सं० पाप+कन्] १. पाप-युक्त। २. पाप करनेवाला। पापी।

पाप-कर—वि० [ष०त०] =पापी।

पाप-कर्म (न्)—पुं० [कर्म०स०] धार्मिक दृष्टि से ऐसा बुरा और निंदनीय काम जिसे करने से पाप लगता हो।

वि० पाप करनेवाला। पापी।

पापकर्मी (र्मिन्)—वि० [सं० पापकर्म] [स्त्री० पापकर्मिणी] पाप करनेवाला। पापी।

पाप-कल्प—वि० [सं० पाप-कल्पप्] पापी।

पुं० खोटा और नीच व्यक्ति।

पाप-क्षय—पुं० [ष०त०] १. ऐसी स्थिति जिसमें किये हुए पापों का फल नहीं भोगना पड़ता। पापों का होनेवाला अंत या क्षय। २. तीर्थ, जहाँ जाने से पापों का क्षय या नाश होता है।

पाप-गति—वि० [ब०स०] १. जो किये हुए पापों का फल भोग रहा हो। २. अभागा।

पाप-ग्रह—पुं० [कर्म०स०] मंगल, शनि, केतु, राहु आदि अशुभ ग्रह जिनकी दशा लगने पर लोग दुःख पाते हैं।

पापघ्न—वि० [सं० पाप√हन् (हिंसा)+टक्] पापों का नाश करनेवाला।

पुं० तिल (जिसके दान करने से पापों का क्षय होना माना जाता है)।

पापघ्नी—स्त्री० [सं० पापघ्न+ङीप्] तुलसी।

पाप-चंद्रमा—पुं० [सं० कर्म० स०] फलित ज्योतिष के अनुसार विशाखा और अनुराधा नक्षत्रों के दक्षिण भाग में स्थित चन्द्रमा।

पापचर—वि० [सं० पाप√चर् (गति)+ट] [स्त्री० पापचरा] पापपूर्ण आचरण करनेवाला। पापी।

पाप-चर्य—पुं० [ब०स०] १. पापी (व्यक्ति)। २. राक्षस।

पापचारी (रिन्)—वि० [सं० पाप√चर्+णिनि] [स्त्री० पापचारिणी] =पाप-चर्य।

पाप-चेता (तस्)—वि० [ब०स०] जो स्वभावतः पापपूर्ण आचरण करने की बातें सोचता हो।

पापचेली—स्त्री० [सं० पाप√चेल्+अच्+ङीष्] पाठा लता।

पापचैल—पुं० [कर्म०स०] अशुभ या अमंगल सूचक वस्त्र।

वि० [ब०स०] जो उक्त प्रकार के वस्त्र पहने हो।

पाप-जीव—वि० [कर्म०स०] पापी।

पुं० पुराणानुसार स्त्री, शूद्र, हूण और शबर आदि जीव जिनका संसर्ग कष्टदायक कहा गया है।

पापड़—पुं० [सं० पर्पट, प्रा० पप्पड़] उर्द, मूँग आदि दालों, मैदे, चौरेठे आदि अन्नों अथवा आलू की बनी हुई एक तरह की मसालेदार पतली चपाती जिसे तल या भूनकर भोजन आदि के साथ खाया जाता है।

मुहा०--पापड़ बेलना=(क) कोई काम इस रूप में करना कि वह बिगड़ जाय। (ख) किसी प्रयोजन की सिद्धि के लिए तरह-तरह के और कष्टसाध्य काम करना। (प्रायः ऐसे कामों से सिद्धि नहीं होती)। जैसे—आप सब पापड़ बेल कर बैठे हैं।

वि० १. पापड़ की तरह पतला या महीन। २. पापड़ की तरह सूखा और भुरभुरा।

पापड़ा—पुं० [सं० पर्पट] १. छोटे आकार का एक पेड़ जो मध्य-प्रदेश बंगाल, मद्रास आदि में उत्पन्न होता है। इसकी लकड़ी से कंघियाँ और खराद की चीजें बनाई जाती हैं। २. दे० 'पित्त-पापड़ा'।

पापड़ा-खार—पुं० [सं० पर्पटक्षार] केले के पेड़ को जलाकर तैयार किया हुआ क्षार।

पापड़ी—स्त्री० [हिं० पापड़ा] एक प्रकार का पेड़ जो मध्यप्रदेश, पंजाब और मदरास में बहुत होता है।

पापदर्शी (र्शिन्)—वि० [सं० पाप√दृश् (देखना)+णिनि] पापपूर्ण दृष्टि से देखनेवाला। बुरी निगाहवाला।

पाप-दृष्टि—वि० [ब०स०] १. जिसकी दृष्टि पापमय हो। २. अमंगलकारिणी या अशुभ दृष्टिवाला।

स्त्री० पाप-पूर्ण दृष्टि।

पाप-धी—वि० [ब०स०] जिसकी बुद्धि पापमय या पापासक्त हो। पापकर्मों में मन लगानेवाला। पापमति। पापचेता।

पाप-नक्षत्र—पुं० [कर्म०स०] फलित ज्योतिष में, ज्येष्ठा आदि कुछ नक्षत्र जो अनिष्टकारक या बुरे माने गये हैं।

पाप-नामा (मन्)—वि० [ब०स०] १. अशुभ नामवाला। २. जिसकी सब जगह निंदा या बदनामी होती हो। बदनाम।

पाप-नाशक—वि० [ष०त०] पापों का नाश करनेवाला।

पाप-नाशन—वि० [ष०त०] पाप का नाश करनेवाला। पापनाशी।

पुं० १. प्रायश्चित्त जिससे पाप नष्ट होते हैं। २. विष्णु। ३. शिव।

पाप-नाशिनी—स्त्री० [सं० पापनाशिन्+ङीप्] १. शमी वृक्ष। २. काली तुलसी।

पापनाशी (शिन्)—वि० [सं० पाप√ नश् (नष्ट होना) +णिच्+णिनि] [स्त्री० पापनाशिनी] पापों का नाश करनेवाला।

पाप-निश्चय—वि० [ब०स०] जिसने पाप करने का निश्चय कर लिया हो। खोटा काम करने को तैयार। पाप करने को कृतसंकल्प।

पाप-पति—पुं० [कर्म०स०] स्त्री का उपपति या यार।

पाप-पुरुष—पुं० [कर्म०स० या मध्य०स०] १. पापी प्रकृतिवाला पुरुष। दुष्ट। २. तंत्र में कल्पित पुरुष जिसका सारा शरीर पाप या पापों से ही बना हुआ माना जाता है। ३. पद्म पुराण के अनुसार ईश्वर द्वारा सारे संसार के दमन के उद्देश्य से रचा हुआ पापमय पुरुष।

पाप-फल—वि० [ब०स०] (कर्म) जिसका परिणाम बुरा हो और जिसे करने पर पाप लगता हो।

पाप-बुद्धि—वि० [ब०स०] जिसकी बुद्धि सदा पापकर्मों की ओर रहती हो।

पाप-भक्षण—पुं० [ब० स०] काल-भैरव।

पापभाक् (ज्)—वि० [सं० पाप√भज् (भजना)+ण्वि] पापी।

पाप-भाव—वि० [ब० स०]=पाप-मति।

पाप-मति—वि० [ब० स०] जो स्वभावतः पाप-कर्म करता हो। पाप-बुद्धि। पापचेता।

पाप-मना (नस्)—वि० [ब० स०] जिसके मन में पापपूर्ण विचारों का निवास हो।

पाप-मित्र—पुं० [कर्म० स०] बुरे कामों में लगाने या बुरी सलाह देने-वाला मित्र।

पाप-मोचन—पुं० [ष० त०] पापों को दूर या नष्ट करना।

पाप-मोचनी—स्त्री० [ष० त०] चैत्र कृष्णपक्ष की एकादशी।

पाप-यक्ष्मा (क्ष्मन्)—पुं० [कर्म० स०] राजयक्ष्मा या क्षय नामक रोग। तपेदिक।

पाप-योनि—वि० [कर्म० स०] बुरी या हीन योनि में उत्पन्न होनेवाला। जैसे—कीट, पतंग आदि।

स्त्री० बुरी या हीन योनि।

पापर†—पुं०=पापड़।

पुं० [अं० पॉपर] १. कंगाल। २. ऐसा व्यक्ति जिसे अपनी निर्धनता प्रमाणित करने पर दीवानी में बिना रसूम दिये मुकदमा चलाने की अनुमति मिली हो।

पाप-रोग—पुं० [मध्य० स०] १. वैद्यक में कुछ विशिष्ट भीषण या विकट रोग जो पूर्व जन्मों के पापों के फल-स्वरूप होनेवाले माने गये हैं। जैसे—कोढ़, क्षयरोग, लकवा आदि। २. मसूरिका या वसन्त नामक रोग। छोटी माता।

पापरोगी (गिन्)—वि० [पाप रोग+इनि] [स्त्री० पापरोगिणी] जिसे कोई पाप-रोग हुआ हो।

पापर्द्धि—स्त्री० [सं० पाप-ऋद्धि, ब० स०] आखेट। मृगया। शिकार।

पापल—वि० [सं० पाप√ला (लेना)+क] जो पाप का कारण हो। पाप उत्पन्न करनेवाला।

पुं० एक प्रकार की पुरानी नाप या परिमाण।

पापलेन—पुं० [अं० पॉपलिन] मारकीन की तरह का परन्तु उससे कुछ बढ़िया सूती कपड़ा।

पाप-लोक—पुं० [ष० त०] [वि० पापलोक्य] १. ऐसा लोक जिसमें पापकर्मों की अधिकता हो। २. नरक, जिसमें पापी लोग पापों का फल भोगने के लिए भेजे जाते हैं।

पाप-वाद—पुं० [ष० त०] अशुभ या अमांगलिक शब्द।

पाप-विनाशन—पुं० [ष० त०] पाप-मोचन।

पाप-शमनी—वि०, स्त्री० [ष० त०] पापों का शमन या नाश करने-वाली।

स्त्री० शमी वृक्ष।

पाप-शील—वि० [ब० स०] [भाव० पापशीलता] जो स्वभावतः पाप-कर्मों की ओर प्रवृत्त रहता हो।

पाप-शोधन—पुं० [ष० त०] १. पाप से शुद्ध होने की क्रिया या भाव। पापनिवारण। २. तीर्थ-स्थान।

पाप-संकल्प—वि० [ब० स०] जिसने पाप करने का पक्का इरादा या संकल्प कर लिया हो।

पाप-सूदन—पुं० [सं० पाप√सूद् (नष्ट करना)+णिच्+ल्यु—अन] एक प्राचीन तीर्थ।

पाप-हर—वि० [ष० त०] पापनाशक। पापहारक।

पापहा (हन्)—वि० [सं० पाप√हन्+क्विप्] पापनाशक।

पापांकुशा—स्त्री० [पाप-अंकुश, च० त०,+टाप्] आश्विन शुक्ला एका-दशी।

पापांत—पुं० [पाप-अंत, ब० स०] पुराणानुसार एक तीर्थ का नाम।

पापा—स्त्री० [सं० पाप+टाप्] १. बुधग्रह की उस समय की गति जब वह हस्त, अनुराधा अथवा ज्येष्ठा नक्षत्र में रहता है।

पुं० [देश०] एक प्रकार का छोटा कीड़ा जो ज्वार, बाजरे आदि की फसल में प्रायः अधिक वर्षा के कारण लगता है।

पुं० [अनु०] १. पाश्चात्य देशों में बच्चों की एक बोली में एक शब्द जिससे वे बाप को संबोधित करते हैं। बाबा। बाबू। २. प्राचीन काल में विशिष्ट पादरियों और आज-कल केवल यूनानी पादरियों के एक विशेष वर्ग की सम्मान-सूचक उपाधि।

पापाख्या—स्त्री० [सं० पाप+आ√ख्या (कहना)+क+टाप्] दे० 'पापा' (बुद्ध की गति)।

पापाचार—वि० [पाप-आचार, ब० स०] पाप कर्म करनेवाला। पापी।

पुं० [ष० त०] पापपूर्ण आचरण।

पापाचारी (रिन्)—वि० [सं० पापाचार+इनि] पापपूर्ण आचरण या कर्म करनेवाला। पापी।

पापात्मा (त्मन्)—वि० [पाप-आत्मन्, ब० स०] जिसकी आत्मा या मन सदा पापकर्मों की ओर रहता हो; अर्थात् बहुत बड़ा पापी। बड़े बड़े पाप करनेवाला।

पापाधम—पुं० [पाप-अधम, स० त०] पापियों में [illegible] अर्थात् महापापी।

पापानुबंध—पुं० [पाप-अनुबन्ध, ष० त०] पाप का कुफल या दुष्परिणाम।

पापानुवसित—वि० [पाप-अनुवसित, तृ० त०] १. पापी। २. पाप-पूर्ण।

पापापनुत्ति—स्त्री० [पाप-अपनुत्ति, ष० त०] प्रायश्चित्त।

पापारंभ—वि० [पाप-आरंभ, ब० स०] दुष्कर्म करनेवाला। पापी।

पापारंभक—वि० [पाप-आरंभक, ष० त०] जो पापकर्म करना चाहता हो।

पापार्त्त—वि० [पाप-आर्त्त, तृ० त०] जो अपने पाप-कर्मों के फल से बहुत ही दुःखी हो।

पापाशय—वि० [पाप-आशय, ब० स०] जिसके मन में पाप हो।

पापाह—पुं० [पाप-अहन्, कर्म० स०, टच्] १. अशौच या सूतक के दिन का समय। २. अशुभ या बुरा दिन।

पापिष्ठ—वि० [सं० पाप+इष्ठन्] बहुत बड़ा पापी।

पापी (पिन्)—वि० [सं० पाप+इनि] [स्त्री० पापिनी] १. पाप में रत या अनुरक्त। पाप करनेवाला। पातकी। अघी। २. लाक्षणिक और व्यंग्य के रूप में, क्रूर, निर्मोही या निर्दय। जैसे—पिया पापी न जागे, जगाय हारी।—लोकगीत।

पुं० वह जो पाप करता हो या जिसने कोई पाप किया हो।

पापीयस्—वि० [सं० पाप+ईयसुन्] [स्त्री० पापीयसी] पापी।

पापोश—स्त्री० [फा०] जूता। उपानह।

पापोशकार—पुं० [फा०] [भाव० पापोशकारी] जूते बनानेवाला व्यक्ति। मोची।

पाप्मा (प्मन्)—वि० [सं०√आप् (व्याप्त करना)+मनिन्; नि० सिद्धि] पापी।

पुं० पाप।

पा-प्यादा—क्रि० वि० [फा०] बिना किसी सवारी के। पैदल।

पाबंद—वि० [फा०] [भाव० पाबंदी] १. जिसके पैर बँधे हुए हों। २. किसी प्रकार के बंधन में पड़ा हुआ। बद्ध। जैसे—नौकरी या मालिक का पाबंद। ३. पूर्ण रूप से किसी नियम, वचन, सिद्धांत आदि का ठीक समय पर पालन करनेवाला। जैसे—वक्त का पाबंद, हुकुम का पाबंद। ४. जो उक्त के आधार पर कोई काम करने के लिए बाध्य या विवश हो।

पुं० १. घोड़े का पिछाड़ी, जिससे उसके पैर बाँधे जाते हैं। २. नौकर। सेवक।

पाबंदी—स्त्री० [फा०] १. पाबंद होने की अवस्था, क्रिया या भाव। बद्धता। २. वचन, समय, सिद्धान्त आदि के पालन करने की जिम्मेदारी। ३. उक्त के फल-स्वरूप होनेवाली लाचारी या विवशता।

पाम (मन्)—पुं० [सं०√पा (पीना)+मनिन्] १ दानेदार चकत्ते या फुंसियाँ। २. खाज। खुजली।

स्त्री० [देश०] १. वह डोरी जो गोटे, किनारी आदि बुनने के समय दोनों तरफ बाँधी जाती है। २. डोरी। रस्सी। (लश०)

पाम—पुं० [अं०] ताड़ का पौधा या वृक्ष।

पामघ्न—वि० [सं० पामन्√हन् (नष्ट करना)+टक्] पामा रोग का नाश करनेवाला।

पुं० गंधक।

पामघ्नी—स्त्री० [सं० पामघ्न+ङीप्] कुटकी।

पामड़ा†—पुं०=पाँवड़ा।

पामड़ी†—स्त्री०=पानड़ी।

पामन—वि० [सं०√पा+मनिन्, पामन्+न, नलोप] १. जिसे या जिसमें पामा रोग हुआ हो। २. खल। दुष्ट।

पुं०=पामा (रोग)।

पामना†—स०=पावना (पाना)।

पुं०=पावना (प्राप्य धन)।

पामर—वि० [सं०√पा (रक्षा करना)+क्विप्, पा√मृ (मरना)+घ] १. बहुत बड़ा दुष्ट और नीच। अधम। २. पापी। ३. जिसका जन्म नीच कुल में हुआ हो। ४. निर्बुद्धि। मूर्ख।

पामर-योग—पुं० [सं० कर्म० स०] एक प्रकार का निकृष्ट योग। (फलित ज्योतिष)

पामरी—स्त्री० [सं० प्रावार] उपरना। दुपट्टा।

स्त्री० सं० 'पामर' का स्त्री०।

†स्त्री०=पाँवड़ी।

†स्त्री०=पानड़ी।

पामा—पुं० [सं० पामन्+डाप्] १. एक प्रकार का चर्म रोग जिसमें शरीर पर चकत्ते निकल आते और उनमें की छोटी छोटी फुंसियों में से पानी बहता है। (एग्जिमा) २. खाज या खुजली नामक रोग।

पामारि—पुं० [पामा-अरि, ष० त०] गंधक।

पामाल—वि० [फा०] [भाव० पामाली] १. पैर से कुचला या पाँव-तले रौंदा हुआ। पद-दलित। २. बुरी तरह से तबाह या बरबाद।

पामाली—स्त्री० [फा०] १. पामाल होने की अवस्था या भाव। २. तबाही। बरबादी।

पामोज—पुं० [?] १. एक प्रकार का कबूतर। २. ऐसा घोड़ा जो सवारी के समय सवार की पिंडली को अपने मुँह से पकड़ता हो।

पायँ†—पुं०=पाँव।

पायँचा—पुं० [हिं० पाँव] पायजामे की टाँग।

पाँयजेहरि—स्त्री० [हिं० पाँय+जेहरी] पायजेब।

पायँत†—स्त्री०=पायँता।

पायँता—पुं० [हिं० पायँ+सं० स्थान, हिं० थान] १. पलंग या चारपाई का वह भाग जिस पर पैर रहते हैं। पैताना। २. वह दिशा जिधर पैर फैलाकर कोई सोया हो।

पायँती—स्त्री० [हिं० पाँयता] पाँयता। पैताना।

पायंदाज—पुं० [फा० पाअंदाज] पैर पोंछने का बिछावन। पावदान।

पायँपसारी—स्त्री० [हिं० पाँव+पसारना] निर्मली का पौधा और फल।

पाय—पुं० [सं०√पा+घञ्, युक्] जल। पानी।

पुं० [फा० पायः] फारसी 'पा' (=पैर) का वह संबंधकारक रूप जो उसे यौ० शब्दों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पायखाना; पायजेब आदि।

पायक—वि० [सं०√पा (पीना)+ण्वुल्—अक, युक्] पान करनेवाला। पीनेवाला।

पुं० [फा०] १. दूत। २. सेवक। दास। ३. पैदल सिपाही। ४. वह छोटा कर्मचारी जो प्रायः दौड़-धूपवाले कामों के लिए नियुक्त हो। ५. झंडा। पताका।

पुं० [?] १. पहलवान। मल्ल। २. पटेबाज।

पायकार—पुं० दे० 'पैकार'।

पायखाना†—पुं०=पाखाना।

पायगाह—स्त्री० [सं०] १. पैर रखने की जगह। २. कचहरी। ३. अस्तबल। तबेला।

पायज†—पुं० [?] पेशाब। मूत्र। उदा०—········निज पायज ज्यौं जल अंक लगावै।—केशव।

पायजामा—पुं०=पाजामा।

पायजेब—स्त्री०=पाजेब।

पाय-जेहरि†—स्त्री०=पाजेब।

पायठ—स्त्री०=पाइट।

पायड़ा—पुं० दे० 'पैंडा'।

पायतन—पुं०=पायँता।

पायताबा—पुं० [फा०]=पाताबा (मोजा)।

पायदान—पुं०=पावदान।

पायदार—वि० [फा० पायःदार] [भाव० पायदारी] टिकाऊ और मजबूत।

पायदारी—स्त्री० [फा०] दृढ़ता और मजबूती।

पायन—पुं०. [सं०√पा+णिच्+ल्युट्—अन] किसी को कुछ पिलाने की क्रिया या भाव।

पायना—स्त्री० [सं०√पा+णिच्+युच्—अन,+टाप्] १. सींचना। २. गीला या तर करना। ३. सान धरना। धार तेज करना।

पायनिक—वि० [सं० पायन+ठक्—इक] सिंचाई के काम में आनेवाला।

पायपोश—पुं०=पापोश।

पायबोसी—स्त्री०=पाबोसी।

पायमाल—वि० [भाव० पायमाली]=पामाल।

पायरा—पुं० [हिं० पाय+रा (=रखना)] घोड़े की जीन।
पुं० [सं० पारावत] एक प्रकार का कबूतर।

पायल—स्त्री० [हिं० पाय+ल (प्रत्य०)] १. पैर में पहनने का स्त्रियों का एक गहना। २. तेज चलनेवाली हथनी। ३. बाँस की सीढ़ी।
वि० [बच्चा] जन्म के समय जिसके पैर पहले बाहर निकले हों।

पायस—पुं० [सं० पायस्+अण्] १. खीर। २. सरल का गोंद। निर्यास। ३. रसायन शास्त्र में, दूधिया रंग का वह तरल पदार्थ जिसमें तेल, सर्जरस आदि के कण सब जगह समान रूप से तैरते रहते हों। (एमल्शन) ४. दे० 'वसापायस'।

पायसा—पुं० [सं० पार्श्व, हिं० पास] पड़ोस। आस-पास का स्थान।

पायसीकरण—पुं० [सं० पायस√कृ (करना)+च्वि, ईत्व+ल्युट्—अन] किसी तरल औषध या घोल को ऐसा रूप देना कि उसमें कुछ पदार्थों के कण तैरते रहें, नीचे बैठ न जायँ। (एमल्सिफिकेशन)

पायसोपवास—पुं० [सं० पायस-उपवास] अच्छी-अच्छी चीजें खाकर भी यह कहते चलना कि हमने तो कुछ भी नहीं खाया। उपहास करने का झूठा बहाना।

पाया—पुं० [फा० पायः] १. पलंग, कुरसी, चौकी आदि का पावा या पैर। २. खंभा। स्तंभ। ३. नींव। बुनियाद। ४. दरजा। पद।
मुहा०—पाया बुलन्द होना=पदोन्नति होना।
५. घोड़ों के पैर में होनेवाला एक रोग।

पायिक—पुं० [सं० पादविक, पृषो० साधु 'पादातिक' का प्रा० रूप] १. पादातिक। पैदल सिपाही। २. चर। दूत।

पायी (यिन्)—वि० [सं०√पा (पीना)+णिनि] समस्त पदों के अन्त में, पीनेवाला। जैसे—स्तनपायी।
स्त्री०=पाई।

पायु—पुं० [सं०√पा (रक्षा)+उण्, युक् आगम] १. मलद्वार। गुदा। २. भरद्वाज के पुत्र।

पाय्य—वि० [सं०√मा (मापना)+ण्यत्, नि० पादेश] १. जो पान किया जा सके। पीये जाने के योग्य। २. जो पीया जाता हो। पेय।
पुं० १. जल। पानी। २. रक्षण।

पारंगत—वि० [सं० पारगत] १. जो पार जा या पहुँच चुका हो। २. जिसने किसी विद्या या शास्त्र का बहुत अधिक ज्ञान प्राप्त कर लिया हो।

पारंपरीण—वि० [सं० परंपरा+खञ्—ईन] परंपरागत।

पारंपर्य—पुं० [सं० परंपरा+ष्यञ्] १. परंपरा का भाव। २. परंपरा से चली आई हुई प्रथा या रीति। आम्नाय। ३. परंपरा का क्रम। ४. वंश परंपरा।

पारंपर्योपदेश—पुं० [पारंपर्य-उपदेश ष० त०] १. परंपरागत उपदेश। २. ऐतिह्य नामक प्रमाण।

पार—पुं० [सं० पर+अण्,√पृ (पूर्ति करना)+घञ्] १. (क) झील, नदी, समुद्र आदि के पूरे विस्तार का वह दूसरा किनारा या सिरा जो वक्ता के पासवाले किनारे या सिरे की विपरीत दिशा में और उस विस्तार के अंतिम सिरे पर पड़ता हो। उस ओर का और दूर पड़नेवाला किनारा या सिरा। ऊपर का तट या सीमा। (ख) उक्त या इस ओर अर्थात् इधर या पास का किनारा या सिरा। जैसे—(क) वह नाव पर बैठकर नदी के पार चला गया। (ख) गंगा के इस पार से उस पार तक तैर के जाने में एक घंटा लगता है।
क्रि० प्र०—करना।—जाना।—होना।
पद—आर-पार, वार-पार। (देखें)
मुहा०—पार उतरना=नदी आदि के तल पर से होते हुए दूसरे किनारे तक पहुँचना। **पार उतारना**=नाव आदि की सहायता से जलाशय के उस पार पहुँचाना या ले जाना। **पार लगना**=उस पार तक पहुँचना। **पार लगाना**=उस पार तक पहुँचाना।
२. (क) किसी तल या पृष्ठ के किसी विंदु के विचार से उसके विपरीत या सामनेवाली दिशा के तल या पृष्ठ का कोई विंदु या स्थान। (ख) उक्त के आमने-सामने वाले अथवा एक सिरे से दूसरे सिरे तक के दोनों विंदुओं में से प्रत्येक विंदु। जैसे—(क) तख्ते में काँटा ठोंककर उसकी नोक उस पार निकाल दो। (ख) गोली उस [illegible] के इस पार से उस पार निकल गई। ३. किसी काम या बात का अंतिम छोर या सिरा। विस्तार या व्याप्ति की चरम सीमा या हद।
पद—इस पार=इस लोक में। उदा०—इस पार प्रिये तुम हो... उस पार न जाने क्या होगा।—बच्चन। **उस पार**=परलोक में।
मुहा०—(किसी का) पार पाना=किसी की चरम सीमा, गंभीरता, गहनता आदि का ज्ञान या परिचय प्राप्त करना। जैसे—इस विद्या का पार पाना कठिन है। **(किसी से) पार पाना**=किसी के विरुद्ध या सामने रहने पर उसकी तुलना या मुकाबले में विजयी या सफल होना, अथवा बढ़ा हुआ सिद्ध होना। जैसे—चालाकी में तुम उससे पार नहीं पा सकते। **(किसी काम या बात का) पार लगना**=ठीक तरह से अन्त या समाप्ति तक पहुँचना। पूरा होना। जैसे—तुम से यह काम पार नहीं लगेगा। **(किसी को) पार लगाना**=(क) कष्ट, संकट आदि से उद्धार करना। उबारना। (ख) जीवन-काल तक किसी का निर्वाह करना।
विशेष—यह मुहा० वस्तुतः 'किसी का बेड़ा पार लगाना' का संक्षिप्त रूप है।
४. किसी काम, चीज या बात का सारा अथवा समूचा विस्तार।

अव्य० अलग और दूर। परे और पृथक्। जैसे—तुम तो बात कहकर पार हो गये, सारा काम हमारे सिर पर आ पड़ा।

पुं० [?] खेत की पहली जोताई।

पारई†—स्त्री०=परई।

पारक—वि० [सं०√पृ+ण्वुल्—अक] [स्त्री० पारकी] १. पार करने या लगानेवाला। २. उद्धार करने या बचानेवाला। ३. पालन करनेवाला। पालक। ४. प्रीति या प्रेम करनेवाला। प्रेमी। ५. पूर्ति करनेवाला।

पुं० १. सोना। स्वर्ण। २. वह पत्र जो परीक्षा आदि में उत्तीर्ण होने का सूचक हो। ३. वह पत्र जिसे दिखलाकर कोई कहीं आ-जा सके या इसी प्रकार का और कोई काम करने का अधिकार प्राप्त करे। पार-पत्र। (पास)

पार-काम—वि० [सं० पार√कम् (चाहना)+अण्] जो पार उतरने अर्थात् उस पार जाने को इच्छुक हो।

पारकी—वि०=परकीय।

पारक्य—वि० [सं० पर+ष्यञ्, कुक्] परकीय। पराया।

पुं० पवित्र आचरण या पुण्य कार्य जो परलोक में उत्तम गति प्राप्त कराता है।

पारख—पुं०=पारखी।

स्त्री०=परख।

पारखद*—पुं०=पार्षद् (सभासद्)।

पारखी—पुं० [हिं० परख+ई (प्रत्य०)] वह व्यक्ति जिसमें किसी चीज की अच्छाई-बुराई, गुण-दोष आदि जानने और परखने की पूर्ण योग्यता हो। जैसे—आप कविता के अच्छे पारखी हैं।

पारखू*—पुं०=पारखी।

पारग—वि० [सं० पार√गम्+ड] १. पार जानेवाला। २. काम पूरा करनेवाला। ३. किसी विषय का पूरा जानकार।

पार-गत—वि० [सं० द्वि० त०] [भाव० पारगति] १. जो पार चला गया हो। २. जो किसी विषय का पूरा ज्ञान प्राप्त कर चुका हो। पारंगत। ३. समर्थ।

पुं० जिन देव।

पारगति—स्त्री० [सं० स० त०] पारंगत होने के लिए अध्ययन करना।

पार-गमन—पुं० [सं०] एक स्थान या स्थिति से दूसरे स्थान या स्थिति में जाने की क्रिया, भाव या स्थिति। (ट्रान्ज़िट)

पारगामी(मिन्)—वि० [सं० पार√गम्+णिनि] पार करने या जानेवाला।

पारचा—पुं० [फा० पार्चः] १. टुकड़ा। खंड। धज्जी। २. कपड़ा। वस्त्र। ३. एक प्रकार का रेशमी कपड़ा। ४. पहनावा। पोशाक। ५. कच्चे कूओं में, दो खड़ी लकड़ियों के ऊपर रखी हुई वह बेड़ी लकड़ी जिस पर से रस्सी कूएँ में लटकाई जाती है। ६. पानी का छोटा हौज।

पारज्—पुं० [सं०√पार (कर्म समाप्त करना)+अजिन्] सोना। सुवर्ण।

पारजन्मिक—वि० [सं० पर-जन्मन्, कर्म० स०,+ठक्—इक] पर-जन्म अर्थात् दूसरे जन्म से संबंध रखनेवाला।

पारजात†—पुं०=परजाता (पारिजात)।

पारजायिक—पुं० [सं० पर जाया, ष० त०,+ठक्—इक] पराई जाया अर्थात् पर-स्त्री से गमन करनेवाला। व्यभिचारी।

पारटीट (टीन)—पुं० [सं०] १. पत्थर। २. शिला। चट्टान।

पारण—पुं० [सं०√पार्+ल्युट्—अन] १. पार करने, जाने या होने की क्रिया या भाव। २. किसी को पार ले जाने की क्रिया या भाव। ३. किसी व्रत या उपवास के दूसरे दिन किया जानेवाला तत्सम्बन्धी कृत्य; और उसके बाद किया जानेवाला भोजन। ४. तृप्त करने की क्रिया या भाव। ५. आज-कल, किसी प्रस्तावित विधान अथवा विधेयक के संबंध में उसे विचारपूर्वक निश्चित और स्वीकृत करने की क्रिया या भाव। ६. परीक्षा या जाँच में पूरा उतरना। उत्तीर्ण होना। (पासिंग) ७. रुकावट या बंधन की जगह पार करके आगे बढ़ना। (पासिंग) ८. पूरा करने की क्रिया या भाव। ९. बादल। मेघ।

पारणक—वि० [सं०] पारण करनेवाला।

पारण-पत्र—पुं० [सं०] १. किसी प्रकार के पारण का सूचक पत्र। २. वह पत्र जिसके आधार पर या जिसे दिखलाने पर किसी को कहीं आ-जा सकने या इसी प्रकार का और कोई काम कर सकने का अधिकार प्राप्त होता हो। (पास)

पारणा—स्त्री० [सं०√पार्+णिच्+युच्—अन, टाप्]=पारण।

पारणीय—वि० [सं०√पार्+अनीयर्] १. जिसे पार किया जा सके। २. जिसे पूरा या समाप्त किया जा सके।

पारतंत्र्य—पुं० [सं० परतंत्र+ष्यञ्] परतंत्रता।

पारत—पुं० [सं० पार√तन् (विस्तार)+ड] एक प्राचीन म्लेच्छ जाति। पारद (जाति और देश)।

पारतल्पिक—पुं० [सं० परतल्प+ठक्—इक] पर-स्त्री गामी। व्यभिचारी।

पारत्रिक—वि० [सं० परत्र+ठक्—इक] १. परलोक-संबंधी। पारलौकिक। २. (कर्म या काम) जिससे पर-लोक में उत्तम गति प्राप्त हो।

पारत्र्य—पुं० [सं० परत्र+ष्यञ्] परलोक में मिलनेवाला फल।

पारथ†—पुं०=पार्थ (अर्जुन)।

पारथिया†—वि० [सं० प्रार्थित] माँगा हुआ। याचित।

पारथिव†—वि०, पुं०=पार्थिव।

पारधी—पुं० [सं० पापर्द्धिक=बहेलिया।] १. बहेलिया २. शिकारी। ३. हत्यारा।

पारद—पुं० [सं०√पॄ+णिच्+तन्, पृषो० त—द] १.पारा। २. एक प्राचीन जाति जो पारस के उस प्रदेश में निवास करती थी जो कैस्पियन सागर के दक्षिण के पहाड़ों को पार करके पड़ता था। ३. उक्त जाति के रहने का देश।

पारदर्शक—वि० [सं० ष० त०] [भाव० पारदर्शकता] प्रकाश की किरणें जिसे पार करके दूसरी ओर जा सकती हों और इसी लिए जिसके इस पार से उस पार की वस्तुएँ दिखाई देती हों। (ट्रान्सपेरेन्ट) जैसे—साधारण शीशे पारदर्शक होते हैं।

पारदर्शकता—स्त्री० [सं० पारदर्शक+तल्+टाप्] पारदर्शक होने की अवस्था, गुण या भाव।

पारदर्शी (शिन्)—वि० [सं० पार√दृश्+णिनि] [भाव० पार-

दर्शिता] १. आर-पार अर्थात् बहुत दूर तक की बात देखने और समझनेवाला। दूरदर्शी। २. पारदर्शक। (दे०)

पारदारिक—वि०, पुं० [सं० पर-दारा, ष० त०,+ठक्—इक] पराई स्त्रियों से अनुचित संबंध रखनेवाला। पर-स्त्रीगामी।

पारदार्य—पुं० [सं० परदारा+ष्यञ्] पराई स्त्री के साथ गमन। पर-स्त्री-गमन।

पारदिक—वि० [सं० पारद+ठक्—इक] १. पारद या पार से संबंध रखनेवाला। २. जिसमें पारे का भी कुछ अंश हो। (मर्क्यूरिक)

पारदेशिक—वि० [सं० परदेश+ठक्—इक] दूसरे देश का। विदेशी। पुं० १. दूसरे देश का निवासी। २. यात्री।

पारदेश्य—वि०, पुं० [सं० परदेश+ष्यञ्]=पारदेशिक।

पारद्रष्टा—वि० [सं०] जो उस पार अर्थात् इस लोक के परे की बातें भी देख या जान सकता हो।

पारधि—पुं०=पारधी।

पारधी—पुं० [सं० परिधान=आच्छादन] १. बहेलिया। व्याध। २. शिकारी। ३. वधिक। ४. काल। मृत्यु।

स्त्री० आड़। ओट।

मुहा०—(किसी के) पारधी पड़ना—आड़ में छिपकर कोई व्यापार देखना या किसी की बात सुनना।

पारन†—पुं०=पारण।

वि०=पारक (पार करने या लगानेवाला)।

पारना—स० [सं० पारण] १. गिराना। २. डालना। ३. लेटाना। ४. कुश्ती या लड़ाई में पटकना। पछाड़ना। ५. प्रस्थापित या स्थापित करना। रखना। उदा०—प्यारे परदेश तें कबै धौं पग पारि हैं।—रत्नाकर।

मुहा०—पिंडा पारना=मृतक के उद्देश्य से पिंडदान करना।

६. किसी के हाथ में देना। किसी को सौंपना। ७. किसी के अन्तर्गत करना। किसी में सम्मिलित करना। ८. शरीर पर धारण करना। पहनना। ९. किसी विशिष्ट क्रिया से किसी के ऊपर जमाना या लगाना। जैसे—कजलौटे पर काजल पारना। १०. कोई अनुचित या अवांछित घटना या बात घटित करना। उदा०—तन जारत, पारति बिपति अपति उजारत लाज।—पद्माकर। ११. कोई काम स्वयं करना अथवा दूसरे से करा देना। उदा०. . . . .बरनि न पारौं अंत।—जायसी। १२. कोई काम करने की समर्थता होना। कर सकना। उदा०—बूझि लेहु जौ बूझे पारहु।—जायसी। †१३. मचाना। जैसे—हल्ला पारना। १४. नियत या स्थिर करना। उदा०—अबहीं ते हद पारो।—सूर।

अ० [सं० पारण=योग्य, का हिं० पार, जैसे—पार लगना=हो सकना] कोई काम करने में समर्थ होना। सकना।

†स०=पालना। (पालन करना) उदा०—जन प्रहलाद प्रतिज्ञा पारी।—सूर।

पार-पत्र—पुं० [सं० ष० त०] वह राजकीय अधिकार-पत्र जो किसी राज्य की प्रजा को विदेश यात्रा के समय प्राप्त करना पड़ता है, और जिसे दिखाकर लोग उसमें उल्लिखित देशों में भ्रमण कर सकते हैं। (पास-पोर्ट)

विशेष—ऐसे पार-पत्र से यात्री को अपने मूल देश के शासन का भी संरक्षण प्राप्त होता है, और उन देशों के शासन का भी संरक्षण प्राप्त होता है जिनमें यात्रा करने का उन्हें अधिकार मिला होता है।

पारबती—स्त्री०=पार्वती।

पार-ब्रह्म—पुं०=पर-ब्रह्म।

पारभृत—पुं०=प्राभृत (भेंट)।

पारमहंस—पुं०=पारमहंस्य।

पारमहंस्य—वि० [सं० परमहंस+[ष्यञ्] जिसका संबंध परमहंस से हो। परमहंस-संबंधी।

पारमाणविक—वि० [सं०] परमाणु-संबंधी। परमाणु का। (एटमिक)

पारमार्थिक—वि० [सं० परमार्थ+ठक्—इक] परमार्थ-संबंधी। परमार्थ का। जैसे—पारमार्थिक ज्ञान। २. परमार्थ सिद्ध करनेवाला। परमार्थ का शुभ फल दिलानेवाला। जैसे—पारमार्थिक कृत्य। ३. सत्यप्रिय। ४. सदा एक-रस और एक रूप बना रहनेवाला। ५. उत्तम। श्रेष्ठ।

पारमार्थ्य—पुं० [सं० परमार्थ+ष्यञ्] १. 'परमार्थ' का गुण या भाव। २. परम सत्य।

पारमिक—वि० [सं० परम+ठक्—इक] १. मुख्य। प्रधान। २. उत्तम। सर्वश्रेष्ठ। ३. परम।

पारमित—वि० [सं० पारम् इत, व्यस्तपद] [स्त्री० पारमिता] १. जो उस पार पहुँच गया हो। २. पारंगत। ३. अतिश्रेष्ठ।

पारमिता—स्त्री० [सं० पारम् इता, व्यस्तपद] सीमा। हद।

पारमेश्वर—वि० [सं० परमेश्वर+अण्] परमेश्वर संबंधी।

पारमेष्ठ्य—पुं० [सं० परमेष्ठिन्+ष्यञ्] १. प्रधानता। २. सर्वोच्च पद। ३. प्रभुत्व। ४. राजचिह्न।

पारयिष्णु—वि० [सं०√पार्+णिच्+इष्णुच्] १. जो पार जाने में समर्थ हो। २. विजयी। ३. सफल। ४. रुचिकर और तृप्तिकारक।

पारयुगीन—वि० [सं० परयुग+खञ्—ईन] परवर्ती युग से संबंध रखनेवाला अथवा उसमें पाया जाने या होनेवाला।

पारलोक्य—वि० [सं० परलोक+ष्यञ्] पारलौकिक।

पारलौकिक—वि० [सं० परलोक+ठक्—इक] १. परलोक-संबंधी। परलोक का। २. (कर्म) जिससे परलोक में शुभ फल की प्राप्ति हो। परलोक सुधारनेवाला।

पुं० अंत्येष्टि क्रिया।

पारवत—पुं० [सं०] पारावत। (दे०)

पारवर्ग्य—वि० [सं० परवर्ग+ष्यञ्] १. अन्य या दूसरे वर्ग से संबंध रखने अथवा उसमें होनेवाला। २. प्रतिकूल।

पुं० वैरी। शत्रु।

पारवश्य—पुं० [सं० परवश+ष्यञ्]=परवशता।

पार-वहन—पुं० [सं०] चीजें आदि एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की क्रिया, भाव या स्थिति। (ट्रान्जिट्)

पारविषयिक—वि० [सं० पर विषय+ठक्—इक] दूसरे के विषयों से संबंध रखनेवाला।

पारशव—पुं० [सं० परशु+अण्] १. लोहा। २. [उपमि० स०] ब्राह्मण पिता और शूद्रा माता से उत्पन्न व्यक्ति। ३. पराई स्त्री के गर्भ

से उत्पन्न करके प्राप्त किया हुआ पुत्र। ४. एक प्रकार की गाली जिससे यह व्यक्त किया जाता है कि अमुक के पिता का कोई पता नहीं वह तो हरामी का है। ५. एक प्राचीन देश, जिसके संबंध में कहा जाता है कि वहाँ मोती निकलते थे।

वि० लौह-संबंधी।

पारशवी—स्त्री० [सं० पारशव+ङीष्] वह कन्या या स्त्री जिसका जन्म शूद्रा माता और ब्राह्मण पिता से हुआ हो।

पारश्व—पुं०=पारश्वधिक।

पारश्वधिक—पुं० [सं० परश्वध+ठञ्—इक] परशु या फरसे से सज्जित योद्धा।

पारस—पुं० [सं० स्पर्श, हिं० परस] १. एक कल्पित पत्थर जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि लोहा इसके स्पर्श से सोना हो जाता है। स्पर्श-मणि। २. पारस पत्थर के समान उत्तम, लाभदायक या स्वच्छ अथवा आदरणीय और बहुमूल्य पदार्थ या वस्तु। जैसे—(क) यदि उनके साथ रहोगे तो कुछ दिनों में पारस हो जाओगे। (ख) यह दवा खाने से शरीर पारस हो जायगा।

पुं० [हिं० परसना] १. परोसा हुआ भोजन। २. परोसा।

अव्य० [सं० पार्श्व] समीप। नजदीक। पास। उदा०—पारस प्रासाद सेन संपेखे।—प्रिथीराज।

पुं० [सं० पलाश] पहाड़ों पर होनेवाला बादाम या खूबानी की जाति का एक मझोले कद का पेड़। गीदड़-ढाक। जापन।

पुं० [फा०] आधुनिक फारस देश का एक पुराना नाम।

पारसनाथ—पुं०=पार्श्वनाथ (जैनों के तीर्थंकर)।

पारसल—पुं० [अं०] डाक, रेल आदि द्वारा किसी के नाम भेजी जानेवाली गठरी या पोटली।

पारसव*—पुं०=पारशव।

पारसा—वि० [फा०] [भाव० पारसाई] पवित्र और शुद्ध चरित्र तथा विचारोंवाला। बहुत बड़ा धर्मात्मा और सदाचारी।

पारसाई—स्त्री० [फा०] 'पारसा' होने की अवस्था या भाव। धार्मिकता और सदाचार।

पारसाल—पुं० [फा०] १. गत वर्ष। २. आगामी वर्ष।

पारसिक—पुं० [सं० पारसीक, पृषो० सिद्धि] पारसीक। (दे०)

पारसी—पुं० [सं० पारसीक से फा० पार्सी] १. पारस अर्थात् फारस (आधुनिक ईरान) का रहनेवाला आदमी। २. आज-कल मुख्य रूप से पारस के वे प्राचीन निवासी जो मुसलमानी आक्रमण के समय अपना धर्म बचाने के लिए वहाँ से भारत चले आये थे। इनके वंशज अब तक बम्बई और गुजरात में बसे हैं। ये लोग अग्निपूजक हैं; और कमर में एक प्रकार का यज्ञोपवीत पहने रहते हैं।

वि० पारस या फारस-संबंधी। पारस का।

पारसीक—पुं० [सं०] १. आधुनिक ईरान देश का प्राचीन नाम। फारस। २. उक्त देश का निवासी। ३. उक्त देश का घोड़ा।

वि०, पुं०=पारसी।

पारसीकयमानी—स्त्री० [सं०] खुरासानी वच।

पारसीकवचा—स्त्री० [सं०] खुरासानी वच।

पारसीकेय—वि० [सं०] ईरान, पारस या फारस देश संबंधी।

पुं० कुंकुम।

पारस्कर—पुं० [सं० पार√कृ०+ट, सुट्] १. एक प्राचीन देश। २. एक गृह्य-सूत्रकार मुनि।

पारस्त्रैणेय—पुं० [सं० पर-स्त्री, ष० त०,+ढक्—एय, इनङ्—आदेश] पराई स्त्री से संबंध रखनेवाले व्यक्ति से उत्पन्न पुत्र। जारज पुत्र।

पारस्परिक—वि० [सं० परस्पर+ठक्—इक] आपस में एक दूसरे के प्रति या साथ होनेवाला। परस्पर होनेवाला। आपस का। आपसी। (म्यूचुअल)

पारस्परिकता—स्त्री० [सं० पारस्परिक+तल्+टाप्] पारस्परिक होने की अवस्था या भाव।

पारस्य—पुं० [सं०] पारस देश।

पारस्स†—पुं० १.=पार्श्व। २.=पार्श्वचर। ३.=पारस्य।

पारहंस्य—वि० [सं० परहंस+ष्यञ्]=पारमहंस्य।

पारा—पुं० [सं० पारद] एक प्रसिद्ध बहुत चमकीली और सफेद धातु जो साधारण गरमी या सरदी में द्रव अवस्था में रहती है और अनुपातिक दृष्टि से बहुत भारी या वजनी होती है। पारद। (मर्करी)

मुहा०—(किसी का) पारा चढ़ना=गुस्से से बेहाल होना। **पारा पिलाना**=(क) किसी वस्तु के अंदर पारा भरना। (ख) किसी वस्तु को इतना अधिक भारी कर देना कि मानो उसके अंदर पारा भर दिया गया हो।

पुं० [सं० पारि=प्याला] दीये के आकार का, पर उससे बड़ा मिट्टी का बरतन। परई।

पुं० [फा० पारः] खंड या टुकड़ा।

पाराती—स्त्री० [सं० प्रातः] एक प्रकार के धार्मिक गीत जो देहाती स्त्रियाँ पर्वों आदि पर किसी तीर्थ या पवित्र नदी में स्नान करने के लिए आते-जाते समय रास्ते में गाती चलती हैं।

परापत—पुं० [सं० पार-आ√पत् (गिरना)+अच्] कबूतर।

पारापार—पुं० [सं० पार-अपार, द्व० स०+अच्] १. यह पार और वह पार। २. इधर और उधर का किनारा। ३. समुद्र।

पारायण—पुं० [सं० पार-अयन, स० त०] [वि० पारायणिक] १. किसी अनुष्ठान या कार्य की होनेवाली समाप्ति। २. नियमित रूप से किसी धार्मिक ग्रंथ का किया जानेवाला पाठ। † ३. किसी चीज का बार-बार पढ़ा जाना।

पारायणी—स्त्री० [सं० पारायण+ङीप्] १. चिंतन या मनन करते हुए पारायण करने की क्रिया। २. सरस्वती। ३. कर्म। ४. प्रकाश।

पारावत—पुं० [सं० पर√अव (रक्षा)+शतृ+अण्] १. कबूतर। २. पेंडकी। ३. बंदर। ४. पहाड़। पर्वत।

पारावतघ्नी—स्त्री० [सं०पारावत√हन् (हिंसा)+टक्+ङीष्] सरस्वती नदी।

पारावत पदी—स्त्री० [ब०स०, ङीष्] १. मालकंगनी। २. काकजंघा।

पारावताश्व—पुं० [सं० पारावत-अश्व, ब० स०] धृष्टद्युम्न।

पारावती—स्त्री० [सं० पारावत+अच्+ङीष्] १. अहीरों के एक तरह के गीत। २. कबूतरी।

पारावारीण—वि० [सं० पार-अवार, द्व० स०,+ख—ईन] १. जो दोनों किनारों पर जाता या पहुँचता हो। २. पारंगत।

पाराशर—वि० [सं० पराशर+अण्] १. पराशर-संबंधी। २. पराशर द्वारा रचित।
पुं० पराशर मुनि के पुत्र, वेदव्यास।

पाराशरि—पुं० [सं० पराशर+इञ्] १. शुकदेव। २. वेदव्यास।

पाराशरी (रिन्)—पुं० [सं० पाराशर्य+णिनि, य लोप] १. संन्यासी। २. वह संन्यासी जो व्यास द्वारा रचित शारीरिक सूत्रों का अध्ययन करता हो।

पाराशर्य—पुं० [सं० पराशर+यञ्]=पराशर।

पारिंद्र—पुं० [सं० पारीन्द्र, पृषो० सिद्धि] सिंह। शेर।

पारि†—स्त्री० [हिं० पार] १. नदी, समुद्र आदि का किनारा। २. ओर। दिशा। ३. बाँध या मेंड़। ४. मर्यादा। सीमा।

पारिकांक्षी (क्षिन्)—पुं० [सं० पारि=ब्रह्मज्ञान√काङ्क्ष (चाहना)+णिनि] तपस्वी।

पारिख†—पुं०=पारखी।
स्त्री०=परख।

पारिखेय—वि० [सं० परिखा+ढक्—एय] १. परिखा या खाईं से संबंध रखनेवाला। २. परिखा या खाईं से घिरा हुआ।

पारिगर्भिक—पुं० [सं० परिगर्भ+ठक्—इक] बच्चों को होनेवाला एक रोग।

पारिग्रामिक—वि० [सं० परिग्राम+ठञ्—इक] किसी गाँव के चारों ओर का।

पारिजात—पुं० [सं० पं० त०] १. स्वर्ग के पाँच वृक्षों में से एक वृक्ष, जो समुद्र-मंथन के समय निकला था, तथा जिसके संबंध में कहा गया है कि इसे इंद्र नंदनवन में ले गये थे। २. परजाता या हरसिंगार नामक पेड़। ३. कचनार। ४. फरहद। ५. सुगंध।

पारिणामिक—वि० [सं० परिणाम+ठञ्—इक] १. परिणाम-संबंधी। २. जिसका कोई परिणाम या रूपांतरण हो सके। जो विकसित हो सके। ३. जो पच सके या पचाया जा सके।

पारिणाय्य—वि० [सं० परिणय+ष्यञ्] परिणय-संबंधी।
पुं० १. वह धन जो कन्या को विवाह के अवसर पर दिया जाता है। दहेज। २. परिणय।

पारिणाह्य—पुं० [सं० परिणाह+ष्यञ्] घर-गृहस्थी के उपयोग में आनेवाली वस्तुएँ या सामग्री।

पारित—वि० [सं०√पार्+णिच्+क्त] १. जिसका पारण हुआ हो। २. जो परीक्षा आदि में उत्तीर्ण हो चुका हो। ३. (प्रस्ताव या विधेयक) जो विधिपूर्वक किसी संस्था के द्वारा स्वीकृत किया जा चुका हो। (पास्ड)

पारितोषिक—पुं० [सं० परितोष+ठक्—इक] १. वह धन जो किसी को देकर परितुष्ट किया जाता है। २. वह धन जो प्रतियोगिता में विजयी या श्रेष्ठ सिद्ध होने पर अथवा कोई असाधारण योग्यता दिखलाने पर उत्साह बढ़ाने के लिए दिया जाता है। (प्राइज)

पारिद†—पुं०=पारद।

पारिध्वजिक—पुं० [सं० परिध्वज, प्रा० स०,+ठञ्—इक] वह जो हाथ में झंडा लेकर चलता हो।

पारिपाट्य—पुं० [सं० परिपाटी+ष्यञ्]=परिपाटी।

पारिपात्र—पुं० [सं०] सात मुख्य पर्वत-मालाओं में से एक। पारियात्र।

पारिपात्रिक—वि० [सं० पारिपात्र+ठक्—इक] १. पारिपात्र-संबंधी। २. पारिपात्र पर बसने, रहने या होनेवाला।

पारिपार्श्व—पुं० [सं० परिपार्श्व+अण्] वह जो साथ-साथ चलता हो। अनुचर। सेवक।

पारिपार्श्विक—पुं० [सं० परिपार्श्व+ठक्—इक] [स्त्री० पारिपार्श्विका] १. सेवक। २. नाटक में, स्थापक का सहायक।

पारिप्लव—वि० [सं० परि√प्लु (गति)+अच्+अण्] १. अस्थिर रहने, हिलने-डुलने या लहरानेवाला। २. तैरनेवाला। ३. विकल। ४. क्षुब्ध।
पुं० १. अस्थिरता। २. नाव। ३. विकलता।

पारिप्लाव्य—पुं० [सं० पारिप्लव+ष्यञ्] १. अस्थिरता। चंचलता। २. कंपन। ३. आकुलता। ४. हंस।

पारिभाव्य—पुं० [सं० परिभू+ष्यञ्] जमानत करने या जामिन होने का भाव।

पारिभाव्य-धन—पुं० [सं० ष० त०] वह धन जो किसी की कोई चीज व्यवहृत करने के बदले में उसके यहाँ अग्रिम जमा किया जाता है और जो उसकी चीज लौटाने पर वापस मिल जाता है।

पारिभाषिक—वि० [सं० परिभाषा+ठञ्—इक] १. परिभाषा-संबंधी। २. (शब्द) जो किसी शास्त्र या विषय में अपना साधारण से भिन्न कोई विशिष्ट अर्थ रखता हो। (टेकनिकल)

पारिभाषिकी—स्त्री० [सं० पारिभाषिक+ङीष्] पारिभाषिक शब्दों की माला या सूची। (टरमिनॉलॉजी)

पारिमाण्य—पुं० [सं० परिमाण+ष्यञ्] घेरा। मंडल।

पारिमिता—स्त्री० [परिमित+अण्+टाप्]=सीमा।

पारिमित्य—पुं० [सं० परिमित+ष्यञ्] सीमा।

पारिमुखिक—वि० [सं० परिमुख+ठक्—इक] [स्त्री० पारिमुख्य] १. जो मुख के समक्ष या सामने हो। २. जो पास में हो या उपस्थित हो।

पारियात्र—पुं० [सं०] सात पर्वत-श्रेणियों में से एक, जो किसी समय आर्यावर्त की दक्षिणी सीमा के रूप में मानी जाती थी। पारिपात्र।

पारियात्रिक—वि० [सं० परियात्रा प्रा० स०, +अण्+ठक्—इक]=पारिपात्रिक (परिपात्र-संबंधी)।

पारियानिक—पुं० [सं० परियान प्रा० स०,+ठक्—इक] ऐसा यान जिस पर यात्रा की जाती हो।

पारिरक्षक—पुं० [सं० परि√रक्ष्+ण्वुल्—अक+अण्] संन्यासी।

पारिव्राज्य—पुं० [सं० परिव्राज्+ष्यञ्] संन्यास।

पारिश्रमिक—पुं० [सं० परिश्रम+ठक्—इक] किये हुए परिश्रम के बदले में मिलनेवाला धन। कोई कार्य करने की मजदूरी। (रिम्यूनरेशन)

पारिष*—स्त्री०=परख।

पारिषद—पुं० [सं० परिषद्+अण्] परिषद् में बैठनेवाला व्यक्ति। परिषद् का सदस्य। (काउंसिलर)

पारिषद्य—पुं० [सं० परिषद्+ण्य] अभिनय आदि का दर्शक। सामाजिक।

पारिस्थितिक—वि० [सं० परिस्थिति+ठक्—इक] १. परिस्थिति संबंधी। २. जो परिस्थितियों का ध्यान रखकर या उनके विचार से किया गया हो। (सर्कस्टैन्शल)

पारिहारिकी—स्त्री० [सं० परिहार+ठक्–इक+ङीष्] एक तरह की पहेली।

पारिहास्य—पुं० [सं० परिहास+ष्यञ्]=परिहास।

पारी—स्त्री० [सं०] १. वह रस्सी जिससे हाथी के पैर बाँधे जाते हैं। २. जल-पात्र। ३. केसर।

स्त्री० [हिं० बार, बारी] १. कोई कार्य करने का क्रमानुसार आने या मिलनेवाला अवसर। बारी। २. गेंद-बल्ले के खेल में, प्रत्येक दल को बल्लेबाजी करने का मिलनेवाला अवसर। पाली।

पारीक्षणिक—पुं० [सं० परीक्षण+ठक्—इक] वह कर्मचारी जो इस बात की परीक्षा या जाँच के लिए रखा गया हो कि यह अपने काम या पद के लिए उपयुक्त है या नहीं। (प्रोबेशनर)

वि० परीक्षण संबंधी। परीक्षण का।

पारीक्षित—पुं० [सं० परीक्षित्+अण्] परीक्षित् के पुत्र, जनमेजय।

पारीछत—भू० कृ०=परीक्षित।

पारीण—वि० [सं० पार+ख—ईन] १. उस पार पहुँचा हुआ। २. पारंगत।

पारीय—वि० [सं० पार+छ—ईय] समस्त पदों के अंत में, किसी विषय में दक्ष।

पारुष्ण—पुं० [सं० परुष्ण+अण्] एक तरह का पक्षी।

पारुष्य—पुं० [सं० परुष+ष्यञ्] परुष होने की अवस्था, गुण या भाव। परुषता।

पारेरक—पुं० [सं० पार√ईर् (गति)+ण्वुल्—अक] तलवार।

पारेवा—पुं० [सं० पारावत] कबूतर। परेवा।

पारेषक—वि० [सं० पार√इष् (गति)+णिच्+ण्वुल्—अक] प्रेषण करने या भेजनेवाला।

पुं० विद्युत् से समाचार भेजने या बात करने के यंत्रों का वह अंग जिससे समाचार यन्त्र से भेजे जाते हैं। 'प्रतिग्राहक' का विपर्याय। (ट्रांसमीटर)

पारोकना*—अ० [सं० परोक्ष] १. परोक्ष या आड़ में होना। २. अंतर्धान या अदृश्य होना।

पारोक्ष—वि० [सं० परोक्ष+अण्] [भाव० पारोक्ष्य] १. रहस्यमय। २. गुप्त। ३. अस्पष्ट।

पार्क—पुं० [अं०] शहरों में, ऐसा उद्यान जिसमें घास उगी हुई हो तथा जहाँ छोटे-मोटे फूल-पौधे भी हों।

पार्जन्य—वि० [सं० पर्जन्य+अण्] मेघ या वर्षा-संबंधी।

पार्ट—पुं० [अं०] १. अंश। भाग। हिस्सा। २. किसी अभिनय, विषय आदि में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किया जानेवाला अपने कर्तव्य का निर्वाह।

पार्टी—स्त्री० [अं०] १. दल। २. वह समारोह जिसमें आमंत्रित लोगों को भोजन, जलपान आदि कराया जाता है।

पार्ण—वि० [सं० पर्ण+अण्] १. पर्ण-संबंधी। पत्तों का। २. पत्तों के द्वारा प्राप्त होनेवाला। जैसे—पार्णकर।

पार्थ—पुं० [सं० पृथा+अण्] १. पृथा के पुत्र युधिष्ठिर, अर्जुन या भीम (विशेषतः अर्जुन)। २. अर्जुन नाम का पेड़। ३. राजा।

पार्थक्य—पुं० [सं० पृथक्+ष्यञ्] १. पृथक् होने की अवस्था या भाव। २. वह गुण जिससे चीजों का पृथक्-पृथक् होना सूचित होता हो। ३. अंतर। ४. जुदाई।

पार्थ-सारथि—पुं० [ष० त०] १. कृष्ण। २. मीमांसा के एक प्राचीन आचार्य।

पार्थिव—वि० [सं० पृथिवी+अञ्] १. पृथ्वी-संबंधी। २. पृथ्वी से उत्पन्न। ३. पृथ्वी से उत्पन्न वस्तुओं का बना हुआ। ४. पृथ्वी पर शासन करनेवाला। ५. राजकीय।

पुं० १. मिट्टी का बरतन। २. काया। देह। शरीर। ३. राजा। ४. पृथ्वी पर या पृथ्वी से उत्पन्न होनेवाला पदार्थ।

पार्थिव-आय—स्त्री० [ष० त०] मालगुजारी। लगान।

पार्थिव-नन्दन—पुं० [ष० त०] [स्त्री० पार्थिव-नंदिनी] राजकुमार।

पार्थिव-पूजन—पुं० [ष० त०] कच्ची मिट्टी का शिव-लिंग बनाकर उसका किया जानेवाला पूजन।

पार्थिव-लिंग—पुं० [ष० त०] १. राजचिह्न। [कर्म० स०] २. कच्ची मिट्टी का बनाया हुआ शिव-लिंग जिसके पूजन का कुछ विशिष्ट विधान है।

पार्थिवी—स्त्री० [सं० पार्थिव+ङीप्] १. सीता। २. लक्ष्मी।

पार्थी—पुं० [सं० पार्थिव=पृथ्वी-संबंधी] मिट्टी का बनाया हुआ शिवलिंग।

पार्पर—पुं० [सं० पर्परी+अण्] १. मुट्ठी भर चावल। २. क्षय। (रोग)। ३. भस्म। राख। ४. यम।

पार्यंतिक—वि० [सं० पर्यंत+ठक्—इक] पर्यंत का; अर्थात् अंतिम।

पार्य—वि० [सं० पार+ष्यञ्] जो पार अर्थात् दूसरे किनारे पर स्थित हो। पुं० अंत।

पार्याप्तिक—वि० [सं० पर्याप्त+ठक्—इक] १. पर्याप्त। यथेष्ट। २. संपूर्ण।

पार्लमेंट—स्त्री० [अं०] संसद। (दे०)

पार्वण—वि० [सं० पर्वन्+अण्] पर्व या अमावस्या के दिन किया जाने या होनेवाला।

पुं० उक्त अवसर पर किया जानेवाला श्राद्ध।

पार्वतिक—पुं० [सं० पर्वत+ठक्—इक] पर्वतमाला। पर्वत-श्रेणी।

पार्वती—स्त्री० [सं० पर्वत+अण्+ङीष्] पुराणानुसार हिमालय पर्वत की पुत्री, जिसका विवाह शिवजी से हुआ था। गिरिजा। भवानी।

पार्वती-कुमार—पुं० [ष० त०] १. कार्त्तिकेय। २. गणेश।

पार्वती-नन्दन—पुं० [ष० त०]=पार्वती-कुमार।

पार्वती-नेत्र—पुं० [ष० त०]=पार्वती-लोचन।

पार्वती-लोचन—पुं० [ष० त०] संगीत में एक प्रकार का ताल।

पार्श्व—पुं० [सं०√स्पृश् (छूना)+श्वण्, पृ—आदेश] १. कंधों और काँखों के नीचे के उन दोनों भागों में से प्रत्येक जिनमें पसलियाँ होती हैं। छाती के दाहिने और बाएँ भागों में से प्रत्येक भाग। बगल। २. पसली की हड्डियों का समुदाय। पंजर। ३. किसी पदार्थ, प्राणी की लंबाई वाले विस्तार में इधर अथवा उधर पड़नेवाला अंग या अंश। बगलवाला छोर या सिरा। ४. किसी क्षेत्र या विस्तार का वह अंग या अंश जो किसी एक ओर या दिशा की सीमा पर पड़ता हो और कुछ दूर तक सीधा चला गया हो। जैसे—इस चौकोर क्षेत्र के चारों पार्श्व बराबर हैं। ५. किसी चीज के अगल-बगल या दाहिने-बाएँ अंशों के पास पड़नेवाला विस्तार। जैसे—गढ़ के दाहिने पार्श्व में वन था।

६. लिखते समय कागज की दाहिनी (अथवा बाईं) ओर छोड़ा जानेवाला स्थान। हाशिया। ८. कपट या छल से भरा हुआ उपाय या साधन। ७. दे० 'पार्श्वनाथ'।

पार्श्वक—पुं० [सं०] वह चित्र जिसमें किसी आकृति का एक ही पार्श्व दिखलाया गया हो।

पार्श्वग—वि० [सं० पार्श्व√गम् (जाना)+ड] साथ में चलने या रहनेवाला।

पुं० नौकर। सेवक।

पार्श्व-गत—वि०[सं० द्वि० त०] १. पार्श्व या बगल में आया या ठहरा हुआ। २. (चित्र) जिसमें किसी आकृति का एक ही पार्श्व दिखाया गया हो, दूसरा पार्श्व सामने न हो। (प्रोफाइल) जैसे—दाहिनी ओर जाते हुए व्यक्ति के चित्र में उसकी पार्श्व-गत आकृति ही दिखाई देती है।

पुं० वह जिसे अपने यहाँ रखकर आश्रय दिया गया हो या जिसकी रक्षा की गई हो।

पार्श्वगायन—पुं० [सं०] आज-कल वह गायन जो नेपथ्य से किसी पात्र या पात्री के गाने के बदले में होता है।

विशेष—जो अभिनेता या अभिनेत्री गान-विद्या में पटु नहीं होती, उसके बदले में नेपथ्य से कोई दूसरा अच्छा गायक या गायिका गाती है। यही गाना पार्श्वगायन कहलाता है।

पार्श्वचर—वि० [सं० पार्श्व√चर् (गति)+ट] पास में रहकर साथ चलनेवाला।

पार्श्वचित्र—पुं० [सं०] पार्श्वक। (दे०)

पार्श्व-टिप्पणी—स्त्री० [मध्य० स०] पार्श्व अर्थात् हाशिये में लिखी गई टिप्पणी। (मार्जिनल नोट)

पार्श्वद—पुं० [सं० पार्श्व√दा (देना)+क] नौकर। सेवक।

पार्श्वनाथ—पुं० [सं०] जैनों के तेइसवें तीर्थंकर।

पार्श्व-परिवर्त्तन—पुं० [ष० त०] लेटे या सोये रहने की दशा में करवट बदलना।

पार्श्ववर्ती—वि० [सं० पार्श्व√वृत (रहना)+णिनि] [स्त्री० पार्श्ववर्त्तिनी] १. किसी के पास या साथ रहनेवाला। जैसे—राजा के पार्श्ववर्ती। २. किसी के पार्श्व में, आस-पास या इधर-उधर रहने या होनेवाला। जैसे—नगर का पार्श्ववर्ती वन।

पुं० १. सहचर। साथी। २. नौकर। सेवक।

पार्श्व-शीर्षक—पुं० [मध्य० स०] पार्श्व अर्थात् हाशियेवाले भाग में लगाया या लिखा हुआ शीर्षक। (मार्जिनल हेडिंग)

पार्श्व-शूल—पुं० [मध्य० स०] बगल या पसलियों में होनेवाला शूल या जोर का दर्द।

पार्श्व-संगीत—पुं० [मध्य० स०] १. आधुनिक अभिनयों, चल-चित्रों आदि में वह संगीत जो अभिनय होने के समय परोक्ष में होता रहता है। २. आधुनिक चल-चित्रों में किसी पात्र का ऐसा गाना जो वास्तव में वह स्वयं नहीं गाता, बल्कि उसका गानेवाला परोक्ष या परदे की आड़ में रहकर उसके बदले में गाता है। (प्लेबैक)

पार्श्वस्थ—वि० [सं० पार्श्व√स्था (ठहरना)+क] जो पास या बगल में स्थित हो।

पार्श्वानुचर—पुं० [पार्श्व-अनुचर, मध्य० स०] सेवक।

पार्श्वायात—वि० [पार्श्व-आयात, स० त०] जो पास आया हो,

पार्श्वासन्न, पार्श्वासीन—वि० [सं० स० त०] पार्श्व अर्थात् बगल में बैठा हुआ।

पार्श्विक—वि० [सं० पार्श्व+ठक्—इक] १. पार्श्व-संबंधी। २. किसी एक पार्श्व या अंग में होनेवाला। ३. किसी एक पार्श्व या अंग की ओर से आने या चलनेवाला। (लेटरल)

पार्षद्—स्त्री० [सं०=परिषद्, पृषो० सिद्धि] परिषद्। सभा।

पार्ष्णि—स्त्री० [सं०√पृष् (सींचना)+नि, नि० वृद्धि] १. पैर की एड़ी। २. सेना का पिछला भाग। ३. किसी चीज का पिछला भाग। ४. पैर से किया जानेवाला आघात। ठोकर। ५. जीतने या विजय प्राप्त करने की इच्छा। जिगीषा। ६. जाँच-पड़ताल। छान-बीन।

पार्ष्णि-क्षेम—पुं० [सं०] एक विश्वेदेव।

पार्ष्णि-ग्रहण—पुं० [ष० त०] किसी पर, विशेषतः शत्रु की सेना पर पीछे से किया जानेवाला आक्रमण या आघात।

पार्ष्णि-ग्राह—पुं० [सं० पार्ष्णि√ग्रह् (ग्रहण)+अण्] १. वह जो किसी के पीठ पर या पीछे रहकर उसकी सहायता करता हो। २. सेना के पिछले भाग का प्रधान अधिकारी या नायक।

पार्ष्णि-घात—पुं० [तृ० त०] पैर से किया जानेवाला आघात। ठोकर।

पार्सल—पुं०=पारसल।

पालंक—पुं० [सं०√पाल् (रक्षण)+क्विप्=पाल् अंक, तृ० त०] १. पालक नाम का साग। २. बाज पक्षी। ३. एक प्रकार का रत्न जो काले, लाल या हरे रंग का होता है।

पालंकी—स्त्री० [सं० पालंक+ङीष्] १. पालकी नाम का साग। २. कुंदुरू नाम का गंध द्रव्य।

पालंक्य—पुं० [सं० पालंक+ष्यञ्] पालक (साग)।

पालंक्या—स्त्री० [सं० पालंक्य+टाप्] कुंदुरू नामक पौधा और उसका फल।

पालंग—पुं०=पलंग।

पाल—वि० [सं०√पाल्+णिच्+अच्] १. पालन करनेवाला। पालक। २. आज-कल कुछ संज्ञाओं के अंत में लगनेवाला एक शब्द जिसका अर्थ होता है—काम, प्रबंध या व्यवस्था करने अथवा सब प्रकार से रक्षित रखनेवाला। जैसे—कोटपाल, राज्यपाल, लेखपाल आदि।

पुं० १. पीकदान। उगालदान। २. चीते का पेड़। चित्रक वृक्ष। ३. बंगाल का एक प्रसिद्ध राजवंश जिसने वंग और मगध पर साढ़े तीन सौ वर्षों तक राज्य किया था।

पुं०[हिं० पालना] १. फलों को गरमी पहुँचाकर पकाने के लिए पत्तों आदि से ढककर या और किसी युक्ति से रखने की विधि।

क्रि० प्र०—डालना।—पड़ना।

२. ऐसा स्थान जहाँ फल आदि रखकर उक्त प्रकार से पकाये जाते हों।

पुं०[सं० पट या पाट] १. वह लंबा-चौड़ा कपड़ा जिसे नाव के मस्तूल से लगाकर इसलिए तानते हैं कि उसमें हवा भरे और उसके जोर से नाव बिना डाँड़ चलाये और जल्दी-जल्दी चले।

क्रि० प्र०—उतारना।—चढ़ाना।—तानना।

२. उक्त प्रकार का वह लंबा-चौड़ा और मोटा कपड़ा जो धूप, वर्षा आदि से बचने के लिए खुले स्थान के ऊपर टाँगा या फैलाया जाता है। ३. खेमा। तंबू। शामियाना। ४. गाड़ी, पालकी आदि को ऊपर से ढकने का कपड़ा। ओहार।

स्त्री०[सं० पालि] १. पानी को रोकनेवाला बाँध या किनारा। मेंड़। २. नदी आदि का ऊँचा किनारा या टीला। ३. नदी आदि के घाट पर के नीचे का ऐसा खोखला स्थान, जो नींव के कंकड़-पत्थर आदि बह जाने के कारण बन जाता है।

पुं०[सं० पालि] कबूतरों का जोड़ा खाना। कपोत-मैथुन।

क्रि० प्र०—खाना।

पुं०[?] वह जमीन जो सरकार की निजी संपत्ति होती है।

पालउ†—पुं०=पल्लव।

पालक—वि०[सं०√पाल्+णिच्+ण्वुल्—अक][स्त्री० पालिका]पालन करनेवाला।

पुं०१. पालकर अपने पास रखा हुआ लड़का। २. प्रधान शासक या राजा। ३. घोड़े का साईस। ४. चीते का पेड़। चित्रक।

पुं०[सं० पाल्यंक] एक प्रकार का प्रसिद्ध साग।

†पुं०=पलंग। उदा०—खंड खंड साजी पालक पीढ़ी।—जायसी।

पालकजूही—स्त्री०[देश०] एक प्रकार का छोटा पौधा जो दवा के काम में आता है।

पालकरी—स्त्री०[हिं० पलंग] लकड़ी का वह छोटा टुकड़ा जो पलंग, चारपाई, चौकीआदि के पायों को ऊँचा करने के लिए उसके नीचे रखा जाता है।

पालकाप्य—पुं०[सं०]१. एक प्राचीन मुनि जो अश्व, गज आदि से संबंध रखनेवाली विद्या के प्रथम आचार्य माने गये हैं। २. वह विद्या या शास्त्र जिसमें हाथी घोड़े आदि के लक्षणों, गुणों आदि का निरूपण हो। शालिहोत्र।

पालकी—स्त्री० [सं० पल्यंक; प्रा० पल्लंक] एक प्रसिद्ध सवारी जिसमें सवार बैठता या लेटता है और जिसे कहार या मजदूर लोग कंधे पर उठा कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते हैं।

स्त्री०[सं० पालंक] पालक का शाक।

पालकी गाड़ी—स्त्री० [हिं० पालकी+गाड़ी] एक तरह की घोड़ा-गाड़ी जिसका ऊपरी ढाँचा पालकी के आकार का तथा छायादार होता है।

पालगाड़ी—स्त्री०=पालकी गाड़ी।

पालघ्न—पुं०[सं० पाल√हन् (हिंसा)+क] कुकरमुत्ता।

पालट—पुं०[सं० पालन]१. पाला हुआ लड़का। २. गोद लिया हुआ लड़का। दत्तकपुत्र।

पुं०[सं० पर्यस्त; प्रा० पल्लट्ट]१. पलटने की क्रिया या भाव। पलट। २. परिवर्तन। ३. पटेबाजी में एक प्रकार का प्रहार या वार।

पालटना*—स०=१.पलटना। २.=पलटाना।

पालड़ा—पुं०=पलड़ा।

पालतू—वि०[सं० पालना] (पशु-पक्षियों के संबंध में) जो पकड़कर घर में रखा तथा पाला गया हो (जंगली से भिन्न)। जैसे—पालतू तोता पालतू बंदर।

पालथी—स्त्री० [सं० पर्य्यस्त=फैला हुआ] दोनों टाँगों को मोड़कर बैठने की वह मुद्रा, जिसमें पैर दूसरी टाँग की रान के नीचे पड़ते हैं। पद्मासन। कमलासन। पलथी।

क्रि० प्र०—मारना।—लगाना।

पालन—पुं० [सं०√पाल्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि०पालनीय, पाल्य, भू० कृ० पालित]१. अपनी देख-रेख में और अपने पास रखकर किसी का भरण-पोषण करने की क्रिया या भाव। (मेन्टेनेन्स)२. आज्ञा, आदेश, कर्तव्य आदि कार्यों का निर्वाह। (डिसचार्ज, परफॉरमेन्स) ३. अनुकूल आचरण द्वारा किसी निश्चय वचन आदि का होनेवाला निर्वाह। (एबाइड) ४. जीव-जंतुओं के संबंध में उन्हें अपने पास रखकर उनका वंश,सामर्थ्य या उनसे होनेवाली उपज आदि बढ़ाने का काम। जैसे—मधुमक्षिका पालन, पशु-पालन आदि। ५. तत्काल ब्याई हुई गाय का दूध। पेवस।

पालना—स०[सं० पालन]१. व्यक्ति के संबंध में, उसे भोजन, वस्त्र आदि देकर उसका भरण-पोषण करना। पालन करना। २. आज्ञा, आदेश, प्रतिज्ञा, वचन आदि के अनुसार आचरण या व्यवहार करना। पालन करना। ३. पशु-पक्षियों को मनोविनोद के लिए अपने पास रखकर खिलाना-पिलाना। पोसना। ४. (दुर्व्यसन या रोग) जान-बूझकर अपने साथ लगा रखना और उसे दूर करने का प्रयत्न न करना। ५. कष्ट या विपत्ति से बचाकर सुरक्षित रखना। रक्षा करना। उदा०—आनन सुखाने कहैं, क्यौहूँ कोउ पालि है।—तुलसी।

पुं०[सं० पल्यंक] एक तरह का छोटा झूला, जिसमें छोटे बच्चों को लेटाकर झुलाया या सुलाया जाता है।

पालनीय—वि० [सं० √ पाल्+णिच्+अनीयर] जिसका पालन किया जाना चाहिए अथवा किया जाने को हो।

पालयिता (तृ)—पुं०[सं०√पाल्+णिच्+तृच्] वह जो दूसरों का पालन अर्थात् भरण-पोषण करता हो। पालन-पोषण करनेवाला।

पाल-वंश—पुं० [सं०] दे० 'पाल' के अंतर्गत।

पालव—पुं०]सं० पल्लव] १. पल्लव। पत्ता। २. कोमल, छोटा और नया पौधा।

पाला—पुं०[सं० प्रालेय]१. बादलों में रहनेवाले पानी या भाप के वे जमे हुए सफेद कण, जो अधिक सरदी पड़ने पर आकाश से पेड़-पौधों आदि पर पतली तह की तरह फैल जाते हैं और इस प्रकार उन्हें हानि पहुँचाते हैं।

क्रि० प्र०—गिरना।—पड़ना।

मुहा०—(किसी चीज पर) पाला पड़ना=(क) बुरी तरह से नष्ट होना। (ख) इतना दब जाना कि फिर जल्दी उठ न सके। जैसे—आशाओं पर पाला पड़ना। (फसल आदि को) पाला मार जाना=आकाश से पाला गिरने के कारण फसल की पैदावार खराब या नष्ट हो जाना।

२. बहुत अधिक ठंढ या सरदी जो उक्त प्रकार के पात के कारण होती है। जैसे—इस साल तो यहाँ बहुत अधिक पाला है।

पुं०[सं० पट्ट, हिं० पाड़ा]१. प्रधान स्थान। पीठ। २. वह धुस या भीटा अथवा बनाई हुई मेंड़ जिससे किसी क्षेत्र की सीमा सूचित होती हो। ३. कबड्डी आदि के खेलों में दोनों पक्षों के लिए अलग-अलग

निर्धारित क्षेत्र में जिसकी सीमा प्रायः जमीन पर गहरी लकीर खींचकर स्थिर की जाती है।

पुं०[हिं०]१. पल्ला। २. लाक्षणिक रूप में, कोई ऐसा काम या बात जिसमें किसी प्रतिपक्षी को दबाना अथवा उसके साथ समानता के भाव से रहकर निर्वाह करना पड़ता है।

मुहा०—(किसी से) पाला पड़ना=ऐसा अवसर या स्थिति आना जिसमें किसी विकट व्यक्ति का सामना करना पड़े, या उससे संपर्क स्थापित हो। जैसे—ईश्वर न करे, ऐसे दुष्ट से किसी का पाला पड़े। (किसी के) पाले पड़ना=ऐसी स्थिति में आना या होना कि जिससे काम पड़े, वह बहुत ही भीषण या विकट व्यक्ति सिद्ध हो। जैसे—तुम भी याद करोगे कि किसी के पाले पड़े थे।

३. वह जगह जहाँ दस-बीस आदमी मिलकर बैठा करते हों। ४. अखाड़ा। ५. कच्ची मिट्टी का वह गोलाकार ऊँचा पात्र, जिसमें अनाज भरकर रखते हैं। कोठला।

पुं०[सं० पल्लव, हिं० पालो] जंगली बेर के वृक्ष की पत्तियाँ जो चारे के काम आती हैं।

†पुं०=पाड़ा (टोला या महल्ला)।

पालागन—स्त्री० [हिं० पावँ+पर+लगना] आदर-पूर्वक किसी पूज्य व्यक्ति के पैर छूने की क्रिया या भाव। प्रणाम।

पालागल—पुं०[सं०]१. प्राचीन भारत में, समाचार लाने और ले जाने-वाला व्यक्ति। संदेशवाहक। संवादवाहक। हरकारा। २. दूत।

पालागली—स्त्री० [सं० पालागल+ङीष्] प्राचीन भारत में, राजा की चौथी और सबसे कम आदर पानेवाली रानी जो शूद्र जाति की होती थी।

पालाश—वि०[सं० पलाश+अण्] १. पलाश-संबंधी। २. पलाश का बना हुआ। ३. हरा।

पुं० १. तेज पत्ता। २. हरा रंग।

पालाशखंड—पुं०[ब०स०] मगध देश।

पालाशि—पुं०[सं० पलाश+इञ्] पलाश गोत्र के प्रवर्तक ऋषि।

पालिंद—पुं०[सं० पलिंद+अण्]कुंदुरू नामक गंध-द्रव्य।

पालिंदी—स्त्री०[सं० पालिंद+ङीप्] १. श्यामा लता। २. त्रिवृत्ता।

पालि—स्त्री०[सं०√ पल् (रक्षा करना)+इण्]१. कान के नीचे लटकने-वाला कोमल मांस-खंड जिसमें छेद करके बालियाँ आदि पहनी जाती हैं। कान की लौ। २. किसी चीज का किनारा या कोना। ३. कतार। पंक्ति। श्रेणी। ४. सीमा। हद। ५. पुल। सेतु। ६. बाँध। मेंड़। ७. घेरा। परिधि। ८. अंक। क्रोड। गोद। ९. अंडाकार तालाब या सरोवर। १०. वह भोजन जो परदेशी विद्यार्थी को गुरुकुल से मिलता था। ११. ऐसी स्त्री जिसकी ठोढ़ी पर बाल तथा मूँछें हों। १२. चिह्न। निशान। १३. जूँ नाम का कीड़ा। १४. एक तौल जो एक प्रस्थ के बराबर होती थी। १५. दे० 'पाली'।

पालिक—पुं०[सं० पल्यंक]१. पलंग। २. पालकी।

पालिका—स्त्री० [सं० पालक+टाप्, इत्व]१. पालन करनेवाली। २. समस्तपदों के अंत में, वह जो पालन-पोषण तथा सुरक्षा का पूरा प्रबंध करती हो। जैसे—नगर पालिका, महानगर पालिका।

पालित—वि०[सं०√पाल्+णिच्+क्त] [स्त्री० पालिता] जिसे पाला गया हो। पाला हुआ।

पुं० सिहोर का पेड़।

पालित्य—पुं०[सं० पलित+ष्यञ्] वृद्धावस्था में बालों का कुछ पीलापन लिये सफेद होना।

पालिधी—स्त्री०[सं०] फरहद का पेड़।

पालिनी—वि० स्त्री० [सं०√ पाल्+णिनि+ङीप्] जो दूसरों को पालती हो। दूसरों का भरण-पोषण करनेवाली।

पालिश—स्त्री०[अं०]१. वह लेप या रोगन जो किसी चीज को चमकाने के लिए उस पर लगाया जाता है।

क्रि० प्र०—करना।—चढ़ाना।

२. उक्त प्रकार के लेप से होनेवाली चमक। ओप।

पालिसी—स्त्री०[अं०]१. नयी रीति। २. बीमा-संबंधी वह प्रतिज्ञा-पत्र जो बीमा करनेवाली संस्था की ओर से अपना बीमा करानेवाले को मिलता है।

पाली (लिन्)—वि० [सं०√पाल्+णिनि] [स्त्री० पालिनी]१. पालन या पोषण करनेवाला। २. रक्षा करनेवाला। रक्षक।

पाली—स्त्री० [?] १. देग। बटलोई। २. बरतन का ढक्कन। ३. ऊपरी तल या पार्श्व। जैसे—कपोलपाली=गाल का ऊपरी तल। ४. प्राचीन भारत की एक प्रसिद्ध भाषा जो गौतम बुद्ध के समय सारे भारत के सिवा वाह्लीक, बरमा, श्याम, सिंहल आदि देशों में बोली और समझी जाती थी।

विशेष—गौतम बुद्ध ने इसी भाषा में धर्मोपदेश किया था, और बौद्ध धर्म के सभी प्रमुख तथा प्राचीन ग्रंथ इसी भाषा में हैं। विद्वानों का मत है कि यह मुख्यतः और मूलतः भारत के मूल देश की भाषा थी जिसमें मागधी का भी कुछ अंश सम्मिलित था; इस भाषा का साहित्य बहुत विशाल है।

५. पंक्ति। श्रेणी। ६. तीतर, बटेर, बुलबुल आदि का वह वर्ग जो प्रायः प्रतियोगिता के रूप में लड़ाया जाता है। ७. वह स्थान जहाँ उक्त प्रकार के पक्षी लड़ाये जाते हैं। ८. आज-कल कारखानों आदि में, श्रमिकों के उन अलग-अलग दलों के काम करने का समय जो पारी पारी से आता है। (शिफ्ट) ९. आज-कल गेंद-बल्ले, चौगान आदि खेलों में खिलाड़ियों के प्रतियोगी दलों को खेलने के लिए होनेवाली पारी। (इनिंग)

†वि०=पैदल। उदा०—धणपाली, पिव पाखरयो, विहूँ भला भड़ जुध्ध।—ढोलामारू।

†पुं०[?] चरवाहा। (राज०)

पालीवत—पुं०[देश०] एक प्रकार का पेड़।

पालीवाल—पुं०[?] गौड़ ब्राह्मणों के एक वर्ग की उपाधि।

पालीशोष—पुं०[सं०] कान का एक रोग।

पालू—वि० [हिं० पालना] पाला हुआ। पालतू।

पाले—अव्य०[हिं० पाला] अधिकार या वश में।

मुहा० दे० 'पाला' के अंतर्गत।

पालो—पुं०[सं० पालि?] ५ रुपए भर का बाट या तौल। (सुनार)

†पुं०=पल्लव।

पाल्य—वि०[सं०√ पाल्+ण्यत्] जिसका पालन होने को हो या किया जाने को हो।

पाल्लवा—स्त्री०[सं० पल्लव+अण्+टाप्] प्राचीन भारत में, एक तरह का खेल जो पेड़ों की छोटी-छोटी टहनियों से खेला जाता था।

पाल्लविक—वि०[सं० पल्लव+ठक्—इक] फैलनेवाला। प्रसरणशील।

पाल्वल—वि०[सं० पल्वल+अण्]१. पल्वल (तालाब) संबंधी। २. पल्वल (तालाब) में होनेवाला।

पुं० छोटे ताल या तालाब का पानी।

पावँ—पुं०=पाँव।

पाव—पुं०[सं० पाद=चतुर्थांश]१. किसी पदार्थ का चौथाई अंश या भाग। २. वह जो तौल या मान में एक सेर का चौथाई भाग अर्थात् चार छटाँक हो। ३. उक्त तौल का बटखरा। ४. नौ गिरह का माप जो एक गज का चतुर्थांश होता है।

पद—पाव भर=(क) तौल में चार छटाँक। (ख) माप में नौ-गिरह।

*स्त्री० दे० 'पो' (पासे का दाँव)।

पावक—वि०[सं०√ पू (पवित्र करना)+ण्वुल्—अक] पवित्र करनेवाला।

पुं०१. अग्नि। आग। २. अग्निमंथ या अगियारी नामक वृक्ष। ३. चित्रक या चीता नामक वृक्ष। ४. भिलावाँ। ५. बाय-बिडंग। ६. कुसुम। बर्रे। ७. वरुण वृक्ष। ८. सूर्य। ९. सदाचार।

पावक-मणि—पुं० [सं० कर्म० स०] सूर्य्यकान्त मणि। आतशी शीशा।

पावका—स्त्री०[सं० पाव√कै+क+टाप्] सरस्वती। (वेद)

पावकात्मज—पुं० [सं० पावक-आत्मज, ष०त०] पावकि।

पावकि—पुं०[सं० पावक+इञ्]१. पावक का पुत्र। कार्तिकेय। २. इक्ष्वाकुवंशीय दुर्योधन की कन्या सुदर्शना का पुत्र सुदर्शन।

पावकी—स्त्री० [सं० पावक+ङीष्]१. अग्नि की स्त्री। २. सरस्वती। (वेद)

पाव-कुलक—पुं०=पादाकुलक।

पावचार*—वि०[सं० पावन-आचार] पवित्र और श्रेष्ठ आचरण करनेवाला। उदा०—तब देखि दुहूँ तिह पावचार।—गुरुगोविंदसिंह।

पुं० पवित्र और श्रेष्ठ आचरण।

पावड़ा†—पुं०=पाँवड़ा।

पावड़ी—स्त्री०=पाँवरी (खड़ाऊँ या जूता)।

पावती—स्त्री०[हिं० पावना]१. किसी चीज के पहुँचने की लिखित सूचना या प्राप्ति की स्वीकृति। जैसे—पत्र की पावती भेजना। २. किसी से रुपए लेने पर उसकी दी जानेवाली पक्की रसीद।

पावतीपत्र—पुं०=पावती।

पावदान—पुं०[फा० पाएदान या हिं० पाँव+फा० दान (प्रत्य०)]१. ऊँचे यानों या सवारियों में वह अंग या स्थान जिस पर पाँव रखकर उन पर सवार हुआ जाता है। जैसे—घोड़ागाड़ी या रेलगाड़ी का पावदान। २. मेज के नीचे रखी जानेवाली वह चौकी या लकड़ी की कोई रचना जिस पर कुरसी पर बैठनेवाले पैर रखते हैं। ३. जटा, मूँज, सन आदि अथवा धातु के तारों का बना हुआ वह चौकोर टुकड़ा जो कमरों के दरवाजे के पास पैर पोंछने के लिए रखा जाता है।

पावन—वि० [सं०√पू+णिच्+ल्यु—अन] [स्त्री० पावनी, भाव० पावनता]१. धार्मिक दृष्टि से, (वह चीज) जो पवित्र समझी जाती हो और दूसरों को भी पवित्र करती या बनाती हो। जैसे—पावन-जल। २. समस्त पदों के अंत में, पवित्र करने या बनानेवाला। जैसे—पतित-पावन। उदा०—सुनु खगपति यह कथा-पावनी।—तुलसी।

पुं० १. पावकाग्नि। २. सिद्ध पुरुष। ३. प्रायश्चित्त। ४. जल। पानी। ५. गोबर। ६. रुद्राक्ष। ७. चंदन। ८. शिलारस। ९. गोबर। १०. कुट नामक ओषधि। ११. पीली भंगरैया। १२. चित्रक। चीता। १३. विष्णु। १४. व्यासदेव का एक नाम।

पावनता—स्त्री० [सं० पावन+तल्—सप्] पावन होने की अवस्था या भाव। पवित्रता।

पावनताई†—स्त्री० =पावनता।

पावनत्व—पुं०[सं० पावन+त्व]=पावनता।

पावन-ध्वनि—पुं०[सं० ब०स०]१. शंख-नाद। २. शंख।

पावना—पुं०[सं० प्रापण, प्रा० पावण] वह जो अधिकार, न्याय आदि की दृष्टि से किसी से प्राप्त किया जाने को हो या किया जा सकता हो। प्राप्य धन या वस्तु। जैसे—बाजार में उनका हजारों रुपयों का पावना पड़ा (या बाकी) है। लहना। (ड्यूज)

स० १. प्राप्त करना। पाना। २. प्रसाद, भोजन आदि के रूप में मिली हुई वस्तु खाना या पीना। जैसे—हम यहीं प्रसाद पावेंगे। ३. किसी चीज या बात का ज्ञान, परिचय आदि प्राप्त करना। ४. दे० 'पाना'।

पावनि—पुं०[सं० पवन+इञ्] पवन के पुत्र हनुमान आदि।

पावनी—वि० स्त्री०[सं० पावन+ङीप्] पावन का स्त्रीलिंग रूप।

स्त्री०१. हड़। हर्रे। २. तुलसी। ३. गाय। गौ। ४. गंगा नदी। ५. पुराणानुसार शाक द्वीप की एक नदी।

पावनेदार—पुं०[हिं० पावना+फा० दार] वह जिसका किसी की ओर पावना निकलता हो। दूसरे से प्राप्य धन लेने का अधिकारी। लहनदार।

पावन्न†—वि०=पावन।

पावमान—वि०[सं० पवमान+अण्] (सूक्त) जिसमें पवमान अग्नि की स्तुति की गयी हो। (वेद)

पावमानी—स्त्री०[सं० पावमान+ङीप्] वेद की एक ऋचा।

पाव-मुहर—स्त्री०[हिं० पाव=चौथाई+मुहर] शाहजहाँ के समय का सोने का एक सिक्का जिसका मूल्य एक अशरफी या एक मुहर का चौथाई होता था।

पावर—पुं० [सं०] १. वह पासा जिस पर दो बिंदियाँ बनी हों। २. पासा फेंकने का एक प्रकार का ढंग या हाथ।

पुं०[अं०] १. वह शक्ति जिससे मशीनें चलाई जाती हैं। यंत्र चलानेवाली शक्ति (जैसे—विद्युत्)। २. अधिकार। शक्ति। ३. सैन्यबल। ४. शासनिक शक्ति।

*पुं०=पामर।

पाव-रोटी—स्त्री०[पुर्त० पाव=रोटी+हिं० रोटी] मैदे, सूजी आदि का खमीर उठाकर बनाई जानेवाली एक तरह की मोटी और फूली हुई रोटी। डबलरोटी।

पावल†—स्त्री०=पायल।

पावली—स्त्री० [हिं० पाव=चौथाई+ला (प्रत्य०)] एक रुपए के चौथाई भाग का सिक्का। चवन्नी।

पावस—स्त्री०[सं० प्रावृष; प्रा० पाउस] १. वर्षाकाल। बरसात। २. वर्षा। वृष्टि। ३. वर्षाऋतु में समुद्र की ओर से आनेवाली वे हवाएँ जो घटाओं के रूप में होती हैं और जल बरसाती हैं। (मानसून)

पावा†—पुं०=पाया।

पावी—स्त्री०[देश०] एक प्रकार की मैना (पक्षी)।

पाश—पुं०[सं०√ पश् (बाँधना)+घञ्]१. वह चीज जिससे किसी को फँसाया या बाँधा जाय। जैसे—जंजीर, रस्सी आदि। २. रस्सी से बनाया जानेवाला वह घेरा जिसमें गागर आदि को फँसाकर कूएँ में लटकाया जाता है। ३. पशु-पक्षियों को फँसाकर पकड़ने का जाल। ४. बंधन। ५. समस्त पदों के अंत में (क) सुन्दरता और सजावट के लिए अच्छी तरह बाँधकर तैयार किया हुआ रूप। जैसे—कर्ण-पाश। (ख) अधिकता और बाहुल्य। जैसे—केश-पाश। ५. वरुण देवता का अस्त्र जो फंदे के रूप में माना गया है। ६. दे० 'फाँस'।
प्रत्य०[फा०] छिड़कनेवाला। जैसे—गुलाब पाश।
पुं० किसी चीज का अंश या खंड। टुकड़ा।
पद—पाश-नाश। (देखें)

पाश-कंठ—वि०[सं० ब०स०] जिसके गले में फाँस या बंधन पड़ा हो।

पाशक—पुं०[सं० √पश+णिच्+ण्वुल्—अक] १. जाल। फंदा। २. चौपड़ खेलने का पाशा।

पाश-क्रीड़ा—स्त्री०[तृ० त०] जूआ। द्यूत।

पाशधर—पुं०[ष०त०] वरुण देवता (जिनका अस्त्र पाश है)।

पाशन—पुं०[सं०√पश+णिच्+ल्युट्—अन]१. रस्सी। २. बंधन।

पाश-पाश—अव्य०[फा०] टुकड़े टुकड़े। चूर-चूर।

पाश-पीठ—पुं०[ष०त०] बिसात (चौसर खेलने की)।

पाश-बंध—पुं०[स०त०] फंदा।

पाश-बंधक—पुं०[सं०] बहेलिया। चिड़ीमार।

पाश-बंधन—पुं०[स०त०]१. जाल। २. फंदा।

पाश-बद्ध—भू०कृ०[स०त०] जाल या फंदे में फँसा हुआ।

पाश-भृत्—पुं०[सं०पाश√भृ (धारण)+क्विप्, तुक्] वरुण (देवता)।

पाश-मुद्रा—स्त्री०[मध्य०स०] हाथ की तर्जनी और अंगूठे के सिरों को सटाकर बनाई जानेवाली एक तरह की मुद्रा। (तंत्र)

पाशव—वि० [सं० पशु+अण्]१. पशु-संबंधी। पशुओं का। २. पशुओं की तरह का। पशुओं का-सा। जैसे—पाशव आचरण।
पुं० पशुओं का झुंड।

पाशवता—स्त्री०=पशुता। उदा०—प्रेम शक्ति से चिर निरस्त्र हो जावेगी पाशवता।—पंत।

पाशवान् (वत्)—वि०[सं० पाश+मतुप्, वत्व] [स्त्री० पाशवती] जिसके पास पाश या फंदा हो। पाशवाला। पशधारी।
पुं० वरुण (देवता)।

पाशवासन—पुं० सं० पाशव-आसन कर्म०स०] एक प्रकार का आसन या बैठने की मुद्रा।

पाशविक—वि०[पशु+ठञ्—इक]१. पशुओं की तरह का ३. (आचरण)जो पशुओं के आचरण जैसा हो।

पाश-हस्त—पुं० [ब० स०] १. वरुण। २. यम।

पाशांत—पुं० [सं०=पार्श्व-अन्त, पृषो० सिद्धि] सिले हुए कपड़े का पीठ की ओर पड़नेवाला अंश।

पाशा—पुं० [तु०] तुर्किस्तान में बड़े बड़े अधिकारियों और सरदारों को दी जानेवाली उपाधि।

पाशिक—पुं० [सं० पाश+ठक्—इक] चिड़ीमार। बहेलिया।

पाशित—भू० कृ०[सं० पाश+णिच्+क्त] पाश में या पाश से बँधा हुआ। पाशबद्ध।

पाशी (शिन्)—वि० [सं० पाश+इनि] १. जो अपने पास पाश या फंदा रखता हो। पाशवाला।
पुं० १. वरुण देवता। २. यम। ३. बहेलिया। ४. अपराधियों के गले में फँदा या फाँसी लगाकर उन्हें प्राण-दंड देनेवाला व्यक्ति, जो पहले प्रायः चांडाल हुआ करता था।
स्त्री० [फा०] १. जल या तरल पदार्थ छिड़कने की क्रिया या भाव। जैसे—गुलाब-पाशी। २. खेत आदि को जल से सींचने की क्रिया। जैसे—आब-पाशी।

पाशुपत—वि० [सं० पशुपति+अण्] १. पशुपति-संबंधी। पशुपति या शिव का।
पुं० १. पशुपति या शिव के उपासक एक प्रकार के शैव। २. एक तंत्र शास्त्र जो शिव का कहा हुआ माना जाता है। ३. अथर्ववेद का एक उपनिषद्। ४. अगस्त का फूल।

पाशुपत-दर्शन—पुं० [कर्म० स०] एक प्राचीन दर्शन जिसमें पशुपति, पाशु और पशु इन तीन सत्ताओं को मुख्य माना गया था और जिसमें पशु के पाश से मुक्त होने के उपाय बतलाये गये हैं।

पाशुपत-रस—पुं० [कर्म० स०] वैद्यक में एक प्रकार का रसौषध।

पाशुपतास्त्र—पुं० [पाशुपत-अस्त्र, कर्म० स०] शिव का एक भीषण शूलास्त्र जिसे अर्जुन ने तपस्या करके प्राप्त किया था।

पाशुपाल्य—पुं० [सं० पशुपाल+ष्यञ्] पशुपालन।

पाशु-बंधक—पुं० [सं० पशुबंध+ठक्—क] यज्ञ में वह स्थान जहाँ बलि पशु बाँधा जाता था।

पाश्चात्य—वि० [सं० पश्चात्+त्यक्] १. पीछे का। पिछला। २ पीछे होनेवाला। ३. पश्चिम दिशा का। ४. पश्चिमी महादेश में होने अथवा उससे संबंध रखनेवाला। पौरस्त्य का विपर्याय। जैसे—पाश्चात्य दर्शन, पाश्चात्य साहित्य।

पाश्चात्यीकरण—पुं० [सं० पाश्चात्य+च्वि, ईत्व√कृ+ल्युट्—अन] किसी देश या जाति को पाश्चात्य सभ्यता के साँचे में ढालना या पाश्चात्य ढंग का बनाना। (वेस्टर्नाइजेशन)

पाश्या—स्त्री० [सं० पाश+यत्+टाप्] पाश। जाल।

पाखंड—पुं०[सं०√पा (रक्षा)+क्विप्=वेदधर्म,√खंड् (खंडन)+अच्] १. वे सब आचरण और कार्य जो वैदिक धर्म या रीति के हों। २. वैदिक रीतियों का खंडन करनेवाले कार्य और विचार। ३. दूसरों को धोखा देने आदि के उद्देश्य से झूठ-मूठ किये जानेवाले धार्मिक कृत्य। ढोंग।

पाखंडी (डिन्)—वि० [सं० पा√खंड्+णिच्+इनि] १. जो वेदों के सिद्धान्तों के विरुद्ध चलता हो और किसी दूसरे झूठे मत का अनुयायी

हो। २. जो दूसरों को धोखा देने के लिए अच्छा वेश बनाकर रहता हो।

पाषक—पुं० [सं०√पष् (बाँधना)+ण्वुल्—अक] पैर में पहनने का एक गहना।

पाषर†—स्त्री०=पाखर (हाथी की झूल)।

पाषाण—पुं० [सं०√पिष् (चूर्ण करना)+आनच्, पृषो० सिद्धि] १. पत्थर। प्रस्तर। शिला। २. नीलम, पन्ने आदि रत्नों का एक दोष। ३. गन्धक।

वि० [स्त्री० पाषाणी] १. निर्दय। २. कठोर। ३. नीरस।

पाषाण-गर्दभ—पुं० [सं०ष०त० ?] दाढ़ में सूजन होने का एक रोग।

पाषाण-चतुर्दशी—स्त्री० [मध्य० स०] अगहन मास की शुक्ला चतुर्दशी। अगहन सुदी चौदस।

पाषण-दारण—पुं० [ष० त०] [वि० पाषाणदारक] पत्थर तोड़ने का काम।

पाषाण-भेद—पुं०[ष०त०] एक प्रकार का पौधा जो अपनी पत्तियों की सुन्दरता के लिए बगीचों में लगाया जाता है। पाखानभेद। पथरचूर।

पाषाण-भेदन—पुं० [पाषाण√भिद् (तोड़ना)+ल्युट्—अन]=पाषाण भेद।

पाषाणभेदी (दिन्)—पुं० [सं० पाषाण√भिद्+णिनि] पाखान भेद। पथरचूर।

पाषाण-मणि—पुं० [मयू० स०] सूर्यकांत मणि।

पाषाण-रोग—पुं० [ष० त०] अश्मरी या पथरी नाम का रोग।

पाषाण-हृदय—वि० [ब० स०] जिसका हृदय बहुत ही कठोर या अत्यन्त क्रूर हो।

पाषाणी—स्त्री० [सं० पाषाण+ङीष्] बटखरा।

वि० स्त्री० निर्दय (स्त्री)।

पासंग—पुं० [फा० पारसंग] १. तराजू के दोनों पलड़ों या पल्लों का वह सामान्य सूक्ष्म अन्तर जो उस दशा में रहता है जब उन पर कोई चीज तौली नहीं जाती। पसंगा।

विशेष—ऐसी स्थिति में तराजू पर जो चीज तौली जाती है वह बटखरे या उचित मान से या तो कुछ कम होती है या अधिक; तौल में ठीक और पूरी नहीं होती।

२. पत्थर, लोहे आदि के टुकड़े के रूप में वह थोड़ा-सा भार जो उक्त अवस्था में किसी पल्ले या उसकी रस्सी में इसलिए बाँधा जाता है कि दोनों पल्लों का अन्तर दूर हो जाय और चीज पूरी तौली जा सके।

विशेष—शब्द के मूल अर्थ के विचार से पासंग का यही दूसरा अर्थ प्रधान है; परन्तु व्यवहारतः इसका पहला अर्थ ही प्रधान हो गया है।

३. वह जो किसी की तुलना में बहुत ही तुच्छ, सूक्ष्म या हीन हो। जैसे—तुम तो चालाकी में उसके पासंग भी नहीं हो।

पुं० [?] एक प्रकार का जंगली बकरा जो बिलोचिस्तान और सिन्ध में पाया जाता है, जिसकी दुम पर बालों का गुच्छा होता है। भिन्न-भिन्न ऋतुओं में इसके शरीर का रंग कुछ बदलता रहता है। इसकी मादा 'बोज' कहलाती है।

पास—अव्य० [सं० पार्श्व] १. जो अवकाश, काल आदि के विचार से अधिक दूरी पर न हो। समय, स्थान आदि के विचार से थोड़े ही अन्तर पर। निकट। समीप। जैसे—(क) उनका मकान भी पास ही है। (ख) परीक्षा के दिन पास आ रहे हैं।

पद—पास-पास या पास ही पास=एक दूसरे के समीप। बहुत थोड़े अन्तर पर। जैसे—दोनों पुस्तकें पास ही पास रखी हैं।

मुहा०—(किसी स्त्री के) पास आना, जाना या रहना=स्त्री के साथ मैथुन या संभोग करना। (किसी के) पास न फटकना=बिलकुल अलग या दूर रहना। (किसी के) पास बैठना=किसी की संगति में रहना। जैसे—भले आदमियों के पास बैठने से प्रतिष्ठा होती है।

२. अधिकार में। कब्जे में। हाथ में। जैसे—तुम्हारे पास कितने रुपए हैं? ३. किसी के निकट जाकर या किसी को सम्बोधित करके। उदा०—माँगत है प्रभु पास दास यह बार बार कर जोरी।—सूर।

पुं० १. ओर। तरफ। दिशा। उदा०—अति उतुंग जल-निधि चहुँपासा।—तुलसी। २. निकटता। सामीप्य। जैसे—उसके पास से हट जाओ। ३. अधिकार। कब्जा। जैसे—हमें दस रुपए अपने पास से देने पड़े।

विशेष—इस अर्थ में इसके साथ केवल 'में' और, 'से' विभक्तियाँ लगती हैं।

पुं० [फा०] किसी के पद, मर्यादा, सम्मान आदि का रखा जानेवाला उचित ध्यान या किया जानेवाला विनयपूर्ण विचार। अदब। लिहाज। जैसे—बड़ों का हमेशा पास करना (या रखना) चाहिए।

क्रि० प्र०—करना।—रखना।

पुं० [अं०] वह अधिकारपत्र जिसकी सहायता से कोई कहीं बिना रोक-टोक आ-जा सकता हो। पारक। पारपत्र। जैसे—अभिनय या खेल-तमाशे में जाने का पास; रेल से कहीं आने-जाने का पास।

विशेष—टिकट या पास में यह अन्तर है कि टिकट के लिए तो धन या मूल्य देना पड़ता है; परन्तु पास बिना धन दिये या मूल्य चुकाये ही मिलता है।

वि० १. जो किसी प्रकार की रुकावट आदि पार कर चुका हो। २. जो जाँच, परीक्षा आदि में उपयुक्त या ठीक ठहरा हो; और इसी लिए आगे बढ़ने के योग्य मान लिया गया हो। उत्तीर्ण। जैसे—(क) लड़कों का इम्तहान में पास होना। (ख) विधायिका सभा में कोई कानून पास होना। ३. पावने, प्राप्यक, व्यय आदि के लेखे के संबंध में, जो उपयुक्त अधिकारी के द्वारा ठीक माना गया और स्वीकृत हो चुका हो। जैसे—कर्मचारियों के वेतन का प्राप्यक (बिल) पास होना।

†पुं० [सं० पास=बिछाना, डालना] आँवें के ऊपर उपले जमाने का काम।

पुं० [देश०] भेड़ों के बाल कतरने की कैंची का दस्ता।

पुं० १. दे० 'पाश'। २. दे० 'पासा'।

पासक†—पुं०=पाशक।

पासना—अ० [सं० पयस्=दूध] स्तनों या थनों में दूध उतरना या उनका दूध से भरना।

पासनी—स्त्री० [सं० प्राशन] बच्चों का अन्नप्राशन। उदा०—कान्ह कुँवर की करहु पासनी।—सूर।

पास-बंद—पुं० [हिं० पास+फा० बंद] दरी बुनने के करघे की वह लकड़ी जिससे बै बँधी रहती है और जो ऊपर-नीचे जाया करती है।

पास-बान—पुं० [फा०] [भाव० पासबानी] पहरा देनेवाला व्यक्ति। द्वारपाल।
स्त्री० रखेली स्त्री। (राज०)

पासबानी—स्त्री० [फा०] १. द्वारपाल का काम और पद। २. पहरेदारी।

पास-बुक—स्त्री० [अं०]=लेखा पुस्तिका।

पासमान—पुं० [हिं० पास+मान (प्रत्य०)] पास रहनेवाला दास।
पुं०=पासबान।

पासवर्ती—वि०=पार्श्ववर्ती।

पाससार†—पुं०=पासासारि।

पासह†—अव्य०=पास।

पासा—पुं० [सं० पाशक, प्रा० पासा] १. हड्डी, हाथी दाँत आदि के छः पहले टुकड़े जिनके पहलों पर एक से छः तक बिंदियाँ अंकित होती हैं और जिन्हें चौसर आदि के खेलों में खेलाड़ी बारी-बारी से फेंककर अपना दाँव निश्चित करते हैं। (डाइस)
मुहा०—(किसी का) पासा पड़ना=(क) पासे के पहल का किसी की इच्छा के अनुसार ठीक गिरना। जीत का दाँव पड़ना। (ख) ऐसी स्थिति होना कि उद्देश्य, युक्ति आदि सफल हो। पासा पलटना=(क) पासे का विपरीत प्रकार या रूप में गिरने लगना। (ख) ऐसी स्थिति आना या होना कि जो क्रम चला आ रहा हो, वह उलट जाय, मुख्यतः बुरी से अच्छी दशा या दिशा की ओर प्रवृत्त होना। पासा फेंकना=भाग्य के भरोसे रहकर और सफलता प्राप्त करने की आशा से किसी प्रकार का उपाय, प्रयत्न या युक्ति करना।
२. चौपड़ या चौसर का खेल, अथवा और कोई ऐसा खेल जो पासों से खेला जाता हो। ३. मोटी छःपहली बत्ती के आकार में लाई हुई वस्तु। गुल्ली। जैसे—चाँदी या सोने का पासा (अर्थात् उक्त आकार में ढाला हुआ खंड)। ४. सुनारों का एक उपकरण जो काँसे या पीतल का चौकोर ढला हुआ खंड होता है और जिसके हर पहल पर छोटे-बड़े गोलाकार गड्ढे बने होते हैं। (इन्हीं गड्ढों की सहायता से गहनों में गोलाई लाई जाती है।) ५. कोई चीज ढालने का साँचा। (राज०)

पासार†—पुं० [फा० पासदार] [भाव० पासारी] १. तरफदार। पक्षपाती। २. शरणदाता। रक्षक।

पासासारि—पुं० [हिं० पासा+सारि=गोटी] १. पासों की सहायता से खेला जानेवाला खेल। जैसे—चौसर। २. चौसर आदि की गोट जो पासा फेंककर उसके अनुसार चलाते हैं।

पासिक—पुं० [सं० पाश] १. फंदा। २. बंधन।

पासिका—स्त्री० [सं० पाश] १. जाल। २. बंधन।

पासी—पुं० [सं० पाशिन्, पाशी] १. जाल या फंदा डालकर चिड़ियाँ पकड़नेवाला। बहेलिया। २. एक जाति जो ताड़ के पेड़ों से ताड़ी उतारने का काम करती है।
स्त्री० [सं० पाश] १. घोड़ों के पिछले पैर में बाँधने की रस्सी। पिछाड़ी। २. घास बाँधने की जाली या रस्सी।
†स्त्री०=पाश (फंदा)।

पासु*—पुं०=पाश।
अव्य०=पास।

पासुरी†—स्त्री०=पसली।

पाहँ—अव्य० [सं० पार्श्व; प्रा० पास; पाह] १. निकट। पास। समीप। २. प्रति। से। उदा०—जाइ कहहु उन पास सँदेसू।—जायसी।

पाह—स्त्री० [हिं० पाहन] एक तरह का पत्थर जिससे लौंग, फिटकरी, अफीम आदि घिसकर आँख पर लगाने का लेप बनाते हैं।
पुं० [सं० पथ] पथ। मार्ग।

पाहत—पुं० [सं० नि० सिद्धि० पररूप] शहतूत का पेड़।

पाहन—पुं० [सं० पाषाण, प्रा० पाहाण] १. पत्थर। उदा०—पाहन ते न कठिन कठिनाई।—तुलसी। २. कसौटी का पत्थर। ३. पारस पत्थर। स्पर्शमणि। उदा०—इतर धातु पाहनहिं परसि कंचन ह्वै सोहै।—नन्ददास।
वि० पत्थर की तरह कठोर हृदय का।

पाहरू—पुं० [हिं० पहर, पहरा] पहरा देनेवाला। पहरेदार।

पाहल—स्त्री० [हिं० पहला] किसी को सिक्ख धर्म की दीक्षा देने के समय होनेवाला धार्मिक कृत्य या समारोह।

पाहा—पुं० [सं० पथ] १. पथ। मार्ग। २. मेंड़।

पाहात—पुं० [सं० नि० सिद्धि] शहतूत का पेड़।

पाहार†—पुं० [सं० पयोधर; प्रा० पयोहर] बादल। मेघ।
†पुं० पहाड़।

पाहि—अव्य० [सं० पार्श्व; प्रा० पास, पाह] १. पास। निकट। २. किसी की ओर या प्रति। ३. किसी के उद्देश्य से अथवा उसके पास जाकर।

पाहि—अव्य० [सं०√पा+लोट्+सिप्—हि] रक्षा करो। बचाओ।

पाहिमाम्—अव्य० [सं० पाहि और माम्‌ व्यस्त पद] त्राहिमाम्।

पाहीं†—अव्य०=पाहि।

पाही—स्त्री० [हिं० पाह=पथ] किसी किसान की वह खेती जो उसके गाँव या निवास स्थान से कुछ अधिक दूरी पर हो। उदा०—तहाँ नरायन पाही कीन्हां, पल आवै पल जाई हो।—नारायणदास सन्त।

पाहुँच†—स्त्री०=पहुँच।

पाहुना—पुं० [सं० प्राघूर्ण, प्राघुण=अतिथि] [स्त्री० पाहुनी] १. अतिथि। मेहमान। अभ्यागत। २. जामाता। दामाद। (पूरब)

पाहुनी—स्त्री० [हिं० पाहुना] १. आतिथ्य। मेहमानदारी। पहुनई। २. रखेली स्त्री।

पाहुर—पुं० [सं० प्राभृत; प्रा० पाहुड=भेंट] १. उपहार। भेंट। नजर। २. शुभ अवसरों पर संबंधियों और इष्ट-मित्रों के यहाँ भेजे जानेवाले फल, मिठाइयाँ आदि। बैना। बायन।

पाहू—पुं० [सं० पथ, पुं० हिं० पाह] १. पथिक। बटोही। २. पाहुना। मेहमान। ३. दामाद। उदा०—पाहू घर आवे मुकलाऊ आये।—गुरु ग्रंथसाहब।
पुं० [?] दोनों ओर से थोड़ा मुड़ा हुआ वह मोटा लोहा जिससे इमारत में अगल-बगल रखे हुए पत्थर जकड़कर स्थित किये जाते हैं।
पुं० [सं० पाहि] १. घृणा या तुच्छतापूर्वक किसी को पुकारने या संबोधित करने का शब्द। २. तुच्छ व्यक्ति।

पिंग—वि० [सं०√पिञ्ज् (वर्ण)+अच्, कुत्व] १. पीलापन लिये हुए भूरा। सुंघनी के रंग का। २. भूरापन लिये हुए लाल। तामड़ा।
पुं० १ भैंसा। २. चूहा। ३. हरताल।

पिंग-कपिशा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] गुबरैले के आकार का एक कीड़ा जिसका रंग काला या तामड़ा होता है। तेलपायी। तेलचटा।

पिंग-चक्षु (स्)—वि० [ब० स०] जिसकी आँखें भूरे या तामड़े रंग की हों।
पुं० नक्र या नाक नामक जल-जंतु।

पिंगल—वि० [सं० पिंग+लच्] १. पीला। २. भूरापन लिये हुए पीला या लाल। तामड़ा
पुं० १. एक प्राचीन मुनि या आचार्य जिन्होंने छंदः सूत्र की रचना की थी। नागमुनि। २. उक्त मुनि का बनाया हुआ छंद शास्त्र। ३. किसी प्रकार का भाषा या छन्द शास्त्र। (प्रॉसोडी)
मुहा०—**(किसी को) पिंगल पढ़ाना**=अपना दोष छिपाने या मतलब निकालने के लिए उलटी-सीधी बातें समझाना। **पिंगल साधना**=(क) टालमटोल करना। (ख) नखरा करना। इतराना।
४. साठ संवत्सरों में से ५१वाँ संवत्सर। ५. संगीत में, सवेरे के समय गाया जानेवाला एक राग जो भैरव राग का पुत्र कहा गया है। ६. सूर्य का एक गण या पारिपार्श्वक। ७. एक यक्ष का नाम। ८. नौ निधियों में से एक। ९. अग्नि। आग। १०. नकुल। नेवला। ११. बन्दर। १२. एक प्रकार का यज्ञ। १३. एक प्राचीन पर्वत। १४. पुराणानुसार भारत के उत्तर-पश्चिम का देश। १५. हरताल। १६. उल्लू। १७. पीपल। १८. उशीर। खस। १९. रास्ना। २०. एक प्रकार का फनदार साँप। २१. एक प्रकार का स्थावर विष। † २२. ब्रजभाषा।
विशेष—किसी समय ब्रजभाषा में ही अधिकतर काव्यों की रचना होती थी; और वही काव्य की मुख्य भाषा मानी जाती थी; इसी से उसका यह नाम पड़ा था।
†पुं०=पंगुल।

पिंगला—स्त्री० [सं० पिंगल+टाप्] १. हठयोग में, सुषुम्ना नाड़ी के बाईं ओर स्थित एक नाड़ी जिससे दक्षिण नासा-पुट का श्वास चलता है। इसमें सूर्य का वास माना गया है। इसलिए इसे सूर्यनाड़ी भी कहते हैं। यह स्वभाव से उष्ण है। इसके अधिष्ठाता देवता विष्णु माने जाते हैं। २. लक्ष्मी। ३. दक्षिण दिशा के दिग्गज की पत्नी। ४. गोरोचन। ५. एक प्रकार की चिड़िया। ६. शीशम का पेड़। ७. राजनीति। ८. भागवत के अनुसार एक प्रसिद्ध भगवद् भक्त वेश्या।

पिंगलाक्ष—पुं० [सं० पिंगल+अक्षि, ब० स०, षच्] शिव।

पिंगलिका—स्त्री० [सं० पिंगल+कन्+टाप्, इत्व] १. एक प्रकार का बगला। २. एक प्रकार का उल्लू। ३. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार की मक्खी जिसके काटने से जलन और सूजन होती है।

पिंगलित—वि० [सं० पिंगल+इतच्] ललाई लिये हुए भूरे रंग का।

पिंग-सार—पुं० [ब० स०] हरताल।

पिंग-स्फटिक—पुं० [कर्म० स०] गोमेदक मणि।

पिंगा—स्त्री० [सं० पिंग+टाप्] १. गोरोचन। २. हल्दी। ३. वंशलोचन। ४. हींग। ५. एक रक्त-वाहिनी नाड़ी। ६. चंडिका देवी।
वि० १. कोमल। नाजुक। २. कमजोर। दुर्बल। ३. दुबला-पतला। ४. टेढ़े-मेढ़े अंगोंवाला।
पुं० वह व्यक्ति जिसके पैर टेढ़े हों।

पिंगाक्ष—वि० [पिंग-अक्षि, ब० स०, षच्] [स्त्री० पिंगाक्षी] जिसकी आँखें कुछ ललाई लिये हुए भूरे रंग की हों।
पुं० १. शिव। २. नाक या कुंभीर नामक जल-जन्तु। ३. बिड़ाल। बिल्ला।

पिंगाक्षी—स्त्री० [सं० पिंगाक्ष+ङीप्] कुमार की अनुचरी एक मातृका।

पिंगाश—पुं० [सं० पिंग√अश् (व्याप्ति)+अण्] १. एक प्रकार की मछली जिसे बंगाल में पांगाश कहते हैं। २. गाँव का प्रधान या मुखिया। ३. खरा या शुद्ध सोना।

पिंगाशी—स्त्री० [सं० पिंगाश+ङीष्] नील का पौधा।

पिंगिमा (मन्)—स्त्री० [सं० पिंग+इमनिच्] ऐसा भूरापन जिसमें कुछ लाली भी हो।

पिंगी—स्त्री० [सं० पिंग+ङीष्] १. शमी का पेड़। २. चुहिया।

पिंगूरा†—पुं० [हिं० पेंग] छोटा पालना।

पिंगेक्षण—वि० [पिंग-ईक्षण, ब० स०]=पिंगाक्ष।
पुं० शिव।

पिंगेश—पुं० [पिंग-ईश, कर्म० स०] अग्नि का एक नाम।

पिच्छ—पुं० =पिच्छ।

पिंज—वि० [सं०√पिज्+घञ्+अच्] विकल। व्याकुल।
पुं० [√पिज्+घञ्] १. बल। शक्ति। २. वध। हत्या। ३. एक प्रकार का कपूर। ४. चन्द्रमा। ५. समूह।

पिंजक—पुं० [सं०√पिञ्ज्+ण्वुल्—अक] धुनिया।

पिंजट—पुं० [सं०√पिञ्ज्+अटन्] आँख में से निकलनेवाला एक तरह का गाढ़ा सफेद मल या कीचड़।

पिंजड़ा—पुं०=पिंजरा।

पिंजन—पुं० [सं०√पिञ्ज्+ल्युट्—अन] १. रूई धुनने की धुनकी। २. रूई धुनने की क्रिया, ढंग या भाव।

पिंजना—स० [सं० पिंजन] धुनकी से रूई धुनना।

पिंजर—वि० [सं०√पिञ्ज्+रच्] १. ललाई लिये हुए पीले रंग का। २. पीला। ३. सुनहला।
पुं० १. पिंजरा। २. हड्डियों की ठठरी। पंजर। ३. हरताल। ४. सोना। ५. नागकेसर। ६. लाल रंग का वह फोड़ा जिसमें कुछ भूरापन भी हो।

पिंजरक—पुं० [सं० पिञ्जर+कन्] हरताल।

पिंजरा—पुं० [सं० पंजर] १. धातु, बाँस आदि की तीलियों का बना हुआ बक्स की तरह का वह आवान जिसमें पक्षी, पशु आदि बंद करके रखे जाते हैं। २. लाक्षणिक अर्थ में, ऐसा स्थान जहाँ से किसी का बाहर निकलना प्रायः असंभव या दुष्कर हो।

पिंजरापोल—पुं० हिं० पिंजरा+पोल=फाटक] १. पशुशाला। २. गोशाला।

पिंजरिक—पुं० [सं०] पुरानी चाल का एक तरह का बाजा।

पिंजरित—भू० कृ० [सं० पिंजर+इतच्] पीले रंग का या पीले रंग में रंगा हुआ।

पिंजल—वि० [सं०√पिञ्ज्+कलच्] १. दुःख, भय संकट आदि के कारण जिसका वर्ण पीला पड़ गया हो। २. दुःखी। ३. व्याकुल। ४. बहुत अधिक आतंकित।

पुं० १. कुशा। २. हरताल। ३. जाल-बेंत।

पिंजली—स्त्री० [सं० पिंजल+ङीप्] एक में बँधी हुई कुश घास की दो नुकीली पत्तियाँ जिनका उपयोग यज्ञ में होता था।

पिंजा—स्त्री० [सं० पिंज+टाप्] १. हलदी। २. रूई।

†पुं०=पिंजारा (धुनिया)।

पिंजारा—पुं० [सं० पिंजन] रूई धुननेवाला कारीगर। धुनिया।

पिंजारी—स्त्री० [देश०] त्रायमाणा नाम की लता। गुरबियानी।

पिंजाल—पुं० [सं०√पिञ्ज्+आलच्] सोना। स्वर्ण।

पिंजिका—स्त्री० [सं०√पिञ्ज्+ण्वुल्—अक+टाप्, इत्व] धुनी हुई रूई की पूनी जो सूत कातने के काम आती है।

पिंजियारा—पुं० [सं० पिंजिका=रूई की बत्ती] १. रूई ओटनेवाला। २. रूई धुननेवाला। धुनिया।

पिंजूष—पुं० [सं०√पिञ्ज्+ऊषन्] कान की मैल। खूँट।

पिंड—वि० [सं०√पिण्ड् (ढेर लगाना)+अच्] [स्त्री० पिंडी] १. घन। ठोस। २. गुथा हुआ। ३. घना।

पुं० १. घनी या ठोस चीज का छोटा और प्रायः गोलाकार खंड या टुकड़ा। ढेला या लोंदा। जैसे—गुड़, धातु या मिट्टी का पिंड। २. कोई गोलाकार पदार्थ। जैसे—नेत्र-पिंड। ३. भोजन का वह अंश जो प्रायः गोलाकार रूप में लाकर मुँह में डाला जाय। कौर। ग्रास। ४. जौ के आटे, भात आदि का बनाया हुआ वह गोलाकार खंड जो श्राद्ध में पितरों के उद्देश्य से वेदी आदि पर रखा जाता है।

पद—**पिंड-दान**। (देखें)

मुहा०—(किसी को) **पिंड देना**=कर्मकांड की विधि के अनुसार किसी मृत व्यक्ति के उद्देश्य से उसका श्राद्ध करना।

५. ढेर। राशि। ६. खाद्य पदार्थ। आहार। भोजन। ७. जीविका या उसके निर्वाह का साधन। ८. भिक्षुकों को दिया जानेवाला दान। खैरात। ९. मांस। गोश्त। १०. गर्भ की आरंभिक अवस्था। भ्रूण। ११. मनुष्य की काया। देह। बदन। शरीर।

पद—**पिंड-रोग**। (देखें)

मुहा०—**(किसी का) पिंड छोड़ना**=जिसके पीछे पड़े हों, उसका पीछा छोड़ना। तंग या परेशान करने से बाज आना। जैसे—(क) वह जब तक उनका सर्वस्व नष्ट न कर देगा, तब तक उनका पिंड नहीं छोड़ेगा। (ख) आज महीने भर बाद बुखार ने पिंड छोड़ा है। **(किसी के) पिंड पड़ना**=किसी प्रकार का स्वार्थ सिद्ध करने के लिए किसी के पीछे पड़ना। **(स्त्री के उदर में) पिंड पड़ना**=स्त्री का गर्भधारण करना। उदा०—पिंड परे तउ प्रीति न तोरउ।—कबीर।

१२. जीव। प्राणी। १३. पैर की पिंडली। १४. तबले आदि के मुँह पर का चमड़ा। १५. पदार्थ। वस्तु। १६. घर का वह विशिष्ट भाग जो वास्तु-शास्त्र के नियमों के अनुसार उसे चौकोर बनाने के लिए बीच में स्थिर किया जाता है। १७. मकान के दरवाजे के सामने का छायादार स्थान। १८. जलाने का कोई सुगंधित पदार्थ। जैसे—धूप, राल आदि। १९. भूमिति में, किसी घन पदार्थ की घनता या मोटाई अथवा उसका परिमाण। २० गणित में त्रिज्या का चौबीसवाँ अंश या भाग। २१. बल। शक्ति।

पुं० [सं० पांडु] पांडु नामक रोग जिसमें सारा शरीर पीला हो जाता है। पीलिया। उदा०—पायाँ ज्यूँ पीली पड़ी रे, लोग कहैं पिंड रोग।—मीराँ।

पिंडक—पुं० [सं० पिण्ड√कै (चमकना)+क] १. गोलाकार पिंड। गोला। २. पिंडालू। ३. लोबान। ४. बोल। मुरमक्की। ५. गिलट। ६. शिला रस। ७. गाजर।

पिंड-कंद—पुं० [मध्य० स०] पिंडालू नामक कंद।

पिंडकर—पुं० [सं०] प्राचीन भारत में, ऐसा कर जिसकी राशि एक बार निश्चित कर दी जाती थी और जिसके मान में सहसा कोई परिवर्तन नहीं होता था।

पिंड-कर्कटी—स्त्री० [मध्य० स०] एक प्रकार का पेठा।

पिंडका—स्त्री० [सं० पिंडक+टाप्] छोटी माता या चेचक नाम का रोग।

पिंडकी—†स्त्री०=पंडुक।

पिंडखजूर—स्त्री० [सं० पिंडखर्जूर] १. खजूर की जाति का एक वृक्ष जिसके फल बहुत मीठे होते हैं। २. उक्त पेड़ के फल।

पिंड-खर्जूर—पुं० [मध्य० स०]=पिंड खजूर।

पिंड-खर्जूरी (रिका)—स्त्री० [सं० पिंडखजूर+ङीष्]=पिंड खजूर।

पिंडगोस— पुं० [सं० गो√सन् (अलग करना)+ड, पिण्ड-गोस, कर्म० स०] १. गंधरस। २. बोल।

पिंडज—पुं० [सं० पिंड√जन् (उत्पन्न होना)+ड] प्राणी के पिंड या शरीर अर्थात् गर्भ से उत्पन्न होनेवाला जीव। जैसे—मनुष्य, घोड़ा, गाय आदि। (अंडज और स्वेदज से भिन्न)

पिंडत†—पुं०=पंडित। उदा०—छाछि छाँड़ि पिंडता पीवीं।—गोरख-नाथ।

पिंड-तैल (क)—पुं० [ब० स०, कप्] १. कुछ वृक्षों से निकलनेवाला एक तरह का गंध-द्रव्य जिसे लोबान कहते हैं। २. शिलारस।

पिंडद—पुं० [सं० पिंड√दा (देना)+क] पिंडा देने अर्थात् मृतक का श्राद्ध करनेवाला व्यक्ति। वंशज। सन्तान।

पिंड-दान—पुं० [ष० त०] कर्मकाण्ड के अनुसार पितरों को पिंड देने का कर्म जो श्राद्ध में किया जाता है।

पिंडन—पुं० [सं०√पिण्ड्+ल्युट्—अन] १. पिण्ड अर्थात् गोलाकार वस्तुएँ बनाना। २. बाँध। ३. टीला।

पिंड-पात—पुं० [ष० त०] १. पिंड-दान। २. भीख माँगने के लिए इधर-उधर घूमना। ३. भिक्षापात्र में मिली हुई भिक्षा।

पिंडपातिक—पुं० [सं० पिंडपात+ठन्—इक] भिखमंगा। भिक्षुक।

पिंड-पाद—पुं० [ब० स०] हाथी।

पिंड-पुष्प—पुं० [ब० स०] १. अशोक का पेड़ और उसका फूल। २. अनार का पौधा। ३. जपा का फूल। ४. तगर का पुष्प। ५. कमल।

पिंड-पुष्पक—पुं० [सं० पिंडपुष्प+कन्] बथुआ (साग)।

पिंड-फल—पुं० [ब० स०] कद्दू।

पिंड-फला—स्त्री० [ब० स०, टाप्] तितलौकी।

पिंड-बीजक—पुं० [ब० स०, कप्] कनेर का पेड़।

पिंडभाक् (ज्)—पुं० [पिंड√भज् (प्राप्त करना)+ण्वि] पिंड पाने का अधिकारी अर्थात् पितर।

पिंडभृति—स्त्री० [ष० त०] जीवन निर्वाह के साधन। जीविका।

पिंड-मुस्ता—स्त्री० [कर्म० स०] नागरमोथा।

पिंड-मूल—पुं० [ब० स०] १. गाजर। २. शलजम।

पिंडरी†—स्त्री०=पिंडली।

पिंड-रोग—पुं० [कर्म० स०] १. ऐसा रोग जिसने शरीर घर कर लिया हो और जो जल्दी छूट न सकता हो। २. कोढ़।

पिंडरोगी (गिन्)—वि० [सं० पिंड रोग+इनि] जो प्रायः सदा रोगी रहता हो और जल्दी अच्छा न हो सकता हो।

पिंडली—स्त्री० [सं० पिंड] घुटने और एड़ी के बीच का वह मांसल स्थान जो पैर में पीछे की ओर होता है।

मुहा०—**पिंडली हिलना**=(क) पैर काँपना या थर्राना। (ख) भय से कँपकँपी होना।

पिंड-लेप—पुं० [ष० त०] पिंड का वह अंश जो पिंड-दान के समय हाथों में चिपक जाता है तथा जिसके वृद्ध प्रपितामह आदि तीन पितर अधिकारी होते हैं।

पिंड-लोप—पुं० [ष० त०] १. पिंडदान का न किया जाना। २. पिंड देनेवाले वंशजों का लोप। निर्वंश होना।

पिंडवाही†—स्त्री० [?] पुरानी चाल का एक प्रकार का कपड़ा।

पिंड-वेणु—पुं० [कर्म० स०] एक तरह का बाँस।

पिंड-शर्करा—स्त्री० [मध्य० स०] ज्वार से बनी हुई चीनी या शर्करा।

पिंड-संबंध—पुं० [तृ० त०] १. जन्य या जनक का सम्बन्ध। २. पिंड-दाता या पिंड-भोक्ता होने का संबंध।

पिंडस—पुं० [सं० पिंड√सन् (देना)+ड] भिखमंगा।

पिंडस्थ—वि० [सं० पिंड√स्था (ठहरना)+क] १. जो पिंड या शरीर में स्थित हो। गर्भ में स्थित। २. जो पिंड या लौंदे के रूप में आया या लाया गया हो। ३. किसी में मिलाया हुआ। मिश्रित।

पिंड-स्वेद—पुं० [मध्य० स०] औषध का वह लेप जो गरम करके फोड़ों आदि पर लगाया जाता है। पुल्टिस।

पिंडा—पुं० [सं० पिंड] [स्त्री० अल्पा० पिंडी] १. ठोस या गीली वस्तु का टुकड़ा। पिंड। २. गोल-मटोल टुकड़ा। लोंदा। जैसे—जौ के आटे, भात आदि का पिंडा जो श्राद्ध में पितरों के उद्देश्य से वेदी पर रखा जाता है।

क्रि० प्र०—देना।

मुहा०—**पिंडा-पानी देना**=मृतक के उद्देश्य से श्राद्ध और तर्पण करना। **पिंडा पारना**=मृतक के उद्देश्य से पिंड-दान करना।

४. देह। शरीर।

मुहा०—**पिंडा धोना**=स्नान करना। नहाना। **पिंडा फीका होना**=जी अच्छा न होना। तबियत खराब होना।

५. स्त्रियों की भग। योनि।

मुहा०—**(किसी को) पिंडा दिखाना या देना**=स्त्री का पर-पुरुष से संभोग कराना।

स्त्री० [सं० पिंड-टाप्] १. एक प्रकार की कस्तूरी। २. वंशपत्री। ३. इस्पात। ४. हलदी।

पिंडाकार—वि० [पिंड-आकार, ब० स०] पिंड अर्थात् प्रायः गोलाकार बँधे लौंदे के आकार का। गोलाकार।

पिंडात—पुं० [सं० पिंड√अत् (गति)+अच्] शिलारस।

पिंडाभ—पुं० [सं० पिंड-आ√भा (दीप्ति)+क] लोबान।

पिंडाभ्र—पुं० [सं० आभ्र, अभ्र+अण्,-पिंड-आभ्र, उपमि० स०] सफेद और चमकीला पिंड अर्थात् ओला।

पिंडायस—पुं० [पिंड-आयस, कर्म० स०] इस्पात।

पिंडार—पुं० [सं० पिंड√ऋ (गति)+अण्] १. एक प्रकार का फल। २. क्षपणक। ३. भैंस का चरवाहा। गोप। ४. विकंकत का पेड़।

पिंडारक—पुं० [सं० पिंडार+कन्] १. एक नाग का नाम। २. वसुदेव और रोहिणी का एक पुत्र। ३. एक पवित्र नद। ४. गुजरात देश में समुद्र-तट का एक प्राचीन तीर्थ।

पिंडारा—पुं० [सं० पिंडार] एक प्रकार का शाक जो वैद्यक में शीतल और पित्तनाशक माना गया है।

†पुं०=पिंडारी।

पिंडारी—पुं० [देश०] दक्षिण भारत की एक जाति जो पहले कर्णाट, महाराष्ट्र आदि में बसकर खेती-बारी करती थी, पर पीछे मध्यप्रदेश और उसके आस-पास के स्थानों में लूटमार करने लगी और मुसलमान हो गई थी।

पिंडालक्तक—पुं० [पिंड-अलक्तक, कर्म० स०] महावर।

पिंडालु—पुं० [पिंड-आलु, उपमि० स०]=पिंडालू।

पिंडालू—पुं० [सं० पिंड+हिं० आलू] १. एक प्रकार का कंद या शकरकन्द जिसके ऊपर कड़े सूत की तरह के रेशे होते हैं। सुथनी। पिंडिया। २. एक प्रकार का रतालू या शफतालू।

पिंडाशक—पुं० [पिंड-आशक, ष० त०] भिक्षुक।

पिंडाशी (शिन्)—पुं० [सं० पिंड√अश्+णिनि]=पिंडाशक।

पिंडाह्वा—स्त्री० [सं० पिंड-आ√ह्वे (स्पर्द्धा करना)+क+टाप्] नाड़ी हींग।

पिंडि—स्त्री० [सं०√पिंड्+इन्]=पिंडी।

पिंडिका—स्त्री० [सं० पिंड+ङीष्+कन्+टाप्, ह्रस्व] १. छोटा पिंड। पिंडी। २. किसी चीज का छोटा ढेला या ढोंका। ३. पहिए के बीच का वह गोल भाग जिसमें धुरी पहिनाई रहती है। चक्रनाभि। ४. पिंडली। ५. इमली। ६. छोटा शिव-लिंग। ७. वह छोटी गोलाकार वेदी जिस पर देव-मूर्ति स्थापित की जाती है।

पिंडित—भू० कृ० [सं०√पिंड+क्त] १. पिंड के रूप में बँधा या बनाया हुआ। २. सूत की पिंडी की तरह लपेटा हुआ। ३. गुणा किया हुआ। गुणित।

पुं० १. शिलारस। २. काँसा। ३. गणित या उसकी क्रिया।

पिंडितार्थ—पुं० [पिंडित-अर्थ, कर्म० स०] कथन आदि का सारांश।

पिंडिनी—स्त्री० [सं०√पिंड्+णिनि+ङीष्] अपराजिता लता।

पिंडिया†—स्त्री०=पिंडी (गुड़, रस्सी आदि की)।

पिंडिल—पुं० [सं० पिंड+इलच्] १. सेतु। पुल। २. गणक।

वि० बड़ी-बड़ी पिंडलियोंवाला।

पिंडिला—स्त्री० [सं० पिंडिल+नप्] ककड़ी।

पिंडी—स्त्री० [सं० पिंड+अच्+ङीष्] १. ठोस या गीली वस्तु का छोटा गोल-मटोल टुकड़ा। लुगदी। जैसे—आटे या गुड़ की पिंडी। २. डोरी या सूत जो उक्त आकार या रूप में लपेटा हुआ हो। जैसे—रस्सी की पिंडी।

क्रि० प्र०—बनाना।—बाँधना।

३. कद्दू। घीया। ४. पिंडखजूर। ५. एक प्रकार का तगर। ६. बलि चढ़ाने की वेदी। ७. दे० 'पिंडिका'।

पिंडीकरण—पुं० [सं० पिंड+च्वि, ईत्व,पिंडी,√कृ (करना)+ल्युट्—अन] किसी वस्तु को पिंड का रूप देना। पिंड अर्थात् गोलाकार वस्तुएँ बनाने की क्रिया।

पिंडीतक—पुं० [सं० पिंडी√तक् (अनुकरण करता)+अच्] १. मैनफल। २. एक प्रकार का तगर जिसे हजारा तगर भी कहते हैं।

पिंडीपुष्प—पुं० [ब० स०] अशोक वृक्ष।

पिंडीर—पुं० [सं० पिंड√ईर् (प्रेरित करना)+अण्] १. अनार। २. समुद्रफेन।

पिंडी-लेप—पुं० [ष० त०] एक तरह का उबटन।

पिंडी-शूर—पुं० [स० त०] १. घर ही में बैठे-बैठे बहादुरी दिखलाने-वाला। २. बहुत अधिक खानेवाला। पेटू।

पिंडुरी (ली)स्त्री०=पिंडली।

पिंडूक—पुं० [?] १. पंडुक। २. उल्लू।

पिंडोदक क्रिया—स्त्री० [सं० पिंड-उदक, द्व० स०], पिंडोदकक्रिया, ष० त०] पूर्वजों के उद्देश्यों से किया जानेवाला पिंडदान और तर्पण।

पिंडोपजीवी (विन्)—पुं० [सं० पिंड-उप√जीव् (जीना)+णिनि] भिखमंगा।

पिंडोल—स्त्री० [सं० पांडु] पीले रंग की मिट्टी। पोतनी मिट्टी।

पिंडोलि—स्त्री० [सं०] १. मुँह से गिरे हुए अन्न के छोटे-छोटे टुकड़े। २. जूठन।

पिंभ†—पुं०=प्रेम।

पिंशन—स्त्री०=पेनशन।

पिंसी—स्त्री०= पीनस (रोग)।

पिअ†—पुं० [सं० प्रिय] १. स्त्री का पति। २. प्रेमी।

वि०=प्रिय।

पिअना†—स०=पीना।

पिअर†—वि०=पीला।

पुं०=पीहर।

पिअरवा—वि०=प्यारा।

†पुं०=पिअ (पति या प्रेमी)।

पिअरा†—वि०=पीला।

पिअराई†—स्त्री० [हिं० पिअरा=पीला] पीलापन।

पिअरिया—पुं० [हिं० पिअर=पीला+इया (प्रत्य०)] पीले रंग का बैल जो बहुत मजबूत और तेज चलनेवाला होता है।

स्त्री०=पिअरी (धोती या साड़ी)।

वि०=प्यारी (प्रिय)।

पिअरी†—स्त्री० [हिं० पीअर=पीला] १. हल्दी के रंग से रँगी हुई वह धोती जो विवाह आदि शुभ अवसरों पर वर या वधू को पहनाई जाती है। २. उक्त प्रकार की वह धोती जो प्रायः गंगा या किसी देवी को चढ़ाई जाती है।

क्रि० प्र०—चढ़ाना।

वि० हिं० 'पिअरा' (पीला) का स्त्री०।

पिआज†—पुं०=प्याज।

पिआना†—स०=पिलाना।

पिआनो—पुं०=पियानो (बाजा)।

पिआर†—पुं०=प्यार।

पिआरा†—वि०=प्यारा।

पिआस—स्त्री०=प्यास।

पिआसा—वि०=प्यासा।

पिउ†—पुं० [सं० प्रिय] १. प्रियतम। २. पति। ३. ईश्वर।

पिउनी†—स्त्री०=पूनी (रूई की)।

पिक—पुं० [सं० अपि√कै (शब्द करना)+क, अकार-लोप] [स्त्री० पिकी] कोयल। कोकिला।

पिक-प्रिया—स्त्री० [ष० त०] बड़ा जामुन।

पिक-बंधु—पुं० [ष० त०] आम का वृक्ष।

पिक-भक्ष्या—स्त्री० [ष० त०] भूमि जंबू। भू-जामुन।

पिक-राग—पुं० [ब० स०] आम का वृक्ष।

पिक-वल्लभ—पुं० [ष० त०] आम का वृक्ष।

पिकांग—पुं० [पिक-अंग, ब० स०] चातक (पक्षी)।

पिकाक्ष—पुं० [ब० स०, अच्] १. रोचनी वृक्ष। २. तालमखाना।

वि० कोयल जैसी आँखोंवाला।

पिकानंद—पुं० [सं० पिक-आ√नन्द् (प्रसन्न होना)+अण्] वसन्त ऋतु।

पिकी—स्त्री० [सं० पिक+ङीष्] मादा कोयल।

पिकेक्षणा—स्त्री० [पिक-ईक्षण, ब० स०,+अच्+टाप्] तालमखाना।

पिक्क—पुं० [सं० पिक√कै+क, पृषो० सिद्धि] १. हाथी का बच्चा। २. ऐसा हाथी जो अवस्था में बीस वर्ष का हो। ३. मोती की एक तौल।

पिघरना†—अ०=पिघलना।

पिघलना—अ० [सं० प्र०+गलन] १. ताप पाकर किसी घन या ठोस पदार्थ का द्रव रूप में आना या होना। जैसे—घी या मोम पिघलना। २. लाक्षणिक अर्थ में, कठोर चित्त का किसी प्रकार के प्रभाव के कारण कोमल या द्रवित होना। पसीजना। जैसे—तुम लाख रोओ, पर वह जल्दी पिघलनेवाला नहीं है।

पिघलाना—स० [हिं० पिघलना का स०]१. किसी घन या ठोस पदार्थ को पिघलने में प्रवृत्त करना। २. किसी के हृदय की कठोरता दूर करके उसे कोमल या द्रवित करना।

पिचंड—पुं० [सं० अपि√चम् (खाना)+ड, अकार-लोप] १. पेट। २. किसी जानवर का कोई अंग।

वि० १. उदर या पेट-संबंधी। २. बहुत अधिक खानेवाला।

पिचंडिल—वि० [सं० पिचंड+इलच्] बड़ी तोंदवाला। तोंदल।

पिच† —स्त्री० =पीच।

पिचक—स्त्री० [हिं० पिचकना] १. पिचकने की क्रिया या भाव। २. पिचके हुए होने की अवस्था।
स्त्री० ३.=पिचकारी।

पिचकना—अ० [सं० पिच्च=दबाना] उभरे या फूले हुए अंग के उभार या फूलन का कम होना। जैसे—गिरने के कारण लोटे का पिचकना, बीमारी के कारण गाल पिचकना।

पिचकवाना—स० [हिं० पिचकाना का प्रे०] पिचकाने का काम दूसरे से कराना।

पिचका—पुं० [हिं० पिचकना] बड़ी पिचकारी।

पिचकाना—स० [हिं० पिचकना का प्रे०] ऐसा काम करना जिससे उभरी या फूली हुई चीज का तल दबता या पिचकता हो। पिचकने में प्रवृत्त करना।

पिचकारी—स्त्री० [हिं० पिचकना] १. नली के आकार का धातु का बना हुआ एक उपकरण जिसके मुँह पर एक या अनेक ऐसे छोटे-छोटे छेद होते हैं, जिनके मार्ग से नली में भरा हुआ तरल पदार्थ दबाव से धार या फुहार के रूप में दूसरों पर या दूर तक छिड़का या फेंका जाता है।
मुहा०—पिचकारी चलाना, छोड़ना या मारना=पिचकारी में रंग, गुलाब-जल आदि भरकर दूसरों पर छोड़ना। **पिचकारी भरना**=पिचकारी की नली का डाट इस प्रकार ऊपर खींचना कि उसमें रंग या और कोई तरल पदार्थ भर जाय।
२. पिचकारी में से निकलनेवाली तरल पदार्थ की धार। ३. किसी चीज में से जोर से निकलनेवाली तरल पदार्थ की धार।
मुहा०—(किसी चीज में से) पिचकारी छूटना या निकलना=किसी चीज या जगह में से किसी तरल पदार्थ का बहुत वेग से बाहर निकलना। जैसे—सिर से लहू की पिचकारी छूटने लगी।
४. चिकित्सा-क्षेत्र में, एक तरह की छोटी पिचकारी जिसके अगले भाग में खोखली सूई लगी रहती है और जिसे चुभोकर शरीर की नसों या रक्त में दवाएँ पहुँचाई जाती हैं। सूई। वस्ति। (सीरिंज)

पिचकी†—स्त्री० =पिचकारी।

पिचपिचा† —वि० [हिं० पिचकना] १. जो पिचकता रहता हो। २. दबा हुआ और गुलगुला।
† वि०=चिपचिपा।

पिचपिचाना—अ० [अनु०] [भाव० पिचपिचाहट] किसी छेद में तरल पदार्थ का पिचपिच शब्द करते हुए रसना या निकलना। जैसे—फोड़े का चिपचिपाना।
अ०=पिचपिचाना।

पिचरिया—स्त्री० [हिं० पिचलना] छोटी कोठीवाला एक तरह का कोल्हू।

पिचलना—स०=कुचलना।

पिचवय—पुं० [सं० पिचव्य] १. कपास का पौधा। २. वटवृक्ष। (डिं०)

पिचास†—पुं०=पिशाच।
वि०=पचास।

पिचु—पुं० [सं० पृषो०] १. रूई। २. एक प्रकार का कोढ़। ३. एक पुरानी तौल जो दो तोले के बराबर होती थी। ४. एक असुर का नाम। ५. एक तरह का अनाज।

पिचुक—पुं० [सं० पृषो०] मैनफल का वृक्ष।

पिचुकिया†—स्त्री० [हिं० पिचकना] १. छोटी पिचकारी। २. वह गुझिया (पकवान) जिसमें केवल गुड़ और सोंठ भरी जाती है।

पिचुक्का†—पुं० [हिं० पिचकना] १. पिचकारी। २. गोलगप्पा।

पिचु-तूल—पुं० [सं०] कपास की रूई।

पिचुमंद—पुं०=पिचुमर्द।

पिचुमर्द—पुं० [सं० पिचु√मृद् (चूर्ण करना)+अण्] नीम का पेड़।

पिचुल—पुं० [सं० पिचु√ला (लेना)+क] १. कपास की रूई। २. झाऊ का पेड़। (डिं०) ३. समुद्रफल। ४. गोताखोर।

पिचू—पुं० [सं० पिचु] १६ माशे की एक पुरानी तौल।

पिचुका†—पुं०=पिचुक्का।

पिचैत†—पुं० [?] पहलवान।

पिचोतरसौ—पुं० [सं० पंचोत्तर शत] एक सौ पाँच की संख्या।
वि० जो गिनती में सौ से पाँच ऊपर हो।

पिच्चट—वि० [सं०√पिच्च् (काटना)+अटन्] दबाकर चिपटा किया हुआ। निचोड़ा हुआ।
पुं० १. सीसा। २. राँगा। ३. आँख का एक रोग।

पिच्चर—पुं०=पिच्चट।

पिच्चा—स्त्री० [सं०√पिच्च्+अ+टाप्] एक निश्चित तौल के १६ मोतियों की माला।
वि० [हिं० पिचकना] [स्त्री० पिच्ची] पिचका हुआ। दबे हुए तल-वाला।

पिच्चिट—पुं० [सं०] एक तरह का विषैला कीड़ा।

पिच्चित—पुं०=पिच्चिट।
वि० [हिं० पिचकना] पिचका हुआ।

पिच्ची—स्त्री०=पच्ची।
वि० पिच्चित।

पिच्छ—पुं० [सं०√पिच्छ् (बाधा डालना)+अच्] किसी पशु की ऐसी दुम या पूँछ जिस पर बाल हों। लांगूल। २. मोर की दुम या पूँछ। ३. मोर की चोटी। ४. बाण में लगाया जानेवाला मोर आदि का पंख। ५. सेमल का गोंद। मोचरस।

पिच्छक—पुं० [सं० पिच्छ+कन्] १. पूँछ। २. पूँछ पर का पंख। ३. सेमल का गोंद। मोचरस।

पिच्छन—पुं० [सं०√पिच्छ्+ल्युट्—अन] १. किसी वस्तु को दबाकर चिपटा करने की क्रिया। २. अत्यन्त पीड़न।

पिच्छ-पाद—पुं० [ब० स०] घोड़े के पैर में होनेवाला एक तरह का रोग।

पिच्छपादी (दिन्)—वि० [सं० पिच्छपाद+इनि] १. पिच्छपाद रोग-संबंधी। २. पिच्छपाद रोग से पीड़ित।

पिच्छ-बाण—पुं० [ब० स०] बाज (पक्षी)।

पिच्छ-भार—पुं० [ब० स०] मोर की पूँछ।

पिच्छल—वि० [सं०] जिस पर पैर फिसलता हो। फिसलनेवाला।

पुं० [सं०√पिच्छ्+कलच्] १. मोचरस। २. आकाशबेल। ३. शीशम का पेड़। ४. वासुकि के वंश का एक सर्प।
वि० [हिं० पिछला] १. पिछला। २. दौड़, प्रतियोगिता, होड़ आदि में जो पीछे रह गया हो।

पिच्छलपाई—स्त्री० [हिं० पीछा+पाई=पैरवाली] १. चुड़ैल या डाइन।
विशेष—लोगों की धारणा है कि चुड़ैलों के पैरों में एड़ी आगे और पंजे पीछे की ओर होते हैं।
२. टोना-टोटका करनेवाली स्त्री।

पिच्छा—स्त्री० [सं० पिच्छ+टाप्] १. सेमल का गोंद। मोचरस। २. सुपारी का पेड़। ३. शीशम। ४. नारंगी का पेड़। ५. निर्मली का पेड़। ६. आकाशबेल। ७. पिच्छतलापाद नामक रोग। ८. पकाये हुए चावलों का माँड़। ९. पिंडली।

पिच्छिका—स्त्री० [सं० पिच्छ+कन्—टाप्, इत्व] १. चँवर। चामर। मोरछल। २. ऊन की वह चँवर जो जैन साधु अपने साथ रखते हैं।

पिच्छितिका—स्त्री० [सं० पृषो०] शीशम का पेड़।

पिच्छिल—वि० [सं० पिच्छा+इलच्] [स्त्री० पिच्छिल] १. सरस और स्निग्ध। गीला और चिकना। २. इतना या ऐसा चिकना जिस पर पैर फिसलता हो या फिसल सकता हो। ३. (पक्षी) जिसके सिर पर चूड़ा या चोटी हो। ४. (वैद्यक में, पदार्थ) जो खट्टा, कोमल फूला हुआ और कफकारी हो।
पुं० १. लिसोड़ा। २. सरस और स्निग्ध व्यंजन। सालन। जैसे—कढ़ी, दाल, रसेदार तरकारी आदि।

पिच्छिलक—पुं० [सं० पिच्छिल+कन्] १. मोचरस। २. धामिन वृक्ष।

पिच्छिलच्छदा—स्त्री० [ब० स०] १. बैर वृक्ष। २. पोई का साग।

पिच्छिल-त्वक्—स्त्री० [ब० स०] १. नारंगी का पेड़। २. धामिन-वृक्ष।

पिच्छिल-दला—स्त्री० [ब० स०]=पिच्छिलच्छदा।

पिच्छिल-वस्ति—स्त्री० [सं० कर्म० स०] वैद्यक में, निरूढ़वस्ति का एक भेद।

पिच्छिल-सार—पुं० [ब० स०] सेमल का गोंद। मोचरस।

पिच्छिला—स्त्री० [सं० पिच्छिल+टाप्] १. पोई। २. शीशम। ३. सेमल। ४. तालमखाना। ५. वृश्चिकाली (जड़ी)। ६. शूली घास। ७. अगर। ८. अलसी। ९. अरवी।
वि० दे० 'पिच्छिल'।

पिछ—पुं० [हिं० पीछा] 'पीछा' का वह लघु रूप जो यौगिक पदों के आरंभ में लगता है। जैसे—पिछलगा, पिछलग्गू, पिछवाड़ा।

पिछड़ना—अ० [हिं० पीछे] १. गति, दौड़, प्रतियोगिता आदि में दूसरों के आगे निकल या बढ़ जाने के कारण अथवा और किसी कारण से पीछे रह जाना। २. वर्ग, श्रेणी आदि में आगे न बढ़ सकने या उन्नति न कर सकने के कारण पीछे रह जाना।
संयो० क्रि०—जाना।

पिछ-लगा—वि० [हिं० पीछे+लगना] [भाव० स्त्री० पिछलगी] १. दीन भाव से किसी के पीछे-पीछे लगा रहनेवाला। २. शक्ति, सामर्थ्य आदि के अभाव में, स्वतंत्र न रह सकने के कारण किसी का अनुगमन या अनुसरण करनेवाला। ३. आश्रित।
पुं० सेवक। दास।

पिछलगी—स्त्री० [हिं० पिछलगा] पिछलगा होने की अवस्था या भाव। २. अनुगमन। अनुवर्तन। अनुसरण।

पिछ-लगू (ग्गू)—वि०, पुं०=पिछ-लगा।

पिछ-लत्ती—स्त्री० [हिं० पिछ+लात] १. पशुओं का पिछले पैरों से आघात करने की क्रिया या भाव। २. उक्त प्रकार से होनेवाला आघात।

पिछलना—अ० [हिं० पीछा] पीछे की ओर हटना या मुड़ना। (क्व०)
† अ०=फिसलना।

पिछलपाई—स्त्री०=पिच्छलपाई।

पिछला—वि० [हिं० पीछा] [स्त्री० पिछली] १. जो किसी वस्तु के पीछे अर्थात् पीठ की ओर पड़ता हो। पीछे का ओर को। 'अगला' का विपर्याय। जैसे—(क) इस मकान का पिछला हिस्सा गिर गया है। (ख) इस घोड़े की पिछली टाँगें टेढ़ी हैं। २. काल, घटना, स्थिति आदि के क्रम के विचार से किसी के पीछे अर्थात् पूर्व में या पहले पड़ने या होनेवाला। जैसे—(क) इधर का हिसाब तो साफ हो गया है, पर पिछला हिसाब बाकी है। (ख) जब मैं पिछली बार आप के यहाँ आया था.....। (ग) पिछला साल रोजगारियों के लिए अच्छा नहीं था। ३. पूर्वकाल में होने अथवा उससे संबंध रखनेवाला। जैसे—पिछला जमाना, पिछले लोग। ४. जो क्रम के विचार से किसी के पीछे या बाद में पड़ता हो। जैसे—इस पुस्तक के कई पिछले पृष्ठ फट गये हैं।
पद—पिछला पहर=दो पहर अथवा आधी रात के बाद का अर्थात् संध्या या प्रभात से पहले का पहर या समय। दिन अथवा रात का उत्तर काल। **पिछली रात**=रात में आधी रात के बाद का और प्रभात या उसके कुछ पहले का समय।
५. गुजरा या बीता हुआ। गत। जैसे—पिछली बातों को भूल जाना ही अच्छा है।
पद—पिछला दिन=वह दिन जो वर्तमान से एक दिन पहले बीता हो। **पिछली रात**=आज से एक दिन पहले बीती हुई रात। कल की रात। गत रात्रि। **पिछले दिन**=बीते हुए दिन। भूतकाल।
पुं० वह भोजन जो रोजे के दिनों में मुसलमान लोग कुछ रात रहते खाते हैं। सहरी।

पिछवई (वाई)—स्त्री० [हिं० पीछे] मूर्तियों या उनके सिंहासनों के पीछे लटकाया जानेवाला बेल-बूटेदार परदा।

पिछवाड़ा—पुं० [हिं० पीछा+बाड़ा] १. किसी वस्तु विशेषतः घर आदि के पीछेवाला भाग। घर का पृष्ठ भाग। २. घर के पीछे वाले भाग के पास की जमीन या मकान।

पिछवारा†—पुं०=पिछवाड़ा।

पिछाड़—वि० [हिं० पीछा] पीछे या बाद में रहने या होनेवाला।
पुं० [हिं० पिछड़ना] पिछड़ने की क्रिया या भाव।
पुं०=पिछाड़ी।

पिछाड़ी—स्त्री० [हिं० पीछा] १. किसी काम, चीज या बात का पिछला

भाग। पीछे का हिस्सा। पृष्ठ भाग। २. घोड़े के पिछले दोनों पैर बाँधने की रस्सी।
क्रि० प्र०—बाँधना।—लगाना।
पद—अगाड़ी-पिछाड़ी (दे०)।

पिछान†—स्त्री०=पहचान। उदा०—मैं पिय लियो पिछान।—पद्माकर।

पिछानना†—स०=पहचानना।

पिछानी—पुं०[हिं० पहचान] १. पहचाननेवाला। उदा०—ऐसा बेद मिलै कोइ भेदी देस-बिदेस पिछानी।—मीराँ। २. जान-पहचान-वाला। परिचित।
†स्त्री०=पहचान।

पिछारी†—स्त्री०=पिछाड़ी।

पिछुआर†—पुं०=पिछवाड़ा।

पिछेलना—स०[हिं० पीछे] १. गति, दौड़, प्रतियोगिता आदि में किसी से आगे निकलना और उसे पीछे छोड़ देना। २. धक्का देकर पीछे हटाना।

पिछोकड़—पुं०[हिं० पीछा] पिछवाड़ा। (राज०) उदा०—म्हारे आँगण आम, पिछोकड़ मखो। (राज०)

पिछौंता—अव्य० [हिं० पीछा+औंता] १. पीछे की ओर। २. पीछे से। बाद में। (पूरब)
†वि०=पिछला।

पिछौंहा—वि०[सं० पश्चिम] [स्त्री० पिछौंही] पश्चिम दिशा में रहने या होनेवाला।

पिछौंही—स्त्री०=पिछौरी।

पिछौंहें—अव्य० [हिं० पीछा] १. पीछे की ओर। २. पीछे की ओर से।
वि० १. पीछे होनेवाला। २. (फसल, फल आदि) जो अपनी ऋतु या समय बीत जाने पर हो।

पिछौड़†—वि० [हिं० पीछे+औड़ (प्रत्य०)] जिसने अपना मुँह पीछे कर लिया हो। किसी के मुँह की ओर जिसकी पीठ पड़ती हो।
अव्य० पीछे की ओर।

पिछौड़ा—अव्य०[हिं० पीछा+औड़ा (प्रत्य०)] पीछे की ओर।
†पुं०=पिछवाड़ा।

पिछौरा—पुं०[सं० पक्ष या पश्च+पट; प्रा० पच्छवड़; हिं० पछेवड़ा] [स्त्री० अल्पा० पिछौरी] पुरुषों के ओढ़ने की चादर। मरदाना दुपट्टा।

पिछौरी—स्त्री०[हिं० पिछौरा] १. ओढ़ने की छोटी चादर। २. स्त्रियों की ओढ़नी या चादर।

पिटंकाकी—स्त्री०=पिटंकोकी।

पिटंकोकी—स्त्री०[सं० पिट्√कु शब्द)+ख, मुम्,+कन्+ङीष्] इंद्रायन नामक लता।

पिटंत—स्त्री०[हिं० पीटना+अंत (प्रत्य०)] १. पीटने की क्रिया या भाव। २. पीटे जाने की अवस्था या भाव। ३. पड़नेवाली मार।

पिटक—पुं०[सं०√पिट (इकट्ठा होना)+क्वुन्—अक] १. पिटारा। २. धान्यागार। कोठार। ३. छोटा फोड़ा। फुंसी। ४. इंद्र की पताका में लगाया जानेवाला एक प्रकार का अलंकरण। ५. ग्रंथ का कोई खंड या विभाग।

पिटका—स्त्री० [सं० पिटक+टाप्] १. छोटा पिटारा। पिटारी। २. छोटा फोड़ा। फुंसी।

पिटना—अ०[हिं० पीटना] १. पीटा जाना। २. प्रतियोगिता आदि में हारना। जैसे—इस बाजी में तो वह बुरा पिटा। ३. कुछ खेलों में गोटी, मोहरे आदि का मारा जाना। जैसे—शतरंज में घोड़ा या वजीर का पिटना। ४. मार खाना। ५. 'पीटना' के सभी अर्थों का अ० रूप। पुं० वह उपकरण जिससे कोई चीज पीटी जाय। जैसे—कपड़े धोने का पिटना, छत पीटने का पिटना।

पिटपिट—स्त्री०[अनु०] थापी, पिटने आदि से बराबर आघात करते रहने पर होनेवाला शब्द।

पिटपिटाना—अ०[अनु०] १. बहुत दुःखी और लाचार होकर यों ही रह जाना। २. बहुत कष्ट में पड़कर छटपटाना।

पिटरिया†—स्त्री०=पिटारी।

पिटरी†—स्त्री०=पिटारी।

पिटवाँ—वि०[हिं० पीटना] जो पीटकर बनाया या तैयार किया गया हो। जैसे—पिटवाँ पत्तर।

पिटवाना—स०[हिं० पीटना] १. ऐसा काम करना जिससे कोई या कुछ पीटा जाय। पीटने का काम किसी दूसरे से कराना। २. ऐसा उपाय करना जिससे कोई पीटा जाय या किसी पर मार पड़े। ३. मैथुन या संभोग करना। (बाजारू)

पिटाई—स्त्री० [हिं० पीटना] १. पीटने की क्रिया या भाव। जैसे—छत की पिटाई। २. पीटने पर मिलनेवाला पारिश्रमिक या मजदूरी। ३. किसी पर अच्छी तरह पड़नेवाली मार। पिटंत।

पिटाक—पुं०[सं०√ पिट्+काक] पिटारा।

पिटाना—स० [हिं० पीटना] १. पिटवाना। २. ऐसा काम करना जिससे कोई अत्यंत दुःखी तथा विकल हो।

पिटापिट—स्त्री० [हिं० पीटना] बार बार पिटने, पीटने आदि की क्रिया या भाव। जैसे—वहाँ खूब पिटापिट मची थी।

पिटारा—पुं०[सं० पिटक] [स्त्री० अल्पा० पिटारी] बाँस, बेंत, मूंज आदि के नरम छिलकों से बना हुआ एक प्रकार का ढक्कनदार बड़ा पात्र।

पिटारी—स्त्री० [हिं० पिटारा का स्त्री० और अल्पा०] छोटा पिटारा।
पद—पिटारी का खर्च=(क) वह धन जो स्त्रियों को पान के खर्च के लिए दिया जाय। पानदान खर्च। (ख) व्यभिचार कराने पर दुश्चरित्रा स्त्री को मिलनेवाला थोड़ा धन।

पिटावना—स०[हिं० पीटना] किसी को किसी व्यक्ति के द्वारा मार खिलवाना।

पिट्टक—पुं०[सं०√ पिट्+ण्वुल्—अक, पृषो० सिद्धि] दाँतों की जड़ों में जमनेवाली मैल।

पिट्टस—स्त्री०[हिं० पिटना+स (प्रत्य०)] १. शोक या दुःख से छाती पीटने की क्रिया या भाव। २. पिटने की अवस्था या भाव। पिटंत।
क्रि० प्र०—पड़ना।—मचना।

पिट्टू—वि०[हिं० पीटना] १. जो बराबर मार खाता रहता हो। २. जो मार खाकर ही कोई काम करता या सीधे रास्ते पर आता हो।

पिट्ठी†—स्त्री०=पीठी।

पिट्ठू—पुं०[हिं० पीठ+ऊ (प्रत्य०)] १. किसी की पीठ के साथ लगा

रहनेवाला अर्थात् पीछे चलनेवाला। पिछलगा। अनुयायी। २. छिपे-छिपे किसी के साथ रहकर उसकी सहायता करनेवाला। ३. कुछ विशिष्ट खेलों में किसी खिलाड़ी का वह कल्पित साथी जिसकी पारी आने पर उक्त खिलाड़ी को अपनी पारी खेल चुकने के उपरांत, पुनः खेलने का अवसर मिलता है। ४. किसी पक्ष के खिलाड़ी का साथी।

पिठमिल्ला—पुं०[हिं० पीठ+मिलना] अँगरखे का पीठ की तरफ का भाग।

पिठर—पुं०[सं० √ पिठ् (क्लेश देना)+करन्] १. मोथा। मुस्तक। २. मथानी। ३. थाली। ४. एक तरह का घर। ५. एक अग्नि का नाम।

पिठरक—पुं० [सं० पिठर+कन्] १. थाली। २. एक नाग। ३. कड़ाही।

पिठरक-कपाल—पुं०[ष० त०] बरतन का टुकड़ा।

पिठर-पाक—पुं० [ष० त०] भिन्न-भिन्न परमाणुओं के गुणों में तेज के संयोग से होनेवाला फेर-फार। जैसे घड़े का पककर लाल होना।

पिठरिका—स्त्री० [सं० पिठर+कन्+टाप, इत्व] १. बटलोई। २. हाँड़ी।

पिठरी—स्त्री०=पिठरिका।

पिठवन—स्त्री०[सं० पृष्ठपर्णी] जमीन पर फैलनेवाला तथा दो-ढाई फुट ऊँचा एक प्रसिद्ध क्षुप जिसके गोल पत्ते तथा बीज दवा के काम आते हैं। ये रक्त-अतिसार, तृषा और वमननाशक तथा वीर्यवर्द्धक होते हैं। पिठौनी। पिथिवन।

पिठी†—स्त्री०=पीठी।

पिठीनस—पुं०[सं०] एक प्राचीन ऋषि।

पिठौनी—स्त्री०=पिठवन (क्षुप और उसके बीज)।

पिठौरी—स्त्री० [हिं० पीठी+औरी (प्रत्य०)] १. पीठी की पकौड़ी। २. पीठी की बरी।

पिडक—पुं०[सं०√पीड् (कष्ट देना)+ण्वुल्, नि० सिद्धि] छोटा फोड़ा। फुंसी।

पिडका—स्त्री०[सं० पिडक+टाप्]=पिड़क।

पिड़काना—स०[सं० पीडा] ऐसा काम करना जिससे कोई झुंझलाता और दुःखी होता हो।

पिड़की—स्त्री०[सं० पिडक] छोटा फोड़ा। फुंसी।
स्त्री०=पेंडुकी।

पिड़िया—स्त्री०[सं० पिंड] चौरेठे को गूँधकर बनाया जानेवाला लोंदा जो उबालकर खाया जाता है।

पिड़ी—स्त्री०[सं० पिंड] १. पिंड। २. वृक्ष का तना। (राज०)

पिढ़ई†—स्त्री०[हिं० पीढ़ा+अई (प्रत्य०)] १. छोटा पीढ़ा या पाटा। २. काठ का वह टुकड़ा जिस पर कोई यंत्र रखा रहता हो।

पिढ़ी—स्त्री०=पीढ़ी।

पिण—अव्य० [?] भी। (डिं०) उदा०—परदल पिण जीणि पदमणी परणे।—प्रिथीराज।

पिण्या—स्त्री०[सं० पण् (स्तुति करना)+यत्, पृषो०, इत्व] मालकंगनी।

पिण्याक—पुं०[सं०√पण्+अकन्, नि० सिद्ध] १. तिल या सरसों की खली। २. हींग। ३. शिलाजीत। ४. शिलारस। ५. केसर।

पितंबर†—पुं०=पीताम्बर।

पित-पापड़ा—पुं०[सं० पर्पट] गेहूँ की फसल में होनेवाला छोटे तथा बारीक पत्तोंवाला एक तरह का पौधा जिसमें लाल अथवा नीले रंग के फूल लगते हैं। यह ओषधि के काम में आता है तथा पिपासानाशक माना जाता है। दमनपापड़।

पितर—पुं०[सं० पितृ, पितर] किसी व्यक्ति की दृष्टि से उसके वे पूर्वज जो स्वर्ग सिधार गये हों। परलोकवासी पूर्वज। कर्मकाण्ड के अनुसार इनके नाम पर श्राद्ध, तर्पण, आदि कृत्य किये जाते हैं।

पितरपख—पुं०=पितृपक्ष।

पितरपति—पुं०[सं० पितृपति] यमराज।

पितराई—स्त्री०=पितरायँध।

पितरायँध—स्त्री० [हिं० पीतल+गंध] पीतल के बरतन में किसी पदार्थ विशेषतः किसी खट्टे पदार्थ के पड़े रहने तथा विकारयुक्त होने पर निकलनेवाली गंध जो अप्रिय होती है।

पितरिहा—वि०[हिं० पीतल+हा] १. पीतल-संबंधी। पीतल का। २. पीतल का बना हुआ।
†पुं० पीतल का घड़ा।

पितलाना—अ०[हिं० पीतल+आना (प्रत्य०)] किसी पदार्थ के पीतल के बरतन में पड़े रहने पर पीतल के कसाव से युक्त होना।

पित-ससुर—पुं० दे० 'पितिया-ससुर'।

पिता (तृ)—पुं०[सं०√पा (रक्षा करना)+तृच्] संबंध के विचार से वह पुरुष जिसने किसी को जन्म दिया और उसका पालन-पोषण किया हो। जनक। बाप।

पितामह—पुं०[सं० पितृ+डामह] [स्त्री० पितामही] १. पिता का पिता। दादा। २. ब्रह्मा। ३. शिव। ४. भीष्म। ५. एक धर्म-शास्त्रकार ऋषि।

पितिजिया—पुं०[?] महाराष्ट्र के कुछ प्रदेशों में होनेवाला एक ऊँचा तथा छायादार वृक्ष जिसके पत्ते तथा बीज कफ तथा वातविनाशक और वीर्यवर्द्धक होते हैं। पितौजिया। जियापोता।

पितिया—पुं०[सं० पितृव्य] [स्त्री० पितियानी] बाप का भाई। चाचा।

पितियानी—स्त्री० [हिं० पितिया+नी (प्रत्य०)] चाचा की स्त्री। चाची।

पितिया-ससुर—पुं०[हिं० पितिया+ससुर] १. किसी पुरुष की दृष्टि से चाचा। २. किसी स्त्री की दृष्टि से उसके पति का चाचा। चचिया ससुर।

पितियासास—स्त्री०[हिं० पितिया+सास] संबंध के विचार से ससुर के भाई की पत्नी। चचिया सास।

पितु—पुं०=पिता।

पितृ—पुं०[सं०√पा (रक्षा करना)+तृच्] १. किसी व्यक्ति के बाप, दादा, परदादा आदि मृत पूर्वज। २. ऐसा मृत व्यक्ति जो प्रेतत्व से मुक्त हो चुका हो। ३. एक प्रकार के देवता जो सब जीवों के आदि पूर्वज माने गये हैं। ४. पिता।

पितृ-ऋण—पुं०[ष०त०] धर्म-शास्त्रों के अनुसार, मनुष्य के तीन ऋणों में से एक जिसे लेकर वह जन्म ग्रहण करता है। कहा गया है कि पुत्र उत्पन्न करने से उस ऋण से मुक्ति होती है।

पितृक—वि०[सं० पैतृक, पृषो० सिद्धि] १. पितृ-संबंधी। पितरों का। पैतृक। २. पिता का दिया हुआ। पिता के द्वारा प्राप्त। पैतृक। ३.

(उत्तराधिकार, व्यवहार आदि की प्रथा) जिसमें गृहपति या पिता का पक्ष प्रधान माना जाता है, गृहस्वामिनी या माता के पक्ष का कोई विचार नहीं होता। (पेट्रिआर्कल)

पितृ-कर्म (न्)—पुं० [मध्य०स०] पितरों के उद्देश्य से किये जानेवाले श्राद्ध, तर्पण आदि कर्म।

पितृ-कल्प—पुं० [मध्य०स०] श्राद्धादि कर्म।

पितृ-कानन—पुं० [ष०त०] श्मशान। मरघट।

पितृ-कार्य—पुं० [मध्य०स०] =पितृ-कर्म।

पितृ-कुल—पुं० [ष० त०] बाप-दादा, परदादा या उनके भाई, बंधुओं आदि का कुल।

पितृ-कुल्या—स्त्री० [मध्य०स०] एक तीर्थस्थान। (महाभारत)

पितृ-कृत्य—पुं० [मध्य०स०] श्राद्ध, तर्पण आदि कार्य जो पितरों के उद्देश्य से किये जाते हैं।

पितृ-गण—पुं० [ष० त०] १. पितर। २. मरीचि आदि ऋषियों के पुत्र।

पितृ-गाथा—स्त्री० [मध्य०स०] पितरों द्वारा पढ़े जानेवाले कुछ विशेष श्लोक या गाथाएँ।

पितृगामी (मिन्)—वि० [सं०पितृ√गम् (जाना)+णिनि] पिता-संबंधी।

पितृ-गृह—पुं० [ष०त०] १. बाप का घर। विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसके माता-पिता का घर। मायका। २. श्मशान।

पितृ-ग्रह—पुं० [ष०त०] स्कंद आदि नौ बाल ग्रहों में से एक।

पितृघात—पुं० [सं० पितृ√हन् (हिंसा)+अण्,] [वि० पितृघातक, पितृघाती] पिता की की जानेवाली हत्या।

पितृ-तर्पण—पुं० [ष०त०] १. पितरों के उद्देश्य से किया जानेवाला जल-दान। विशेष दे० तर्पण। २. तिल जिससे पितरों का तर्पण किया जाता है। ३. गया नामक तीर्थ, जहाँ श्राद्ध करने से पितरों का प्रेतयोनि से मुक्त होना माना जाता है।

पितृता—स्त्री० [सं० पितृ+तल्+टाप्]=पितृत्व।

पितृ-तिथि—स्त्री० [मध्य०स०] अमावस्या।

पितृतीर्थ—पुं० [मध्य०स०] १. गया नामक तीर्थ। २. मत्स्य पुराण के अनुसार गया, वाराणसी, प्रयाग, विमलेश्वर आदि २२२ तीर्थ। ३. अँगूठे और तर्जनी के बीच का भाग जिसमें से तर्पण का जल गिराया या छोड़ा जाता है।

पितृत्व—पुं० [सं० पितृ+त्व] पिता होने का भाव।

पितृ-दान—पुं० [च०त०] पितरों के उद्देश्य से किया जानेवाला दान।

पितृ-दान—पुं० [सं० ष० त०] उत्तराधिकार में पिता से मिलनेवाली संपत्ति। बपौती।

पितृ-दिन—पुं० [ष०त०] अमावस्या।

पितृ-देव—पुं० [ष०त०] पितरों के अधिष्ठाता देवता। अग्निष्वातादि पितरगण।

पितृ-देश—पुं० [ष०त०] किसी की दृष्टि से, उसके पितरों या पूर्वजों के रहने का देश। वह देश जिसमें कोई अपने पूर्वजों के समय से रहता आया हो। (फादरलैंड)

पितृ-दैवत—वि० [सं० पितृदेवता+अण्] पितृदेवता-संबंधी। पितरों की प्रसन्नता के लिए किया जानेवाला (यज्ञ आदि)।
पुं० मघा नक्षत्र।

पितृदैवत्य—वि० [सं० पितृदेवता+ष्यञ्] पितृदैवत।
पुं० (कुछ विशिष्ट मासों की) अष्टमी के दिन किया जानेवाला एक पितृ-कृत्य।

पितृ-नाथ—पुं० [ष०त०] १. यमराज। २. अर्यमा नाम के पितर जो सब पितरों में श्रेष्ठ हैं।

पितृ-पक्ष—पुं० [ष०त०] १. कुआर या आश्विन का कृष्णपक्ष। २. पितृकुल।

पितृ-पति—पुं० [ष०त०] यम।

पितृ-पद—पुं० [ष०त०] १. पितरों का देश या लोक। २. पितृ या पितर होने का पद या स्थिति।

पितृ-पिता (तृ)—पुं० [ष०त०] पितामह।

पितृपैतामह—वि० [सं० पितृपितामह+अण्] जिसका संबंध पिता-पितामह आदि से हो। बाप-दादों का।

पितृ-प्रसू—स्त्री० [ष०त०] १. पिता की माता। दादी। २. सायंकाल। संध्या।

पितृ-प्राप्त—वि० [पं० त०] जो पिता से मिला हो।

पितृ-प्रिय—पुं० [ष० त०] १. भँगरा। भँगरैया। भृंगराज। २. अगस्त का पेड़।

पितृ-बंधु—पुं० [ष०त०] वह व्यक्ति जिससे संबंध पिता-पितामह आदि के विचार से हो। 'मातृबंधु' का विपर्याय।

पितृ-भक्त—वि० [ष०त०] [भाव० पितृभक्ति] अपने पिता की सेवा करने तथा उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करनेवाला।

पितृ-भक्ति—स्त्री० [ष०त०] पितृभक्त होने की अवस्था या भाव। पिता के प्रति होनेवाली भक्ति।

पितृ-भोजन—पुं० [ष०त०] १. पितरों को अर्पित किया जानेवाला भोजन। २. उड़द। माष।

पितृ-मंदिर—पुं० [ष०त०] १. पिता का घर। पितृ-गृह। २. श्मशान या मरघट जो पितरों का वास-स्थान माना गया है।

पितृ-मेध—पुं० [मध्य०स०] वैदिक काल का एक अंत्येष्टि कर्म जिसमें अग्निदान और दस पिंडदान आदि कृत्य होते थे। (श्राद्ध से भिन्न)

पितृ-यज्ञ—पुं० [मध्य०स०] =पितृ-तर्पण।

पितृ-याण—पुं० [ष०त०] १. मृत्यु के अनंतर जीव के पर-लोक जाने का वह मार्ग जिससे वह चंद्रमा में पहुँचता है। कहते हैं कि इस मार्ग में जाने-वाले मृत व्यक्ति की आत्मा को निश्चित काल तक स्वर्ग आदि में सुख भोगकर फिर संसार में आना पड़ता है। २. वह मार्ग जिस पर पितर चलते हैं और अपने लिए नियत लोकों में जाते हैं।

पितृ-राज—पुं० [ष०त०] यम।

पितृ-रिष्ट—पुं० [ब० स०] फलित ज्योतिष के अनुसार एक योग जिसमें जन्म लेनेवाला बालक पिता के लिए घातक समझा जाता है।

पितृरूप—पुं० [सं० पितृ+रूपम्] शिव।

पितृ-लोक—पुं० [ष०त०] वह लोक जिसमें पितरों का निवास माना जाता है।

पितृ-वंश—पुं० [ष०त०] पिता का कुल।

पितृ-वन—पुं० [ष०त०] मरघट। श्मशान।

पितृवनेचर—पुं० [सं० अलुक् स०] १. पितृ-वन अर्थात् श्मशान में बसने-वाले जीव। भूत-प्रेत। २. शिव।

पितृ-वसति—स्त्री०[ष०त०] श्मशान।

पितृ-वित्त—पुं०[ष० त०] बाप-दादों द्वारा छोड़ी हुई संपत्ति। पैतृक या मौरूसी जायदाद।

पितृ-वेश्म (न्)—पुं०[ष०त०] स्त्री के पिता का घर। नैहर। मायका।

पितृव्य—पुं०[सं० पितृ+व्यत्] १. पिता के तुल्य आदरणीय व्यक्ति। २. चाचा।

पितृ-व्रत—पुं०[मध्य० स०] पितृ-कर्म।
वि० पितरों की पूजा करनेवाला।

पितृषद्—पुं०[सं० पितृ√ सद्+क्विप्] =पितृ-गृह। (स्त्रियों के लिए)

पितृषदन—पुं०[सं० ष०त०] कुश।

पितृष्वसा (सृ)—स्त्री० [सं० ष०त०] पिता की बहन। बूआ। फूफी।

पितृष्वस्रीय—पुं०[सं० पितृष्वसृ+छ—ईय] बूआ का पुत्र। फुफेरा भाई।

पितृ-सद्म (न्)—पुं०[ष०त०] स्त्री के पिता का घर। मायका।

पितृसू—स्त्री० [सं० पितृ√ सू (प्रसव करना)+क्विप्] १. दादी। २. सायंकाल।

पितृ-स्थान—पुं०[ष०त०] पिता का स्थान या पद।

पितृस्थानीय—वि०[सं० पितृस्थान+छ—ईय] १. पिता के स्थान पर होनेवाला या उसका समकक्ष। २. अभिभावक।

पितृ-हंता (तृ)—वि०[ष०त०]=पितृहा।

पितृहा (हन्)—वि०[सं० पितृ √ (हन् (हिंसा)+क्विप्] जिसने पिता की हत्या की हो।

पितृह्व—पुं०[सं० पितृ√ ह्वे (बुलाना)+क्विप्] दाहिना कान।

पितृह्वय—पुं०[सं० पितृ √ ह्वे+क्यप्?] श्राद्ध आदि कार्यों के समय पितरों का आह्वान करना। पितरों को बुलाना।

पितौंजिया—पुं०=पितिजिया।

पित्त—पुं०[सं० अपि√ दो (काटना)+क्त, तादेश, अकार-लोप] १. वैद्यक के अनुसार शरीर के तीन मुख्य तत्त्वों में से एक (अन्य दो वात और कफ हैं) जो नीलापन लिये तरल होता है और यकृत में बनता है। (बाइल) २. उक्त का प्रमुख गुण, ताप या शक्ति जो भोजन पचाती है। मुहा०—पित्त उबलना=दे० 'पित्ता' के अंतर्गत 'पित्ता खौलना'। पित्त उभरना= पित्त का प्रकोप या विकार उत्पन्न होना। (किसी का) पित्त गरम होना=स्वभावतः क्रोधी होना। मिजाज में गरमी होना। जैसे—अभी तुम जवान हो इसी से तुम्हारा पित्त इतना गरम है। पित्त डालना=कै करना।

पित्त-कर—वि०[ष०त०] पित्त को बढ़ानेवाला (पदार्थ)।

पित्त-कास—पुं०[मध्य०स०] पित्त बिगड़ने के फलस्वरूप होनेवाली एक तरह की खाँसी।

पित्त-कोष—पुं०[ष०त०] पित्ताशय। (दे०)

पित्त-क्षोभ—पुं०[ष०त०] पित्त के बिगड़ने से होनेवाले विकार।

पित्तगदी (दिन्)—वि०[सं० पित्त-गद, ष०त०, +इनि] जिसका पित्त बिगड़ा हुआ हो।

पित्त-गुल्म—पुं०[सं०] पित्त की अधिकता के कारण होनेवाला पेट फूलने का एक रोग।

पित्तघ्न—वि०[सं० पित्त√ हन्+टक्] पित्त का नाश अथवा उसके विकारों को दूर करनेवाला।
पुं० घी। घृत।

पित्तघ्नी—स्त्री० [सं० पित्तघ्न+ङीष्] गुरुच।

पित्तज—वि०[सं०पित्त√जन् (उत्पत्ति)+ड] पित्त अथवा उसके प्रकोप से उत्पन्न होनेवाला। जैसे—पित्तज ज्वर, पित्तज शोथ आदि।

पित्त-ज्वर—पुं०[मध्य०स०] पित्त बिगड़ने से होनेवाला ज्वर।

पित्तदाह—पुं० [सं०] पित्त-ज्वर। (दे०)

पित्तद्रावी (विन्)—वि० [सं० पित्त√द्रु (गति)+ णिच्+णिनि] पित्त को द्रवित करने अर्थात् पिघलानेवाला।
पुं० मीठा नींबू

पित्त-धरा—स्त्री०[ष०त०] पित्त को धारण करनेवाली एक कला या झिल्ली। ग्रहणी।

पित्त-नाड़ी—स्त्री० [ष० त०] एक प्रकार का नाड़ी-व्रण जो पित्त के प्रकोप से होता है। (वैद्यक)

पित्त-नाशक—वि०[ष०त०] १. पित्त का नाश करनेवाला। २. पित्त का प्रकोप दूर करनेवाला।

पित्त-निर्वहण—वि०[ष०त०] =पित्त-नाशक।

पित्त-पथरी—स्त्री०[सं० पित्त+हिं० पथरी] एक प्रकार का रोग जिसमें पित्ताशय अथवा पित्तवाहक नालियों में पित्त की कंकड़ियाँ बन जाती हैं। यद्यपि ये पित्ताशय में ही बनती हैं, पर यकृत और पित्त-प्रणालियों में भी पाई जाती हैं।

पित्त-पांडु—पुं०[बैं०स०] पित्त के प्रकोप के कारण होनेवाला एक रोग जिसमें रोगी के मूत्र, विष्ठा, और नेत्र के सिवा सारा शरीर पीला हो जाता है।

पित्त-पापड़ा—पुं०=पितपापड़ा (दे०)।

पित्त-प्रकृति—वि०[ब०स०] जिसके शरीर में वात और कफ की अपेक्षा पित्त की प्रधानता या अधिकता हो।

पित्त-प्रकोप—पुं०[ष०त०] पित्त के अधिक बढ़ जाने अथवा उसमें विकार होने के फलस्वरूप उसका उग्र रूप धारण करना (जिसके फलस्वरूप अनेक रोग होते हैं)।

पित्त-प्रकोपी (पिन्)—वि०[सं० पित्त-प्रकोप, ष० त०,+इनि] पित्त को बढ़ाने या कुपित करनेवाला (द्रव्य)। जिसे खाने से पित्त की वृद्धि हो।

पित्त-भेषज—पुं०[ष० त०] मसूर की दाल।

पित्त-रंजक—पुं०[सं०]=पित्तारुण।

पित्त-रक्त—पुं०[मध्य० स०] रक्तपित्त नामक रोग।

पित्तल—वि०[सं० पित्त+ लच्] १. जिसमें पित्त की बहुलता हो। २. जिससे पित्त का प्रकोप या दोष बढ़े। पित्तकारी (द्रव्य)।
पुं०१. पीतल। २. हरताल। ३. भोजपत्र।

पित्तला—स्त्री०[सं० पित्तल+टाप्] १. जल-पीपल। २. वैद्यक के अनुसार योनि का एक रोग जो दूषित पित्त के कारण होता है। इसके कारण योनि में अत्यन्त दाह, पाक तथा शरीर में ज्वर होता है।

पित्त-वर्ग—पुं०[ष०त०] मछली, गाय, घोड़े, रुरु और मोर के पित्तों का समूह। पंचविधपित्त।

पित्त-वल्लभा—स्त्री० [ष०त०] काला अतीस।

पित्त-वायु—स्त्री०[मध्य०स०] पित्त के प्रकोप से पेट में उत्पन्न होनेवाली वायु।

पित्त-विदग्ध—वि० [तृ० त०] जिसका पित्त कुपित हो।

पित्त-विदग्ध-दृष्टि—पुं० [ब० स०] आँख का एक रोग जो दूषित पित्त के दृष्टि-स्थान में आ जाने के कारण होता है। इसके कारण रोगी दिन में नहीं देख सकता केवल रात में देखता है।

पित्त-विसर्प—पुं० [मध्य०स०] विसर्प रोग का एक भेद।

पित्त-व्याधि—स्त्री० [मध्य०स०] पित्त के कुपित होने से होनेवाला रोग।

पित्त-शमन—वि० [ष० त०] पित्त का प्रकोप दूर करनेवाला।

पित्त-शूल—पुं० [मध्य०स०] पित्त के प्रकोप के कारण होनेवाला शूल।

पित्त-शोथ—पुं० [मध्य०स०] पित्त के प्रकोप के कारण शरीर में होनेवाला शोथ या सूजन।

पित्त-श्लेष्म ज्वर—पुं० [सं० पित्त-श्लेष्मन्, द्व० स०, पित्तश्लेष्म-ज्वर, मध्य०स०] पित्त और कफ दोनों के प्रकोप से होनेवाला एक तरह का ज्वर।

पित्त-श्लेष्मोल्वण—पुं० [सं० पित्तश्लेष्म-उल्वण, मध्य०स०] एक प्रकार का सन्निपात ज्वर जिसमें पतला मल निकलता है और सारे शरीर में पीड़ा होती है।

पित्त-संशमन—पुं० [ष०त०] आयुर्वेदोक्त ओषधियों का एक वर्ग। इस वर्ग की ओषधियाँ प्रकुपित पित्त को शांत करनेवाली मानी जाती हैं। चन्दन, लालचंदन, खस, सतावर, नीलकमल, केला, कमलगट्टा आदि इस वर्ग में माने गये हैं।

पित्त-स्थान—पुं० [ष० त०] १. पित्ताशय। २. शरीर के अंदर के वे पाँच स्थान जिनमें वैद्यक के अनुसार पाचक, रंजक आदि ५ प्रकार के पित्त रहते हैं। ये स्थान आमाशय-पक्वाशय, यकृत, प्लीहा, हृदय, दोनों नेत्र और त्वचा हैं।

पित्त-स्यंदन—पुं० [मध्य०स०] पित्त के विकार से उत्पन्न एक नेत्र रोग।

पित्त-स्राव—पुं० [ष०त०] सुश्रुत के अनुसार, एक प्रकार का नेत्ररोग जिसमें आँखों से पीला (या नीला) और गरम पानी बहता है।

पित्त-हर—पुं० [ष०त०] खस। उशीर।

पित्तहा (हन्)—पुं० [सं० पित्त√हन्+क्विप्] पित्त पापड़ा।
वि० पित्त का प्रकोप शांत करनेवाला।

पित्तांड—पुं० [पित्त-अंड, ब० स०] घोड़ों के अंडकोश में होनेवाला एक रोग।

पित्ता—पुं० [सं० पित्त] १. वह थैली जिसमें पित्त रहता है। पित्ताशय। (देखें) २. शरीर के अंदर का पित्त, जिसका मनुष्य के मनोभावों पर विशेष प्रभाव पड़ता है।

पद—पित्तामार काम=ऐसा कठिन काम जो बहुत देर में पूरा होता हो और जिसमें बहुत अधिक तल्लीनता अथवा सहिष्णुता की आवश्यकता हो।

मुहा०—पित्ता उबलना या खौलना=किसी कारणवश मन में बहुत अधिक क्रोध उत्पन्न होना। **पित्ता निकलना**=बहुत अधिक कष्ट, परिश्रम आदि के कारण शरीर की दुर्दशा होना। **पित्ता पानी करना**=किसी काम को पूरा करने के लिए बहुत अधिक परिश्रम करना। **पित्ता मरना**= शरीर में उत्साह, उमंग आदि का बहुत-कुछ अंत या अभाव हो जाना। **पित्ता मारना**=(क) मन के दूषित भाव या बुरी बातें उमड़ने न देना। (ख) मन के उत्साह, उमंग आदि को दबा या रोककर रखना। जैसे—पित्ता मारकर काम करना सीखो।
३. हिम्मत। साहस। हौसला। जैसे—उसका क्या पित्ता है जो तुम्हारे सामने ठहरे। ४. कुछ पशुओं के शरीर से निकला हुआ पित्त नामक पदार्थ जिसका उपयोग औषध के रूप में होता है। जैसे—बैल का पित्ता।

पित्तातिसार—पुं० [पित्त-अतिसार, मध्य० स०] वह अतिसार रोग जो पित्त के प्रकोप या दोष से होता है।

पित्ताभिष्यंद—पुं० [पित्त-अभिष्यंद, मध्य०स०] पित्त कोप से आँख आने का रोग।

पित्तारि—पुं० [पित्त-अरि, ष० त०] १. पित्त पापड़ा। २. लाख। ३. पीला चंदन।

पित्तारुण—पुं० [सं० पित्त-अरुण] आधुनिक विज्ञान में, शरीर के रक्त-रस में रहनेवाला एक रंगीन तत्त्व जिसकी अधिकता से आदमियों को कामला या पीलिया नामक रोग हो जाता है। (बिली रुबिन)

पित्ताशय—पुं० [पित्त-आशय, ष०त०] शरीर के अंदर यकृत के पीछे की ओर रहनेवाली थैली के आकार का वह अंग जिसमें पित्त रहता है। (गालब्लैडर)

पित्तिका—स्त्री० [सं० पित्त+कन्+टाप्, इत्व] एक प्रकार की शतपदी (ओषधि)।

पित्ती—स्त्री० [हिं० पित्त+ई] १. एक रोग जो पित्त के प्रकोप से रक्त में बहुत अधिक उष्णता होने के कारण होता है तथा जिसमें शरीर के विभिन्न अंगों में छोटे-छोटे ददोरे निकल आते हैं और जिन्हें खुजलाते-खुजलाते रोगी विकल हो जाता है।
क्रि० प्र०—उछलना।
२. वे लाल महीन दाने जो गरमी के दिनों में पसीना मरने से शरीर पर निकल आते हैं। अंभौरी।
क्रि० प्र०—निकलना।
पुं० [सं० पितृव्य] पिता का भाई। चाचा।

पित्तोत्क्लिष्ट—पुं० [पित्त-उत्क्लिष्ट, ब०स०] आँख का एक रोग जिसमें पलकों में दाह, क्लेद और पीड़ा होती है तथा ज्योति कम हो जाती है। (वैद्यक)

पित्तोदर—पुं० [पित्त-उदर, मध्य०स०] पित्त-गुल्म। (देखें)

पित्तोन्माद—पुं० [पित्त-उमाद, मध्य०स०] [वि० पित्तोन्मादिक] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का उन्माद, रोग जिसमें साधारणतः बिना किसी कारण के रोगी बहुत ही खिन्न, चिन्तित और दुःखी रहता है और जो पित्ताशय के ठीक काम न करने से उत्पन्न होता है। (हाइपोकान्ड्रिया)

पित्तोपहत—वि० [पित्त-उपहत, तृ० त०] जिसे पित्त का प्रकोप हुआ हो।

पित्तोल्वण सन्निपात—पुं० [पित्त-उल्वण, तृ० त०, पित्तोल्वण—सन्निपात, कर्म० स०] एक प्रकारका सन्निपातिक ज्वर। भ्रम, मूर्छा, मुँह और शरीर में लाल दाने निकलना आदि इसके लक्षण हैं। (वैद्यक)

पित्र्य—वि० [सं० पितृ+यत्] पिता-संबंधी।
पुं० १. बड़ा भाई। २. पितृतीर्थ। ३. तर्जनी और अँगूठे का अंतिम भाग। ४. शहद। ५. उड़द।

पित्र्या—स्त्री०[सं० पित्र्य+टाप्]१. मघा नक्षत्र। २. पूर्णिमा। पूर्णमासी। ३. अमावस्या। अमावस।

पिथ†—पुं०=पृथ्वीराज।

पिथौरा†—पुं०=पृथ्वीराज (दिल्ली के अंतिम हिन्दू सम्राट्)।

पिदड़ी†—स्त्री०=पिद्दी।

पिदारा*—पुं०=पिद्दा।

पिद्दा—पुं०[हिं० पिद्दी]१. पिद्दी का नर। विशेष दे० 'पिद्दी'। २. गुलेले की ताँत में लगी हुई निवाड़ आदि की वह गद्दी जिस पर फेंकने के समय गोली रखते हैं। फटकना।

पिद्दी—स्त्री०[हिं० पिद्दा]१. बया की तरह की एक सुन्दर छोटी चिड़िया जो अनेक रंगों की होती है। इसे 'फुदकी' भी कहते हैं। २. अत्यन्त तुच्छ या नगण्य जीव।

पिधना†—स०[सं० परिधारण] शरीर पर धारण करना, पहनना। उदा०—पीत बसन हे जुवति पिधिलेह।—विद्यापति।

पिधान—पुं०[सं० अपि√धा (धारण करना)+ल्युट्—अन, अकार-लोप] १. आच्छादन। आवरण। २. पर्दा। गिलाफ। ३. ढक्कन। ४. तलवार का कोष। म्यान। ५. किवाड़ा। दरवाजा।

पिधानक—पुं०[सं० पिधान+कन्]१. ढक्कन। २. कोष। म्यान।

पिधायक—वि०[सं० अपि√धा+ण्वुल्—अक, अकार-लोप] १. ढकनेवाला। २. छिपानेवाला।

पिन—स्त्री०[अं०] धातु की तरह की पतली, नुकीली कील जिससे कागज नत्थी किये जाते हैं। आलपीन।

पिनक—स्त्री०[हिं० पिनकना]१. पिनकने की क्रिया या भाव। २. अफीमची की वह अवस्था जिसमें वह नशे की अधिकता के कारण सिर झुकाकर बैठे रहने की दशा में बेसुध या सोया हुआ-सा रहता है।

क्रि० प्र०—लेना।

पिनकना—अ० [हिं० पीनक] १. अफीमची का नशे की हालत में रह-रहकर ऊँघते हुए आगे की ओर झुकना। पीनक लेना। २. अधिक नींद आने के कारण सिर का रह-रहकर झुक पड़ना।

पिनकी—पुं०[हिं० पीनक] वह जो अफीमचियों की तरह बैठे-बैठे सोता हो और नीचे की ओर सिर रह-रहकर झुकाता हो।

पिनद्ध—भू० कृ० [सं० अपि√नह् (बांधना)+क्त, अकार-लोप]१. कसा या बांधा हुआ। २. पहना या धारण किया हुआ। ३. छाया, ढका या लपेटा हुआ।

पिनपिन—स्त्री०[अनु०]१. बच्चों के रह-रहकर रोने पर होनेवाला अनुनासिक और अस्पष्ट शब्द। २. रोगी या दुबले पतले बच्चे के रोने का शब्द।

क्रि० प्र०—करना।—लगाना।

पिनपिनहाँ—वि०[हिं० पिनपिन+हा (प्रत्य०)]१. पिनपिन करनेवाला (बच्चा)। जो हर समय रोया करे। २. प्रायः रोगी रहनेवाला दुबला-पतला (बच्चा)।

पिनपिनाना—अ०[हिं० पिनपिन]१. रोते समय नाक से पिनपिन का-सा स्वर निकालना। २. धीरे-धीरे, रुक-रुककर या हिचकियाँ लेते हुए रोना।

पिनपिनाहट—स्त्री०[हिं० पिनपिनाना] पिनपिन करने की क्रिया, भाव या शब्द।

पिनसन†—स्त्री०=पेंशन।

पिनाक—पुं०[सं०√ पा (रक्षा करना)+आकन्, नुट्, इत्व] १. शिव का वह धनुष जो श्रीरामचंद्र ने सीता स्वयंवर में तोड़ा था। अजगव। २. धनुष। ३. त्रिशूल। ४. नीला अभ्रक।

पिनाक-गोप्ता (प्तृ)—पुं०[ष०त०] शिव।

पिनाक-धृत्—पुं० [सं० पिनाक√धृ (धारण करना)+क्विप्] शिव।

पिनाक-पाणि—पुं०[ब०स०] शिव।

पिनाक-हस्त—पुं०[ब०स०] शिव।

पिनाकी (किन्)—पुं०[सं० पिनाक+इनि]१. पिनाक धारण करनेवाले, महादेव। शिव। २. प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जिसमें बजाने के लिए तार लगा रहता था।

पिन्नस†—स्त्री०=पीनस (रोग)।

पिन्ना—वि०[हिं० पिनपिनाना] प्रायः पिनपिन करने अर्थात् रोता रहनेवाला।

पुं०[हिं० पींजना] धुनिया।

पुं०[हिं० पिन्नी का पुं०] बड़ी पिन्नी।

पिन्नी—स्त्री०[सं० पिंडी]१. एक प्रकार का लड्डू जो आटे आदि में कई तरह के मसाले और चीनी या गुड़ मिलाकर बनाया जाता है। २. सूत, धागे आदि को लपेटकर गोलाकार बनाया हुआ छोटा पिंड। जैसे—डोर या नग की पिन्नी।

पिन्यास—पुं०[सं० अपि-न्यास, ब०स०, अकार-लोप] हींग।

पिन्हाना†—स०=पहनाना।

पिपर†—पुं०=पीपल।

पिपरमिंट—पुं०[अं० पेपरमिंट]१. पुदीने की जाति का परन्तु उससे भिन्न एक प्रकार का पौधा जो यूरोप और अमेरिका में होता है। इसकी पत्तियों में एक विशेष प्रकार की गंध और ठंढक होती है। २. उक्त पत्तियों का निकाला हुआ सत्त या सार भाग जो छोटे सफेद रवे के रूप में होता और पाचक माना जाता है।

पिपरामूल—पुं०[हिं० पीपल+सं० मूल] पीपल की जड़।

पिपराही—पुं० [हिं० पिपर+आही (प्रत्य०)] पीपल का जंगल या वन।

पिपरिहा†—पुं०[पिपरहा (स्थान)] राजपूतों की एक शाखा या अल्ल।

पिपली—स्त्री० [देश०] नैपाल, दार्जिलिंग आदि पहाड़ी इलाकों में होनेवाला एक तरह का वृक्ष जिसकी लकड़ी इमारती कामों में आती है।

पिपहीं†—स्त्री०= पिपीली।

पिपास—स्त्री०=पिपासा (प्यास)।

पिपासा—स्त्री० [सं० √ पा (पीना)+सन्+अ—टाप्] १. पानी या और कोई तरल पदार्थ पीने की इच्छा। तृष्णा। तृषा। प्यास। २. कोई चीज पाने की इच्छा या लोभ।

पिपासित—वि० [सं० पिपासा+इतच्] जिसे प्यास लगी हो। प्यासा।

पिपासी (सिन्)—वि०[सं० पिपासा+इनि] प्यासा।

पिपासु—वि०[सं०√ पा+सन्+उ]१.जिसे पिपासा या प्यास लगी हो।

तृषित। प्यासा। २. पीने का इच्छुक। ३. जिसके मन में किसी प्रकार की उग्र कामना या लोभ हो। जैसे—रक्तपिपासु।

पिपियाना—अ० [हिं० पीप=मवाद] फोड़े आदि में पीप पैदा होना। स० फोड़े आदि में मवाद उत्पन्न करना। फोड़ा पकाना।

पपिली—स्त्री०=पिपीली।

पिपीतकी—स्त्री० [सं० पिपीतक+अच्+ङीप्] वैशाख शुक्ल द्वादशी जो व्रत का दिन माना गया है। पहले-पहल कहते हैं कि पिपीतक नाम के एक ब्राह्मण ने किया था। इसी से इसका यह नाम पड़ा है।

पिपीलक—पुं० [सं० अपि√पील् (रोकना)+ण्वुल्—अक, अकार-लोप] [स्त्री० अल्पा० पिपीलिका] १. बड़ा चींटा। २. एक तरह का सोना।

पिपीलिक—पुं०=पिपीलक।

पिपीलिका—स्त्री० [सं० पिपीलक+टाप्, इत्व] १. च्यूँटी या चींटी नाम का छोटा कीड़ा। २. च्यूँटियों की तरह एक के पीछे एक चलने की प्रवृत्ति।

पिपीलिका भक्षी (क्षिण्)—पुं० [सं० पिपीलिका√भक्ष् (खाना)+णिनि] दक्षिण अफ्रीका का एक जंतु जिसका बहुत लंबा थूथन और बहुत बड़ी जीभ होती है। इसे दाँत नहीं होते यह अपने पंजों से चींटियों के बिल खोदता है और उन्हें खाता है।

पिपीलिका-मार्ग—पुं० [ष०त०] योग की साधना में दो मार्गों में से एक जिसके द्वारा साधक क्रमशः धीरे-धीरे आगे बढ़ता और षट् चक्रों को बेधता हुआ अपने प्राण ब्रह्माण्ड तक पहुँचाता है। इसकी तुलना में दूसरा अर्थात् विहंगम मार्ग, (देखें) श्रेष्ठ समझा जाता है।

पिपीलिकोद्वाप—पुं० [पिपीलिका-उद्वाप, ष०त०] वल्मीक।

पिपीली—स्त्री० [सं० अपि√पील्+अच्+ङीप् अलोप] चींटी। च्यूँटी।

पिप्पटा—स्त्री० [सं०] १. पुरानी चाल की एक तरह की मिठाई। २. चीनी।

पिप्पल—पुं० [सं०√पा+अलच्, पृषो० सिद्धि] १. पीपल का पेड़। अश्वत्थ। २. एक प्रकार का पक्षी। ३. रेवती से उत्पन्न मित्र का एक पुत्र। (भागवत) ४. नंगा आदमी। ५. जल। पानी। ६. वस्त्र-खंड। कपड़े का टुकड़ा। ७. अंगे आदि की बाँह या आस्तीन।

पिप्पलक—पुं० [सं० पिप्पल+कन्] स्तनमुख।

पिप्पलयांग—पुं० [सं०] चीन और जापान में होनेवाला एक प्रकार का पौधा जो अब भारतवर्ष में भी गढ़वाल, कुमाऊँ और काँगड़े की पहाड़ियों में पाया जाता है। इसके फलों के बीज के ऊपर चरबी की तरह का चिकना पदार्थ होता है जिसे चीनी मोम कहते हैं। मोमचीना।

पिप्पला—स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी।

पिप्पलाद—पुं० [सं० पिप्पल√अद् (खाना)+अण्] पुराणानुसार एक ऋषि जो अथर्ववेद की एक शाखा के प्रवर्तक माने गये हैं।

पिप्पलाशन—वि० [पिप्पल-अशन, ब०स०] जो पीपल का फल या गूदा खाता हो।

पिप्पलि—स्त्री० [सं० पिप्पल+इन्] पीपल नामक लता और उसकी कली जो दवा के काम आती है।

पिप्पली—स्त्री० [सं० पिप्पलि+ङीष्] पीपल (लता)।

पिप्पली-खंड—पुं० [ष०त०] वैद्यक के अनुसार एक औषध जो पीपल के चूर्ण, घी, शतमूली के रस, चीनी आदि को दूध में पकाकर बनाई जाती है।

पिप्पलीमूल—पुं० [ष०त०] पीपल की जड़। पिपरामूल।

पिप्पल्यादिगण—पुं० [सं० पिप्पली-आदि, ब०स०, पिप्पल्यादि-गण, ष०त०] सुश्रुत के अनुसार ओषधियों का एक वर्ग जिसके अंतर्गत पिप्पली, चीता, अदरख, मिर्च, इलायची, अजवायन, इन्द्रजव, जीरा, सरसों, बकायन, हींग, भारंगी, अतिविषा, वच, विडंग और कुटकी हैं।

पिप्पिका—स्त्री० [सं०] दाँतों की मैल।

पिप्पीक—पुं० [सं०] एक प्रकार का पक्षी।

पिप्लु—पुं० [सं० अपि√प्लु (गति)+डु, अकार-लोप] १. समा। २. तिल।

पिय—पुं० [सं० प्रिय] १. स्त्री की दृष्टि से वह व्यक्ति जिससे वह प्रेम करती हो। प्रियतम। २. पति।

पियर†—वि० [भाव० पियरई] =पियरा (पीला)।

पियरई†—स्त्री० [हिं० पियर=पीला] पीलापन।

पियरवा†—पुं०=प्यारा।

†वि०=पीला।

पियरा†—वि० [स्त्री० पियरी] =पीला।

पियराई†—स्त्री०=पियरई (पीलापन)।

पियराना—अ० [हिं० पियरय] १. पीला पड़ना। २. पीले रंग का होना।

पियरी†—स्त्री० [हिं० पियरा] १. पीलापन। २. पीली रंगी हुई वह धोती जो प्रायः देवियों, नदियों आदि को चढ़ाई जाती है। उदा०—कोउ थाननि के थान तानि पियरी पहिरावत।—रत्ना०। ३. उक्त प्रकार की वह धोती जो वर और वधू को विवाह के समय पहनाई जाती है। ४. एक प्रकार की चिड़िया।

पियरोला—पुं० [हिं० पीयर] मैना से कुछ छोटी तथा पीले रंग की मधुर स्वरवाली एक चिड़िया।

पियली—स्त्री० [हिं० प्याली] नारियल की खोपरी का वह टुकड़ा जिसे बढ़ई आदि बरमे के ऊपरी सिरे के कांटे पर इसलिए रख लेते हैं कि छेद करने के लिए बरमा सहज में घूम सके।

पियल्ला—पुं० [हिं० पीना] दूध पीनेवाला बच्चा।

पुं०=पियरोला।

पियवास†—पुं०=पियाबाँसा (कटसरैया)।

पिया†—पुं०=पिय।

पियाज†—=प्याज।

पियाजी†—वि०=प्याजी।

पियादा†—पुं०=प्यादा।

पियाना†—स०=पिलाना। (पूरब)

पियानो—पुं० [अं०] हारमोनियम की तरह का एक प्रकार का बड़ा अंग-रेजी बाजा जो मेज के आकार का होता है।

पियाबाँसा—पुं० [हिं० पिय+बाँस] कटसरैया। कुरबक।

पियामन—पुं० [?] राजजामुन। (वृक्ष)

पियार—पुं० [सं० पियाल] मझोले आकार का एक पेड़ जो देखने में महुए की तरह का होता है। इसका फल फालसे के बराबर और गोल होता

है। बीज की गिरी बादाम और पिस्ते की तरह मीठी होती है और चिरौंजी कहलाती है।
वि०=प्यारा।
पुं०=प्यार।
पियारा†—वि०, पुं०=प्यारा।
पियाल—पुं०[सं०√पी (पीना)+कालन्, इयङ्] १. चिरौंजी का पेड़। पयार। २. उक्त पेड़ का बीज।
पुं०[सं० पाताल] १. पाताल। २. गहराई। उदा०—पैसि पियाल काली नाग नाथ्यो।—मीराँ।
†पुं०=पयाल।
पियाला†—पुं०=प्याला।
पियाव-बड़ा—पुं०[पियाव ?+बड़ा] एक तरह की मिठाई।
पियास†—स्त्री०=प्यास।
पियासा†—वि०=प्यासा।
पिया-साल—पुं०[सं० पीतसाल, प्रियसालक] बहेड़े या अर्जुन की जाति का एक प्रकार का बड़ा पेड़ जो भारतवर्ष के जंगलों में प्रायः सब जगह होता है। इसके पत्ते, छाल तथा लकड़ी कई तरह के कामों में आती है।
पियासी*—स्त्री०[?] एक प्रकार की मछली।
पियूख(ष)†—पुं०=पियूष (अमृत)।
पियौसार†—स्त्री०[पिय+शाला] विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसके पति का घर अर्थात् ससुराल।
पिरकी†—स्त्री०[सं० पिड़क, पिड़का] छोटा फोड़ा। फुंसी। (पूरब)
पिरता—पुं०[सं० पट्ट] काठ या पत्थर का वह टुकड़ा जिस पर रूई की पूनी रखकर दबाते हैं।
पिरथी†—स्त्री०=पृथ्वी।
पिरथोनाथ†—पुं०=पृथ्वीनाथ।
पिरन†—पुं०[देश०] चौपायों का लंगड़ापन।
पिराई†—स्त्री०=पियरई।
पिराक—पुं० [सं० पिष्टक, प्रा० पिट्ठक; पिड़क] [स्त्री० अल्पा० पिराकड़ी] गुझिया या गोझा नामक पकवान, जो मैदे की पतली लोई के अंदर सूजी, खोआ, मेवे आदि भरकर और उसे अर्द्धचन्द्राकार मोड़कर घी में तलकर बनाया जाता है।
पिराग†—पुं०=प्रयाग।
पिराना—अ०[सं० पीड़ा+हिं० आना (प्रत्य०)] १. (किसी अंग का) दर्द करना। पीड़ा होना। २. पीड़ा या दुःख अनुभव करना। ३. किसी को दुःखी देखकर स्वयं दुखी होना।
पिरारा†—पुं० १.=पिंडारा (साग)। २.=पिंडारी (डाकू)।
पिरिच—स्त्री० [देश०] तश्तरी विशेषतः चीनी मिट्टी की।
पिरिया—पुं०[देश०] १. कूएँ से पानी निकालने का रहँट। २. एक तरह का बाजा।
पिरीतना—अ०[सं० प्रीति] १. प्रीति या प्रेम करना। २. प्रसन्न होना। उदा०—समउ फिरें रिपु होहिं पिरीते।—तुलसी।
पिरीतम†—पुं०=प्रियतम।
पिरीता—वि०[सं० प्रीत=प्रसन्न] प्रिय।
पिरीती†—स्त्री०=प्रीति।
पिरोज—पुं०[?] १. कटोरा। २. तश्तरी।
पिरोजन—पुं०[सं० प्रयोजन] १. बालक के कान छेदने की रीति। कनछेदन। २. दे० 'प्रयोजन'।
पिरोजा†—पुं०=फीरोजा।
पिरोजी†—वि०=फीरोजी।
पिरोड़ा—स्त्री०[देश०] पीली, कड़ी मिट्टीवाली भूमि।
पिरोना—स०[सं० प्रोत; प्रा० पोइअ, प्रोअ+ना (प्रत्य०)] १. किसी छेदवाली वस्तु में धागा डालना। जैसे—सूई में धागा पिरोना। २. छेदवाली बहुत-सी वस्तुओं को एक साथ धागे में नत्थी करना। जैसे—माला पिरोना।
पिरोला—पुं०[हिं० पीला] पियरोला नामक पक्षी।
पिरोहना†—स०=पिरोना।
पिरौहाँ†—वि० [सं० पीड़ा] [स्त्री० पिरौंहीं] मन में पीड़ा उत्पन्न करनेवाला। कष्टदायक। उदा०—तब लखिमिनि दुख पूँछ पिरौहीं। —जायसी।
पिलई—स्त्री०[सं० प्लीहा] १. शरीर के अंदर का तिल्ली नामक अंग। २. ताप-तिल्ली या प्लीहा नामक रोग।
पिलक—पुं० [हिं० पीला] १. पीले रंग की एक चिड़िया जो मैना से कुछ छोटी होती है और जिसका स्वर बहुत मधुर होता है। पियरोला। जर्दक। २. अबलक कबूतर।
पिलकना—स०[सं० पिच्छिल] १. गिरना। २. ढकेलना। ३. झूलना। लटकना।
अ० १. गिरना। २. लुढ़कना।
पिलकिया—पुं० [देश०] पीलापन लिये खाकी रंग की एक तरह की छोटी चिड़िया जो पंजाब से आसाम तक दिखाई देती है।
पिलखन—पुं०[सं० प्लक्ष] पाकर वृक्ष।
पिलचना—अ० [सं० पिल=प्रेरणा] १. दो आदमियों का आपस में भिड़ना। गुथना। लिपटना। २. किसी काम में तत्पर या लीन होना।
पिलड़ी—स्त्री०[देश०] पकाया हुआ मसालेदार कीमा।
पिलहा—पुं०[फा० पलीद (गंदा) या पहलवी पलीदीह] [स्त्री० अल्पा० पिलही] १. गू। मल। विष्ठा। २. बहुत ही गन्दी या मैली चीज। ३. गंदगी। ४. वह रूप जो किसी चीज को बहुत बुरी तरह से कूटने-पीटने पर प्राप्त होता है। कचूमर।
पिलना—अ०[सं० पिल=प्रेरणा] १. वेगपूर्वक अन्दर की ओर धँसना या पठना। जैसे—सब लोग घर के अन्दर पिल पड़े। २. पूरी शक्ति से किसी काम में जुटना या लगना। ३. भिड़ जाना।
संयो० क्रि०—पड़ना।
४. ऊख, तिल आदि का पेरा जाना।
संयो० क्रि०—जाना।
पिलपिल—स्त्री०[हिं० पिलपिलाना] पिलपिल करने या होने की अवस्था या भाव।
वि०=पिलपिला।
पिलपिला—वि०[अनु०] [भाव० पिलपिलापन, स्त्री० पिलपिली] (पदार्थ) जो इतना अधिक कोमल हो कि हलका स्पर्श करने मात्र से

उसका रस या गूदा बाहर निकलने लगे। जैसे—पिलपिला आम, पिलपिला फोड़ा।

पिलपिलाना—अ०[हिं० पिलपिला] पिलपिला होना।

क्रि० प्र०—जाना।

स० इस प्रकार किसी चीज को बार-बार हल्के हाथ से दबाना कि उसका गूदा रस में परिवर्तित होकर बाहर निकलने लगे।

संयो० क्रि०—डालना।—देना।

पिलपिलाहट—स्त्री० [हिं० पिलपिला] पिलपिले होने की अवस्था या भाव। पिलपिलापन।

पिलवाना—स०[हिं० पिलाना का प्रे०] पिलाने का काम किसी दूसरे से कराना। दूसरे को पिलाने में प्रवृत्त करना।

स० [हिं० पेलना का प्रे० रूप] किसी को कुछ पेलने या पेरने में प्रवृत्त करना। जैसे—कोल्हू में तिल पिलवाना।

पिलाई—स्त्री० [हिं० पिलाना] १. (जल आदि) पिलाने की क्रिया या भाव। २. बच्चों को अपना स्तन का दूध पिलानेवाली दाई। ३. कोई तरल पदार्थ इस प्रकार उँड़ेलना कि वह नीचे के छेदों या संधियों में समा जाय। (ग्राउटिंग) जैसे—सड़कों पर अलकतरे की पिलाई। ४. गोली के खेल में, गोली को किसी विशिष्ट गड्ढे में डालने की क्रिया या भाव।

पिलाना—स०[हिं० पीना] १. किसी को कुछ पीने में प्रवृत्त करना। जैसे—किसी को दवा या पानी पिलाना। २. किसी प्रकार के अवकाश या विवर में कोई पदार्थ विशेषतः तरल पदार्थ उँड़ेलना या डालना। जैसे—किसी के कान में सीसा पिलाना। ३. कोई बात किसी के मन में अच्छी तरह जमाना या बैठाना।

संयो० क्रि०—देना।

४. गोली के खेल में, इस प्रकार गोली फेंकना कि वह किसी विशिष्ट गड्ढे में जा गिरे।

पिलुंडा†—पुं०[स्त्री० अल्पा० पिलुंडी]=पुलिंदा।

पिलुक—पुं० [सं० अपि√ला (लेना)+डु, अकार–लोप,+कन्] पीलू का पेड़।

पिलुनी—स्त्री० [सं० अपि√ला+डुन+ङीष्, अकार–लोप] मूर्वा।

पिलु-पर्णी—स्त्री०[ब०स, ङीष्] मूर्वा (लता)।

पिल्ल—पुं०[सं०√ क्लिद् (गीला होना)+ल, पिल्–आदेश] एक नेत्र-रोग जिसमें आँखों से कीचड़ बहता रहता है।

वि० जिसके नेत्रों से कीचड़ निकलता हो।

पिल्लका—स्त्री०[सं० पिल्ल√ कै (चमकना)+क+टाप्] मादा हाथी। हथिनी।

पिल्ला—पुं०[तामिल] [स्त्री० पिल्ली] कुत्ते का बच्चा।

पिल्लू—पुं०[सं० पीलु=कृमि] सफेद रंग का एक प्रकार का छोटा लंबा कीड़ा जो सड़े हुए फलों, घावों आदि में देखा जाता है। ढोला।

क्रि० प्र०—पड़ना।

पिव*—पुं०=पिय।

पिवाना—स०=पिलाना।

पिशंग—पुं०[सं०√ पिश् (अंश होना)+अंगच्] लाली लिये भूरा रंग।

वि० उक्त प्रकार के रंग का।

पिशंगक—पुं०[सं० पिशंग+कन्]१. विष्णु। २. विष्णु का अनुचर।

पिशंगिला—स्त्री० [सं० पिश√गिल् (लीलना)+ख, मुम्, टाप्] काँसा नामक मिश्र धातु।

पिशंगी (गिन्)—वि०[सं० पिशंग+इनि] पिशंग वर्ण का।

पिश—वि०[सं०√पिश्+क] १. पाप आदि न करनेवाला। पाप-रहित। २. अनेक रूपोंवाला।

पिशवाज—पुं० =पेशवाज (स्वागत)।

स्त्री०[फा० पिश्वाज़] एक तरह का घाघरा जिसे नर्तकियाँ पहनकर नाचती थीं।

पिशाच—पुं०[सं० पिश+आ√ चम् (खाना)+ड, पृषो० सिद्धि][वि० पैशाच, पैशाची] [स्त्री० पिशाचिनी, पिशाची]१. एक प्रकार के भूत या प्रेत जिनकी गणना हीन देवयोनियों में होती है तथा जो वीभत्स कर्म करनेवाले माने जाते हैं। २. उक्त के आधार पर वीभत्स तथा जघन्य कर्म करनेवाला व्यक्ति। ३. किसी काम या बात के संबंध में वैसा ही उग्र और भीषण रूप रखनेवाला जैसा पिशाचों का होता है। जैसे—अर्थ-पिशाच, बुद्धि-पिशाच। ४. कश्मीर की सीमा से प्राचीन भारत की पश्चिमोत्तर सीमा तक के प्रदेश का प्राचीन नाम।

वि० मांस खानेवाला। मांस-भोजी।

पिशाचक—पुं०[सं० पिशाच+कन्] पिशाच।

पिशाचकी (किन्)—पुं०[सं० पिशाचक+इनि] कुबेर।

पिशाचघ्न—वि०[सं० पिशाच√हन् (मारना)+ठक्] पिशाचों को नष्ट या दूर करनेवाला।

पुं०पीली सरसों जिसका प्रयोग प्रायः ओझा और तांत्रिक भूत-प्रेत की बाधा दूर करने के लिए करते हैं।

पिशाच-चर्या—स्त्री०[ष० त०] पिशाचों की तरह श्मशान आदि में घूमना।

पिशाचद्रु—पुं०[मध्य० स०] सिहोर का पेड़।

पिशाच-पति—पुं०[ष० त०] शिव।

पिशाच-बाधा—स्त्री० [मध्य०स०] वह कष्ट जो किसी पिशाच के उपद्रवों के कारण प्राप्त हो।

पिशाच-भाषा—स्त्री०[ष०त०] पैशाची नामक प्राकृत भाषा।

पिशाच-मोचन—पुं०[ष०त०]१. वह स्थान जहाँ पिंडदान करने से मृत व्यक्तियों की पिशाच-योनि से मुक्ति होती है। २. काशी का एक प्रसिद्ध तालाब जिसके किनारे पिंडा पारा जाता है। प्रसिद्ध है कि यहाँ पिंड-दान करने से जीवात्मा की पिशाच-योनि से मुक्ति हो जाती है।

पिशाच-संचार—पुं०[ष०त०] किसी के शरीर में पिशाच का होनेवाला वह संचार जिसके फलस्वरूप वह पिशाचों के-से घृणित और जघन्य कार्य करने लगता है।

पिशाचांगना—स्त्री०[पिशाच-अंगना, ष०त०] पिशाच प्रदेश की स्त्री।

पिशाचालय—पुं० [पिशाच-आलय, ष० त०] वह स्थान जहाँ फास्फोरस के कारण अंधेरे में प्रकाश होता है, और इसी लिए जिसे लोग पिशाचों के रहने का स्थान समझते हों।

पिशाचिका—स्त्री० [सं० पिशाच+ङीष्+कन्+टाप्,ह्रस्व] १. पिशाच-योनि की स्त्री। २. छोटी जटामासी।

पिशाची—स्त्री०[पिशाच+ङीष्]१. पिशाच स्त्री। २. जटामासी।

†स्त्री०=पैशाची।

पिशिक—पुं०[सं०] एक प्राचीन देश। (बृहत्संहिता)

पिशित—पुं०[सं०√ पिश्+क्त] १. मांस। गोश्त। २. मांस का टुकड़ा या बोटी।

पिशिता—स्त्री०[सं० पिशित+टाप्] जटामासी।

पिशिताशन—पुं०[सं० पिशित-अशन, ब०स०] १. वह जो मनुष्यों को खाता हो। २. राक्षस। ३. भेड़िया।

पिशिनी—स्त्री० दे० 'पिशी'।

पिशी—स्त्री०[सं०√ पिश्+क+ङीप्] जटामासी।

पिशील—पुं०[सं० √ पिश्+ईल] मिट्टी का प्याला या कटोरा। (शतपथ ब्रा०)

पिशुन—वि०[सं०√ पिश्+उनन्] [भाव० पिशुनता] १. नीच। २. क्रूर। ३. चुगलखोर।

पुं० १. वह प्रेत जो गर्भिणी स्त्रियों को बाधा पहुँचाता हो। २. एक की दूसरे से बुराई करके दो पक्षों में लड़ाई करानेवाला व्यक्ति। ३. केसर। ४. तगर। ५. कपास। ६. नारद। ७. कौआ।

पिशुनता—स्त्री०[सं० पिशुन+तल्+टाप्] १. पिशुन होने की अवस्था या भाव। २. चुगलखोरी। ३. असवर्ग।

पिशुन-वचन—पुं०[ष०त०] चुगली।

पिशुना—स्त्री०[सं० पिशुन+टाप्] चुगलखोरी।

पिशोन्माद—पुं०[ब०स०] वैद्यक में, एक प्रकार का उन्माद या पागलपन जिसमें रोगी प्रायः ऊपर को हाथ उठाये रहता, अधिक बकता और रोता तथा गन्दा या मैला-कुचैला बना रहता है।

पिशोर—पुं०[देश०] हिमालय में होनेवाली एक प्रकार की झाड़ी जिसकी पतली, लचीली टहनियाँ बोझ बाँधने तथा टोकरे आदि बनाने के काम आती हैं।

पिष्ट—वि०[सं०√ पिष् (पीसना)+क्त] १. पिसा या पीसा हुआ। चूर्ण किया हुआ। २. निचोड़ा हुआ।

पुं० १. पानी के साथ पिसा हुआ अन्न, विशेषतः दाल। पीठी। २. कोई ऐसा पकवान जिसके अन्दर पीठी भरी हो। ३. सीसा।

पिष्टक—पुं०[सं० पिष्ठ+कन्] १. पिष्ट अर्थात् पीठी का बना हुआ खाद्य पदार्थ। २. तिल का चूर्ण। ३. फूली नामक नेत्र रोग।

पिष्ट-पचन—पुं०[ष० त०] १. कड़ाही। २. तवा।

पिष्ट-पशु—पुं०[ष० त०] बलि चढ़ाने के काम के लिए गुँधे हुए आटे का बनाया हुआ पशु।

पिष्ट-पाचक—पुं०[ष०त०] कड़ाही या तवा जिसपर पीसी हुई चीजें पकाई जाती हैं।

पिष्ट-पिंड—पुं०[ष० त०] बाटी नामक पकवान। लिट्टी।

पिष्ट-पूर—पुं०[सं० पिष्ट√पूर् (पूर्णकरना)+णिच्+अच्] =**घृतपूर।**

पिष्ट-पेषण—पुं०[ष० त०] १. पीसी हुई चीज को फिर से पीसना। २. उक्त के आधार पर ठीक तरह से पूरे किये हुए कार्य को फिर उसी तरह दोहराकर व्यर्थ परिश्रम करना जिस प्रकार पीसी हुई चीज को फिर से पीसने का व्यर्थ परिश्रम किया जाता है।

पिष्ट-प्रमेह—पुं०[ष० त०] वैद्यक में, एक प्रकार का प्रमेह जिसमें मूत्र के साथ चावल के पानी के समान तरल पदार्थ गिरता है।

पिष्ट-मेह—पुं०[ष० त०]=पिष्ट प्रमेह।

पिष्टवर्ति—स्त्री०[सं० पिष्ट√वृत् (बरतना)+इन्] किसी अन्न-चूर्ण का बना हुआ पिंड।

पिष्ट-सौरभ—पुं० [ब०स०] पीसे जाने पर सुगंध छोड़नेवाला चंदन।

पिष्टात—पुं०[सं० पिष्ट√अत् (गति)+अच्] अबीर। बुक्का।

पिष्टातक—पुं०[सं० पिष्टात+कन्] अबीर। बुक्का।

पिष्टाद—वि०[सं० पिष्ट√अद् (खाना)+अण्] जो अन्न-चूर्ण खाता हो।

पिष्टान्न—पुं०[पिष्ट-अन्न, कर्म० स०] पीसे हुए अन्न से बना हुआ पकवान।

पिष्टि—स्त्री०[सं०√ पिश्+क्तिन्] १. पीसा हुआ अन्न। अन्न-चूर्ण। २. पीठी।

पिष्टिक—पुं०[सं० पिष्ट+ठन्—इक] चावल की पीठी।

पिष्टोदक—पुं०[पिष्ट-उदक, मध्य० स०] ऐसा जल जिसमें पीसा हुआ अन्न मिला या मिलाया गया हो।

पिष्षना*—स०=पेखना।

पिसंग—वि०, पुं०=पिशंग।

पिसनहारा—पुं०[हिं० पीसना+हारा (प्रत्य०)] [स्त्री० पिसनहारी] वह व्यक्ति जो अन्न पीसकर अपनी जीविका चलाता हो।

पिसना—अ०[हिं० पीसना का अ०] १. पीसा जाना। २. बहुत बुरी तरह से इस प्रकार कुचला या दबाया जाना कि बहुत छोटे-छोटे खंड हो जायँ। ३. किसी प्रकार के कष्ट, संकट आदि में पड़ने के कारण अथवा बहुत अधिक परिश्रम आदि के कारण थककर चूर या परम शिथिल हो जाना। जैसे—दिन भर कार्यालय में काम करते करते वह पिसा जाता था।

संयो० क्रि०—जाना।

४. शोषित किया जाना। शोषित होना।

पिसर—पुं०[फा०] पुत्र। बेटा। लड़का।

पिसरे मुतबन्ना—पुं० [फा०] दत्तक पुत्र।

पिसवाज†—स्त्री०=पेशवाज।

स्त्री०[फा० पिश्वाज] नर्तकियों के पहनने का लँहगा।

पिसवाना—स०[हिं० पीसना का प्रे०] किसी को कुछ पीसने में लगाना या प्रवृत्त करना।

पिसाई—स्त्री०[हिं० पीसना] १. पीसने की क्रिया, भाव या मजदूरी। २. चक्की पीसने का व्यवसाय। ३. चक्की पीसने पर मिलनेवाला पारिश्रमिक। ४. वह अवस्था जिसमें आदमी को बहुत अधिक परिश्रम करते-करते थककर चूर हो जाना पड़ता है। जैसे—दिन भर कार्यालय में पिसाई करने पर संध्या को थका-माँदा घर आता था।

पिसाच†—पुं०=पिशाच।

पिसान—पुं०[हिं० पिसना+अन्न] पीसा हुआ अन्न, विशेषतः गेहूँ या जौ का आटा।

पिसाना—स०=पिसवाना।

†अ०=पिसना।

पिसानी†—स्त्री०=पेशानी (ललाट)।

पिसिया—पुं०[हिं० पिसना] एक तरह का लाल रंग का गेहूँ।

स्त्री० आटा पीसकर अर्थात् चक्की चलाकर जीविका चलाने का काम।

पिसी†—स्त्री०[हिं० पिसना] एक तरह का सफेद रंग का गेहूँ।

पिसुन†—वि०, पुं०=पिशुन।

पिसुराई—स्त्री० [देश०] सरकंडे का वह छोटा टुकड़ा जिस पर रूई लपेट-कर पूनियाँ बनाते हैं।

पिसूरी—पुं० [?] भूरे रंग का एक प्रकार का बहुत छोटा हिरन जो मध्य-प्रदेश, उड़ीसा, लंका और दक्षिणी भारत के जंगलों में अधिकता से पाया जाता है। इसके बाल घने, पतले और मुलायम होते हैं।

पिसेरा†—पुं०=पिसूरी (हिरन)।

पिसौनी*—स्त्री० [हिं० पीसना] १. पीसने की क्रिया या भाव। २. दे० 'पिसाई'।

पिस्टल—स्त्री० [अं०] पिस्तौल।

पिस्तई—वि० [हिं० पिस्ता] पिस्ते के रंग का। पीलापन लिए हरे रंग का। जैसे—पिस्तई धोती।

पुं० उक्त प्रकार का रंग।

पिस्ताँ—पुं० [सं० पयस्तन से फा०] स्त्री का स्तन। छाती।

पिस्ता—पुं० [फा० पिस्तः] १. एक प्रकार का छोटा पेड़ जो इराक और अफगानिस्तान आदि देशों में होता है और जिसके फल की गिरी मेवों में गिनी जाती है। २. उक्त के फलों की गिरी जो बहुत स्वादिष्ट होती है।

पिस्तौल—स्त्री० [अं० पिस्टल] गोली चलाने की एक प्रकार की छोटी जेबी बंदूक। तमंचा।

पिस्सी—स्त्री०=पिसी। (दे०)

पिस्सू—पुं० [फा० पश्शः] १. एक प्रकार का छोटा उड़नेवाला कीड़ा जो मच्छर की तरह शरीर का रक्त चूसता है। २. मच्छर।

पिहकना—अ० [अनु०] कोयल, पपीहे, मोर आदि का पी पी या पिट्ट पिट्ट् करके चहकना या बोलना।

पिहान—पुं० [सं० पिधान] [स्त्री० अल्पा० पिहानी] ढक्कन। ढकना।

पिहानी—स्त्री० [हिं० पिहान] १. छोटा ढक्कन। २. ऐसी गुप्त बात जो दूसरों से छिपाई जाय।

पिहित—वि० [सं० अपि√धा (धारण करना)+क्त, अकार—लोप] १. ढका हुआ। २. छिपा हुआ। गुप्त।

पुं० साहित्य में एक अर्थालंकार जिसमें ऐसी क्रिया का वर्णन होता है जिसके द्वारा यह जतलाया जाता है कि हमने आपके मन का गुप्त भाव ताड़ लिया है।

पिहुआ†—पुं० [देश०] एक प्रकार का पक्षी।

पिहोली—पुं० [देश०] एक प्रकार का पौधा जो मध्यप्रदेश में और बरार से बंबई तक होता है। इसकी पत्तियाँ सुगंधित होती हैं जिनसे इत्र बनता है। इसे पिचौली भी कहते हैं।

पींग—स्त्री० [हिं० पेंग] १. पेड़ की डाल में रस्सा लटकाकर बनाया जाने-वाला झूला। (पश्चिम) २. दे० 'पेंग'।

पींजन—पुं० [सं० पिंजन] भेड़ों के बाल धुनने की धुनकी।

पींजना—स० [सं० पिंजन=धुनकी] रूई धुनना। पिंजना।

पुं०†=धुनिया।

पींजर—पुं० १. दे० 'पिंजड़ा'। २. दे० 'पंजर'।

पींजरा—पुं०=पिंजरा।

पींड—पुं० [सं० पिंड] १. वृक्ष का धड़। तना। पेड़ी। २. कटहल के पुराने पेड़ों की जड़ और तने के बीच का वह अंश जो जमीन में रहता है तथा जिसमें फल लगते हैं जो खोदकर निकाले जाते हैं। ३. कोल्हू के चारों ओर गीली मिट्टी का बनाया हुआ घेरा जिससे ईख की अंगरियाँ या छोटे टुकड़े छटककर बाहर नहीं निकल सकते। ४. चरखे का मध्य-भाग। बेलन। ४. दे० 'पिंड'। ५. दे० 'पिंड खजूर'।

पींडी†—स्त्री० १.=पिंडी। २. पिंडली।

पींडुरी†—स्त्री०=पिंडली।

पी†—पुं० दे० 'पिय'।

पुं० [अनु०] पपीहे के बोलने का शब्द।

पीऊ—पुं०=पिय (प्रियतम)।

वि० =परमप्रिय।

पीक—स्त्री० [सं० पिच्च] १. चबाये हुए पान का वह रस जो थूका जाता है। पान की थूक। २. वह रंग जो कपड़े को पहली बार रंग में डुबाने से चढ़ता है। (रंगरेज)

वि० [?] ऊँचा-नीचा। ऊबड़-खाबड़। (लश०)

पीकदान—पुं० [हिं० पीक+फा० दान= पात्र] वह पात्र जिसमें पीक थूकी जाती है। उगालदान।

पीकना—अ० [पी-पी से अनु०] पीपी शब्द करना। जैसे—पपीहे का पीकना।

पीका—पुं० [?] वृक्ष का नया कोमल पत्ता। कल्ला। कोंपल।

क्रि० प्र०—पनपना।—फूटना।

पीच—स्त्री० [सं० पिच्च] वह लसीला तरल पदार्थ जो चावल उबालने पर बच रहता है। माँड़।

पुं० [अं० पिच] अलकतरा।

स्त्री०=पीक (पान की)।

पीचना†—अ० [सं० पिच्च] पैरों से कुचलना या रौंदना।

पीचू—पुं० [देश०] १. चीलू या जरदालू का पेड़। २. करील का पका हुआ फूल। कचरा टेंटी।

पीछ—स्त्री० [हिं० पीछे या पिछला] पक्षी की दुम। पूँछ।

†स्त्री०=पीच (माँड़)।

पीछा—पुं० [सं० पश्चात्; फा० पच्छा] १. किसी व्यक्ति के शरीर का वह भाग जो उसकी छाती, पेट, मुँह आदि की विपरीत दिशा में पड़ता है। पीठ की ओर का भाग। पृष्ठ भाग। 'आगा' का विपर्याय। २. किसी चीज के पीछे की ओर का विस्तार।

मुहा०—**(किसी का) पीछा करना**=(क) किसी को पकड़ने, भागने, मारने-पीटने आदि के लिए अथवा उसका पता लगाने या भेद लेने के लिए उसके पीछे-पीछे तेजी से चलना या दौड़ना। जैसे—अपराधी, चोर या शिकार का पीछा करना। (ख) किसी का भेद या रहस्य जानने के लिए छिपकर उसके पीछे-पीछे चलना। जैसे—वह जहाँ जाता था, वहीं पुलिस उसका पीछा करती थी। (ग) दे० नीचे 'पीछा पकड़ना'। **(किसी काम या बात से) पीछा छुड़ाना**=अपने साथ होनेवाली किसी अनिष्ट या अप्रिय बात से अपना सम्बन्ध छुड़ाना। पिंड छुड़ाना। जैसे—अफीम या शराब की लत से पीछा छुड़ाना। **(किसी व्यक्ति से) पीछा छुड़ाना** =जो व्यक्ति किसी काम या बात के लिए पीछे पड़कर बहुत तंग कर रहा हो, उससे किसी प्रकार छुटकारा पाना। **पीछा छूटना**=(क) पीछा करनेवाले या पीछे पड़े हुए व्यक्ति से छुटकारा मिलना। पिंड छूटना। जान छूटना। (ख) अनिष्ट अथवा अप्रिय काम या बात

से छुटकारा मिलना (ग)। किसी प्रकार का या किसी रूप में छुटकारा मिलना। बचाव या रक्षा होना। जैसे—महीनों बाद बुखार से पीछा छूटा है। **(किसी व्यक्ति का) पीछा छूटना**=किसी का पीछा करने का काम बंद करना। किसी आशा या प्रयोजन से किसी के साथ लगे फिरने या उसके पीछे-पीछे दौड़ने या उसे तंग करने का काम बंद करना। **(किसी काम या बात का) पीछा छोड़ना**=जिस काम या बात में बहुत अधिक उत्साह या तन्मयता से लगे रहे हों, उससे विरत होना अथवा उसका आसंग या ध्यान छोड़ना। **पीछा दिखाना**=(क) सम्मुख या साथ न रहकर अलग या दूर हो जाना। पीठ दिखाना। जैसे—संकट के समय संगी-साथियों ने भी पीछा दिखाया। (ख) प्रतियोगिता, लड़ाई-झगड़े आदि में डर या हारकर भाग जाना। पीठ दिखाना। **पीछा देना**=दे० ऊपर 'पीछा दिखाना'। **(किसी का) पीछा पकड़ना**=किसी आशा से या अपने कोई उद्देश्य सिद्ध करने के लिए किसी का अनुचर या साथी बनना। किसी के आश्रय या सहायता का आकांक्षी बनकर प्रायः उसके साथ लगे रहना। जैसे—किसी रईस का पीछा पकड़ना। **(किसी काम या बात का) पीछा भारी होना**= (क) पीछे की ओर शत्रु या संकट की आशंका या भय होना। (ख) अधिक उपयोगी या सहायक अंश का पीछे की ओर आधिक्य होना। (ग) किसी काम के अंतिम या शेष अंश का अधिक कठिन या अधिक कष्टसाध्य होना। पिछला अंश ऐसा होना कि सँभलना कठिन हो।

३. पीछे-पीछे चलकर किसी के साथ लगे रहने की क्रिया या भाव। जैसे—बड़े का पीछा है; कुछ न कुछ दे ही जायगा। उदा०—प्रभु मैं पीछौ लियो तुम्हारौ।—सूर। ४. पहनने के वस्त्रों आदि का वह भाग जो पीछे अथवा पीठ की ओर रहता है। जैसे—इस कोट का पीछा ठीक नहीं सिला है।

पीछू†—अव्य०=पीछे।

पीछे—अव्य० [हिं० पीछा] १. जिस ओर या जिस दिशा में किसी का पीछा या पीठ हो, उस ओर या उस दिशा में। किसी के मुख या सामनेवाली दिशा की विपरीत दिशा में। 'आगे' और 'सामने' का विपर्याय। जैसे—(क) हम लोग सभापति के पीछे बैठे थे। (ख) मकान के पीछे बहुत बड़ा मैदान था।

विशेष—इस अर्थ में उक्त ओर या दिशा में होनेवाले विस्तार का भाव भी निहित है; और इसके अधिकतर मुहा० इसी आधार पर बने हैं।

मुहा०—**(किसी के) पीछे चलना**=किसी का अनुगामी या अनुयायी बनना। अनुकरण करना। जैसे—आज-कल तो जो नेता बन सके, उसी के पीछे हजारों आदमी चलने लगते हैं। **(किसी चीज या व्यक्ति का) पीछे छूटना**=किसी की तुलना में या किसी के विचार से पीछे की ओर रह जाना। जैसे—(क) यात्रियों में से कुछ लोग पीछे छूट गये थे। (ख) हम लोग बातें करते हुए आगे बढ़ गए, और उनका मकान पीछे छूट गया। **(किसी काम या बात में, किसी के) पीछे छूटना या रह जाना**=उन्नति, गति, दौड़ प्रतियोगिता आदि में किसी से घटकर या कम योग्यता का सिद्ध होना। किसी की तुलना में पिछड़ा हुआ सिद्ध होना। जैसे—आणविक आविष्कारों के क्षेत्र में बहुत से देश अमेरिका और रूस से पीछे छूट गये हैं। (इस मुहा० में 'छूटना' के साथ संयो० क्रि० 'जाना' का प्रयोग प्रायः अनिवार्य रूप से होता है। **(किसी का किसी व्यक्ति के) पीछे छूटना या लगना**=किसी भागे हुए आदमी को पकड़ने के लिए या किसी का भेद, रहस्य आदि जानने के लिए किसी का नियुक्त किया जाना या होना। जैसे—डाकुओं का पता लगाने के लिए बीसियों जासूस (या सिपाही, उनके पीछे छूटे (या लगे) थे। **(किसी काम या बात में किसी को) पीछे छोड़ना**=किसी विषय में औरों से बढ़कर इस प्रकार आगे हो जाना कि और लोग उसकी तुलना में न आ सकें या बराबरी न कर सकें। कौशल, योग्यता सामर्थ्य आदि में औरों से आगे बढ़ जाना। जैसे—अपने काम में वह बहुतों को पीछे छोड़ गया है। **(किसी को किसी के) पीछे छोड़ना, भेजना या लगाना**= (क) जासूस या भेदिया बनाकर किसी को किसी के साथ लगाना। भेदिया नियुक्त करना या साथ लगाना। (ख) भागे हुए व्यक्ति को पकड़कर लाने के लिए कुछ लोगों को नियुक्त करना। **(किसी को किसी के) पीछे डालना**= दे० ऊपर (किसी के) 'पीछे छोड़ना, भेजना या लगाना'। **(धन) पीछे डालना**=भविष्यत् की आवश्यकता के लिए खर्च से बचाकर कुछ धन एकत्र करके रखना। आगे के लिए संचय करना। जैसे—हर महीने दस-पाँच रुपए बचाकर पीछे भी डालते चलना चाहिए। **(किसी काम या व्यक्ति के) पीछे दौड़ना या दौड़ पड़ना**=बिना सोचे-समझे किसी काम या बात में लग जाना या किसी का अनुगामी अथवा अनुयायी बनना। **(किसी को किसी के) पीछे दौड़ाना**=गये या जाते हुए आदमी को बुला या लौटा लाने या उसे कोई संदेशा पहुँचाने के लिए किसी को उसके पीछे भेजना। **(किसी काम या बात के) पीछे पड़ना या पड़ जाना** = किसी काम को कर डालने पर तुल जाना। किसी कार्य के लिए बहुत परिश्रमपूर्वक निरंतर उद्योग करते रहना। (कुछ कुत्सित या हीन भाव का सूचक) जैसे—तुम्हारी यह बहुत बुरी आदत है कि तुम हर काम या बात) के पीछे पड़ जाते हो। **(किसी व्यक्ति के) पीछे पड़ना**=(क) कोई काम करने के लिए किसी से बहुत आग्रहपूर्वक और बार बार कहना। (ख) किसी को बहुत अधिक तंग, दुःखी या परेशान करने के लिए अथवा किसी का बहुत अधिक अपकार, अहित या हानि करने के लिए कटिबद्ध होना। **(किसी के) पीछे लगना**= (क) किसी का अनुगामी या अनुयायी बनना। किसी का अनुकरण करना। (ख) दे० ऊपर (किसी काम, बात या व्यक्ति के) 'पीछे पड़ना'। **(किसी व्यक्ति को अपने) पीछे लगाना**= किसी को अपना अनुगामी या अनुयायी बनाना। **(कोई काम या बात अपने) पीछे लगाना**= कोई काम या बात इस प्रकार घनिष्ठ रूप में अपने साथ सम्बद्ध करना कि सहसा उससे बचाव, रक्षा या विरक्ति न हो सके। जान-बूझकर ऐसे काम या बात से सम्बद्ध होना जिससे तंग, दुःखी या परेशान होना पड़े। जैसे—तुमने यह व्यर्थ का झगड़ा अपने पीछे लगा लिया है। **(किसी व्यक्ति को किसी के) पीछे लगाना**=किसी का भेद या रहस्य जानने अथवा किसी को तंग, दुःखी या परेशान करने के लिए किसी दूसरे व्यक्ति को उत्साहित या नियत करना। जैसे—वे तो चुपचाप घर बैठे हैं, पर अपने आदमियों को उन्होंने हमारे पीछे लगा दिया है। **(कोई काम या बात किसी के) पीछे लगाना** = कोई काम या बात इस प्रकार किसी के साथ सम्बद्ध करना कि वह उससे तंग, दुःखी या परेशान हो; अथवा सहज में अपना बचाव या रक्षा न कर सके। जैसे—बीड़ी पीने की लत तुम्हीं ने उसके पीछे लगा दी है।

२. अनुपस्थित या अविद्यमान होने की अवस्था में। किसी के सामने न रहने की दशा में । जैसे—किसी के पीछे उसकी बुराई करना बहुत अनुचित है।

पद—पीठ पीछे= दे० 'पीठ' के अन्तर्गत यह पद ।

३. किसी के इस लोक में न रह जाने की दशा में । मर जाने पर । मरणोपरांत। जैसे—आदमी के पीछे उसका नाम ही रह जाता है। ४. कोई काम, घटना या बात हो चुकने पर, उसके बाद। उपरांत। फिर। जैसे—पहले तो उन्होंने बहुत धन गँवाया था, पर पीछे वे संभल गये थे।

विशेष—इस अर्थ में कभी कभी यह 'पीछे को' या 'पीछे से' के रूप में भी प्रयुक्त होता है। जैसे—पीछे को (या पीछे से) हमें दोष मत देना।

५. कालक्रम, देश आदि के विचार से किसी के पश्चात् या उपरांत। घटना या स्थिति के विचार से किसी के अनंतर, कुछ दूर या कुछ देर बाद। उपरांत। पश्चात् । जैसे—सब लोग एक पंक्ति में एक दूसरे के पीछे चल रहे थे। ६. किसी के अर्थ से, कारण या खातिर। निमित्त। लिए। वास्ते। जैसे—तुम्हारे पीछे ही मैं ये सब कष्ट सह रहा हूँ। ७. प्रति इकाई के विचार या हिसाब से। जैसे—अब आदमी पीछे पाव भर आटा पड़ता या मिलता है।

पीटन†—पुं०=पिटना।

पीटना—स०[सं० पीडन] १. किसी जीव पर उसे चोट पहुँचाने अथवा सजा देने के उद्देश्य से किसी चीज से जोर से आघात करना। जैसे—लड़के को छड़ी से पीटना। २. किसी पदार्थ पर इस प्रकार किसी भारी चीज से निरंतर आघात करना कि उसमें कुछ विशिष्ट विकार आ जाय। जैसे—(क) दुरमुस से कंकड़ पीटना। (ख) पिटने से कपड़ा पीटना। (ग) हथौड़ी से पत्तर पीटना। ३. घोर दुःख, व्यथा या शोक प्रदर्शित करने के लिए दोनों हाथों की हथेलियों से अपने किसी अंग पर जोरों से आघात करना। जैसे—छाती, मुँह या सिर पीटना। ४. चौसर, शतरंज आदि के खेलों में, विपक्षी की गोट या मोहरा मारना। जैसे—हाथी, घोड़ा या प्यादा पीटना ५. जैसे-तैसे किसी से कुछ प्राप्त या वसूल करना। ६. जैसे-तैसे कोई काम पूरा करना।

पुं०१. मृत्यु-शोक। मातम। विलाप। जैसे—यहाँ यह कैसा पीटना पड़ा हुआ है ! २. आपद। मुसीबत।

पीठ—पुं०[सं० पा√ (पीना) +ठक्, पृषो०दीर्घ] १.लकड़ी, पत्थर या धातु का बना हुआ बैठने का आधार या आसन। जैसे—चौकी, पीढ़ा, सिंहासन आदि। २. विद्यार्थियों, व्रतधारियों आदि के बैठने के लिए बना हुआ कुश का आसन। ३. नीचे वाला वह आधार जिस पर मूर्ति रखी या स्थापित की जाती है। ४. वह स्थान जहाँ बैठकर किसी प्रकार का उपदेश, शिक्षा आदि दी जाती हो। जैसे—धर्म-पीठ, विद्या-पीठ, व्यासपीठ आदि । ५. किसी बड़े अधिकारी या सम्मानित व्यक्ति के बैठने का स्थान, आसन और पद। (चेयर) जैसे—(क) अमुक विद्यालय में हिन्दी की उच्च शिक्षा के लिए एक पीठ स्थापित हुआ है। (ख) आपको जो कुछ कहना हो वह पीठ को संबोधित कर कहें। ६. न्यायाधीश अथवा न्यायाधीशों का वर्ग। (बेंच) ७. बैठने का एक विशिष्ट प्रकार का आसन, ढंग या मुद्रा। ८. राजसिंहासन। ९. वेदी। १०. प्रदेश। प्रान्त। ११. उन अनेक तीर्थों या पवित्र स्थानों में से प्रत्येक जहाँ पुराणानुसार दक्ष-कन्या सती का कोई अंग या आभूषण विष्णु के चक्र से कटकर गिरा था।

विशेष—भिन्न-भिन्न पुराणों में ऐसे स्थानों की संख्या ५१, ५३, ७७ या १०८ कही गई है। इनमें से कुछ को उप-पीठ और कुछ को महापीठ कहा गया है। तांत्रिकों का विश्वास है कि ऐसे स्थानों पर साधना करने से सिद्धि बहुत शीघ्र प्राप्त होती है। प्रत्येक पीठ में एक-एक शक्ति और एक एक भैरव का निवास माना जाता है ।

१२. कंस का एक मंत्री। १३. एक असुर। १४. गणित में वृत्त के किसी अंग का पूरक ।

स्त्री०[सं० पृष्ठ] प्राणियों के शरीर का वह भाग जो उनके सामनेवाले अंगों अर्थात् छाती, पेट आदि की विपरीत दिशा में या पीछे की ओर पड़ता है और जिसमें लंबाई के बल रीढ़ होती है। पृष्ठ। पुश्त।

विशेष—यह भाग गरदन के नीचेवाले भाग से कमर तक (अर्थात् रीढ़ की अंतिम गुरिया तक) विस्तृत होता है। मनुष्यों में यह भाग सदा पीछे की ओर रहता है; और कीड़े-मकोड़ों, चौपायों आदि में ऊपर या आकाश की ओर। पशुओं के इसी भाग पर सवारी की जाती और माल लादा जाता है; इसलिए इसके कुछ पद और मुहावरे इस तत्त्व के आधार पर भी बने हैं। यह भाग पीछे की ओर होता है। इसलिए इसके कुछ पदों और मुहा० में परवर्ती पिछले या बादवाले होने का तत्त्व या भाव भी निहित है। इसके सिवा इसमें सहायक, साथी आदि के भाव भी इसलिए सम्मिलित हैं कि वे प्रायः पीछे की ओर ही रहते हैं।

पद—पीठ का—दे० नीचे 'पीठ पर का'। **पीठ का कच्चा**=(घोड़ा) जो देखने में हृष्ट-पुष्ट और सजीला हो, पर सवारी का काम ठीक तरह से न देता हो। **पीठ का सच्चा**= (घोड़ा) जो सवारी का ठीक और पूरा काम देता हो। **पीठ पर**=एक ही माता द्वारा जन्मे, क्रम में किसी के तुरन्त बाद या पीछे। जैसे—इस लड़के के पीठ पर यही लड़की हुई थी। **पीठ पर का**=जन्म-क्रम में अपने सहोदर या सहोदरा के तुरन्त बाद का। ठीक उपरान्त का। जैसे—इस लड़की की पीठ पर का यही लड़का है। **(किसी के) पीठ पीछे**= किसी की अनुपस्थिति, अविद्यमानता या परोक्ष में। किसी के सामने न रहने की दशा में। किसी के पीछे। जैसे—किसी के पीठ-पीछे उसकी निन्दा नहीं करनी चाहिए।

मुहा०—(किसी की) पीठ खाली होना=पोषक या सहायक से रहित अथवा हीन होना। कोई सहारा देनेवाला या हिमायती न होना। जैसे—उसकी पीठ खाली है; इसी लिए उस पर इतने अत्याचार होते हैं। **(किसी की) पीठ ठोंकना**=(क) कोई अच्छा काम करने पर कर्ता की पीठ थपथपाते हुए या यों ही उसका अभिनन्दन या प्रशंसा करना, (ख) किसी को किसी काम में प्रवृत्त करने के लिए उत्साहित करना, (ग) दे० नीचे 'पीठ थपथपाना'। **पीठ थपथपाना**=पशुओं आदि के विशेष परिश्रम करने पर उन्हें उत्साहित करने तथा धैर्य दिलाने के लिए अथवा क्रुद्ध होने अथवा बिगड़ने पर शांत करने के लिए उनकी पीठ पर हथेली से धीरे धीरे थपकी देना। **(किसी को) पीठ दिखाकर जाना**= ममता, स्नेह आदि का विचार छोड़कर कहीं दूर चले जाना। जैसे—प्रेमी का

प्रेमिका को पीठ दिखाकर जाना, या मित्र का अपने बंधुओं और स्नेहियों को पीठ दिखाकर जाना। **पीठ दिखाना**=प्रतियोगिता, लड़ाई-झगड़े आदि के समय सामने न ठहर सकने के कारण पीछे हटना या भाग जाना। दबने के कारण मैदान छोड़कर सामने से हट जाना। जैसे—दो ही दिन की लड़ाई में शत्रु पीठ दिखाकर भाग खड़े हुए। **पीठ देना**=(क) चारपाई या बिस्तर पर पीठ रखना। लेट कर आराम करना। जैसे—लड़के की बीमारी के कारण इन दिनों पीठ देना मुश्किल हो गया है। (ख) दे० नीचे 'पीठ फेरना'। **(किसी की ओर) पीठ देना**=किसी की ओर पीठ करके बैठना। **पीठ पर खाना**=भागते हुए मार खाना। भागने की दशा में पिटना। (कायरता का सूचक) जैसे—पीठ पर खाना मरदों का काम नहीं है। **पीठ पर हाथ फेरना**=दे० ऊपर 'पीठ ठोंकना'। **(किसी का किसी की) पीठ पर होना**=जन्म-क्रम में अपने किसी भाई या बहन के पीछे होना। अपने सहोदरों में से किसी के ठीक पीछे जन्म ग्रहण करना। **(किसी का) पीठ पर होना**=सहायक होना। सहायता के लिए तैयार होना। मदद या हिमायत पर होना। जैसे—आज मेरी पीठ पर कोई नहीं है, इसी लिए न तुम इतना रोब जमाते हो। **पीठ फेरना**=(क) कहीं से प्रस्थान करना। बिदा होना। (ख) ममता, स्नेह आदि का ध्यान छोड़कर अलग या दूर होना। (ग) अरुचि, उदासीनता आदि प्रकट करते हुए विमुख या विरत होना। अलग, किनारे या दूर होना। (घ) सामने से भाग या हट जाना। **पीठ मींजना**=दे० ऊपर 'पीठ ठोंकना'। **(चारपाई से) पीठ लग जाना**=बीमारी के कारण उठने-बैठने में असमर्थ हो जाना। जैसे—अब तो चारपाई से पीठ लग गई है, वे उठ-बैठ भी नहीं सकते। **(किसी व्यक्ति की) पीठ लगना**=कुश्ती में हारकर चित्त होना। पटका जाना। पछाड़ा जाना। **(किसी पशु की) पीठ लगना**=काठी, चारजामे, जीन आदि की रगड़ के कारण पीठ पर घाव होना। जैसे—जिस घोड़े की पीठ लगी हो, उस पर सवारी नहीं करनी चाहिए। **(चारपाई से) पीठ लगना**=आराम करने के लिए लेटने की स्थिति में होना। **(किसी व्यक्ति की) पीठ लगाना**=कुश्ती में गिरा, पछाड़ या पटक कर चित्त करना है।

२. पहनने के कपड़ों का वह भाग जो पीठ की ओर रहता या पीठ पर पड़ता है। ३. आसन आदि में वह भाग जो पीठ के सहारे के लिए बना रहता है। जैसे—कुरसी की पीठ खराब हो गई है, उसे बदलवा दो। ४. किसी वस्तु की रचना में, उसके अगले, ऊपरी या सामनेवाले भाग का विपरीत भाग। साधारणतः काम में आने या सामनेवाले भाग से भिन्न और पीछेवाला भाग। जैसे—(क) पत्र की पीठ पर पता भी लिख दो। (ख) पदक की पीठ पर उसके दाता का नाम भी खुदा हुआ था। ५. पुस्तक का वह भाग जिसमें अन्दर के पृष्ठों की सिलाई रहती है और जो उसे अलमारी में खड़ी करके रखने पर सामने की ओर रहता है। पुट्ठा। जैसे—पुस्तक की पीठ पर सुनहले अक्षरों में उसका नाम छपा था।

पीठक—पुं० [सं० पीठ+कन्] १. वह चीज जिसपर बैठा जाय। जैसे—कुरसी, चौकी, पीढ़ा आदि। २. एक तरह की पालकी।

पीठ-केलि—पुं० [ब० स०] १. विश्वसनीय व्यक्ति। २. वह जो दूसरों का पोषण करता हो।

पीठ-गर्भ—पुं० [ष० त०] वह गड्ढा जिसमें मूर्ति के पैर या निचला अंश जमाकर उसे खड़ा किया जाता है।

पीठ-चक्र—पुं० [ब० स०] पुरानी चाल का एक प्रकार का रथ।

पीठ-देवता—पुं० [मध्य० स०] आदि शक्ति जो सारी सृष्टि का मूल आधार है।

पीठ-नायिका—स्त्री० [ष० त०] १. पुराणानुसार किसी पीठस्थान की अधिष्ठात्री देवी। २. दुर्गा। ३. लोक में, वह कुमारी जिसकी पूजा दुर्गा-पूजा के दिनों में की जाती है।

पीठ-न्यास—पुं० [स० त०] तंत्र में एक मुख्य न्यास जो प्रायः सभी तांत्रिक पूजाओं में आवश्यक है।

पीठ-भू—पुं० [मध्य० स०] प्राचीर के आसपास का भू-भाग। चहार-दीवारी के आसपास की जमीन।

पीठ-मर्द—वि० [स० त०] बहुत अधिक ढीठ और निर्लज्ज।

पुं० १. साहित्य में नायक के चार प्रकार के सखाओं में से वह जो रुष्ट नायिका को मनाने और उसका मान हरण करने में सहायक होता है। २. किसी साहित्यिक रचना के मुख्य पात्र का वह सखा जो गुणों में उससे कुछ घटकर होता है। जैसे—रामायण में राम का सखा सुग्रीव। ३. वेश्याओं को नाच-गाना सिखलानेवाला व्यक्ति। उस्ताद।

पीठ-मर्दिका—स्त्री० [ष० त०] नायिका की वह सखी जो नायक को रिझाने में नायिका की सहायता करती है।

पीठ-विवर—पुं० [ष० त०] पीठगर्भ। (दे०)

पीठ-सर्प—वि० [सं० पीठ√सृप् (गति)+अच्] लंगड़ा।

पीठसर्पी (पिन्)—वि० [सं० पीठ√सृप्+णिनि] लंगड़ा।

पीठ-स्थान—पुं० [ष० त०] १. वे स्थान जो दक्ष की कन्या सती के अंग या आभूषण गिरने के कारण पवित्र माने जाते हैं। (दे० 'पीठ' १.) २. प्रतिष्ठान (आधुनिक झूसी का एक पुराना नाम)।

पीठा—पुं० [सं० पिष्टक; प्रा० पिट्ठक] आटे की लोई में पीठी भरकर बनाया जानेवाला एक तरह का पकवान।

†पुं०=पीढ़ा।

पीठासीन—वि० [पीठ-आसीन; स० त०] जो पीठ अर्थात् अध्यक्ष के स्थान पर आसीन हो। (प्रेसाइडिंग)

पीठासीन-अधिकारी—पुं० [कर्म० स०] वह अधिकारी जो अध्यक्ष-पद पर रहकर अपनी देख-रेख में कोई काम कराता हो। (प्रेसाइडिंग आफिसर)

पीठि—स्त्री० =पीठ।

पीठिका—स्त्री० [सं० पीठ+कन्+टाप्, इत्व] १. छोटा पीढ़ा। पीढ़ी। २. वह आधार जिस पर कोई चीज विशेषतः देवमूर्ति रखी, लगाई या स्थापित की गई हो। ३. ग्रंथ के विशिष्ट विभागों में से कोई एक। जैसे—पूर्वपीठिका, उत्तर-पीठिका।

पीठी—स्त्री० [सं० पिष्ट या पिष्टक; प्रा० पिट्ठा] १. भींगी हुई दाल को पीसने पर तैयार होनेवाला रूप। जैसे—उड़द या मूंग की पीठी।

क्रि० प्र०—पीसना।—भरना।

विशेष—पीठी की टिकिया तलकर बड़े, सुखाकर बरियाँ और लोई भरकर कचौड़ियाँ आदि बनाई जाती हैं।

पीड़—पुं०[सं० पिंड] मिट्टी का वह आधार जिसे घड़े को पीटकर बढ़ाते समय उसके अन्दर रख लेते हैं।

†पुं०=आपीड़।

†स्त्री०=पीड़ा।

पीडक—वि०[सं०√पीड+ण्वुल्—अक] पीड़क। (दे०)

पीड़क—वि०[सं० पीडक से] १. जो दूसरों को शारीरिक कष्ट पहुँचाता हो। पीड़ा देनेवाला। २. अधिक व्यापक अर्थ में, बहुत बड़ा अत्याचारी या जुल्मी। ३. दबाने या पीसनेवाला। जैसे—पीड़क-चक्र=वह पहिया जो दबाता या पीसता हो।

पीडन—पुं०[सं०√पीड+ल्युट्—अन] पीड़न। (दे०)

पीड़न—पुं०[सं० पीडन से] [कर्ता पीड़क, वि० पीड़नीय, भू० कृ० पीड़ित] १. व्यक्तियों के सम्बन्ध में, किसी को शारीरिक या मानसिक कष्ट पहुँचाना। तकलीफ देना। २. चीजों के संबंध में, जोर से कसना, दबाना या पीसना। ३. पेरना। ४. अच्छी तरह से या मजबूती से पकड़ना। ५. नष्ट करना। ६. ग्रहण। जैसे—ग्रह-पीड़न। ७. स्वरों के उच्चारण करने में होनेवाला एक तरह का दोष।

पीडनीय—वि०[सं०√पीड्+अनीयर] पीड़नीय। (दे०)

पीड़नीय—वि० [सं० पीडनीय से] १. जिसका पीड़न हो सके या किया जाने को हो। २. जिसे कष्ट पहुँचाया जा सके या पहुँचाया जाने को हो।

पुं० याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार ऐसा राजा या राज्य जो अच्छे मंत्री और उपयुक्त सेना से रहित हो और इसी लिए जिसे सहज में दबाकर अपने अधिकार में किया जा सकता हो।

पीड़-पखा—पुं०[सं० अपीड+पक्ष=पंख] [स्त्री० अल्पा० पीड़-पखी] १. सिर पर की चोटी या बालों की पट्टी। २. सिर पर पहना जानेवाला एक प्रकार का आभूषण। उदा०—कै मयूर की पीड़-पखी री।—सूर।

पीडा—स्त्री० [सं०√पीड्+अङ्+टाप्] पीड़ा। (दे०)

पीड़ा—स्त्री०[सं० पीडा से] १. प्राणियों को दुःखित या व्यथित करनेवाली वह अप्रिय अनुभूति जो किसी प्रकार का मानसिक या शारीरिक आघात लगने, कष्ट पहुँचने या हानि होने पर उत्पन्न होती है और उसे बहुत ही खिन्न, चिंतित तथा विकल रखती है। तकलीफ। वेदना। व्यथा। (पेन) जैसे—धन-नाश, पुत्र-शोक, प्रिय के वियोग या विरह के कारण होने-वाली पीड़ा। २. सामान्य अर्थ में, शरीर के किसी अंग पर चोट लगने या उसमें किसी प्रकार का विकार उत्पन्न होने पर अथवा शारीरिक क्रियाओं को अव्यवस्थित होने पर उत्पन्न होनेवाली उक्त प्रकार की वह अनुभूति जिसका ज्ञान सारे शरीर को स्नायविक तंत्र के द्वारा होता है। दरद। (पेन) जैसे—अपच के कारण पेट में, ज्वर के कारण सिर में अथवा ऊँचाई से गिर पड़ने के कारण हाथ-पैरों में होनेवाली पीड़ा। ३. कोई ऐसी खराबी या गड़बड़ी जिससे किसी प्रकार की व्यवस्था में बाधा होती हो और वह ठीक तरह से न चलने पाती हो। कष्टदायक अव्यवस्था। जैसे—(क) राक्षसों के उपद्रव से ऋषि-मुनियों के आश्रम में पीड़ा होती थी। (ख) दरिद्रता की पीड़ा से सारा परिवार छिन्न-भिन्न हो गया। (ग) काम वासना की पीड़ा से वह विकल हो रहा था। ४. बीमारी। रोग। व्याधि। ५. प्रतिबंध। रुकावट। ६. विनाश। ७. क्षति। नुकसान। हानि। ८. करुणा। दया। ९. चंद्रमा या सूर्य का ग्रहण। उपराग। १०. सिर पर लपेटकर बाँधी जानेवाली माला। शिरोमाला। ११ धूप-सरल या सरल नामक वृक्ष।

पीडाकर—वि०[सं० पीड़ा√कृ (करना)+ट] पीड़ा या कष्ट देनेवाला।

पीडा-गृह—पुं०[ष० त०] वह स्थान जहाँ किसी को कष्ट पहुँचाया जाता हो।

पीडा-स्थान—पुं०[सं० स० त०] फलित ज्योतिष के अनुसार जन्मकुण्डली में उपचय अर्थात् लग्न से तीसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें स्थान के अतिरिक्त शेष स्थान जो अशुभ ग्रहों के स्थान माने गये हैं।

पीडिका—स्त्री०[सं० पीड़ा+कन्—टाप्, इत्व] फुड़िया। फुंसी।

पीडित—वि०[सं०√पीड्+क्त] पीड़ित। (दे०)

पीड़ित—वि०[सं० पीडित] १. जो किसी प्रकार की पीड़ा से ग्रस्त हो। जैसे—रोग से पीड़ित। २. जो दूसरों के अत्याचार, जुल्म आदि से आक्रांत और फलतः कष्ट में हो। जैसे—पीड़ित जन-समाज। ३. जिसे दबाया या पीसा गया हो। ४. जो नष्ट कर दिया गया हो। ५. जो किसी चीज के प्रभाव या फल से अपने को दुःखी समझता हो। सताया हुआ। जैसे—जग पीड़ित रे अति सुख से।—पंत।

पीड़ी—स्त्री०[सं० पीठ] १. देव-स्थान। देवपीठ। २. वेदी।

पीडुरी†—स्त्री०=पिंडली।

पीढ़ा—पुं०[सं० पीठ अथवा पीढक] [स्त्री० अल्पा० पीढ़ी] १. प्रायः लकड़ी का बना हुआ चौकी के आकार का वह छोटा आसन जिसके पाये बहुत कम ऊँचे होते हैं और जिस पर हिन्दू लोग भोजन करते समय बैठते हैं। २. विस्तृत अर्थ में, बैठने का कोई आसन।

मुहा०—(किसी को) ऊँचा पीढ़ा देना=विशेष आदर-सम्मान प्रकट करते हुए अच्छे या ऊँचे आसन पर बैठाना।

३. सिंहासन।

पीढ़ी—स्त्री०[हिं० पीढ़ा का स्त्री० अल्पा०] बैठने के लिए एक विशेष प्रकार की छोटी चौकी। छोटा पीढ़ा।

स्त्री०[सं० पीठिका] १. किसी कुल या वंश की परम्परा में, क्रम क्रम से आगे बढ़नेवाली संतान की प्रत्येक कड़ी या स्थिति। जैसे—(क) बाप, दादा और परदादा ये तीन पीढ़ियाँ; अथवा बाप, बेटे और पोते की तीन पीढ़ियाँ। (ख) हमारे पास अपने पूर्वजों के बीस पीढ़ियों के वंश-वृक्ष हैं। २. उक्त कड़ी या स्थिति के वे सब लोग जो रिश्ते या संबंध में आपस में प्रायः बराबरी के हों। वंश-क्रम में प्रत्येक श्रृंखला के क्षेत्र के सब लोग। जैसे—(क) उनकी दूसरी पीढ़ी में तो दस ही आदमियों का परिवार था; पर चौथी पीढ़ी में परिवारवालों की संख्या बढ़कर साठ तक पहुँची थी। (ख) हमारी सात पीढ़ियों में से किसी पीढ़ी ने कभी ऐसा अनाचार न किया होगा। ३. किसी जाति, देश या समाज के वे सब लोग जो किसी विशिष्ट काल में प्रायः कुछ आगे-पीछे जन्म लेकर साथ ही साथ रहते हों। किसी विशिष्ट समय का वह सारा जनसमुदाय जिनकी अवस्था या वय में अधिक छोटाई-बड़ाई न हो। जैसे—ये नई पीढ़ी के लोग ठहरे; इनमें पुरानी पीढ़ी के लोगों का-सा आचार-विचार नहीं रह गया है। ४. किसी प्रकार की परम्परागत

स्थिति। उदा०—सदा समर्थन करती उसका तर्क-शास्त्र की पीढ़ी।—प्रसाद।

पीत—वि०[सं०√प+क्त+अच्] [स्त्री० पीता] १. पीले रंग का। पीला। २: भूरा। (क्व०)

पुं०[√पा+क्त] १. पीला रंग। भूरा रंग। ३. हरताल। ४. हरिचंदन। ५. कुसुम। बर्रे। ६. अंकोल का वृक्ष। ढेरा। ७. सिहोर का पेड़। ८. धूप-सरल। ९. बेंत। १०. पुखराज। ११. तुन। नंदिवृक्ष। १२. एक प्रकार की सोमलता। १३. पीली कटसरैया। १४. पद्मकाष्ठ। पदमाख। १५. पीला खस। १६. मूंगा।

भू० कृ० [सं०√ पा (पीना)+क्त] जो पान किया गया हो। पीया हुआ।

पीतकंद—पुं० [ब०स०] गाजर।

पीतक—पुं० [सं० पीत+क] १. हरताल। २. केसर। ३. अगर। ४. पदमाख। ५. सोनामाखी। ६. तुन। ७. विजयसार। ८. सोनापाठा। ९. हल्दी। हरिद्रा। १०. किंकिरात। ११. पीतल। १२. पीला चंदन। १३. एक प्रकार का बबूल। १४. शहद। १५. गाजर। १६. सफेद जीरा। १७. पीली लोध। १८. चिरायता। १९. अंडे के अंदर का पीला अंश। अंडे की जरदी।

वि० पीले रंग का। पीला।

पीत-कदली—स्त्री०[कर्म० स०] सोन केला।

पीतक-द्रुम—पुं०[कर्म० स०] हलदुआ। हरिद्रवृक्ष।

पीत-करवीरक—पुं०[कर्म० स० +क] पीले फूलोंवाला कनेर।

पीतका—स्त्री०[सं० पीतक+टाप्] १. कटसरैया। २. हलदी।

पीत-कावेर—पुं० [सं० कु-वेर=शरीर, प्रा० स०, पीत-कावेर, ब० स०] १. केसर। २. पीतल के योग से बनी हुई एक मिश्र धातु जिसके घंटे आदि बनाये जाते हैं।

पीत-काष्ठ—पुं०[कर्म० स०] १. पीला चंदन। २. पीला अगरु।

पीत-कीला—स्त्री०[कर्म०स०] अवर्तकी लता। भागवत वल्ली।

पीत-कुरवक—पुं०[कर्म० स०] पीली कटसरैया।

पीत-कुरंट—पुं०[कर्म० स०] पीली कटसरैया।

पीतकुष्ठ—पुं०[कर्म० स०] पीले रंग का कोढ़।

पीत-कुष्मांड—पुं०[कर्म० स०] पीले रंग का कुम्हड़ा।

पीत-कुसुम—पुं०[कर्म० स०] पीली कटसरैया।

पीत-केदार—पुं०[ब० स०] एक तरह का धान।

पीत-गंध—पुं०[द्व० स०] पीला चंदन। हरिचंदन।

पीत-गन्धक—पुं०[कर्म० स०] गंधक।

पीत-घोशा—स्त्री०[कर्म० स०] पीले फूलोंवाली एक तरह की लता।

पीत-चंदन—पुं०[कर्म० स०] पीले रंग का चंदन जो पहले द्रविड़ देशों से आता था। हरिचंदन।

पीत-चंपक—पुं०[कर्म० स०] १. पीली चंपा। २. दीपक। चिराग।

पीत-चोप—पुं०[सं०] पलास का फूल। टेसू।

पीत-झिंटी—स्त्री०[कर्म० स०] १. पीले फूलवाली कटसरैया। २. एक तरह की कटाई।

पीत-तंडुल—पुं०[ब० स०] कँगनी नामक कदन्न।

पीतता—स्त्री०[सं० पीत+तल्+टाप्] पीलापन। जर्दी।

पीत-तुंड—पुं०[ब०स०] बत्तख या हंस की जाति का एक तरह का पक्षी। कारंडव। बया।

पीत-तैल—स्त्री०[ब० स०] मालकँगनी।

पीतत्व—पुं०[सं० पीत +त्व] पीतता। पीलापन।

पीतदंतता—स्त्री०[सं० पीत-दंत, कर्म० स० +तल्+टाप्] दाँतों का एक पित्तज रोग जिसमें दाँत पीले हो जाते हैं।

पीत-दारु—पुं०[कर्म० स०] १. देवदारु। २. धूपसरल। ३. हलदुआ। ४. हलदी। ५. चिरायता। ६. कायकरंज।

पीत-दीप्ता—स्त्री०[द्व० स०, टाप्] बौद्धों की एक देवी।

पीत-दुग्धा—स्त्री०[ब० स०, टाप्] १. दूध देनेवाली गाय। २. वह गाय जिसका दूध महाजन को ऋण के बदले में दिया जाता हो। ३. कटेहरी। ४. ऊँटकटारा। भड़भाँड़। ५. सातला। थूहर।

पीतद्रु—पुं०[कर्म० स०] १. दारु-हलदी। २. धूप-सरल ३. देव-दारु।

पीत-धातु—पुं०[कर्म० स०] १. रामरज। २. गोपीचंदन।

पीतन, पीतनक—पुं०[सं० पीत√नी+ड] [सं० पीतन+कन्] १. केसर २. हरताल। ३. धूपसरल। ४ अमड़ा। ५. पाकर।

पीत-निद्र—वि०[ब० स०] गहरी नींद में सोया हुआ।

पीतनी—स्त्री०[सं० पीतन+ङीष्] सखिन। शालपर्णी।

पीत-नील—पुं०[कर्म० स०] नीले और पीले रंग के संयोग से बना हुआ रंग। हरा रंग।

वि० उक्त प्रकार के रंग का।

पीत-पराग—पुं०[कर्म० स०] कमल का केसर।

पीत-पर्णी—स्त्री०[ब० स०, ङीष्] वृश्चिकाली (क्षुप)।

पीत-पादप—पुं०[कर्म० स०] १. श्योनाक वृक्ष। सोना-पाढ़ा। २. लोध।

पीत-पादा—स्त्री०[ब० स०. टाप्] मैना। सारिका।

पीत-पुष्प, पीत-पुष्पक—पुं०[ब० स०] १. कनेर। २. घीया तरोई। ३. पीली कटसरैया। ४. चंपा। ५. पेठा। ६. तगरु। ७. हिंगोट। ८. लाल कचनार।

पीत-पुष्पका—स्त्री०[ब० स०,+कप्+टाप्] जंगली ककड़ी।

पीत-पुष्पा—स्त्री०[ब० स,+टाप्] १. झिंझरीटा। २. सहदेई। ३. अरहर। ४. तरोई। तोरी। ५. पीली कटसरैया। ६. पीला कनेर। ७. सोन-जूही।

पीत-पुष्पी—स्त्री० [ब० स०+ङीष्] १. शंखाहुली। २. सहदेई बूटी। ३. बड़ी तरोई। ४. खीरा। ५. इन्द्रायण। ६. सोन-जूही।

पीत-पृष्ठा—स्त्री०[ब० स०+टाप्] वह कौड़ी जिसकी पीठ पीली हो।

पीत-प्रसव—पुं०[ब० स०] १. हिंगपुत्री। २. पीला कनेर।

पीत-फल—पुं०[ब० स०] १. सिहोर। २. कमरख। ३. धव का पेड़।

पीत-फलक—पुं०[ब० स०,+कप्] १. सिहोर। २. रीठा। ३. कमरख। ४. धव वृक्ष।

पीत-फेन—पुं०[ब० स०] रीठा। अरिष्ठक वृक्ष।

पीत-बालुका—स्त्री०[ब० स०] हलदी।

पीत-बीजा—स्त्री० [ब० स०, टाप्] मेथी।

पीत-भद्रक—पुं०[कर्म० स०] एक प्रकार का बबूल। देवबब्बूर।

पीत-भृंगराज—पुं० [कर्म० स०] पीला भंगरा।
पीतम†—वि० =प्रियतम।
पीत-मणि—पुं० [कर्म० स०] पुखराज। पुष्पराज मणि।
पीत-मस्तक—पुं० [ब० स०] पीले मस्तकवाला एक तरह का पक्षी।
पीत-माक्षिक—पुं० [कर्म० स०] सोनामाखी।
पीत-मारुत—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का साँप।
पीतमुंड—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का हिरन।
पीत-मुद्‌ग—पुं० [कर्म० स०] एक प्रकार का मूँग।
पीत-मूलक—पुं० [ब० स०, +कप्] गाजर।
पीत-मूली—स्त्री० [ब० स०, +ङीप्] रेवंद चीनी।
पीत-यूथी—स्त्री० [कर्म० स०] सोनजूही। स्वर्णयूथिका।
पीतर†—पुं० =पीतल।
पीत रक्त—पुं० [कर्म० स०] १. पुखराज। २. पीलापन लिये लाल रंग।
वि० पीलापन लिये लाल रंग का।
पीत-रत्न—पुं० [कर्म० स०] पुखराज। पीतमणि।
पीत-रस—पुं० [ब० स०] कसेरू।
पीत-राग—पुं० [ब० स०] १. पद्मकेसर। २. मोम। ३. पीला रंग।
वि० पीले रंग का।
पीत-रोहिणी—स्त्री० [सं० पीत√ रुह् (उगना)+ णिनि+ङीप्] १. जंबीरी नींबू। २. पीली कुटकी। कुंभेर।
पीतल—पुं० [सं० पित्तल] १. एक प्रसिद्ध मिश्र धातु जो ताँबे और जस्ते के मेल से बनती है और जिसके प्रायः बरतन बनते हैं। (ब्रॉस) २. पीला रंग।
वि० पीले रंग का।
पीतलक—पुं० [सं० पीतल√कै (भासित होना) +क] पीतल।
पीत-लोह—पुं० [कर्म०स०] पीतल (धातु)।
पीत-वर्ण—पुं० [ब० स०] १. पीला मेढक। स्वर्ण मंडूक। २. ताड़ का पेड़। ३. कदंब। ४. हलदुआ। ५. लाल कचनार। ६. मैनसिल। ७. पीला चंदन। ८. केसर।
पीत-वल्ली—स्त्री० [कर्म० स०] आकाश बेल।
पीतवान—पुं० [?] हाथी की दोनों आँखों के बीच का स्थान।
पीत-वालुका—स्त्री० [ब०स०] हलदी।
पीत-वास (स्)—पुं० [ब०स०] श्रीकृष्ण।
पीत-विंदु—पुं० [कर्म०स०] विष्णु के चरण-चिह्नों में से एक।
पीत-वृक्ष—पुं० [कर्म०स०] सोनापाठा।
पीतशाल—पुं० [सं० पीत√ शल् (जाना)+अण्] विजयसार नामक वृक्ष।
पीतशालक—पुं० [सं० पीतशाल+कन्] =पीतशाल।
पीत-शेष—वि० [सं० सहसुपा स०] पीने के उपरांत बचा हुआ (तरल पदार्थ)।
पीत-शोणित—वि० [ब० स०] १. जिसने किसी का रक्त पिया हो। २. खूनी। हत्यारा।
पीतसरा†—पुं० [सं० पितृव्य, हिं० पितिया+ससुर] चचिया ससुर। ससुर का भाई।
पीत-सार—पुं० [ब० स०] १. पीत चंदन। हरिचंदन। २. सफेद चंदन। ३. गोमेद। ४. अंकोल। ५. विजयसार। ६. शिलारस।

पीतसारक—पुं० [सं० पीतसार+कन्] १. नीम का पेड़। २. ढेरे का पेड़।
पीतसारिका—स्त्री० [सं० पीत √सृ (गति)+णिच्+इन्+कन्+टाप्] काला सुरमा।
पीत-साल(क)—पुं० =पीतशाल।
पीत-स्कंध—पुं० [ब० स०] १. सूअर। शूकर। २. एक वृक्ष।
पीत-स्फटिक—पुं० [कम०स०] पुखराज।
पीत-स्फोट—पुं० [कर्म०स०] १. खुजली। २. खसरा नामक रोग।
पीत-हरित—वि० [कर्म० स०] पीलापन लिये हरे रंग का।
पुं० पीलापन लिये हरा रंग।
पीतांग—वि० [पीत-अंग, ब०स०] पीले अंगोंवाला।
पुं० १. एक तरह का मेढक जिसका रंग पीला होता है। २. सोनपाठा (वृक्ष)
पीतांबर—पुं० [पीत-अंबर, ब०स०] १. पीले रंग का वस्त्र। पीला कपड़ा। २. एक प्रकार की रेशमी धोती जो हिन्दू लोग प्रायः पूजा-पाठ के समय पहनते हैं। ३. पीले वस्त्र धारण करनेवाला व्यक्ति। जैसे—कृष्ण, नट, संन्यासी विष्णु आदि।
वि० जो पीले कपड़े पहने हुए हो।
पीता—स्त्री० [सं० पीत+टाप्] १. हलदी। २. दारुहलदी। ३. बड़ी माल-कँगनी। ४. भूरा शीशम। ५. प्रियंगु फल। ६. गोरोचन। ७. अतीस। ८. पीला केला। ९. जंगली बिजौरा नीबू। १०. जर्द चमेली। ११. देव दारु। १२. राल। १३. असगंध। १४. शालिपर्णी। १५. आकाश बेल।
वि० पीले रंगवाली।
पीताब्धि—पुं० [पीत-अब्धि, ब०स०] समुद्र पान करनेवाले, अगस्त्य मुनि।
पीताभ—वि० [पीता-आभा, ब०स०] जिसमें से पीली आभा निकलती हो। जिसमें से पीला रंग झलक रहा हो।
पुं० पीला चन्दन।
पीताभ्र—पुं० [पीत-अभ्र, कर्म०स०] पीले रंग का एक तरह का अभ्रक।
पीताम्लान—पुं० [पीत-अम्लान, कर्म०स०] पीली कटसरैया।
पीतारुण—पुं० [पीत-अरुण, कर्म० स०] पीलापन लिये हुए लाल रंग।
वि० [कर्म०स०] उक्त प्रकार के रंग का। पीलापन लिए लाल।
पीतावशेष—वि० [सं० पीत-अवशेष, सहसुपा स०] पीत-शेष।
पीताश्म (न्)—पुं० [पीत-अश्मन, कर्म०स०] पुखराज। पुष्परागमणि।
पीताह्व—पुं० [पीता-आह्वा] राल।
पीति—स्त्री० [सं०√ पा (पीना)+क्तिन्] १. पीने की क्रिया या भाव। २ गति। ३. सूँड़।
वि० घोड़ा।
पीतिका—स्त्री० [सं० पीत+क+टाप्, इत्व] १. हल्दी। २. दारु हल्दी। ३. सोनजूही।
पीती (तिन्)—पुं० [सं० पीत+इनि] घोड़ा।
†स्त्री० =प्रीति।
पीतु—पुं० [सं० √ पा (पीना या रक्षा करना)+तुन्, कित्व] १. सूर्य २. अग्नि। ३. झुंड का प्रधान हाथी। यूथपति। ४. सेना में हाथियों के दल का नायक।

पीतुदारु—पुं० [ब०स०] १. गूलर। २. देवदार।
पीतोदक—पुं० [पीत-उदक, ब०स०] नारियल (जिसके अन्दर जल या रस रहता है)।
पीथ—पुं० [सं०√पा (पीना) +थक्] १. पानी। २. पेय पदार्थ। ३. घी। ४. अग्नि। ५. सूर्य। ६. काल। ७. समय।
पीथि—पुं० [सं० पीति, पृषो० सिद्धि] घोड़ा।
पीदड़ी—स्त्री०=पिद्दी।
पीन—वि० [सं०√प्याय् (बढ़ाना)+क्त, संप्रसारण, नत्व, दीर्घ] [भाव० पीनता] १. आकार-प्रकार की दृष्टि से भारी-भरकम। दीर्घकाय। बहुत बड़ा और मोटा। २. पुष्ट। ३. भरा-पूरा। संपन्न।
पुं० मोटाई। स्थूलता।
पीनक—स्त्री०=पिनक।
पीनता—स्त्री० [सं० पीन+तल्+टाप्] १. पीन होने की अवस्था या भाव। २. मोटाई। स्थूलता।
पीनना†—स०=पींजना।
पीनस—पुं० [सं० पीन√सो (नष्ट करना)+क] १. सर्दी या जुकाम। २. एक रोग जिसमें नाक से दुर्गंधमय गाढ़ा पानी निकलता है।
स्त्री० [फा० फ़ीनस] १. पालकी नाम की सवारी। २. एक प्रकार की नाव।
पीनसा—स्त्री० [सं० पीनस+टाप्] ककड़ी।
पीनसित, पीनसी (सिन्)—वि० [सं० पीनस+इतच्] [पीनस+इनि] जिसे पीनस रोग हुआ हो। पीनस रोग से ग्रस्त।
पीना—स० [सं० पान] १. जीवों के मुँह के द्वारा या वनस्पतियों का जड़ों के द्वारा स्वाभाविक क्रिया से तरल पदार्थ विशेषतः जल आत्मसात् करना। २. किसी तरह पदार्थ में मुँह लगाकर उसे धीरे-धीरे चूसते हुए गले के रास्ते पेट में उतारना। जैसे—यहाँ रात भर मच्छर हमारा खून पीते हैं। ३. गांजे, तमाकू आदि का धूँआ नशे के लिए बार-बार मुँह में लेकर बाहर निकालना। धूम्रपान करना। जैसे—चिलम, बीड़ी, सिगरेट या हुक्का पीना। ४. एक पदार्थ का किसी दूसरे तरल पदार्थ को अपने अन्दर खींचना या सोखना। जैसे—इतना ही आटा (या चावल) पाव भर घी पी गया। ५. लाक्षणिक अर्थ में धन आत्मसात् करना या ले लेना। जैसे—(क) यह मकान मरम्मत में ५०० रुपए पी गया। (ख) लड़का बुढ़िया का सारा धन पी गया।
संयो० क्रि०—जाना।—डालना।—लेना।
६. मन में कोई उग्र या तीव्र मनोविकार होने पर भी उसे अन्दर ही अन्दर दबा लेना और ऊपर या बाहर प्रकट न होने देना। चुपचाप सहकर रह जाना। जैसे—किसी के अपमान करने या गाली देने पर भी क्रोध या गुस्सा पीकर रह जाना। ७. कोई अप्रिय या निंदनीय घटना या बात हो जाने पर उसे चुपचाप दबा देना और उसके संबंध में कोई कार्रवाई न करना या लोगों में उसकी चर्चा न होने देना। जैसे—ऐसा जान पड़ता है कि सरकार इस मामले को पी गई।
संयो० क्रि०—जाना।
मुहा०—(कोई गुण या भाव) घोलकर पी जाना=इस बुरी तरह से आत्मसात् करना या दबा डालना कि मानों उसका कभी कोई अस्तित्व ही नहीं था। जैसे—लज्जा (या शरम) तो तुम घोलकर पी गये हो।
पुं० १. पीने की क्रिया या भाव। २. शराब पीने की क्रिया या भाव। जैसे—उनके यहाँ पीना-खाना सब चलता है।
पुं० [सं० पीडन=पेरना] १. तिल, तीसी आदि की खली। २. किसी चीज के मुँह पर लगाई जानेवाली डाट। (लश०)
पीनी—स्त्री० [सं० पिंड या पीडन ?] तिल, तीसी या पोस्ते की खली।
पीनोरु—वि० [सं० पीन-ऊरु, ब०स०] जिसकी जाँघें भारी और मोटी हों।
पीनोध्नी—स्त्री० [सं० पीन-ऊधस्, ब०स०, ङीप्, अनङ्+आदेश] बड़े और भारी थनवाली गाय।
पीप—स्त्री० [सं० पूय] पके हुए घाव या फोड़े के अन्दर से निकलनेवाला वह सफेद लसदार पदार्थ जो दूषित रक्त का रूपान्तर और विषाक्त होता है। पीब। मवाद।
विशेष—रक्त में श्वेत कणों की अधिकता होने से ही इसका रंग सफेद हो जाता है।
क्रि० प्र०—निकलना।—बहना।
पीपर†—पुं०=पीपल।
पीपर-पर्न—पुं० [हिं० पीपल+सं० पर्ण=पत्ता] १. पीपल का पत्ता। २. कान में पहनने का एक आभूषण।
पीपरा-मूल—पुं० [सं० पिप्पलीमूल] पीपल नामक लता की जड़।
पीपरि—पुं० [सं० ऋपि√पृ (बचाना)+इन्, अकार-लोप, दीर्घ] छोटा पाकर वृक्ष।
†पुं०=पीपल।
स्त्री० [सं० पिप्पली] एक लता जिसके फल और जड़ें औषध के काम आती हैं। इस लता के पत्ते पान के पत्तों की तरह परन्तु कुछ छोटे, अधिक नुकीले तथा अधिक चिकने होते हैं।
पीपल—पुं० [सं० पिप्पल] बरगद की जाति का एक प्रसिद्ध वृक्ष जो भारत में प्रायः सभी स्थानों में अधिकता से पाया जाता है। पर इसमें जटाएँ नहीं फूटतीं। इसका गोदा (फल) पकने पर मीठा होता है। हिन्दू इसे बहुत पवित्र मानते और पूजते हैं। चलदल। चलपत्र। बोधि-द्रुम।
स्त्री० [सं० पिप्पली] एक प्रकार की लता जिसकी कलियाँ ओषधि के रूप में काम में आती हैं। कलियाँ तीन-चार अंगुल लंबी शहतूत (फल) के आकार की और स्वाद में तीखी होती हैं। पिप्पली। मागधी।
पीपलामूल—पुं० [सं० पिप्पलीमूल] एक प्रसिद्ध ओषधि जो पीपल नामक लता की जड़ है। यह चरपरा, तीखा, गरम, रूखा, दस्तावर, पाचक, रेचक तथा कफ, वात, आदि को दूर करनेवाला माना जाता है।
पीपा—पुं० [?] [स्त्री० अल्पा० पीपी] १. लकड़ी, लोहे आदि का बना हुआ तेल आदि रखने का एक प्रकार का बड़ा आधान। २. राजस्थान के एक प्रसिद्ध राजा जो अपना राज्य छोड़कर साधु और रामानंद के शिष्य बन गये थे।
पीबा†—पुं०=पीप।
पीया†—पुं० =पिय (प्रियतम)।
पीयर†—वि०=पीला।

पीया—पुं०=पिय (प्रियतम)।

पीयु—पुं०[सं०√ पा (पीना)+कु,नि० सिद्धि] १. काल। २. सूर्य। ३. थूक। ४. कौआ। ५. उल्लू।
वि० १. हिंसक। २. प्रतिकूल।

पीयूक्षा—स्त्री०[सं० पीयु√उक्ष् (सींचना)+अ+टाप्] पाकर की एक जाति।

पीयूख†—पुं० =पीयूष।

पीयूष—पुं०[सं०√ पीय् (संतुष्ट करना)+ऊषन्] १. अमृत। सुधा। २. दूध। ३. गाय आदि के प्रसव के उपरांत, पहले सात दिनों का दूध जो अग्राह्य माना जाता है। पेऊस।

पीयूष-ग्रंथि—स्त्री०[मध्य०स०] शरीर के अंदर मस्तिष्क के निचले भाग की एक ग्रंथि जो कफ उत्पन्न करती है। (पिट्यूटरी ग्लैंड)

पीयूष-पाणि—वि०[ब०स०] १. जिसके हाथ में अमृत हो। २. जिसके हाथ की दी हुई चीज में अमृत का-सा गुण हो। जैसे—वे पीयूष-पाणि वैद्य थे।

पीयूष-भानु—पुं०[ब०स०] चंद्रमा।

पीयूष-रुचि—पुं०[ब०स०] चंद्रमा।

पीयूष-वर्ष—पुं०[सं० पीयूष√ वृष् (बरसना)+अण्]१. अमृत की वर्षा करनेवाला, चंद्रमा। २. संस्कृत के जयदेव नामक कवि।३. कपूर। ४. एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में १० और ९ के विश्राम से १९ मात्राएँ और अंत में गुरु-लघु होता है। इसे आनन्दवर्द्धक भी कहते हैं।

पीर—स्त्री०[सं०पीड़ा]१. कष्ट। तकलीफ। दुःख। २. दर्द। वेदना। ३. दूसरे का कष्ट या पीड़ा देखकर उसके प्रति मन में होनेवाली करुणा-पूर्ण भावना या सहानुभूति। दूसरे के दुःख से कातर होने की अवस्था या भाव। ४. प्रसव-काल के समय स्त्रियों को होनेवाली पीड़ा या दर्द।
क्रि० प्र०—आना।—उठना।
मुहा०—(किसी की) पीर जानना या पाना=सहानुभूतिपूर्वक किसी का कष्ट या दुःख समझना।
वि०[फा०] [भाव० पीरी]१. वृद्ध। बुड्ढा। २. बड़ा और पूज्य। बुजुर्ग। ३. चालाक। धूर्त।
पुं० १. परलोक का मार्ग-दर्शक। धर्म-गुरु। २. महात्मा और सिद्ध पुरुष। ३. मुसलमानों का धर्मगुरु। ४. सोमवार का दिन। चंद्रवार।

पीरजादा—पुं०[फा० पीरजादा] [स्त्री० पीरजादी] किसी पीर या धर्म-गुरु का पुत्र।

पीरतन†—पुं०[हिं० पियरा+तन(प्रत्य०)] पीलापन। उदा०—कबीर हरदी पीरतनु हरै चून चिहनुन रहाइ।—कबीर।

पीरना*—स०=पेरना। उदा०—तेली ह्वै तन कोल्हू करिहौं पाप पुन्नि दोऊ पीरौं। —कबीर।

पीर-नाबालिग—पुं०[फा० पीर+अ० नाबालिग] ऐसा वृद्ध जो बच्चों के से आचरण, काम या बातें करे। सठियाया हुआ बुड्ढा। बुद्धिभ्रष्ट बूढ़ा।

पीर-भुचड़ी—पुं० [फा०+अनु०] जनखों या हिजड़ों के संप्रदाय के एक कल्पित पीर।

पीरमान—पुं०[लश०] मस्तूल के ऊपर बँधे हुए वे डंडे जिनके दोनों सिरों पर लट्टू लगे रहते हैं और जिन पर पाल चढ़ाई जाती है। अड्डंडा।

पीर-मुरशिद—पुं०[फा०] गुरु, महात्मा, और पूजनीय व्यक्ति। प्रायः राजाओं, बादशाहों और बड़ों के लिए भी इसका प्रयोग होता है।

पीरा†—स्त्री०=पीड़ा।
वि०[स्त्री० पीरी] पीला।

पीराई—पुं०[फा० पीर+आई (प्रत्य०)] १. डफालियों की तरह की एक जाति जिसकी जीविका पीरों के गीत गाने से चलती है। २. उक्त जाति का व्यक्ति।
†स्त्री०=पीरी ('पीर' का भाव०)।

पीरानी—स्त्री० [फा०] पीर अर्थात् मुसलमानी धर्मगुरु की पत्नी।

पीरी—स्त्री० [फा०]१. वृद्ध होने की अवस्था, या भाव। वृद्धावस्था। २. किसी इस्लामी धर्म-स्थान के पीर (महन्त) होने की अवस्था या भाव। ३. दूसरों को अपना अनुयायी या शिष्य बनाने का धन्धा या पेशा। ४. बहुत बड़ी चालाकी या बहादुरी। जैसे—इतना-सा काम करके तुमने कौन-सी पीरी दिखला दी। ५. किसी प्रकार का विशेषाधिकार। इजारा। ठेका। (व्यंग्य) जैसे—यहाँ क्या तुम्हारे बाबा की पीरी है। ६. कोई अलौकिक या चमत्कारपूर्ण कृत्य करने की शक्ति।
वि० हिं० 'पीरा' (पीला) का स्त्री०।

पील—पुं०[फा० पील मुर्ग] एक प्रकार का मुरगा।

पीरोजा—पुं० दे०=फीरोजा।

पील—पुं०[सं० पीलु (हाथी) इस फा०]१. हाथी। गज। हस्ति। २. शतरंज के खेल का हाथी नामक मोहरा।
पुं०=पीलु (पिल्लू नामक कीड़ा)।
पुं०=पोलु।

पीलक—पुं०[देश०] पीले रंग का एक प्रकार का पक्षी जिसके डैने काले और चोंच लाल होती है।

पीलखा—पुं०[देश०] एक प्रकार का वृक्ष।

पील-पाँव†—पुं०=फील पाँव।

पीलपाया—पुं०[फा० पीलपायः]१. आधार या आश्रय के लिए किसी चीज के नीचे लगाई जानेवाली टेक या थूनी। २. किलों आदि की दीवारों के नीचे या साथ सहारे के लिए बनी हुई बहुत मोटी दीवार।

पीलपाल—पुं०=फीलवान।

पीलवान—पुं०=फीलवान।

पीलसोज—पुं० [फा० फ़तीलसोज] दीयट। चिरागदान।

पीला—वि० [सं० पीत] [स्त्री० पीली, भाव० पीलापन] १. (पदार्थ) जो केसर, सोने या हलदी के रंग का हो। पीत। जर्द। २. (शरीर का वर्ण) जो रक्त की कमी के कारण हलका सफेद हो गया हो और जिसमें स्वास्थ्य की सूचक चमक या लाली न रह गई हो। जैसे—बीमारी के कारण उनका सारा शरीर पीला पड़ गया है।
क्रि० प्र०—पड़ना।
३. (शरीर का वर्ण) जो भय, लज्जा आदि के कारण उक्त प्रकार का हो गया हो। जैसे—मुझे देखते ही उसका चेहरा पीला पड़ गया।
क्रि० प्र०—पड़ना।
पुं०[?] एक प्रकार का रंग जो हलदी या सोने के रंग से मिलता-जुलता होता है।
पुं०[सं० पीलु, फा० पील] शतरंज का पील, फील या हाथी नामक मोहरा

पीला कनेर—पुं० [हिं० पीला+कनेर] एक तरह का कनेर जिसमें पीले रंग के फूल लगते हैं।

पीला धतूरा—पुं० [हिं० पीला+धतूरा] ऊँटकटारा। घमोय। भँड-भाँड़। सत्यानासी।

पीलापन—पुं० [हिं० पीला+पन (प्रत्य०)] १. पीले होने की अवस्था, गुण या भाव। पीतता। जर्दी। २. खून की कमी अथवा भय आदि के कारण होनेवाली शरीर की रंगत।

पीला बरेला—पुं० [देश०] बनमेथी। बरियारा।

पीला बाला—पुं०=लामज (तृण)।

पीला शेर—पुं० [हिं० पीला+फा० शेर] अफ्रीका के जंगलों में रहनेवाले शेरों की एक जाति जिसका रंग पीला होता है।

पीलित—भू० कृ० [सं०] जिसमें बल डाले गये हों या पड़े हों। ऐंठा या मरोड़ा हुआ।

पीलिमा—स्त्री० [हिं० पीला] पीलापन।। ('कालिमा' के अनुकरण पर; असिद्ध रूप)

पीलिया—पुं० [हिं० पीला+इया (प्रत्य०)] कमल नामक रोग जिसमें मनुष्य की आँखें और शरीर पीला पड़ जाता है।

पीली—स्त्री० [हिं० पीला=पीत] तड़के या प्रभात के समय आकाश में दिखाई देनेवाली लाली जो कुछ पीलापन लिये होती है।

मुहा०—**पीली फटना**=तड़का या प्रभात होना। पौ फटना।

पीली चमेली—स्त्री० [हिं०] चमेली के पौधों की एक जाति।

पीली चिट्ठी—स्त्री० [हिं० पीला+चिट्ठी] विवाह आदि शुभ कृत्यों का निमंत्रण-पत्र जो प्रायः पीले रंग के कागज पर छपा या लिखा रहता है अथवा जिस पर केसर आदि छिड़का रहता है।

पीली जुही—स्त्री० =सोन जुही।

पीली मिट्टी—स्त्री० [हिं० पीला+मिट्टी] १. पीले रंग की मिट्टी। २. पटिया आदि पर पोतने की पीले रंग की जमी हुई कड़ी चिकनी मिट्टी।

पीलु—पुं० [सं०√पील् (रोकना)+ड] १. दो-तीन हाथ ऊँचा एक तरह का क्षुप जिसमें पीले रंग के गुच्छाकार फूल तथा कालापन लिये लाल रंग के छोटे-छोटे गोल फल लगते हैं। ३. उक्त क्षुप का फल। ४. पुष्प। फूल। ५. हाथी। ६. परमाणु। ७. ताल वृक्ष का तना। ८. हड्डी का टुकड़ा। ९. तीर। वाण। १०. कृमि। कीड़ा। ११. चने का साग। १२. सरकंडे या सरपत का फूल। १३. लाल कटसरैया। १४. अखरोट का पेड़। १५. हाथ की हथेली।

पीलुआ†—पुं० [देश०] मछली पकड़ने का बहुत बड़ा जाल।

पीलुक—पुं० [सं० पीलु√कै+क] च्यूँटा।

पीलुनी—स्त्री० [सं०√ पील+उन+ङीष्] १. चुरनहार। मूर्वा। २. चने का साग।

पीलु-पत्र—पुं० [ब०स०] मोरट नाम की लता।

पीलु-पर्णी—स्त्री० [ब०स०,+ङीप्] १. चुरनहार। मूर्वा। २. कुंदुरू।

पीलु-पाक—पुं० [ष०त०] वैशेषिक का यह सिद्धान्त कि तेज के प्रभाव से पदार्थों के परमाणु पहले अलग-अलग होते और फिर मिलकर एक हो जाते हैं। जसे—कच्ची मिट्टी के घड़े का जब अग्नि या ताप से संयोग होता है तब पहले तो उसके परमाणु अलग-अलग होते हैं और फिर लाल होने पर मिलकर एक हो जाते हैं।

पीलुपाक-वाद—पुं० [ष०त०] वैशेषिकों का पीलुपाक-संबंधी मत या सिद्धान्त।

पीलुपाकवादी (दिन्)—वि० [पीलुपाकवाद+इनि, (बोलना)+णिनि] पीलुपाकवाद-संबंधी।

पुं० १. पीलुपाक का सिद्धान्त माननेवाला व्यक्ति। २. वैशेषिक दर्शन का अनुयायी या पंडित।

पील-मूल—पुं० [ष०त०] १. पीलु वृक्ष की जड़। २. सतावर। ३. शालपर्णी।

पील-मूला—स्त्री० [ब०स०,+टाप्] जवान गाय।

पीलू—पुं० [सं० पीलु] १. एक प्रकार का काँटेदार वृक्ष जो दक्षिण भारत में अधिकता से होता है। इसकी पत्तियाँ ओषधि के काम आती हैं। २. पिल्लू नाम का कीड़ा। ३. संगीत में एक प्रकार का राग जिसके गाने का समय दिन के तीसरे पहर कहा गया है।

पीव—वि० [सं० पीवन] १. मोटा। स्थूल। २. हृष्ट-पुष्ट।

†पुं०=पीप (मवाद)।

†पुं० १. =पिय (प्रियतम)। २. साधकों की परिभाषा में, परमेश्वर।

पीवट—स्त्री० [?] युक्ति। उपाय। तरकीब। उदा०—न मालूम कौन सी पीवट लगाए होगा।—वृंदावनलाल वर्मा।

पीवना†—स०=पीना।

पीवर—वि० [सं०√प्यै (वृद्धि)+ष्वरच्, संप्रसारण, दीर्घ] [स्त्री० पीवरा] [भाव० पीवरता, पीवरत्व] पीन (दे० सभी अर्थों में)। पुं० १ कछुआ। २. जटा। ३. तापस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

पीवरा—स्त्री० [सं० पीवर+टाप्] १. असगंध। २. सतावर।

पीवरी—स्त्री० [सं० पीवर+ङीष्] १. सतावर। २. शालिपर्णी। ३. वर्हिषद् नामक पिता की मानसी कन्याओं में से एक। ४. युवती स्त्री। ५. गाय। गौ।

पीवा—स्त्री० [सं० √पी (पीना)+व+टाप्] जल। पानी।

वि०=पीवर।

पीविष्ठ—वि० [सं० पीवन्+इष्ठन्] अतिशय स्थूल। बहुत मोटा।

पीसना—स० [सं० पेषण] १. कोई पदार्थ दो कठोर या कड़े तलों के बीच में डाल या रखकर बार बार इस प्रकार रगड़ते हुए दबाना कि उसके बहुत छोटे-छोटे खंड या कण हो जायँ। घन पदार्थ को चूर्ण के रूप में लाना। जैसे—चक्की में आटा पीसना, सिल पर चटनी, भाँग या मसाला पीसना।

संयो० क्रि०—डालना।—देना।

२. बहुत ही कठोरता, निर्दयता या हृदयहीनतापूर्वक किसी को बुरी तरह से कुचलना, दबाना या पीड़ित करना। जैसे—(क) मुझसे पाजीपन करोगे तो पीसकर रख दूंगा। (ख) सन् १९५७ के उपद्रवों के बाद अंगरेजों ने सारे देश को एक तरह से पीस डाला था। ३. खूब दबाते हुए रगड़ना। जैसे—दाँत पीसना। ४. इस प्रकार कष्ट भोगते हुए कठोर परिश्रम का काम करना कि मानों चक्की में डालकर पीसे जा रहे हों। ५. बहुत परिश्रम का काम करना। जैसे—दोनों भाइयों को दिन भर दफ्तर में पीसना पड़ता है।

पुं० १. पीसने की क्रिया या भाव। २. वह या उतनी वस्तु जो

किसी को पीसने को दी जाय। जैसे—गेहूँ पीसना। ३. एक व्यक्ति के जिम्मे या हिस्से के कठोर परिश्रम का काम।

पीसी†—स्त्री०[सं० पितृष्वसा] पिता की बहन। बूआ। (बंगाल)

पीसू—वि०[हिं० पीसना] बहुत पीसनेवाला।
†पुं०=पिस्सू।

पीह—स्त्री०[सं० पीव=मोटा?] चरबी।

पीहर—पुं०[सं० पितृ+गृह, हिं० घर] विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसके माता-पिता का घर। मैका।

पीहा—पुं०[अनु०] पपीहे का शब्द। उदा०—पीहा पीहा रटत पपीहा मधुबन में।—रत्नाकर।

पीहू†—पुं० =पिस्सू (कीड़ा)।

पुंकेसर—पुं० [सं०] फूलों का वह केसर जिसमें पुंसत्ववाला तत्त्व रहता है और जिसके पराग या धूलि-कणों के संयोग से स्त्री केसर में गर्भाधान होता है। (स्टेमन)

पुंख—पुं०[सं० पुंस√ खन् (खोदना)+ड] १. तीर या वाण का वह हिस्सा जिसमें पंख लगाया जाता था। २. बाज (पक्षी)। ३. मंगलाचार।

पुंखित—वि०[सं० पुंख+इतच्] १. जो पंख या पंखों से युक्त हो। २. वाण जिसके पिछले भाग में पंख लगे हों।

पुंग—पुं०[सं० =पूग, पृषो० सिद्धि] बहुत बड़ा ढेर। राशि।

पुंगफल—पुं०=पूंगीफल।

पुंगल—पुं०[सं० पुंगु√ ला (लेना)+क] आत्मा।

पुंगव—पुं० [सं० कर्म०स०,+षच्] १. बैल। वृष। साँड़। २. औषधि के काम में आनेवाली एक वनस्पति।
वि० उत्तम। श्रेष्ठ। जैसे—नर-पुंगव = मनुष्यों में श्रेष्ठ।

पुंगव-केतु—पुं० [ब०स०] वृषभध्वज। शिव।

पुंगी—स्त्री० [हिं० खोंगी] पत्ते का वह पतला चोंगा जिसमें तम्बाकू भरकर पीते हैं। उदा०—पुंगी के सिरे पर आग चिलचिला उठी।—वृन्दावनलाल वर्मा।

पुंगीफल—पुं०=पूंगीफल'।

पुंछल्ला†—पुं०='पुछल्ला।

पुंछवाना†—स० [हिं० पोंछना का प्रे०] पोंछने का काम किसी से कराना।
†स०=पुछवाना।

पुंछार†—वि०[हिं० पूंछ+आर (प्रत्य०) बड़ी पूंछवाला।
पुं० मोर।

पुंछाला—पुं०[हिं० पूंछ+ला (प्रत्य०)] १.=पुछल्ला। २.= पिछलगा।

पुंज—पुं०[सं०√ पिञ्ज् (सामर्थ्य)+अच्, पृषो० सिद्धि] १ ढेर। २ राशि। समूह।

पुंज-दल—पुं०[ब०स०] सुसना नाम का साग।

पुंजन—पुं०[सं० पुंज+णिच्+ल्युट्—अन] १. पुंज अर्थात् राशि बनाने की क्रिया या भाव। २. दे० 'संचयन'।

पुंजशः—अव्य०[सं० पुंज+शस्] ढेर का ढेर। ढेरों।

पुंजा—पुं०[सं० पुंज] १. गुच्छा। २. समूह। ३. गट्ठा। पूला।

पुंजातीय—वि०[सं० पुम्स्-जाति, ष० त०, +छ—ईय] लिंग के विचार से नर या पुरुष जाति का।
पुं० जाति या वर्ग का। (मेल)

पुंजि—पुं०[सं०√ पिञ्ज्+इन, पृषो० सिद्धि] समूह । ढेर।

पुंजिक—पुं०[सं० पुंज+ठन्—इक] ओला। (आकाश से गिरनेवाला)

पुंजित—भू० कृ०[सं० पुंज+इतच्] १. पुंज अर्थात् ढेर के रूप में बनाया या लगाया हुआ। २. एकत्र किया हुआ। संचित। (एक्यूमुलेटेड)

पुंजिष्ठ—भू० कृ०[सं० पुंज+इष्ठन्] पुंजित । (दे०)

पुंजी †—स्त्री०=पूंजी।

पुंजीभूत—वि०[सं० पुंज+च्वि, ईत्व √भू (होना)+क्त] पुंज या ढेर के रूप में बना या लगा हुआ। जो राशि के रूप में हो गया हो।

पुंजोत्पादन—पुं०[सं० पुंज-उत्पादन, ष०त०] यंत्रों आदि की सहायता से चीजों का बहुत अधिक मात्रा, राशि या संख्या में तैयार करना। (मास-प्रोडक्शन)

पुंड—पुं०[सं०√ पुंड् (मलना)+अच्] १. चंदन आदि का टीका। तिलक। २. दक्षिण भारत में बसनेवाली एक जाति जो पहले रेशम के कीड़े पालती थी।

पुंडरिया—पुं०[सं० पुंडरीक] पुंडरी का पौधा।

पुंडरी (रिन्)—पुं० [सं० पुंड√ऋ (गति)+णिनि] एक प्रकार का पौधा जिसकी सुगंधित पत्तियाँ शालपर्णी की पत्तियों की-सी होती हैं। इसका रस आँख के रोगों में हितकर माना गया है।

पुंडरीक—पुं० [सं०√ पुंड्+ईक, नि० सिद्धि] १. श्वेत कमल। २. कमल। ३. रेशम का कीड़ा। ४. बाघ। शेर। ५. एक सुगंधित पौधा। पुंडरिया। ६. सफेदा छाता। ७. कमंडल। ८. तिलक। ९. एक यज्ञ। १०. सफेदा आम। ११. एक तरह का धान। १२. सफेद हाथी। १३. एक तरह की ईख। पौंडा। १४. चीनी। १५. सफेद रंग का साँप। १६. एक प्रकार का बाज पक्षी। १७. श्वेतकुष्ठ। १८. हाथियों का ज्वर। १९. एक नाग। २०. अग्निकोण का दिग्गज। २१. क्रौंच द्वीप का एक पर्वत। २२. एक तीर्थ। २३. अग्नि। आग। २४. तीर। बाण। २५. आकाश। २६. जैनों के एक गणधर। २७. दमन या दौना नाम का पौधा। २८. सफेद रंग।

पुंडरीकाक्ष—पुं०[पुंडरीक-अक्षि, ब०स०,+षच्] १. विष्णु या नारायण, जिनके नेत्र कमल के समान माने गये हैं। २. रेशम के कीड़े पालनेवाली एक प्राचीन जाति।
वि० जिसके नेत्र कमल के समान बड़े और सुन्दर हों।

पुंडरीकाख†—पुं०=पुंडरीकाक्ष।

पुंडरीयक—पुं० [सं० पुंडरिन्+क्यच्+ण्वुल्—अक] १. पुंडरी का पौधा। २. स्थल कमल। ३. एक औषध। ४. एक विश्वदेव।

पुंडर्य—पुं०[सं०√पुण्ड+अच्, पुण्ड-अर्य, ष०त०, पररूप] पुंडरी नामक पौधा।

पुंड्र—पुं०[सं०√ पुण्ड+रक्] १. लाल रंग का एक तरह का मोटा गन्ना। पौंडा। २. तिनिश का वृक्ष। ३ माधवी लता। ४. पाकर वृक्ष। ५. सफेद कमल। ६. माथे पर लगाया जानेवाला टीका या तिलक। ७. तिलक का पौधा। ८. बलि के पुत्र एक दैत्य का नाम। ९. उक्त दैत्य के नाम पर बसा हुआ भारत का एक प्राचीन देश। १०. उक्त प्रदेश का प्राचीन नाम जिसमें आज-कल पुरनियाँ, मालदह, दीनाजपुर और राजशाही के कुछ क्षेत्र सम्मिलित थे। ११. उक्त देश का निवासी।

पुंड्रक—पुं० [सं० पुंड्र+कन्] १. माधवी लता। २. टीका। तिलक। ३. तिलक का वृक्ष। ४. पुंड्र या पौंड़ा नामक ईख। ५. रेशम के कीड़े पालनेवाला व्यक्ति। ६. घोड़े के शरीर का एक चिह्न या लक्षण जो रोएँ के रंग के भेद से होता है और जो शंख, चक्र, गदा, पद्म, खड्ग अंकुश या धनुष के आकार का होता है।

पुंड्र-केलि—पुं० [ब०स०] हाथी।

पुंड्र-वर्द्धन—पुं० [प०त०] प्राचीन पुंड्र देश की राजधानी जो तीर्थ भी थी।

पुंध्वज—पुं० [प०त०] नरपशु।

पुंनक्षत्र—पुं० [सं० कर्म०स०] वह नक्षत्र जिसके स्थिति काल में नर संतान उत्पन्न हो। नर नक्षत्र।

पुंनाग—पुं० [सं० उपमि०स०] १. सुलताना चंपा। २. श्वेत कमल। ३. जायफल। ४. श्रेष्ठ पुरुष।

पुंनाट—पुं० [सं० पुंस्√नट् (नृत्य)+णिच्+अच्] १. चक्रमर्द। चकवड़ का पौधा। २. कर्नाटक के निकट का एक देश। ३. दिगंबर जैन संप्रदाय का एक संघ।

पुंनाड—पुं०=पुंनाट।

पुंनिम†—स्त्री०=पूर्णिमा।

पुंमंत्र—पुं० [ष० त०] ऐसा मंत्र जिसके अंत में 'स्वाहा' या 'नमः' न हो।

पुंयान—० [पुंस० मध्य०स०] पालकी।

पुंरत्न—पुं० [उपमि०स०] पुरुष रत्न। श्रेष्ठ पुरुष।

पुंराशि—पुं० [कर्म०स०] कोई नर राशि। जैसे—मकर, कुंभ आदि।

पुंलिंग—पुं० [ष०त०] १. पुरुष का चिह्न। २. पुरुष का शिश्न, लिंग। ३. व्याकरण में संज्ञा शब्दों के दो वर्गों में से एक, जिसकी संज्ञाएँ नरों की सूचक होती हैं अथवा ऐसी चीजों की सूचक होती हैं जो पुरुष वर्ग की समझी जाती हैं। (मैसकुलिन)

वि० नर या पुरुष वाचक (शब्द)।

पुंवृष—पुं० [सं० पुंस्√वृष् (बरसना)+क] छछूंदर।

पुंश्चली—वि०, स्त्री० [सं० पुंस्√चल् (चलना)+अच्+ङीष्] पर-पुरुषों से गुप्त संबंध रखनेवाली (स्त्री)। व्यभिचारिणी। कुलटा। स्त्री० कुलटा या व्यभिचारिणी स्त्री।

पुंश्चलीय—पुं० [सं० पुंश्चली+छ—ईय] पुंश्चली का पुत्र या सन्तान। व्यभिचारिणी से उत्पन्न व्यक्ति।

पुंश्चिह्न—पुं० [सं० ष०त०] पुरुष का लिंग, शिश्न।

पुंस्—पुं० [सं०√पू (पवित्र करना)+डुमसुन्] पुरुष। नर। मर्द।

पुं-संतति—स्त्री० [सं०] वह संतान या वंशज जो पुरुष हो (स्त्री न हो)।

पुंसत्व—पुं=पुंस्त्व।

पुंसवन—वि० [सं० पुंस्√सू (प्रसव करना)+ल्युट्—अन] पुत्र उत्पन्न करनेवाला।

पुं० १. द्विजातियों के सोलह संस्कारों में से दूसरा संस्कार जो गर्भाधान से तीसरे महीने इस उद्देश्य से किया जाता है कि गर्भिणी स्त्री पुत्र प्रसव करे। २. वैष्णवों का एक प्रकार का व्रत। ३. दूध।

पुंसवान (वत्)—वि० [सं० पुंस+मतुप्, वत्व?] [स्त्री० पुंसवती] जिसे पुत्र हो। पुत्रवाला।

पुंसी—स्त्री० [सं० पुंस्+अच+ङीष] ऐसी गाय जिसके आगे बछड़ा हो। सवत्सा गौ।

पुंस्त्व—पुं० [सं० पुंस्+त्व] १. नर होने की अवस्था या भाव। पुरुषत्व। २. पुरुष की काम-शक्ति। ३. शुक्र। वीर्य। ४. व्याकरण में शब्द के पुंलिंग होने की अवस्था या भाव।

पुंस्त्व-विग्रह—पुं० [सं० ब० स०] भूतृण नाम की सुगंधित घास।

पुआ†—पुं०=पूआ (पकवान)।

पुआई—स्त्री० [देश०] १. एक प्रकार का सदाबहार पेड़ जिसकी लकड़ी चिकनी और पीले रंग की होती है। २. उक्त पेड़ की लकड़ी।

पुआल—पुं० [देश०] एक ऊँचा जंगली पेड़ जिसकी लकड़ी बहुत मजबूत और पीले रंग की होती है और इमारतों में लगती है।

†पुं०=पयाल (धान का)।

पुकार—स्त्री० [हि० पुकारना] १. पुकारने अर्थात् जोर से नाम लेकर संबोधित करने की क्रिया या भाव। २. कहीं उपस्थित होने के लिए किसी का जोर से लिया जानेवाला नाम। जैसे—कचहरी में पुकार होने पर कैदी न्यायाधीश के सामने लाया गया। ३. आत्मरक्षा, सहायता आदि के लिए दूसरों को बुलाने की क्रिया या भाव।

मुहा०—पुकार उठाना या मचाना=कोई काम कराने या अनौचित्य, अन्याय आदि रोकने के लिए सबसे चिल्लाकर कहना या आंदोलन करना।

४. किसी चीज का अभाव होने पर उसके लिए जन-साधारण द्वारा की जानेवाली बहुत जोरों की माँग। जैसे—शहर में चीनी की पुकार मची है। ५. अपना कष्ट जतलाते हुए किसी से न्याय करने के लिए की जाने-वाली प्रार्थना। फरियाद। ६. किसी काम या बात के लिए दिया जाने-वाला निमंत्रण। बुलावा। ७. जोर देते हुए किसी काम या बात के लिए किया जानेवाला निवेदन या प्रार्थना। ८. किसी बात का अभाव या आवश्यकता सूचित करने के लिए कही जानेवाली बात।

क्रि० प्र०—मचना—मचाना।

९. संगीत में, कंठ या वाद्य से निकाला हुआ कोई ऐसा बहुत ऊँचा स्वर जिसका क्रम अपेक्षया अधिक समय तक चलता रहे। जैसे—शहनाई की यह पुकार बहुत ही सुन्दर हुई है।

पुकारना—स० [सं० प्रकुश] १. किसी को बुलाने, संबोधित करने या उसका ध्यान आकृष्ट करने के लिए जोर से उसका नाम लेना। २. रक्षा, सहायता आदि के लिए किसी का आवाहन करना। जैसे—भारत-माता नवयुवकों को पुकार रही है। ३. किसी के नाम का जोर से उच्चा-रण करना। धुन लगाना। रटना। जैसे—ईश्वर का नाम पुकारना। ४. लोगों का ध्यान आकृष्ट करने के लिए जोर से किसी पद या शब्द का उच्चारण करना। उदा०—हरी हरी पुकारती हरी हरी लतान में। ५. कोई वस्तु पाने के लिए आकुल होकर बार बार उसका नाम लेना। चिल्लाकर माँगना। जैसे—प्यास के मारे सब 'पानी पानी' पुकार रहे हैं। ६. छुटकारे, बचाव, रक्षा आदि के लिए जोर से आवाज लगाना या चिल्लाना। ७. किसी नाम या संज्ञा से किसी को अभिहित करना। कहना। नाम धरना। (क्व०) जैसे—यहाँ तो इसे 'तीतर' पुकारते हैं।

पुक्कश—पुं०=पुक्कस।

पुक्कस—वि०[सं० पुक्√कस् (गति)+अच्, पृषो० सिद्धि]अधम। नीच। पुं० एक प्राचीन जाति जिसकी उत्पत्ति निषाद पिता और शूद्रा माता से कही गई है।

पुक्कसी—स्त्री०[सं० पुक्कस+ङीप्] १. कालापन। कालिमा। २. नील का पौधा।

पुक्की†—स्त्री०[हिं० पुकारना या फूँकना ?] सीटी।

पुख†—पुं० =पुष्य (नक्षत्र)।

पुखता—वि०=पुख्ता।

पुखर (रा)†—पुं०=पोखरा (तालाब)।

पुखराज—पुं० [सं० पुष्पराग] नौ प्रकार के रत्नों में से एक जो पीले रंग का होता है तथा जो धारण किये जाने पर बृहस्पति ग्रह का दोष हरता है। अन्य आठ रत्न ये हैं—मोती, हीरा, लहसुनिया, पद्मराग, गोमेद, नीलम, पन्ना और मूँगा।

पुख्ता—वि०[फ़ा० पुख्तः] [भाव०पुख्तगी] १. गठन, प्रकार, रचना आदि की दृष्टि से उच्च कोटि का, टिकाऊ और दृढ़। पक्का। मजबूत। २. जानकार। अनुभवी। ३. पूरी उम्र का। प्रौढ़। ४. पूरी तरह से निश्चित या स्थिर किया हुआ।

पुगना—अ० १.=पूजना। २=पूगना।

पुगाना—स०[हिं० पूगना (पूजना) का स०] १. उद्दिष्ट सीमा, स्थान आदि तक पहुँचाना। २. नियत या स्थिर अवधि या सीमा तक पहुँचाना। जैसे—गोली के खेल में गोली पुगाना=नियत गड्ढे में उसे प्रविष्ट करना। ३. जो उचित हो उसे पूरा करना, देना या भरना। जैसे—महाजन का रुपया पुगाना।

पुचकार—स्त्री०[हिं० पुचकारना] पुचकारने की क्रिया या भाव। प्यार जताने के लिए होंठों से निकाला हुआ चूमने का-सा शब्द। चुमकार।

पुचकारना—स०[अनु० पुचपुच से] प्यार जतलाते हुए मुँह से पुच-पुच शब्द करना।

पुचकारी—स्त्री०[हिं० पुचकारना] १. पुचकारने की क्रिया या भाव। पुचकार। २. मुँह से किया जानेवाला पुचपुच शब्द।

क्रि० प्र०—देना।

पुचपुच†—स्त्री०=पुचकारी।

पुचरस—पुं०[देश०] ऐसी धातु जिसमें कई और धातुओं की मिलावट हो। मिश्रधातु।

पुचारना—स०[हिं० पुचारा] १. पुचारा देना। पोतना। २. उजला या साफ करना। चमकाना। ३. सज्जित करना। सजाना। (क्व०)

पुचारा—पुं०[अनु० पुचपुच=भीगे कपड़े को दबाने का शब्द या हिं० पोतना से पुचारा] १. किसी चीज पर पतला लेप करने या पोतने का काम। २. भीगे हुए कपड़े से जमीन रगड़कर पोंछने का काम।

क्रि० प्र०—देना।—फेरना।

३. वह कपड़ा या और कोई ऐसी चीज जिससे उक्त क्रिया की जाय। ४. वह घोल या तरल पदार्थ जो किसी दूसरी चीज पर पोता या लेपा जाय।

क्रि० प्र०—फेरना।—लगाना।

५. उक्त प्रकार के लेप से किसी चीज पर चढ़ी हुई तह या परत। ६. छोड़ी या दगी हुई तोप या बंदूक की गरम नली ठंढी करने के लिए उस पर गीला कपड़ा फेरने की क्रिया। ७. किसी को पुचकारने या प्रसन्न करते हुए कही जानेवाली ऐसी बात जो उसे अपने अनुकूल करने या किसी के विरुद्ध उभारने के लिए कही जाय।

क्रि० प्र०—देना।

पुच्छ—स्त्री०[सं०√ पुच्छ् (प्रसन्न होना)+अच्] १. दुम। पूँछ। २. किसी चीज का पिछला और प्रायः नुकीला या लंबा भाग।

पुच्छकंटक—पुं०[ब० स०] बिच्छू, जिसकी दुम में, डंक होता है।

पुच्छदा—स्त्री०[सं० पुच्छ√दै (शोधन करना)+क+टाप्] लक्ष्मणा कंद।

पुच्छ-फल—पुं०[सं० ब० स०] बेर का पेड़।

पुच्छल—वि०[हिं० पुच्छ] १. जिसमें या जिसके पीछे पूँछ या दुम हो। पूँछवाला। २. जिसमें पूँछ की तरह पीछे कोई लंबा और प्रायः व्यर्थ का अंग लगा हो। जैसे—पुच्छलवाला।

पुच्छल तारा—पुं०[सं०] सूर्य के चारों ओर घूमनेवाला एक चमकीला पिंड जिसका मध्यवर्ती केन्द्र ठोस पदार्थ का बना होता है और साथ में गैस की एक पूँछ सी लगी रहती है। (कॉमेट)

पुच्छिका— स्त्री० [सं० पुच्छ+क+टाप्, इत्व] माषपर्णी।

पुच्छी (च्छिन्)—वि०[सं० पुच्छ+इनि] पूँछवाला। दुमदार। पुं०१. आक। मदार। २. मुरगा।

पुछना—अ०[हिं० पोंछना का अनु०] १. पुचारे से स्थान आदि का पोंछा जाना। २. न रह जाना। मिट जाना। उदा०—पुछ गया प्रतिगेह से दो एक का सिंदूर।—दिनकर।

पुछल्ला—पुं०[हिं० पूँछ+ला (प्रत्य०)] १. बड़ी या लंबी दुम। २. पूँछ की तरह पीछे जोड़ी या लगी हुई कोई लंबी चीज या धज्जी। जैसे—गुड्डी या पतंग का पुछल्ला। ३. वह जो प्रायः अनावश्यक रूप से या व्यर्थ किसी के पीछे या साथ लगा रहता हो और जल्दी उसका संग न छोड़ता हो। जैसे—वह जहाँ जाता है, अपने भाई को भी पुछल्ला बनाकर अपने साथ ले जाता है। ४. करघे में लपेटन की बाईं ओर का खूँटा। (जुलाहे)

पुछवैया—वि०[हिं० पुछवाना] किसी से कुछ पुछवानेवाला।

वि०[हिं० पूछना] १. पूछनेवाला। पुछैया। २. खोज-खबर लेनेवाला।

पुछार—पुं०[हिं० पूछना] १. पूछनेवाला। २. खोज-खबर लेनेवाला। ३. आदर करनेवाला।

†पुं० =पुंछार (मोर)।

पुछारी—पुं०[हिं० पूँछ] मोर। मयूर।

पुछिया—पुं०[हिं० पूँछ] दुंबा मेढ़ा।

पुछैया†—पुं०=पुछवैया।

पुजंता—वि०[सं० पूजा+हिं० अंता (प्रत्य०)] पूजा करनेवाला।

पुजना—अ०[हिं० पूजना] १. दूसरों द्वारा पूजित या सेवित होना। पूजा जाना। २. आदर, सम्मान आदि का भाजन होना। ३. पूजा, भेंट आदि का अधिकारी या पात्र बनना। जैसे—देहातों में नीम हकीम ही पुजते हैं।

पुजवना—स०[हिं० पूजना] १. पूरा करना। २. पूर्ण करना। जैसे—किसी की आस पुजवना। २. भरना। ३. देवी, देवता आदि की पूजा दूसरे से कराना। ४. सफल या सिद्ध करना। जैसे—कामना पुजवना।

पुजवाना—स० [हिं० 'पूजना' का प्रे०] १. किसी को पूजा करने में प्रवृत्त करना। आराधन या पूजन कराना २. किसी से धन प्राप्त करने के लिए उससे किसी की पूजा कराना। जैसे—पुजारी का मंदिर में बैठकर पुजवाना। ३. अपनी या अपने किसी अंग की औरों से पूजा करवाना। जैसे—वे शिष्यों से पैर पुजवाते हैं।

पुजाई—स्त्री० [हिं० पूजना=पूजा करना] १. पूजने की क्रिया या भाव। जैसे—गंगा पुजाई। २. पुजाने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक।

स्त्री० [हिं० पूजना=पूजा होना] १. पूरा करने या होने की क्रिया या भाव। २. पूरा करने या कराने का पारिश्रमिक

पुजाना—स० [हिं० पूजना=(पूजन करना) का प्रे०] १. दूसरे से देवी-देवता आदि का पूजन या पूजा कराना। किसी को पूजा में प्रवृत्त या नियुक्त करना। जैसे—पुजारी से ठाकुर पुजाना। २. किसी से अपनी पूजा, प्रतिष्ठा या आदर-सम्मान कराना अथवा देवतुल्य बनकर किसी से अपनी पूजा कराना और उनसे भेंट आदि प्राप्त करना। जैसे—आज कल पंडित जी यजमानों से पुजाते फिरते हैं। ३. किसी तरह से डरा-धमका या दबाकर अथवा उसके मन में किसी प्रकार का पूज्यभाव उत्पन्न, करके उससे कुछ धन या भेंट प्राप्त करना। दबा और फुसलाकर वसूल करना।

संयो० क्रि०—लेना।

स० [हिं० पूजना= पूरा होना] १. पूरा करना। पूर्ति करना। २. भरना। जैसे—दवा से घाव पुजाना। ३. सफल या सिद्ध करना। जैसे—किसी के मनोरथ पुजाना।

†अ०=पुजना (पूरा होना) ?

पुजापा—पुं० [सं० पूजा+पात्र] पूजन की सब सामग्री। जैसे—फल, फूल, धूप आदि।

मुहा०—पुजापा फैलाना=(क) देव-पूजा आदि की आडंबर पूर्ण व्यवस्था करना। (ख) बहुत-सी व्यर्थ की चीजें इधर-उधर फैलाना या बिखेरना। २. पूजा की सामग्री रखने का झोला। पुजाही।

पुजारी—पुं० [सं० पूजा+हिं० कारी (प्रत्य०)] १. किसी देवी-देवता की मूर्ति या प्रतिमा की पूजा पूरनेवाला व्यक्ति। विशेष रूप से ऐसा व्यक्ति जो किसी देवमूर्ति की पूजा, सेवा आदि करने के लिए नियुक्त किया गया हो। जैसे—उन्होंने अपने मंदिर में दो पुजारी भी रख लिये थे। २. किसी को देव-तुल्य मानकर उसकी भक्ति करनेवाला व्यक्ति। जैसे—धन या लक्ष्मी के पुजारी।

पुजाही†—स्त्री० [हिं० पूजा+आही (प्रत्य०)] पूजन की सामग्री रखने की थैली या पात्र। पुजापा।

पुजेरी—पुं० =पुजारी।

पुजेला—पुं०=पुजारी।

पुजैया—वि० [हिं० पूजना=पूजा करना] पूजा पूरनेवाला। पूजनेवाला। पूजक।

स्त्री० किसी विशेष उद्देश्य और समारोहपूर्वक की जानेवाली पूजा। पुजाई। जैसे—गंगा-पुजैया।

वि० [हिं० पूजना =भरना] पूरा करनेवाला। भरनेवाला।

स्त्री० पूरा करने या करने की क्रिया या भाव।

पुजौरा—पुं० [हिं० पूजा] १. अर्चना और पूजा। पूजन। २. पूजा के समय देवता के सामने रखी जानेवाली सामग्री।

पुट—पुं० [सं० √पुट् (=मिलना)+क] १. किसी चीज को मोड़कर लगाई हुई तह या बनाई हुई परत। २. पत्तों आदि को मोड़कर बनाया हुआ पात्र। दोना। ३. खाली या खोखली जगह या स्थान। ४. किसी प्रकार का बना या बनाया हुआ आधान या पात्र। जैसे—अंजलि-पुट, श्रवण-पुट आदि। उदा०—पियत नयन पुट रूप पियूखा।—तुलसी। ५. आच्छादित करने या ढकनेवाला आवरण या चीज। जैसे—नेत्र पुट (पलक); रद पुट (होंठ)। ६ वैद्यक में, वह मुँह बंद बरतन जिसके अन्दर रखकर कोई ओषधि या दवा पिलाई, फूँकी या सिद्ध की जाती है। ७. वैद्यक में, औषध सिद्ध करने या भस्म, रस आदि बनाने की उक्त प्रकार की कोई प्रक्रिया। जैसे—गज-पुट, भांड पुट, महापुट आदि।

विशेष—इसमें प्रायः एक पात्र में दवा रखी जाती है और उसके मुँह पर दूसरा पात्र रखकर चारों ओर से वह मुंह इस प्रकार बंद कर दिया जाता है कि न तो उसके अंदर कोई चीज जा सके और न अन्दर की कोई चीज बाहर आ सके। इसी लिए इसे 'संपुट' भी कहते हैं।

८. घोड़े की टाप। ९. जायफल। १०. एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में दो नगण, एक मगण और एक यगण होता है। ११. अंतःपट। अँतरौटा। १२. कली के आकार का पौधे का वह अंग जिसमें से नये कल्ले फूटकर निकलते हैं।

पुं० [सं० पुट=तह या परत] १. किसी चीज के ऊपर किसी दूसरी चीज की चढ़ाई, जमाई या लगाई हुई तह या परत। जैसे—इस पर गुलाबी रंग का एक पुट चढ़ा दो। २. किसी चीज में किसी दूसरी चीज का वह थोड़ा-सा अंश जो हलकी मिलावट के लिए उसमें डाला जाता है। जैसे—(क) शीरा पकाते समय उसमें दूध का पुट भी देते चलते हैं। (ख) इस शरबत में संतरे का भी पुट है।

मुहा०—पुट देना=कपड़े पर माँड़ी का छींटा देना। (जुलाहे)

३. लाक्षणिक रूप में, किसी बात की हलकी मिलावट या थोड़ा सा मेल। जैसे—उनके भाषण में परिहास का भी कुछ पुट रहता है।

पुं० [अनु०] किसी प्रकार उत्पन्न होनेवाला 'पुट' शब्द। जैसे—उँगलियाँ चटकाने या कलियों के चटकने के समय होनेवाला पुट शब्द।

पुट-कंद—पुं० [सं० ब०स०] कोलकंद। वाराही कंद।

पुटक—पुं० [सं० पुट√कै (भासित होना)+क] कमल।

पुटकिनी—स्त्री० [सं० पुटक+इनि—ङीप्] १. पद्मिनी। कमलिनी। २. कमलों का समूह। पद्म-जाल। ३. ऐसा स्थान जहाँ कमल अधिकता से होते हों।

पुटकी—स्त्री० [सं० पुटक=दोना] छोटी गठरी। पोटली।

स्त्री० [पुट से अनु०] १. कीड़े-मकोड़ों की तरह होनेवाली आकस्मिक तथा तुच्छतापूर्ण मृत्यु। २. आकस्मिक दैवी विपत्ति। बहुत बड़ी आफत। गजब।

मुहा०—(किसी पर) पुटकी पड़ना=(क) आकस्मिक दुर्घटना, रोग आदि के कारण चटपट मर जाना। (ख) बहुत बड़ी दैवी विपत्ति आना या पड़ना। (स्त्रियों की गाली या शाप) जैसे—पुटकी पड़े ऐसी मजदूरनी पर।

स्त्री० [हिं० पुट=हलका मेल] वह बेसन या आटा जो तरकारी के रसे में उसे गाढ़ा करने के लिए मिलाया जाता है। आलन।

पुट-ग्रीव—पुं० [सं० ब०स०] गगरा। कलसा।

पुट-पाक—पुं० [तृ० त०] १. पत्ते के दोने या और किसी प्रकार के पुट में रखकर औषध पकाने अथवा भस्म या रस बनाने की क्रिया या विधान। (वैद्यक)

पुट-भेद—पुं० [सं० पुट√भिद् (फाड़ना)+अण्] १. जल का भँवर। २. नगर। पत्तन। ३. पुरानी चाल का एक प्रकार का बाजा।

पुटरिया†—स्त्री०=पोटली।

पुटरी—स्त्री०=पोटली।

पुटालु—पुं० [सं० पुट-आलु, कर्म० स०] कोलकंद।

पुटास—पुं०=पोटास।

पुटिका—स्त्री० [सं० पुट+ठन्—इक, टाप्] १. पुड़िया। २. इलायची।

पुटित—भू० कृ० [सं० पुट+इतच्] १. जो किसी प्रकार के पुट के रूप में आया या लाया गया हो। २. जो सिमटकर दोने के आकार का हो गया हो। ३. संकुचित। सिकुड़ा हुआ। ४. पटा हुआ या पाटा हुआ। ५. मिला हुआ। ६. चारों ओर से बन्द किया हुआ। ७. (औषध) जो पुटी के रूप में किसी आवरण के अंदर हो। (कैप्स्यूल्ड)

पुटिया—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की छोटी मछली।

पुटियाना—स० [हिं० पुट+देना] फुसला या समझा-बुझाकर किसी को अनुकूल या राजी करना।

पुटी—स्त्री० [सं० पुट+ङीप्] १. छोटा दोना। छोटा कटोरा। २. खाली स्थान जिसमें कोई वस्तु रखी जा सके। जैसे—चंचुपुटी। ३. पुड़िया। ४. लंगोटी। ५. खाने के लिए गोली या टिकिया के रूप में, वह औषध जो किसी ऐसे आवरण में बंद हो जो औषध के साथ खाया जा सके। (कैप्स्यूल)

वि० (औषध) जो पुट-पाक की विधि में प्रस्तुत हो। (समस्त पदों के अन्त में) जैसे—सहस्रपुटी अभ्रक।

पुटीन—पुं० [अं० पुटी] लकड़ी की संधियों या छेदों आदि में भरने का एक तरह का मसाला जो अलसी के तेल में खड़िया मिट्टी मिलाकर बनाया जाता है।

पुटोटज—पुं० [सं० पुट-उटज, उपमि०स०] सफेद छाता।

पुटोदक—पुं० [सं० पुट-उदक, ब०स०] नारियल।

पुट्टी—स्त्री० [देश०] मछलियाँ पकड़ने का बड़ा झाबा।

पुट्ठा—पुं० [सं० पृष्ठ] १. कमर के पास का चूतड़ का ऊपरी भाग। २. चौपाये, विशेषतः घोड़े का चूतड़।

मुहा०—पुट्ठे पर हाथ न रखने देना=(क) चंचलता और तेजी के कारण सवार को पास न आने देना। (घोड़ों के लिए) (ख) अपना दोष छिपाने के लिए चतुर व्यक्ति का कौशलपूर्वक कोई ऐसी बात न होने देना जिससे वह पकड़ में आ सके।

३. उक्त अंग पर का चमड़ा जो अपेक्षया अधिक मजबूत होता है। (मोची) ४. घोड़ों की संख्या का सूचक शब्द। रास। जैसे—इस साल उसने चार पुट्ठे खरीदे हैं। ५. किसी पुस्तक की जिल्द या मोटाई का वह पिछला भाग, जिसके अन्दर उसकी सिलाई रहती है।

पुठवार—अव्य० [हिं० पुट्ठा] १. पीछे। २. बगल में।

पुठवाल—पुं० [हिं० पुट्ठा+वाला (प्रत्य०)] १. चोरों के दल का वह आदमी जो सेंध के मुहाने पर पहरे के लिए खड़ा रहता है। २. पृष्ठ-पोषक। ३. मददगार। सहायक।

पुठ्ठ†—स्त्री० दे० 'पीठ'।

पुठ्ठी†—स्त्री० [हिं० पुट्ठा] बैलगाड़ी के पहिये के घेरे का वह भाग जिसमें आरा और गज घुसे रहते हैं। किसी पहिये के ऐसे पूरे घेरे में ४ और किसी में ६ भाग होते हैं।

पुड़†—पुं० [सं० पुट] तल। सतह। (डिं०) उदा०—मुयंग छनी प्रथकी पुड़ भेदे।—प्रिथीराज।

पुड़ा—पुं० [सं० पुट] [स्त्री० अल्पा० पुड़िया, पुड़ी] १. बड़ी पुड़िया या बंडल। २. गौ का गर्भाशय।

मुहा०—पुड़ा टूटना=गौ का गर्भवती होना।

पुं० [हिं० पूरी=तबले पर का चमड़ा] ढोल पर मढ़ा जानेवाला चमड़ा।

पुं० पुट्ठा।

पुड़िया—स्त्री० [सं० पुटिका] १. कागज के टुकड़े को कुछ विशिष्ट प्रकार से मोड़ तथा उसके किनारों पर विशिष्ट प्रकार से बल चढ़ाकर ऐसा रूप देना कि उसमें रखी जानेवाली चीज बंद हो जाय। जैसे—(क) सौंफ या धनिये की पुड़िया। (ख) दवा की पुड़िया। २. पुड़िया में लपेटी हुई दवा या ऐसी ही और कोई चीज। जैसे—एक पुड़िया आज और दो पुड़िया कल खानी होंगी। ३. उक्त के आधार पर ऐसी चीज जो देखने में छोटी-सी हो परन्तु प्रभाव की दृष्टि से उग्र या प्रबल जैसे—यह लड़का जहर की पुड़िया है। ४. मुसलमानों में अबीर, गुलाल आदि की वह पुड़िया जो किसी कब्र या मजार पर भेंट के रूप में चढ़ाई जाती है।

मुहा०—पुड़िया उड़ाना=आकांक्षा या मन्नत पूरी होने पर कब्र या मजार पर अबीर, गुलाल आदि उड़ाना या चढ़ाना।

५. किसी के पास होनेवाली सारी पूँजी या सम्पत्ति। जैसे—अब तो उनके पास पचास हजार की पुड़िया हो गई है।

पुड़ी—स्त्री० १.=पुड़िया। २.=पूरी। ३.=पुटी।

पुढ़वी†—स्त्री०=पृथ्वी।

पुढ़ाई—स्त्री०=प्रौढ़ता।

पुणग—अव्य० [सं० पुनः] भी। (राज०)। उदा०—प्रांण दिये पाणी पुणग, जावा न दिए जेह।—बाँकीदास।

पुं०=पन्नग।

पुणच†—स्त्री० [सं० प्रत्यंचा] धनुष की डोरी। प्रत्यंचा। उदा०—संग्रहि धनुख पुणच सर संधि।—प्रिथीराज।

पुणिंद†—पुं०=फणीन्द्र।

पुणि—अव्य० [सं० पुनर] पुनः। फिर। उदा०—परमेसर प्रणवि सरसति पुणि।—प्रिथीराज।

पुण्य—वि० [सं०√पु (पवित्र करना)+यत्, णुक्-आगम, ह्रस्व] १. पवित्र। शुद्ध। जैसे—पुण्य-स्थान। २. मंगलकारक। शुभ। जैसे—पुण्य दिन। ३. धर्म विहित और उत्तम फल देनेवाला। जैसे—पुण्य-काम। ४. प्रिय और सुन्दर या सुखद। जैसे—पुण्य-लक्ष्मी।

पुं० वह धर्म विहित कर्म जिसका फल शुभ हो। सुकृत। जैसे—उन्होंने अपनी सारी संपत्ति पुण्य-खाते में दे दी थी। २. अच्छा या भला कार्य।

जैसे—दीनों को दान देना पुण्य का कार्य है। ३. कोई धार्मिक कृत्य, विशेषतः वह कृत्य जो स्त्रियाँ अपने पति और पुत्र की मंगल-कामना से करती हैं। ४. धार्मिक दृष्टि से कुछ विशिष्ट अवसरों पर कुछ विशिष्ट कर्म करने से प्राप्त होनेवाला शुभ फल। जैसे—कार्तिक स्नान का पुण्य, कथा सुनने का पुण्य आदि। ५. अच्छे और शुभ कर्मों का संचित रूप जिसका आगे चलकर उत्तम फल मिलता हो। जैसे—ऐसा सुशील लड़का बड़े पुण्य से मिलता है। ६. परोपकार का काम।

पुण्यक—पुं०[सं० पुण्य√कै (भासित होना)+क] १. व्रत, अनुष्ठान आदि धार्मिक कृत्य जिनके सम्पादन से पुण्य होता है। २. वे व्रत जो स्त्रियाँ पति तथा पुत्र के कल्याण की कामना से रखती हैं। ३. विष्णु।

पुण्य-कर्ता (र्तृ)—पुं०[ष०त०] पुण्य कर्म करनेवाला।

पुण्य-कर्म (न्)—पुं०[कर्म० स०] ऐसा कर्म जिसे करने से पुण्य होता हो। भला या शुभ कर्म।

पुण्य-कर्मा (र्मन्)—पुं०[ब०स०] अच्छे और शुभ कर्म करनेवाला।

पुण्य-काल—पुं०[मध्य०स०] धार्मिक दृष्टि से वह शुभ समय जिसमें दान आदि करने से पुण्य का विशेष फल मिलता है। जैसे—पूर्णिमा, संक्रान्ति आदि।

पुण्य-कीर्तन—पुं०[ब०स०] १. विष्णु। २. [ष० त०] पुराणों या धार्मिक ग्रन्थों का पाठ या वाचन।

पुण्य-कीर्ति—वि०[ब०स०] जिसकी कीर्ति के वर्णन से पुण्य हो।
स्त्री०[कर्म० स०] ऐसी कीर्ति जो पुण्यात्मक हो।

पुण्यकृत—पुं०[सं० पुण्य √ कृ (करना)+क्विप्] पुण्य करनेवाला।

पुण्य-कृत्य—पुं०[कर्म०स०]=पुण्य कर्म।

पुण्य-क्षेत्र—पुं०[ष०त०] वह स्थान, विशेषतः कोई तीर्थ-स्थान जहाँ जाने और धार्मिक कृत्य करने से विशेष पुण्य होता हो।

पुण्य-गंध—पुं०[ब०स०] चंपा।

पुण्य-गंधा—स्त्री० [ब०स०, टाप्] सोनजुही का फूल।

पुण्य-जन—पुं०[कर्म०स०]१. धर्मात्मा। सज्जन। २. राक्षस। ३. यक्ष।

पुण्यजनेश्वर—पुं० [पुण्यजन-ईश्वर, ष० त०] कुबेर।

पुण्य-जित्—वि०[तृ० त०] पुण्य कर्मों के द्वारा जीता या प्राप्त किया जानेवाला।

पुण्य-तिथि—स्त्री०[कर्म०स०]१. ऐसा शुभ दिन जिसमें धर्म, लोकोपकार आदि की दृष्टि से अच्छे कर्म (जैसे—दान, स्नान आदि) करने का विधान हो। २. कोई शुभ कार्य करने के लिए उपयुक्त दिन। ३. किसी महापुरुष के निधन की वार्षिक तिथि। जैसे—महात्मा गांधी या लोकमान्य तिलक की पुण्य-तिथि।

पुण्य-तृण—पुं०[कर्म०स०] सफेद कुश।

पुण्य-दर्शन—वि० [ब०स०] १. जिसके दर्शन मात्र से पुण्य होता हो। २. ऐसा जीव जिसके दर्शन का फल शुभ या अच्छा माना जाता या अच्छा होता हो।
पुं० नीलकंठ नामक पक्षी जिसका लोग विजयादशमी के दिन दर्शन करना पुण्यात्मक और शुभ समझते हैं।

पुण्य-पुरुष—पुं०[कर्म०स०] धर्मात्मा और पुण्यात्मा मनुष्य।

पुण्य-प्रताप—पुं०[ष० त०] किये हुए पुण्य से प्राप्त हुई विशेष कीर्ति या शक्ति। जैसे—बड़ों के पुण्य-प्रताप से सब काम ठीक हो जाते हैं।

पुण्य-फल—पुं०[ष०त०]१. धार्मिक कर्मों का शुभ फल। २. [ब०स०] लक्ष्मी के निवास करने का उद्यान।

पुण्यभाक् (ज्)—वि०[सं० पुण्य√ भज् (सेवा)+ण्वि] धर्मात्मा। पुण्यात्मा।

पुण्य-भूमि—स्त्री०[कर्म०स०]१. तीर्थ-स्थान। २. आर्यावर्त देश। ३. पुत्रवती स्त्री।

पुण्य-योग—पुं०[ष०त०] पूर्वजन्म में किये हुए शुभ कर्मों का मिलनेवाला फल।

पुण्य-लोक—पुं०[मध्य०स०] स्वर्ग जहाँ पुण्य अर्थात् शुभ कर्म करनेवाले लोग रहते हैं या मरने के बाद जाते हैं।

पुण्यवान् (वत्)—वि०[सं० पुण्य+मतुप्, वत्व] [स्त्री० पुण्यवती] पुण्य अर्थात् शुभ कर्म करनेवाला।

पुण्य-शील—वि०[ब०स०]=पुण्यात्मा।

पुण्य-श्लोक—वि०[ब०स०] [स्त्री० पुण्यश्लोका] जिसका चरित्र या यश बहुत शुभ और सुन्दर हो। शुभ-चरित्र।
पुं० १. राजा नल। २. युधिष्ठिर। ३. विष्णु।

पुण्य-श्लोका—स्त्री०[सं० पुण्य-श्लोक+टाप्]१. सीता। २. द्रौपदी।

पुण्य-स्थान—पुं०[मध्य० स०] १. अच्छे कर्म करने से मिलनेवाला स्थान या लोक। २. तीर्थ-स्थान जहाँ पुण्य-कर्म करने का विधान है। ३. जन्मकुंडली में लग्न से नवाँ स्थान जिसमें कुछ विशिष्ट ग्रहों की स्थिति से यह जाना जाता है कि अमुक व्यक्ति पुण्यवान होगा या नहीं।

पुण्या—स्त्री०[सं० पुण्य+टाप्] १. तुलसी। २. पुनपुना नदी।

पुण्याई—स्त्री०[हिं० पुण्य+आई (प्रत्य०)] पुण्य का परिणाम, प्रभाव या फल।

पुण्यात्मा (त्मन्)—वि० [पुण्य-आत्मन्, ब० स०] प्रायः पुण्यकर्म करनेवाला। पुण्यशील।

पुण्यार्थ—वि०[पुण्य-अर्थ, ब० स०]१. (कार्य) जो पुण्य की प्राप्ति के विचार से किया गया हो। २. (धन) जो लोकोपकारी कार्यों के लिए दान रूप में दिया गया हो। (चैरिटेबुल)
अव्य० पुण्य अर्थात् परोपकार या शुभ फल की प्राप्ति के विचार से।
पुं०१. लोकोपकार की भावना। २. लोकोपकार की भावना से दिया जानेवाला धन।

पुण्यार्थ-निधि—स्त्री० [कर्म०स०] वह निधि या धन-संपत्ति जो पक्की-लिखा पढ़ी करके किसी धार्मिक या सामाजिक लोकोपकारी शुभ कार्य के लिए दान की गई हो। (चैरिटेबुल एन्डाउमेन्ट)

पुण्याह—पुं०[पुण्य-अहस्, कर्म स०] मंगल कारक या शुभ दिन।

पुण्याह-वाचन—पुं०[ष०त०] १. मांगलिक कार्य के अनुष्ठान के पहले मंगल की कामना से तीन बार 'पुण्याह' शब्द कहना। २. कर्म-कांड में उक्त से सम्बद्ध एक प्रकार का कृत्य जो विवाह आदि शुभ कार्यों से पहले किया जाता है।

पुण्योदय—पुं०[पुण्य-उदय, ष० त०] शुभ कर्मों के फलस्वरूप होनेवाला सौभाग्य का उदय।

पुत्—पुं०[सं०√पृ (पूर्ति)+डुति, पृषो० सिद्धि] एक नरक का नाम जिससे पुत्र होने पर ही उद्धार होता हो या हो सकता है।

मिलावट, मैल आदि निकालकर किसी चीज को स्वच्छ बनाना। (रिफाइनिंग) २. त्रुटियाँ, दोष आदि दूर करके सुंदर, सुरुचिपूर्ण और स्वच्छ बनाना। (एम्बेलिशमेंट) ३. निर्मलता। स्वच्छता। ४. अलंकार। गहना। ५. शोभा। श्री। ६. बनाव-सिंगार। सजावट। ७. सजाने की सामग्री। उपस्कर। (फरनीचर) ८. संयम। (बौद्ध दर्शन)

परिष्कृति—स्त्री० [सं० परि√कृ+क्तिन्, सुट्] १. परिष्कृत होने की अवस्था, गुण या भाव। २. परिष्कार। ३. आचार-व्यवहार की वह उन्नत स्थिति जिसमें अशिष्ट, उद्धत, ग्राम्य, परुष, रुक्ष आदि बातों का अभाव और कोमल, नागर, विनम्र, शिष्ट तथा स्निग्ध तत्त्वों की अधिकता और प्रबलता होती है। (रिफाइनमेंट)

परिष्क्रिया—स्त्री० [सं० परि√कृ+सुट्,+टाप्] परिष्कार। (दे०)

परिष्कृत—भू० कृ० [सं० परि√कृ+क्त, सुट्] [भाव० परिष्कृति] १. जिसका परिष्कार किया गया हो। अच्छी तरह ठीक और साफ किया हुआ। २. सवाँरा या सजाया हुआ। अलंकृत। ४. सुधारा हुआ।

परिष्कृति—स्त्री० [सं० परि√कृ+क्तिन्, सुट्] परिष्कृत होने की अवस्था या भाव। परिष्कार।

परिष्टवन—पुं० [सं० प्रा० स०] प्रशंसा। स्तुति।

परिष्टोम—पुं० [सं० अत्या० स०] १. एक प्रकार का सामगान जिसमें ईश्वर की स्तुति होती है। २. घोड़े, हाथी आदि की झूल।

परिष्ठल—पुं० [सं० परि-स्थल, प्रा० स०] आस-पास की भूमि।

परिष्यंद—पुं० [सं० परि√ष्यंद् (बहना)+घञ्, षत्व]=परिस्यंद।

परिष्यंदी (दिन्)—वि० [सं० परिष्यंद+इनि] बहानेवाला।

परिष्वंग—पुं० [सं० परि√स्वञ्ज् (आलिंगन)+घञ्] गले लगाना। आलिंगन।

परिष्वंजन—पुं० [सं० परि√स्वञ्ज् (चिपकना)+ल्युट्—अन] [वि० परिष्वक्त] गले लगाना। आलिंगन।

परिष्वक्त—भू० कृ० [सं० परि√स्वञ्ज्+क्त] जिसे गले लगाया गया हो। आलिंगित।

परिसंख्या—स्त्री० [सं० परि-सम्√ख्या (प्रसिद्ध करना)+अङ्+टाप्] १. गणना। गिनती। २. साहित्य में, एक अलंकार जिसमें किसी स्थान में होनेवाली बात या वस्तु का प्रश्न या व्यंग्यपूर्वक निषेध करके अन्य स्थान पर प्रतिष्ठापन करने का वर्णन होता है। ३. कुछ स्थानों पर होनेवाली वस्तुओं के संबंध में यह कहना कि अब वे वहाँ नहीं रह गईं केवल अमुक जगह में रह गई हैं। जैसे—रामराज्य की प्रशंसा करते हुए यह कहना कि उसमें स्त्रियों के नेत्रों को छोड़कर कुटिलता और कहीं नहीं दिखाई देती थी।

परिसंख्यान—पुं० [सं० परि—सम्√ख्या+ल्युट्—अन] [भू० कृ० परिसंख्यात] अनुसूची। (दे०)

परिसंघ—पुं० [सं० प्रा० स०] पारस्परिक तथा सामूहिक हितों के रक्षार्थ बननेवाला वह अंतरराष्ट्रीय संघटन जिसके सदस्य स्वतंत्र राष्ट्र होते हैं। (कनफेडरेशन)

परिसंचर—पुं० [सं० परि-सम्√चर् (गति)+अच्] प्रलय-काल।

परिसंचित—भू० कृ० [सं० परि—सम्√चि (इकट्ठा करना) +क्त] इकट्ठा या संचित किया हुआ।

परिसंतान—पुं० [सं० अत्या० स०] १. तार। २. तंत्री।

परिसंपद्—स्त्री० [सं० प्रा० स०] व्यक्ति, संघटन, संस्था आदि का वह निजी या अधिकृत धन तथा संपत्ति जिसमें से उसका ऋण, देय आदि चुकाया जाता हो या चुकाया जा सके। (असेट्स)

परिसंवाद—पुं० [सं० परि-सम्√वद् (बोलना)+घञ्] १. दो या अधिक व्यक्तियों में किसी बात, विषय आदि के संबंध में होनेवाला तर्क संगत या विचारपूर्ण वादविवाद। (डिस्कशन) २. दे० परिचर्चा।

परिसंहत—वि० [सं०] १. अच्छी तरह उठा हुआ। २. (कथन या लेख) जिसमें फालतू या व्यर्थ की बातें अथवा शब्द न हों। (टर्म)

परिसंहित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] बहुत अच्छी तरह गठा या गाँठा हुआ। २. (साहित्य में ऐसी गठी हुई तथा संक्षिप्त रचना) जिसमें ओज, प्रसाद आदि गुण भी यथेष्ट मात्रा में हों।

परिसभ्य—पुं० [सं० प्रा० स] सभासद। सदस्य।

परिसमंत—पुं० [सं०प्रा०स०] वृत्त के चारों ओर की रेखा या सीमा।

परिसमापक—पुं० [परि-सम्√आप् (व्याप्ति)+ण्वुल्—अक] परिसमापन करनेवाला अधिकारी। (लिक्वीडेटर)

परिसमापन—पुं० [परि-सम्√आप्+ल्युट्—अन्] १. समाप्त करना। २. किसी चलते हुए काम का समाप्त होना। (टरमीनेशन) ३. किसी ऋणग्रस्त संस्था का कार-बार बंद करते समय किसी सरकारी अधिकारी या आदाता द्वारा उसकी परिसंपद लहनेदारों में किसी विशिष्ट अनुपात से बाँटा जाना। (लिक्वीडेशन) ३. दे० 'अपाकरण'।

परिसमाप्त—भू० कृ० [सं० परि-सम्√आप+क्त] १. जो पूरी तरह से समाप्त हो चुका हो। २. (संस्था) जिसका परिसमापन हो चुका हो।

परिसमाप्ति—स्त्री० [सं० परि-सम्√आप्+क्तिन्] परिसमापन।

परिसमूहन—पुं० [सं० परि-सम्√ऊह् (वितर्क)+ल्युट्—अन] १. एकत्र करना। २. यज्ञ की अग्नि में समिधा डालना। ३. तृण आदि आग में डालना। ४. यज्ञाग्नि के चारों ओर जल छिड़कने की क्रिया।

परिसर—वि० [सं० परि√सृ (गति)+अप्] [स्त्री० परिसरा] १. किसी के चारों ओर बहने (अथवा चलने) वाला। २. किसी के साथ जुड़ा, मिला, लगा या सटा हुआ। ३. फैला हुआ। विस्तृत। उदा०—खुली रूप कलियों में परभर स्तर स्तर सु-परिसरा। —निराला।

पुं० १. किसी स्थान के आस-पास की भूमि या खुला मैदान। २. प्रांत भूमि। ३. मृत्यु। ४. ढंग। तरीका। विधि। ५. शरीर की नाड़ी या शिरा।

परिसरण—पुं० [सं० परि√सृ+ल्युट्-अन] [भू० कृ० परिसृत] १. किसी के चारों ओर बहना (या चलना)। २. पर्यटन। ३. पराजय। हार। ४. मृत्यु। मौत। ५. दे० रसाकर्षण।

परिसर्प—पुं० [सं० परि√सृप् (गति)+घञ्] १. किसी के चारों ओर घूमना। परिक्रिया। परिक्रमण। २. घूमना-फिरना या टहलना। ३. ढूँढ़ने या तलाश करने के लिए निकलना। ४. चारों ओर से घेरना। ५. साहित्य दर्पण के अनुसार नाटक में किसी का किसी की

खोज और केवल मार्गचिह्नों आदि के सहारे उसका पता लगाने का प्रयत्न करना। जैसे—सीता-हरण के उपरान्त, राम का सीता को बन में ढूँढ़ते फिरना। ६. सुश्रुत के अनुसार ११ प्रकार के क्षुद्र कुष्ठों में से एक जिसमें छोटी-छोटी फुंसियाँ निकलती हैं और उन फुंसियों से पंछा या मवाद निकलता है। ७. एक प्रकार का साँप।

परिसर्पण—पुं० [सं० परि√सृप्+ल्युट्–अन] १. घूमना-फिरना। टहलना। २. साँप की तरह टेढ़े-तिरछे चलना या रेंगना।

परिसर्पा—स्त्री० [सं० परि√सृ (गति)+क्यप्+टाप्] १. मृत्यु। २. हार।

परिसांत्वन—पुं० [सं० परि√सान्त्व् (ढाढस देना)+ल्युट्—अन] १. बहुत अधिक सांत्वना देना। २. उक्त प्रकार से दी हुई सान्त्वना।

परिसाम (मन्)—पुं० [सं० प्रा० स०] एक विशेष साम।

परिसार—पुं० [सं० परि√सृ+घञ्] =परिसरण।

परिसारक—वि० [सं० परि√सृ+ण्वुल्–अक] जो परिसरण करे। चारों ओर चलने, जाने या बहनेवाला।

परिसारी (रिन्)—वि० [सं० परि√सृ+णिनि] १. परिसरण-संबंधी। २. परिसारक। (दे०)

परिसिद्धिका—स्त्री० [सं० प्रा० स०] वैद्यक में, चावल की एक प्रकार की लपसी।

परिसीमन—पुं० [सं० परिसीमा से] [भू० कृ० परिसीमित] किसी क्षेत्र, विषय आदि की सीमाएँ निर्धारित करना। (डिलिमिटेशन)

परिसीमा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. अंतिम या चरम सीमा। २. वह मर्यादा या रेखा जहाँ आगे किसी विषय का विस्तार न हो।

परिसीमित—भू० कृ० [सं० परिसीमा+इतच्] जिसका परिसीमन हुआ या किया जा चुका हो। २. (संस्था) जिसकी पूँजी, हिस्सेदारी आदि कुछ विशिष्ट नियमों या सीमाओं के अन्दर रखी गई हो। (लिमिटेड)

परिसून—पुं० [सं० अत्या० स०] बिना अधिकार के और बूचड़खाने से बाहर मारा हुआ पशु।

परिसेवन—पुं० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक सेवा करना।

परिसेवित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. जिसकी बहुत अच्छी तरह सेवा की गई हो। २. जिसका बहुत अच्छी तरह सेवन किया गया हो।

परिस्कंद—पुं० =परिष्कंद।

परिस्तरण—पुं० [सं०परि√स्तृ (आच्छादन)+ल्युट्–अन] १. इधर-उधर फेंकना या डालना। छितराना। २. फैलाना। ३. ढकना या लपेटना।

परिस्तान—पुं० [फा०] १. परियों अर्थात् अप्सराओं का जगत् या देश। २. ऐसा स्थान जहाँ बहुत-सी सुन्दर स्त्रियों का जमघट या निवास हो।

परिस्तोम—पुं० [सं० प्रा० ब० स०] चित्रित या अनेक रंगोंवाली (हाथी की पीठ पर डाली जानेवाली) झूल।

परिस्थान—पुं० [सं० प्रा० स०] १. वासस्थान। २. दृढ़ता।

परिस्थिति—स्त्री० [सं० प्रा० स०] [वि० परिस्थितिक] किसी व्यक्ति के चारों ओर होनेवाली वे सब बातें या उनमें से कोई एक जिससे बाध्य या प्रेरित होकर वह कोई कार्य करता हो। (सर्कम्स्टेंसेज)

परिस्थिति विज्ञान—पुं० [सं०] आधुनिक जीव विज्ञान की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि देश, काल आदि की परिस्थितियों का जीव-जंतुओं पर क्या प्रभाव पड़ता है। (इकालोजी)

परिस्पंद—पुं० [सं० परि√स्पंद् (हिलना)+घञ्] १. काँपने की क्रिया या भाव। कंप। कँपकँपी। २. दबाना या मलना। ३. ठाट-बाट। तड़क-भड़क। ४. फूलों आदि से सिर के बाल सजाना। ५. निर्वाह का साधन। ६. परिवार। ७. धारा। प्रवाह। ८. नदी। ९. द्वीप। टापू।

परिस्पंदन—पुं० [सं० परि√स्पंद्+ल्युट्–अन] ८. बहुत अधिक हिलना। खूब काँपना। २. काँपना।

परिस्पर्द्धा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] =प्रतिस्पर्धा।

परिस्पर्द्धी (द्धिन्)—पुं० [सं०परि√स्पर्ध् (जीतने की इच्छा)+णिनि] =प्रतिस्पर्धी।

परिस्फुट—वि० [सं० प्रा० स०] १. भली-भाँति व्यक्त। सब प्रकार से प्रकट या खुला हुआ। २. अच्छी तरह खिला हुआ। पूर्ण विकसित।

परिस्फुरण—पुं० [सं० परि√स्फुर् (गति)+ल्युट्–अन] १. कंपन। २. कलियों, कल्लों आदि का निकलना या फूटना।

परिस्मापन—पुं० [सं० परि√स्मि (विस्मय करना)+णिच्, पुक्+ल्युट् —अन] बहुत अधिक चकित या विस्मित करना।

परिस्यंद—पुं० [सं० परिष्यंद] चूना। रसना।

परिस्यंदी (दिन्)—वि० [सं० 'परिष्यंदी] जिसमें प्रवाह हो। बहता हुआ।

परिस्रव—पुं [सं० परि√स्रु (बहना)+अप्] बहुत अधिक या चारों ओर से चूना या रसना।

परिस्राव—पुं० [सं० परि√स्रु+घञ्] १. चू या रसकर अधिक परिमाण में निकलनेवाला तरल पदार्थ। २. एक रोग जिसमें रोगी को ऐसे बहुत अधिक दस्त होते हैं जिनमें कफ और पित्त मिला होता है।

परिस्रावण—पुं० [सं० परि√स्रु+णिच्+ल्युट्—अन] वह पात्र जिसमें कोई चीज चुआ या रसाकर इकट्ठी की जाय।

परिस्रावी (विन्)—वि० [सं० परि√स्रु+णिनि] चूने, रसने या बहनेवाला।

पुं० ऐसा भगंदर रोग जिसमें फोड़े में से बराबर गाढ़ा मवाद निकलता रहता है।

परिस्रुत—वि० [सं० परि√स्रु+क्त] १. जिससे कुछ टपक या चू रहा हो। स्रावयुक्त। २. चुआया या टपकाया हुआ।

पुं० फूलों का सुगंधित सार। (वैदिक)

स्त्री० मदिरा। शराब।

परिस्रुत-दधि—पुं० [सं० कर्म० स०] ऐसा दही जिसे निचोड़कर उसमें का जल निकाल दिया गया हो।

परिस्रुता—स्त्री० [सं० परिस्रुत+टाप्] १. चुआई या टपकाई हुई तरल वस्तु। २. मद्य। शराब। ३. अंगूरी शराब।

परिहँस*—पुं० [सं० परिहास] १. हँसी-दिल्लगी। परिहास। २. लोक में होनेवाली हँसी। उपहास। उदा०—परहँसि मरसि कि कौनेहु लाजा—जायसी। ३. खेद। दुःख। रंज। (मुख्यतः लोक-निंदा, उपहास आदि के भय से होनेवाला) उदा०—कंठ बचन न बोलि आवै हृदय परिहँस करि, नैन जल भरि रोई दीन्हों, ग्रसति आपद दीन।—सूर।

परिहत—भू०कृ० [सं० परि√हन् (हिंसा)+क्त] १. जो मार डाला गया

स० पूरा करना।

पुनपुना—स्त्री०[सं० पुनःपुना] बिहार राज्य की एक छोटी नदी जो गया से होकर बहती है और पवित्र मानी जाती है। इसके किनारे लोग पिंड-दान करते हैं।

पुनरपगम—पुं०[सं० पुनर्-अपगम, मध्य०स०] पुनः जाना।

पुनरपि—अव्य०[सं० पुनर्-अपि, द्व० स०]१. फिर भी। २. फिर से। दोबारा।

पुनरबसु—पुं०=पुनर्वसु।

पुनरभिधान—पुं०[सं० पुनर्-अभिधान, मध्य०स०] कोई बात फिर से या पुनः कहना।

पुनरवलोकन—पुं० [सं० पुनर्-अवलोकन, मध्य स०] फिर से या दोबारा देखना।

पुनरस्त्रीकरण—पुं०[सं० पुनर्-अस्त्रीकरण, मध्य०स०] [वि० पुनरस्त्री-कृत] जिस देश, राष्ट्र या सेना के अस्त्र, शस्त्र आदि पहले छीन लिए गए हों, उसे फिर से अस्त्र, शस्त्रों आदि से युक्त और सज्जित करना। (री-आर्मामेन्ट)

पुनरागत—वि० [सं० पुनर्-आगत, मध्य०स०] १. पुनः आया हुआ। २. लौटा हुआ।

पुनरगम—पुं०[सं० पुनर्-आगम, मध्य०स०] फिर से या लौटकर आना। पुनरागमन।

पुनरागमन—पुं०[सं० पुनर्-आगमन, मध्य० स०]१. एक बार आ चुकने-के बाद दोबारा या फिर से आना। २. मृत्यु होने पर फिर शरीर धारण करके इस संसार में आना। पुनर्जन्म।

पुनरागामी (मिन्)—वि०[सं० पुनर्-आगामिन्, मध्य०स०] फिर से आने-वाला।

पुनरादि—वि०[सं० पुनर्-आदि, ब०स०] फिर से आरम्भ या शुरू करने-वाला।

पुनराधान—पुं०[सं० पुनर्-आधान, मध्य०स०] श्रौत या स्मार्त अग्नि का एक बार छूट या बुझ जाने पर फिर से किया जानेवाला ग्रहण। अग्निस्थापन।

पुनराधेय—वि०[सं० पुनर्-आधेय, मध्य० स०] फिर से स्थापित की जाने-वाली (अग्नि)।
पुं० दे० 'पुनराधान'।

पुनरानयन—पुं०[सं० पुनर्-आनयन, मध्य०स०] लौटा लाना।

पुनरारंभ—पुं० [सं० पुनर्-आरंभ, मध्य० स०] छोड़ा या स्थगित किया हुआ काम पुनः या फिर से आरंभ करना। (रिजम्पशन)

पुनरावर्त—पुं०[सं० पुनर्-आवर्त, मध्य०स०]१. लौटना। २. बार-बार जन्म लेना।

पुनरावर्तक—वि०[सं० पुनर्-आवर्तक, मध्य०स०] पुनः पुनः आनेवाला ज्वर।

पुनरावर्तन—पुं०[सं० पुनर्-आवर्तन, मध्य० स०] १. फिर से या दोबारा होनेवाला आवर्तन। फिर से लौटकर आना। २. किसी रोग के बहुत-कुछ अच्छे हो जाने पर भी फिर से होनेवाला उसका प्रकोप। (रिलैप्स)

पुनरावर्ती (तिन्)—वि० [सं० पुनर्-आवर्तिन्, मध्य० स०] बार-बार जन्म लेनेवाला।

पुनरावर्ती ज्वर—पुं०[सं०] किलनी, जूँ आदि के काटने से होनेवाला एक प्रकार का विकट ज्वर जो पहले तो एक सप्ताह तक निरन्तर रहता है, और तब उतर जाने के बाद भी फिर आने लगता है। (रिलैप्सिंग फीवर)

पुनरावलोकन—पुं०[सं० पुनरवलोकन] [वि० पुनरावलोकित] १. देखी हुई चीज का फिर से देखना। २. किये हुए काम, निश्चय आदि को सुधार के विचार से फिर से देखना या दोहराना। (रिवीजन)

पुनरावृत्त—वि०[सं० पुनर्-आवृत्त, मध्य०स०] १. फिर से घूम या लौट कर आया हुआ। २. फिर से किया या दोहराया हुआ।

पुनरावृत्ति—स्त्री०[सं० पुनर्-आवृत्ति, मध्य० स०]१. फिर से घूमना या घूमकर आना। २. किये हुए काम या बात की फिर से होनेवाली आवृत्ति। किसी काम या बात का दोहराया जाना। जैसे—पढ़े हुए पाठ की पुनरावृत्ति।

पुनरीक्षण—पुं०[सं० पुनर्-ईक्षण, मध्य० स०] [भू० कृ० पुनरीक्षित] १. किसी किये हुए काम को जाँचने के लिए फिर से देखना। (रिव्यू) २. न्यायालय का एक बार सुने हुए मुकदमे को कुछ विशेष अवस्थाओं में फिर से सुनना। (रिवीजन)

पुनरीक्षित—भू० कृ० [सं० पुनर्-ईक्षित, मध्य० स०] जिसका पुनरीक्षण किया गया हो या हो चुका हो। (रिवाइज्ड)

पुनरुक्त—वि० [सं० पुनर्-उक्त, मध्य० स०] एक बार कहने के उपरान्त दोबारा या फिर से कहा हुआ।
पुं० साहित्य में एक प्रकार का दोष जो उस दशा में माना जाता है जब कोई बात एक बार कही जाने पर फिर से दोबारा या कई बार व्यर्थ ही कही जाती है।

पुनरुक्तवद-भास—पुं० [सं० पुनरुक्त+वति, पुनरुक्तवत-आ+भास ब० स०]एक प्रकार का शब्दालंकार जिसमें ऐसे शब्दों का प्रयोग होता है जो सुनने में एकार्थक और फलतः पुनरुक्त से जान पड़ें पर वास्तव में प्रसंगतः भिन्न-भिन्न अर्थ रखते हैं।

पुनरुक्ति—स्त्री० [सं० पुनर्-उक्ति, मध्य० स०] १. एक बार कही हुई बात शब्द आदि को फिर कहना। २. इस प्रकार दोबारा कही हुई बात। (रिपीटीशन)

पुनरुज्जीवन—पुं० [सं० पुनर्-उज्जीवन, मध्य० स०] [वि० पुनरुज्जी-वित] फिर से जीवित होना। (रिवाइल)

पुनरुज्जीवित—वि० [सं० पुनर्-उज्जीवित, मध्य० स०] जिसे फिर से जीवित किया गया हो अथवा जिसने फिर से जीवन प्राप्त किया हो। (रिवाइव्ड)

पुनरुत्थान—पुं० [सं० पुनर्-उत्थान, मध्य० स०] [भू० कृ० पुनरु-त्थित] १. गिरे हुए का फिर से उठना। २. जिसका एक बार पतन या ह्रास हो चुका हो, उसका फिरसे उठकर उन्नति करना। (रिनेसान्स)

पुनरुत्थित—भू० कृ० [सं० पुनर्-उत्थित, मध्य० स०] जिसका पुनरु-त्थान किया गया हो। अथवा हुआ हो।

पुनरुद्धार—पुं० [सं० पुनर्-उद्धार, मध्य० स०] टूटी-फूटी या नष्ट हुई चीज को फिर से ठीक करके उसे यथावत् या उसका उद्धार करना। (रिस्टोरेशन, रिनोवेशन)

पुनरुपगम—पुं० [सं० पुनर्-उपगम, मध्य० स०] वापस आना। लौटना।
पुनरुपोढा—वि० स्त्री० [सं० पुनर्-उपोढ, मध्य० स०] जो दोबारा या फिर से किसी के साथ ब्याही गई हो।
पुनरूढा—स्त्री० [सं० पुनर्-ऊढा, मध्य० स०] जो फिर से ब्याही गई हो।
पुनर्गमन—पुं० [सं० मध्य० स०] दोबारा जाना।
पुनर्गेय—वि० [सं० मध्य० स०] जो फिर से गाया जाय।
पुं० पुनरुक्ति।
पुनर्ग्रहण—पुं० [सं० मध्य० स०] कोई कार्य, पद, भार आदि एक बार छोड़ चुकने के बाद फिर से ग्रहण करना। (रिजम्पशन)
पुनर्जन्म (न्)—पुं० [सं० मध्य० स०] जीवात्मा का एक शरीर त्यागने के उपरांत दूसरा शरीर धारण करते हुए जन्म लेना। पुनः होनेवाला जन्म। (ट्रान्समाइग्रेशन)
पुनर्जन्मा (न्मन्)—पुं० [सं० ब० स०] ब्राह्मण।
पुनर्जागरण—पुं० [सं०] १. सोये हुए का फिर से जागना। २. युरोप के इतिहास में १४वीं,१५वीं और १६वीं शताब्दियों की वह स्थिति जिसमें कला, विद्या और साहित्य का नये सिरे से अनुसंधान और प्रचार होने लगा था; और जिसके कारण मध्य युग का अंत तथा आधुनिक युग का आरंभ हुआ था। (रिनेसन्स)
पुनर्जात—भू० कृ० [सं० मध्य० स०] जिसने पुनः जन्म लिया हो।
पुनर्जीवन—पुं० [सं० मध्य० स०] फिर से प्राप्त होनेवाला जीवन। पुनर्जन्म।
† पुं०=पुनरुज्जीवन।
पुनर्डीन—पुं० [सं० मध्य० स०] पक्षियों के उड़ने का एक प्रकार।
पुनर्णव—पुं० [सं० मध्य० स०] नख। नाखून।
पुनर्नव—वि० [सं० मध्य० स०] [भाव० पुनर्नवता, स्त्री० पुनर्नवा] जो पुराना हो जाने पर फिर से नया हो गया हो या नया कर दिया गया हो।
पुनर्नवा—स्त्री० [सं० मध्य० स०] गदह-पूरना नाम की वनस्पति जिसके सेवन से आँखों की ज्योति का फिर से बहुत बढ़ जाना माना जाता है।
पुनर्निर्माण—पुं० [सं० मध्य० स०] किसी टूटी-फूटी वस्तु का फिर से होनेवाला निर्माण। (री-कन्स्ट्रक्शन)
पुनर्परीक्षण—पुं० [सं० पुनःपरीक्षण] [भू० कृ० पुनर्परीरक्षित] फिर से या पुनः परीक्षण करना। दूसरी बार या दोबारा जाँचना। (रीएक्ज़ामिनेशन)
पुनर्भव—पुं० [सं० पुनर्√भू (होना)+अप्] १. पुनः होनेवाला जन्म। २. नख। नाखून। ३. रक्त पुनर्नवा।
वि० जो फिर हुआ हो। फिर से उत्पन्न।
पुनर्भाव—पुं० [सं० मध्य० स०] पुनर्जन्म।
पुनर्भू—स्त्री० [सं० पुनर्√भू+क्विप्] वह स्त्री जिसने पति के मरने पर दूसरे पुरुष से विवाह कर लिया हो।
पुनर्भोग—पुं० [सं० मध्य० स०] धार्मिक दृष्टि से पूर्व कर्मों का प्राप्त होनेवाला फल-भोग।
पुनर्मुद्रण—पुं० [सं० मध्य० स०] १. एक बार छपी हुई चीज का फिर से उसी रूप में छपना। २. पुस्तकों आदि का इस प्रकार छपकर तैयार होनेवाला संस्करण। (री-प्रिन्ट)
पुनर्वचन—पुं० [सं० मध्य० स०] १. पुनरुक्ति। २. शास्त्र द्वारा किसी बात का बार-बार विदित होना।
पुनर्वसु—पुं० [सं० पुनर्√वस् (निवास, आच्छादन)+उ] १. सत्ताईस नक्षत्रों में से सातवाँ नक्षत्र। २. विष्णु। ३. कात्यायन मुनि। ५. एक लोक।
पुनर्वाद—पुं० [सं० मध्य० स०] १. कोई बात पुनः ज्यों की त्यों अथवा कुछ उलट-पुलट कर कहना। २. छोटे न्यायालय के निर्णय के असंतोष-जनक प्रतीत होने पर बड़े न्यायालय से उस पर फिर से विचार करने के लिए की जानेवाली प्रार्थना। (अपील)
पुनर्वादी (दिन्)—पुं० [सं० पुनर्वाद+इनि] वह जो बड़े न्यायालयों से किसी छोटे न्यायालय द्वारा किये हुए निर्णय पर फिर से विचार करने के लिए कहे। (एपेलेन्ट)
पुनर्वास—पुं० [सं० मध्य० स०] १. पुनः बसना। २. घर-बार न रह जाने पर अथवा छीन लिये जाने पर फिर से नया घर आदि बनाकर रहना। ३. उजड़े हुए लोगों को फिर से बसाना या आबाद करना। (री-हैबिलिटेशन)
पुनर्वासन—पुं० [सं० मध्य० स०] उजड़े हुए लोगों को फिर से बसाने की क्रिया या भाव।
पुनर्विधान—पुं० [सं० मध्य० स०] फिर से विधान करना या बनाना।
पुनर्विधायन—पुं० [सं० मध्य० स०] [भू० कृ० पुनर्विहित] किसी बने हुए विधान को घटा या बढ़ाकर नये सिरे से विधान का रूप देना। (री-एनैक्टमेन्ट)
पुनर्विधायित—भू० कृ० [सं० मध्य० स०]=पुनर्विहित।
पुनर्विभाजन—पुं० [सं० मध्य० स०] एक बार जिसका विभाजन हो चुका हो, उसका फिर से विभाजन करना। (री-डिस्ट्रीब्यूशन)
पुनर्विलोकन—पुं० [सं० मध्य० स०] एक बार देखी हुई वस्तु, बात आदि को फिर से अच्छी तरह से देखना। (रिव्यू)
पुनर्विवाह—पुं० [सं० मध्य० स०] एक बार विवाह हो चुकने पर (पति या पत्नी के मर जाने पर) दोबारा होनेवाला विवाह। दूसरा ब्याह।
पुनर्विवाहित—भू० कृ० [सं० मध्य० स०] जिसका एक बार विवाह हो चुकने के उपरान्त किसी कारण-वश फिर से विवाह हुआ है।
पुनर्विहित—भू० कृ० [सं० मध्य० स०] १. जिसका फिर से विधान हुआ या किया गया हो। २. (पहले से बना हुआ विधान) जो फिर से घटा-बढ़ाकर ठीक किया गया और नये विधान के रूप में लाया गया हो। (री-एनैक्टैड)
पुनर्व्यंजन—पुं० [सं० मध्य० स०] पहले से बनी हुई चीज जो अब अस्तित्व में न रह गयी हो, उसे फिर से ज्यों की त्यों या उसी तरह बनाकर सबके सामने रखना। (री-प्रोडक्शन)
पुनर्व्यक्त—भू० कृ० [सं० मध्य० स०] जिसका पुनर्व्यंजन हुआ हो। दोबारा बनाकर अस्तित्व में लाया हुआ।
पुनर्सारण—पुं० [सं० पुनःसारण] [भू० कृ० पुनर्सारित] किसी एक

रेडियो-आस्थान से प्रसारित होनेवाला कार्य-क्रम ज्यों का त्यों उसी समय दूसरे रेडियो-आस्थानों से भी प्रसारित किया जाना। (रिले)

पुनर्सारित—भू० कृ० [सं० पुनःसारित] (कार्य-क्रम) जो अन्य रेडियो आस्थानों से भी प्रसारित किया गया हो या किया जा रहा हो। (रिलेड)

पुनर्स्थापन—पुं० [सं० पुनःस्थापन] [भू० कृ० पुनर्स्थापित] जो पहले अपने स्थान से हटाया गया हो, उसे फिर उसी स्थान पर रखना या स्थापित करना। (रिप्लेसमेन्ट)

पुनवाँसी—स्त्री०=पूर्णमासी।

पुनश्च—अव्य० [सं० पुनर्-च] १. इसके बाद। फिर। २. दूसरी बार। दोबारा। ३. जो कुछ कहा जा चुका है, उसके बाद या साथ इतना और भी या यह भी।

पुं० एक पद जिसका प्रयोग पत्र आदि लिखकर समाप्त कर लेने पर बाद में याद आई हुई बात नीचे लिखने से पहले होता है। (पोस्टस्क्रिप्ट)

पुनश्चर्वण—पुं० [सं० पुनर-चर्वण, मध्य० स०] चौपायों का पागुर करना। पगुरी।

पुनह*—अव्य०=पुनः।

पुनि—अव्य० [सं० पुनः] १. फिर से। दोबारा। पुनः।

पद—पुनि पुनि=बार बार।

२. ऊपर से। तिस पर। और भी।

पुनिम (ा)†—स्त्री०=पूर्णिमा।

पुनी—पुं० [सं० पुण्य, हिं० पुन] पुण्य करनेवाला। पुण्यात्मा।

स्त्री०=पूर्णिमा।

अव्य०=पुनि।

पुनीत—वि० [सं० पूत] [स्त्री० पुनीता] १. जिसमें पवित्रता हो। पवित्र। २. जो उत्तम हो और इसी लिए जो पवित्र और प्रशंसनीय माना जाता हो जैसे—पुनीत-कर्तव्य।

पुन्न†—पुं०=पुण्य।

पुन्नक्षत्र—पुं०=पुं-नक्षत्र।

पुन्नपुंसक—पुं० [सं०] संस्कृत व्याकरण में ऐसा शब्द जो पुंलिंग और नपुंसक लिंगी दोनों में चलता हो। जैसे—शिशिर।

पुन्नाग—पुं० [सं०] सुल्तान चंपा (देखें) नामक वृक्ष।

पुन्नार—पुं०=पुंनाट।

पुन्नाड़—पुं०=पुंनाट।

पुन्य†— पुं०=पुण्य।

पुन्यता (ई)—स्त्री० [सं० पुण्य] १. पुण्य का कार्य या भाव। २. पवित्रता। ३. धर्मशीलता।

पुपलाना—अ० [हिं० पोपला] पोपला होना

स० पोपला करना।

पुपली—स्त्री० [हिं० पोपला=पोला] १. आम की गुठली घिसकर बनाया हुआ बाजा या सीटी। २. बाँस की पतली और पोली नली।

विशेष :—कुछ विशिष्ट प्रकार के हाथ से चलाये जानेवाले खपचियों के बने हुए पंखों की डंडियों में पुपली पहनाई जाती है। इसे पकड़कर पंखा चलाने पर वह चारों ओर घूमने लगता है।

३. बच्चों के खेलने का काठ का एक प्रकार का छोटा खिलौना जो छोटी डंडी के आकार का होता है और जिसके दोनों सिरे कुछ मोटे होते हैं। इसे प्रायः छोटे बच्चे चूसते हैं, इसलिए इसे 'चुसनी' भी कहते हैं।

पुपूषा—स्त्री० [सं०√पू (पवित्र करना)+सन्+अ+टाप्] शुद्धि करने की इच्छा।

पुप्पू—पुं०=पुष्प।

पुप्फुल—पुं० [सं० पुप् फुस् पृषो० स–ल] पेट के अन्दर की हवा। उदरस्थ वायु।

पुप्फुस—पुं० [सं० पुप् फुस्+अच्] १. फेफड़ा। २. कमल का बीज-कोश। कँवलगट्टे का छत्ता।

† स्त्री०=फुसफुस।

पुब्बय—वि० [सं० पूर्वीय] १. पूर्वकाल का। २. पुराना।

पुमर्थ—पुं० [सं० ष० त०] चार प्रकार के पुरुषार्थों में से हर एक।

पुमान् (मस्)—पुं० [सं०√पू+डुमसुन्] मर्द। नर। पुरुष।

पुरंजन—पुं० [सं० पुर√जन् (उत्पन्न करना)+ख, मुम्] जीवात्मा।

पुरंजनी—स्त्री० [सं० पुरंजन+ङीष्] बुद्धि। समझ।

पुरंजय—वि० [सं० पुर√जि (जीतना)+खच्, मुम्] पुर को जीतनेवाला।

पुं० एक सूर्यवंशी राजा जिसका दूसरा नाम काकुत्स्थ था।

पुरंजर—स्त्री० [सं०] काँख। बगल।

पुरंदर—वि० [सं० पुर√दृ (तोड़ना, फाड़ना)+खच्, मुम्] पुर (नगर या घर) को तोड़नेवाला।

पुं० १. इंद्र। २. चोर। ३. चव्य। चाब। ४. मिर्च। ५. ज्येष्ठा नक्षत्र। ६. विष्णु।

पुरंदरा—स्त्री० [सं० पुरंदर+टाप्] गंगा।

पुरंध्री—स्त्री० [सं० पुर√भृ (पालन करना)+खच्+ङीष्] १. ऐसी सौभाग्यवती स्त्री जिसके आगे पति, पुत्र और कन्याएँ हों। २. स्त्री।

पुरः (रस्)—अव्य० [सं० पूर्व+असि, पुर्–आदेश] १. काल, दिशा आदि के विचार से आगे या सामने। समक्ष। २. किसी के पहले या पूर्व। ३. पूर्व दिशा का। पूर्वी। ४. पूर्व की ओर उन्मुख।

विशेष—पुरस्कार, पुराक्रिया, पुरस्कृत, पुरस्सर आदि शब्दों में उनके पहले इसका उक्त पुरस् रूप ही सम्मिलित रहता है।

पुरःदत्त—वि० [सं० पुरोदत्त] (परिव्यय या शुल्क) पहले से किया हुआ। जो पहले दिया गया हो। (प्रीपेड)

पुरःदान—पुं० [सं० पुरोदान] [भू० कृ० पुरःदत्त] (देन, परिव्यय, शुल्क आदि) नियत समय से पहले ही चुकाना या दे देना। (प्रीपेमेन्ट)

पुरःप्रत्यय—पुं० [सं० मध्य० स०] व्याकरण में ऐसा प्रत्यय जो किसी शब्द के पहले लगकर उसके अर्थ में कोई विशेषता उत्पन्न करता है। जैसे—'अनुगत' में का 'अनु' पुरःप्रत्यय है।

पुरः संगी—वि० [सं०] किसी कार्य, तथ्य या विषय में, उससे पहले सम्बद्ध या सहायक रूप में आने, होने या साथ रहनेवाला। (एक्सेसरी बिफोर दी फैक्ट)

पुरःसर—वि० [सं० पुरस्√सृ (गति)+ट] १. मिला हुआ। युक्त। २. संग या साथ रहने या होनेवाला।

पुं० १. आगे आगे चलनेवला। २. अगुआ। नेता। ३. संगी। साथी।

पुर—वि० [सं०√पुर् (आगे जाना)+क] भरा हुआ।
पु० [स्त्री० अल्पा० पुरी] १. वह बड़ी बस्ती जिसमें बड़ी बड़ी इमारतें भी हों। गाँव से बड़ी परन्तु नगर से छोटी बस्ती।
विशेष—प्राचीन काल में पुर का क्षेत्रफल एक कोस से अधिक होता था और उसके चारों ओर खाई होती थी।
२. घर। मकान। ३. अटारी। कोठा। ४. भुवन। लोक। ५. नक्षत्रों का पुंज। राशि। ६. देह। शरीर। ७. कुएँ से पानी खींचने का मोट।—चरसा। ८. मोथा। ९. पीली कसरैया। १०. गुग्गुल। ११. किला। गढ़। दुर्ग। १२. चोगे की तरह का एक प्रकार का पुराना पहनावा।
अव्य० [सं० पुरः] आगे। सामने। उदा०—स्वान। निशंक कहौ पुर मेरे।।—केशव।
पुं०=पुरवट। (लखनऊ)
मुहा०—पुर लेना=पानी से भरा हुआ पुरवट खींचकर उसका पानी नाली में गिराना।

पुरइन—स्त्री० [सं० पुटकिनी, प्रा० पुड़इनी=कमलिनी, पु० हिं० पुरइनि] १. कमल का पत्ता। २. कमल। ३. जरायु।

पुरउना*—स०=पुरवना।

पुरउबि*—स० [सं० पूर्ण] पूरा कीजिएगा।

पुर-कायस्थ—पुं० [सं० ष० त०] प्राचीन भारत में पुर (या नगर) का वह अधिकारी जिसके पास मुख्य लेखों, दस्तावेजों आदि की नकलें रहती थीं। (इसका पद प्रायः आज-कल के रजिस्ट्रार के पद के समान होता था।)

पुर कोट्ट—पुं० [ष० त०] नगर की रक्षा के लिए बनाया हुआ दुर्ग।

पुरखा—पुं० [सं० पुरुष] [स्त्री० पुराविन] १. पूर्वज।
मुहा०—पुरखे तर जाना=पूर्व पुरुषों को (पुत्र आदि के कृत्यों से) परलोक में उत्तम गति प्राप्त होना। बहुत बड़ा पुण्य या उसका फल होना। कृत्य कृत्य होना। जैसे—उनके आने से तुम क्या, तुम्हारे पुरखे भी तर जायँगे।
२. सयाना और वृद्ध व्यक्ति।

पुरग—वि० [पुर√गम् (जाना)+ड] १. नगरगामी। २. जिसकी मनोवृत्ति अनकूल हो।

पुरगुर—पुं० [देश०] एक प्रकार का पेड़ जिसकी लकड़ी खिलौने, हल आदि बनाने के काम आती है।

पुरचक—स्त्री० [हिं० पुचकार] १. चुमकार। पुचकार। २. बढ़ावा। प्रेरणा।
क्रि० प्र०—देना।
३. पृष्टपेषण। ४. समर्थन। हिमायत।
क्रि० प्र०—देना।—पाना।—लेना।
५. बुरा अभ्यास या परिपाटी। (पश्चिम)

पुर-जन—पुं० [ष० त०] पुर या नगर के रहनेवाले लोग। पुरवासी।

पुरजा—पुं० [फा० पुर्जः] १. टुकड़ा। खंड।
मुहा०—पुरजे पुरजे उड़ाना या करना=कागज, पत्र आदि को फाड़कर उसके अनेक छोटे छोटे टुकड़े कर देना।
२. काटकर निकाला हुआ टुकड़ा। कतरन। धज्जी। ३. कागज के टुकड़े पर लिखी हुई बात या सूचना। ४. किसी के हस्ते भेजी जाने वाली चिट्ठी। ५. किसी बड़े यंत्र का कोई अंग, अंश या खंड। जैसे—घड़ी के कई पुरजे खराब हो गये हैं।
पद—चलता पुरजा=बहुत बड़ा चालाक।
मुहा०—(किसी के दिमाग का) पुरजा ढीला होना=कुछ खबती, झक्की या सनकी होना।

पुरजित्—पुं० [सं० पुर√जि (जीतना)+क्विप्] १. शिव। २. कृष्ण का एक पुत्र जो जांबवती के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

पुरट—पुं० [सं०√पुर्+अटन] सुवर्ण। सोना।

पुरण—पुं० [सं०√पृ+क्यु—अन] समुद्र।

पुरतः (तस्)—अव्य० [सं० पुर+तस्] आगे। सामने। उदा०—पुरतो में प्रेषितम् पत्र।—प्रिथीराज।

पुर-तटी—स्त्री० [मध्य० स०] छोटा बाजार। हाट।

पुर-तोरण—पुं० [ष० त०] नगर का बाहरी दरवाजा या मुख्य-द्वार।

पुर-त्राण—वि० [ब० स०] पुर की रक्षा करनेवाला।
पुं० परकोटा।

पुर-देव—पुं०=नगर-देवता।

पुर-द्वार—पुं० [ष० त०] पुर का मुख्य द्वार। नगर का मुख्य फाटक।

पुरद्विट् (ष)—पुं० [ष० त०] शिव।

पुरना—अ० [हिं० पूरा] १. पूरा या पूर्ण होना। २. यथेष्ट मात्रा या मान में प्राप्त होना। उदा०—पुरती न जो पै मोर-चंद्रिका किरीट-काज, जुरती कहा न काँच किरचें कुमाय की।—रत्नाकर। ३. समाप्त होना।

पुर-नारी—स्त्री० [ष० त०] नगर-नारी। रंडी। वेश्या।

पुरनियाँ—वि० [हिं० पुरान] बुड्ढा (या बुड्ढी)। वृद्ध (या वृद्धा)।

पुर-निवेश—पुं० [ष० त०] पुर या नगर बनाना और बसाना।

पुर-निवेशन—पुं० [ष० त०] पुर या नगर बसाने का कार्य।

पुरनी—स्त्री० [हिं० पूरना=भरना] १. अँगूठे में पहनने का छल्ला। २. तुरही। ३. बंदूक की नली साफ करने का कागज।

पुर-पक्षी (क्षिन्)—पुं० [ष०त०] १. पुर या नगर में रहनेवाला पक्षी। २. पालतू पक्षी।

पुरपाल—पुं० [सं० पुर√पाल् (रक्षा)+णिच+अच्] १. पुर या नगर का प्रधान अधिकारी। २. कोतवाल। ३. आत्मा। जीव।

पुरबला—वि० [सं० पूर्व+हिला (प्रत्य०)] [स्त्री० पुरबली] १. पूर्व का। पहले का। २. पूर्व जन्म का। पिछले जन्म का।

पुरबा†—वि०=पुरवा।

पुरबिया—वि० [हिं० पूरब] [स्त्री० पुरबिनी] १. पूर्व देश में उत्पन्न या रहनेवाला। परब का। २. पूर्व दिशा से आनेवाला। जैसे—पुरबिया हवा।
पुं० पूर्वी देश का निवासी।

पुरबिहा†—वि०, पुं०=पुरबिया।

पुरबी—वि०=पूरबी।

पुरभिद्—पुं० [सं० पुर√भिद् (विदीर्ण करना)+क्विप्] पुर (त्रिपुर) का भेदन करनेवाले, शिव।

पुरमथन—पुं० [ष० त०] शिव।

पुर-मथिता (तृ)—पुं०[सं०] शिव।

पुर-मार्ग—पुं०[ष० त०] १. पुर या नगर की ओर जानेवाला रास्ता। २. शहर की सड़क।

पुर-रक्षी—पुं०=पुर-रक्षक।

पुर-रक्षक—पुं०[ष०त०] नगर की रक्षा करनेवाला कर्मचारी।

पुर-रक्षा (क्षिन्)—पुं०[ष०त०]=पुर-रक्षक।

पुर-रोध—पुं०[ष० त०] शत्रु के नगर को घेरा डालना। चारों ओर से घेरना।

पुरला—स्त्री०[सं०√ पुर्+कलच्+टाप्] दुर्गा।

पुर-लोक—पुं०[ष० त०]=पुरजन।

पुरवइया†—स्त्री०=पुरवाई।

पुरवट—पुं०[सं० पूर] चमड़े का एक तरह का बड़ा उपकरण या डोल जिससे सिंचाई के लिए कुओं से पानी निकालते हैं। चरसा। मोट।

क्रि० प्र०—खींचना।—चलना।—चलाना।

मुहा०—पुरवट नाधना=पुरवट चलाने के लिए उसमें बैल जोतना।

पुर-वधू—स्त्री०[ष० त०] वेश्या।

पुरवना—स०[हिं० पूरना का प्रेर०]१. पूर्ण या पूरा करना। जैसे—मनोरथ पुरवना।

मुहा०—साथ पुरवना=अन्त तक या पूरी तरह से साथ देना।

२. इच्छा, कामना, प्रतिज्ञा आदि पूरी करना। उदा०—जन प्रहलाद प्रतिज्ञा पुरई सखा विप्र दरिद्र हयौ।—सूर।

अ०१. पूरा या पूर्ण होना। २. पूरा पड़ना। यथेष्ट होना। ३. पूर्ति होना। कमी दूर होना।

पुर-वर—पुं०[स० त०]१. अच्छा और बढ़िया या श्रेष्ठ नगर। २. राजनगर। राजधानी।

पुरवा—पुं०[सं० पुर] छोटा गाँव। पुरा। खेड़ा।

वि०[सं० पूर्व] पूर्व दिशा का।

पुं०[सं० पूर्व+वात] १. पूर्व की ओर से आने या चलनेवाली हवा। पुरवाई। २. उक्त वायु के चलने पर पशुओं को होनेवाला एक रोग, जिसमें उनका गला और पेट फूल जाता है।

पुं०[सं० पुटक] मिट्टी का एक प्रकार का छोटा बरतन जिसमें पानी, दूध, शराब आदि पीते हैं। कुल्हड़।

पुरवाई—स्त्री०[सं० पूर्व+वायु, हिं० पूरब+वाई] पूर्व की वायु। वह वायु जो पूर्व दिशा से आती हो।

पुरवाना—स०[हिं० पुरवना का प्रे०] पूरा कराना।

पुरवासी (सिन्)—पुं०[सं० पुर√वस् (बसना)+णिनि] पुर या नगर का रहनेवाला। नागरिक।

पुर-वास्तु—पुं०[ष० त०] वह भूमि या स्थान जहाँ नगर अच्छी तरह बनाया या बसाया जा सकता हो।

पुरवैया—स्त्री०=पुरवाई।

पुर-शासन—पुं०[सं० पुर√शास् (शासन करना)+ल्यु—अन] १. दैत्यों के त्रिपुर का ध्वंस करनेवाले, शिव। २. विष्णु।

पुरश्चरण—पुं०[सं० पुरस्√चर् (गति)+ल्युट्—अन] १. किसी कार्य की सिद्धि के लिए पहले से ही उपाय सोचना और उसका अनुष्ठान करना। किसी काम की पहले से की जानेवाली तैयारी। २. किसी विशिष्ट उद्देश्य की सिद्धि के लिए नियम और विधान पूर्वक कुछ निश्चित समय तक किया जानेवाला तांत्रिक पूजा-पाठ। तांत्रिक प्रयोग।

पुरश्चर्या—स्त्री०[सं० पुरस्√ चर्+क्यप्+टाप्] पुरश्चरण।

पुरश्छद—पुं०[सं० पुरस्√छद (ढंकना)+णिच्+घ, ह्रस्व] कुश या डाभ की तरह की एक घास।

पुरषा†—पुं० =पुरखा (पूर्व पुरुष)।

पुरस—पुं०[सं० पुरीष] खाद।

पुरसाँ—वि०[फा० पुसाँ] पूछने या खोज-खबर लेनेवाला।

पुरसा—पुं०[सं० पुरुष] ऊँचाई या गहराई नापने की एक नाप जो उतनी ऊँची होती है, जितना ऊँचा हाथ ऊपर ऊठाकर खड़ा हुआ साधारण मनुष्य होता है। लगभग साढ़े चार या पांच हाथ की एक माप। जैसे—यह कुआँ या नदी चार पुरसा गहरी है।

पुरसी—स्त्री०[फा०] समस्त पदों के अंत में, जानने के लिए कुछ पूछने की क्रिया या भाव। जैसे—मातम-पुरसी, मिजाज-पुरसी आदि।

पुरस्कार—पुं०[सं० पुरस्√ कृ (करना)+घञ्] [भू० कृ० पुरस्कृत] १. आगे करने की क्रिया। २. आदर। पूजा। ३. प्रधानता। ४. स्वीकार। ५. अच्छी तरह कोई बड़ा और कठिन काम करने पर उसके कर्ता को आदर या सत्कार के रूप में दिया जानेवाला धन या पदार्थ। इनाम (प्राइज)।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।

पुरस्कृत—भू० कृ०[सं० पुरस्√कृ+क्त] १. आगे किया हुआ। २. पूजित। ३. स्वीकृत। ४. जिसे पुरस्कार मिला हो।

पुरस्तात्—अव्य०[सं० पूर्व+अस्ताति, पुर—आदेश] १. आगे। सामने। २. पूर्व दिशा में। ३. पूर्व काल में। ४. आरंभ में।

पुरस्सर—वि०=पुरः सर।

पुरहँड़†—पुं०[सं० पुरोघट या पूर्णघट] मंगलकलश।

पुरहत—पुं०[सं० पुरः-अक्षत] वह अन्न और द्रव्य जो विवाह आदि मंगल कार्यों में पुरोहित और नेगियों को कृत्य करने के प्रारंभ में दिया जाता है। आखत।

पुरहन्—पुं०[सं० पुर√हन् (हिंसा)+क्विप्] १. विष्णु। २. शिव।

पुरहर†—पुं०[सं० पूर्ण-भर] मांगलिक पात्र। मंगलघट। उदा०—धवल कमल फुल पुरहर भेल।—विद्यापति।

वि०=पूरा।

पुरहा—पुं०[सं०] १. शिव। २. विष्णु।

†पुं०[हिं० पुर] वह व्यक्ति जो खेतों की नालियों में पुरवट का पानी गिराता हो। (पूरब)

पुरही—स्त्री०[?] एक प्रकार की झाड़ी जिसकी पत्तियाँ और जड़ें औषध के काम आती हैं। हर-जेवड़ी।

पुरहूत—वि०, पुं०=पुरुहूत।

पुरांगना—स्त्री०[सं० पुर-अगना, ष०त०] नगर में रहनेवाली स्त्री। नगर-निवासिनी।

पुरांतक—पुं०[स० पुर-अंतक ष०त०] शिव।

पुरा—अव्य०[सं० √ पुर (अग्रगति)+का]१. पुराने समय में। पूर्व या प्राचीन काल में। २. अब तक। ३. थोड़े समय में।

वि० समस्त पदों के आरंभ में विशेषण के रूप में लगकर यह पुराना या प्राचीन का अर्थ देता है। जैसे—पुराकल्प, पुरावृत्त।
स्त्री०१. पूर्व दिशा। पूरब। २. मुरा नामक गंध द्रव्य। ३. छोटी बस्ती। गाँव।

पुराई—स्त्री०[हिं० पूरना-भरना] १. पूरा करने की क्रिया या भाव। २. पुरवट आदि के द्वारा खेतों में पानी देने की क्रिया। सिंचाई।
क्रि० प्र०—चलना।
३. उक्त का पारिश्रमिक या मजदूरी।

पुरा-कथा—स्त्री० [कर्म० स०] १. प्राचीन काल की बातें। २. इतिहास।

पुराकल्प—पुं० [कर्म० स०] १. पूर्व कल्प। पहले का कल्प। २. प्राचीन इतिहास युग। ३. एक प्रकार का अर्थवाद जिसमें प्राचीन काल का कहकर किसी विधि के करने की ओर प्रवृत्त किया जाय। जैसे—ब्राह्मणों ने इससे हविः पवमान सामस्तोम की स्तुति की थी। ४. आधुनिक भू० विज्ञान के अनुसार उत्तर पाँच कल्पों में से तीसरा कल्प, जिसमें पृथ्वी तल पर जगह-जगह छिछले समुद्र बनने लगे थे; खूब बाढ़ें आती थीं; मछलियाँ, सरीसृप और कीड़े-मकोड़े उत्पन्न होने लगे थे, और कुछ विशिष्ट प्रकार के बहुत बड़े-बड़े वृक्ष होते थे। यह कल्प प्रायः बीस से पचास करोड़ वर्ष पहले हुआ था। पुराजीवकाल। (पेलियो जोइक एरा)
विशेष—शेष चार कल्प ये हैं—आदि कल्प, उत्तर कल्प, मध्य कल्प और नवकल्प।

पुराकालीन—वि०[सं० पुरा–काल, कर्म० स०,+ख—ईन] १. प्राचीन काल का। बहुत पुराना। २. इतना अधिक पुराना कि जिसका प्रचलन, प्रयोग या व्यवहार बहुत दिन पहले से उठ गया हो। बहुत पुराने जमाने का। (एन्टीक)

पुराकृत—भू० कृ०[सं० स० त०]१. पूर्व काल में किया हुआ। २. पूर्वजन्म में किया हुआ।
पुं० पूर्वजन्म में किये हुए वे भले और बुरे काम जिनका फल दूसरे जन्म में भोगना पड़ता है।

पुरा-कोश—पुं०[सं०कर्म० स०] ऐसा शब्दकोश जिसमें प्राचीन भाषाओं के अथवा बहुत पुराने शब्दों का विवेचन होता है। निघण्टु। (लेक्सिकन)

पुराग—वि०[सं० पुरा√गम् (जाना)+ड] पूर्वगामी।

पुराचीन—वि० १.=पुराकालीन। २.=प्राचीन।

पुराजीव—पुं०=जीवाश्म। (देखें)

पुराजीवकाल—पुं०=पुराकाल।

पुराजैविकी—स्त्री०=जीवाश्म विज्ञान। (देखें)

पुराण—वि० [सं० पुरा√ट्यु—अन] [भाव० पुराणता] १. बहुत प्राचीन काल का। बहुत पुराना। पुरातन। जैसे—पुराण पुरुष। २. बहुत अधिक अवस्था या वय वाला। वृद्ध। बुड्ढा। ३. जो पुराना होने के कारण जीर्ण-शीर्ण हो गया हो।
पुं०१. बहुत पुरानी घटना या उसका वृत्तांत। २. प्रायः सभी प्राचीन जातियों, देशों और धर्मों में प्रचलित उन पुरानी और परम्परागत कथा-कहानियों का समूह जिनका थोड़ा-बहुत ऐतिहासिक आधार होता है; पर जिनके रचयिता अज्ञात कवि होते हैं। (मिथ) जैसे—चीन, यूनान या रोम के पुराण, जैन या बौद्ध पुराण।
विशेष—ऐसी कथाओं में प्रायः प्राकृतिक घटनाओं, मानव जाति की उत्पत्ति, सृष्टि की रचना, प्राचीन धार्मिक कृत्यों और सामाजिक रीति-रिवाजों के कुछ अत्युक्तिपूर्ण विवरण होते हैं; तथा देवी-देवताओं और वीर पुरुषों के जीवन-वृत्त होते हैं।
३. भारतीय धार्मिक क्षेत्र में, उक्त प्रकार के वे विशिष्ट बहुत बड़े-बड़े काव्य-ग्रंथ, जिनमें प्राचीन इतिहास की बहुत-सी घटनाओं के साथ-साथ सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और लय, देवी-देवताओं, दानवों, ऋषि-महर्षियों, महाराजाओं, महापुरुषों आदि के गुणों तथा पराक्रमों की बहुत-सी बातें, और अनेक राजवंशों की वंशावलियाँ आदि भी दी गई हैं, और धार्मिक दृष्टि से जिनकी गणना पाँचवें वेद के रूप में होती है।
विशेष—हिंदू धर्म में कुल १८ पुराण माने गये हैं। प्रायः सभी पुराणों में शेष सभी पुराणों के नाम और श्लोक-संख्याएँ थोड़े-बहुत अन्तर से दी हैं। पुराणों के नाम प्रायः ये हैं—ब्रह्म, पद्म, विष्णु, वायु अथवा शिव, लिंग अथवा नृसिंह, गरुड़, नारद, स्कंद,अग्नि, श्रीमद्भागवत अथवा देवी भागवत, मार्कण्डेय, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, वामन, वाराह, मत्स्य, कूर्म और ब्रह्माण्ड पुराण। साहित्यकारों के अनुसार पुराणों में पाँच बातें होती हैं—सर्ग अर्थात् सृष्टि, प्रतिसर्ग अर्थात् प्रलय और उसके उपरांत फिर से होनेवाली सृष्टि, वंशों, मन्वन्तरों और वंशानुचरित की बातों का वर्णन; परन्तु कुछ पुराणों में इस प्रकार की बातों के सिवा राजनीति राजधर्म, प्रजा-धर्म, आयुर्वेद, व्याकरण, शस्त्र-विद्या, साहित्य, अवतारों देवी-देवताओं आदि की कथाएँ तथा इसी प्रकार की और भी बहुत-सी बातें मिलती हैं। धार्मिक हिंदू प्रायः विशेष भक्ति और श्रद्धा से इन पुराणों की कथाएँ सुनते हैं। साधारणतः वेद-मंत्रों के संग्रहकर्ता वेद-व्यास ही इन सब पुराणों के भी रचयिता माने जाते हैं। इन १८ पुराणों के सिवा १८ उप-पुराण भी माने गये हैं। और जैन तथा बौद्ध-धर्मों में भी इस प्रकार के कुछ पुराण बने हैं। आधुनिक विद्वानों का मत है कि भिन्न-भिन्न पुराण भिन्न-भिन्न समयों में बने हैं। कुछ प्राचीन पुराणों के नष्ट हो जाने पर उनके स्थान पर उन्हीं के नाम से कुछ नये पुराण भी बने हैं। और इनमें बहुत-सी बातें समय-समय पर घटती-बढ़ती रही हैं।
४. उक्त ग्रन्थों के आधार पर १८ की संख्या का वाचक शब्द। ५. शिव। ६. कार्षापण नाम का पुराना सिक्का।

पुराण-कल्प—पुं० =पुराकल्प। (दे०)

पुराणग—पुं०[सं० पुराण√ गम् (जाना)+ड]१. पुराणों की कथाएँ पढ़ने अथवा पढ़कर दूसरों को सुनानेवाला पंडित या व्यास। २. ब्रह्मा।

पुराणता—स्त्री०[सं० पुराण+तल्+टाप्]१. पुराण का भाव। २. बहुत ही प्राचीन होने की अवस्था या भाव। (एन्टिक्विटी)

पुराण-दृष्ट—भू० कृ०[तृ० त०] जो पुराने लोगों द्वारा देखा और माना गया हो।

पुराण-पुरुष—पुं०[कर्म० स०]१. विष्णु। २. वृद्ध व्यक्ति।

पुरातत्त्व—पुं०[कर्म० स०] वह विद्या जिसमें मुख्यतः इतिहास पूर्व-काल की वस्तुओं के आधार पर पुराने अज्ञात इतिहास का पता लगाया जाता है। प्रत्न विज्ञान। (आर्कियॉलोजी)

पुरातत्त्वज्ञ—पुं० [सं० पुरातत्त्व√ज्ञा (जानना)+क] वह जो पुरातत्त्व विद्या का ज्ञाता हो। (आर्कियालाजिस्ट)

पुरातन—वि० [सं० पुरा+ट्यु—अन, तुट्] १. सब से पहले का। आद्य। २. पुराना। प्राचीन।

पुं० विष्णु।

पुरा-तल—पुं० [कर्म० स०] तलातल। (दे०)

पुराधिप—पुं० [सं० पुर-अधिप, ष० त०] पुर अर्थात् नगर का प्रधान शासनिक अधिकारी।

पुराध्यक्ष—पुं० [सं० पुर-अध्यक्ष, ष० त०] पुराधिप।

पुरान†—वि०=पुराना।

पुं०=पुराण।

पुराना—वि० [सं० पुराण] [स्त्री० पुरानी] १. जो प्रस्तुत समय से बहुत पहले का हो। बहुत पूर्व या प्राचीन काल का। जैसे—पुराना जमाना, पुरानी सभ्यता। २. जिसे अस्तित्व में आये या जीवन धारण किये हुए बहुत समय हो चुका हो। जैसे—पुराना पेड़, पुराना बुखार, पुराना मकान आदि। ३. जो बहुत दिनों का हो जाने के कारण अच्छी दशा में न रह गया हो या ठीक तरह से और पूरा काम न दे सकता हो। जीर्ण-शीर्ण। जैसे—पुराना कपड़ा, पुरानी चौकी। ४. जिसे किसी काम या बात का बहुत दिनों से अनुभव होता आया हो, अथवा जो बहुत दिनों से अभ्यस्त हो रहा हो। यथेष्ट रूप में परिपक्व। जैसे—पुराना कारीगर, पुराने पंडित या विद्वान्।

पद—**पुराना खुर्राट**=बहुत बड़ा अनुभवी। **पुराना घाघ**=बहुत बड़ा चालाक।

५. जो किसी निश्चित या विशिष्ट काल अथवा समय से चला आ रहा हो। जैसे—(क) पाँच सौ वर्ष का पुराना चावल, सौ वर्ष का पुराना पेड़। ६. जो उक्त प्रकार का होने पर भी अब प्रचलित न हो। जिसका चलन अब उठ गया हो, या उठता जा रहा हो। जैसे—पुराना पहनावा, पुरानी परिपाटी या प्रथा।

स० [हिं० पूरना का प्रे०] १. पूरने का काम किसी और से कराना। पूरा कराना। २. आज्ञा, निर्देश वचन आदि का निर्वाह या पालन कराना। ३. अवकाश, गड्ढे आदि के प्रसंग में, समतल कराना। भरवाना।

स० [हिं० पूरना] १. पूरा करना। २. निर्वाह या पालन करना।

=†अ०=पूरना (पूरा होना)।

पुराराति—पुं० [सं० पुर-अराति, ष० त०] शिव।

पुरारि—पुं० [सं० पुर-अरि, ष० त०] शिव।

पुराल†—पुं० [हिं०]=पयाल (धान के डंठल)। धान के ऐसे डंठल, जिसमें से बीज झाड़ लिये गये हों। पद।

पुरा-लेख—पुं० [कर्म० स०] किसी प्राचीन भवन या स्मृति-चिह्न पर अंकित किया हुआ कोई ऐसा लेख, जो किसी प्राचीन लिपि में अंकित हो। (एपिग्राफ)

पुरालेखशास्त्र—पुं० [ष० त०] वह शास्त्र जिसमें प्राचीन काल की लिपियाँ पढ़ने का विवेचन होता है। (एपिग्राफी)

पुरावती—स्त्री० [सं० पुर+मतुप्, वत्व,+ङीप्, दीर्घ] एक प्राचीन नदी। (महाभारत)

पुरावशेष—पुं० [सं० पुरा-अवशेष, कर्म० स०] बहुत प्राचीन काल की चीजों के टूटे-फूटे या बचे-खुचे अंश या अवशेष जिनके आधार पर उस काल की सभ्यता, इतिहास आदि के संबंध में जानकारी प्राप्त की जाती है। (एन्टिक्विटीज़)

पुरावसु—पुं० [कर्म० स०] भीष्म।

पुराविद्—वि० [सं० पुरा√विद् (जानना)+क्विप्] पुरानी अर्थात् प्राचीन काल की ऐतिहासिक, सामाजिक आदि बातों को जाननेवाला। पुरातत्त्वज्ञ। (आर्कियालोजिस्ट)

पुरा-वृत्त—पुं० [कर्म० स०] प्राचीन काल का कोई वृत्तांत।

पुरासाह्—पुं० [सं० पुरा√सह् (सहन करना)+ण्वि] इन्द्र।

पुरासिनी—स्त्री० [सं० पुर√अस् (फेंकना)+णिनि+ङीप्] सहदेवी नाम की बूटी।

पुरि—स्त्री० [सं०√पृ+इ] १. पुरी। २. शरीर। ३. नदी।

पुं० १. राजा। २. दशनामी संन्यासियों में से एक।

पुरिखा†—पुं०=पुरखा।

पुरिया—स्त्री० [हिं० पूरना] १. बाना फैलाने की नरी। २. ताना।

†स्त्री०=पुड़िया।

पुरिशय—पुं० [सं० पुरि√शी सोना+ड, अलुक्स] जीव।

पुरिष—पुं०=पुरीष (विष्ठा)।

पुरी—स्त्री० [सं० पुरि+ङीष्] १. छोटा पुर। नगरी। २. जगन्नाथ-पुरी। ३. गढ़। दुर्ग। ४. देह। शरीर।

पुरीतत्—स्त्री० [सं० पुरी√तन् (विस्तार)+क्विप्, तुक] १. हृदय के पास की एक नाड़ी। २. आँत।

पुरीमोह—पुं० [सं० पुरी√मुह् (मुग्ध होना)+णिच्+अण्] धतूरा।

पुरीष—पुं० [सं०√पृ+ईषन्, कित्] १. विष्ठा। मल। गू। २. जल। पानी।

पुरीषण—पुं० [सं० पुरी√ईष् (त्याग)+ल्युट्—अन] विष्ठा।

पुरीषम—पुं० [सं० पुरीष√मा (शब्द)+क] १. मल। विष्ठा। २. गंदगी। कूड़ा।

पुरीष-स्थान—पुं० [ष० त०] मल त्याग करने का स्थान। जैसे—खुड्डी पाखाना, संडास आदि।

पुरीषाधान—पुं० [सं० पुरीष-आधान, ष० त०] मलाशय।

पुरीषोत्सर्ग—पुं० [सं० पुरीष-उत्सर्ग, ष० त०] मल-त्याग।

पुरु—वि० [सं०√पृ (पालन, पोषण)+कु, उत्व] बहुत अधिक। विपुल।

पुं० १. देवलोक। स्वर्ग। २. एक दैत्य जिसे इन्द्र ने मारा था। ३. एक प्राचीन पर्वत। ४. फूलों का पराग। ५. देह। शरीर। ६. पुराणानुसार एक देश का नाम। ७. छठवें चन्द्रवंशी राजा, जो नहुष के पोते तथा ययाति के पुत्र थे। अपने पाँचों भाइयों में से इन्होंने अपने पिता ययाति के माँगने पर उन्हें अपना यौवन और रूप दे दिया, जिन्हें हजार वर्षों तक भोगने के बाद ययाति ने फिर इन्हें लौटा दिया था और अपने राज-सिंहासन का अधिकारी बनाया था। इन्हीं के वंश में दुष्यन्त और भरत हुए थे। जिनके वंशज आगे चलकर कौरव लोग हुए। ८. पंजाब का एक प्रसिद्ध राजा जो ई० पू० ३२७ में सिकन्दर से लड़ा था।

पुरुकुत्स—पुं० [सं०] एक राजा जो मांधाता का पुत्र और मुचुकुंद का भाई

था और जो नर्मदा नदी के आस-पास के प्रदेश पर राज्य करता था। इसने नाग कन्या नर्मदा के साथ विवाह किया था।

पुरुख†—पुं०=पुरुष।

पुरुजित्—पुं० [सं० पुरु√जि (जीतना)+क्विप्] १. कुंतिभोज का पुत्र जो अर्जुन का मामा था। २. विष्णु।

पुरुदंशक—पुं० [सं० ब० स०, कप्] हंस।

पुरुदंशा (शस)—पुं० [सं० पुरु√दंश् (काटना)+असुन्] इंद्र।

पुरुदस्म—पुं० [सं० पुरु√दस् (काटना)+मन्] विष्णु।

पुरुब—पुं०=पूर्व (दिशा या देश)।

पुरुभोजा (जस्)—पुं० [सं० पुरु√भुज् (खाना)+असुन्] बादल।

पुरुमित्र—पुं० [सं०] १. एक प्राचीन राजा जिसका नाम ऋग्वेद में आया है। २. धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

पुरुमीढ़—पुं० [सं०] अजमीढ़ का छोटा भाई।

पुरुष—पुं० [सं०√पुर् (आगे जाना)+कुषण्] १. मानव जाति का नर प्राणी। आदमी। मर्द। (स्त्री से भिन्न) २. उक्त प्रकार का वह व्यक्ति जिसमें विशिष्ट शक्ति या सामर्थ्य हो और जो वीरता तथा साहस के काम कर सकता हो; जैसे—तुम्हें पुरुषों की तरह मैदान में आना चाहिए। ३. राज्य की ओर से सार्वजनिक कार्यों के लिए नियुक्त किया हुआ कोई अधिकारी। राज-पुरुष। ४. ऊँचाई की एक नाप जो किसी सामान्य वयस्क मनुष्य की ऊँचाई के बराबर होती है। पुरसा। ५. शरीर में रहनेवाली आत्मा या जीव। ६. वह प्रधान सत्ता, जो सारे विश्व में आत्मा के रूप में वर्तमान है। विश्वात्मा।

विशेष—सांख्यकार ने इसे प्रकृति से भिन्न एक ऐसा चेतन मूल तत्त्व या पदार्थ माना है, जिसमें कभी कोई परिणाम या विकार नहीं होता, और जो स्वयं कुछ भी न करने और सबसे अलग रहने पर भी प्रकृति के सान्निध्य से ही सृष्टि की उत्पत्ति करता है।

७. किसी व्यक्ति की ऊपरवाली पीढ़ी या पीढ़ियाँ। पूर्व पुरुष। पूर्वज। उदा०—सों सठ कोटिक पुरुष समेता। बसहिं कलप सत नरक-निकेता।—तुलसी।

८. स्त्री का, पति या स्वामी। ९. व्याकरण में, वक्ता की दृष्टि से किया जानेवाला सर्वनामों का वर्गीकरण।

विशेष—इसके उत्तम पुरुष, प्रथम पुरुष और मध्यम पुरुष, ये तीन विभाग हैं। वक्ता अपने संबंध में जिस सर्वनाम का उपयोग करता है, वह उत्तम पुरुष कहलाता है। जैसे—मैं या हम। वह जिससे कोई बात-चीत करता है, उसके संबंध में प्रयुक्त होनेवाले विशेषण मध्यम पुरुष कहलाते हैं। जैसे—तू, तुम या आप। किसी तीसरे अनुपस्थित या दूरस्थ व्यक्ति या पदार्थ के लिए प्रयुक्त होनेवाले सर्वनामों की गणना प्रथम पुरुष में होती है। जैसे—वह या वे। कुछ वैयाकरण अँगरेजी व्याकरण के अनुकरण पर इन्हें क्रमात प्रथम पुरुष, द्वितीय पुरुष और तृतीय पुरुष भी कहते हैं। हमारी भाषा में इन पुरुषों का परिणाम या प्रभाव क्रिया-पदों पर भी होता है। जैसे—मैं जाता हूँ; तुम जाते हो; वह जाता है आदि।

१०. विष्णु। ११. सूर्य। १२. शिव। १३. पारा। १४. गुग्गुल। १५. पुन्नाग। १६. घोड़े का अपने पिछले दोनों पैरों पर खड़ा होना। पुरुषक। (देखें)

वि० [सं०] १. तीखा। तेज। जैसे—पुरुष पवन। २. नर। 'स्त्री' का विपर्याय। जैसे—पुरुष मकर। ३. जोरदार। बलवान।

पुरुषक—पुं० [सं० पुरुष√कै (भासित होना)+क] घोड़े की वह स्थिति जिसमें वह अपने दोनों अगले पैर ऊपर उठाकर दोनों पिछले पैरों पर खड़ा हो जाता है। अलफ। सीख-पाँव।

विशेष—लोक में इसे 'घोड़े का जमना' कहते हैं।

पुरुष-कार—पुं० [ष० त०] १. पुरुषार्थ। पौरुष। २. उद्योग।

पुरुष-केशरी—पुं० [उपमि० स०] १. सिंह के समान वीर पुरुष। बहुत बड़ा वीर। २. नृसिंह अवतार।

पुरुष-गति—स्त्री० [सं० ष० त०] एक प्रकार का साम।

पुरुष-ग्रह—पुं० [सं० ष० त०] ज्योतिष के अनुसार मंगल, सूर्य और बृहस्पति, ये तीन ग्रह।

पुरुषघ्नी—स्त्री० [सं० पुरुष√हन् (हिंसा)+टक्+ङीप्] पति की हत्या करनेवाली स्त्री।

पुरुषत्व—पुं० [सं० पुरुष+त्व] पुरुष होने की अवस्था, गुण या भाव।

पुरुष-दंतिका—स्त्री० [सं० ब० स०, कप्+टाप, इत्व] मेदा नामक जड़ी।

पुरुषदघ्न—पुं० [सं० पुरुष+दघ्नच्]=पुरुषद्वयस्।

पुरुषद्वयस्—पुं० [सं० पुरुष+द्वयसच्] ऊँचाई में पुरुष के बराबर।

पुरुष-द्विष्—पुं० [सं० पुरुष√द्विष् (शत्रुता करना)+क्विप्] विष्णु का शत्रु।

पुरुषद्वेषिणी—स्त्री० [सं० पुरुष-द्विष्+णिनि+ङीप्] अपने पति से द्वेष करनेवाली स्त्री।

पुरुष-नक्षत्र—पुं० [ष० त०] हस्त, मूल, श्रवण, पुनर्वसु, मृगशिरा और पुष्य, ये नक्षत्र। (ज्यो०)

पुरुषनाय—पुं० [सं० पुरुष√नी (ले जाना) +अण्] १. सेनापति। २. राजा।

पुरुष-पशु—पुं० [उपमि० स०] पशुओं जैसा आचरण करनेवाला व्यक्ति।

पुरुष-पुंगव—पुं० [उपमि० स०] श्रेष्ठ पुरुष।

पुरुष-पुंडरीक—पुं० [उपमि० स०] १. श्रेष्ठ पुरुष। २. जैनियों के मतानुसार नौ वासुदेवों में सातवें वासुदेव।

पुरुष-पुर—पुं० [ष० त०] आधुनिक पेशावर का पुराना नाम। किसी समय यह गांधार की राजधानी थी।

पुरुष-प्रेक्षा—स्त्री० [ष० त०] वह खेल या तमाशा जो केवल पुरुषों के देखने योग्य हो, और जिसे देखना स्त्रियों के लिए वर्जित हो।

पुरुषमात्र—वि० [सं० पुरुष+मात्रच्] मनुष्य की ऊँचाई के बराबर का।

पुरुषमानी (निन्)—वि० [सं० पुरुष√मन् (समझना)+णिनि] अपने को वीर समझनेवाला।

पुरुष-मुख—वि० [ब० स०] [स्त्री० पुरुषमुखी] पुरुष के समान मुख वाला।

पुरुष-मेध—पुं० [मध्य० स०] एक वैदिक यज्ञ, जिसमें पुरुष अर्थात् मनुष्य की बलि दी जाती थी। यह यज्ञ करने का अधिकार केवल ब्राह्मण और क्षत्रिय को था।

पुरुष-राशि—स्त्री० [ष० त०] मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धन और कुंभ नामक विषम राशियों में से हर एक। (ज्यो०)

पुरुष-वर—पुं० [स० त०] १. श्रेष्ठ पुरुष। २. विष्णु।

पुरुषवाद—पुं० [सं०] प्राचीन भारत में एक नास्तिक दार्शनिक मत, जो ईश्वर को नहीं, बल्कि पुरुष और उसके पौरुष को ही सर्वप्रधान मानता था।

पुरुषवादी—वि० [सं०] पुरुषवाद-संबंधी।
पुं० पुरुषवाद का अनुयायी व्यक्ति।

पुरुष-वार—पुं० [ष० त०] रवि, मंगल, बृहस्पति और शनि इन चार वारों में हर एक। (ज्यो०)

पुरुषवाह—पुं० [सं० पुरुष√वह् (ढोना)+अण्] गरुड़।
पुं० [ब० स०] कुबेर।

पुरुष-व्याघ्र—पुं० [उपमि० स०] सिंह के समान बलवाला व्यक्ति। शेर के समान पराक्रमवाला। पुरुष-सिंह।

पुरुष-शार्दूल—पुं० [उपमि० स०] पुरुष-व्याघ्र। (दे०)

पुरुष-शीर्ष(क)—पुं० [ष० त०] काठ का बना हुआ मनुष्य का सिर, जिसे चोर सेंध में यह देखने को डालते थे कि वह प्रवेश योग्य है या नहीं।

पुरुष-सिंह—पुं० [उपमि० स०] ऐसा व्यक्ति जो पराक्रम या वीरता के विचार से पुरुषों में सिंह के समान हो। परम वीर पुरुष।

पुरुष-सूक्त—पुं० [मध्य० स०] ऋग्वेद का एक अति पवित्र तथा प्रसिद्ध माना जानेवाला सूक्त जो 'सहस्रशीर्षा' से आरंभ होता है।

पुरुषांग—पुं० [पुरुष-अंग, ष० त०] पुरुष की लिंगेंद्रिय। शिश्न।

पुरुषांतर—पुं० [पुरुष-अंतर, मयू० स०] अन्य व्यक्ति।

पुरुषाद—पुं० [सं० पुरुष√अद् (खाना)+अण्] १. मनुष्यों को खाने वाला, अर्थात् राक्षस। २. बृहत्संहिता के अनुसार एक देश जो आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्य के अधिकार में माना गया है।

पुरुषादक—पुं० [सं० पुरुषाद+कन्] १. मनुष्यों को खानेवाला अर्थात् राक्षस। २. कल्माषपाद का एक नाम।

पुरुषाद्य—पुं० [पुरुष-आद्य, ष० त०] १. जिनों के प्रथम आदिनाथ। (जैन) २. विष्णु। ३. राक्षस।

पुरुषाधम—पुं० [पुरुष-अधम, स० त०] अधम पुरुष। हेय व्यक्ति।

पुरुषानुक्रम—पुं० [पुरुष-अनुक्रम, ष० त०] [वि० पुरुषानुक्रमिक] १. पुरखों की अनेक पीढ़ियों से चली आई हुई परंपरा। २. एक के बाद एक पीढ़ी का क्रम।

पुरुषानुक्रमिक—वि० [पुरुष-आनुक्रमिक, ष० त०] जो पुरुषानुक्रम से चला आया हो, या चला आ रहा हो। जो पूर्वजों के समय से हर पीढ़ी में होता आया हो। वंशानुक्रमिक। (हेरिडेटरी)

पुरुषायित—क्रि० वि० [सं० पुरुष+क्यङ०+क्त] पुरुषों या मर्दों की तरह। वीरतापूर्वक। बहादुरी से।
पुं० १. वीर अथवा सुयोग्य पुरुषों का-सा आचरण। २. दे० 'पुरुषायित-बंध।'

पुरुषायित-बंध—पुं० [कर्म० स०] कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार की संभोग-मुद्रा, जिसमें स्त्री ऊपर और पुरुष नीचे रहता है। साहित्य में इसे विपरीत रति कहते हैं।

पुरुषायण—पुं० [पुरुष-अयन, ब० स०] प्राणादि षोडश कला। (प्रश्नोपनिषद्)

पुरुषायुष—पुं० [पुरुष-आयुस्, ष० त०, अच्] पुरुष की आयु जो सामान्यतः १०० वर्षों की मानी जाती है।

पुरुषारथ—पुं०=पुरुषार्थ।

पुरुषार्थ—पुं० [पुरुष-अर्थ, ष० त०] १. वह मुख्य अर्थ उद्देश्य या प्रयोजन, जिसकी प्राप्ति या सिद्धि के लिए प्रयत्न करना पुरुष या मनुष्य के लिए आवश्यक और कर्त्तव्य हो। पुरुष के उद्देश्य और लक्ष्य का विषय। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति की दृष्टि से ये चार प्रकार के होते हैं।

विशेष—सांख्य-दर्शन में सब प्रकार के दुःखों से छुटकारा पाने के लिए प्रयत्न करना ही परम पुरुषार्थ है। परवर्ती पौराणिकों ने धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति या सिद्धि के लिए प्रयत्न करना ही पुरुषार्थ माना है, और इसी लिए उक्त चारों बातों की गिनती उन मुख्य पदार्थों में की जाती है. जिनकी ओर सदा मनुष्य का ध्यान या लक्ष्य रहना चाहिए।

२. वे सब विशिष्ट उद्योग तथा प्रयत्न, जो अच्छा और सशक्त मनुष्य करता है अथवा करना अपना कर्त्तव्य समझता है। पुरुषकार। ३. पुरुष में होनेवाली शक्ति या सामर्थ्य। मनुष्योचित बल। पौरुष।

पुरुषार्थी (र्थिन्)—वि० [सं० पुरुषार्थ+इनि] १. पुरुषार्थ करनेवाला। २. उद्योगी। ३. परिश्रमी। ४. बली।
पुं० पश्चिमी पाकिस्तान से आये हुए हिंदू और सिक्ख शरणार्थियों के लिए सम्मान-सूचक शब्द।

पुरुषावतार—पुं० [पुरुष-अवतार, ष० त०] व्यापक ब्रह्म का पुरुष या मनुष्य के रूप में होनेवाला वह अवतार, जिसमें वह शुद्ध सत्त्व को आधार बनाकर परमधाम से इस लोक में आविर्भूत होता है।

पुरुषाशी (शिन्)—पुं० [सं० पुरुष√अश् (खाना)+णिनि] [स्त्री० पुरुषाशिनी] मनुष्य (खानेवाला) राक्षस।

पुरुषी—स्त्री० [सं० पुरुष+ङीष्] स्त्री।

पुरुषोत्तम—[सं० पुरुष-उत्तम, स० त०] जो पुरुषों में सब से उत्तम या सर्वश्रेष्ठ हो।
पुं० १. वह जो पुरुषों में सब से उत्तम या सर्व-श्रेष्ठ हो। श्रेष्ठ पुरुष। २ धर्मशास्त्र के अनुसार ऐसा निष्पाप व्यक्ति, जो शत्रु और मित्र सब से उदासीन रहे। ३. विष्णु। ४. जगन्नाथ की मूर्ति। ५. जगन्नाथ का मन्दिर। ६. जैनियों के एक वासुदेव का नाम। ७. श्रीकृष्ण। ८. ईश्वर। ९. चांद्र गणना के अनुसार होनेवाला अधिक मास। मलमास।

पुरुषोत्तम-क्षेत्र—पुं० [ष० त०] जगन्नाथपुरी।

पुरुषोत्तम-मास—पुं० [ष०त०] चांद्र गणना के अनुसार होनेवाला अधिक मास। मलमास।

पुरुहूत—वि० [सं० ब० स०] १.जिसका आह्वान बहुतों ने किया हो। २. जिसकी बहुत से लोगों ने स्तुति की हो।
पुं० इंद्र।

पुरु-हूति—स्त्री० [सं० ब० स०] दाक्षायणी।
पुं० विष्णु।

पुरूरवा (वस्)—पुं० [सं० पुरु√रु (शब्द करना) +अस, दीर्घ] १. एक प्राचीन राजा, जिसे ऋग्वेद में इला का पुत्र कहा गया है। ये चंद्र-

वंश के प्रतिष्ठाता थे। राजा पुरुरवा और उर्वशी अप्सरा की प्रेम-कथा प्रसिद्ध है। २. विश्वदेव। ३. एक देवता, जिनका पूजन पार्वण श्राद्ध में होता है।

वि० अनेक प्रकार के रव या ध्वनियाँ प्रकट करनेवाला।

पुरेया—पुं० [हिं० पूरा+हथा] हल की मूठ।

पुरेन—स्त्री० [सं० पुटकिनी] १. कमल का पत्ता। २. कमल।

पुरेभा=स्त्री०=कुरेमा (ऐसी गाय जो वर्ष में दो बार बच्चा देती है)।

पुरैन—स्त्री०=पुरेन।

पुरैना*—स० [हिं० पूरा] पूरा करना। उदा०—जज्ञ पूरैबो ठानि विज्ञ दैवज्ञ बुलाए। रत्नाकर।

अ०=पूरा होना।

स्त्री०=पुरइन (कमल)।

पुरोगंता (तृ)—वि०, पुं० [सं० पुरस्√गम् (जाना)+तृच्]=पुरोगामी।

पुरोगत—वि० [सं० पुरस्√गम्+क्त] [भाव० पुरोगति] १. जो सामने हो। २. जो पहले गया हो। पुराना।

पुरोगति—स्त्री० [सं० पुरस्√गम्+क्तिन्] १. पुरोगत होने की अवस्था या भाव। २ अग्रगामिता।

पुं० [ब० स०] कुत्ता।

वि० आगे-आगे चलनेवाला।

पुरोगमन—पुं० [सं० पुरस्√गम्+ल्युट्—अन] १. आगे की ओर चलना या बढ़ना। २. उन्नति, वृद्धि आदि की ओर अग्रसर या प्रवृत्त होना। (प्रोग्रेशन)

पुरोगामी (मिन्)—वि० [सं० पुरस्√गम्+णिनि] १. आगे आगे चलनेवाला। अगुआ। अग्रगामी। (पायोनियर) २. बराबर उन्नति करता और आगे बढ़ता हुआ। ३. किसी विषय में उदार विचार रखने और अग्रसर रहनेवाला। (प्रोग्रेसिव)

पुं० १. नायक। २. अग्रदूत। ३. कुत्ता।

पुरोचन—पुं० [सं०] दुर्योधन का एक मित्र, जो पांडवों को लाक्षागृह में जलाने के लिए नियुक्त किया गया था।

पुरोजव—वि० [सं० पुरस्-जव, ब० स०] १. जिसके सामनेवाले भाग में वेग हो। २. आगे बढ़नेवाला।

पुं० पुराणानुसार पुष्कर द्वीप के सात खंडों में से एक खंड।

पुरोडा—पुं० [सं० पुरस्√दाश् (दान)+घञ्, डत्व] १. जौ के आटे की बनी हुई वह टिकिया, जो कपाल में पकाई जाती थी। यज्ञों में इसमें से टुकड़ा काटकर देवताओं के लिए मंत्र पढ़कर आहुति दी जाती थी। २ उक्त आहुति देने के समय पढ़ा जानेवाला मंत्र। ३. उक्त का वह अंश जो हवि देने के बाद बच रहता था। ४. यज्ञ में दी जानेवाली आहुति या हवि। ५. सोमरस।

पुरोत्सव—पुं० [सं० पुर-उत्सव, मध्य० स०] पूरे पुर या नगर में सामूहिक रूप से मनाया जानेवाला उत्सव।

पुरोदर्शन—पुं० [सं० पुरस्-दर्शन, ब० स०] १. सामने की ओर से दिखाई देनेवाला रूप। २. वास्तु-रचना का वह चित्र, जो उसके सामनेवाले भाग के स्वरूप का परिचायक हो। (फ्रन्ट एलिवेशन)

पुरोद्भवा—स्त्री० [सं० पुर√उद्√भू (उत्पन्न होना) +अच्+टाप्] महामेदा।

पुरोद्यान—पुं० [सं० पुर-उद्यान, ष० त०] पुर या नगर का मुख्य उद्यान या बाग।

पुरोध—पुं० =पुरोधा।

पुरोधा (धस्)—पुं० [सं० पुरस्√धा (धारण)+असि] पुरोहित।

पुरोधानीय—पुं० [सं० पुरस्√धा+अनीयर्] पुरोहित।

पुरोनुवाक्या—स्त्री० [सं० पुरस्-अनुवाक्या, स० त०] १. यज्ञों की तीन प्रकार की आहुतियों में से एक। २. उक्त आहुति के समय पढ़ी जानेवाली ऋचा।

पुरोभाग—पुं० [सं० पुरस्-√भज्+घञ्] १. अग्रभाग। अगला हिस्सा। २. दोष निकालने या बतलाने की क्रिया।

पुरोभागी (गिन्)—वि० [सं० पुरस्√भज्+णिनि] [स्त्री० पुरोभागिनी] १. आगे की ओर रहने या होनेवाला। अग्र भाग का। २. जो गुणों को छोड़कर केवल दोष देखता हो। छिद्रान्वेषी। दोषदर्शी।

पुरोरवस—पुं० [सं०=पुरुवस्, पृषो० सिद्धि]=पुरूरवा।

पुरोवात—पुं० [सं० पुरस्-वात, मध्य० स०] पूर्व दिशा से आनेवाली हवा। पुरवा।

पुरोवाद—पुं० [सं० पुरस्-वाद, कर्म० स०] पूर्व कथन।

पुरोहित—वि० [सं० पुरस्√धा+क्त, हि—आदेश] १. आगे या सामने रखा हुआ। २. किसी काम या बात के लिए नियुक्त किया हुआ।

पुं० [स्त्री० पुरोहितानी] १. प्राचीन भारत में वह प्रधान याजक, जो अन्य याजकों का नेता बनकर यजमान से गृह-कर्म, श्रौत-कर्म तथा धार्मिक संस्कार आदि कराता था। २. आज-कल कर्मकांड आदि जाननेवाला वह ब्राह्मण, जो अपने यजमान के यहाँ मुंडन, यज्ञोपवीत, विवाह आदि संस्कार कराता तथा अन्य अवसरों पर उनसे दान, दक्षिणा आदि लेता है। ३. साधारण लोक-व्यवहार में, किसी जाति या धर्म का वह व्यक्ति, जो दूसरों से धार्मिक कृत्य, संस्कार आदि कराता हो। (प्रीस्ट)

पुरोहित-तंत्र—पुं० [ष० त०] ऐसा तंत्र या शासन-प्रणाली, जिसमें पुरोहितों के मत का ही प्राधान्य हो। (हायरार्की)

पुरोहिताई—स्त्री० [सं० पुरोहित+आई (प्रत्य०)] पुरोहित का काम, पद या भाव। यजमानों को धार्मिक कृत्य आदि कराने का काम या वृत्ति।

पुरोहितानी—स्त्री० [सं० पुरोहित] पुरोहित की स्त्री।

पुरोहिती—वि० [हिं० पुरोहित] पुरोहित-सम्बन्धी। पुरोहित का

स्त्री०=पुरोहिताई।

पुरौ*—पुं०=पुरवट।

पुरौती†—स्त्री० [हिं० पुरवना=पूरा करना] कमी पूरी करना। पूर्ति।

पुरौनी—स्त्री० [हिं० पूरना=पूरा करना] १. पूरा करना। २. समाप्ति।

पुर्जा—पुं०=पुरजा।

पुर्तगाल—पुं० [अं०] योरप के दक्षिण पश्चिम कोने पर पड़नेवाला एक छोटा प्रदेश, जो स्पेन से लगा हुआ है।

पुर्तगाली—वि० [हिं० पुर्तगाल] १. पुर्तगाल देश संबंधी। पुर्तगाल का।

पुं० पुर्तगाल देश का निवासी।

स्त्री० पुर्तगाल देश की भाषा।

पुर्तगीज—वि०=पुर्तगाली।

पुर्बला—वि० [हिं० पुरबला] १. पहले का। २. पूर्व जन्म का।

पुर्सा—पुं०=पुरसा।

पुर्सी—स्त्री० [फा०] पुरसी। (दे०)

पुलंदा†—पुं०=पुलिंदा।

पुल—पुं० [फा०] १. खाइयों नदी-नालों, रेललाइनों आदि के ऊपर आर-पार पाटकर बनाई हुई वह वास्तु रचना, जिस पर से होकर गाड़ियाँ और आदमी इधर से उधर आते जाते हैं। सेतु।

विशेष—मूलतः पुल प्रायः नदियाँ पार करने के लिए नावों की शृंखला से बनते थे। बाद में पीपों आदि के आधार पर अथवा बड़े-बड़े ऊँचे खंभों पर भी बनने लगे।

२. लाक्षणिक रूप में, किसी चीज या बात का कोई बहुत लंबा क्रम या सिलसिला। झड़ी। ताँता। जैसे—किसी की तारीफ का पुल बाँधना; बातों का पुल बाँधना।

क्रि० प्र०—बाँधना।

मुहा०—(किसी चीज या बात का) पुल टूटना=इतनी अधिकता या भरमार होना कि मानों उसकी राशि को रोक रखनेवाला बंधन टूट गया हो। जैसे—मेला देखने के लिए आदमियों का पुल टूट पड़ा था।

३. लाक्षणिक अर्थ में, कोई ऐसी चीज, जो दो या कई पक्षों के बीच में रहकर उन्हें मिलाये रखती हो। माध्यम।

पुं० [सं०√पुल् (ऊँचा होना)+क] १. पुलक। रोमांच। २. शिव का एक अनुचर।

वि० १. बहुत अधिक। विपुल। २. बहुत बड़ा, विशाल या विस्तृत।

पुलक—पुं० [सं० पुल+कन्] १. प्रेम, भय, हर्ष आदि मनोविकारों की प्रबलता के समय शरीर में होनेवाला रोमांच। त्वककंप।

विशेष—पुलक और रोमांच के अंतर के लिए दे० 'रोमांच' का विशेष।

२. मन में होनेवाली वह कामना या वासना, जो कोई काम करने की प्रवृत्ति उत्पन्न करती हो। (अर्ज) जैसे—संभोग-पुलक। ३. एक प्रकार का मोटा अन्न। ४. एक प्रकार का नगीना या रत्न, जिसे चुन्नी, महताब और याकूत भी कहते हैं। ५. एक प्रकार का कीड़ा जो शरीर के गले हुए अंगों में उत्पन्न होता है। ६. जवाहिरात या रत्नों का एक प्रकार का दोष। ७. हाथी का रातिब। ८. हरताल। ९. प्राचीन काल का एक प्रकार का मद्यपात्र। १०. एक प्रकार की राई। ११. एक प्रकार का कंदा १२. एक गंधर्व का नाम।

पुलकना—अ० [सं० पुलक+ना (प्रत्य०)] प्रेम, हर्ष आदि से पुलकित होना।

पुलक-बंध—पुं० [सं० ब० स०] चुनरी। चुंदरी।

पुलकांग—पुं० [सं० पुलक-अंग, ब० स०] वरुण का पाश।

पुलकाई*—स्त्री०=[सं० पुलक] पुलकित होने की अवस्था या भाव। पुलक।

पुलकालय—पुं० [सं० पुलक-आलय, ब० स०] कुबेर का एक नाम।

पुलकालि—[सं० पुलक-आलि, ष० त०]=पुलकावलि।

पुलकावलि—स्त्री० [सं० पुलक-आवलि, ष० त०] हर्ष से प्रफुल्ल रोम। हर्षजन्य रोमांच।

पुलकित—भू० कृ० [सं० पुलक+इतच्] प्रेम, हर्ष आदि के कारण जिसे पुलक हुआ हो, या जिसके रोएं खड़े हो गये हों। प्रेम या हर्ष से गद्गद्। रोमांचित।

पुलकी (किन्)—वि० [सं० पुलक+इनि] १. जिसे पुलक हुआ हो। पुलकित। २. जो प्रेम, हर्ष आदि में गद्गद् और रोमांचित हुआ हो। पुं० १. कदंब। २. धारा कदंब।

पुलकोद्गम, पुलकोद्भेद—पुं० [सं० पुलक-उद्गम, पुलक-उद्भेद, ष० त०] रोम खड़े होना। लोमहर्षण।

पुलट—स्त्री०=पलट।

पुलटिस—स्त्री० [सं० पोल्टिस] फोड़ों आदि को पकाने या बहाने के लिए उस पर चढ़ाया जानेवाला अलसी, रेंडी आदि का मोटा लेप।

क्रि० प्र०—चढ़ाना।—बाँधना।

पुलना—अ० [देश०] चलना। उदा०—जेती जउ मनमाँहि, पँजर जइ तेती, पुलइ।—ढो० मा०।

पुलपुल—स्त्री० [अनु०] किसी फूली हुई चीज के बार-बार या रह-रहकर थोड़ा पिचकने और फिर उभरने या फूलने की क्रिया या भाव।

वि०=पुलपुला।

पुलपुला—वि० [अनु०] १. जो अन्दर से इतना ढीला और मुलायम हो कि जरा-सा दबाने से उसका तल सहज में कुछ दब या धँस जाय। जैसे—ये आम पककर पुलपुले हो गये हैं। २. दे० 'पोला'।

पुलपुलाना—स० [हिं० पुलपुलाना] [भाव० पुलपुलाहट] १. किसी मुलायम चीज को मुँह में लेकर या हाथ से दबाकर पुलपुला करना। जैसे—आम पुल-पुलाना।

अ० पुलपुला होना। जैसे—आम पुलपुला गया है। (पूरब)

पुलपुलाहट—स्त्री० [हिं० पुलपुला+हट (प्रत्य०)] पुलपुले होने की अवस्था, गुण या भाव। पुलपुलापन।

पुलस्त—पुं०=पुलस्त्य।

पुलस्ति—पुं० [सं० पुल√अस् (जाना)+ति, शक० पररूप]=पुलस्त्य।

पुलस्त्य—पुं० [सं० पुलस्ति+यत्] १. ब्रह्मा के मानस पुत्रों में से एक जिसकी गिनती सप्तर्षियों और प्रजापतियों में होती है। २. शिव का एक नाम।

पुलह—पुं० [सं०] १. सप्तर्षियों में से एक ऋषि जो ब्रह्मा के मानस पुत्रों और प्रजापतियों में थे। २. शिव का एक नाम।

पुलहना*—अ०=पलुहना।

पुलाक—पुं० [सं०√पुल्+कलाक, नि० सिद्धि] १. एक प्रकार का कदन्न। अँकरा २. भात। ३. माँड़। ४. पुलाव। ५. अल्पता। ६. छिप्रता। जल्दी।

पुलाकी (किन्)—पुं० [सं० पुलाक+इनि] वृक्ष।

पुलायित—पुं० [सं० पुल+क्यङ्+क्त] घोड़े का सरपट दौड़ना।

पुलाव—पुं० [सं० पुलाक, से० फा० पलाव] एक प्रकार का व्यंजन जो मांस और चावल को एक साथ पकाने से बनता है। मांसोदन। २. पकाये हुए मीठे चावल।

पुलिंद—पुं० [सं०√पुल्+किन्दच्] १. भारतवर्ष की एक प्राचीन असभ्य जाति। २. उक्त जाति के बसने का देश। ३. उक्त जाति का व्यक्ति।

पुलिंदा—स्त्री० [सं०] एक छोटी नदी, जो ताप्ती में मिलती है। महाभारत में इसका उल्लेख है।

पुं० [सं० पुल=ढेर; या हिं० पूला] कागज, कपड़े आदि में बँधी बड़ी गठरी।

पुलिकेशि—पुं० [सं०] १. ईसवी छठी शताब्दी के एक राजा, जिन्होंने दक्षिण भारत में पल्लवों की राजधानी वातापिपुरी जीतकर चालुक्य वंशीय राज्य स्थापित किया था। २. उक्त वंश के एक प्रतापी राजा, जिन्होंने ७ वीं शताब्दी के आरंभ में पूरे दक्षिण भारत और महाराष्ट्र पर शासन किया था।

पुलिन—पुं० [सं०√पुल्+इनन्] १. ऐसी गीली भूमि, जो नदी आदि का पानी हटने से निकल आई हो। चर। २. नदी, समुद्र आदि का किनारा विशेषतः रेतीला किनारा। तट। (बीच) ३. नदी आदि के बीच में निकला हुआ रेत का ढूह। चर। ४. एक यक्ष का नाम।

पुलिनमय—वि० [सं० पुलिन+मयट्] (स्थान) जो बहते हुए पानी के सम्पर्क से गीला या तर हो। (एल्यूवियल)

पुलिनवती—स्त्री० [सं० पुलिन+मतुप्, वत्व, ङीप्] तटिनी। नदी।

पुलिरिक—पुं० [सं०] साँप।

पुलिश—पुं० [सं०] ज्योतिष के एक प्राचीन आचार्य, जिनके नाम से पौलिश सिद्धान्त प्रसिद्ध है और जो वराहमिहिरों के कहे हुए पंच सिद्धान्तों में से एक है। अलबरुनी ने इसे यूनानी (यवन) और कुछ इतिहासज्ञों ने इसे मिश्र देश का निवासी बताया है।

पुलिस—स्त्री० [अं०] १. किसी नगर, राज्य आदि का वह राजकीय विभाग, जिसका मुख्य काम शांति तथा व्यवस्था बनाये रखना है और जो अपराधों को रोकने के लिए अपराधियों को पकड़ता तथा न्यायालय द्वारा उन्हें दण्डित कराता है। २. उक्त विभाग के लोगों का दल। ३. उक्त विभाग का कोई अधिकारी या कर्मचारी। सिपाही।

पुलिसमैन—पुं० [अं०] पुलिस (विभाग) का सिपाही।

पुलिहोरा—पुं० [देश०] एक प्रकार का पकवान।

पुली—स्त्री० [देश०] उत्तर भारत में होनेवाली काली और भूरे रंग की एक चिड़िया।

स्त्री० [अं० पूली] १. वह चक्कर या पहिया, जिस पर रस्सा रखकर भार खींचते हैं। २. उक्त प्रकार के चक्करों या पहियों का वह सामूहिक यांत्रिक, रूप जिसकी सहायता से बहुत बड़े-बड़े भार उठा कर इधर-उधर किये जाते हैं। ३. उक्त प्रकार का वह चक्कर या पहिया, जिस पर-पट्टा रखकर इंजन आदि की संचालक शक्ति यंत्रों तक पहुँचाई जाती है।

पुलोम (न्)—पुं० [सं०] इंद्र की पत्नी शची के पिता, जो एक राक्षस थे तथा जिन्हें इंद्र ने युद्ध में मारा था।

पुलोमजा—स्त्री० [सं० पुलोमन्√जन् (उत्पत्ति)+ड+टाप्] पुलोम राक्षस की कन्या शची, जो इन्द्र की पत्नी थी।

पुलोमजित्—पुं० [सं० पुलोमन्√जि (जीतना)+क्विप्] इन्द्र।

पुलोमही—स्त्री० [सं०] अहिफेन। अफीम।

पुलोमा†—पुं० [सं०] पुलोम नामक राक्षस।

पुल्कस—पुं० [सं०] उपनिषद्-काल की एक संकर जाति, जिसकी उत्पत्ति निषाद पुरुष और शूद्रा स्त्री से मानी गई है।

पुल्ला—पुं० [?] १. नाक में पहनने का एक गहना। २. हिलसा मछली।

पुल्लिग—पुं०=पुंलिंग।

पुल्ली—स्त्री० [देश०] घोड़े के सुम के ऊपर का हिस्सा।

†स्त्री० १.=पुली। २.=पूली (पूला का स्त्री०)।

पुवा†—पुं०=पूआ (पकवान)।

पुवार†—पुं०=पयाल।

पुश्त—स्त्री० [फा०] १. पशुओं, मनुष्यों आदि की पीठ। जैसे—पुश्त-खम=टेढ़ी पीठवाला, अर्थात् कुबड़ा। २. किसी चीज का पिछला भाग। पृष्ठ-देश। पोछा। ३. वंश-परम्परा में की प्रत्येक श्रेणी या स्थान जिस पर कोई पुरुष रहा हो या आने को हो। पीढ़ी। (जेनरेशन)
पद—पुश्त-दरपुश्त=बराबर या लगातार हर पीढ़ी में। पुश्तहा-पुश्त—(क) कई पीढ़ियों से। (ख) कई पीढ़ियों तक।

पुश्तक—स्त्री० [फा०] पशुओं द्वारा पिछले दोनों पैर उठाकर किया जानेवाला आघात। दोलत्ती।
क्रि० प्र०—झाड़ना। मारना।

पुश्तखार—पुं० [फा०] पीठ खुजलाने का सींग, हाथी दाँत आदि का एक तरह का पंजा।

पुश्तनामा—पुं० [फा० पुश्तनामः] वह कागज जिस पर पूर्वापर क्रम से किसी कुल में उत्पन्न हुए लोगों के नाम लिखे होते हैं। वंशावली। कुरसीनामा।

पुश्तवानी—स्त्री० [फा० पुश्त+हिं० वान् (प्रत्य०)] वह आड़ी लकड़ी जो किवाड़ के पीछे पल्ले की मजबूती के लिए लगाई जाती है।

पुश्ता—पुं० [फा० पुश्तः] १. ईंट, पत्थर, मिट्टी आदि की वह ढालुई वास्तु-रचना जो (क) नदियों के किनारे पानी की बाढ़ रोकने अथवा (ख) बड़ी और भारी दीवारों या ऊँची सड़कों को गिरने से बचाने के लिए उनके पार्श्व में खड़ी की जाती है। (एम्बेंकमेन्ट) २. किताब की जिल्द के पीछे, अर्थात् पुट्ठे पर लगा हुआ चमड़ा या ऐसी ही और कोई चीज। ३. संगीत में पौने चार मात्राओं का एक प्रकार का ताल जिसमें तीन आघात होते हैं और एक खाली रहता है।

पुश्तापुश्त—अव्य० [फा०] १. कई पीढ़ियों से। २. कई पीढ़ियों तक।

पुश्ताबंदी—स्त्री० [फा०] पुश्ता उठाने, खड़ा करने या बाँधने की क्रिया या भाव।

पुश्तारा—पुं० [फा० पुश्तवारः] वह बोझ जो पीठ पर उठाया जाय, या उठाया जा सके।

पुश्ती—स्त्री० [फा०] १. टेक। सहारा। आश्रय। थाम। २. वह टेक या सहारा, जो किसी चीज के पीछे उसे खड़ी रखने या गिरने से बचाने के लिए लगाया जाय। २. पीछे की ओर से की जानेवाली मदद या दी जानेवाली सहायता। पृष्ठ-पोषण। ३. पक्षपात। तरफदारी। ४. पालन-पोषण।
क्रि० प्र०—लेना।
५. पीठ टेककर बैठने का बहुत बड़ा तकिया। गाव-तकिया।

पुश्तैन—स्त्री० [फा० पुश्त] वंशपरंपरा। पीढ़ी-दर-पीढ़ी।

पुश्तैनी—वि० [हिं० पुश्तैन] १. जो पुरानी पीढ़ी के लोगों के अधिकार में रहा हो। जैसे—हमारा पुश्तैनी मकान बिक चुका है। २. जो कई पीढ़ियों से बराबर चला आ रहा हो। जैसे—पुश्तैनी रोग।

पुष—वि० [सं०√पुष् (पुष्ट करना)+क] १. पोषण प्रदान करनेवाला। २. दिखलाने या प्रदर्शित करनेवाला।

पुषा—स्त्री० [सं० पुष+टाप्] कलियारी का पौधा।

पुषित—भू० कृ० [सं० पुष्ट] १. पोषित। २. वर्द्धित।

पुष्कर—पुं० [सं०√पुष्+क, कित्व, पुष्क √रा (देना)+क] १. जल। पानी। २. जलाशय। पोखरा। ३. कमल। ४. कलछी के आगे लगी हुई कटोरी। ५. ढोल, मृदंग आदि का मुँह। ६. हाथी की सूँड़ का अगला भाग। ७. आकाश। आसमान। ८. तीर। वाण। ९. तलवार का फल। १०. म्यान। ११. पिंजड़ा। १२. पद्मकंद। १३. नृत्यकला। १४. सर्प। १५. युद्ध। लड़ाई। १६. अंश। भाग। १७. नशा। मद। १८. भग्नपाद नक्षत्र का एक अशुभ योग जिसकी शांति का विधान किया गया है। १९. पुष्कर-मूल। २०. कुष्ठौषधि। कुट। २१. एक तरह का ढोल। २२. एक प्रकार का रोग। २३. एक दिग्गज। २४. सारस पक्षी। २५. विष्णु का एक रूप। २६. शिव। २७. भरत के एक पुत्र। २८. कृष्ण के एक पुत्र। २९. एक असुर का नाम। ३०. गौतम बुद्ध का एक नाम। ३१. पुराणानुसार ब्रह्मांड के सात लोकों में से एक। ३२. मेघों का एक नायक। ३३. आधुनिक अजमेर के पास का एक प्रसिद्ध तीर्थ।

पुष्कर-कर्णिका—स्त्री० [सं० पुष्कर√कर्ण्+ण्वुल्—अक, टाप्, इत्व] १. स्थलपद्मिनी। †२. सूँड़ की नोक।

पुष्कर-चूड़—पुं० [सं०] लोलार्क पर्वत पर स्थित दिग्गज का नाम।

पुष्कर-जटा—स्त्री० [सं०] १. कुट नामक औषधि। २. कमल की जड़। मसींड।

पुष्कर-नाड़ी—स्त्री० [सं० पुष्कर√नड् (नष्ट करना)+णिच्+अच्—ङीष्] स्थल पर होनेवाला एक तरह का कमल। स्थलपद्मिनी।

पुष्कर-नाभ—पुं० [ब० स०, अच्] विष्णु।

पुष्कर-पर्ण—पुं० [ष० त०] १. कमल का पत्ता। २. यज्ञ की वेदी बनाने के काम में आनेवाली एक प्रकार की ईंट।

पुष्कर-प्रिय—पुं० [ब० स०] मधुमक्षिका। मधुमक्खी।

पुष्कर-बीज—पुं० [ष० त०] कमल का बीज। कमल-गट्टा।

पुष्कर-मुख—पुं० [ब० स०] सूँड़ का विवर।
वि० सूँड़ जैसे मुँहवाला।

पुष्कर-मूल—पुं० [ब० स०] एक प्रकार की वनस्पति की जड़, जिसके संबंध में कहा जाता है कि यह कश्मीर के सरोवरों में उत्पन्न होती है। यह ओषधि आजकल नहीं मिलती ; वैद्य लोग इसके स्थान पर कुष्ठ या कुट का व्यवहार करते हैं।

पुष्कर-व्याघ्र—पुं० [स० त०] घड़ियाल।

पुष्कर-शिफा—स्त्री० [ष० त०] पुष्कर-मूल।

पुष्कर-सागर—पुं० [उपमि० स०] पुष्कर-मूल।

पुष्कर-सारी—स्त्री० [ष० त०,+ङीष्] एक प्राचीन लिपि।

पुष्कर-स्थपति—पुं० [ष० त०] शिव।

पुष्कर-स्रज् (ज्)—पुं० [ब० स०] अश्विनीकुमार।
स्त्री० कमलों की गूँथी हुई माला।

पुष्कराक्ष—वि० [पुष्कर-अक्षि, ब० स०, अच्] कमल-नयन।
पुं० विष्णु।

पुष्कराख्य—पुं० [सं० पुष्कर-आख्या, ब० स०] सारस पक्षी।

पुष्कराग्र—पुं० [सं० पुष्कर-अग्र, ष० त०] सूँड़ का अगला भाग।

पुष्करावती—स्त्री० [सं० पुष्कर+मतुप्, वत्व, दीर्घ] एक प्राचीन नदी।

पुष्करावर्तक—पुं० [सं० पुष्कर-आ√वृत् (बरतना)+णिच्+ण्वुल्—अक] मेघों के एक अधिपति।

पुष्कराह्व—पुं० [सं० पुष्कर-आह्वा, ब० स०] सूँड़ का अग्र भाग।

पुष्करिका—स्त्री० [सं० पुष्कर+ठन्—इक,+टाप्] लिंग का एक रोग।

पुष्करिणी—स्त्री० [सं० पुष्कर+इनि+ङीष्] १. हथिनी। २. छोटा जलाशय। ३. ऐसा जलाशय, जिसमें कमल खिले हों। ४. कमल का पौधा। ५. एक प्राचीन नदी। ६. चाक्षुष मनु की पत्नी। ७. भूमन्यु की पत्नी और ऋचीक की माता।

पुष्करी (रिन्)—पुं० [सं० पुष्कर+इनि] हाथी।
वि० जिसमें कमल हों।

पुष्कल—पुं० [सं०√पुष्+कलच्, कित्व] १. वह भिक्षा, जो केवल चार गाँवों से लाई जाती थी। २. अनाज नापने का एक प्राचीन मान, जो ६४ मुट्ठियों के बराबर होता था। ३. शिव। ५. वरुण के एक पुत्र। ५. राम के भाई भरत का एक पुत्र। ६. एक बुद्ध का नाम। ७. एक प्रकार का ढोल। ८. एक प्रकार की वीणा।
वि० १. बहुत। अधिक। ढेर-सा। प्रचुर। २. भरा-पूरा। परिपूर्ण। ३. श्रेष्ठ। ४. उपस्थित। प्रस्तुत। ५. पवित्र।

पुष्कलक—पुं० [सं० पुष्कल+कन्] १. कस्तूरी-मृग। २. अर्गला। सिटकिनी। ३. कील।

पुष्कलावती—स्त्री० [सं० पुष्कल+मतुप, वत्व, दीर्घ] पुराणानुसार भरत के पुत्र पुष्कल की बसाई हुई गांधार देश की प्राचीन नगरी।

पुष्ट—वि० [सं०√पुष्+क्त] [भाव० पुष्टता, पुष्टि] १. जिसका अच्छी तरह पोषण हुआ हो; फलतः दृढ़ या मजबूत। २. मोटा-ताजा और बलवान।
पद—हृष्टपुष्ट। (देखें)
३. जिसमें कोई कचाई या कोर-कसर न हो, और इसी लिए जिसका भरोसा किया जा सके। पक्का। ४.. (कथन या बात) जो प्रमाणों से सत्य सिद्ध होती हो, फलतः जिसके ठीक या सत्य होने में कोई संदेह न रह गया हो। ५. सब तरह से पूरा। परिपूर्ण। ६. प्रमुख। मुख्य। ७. दे० 'पौष्टिक'।
पुं० विष्णु।

पुष्टई—स्त्री० [सं० पुष्ट+ई (प्रत्य०)] १. पुष्टता। २. वह ओषधि या खाद्य-वस्तु, जो शरीर को पुष्ट करने के लिए खाई जाय।

पुष्टता—स्त्री० [सं० पुष्ट+तल्+टाप] पुष्ट होने की अवस्था या भाव। पुष्टि।

पुष्टि—स्त्री० [सं०√पुष+क्तिन] १. पुष्ट अर्थात् दृढ़ या मजबूत होने की अवस्था या भाव। दृढ़ता। मजबूती। २. पुष्ट करने की क्रिया या भाव। पोषण। ३. धन, संतान आदि की होनेवाली वृद्धि। बढ़ती। ४. वह उदाहरण, तर्क या प्रमाण, जिसमें कोई बात पुष्ट की जाय। ५. किसी कही हुई बात का ऐसा अनुमोदन या समर्थन, जिससे वह और भी अधिक या पूर्ण रूप से पुष्ट हो जाय। जैसे—आपकी इस बात से मेरे मत (या संदेह) की पुष्टि होती है। ६. सोलह मातृकाओं में से एक। ७. मंगला, विजया आदि आठ प्रकार की चारपाइयों में से

एक। ८. धर्म की पत्नियों में से एक। ९. एक योगिनी का नाम। १०. असगंध नामक ओषधि। अश्वगंध। ११. दे० 'पुष्टिमार्ग'।

पुष्टि-कर—वि० [ष० त०] १. पुष्ट करनेवाला। २. पुष्टि करनेवाला। ३. बल या वीर्य्यवर्द्धक।

पुष्टिकरी—स्त्री० [सं० पुष्टिकर+ङीप्] गंगा। (काशी-खंड)

पुष्टि-कर्म (र्मन्)—पुं० [ष० त०] अभ्युदय के लिए किया जानेवाला एक धार्मिक कृत्य।

पुष्टिका—स्त्री० [सं० पुष्टि+कन्—टाप्] जल की सीप। सुतही। सीपी।

पुष्टि-काम—वि० [ब० स०] अभ्युदय का इच्छुक।

पुष्टि-कारक—वि० [ष० त०] पुष्टिकर। (दे०)

पुष्टिद—वि० [सं० पुष्टि√दा (देना)+क] पुष्टिकर। (दे०)

पुष्टिदग्धयत्न—पुं० [सं० दग्ध-यत्न, ष० त०, पुष्टिदग्धयत्न, मध्य० स०] चिकित्सा का एक प्रकार, जिसमें आग में जले हुए अंग को आग से सेंक कर या किसी प्रकार का गरम-गरम लेप करके अच्छा किया जाता है।

पुष्टिदा—स्त्री० [सं० पुष्टिद+टाप्] १. अश्वगंधा। असगंध। २. वृद्धि नाम की ओषधि।

पुष्टिपति—पुं० [सं० ष० त०] अग्नि का एक भेद।

पुष्टि-मत—पुं०=पुष्टि-मार्ग।

पुष्टि-मार्ग—पुं० [ष० त०] भक्ति-क्षेत्र में, श्री वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैत मत की साधना-व्यवस्था जो श्रीमद्भागवत के 'पोषणं तदनुग्रहः' वाले तत्त्व पर आधारित है। इसमें भक्त कर्म-निरपेक्ष होकर भगवान श्रीकृष्ण को आत्म-समर्पण करके ही सुखी रहता है; और अपने कर्मों के फल की कामना नहीं करता।

पुष्टीकरण—पुं० [सं० पुष्ट+च्वि, ईत्व√कृ+ल्युट्—अन] किसी कही हुई बात या किये हुए काम को ठीक मानते हुए उसकी पुष्टि करना। (कन्फर्मेशन)

पुष्पंधय—वि० [सं० पुष्प√धे (पीना)+श, मुम्] मकरंद पान करनेवाला।
पुं० भौंरा। भ्रमर।

पुष्प—पुं० [सं०√पुष्प् (खिलना)+अच्] १. पेड़-पौधों के फूल। कुसुम। २. मधु। शहद। ३. पुष्पराग नामक मणि। पुखराज। ४. आँख का फूली नामक रोग। ५. ऋतुमती या रजस्वला स्त्री का रज। ६. घोड़ों के शरीर पर का एक चिह्न या लक्षण। चित्ती। ७. खिलने और फैलने की क्रिया। विकास। ८. आँख में लगाने का एक प्रकार का अंजन या सुरमा। ९. रसौत। १० पुष्कर-मूल। ११. लौंग। १२. वाममार्गियों की परिभाषा में खाया जानेवाला मांस। गोश्त। १३. पुष्पक विमान।

पुष्पक—पुं० [सं० पुष्प+कन् या पुष्प√कै (भासित होना)+क] १. फूल। कुसुम। पुष्प। २. कुबेर का विमान। ३. जड़ाऊ कंगन। ४. रसांजन। रसौत। ५. आँख का फूली नामक रोग। ६. हीरा कसीस। ७. पीतल, लोहे आदि की मैल। ८. पीतल। ९. एक प्रकार का बिना विष का साँप। १०. एक प्राचीन पर्वत। ११. प्रासाद बनाने में एक प्रकार का मंडप। १२. वह खंभा जिसके कोने आठ भागों में बँटे हों।

पुष्प-करंडक—पुं० [सं० ब० स०] १. उज्जयिनी का एक प्राचीन शिवोद्यान। २. डलिया, जिसमें तोड़े हुए फूल रखे जाते हैं।

पुष्प-करंडिनी—स्त्री० [सं० पुष्प-करंड, ष० त०, इनि+ङीप्] उज्जयिनी।

पुष्प-काल—पुं० [ष० त०] १. वसंतऋतु। २. स्त्रियों का ऋतु काल।

पुष्प-कासीस—पुं० [उपमि० स०] एक तरह का कसीस। हीरा कसीस।

पुष्प-कीट—पुं० [मध्य० स०] १. फूल का कीड़ा। २. भौंरा।

पुष्प-कृच्छ्र—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार का व्रत जिसमें केवल फूलों का क्वाथ पीकर निर्वाह किया जाता है।

पुष्प-केतन—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्प-केतु—पुं० [ब० स०] १. पुष्पांजन। २. कामदेव। ३. बुद्ध।

पुष्प-गंडिका—स्त्री० [ष० त०] लास्य के दस भेदों में से एक।

पुष्प-गंधा—स्त्री० [ब० स०+टाप्] जूही।

पुष्प-गवेधुका—स्त्री० [स० त०] नागवला।

पुष्प-घातक—पुं० [ष० त०] बाँस।

पुष्प-चयन—पुं० [ष० त०] पुष्प तोड़ना। फूल चुनना।

पुष्प-चाप—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्प-चामर—पुं० [ब० स०] १. दौना। २. केवड़ा।

पुष्पज—वि० [सं० पुष्प√जन् (उत्पन्न होना)+ड] फूल से उत्पन्न होनेवाला।
पुं० फूल का मकरंद या रस।

पुष्पजीवी (विन्)—पुं० [सं० पुष्प√जीव् (जीना)+णिनि] माली।

पुष्प-दंड—पुं० [ष० त०] पेड़-पौधों की वह डंडी, जिसमें फूल या फल लगते हैं।

पुष्प-दंत—पुं० [ब० स०] १. वायुकोण का दिग्गज। २. प्राचीन भारत में एक प्रकार का नगरद्वार। ३. शिव का अनुचर एक गंधर्व, जिसका रचा हुआ महिम्नस्तोत्र कहा जाता है। ४. एक विद्याधर। ५. कार्तिकेय का एक अनुचर।

पुष्पद—वि० [सं० पुष्प√दा (देना)+क] पुष्प या फूल देनेवाला।
पुं० पेड़। वृक्ष।

पुष्पध—पुं० [सं० पुष्प√धा (धारण करना)+क] व्रात्य ब्राह्मण से उत्पन्न एक जाति।

पुष्पधनु—पुं०=पुष्प-धन्वा।

पुष्प-धनुस्—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्प-धन्वा (न्वन्)—पुं० [ब० स०] १. कामदेव। २. वैद्यक में एक प्रकार का रसौषध जो रससिंदूर, सीसे, अभ्रक और बंग में धतूरा भाँग, जेठी मधु आदि मिलाने से बनता है और जो कामोद्दीपक तथा शक्ति-वर्द्धक माना जाता है।

पुष्प-ध्वज—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्पनिक्ष—पुं० [सं० पुष्प√निक्ष् (चूमना)+अण्] भ्रमर। भौंरा।

पुष्प-निर्यास—पुं० [ष० त०] फूलों का रस। मकरंद।

पुष्प-नेत्र—पुं० [मध्य० स०] वस्ति की पिचकारी की सलाई।

पुष्प-पत्र—पुं० [ष० त०] १. फूल की पँखड़ी। २. दे० 'पत्र-पुष्प'। ३. एक प्रकार का बाण।

पुष्प-पत्री (त्रिन्)—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्प-पथ—पुं० [ष० त०] स्त्रियों के रज के निकलने का मार्ग अर्थात् भग। योनि।

पुष्प-पदवी—स्त्री० [ष० त०] भग। योनि।

पुष्प-पांडु—पुं० [उपमि० स०] एक प्रकार का साँप।

पुष्प-पिंड—पुं० [ब० स०] =पिंड पुष्प (अशोक वृक्ष)।

पुष्प-पुट—पुं० [ष० त०] १. फूल की पंखड़ियों का वह आधार, जो कटोरी के आकार का होता है। २. हाथ का चंगुल जो उक्त आकार का होता है।

पुष्प-पुर—पुं० [मध्य० स०] प्राचीन पाटलिपुत्र। आधुनिक पटना का एक नाम।

पुष्प-पेशल—वि० [उपमि० स०] फूल की तरह सुकुमार।

पुष्प-प्रचाय—पुं० [सं० पुष्प-प्र√चि (चुनना)+घञ्] फूलों का चुना या तोड़ा जाना।

पुष्प-प्रस्तार—पुं० [ष० त०] फूलों का बिछावन। पुष्पशय्या।

पुष्प-फल—पुं० [ब० स०] १. कुम्हड़ा। २. कैथ। ३. अर्जुन वृक्ष।

पुष्प-बाण—पुं० [ब० स०] १. कामदेव। २. कुश द्वीप का एक पर्वत। ३. एक दैत्य।

पुष्प-भद्र—पुं० [ब० स०] प्राचीन भारत की वास्तु-रचना में, एक प्रकार का मंडप जिसमें ६२ खंभे होते थे।

पुष्प-भद्रक—पुं० [ब० स०,+कप्] देवताओं का एक उपवन।

पुष्पभद्रा—स्त्री० [सं० पुष्पभद्र+टाप्] पुराणानुसार मलय पर्वत के पश्चिम की एक नदी।

पुष्प-भव—पुं० [ष० त०] फूलों का रस। मकरंद।

पुष्प-भाजन—पुं० [ष० त०] तोड़े हुए फूल रखने का पात्र।

पुष्प-भूति—पुं० [ब० स०] १. सम्राट् हर्षवर्द्धन के एक पूर्व पुरुष, जो शैव थे। २. ईसवी सातवीं शताब्दी के कांबोज (आधुनिक काबुल) के एक हिन्दू राजा।

पुष्प-मंजरिका—स्त्री० [ष० त०] १. नील कमलिनी। २. फूल की मंजरी।

पुष्प-मंजरी—स्त्री० [ष० त०] १. फूल की मंजरी। २. घृतकरंज।

पुष्प-मास—पुं० [मध्य० स०] १. चैत्रमास। चैत का महीना। २. वसंत काल।

पुष्पमित्र—पुं० दे० 'पुष्यमित्र' (शुंग वंश के राजा का नाम)।

पुष्प-मृत्यु—पुं० [ब० स०] एक प्रकार का नरकट। बड़ा नरसल। देव नल।

पुष्प-मेघ—पुं० [मध्य० स०] पुराणानुसार फूलों की वर्षा करनेवाला बादल।

पुष्प-रक्त—पुं० [ब० स०] सूर्य्यमणि नामक पौधा और उसका फूल।

पुष्प-रचन—पुं० [ष० त०] फूलों की माला गूँथने, गुच्छे आदि बनाने की क्रिया या भाव।

पुष्प-रज (स्)—पुं० [ष० त०] पराग।

पुष्प-रथ—पुं० [मध्य० स०] प्राचीन भारत में एक प्रकार का रथ, जिस पर चढ़कर लोग हवा खाने निकलते थे।

पुष्प-रस—पुं० [ष० त०] पराग।

पुष्परसाह्वय—पुं० [पुष्परस-आह्वय, ब० स०] मधु। शहद।

पुष्प-राग—पुं० [ब० स०] पुखराज नामक रत्न।

पुष्पराज—पुं० [सं० पुष्प√राज् (शोभित होना)+अच्] पुखराज या पुष्पराग नामक रत्न।

पुष्प-रेणु—पुं० [ष० त०] फूल की धूल। पुष्परज।

पुष्प-रोचन—पुं० [ब० स०] नाग-केसर।

पुष्पलक—पुं० [सं० पुष्कलंक] १. कस्तूरी मृग। २. बौद्ध भिक्षु।

पुष्पलाव—पुं० [सं० पुष्प√लू (काटना)+अण्] [स्त्री० पुष्पलावी] १. वह जो फूल चुनता हो। २. माली।

पुष्पलावन—पुं० [सं० पुष्प√लू+ णिच्+ल्यु—अन] उत्तर दिशा का एक देश। (बृहत्संहिता)

पुष्पलिक्ष—पुं० [सं० पुष्प√लिह् (स्वाद लेना)+क्स] भ्रमर। भौंरा।

पुष्पलिट् (ह्)—पुं० [सं० पुष्प√लिह्+क्विप्] भौंरा।

पुष्प-लिपि—स्त्री० [मध्य० स०] एक प्रकार की पुरानी लिपि। (ललित विस्तर)

पुष्पवती—स्त्री० [सं० पुष्प+मतुप्, वत्व+ङीप्] १. ऋतुमती या रजस्वला। २. एक तीर्थ। (महा०)

पुष्प-वर्ग—पुं० [ष० त०] वैद्यक में अगस्त्य, कचनार, सेमल आदि वृक्षों के फूलों का एक विशिष्ट समाहार।

पुष्पवर्त्म (न्)—पुं० [सं०] द्रुपद।

पुष्प-वर्ष—पुं० [मध्य० स०] १. पुराणानुसार एक वर्ष पर्वत का नाम। २. [ष० त०] फूलों की वर्षा। पुष्पवर्षण।

पुष्प-वर्षण—पुं० [ष० त०] फूलों का बरसना। पुष्पवृष्टि।

पुष्प-वर्षा—स्त्री० [ष० त०] बहुत से फूलों की ऊपर से होनेवाली या की जानेवाली वर्षा।

पुष्प-वसंत—पुं० [उपमि० स०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

पुष्प-वाटिका—स्त्री० [ष० त०] ऐसा छोटा उद्यान, जिसमें फूलोंवाले अनेक पौधे तथा वृक्ष हों। फुलवारी।

पुष्प-वाटी—स्त्री० [ष० त०] पुष्पवाटिका। (दे०)

पुष्प-वाण—पुं० [ष० त०] १. फूलों का वाण। २. कामदेव। ३. कुशद्वीप के एक राजा। ४. एक दैत्य।

पुष्प-वाहिनी—स्त्री० [ष० त०] पुराणानुसार एक प्राचीन नदी।

पुष्प-विचित्रा—स्त्री० [उपमि० स०] एक प्रकार का वृत्त।

पुष्प-विशिख—पुं० [ब० स०] कामदेव। २. कुशद्वीप का एक पर्वत। ३. एक राक्षस।

पुष्प-वृष्टि—स्त्री० [ष० त०] फूलों का बरसना या बरसाया जाना। फूलों की वर्षा।

पुष्प-वेणी—स्त्री० [ष० त०] फूलों को गूँथकर बनाई हुई माला।

पुष्प-शकटिका—स्त्री० [ष० त०] आकाशवाणी।

पुष्प-शकटी—स्त्री० =पुष्प-शकटिका।

पुष्प-शकली (लिन्)—पुं० [सं० पुष्पशकल, ष० त०,+इनि] एक तरह का विषहीन साँप। (सुश्रुत)

पुष्प-शय्या—स्त्री० [मध्य० स०] वह शय्या, जिस पर फूल बिछे हों। फूलों का बिछौना।

पुष्प-शर—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्प-शरासन—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्प-शाक—पुं० [मध्य० स०] ऐसे फूल जिनकी तरकारी बनाई जाती हो। जैसे—अगस्त, कचनार, खैर, नीम, रासना, सहिजन, सेमल आदि।

पुष्प-शिलीमुख—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्प-शून्य—वि० [तृ० त०] जिसमें पुष्प न हों। बिना फूल का। पुं० गूलर।

पुष्प-शेखर—पुं० [ष० त०] फूलों की माला।

पुष्प-श्रेणी—स्त्री० [ब० स०] मूसाकानी नामक जमीन पर फैलनेवाला क्षुप।

पुष्प-समय—पुं० [ष० त०] वसंत काल।

पुष्प-साधारण—पुं० [ब० स०] वसंत काल।

पुष्प-सायक—पुं० [ब० स०] कामदेव।

पुष्प-सार—पुं० [ष० त०] १. फूल का मधु या रस। २. फूलों का इत्र।

पुष्प-सारा—स्त्री० [ब० स०+टाप्] तुलसी।

पुष्प-सिता—स्त्री० [मध्य० स०] एक तरह की चीनी।

पुष्प-सूत्र—पुं० [मध्य० स०] गोभिल के सूत्र ग्रन्थ का नाम।

पुष्प-सौरभा—स्त्री० [ब० स०,+टाप्] कलिहारी का पौधा। करियारी।

पुष्प-स्नान—पुं० दे० 'पुष्यस्नान'।

पुष्प-स्नेह—पुं० [ष० त०] १. मकरंद। २. मधु शहद।

पुष्प-स्वेद—पुं० [ष० त०] १. मकरंद। २. मधु।

पुष्प-हास—पुं० [ष० त०] १. फूलों का खिलना। २. विष्णु।

पुष्पहासा—स्त्री० [सं० पुष्पहास+टाप्] रजस्वला स्त्री। ऋतुमती स्त्री।

पुष्पहीन—वि० [ब० स०] [स्त्री० पुष्पहीना] (पेड़) जिसमें फूल न लगते हों।
पुं० गूलर का वृक्ष।

पुष्पहीना—वि० स्त्री० [सं० पुष्पहीन+टाप्] १. (स्त्री) जिसे रजोदर्शन न हो। २. बाँझ। वंध्या। ३. (स्त्री) जिसकी बच्चे पैदा करने की अवस्था बीत चुकी हो।

पुष्पांक—पुं० [पुष्प-अंक, ष० त०] माधवी लता।

पुष्पांजन—पुं० [पुष्प-अंजन, ष० त०] वैद्यक में एक प्रकार का अंजन जो पीतल के हरे कसाव में कुछ ओषधियों को मिलाकर बनाया जाता है।

पुष्पांजलि—स्त्री० [पुष्प-अंजलि, ष० त०] फूलों से भरी हुई अंजलि जो किसी देवता या महापुरुष को अर्पित की जाती है।

पुष्पांबुज—पुं० [सं० पुष्प-अंबु, ष० त०, पुष्पांबु√जन् (उत्पन्न होना)+ड] मकरंद।

पुष्पांभस्—पुं० [ब० स०] एक प्राचीन तीर्थ।

पुष्पा—स्त्री० [सं०√पुष्प्+अच्+टाप्] आधुनिक चम्पारन का प्राचीन नाम जहाँ किसी जमाने में अंगदेश की राजधानी थी।

पुष्पाकर—पुं० [पुष्प-आकर, ष० त०] वसंत ऋतु।

पुष्पागम—पुं० [पुष्प-आगम, ब० स०] वसन्त ऋतु।

पुष्पाजीवी (विन्)—पुं० [सं० पुष्प+आ√जीव्+णिनि] माली।

पुष्पानन—पुं० [पुष्प-आनन, ब० स०] एक तरह की शराब।

पुष्पापीड—पुं० [पुष्प-आपीड, ष० त०] १. सिर पर धारण की जानेवाली फूलों की माला आदि। २. फूलों का मुकुट या सेहरा।

पुष्पाभिषेक—पुं० [पुष्प-अभिषेक, तृ० त०] दे० 'पुष्प-स्नान'।

पुष्पायुध—पुं० [पुष्प-आयुध, ब० स०] वह जिसका फूल अस्त्र हो; कामदेव।

पुष्पाराम—पुं० [पुष्प-आराम, ष० त०] फुलवारी। पुष्पवाटिका।

पुष्पावचय—पुं० [पुष्प-अवचय, ष० त०] फूल चुनना।

पुष्पावचायी (यिन्)—पुं० [सं० पुष्प+अव√चि (चुनना)+णिनि] माली।

पुष्पासव—पुं० [पुष्प-आसव, मध्य० स०] १. मधु। शहद। २. कुछ विशिष्ट प्रकार के फूलों को सड़ाकर बनाई जानेवाली एक तरह की शराब।

पुष्पासार—पुं० [पुष्प-आसार, ष० त०] फूलों की वर्षा।

पुष्पास्तरक—पुं० [पुष्प-आस्तरक, ष० त०] १. फूल बिखेरनेवाला। २. फूलों का बिछौना तैयार करनेवाला।

पुष्पास्तरण—पुं० [पुष्प-आस्तरण,ष० त०] १. फूल बिखेरने की क्रिया या भाव। २. शय्या पर फूल बिछाने का काम।

पुष्पास्त्र—पुं० [पुष्प-अस्त्र, ब० स०] पुष्पायुध (कामदेव)।

पुष्पाह्वा—स्त्री० [सं० पुष्प+आ√ह्वे+क+टाप्, ब० स०, प्] सौंफ।

पुष्पिका—स्त्री० [सं०√पुष्प्+ण्वुल्—अक,+टाप्, इत्व] १. दाँत की मैल। २. लिंग की मैल। ३. अधिकतर प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों या उनके अध्यायों के अन्त का वह वाक्य या पद्य जिससे कहे हुए प्रसंग की समाप्ति सूचित होती है और जिसमें प्रायः लेखक का नाम और रचना-संवत् भी रहता है।

पुष्पिणी—स्त्री० [सं० पुष्प+इनि+ङीप्] रजस्वला स्त्री। ऋतुमती स्त्री।

पुष्पित—वि० [सं० पुष्प+इतच्] [स्त्री० पुष्पिता] १. (वृक्ष या पौधा) जिसमें फूल निकले हों। पुष्पों से युक्त। फूलों से लदा हुआ। २. उन्नत और समृद्ध।
पुं० १. कुशद्वीप का एक पर्वत। २. एक बुद्ध का नाम।

पुष्पिता—वि० स्त्री० [सं० पुष्पित+टाप्] रजस्वला (स्त्री)।

पुष्पिताग्रा—स्त्री० [सं० पुष्पित-अग्र, ब० स०, +टाप्] एक प्रकार का अर्द्धसम वृत्त जिसके पहले और तीसरे चरणों में दो नगण, एक रगण और एक यगण होता है तथा दूसरे और चौथे चरणों में एक नगण, दो जगण, एक रगण और गुरु होता है।

पुष्पी (ष्पिन्)—वि० [सं० पुष्प+इनि] (पौधा या वृक्ष) जिसमें फूल लगे हों।

पुष्पेषु—पुं० [पुष्प-इषु, ब० स०] कामदेव।

पुष्पोत्कटा—स्त्री० [पुष्प-उत्कटा, तृ० त०] रावण, कुंभकरण आदि राक्षसों की माता जो सुमाली राक्षस की कन्या थी।

पुष्पोद्गम—पुं० [पुष्प-उद्गम, ष० त०] पौधे, वृक्षों आदि में फूल निकलना आरंभ होना।

पुष्पोद्यान—पुं० [पुष्प-उद्यान, ष० त०] फुलवारी। पुष्पवाटिका। बगीचा।

पुष्पोपजीवी (विन्)—पुं० [सं० पुष्प+उप√जीव् (जीना)+णिनि] माली।

पुष्य—पुं० [सं०√पुष् (पुष्टि)+क्यप्] १. पुष्टि। पोषण। २.

पौष का महीना। ३. सत्ताईस नक्षत्रों में से ८वाँ नक्षत्र जिसमें तीन तारे हैं तथा जिसकी आकृति बाण की सी कही गई है और जो अनेक कार्यों के लिए शुभ माना जाता है। इसे 'तिष्य' और 'सिध्य' भी कहते हैं।

पुष्य-नेत्रा--स्त्री० [सं० ब० स०, अच, + टाप्] ऐसी रात्रि जिसमें पुष्य नक्षत्र दिखाई पड़ता हो।

पुष्यमित्र--पुं० [सं०] मगध में मौर्य शासन समाप्त करके शुंगवंशीय राज्य स्थापित करनेवाला एक प्रतापी राजा।

पुष्यरथ--पुं०=पुष्प-रथ।

पुष्यलक--पुं० [सं०√पुष्+कि, पुषि√अल् (पर्याप्ति)+अच्+क] १. कस्तूरी मृग। २. वह जैन साधु जो हाथ में चँवर लिये रहता हो। ३. बड़ी और मोटी कील या खूँटा।

पुष्य-स्नान--पुं० [स० त०] राजाओं या राज्य के विघ्नों की शांति के लिए एक विशिष्ट स्नान जो पूस के महीने में चन्द्रमा के पुष्य नक्षत्र में होने पर किया जाता था।

पुष्याभिषेक--पुं०=पुष्य-स्नान।

पुष्यार्क--पुं० [सं० पुष्य-अर्क, स० त०] १. फलित ज्योतिष में, एक योग जो कर्क की संक्रांति में सूर्य के पुष्य नक्षत्र में होने पर होता है। यह प्रायः श्रावण में दस दिन के लगभग रहता है। २. रविवार के दिन होनेवाला पुष्य-नक्षत्र।

पुस--अव्य० [देश०] होंठों को सिकोड़कर हवा झटके से अन्दर की ओर खींचने से होनेवाला शब्द जो प्रायः प्यार से बिल्ली, कुत्ते आदि को अपने पास बुलाने के लिए किया जाता है। जैसे—आ पुस, पुस!

पुसकर†--पुं०=पुष्कर।

पुसाना--अ० [हिं० पोसना का अ०] १. पोसा जाना। पोषण होना। २. कार्य आदि का शक्य या संभव होना। पूरा पड़ना। बन पड़ना। ३. अच्छा, उचित या भला लगना।

पुस्त--पुं० [सं०√पुस्त् (बाँधना)+अच्] १. गीली मिट्टी, लकड़ी, कपड़े, चमड़े, लोहे या रत्नों आदि को गढ़, काट या छील-छालकर बनाई जानेवाली वस्तु। सामान। २. कारीगरी। रचना-कौशल। ३. किताब। पुस्तक। जैसे—पुस्त-पाल। (देखें)
†स्त्री०=पुश्त।

पुस्तक--स्त्री० [सं० पुस्त+क] [स्त्री० अल्पा० पुस्तिका] १. हाथ से लिखे हुए या छपे हुए पन्नों का जिल्द बँधा हुआ रूप। (पत्रिका से भिन्न) २. कोई वैज्ञानिक या साहित्यिक कृति।

पुस्तकाकार--वि० [सं० पुस्तक-आकार, ब० स०] जो पुस्तक के आकार या रूप में हो। जैसे—उनके सब लेख पुस्तकाकार छप गये हैं।

पुस्तकागार--पुं० [सं० पुस्तक-आगार, ष० त०]=पुस्तकालय।

पुस्तकालय--पुं० [सं० पुस्तक-आलय] १. वह भवन या घर जिसमें अध्ययन और संदर्भ के लिए पुस्तकें रखी गई हों। जैसे—उनके पुस्तकालय में ५ हजार पुस्तकें थीं। २. उक्त प्रकार का वह भवन या स्थान जहाँ से सर्वसाधारण को पढ़ने के लिए पुस्तकें मिलती हों। जैसे—इस नगर में एक बहुत बड़ा नया पुस्तकालय खुलनेवाला है।

पुस्तकालयाध्यक्ष--पुं० [सं० पुस्तकालय-अध्यक्ष, ष० त०] पुस्तकालय का प्रधान अधिकारी। (लाइब्रेरियन)

पुस्तकास्तरण--पुं० [सं० पुस्तक-आस्तरण, ष० त०] १. पुस्तक की बेठन। २. पुस्तक पर उसे धूल, मैल आदि से बचाने के लिए चढ़ाया जानेवाला कागज।

पुस्तकी--स्त्री० [सं० पुस्तक+ङीष्] पुस्तिका।

पुस्तकीय--वि० [सं० पुस्तक+छ—ईय] १. पुस्तक-संबंधी। २. पुस्तकों से प्राप्त होनेवाला। जैसे—पुस्तकीय ज्ञान।

पुस्त-डाक--स्त्री० [सं० पुस्तक+हिं० डाक] वह डाक या डाक से भेजने की वह विधि जिसके अनुसार समाचार-पत्र, पुस्तकें आदि विशेष रिआयती दर से भेजी जाती हैं। (बुक-पोस्ट)

पुस्तपाल--पुं० [सं० पुस्त√पाल् (रक्षा)+णिच्+अच्] १. प्राचीन भारत में वह अधिकारी जो किसी राजकीय कार्यालय के कागज-पत्र संभालकर रखता था। २. आज-कल किसी पुस्तकालय का प्रधान अधिकारी। (लाइब्रेरियन)

पुस्तशिंबी--स्त्री० [सं०] एक प्रकार की सेम।

पुस्तिका--स्त्री० [सं० पुस्तक+टाप्, इत्व] छोटी पुस्तक विशेषतः ऐसी छोटी पुस्तक जिसका आवरण कागज का ही हो, दफ्ती का न हो।

पुस्ती--स्त्री० [सं० पुस्त+ङीप्] १. हाथ की लिखी हुई पोथी या किताब। २. पुस्तक।

पुहकर†--पुं०=पुष्कर।

पुहकरमूल†--पुं०=पुष्करमूल।

पुहतना--अ० [सं० प्रभूत, प्रा० पहूच] पहुँचना। उदा०—पहिलुं इजाइ लगन ले पुहतौ।—प्रिथीराज।

पुहना--अ० [हिं० पोहना] पोहा जाना। गूँथा जाना।
स०=पोहना।

पुहप (प्प)†--पुं०=पुहुप (पुष्प)।

पुहाना--स० [हिं० पोहना का प्रे०] पोहने या पिरोने का काम दूसरे से कराना। गुथवाना।

पुहुप†--पुं० [सं० पुष्प] फूल।

पुहुपराग†--पुं०=पुखराज।

पुहुमी†--स्त्री० [सं० भूमि, प्रा० पुहवी] १. पृथ्वी। २. भूमि।

पुहुरेनु--पुं० [सं० पुष्परेणु] फूल की धूल। पराग।

पुहुवी†--पुं०=पुहुप (पुष्प)।

पुहुवि†--स्त्री०=पुहुमि (पृथ्वी)। उदा०—चंपकें कएल पुहुवि निरमान।—विद्यापति।

पूँगरण--पुं० [सं० पुंग=राशि या समूह] वस्त्र। कपड़ा। (डिं०)

पूँगरा†--वि० दे० 'पोंगा'।

पूँगा--पुं० [देश०] सीप के अन्दर रहनेवाला कीड़ा।
†स्त्री० [अनु०] [स्त्री० अल्पा० पूँगी] १. सँपेरों की बीन। महुअर। २. एक तरह की बाँसुरी।
†वि० दे० 'पोंगा'।

पूँछ--स्त्री० [सं० पुच्छ] १. चौपायों तथा जंतुओं का वह गावदुमा तथा लचीला पिछला भाग जो गुदा-मार्ग के ऊपर रीढ़ की हड्डी की संधि में या उससे निकलकर नीचे की ओर कुछ दूर तक लम्बा चला जाता या नीचे लटकता रहता है। पुच्छ। लांगूल। दुम। जैसे—कुत्ते, लंगूर या घोड़े की पूँछ, चिड़िया, चूहे या घड़ियाल की पूँछ।

मुहा०—किसी की पूँछ पकड़कर चलना=(क) विना सोचे-समझे किसी का अनुयायी बनकर चलना। (ख) किसी का सहारा पकड़कर चलना। (किसी के आगे) पूँछ हिलाना=किसी के आगे उसी तरह से दीन बनकर आचरण करना जिस प्रकार कुत्ते अपने स्वामी या भोजन देनेवाले के सामने पूँछ हिलाकर दीनता प्रकट करते हैं।
२. किसी काम, चीज या बात के पीछे का वह लंबा अंश जो प्रायः अनावश्यक या निरर्थक हो। ३. पतंग, पुच्छल तारे, उल्का आदि के पीछे का चमकनेवाला रेखाकार अंग। जैसे—पतंग की पूँछ। ४. वह जो हरदम दीन भाव से किसी के पीछे या साथ लगा रहता हो।

पूँछ-गाछ†—स्त्री०=पूछ-ताछ।

पूँछटा†—स्त्री०=पूँछ (दुम)। (उपेक्षा सूचक)

पूँछड़ी—स्त्री० [हिं० पूँछ+ड़ी (प्रत्य०)] छोटी पूँछ।

पूँछ-ताछ†—स्त्री०=पूछ-ताछ।

पूँछना†—स०=पूछना।

पूँछ-पाँछ†—स्त्री०=पूछ-ताछ।

पूँछल-तारा†—पुं०=पुच्छल तारा (केतु)।

पूँजना—स० [देश०] नया बंदर पकड़ना। (कलंदर)

पूँजी—स्त्री० [सं० पुंज] १. जोड़ा या जमा किया हुआ धन। २. विशेषतः ऐसा धन जो और अधिक धन कमाने के उद्देश्य से व्यापार आदि में लगाया गया हो अथवा ऋण आदि पर उधार दिया गया हो। मूलधन। (कैपिटल) ३. सम्पत्ति, विशेषतः ऐसी सम्पत्ति जिससे आय होती हो। जैसे—विधवा की पूंजी यही एक मकान था। ४. उन सब वस्तुओं का समूह जो पास में हो। ५. किसी विषय में किसी की सारी योग्यता या ज्ञान।

पूँजीदार—पुं० [हिं० पूँजी+फा० दार] [भाव० पूँजीदारी] १. वह जिसके पास अधिक या अत्याधिक पूँजी या धन-सम्पत्ति हो। २. वह जो आर्थिक लाभ के लिए किसी उद्योग या व्यवसाय में पूंजी या धन लगाता हो। पूंजीपति।

पूँजीदारी—स्त्री० [हिं० पूँजीदार] १. पूँजीदार होने की अवस्था या भाव। २. दे० 'पूँजीवाद'।

पूँजीपति—पुं० [हिं० पूंजी+सं० पति] १. जिसके पास अधिक पूँजी हो। २. ऐसा व्यक्ति जो लाभ की दृष्टि से विभिन्न उद्योग-धंधों में पूँजी लगाता हो। पूँजीदार।

पूँजीवाद—पुं० [हिं० पूँजी+सं० वाद] १. आधुनिक अर्थशास्त्र में, वह आर्थिक प्रणाली या व्यवस्था जिसमें देश के प्रमुख उत्पत्ति तथा वितरण के साधनों पर धनिकों या पूँजीपतियों का व्यक्तिगत रूप से पूरा अधिकार होता है। इसमें धनवान् लोग अपनी पूँजी से वस्तुओं का उत्पादन करते-कराते और उसका सारा लाभ अपने सुख-भोग तथा पूंजी बढ़ाने में लगाते हैं। (कैपिटलिज्म)

पूँजीवादी—पुं० [हिं०+सं०] वह जो पूँजीवाद के सिद्धान्त मानता हो या उनका अनुयायी हो।
वि० पूँजीवाद-सम्बन्धी। जैसे—पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था।

पूँठ†—स्त्री०=पीठ।

पू—वि० [सं० पूर्वपद के रहने पर] समस्त पदों के अन्त में, पवित्र या शुद्ध करनेवाला। जैसे—खलपू=खलों को पवित्र करनेवाला।

पूआ—पुं० [सं० पूप, अपूप] पूरी की तरह का एक मीठा पकवान जो आटे को गुड़ या चीनी के रस में घोलकर घी में तलने से बनता है।

पूखन†—पुं०=पूषण (सूर्य)।
पुं०=पोषण।

पूग—पुं० [सं०√पू+गन्] १. सुपारी का पेड़ और उसका फल। २. ढेरा। ३. शहतूत का पेड़। ४. कटहल। ५. एक प्रकार की कटेरी। ६. भाव। ७. छंद। ८. समूह। ढेर।

पूग-कृत—भू० कृ० [स० त०] १. स्तूप के आकार में बनाया हुआ। जो टीले के आकार का हो। २. एकत्र किया हुआ। संगृहीत। संचित।

पूगना—अ० [हिं० पूजना] १. पूरा होना। जैसे—हुंडी की मिती पूगना। २. चौसर आदि के खेलों में गोटी, पासे आदि का नियत मार्ग से होते हुए अन्त में कोठे या घर में पहुँचना जो जीत का सूचक माना जाता है। ३. दे० 'पूजना'।

पूगपात्र—पुं० [ष० त०] पीकदान। उगालदान।

पूग-पीठ—पुं० [ष० त०] पीकदान।

पूग-पुष्पिका—स्त्री० [ब० स०, कप्,+टाप्, इत्व] विवाह-संबंध स्थिर हो जाने पर दिया जानेवाला पुष्प सहित पान। पानफूल।

पूग-फल—पुं० [ष० त०] सुपारी।

पूगरोठ—पुं० [सं० पूग√रुट् (दीप्ति)+अच्] एक प्रकार का ताड़।

पूगी (गिन्)—पुं० [सं० पूग+इनि] सुपारी का पेड़।
स्त्री० सुपारी।

पूगीफल—पुं० [सं० पूगफल] सुपारी।

पूग्य—वि० [सं० पूग+यत्] पूग-संबंधी। पूग का।

पूछ—स्त्री० [हिं० पूछना] १. पूछने की क्रिया या भाव। जिज्ञासा। २. चाह। तलब। जरूरत। ३. आदर। खातिर।
†स्त्री०=पूँछ (दुम)।

पूछ-गाछ†—स्त्री०=पूछ-ताछ।

पूछ-ताछ—स्त्री० [हिं० पूछना+ताछना अनु०] १. कुछ जानने के लिए किसी से प्रश्न करने की क्रिया या भाव। किसी बात का पता लगाने के लिए बार-बार या कई लोगों से कुछ पूछना या प्रश्न करना। २. किसी विषय में खोज, अनुसंधान या जाँच पड़ताल करने के लिए बार-बार जिज्ञासा या प्रश्न करना। जैसे—बहुत पूछ-ताछ करने पर इस मामले का कुछ पता चला।

पूछना—स० [सं० पृच्छण] १. किसी से कोई बात जानने या समझने के लिए शब्दों का प्रयोग करना। जिज्ञासा करना। जैसे—किसी से कहीं का रास्ता (या किसी का नाम) पूछना। २. जाँच, परीक्षा आदि के प्रसंग में इसलिए किसी के सामने कुछ प्रश्न रखना कि वह उसका उत्तर दे। प्रश्न करना। जैसे—परीक्षा के समय विद्यार्थियों से तरह-तरह की बातें पूछी जाती हैं। ३. किसी के प्रति सहानुभूति रखते हुए उससे यह जानने का प्रयत्न करना कि आज-कल तुम कैसे हो या किस प्रकार जीवन यापन करते हो। किसी का हाल-चाल या खोज-खबर लेना। जैसे—(क) वह महीनों बीमार पड़ा रहा; पर कोई उसके पास पूछने तक न गया। (ख) अजी, गरीबों को कौन पूछता है। ४. किसी के प्रति आदर-सत्कार का भाव प्रकट करते हुए

उसकी ओर उचित ध्यान देना। जैसे—इतनी भीड़-भाड़ में कौन किसे पूछता है।

मुहा०—(किसी से) बात तक न पूछना या बात न पूछना=(क) कुछ भी ध्यान न देना। (ख) बहुत ही उपेक्षापूर्ण व्यवहार करना। ५. उचित महत्त्व या मूल्य समझते हुए आदर या कदर करना। जैसे—आज-कल गुण या योग्यता को कौन पूछता है। ६. किसी प्रकार का ध्यान देते हुए कोई जिज्ञासा करना या कुछ कहना। जैसे—उनके घर पहुँचकर सीधे ऊपर चले जाना; कोई कुछ नहीं पूछेगा।

पूछ-पाछ†—स्त्री०=पूछ-ताछ।

पूछरी—स्त्री०=पूँछ (दुम)।

पूछा-ताछी, पूछा-पाछी—स्त्री० [हिं० पूछना] =पूछ-ताछ।

पूज—स्त्री० [सं० पूजन] कुछ विशिष्ट जातियों में विवाह, यज्ञोपवीत, आदि शुभ कार्यों से एकाध दिन पहले होनेवाला एक कृत्य जिसमें गणेश-पूजन किया जाता है और बिरादरी के आमंत्रित व्यक्तियों को बताशे, लड्डू आदि दिये जाते हैं।

स्त्री०[हिं० पूजना] पूजने की क्रिया या भाव।

†पुं० [सं० पूज्य] देवता। (डिं०)

†वि०=पूज्य।

पूजक—वि० [सं०√पूज् (पूजना)+णिच्+ण्वुल्—अक] पूजा करनेवाला। जैसे—अग्निपूजक।

पूजन—पुं० [सं०√पूज्+णिच्+ल्युट-अन्] [वि० पूजक, पूजनीय पूजितव्य, पूज्य] १. देवी-देवता या किसी अन्य पूज्य वस्तु की की जानेवाली आराधना और वंदना। २. आदर। सम्मान। जैसे—अतिथि पूजन।

पूजना—स० [सं० पूजन] १. देवी-देवता को प्रसन्न या संतुष्ट करने के लिए यथाविधि श्रद्धाभाव से जल, फूल, नैवेद्य आदि चढ़ाना। पूजन करना। २. किसी को परम श्रद्धा तथा भक्ति की दृष्टि से देखना और आदरपूर्वक उसकी सेवा तथा सत्कार करना। ३. किसी को प्रसन्न या संतुष्ट करने के लिए उसे किसी रूप में कुछ धन देना। जैसे—कचहरी के अमलों को पूजना। ४. व्यंग्य और परिहास में, खूब मारना-पीटना। जैसे—वे आज इसकी खूब पूजा करेंगे।

अ० [सं० पूर्यते, प्रा० पुज्जति] १. पूरा होना। भरना। २. कमी, त्रुटि, देन आदि की पूर्ति होना। जैसे—किसी की रकम पूजना=दिया या लगाया हुआ धन पूरा पूरा वसूल होना। ३. अवधि या नियत समय पूरा होना। जैसे—हुंडी की मिती पूजना=रुपया चुकाने की नियत तिथि आना। ४. गहराई का भरना या बराबर होना। आस-पास के धरातल के समान हो जाना। जैसे—गड्ढा पूजना, घाव पूजना। ५. ऋण या देन चुकता होना। ६. किसी की बराबरी तक पहुँचना। उदा०—ये सब पतित न पूजत मो सम।—सूर। ७. दे० 'पुगना'।

स० १. पूरा करना। २. नया बंदर पकड़ना। (कलंदर)

पूजनी—स्त्री० [सं० पूजन+ङीप्] मादा गौरैया।

पूजनीय—वि० [सं०√पूज्+णिच्+अनीयर] १. जिसकी पूजा करना कर्तव्य या उचित हो। पूजन करने के योग्य। अर्चनीय। २. आदरणीय।

पूजमान—वि०=पूज्यमान।

पूजयितव्य—वि० [सं०√पूज्+णिच्+तव्यत्] जिसकी पूजा की जा सकती हो अथवा जिसकी पूजा करना उचित हो। पूज्य।

पूजयिता (तृ)—वि०, पुं० [सं०√पूज्+णिच्+तृच्] पूजा करनेवाला। पूजक।

पूजा—स्त्री० [सं०√पूज+णिच्+अ+टाप्] १. देवी-देवता के प्रति विनय, श्रद्धा और समर्पण का भाव प्रकट करनेवाले कार्य। अर्चना। पूजन। २. किसी देवी-देवता पर जल, फूल, फल, अक्षत आदि चढ़ाने का धार्मिक कृत्य। पूजन। ३. बहुत अधिक या यथेष्ट आदर-सत्कार। आव-भगत। । खातिरदारी। ४. किसी को प्रसन्न या संतुष्ट करने के लिए किया जानेवाला कोई कार्य। ५. उक्त के आधार पर, लाक्षणिक रूप में, घूस या रिश्वत। जैसे—अब तो पहले दफ्तरवालों की पूजा करो, तब कहीं जाकर नौकरी मिलती है। ६. व्यंग्य के रूप में, किसी को मारने-पीटने अथवा तिरस्कृत या दंडित करने की क्रिया या भाव। जैसे—चलो देखो, आज घर पर तुम्हारी कैसी पूजा होती है।

पूजाधार—पुं० [सं० पूजा-आधार, ष० त०] देवपूजा में विधेय वस्तुएँ और बातें। जैसे—जल, विष्णुचक्र, मंत्र, प्रतिमा, शालग्राम आदि।

पूजार्ह—वि० [सं० पूजा√अर्ह् (पुजना)+अच्] पूजनीय।

पूजित—भू० कृ० [सं०√पूज्+क्त] [स्त्री० पूजिता] जिसकी पूजा की गई हो।

पूजितव्य—वि० [सं०√पूज्+तव्यत्] पूजनीय। पूज्य।

पूजिल—पुं० [सं०√पूज्+इलच्] देवता।

वि० पूजनीय।

पूजी—स्त्री० [फा० पूजबंद] घोड़े का एक प्रकार का साज जो उसके मुँह पर रहता है। उदा०—पूजी कलगी करनफूल कल हैकल सेली।—रत्ना०।

पूजोपकरण—पुं० [सं० पूजा-उपकरण, ष० त०] देवता की पूजा के लिए आवश्यक उपकरण या सामग्री।

पूजोपचार—पुं० [सं० पूजा-उपचार, ष० त०] पूजन के लिए किया जानेवाला उपचार और उसकी सामग्री।

पूजोपहार—पुं० [सं० पूजा-उपहार, ष० त०] पूजा के समय देवी-देवता को चढ़ाई जानेवाली वस्तु। चढ़ावा।

पूज्य—वि० [सं०√पूज्+यत्] [स्त्री० पूज्या] १. पूजा किये जाने के योग्य। २. आदर, श्रद्धा आदि के योग्य। माननीय।

पुं० श्वसुर। ससुर।

पूज्यता—स्त्री० [सं० पूज्य+तल्+टाप्] पूज्य होने की अवस्था या भाव। पूजे जाने के योग्य होना। पूजनीयता।

पूज्य-पाद—वि० [ब० स०] इतना महान् कि उसके पैरों की पूजा करना उचित हो। परम पूज्य और मान्य।

पूज्यमान—वि० [सं०√पूज्+यक्+शानच्] जिसकी पूजा की जा रही हो। पूजा जाता हुआ। सेव्यमान।

पुं० सफेद जीरा।

पूज्यवर—वि० [स० त०] परम आदरणीय, पूज्य और बड़ा। जैसे—पूज्यवर मालवीय जी।

पूटरी—स्त्री० [देश०] ईख के रस की वह अवस्था जो उसके खाँड़ बनने से पहले होती है।

†स्त्री०=पोटली।

पूटीन—स्त्री०=पुटीन।

पूठ†—पुं०=पुट्ठा।
†स्त्री०=पीठ।

पूठा†—वि० [सं० पुष्ट] [स्त्री० पूठी] १. पुष्ट। मजबूत। २. पक्का। प्रौढ़।
†पुं०=पुट्ठा।

पूठि†—स्त्री० १.=पीठ। २.=पुष्टि।

पूड़ा†—पुं०=पूआ (पकवान)।

पूड़ी—स्त्री० [हिं० पूरी] १. तबले या मृदंग पर मढ़ा हुआ गोल चमड़ा। २. दे० 'पूरी'।

पूणू†—पुं० =पत्थर। (डिं०)
स्त्री०=पूनो (पूर्णिमा)।

पूत—वि० [सं०√पू (पवित्र करना)+क्त] १. पवित्र। शुद्ध। शुचि। २. सत्य।
पुं० १. शंख। २. सफेद कुश। ३. पलास। ४. तिल का पेड़। ५. भूसी निकाला हुआ अन्न। ६. जलाशय।
पुं० [सं० पुत्र; प्रा० पुत्त] बेटा। लड़का। पुत्र। उदा०—एक पहेली मैं कहूँ, तुम बूझो मेरे पूत।
पुं० [देश०] चूल्हे के दोनों किनारों और बीच के वे नुकीले उभार जिनके सहारे पर कड़ाही, तवा, देगची आदि रखते हैं।

पूतक्रतायी—स्त्री० [सं० पूतक्रतु+ङीष्, ऐ–आदेश] इंद्र की पत्नी। इन्द्राणी। शची।

पूत-क्रतु—पुं० [ब० स०] इन्द्र।

पूत-गंध—पुं० [ब० स०] बर्बर नामक सुगंधित तृण।

पूतड़ा†--पुं०=पोतड़ा।

पूत-तृण—पुं० [कर्म० स०] सफेद कुश।

पूत-दारु—पुं० [कर्म० स०] पलास। ढाक।

पूत-द्रु—पुं० [कर्म० स०] १. ढाक। पलास। २. खैर का पेड़। ३. देवदार।

पूत-धान्य—पुं० [कर्म० स०] तिल।

पूतन—पुं० [सं० पूत+णिच्+ल्यु—अन] १. वैद्यक के अनुसार गुदा में होनेवाला एक प्रकार का रोग। २. बेताल। ३. कब्र में रखा हुआ शव।

पूतना—स्त्री० [सं० पूतन+टाप्] १. एक राक्षसी जो कंस के कहने पर बालक कृष्ण को मारने के उद्देश्य से, अपने स्तनों पर विष लगाकर, उसे स्तन-पान कराने आई थी। बालक कृष्ण ने इसका दुष्ट उद्देश्य जान लिया और इसे मार डाला। २. राक्षसी। दानवी। ३. सुश्रुत के अनुसार, एक बाल-ग्रह या बाल रोग जिसमें बच्चे को जल्दी अच्छी नींद नहीं आती। उसे पतले, मैले दस्त आते हैं, बहुत प्यास लगती है और बार बार कै होती है। ४. कार्तिकेय की अनुचरी एक मातृका। ५. पीली हर्रे। ६. सुगंधित जटामासी। गन्ध-मासी।

पूतनारि—पुं० [सं० ष० त०] पूतना के शत्रु; श्रीकृष्ण।

पूतना-दूषण—पुं० [ष० त०] श्रीकृष्ण।

पूतना-सूदन—पुं० [ष० त०] श्रीकृष्ण।

पूतनाहर्रे—स्त्री० [सं० पूतना+हिं० हर्रे] छोटी हर्रे।

पूतनिका—स्त्री० [सं० पूतन+कन्+टाप्, इत्व] १. पूतना (राक्षसी)। २. पूतना नामक बाल रोग।

पूत-पत्री—स्त्री० [ब० स०, ङीप्] तुलसी।

पूत-फल—पुं० [ब० स०] कटहल का पेड़ और उसका फल।

पूतभृत्—पुं० [सं० पूत√भृ (धारण करना)+क्विप्] वह पवित्र बरतन जिसमें सोम रस रखा जाता था।

पूत-मति—वि० [ब० स०] पवित्र बुद्धिवाला। पवित्र अंतःकरणवाला।
पुं० शिव का एक नाम।

पूतर—पुं० [सं० पूत√रा (देना)+क] १. एक प्रकार का जल-जंतु। २. तुच्छ व्यक्ति।

पूतरा†--पुं० [स्त्री० पूतरी]=पुतला।
†पुं०=पूत (बेटा)।

पूतरी†—स्त्री०=पुतली।

पूता—स्त्री० [सं० पूत+टाप्] दुर्गा।
वि० स्त्री०=शुद्ध। पवित्र।
†पुं० [सं० पुत्र, हिं० पुत्र, हिं० पूत] पुत्र। बेटा। (प्रायः सम्बोधन कारक में प्रयुक्त)

पूतात्मा (त्मन्)—वि० [पूत-आत्मन्, ब० स०] पवित्रात्मा। शुद्ध अंतःकरण का।
पुं० विष्णु।

पूति—स्त्री० [सं०√पू+क्तिन्, क्तिच्] १. पवित्रता। शुचिता। २. दुर्गंध। ३. गंध-मार्जार। ४. रोहित तृण। ५. घावों, फोड़ों आदि में विषाक्त कीटाणुओं आदि के उत्पन्न होने के कारण उनका सड़ने लगना जो प्रायः रोगी के लिए घातक सिद्ध होता है। सड़ायँध। (सेप्टिक)

पूतिक—पुं० [सं० पूति√कै (भासित होना)+क] १. दुर्गंध करंज। काँटा करंज। पूति करंज। २. पाखाना। विष्ठा।
वि० १. जिसमें से दुर्गंध निकल रही हो। बदबूदार। २. (घाव) जिसमें विषाक्त कीटाणुओं के कारण सड़ायँध आ गई हो। ३. (तत्व) जो उक्त प्रकार की विषाक्त सड़ायँध उत्पन्न कर सकता हो। (सेप्टिक, अन्तिम दोनों अर्थों के लिए)

पूति-कन्या—स्त्री० [मध्य० स०] पुदीना।

पूति-करंज—पुं० [मध्य० स०] फसल के रक्षार्थ प्रायः मेड़ों पर लगाया जानेवाला एक क्षुप जिसमें बहुत-अधिक काँटे होते हैं। काँटा-करंज।

पूति-कर्ण, पूति-कर्णक—पुं० [ब० स०] [ब० स०,+कप्] कान का एक रोग जिसमें अन्दर घाव या फुंसी होने के कारण बदबूदार पीब निकलता है।

पूतिका—स्त्री० [सं० पूतिक+टाप्] १. पोई का साग। २. एक प्रकार की मधुमक्खी। ३. बिल्ली।

पूतिका-मुख—पुं० [ब० स०] घोंघा। शंबूक।

पूति-काष्ठ—पुं० [कर्म० स०] देवदारु।

पूतिकाष्ठक—पुं० [पूतिकाष्ठ+कन्] धूपसरल।

पूतिकाह्व—पुं० [सं० पूतिक–आह्वा ब० स०] पूति करंज। (दे०)

पूति-कीट—पुं० [कर्म० स०] एक तरह की मधुमक्खी। पूतिका।

पूति-कुंड—पुं० [ष० त०] आज-कल एक प्रकार का गड्ढा या कुंड जो

गृहस्थों के घर के पास मल-मूत्र इकट्ठा करने के लिए बनाया जाता है। (सेप्टिक टैंक)

विशेष—ऐसे कुंडों की आवश्यकता उन्हीं नगरों या स्थानों में होती है जहाँ मल-मूत्र वहन करनेवाले नल नहीं होते।

पूति-केशर—पुं० [ब० स०] १. नागकेशर। २. गंध-मार्जार। मुश्क-बिलाव।

पूति-गंध—पुं० [ब० स०] १. राँगा। २. हिंगोट। इंगुदी। ३. गंधक। ४. दुर्गंध।

वि० दुर्गंधवाला। बदबूदार।

पूतिगंधा—स्त्री० [सं० पूतिगंध+टाप्] एक प्रसिद्ध क्षुप जिसके गुच्छों में काले-काले फूल लगते हैं तथा जिसके बीज उग्रगंध वाले होते हैं और दवा के काम आते हैं। बकुची।

पूति-गंधि (क)—वि० [ब० स०,+कप्] दुर्गंधवाला। बदबूदार।

पूतिगंधिका—स्त्री० [सं० ब० स०, कप्,+टाप्, इत्व] १. दे० 'पूत-गंधा'। २. पोय का शाक। पूतिका।

पूतिघास—पुं० [सं० पूति√घस् (खाना)+अण्] सुश्रुत में वर्णित एक तरह का जंतु।

पूति-दला—स्त्री० [ब० स०,+टाप्] तेजपत्ता।

पूति-नस्य—पुं० [कर्म० स०] पीनस रोग।

पूति-नासिका—वि० [ब० स०] पीनस रोग से पीड़ित।

पूति-पत्र—पुं० [ब० स०] १. सोनापाठा। २. पीला लोध।

पूति-पत्रिका—स्त्री० [ब० स०, कप्, +टाप्, इत्व] प्रसारिणी लता। पसरन।

पूति-पर्ण (क)—पुं० [ब० स०] [ब० स०, कप्] पूति-करंज। (दे०)

पूति-पल्लवा—स्त्री० [ब० स०,+टाप्] बड़ा करेला।

पूति-पुष्प—पुं० [ब० स०] इँगुदी वृक्ष। गोंदी। हिंगोट।

पूति-पुष्पिका—स्त्री० [ब० स०, कप्, +टाप्, इत्व] चकोतरा नींबू।

पूति-फल—पुं० [ब० स०] बकुची। सोमराजी।

पूतिफला, पूतिफली—स्त्री० [सं० पूतिफल+टाप्] [सं० पूति-फल+ ङीष्] बावची।

पूति-बर्बरा—स्त्री० [कर्म० स०] बनतुलसी। जंगली तुलसी। काली बर्बरी।

पूति-भाव—पुं० [ष० त०] सड़ने की क्रिया या भाव। सड़ायँध।

पूति-मज्जा—स्त्री० [ब० स०,+टाप्] गोंदी। इँगुदी वृक्ष।

पूति-मयूरिका—स्त्री० [पूति-मयूरी, उपमि०स०,+क+टाप्, ह्रस्व] अजवायन की तरह का एक पौधा।

वि० दे० 'अजमोदा'।

पूतिभाव—पुं० [सं०] एक गोत्र प्रवर्त्तक ऋषि।

पूतिमुद्गल—स्त्री० [सं०] रोहिष तृण।

पूति-मूषिका—स्त्री० [कर्म० स०] छछूँदर।

पूति-मृत्तिक—स्त्री० [ब० स०] पुराणानुसार इक्कीस नरकों में से एक नरक का नाम।

पूति-मेद—पुं० [ब० स०] दुर्गंध खैर। अरिमेद।

पूति-योनि—पुं० [ब० स०] एक तरह का योनि-रोग।

पूति-रक्त—पुं० [ब० स०] एक रोग जिसमें नाक में से दुर्गन्ध युक्त रक्त निकलता है।

पूति-रज्जु—स्त्री० [ब० स०] एक प्रकार की लता।

पूति-वक्त्र—वि० [ब० स०] जिसके मुँह से दुर्गन्ध निकलती हो।

पूति-वात—पुं० [ब० स०] १. बेल का पेड़। २. गंदी वायु। ३. पाद।

पूति-वृक्ष—पुं० [कर्म० स०] सोनापाठा।

पूति-व्रण—पुं० [कर्म० स०] ऐसा फोड़ा जिसमें निकलनेवाला मवाद अत्यधिक दुर्गंधयुक्त होता है।

पूति-शाक—पुं० [कर्म० स०] अगस्त। वक वृक्ष।

पूति-शारिजा—स्त्री० [कर्म० स०] बनबिलाव।

पूती—स्त्री० [सं० पोत=गट्ठा] १. गाँठ के रूप में होनेवाली पौधों की जड़। २. लहसुन आदि की गाँठ।

पूतीक—पुं० [सं०=पूतिक, पृषो० सिद्धि] १. पूतिकरंज। (दे०) २. गंध मार्जार।

पूतीकरंज—पुं० [सं०=पूतिकरञ्ज, पृषो० सिद्धि] पूतिकरंज। (दे०)

पूतीकरण—पुं० [सं० पूत+च्वि√कृ+ल्युट्—अन] पूत अर्थात् पवित्र या शुद्ध करने की क्रिया, प्रणाली या भाव। (प्योरिफिकेशन)

पूतीका—स्त्री० [सं०=पूतिका, पृषो० सिद्धि] पोई। पूतिका शाक।

पूत्कारी—स्त्री० [सं०] १. सरस्वती। २. नाग-लोक की राजधानी।

पूत्यंड—पुं० [सं० पूति-अंड, ब० स०] १. कस्तूरी मृग। २. एक बदबूदार कीड़ा। गंध-कीट।

पूथ—पुं० =पूथा।

पूथा—पुं० [देश०] बालू का ऊँचा टीला या ढूह।

पूथिका—स्त्री० [सं०=पूतिका, पृषो० सिद्धि] पोई नामक पौधा और उसकी पत्ती।

पूदना—पुं० [देश०] भूरे रंग का एक प्रकार का पक्षी जो प्रायः जमीन पर चला करता है; और घास-फूस का घोसला बना कर रहता है।

पुं०=पुदीना।

पून—पुं० [देश०] जंगली बादाम का पेड़ जो पाकिस्तान के पश्चिमी किनारों पर होता है। इसके फूल और पत्तियाँ दोनों दवा के काम आती हैं। इसमें से एक प्रकार का गोंद भी निकलता है।

†पुं०=पूर्ण

वि० [सं०] नष्ट।

पूनना—पुं० [देश०] १. कलपून या पुन नाम का सदा बहार पेड़। २. एक तरह की ईख।

†स०=पुनना।

पूनव†—स्त्री०=पूर्णिमा।

पून-सलाई—स्त्री० [हिं० पूनी+सलाई] लोहे की सींक अथवा बेंत, नरसल आदि की वह छोटी पतली नली या पोर जिसपर रूई लपेटकर पूनी बनाई जाती है।

पूनाक—पुं० [देश०] तिलों में से तेल निकाल लिए जाने पर बच रहने-वाली सीठी। खली।

पूनिउँ†—स्त्री०=पूनो (पूर्णिमा)।

पूनी—स्त्री० [सं० पिंजिका] १. चरखे पर सूत कातने के उद्देश्य से बनाई हुई सलाई आदि पर लपेटकर रूई की बत्ती। २. वह बहुत लम्बी रूई की बत्ती जिससे मशीनों पर सूत काता जाता है।

पूनो†—स्त्री० [सं० पूर्णिमा] किसी महीने के शुक्ल पक्ष का अन्तिम दिन। पूर्णिमा।

पून्यो—स्त्री०=पूनो (पूर्णिमा)।

पूप—पुं० [सं०√पू (पवित्र करना)+पक्] एक तरह की मीठी पूरी। वि० दे० 'पूआ'।

पूपला—स्त्री० [सं० पूप√ला (लेना)+क+टाप्] पूआ नामक पकवान।

पूपली—स्त्री० [सं० पूपल+ङीप्] छोटा पूआ।

पूपशाला—स्त्री० [ष० त०] वह स्थान जहाँ पूप आदि पकवान बनते या बनने पर रखे जाते हैं।

पूपाली—स्त्री० [सं० पूप√अल् (पर्याप्त होना)+अच्+ङीष] पूआ।

पूपाष्टका—स्त्री० [सं० पूप-अष्टका, मध्य० स०] पूस के कृष्णपक्ष की अष्टमी; इस दिन मालपूओं से श्राद्ध करने का विधान है।

पूपिक—पुं० [सं० पूप+ठन्—इक] पूआ।

पूय—पुं० [सं०√पूय (दुर्गन्ध करना)+अच्] फोड़े में से निकलनेवाला सफेद गाढ़ा तरल पदार्थ। पीप।

पूय-कुंड—पुं० [ष० त०] १. पुराणानुसार एक नरक का नाम। २. दे० 'पूति-कुंड'।

पूय-दंत—पुं० [ब० स०] दाँतों का एक विकट रोग जिस में मसूड़ों में से मवाद निकलता है। (पायरिया)

पूयन—पुं० [सं०√पूय्+ल्युट्—अन] १. पूय। मवाद। २. प्राणी या वनस्पति के अंग का इस प्रकार गलना या सड़ना कि उसमें से दुर्गन्ध आने लगे। सड़न। (प्यूट्रिफिकेशन)

पूय-प्रमेह—पुं० [सं० ब० स०] वैद्यक में एक प्रकार का प्रमेह जिसमें मूत्र पीप की तरह गाढ़ा और दुर्गन्धमय होता है।

पूयभुक् (ज्)—वि० [सं० पूय√भुज् (खाना)+क्विप्] सड़ा मुर्दा खानेवाला।

पूय-मेह—पुं० [ब० स०] पूय-प्रमेह।

पूय-रक्त—पुं० [ब० स०] १. रक्तपित्त की अधिकता अथवा सिर पर चोट लगने के कारण नाक में से पीप मिला हुआ लहू निकलने का एक रोग। २. नाक में से निकलनेवाला पीव मिला हुआ रक्त।

पूयवह—पुं० [सं० पूय√वह् (बहना)+अण्] एक नरक।

पूय-शोणित—पुं०=पूय-रक्त। (दे०)

पूय-स्राव—पुं० [ब० स०] सुश्रुत के अनुसार आँखों का एक रोग जिसमें उसका संधिस्थान पक जाता है और उसमें से पीब बहने लगता है।

पूयारि—पुं० [पूय-अरि, ष० त०] नीम।

पूयालस—पुं० [पूय-अलस, ब० स०] आँखों का एक रोग जिसमें उसकी पुतली के संधिस्थल में से पीब निकलने लगता है।

पूयोद—पुं० [पूय-उदक, ब० स०, उदादेश] एक नरक का नाम।

पूर—पुं० [हिं० पूरना=भरना] १. कोई काम पूरा करने की क्रिया या भाव।

मुहा०—पूर देना=किसी बात का अन्त या समाप्ति करना। उदा०—दुइ सुत मारेउ पुर दहेउ अजहुँ पूर पिय देहु।—तुलसी। २. वे मसाले या दूसरे पदार्थ जो किसी पकवान के अन्दर भरे जाते हैं। जैसे—समोसे का पूर। ३. नदियों आदि में आनेवाली बाढ़।

†वि०=पूर्ण।

पुं० [सं०√पूर् (प्रसन्न करना)+क] १. दाह अगर। दाहागुरु। २. बाढ़। ३. घाव का पूरा होना या भरना। ४. प्राणायाम में पूरक क्रिया। वि० दे० 'पूरक'।

पूरक—वि० [सं०√पूर्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. पूर्ति करनेवाला। कमी, त्रुटि आदि पर दूर करनेवाला। २. (अंश या मात्रा) जिसके योग से किसी दूसरे तत्त्व या बात में पूर्णता आती हो या किसी प्रकार की पूर्ति होती हो। संपूरक। (कॉम्प्लिमेन्टरी) ३. किसी के सामने आकर उसकी बराबरी या सामना कर सकनेवाला। उदा०—पूरक है तेरा यहाँ एक युधिष्ठिर ही।—मैथिलीशरण। दे० 'संपूरक'।

पुं० १. प्राणायाम विधि के तीन भागों में से पहला भाग जिसमें श्वास को नाक से खींचते हुए अन्दर की ओर ले जाते हैं। २. वे दस पिंड जो हिंदुओं में से किसी के मरने पर उसके मरने की तिथि से दसवें दिन तक नित्य दिये जाते हैं। कहते हैं कि जब शरीर जल जाता है तब इन्हीं पिंडों से मृत व्यक्ति का पारलौकिक शरीर फिर से बनता है। ३. गणित में वह अंक जिसके द्वारा गुणा किया जाता है। गुणक अंक। ४. बिजौरा नींबू। ५. दे० 'समायोजक'।

पूरण—पुं० [सं०√पूर्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० पूरणीय] १. पूरा करने की क्रिया। २. अवकाश, रिक्त स्थान आदि में किसी को बैठना या रखना। पूर्ति करना। ३. कान आदि में तेल डालने की क्रिया। ४. अंकों का गुणा करना। ५. मृतक के दसवें दिन दिया जानेवाला पिंड जो मृतक के पर-लोक-गत शरीर को पूरा करनेवाला माना जाता है। ६. वर्षा। वृष्टि। ७. केवटी मोथा। ८. पुल। सेतु। ९. समुद्र। १०. गदह-पूरना। पुनर्नवा। ११. वैद्यक में वात के प्रकोप से होनेवाला एक प्रकार का फोड़ा या व्रण।

वि० [सं०√पूर्+णिच्+ल्यु—अन] पूरा करनेवाला। पूरक।

पूरणी—स्त्री० [सं० पूरण+ङीप्] सेमर। शाल्मली वृक्ष।

पूरणीय—वि० [सं०√पूर्+अनीयर्] १. जो पूर्ण किये जाने के योग्य हो। २. भरे जाने के योग्य।

पूरन†—वि० [सं० पूर्ण] पूर्ण। पूरा।

पुं० कचौरी, समोसे आदि पकवानों के बीच में भरा जानेवाला मसाला या और कोई वस्तु। पूर।

पुं० [हिं० पूर] १. जलाशय, नदी आदि की बाढ़। २. नदी की धारा या प्रवाह।

पूरन-काम†—वि०=पूर्ण-काम।

वि० [सं० पूर्णकाम] जिसकी इच्छाएँ पूर्ण हो चुकी हों।

पूरन-परब—पुं० [सं० पूर्णपर्व] पूर्णमासी।

पूरन-पूरी—स्त्री० [सं० पूर्ण+हिं० पूरी] एक प्रकार की मीठी कचौरी या पूरी जिसके अन्दर पूर भरा रहता है।

पूरनमासी†—स्त्री०=पूर्णिमा।

पूरना—स० [सं० पूरण] १. कमी या त्रुटि दूर करना या पूरी करना। पूर्ति करना। २. किसी के अन्दर कोई चीज अच्छी तरह से भरना। उदा०—सतगुरु साँचा सूरमा नखसिख मारे पूर।—कबीर। ३. आच्छादित करना। ढाँकना। ४. (अभिलाषा या मनोरथ) पूर्ण और सफल करना। ५. आवश्यक और उपयुक्त स्थान पर रखना या

लगाना। उदा०—हरि रहीम ऐसी करी ज्यों कमान सर पूर।—रहीम। ६. सूत आदि की कोई चीज बटकर तैयार करना। जैसे—पूनी पूरना, सेवई पूरना। ७. कपड़ा बुनने से पहले ताने के सूत फैलाना। ८. मंगल अवसरों पर आटे, अबीर आदि से देवताओं के पूजन आदि के लिए तिकोने, चौखूँटे आदि क्षेत्र बनाना। चौक बनाना। जैसे—चौक पूरना। ९. शंख बनाने के लिए मुँह से फूँककर उसमें हवा भरना और फलतः उसे बजाना। जैसे—शंख पूरना।

†अ० १. पूरा होना। २. किसी चीज से भरा जाना या व्याप्त होना। ३. पूरा या समाप्त होना।

पूरनिमा*—स्त्री०=पूर्णिमा।

पूरब—पुं० [सं० पूर्व] १. वह दिशा जिसमें सूर्य का उदय होता है। पूर्व। प्राची। २. उक्त दिशा में स्थित कोई क्षेत्र या प्रदेश। जैसे—पूरब में रहनेवाला व्यक्ति।

वि०=पूर्व।

क्रि० वि०=पूर्व।

पूरबल—पुं० [सं० पूर्व+वेला] १. पुराना जमाना। २. इस जन्म से पहलेवाला जन्म। पूर्व जन्म।

पूरबला—वि० [सं० पूर्व, हिं०+ला (प्रत्य०)] [स्त्री० पूरबली] १. पुराने जमाने से संबंधित। २. पूर्व जन्म-सम्बन्धी।

पूरबली*—स्त्री० [हिं० पूरबला] पूर्व जन्म का कर्म।

पूरबिय—पुं० [हिं० पूरब] पूरब अर्थात् पूर्वी भू-भाग या पूर्वी प्रान्त में रहनेवाला व्यक्ति।

वि०=पूरबी।

पूरबी—वि० [हिं० पूरब+ई (प्रत्य०)] १. पूरब का। पूरब-संबंधी। २. पूर्व दिशा से आनेवाला। जैसे—पूरबी हवा। ३. जिसमें पूर्व देश के लक्षण, विशेषताएँ आदि हों। जैसे—पूरबी दादरा, पूरबी हिंदी, पूरबी पहनावा।

पुं० १. एक प्रकार का दादरा जो बिहारी भाषा में होता और विहार प्रान्त में गाया जाता है। २. एक प्रकार का तमाकू।

स्त्री०=पूर्वी (रागिनी)।

पूरयितव्य—वि० [सं०√पूर्+णिच्+तव्यत्] जिसे पूरा या पूर्ण करना आवश्यक या उचित हो। पूरणीय।

पूरयिता (तृ)—पुं० [सं०√पूर्+णिच्+तृच्] १. पूर्णकर्ता। पूरक। पूर्ण करनेवाला। २. विष्णु का एक नाम।

पूरा—वि० [सं० पूर्ण] [स्त्री० पूरी] १. जिसके अन्दरवाले अवकाश में कुछ भी स्थान खाली न बचा हो। जिसका भीतरी भाग अच्छी तरह भर चुका हो। भरा हुआ। परिपूर्ण। जैसे—पूरा भरा हुआ कमरा या घड़ा। २. जितना आवश्यक, उचित या संभव हो, उतना। भरपूर। यथेच्छ। यथेष्ट। जैसे—यहाँ सब चीजें पूरी हैं, किसी चीज की कमी नहीं होगी।

मुहा०—पूरा पड़ना=जितनी आवश्यकता हो, उतना होना। यथेष्ट होना। जैसे—तुम्हारा तो सौ रुपये में भी पूरा नहीं पड़ेगा।

३. समग्र। समूचा। सारा। कुल। जैसे—(क) उन्होंने पूरा जंगल ठेके पर ले लिया है। (ख) यह पूरा मकान किराये पर दिया जायगा। ४. जो आकार, घनता, विस्तार आदि के विचार से अच्छी तरह विस्तृत या व्याप्त हो चुका हो। जैसे—पूरा जवान, पूरा जोर, पूरी तेजी। ५. जिसमें कोई कमी या कोर-कसर न हो या न रह गई हो। पक्का। जैसे—(क) अब वह अपने काम में पूरा होशियार हो गया है। (ख) अब तो वह हमारा पूरा दुश्मन हो गया है।

पद—किसी काम या बात का पूरा=अच्छी तरह से निर्वाह या पालन कर सकने के योग्य या कर सकनेवाला। जैसे—(क) बात या वचन का पूरा। (ख) गुण या विद्या का पूरा।

६. (काम) जो क्रिया रूप में लाकर अन्त या समाप्ति तक पहुँचा दिया गया हो। पूर्ण रूप से कृत, संपन्न या संपादित। जैसे—(क) साल भर में यह पुस्तक पूरी हुई है। (ख) जब तक काम पूरा न हो जायगा, तब तक वह दम (या साँस) न लेगा।

मुहा०—(कोई काम) पूरा उतरना=ठीक तरह से संपन्न या संपादित होना। जैसे—रहने दो, तुमसे यह काम पूरा नहीं उतरेगा।

७. (बात) जो कार्यतः या व्यावहारिक रूप में ठीक सिद्ध हो। जैसे—तुम्हारा कहना पूरा होकर ही रहेगा।

मुहा०—(कथन) पूरा करना=ठीक या सत्य सिद्ध होना। जैसे—तुम्हारी भविष्यवाणी पूरी उतरी। **पूरा पाना**=अपने उद्देश्य या प्रयत्न की सिद्धि में सफल होना। उदा०—नाच्यौ नाचलच्छ चौरासी कबहुँन पूरौ पायौ।—सूर।

८. (समय) व्यतीत करना। बिताना। जैसे—(क) हम भी यहाँ अपने दिन पूरे कर रहे हैं; अर्थात् किसी प्रकार समय बिता रहे हैं। (ख) पांडवों ने अज्ञातवास की अवधि भी पूरी कर ली।

मुहा०—(किसी के) दिन पूरे होना=अवधि, आयु आदि का अन्त या समाप्ति तक पहुँचना। **(गर्भवती के) दिन पूरे होना**=गर्भ-धारण का समय समाप्ति पर होना और प्रसव का समय समीप आना।

८. (कामना या इच्छा) संतोषजनक रूप में सफल या सिद्ध होना। जैसे—अब हमारी सभी वासनाएँ पूरी हो चुकी हैं; हमें कुछ नहीं चाहिए। १०. अवस्था या वय में यथेष्ट मान तक पहुँचा हुआ। वयस्क। जैसे—कच्चा तो कचौरी माँगे, पूरी माँगे पूरा।—(कहा०)

क्रि० वि० पूर्ण रूप से। पूरी तरह से। जैसे—यह घड़ा पूरा भर दो।

पूराम्ल—पुं० [सं० पूर-अम्ल, ब० स०] १. इमली। २. अम्लबेंत।

पूरिका—स्त्री० [सं० पूरक+टाप्, इत्व] आटे आदि की बनी हुई पूरी।

पूरित—भू० कृ० [सं०√पूर्+णिच्+क्त] १. पूर्ण किया या भरा हुआ। परिपूर्ण। लबालब। २. तृप्त। ३. गुणित। गुणा किया हुआ।

पूरिया—पुं० [देश०] संध्या के समय गाया जानेवाला षाड़व जाति का एक राग। इसमें पंचम स्वर वर्जित है।

पूरिया कल्याण—पुं० [हिं० पूरिया+कल्याण (राग)] रात के पहले पहर में गाया जानेवाला संपूर्ण जाति का एक संकर राग।

पूरी—स्त्री० [सं० पूलिका] १. एक प्रकार का प्रसिद्ध पकवान जिसे साधारण रोटी आदि की तरह बेलकर खौलते घी या तेल में छानकर पकाते हैं। २. ढोल, तबले, मृदंग आदि में वह गोलाकार चमड़ा जो उनके मुँह पर मढ़ा रहता है और जिस पर आघात होने से वे बजते हैं।

क्रि० प्र०—चढ़ाना।—मढ़ना।

वि० हिं० 'पूरा' का स्त्री०। (मुहा० के लिए दे० 'पूरा')

वि० [सं० पूरिन्] पूरा करनेवाला। पूरक।

स्त्री० घास आदि का छोटा पूला।

पूरु—पुं० [सं०√पृ (पूर्ति)+कु] १. मनुष्य। २. राजा ययाति के पुत्र का नाम। ३. वैराज मनु के एक पुत्र। ४. जदु के एक पुत्र। ५. एक राक्षस।

पूरुख—पुं०=पूरुष (पुरुष)।

पूरुजित—पुं० [सं० पूरु√जि (जीतना)+क्विप्] विष्णु।

पूरुब—पुं०=पूरब।

पूरुष—पुं० [सं०√पूर्+उषन्] १. पुरुष। २. आत्मा।

पूर्ण—वि० [सं०√पूर्+क्त, त–न] १. (आधान या पात्र) जो पूरी तरह से भरा हुआ हो। जिसमें काम का कोई अवकाश या स्थान खाली न रह गया हो। जैसे—जल से पूर्ण घट। २. लाक्षणिक रूप में, किसी तत्त्व या बात से भरा हुआ। पूरी तरह से युक्त। जैसे—शोक-पूर्ण समाचार, हर्ष-पूर्ण समारोह। ३. सब प्रकार की यथेष्टता के कारण जिसमें कुछ भी अपेक्षा, अभाव या आवश्यकता न रह गई हो। जितना आवश्यक या उचित हो, उतना सब। जैसे—धन-धान्य से पूर्ण गृहस्थी या परिवार। ४. (आवश्यकता या इच्छा) जिसके पूरे होने में कोई कसर या सन्देह न रह गया हो। हर प्रकार से तृप्त और संतुष्ट। जैसे—आपने मेरी सभी कामनाएँ पूर्ण कर दीं। ५. सब का सब। पूरा। समूचा। सारा। समस्त। संपूर्ण। जैसे—पूर्ण योजना सफल हो गई। ६. जिसमें किसी आवश्यक अंग या संयोजक तत्त्व का ठीक अभाव न हो। हर तरह से ठीक और पूरा। जैसे—पूर्ण उपमा अलंकार। ८. (उद्देश्य या प्रयत्न) सफल। सिद्ध। जैसे—आज आपका संकल्प पूर्ण हुआ। ९. जो अपनी अवधि या सीमा के सिरे पर पहुँच गया हो। जैसे—आयु पूर्ण होना; दंड की अवधि पूर्ण होना।

पुं० १. प्रचुरता। बाहुल्य। २. जल। पानी। ३. विष्णु का एक नाम। ४. बौद्ध कथाओं के अनुसार मैत्रायणी का एक पुत्र।

पूर्ण-अतीत—पुं० [कर्म० स०] १. संगीत में ताल का वह स्थान जो 'सम अतीत' के एक मात्रा बाद आता है। यह स्थान भी कभी कभी सम का काम देता है।

पूर्णक—पुं० [सं० पूर्ण+कन्] १. मुर्गा। कुक्कुट। २. देवताओं की एक योनि। ३. दे० 'पूर्ण'।

पूर्ण-कलानिधि—पुं० [कर्म० स०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

पूर्ण-काम—वि० [ब० स०] १. जिसकी कामनाएँ पूर्ण या पूरी हो चुकी हों। २. कामना-रहित। निष्काम।

पुं० परमेश्वर।

पूर्ण-काश्यप—पुं० [कर्म० स०] उन छः तीर्थिकों में से एक जिन्हें भगवान् बुद्ध ने शास्त्रार्थ में पराजित किया था। कहते हैं कि इसी दुःख में ये अपने गले में बालू भरा घड़ा बाँधकर डूब मरे थे।

पूर्णकुंभ—पुं० [कर्म० स०] १. जल से भरा हुआ घड़ा जो मांगलिक और शुभ माना जाता है। पूर्ण घट। २. घड़े के आकार का दीवार में बनाया जानेवाला छेद। ३. एक तरह का युद्ध।

पूर्णकोशा—स्त्री० [सं० ब० स०, +टाप्] एक प्रकार की लता जो ओषधि के काम आती है।

पूर्णकोषा—स्त्री० [ब० स०, +टाप्] १. कचौरी। २. प्राचीन काल में जौ के आटे से बननेवाला एक प्रकार का पकवान। ३. दे० 'पूर्ण-कोशा'।

पूर्णकोष्ठा—स्त्री० [ब० स०, +टाप्] नागरमोथा।

पूर्णगर्भा—स्त्री० [ब० स०, +टाप्] १. वह स्त्री जिसे शीघ्र प्रसव होने की संभावना हो। वह स्त्री जिसके गर्भ के दिन पूरे हो चले हों। २. कचौरी, जिसमें पीठी आदि भरी रहती है। ३. पूरन-पूरी नाम का पकवान।

पूर्णघट—पुं०=पूर्ण-कुंभ।

पूर्णचंद्र—पुं० [कर्म० स०] पूर्णिमा का चन्द्रमा जो अपनी सब कलाओं से पूर्ण या युक्त रहता है।

पूर्ण-चंद्रिका—पुं० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

पूर्णतः—अव्य० [सं० पूर्ण+तस्] पूरी तरह से। पूर्णतया।

पूर्णतया—अव्य० [सं० पूर्णता की तृ० विभक्ति का रूप] पूरी तरह से। पूर्ण रूप से।

पूर्णता—स्त्री० [सं० पूर्ण+तल्+टाप्] १. पूर्ण होने की अवस्था या भाव। २. ऐसी स्थिति जिसमें किसी प्रकार का अभाव, कमी या त्रुटि न हो। (परफेक्शन)

पूर्ण-परिवर्तक—पुं० [कर्म० स०] वह जीव जो अपने जीवन में अनेक बार रूप आदि बदलता हो। जैसे—कीड़े-मकोड़े, तितली, मेढक आदि।

पूर्णपर्वेंदु—पुं० [पूर्ण-पर्व-इंदु, ब० स०] पूर्णिमा। पूर्णमासी।

पूर्णपात्र—पुं० [कर्म० स०] १. वह घड़ा जो प्राचीन काल में चावलों से भरकर होम या यज्ञ के अन्त में दक्षिणा के रूप में पुरोहित को दिया जाता था। इसमें साधारणतः २५६ मुट्ठी चावल हुआ करता था। २. उक्त के आधार पर २५६ मुट्ठियों की एक नाप। ३. पुत्र-जन्म आदि शुभ अवसरों पर शुभ संवाद सुनानेवाले लोगों को बाँटे जानेवाले कपड़े और गहने।

पूर्णप्रज्ञ—वि० [ब० स०] १. जिसकी बुद्धि में कोई कमी या त्रुटि न हो। २. बहुत बड़ा बुद्धिमान्। ३. पूर्ण ज्ञानी।

पुं० पूर्ण प्रज्ञदर्शन के कर्ता मध्वाचार्य जो वैष्णव मत के संस्थापक आचार्यों में माने जाते हैं। हनुमान और भीम के बाद ये वायु के तीसरे अवतार कहे गये हैं। इनका एक नाम आनन्दतीर्थ भी है।

पूर्णप्रज्ञदर्शन—पुं० [ष० त०] सर्वदर्शन संग्रह के अनुसार, एक दर्शन जिसके प्रवर्तक पूर्णप्रज्ञ या मध्वाचार्य हैं। इसके अधिकतर सिद्धान्त रामानुज दर्शन के सिद्धान्तों से मिलते हैं।

पूर्णबीज—पुं० [ब० स०] बिजौरा नीबू।

पूर्णभद्र—पुं० [कर्म० स०] १. स्कंद पुराण के अनुसार हरिकेश नामक यक्ष के पिता। २. एक नाग का नाम।

पूर्णभेदी (दिन्)—पुं० [सं० पूर्ण√भिद् (विदारण)+णिनि] एक प्रकार का पौधा।

पूर्णमा—स्त्री० [सं० पूर्ण√मा (मापना)+क+टाप्] पूर्णिमा। पूर्णमासी।

पूर्णमानस—वि० [ब० स०] जो मन से भली भाँति संतुष्ट हो।

पूर्णमास—स्त्री० [ब० स०] १. चन्द्रमा। २. [पूर्णमासी+अच्] प्राचीन काल में पूर्णिमा को किया जानेवाला एक तरह का यज्ञ।

पूर्णमासी—स्त्री० [सं० पूर्णमास+ङीष्] शुक्लपक्ष की अंतिम तिथि जिसमें चन्द्रमा अपनी सोलहों कलाओं से युक्त होता है। पूर्णिमा। पूनो।

पूर्ण मैत्रायनी पुत्र—पुं० [सं० मैत्रायनी-पुत्र, ष० त०, पूर्ण-मैत्रायनी पुत्र, कर्म० स० ?] बुद्ध भगवान के अनुचरों में से एक जो पश्चिम भारत के सुरपाक नामक स्थान में रहते थे।

पूर्णयोग—पुं० [ब० स०] प्राचीन भारत में एक प्रकार का बाहुयुद्ध। भीम और जरासंघ में यही बाहु-युद्ध हुआ था।

पूर्णरथ—पुं० [ब० स०] बहुत कुशल और पक्का योद्धा।

पूर्णलक्ष्मीक—वि० [ब० स०, +कप्] लक्ष्मी या धन से भली भाँति सम्पन्न।

पूर्णवर्मा (र्मन्)—पुं० [सं०] महाराज अशोक के वंश के अंतिम मगध सम्राट्। गौड़राज शशांक द्वारा बोधिगया के बोधिवृक्ष के नष्ट किए जाने पर इन्होंने उसे फिर से जीवित कराया था।

पूर्णवर्ष—वि० [ब० स०] बीस वर्ष की अवस्थावाला नौजवान।

पूर्णविराम—पुं० [कर्म० स०] लिखाई, छपाई आदि में एक प्रकार का चिह्न जो वाक्य के अन्त में उसकी पूर्णता या समाप्ति जतलाने के लिए खड़ी पाई के रूप में लगाया जाता है। (फुल-स्टॉफ)

पूर्णविषम—पुं० [कर्म० स०] संगीत में ताल का एक स्थान जो कभी कभी सम का काम देता है।

पूर्णवैनाशिक—पुं० [कर्म० स०] वह बौद्ध जिसकी आस्था सर्वशून्य तत्त्ववाद में हो।

पूर्णशैल—पुं० [कर्म० स०] योगिनी तंत्र के अनुसार उल्लिखित एक पर्वत का नाम।

पूर्ण-श्री—वि० [ब० स०] प्रतिष्ठित, सम्पन्न तथा सुखी (व्यक्ति)।

पूर्णहोम—पुं० [कर्म० स०] पूर्णाहुति। (दे०)

पूर्णांक—पुं० [पूर्ण-अंक, कर्म० स०] १. पूरी संख्या। २. गणित में अविभक्त संख्या। ३. किसी प्रश्न-पत्र के लिए निर्धारित अंक। (फुल मार्क्स)

पूर्णांजलि—वि० [पूर्ण-अंजलि, ब० स०] जितना अँजुली, में आ सके, उतना। अंजुलि भर।

पूर्णा—स्त्री० [सं० पूर्ण+टाप्] १. चंद्रमा की पंद्रहवीं कला। २. पंचमी, दशमी, अमावस और पूर्णमासी की तिथियाँ। ३. दक्षिण भारत की एक नदी।

पूर्णाघात—पुं० [पूर्ण-आघात, कर्म० स०] संगीत में, ताल का वह स्थान जो अनाघात के उपरांत एक मात्रा के बाद आता है। कभी-कभी वह स्थान भी सम का काम देता है।

पूर्णानंद—पुं० [पूर्ण-आनंद, ब० स०] परमेश्वर।

पूर्णाभिलाष—वि० [पूर्ण-अभिलाष, ब० स०] १. जिसकी अभिलाषा पूरी हो चुकी है। २. तृप्त। संतुष्ट।

पूर्णाभिषिक्त—भू० कृ० [पूर्ण-अभिषिक्त, कर्म० स०] जिसका पूर्णाभिषेक संस्कार हो चुका हो।

पुं० तांत्रिकों और [illegible]ों का एक भेद या वर्ग।

पूर्णाभिषेक—पुं० [पूर्ण-अभिषेक, कर्म० स०] वाममार्गियों का एक तांत्रिक संस्कार जो किसी नये साधक के गुरु द्वारा दीक्षित होने के समय किया जाता है। अभिषेक। महाभिषेक।

पूर्णामृता—स्त्री० [पूर्ण-अमृता, कर्म० स०] चन्द्रमा की सोलहवीं कला।

पूर्णायु (स्)—वि० [पूर्ण-आयुस्, ब० स०] जिसने पूरी अर्थात् सौ वर्षों की आयु पाई हो।

स्त्री० [पूर्ण-अवतार, कर्म० स०] १. पूरी आयु। सारा जीवन। २. सौ वर्षों की आयु।

पूर्णावतार—पुं० [पूर्ण-अवतार, कर्म० स०] अंशावतार से भिन्न ऐसा अवतार जो किसी देवता की संपूर्ण कलाओं से युक्त हो। सोलहों कलाओं से युक्त अवतार।

पूर्णाशा—स्त्री० [पूर्ण-आशा, ब० स०, +टाप्] महाभारत में उल्लिखित एक नदी।

पूर्णाहुति—स्त्री० [पूर्ण-आहुति, कर्म० स०] १. यज्ञ की समाप्ति पर दी जानेवाली आहुति। २. लाक्षणिक अर्थ में किसी कार्य की समाप्ति के समय होनेवाला अन्तिम कृत्य।

पूर्णि—स्त्री० [सं०√पृ+णिङ्] पूर्णिमा।

पूर्णिका—स्त्री० [सं० पूर्णि+कन्+टाप्] एक प्रकार की चिड़िया जिसकी चोंच का दोहरा होना माना जाता है। नासाच्छिनी पक्षी।

पूर्णिमांत—पुं० [सं०] गौण चांद्रमास का दूसरा नाम।

पूर्णिमा—स्त्री० [सं० पूर्णि√मा (मापना)+क+टाप्] चांद्र मास के शुक्ल पक्ष की अन्तिम तिथि जिसमें चन्द्रमा अपने पूरे मंडल से उदय होता है। पूर्णमासी।

पूर्णमासी—स्त्री०=पूर्णिमा।

पूर्णेंदु—पुं० [पूर्ण-इन्दु, कर्म० स०] पूर्णिमा का चन्द्रमा जो अपनी सोलहों कलाओं से युक्त होता है। पूर्णचन्द्र।

पूर्णोत्कट—पुं० [पूर्ण-उत्कट, कर्म० स०] मार्कंडेय पुराण में उल्लिखित एक पूर्व देशीय पर्वत।

पूर्णोदरा—स्त्री० [पूर्ण-उदर, ब० स०, टाप्] एक देवी।

पूर्णोपमा—पुं० [पूर्ण-उपमा, कर्म० स०] उपमा अलंकार के दो मुख्य भेदों में से पहला जिसमें उपमेय, उपमान, वाचक और धर्म चारों अंग प्रकट रूप से वर्तमान रहते हैं। यथा—सुभग सुधाधर तुल्य मुख, मधुर सुधा से बैन—पद्माकर।

विशेष—इसके आर्थी और श्रौती दो भेद होते हैं।

पूर्त—वि० [सं०√पृ (पालन करना)+क्त] १. पूरी तरह से भरा हुआ। २. छाया या ढका हुआ। आवृत। ३. पालित। ४. रक्षित। पुं० १. पूर्णता। २. देवगृह, वापी आदि का बनवाना जो धार्मिक दृष्टि से उत्तम कर्म माना गया है।

पूर्त-विभाग—पुं० [ष० त०] आज-कल वह राजकीय विभाग जो सड़कें, पुल, नहरें आदि लोकोपयोगी वास्तु-रचनाओं का निर्माण कराता है।

पूर्त-संस्था—स्त्री० [ष० त०] धर्मार्थ कार्यों के लिए स्थापित की हुई संस्था। (चैरिटेबिल इंस्टीट्यूशन)

पूर्ति—स्त्री० [सं० पृ+क्तिन्] १. पूरे या पूर्ण होने की क्रिया या भाव। पूर्णता। २. जो वस्तु अपेक्षित, आवश्यक या कम हो, उसे लाकर प्रस्तुत करने की क्रिया। कमी पूरी करने का काम। जैसे—अभाव की पूर्ति, समस्या की पूर्ति। ३. अर्थशास्त्र में, वे वस्तुएँ जो किसी विशिष्ट मूल्य पर बिकने के लिए बाजार में आई हों। (सप्लाई) ४.

वापी, कूप या तड़ाग आदि का उत्सर्ग। ५. किसी वही, आकार-पत्र आदि के कोष्ठकों में आवश्यकतानुसार कुछ लिखने या खाने भरने का काम। ६. गुणा करने की क्रिया या भाव। गुणन।

पूर्ती (र्तिन्)—वि० [सं० पूर्त्त+इनि] १. तृप्ति देनेवाला। २. इच्छा पूर्ण करनेवाला। ३. भरा हुआ। पूरित।

पुं० श्राद्ध।

पूर्ब—पुं० दे० 'पूर्व'।

वि० दे० 'पूर्व'।

पूर्य—वि० [सं०√पृ+क्यप् वा√पूर्+ण्यत्] १. जिसे पूरा करना आवश्यक या उचित हो। पूरणीय। २. जो पूरा किया जाने को हो। ३. (आज्ञा) जिसका पालन करना आवश्यक और उचित हो।

पुं० एक प्रकार का तृण-धान्य।

पूर्व—वि० [सं०√पूर्व्+अच्] १. जो सबसे आगे, सामने या पहले हो। २. जो किसी से पहले अस्तित्व में आया या बना हो। ३. अत्यधिक पुराना। प्राचीन। ४. किसी कृति के पहलेवाले अंश से संबद्ध। 'उत्तर' का विपर्याय।

क्रि० वि० पहले। आगे।

पुं० [सं०√पूर्व् (निवास)+अच्] १. वह दिशा जिसमें से प्रातः-काल सूर्य निकलता हुआ दिखाई देता है। पश्चिम के सामने की दिशा। पूरब। २. जैनों के अनुसार सात नील, पाँच खरब, साठ अरब वर्ष का एक काल-विभाग।

पूर्वक—अव्य० [सं०] समस्त पदों के अन्त में (क) सहित या साथ। (ख) (कोई काम) अच्छी तरह से करते हुए। जैसे—ध्यानपूर्वक, विचारपूर्वक।

पूर्व कर्म (न्)—पुं० [कर्म० स०] सुश्रुत के अनुसार रोगी के सम्बन्ध में किये जानेवाले तीन कर्मों में से पहला कर्म। रोगोत्पत्ति के पहले किये जानेवाले काम।

पूर्वकल्प—पुं० [कर्म० स०] प्राचीन काल।

पूर्वकल्याण—पुं० [सं०] संगीत में एक प्रकार का राग।

पूर्व-कल्याणी—स्त्री० [कर्म० स०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

पूर्वकाय—पुं० [एकदेशित०] शरीर का पूर्व या ऊपरी भाग। नाभि से ऊपर का भाग।

पूर्वकाल—पुं० [कर्म० स०] १. बीता हुआ समय। २. पुराना जमाना।

पूर्वकालिक—वि० [सं० पूर्व-काल; कर्म० स०,+ठन्—इक] १. जिसकी उत्पत्ति या जन्म पूर्वकाल में हुआ हो। पूर्वकाल-जात। २. पूर्व समय या पुराने जमाने से संबद्ध। ३. जिसका अवस्थान या स्थिति पूर्वकाल में रही हो। पुराने जमाने का।

पूर्वकालिक क्रिया—स्त्री० [सं०] व्याकरण में धातु से बना हुआ वह कृदंत जो क्रिया विशेषण की तरह युक्त होता है तथा जिससे सूचित होता है कि अमुक कार्य होने के बाद ही मुख्य क्रिया द्वारा निर्दे-शित कार्य हुआ या होगा। यह रूप धातु में 'कर' लगने से बनता है। विशेष—यह घटना-क्रम के विचार से होनेवाले क्रिया के दो भेदों में से एक है। दूसरा भेद समापक या समापिका क्रिया कहलाता है।

पूर्वकालीन—वि० [सं० पूर्वकाल+ख—ईन] पुराने जमाने का। प्राचीन। पुराना।

पूर्वकृत्—पुं० [सं० पूर्व√कृ (करना)+क्विप्] पूर्व दिशा के कर्ता सूर्य।

भू० कृ० पहले किया हुआ।

पूर्व गंगा—स्त्री० [सं० कर्म० स०] नर्मदा नदी।

पूर्वग—वि० [सं० पूर्व√गम् (जाना)+ड] आगे या पहले चलनेवाला। पूर्वगामी।

पूर्वगत—वि० [सुप्सुपा स०] १. जो पहले चला गया हो या जा चुका हो। २. बीता हुआ।

पूर्वगामी (मिन्)—वि० [सं० पूर्व√गम् (जाना)+णिनि] आगे या पहले चल या निकल जानेवाला। जो पहले चला गया हो।

पूर्वग्रस्त—भू० कृ० [सं०] १. (बात या विषय) जिसके संबंध में मन में कोई पूर्व-ग्रह हो। २. (व्यक्ति) जिसके मन में किसी बात या विषय के संबंध में कोई पूर्व-ग्रह हो। (प्रेजुडिस्ट)

पूर्वग्रह—पुं० [कर्म० स०] १. चिकित्सा शास्त्र में, वह सिहरन या इसी प्रकार की और कोई अनुभूति जो मिरगी आदि विकट रोगों का दौरा शुरू होने से पहले होती है। २. किसी अनिश्चित अप्रमाणित या विवादास्पद बात या विषय के संबंध से वह आग्रहपूर्वक धारणा जो पहले से बिना जाने या समझे-बूझे अपने मन में स्थिर कर ली गई हो। (प्रेजुडिस)

पूर्वचित्ति—स्त्री० [सं०] एक अप्सरा का नाम।

पूर्वचेतन—पुं० [सं०] आधुनिक मनोविज्ञान में वे अचेतन इच्छाएँ या वासनाएँ या प्रतिक्रियाएं जो पहले से मन में सोई रहती है और सहज में चेतन अवस्था में आ सकती या आ जाती हैं। यह अहं का बौद्धिक अंश माना गया है। (प्रीकॉन्शेन्स)

विशेष—अचेतन और पूर्व-चेतन में यह अन्तर किया गया है कि अचेतन तो दमित और गतिशील होता है, पर पूर्व-चेतन का दमित होना आव-श्यक नहीं है। यह अचेतन और चेतन के बीच की स्थिति है।

पूर्वज—वि० [सं० पूर्व√जन् (उत्पन्न होना)+ड] जिसकी उत्पत्ति या जन्म पूर्वकाल में अथवा किसी के पूर्व या पहले हुआ हो।

पुं० १. बड़ा भाई। अग्रज। २. बाप, दादा, परदादा आदि पूर्व पुरुष। पुरखा। ३. एक प्रकार के दिव्य पितृगण जिनका निवास चन्द्र-लोक में माना गया है।

पूर्व-जन—पुं० [कर्म० स०] पुराने समय के लोग। पुराकालीन पुरुष।

पूर्व-जन्म (न्)—पुं० [कर्म० स०] १. प्रस्तुत या वर्तमान से भिन्न पहले-वाला कोई जन्म। २. इस जन्म से पहलेवाला जन्म। पिछला जन्म।

पूर्व-जन्मा (न्मन्)—पुं० [ब० स०] बड़ा भाई। अग्रज।

पूर्वजा—स्त्री० [सं० पूर्वज+टाप्] बड़ी बहन।

पूर्वजाति—स्त्री० [कर्म० स०] पूर्व जन्म। पिछला जन्म।

पूर्वजिन—पुं० [कर्म० स०] १. अतीत जिन या बुद्ध। २. मंजुश्री का एक नाम।

पूर्वज्ञान—पुं० [ष० त०] १. पूर्व जन्म की बात का ज्ञान। पूर्व जन्म में अर्जित ज्ञान जो इस जन्म में भी विद्यमान हो। २. पूर्वार्जित या पहले

का ज्ञान। ३. आत्मिक शक्ति की सहायता से ऐसी घटनाओं या बातों का पहले से ही परिज्ञान हो जाना जो अभी घटित न हुई हों, बल्कि भविष्य में कभी घटित होने को हों। (फोर-नॉलेज)

पूर्वतः (तस्)—अव्य०[सं० पूर्व+तस्]१. पहले। २. प्रथमत। ३. सामने।

पूर्वतन—वि० [सं० पूर्व+ट्यु—अन, तुट्] १. पहला। २. पुराना।

पूर्वतर—वि० [सं० पूर्व+तरप्] [भाव० पूर्वतरता] १. पहला। २. पूर्व का।

पूर्व-तिथि—स्त्री० [कर्म० स०] पत्रों, लेखों आदि पर लिखी जानेवाली वह तिथि जो अभी कुछ दिन बाद आने को हो। आज की तिथि या दिनांक के बाद की कोई तिथि या दिनांक।

पूर्वतिथित—भू० कृ० [सं० पूर्वतिथि+णिच्+क्त] (वह) जिस पर पहले से कोई पहले की तारीख या तिथि दे या लिख दी गई हो।

पूर्वत्र—अव्य० [सं० पूर्व+त्रल्] १. पहले। २. पहलेवाले भाग या स्थान में।

पूर्व-दक्षिणा—स्त्री० [ब० स०] पूर्व और दक्षिण के बीच का कोना।

पूर्वदत्त—भू० कृ० [कर्म० स०] जो पहले दिया जा चुका हो। पहले का दिया हुआ। (प्री-पेड)

पूर्वदर्शन—पुं० [कर्म० स०] आत्मिक शक्ति की सहायता से ऐसी घटनाएँ या बातें पहले से दिखाई देती हुई जान पड़ना जो अभी घटित न हुई हों बल्कि भविष्य में कभी घटित होने को हों। (प्रीकाग्निशन)

पूर्वदान—पुं० [सं०] पहले या पेशगी देना। पहले ही चुका देना है।

पूर्वदिक्-पति—पुं० [ष० त०] इंद्र।

पूर्वदिग्-वदन—पुं० [ब० स०]=पूर्व-दिगीश।

पूर्वदिगीश—पुं० [पूर्वदिश्-ईश, ष० त०] १. इन्द्र। २. सिंह, मेष और धनु तीनों राशियाँ।

पूर्वदिन—पुं० [एकदेशित०] मध्याह्न से पहले का समय।

पूर्वदिश्य—वि० [सं० पूर्वदिश्+यत्] पूर्व दिशा का या उससे सम्बन्ध रखनेवाला।

पूर्वदिष्ट—पुं० [कर्म० स०,+अच्] वे सुख-दुःख आदि जो पूर्व जन्म में किये हुए कर्मों के परिणामस्वरूप भोगने पड़ें।

पूर्वदुष्कृत—पुं० [ष० त०] पूर्व जन्म का पाप।

पूर्वदृष्टि—स्त्री० [कर्म० स०] वह दृष्टि या विचार-शक्ति जिसकी सहायता से किसी होनेवाली बात के सब अंग पहले से ही देख या सोच-समझ लिये जाते हैं। (फोर साइट)

पूर्व-देव—पुं० [कर्म० स०] १. नर और नारायण। २. असुर जो पहले देव या सुर थे, पर अपने दुष्कर्मों के कारण बाद में सुरों के वर्ग से अलग हो गये थे।

पूर्वदेवता—पुं० [कर्म० स०] पितर।

पूर्वदेह—स्त्री० [कर्म० स०] १. पूर्व जन्मवाला शरीर। २. शरीर का अगला भाग।

पूर्वदेहिक, पूर्वदैहिक—वि० [सं० पूर्व-देह, कर्म० स०,+ठन्—इक् ?] [सं० पूर्वदेह+ठञ्—इक ?] पूर्व जन्म में किया हुआ।

पूर्व-निरूपण—पुं० [कर्म० स०] १. किसी बात का पहले से किया जानेवाला निरूपण। २. किस्मत। तकदीर। भाग।

पूर्वन्याय—पुं० [कर्म० स०] किसी अभियोग में प्रतिवादी का यह कहना कि ऐसे अभियोग में मैं वादी को पराजित कर चुका हूँ। यह उत्तर का एक प्रकार है।

पूर्वपक्ष—पुं० [कर्म० स०] १. किसी शास्त्रीय विषय के संबंध में उठाया हुआ ऐसा प्रश्न, बात या शंका जिसका दूसरे पक्ष को उत्तर देना या समाधान करना पड़े। २. व्यवहार या अभियोग में वादी द्वारा उपस्थित किया हुआ अभियोग या बात। मुद्दई का दावा। ३. चांद्रमास का कृष्णपक्ष।

पूर्वपक्षी (क्षिन्)—पुं० [सं० पूर्वपक्ष+इनि] १. वह जो पूर्वपक्ष उपस्थित करे। २. वह जो न्यायालय में कोई अभियोग या वाद उपस्थित करे। मुद्दई।

पूर्वपक्षीय—वि० [सं० पूर्वपक्ष+छ—ईय] पूर्वपक्ष संबंधी। पूर्व-पक्ष का।

पूर्वपद—पुं० [कर्म० स०] १. यौगिक या समस्त पद में का पहले का पद। 'उत्तर-पद' का विपर्याय। जैसे—लोकगीत में का 'लोक' पूर्व-पद है। २. किसी सोपाधिक बात का पहला अंश जिस पर दूसरा अंश अवलंबित हो। ३. कोई ऐसी बात जिस पर तार्किक दृष्टि से कोई दूसरी बात अवलंबित हो। ४. काल-क्रम के विचार से पहले घटित होनेवाली ऐसी घटना जिसके फलस्वरूप बाद में और कोई घटना घटित होती है।

पूर्व-पर्वत—पुं० [कर्म० स०] उदयाचल।

पूर्वपाली (लिन्)—पुं० [सं० पूर्व√पाल् (रक्षा करना)+णिच्+णिनि] इन्द्र।

पूर्वपितामह—पुं० [ष० त०] १. पुरखा। पूर्वज। २. प्रपितामह। परदादा।

पूर्वपीठिका—स्त्री० [कर्म० स०] वह अवस्था, रूप या स्थिति जिसके आगे या सामने कोई नई स्थिति या रूप खड़ा हो। भूमिका। (बेक-ग्राउन्ड)

पूर्वपुरुष—पुं० [कर्म० स०] दादा-परदादा। पूर्वज। (फोर-फादर्स)

पूर्व-प्रत्यय—पुं० [कर्म० स०] वह प्रत्यय जो शब्द के पहले लगाया जाता है।

पूर्व-प्लावनिक—वि० [सं०] १. वैवस्वत मनु अथवा हजरत नूर के समय के प्लावन से पहले का। २. बहुत पुराना फलतः बिलकुल निकम्मा। (एन्टी-डिलूविअल)

पूर्व-फल्गुनी—स्त्री० [कर्म० स०] सत्ताईस नक्षत्रों में से ग्यारहवाँ नक्षत्र जिसमें दो तारे हैं।

पूर्वफल्गुनी भव—पुं० [सं० पूर्व फल्गुनी√भू (होना)+अच्] बृह-स्पति (ग्रह)।

पूर्वबंधु—पुं० [कर्म० स०] पहला या सबसे अच्छा मित्र।

पूर्वबाध—पुं० [ष० त०] पहले के निश्चय को स्थगित या रद्द करना।

पूर्वबाहु—स्त्री० [एकोशित०] कोहनी से आगे का वह भाग जिसमें कलाई और पंजा होता है। (फोर आर्म)

पूर्वभक्षिका—स्त्री० [कर्म० स०] प्रातःकाल किया जानेवाला भोजन। जलपान। नाश्ता।

पूर्वभाद्रपद—पुं० [कर्म० स०] सत्ताईस नक्षत्रों में २५वाँ नक्षत्र जिसमें दो तारे हैं।

पूर्वभाव—पुं० [कर्म० स०] १. पूर्व सत्ता। २. प्राथमिकता। ३. विचार की अभिव्यक्ति। ४. 'पूर्वराग' (साहित्य)।

पूर्वभावी (विन्)—पुं० [सं० पूर्व√भू+णिनि] कारण। वि० पूर्ववर्ती।

पूर्वभाषी (षिन्)—वि० [सं० पूर्व-भाष् (बोलना)+णिनि] १. पहले बोलने का इच्छुक। २. नम्र। विनयी।

पूर्व-मीमांसा—पुं० [कर्म० स०] जैमिनि मुनि द्वारा कृत एक प्रसिद्ध भारतीय दर्शन जिसमें कर्मकांड सम्बन्धी बातों का विवेचन है।

पूर्वयज्ञ—पुं० [कर्म० स०] जैनों के अनुसार एक जिनदेव जो मणिभद्र और जलेंद्र भी कहलाते हैं।

पूर्व-रंग—पुं० [कर्म० स०] १. अभिनय में वह संगीत या स्तुति आदि जो नाटक आरंभ होने से पहले विघ्नों की शांति और दर्शकों को अनुरक्त करने के लिए होता है। यद्यपि इसके प्रत्याहार आदि अनेक अंग हैं; फिर भी इसमें नान्दी का होना परम आवश्यक है। २. रंग-शाला।

पूर्व-राग—पुं० [कर्म० स०] साहित्य में किसी के प्रति मन में उत्पन्न होनेवाला वह प्रेम जो बिना प्रिय को देखे केवल उसका गुण या नाम सुनने, चित्र आदि देखने से होता है। इसकी ये दस दशाएँ कही गई हैं:—अभिलाषा, चिन्ता, स्मृति, गुण-कथन, उद्वेग, संलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और मरण।

पूर्व-रूप—पुं० [कर्म० स०] १. किसी काम, चीज या बात का पहलेवाला आकार, रूप या रंग-ढंग। जैसे—इस पुस्तक का पूर्वरूप ऐसा ही था। २. किसी वस्तु का वह रूप जो उस वस्तु के पूर्ण रूप से प्रस्तुत होने से पहले बनता या तैयार होता है। ३. साहित्य में एक अर्थालंकार, जिसमें किसी के विनष्ट, गुण, रूप, वैभव आदि के फिर से वापस या लौट आने का उल्लेख होता है।

पूर्वलेख—पुं० दे० 'संलेख'।

पूर्ववत्—अव्य० [सं० पूर्व+वति] १. जिस प्रकार पहले हुआ या किया गया हो, उसी प्रकार या उसी के अनुसार। २. पहले की ही तरह। ज्यों का ज्यों (अर्थात बिना किसी प्रकार के परिवर्तन के)। पुं० किसी कार्य का वह अनुमान जो उसके कारणों को देखकर उसके होने से पहले ही किया जाता है।

पूर्ववर्ती (र्तिन्)—वि० [सं० पूर्व√वृत् (वरतना)+णिनि] जो पहले से वर्तमान हो या रह चुका हो। पूर्व में या पहले रहने या होनेवाला। जैसे—यहाँ के पूर्ववर्ती अध्यापक बहुत वृद्ध हो गये थे।

पूर्ववाद—पुं० [सं० कर्म० स०] व्यवहार शास्त्र के अनुसार वह पहला अभियोग जो कोई व्यक्ति न्यायालय आदि में उपस्थित करे। पहला दावा। नालिश।

पूर्ववादी (दिन्)—पुं० [सं० पूर्व√वद् (बोलना)+णिनि] वादी। मुद्दई।

पूर्वविचार—पुं० [कर्म० स०] किसी होनेवाली बात के संबंध में पहले से किया जानेवाला विचार। (फोर थॉट)

पूर्वविद्—वि० [सं० पूर्व√विद् (जानना)+क्विप्] पुराने समय की बातें जाननेवाला। इतिहास आदि का ज्ञाता।

पूर्व विवेचन—पुं० [सं०] किसी विषय से संबंध रखनेवाली सब बातें पहले से अच्छी तरह सोच-समझ लेने की क्रिया या भाव। (प्राविडेन्स)

पूर्व विहित—वि० [कर्म० स०] १. जिसका पहले से विधान किया जा चुका हो या हो चुका हो। २. पहले का जमा किया हुआ या गाड़ा हुआ (धन)।

पूर्ववृत्त—पुं० [कर्म० स०] पुराने समय की घटनाओं का विवरण। पूर्वकाल की बातें। इतिहास।

पूर्वव्यापित—वि० [सं०] (आदेश, नियम या निश्चय) जिसका प्रभाव बीते हुए काल के कार्यों, व्यवस्थाओं पर भी पड़ता हो। (रिट्रोस्पेक्टिव)

पूर्व-शैल—पुं० [सं० कर्म० स०] उदयाचल।

पूर्व-संचित—भू० कृ० [कर्म० स०] पहले से इकट्ठा या संचित किया हुआ।

पूर्व-संध्या—स्त्री० [कर्म० स०] दिन की पहली सन्ध्या; अर्थात् प्रातःकाल।

पूर्व-सक्थ—पुं० [एकदेशि त०] जाँघ का ऊपरी भाग।

पूर्व-सभिक—पुं० [कर्म० स०] जूए खाने का प्रधान या मालिक।

पूर्वसर—वि० [सं० पूर्व√सृ (गति)+ट] आगे चलनेवाला। अग्रगामी।

पूर्व-सागर—पुं० [कर्म० स०] पूर्वी समुद्र।

पूर्वसाहस—पुं० [कर्म० स०] पहला या सबसे बड़ा दंड।

पूर्वसाचित्य—पुं० [कर्म० स०] किसी काम में पहले से सोच-समझकर अपनी रक्षा के विचार से किया जानेवाला साचित्य। (प्रिकाशन)

पूर्वसिंधु—पुं० [कर्म० स० ?] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

पूर्वसूचन—पुं० [कर्म० स०] १. सूचना या चेतावनी पहले से देना। २. किसी भावी कार्य या बात के सम्बन्ध में बचत, रक्षा आदि के विचार से पहले से दी जानेवाली सूचना या चेतावनी।

पूर्वा—स्त्री० [सं० पूर्व+टाप्] १. पूर्व दिशा। पूरब। २. दे० 'पूर्वाफाल्गुनी'। ३. राजाओं आदि के बड़े बड़े कार्यों का उल्लेख या वर्णन। प्रशस्ति।

पूर्वागम—पुं० [पूर्व-आगम, कर्म० स०] भाषा-विज्ञान में, शब्द के आदि में रहनेवाले व्यंजन के साथ उच्चारण के सुभीते के लिए स्वाभाविक रूप से इ या उ स्वर का लगना। (प्रोथेसिस) जैसे—'स्त्री' का उच्चारण 'इस्त्री' के रूप में करना।

पूर्वाग्नि—स्त्री० [पूर्व-अग्नि, कर्म० स०] आवसथ्य अग्नि।

पूर्वाचल, पूर्वाद्रि—पुं० [पूर्व-अचल, पूर्व-अद्रि कर्म० स०] उदयाचल।

पूर्वादेश—पुं० [पूर्व-आदेश, कर्म० स०] किसी बात के सम्बन्ध में पहले से दिया हुआ आदेश या बतलाई हुई कार्य-प्रणाली। (प्रीवियस इन्स्ट्रक्शन)

पूर्वाधिकारी (रिन्)—पुं० [पूर्व-अधिकारिन्, कर्म० स०] वह जो किसी पद पर पहले अधिकारी के रूप में रह चुका हो। (प्रीडिसेसर)

पूर्वानिल—पुं० [पूर्व-अनिल, कर्म० स०] पूरबी वायु। पुरवा। हवा।

पूर्वानुमान—पुं० [पूर्व-अनुमान, कर्म० स०] किसी भावी काम या बात के स्वरूप आदि के सम्बन्ध में पहले से किया जानेवाला अनुमान या कल्पना। (फोर कास्ट) जैसे—फसल या वर्षा का पूर्वानुमान।

पूर्वानुराग—पुं०=पूर्व-राग।

पूर्वापर—अव्य० [पूर्व-अपर, द्व० स०] आगे पीछे।
वि० आगे का और पीछे का।
पुं० किसी बात का आगा-पीछा, ऊँच-नीच या भला-बुरा।

पूर्वापराधी (धिन्)—पुं० [पूर्व-अपराधिन्, कर्म० स०] १. वह जो पहले कोई अपराध कर चुका हो। २. विशेषतः ऐसा अपराधी जो दंड भोग चुका हो। (एक्स-कॉन्विक्ट)

पूर्वापर्य—पुं० [सं० पूर्वापर+यत्] पूर्वापर की अवस्था या भाव।

पूर्वा-फाल्गुनी—स्त्री० [सं० व्यस्त पद] ज्योतिष में ग्यारहवाँ नक्षत्र जिसका आकार पलंग की तरह और नीचे की ओर मुँहवाला माना जाता है। इसमें दो तारे हैं; और इसके अधिष्ठाता देवता यम कहे गए हैं।

पूर्वा-भाद्रपद—पुं० [व्यस्त पद]=पूर्वाभाद्रपदा।

पूर्वाभाद्रपदा—स्त्री० [सं० व्यस्त पद] ज्योतिष में, पचीसवाँ नक्षत्र जिसका आकार घंटे के समान माना गया है और जिसमें दो नक्षत्र हैं।

पूर्वाभिनय—पुं० [पूर्व-अभिनय, कर्म० स०] अभिनय या इसी प्रकार के और किसी बड़े आयोजन के सम्बन्ध में उसके नियत समय से कुछ पहले उसका किया जानेवाला यथा-तथ्य अभ्यास। (रिहर्सल)

पूर्वाभिमुख—वि० [पूर्व-अभिमुख, ब० स०] जिसका रुख पूरब की ओर हो।
अव्य० पूरब की ओर मुँह करके।

पूर्वाभिषेक—पुं० [पूर्व-अभिषेक, कर्म० स०] एक प्रकार का मंत्र।

पूर्वाभ्यास—पुं० [पूर्व-अभ्यास, कर्म० स०] कोई कार्य दर्शकों के सम्मुख करने से पहले उसे पक्का करने के लिए किया जानेवाला अभ्यास। रिहर्सल।
वि० दे० 'पूर्वाभिनय'।

पूर्वाराम—पुं० [पूर्व-आराम, कर्म० स०] एक प्रकार का बौद्धसंघ या मठ।

पूर्वार्चिक—पुं० [पूर्व-आर्चिक, कर्म० स०] सामवेद का पूर्वार्द्ध।

पूर्वार्जित—वि० [पूर्व-अर्जित, कर्म० स०] पहले का अर्जित किया हुआ। पहले का कमाया हुआ।
पुं० पैतृक संपत्ति।

पूर्वार्द्ध—पुं० [सं० पूर्व-अर्द्ध, कर्म० स०] किसी काम चीज या बात का पहला आधा भाग। शुरू का आधा हिस्सा।

पूर्वावेदक—पुं० [सं० पूर्व-आवेदक, कर्म० स०]=पूर्ववादी।

पूर्वाश्रम—पुं० [सं० पूर्व-आश्रय, कर्म० स०] १. ब्रह्मचर्याश्रम। २. वह आश्रम जिसमें कोई व्यक्ति नये आश्रम में प्रविष्ट होने से पहले रहा हो। जैसे—संन्यासी होने से पहले इनका पूर्वाश्रम ब्राह्मण था।

पूर्वाषाढ़—पुं०=पूर्वाषाढ़ा।

पूर्वाषाढ़ा—स्त्री० [सं० पूर्वा-आषाढ़ा, कर्म० स०] ज्योतिष में, बीसवाँ नक्षत्र जिसमें दो तारे होते हैं और जिसका आकार सूप का सा और अधिष्ठाता देवता जल माना गया है।

पूर्वाह†—पुं०=पूर्वाह्न।

पूर्वाह्न—पुं० [सं० पूर्व-अह्न्, एकदेशित०] दिन का पहला भाग। सबेरे से दोपहर तक का समय।

पूर्वाह्णिक—पुं० [सं० पूर्वाह्ण+ठन्—इक] वे कर्म जो दिन के पहले भाग में किया जाता हो। जैसे—स्नान, संध्या, पूजा आदि।

पूर्विका—स्त्री० [सं० पूर्व+कन्+टाप्, इत्व] पहले की कोई घटना या मामला जो बाद की वैसी ही घटनाओं के लिए उदाहरण या नजीर का काम दे। किसी न्यायालय का वह अभिनिर्णय या कार्यविधि जिसे आदर्श माना जाता हो। (प्रिसीडेन्ट)

पूर्वी—वि० [सं० पूर्वीय] पूर्व दिशा में संबंध रखनेवाला। पूरब का।
पुं० १. एक प्रकार का चावल जो पूर्वी प्रदेशों में होता है। २. सन्ध्या समय गाया जानेवाला सम्पूर्ण जाति का एक राग। ३. उत्तर प्रदेश के पूर्वी भागों तथा बिहार आदि में गाये जानेवाला कुछ विशिष्ट प्रकार के गीत। (इस अन्तिम अर्थ में कुछ लोग स्त्री० में भी इसका प्रयोग करते हैं।)

पूर्वी घाट—पुं० [हिं० पूर्वी+घाट] दक्षिण भारत के पूर्वी किनारे पर का पहाड़ों का सिलसिला जो बालासोर से कन्या कुमारी तक चला गया है और वहीं पश्चिमी घाट के अंतिम अंश से मिल गया है।

पूर्वीण—वि० [सं० पूर्व+ख—ईन] १. पुराना। २. पैतृक।

पूर्वेद्युः—पुं० [सं० पूर्व+एद्युस्] १. एक प्रकार का श्राद्ध जो अगहन, पूस, माघ और फागुन के कृष्णपक्ष की सप्तमी तिथि को किया जाता है। २. प्रातःकाल। सबेरा।

पूर्वोक्त—वि० [सं० पूर्व-उक्त, कर्म० स०] जिसका जिक्र पहले आ चुका हो। जो पहले कहा जा चुका हो।

पूर्वोत्तर—वि० [सं० पूर्व-उत्तर, ब० स०] पूर्व और उत्तर के बीच का। जैसे—पूर्वोत्तर रेलवे।

पूर्वोत्तरा—स्त्री० [सं० पूर्वोत्तर+टाप्] पूर्व और उत्तर के बीच की दिशा। ईशान कोण।

पूर्वोपाय—पुं० [सं० पूर्व+उपाय] बात, रक्षा, व्यवस्था आदि का ध्यान रखते हुए पहले से किया जानेवाला उपाय। (प्रिकॉशनरी मेज़र)

पूलक—पुं० [सं०√पूल् (इकट्ठा करना)+ण्वुल्—अक] घास आदि का पूला।

पूला—पुं० [सं० पूलक] [स्त्री० अल्पा० पूली] घास-तृणों आदि का बँधा हुआ गट्ठर।

पूलाक—पुं० [सं०=पुलाक, पृषो० सिद्धि] =पुलाक। (दे०)

पूलिया—पुं० [देश०] मालाबार प्रदेश में रहनेवाले मुसलमानों की एक उप-जाति।

पूली—स्त्री० [हिं० पूला का अल्पा०] छोटा पूला।

पूलीची—स्त्री० [देश०] मालाबार प्रदेश की एक असभ्य जंगली जाति।

पूल्य—पुं० [सं०√पूल+ण्यत्] अनाज का कोई खोखला दाना।

पूवा†—पुं०=पूआ।

पूष—पुं० [सं०√पूष् (बढ़ना)+क] १. शहतूत का पेड़। २. पौष मास।

पूषक—पुं० [सं०√पूष्+ण्वुल्—अक] १. शहतूत का पेड़ और उसका फल।

पूषण—पुं० [सं० √पूष्+कनिन्] १. सूर्य। २. बारह आदित्यों में से एक। (पुराण) ३. एक वैदिक देवता।

पूषदंतहर—पुं० [सं० पूषन्-दन्त, ष० त०, पूषदन्त√हृ (हरण)+अच्] वीर भद्र (जिसने दक्ष के यज्ञ के समय सूर्य का दाँत तोड़ा था)।

पूषमित्र—पुं० [सं०] गोभिल का एक नाम।

पूषा—स्त्री० [सं० पूष+टाप्] १. चन्द्रमा की तीसरी कन्या। २ हठ-योग के अनुसार दाहिने कान की एक नाड़ी।

पूषाकल्याणी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटिकी पद्धति की एक रागिनी।

पूषात्मज—पुं० [सं० पूषन्-आत्मज, ष० त०] १. मेघ। बादल। २. इंद्र। ३. कर्ण।

पूस—पुं० [सं० पौष] विक्रमी संवत् का दसवाँ महीना। पौष।

पृंग—पुं० [सं० पिंग से] मध्य एशिया में बननेवाला एक तरह का रेशमी कपड़ा।

पृंगा—स्त्री० [पृंग से] एक प्रकार की ढीली सलवार। पिंगा।

पृक्का—स्त्री० [सं०√पृच् (संपर्क)+कन्+टाप्] असबरग नाम का गंध-द्रव्य।

पृक्ति—स्त्री० [सं०√पृच्+क्तिन्] १. संबंध। लगाव। २. स्पर्श। ३. मिलन। ४. जोड़।

पृक्ष (स्)—पुं० [सं०√पृच्+असि, सुट्] अन्न। अनाज।

पृच्छक—वि० [सं०√प्रच्छ् (पूछना)+ण्वुल्—अक] १. प्रश्न करने-वाला। पूछनेवाला। २. जिज्ञासु।

पृच्छन—पुं० [सं०√प्रच्छ्+ल्युट्—अन] पूछने की क्रिया या भाव। प्रश्न करना। पूछना।

पृच्छना—स्त्री० [सं०√प्रच्छ्+णिच्+युच्—अन,+टाप्] पूछना। जिज्ञासा करना।

पृच्छा—स्त्री० [सं०√प्रच्छ+अङ्+टाप्] प्रश्न। सवाल।

पृच्छय—वि० [सं०√प्रच्छ+क्यप्] जो पूछे जाने के योग्य हो। जिसके सम्बन्ध में प्रश्न हो सकता हो या होने को हो।

पृतना—स्त्री० [सं०√पृ (व्यायाम)+तनन्+टाप्] १. सेना। २. सेना का एक प्राचीन विभाग जिसमें तीन वाहिनियाँ अर्थात् २४३ हाथी, इतने ही रथ, ७२९ घुड़सवार और १२१५ पैदल सिपाही होते थे। ३. लड़ाई। युद्ध।

पृतनानी—पुं० [सं० पृतना√नी (ले जाना)+क्विप्] १. पृतना नामक सेना विभाग का अधिकारी या नायक। २. सेनापति।

पृतना-पति—पुं० [ष० त०] =पृतनानी।

पृतनाषाट्, पृतनासाह्—पुं० [सं० पृतना√सह् (सहना)+ण्वि] इंद्र।

पृतन्या—स्त्री० [सं० पृतना+यत्+टाप्] सेना। फौज।

पृथक्—वि० [सं०√प्रथ् (फेंकना)+अजि, कित् संप्रसारण] [भाव० पृथक्ता] १. जो प्रस्तुत से संबंधित न हो और उससे अतिरिक्त हो। २. जो अंगों से अलग हो चुका हो। ३. आकार-प्रकार, गुण, रूप आदि की दृष्टि से प्रस्तुत से भिन्न प्रकार का। ४. अपने कार्य या पद से हटाया हुआ।

पृथक्करण—पुं० [सं० पृथक्-करण, सुप्सुपा स०] १. पृथक् या अलग करने की क्रिया या भाव। २. किसी पदार्थ को काटकर उसके अंग अलग-अलग करना। ३. एक में मिली हुई बहुत सी वस्तुओं को छाँटकर उनके वर्ग या श्रेणियाँ बनाना। ४. अधिकार, पद आदि से हटाना।

पृथक्-क्षेत्र—पुं० [सं० ब० स०] एक ही पिता परन्तु विभिन्न माताओं से उत्पन्न बहन और भाई।

पृथक्ता—स्त्री० [सं० पृथक्+तल्+टाप्] पृथक होने की अवस्था या भाव। पार्थक्य।

पृथक्त्व—पुं० [सं० पृथक्+त्व] पृथक् होने की अवस्था या भाव। अलगाव। पार्थक्य।

पृथक्त्वचा—स्त्री० [सं० ब० स० टाप्] मूर्वा लता।

पृथक्पर्णी—स्त्री० [सं० ब० स०, ङीष्] पिठवन नामक लता।

पृथगात्मता (त्मन्)—स्त्री० [सं० पृथगात्मन्, ब० स०+तल्+टाप्] १. विरक्ति। वैराग्य। २. अंतर। भेद।
वि० १. भिन्न। २. विशिष्ट।

पृथगात्मिका—स्त्री० [सं० ब० स०,+कप्+टाप्, इत्व] (दूसरे से भिन्न) व्यक्तिगत सत्ता।

पृथग्जन—पुं० [सं० ष० त०] १. मूर्ख। बेवकूफ। २. नीच या कमीना आदमी। ३. पापी।

पृथग्बीज—पुं० [सं० ब० स०] भिलावाँ।

पृथग्वासन—पुं० [सं० कर्म० स०] विभिन्न जातियों के लोगों को विशेषतः गोरी और काली जातियों के लोगों को अलग-अलग बसाने का काम। (एपारथीड)

पृथवी†—स्त्री०=पृथ्वी।

पृथा—स्त्री० [सं०] कुंतिभोज की कन्या कुंती जिसका विवाह पांडु से हुआ था तथा जो युधिष्ठिर भीम और अर्जुन की माता थी।

पृथाज—पुं० [सं० पृथा√जन् (उत्पन्न होना)+ड] १. पृथा या कुंती के पुत्र युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन। २. अर्जुन का पेड़।

पृथिका—स्त्री० [सं०√प्रथ्+क+,क+टाप्, इत्व] गोजर।

पृथिवी—स्त्री० [√प्रथ्+षिवन्, संप्रसारण, ङीप्]=पृथ्वी।

पृथिवी-कंप—पुं० [ष० त०] =भूकंप।

पृथिवीक्षित्—पुं० [सं० पृथिवी√क्षि (निवास, हिंसा) +क्विप्] राजा।

पृथिवी-तल—पुं० [ष० त०] पृथिवी की ऊपरी सतह। धरातल।

पृथिवी-नाथ—पुं० [ष० त०] राजा।

पृथिवि-पति—पुं० [ष० त०] १. राजा। २. यम। ३. ऋषभ नामक ओषधि।

पृथिवीपाल—पुं० [सं० पृथिवी√पाल्+णिच्+अण्] राजा।

पृथिवीभुज्—पुं० [सं० पृथिवी√भुज् (पालन करना)+क्विप्] राजा।

पृथिवीश—पुं० [सं० पृथिवी-ईश, ष० त०] राजा।

पृथिवी-शक्र—पुं० [सं० स० त०] राजा।

पृथिवी-शत्रु—पुं० [सं० ष० त०] राजा।

पृथी—स्त्री०=पृथ्वी।
पुं०=पृथु (राजा)।

पृथीनाथ—पुं० [सं० पृथिवी-नाथ] राजा।

पृथु—वि० [सं०√प्रथ्+कु, संप्रसारण] [भाव० पृथुता] १. अधिक विस्तारवाला। विस्तीर्ण। २. बड़ा। महान। ३. अगणित। बहुत। अधिक। ४. चतुर। होशियार। ५. महत्त्वपूर्ण।
पुं० १. एक हाथ का मान। दो बालिश्त की लंबाई। २. अग्नि। आग। ३. विष्णु। ४. शिव। ५. एक विश्वेदेवा। ६. चौथे मन्वंतर के एक सप्तर्षि। ७. तामस मन्वंतर के एक ऋषि। ८. वेणु के पुत्र एक प्रसिद्ध राजा जिनके नाम से भूमि का नाम पृथ्वी पड़ा था। कहते हैं कि इन्होंने गो रूप धारिणी पृथ्वी से ओषधियों का दोहन किया था। (मार्कण्डेय पुराण)

स्त्री० [सं०] १. काला जीरा। २. हिंगुपत्री। ३ अफीम।
पृथुक--पुं० [सं० पृथु+कन्, या√प्रथ्+कुकन्, संप्रसारण] [स्त्री० पृथुका] १. बच्चा। बालक। ३. चाक्षुष मन्वंतर के एक देव-गण। हिंगुपत्री। ५. चिड़वा।
पृथुका--स्त्री० [सं० पृथुक+टाप्] १. हिंगुपत्री। २. बालिका।
पृथुकीर्ति--स्त्री० [सं०] पुराणानुसार पृथा (कुंती) की एक छोटी बहन का नाम।
वि० जिसकी चारों ओर कीर्ति हो। यशस्वी।
पृथुकोल--पुं० [सं० कर्म० स०] बड़ा बेर।
पृथुच्छद--पुं० [ब० स०] १. एक प्रकार का दो रंगा कुश। २. हाथीकंद।
पृथुता--स्त्री० [सं० पृथु+तल्+टाप्] १. पृथु होने की अवस्था या भाव। २. फैलाव। विस्तार।
पृथुत्व--पुं० [सं० पृथु+त्व] पृथुता। (दे०)
पृथुदर्शी (र्शिन्)--वि० [सं० पृथु√दृश् (देखना)+णिनि] दूरदर्शी।
पृथुपत्र--पुं० [ब० स०] १. लाल लहसुन। २. हाथी कंद।
पृथु-पलाशिका--पुं० [सं० ब० स०,+कप्+टाप्, इत्व] कचूर।
पृथुपाणि--पुं० [ब० स०] जिसके हाथ घुटनों तक लंबे हों। आजानुबाहु।
पृथु-प्रथ--वि० [ब० स०] अति प्रसिद्ध। विख्यात।
पृथु-बीजक--पुं० [ब० स०,+कप्] मसूर।
पृथु-भैरव--पुं० [कर्म० स०] बौद्धों के एक देवता।
पृथु-यशा (शस्)--वि० [ब० स०] बहुत बड़ा यशस्वी।
पृथु-रोमा (मन्)--स्त्री० [सं० ब० स०, डाप्] १. मछली। २. मीन-राशि।
पृथुल--वि० [सं० पृथु+लच्] १. अधिक विस्तारवाला। विस्तीर्ण। पृथु। २. बहुत बड़ा। जैसे--पृथु-लोचन। ३. भारी। जैसे--पृथु विक्रम। ४. अधिक। ढेर।
पृथुला--स्त्री० [सं० पृथुल+टाप्] हींग की जाति का एक वृक्ष। हिंगुपत्री।
पृथु-लोचन--वि० [ब० स०] बड़ी-बड़ी आँखोंवाला।
पृथु-शिंब--पुं० [ब० स०] सोनापाठा।
पृथुशेखर--पुं० [ब० स०] पहाड़। पर्वत।
पृथु-श्रवा (वस्)--पुं० [ब० स०] १. कार्तिकेय का एक अनुचर। २. पुराणानुसार नवें मनु का एक पुत्र।
वि० १. बड़े-बड़े कानोंवाला। २. बहुत प्रसिद्ध।
पृथु श्रोणि--वि० [ब० स०] जिसकी कमर चौड़ी हो।
पृथु-संपद्--वि० [ब० स०] बहुत बड़ा धनवान्।
पृथु-स्कंध--पुं० [ब० स०] सूअर।
पृथूदक--पुं० [सं० पृथु-उदक, ब० स०] सरस्वती नदी के दक्षिण तट पर का एक प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थ जिसका आधुनिक नाम पोहोआ है।
पृथूदर--वि० [सं० पृथु-उदर, ब० स०] बड़े या मोटे पेटवाला।
पुं० मेढ़ा। मेष।
पृथ्वी--स्त्री० [सं० पृथु+ङीष्] १. सौर जगत् का पाँचवाँ सबसे बड़ा ग्रह जिसमें हम लोग रहते हैं। २. उक्त का अंश तथा जल से भिन्न और अतिरिक्त अंश, जिसपर मनुष्य तथा पशु विचरण करते तथा पेड़-पौधे उगते हैं। जमीन। ३. स्वर्ग और नरक से भिन्न हमारा यह संसार। ४. मिट्टी। ५. पंचभूतों या तत्त्वों में एक जिसका प्रधान गुण गंध है, पर जिसमें गौण रूप से शब्द, स्पर्श रूप और रस चारों गुण भी माने गये हैं। दे० 'भूत'। ६. हिंगुपत्री। ७. काला जीरा। ८. सोंठ। ९. बड़ी इलायची। १०. सत्रह अक्षरों का एक वर्णवृत्त जिसमें ८, ९ पर यति और अंत में लघु-गुरु होते हैं। ११. एक प्रकार का वर्ण-वृत्त।
पृथ्वीका--स्त्री० [सं० पृथ्वी+कन्+टाप्] १. बड़ी इलायची। २. छोटी इलायची। ३. काला जीरा। ४. हिंगुपत्री।
पृथ्वी कुड़क--पुं० [स० त०] सफेद मदार या आक।
पृथ्वीखात--पुं० [ष० त०] गुफा।
पृथ्वीगर्भ--पुं० [ब० स०] गणेश।
वि० बड़े पेटवाला।
पृथ्वीज--वि० [सं० पृथ्वी√जन् (उत्पन्न होना)+ड] जो पृथ्वी से उत्पन्न हुआ हो।
पुं० १. पेड़-पौधे। २. सांभर नमक। ३. मंगल ग्रह।
पृथ्वीतनया--स्त्री० [ष० त०] सीता।
पृथ्वीतल--पुं० [ष० त०] १. जमीन का वह ऊपरी धरातल जिसपर हम लोग रहते हैं। २. दुनियाँ। संसार।
पृथ्वीधर--वि० [ष० त०] पृथ्वी को धारण करनेवाला।
पुं० पर्वत। पहाड़।
पृथ्वी-नाथ--पुं० [ष० त०] राजा।
पृथ्वी-पति--पुं० [ष० त०] राजा।
पृथ्वीपाल--पुं० [सं० पृथ्वी√पाल् (पालन करना)+णिन्+अण्] राजा।
पृथ्वी-पुत्र--पुं० [ष० त०] १. वीर पुरुष। २. मंगल ग्रह।
पृथ्वीभुक् (ज्)--पुं० [सं० पृथ्वी√भुज् (पालन)+क्विप्] राजा।
पृथ्वी-भृत्--पुं० [सं० पृथ्वी√भृ (पोषण)+क्विप्] राजा।
पृथ्वीश--पुं० [सं० पृथ्वी-ईश, ष० त०] राजा।
पृदाकु--पुं० [सं० √पर्द+काकु, संप्रसारण, अकार-लोप] १. साँप। २. बिच्छू। ३. चीता। बाघ। ४. हाथी। ५. पेड़। वृक्ष।
पृश्नि--स्त्री० [सं०√स्पृश् (छूना)+नि, पृषो० सिद्धि] १. चितकबरी गौ। २. किरण। ३. पिठवन। ४. श्रीकृष्ण की माता देवकी का एक नाम।
पुं० १. अनाज। २. जल। पानी। ३. अमृत। ४. वेद। ५. एक प्राचीन ऋषि। ६. बौना।
वि० १. दुबला-पतला। कृश। २. चितकबरा। ३. सफेद। ४. साधारण। मामूली।
पृश्नि-का--स्त्री० [सं० पृश्नि=स्वल्प+क=जल, ब० स०, टाप्] जलकुंभी।
पृश्नि-गर्भ--पुं० [सं० ष० त०,+अच्] श्रीकृष्ण।
पृश्नि-पर्णी--स्त्री० [सं० ब० स०+ङीष्] पिठवन लता।
पृश्नि-शृंग--पुं० [सं० ब० स०] १. विष्णु। २. गणेश।
पृश्नी--स्त्री० [सं० पृश्नि+ङीष्] जलकुंभी।

पृषत्—वि० [सं०√पृष् (सींचना)+अति] १. सिक्त करनेवाला। २. चितकबरा।
पुं० १. चितकबरा हिरन। चीतल। २. बिंदु।

पृषत—पुं० [सं०√पृष्+अतच्] १. चितला हिरन। चीतल मृग। २. एक प्रकार का साँप। ३. रोहू मछली। ४. पानी की बूंद। ५. राजा द्रुपद के पिता का नाम।

पृषताश्व—पुं० [सं० पृषत-अश्व, ब० स०] वायु। हवा।

पृषत्क—पुं० [सं० पृषत्+कन्] बाण। तीर।

पृषदंश—पुं० [सं०] १. वायु। २. शिव।

पृषदश्व—पुं० [सं० पृषत्–अश्व, ब० स०] १. वायु। हवा। २. एक राजर्षि। (महाभारत) ३. विरूपाक्ष के पुत्र। (भागवत)

पृषदाज्य—पुं० [सं० पृषत्-आज्य, मध्य० स०] वह घी जिसमें कुछ अंशों में दही भी मिला हो।

पृषद्वरा—स्त्री० [सं०] मेनका की कन्या का नाम।

पृषद्वल—पुं० [सं० पृषद्+वलच्] वरुण देवता का घोड़ा।

पृषभाषा—स्त्री० [सं० पृष,√पृष् (सेक)+क टाप्, पृषा (अमृतवर्षिणी)+भाषा, ब० स०] इंद्र की पुरी, अमरावती।

पृषाकरा—स्त्री० [सं०√पृष्+क्विप्, पृष्+आ√कृ+अप्, पृषो० सिद्धि] भार तौलने का पत्थर का बटखरा।

पृषातक—पुं० [सं० पृषत्+आ√तक् (हँसना)+अच्, पृषो० सिद्धि] पृषदाज्य। (दे०)

पृषोदर—वि० [स० ब०, पृषत्-उदर, त–लोप] छोटे पेटवाला।
पुं० वायु। हवा।

पृषोद्यान—पुं०[सं० पृषत्—उद्यान, कर्म० स०, त–लोप] छोटा उपवन।

पृष्ट—वि० [सं०√प्रच्छ् (पूछना)+क्त, संप्रसारण] १. जो पूछा गया हो। पूछा हुआ। २. जिससे पूछा गया हो। ३. सींचा हुआ। सिक्त।
†पुं०=पृष्ठ।

पृष्टि—स्त्री० [सं०√प्रच्छ्+क्तिन्] १. पूछने की क्रिया या भाव। प्रश्न करना। पूछना। २. पिछला भाग। पृष्ठभाग। ३. स्पर्श। ४. किरण। रश्मि।

पृष्ठ—पुं० [सं०√पृष् या√स्पृश्+थक्, नि० सिद्धि] १. किसी पदार्थ के पीछे की ओर का तल या भाग। पीठ। २. किसी पदार्थ का ऊपरी तल या भाग। सतह। ३. पुस्तक आदि के पन्नों के दोनों तलों में से प्रत्येक। पन्ना।
मुहा०—**पृष्ठ पलटना**=(क) अकर्मक रूप में, एक क्रम की समाप्ति के बाद दूसरे क्रम या घटना-प्रकार का आरंभ होना। (ख) सकर्मक रूप में, नया क्रम, घटना-प्रकार, प्रसंग आदि आरंभ करना। उदा०—पलटा पृष्ठ उसी ने तुमको सुर-पुर कैसा भाया?—मैथली शरण।

पृष्ठक—पुं० [सं० पृष्ठ+कन्] पिछला भाग। पीछे या पीठ की ओर का भाग।

पृष्ठ-करण—पुं० [सं० ष० त०] किसी पदार्थ का ऊपरी अथवा और कोई तल चौरस या बराबर करना। (सर्फेसिंग)

पृष्ठ-गत—वि० [सं० द्वि० त०] पीछे की ओर का। पीछे का। जैसे—पृष्ठगत चित्र।

पृष्ठ-गोप—पुं० [सं० पृष्ठ√गुप् (रक्षा करना)+अण्, उप० स०] सेना का वह अधिकारी जो युद्ध में लड़ती हुई सेना के पिछले अंग पर निगरानी रखता है।

पृष्ठ-ग्रह—पुं० [सं० पृष्ठ√ग्रह् (पकड़ना)+अच्, उप० स०] घोड़े का एक रोग।

पृष्ठ-चक्षु (स्)—वि० [ब० स०] जिसकी आँखें पीठ पर हों।
पुं० १. भालू। रीछ। २. केकड़ा।

पृष्ठज—वि० [सं० पृष्ठ√जन् (उत्पत्ति+ड] किसी के बाद में या पीछे जन्म लेनेवाला।

पृष्ठ-दृष्टि—पुं० [ब० स०] १. रीछ। भालू। २. केकड़ा।

पृष्ठ-देश—पुं० [ष० त०] किसी चीज के पीछे की ओर का तल या भाग।

पृष्ठ-पर्णी—स्त्री० [ब० स०, +ङीप्] पिठवन लता।

पृष्ठ-पोषक—वि० [ष० त०] पृष्ठ-पोषण करनेवाला। पीठ ठोकने और मदद करनेवाला। रक्षक।

पृष्ठ-पोषण—पुं० [ष० त०] किसी के पीछे या साथ रहकर उसका हर बात में समर्थन करना तथा उसे प्रोत्साहन और सहायता देना।

पृष्ठ-भंग—पुं० [ब० स०] युद्ध का एक ढंग जिसमें शत्रु-सेना के पिछले भाग पर आक्रमण करके उसे नष्ट किया जाता है।

पृष्ठ-भाग—पुं० [ष० त०] १. किसी चीज का पिछला अंश या भाग। पीठ की ओर का विस्तार। २. पीठ।

पृष्ठ-भूमि—स्त्री० [ष० त०] १. पिछला भाग। २. पहले की वे सब बातें और परिस्थितियाँ जिसके आगे या सामने कोई नई विशेष बात या घटना हो और जिनके साथ मिलान करने पर उस बात या घटना का रूप स्पष्ट होता है। भूमिका। जैसे—हिंदी भाषा की पृष्ठ-भूमि। ३. दे० 'पृष्ठिका'।

पृष्ठ-मर्म (न्)—पुं० [ष० त०] सुश्रुत के अनुसार पीठ पर के वे चौदह मर्मस्थान जिन पर आघात लगने से मनुष्य मर सकता है, अथवा उसका कोई अंग बेकाम हो सकता है। ये सब स्थान गरदन से चूतड़ तक मेरुदंड के दोनों ओर युग्म संख्या में हैं और इन सबके अलग-अलग नाम हैं।

पृष्ठ-मांस—पुं० [ष० त०] पीठ का मांस।

पृष्ठ-मांसाद—पुं० [सं० पृष्ठमांस√अद् (खाना)+अण्] वह जो पीठ के पीछे किसी की बुराई करता हो। चुगलखोर व्यक्ति।

पृष्ठ-मांसादन—पुं० [सं० पृष्ठमांस-अदन, ष० त०] १. पीठ पीछे किसी की निन्दा करना। २. चुगली।

पृष्ठयान—पुं० [तृ० त०] किसी की पीठ पर की जानेवाली सवारी।

पृष्ठ-रक्ष—पुं० [सं० पृष्ठ√रक्ष् (रक्षा)+अण्] १. वह जो किसी के पीछे रहकर उसकी रक्षा करता हो। २. दे० 'पृष्ठ-गोप'।

पृष्ठ-रक्षण—पुं० [ष० त०] किसी के पीछे रहकर उसकी रक्षा करना।

पृष्ठ-लग्न—वि० [स० त०] १. किसी के पीछे लगा रहनेवाला। २. अनुयायी।

पृष्ठ-वंश—पुं० [ष० त०] पीठ के बीच की हड्डियों की माला। रीढ़। (स्पाइन)

पृष्ठ-वास्तु—पुं० [मध्य० स०] एक मकान के ऊपर बना हुआ अथवा ऐसा मकान जिससे नीचेवाले खंड के ऊपर दूसरा खंड भी प्रायः उसी रूप में बना हो। दो-मंजिला मकान या इमारत।

पृष्ठ-वाह्य—पुं० [ब० स०] वह पशु जो पीठ पर बोझ लादकर ले चलता हो। जैसे—ऊँट, घोड़ा, बैल आदि।

पृष्ठ-शीर्षक—पुं० दे० 'पताकाशीर्षक'।

पृष्ठ-शूल—पुं० [सं०] पीठ में होनेवाला एक विशेष प्रकार का कष्टदायक तेज दर्द। (बैक-एक)

पृष्ठ-शृंग—पुं० [ब० स०] जंगली बकरा।

पृष्ठ-शृंगी (गिन्)—पुं० [सं० पृष्ठ-शृंग, स० त०,+इनि] १. भेड़ा। २. भैंसा। ३. नामर्द। हिजड़ा। ४. भीमसेन का एक नाम

पृष्ठांकन—पुं० [पृष्ठ-अंकन, स० त०] [भू० कृ० पृष्ठांकित] हुंडी। लेन-देन के पुरजे आदि लेख्यों की पीठ पर यह लिखना कि इसका, भुगतान अमुक व्यक्ति, या संस्था को दे दिया जाय। (एन्डोर्समेन्ट)

पृष्ठांकित—भू० कृ० [पृष्ठ-अंकित, स० त०] जिस पर या जिसकी पीठ पर पृष्ठांकन के रूप में हस्ताक्षर कर दिया गया हो या कुछ लिख दिया गया हो। (एन्डोर्स्ड)

पृष्ठाधान—पुं० [पृष्ठ-आधान, स०त०] वह चीज जो किसी दूसरी चीज के पीछे उसके सहारे के लिए अथवा उसमें दृढ़ता लाने के लिए उसके पीछे रखी या लगाई जाय। (बैकिंग)

पृष्ठानुग—वि० [सं० पृष्ठ-अनु√गम् (जाना)+ड]=पृष्ठानुगामी।

पृष्ठानुगामी (मिन्)—वि० [सं० पृष्ठ अनु√गम्+णिनि] अनुगमन करनेवाला। अनुगामी।

पृष्ठास्थि—स्त्री० [पृष्ठ-अस्थि, ष० त०] पीठ की लंबी हड्डी। रीढ़।

पृष्ठिका—स्त्री० [सं० पृष्ठ+कन्+टाप्, इत्व ?] १. पिछला भाग। २. वह भूमि या तल जो किसी वस्तु के पिछले भाग में हो। ३. पहले की वे सब बातें या परिस्थितियाँ जिनके आगे या सामने कोई नई विशेष बात या घटना हो और जिनके साथ मिलान करने पर उस बात या घटना का ठीक रूप स्पष्ट होता हो। ४. मूर्ति या चित्र में वह सब से पीछे का भाग जो अंकित दृश्य या घटना का आश्रय होता है। पृष्ठ-भूमि। ५. पीछे की ओर का वह स्थान या अवस्था जिसपर जल्दी ध्यान न जाता हो। (बैकग्राउण्ड; उक्त सभी अर्थों में)

पृष्ठेमुख—पुं० [अलुक् स०] कार्तिकेय का एक अनुचर।

पृष्ठोदय—पुं० [पृष्ठ-उदय, ब० स०]] ज्योतिष में मेष, वृष, कर्क, धन, मकर और मीन ये छः राशियाँ जिनके विषय में यह माना जाता है कि ये पीठ की ओर से उदित होती हैं।

पृष्ठ्य—वि० [सं० पृष्ठ+यत्] १. पृष्ठ-संबंधी। पीठ का। २. पुस्तक आदि के पन्ने से संबंधित।

पुं० [स्त्री० पृष्ठ्या] वह घोड़ा या और कोई पशु जिसकी पीठ पर बोझ लादा जाता हो।

पृष्णि—स्त्री० [सं०=पृश्नि, पृषो० सिद्धि] १. एड़ी। २. पिछला भाग। ३. किरण।

पें—स्त्री० [अनु०] १. पें पें का शब्द, जो रोने, बाजा फूंकने आदि से निकलता है। २. लाक्षणिक रूप में अभिमान या घमंड।

पेंग—स्त्री० [हिं० पटेंग, पट=पटड़ा+वेग अथवा प्लवंग ?] हिंडोले या झूले का झूलते समय एक ओर से दूसरी ओर जाना।

मुहा०—पेंग मारना या लेना=झूले पर झूलते समय उस पर इस प्रकार जोर पहुँचाना जिसमें उसका वेग बढ़ जाय और दोनों ओर वह दूर तक झूले।

पुं० [देश०] एक प्रकार का पक्षी।

पेंगा†—स्त्री०=पेंगिया (मैना)।

पेंगिया—स्त्री० [हिं० पेग+मैना] एक प्रकार की मैना (पक्षी) जिसे सतमैया भी कहते हैं।

पेंघट—पुं०=पेंघा।

पेंघा—पुं० [देश०] एक प्रकार का पक्षी जिसका शरीर मटमैले रंग का, आँखें लाल और चोंच सफेद होती है।

पेंच—पुं०=पेच।

पेंचकश—पुं०=पेचकश।

पेंजनी—स्त्री०=पैंजनी।

पेंठ—स्त्री०=पैंठ।

पेंड़—पुं० [सं० पंडुक] एक प्रकार का सारस पक्षी जिसकी चोंच पीली होती है।

†पुं०=पेड़ (वृक्ष)।

पेंड़ना—स०=बेंड़ना।

पेंडुकी—स्त्री० [सं० पंडुक] १. पंडुक पक्षी। फाखता। २. सुनारों की फुँकनी जिससे वे आग सुलगाते हैं।

स्त्री०=पिराक (गुझिया) नाम का पकवान।

पेंडुली†—स्त्री०=पिंडली।

पेंदर†—पुं० [हिं० पेंदा या पेड़ू] पेड़ू।

पेंदा—पुं० [सं० पिंड] [स्त्री० अल्पा० पेंदी] १. किसी वस्तु का वह निचला भाग जिसके सहारे वह खड़ी, ठहरी या रखी जाती हो। तला। जैसे—लोटे का पेंदा, जहाज का पेंदा।

पद—बे पेंदी का लोटा=ऐसा व्यक्ति जिसे स्वयं कोई बात समझने और किसी निर्णय तक पहुँचने की बुद्धि न हो, बल्कि उसे जो कोई जैसी राय देता हो उसे ठीक मान लेता हो।

मुहा०—पेंदे के बल बैठना=(क) चूतड़ टेककर या पलथी मारकर बैठना। (ख) हार मानकर चुप हो जाना।

२. सबसे नीचेवाला अंश या स्तर।

पेंदी—स्त्री० [हिं० पेंदा] १. किसी वस्तु का बिलकुल निचला भाग। पेंदा। २. मलत्याग की इंद्रिय। गुदा। ३. तोप, बंदूक आदि की कोठी, जिसमें बारूद भरते थे। ४. गाजर, मूली आदि कन्दों की जड़। ५. कोई ऐसा आधार जिसके सहारे कोई चीज सीधी खड़ी रहती हो।

पधना—स०=पहनना। (पूरब)

पेंपो—स्त्री० [अनु०] १. कोमल कल्ला। कोंपल। २. दे० 'पोंपी'।

पेंशन—स्त्री०=निवृत्ति वेतन।

पेंसिल—स्त्री०=पेन्सिल।

पेंसिलिन—पुं० [अं०] आधुनिक चिकित्सा शास्त्र में, एक प्रकार का प्रबल और शक्तिशाली तत्त्व जो विषाक्त कीटाणुओं का नाशक होता है। इसका आविष्कार दूसरे युरोपीय महायुद्ध के समय हुआ था।

पेंअना*—स० १.=पेखना। =२. पीना।

पेई†—स्त्री० [?] छोटा सन्दूक।

पेउस†—पुं० [सं० पीयूष] १. ब्याई हुई गाय या भैंस का पहले कई दिनों

का दूध जो बहुत गाढ़ा और कुछ पीले रंग का होता है और जो मनुष्यों के पीने के योग्य नहीं होता। इसे तेली भी कहते हैं। २. उक्त दूध में सोंठ आदि मसाले मिलाकर बनाया जानेवाला एक प्रकार का मीठा पकवान जो पौष्टिक और स्वादिष्ट होता है।

पेउसरी†—स्त्री०=पेउस।

पेउसी†—स्त्री०=पेउस।

पेक—पुं० [फा० पेकार] १. घूम-घूमकर माल बेचनेवाला व्यापारी। फेरीवाला। २. छोटा व्यापारी। उदा०—पेक पेक तन हेरि कै गरुवे तोरत बाट।—रहीम।

पेंका—पुं० [सं० पितृ-गृह] ब्याही हुई स्त्री की दृष्टि से उसके माता-पिता का घर। मायका। पीहर।

पेखक—वि० [हिं० पेखना] देखनेवाला। दर्शक।

पेखन—पुं० [सं० प्रेक्षण] १. कतूहलपूर्वक और मनोविनोद के लिए देखी जानेवाली कोई चीज या दृश्य। उदा०—जगपेखन, तुम देखन हारे।—तुलसी। २. तमाशा।

पेखना—स० [सं० प्रेक्षण; प्रा० पेक्खण] १. कुतूहलपूर्वक और मनोविनोद के लिए कुछ समय तक देखते रहना। २. अवलोकन करना। देखना।

†पुं० १. दृश्य। २. तमाशा। उदा०—दिवस चारि कौ पेखना, अंति खेह की खेह।—कबीर।

पेखनि—स्त्री० [हिं० पेखना] १. पेखने की क्रिया या भाव। देखना। २. दे० 'पेखन'।

पेखनियाँ—वि० [हिं० पेखना] १. पेखनेवाला। २. विनोद के लिए तमाशा आदि देखनेवाला।

पेखनी—स्त्री० [सं० प्रेक्षण, हिं० पेखन] देखने योग्य बढ़िया और विलक्षण चीज या बात। उदा०—नटवरबाजी पेखनी।···कबीर।

पेग—पुं० [अं०] १. शराब और सोडावाटर के मिश्रण का पान। २. पीने के लिए शराब की एक नाप। ३. उतनी शराब जितनी एक बार पीने के लिए गिलास में उँडेली या डाली जाय। ४. खूंटी।

पेच—पुं० [फा०] १. वह स्थिति जिसमें कोई चीज किसी दिशा में सीधी रेखा में न गई हो, बल्कि जिसमें जगह-जगह कई तरह के घुमाव, चक्कर, मोड़ या लपेट हों। जैसे—तुम सीधा रास्ता छोड़ कर ऐसे रास्ते चलना चाहते हो जिसमें सौ तरह के पेच हैं। २. उक्त के आधार पर चालबाजी या चालाकी की कोई ऐसी बात जिसमें निकल भागने, पीछे हटने, मुकरने आदि के लिए और दूसरों को धोखे में रखने के लिए बहुत-कुछ अवकाश हो। घुमाव-फिराव या हेर-फेर की स्थिति।

क्रि० प्र०—डालना।

३. ऐसी स्थिति जिसमें आगे बढ़ने के लिए कोई सरल या सीधा मार्ग न हो, बल्कि जगह-जगह कठिनाइयाँ, घुमाव-फिराव, चक्कर या फेर पड़ते हों।

क्रि० प्र०—पड़ना।

४. चारों ओर लपेटी जानेवाली चीज का प्रत्येक फेरा या लपेट। जैसे—पगड़ी का पेच, पटके या कमरबंद का पेच। ५. गुड्डी या पतंग लड़ाने के समय की वह स्थिति जिसमें दो या अधिक गुड्डियों या पतंगों की डोरें या नखें चक्कर काटती या एक दूसरी को घेरती हुई आपस में उलझ या फँस जाती हैं; और एक डोर या नख की रगड़ से दूसरी डोर या नख के कट जाने की संभावना होती है।

मुहा०—पेच काटना=दूसरे की गुड्डी या पतंग की डोर में अपनी डोर फँसा कर उसकी डोर काटना। गुड्डी या पतंग काटना। **पेच लड़ाना**=दूसरे की पतंग काटने के लिए उसकी डोर या नख में अपनी डोर या नख फँसाना।

६. उक्त के आधार पर, गुड्डी या पतंग लड़ाने में हर बार की ऐसी स्थिति जिसमें एक की डोर या नख दूसरे की डोर या नख में उलझाई या फँसाई जाती हो। जैसे—आओ, एक पेच तुमसे भी हो जाय।

क्रि० प्र०—लड़ाना।

७. कुश्ती में वह विशेष शारीरिक क्रिया या युक्ति जिससे प्रतिद्वंद्वी को पछाड़ने में सहायता मिलती है। दाँव।

क्रि० प्र०—लगाना।

८. कौशल या चालाकी से भरी हुई कोई ऐसी तरकीब या युक्ति जिसका प्रतिपक्षी को सहज में पता न चले और जिससे बच निकलना उसके लिए कठिन हो।

यौ०—दाँव-पेच। (देखें)

९. एक प्रकार का चक्करदार आभूषण जो टोपी या पगड़ी में सामने की ओर खोंसा या लगाया जाता है। सिरपेच। १०. कानों में पहना जानेवाला उक्त प्रकार का एक आभूषण या गहना। गोश-पेच। ११. एक विशिष्ट प्रकार का काँटा या कील जिसके अगेवाले आधे भाग में गड़ारीदार चक्कर बने होते हैं और जो ऊपर से ठोंककर नहीं, बल्कि दाहिनी ओर घुमाते हुए जड़ी या अंदर धँसाई जाती है। (स्क्रू)

क्रि० प्र०—कसना।—खोलना—जड़ना।—निकालना।

पद—पेच-कश।

१२. यंत्र का कोई ऐसा विशिष्ट अंग या पुरजा जिसे घुमाने, चलाने, दबाने या हिलाने से वह यंत्र अथवा उसका कोई अंश चलता या रुकता हो।

क्रि० प्र०—घुमाना।—चलाना।—दबाना।

मुहा०—पेच घुमाना=ऐसी युक्ति करना जिससे किसी के कार्य या विचार की दिशा बदल जाय। तरकीब से किसी का मन फेरना या एक ओर से हटाकर दूसरी ओर लगाना। **(किसी का) पेच हाथ में होना**=किसी के विचारों को परिवर्तन करने की शक्ति होना। प्रवृत्ति आदि बदलने में समर्थ होना। जैसे—उनकी चिंता छोड़ दो, उनका पेच तो हमारे हाथ में है। (अर्थात् हम जब जिधर चाहेंगे, तब उधर उन्हें प्रवृत्त कर सकेंगे।) १३. किसी प्रकार की कल या यंत्र। (मशीन) जैसे—कपास ओटने या तेल पेरने का पेच। १४. मृदंग आदि के किसी परन या ताल के बोल में से कोई एक टुकड़ा निकाल कर उसके स्थान पर ठीक उतना ही बड़ा कोई दूसरा टुकड़ा बैठाने या लगाने की क्रिया या भाव। क्रि० प्र०—लगाना।

१५. पेट में होनेवाली पेचिश। मरोड़।

पेचक—पुं० [सं०√पच् (पकाना)+वुन्—अक, एत्व] [स्त्री० पेचिका] १. उल्लू पक्षी। २. जूँ नाम का कीड़ा। ३. बादल। मेघ। ४. खाट। चारपाई। ५. हाथी की दुम।

स्त्री० [फा०] १. कपड़े सीने के लिए बटे हुए तागे की गोली या गुच्छी।

२. ऐसी रचना जो घूमती हुई सीधी ऊपर या नीचे चली गई हो। ३. चित्र-कला में फूल-पत्तियाँ आदि का उक्त प्रकार का अंकन। डंडा-मुर्री। (स्पिरल)

पेच-कश—पुं० [फा०] १. बढ़इयों, लोहारों आदि का एक औजार जिससे वे पेच कसते, जड़ते अथवा निकालते हैं। यह आगे से चपटा और कुछ नुकीला होता है जिसके पिछले भाग में मुठिया लगी रहती है। यही मुठिया घुमाने से पेच अन्दर धँसता और बाहर निकलता है। २. लोहे का बना वह घुमावदार पेचदार उपकरण जिसकी सहायता से बोतलों का काग बाहर निकाला जाता है।

पेचकी—स्त्री० [सं० पेचक-ङीष्] उल्लू की मादा।

पेचताब—पुं० [फा०] १. ऐसा क्रोध जो विवशता आदि के कारण प्रकट या सार्थक न किया जा सके; और जो इसी लिए अंदर ही अंदर रोक-कर चुप रह जाना पड़े।

क्रि० प्र०—खाना।

२. उक्त के फल-स्वरूप मन में होनेवाली बेचैनी या विकलता।

पेचदार—वि० [फा०] १. जिसमें किसी तरह का पेच या चक्कर बना या लगा हो। पेचवाला। २. (काम या बात) जिसमें बहुत से पेच अर्थात् घुमाव-फिराव, चक्कर या झंझटें हों। पेचीला। ३. (बात) जिससे सत्यता और सरलता के बदले घुमाव-फिराव या हेर-फेर बहुत हों; और इसी लिए जिसमें से निकल भागने या जिसे उलट-पुलट कर दूसरा अर्थ निकालने और लोगों को धोखे में रखने के लिए यथेष्ट अवकाश हो।

पुं० एक प्रकार का कसीदे का काम जिसमें सीधी रेखा के इधर-उधर जगह जगह फंदे भी लगाये जाते हैं।

पेचना—स० [फा० पेच] दो चीजों के बीच में उसी प्रकार की कोई तीसरी चीज इस प्रकार बैठाना या लगाना कि साधारणतः वह ऊपर से दिखाई न पड़े। इस प्रकार लगाना कि पता न लगे।

पेचनी—स्त्री० [हिं० पेच] कसीदे में, किसी सीधी रेखा के दोनों ओर किया हुआ ऐसा काम जो देखने में बेल या श्रृंखला की तरह जान पड़े।

पेचवान—पुं० [फा०] १. वह बड़ी और लंबी सटक जो फरशी या हुक्के में लगाई जाती है। २. वह बड़ा हुक्का जिसमें उक्त प्रकार की सटक लगी हो।

विशेष—ऐसा हुक्का प्रायः कुछ दूरी पर रखकर पीया जाता है।

पेचा—पुं० [सं० पेचक] [स्त्री० पेची] उल्लू पक्षी।

पुं० [फा० पेच] उड़ती हुई पतंगों की नगों या डोरों का एक दूसरी को काटने के उद्देश्य से परस्पर उलझना। पेच।

क्रि० प्र० —लड़ना।

पेचिका—स्त्री० [सं० पेचक+टाप्, इत्व] उल्लू पक्षी की मादा।

पेचिश—स्त्री० [फा०] १. एक उदर रोग जिसमें आँतों में घाव हो जाते हैं जिससे पेट में ऐंठन होने लगती है और बार बार ऐसा पाखाना होने लगता है जिसमें सफेद रंग का लसीला गाढ़ा पदार्थ मिला रहता है। २. उक्त रोग में पेट में होनेवाली ऐंठन या मरोड़।

क्रि० प्र०—पड़ना।

पेचीदगी—स्त्री० [फा०] १. पेचीदा अर्थात् पेचीले होने की अवस्था या भाव। घुमावदार होने की अवस्था या भाव। २. बहुत ही उलझी हुई स्थिति या ऐसी स्थिति उत्पन्न करनेवाली बात। उलझन।

पेचीदा—वि० [फा० पेचीदः] पचीला। (दे०)

पेचीला—वि० [हिं० पेच+ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० पचीली] १. जिसमें बहुत से पेच हों। घुमाव-फिराववाला। २. (काम या बात) जिसमें बहुत सी उलझनें, कठिनाइयाँ या झंझटें हों। ३. (बात या विषय) जो इतना अधिक कठिन और जटिल हो कि उसे सामान्यतया न समझा जा सके।

पेचीलापन—पुं० [हिं० पेचीला+पन (प्रत्य०)] पेचीले होने की अवस्था, गुण या भाव।

पेज—स्त्री० [सं० पेय] रबड़ी। बसौंधी।

पुं० [अं०] पुस्तक, बही, मासिक पत्रिका, समाचारपत्र आदि के पृष्ठ का एक ओर का भाग। पन्ना। वरक।

*स्त्री० [हिं० पैंज] १. लाज। शरम। २. प्रतिष्ठा।

पेट—पुं० [सं० पेट=थैला] १. शरीर के मध्य भाग का वह सामनेवाला अंग जो छाती के नीचे और पेड़ू के ऊपर रहता है और जिसके भीतरी भाग में आमाशय, गुरदा, प्लीहा, यकृत आदि अंग होते हैं। २. उक्त अंग के भीतरी भाग की वह थैली जिसमें पहुँचकर खाया हुआ भोजन पचता है। आमाशय। ओझर। पचौनी।

विशेष—पेट में होनेवाले विकारों तथा उसकी आवश्यकताओं से संबंधित पद और मुहावरे इसी अर्थ के अंतर्गत आये हैं।

पद—**पेट का कुत्ता**=जो केवल भोजन के लालच से सब कुछ करता या कर सकता हो। केवल पेट के लिए सब कुछ करनेवाला। **पेट का धंधा**=(क) रसोई बनाने का काम या व्यवस्था। जैसे—स्त्रियाँ सवेरे उठते ही पेट के धंधे में लग जाती हैं। (ख) जीविका-निर्वाह के लिए किया जानेवाला उद्योग। काम-धंधा। **पेट की आग**=भूख। क्षुधा। **पेट के लिए**=इस उद्देश्य से कि पेट भरने का साधन बना रहे। उदर पूर्ति या जीविका-निर्वाह के लिए।

मुहा०—**पेट अफरना**=पेट में ऐसा विकार होना कि वह वायु से भर और फूल जाय। **पेट आना**=पतले दस्त आना। (क्व०) **पेट और पीठ एक हो जाना या पेट पीठ से लग जाना**=(क) बहुत भूख लगना। (ख) बहुत अधिक दुबला हो जाना। **(अपना) पेट काटना**=पैसे बचाने के लिए कम खाना। इसलिए कम खाना कि पैसों की कुछ बचत हो। **(किसी का) पेट काटना**=ऐसा काम करना जिससे किसी को खाने के लिए आवश्यक या उचित से कम अन्न या धन मिले। जैसे—गरीब का पेट नहीं काटना चाहिए। **पेट का पानी तक न हिलना**=कुछ भी कष्ट या परिश्रम न पड़ना। जरा भी तकलीफ या मेहनत न होना। **पेट का पानी न पचना**=किसी काम या बात के लिए इतनी उत्सुकता और विकलता होना कि उसके बिना रहा न जा सके। **पेट की आग बुझाना**=पेट में भोजन पहुँचाना। खाकर भूख मिटाना। **(किसी को) पेट की मार देना (या मारना)**=(क) भूखा रखना। भोजन न देना। (ख) जीविका उपार्जन में बाधक होना। **पेट को धोखा देना**=दे० ऊपर '(अपना) पेट काटना'। **पेट खलाना**=(क) अपने भूखे होने का संकेत करना। यह इशारा करना कि हमें बहुत भूख लगी है। (ख) बहुत अधिक दीनता या नम्रता प्रकट करना। **पेट को लगना**=बहुत

अधिक भूख लगना। पेट गड़ना=अपच के कारण पेट में दर्द होना। **पेट गुड़गुड़ाना**=पेट में अपच, वायु-विकार आदि के कारण गुड़-गुड़ का-सा शब्द होना। **पेट चलना**=(क) ऐसी व्यवस्था होना कि जीविका चलती रहे या उसका साधन बना रहे। जैसे—सौ रुपये महीने में सारी गृहस्थी का किसी तरह पेट चलता है (ख) रह-रहकर पतले दस्त होना। **पेट छँटना**=(क) पेट का मल या विकार निकल जाना जिससे वह हलका हो जाय। (ख) पेट की मोटाई कम होना **पेट छूटना**=पतले दस्त आना। **पेट जलना**=(क) बहुत भूख लगना। (ख) मन ही मन बहुत अधिक क्रोध होना। रोष होना। **पेट जारी होना**=पतले दस्त आना। (अपना) **पेट दिखाना**=अपने भूखे होने का संकेत करना। यह इशारा करना कि मुझे भूख लगी है। **पेट पकड़े फिरना**=बहुत अधिक कष्ट, विकलता आदि के चिह्न प्रकट करते हुए जगह-जगह घूमना या जाना। **पेट पाटना**=जो कुछ मिल जाय, उसी से पेट भर लेना। भूख के मारे खाद्य या अखाद्य का विचार छोड़कर खा लेना। **पेट पानी होना**=बार-बार बहुत अधिक पतले दस्त आना। **पेट पालना**=कठिनता से खाने भर को कमा लेना। किसी तरह या जैसे-तैसे जीविका-निर्वाह करना। **पेट फूलना**=पेट अफरना। (देखें ऊपर) (**कुछ करने, कहने या जानने के लिए**) **पेट फूलना**=बहुत अधिक उत्सुकता या विकलता होना। जैसे—तुम्हारा सारा हाल सुनने के लिए इन लोगों का पेट फूल रहा है। (**हँसते हँसते**) **पेट फूलना**=बहुत अधिक हँसने के फलस्वरूप पेट में बहुत अधिक वायु भर जाना और अधिक हँसने के योग्य न रह जाना। **पेट भरना**=(क) जो कुछ मिले, उसे खाकर भूख मिटाना। (ख) खूब अच्छी तरह और यथेष्ट भोजन करना। (ग) इच्छा, कामना आदि पूर्ण करना या होना। जी भरना। **पेट मार कर मर जाना**=आत्म-घात कर लेना (पेट में छूरा मारकर मर जाने के आधार पर)। **पेट मारना**=पेट काटना (दे० ऊपर)। **पेट में आँत और मुख में दाँत न होना**=इतना अधिक वृद्ध होना की पाचन शक्ति बिलकुल न रह गई हो और सब दाँत झड़ या टूट गये हों। **पेट में चूहा कूदना या दौड़ना**=बहुत अधिक भूख लगना। **पेट में चूँटे की गाँठ होना**=बहुत ही थोड़ा भोजनकर सकने के योग्य होना। बहुत ही अल्पाहारी होना। **पेट में डालना**=जो कुछ मिले, वही खाकर भूख मिटाना। किसी तरह पेट भरना। **पेट में दाढ़ी होना**=थोड़ी अवस्था में ही वयस्कों की तरह बहुत अधिक चालाक या होशियार होना। **पेट में पाँव होना**=अत्यंत छली या कपटी होना। बहुत चालू होना या धोखेबाज होना। (**हँसते हँसते**) **पेट में बल पड़ना**=इतनी हँसी आना कि पेट में दर्द-सा होने लगे। **पेट मोटा होना या हो जाना**=ऐसी स्थिति होना कि थोड़े या सहज में तृप्ति या संतोष न हो सके। जैसे—जिन रोजगारियों का पेट मोटा हो जाता है, वे कम मुनाफे पर माल नहीं बेचते। **पेट लगना या लग जाना**=भूख से पेट अंदर धँस जाना। **पेट से पाँव निकालना**=(क) किसी अच्छे आदमी का बुरा काम करने लग जाना। कुमार्ग में लगना। (ख) योग्यता, सामर्थ्य आदि से बहुत बढ़कर कोई काम करने के लिए प्रवृत्त होना।

३. स्त्री का गर्भाशय; अथवा उसमें स्थित होनेवाला गर्भ। हमल। **पद—पेट चोट्टी**=वह स्त्री जिसके गर्भ तो हो, परंतु ऊपर से उसका कोई लक्षण जल्दी दिखाई न देता हो। गर्भवती होने पर भी जिसके गर्भ के बाहरी लक्षण दिखाई न पड़ें। **पेट-पोंछना**=किसी स्त्री की वह संतान जिसके उपरांत और कोई संतान न हुई हो। अंतिम संतान। **पेट-वाली**=गर्भवती स्त्री।

मुहा०—पेट गदराना=गर्भवती होने के कारण पेट का चिकना होकर कुछ उभरना या भारी जान पड़ना। **पेट गिरना**=गर्भाशय में ठहरा हुआ गर्भ निकल जाना। गर्भपात होना। **पेट गिरवाना**=गर्भपात कराना। **पेट गिराना**=गर्भवती होने की दशा में जान-बूझकर ऐसा उपाय, प्रयोग या युक्ति करना कि गर्भपात हो जाय। **पेट छँटना**=संतान का प्रसव होने के उपरांत पेट के अंदर का सारा बचा-खुचा विकार निकल जाने पर पेट का साफ और हलका हो जाना। **पेट ठंढा रहना**=संतान का जीवित रहना और फलतः माता का सुखी रहना। (**स्त्री का**) **पेट फुलाना या फुला देना**=किसी स्त्री को गर्भवती कर देना। **पेट फूलना**=गर्भवती होना। **पेट रखाना**=पुरुष के साथ संभोग कर के गर्भाशय में गर्भ स्थित कराना। जैसे—न जाने कहाँ से पेट रखाकर आई है। **पेट रहना**=गर्भवती होना। **पेट में होना**=गर्भवती होना। **पेट होना**=गर्भवती होना।

४. लाक्षणिक रूप में, अंतःकरण या मन जिसमें अनेक प्रकार की प्रवृत्तियाँ, वासनाएँ और विचार उठते या रहते हैं।

पद—पेट का गहरा=(व्यक्ति) जो अपने मन की बात किसी पर प्रकट न होने दे। **पेट का हलका**=(क) जो कोई भेद की बात सुनकर उसे छिपा न रख सकता हो। ओछे या क्षुद्र स्वभाववाला। **पेट की बात**=मन में छिपाकर रखा हुआ गूढ़ उद्देश्य या और कोई बात। **पेट में**=मन या हृदय में। जैसे—तुम्हारे पेट में जो कुछ हो, वह भी कह डालो।

मुहा०—(किसी को अपना) पेट देना=अपना गूढ़ भेद या विचार किसी का बतलाना। उदा०—अपनौ पेट दियौ तैं उनकौं नाकबुद्धि तिय सबै कहैरी।—सूर। **पेट में खलबली पड़ना, मचना या होना**=कुछ करने, कहने या जानने-सुनने के लिए मन में बहुत अधिक उत्सुकता और विकलता होना। छटपटी पड़ना। (**किसी के**) **पेट में घुसना**=किसी का भेद लेने के लिए उससे मेल-जोल बढ़ाना। **पेट में चूहे कूदना या दौड़ना**=कोई काम करने या बात जानने के लिए बहुत अधिक उत्सुकता छटपटी या विकलता होना। (**कोई बात**) **पेट में डालना**=देखी या सुनी हुई बात अपने मन में छिपाकर रखना। किसी पर प्रकट न होने देना। (**किसी के**) **पेट में पैठना या बैठना**=दे० ऊपर (किसी के) पेट में घुसना।

५. लाक्षणिक रूप में कोई चीज अधिकार या भोग में होने की अवस्था। **मुहा०—(कोई चीज किसी के) पेट में होना**=किसी के अधिकार या भोग में होना। जैसे—सारा माल उसी के पेट में है। (**कोई चीज किसी के**) **पेट से निकालना**=जो चीज किसी ने उड़ा, छिपा या दबाकर रख छोड़ी हो, वह किसी प्रकार उससे प्राप्त करना या उसके अधिकार से निकलवाना या निकालना। जैसे—इतने दिनों बाद भी तुमने यह कलम (या पुस्तक) उसके पेट से निकालकर ही छोड़ी।

६. किसी खुली या पोली चीज के बीच का भीतरी खाली या खोखला भाग। किसी पदार्थ के अंदर का वह स्थान जिसमें कोई चीज भरी जा सके या भरी जाती हो। जैसे—बोतल या लोटे का पेट, बगीचे या

मकान का पेट। ७. बंदूक या तोप में का वह स्थान जहाँ गोली या गोला भरा या रखा जाता है। ८. चक्की के दोनों पाटों के बीच का वह स्थान जिसमें पहुँचकर कोई चीज पिसती है। ९. सिल आदि का वह भाग जो कूटा हुआ और खुरदरा रहता है और जिस पर रखकर कोई चीज पीसी जाती है। १०. किसी प्रकार का ऐसा अवकाश जिसमें कोई चीज आ ठहर या रह सके। गुंजाइश। समाई। जैसे—जिस काम का जितना पेट होगा, उसमें उतना ही खरच पड़ेगा।

पेटक—पुं० [सं०√पिट् (इकट्ठा होना)+ण्वुल्—अक] [स्त्री० अल्पा० पेटिका] १. पिटारा। मंजूषा। २. संदूक। ३. ढेर। राशि। समूह।

पेटकैयाँ—क्रि० वि० [हिं० पेट+कैया (प्रत्य०)] पेट के बल। जैसे—पेटकैयाँ चलना या लेटना।

पेट पूजा—स्त्री० [हिं०] भोजन करना। खाना। (परिहास और व्यंग्य)

पेट-पोसुआ—वि० [हिं० पेट+पोसना] १. (केवल) अपने उदर की पूर्ति करने और चाहनेवाला। २. स्वार्थी। ३. पेटू।

पेटरिया†—स्त्री०=पिटारी।

पेटल—वि० [हिं० पेट+ल (प्रत्य०)] बहुत बड़े पेटवाला। तोंदल।

पेटा—पुं० [हिं० पेट] १. किसी पदार्थ में पेट के स्थान पर पड़नेवाला अर्थात् मध्य भाग। बीच का हिस्सा। २. किसी चीज का मध्य भाग, विशेषतः ऐसा मध्य भाग जो खाली हो तथा भरा जाने को हो। ३. किसी मद या शीर्षक के अंतर्गत होनेवाला अंश या भाग। ४. उक्त अंश में लिखा जानेवाला या लिखा हुआ विवरण। ५. उक्त के आधार पर किसी प्रकार का विस्तृत विवरण। ब्योरेवार बातें।

मुहा०—पेटा भरना=विवरण आदि लिखा जाना।

६. घेरा। वृत्त। ७. फैलाव। विस्तार। ८. विस्तार की अंतिम सीमा। हद। ९. वह गड्ढा जिसमें से होकर नदी और नाला बहता है। १०. नदी या नाले के ऊपरी तल की चौड़ाई या विस्तार। पाट। ११. पशुओं की आँतें जो उनके पेट के अंतिम सिरे पर रहती हैं। १२. बड़ा टोकरा। दौरा। १३. उड़ती हुई पतंग की डोर का वह भाग जिसमें झोल पड़ा रहता है।

मुहा०—पेटा छोड़ना=उड़ती हुई गुड्डी की डोर का बीच में से लटक या झूल जाना। पेटा तोड़ना=अपनी डोर या नख से दूसरे की गुड्डी या पतंग का उक्त अंश काट देना।

पेटागि—स्त्री० [हिं० पट+आग] १. खाली पेट होने पर लगनेवाली भूख। २. उदर पूर्ति की चिंता।

पेटारा—पुं० [स्त्री० अल्पा० पेटारी] पिटारा।

पेटार्थी, पेटार्यू—वि० दे० 'पेटू'।

पेटिका—स्त्री० [सं०√पिट् (इकट्ठा होना)+ण्वुल्—अक, टाप्, +इत्व] १. पिटारी नाम का वृक्ष। २. छोटी पेटी। ३. छोटी पिटारी।

पेटिया—पुं० [हिं० पेट] भोजन आदि के लिए मिलनेवाला दैनिक भत्ता।

पेटिया जड़—स्त्री० [हिं० पेट] वनस्पति विज्ञान में ऐसी मूसला जड़ जो खूब फूली हुई और मोटी हो। गाजर, मूली, शलजम आदि कंद इसी के अंतर्गत हैं।

पेटी—स्त्री० [हिं० पेट] १. मनुष्य के शरीर में, छाती और पेड़ू के बीच का वह स्थान जो प्रायः कुछ उभरकर आगे निकल आता है और जिसमें त्रिवली नाम के दो या तीन बल पड़ते हैं। [illegible]

मुहा०—पेटी निकलना या पड़ना=पेट का उक्त भाग फूलकर आगे की ओर निकलना। (किसी से) पेटी लड़ाना=मैथुन या संभोग करना।

२. अन्न के दानों का भीतरी भाग जिसके पुष्ट होने से वे अधिक समय तक बिना घुने रह सकते हैं। जैसे—कच्ची (या पक्की) पेटी का गेहूँ। ३. कमर में लपेट कर बाँधने का तस्मा। कमरबंद। ४. उक्त प्रकार का वह तस्मा जिसमें चपरास भी लगी रहती है।

मुहा०—पेटी उतरना=सिपाही का मुअत्तल या बरखास्त किया जाना।

५. उक्त प्रकार का वह तस्मा या पेट्टी जो बुलबुल आदि पक्षियों की कमर में इसलिए बाँधी जाती है कि उसमें लगे हुए डोरे के आधार पर वे अड्डे या हाथ पर बैठाये जा सकें। (बेल्ट, अंतिम तीनों अर्थों में)

क्रि० प्र०—बाँधना।

स्त्री० [सं० पेटिका] १. छोटा संदूक। संदूकची। जैसे—रोकड़ रखने या माल बाहर भेजने की पेटी। २. छोटी डिबिया। जैसे—दियासलाई की पेटी, सिगरेट की पेटी। ३. उक्त प्रकार का वह आधान जिसमें हज्जाम अपना उस्तरा कैंची, नहरनी आदि रखते हैं। किसबत।

पेटीकोट—पुं० [अं०] छोटे घेरेवाला एक तरह का घाघरा जिसे आज-कल स्त्रियाँ धोती या साड़ी के नीचे पहनती हैं।

पेटू—वि० [हिं० पेट] १. जो बहुत अधिक खाता हो। २. जो सदा उदर-पूर्ति की ताक में लगा रहता हो। भुक्खड़।

पेटेंट—वि० [अं०] जो आविष्कृत तथा किसी विशिष्ट नाम से प्रसिद्ध हो और जिसे उक्त विशिष्ट नाम से बनाने तथा बेचने का एकाधिकार सरकार से किसी को प्राप्त हो। जैसे—पेटेंट दवाएँ।

पेट्रोल—पुं० [अं०] काले रंग का एक प्रसिद्ध ज्वलनशील खनिज तेल जिसके ताप से मोटरों के इंजन आदि चलते हैं और जिससे कई प्रकार की उपयोगी चीजें निकलती या बनती हैं।

पुं० [अं० पैट्रोल] १. सैनिक रक्षा के लिए घूम-घूम कर पहरा देना। २. पहरा देनेवाला सैनिक।

पेठ†—स्त्री०=पैंठ।

पेठा—पुं० [देश०] १. कुम्हड़े के आकार-प्रकार का एक तरह का फल जिसका मुरब्बा डाला तथा मिठाई बनाई जाती है। सफेद कुम्हड़ा। २. उक्त की बनी हुई मिठाई या मुरब्बा।

पेड़—पुं० [प्रा० पेण्ठ=पिंड] १. वृक्ष। दरख्त।

पुं० [सं० पिंड] आदि या मूल कारण।

पेड़ना†—स०=पेरना।

पेडल—पुं० [अं०] साइकिल, रिक्शे आदि का वह अंग जिस पर पैर रखा जाता है और जिसके चलाये जाने पर साइकिल या रिक्शा आगे बढ़ता है।

पेड़ा—पुं० [सं० पिंड] १. खोए और चीनी या खाँड़ से बनी हुई एक प्रसिद्ध गोलाकार चिपटी टिकिया के आकार की मिठाई। २. उक्त आकार या रूप में लाई हुई (गुँध हुए) आटे की लोई जिसे बेल कर पूरी रोटी आदि का रूप दिया जाता है।

स्त्री० [सं०] बड़ा टोकरा या पिटारा।

पेड़ारा—पुं० [सं० पिंड] एक प्रकार का वृक्ष।

पेड़ी—स्त्री० [हिं० पेड़] १. छोटा पेड़ या पौधा। जैसे—नील की पेड़ी। २. पान का पुराना पौधा। ३. उक्त पौधे का पान। ४. मनुष्य का

घड़। ५. प्रति पेड़ के हिसाब से लगनेवाला कर। ६. ऐसा खेत जिसमें ऊख की फसल कट चुकी हो और जिसे जोतकर गेहूँ आदि बोने के योग्य बनाया गया हो।

पेड़ू—पुं० [हिं० पेट] १. मनुष्य के शरीर में मूत्रेंद्रिय से ऊपर तथा नाभि से कुछ नीचे का स्थान। पेट के नीचे का अगला अंश या भाग। उपस्थ। २. गर्भाशय।

पद—पेड़ू की आँच=(क) स्त्री के मन में होनेवाली काम-वासना। (ख) केवल कामुकता के कारण किसी पुरुष के साथ होनेवाली आसक्ति।

पेदड़ी†—स्त्री०=पिद्दी।

पेदर—पुं० [देश०] आंध्र, बंगाल आदि प्रदेशों में होनेवाला एक प्रकार का बहुत बड़ा जंगली पेड़ जिसकी लकड़ी का रंग सफेद होता है और जो इमारत के काम आती है।

पेन—पुं० [देश०] लसोड़े की जाति का एक वृक्ष जो गढ़वाल में होता है। इसकी लकड़ी मजबूत होती है। इसे 'कूम' भी कहते हैं।

पुं० [अं०] अंगरेजी ढंग की कलम जिसमें धातु की निब लगी रहती है।

पेनी—स्त्री० [अं०] इंग्लैंड में प्रचलित एक सिक्का, जिसका मूल्य शिलिंग के बारहवें भाग के बराबर होता है।

पेन्शन—स्त्री० [अं०] अनुवृत्ति। (दे०)

पेन्सिल—स्त्री० [अं०] लकड़ी का बना हुआ एक प्रकार का लंबोतरा और पतला लिखने का प्रसिद्ध उपकरण जिसमें मसाले की बत्ती भरी होती है और जिससे कागज आदि पर लिखते हैं।

पेन्हाना—अ० [सं० पयः स्रवन; प्रा० पह्णवन] दुहे जाने के समय भैंस आदि के थन में दूध उतरना।

†स०=पहनाना।

पेपर—पुं० [अं०] १. कागज। २. समाचार-पत्र। अखबार। ३. तमस्सुक, दस्तावेज आदि विधिक पत्र। लेख्य। ४. किसी तरह या विषय के कागज-पत्र। ५. प्रश्न-पत्र।

पेपरमिन्ट—पुं० =पिपरमिंट।

पेम*पुं०=प्रेम।

पेमचा—पुं० [देश०] एक प्रकार का रेशमी कपड़ा।

पेमेंट—पुं० [अं०] देन का चुकाया जाना। भुगतान। (दे०)

पेय—वि० [सं०√पा (पीना)+यत्] जो पीया जा सके। पीये जाने के योग्य।

पुं० १. कोई ऐसा स्वादिष्ट तरल पदार्थ जो पीने के काम में आता हो। पीये जाने के योग्य तरल पदार्थ। (ड्रिंक) जैसे—दूध, शरबत, शराब आदि। २. जल। पानी। ३. दूध।

पेया—स्त्री० [सं०] १. वैद्यक में चावलों की बनी हुई एक प्रकार की लपसी जो रोगियों को पथ्य के रूप में दी जाती थी। २. चावल की माँड़। पीच। ३. अदरक। आदी। ४. सोआ नामक साग। ५. सौंफ। ६. कोई पेय पदार्थ। जैसे—दूध, मद्य, शरबत आदि।

पेयूष—पुं० [सं०√पीय् (तृप्त करना)+ऊषन्] १. वह दूध जो गौ के बच्चा देने के सात दिन बाद तक निकलता है। उसका स्वाद अच्छा नहीं होता और पीने पर विकार उत्पन्न करता है। पेउस। २. ताजा घी या मक्खन। ३. अमृत। सुधा।

पेरना—स० [सं० पीड़न] १. वनस्पति, बीजों आदि में से उनका तरल अंश (जैसे—तेल, रस आदि) निकालने के लिए उन्हें कोल्हू आदि में डालकर दबाना। दो भारी तथा कड़ी वस्तुओं के बीच में डालकर किसी तीसरी वस्तु से दबाना। २. लाक्षणिक अर्थ में, किसी को बहुत अधिक कष्ट देना। ३. किसी काम में बहुत अधिक देर लगाना।

स० [सं० प्रेरण] १. प्रेरित करना। २. भेजना।

स० [सं० परिधान] पहनना। (राज०)

पेरली—स्त्री० [?] तांडव नृत्य का एक भेद जिसमें अंगों का विक्षेपण विशेष रूप से होता है।

पेरवा, पेरवाह†—पुं० [हिं० पेरना] वनस्पतियों, बीजों आदि को पेरकर उनमें से तरल पदार्थ निकालनेवाला व्यक्ति।

पेरा—पुं० [हिं० पीला] एक प्रकार की कुछ पीली मिट्टी जिससे दीवार, घर इत्यादि पोतने का काम लिया जाता है। पोतनी मिट्टी।

†पुं०=पेड़ा।

पेराई—स्त्री० [हिं० पेरना] पेरने की क्रिया, भाव और मजदूरी।

पेरी—स्त्री० [हिं० पीली] पीले रंग में रंगी हुई धोती जो शुभ अवसरों पर पहनी तथा देवियों या नदियों को चढ़ाई जाती है। पियरी।

पेरु—पुं० [सं०√पुर् (आगे जाना)+ऊ, नि० एत्व] १. सागर। समुद्र। २. सूर्य। ३. अग्नि। आग।

वि० १. रक्षा करनेवाला। रक्षक। २. पूर्ण या पूरा करनेवाला।

पेरोल—पुं० [अं०] कारावास में रखे गये दंडित अपराधी को कुछ नियत अवधि के लिए खुला छोड़ना।

पेलक—पुं० [सं०√पेल् (काँपना)+अच्,+क] अंडकोष।

पेलड़—पुं० [सं० पेलक] अंडकोश।

पेलना—स० [सं० पीड़न] १. दबा या ढकेलकर किसी को कहीं घुसाना या धँसाना। २. धक्का देना। ढकेलना। ३. आज्ञा, विधि आदि का उल्लंघन करना। ४. त्यागना। हटाना। फेंकना। ५. दूर करना। हटाना। ६. बल-प्रयोग करना। गुदा-मंजन करना। अप्राकृतिक संभोग करना। (बाजारू) ८. दे० 'पेरना'।

स० [सं० प्रोण] किसी पर आक्रमण करने के लिए हाथी, घोड़ा आदि उसके आगे या सामने छोड़ना।

पेलव—वि० [सं०√पेल्+घञ्, पेल√वा (गति)+क] १. कोमल। २. दुबला-पतला। कृश। क्षीण। ३. छितरा हुआ। विरल।

पेलवाना—स० [हिं० पेलना का प्रेरणार्थक रूप] पेलने का काम दूसरे से कराना।

पेला—पुं० [हिं० पेलना] १. एक दूसरे पर पिल पड़ने की क्रिया या भाव। २. हाथा-बाँही या उसके साथ होनेवाली मार-पीट। ३. झगड़ा। तकरार। ४. आक्रमण। चढ़ाई। ५. अपराध। कसूर।

पेलास—पुं० [अं०] मंगल और बृहस्पति के बीच का एक क्षुद्र ग्रह जो सूर्य से २५.७ करोड़ मील दूर है।

पेलू—वि० [हिं० पेलना+ऊ (प्रत्य०)] १. पेलनेवाला। जो पेलता हो। २. जबरदस्त। बलवान्।

पुं० १. वह जो किसी लड़के के साथ अप्राकृतिक मैथुन करता हो। गुदा-भंजन करनेवाला। २. स्त्री का उपपति। जार।

पेल्हड़—पुं० =पेलड़।

पेवँ†—पुं०=प्रेम।

पेवकड़ा†—पुं०=पेका (मायका)। उदा०—पेवकड़े दिन चारि है साहु-रेड़ जाणा।—कबीर।

पेवक्कड़†—वि०=पियक्कड़ (बहुत अधिक पीनेवाला)।

पेवड़ी—स्त्री० [सं० पीत] १. पीले रंग की बुकनी। २. रामरज नाम की पीली मिट्टी।

पेवर—पुं० [सं० पीत] पीला रंग।

पेवस—पुं० [सं० पेयूष] एकाध सप्ताह की ब्याई हुई गाय या भैंस का दूध जो कुछ पीलापन लिये गाढ़ा होता है और पीने योग्य नहीं माना जाता। पेउस।

पेवसी—स्त्री०=पेवस।

पेश—अव्य० [फा०] (किसी की) उपस्थिति में। समक्ष। सामने।

मुहा०—**(किसी से) पेश आना**=बरताव करना। व्यवहार करना। **पेश करना**=(क) उपस्थित करना। (ख) भेंट करना। **पेश जाना या चलना**=वश चलना।

पुं० दे० 'पेश कश'।

पुं० [सं० पेशस्] कसीदे का काम।

पेश-कब्ज—पुं० [फा० पेश+कब्ज] छोटी कटार।

पेश-कश—पुं० [फा०] १. आदरपूर्वक उपस्थित किया जानेवाला उपहार। नजर। भेंट। २. तोहफा। सौगात। ३. प्रार्थना। ४. प्रस्ताव। तजवीज।

पेशकार—पुं० [फा०] [भाव० पेशकारी] १. वह जो किसी के सम्मुख कोई चीज पेश या उपस्थित करता हो। २. न्यायालय में वह कर्मचारी जो न्यायाधीश के सम्मुख मुकदमों के कागज-पत्र पेश करता है।

पुं० [सं० पेशस्+कार (प्रत्य०)] वह जो कसीदा काढ़ने का काम करता हो।

पेशकारी—स्त्री० [फा०] पेशकार का काम, पद या भाव।

पेश-खेमा—पुं० [फा० पेश खेमः] १. वह खेमा जो अधिकारी, सेना आदि के अगले पड़ाव पर पहुँचने से पहले इस दृष्टि से लगा दिया जाता है कि आने पर उसे किसी प्रकार का कष्ट न हो। २. किसी पड़ाव में ठहरी हुई सेना का सबसे आगेवाला खेमा। ३. पहले से किया जानेवाला प्रबंध या बनायी जानेवाली योजना।

पेशगी—स्त्री० [फा० पेश्गी] मूल्य, पारिश्रमिक आदि का वह अंश जो किसी से कोई चीज खरीदने से पहले अथवा कोई काम करने से पहले ही उसे दे दिया जाता है (शेष मूल्य या पारिश्रमिक चीज लेते समय या काम करने के उपरांत दिया जाता है)। अग्रिम धन। अगाऊ। (एडवान्स)

पेशतर—अव्य० [फा०] किसी की तुलना में पूर्वकाल में। पहले। जैसे—वहाँ जाने से पेशतर यहाँ का काम खत्म कर लो।

पेशताक—स्त्री० [फा० पेशताक़] एक प्रकार की मेहराब जो सुन्दरता के लिए बड़ी इमारतों में दरवाजे के ऊपर तथा कुछ आगे बढ़ाकर बनाई जाती है।

पेशदस्त—वि० [फा०] [भाव० पेशदस्ती] १. पेश करनेवाला। २. छेड़खानी करनेवाला।

पेशबंद—पुं० [फा०] चारजामे में लगा हुआ वह दोहरा बन्द जो घोड़े की गर्दन पर से लाकर दूसरी ओर बाँध दिया जाता है। इससे वह दुम की ओर नहीं खिसक सकता।

पेशबंदी—स्त्री० [फा०] १. आक्रमण, रक्षा आदि के लिए पहले से किया हुआ प्रबंध, युक्ति या व्यवस्था। २. षड्यंत्र। साजिश।

पेशबीन—वि० [फा० पेशबीं] अग्रशोची। दूरदर्शी।

पेशबीनी—स्त्री० [फा०] आगे की बात पहले से सोचना। दूरदर्शिता।

पेशराज—पुं० [फा० पेश+हिं० राज] मकान बनानेवाला वह मजदूर जो राज या मेमार के लिए पत्थर ढो ढोकर लाता हो। पत्थर ढोनेवाला मजदूर।

पेशल—वि० [सं०√पिश् (अवयव बनाना)+अलच्] १. मनोमुग्धकारी। मनोहर। सुन्दर। २. कुशल। प्रवीण। ३. चालाक। धूर्त। ४. कोमल। मुलायम।

पुं० विष्णु।

पेशलता—स्त्री० [सं० पेशल+तल्+टाप्] पेशल होने की अवस्था या भाव।

पेशवा—पुं० [फा०] १. वह जो किसी दल के आगे चलता हो; अर्थात् नेता। सरदार। २. मध्ययुग में दक्षिण भारत के महाराष्ट्र साम्राज्य के प्रधान मंत्रियों की उपाधि।

पेशवाई—स्त्री० [फा०] १. पेशवा होने की अवस्था या भाव। नेतृत्व। २. महाराष्ट्र सामाज्य में पेशवाओं की शासनप्रणाली या शासन-काल। ३. अतिथि का आगे बढ़कर किया जानेवाला स्वागत।

पेशवाज—स्त्री० [फा० पिश्वाज़] बहुत बड़े घेरेवाला वह घाघरा या लहँगा जो नर्तकियाँ नाचने के समय पहनती हैं।

पेशा—पुं० [फा० पेशः] १. वह कार्य, सेवा या व्यवसाय जो जीविका-उपार्जन का साधन हो। व्यवसाय। (प्रोफेशन) २. वेश्यावृत्ति।

मुहा०—**पेशा कमाना**=स्त्री का व्यभिचार के द्वारा धन कमाना।

३. समस्त पदों के अन्त में, वह जिसका पेशा अमुक (पूर्वपद में उल्लिखित) हो। जैसे—नौकरी-पेशा।

पेशानी—स्त्री० [फा०] १. ललाट। भाल। मस्तक। माथा। २. प्रारब्ध। भाग्य। (क्व०) ३. किसी पदार्थ का अगला और ऊपरी भाग।

पेशाब—पुं० [फा०] १. मूत। मूत्र।

मुहा०—**(किसी चीज पर) पेशाब करना**=बहुत ही तुच्छ या हेय समझना। **(धन) पेशाब के रास्ते बहाना**=लैंगिक भोग-विलास में धन नष्ट करना। बहुत अधिक भयभीत होने के लक्षण प्रकट करना। **(किसी को देखकर) पेशाब बन्द होना**=अत्यन्त भयभीत हो जाना। **(किसी के) पेशाब से चिराग जलना**=किसी का अत्यन्त प्रभावशाली और वैभवशाली होना।

२. पुरुष की धातु। वीर्य। ३. औलाद। संतान।

पेशाब-खाना—पुं० [फा०] पेशाब करने के लिए बनाया हुआ स्थान।

पेशावर—वि० [फा० पेशःवर] १. जो कोई पेशा करता हो। २. (व्यक्ति) जिसने किसी परोपकार या लोक-रंजन के काम को ही पेशा बना लिया हो। जैसे—पेशावर शायर। ३. (स्त्री) जो व्यभिचार के द्वारा जीविका उपार्जन करे।

पुं० [सं० पुरुषपुर] अखंड भारत की उत्तर पश्चिमी सीमा का एक प्रसिद्ध नगर जो अब पाकिस्तान में चला गया है।

पेशि—स्त्री० [सं०√पिश्+इन्]=पेशी। (देखें)

पेशि-कोष—पुं० [सं० ष० त०] अंडा।

पेशिका—स्त्री० [सं० पेशि+कन्,+टाप्] अंडा।

पेशी—स्त्री० [सं०] १. मांस का टुकड़ा। मांस-खंड। २. शरीर के अन्दर मांस के रेशों की वह गुलथी या समूह जिससे भिन्न भिन्न अंगों को मोड़ने, सिकोड़ने आदि में सहायता मिलती है। (मसल्) ३. गर्भाशय में स्थिति होनेवाले गर्भ का आरंभिक रूप। ४. अंडा। ५. तलवार की म्यान। ६. फूल की कली। ७. जटामासी। ८. जूता। ९. एक प्राचीन नदी। १०. इंद्र का वज्र। ११. पुरानी चाल का एक प्रकार का ढोल।

स्त्री० [फा०] १. पेश होने की अवस्था या भाव। २. मुकदमे की तारीख के दिन न्यायालय में वादी और प्रतिवादी का न्यायाधीश के सन्मुख उपस्थित होना। ३. मुख्तार, वकील आदि को उसकी पेशी के दिन की सेवाओं के बदले में दिया जानेवाला धन।

पेशीन-गो—पुं० [फा० पेशींगो] [भाव० पेशीनगोई] भविष्यद्-वक्ता।

पेशीन-गोई—स्त्री० [फा०] भविष्य कथन। भविष्यवाणी।

पेशेवर—वि०=पेशावर।

पेश्तर—अव्य०=पेशतर।

पेषक—वि० [सं०√पिष् (पीसना)+ण्वुल्—अक] पीसनेवाला।

पेषण—पुं० [सं०√पिष्+ल्युट्—अन] १. पीसने की क्रिया या भाव। पीसना। २. विशेषतः ठोस चीज को पीसकर चूर्ण के रूप में लाना। (पल्वशइज़ेशन) ३. थूहड़। तिघारा।

पद—पिष्ट-पेषण। (दे०)

पेषणी—स्त्री० [सं० पेषण+ङीप्] वह सिल जिस पर कोई चीज पीसी जाय।

पेषना†—स०=पेखना।

पुं०=पेखन।

पेषि—स्त्री० [सं०√पिष्+इन्] वज्र।

पेषी—स्त्री० [सं० पेषि+ङीष्] पिशाचिनी।

पेस—अव्य०, पुं०=पेश।

पेसना—स० [सं० पेषण] कोई छोटी चीज किसी बड़ी चीज के अन्दर घँसाना या घुमाना।

*अ० प्रवेश करना। घुसना।

पेसल—वि० [सं० पेशल] कोमल। उदा०—पिय रस पेसल प्रथम समाजे।—विद्यापति।

पेहँटा—पुं० [देश०] कचरी नाम की लता का फल जो कुँदरू के आकार का होता है और जिसकी तरकारी बनती है।

पेहर—पुं० [?] १. वह स्थान जहाँ हरी घास उगी हो। चरागाह। २. एक प्रकार का गीत जो किसान बैल चराते समय गाते हैं।

पैंकड़ा—पुं० [हिं० पायँ=कड़ा] १. पैर का कड़ा। २. बेड़ी।

पुं० [?] ऊँट की नकेल।

पैंग—स्त्री०=पेंग।

पैंगि—पुं० [सं० पैंग+इञ्] यास्क का एक नाम।

पैंच—स्त्री० [सं० प्रतंची] धनुष की डोरी।

स्त्री० [सं० युद्ध] मोर की दुम।

†पुं०=पंच।

पैंचना—स० [देश०] १. अनाज फटकना। पछोरना। २. पलटना। फेरना।

पैंचा—पुं० [देश०] १. अदला-बदली। हेर-फेर। २. बहुत थोड़े समय के लिए उधार या मँगनी लेने की क्रिया या भाव। मंगनी। ३. उक्त प्रकार से माँगकर ली हुई चीज।

वि० उधार या मँगनी लिया हुआ।

पैंजना—पुं० [हिं० पाँय+अनु० झन, झन] [स्त्री० अल्पा० पैंजनी] पैर का एक प्रकार का आभूषण जो कड़े के आकार का पर उससे मोटा और खोखला होता है। इसके अन्दर कंकड़ियाँ रहती हैं जिससे चलने में यह बजता है।

पैंजनियाँ—स्त्री०=पैंजनी।

पैंजनी—स्त्री० [हिं० पाँय+अनु० झन, झन] १. छोटा पैंजना। २. सग्गड़ या बैलगाड़ी के पहिए के आगे की वह टेढ़ी लकड़ी जिसके छेद में से धुरा निकला रहता है।

पैंट—पुं० [अं०] पायजामे की तरह का एक अंग्रेजी पहनावा। पतलून।

पैंठ—स्त्री० [सं० पण्यस्थान, प्रा० पणठ्ठा; अप० पहँठ्ठा] १. वह खुला स्थान जहाँ किसी निश्चित दिन या समय छोटे व्यापारी माल बेचने के लिए आकर बैठते हों। २. सप्ताह का वह विशिष्ट दिन जिसमें किसी विशिष्ट स्थान पर बाजार या हाट लगता हो। ३. छोटी दूकान। ४. महाजनी बोलचाल में, वह हुंडी जो पहली हुंडी खो जाने पर उसके स्थान पर फिर से लिखकर दी जाती है। ५. कृषकों की रमैती (देखें) नामक प्रथा।

पैंठौर—पुं०=पैंठ।

पैंड़—पुं० [हिं० पाँय+ड़ (प्रत्य०) या पाददंड, प्रा० पायडंड] १. कदम। डग। पग।

मुहा०—**पैंड भरना**=कदम या पैर उठाते हुए किसी ओर चलना। डग भरना।

२. चलने के समय एक पैर से दूसरे पैर तक की दूरी। जैसे—जरा उठकर चार पैंड़ चलो तो सही। ३. पैंडा। मार्ग। ४. विधि। ढंग।

पैंड़ा—पुं० [हिं० पैंड] १. वह दूरी या रास्ता जो कोई चलकर आया हो अथवा चलने को हो।

मुहा०—**पैंड़ा मारना**=बहुत दूर तक पैदल चलते हुए जाना या कहीं पहुँचना। जैसे—तुम्हारे लिए ही हम इतनी दूर से पैंडा मार कर आये हैं। **(किसी के) पैंड़े पड़ना**=(क) किसी के कार्य या मार्ग में बाधक होना या बाधा खड़ी करना। (ख) तंग या परेशान करना। २. नियत या नियमित रूप से कहीं आने-जाने की प्रथा। उदा०—राजों घर पैंडा मेरा, जल को होत अबेर। ३. प्रणाली। प्रथा। ४. पानी का घड़ा रखने का स्थान। ५. अस्तबल। घुड़साल।

पैंडिक्य—पुं० [सं० पिंड+ठन्—इक,+ष्यञ्] भिक्षावृत्ति।

पैंडिन्य—पुं० [सं० पिंड+इनि, ष्यञ्] भिक्षावृत्ति।

पंडिया—पुं० [देश०] कोल्हू में पेरने के लिए गन्ने लगानेवाला मजदूर।

पंत—स्त्री० [सं० पणकृत; प्रा० पणइत] १. दाँव। बाजी। २. जूआ खेलने का पाँसा।

मुहा०—पंत पूरना=चौसर के खेल में पाँसा फेंकना। उदा०—प्रमुदित पुलकि पंत पूरे जनु...।—तुलसी।

पुं० [सं० पद+अंत, प्रा० पईत] १. अंतिम पद या स्थान। २. पायँता। उदा०—सिर सौं खेलि पैंत जिनु लावौं। —जायसी।

वि० [?] जो गिनती या संख्या में सात हो।

पुं० सात की सूचक संख्या। (दलाल)

पैंतरा—पुं० [सं० पदांतर; प्रा० पयांतर] १. पटा, तलवार आदि चलाने या कुश्ती लड़ने में घूम-फिरकर ठीक ऐसी जगह पैर रखने की मुद्रा जहाँ से अच्छी तरह वार किया या रोका जा सके।

मुहा०—पैंतरा बदलना=पटा, तलवार आदि चलाने या कुश्ती लड़ने में पहलेवाली मुद्रा छोड़कर दूसरी ओर अधिक उपयुक्त मुद्रा में आना। **पैंतरा भाँजना**=बार बार इधर-उधर घूमते या हटते हुए पैर जमाकर रखना और वार करने तथा बचाने के लिए हाथ घुमाना या चलाना।

२. चालाकी से भरी हुई कोई चाल। ३. धूल पर पड़ा हुआ पैर का निशान।

पैंतरी—स्त्री० १. =पग-तरी (जूती)। २. दे० 'पैंतरी'।

पैंतरेबाज—पुं० [हिं० पैंतरा+फा० बाज] [भाव० पैंतरेबाजी] १. वह जो कुश्ती लड़ने, हथियार आदि चलाने के पैंतरे या ठीक ढंग जानता हो। २. वह जो समय समय पर अवसर देखता हुआ उसी के अनुसार अपने रंग-ढंग या आचरण-व्यवहार बदलना जानता हो।

पैंतरेबाजी—स्त्री० [हिं० पैंतरेबाज] पैंतरेबाज होने की अवस्था, कला या भाव।

पैंतलाय—वि० [?] सत्रह। (दलाल)

पैंतालीस—वि० [सं० पंचचत्वारिंशत्, प्रा० पंचक्तालीसति, अप० पंचतीसा] जो गिनती या संख्या में चालीस से पाँच अधिक हो। चालीस और पाँच।

पुं० चालीस और पाँच के योग की संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—४५

पैंती—स्त्री० [सं० पवित्त; प्रा० पवित्र, पइत्त] १. कुश को लपेटकर बनाया हुआ छल्ला जो श्राद्धादि कर्म करते समय उँगली में पहनते हैं। पवित्री। २. ताँबे या त्रिलौह का बना हुआ उक्त प्रकार का छल्ला।

पैंतीस—वि० [सं० पंचत्रिंशत; प्रा० पंचत्तिसति; अप० पंचतीसो] जो गिनती या संख्या में तीस से पाँच अधिक हो।

पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है।—३५।

पैंया—स्त्री० [हिं० पाँय] १. पैर। पाँव। २. विशेषतः छोटा पैर। बालक का पैर।

पैंसठ—वि० [सं० पंचषष्ठि; प्रा० पंचसट्ठि] जो गिनती या संख्या में साठ से पाँच अधिक हो। साठ और पाँच।

पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—६५।

पै—अव्य० [सं० परं] १. पर। परन्तु। लेकिन।

पद—जो पै=यदि। **तोपै**=तो।

२. उपरांत। पीछे। बाद। ३. निश्चित रूप से। अवश्य। जरूर।

अव्य० [सं० प्रति, प्रा० पडि, प्र० हिं० पँह] १. पास। समीप। २. ओर। तरफ। प्रति।

प्रत्य० [सं० उपरि, हिं० ऊपर] १. पुरानी हिन्दी में अधिकरण कारक की सूचक विभक्ति। पर। ऊपर। २. करण कारक की सूचक विभक्ति। द्वारा। से। उदा०—विदा ह्वै चले राम पै शत्रुहंता।—केशव।

स्त्री० [सं० आपत्ति=दोष, मूल] दोष। ऐब। नुक्स।

मुहा०—(किसी चीज या बात में) पै निकालना=व्यर्थ का और तुच्छ दोष दिखलाना। छिद्रान्वेषण करना।

पुं० [देश०] कपड़े पर माँड़ी लगाने की क्रिया। कलफ चढ़ाना। (जुलाहे)

पुं० [सं० पद] पाँव। पैर।

पुं० [फा०] वह ताँत जो कमान, गुलेल आदि में लगाई जाती है।

पुं० [फा० पा या पाय (=पैर) का संक्षिप्त रूप] पाँव। पैर।

पद—प-दर-पै=(क) कदम कदम पर। पग पग पर। (ख) थोड़ी थोड़ी दूरी पर। (ग) एक के बाद एक। निरंतर। लगातार।

†पुं०=पय

पैक—पुं० [फा०] संदेशवाहक। दूत।

पैकर—पुं० कपास से रूई इकट्ठा करनेवाला।

पुं० [अं०] पैकिंग करनेवाला व्यक्ति।

पुं० [फा०] १. देह। शरीर। २. आकृति।

पैकरमा†—स्त्री०=परिक्रमा।

पैकरा†—पुं० [हिं० पैर+कड़ा] बेड़ी।

पैकरी—स्त्री० [हिं० पाँय+कड़ा] पाँव में पहनने का एक गहना। पैरी।

पैकार—पुं० [फा०] युद्ध। लड़ाई।

पुं० [?] थोड़ी पूँजीवाला छोटा व्यापारी।

पैकारी—स्त्री० [हिं० पैकार] पैकार का काम, पद या भाव।

वि० पैकार-सम्बन्धी।

पैकिंग—स्त्री० [अं०] १. किसी चीज को कहीं भेजने या ले जाने के समय बक्स आदि में अंदर रखने अथवा कागज, कपड़े आदि में मजबूती और हिफाजत से बाँधने की क्रिया और भाव। २. उक्त काम का पारिश्रमिक।

पैकी—पुं० [फा० पैक=हरकारा] मेले-तमाशे में घूम-घूमकर लोगों को हुक्का पिलानेवाला व्यक्ति।

पैकेट—पुं० [अं०] १. किसी चीज का बँधा हुआ छोटा पुलिंदा। २. वह डिबिया जिसमें एक तरह की कई या बहुत सी चीजें भरी होती हैं। जैसे—सिगरेटों का पैकेट।

क्रि० प्र०—बाँधना।

पैखाना—पुं०=पाखाना।

पैगंबर—पुं० [फा० पैगंबर] इस्लाम, ईसाई, मूसाई आदि कुछ धर्मों में, वह पूज्य व्यक्ति जो ईश्वर का संदेश सुनानेवाला माना जाता और किसी नये धर्म या संप्रदाय का प्रवर्त्तक होता है। (प्रॉफेट)

पैगंबरी—वि० [फा०] पैगम्बर-संबंधी। पैगंबर का। जैसे—पैगंबरी धर्म।

स्त्री० १. पैगंम्बर होने की अवस्था, पद या भाव। २. एक प्रकार का गेहूँ।

पैंग—पुं०=पग (कदम)।

पैगाम—पुं० [फा० पैग़ाम] १. किसी को किसी के द्वारा भेजा जानेवाला संदेश या समाचार। २. विशेषतः ऐसा संदेश या प्रस्ताव जो लड़केवालों की तरफ से लड़कीवालों के यहाँ विवाह-संबंध स्थिर करने के लिए भेजा जाय।

क्रि० प्र०—डालना।—भेजना।

पैगोड़ा—पुं० [फा० बुत-कदः=देवमंदिर, पुर्त० पैगोड] दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों में बौद्ध मंदिरों की संज्ञा।

पैज—स्त्री० [सं० प्रतिज्ञा; प्रा० प्रतिज्जा; अप० पइज्जा] १. प्रतिज्ञा। प्रण।

मुहा०—पैज सारना=(क) प्रतिज्ञा पूरी करना। (ख) अपनी बात या हठ रखना। उदा०—बरबस ही लै जान कहते हैं पैज अपनी सारत।—सूर।

२. जिद। हठ।

क्रि० प्र०—करना।—गहना।—बाँधना।

३. लाग-डाँट के कारण बराबरी करने का प्रयत्न। रीस।

मुहा०—(किसी से) पैज पड़ना=प्रतिद्वंद्विता या लाग-डाँट होना।

४. दे० 'पैंतरा'।

पैंजनी—स्त्री०=पैंजनी।

पैजा—पुं० [हिं० पाय+सं० जट, हिं० जड़] लोहे का कड़ा जो किवाड़ के छेद में इसलिए पहनाया रहता है जिसमें किवाड़ उतर न सके। पायजा।

पैजामा—पुं०=पाजामा।

पैजार—स्त्री० [फा० पैज़ार] जूता। पनही। जोड़ा।

पद—जूती-पैजार। (दे०)

पैठ—स्त्री० [सं० प्रविष्ट; प्रा० पइट्ठ] १. पैठने की क्रिया या भाव। प्रवेश। उदा०—जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ।—कबीर। २. किसी स्थान पर बैठने की क्षमता, सुभीता या स्थिति। पहुँच। जैसे—वहाँ तुम्हारी पैठ नहीं हो सकेगी।

†स्त्री०=पैंठ (बाजार)।

पैठना—अ० [हिं० पैठ+ना (प्रत्य०)] १. किसी स्थान विशेषतः किसी गहरे स्थान के अन्दर जाना या घुसना। २. बैठना।

पैठाना—स० [हिं० पैठना] बलपूर्वक अन्दर ले जाना। प्रवेश कराना। संयो० क्रि०—देना।

पैठार—पुं० [हिं० पैठ+आर (प्रत्य०)] १. पैठ। प्रवेश। २. प्रवेश-द्वार। फाटक।

पैठारी—स्त्री० [हिं० पैठार] १. पैठ। प्रवेश। २. गति। पहुँच।

पैंठी—स्त्री० [हिं० पैंठ] बदला। एवज।

पैड—पुं० [अं०] सोख्ते, पत्र लिखने आदि के काम आनेवाले कागज की गड्डी। २. कोई छोटी मुलायम गद्दी। जैसे—मोहर की स्याही का पैड।

पैडा—पुं० [हिं० पैर] खड़ाऊँ।

पैडिक—वि० [सं० पीडा+ठक्—इक] फुंसी-संबंधी।

पैड़ी—स्त्री० [हिं० पैर] १. मकानों आदि में ऊपर चढ़ने की सीढ़ी। जीना। जैसे—हरिद्वार में हर की पैड़ी। २. कूएँ पर चरसा खींचनेवाले बैलों के चलने के लिए बना हुआ ढालुआँ रास्ता। ३. वह गड्ढा जिसमें सिंचाई के लिए जलाशय से पानी लेकर ढालते हैं। पौदर।

पैतरा—पुं०=पैंतरा।

पैतरी—स्त्री० [हिं० पैतरा] रेशम फेरने की परेती।

†स्त्री०=पग-तरी (जूता)।

पैतला—वि०=पैथला। (देखें)

पैताना—पुं०=पायँता।

पैतामह—वि० [सं० पितामह+अण्] पितामह-संबंधी। पितामह का।

पैतामहिक—वि० [सं० पितामह+ठक्—इक] पितामह से प्राप्त धन, संपत्ति आदि।

पैतृक—वि० [सं० पितृ+ठञ्—क] १. पितृ या पिता संबंधी। २. बाप-दादा तथा अन्य पूर्वजों के समय से चला आया हुआ। पुरखों का। पुश्तैनी। जैसे—पैतृक संपत्ति।

पैतृमत्य—पुं० [सं० पितृमती+ष्य] १. वह शिशु या (व्यक्ति) जो अविवाहिता बालिका के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो। २. विख्यात।

पैत्त—वि० [सं० पित्त+अण्] पैत्तिक। (दे०)

पैत्तल—वि० [सं० पित्तल+अण्] पीतल का बना हुआ।

पैत्तिक—वि० [सं० पित्त+ठञ्—इक] १. पित्त-संबंधी। पित्त का। २. (रोग) जिसमें पित्त के प्रकोप के विकार की प्रधानता हो। (बिलिअरी)

पैत्र—पुं० [सं० पितृ+अण्] १. अँगूठे और तर्जनी के बीच का भाग। पितृतीर्थ। २. पितरों के उद्देश्य से किया जानेवाला श्राद्ध।

पैत्रिक—वि०=पैतृक।

पैथल†—वि० [हिं० पाँय+थल] उथला। छिछला। (मुख्यतः जलाशयों आदि के लिए प्रयुक्त)

पैदर—वि०, पुं०=पैदल।

पैदल—वि० [सं० पादतल; प्रा० पायतल] (व्यक्ति) जो अपने पैरों से ही चल रहा हो या चलता हो (किसी वाहन या सवारी पर न हो)। जैसे—राजा साहब पैदल चले आ रहे थे।

पुं० १. पाँव पाँव चलना। पादचारण। जैसे—पैदल का रास्ता, पैदल का सफर। २. ऐसा सिपाही जो पैदल चलता हो और जिसे चलने के लिए सवारी न मिलती हो। (घुड़सवार आदि से भिन्न) जैसे—दस सवार और सौ पैदल सिपाही। ३. शतरंज में वह गोटी जो पैदल सैनिक के प्रतीक के रूप में होती है। यह घर सीधी आगे चलती है; और इसकी मार दाहिने या बाएँ आड़े घर पर होती है।

पैदा—वि० [फा०] १. जिसने अभी जन्म लिया हो। नया जन्मा हुआ। नव-प्रसूत। उत्पन्न। जैसे—कल उनके यहाँ लड़का पैदा हुआ है। २. जो पहले न रहा हो; और अभी हाल में अस्तित्व में आया अथवा प्रकट या व्यक्त हुआ हो। उत्पन्न। जैसे—कोई नई बात या नई बीमारी पैदा होना। ३. (गुण, तत्त्व या पदार्थ) जो प्रयत्नपूर्वक अर्जित या प्राप्त किया गया हो। जैसे—खेत में अनाज या फसल पैदा

करना, रोजगार में रुपया पैदा करना; किसी हुनर में कमाल या नाम पैदा करना।

स्त्री० आय। आमदनी। जैसे—यहाँ उन्हें सैकड़ों रुपया रोज की पैदा है।

पैदाइश—स्त्री० [फा०] १. पैदा होने की अवस्था या भाव। उत्पत्ति। २. जन्म। ३. उपज। पैदावार। ४. आय। जैसे—दस रुपए रोज की पैदाइश। ५. वह जो किसी के द्वारा उत्पन्न हुआ अथवा जनमा हो। जैसे—वह कमीने की पैदाइश (संतान) है। ६. प्रारंभ। शुरुआत।

पैदाइशी—वि० [फा०] १. जो पैदा होने के समय से ही साथ आया, रहा या लगा हो। जन्म-जात। जैसे—पैदाइशी निशान। पैदाइशी बीमारी। २. उक्त के आधार पर, जो जन्म से ही प्रकृति या स्वभाव के रूप में प्राप्त हुआ हो। जन्मसिद्ध।

पैदावार—स्त्री० [फा०] १. अन्न आदि जो खेत में बोने से प्राप्त होता है। फसल। २. कारखाने आदि में होनेवाला किसी चीज का उत्पादन।

पैदावारी†—स्त्री०=पैदावार।

पैन—स्त्री० [सं० प्रणाली] १. नाली। २. पनाला।

पैना—वि० [सं० पैण=घिसना,] [स्त्री० पैनी] जिसकी धार बहुत पतली या काटनेवाली हो। चोखा। धारदार। तीक्ष्ण। तेज। जैसे—पैनी कटार, पैनी छुरी।

पुं० १. बैल हाँकने की हलवाहों की छोटी छड़ी। २. धातु आदि का नुकीला छड़। ३. हाथी चलाने का अंकुश।

पुं० [?] कुछ विशिष्ट धातुएँ गलाने का मसाला।

† पुं०=पैन।

पैनाक—वि० [सं० पिनाक+अण्] पिनाक-संबंधी। पिनाक का।

पैनाना—स० [हिं० पैना] छुरे आदि की धार रगड़कर तेज या पैनी करना। चोखा करना। टेना।

मुहा०—(किसी चीज पर) दाँत पैनाना=कोई चीज पाने के लिए उस पर निगाह रखना। दाँत गड़ाना।

पैन्हना†—स०=पहनना।

पैन्हाना†—स०=पहनाना।

पैप्पल—वि० [सं० पिप्पली+अण्] १. पीपल संबंधी। पीपल का। २. पीपल की लकड़ी या उसके किसी और अंग से तैयार किया या बना हुआ।

पैप्पलाद—पुं० [सं० पिप्पलाद+अण्] पिप्पलाद ऋषि के ग्रंथों का अध्ययन करनेवाला।

पैमक—स्त्री० [?] कलाबत्तू की बनी हुई एक प्रकार की सुनहरी गोट जो अँगरखे, टोपी आदि के किनारों पर टाँकी जाती है।

पैमाइश—स्त्री० [फा०] १. नापने या मापने की क्रिया या भाव। २. विशेष रूप से खेतों, जमीनों आदि का क्षेत्र-फल जानने के लिए की जाने वाली नाप। (सर्वे)

पैमाना—पुं० [फा० पैमानः] १. वह वस्तु (छड़, डंडा, सूत, डोरी, बरतन आदि) जिससे कोई वस्तु नापी या मापी जाय। मापने का औजार। मानदंड। २. विशेषतः वह प्याला जिसमें कुछ विशिष्ट मात्रा में भरकर शराब पीते हैं। मद्य-चषक।

पैमाल—वि०=पामाल।

पैयाँ—स्त्री० [हिं० पायँ] पाँव। पैर।

अव्य० पैरों से चलते हुए। पाँव पाँव।

पैया—पुं० [सं० पाय्य=निकृष्ट] १. बिना सत का अनाज का दाना। खोखला या मारा हुआ दाना।

वि० १. निःसार। २. दीन-हीन। ३. तुच्छ। ४. निकृष्ट। बुरा।

पुं० [देश०] एक प्रकार का बाँस जो पूरबी बंगाल, चटगाँव और बरमा में बहुत होता है। इसमें बड़े-बड़े फल लगते हैं जो खाए जाते हैं। इसे मूली-मंतगा और तिराई का बाँस भी कहते हैं।

† पुं०=पहिया।

पैर—पुं० [सं० पद+दंड; प्रा० पयदंड; अप० पयँड़] १. प्राणियों के शरीर का वह अंग या अवयव जिस पर खड़े होने की दशा में शरीर का सारा भार रहता है और जिससे वे चलते-फिरते हैं। पाँव। चरण।

पद—पैर (या पैरों) की आहट=परोक्ष में किसी के आने या चलने से होनेवाली हलकी पद-ध्वनि या शब्द। जैसे—बगलवाले कमरे में किसी के चलने की आहट सुनकर मैं सचेत हो गया। **पैर की जूती**=बहुत ही तुच्छ और हीन वस्तु या व्यक्ति।

मुहा०—पैर उखड़ना या उखड़ जाना=प्रतियोगिता, लड़ाई आदि में सामना करने की शक्ति या साहस न रह जाने पर पीछे हटना या भागना। **(किसी के) पैर उखाड़ना**=प्रतियोगिता, युद्ध, विरोध आदि में इतनी दृढ़ता या वीरता दिखलाना कि विरोधी या शत्रु सामने ठहर न सकें और पीछे हटने लगे। **पैर उठाना**=दे० नीचे 'पैर बढ़ाना'। **पैर काँपना या थरथराना**=आशंका, दुर्बलता, भय आदि के कारण खड़े रहने या चलने की शक्ति अथवा साहस न होना। **(स्त्री के) पैर छूटना**=मासिक धर्म अधिक होना। बहुत रजःस्राव होना। **(किसी के) पैर छूना**=दे० 'पाँव' के अन्तर्गत 'पाँव छूना या लगाना।' **(किसी जगह) पैर जमना**=(क) दृढ़तापूर्वक या स्थिर भाव से खड़े होने या ठहरने में समर्थ होना। (ख) अपने स्थान पर इस प्रकार दृढ़तापूर्वक अड़े या ठहरे रहना कि सहसा विचलित होने या हटने की नौबत न आए। **(किसी जगह) पैर जमाना**=कहीं पहुँचकर वहाँ अपनी स्थिति दृढ़ करना। **(किसी जगह) पैर टिकना**=(क) कहीं खड़े होने के लिए आधार या आश्रय मिलना। (ख) कहीं कुछ समय तक स्थायी रूप या स्थिर भाव से अवस्थित रहना या होना। जैसे—बरसों से वह इधर-उधर मारा फिरता था, पर अब दिल्ली में उसके पैर टिक गये हैं। **पैर डगमगाना या डिगना**=खड़े रहने या चलने में पैरों का ठीक स्थिति में न रहना और काँपना या विचलित होना। (ख) प्रतिज्ञा, प्रयत्न आदि में ठीक रास्ते से कुछ इधर-उधर या विचलित होना। **पैर (पैरों) तले से जमीन खिसकना या निकलना**=होश-हवाश गायब होना। **(अपने) पैर तोड़ना**=(क) बहुत अधिक चल-फिरकर थकना। (ख) किसी काम के लिए बहुत अधिक दौड़-धूप करना। **(किसी के) पैर तोड़ना**=किसी को चलने-फिरने या कुछ करने-धरने में असमर्थ करना। **पैर दबाना**=किसी की सेवा-टहल करना या थकावट दूर करने के लिए पैर दबाना। **पैर दबाकर चलना**=इस प्रकार चलना कि आहट तक

न हो। पैर धुनना=खिजलाकर पैर पटकना। **पैर न उठना**=आगे चलने या बढ़ने की प्रवृत्ति या साहस न होना। जैसे—माधव के घर जाने के लिए उसके पैर ही न उठते थे। **(जमीन या धरती पर) पैर न रखना**=(क) बहुत अधिक घमंड के कारण साधारण आचार-व्यवहार छोड़कर बहुत बड़े आदमी होने का ढोंग करना। (ख) बहुत अधिक प्रसन्नता के कारण सब सुध-बुध भूल जाना। फूले अंगों न समाना। **(किसी के) पैर न होना**=कोई ऐसा आधार या बल न होना जिससे दृढ़तापूर्वक कहीं टिकने या ठहरने का साहस हो सके। जैसे—चोर (या झूठे) के पैर नहीं होते। **(किसी का) पैर निकलना**=(क) घूमने-फिरने या सैर-सपाटे की आदत पड़ना। (ख) बुरे कामों की ओर उन्मुख होना। **(किसी के) पैर पकड़ना**=दे० 'पाँव' के अन्तर्गत 'पाँव धरना या पकड़ना'। **(किसी के) पैर (या पैरों) पड़ना**=(क) झुककर नमस्कार या प्रणाम करना। (ख) दीनतापूर्वक आग्रह या विनती करना। **पैर पसार देना**=(क) बहुत ही शिथिल या हतोत्साह होकर चुपचाप पड़ या बैठे रहना। दौड़-धूप या प्रयत्न छोड़ देना। (ख) शरीर छोड़कर परलोक सिधारना। मर जाना। **पैर पसारना**=दे० नीचे 'पैर फैलाना'। **पैर फैलना**=दे० 'पाँव' के अन्तर्गत 'पाँव पूजना'। **पैर फैलाना**= (क) विश्राम करने के लिए सुखपूर्वक पैर पसार कर लेटना। (ख) कुछ अधिक पाने या लेने के लिए विशेष आग्रह या हठ करना। (ग) आडंबर खड़ा करना। ठाठ-बाट बढ़ाना। (घ) अपनी शक्ति या सामर्थ्य देखते हुए कोई काम करना। **पैर बढ़ाना**=चलने के समय, देर हो जाने के भय से, जल्दी-जल्दी आगे पैर रखना। जल्दी जल्दी डग भरते हुए चाल तेज करना। **पैर भरना या भर जाना**=बहुत अधिक चलने के कारण थकावट से पैरों में बोझ सा बँधा हुआ जान पड़ना। अधिक चलने की शक्ति या सामर्थ्य न रह जाना। **(स्त्री का) पैर भारी होना**=गर्भवती होना। हमल रहना।

विशेष—गर्भवती होने की दशा में स्त्रियाँ अधिक चलने-फिरने के योग्य नहीं रह जातीं। इसी आधार पर यह मुहावरा बना है।

मुहा०—**(किसी को) पैर में (या से) बाँधकर रखना**=सदा अपने पास या साथ रखना। जल्दी अलग या दूर न होने देना। **(किसी रास्ते पर) पैर रखना**=किसी ओर अग्रसर या प्रवृत्त होना। जैसे—जब से तुमने इस बुरे रास्ते पर पैर रखा है, तब से तुम सबकी नजरों से गिर गये हो। **पैर सो जाना**=किसी विशिष्ट स्थिति में देर तक पड़े रहने के कारण पैरों में का रक्त-संचार रुकना और उसके फलस्वरूप कुछ देर के लिए पैर सुन्न हो जाना। **पैरों चलना**=पैदल चलना। **पैरों तले की जमीन (धरती या मिट्टी) निकल जाना**=कोई बहुत ही भीषण या विकट बात सुनकर स्तब्ध या सन्न हो जाना? **(किसी के) पैरों पर सिर रखना**=(क) पैरों पर सिर रखकर प्रणाम करना। (ख) प्रार्थना या विनती स्वीकृत कराने के लिए बहुत ही दीन भाव से आग्रह करना। **फूंक-फूंक कर पैर रखना**=बहुत ही सचेत या सावधान रहकर किसी काम में आगे बढ़ना। बहुत सँभलकर कोई काम करना।

विशेष—'पाँव' और 'पैर' के प्रयोगों और मुहावरों से संबंध रखनेवाली कुछ विशिष्ट बातों और 'पैर' के शेष मुहा० के लिए दे० 'पाँव' और उसके विशेष तथा उसके मुहा०।

२. धूल आदि पर पड़ा हुआ पैर का चिह्न। पैर का निशान। जैसे—बालू पर पड़े हुए पैर देखते चले जाओ।

पुं० [हिं० पयाल, पयार] १. वह स्थान जहाँ खेत से कटकर फसल दाने झाड़ने के लिए फैलाई जाती है। खलिहान। २. खेत से काट कर लाये हुए डंठल सहित अनाज का अटाला, ढेर या राशि। ३. किसी चीज का ढेर या राशि।

†पुं०=प्रदर (रोग)।

पैर-गाड़ी—स्त्री० [हिं० पैर+गाड़ी] वह गाड़ी जो पैरों से चलाई जाय। जैसे—साइकिल, रिक्शा आदि।

पैरना—अ० [सं० प्लावन; प्रा० पवण; हिं० पीड़ना] पानी के ऊपर उतरते और हाथ-पैर चलाते हुए आगे बढ़ना। तैरना। संयो० क्रि०—जाना।

†वि० १. जो पैरता या तैरता हो। २. किसी बात या विषय में कुशल। दक्ष। पारंगत।

स०=पहनना। (बुन्देल०) उदा०—जियना रजऊ ने पैरो गारो।—लोक-गीत।

पैरवी—स्त्री० [फा०] १. किसी के पीछे-पीछे चलने की क्रिया या भाव। २. आज्ञा-पालन। (क्व०) ३. कोई काम या बात पूरी या सिद्ध करने के लिए किया जानेवाला निरंतर प्रयत्न। ४. आज-कल विशेष रूप से विधिक क्षेत्रों में किसी अभियोग या वाद (मुकदमें) के संबंध में की जानेवाली वे सब कार्रवाइयाँ जो जीतने अथवा अपना पक्ष प्रामाणिक सिद्ध करने के लिए की जाती हैं। जैसे—वकीलों के यहाँ दौड़-धूप करना, अच्छे गवाह इकट्ठे करके उन्हें तैयार करना, कागजी सबूत आदि पेश करना आदि।

पैरवीकार—पुं० [फा०] १. वह जो किसी काम या बात की पैरवी करता हो। २. वह जो अदालत में किसी मुकदमे की पैरवी करने के लिए नियुक्त हो।

पैरहन—पुं० [फा० पैराहन का संक्षिप्त] १. पहनने का कुरता। २. पहनने के कपड़े। पोशाक। वस्त्र। ३. एक प्रकार का कश्मीरी गहना।

पैरा—पुं० [हिं० पहरा या पैर?] १. आया हुआ कदम। पड़े हुए चरण। पौरा। जैसे—नई बहू का पैरा अच्छा है। इसके आते ही आमदनी बढ़ गई। २. पैरों में पहनने का एक प्रकार का कड़ा। ३. किसी ऊँची जगह पर चढ़ने के लिए लकड़ियों के बल्ले आदि रखकर बनाया हुआ रास्ता।

स्त्री० [देश०] दक्षिण भारत में होनेवाली एक प्रकार की कपास जिसके पौधे बहुत दिनों तक रहते हैं।

वि० [हिं० पैर] पैरोंवाला।

पुं० [सं० पिटक; प्रा० पिडा] लकड़ी का वह खाना जिसमें सोनार अपना काँटा, बटखरे आदि रखते हैं।

†पुं० पयाल।

पुं० [अं० पैराग्राफ का संक्षि०] लेख का उतना अंश जितने में कोई एक बात पूरी हो जाय और जो इसी प्रकार के दूसरे अंश से कुछ जगह छोड़ कर अलग किया गया हो। अनुच्छेद

विशेष—जिस पंक्ति में एक पैरा समाप्त होता है, दूसरा पैरा उस पंक्ति को छोड़ कर नई पंक्ति से आरम्भ किया जाता है।

पैराई—स्त्री० [हिं० पैरना] पैरने अर्थात् तैरने की क्रिया या भाव।

पैराउ *—पुं०=पैराव ।

पैराक—पुं० [हिं० पैरना] वह जो पैरने की कला में कुशल हो। तैराक।

पैराग्राफ—पुं०=पैरा (अनुच्छेद) ।

पैराना—स० [हिं० 'पैरना' का प्रे०] किसी को पैरने या तैरने में प्रवृत्त करना । तैरना ।

संयो० क्रि०—देना ।

पैराफिन—पुं० [अ०] एक प्रकार का गाढ़ा चिकना पदार्थ जो कुछ कोमल पत्थरों, और लकड़ियों से निकाला जाता और मोमबत्तियाँ आदि बनाने के काम आता है ।

पैराव—पुं० [हिं० पैरना] नदी, नाले आदि का वह स्थान जो तैर कर पार करने योग्य हो। अधिक जलवाला गहरा स्थान ।

पैराशूट—पुं० [अं०] १. कपड़े का एक प्रकार का थैला जो खुलने पर छाते के आकार का हो जाता है और जिसकी सहायता से हवाई जहाजों से गिरनेवाले आदमी या गिराई जानेवाली चीजें धीरे धीरे और सुरक्षित दशा में उतरकर जमीन पर आकार टिकती हैं । २. एक तरह का बढ़िया गफ कपड़ा जिससे उक्त उपकरण बनाये जाते हैं।

पैरी—स्त्री० [हिं० पैर] १. फूल, काँसे आदि का बना हुआ पैर में पहनने का एक प्रकार का चौड़ा गहना । २. फसल के वे कटे हुए पौधे जो दौनी करने के लिए फैलाये जाते हैं। ३. अनाज की दौनी। दवाँई। दौरी।

स्त्री० [?] भेड़ों के बाल कतरने का काम। (गड़ेरिए)

†स्त्री०=पीढ़ी।

पैरेखना†—स०=परेखना ।

पैरोकार—पुं०=पैरवीकार ।

पैलगी—स्त्री० [हिं० पायँ=पैर+लगना] पैरों पर सिर रखकर अथवा पैर छूकर किया जानेवाला अभिवादन। पालागन । प्रणाम।

पैलॉ†—अव्य० हिं० 'पहले' का स्थानिक रूप । (पंजाब, राज०)

पैला—वि० [सं० पर] [स्त्री० पैली] उस ओर का । उस पार का । परला । उदा०—अजामिल, गनिकादि पैरि पार गाहि पैलों ।—पूर ।

पुं० [हिं० पैली] १. नांद के आकार का मिट्टी का वह बरतन जिससे दूध-दही ढकते हैं। बड़ी पैली। २. अनाज तौलने की ४ सेर की एक नाप। ३. उक्त नाप की डलिया। ४. टोकरी । दौरी।

पैली—स्त्री० [सं० पातिली; प्रा० पाइली] १. मिट्टी का एक प्रकार का चौड़ा बरतन जिसमें अनाज या तेल रखते हैं। २. दे० 'पैला।'

पैवंद—पुं० [फा०] १. किसी बड़ी चीज के साथ कोई छोटी चीज जोड़ने की क्रिया या भाव । २. फटे हुए कपड़े पर लगाई जानेवाली चकती। थिगली। ३. किसी पेड़ की वह टहनी जो काटकर उसी जाति के दूसरे पेड़ की टहनी में बाँधी जाती है । (ऐसी टहनी में लगनेवाले फल अधिक स्वादिष्ट होते हैं)

मुहा०—(किसी बात में) पैवंद लगाना=कोई ऐसी कल्पित या नई बात कहना जिससे पहलेवाली किसी बात की त्रुटि या दोष दूर हो जाय, अथवा वह अच्छी या ठीक जान पड़ने लगे। जैसे—तुम भी बातों में पैवंद लगाना खूब जानते हो।

पैवंदी—वि० [फा०] १. जिसमें पैवंद लगा या लगाया गया हो। २. (पौधा या वृक्ष) जो पैवंद या कलम लगाकर तैयार किया गया हो। ('बीजू' में भिन्न) ३. वर्णसंकर । दोगला । (व्यंग और परिहास)

पुं० बड़ा आड़ू । शफतालू ।

पैवस्त—वि० [फा०] [भाव पैवस्तगी] १. (तरल पदार्थ) जो किसी चीज के अंदर घुसकर सब भागों में फैल गया हो। अच्छी तरह सोखा और समाया हुआ । जैसे—सिर में तेल पैवस्त होना । २. (घन पदार्थ) जो किसी के अंदर धँसकर अच्छी तरह बैठ गया हो ।

पैशल्य—पुं० [सं० पेशल+ष्यञ्] पेशलता। कोमलता ।

पैशाच—वि० [सं० पिशाच+अण्] १. पिशाच-संबंधी। पिशाच का। २. पिशाच देश का ।

पुं० १. पिशाच । २. प्राचीन भारत की एक आयुधजीवी जाति ।

पैशाच-काय—पुं० [सं० कर्म० स०] सुश्रुत में कही हुई कायों (शरीरों) में से वह काया (व्यक्ति) जिसके स्वभाव में उग्रता आदि दोष यथेष्ट हों और जिसे धार्मिकता, नैतिकता आदि का कोई ध्यान नहीं रहता।

पैशाच-विवाह—पुं० [सं० कर्म० स०] धर्म-शास्त्रों के अनुसार आठ प्रकार के विवाहों में से एक । ऐसा विवाह जो सोई हुई कन्या का हरण करके या मदोन्मत्त कन्या को फुसलाकर छल से किया गया हो। स्मृतियों में इस प्रकार का विवाह बहुत निंदनीय कहा गया है ।

पैशाचिक—वि० [सं० पिशाच+ठक्—इक] १. पिशाच-संबंधी। पिशाचों का । राक्षसी । २. पिशाचों की तरह का घोर और वीभत्स। जैसे—पैशाचिक अत्याचार ।

पैशाचिकी—स्त्री० [सं०] वह विद्या जिसमें इस बात का अध्ययन और विवेचन होता है कि भिन्न भिन्न जातियों और देशों में असुरों, राक्षसों आदि के क्या क्या रूप माने जाते हैं और उनके संबंध में लोगों की किस प्रकार की धारणाएं और विश्वास होते हैं। (डेमनालोजी)

पैशाची—स्त्री० [सं० पैशाच+ङीप्] पिशाच (दे०) देश की प्राचीन प्राकृत भाषा जिससे आज-कल की दरद वर्ग की बोलियाँ निकली हैं।

वि० १. पिशाच-संबंधी। पैशाचिक २. पिशाचों की तरह का ।

पैशाच्य—पुं० [सं० पिशाच+ष्यञ्] पिशाचों का अथवा पिशाचों का सा क्रूर और निर्दय स्वभाव ।

पैशिक—वि० [सं०] शरीर की पेशियों से संबंध रखनेवाला । पेशी-संबंधी ।

पैशुन—पुं० [सं० पिशुन+अण्] पैशुन्य ।

पैशुन्य—पुं० [सं० पिशुन+ष्यञ्] किसी के पीठ पीछे उसे हानि पहुँचाने के लिए दूसरों से की जानेवाली उसकी निन्दा। चुगल खोरी । पिशुनता। (बैक-बाइटिंग)

पैष्ट—वि० [सं० पिष्ट+अण्] आटे का बना हुआ ।

पैष्टिक—वि० [सं० पिष्ट+ठञ्—इक]=पैष्ट ।

पैष्टी—स्त्री० [सं० पैष्ट+ङीष्] एक तरह की मदिरा जो अन्न से बनाई जाती है ।

पैसंगी—स्त्री० [फा० पेशीनगोई] भविष्यवाणी।

पैसना—अ० [सं० प्रविश; प्रा० पइस+ना (प्रत्य०)] प्रविष्ट होना । घुसना । पैठना ।

पैसरा†—पुं० [सं० परिश्रम] १. परिश्रम । मेहनत। २. झंझट। बखेड़ा।

पैसा—पुं० [सं० पाद, प्रा० पाप=चौथाई+अंश, प्रा० अंस या पणांश] १. ताँबे का सबसे अधिक चलता सिक्का जो कुछ दिन पहले तक एक

आने का चौथा और रुपये का चौंसठवाँ भाग होता था; पर अब जो एक रुपये का सौवाँ भाग हो गया है। २. धन-संपत्ति। दौलत। माल। जैसे--वह बहुत पैसेवाला आदमी है।

मुहा०—**पैसा धोकर उठाना**=किसी देवता की पूजा की मनौती करके उसके नाम पर अलग पैसा निकालकर रखना। (मनौती पूरी हो जाने पर यह पैसा उसी देवता के पूजन में लगाया जाता है।)

पैसार—पुं० [हिं० पैसना] १. पैठ। प्रवेश। २. अंदर जाने का मार्ग। ३. प्रवेश-द्वार।

पैसारना—स० [हिं० पैसार] पैठाना। घुसना। उदा०—पाँच भूत तेहि मह पैसारा।—जायसी।

पैसिंजर—पुं० [अं०] यात्री।

पैसिंजर-गाड़ी—स्त्री० [अं० पैसिंजर+हिं० गाड़ी] मुसाफिरों को ले जानेवाली वह रेलगाड़ी जिसकी चाल अपेक्षया कुछ मंद होती और जो प्रायः सभी स्टेशनों पर ठहरती चलती है। सवारी गाड़ी (डाक और एक्सप्रेस से भिन्न)।

पैसेवाला—वि० [हिं०] [स्त्री० पैसेवाली] धनवान्। मालदार। धनी।

पैहम—अव्य० [फा०] निरंतर। लगातार।

पैहरा†—पुं० [देश०] कपास के खेत में रुई इकट्ठी करनेवाला मजदूर। पैकर। बिनिया।

पैहारी—वि० [सं० पयस्+आहारी] केवल दूध पीकर जीवित रहनेवाला। पुं० एक तरह के साधु जो केवल दूध पीकर रहते हैं।

पों—स्त्री० [अनु०] १. लंबी नाल के आकार का एक बाजा जिसमें फूँकने से पों शब्द निकलता है। भोंपा। २. उक्त बाजे से निकलनेवाला पों शब्द।

मुहा०--**(किसी की) पों बजाना**=किसी की बात का समर्थन बिना समझे-बूझे करना। (व्यंग्य और परिहास)

२. अधोवायु। पाद।

मुहा०--**पों बोलना**=(क) हार मानना। (ख) थककर बैठ रहना। (ग) दिवाला निकालना। दिवालिया बनना।

पोंकना—अ० [अनु० पों से] १. बहुत डरकर पों पों शब्द करना। २. पतला पाखाना फिरना।

†पुं० पशुओं को पतला पाखाना होने का रोग।

पोंका—पुं० [सं० पुत्तिका] पौधों आदि पर उड़नेवाला एक तरह का फतिंगा। बोंका।

पोंगरा*—वि०=पोंगा (मूर्ख)।

पुं० बच्चा।

पोंगली—स्त्री० [हिं० पोंगा] १. वह नरिया जो दोबारा चाक पर से बनाकर उतारी गई हो। (कुम्हार) २. दे० 'पोंगी'।

पोंगा—पुं० [सं० पुटक=खोंखला बरतन] [स्त्री० अल्पा० पोंगी] १. बाँस की नली। बाँस का खोखला पोर। २. धातु का बना हुआ उक्त प्रकार का नल। ३. पैर की लंबी हड्डी। नली।

वि० १. पोला। २. निरा मूर्ख। नासमझ। ३. निकम्मा। बेकाम।

पोंगापंथी—वि० [हिं० पोंगा+पंथी] वज्रमूर्ख।

स्त्री० मूर्खतापूर्ण आचरण या व्यवहार।

पोंगिया†—स्त्री०=सतभइया।

३--७३

पोंगी—स्त्री० [हिं० पोंगा] १. छोटी पोली नली। २. नरकुल की वह नली जिस पर जुलाहे तागा लपेटकर ताना या भरनी करते हैं। ३. चार या पाँच अंगुल के बाँस की वह पोली नली जो बाँस के पंखे की डंडी में उन्हें घुमाने या चलाने के लिए लगी होती है। हाँकनेवाले इसे पकड़-कर पंखे को घुमाते हैं। ४. ऊख, गन्ने आदि का पोर।

पोंचना—अ०=पहुँचना। (बुन्दे०)

पोंछा†—स्त्री०=पूँछ (दुम)।

पोंछन—स्त्री० [हिं० पोंछना] १. पोंछने की क्रिया या भाव। २. किसी पात्र में लगी हुई वस्तु का बचा हुआ वह अंश जो पोंछकर निकाला जाता है।

पद—**पेट की पोंछन**=स्त्री की अंतिम संतान।

३. पोंछने के काम आनेवाला कपड़ा या और कोई चीज। झाड़न।

पोंछना—स०[सं० प्रोञ्छन, प्रा० पोंछन] १. सूखे कपड़े के टुकड़े को इस प्रकार किसी अंग, वस्तु या स्थान पर फेरना कि वह उस स्थान की आर्द्रता या नमी सोख ले। जैसे—रूमाल से आँसू या पसीना पोंछना; नहाकर तौलिये से गीला शरीर पोंछना। २. किसी स्थान पर जमी हुई मैल, बना हुआ चिह्न आदि हटाने या दूर करने के उद्देश्य से उस पर सूखे अथवा गीले कपड़े का टुकड़ा रगड़ते हुए फेरना। जैसे—जमीन या फरश पोंछना, तख्ता या स्लेट पोंछना।

संयो० क्रि०—डालना।—देना।—लेना।

†पुं० १. वह चीज जो कुछ पोंछने के काम में आती हो। जैसे—पैर-पोंछना=पाँवदान। २. वह चीज जो पोंछने पर निकलती हो। जैसे—पेट पोंछना। (देखें)

पोंटा—पुं० [देश०] १. नाक का मल। २. पोटा। (देखें)

पोंटी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की छोटी मछली।

पोंद—स्त्री० [सं० पाणु या हिं० पेंदा] १. मल-त्याग की इंद्रिय। गुदा। २. चूतड़।

पोंपी—स्त्री० [अनु०] १. छोटी गोलाकार नली। २. उक्त आकार का कोई ऐसा बाजा जिससे 'पों' 'पों' शब्द निकलता हो।

पोआ—पुं० [सं० पुत्रक] १. साँप का छोटा बच्चा। संपोला। २. कोई छोटा कीड़ा।

पोआना—स० [हिं० 'पोना' का प्रे०] किसी से पोने का काम कराना।

पोइणि—स्त्री०=पद्मिनी (कमलिनी)।

पोइया—स्त्री० [फा० पोयः] घोड़े की वह चाल जिसमें वे दो दो पैर फेंकते हुए आगे बढ़ते हैं। सरपट चाल।

मुहा०—**पोइयों जाना**—घोड़े का दोनों पैर फेंकते हुए दौड़ना।

पोइसों—स्त्री० [फा० पोयः] दे० 'पोइया'।

अव्य० [फा० पोश] देखो। हटो। बचो।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग मुख्यतः पशु हाँकने और बैल-गाड़ियाँ आदि चलानेवाले लोग राह चलतों को सावधान करने के लिए करते हैं।

पोई—स्त्री० [सं० पोत की या पोदकी] १. वर्षा तथा शिशिर ऋतुओं में होनेवाली एक प्रसिद्ध लता जिसकी पान की तरह की मोटी हरी पत्तियाँ होती हैं; जिनका साग, पकौड़े आदि बनाये जाते हैं। वैद्यक में इसकी पत्तियाँ वात और पित को दूर करनेवाला मानी गई हैं।

२. किसी पौधे का छोटा और नरम कल्ला। अंकुर। जैसे—ईख की पोई।

क्रि० प्र०—निकलना।—फूटना।

३. गेहूँ, जौ मटर आदि का छोटा नया पौधा। ४. दे० 'पोर'।

पोकल—वि० [देश०] १. पुलपुला २. कोमल। नाजुक। ३. दुबला। कमजोर। ४. खोखला। पोला। ५. तत्त्व हीन। निःसार।

पोका†—पुं०=पोंका।

पोकार†—स्त्री०=पुकार।

पोख—पुं० [सं० पोषण] १. पालने-पोसने की क्रिया या भाव। २. पालन, पोषण आदि के कारण उत्पन्न होनेवाली पारस्पसिक ममता। ३. दे० 'पोस'।

पोख-नरी—स्त्री० [हिं०] ढरकी के बीच का गड्ढा जिसमें नरी लगाकर कपड़ा बुना जाता है।

पोखना—स० [सं० पोषण] पालना। पोसना।

†स०=पोंकना।

†अ०=पोखाना।

पोखर—पुं० = पोखरा।

पोखरा—पुं० [सं० पुष्कर] [स्त्री० पोखरी] वह गहरा तथा अधिक विस्तृत गड्ढा जिसमें बरसाती पानी जमा होता हो। छोटा ताल।

†पुं० [?] वह आधान जिसमें पाखाना किया जाता है और पानी डालने से बहकर नाले में चला जाता है।

पोखराज†—पुं०=पुखराज।

पोखरी—स्त्री० हिं० 'पोखरा' का स्त्री अल्पा० रूप।

पोगंड—पुं० [सं०√पू (पवित्र करना)+विच् पो,+गंड ब० स०] १. पाँच से दस वर्ष तक की अवस्था का बालक। २. वह जिसके शरीर में कोई अंग अधिक, कम या विकृत हो।

पोगर †—पुं०=पोखरा।

पोच—वि० [फा०] १. निकृष्ट। खराब। बुरा। २. क्षुद्र। तुच्छ। ३. सब प्रकार के गुणों शक्तियों आदि से रहित या हीन। ४. निःसार। ५. अकुलीन। ६. आवारा।

पोचाई†—स्त्री० [?] बिहारी आदिवासियों और कोल-भीलों के पीने की एक प्रकार की देशी शराब जो भात और मांड़ में कोई जंगली जड़ी-बूटी डालकर बनाई जाती है।

पोचारा†—पुं०=पुचारा।

पोची—स्त्री० [हिं० पोच] पोच अर्थात् व्यर्थ, निकम्मा अथवा अकुलीन होने की अवस्था या भाव। पोचपन।

पोछना—स० १.=पोंछना। २. =पोतना।

†अ०=पहुँचना।

पोट—पुं० [सं०√पुट् (मिलना)+घञ्] १. घर की नीव। २. मेल। मिलान।

स्त्री० [सं० पोट=ढेर, हिं० पोटली] १. ऐसी पोटली या गठरी जो चारों ओर से कपड़े, कागज, टाट आदि से बंधी हुई हो। २. ढेर। राशि।

स्त्री० [सं० पृष्ठ] पुस्तकों की सिलाई में उसका पुट्ठा।

स्त्री० [सं० पोत=वस्त्र] शव पर डाली जानेवाली चादर। कफन के ऊपर का कपड़ा।

पोटक—पुं० [सं०√पुट्+अच्,+कन्] सेवक। नौकर।

पोटगल—पुं० [सं० पोट√गल् (चुआना, खाना)+अच्] १. नरसल। नरकट। २. काँस। ३. मछली। ४. एक प्रकार का साँप।

पोटडाक—स्त्री० [हिं० पोट+डाक] १. डाक से चीजें भेजने की वह व्यवस्था जिसमें चीजें आदि चारों ओर से कपड़े, टाट आदि से सीकर या बक्सों में बंद करके भेजी जाती हैं। (पारसल पोस्ट) २. इस प्रकार भेजी हुई कोई चीज।

पोटना—स० [हिं० पुट] १. इकट्ठा करना। समेटना। २. अपने अधिकार या हाथ में करना। ३. फुसला या बहकाकर अपने पक्ष में करना।

पोटरी†—स्त्री०=पोटली।

पोटलक—पुं० [सं० पोट√ली (समाना)+ड,+क] [स्त्री० अल्पा० पोटलिका] पोटली।

पोटला—पुं० [हिं० पोटलक] [स्त्री० अल्पा० पोटली] बड़ी पोटली।

पोटली—स्त्री० [सं० पोटलिका] १. बहुत छोटी गठरी जिसमें आवश्यक वस्तुएँ रखकर लोग साथ लेकर विशेषतः बगल में रखकर चलते हैं। २. छोटी थैली।

पोटा—पुं० [सं० पुट=थैली] [स्त्री० अल्पा० पोटी] १. पेट की थैली। उदराशय। जैसे—चिड़िया या बकरी का पोटा।

मुहा०—पोटा तर होना=पास में धन-संपत्ति होने से प्रसन्नता और निश्चिंतता होना।

२. हृदय में होनेवाला उत्साह, बल और साहस। जैसे—किसका पोटा है जो तुम्हारे सामने आकर खड़ा हो। ३. समाई। सामर्थ्य। जैसे—जितना जिसका पोटा होगा उतना ही वह खरच करेगा। ४. आँख की पलक। ५. उँगली का अगला भाग या सिरा। ६. चिड़िया का वह छोटा बच्चा जिसके अभी पर न निकले हों। ७. नाक का मल। सींड।

क्रि० प्र०—बहना।

स्त्री० [सं०√पुट्+अच्+टाप्] १. वह स्त्री जिसमें पुरुषों के से लक्षण हों। जैसे—दाढ़ी या मूँछ के स्थान पर बाल। २. दासी। सेविका।

पुं० घड़ियाल।

पोटास—पुं० [अं०] एक प्रकार का क्षार जो वनस्पतियों और लकड़ियों की राख, कई प्रकार के खनिज पदार्थों और कल-कारखानों की कोई तरह की फालतू चीजों में से निकलता और खाद, साबुन आदि बनाने के काम आता है।

पोटिक—पुं० [सं०] फोड़ा।

पोटिक—पुं० [हिं० पोट] पोट अर्थात् बोझा ढोनेवाला मजदूर। पोटिया।

पोट्टली—स्त्री० [सं०=पोटलिका, पृषो० सिद्धि]=पोटली।

पोठी†—स्त्री० [?] एक प्रकार की मछली।

पोढ़ (ा)—वि० [सं० प्रौढ़] [स्त्री० प्रौढ़ी] १. जो यथेष्ट रूप से वयस्क हो चुका हो। २. हृष्ट-पुष्ट। ३. कठोर। ४. दृढ़। पक्का।

पोढ़ना—अ० [हिं० पोढ़] १. दृढ़ होना। मजबूत होना। २. निश्चित

या पक्का होना। ३. उपयुक्त अथवा यथेष्ट पद को प्राप्त होना। स० १. दृढ़ या पुष्ट करना। पक्का या मजबूत करना।

पोत—पुं० [सं०√पू+तन्] १. किसी पशु या पक्षी का छोटा बच्चा। २. दस वर्ष की अवस्थावाला हाथी। ३. छोटा पौधा या उसमें से निकला हुआ नया कल्ला। ४. वह गर्भस्थ पिंड जिस पर अभी झिल्ली न चढ़ी हो। ५. पहनने के वस्त्र। पोशाक। ६. सूत के प्रकार, बुनावट आदि के विचार से कपड़े के तल की चिकनई और मोटाई। (टेक्सचर) ७. पानी पर चलने वाला यान। जैसे—जहाज, नाव आदि।

पुं० [हिं० पोतना] पोतने की क्रिया या भाव। पुताई।

पुं० [सं० प्रवृत्ति, प्रा० पउत्ति] १. प्रकृति। स्वभाव। २. ढब। ढंग। तरीका। ३. कोई काम करने का क्रमागत अवसर। दाँव। बारी।

पुं० [फा० फ़ोतः] जमीन का लगान। भू-कर।

मुहा०—पोत पूरा करना=उसी प्रकार जैसे-तैसे कोई काम या त्रुटि पूरी करना जिस प्रकार चुकाने के लिए भू-कर या लगान इकट्ठा करते हैं।

†पुं० १. =पुत्र। २. =पौत्र।

स्त्री० [सं० प्रोता, प्रा० पोत्ता] १. माला की गुरिया या दाना। २. कांच आदि की गुरिया जो माला के रूप में पिरोई जाती है। उदा०—मानों मनि मोतिन लाल माल आगे पोति है।—सेनापति।

पोतक—पुं० [सं० पोत√कै (शब्द करना)+क] १. छोटा बच्चा। २. छोटा पौधा या कल्ला। ३. वह स्थान जहाँ घर बनाया जाने को हो।

पोतकी—स्त्री० [सं० पोतक+ङीष्] पोई नाम की लता।

पोत-घाट—पुं० [सं० पोत+हिं० घाट] समुद्र आदि के किनारे बना हुआ वह पक्का घाट या घेरा जिसके अंदर आकर यात्रियों आदि को उतारने-चढ़ाने के लिए जहाज ठहरते हैं। (पिअर)

पोतड़ा—पुं० [हिं० पोतना+ड़ा (प्रत्य०)] वह कपड़ा जो नन्हें बच्चों के नीचे इसलिए बिछाया जाता है कि उसका गुह-मूत उसी पर गिरे या लगे, नीचेवाला बिस्तर खराब न करे।

पद—पोतड़ों के अमीर=सम्पन्न घराने में उत्पन्न होनेवाला।

पोतदार—पुं० [हिं० पोत=भूकर+फा० दार] १. वह जो लगान या कर का रुपया जमा करके रखता हो। २. खजानची। ३. वह जो खजाने में रुपए, रेजगी आदि परखकर थैलियों में रखने का काम करता हो।

पोत-धारी (रिन्)—पुं० [सं० पोत√धृ (धारण करना)+णिनि] जहाज का अधिकारी या मालिक।

पोत-ध्वज—पुं० [सं० ष० त०] जहाज, बड़ी नाव आदि पर का वह झंडा जो उसके राष्ट्र का सूचक होता है। (एन्साइन)

पोतन—वि० [सं०√पू+तन] १. पवित्र या शुद्ध करनेवाला। २. पवित्र। शुद्ध।

†स्त्री० [हिं० पोतना] पोतने की क्रिया, ढंग या भाव।

पोतनहर—स्त्री० [हिं० पोतना+हर (प्रत्य०)] १. वह बरतन जिसमें आँगन, चौका आदि पोतने के लिए मिट्टी घोलकर रखी जाती है। २. वह स्त्री जो आँगन, चौका आदि पोतने का काम करती है।

†स्त्री० [?] अँतड़ी। आँत।

पोतना—स० [सं० प्लुत; प्रा० पुत+ना] १. किसी विशिष्ट तरल पदार्थ में तर किये हुए कपड़े के टुकड़े को इस प्रकार किसी चीज पर फेरना कि उस पर तरल पदार्थ की तह चढ़ जाय। लेप करना। लीपना। जैसे—किवाड़ों पर रंग पोतना। २. किसी गीले या सूखे पदार्थ को किसी वस्तु पर इस प्रकार लगाना कि वह उस पर बैठ जाय या जम जाय। जैसे—किसी के मुँह पर गुलाल पोतना। ३. आँगन, चौके आदि को पवित्र करने के उद्देश्य से उस पर गोबर, मिट्टी आदि का लेप करना। ४. लाक्षणिक अर्थ में, किसी चीज या बात के ऊपर ऐसी क्रिया करना कि वह छिप या ढक जाय।

पुं० वह कपड़ा जिससे कोई चीज पोती जाय। पोतने का कपड़ा।

पोत-प्लव—पुं० [सं० पोत√प्लु+अच्] मल्लाह। माँझी।

पोत-भंग—पुं० [सं० ष० त०] जहाज का चट्टानों आदि से टकराकर टूट-फूट जाना।

पोत-भार—पुं० [सं० मध्य० स०] पोत या जलयान पर लादा जानेवाला या लदा हुआ माल। (कारगो)

पोत-भारक—पुं० [सं०] वह पोत या जलयान जो माल ढोता हो। (कारगोशिप)

पोतला—पुं० [हिं० पोतना] तवे पर घी पोतकर सेंकी हुई चपाती। पराँठा।

†पुं०=पुतला।

पोत-वणिक् (ज्)—पुं० [सं० सुप्सुपा स०] वह व्यापारी जो जहाजों पर लादकर माल भेजता या मँगाता हो।

पोतवाह—पुं० [सं० पोत√वह्+अण्] मल्लाह। माँझी।

पोत-संतरण—पुं० [ष० त०] कारखाने से बनकर निकले हुए जहाज को पहली बार समुद्र में उतारना या तैराना।

पोता—पुं० [सं० पौत्र; प्रा० पोत] [स्त्री० पोती] बेटे का बेटा। पुत्र का पुत्र।

पुं० [हिं० पोतना] १. वह कपड़ा या कूची जिससे घरों में चूना पोता या फेरा जाता है। २. धुली हुई मिट्टी जो आँगन, चौका, दीवार आदि पोतने के काम आती है।

क्रि० प्र०—फेरना।—लगाना।

मुहा०—पोता फेरना=पूरी तरह से चौपट या बरबाद करना। चौका लगाना।

पुं० [फा० फ़ोतः] १. भूमिकर। लगान। पोत। २. अंड-कोश।

पुं० [सं० पोत] १५ या १६ अंगुल लंबी एक प्रकार की मछली जो भारत की प्रायः सभी नदियों में मिलती है।

पुं० [सं०√पू+तृच्] १. यज्ञ में सोलह प्रधान ऋत्विजों में से एक। २. वायु। हवा। ३. विष्णु।

†पुं०=पोटा।

पोताई—स्त्री० [हिं० पोतना] पोतने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

पोताच्छादन—पुं० [सं० पोत+आ√छद्+णिच्+ल्यु—अन] तंबू। छौलदारी। डेरा।

पोताधान—पुं० [सं० पोत-आधान, ष[illegible] त०] मछलियों के बच्चों का गोल या समूह। छाँवर। गो[illegible]

पोतारा—पुं०=[illegible]

पोतारी—स्त्री०=पुतारा।

पोताश्रय—पुं० [सं० पोत-आश्रय, ष० त०] समुद्र के किनारे का वह प्राकृतिक या कृत्रिम स्थान जहाँ पहुँचकर जहाज ठहरते तथा माल आदि उतारते-चढ़ाते हैं। बन्दरगाह। (हार्बर)

पोतास—पुं० [सं०] भीमसेनी कपूर। बरास।

पोति—स्त्री०=पोत (काँच की गुरिया)।

पौतिका—स्त्री० [सं०=पूतिका; पृषो० सिद्धि] १. पोई की बेल। २. कपड़ा। वस्त्र।

पोतिया—पुं० [सं० पोत] १. वह कपड़ा जो साधु लुंगी की तरह कमर में बाँधकर पहनते हैं। २. पान, सुपारी, सुरती आदि रखने की छोटी थैली या बटुआ। ३. एक प्रकार का खिलौना।

†वि० [?] बाद में आने या पड़नेवाला। परवर्ती।

पोती—स्त्री० [हिं० पोतना] १. पोतने की क्रिया या भाव। पोताई। २. मिट्टी का वह लेप जो हँड़िया आदि की पेंदी पर इसलिए चढ़ाया जाता है कि उसमें अधिक आँच न लगे। उदा०—जैन नीर सों पोती किया।—जायसी। २. किसी गरम चीज को ठंढा रखने के लिए उस पर पानी से तर कपड़ा फेरने की क्रिया या भाव। ३. दे० 'पुतारा'। स्त्री० हिं० पोता (पौत्र) का स्त्री०।

पोत्या—स्त्री० [सं० पोत+य+टाप्] पोतों अर्थात् जलयानों का समूह।

पोत्र—पुं० [सं०√पू+ष्ट्रन्] १. सूअर का थूंथन। २. वज्र। ३. एक प्रकार का यज्ञ-पात्र जो पोता नामक याजक के पास रहता था। ४. जहाज या नाव। पोत। ५. नाव खेने का डाँडा।

पोत्रायुध—पुं० [सं० पोत्र-आयुध, ब० स०] जंगली सूअर।

पोत्री (त्रिन्)—पुं० [सं० पोत्र+इनि] सूअर।

पोथा—पुं० [हिं० पोथी] १. बहुत बड़ी पोथी या पुस्तक। (व्यंग्य और हास्य) २. कागजों आदि की बहुत बड़ी गड्डी या पुलिंदा।

पोथिया†—पुं०=पोतिया।

पोथी—स्त्री० [सं० पुस्तिका; प्रा० पोत्थिआ] छोटी पुस्तक। विशेषतः कोई धार्मिक पुस्तक।

†स्त्री० [हिं० पोट ?] प्याज, लहसुन आदि की गाँठ।

पोदना—पुं० [अनु० फुदकना] १. एक छोटी चिड़िया। २. बहुत ही ठिगना या नाटा आदमी। ३. प्रेत या भूत।

†पुं०=पुदीना।

पोदीना†—पुं०=पुदीना।

पोद्दार—पुं०=पोतदार। (देखें)

पोन†—पुं० = पवन।

†स्त्री०=पौंद।

पोना—स० [सं० पूय; हिं० पूवा+ना (प्रत्य०)] १. गुँधे हुए आटे की लोई को उँगलियों और हथेलियों से बार बार दबाते तथा बढ़ाते हुए रोटी के आकार में लाना। जैसे—आटा पोना। २. (रोटी) पकाना या सेंकना।

†स०=पिरोना।

पोप—पुं० [अं०] रोम के कैथोलिक गिरजों का सर्वप्रधान आचार्य या धर्म गुरु।

पोपटा—पुं० [देश०] एक प्रकार की जंगली झाड़ी जिसे झड़बेरी या करौंदा भी कहते हैं।

पोपला—वि० [हिं० पुलपुला] [स्त्री० पोपली] १. जो अंदर से बिलकुल खाली होने के कारण ऊपर से पचक या दब गया हो। पिचका और सिकुड़ा हुआ। २. (मुंह) जिसके अंदर के दाँत टूट या निकल गये हों और इसी लिए जो अंदर से पोला गया हो।

पोपलाना—अ०, स०=पुपलाना।

पोपली†—वि० स्त्री० 'पोपला' का स्त्रीलिंग रूप।

स्त्री०=पुपली।

पोप-लीला—स्त्री० [अं० पोप+सं० लीला] पोपों आदि धर्म-पुरोहितों के आडंबरपूर्ण कार्य।

पोमचा—पुं० [?] कपड़ों की छपाई, बुनाई, रँगाई आदि में ऐसी आकृति जिसमें चारों कोनों पर चार कमल या बूटे हों और बीच में एक वैसा ही कमल या बूटा हो और बाकी जमीन खाली हो।

पोमिनि†—स्त्री०=पद्मिनी।

पोय†—स्त्री०=पोई।

पोयण†—पुं० [सं० पद्म ?] कमल। उदा०—मेवाड़ो तिण माँह पोयण फूल प्रतापसी—पृथ्वीराज।

पोयणि†—स्त्री०=पद्मिनी।

पोया†—पुं० [सं० पोत] १. वृक्ष का नरम पौधा। २. बहुत छोटा बच्चा। जैसे—चिड़िया या साँप का पोया।

पोर—स्त्री० [सं० पर्व] १. उँगली, अँगूठे आदि में का कोई जोड़। २. उक्त के दो जोड़ों के बीच का अंश, भाग या विस्तार। ३. अनेक गाँठों या जोड़ों वाली किसी वस्तु के दो भागों या जोड़ों के बीच का अंश, भाग या विस्तार। जैसे—ईख या बाँस के पोर। ४. शरीर का अंग। ५. पृष्ठ भाग। पीठ। उदा०—निकसे सबै कुँवर असवारी उच्चश्रवा के पोर। —सूर। †६. जूए में किसी के जिम्मे बाकी पड़ने वाली रकम।

पोरा†—पुं० [हिं० पोर] १. लकड़ी का मंडलाकार टुकड़ा। लकड़ी का गोल कुंदा। २. दे० 'पोर'।

पोरिया—स्त्री० [हिं० पोर] उँगलियों के पोरों पर पहनने का एक तरह का पुराना चाल का गहना।

पोरी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की कड़ी मिट्टी।

†स्त्री०=पोरिया।

पोरुआ†—पुं०=पोरिया।

पोर्ट—पुं० [पुर्त० पोर्टो] अंगूर के रस से बनी हुई एक प्रकार की शराब जो धूप में सड़ाकर बनाई जाती है। इसमें नशा बहुत कम होता है; पर यह पुष्टकारक होती है।

पुं० [अं०] बंदरगाह।

पोल—स्त्री० [हिं० पोला] १. पोले होने की अवस्था या भाव। पोलापन। २. किसी चीज के अंदर का पोला स्थान। खाली जगह। अवकाश। जैसे—ढोल के अंदर पोल। ३. अंदर का आवश्यक भराव न होने या न रह जाने के फल-स्वरूप होनेवाली शून्यता। ३. लाक्षणिक अर्थ में, ऐसी स्थिति जो ऊपर से देखने में तो आडंबरपूर्ण हो, परंतु जिसमें सार या तत्त्व कुछ भी न हो।

मुहा०—(किसी की) पोल खुलना=भीतरी दुरवस्था, सारहीनता आदि प्रकट हो जाना। छिपा हुआ दोष या बुराई प्रकट हो जाना।

भंडा फूटना। (किसी की) पोल खोलना=ऐसा कार्य करना जिससे किसी के अंदर की दुरवस्था, दोष, सारहीनता आदि बातें सब पर प्रकट हो जायँ।

पुं० [सं० प्रतोली; प्रा० पओली] १. नगर का मुख्य प्रवेशद्वार। उदा०—अविनासी की पोल पर जी, मीराँ करै छै पुकार।—मीराँ। २. बड़ा दरवाजा। फाटक। ३. घर का आँगन। सहन।

पुं० [सं०√पुल् (उठना, महत्त्व का होना)+ण] एक प्रकार का फुलका। पोली।

पोलक—पुं० [हिं० पूला] लंबे बाँस के छोर पर चरखी में बँधा हुआ पयाल जिसे लुक की तरह जलाकर मस्त हाथी को डराते और वश में करते हैं।

पोलच(ा)—पुं० [हिं० पोल] १. वह परती भूमि जो पिछले वर्ष रबी बोने के पहले जोती गई हो। जौनाल। २. ऐसा ऊसर जो बहुत दिनों से जोता-बोया न गया हो।

पोला—वि० [हिं० फूलना, या सं० पोल=फुलका] [स्त्री० पोली] १. जिसके अंदर कुछ न हो, खाली जगह या हवा ही हो। अंदर से खाली। खोखला। 'ठोस' का विपर्याय। जैसे—पोला छड़, पोली नली। २. जिसके नीचे का तल कड़ा या ठोस न हो। जिसके अंदर उचित या पूरा भराव न हो। जो कड़ा या ठोस न हो। जैसे—पोली जमीन। ३. जिसमें विशेष तत्त्व या सार न हो। निस्सार और इसी लिए प्रायः निरर्थक या रद्दी। थोथा।

पुं० [देश०] एक प्रकार का छोटा पेड़ जिसकी छाल से रस्सी बनाई जाती है। इसकी लकड़ी साफ और नरम होती है।

†पुं०=पूला।

पोलाद†—पुं०=फौलाद।

पोलारी—स्त्री० [हिं० पोल] छेनी के आकार का एक छोटा औजार जिससे सुनार कंगन, घुँघुरु आदि के दाने बनाते हैं।

पोलाव—पुं०=पुलाव।

पोलिया—स्त्री० [हिं० पोला] पैरों में पहनने का एक प्रकार का पोला गहना।

†पुं०=पौरिया।

पोली—स्त्री० [सं०√पुल्+ण+ङीष्] एक प्रकार की पूरी।

स्त्री० [देश०] जंगली कुसुम या बर्रे जिसका तेल मोमजामा बनाने के काम में आता है।

पोलीड़ा—पुं० [हिं० पोल=फाटक] फाटक पर पहरा देनेवाला दरबान। (राज०)

पोलो—पुं० [अं०] घोड़ों पर चढ़कर खेला जानेवाला गेंद का खेल। चौगान।

पोवना—स०=पोना।

पोश—वि० [फा०] (शब्दों के अंत में प्रत्यय के रूप में लगकर) १. छिपाने या ढकनेवाला। जैसे—मेजपोश, तख्तपोश आदि। २. पहननेवाला। जैसे—सफेदपोश।

पुं० सामने से हटाने का संकेत जिसका अर्थ है—बचो, हट जाओ।

पोशाक—स्त्री० [फा० पोश या पोशिश से उर्दू] १. पहनने के कपड़े। परिधान। २. वे कपड़े जो किसी प्रदेश के रहनेवाले विशेष रूप से पहनते हों। पहनावा।

पोशाका—पुं० [फा० पोशाकः] १. एक प्रकार का कपड़ा जो गाढ़े से महीन और तनजेब से मोटा होता है। २. अच्छा या बढ़िया कपड़ा।

पोशाकी—वि० [हिं० पोशाक] पोशाक या पहनावे से संबंध रखनेवाला।

स्त्री० वेतन के अतिरिक्त वह धन जो नौकरों को नियमित रूप से अथवा विशिष्ट अवसरों पर अपनी पोशाक या पहनने के कपड़े बनवाने के लिए दिया जाता है।

पोशीदगी—स्त्री० [फा०] पोशीदा (छिपा हुआ) होने की अवस्था या भाव। गुप्ति। छिपाव।

पोशीदा—वि० [फा० पोशीदः] १. ढका या ढाँका हुआ। २. छिपा या छिपाया हुआ। ३. गुप्त।

पोष—पुं० [सं०√पुष् (पुष्टि)+घञ्] १. पोषण। पुष्टि। २. अभ्युदय। उन्नति। ३. बढ़ती। वृद्धि। ४. धन-संपत्ति। ५. तुष्टि। तृप्ति।

पोषक—पुं० [सं०√पुष्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० पोषिका] दे० 'विटामिन'।

पोषक-तत्त्व—पुं० [सं० कर्म० स०] दे० 'विटामिन'।

पोषण—पुं० [सं०√पुष्+ल्युट्—अन] [वि० पोषित, पुष्ट, पोषणीय, पोष्य] १. किसी को इस उद्देश्य से खिलाते-पिलाते और देखते-भालते रहना कि वह सुखपूर्वक जीवन बिता सके, और ठीक तरह से बढ़ता चले। २. किसी वस्तु में आवश्यक और उपयोगी तत्त्व पहुँचाकर उसे अच्छी तरह से बढ़ाना और पुष्ट करना। ३. किसी रूप में बढ़ाने की क्रिया या भाव। वर्धन। (मेन्टेनेन्स, उक्त तीनों अर्थों में) ४. किसी काम या बात की पुष्टि या समर्थन। जैसे—(क) किसी के मत का पोषण करना। (ख) किसी का पृष्ठ-पोषण करना।

पोषण-वृत्ति—स्त्री० [सं० ष० त०] वह वृत्ति जो किसी को भरण-पोषण या जीविका-निर्वाह के लिए दी जाती हो। (मेन्टेनेन्स एलाउन्स)

पोषणीय—वि० [सं०√पुष्+अनीयर्] जिसका पोषण करना आवश्यक या उचित हो।

पोषध—पुं० [सं० उपवसथ-उपोषध-पोषध] उपवास व्रत। (बौद्ध)

पोषना—स०=पोसना।

पोषयिता (तृ)—वि०, पुं० [सं०√पुष्+णिच्+तृच्]=पोषक।

पोषाहार—पुं० [सं० पोष-आहार, ष० त०] ऐसा आहार या खाद्य पदार्थ का ऐसा तत्त्व जिससे प्राणियों के शरीर की पोषण और वर्धन होता है। (न्यूट्रिशन)

पोषित—भू० कृ० [सं०√पुष्+णिच्+क्त] १. जिसका पोषण किया गया हो अथवा हुआ हो। २. पाला हुआ। पालित।

पोष्टा (ष्टृ)—वि० [सं०√पुष्+तृच्]=पोषक।

पोष्य—वि० [सं०√पुष्+ण्यत्] १. जिसका पालन-पोषण करना आवश्यक या उचित हो। २. जिसका पालन-पोषण किया जाने को हो। ३. पाला हुआ अर्थात् गोद लिया हुआ। जैसे—पोष्य पुत्र।

पुं० नौकर। सेवक।

पोष्य-वर्ग—पुं० [ष० त०] ऐसे संबंधित लोग जिनका भरण-पोषण तथा रक्षण आवश्यक रूप से करना [illegible] हो।

पोस—पुं० [सं० पोषण; हिं० [illegible]] १. पालने-पोसने की क्रिया या भाव। २. पा[illegible] फलस्वरूप होनेवाली पारस्परिक ममता या

स्नेह। वह स्थिति जिसमें किसी का ठीक तरह से पालन-पोषण होता हो। **मुहा०—पोस मानना**=उक्त प्रकार की स्थिति को अनुकूल और हितकर समझकर उसमें शांति और सुखपूर्वक रहना। जैसे—(क) साधारणतः सभी कुत्ते पोस मानते हैं। (ख) यहाँ की जमीन में कपास के पौधे पोस नहीं मानते।

विशेष—जीव-जन्तुओं के सम्बन्ध में इस शब्द के अन्तर्गत पालनकर्ता या पोषक के प्रति कृतज्ञ और निष्ठ रहने का भाव भी सम्मिलित रहता है।

†पुं० [फा० पोश] पहनावा। पोशाक।

पोसन*—पुं०=पोषण।

पोसना—स० [सं० पोषण] १. पोषण अर्थात् पालन या रक्षा करना। पालना। २. पशु-पक्षी आदि में से किसी को अपने पास रखकर उसका पालन करना। जैसे—कुत्ता या तोता पोसना। ३. लाक्षणिक रूप में कोई दुर्व्यसन आदि जान-बूझकर अपने साथ लगाये रखना और उससे बचने या उसे दूर करने का कोई विशेष प्रयत्न न करना। (परिहास और व्यंग्य)

पोस्ट—स्त्री० [अं०] १. जगह। स्थान। २. कर्मचारी या कार्यकर्ता का पद। ३. नौकरी। ४. डाक विभाग।

पोस्ट-आफिस—पुं० [अं०] डाकघर। डाकखाना।

पोस्टकार्ड—पुं० [अं०] टिकट लगा हुआ मोटे कागज का वह टुकड़ा जिस पर पत्र लिखकर डाक के द्वारा कहीं भेजते हैं।

पोस्टमार्टम—पुं० [अं०]=शव-परीक्षा।

पोस्टमास्टर—पुं० [अं०] किसी डाकघर का सबसे बड़ा और प्रधान अधिकारी।

पोस्टमैन—पुं० [अं०] डाक में आई चिट्ठियाँ आदि घर-घर पहुँचनेवाला कर्मचारी। डाकिया। चिट्ठीरसाँ।

पोस्टर—पुं० [अं०] किसी बड़े कागज पर मोटे अक्षरों में छपी हुई वह सूचना जो जनता की जानकारी के लिए जगह-जगह दीवारों आदि पर चिपकाई जाती है। प्रज्ञापक।

पोस्टल—वि० [अं०] १. डाक-विभाग-संबंधी। जैसे—पोस्टल गाइड। २. डाक विभाग के द्वारा आने या जानेवाला। जैसे—पोस्टल आर्डर।

पोस्टल आर्डर—पुं० [अं०] कहीं कुछ रुपए भेजने की एक विशिष्ट प्रकार की व्यवस्था (मनी आर्डर से भिन्न) जिसमें निश्चित मूल्य का कोई ऐसा कागज खरीदकर कहीं भेजा जाता है, जिसका प्राप्य धन किसी डाकखाने से लिया जा सकता है।

पोस्टल-गाइड—स्त्री० [अं०] वह पुस्तक जिसमें डाक द्वारा भेजे जानेवाले पत्रों, पारसलों आदि के संबंध में आवश्यक निर्देश होते हैं।

पोस्टेज—पुं० [अं०] डाक द्वारा चिट्ठी, पारसल आदि भेजने का महसूल। डाकव्यय।

पोस्टेज स्टाप—पुं० [अं०] डाक का वह टिकट जो डाक द्वारा भेजी जानेवाली चीज का महसूल चुकाने के लिए उस चीज पर चिपकाया या लगाया जाता है।

पोस्त—पुं० [फा०] १. खाल। त्वचा। २. पेड़ की छाल। ३. पोस्ते का डोडा। ४. दे० '[illegible]'। ५. पिशुनता।

पोस्ता—पुं० [फा० पोस्त] एक प्रकार का पौधा जिसके डोडों से अफीम तैयार की जाती है।

पोस्ती—पुं० [फा०] १. अफीम खानेवाला। २. मदक पीनेवाला। ३. वह जो बहुत बड़ा अकर्मण्य तथा आलसी हो। ४. गुड़िया के आकार का कागज का एक खिलौना जिसके पेंदे में मिट्टी का ठोस गोला रहता है। यह फेंकने पर जमीन पर खड़ा होकर कुछ देर तक झूमता रहता है। इसे 'मतवाला' और 'खड़े खाँ' भी कहते हैं।

पोस्तीन—पुं० [फा०] १. गरम और मुलायम रोएँवाले लोमड़ी, सूअर आदि कुछ जानवरों की खाल जिसे कई रूपों में बना और सीकर पामीर, तुर्किस्तान और मध्य एशिया के लोग पहनते थे, और जिसका प्रचलन अब सरदी के दिनों में अन्य स्थानों में भी होने लगा है। २. उक्त खाल का बना हुआ कोई पहनावा। ३. पुस्तक की जिल्द के भीतरी भाग पर चिपकाया जानेवाला कागज।

पोहना†—स० [सं० प्रोत, प्रा० पोइइ पोय+ना (प्रत्य०)] १. पिरोना। गूँथना। २. कोई चीज पिरोने के लिए उसमें आर-पार छेद करना। ३. ऊपर से लेप लगाना। पोतना। ४. घुमाना। धँसाना। ५. जमाकर बैठाना। ६. घिसना। रगड़ना।

वि० [स्त्री० पोहनी] पोहनेवाला।

†स०=पोना। (देखें)

पोहमी†—स्त्री०=पुहमी (पृथ्वी)।

पोहर†—पुं० [हिं० पोहा] १. वह स्थान जहाँ पशु चरते हैं। २. पशुओं के खाने का चारा। चरी।

पोहा†—पुं० [सं० पशु] पशु। चौपाया।

पोहिया—पुं० [हिं० पोह] चरवाहा।

पौंचा—पुं० [हिं० पाँच] साढ़े पाँच का पहाड़ा।

पौंड—पुं०=पाउन्ड (अंग्रेजी सिक्का)।

पौंडना†—अ०=पौडना (तैरना)।

पौंडरीक—पुं० [सं० पुंडरीक+अण्] १. स्थलपद्म। पुंडरीक। २. एक प्रकार का कुष्ठ रोग जिसमें कमल के पत्ते के रंग का-सा वर्ण हो जाता है। ३. एक प्रकार का यज्ञ।

पौंडर्य्य—पुं० [सं० पुण्डर्य+अण्] स्थलपद्म।

पौंड़ा—पुं०=पौंढ़ा (गन्ना)।

पौंड़ी†—स्त्री०=पौरी।

पौंड्र—वि० [सं० पुण्ड्र+अण्] पुंड्र देश का।

पुं० १. पुंड्र देश का निवासी। २. पुंड्र देश का बना रेशमी कपड़ा जो किसी समय बहुत प्रसिद्ध था। ३. भीमसेन के शंख का नाम। ४. मनु के अनुसार एक प्राचीन जाति जो पहले क्षत्रिय थी पर पीछे संस्कार भ्रष्ट होकर वृषल हो गई थी। ५. दे० 'पौंड्रक'।

पौंड्रक—पुं० [सं० पुण्ड्रक+अण्] ? एक प्रकार का मोटा गन्ना। पौंढ़ा। २. पुंड्र नामक प्राचीन जाति। ३. पुंड्र देश का एक राजा जो जरासंध का संबंधी था; और जिसे लोग मिथ्या वासुदेव भी कहते थे।

पौंड्रिक—पुं० [सं० पुण्ड्र+ठञ्—इक] १. मोटा गन्ना। पौंढ़ा। २. लवा नामक पक्षी। ३. पुंड्र नामक देश। ४. एक गोत्र-प्रवर्तक ऋषि।

पौंढ़ई†—वि०, पुं०=गन्नई (रंग)।

पौंढ़ना—स०=पौढ़ना।

पौंढ़ा†—पुं० [सं० पौंड्रक] एक तरह का कड़े छिलकेवाला मोटा गन्ना।

पौंद†—स्त्री०=पोंद।

पौंरना—अ० [सं० प्लवन] तैरना।

पौंरि—स्त्री०=पौरि या पौरी।

पौंरिया†—पुं०=पौरिया।

पौंश्चलेय—पुं० [सं० पुंश्चली+ढक्—एय] पुंश्चली या कुलटा का पुत्र।

पौंश्चल्य—पुं० [सं० पुंश्चली+ष्यञ्] पुंश्चली होने की अवस्था या भाव। स्त्री का व्यभिचार। छिनाला।

पौ—स्त्री० [सं० पाद, प्रा० पाय, पाव=किरन] १. ज्योति या प्रकाश की रेखा। २. सूर्य निकलने से पहले दिखाई देनेवाला हलका प्रकाश।

मुहा०—**पौ फटना**=प्रभात के समय सूर्योदय के सामीप्य के कारण कुछ कुछ उजाला दिखाई पड़ना।

३. पैर। ४. जड़। मूल। ५. पाँसे का वह तल जिस पर एक बिंदी रहती है।

मुहा०—**पौ बारह पड़ना**=(तीन पाँसों के खेल में) पाँसों का इस प्रकार पड़ना कि एक पाँसे में पौ और बाकी दोनों पाँसों में छः छः के दाँव (६+६+१) आएँ। (यह जीत का सबसे बड़ा दाँव होता है)। **(किसी की) पौ बारह होना**=(क) बहुत बड़ी जीत या लाभ होना। (ख) बहुत अधिक लाभ या सौभाग्य का सुयोग आना।

पुं० [सं० प्रपा] पौसला (प्याऊ)।

पौआ—पुं० [सं० पाद; हिं० पाव] १. एक सेर का चौथाई भाग। सेर का चतुर्थांश। पाव। २. पाव भर के मान का बटखरा। ३. नापने का वह बरतन जिसमें कोई तरल पदार्थ पाव भर आता हो। जैसे—तेल या दूध नापने का पौआ।

पौगंड—पुं० [सं० पोगण्ड+अण्] पाँचवें वर्ष से लेकर सोलहवें वर्ष तक की अवस्था।

पौटिया†—पुं० [?] हिन्दुओं में एक जाति जो चाँदी-सोने के तार आदि बनाने का काम करती है।

पौठ—स्त्री० [सं० प्रवर्त्त; प्रा० पवट्ट] ब्रिटिश शासन में, जोत की एक रीति जिसके अनुसार प्रति वर्ष जोतने का अधिकार नियमानुसार बदलता रहता था। मेजवारी।

विशेष—इसमें गाँव के सब किसानों को जोतने के लिए जमीन मिलती रहती थी।

पौडर†—पुं०=पाउडर। (देखें)

पौड़ी—स्त्री० [हिं० पाँव+ड़ी] १. लकड़ी का वह मोढ़ा जिस पर मदारी बंदर को नचाते समय बैठाता है। २. दे० 'पाँवड़ी'।

स्त्री० [?] एक प्रकार की कड़ी मिट्टी।

पौढ़ना†—अ० [सं० प्रलोठन, ?] आराम करने या सोने के लिए लेटना।

अ० [सं० प्लवन, प्रा० पव्वलन] आगे पीछे हिलना। झूलना। जैसे—झूले का पौढ़ना।

†अ०=पैरना (तैरना)।

पौढ़ाना—स० [हिं० पौढ़ना] १. किसी को पौढ़ने में प्रवृत्त करना। लेटाना या सुलाना। २. इधर-उधर हिलाना, डुलाना। झुलाना। माल की तौल तथा बटखरों आदि की जाँच या देख-रेख।

पौताना—पुं० [हिं० पाँव] १. जुलाहों के करघे में लकड़ी का एक औजार जो चार अंगुल लंबा और चौकोर होता है। २. दे० 'पैताना'।

पौतिक—वि० [सं० पूतिक+अण्] (घाव या फोड़ा) जो पूति अर्थात् विषाक्त कीटाणुओं के उत्पन्न होने से सड़ने लगा हो। पूति-दूषित। (सेप्टिक)

पौतिनासिक्य—पुं० [सं० पूति-नासिका, मध्य० स०,+ष्यञ्] पीनस रोग।

पौती†—स्त्री०=पिटारी।

पौत्तलिक—वि० [सं० पुत्तलिका+अण्] १. पुत्तलिका संबंधी। पुतलों या पुतलियों का। जैसे—पौत्तलिक अभिनय या नृत्य। २. मूर्तिपूजक।

पौत्तिक—पुं० [सं० पुत्तिका+अण्] पुत्तिका नाम की मधु-मक्खी द्वारा इकट्ठा किया हुआ मधु जो घी के समान गाढ़ा होता है।

पौत्र—पुं० [सं० पुत्र+अण्] [स्त्री० पौत्री] लड़के का लड़का। पोता।

पौत्रिक—वि० [सं० पुत्र+ठक्—इक] १. पुत्र-संबंधी। २. पौत्र-संबंधी।

पौत्रिकेय—पुं० [सं० पुत्रिका+ढक्—एय] अपना उत्तराधिकारी बनाने के लिए पुत्र के स्थान पर माना हुआ कन्या का पुत्र।

पौत्री—स्त्री० [सं० पुत्र+अञ्+ङीप्] १. दुर्गा। २. 'पौत्र' का स्त्री० लड़के की लड़की। पोती।

पौद—स्त्री० [सं० पोत] १. नया निकलता हुआ छोटा पौधा। २. कुछ विशिष्ट प्रकार के पौधों और वृक्षों का वह नया कल्ला जो एक स्थान से उखाड़कर दूसरे स्थान पर लगाया जाता हो।

क्रि० प्र०—जमाना।—लगाना।

३. उपज। पैदावार। ४. नई पीढ़ी जिसमें अधिकतर बच्चे और नवयुवक ही होते हैं।

स्त्री० [सं० पाद+पट] पाँवड़ा।

पौदर—स्त्री० [हिं० पाँव+डालना] १. चलने के समय पैर का चिह्न। २. पैदल चलने का रास्ता। ३. पगडंडी। ४. वह रास्ता जिस पर कोल्हू, मोट आदि के बैल चक्कर लगाते या आते-जाते हैं।

पौदा†—पुं०=पौधा।

पौद्गलिक—वि० [सं० पुद्गल+ठक्—इक] १ पुद्गल-संबंधी। द्रव्य या भूत-संबंधी। २. जीव-संबंधी। ३. जो सांसारिक सुख-भोगों में लिप्त हो।

पौध†—स्त्री०=पौद। (देखें)

पौधन—स्त्री० [सं० पयस्+आधान] मिट्टी का वह बरतन जिसमें भोजन रखकर परोसा जाता है।

पौधा—पुं० [सं० पोत] १. वृक्ष का वह आरंभिक रूप; जो दो-तीन हाथ तक ऊँचा होता है तथा एक स्थान से उखाड़कर दूसरे स्थान पर लगाया जा सकता है। जैसे—आम या जामुन का पौधा। २. वे वनस्पतियाँ (लताओं, पेड़ों और झाड़ियों से भिन्न) जो दो-तीन हाथ तक ऊपर बढ़ती हैं तथा जिनके तने और शाखाएँ बहुत कोमल होते हैं। जैसे—गुलाब या बेले का पौधा। ३. रेशम या सूत का वह फुंदना जो बुलबुल पालनेवाले लोग सुन्दरता बढ़ाने के लिए बुलबुल की पेटी में बाँध देते हैं। ४. किसी प्रकार का झब्बेदार फुंदना।

पौधि†—स्त्री० १.=पौधा। [illegible] पौद।

पौनःपुनिक—वि० [सं० पुनः पुनः+ठञ् —इक] पुनः पुनः या फिर फिर होनेवाला। जो बार बार होता हो।

पौनःपुन्य—पुं० [सं० पुनः पुनः +ष्यञ्] कोई काम या बात बार-बार होने की अवस्था या भाव।

पौन—पुं० [सं० पवन] १. वायु। हवा। २. जीव या प्राण जिसका रूप वायु के समान सूक्ष्म माना गया है। ३. भूत-प्रेत।

मुहा०—(किसी पर) पौन बैठाना=किसी पर भूत-प्रेत की बाधा उपस्थित करना।

४. जादू-टोना जिसका प्रभाव लोक-विश्वास के अनुसार वायु के संसर्ग से दूर तक पहुँचता है।

मुहा०—पौन चलाना या मारना=जादू या टोना चलाना। मूठ चलाना।

वि० [सं० पाद+ऊन=पादोन, प्रा० पाओन] पूरे एक में से चौथाई कम। तीन चौथाई। जैसे—पौन घंटे में काम हो जायगा।

पौनरुक्त—पुं० [सं० पुनरुक्त+अण्] वह अवस्था जिसमें कोई बात दो बार अर्थात् फिर से कही गई हो। पुनरुक्त होने की अवस्था या भाव।

पौनर्भव—वि० [सं० पुनर्भू+अण्] [स्त्री० पौनर्भवा] १. उस विधवा से संबंध रखनेवाला जिसने दूसरा विवाह कर लिया हो। २. पुनर्भू से उत्पन्न या प्राप्त।

पुं० १. विधवा के दूसरे पति से उत्पन्न पुत्र। २. ऐसा व्यक्ति जिसने किसी विधवा अथवा किसी के द्वारा परित्यक्ता स्त्री से विवाह किया हो।

पौनर्भवा—स्त्री० [सं० पौनर्भव+टाप्] वह कन्या जिसका किसी के साथ एक बार विवाह संस्कार हो चुका हो और फिर दूसरी बार किसी दूसरे के साथ विवाह हुआ हो।

पौनर्वादिक—वि० [सं० पुनर्वाद+ठक्—इक] १. पुनर्वाद-संबंधी। पुनर्वाद का। (एपेलेट) जैसे—पौनर्वादिक न्यायालय। (ऐपेलेट कोर्ट) २. पुनर्वाद के विचार के परिणाम स्वरूप होनेवाला। जैसे—पौनर्वादिक आज्ञा। (एपेलेट आर्डर)

पौन-सलाई—स्त्री० [हिं०] एक प्रकार का बेलन जिस पर सूत कातने के पहले रूई तैयार की जाती है।

पौना—पुं० [सं० पाद+ऊन, प्रा० पाव+ऊन=पाऊन] पौने का पहाड़ा।

वि०=पौन (तीन-चौथाई)।

†पुं० [?] काठ, लोहे आदि की एक प्रकार की कलछी।

पौनार—स्त्री० [सं० पद्मनाल] कमल के फूल की नाल या डंठल जो बहुत नरम और कोमल होता है।

पौनारी†—स्त्री०=पौनार (पद्मनाल)। उदा०—भुजन छपानि कँवल पौनारी।—जायसी।

पौनिया†—पुं० [हिं० पौना] छोटे अरज या कम चौड़ाई का एक प्रकार का कपड़ा जिसका थान प्रायः थान के साधारण मान का तीन-चौथाई होता था।

पौनी—स्त्री० [हिं० 'पौना' का स्त्री० अल्पा०] छोटा पौना या एक प्रकार की कलछी।

पुं० [हिं० पाव[illegible]] कुम्हा[illegible], [illegible]बी, नाई आदि वे लोग जिन्हें मंगल अवसरों पर नेग मिलता है। [illegible]

पौने—वि० [हिं० पौन] हिं० 'पौन' या 'पौना' का वह रूप जो उसे संख्यावाचक शब्दों के पहले लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—पौने चार रुपए, पौने दस बजे।

पद—पौने सोलह आने=बहुत अधिक अंशों में, बहुत अधिक रूप में। जैसे—आपकी बात पौने सोलह आने ठीक है; अर्थात् उसके ठीक न होने की बहुत कम संभावना है।

मुहा०—(कोई चीज) औने-पौने करना=थोड़ा-बहुत जो दाम मिले, उसी पर बेच डालना।

पौमान†—पुं० [?] जलाशय।

पुं०=पवमान।

पौरंदर—पुं० [सं० पुरन्दर+अण्] ज्येष्ठा नक्षत्र।

वि० पुरन्दर-संबंधी। पुरन्दर का।

पौरंध्र—वि० [सं० पुरन्ध्री+अण्] स्त्री-संबंधी।

पौर—वि० [सं० पुर+अण्] १. पुर या नगर-संबंधी। पुर का। २. पुर में उत्पन्न होनेवाला। ३. पूर्वकाल या पूर्व दिशा में उत्पन्न। ४. सदा पेट भरने की चिंता में रहनेवाला। पेटू।

पुं० [सं०] १. नगर-निवासी। नागरिक। २. पुरु राजा का पुत्र। ३. रोहिष या रूसा नाम की घास। ४. नखी नामक गन्ध-द्रव्य।

†पुं०=प्रहर।

†स्त्री० [हिं० पौरि] १. ड्योढ़ी। २. दरवाजा।

पौरक—पुं० [सं० पौर√कै+क] १. पुर या नगर के समीप का बाग। २. घर के आस-पास का बगीचा।

पौर-जन—पुं० [कर्म० स०] नागरिक।

पौर-जानपद—पुं० [कर्म० स०] प्राचीन भारतीय राज्य तंत्र में पुर या नगर और जनपद या बाकी देश के प्रतिनिधियों की सभाओं का सम्मिलित रूप।

पौर-मुख्य—पुं० [स० त०] नगर का प्रमुख या प्रधान।

पौर-लेखक—पुं० [ष० त०] प्राचीन भारतीय राजतंत्र में वह अधिकारी जिसके पास पुर या नगर के लेख्यों या दस्तावेजों की नकल और विवरण रहता था।

पौरव—वि० [स० पुरु+अण्] [स्त्री० पौरवी] १. पुरु-संबंधी। पुरु का। २. पुरु के वंश का। पुरु से उत्पन्न।

पुं० १. पुरु का वंशज या संतान। २. महाभारत के अनुसार उत्तर-पूर्व दिशा का एक देश। ३. उक्त देश का निवासी।

पौरवी—स्त्री० [सं० पौरव+ङीप्] १. युधिष्ठिर की एक स्त्री का नाम। २. वासुदेव की एक स्त्री। ३. संगीत में एक प्रकार की मूर्च्छना, इसका सरगम इस प्रकार है—ध, नि, स, रे, गम, प। प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे।

पौर-वृद्ध—पुं० [स० त०] प्रमुख और वयोवृद्ध तथा प्रतिष्ठित नागरिक।

पौर-सख्य—पुं० [स० त०] एक ही पुर या नगर में रहनेवाले लोगों में उत्पन्न होनेवाली मित्रता या सुहृदता।

पौरस्त्य—वि० [सं० पुरस्+त्यक्] १. पूर्वी दिशा या पूर्वी देशों से संबंध रखने या उनमें होनेवाला। २. पहले का पुराना।

पौरस्त्री—स्त्री० [सं०कर्म० स०] १. पुर या नगर में रहनेवाली स्त्री।

'ग्राम्या' का विपर्याय। २. पढ़ी-लिखी या सुशील स्त्री। ३. अंतःपुर में रहनेवाली स्त्री।

पौरा—पुं० [हिं० पहरा या पैर?] शुभाशुभ फलों के विचार से, घर में परिवार के सदस्य के रूप में किसी नये व्यक्ति का होनेवाला आगमन। जैसे—(क) बहू का पौरा अच्छा है, जब से आई है, तब से घर में बरकत दिखाई देने लगी है। (ख) इस नये शिष्य का पौरा अनर्थ-कारक सिद्ध हुआ।

पौराणिक—वि० [सं० पुराण+ठक्—इक] [स्त्री० पौराणिकी] १. पुराण-संबंधी। पुराण या पुराणों का। २. जिसका उल्लेख पुराणों में हुआ हो। जैसे—पौराणिक आख्यान या कथा। ३. प्राचीन काल का। पुराना।

पुं० १. वह ब्राह्मण जो पुराणों का पंडित हो, और पुराणों की कथाएँ लोगों को सुनाता हो। २. अठारह की संख्या का सूचक शब्द।

पौरि—स्त्री०=पौरी।

पौरिक—पुं० [सं० पुर+ठक्—इक] १. पुर में रहनेवाला व्यक्ति। २. पुर का प्रधान शासनिक अधिकारी। ३. दक्षिण भारत का एक प्राचीन देश।

वि० पुर-संबंधी। पुर का।

पौरिया—पुं० [हिं० पौरी] द्वारपाल। ड्योढ़ीदार। दरबान।

पौरी—स्त्री० [सं० प्रतोली; प्रा० पओली] घर के मुख्य द्वार के अन्दर का वह भाग जिसमें से होकर घर के कमरों, आँगन आदि में जाया जाता है। ड्योढ़ी।

पौरुकुत्स—पुं० [सं० पुरुकुत्स+अण्] पुरुकुत्स के गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति।

पौरुष—वि० [सं० पुरुष+अण्] १. पुरुष या मनुष्य से संबंध रखनेवाला। पुरुष का। पुरुष-संबंधी। २. पुरुष की शक्ति विशेषतः शारीरिक शक्ति से संबंध रखनेवाला।

पुं० १. पुरुष होने की अवस्था या भाव। २. पुरुषों में सामान्य रूप से होनेवाले गुण तथा विशेषताएँ। जैसे—बल, शौर्य, साहस आदि। ३. पुरुष का कर्म। पुरुषार्थ। ४. पुरुष की लिंगेंद्रिय। ५. वीर्य। शुक्र। ६. ऊँचाई या गहराई की 'पुरसा' नामक माप।

पौरुषी—स्त्री० [सं० पौरुष+ङीप्] स्त्री।

पौरुषेय—वि० [सं० पुरुष+ढञ्—एय] १. पुरुष-संबंधी। पुरुष का। २. पुरुष का किया, बनाया या रचा हुआ। ३. आध्यात्मिक।

पुं० १. पुरुष का काम। २. पुरुषों या मनुष्यों का समूह। जन-समुदाय। ३. वह मजदूर जो दैनिक वेतन पर काम करता हो।

पौरुष्य—पुं० [सं० पुरुष+ष्यञ्]=पौरुष।

पौरुहूत—वि० [सं० पुरुहूत+अण्] इंद्र-संबंधी।

पौरू†—स्त्री० [देश०] मिट्टी के विचार से भूमि का एक भेद।

पौरोगव—पुं० [सं० पुरस्-गो, ब० स०; पुरोगु+अण्] राजभवन की पाकशाला का प्रधान अधिकारी।

पौरोडाश—वि० [सं० पुरोडाश+अण्] पुरोडाश-संबंधी। पुरोडाश का।

पुं० पुरोडाश के समर्पण के समय पढ़ा जानेवाला एक मंत्र।

पौरोडाशिक—पुं० [सं० पुरोडाश+ठक्—इक] पुरोडाश नामक मंत्र का पाठ करनेवाला ऋत्विक।

३—७४

पौरोधस—पुं० [सं० पुरोधस्+अण्] १. पुरोहित। २. पुरोहित का काम या पद।

पौरोभाग्य—पुं० [सं० पुरोभागिन्+ष्यञ्] १. दूसरों के दोष दिखलाना। २. ईर्ष्या या द्वेषपूर्ण भावना। ३. ईर्ष्या या द्वेष-वश किया हुआ कार्य।

पौरोहित्य—पुं० [सं० पुरोहित+ष्यञ्] १. पुरोहित होने की अवस्था या भाव। २. पुरोहित का काम, कृत्य या वृत्ति। ३. पुरोहितों का वर्ग या समाज। (प्राइस्टहुड)

पौर्णमास—पुं० [सं० पौर्णमासी+अण्] प्राचीन भारत में पूर्णिमा के दिन किया जानेवाला एक तरह का यज्ञ।

वि० पूर्ण चन्द्र से संबंध रखनेवाला।

पौर्णमासिक—वि० [सं० पूर्णमासी+ठञ्—इक] १. पूर्णिमा-संबंधी। २. पूर्णिमा के दिन होनेवाला।

पौर्णमासी—स्त्री० [सं० पूर्णमास+अण्—ङीप्] पूर्णिमा।

पौर्णमास्य—पुं० [सं० पौर्णमासी+यत्] पूर्णिमा के दिन होनेवाले यज्ञ आदि।

पौर्वात्य—वि० [सं० पूर्व+त्यक्] 'पाश्चात्य' के अनुकरण पर बना हुआ असिद्ध शब्द। शुद्ध रूप पौरस्त्य (पूर्व दिशा का)।

पौर्वापर्य—पुं० [सं० पूर्वापर+ष्यञ्] १. पूर्व और पर अर्थात् आगे और पीछे होने की अवस्था या भाव। पूर्वापरता। २. अनुक्रम। सिलसिला।

पौर्वार्द्धिक—वि० [सं० पूर्वार्द्ध+ठञ्—इक] पूर्वार्द्ध-संबंधी।

पौर्वाह्णिक—वि० [सं० पूर्वाह्ण+ठञ्—इक] [स्त्री० पौर्वाह्णिकी] पूर्वाह्ण संबंधी। पूर्वाह्ण का।

पौर्विक—वि० [सं० पूर्व+ठञ्—इक] १. जो पूर्व में अर्थात् पहले हुआ हो। २. जो पूर्व में अर्थात् पहले किया जाने को हो।

पौल—स्त्री०=पोल (बड़ा द्वार)।

पौलना*—स० [?] काटना।

†पुं०=पौला (भद्दा जूता)।

पौलस्ती—स्त्री० [पुलस्त+अण्, ङीप्] रावण की बहन, शूर्पणखा।

पौलस्त्य—पुं० [सं० पुलस्त+यञ्] [स्त्री० पौलस्त्यी] १. पुलस्त्य का पुत्र या उनके वंश का पुरुष। २. रावण, विभीषण और कुंभकर्ण। ३. कुबेर। ४. चन्द्रमा।

पौला—पुं० [हिं० पाँव, पाउ+ला (प्रत्य०)] एक प्रकार की खड़ाऊँ जिसमें खूँटी नहीं होती, बल्कि छेद में बँधी हुई रस्सी में अँगूठा फँसा रहता है।

पुं० [हिं० पाँव+ला (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० पौली] १. एक तरह का देहाती भद्दा जूता। (पश्चिम) २. जूता।

पौलिया†—पुं०=पौरिया।

पौलिश—वि० [यू० पालस=एक यूनानी ज्योतिषी] पुलिस या पालस नामक यूनानी ज्योतिषी का (ज्योतिषिक सिद्धान्त)।

पौली—स्त्री० [सं० प्रतोली; पा० पओली] पौरी। ड्योढ़ी।

स्त्री० [हिं० पाँव; पाउ+ली (प्रत्य०)] १. पैर का वह भाग जो खड़े होने पर जमीन से [illegible] लगा रहता है। एड़ी से लेकर उँगलियों तक का भाग। पैर क[illegible] से [illegible] जा [illegible] ने [illegible] पर पड़नेवाला पैर का निशान। पद-[illegible] सहायक बन[illegible] जो

पौलुषि—पुं० [सं० पुलुष+इञ्] १. पुलुवंश में उत्पन्न व्यक्ति। २. सत्ययज्ञ नामक एक ऋषि जो पुलु ऋषि के वंश में उत्पन्न हुए थे। (शतपथ ब्राह्मण)

पौलोम—वि० [सं० पुलोमन्+अण्] [स्त्री० पौलोमी] पुलोम-संबंधी। पुलोम का।

पुं० १. पुलोमा ऋषि का अपत्य या वंशज। २. उपनिषद काल में, दैत्यों की एक जाति या वर्ग।

पौलोमी—स्त्री० [सं० पौलोम+ङीप्] १. इंद्राणी। २. महर्षि भृगु की पत्नी।

पौल्कस—वि० [सं० पुल्कस+अण्] पुल्कस (एक संकर जाति) जाति संबंधी। पुल्कसों का।

पुं० पुल्कस जाति का व्यक्ति।

पौवा†—पुं०=पौआ। (देखें)

पौष—पुं० [सं० पुष्य+अण्, य—लोप] विक्रम संवत् का दसवाँ महीना। उसमें पड़नेवाली पूर्णमासी पुष्य नक्षत्र में होती है।

पौष्कर—वि० [सं० पुष्कर+अण्] पुष्कर-संबंधी। पुष्कर का।

पुं० १. पुष्करमूल । २. कमल की नाल। मृणाल। भसींड़। ३. स्थल-पद्म। ४. एरंड या रेंड़ की जड़।

पौष्कल—पुं० [सं० पुष्कल+अण्] एक तरह का अनाज।

पौष्कल्य—पुं० [सं० पुष्कल+ष्यञ्] १. पुष्कल होने की अवस्था या भाव। २. संपूर्णता।

पौष्टिक—वि० [सं० पुष्टि+ठक्—इक] १. शरीर का बल और वीर्य बढ़ाकर उसे पुष्ट करनेवाला (पदार्थ)। जैसे—पौष्टिक औषध, पौष्टिक भोजन।

पुं० १. ऐसे कर्म जिनसे धन, जन आदि की वृद्धि होती हो। २. वह कपड़ा जो बच्चे का मुंडन हो चुकने पर उसके सिर पर ओढ़ाया जाता है।

पौष्ण—वि० [सं० पूषन्+अण्, उपधा-लोप] पुषा देवता संबंधी। पूषा देवता का।

पुं० रेवती नक्षत्र।

पौष्प—वि० [सं० पुष्प+अण्] पुष्प-संबंधी। फूल का।

पुं० १. फूलों के रस से बनाया जानेवाला मद्य। २. पुष्प-रेणु। पराग।

पौष्पक—पुं० [सं० पुष्पक+अण्] पीतल के कसाव से तैयार किया जानेवाला एक तरह का अंजन। कुसुमांजन। पुष्पांजन।

पौसला—पुं० [सं० पयःशाला] वह स्थान जहाँ लोगों को परोपकार की दृष्टि से पानी पिलाया जाता है। प्याऊ।

क्रि० प्र०—चलाना।—बैठना।

पौसार—स्त्री० [हिं० पाँव] करघे में लकड़ी का वह डंडा जो ताने और राछ के नीचे लगा रहता है। इसी को दबाकर राछ ऊँची-नीची की जाती है।

पौ-सेरा—पुं० [हिं० पाव+सेर] पाव सेर की तौल या बटखरा।

पौहर† —पुं०=प्रहर।

पौहारी—वि० [सं० पयस्=दूध+आहार] जिसका आहार केवल दूध हो।

पुं० वह जो केवल दूध पीकर रहता हो, अन्न न खाता हो।

प्याऊ—वि० [सं० प्रपा, हिं० प्याना=पिलाना+ऊ (प्रत्य०)] पिलानेवाला। [illegible]

पुं० वह स्थान जहाँ गरमी के दिन[illegible] चलते प्यासे लोगों को पानी, शरबत, लस्सी आदि पिलाई जाती है।

प्याज—पुं० [फा० प्याज़] १. एक प्रसिद्ध छोटा क्षुप या पौधा जिसके सफेद रंग के फूल गुच्छे में लगते हैं। २. उक्त पौधे का कंद जो गोल गाँठ के रूप में होता है तथा जिसका स्वाद बहुत चरपरा या तीखा और गंध बहुत उग्र होती है। वैद्यक में यह बल तथा वीर्यवर्धक और वातघ्न माना जाता है।

प्याजी—वि० [फा० प्याजी] प्याज के ऊपरी छिलके के रंग का। हलका गुलाबी।

पुं० उक्त प्रकार का रंग।

प्यादा—पुं० [फा० पयादः] १. पैदल चलनेवाला व्यक्ति। पदाति। २. वह सैनिक जो पैदल चलता हो (सवार से भिन्न)। ३. दूत। ४. हरकारा। ५. शतरंज का एक मोहरा जो एक घर सीधा चलता और एक घर तिरछे मार करता है। पैदल।

वि० जो सवारी पर न हो, बल्कि पैरों से चल रहा हो।

प्याना†—स०=पिलाना।

प्यायित—वि० [सं० प्याय् (वृद्धि)+क्त] १. जिसकी वृद्धि हुई हो। बढ़ा हुआ। २. जिसकी शक्ति बढ़ गई हो। ३. जो मोटा हो गया हो। ४. जो तृप्त किया गया हो।

प्यार—पुं० [सं० प्रीति] १. किसी के प्रति होनेवाली आसक्तिपूर्ण या श्रद्धापूर्ण भावना। २. पुरुष की स्त्री के प्रति अथवा स्त्री की पुरुष के प्रति होनेवाली ऐसी आसक्तिपूर्ण भावना जो पारस्परिक आकर्षण के कारण होती है। प्रेम। मुहब्बत। ३. प्रेमपूर्वक किया जानेवाला आलिंगन, चुंबन आदि।

पुं० [सं० पियाल] अचार या पियाल नाम का वृक्ष जिसका बीज चिरौंजी है।

प्यारा—वि० [हिं० प्यार] [स्त्री० प्यारी] १. जो अच्छे, आकर्षण या सुंदर होने के कारण प्रेम-पूर्ण भाव का अधिकारी हो। प्रीतिपात्र। प्रिय। २. उक्त गुणों के कारण जिसे प्यार करने को जी चाहे। जो देखने में अच्छा और भला लगे। जैसे—प्यारा सा बच्चा उसकी गोद में था। ३. जिसके प्रति बहुत अधिक प्रेम, मोह या स्नेह हो। जैसे—जीवन सबको प्यारा होता है।

†पुं०=अमरूत (फल)।

प्यारा-फूली—पुं० [हिं० प्यार+फूलना] एक प्रकार का बढ़िया आम जो प्रायः दक्षिणी भारत में होता है।

प्याल†—पुं०=पयाल।

प्याला—पुं० [फा० पियालः] [स्त्री० अल्पा० प्याली] १. चीनी मिट्टी, धातु आदि का बना हुआ कटोरी के आकार का एक प्रसिद्ध बरतन जिसका ऊपरी भाग या मुँह नीचेवाले भाग या पेंदे की अपेक्षा कुछ अधिक चौड़ा होता है और जिसका व्यवहार साधारणतः चाय, शराब आदि पीने में होता है। जाम। २. उक्त पात्र में भरा हुआ तरल पदार्थ। **मुहा०—प्याला पीना या लेना**=मद्य पीना। शराब पीना। **(किसी चीज या बात का) प्याला पीना**=किसी चीज या बात से अपना अंतःकरण या मन अच्छी तरह ओत-प्रोत या पूर्ण करना। जैसे—पीले पीले पीले हरी नाम का प्याला। (गीत) **(किसी व्यक्ति का) प्याला भरना**=आयु या जीवन-काल पूर्ण होना। जीवन के दिन पूरे होना।

३. जुलाहों का मिट्टी का वह बरतन जिसमें वे नरी भिगोते हैं। ४. स्त्री का गर्भाशय।

मुहा०—प्याला बहना=गर्भपात होना। गर्भ गिरना।

४. भीख़ माँगने का पात्र। भिक्षा-पात्र। ५. तोप या बंदूक आदि में वह गड्ढा या स्थान जिसमें रंजक रखते हैं।

प्यावना—स०=पिलाना।

प्यास—स्त्री० [सं० पिपासा] १. वह स्थिति जिसमें जल या और कोई तरल पदार्थ पीने की उत्कट इच्छा होती है तथा जो शरीर के जलीय पदार्थ के कम हो जाने पर उत्पन्न होती है। तृष्णा। पिपासा। २. लाक्षणिक रूप में, किसी पदार्थ की प्राप्ति की प्रबल इच्छा या कामना। क्रि० प्र०—बुझना।—मिटना।—लगना।

प्यासा—वि० [हिं० प्यास] [स्त्री० प्यासी] १. जिसे प्यास लगी हो। जो पानी पीना चाहता हो। तृषित। पिपासित। २. जिसे किसी काम या बात की प्रबल कामना या वासना हो। उदा०—अँखिया हरि दरसन की प्यासी।—सूर।

प्यासी—स्त्री० [?] एक प्रकार की छोटी मछली।

प्यून—पुं० [अं० पियन] १. पैदल सिपाही। २. कागज, पत्र आदि इधर-उधर ले जानेवाला छोटा कर्मचारी या चपरासी।

प्यूनी—स्त्री०=पूनी (रुई की)।

प्यूस†—पुं०=पेउस।

प्यूसी†—स्त्री०=पेवसी।

प्योंदा—पुं० [स्त्री० अल्पा० प्योंदी]=पैवंद।

प्यो—पुं० [हिं० पिय] १. स्त्री का पति। २. स्त्री का प्रियतम। ३. पिता। (पश्चिम)

प्योड़ी—स्त्री० [देश०] चित्र-कला में, एक प्रकार का स्थायी और तेज पीला रंग जो ऐसी गौओं के मूत्र से बनाया जाता था जिन्हें कुछ दिनों तक आम की पत्तियाँ खिलाकर रखा जाता था।

प्योसर—पुं० [सं० पीयूष] हाल की ब्याई हुई गौ का दूध, जो विशेष गुणकारक और स्वादिष्ट होता है।

प्योसार—पुं० [सं० पितृशाला] विवाहिता स्त्री की दृष्टि से उसके माता-पिता का घर। पीहर। मायका।

प्यौंदा†—पुं०=पैवंद।

प्यौर*—पुं० [सं० प्रिय] १. प्रियतम। २. पति। ३. साधकों की परिभाषा में, परमेश्वर।

प्यौसाल—पुं० [सं० पितृशाला] स्त्री का मायका। पीहर। उदा०—पिय बिछुरन को दुसह दुख हरखि जात प्यौसाल।—बिहारी।

प्रकंप—पुं० [सं० प्र√कम्प् (काँपना)+घञ्] १. बहुत काँपना या हिलना। २. कँपकँपी। थरथराहट।

प्रकंपन—पुं० [सं० प्र√कम्प्+ल्युट्—अन] १. अच्छी तरह या बहुत काँपने अथवा हिलने की क्रिया। २. कँपकँपी। थरथराहट।

वि० कँपाने या हिलानेवाला।

पुं० [सं० प्र√कम्प्+णिच्+युच्—अन] १. वायु। हवा। २. पुराणानुसार एक नरक का नाम।

प्रकंपमान—वि० [सं० प्र√कम्प्+शानच्] १. जो काँपता या थरथराता हो। २. बहुत हिलता हुआ।

प्रकंपित—भू० कृ० [सं० प्र√कम्प्+क्त] १. कँपाया या हिलाया हुआ। २. काँपता या थरथराता हुआ। ३. हिलता हुआ।

प्रकच—वि० [सं० ब० स०] लंबे और खड़े बालोंवाला।

प्रकट—वि० [सं० प्र√कट्+अच्] १. जो इस प्रकार अस्तित्व में आया हो या वर्तमान हो कि सहज में देखा जा सके। २. जो इस प्रकार व्यक्त तथा स्पष्ट हो कि उससे ठीक-ठीक बोध होता हो। ३. जिसका अभी अभी प्रादुर्भाव हुआ हो। उद्भूत। उत्पन्न। जैसे—अब तो ज्वर के लक्षण प्रकट होने लगे हैं।

प्रकटाना—स० [सं० प्रकटन] प्रकट या जाहिर करना। उदा०—आज अखिल विज्ञान, ज्ञान को रूप गंध, रस में प्रगटाओ।—पन्त।

प्रकटित—भू० कृ० [सं० प्र√कट्+क्त] १. जो प्रकट हुआ हो। २. प्रकट किया हुआ।

प्रकटीकरण—पुं० [सं० प्रकट+च्वि, ईत्व√कृ (करना)+ल्युट्—अन] प्रकट करने की क्रिया या भाव।

प्रकथन—पुं० [सं० प्र√कथ् (कहना)+ल्युट्—अन] विशेष रूप से कोई बात कहना या घोषित करना।

प्रकर—पुं० [सं० प्र√कृ (करना)+अच्] १. वह जो कोई काम करने में बहुत अधिक कुशल या दक्ष हो। २. [प्र√कृ+अप्] अगर नामक गंधद्रव्य। अगरु। ३. खिला हुआ फूल। ४. अविकार। ५. मदद। सहायता। ६. आश्रय। सहारा। ७. झुंड। समूह। ८. दोस्ती। मित्रता। ९. सम्मान। १०. प्रथा। रवाज। ११. गुलदस्ता।

प्रकरण—पुं० [सं० प्र√कृ (करना)+ल्युट्—अन] १. उत्पन्न करना। अस्तित्व में लाना। २. बनाना। ३. कोई बात या विषय अच्छी तरह समझने-समझाने के लिए उस पर वादविवाद या विचार करना। ४. कोई ऐसी विशिष्ट बात या विषय जो उपस्थिति या प्रस्तुत हो और जिसका उल्लेख या विचार हो रहा हो। प्रसंग। विषय। जैसे—अब विवादवाला प्रकरण समाप्त होना चाहिए। ५. वह कथन या वचन जिसमें आवश्यक रूप से कोई काम या बात करने का विधान हो। ६. किसी ग्रंथ के अंतर्गत विभिन्न अध्यायों में से कोई एक। ६. रूपक के दस भेदों में से एक, ऐसा नाटक जिसकी कथा-वस्तु प्रख्यात न हो, बल्कि लौकिक और कल्पित, हो; नायक धीर या शांत हो तथा नायिका कुल-कन्या या वेश्या हो।

प्रकरण वक्रता—स्त्री० [ष० त०] साहित्य में, काव्य-प्रबन्ध के किसी एक अंग या प्रकरण की चमत्कारपूर्ण रमणीयता।

प्रकरणसम—पुं० [सं०] भारतीय नैयायिकों के अनुसार ५ प्रकार के हेत्वाभासों में से एक।

प्रकरणिका—स्त्री० [सं० प्रकरणी+कन्+टाप्, ह्रस्व] साहित्य में, एक प्रकार का छोटा प्रकरण (नाटक या रूपक) जिसमें नायक कोई व्यापारी और नायिका उसकी सजातीय स्त्री होती है। शेष बातें प्रकरण (देखें) के समान होती हैं।

प्रकरणी—स्त्री० [सं० प्रकरण+अच्+ङीष्] नाटिका।

प्रकरी—स्त्री० [सं० प्रकर+ङीष्] १. एक प्रकार का गान। २. नाटक में किसी स्थानिक घटना की अवांतर कथा की सहायता से कथा-वस्तु का प्रयोजन सिद्ध करना जो एक अर्थ प्रकृति है। ३. नाटक में, उन छोटी छोटी प्रासंगिक कथाओं में से कोई एक जो समय समय पर तथा बीच-बीच में आकर मुख्य कथा की सहायक बनकर समाप्त हो जाती हैं। जैसे—

'प्रसाद' के चंद्रगुप्त नामक नाटक में चंद्रगुप्त और दंडायन का मिलन। प्रासंगिक कथाओं का एक अन्य भेद है—पताका। (दे०)

प्रकर्ष—पुं० [सं० प्र√कृश् (खींचना)+घञ्] १. उत्कर्ष। उत्तमता। २. अधिकता। बहुतायत।

प्रकर्षक—वि० [सं० प्र√कृष्+ण्वुल्—अक] प्रकर्ष या उत्कर्ष करने-वाला।

प्रकर्षण—पुं० [सं० प्र√कृष्+ल्युट्—अन] १. पीछे की ओर ढकेलना। २. प्रकर्ष। उत्कर्ष। ३ अधिकता। बहुतायत।

प्रकर्षणीय—वि० [सं० √कृष्+अनीयर्] जिसका उत्कर्ष करना आवश्यक या उचित हो।

प्रकला—स्त्री० [सं० प्रा० स०] कला (समय का एक विशिष्ट मान) का साठवाँ भाग।

प्रकल्पना—स्त्री० [सं० प्र√कृप् (कल्पना करना)+णिच्+युच्—अन्, +टाप्] लोक-व्यवहार और विधिक क्षेत्र में किसी घटना या बात से निकलनेवाला ऐसा आनुमानिक निष्कर्ष जो बहुत-कुछ ठीक और संभाव्य जान पड़ता हो। यह मान लिया जाना कि इस बात का यही अर्थ या आशय हो सकता है। (प्रिज़म्पशन)

प्रकल्पित—भू० कृ० [सं० प्र√कृप्+णिच्+क्त] १ जिसकी प्रकल्पना हुई हो। २. निश्चित या स्थिर किया हुआ।

प्रकल्प्य—वि०[सं० प्र√कृप्+णिच्+यत्] १. जिसके सम्बन्ध में प्रकल्पना हो या होने को हो। २. निश्चित या स्थिर किये जाने के योग्य।

प्रकश—पुं०[सं० प्र √कश् (शब्द करना)+अच्] १. चाबुक। २. कष्ट पहुँचाना। पीड़ित करना। ३. मूत्रनलिका।

प्रकशी—स्त्री०[सं० प्रकश+ङीप्] शूक नामक रोग जिसमें पुरुषों की मूत्रेंद्रिय सूज जाती है। (यह रोग प्रायः इन्द्रिय को बढ़ानेवाली औषधियों के प्रयोग से होता है।)

प्रकांड—वि०[सं० प्रा० स०] १. बहुत बड़ा। विशाल। २. बहुत अधिक विस्तृत। ३. उत्तम। सर्वश्रेष्ठ।

पुं० १. वृक्ष का तना। स्कंध। २. वृक्ष की टहनी या डाल। शाखा। ३. पेड़। वृक्ष।

प्रकाम—वि०[सं० ब० स०] १. जितना आवश्यक हो। उतना। २. पूरा। यथेष्ठ। ३. जिसमें अत्यधिक काम वासना हो।

पुं० १. इच्छा। कामना। २. तृप्ति।

प्रकार—पुं०[सं० प्र√कृ+घञ्] १. वस्तुओं, व्यक्तियों आदि का वह वह समुदाय या समूह जिसमें सामान्य रूप से कुछ ऐसे विशिष्ट गुण, तत्त्व या लक्षण मिलते हों जिनके आधार पर उसी जाति या श्रेणी के अन्य समुदायों या समूहों को उससे अलग किया जाता हो। (टाइप, काइंड) २. उन तत्त्वों, गुणों, विशेषताओं आदि का समूह जिनसे किसी वस्तु का स्वतंत्र स्वरूप प्रकट होता है। भेद। (डेस्क्रिप्शन) ३. कोई काम करने के लिए व्यवहार में लाई जानेवाली क्रिया या प्रक्रिया। ढंग। (मैनर) ४. वह प्राकृतिक तत्त्व जिसके कारण किसी वस्तु का कोई अलग वर्ग बनता है।

स्त्री०=प्राकार (प्राचीर)।

प्रकालन—वि०[सं० प्र√कल् (प्रेरित करना)+णिच्+ल्युट्—अन] हिंसक। २. पीछा करनेवाला।

पुं० १. हिंसा करना। २. मार डालना। ३. एक प्रकार का साँप। ४. एक नाग का नाम।

प्रकाश—पुं०[सं० प्र√काश् (दीप्ति)+घञ्] १. साधारणतः वह स्थिति जिसमें आँखों से सब चीजें देखने में आती हैं और ज़िसके अभाव में कुछ भी दिखाई नहीं देता। चाँदना। रोशनी। 'अन्धकार' का विपर्याय। जैसे—दीपक या सूर्य का प्रकाश। २. पारिभाषिक और वैज्ञानिक क्षेत्रों में, गति और शक्ति का एक परिणाम या रूप जो ज्योतिष्मान् पदार्थों से निकलनेवाली तरंगों के रूप में होता है। (लाइट) विशेष—वैज्ञानिकों का मत है कि ज्योतिष्मान् पदार्थों में से निकलने-वाली तरंगों के कारण आकाश (ईथर) में जो क्षोभ उत्पन्न होता है, वही प्रकाश की तरंगों के रूप में चारों ओर फैलता है। आँखों पर उसकी जो प्रतिक्रिया होती है, उसी के फलस्वरूप सब चीजें दिखाई देती हैं। इसका प्रत्यक्ष तथा मौलिक संबंध किसी न किसी प्रकार के ताप से होता है और इसकी गति प्रति सेकेंड १८६०००मील होती है। यह कोई द्रव्य नहीं है, इसी लिए इसमें कोई गुरुत्व या भार नहीं होता। ३. उक्त का वह रूप जो हमें आँखों से दिखाई देता है। रोशनी। जैसे—अग्नि, दीपक या सूर्य का प्रकाश। ४. वह उद्गम या स्रोत जिससे उक्त प्रकार की ज्योतिर्मय तरंगें निकलकर हमारी दृष्टि-शक्ति की सहायक होती ह। जैसे—यहाँ तो बिलकुल अँधेरा है, कोई प्रकाश (अर्थात् जलता हुआ दीआ, मोमबत्ती आदि) लाओ तो कुछ दिखाई भी दे। ५. लाक्षणिक रूप में कोई ऐसा तत्त्व या बात जिससे किसी विषय का ठीक और पूरा रूप समझ में आता या स्पष्ट दिखाई देता हो। जैसे—(क) ज्ञान का प्रकाश। (ख) किसी के उपदेश, प्रवचन या भाषण से किसी गूढ़ विषय पर पड़नेवाला प्रकाश। ६. वह स्थिति जिसमें आने पर कोई चीज या बात प्रत्यक्ष रूप में सबके सामने आती है। जैसे—दो हजार वर्ष बाद यह पुस्तक प्रकाश में आई है। ७. आँखों की वह शक्ति जिससे चीजें दिखाई देती हैं। ज्योति। जैसे—उनकी आँखों का प्रकाश दिन पर दिन कम होता जा रहा है। ८. कोई ऐसा विकास या स्फुटन जो दृश्य, प्रत्यक्ष या व्यक्त हो। ९. ख्याति। प्रसिद्धि। १०. सूर्य का आतप। धूप। ११. किरण। १२. किसी ग्रंथ या पुस्तक का कोई अध्याय, खंड या विभाग। १३. घोड़े की पीठ पर की चमक।

वि० १. जगमगाता हुआ। दीप्त। प्रकाशित। २. खिला हुआ। विकसित। ३. जो प्रत्यक्ष या सामने हो। गोचर। ४. प्रसिद्ध। विख्यात ५. खुला हुआ। स्पष्ट।

प्रकाशक—पुं०[सं० प्र √काश् (दीप्ति)+ण्वुल्—अक] १. वह जो प्रकाश करे। जैसे—सूर्य। २. पुस्तकें, समाचार-पत्र आदि प्रकाशित करने-वाला व्यक्ति। ३. कांसा। ४. महादेव।

प्रकाश-धृष्ट—पुं०[सं० सुप्सुपा स०] धृष्ट नायक के दो भेदों में से एक। वह नायक जो प्रकट रूप में धृष्टता करे, झूठी सौंगध खाता हो, नायिका के साथ साथ लगा फिरता हो या इसी तरह की धृष्टता की बातें खुले आम करता हो।

प्रकाशन—वि० [सं० प्र√काश्+णिच्+ल्यु—अन्] १. प्रकाश करने-वाला। २. चमकीला। ३. दीप्तिमान्।

पुं० १ प्रकाश करने की क्रिया या भाव। २. प्रकाश में या सबके सामने लाने की क्रिया या भाव। ३. आज-कल मुख्य रूप से ग्रन्थ

आदि छपवाकर बेचने तथा प्रचारित करने का व्यवसाय। ४. प्रकाशित की जानेवाली कोई पुस्तक। (पब्लिकेशन; अंतिम दोनों अर्थों के लिए) ५. विष्णु।

प्रकाश-परावर्तक—पुं० [ष० त०] शीशे आदि का वह टुकड़ा या उससे युक्त वह उपकरण जो कहीं से प्रकाश-ग्रहण कर उसे अन्य दिशा में ले जाकर फेंकता हो। (रिफ्लेक्टर)

प्रकाशमान—वि० [सं० प्र√काश्+शानच्] १. चमकता हुआ। चमकीला। प्रकाशयुक्त। २. प्रसिद्ध। विख्यात। मशहूर।

प्रकाश-रसायन—पुं० [ष० त०] रसायनशास्त्र का वह अंग या शाखा जिसमें प्रकाश की किरणों का विश्लेषण और विवेचन होता है। (फोटो कैमिस्ट्री)

प्रकाश-वर्ष—पुं० [सं० मध्य० स० ?] बहुत अधिक दूर के आकाशस्थ पिंडों या तारों की दूरी मापने का एक मान जो प्रकाश की गति के विचार से स्थिर किया गया है और जो उतनी दूरी का सूचक है जितना प्रकाश एक वर्ष में पार करता है। (लाइट ईयार) जैसे—अमुक तारा पृथ्वी से दस प्रकाश वर्षों की दूरी पर है।

विशेष—प्रकाश की गति प्रति सेकेंड १८६००० मील होती है। अतः प्रकाश वर्ष की दूरी लगभग ६० खरब ६००००००००००० मील होती है।

प्रकाश-वियोग—पुं० [सं० मध्य० स०] केशव के अनुसार वियोग के दो भेदों में से एक। प्रेमी और प्रेमिका का ऐसा वियोग जो सब पर प्रकट हो जाय।

प्रकाश-संयोग—पुं० [सं० मध्य० स०] केशव के अनुसार संयोग के दो भेदों में से एक। प्रेमी और प्रेमिका का ऐसा संयोग जो सब पर प्रकट हो।

प्रकाश-संश्लेषण—पुं० [ष० त०] इस बात का संश्लेषण या विवेचन कि प्रकाश पड़ने पर जल, वायु आदि किस प्रकार विकृत होकर दूसरे तत्त्वों में रासायनिक परिवर्तन उत्पन्न करते हैं। (फोटो-सिन्थेसिस)

प्रकाश-स्तंभ—पुं० [ष० त० या मध्य० स०] वह ऊँची इमारत विशेषतः समुद्र में बना हुआ वह स्तंभ जहाँ से बहुत प्रबल प्रकाश निकलकर चारों ओर फैलता तथा जिससे जलयानों, वायुयानों आदि का रात के समय पथ-प्रदर्शन होता है। (लाइट हाउस)

प्रकाशात्मा (त्मन्)—पुं० [सं० प्रकाश-आत्मन्, ब० स०] १. सूर्य। २. विष्णु।

प्रकाशित—भू० कृ० [सं० प्र√काश्+क्त] १. प्रकाश से युक्त किया अथवा प्रकाश में लाया हुआ। २. (ग्रन्थ या लेख) जो छापकर सबके सामने लाया गया हो। ३. जो प्रकाश निकलने या पड़ने से चमक रहा हो। चमकता हुआ।

प्रकाशी (शिन्)—वि० [सं० प्रकाश+इनि] [स्त्री० प्रकाशिनी] १. जिसमें प्रकाश हो। चमकता हुआ। २. प्रकाश करनेवाला। जैसे—आत्म-प्रकाशी।

प्रकाश्य—वि० [सं० प्र√काश्+ण्यत्] प्रकाश में आने या लाये जाने के योग्य।

अव्य० १. प्रकट या स्पष्ट रूप में। २. (नाटक में कथन) जोर से बोलते और सबको सुनाते हुए। 'स्वगत' का विपर्याय।

प्रकास—पुं०=प्रकाश

प्रकासना—स० [सं० प्रकाश] प्रकाश से युक्त करना। चमकाना। अ० प्रकाशित होना।

प्रकिरण—पुं० [सं० प्र√कृ (विक्षेप)+ल्युट्—अन] १. फैलाना। बिखेरना। २. मिश्रण। मिलाना।

प्रकीर्ण—वि० [सं० प्र√कृ+क्त] १. फैला हुआ। विस्तृत। २. इधर-उधर यों ही छितराया या बिखरा हुआ। ३. मिला हुआ। मिश्रित। ४. जिसमें अनेक प्रकार की चीजें मिली हों। (विशेषतः ऐसा आय-व्यय जो किसी एक निश्चित मद में न हो, बल्कि इधर-उधर की फुटकर मदों का हो। (मिस्लेनिअस) ५. पागल। विक्षिप्त। ६. उच्छृंखल। उद्दंड। ७. क्षुब्ध।

पुं० [सं०] १. पुस्तक का अध्याय या प्रकरण। २. फुटकर कविताओं का संग्रह। ३. चँवर। ४. ऐसा करंज जिसमें से दुर्गंध निकलती हो। पूति। करंज।

प्रकीर्णक—पुं० [सं० प्रकीर्ण+कन्] १. चँवर। २. ग्रन्थ का अध्याय या प्रकरण। ३. फैलाव। विस्तार। ४. ऐसा वर्ग या संग्रह जिसमें अनेक प्रकार की ऐसी वस्तुओं का मेल हो जो किसी विशिष्ट वर्ग या शीर्षक में न रखी जा सकती हों। फुटकर। ५. वह छोटा-मोटा पाप जिसके प्रायश्चित का उल्लेख किसी धर्म-ग्रन्थ में न हो।

प्रकीर्णकेशी—स्त्री० [सं० ब० स०+ङीप्] दुर्गा।

प्रकीर्णन—पुं० [सं०] [भू० कृ० प्रकीर्णत] चीजें इधर-उधर छितराना या बिखेरना (स्कैटरिंग)

प्रकीर्तन—पुं० [सं० प्र√कृत् (जोर से शब्द करना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रकीर्तित] १. जोर जोर से कीर्तन करना। २. घोषणा।

प्रकीर्ति—स्त्री० [सं० प्र√कृत्+क्तिन्] १. घोषणा २. ख्याति।

प्रकीर्तित—भू० कृ० [सं० प्र√कृत्+क्त] १. जिसका यश गाया गया हो। प्रशंसित। २. जिसकी घोषणा की गई हो।

प्रकुपित—वि० [सं० प्रा० स०] जिसका प्रकोप बहुत बढ़ा हो या बढ़ाया गया हो।

प्रकृत—वि० [सं० प्र√कृ (करना)+क्त] [भाव० प्रकृतता, प्रकृति] १. जो प्रकृति अर्थात् विसर्ग से उत्पन्न या प्राप्त हुआ हो अथवा उसका बनाया हुआ हो। प्रकृतिजन्य। जैसे—प्रकृत झीलें प्रकृत वनस्पतियाँ। २. जो ठीक उसी रूप में हो, जिस रूप में प्रकृति उसे उत्पन्न करती हो। जिसमें कोई कृत्रिमता, बनावट, मेल या विकार न हो अथवा न हुआ हो। 'विकृत' इसी का विपर्याय है। ३. जो शरीर की प्रकृति अर्थात् स्वभाव के आधार पर हो या उससे संबंध रखता हो। स्वाभाविक। (नैचुरल, उक्त सभी अर्थों में) जैसे—प्रकृत क्रोध, प्रकृत बल। ४. जो अपनी ठीक वास्तविक या साधारण स्थिति में हो। जिसमें कुछ घटाया-बढ़ाया या अदला-बदला न गया हो। प्रसम। सहज। साधारण। (नार्मल) ५. जो प्रस्तुत प्रकरण या प्रसंग के विचार से उपयुक्त, यथेष्ट या वांछनीय हो। संगत। (रेलेवेन्ट) उदा०—यहाँ इतना ही प्रकृत है कि कबीरदास का 'पंडित' बहुत अपना आदमी है।—हजारीप्रसाद द्विवेदी।

पुं० श्लेष अलंकार का एक प्रकार या भेद।

प्रकृतता—स्त्री० [सं० प्रकृत+तल्+टाप्] १. प्रकृत होने की अवस्था या भाव। २. असलियत। यथार्थता वास्तविकता।

प्रकृतत्व—पुं० [सं० प्रकृत+त्व]=प्रकृतता।

प्रकृतवाद—पुं० [सं०] आज-कल साहित्य में यथार्थवाद (देखें) का वह बहुत आगे बढ़ा हुआ रूप जिसमें समाज के प्रायः नग्न चित्र उपस्थति करना ही ठीक समझा जाता है। इसमें प्रायः समाज के अश्लील, कुरुचिपूर्ण और हेय अंगों के ही चित्र होते हैं।

प्रकृतवादी—वि० [सं०] प्रकृतवाद-संबंधी। प्रकृतवाद का।
पुं० प्रकृतवाद का अनुयायी।

प्रकृतार्थ—वि० [सं० प्रकृत-अर्थ, कर्म० स०] असल। वास्तविक।
पुं० प्रकृत अर्थात् यथार्थ और वास्तविक अर्थ, आशय या अभिप्राय।

प्रकृति—स्त्री० [सं० प्र√कृ+क्तिन्] १. किसी पदार्थ या प्राणी का वह विशिष्ट मौतिक सारभूत तथा सहज और स्वाभाविक गुण या तत्त्व जो उसके स्वरूप के मूल में होता है और जिसमें कभी कोई परिवर्तन या विकार नहीं होता। 'विकृति' इसी का विपर्याय है। जैसे—(क) जन्म लेना और मरना प्राणी मात्र की प्रकृति है। (ख) ताप उत्पन्न करना और जलाना अग्नि की प्रकृति है। (ग) जानवरों का शिकार करके पेट भरना चीतों और शेरों की प्रकृति है। २. विश्व में रचना या सृष्टि करनेवाली वह मूल नियामक तथा संचालक शक्ति जो सभी कारणों और कार्यों का उद्गम है और जिससे सभी जीव तथा पदार्थ बनते, विकसित होते तथा अंत में नष्ट या समाप्त होते रहते हैं। निसर्ग।
विशेष—अधिकतर दार्शनिक, 'प्रकृति' को ही सारी सृष्टि का एक मात्र उपादान कारण मानते हैं। पर सांख्यकार ने कहा है कि इसके साथ एक दूसरा तत्त्व 'पुरुष' नाम का भी होता है। जिसके सहयोग से प्रकृति सब प्रकार की सृष्टियाँ करती है। मौतिक जगत् में हमें जो कुछ दिखाई देता है, वह सब इसी का परिणाम या विकार माना जाता है। इसी में सत्त्व, रज और तम नामक तीनों गुणों का अधिष्ठान कहा गया है। आध्यात्मिक क्षेत्रों और विशेषतः वेदांत में इसे परमात्मा या विश्वात्मा की मूर्तिमती इच्छा-शक्ति के रूप में माना गया है, और इसे 'माया' का रूपान्तर कहा गया है। कभी-कभी इसका प्रयोग ईश्वर के समानक के रूप में भी होता है।
३. वह सारा दृश्य जगत् जिसमें हमें पशु-पक्षी, वनस्पतियाँ आदि अपने मौलिक या स्वाभाविक रूप में दिखाई देती हैं। जैसे—वहाँ प्रकृति की छटा देखने ही योग्य थी। ४. मनुष्यों का वह चारित्रिक मूल-भूत गुण, तत्त्व या विशेषता जो बहुत-कुछ जन्म-जात तथा प्रायः अविकारी होती है। जैसे—वह प्रकृति से ही उदार तथा दयालु (अथवा क्रोधी और लोमी) था।
विशेष—इसमें उन सभी आकांक्षाओं, प्रवृत्तियों, वासनाओं आदि का अंतर्भाव होता है जिनके वश में रहकर मनुष्य सब प्रकार के काम करते हैं और जिनके फल-स्वरूप उनका चरित्र अथवा जीवन बनता-बिगड़ता है।
५. जीवन-यापन का वह सरल और सहज प्रकार जिस पर आधुनिक सभ्यता का प्रभाव न पड़ा हो और जो निरोधक प्रतिबन्धों से बहुत-कुछ मुक्त या रहित हो। जैसे—जंगली जातियाँ सदा प्रकृति की गोद में ही खेलती और पलती हैं। (अर्थात् खुले मैदानों में, झगड़े-बखेड़ों और भीड़-भाड़ से दूर रहते हैं)। ६. प्राणियों की जीवन-दायिनी और स्वास्थ्य प्रद प्रवृत्ति या स्थिति। जैसे—आज-कल उन्होंने अपने रोग की दवा करना बन्द कर दिया है और उसे प्रकृति पर छोड़ दिया है। ७. वैद्यक में, शारीरिक रचना और प्रवृत्ति के आधार पर मनुष्य की मूल स्थितियों के ये सात विभाग—वातज, पित्तज, कफज, वात-पित्तज, वात कफज, कफ-पित्तज और सम-धातु। ८. व्याकरण में, किसी शब्द का वह आधार-भूत, मूल या धातु रूप जिसमें उपसर्ग, प्रत्यय आदि लगने अथवा और प्रकार के विकार होने पर उसके अनेक दूसरे रूप बनते हैं। ९. प्राचीन भारतीय राजनीति में राजा, अमात्य या मंत्री, सुहृद, कोश, राष्ट्र, दुर्ग, बल और प्रजा इन आठों का समूह। १०. परवर्ती दार्शनिक क्षेत्र में, पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार इन आठों का समूह। ११. कर्मकांड में वह प्रतिमान या मानक रूप जिसे देखकर उसी तरह की और रचनाएँ प्रस्तुत की जाती हों। १२. आकृति। रूप। १३. प्रजा। रिआया। १४. नारी। स्त्री।

प्रकृतिज—वि० [सं० प्रकृति√जन् (उत्पन्न होना)+ड] १. जो प्रकृति से उत्पन्न हुआ हो। प्राकृतिक। २. जो स्वभाव से ही होता हो। प्रकृति जन्य

प्रकृति-देववाद—पुं० [सं०ष०त०] एक दार्शनिक मतवाद जिसमें यह माना जाता है कि ईश्वर ने सृष्टि की रचना तो अवश्य की परंतु उसके बाद उसने उस पर से अपना सारा नियंत्रण हटा लिया, आगे के सब काम प्रकृति पर छोड़ दिये। (डीइज़्म)

प्रकृति-पुरुष—पुं० [ष० त०] राजमंत्री।

प्रकृति-भाव—पुं० [ष० त०] १. स्वभाव। २. अविकृति और मूल रूप अथवा स्थिति। ३. व्याकरण में शब्दों की सन्धि की वह अवस्था जिसमें नियमतः शब्दों के रूपों में कोई विकार नहीं होता।

प्रकृति-मंडल—पुं० [ष० त०] १. राज्य के अधिपति, अमात्य, सुहृद्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग और बल इन सातों अंगों का समूह। २. प्रजा का वर्ग या समूह।

प्रकृति-लय—पुं० [स० त०] प्रलय। (सांख्य)

प्रकृति-वाद—पुं० [ष० त०] १. यह मत या सिद्धान्त कि मनुष्य के सभी आचरण, कार्य, विचार, आदि प्रकृति अर्थात् निसर्ग से उत्पन्न होनेवाली कामनाओं तथा प्रवृत्तियों पर आश्रित होते हैं। २. दार्शनिक क्षेत्र की दो मुख्य धाराएँ (क) यह मत या सिद्धान्त कि सारी सृष्टि प्रकृति से ही उत्पन्न है और इसके मूल में कोई अलौकिक तत्त्व या दैवी शक्ति काम नहीं करती। (ख) यह मत या सिद्धान्त कि मनुष्यों में धर्म तत्त्व का आविर्भाव किसी अलौकिक या दैवी शक्ति की प्रेरणा से नहीं हुआ है, बल्कि मनुष्यों ने धर्म-संबंधी सभी भावनाएँ और विचार प्राकृतिक जगत् से ही प्राप्त किये हैं। ३. कला और साहित्य के क्षेत्र में, यह मत या सिद्धांत कि संसार में प्राकृतिक तथा वास्तविक रूप में जो कुछ होता हुआ दिखाई देता है, उसका अंकन या चित्रण ज्यों का त्यों और ठीक उसी रूप में होना चाहिए और उसमें नैतिक आदर्शों या भावनाओं का अतिरिक्त आरोप या मिश्रण नहीं किया जाना चाहिए। (नैचुरलिज़्म, उक्त सभी अर्थों में)
विशेष—वस्तुतः उक्त अंतिम मत यथार्थवाद का वह आगे बढ़ा हुआ रूप है जिससे अशिष्ट, अश्लील, कुरुचिपूर्ण और हेय पक्षों का भी अंकन या चित्रण होने लगा है। इसका आरम्भ युरोप में १९ वीं शती में हुआ था।

प्रकृतिवादी (दिन्)—पुं० [सं० प्रकृतिवादी+इनि] वह जो प्रकृतिवाद का सिद्धान्त मानता हो या उसका अनुयायी हो। (नैचुरलिस्ट)
वि० प्रकृतिवाद-संबंधी। प्रकृतिवाद का।

प्रकृति-विज्ञान—पुं० [ष० त०] १. वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें प्राकृतिक बातों अर्थात् सृष्टि की उत्पत्ति, विकास, लय आदि का निरूपण होता है। २. पारिभाषिक और वैज्ञानिक क्षेत्रों में, वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें प्राकृतिक या भौतिक जगत् के भिन्न-भिन्न अंगों, क्षेत्रों, रूपों स्थितियों आदि का विचार या विवेचन होता है। (नैचुरल सायन्स) विशेष—जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, भौतिक और रसायन विज्ञान, भूगर्भशास्त्र आदि इसी के अन्तर्गत या इसकी शाखाओं के रूप में हैं। ३. उक्त के आधार पर साधारण लौकिक व्यवहार में, वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें पशु-पक्षियों, वनस्पतियों, वृक्षों, खनिज पदार्थों और भूगर्भ की बातों का अध्ययन और विवेचन अ-पारिभाषिक रूप में होता है। (नैचुरल हिस्टरी)

प्रकृतिविद्—पुं० [सं० प्रकृति√विद्+क्विप्] प्रकृतिवेत्ता।

प्रकृतिवेत्ता (तृ)—पुं० [ष० त०] वह जो प्रकृति विज्ञान का ज्ञाता या पंडित हो। (नैचुरलिस्ट)

प्रकृतिशास्त्र—पुं० दे० 'प्रकृति विज्ञान'।

प्रकृतिसिद्ध—वि० [सं० तृ० त०] १. जो प्रकृति के विषयों के अनुसार हुआ हो या होता हो। २. प्राकृतिक। नैसर्गिक। ३. स्वाभाविक।

प्रकृतिस्थ—वि० [सं० प्रकृति√स्था (ठहरना)+क] १. जो अपनी प्राकृतिक अवस्था में स्थित या वर्तमान हो और जिसमें किसी प्रकार का क्षोभ या विकार न हुआ हो। जो अपनी मामूली हालत में हो। २. जिसका चित्त या मन ठिकाने हो अर्थात् उद्विग्न या विचलित न हो। ठहरा हुआ और शान्त।

प्रकृतिस्थ-सूर्य—पुं० [सं० कर्म० स०] उस समय का सूर्य जब वह उत्तरायण को पार करके अर्थात् दक्षिणायन होता है।

प्रकृतीश—पुं० [सं० प्रकृति-ईश, ष० त०] राजा।

प्रकृत्या—अव्य० [सं० तृतीया विभक्ति का रूप] प्रकृति की दृष्टि या विचार से। प्रकृतितः। स्वभावतः।

प्रकृष्ट—भू० कृ० [सं० प्र√कृष् (खींचना)+क्त] १. खींचा या निकाला हुआ। २. उत्तम। श्रेष्ठ। ३. मुख्य। प्रधान। ४. तीव्र। तेज।

प्रकृष्टता—स्त्री० [सं० प्रकृष्ट+तल्+टाप्] प्रकृष्ट होने की अवस्था या भाव। उत्तमता। श्रेष्ठता।

प्रकोथ—पुं० [सं० प्र√कुथ् (पतित होना)+घञ्] १. सड़ने की अवस्था या भाव। २. दूषित होना। ३. सूखना। शोष।

प्रकोप—पुं० [सं० प्रा० स०] १. बहुत अधिक या बढ़ा हुआ कोप। २. क्षोभ। ३. चंचलता। ४. शरीर के वात, पित्त अथवा कफ के बढ़ने अथवा उसमें किसी प्रकार का विकार होने के फलस्वरूप उसका उग्र रूप धारण करना जिससे रोग उत्पन्न होता है। २. सार्वजनिक रूप से होनेवाली किसी रोग की अधिकता या प्रबलता। जैसे—आज-कल नगर में हैजे का प्रकोप है।

प्रकोपन—पुं० [सं० प्र√कुप् (क्रोध करना)+णिच्+ल्युट्—अन] १. प्रकुपित करना या होना। २. शोभा।

प्रकोष्ठ—पुं० [सं० प्रा० स०] १. कोहनी के आगे का भाग। २. मुख्य द्वार या सदर दरवाजे के पास का कमरा। ३. वह बड़ा आँगन जिसके चारों ओर कमरे और बरामदे हों। ४. आज-कल संसद्, विधान-सभा आदि के बाहर का वह कमरा, बरामदा या प्रांगण जहाँ बैठकर सदस्य व्यक्तिगत रूप से बातचीत करते तथा पत्रकारों आदि से मिलते हों। (लॉबी)

प्रकोष्ठक—पुं० [सं० प्रकोष्ठ+कन्] प्राचीन भारत में प्रासाद के मुख्य द्वार के पास का कमरा।

प्रक्रम—पुं० [सं० प्र√क्रम् (गति)+घञ्] १. क्रम। सिलसिला। २. अतिक्रमण। उल्लंघन। ३. वह उपाय या योजना जो कोई कार्य आरम्भ करने से पहले की जाय। उपक्रम। ४. अवसर। मौका। ५. किसी प्रकार की प्रगति के क्रम या मार्ग में बीच-बीच में पड़नेवाली वे स्थितियाँ जो अलग-अलग अंगों या विभागों के रूप में होती हैं; और जिनके उपरांत कोई नया क्रम आरम्भ होता है। मंजिल। (स्टेज) ६. किसी कार्य की सिद्धि में आदि से अंत तक होनेवाली वे आवश्यक बातें जिनसे वह काम आगे बढ़ता है। ७. कोई चीज बनाने या माल तैयार करने की सारी क्रियाएँ। प्रक्रिया। (प्रोसेस)

प्रक्रमण—पुं० [सं० प्र√क्रम्+ल्युट्—अन] १. अच्छी तरह घूमना। खूब भ्रमण करना। २. आगे बढ़ना। ३. पार करना। ४. आरम्भ करना।

प्रक्रम-भंग—पुं० [सं० ष० त०] साहित्य में, पहले कुछ बातें एक क्रम से कहना और तब उनसे संबद्ध कुछ दूसरी बातें किसी दूसरे क्रम से कहना जो एक दोष माना गया है।

प्रक्रांत—वि० [सं० प्र√क्रम्+क्त] १. जिसका प्रकरण चल रहा हो। जिसका उल्लेख या वर्णन हो रहा हो। २. प्रकरण में आया हुआ।

प्रक्रिया—स्त्री० [सं० प्र√कृ+श+टाप्, इयङ्] १. कोई काम करने या चीज बनाने की वह निश्चित और विशिष्ट क्रिया, ढंग या प्रकार जिसके बिना वह ठीक तरह से सम्पन्न या प्रस्तुत न हो सके। जैसे—धातु-मल से धातुएँ निकालने की प्रक्रिया। २. कोई ऐसा प्रक्रम या विकास जिसमें बीच बीच में कुछ परिवर्तन या विकार होते चलें। जैसे—पेट में भोजन के पाचन की प्रक्रिया। ३. किसी काम या बात में क्रम-क्रम से आगे बढ़ने की क्रिया या भाव। (प्रासेस, उक्त सभी अर्थों में) ४. किसी कृत्य विशेषतः अभियोग आदि की सुनवाई में होने वाले आदि से अन्त तक के सब काम या उनका क्रम। (प्रोसीजर) ५. वह कार्रवाई जो अब तक किसी कार्य की सिद्धि के लिए की जा चुकी हो। (प्रोसीडिंग) ६. ऊँचा स्थान या स्थिति। ७. पुस्तक का अध्याय या प्रकरण। ८. प्रस्तावना। भूमिका। ९. राजाओं का चंवर, छत्र आदि राज-चिह्न धारण करना। १०. व्याकरण में, शब्द अथवा उसके प्रयोग का किया जानेवाला साधन।

प्रक्लिन्न—वि० [सं० प्र√क्लिद् (गीला)+क्त] १. आर्द्र। गीला। २. दयार्द्र।

प्रक्लेद—पुं० [सं० प्र√क्लिद् (गीला होना)+घञ्] १. आर्द्रता। तरी। नमी। २. दयार्द्रता।

प्रक्लेदन—पुं० [सं० प्र√क्लिद्+णिच्+ल्युट्—अन] गीला या तर करना। भिगोना।

वि० तर या गीला करनेवाला। प्रक्लेदी।

प्रक्वण—पुं० [सं० प्र√क्वण् (शब्द करना)+अप्] बाँसुरी से निकलने-वाली मधुर ध्वनि।

प्रक्वाण—पुं०=प्रक्वण।

प्रक्वाथ—पुं०[सं० प्र√क्वथ् (उबलना)+घञ्] १. उबालने की क्रिया या भाव। २. उबाल।

प्रक्ष—वि० [सं० प्रच्छक] प्रश्न करनेवाला। पूछनेवाला।

प्रक्षय—पुं० [सं० प्र√क्षि (नाश)+अच्]=क्षय।

प्रक्षयण—पुं० [सं० प्र√क्षि+ल्युट्—अन] नष्ट या बरबाद करना।

प्रक्षर—पुं० [सं० प्र√क्षर् (झरना)+अच्] घोड़ों आदि की पक्खर या पाखर।

प्रक्षरण—पुं०[सं० प्र√क्षर्+ल्युट्—अन] १. चूना। रिसना। २. बहना।

प्रक्षालन—पुं०[सं० प्र√क्षल्+णिच्+ल्युट्—अन] १. कोई चीज जल से साफ करने की क्रिया। धोना। २. वैज्ञानिक क्षेत्र में जल के संयोग से या विशिष्ट प्रक्रिया से किसी वस्तु में की मैल या अवांछित अंश अलग करना। (ब्लीचिंग) ३. स्वच्छ या निर्मल करना। ४. नहाना। ५. नहाने, कपड़े धोने आदि का जल।

प्रक्षालन-गृह—पुं०[ष० त०] हाथ-मुँह आदि धोने का कमरा या प्रकोष्ठ।

प्रक्षालयिता (तृ)—पुं०[सं० प्र√क्षल्+णिच्+तृच्] १. धोनेवाला। २. अतिथियों के चरण धोनेवाला।

प्रक्षालित—भू० कृ०[सं० प्र√क्षल्+णिच्+क्त] १. जिसका प्रक्षालन हुआ हो। २. धोया हुआ।

प्रक्षाल्य—वि०[सं० प्र√क्षल्+णिच्+यत्] धोये जाने के योग्य।

प्रक्षिप्त—भू० कृ०[सं० प्र√क्षिप् (फेंकना)+क्त] १. फेंका हुआ। २. अलग, ऊपर या बाहर से लाकर बढ़ाया या मिलाया हुआ। जैसे—तुलसी-कृत रामायण का प्रक्षिप्त अंश। ३. आगे की ओर बढ़ा या निकला हुआ। (प्रॉजेक्टेड)

प्रक्षीण—वि०[सं० प्रा० स०] जो पूरी तरह से क्षीण, नष्ट या लुप्त हो चुका हो। विनष्ट।

पुं० वह स्थल या स्थिति जहाँ पहुँचकर पूर्ण विनाश होता हो।

प्रक्षीबित—वि० [सं० प्र√क्षीव् (नशे में होना)+क्त] जो नशे में हो।

प्रक्षुण्ण—वि०[सं० प्र√क्षुद् (पीसना) +क्त] १. कूटा या पीसा हुआ २. चूर्ण किया हुआ। ३. उत्तेजित किया हुआ।

प्रक्षेप—पुं०[सं० प्र√क्षिप्+घञ्] १. आगे की ओर जोर से फेंकना। २. युद्ध में दूरवर्ती शत्रु पर कोई अस्त्र फेंकना। ३. छितराना। बिखेरना। वह जो फेंका या छितराया गया हो। ५. बढ़ाने के लिए इधर-उधर से लाकर कुछ मिलाना। ६. वह अंश जो उक्त प्रकार से मिलाया जाय। ७. वह पदार्थ जो औषध आदि में ऊपर से डाला या मिलाया जाय। ८. किसी कारोबार या व्यापार में लगा हुआ किसी हिस्सेदार का मूल धन।

प्रक्षेपक—वि०[सं० प्र०√क्षिप्+ण्वुल्—अक] प्रक्षेपण करनेवाला।

पुं० १. वह यंत्र जिसके द्वारा किसी आकृति या चित्र का प्रतिबिम्ब सामनेवाले परदे पर डाला जाता है। (प्रोजेक्टर) २. लिखाई में वह चिह्न जो इस बात का सूचक होता है कि इसके आगे का अंश मूल में नहीं है, बल्कि बाद में किसी ने क्षेपक के रूप में बढ़ाया है।

प्रक्षेपण—पुं०[सं० प्र०√क्षिप्+ल्युट्—अन] १. सामने की ओर कोई चीज फेंकने की क्रिया या भाव। २. ऊपर से मिलाना। ३. जहाज आदि चलाना। ४. निश्चित करना। ५. साधारण सीमा या नियमित रेखा से आगे निकालना या बढ़ाना। ६. उक्त प्रकार से आगे निकला या बढ़ा हुआ अंश। (प्रोजेक्शन)

प्रक्षेपणीय—वि०[सं० प्र√क्षिप्+अनीयर्] प्रक्षेपण के योग्य।

प्रक्षोभण—पुं० [सं० प्र√क्षुभ् (विचलित होना)+णिच्+ल्युट्—अन] १. क्षोभ उत्पन्न करने की क्रिया या भाव। २. घबराहट। बेचैनी।

प्रखंड—पुं०[सं० प्रा० स०] किसी खंड या विभाग का कोई छोटा खंड या विभाग। (डिवीजन)

प्रखर—वि०[सं० प्रा० स०] [भाव० प्रखरता] १. जिसमें बहुत अधिक उग्रता, ताप या तेजी हो। २. चोखा। पैना।

पुं० १. खच्चर। २. कुत्ता। ३. घोड़े की पाखर।

प्रखरता—स्त्री०[सं० प्रखर+तल्+टाप्] प्रखर होने की अवस्था, गुण या भाव।

प्रखल—वि०[सं० प्रा० स०] बहुत बड़ा खल या दुष्ट।

प्रखोलना—स०[सं० प्रक्षालन] १. धोना। पखारना। २. छिड़कना। ३. सुवासित करना।

प्रख्या—स्त्री०[सं० प्र√ख्या (कहना)+अङ+टाप्] १. दिखलाई देना। २. प्रकट या प्रकाश रूप में उपस्थित होना। ३. विख्याति। प्रसिद्धि। ४. बराबरी। समता। ५. उपमा। तुलना।

प्रख्यात—वि०[सं० प्र√ख्या+क्त] जिसे सब या बहुत से लोग जानते हों। प्रसिद्ध। मशहूर। विख्यात।

पुं० नाटक की कथा-वस्तु के स्वरूप की दृष्टि से किये गये तीन भेदों में से एक, जिसमें कथा-वस्तु का आधार मुख्य रूप से इतिहास, पुराण आदि की प्रसिद्ध कहानियाँ होती हैं और नाटककार द्वारा कल्पना से जोड़े गये प्रक्षिप्त अंगों से उसमें विकृति नहीं आती। हिन्दी के चन्द्रगुप्त, स्कंदगुप्त, रक्षाबन्धन, वितस्वा की लहरें आदि नाटकों की कथा-वस्तु इसी भेद के अन्तर्गत हैं। (शेष दो भेद उत्पाद्य और मिश्र कहलाते हैं।)

प्रख्याति—स्त्री० [सं० प्र√ख्या+क्तिन्] प्रख्यात होने की अवस्था या भाव। प्रसिद्धि। विख्याति।

प्रख्यान—पुं०[सं० प्र√ख्या+ल्युट्—अन] १. खबर देना। सूचित करना। २. दी हुई खबर या सूचना। ३. अनुभूति।

प्रख्यापन—पुं० [सं० प्र+ख्या√णिच्, पुक्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रख्यापित] १. लोगों को जतलाने के लिए कोई बात औपचारिक, निश्चित और स्पष्ट रूप से कहना। (प्रोमल्गेशन) २. इस प्रकार का कोई ऐसा कथन लेख या वक्तव्य जो किसी अधिकारी के सामने सारा उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेते हुए उपस्थित किया जाता है। (डिक्लेरेशन)

प्रख्यापित—भू० कृ०[प्र√ख्या+णिच्, पुक्+क्त] जिसका प्रख्यापन हुआ हो। जो प्रख्यापन के रूप में उपस्थित किया गया हो।

प्रगंध—पुं०[सं० ब० स०] दवन पापड़ा।

प्रगट—वि०=प्रकट।

प्रगटन—पुं०=प्रकटन।

प्रगटना—अ० [सं० प्रकटन] प्रकट होना। सामने आना। जाहिर होना। स०=प्रगटाना।

प्रगटाना—स०[सं० प्रकटन; हिं० प्रगटना का स० रूप] प्रकट या जाहिर करना। सामने लाना।

प्रगत—वि० [सं० प्रा० स०] १. जिसने प्रस्थान किया हो। जो चल पड़ा हो। २. आगे गया हुआ या बढ़ा हुआ। जो अलग या अधिक दूरी पर हो। ३. छूटा हुआ। मुक्त। ४. मरा हुआ। मृत।

प्रगत-जानुक—वि० [सं० ब० स०, +कप्] (जीव या प्राणी) जिसके घुटने एक दूसरे से अधिक अलग या कुछ दूरी पर हों। ऐसे जीवों की टाँगें प्रायः धनुषाकार होती हैं।

प्रगति—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. आगे की ओर बढ़ना। २. विशेषतः किसी कार्य को पूर्णता की ओर बढ़ाते चलना। ३. सामूहिक रूप से विभिन्न कार्यों में होनेवाली क्रमिक उन्नति। (प्रोग्रेस) जैसे—देश प्रगति के पथ पर है।

प्रगति-वाद—पुं० [सं० प० त०] एक प्रकार का आधुनिक साहित्यिक वाद या सिद्धांत जिसका मुख्य उद्देश्य जनवादी शक्तियों को संघटित करके मार्क्सवाद और भौतिक यथार्थवाद के लक्षित उद्देश्यों की सिद्धि करना है। सामाजिक यथार्थवाद को प्रतिष्ठित करने के कारण ही इसे प्रगति-वाद कहा जाता है।

प्रगतिवादी (दिन्)—वि० [सं० प्रगतिवाद+इनि] प्रगतिवाद-सम्बन्धी। प्रगतिवाद का।

पुं० वह जो प्रगतिवाद का अनुयायी, पोषक या समर्थक हो।

प्रगति-शील—वि० [सं० ब० स०] [भाव० प्रगतिशीलता] जो प्रगति कर रहा हो। जो आगे बढ़ रहा या उन्नति कर रहा हो। (प्रोग्रेसिव)

प्रगम—पुं० [सं० प्र√गम् (जाना)+अप्] १. प्रेम में अग्रसर होना। २. ऐसे लक्षण जिनसे पहले-पहल प्रेम होना सूचित हो।

प्रगमन—पुं० [सं० प्र√गम्+ल्युट्—अन] [वि० प्रगमनीय] १. आगे बढ़ना। २. उन्नति। तरक्की। ३. लड़ाई-झगड़ा। ४. ऐसा भाषण या उक्ति जिसमें किसी बात का उचित, उपयुक्त और पूरा उत्तर निहित हो।

प्रगल्भ—वि० [सं० प्र√गल्भ् (धृष्टता करना)+अच्] [स्त्री० प्रगल्भा] १. चतुर। होशियार। २. प्रतिभाशाली। ३. उत्साही। हिम्मती। ४. हाजिर-जवाब। ५. निडर। निर्भर। ६. बोलने में संकोच न करने-वाला। प्रायः बढ़-बढ़कर बोलनेवाला। वाचाल। ७. गंभीर। ८. मुख्य। ९. निर्लज्ज। १०. जिसमें नम्रता न हो। उद्धत। ११. अभिमानी। अहंकारी। १२. पुष्ट। प्रौढ़।

प्रगल्भता—स्त्री० [सं० प्रगल्भ+तल्+टाप्] १. प्रगल्भ होने की अवस्था या भाव। २. बुद्धिमत्ता। समझदारी। होशियारी। ३. प्रतिभा। ४. उत्साह। ५. वाक्-चातुरी। ६. वाचालता। ७. निर्भयता। निर्भीकता। ८. गंभीरता। गहनता। ९. प्रधानता। मुख्यता। १०. ढिठाई। धृष्टता। ११. निर्लज्जता। बेहयाई। १२. उच्छृंखलता। उद्दंडता। १३. अभिमान। घमंड। १४. पुष्टता। मजबूती। १५. व्यर्थ की बात-चीत। बकवाद। १५. शक्ति। सामर्थ्य। १७. साहित्य में, नायिका के सात प्रकार के अयत्नज और स्वाभाविक अलंकारों में से एक। प्रायः प्रौढ़ा, सामान्या आदि नायिकाओं के वे आवरण या हाव-भाव जो वे प्रायः निःशंक या निःसंकोच होकर करती हैं। यथा—फूलत फूल गुलावन के, चटकाहट चौंकि चली चपला सी। कान्ह के काननि आँगुरि नाइ रही लपटाइ लवंग लता सी।—पद्माकर।

प्रगल्भ-वचना—स्त्री० [सं० ब० स०] साहित्य में मध्या नायिका के चार भेदों में से एक। वह नायिका जो बातों ही बातों में अपना दुःख और क्रोध भी प्रकट करें और उलाहना भी दे।

प्रगल्भा—स्त्री० [सं० प्रगल्भ+टाप्] १. प्रौढ़ा (नायिका)। २. धृष्ट स्त्री। ३. दुर्गा।

प्रगल्भित—वि० [सं० प्र+गल्भ्√क्त] प्रगल्भता से युक्त।

प्रगसना—अ० [सं० प्रकाश] १. प्रकट होना। २. प्रकाशित होना। चमकना।

स०=प्रगासना।

प्रगाढ़—वि० [सं० प्र√गाह् (हलचल पैदा करना)+क्त] [भाव० प्रगाढ़ता] १. तर किया या भिगोया हुआ। २. बहुत अधिक। ३. बहुत गाढ़ा या गहरा। ४. घना। ५. कठिन।

प्रगाता (तृ)—वि० [सं० प्र√गै (गाना)+तृच्] गानेवाला।

पुं० बहुत बड़ा गवैया।

प्रगामी (मिन्)—वि० [सं० प्र√गम् (जाना)+णिनि] गमन करने-वाला। जानेवाला।

प्रगायी (यिन्)—पुं० [सं० प्र√गै+णिनि] गानेवाला।

प्रगासना—स० [सं० प्रकाशन] १. प्रकट करना। २. प्रकाश से युक्त करना। चमकाना।

प्रगीत—पुं० [सं० प्र√गै+क्त] १. गीत। गाना। २. आज-कल मुख्य रूप से ऐसा गीत जिसमें गीतकार की निजी अनुभूतियों का प्रतिबिम्ब हो और जो उसका विशिष्ट व्यक्तित्व प्रकट करता हो। (लिरिक) जैसे—श्रीमती महादेवी वर्मा के प्रगीत। ३. दे० 'प्रगीत'।

प्रगीति—पुं० [सं० प्रा० स०] १. एक प्रकार का छंद। २. दे० 'गीति-काव्य'।

प्रगुण—वि० [सं० ब० स०] १. गुणवान्। गुणी। २. चतुर। होशियार। ३. अच्छा और लाभदायक। ४. शुभ।

पुं० कोई ऐसा गुण या विशिष्टता जो परिश्रम तथा प्रयत्नपूर्वक अर्जित या प्राप्त की गई हो। दक्षता। निपुणता। (एफिशिएन्सी)

प्रगुणता—स्त्री० [सं० प्रगुण+तल्—टाप्] किसी प्रगुण से युक्त होने की अवस्था या भाव। दक्षता। निपुणता (एफीशिएन्सी)

प्रगुणी (णिन्)—वि० [सं० प्रा० स०] १. गुणवान्। २. चालाक। होशियार।

प्रगृहीत—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. जो अच्छी तरह ग्रहण किया गया हो। २. (व्याकरण में शब्द या पद) जिसका उच्चारण सन्धि के नियमों का ध्यान रखे बिना किया गया हो। ३. आज-कल किसी सभा-समिति का वह सदस्य जिसे दूसरे सदस्यों ने अपनी सहायता के लिए चुनकर अपने साथ सम्मिलित किया हो। सहयोजित। (कोऑप्टेड)

प्रगृह्य—वि० [सं० प्र√ग्रह् (ग्रहण करना)+क्यप्] १. जो ग्रहण किए जाने के योग्य हो। ग्राह्य। २. जो पकड़ा जा सके। ३. (शब्द) जिसका उच्चारण संधि के नियमों का ध्यान रखे बिना किया जा सकता या किया जाता हो।

पुं० १. स्मरण-शक्ति। २. वाक्य।

प्रग्रह—पुं० [सं० प्र√ग्रह्+अप्] १. अच्छी तरह पकड़ने की क्रिया, ढंग या भाव। २. ग्रहण या धारण करने की क्रिया या भाव। ३. कुश्ती आदि लड़ने का एक ढंग या प्रकार। ४. सूर्य या चंद्र के ग्रहण

का आरम्भ। ग्रस्त होना। ५. आदर। सत्कार। ६. अनुग्रह। कृपा। ७. उद्धतता। उद्दंडता। ८. घोड़े आदि की लगाम। बाग। ९. किरण। १०. डोरी, विशेषतः तराजू आदि में बँधी हुई डोरी। ११. पशुओं के गले में बाँधने की रस्सी। पगहा। १२. डोरी। रस्सी। १३. घोड़ों, बैलों आदि को जुताई, सवारी आदि के कामों में लाने के लिए सधाने या सिखाने की क्रिया या भाव। १४. मार्ग-दर्शक। नेता। १५. किसी बड़े ग्रह के साथ रहनेवाला छोटा ग्रह। उपग्रह। १६. कैदी। बंदी। १७. इंद्रियों का दमन या निग्रह। १८. सोना। स्वर्ण। १९. विष्णु। २०. बाँह। हाथ। २१. एक प्रकार का अमलतास। २२. कर्णिकार। कनियारी। (वृक्ष)

प्रग्रहण—पुं० [सं० प्र√ग्रह्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रगृहीत] १. ग्रहण करने की क्रिया या भाव। धारण। २. सूर्य या चन्द्रमा के ग्रहण का आरम्भ। ३. घोड़ों आदि को बोझ ढोने, सवारी के काम में लाने आदि के लिए सधाने की क्रिया या भाव। ४. वह डोरी जिसमें तराजू के पल्ले बँधे रहते हैं। ५. घोड़े की बाग। लगाम। ६. पशुओं के गले में बाँधने की रस्सी। पगहा। ७. आज-कल किसी सभा-समिति में उसके सदस्यों द्वारा किसी बाहरी आदमी को अपनी सहायता के लिए चुनकर अपना सदस्य बनाना। सहयोजन। (कोऑप्शन)

प्रग्राह—पुं० [सं० प्र०√ग्रह्+घञ्] १. तराजू आदि की डोरी। २. लगाम। ३. पगहा।

प्रग्रीव—पुं० [सं० ब० स०] १. किसी मकान के चारों तरफ का वह घेरा जो लट्ठे, बाँस आदि गाड़कर बनाया गया हो। २. छोटी खिड़की। झरोखा। ३. अस्तबल। ४. वृक्ष का ऊपरी भाग। ५. आमोद-प्रमोद का स्थान। ६. विलास-भवन। रंग-भवन।

प्रघट—वि० दे० 'प्रकट'।
पुं०=प्रघटक।

प्रघटक—पुं० [सं० प्रा० स०] सिद्धांत।

प्रघटन—पुं० [सं० प्रा० स०] १. विशिष्ट रूप से घटित होने की क्रिया या भाव। २. वह कार्य, घटना या स्थिति जो वस्तुतः घटित हुई हो और जिसके संबंध में कुछ अध्ययन, अनुसन्धान, निर्णय या विचार होने को हो। मामला। (केस) जैसे—आज-कल नगर में चोरियों के प्रघटन बहुत होने लगे हैं।

प्रघटना—अ० [सं० प्रकट] प्रकट होना।

प्रघटा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] किसी विज्ञान या शास्त्र की मोटी और साधारण बातें।

प्रघट्टक—पुं० [सं० प्र√घट्ट् (चलाना)+ण्वुल्—अक] सिद्धांत।
वि० [सं० प्रकट] प्रकट करने या सामने लानेवाला। (क्व०)

प्रघण—पुं० [सं० प्र√हन् (हिंसा)+अप्, कुत्व, णत्व] १. बरामदा। अलिंद। २. लोहे का मुद्गर। ३. ताँबे का घड़ा।

प्रघल†—वि० =प्रबल। उदा०—राणो पिमै न रास, प्रघलो साँड प्रतापसी।—पृथ्वीराज।

प्रघस—पुं० [सं० प्र√अद् (खाना)+अप्, घसादेश] १. रावण की सेना का एक सेनापति जिसे हनुमान ने प्रमदा-वन उजाड़ने के समय मारा था। २. दैत्य। राक्षस। ३. बहुत अधिक खाना।
वि० बहुत अधिक खानेवाला। पेटू।

प्रघात—पुं० [सं० प्र√हन्+घञ्] १. आघात। चोट। २. आघात करने या चोट पहुँचाने की क्रिया। ३. युद्ध। ४. मार डालना।

प्रघुण—पुं० [सं० प्र√घुण् (घूमना)+क] अतिथि। अभ्यागत।

प्रघोर—वि० [सं० प्रा० स०] १. बहुत अधिक। घोर। २. बहुत अधिक कठिन या विकट।

प्रचंड—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० प्रचंडता] १. जिसमें अत्यधिक उग्रता, तीव्रता या तेजी हो। २. बहुत अधिक गरम। ३. भयंकर। भीषण। ४. कठिन। कठोर। ५. असह्य। ६. भारी। ७. बलवान्। पुष्ट। ८. प्रतापी।
पुं० १. शिव का एक गण। २. सफेद कनेर।

प्रचंडता—स्त्री० [सं० प्रचंड+तल्+टाप्] १. प्रचंड होने की अवस्था या भाव। तेजी। तीखापन। प्रबलता। उग्रता। २. भयंकरता।

प्रचंडत्व—पुं० [सं० प्रचंड+त्व] प्रचण्डता।

प्रचंडा—स्त्री० [सं० प्रचंड+टाप्] १. एक तरह की सफेद दूब जिसमें सफेद रंग के फूल लगते हैं। २. चंडी। दुर्गा। ३. दुर्गा की एक सहेली।

प्रचई*—स्त्री०=परचई।

प्रचय—पुं० [सं० प्र√चि (चयन करना)+अच्] १. वेद-पाठ विधि में एक प्रकार का स्वर जिसके उच्चारण के विधानानुसार पाठक को अपना हाथ नाक के पास ले जाने की आवश्यकता पड़ती है। २. बीज-गणित में एक प्रकार का संयोग। ३. झुंड। दल। ४. ढेर। राशि। ५. बढ़ती। वृद्धि। ६. लकड़ी आदि की सहायता से फलों, फूलों आदि का होनेवाला चयन।

प्रचर—पुं० [सं० प्र√चर् (गति)+अप्] १. मार्ग। रास्ता। २. रीति। रिवाज।

प्रचरण—पुं० [सं० प्र√चर्+ल्युट्—अन] १. आगे बढ़ना। कदम बढ़ाना। २. घूमना-फिरना। ३. उपभोग करना। ४. प्रचलित होना।

प्रचरना—अ० [सं० प्रचार] १. चलना। २. प्रचलित होना। फैलना।

प्रचरित—वि० [सं० प्र√चर्+क्त] १. जो प्रचरण में हो। २. प्रचलित।

प्रचल—वि० [सं० प्र√चल् (चलना)+अच्] बहुत अधिक चंचल।
पुं० मोर।

प्रचलन—पुं० [सं० प्र√चल्+ल्युट्—अन] १. चलना या व्यवहार में होना। चलनसार होना। २. उपयोग, व्यवहार आदि में आना। ३. रीति, रिवाज, नियम, सिद्धांत आदि का जारी रहने का भाव। ४. प्रथा। रिवाज।

प्रचला—स्त्री० [सं० प्रचल+टाप्] १. वह निद्रा जो बैठे या खड़े हुए मनुष्य को आती है। २. वह पाप-कर्म जिसके उदित होने से उक्त प्रकार की निद्रा आती है।

प्रचलित—भू० कृ० [सं० प्र√चल्+क्त] १. जिसका प्रचलन हो। चलनसार। (करेंट) २. जो उपयोग, व्यवहार आदि में आ रहा हो। जो इस समय चल रहा हो। ३. कार्य या व्यवहार के रूप में चलाया या लाया हुआ। (इनफोर्स)

प्रचाय—पुं० [सं० प्र√चि (चयन करना)+घञ्] १. हाथ से कोई चीज एकत्र करना। २. एकत्र की हुई वस्तु का बनाया हुआ ढेर। राशि। ३. अधिकता। वृद्धि।

प्रचायक—वि० [सं० प्र√चि+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रचायिका] १. चयन करने या चुननेवाला। २. संग्रह करनेवाला। ३. ढेर लगानेवाला।

प्रचार—पुं० [सं० प्र√चर्+घञ्] १. किसी वस्तु या बात का बराबर व्यवहार में आना या चलता रहना। २. वह प्रयास जो किसी बात, सिद्धांत आदि को जनता या लोक में फैलाने के लिए विशेष रूप से किया जाता है और जिसका प्रमुख उद्देश्य किसी चीज को लोकप्रिय बनाना अथवा किसी लोक-प्रिय वस्तु को हेय सिद्ध करना होता है। ३. उक्त के आधार पर प्रचारित की हुई कोई बात। ४. प्रसिद्धि। ५. आकाश। ६. गोचर-भूमि। ७. घोड़ों की आँख का एक रोग जिसमें आँखों के आस-पास का मांस बढ़कर दृष्टि रोक लेता है।

प्रचारक—वि० [सं० प्र√चर्+णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रचारिणी] किसी बात, विषय, सिद्धांत आदि का प्रचार करनेवाला। जैसे—हिन्दी प्रचारक।

प्रचारण—पुं० [सं० प्र√चर्+णिच्+ल्युट्—अन] प्रचार करने की क्रया या भाव।

प्रचारना—स० [सं० प्रचारण] १. प्रचारित करना। फैलाना। २. ललकारना।

प्रचारित—भू० कृ० [सं० प्र+चर्+णिच्√क्त] १. (बात, वस्तु या सिद्धांत) जिसका प्रचार हुआ या किया गया हो। २. (नियम, विधान आदि) जिसे काम में लाने या जिसके अनुसार काम करने की आज्ञा दी जा चुकी हो। (प्रोमलगेटेड)। ३. जिसे लड़ाई आदि के लिए ललकारा गया हो। जिसके प्रति प्रचारणा की गई हो।

प्रचारी (रिन्)—वि० [सं० प्र√चर्+णिनि] १. घूमने-फिरनेवाला। २. प्रकट होनेवाला। ३. प्रचार करनेवाला। दे० 'प्रचारक'।

प्रचालन—पुं० [सं०] [भू० कृ० प्रचालित] १. अच्छी तरह चलाने की क्रिया या भाव। २. प्रचलन में लाने की क्रिया या भाव। ३. दे० 'संचालन'।

प्रचालित—भू० कृ० [सं० प्र√चल्+णिच्+क्त] १. जिसे प्रचलन में लाया गया हो। २. परिचालित या संचालित किया हुआ।

प्रचित—वि० [सं० प्र√चि+क्त] १. संग्रहीत। २. चयन किया हुआ। ३. (स्वर) जो अनुदात हो।

पुं० दंडकवृत्त का एक भेद। (पिंगल)

प्रचुर—वि० [सं० प्र√चुर् (चुराना)+क] [भाव० प्रचुरता] १. (किसी वस्तु का उतना मान या मात्रा) जिससे आवश्यकता, अपेक्षा, न्यूनता आदि की पूर्ति अच्छी तरह हो जाती या हो सकती हो। २. बहुत अधिक। विपुल। ३. भरा-पूरा। पूर्ण।

पुं० चोर।

प्रचुरता—स्त्री० [सं० प्रचुर+तल्—टाप्] प्रचुर होने की अवस्था या भाव। अधिकता।

प्रचूषण—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० प्रचूषित] १. अच्छी तरह चूसना। २. शोषण करना। सोखना। अवशोषण। (एब्जार्शन)

प्रचेता (तस्)—पुं० [सं० प्र√चित्+असुन्] १. वरुण का एक नाम। २. बारहवें प्रजापति का एक नाम। ३. एक प्राचीन ऋषि जो अनेक विधि-विधानों के निर्माता माने जाते हैं। ४. पृथु के परपोते और प्राचीन वर्हि के दस पुत्र जिन्होंने दस हजार वर्ष तक समुद्र के अन्दर रह कर कठिन तपस्या की थी।

वि० १. चतुर। होशियार। २. बुद्धिमान। समझदार।

प्रचेय—वि० [सं० प्र√चि+यत्] १. (फूल या ऐसी ही और कोई चीज) जिसका चयन होने को हो या किया जाना उचित हो। २. चुने जाने या संग्रह करने के योग्य। ३. ग्रहण किये जाने के योग्य। ग्राह्य।

प्रचोदक—वि० [सं० प्र√चुद्+ण्वुल्—अक] १. प्रचोदन या प्रेरणा करनेवाला। २. उत्तेजित करनेवाला। उत्तेजक।

प्रचोदन—पुं० [सं० प्र√चुद्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रचोदित] १. कोई काम करने के लिए दिया जानेवाला बढ़ावा। उत्तेजना। २. प्रेरणा करना। उकसाना। ३. आज्ञा, नियम या सिद्धांत। ४. प्रेषण। भेजना। ५. घोषणा।

प्रचोदित—भू० कृ० [सं० प्र√चुद्+णिच्+क्त] १. जिसे बढ़ावा दिया गया हो। २. उत्तेजित किया हुआ। जिसे प्रेरणा की गई हो। प्रेरित किया हुआ। ३. जिसे आज्ञा, आदेश आदि मिला हो। ४. भेजा हुआ। ५. घोषित किया हुआ।

प्रच्छक—वि० [सं०√प्रच्छ् (पूछना)+ण्वुल्—अक] प्रश्न करने या पूछनेवाला।

प्रच्छद—पुं० [सं० प्र√छद् (ढकना)+णिच्+घ] १. वह जिसमें कोई चीज ढकी या लपेटी जाय। २. बिस्तर पर बिछाई जानेवाली चादर। ३. चाँदनी। ४. कंबल। ५. चोगा।

प्रच्छना†—स० [सं० पृच्छन] प्रश्न करना। पूछना।

प्रच्छन्न—वि० [सं० प्र√छद्+क्त] १. किसी आच्छादन, आवरण, वस्त्र आदि से ढका हुआ। जैसे—प्रच्छन्न शरीर। २. जो जान-बूझकर दूसरों से छिपाया गया हो। (हिडिन) जैसे—प्रच्छन्न धन। ३. जो अपना वास्तविक रूप औरों से छिपाकर रखता हो। जैसे—प्रच्छन्न बौद्ध।

पुं० १. चोर दरवाजा। २. खिड़की।

प्रच्छर्दक—वि० [सं० प्र√छर्द् (वमने)+ण्वुल्—अक] १. बाहर निकालनेवाला। २. (ऐसी ओषधि) जिसके सेवन से कै या वमन होता हो। ३. कै या वमन करनेवाला।

प्रच्छर्दन—पुं० [सं० प्र√छर्द् (वमन करना)+ल्युट्—अन] १. बाहर निकालना। २. नाक के रास्ते प्राण-वायु बाहर निकालना। रेचन। ३. उल्टी, कै या वमन करना।

प्रच्छर्दिका—स्त्री० [सं० प्र√छर्द्+ण्वुल्,—अक+टाप्, इत्व] १. ऐसी ओषधि जिसके सेवन से कै होती हो। २. बराबर कै या वमन करते रहने का एक रोग।

प्रच्छादक—वि० [सं० प्र√छद्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. अच्छी तरह से ढकने या आच्छादित करनेवाला। २. छिपानेवाला।

प्रच्छादन—पुं० [सं० प्र√छद्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० प्रच्छादित] १. कोई चीज ढकने की क्रिया या भाव। २. वह चीज जिससे कोई दूसरी चीज ढंकी जाय। ३. उत्तरीय वस्त्र। ४. दूसरों से चुराने, छिपाने या दबाने की क्रिया या भाव। ५. आँख की पलक।

प्रच्छादित—भू० कृ० [सं० प्र√छद्+णिच्+क्त] १. ढका हुआ। आवृत। २. छिपाया हुआ। (कन्सील्ड)

प्रच्छाय—पुं० [सं० ब० स०] १. वह स्थान जहाँ घनी छाया हो। २. घनी छाया। ३. अन्धकार। अँधेरा।

प्रच्छाया—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. किसी ग्रह या उपग्रह की वह छाया जो सूर्य की विपरीत दिशा में कोण के रूप में पड़ती है। २. गहरी छाया। ३. ग्रहण के समय चन्द्रमा या सूर्य पर पड़नेवाली छाया। ४. भौतिक विज्ञान में, वह गहरी छाया जिसमें प्रकाश के उद्‌गम से कुछ भी प्रकाश प्रत्यक्ष रूप से या सीधा न आता हो। (अम्ब्रा)

प्रच्छालना*—स० [सं० प्रक्षालन] धोना।

प्रच्छिल—वि० [सं०√प्रच्छ्+इलच्] १. शुष्क। सूखा। २. जिसमें जलीय तत्त्व न हों। जल-रहित।

प्रच्छेदन—पुं० [सं० प्र√छिद्+ल्युट्—अन] १. कोई चीज इस प्रकार काटना कि उसके छोटे-छोटे टुकड़े हो जायँ। टुकड़े-टुकड़े करना। २. भेद न करना। छेदना।

प्रच्युत—वि० [सं० प्र√च्यु+क्त] [भाव० प्रच्युति] १. अपने स्थान से हटा या हटाया हुआ। २. विशेषतः किसी उच्च पद से हट या हटाकर निम्न पद पर आया या लाया हुआ। ३. झरा या बहा हुआ।

प्रच्युति—स्त्री० [सं० प्र√च्यु+क्तिन्] अपने स्थान से गिरने या हटने की अवस्था क्रिया या भाव। च्युति।

प्रछन्न†—वि०=प्रच्छन्न।
पुं०=प्रश्न।

प्रजंक†—पुं०=पर्यंक।

प्रजंत†—अव्य०=पर्यंत (तक)।

प्रज—पुं० [सं० √जन् (उत्पन्न होना)+ड] स्त्री का पति। स्वामी।
स्त्री०=प्रजा।

प्रजन—पुं० [सं० √जन्+घञ्] १. गर्भधारण करने के लिए (पशुओं का) मैथुन। जोड़ा खाना। २. पशुओं के गर्भधारण का समय। ३. नर या पुरुष की जननेन्द्रिय। लिंग। ४. दे० 'प्रजनन'।
वि० जन्म देनेवाला। जनक।

प्रजनक—वि० [सं० प्र√जन्+णिच्+ ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रजनिका] जन्म देने या उत्पन्न करनेवाला।
पुं० जनक। पिता।

प्रजनन—पुं० [सं० प्र√जन्+णिच्+ल्युट्—अन] १. अपने ही जैसे नये जीवों को जन्म देकर अपने वंश या वर्ग की वृद्धि करना। संतान उत्पन्न करना। (रिप्रोडक्शन)। २. जीवों का होनेवाला जन्म। ३. दाई या धात्री का काम। ४. पशुओं आदि को पाल-पोसकर उनकी उन्नति और वृद्धि करना। (ब्रीडिंग)

प्रजनिका—स्त्री० [सं० प्र√जन्+णिच् + ण्वुल्—अक,+टाप्, इत्व] माता। जननी।

प्रजनिष्णु—वि० [सं० प्र√जन्+णिच्+इष्णुच्] प्रजनन करने या जन्म देनेवाला।

प्रजरंत†—वि०=प्रज्वलित।

प्रजरना—अ० [सं० प्र+हिं० जरना] अच्छी तरह जलना। प्रज्वलित होना। उदा०—प्रजरयो आग वियोग की बह्यो विलोचन नीर।—विहारी।
स०=प्रजारना।

प्रजल्प—पुं० [सं० प्र√जल्प् (बोलना)+घञ्] १. इधर-उधर की या व्यर्थ की बातचीत। बकवाद। २. प्रिय को प्रसन्न करने के लिए कही जानेवाली बात या हाँकी जानेवाली गप्प।

प्रजल्पित—भू० कृ० [सं० प्र√जल्प्+क्त] बकवाद के रूप में कहा हुआ।
पुं० बकवाद।

प्रजवी (विन्)—पुं० [सं० प्र√जु+इनि+] १. दूत। २. हरकारा।

प्रजांतक—पुं० [सं० प्रजा-अन्तक, ष० त०] यम।

प्रजा—स्त्री० [सं० प्र√जन्+ड + टाप्] १. संतान। औलाद। २. किसी विशिष्ट राज्य या शासन में रहनेवाले वे सब लोग जो उसके द्वारा शासित होते हैं। रिआया। (सब्जेक्ट) ३. भारतीय देहाती समाज में छोटी जातियों के वे लोग जो बिना वेतन लिये काम करते हैं, और जिन्हें नियमित रूप से समय-समय पर अन्न, धन, वस्त्र, आदि मिलते रहते हैं। जैसे—नाऊ, बारी, भाट, नट, लोहार, कुम्हार, चमार, धोबी आदि। ४. सृष्टिकर्ता। ब्रह्मा।

प्रजाकाम—वि० [सं० प्रजा√कम् (चाहना) + णिङ्+अण्] जिसे पुत्र की कामना हो।

प्रजाकार—पुं० [सं०प्र√जा+कृ (करना) + अण्] सृष्टि के रचयिता। ब्रह्मा।

प्रजागर—वि० [सं० प्र√जागृ (जागना)+अच्] १. जागता रहनेवाला। २. पहरा देने या चौकसी करनेवाला।
पुं० १. जागरण। २. निद्रा न आने का रोग। उन्निद्र। ३. विष्णु। ४. प्राण।

प्रजागरण—पुं० [सं० प्र√जागृ+ल्युट्—अन] १. जागते रहने का भाव। जागरण। २. पहरा देना। चौकसी करना।

प्रजा-तंतु—पुं० [सं० ष० त०] १. संतान। संतति। २. कुल। वंश। ३. किसी वंश की विभिन्न पीढ़ियों की श्रृंखला। वंश-परम्परा।

प्रजातंत्र—पुं०[सं० ष० त०] दे० 'लोकतंत्र'।

प्रजात—भू० कृ० [सं० प्र√जन् (उत्पन्न होना)+क्त] जिसे जन्म दिया गया हो। उत्पन्न किया हुआ।

प्रजाता—स्त्री० [सं० प्रजात+टाप्] वह स्त्री जिसने बच्चे को जन्म दिया हो। जच्चा। प्रसूतिका।

प्रजाति—स्त्री० [सं० प्र√जन्+क्तिन्] १. प्रजा। २. संतान। ३. संतान उत्पन्न करना। ३. प्रजनन। जन्म देने या उत्पन्न करने की शक्ति। ५. बच्चे को जन्म देना।

प्रजाद—वि० [सं० प्रजा√दा+क] १. जन्म देने या उत्पन्न करनेवाला। २. बाँझपन दूर करनेवाला।

प्रजादा—स्त्री० [सं० प्रजा√दा (देना)+क + टाप्] बाँझपन दूर करनेवाली ओषधि।

प्रजा-द्वार—पुं० [ष० त०] १. प्रजा या संतान उत्पन्न करने का उपाय या साधन। २. सूर्य का एक नाम।

प्रजाध्यक्ष—पुं० [प्रजा-अध्यक्ष, ष० त०] १. प्रजापति। २. सूर्य।

प्रजानाथ—पुं० [ष० त०] १. ब्रह्मा। २. मनु। ३. दक्ष। ४. राजा।

प्रजापति—पुं० [ष० त०] १. सृष्टि का रचयिता। सृष्टि कर्ता। ब्रह्मा। २. वे दस लोककर्ता जिन्हें ब्रह्मा ने सृष्टि के आरम्भ में प्रजा-वृद्धि

के लिए उत्पन्न किया था। ३. मनु। ४. राजा। ५. सूर्य। ६. अग्नि। ७. विश्वकर्मा। ८. पिता। ९. तितली। १०. घर का मालिक या स्वामी। ११. एक नक्षत्र का नाम। १२. एक प्रकार का यंत्र। १३. जामाता। दामाद। १४. कुंभकार। कुम्हार। १५. साठ संवत्सरों में से पाँचवा संवत्सर। १६. प्राजापत्य (देखें) नामक विवाह-प्रकार।

प्रजापती—स्त्री० [सं०, प्रजापति] गौतम-बुद्ध को पालने वाली गोमती का नाम।

†पुं० = प्रजापति।

प्रजा-पालक—पुं० [सं० ष० त०, णिच्+अच्] प्रजा का पालन-पोषण करनेवाला अर्थात् राजा।

प्रजा-पालन—पुं० [ष० त०] प्रजा का पालन और भरण-पोषण तथा रक्षा।

प्रजायी (यिन्)—वि० [सं० प्र√जन्+णिनि] [स्त्री० प्रजायिनी] उत्पन्न करने या जन्म देनेवाला। जैसे—वीरप्रजायी।

प्रजारना—स० [सं० प्र (उप०)+हिं० जारना] अच्छी तरह जलाना। प्रज्वलित करना।

प्रजालना*—स० प्रजारना।

प्रजावती—स्त्री० [सं० प्रजा+मतुप्, वत्व, +ङीष्] १. ऐसी स्त्री जिसके बहुत से बच्चे या संतानें हों। २. गर्भवती स्त्री। ३. भाई की स्त्री। ४. बड़े भाई की स्त्री। भाभी। भौजाई। ५. राजा प्रियव्रत की पत्नी का नाम।

प्रजा-वृद्धि—स्त्री० [ष० त०] १. संतान की बढ़ती। २. जनता या जन-संख्या की वृद्धि।

प्रजा-सत्ता—स्त्री० [ष० त०]=प्रजातंत्र।

प्रजा-सत्ताक—वि० [ब० स०,+कप्] १. (शासन प्रणाली) जिसमें शासन सूत्र प्रजा अथवा उसके चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथ में होता है। २. (राज्य) जिसका शासन सूत्र प्रजा या उसके चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथ में होता है।

प्रजित्—वि० [सं० प्र√जि (जीतना)+क्विप्, तुक्] जीतनेवाला। विजेता। विजयी।

प्रजिन—पुं० [सं० प्र√ज्या (जीर्ण होना)+नक्, सम्प्रसारण] वायु। हवा।

प्रजीवन—पुं० [सं० प्रा० स०] जीविका। रोजी।

प्रजुरित, प्रजुलित†—वि०=प्रज्वलित।

प्रजेप्सु—वि० [सं० प्रजा–ईप्सु, ष० त०] प्रजा या संतान की कामना करनेवाला।

प्रजेश—पुं० [सं० प्रजा+ईश, ष० त०]=प्रजापति।

प्रजोग†—पुं०=प्रयोग।

प्रज्ञ—वि० [सं० प्र√ज्ञा (जानना)+क] [स्त्री० प्रज्ञा, भाव० प्रज्ञता] १. जाननेवाला। जानकार। २. जिसमें प्रज्ञा-शक्ति यथेष्ट हो। बहुत चतुर और बुद्धिमान।

पुं० १. किसी विषय का बहुत अच्छा ज्ञाता, पंडित या विद्वान। २. बुद्धिमान्।

प्रज्ञता—स्त्री० [सं० प्रज्ञ√तल्+टाप्] १. प्रज्ञ होने की अवस्था या भाव। २. पांडित्य। विद्वता। ३. अच्छी जानकारी।

प्रज्ञप्त—भू० कृ० [सं० प्र√ज्ञप्+क्त] १. जतलाया, बतलाया या सूचित किया हुआ। २. जिसके सम्बन्ध में कोई प्रज्ञप्ति निकली या हुई हो।

प्रज्ञप्ति—स्त्री० [सं० प्र√ज्ञप् (जताना)+क्तिन्] १. जतलाने या सूचित करने की क्रिया या भाव। २. सूचना।

प्रज्ञा—स्त्री० [सं० प्र√ज्ञा+अङ+टाप्] १. बुद्धि। समझ। २. बुद्धि का वह परिष्कृत, विकसित तथा संस्कृत रूप जो उसे अध्ययन, अभ्यास, निरीक्षण आदि के द्वारा प्राप्त होता है और जिससे मनुष्य सब बातों का आगा-पीछा या वास्तविक रूप जल्दी और सहज में समझ लेता है। न्याय-बुद्धि। (इन्टलेक्ट)

विशेष—यह मुख्यतः अनुभव, पांडित्य और विचारशीलता का प्रकाशमान् सम्मिश्रण और साधारण बुद्धि का खरादा, गढ़ा और तराशा हुआ रूप है।

३. सरस्वती का एक नाम। ४. विदुषी और सभ्य स्त्री।

प्रज्ञा-चक्षु (स्)—वि० [ब० स०] जिसके लिए उसकी बुद्धि ही आँखों का काम देती हो।

पुं० १. ऐसा अन्धा व्यक्ति जो अपनी बुद्धि से ही सब बातें जान या समझ लेता हो। २. अन्धा व्यक्ति। (परिहास और व्यंग्य) ३. धृतराष्ट्र। ४. ज्ञानी पुरुष।

प्रज्ञात—भू० कृ० [सं० प्र√ज्ञा+क्त] १. जिसका प्रज्ञान हुआ हो या किया गया हो; २. अच्छी तरह से जाना और समझा हुआ। ३. स्पष्ट। ४. विवेचित। ५. प्रसिद्ध। विख्यात।

प्रज्ञाता—वि० [सं०] प्रज्ञान करनेवाला (कॉग्निजेन्ट)

प्रज्ञा-दृष्टि—पुं०=प्रज्ञा-चक्षु।

प्रज्ञान—पुं० [सं० प्र√ज्ञा+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रज्ञात, वि० प्रज्ञेय] १. किसी बात या विषय का विशेष रूप से प्राप्त किया हुआ ज्ञान। २. विधिक क्षेत्र में किसी कार्य विशेषतः आपराधिक कार्य की ओर आधिकारिक रूप से किया जानेवाला ध्यान। (काग्निजेन्स) ३. विवेक। बुद्धि। ४. चिह्न। निशान। ५. चैतन्य। विद्वान्।

प्रज्ञापक—वि० [सं० प्र√ज्ञा+णिच्+ण्वुल्—अक, पुक् आगम] प्रज्ञापन करने या जतानेवाला। सूचित करनेवाला।

पुं० बड़े बड़े या मोटे मोटे अक्षरों में लिखा या छपा हुआ विज्ञापन। (पोस्टर)

प्रज्ञापन—पुं० [सं० प्र√ज्ञा+णिच्, पुक्, +ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रज्ञापित] किसी को विशेष रूप से किसी घटना, बात या विषय का ज्ञान कराना।

प्रज्ञा-पारमिता—स्त्री० [सं० ष० त०] पूर्ण ज्ञान प्राप्त होने की स्थिति जो बौद्धों के अनुसार दस (या छः) गुणों (पारमिताओं) में से एक है।

प्रज्ञापित—भू० कृ० [सं० प्र√ज्ञा+णिच्, पुक्+क्त] १. (विषय) जिसका प्रज्ञापन हुआ हो। २. (व्यक्ति) जिसे सूचना दी गई हो।

प्रज्ञामय—पुं० [सं० प्रज्ञा+मयट्] प्रज्ञाशील। पंडित। विद्वान्।

प्रज्ञाल—वि० [सं० प्रज्ञा+लच्] बुद्धिमान्।

प्रज्ञावाद—पुं० [सं० ष०त०] [वि० प्रज्ञावादी] यह मत या सिद्धांत कि मनुष्य को सदा सब काम अपनी प्रज्ञा के अनुसार सब समझ-बूझकर करने चाहिए। (इन्टलेकचुअलिज्म)

प्रज्ञावान् (वत्)—वि० [सं० प्रज्ञा+मतुप्, वत्व] जो खूब सोच-समझ कर काम करता हो।

प्रज्ञा-शील—वि० [सं० ब० स०] जो हर काम सोच-समझकर करता हो। जिसमें न्याय-बुद्धि हो।

प्रज्ञेय—वि० [सं०] जिसका प्रज्ञान हो सकता हो या होने को हो। (कान्जिज़ेबुल)

प्रज्वलन—पुं० [सं० प्र√ज्वल् (दीप्ति)+ल्युट्—अन] [वि० प्रज्व-लनीय, भू० कृ० प्रज्वलित] ताप, प्रकाश आदि उत्पन्न करने के लिए कोई चीज जलाना।

प्रज्वलित—भू० कृ०[सं० प्र√ज्वल्+क्त] १. ताप, प्रकाश आदि उत्पन्न करने के उद्देश्य से जलाया हुआ। २. चमकता हुआ। ३. व्यक्त और सुस्पष्ट।

प्रज्वलिया—पुं० [?] एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ होती हैं।

प्रज्वार—पुं० [सं० प्र√ज्वर् (दाह)+घञ्] ज्वर से पीड़ित होने पर शरीर में से निकलनेवाला ताप।

प्रज्वालन—स० [सं० प्र√ज्वल्+णिच्+ल्युट्—अन] प्रज्वलित करना।

प्रडीन—पुं० [सं० प्र√डी (उड़ना)+क्त] पक्षियों की १०१ तरह की उड़ानों में से एक उड़ान।
वि० जो डैनों या परों की सहायता से उड़ गया हो या उड़ रहा हो।

प्रण—वि० [सं० पुराण+न, प्र—आदेश] पुराना। प्राचीन।
पुं० [सं० पण] कोई काम विशेषतः कोई कठिन और वीरतापूर्ण काम करने का अटल या दृढ़ निश्चय। दृढ़ प्रतिज्ञा।

प्रणख—पुं० [सं० प्र-नख, प्रा० स०, णत्व] नाखून का अगला नुकीला भाग।

प्रणत—वि० [सं० प्र√नम् (झुकना)+क्त] १. बहुत झुका हुआ। २. जो झुककर किसी को प्रणाम कर रहा हो। ३. नम्र। विनीत। दीन।
पुं० १. दास। २. नौकर। सेवक। ३. उपासक या भक्त।

प्रणतपाल—वि० [ष० त०]=प्रणतपालक।

प्रणतपालक—वि० [सं० प्रणत√पाल् (पालना)+णिच्+अच्] [स्त्री० प्रणतपालिका] शरण में आये हुए दीन-दुखियों की रक्षा करनेवाला।

प्रणति—स्त्री० [सं० प्र√नम् (झुकना)+क्तिन्] १. झुकने की क्रिया या भाव। २. प्रणाम। प्रणिपात। दंडवत्। ३. नम्रता। ४. विनती।

प्रणदन—पुं० [सं० प्र√नद् (शब्द करना)+ल्युट्—अन] जोर से नाद या आवाज करना। गरजना या चिल्लाना।

प्रणपति—स्त्री० [सं० प्रणिपत्] १. प्रणति। २. प्रणाम। उदा०—करि प्रणपति लागी कहण।—प्रिथीराज।

प्रणमन—पुं० [सं० प्र√नम्+ल्युट्—अन] १. झुकना। २. प्रणाम करना।

प्रणम्य—वि० [सं० प्र√नम्+यत्] १. जिसके आगे झुकना उचित हो। २. जिसके सामने झुककर प्रणाम करना उचित हो। पूज्य और वन्दनीय।

प्रणय—पुं० [सं० प्र√नी (पहुँचना)+अच्] १. प्रेमपूर्वक की जाने-वाली प्रार्थना। २. प्रेम विशेषतः ऐसा श्रृंगारिक प्रेम जो साधारण अनुराग या स्नेह से बहुत आगे बढ़ा हुआ होता है। ३. भरोसा। विश्वास। ४. मोक्ष। निर्वाण। ५. श्रद्धा। ६. प्रसव।

प्रणय-कोप—पुं० [सं० सुप्सुपा स०] प्रेमियों का एक दूसरे पर बिगड़ना या रोष प्रकट करना।

प्रणयन—पुं० [सं० प्र√नी+ल्युट्—अन] १. कोई चीज कहीं से ले आना या ले जाकर कहीं पहुँचाना। २. कोई काम पूरा करना। ३. कोई नई चीज़ बनाकर तैयार करना। रचना। ४. साहित्यिक काव्य, ग्रन्थ, लेख आदि प्रस्तुत करना या लिखना। ५. उपस्थित करना। सामने लाना। ६. होम आदि के समय किया जानेवाला अग्नि का एक संस्कार।

प्रणयमान—पुं० [सं० सुप्सुपा स०] प्रेम में किया जानेवाला मान। रूठना।

प्रणयिता—स्त्री० [सं० प्रणयिता+तल्,+टाप्] प्रणय-युक्त होने की अवस्था या भाव। अनुरक्ति।

प्रणयिनी—स्त्री० [सं० प्रणयिन्+ङीप्] पुरुष की दृष्टि से वह स्त्री जिससे वह प्रणय या बहुत अधिक प्रेम करता हो।

प्रणयी (यिन्)—पुं० [सं० प्रणय+इनि] [स्त्री० प्रणयिनी] वह पुरुष जो किसी स्त्री से प्रेम करता हो। स्त्री का प्रेमी।

प्रणव—पुं० [सं० प्र√नु (स्तुति)+अप्] १. ॐकार। ब्रह्मा बीज। ओंकार मंत्र। २. (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) त्रिदेव। ३. परमेश्वर।

प्रणवना—स० [सं० प्रणमन] १. प्रणाम करना। नमस्कार करना। २. प्रणाम करने के उद्देश्य से किसी के आगे झुकना। ३. किसी के आगे झुकना। हार मानना।

प्रनष्ट—वि० [सं० प्र√नश् (नष्ट होना+क्त] १. जो लुप्त हो गया हो। विनष्ट। २. मृत। मरा हुआ।

प्रणस—पुं० [सं० प्र-नासिका, ब० स०, नस—आदेश] वह व्यक्ति जिसकी नाक बड़ी और मोटी हो। (ऐसा व्यक्ति भाग्यवान् समझा जाता है।)

प्रणाद—पुं० [सं० प्र√नद् (शब्द करना)+घञ्] १. बहुत जोर से होनेवाला शब्द। २. आनन्द या प्रसन्नता के समय मुँह से निकलने-वाला शब्द। ३. झंकार। जैसे—आभूषणों या नूपुरों का प्रणाद। ४. घोड़ों के हिनहिनाने का शब्द। ५. कर्ण-नाद नाम का रोग जिसमें कानों में गूँज या साँयँ साँयँ सुनाई पड़ती है।

प्रणाम—पुं० [सं० प्र√नम् (झुकना)+घञ्] बड़ों के आगे नत मस्तक होकर उनका अभिवादन करने का एक ढंग या प्रकार।

प्रणामांजलि—स्त्री० [सं० प्रणाम-अंजलि, च० त०] हाथ जोड़कर किया जानेवाला प्रणाम। करबद्ध प्रणाम।

प्रणामी (मिन्)—पुं० [सं० प्रणाम+इनि] प्रणाम करनेवाला।
स्त्री० [सं० प्रणाम] वह दक्षिणा या धन जो बड़ों को प्रणाम करते समय उनके चरणों पर आदरपूर्वक रखा जाता है।

प्रणायक—पुं० [सं० प्र√नी+ण्वुल्—अक] १. वह जो मार्ग दिख-लाता हो। पथप्रदर्शक। २. नेता। ३. सेनापति।

प्रणाल—पुं० [सं० प्र√नल् (बाँधना)+घञ्] १. बड़ा जल-मार्ग। २. पनाला।

प्रणालिका—पुं० [सं० प्रणाली+कन्,+टाप्, ह्रस्व] १. परनाली। नाली। २. बंदूक की नली।

प्रणाली—स्त्री० [सं० प्रणाल+ङीष्] १. वह मार्ग जिसमें से होकर जल बहता हो। २. विशेषतः ऐसा जल-मार्ग जो दो जल-राशियों को मिलाता हो। ३. कोई काम करने का उचित, उपयुक्त, नियत या विधि विहित ढंग, प्रकार या साधन। (चैनल, उक्त सभी अर्थों में) ४. वह सारी व्यवस्था और उसके सब अंग जिनसे कोई निश्चित या विशिष्ट कार्य होता हो। तरीका। ५. द्वार। ६. परम्परा।

प्रणाश—पुं० [सं० प्र√नश्+घञ्] १. पूर्णरूप से होनेवाला विनाश। २. मृत्यु। ३. पलायन। भागना।

प्रणाशी (शिन्)—वि० [सं० प्र√नश्+णिच्+णिनि] [स्त्री० प्रणाशिनी] नाश करनेवाला।

प्रणिधान—पुं० [सं० प्र-नि√धा (धारण करना)+ल्युट्—अन] १. देखा जाना। २. प्रयत्न। ३. योग-साधन में, समाधि। ३. पूरी भक्ति और श्रद्धा से की जानेवाली उपासना। ४. मन को एकाग्र करके लगाया जानेवाला ध्यान। ५. किये जानेवाले कर्म के फल का त्याग। ६. अर्पण। ७. भक्ति। ८. किसी बात या विषय में होनेवाली गति, पहुँच या प्रवेश। ९. भावी-जन्म के संबंध में की जानेवाली कोई प्रार्थना।

प्रणिधि—पुं० [सं० प्र-नि√धा+कि] दूत या भेदिया जो किसी विशेष कार्य के लिए कहीं भेजा गया हो।

स्त्री० १. प्रार्थना। २. मन की एकाग्रता। ३. तत्परता।

प्रणिधेय—पुं० [सं० प्र-नि√धा+यत्] १. गुप्तचर भेजना। २. नियुक्ति। ३. प्रयोग।

प्रणिनाद—पुं०=प्रणाद।

प्रणिपात—पुं० [सं० प्र-नि√पत्+घञ्] प्रणाम।

प्रणिहित—भू० कृ० [सं० प्र-नि√धा (रखना)+क्त, हि—आदेश] १. जिसकी स्थापना की गई हो। स्थापित। २. मिला या मिलाया हुआ। मिश्रित। ३. पाया हुआ। प्राप्त। ४. किसी के पास रखा या किसी को सौंपा हुआ। ५. जिसका ध्यान किसी चीज या बात पर एकाग्रतापूर्वक लगा हो।

प्रणी—पुं० [सं० प्र√नी+क्विप्] ईश्वर।

वि० [सं० प्रण] प्रण या दृढ़ प्रतिज्ञा करनेवाला।

प्रणीत—भू० कृ० [सं० प्र√नी+क्त] १. जिसका प्रणयन किया गया हो या हुआ हो। बना या तैयार किया हुआ। निर्मित। रचित। २. जिसका संशोधन या संस्कार हुआ हो। संस्कृत। ३. भेजा हुआ। ४. लाया हुआ।

पुं० १. वह जल जिसका मंत्र से संस्कार किया गया हो। २. यज्ञ के लिए मंत्रों द्वारा संस्कृत की हुई अग्नि। ३. अच्छी तरह पकाया हुआ भोजन।

प्रणीता—स्त्री० [सं० प्रणीत+टाप्] १. वह जल जो यज्ञ के कार्य के लिए वेद मंत्र पढ़ते हुए कुँए से निकाला और छानकर रखा जाता है। २. वह पात्र जिसमें उक्त जल रखा जाता है।

प्रणीय—वि० [सं० प्र√नी+क्यप्] १. ले जाने योग्य। २. जिसका संस्कार होने को हो।

प्रणेता (तृ)—वि० [सं० प्र√नी+तृच्] १. ले जानेवाला। २. प्रणयन करने अर्थात् निर्मित करने या बनानेवाला। जैसे—ग्रन्थ का प्रणेता।

प्रणेय—वि० [सं० प्र√नी+यत्] १. ले जाने योग्य। २. अधीन। वशवर्ती। ३. जिसका संस्कार किया जाने को हो या होने को हो।

प्रणोदन—पुं० [सं० प्र√नुद्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रणोदित] १. किसी को कहीं भेजाना। प्रेषण। २. प्रेरित करना।

प्रतंचा†—स्त्री०=प्रत्यंचा।

प्रतच्छ†—वि०=प्रत्यक्ष।

प्रतत—भू० कृ० [सं० प्र√तन् (फैलना)+क्त] १. फैलाया हुआ। २. कोई चीज ढकने के लिए उस पर फैलाया हुआ।

प्रतति—स्त्री० [सं० प्र√तन्+क्तिन्] १. फैले हुए होने की अवस्था या भाव। २. फैलाव। विस्तार।

प्रतन—वि० [सं० प्र√तन्+ट्यु—अन, तुट्—आगम] [वि० स्त्री० प्रतनी] प्राचीन। पुराना।

प्रतना—स्त्री०=पृतना (सेना का एक विभाग)।

प्रतनु—वि० [सं० प्र-तनु, प्रा० स०] १. क्षीण-काय। दुबला-पतला। २. बहुत ही कोमल या सुकुमार। ३. सूक्ष्म। बहुत छोटा। ४. तुच्छ। हीन।

प्रतपन—पुं० [सं० प्र√तप् (तपना)+ल्युट्—अन] १. गरम करना। गरमाहट पहुँचाना। २. तप्त करना। तपाना।

वि० १. गरम करने या गरमाहट पहुँचानेवाला। २. तपानेवाला।

प्रतप्त—भू० कृ० [सं० प्र√तप्+क्त] १. तपाया या बहुत गरम किया हुआ।

पुं० ऐसा साधु जिसने तपस्या के द्वारा अपना शरीर सुखा डाला हो।

प्रतमाली—स्त्री० [?] कटारी। (डिं०)

प्रतरण—पुं० [सं० प्र√तृ (तैरना)+ल्युट्—अन] १. तैरना। २. तैरकर पार करना।

प्रतर्क—पुं० [सं० प्र√तर्क् (बहस या ऊह करना)+घञ्] १. वाद-विवाद। तर्क-वितर्क। २. अनुमान। ३. कल्पना।

प्रतर्कण—पुं० [सं० प्र√तर्क्+ल्युट्—अन] १. तर्क-वितर्क या वाद-विवाद करना। २. अनुमान या कल्पना करना। ३. संशय।

प्रतर्क्य—वि० [सं० प्र√तर्क्+ण्यत्] १. जिसके संबंध में तर्क किया जा सके या किया जाने को हो। २. जिसके संबंध में अनुमान या कल्पना की जा सके या की जाने को हो।

प्रतर्दन—पुं० [सं० प्र√तर्द् (अनादर करना)+ल्युट्—अन] १. वेदों में उल्लिखित काशी के प्रथम राजा दिवोदास के एक पुत्र का नाम जिसका विवाह मंदालसा के साथ हुआ था। २. एक प्राचीन ऋषि जो इन्द्र के शिष्य थे। ३. विष्णु। ४. ताड़ना।

वि० ताड़ना करनेवाला।

प्रतल—पुं० [सं० प्र-तल, ब० स०] १. हाथ की हथेली। २. [प्रा० स०] पृथ्वी के नीचेवाले सात लोकों में से अंतिम जिसमें नाग जाति के लोग बसते हैं। पाताल।

प्रता—स्त्री० [सं० प्रतति] छोटी लता। उदा०—लता प्रता से मंडित-कुसुमित पर्ण-कुटी में।—पन्त।

प्रतान—पुं० [सं० प्र√तन् (फैलना)+घञ्] १. पेड़-पौधे का नया कल्ला। २. झाड़ या लता विशेषतः ऐसा झाड़ या लता जो जमीन

पर फैलती हो। ३. लता तंतु। रेशा। ४. विस्तार। फैलाव। ५. एक रोग जिसमें प्रायः मूर्च्छा आती है।

वि० १. फैला हुआ। विस्तृत। २. रेशेदार।

प्रतानिनी—स्त्री० [सं० प्रतानिन्+ङीप्] शाखाओं-प्रशाखाओं की सहायता से दूर तक फैलनेवाली लता।

प्रतानी (निन्)—वि० [सं० प्रतान+इनि] १. झाड़, लता आदि जो दूर तक फैली हुई हो। २. फैलनेवाला। ३. रेशेदार।

प्रताप—पुं० [सं० प्र√तप्+घञ्] १. बहुत अधिक गरमी या ताप। २. ऐसा ताप जिसमें खूब चमक हो। तेज। ३. किसी बहुत बड़े आदमी की कर्मठता, योग्यता, नाम, यश आदि पर आश्रित ऐसा तेज, बल या महत्त्व जिसके प्रभाव से अनेक बड़े-बड़े काम अनायास या सहज में हो जाते हों। इकबाल। जैसे—आप वहाँ नहीं गये तो क्या हुआ, आपके प्रताप से ही वहाँ का सारा काम हो गया।

पद—पुण्य प्रताप=सत्कर्मों और तेज का प्रभाव। जैसे—बड़ों के पुण्य-प्रताप से सब काम बहुत अच्छी तरह हो गये।

४. पौरुष। मरदानगी। ५. बहादुरी। वीरता। ६. साहस। हिम्मत। ७. प्राचीन भारत में वह छत्र जो युवराज के सिर पर लगाया जाता था। ८. संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग। ९. आक या मदार का पौधा।

प्रतापन—पुं० [सं० प्र√तप्+णिच्+ल्युट्—अन] १. खूब गरम करना। तपाना। २. ताप अर्थात् कष्ट या पीड़ा पहुँचाना। ३. एक नरक का नाम। ४. कुंभी-पाक नरक। ५. विष्णु।

वि० १. ताप पहुँचानेवाला। २. कष्ट या पीड़ा देनेवाला।

प्रतापवान् (वत्)—वि० [सं० प्रताप+मतुप्] [स्त्री० प्रतापवती] (व्यक्ति) जिसका यथेष्ट प्रताप हो। प्रतापशाली। इकबालमंद।

प्रताप-सारंग—पुं० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

प्रताप-हंसी—स्त्री० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

प्रतापी (पिन्)—वि० [सं० प्रताप+इनि] १. प्रताप-संबंधी। २. जिसका चारों ओर प्रताप फैला हो। ३. जिसके प्रताप से सब काम होते हों। प्रतापशाली। ४. दुःख देने या सतानेवाला।

प्रतारक—वि० [सं० प्र√तॄ (तैरना)+णिच्+ण्वुल्—अक] १. प्रतारण करने अर्थात् ठगनेवाला। २. चालाक। धूर्त। ३. धोखेबाज।

प्रतारण—पुं० [सं० प्र√तॄ+णिच्+ल्युट्—अन] १. धोखा देना या ठगना। २. धूर्तता। धोखेबाजी।

प्रतारणा—स्त्री० [सं० प्र√तॄ+णिच्+युच्—अन, +टाप्] धोखा देने या ठगने का कोई क्रिया, ढंग या युक्ति।

प्रतारित—भू० कृ० [सं० प्र०√तॄ+णिच्+क्त] (व्यक्ति) जिसे धोखा दिया या ठगा गया हो। छला हुआ।

प्रतिंचा—स्त्री०=प्रत्यंचा (धनुष का डोरा)।

प्रति—अव्य० [सं०] १. एक संस्कृत अव्यय जो क्रियाओं और संज्ञाओं से पहले उपसर्ग के रूप में लगकर नीचे लिखे अर्थ देता है—(क) किसी काम या बात के आधार, परिणाम या फल-स्वरूप होनेवाला। जैसे—प्रतिक्रिया, प्रतिध्वनि, प्रतिफल। (ख) विपरीत, विरोधी या समानान्तर पक्ष या स्थिति में होनेवाला। जैसे—प्रतिकूल, प्रतिद्वंद्वी, प्रतिवाद, प्रतिक्रिया। (ग) किसी के अनुकरण पर अथवा अनुरूप बनने या होनेवाला। जैसे—प्रतिकृति, प्रतिच्छाया, प्रतिमान, प्रतिमूर्ति, प्रतिलिपि। (घ) आगे या सामने। जैसे—प्रत्यक्ष। (च) अच्छी तरह। भली भाँति। जैसे—प्रतिपादन, प्रति-बोध। (छ) चारों ओर अथवा चारों ओर से। जैसे—प्रतिमंडल, प्रतिरक्षा। (ज) पहले या पूर्व से। जैसे—प्रति-नियत। (झ) साधारण या सामान्य। जैसे—प्रति-नियम। (ट) पुनः या फिर। जैसे—प्रतिनिर्देश। (ठ) किसी के अधीन, सहायक अथवा स्थानापन्न रूप में काम करनेवाला। जैसे—प्रति-अधीक्षक, प्रति निर्देशन, प्रति-निधि। (ड) समान। जैसे—प्रतिबल। २. विशुद्ध अव्यय की तरह और स्वतंत्र रूप में प्रयुक्त होने पर यह नीचे लिखे अर्थ देता है—(क) किसी की ओर या दिशा में। (ख) किसी को उद्दिष्ट या लक्षित करते हुए। जैसे—देवता (या पति) के प्रति उसमें यथेष्ट श्रद्धा थी। (ग) कइयों या बहुतों में से हर एक और अलग-अलग। जैसे—प्रति-व्यक्ति एक रुपया कर लगा था।

स्त्री० १. चित्र, पुस्तक, लेख, सामयिक-पत्र आदि की बहुत सी छपी अथवा लिखी हुई नकलों या प्रतिकृतियों में से हर एक। नकल। (कापी) जैसे—(क) इस पुस्तक के पहले संस्करण की दो हजार प्रतियाँ छपी थीं। (ख) इस चित्र (अथवा लेख) की एक प्रति हमारे लिए भी तैयार करा लेना। २. किसी चीज की कोई अनुकृति या नकल। ३. प्रतिबिंब। परछाईं। ४. कोटि। वर्ग। जैसे—उच्च प्रति के लोग।

प्रतिक—वि० [सं० कार्षापण+टिठन्—इक, प्रति—आदेश] १. जो एक कार्षापण में खरीदा गया हो। २. पुस्तकों आदि की प्रति से सम्बन्ध रखनेवाला। जैसे—पुस्तक का प्रतिक स्वत्व।

प्रतिकर—पुं० [सं० प्रति√कृ (फेंकना)+अप्] अपकार, क्षति, हानि आदि के बदले में दिया जानेवाला धन। मुआवजा। (कम्पेन्सेशन)

प्रतिकरण—पुं० [सं० प्रति√कृ+ल्युट्—अन] किसी कार्य, उत्तर, प्रतिकार या विरोध में किया जानेवाला कार्य। (काउन्टर एक्शन)

प्रतिकर्त्ता (तृ)—वि० [सं० प्रति√कृ+तृच्] प्रतिकरण या प्रतिकार करनेवाला।

प्रतिकर्म (न्)—पुं० [सं० मध्य० स०] १. वेश। भेस। २. किसी के कर्म के उत्तर में या उसका बदला चुकाने के लिए किया जानेवाला कर्म। प्रतिकार। बदला। ३. शरीर को सजाने-सँवारने के लिए किये जानेवाले अंग-कर्म। शृंगार।

प्रतिकर्मक—वि० [सं०] प्रतिकर्म करनेवाला।

प्रतिकर्मक—पुं० [सं०] रसायन शास्त्र में किसी द्रव्य के अस्तित्व या विद्यमानता की जाँच करने के लिए उसमें मिलाया जानेवाला वह द्रव्य जो पहलेवाले परीक्ष्य द्रव्य में प्रतिक्रिया उत्पन्न करता हो। (रि-एजेन्ट)

प्रतिकर्ष—पुं० [सं० प्रति√कृष् (खींचना)+घञ्] १. एकत्र करना। २. संयोग।

प्रतिकश—वि० [सं० प्रति√कश् (गति और शासन)+अच्] चाबुक की परवाह न करनेवाला (घोड़ा)।

प्रतिकष—पुं० [सं० प्रति√कष् (गति)+अच्] १. नेता। २. सहायक। ३. दूत।

प्रतिक स्वत्व—पुं० [सं०] किसी कवि, लेखक, कलाकार आदि की कृति की प्रतियाँ छापने अथवा और किसी प्रकार प्रस्तुत करने का वह स्वत्व जो उसके कर्ता की अनुमति के बिना और किसी को प्राप्त नहीं होता। (कॉपी राइट)

प्रति-कामिनी—स्त्री० [सं० प्रा० स०] सौत। सपत्नी।

प्रतिकाय—पुं० [सं० प्रति√चि (चयन करना)+घञ्, कुत्व] १. किसी की काया के अनुरूप बनाई हुई काया। प्रतिमूर्ति। पुतला। २. दुश्मन। शत्रु। ३. लक्ष्य।

प्रतिकार—पुं० [सं० प्रति√कृ (करना)+घञ्] १. किसी काम, चीज या बात के बदले में या क्षतिपूर्ति के निमित्त दिया जानेवाला धन। २. किसी काम या बात का बदला चुकाने के लिए किया जानेवाला कार्य। बदला। ३. किसी काम या बात को दबाने, रोकने आदि के लिए किया जानेवाला उपाय या प्रयत्न। (काउन्टर-एक्शन) जैसे—उन्होंने जो यह व्यर्थ का उपद्रव खड़ा कर रखा है, इसका कुछ प्रतिकार होना चाहिए। ४. रोग की चिकित्सा। इलाज।

प्रतिकारक—वि० [सं० प्रति√कृ+ण्वुल्—अक] १. किसी प्रकार की क्रिया का प्रतिकार या विरोध करनेवाला। २. किसी क्रिया के गुण या प्रभाव को नष्ट करनेवाला। मारक। (एन्टीडोट)

प्रतिकारिक—वि० [सं० प्रतिकार से] १. प्रतिकार के रूप में होने या उससे सम्बन्ध रखनेवाला। २. किसी गुण, परिणाम, प्रभाव आदि के विपरीत होकर उसे निष्फल या व्यर्थ करनेवाला। (काउन्टर-एक्टिव)

प्रतिकार्य—वि० [सं० प्रति√कृ+ण्यत्] जिसका प्रतिकार किया जा सके या किया जाना चाहिए।

प्रति-कितव—पुं० [सं० प्रा० स०] १. वह जुआरी जो किसी दूसरे जुआरी के मुकाबले में जुआ खेलता हो। २. जोड़ीदार।

प्रतिकुंचित—वि० [सं० प्रति√कुंच् (टेढ़ा होना)+क्त] झुका हुआ। टेढ़ा।

प्रतिकूप—पुं० [सं० प्रा० स०] परिखा। खाईं।

प्रतिकूल—पुं० [सं० व० स०] नदी का सामनेवाला अर्थात् उस ओर का कूल अर्थात् किनारा या तट।

वि०[भाव० प्रतिकूलता] १. जो इस ओर या हमारे पक्ष में नहीं, बल्कि उस, दूरवर्ती या सामनेवाले पक्ष में हो। 'अनुकूल' का विपर्याय। २. (व्यक्ति) जो हमसे अलग या दूर रहकर हमारे कामों में बाधक होता हो। ३. (कार्य, वस्तु या स्थिति) जो किसी अन्य कार्य, वस्तु या स्थिति के मार्ग में बाधक होती हो। (एडवर्स) ४. रुचि, वृत्ति, स्वभाव आदि के विरुद्ध पड़ने या होनेवाला। जैसे—यहाँ का जलवायु हमारे लिए प्रतिकूल है। 'अनुकूल' का विपर्याय, उक्त सभी अर्थों में।

प्रतिकूलता—स्त्री० [सं० प्रतिकूल+तल्+टाप्] १. प्रतिकूल होने की अवस्था, गुण या भाव। विपरीतता। २. विरोध।

प्रतिकूलत्व—पुं० [सं० प्रतिकूल+त्व] प्रतिकूलता।

प्रतिकूला—स्त्री० [सं० प्रतिकूल+टाप्] सौत। सपत्नी।

प्रतिकूलाक्षर—पुं० [सं० प्रतिकूल-अक्षर, ब० स०] साहित्य में किसी प्रसंग के वर्णन में ऐसे खटकनेवाले अक्षरों या वर्णों का प्रयोग जो वस्तुतः उसके प्रतिकूल प्रसंगों में प्रयुक्त होना चाहिए। जैसे—शृंगार रस के प्रसंग में टवर्ग के वर्णों का प्रयोग, या रौद्र रस के वर्णन में कोमलावृत्ति का प्रयोग। (साहित्य में यह एक दोष माना गया है।)

प्रतिकृत—वि० [सं० प्रति√कृ (करना)+क्त] १. जिसका प्रतिकार हो चुका हो। २. जिसका उत्तर दिया अथवा बदला चुकाया जा चुका हो। ३. जिसके अन्त या विनाश का उपाय किया जा चुका हो।

प्रतिकृति—स्त्री० [सं० प्रति√कृ+क्तिन्] १. किसी चीज के आकार-प्रकार आदि के अनुरूप बनी या बनाई हुई वैसी ही दूसरी चीज। जैसे—यह लड़का अपने पिता की प्रतिकृति है। २. प्रतिमा। प्रतिमूर्ति। ३. चित्र। तसवीर। ४. छाया। प्रतिबिंब। ५. प्रतिकार। बदला। ६. पूजा। ७. प्रतिनिधि।

प्रतिकृत्य—वि० [सं० प्रति√कृ+क्यप्] १. जिसका प्रतिकार किया जा सकता हो या किया जाने को हो। २. जिसका प्रतिकार करना उचित हो।

पुं० ऐसा कार्य जो किसी के विरोध में किया गया हो। प्रतिकार।

प्रतिकृष्ट—वि० [सं० प्रति√कृष्+क्त] १. दोबारा जोता हुआ (खेत)। २. जिसका निवारण किया गया हो। ३. छिपा हुआ। ४. तुच्छ। हेय।

प्रतिक्रम—पुं० [सं० प्रा० स०] १. उलटा या विपरीत क्रम। २. प्रतिकूल अथवा विपरीत आचरण या कार्य।

वि० जो किसी नियत या मानक क्रम के अनुसार न होकर विपरीत क्रम से बना या लगा हुआ हो।

प्रतिक्रमात्—अव्य० [सं० प्रतिक्रम का पञ्चम्यन्त] उल्लिखित, निर्दिष्ट या बताये हुए क्रम के उलटे या विपरीत क्रम से। (वाइस-वर्सा)

प्रतिक्रांति—स्त्री० [सं०] किसी क्रांति के बल या वेग के बहुत बढ़ने पर उसे दबाने या रोकने के लिए होनेवाली क्रांति। (काउन्टर रिवो-ल्यूशन)

प्रतिक्रिय—वि० [सं० प्रतिक्रिया से] १. (पदार्थ) जिससे कोई रसायनिक क्रिया हो चुकने पर उसके विपरीत कोई क्रिया उत्पन्न हो। २. कोई क्रिया होने पर उसके फलस्वरूप या विपरीत क्रिया उत्पन्न या सम्पन्न करनेवाला। (रि-एक्टिव)

प्रतिक्रियक—वि० दे० 'प्रतिक्रियावादी'।

प्रतिक्रिया—स्त्री० [सं० प्रति√कृ+श, इयङ्–आदेश, +टाप्] १. किसी के किये हुए काम या बात का होनेवाला प्रतिकार। बदला। (रिएक्शन) २. कोई क्रिया या घटना होने पर उसके विपक्ष या विरोध में अथवा उसकी पुनरावृत्ति रोकने के लिए होनेवाली क्रिया या घटना। जैसे—वह दमन की प्रतिक्रिया ही थी, जिसने आंदोलन का रूप और भी उग्र कर दिया था। ३. कोई क्रिया होने पर उसकी विपरीत दिशा में आप से आप प्राकृतिक नियमों के अनुसार या स्वाभाविक रूप से होनेवाली क्रिया। जैसे—फेंका हुआ पत्थर जहाँ गिरता है, वहाँ से इसी लिए उछल कर दूर जा पड़ता है कि उस पर आघात की प्रतिक्रिया होती है। ४. किसी काम, चीज या बात के बहुत आगे बढ़ चुकने पर पीछे की ओर अथवा किसी अन्य विपरीत दिशा में होनेवाली उसकी गति या प्रवृत्ति। जैसे—इस थकावट (या शिथिलता) को परिश्रम की प्रतिक्रिया

समझना चाहिए ५. रसायन शास्त्र में, दो या अधिक द्रव्यों का मिश्रण या संयोग होने पर उनमें से किसी पर दूसरे द्रव्य का पड़नेवाला प्रभाव या होनेवाला परिणाम। ६. भौतिक शास्त्र में, एक अवस्था का अन्त होने पर स्वाभाविक रूप से दूसरी विपरीत अवस्था का आविर्भाव या संचार। जैसे—बहुत अधिक गरमी के बाद होनेवाली ठंढक, या ज्वर उतर जाने पर शरीर का बिलकुल ठंढा हो जाना। ६. प्राचीन संस्कृत साहित्य में (क) परिष्करण या संस्कार। (ख) शृंगार या सजावट।

प्रतिक्रियात्मक—वि० [सं० प्रतिक्रिया-आत्मन्, ब० स०, + कप्] १. जिसके साथ कोई प्रतिक्रिया लगी हो या लगी रहती हो। प्रतिक्रिया से युक्त। २. दे० 'प्रतिक्रियक'।

प्रतिक्रियावाद—पुं० [सं० ष० त०] [वि० प्रतिक्रियावादी] यह मत या सिद्धांत कि जो बातें पहले से चली आ रही हैं, उनमें परिवर्तन या सुधार करनेवालों का विरोध करना चाहिए। (रिएक्शनिज्म)

प्रतिक्रियावादी (दिन्)—वि० [सं० प्रतिक्रियावाद+इनि] प्रतिक्रिया-वाद-संबंधी।

पुं० वह जो प्राचीन मान्यताओं, सिद्धान्तों आदि को माननेवाला तथा नवीन मान्यताओं, सिद्धान्तों आदि का विरोधी हो।

प्रतिक्रोश—पुं० [सं० प्रति√क्रुश् (आह्वाण)+घञ्] बिक्री का वह प्रकार जिसमें प्रतिस्पर्धी ग्राहकों में से किसी चीज का बढ़-चढ़कर और सबसे अधिक मूल्य लगानेवाले ग्राहक के हाथ चीज बेची जाती है। नीलामी। (ऑक्शन)

प्रतिक्षय—पुं० [सं० प्रति√क्षि (ऐश्वर्य)+अच्] अंगरक्षक।

प्रतिक्षिप्त—भू० कृ० [सं० प्रति√क्षिप् (प्रेरणा करना)+क्त] १. किसी के प्रति फेंका हुआ। २. जो अमान्य किया गया हो। ४. बल-पूर्वक पीछे की ओर ढकेला या हटाया हुआ। (रिपल्सड)

प्रतिक्षेप—पुं० [सं० प्रति√क्षिप् (प्रेरित करना)+घञ्] १. बलपूर्वक पीछे की ओर फेंकना या हटाना। जैसे—आक्रमण करनेवाले शत्रु का प्रतिक्षेप। २. गृहीत, मान्य या स्वीकृत न करना। अग्राह्य, अमान्य या अस्वीकृत करना। ३. अपने अनुकूल न समझकर या अरुचिकर होने पर अलग या दूर करना अथवा हटाना। ४. किसी प्रकार के गुण, प्रकृति आदि का उत्कट विरोध होने के कारण एक तत्त्व या पदार्थ का दूसरे तत्त्व या पदार्थ को दूर हटाना। (रिपल्सन; उक्त सभी अर्थों में)। ५. रोकना। ६. तिरस्कार।

प्रतिक्षेपण—पुं० [सं० प्रति√क्षिप्+ल्युट्—अन] प्रतिक्षेप करने की क्रिया या भाव।

प्रतिखुर—पुं० [सं० प्रा० स०] गर्भ में मरा हुआ बच्चा, जिसके कारण योनिमार्ग अवरुद्ध हो जाता है।

प्रतिख्यात—वि० [सं० प्रति√ख्या (कहना)+क्त] [भाव० प्रति-ख्याति] जिसकी चारों ओर प्रसिद्धि हो।

प्रतिगत—भू० कृ० [सं० प्रति√गम् (जाना)+क्त] १. जो कहीं जाकर लौट या वापस आ गया हो। २. जो पुनः प्राप्त हुआ हो। ३. भूला हुआ। विस्मृत।

पुं० पक्षियों की एक प्रकार की उड़ान।

प्रतिगमन—पुं० [सं० प्रति√गम्+ल्युट्—अन] वापस आना। लौटना।

प्रतिगामी (मिन्)—पुं० [सं० प्रति√गम् (जाना)+णिनि] [भाव० प्रतिगामिता] दे० 'प्रतिक्रियावादी'।

प्रतिगिरि—पुं० [सं० प्रा० स०] १. एक पहाड़ के सामनेवाला दूसरा पहाड़। २. वह जो देखने में पहाड़ के समान हो।

प्रतिगृहीत—भू० कृ० [सं० प्रति√ग्रह् (ग्रहण करना)+क्त] १. जिसका प्रतिग्रहण हुआ हो। गृहीत या स्वीकृत किया हुआ। २. ब्याहा हुआ। विवाहित।

प्रतिगृहीता—स्त्री० [प्रतिगृहीत+टाप्] १. वह स्त्री जिसका पाणिग्रहण किया गया हो। विवाहिता स्त्री। २. धर्मपत्नी।

प्रतिगृह्य—वि० [सं० प्रति√ग्रह्+क्यप्]=प्रतिग्राह्य।

प्रतिग्या†—स्त्री०=प्रतिज्ञा।

प्रतिग्रह—पुं० [सं० प्रति√ग्रह्+अप्] १. किसी की दी हुई चीज ग्रहण करना। लेना। २. अधिकार या वश में करना। ३. मंजूरी। स्वीकृति। ४. ब्राह्मण का ऐसा दान लेना जो उसे विधि-पूर्वक दिया जाय। ५. दान आदि ग्रहण करने का अधिकार। ६. ग्रहण किया हुआ उपहार या भेंट। ७. अभ्यर्थना। ८. सूर्य, चन्द्रमा आदि को लगनेवाला ग्रहण। उपराग। ९. किसी बात का किया जानेवाला प्रतिकार या विरोध। १०. किसी बात का दिया जानेवाला उत्तर। जवाब। ११. सेना का पिछला भाग। १२. रक्षा-पूर्वक रखने के लिए मिली हुई संपत्ति। धरोहर। १३. अभि-युक्त या संदिग्ध व्यक्ति का अधिकारियों के हाथ में जाँच या विचार के लिए लिया जाना। (कस्टडी) १४. सिलाई के समय उँगली में पहनने का अंगुश्ताना। १५. उगालदान। पीकदान।

प्रतिग्रहण—पुं० [सं० प्रति√ग्रह्+ल्युट्—अन] १. विधिपूर्वक दी हुई चीज ग्रहण करना या लेना। प्रतिग्रह। २. दे० 'प्रतिग्रह'।

प्रतिग्रही (हिन्)—वि० [सं० प्रतिग्रह+इनि] प्रतिग्रहण करने या प्रतिग्रह लेनेवाला।

प्रतिग्रहीता (तृ)—पुं० [सं० प्रति√ग्रह्+तृच्]=प्रतिग्रही।

प्रतिग्राह—पुं० [सं० प्रति√ग्रह्+ण] १. प्रतिग्रहण। २. दे० 'प्रति-ग्रह'। ३. उगालदान। पीकदान।

प्रतिग्राहक—वि० [सं० प्रति√ग्रह्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रतिग्राहिका] प्रतिग्रह या दान लेनेवाला। दी हुई चीज लेनेवाला।

पुं० १. दे० 'आदाता'। २. आज-कल न्यायालय द्वारा नियुक्त वह अधिकारी जो किसी विवादास्पद या ऋण-ग्रस्त संपत्ति आदि की व्यवस्था के लिए नियुक्त किया जाता है। ३. बिजली की सहायता से आई हुई ध्वनियाँ आदि ग्रहण करनेवाले यंत्रों का वह अंग जो उन ध्वनियों को ग्रहण कर उपयोग के लिए सुरक्षित रखता है। (रिसीवर, उक्त दोनों अर्थों के लिए)

प्रतिग्राह्य—वि० [सं० प्रति√ग्रह्+ण्यत्] १. जो प्रतिग्रह या दान के रूप में लिया जा सके। २. जो ठीक मानकर गृहीत किया जा सके। स्वीकार्य।

प्रतिघ—पुं० [सं० प्रति√हन् (हिंसा)+ड, कुत्व] १. विरोध। २. द्वयु। लड़ाई। ३. शत्रु। ४. क्रोध। गुस्सा। ५. मूर्च्छा।

प्रतिघात—स्त्री० [सं० प्रति√हन्+णिच्+अप्] १. वह आघात जो किसी के आघात करने पर किया जाय। २. आघात लगने पर

उसके फलस्वरूप आप से आप होनेवाला दूसरा आघात। टक्कर। ३. बाधा। रुकावट।

प्रतिघातक—वि० [सं० प्रति√हन्+णिच्+ण्वुल्—अक] प्रतिघात करनेवाला।

प्रतिघातन—पुं० [सं० प्रति√हन्+णिच्√ल्युट्—अन] १. प्रतिघात करने की क्रिया या भाव। २. जान से मार डालना। प्राणघात। हत्या। ३. रुकावट। बाधा।

प्रतिघाती (तिन्)—वि० [सं० प्रति√हन्+णिच्+णिनि] १. प्रतिघात करनेवाला। २. टक्कर मारने या लेनेवाला। ३. सामने आकर मुकाबला या विरोध करनेवाला। प्रतिद्वंद्वी।

प्रतिघ्न—पुं० [सं० प्रति√ हन्+क] काया। शरीर।

प्रतिचार—पुं० [सं० प्रति√चर् (गति)+घञ्] सजावट करना। अपने आपको सजाना।

प्रतिचिंतन—पुं० [सं० प्रति √चित् (स्मरण करना)+ल्युट्—अन] पुनः या फिर से चिंतन या विचार करना।

प्रतिचिकीर्षा—स्त्री० [सं० प्रति√कृ+सन्+अ, +टाप्] बदला लेने की भावना।

प्रतिच्छन्न—भू० कृ० [सं० प्रति√छद् (ढकना)+क्त] १. छाया या ढका हुआ। २. छिपा हुआ।

प्रतिच्छवि—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. प्रतिबिंब। परछाई। २. चित्र। तसवीर।

प्रतिच्छा†—स्त्री०=प्रतीक्षा।

प्रतिच्छाया—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. परछाईं। प्रतिबिंब। २. पत्थर, मिट्टी आदि की बनी हुई मूर्ति। प्रतिकृति। ३. चित्र। तसवीर।

प्रतिछाँईं†—स्त्री०=परछाईं।

प्रतिछाँहरी—स्त्री०=परछाईं।

प्रतिछाया—स्त्री०=प्रतिच्छाया (परछाईं)।

प्रतिजन्म—पुं० [सं० प्रा० स०] दुबारा होनेवाला जन्म। पुनर्जन्म।

प्रतिजल्प—पुं० [सं० प्रति√जल्प् (बोलना)+घञ्] १. किसी के उत्तर में कही हुई बात। २. विपरीत या विरुद्ध बात।

प्रतिजल्पक—पुं० [सं० प्रति√जल्प्+ण्वुल्—अक] टाल-मटोल करने के लिए दिया जानेवाला उत्तर।

वि० किसी के विरुद्ध बोलनेवाला।

प्रतिजागर—पुं० [सं० प्रति√जागृ+घञ्] किसी चीज की खूब सचेत होकर देख-रेख करना।

प्रति-जिह्वा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] गले के अन्दर की घंटी। छोटी जीभ। कौआ।

प्रति-जिह्विका—स्त्री० [सं०]=प्रतिजिह्वा।

प्रतिजीवन—पुं० [सं० प्रति√जीव् (जीना)+ल्युट्—अन] पुनः या फिर से मिलने या प्राप्त होनेवाला जीवन। पुनर्जन्म।

प्रतिज्ञांतर—पुं० [सं० प्रतिज्ञा-अंतर, मयू० स०] तर्क में एक प्रकार का निग्रह-स्थान, जिसमें अपनी की हुई प्रतिज्ञा का खंडन होने पर वादी अपने मन से कोई और दृष्टान्त देता हुआ अपनी प्रतिज्ञा में किसी नये धर्म का आरोप करता है। जैसे—यदि कहा जाय, 'शब्द अनित्य है, क्योंकि वह घट के समान इंद्रियों का विषय है' तो उसके उत्तर में यह कहना प्रतिज्ञांतर होगा—शब्द नित्य है, क्योंकि वह जाति के समान इन्द्रियों का विषय है।

प्रतिज्ञा—स्त्री० [सं० प्रति√ज्ञा (जानना)+अङ्, +टाप्] १. किसी बात की जानकारी की दी जानेवाली स्वीकृति। २. कोई बात कह चुकने के बाद अथवा कोई काम कर चुकने के बाद इस बात का किया जानेवाला दृढ़ निश्चय कि भविष्य में पुनः ऐसा काम नहीं करेंगे। ३. कुछ करने या न करने के संबंध में किया जानेवाला दृढ़ निश्चय।

मुहा०—प्रतिज्ञा पारना=प्रतिज्ञा पूरी करना। उदा०—जन प्रह्लाद प्रतिज्ञा पारी।—सूर।

४. किसी प्रकार का कथन या वक्तव्य। ५. किसी के विरुद्ध उपस्थित किया जानेवाला अभियोग। ६. शपथ। सौगंध। ७. न्याय में किसी पक्ष से कही जानेवाली वह बात या उपस्थित किया जानेवाला वह मत जिसे आगे चलकर उसे प्रमाण, युक्ति आदि की सहायता से ठीक सिद्ध करना पड़ता हो। (प्रॉपोज़ीशन)

विशेष—यह अनुमान के पाँच अवयवों में से एक माना गया है।

प्रतिज्ञात—वि० [सं० प्रति√ज्ञा+क्त] १. घोषित किया हुआ। कहा हुआ। २. जिसके संबंध में प्रतिज्ञा की गई हो। जो प्रतिज्ञा का विषय बन चुका हो। ३. जो किया जा सकता या हो सकता हो। संभव। साध्य।

प्रतिज्ञान—पुं० [सं० प्रति√ज्ञा+ल्युट्—अन] १. प्रतिज्ञा। २. किसी बात के संबंध में शपथ या सौगन्ध न खाकर सत्य-निष्ठापूर्वक कोई बात कहना।

प्रतिज्ञा-पत्र—पुं० [ष० त०] १. ऐसा पत्र जिस पर कोई की हुई प्रतिज्ञा लिखी हो। २. इकरारनामा।

प्रतिज्ञापन—पुं० [सं०] विशेष रूप से जोर देकर कोई बात कहना। (एफरमेशन)

प्रतिज्ञा-पालन—पुं० [ष० त०] की हुई प्रतिज्ञा के अनुसार काम करना या चलना।

प्रतिज्ञा-भंग—पुं० [ष० त०] प्रतिज्ञा का भंग होना। प्रतिज्ञा के विरुद्ध कार्य कर बैठना, जिससे उस प्रतिज्ञा का महत्त्व समाप्त हो जाता है।

प्रतिज्ञेय—वि० [सं० प्रति√ज्ञा+यत्] १. (कार्य या बात) जिसके करने या न करने की प्रतिज्ञा की गई हो या की जाने को हो। २. प्रशंसा या स्तुति करनेवाला। प्रशंसक।

प्रतितंत्र—पुं० [सं० प्रा० स०] १. वह शासन या शासन-प्रणाली जो किसी दूसरे प्रकार के शासन या शासन-प्रणाली के बिलकुल विपरीत हो। २. प्रतिकूल शास्त्र।

प्रतितंत्र-सिद्धान्त—पुं० [सं० ष० त०] ऐसा सिद्धान्त जो कुछ शास्त्रों में तो हो और कुछ में न हो। जैसे—मीमांसा में 'शब्द' को नित्य माना जाता है परन्तु न्याय में वह अनित्य माना जाता है; इसलिए यह प्रति-तंत्र सिद्धान्त है।

प्रति तर—पुं० [सं० प्रति√तृ (तैरना)+अप्] वह जो उस पार ले जाता हो। मल्लाह। माँझी।

प्रतिताल—पुं० [सं० प्रा० स०] संगीत में ताल का एक वर्ग जिसके अन्तर्गत कांतार, समराव्य, वैकुंठ और वांछित ये चारों ताल हैं।

प्रतितुलन—पुं० [सं० प्रति√तुल्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतितुलित]

१. किसी ओर पड़े या बढ़े हुए भार की तुलना में दूसरी ओर का भार बढ़ाकर दोनों को समान करना। (काउन्टर-बैलेन्स) २. लाक्षणिक अर्थ में, ऐसी स्थिति जिसमें दोनों पक्षों की शक्ति बराबर-बराबर हो। संतुलन।

प्रतिदत्त—भू० कृ० [सं० प्रति√दा (देना)+क्त] १. प्रतिदान के रूप में अर्थात् किसी चीज के बदले में दिया हुआ। २. लौटाया या वापस किया हुआ।

प्रतिदान—पुं० [सं० प्रति√दा+ल्युट्—अन] १. किसी से पाई या ली हुई चीज उसे वापस करना या लौटाना। वापस करना। २. एक चीज लेकर उसके बदले में दूसरी चीज देना। विनिमय। ३. वह चीज जो किसी को किसी दूसरी चीज के बदले में दी गई हो। (रिटर्न)

प्रतिदूत—पुं० [सं० प्रा० स०] किसी के यहाँ से दूत आने पर उसके बदले में भेजा जानेवाला दूत।

प्रतिदेय—वि० [सं० प्रति√दा+यत्] १. जो लौटाया या वापस किया जाने को हो। २. जिसके बदले में कुछ दिया जाने को हो।

प्रति-दृष्टांत सम—पुं० [सं० प्रति-दृष्टांत, प्रा० स०, प्रतिदष्टांत-सम तृ० त०] न्याय में एक प्रकार की जाति।

प्रतिद्वंद्व—पुं० [सं० प्रा० स०] दो समान व्यक्तियों या शक्तियों का पारस्परिक विरोध। बराबरवालों का झगड़ा या मुकाबला।

प्रतिद्वंद्विता—स्त्री० [सं० प्रतिद्वंद्विन्+तल्+टाप्] प्रतिद्वंद्वी होने की अवस्था या भाव।

प्रतिद्वंद्वी(द्विन्)—पुं० [सं० प्रतिद्वंद्व+इनि] [भाव० प्रतिद्वंद्विता] १. वह व्यक्ति या वस्तु जो किसी दूसरे व्यक्ति या वस्तु के मुकाबले की हो अथवा जिससे उसका मुकाबला हो। २. एक व्यक्ति की दृष्टि से वह दूसरा व्यक्ति जो उसी की तरह किसी एक-ही पद का उम्मीदवार हो अथवा किसी एक ही वस्तु को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो।

प्रतिधान—पुं० [सं० प्रति√धा (धारण)+ल्युट्—अन] १. कहीं धरना या रखना। २. लौटाना। ३. निराकरण।

प्रतिध्रुव—पुं० [सं०] भूगोल में किसी देश या स्थान के विचार से वह देश या स्थान जो उससे १८०° देशान्तर पर स्थित हो।

प्रतिध्वनि—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. किसी तल या रचना से परावर्तित होकर सुनाई पड़नेवाली ध्वनि-तरंगें। गूंज। प्रति-शब्द। २. उक्त के आधार पर लाक्षणिक रूप में दूसरे के विचारों आदि का कुछ परिवर्तित रूप में इस प्रकार दोहराया जाना कि उनमें से मूल विचारों की ध्वनि या छाया निकलती हो। (ईको, उक्त दोनों अर्थों में)

प्रतिध्वनिक—वि० [सं० प्रतिध्वनि से] प्रतिध्वनि-सम्बन्धी। प्रतिध्वनि का।

प्रतिध्वनिक शब्द—पुं० [सं० प्रतिध्वनि से] भाषा विज्ञान में, कोई ऐसा निरर्थक शब्द जो प्रायः बोल-चाल में किसी शब्द के अनुकरण पर ठीक उसके अनुरूप बना लिया जाता है। (ईको वर्ड) जैसे—कुछ काम करो तो पैसा-वैसा मिले। में 'वैसा' निरर्थक शब्द 'पैसा' का प्रतिध्वनिक शब्द है।

प्रतिध्वनित—भू० कृ० [सं० प्रति√ध्वन् (शब्द)+क्त] जो प्रतिध्वनि के रूप में शब्द करता हो। गूंजा हुआ।

प्रतिध्वान—पुं० [सं० प्रति√ध्वन्+घञ्]=प्रतिध्वनि।

प्रतिनंदन—पुं० [सं० प्रति√नन्द् (प्रशंसा करना)+ल्युट्—अन] वह अभिनन्दन जो आशीर्वाद देते हुए किया जाय। बधाई देनेवाले के प्रति प्रकट की जानेवाली शुभ कामना।

प्रतिनप्ता (प्तृ)—पुं० [सं० प्रा० स०] प्रपौत्र। परपोता।

प्रतिना—स्त्री०=पृतना।

प्रतिनाद—पुं० [सं० प्रति√नद्+घञ्]=प्रतिध्वनि।

प्रतिनायक—पुं० [सं० प्रा० स०] नाटकों, काव्यों आदि में वह पात्र जो नायक का प्रतिद्वन्द्वी हो या जिसकी नायक से प्रतिद्वंद्विता होती हो।

प्रतिनाह—पुं० [सं० प्रति√नह् (बाँधना)+घञ्] एक प्रकार का रोग जिसमें नाक के नथनों में कफ रुकने से श्वास चलना बन्द हो जाता है।

प्रति-निचयन—पुं० [सं० प्रति-नि√चि+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिनिचित] कहीं से आया या किसी का दिया हुआ देय। शुल्क आदि उचित से अधिक या अनियमित होने पर उसे दाता को लौटाना या उसके खाते में जमा करना। (रिफन्ड)

प्रतिनिधान—पुं० [सं० प्रति-नि√धा+ल्युट्—अन] १. दे० 'शिष्ट-मण्डल'। २. वह व्यक्ति या व्यक्तियों का दल जो इस प्रकार प्रतिनिधि बनकर कहीं भेजा जाय। प्रतिनिधि मण्डल। (डेपुटेशन)

प्रतिनिधि—पुं० [सं० प्रति-नि√धा (धारण)+कि] १. प्रतिमा। प्रतिमूर्ति। २. वह व्यक्ति जो दूसरों की ओर से कहीं भेजा जाय अथवा उनकी तरफ से कार्य करता हो। अभिकर्ता। ३. संसद, विधान-सभा आदि का वह सदस्य जो किसी निर्वाचन-क्षेत्र से चुना गया हो, और जिसे उस क्षेत्र के लोगों की ओर से बोलने तथा काम करने का अधिकार होता है। ४. वह जिसे देखकर उसी के वर्ग, जाति आदि के औरों के स्वरूप रंग-ढंग, आचार-विचार आदि का अनुमान या कल्पना की जा सके। ५. वह जो अपने वर्ग के औरों की जगह काम आ सके। (रिप्रेजेंटेटिव; उक्त चारों अर्थों के लिए) ६. दे० 'प्रतिनिधि द्रव्य'

प्रतिनिधित्व—पुं० [सं० प्रतिनिधि+त्व] प्रतिनिधि होने की अवस्था या भाव। प्रतिनिधि होने का काम। (रिप्रेजेंटेशन)

प्रतिनिधि-द्रव्य—पुं० [सं० मध्य० स०] वैद्यक में, वह औषध जो किसी अन्य औषध के अभाव में दी जाती हो। जैसे—चित्रक के अभाव में दंती, तगर के अभाव में कुंठ, नखी के अभाव में लौंग दिया जाना।

प्रतिनिधि-शासन—पुं० [सं० प० त०] वह शासन जिसमें विधान आदि बनाने और शासन की नीति आदि स्थिर करने के प्रायः सभी अधिकार जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथ में रहते हैं। (रिप्रेजेंटेटिव गवर्नमेंट)

प्रतिनियम—पुं० [सं० प्रति-नि√यम्+अप्] सामान्य नियम या व्यवस्था।

प्रतिनियुक्त—वि० [सं० प्रति-नि√युज् (जोड़ना)+क्त] प्रतिनिधि या अधीनस्थ अधिकारी के रूप में बनकर कहीं भेजा हुआ। (डेप्यूटेड)

प्रतिनियोजन—पुं० [सं० प्रति-नि√युज्+ल्युट्—अन] किसी को कहीं भेजने के लिए अधीनस्थ कर्मचारी के रूप में नियुक्त करना। (डिप्यूटेशन)

प्रतिनिर्देश—पुं० [सं० प्रति-निर्√दिश् (बताना)+घञ्] पुनः उल्लेख या कथन करना।

प्रतिनिर्देश्य—वि० [सं० प्रति-निर्√दिश्+ण्यत्] जिसका पुनः कथन या निर्देशन करना आवश्यक या उचित हो अथवा किया जाने को हो।

प्रति-निर्वतन—पुं० [सं० प्रति-निर् √यत् (प्रयत्न)+णिच्+ल्युट्–अन्] [भू० कृ० प्रतिनिर्वातित] १. लौटाना। २. बदला लेना।

प्रतिनिविष्ट—वि० [सं० प्रति-नि√विश् (घुसना)+क्त] जो दृढ़ हो गया हो।

प्रतिपक्ष—पुं० [प्रा० स०] १. मुकाबले का या विरोधी पक्ष। अन्य या दूसरा पक्ष। २. दूसरे या विरोधी पक्ष की कही हुई बात या उसके द्वारा उपस्थित किया हुआ मत या विचार। ३. [ब० स०] प्रतिवादी। ४. शत्रु। वैरी। ५. [प्रा० स०] बराबरी। समानता।

प्रतिपक्षता—स्त्री० [सं० प्रतिपक्ष+तल्–टाप्] १. प्रतिपक्षी होने की अवस्था या भाव। २. विरोध।

प्रतिपक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० प्रतिपक्ष+इनि] १. दूसरे या विरोधी पक्ष में रहनेवाला। २. वह जो विरोधी पक्ष में रहकर सदा हानि पहुँचाने का प्रयत्न करता हो। (हॉस्टाइल)

प्रतिपक्षीय—वि०=प्रतिपक्षी।

प्रतिपच्छ†—पुं०=प्रतिपक्ष।

प्रतिपच्छी†—पुं० प्रतिपक्षी।

प्रतिपत्—स्त्री०=प्रतिपद्।

प्रतिपत्ति—स्त्री० [सं० प्रति√पद् (गति)+क्तिन्] १. प्राप्ति। पाना। २. ज्ञान। ३. अनुमान। ४. दान देना। ५. कार्य के रूप में लाना। कार्यान्वित करना। ६. किसी बात या विषय का होनेवाला निरूपण, निर्धारण या प्रतिपादन। ७. कोई बात अच्छी तरह और प्रमाणपूर्वक कहते हुए किसी के मन में बैठाना। ८. उक्त प्रकार से कही हुई बात मान लेना। ग्रहण। स्वीकार। ९. मान-मर्यादा। गौरव। प्रतिष्ठा। १०. शक्तिमत्ता आदि की धाक या साख। ११. आदर-सत्कार। १२. प्रवृत्ति। १३. दृढ़ निश्चय या विचार। १५. परिणाम। नतीजा।

प्रतिपत्ति-कर्म (न्)—पुं० [ष० त०] १. श्राद्ध आदि में, वह कर्म जो सब के अन्त में किया जाय। २. अन्त या समाप्ति के समय किया जानेवाला काम।

प्रतिपत्तिमान् (मत्)—वि० [सं० प्रतिपत्ति+मतुप्] १. [स्त्री० प्रतिपत्तिमती] २. बुद्धिमान। ३. प्रसिद्ध। ४. कार्यकुशल।

प्रतिपत्ति-मूढ़—वि०=किंकर्तव्य-विमूढ़।

प्रतिपत्र-फला—स्त्री० [सं० ब०स०] करेली।

प्रतिपद्—स्त्री० [सं० प्रति√पद् (गति)+क्विप्] १. मार्ग। रास्ता। २. आरम्भ। ३. बुद्धि। समझ। ४. पंक्ति। श्रेणी। ५. पुरानी चाल का एक प्रकार का ढोल। ६. चांद्र मास के प्रत्येक पक्ष की पहली तिथि। प्रतिपदा।

प्रतिपद†—स्त्री० [सं०] एकम।

प्रतिपन्न—वि० [सं० प्रति√पद्+क्त] १. अवगत। जाना हुआ। २. अंगीकृत। स्वीकृत। ३. प्रचंड। ४. प्रमाणित। निरूपित। ५. भरा-पूरा। ६. शरणागत। ७. सम्मानित। ८. प्राप्त।

प्रतिपन्नक—पुं० [सं० प्रतिपन्न+कन्] बौद्ध शास्त्रों के अनुसार श्रोतापन्न, सकृदागामी, अनागामी, और अर्हत् ये चार पद।

प्रतिपन्नत्व—पुं० [सं० प्रतिपन्न+त्व] प्रतिपन्न होने की अवस्था या भाव।

प्रति-परीक्षण—पुं० [सं० प्रा० स०] न्यायालय आदि में, किसी के कुछ कह चुकने पर उससे दबी-दबाई बातों का पता लगाने के लिए उससे कुछ और प्रश्न करना। (क्रास-इग्ज़ामिनेशन)

प्रतिपर्ण—पुं० [सं० प्रा० स०] दो टुकड़ोंवाली पावती या रसीद, प्रमाण-पत्र आदि में का वह टुकड़ा जो देनेवाले के पास रह जाता है और जिस पर किसी को दिये हुए दूसरे टुकड़े की प्रतिलिपि रहती है। (काउन्टर फॉयल)

प्रतिपाण—पुं० [सं० प्रति√पण् (शर्त रखना)+घञ्] वह धन जो दाँव पर प्रतिपक्षी ने लगाया हो।

प्रतिपादक—वि० [सं० प्रति√पद्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. प्रतिपादन करनेवाला। २. प्रतिपन्न करनेवाला। ३. उत्पादन करनेवाला। ४. निर्वाह करनेवाला।

प्रतिपादन—पुं० [सं० प्रति√पद्+णिच्+ल्युट्—अन] १. भली भाँति ज्ञान कराना। अच्छी तरह समझाना। प्रतिपत्ति। २. प्रमाण देते हुए कोई बात कहना या सिद्ध करना। निरूपण। निष्पादन। ३. प्रमाण। सबूत। ४. उत्पत्ति। जन्म। ५. दान। ६. इनाम। पुरस्कार।

प्रतिपादयिता (तृ)—वि० [सं० प्रति√पद्+णिच्+तृच्] प्रतिपादन करने अर्थात् अच्छी तरह बतलाने-समझानेवाला।
पुं० १. शिक्षक। २. व्याख्याकार।

प्रतिपादित—भू० कृ० [सं० प्रति√पद्+णिच्+क्त] १. जिसका प्रतिपादन हो चुका हो। २. निर्धारित। निश्चित। ३. जो दिया जा चुका हो। दत्त।

प्रतिपाद्य—वि० [सं० प्रति√पद्+णिच्+यत्] १. जिसका प्रतिपादन किया जा सकता हो या किया जाने को हो। २. जो दिया जा सकता हो या दिया जाने को हो।

प्रति-पाप—पुं० [सं० प्रा० स०] वह कठोर और पाप-रूप व्यवहार जो किसी पापी के साथ किया जाय।

प्रतिपार—वि०, पुं०=प्रतिपाल।

प्रतिपारना—स० =प्रतिपालना।

प्रतिपाल—वि० [सं० प्रति√पाल् (रक्षा करना)+णिच्+अच्] १. प्रतिपालन करनेवाला। प्रतिपालक। २. रक्षा करनेवाला। रक्षक।
पुं० १. रक्षा। २. सहायता।

प्रतिपालक—वि० [सं० प्रति√पाल्×णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रतिपालिका] १. पालन-पोषण करनेवाला। पोषक। २. रक्षक।
पुं० राजा।

प्रतिपालक-अधिकरण—पुं० [सं० कर्म० स०] वह राजकीय अधिकरण या विभाग जो ऐसे लोगों की संपत्ति की व्यवस्था करता है जो अल्प-वयस्क, बौद्धिक दृष्टि से अयोग्य अथवा शारीरिक दृष्टि से असमर्थ हों। (कोर्ट ऑफ़ वार्ड्स्)

प्रतिपालन—पुं० [सं० प्रति√पाल्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिपालित] १. दूसरों से रक्षित रखते हुए किसी का किया जानेवाला

पालन। २. आज्ञा, आदेश आदि का कर्तव्यपूर्वक किया जानेवाला पालन। ३. देख-रेख। निगरानी। रक्षण।

प्रतिपालना—सं० [स० प्रतिपालन] १. प्रतिपालन करना। २. भरण-पोषण और रक्षा करना। ३. आज्ञा, आदेश आदि का निर्वाह करना।

प्रतिपालनीय—वि० [सं० प्रति√पाल्+णिच्+अनीयर्] जिसका प्रति-पालन करना आवश्यक या उचित हो।

प्रतिपालित—भू० कृ० [सं० प्रति√पाल्+णिच्+क्त] [स्त्री० प्रति-पालिता] १. जिसका प्रतिपालन किया गया हो या हुआ हो। २. अपनी देख-रेख में पाला-पोसा हुआ। ३. (आज्ञा, आदेश आदि) जिसके अनुसार आचरण किया गया हो।

प्रतिपाल्य—वि० [सं० प्रति√पाल्+णिच्+यत्] १. प्रतिपालन किये जाने के योग्य। २. जिसका प्रतिपालन किया जा सकता हो। ३. जिसका पालन और रक्षा करना उचित हो। रक्षणीय।

प्रतिपीडन—पुं० [सं० प्रति√पीड् (कष्ट पहुँचाना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिपीडित] पीड़ित करनेवाले को पीड़ा पहुँचाना। (रिप्राइजल)

प्रतिपुरुष—पुं० [सं० प्रा० स०] १. वह पुरुष जो किसी दूसरे पुरुष के स्थान पर उसका प्रतिनिधि या स्थानापन्न होकर काम करता हो। प्रतिनिधि। २. बराबर या जोड़ का व्यक्ति। ३. वह पुतला जिसे चोर किसी घर में घुसने से पहले यह जानने के लिए अंदर फेंकते थे कि लोग सोये हैं या जागते।

प्रतिपुरुष-पत्र—पुं० [ष० त०] वह पत्र जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को किसी के बदले कुछ काम करने, मत देने आदि का अधिकार दिया जाता है। (प्रॉक्सी)

प्रतिपूजक—वि० [सं० प्रति√पूज् (पूजा करना)णिच्+ण्वुल्—अक] प्रतिपूजन अर्थात् अभिवादन करनेवाला। अभिवादक।

प्रतिपूजन—पुं० [सं० प्रति√पूज्+णिच्+ल्युट्—अन] १. अभिवादन। साहब-सलामत। २. पारस्परिक किया जानेवाला अभिवादन। अभिवादन का आदान-प्रदान।

प्रतिपूजा—स्त्री० [सं० प्रति√पूज्+अ+टाप्] प्रतिपूजन। (दे०)

प्रतिपूजित—भू० कृ० [सं० प्रति√पूज् णिच्+क्त] १. जिसका प्रति-पूजन का अभिवादन किया गया हो। अभिवादित। २. (व्यक्ति) जिसके साथ आदरपूर्वक व्यवहार किया गया हो। सम्मानित।

प्रतिपूज्य—वि० [सं० प्रति√पूज्+ण्यत्] जिसका प्रतिपूजन या अभिवादन करना आवश्यक या उचित हो। अभिवाद्य।

प्रतिपूर्ति—स्त्री० [सं० प्रति√पॄ+क्तिन्] किसी व्यक्ति या मद से लिया हुआ या लेकर व्यय किया हुआ धन उसे देकर या उसमें जमाकर उस की पूर्ति करना। (रि-इम्बर्समेन्ट)

प्रतिपोषक—वि० [सं० प्रति√पुष् (पुष्ट करना)+ण्वुल्+अक] प्रतिपोषण या सहायता करनेवाला। मदद करनेवाला। सहायक।

प्रतिपोषण—पुं० [सं० प्रति√पुष्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिपोषित] सहायता। मदद।

प्रति-पौतिक—वि० [सं० प्रा० स०] जो पूति (सड़ायँध आदि) का नाश करनेवाला हो। पूतिका-मारक। (एन्टिसेप्टिक)

प्रतिप्रभा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. प्रतिबिंब। २. परछाईं। छाया।

प्रतिप्रसव—पुं० [सं० प्रति-प्र√सू (उत्पन्न करना)+अप्] ऐसा तथ्य या बात जो किसी सामान्य नियम के अपवाद का भी अपवाद हो। (काउन्टर-एक्सेप्शन)

प्रति-प्रसूत—वि० [सं० प्रति-प्र√सू+क्त] १. प्रतिप्रसव-संबंधी। २. प्रति प्रसव के रूप में होनेवाला।

प्रति-प्राकार—पुं० [सं० प्रा० स०] दुर्ग के बाहर की ओर का प्राकार। बाहरी परकोटा।

प्रति-प्राप्ति—स्त्री० [सं०] [भू० कृ० प्रतिप्राप्त] १. पुनः प्राप्त करने या होने की अवस्था या भाव। २. किसी के हाथ में गई हुई अथवा अधि-कार से निकली हुई चीज फिर से प्राप्त करना। (रिकवरी)

प्रतिफल—पुं० [सं० प्रति√फल् (फलना)+अच्] १. चीज या फल के रूप में होनेवाली वह प्राप्ति जो किसी को कोई काम करने के बदले में, अथवा कोई काम करने के परिणामस्वरूप होती है। किसी काम या बात के बदले में या परिणाम के रूप में प्राप्त होनेवाला फल। २. परिणाम। नतीजा। ३. प्रतिबिंब।

प्रतिफलक—पुं० [सं० प्रतिफल+णिच्+ण्वुल्—अक] १. वह फलक जिसकी सहायता से किसी चीज की पड़नेवाली परछाईं दूसरी ओर या दूसरी चीज पर परावर्तित की जाती है।

प्रतिफलित—भू० कृ० [सं० प्रति√फल्+क्त] १. जो प्रतिफल के रूप में हो। २. जो प्रतिफल दे रहा हो। ३. जिसका प्रतिफल मिल रहा हो। ४. प्रतिबिंबित।

प्रतिबंध—पुं० [सं० प्रति√बन्ध् (बाँधना)+घञ्] १. वह बंधन या रोक जो किसी काम बात या व्यक्ति पर लगाई गई हो। २. विशेषतः ऐसी आज्ञा, आदेश या सूचना जो किसी बात को कोई प्रायिक, स्वाभाविक या अधिकृत आचरण, व्यवहार आदि करने से पहले ही रोकने के लिए दी गई हो। मनाही। (रेस्ट्रिक्शन) ३. किसी काम या बात में लगाई हुई शर्त। पण। (कन्डिशन) ४. निश्चय, विधि आदि में पड़नेवाली कठिनता से बचने के लिए निकाला हुआ ऐसा मार्ग या निश्चित किया हुआ विधान जिसके साथ कोई शर्त भी लगी हो। उपबंध। (प्राविजो) जैसे—परन्तु प्रतिबंध यह है कि....।

प्रतिबंधक—वि० [सं० प्रति√बन्ध्+ण्वुल्—अक] १. प्रतिबंध लगाने-वाला। मनाही करनेवाला। २. रुकावट डालनेवाला। बाधक। पुं० पेड़। वृक्ष।

प्रतिबंधकता—स्त्री० [सं० प्रतिबंधक+तल्+टाप्] १. प्रतिबंधक होने की अवस्था या भाव। २. प्रतिबंध। रुकावट। बाधा। विघ्न।

प्रतिबंधि—स्त्री० [सं० प्रति√बन्ध्+इन्] १. ऐसा तर्क या दलील जो दोनों पक्षों पर समान रूप से घटती या लागू होती हो। २. आपत्ति।

प्रतिबंधु—पुं० [सं० प्रा० स०] वह जो समान पद या पदवीवाला हो।

प्रतिबद्ध—भू० कृ० [सं० प्रति√बन्ध्+क्त] १. बँधा हुआ। २. जिसके सम्बन्ध में कोई प्रतिबंध या रुकावट लगी हो। ३. जिसके मार्ग में बाधा खड़ी की गई हो। ४. नियंत्रित। ५. जो इस प्रकार किसी से संबद्ध हो कि उससे अलग न किया जा सके।

प्रति-बल--वि० [सं० ब० स०] १. समर्थ। सशक्त। २. बल या शक्ति में बराबरी का। सम-बल।

प्रतिबाधक--वि० [सं० प्रति√बाध् (रोकना)+ण्वुल्—अक] १. बाधा खड़ी करनेवाला। बाधक। २. रोकने या रुकावट खड़ी करनेवाला। ३. कष्ट पहुँचाने या पीड़ा देनेवाला।

प्रतिबाधन--पुं० [सं० प्रति√बाध्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिबाधित] १. विघ्न। बाधा। २. कष्ट। पीड़ा।

प्रतिबाधित--भू० कृ० [सं० प्रति√बाध्+क्त] १. जिसके लिए किसी प्रकार की बाधा या रुकावट खड़ी की गई हो। २. हटाया हुआ। निवारित। ३. पीड़ित।

प्रतिबाधी (धिन्)--वि० [सं० प्रति√बाध्+णिनि] १. रोकनेवाला २. बाधा डालनेवाला। ३. कष्ट पहुँचानेवाला। ४. विरोध करनेवाला। पुं० वैरी। शत्रु।

प्रतिबाहु--पुं० [सं० अत्या० स०] १. बाँह का अगला भाग। २. ज्यामिति में; वर्गिक क्षेत्र में किसी एक बाहु की दृष्टि से उसकी सामनेवाली बाहु। ३. पुराणानुसार श्वफल्क के एक पुत्र और अक्रूर के भाई का नाम।

प्रतिबिंब--पुं० [सं० प्रा० स०] १. किसी पारदर्शक तल में किसी वस्तु की दिखलाई पड़नेवाली आकृति। परछाईं। प्रतिच्छाया। जैसे—जल में दिखाई देनेवाला चंद्रमा का प्रतिबिंब, शीशे में दिखाई पड़नेवाला मुख का प्रतिबिम्ब। २. छाया। ३. मूर्ति। ४. चित्र। ५. शीशा। ६. झलक।

प्रतिबिंबक--वि० [सं० प्रतिबिंब+कन्] परछाईं के समान पीछे-पीछे चलनेवाला।
पुं० अनुगामी। अनुचर।

प्रतिबिंबन--पुं० [सं० प्रतिबिंब+क्विप्+ल्युट्—अन] १. छाया या परछाईं डालना या पड़ना। २. अनुकरण। ३. तुलना।

प्रतिबिंबना--अ० [सं० प्रतिबिंबन] प्रतिबिंबित होना।
स० प्रतिबिंबित करना।

प्रतिबिंबवाद--पुं० [सं० ष० त०] वेदांत का एक सिद्धान्त जिसमें यह माना जाता है कि जीव वास्तव में ईश्वर का प्रतिबिंब मात्र है।

प्रतिबिंबवादी (दिन्)--पुं० [सं० प्रतिबिंबवाद+इनि] प्रतिबिंबवाद का अनुयायी या समर्थक।

प्रतिबिंबित--भू० कृ० [सं० प्रतिबिंब+इतच्] १. जिसका प्रतिबिंब पड़ता हो। जिसकी परछाईं पड़ती हो। २. जो परछाईं के कारण दिखाई देता या होता हो। कुछ-कुछ या अस्पष्ट रूप से दिखाई देनेवाला। झलकता हुआ।

प्रतिबीज--वि० [सं० ब० स०] १. जिसका बीज नष्ट हो गया हो। २. जिसकी उत्पन्न करने की शक्ति नष्ट हो गई हो। निर्बीज।
पुं० मरा या सड़ा हुआ बीज।

प्रतिबुद्ध--वि० [सं० प्रति√बुध् (जानना)+क्त] १. जिसे प्रतिबोध मिला हो या हुआ हो। २. जागा हुआ। ३. चतुर। होशियार। ४. प्रसिद्ध। मशहूर। ५. उन्नत।

प्रतिबुद्धि--स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. प्रतिबुद्ध होने की अवस्था या भाव। २. विपरीत बुद्धि।

प्रतिबोध--पुं० [सं० प्रति√बुध्+घञ्] १. जागरण। जागना। २. ज्ञान। ३. चातुर्य। होशियारी।

प्रतिबोधक--वि० [सं० प्रति√बुध्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. प्रतिबोध करानेवाला। २. जगानेवाला। ३. ज्ञान उत्पन्न करनेवाला। ४. शिक्षा देनेवाला। ५. तिरस्कार करनेवाला।
पुं० अध्यापक। शिक्षक।

प्रतिबोधन--पुं० [सं० प्रति√बुध्+णिच्+ल्युट्—अन] १. जगाना। २. ज्ञान उत्पन्न करना।

प्रतिबोधित--भू० कृ० [सं० प्रति√बुध्+णिच्+क्त] १. जगाया हुआ। २. जिसे किसी बात का ज्ञान या प्रतिबोध कराया गया हो।

प्रतिबोधी (धिन्)--वि० [सं० प्रति√बुध्+णिनि] १. जागता हुआ। २. जो शीघ्र ही ज्ञान प्राप्त करने को हो।

प्रतिभट--पुं० [सं० प्रा० स०] [भाव० प्रतिभटता] १. बराबर का योद्धा। समान शक्तिवाला योद्धा। २. वह जिससे मुकाबला या लड़ाई होती हो। प्रतिद्वन्द्वी। ३. वैरी। शत्रु। ४. विपक्षी दल का सैनिक।

प्रतिभय--वि० [ब० स०] भयंकर।
पुं० [प्रा० स०] भय। डर।

प्रतिभा--स्त्री० [सं० प्रति√भा (दीप्ति)+अङ+टाप्] १. ऊपर या सामने दिखाई देनेवाली आकृति या रूप। २. प्रकाश। ३. चमक। ४. ऐसी प्राकृतिक बुद्धि या मानसिक शक्ति जिसमें असाधारण तीव्रता या प्रखरता हो; और जिसके फल-स्वरूप मनुष्य अपनी कल्पना के द्वारा कला, विज्ञान, साहित्य, आदि के क्षेत्रों में उच्च कोटि की बिलकुल नई या मौलिक तथा रचनात्मक कृतियों को प्रस्तुत करने में समर्थ होता है। असाधारण बुद्धि-बल। (जीनियस)

प्रतिभाग--पुं० [सं० प्रा० स०] [वि० प्रातिभागिक] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का राजकर। २. आज-कल वह शुल्क जो राज्य में बनानेवाले कुछ विशिष्ट पदार्थों (यथा—नमक, मादक, द्रव्य, दीया-सलाई कपड़ों आदि) पर उनके बनते ही और बाजार में बिक्री के लिए जाने से पहले ही ले लिया जाता है। उत्पादनकर। (एक्साइज ड्यूटी)

प्रतिभागिक--वि०=प्रातिभागिक।

प्रतिभात--वि० [सं० प्रति√भा+क्त] १. प्रभायुक्त। चमकदार। २. जाना हुआ। ज्ञात। ३. सामने आया हुआ। ४. प्रतीत।

प्रतिभान--पुं० [सं० प्रति√भा+ल्युट्—अन] १. प्रभा। चमक। २. बुद्धि। समझ। ३. उपस्थित बुद्धि। ४. विश्वास। ५. प्रगल्भता।

प्रतिभान्वित--वि० [सं० प्रतिभा-अन्वित, तृ० त०] जिसमें प्रतिभा हो। असाधारण बुद्धिवाला। प्रतिभाशाली।

प्रतिभाव--पुं० [सं०] १. किसी भाव के प्रतिकूल या विरुद्ध पड़नेवाला भाव। २. प्रतिच्छाया। परछाईं।

प्रतिभावान् (वत्)--वि० [सं० प्रतिभा+मतुप्] १. प्रतिभाशाली। २. दीप्तिमान्। चमकीला।

प्रतिभाव्य--वि० [सं० प्रति√भू (होना)+णिच्+यत्] (अपराधी या अभियुक्त) जो निर्णय काल तक के लिए छुड़ाया जा सकता हो। जिसकी जमानत हो सकती हो। (बेलेबुल)

प्रतिभाशाली (लिन्)—वि० [सं० प्रतिभा√शाल्+णिनि] [स्त्री० प्रतिभाशालिनी] १. जिसमें प्रतिभा हो। २ प्रभावशाली।

प्रतिभाषा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. उत्तर। जवाब। २. उत्तर मिलने पर दिया जानेवाला उसका दूसरा उत्तर। प्रत्युत्तर।

प्रतिभास—पुं० [सं० प्रति√भास् (चमकना)+घञ्] १. आकस्मिक रूप से या एकाएक होनेवाला ज्ञान या बोध। २. यों ही या ऊपर से देखने पर होनेवाला भ्रम। ३. भ्रम। ४. आकृति।

प्रतिभासन—पुं० [सं० प्रति√भास्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिभासित] १. चमकना। २. दिखाई देना। ३. भासित होना। जान पड़ना।

प्रतिभिन्न—भू० कृ० [सं० प्रति√भिद् (फाड़ना)+क्त] १. जिसका भेदन किया गया हो। २. जो अलग हो गया हो। विभक्त।

प्रतिभू—पुं० [सं० प्रति√भू+क्विप्] १. वह व्यक्ति जो ऋण देनेवाले (उत्तमर्ण) के सामने ऋण लेनेवाले (अधमर्ण) की जमानत करता हो। जामिन। २. वह जो किसी की किसी तरह की जमानत दे। जमानतदार। जामिन। ३. प्रतिभूति। (दे०)

प्रतिभूत—भू० कृ० [सं० प्रति√भू+क्त] १. (व्यक्ति) जिसकी जमानत की गई हो। २. (धन) जो जमानत के रूप में जमा किया गया हो। ३. (संपत्ति) जो जमानत या रेहन के रूप में किसी को दी या सौंपी गई हो। (प्लेज्ड)

प्रतिभूति—स्त्री० [सं० प्रति√भू+क्तिन्] १. कोई काम या वचन पूरा करने आदि के लिए दिया गया निश्चित आश्वासन या उसके बदले जमा की गई वस्तु या धन। मुचलका। (सिक्योरिटी) २. ऋण आदि के प्रमाण-स्वरूप जारी किया गया सरकारी कागज। साख-पत्र। ३. प्रतिभू के द्वारा दी हुई जमानत। (बेल)

प्रतिभू-पत्र—पुं० [सं० ष० त०] वह पत्र जिसमें कोई प्रतिभू या जमानतदार अपने उत्तरदायित्व की स्वीकृति लिखकर देता है। (बांड आफ श्योरिटी)

प्रतिभेद—पुं० [सं० प्रति√भिद्+घञ्] १. प्रभेद। अन्तर। फरक। २. विभाग। ३. भेद या रहस्य प्रकट करना या खोलना।

प्रतिभेदन—पुं० [सं० प्रति√भिद्+ल्युट्—अन] १. प्रतिभेद या अन्तर उत्पन्न करना। २. विभाग करना। विभाजन। ३. बंद करना।

प्रतिभोग—पुं० [सं० प्रति√भुज् (भोगना)+घञ्] उपभोग।

प्रतिभोजन—पुं० [सं० प्रा० स०] चिकित्साशास्त्र में, किसी के लिए या कुछ विशिष्ट स्थितियों के विचार से नियत या निर्दिष्ट किया हुआ भोजन। (प्रेस्क्राइब्ड डायट)

प्रतिभौ*—पुं० [सं० दे॰प्रति+भाव] शरीर का तेज और बल। उदा०—हा जदुनाथ, जरा तनु ग्रास्यौ। प्रतिभौ उतरि गयौ।—सूर।

प्रतिमंडल—पुं० [सं० प्रा० स०] ग्रह, नक्षत्र आदि के चारों ओर का घेरा। परिवेश। भा-मंडल।

प्रतिमंडित—भू० कृ० [सं० प्रति√मंड् (अलंकृत करना)+क्त] सजाया हुआ। अलंकृत।

प्रतिमंत्रण—पुं० [सं० प्रति√मंत्र् (गुप्त भाषण करना) +ल्युट्—अन] १. अभिमन्त्रण: २. उत्तर। जवाब।

प्रतिमंत्रित—भू० कृ० [सं० प्रति√मंत्र्+क्त] १. मन्त्र द्वारा पवित्र किया हुआ। अभिमंत्रित। २. जिसका जवाब दिया जा चुका हो। उत्तरित।

प्रतिमर्श—पुं० [सं० प्रति√मृश् (छूना)+घञ्] एक तरह का चूर्ण।

प्रतिमा—स्त्री० [सं० प्रति√मा (मापना)+अङ+टाप्] १. किसी की वास्तविक अथवा कल्पित आकृति के अनुसार बनाई हुई मूर्ति या चित्र। अनुकृति। २. आराधन, पूजन आदि के लिए धातु, पत्थर मिट्टी आदि की बनाई हुई देवता या देवी की मूर्ति। देव-मूर्ति। ३. प्रतिबिंब। परछाईं। ४. साहित्य में एक अलंकार जिससे किसी मुख्य पदार्थ या व्यक्ति के न होने की दशा में उसी के समान किसी दूसरे पदार्थ या व्यक्ति की स्थापना का उल्लेख होता है। ५. हाथियों के दांतों पर जड़ा-जानेवाला पीतल, ताँबे आदि का छल्ला या मंडल। ६. तौलने का बट-खरा। बाट।

प्रतिमान—पुं० [सं० प्रति√मा+ल्युट्—अन] १. समान मानवाली मुकाबले की दूसरी वस्तु। २. वह वस्तु या रचना जिसे आदर्श मानकर उसके अनुरूप और वस्तुएँ बनाई जाती हों। (मॉडल) ३. वह अच्छी और बढ़िया चीज जो पहले एक बार नमूने के तौर पर बनाकर रख ली जाती है और तब उसी के अनुरूप या वैसी ही चीजें बनाकर तैयार की जाती हैं। (पैटर्न) ४. उदाहरण। दृष्टांत।

प्रतिमानीकरण—पुं० [सं०] १. प्रतिमान के रूप में लाने की प्रक्रिया या भाव। २. दे० 'मानकीकरण'।

प्रतिमाला—स्त्री० [सं० प्रा० स०] स्मरणशक्ति का परिचय देने के लिए दो आदमियों का एक दूसरे के बाद लगातार एक ही तरह के अथवा एक दूसरे के जोड़ के श्लोक या पद पढ़ना।

प्रतिमावली—स्त्री० [सं०] दे० 'मूर्तिविधान'।

प्रतिमित—भू० कृ० [सं० प्रति√मा+क्त] १. जिसका प्रतिबिंब पड़ा हो। प्रतिबिंबित। २. अनुकृत। ३. जिसकी तुलना की गई हो।

प्रतिमुक्त—वि० [सं० प्रति√मुच् (छोड़ना)+क्त] १. पहना हुआ (कपड़ा या गहना)। २. छोड़ा या त्यागा हुआ। परित्यक्त। ३. खुला हुआ। मुक्त।

प्रतिमुख—वि० [सं० प्रा० स०] मुकाबले या सामने का। जैसे—प्रतिमुख वायु।

पुं० १. मुख के पीछेवाला भाग। पीठ। २. दे० 'प्रतिमुख सन्धि'।

प्रतिमुख सन्धि—स्त्री० [सं० मयू० स०] साहित्य में, रूपक (नाटक) की पाँच प्रकार की सन्धियों में से दूसरी सन्धि जिसमें 'बिन्दु' नामक अर्थ-प्रकृति और 'प्रयत्न' नामक अवस्था का मिश्रण होता है। मुख-सन्धि में जो बीज बोया जाता है, उसके विकास का आरंभ इसी में दिखाई देता है। विलास, परिसर्प, विधुत्, तपन, नर्म नर्मद्युति, प्रगमन, विरोध, पर्युपासन, पुष्प, वज्र, उपन्यास और वर्ण-संहार इसके १३ अंग कहे गये हैं जो प्रायः प्रयोग में नहीं लाये जाते।

प्रतिमुद्रण—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० प्रति-मुद्रित] १. खुदी या लिखी हुई आकृति, लेख आदि पर से उसकी यथा-तथ्य प्रतिलिपि उतारने या छापने की क्रिया या भाव। २. उक्त प्रकार से ज्यों की त्यों उतारी या छापी हुई प्रति। जैसे—शिलालेख या हस्तरेखा का प्रति-मुद्रण।

प्रतिमुद्रांकन—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० प्रतिमुद्रांकित] १. जिस पर पहले किसी अधीनस्थ अधिकारी का मुद्रांकन हो चुका हो या मुहर लग चुकी हो उस पर किसी बड़े अधिकारी का अपनी स्वीकृति या सहमति सूचित करने के लिए अपनी मोहर भी लगाना। २. उक्त प्रकार से किया हुआ मुद्रांकन या लगाई हुई मोहर। (काउन्टर-सील)

प्रतिमुद्रा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. मुद्रण से ली जानेवाली छाप। २. मुद्रा (अँगूठी या मोहर) से ली जानेवाली छाप।

प्रतिमूर्ति—स्त्री० [सं० प्रा० स०] किसी की आकृति को देखकर उसके अनुरूप बनाई हुई मूर्ति या चित्र आदि। प्रतिमा।

प्रतिमूल्य—पुं० [सं०] किसी काम, चीज या बात के बदले में दिया जानेवाला धन। मुआवजा। (कम्पेन्सेशन)

प्रतिमोक्ष—पुं० [सं० प्रा० स०] मोक्ष की प्राप्ति।

प्रतिमोचन—पुं० [सं० प्रति√मुच् (खोलना)+ल्युट्—अन] बंधन से मुक्त करना। छुड़ाना। मोचन।

प्रतियत्न—पुं० [सं० प्रा० स०] १. लालच। प्राप्ति या लाभ की इच्छा। २. उपग्रह। ३. कैदी। ४. संस्कार।

प्रतियाग—पुं० [सं० प्रा० स०] विशेष उद्देश्य से किया जानेवाला यज्ञ।

प्रतियातन—पुं० [सं० प्रति√यत्+णिच्+ल्युट्—अन] १. प्रतिकार। २. प्रतिशोध। बदला।

प्रतियातना—स्त्री० [सं० प्रति√यत्+णिच्+युच्—अन, टाप्] प्रतिमा। मूर्ति।

प्रतियान—पुं० [सं० प्रति√या (जाना)+ल्युट्—अन] वापस आना। लौटना।

प्रतियुत—भू० कृ० [सं० प्रति√यु (मिश्रित होना)+क्त] बँधा हुआ।

प्रतियुद्ध—पुं० [सं० प्रा० स०] बराबरवालों का या बराबरी का युद्ध।

प्रतियोग—पुं० [सं० प्रति√युज् (जोड़ना)+घञ्] [वि० प्रतियोगिक] १. किसी चीज का विरोध पक्ष बनाना या तैयार करना। २. दो विरोधी तत्त्वों, पदार्थों आदि का होनेवाला मिश्रण या संयोग। ३. विरोधी तत्त्व या भाव। ४. किसी बात या मत का खण्डन। ५. किसी व्यक्ति का विरोधी। ६. वैर। शत्रुता। ७. किसी चीज, बात का परिणाम या प्रभाव नष्ट करनेवाला कार्य या तत्त्व। मारक। ८. एक बार विफल होने पर फिर से किया जानेवाला उद्योग या प्रयत्न।

प्रतियोगिता—स्त्री० [सं० प्रतियोगिन्+तल्-टाप्] १. वह स्थिति जिसमें कोई व्यक्ति किसी चीज को ठीक समय से प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो। जिसकी प्राप्ति के लिए अन्य लोग भी उसी समय प्रयत्नशील हों। २. दुश्मनी। शत्रुता। ३. किसी विशिष्ट उद्देश्य की सिद्धि या फल की प्राप्ति के लिए कुछ लोगों में आपस में होनेवाली चढ़ा-ऊपरी या होड़। मुकाबला। (कम्पीटीशन)

प्रतियोगी (गिन्)—पुं० [सं० प्रति√युज्+घिनुण्] १. उन कई व्यक्तियों में से हर एक जो किसी एक ही चीज को पाने के लिए किसी एक समय में समान रूप से प्रयत्नशील हों। प्रतियोगिता करनेवाला व्यक्ति। २. साझेदार। हिस्सेदार। ३. वह जो मुकाबला या सामना कर रहा हो। वैरी शत्रु। ४. विरोधी। ५. मददगार। सहायक। ६. संगी। साथी। ७. वह जो तुलना आदि के विचार से बराबरी का हो। जोड़ीदार।

प्रतियोद्धा (द्धृ)—पुं० [सं० प्रति√युध् (लड़ाई करना)+तृच्] १. बराबरी का या मुकाबले में रहकर युद्ध करनेवाला। २. विरोधी। ३. शत्रु। दुश्मन।

परिक्षण—पुं० =प्रतिरक्षा।

प्रतिरक्षा—स्त्री० [सं० प्रति√रक्ष्+अ—टाप्] १. रक्षण। हिफाजत। २. आज-कल, राजनीतिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में किसी के आक्रमण से अपनी रक्षा करने का कार्य या व्यवस्था। ३. विधिक क्षेत्र में, अपने ऊपर लगे हुए अभियोग से अपना बचाव करने या अपनी निर्दोषिता दिखाने का प्रयत्न। सफाई। (डिफेन्स)

प्रतिरथ—पुं० [सं० ब० स०] १. बराबरी का लड़नेवाला योद्धा या रथी। २. वह जो मुकाबला करे। प्रतिद्वंद्वी।

प्रतिरव—पुं० [सं० प्रति√रु (शब्द)+अप्] १. विवाद। झगड़ा। २. प्रतिध्वनि। गूँज।

प्रतिरुद्ध—वि० [सं० प्रति√रुध् (रुकना)+क्त] १. जिसका प्रतिरोध हुआ हो। २. रुका हुआ। अवरुद्ध। ३. अटका या फँसा हुआ।

प्रतिरूप—पुं० [सं० प्रा० स०] १. प्रतिमा। मूर्ति। २. चित्र। तस्वीर। ३. प्रतिनिधि। ४. एकदानव (महाभारत)।

वि० नकली। जाली। (काउन्टरफीट)

प्रतिरूपक—पुं० [सं० प्रतिरूप+कन्] वह जो नकली या बनावटी चीजें विशेषतः सिक्के, नोट आदि बनाता हो। (काउन्टरफीटर)

प्रतिरोद्धा (द्धृ)—वि० [सं० प्रति√रुध्+तृच्] १. प्रतिरोध करनेवाला। विरोधी। २. बाधा डालनेवाला। बाधक। ३. शत्रुता करनेवाला।

प्रतिरोध—पुं० [सं० प्रति√रुध्+घञ्] १. अड़चन। बाधा। रुकावट। २. शत्रु के गढ़, सेना आदि के चारों ओर डाला जानेवाला घेरा। ३. आवेग, आक्रमण आदि को रोकने के लिए किया जानेवाला कार्य। ४. छिपाव। दुराव। ५. विरोध। ६. चोरी, डाका आदि दुष्कृत्य। ७. तिरस्कार। ८. प्रतिबिंब। परछाईं।

प्रतिरोधक—वि० [सं० प्रति√रुध्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रतिरोधिका] प्रतिरोध करनेवाला। रोकने या बाधा डालनेवाला।

पुं० चोर, ठग, डाकू आदि जो शान्तिपूर्वक जीवन बिताने में बाधक होते हैं।

प्रतिरोधन—पुं० [सं० प्रति√रुध्+ल्युट्—अन] प्रतिरोध करने की क्रिया या भाव।

प्रतिरोधित—भू० कृ० [सं० प्रति√रुध्+णिच्+क्त] १. जो रोका गया हो। २. जिसमें बाधा डाली गई हो।

प्रतिलंभ—पुं० [सं० प्रति√लभ् (प्राप्ति)+अप्, मुम्] १. बुरी चाल। कुरीति। २. किसी पर लगाया जानेवाला अभियोग, कलंक या दोष। ३. निंदा। बुराई। ४. प्राप्ति। लाभ।

प्रतिलब्धि—स्त्री० [सं० प्रति√लभ्+क्तिन्] प्रतिप्राप्ति। (दे०)

प्रतिलाभ—पुं० [सं० प्रति√लभ्+घञ्] १. प्रति-प्राप्ति। (दे०) २. शालक राग का एक भेद।

प्रतिलिपि—स्त्री० [सं० प्रा० स०] मूल लेख, पत्र आदि की ज्यों का त्यों और अक्षरशः तैयार की हुई नकल। (कॉपी)

प्रतिलिपिक—पुं० [सं० प्रा० स०] वह जो मूल लेखों, पत्रों आदि की प्रतिलिपियाँ तैयार करने का काम करता हो। (कापीइस्ट)

प्रतिलिपित—भू० कृ० [सं० प्रतिलिपि+णिच्+क्त] (पत्र-लेख आदि) जिसकी प्रतिलिपि तैयार हो चुकी हो।

प्रतिलिप्त—वि० =प्रतिलिपित।

प्रतिलेखक—पुं० [सं० प्रति√लिख्+ण्वुल्—अक] प्रतिलेखन का काम करनेवाला लेखक।

प्रतिलेखन—पुं० [सं० प्रति√लिख्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिलिखित] १. किसी लिखी हुई चीज की ज्यों की त्यों नकल उतारने या उसी तरह लिखने की क्रिया या भाव। २. भाषण, संकेत-लिपि आदि की टिप्पणियों के आधार पर पढ़ने योग्य लिखित प्रति तैयार करना। (ट्रान्सक्रिप्शन)

प्रतिलोम—वि० [सं० प्रा० स०] १. जो प्राकृतिक या प्रसम क्रम के ठीक विपरीत हो। उलटा। विपरीत। 'अनुलोम' का विपर्याय। जैसे—१, २, ३, ४ आदि का क्रम अनुलोम और ४, ३, २, १ का क्रम प्रतिलोम कहलायेगा। (कानवर्स) २. तुच्छ और नीच।

प्रतिलोमक—पुं० [सं० प्रतिलोम+कन्] उलटा या विपरीत क्रम। वि० =प्रतिलोम।

प्रतिलोमज—पुं० [सं० प्रतिलोम√जन् (उत्पन्न होना)+ड] १. वह जिसकी उत्पत्ति प्रतिलोम-विवाह (देखें) के फलस्वरूप हुई हो। २. वर्ण-संकर।

प्रतिलोमतः—अव्य० [सं० प्रतिलोम+तस्] प्रतिलोम अर्थात् उलटे क्रम से।

प्रतिलोम विवाह—पुं० [सं० कर्म० स०] वह विवाह जिसमें पुरुष छोटे वर्ण का और स्त्री उच्च वर्ण की हो।

विशेष—शास्त्रों में उच्च वर्ण के पुरुष को तो छोटे या नीचे वर्ण की स्त्री के साथ विवाह करना विहित माना गया है, पर इसके विपरीत रूप का विवाह वर्जित है।

प्रतिवक्ता (क्तृ)—पुं० [सं० प्रा० स०] १. वह जो किसी की बात का उत्तर दे। २. कानून या विधान की व्याख्या करनेवाला व्यक्ति।

प्रतिवचन—पुं० [सं० प्रा० स०] १. उत्तर। जवाब। २. प्रतिध्वनि। गूंज।

प्रतिवर्णिक—वि० [सं० प्रति-वर्ण, प्रा० स०,+ठन्—इक] १. एक ही जैसे रंगवाला। २. समान। सदृश।

प्रतिवर्तन—पुं० [सं० प्रति√वृत् (बरतना)+ल्युट्—अन] १. वापस आना या होना। लौटना। २. वापस करना। लौटाना। ३. किसी प्रकार के आचरण या व्यवहार के बदले में किया जानेवाला वैसा ही दूसरा आचरण या व्यवहार। उदा०—दोनों का समुचित प्रतिवर्तन जीवन में शुद्ध विकास हुआ।—प्रसाद। ४. पिछली या पुरानी घटनाओं, तथ्यों आदि को फिर से देखना या विचार करना। अनुदर्शन। सिंहावलोकन। (रिट्रास्पेक्शन)

प्रतिवर्ती (र्तिन्)—वि० [सं० प्रति√वृत्+णिनि] [स्त्री० प्रतिवर्तिनी] १. पीछे की ओर घूमने, मुड़ने या लौटनेवाला। २. वापस होने या लौटनेवाला। ३. जो किसी के प्रति उसके द्वारा किये हुए आचरण के अनुसार व्यवहार करता हो। ४. जिसका संबंध पिछली या बीती हुई घटनाओं या भूत काल से भी हो। (रिट्रास्पेक्टिव) जैसे—वेतन-वृद्धि के इस निश्चय का प्रभाव इस वर्ष के लिए प्रतिवर्ती भी होगा (अर्थात् इस वर्ष के जो महीने बीत चुके हैं, उनके वेतन में भी इसी प्रकार की वृद्धि होगी।)

प्रतिवस्तु—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. वह जो रूप आदि में किसी वस्तु के तुल्य हो। दूसरी सदृश्य वस्तु। २. किसी वस्तु के बदले में दी जानेवाली वस्तु। ३. उपमान।

प्रतिवस्तूपमा—स्त्री० [सं० प्रतिवस्तु-उपमा, ष० त०] साहित्य में, एक प्रकार का अलंकार जिसे कुछ लोग 'उपमा' अलंकार के अंतर्गत और कुछ लोग उससे पृथक् तथा स्वतंत्र अलंकार मानते हैं। इस काव्यालंकार के प्रत्येक वाक्यार्थ में उपमा अर्थात् साधर्म्य का उल्लेख होता है अथवा एक ही साधारण धर्म का उपमान-वाक्य में भी और उपमेय-वाक्य में भी समान रूप से कथन होता है। जैसे—मैं तुम्हारे मुख पर अनुरक्त हूँ, चकोर चंद्रमा पर ही अनुरक्त होता है।

विशेष—दृष्टांत और प्रतिवस्तूपमा अलंकारों का अन्तर जानने के लिए। दे० 'दृष्टांत (अलंकार) का विशेष।

प्रतिवहन—पुं० [सं० प्रति√वह् (ढोना)+ल्युट्—अन] पीछे की ओर या विपरीत दिशा में ले जाने की क्रिया या भाव।

प्रतिवाक्य—पुं० [सं० प्रा० स०] प्रतिवचन। (दे०)

प्रतिवाणी—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. कोई शब्द सुनकर उसके उत्तर में कही जानेवाली उसी तरह की दूसरी बात। २. जवाब का जवाब। प्रत्युत्तर।

प्रतिवाद—पुं० [सं० प्रति√वद् (बोलना)+घञ्] १. किसी बात के विरुद्ध कही जानेवाली बात। २. विशेषतः ऐसा कथन या वक्तव्य जो किसी के द्वारा उपस्थित किये हुए तर्क, लगाये गये अभियोग आदि का खण्डन करने तथा उसे मिथ्या सिद्ध करने के लिए दिया जाता है। ३. विवाद। बहस। ४ उत्तर। जवाब।

प्रतिवादक—वि० [सं० प्रति√वद्+णिच्+ण्वुल्—अक] प्रतिवाद करनेवाला। जो प्रतिवाद करे।

प्रतिवादिता—स्त्री० [सं० प्रतिवादिन्+तल्—टाप्] १. प्रतिवाद करने की क्रिया या भाव। २. प्रतिवादी होने की अवस्था, धर्म या भाव।

प्रतिवादी (दिन्)—वि० [सं० प्रति√वद्+णिनि] १. प्रतिवाद-संबंधी। प्रतिवादक। २. (व्यक्ति या वस्तु) जो किसी का प्रतिवाद करता हो अथवा जिससे प्रतिवाद होता हो। ३. तर्क-वितर्क या वाद-विवाद करनेवाला। ४. प्रतिपक्षी।

पुं० १. वह जो दूसरों द्वारा लगाये गये अभियोगों आदि का उत्तर दे। २. विधिक क्षेत्र में, वह जिसके संबंध में वादी ने न्यायालय में कोई अभियोग या वाद उपस्थित किया हो और जिसका उत्तर देने के लिए वह न्यायतः बाध्य हो। मुद्दालेह।

प्रतिवाप—पुं० [सं० प्रति√वप् (काटना)+घञ्] १. ओषधियों का वह चूर्ण जो किसी काढ़े आदि में डाला जाय। २. चूर्ण। बुकनी। ३. वैद्यक में धातुओं को भस्म करने की क्रिया या भाव।

प्रतिवारण—पुं० [सं० प्रति√वृ (रोकना) +णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिवारित] १. मना करना। रोकना। २. चेतावनी।

प्रतिवारित—भू० कृ० [सं० प्रति√वृ+णिच्+क्त] १. रोका हुआ। २. जिसे चेतावनी दी गई हो।

प्रतिवार्ता—स्त्री० [सं० प्रा० स०] किसी की बात का दिया जानेवाला उत्तर।

प्रतिवास—पुं० [सं० प्रति√वास् (सुगंधित करना)+घञ्] १. सुगंधि। सुवास। खुशबू। २. समीप रहना। पास या बगल में रहना। ३. प्रतिवेश। पड़ोस।

प्रतिवासिता—स्त्री० [सं० प्रतिवासिन्+तल्-टाप्] प्रतिवासी अर्थात् पड़ोसी होने की अवस्था, धर्म या भाव।

प्रतिवासी (सिन्)—पुं० [सं० प्रति√वस्+णिनि] प्रतिवास अर्थात् पड़ोस में रहनेवाला व्यक्ति। पड़ोसी।

प्रति-वासुदेव—पुं० [सं० प्रा० स०] जैनों के अनुसार विष्णु या वासुदेव के ये नौ विरोधी या शत्रु जो नरक में गये थे—अश्वग्रीव, तारक, मोदक, मधु, निशुंभ, बलि, प्रह्लाद, रावण और जरासंध।

प्रतिविधान—पुं० [सं० प्रति-वि√धा (धारण करना)+ल्युट्—अन] १. प्रतिकार। २. धर्म-शास्त्र में वह कृत्य जो किसी अन्य कृत्य के बदले में किया जाता है।

प्रतिविधि—स्त्री० [सं० प्रति-वि√धा+कि] १. प्रतिकार। २. ऐसा काम या बात जिससे किसी प्रकार की क्षति, दोष आदि का प्रतिमार्जन हो। (रेमेडी)

प्रतिविधिक—वि० [सं० प्रतिविधि] प्रतिविधि (उपचार या प्रतिकार) के रूप में किया हुआ अथवा होनेवाला। (रेमीडिएल)

प्रतिविष—पुं० [सं० ब० स०] विष का प्रभाव नष्ट करनेवाला पदार्थ। वि० विष का मारक।

प्रतिवीर्य—पुं० [सं० ब० स०] वह जिसमें प्रतिरोध करने का यथेष्ट बल या शक्ति हो।

प्रतिवेदन—पुं० [सं० प्रति√विद् (जानना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिवेदित] १. प्रार्थना। २. किसी कार्य, घटना, तथ्य, योजना आदि के संबंध में छान-बीन, पूछ-ताछ आदि करने के उपरांत तैयार किया हुआ विवरण जो किसी बड़े अधिकारी के पास भेजा जाता है। (रिपोर्ट)

प्रतिवेदित—भू० कृ० [सं० प्रति√विद्+णिच्+क्त] १. प्रार्थित। २. जिसके संबंध में प्रतिवेदन तैयार करके बड़े अधिकारी के पास भेजा जा चुका हो। (रिपोर्टेड)

प्रतिवेदी (दिन्)—पुं० [सं० प्रति√विद्+णिच्+णिनि] १. वह जो प्रतिवेदन तैयार करता हो। २. वह जो समाचार-पत्रों में छपने के लिए समाचार लिखकर भेजता हो। (रिपोर्टर) वि० प्रतिवेदन-संबंधी।

प्रतिवेश—पुं० [सं० प्रति√विश्+घञ्] १. अपने घर के अगल-बगल या आस-पास का स्थान। पड़ोस। २. घर के आस-पास या सामने के मकान। पड़ोस। ३. किसी के अगल-बगल या आस-पास में रहने की अवस्था या भाव।

प्रतिवेशी (शिन्)—पुं० [सं० प्रतिवेश+इनि] प्रतिवेश अर्थात् पड़ोस में रहनेवाला व्यक्ति। पड़ोसी।

प्रतिवेश्म—पुं० [सं० प्रा० स०] पड़ोस या पड़ोसी का घर।

प्रतिवेश्य—पुं० [सं० प्रतिवेश+यत्] पड़ोसी।

प्रतिवैर—पुं० [सं० प्रा० स०] १. वैर के बदले में किया जानेवाला वैर। २. वैर का प्रतिकार।

प्रतिव्यूह—पुं० [सं० प्रा० स०] शत्रु के विरुद्ध की जानेवाली व्यूह-रचना या मोर्चेबंदी।

प्रतिशंका—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. किसी शंका के उत्तर में की जाने-वाली दूसरी शंका। २. ऐसी शंका जो बराबर बनी रहे।

प्रतिशत—अव्य० [सं० अव्य० स०] हर सैकड़े के हिसाब से। हर सौ पर। फी सदी। (पर सेन्ट)

प्रतिशतक—पुं० [सं०] वह अनुपात जो प्रति सैकड़े के हिसाब से ठीक किया गया हो। सौ के हिसाब से लगाया जानेवाला लेखा या बैठाया जानेवाला पड़ता। (परसेन्टेज)

प्रतिशब्द—पुं० [सं० प्रा० स०] १. पर्याय। २. प्रतिध्वनि। गूंज।

प्रतिशयन—पुं० [सं० प्रति√शी (सोना)+ल्युट्—अन्] किसी मनोरथ की सिद्धि के लिए किसी देवता के समक्ष निराहार पड़े रहने की अवस्था या भाव। धरना।

प्रतिशयित—भू० कृ० [सं० प्रति√शी (सोना)+क्त] जो प्रतिशयन कर रहा हो या धरना दे रहा हो।

प्रतिशासन—पुं० [सं० प्रति√शास् (शासन करना)+ल्युट्—अन] १. किसी को बुलाकर किसी काम के लिए कहीं भेजना। २. ऐसा शासन जिसमें शासक कोई वैरी या शत्रु हो।

प्रतिशिष्य—पुं० [सं० अव्या० स०] शिष्य का शिष्य।

प्रतिशीत—वि० [सं० प्रति√श्या (गति)+क्त] १. पिघला हुआ। २. तरल। चूता हुआ।

प्रतिशोध—पुं० [सं० प्रा० स०] किसी के द्वारा कोई अनिष्ट होने पर उसके बदले में उसके साथ किया जानेवाला वैसा ही अनिष्ट व्यवहार। बदला। प्रतिकार। (रिवेंज)

प्रतिश्या—स्त्री० [सं० प्रति√श्यै+अङ्—टाप्] प्रतिश्याय।

प्रतिश्यान—पुं० [सं० प्रति√श्यै+अन]=प्रतिश्याय।

प्रतिश्याय—पुं० [सं० प्रति√श्यै+घञ्] १. जुकाम या सरदी नामक रोग। २. पीनस नामक रोग।

प्रतिश्रम—पुं० [सं० प्रति√श्रम् (आयास करना)+घञ्) परिश्रम। मेहनत।

प्रतिश्रय—पुं० [सं० प्रति√श्रि+अच्] १. आश्रम। २. सभा। ३. जगह। स्थान। ४. निवास-स्थान। ५. यज्ञशाला।

प्रतिश्रव—पुं० [सं० प्रति√श्रु (सुनना)+अप्] १. प्रतिज्ञा। २. प्रतिध्वनि। गूंज।

प्रतिश्रवण—पुं० [सं० प्रति√श्रु+ल्युट्—अन] १. अच्छी तरह से सुनना। २. प्रतिज्ञा करना।

प्रतिश्रित—पुं० [सं० प्रति√श्रि+क्त] आश्रय-स्थान।

प्रतिश्रुत्—स्त्री० [सं० प्रति√श्रु+क्विप्, तुक्] प्रतिशब्द। प्रतिध्वनि।

प्रतिश्रुत—भू० कृ० [सं० प्रति√श्रु+क्त] १. अच्छी तरह सुना हुआ। २. माना या स्वीकृत किया हुआ। ३. (विषय) जिसके सम्बन्ध में कोई प्रतिज्ञा की गई हो या वचन दिया गया हो। ४. (व्यक्ति) जिसने किसी बात की कोई प्रतिज्ञा की हो अथवा किसी बात की जिम्मेदारी ली हो।

प्रतिश्रुति—स्त्री० [सं० प्रति√श्रु+क्तिन्] १. प्रतिध्वनि। २. किसी बात के लिए दिया जानेवाला वचन। (प्रामिस) ३. इस बात की जिम्मेदारी कि कोई चीज या बात ऐसी ही है इससे भिन्न, विपरीत या अन्यथा नहीं है। (गारन्टी)

प्रतिश्रोता (तृ)—वि० पुं० [सं० प्रति√श्रु+तृच्] १. अनुमति देनेवाला। २. मंजूर करनेवाला। ३. किसी बात या विषय की प्रतिश्रुति करनेवाला।

प्रतिषिद्ध—भू० कृ० [सं० प्रति√सिध् (गति)+क्त] (कार्य या बात) जिसे करने से किसी को रोका गया हो।

प्रतिषेद्धा (द्धृ)—पुं० [प्रति√सिध्+तृच्] =प्रतिषेधक।

प्रतिषेध—पुं० [सं० प्रति√सिध्+घञ्] १. निषेध। मनाही। २. खंडन। ३. साहित्य में एक अर्थालंकार जिसमें चमत्कार-पूर्ण ढंग से प्रसिद्ध अर्थ का निषेध किया जाता है। उदा०—मोहन कर मुरली नहीं है कछु बड़ी बलाय। यहाँ मुरली का निषेध किया गया है।

प्रतिषेधक—वि० [सं० प्रति√सिध्+णिच्+ण्वुल्—अक] (आज्ञा, कथन आदि) जिसमें या जिसके द्वारा किसी प्रकार का प्रतिषेध हो। (प्राहिबिटरी)

पुं० वह जो प्रतिषेध करे। (प्राहिबिटर)

प्रतिषेधन—पुं० [सं० प्रति√सिध्+णिच्+ल्युट्—अन] प्रतिषेध करने की क्रिया या भाव।

प्रतिषेध-लेख—पुं० [ष० त०] आज-कल विधिक क्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय की वह लिखित आज्ञा जो किसी को अन्तरिम काल में या अन्तिम निर्णय होने तक कोई काम करने से रोकने के लिए दी जाती है। (रिट आफ प्रोहिबिशन)

प्रतिषेधाधिकार—पुं० [प्रतिषेध-अधिकार, ष० त०] किसी शासक, संसद आदि को प्राप्त वह संवैधानिक अधिकार जिससे वह शासन के किसी अन्य अंग की आज्ञा, निर्णय, प्रस्ताव आदि अमान्य या रद्द कर सकता है। निषेधाधिकार। (वीटो)

प्रतिषेधोपमा—स्त्री० [सं० प्रतिषेध-उपमा, ष० त०] उपमालंकार का एक भेद जिसमें कुछ प्रतिषेधक तत्त्व होता है।

प्रतिष्टंभ—पुं० [सं० प्रति√स्तम्भ् (रोकना)+घञ्] [भू० कृ० प्रतिष्टब्ध] १. स्तब्ध या निश्चेष्ट होने या करने की क्रिया या भाव। २. बाधा।

प्रतिष्ठ—वि० [सं० प्रति√स्था (ठहरना)+क] प्रसिद्ध। प्रख्यात। मशहूर।

प्रतिष्ठा—स्त्री० [सं० प्रति√स्था+अङ्+टाप्] १. किसी चीज का कहीं अच्छी तरह रखा या स्थापित किया जाना। स्थापन। जैसे—मन्दिर में मूर्ति की प्रतिष्ठा; देव-मूर्त्ति में की जानेवाली प्राण-प्रतिष्ठा। २. ठहराव। स्थिति। ३. जगह। स्थान। ४. मान-मर्यादा। इज्जत। ५. आदर। सत्कार। ६. प्रख्याति। प्रसिद्धि। ७. कीर्ति। यश। ८. यश की प्राप्ति। ९. देह। शरीर। १०. पृथ्वी। ११. व्रत का उद्यापन। १२. चार वर्णों के वृत्तों की संज्ञा। १३. एक प्रकार का छन्द।

प्रतिष्ठान—पुं० [सं० प्रति√स्था+ल्युट्—अन] १. प्रतिष्ठित या स्थापित करने की क्रिया या भाव। बैठाना। स्थापन। २. मन्दिर आदि में देव-मूर्ति की स्थापना। ३. उपाधि। पदवी। ४. जड़। मूल। ५. जगह। स्थान। ६. व्रत आदि की समाप्ति पर किया जानेवाला कृत्य। ७. दे० 'प्रतिष्ठानपुर'। ८. दक्षिण भारत का एक प्राचीन नगर जिसका आधुनिक नाम पैठण है।

प्रतिष्ठानपुर—पुं० [सं० ष० त०] १. गंगा और यमुना के संगम पर बसी हुई झूसी नामक बस्ती का पुराना नाम। २. गोदावरी के तट पर महाराष्ट्र देश का एक प्राचीन नगर जहाँ राजा शालिवाहन की राजधानी थी।

प्रतिष्ठापन—पुं० [सं० प्रति+स्था√णिच्, पुक्+ल्युट्—अन] प्रतिष्ठित अर्थात् स्थापित करने की क्रिया या भाव।

प्रतिष्ठापयिता (तृ)—पुं० [सं०, प्रति√स्था+णिच्, पुक्, +तृच्] प्रतिष्ठापन करनेवाला।

प्रतिष्ठापित—भू० कृ० [सं० प्रति+स्था√णिच्, पुक्+क्त] जिसका प्रतिष्ठापन किया गया हो या हुआ हो।

प्रतिष्ठित—भू० कृ० [सं० प्रति√स्था+क्त] १. जिसकी प्रतिष्ठा या इज्जत की गई हो या हुई हो। आदर-प्राप्त। २. जिसकी स्थापना की गई हो। स्थापित। जैसे—मन्दिर में मूर्ति प्रतिष्ठित करना। ३. जो किसी स्थान पर बैठा या बैठाया गया हो। जैसे—आसन पर प्रतिष्ठित।

पुं० विष्णु।

प्रतिष्ठिति—स्त्री० [सं० प्रति√स्था+क्तिन्] स्थापित करने या होने की क्रिया या भाव। प्रतिष्ठान।

प्रतिसंख्या—स्त्री० [सं० प्रति-सम्√ख्या (कहना)+अङ्—टाप्] १. चेतना। २. सांख्य के अनुसार ज्ञान की एक अवस्था या रूप।

प्रतिसंचर—पुं० [सं० प्रति-सम्√चर् (गति)+अप्] पुराणानुसार प्रलय का एक भेद।

प्रतिसंदेश—पुं० [सं० प्रा० स०] संदेश के जवाब में भेजा हुआ संदेश।

प्रतिसंधान—पुं०=अनुसंधान।

प्रतिसंधि—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. वियोग। विछोह। २. अनुसंधान। खोज। तलाश। ३. अन्त। समाप्ति। ४. दो युगों का संधि-काल। ५. भाग्य की प्रतिकूलता। ६. पुनर्जन्म।

प्रतिसंविद्—स्त्री० [सं० प्रा० स०] किसी विषय का सांगोपांग ज्ञान।

प्रतिसंवेदक—वि० [सं० प्रति-सम्√विद् (जानना)+णिच्+ण्वुल्—अक] जिससे किसी के संबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती हो।

प्रतिसंस्कार—पुं० [सं०] [भू० कृ० प्रतिसंस्कृत] १. फिर से किया जानेवाला संस्कार। २. मरम्मत।

प्रतिसंहरण—पुं० [सं०] किसी की दी हुई आज्ञा या किये हुए कार्य या निश्चय को नई आज्ञा या निर्णय से रद्द अथवा नहीं के समान करना। रद्द करना। (रिवोकेशन)

प्रतिसंहार—पुं० [सं० प्रति-सम्√हृ+घञ्] १. समेट लेना। २. त्यागना। ३. किसी वस्तु से दूर रहना। ४. निरर्थक या रद्द करना। मिटाना।

प्रतिसम—वि० [सं० प्रा० स०] १. जो समान हो। २. जो बराबरी या मुकाबले का हो।

प्रतिसमाधान—पुं० [सं० प्रति–सम्-आ√धा+ल्युट्–अन] १. प्रतिकार। बदला। २. इलाज।

प्रतिसर—पुं० [सं० प्रति√सृ (गति)+अच्] १. सेवक। नौकर। २. सेना का पिछला भाग। ३. विवाह के समय पहना जानेवाला कंगन। ४. कंगन नाम का गहना। ५. जादू-टोना करने का मंत्र। ६. घाव का भराव। ७. प्रातःकाल। सवेरा। ८. माला। हार।

प्रतिसरण—पुं० [सं० प्रति√सृ+ल्युट्—अन] किसी के सहारे उठँघने की क्रिया।

प्रतिसर्ग—पुं० [सं० प्रा० स०] १. पुराणानुसार वे सब सृष्टियाँ जो ब्रह्मा के मानस-पुत्रों रुद्र, विराट पुरुष, मनु, यक्ष, मारीचि आदि ने उत्पन्न की थीं। २. प्रलय। ३. पुराणों का वह अंश जिसमें सृष्टि के प्रलय का वर्णन है।

प्रतिसव्य—वि० [सं०प्रा०स०] १. विरुद्ध आचरण करनेवाला। विरुद्धाचारी। २. प्रतिकूल। विपरीत।

प्रतिसारक—वि० [सं० प्रति√सृ+णिच्+ण्वुल्—अक] प्रतिसरण करनेवाला।

प्रतिसारण—पुं० [सं० प्रति√सृ+णिच् + ल्युट्—अन] १. अलग या दूर करना। हटाना। २. मसूड़े साफ करने के लिए किया जानेवाला मंजन। ३. किसी अंग पर कोई दवा या मरहम लगाकर मलना। ४. वैद्यक में एक प्राचीन प्रक्रिया जिसमें किसी रुग्ण अंग की चिकित्सा के लिए उसे जलाने के लिए घी या तेल से दागा जाता था। ५. आज-कल, घावों और फोड़े-फुन्सियों को धोकर और उन पर दवा लगाकर पट्टी आदि बाँधने की क्रिया। मरहम-पट्टी। (ड्रेसिंग)

प्रतिसारण-शाला—स्त्री० [सं० ष० त०] वह स्थान या कमरा जहाँ रोगियों के घावों आदि का प्रतिसारण या मरहम-पट्टी होती है। (ड्रेसिंग रूम)

प्रतिसारणीय—वि० [सं० प्रति√सृ+णिच् +अनीयर्] १. हटाकर दूसरे स्थान पर ले जाने के योग्य। प्रतिसारण के योग्य। २. (घाव) जिस पर मरहम-पट्टी की जाने को हो या की जानी चाहिए।

पुं० सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार की क्षार-पाक-विधि जो कुष्ठ, भगंदर, दाह, कुष्ठ-व्रण, झाँई, मुँहासे और बवासीर आदि में अधिक उपयोगी होती है।

प्रतिसारी (रिन्)—वि० [सं० प्रति√सृ (गति)+णिनि] उलटी दिशा में जानेवाला।

प्रतिसूर्य—पुं० [सं० प्रा० स०] १. सूर्य का मंडल या घेरा। २. गिरगिट। ३. आकाश में होनेवाला एक प्रकार का उत्पात जिसमें सूर्य के सामने एक और सूर्य निकलता हुआ दिखाई देता है।

प्रतिसृष्ट—भू० कृ० [सं० प्रति√सृज् (भेजना, त्यागना)+क्त] १. भेजा हुआ। प्रेषित। २. जिसका अस्वीकरण या निराकरण हुआ या किया गया हो। ३. मत्त। मतवाला।

प्रतिसेना—स्त्री० [सं० प्रा० स०] विपक्षी की सेना।

प्रतिस्त्री—स्त्री० [सं० प्रा० स०] पराई स्त्री।

प्रतिस्थापन—पुं० [सं० प्रति√स्था+णिच्, पुक्+ ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिस्थापित] १. किसी चीज के न रह जाने, नष्ट हो जाने अथवा हट जाने पर उसके स्थान पर वैसी ही दूसरी चीज रखना। २. किसी व्यक्ति के हट जाने पर उसका काम चलाने के लिए उसके स्थान पर दूसरा व्यक्ति रखना। (सब्स्टिट्यूशन)

प्रतिस्थापित—भू० कृ० [सं० प्रति√स्था+णिच्, पुक् + क्त] काम चलाने के लिए किसी के स्थान पर बैठाया या रखा हुआ। (सब्स्टिट्यूट)

प्रतिस्पर्धा—स्त्री० [सं० प्रति√स्पर्ध् (होड़ लगाना)+अ–टाप्] वह स्थिति जिसमें दो या अधिक व्यक्ति एक दूसरे से किसी काम में आगे निकलने के लिए प्रयत्नशील तथा कटिबद्ध होते हैं। (राइवलरी)

प्रतिस्पर्धी (र्धिन्)—पुं० [प्रति+स्पर्ध्√णिनि] वह जो किसी से प्रतिस्पर्धा करता हो। प्रतिद्वंद्वी। (राइवल)

प्रतिस्राव—पुं० [सं० प्रति√स्रु (बहना)+घञ्] १. एक रोग जिसमें नाक में से पीला या सफेद रंग का बहुत गाढ़ा कफ निकलता है। २. पीले या सफेद रंग का उक्त कफ।

प्रतिस्वन—पुं० [सं० प्रा० स०] प्रतिशब्द। ध्वनि।

प्रतिस्वर—पुं० [सं० प्रा० स०] प्रतिशब्द।

प्रतिहंता (तृ)—वि० [सं० प्रति√हन् (हिंसा)+तृच्] १. रोकनेवाला। बाधक। २. मुकाबले में खड़ा होनेवाला।

प्रतिहत—भू० कृ० [सं० प्रति√हन्+क्त] १. जिसे कोई ठोकर या आघात लगा हो। २. जिसके सामने कोई बाधा या विघ्न हो। ३. हटाया हुआ। ४. फेंका हुआ। ५. गिरा हुआ। ६. निराश।

प्रतिहति—स्त्री० [सं० प्रति√हन् +क्तिन्]=प्रतिहनन।

प्रतिहनन—पुं० [सं० प्रति√हन्+ल्युट्—अन] १. किसी हनन करनेवाले को मार डालना। २. आघात के बदले में आघात करना। प्रतिघात।

प्रतिहरण—पुं० [प्रति√हृ (हरण करना)+ल्युट्—अन] १. विनाश। बरबादी। २. निवारण।

प्रतिहर्ता (र्तृ)—वि० [सं० प्रति√हृ+तृच्] प्रतिहरण या विनाश करनेवाला।

पुं० यज्ञ के १६ ऋत्विजों में से बारहवाँ ऋत्विज।

प्रतिहस्त—पुं० [सं० ब० स०] १. वह जो किसी के न होने की दशा में उसके स्थान पर हो या रखा गया हो। २. प्रतिनिधि।

प्रतिहस्ताक्षरण—पुं० [सं० प्रतिहस्ताक्षर+ णिच् + ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिहस्ताक्षरित] किसी के हस्ताक्षर का अनुमोदन या समर्थन करने के लिए किसी बड़े अधिकारी का भी उसके साथ हस्ताक्षर करना। (काउन्टर-साईनिंग)

प्रतिहस्ताक्षरित—भू० कृ० [सं० प्रतिहस्ताक्षर, प्रा० स०,+इतच्] जिस पर किसी के हस्ताक्षर को साक्षीकृत करने के लिए किसी बड़े अधिकारी ने हस्ताक्षर किये हों। (काउन्टरसाइन्ड)

प्रतिहार—पुं० [सं० प्रति√हृ+अण्] [भाव० प्रतिहारत्व, स्त्री० प्रतिहारी] १. प्राचीन काल का एक राजकर्मचारी जो सदा राजाओं के पास रहा करता था और राजाओं के संदेश लोगों तक पहुँचाता था। २. द्वारपाल। दरबान। ३. चोबदार। ४. ऐंद्रजालिक। जादूगर। ५. सामवेद गान का एक अंग। ६. दो दलों या व्यक्तियों में होनेवाली वह सन्धि या समझौता जिसमें यह निश्चय होता है कि पहले हम तुम्हारा अमुक काम कर देते हैं; पर इसके उपरान्त तुम्हें भी हमारा अमुक काम करना पड़ेगा।

प्रतिहारक—पुं० [सं० प्रति√हृ+ण्वुल्—अक] १. इंद्रजाल दिखानेवाला। बाजीगर। २. वह जो प्रतिहार नामक सामक गान करता हो।

प्रतिहारण—पुं० [प्रति√हृ+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रतिहारित] १. द्वार। दरवाजा। २. द्वार में प्रवेश करने की अनुमति। ३. द्वार पर पहुँचकर किया जानेवाला स्वागत।

प्रतिहारत्व—पुं० [सं० प्रतिहार+त्व] ड्योढ़ीदारी। प्रतिहार या द्वारपाल का काम या पद।

प्रतिहारित—भू० कृ० [सं० प्रति√हृ+णिच्+क्त] जिसका स्वागत किया गया हो।

प्रतिहारी (रिन्)—पुं० [सं० प्रति√हृ+णिनि] [स्त्री० प्रतिहारिणी] द्वारपाल। दरबान।

†स्त्री० वह स्त्री जो प्राचीनकाल में राजाओं के यहाँ प्रतिहार का काम करती थी।

प्रतिहार्य—पुं० [सं० प्रति√हृ+ण्यत्] इंद्रजाल। बाजीगरी।

प्रतिहिंसा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] हिंसा के बदले में की जानेवाली हिंसा।

प्रतिहित—भू० कृ० [सं० प्रति√धा (रहना)+क्त, हि-आदेश] १. रखा हुआ। २. जमाया या स्थापित किया हुआ।

प्रतीक—वि० [सं० प्रति+कन्, नि० दीर्घ] १. जो किसी ओर अग्रसर या प्रवृत्त किया गया हो। किसी तरफ बढ़ाया हुआ। २. उलटा या विपरीत रूप में लाया हुआ। ३. जो अनुकूल न हो। प्रतिकूल। विरुद्ध। ४. जो उलटे क्रम से चल रहा हो। प्रतिलोम। विलोम।

पुं० १. अंग। अवयव। २. अंश। भाग। ३. मुख। मुँह। ४. आगे या सामने का भाग। सामना। ५. आकृति। रूप। सूरत। ६. किसी वस्तु के अनुरूप बनाई हुई वैसी ही दूसरी वस्तु। प्रतिरूप। ७. प्रतिमा। मूर्ति। ८. वह गोचर या दृश्य तथ्य या वस्तु जो किसी अगोचर, अदृश्य या अप्रस्तुत तथ्य या वस्तु के ठीक या बहुत-कुछ अनुरूप होने के कारण उसके गुण-रूप का परिचय कराने के लिए उसका प्रतिनिधित्व करती हो। (सिम्बल) जैसे—देव-मूर्त्ति ईश्वर का प्रतीक है। ९. साहित्य में वह बात या वस्तु जो अपने आकस्मिक सादृश्य, अभिसमय अथवा तर्क-संगत संबंध के आधार पर किसी दूसरी बात या वस्तु या स्थान ग्रहण करती हो। (सिम्बल) १०. कविता या उसके किसी चरण अथवा किसी वाक्य का वह पहला शब्द जिसका उपयोग किसी को उस कविता, चरण या वाक्य का स्मरण कराने के लिए किया जाता है। ११. वसु के पुत्र और ओघवान् के पिता का नाम। १२. मरु के पुत्र का नाम। १३. परवल।

प्रतीक-कथा—स्त्री० [सं०] कथा का वह प्रकार या भेद जिसमें गुण, प्रवृत्ति, भाव आदि अमूर्त तत्त्वों को पात्र मानकर और उन्हें शरीरधारी मानव का रूप देकर उनसे आचरण या व्यवहार कराये जाते हैं। (एलिगोरी) जैसे 'प्रसाद' कृत 'कामना' और 'एक घूँट'।

प्रतीक-भाषा—स्त्री० [सं० ष० त०] ऐसी भाषा जिसमें कुछ शब्द दूसरी संज्ञाओं के प्रतीक रूप में (उनके स्थान पर) प्रयुक्त होते हैं। जैसे—हठ-योग की प्रतीक भाषा में 'सखी' का अर्थ 'सुरति' होता है।

प्रतीक-वाद—पुं० [सं० ष० त०] आज-कल कला और साहित्य के क्षेत्र में अभिव्यंजना की वह विशिष्ट प्रणाली अथवा उस प्रणाली से संबंध रखनेवाला मूल तथा स्थूल सिद्धान्त जिसके अनुसार प्रतीकों के आधार पर भावों, वस्तुओं, विषयों आदि का बोध कराया जाता है। (सिम्बलिज्म)

प्रतीक-वादी (दिन्)—वि० [सं० प्रतीक-वाद+इनि] प्रतीक-वाद सम्बन्धी। प्रतीक-वाद का।

पुं० प्रतीकवाद का अनुयायी, पोषक या समर्थक।

प्रतीकात्मक—वि० [सं० प्रतीक-आत्मन्, ब० स०, कप्] १. जो प्रतीक या प्रतीकों से संबद्ध हो। २. (साहित्यिक रचना) जिसमें प्रतीकों की सहायता से भावों, वस्तुओं, विषयों आदि का बोध कराया गया हो।

प्रतीकानुक्रमणिका—स्त्री० [सं० प्रतीक-अनुक्रमणिका, ष० त०] किसी व्यक्ति, ग्रन्थ या काव्य-संग्रह में आये हुए छन्दों या पद्यों के प्रतीकों की अक्षर-क्रम से लगी हुई सूची।

प्रतीकार—पुं० [सं० प्रति√कृ+घञ्, दीर्घ] बदला। प्रतिकार।

प्रतीकार्य—वि० [सं० प्रति√कृ+ण्यत्, दीर्घ] जिसका प्रतिकार हो सकता हो या किया जाने को हो।

प्रतीकोपासना—स्त्री० [सं० प्रतीक-उपासना, ष० त०] प्रतीकों के आधार पर ईश्वर या ब्रह्मा की की जानेवाली उपासना।

प्रतीक्षक—वि० [सं० प्रति√ईक्ष् (देखना)+ण्वुल्—अक] १. प्रतीक्षा करने या आसरा देखने वाला। किसी का रास्ता देखने या बाट जोहनेवाला। २. पूजा करनेवाला। पूजक।

प्रतीक्षण—पुं० [सं०] [भू० कृ० प्रतीक्षित] प्रतीक्षा करने की क्रिया या भाव। बाट जोहना। आसरा देखना।

प्रतीक्षा—स्त्री० [सं० प्रति√ईक्ष्+अ+टाप्] १. वह स्थिति जिसमें कोई उत्सुकतापूर्वक किसी आनेवाले व्यक्ति या वस्तु की बाट जोहता या रास्ता देख रहा होता है। इंतजार। इंतजारी। जैसे—वे डाकिये की प्रतीक्षा में हैं। २. किसी का भरण-पोषण करना। ३. पूजा।

प्रतीक्षागृह—पुं०=प्रतीक्षालय।

प्रतीक्षालय—पुं० [सं० प्रतीक्षा-आलय, ष० त०] १. वह स्थान जहाँ पर यात्री लोग देर से आनेवाले यानों की प्रतीक्षा में ठहरते या रुकते हैं। २. किसी अधिकारी, बड़े आदमी आदि से मिलनेवालों के लिए बैठकर, प्रतीक्षा करने का कमरा या घर। (वेटिंग रूम)

प्रतीक्षित—भू० कृ० [सं० प्रति√ईक्ष्+क्त] १. जिसकी प्रतीक्षा की गई हो अथवा की जा रही हो। २. जिसका यथेष्ट ध्यान रखा गया हो। ३. पूजित।

प्रतीक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० प्रति √ईक्ष्+णिनि]=प्रतीक्षक।

प्रतीक्ष्य—वि० [सं० प्रति√ईक्ष्+ण्यत्] जिसकी प्रतीक्षा की जाय या की जा सके।

प्रतीची—स्त्री० [सं० प्रत्यच्+ङीप्] पश्चिम (दिशा)।

प्रतीचीन—वि० [सं० प्रत्यच्+ख—ईन] १. पश्चिम संबंधी। पश्चिम का। २. जो अभी या भविष्य में होने को हो। ३. जिसने मुँह फेरकर दूसरी ओर कर लिया हो। पराङ्मुख। ४. पीछे से आनेवाला।

प्रतीचीश—पुं० [सं० प्रतीची-ईश, ष० त०] १. पश्चिम दिशा के स्वामी, वरुण। २. समुद्र। सागर।

प्रतीच्छक—पुं० [सं० प्रति-इच्छा, ब० स०, कप्] ग्राहक। (मनु०)

†वि०=प्रतीक्षक।

प्रतीच्य—वि० [सं० प्रतीची+यत्] १. पश्चिम-संबंधी। २. पश्चिम में होने या रहनेवाला।

प्रतीच्या—स्त्री० [सं० प्रतीच्य+टाप्] पुलस्त्य की माता।

प्रतीत—वि० [सं० प्रति√इ (गति)+क्त] [भाव० प्रतीति] अटकल, अनुमान, विश्वास आदि के आधार पर जान पड़नेवाला या जान पड़ा हुआ। जैसे—ऐसा प्रतीत होता था कि वह अभी तक हमारे अनुकूल ही होगा। २. प्रसिद्ध। विख्यात। ३. प्रसन्न और सन्तुष्ट।

प्रतीति—स्त्री० [सं० प्रति√इ+क्तिन्] १. प्रतीत होने की क्रिया या भाव। २. जानकारी। ज्ञान। ३. किसी बात या विषय के सम्बन्ध में होनेवाला दृढ़ निश्चय या विश्वास। यकीन। ४. प्रसन्नता। हर्ष। ५. आदर। सम्मान।

प्रतीत्य—पुं० [सं० प्रति√इ+क्यप्] सांत्वना।

प्रतीत्य-समुत्पाद—पुं० [सं० ष० त०] बौद्धों के अनुसार अविद्या, संस्कार विज्ञान, नामरूप, षडायतन, स्पर्श, वेदना, तृष्णा, उपादान, भय, जाति और दुःख ये बारहों पदार्थ जो उत्तरोत्तर संबद्ध हैं और क्रमात् एक दूसरे से उत्पन्न होते हैं।

प्रतीनाह—पुं० [सं० प्रति√नह् (बाँधना)+घञ्] झंडा।

प्रतीप—वि० [सं० प्रति-आप्, ब० स०,+अ, ईत्व] १. क्रम के विचार से उलटा। विलोम। २. प्रतिकूल। विरुद्ध। ३. पिछड़ा हुआ। ४. पीछे की ओर चलने या होने वाला। जैसे—प्रतीप गति। ५. रुचि के विरुद्ध। अप्रिय। ६. हठी। ७. बाधक। ८. विरोधी। ९. उद्दंड। उद्धत।

क्रि० वि० विपरीत अवस्था में। उलटे। उदा०—फाड़ सुनहली साड़ी उसकी तू हँसती क्यों अरी प्रतीप।—प्रसाद।

पुं० १. एक प्रसिद्ध राजा जो शान्तनु के पिता और भीष्म के प्रपिता थे। २. साहित्य में एक प्रसिद्ध अलंकार जिसमें प्रसिद्ध उपमान का अपकर्ष दिखलाने के लिए उसे उपमेय रूप में वर्णित किया जाता और इस प्रकार वर्णनीय उपमेय का निरादर किया जाता है। इसके पाँच भेद माने गये हैं जो प्रथम, द्वितीय आदि विशेषणों से युक्त होते हैं।

प्रतीपक—वि० [सं० प्रतीप√कन्] विरुद्ध। प्रतिकूल।

प्रतीप-गमन—पुं० [सं० कर्म० स०] पीछे की ओर जाना।

प्रतीप-गामी (मिन्)—वि० [सं० प्रतीप√गम्+णिनि] पीछे की ओर जानेवाला।

प्रतीप-दर्शनी—स्त्री० [सं० प्रतीप√दृश् (देखना)+णिनि] औरत। स्त्री।

प्रतीपादन—पुं० [सं०] १. लौटकर फिर पहले स्थान पर आना। प्रतिगमन। २. मनोविज्ञान में, वह स्थिति जिसमें किसी अप्रिय या कष्टदायक मनोदशा से छूटकर मन फिर अपनी पहलेवाली स्वाभाविक स्थिति में आता है। (रिग्रेशन)

प्रतीपी (पिन्)—वि० [सं० प्रतीप+इनि] प्रतिकूल। विरुद्ध।

प्रतीपोक्ति—स्त्री० [सं० प्रतीप-उक्ति, कर्म० स०] किसी के कथन के विरुद्ध कही जानेवाली बात। खंडन।

प्रतीयमान—वि० [सं० प्रति√इ (गति)+शानच्] १. जिसकी प्रतीति हो रही हो। २. जो ध्यान या समझ में आ रहा हो। ३. (रूप) जो ऊपर से दिखाई देता या प्रतीत होता हो। ४. (रूप) जो वास्तविक से भिन्न होने पर भी देखने में बहुत-कुछ वास्तविक-सा जान पड़ता हो। (एपेरेन्ट) ५. (अर्थ) जो ध्वनि, व्यंग्य आदि के रूप में निकलता हो। ६. अभिप्राय या आशय के रूप में जान पड़नेवाला। उद्देश्य के रूप में जान पड़नेवाला। (पर्पटेड)

प्रतीयमानतः—अव्य० [सं० प्रतीयमान+तस्] (ज्ञान या प्रतीति के संबंध में) प्रतीयमान के रूप में। ऊपर या बाहर से देखने पर। (एपेरेन्टली)

प्रतीर—पुं० [सं० प्र√तीर् (पार जाना)+क] किनारा। तट। तीर।

प्रतीवाप—पुं० [सं० प्रति√वप् (बोना)+घञ्, दीर्घ] १. वह दवा जो पीने के लिए काढ़े आदि में मिलाई जाय। २. दैवी उत्पात या उपद्रव। ३. फेंकना। क्षेपण। ४. किसी चीज का रूप बदलने के लिए उसे किसी दूसरी चीज में मिलाना।

प्रतीवेश—पुं० [सं० प्रति√विश् (घुसना) +घञ्, दीर्घ]=प्रतिवेश।

प्रतीवेशी (शिन्)—पुं० [सं० प्रति√विश्+णिनि, दीर्घ] =प्रतिवेशी।

प्रतीहार—पुं० [सं० प्रति√हृ (हरण करना)+अण्, दीर्घ]=प्रतिहार।

प्रतीहारी (रिन्)—पुं० [सं० प्रति√हृ+णिनि, दीर्घ]=प्रतिहारी।

प्रतुद्—पुं० [सं० प्र√तुद् (व्यथित होना)+क्] चोंच से तोड़कर अपना भक्ष्य खानेवाले पक्षियों की संज्ञा।

प्रतूर्ण—वि० [सं० प्र√त्वर् (वेग)+क्त] वेगवान।

प्रतूलिका—स्त्री० [सं० प्र-तूल, ब० स०, कप्] तोशक। गद्दा।

प्रतोद—पुं० [सं० प्र√तुद्+घञ्] १. पशु हाँकने की छड़ी। औगी। पैना। २. कोड़ा। चाबुक। ३. एक प्रकार का साम गान।

प्रतोली—स्त्री० [सं० प्र√तुल् (तोलना)+अच्+ङीष्] १. वह चौड़ा रास्ता जो नगर के मध्य से होकर निकला हो। चौड़ी सड़क। राजमार्ग। २. गली। बीथी। ३. वह दुर्ग या द्वार जो नगर की ओर हो। ४. नगर के प्राकार में बना हुआ फाटक। ५. फोड़ों पर बाँधी जानेवाली एक विशिष्ट प्रकार की पट्टी।

प्रतोष—पुं० [सं० प्र√तुष् (प्रीति)+घञ्] १. स्वायंभू—मनु के एक पुत्र। २. परितोष।

प्रतोषना*—स० [सं० परितोषण] १. संतुष्ट करना। २. समझाना-बुझाना।

प्रत्त—वि० [सं० प्र√दा (देना)+क्त,दा=त]=प्रदत्त।

प्रत्न—वि० [सं० प्र+त्नप्] १. प्राचीन। पुराना। २. पहले का। ३. परंपरा से चला आया हुआ।

प्रत्न-जीव-विज्ञान—पुं० [सं० प्रत्न-जीव, कर्म० स०, प्रत्न-जीव-विज्ञान, ष० त०] वह विज्ञान जिसमें बहुत प्राचीन काल के ऐसे जीव-जंतुओं की जातियों, आकृतियों आदि का विवेचन होता है, जो अब कहीं नहीं मिलते। (पेलियन्टॉलोजी)

प्रत्नतत्व—पुं०=पुरातत्व।

प्रत्यंकन—पुं० [सं० प्रति√अंक् (चिह्नित करना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रत्यंकित] दे० 'अनुरेखन'।

प्रत्यंग—पुं० [सं० प्रति-अंग, प्रा० स०] १. शरीर का कोई गौण या छोटा अंग। जैसे—अंग-प्रत्यंग में पीड़ा होना। २. किसी चीज के गौण या छोटे अंग या अंश। जैसे—इस विषय के सभी अंग-प्रत्यंग उन्होंने देख डाले है। ३. ग्रन्थ का अध्याय या परिच्छेद। ४. अस्त्र। ५. एक प्रकार की पुरानी तौल।

प्रत्यंगिरा (रस्)—पुं० [सं०] १. पुराणानुसार चाक्षुष मन्वंतर के अंगि-

रस के पुत्र एक ऋषि का नाम। २. सिरस का पेड़। ३. बिसखोपड़ा नामक जन्तु।

स्त्री० तांत्रिकों की एक देवी।

प्रत्यंचा—स्त्री० [प्रति√अंच् (गति)+क्विप् या विच्,—टाप्] धनुष की डोरी जिसकी सहायता से बाण छोड़ा जाता है। चिल्ला।

प्रत्यंचित—भू० कृ० [सं० प्रति√अंच्+क्त] पूजित। सम्मानित।

प्रत्यंत—पुं० [सं० प्रति-अंत, अव्या० स०] म्लेच्छों के रहने का देश।

प्रत्यंत-पर्वत—पुं० [सं० कर्म० स०] वह छोटा पहाड़ जो किसी बड़े पहाड़ के पास हो।

प्रत्यंतर—पुं० [सं० प्रति+अन्तर] १. किसी अंतर के अंदर होनेवाले कोई दूसरा छोटा या विभागीय अंतर। २. उक्त प्रकार के अंतर की अवधि या काल। जैसे—आज-कल बुध की दशा में राहु का प्रत्यंतर चल रहा है। (फलित ज्योतिष)

प्रत्यक्—क्रि० वि० [सं० प्रति√अंच् (गति)+क्विन्] पीछे।

प्रत्यक्-चेतन—पुं० [सं० कर्म० स०] १. योग के अनुसार वह निर्मल चित्त-वृत्तिवाला व्यक्ति, जिसने आत्म-ज्ञान प्राप्त कर लिया हो। २. अंतरात्मा। ३. परमेश्वर।

प्रत्यक्-पर्णी, प्रत्यक्-पुष्पी—स्त्री० [सं० ब० स०,+ङीप्] दंती वृक्ष। मूसाकानी। २. अपामार्ग। चिचड़ा।

प्रत्यक्ष—वि० [सं० प्रति-अक्षि, अव्य० स०,+अच्] १. जो आँखों के सामने उपस्थित हो तथा स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा हो। २. जिसका ज्ञान इंद्रिय या इन्द्रियों से स्पष्ट रूप में हो रहा हो। जैसे—प्रत्यक्ष झूठा। ३. जिसमें कोई घुमाव-फिराव या पेचीलापन न हो। नियम, परिपाटी आदि के विचार से सीधा। जैसे—प्रत्यक्ष कर। ४. जिसमें किसी बाहरी आधार या साधन का उपयोग न हुआ हो। जैसे—प्रत्यक्ष प्रमाण। ५. सीधे जनता के मतों के आधार पर या अनुसार होनेवाला। जैसे—प्रत्यक्ष निर्वाचन। (डाइरेक्ट, उक्त तीनों अर्थों में)

पुं० चार प्रकार के प्रमाणों में से एक जिसके स्पष्ट होने के कारण किसी प्रकार का आपत्ति या सन्देह न किया जा सके। यह सबसे श्रेष्ठ माना जाता है। जैसे—नित्य ज्वर आना ही उसके रोगी होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

क्रि० वि० आँखों के आगे। सामने।

प्रत्यक्ष कर—पुं० [सं० कर्म० स०] वह कर जो उपभोक्ताओं तथा कर-दाताओं से प्रत्यक्ष रूप से लिया जाता हो, किसी माध्यम से नहीं। (डाइरेक्ट टैक्स)

प्रत्यक्ष ज्ञान—पुं० [सं०] इन्द्रियों के द्वारा होनेवाला किसी वस्तु या विषय का ज्ञान या जानकारी। (पर्सेप्शन)

प्रत्यक्षता—स्त्री० [सं० प्रत्यक्ष+तल्+टाप्] प्रत्यक्ष होने की अवस्था, गुण या भाव।

प्रत्यक्षदर्शी (र्शिन्)—वि० [सं० प्रत्यक्ष√दृश्+णिनि] [स्त्री० प्रत्यक्ष-दर्शिनी] जिसने प्रत्यक्ष रूप से कोई घटना या बात होती हुई देखी हो। साक्षी। (आई-विटनेस)

प्रत्यक्षर—अव्य० [सं० प्रति-अक्षर, अव्य० स०] प्रत्येक अक्षर के विचार से।

प्रत्यक्षरी—स्त्री० [सं० प्रत्यक्षर+अच्+ङीप्] लेखों आदि की अक्षरशः की हुई नकल। प्रतिलिपि।

प्रत्यक्ष-लवण—पुं० [सं० कर्म० स०] वह नमक जो भोजन परोसने के समय किसी चीज में डालने के लिए अतिरिक्त रूप में और अलग दिया जाता है।

प्रत्यक्ष-वाद—पुं० [सं० ष० त०] दार्शनिक क्षेत्र में, यह मत या सिद्धान्त कि जो कुछ इन्द्रियों से प्रत्यक्ष दिखाई देता हो, या जो अनुभूत होता हो, वही ठीक है; उसके सिवा और सब बातें अथवा अज्ञात और अदृश्य कारण आदि मिथ्या या व्यर्थ हैं। (एम्परिसिज़्म)

प्रत्यक्ष-वादी (दिन्)—वि० [सं० प्रत्यक्ष-वाद+इनि] प्रत्यक्ष-वाद सम्बन्धी। प्रत्यक्ष-वाद का।

पुं० वह जो प्रत्यक्ष-वाद का अनुयायी, पोषक या समर्थक हो। वह जो केवल प्रत्यक्ष को प्रमाण मानता हो।

प्रत्यक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० प्रत्यक्ष+इनि] प्रत्यक्षदर्शी।

प्रत्यक्षीकरण—पुं० [सं० प्रत्यक्ष+च्वि, ईत्व,√कृ (करना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रत्यक्षीकृत] १. किसी वस्तु या विषय को ऐसा रूप देना कि वह प्रत्यक्ष हो जाय। २. कोई बात या विषय प्रत्यक्ष रूप से सामने लाना।

प्रत्यगात्मा (त्मन्)—पुं० [सं० प्रत्यक्-आत्मन्, कर्म० स०] व्यापक ब्रह्म। परमेश्वर।

प्रत्यग्र—वि० [सं० प्रति-अग्र, ब० स०] १. हाल का। ताजा। नया। २. शुद्ध किया हुआ। शोधित।

पुं० पुराणानुसार उपरिचर वसु का एक पुत्र।

प्रत्यग्रथ—पुं० [सं०] गंगा और रामगंगा के बीच का प्राचीन जनपद जो 'पंचाल' भी कहलाता था।

प्रत्यनंतर—वि० [सं० प्रति-अनंतर, अव्या० स०] किसी के उपरान्त या उसके स्थान अथवा पद पर बैठनेवाला।

पुं० उत्तराधिकारी।

प्रत्यनीक—पुं० [सं० प्रति-अनीक, अव्य० स०] १. प्रतिपक्षी। विरोधी। २. प्रतिवादी। ३. बाधा। विघ्न। ४. वैरी। दुश्मन। ५. साहित्य में, एक प्रकार का अलंकार जिसमें शत्रु का प्रतिकार या नाश न कर सकने पर उसके पक्षवालों के किये जानेवाले तिरस्कार का उल्लेख होता है। ६. साहित्य में रस संबंधी एक दोष जो उस समय माना जाता है जब एक ही छंद या प्रसंग में शृंगार और वीभत्स अथवा रौद्र और करुण सरीखे परस्पर विरोधी रस एक साथ लाये जाते हैं।

प्रत्यनुमान—पुं० [सं० प्रति-अनुमान, प्रा० स०] तर्क में किया जानेवाला वह अनुमान जिसका उद्देश्य दूसरे के अनुमान को खंडित करना होता है।

प्रत्यपकार—पुं० [सं० प्रति-अपकार, प्रा० स०] अपकार करनेवाले के साथ किया जानेवाला अपकार।

प्रत्यब्द—अव्य० [सं० प्रति-अब्द, अव्य० स०] प्रति वर्ष। हर साल।

प्रत्यभिज्ञा—स्त्री० [सं० प्रति-अभिज्ञा, अव्य० स०] १. ज्ञान प्राप्त करना। जानना। २. पहले से देखे हुए को पहचानना। ३. पहले से देखी हुई चीज की तरह की कोई दूसरी चीज देखकर उसका ज्ञान प्राप्त करना। ४. वह अभेद ज्ञान जिसमें ईश्वर और जीवात्मा दोनों एक माने जाते हैं। ५. दे० 'प्रत्यभिज्ञादर्शन'।

प्रत्यभिज्ञात—भू० कृ० [सं० प्रति-अभि√ज्ञा (जानना)+क्त] जाना या पहचाना हुआ।

प्रत्यभिज्ञा-दर्शन—पुं०[सं० ष० त०] माहेश्वर या शैव संप्रदाय का एक दर्शन जिसमें उसके सब सिद्धान्तों का तर्क-बद्ध निरूपण है और जिसके अनुसार भक्त-वत्सल महेश्वर ही परमेश्वर माने गये हैं।

प्रत्यभिज्ञान—पुं०[सं० प्रति-अभि√ज्ञा+ल्युट्-अन] १. प्रत्यभिज्ञा। २. स्मृति की सहायता से होनेवाला ज्ञान।

प्रत्यभिदेश—पुं०[सं० प्रति-अभिदेश, प्रा० स०] [भू० कृ० प्रत्यभिदिष्ट] जिससे अभिदेश लेना या कुछ जानना चाहें उसका किसी और को अभिदिष्ट करना या किसी दूसरे की ओर संकेत करना। अन्योन्य संदर्भ। (क्रास रेफरेंस) जैसे—कोश में किसी शब्द का अर्थ जानने के लिए उसके आगे किया हुआ किसी दूसरे शब्द का अभिदेश।

प्रत्यभिभूत—वि०[सं० प्रति-अभि√भू (होना)+क्त]=पराभूत।

प्रत्यभियुक्त—भू० कृ०[सं० प्रति-अभि√युज् (जोड़ना)+क्त] जिस पर प्रत्यभियोग लगाया गया हो।

प्रत्यभियोग—पुं०[सं० प्रति-अभि√युज्+घञ्] वह दूसरा अभियोग जो अभियुक्त अपने वादी अथवा अभियोग लगानेवाले पर लगावे।

प्रत्यभिवाद—पुं०=प्रत्यभिवादन।

प्रत्यभिवादन—पुं०[सं० प्रति-अभि√वद्+णिच्+ल्युट्—अन] अभिवादन करनेवाले को उत्तर के रूप में किया जानेवाला अभिवादन।

प्रत्यय—पुं०[सं० प्रति√इ (गति)+अच्] १. किसी के संबंध में होनेवाली विश्वासमय दृढ़ धारणा। (आइडिया) २. प्रमाण। ३. विचार। ख्याल। ४. ज्ञान। ५. आवश्यकता। ६. व्याख्यान। ७. कारण। हेतु। ८. प्रसिद्धि। ९. लक्षण। चिह्न। १०. निर्णय। फैसला। ११. सम्मति। राय। १२. स्वाद। १३. सहायक। मददगार। १४. विष्णु का एक नाम। १५. छंदशास्त्र या पिंगल का वह अंग जिसके द्वारा छंदों के भेद या विस्तार और उनकी संख्याएँ जानी जाती हैं। इसके प्रस्तार, सूची, उद्दिष्ट, नष्ट, पाताल, मेरु, खंडमेरु, पताका और मर्कटी ये नौ भेद माने गये हैं। १६. व्याकरण में वह अक्षर या अक्षर-समूह जो धातुओं अथवा विकारी शब्दों के अंत में लगाकर उनके अर्थों का विकास करता अथवा उनमें कोई विशेषता उत्पन्न करता है। जैसे—ना, ता, पन आदि।

प्रत्यय-पत्र—पुं०[सं० ष० त०] किसी राज्य अथवा उसके सर्व-प्रधान अधिकारी के हस्ताक्षर और मुद्रा से युक्त वह प्रमाण-पत्र जो इस बात का परिचायक होता है कि अमुक व्यक्ति को आधिकारिक रूप से अमुक पद पर नियुक्त किया गया है। (क्रिडेन्शल्स) जैसे—अमेरिका के राजदूत ने आज राष्ट्रपति महोदय की सेवा में अपना प्रत्यय-पत्र उपस्थित किया। किसी व्यक्ति को दिया हुआ वह पत्र या प्रमाण पत्र जो इस बात का परिचायक होता है कि उसे अमुक पद पर काम करने का अधिकार दिया गया है।

प्रत्ययवाद—पुं०[सं० ष० त०] दार्शनिक क्षेत्र में, यह मान्यता या सिद्धान्त कि यह दृश्य जगत् किसी चेतन सत्ता की सृष्टि है, इसलिए मनुष्य को बौद्धिक विचारों का आधार छोड़कर चिरन्तन तथा शाश्वत विचारों का आश्रय लेना चाहिए। आदर्शवाद (आइडियलिज्म)

विशेष—यह मत बौद्धों के विज्ञानवाद से बहुत-कुछ मिलता-जुलता और भौतिकवाद का प्रायः विपर्याय-सा है।

प्रत्ययवादी (दिन्)—वि०[सं० प्रत्ययवाद+इनि] प्रत्ययवाद-सम्बन्धी। प्रत्ययवाद का।
पुं० वह जो प्रत्ययवाद का अनुयायी, पोषक या समर्थक हो।

प्रत्यय-वृत्ति—स्त्री०[सं० ष० त०] भाषा विज्ञान में, वह वृत्ति या विधि जिससे शब्दों के अन्त में प्रत्यय लगाकर नये शब्द बनाये जाते हैं। निष्पत्ति विधि। जैसे—परिवार से पारिवारिक, राज्य से राजकीय आदि शब्द इसी वृत्ति से बने हैं।

प्रत्ययांत—वि०[सं० प्रत्यय-अंत, ब० स०] (शब्द) जिसके अन्त में कोई प्रत्यय लगा हो। प्रत्यय से युक्त शब्द। जैसे—दूकानदार, मिलनसार, लिखावट आदि शब्द प्रत्यांत हैं।

प्रत्ययिक—वि० [सं० प्रात्ययिक] १. प्रत्यय-सम्बन्धी। प्रत्यय का। २. (बात या विषय) जो किसी को इस प्रत्यय या विश्वास पर बतलाया जाय कि वह इसे किसी और पर प्रकट न करेगा। विश्रंभी। विश्वस्त। (कान्फिडेन्शल)

प्रत्ययित—वि० [सं० प्रत्यय+इतच्] १. (व्यक्ति) जिसका प्रत्यय या विश्वास किया गया हो या किया जा सकता हो। २. (विषय) जिस पर प्रत्यय या विश्वास किया गया हो। ३. (शब्द) जिसमें प्रत्यय लगा या लगाया गया हो। ४. दे० 'प्रत्ययिक'।

प्रत्ययी (यिन्)—वि०[सं० प्रत्यय+इनि] १. प्रत्यय या विश्वास करनेवाला। २. 'प्रत्ययिक'।

प्रत्यर्क—पुं०[सं० प्रति-अर्क, प्रा० स०] सूर्य के पास कभी-कभी दिखाई पड़नेवाला सूर्य-मंडल की तरह का एक प्रकाश। प्रतिसूर्य।

प्रत्यर्थ—वि०[सं० प्रति-अर्थ, प्रा० स०] उपयोगी।
पुं० १. उत्तर। जवाब। २. विरोध।

प्रत्यर्थक—पुं०[सं० प्रत्यर्थ+कन्] १. उत्तर। जवाब। ३. विरोध।

प्रत्यर्थिक—पुं०[सं० प्रत्यर्थिन्+कन्]=प्रत्यर्थक।

प्रत्यर्थी (थिन्)—पुं०[सं० प्रति√अर्थ्, (पीड़ित करना)+णिनि] [स्त्री० प्रत्यर्थिनी] १. प्रतिवादी। मुद्दालेह। २. प्रतिस्पर्धा करनेवाला व्यक्ति। प्रतिद्वंद्वी। ३. शत्रु।

प्रत्यर्पण—पुं०[सं० प्रति√ऋ (गति)+णिच्, पुक्, +ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रत्यर्पित] १. वापस करना। लौटाना। २. लिया हुआ अधिक धन उसके मालिक को लौटाना। ३. जिसकी कोई चीज किसी तरह अपने पास आ गई हो उसे वापस करना या उसके स्थान पर वैसी ही दूसरी चीज देना। लौटाना। ४. किसी देश या राज्य के द्वारा दूसरे देश के अपराधी, कैदी या भगोड़े को अपने यहाँ से पकड़कर उस देश या राज्य को लौटाने की क्रिया। (एक्स्ट्राडिशन)

प्रत्यर्पित—भू० कृ०[सं० प्रति√ऋ+णिच्, पुक्, +क्त] लौटाया या वापस किया हुआ।

प्रत्यवरोध—पुं०[सं० प्रति-अव√रुध्+घञ्] बाधा। रुकावट।

प्रत्यवरोधन—पुं०[सं० प्रति-अव√रुध् (रोकना)+ल्युट्—अन] प्रत्यवरोध उत्पन्न करना। बाधा डालना।

प्रत्यवरोह—पुं०[सं० प्रति-अव√रुह्+घञ्] १. अवरोह। उतार। २. सीढ़ी।

प्रत्यवरोहण—पुं० [सं० प्रति—अव√रुह्+ल्युट्—अन] नीचे की ओर आना। उतरना।

प्रत्यवलोकन—पुं०[सं० प्रति-अव√लोक् (देखना)+ल्युट्—अन] पीछे की ओर देखना।

प्रत्यवसान—पुं०[सं० प्रति-अव√सो (समाप्त करना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रत्यवसित] १. भोजन करना। खाना। २. भोजन।

प्रत्यवस्कंद—पुं०[सं० प्रति-अव√स्कन्द् (गति)+घञ्] किसी के द्वारा लगाया हुआ अभियोग इस ढंग से स्वीकार करना कि उसकी गिनती अभियोग में न होने पावे।

प्रत्यवस्थाता (तृ)—पुं०[सं० प्रति-अव√स्था+तृच्] १. प्रतिवादी। २. शत्रु।

प्रत्यवस्थान—पुं०[सं० प्रति-अव√स्था+ल्युट्—अन] १. किसी स्थान से हटाना। २. विरोध। ३. शत्रुता। ४ दे० 'यथापूर्व स्थिति'।

प्रत्यवहार—पुं०[सं० प्रति-अव√हृ (हरण करना)+घञ्] १. वापस लेना। ३. संहार। ४. लड़ते हुए सैनिकों को लड़ने से रोकना। युद्ध स्थगित करना।

प्रत्यवाय—पुं०[सं० प्रति-अव√इ+अच्] १. कम होना। घटना। ह्रास। २. दैनिक विहित कर्मों के न करने से लगनेवाला पाप। ३. बहुत बड़ा उलट-फेर या परिवर्तन। ४. बुरा काम। दुष्कर्म। ५. जो न हो, उसका आविर्भाव न होना। ६. जो हो, उसका न रह जाना। विनाश। नाश।

प्रत्यवेक्षण—पुं०[सं० प्रति-अव√ईक्ष् (देखना)+ल्युट्—अन] १. देख-रेख करना। चौकसी करना। २. ध्यान रखना। ३. किसी काम, चीज या बात का किसी की देख-रेख में रहना या होना। अवधान।

प्रत्यवेक्षा—स्त्री०[सं० प्रति-अव√ईक्ष्+अ+टाप्] =प्रत्यवेक्षण।

प्रत्यष्ठीला—पुं०[सं० प्रति-अष्ठीला, प्रा० स०] सुश्रुत के अनुसार, एक प्रकार का वात रोग जिसमें नाभि के नीचे पेड़ू में एक गुठली-सी हो जाती है, और जिसके फलस्वरूप मल-मूत्र बंद हो जाते हैं।

प्रत्यस्थ—वि०[सं०] जो खींचने या तानने पर बढ़ जाय या लंबा हो जाय परन्तु खिंचाव या तनाव हटने पर फिर ज्यों का त्यों हो जाय। तन्यक। (इलैस्टिक)

प्रत्यस्थता—स्त्री०[सं०] प्रत्यस्थ होने की अवस्था या भाव। तन्यता। (इलैस्टिसिटी)

प्रत्याक्रमण—पुं० [सं० प्रति-आक्रमण, प्रा० स०] आक्रमण होने पर उसके उत्तर या बदले में किया जानेवाला आक्रमण। जवाबी हमला। (काउन्टर अटैक)

प्रत्याख्यात—भू० कृ० [सं० प्रति-आ√ख्या (कहना)+क्त] जिसका प्रत्याख्यान हुआ हो या किया गया हो।

प्रत्याख्यान—पुं०[सं० प्रति-आ√ख्या+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रत्याख्यात] १. किसी कही हुई बात के विरोध में कुछ कहना। २. अस्वीकृत करना। न मानना। ३. किसी कार्य, निश्चय आदि के सम्बन्ध में की जानेवाली आपत्ति या विरोध। (प्रोटेस्ट) ४. निर्णय आदि को सर्वतः या आंशिक रूप में अग्राह्य या अमान्य करना। ५. अनादर या अवज्ञापूर्वक कोई चीज लेने से इन्कार करना या लौटाना। ५. दे० 'अपासन'।

प्रत्यागत—वि०[सं० प्रति-आ√गम् (जाना)+क्त] १. जो कहीं जाकर लौट आया हो। वापस आया हुआ। २. जो पुनः प्राप्त या हस्तगत हुआ हो।

पुं० १. कुश्ती में, एक प्रकार का दाँव या पेच। २. तलवार, लाठी आदि की लड़ाई में एक प्रकार का पैंतरा।

प्रत्यागति—स्त्री०[सं० प्रति-आ√गम्+क्तिन्] वापस आने या होने का भाव। वापसी।

प्रत्यागम—पुं०[सं० प्रति-आ√गम्+अप्] १. वापस आना या लौटना। २. दोबारा या फिर से आना। ३. किसी काम या व्यापार में लगी हुई पूँजी के बदले में मिलनेवाला धन। मुनाफा। लाभ।

प्रत्यागमन—पुं०[सं० प्रति-आ√गम्+ल्युट्—अन] प्रतिगमन।

प्रत्याघात—पुं० [सं० प्रति-आघात, प्रा० स०] १. आघात के बदले में किया जानेवाला आघात। २. टक्कर। ३. आधुनिक राजनीति में (युद्ध से भिन्न) वह कड़ी आर्थिक या राजनीतिक कार्रवाई जो किसी राज्य के साथ अपनी शिकायतें दूर कराने अथवा अपनी किसी क्षति का बदला चुकाने के उद्देश्य से की जाती है। (रेप्रिजल)

प्रत्याचार—पुं० [सं० प्रति-आचार, प्रा० स०] १. किसी प्रकार के आचरण के बदले में किया जानेवाला वैसा ही आचरण या व्यवहार। २. अनुकूल व्यवहार।

प्रत्यातप—पुं० [सं० प्रति-आतप, प्रा० स०] छाया। परछाईं।

प्रत्यादान—पुं० [सं० प्रति-आदान, प्रा० स०] पुनः या दोबारा किसी से कोई चीज लेना।

प्रत्यादित्य—पुं० [प्रति-आदित्य, प्रा० स०] दे० 'प्रतिसूर्य'।

प्रत्यादेश—पुं० [सं० प्रति-आ√दिश्+घञ्] [भू० कृ० प्रत्यादिष्ट] १. आदेश। आज्ञा। २. घोषणा। ३. अस्वीकरण। इनकार। ४. खंडन। ५. ऐसी आकाशवाणी जो चेतावनी के रूप में हो। ६. किसी को मात करने या हराने की क्रिया या भाव।

प्रत्याधान—पुं० [सं० प्रति-आ√धा (धारण करना)+ल्युट्—अन] १. मस्तक। (वेद) २. ऐसा स्थान जहाँ चीजें जमा की जाती हों।

प्रत्यानयन—पुं० [सं० प्रति-आनयन, प्रा० स०] [भू० कृ० प्रत्यानीत] १. किसी को वापस लाना। २. दे० 'प्रत्यर्पण'।

प्रत्यानीत—भू० कृ० [सं० प्रति-आनीत, प्रा० स०] वापस लाया या लौटाया हुआ।

प्रत्यापत्ति—स्त्री० [सं० प्रति-आपत्ति, प्रा० स०] १. पुनरागमन। २. वैराग्य। ३. उत्तराधिकारी के न रहने पर किसी संपत्ति का राज्य के अधिकार में आना। ४. उक्त प्रकार से राज्य को प्राप्त होनेवाली अचल सम्पत्ति। नजूल।

प्रत्यापन्न—वि० [सं० प्रति-आ√पद्+क्त] लौटा या लौटकर आया हुआ।

प्रत्याभास—पुं० [सं० प्रति+आभास] किसी प्रकार के तेज या शक्ति की प्रतिक्रिया के रूप में अथवा फलस्वरूप होनेवाला आभास। जैसे—(क) मन में आत्मा का प्रत्याभास निहित रहता (अथवा लक्षित होता) है। (ख) सूर्य के प्रत्याभास से ही चंद्रमा प्रकाशमान् होता है।

प्रत्याभूति—स्त्री० [सं० प्रति-आ√भू (होना)+क्तिन्] किसी चीज या बात के संबंध में दृढ़ता और निश्चयपूर्वक यह कहना या विश्वास दिलाना कि यह ऐसी ही है या ऐसी ही होगी। (गारंटी)

विशेष—यह कई प्रकार की होती और कई रूपों में की जाती है। यथा—(क) यदि अमुक वस्तु वैसी न होगी जैसी कही या दिखाई गई है तो बदल दी जायगी या ठीक कर दी जायगी। (ख) अमुक काम अमुक प्रकार से ही किया जायगा अथवा होगा; और किसी प्रकार से नहीं। आदि आदि।

प्रत्याभोग—पुं० [सं० प्रति-आभोग, प्रा० स०] १. धन या सम्पत्ति का ऐसा भोग जो उस पर अधिकार प्राप्त होने से पहले ही, केवल उसकी प्राप्ति की आशा या निश्चय होने पर ही आरंभ कर दिया जाय।

प्रत्याम्नाय—पुं० [सं० प्रति-आ√म्ना (अभ्यास)+घञ्] १. तर्क में, वाक्य का पाँचवाँ अवयव। २. प्रतिनिधि या स्थानापन्न।

प्रत्याय—स्त्री० [सं० प्रति-आय, प्रा० स०] १. राजस्व। कर। २. आय; विशेषतः ऐसी आय या लाभ जो किसी काम में कुछ धन लगाने या व्यवस्था आदि करने के बदले में मिलता या प्राप्त होता हो। प्रत्यागम (रिटर्न)

प्रत्यायक—वि० [सं० प्रति√इ+णिच्+ण्वुल्—अक] १. प्रत्यय करने या विश्वास दिलानेवाला। २. जिससे विश्वास उत्पन्न होता है। ३. व्याख्यापित या सिद्ध करनेवाला।

पुं० १. वह पत्र जो इस बात का सूचक होता है कि दूसरा धारक या वाहक अमुक बात के लिए विश्वसनीय है। २. वह परिचायक-पत्र या प्रमाण-पत्र जिसे दिखलाकर राज-प्रतिनिधि विदेशों में अपना अधिकार और पद प्राप्त करते हैं। (क्रिडेन्शल)

प्रत्यायन—पुं० [सं० प्रति√इ+णिच्+ल्युट्—अन] १. विश्वास दिलाने की क्रिया या भाव। २. (वधू को) लिवा ले जाना। ३. विवाह करना। ४. सूर्य का अस्त होना।

प्रत्यायोजन—पुं० [सं० प्रति-आ√युज् (जुटना)+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रत्यायोजित] १. पुनः आयोजन करना। २. दे० 'प्रति-निधायन'।

प्रत्यारंभ—पुं० [सं० प्रति-आरंभ, प्रा० स०] १. फिर से या दोबारा आरंभ होना। २. पुनरारंभ।

प्रत्यारोप—पुं० [सं० प्रति-आरोप, प्रा० स०] वह आरोप जो किसी आरोप के उत्तर या बदले में किया या लगाया जाय। (काउंटर-चार्ज)

प्रत्यालीढ़—पुं० [सं० प्रति-आलीढ़, प्रा० स०] धनुष चलाने के समय बायाँ पैर आगे की ओर और दाहिना पैर पीछे की ओर ले जाकर बैठने की एक मुद्रा।

वि० खाया हुआ।

प्रत्यालोचन—पुं० [सं० प्रति-आलोचन, प्रा० स०] [भू० कृ० प्रत्यालोचित] १. किसी के किए हुए निर्णय या निर्णीत व्यवहार को फिर से देखना कि वह ठीक है या नहीं। (रिव्यू) २. प्रत्यालोचना। (दे०)

प्रत्यालोचना—स्त्री० [सं० प्रति-आलोचना, प्रा० स०] किसी बात या विषय की आलोचना की भी की जानेवाली आलोचना। आलोचना की समीक्षा।

प्रत्यावर्तन—पुं० [सं० प्रति-आ√वृत् (बरतना)+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रत्यावर्तित] १. वापस आना। लौटाना।

प्रत्यावर्तित—भू० कृ० [सं० प्रति-आ√वृत्+णिच्+क्त] जिसका प्रत्यावर्तन हुआ हो या किया गया हो।

प्रत्याशा—स्त्री० [सं० प्रति-आ√अश् (व्याप्ति)+अच्,+टाप्] १. आशा। उम्मीद। भरोसा। २. आज-कल किसी बात के सम्बन्ध में पहले से की जानेवाली ऐसी आशा या उसके सम्बन्ध की कल्पना जिसके घटित होने की बहुत कुछ संभावना हो। प्रवेक्षा। (एन्टिसिपेशन)

विशेष—आशा तो साधारणतः इसी बात की सूचक होती है कि हमारे मन में किसी बात की इच्छा या कामना है; परन्तु प्रत्याशा से यह सूचित होता है कि हमें इस बात का बहुत-कुछ विश्वास है कि हमारी इच्छा या कामना पूरी हो जायगी।

प्रत्याशित—वि० [सं० प्रति-आ√अश्+क्त] जिसकी आशा या अपेक्षा पहले की गई हो। जिसका पहले से अनुमान किया गया हो। (एन्टि-सिपेटेड)

प्रत्याशी (शिन्)—वि० [सं० प्रति-आ√अश्+णिनि] प्रत्याशा अर्थात् आशा करनेवाला।

पुं० १. वह जो किसी पद की प्राप्ति के लिए इच्छुक हो। २. उम्मीद-वार। (कैन्डिडेट)

प्रत्याश्रय—पुं० [सं० प्रति-आश्रय, प्रा० स०] वह स्थान जहाँ आश्रय लिया जाय। पनाह लेने की जगह। आश्रय-स्थल।

प्रत्याश्वासन—पुं० [सं० प्रति-आ√श्वस्+णिच्+ल्युट्—अन] आश्वा-सन के बदले में दिया जानेवाला आश्वासन।

प्रत्यासत्ति—स्त्री० [सं० प्रति आ√सद् (गति)+क्तिन्] १. निकटता। सामीप्य। नजदीकी। २. दे० 'आसक्ति'।

प्रत्यासन्न—वि० [सं० प्रति-आ√सद्+क्त] [भाव० प्रत्यासन्नता] निकट या पास आया हुआ।

प्रत्यासर—पुं० [सं० प्रति-आ√सृ (गति)+अप्] १. सेना का पिछला भाग। सैनिक व्यूह।

प्रत्याहत—भू० कृ० [सं० प्रति-आ√हन् (हिंसा)+क्त] १. हटाया हुआ। २. अस्वीकृत किया हुआ।

प्रत्याहरण—पुं० [सं० प्रति-आ√हृ (हरण करना)+ल्युट्—अन] १. पुनः या वापस लेना। २. हटाना। ३. निग्रह करना। ४. इंद्रियों को विषयों से निवृत्त करना।

प्रत्याहार—पुं० [सं० प्रति-आ√हृ+घञ्] [भू० कृ० प्रत्याहृत] १. पीछे की ओर खींचना या ले जाना। २. आज्ञा, निश्चय वचन आदि का वापस लिया जाना। ३. पाणिनि व्याकरण के अनुसार, वह संक्षिप्त रूप जो किसी सूत्र के प्रथम और अंतिम वर्णों को जोड़कर बनाया जाता है। जैसे—अइउण् सूत्र का प्रत्याहार अण्। ४. योग के आठ अंगों में से एक जिसमें इंद्रियों को सब विषयों से हटाकर एकाग्र किया जाता है।

प्रत्याहूत—वि० [सं० प्रति-आ√ह्वे (बुलाना)+क्त] (व्यक्ति) जिसे वापस बुलाया गया हो।

प्रत्याहृत—भू० कृ० [सं० प्रति-आ√हृ+क्त] १. पीछे खींचा या हटाया हुआ। २. (इंद्रिय) जिसे संयम में रखा गया हो।

प्रत्याह्वान—पुं० [सं० प्रति-आ√ह्वे+ल्युट्—अन] १. किसी दूसरे स्थान पर भेजे हुए व्यक्ति को वापस बुलाना। २. वापस बुलाने के लिए दी जानेवाली आज्ञा। (रिकाल)

प्रत्युक्त—भू० कृ० [सं० प्रति√वच् (बोलना)+क्त] १. जिसका उत्तर दिया गया हो। उत्तरित। २. जिसका उत्तर देकर खंडन किया गया हो।

प्रत्युक्ति—स्त्री० [सं० प्रति√वच्+क्तिन्] उत्तर। जवाब।

प्रत्युच्चार—पुं० [सं० प्रति-उद्√चर् (गति)+णिच्+घञ्] पुनः या दोबारा उच्चारण करना।

प्रत्युज्जीवन—पुं० [सं० प्रति-उद्√जीव् (जीना)+ल्युट्—अन] पुनरुज्जीवन।

प्रत्युत—अव्य० [सं० प्रति-उत, सुप्सुपा स०] १. बल्कि। वरन्। २. इसके विपरीत।

प्रत्युत्क्रम—पुं० [सं० प्रति-उद्√क्रम् (गति)+घञ्] १. युद्ध के समय पहले-पहल किया जानेवाला आक्रमण। २. आक्रमण के बदले में किया जानेवाला आक्रमण। ३. ऐसा गौण कार्य जो किसी मुख्य कार्य की सिद्धि में सहायक हो।

प्रत्युत्तर—पुं० [सं० प्रति-उत्तर, प्रा० स०] किसी से प्राप्त होनेवाले उत्तर के जवाब में उसे दिया जानेवाला उत्तर। (रिज्वाइंडर)

प्रत्युत्थान—पुं० [सं० प्रति-उद्√स्था (ठहरना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रत्युत्थित] १. किसी के स्वागत और सत्कार के लिए खड़े होना। २. विरोध का सामना करने के लिए खड़े होना।

प्रत्युत्पन्न—वि० [सं० प्रति-उद्√पद् (गति)+क्त] १. जो फिर से उत्पन्न हुआ हो। जो पुनः या दोबारा उत्पन्न हुआ हो। २. जो ठीक समय पर उत्पन्न हुआ या सामने आया हो। उपस्थित और वर्तमान। जैसे—प्रत्युत्पन्नमति (जो तुरंत उपयुक्त बात या युक्ति सोच ले)।

प्रत्युदाहरण—पुं० [सं० प्रति-उद्-आ√हृ+ल्युट्—अन] किसी उदाहरण के विरोध में विशेषतः उसका खंडन करने के लिए दिया जानेवाला प्रतिकूल उदाहरण।

प्रत्युद्गमन—पुं० [प्रति-उद्√गम्+ल्युट्—अन] प्रत्युत्थान।

प्रत्युद्गमनीय—वि० [सं० प्रति-उद्√गम्+अनीयर्] १. सामने या पास रखने योग्य। २. सम्मानित किये जाने के योग्य। आदरणीय। पूज्य।

पुं० यज्ञ के समय पहना जानेवाला अधोवस्त्र और उत्तरीय।

प्रत्युद्धरण—पुं० [सं० प्रति-उद्√धृ (रखना)+ल्युट्—अन] गई हुई चीज फिर से प्राप्त करना। कोई चीज पुनः या दोबारा प्राप्त करना।

प्रत्युद्यम—पुं० [सं० प्रति-उद्यम, प्रा० स०] १. वह कार्य जो किसी के विरोध में किया जाय। २. प्रतिकार।

प्रत्युपकार—पुं० [सं० प्रति-उपकार, प्रा० स०] वह उपकार जो किसी के किए हुए उपकार के बदले में किया जाय।

प्रत्युपकारी (रिन्)—पुं० [सं० प्रत्युपकार+इनि] प्रत्युपकार करने अर्थात् उपकार का बदला उपकार द्वारा चुकानेवाला।

प्रत्युपदेश—पुं० [सं० प्रति-उपदेश, प्रा० स०] १. उपदेश के बदले में दिया जानेवाला उपदेश। २. राय के बदले में दी जानेवाली राय।

प्रत्युपपन्न—वि० [सं० प्रति-उपपन्न, प्रा० स०]=प्रत्युत्पन्न।

प्रत्युपमान—पुं० [सं० प्रति-उपमान, प्रा० स०] उपमान को उपमित करनेवाला उपमान। उपमान का उपमान।

प्रत्युष (स्)—पुं० [सं० प्रति√उष्+अस्] प्रभात। प्रातःकाल।

प्रत्यूष—पुं० [सं० प्रति√ऊष्+क] १. प्रभात। तड़का। प्रातःकाल। २. सूर्य। ३. आठ वसुओं में से एक।

प्रत्यूह—पुं० [सं० प्रति√ऊह् (वितर्क करना)+घञ्] बाधा। रुकावट।

प्रत्येक—वि० [सं० प्रति-एक, अव्य० स०] [भाव० प्रत्येकत्व] संख्या के विचार से दो या अधिक इकाइयों, समूहों आदि में से हर एक। जैसे—प्रत्येक कण में ईश्वर व्याप्त है।

प्रत्येकत्व—पुं० [सं० प्रत्येक+त्व] प्रत्येक होने की अवस्था, धर्म या भाव।

प्रत्येक बुद्ध—पुं० [सं०] वह बुद्ध जो एकांत में रहकर केवल अपने कल्याण का उपाय करता हो; लोक-कल्याण की चिंता न करता हो।

प्रथन—पुं० [सं०√प्रथ् (फैलना)+ल्युट्—अन] १. विस्तार करना। २. प्रक्षेपण करना। ३. ऐसा स्थान जहाँ कोई चीज फैलाई जाय। प्रकाश में लाना। ५. घोषणा करना। ६. एक प्रकार का गुल्म।

प्रथम—वि० [सं०√प्रथ्+अमच्] [भाव० प्रथमता] १. क्रम, संख्या, श्रृंखला आदि में जो सबसे आगे या पहले हो। २. जो गुण, महत्त्व, योग्यता आदि में सबसे उत्तम या बढ़कर हो। सर्वश्रेष्ठ। ३. परीक्षा, प्रतियोगिता आदि में जिसने सबसे अधिक अंक प्राप्त किये हों अथवा सबको पराजित किया हो।

क्रि० वि० आगे। पहले।

प्रथमकारक—पुं० [सं० कर्म० स०] व्याकरण में कर्ता कारक।

प्रथमतः—अव्य० [सं० प्रथम√तस्] महत्त्व आदि के विचार से, आगे या पहले। सबसे पहले। (फर्स्टली)

प्रथमता—स्त्री० [सं० प्रथम+तल्+टाप्] १. 'प्रथम' होने की अवस्था या भाव। २. औरों की तुलना में पहला अवसर या स्थान मिलने की अवस्था या भाव। प्राथमिकता (प्रायॉरिटी)

अव्य० साधारण रूप में देखने पर। (प्राइमा-फेसी)

प्रथम-पुरुष—पुं० [सं० कर्म० स०] व्याकरण में वे सर्वनाम जिन्हें वक्ता अपने लिए प्रयुक्त करता है (मध्यम पुरुष तथा अन्य पुरुष से भिन्न)। जैसे—मैं, हम।

प्रथम साहस—पुं० [सं० कर्म० स०] प्राचीन व्यवहारशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का दंड जिसमें २५० पण तक जुरमाना होता था।

प्रथमा—स्त्री० [सं० प्रथम+टाप्] १. मदिरा। शराब। (तांत्रिक) २. व्याकरण में कर्ता कारक।

प्रथमाक्रमण—पुं० [सं० प्रथम-आक्रमण, कर्म० स०] दूसरे पर आक्रमण करने की क्रिया या भाव। अग्रघर्षण। (एग्रेशन)

प्रथमाक्रमणकारी (रिन्)—पुं० [सं० प्रथमाक्रमण√कृ (करना)+णिनि] प्रथम आक्रमण करनेवाला व्यक्ति, दल, पक्ष या राष्ट्र। (एग्रेसर)

प्रथमार्द्ध—पुं० [सं० प्रथम-अर्ध, कर्म० स०] किसी चीज के दो समान खंडों या भागों में से पहलेवाला खंड या भाग। जैसे—यह पुस्तक का प्रथमार्द्ध है।

प्रथमाश्रम—पुं० [सं० प्रथम-आश्रम, कर्म० स०] ब्रह्मचर्याश्रम।

प्रथमी†—स्त्री० [सं० प्रथम+ङीप्]=पृथ्वी।

प्रथमे, प्रथमै*—क्रि० वि० [सं० प्रथम] आरंभ में। पहले। उदा०—प्रथमै गगन कि पुहुमइ प्रथमै—कबीर।

प्रथमेतर—वि० [सं० प्रथम-इतर, पं० त०] पहले के बाद का या उससे भिन्न।

प्रथमोक्त—वि० [सं० प्रथम+उक्त] जो पहले कहा गया हो। पूर्वोक्त।

प्रथमोपचार—पुं० [सं० प्रथम-उपचार, कर्म० स०] दे० 'प्राथमिक उपचार'।

प्रथा—स्त्री० [सं०√प्रथ्+अ+टाप्] १. किसी जाति, समाज आदि में किसी विशिष्ट अवसर पर किसी विशिष्ट ढंग से किया जानेवाला कोई काम। रीति। जैसे—प्रथा के अनुसार विवाह के अवसर पर कन्या पक्षवाले दहेज देते हैं। २. नियम। ३. प्रसिद्धि। ख्याति।

विशेष—पद्धति तो कोई काम करने का ऐसा ढंग या प्रकार है जिसके मूल में किसी कला, विधान या शास्त्र का कोई सर्व-मान्य सिद्धान्त होता है। परिपाटी उक्त प्रकार के तत्त्व से प्रायः रहित या हीन होती है; और किसी चली आई हुई पुरानी रीति मात्र की सूचक होती है। प्रथा इसी परिपाटी का वह उत्कृष्ट और बढ़ा हुआ रूप है जो किसी देश या समाज में सार्विक रूप से मान्य हो चुका हो और जिसका उल्लंघन अनुचित या दूषित माना जाता हो। उदाहरणार्थ—विवाह की प्रथा तो सभी देशों और समाजों में समान रूप से प्रचलित है; परन्तु उसकी पद्धतियाँ सभी देशों और समाजों में एक दूसरे से भिन्न हैं। हाँ, प्रत्येक पद्धति में कुछ अलग-अलग प्रकार की परिपाटियाँ भी हो सकती हैं और होती ही हैं।

प्रथित—भू० कृ० [सं०√प्रथ्+क्त] [स्त्री० प्रथिता] १. लंबा-चौड़ा। विस्तृत। २. प्रसिद्ध। मशहूर।

प्रथिति—स्त्री० [सं०√प्रथ्+क्तिन्] १. विस्तार। २. ख्याति। प्रसिद्धि।

प्रथिमा (मन्)—स्त्री० [सं० पृथु+इमनिच्, प्रथ्-आदेश] स्थूलता। पृथुत्व।

प्रथिमी†—स्त्री०=पृथ्वी।

प्रथिवी—स्त्री० [सं० पृथिवी, पृषो० सिद्धि] पृथ्वी।

प्रथी—स्त्री०=पृथ्वी।

प्रद—वि० [सं० प्र√दा+क] समस्त पदों के अन्त में, (क) देनेवाला। दाता। जैसे—सुखप्रद, फलप्रद। (ख) उत्पन्न करनेवाला। जैसे—तापप्रद।

प्रदक्षिण—वि० [सं० प्रा० स०] १. योग्य। समर्थ। २. चतुर। होशियार। पुं०=प्रदक्षिणा।

प्रदक्षिणा—स्त्री० [प्रा० स०] धार्मिक क्षेत्र में, देवमूर्ति या पवित्र स्थान के प्रति भक्ति और श्रद्धा प्रकट करने के लिए उसके चारों ओर इस प्रकार घूमना या चक्कर लगाना कि वह देवमूर्ति या पवित्र स्थान बराबर दाहिनी ओर रहे। परिक्रमा।

प्रदग्ध—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] बहुत जला हुआ।

प्रदच्छिन*—पुं०=प्रदक्षिण।

प्रदच्छिना†—स्त्री०=प्रदक्षिणा।

प्रदत्त—भू० कृ० [सं० प्र√दा (देना)+क्त] दिया या प्रदान किया हुआ।

प्रदर—पुं० [सं० प्र√दॄ (फाड़ना)+अप्] १. तोड़ने-फोड़ने की क्रिया या भाव। २. तितर-बितर होना। ३. स्त्रियों का एक रोग जिसमें उनके गर्भाशय से सफेद या लाल रंग का लसदार गंदा तरल पदार्थ बहता रहता है। (ल्यूकोरिया) ४. तीर। वाण। ५. दरार।

प्रदर्प—पुं० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक या बढ़ा हुआ दर्प।

प्रदर्श—पुं० [सं० प्र√दृश् (देखना)+घञ्] १. आकृति। रूप। शकल। २. आदेश। आज्ञा।

प्रदर्शक—वि० [सं० प्र√दृश्+णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रदर्शिका] १. प्रदर्शन करनेवाला। २. दिखलानेवाला। ३. पथप्रदर्शक। ४. दे० 'प्रादर्शनिक'।

पुं० १. गुरु। २. दर्शक। ३. सिद्धान्त।

प्रदर्शन—पुं० [सं० प्र√दृश्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० प्रादर्शनिक, भू० कृ० प्रदर्शित] १. लोगों की जानकारी के लिए कोई काम उन्हें दिखलाना। जैसे—बालकों द्वारा व्यायाम प्रदर्शन। २. जनता को अपना असंतोष, दुःख आदि बतलाने तथा उसकी सहानुभूति प्राप्त करने के लिए कर्मचारियों या किसी विशिष्ट वर्ग के व्यक्तियों का सामूहिक रूप से संबद्ध अधिकारियों के अन्याय के विरोध में नारे आदि लगाते हुए निकाला जानेवाला जुलूस। (डिमांस्ट्रेन) ३. दे० 'प्रदर्शनी'।

प्रदर्शनी—स्त्री० [सं० प्रदर्शन+ङीप्] ऐसा स्थान जहाँ विशेष रूप से नई तथा चामत्कारिक चीजों का प्रदर्शन किया जाता है। (एक्सहिबिशन)

प्रदर्शित—भू० कृ० [सं० प्र√दृश्+णिच्+क्त] १. जिसका सार्वजनिक रूप से प्रदर्शन हुआ हो। दिखलाया हुआ। २. प्रदर्शनी में रखा हुआ।

प्रदर्शी (शिन्)—वि० [सं० प्र√दृश्+णिनि] [स्त्री० प्रदर्शिनी] १. जो देखता हो। दर्शक। २. दे० 'प्रदर्शक'।

प्रदल—पुं० [सं० प्र√दल् (रौंदना)+अच्] वाण। तीर।

प्रदाता (तृ)—वि० [सं० प्र√दा (देना)+तृच्] प्रदान करने या देनेवाला। दाता।

पुं० १. बहुत बड़ा दानी। २. इन्द्र। ३. एक विश्वेदेवा।

प्रदान—पुं० [सं० प्र√दा+ल्युट्—अन्] [भू० कृ० प्रदत्त, वि० प्रदेय] १. देने की क्रिया या भाव विशेषतः बड़ों के द्वारा छोटों को दिया जानेवाला दान। २. इस प्रकार दी जानेवाली वस्तु। ३. इनाम। पुरस्कार। ४. कन्या-दान। ५. अंकुश।

प्रदानक—पुं० [सं० प्रदान+कन्] १. दान। २. उपहार। भेंट। वि०, पुं० दे० 'प्रदाता'।

प्रदानी†—वि०=प्रदायक।

प्रदाय—पुं० [सं० प्र√दा+घञ्] १. प्रदान की हुई वस्तु। २. उपहार। भेंट।

प्रदायक—वि० [सं० प्र√दा+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रदायिका] १. प्रदान करनेवाला। २. समस्त पदों के अन्त में, देनेवाला। जैसे—सुखप्रदायक।

प्रदायी (यिन्)—वि० [सं० प्र√दा+णिनि] [स्त्री० प्रदायिनी] प्रदायक।

प्रदाह—पुं० [सं० प्रा० स०] १. ज्वर आदि के कारण अथवा और किसी कारण शरीर में होनेवाली जलन। दाह। २. किसी प्रकार का मानसिक कष्ट या ताप। ३. विनाश। बरबादी।

प्रदिक्—स्त्री०=प्रदिशा।

प्रदिशा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] दो मुख्य दिशाओं के बीच की दिशा। कोण। विदिशा।

प्रदिष्ट—भू० कृ० [सं० प्र√दिश् (बताना)+क्त] १. दिखाया

हुआ। २. बताया हुआ। ३. नियत किया हुआ। ठहराया हुआ। ४. जिसके विषय में प्रदेशन हुआ हो। आदिष्ट। (प्रेसक्राइब्ड) ५. सुभीते के लिए खंड या भाग के रूप में लोगों में बांटा या उन्हें दिया हुआ। नियत। (एलॉटेड)

प्रदीप—वि० [सं० प्र√दीप् (चमकना)+अच्] प्रकाश करने या देनेवाला। पुं० १. दीपक। दीया। २. प्रकाश। रोशनी। ३. संपूर्ण जाति का एक राग जिसके गाने का समय तीसरा प्रहर है। किसी किसी ने इसे दीपक राग का पुत्र माना।

प्रदीपक—वि० [सं० प्र√दीप्+णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रदीपिका] १. प्रदीपन करनेवाला। २. प्रकाश या रोशनी करनेवाला। पुं० वैद्यक के अनुसार नौ प्रकार के विषों में से एक प्रकार का भयंकर स्थावर विष। कहते हैं कि इसके सूँघने मात्र से मनुष्य मर जाता है।

प्रदीपकी—स्त्री० [सं० प्रदीपक+ङीष्] संगीत में एक प्रकार की रागिनी।

प्रदीपति—स्त्री०=प्रदीप्ति।

प्रदीपन—पुं० [सं० प्र√दीप्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रदीप्त] १. प्रकाश करने का काम। उजाला करना। २. उज्ज्वल करना। चमकाना। ३. उत्तेजित करना। भड़काना। ४. तीव्र या तेज करना। ५. [प्र√दीप्+णिच्+ल्यु—अन] वह जिससे पेट की अग्नि तीव्र हो, भूख लगे तथा भोजन पचे। ६. प्रदीपक नाम का स्थावर विष।

प्रदीप-न्याय—पुं० [ष० त०] सांख्य का यह मत या सिद्धान्त कि जिस प्रकार आग, तेल और बत्ती के संयोग से प्रदीप या दीया जलता है, उसी प्रकार सत्त्व, रज और तम के सहयोग के शरीर से सब काम होते हैं।

प्रदीपिका—स्त्री० [सं० प्रदीपक+टाप्, इत्व] १. छोटी लालटेन। २. संगीत में एक रागिनी जो किसी किसी के मत से दीपक राग की स्त्री है। ३. आज-कल टीका, व्याख्या आदि के रूप में कोई ऐसी पुस्तक जिससे कोई दूसरी कठिन पुस्तक पढ़ने या समझने में सहायता मिलती हो।

प्रदीप्त—वि० [सं० प्र√दीप्+क्त] [भाव० प्रदीप्ति] १. जलता हुआ। २. चमकता या जगमगाता हुआ। प्रकाशित। ३. उज्ज्वल। चमकीला।

प्रदीप्ति—स्त्री० [सं० प्र√दीप्+क्तिन्] १. रोशनी। प्रकाश। २. चमक।

प्रदुमन—पुं०=प्रद्युम्न।

प्रदुष्ट—वि० [सं० प्र√दुष् (बिगड़ना)+क्त] १. बिगड़ा हुआ। दोषयुक्त। २. बुरे स्वभाववाला। दुष्ट। ३. लंपट। व्यभिचारी। ४. लोभ, स्वार्थ आदि के कारण नैतिक दृष्टि से गिरा हुआ। (कोरप्ट)

प्रदूषक—वि० [सं० प्र√दूष् (नष्ट करना)+णिच्+ण्वुल्—अक] १. नष्ट करनेवाला। २. अपवित्र करनेवाला।

प्रदूषण—पुं० [सं० प्र√दूष्+णिच्+ल्युट्—अन] १. नष्ट करना। चौपट या बरबाद करना। २. अपवित्र करना।

प्रदूषित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. नष्ट किया हुआ। २. अपवित्र किया हुआ। दूषित। ३. प्रदुष्ट (व्यक्ति)।

प्रदेय—वि० [सं० प्र√दा (देना)+यत्] १. जो प्रदान किये जाने के योग्य हो। जो दिया जा सके। २. (कन्या) जो विवाह करके किसी को देने के योग्य हो। पुं० ऐसी अच्छी चीज जो उपहार या भेंट के रूप में दी जा सके।

प्रदेयक—पुं० [सं० प्रदेय+कन्] इनाम। पुरस्कार।

प्रदेश—पुं० [सं० प्रा० स०] [वि० प्रादेशिक] १. भू-भाग का कोई खंड, विशेषतः कोई बड़ा खंड। २. किसी संघ राज्य की कोई इकाई। जैसे—उत्तर या मध्यप्रदेश। ३. प्रांत। (दे०) ४. अंग। अवयव। ५. दीवार। ६. नाम। संज्ञा। ७. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार की तंत्र-युक्ति। ८. अँगूठे के अगले सिरे से होकर तर्जनी के अगले सिरे तक की दूरी। छोटा बित्ता या बालिश्त।

प्रदेशकारी (रिन्)—पुं० [सं० प्रदेश√कृ (करना)+णिनि] योगियों का एक सम्प्रदाय।

प्रदेशन—पुं० [सं० प्र√दिश्+ल्युट्—अन] १. उपहार। भेंट। २. आज्ञा, आदेश, नियम आदि के रूप में यह बतलाना कि यह काम इस प्रकार होना चाहिए। (प्रेसक्रिप्शन) ३. कार्य, वस्तु आदि के छोटे-छोटे भाग करके सुभीते के लिए उन्हें अलग-अलग लोगों को देना या उनमें बाँटना। नियतन। (एलॉटमेन्ट)

प्रदेशनी—स्त्री० [सं० प्र√दिश्+ल्युट्—अन,+ङीप्] अँगूठे के पास की उँगली। तर्जनी।

प्रदेशित—भू० कृ० [सं० प्र√दिश्+णिच्+क्त] १. दिखलाया या बतलाया हुआ। २. जिसका प्रदेशन हुआ हो। प्रदिष्ट।

प्रदेशी (शिन्)—वि० [सं० प्रदेश+इनि] प्रदेश-संबंधी। प्रदेश का।

प्रदेशीय—वि० [सं० प्रदेश+छ—ईय] किसी प्रदेश में होनेवाला अथवा उससे सम्बन्ध रखनेवाला।

प्रदेष्टा (ष्टृ)—पुं० [सं० प्र√दिश्+तृच्] १. प्रधान विचारपति। २. वह जो प्रदेशन करता हो। (प्रेसक्राइबर)

प्रदेह—पुं० [सं० प्र√दिह्+घञ्] १. वह औषध या लेप जो फोड़े पर, उसे दबाने या बैठाने के लिए लगाया जाय। २. एक तरह का व्यंजन।

प्रदोष—पुं० [सं० प्रा० स०] १. सूर्य के अस्त होने का समय। संध्या। २. एक प्रकार का उपवास या व्रत जो प्रत्येक पक्ष की त्रयोदशी को होता है और जिसमें सूर्यास्त से कुछ पहले ही शिव का पूजन करके भोजन किया जाता है। ३. बहुत बड़ा दोष। ४. पक्षपात, आर्थिक लाभ, स्वार्थ आदि से अभिभूत होने के फलस्वरूप होनेवाला नैतिक पतन। (कोरप्शन)

प्रदोषक—वि० [सं० प्रदोष+वुन्—अक] १. प्रदोषकाल सम्बन्धी। २. जो प्रदोषकाल में उत्पन्न हुआ हो। ३. दे० 'प्रदुष्ट'।

प्रद्धटिका—स्त्री०=पज्झटिका।

प्रद्युम्न—पुं० [सं० ब० स०] १. कामदेव। कंदर्प। २. श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम। ३. मनु के एक पुत्र का नाम। ४. वैष्णवों में, चतुर्व्यूहात्मक विष्णु के एक अंश का नाम। ५. बहुत बड़ा बहादुर या वीर पुरुष।

प्रद्योत—पुं० [सं० प्र√द्युत्+घञ्] १. किरण। रश्मि। २. दीप्ति। आभा। चमक। ३. एक यक्ष।

प्रद्योतन—पुं० [सं० प्र√द्युत्+युच्—अन] १. दीप्ति से युक्त करना। चमकाना। २. चमक। दीप्ति। ३. सूर्य।

प्रद्वार—पुं० [सं० प्रा० स०] १. मुख्य द्वार के अगल-बगल या आस-पास का भाग। २. बड़ा या मुख्य द्वार।

प्रद्वेषी (षिन्)—स्त्री० [सं० प्र√द्विष्+णिनि] दीर्घतमा ऋषि की पत्नी। (महा०)
वि० मन में द्वेष रखनेवाला। द्वेषी।

प्रधन—पुं० [सं० ब० स०] १. धनवान्। २. [प्र√धा+क्यु—अन] युद्ध।

प्रधमन—पुं० [सं० प्र√धम् (शब्द)+ल्युट्—अन] १. नाक के रास्ते सूँघकर ओषधि ग्रहण करने की क्रिया या भाव। २. इस प्रकार सूँघी जानेवाली ओषधि। ३. वैद्यक में एक प्रकार की सुँघनी।

प्रधर्ष—पुं० [सं० प्र√धृष् (डाँटना, बलात्कार करना)+घञ्] १. अपमान। २. पराभव। ३. स्त्री का सतीत्व नष्ट करना। बलात्कार। ४. आक्रमण।

प्रधर्षक—वि० [सं० प्र√धृष्+ण्वुल्—अक] प्रधर्ष करनेवाला।

प्रधर्षण—पुं० [सं० प्र√धृष्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रधर्षित] १. अपमान। बेइज्जती। २. आक्रमण। चढ़ाई। ३. स्त्री का बलपूर्वक किया जानेवाला सतीत्व हरण।

प्रधर्षित—भू० कृ० [सं० प्र√धृष्+क्त] १. जिस पर आक्रमण किया गया हो। २. अपमानित। ३. (स्त्री) जिसका बलपूर्वक सतीत्व हरण किया गया हो। जिसके साथ बलात्कार हुआ हो।

प्रधा—स्त्री० [सं० प्र√धा+अङ्+टाप्] दक्ष प्रजापति की एक कन्या जिसका विवाह कश्यप ऋषि से हुआ था।

प्रधान—वि० [सं० प्र√धा+ल्युट्—अन] [भाव० प्रधानता] अधिकार, पद, महत्त्व आदि की दृष्टि से जो सबसे बड़ा या बढ़कर हो। पुं० १. नेता। मुखिया। सरदार। २. मंत्री। सचिव। ३. आज-कल किसी संस्था या सभा का वह सबसे बड़ा अधिकारी जो कुछ नियत काल के लिए चुना जाता और सभापति के रूप में उसके सब कामों का निरीक्षण तथा संचालन करता है। ४. संसार का उपादान कारण। ५. बुद्धि। समझ। ६. ईश्वर। ७. सेनापति।

प्रधानक—पुं० [सं० प्रधान+कन्] सांख्य के अनुसार बुद्धि-तत्त्व।

प्रधान-कर्म (न्)—पुं० [कर्म० स०] सुश्रुत के अनुसार तीन प्रकार के कर्मों में से एक कर्म जो रोग की उत्पत्ति हो जाने पर किया जाता है।

प्रधान-कार्यालय—पुं० [कर्म० स०] व्यापारिक अथवा अन्य संस्थाओं का मुख्य और सबसे बड़ा कार्यालय जिसके अधीन कई छोटे-छोटे कार्यालय हों और जहाँ से सब कार्यों तथा शाखाओं का संचालन होता हो। (हेड आफिस)

प्रधानता—स्त्री० [सं० प्रधान+तल्+टाप्] प्रधान होने की अवस्था, गुण या भाव।

प्रधान-धातु—पुं० [सं० कर्म० स०] शरीर की सब धातुओं में से प्रधान शुक्र या वीर्य।

प्रधान-मंत्री (त्रिन्)—पुं० [कर्म० स०] १. संस्था आदि का वह सबसे बड़ा मंत्री जिसके अधीन और भी कई विभागीय मंत्री हों। (जनरल सेक्रेटरी) २. किसी देश या राज्य का सबसे बड़ा मंत्री। (प्राइम मिनिस्टर)

प्रधानाचार्य—पुं० [सं०] आज-कल किसी महाविद्यालय (कालेज) का प्रधान अधिकारी और सर्वप्रमुख अध्यापक। (प्रिंसिपल)

प्रधानाध्यापक—पुं० [प्रधान अध्यापक, कर्म० स०] किसी विद्यालय का सबसे बड़ा अध्यापक। (हेड मास्टर)

प्रधानामात्य—पुं० [प्रधान-अमात्य, कर्म० स०] प्रधान मंत्री।

प्रधानिक—वि०=प्राधानिक।

प्रधानी—स्त्री० [सं० प्रधान+हिं० ई (प्रत्य०)]=प्रधानता।

प्रधारणा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] किसी विषय पर एकाग्र होकर ध्यान जमाये रखना।

प्रधि—पुं० [सं० प्र√धा+कि] गाड़ी का धुरा। अक्ष।

प्रधी—वि० [सं० ब० स०] बहुत अधिक चतुर या बुद्धिमान।
स्त्री० उत्तम और प्रखर बुद्धि।

प्रधूपित—भू० कृ० [सं० प्र√धूप् (तपाना)+क्त] १. तप्त। तपाया हुआ। २. चमकता हुआ। ३. संतप्त।

प्रधूपिता—स्त्री० [सं० प्रधूपित+टाप्]वह दिशा जिधर सूर्य बढ़ रहा हो।

प्रधूमित—भू० कृ० [सं० प्र-धूम, प्रा० स०,+इतच्] १. जो धुआँ उत्पन्न करने के लिए जलाया गया हो। २. जिसमें से धुआँ निकल रहा हो। ३. जो अन्दर ही अन्दर धधक या सुलग रहा हो।

प्रधृष्ट—वि० [सं० प्र√धृष्+क्त] १. जिसके साथ दुर्व्यवहार किया गया हो। अपमानित। २. घमंडी। ३. उद्धत। उद्दंड।

प्रध्मापन—पुं० [सं० प्र√ध्मा (शब्द)+णिच्, युक्+ल्युट्—अन] वैद्यक में, वह उपचार या क्रिया जो स्वर-नलिका में का अवरोध दूर करने और श्वास-प्रश्वास की क्रिया ठीक करने के लिए की जाती है।

प्रध्वंस—पुं० [सं० प्र√ध्वंस् (नाश करना)+घञ्] [भू० कृ० प्रध्वंसित] १. नष्ट हो जाना। ध्वंस। नाश। विनाश। २. सांख्य के मत से, किसी वस्तु की अतीत अवस्था।

प्रध्वंसक—वि० [सं० प्र√ध्वंस्+णिच्+ण्वुल्—अक] ध्वंस या नाश करनेवाला।

प्रध्वंसाभाव—पुं० [सं० प्रध्वंस-अभाव, स० त० या मध्य० स०] ऐसा अभाव जो किसी वस्तु के नष्ट होने से हुआ हो। (न्याय)

प्रध्वंसी (सिन्)—वि० [सं० प्र√ध्वंस्+णिच्+णिनि] विनाश करनेवाला।

प्रध्वस्त—भू० कृ० [सं० प्र√ध्वंस्+क्त] जिसका विनाश हो चुका हो।
पुं० एक प्रकार का तांत्रिक मंत्र।

प्रन†—पुं०=प्रण।

प्रनत†—वि०=प्रणत।

प्रनति†—स्त्री०=प्रणति।

प्रनना*—अ० [सं० प्रणन] १. प्रणाम करना। २. झुकना। ३. शरण में जाना। उदा०—प्रनत जन कुमुद बन इंदु कर जालिका।—तुलसी।

प्रनप्ता (प्तृ)—पुं० [सं० प्रा० स०] परनाती। नाती का लड़का।

प्रनमन†—पुं०=प्रणमन।

प्रनमना—अ०=प्रनना (प्रणाम करना)।

प्रनय†—पुं०=प्रणय।

प्रनर्तित—भू० कृ० [सं० प्र√नृत् (नाचना)+णिच्+क्त] १. जो नचाया गया हो या नाच रहा हो। २. काँपता या हिलता हुआ।

प्रनव†—पुं०=प्रणव।

प्रनवना—अ०=प्रनना (प्रणाम करना)।

प्रनष्ट—वि० [सं० प्रा० स०] १. विनष्ट। २. लुप्त। ३. भागा हुआ।

प्रनाम†—पुं०=प्रणाम।

प्रनामी—स्त्री०=प्रणामी। (दे०)
वि० प्रणाम करनेवाला।

प्रनायक—वि० [सं० ब० स०] जिसका नायक साथ न हो। नायक-हीन।
पुं० बड़ा या श्रेष्ठ नायक।

प्रनासना*—स० [सं० प्रज्ञान] पूरी तरह से नष्ट करना।

प्रनिपात—पुं० =प्रणिपात (प्रणाम)।

प्रनियम—पुं० [सं० प्रा० स०] किसी बड़े नियम के अन्तर्गत उसके अंगों के रूप में बने हुए छोटे नियम या विभाग।

प्रन्यास—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० प्रन्यस्त] किसी विशेष कार्य के लिए किसी को या कुछ विशिष्ट लोगों को सौंपा हुआ धन या संपत्ति। (ट्रस्ट)

प्रपंच—पुं० [सं० प्र√पञ्च् (विस्तार)+घञ्] १. फैलाव। विस्तार। २. फैला हुआ यह दृश्य जगत् जो मायावी और मिथ्या कहा गया है, तथा जिसमें परस्पर विरोधी तथा विभिन्न कार्य होते रहते हैं। ३. कोई ऐसा कार्य जिसमें कई तरह की परस्पर विरोधी बातें होती हैं, और सार कुछ भी नहीं होता या बहुत कम होता है। ४. विशेषतः कोई ऐसा कार्य जो छल-कपट या झगड़े-झंझट से भरा हो और जो तुच्छ अथवा हीन उद्देश्य से किया जा रहा हो। ५. झंझट। बखेड़ा।

प्रपंचन—पुं० [सं० प्र√पञ्च्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रपंचित] १. विस्तार बढ़ाना। २. प्रपंच खड़ा करना।

प्रपंची (चिन्)—वि० [सं० प्रपंच+इनि] १. प्रपंच रचनेवाला। २. कपटी। छली।

प्रपंजी—स्त्री० [सं० प्रा० स०] किसी बैंक, व्यापारिक संस्था आदि की वह मुख्य पंजी या रजिस्टर जिसमें रुपयों का लेन-देन करनेवालों आदि का पूरा विवरण लिखा रहता है। खाता। बही। (लेजर)

प्रपक्ष—पुं० [सं० अत्या० स०] सेना के किसी पक्ष का अग्र भाग।

प्रपठन—पुं० [सं० प्र√पठ् (पढ़ना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रपठित] १. लेख आदि का ज्यों का त्यों पढ़ा जाना। पाठ। (रिसाइटेशन) जैसे—कवि-सम्मेलन में दूसरे कवियों की कविताओं का प्रपठन भी होगा। २. उद्धरणी।

प्रपत्ति—स्त्री० [सं० प्र√पद्+क्तिन्] १. किसी के प्रति होनेवाली अनन्य भक्ति। २. भक्ति का वह प्रकार या भेद जिसमें भक्त अपने आप को भगवान की शरण में सौंपकर यह विश्वास रखता है कि वह मुझ पर अवश्य दया करेगा। शरणागति।

प्रपत्र—पुं० [सं० प्रा० स०] वह छपा हुआ पत्र जिसमें के निरंक स्थलों में पूछी गई बातों के विवरण लिखे जाते हैं। जैसे—विद्यालय में भरती होने के लिए भरा जानेवाला प्रपत्र। (फॉर्म)

प्रपथ—वि० [सं० ब० स०] शिथिल। थका-माँदा।
पुं० बहुत दूर जानेवाला कोई बड़ा तथा चौड़ा मार्ग।

प्रपद—पुं० [सं० प्रा० स०] १. पैर का अगला भाग। पंजा। २. पैर के अँगूठे का सिरा।

प्रपन्न—भू० कृ० [सं० प्र√पद्+क्त] १. प्राप्त। आया हुआ। पहुँचा हुआ। २. शरणागत।

प्रपर्ण—पुं० [सं० प्रा० स०] गिरा हुआ पत्ता।

प्रपलायन—पुं० [सं०] कोई अनुचित काम कर चुकने पर उसके दंड से बचने के लिए भाग जाना। फरार होना। (एब्स्कांड)

प्रपलायी—पुं० [सं० प्रपलायिन्] वह जो कोई अनुचित काम करके उसके दंड-भोग से बचने के लिए भाग गया हो। फरार। भगोड़ा। (एब्स्कांडर)

प्रपा—पुं० [सं० प्र√पा (पीना)+क+टाप्] १. प्यासों, विशेषतः प्यासे यात्रियों आदि को जल अथवा कोई पेय पिलाने का सार्वजनिक स्थान। प्याऊ। २. यज्ञशाला।

प्रपाक—पुं० [सं० प्रा० स०] १. घाव, फोड़े आदि का पकना। २. उक्त के पकने से होनेवाली सूजन।

प्रपाठ—पुं० [सं० प्रा० स०] १. पुस्तक में का पाठ। २. पुस्तक का अध्याय। ३. दे० 'प्रपठन'।

प्रपाणि—पुं० [सं० प्रा० स०] १. हाथ का अगला भाग। २. हथेली।

प्रपात—पुं० [सं० प्र√पत् (गिरना)+घञ्] १. एकबारगी और बहुत तेजी से ऊपर से नीचे आना या गिरना। २. वह बहुत ऊँचा स्थान जहाँ से कोई चीज नीचे गिरती हो। ३. जल की वह धारा जो किसी पहाड़ी प्रदेश में बहुत ऊँचे स्थान से नीचे गिरती हो। (वाटर फाल)

प्रपातन—पुं० [सं० प्र√पत्+णिच्+ल्युट्—अन] जोर से नीचे गिराना या फेंकना।

प्रपाती (तिन्)—पुं० [सं० प्रपात+इनि] वह चट्टान या पहाड़ जिसका किनारा खड़ा हो।
स्त्री० [सं० प्रपात] नदियों के प्रवाह में कुछ ऊँची-नीची चट्टानें पड़ने के कारण बननेवाला प्रपात। (कैस्केड)

प्रपादिक—पुं० [सं० प्रपद+ठक्—इक] मयूर। मोर।

प्रपान—पुं० [सं० प्र√पा+ल्युट्—अन] १. पीने की क्रिया या भाव। २. प्रपा। पौंसला।

प्रपानक—पुं० [सं० प्रपान, ब० स०,+कप्] आम अथवा किसी अन्य फल के गूदे का बना हुआ एक तरह का खट-मीठा शरबत। पना। पन्ना।

प्रपाली (लिन्)—पुं० [सं० प्र√पाल् (पालन करना)+णिच्+णिनि] कृष्ण के भाई; बलराम।

प्रपितामह—पुं० [सं० अत्या० स०] [स्त्री० प्रपितामही] १. पितामह का पिता। बाप का दादा। परदादा। २. परब्रह्म।

प्रपितृव्य—पुं० [सं० अत्या० स०] परदादा का भाई।

प्रपीडक—वि० [सं० प्र√पीड् (कष्ट देना)+णिच्+ण्वुल्—अक] १. दबाने या पेरनेवाला। २. बहुत अधिक कष्ट देने या सतानेवाला।

प्रपीडन—पुं० [सं० प्र√पीड्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रपीडित] १. इस प्रकार किसी चीज को दबाना कि उसका रस निकल आये। पेरना। २. बहुत अधिक सताना या कष्ट देना।

प्रपील†—स्त्री०=पिपीलिका (चींटी)।

प्रपुंज—पुं० [सं० प्रा० स०] बहुत बड़ा ढेर या राशि।

प्रपुत्र—पुं० [सं० अत्या० स०] [स्त्री० प्रपुत्री] पुत्र का पुत्र। पोता।

प्रपूरक—वि० [सं० प्र√पूर् (पूर्ण करना) +णिच् + ण्वुल्—अक] १. अच्छी तरह पूरा करने या भरनेवाला। २. तृप्त करनेवाला।

प्रपूरण—पुं० [सं० प्र√पूर् + णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रपूरित] १. अच्छी तरह पूरा करना या भरना। २. तृप्त करना। ३. मिलाना।

प्रपूरित—भू० कृ० [सं० प्र√पूर् + णिच् + क्त] १. अच्छी तरह पूरा किया या भरा हुआ। २. अच्छी तरह तृप्त किया हुआ।

प्रपौत्र—पुं० [सं० अत्या० स०] [स्त्री० प्रपौत्री] पुत्र का पोता। पोते का पुत्र। परपोता।

प्रफुलना†—अ० [सं० प्रफुल्ल] फूलों से युक्त होना। फूलना।

प्रफुल्ल—वि० [सं० प्र√फुल्ल् (विकसित होना)+अच्] १. (फूल) जो खिला हुआ हो। २. (पौधा या वृक्ष) जिसमें फूल खिले हुए हों। ३. (व्यक्ति) जो अत्यधिक प्रसन्न हो। ४. (पदार्थ) जो खुला हुआ हो।

प्रफुल्ल-वदन—वि० [ब० स०] जिसका मुख प्रसन्न दीखता हो।

प्रफुल्ला—स्त्री० [सं० प्रफुल्ल=खिला हुआ] १. कुमुदिनी। कोईं। २. कमलिनी।

प्रफुल्लित—भू० कृ० [सं० प्रफुल्ल] १. खिला हुआ। कुसुमित। २. फूल की तरह खिला हुआ अर्थात् प्रसन्न तथा हँसता हुआ।

प्रबंध—पुं० [सं० प्र√बंध् (बाँधना)+घञ्] १. वह चीज जिससे कोई दूसरी चीज बाँधी जाय। बंधन। जैसे—डोरी, रस्सी आदि। २. अच्छा, पक्का और श्रेष्ठ बंधन। ३. ठीक तरह से निरंतर चलता रहनेवाला क्रम। जैसे—प्रबन्ध वर्षा अर्थात् लगातार होती रहनेवाली वर्षा। ४. ऐसी रचना जिसमें सभी अंग, बातें या विषय उपयुक्त स्थानों पर रखकर और ठीक तरह से बाँध या सजाकर रखे गये हों। अच्छी और ठीक तरह से तैयार की हुई चीज। ५. प्राचीन भारतीय साहित्य में काव्य के दो भेदों में से एक (दूसरा भेद निर्बंध कहलाता था) जिसमें कोई कथा या घटना क्रमबद्ध रूप में कही गई हो। खंडकाव्य और महाकाव्य इसी के उपभेद हैं। ६. भारतीय संगीत में, शास्त्रीय नियमों के अनुसार राग-रागिनियाँ गाने की वह प्रथा (खयाल, ध्रुपद आदि के गाने की प्रथा से भिन्न) जो मध्य युग के साधु-संतों में प्रचलित थी। ७. आज-कल उच्च श्रेणी के विचारशील विद्यार्थियों की वह कृति या रचना जो किसी विशिष्ट विषय या उसके किसी अंग-उपांग के संबंध में यथेष्ट अनुसंधान और छानबीन करके और उसके संबंध में अपना नया तथा स्वतंत्र मत प्रतिपादित करते हुए प्रस्तुत की गई हो। (थीसिस) ८. आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में घर-गृहस्थी, निर्माणशालाओं या संस्थाओं के विभिन्न कार्यों तथा आयोजनों का अच्छी तरह से तथा कुशलतापूर्वक किया जानेवाला संचालन। (मैनेजमेंट)। ९. किसी तरह के काम के लिए की जानेवाली कोई योजना। जैसे—कपट-प्रबंध अर्थात् किसी को फँसाने के लिए बिछाया जानेवाला जाल।

प्रबंध-अभिकर्ता—पुं० [ष० त०] किसी व्यावसायिक संस्था के किसी अभिकरण का मुख्य प्रबंधकर्ता। (मैनेजिंग एजेंट)

प्रबंधक—वि० [सं० प्र√बन्ध्+णिच् + ण्वुल्—अक] प्रबन्ध या व्यवस्था करनेवाला।

पुं० वह जो किसी कार्य, कार्यालय या विभाग के कार्यों का संचालन करता हो। व्यवस्थापक। (मैनेजर)

प्रबंधकल्पना—स्त्री० [सं० ष० त०] १. साहित्यिक प्रबन्ध की रचना। २. वह साहित्यिक रचना जो मूलतः किसी घटना या तथ्य पर आश्रित हो और जिसमें कवि या लेखक ने अपनी कल्पना-शक्ति से भी बहुत सी बातें बढ़ाई हों।

प्रबंधन—पुं० [सं० प्र√बन्ध्+णिच् + ल्युट्—अन] १. किसी काम या बात का प्रबन्ध अर्थात् व्यवस्था करने की क्रिया या भाव। २. साहित्यिक रचना का ढंग, प्रकार या शैली। जैसे—कबीर या तुलसी की रचनाओं का प्रबन्धन।

प्रबंध-परिव्यय—पुं० [ष० त०] वह परिव्यय या खर्च जो किसी काम का प्रबन्ध करने के बदले में किसी को दिया जाय। (मैनेजमेण्ट चार्जेज)

प्रबंध-परिषद्—स्त्री० [ष० त०] वह परिषद् या सभा-समिति जो किसी बड़े कार्य या संस्था का परिचालन और व्यवस्था करती हो। (गवर्निंग बॉडी)

प्रबंध-व्यय—पुं० [ष० त०] वह व्यय या खर्च जो किसी काम या बात का प्रबन्ध करने में लगे। (कॉस्ट ऑफ मैनेजमेण्ट)

प्रबंध-संपादक—पुं० [ष० त०] पत्र, पत्रिकाओं के संपादकीय विभाग का प्रबंध करनेवाला संपादक। (मैनेजिंग एडिटर)

प्रबंध-समिति—स्त्री० [ष० त०] किसी बड़ी संस्था, सभा आदि के चुने हुए लोगों की वह समिति जो उसकी सब बातों का प्रबन्ध या व्यवस्था करती हो। (मैनेजिंग कमिटी)

प्रबंधार्थ—पुं० [प्रबंध-अर्थ, ष० त०] वह विषय जिसका उल्लेख या विचार किसी साहित्यिक-रचना में हुआ हो।

प्रबंधी (धिन्)—वि० [सं० प्रबंध + इनि]=प्रबंधक। जैसे—प्रबंधी संचालक।

प्रबंधी संचालक—पुं० [सं० व्यस्त पद] किसी बहुत बड़ी संस्था के विभिन्न संचालकों में से वह व्यक्ति जिस पर उसके प्रबंध आदि का भी सब भार हो। (मैनेजिंग डाइरेक्टर)

प्रब†—पुं०=पर्व।

प्रबरष (स) न*—पुं०=प्रवर्षण।

प्रबल—वि० [सं० ब० स०] [स्त्री० प्रबला] १. जिसमें बहुत अधिक बल या शक्ति हो। बलवान। २. जो बल में किसी से बीस पड़ता हो। अपेक्षाकृत अधिक बलवाला। ३. उग्र। तेज। प्रचंड। ४. बहुत जोरों का। घोर या भारी।

प्रबल झंझा—स्त्री० =चंडवात।

प्रबलन—पुं० [सं० प्र√बल्+ल्युट्—अन] १. बल या शक्ति बढ़ाने की क्रिया या भाव। प्रबल करना। २. किसी दुर्बल को अधिक बलवान बनाने के लिए किया जानेवाला उपाय या दी जानेवाली सहायता।

प्रबला—स्त्री० [सं० प्रबल + टाप्] प्रसारिणी नाम की ओषधि।

वि० सं० 'प्रबल' का स्त्री०।

प्रबाधित—भू० कृ० [सं० प्र√बाध् (बाधा देना)+क्त] १. सताया हुआ। २. दबाया या धकेला हुआ।

प्रबाल—पुं०=प्रवाल।

प्रबास—पुं०=प्रवास।

प्रबाह—पुं०=प्रदाह।

प्रबाहु—पुं० [सं० अत्या० स०] हाथ का आगेवाला अंश। पहुँचा।

प्रबिसना†—अ०=प्रविसना (प्रवेश करना)।

प्रबीन†—वि०=प्रवीण।

प्रबुद्ध—वि० [सं० प्र√बुध् (जानना)+क्त] १. जागा हुआ। जाग्रत। २. जिसकी बुद्धि ठिकाने हो और अच्छी तरह काम कर रही हो। ३. जो होश में हो। चैतन्य। सचेत। ४. जिसे प्रबोध हो या हुआ हो। यथार्थ ज्ञान से परिचित। ५. खिला हुआ। विकसित।

पुं० १. नौ योगेश्वरों में से एक योगेश्वर। २. ज्ञानी। ३. पंडित। विद्वान्।

प्रबोध—पुं० [सं० प्र√बुध्+घञ्] [वि० प्रबुद्ध] १. सोकर उठना। जागना। २. किसी बात या विषय का ठीक और पूरा ज्ञान। यथार्थ ज्ञान। ३. किसी को समझा-बुझाकर शांत या स्थिर करना। ढारस। दिलासा। सांत्वना। ४. साहित्य में, दूत या दूती का नायिका या नायक को कोई बात अच्छी तरह और युक्तिपूर्वक समझाकर उत्साहित या शांत करना या सांत्वना देना। ५. चेतावनी। ६. विकास। ७. महाबुद्ध की एक अवस्था। (बौद्ध)

प्रबोधक—वि० [सं० प्र√बुध्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. जगानेवाला। २. चेताने या सचेत करनेवाला। ३. समझाने-बुझानेवाला। ४. यथार्थ ज्ञान कराने या बतलानेवाला। ५. ढारस या सांत्वना देनेवाला।

प्रबोधन—पुं० [सं० प्र√बुध्+ल्युट्—अन, या णिच्+ल्युट्] १. जागरण। जागना। २. नींद से उठाना। जगाना। ३. यथार्थ ज्ञान। बोध। ४. बोध कराना। जताना। ५. सचेत या सावधान करना। ६. ढारस, तसल्ली या सान्त्वना देना। ७. विकसित करना।

प्रबोधना—स० [सं० प्रबोधन] १. सोये हुए को उठाना। जगाना। २. सचेत या सजग करना। ३. अच्छी तरह समझाना-बुझाना। ४. ढारस या सान्त्वना देना। उदा०—मंत्रिहि राम उठाइ प्रबोधा।—तुलसी। ५. अपने अनुकूल करने के लिए सिखाना-पढ़ाना। ६. आध्यात्मिक ज्ञान से युक्त करना।

प्रबोधनी—स्त्री० [सं० प्र√बुध्+णिच्+ल्युट्—अन, ङीप्]=प्रबोधिनी।

प्रबोधित—भू० कृ० [सं० प्र√बुध्+णिच्+क्त] १. जो जगाया गया हो। २. जिसे उपयुक्त ज्ञान दिया गया हो। ३. जिसे समझाया-बुझाया गया हो। ४. जिसे ढारस या सान्त्वना दी गई हो।

प्रबोधिता—स्त्री० [सं० प्रबोधित+टाप्] एक प्रकार की वर्णवृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में सगण, जगण, सगण, जगण और अंत में गुरु (सजसजग) होता है। दे० 'मंजुभाषिणी'।

प्रबोधिनी—स्त्री० [सं० प्र√बुध्+णिच्+णिनि+ङीप्] १. कार्तिक शुक्ला एकादशी। २. जवासा। धमासा।

प्रबोधी (धिन्)—वि० [सं० प्र√बुध्+णिच्+णिनि] [स्त्री० प्रबोधिनी] १. जगानेवाला। २. प्रबोधन करनेवाला। प्रबोधक।

प्रब्ब†—पुं०=पर्व।

प्रभंजन—पुं० [सं० प्र√भंज् (भंग करना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रभग्न] १. अच्छी या पूरी तरह से तोड़-फोड़ने और नष्ट करने की क्रिया या भाव। २. रोकना या निवारण करना। ३. हराना। पराजित करना। ४. वैज्ञानिक क्षेत्र में, मुख्यतः वह बहुत तेज हवा जो ७५ से १०० मील प्रति घंटे के हिसाब से चलती हो। (हरिकेन) ५. वायु। हवा। ६. वायु का वह देव रूप जिससे हनुमान उत्पन्न हुए थे।

प्रभंजन-जाया*—पुं०=हनुमान (प्रभंजन के पुत्र)।

प्रभग्न—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. तोड़-फोड़कर नष्ट-भ्रष्ट किया हुआ। २. हराया हुआ।

प्रभणना—स० [सं० प्रभणन] कहना। उदा०—प्रभणंति पुत्र इम मात पिता प्रति।—प्रिथीराज।

प्रभणाना—स० [हिं० प्रभणना का प्रे०] कहलाना। उदा०—पखरावि त्रिया वामै प्रभणावै।—प्रिथीराज।

प्रभत*—स्त्री० [सं० प्रभुता] बड़प्पन। बड़ाई।

प्रभद्र—पुं० [सं० प्र-भद्र, ब० स०] नीम।

प्रभद्रक—पुं० [सं० प्रभद्र+कन्] प्रभद्रिका (वर्ण वृत्ति)।

प्रभद्रिका—स्त्री० [सं० प्रभद्र+कन्+टाप्, इत्व] पंद्रह अक्षरों की एक वर्णवृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में नगण, भगण फिर जगण और अंत में एक रगण होता है। जैसे—निजभुज राघवेन्द्र दस-सीस ढाइहैं।

प्रभव—पुं० [सं० प्र√भू (होना)+अप्] १. उत्पत्ति या सृष्टि का मूल कारण। २. उत्पत्ति। जन्म। ३. उत्पत्ति का स्थान। ४. सृष्टि। ५. जगत्। संसार। ६. नदी का उद्गम या मूल स्थान। ७. पराक्रम।

प्रभवन—पुं० [सं० प्र√भू+ल्युट्—अन] १. उत्पत्ति। २. आकार। ३. मूल। ४. अधिष्ठान।

प्रभविता (तृ)—पुं० [सं० प्र√भू+तृच्] १. शासक। २. प्रभु। स्वामी।

प्रभविष्णु—वि० [सं० प्र√भू+इष्णुच्] [भाव० प्रभविष्णुता] १. दूसरों पर प्रभाव डालनेवाला। प्रभावशील। २. बलवान।

पुं० १. प्रभु। २. विष्णु।

प्रभविष्णुता—स्त्री० [सं० प्रभविष्णु+तल्+टाप्] १. औरों की तुलना में होनेवाली प्रधानता या श्रेष्ठता। २. किसी वस्तु में निहित वह स्थायी गुण या तत्त्व जिसका दूसरी वस्तुओं पर कुछ परिणाम होता या प्रभाव पड़ता हो। (पोटेन्सी)। जैसे—बरसात आने पर इस ओषधि की प्रभविष्णुता कुछ कम हो जाती है।

प्रभा—स्त्री० [सं० प्र√भा (दीप्ति)+अङ्+टाप्] १. प्रकाश। दीप्ति। २. सूर्य का बिंब या मंडल। ३. सूर्य की एक पत्नी। ४. दुर्गा की एक मूर्ति या रूप। ५. कुबेर की नगरी। ६. बारह अक्षरों की एक वर्ण-वृत्ति जिसे मन्दाकिनी भी कहते हैं।

प्रभाउ†—पुं०=प्रभाव।

प्रभाकर—पुं० [सं० प्रभा√कृ (करना)+ट] १. सूर्य। २. चंद्रमा। ३. अग्नि। ४. आक। मदार। ५. समुद्र। ६. शिव। ७. मार्कंडेय पुराण के अनुसार आठवें मंवंतर के देवगण के एक देवता। ८. एक प्रसिद्ध मीमांसक जो मीमांसा-दर्शन की एक शाखा के प्रवर्तक थे। ९. कुश द्वीप के एक वर्ष का नाम।

प्रभाकरी—स्त्री० [सं० प्रभाकर+ङीप्] बोधि सत्त्वों की तृतीय अवस्था जो प्रमुदिता और विमला के उपरांत प्राप्त होती है।

प्रभाकीट—पुं० [सं० मध्य० स०] खद्योत। जुगनू।

प्रभाग—पुं० [सं० अत्या० स०] १. किसी बड़े विभाग के अंतर्गत कोई छोटा भाग या विभाग। (सेक्शन) २. गणित में भिन्न का भिन्न। जैसे—$\frac{1}{2}$ का $\frac{1}{3}$।

प्रभात—पुं० [सं० प्र√भा (दीप्ति)+क्त] १. सूर्य निकलने से कुछ

पहले का समय। तड़का। २. प्रभा (सूर्य की पत्नी) के एक पुत्र। ३. संगीत में, एक राग।

वि० जो कुछ-कुछ स्पष्ट रूप में सामने आने लगा हो।

प्रभात-फेरी—स्त्री० [सं०+हिं०] प्रचार आदि के लिए बहुत तड़के दल बाँधकर गाते-बजाते और नारे लगाते हुए बस्तियों में चक्कर लगाना।

प्रभाती—स्त्री० [सं० प्रभात+ङीप्] १. प्रत्यूष और प्रभास नामक वसुओं की माता। (महाभारत) २. प्रभात के समय गाये जानेवाले गीत। ३. दातुन।

वि० प्रभात-संबंधी।

प्रभान—पुं० [सं० प्र√भा+ल्युट्—अन] १. ज्योति। प्रकाश। २. चमक। दीप्ति।

प्रभापन—पुं० [सं० प्र√भा+णिच्, पुक्,+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रभापित] दीप्तिमान् करना।

प्रभापूर्य—वि० [सं० प्रभा-आपूर्य, तृ० त०] १. प्रकाश से युक्त। २. प्रकाश करनेवाला। ३. प्रकाशित करनेवाला। उदा०—भारत के नभ का प्रभापूर्य।—निराला।

प्रभा-मंडल—पुं० [सं० ष० त०] दिव्य पुरुषों, देवताओं आदि के मुख के चारों ओर का वह आभायुक्त मंडल जो चित्रों, मूर्तियों आदि में दिखाया जाता है। परिवेश। भा-मंडल। (हैलो)

प्रभाव—पुं० [सं० प्र√भू (होना)+घञ्] १. अस्तित्व में आना। उद्भव। २. वह दबाव जो किसी के बुद्धि-बल, चारित्रिक विशेषता, उच्च पद आदि के फल-स्वरूप दूसरों पर पड़ता है। (इन्फ्लुएन्स) ३. वह अच्छा या बुरा परिणाम जो किसी चीज के गुणों के फलस्वरूप लक्षित होता है। (एफेक्ट) जैसे—शिक्षा या सिनेमा का प्रभाव, औषध या पुस्तक का प्रभाव। ४. ज्योतिष में, ग्रह या ग्रहों की विशिष्ट स्थिति के फल-स्वरूप किसी में सामान्य से भिन्न दिखलाई पड़नेवाले विकार। ५. दूसरों को किसी विशिष्ट विचारधारा का अनुयायी, समर्थक आदि बनाने अथवा किसी ओर ले चलने का सामर्थ्य। जैसे—वे अपने प्रभाव से ही बहुत से काम करा लेते हैं। ६. उक्त सामर्थ्य के फलस्वरूप चारों ओर छाया हुआ आतंक। जैसे—यहाँ भी उनका प्रभाव काम कर रहा है। ७. स्वारोचिष मनु के एक पुत्र जो कलावती के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। (मार्कंडेय पुराण)। ८. सूर्य के एक पुत्र। ९. सुग्रीव के एक मंत्री।

प्रभावक—वि०[सं० प्र√भू+णिच्+ण्वुल्—अक] प्रभाव उत्पन्न करने या डालनेवाला। प्रभावशाली। उदा०—नवयुग का वाहक हो, नेता, लोक प्रभावक।—पंत।

प्रभाव-क्षेत्र—पुं० [सं० ष० त०] आधुनिक राज-तंत्र में, वह क्षेत्र या प्रदेश जो किसी प्रबल और बड़े राज्य के प्रभाव या दबाव में रहता हो और जिस पर किसी दूसरे राज्य या राष्ट्र का प्रभाव अथवा हस्तक्षेप सहन न किया जाता हो। (स्फीयर ऑफ इन्फ्लुएन्स)

प्रभावज—वि० [सं० प्रभाव√जन् (उत्पन्न होना)+ड] १. प्रभाव से उत्पन्न। प्रभावजात।

पुं० १. राज्य की वह शक्ति जो उसके कोप, सेना आदि के मान पर आश्रित होती है। २. एक प्रकार का रोग जिसके सम्बन्ध में यह माना जाता है कि यह देवताओं, महात्माओं आदि के शाप अथवा ग्रहों के प्रकोप से उत्पन्न होता है।

प्रभावती—स्त्री० [सं० प्रभा+मतुप्, वत्व,+ङीप्] १. महाभारत के अनुसार सूर्य की पत्नी का नाम। २. कार्तिकेय की एक मातृका। ३. शिव के एक गण की वीणा। ४. प्रभाती नामक गीत। ५. रुचि नामक छन्द का एक नाम।

प्रभावना—स्त्री० [सं० प्र√भू+णिच्+युच्—अन,+टाप्] १. उद्भावना। २. प्रकाश।

प्रभाववान् (वत्)—वि० [सं० प्रभाव+मतुप्, वत्व] = प्रभावशाली।

प्रभावशाली (लिन्)—वि० [सं० प्रभाव√शाल्+णिनि] जिसमें यथेष्ट प्रभाव उत्पन्न करने की शक्ति हो। जो अच्छा या बहुत प्रभाव डाल सकता हो।

प्रभावान्वित—भू० कृ० [सं० प्रभाव-अन्वित, तृ० त०] किसी से प्रभावित।

प्रभावित—भू० कृ० [सं० प्र√भू+णिच्+क्त] जिस पर किसी का प्रभाव पड़ा हो। किसी के प्रभाव से दबा हुआ।

प्रभाषण—पुं० [सं० प्र√भाष्+ल्युट्—अन] कठिन पदों, वाक्यों, शब्दों आदि की व्याख्या।

प्रभास—वि० [सं० प्र√भास्+अच्; प्र√भास्+घञ्] १. जिसमें बहुत अधिक या यथेष्ट प्रभा हो। प्रभापूर्ण। २. बहुत चमकीला।

पुं० १. ज्योति। २. दीप्ति। चमक। ३. एक वसु का नाम। ४. कार्तिकेय का एक अनुचर। ५. आठवें मंवंतर के एक देव-गण। ६. एक प्राचीन तीर्थ जिसे सोमतीर्थ भी कहते थे। ७. एक जैन गणाधिप।

प्रभासन—पुं० [सं० प्र√भास्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रभासित] १. प्रभास या दीप्ति उत्पन्न करना। २. दीप्ति। ज्योति।

प्रभासना—अ० [सं० प्रभासन] १. प्रकाशित होना। चमकना। २. भासित होना। कुछ कुछ दिखाई पड़ना। आभास होना।

स० १. प्रकाशित करना। २. चमकाना।

प्रभीत—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक डरा हुआ। भयभीत।

प्रभु—वि० [सं० प्र√भू+डु] [भाव० प्रभुता, प्रभुत्व] जो बहुत अधिक बलवान हो।

पुं० १. स्वामी। मालिक। २. ईश्वर। ३. बड़ों के लिए प्रयुक्त होनेवाला संबोधन।

प्रभुता—स्त्री० [सं० प्रभु+तल्+टाप्] १. प्रभु होने की अवस्था या भाव। प्रभुत्व। २. अधिकार, शक्ति आदि से युक्त बड़प्पन। महत्त्व। ३. शासन आदि का अधिकार। हुकूमत। ४. वैभव। ५. दे० 'प्रभु-सत्ता'।

प्रभुताई*—स्त्री०=प्रभुता।

प्रभुत्व—पुं० [सं० प्रभु+त्व] प्रभुता।

प्रभु-राज्य—पुं० [सं० कर्म० स०] ऐसा राज्य जिसकी प्रभु-सत्ता उसकी वैधानिक सरकार या जन-साधारण में निहित हो। (सावरेन स्टेट)

प्रभु-सत्ता—स्त्री० [सं० कर्म० स०] [वि० प्रभु-सत्ताक] दे० 'संप्रभुता'।

प्रभु-सत्ताक—वि०[सं० ब० स०,+कप्] १. प्रभु-सत्ता से युक्त। जिसे

प्रभुसत्ता प्राप्त हो। २. (देश या राज्य) जिस पर दूसरों का कोई नियंत्रण, प्रभाव या शासन न हो। परम स्वतंत्र। (सॉवरेन)

प्रभू†—पुं०=प्रभु।

प्रभूत—वि०[सं० प्र√भू+क्त] १. जो अच्छी तरह हुआ हो। २. जो उत्पन्न हुआ या निकला हो। उद्भूत। ३. बहुत अधिक। प्रचुर। ४. उन्नत। ५. पूर्ण। पूरा। ६. पका हुआ। पक्व।
पुं०=पंच-भूत।

प्रभूति—स्त्री०[सं० प्र√भू+क्तिन्] १. प्रभूत होने की अवस्था या भाव। २. उत्पत्ति। ३. अधिकता। प्रचुरता।

प्रभृति—अव्य०[सं० प्र√भृ (धारण-पोषण)+क्तिच्] इत्यादि। आदि। वगैरह।

प्रभेद—पुं०[सं० प्र√भिद् (विदारण)+घञ्] १. किसी बड़े भेद, वर्ग या विभाग के अन्तर्गत कोई छोटा भेद, वर्ग या विभाग। २. अन्तर। भेद।

प्रभेदक—वि०[सं० प्र√भिद्+ण्वुल्—अक] १. अच्छी तरह भेदन करने या तोड़ने-फोड़नेवाला। २. भेद या प्रभेद उत्पन्न करनेवाला।

प्रभेदन—पुं० [सं० प्र√भिद्+ल्युट्—अन] १. अच्छी तरह भेदन अर्थात् तोड़ने-फोड़ने की क्रिया या भाव। २. भेद या प्रभेद उत्पन्न करना।
वि०=प्रभेदक।

प्रभेव*—पुं०=प्रभेद।

प्रभ्रष्ट—भू० कृ०[सं० प्र√भ्रंश्+क्त] १. गिरा हुआ। ३. टूटा हुआ। ३. भ्रष्टा।

प्रभ्रष्टक—पुं०[सं० प्रभ्रष्ट+कन्] सिर से लटकती हुई माला।

प्रमंडल—पुं०[सं० अत्या० स०]१. पहिये के बाहरी हिस्से का खंड। चक्के का खंड। २. प्रदेश का वह विभाग जिसमें अनेक मंडल या जिले हों। (कमिश्नरी)

प्रमग्न—वि०[सं० प्र√मस्ज् (स्नान)+क्त]=निमग्न।

प्रमत्त—वि०[सं० प्रा० स०] [भाव० प्रमत्तता] १. जो बहुत अधिक मत्त हो। नशे में चूर। मतवाला। २. पागल। बावला। ३. अधिकार, पद आदि का जिसे बहुत अधिक अभिमान हो। ४. लापरवाही के कारण धार्मिक कृत्य न करनेवाला।

प्रमत्तता—स्त्री० [सं० प्रमत्त+तल्+टाप्] प्रमत्त होने की अवस्था या भाव।

प्रमथ—वि०[सं० प्र √मथ् (मथना)+अच्] १. मंथन करनेवाला। २. कष्ट देने या पीड़ित करनेवाला।
पुं० १. शिव के एक प्रकार के गण या परिषद् जिनकी संख्या ३६ करोड़ कही गई है। २. घोड़ा। ३. धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

प्रमथन—पुं०[सं० प्र√मथ्+ल्युट्—अन] १. अच्छी तरह मथना। २. कष्ट देना। पीड़ित करना। ३. वध करना। मार डालना। ४. चौपट, नष्ट या बरबाद करना।

प्रमथ-नाथ—पुं०[ष०त०] महादेव। शिव।

प्रमथ-पति—पुं०[ष० त०] महादेव। शिव।

प्रमथा—स्त्री०[सं० प्रमथ+टाप्] १. हरीतकी। हर्रे। २. पीड़ा।

प्रमथाधिप—पुं० [सं० प्रमथ-अधिप, ष० त०] शिव।

प्रमथालय—पुं०[सं० प्रमथ-आलय, ष० त०] दुःख या यंत्रणा का स्थान, नरक।

प्रमथित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] १. अच्छी तरह मथा हुआ। २. सताया हुआ।
पुं० दही मथने पर निकला हुआ शुद्ध मठा जिसमें पानी न मिलाया गया हो।

प्रमद—पुं० [सं० प्र√मद् (हर्ष)+अप्] १. मतवालापन। २. धतूरे का फल। ३. आनंद। हर्ष। ४. एक प्रकार का दान। ५. वशिष्ठ के एक पुत्र।
वि० १. नशे में चूर। २. असावधान।

प्रमदक—वि० [सं० प्र√मद्+अच्, +कन्] १. परलोक को न माननेवाला, अर्थात् नास्तिक। २. मन-माना आचरण करनेवाला। ३. कामुक।

प्रमदवन—पुं०[सं० ष० त०] राजमहल के पास का वह उद्यान जिसमें रानियाँ सैर करती थीं।

प्रमदा—स्त्री०[सं० प्रमद+टाप्] १. सुंदर तथा युवती स्त्री। २. स्त्री। ३. पत्नी। ४. प्रियंगु। मालकँगनी। ५. एक प्रकार का छंद।

प्रमद्वर—वि० [सं० प्र√मद्+वरच्] १. ध्यान देनेवाला। २. असावधान। लापरवाह।

प्रमन (स्)—वि०[सं० ब० स०] प्रसन्न। सुखी। उदा०—भूले थे अब तक बंधु प्रमन।—निराला।

प्रमना—वि०=प्रमन।

प्रमन्यु—वि०[सं० ब० स०] १. क्रुद्ध। २. दुःखी। संतप्त।
पुं० १. बहुत अधिक क्रोध। २. दुःख। संताप।

प्रमर्दन—पुं०[सं० प्रा० स०] १. अच्छी तरह मर्दन करना। अच्छी तरह मलना-दलना। मसल, रगड़ या रौंदकर नष्ट-भ्रष्ट करना। २. दमन करना। ३. विष्णु।
वि० नष्ट करने या रौंदनेवाला।

प्रमस्तिष्क—पुं० [सं०] [वि० प्रमास्तिष्क] रीढ़वाले पशुओं और मनुष्यों की खोपड़ी के अंदर का वह ऊपरी भाग जहाँ से शारीरिक क्रियाओं, व्यापारों आदि का प्रवर्तन और संचालन होता है। (सेरिब्रम)

प्रमा—स्त्री० [सं० प्र√मा (मापना)+अड+टाप्] १. तर्क और प्रमाणों आदि के आधार पर प्राप्त होनेवाला यथार्थ ज्ञान। २. वह ज्ञान जो बिना बुद्धि की सहायता के या बिना सोचे-विचारे आप से आप तत्काल उत्पन्न हो। (इन्ट्यूशन)। ३. नींव। ४. नाप। माप।

प्रमाण—पुं० [सं० प्र√मा+ल्युट्—अन] १. लंबाई, चौड़ाई आदि नापने या भार आदि तौलने का मान। नाप या तौल। जैसे—गज, बटखरे आदि। २. नाप, तौल आदि की नियत इकाई या इयत्ता। जैसे—इस धोती का प्रमाण दस हाथ है; अर्थात् यह इससे न कम होती है और न अधिक। ३. लंबाई-चौड़ाई। विस्तार। ४. सीमा। हद। ५. ऐसा कथन, तथ्य या बात जिससे किसी अन्य कथन, तथ्य या बात के सत्य-पूर्ण होने की प्रतीति होती है। सबूत। (प्रूफ) जैसे—धुआँ इस बात का प्रमाण है कि कहीं आग जल रही है। ६. वह चीज या बात जिससे विवादास्पद दूसरी बात के किसी एक पक्ष या मत का ठीक होने का निश्चय होता हो।
पद—प्रमाणपत्र। (देखें)

७. वह चीज या बात जो किसी कथन को ठीक सिद्ध करने के लिए औरों के सामने रखी जाती हो। साक्षी। (एविडेन्स) ८. ऐसा कथन, तथ्य या बात जिसे सब लोग ठीक, प्रामाणिक या यथार्थ मानते हों। ९. किसी चीज या बात के ठीक या यथार्थ होने की अवस्था या भाव। सचाई। सत्यता। उदा०—कान्ह जू कैसे दया के निधान हौ, जानौ न काहू के प्रेम प्रमानहि।—दास। १०. किसी की सत्यता आदि पर किया जानेवाला विश्वास। प्रतीति। ११. ऐसी चीज या बात जो बिलकुल ठीक होने के कारण सबके लिए आदरणीय या मान्य हो। उदा०—अति ब्रह्म-शास्त्र प्रमाण मानि सो वश्य मो मन युद्ध कै। —केशव। १२. साहित्य में एक प्रकार का अलंकार जिसमें किसी बात का कोई प्रमाण मिलने पर उस बात के प्रत्यक्ष या सिद्ध होने का उल्लेख होता है।

विशेष—न्यायशास्त्र में प्रमाण के जो आठ भेद कहे गये हैं, उन्हीं के अनुसार इस अलंकार के भी आठ भेद माने गये हैं।

१३. किसी बात का ठीक, पूरा और सच्चा ज्ञान। १४. चित्रकला में, अंकित पदार्थों, व्यक्तियों आदि के सब अंगों का पारस्परिक ठीक अनुपात। (प्रोपोर्शन) १५. शास्त्र, जो प्रमाण के रूप में माने जाते हैं। १६. मूल-धन। पूँजी। १७. एकता। १८. कारण। सबब। १९. गणित में त्रैराशिक की पहली राशि या संख्या। २०. विष्णु का एक रूप। २१. शिव।

वि० १. जो ठीक या सत्य सिद्ध हो चुका हो अथवा माना जाता हो। २. जो सबके लिए मान्य हो। ३. जो यह जानता हो कि क्या ठीक है, और क्या ठीक नहीं है।

अव्य० १. अवधि या सीमा सूचक शब्द। पर्यन्त। तक। उदा०—सत जोजन प्रमान लै धावैं।—तुलसी। २. किसी के तुल्य, सदृश या समान।

प्रमाणक—वि० [सं० प्रमाण + कन् या प्रमाण + णिच् + ण्वुल्—अक] १. समस्त पदों के अंत में, परिमाण या विस्तार-संबंधी। २. प्रमाणित करनेवाला।

पुं० १. वह पत्र जिस पर लिखी हुई बातें प्रामाणिक और सही मानी जाती हैं। (सर्टिफिकेट) २. किसी रकम के आय-व्यय के खाते में चढ़ाये जाने की संपुष्टि या प्रमाण के रूप में साथ में नत्थी किये जानेवाले हिसाब के ब्यौरे का पुरजा। (वाउचर)

प्रमाणकर्ता (तृ)—पुं० [ष० त०] वह व्यक्ति जो कोई बात प्रमाणित करता हो। (सर्टिफायर)

प्रमाण-कुशल—वि० [स० त०] अच्छा तर्क करने और उपयुक्त प्रमाण देनेवाला।

प्रमाणकोटि—स्त्री० [ष० त०] प्रमाण मानी जानेवाली बातों या वस्तुओं का वर्ग।

प्रमाणतः (तस्)—अव्य० [सं० प्रमाण + तस्] प्रमाण के अनुसार या आधार पर।

प्रमाणन—पुं० [सं० प्रमाण + णिच् + ल्युट्—अन] १. कथन, लेख आदि के सम्बन्ध में यह कहना या सिद्ध करना कि यह ठीक और प्रामाणिक है। (सर्टिफिकेशन) २. प्रमाण उपस्थित करके किसी तथ्य या बात को सही सिद्ध करना।

प्रमाणना—स०=प्रमानना।

प्रमाण-पत्र—पुं० [ष० त०] वह पत्र जिसमें कोई संबंधित अधिकारी यह कहता है कि किसी के संबंध की अमुक-अमुक बातें सत्य हैं। प्रमाणक। (सर्टिफिकेट)

प्रमाण-पुरुष—पुं० [मध्य० स०] वह जिसके निर्णय मानने के लिए दोनों पक्षों के लोग तैयार हों। पंच।

प्रमाण-शास्त्र—पुं०=तर्क-शास्त्र। (न्याय)

प्रमाणिक—वि० [सं० प्रमाण + ठन्—इक] प्रामाणिक।

प्रमाणिका—स्त्री० [सं० प्रमाणिक + टाप्] प्रमाणी। (दे०)

प्रमाणित—भू० कृ० [सं० प्रमाण + णिच् + इतच्] १. जो प्रमाण द्वारा ठीक सिद्ध किया जा चुका हो। २. जिसके संबंध में किसी आधिकारिक व्यक्ति ने यह लिखा हो कि यह प्रामाणिक, सत्यपूर्ण या सही है।

प्रमाणी—स्त्री० [सं० प्रमाण + ङीष्] चार चरणों का एक वर्ण वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रम से जगण, रगण, लघु और गुरु (ज, र, ल, ग) होते हैं। नाग स्वरूपिणी।

प्रमाणीकरण—पुं० [सं० प्रमाण + च्वि √कृ (करना) + ल्युट्—अन] प्रमाणन।

प्रमाणीकृत—भू० कृ० [सं० प्रमाण + च्वि √कृ + क्त] जो प्रमाण के रूप में मान लिया गया हो। या प्रमाण के द्वारा सत्य या सिद्ध हो चुका हो।

प्रमातव्य—वि० [सं० प्र √मा + तव्यत्] मारे जाने के योग्य।

प्रमाता (तृ)—पुं० [सं० प्र √मा + तृच्] १. प्रमाणों को मानने अर्थात् उनके आधार पर न्याय करनेवाला अधिकारी। २. न्यायाधीश। ३. आत्मा या चेतन पुरुष जिसे या जिससे ज्ञान होता है। ४. वह जो विषय से भिन्न और द्रष्टा या साक्षी हो।

प्रमातामह—पुं० [सं० अत्या० स०] [स्त्री० प्रमातामही] परनाना।

प्रमात्रा—स्त्री० [सं० प्रा० स०] उतनी मात्रा जितनी आवश्यक, इष्ट या निर्दिष्ट हो। (क्वॅन्टम)

प्रमाथ—पुं० [सं० प्र √मथ् + घञ्] १. मथन। २. कष्ट देना। पीड़न। ३. नष्ट करना। न रहने देना। ४. मार डालना। ५. बलात् किया जानेवाला संभोग। बलात्कार। ६. बलपूर्वक किसी से कुछ छीन लेना। ७. प्रतिद्वंद्वी को जमीन पर पटककर उस पर चढ़ बैठना और उसे घस्सा देना। ८. शिव का एक गण। ९. धृतराष्ट्र का एक पुत्र। १०. कार्तिकेय का एक अनुचर।

प्रमाथी (थिन्)—वि० [सं० प्र √मथ् + णिनि] [स्त्री० प्रमाथिनी] १. प्रमथन करने या मथनेवाला। २. कष्ट देने या पीड़ित करनेवाला। ३. नष्ट करनेवाला। नाशक। ४. मार डालनेवाला। ५. घातक। ६. काटनेवाला।

पुं० १. बृहत्संहिता के अनुसार बृहस्पति के ऐंद्र नामक तीसरे युग का दूसरा संवत्सर जो निकृष्ट माना गया है। २. वह ओषध जो मुँह, आँख, कान आदि में जमा हुआ कफ बाहर निकाल दे। ३. धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

प्रमाद—पुं० [सं० प्र √मद् + घञ्] १. किसी प्रकार के मद या नशे में होने की अवस्था या भाव। २. वह मानसिक स्थिति जिसमें मनुष्य अभिमान, असावधानता, उपेक्षा, प्रभुत्व, भ्रम आदि के कारण बिना कुपरिणाम का विचार किये कोई अनुचित काम, बात या भूल कर बैठता है। ३. उक्त प्रकार की मानसिक अवस्था में की जानेवाली कोई बहुत बड़ी भूल। ४.

दुर्घटना। ५. बेहोशी। मूर्च्छा। ६. अंतःकरण की दुर्बलता। ७. उन्माद। पागलपन। ८. योग-शास्त्र में समाधि के साधनों की ठीक तरह से भावना न करना या उन्हें ठीक न समझना।

प्रमादतः—अव्य०[सं० प्रमाद+तस्] प्रमाद के कारण।

प्रमादवान् (वत्)—वि० [सं० प्रमाद+तुप्, वत्व] (व्यक्ति) जो प्रमाद करता हो अर्थात् बिना कुपरिणाम का विचार किये अनुचित या गलत काम करता हो।

प्रमादिक—वि०[सं० प्रमाद+ठन्—इक] १. प्रमाद-सम्बन्धी। प्रमाद का। २. प्रमाद करनेवाला। प्रमादशील।

प्रमादिका—स्त्री० [सं० प्रमादिक+टाप्] ऐसी कन्या जिसके साथ किसी ने बलात्कार किया हो।

प्रमादिनी—स्त्री० [सं० प्रमादिन्+ङीप्] संगीत में एक रागिनी जो हिंडोल राग की सहचरी कही गई है।

प्रमादी (दिन्)—वि० [सं० प्रमाद+इनि] [स्त्री० प्रमादिनी] १. (व्यक्ति) जो प्रमाद करता हो। प्रमादवान्। २. पागल।

प्रमान—वि०[सं० प्रमाण या प्रामाणिक] १. प्रामाणिक। २. निश्चित। पक्का। उदा०—यह प्रमान मन मोरे।—तुलसी।

अव्य० की तरह। की भाँति। के समान।

प्रमानना—स०[सं० प्रमाण+ना (प्रत्य०)] १. प्रमाण के रूप में या बिलकुल सत्य मानना। ठीक समझना। २. प्रमाणित या सिद्ध करना। साबित करना। ३. निश्चित या स्थिर करना। ठहराना।

प्रमानी†—वि०=प्रामाणिक।

प्रमापक—वि०[सं० प्र√मा+णिच्, पुक्, +ण्वुल्—अक] प्रमाणित करनेवाला।

पुं० प्रमाण।

प्रमापन—पुं०[सं० प्र√मा+णिच्, पुक्, +ल्युट्—अन] १. मार डालना। मारण। २. नाश। ३. आकृति। रूप।

प्रमापयिता (तृ)—वि० [सं० प्र√मा+णिच्, पुक्, +तृच्] [स्त्री० प्रमापयित्री] १. घातक। २. नाशक। ३. अनिष्टकारक। हानिकारक।

प्रमापित—भू० कृ०[सं० प्र√मा+णिच्, पुक्, +तृच्] १. जो मार डाला गया हो। हत। २. ध्वस्त। विनष्ट।

प्रमापी (पिन्)—वि० [सं० प्र√मा+णिच्, पुक्, +णिनि] १. वध करने-वाला। २. नष्ट करनेवाला।

प्रमायुक—वि०[सं० प्र√मी (हिंसा)+उकञ्] जो ध्वस्त या नष्ट हो सकता है।

प्रमार्जक—वि० [सं० प्र√मृज् (शुद्ध करना)+णिच्+ण्वुल्—अक] १. पोंछने या साफ करनेवाला। २. दूर करने या हटानेवाला।

प्रमार्जन—पुं०[सं० प्र√मृज+णिच्+ल्युट्—अन] १. झाड़-पोंछ या धोकर साफ करना। २. मरम्मत या सुधार करना। ३. दूर करना। हटाना।

प्रमावाद—पुं० [सं० ष० त०] [वि० प्रमावादी] १. मनोविज्ञान का यह मत या सिद्धान्त कि कोई सार्थिक शब्द या संज्ञा सुनकर उसके अनुरूप आकृति प्रस्तुत करने की शक्ति मन में होती है। (कन्सेप्चुअलिज्म)

प्रमास्तिष्क—वि०[सं०] प्रमस्तिष्क से संबंध रखने या उसमें होनेवाला। (सेरिब्रल)

प्रमित—भू० कृ०[सं० प्र√मन्+क्त] १. नापा या मापा हुआ। २. परिमित (अल्प या सीमित)। ३. जाना हुआ। ज्ञात। ४. निश्चित। ५. जिसके सम्बन्ध में प्रमा (अर्थात् प्रमाणों के द्वारा यथार्थ ज्ञान) की प्राप्ति हुई हो। ६. प्रमाणित।

प्रमिताक्षरा—स्त्री०[सं० प्रमित-अक्षर, ब०स०, टाप्] बारह अक्षरों की एक वर्णवृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में सगण, जगण, सगण और सगण (स, ज, स, स) होते हैं।

प्रमिति—स्त्री०[सं० प्र√मि+क्तिन्]। १. नापने की क्रिया या भाव। २. नाप। ३. प्रमाणों के आधार पर प्राप्त किया जाने या होनेवाला यथार्थ ज्ञान।

प्रमीढ़—वि०[सं० प्र√मिह् (सींचना)+क्त] १. गाढ़ा। २. घना। ३. जो मूत्र बनकर या मूत्र के रूप में शरीर के बाहर निकला हो।

प्रमीत—भू० कृ०[सं० प्र√मी+क्त] १. प्रकृत या स्वाभाविक रूप से मरा हुआ। मृत (डिसीज्ड) ३. वैदिक युग में, (पशु) जो यज्ञ में बलि चढ़ाने के लिए मारा गया हो। ३. नष्ट। बरबाद।

पुं० बलि चढ़ाया हुआ पशु।

प्रमीति—स्त्री०[सं० प्र√मी+क्तिन्] १. हनन। वध। २. मनुष्य का प्रकृत या स्वाभाविक रूप से मरना। साधारण रूप से होनेवाली मृत्यु। (डीसीज) ३. नाश। बरबादी।

प्रमीलन—पुं०[सं० प्र√मील् (मूँदना)+ल्युट्—अन] निमीलन। मूँदना।

प्रमीला—स्त्री०[सं० प्र√मील्+अ+टाप्] १. तंद्रा। २. थकावट। शिथिलता। ३. मूँदना। ४. एक स्त्री जिसने अर्जुन से युद्ध किया था और पराजित होने पर उससे विवाह करना स्वीकार किया था।

प्रमीलित—भू० कृ०[सं० प्र√मील्+क्त] मुँदा या मूँदा हुआ।

प्रमीली (लिन्)—वि०[सं० प्र√मील्+णिनि] [स्त्री० प्रमीलिनी] निमीलित करनेवाला। आँखें मूँदनेवाला।

प्रमुख—वि०[सं० प्रा० स०] [भाव० प्रमुखता] १. जो दूसरों के प्रति मुँह करके खड़ा हो। २. सबसे आगे या पहलेवाला। प्रथम। ३. जो सब बातों में औरों से बढ़कर या श्रेष्ठ हो। प्रधान। मुख्य। ४. समस्त पदों के अंत में, जो प्रधान के पद पर हो। जैसे—राज-प्रमुख।

पुं० १. प्रधान। २. प्रधान शासक। ३. विधान-सभा या संसद् का अध्यक्ष। (स्पीकर)

अव्य० १. आगे। सामने। २. उसी समय। तत्काल। ३. इससे आरंभ करके और भी अनेक। आदि। प्रभृति।

प्रमुखता—स्त्री०[सं० प्रमुख+तल्+टाप्] प्रमुख होने की अवस्था, गुण या भाव।

प्रमुग्ध—वि०[सं प्रा० स०] १. मूर्च्छित। अचेत। २. हत बुद्धि। ३. बहुत सुंदर।

प्रमुद—वि०[सं० प्र√मुद्+क]=प्रमुदित।

*पुं०=प्रमोद।

प्रमुदित—भू० कृ०[सं० प्र√मुद्+क्त] जिसे प्रमोद हुआ हो। प्रसन्न तथा हर्षित।

प्रमुदित-वदना—स्त्री०[सं० ब० स०,+टाप्] बारह अक्षरों की मंदाकिनी नामक एक प्रकार की वर्णवृत्ति।

प्रमुषित—भू० कृ० [सं० प्र√मुष् (चुराना)+क्त] १. चुराया या छीना हुआ। २. हतबुद्धि।

प्रमुषिता—स्त्री०[सं० प्रमुषित+टाप्] एक प्रकार की पहेली।

प्रमूढ़—वि०[सं० प्र√मुह् (अविवेक)+क्त] १. घबराया हुआ। २. मोहित ३. मूर्ख। मूढ़।

प्रमृत—भू० कृ०[सं० प्र√मृ (मरना)+क्त] १. मरा हुआ। २. ढका हुआ। ३. दृष्टि से दूर गया हुआ।
पुं० १. मृत्यु। २. कृषि। खेती।

प्रमृष्ट—भू० कृ० [सं० प्र√मृष (सहना)+क्त] १. साफ या स्वच्छ किया हुआ। २. ओप, मसाले आदि से चमकाया हुआ।

प्रमेय—वि० [सं० प्र√मा (माँपना)+यत्] १. नापने योग्य । २. जिसका मान अर्थात तौल या नाप जान सकें। ३. जिसका अवधारण हो सके। जो समझ में आ सके। ४. जो प्रमाणों से सिद्ध किया जा सके।
पुं० १. कोई ऐसी बात, मत या विचार जो स्वयं सिद्ध न हो, बल्कि जिसे तर्क, प्रमाण आदि के द्वारा प्रमाणित या सिद्ध करना अपेक्षित अथवा आवश्यक हो। (थियोरम) २. गणित और ज्यामिति में कोई ऐसी बात जो प्रमाणित या सिद्ध की जानेवाली हो। (थियोरम) ३. ग्रन्थ का अध्ययन या परिच्छेद।

प्रमेह—पुं०[सं० प्र√मिह् (सींचना)+घञ्] एक रोग जिसमें थोड़ी-थोड़ी देर पर पेशाब होने लगता है और उसके साथ शरीर की शुक्र आदि धातुएँ निकलने लगती हैं।

प्रमेही (हिन्)—वि० [सं० प्रमेह+इनि] प्रमेह रोग से ग्रस्त या पीड़ित।

प्रमोक्ष—पुं०[सं० प्रा० स०] मोक्ष।

प्रमोद—पुं०[सं० प्र√मुद् (हर्ष)+घञ्] १. बहुत अधिक बढ़ा हुआ मोद, प्रसन्नता या हर्ष। आमोद या मोद का बहुत बढ़ा हुआ रूप। (मेरिमेन्ट) २. आराम। सुख। ३. बृहस्पति के पहले युग के चौथे वर्ष का नाम। ४. कार्तिकेय का एक अनुचर। ५. प्रमोदा (देखें) नामक सिद्धि। ६. कड़ी सुगंधि।

प्रमोदक—पुं० [सं० प्र√मुद्+णिच्+ण्वुल—अक] एक प्रकार का जड़हन।
वि० प्रमोद अर्थात् आनन्द उत्पन्न करनेवाला।

प्रमोदकर—पुं०[ष० त०] दे० 'मनोरंजन-कर'।

प्रमोदन—पुं० [सं० प्र√मुद्+णिच्+ल्युट्—अन] १. प्रमुदित करना। आनंदित करना। २. [प्र√मुद्+णिच्+ल्यु—अन] विष्णु।

प्रमोदा—स्त्री०[सं० प्रमोद+टाप्] सांख्य के अनुसार आठ प्रकार की सिद्धियों में से एक जिसकी प्राप्ति से आध्यात्मिक दुःखों का नाश हो जाता है और साधक परम प्रसन्न होता है।

प्रमोदित—भू०कृ० [सं० प्रमोद+इतच्] जो प्रमोद या आनन्द से युक्त किया गया हो।
पुं० कुबेर।

प्रमोदिनी—स्त्री०[सं० प्रमोदिन्+ङीप्] जिंगिनी।

प्रमोदी (दिन्)—वि० [सं० प्र√मुद्+णिच्+णिनि] १. प्रमोद-संबंधी। २. प्रमुदित रहनेवाला।

प्रमोधना*—स०=प्रबोधना।

प्रमोह—पुं०[सं० प्र√मुह+घञ्] १. मोह। २. मूर्च्छा। ३. मूर्खता।

प्रमोहन—पुं० [सं० प्र√मुह्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रमोहित] १. मोहित करने की क्रिया या भाव। २. एक प्रकार का अस्त्र जिसके विषय में कहा जाता है कि इसे चलाने से शत्रु के सैनिक मोह के वश में हो जाते थे।

प्रमोहित—भू० कृ० [सं० प्र√मुह+णिच्+क्त] १. मोहित। २. प्रमोह अस्त्र के चलने के फलस्वरूप जो मोह में पड़ गया हो।

प्रमोही (हिन्)—वि० [सं० प्र√मुह+णिच्+णिनि] १. प्रमोह या मोह-संबंधी। २. मोहित करनेवाला।

प्रयंक†—पुं०=पर्यंक।

प्रयंत†—अव्य०=पर्यन्त।

प्रयत—वि०[सं० प्र√यम् (नियंत्रण)+क्त] १. पवित्र। २. संयत। ३. दीन। नम्र। ४. प्रयत्नशील।

प्रयतात्मा (त्मन्)—वि०[सं० प्रयत-आत्मन्, ब० स०] जितेंद्रिय। संयमी।

प्रयति—स्त्री०[सं०√सं प्र√यम्+क्तिन्] संयम।

प्रयत्न—पुं०[सं० प्र√यत्+नङ्] १. वह शारीरिक या मानसिक चेष्टा जो कोई उद्देश्य या कार्य पूरा करने के लिए की जाती है। २. किसी कठिन कार्य की सिद्धि अथवा किसी चीज की प्राप्ति के लिए आदि से अंत तक अध्यवसायपूर्वक किये जानेवाले सभी उद्योग, कृत्य या चेष्टाएँ। कोशिश। चेष्टा। प्रयास। (एफर्ट) ३. न्याय दर्शन के अनुसार जीव या प्राणी के छः गुणों में से एक जो उसकी सक्रिय चेष्टा का सूचक होता है। यह प्रकृति, निवृत्ति और जीवन-कारण या जीवन योनि के भेद से तीन प्रकार का माना गया है। ४. क्रियाशीलता। सक्रियता। ५. सतर्कता। सावधानी। ६. भाषाविज्ञान और व्याकरण में, गले और मुख के अन्दर की वह क्रिया या चेष्टा जो ध्वनियों के उच्चारण के लिए होती है और जिसमें जीभ आस-पास के किसी भीतरी अवयव को छूकर तथा श्वास को रोक या विकृत करके ध्वनियों का उच्चारण कराती है। इसके आभ्यंतर और बाह्य ये दो भेद कहे गये हैं।

प्रयत्नवान् (वत्)—वि०[सं० प्रयत्न+मतुप्, वत्व] [स्त्री० प्रयत्नवती] किसी प्रकार के प्रयत्न या उद्योग में लगा हुआ।

प्रयत्न-शील—वि०[सं० ब० स०]=प्रयत्नवान्।

प्रयस्त—भू० कृ०[सं० प्र√यस् (प्रयत्न)+क्त] १. प्रयत्न में लगा हुआ। २. छौंका, तड़का या बघारा हुआ।

प्रयाग—पुं०[सं० ब० स०] १. वह स्थान जहाँ बहुत से यज्ञ हुए हों। २. यज्ञ। याग। ३. गंगा और यमुना के संगम पर स्थित एक प्रसिद्ध तीर्थ जो आज-कल इलाहाबाद के नाम से प्रसिद्ध है। ४. इन्द्र। ५. घोड़ा।

प्रयागवाल—पुं० [हिं० प्रयाग+वाला (प्रत्य०)] प्रयागतीर्थ का पंडा।

प्रयाचन—पुं०[सं० प्र√याच् (माँगना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रयाचित] गिड़गिड़ाकर माँगना।

प्रयाज—पुं०[सं० प्र√यज् (देवपूजन)+घञ्] दर्शपौर्ण मास यज्ञ के अंतर्गत एक अंग-यज्ञ।

प्रयाण—पुं०[सं० प्र√या (गति)+ल्युट्—अन] १. कहीं जाने के लिए यात्रा आरंभ करना। कूच। प्रस्थान। २. यात्रा। सफर। ३. विशेषतः सैनिक यात्रा। अभियान। चढ़ाई। ४. उक्त अवसर पर बजाया जानेवाला नगाड़ा। ५. मर कर किसी अन्य लोक में जाना। ६. कार्य का अनुष्ठान या आरंभ।

प्रयाणक—पुं०[सं० प्रयाण+कन्] १. यात्रा। २. प्रस्थान। ३. गति।

प्रयाण-काल—पुं०[सं० ष० त०] १. प्रयाण करने अर्थात् चलने या जाने

का समय। यात्रा का समय। २. इस लोक से पर-लोक जाने अर्थात् मरने का समय।

प्रयाण-गीत—पुं०[सं० ष० त०] १. सैनिक अभियान के समय गाये जानेवाले गीत। २. आधुनिक हिंदी साहित्य में वीर-गाथावाले गीतों का वह अंश जिसमें योद्धाओं के वे उल्लासपूर्ण गीत होते हैं, जो वे युद्ध-भूमि की ओर प्रस्थान के समय या किसी प्रकार के संघर्ष के लिए आगे बढ़ने के समय मिलकर गाते चलते हैं। (मार्चिंग सॉंग) जैसे—'प्रसाद' का 'हिमाद्रि तुंग-शृंग से...' वाला गीत।

प्रयात—भू० कृ०[सं० प्र√या (जाना)+क्त] १. गया हुआ। गत। २. मरा हुआ। मृत। ३. सोया हुआ। ४. बहुत चलनेवाला।

पुं० बहुत ऊँचा किनारा जिस पर से गिरने से कोई चीज एकदम नीचे चली जाय। कगार। भृगु।

प्रयान—पुं०=प्रयाण।

प्रयापण—पुं०[सं० प्र√या+णिच्, पुक्, + ल्युट्—अन] [वि० प्रयापणीय, प्रयाप्य, भू कृ० प्रयापित] १. प्रस्थान कराना। २. चलता करना। भगाना या हटाना। ३. किसी से आगे निकलना या बढ़ना।

प्रयास—पुं०[सं० प्र√यस् (प्रयत्न)+घञ्] १. किसी नये अथवा कठिन काम को आरंभ करने के लिए किया जानेवाला उद्योग या प्रयत्न। परिश्रम। मेहनत। २. वह कार्य या पदार्थ जो इस प्रकार किया या बनाया गया हो। जैसे—यह पुस्तक प्रशंसनीय प्रयास है। ३. इच्छा।

प्रयुक्त—भू० कृ० [सं० प्र√युज् (जोड़ना)+क्त] [भाव० प्रयुक्ति] १. जोड़ा या मिलाया हुआ। सम्मिलित। २. जिसे प्रयोग या व्यवहार में लाया गया हो अथवा लाया जा रहा हो। ३. जो किसी काम में लगाया गया हो। ४. दे० 'व्यावहारिक'।

प्रयुक्ति—स्त्री० [सं० प्र√युज्+क्तिन्] १. प्रयुक्त होने की अवस्था या भाव। २. प्रयोग। ३. प्रयोजन।

प्रयोक्ता (क्तृ)—वि० [सं० प्र√युज्+तृच्] १. प्रयुक्त करने अर्थात् किसी चीज को प्रयोग में लानेवाला। २. काम में लगाने या नियुक्त करनेवाला।

पुं० १. ऋण देनेवाला। उत्तमर्ण। महाजन। २. नाटक का सूत्रधार।

प्रयुत—भू० कृ० [सं० प्र√यु (मिलना)+क्त] १. खूब मिला हुआ। २. अस्पष्ट। गड़बड़। ३. समेत। सहित। ४. दस लाख।

पुं० दस लाख की संख्या।

प्रयोग—पुं० [सं० प्र√युज्+घञ्] १. किसी चीज या बात को आवश्यकता अथवा अभ्यासवश काम में लाना। इस्तेमाल। व्यवहार। (यूज़) जैसे—(क) वाक्य में शब्दों का किया जानेवाला प्रयोग। (ख) जाड़े में गरम कपड़ों का किया जानेवाला प्रयोग। (ग) किसी काम या बात के लिए अधिकार या बल का किया जानेवाला प्रयोग। २. आज-कल वैज्ञानिक क्षेत्रों में, किसी प्रकार का अनुसंधान करने या कोई नई बात ढूँढ़ निकालने के लिए की जानेवाली कोई परीक्षणात्मक क्रिया अथवा उसका साधन। ३. जो तथ्य उक्त प्रकार के अनुसंधान से सिद्ध हो चुका हो, उसे दूसरों को समझाने के लिए की जानेवाली वह क्रिया जिससे वह तथ्य ठीक और मान्य सिद्ध होता है। प्रत्यक्ष रूप से कोई काम या बात प्रमाणित या सिद्ध करने की क्रिया। ४. वह क्रिया जो यह जानने के लिए की जाती है कि कोई काम, चीज या बात ठीक तरह से पूरी उतर सकेगी या नहीं। जाँच। परीक्षण। (एक्सपेरिमेन्ट, उक्त तीनों अर्थों के लिए) ५. किसी प्रकार की क्रिया का प्रत्यक्ष रूप से होनेवाला साधन। ६. ठीक तरह से काम करने का ढंग या विधि। ७. प्राचीन भारतीय राजनीति में साम, दाम, दंड और भेद की नीति का किया जानेवाला उपयोग या व्यवहार। ८. तंत्रशास्त्र में, वह पूजा-पाठ जो किसी विशिष्ट उद्देश्य की सिद्धि के लिए नियमित रूप से कुछ समय तक विधिपूर्वक किया जाता है। उच्चाटन, मारण, मोहन आदि के लिए किये जानेवाले तांत्रिक उपचार। ९. वैद्यक में, रोगी का ऐसा उपचार या चिकित्सा जो उसके देश, काल, शारीरिक स्थिति आदि का ध्यान रखते हुए की जाती है। १०. व्याकरण में, कर्ता, कर्म अथवा क्रियार्थक संज्ञा के लिंग, वचन आदि के अनुसार प्रयुक्त होनेवाला क्रिया-पद की संज्ञा जो कर्ता के अनुसार होने पर कर्तृ प्रयोग, कम के अनुसार होने पर कर्माणि प्रयोग और भाव के अनुसार होने पर भावे प्रयोग कहलाता है। ११. साहित्य में, रूपकों आदि का अभिनय। १२. तर्क-शास्त्र में अनुमान के पाँचों अवयवों का कथन या प्रतिपादन। १५. वह उपकरण जिससे कोई काम होता हो। १६. वैदिक युग में यज्ञ आदि कर्मों के अनुष्ठान का बोध करानेवाली विधि। पद्धति। १७. धार्मिक ग्रन्थ या शास्त्र। १८. प्राचीन भारतीय लोक-व्यवहार में अपनी आय बढ़ाने के लिए लोगों को सूद पर ऋण देने का व्यवसाय। १९. कार्य का अनुष्ठान या आरम्भ। २०. तरकीब। युक्ति। २१. उदाहरण। दृष्टांत। २२. परिणाम। फल। २३. उपहार। भेंट। २४. इंद्रजाल। २५. घोड़ा।

प्रयोगतः (तस्)—अव्य० [सं० प्रयोग+तस्] प्रयोग द्वारा। परिणामरूप में। अनुसार। कार्यतः।

प्रयोग-वाद—पुं० [सं० ष० त०] यह आधुनिक साहित्यिक मत या सिद्धांत कि अब तक जो साहित्यिक परम्पराएँ चली आ रही हैं, उन्हें प्रयोगात्मक परीक्षण के द्वारा जाँच लेना चाहिए; और उनमें से जो अनावश्यक या निरर्थक हों, उनके स्थान पर नई परम्पराएँ चलाने के लिए नये प्रयोग करके देखना चाहिए। (एक्सपेरिमेंटलिज्म)

विशेष—इस वाद के अनुयायी कवि या लेखक संसार में छाये हुए अन्धकार, अनाचार और विषाद में अपने आपको नये उचित मार्ग का अन्वेषक तथा अपनी कृतियों या रचनाओं को प्रयोग मात्र मानते हैं।

प्रयोगवादी (दिन्)—वि० [सं० प्रयोगवाद+इनि] प्रयोगवाद-सम्बन्धी। प्रयोगवाद का।

पुं० वह जो प्रयोगवाद का अनुयायी, पोषक या समर्थक हो।

प्रयोग-शाला—स्त्री० [ष० त०] वह स्थान जहाँ पदार्थ-विज्ञान, रसायन शास्त्र आदि-विषयक तथ्यों को समझने, जानने या नई बातों का पता लगाने की दृष्टि से विविध प्रयोग किये जाते हों। (लेबोरेटरी)

प्रयोगातिशय—पुं० [सं० प्रयोग-अतिशय, ष० त०] साहित्य में, रूपक की पाँच प्रकार की प्रस्तावनाओं में से एक जिसमें सूत्रधार प्रस्तावना की समाप्ति होते होते किसी नट या पात्र को मंच की ओर आते हुए देखकर यह कहता हुआ प्रस्थान करता हूँ—अरे. . .वह तो आ रहा है या आ पहुँचा।

प्रयोगार्थ—पुं० [सं० प्रयोग-अर्थ, ष० त०] मुख्य कार्य की सिद्धि के लिए किया जानेवाला गौण कार्य।

प्रयोगार्ह—वि० [सं० प्रयोग√अर्ह (योग्य होना)+अच्] जिसका प्रयोग किया जा सके। प्रयोग के योग्य।

प्रयोगी (गिन्)—वि० [सं० प्रयोग+इनि] १. प्रयोग करनेवाला। प्रयोगकर्ता। २. प्रेरक। ३. जिसके सामने कोई उद्देश्य हो।

प्रयोग्य—पुं० [सं० प्र√युज्+ण्यत्] (गाड़ी में जोता जानेवाला) घोड़ा।

वि० प्रयोग में आने या लाये जाने के योग्य।

प्रयोजन—पुं० [सं० प्र√युज्+ल्युट्—अन] [वि० प्रयोजनीय, प्रयोज्य, भू० कृ० प्रयुक्त] १. किसी काम, चीज या बात का प्रयोग करने अर्थात् उसे व्यवहार में लाने की क्रिया या भाव। उपयोग। प्रयोग। व्यवहार। २. वह उद्देश्य जिससे प्रेरित होकर मनुष्य कोई काम करने में प्रवृत्त होता और उसे पूरा करता है। अभिप्राय। मतलब। (पर्पज़) जैसे—इन बातों से हमारा प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा। ३. हिन्दुओं में, कोई अच्छा, धार्मिक, बड़ा या शुभ काम या उत्सव। जैसे—जब उनके यहाँ कोई प्रयोजन होता है, तब वे हमें अवश्य बुलाते हैं।

प्रयोजनवती लक्षणा—स्त्री० [सं० प्रयोजन+मतुप्, वत्व, +ङीप्, प्रयोजनवती लक्षणा, व्यस्तपद] साहित्य में, लक्षणा का वह प्रकार या भेद जिसमें मुख्य अर्थ का बाध होने पर किसी विशेष प्रयोजन के लिए मुख्य अर्थ से संबद्ध किसी दूसरे अर्थ का ज्ञान कराया जाता है। जैसे—'वह गाँव पानी में बसा है।' इसलिए कहा जाता है कि वह गाँव किसी जलाशय के किनारे पर या कई ओर पानी से घिरा हुआ होता है। यह लक्षणा दो प्रकार की होती है—गौणी और शुद्धा।

प्रयोजनीय—वि० [सं० प्र√युज्+अनीयर्] १. प्रयोग में लाने योग्य। उपयोगी। २. काम या मतलब का।

प्रयोज्य—वि० [सं० प्र√युज्+ण्यत्] १. जो प्रयोग में लाया जाने को हो अथवा लाया जा सके। (एप्लिकेबुल) २. जो अधिकार के रूप में काम में लाये जाने के योग्य हो अथवा लाया जा सके। ३. आचरित होने के योग्य। जिसका आचरण हो सके।

पुं० १. नौकर। भृत्य। २. वह धन जो किसी काम में लगाया जाने को हो।

प्ररक्षण—पुं० [सं० प्र√रक्ष् (रक्षा करना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्ररक्षित]=रक्षण।

प्ररुह—वि० [सं० प्र√रुह्+क] ऊपर की ओर जाने या बढ़नेवाला।

प्ररूढ़—भू० कृ० [सं० प्र√रुह्+क्त] [भाव० प्ररूढ़ि] १. उगा हुआ। २. आगे या ऊपर बढ़ा हुआ।

प्ररूप—पुं० [सं० प्रा० स०] [वि० प्रारूपिका] किसी वर्ग की वस्तुओं, व्यक्तियों आदि में से कोई एक ऐसी वस्तु या व्यक्ति जिससे उस वर्ग के सामान्य गुणों, विशेषताओं आदि का बोध हो जाता हो। (टाइप)

प्ररूपण—पुं० [सं० प्र√रूप्+णिच्+ल्युट्—अन] १. व्याख्या करना। २. समझाना।

प्ररूपी (पिन्)—वि० [सं० प्ररूप+इनि] प्ररूप के रूप में माना या स्वीकार किया जानेवाला। प्रारूपिक। (टिपिकल्)

प्ररोचन—पुं० [सं० प्र√रुच् (दीप्ति)+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्ररोचित] १. किसी काम या बात के प्रति रुचि उत्पन्न करना। शौक पैदा करना। २. अनुरक्त या मोहित करना। ३. उत्तेजित करना। उत्तेजन।

प्ररोचना—स्त्री० [सं० प्र√रुच्+णिच्+युच्—अन,+टाप्] १. नाटक के अभिनय में प्रस्तावना के समय सूत्रधार नट, नटी आदि का नाटक और नाटककार की प्रशंसा में कुछ ऐसी बातें कहना जिससे दर्शकों में अभिनय के प्रति रुचि उत्पन्न हो। २. अभिनय के अन्तर्गत कही जानेवाली ऐसी बात जिससे किसी भाव, घटना या दृश्य के प्रति लोगों में रुचि उत्पन्न हो। ३. दे० 'प्ररोचन'।

प्ररोधन—पुं० [सं० प्र√रुध् (रोकना)+णिच्+ल्युट्—अन] ऊपर उठाना या चढ़ाना।

प्ररोह—पुं० [सं० प्र√रुह्+अच्] १. आरोह। चढ़ाव। २. पौधों आदि का उगकर ऊपर की ओर बढ़ना। ३. अंकुर। ४. कल्ला। कोंपल। ५. संतान। ६. किस्सा। ७. तुन का पेड़। नदी वृक्ष। ८. अर्बुद।

प्ररोहण—पुं० [सं० प्र√रुह्+ल्युट्—अन] १. ऊपर की ओर जाने या बढ़ने की क्रिया या भाव। २. अंकुर, कल्ले आदि का निकलना। उत्पन्न होना।

प्ररोह-भूमि—स्त्री० [सं० ष० त०] उर्वरा भूमि। उपजाऊ जमीन।

प्ररोहशाखी (खिन्)—पुं० [सं० प्ररोह-शाखा, मध्य० स०, प्ररोहशाखा-इनि] ऐसा वृक्ष जिसकी कलम लगाने से लग जाती हो और नये वृक्ष का रूप धारण कर लेती हो।

प्ररोही (हिन्)—वि० [सं० प्ररोह+इनि] [स्त्री० प्ररोहिणी] १. ऊपर की ओर जाने या बढ़नेवाला। २. उगनेवाला। ३. उत्पन्न होनेवाला।

प्रलंब—वि० [सं० प्र√लंब्+अच्] १. जो ऊपर से नीचे की ओर लटक रहा हो। २. टाँगा या लटकाया हुआ। ३. लम्बा। ४. किसी ओर निकला या बढ़ा हुआ। ५. काम करने में ढीला। सुस्त।

पुं० १. लटकने की क्रिया या भाव। २. काम में होनेवाला व्यर्थ का विलंब। ३. पेड़ की टहनी। डाल। शाखा। ४. बीज आदि का अंकुर। ५. खीरा। ६. राँगा। ७. स्त्री या मादा की छाती। स्तन। ८. गले में पहनने का एक प्रकार का हार। ९. एक दानव जिसे बलराम ने मारा था।

प्रलंबक—पुं० [सं० प्रलंब+कन्] एक सुगंध-तृण। रोहिष।

प्रलंबन—पुं० [सं० प्र√लंब्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रलंबित] १. प्रलंब की स्थिति में किसी को लाना। २. लंबा करना। ३. देर लगाना। ४. अवलंबन। सहारा लेना।

प्रलंबित—भू० कृ० [सं० प्र√लंब्+क्त] १. प्रलंब के रूप में लाया हुआ। २. (कर्मचारी) जिसका प्रलंबन हुआ हो।

प्रलंबी (बिन्)—वि० [सं० प्र√लंब्+णिनि] [स्त्री० प्रलंबिनी] १. नीचे की ओर दूर तक लटकनेवाला। २. लंबा। ३. अवलंब। या सहारा लेनेवाला। ४. काम में व्यर्थ देर लगानेवाला। ५. दे० 'प्रलंब'।

प्रलंभन—पुं० [सं० प्र√लभ्+ल्युट्—अन, मुम्] [वि० प्रलब्ध] १. लाभ होना। प्राप्ति होना। २. धोखा देना।

प्रलपन—पुं० [सं० प्र√लप् (कहना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रलपित] १. बात-चीत या वार्तालाप करना। २. प्रलाप या बकवाद करना।

प्रलब्ध—भू० कृ० [सं० प्र√लभ्+क्त] १. जो छला गया हो। २. धोखा खाया हुआ। ३. ग्रहण किया गया हो। ग्रहीत।

प्रलब्धा (ब्धृ)—वि० [सं० प्र√लभ्+तृच्] धोखा देने या छलनेवाला।

प्रलयंकर—वि० [सं० प्रलय√कृ (करना)+खच्, मुम्] [स्त्री० प्रलयंकरी] प्रलयकारी। सर्वनाशकारी।

प्रलय—पुं० [सं० प्र√ली (विलीन होना)+अच्] १. पूरी तरह से होनेवाला लय अर्थात् नाश या विलीनता। २. अधिकतर प्राचीन जातियों और देशों में प्रचलित प्रवादों के अनुसार सारी सृष्टि का वह विनाश जो बहुत प्राचीन काल में किसी बहुत बड़ी और जगत्‌व्यापी बाढ़ के फल-स्वरूप हुआ था। (डिल्यूज)

विशेष—भारतीय पुराणों के अनुसार प्रत्येक कल्प का अन्त होने पर अर्थात् ४३,२०,००,००० वर्ष बीतने पर सारी सृष्टि का प्रलय होता है; और सृष्टि अपने मूल कारण अर्थात् प्रकृति में लीन हो जाती है; और इसके उपरांत नये सिरे से सृष्टि की रचना होती है। पिछली बार वैवस्वत मनु, के समय ऐसा प्रलय हुआ था। ईसाइयों, मुसलमानों आदि में प्रचलित प्रवादों के अनुसार पिछली बार हजरत नूह के समय ऐसा प्रलय हुआ था। वेदांत में प्रलय के ये चार प्रकार या भेद कहे गये हैं—नित्य, नैमित्तिक, प्राकृत और आत्यंतिक।

३. बहुत ही उत्कट या तीव्र रूप में और विस्तृत भू-भाग में होनेवाला भयंकर नाश या बरबादी। जैसे—दोनों महायुद्धों के समय सारे युरोप में प्रलय का दृश्य उपस्थित हो गया था। ४. मृत्यु। ५. बेहोशी। मूर्च्छा। ६. साहित्य में नौ सात्विक अनुभावों में से एक जिसमें प्रिय के वियोग के कारण मूर्च्छा, निद्रा, चेतनहीनता, निश्चेष्टता, श्वासावरोध, स्तब्धता आदि बातें होती हैं और फलतः प्रिया की प्राण-हीनता दीख पड़ने लगती है। ७. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र।

प्रलव—पुं० [सं० प्र√लू+अप्] किसी चीज का छोटा टुकड़ा।

प्रलाप—पुं० [सं० प्र√लप् (कहना)+घञ्] [कर्ता प्रलापी] १. बात-चीत करना। वार्तालाप। २. मानसिक विकार या शारीरिक कष्ट के कारण पागलों की तरह या बे-सिर-पैर की बातें करना। ३. रो-रोकर किसी को अपना कष्ट या व्यथा सुनाना। ४. साहित्य में, शृंगार रस के प्रसंग में विरह से व्याकुल होकर इस रूप में बातें करना कि मानो वे सामने बैठे हुए प्रेमी या प्रेमिका से ही कही जा रही हों। ५. कुछ विकट रोगों में वह अवस्था जिसमें रोगी बहुत ही विकल होकर पागलों की तरह अंडबंड बातें बकता है। (डिलीरियम)

प्रलापक—पुं० [सं० प्र√लप्+णिच्+ण्वुल्—अक] एक प्रकार का सन्निपात जिसमें रोगी प्रलाप करता अर्थात् अनाप-शनाप बकता है, और उसका चित्त ठिकाने नहीं रहता।

वि० १. प्रलाप करनेवाला। २. व्यर्थ या अंड-बंड बकनेवाला।

प्रलापी (पिन्)—वि० [सं० प्र√लप्+घिनुण्] [स्त्री० प्रलापिनी] १. प्रलाप करनेवाला। २. व्यर्थ बकवाद करने या अंड-बंड बकनेवाला।

प्रलाभ—पुं० [सं० प्रा० स०] यथेष्ठ या विशिष्ट रूप में होनेवाला लाभ।

प्रलाभी (भिन्)—वि० [प्रलाभ+इनि] १. (काम, पद या व्यवस्था) जिससे या जिसमें यथेष्ठ आर्थिक लाभ होता हो। २. (व्यक्ति) जो प्रायः या सदा बहुत अधिक आर्थिक लाभ के लिए उत्सुक तथा प्रयत्नशील रहता हो। (ल्यूक्रेटिव, उक्त दोनों अर्थों में)

प्रलीन—भू० कृ० [सं० प्र√ली+क्त] [भाव० प्रलीनता] १. गला या घुला हुआ। २. (स्थान) जहाँ प्रलय हुई हो फलतः ध्वस्त और नष्ट-भ्रष्ट। ३. जड़ के समान निश्चेष्ट। ४. मरा हुआ। ५. छिपा हुआ। तिरोहित।

प्रलीनता—स्त्री० [सं० प्रलीन+तल्+टाप्] १. प्रलीन होने की अवस्था या भाव। २. जड़त्व। जड़ता। ३. विनाश।

प्रलीनेंद्रिय—वि० [सं० प्रलीन-इन्द्रिय, ब० स०] जिसकी इन्द्रियाँ शिथिल या नष्ट हो गई हों।

प्रलुब्ध—वि० [सं० प्र√लुभ् (चाहना)+क्त] [स्त्री० प्रलुब्धा] १. लोभ में पड़ा हुआ। २. किसी पर अनुरक्त या लुभाया हुआ। मोहित। ३. दूसरों को धोखा देनेवाला। वंचक।

प्रलेख—पुं० [सं० प्र√लिख् (लिखना)+घञ्] १. विधिक क्षेत्र में काम आ सकने योग्य कोई लिखा हुआ कागज या लेख। लेख्य। दस्तावेज। (डॉक्यूमेन्ट) २. ऐसा अनुबंध-पत्र जो निष्पादक या लिखनेवाला अपने हस्ताक्षर करके दूसरे पक्ष को देता है। (डीड)

प्रलेखक—पुं० [सं० प्र√लिख्+ण्वुल्—अक] लेख्य लिखनेवाला कर्मचारी। अर्जीनवीस। कातिब।

प्रलेखन—पुं० [सं०] लेख्य आदि लिखने का काम।

प्रलेख-पोषण—पुं० [सं०] आवश्यकता के अनुसार प्रलेखों या उद्दिष्ट निर्देशों का यथास्थान अंकन या उल्लेख करना। (डाक्यूमेन्टेशन)

प्रलेप—पुं० [सं० प्र √लिप्+घञ्] १. किसी अंग विशेषतः त्वचा पर किसी ओषधि का किया जानेवाला लेप। २. किसी गाढ़ी चीज का किसी दूसरी चीज पर किया जानेवाला लेप। ३. वह चीज जो उक्त रूप में लगाई जाय।

प्रलेपक—वि० [सं० प्र √लिप्+ण्वुल्—अक] प्रलेप या लेप करनेवाला।

पुं० वह ज्वर जो क्षय आदि रोगों के साथ होता है और जिसमें शरीर का चमड़ा रूखा या शुष्क होने लगता है। (हेक्टिक फीवर)

प्रलेपन—पुं० [सं० प्र √लिप्+ल्युट्—अन] १. लेप करने या लगाने की क्रिया या भाव। २. पोताई।

प्रलेप्य—वि० [सं० प्र √लिप्+ण्यत्] १. जो लेप के रूप में लगाया जा सके। २. जिस पर लेप लगाया जा सके या लगाया जाने को हो।

पुं० घुँघराले बाल।

प्रलेह—पुं० [सं० प्र √लिह् (आस्वादन करना)+घञ्] मांस के कूटे या पीसे हुए अंशों को तलकर बनाया जानेवाला एक व्यंजन। कोरमा।

प्रलेहन—पुं० [सं० प्र √लिह्+ल्युट्—अन] चाटना।

प्रलोप—पुं० [सं० प्र √लुप् (काटना)+घञ्] लोप।

प्रलोभ—पुं० [सं० प्र √लुभ् (लालच करना)+घञ्] १. बहुत अधिक लालच या लोभ। २. प्रलोभन।

प्रलोभक—वि० [सं० प्र√लुभ्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. प्रलोभन देनेवाला। लालच देनेवाला। २. लुभानेवाला।

प्रलोभन—पुं० [सं० प्र√लुभ्+णिच्+ल्युट्—अन] १. किसी के मन

में लोभ उत्पन्न करना। किसी को लोभी बनाना। २. वह चीज या बात जो किसी के मन में लोभ या लालच उत्पन्न करती हो। (टेम्पटेशन) ३. कोई कार्य विशेषतः बुरा कार्य करने के लिए होनेवाली वृत्ति। लोभ। ४. किसी के मन में अपने प्रति अनुराग या प्रेम उत्पन्न करना। लुभाना।

प्रलोभित—भू० कृ० [सं० प्र√लुभ्+णिच्√क्त] १. जिसके मन में लोभ उत्पन्न किया गया हो या हुआ हो। ललचाया हुआ। २. लुभाया हुआ।

प्रलोभी (भिन्)—वि० [सं० प्र√लुभ्+णिनि] प्रलोभ में फँसनेवाला। लोभ या लालच करनेवाला।

प्रलोल—वि० [सं० प्रा० स०] १. लटकता और हिलता हुआ। २. क्षुब्ध।

प्रवंचक—पुं० [सं० प्र√वञ्च्+णिच+ण्वुल्—अक] १. वंचन करनेवाला। ठग। २. धोखेबाज। धूर्त।

प्रवंचन—पुं० [सं० प्र√वञ्च्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रवंचित] धोखा देने, छलने या ठगने का काम। धोखेबाजी। ठगी।

प्रवंचना—स्त्री० [सं० प्र√वञ्च्+णिच्+युच्—अन, टाप्] छलने, धोखा देने अथवा ठगने का कोई कार्य। छलपूर्ण कार्य।

प्रवंचित—भू० कृ० [सं० प्र√वञ्च्+णिच्+क्त] जो अथवा जिसे छला, या ठगा गया हो। धोखा दिया या खाया हुआ।

प्रवक्ता (क्तृ)—वि० [सं० प्रा० स०] १. प्रवचन करनेवाला। २. अच्छी तरह समझानेवाला।

पुं० १. प्राचीन भारत में वह विद्वान् जो प्रोक्त साहित्य का प्रवचन करता या शिक्षा देता था। २. आज-कल वह जो किसी शासक-मंडल, संस्था आदि की ओर से आधिकारिक रूप से कोई बात कहता या मत प्रकट करता हो। (स्पोक्समैन)

प्रवचन—पुं० [सं० प्र√वच् (बोलना)+ल्युट्—अन] [वि० प्रवचनीय] १. कोई बात या विषय अच्छी तरह और पांडित्यपूर्वक बतलाना या समझाना। २. धार्मिक, नैतिक आदि गंभीर विषयों में परोपकार की दृष्टि से कही जानेवाली अच्छी तथा विचारपूर्ण बातें। ३. उक्त प्रकार से होनेवाला उपदेशपूर्ण भाषण।

प्रवट—पुं० [सं०√प्रु (सरकना)+अट] गेहूँ।

प्रवण—वि० [सं०√प्रु+ल्युट् (अधिकरण)—अन] [भाव० प्रवणता] १. जो नीचे की ओर झुका चला गया हो। ढालुआँ। २. झुका हुआ। नत। ३. किसी काम या बात की ओर ढला हुआ। प्रवृत्त। ४. नम्र। विनीत। ५. सच्चा और साफ व्यवहार करनेवाला। खरा। ६. उदार और सहृदय। ७. अनुकूल। मुआफिक। ८. चिकना। स्निग्ध। ९. लंबा। १०. कुशल। दक्ष। निपुण।

पुं० १. ढलान। २. चौराहा। ३. उदर। ४. क्षण। ५. आहुति।

प्रवणता—स्त्री० [सं० प्रवण+तल्+टाप्] १. प्रवण होने की अवस्था, गुण या भाव। २. ढलान। ३. प्रवृत्ति।

प्रवत्सथ—वि० [सं०] जो विदेश यात्रा को उद्यत हो।

प्रवत्स्यत्पतिका—स्त्री० [सं० ब० स०,+कप्+टाप्] साहित्य में वह नायिका जिसका पति विदेश जानेवाला हो।

प्रवत्स्यद्भर्तृका—स्त्री० [सं० प्रवत्स्यत्-भर्तृ, ब० स०,+कप्+टाप्]=प्रवत्स्यत्पतिका।

प्रवदन—पुं० [सं० प्र√वद् (बोलना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रवदत] घोषणा।

प्रवर—वि० [सं० प्रा० स०] १. सबसे अच्छा, बढ़कर या श्रेष्ठ। २. अवस्था या वय में सबसे बड़ा। (सीनियर) ३. अधिकार, योग्यता आदि में सबसे बड़ा माना जानेवाला। (सुपीरियर)

पुं० १ अग्नि का एक विशिष्ट प्रकार का आवाहन या आहुति। २. पूर्व पुरुषों का क्रम या श्रृंखला। ३. कुल। वंश। ४. ऐसे ऋषि या मुनि की वंश-परम्परा या शिष्य-परम्परा जो किसी गोत्र का प्रवर्तक या संस्थापक रहा हो।

विशेष—हमारे यहाँ प्रवरों के एक-प्रवर द्विप्रवर, त्रिप्रवर और पंच-प्रवर भेद या प्रकार कहे गये हैं।

५. वंशज। संतान। ६. हिन्दुओं के ४२ गोत्रों में से एक। ६. उत्तरीय वस्त्र। चादर। ८. अगर की लकड़ी।

प्रवर-गिरि—पुं० [सं० कर्म० स०] मगध देश के एक पर्वत का प्राचीन नाम।

प्रवरण—पुं० [सं० प्र√वृ+ल्युट्—अन] १. देवताओं का आवाहन। २. बौद्धों का एक उत्सव जो वर्षा ऋतु के अन्त में होता था।

प्रवर समिति—स्त्री० [कर्म० स०] किसी विषय की छानबीन करने और विचार-विमर्श के बाद निश्चित मत प्रकट करने के लिए बनाई जानेवाली वह समिति जिसमें उस विषय के चुने हुए विशेषज्ञ रखे जाते हैं। (सिलेक्ट कमेटी)

प्रवरा—स्त्री० [सं० प्रवर+टाप्] १. अगुरु या अगर की लकड़ी। २. दक्षिण भारत की एक छोटी नदी जो गोदावरी में मिलती है।

प्रवर्ग—पुं० [सं० प्र√वृज् (छोड़ना)+घञ्] १. हवन करने की अग्नि। होमाग्नि। २. किसी वर्ग के अन्तर्गत किया हुआ कोई छोटा विभाग। ३. विष्णु।

प्रवर्त—पुं० [सं० प्र√वृत् (बरतना)+घञ्] १. कोई कार्य आरम्भ करना। अनुष्ठान। प्रवर्तन। ठानना। २. एक प्रकार के मेघ या बादल। ३. वैदिक काल का एक प्रकार का गोलाकार आभूषण या गहना।

प्रवर्तक—वि० [सं० प्र√वृत्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. प्रवर्तन (देखें) करनेवाला। २. किसी काम या बात का आरंभ अथवा प्रचलन करनेवाला। प्रतिष्ठाता। ३. काम में लगाने या प्रवृत्त करनेवाला। प्रेरित करनेवाला। ४. उभारने या उसकानेवाला। ५. गति देने या चलानेवाला। ६. नया आविष्कार करनेवाला। ७. न्याय या विचार करनेवाला।

पुं० साहित्य में, रूपकों की प्रस्तावना का वह प्रकार या भेद जिसमें प्रस्तुत कार्य से संबद्ध कृत्य का परित्याग करके कोई और काम कर बैठने का दृश्य उपस्थित किया जाता है। जैसे—संस्कृत के 'महावीर चरित' में राम की वीरता से प्रसन्न होकर परशुराम उनसे लड़ने का विचार छोड़कर प्रेमपूर्वक उनका आलिंगन करने लगते हैं।

प्रवर्तन—पुं० [सं० प्र√वृत्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रवर्तित, वि० प्रवर्तनीय, प्रवर्त्य] १. नया काम या नई बात का आरंभ

करना। श्रीगणेश करना। ठानना। २. नये सिरे से प्रचलित करना। ३. जारी करना। जैसे—अध्यादेश का प्रवर्तन। ४. प्रवृत्त करना। ५. उत्तेजित करना। ६. दुरुत्साहन।

प्रवर्तना—स० [सं० प्रवर्त्तन] प्रवर्तित या प्रवृत्त करना।
स्त्री० [सं०प्र√वृत्+णिच्+युच्—अन,+टाप्]=प्रवर्तन।

प्रवर्तित—भू० कृ० [सं० प्र√वृत्+णिच्+क्त] १. ठाना हुआ। आरब्ध। २. चलाया हुआ। ३. निकाला हुआ। ४. उत्पन्न। ५. उभरा हुआ। ६. उत्तेजित।

प्रवर्द्धन—पुं० [सं० प्र√वृध्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रवर्द्धित] १. अच्छी तरह बढ़ाना। २. बढ़ती। वृद्धि।

प्रवर्षण—पुं० [सं० प्र√वृष् (बरसना)+ल्युट्—अन] १. वर्षा ऋतु की पहली वर्षा। २. वर्षा। ३. किष्किंधा का एक पर्वत जहाँ राम-लक्ष्मण ने कुछ समय तक निवास किया था।

प्रवर्ह—वि० [सं० प्र√वृह् (बढ़ना)+अच्] प्रधान। श्रेष्ठ।

प्रवलाकी (किन्)—पुं० [सं०] १. मोर। मयूर। २. साँप।

प्रवल्हिका—स्त्री० [सं०]=प्रहेलिका (पहेली)।

प्रवसथ—पुं० [सं० प्र√वस् (बसना)+अथच्] १. प्रस्थान। २. प्रवास।

प्रवसन—पुं० [सं० प्र√वस्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रवसित] अपना मूल निवास स्थान छोड़कर किसी दूसरी जगह जा रहना या जा बसना।

प्रवस्तु—स्त्री० [सं० प्रा० स०] वह वस्तु जो वस्तुओं के किसी बड़े वर्ग या विभाग के अन्तर्गत या उसके अंग के रूप में हो। (आर्टिकिल) जैसे—कपड़े बनाने के उपकरण या सामग्री में कपास के सिवा ऊन भी एक प्रमुख प्रवस्तु है।

प्रवह—पुं० [सं० प्र√वह् (बहना)+अच्] १. बहुत अधिक या तेज बहाव। २. ऐसा कुंड या तालाब जिसमें नाली से पानी पहुँचता हो। ३. सात वायुओं में से एक वायु। ४. अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक जिह्वा। ५. घर या बस्ती से बाहर निकलना।

प्रवहण—पुं० [सं० प्र√वह्+ल्युट्—अन] १. ले जाना। २. छकड़ा, डोली, नाव, पालकी, रथ आदि सवारियाँ विशेषतः छाई हुई सवारियाँ। ३. एक प्रकार का छोटा परदेदार रथ। बहली। ४. कन्या का विवाह करके उसे वर के हाथ सौंपना।

प्रवहमान—वि० [सं० प्र√वह्+शानच्, मुक्] जो बह रहा हो।

प्रवाक् (च्)—वि० [सं० ब० स०] १. घोषणा करनेवाला। २. बकवादी। ३. शेखी बघारनेवाला।

प्रवाचक—पुं० [सं० प्रा० स०] अच्छा प्रवचन करनेवाला व्यक्ति या महापुरुष।

प्रवाण—पुं० [सं० प्र√वे (बुनना)+ल्युट्—अन] कपड़े का छोर या अंचल बनाना।

प्रवात—पुं० [सं० प्रा० स०; ब० स०] १. स्वच्छ वायु। साफ हवा। २. जोर की या तेज हवा। ३. ऐसा स्थान जहाँ प्रायः तेज हवा चलती हो। ४. ढालुई जमीन या स्तर। उतार। प्रवण। ५. दे० 'प्रभंजन'। वि० जो तेज हवा के कारण झोंके खा रहा या इधर-उधर हिल रहा हो। हिलता हुआ।

प्रवाद—पुं० [सं० प्र√वद् (बोलना)+घञ्] १. परस्पर होनेवाली बातचीत। वार्तालाप। २. जनरव। जन-श्रुति। ३. झूठी बदनामी।

प्रवादक—वि० [सं० प्र√वद्+णिच्+ण्वुल्—अक] बाजा बजानेवाला।

प्रवादी (दिन्)—वि० [सं० प्रवाद+इनि] १. प्रवाद-संबंधी। २. प्रवाद करनेवाला।

प्रवान*—वि० [सं० प्रमाण] १. प्रामाणिक। २. समान।
पुं० प्रमाण।

प्रवार—पुं० [सं० प्र√वृ (ढकना)+घञ्] १. प्रवर। २. वस्त्र। ३. चादर या दुपट्टा।

प्रवारण—पुं० [सं० प्र√वृ+णिच्+ल्युट्—अन] १. वारण करना। मनाही। २. किसी कामना से किया जानेवाला दान। ३. बौद्धों का एक उत्सव जो वर्षा ऋतु बीत जाने पर होता था।

प्रवाल—पुं० [सं० प्र√वल् (काँपना)+ण] १. मूँगा। विद्रुम। २. नया और मुलायम पत्ता। कल्ला। कोंपल। ३. बीन, सितार आदि का बीचवाला लंबा दंड।

प्रवाल-द्वीप—पुं० [सं० ष० त०] प्रवाल या मूँगे के वे बड़े और लंबे-चौड़े ढूह जो समुद्रों में अनेक स्थानों में पाये जाते हैं और जिनमें मूँगे के जन्तुओं के उपनिवेश होते हैं। दे० 'मूँगा'। (कॉरल आइलैंड)

प्रवाल श्रेणी—पुं० [सं०] समुद्र की सतह पर प्रकट होनेवाली मूँगे के कीड़ों से बनी हुई चट्टानों की शृंखला।

प्रवाली (लिन्)—वि० [सं० प्रवाल+इनि] १. मूँगे के रंग का। मूँगिया। २. मूँगे का।
स्त्री० समुद्र में मूँगे की चट्टानों का वृत्ताकार घेरा। (एटोल)

प्रवास—पुं० [सं० प्र√वस् (बसना)+घञ्] १. अपनी जन्म-भूमि छोड़कर विदेश में जाकर किया जानेवाला वास। २. यात्रा। सफर। ३. विदेश। परदेश।

प्रवासन—पुं० [सं० प्र√वस्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० प्रवासित, प्रवास्य] १. विदेश में रहना। २. देश-निकाला। ३. वध।

प्रवास-पत्र—पुं० [सं०] राजकीय अधिकारियों से मिलनेवाला वह अधिकारपत्र, जिससे किसी को अपना देश छोड़कर दूसरे देश में बसने या रहने की अनुमति मिलती है।

प्रवासित—भू० कृ० [सं० प्र√वस्+णिच्+क्त] १. देश से निकाला हुआ। जिसे देश-निकाले का दंड मिला हो। २. मारा हुआ।

प्रवासी (सिन्)—वि० [सं० प्रवास+इनि] [स्त्री० प्रवासिनी] जो प्रवास में हो।

प्रवास्य—वि० [सं० प्र√वस्+णिच्+यत्] १. विदेश भेजने के योग्य। २. जिसे देशनिकाला देना उचित हो।

प्रवाह—पुं० [सं० प्र√वह् (बहना)+घञ्] १. किसी तरल पदार्थ के किसी ओर वेगपूर्वक निरन्तर चलते या बहते रहने की क्रिया या भाव। २. जल की वह धारा या राशि जो किसी दिशा में वेगपूर्वक बढ़ रही हो। बहाव। ३. किसी काम या बात का ऐसा क्रम जो बराबर चलता हो और बीच में कहीं से टूटता न हो। जैसे—आज-कल सारे संसार में जन-मत का प्रवाह स्वतंत्रता की ओर है। ४. विद्युत्

की गति जो जल की धारा के सदृश प्रवाहमान होती है। ५. कोई अच्छा वाहन या सवारी।

प्रवाहक—वि० [सं० प्र√वह्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. अच्छी तरह वहन करनेवाला। २. अच्छी तरह प्रवाहित करने या बहानेवाला। पुं० राक्षस।

प्रवाहण—पुं० [सं० प्र√वह्+णिच्+ल्युट्—अन] [वि० प्रवाहित] १. अच्छी तरह से वहन करना। २. बहाना।

प्रवाहणी—स्त्री० [सं० प्रवाहण+ङीप्] मलद्वार में सबसे ऊपर की कुंडली जो आँतों में का मल बाहर निकालती है।

प्रवाह-मार्ग—पुं० [सं० ष० त०] दार्शनिक क्षेत्र में, सब प्रकार के साधना-मार्गों (अर्थात् पुष्टि-मार्ग और मर्यादा-मार्ग) से भिन्न सांसारिक सुख-प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने की प्रथा या मार्ग जिस पर चलनेवाला जीव सदा जन्म-मरण के बन्धन में पड़ा रहता है।

प्रवाहिका—स्त्री० [सं० प्र√वह्+ण्वुल्—अक,+टाप्, इत्व] आँतों के विकार के कारण होनेवाला एक रोग जिसमें पेट में दर्द या मरोड़ होता और पतले दस्त आते हैं। पेचिश। (डिसेन्ट्री)

प्रवाहित—भू० कृ० [सं० प्र√वह्+णिच्+क्त] १. वहन किया या ढोया हुआ। २. जो नदी की धारा में बह जाने के लिए छोड़ा गया हो। ३. बहता हुआ या बहाया हुआ।

प्रवाहिनी—स्त्री० [सं० प्र√वह्+णिनि+ङीप्] नदी।

प्रवाही (हिन्)—वि० [सं० प्र√वह्+णिनि] [स्त्री० प्रवाहिनी] १. वहन करनेवाला। २. बहानेवाला। ३. जो बह रहा हो। ४. प्रवाह से युक्त। ५ तरल। द्रव।
स्त्री० [सं० प्र√वह्+णिच्+अच्+ङीप्] बालू। रेत।

प्रविग्रह—पुं० [सं० प्रा० स०] राजाओं, राज्यों आदि में, पुरानी सन्धि की बातों का पालन न होना या उनके विरुद्ध व्यवहार होना। संधि-भंग। (कौटिल्य)

प्रविचय—पुं० [सं० प्रा० स०] [भू० कृ० प्रविचित] १. अनुसंधान। खोज। २. परीक्षा। जाँच।

प्रवितत—भू० कृ० [सं० प्र-वि√तन्+क्त] १. फैला हुआ। २. बिखरा हुआ।

प्रविद्ध—भू० कृ० [सं० प्र√व्यध् (वेधना)+क्त] १. फेंका हुआ। २. विद्ध।

प्रविधान—पुं० [सं० प्र-वि√धा (धारण करना)+ल्युट्—अन] [वि० प्राविधानिक] १. किसी विषय पर विचार करना। २. कार्य रूप देना। ३. वे उपाय जिनके अनुसार काम किया जाता हो। ४. दे० संविधि।

प्रविधि—स्त्री० [सं० प्रा० स०] [वि० प्राविधिक] १. कला, विज्ञान, यंत्र-निर्माण आदि के क्षेत्रों में, कोई काम करने या कोई चीज तैयार करने की वह विशिष्ट क्रियात्मक पारिभाषिक विधि जो अनुभव, प्रयोग आदि के आधार पर स्थिर होती है। २. उक्त विधि के आधार पर अर्जित कौशलपूर्ण दक्षता या प्रवीणता। (टेक्नीक) ३. किसी विशिष्ट विषय का विधान या कानून। प्रविधान।

प्रविधिज्ञ—पुं० [सं०] वह जो कला, विज्ञान, यंत्रों आदि की विधियों का अच्छा ज्ञाता हो। (टेक्नीशियन)

प्रविपल—पुं० [सं० अत्या० स०] विपल (पल का साठवाँ भाग) का एक अंश-मान।

प्रविरत—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] जिसने अपने को किसी के साथ से अथवा कहीं से अलग कर लिया हो। विरत।

प्रविषा—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] अतीस।

प्रविष्ट—भू० कृ० [सं० प्र√विश् (घुसना)+क्त] १. जिसका कहीं या किसी के अन्दर प्रवेश हो चुका हो। २. अन्दर पहुँचा, घुसा या पैठा हुआ। ३. जिसकी प्रविष्टि हुई हो।

प्रविष्टि—स्त्री० [प्र√विश्+क्तिन्] १. प्रवेश। २. रोकड़, बही खाते आदि में लेखे, विवरण आदि लिखना। ३. इस प्रकार लिखी जानेवाली कोई बात, रकम या विवरण। (एंट्री, उक्त दोनों अर्थों में)

प्रविसना*—अ० [सं० प्रविश] प्रविष्ट होना। घुसना। पैठना।

प्रवीण—वि० [सं० प्र-वीणा, प्रा० स०, प्र√वीण+णिच्+अच्] [भाव० प्रवीणता] १. अच्छा गाने-बजाने या बोलनेवाला। २. किसी काम के सभी अंगों-उपांगों का पूरा ज्ञाता। (एक्सपर्ट) ३. कुशल। दक्ष। पुं० वह जो वीणा बजाने में दक्ष हो।

प्रवीणता—स्त्री० [सं० प्रवीण+तल्+टाप्] प्रवीण होने की अवस्था, गुण या भाव।

प्रवीन*—पुं०=प्रवीण।

प्रवीर—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० प्रवीरता] बहुत बड़ा वीर या योद्धा। २. उत्तम।

प्रवृत—भू० कृ० [सं० प्र√वृ (चुनना)+क्त] १. चुना हुआ। २. (दत्तक के रूप में) ग्रहण किया हुआ।

प्रवृत्त—भू० कृ० [सं० प्र√वृत् (बरतना)+क्त] १. जिसकी प्रवृत्ति या मन का झुकाव किसी काम या बात की ओर हो और इसी लिए जो उसके संपादन में लगा हो या लगना चाहता हो। २. किसी की ओर घुमा या मुड़ा हुआ। ३. उद्यत। प्रस्तुत। ४. उत्पन्न। जात।

प्रवृत्ति—स्त्री० [सं० प्र√वृत्+क्तिन्] १. निरंतर बढ़ते रहने की क्रिया या भाव। २. किसी काम, विषय या बात की ओर अथवा किसी विशिष्ट दिशा में प्रवृत्त होने या बढ़ने की क्रिया या भाव। ३. मनुष्य के व्यक्तित्व का वह अंग जो इस बात का सूचक होता है कि वह अपने उद्देश्यों या कार्यों की सिद्धि के लिए किस प्रकार या किस रूप में सचेष्ट रहता है। ४. मन की वह स्थिति जिसमें वह किसी ऐसे काम या बात की ओर अग्रसर होता है जो उसे प्रिय तथा रुचिकर होती है। (टेन्डेन्सी) ५. दार्शनिक और धार्मिक क्षेत्रों में जीवन-यापन का वह प्रकार जिसमें मनुष्य घर-गृहस्थी सांसारिक कार्यों, सुख-भोगों आदि में प्रवृत्त रहता है। 'निवृत्ति' का विपर्याय। ६. मनुष्यों का साधारण आचरण व्यवहार या रहन-सहन। ७. साहित्य में, नाटकों आदि का वह तत्त्व या पद्धति जो भिन्न-भिन्न देशों के आचार-व्यवहार, रहन-सहन, वेश-भूषा आदि प्रकट या सूचित करती है। देश-भेद के विचार से ये चार प्रवृत्तियाँ मानी गई हैं—आवन्ती, दक्षिणात्य, पांचाली और मागधी।
विशेष—वृत्ति और प्रवृत्ति में यह अन्तर है कि वृत्ति का मुख्य संबंध आन्तर व्यापारों से और प्रवृत्ति का बाह्य व्यापारों से होता है। वृत्ति तो केवल शब्दों के द्वारा काम करती है, पर प्रवृत्ति आचार-व्यवहार के माध्यम से व्यक्त होती है। इसलिए वृत्ति तो काव्य, नाटक आदि सभी

प्रकार की साहित्यिक कृतियों में होती है; परन्तु प्रवृत्ति केवल अभिनय या नाटक में होती है।

८. वर्णन। वृतांत। ९. उत्पत्ति। जन्म। १०. कार्य का अनुष्ठान या आरंभ। ११. यज्ञ आदि धार्मिक कृत्य। १२. हाथी का मद।

प्रवृत्ति-मार्ग—पुं० [सं० ष० त०] जीवन-यापन का वह प्रकार जिसमें मनुष्य सांसारिक कार्यों और बंधनों में पड़ा रहकर दिन बिताता है। 'निवृत्ति-मार्ग' का विपर्याय।

प्रवृत्ति-विज्ञान—पुं० [सं० ष० त०] बाह्य पदार्थों से प्राप्त होनेवाला ज्ञान।

प्रवृद्ध—वि० [सं० प्र√वृध् (बढ़ना)+क्त] १. बहुत अधिक बढ़ा हुआ। २. खूब पक्का। प्रौढ़। ३. फैला हुआ। विस्तृत।

पुं० १. अयोध्या के राजा रघु का एक पुत्र जो गुरु के शाप से १२ वर्षों के लिए राक्षस हो गया था। २. तलवार चलाने के ३२ ढंगों या हाथों में से एक जिसे प्रसृत भी कहते हैं।

प्रवेक्षण—पुं०=प्रवेक्षा।

प्रवेक्षा—स्त्री० [सं० प्रवीक्षा] [भू० कृ० प्रवेक्षित] ऐसा अनुमान या आशा कि आगे चलकर अमुक बात होगी। प्रत्याशा। (एन्टिसिपेशन)

प्रवेक्षित—वि० [सं० प्रवीक्षित] जिसकी प्रवेक्षा की गई हो या की जा रही हो। प्रत्याशित। (एन्टिसिपेटेड)

प्रवेग—पुं० [सं० प्रा० स०] [वि० प्रावेगिक] १. तीव्र या प्रबल वेग। २. वैज्ञानिक क्षेत्र में गति या वेग का वह मान जिसमें कोई चीज आगे बढ़ रही हो अथवा कोई क्रिया हो रही हो। ३. दे० 'संवेग'।

प्रवेणी—स्त्री० [सं० प्र√वेण्+इन्+ङीप्] १. सिर के बालों की चोटी कबरी। वेणी। २. हाथी की पीठ पर डाली जानेवाली रंग-बिरंगी झूल। ३. महाभारत-काल की एक नदी।

प्रवेता (तृ)—पुं० [सं० प्र√वी (गति)+तृच्] सारथी। रथवान।

प्रवेदन—पुं० [सं० प्र√विद् (जानना) णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रवेदित] प्रकट करना। जाहिर करना।

प्रवेपन—पुं० [प्र√वेप्+ल्युट्—अन] १. हिलना-डुलना। २. काँपना।

प्रवेश—पुं० [सं० प्र√विश् (पैठना)+घञ्] १. किसी निश्चित या विशिष्ट सीमा को लाँघकर उसके अन्दर जाने की क्रिया या भाव। अन्दर जाना। जैसे—गृह-प्रवेश, जल-प्रवेश। २. किसी विशिष्ट संस्था आदि में भरती होना। (एडमिशन) २. गति। पहुँच। रसाई। ४. किसी विषय की होनेवाली साधारण जानकारी। (एडमिशन)

प्रवेशक—वि० [सं० प्र√विश्+णिच्+ण्वुल्—अक] प्रवेश करनेवाला।

पुं० नाटक में एक प्रकार का अर्थोपक्षेपक जो दो अंकों के बीच में होता है, और जिसमें नीच पात्रों के द्वारा किसी भावी या भूत कथांश की सूचना मात्र होती है।

प्रवेश-द्वार—पुं० [सं० ष० त०] वह द्वार या दरवाजा जिसमें से होकर अन्दर जाना पड़ता है।

प्रवेशन—पुं० [सं० प्र√विश्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रविष्ट, प्रवेशनीय, प्रवेश्य] १. प्रवेश करना या अन्दर जाना। घुसना। पैठना। २. सिंहद्वार।

प्रवेशना*—अ० [सं० प्रवेश] प्रवेश करना।

स० प्रविष्ट करना। प्रवेश कराना।

प्रवेश-पत्र—पुं० [ष० त०] १. वह पत्र जिसमें किसी को कहीं प्रवेश करने के लिए अनुमति दी गई हो। पास। २. टिकट।

प्रवेश-शुल्क—पुं० [ष० त०] वह शुल्क जो किसी संस्था को उसमें प्रवेश करते समय दिया जाता है।

प्रवेशार्थी—पुं० [सं० प्रवेश+अर्थी] वह जो कहीं प्रवेश करना या पाना चाहता हो। प्रविष्ट होने के लिए उत्सुक या उद्यत व्यक्ति।

प्रवेशिका—स्त्री० [सं० प्र√विश्+णिच्+ण्वुल्—अक,+टाप्, इत्व] १. प्रवेश-पत्र। २. उक्त के बदले में दिया जानेवाला धन या शुल्क। ३. आज-कल कुछ संस्थाओं में एक प्रकार की परीक्षा जो आरम्भिक शिक्षा के उपरान्त ली जाती है और जिसमें उत्तीर्ण होने पर विद्यार्थी उच्च कोटि की शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी होता है।

प्रवेशित—भू० कृ० [सं० प्र√विश्+णिच्+क्त] १. जिसे प्रविष्ट किया या कराया गया हो। २. अन्दर पहुँचाया हुआ।

प्रवेश्य—वि० [सं० प्र√विश्+ण्यत्] १. (स्थान) जिसमें प्रवेश हो सके। २. (व्यक्ति) जिसका कहीं प्रवेश हो सके। ३. (बाजा) जो बजाया जाता हो।

पुं० प्राचीन भारत में वह माल जो विदेशों से आता था। आयात।

प्रवेष—पुं० [प्र√विष् +घञ्]=परिवेश।

प्रवेष्ट—पुं० [सं० प्र√वेष्ट् (लपेटना)+अच्] १. बाहु। बाँह। २. कलाई पर का भाग। पहुँचा। ३. हाथी का मसूड़ा। ४. हाथी की पीठ, जिस पर बैठकर सवारी की जाती है।

प्रवेष्टक—पुं० [सं० प्र√वेष्ट्+णिच्+ण्वुल्—अक] दाहिना हाथ।

प्रवेष्टा (ष्टृ)—वि० [सं० प्र√विश्+तृच्] प्रवेश करनेवाला। प्रवेशक।

प्रवेसना—अ० [सं० प्रवेश] प्रवेश करना।

प्रव्याहार—पुं० [सं० प्रा० स०] वार्तालाप। वाद-विवाद आदि का चलता रहना।

प्रव्रजन—पुं० [सं० प्र√व्रज् (गति)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रव्रजित] १. एक स्थान से चलकर दूसरे स्थान पर जाना। २. आज-कल मुख्य रूप से (क) लोगों का अपना निवास-स्थान छोड़कर दूसरे देश या स्थान में बसने के लिए जाना। (ख) पक्षियों आदि का कुछ विशिष्ट ऋतुओं में एक स्थान से उड़कर दूसरे स्थान पर कुछ समय तक रहने के लिए जाना। (माइग्रेशन)

प्रव्रजित—भू० कृ० [सं० प्र√व्रज्+क्त] [स्त्री० प्रव्रजिता] १. (व्यक्ति) जिसने संन्यास ग्रहण किया हो। २. जीविका के लिए विदेश जाकर बसा हुआ।

प्रव्रज्या—स्त्री० [सं० प्र√व्रज्+क्यप्+टाप्] १. चलकर कहीं दूर जाना। २. घर-बार छोड़कर दूर के किसी एकान्त स्थान में जा रहना। ३. सांसारिक बंधनों को छोड़कर संन्यास ग्रहण करना। ४. आज-कल, जीविका, निवास आदि के सुभीते के विचार से अपना देश या स्थान छोड़कर किसी दूसरे देश या स्थान में जा बसना। (माइग्रेशन) ५. देश-निकाला।

प्रव्रज्या-व्रत—पुं० [सं० ष० त०] नैपाली बौद्धों का एक संस्कार जो हिन्दुओं के यज्ञोपवीत की तरह का होता है।

प्रव्राज—पुं० [सं० प्र√व्रज्+घञ्] १. बहुत नीची जमीन। २. संन्यास।

प्रव्राजक—पुं० [सं० प्र√व्रज्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रव्राजिका] १. परिव्राजक। २. संन्यासी।

प्रशंस*—स्त्री०=प्रशंसा।

वि०=प्रशंस्य (प्रशंसनीय)।

प्रशंसक—वि० [सं० प्र√शंस् (स्तुति करना)+ण्वुल्—अक] १. प्रशंसा करनेवाला। २. किसी के अच्छे गुणों या बातों को आदर की दृष्टि से देखनेवाला। (एडमायरर)

प्रशंसन—पुं० [सं० प्र√शंस्+ल्युट्—अन] [वि० प्रशंसनीय, प्रशंस्य, भू० कृ० प्रशंसित] प्रशंसा या तारीफ करना। सराहना।

प्रशंसना*—स० [सं० प्रशंसन] किसी की प्रशंसा या तारीफ करना। गुणानुवाद करना। सराहना।

प्रशंसनीय—वि० [सं० प्र√शंस्+अनीयर्] जिसकी प्रशंसा की जा सकती हो। प्रशंसा का अधिकारी या पात्र।

प्रशंसा—स्त्री० [सं० प्र√शंस्+अ+टाप्] [भू० कृ० प्रशंसित] १. प्रसन्नतापूर्वक किसी के अच्छे गुणों या कार्यों का किया जानेवाला ऐसा उल्लेख जिससे समाज में उसका आदर तथा प्रतिष्ठा बढ़ती हो। २. प्रसन्न होकर यह कहना कि कोई चीज बहुत अच्छी है, तथा गुण-संपन्न है। (प्रेज)

प्रशंसित—भू० कृ० [सं० प्रशंसा+इतच्] जिसकी प्रशंसा की गई हो या हुई हो। सराहा हुआ।

प्रशंसोपमा—स्त्री० [सं० प्रशंसा-उपमा, मध्य० स०] उपमालंकार का एक भेद जिसमें उपमेय की प्रशंसा करके उपमान को प्रशंसनीय सिद्ध किया जाता है।

प्रशंस्य—वि०=प्रशंसनीय।

प्रशक्य—वि० [सं० प्र√शक् (सकना)+यत्] अपनी शक्ति के अनुसार ठीक और पूरा काम करनेवाला।

प्रशत्वरी—स्त्री० [सं० प्रशत्वन्+ङीप्, र-आदेश] नदी।

प्रशत्वा (त्वन्)—पुं० [सं० प्र√शद्क्व+निप्, तुट्] समुद्र।

प्रशम—पुं० [सं० प्र√शम् (शांत होना)+घञ्] १. शमन। उपशम। शांति। २. निवृत्ति। ३. ध्वंस। नाश।

प्रशमन—पुं० [सं० प्र√शम्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रशमित] १. शांत करना। २. कोप, रोग आदि को दबाना। ३. नाशन। ध्वंस। ४. मारण। वध।

वि० शमन या शांत करनेवाला।

प्रशमित—भू० कृ० [सं० प्र√शम्+णिच्+क्त] १. शांत किया हुआ। २. दबाया हुआ।

प्रशम्य—वि० [सं० प्र√शम्+यत्] जिसका शमन हो सकता हो या होने को हो।

प्रशस्त—भू० कृ० [सं० प्र√शंस्+क्त] १. जिसकी प्रशंसा हुई हो या की गई हो। २. जो उत्तम प्रकार का हो तथा जिसमें दोष, विकार विघ्न आदि न हों।

प्रशस्त-पाद—पुं० [सं० ब० स०] एक प्राचीन आचार्य जिनका वैशेषिक दर्शन पर 'पदार्थ-धर्म-संग्रह' नामक ग्रन्थ है।

प्रशस्त-वचन—पुं० [कर्म० स०] स्तुति।

प्रशस्ति—स्त्री० [सं० प्र√शंस्+क्तिन्] १. प्रशंसा। स्तुति। २. विवरण। ३. किसी के विशेषतः अपने पालक या संरक्षक के गुणों, विशेषताओं आदि की कुछ बढ़ा-चढ़ाकर की जानेवाली विशद और विस्तृत प्रशंसा। (ग्लोरिफ़िकेशन)। ४. प्राचीन भारत में, वह ईश्वर-प्रार्थना जो किसी नये राजा के सिंहासन पर बैठने के समय राज्य और लोक की मंगल-कामना से की जाती थी। ५. परवर्ती भारत में (क) राजाओं के एक प्रकार के प्रख्यापन जो चट्टानों, ताम्रपत्रों आदि पर अंकित किये जाते थे। (ख) ग्रंथों के आदि या अंत का वह अंश जिसमें उनके कर्ता, रचना-काल, विषय आदि का उल्लेख रहता था। पुष्पिका। और (ग) वे प्रशंसा-सूचक पद या वाक्य जो पत्रों आदि के आरंभ में संबोधन के रूप में लिखे जाते थे।

प्रशस्य—वि० [सं० प्र√शंस्+क्यप्] प्रशंसनीय।

प्रशांत—वि० [सं० प्र√शम्+क्त] [भाव० प्रशांति] १. बहुत अधिक शान्त या स्थिर। २. (व्यक्ति) जिसकी वृत्ति निश्चल और शान्त हो।

प्रशांत-महासागर—पुं० [सं० कर्म० स०] विश्व का सबसे बड़ा महासागर जो अमेरिका के पश्चिमी तट से एशिया के पूर्वी तटों तक फैला हुआ है और जिसका क्षेत्रफल ६ करोड़ ८० लाख वर्ग मील है। (पैसिफिक ओशन)

प्रशांति—स्त्री० [प्र√शम्+क्तिन्] १.प्रशांत होने की अवस्था या भाव। २. देश, राज्य आदि में होनेवाली वह स्थिति जिसमें किसी प्रकार का असंतोष या क्षोभ न हो और सब लोग शांतिपूर्वक जीवन-यापन कर रहे हों। (ट्रैंक्विलटी)

प्रशाख—वि० [सं० प्रशाखा, ब० स०] जिसमें या जिसकी अनेक शाखाएँ हों।

पुं० गर्भ में भ्रूण की पाँचवीं अवस्था जिसमें उसकी शाखाएँ निकलने लगती है अर्थात् हाथ-पैर बनने लगते हैं।

प्रशाखा—स्त्री० [सं० अत्या० स०] किसी बड़ी शाखा या डाली से निकली हुई छोटी शाखा या डाल।

प्रशाखिका—स्त्री० [सं०] खेल के मैदान में बनी हुई वह इमारत जिसमें लोग बैठकर खेल देखते हैं। २. छाया हुआ मंडप। (पैविलियन)

प्रशासक—पुं० [सं० प्र√शास्+ण्वुल्—अक] १. शासन करनेवाला अधिकारी। २. किसी नगर, संस्था आदि का वह प्रधान अधिकारी जिस पर वहाँ के शासन का पूरा उत्तरदायित्व तथा भार रहता है। (एडमिनिस्ट्रेटर)

प्रशासन—पुं० [सं० प्र√शास्+ल्युट्—अन] १. किसी नगर, संस्था आदि के अधिकारों, कर्तव्यों आदि को कार्य का रूप देना। जैसे—विद्यालय का प्रशासन। २. अधिक विस्तृत क्षेत्र में, राज्य के सार्वजनिक अधिकारों विशेषतः कार्यकारी अधिकारों की सुव्यवस्था की दृष्टि से किया जानेवाला निष्पादन। (एडमिनिस्ट्रेशन)

प्रशासनिक—वि० [सं० प्राशासनिक] प्रशासन-सम्बन्धी। प्रशासन का। (एडमिनिस्ट्रेटिव्)

प्रशासनीय—वि० [सं० प्रशासन+छ—ईय]=प्रशासनिक।

प्रशासित—भू० कृ० [सं० प्र√शास्+णिच्+क्त] १. जिसका प्रशासन हो रहा हो। २. अच्छी तरह से शासित किया हुआ।

प्रशास्ता (स्तृ)—पुं० [सं० प्र√शास्+तृच्] १. एक ऋत्विक जो होता का सहकारी होता था और जिसे मैत्रावरुण भी कहते थे।

ऋत्विक्। ३. मित्र। ४. शासक। ५. प्रासक।

प्रशास्त्र—पुं० [सं० प्रशास्तृ+अण्] १. एक प्रकार का याग। २. प्रशास्ता नामक ऋत्विक् का कर्म। ३. वह पात्र जिसमें प्रशास्ता सोमपान करता था।

प्रशिक्षण—पुं० [सं० प्र√शिक्ष् (सीखना)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रशिक्षित] १. किसी व्यावहारिक या प्रायौगिक शिक्षा पद्धति से या नियमित रूप से दी जाने या प्राप्त की जानेवाली शिक्षा। २. उक्त पद्धति से शिक्षा प्राप्त करने या देने की अवस्था, क्रिया या भाव। (ट्रेनिंग)

प्रशिक्षण-महाविद्यालय—पुं० [सं० ष० त०] वह महाविद्यालय जिसमें ऊँची कक्षाओं के शिक्षक तैयार करने के उद्देश्य से लोगों को शिक्षण के सिद्धान्त बतलाये और शिक्षा देने की पद्धति सिखाई जाती है। (ट्रेनिंग कालेज)

प्रशिक्षण-विद्यालय—पुं० [सं० ष० त०] वह विद्यालय जिसमें भारतीय भाषाओं के शिक्षकों को शिक्षण विज्ञान की शिक्षा दी जाती और शिक्षा-पद्धति सिखाई जाती है। (ट्रेनिंग स्कूल)

प्रशिक्षा—स्त्री०=प्रशिक्षण।

प्रशिक्षित—भू० कृ० [सं०प्र√शिक्ष्+क्त] (व्यक्ति) जिसे किसी प्रकार का प्रशिक्षण मिला हो। विशेष रूप से सिखाकर तैयार किया हुआ। (ट्रेन्ड)

प्रशिष्टि—स्त्री० [सं० प्र√शास्+क्तिन्] १. अनुशासन। २. शिक्षा। ३. आदेश।

प्रशिष्य—पुं० [सं० अत्या० स०] १. शिष्य का शिष्य। २. परंपरागत शिष्य।

प्रशीत—वि० [सं० प्रा० स०] १. बहुत अधिक ठंढा। २. ठंढ से जमा हुआ।

प्रशीतक—वि० [सं० प्रशीत+णिच्+ण्वुल्—अक] बहुत ठंढा करने या रखनेवाला।

पुं० आज-कल, लोहे की एक विशिष्ट प्रकार की अलमारी जिसमें औषध, खाद्य पदार्थ आदि ठंढे रखने और सड़ने-गलने या विकृत होने से बचाने के लिए रखे जाते हैं। हिमीकर। (रेफ्रिजरेटर)

प्रशीतन—पुं० [सं० प्रशीत+णिच्+ल्युट्—अन] १. बहुत अधिक ठंढा करना या रखना। २. प्राकृतिक कारणों से पृथ्वी का भीतरी ताप कुछ कम होना। ३. शरीर का तापमान कम होना। शरीर ठंढा होना। ४. खाद्य पदार्थों, औषधों आदि को इस प्रकार ठंढा रखना कि वे सड़ने-गलने या विकृत होने से बची रहें। (रेफ्रिजरेशन)

प्रशीताद—पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें मसूड़े गलने लगते हैं; मुँह से दुर्गंध आती है, हाथ-पैरों में पीड़ा होती है और रोगी दिन-पर-दिन दुबला होता जाता है। (स्कर्वी)

प्रशोभन—वि० [सं० प्रा० स०] बहुत अधिक शोभा देने या भला लगनेवाला। फबनेवाला।

पुं० [भू० कृ० प्रशोभित] बहुत अधिक शोभा से युक्त करना।

प्रशोभित—भू० कृ० [सं० प्रा० स०] जो बहुत अधिक शोभा से युक्त हो या किया गया हो।

प्रशोभी†—वि०=प्रशोभन।

प्रशोषण—पुं० [सं० प्र√शुष्+णिच्+ल्युट्—अन] १. अच्छी तरह सोखना। २. एक कल्पित राक्षस जिसके सम्बन्ध में यह माना जाता है कि वह बच्चों को सुखंडी रोग से पीड़ित करता है।

प्रश्न—पुं० [सं०√प्रच्छ् (पूछना)+नङ्] १. वह बात जिसका उत्तर अभीष्ट हो या दिया जाता हो। जैसे—गणित का प्रश्न। २. वह बात जिसका उत्तर किसी से माँगा गया हो। ३. किसी से पूछी जानेवाली ऐसी गंभीर या गूढ़ बात जिसका स्पष्टीकरण सब लोग सहज में न कर सकते हों। सवाल। ४. कोई ऐसा विषय जिस पर अच्छी तरह अनुसंधान, मनन, विचार अथवा निर्णय करने की आवश्यकता हो। समस्या। सवाल। (क्वेश्चन, उक्त सभी अर्थों में) ५. न्यायालय में, उपस्थित वाद के संबंध की विचारणीय बात या बातें। ६. न्यायालय आदि के द्वारा होनेवाला अनुसंधान या जाँच-पड़ताल। ७. एक उपनिषद् का नाम।

प्रश्नचिह्न—पुं० [सं० ष० त०] १. छपाई, लेखन आदि में, प्रश्नात्मक वाक्यों के अन्त में लगाया जानेवाला विराम चिह्न। इसका रूप यह है—(नोट ऑफ इन्टेरोगेशन) जैसे—'क्या वह चला गया ? २. लाक्षणिक अर्थ में ऐसी विकट समस्या जिसके निदान के संबंध में कुछ सूझ न रहा हो।

प्रश्न-विवाक—पुं० [सं० ष० त०] १. वैदिक काल के विद्वानों का एक भेद जो भावी घटनाओं के विषय में प्रश्नों का उत्तर दिया करते थे। २. सरपंच। पंच।

प्रश्नावली—स्त्री० [सं० प्रश्न—आवली, ष० त०] १. प्रश्नों की सूची। २. किसी विषय से सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्नों की वह सूची जो आधिकारिक रूप से किसी बात की जाँच करने, आँकड़े प्राप्त करने अथवा कुछ अभिमत प्राप्त करने के लिए संबद्ध लोगों के पास भेजी जाती है। (क्वेश्चनेयर)

प्रश्नी (श्निन्)—वि० [सं० प्रश्न+इनि] प्रश्न-कर्ता।

प्रश्नोत्तर—पुं० [सं० प्रश्न-उत्तर, द्व० स०] १. प्रश्न और उसका उत्तर। सवाल और जवाब। २. पूछ-ताछ। ३. साहित्य में उत्तर नामक अर्थालंकार का एक भेद जिसमें कुछ प्रश्न और उनके उत्तर रहते हैं।

प्रश्नोत्तरी—स्त्री० [सं० प्रश्नोत्तर+अच्+ङीप्] किसी विषय से सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्नों और उनके उत्तरों का संग्रह। विशेषतः ऐसा संग्रह जिसमें कुछ प्रश्न और उनके उत्तर देकर उस विषय का स्वरूप स्पष्ट किया जाता है। (कैटेकिज्म)

प्रश्नोपनिषद्—स्त्री० [सं० प्रश्न-उपनिषद्, मध्य० स०] अथर्ववेद की एक उपनिषद्।

प्रश्रब्धि—स्त्री० [सं० प्र√श्रम्भ् '(विश्वास)+क्तिन्] =विश्राब्धि।

प्रश्रय—पुं० [सं० प्र√श्रि+अच्] १. आश्रयस्थान। २. आधार। टेक। सहारा। ३. नम्रता। विनय।

प्रश्रयण—पुं० [सं० प्र√श्रि+ल्युट्—अन] १. विनय। नम्रता। २. शिष्टाचार। ३. सौजन्य।

प्रश्रयी (यिन्)—वि० [सं० प्रश्रय+इनि] १. शिष्ट। सुजन। भलामानुस। २. नम्र। विनयी। ३. धीर। शान्त। ४. शिष्ट। सज्जन।

प्रश्रित—भू० कृ० [सं० प्र√श्रि+क्त] विनीत।

प्रश्लिष्ट—भू० कृ० [सं० प्र√श्लिष् (चिपटना)+क्त] १. जुड़ा हुआ। युक्त। २. युक्तियुक्त।

प्रश्लेष—पुं० [सं० प्र√श्लिष्+घञ्] १. घनिष्ठ संबंध। २. व्याकरण में, स्वरों की संधि हो ने पर उनका परस्पर मिलकर एक होना।

प्रश्वास—पुं० [सं० प्र√श्वस् (साँस लेना)] १. वह वायु जो साँस लेने के समय नथने से बाहर निकलती है। बाहर आता हुआ साँस। २. उक्त प्रकार से वायु बाहर निकलने की क्रिया या भाव।

प्रष्टव्य—वि० [सं०√प्रच्छ्+तव्यत्] प्रश्न के रूप में पूछे जाने के योग्य।

प्रष्टा (ष्टृ)—वि० [सं०√प्रच्छ्+तृच्] पूछनेवाला। प्रश्नकर्ता।

प्रष्टि—पुं० [सं०√प्रच्छ्+ति (बा०)] १. वह घोड़ा या बैल जो तीन घोड़ों के रथ या तीन बैलों की गाड़ी में सब से आगे जुता रहता है। २. जोड़ी में दाहिनी ओर जोता जानेवाला घोड़ा या बैल। ३. तिपाई।

प्रष्ठ—वि० [सं० प्र√स्था (ठहरना)+क, षत्व] १. आगे-आगे चलनेवाला। अग्रगामी। अगुआ। २. प्रधान। मुख्य। ३. श्रेष्ठ।

प्रसंख्या—स्त्री० [सं० प्रा० स०] १. दो या अनेक संख्याओं को जोड़ने से प्राप्त होनेवाला फल। जोड़। योग।

प्रसंख्यान—पुं० [सं० प्र-सम्√ख्या+ल्युट्—अन] १. जोड़ करना या लगाना। २. सम्यक् ज्ञान। सत्य ज्ञान। ३. आत्मानुसंधान। ध्यान।

प्रसंग—पुं० [सं० प्र√सञ्ज् (मिलना)+घञ्] १. संबंध। लगाव। २. अनुराग। आसक्ति। ३. मैथुन। संभोग। ४. विवेचित विषय अथवा बातचीत का वह पहलेवाला अंश जिसके संबंध में अब कुछ और कहा जा रहा हो। (कानटेक्स्ट) ५. प्रकरण। ६. हेतु। ७. फैलाव।

प्रसंग-विध्वंस—पुं० [सं० ष० त०] साहित्य में, मान-मोचन के छः प्रकारों में से एक जिसमें मानिनी का मान उसे भय दिखलाकर दूर किया जाता है।

प्रसंगविभ्रंश—पुं०=प्रसंग-विध्वंस।

प्रसंग-सम—पुं० [सं० तृ० त०] न्याय में, यह कथन कि प्रमाण को भी प्रमाणित सिद्ध करके दिखलाओ। (एक प्रकार का दोष)

प्रसंगी (गिन्)—वि० [सं० प्रसंग+इनि] १. प्रसंगयुक्त। २. प्रसंग या मैथुन करनेवाला। ३. अनुरक्त।

प्रसंधान—पुं० [सं० प्र-सम्√धा (धारण)+ल्युट्—अन] संधि। योग।

प्रसंविदा—स्त्री० [सं०] वह पत्र जिसमें कोई बात करने या न करने के संबंध में लिखित रूप में वचन दिया गया हो। (कावनेन्ट)

प्रसंसना*—स०=प्रशंसना (प्रशंसा करना)।

प्रसक्त—भू० कृ० [सं० प्र√सञ्ज् (मिलना)+क्त] १. किसी के साथ लगा हुआ। संश्लिष्ट। २. बराबर या सदा साथ लगा रहनेवाला। ३. संबद्ध। ४. आसक्त। ५. प्रस्तावित।

प्रसक्ति—स्त्री० [सं० प्र√सञ्ज्+क्तिन्] १. प्रसंग। संपर्क। २. अनुमिति। ३. आपत्ति। ४. व्याप्ति।

प्रसज्य—वि० [सं० प्र√सञ्ज्+ण्यत्] १. जो संबद्ध किया जाय। २. जो प्रयोग में लाया जाय। ३. संभव।

प्रसज्य प्रतिषेध—पुं० [सं० सुप्सुपा स०] ऐसा निषेध जिसमें वर्जन का भाव ही प्रधान होता है और अनुमति, आज्ञा या विधि अल्प तथा गौण रहती है। 'पर्युदास' का विपर्याय।

प्रसणां†—पुं० [?] शत्रु। उदा०—प्रसणां सोण अहोनसपातल यग सावरत रहै पूमांण।—प्रिथीराज।

प्रसति—स्त्री० [सं० प्र√सद्+क्तिन्] १. प्रसन्नता। २. शुद्धि।

प्रसत्वा (त्वन्)—पुं० [सं० प्र√सद्+वनिप्] १. धर्म। २. प्रजापति।

प्रसद्द*—पुं० [सं० प्र-शब्द] जोर का शब्द।

प्रसन—पुं० [सं० प्रस्रवण] गिरना, झरना या बहना। उदा०—पेखि रुपमणी जल प्रसन।—प्रिथीराज।

†पुं०=प्रश्न।

†वि०=प्रसन्न।

प्रसन्न—वि० [सं० प्र√सद्+क्त] [भाव० प्रसन्नता] १. जो अनुकूल परिस्थितियों से संतुष्ट और प्रफुल्लित रहता हो। २. जो किसी कार्य या बात के गुणों या फलों को देखकर संतुष्ट तथा प्रफुल्लित हुआ हो।

पुं० महादेव। शिव।

†स्त्री०=पसंद।

प्रसन्नता—स्त्री० [सं० प्रसन्न+तल्+टाप्] १. प्रसन्न होने या रहने की अवस्था या भाव। खुशी। हर्ष। २. अनुग्रह। ३. निर्मलता। स्वच्छता।

प्रसन्न-मुख—वि० [सं० ब० स०] जिसके चेहरे से ही उसका प्रसन्न होना प्रकट हो रहा हो।

प्रसन्ना—स्त्री० [सं० प्रसन्न+टाप्] १. प्रसन्न करने की क्रिया या भाव। २. चावल से बनाई हुई एक तरह की शराब।

प्रसन्नात्मा (त्मन्)—वि० [सं० प्रसन्न-आत्मन्, ब० स०] सदा प्रसन्न रहनेवाला।

पुं० विष्णु।

प्रसन्नित*—वि०=प्रसन्न।

प्रसभ—पुं० [सं० प्रा० स०] १. बल। शक्ति। २. बल-प्रयोग। दमन। ४. बलात्कार।

क्रि० वि० १. बलपूर्वक। २. दमन करते हुए। ३. बहुत अधिक।

प्रसम—वि० [सं० प्रा० स०] [भाव० प्रसमता] जो किसी अपनाये हुए, प्रचलित, मानक अथवा मान्य आदर्श, मान, सिद्धांत आदि के अनुरूप या अनुसार हो। प्रसामान्य। (नार्मल)

प्रसमतः—क्रि० वि० [सं० प्रश+तस्] दे० 'सामान्यतः'।

प्रसमता—स्त्री० [सं० प्रश+तल्+टाप्] प्रसम होने की अवस्था या भाव। (नार्मेल्टी)

प्रसमा—स्त्री० [हिं० प्रसम से] उन्नति, सफलता आदि की दृष्टि से माना हुआ वह मानक जो प्रायः किसी समूह की औसत उन्नति, सफलता आदि का सूचक होता है। प्रसामान्यक। (नार्म) जैसे—यदि कुछ स्थानों पर जाँच करके यह स्थिर कर लिया जाय कि १० या १२ वर्ष की अवस्था के लड़के इतनी बातें जान या सीख सकते हैं तो यही मानक साधारणतः उक्त अवस्था के सभी लड़कों की योग्यता की प्रसमा के रूप में मान लिया जायगा।

प्रसर—पुं० [सं० प्र√सृ+अप्] १. आगे बढ़ना। २. ऐसी गति जिसमें कोई बाधा न हो। ३. फैलाव। विस्तार। व्याप्ति। ४. वेग। तेजी। ५. वात, पित्त आदि प्रकृतियों का संचार या घटाव-बढ़ाव। (वैद्यक) ६. राशि। समूह। ७. प्रधानता। प्रकर्ष। ८. युद्ध। ९. न्यायालय का वह आज्ञापत्र जिसमें किसी व्यक्ति को न्यायालय में उपस्थित होने

अथवा कोई चीज उपस्थित करने का आदेश होता है। आदेशिका। (प्रोसेस)

प्रसरण—पुं० [सं० प्र√सृ+ल्युट्—अन] [वि० प्रसरणीय, प्रसरित] १. आगे की ओर खिसकना, फैलना या बढ़ना। २. व्याप्ति। ३. विस्तार। ४. उत्पत्ति। ५. अपने काम में लगना। ६. सेना का लूट-पाट के लिए इधर-उधर घूमना।

प्रसरणी—स्त्री० [सं० प्र√सृ+अनि+ङीप्] १. प्रसरण। २. सेना का वह घेरा जो विपक्षी सेना के चारों ओर बनाया जाता है।

प्रसर-शुल्क—पुं० [सं० ष० त०] वह शुल्क जो न्यायालय से कोई प्रसर (देखें) निकलवाने के लिए देना पड़ता है। (प्रोसेस फ़ी)

प्रसरा—स्त्री० [सं० प्रसर+टाप्] प्रसारणीय (लता)।

प्रसरित—भू० कृ० [सं० प्रसृत] १. पसरा या फैला हुआ। २. आगे की ओर निकला या बढ़ा हुआ। ३. विस्तृत।

प्रसर्ग—पुं० [सं० प्र√सृज् (त्यागना)+घञ्] १. गिराना। २. फेंकना। ३. अलग करना। ४. बरसाना।

प्रसर्जन—पुं० [सं० प्र√सृज्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रसर्जित] १. गिराना। २. फेंकना।

प्रसर्प—पुं० [सं० प्र√सृप् (गति)+घञ्] १. आगे की ओर चलना। गमन। २. एक प्रकार का सामगान।

प्रसर्पक—वि० [सं० प्र√सृप्+ण्वुल्—अक]=प्रसर्पी।

प्रसर्पण—पुं० [सं० प्र√सृप्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रसर्पित] १. आगे की ओर चलना या बढ़ना। २. घुसना। पैठना। ३. चारों ओर से घेरना या छाना। ४. शत्रु-सेना को घेरने के उद्देश्य से सेना का चारों ओर फैलना। ५. शरण या रक्षा का स्थान। ६. गति। चाल।

प्रसर्पी (पिन्)—वि० [सं० प्र√सृप्+णिनि] १. रेंगनेवाला। २. आगे की ओर बढ़नेवाला। गतिशील। ३. बिना बुलाये कहीं जा पहुँचने या घुस आनेवाला।

प्रसव—पुं० [सं० प्र√सू (बच्चा)+अप्] १. स्त्री का अपने गर्भ से बच्चा जनने की क्रिया या भाव। जनना। प्रसूति। (डेलिवरी) २. इस प्रकार बच्चे का होनेवाला जन्म। उत्पत्ति। ३. जन्मा हुआ बच्चा। अपत्य। संतान। ४. फल। ५. फूल। ६. बढ़ती। वृद्धि। ७. विकास।

प्रसवक—पुं० [सं० प्रसव√कै (प्रतीत होना)+क] चिरौंजी का पेड़।

प्रसवन—पुं० [सं० प्र√सू+ल्युट्—अन] [वि० प्रसवनीय] स्त्री का अपने गर्भ से बच्चा जनना। प्रसव करना।

प्रसवना*—स० [सं० प्रसवन] प्रसव करना।

अ० प्रसव होना।

प्रसव-बंधन—पुं० [सं० ब० स०] वनस्पतियों में वह पतला सींका जिसके सिरे पर पत्ता या फूल लगता है। नाल।

प्रसवावकाश—पुं० [सं० प्रसव-अवकाश, च० त०] वह अवकाश या रियायती छुट्टी जो कहीं नौकरी करनेवाली गर्भवती स्त्रियों को प्रसव के दिनों में दी जाती है। (मैटर्निटी लीव)

प्रसविता (तृ)—वि० [सं० प्र√सू+तृच्] [स्त्री० प्रसवित्री] १. जन्म देनेवाला। २. उत्पन्न करनेवाला।

पुं० जनक। पिता। बाप।

प्रसवित्री—वि० [सं० प्रसवितृ+ङीप्] १. जन्म देनेवाली। स्त्री० माता। माँ।

प्रसविनी—वि० स्त्री० [सं० प्र√सू+इनि+ङीप्] अपने गर्भ से संतान उत्पन्न करनेवाली। जननेवाली।

प्रसवी (विन्)—वि० [सं० प्र√सू+इनि] [स्त्री० प्रसविनी] प्रसव करने या जन्म देनेवाला।

प्रसह—पुं० [सं० प्र√सह् (सहना)+अच्] १. शिकारी चिड़िया। २. अमलतास।

प्रसहन—पुं० [सं० प्र√सह्+ल्युट्—अन] १. हिंसक पशु। २. आलिंगन। ३. सहनशीलता। क्षमा।

वि० हिंसक। २. सहनशील।

प्रसह्य-हरण—पुं० [सं० सुप्सुपा स०] किसी से जबरदस्ती कोई चीज छीनना।

प्रसाद—पुं० [सं० प्र√सद्+घञ्] १. प्रसन्नता। २. किसी पर की जानेवाली ऐसी कृपा जिससे उसका बहुत बड़ा उपकार होता हो। ३. ईश्वरीय कृपा। ४. देवी-देवता को भोग लगाई हुई वह वस्तु जो भक्त जनों में बाँटी जाती है।

क्रि० प्र०—बँटना।—बाँटना।

५. उक्त का वह अंश जो किसी भक्त जन को प्राप्त होता है। ६. साधु-संतों की परिभाषा में, भोजन जिसका पहले देवता को भोग लगाया जाता है और जो बाद में उसके प्रसाद के रूप में ग्रहण किया जाता है।

मुहा०—प्रसाद पाना=यह समझकर भोजन करना कि यह देवता के अनुग्रह का फल और उसकी प्रसन्नता का सूचक है।

७. भोजन। (पश्चिम)

क्रि० प्र०—छकना।—पाना।

८. देवता, गुरुजन आदि को देने पर बची हुई वस्तु जो काम में लाई जाय। ९. ऐसी चीज जो किसी गुरुजन से उसके अनुग्रह के फल-स्वरूप मिली हो। १०. साहित्य में, काव्य का एक गुण जो उस अवस्था में माना जाता है जब काव्य-रचना बहुत ही सरल, सहज और स्वच्छ होती है और जिसमें पाठक या श्रोता को उसका आशय समझने में कुछ भी कठिनता नहीं होती; तथा उसके हृदय में उद्दिष्ट भावों का संचार या परिपाक अनायास हो जाता है। ११. शब्दालंकार के अंतर्गत कोमला वृत्ति जो काव्य में उक्त गुण उत्पन्न करनेवाली होती है। १२. धर्म की पत्नी मूर्ति से उत्पन्न एक पुत्र। १३. निर्मलता। स्वच्छता। १४. स्वास्थ्य।

†पुं० दे० 'प्रासाद'।

प्रसादक—वि० [सं० प्र√सद्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. बहुत बड़ी कृपा करनेवाला। २. आनन्द बढ़ाने या प्रसन्न करनेवाला। ३. प्रीतिकर। ४. निर्मल। स्वच्छ।

पुं० १. प्रसाद। २. देवधन। ३. बथुए का साग।

प्रसाद-दान—पुं० [सं० ष० त०] वह चीज जो प्रसन्न होकर या प्रेम-भाव से किसी को दी जाय। (एफेक्शनेट० गिफ्ट)

प्रसादन—पुं० [सं० प्र√सद्+णिच्+ल्युट्—अन] १. किसी को अपने अनुकूल रखने के लिए प्रसन्न करना। २. अन्न।

वि० १. प्रसन्न करनेवाला। २. आनन्द या सुख देनेवाला।

प्रसादना—स्त्री०[सं० प्र√सद्+णिच्+युच्—अन+टाप्] सेवा। परि-चर्या।
†स०[सं० प्रसादन] प्रसन्न करना।
†अ० प्रसन्न होना।

प्रसादनीय—वि०[सं० प्र√सद्+णिच्+अनीयर्] जिसे प्रसन्न किया जा सके या प्रसन्न करना उचित हो।

प्रसादित—भू० कृ०[सं० प्र√सद्+णिच्+क्त] १. जो प्रसन्न किया गया हो। २. आराधित। ३. साफ या स्वच्छ किया हुआ।

प्रसादी (दिन्)—वि०[सं० प्र√सद्+णिच्+णिनि] १. प्रसन्न करनेवाला। २. प्रीति या प्रेम उत्पन्न करनेवाला। प्रीतिकर। ३. शांत। ४. अनु-ग्रह या कृपा करनेवाला। ५. निर्मल। स्वच्छ।
स्त्री०[सं० प्रसाद] १. देवताओं को चढ़ाया हुआ पदार्थ। नैवेद्य। प्रसाद। २. उक्त का वह अंश जो प्रसाद के रूप में लोगों को दिया जाता है। ३. वह चीज जो बड़े लोग प्रसन्न होकर छोटों को देते हैं।

प्रसाद्य—वि०[सं० प्र√सद्+णिच्+यत्] [स्त्री० प्रसाद्या] १. जिसे प्रसन्न करना या रखना उचित हो। २. जिसे प्रसन्न किया या रखा जा सके।

प्रसाधक—वि० [सं० प्र√साध्+णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रसाधिका] १. प्रसाधन करनेवाला। २. कार्य का निर्वाह या सम्पादन करने-वाला। ३. अलंकृत करने या सजानेवाला। सजावट करनेवाला। ४. किसी के शरीर या अंगों का श्रृंगार करनेवाला।
पुं० प्राचीन भारत में, वह भृत्य जो राजाओं को वस्त्र, आभूषण आदि पहनाता था।

प्रसाधन—पुं० [सं० प्र√साध्+णिच्+युच्-अन] १. किसी (व्यक्ति) को सजाने के लिए वस्त्र, अलंकार आदि पहनाना। श्रृंगार करना। सजाना। २. कंघी से सिर के बाल झाड़ना। ३. वे कार्य जो शरीर सजाने अथवा उसका रूप या सौंदर्य बढ़ाने के लिए किये जाते हैं। ४. उक्त प्रकार के कार्यों के लिए उपयोगी आवश्यक सामग्री। (टॉयलेट) ५. वेष-भूषा। ६. ठीक तरह से कोई काम पूरा करना। कार्य का सम्पादन। ७. किसी चीज को अच्छी तरह काट-छाँटकर अथवा परिष्कृत करके काम में आने के योग्य बनाना। (ड्रेसिंग) ८. वे पदार्थ या सामग्री जो किसी काम के लिए आवश्यक और उपयोगी होते हैं। उपस्कर। सज्जा। (इक्विपमेन्ट)

प्रसाधनी—स्त्री०[सं० प्रसाधन+ङीप्] कंघी।

प्रसाधिका—स्त्री० [सं० प्रसाधक+टाप्, इत्व] १. प्राचीन भारत में वह दासी जो रानी-महारानियों की कंघी-चोटी करती और उनको गहने-कपड़े आदि पहनाती थी। २. निवार नामक धान।

प्रसाधित—भू० कृ० [सं० प्र√साध्+णिच्+क्त] १. जिसे आभूषण, वस्त्र आदि पहनाकर सजाया गया हो। सजाया हुआ। २. सुसंपादित।

प्रसामान्य—वि० [सं०] =प्रसम।

प्रसार—पुं०[सं० प्र√सृ (गति)+णिच्+घञ्] १. दीर्घ अवकाश में अथवा दीर्घ समय तक फैले रहने या होने की अवस्था, गुण या भाव। २. संचार। ३. गमन। ४. निकास। ५. इधर-उधर जाना। ६. वह सीमा जहाँ तक कोई चीज फैली हो या पहुँचती हो। (एक्सटेंट)

प्रसारण—पुं०[सं० प्र√सृ+णिच्+ल्युट्—अन] [भू०कृ० प्रसारित, वि० प्रसारणीय, प्रसार्य] १. दीर्घ अवकाश या काल में किसी चीज को फैलाना। २. संस्था आदि का कारोबार अथवा अधिक्षेत्र विस्तृत प्रदेश में विशेषतः नये प्रदेशों तक बढ़ाना। ३. रेडियो के द्वारा अथवा ऐसे ही किसी और साधन द्वारा कविता, गीत, समाचार आदि दूर-दूर के लोगों को सुनाने के लिए आकाशवाणी द्वारा चारों ओर फैलाना। (ब्राडकास्टिंग)

प्रसारणीय—वि०[सं० प्र√सृ+णिच्+अनीयर्] १. जो फैलाया जा सके। २. जो प्रसारित किये जाने को हो अथवा उसके योग्य हो।

प्रसारना*—स० [सं० प्रसारण] १. प्रसारण करना। रेडियो आदि के द्वारा गीत, समाचार आदि प्रसारित करना। २. पसारना। फैलाना।

प्रसारिणी—स्त्री०[सं० प्रसारिन्+ङीप्] १. गंधप्रसारिणी नामक लता। गंध प्रसारी। २. लज्जावंती या लजालू नाम की लता। ३. देव-धान्य। ४. वह सेना जो चारों ओर लूट पाट करने के लिए निकली हो। ५. संगीत में, मध्यम स्वर की चार श्रुतियों में से दूसरी श्रुति।

प्रसारित—भू० कृ०[सं० प्र√सृ+णिच्+क्त] १. पसारा या फैलाया हुआ। २. रेडियो आदि के द्वारा जिसका प्रसारण किया गया हो।

प्रसारी (रिन्)—वि०[सं० प्र√सृ+णिनि] [स्त्री० प्रसारिणी] १. प्रसा-रण करनेवाला। २. फैलाने या फैलनेवाला।

प्रसार्य—वि०[सं० प्र√सृ+णिच्+यत्]=प्रसारणीय।

प्रसाव*—पुं०[सं० प्रसाद] १. अनुग्रह। प्रसाद। उदा०...सपने भी मुझ पर सही, यदि हरि-गौरि प्रसाव।—निराला।
†पुं०=प्रस्ताव।

प्रसावक—वि०[सं० प्र√सू+णिच्+ण्वुल्-अक] [स्त्री० प्रसाविका] प्रसव करानेवाला।

प्रसाविका—स्त्री० [सं० प्रसावक+टाप्, इत्व] वह स्त्री जो गर्भवती स्त्रियों के सन्तान प्रसव करने के समय उनकी देख-भाल और सेवा-शुश्रूषा करने का पेशा करती हो। प्रसव करानेवाली दाई। धात्री। (मिड-वाइफ़)

प्रसाह—पुं०[सं० प्र+सह्√घञ्] १. आत्मशासन। संयम। २. किसी पर विजय प्राप्त करना। किसी को हराना।

प्रसित—भू०कृ०[सं० प्र√सि (बंधन)+क्त] [भाव० प्रसिति] १. कसा या बँधा हुआ। २. लक्षित और स्पष्ट।
पुं० पीब। मवाद।

प्रसिति—स्त्री०[सं० प्र√सि+क्तिन्] १. कसे या बँधे होने की अवस्था या भाव। २. वह चीज जिससे किसी को कसा या बाँधा गया हो। जैसे—रस्सी। ३. जाल। ४. रश्मि। ५. ज्वाला। लपट।

प्रसिद्ध—वि० [सं० प्र√सिध्+क्त] [भाव० प्रसिद्धि] १. (व्यक्ति) जो अपने कार्यों, गुणों आदि के फलस्वरूप ऐसी स्थिति में हो कि उसे किसी विशिष्ट क्षेत्र के लोग अच्छी तरह जानते हों। ख्यात। मशहूर। २. (वस्तु या व्यवहार) जो विशेष रूप से प्रचलन में हो और इसी लिए जिसे बहुत से लोग जानते हों। ३. अलंकृत। भूषित।
क्रि० वि० स्पष्ट शब्दों में। साफ-साफ। उदा०—दै बरदान प्रसिद्ध सिद्ध कीन्हौं रण रुद्रहिं।—केशव।

प्रसिद्धता—स्त्री०[सं० प्रसिद्ध+तल्+टाप्]=प्रसिद्धि।

प्रसिद्धि—स्त्री०[सं० प्र√सिध्+क्तिन्] १. प्रसिद्ध होने की अवस्था, गुण या भाव। ख्याति। मशहूरी। २. बनाव-सिंगार। भूषा।

प्रसीदिका—स्त्री० [सं० अत्या० स०] छोटा उद्यान। वाटिका।

प्रसुत—भू० कृ० [सं० प्र√सु (निचोड़ना)+क्त] दबा या निचोड़कर निकाला हुआ।
पुं० एक संख्या का नाम।

प्रसुप्त—भू० कृ० [सं० प्र√स्वप् (सोना)+क्त] [भाव० प्रसुप्ति] १. अच्छी तरह या गहरी नींद में सोया हुआ। २. इस प्रकार अन्दर छिपा या दबा हुआ कि बाहर से अस्तित्व का कोई लक्षण दिखाई न दे या अपना कार्य न कर रहा हो। सुषुप्त। जैसे—शरीर के अन्दर रोग के प्रसुप्त कीटाणु या विष।

प्रसुप्ति—स्त्री० [सं० प्र√स्वप्+क्तिन्] गहरी या गाढ़ी नींद। सुषुप्ति।

प्रसू—वि० [सं० प्र√सू (जनना)+क्विप्] १. जननेवाली। जन्म-दात्री। २. उत्पन्न करनेवाली। जैसे—रत्न-प्रसू भूमि।
स्त्री० १. माता। जननी। २. घोड़ी। ३. मुलायम घास। ४. कुशा। ५. केला।

प्रसूत—भू० कृ० [सं० प्र√सू+क्त] [स्त्री० प्रसूता] १. (वह) जो प्रसव के रूप में हुआ हो। उत्पन्न। पैदा।
पुं० १. प्रसव-काल के समय होनेवाला एक रोग। २. फूल। ३. चाक्षुष मन्वंतर के एक देवगण।

प्रसूता—स्त्री० [सं० प्रसूत+टाप्] १. वह स्त्री जिसने प्रसव किया अर्थात् बच्चा जना हो। नवजात शिशु की माता। २. घोड़ी।

प्रसूतालय—पुं० [सं० प्रसूता-आलय, ष० त०]=प्रसूति-भवन।

प्रसूति—स्त्री० [सं० प्र√सू+क्तिन्] १. स्त्री का प्रसव करना। बच्चे को जन्म देना। २. जीवों का बच्चे या अंडे देना। ४. उद्भव। उत्पत्ति स्थान। ५. संतति। ६. प्रसूता। जिसने प्रसव किया हो। ७. दक्ष प्रजापति की स्त्री सती की माता। ८. कारण।

प्रसूतिका—स्त्री० [सं० प्रसूत+ठन्—इक,+टाप्] प्रसूता स्त्री।

प्रसूतिज—पुं० [सं० प्रसूति√जन् (उत्पन्न होना)+ड] गर्भवती को प्रसव के समय होनेवाली पीड़ा।

प्रसूतिज्वर—पुं० [ष० त०] प्रसव के कुछ दिन बाद होनेवाला ज्वर।

प्रसूति-भवन—पुं० [ष० त०] १. अस्पतालों आदि का वह कमरा जिसमें रह कर स्त्रियाँ प्रसव करती अर्थात् बच्चा जन्मती हैं। (लेबर-रूम) २. वह घर या स्थान जहाँ स्त्रियों को बच्चे जनाने का काम होता हो।

प्रसूति-विज्ञान—पुं० [सं०] वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें गर्भवती स्त्रियों को संतान प्रसव कराने की कला या विद्या का विवेचन होता है। (अब्स्ट्रेट्रिक्स)

प्रसूत्यवकाश—पुं० [प्रसूति-अवकाश, च० त०] दे० 'प्रसवावकाश'।

प्रसून—वि० [सं० प्र√सू+क्त] १. जन्मा हुआ। प्रसूत। २. उत्पन्न पैदा।
पुं० १. पुष्प। फूल। २. कली।

प्रसूनक—पुं० [सं० प्रसून+कन्] १. फूल। २. कली। ३. एक तरह का कदंब।

प्रसून-शर—पुं० [ब० स०] कामदेव।

प्रसृत—भू० कृ० [सं० प्र√सृ (गति)+क्त] १. फैला हुआ। २. बढ़ा हुआ। ३. विनीत। ४. भेजा हुआ। ५. तत्पर। लगा हुआ। ६. प्रचलित। ७. इन्द्रियलोलुप।
पुं० १. हथेली भर का मान। २. अर्द्धांजलि। ३. दो पलों का मान।

प्रसृतज—पुं० [सं० प्रसृत√जन्+ड] महाभारत के अनुसार वह पुत्र जो व्यभिचार से उत्पन्न हुआ हो। जारज पुत्र।

प्रसृति—स्त्री० [सं० प्र√सृ+क्तिन्] १. फैले हुए होने की अवस्था या भाव। प्रसार। फैलाव। २. संतति। संतान। ३. गहरी की हुई अंजलि या हथेली। ४. सोलह तोले की एक पुरानी तौल। पसर। ५. जल्दी। शीघ्रता।

प्रसृष्ट—भू० कृ० [सं० प्र√सृज (सर्जन करना)+क्त] त्यागा हुआ। परित्यक्त।

प्रसेक—पुं० [सं० प्र√सिच् (सींचना)+घञ्] १. सेचन। सींचना। २. निचुड़ने या निचोड़ने की क्रिया या भाव। ३. निचुड़ने या निचोड़ने पर निकलनेवाला जल या और कोई तरल पदार्थ। ४. छिड़काव। ५. ५. थोड़ा-थोड़ा बहना। रसना। ६. बाहर निकलना। ७. जुकाम या सरदी में नाक से पतला पानी निकलने का रोग। ८. वीर्य के पतले होकर, धीरे-धीरे निकलते रहने का रोग। जिरियान।

प्रसेकी (किन्)—वि० [सं० प्र√सिच्+घिणुन्] १. बहनेवाला। २. जिससे मवाद निकलता रहे। ३. ऐसे व्रणवाला। ४. कै करता हुआ।
पुं० एक प्रकार का असाध्य व्रण या घाव।

प्रसेद†—पुं०=प्रस्वेद (पसीना)।

प्रसेदिका—स्त्री०=प्रसीदिका (वाटिका)।

प्रसेन—पुं०=प्रसेनजित्।

प्रसेनजित्—पुं० [सं०] भागवत के अनुसार, इसी के पास वह स्यमंतक मणि थी जिसे चुराने का कलंक श्रीकृष्ण पर लगा था।

प्रसेव—पुं० [सं० प्र√सिव् (सीना)+घञ्] १. वीन की तूँबी। २. थैली।

प्रसेवक—पुं० [सं० प्र√सिव्+ण्वुल्—अक] १. वह जो थैलियाँ बनाता हो। २. दे० 'प्रसेव'।

प्रसोपा—स्त्री० [अं० प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के आरंभिक अक्षर प्र+सो+पा] भारत का एक राजनीतिक दल और जिसका पूरा नाम प्रजा सोशलिस्ट पार्टी था और अब जिसका संयुक्त समाजवादी दल में विलयन हो गया है।

प्रस्कंदन—पुं० [सं० प्र√स्कन्द् (गति)+ल्युट—अन] १. कूदकर कोई चीज लाँघना। २. इस प्रकार भरी जानेवाली छलाँग। ३. महादेव। शिव। ४. जुलाब। विरेचन। ५. अतिसार।

प्रस्कन्न—वि० [सं० प्र√स्कंद+क्त] १. गिरा हुआ। २. समाज का नियम भंग करनेवाला। ३. जो समाज का नियम तोड़ने के कारण पतित समझा जाता हो। ४. जिस पर आक्रमण किया गया हो।
पुं० घोड़ों का एक प्रकार का रोग।

प्रस्खलन—पुं० [सं० प्र√स्खल् (पतन)+ल्युट-अन] =स्खलन।

प्रस्तर—पुं० [सं० प्र√स्तृ (फैलाना)+अच्] १. पत्थर। २. सम-तल स्थान। ३. कुश या डाभ का पूला। ४. पत्तों आदि का आसन या बिछावन। ५. बिछौना। बिस्तर। ६. चमड़े की थैली। ८. संगीत में, एक प्रकार का ताल। ८. दे० 'प्रस्तर'।

प्रस्तर कला—स्त्री० [ष० त०] पत्थरों को काट-छाँट या गढ़कर उनकी

विशिष्ट आकृतियों आदि बनाने और उन पर ओप आदि लाने की कला या विद्या।

प्रस्तरण—पुं०[सं० प्र√स्तृ+ल्युट्—अन] १. बिछाना। फैलाना। २. बिछावन।

प्रस्तरणी—स्त्री०[सं० प्रस्तरण +ङीप्] १. श्वेत दूर्वा। २. गोजिह्वा।

प्रस्तरभेद—पुं०[ष० त०] पाषाण भेद।

प्रस्तर मुद्रण—पुं०[तृ० त०] छापे या मुद्रण का वह प्रकार जिसमें छापे जानेवाले लेख आदि पहले एक विशेष प्रकार से तैयार किये हुए कागज पर लिखकर तब एक विशेष प्रकार के पत्थर पर उतारे और तब छापे जाते हैं। (लीथोग्राफ)

प्रस्तरोपल—पुं०[सं० प्रस्तर-उपल, मयू० स०] चंद्रकांत मणि।

प्रस्तार—पुं०[सं० प्र√स्तृ+घञ्] १. फैलाव। विस्तार। २. अधिकता। ३. तह। परत। ४. सीढ़ी। ५. समतल स्थान। ६. ऐसा मैदान जिसमें दूर तक घास ही घास हो। (लॉन) ७. घास-फूस, पत्तियों आदि का बिछौना। ८. छंदः शास्त्र में नौ प्रत्ययों में से पहला प्रत्यय जिसकी सहायता से यह जाना जाता है कि किसी मात्रिक या वर्णिक छंद के कितने भेद या रूप हो सकते हैं। इसी आधार पर इसके ये दो भेद होते हैं—मात्रिक प्रस्तार और वर्णिक प्रस्तार। ९. अंकों, वस्तुओं आदि के पंक्ति-बद्ध समूहों या वर्गों के क्रम या विन्यास में संगत और संभव परिवर्तन करना। (परम्युटेशन)

प्रस्तार-पंक्ति—स्त्री०[मयू० स०] एक प्रकार का वैदिक छंद जो पंक्ति छंद का एक भेद है।

प्रस्तारी (रिन्)—वि० [सं० प्र√स्तृ+णिनि] फैलने या फैलानेवाला (समास में)।

पुं० एक नेत्र रोग।

प्रस्ताव—पुं०[सं० प्र√स्तु (स्तुति)+घञ्] १. आरंभ। शुरू। २. विषय के आरंभ में परिचय देने के लिए कही जानेवाली बात। प्रस्तावना। प्राक्कथन। ३. किसी प्रसंग या विषय की छिड़ी हुई बात। चर्चा। ४. प्रकरण। विषय। ५. उपयुक्त समय। अवसर। मौका। ६. सामवेद का एक अंश जो प्रस्तोता नामक ऋत्विक् द्वारा गाया जाता था। ७. पहली भेंट या मुलाकात। ८. आज-कल मुख्य रूप से (क) वह नई बात जो किसी के सामने इस उद्देश्य से विचारार्थ रखी जाय कि यदि वह उसे उपयुक्त समझे तो मान ले और उसके अनुसार कार्य करे। (ऑफर, प्रोपोज़ल) जैसे—मेरा तो यही प्रस्ताव है कि आप लोग न्यायालय में न जाकर पंचायत से ही इसका निर्णय करा लें। (ख) उक्त का वह रूप जो किसी संस्था या सभा के सदस्यों के सामने इसलिए विचारार्थ रखा जाता है कि यदि अधिकतर सदस्य उसे मान लें तो उसी के अनुसार भविष्य में काम हुआ करे। (मोशन) जैसे—कर घटाने या बढ़ाने का प्रस्ताव।

प्रस्तावक—वि० [सं० प्र√स्तु+णिच्+ण्वुल्—अक] प्रस्ताव करनेवाला।

प्रस्तावन—पुं० [सं० प्र√स्तु+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रस्तावित] प्रस्ताव करने की क्रिया या भाव।

प्रस्तावना—स्त्री०[सं० प्र०√स्तु+णिच्+युच्-अन, +टाप्] १. आरंभ। २. प्रस्ताव। ३. वह आरंभिक कथन या वक्तव्य जो किसी विषय का विस्तारपूर्वक वर्णन करने से पहले उसके सम्बन्ध की कुछ मुख्य बातें बतलाने के लिए हो। उपोद्घात। प्राक्कथन। भूमिका। (इन्ट्रोडक्शन)

प्रस्तावित—भू० कृ०[सं० प्र√स्तु+णिच्+क्त] जिसके लिए या जिसके विषय में प्रस्ताव हुआ हो या किया गया हो।

प्रस्तावितो—पुं०[सं० प्रस्तावित से] वह जिसके सामने कोई झगड़ा निपटाने या समझौता करने के लिए कोई नया प्रस्ताव रखा जाय। (ऑफरी)

प्रस्ताव्य—वि० [सं० प्र√स्तु+णिच्+यत्] १. जो प्रस्ताव के रूप में उपस्थित किया जाने को हो अथवा किये जाने के योग्य हो। २. जिसके संबंध में प्रस्ताव किया जा सके या करना उचित हो।

प्रस्तुत—वि०[सं० प्र√स्तु+क्त] १. जिसकी स्तुति या प्रशंसा की गई हो। २. जिसका आरंभ हुआ हो या किया गया हो। आरब्ध। ३. जो कार्य रूप में किया गया अथवा घटित हुआ हो। ४. जिसकी अभिलाषा और आशा की गई हो। ५. जो कहा गया हो। उक्त। कथित। ६. जो किसी उपयोग या काम में आने के लिए ठीक और पूरा हो चुका हो। तैयार। जैसे—(क) भोजन प्रस्तुत है। (ख) मैं चलने को प्रस्तुत हूँ। ७. (बात या विषय) जो प्रस्ताव के रूप में किसी के सामने निर्णय, विचार आदि के लिए रखा गया हो। (प्रेजेन्टेड) ८. जो इस समय उपस्थित या वर्तमान हो। मौजूद। (प्रेजेन्ट) ९. बनाकर या और किसी प्रकार तैयार किया हुआ। तैयार। (प्रोड्यूस्ड)

पुं० १. साहित्य में, वह बात, वस्तु या विषय जिसकी चर्चा या वर्णन प्रत्यक्ष रूप से हो रहा हो; और प्रसंगवश जिसके साथ दूसरी बात, वस्तु या विषय का भी (उपमा, तुलना आदि के विचार से) उल्लेख या चर्चा हो जाती हो। (इसका विपर्याय 'अ-प्रस्तुत' है।)

विशेष—अलंकार शास्त्र में, इस प्रकार के वर्णनीय विषय को उपमा के चार मुख्य उपादानों में से एक उपादान माना है और 'उपमेय' को ही 'प्रस्तुत' कहा है। जैसे—'उसका मुख चंद्रमा के समान है।' में 'मुख' ही वर्ण्य विषय होने के कारण 'प्रस्तुत' है जिसकी उपमा चंद्रमा से दी गई है।

प्रस्तुतांकुर—पुं०[सं० प्रस्तुत-अंकुर, ष० त०] साहित्य में, अप्रस्तुत प्रशंसा की तरह का एक अलंकार जिसमें एक प्रस्तुत अर्थ में से एक दूसरा अर्थ भी अंकुर के रूप में निकलता है। जैसे—यदि नायिका भ्रमर से कहे कि तुम मालती को छोड़कर कँटीली केतकी के पास क्यों जाते हो। तो इसमें से एक दूसरा अर्थ यह निकलेगा कि तुम कुलीन वधू के रहते हुए पर-स्त्री या वेश्या के पास क्यों जाते हो? अथवा यदि कहा जाय—'तुम उनकी क्या निंदा करते हो। उनके सामने तो बड़े बड़े लोग सिर झुकाते हैं।' तो यहाँ एक की निंदा के साथ दूसरे की प्रशंसा भी अंकुर के रूप में लगी रहेगी।

प्रस्तुतार्थ—पुं०[सं० प्रस्तुत-अर्थ, ष० त०] पद, वाक्य, या शब्द का वह अर्थ जो प्रस्तुत प्रसंग या विषय के विचार से ठीक निकलता या बैठता हो (संकेतार्थ से भिन्न)।

प्रस्तुति—स्त्री०[सं० प्र√स्तु+क्तिन्] १. प्रस्तुत होने की अवस्था या भाव। २. प्रशंसा। स्तुति। ३. प्रस्तावना। भूमिका। ४. उपस्थिति। ५. तैयारी।

प्रस्तुतीकरण—पुं० [सं०प्रस्तुत+च्वि, इत्व, दीर्घ,√कृ(करना)+ल्युट्-अन] प्रस्तुत करने की क्रिया या भाव।

प्रस्तोक—पुं०[सं० प्र√स्तुच् (प्रसन्न होना)+घञ्] १. एक प्रकार का सामगान। २. सृजय का एक पुत्र।

प्रस्तोता (तृ०)—पुं०[सं० प्र√स्तु+तृच्] एक सामवेदी ऋत्विक् जो यज्ञ में पहले सामगान का प्रारंभ करता है।
पुं० प्रस्ताव करनेवाला व्यक्ति। प्रस्तावक।

प्रस्तोभ—पुं० [सं० प्र√स्तुभ् (स्तम्भन)+घञ्] एक प्रकार का साम।

प्रस्थ—वि० [सं० प्र√स्था (ठहरना)+क] १. प्रस्थान करनेवाला। २. कहीं पहुँचकर वहाँ रहनेवाला। जैसे—वानप्रस्थ।
पुं० १. पहाड़ के ऊपर की चौरस भूमि। (टेबुल लैंड) २. सम-तल भूमि। चौरस मैदान। ३. पहाड़ का ऊँचा किनारा। ४. किसी चीज का बहुत ऊपर उठा हुआ भाग। ५. फैलाव। विस्तार। ६. प्राचीन काल का एक मान जो दो प्रकार का होता था—एक तौलने का और दूसरा मापने का।

प्रस्थ-पुष्प—पुं० [ब० स०] १. छोटे पत्तोंवाली तुलसी। २. मरुआ। ३. जँबीरी। नीबू।

प्रस्थल—पुं०[सं० प्रस्थ√ला (लेना)+क] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन देश।

प्रस्थान—पुं०[सं० प्र√स्था+ल्युट्—अन] १. एक स्थान से दूरवाले किसी दूसरे स्थान की ओर चलना। यात्रा आरंभ करना। रवानगी। (डिपार्चर) २. सेना का युद्ध-क्षेत्र की ओर जाना। कूच। ३. आस्तिक हिंदुओं की एक प्रथा जिसमें वे शुभ मुहूर्त में यात्रा आरंभ न कर सकने पर उसके प्रतीक के रूप में अपने ओढ़ने-पहनने का कोई कपड़ा उस दिशा के किसी समीपस्थ गृहस्थ के घर रख देते हैं जिस दिशा में उन्हें जाना होता है।
क्रि० प्र०—रखना।
४. मरण। मरना। ५. मार्ग। रास्ता। ६. ढंग। तारीका। ७. वैखरी वाणी के ये अठारह अंग-चारों वेद, चारों उपवेद, ६ वेदांग, धर्मशास्त्र न्याय, मीमांसा और पुराण।

प्रस्थान-त्रयी—स्त्री०[सं० ष० त०] उपनिषदों, वेदांत सूत्रों और भगवद्गीता का सामूहिक नाम जिनमें प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों मार्गों का तात्त्विक विवेचन है।

प्रस्थानी (निन्)—वि० [सं० प्रस्थान+इनि] प्रस्थान अर्थात् यात्रा आरंभ करनेवाला। प्रस्थानकर्ता।
पुं० दे० प्रस्थान '३'।

प्रस्थानीय—वि०[सं० प्र√स्था+अनीयर्] जहाँ या जिसके लिए प्रस्थान किया जा सके।

प्रस्थापक—वि०[सं० प्र√स्था+णिच्, पुक् √ण्वुल्—अक] १. प्रस्थापन करनेवाला। २. प्रस्ताव करनेवाला। प्रस्तावक। प्रस्तोता।

प्रस्थापन—पुं० [सं० प्र√स्था+णिच्, पुक्,√ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रस्थापित, वि० प्रस्थानी, प्रस्थाप्य] १. प्रस्थान करना। भेजना। २. प्रेरणा। ३. कोई बात या विषय प्रमाणों आदि से सिद्ध करते हुए किसी के सामने उपस्थित करना या रखना। स्थापना। ४. उपयोग या व्यवहार करना। ५. मशीनों, यंत्रों आदि को किसी स्थान पर लगाना। प्रतिष्ठित करना। ६. उक्त रूप में बैठाये या लगाये हुए यंत्रों की सामूहिक संज्ञा। संस्थापन। (इन्स्टालेशन, अंतिम दोनों अर्थों में)

प्रस्थापना—स्त्री०=प्रस्थापन।

प्रस्थापित—भू० कृ०[सं० प्र√स्था+णिच्, पुक्,+क्त] १. जिसका प्रस्थापन हुआ हो या किया गया हो। २. भेजा हुआ। प्रेषित।

प्रस्थायी (यिन्)—वि०[सं० प्र√स्था+णिनि] १. प्रस्थान करनेवाला। २. जो कहीं भेजा जाने को हो। ३. स्थायी। चिरस्थायी।

प्रस्थिका—स्त्री०[सं० प्रस्थ+ठन्—इक,+टाप्] १. आमड़ा। २. पुदीना।

प्रस्थित—भू०कृ०[सं० प्र√स्था+क्त] [भाव० प्रस्थिति] १. जिसने प्रस्थान किया हो। २. जिसे कहीं भेजा गया हो। ३. जो अच्छी तरह या दृढ़तापूर्वक स्थित हो।

प्रस्थिति—स्त्री०[सं० प्र√स्था+क्तिन्] १. प्रस्थित होने की अवस्था या भाव। २. प्रस्थान। गमन।

प्रस्न—पुं०[सं० प्र√स्ना (नहाना)+क] नहाते समय शरीर पर जल उलीचने का पात्र।
†पुं०=प्रश्न।

प्रस्नव—पुं० [सं० प्र√स्नु (बहना)+अप्] १. धारा के रूप में बहने का भाव। २. धारा। ३. मूत की धार।

प्रस्नुत—वि०[सं० प्र√स्नु+क्त] टपकाने या बहानेवाला।

प्रस्नुत-स्तनी—स्त्री०[ब० स०,+ङीष्] वह स्त्री जिसके स्तनों से वात्सल्य के कारण दूध की धारें, बह रही हों।

प्रस्नुषा—स्त्री०[सं० प्रा० स०, पृषो० सिद्धि] पोते की स्त्री। पौत्र-वधू।

प्रस्नेय—वि०[सं० प्र√स्ना+यत्] (जल) जिससे स्नान किया जा सके। स्नान के काम आने योग्य।

प्रस्फुट—वि०[सं० प्र√स्फुट् (विकसित होना)+क] १. खिला हुआ विकसित।
भू० कृ० १. (फूल) जो खिला हुआ हो। २. (बात या विषय) जो बिलकुल स्पष्ट हो। ३. प्रकट। व्यक्त।

प्रस्फुटन—पुं०[सं० प्र√स्फुट् (फुरना, गति आदि)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रस्फुटित] १. (फूलों का) खिलना। फूटना। निकलना। २. व्यक्त होना। ३. प्रकाशित होना। ४. स्फूर्ति होना।

प्रस्फुरण—पुं० [सं० प्र√स्फुर्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रस्फुरित] १. काँपना। २. फैलना। ३. चमकना। ४. स्पष्ट होना।

प्रस्फोट—पुं० [सं०] अन्दर से फूटकर बाहर निकलने की क्रिया या भाव। (दे० 'प्रस्फोटन')

प्रस्फोटक—वि० [सं०] प्रस्फोट करने या फोड़नेवाला।
पुं० किसी यंत्र का वह अंग या कोई ऐसा उपकरण जो स्फोटन करता हो। (डिटोनेटर)

प्रस्फोटन—पुं० [सं० प्र√स्फुट् (फूटना)+ल्युट्—अन] १. प्रस्फोट उत्पन्न करने की क्रिया या भाव। २. किसी वस्तु का इस प्रकार एक बारगी खुलना या फूटना कि उसके अन्दर के पदार्थ वेग से ऊपर या बाहर निकल पड़ें। ३. तोड़-फोड़कर अन्दर की चीज निकालना। ऐसी क्रिया करना जिससे कोई चीज (जैसे—गैस या बारूद) जोर का शब्द करती हुई जलकर उड़े। (डिटोनेशन) ४. खिलना या खिलाना ५. विकसित करना। ६. अन्न आदि फटकना। ७. अन्न फटकने का सूप।

प्रस्मृत—भू० कृ०=विस्मृत

प्रस्मृति—स्त्री० [सं० प्र√स्मृ+क्तिन्]=विस्मृति (भूलना)।

प्रस्यंद—पुं० [सं० प्र√स्यंद् (बहना)+घञ्] १. बहना। २. चूना। टपकना।

प्रस्रंसन—पुं० [सं० प्र√स्रंस्+ल्युट्—अन] १. गिरना। २. गर्भ-पात होना। ३. बहनेवाला पदार्थ।

प्रस्रंसी (सिन्)—वि० [सं० प्र√स्रंस्+णिनि] [स्त्री० प्रस्रंसिनी] १. पतनशील। गिरनेवाला। २. असमय ही गिर जानेवाला (गर्भ)।

प्रस्रव—पुं० [सं० प्र√स्रु (गति)+अप्] १. धारा के रूप में बहना या चूना। २. इस प्रकार बहने या चूनेवाली धारा। ३. स्तन या थन में से वात्सल्य या दूध की अधिकता के कारण बहनेवाली दूध की धारा। ४. मूत्र। पेशाब। ५. चावल की माँड़। ५. आँसू।

प्रस्रवण—पुं० [सं० प्र√स्रु+ल्युट्—अन] १. तरल पदार्थ के चूने या बहने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. पानी का झरना। सोता। ३. दूध। ४. पसीना। प्रस्वेद। ५. माल्यवान पर्वत।

प्रस्रवणी—स्त्री० [सं० प्रस्रवण+ङीप्] वैद्यक के अनुसार बीस प्रकार की योनियों में से एक।

प्रस्राव—पुं० =प्रस्रव।

प्रस्रुत—भू० कृ० [सं० प्र√स्रु+क्त] १. प्रस्रव के रूप में होनेवाला। २. गिरा, झड़ा या बहा हुआ।

प्रस्वन—पुं० [सं० प्रा० स०] जोरों का शब्द। ऊँचा स्वर।

प्रस्वाप—पुं० [सं० प्र√स्वप् (सोना)+णिच्+घञ्] १. वह वस्तु जिसके प्रयोग से निद्रा आए। नींद लानेवाली चीज या दवा। २. नींद। ३. एक प्रकार का अस्त्र जिसके संबंध में यह प्रसिद्ध है कि इसे चलाने पर शत्रु-पक्षवालों को नींद आ जाती थी। ४. स्वप्न।

प्रस्वापक—वि० [सं० प्र√स्वप्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. नींद लाने या सुलानेवाला। २. मारक।

प्रस्वापन—पुं० [सं० प्र+स्वप्√णिच्√ल्युट्—अन] ऐसा काम करना जिससे कोई सो जाय। सुलाना।

प्रस्विन्न—वि० [सं० प्र√स्विद्+क्त] पसीने से लथ-पथ।

प्रस्वेद—पुं० [सं० प्र√स्विद्+घञ्] त्वचा में से निकलनेवाले जलकण।

प्रस्वेदक—वि० [सं० प्र√स्विद्+णिच्+ण्वुल्—अक] प्रस्वेद या पसीना लानेवाला।

पुं० ऐसी दवा जो पसीना लाकर शरीर के अन्दर का विष पसीने के रूप में बाहर निकाल दे। (डायोफोरेटिक)

प्रस्वेदन—पुं० [सं० प्र√स्विद्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रस्वेदित] १. पसीना निकालने या लाने की क्रिया या भाव। २. रसायन-शास्त्र में, किसी चीज पर की जानेवाली वह प्रक्रिया जिससे वह चीज हवा की नमी के कारण पसीजने या गलने लगती है। (डिलीक्विसेन्स)

प्रस्वेदित—वि० [सं० प्रस्वेद+इतच्] १. पसीने से भींगा हुआ। २. पसीना लानेवाला। ३. गरम।

प्रस्वेदी (दिन्)—वि० [सं० प्रस्वेद+इनि] पसीने से भींगा हुआ।

प्रस्वेद्य—वि० [सं० प्र√स्विद्+णिच्+यत्] जिस पर या जिसमें प्रस्वेद या प्रस्वेदन की क्रिया होती या हो सकती हो अथवा की जा सकती हो या की जाने को हो। (डिलीक्वेसेन्ट)

प्रह—पुं० [सं० प्रज्ञा] १. चमक। २. प्रकाश।

प्रहणन—पुं०=हनन।

प्रहत—भू० कृ० [सं० प्र√हन्+क्त] [भाव० प्रहति] १. मारा हुआ। हत। २. जिस पर आघात हुआ हो। ३. पराजित। ४. प्रसारित। पुं० १. आघात। प्रहार। २. पासा आदि फेंकने की क्रिया।

प्रहति—स्त्री० [सं० प्र√हन्+क्तिन्] १. प्रहत होने की अवस्था या भाव। २. आघात। प्रहार।

प्रहर—पुं० [सं० प्र√हृ (हरण करना)+अप्] काल-मापन की दृष्टि से दिन के किये हुए आठ भागों में से प्रत्येक जिनकी अवधि ३-३ घंटे की होती है।

प्रहरक—पुं०=प्रहरी।

प्रहरखना*—अ० [सं० प्रहर्षण] हर्षित या प्रसन्न होना। आनंदित होना।

प्रहरण—पुं० [सं० प्र√हृ (हरण करना)+ल्युट्—अन] १. बलपूर्वक किसी से कुछ ले लेना। छीनना। २. अस्त्र। ३. युद्ध। ४. आघात। प्रहार। वार। ५. फेंकना। ६. परित्याग। ७. चित्त की एकाग्रता। ८. एक तरह की पालकी। ९. पालकी में बैठने का स्थान। १०. मृदंग का एक प्रबंध।

प्रहरणीय—वि० [सं० प्र√हृ+ल्युट्—अन] १. जिसे छीना जा सके। २. जिसपर आक्रमण किया जा सके। ३. जिससे युद्ध किया जा सके। ४. नष्ट किये जाने के योग्य।

पुं० प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र।

प्रहरी (रिन्)—पुं० [सं० प्रहार+इनि] १. पहर-पहर पर घंटा बजाने-वाला कर्मचारी। घड़ियाली। २. पहरेदार।

प्रहर्ता (र्तृ)—पुं० [सं० प्र√हृ+तृच्] [स्त्री० प्रहर्त्री] १. वह जो किसी पर प्रहार करे। २. योद्धा।

प्रहर्ष—पुं० [सं० प्रा० स०] हर्ष का वह तीव्र रूप जिसमें हृदय उमड़ने लगता है।

प्रहर्षण—पुं० [सं० प्र√हृष्+णिच्+ल्युट्—अन] १. हर्षित या प्रसन्न करने की क्रिया या भाव। २. आनन्द। प्रसन्नता। ३. [प्र√हृष्+णिच्+ल्युट्—अन] बुध नामक ग्रह। ४. परवर्ती साहित्य में एक प्रकार का गौण अर्थालंकार जिसमें अनायास या सहज में किसी उद्देश्य की आशा से अधिक सिद्धि या आशातीत फलप्राप्ति की स्थिति का उल्लेख होता है। (यह 'विषादन' अलंकार के विपरीत भाव का सूचक है।)

प्रहर्षणी—स्त्री० [सं० प्रहर्षण+ङीप्] १. हरिद्रा। हलदी। २. तेरह अक्षरों की एक वर्णवृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः म, न, ज, र, ग होता है।

प्रहर्षित—भू० कृ० [सं० प्रहर्ष+इतच्] १. जिसे प्रहर्ष हुआ हो। २. जिसके मन में प्रहर्ष हुआ हो। ३. जिसके मन में प्रहर्ष उत्पन्न किया गया हो।

प्रहसन—पुं० [सं० प्र√हस्+ल्युट्+अन] १. प्रसन्नतापूर्वक हँसना। विशेषतः जोरों से हँसना। २. किसी को उपहासास्पद ठहराना या बनाना। ३. एक प्रकार का रूपक जो भाण की तरह हास्य-रस-प्रधान होता है। इसमें एक या दो अंग तथा अनेक पात्र होते हैं; इसका विषय प्रायः कवि-कल्पित होता है; और इसमें दूषित तथा हेय आचार-विचार की दिल्लगी उड़ाई जाती है।

प्रहसित—पुं० [सं० प्र√हस्+क्त] १. खूब जोर से होनेवाली हँसी। ठहाका। २. एक बुद्ध का नाम।

भू० कृ० हँसता हुआ।

प्रहस्त—पुं० [सं० ब० स०] १. हथेली की वह स्थिति जिसमें उँगलियाँ खुली तथा अकड़ी हुई हों। पंजा। २. चपत। थप्पड़। ३. रावण का एक सेनापति। (रामायण)

प्रहाण—पुं० [सं० प्र√हा (त्याग)+ल्युट्—अन] १. छोड़ना। त्यागना। २ अनुमान करना। ३. उद्योग। चेष्टा।

प्रहान*—पुं०=प्रहाण।

प्रहानि—स्त्री० [सं०] १. बहुत बड़ी हानि। २. कमी। ३. त्रुटि।

प्रहार—पुं० [सं० प्र√हृ+घञ्] १. आहत या हत करने के लिए किसी पर किया जानेवाला आघात। वार। जैसे—लाठी या तलवार से किया जानेवाला प्रहार। २. आघात। चोट।

प्रहारक—वि० [सं० प्र√हृ+ण्वुल्—अक] प्रहार करनेवाला।

प्रहारण—पुं० [सं० प्र√हृ+णिच्+ल्युट्—अन] १. प्रहार करना। २. काम्यदान। मनचाहा दान।

प्रहारना*—स० [सं० प्रहार] आघात या प्रहार करना। मारना।

प्रहारार्त—वि० [सं० प्रहार-आर्त, तृ० त०] जिस पर प्रहार किया गया हो; फलतः आहत या हत।

पुं० १. प्रहार लगने से होनेवाला घाव। २. उक्त घाव से होनेवाली पीड़ा।

प्रहारित*— भू० कृ० [सं० प्रहृत] जिस पर आघात या प्रहार हुआ हो जिसे चोट लगी या मार पड़ी हो।

प्रहारी (रिन्)—वि० [सं० प्र√हृ+णिनि] [स्त्री० प्रहारिणी] १. प्रहार करने या मारनेवाला। २. दूर करने या हटानेवाला। ३. नष्ट करनेवाला। नाशक। ४. (अस्त्र, शस्त्र आदि) चलाने या छोड़नेवाला।

प्रहारुक—वि० [सं० प्र√हृ+उकञ्] १. छीननेवाला। २. प्रहार करनेवाला।

प्रहार्य—वि० [सं० प्र√हृ+ण्यत्] १. जो हरण किया या छीना जा सके। २. जिस पर प्रहार या आघात किया जा सके।

प्रहास—पुं० [सं० प्र√हस् (हँसना)+घञ्] १. प्रहसन। हँसी। २. अट्टहास। ३. नट। ४. शिव। ५. कार्तिकेय का एक अनुचर। ६. सोमतीर्थ का एक नाम।

प्रहासी (सिन्)—वि० [सं० प्र√हस्+णिनि] जोर से हँसने या हँसानेवाला।

प्रहित—भू० कृ० [सं० प्र√धा (धारण)+क्त, धा=हि] १. भेजा हुआ। प्रेरित। २. फेंका हुआ। ३. फटका हुआ। ४. निष्कासित।

पुं० १. सूप। २. दाल। ३. सालन।

प्रहुत—पुं० [सं० प्र√हु (होम करना)+क्त] बलिवैश्वदेव। भूतयज्ञ।

प्रहुति—स्त्री० [सं० प्र√हु+क्तिन्] आहुति।

प्रहृत—भू० कृ० [सं० प्र√हृ (हरण)+क्त] १. फेंका हुआ। २. चलाया हुआ। ३. मारा हुआ। ४. फैलाया हुआ। ५. ठोंका या पीटा हुआ।

पुं० १. प्रहार। मार। २. एक गोत्र-प्रवर्तक ऋषि।

प्रहृष्ट—भू० कृ० [सं० प्र√हृष् (प्रसन्न होना)+क्त] अत्यन्त प्रसन्न। आह्लादित।

प्रहेलक—पुं० [सं० प्र√हिल् (हाव-भाव करना)+अच्√कन] लपसी।

प्रहेला—स्त्री० [सं० प्रा० स०] स्वच्छन्द रूप से की जानेवाली क्रीड़ा।

प्रहेलि—स्त्री०=प्रहेलिका।

प्रहेलिका—स्त्री० [सं० प्र√हिल्+क्वुन्—अक,+टाप्, इत्व] पहेली। (दे०)

प्रह्लाद—पुं०=प्रह्लाद।

प्रह्लाद—पुं० [सं० प्र√ल्हाद्+णिच्+अच्] १. आह्लाद। आनन्द। २. एक प्राचीन देश। ३. दैत्यराज हिरण्यकशिपु का एक पुत्र जो बहुत बड़ा ईश्वर-भक्त था। कहा जाता है कि इसी की रक्षा करने के लिए भगवान ने नृसिंह अवतार धारण करके हिरण्यकशिपु को मारा था।

प्रह्लादक—वि० [सं० प्र√ह्लाद+णिच्+ण्वुल्—अक] [स्त्री० प्रह्लादिका] प्रसन्न करनेवाला। हर्षकारक।

प्रह्लादन—पुं० [सं० प्र√ह्लाद+णिच+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रह्लादित] आह्लादित या प्रसन्न करना।

प्रह्लादी (दिन्)— वि० [सं० प्रह्लाद+इनि] प्रसन्न होनेवाला।

प्रांकुर—पुं० [सं०] वनस्पतियों में बीज का वह अगला भाग जिससे पत्तियों, शाखाओं अदि का अंकुरण आरंभ होता है। (प्लुम्यूल)

प्रांग—वि० [सं० प्र-अंग, ब० स०] लंबे डीलडौल का।

पुं० एक तरह का छोटा ढोल। पणव।

प्रांगण—पुं० [सं० प्र-अंगन, ब० स०] १. मकान के आगे का खुला छोड़ा हुआ स्थान। २. मकान के अन्दर का वह स्थान जो चारों ओर से घिरा परन्तु ऊपर से खुला होता है। ३. एक तरह का ढोल।

प्रांगन†—पुं०= प्रांगण।

प्रांजन—पुं० [सं० प्र—अंजन, प्रा० स०] आँखों में अंजन लगाना। २. आँख में लगाने का अंजन। ३. रंग। ४. प्राचीन भारत में तीर या वाण पर लगाया जानेवाला एक प्रकार का रंग या लेप।

प्रांजल—वि० [सं० प्र√अञ्ज् (चिकना करना)+अलच्] [भाव० प्रांजलता] १. (भाव या भाषा) जो सरल तथा स्पष्ट हो और जिसमें जटिलता न हो। निर्मल। २. सच्चा। ३. समान। बराबर। ४. साफ। स्वच्छ।

प्रांजलि—वि० [सं० प्र-अंजलि, ब० स०] जो अंजलि बाँधे हो। अंजलिबद्ध।

स्त्री० १. वह मुद्रा जिसमें दोनों हाथ जुड़े हुए हों। २. अंजलि।

प्रांत—पुं० [सं० प्र-अंत, प्रा० स०] [वि० प्रांतिक] १. अंत। शेष। सीमा। २. किनारा। छोर। सिरा। ३. ओर। तरफ। दिशा। ४. भारत में, अंगरेजी शासन में वह शासनिक इकाई जिसमें कई प्रमंडल होते थे, तथा जिसका प्रधान शासक राज्यपाल होता था। प्रदेश। (प्राविन्स) ५. एक प्राचीन ऋषि। ६. उक्त ऋषि के गोत्र के लोग।

प्रांतग—वि० [सं० प्रांत√गम् (जाना)+ड] सीमा पर का निवासी।

प्रांतदुर्ग—पुं० [मध्य० स०] प्राचीन भारत में, वह दुर्ग जो नगर के

किनारे प्राचीर के बाहर होता था। २. दुर्ग के आस-पास की बाहर की बस्ती।

प्रांत पुष्पा—स्त्री० [ब० स०] १. एक प्रकार का पौधा। २. उक्त पौधे का फूल।

प्रांतभूमि—स्त्री० [प० त०] १. किसी पदार्थ का अंतिम भाग। किनारा। सिरा। २. योग में सिद्धि की अंतिम सीमा; समाधि। ३. सीढ़ी।

प्रांतर—पुं० [सं० प्र-अन्तर, ब० स०] १. छाया आदि से रहित विस्तृत निर्जन पथ। २. दो गाँवों के बीच की जमीन। ३. दो प्रदेशों के बीच का स्थान। ४. जंगल। वन। ५. पेड़ के तने का खोखला अंश। खोडर।

प्रांतायन—पुं० [सं० प्रांत+फक्—आयन्] प्रांत नामक ऋषि के गोत्रज।

प्रांतिक—वि० [सं० प्रांत+ठक्—इक]=प्रांतीय।

प्रांतीय—वि० [सं० प्रांत+छ—ईय] [भाव० प्रांतीयता] १. प्रांत से संबंध रखनेवाला। प्रांत में होनेवाला। २. प्रांत की सरकार के अधि-क्षेत्र का (अर्थात जिस पर केन्द्रिय सरकार का अधिकार न हो)।

प्रांतीयता—स्त्री० [सं० प्रांतीय+तल—टाप्] १. प्रांतीय होने की अवस्था या भाव। २. अपने प्रांतवासियों के प्रति होनेवाली ऐसी मोहजन्य तथा पक्षपातपूर्ण भावना जिसके कारण अन्य प्रांतों के वासियों के प्रति उदासीनता या उपेक्षा दिखाई जाती है। (प्राविन्शलिज़्म)

प्रांशु—वि० [सं० प्र-अंशु, ब० स०] [भाव० प्रांशुता] १. ऊँचा। उच्च। २. लंबा।

प्राइमर—स्त्री० [अं०] १. किसी भाषा की वर्ण-माला आदि सिखाने-वाली प्रारंभिक पुस्तक जिसके द्वारा बच्चों को लिखना-पढ़ना सिख-लाया जाता है। २. किसी विषय की आरंभिक मोटी-मोटी बातें बतलानेवाली पुस्तक। पहली पुस्तक।

प्राइमरी—वि० [अं०] १. प्राइमर-संबंधी। २. आरंभिक। ३. प्राथ-मिक।

प्राइवेट—वि० [अं०] १. जिसका संबंध केवल किसी व्यक्ति से हो। निज का। जैसे—प्राइवेट सेक्रेटरी=वह सहायक जो किसी के साथ रहकर उसके पत्र-व्यवहार आदि का काम करता हो। निजी सचिव। २. (बात या रहस्य) जिसका संबंध अपने से अथवा किसी विशिष्ट व्यक्ति से हो और इसी लिए जिसे लोगों पर प्रकट न किया जा सकता हो।

प्राक्—अव्य० [सं० प्र√अञ्च् (गति)+क्विप्] १. सम्मुख। सामने। २. आगे। पहले। ३. पिछले प्रकरण या भाग में।
वि० पुराना।
पुं० पूर्व दिशा। पूरब।

प्राकट्य—पुं० [सं० प्रकट+ष्यञ्] प्रकट होने की अवस्था या भाव। प्रकटता।

प्राकर्ष—पुं० [सं० प्रकर्ष+अण्] एक प्रकार का साम।

प्राकर्षिक—वि० [सं० प्रकर्ष+ठञ्—इक] जो औरों से अच्छा समझा जा सके और इसी लिए ग्राह्य हो। वरेण्य।

पुं० [सं० प्र+आ√कर्ष (हिंसा)+किकन्] १. स्त्रियों के साथ नाचने-वाला पुरुष। २. स्त्रियों का दलाल। कुटना।

प्राकाम्य—पुं० [सं० प्रकाम+ष्यञ्] आठ प्रकार के ऐश्वर्यों या सिद्धियों में से एक जिसकी प्राप्ति से सब प्रकार की कामनाएँ बहुत सहज में और तुरन्त पूरी की जा सकती हैं।

प्राकार—पुं० [सं० प्र√कृ (विक्षेप)+घञ्] १. किसी स्थान या इमा-रत के चारों ओर की दीवार। चहारदीवारी। २. घेरा।

प्राकारीय—वि० [सं० प्राकार+छ—ईय] १. प्राकार-संबंधी। २. प्राकार या परकोटे से घिरा हुआ।

प्राकाश—पुं०=प्रकाश।

प्राकाशिकी—स्त्री० [सं० प्रकाश से] दे० 'प्रकाशिकी'।

प्राकाश्य—पुं० [सं० प्रकाश+ष्यञ्] १. प्रकाशित होने की अवस्था या भाव। २. प्रकटता। प्राकट्य। ३. कीर्ति। यश।

प्राकृत—वि० [सं० प्रकृति+अण्] [भाव० प्राकृतत्व] १. प्रकृति संबंधी। प्रकृति का। २. प्रकृति से उत्पन्न। नैसर्गिक। ३. जो अपने उसी मूल रूप में हो, जिसमें प्रकृति ने उसे उत्पन्न किया हो। ४. भौतिक। ५. लौकिक। सांसारिक। ६. स्वाभाविक। ७. साधारण। मामूली। ८. प्रांतीय। ९. अशिक्षित। १०. क्षुद्र, तुच्छ या नीच।
स्त्री० १. किसी विशिष्ट क्षेत्र या प्रांत के लोगों की बोल-चाल की भाषा जो छोटे-बड़े, शिक्षित-अशिक्षित सभी प्रकार के लोग सामान्य रूप से आपस के नित्य के व्यवहारों में बोलते हों। यह उच्च और शिक्षित समाज की परिष्कृत या संस्कृत भाषा से भिन्न होती है। २. उक्त प्रकार की वह विशिष्ट भाषा जो भारत के प्राचीन आर्य लोग बोलते थे और जिसका संस्कार करके शिक्षित समाज तथा साहित्यिक रचनाओं के लिए बाद में संस्कृत भाषा बनाई गई थी।

विशेष—(क) यों तो वैदिक युग में भी अपने समय की प्राकृत भाषा ही बोलते थे, परन्तु स्वतंत्र भाषा के रूप में 'प्राकृत' का नामकरण संस्कृत भाषा बन जाने पर ही और उससे पार्थक्य दिखलाने के लिए हुआ था। (ख) आज-कल संकुचित अर्थ में पालि, प्राकृति और अपभ्रंश को क्रमशः प्राकृत के आरंभिक, मध्यकालीन और उत्तरकालीन रूप माना जाने लगा है। मागधी, अर्धमागधी, पैशाची, शौरसेनी, महाराष्ट्री आदि इसी के बाद के साहित्यिक रूप हैं। इन भाषाओं में भी किसी समय प्रचुर साहित्य प्रस्तुत होता था, जिसका बहुत-सा अंश अब भी अनेक स्थानों में मिलता है।

४. पराशर मुनि के मत से बुधग्रह की सात प्रकार की गतियों में पहली और उस समय की गति जब वह स्वाती, भरणी और कृत्तिका नक्षत्रों में रहता है। यह गति चालीस दिनों तक रहती है।

प्राकृत ज्वर—पुं० [कर्म० स०] वैद्यक के अनुसार वह ज्वर जो ऋतु के प्रभाव से वर्षा, शरद और वसन्त ऋतुओं में होता है; और जिसमें क्रमात वात, पित्त और कफ का प्रकोप होता है।

प्राकृतत्व—पुं० [सं० प्राकृत+त्व] प्राकृत होने की अवस्था, धर्म या भाव।

प्राकृत-प्रलय—पुं० [कर्म० स०] वेदांत के अनुसार प्रलय का वह उग्र रूप जिसमें तीनों लोकों के सिवा महतत्त्व अर्थात प्रकृति के पहले और मूल विकार तक का क्षय या विनाश हो जाता है; और प्रकृति भी ब्रह्म में लीन हो जाती है।

प्राकृतिक—वि० [सं० प्रकृति+ठञ्—इक] १. प्रकृति से उद्भूत। नैसर्गिक। २. प्रकृति में होनेवाले किसी विकार के फलस्वरूप होनेवाला। ३. मनुष्य की प्रकृति या स्वभाव से संबंध रखनेवाला। ४. मानुषिक भावों, गुणों, स्वभावों आदि के अनुसार होनेवाला; फलतः जो कृत्रिम अथवा क्रूर न हो। जैसे—(क) स्त्री पुरुष में होनेवाला प्रेम का प्राकृतिक बन्धन। (ख) प्राकृतिक, हास। ५. प्रकृति। आवश्यकता आदि के फलस्वरूप स्वाभाविक रूप से जो आदिकाल से उपयोग में चला आ रहा हो। जैसे—हिंसक जीवों के लिए आमिष प्राकृतिक भोजन है। ६. साधारण। मामूली। ७. भौतिक। ८. सांसारिक। ९. नीच।

प्राकृतिक चिकित्सा—स्त्री० [सं० कर्म० स०] चिकित्सा का एक प्रकार जिसमें रोगों का निदान प्राकृतिक उपायों से किया जाता है। (नेचर क्योर)

प्राकृतिक भूगोल—पुं० [सं० कर्म० स०] भूगोल विद्या का वह अंग जिसमें प्राकृतिक तत्त्वों का तुलनात्मक दृष्टि से विचार होता है। इसमें पृथ्वी-तल की वर्तमान तथा भिन्न-भिन्न प्राकृतिक अवस्थाओं का विचार होता है।

प्राक्कथन—पुं० [सं० कर्म० स०] १. पहले कही हुई बात। २. पुस्तक के विषय आदि के संबंध में पहले कही जानेवाली बात। प्रस्तावना।

प्राक्कर्म (र्मन्)—पुं० [सं० कर्म० स०] १. आरंभ में या पहले किया जानेवाला काम। २. पूर्व जन्म के किये हुए कर्म। ३. अदृष्ट। भाग्य।

प्राक्कलन—पुं० [सं० कर्म० स०] अनुमान, कल्पना या संभावना के आधार पर पहले से किया जानेवाला आकलन या गणना। कूत। तखमीना। (एस्टिमेशन)

प्राक्कल्प—पुं०=पुराकल्प।

प्राक्चरण—पुं० [सं० ब० स०] योनि। भग।

प्राक्छाय—पुं० [सं० ब० स०] वह समय जब छाया पूर्व ओर पड़ती हो। अर्थात् अपराह्णकाल या तीसरा प्रहर।

प्राक्तन—वि० [सं० प्राच्+ट्यु—अन, तुट्] १. पहले का। २. पूर्व जन्म का। ३. पुराना। प्राचीन।
पुं० भाग्य। प्रारब्ध।

प्राक्फाल्गुन—पुं० [सं० प्राक्फाल्गुनी+अण्] बृहस्पति ग्रह।

प्राक्फाल्गुनी—स्त्री०=पूर्वा फाल्गुनी।

प्राक्संध्या—स्त्री० [सं० कर्म० स०] सूर्योदय के समय की संध्या अर्थात् सवेरा।

प्रांक्सी—स्त्री० दे० 'प्रतिपुरुषपत्र'।

प्राखर्य—पुं० [सं० प्रखर+ष्यञ्]=प्रखरता।

प्राग*—वि० [सं० प्राक्] १. पहले का। पहलेवाला। २. पहला माना या समझा जानेवाला; अर्थात् मुख्य।

प्रागल्भ—पुं० [सं० प्रगल्भ+ष्यञ्] =प्रगल्भता।

प्रागभाव—पुं० [सं० प्राग्—अभाव, मध्य० स०] १. पहले से अथवा पूर्वकाल से वर्तमान रहने या होने की अवस्था। (प्रि-एग्ज़िस्टेन्स) २. वैशेषिक दर्शन के अनुसार, पाँच प्रकार के अभावों में से पहला। ऐसा अभाव जिसकी पूर्ति पीछे या बाद में हो गई हो। जैसे—बनकर तैयार होने से पहले घर या वस्त्र का प्रागभाव होता है। ३. ऐसा पदार्थ जिसका आदि तो न हो, परन्तु अंत होता हो। अनादि परन्तु सांत।

प्रागार—पुं० [सं० प्र-आगार, प्रा० स०] १. घर। मकान। २. प्रासाद। महल।

प्रागुक्ति—स्त्री० [सं० प्राची-उक्ति, कर्म० स०] पहले कही हुई बात। पूर्व-कथन।

प्रागुत्तर—वि० [सं० प्राच्-उत्तर, कर्म० स०] पूर्वोत्तर।

प्रागुत्तर—स्त्री० [सं० प्राची-उत्तरा, कर्म० स०] ईशान कोण।

प्रागुदीची—स्त्री० [सं० प्राची-उदीची, कर्म० स०] ईशान कोण।

प्रागैतिहासिक—वि० [सं० प्राक्-ऐतिहासिक, कर्म० स०] क्रम-बद्ध रूप में प्राप्त होनेवाला लिखित इतिहास से पूर्व काल का। इतिहास में वर्णित और निश्चित काल से पहले का। (प्री-हिस्टारिक)

प्राग्ज्योतिष—पुं० [सं० ब० स०] महाभारत आदि के अनुसार असम राज्य। कामरूप देश।

प्राग्ज्योतिषपुर—पुं० [सं०] प्राग्ज्योतिष की राजधानी जिसे अब गोहाटी कहते हैं। कहते हैं कि यह नगर कुश के पुत्र अमूर्तरज ने बसाया था और परवर्ती काल में नरकासुर की राजधानी यही थी।

प्राग्दक्षिणा—स्त्री० [सं० प्राची-दक्षिण, कर्म० स०] अग्निकोण।

प्राग्द्वार—पुं० [सं० कर्म० स०] पूर्वीद्वार।

प्राग्भक्त—पुं० [सं० कर्म०स०] १. वैद्यक में, भोजन करने से कुछ पहले का समय जिसमें ओषधि खाई जाती है। २. उक्त समय में ओषधि खाना।

प्राग्भव—पुं० [सं० कर्म० स०] पूर्व-जन्म।

प्राग्भाग—पुं० [सं० कर्म० स०] अगला या आगे का भाग।

प्राग्र—पुं० [सं० प्र-अग्र, प्रा० स०] चरम या शीर्षबिंदु।

प्राग्वंश—पुं० [सं० कर्म० स०] १. पहले का वंश। २. [ब० स०] यज्ञशाला में हविर्गृह के पूर्व स्थित स्थान। ३. विष्णु।

प्राग्वचन—पुं० [सं० कर्म० स०] १. प्राक्कथन। २. मन्वादि महर्षियों के वचन। (महा०) ३. पहले से किसी को दिया हुआ वचन।

प्राग्वर्ण—पुं० [सं०कर्म० स०] वर्णमाला का प्रारम्भिक अक्षर या वर्ण। उदा०—ये नयन डूबे अनेकों बार हैं, काव्य के प्राग्वर्ण पर भी हैं रुके।—पन्त।

प्राघात—पुं० [सं० प्र+आ√हन् (हिंसा)+घञ्] १. भारी आघात। कड़ी चोट। २. युद्ध।

प्राघार—पुं० [सं० प्र+आ√घृ (चूना)+घञ्] चूना। रसना।

प्राघुण—पुं० [सं० प्र+आ√घुर्ण् (भ्रमण)+क] अतिथि।

प्राघुणिक—पुं० [सं० प्र+आ√घूर्ण्+घञ्, प्राघूर्ण+ठञ्—इक] अतिथि। मेहमान।

प्राङ्न्याय—वि० [सं० ब० स०] जिसका न्याय पहले हो चुका हो।
पुं० न्याय में, किसी दोबारा चलाये हुए अभियोग के संबंध में प्रतिवादी का यह कहना कि इसका न्याय पहले ही (वादी के विरुद्ध) हो चुका है।

प्राङ्मुख—वि० [सं० ब० स०] जो पूर्व दिशा की ओर मुख किये हुए हो। पूर्व दिशा की ओर देखता हुआ।
क्रि० वि० पूर्व की ओर मुख किये हुए।

प्राचंड्य—पुं० [सं० प्रचंड+ष्यञ्]=प्रचंडता।

प्राचार्य—पुं० [सं० प्र+आचार्य प्रा० स०] दे० 'प्रधानाचार्य'।

प्राची—स्त्री० [सं० प्राच्+ङीप्] १. पूर्व दिशा। पूरब। २. अपने अथवा देवता के सामने की दिशा। ३. जल-आँवला।

प्राचीन—वि० [सं० प्राच्+ख—ईन] [भाव० प्राचीनता] १. पूर्व दिशा में होनेवाला अथवा उससे संबंध रखनेवाला। २. जो पूर्व अर्थात् पहलेवाले समय में बना, रहा या हुआ हो। बहुत दिनों का। (एन्शेन्ट) ३. पुराना।
पुं०=प्राचीर।

प्राचीनता—स्त्री० [सं० प्राचीन+तल्+टाप्] प्राचीन होने की अवस्था, गुण या भाव। पुरानापन।

प्राचीनत्व—पुं०=प्राचीनता।

प्राचीन-पनस—पुं० [सं० कर्म० स०] बेल (पेड़)।

प्राचीनबर्हि (स्)—पुं० [सं०] इंद्र।

प्राचीन-योग—पुं० [सं० ब० स०] एक गोत्र-प्रवर्त्तक ऋषि।

प्राचीना—स्त्री० [सं० प्राचीन+टाप्] १. पाठा। २. रास्ता। ३. दे० 'नित्यप्रिया' (गोपियाँ)।
वि० स्त्री० प्राचीन का स्त्री० रूप।

प्राची-पति—पुं० [सं० ष० त०] इन्द्र।

प्राचीर—पुं० [सं० प्र+आ√चि+ऋन्, दीर्घ] ऐसी ऊँची तथा पक्की दीवार जो किले, नगर आदि के रक्षार्थ उसके चारों ओर बनाई गई हो। चहारदीवारी। परकोटा।

प्राचुर्य—पुं० [सं० प्रचुर+ष्यञ्]=प्रचुरता।

प्राचेतस—पुं० [सं० प्रचेतस्+अण्] १. प्रचेता के अपत्य या वंशज। २. प्रचेतागण जो प्राचीनर्बाह के पुत्र थे और जिनकी संख्या दस थी। ३. विष्णु। ४. दक्ष प्रजापति। ५. वरुण के एक पुत्र। ६. वाल्मीकि मुनि का एक नाम।

प्राच्छित†—पुं०=प्रायश्चित्त।

प्राच्य—वि० [सं० प्राच्+यत्] १. जो पूरब अर्थात् पूर्वी भू-भाग में बना, रहता या होता हो। पूरबी। २. पूर्वीय देशों अर्थात् एशिया महाद्वीप के देश और उनके निवासियों से संबंध रखनेवाला। पूर्वीय। जैसे—प्राच्य सभ्यता। ३. पुराना। प्राचीन।
पुं० १. पूर्वी भूभाग। २. पूर्वी देश। ३. कोशल, काशी, विदेह और अंग देश की प्राचीन सामूहिक संज्ञा।

प्राच्यक—वि० [सं० प्राच्य+कन्]=प्राच्य।

प्राच्यविद्—पुं० [सं०]=प्राच्यवेत्ता।

प्राच्य-विद्या—स्त्री० [सं०] पुरातत्व की वह शाखा जिसमें प्राच्य देशों अर्थात् तुर्की, ईरान, भारत, बरमा, चीन, स्याम, मलाया आदि पूर्वीय देशों के इतिहास, धर्म, भाषा, संस्कृत, साहित्य आदि का अनुसंधानात्मक विचार और विवेचन होता है। (ओरियन्टलिज्म)

प्राच्य-वृत्ति—स्त्री० [सं०कर्म०स०] साहित्य में वैताली वृत्ति का एक भेद जिनके समपादों में चौथी और पाँचवीं मात्राएँ मिलकर गुरु हो जाती हैं।

प्राच्यवेत्ता—पुं० [सं०] वह जो प्राच्य-विद्या का अच्छा ज्ञाता हो। (ओरिएण्टलिस्ट)

प्राच्य-व्रण—पुं० [सं० कर्म० स०] एक प्रकार का व्रण या घाव जो उष्ण कटिबन्ध के देशों में चेहरे या हाथ-पैर पर होता है। (ओरिए-न्टल सोर)

प्राच्या—स्त्री० [सं० प्राच्य+टाप्] प्राच्य (कोशल, काशी, विदेह और अंग) के निवासियों की भाषा। अर्द्ध-मागधी और मागधी इसी के विकसित रूप हैं।

प्राजक—पुं० [सं० प्र√अज् (गति)+णिच्+ण्वुल्—अक] रथ चलाने-वाला। सारथी।

प्राजन—पुं० [सं० प्र√अज्+ल्युट्—अन] कोड़ा। चाबुक।

प्राजापत—पुं० [सं० प्रजापति+अण्] प्रजापति का कार्य, पद या भाव।

प्राजापत्य—वि० [सं० प्रजापति+ण्य] १. प्रजापति-संबंधी। प्रजापति का। २. प्रजापति से उत्पन्न।
पुं० १. हिंदू धर्म-शास्त्रों के अनुसार आठ प्रकार के विवाहों में से वह विवाह जिसमें कन्या का पिता वर से बिना कुछ लिए उसे अपनी कन्या दे देता है।
विशेष—ऐसे विवाह में वर और कन्या को प्रतिज्ञा करनी पड़ती है कि हम दोनों मिलकर गार्हस्थ्य धर्म का पालन करेंगे, और एक दूसरे के प्रति निष्ठ रहेंगे।
२. एक प्रकार का व्रत जो बारह दिनों का होता है। इसमें पहले तीन दिन तक सायंकाल २२ ग्रास, फिर तीन दिन तक प्रातः काल २६ ग्रास, फिर तीन दिन तक अपाचित अन्न २४ ग्रास खाकर अन्त में तीन दिन उपवास करना पड़ता है। ३. रोहिणी नक्षत्र। ४. यज्ञ। ५. प्रयाग तीर्थ का एक नाक।

प्राजापत्या—स्त्री० [सं० प्राजापत्य+टाप्] १. संन्यास ग्रहण करने से पूर्व अपनी संपत्ति दान करने की क्रिया या भाव। २. वैदिक छंदों के आठ भेदों में से एक।

प्राजिता (तृ)—पुं० [सं० प्र√अज्+तृच्]=प्राजक (सारथी)।

प्राजी (जिन्)—पुं० [सं० प्र√अज्+णिनि] बाज (पक्षी)।

प्राजेश—पुं० [सं० प्रजेश+अण्] १. रोहिणी नक्षत्र। २. यज्ञ में प्रजापति देवता के उद्देश्य से रखा जानेवाला पदार्थ।

प्राज्ञ—वि० [सं० प्र√ज्ञा (जानना)+क+अण्] [स्त्री० प्राज्ञा, प्राज्ञी, भाव० प्राज्ञता, प्राज्ञत्व] १. बुद्धिमान। समझदार। २. चतुर। होशियार। ३. (ऐसा व्यक्ति) जिसने अध्ययन द्वारा बहुत अधिक ज्ञान प्राप्त किया हो।
पुं० १. चतुर व्यक्ति। २. विद्वान् व्यक्ति। ३. जीवात्मा।

प्राज्ञत्व—पुं० [सं० प्राज्ञ+त्व] १. प्राज्ञ होने की अवस्था या भाव। पांडित्य। विद्वत्ता। २. कौशल। चातुर्य। ३. बुद्धिमत्ता। ४. मूर्खता। बेवकूफी। (व्यंग्य)

प्राज्ञमानी (निन्)—पुं० [सं० प्राज्ञ+मन्+णिनि] वह जिसे अपने पांडित्य का विशेष अभिमान हो।

प्राज्ञी—स्त्री० [सं० प्राज्ञ+ङीप्] १. ऐसी स्त्री जिसने अध्ययन द्वारा बहुत अधिक ज्ञान प्राप्त किया हो। २. सूर्य्य की भार्या का नाम।

प्राज्य—वि० [सं० प्र√अज्+ण्यत्] १. प्रचुर। अधिक। २. ऊँचा। विशाल। ३. जिसमें बहुत घी पड़ा हो।

प्राड्विवाक—पुं० [सं०√प्रच्छ् (पूछना)+क्विप्=प्राट्-विवाक, कर्म० स०] १. वह जो व्यवहार-शास्त्र का ज्ञाता हो और विवाद आदि का निर्णय करता हो। न्यायाधीश २. प्राचीन काल में वह अधि-कारी जिसे राजा न्याय करने के लिए नियुक्त करता था। ३. वकील।

प्राण—पुं० [सं० प्र√अन्+घञ्] १. श्वास। साँस। २. वह वायु या हवा जो साँस के साथ अन्दर जाती और बाहर निकलती है। ३. वह शक्ति जो जीव-जंतुओं, पेड़-पौधों आदि में रहकर उन्हें जीवित रखती और उन्हें अपने सब व्यापार चलाने में समर्थ करती है। जीवनी-शक्ति। जान। (लाइफ़)

विशेष—हमारे यहाँ शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों में रहनेवाले ये पाँच प्रकार के प्राण माने गये हैं—प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान। इसी आधार पर 'प्राण' का प्रयोग प्रायः बहुवचन में होता है। इसके सिवा शरीर की कुछ विशिष्ट क्रियाएँ करानेवाले और भी पाँच प्राण कहे गये हैं जो वायु रूप में हैं और जिन्हें नाग, कूर्म, कृकिल, देवदत्त तथा धनंजय कहते हैं। छांदोग्य ब्राह्मण में जीवनी शक्ति, वाक्, चक्षु, श्रोत्र और मन को 'प्राण' कहा गया है। कुछ ग्रंथों में मूलाधार में रहनेवाली वायु को ही मुख्य रूप से 'प्राण' कहा गया है। जैन शास्त्रों में पाँचों इंद्रियाँ, त्रिविध बलों (मनोबल, वाक्‌बल और काय-बल) तथा उच्छ्वास और आयु के समूह को प्राण कहा गया है। कुछ अवसरों पर और विशेषतः कुछ मुहावरों में यह शारीरिक बल या शक्ति का भी वाचक होता है।

मुह०—प्राण उड़ जाना=दुःख, भय आदि के कारण होश-हवाश जाता रहना। बहुत घबराहट या विकलता होना। **(किसी के) प्राण खाना**=बहुत तंग या परेशान करना। **प्राण गले (या मुँह) तक आना**=रोग, संकट आदि के कारण मृत्यु के समीप तक पहुँचना। मरणासन्न होना। **प्राण घुटना**=मृत्यु होना। मरना। **प्राण छोड़ना, तजना या त्यागना**=यह शरीर छोड़कर परलोक जाना। मरना। **प्राण जाना या निकलना**=मृत्यु होना। **(किसी में) प्राण डालना**=(क) किसी में जीवन का संचार करना। (ख) किसी मरते हुए को जीवन प्रदान करना। **(अपने) प्राण देना**=मर जाना। मरना। **(किसी के लिए) प्राण देना**=किसी के किसी काम से बहुत दुःखी या रुष्ट होकर मरना। **(किसी पर) प्राण देना**=किसी से इतना अधिक प्रेम करना कि उसके बिना रहा न जा सके। प्राणों के समान प्रिय समझना। **(किसी काम या बात से) प्राण निकलने लगना**=कोई काम या बात करते हुए इतनी आशंका या भय होना कि मानों प्राण निकल जायँगे। भय, शंका आदि के कारण अथवा और किसी प्रकार अपने आप को बचाने के लिए बिलकुल अलग या बहुत दूर रहना। **प्राण (या प्राणों) पर खेलना**=ऐसा काम करना जिसमें जान जाने का भय हो। प्राणों को संकट में डालना। **प्राण या (प्राणों) पर बीतना**=(क) जीवन संकट में पड़ना। जान जोखिम होना। (ख) मृत्यु होना। मर जाना। **(किसी के) प्राण बचाना**=जीवन की रक्षा करना। जान बचाना। **(अपने) प्राण बचाना**=(क) किसी प्रकार अपने जीवन की रक्षा करना। (ख) कोई काम करने से बचना या भागना। जान या पीछा छुड़ाना। **प्राण मुट्ठी या हथेली में लिये फिरना**=जीवन को कुछ न समझना। प्राण देने पर हर समय तैयार रहना। **किसी के प्राण रखना**=जान बचाना। जीवन की रक्षा करना। **(किसी के) प्राण लेना या हरना**=जीवन का अन्त कर देना। मार डालना। **प्राण हारना**=(क) मर-जाना। (ख) साहस या हिम्मत छोड़ देना। हतोत्साह होना। **प्राणों पर आ पड़ना या आ बनना**=जीवन संकट में पड़ना। जान जोखिम में होना। **प्राणों में प्राण आना**=घबराहट या भय कम होना। चित्त कुछ ठिकाने या शांत होना।

३. वह जो प्राणों के समान परम प्रिय हो। ४. ब्रह्म। ५. ब्रह्मा। ६. विष्णु। ७. अग्नि। आग। ८. वैवस्वत मंवतर के सप्तर्षियों में से एक। ९. धाता के एक पुत्र का नाम। १०. एक साम का नाम। ११. यवर्ण। यकार। १२. वाराहमिहिर आर्यभट्ट के अनुसार उतना काल जितने में दस दीर्घ मात्राओं का उच्चारण होता है। यह विनाडिका का छठा भाग है। १३. पुराणानुसार एक कल्प जो ब्रह्मा के शुक्ल पक्ष की षष्ठी को होता है।

प्राण-अधार*—पुं०=प्राणाधार।

प्राणक—पुं० [सं० प्राण√कै (प्रकाशित होना)+क] १. जीवक वृक्ष। २. जीव। प्राणी। ३. गोंद।

प्राण-कर—वि० [सं० प्राण√कृ (करना)+ट] जिससे शरीर का बल बढ़ता हो। शक्ति-वर्द्धक। पौष्टिक।

प्राण-कष्ट—पुं० [ष० त० या मध्य० स०] वह कष्ट जो प्राण निकलने या मरने के समय होता है। मरण-काल की यातना या वेदना।

प्राण-कृच्छ्—पुं०=प्राण-कष्ट।

प्राण-ग्रह—पुं० [ष० त०] नासिका। नाक।

प्राण-घातक—वि० [सं० ष० त०] १. प्राण लेने या मार डालनेवाला। २. (विष या और कोई पदार्थ) जिसके व्यवहार से प्राण निकल जायँ।

प्राणघ्न—वि० [सं० प्राण√हन्+टक्]=प्राण-घातक।

प्राणच्छेद—पुं० [ष० त०] हत्या। वध।

प्राण-जीवन—पुं० [ष० त०] १. वह जो प्राणों का आधार हो। प्राणाधार। २. परम प्रिय व्यक्ति। ३. विष्णु।

प्राण-त्याग—पुं० [ष० त०] प्राण का शरीर से निकल जाना। मर जाना।

प्राणथ—पुं० [सं० प्र√अन् (जीना)+अथ] १. वायु। हवा। २. प्रजापति। ३. पवित्र स्थान। तीर्थ। ४. जैन शास्त्रानुसार एक देवता जो कल्पभव नामक वैमानिक देवताओं के अंतर्गत हैं।

वि० बलवान। सशक्त।

प्राण-दंड—पुं० [ष० त०] हत्या या ऐसे ही किसी दूसरे गंभीर अपराध के लिए किसी को दी जानेवाली मौत की सजा। मृत्यु-दंड। (कैपिटल पनिशमेन्ट)

प्राणद—वि० [सं० प्राण√दा+क] १. प्राणों की प्रतिष्ठा या संचार करनेवाला। प्राण-दाता। २. प्राणों की रक्षा करनेवाला। प्राण-रक्षक। ३. शरीर की प्राण-शक्ति बढ़ानेवाला।

पुं० १. जल। २. खून। ३. जीवक वृक्ष। ४. विष्णु।

प्राणदा—स्त्री० [सं० प्राणद+टाप्] १. हरीतकी। हर्रे। २. ऋद्धि नामक ओषधि।

प्राण-दाता (तृ)—वि० [ष० त०] प्राणों की प्रतिष्ठा या संचार करनेवाला। प्राणद।

प्राण-दान—पुं० [ष० त०] १. किसी में प्राण डालना या उसे प्राणों से युक्त करना। २. जिसे मार डालना चाहते हों, उसे दया करके यों ही छोड़ देना। किसी के प्राणों की रक्षा करना। ३. अपने प्राणों का किसी शुभ काम के निमित्त किया जानेवाला बलिदान। जीवन-दान।

प्राणद्यूत—पुं० [ष० त०] अपने को ऐसी स्थिति में डालना जिसमें प्राण तक जाने का भय हो। जान जोखिम में डालना। जान की बाजी लगाना।

प्राण-द्रोह—पुं० [ष० त०] किसी के प्राण लेने के लिए किया जानेवाला दुस्साहस जो विधिक दृष्टि में अपराध होता है।

प्राण-धन—पुं० [ष० त०] १. वह जो किसी को प्राणों के समान प्रिय हो। २. पति या प्रियतम।

प्राणधार—वि० [सं० प्राण√धृ (धारण करना)+अण्] जो प्राण धारण किये हुए हो। जीता हुआ।
पुं० प्राणी। जीव।

प्राण-धारण—पुं० [ष० त०] १. प्राणों की रक्षा तथा उन्हें पोषित करते रहने का भाव। २. उक्त का कोई साधन। ३. शिव।

प्राणधारी (रिन्)—वि० [सं० प्राण√धृ+णिनि] जो साँस लेता हो। साँस लेकर जीवित रहने वाला।
पुं० जीव। प्राणी।

प्राण-ध्वनि—स्त्री० [सं०] १. भाषा विज्ञान और व्याकरण में, शब्दों के उच्चारण के समय मुँह से निकलनेवाली ऐसी ध्वनि जिसमें किसी स्वर के उच्चारण से पहले उस पर श्वास का कुछ अधिक जोर पड़ता या झटका लगता है। जैसे—'ए' (संबोधन) के उच्चारण में प्राण-ध्वनि लगने पर 'हे' और होंठ में के 'ओं' के उच्चारण में लगने पर 'हों' (होंठ) का उच्चारण होता है। २. वर्ण-माला में का 'ह' वर्ण।

प्राणन—पुं० [सं० प्र√अन्+ल्युट्—अन] १. किसी में प्राण डालने की क्रिया या भाव। प्राण-प्रतिष्ठा करना। २. जीवन। ३. इस प्रकार हिलना-डुलना कि जीवित होने का प्रमाण मिले। ४. जल। पानी।

प्राण-नाथ—पुं० [ष० त०] [स्त्री० प्राणनाथा] १. वह जो प्राणों फलतः शरीर का स्वामी हो। २. स्त्री की दृष्टि से उसका पति। ३. प्रियतम। प्रेमी। ४. यम। ५. औरंगजेब के शासन-काल में एक क्षत्रिय आचार्य जो प्राण-नाथी धार्मिक संप्रदाय के प्रवर्तक थे।

प्राण-नाथी (थिन्)—पुं० [सं० प्राण-नाथ+इनि] १. प्राण-नाथ का चलाया हुआ एक धार्मिक संप्रदाय। २. उक्त संप्रदाय का अनुयायी।

प्राण-नाश—पुं० [ष० त०] १. प्राणों का नष्ट हो जाना। मृत्यु। २. जान से मार डालना। हत्या।

प्राण-नाशक—वि० [ष० त०] प्राण नष्ट करने या मार डालनेवाला।

प्राण-निग्रह—पुं० [ष० त०] प्राणायाम।

प्राण-पति—पुं० [ष० त०] १. प्राण-नाथ। २. आत्मा। ३. वैद्य।

प्राण-परिक्रय—पुं० [ष० त०] प्राणों की बाजी लगाना।

प्राण-परिग्रह—पुं० [ष० त०] प्राण धारण करना। जन्म लेना।

प्राण-प्यारा—वि०, पुं०=प्राण-प्रिय।

प्राण-प्रतिष्ठा—स्त्री० [ष० त०] १. किसी में प्राण डालकर उसे प्राण-युक्त अर्थात् सजीव बनाना। २. देवालय स्थापित करते समय किसी विशिष्ट मूर्ति में वास करने के लिए उसके देवता का किया जानेवाला आवाहन तथा स्थापन जो कर्म-कांड का धार्मिक कृत्य है।

प्राणप्रद—वि० [सं० प्राण+प्र√दा (देना)+क] १. प्राणद। (दे०) २. शरीर का स्वास्थ्य ठीक करने और बढ़ानेवाला।

प्राण-प्रदायक—वि० [ष० त०] प्राणद। प्राणदाता।

प्राण-प्रिय—वि० [स्त्री० प्राण-प्रिया] प्राणों के समान प्रिय।
पुं० १. परम प्रिय व्यक्ति। २. प्रियतम।

प्राणभृत्—वि० [सं० प्राण√भृ (धारण करना)+क्विप्] १. प्राण धारण करनेवाला। २. प्राण-पोषक।
पुं० १. जीव। २. विष्णु।

प्राणमय—वि० [सं० प्राण+मयट्] [स्त्री० प्राणमयी] जिसमें प्राण या जीवनी-शक्ति हो। जानदार। सजीव।

प्राणमय-कोश—पुं० [सं० कम० स०] आत्मा को आवृत करनेवाले पाँच कोशों में से दूसरा जो पाँचों प्राणों (प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान) तथा पाँचों कर्मेन्द्रियों का समूह कहा गया है। (वेदान्त)

प्राण-यात्रा—स्त्री० [सं० ष० त०] १. श्वास-प्रश्वास के आने-जाने की क्रिया। साँस का आना-जाना। २. भोजन, स्नान आदि के दैनिक कृत्य जिनसे मनुष्य या प्राणियों का जीवन चलता है। ३. जीविका।

प्राण-योनि—पुं० [सं० ष० त०] १. परमेश्वर। २. वायु।
स्त्री० प्राणों का स्रोत।

प्राणरंध्र—पुं० [सं० ष० त०] शरीर के छिद्र या रन्ध्र। मुख्यतः नाक और मुँह जिनसे मनुष्य साँस लेता है।

प्राणरोध (न्)—पुं० [सं० ष० त०] १. साँस रोकना। २. प्राणायाम।

प्राण-वध—पुं० [सं० ष० त०] जान से मार डालना। वध। हत्या।

प्राण-वल्लभ—पुं० [सं० उपमित स०] [स्त्री० प्राणवल्लभा] १. वह जो बहुत प्यारा हो। अत्यंत प्रिय। २. पति। स्वामी। ३. प्रियतम।

प्राणवान् (वत्)—वि० [सं० प्राण+मतुप्, वत्व] जिसमें प्राण हों। प्राणों से युक्त।

प्राण-वायु—स्त्री० [सं० कर्म० स०] १. प्राण। २. जीव। ३. आज-कल वातावरण में रहनेवाला एक प्रसिद्ध गैस जिसमें कोई गन्ध, वर्ण या स्वाद नहीं होता और जो प्राणियों, वनस्पतियों आदि को जीवित रखने के लिए परम आवश्यक तत्त्व है। (ऑक्सिजन)

प्राण-विद्या—स्त्री० [सं० ष० त०] उपनिषदों का वह प्रकरण जिसमें प्राणों का वर्णन है।

प्राण-वृत्ति—स्त्री० [सं० ष० त०] प्राण, अपान, उदान आदि पंच प्राणों के कार्य।

प्राण-व्यय—पुं० [सं० ष० त०] प्राणनाश। मृत्यु।

प्राण-शरीर—पुं० [सं० ष० त०] १. उपनिषदों के अनुसार वह सूक्ष्म शरीर जो मनोमय विज्ञान और क्रिया का हेतु माना गया है। २. परमेश्वर।

प्राण-शोषण—पुं० [सं० ष० त०] बाण। तीर।

प्राण-संकट—पुं० [सं० ष० त०] १. ऐसी स्थिति जिसमें प्राण जाने का भय हो। २. ऐसी बात जिसके कारण जान जोखिम में पड़ी हो।

प्राण-संदेह—पुं० [ष० त०] वह अवस्था जिसमें जान जाने का डर हो। प्राणान्त होने की आशंका।

प्राण-संन्यास—पुं० [ष० त०] मृत्यु। मौत।

प्राण-संयम—पुं० [सं० ब० स०] प्राणायाम।

प्राण-शय—पुं० [ष० त०] १. जीवन के नष्ट होने की आशंका। २. मरणासन्नता। ३. प्राण-संकट।

प्राण-हर—वि० [सं० प्राण√हृ (हरण करना)+अच्] १. जान से मार डालनेवाला। प्राण लेनेवाला। २. बलनाशक।
पुं० विष आदि ऐसे पदार्थ जिनके सेवन से प्राण निकल जाते हैं।

प्राण-हानि—स्त्री० [सं० ष० त०] प्राणों का नाश। मृत्यु।

प्राण-हारक—वि० [सं० ष० त०]=प्राण-हर।
पुं० वत्सनाभ। बछनाग।

प्राणहारी (रिन्)—वि० [सं० प्राण√हृ+णिनि] प्राण लेनेवाला। प्राण-नाशक।

प्राणांत—पुं० [सं० प्राण-अंत, ष० त०] प्राणों का होनेवाला अंत या नाश। मृत्यु।

प्राणांतक—वि० [सं० प्राण-अंतक, ष० त०] १. प्राण या जान लेनेवाला। घातक। २. मरने का-सा कष्ट देनेवाला। जैसे—प्राणांतक परिश्रम।

प्राणांतिक—पुं० [सं० प्राणांत+ठक्—इक] १. वध। हत्या। २. वधिक।
वि०=प्राणांतक।

प्राणाग्नि-होत्र—पुं० [सं०प्राण-अग्नि, कर्म० स०, प्राणाग्नि-होत्र, स० त०] भोजन के समय पहले किया जानेवाला वह कृत्य जिसमें 'प्राणाय स्वाहा', 'अपानाय स्वाहा', 'व्यानाय, स्वाहा' 'उदानाय स्वाहा' और 'समानाय स्वाहा' कहते हुए पाँच ग्रास निकालकर अलग रखते हैं।

प्राणाघात—पुं० [सं० प्राण-आघात, स०त०] १. वह आघात जो किसी के प्राण लेने के उद्देश्य से किया गया हो। २. मार डालना। वध। हत्या।

प्राणाचार्य—पुं० [सं० प्राण-आचार्य, ष० त०] वैद्य विशेषतः राजवैद्य।

प्राणातिपात—पुं० [सं० प्राण-अतिपात, ष० त०] जान से मार डालना। हत्या।

प्राणातिपात-विरमण—पुं० [सं० पं० त०] जैन मतानुसार अहिंसा व्रत। यह दो प्रकार का कहा गया है—द्रव्य-प्राणातिपात-विरमण और भाव-प्राणातिपात-विरमण।

प्राणात्मा (त्मन्)—पुं०=जीवात्मा।

प्राणात्यय—पुं० [सं० प्राण-अत्यय, ष० त०] १. प्राण-नाश। २. मरने का समय। मृत्यु-काल। ३. वह बात जिसके कारण मारे जाने का भय हो।

प्राणाद—वि० [सं० प्राण√अद् (खाना)+अण्] प्राणनाशक।

प्राणाधार—वि० [सं० प्राण-आधार, ष० त०] जिसके कारण प्राण टिके या बने हुए हों। अत्यंत प्रिय। प्यारा।
पुं० १. प्रेम-पात्र। २. स्त्री का पति। स्वामी।

प्राणाधिक—वि० [सं० प्राण-अधिक, पं०त०] [स्त्री० प्राणाधिका] प्राणों से भी अधिक प्रिय। बहुत प्यारा।
पुं० स्त्री का पति। स्वामी।

प्राणाधिप—पुं० [सं० प्राण-अधिप, ष० त०] आत्मा।

प्राणाबाध—पुं० [सं० प्राण-आबाध, ष० त०] प्राण जाने की आशंका या संभावना।

प्राणायतन—पुं० [सं० प्राण-आयतन, ष० त०] शरीर से प्राणों के निकलने के नौ मार्ग—दो कान, नाक के दोनों छेद, दोनों आँखें, मुख, गुदा और उपस्थ।

प्राणायाम—पुं० [सं० प्राण-आयाम, ष०त०] १. प्राणों को अपने वश में रखने की क्रिया या भाव। २. योग शास्त्रानुसार योग के आठ अंगों में चौथा जिसमें मन को शांत और स्थिर करने के लिए श्वास और प्रश्वास की वायुओं को नियंत्रित और नियमित रूप से अंदर खींचा और बाहर निकाला जाता है। प्राण-निरोध।

प्राणायामी (मिन्)—वि० [सं० प्राणायाम+इनि] १. प्राणायाम संबंधी। २. प्राणायाम करनेवाला।

प्राणावरोध—पुं० [सं० प्राण-अवरोध, ष० त०] श्वास को अंदर खींचकर रोक रखना।

प्राणाशय—पुं० [सं० प्राण-आशय, ष० त०] प्राण-शक्ति। उदा०—अपनी असीमता में अवसित प्राणाशय।—निराला।

प्राणासन—पुं० [सं० प्राण-आसन, मध्य० स०] तांत्रिक साधना में एक प्रकार का आसन।

प्राणाहुति—स्त्री० [सं० प्राण-आहुति, ष० त०] पाँचों प्राणों को पाँच ग्रासों के रूप में दी जानेवाली आहुति।

प्राणि—पुं०=प्राणी।

प्राणिक—वि० [सं० प्राण+ठन्—इक] १. प्राण-संबंधी। प्राणों का। २. बिना शोर मचाये बोलनेवाला।
वि० [सं० प्राणी से] प्राणियों या जीव-धारियों से सम्बन्ध रखनेवाला। प्राणियों का।

प्राणित—भू० कृ० [सं० प्र√अन्+णिच्+क्त] १. प्राणों या जीवनी-शक्ति से युक्त किया हुआ। उदा०—शशि मुख प्राणित नील गगन था, भीतर से आलोकित मन था।—पंत। २. जीता हुआ।

प्राणि-द्यूत—पुं० [सं० ष० त०] वह बाजी जो भेड़े, तीतर, घोड़े आदि जीवों की लड़ाई, दौड़ आदि में लगाई जाय। (धर्म-शास्त्र)

प्राणि-भूगोल—पुं० [सं० ष० त०] भूगोल की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि पृथ्वी पर कहाँ की जल-वायु के प्रभाव के कारण कैसे-कैसे प्राणी और वनस्पतियाँ होती हैं। (बायोजियाग्रैफी)

प्राणि-मंडल—पुं० [सं० ष० त०] वैज्ञानिक क्षेत्रों में जल, स्थल और आकाश का उतना अंश जिसमें कीड़े, मकोड़े, जीव-जंतु, वनस्पतियाँ आदि रहती तथा होती हैं। जीव-मंडल। (बायोस्फीयर)

प्राणि-विज्ञ—पुं० [सं० ष० त०] वह जो प्राणि-शास्त्र का अच्छा ज्ञाता हो। (जूलाजिस्ट)

प्राणि-विज्ञान—पुं० [सं०ष० त०] आधुनिक विज्ञान की वह शाखा जिसमें प्राणियों की जातियों, वर्गों, विभेदों आदि का अध्ययन होता है। (जूलॉजी)

प्राणिशास्त्र—पुं०=प्राणि-विज्ञान।

प्राणी (णिन्)—वि० [सं० प्राण+इनि] जिसमें पाँचों प्राणों का निवास हो। जीव-धारी। प्राण-धारी।
पुं० १. प्राणों से युक्त शरीर। २. मनुष्य। ३. व्यक्ति। ४. स्त्री की दृष्टि से उसका पति। ५. पति की दृष्टि से उसकी पत्नी।
पद—दोनों प्राणी=पति और पत्नी। पुरुष और स्त्री। दंपति।

प्राणेश—पुं० [सं० प्राण-ईश, ष० त०] [स्त्री० प्राणेशा] १. प्राणों का स्वामी। २. स्त्री की दृष्टि से उसका पति। ३. परम प्रिय व्यक्ति।

प्राणेश्वर—पुं० [सं० प्राण-ईश्वर ष० त०] [स्त्री० प्राणेश्वरी] १. पति। स्वामी। २. परम प्रिय व्यक्ति।

प्राणोत्सर्ग—पुं० [सं० प्राण-उत्सर्ग, ष० त०] मृत्यु।

प्राणोपेत—वि० [सं० प्राण-उपेत पुं० त०] प्राणों से युक्त। जीवित।

प्रातःकर्म—पुं० [सं० ष० त० वा स० त०] कर्म जो नित्य प्रातःकाल किये जाते हैं।

प्रातःकार्य—पुं०=प्रातःकर्म।

प्रातःकाल—पुं० [सं० कर्म० स० या ष० त०] १. पौ फटने का समय। तड़का। रात का अंतिम एक दंड और दिन का पहला एक दंड। २. सूर्य निकलने से कुछ पहले और बाद का समय। ३. कार्यालयों, निर्माण-शालाओं तथा विद्यालयों में जाने तथा काम करने का सवेरे ६-७ बजे से लेकर ११-१२ बजे दोपहर तक का समय। 'दिन' से भिन्न। जैसे—कल से कार्यालय प्रातःकाल हो गया है।

प्रातःकालिक—वि० [सं० प्रातःकाल+ठञ्—इक] प्रातःकाल-संबंधी। प्रातःकाल का।

प्रातःकालीन—वि० [सं० प्रातःकाल+ख—ईन]=प्रातःकालिक।

प्रातःसंध्या—स्त्री० [सं० सप्त० स०] प्रातःकाल की जानेवाली संध्या (ईश्वरोपासना)।

प्रातःसवन—पुं० [सं० मध्य० स०] तीन प्रधान सवनों (सोम-यागों) में से पहला सवन जो प्रातःकाल किया जाता है।

प्रातःस्नान—पुं० [सं० ष० त० वा स० त०] प्रातःकाल या सवेरे का स्नान।

प्रातःस्नायी (यिन्)—वि० [सं० प्रातः√स्ना+णिनि] प्रातः काल स्नान करनेवाला। सवेरे नहानेवाला।

प्रातःस्मरण—पुं० [सं० स० त०] सवेरे के समय ईश्वर, देवतादि का किया जानेवाला जप, पाठ या भजन।

प्रातःस्मरणीय—वि० [सं० स० त०] जिसे प्रातःकाल स्मरण करना उचित हो; अर्थात् परम पूज्य और श्रेष्ठ।

प्रात—अव्य० [सं० प्रातः] प्रभात के समय। बहुत सवेरे। तड़के।
पुं० प्रातःकाल। सवेरा।

प्रातकाली—स्त्री० दे० 'पाराती' (गीत)।

प्रात-कृत—पुं०=प्रातःकृत्य।

प्रातनाथ—पुं० [सं० प्रातर्नाथ] सूर्य।

प्रातर्—अव्य० [सं० प्र√अत्+अरन्] प्रभात के समय। सवेरे।
पुं० पुष्पार्ण के पुत्र एक देवता जो प्रभा के गर्भ से उत्पन्न हुए।

प्रातरनुवाक—पुं० [सं० मध्य० स०] ऋग्वेद के अंतर्गत वह अनुवाक जो प्रातःसवन नामक कर्म के समय पढ़ा जाता है।

प्रातरभिवादन—पुं० [सं० ष० त०] बड़ों का वह अभिवादन जो प्रातःकाल सोकर उठने के समय किया जाय।

प्रातराश—पुं० [सं० ष० त०] प्रातःकाल किया जानेवाला हलका भोजन। जलपान। कलेवा।

प्रातर्दन—पुं० [सं० प्रतर्दन+अण्] प्रतर्दन के गोत्र में उत्पन्न पुरुष। प्रतर्दन का अपत्य।
वि० प्रतर्दन-संबंधी। प्रतर्दन का।

प्राति—स्त्री० [सं०√प्रा (पूर्ति)+क्तिन्] १. अँगूठे और तर्जनी के बीच का स्थान। पितृ-तीर्थ। २. लाभ। ३. पूर्ति।

प्रातिकूलिक—वि० [सं० प्रतिकूल+ठक्—इक] विरुद्ध।

प्रातिकूल्य—पुं० [सं० प्रतिकूल+ष्यञ्] १. प्रतिकूल या विरुद्ध होने की अवस्था या भाव। २. हिन्दू धर्म-शास्त्रों के अनुसार इस बात का विचार कि परस्पर प्रतिकूल अवस्थाओं में कोई काम कब और कैसे करना चाहिए। जैसे—घर में अशौच होने पर मांगलिक और शुभ कार्य करने के समय आदि का विचार।

प्रातिज्ञ—पुं० [सं० प्रतिज्ञा+अण्] तर्क या विवाद का विषय।

प्रातिदैवासिक—वि० [सं० प्रतिदिवस+ठञ्—इक] प्रति दिवस अर्थात् नित्य होनेवाला। दैनिक।

प्रातिनिधिक—वि० [सं० प्रतिनिधि√ठक्—इक] १. प्रतिनिधि सम्बन्धी। प्रतिनिधि का। २. प्रतिनिधि के रूप में होनेवाला।
पुं० १. प्रतिनिधि। २. स्थानापन्न।

प्रातिपक्ष—वि० [सं० प्रतिपक्ष+अण्] १. विरुद्ध। प्रतिकूल। २. प्रतिपक्षवाला।

प्रातिपथिक—वि० [सं० प्रतिपथ+ठक्—इक] यात्रा करनेवाला।
पुं० यात्री।

प्रातिपद—वि० [सं० प्रतिपद्+अण्] १. प्रतिपदा-संबंधी। २. प्रतिपदा के दिन होनेवाला। ३. आरंभिक।

प्रातिपदिक—पुं० [सं० प्रतिपद्+ठञ्—इक] १. अग्नि। २. वातु। ३. संस्कृत व्याकरण में धातु और प्रत्यय से भिन्न कोई सार्थक शब्द। ४. कोई कृदन्त, तद्धित और समस्त पद।
वि०=प्रातिपद।

प्रातिभ—वि० [सं० प्रतिभा√अण्] १. प्रतिमा-संबंधी। प्रतिमा का। २. प्रतिमा से उद्भूत। प्रतिभाजन्य। ३. मानसिक।
पुं० १. प्रतिमा से युक्त या संपन्न व्यक्ति। प्रतिभाशाली मनुष्य। २. योग साधन में होनेवाले पाँच प्रकार के उपसर्गों या विघ्नों में से एक जो साधक की प्रतिमा के कारण उत्पन्न होता है; और जिसमें वेद-शास्त्रों, कलाओं, विद्याओं आदि से संबंध रखनेवाले विचार मन में उत्पन्न होकर उसे एकाग्र नहीं होने देते।

प्रातिभाज्य—वि० [सं० प्रति√भज्+णिच्+यत्] (पदार्थ) जिस पर प्रति-भाग नामक शुल्क लगता या लग सकता हो।

प्रातिभाव्य—पुं० [सं० प्रतिभू+ष्यञ्] १. प्रतिभू होने की अवस्था या भाव। २. जमानत।

प्रातिभासिक—वि० [सं० प्रतिभास+ठक्—इक] १. प्रतिभास-संबंधी। अनुरूपक। २. जो अस्तित्व में न हो, या जिसका अस्तित्व भ्रममूलक हो। ३. जो व्यवहारिक न हो।

प्रातिलोमिक—वि० [सं० प्रतिलोम+ठक्—इक] प्रतिलोम-संबंधी; या प्रतिलोम के रूप में होनेवाला। 'अनुलोमिक' का विपर्याय। २. प्रतिकूल। विरुद्ध। ३. अप्रिय। अरुचिकर।

प्रातिलोम्य—पुं० [सं० प्रतिलोम+ष्यञ्] प्रतिलोम होने की अवस्था या भाव।

प्रातिवेशिक—पुं० [सं० प्रतिवेश+ठक्—इक]=प्रतिवेशी (पड़ोसी)।

प्रातिवेश्य—पुं० [सं० प्रतिवेश+ष्यञ्] प्रतिवेश में रहने की अवस्था या भाव। पड़ोस।

प्रातिवेश्यक—पुं० [सं० प्रातिवेश्य+कन्] पड़ोसी।

प्रातिशाख्य—पुं० [सं० प्रतिशाखा+ञ्य] ऐसा ग्रंथ जिसमें वेदों के किसी शाखा के स्वर, पद, संहिता, संयुक्त वर्णों के उच्चारण आदि का निर्णय या विचार किया गया हो।

प्रातिहत—पुं० [सं० प्रतिहत+अण्] स्वरित।

प्रातिहर्त्र—पुं० [सं० प्रतिहर्तृ+अण्] प्रतिहर्ता का काम, पद या भाव।

प्रातिहार—पुं० [सं० प्रतिहार+अण्] १. जादूगर। बाजीगर। २. दरवान। द्वार-पाल।

प्रातिहारक—पुं०=प्रातिहार।

प्रातिहारिक—वि० [सं० प्रतिहार+ठञ्—इक] प्रतिहार-संबंधी।

पुं० प्रातिहार।

प्रातिहार्य—पुं० [सं० प्रतिहार+ष्यञ्] १. इंद्रजाल। बाजीगरी। २. कोई चमत्कारी खेल। करामात। ३. द्वारपाल का काम, पद या भाव।

प्रातीतिक—वि० [सं० प्रतीति+ठञ्—इक] १. जिससे प्रतीति होती हो या जो प्रतीति कराता हो। २. मन या कल्पना में होनेवाला। काल्पनिक या मानसिक।

प्रातीप—पुं० [सं० प्रतीप+अण्] १. प्रतीप का अपत्य या वंशज। २. प्रतीप के पुत्र शांतनु।

प्रातीपिक—वि० [सं० प्रतीप+ठञ्—इक] १. प्रतीप-संबंधी। प्रतीप का। २. प्रतिकूल आचरण करनेवाला। विरुद्धाचारी। ३. उलटा। विपरीत।

प्रात्यंतिक—पुं० [सं० प्रत्यंत+ठञ्—इक] १. सीमा पर स्थित राज्य। २. सीमा की रक्षा करनेवाला अधिकारी।

प्रात्यक्ष—वि० [सं० प्रत्यक्ष+अण्] १. प्रत्यक्ष नामक प्रमाण के रूप में होनेवाला। २. उक्त प्रमाण-संबंधी।

प्रात्यक्षिक—वि० [प्रत्यक्ष+ठक्—इक] =प्रात्यक्ष।

प्रात्ययिक—पुं० [सं० प्रत्यय+ठक्—इक] मिताक्षरा के अनुसार तीन प्रकार के प्रतिभूओं में से दूसरा। वह जो किसी को पहचान कर के उसका प्रतिभू बने।

वि० १. प्रत्यय के रूप में होनेवाला। २. प्रत्यय-संबंधी।

प्रात्यहिक—वि० [सं० प्रत्यह+ठक्—इक] प्रतिदिन का। दैनिक।

प्राथमकल्पिक—पुं० [सं०प्रथमकल्प+ठक्—इक] वह विद्यार्थी जिसने वेद का अध्ययन अथवा योग साधन का आरंभ कर दिया हो।

वि० प्रथम कल्प का।

प्राथमिक—वि० [सं० प्रथम+ठक्—इक] [भाव० प्राथमिकता] १. क्रम, गिनती आदि के विचार से आरंभ में आने या पड़नेवाला। २. जो उक्त विचार के आधार पर आरंभ में या पहले होता हो। (प्राइमरी)। जैसे—प्राथमिक विद्यालय ३. जिससे किसी चीज या बात का आरम्भ सूचित होता है। जैसे—कमल रोग के यह प्राथमिक लक्षण हैं।

प्राथमिक उपचार—पुं० [सं० (कर्म० स०)] अचानक किसी के बीमार पड़ने, घायल होने, जल जाने आदि की अवस्था में, योग्य चिकित्सक के पहुँचने से पहले किया जानेवाला वह उपचार जो पीड़ित या रोगी की पीड़ा या रोग अधिक बढ़ने न दे। प्राथमिक चिकित्सा। (फर्स्ट एड)

प्राथमिक चिकित्सा—स्त्री० [सं० कर्म० स०]=प्रथमोपचार। (देखें)

प्राथमिकता—स्त्री० [सं० प्राथमिक+तल्–टाप्] १. प्रथम स्थान में होने अथवा रखे जाने की अवस्था या भाव। २. किसी काम, बात या व्यक्ति को औरों से पहले दिया जाने अथवा मिलनेवाला अवसर या स्थान। प्रथमता। (प्रायोरिटी)

प्राथमिक शिक्षा—स्त्री० [सं० कर्म० स०] वह शिक्षा जो नये विद्यार्थियों को आरंभ में दी जाती है। विशेषतः छोटे बालकों को बिलकुल आरंभिक कक्षाओं में दी जानेवाली शिक्षा जिसमें उन्हें लिखना-पढ़ना सिखलाया जाता है। (प्राइमरी एजुकेशन)

विशेष—आज-कल विद्यालयों की आरंभिक ४ या ५ कक्षाओं तक की शिक्षा इसी के अंतर्गत मानी जाती है।

प्राथम्य—पुं० [सं० प्रथम+ष्यञ्] १. 'प्रथम' होने की अवस्था या भाव। प्रथमता। पहलापन। २. दे० 'प्राथमिकता'।

प्रादक्षिण्य—वि० [सं० प्रदक्षिण+ष्यञ्] प्रदक्षिण-संबंधी।

प्रादर्शनिक—वि० [सं० प्रदर्शन+ठक्—इक] १. प्रदर्शन-संबंधी। २. (काम या बात) जो प्रदर्शन के रूप में अथवा प्रदर्शन के लिए हो। प्रदर्शनात्मक। (डिमान्स्ट्रेटिव)

प्रादानिक—वि० [सं० प्रदान+ठक्—इक] १. प्रदान-संबंधी । २. जो दान या प्रदान करने के योग्य हो।

प्रादीपिक—पुं० [सं० प्रदीप+ठक्—इक] घर-खेत आदि में आग लगानेवाला व्यक्ति।

वि० प्रदीप संबंधी। प्रदीप का।

प्रादुर्भवन—पुं० [सं०] दे० 'प्रोद्भवन'।

प्रादुर्भाव—पुं० [सं० प्रादुर्√भू (होना)+घञ्] [भू० कृ० प्रादुर्भूत] १. जन्म धारण कर अस्तित्व में आने का भाव। २. पुनः, दोबारा या नये सिरे से अस्तित्व में आना या पनपना। ३. विकास।

प्रादुर्भूत—भू० कृ० [सं० प्रादुर्√भू+क्त] १. जिसका प्रादुर्भाव हुआ हो। २. विकसित। ३. उत्पन्न। ४. दे० प्रोद्भूत।

प्रादुर्भूत-मनोभवा—स्त्री० [ब० स०] केशव के अनुसार मध्या नायिका के चार भेदों में से एक। ऐसी नायिका जिसके मन में काम का पूरा प्रादुर्भाव होता हो और कामकला के समस्त चिह्न प्रकट होते हों। साहित्य दर्पण में इसे प्ररूढ़-स्मर-यौवना लिखा है।

प्रादेश—पुं० [सं० प्र+दिश (बताना)+घञ्, दीर्घ] १. अधिकारिक रूप से दिया हुआ कोई आदेश, विशेषतः लिखित आदेश। २. वह आदेशात्मक अधिकार जो प्रथम महायुद्ध के बाद राष्ट्र-संघ (लीग आफ नेशन्स) की ओर से कुछ बड़े-बड़े राष्ट्रों को विजित उपनिवेशों, प्रदेशों आदि की शासनिक व्यवस्था के लिए दिया गया था। (मैनडेट) ३. तर्जनी और अँगूठे के सिरों के बीच की अधिकतम दूरी जो नाप में १२ उँगलियों के बराबर होती है। ४. तर्जनी और अँगूठे का बीच का भाग। ५. प्रदेश। ६. जगह। स्थान।

प्रादेशात्मक—वि० [सं० प्रदेशात्मक+अण्] (व्यवस्था) जो किसी प्रादेश के अनुसार हो। (मैनडेटरी)

प्रादेशिक—वि० [सं० प्रदेश+ठक्—इक] [भाव० प्रादेशिकता] १. प्रदेश-संबंधी। किसी एक प्रदेश का। जैसे—प्रादेशिक परिषद्, प्रादेशिक भाषा। २. प्रदेश के भीतरी कामों या भागों से संबंध रखनेवाला अथवा उनमें रहने या होनेवाला। (टेरिटोरियल) जैसे—प्रादेशिक सेना। ३. किसी प्रसंग या प्रस्तुत विषय के अनुसार या उससे संबद्ध। प्रसंग-गत।

पुं० १. सरदार। सामंत। २ किसी प्रदेश का प्रधान अधिकारी। सूबेदार।

प्रादेशिकता—स्त्री० [सं० प्रादेशिक+तल्—टाप्] प्रांतीयता।

प्रादेशिक समुद्र—पुं० [सं०] किसी देश या प्रदेश के समुद्री तट के सामने के समुद्र का कुछ विशिष्ट भाग जिसमें दूसरे देशों के जहाजों को बिना अनुमति प्राप्त किये आने का अधिकार नहीं होता।
विशेष—पहले इसका विस्तार समुद्री तट से तीन मील की दूरी तक माना जाता था, परन्तु अब बड़ी-बड़ी दूरमार तोपों के बन जाने के कारण यह विस्तार बढ़ाकर बारह मील कर दिया गया है।

प्रादेशिक सेना—स्त्री० [सं० कर्म० स०] किसी देश या प्रदेश के भीतरी भागों या सीमाओं के अन्दर रहकर स्थानिक सुरक्षा, शांति आदि की व्यवस्था करनेवाली सेना। (टेरिटोरियल आर्मी)

प्रादेशी (शिन्)—वि० [सं० प्रादेश+इनि] जो लंबाई में एक प्रादेश हो।

प्रादोष—वि० [सं० प्रदोष+अण्]=प्रादोषिक।

प्रादोषिक—वि० [सं० प्रदोष+ठक्—इक्] १. प्रदोष-संबंधी। प्रदोष का।

प्राधनिक—वि० [सं० प्रधन+ठक्—इक] १. विध्वंसक या विनाशकारी अस्त्र। २. लड़ाई में काम आनेवाला अस्त्र-शस्त्र।

प्राधा—स्त्री० [सं० प्रधा+ण—टाप्] दक्ष की एक कन्या जो कश्यप ऋषि को ब्याही थी। पुराणों में इसे गन्धर्वों और अप्सराओं की माता बतलाया है।

प्राधानिक—वि० [सं० प्रधान+ठक्—इक] १. प्रधान (अध्यक्ष या मुखिया) से संबंध रखनेवाला। जैसे—प्राधानिक शासन। २. उच्च कोटि का। उत्तम।

प्राधानिक शासन—पुं० [सं० कर्म० स०] वह शासन प्रणाली जिसमें प्रधान अर्थात् अध्यक्ष राज्य का मुख्य तथा सर्वोपरि शासक होता है। मन्त्रि-मंडलीय शासन-प्रणाली से भिन्न। (प्रेजीडेंशियल गवर्नमेंट)

प्राधान्य—पुं० [सं० प्रधान+ष्यञ्] १. प्रधान होने की अवस्था या भाव। २. वह स्थान या स्थिति जिसमें किसी चीज की अधिकता होती है। श्रेष्ठता।

प्राधिकरण—पुं० [सं० प्र-अधिकरण, प्रा० स०] १. प्राधिकार देना। (अथारिजेशन) २. प्राधिकारी का विशिष्ट अधिकार, कार्यालय या पद।

प्राधिकार—पुं० [सं० प्र+अधिकार] १. वह विशिष्ट अधिकार या शक्ति जिसके अनुसार औरों को कुछ करने की आज्ञा या आदेश दिया जा सकता हो, उसका पालन कराया जा सकता हो और महत्त्व की बातों का अंतिम निर्णय किया जा सकता हो (आँथारिटी) २. वह अधिकार जिससे अनेक प्रकार की ऐसी सुविधाएँ प्राप्त होती हैं, जिनसे कठिनाइयों, बाधाओं आदि से सहज में बचा जा सकता हो। (प्रिविलेज)

प्राधिकारिक—वि० [सं० प्राधिकार+ठक्—इक] १. प्राधिकार से संबंध रखने या प्राधिकार के रूप में होनेवाला। २. प्राधिकारी से संबंध रखनेवाला।

प्राधिकारी (रिन्)—पुं० [सं० प्र-अधिकारिन्, प्रा० स०] १. राज्य, शासन आदि का वह अधिकारी जिसे किसी क्षेत्र या विभाग में अधिकार प्राप्त हों। २. कोई ऐसा व्यक्ति जिसे किसी कार्य या विषय का बहुत अच्छा अनुभव या ज्ञान हो; और इसी लिए जिसका मत साधारणतः सबके लिए मान्य होता हो। (अथाँरिटी, उक्त दोनों अर्थों के लिए)

प्राधिकृत—भू० कृ० [सं० प्र-अधिकृत, प्रा० स०] १. जिसे कोई प्राधिकार या सुभीता दिया गया हो या मिला हो। जैसे—प्राधिकृत अभिकर्ता। २. जिसके लिए या जिसके संबंध में प्राधिकार मिला हो। (आथोराइज्ड) जैसे—प्राधिकृत पूंजी।

प्राध्यापक—पुं० [सं० प्र-अध्यापक, प्रा० स०] १. उच्च अथवा महाविद्यालय में किसी विषय की शिक्षा देनेवाला सबसे बड़ा अध्यापक। (प्रोफेसर) २. दे० 'प्रधानाध्यापक'।

प्राध्यापन—पुं० [सं० प्र-अध्यापन प्रा० स०] उच्च श्रेणियों के विद्यार्थियों का पढ़ाना।

प्राध्व—पुं० [सं० प्र-अध्वन् प्रा० स०] १. बहुत बड़ा या लम्बा रास्ता। २. यात्रा के काम में आनेवाली सवारी। ३. रथ।
वि० अधिक अंतर पर स्थित। दूर।

प्रान†—पुं०=प्राण।

प्रानी†—पुं०=प्राणी।

प्रानेस†—पुं०=प्राणेश।

प्राप—पुं० [सं० प्र√आप् (पाना)+घञ्] १. प्राप्ति। २. पहुँचना। जैसे—दुष्प्राप। ३. जल का प्रचुर होना।
वि० १.=प्राप्त। २.=प्राप्य।

प्रापक—वि० [सं० प्र√आप्+ण्वुल्—अक] १. प्राप्ति-संबंधी। २. प्राप्त करने या कराने वाला। (रिसीवर) ३. प्राप्त होने या मिलने-वाला।
पुं० दे० 'आदायक'।

प्रापण—पुं० [सं० प्र√आप्+ल्युट्—अन] [वि० प्रापणीय, प्राप्य] १. प्राप्त करना या कराना। २. पहुँचाना।

प्रापणिक—पुं० [सं० प्रापण√ठक्—इक] व्यापारी।

प्रापणीय—वि० [सं० प्र√आप+अनीयर] १. जो प्राप्त किया जा सके। प्राप्य। २. पहुँचाने योग्य।

प्रापत†—वि०=प्राप्त।

प्रापति†—स्त्री०=प्राप्ति।

प्रापना—अ० [सं० प्रापण] प्राप्त होना। मिलना।
स० प्राप्त करना। पाना।

प्रापयिता (तृ)—वि० [सं० प्र√आप्+णिच्+तृच्] प्राप्त करनेवाला।

प्रापी (पिन्)—वि० [सं० प्र√आप्+णिनि] १. प्राप्त करनेवाला। २. पहुँचनेवाला। (समासांत में)

प्राप्त—भू० कृ० [प्र√आप्+क्त] [भाव० प्राप्ति] १. (अधिकार) गुण, धन, वस्तु आदि जिसे प्रयत्न करके अधिकार में लाया गया हो अथवा जो यों ही या किसी अभिकरण के द्वारा हस्तगत हुआ हो। २. सामने आया हुआ। उपस्थित। जैसे—मृत्यु प्राप्त करना। ३. जो अनुभूत हुआ हो। जैसे—सुख प्राप्त होना।

प्राप्तकाल—पुं० [ब० स०] १. कोई काम करने का उपयुक्त समय। २. मरने का समय। अंतिम समय।
वि० (काम या बात) जिसका काल या समय आ गया हो।

प्राप्त-जीवन†—वि० [ब० स०] जिसे जीवन मिला हो।

प्राप्त-दोष—वि० [ब०स०] १. जिसमें कोई दोष आ गया हो। २. जिसने कोई दोष किया हो।

प्राप्त-पंचत्व—वि० [ब०स०] जो पंचतत्त्वों को प्राप्त हुआ हो; अर्थात् मरा हुआ।

प्राप्त-प्रसवा—वि० स्त्री० [सं० ब० स०] जो बच्चे को देनेवाली हो। जो प्रसव करने को हो।

प्राप्त बुद्धि—वि० [सं० ब० स०] १. जिसने फिर से चेतना या संज्ञा प्राप्त की हो। २. चतुर। ३. बुद्धिमान।

प्राप्त-यौवन—वि० [सं० ब० स०] [स्त्री० प्राप्त-यौवना] जिसमें जवानी आ गई हो।

प्राप्त रूप—वि० [सं० ब० स०] १. जिसे रूप की प्राप्ति हुई हो; अर्थात् सुन्दर। २. आकर्षक। मनोहर। ३. बुद्धिमान। ४. विद्वान।

प्राप्तव्य—वि० [सं० प्र०√आप्+तव्यत्] जो प्राप्त किया जा सके अथवा हो सके।

प्राप्तार्थ—वि० [सं० प्राप्त-अर्थ, ब०स०] १. जिसे अर्थ की प्राप्ति हुई हो। २. सफल।

पुं० मिला हुआ धन या वस्तु।

प्राप्ति—स्त्री० [सं० प्र√ आप्+क्तिन्] १. प्राप्त होने अर्थात् अपने अधिकार या हाथ में आने या मिलने की क्रिया, अवस्था या भाव। हासिल होना। पाया जाना। मिलना। उपलब्धि। जैसे—धन या प्रत्र की प्राप्ति। २. कोई अवस्था या स्थिति आकर पहुँचना या प्रत्यक्ष होना। जैसे—दुःख या सुख की प्राप्ति। ३. इस रूप में कोई चीज मिलना या हाथ में आना कि उससे अपना आर्थिक या और किसी प्रकार का लाभ या हित हो। फायदा। लाभ। (गेन, उक्त सभी अर्थों में) जैसे—(क) आज-कल उन्हें व्यापार में अच्छी प्राप्ति हो रही है। (ख) जहाँ उन्हें कुछ प्राप्ति की आशा होती है, वहीं वे जाते हैं। ४. किसी चीज या बात के आकर उपस्थित होने या पास पहुँचने की क्रिया या भाव। जैसे—(क) पत्र या उसके उत्तर की प्राप्ति। (ख) यौवनावस्था की प्राप्ति। ५. कहीं से आनेवाली किसी चीज या बात को ग्रहण करना। (रिसेप्शन) जैसे—ध्वनियों की प्राप्ति हमारे कानों को होती है। ६. योगशास्त्र में, आठ प्रकार की सिद्धियों में से एक जो सभी अभीष्ट उद्देश्य या कामनाएँ पूरी करनेवाली कही गई है। ७. नाट्यशास्त्र में, अभिनय का शुभ और सुखद अंत या उपसंहार। ८. किसी गुण, तत्त्व या बात का अधिगम या अर्जन। ९. फलित ज्योतिष में, चंद्रमा का ग्यारहवाँ स्थान जो किसी चीज या बात की प्राप्ति या लाभ के लिए शुभ माना गया है। १०. भाग्य। ११. उदय। १२. मेल। संगति। १३. समिति या संघ। १४. प्रवृत्ति। १५. व्याप्ति। १६. कामदेव की एक पत्नी। १७. जरासंध की एक पुत्री जो कंस को ब्याही थी।

प्राप्तिका—स्त्री० [सं० प्राप्ति+कन्—टाप्] वह पत्र जिसमें किसी वस्तु की प्राप्ति या पहुँच का नियमित रूप से उल्लेख हो। पावती। रसीद। (रिसीट)

प्राप्तिसम—पुं० [सं० वृ० त०] तर्क या न्याय में एक प्रकार की जाति। ऐसी आपत्ति जो प्रस्तुत हेतु और साध्य अवशिष्ट बतलाकर की जाय।

प्राप्त्याशा—स्त्री० [सं० प्राप्ति-आशा ष० त०] १. प्राप्ति की आशा। मिलने की आशा। २. नाट्यशास्त्र में आरब्ध कार्य की वह अवस्था या स्थिति जिसमें उद्देश्य के सिद्ध होने की आशा होने लगती है।

प्राप्य—वि० [सं० प्र√आप+ण्यत्] १. जो कहीं से या किसी से प्राप्त हो सकता हो या प्राप्त होने को हो। मिल सकने के योग्य। (एवेलेबुल) २. (बाकी धन या वस्तु) जो किसी की ओर निकलता हो और इसी लिए उससे आधिकारिक और आवश्यक रूप से प्राप्त किया जाने को हो या किया जा सकता हो। (ड्यू) ३. जिस तक पहुँच हो सके। गम्य।

प्राप्यक—पुं० [सं०]वह पत्र जिसमें किसी प्राप्य धन का ब्योरा होता है। विपत्र। (बिल)

प्राप्यक-समाहर्ता (र्तृ)—पुं० [ष०त०] वह अधिकारी जो प्राप्यक का बाकी धन उगाहने का काम करता है। (बिल कलक्टर)

प्राबल्य—पुं० [सं० प्रबल+ष्यञ्] १. प्रबलता। २. प्रधानता।

प्राबोधक—पुं० [सं० प्रबोधक + अण्] प्रातःकाल राजाओं को उनकी स्तुति सुनाकर जगाने के लिए नियुक्त किया हुआ कर्मचारी। वंदी।

प्राबोधिक—पुं० [सं० प्रबोध√ठक्—इक] = प्रबोधक।

प्राभंजन—वि० [सं० प्राभंजन√अण्] १. प्रभंजन या वायुदेवता-संबंधी। २. वायु देवता द्वारा आधिष्ठित।

पुं० स्वाति (नक्षत्र)।

प्राभव—पुं० [सं० प्रभु+अण्] प्रभुता। प्रभुत्व।

प्राभवत्य—पुं० [सं० प्रभवत्+ष्यञ्] प्रभुता। प्रभुत्व।

प्राभातिक—वि० [सं० प्रभात√ठक्—इक] १. प्रभात में होनेवाला। २. प्रभात-संबंधी।

पुं० प्रभात में गाये जानेवाले एक तरह के गीत।

प्राभाविक—वि० [सं० प्रभाव√ठक्—इक] प्रभाव उत्पन्न करने या दिखलानेवाला। (एफेक्टिव)

प्राभासिक—वि० [सं० प्रभास+ठक्—इक] १. प्रभास देश-संबंधी। २. प्रभास देश में बनने, रहने या होनेवाला।

प्राभियोजक—वि० = अभियोजक।

प्राभियोजन—पुं० = अभियोजन।

प्राभृत—पुं० [सं० प्र-आ+भृ (धारण)√क्त] १. उपहार। भेंट। २. राजाओं, सम्राटों आदि को दिया जानेवाला नजराना।

प्रामंडलिक—वि० [सं० प्रमंडल+ठक्—इक] १. प्रमंडल-संबंधी। २. दे० 'प्राखंडिक'।

प्रामाणिक—वि० [सं० प्रमाण+ठक्—इक्] [भाव० प्रामाणिकता] १. जो प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों के द्वारा सिद्ध हो। २. जो प्रमाण के रूप में माना जाता हो या माना जा सकता हो। (ऑथारिटेटिव) ३. ठीक या सत्य। ४. जिसके अच्छे या सच्चे होने में किसी को संदेह न हो। जिसकी साख जमी या बनी हो। सब जगह ठीक माना जानेवाला। ५. जो शास्त्रों आदि से प्रमाणित या सिद्ध हो। ६. (व्यक्ति) जो अच्छे प्रमाण मानता हो।

पुं० १. शास्त्रज्ञ। २. व्यापारियों का चौधरी या मुखिया।

प्रामाण्य—पुं० [सं० प्रमाण+ष्यञ्] १. प्रमाण। २. प्रमाणों के ज्ञाता होने की अवस्था या भाव। ३. मर्यादा। ४. विश्वसनीयता।

प्रामादिक—वि० [सं० प्रमाद+ठक्-इक] १. प्रमाद-संबंधी। प्रमाद का। २. प्रमाद के कारण होनेवाला। ३. जिसमें कोई दोष या भूल हो।

प्रामिसरी—वि० [अं०] १. जो प्रतिज्ञा, वचन आदि के रूप में हो। २. जिसमें किसी बात की प्रतिज्ञा की गई हो। जैसे—प्रामिसरी नोट। (दे०)

प्रामिसरी नोट—पुं० [अं०] १. वह पत्र जिसमें आधिकारिक रूप से यह

लिखा होता है कि अमुक मिति को माँगने पर मैं इतना धन इसके बदले में दूँगा। २. वह राजकीय ऋणपत्र जिसमें शासन द्वारा अपनी प्रजा से लिये हुए ऋण का उल्लेख तथा यह प्रतिज्ञा लिखी रहती है; कि मूल तथा सूद अमुक समय पर चुका दिया जायगा।

प्रामोदिक—वि० [सं० प्रमोद+ठक्—इक] १. प्रमोदजनक। आनंद-दायक। २. सुंदर।

प्रायः—अव्य० [सं० प्र√अय् (गति)+असुन्] १. अधिकतर अवसरों, अवस्थाओं आदि में। अक्सर। २. करीब-करीब। लगभग। ३. बीच बीच में। जल्दी जल्दी। जैसे—मुझे प्रायः उनके यहाँ जाना पड़ता है।

प्राय—वि० [सं० प्र√अय् (गति)+घञ्] १. रूप, स्थिति आदि के विचार से किसी के बहुत-कुछ अनुरूप या समान। कुछ बातों में किसी से मिलता-जुलता या उस तक पहुँचता हुआ। (प्रायः यौ० के अंत में) जैसे—नष्ट प्राय, मृतप्राय आदि। (और कभी कभी यौ० के आरंभ में भी) जैसे—प्राय-द्वीप। २. किसी तत्त्व या बात से बहुत अधिक युक्त या भरा हुआ। जैसे—कष्ट-प्राय शरीर, जल-प्राय देश।

पुं० १. अनशनादि जिनसे मनुष्य शक्तिहीन होकर मृतक के तुल्य हो जाता या मर जाता है। २. मृत्यु। मौत। ३. अवस्था। उमर। वय।

प्रायगत—वि० [सं० द्वि० त०] जिसके मरने में अधिक विलंब न हो। मरणासन्न।

प्रायण—पुं० [सं० प्र√अय्+ल्युट्—अन+] १. एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना। प्रयाण। २. एक शरीर छोड़कर दूसरा शरीर धारण करना। ३. दूसरा जन्म। जन्मान्तर। ४. अनशन करते हुए अर्थात् खाना-पीना छोड़कर प्राणदेना या मरना। ५. अनशन, व्रत आदि की समाप्ति पर किया जानेवाला जलपान या भोजन। ६. एक तरह का दूध से बनाया हुआ व्यंजन। ७. प्रदेश। ८. आरंभ। ९. शरण।

प्रायणीय—पुं० [सं० प्रयण+छ—ईय] १. सोमयाग में पहली सुत्या के दिन का कर्म। २. आरंभिक कृत्य।

वि० आरंभ या शुरू में होनेवाला। आरंभिक। जैसे—प्रायणीय कर्म, प्रायणीय याग।

प्रायद्वीप—पुं० [सं० प्रायोद्वीप] स्थल का वह भाग जो, तीन ओर से समुद्र से घिरा हो और जिसके केवल एक ओर स्थल मिला हो। (पेनिन्शुला)

प्रायद्वीप खंड—पुं० [सं०] भूगोल में स्थल खंड का वह छोटा संकरा भाग जिसके तीन ओर जल रहता हो और जो जल में नुकीली चोंच के रूप में बढ़ा हुआ होता है।

प्रायशः—अव्य० [सं० प्राय०+शस्] प्रायः। अक्सर।

प्रायश्चित—पुं० [सं० प्राय-चित् ष० त०, सुट् आगम] १. किये हुए दुष्कर्म या पाप के फल-भोग से बचने के लिए किये जानेवाला शास्त्र विहित कर्म जो बहुधा दंड के रूप में होते हैं। जैसे—दान, व्रत आदि। जैनों के अनुसार आलोचना, प्रतिक्रण, आलोचना प्रतिक्रमण, विवेक, व्युत्सर्ग, तप, छेद, परिहर और उपस्थान ये नौ प्रकार के प्रायश्चित माने गये हैं। २. अपने प्रति किया जानेवाला वह कठोर आचरण जो अपने किसी कार्य अथवा उसके परिणाम से क्षुब्ध होकर या ग्लानिवश किया जाता है। ३. साधारण बोल-चाल में, अपने किसी दोष, प्रमाद, भूल आदि के फलस्वरूप होनेवाला किसी प्रकार का कष्ट या हानि।

प्रायश्चित्तिक—वि० [सं० प्रायश्चित+ठक्—इक] १. प्रायश्चित-संबंधी। प्रायश्चित्त का। २. (दूषित कार्य) जिसके लिए प्रायश्चित करना आवश्यक या उचित हो।

प्रायश्चित्ती (त्तिन्)—वि० [सं० प्रायश्चित्त+इनि] १. (व्यक्ति) जिसे प्रायश्चित्त करना आवश्यक या उचित हो। २. प्रायश्चित्त करनेवाला।

प्रायश्चित्तीय—वि० –[सं० प्रायश्चित्त+छ—ईय] प्रायश्चित-संबंधी। प्रायश्चित् का।

प्रायाणिक—वि० [सं० प्रयाण+ठक्—इक] प्रयाण-संबंधी। प्रयाण या यात्रा का।

पुं० यात्रा के समय शुभ माने जानेवाले शंख, चवँर, दही आदि मांगलिक द्रव्य।

प्रायिक—वि० [सं० प्राय+ठक्—इक] [भाव० प्रायिकता] १. जो नियमित रूप से या सदा तो नहीं फिर भी बीच-बीच में प्रायः होता रहता हो। (यूजुअल) जैसे—सावन-भादों में वर्षा प्रायिक होती है। २. अनुमान, संभावना आदि के विचार से बहुत-कुछ ठीक तथा संभव।

प्रायोगिक—वि० [सं० प्रयोग+ठक्—इक] १. प्रयोग-संबंधी। प्रयोग का। २. उपयोगी, ठीक या मान्य सिद्ध करने के लिए अभी जिसका प्रयोग या परीक्षा मात्र हो रही हो। (एक्सपेरिमेन्टल) ३. प्रयोग के रूप में किया या काम में लाया जानेवाला। (एप्लाएड) ४. क्रिया-त्मक। व्यावहारिक।

प्रायोगिक-कला—स्त्री० [सं० कर्म० स०] व्यवहारिक कला।

प्रयोगिका-विज्ञान—पुं० [सं० कर्म स०] व्यावहारिक विज्ञान।

प्रायोज्य—वि० [सं० प्र-आ√युज् (जोड़ना)+णिच् ण्यत्] जिससे कोई प्रयोजन सिद्ध होता हो। उपयोग या प्रयोग में आनेवाला।

पुं० ऐसी वस्तु या वस्तुएँ जिनका काम किसी को नित्य पड़ता हो।

प्रायोपगमन—पुं० [सं० प्राय-उपगमन, ष० त०] आमरण अनशन।

प्रायोपविष्ट—वि० [सं० प्राय-उपविष्ट, सुप्सुपा स०] जो आमरण अनशन कर रहा हो।

प्रायोपवेश—पुं० [सं० प्राय-उपवेश, सुप्सुपा स०] प्रायोपगमन। आमरण अनशन।

प्रायोपवेशन—पुं०=प्रायोपगमन।

प्रायोपवेशी (शिन्)—वि० [सं० प्रायोपवेश+इनि] [स्त्री० प्रायोप-वेशिनी] आमरण अनशन करनेवाला।

प्रायोभावी (विन्)—वि० [सं० प्रायस्√भू (होना)+णिनि] जो प्रायः या सब जगह हो अर्थात् साधारण या सामान्य।

प्रायौगिक—वि०=प्रायोगिक।

प्रारंभ—पुं० [सं० प्र-आ√रम्+घञ्, मुम्] १. किसी काम या बात का चलने लगना या जारी होना। २. किसी कार्य या बात का पहले या शुरूवाला अंश। जैसे—प्रारंभ में तो आपने कुछ और ही कहा था।

प्रारंभण—पुं० [सं० प्र-आ√रभ्+ल्युट्—अन, मुम्] [भू० कृ० प्रारब्ध] प्रारंभ या शुरू करना।

प्रारंभिक—वि० [सं० प्रारंभ]+ठक्–इक] १. प्रारंभ में होनेवाला अथवा उससे संबंध रखनेवाला। २. दे० 'प्राथमिक'।

प्रारक्षण—पुं० [सं० प्र०√रक्ष्+ल्युट्—अन अण्] [भू० कृ० प्रारक्षित] कोई ऐसी क्रिया करना जिसके द्वारा कोई पद, वस्तु, व्यक्ति या स्थान मुख्य रूप से या किसी विशिष्ट उद्देश्य की सिद्धि के लिए अलग करके रक्षित रखा जाता हो। किसी काम या बात के लिए निश्चित रूप से पृथक् करने अथवा रखने की क्रिया या भाव। (रिजर्वेशन) जैसे—रंग-मंच पर संसद् के सदस्यों (अथवा स्त्रियों) के लिए होनेवाला आसनों या स्थानों का प्रारक्षण।

प्रारक्षित—भू० कृ० [सं० प्र–अ√रक्ष+क्त] जिसका या जिसके संबंध में प्रारक्षण हुआ हो। किसी विशिष्ट उद्देश्य से या विशिष्ट व्यक्ति के लिए अलग किया या रखा हुआ। (रिजर्वड) जैसे—इस विभाग में प्रारक्षित १० पद हरिजनों (या पिछड़ी हुई जातियों के लोगों) के लिए हैं।

प्रारब्ध—वि० [सं० प्र-आ√रभ्+क्त] (काम) आरंभ किया हुआ। जो शुरू किया गया हो।

पुं० १. पूर्व जन्म अथवा पूर्वकाल में किये हुए अच्छे और बुरे वे कर्म जिनका वर्तमान में फल भोगा जा रहा हो। २. उक्त कर्मों का फलभोग। **विशेष**—इसके दो मुख्य भेद हैं—(क) संचित प्रारब्ध जो पूर्व जन्मों के कर्मों के फल-स्वरूप होता है; और (ख) क्रियमाण प्रारब्ध जो इस जन्म में किये हुए कर्मों के फलस्वरूप होता है। इसके सिवा अनिच्छा प्रारब्ध, परेच्छा प्रारब्ध और स्वेच्छा प्रारब्ध नाम के तीन गौण भेद भी हैं।

३. किस्मत। तकदीर। भाग्य।

प्रारब्धि—स्त्री० [सं० प्र-आ√रभ्+क्तिन्] १. आरंभ। २ हाथी बाँधने का रस्सा।

प्रारब्धी (ब्धिन्)—वि० [सं० प्रारब्ध+इनि] भाग्यवाला। भाग्यवान्।

प्रारूप—पुं०=प्रालेख। 'प्रारूप' व्याकरण से असिद्ध है।

प्रारूपिक—वि० [सं० प्रारूप+ठक् इक।] गुण, रूप आदि के विचार से जो अपने वर्ग की सब विशेषताओं से युक्त हो और अपने वर्ग के प्रतिनिधि या प्रतीक का काम देता हो। प्ररूपी। (टिपिकल)

प्राज्र्जुन—पुं० [सं०] एक प्राचीन देश।

प्रार्थक—वि० =प्रार्थी।

प्रार्थन—पुं० [सं० प्र√अर्थ+णिच्+ल्युट्—अन] प्रार्थना करने की क्रिया या भाव।

प्रार्थना—स्त्री० [सं० प्र√अर्थ+णिच् युच्-अन, टाप्] १. नम्रतापूर्वक निवेदित की जानेवाली बात। निवेदन। (रिक्वेस्ट) २. भक्ति और श्रद्धापूर्वक ईश्वर, देवता आदि से अपने किसी के अथवा सबके कल्याण के लिए कही जानेवाली बात। ३. विशिष्ट संप्रदायों आदि के वे गेय पद जिनमें मंगल-कामना के भाव होते हैं। ४. तंत्र में, प्रार्थना के समय की एक विशिष्ट मुद्रा। ५. मुकदमे के आरंभ के लिए न्यायालय से किया जानेवाला लिखित निवेदन। अरजी-दावा। ६. इच्छा। †स० प्रार्थना करना।

प्रार्थना-पत्र—पुं० [ष० त०] वह पत्र जिसमें किसी प्रकार की प्रार्थना लिखी हो। निवेदनपत्र। अर्जी। जैसे—अमुक बालक का छुट्टी के लिए प्रार्थना-पत्र आया था।

प्रार्थना-भंग—पुं० [ष० त०] प्रार्थना अस्वीकृत करना।

प्रार्थना-समाज—पुं० [स० ष० त०] एक आधुनिक संप्रदाय जिसके अनुयायी महाराष्ट्र की ओर अधिक हैं।

प्रार्थनीय—वि० [सं० प्र√अर्थ+णिच्+अनीयर] जिसके संबंध में प्रार्थना की गई हो या की जाने को हो।

पुं० द्वापर युग।

प्रार्थयितव्य—वि० [सं० प्र√अर्थ्+णिच्√तव्यत्] जिसके लिए या जिससे प्रार्थना की जा सके या की जाने को हो।

प्रार्थयिता (तृ)—वि० [सं० प्र√अर्थ+णिच्+तृच्]=प्रार्थी।

प्रार्थित—भू० कृ० [सं० प्र√अर्थ+णिच्+क्त] जिसके लिए प्रार्थना की गई हो। माँगा हुआ। याचित।

प्रार्थी (र्थिन्)—वि० [सं० प्र√अर्थ+णिच्+णिनि] [स्त्री प्रार्थिनी] १. प्रार्थना करनेवाला। याचक। २. प्रार्थना-पत्र देनेवाला। ३. इच्छुक। ४. उम्मीदवार।

प्रार्थ्य—वि०=प्रार्थनीय।

प्रालंब—पुं० [सं० प्र-आ लम्ब् (लटकना)+अच्] १. रस्सी या ऐसी ही कोई चीज जो किसी ऊँची वस्तु में टँगी और लटकती हो। २. ऐसी माला या हार जो पहना जाने पर छाती तक लटकता हो।

प्रालंबक—पुं० [सं० प्रालंब+कन्] [स्त्री० प्रालंबिका] छाती तक लटकनेवाली माला या हार।

प्राल†—पुं०=पराल।

प्रालब्ध—पुं०=प्रारब्ध।

प्रालेख—पुं० [सं० प्र-अ√लिख् (लिखना)+घञ्] लेख, लेख्य, विधान आदि का वह टंकित-मुद्रित या हस्तलिखित आरंभिक रूप जो काट-छांट, संशोधन आदि के लिए तैयार किया जाता है। खाका। मसौदा। (ड्राफ्ट)

प्रालेय—वि० [सं० प्रलय+अण् नि० एत्व, अथवा प्र-आ√ली (मिल जाना) +यत्] प्रलय-संबंधी। उदा०—व्यस्त बरसने लगा अश्रुमय यह प्रालेय हलाहल नीर। —प्रसाद।

पुं० १. तुषार। २. बरफ। हिम। ३. भूगर्भशास्त्रानुसार वह समय जब बहुत अधिक हिम पड़ने के कारण उत्तरीय ध्रुव पर सब पदार्थ नष्ट हो जाते हैं और शीत की अधिकता के कारण कोई जंतु या वनस्पति वहाँ नहीं रह सकती।

प्रालेय-रश्मि—पुं० [ब० स०] चंद्रमा।

प्रालेयांशु—पुं० [सं० प्रालेय-अंशु, ब० स०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

प्रालेयाद्रि—पुं० [सं० प्रालेय-अद्रि, ष० त०] हिमालय।

प्रावट—पुं० [सं० प्र√अव् (रक्षण, गति आदि) +अट] जौ। यव।

प्रावर—पुं० [सं० प्रआ√वृ (घेरना)+अप्] प्राचीर। चहारदीवारी।

प्रावरण—पुं० [सं० प्र—आ√वृ+ल्युट्—अन] १. ढाँकने का कपड़ा। आवरण। २. ढकना। ढक्कन। ३. उत्तरीय या ओढ़ने का कपड़ा। चादर।

प्रावरणीय—पुं० [सं० प्र—आ√वृ+अनीयर] ओढ़ने का वस्त्र। उपरना या दुपट्टा।
वि० जिससे कुछ ढका जाय या ढाका जा सके।

प्रावर्तन—पुं० [सं० प्र—आ√वृत् (बरतना)+ल्युट्—अन] दे० 'परावर्तन'।

प्रावसादन—पुं० [सं० प्र+अवसादन] १. वह स्थिति जिसमें मनुष्य थक या हारकर अकर्मण्य अक्रिय या उत्साहहीन हो। २. किसी तत्व या पदार्थ की वह स्थिति जिसमें वह अपनी क्रियाशीलता, शक्ति आदि से रहित होकर कुंठित हो रहा हो। ३. बाजार, रोजगार आदि में बेकारी या मंदी की स्थिति। ४. आकाश में वातावरण के दबाव का कम होना जिससे तापमापक आदि का पारा गिर जाता है। (डिप्रेशन, उक्त सभी अर्थों में)

प्रावार—पुं० [सं० प्र-आ√वृ+घञ्] [वि० प्रावारिक] १. एक प्रकार का प्राचीनकाल का बहुमूल्य कपड़ा। २. उत्तरीय वस्त्र।

प्रावारक—पुं० [सं० प्रावार+कन्] ओढ़ने का वस्त्र। उत्तरीय।

प्रावारिक—वि० [सं० प्रावार+ठक्—इक] प्रावार-संबंधी।
पुं० प्रवार बनानेवाला कारीगर।

प्रावालिक—पुं० [सं० प्रवाल+ठक्-इक] प्रवाल या मूँगें का व्यापार करनेवाला व्यापारी।

प्रावास—वि०=प्रावासिक।

प्रावासिक—वि० [सं० प्रवास+ठक्—इक्] १. प्रवास-संबंधी। प्रवास का। २. जो प्रवास या यात्रा के लिए उपयुक्त हो।

प्राविट—स्त्री० [सं० प्रावृट्] पावस। वर्षा ऋतु।

प्राविधानिक—वि० [सं० प्रविधान+ठक्—इक] १. प्रविधान-संबंधी। २. प्रविधान के रूप में होनेवाला।

प्राविधिक—वि० [सं० प्रविधि+ठक्—इक्] १. प्रविधि-संबंधी। प्रविधि का। कला, शिल्प, यंत्र आदि से संबंधित। (टेकनिकल) २. किसी कार्य की विशिष्ट प्रायौगिक तथा व्यावहारिक प्रक्रियाओं से संबंध रखनेवाला। तकनीकी। (टेकनिकल)

प्राविधिकता—स्त्री० [सं० प्राविधिक+तल्—टाप्] १. प्राविधिक होने की अवस्था या भाव। २. प्राविधिज्ञ को होनेवाली जानकारी। ३. ऐसी बात जिसका संबंध किसी प्राविधिज्ञ से हो और जिसका वही जानकार हो। (टेक्नीकेलिटी)

प्राविधिज्ञ—पुं० [सं० प्रविधिज्ञ] दे० 'प्रविधिज्ञ'।

प्राविष्ट्य—पुं० [सं०] क्रौंचद्वीप के एक खंड का नाम। (केशव)

प्रावीण्य—पुं० [सं० प्रवीण+ष्यञ्] प्रवीणता।

प्रावृट्—पुं० [सं० प्र√वृष् (बरसना)+क्विप्, दीर्घ] वर्षा ऋतु।

प्रावृत—पुं० [सं० प्र—आ√वृ (आच्छादित करना)+क्त] १. ओढ़ने का कपड़ा। चादर। २. ढकने का कपड़ा। आच्छादन।
वि० १. घिरा हुआ। २. ढका हुआ। आवृत।

प्रावृति—स्त्री० [सं० प्र-आ√वृ+क्तिन्] १. प्राचीर। चहारदीवारी। २. जैनों के अनुसार आत्मा की शक्ति को आच्छादित करनेवाला मल। ३. आध्यात्मिक अज्ञान।

प्रावृत्तिक—पुं० [सं० प्रवृत्ति+ठक्—इक] [स्त्री० प्रावृत्तिका] संदेशवाहक दूत।
वि० १. प्रवृत्ति-संबंधी। २. गौण। ३. विशेष जानकारी रखनेवाला।

प्रावृष्—स्त्री० [सं० प्र√वृष्+क्विप्, दीर्घ] वर्षा ऋतु।

प्रावृषा—स्त्री० [सं० प्रावृष्+टाप्] वर्षा ऋतु।

प्रावृषिक—वि० [सं० प्रावृषि√कै+क, अलुक् स०] १. वर्षा ऋतु-संबंधी। २. वर्षा ऋतु में होनेवाला।
पुं० मयूर। मोर।

प्रावृषिज—पुं० [सं० प्रावृषि√जन् (उत्पन्न होना)+ड] बरसाती तेज हवा।
वि० वर्षा ऋतु में होनेवाला।

प्रावृषीण—वि० [सं० प्रावृष्+ख—ईन] =प्रावृषिज।

प्रावृषेय—वि० [सं० प्रावृष्+ढक्—एय] वर्षा ऋतु में होनेवाला।
पुं० एक प्राचीन देश का नाम।

प्रावृष्य—वि० [सं० प्रावृष्+यत्] जो वर्षा काल में हो।
पुं० १. वैदूर्य मणि। २. कुटज। कुटैया। ३. धारा कदंब। ४. विकटक।

प्रावेण्य—पुं० [सं०] प्राचीन काल की एक तरह की बढ़िया ऊनी चादर।

प्रावेशन—वि० [सं० प्रवेशन+अण्] १. प्रवेश-संबंधी। २. कहीं प्रवेश करने के समय किया या दिया जाने वाला।
पुं० निमार्णशाला।

प्रावेशिक—वि० [सं० प्रवेश+ठञ्—इक] [स्त्री० प्रावेशिकी] १. प्रवेश-संबंधी। २. जिसके कारण या द्वारा प्रवेश हो। ३. प्रवेश करने के लिए शुभ।

प्राव्राज्य—वि० [सं० प्रव्रज्या+अण्] प्रव्रज्या अर्थात् संन्यास संबंधी।
पुं० १. संन्यासियों का जीवन। २. घूमते रहने की प्रवृत्ति। घुमक्कड़पन।

प्राश—पुं० [सं० प्र√अश् (खाना)√घञ्] १. भोजन करना। २. स्वाद लेना। चखना। आहार। भोजन।

प्राशक—वि० [सं० प्र√अश्+ण्वुल्—अक] १. खाने या भोजन करनेवाला। २. चखने या चाटने वाला।

प्राशन—पुं० [सं० प्र√अश्+ल्युट्—अन] १. भोजन करना। खाना। २. चखना या चाटना। ३. अन्न-प्राशन।

प्राशनीय—वि० [सं० प्र√अश्+अनीयर्] १. प्राशन अर्थात् खाने या चखने के योग्य। २. जो खाया या चखा जाने को हो।

प्राशस्त्य—पुं० [सं० प्रशस्त+ष्यञ्] प्रशस्तता।

प्राशास्त्र—पुं० [सं० प्रशास्तृ+अण्] १. प्राशास्ता नामक ऋत्विक का कर्म या पद। २. शासन। ३. राज्य।

प्राशित—भू० कृ० [सं० प्र√अश्+क्त] १. खाया या चखा हुआ। २. जिसका उपभोग किया गया हो।
पुं० [प्र-अशित, ब० स०] १. पितृ-यज्ञ। तर्पण। २. भक्षण। खाना।

प्राशित्र—पुं० [सं०] यज्ञों में पुरोडाश आदि में से काटकर निकाला हुआ वह छोटा टुकड़ा जो ब्राह्मण के लिए एक पात्र में अलग रखा जाता था। २. गाय के कान की तरह का एक पात्र जिसमें उक्त पदार्थ रखा जाता था। ३. कोई खाद्य पदार्थ।

प्राशी (शिन्)—वि० [सं० प्र√अश्+णिनि] [स्त्री० प्राशिनी] प्राशन करने अर्थात् खाने या चखनेवाला। प्राशक।

प्राश्निक—वि० [सं० प्रश्न+ठक्—इक] १. प्रश्न करने या पूछनेवाला। २. प्रश्न से संबंध रखने या प्रश्न के रूप में होनेवाला। ३. (पत्र आदि) जिसमें बहुत से प्रश्न लिखे हुए हों। ४. (व्यक्ति) जो अनेक प्रश्न करता हो। (क्वेश्चनर)
पुं० १. प्रश्न-कर्ता। २. वह जो प्रश्न-पत्र (परीक्षार्थियों के लिए) तैयार करता या बनाता हो। (एग्ज़ामिनर) ३. सभासद। ४. पंच। मध्यस्थ।

प्राश्य—वि० [सं० प्र√अश्+ण्यत्] प्राशन के योग्य। जो खाया जा सके।

प्रासंग—पुं० [सं०√सन्ज् (सटना)+घञ्] १. हल का जूआ या जुआठा जिसमें नये बैल निकाले जाते हैं। २. तराजू की डंडी। ३. तराजू। तुला।

प्रासंगिक—वि० [सं० प्रसंग+ठञ्—इक] १. प्रसंग-संबंधी। प्रसंग का। २. प्रस्तुत प्रसंग से संबंध रखनेवाला। ३. किसी अवसर, विषय आदि के अनुकूल और प्रसंग-प्राप्त। (रेलेवेन्ट; उक्त दोनों अर्थों में)
पुं० दृश्य काव्य में कथा-वस्तु के दो अंशों में से वह दूसरा अंश जो मूल या आधिकारिक अंश में प्रसंगात् सहायक होता है। दे० 'आधिकारिक' (दृश्य काव्य का)।

प्रास—पुं० [सं० प्र√अस् (फेंकना)+घञ्] १. फेंकना। २. पुरानी चाल का एक तरह का भाला जो फेंककर चलाया जाता था। ३. आजकल, उतनी क्षैतिज दूरी जितनी कोई चलाई या फेंकी जानेवाली चीज पार करती है। मार। ४. वह पूरी दूरी या विस्तार जिसमें कोई चीज होती, रहती, सुनी जाती या कार्यकारी होती हो। (रेंज, अंतिम दोनों अर्थों में)

प्रासक—पुं० [सं० प्रास+कन्] १. प्रास नामक अस्त्र। २. जूआ खेलने का पासा। पाशक।

प्रासन—पुं० [सं० प्र√अस्+ल्युट्—अन] फेंकना।
पुं० दे० 'प्रासायन'।
†पुं०=प्राशन।

प्रासना—स० [सं० प्राशन] खाना या चाटना। उदा०—प्रासै जो बीजौ परण।—प्रिथीराज।

प्रासमिक—वि० [सं० प्रसम+ठक्—इक] १. प्रसम-संबंधी। प्रसम का। २. प्रसम।

प्रासविक—वि० [सं० प्रसव+ठक्-इक] १. प्रसव-संबंधी। २. प्रासविक-विज्ञान-संबंधी। (ऑब्स्टेट्रिकल)

प्रासविक-विज्ञान—पुं० [सं० कर्म० स०] दे० 'प्रसूति-विज्ञान'।

प्रासविकी—स्त्री०=प्रासविक विज्ञान।

प्रासाद—पुं० [सं० प्र√सद्+घञ्—दीर्घ] १. वह विशाल इमारत जिसमें अनेक शृंग, शृंखलाएँ, अंडकादि हों। २. राज-भवन। राज-महल। ३. बौद्धों के संघाराम में वह बड़ी शाला जिसमें साधु लोग एकत्र होते थे। ४. देवमंदिर। देवालय।

प्रासादिक—वि० [सं० प्रसाद+ठक्—इक्] १. सहज में प्रसन्न होकर कृपा करने या दया दिखानेवाला। २. प्रसाद के रूप में दिया जाने या मिलनेवाला। ३. सुंदर। ४. प्रासाद-संबंधी।

प्रासादीय—वि० [सं० प्रासाद+छ—ईय] १. प्रासाद अर्थात् राजमहल संबंधी। २. विशाल। ३. भव्य तथा सुसज्जित।

प्रासायन—पुं० [सं० प्रास-अयन उपमित स०] १. आयुध शास्त्र में, वह अर्ध चंद्राकार मार्ग जिससे होकर तोप या बंदूक का गोला या गोली नाल में से निकलकर निशाने तक पहुँचती है। (ट्रेजेक्टरी) २. दे० 'प्रक्षेप-वक्र'।

प्रासिक—वि० [सं० प्रास+ठक्—इक] १. जिसके पास प्रास अर्थात् भाला हो। २. प्रास-संबंधी। प्रास का। प्रासीय।

प्रासूतिक—वि० [सं० प्रसूति+ठक्—इक्] प्रसूति-संबंधी।

प्रास्तारिक—वि० [सं० प्रस्तार+ठक्—इक्] १. प्रस्तार-संबंधी। २. जिसका व्यवहार प्रस्तार में हो। प्रस्तार में काम आनेवाला।

प्रास्ताविक—वि० [सं० प्रस्ताव+ठक्—इक्] १. प्रस्ताव के रूप में होनेवाला। २. प्रस्तावना के रूप में होनेवाला। ३. प्रासंगिक। प्रसंग-प्राप्त।

प्रास्थानिक—पुं० [सं० प्रस्थान+ठञ्—इक्] वह पदार्थ जो प्रस्थान के समय मंगलकारक माना जाता हो। जैसे शंख की ध्वनि, दही, मछली आदि।
वि० १. प्रस्थान-संबंधी। २. (समय आदि) जो प्रस्थान करने के लिए शुभ हो।

प्रास्थिक—वि० [सं० प्रस्थ+ठञ्—इक्] १. प्रस्थ-संबंधी। २. प्रस्थ (तौल या मान) के हिसाब से दिया या लिया जानेवाला। ३. पाचन करानेवाला। पाचक।

प्राहारिक—पुं० [सं० प्रहर+ठक्—इक] १. चौकीदार। पहरुआ। २. प्रहरियों का प्रधान अधिकारी।

प्राहुण—पुं० [सं० प्रहुण+अण्] अतिथि। पाहुन।

प्राहुणक—पुं० [सं० प्राहुण+कन्] प्राहुण।

प्राह्ण—पुं० [सं० प्र-अहन् प्रा० स०, टच्]=पूर्वाह्ण।

प्राह्लाद—पं० [सं० प्रह्लाद+अण्] प्रहलाद का वंशज।

प्रिथिमी†—स्त्री०=पृथ्वी।

प्रियंकर—वि० [सं० प्रिय√कृ+खच्, मुम्] प्रसन्न करनेवाला।

प्रियंकरी—स्त्री० [सं० प्रियंकर+ङीप्] १. सफेद कटेरी। २. बड़ी जीवंती। ३. असगंध।

प्रियंगु—स्त्री० [सं० प्रिय√गम् (जाना)+डु, मुम्] १. कँगनी नाम का अन्न। २. राजिका। राई। ३. पिप्पली। ४. कुटकी।

प्रियंवद—वि० [सं० प्रिय√वद् (बोलना)+खच्, मुम्] [स्त्री० प्रियंवदा] प्रिय या मधुर बोलनेवाला। प्रिय-भाषी।
पुं० चिड़िया। पक्षी।

प्रियंवदा—स्त्री० [सं० प्रियंवद+टाप्] एक प्रकार का वर्ण वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक एक नगण, भगण, जगण और रगण होता है और ४-४ पर यति होती है।

प्रिय—वि० [सं०√प्री (तृप्त करना)+क] [भाव० प्रियता, प्रियत्व,] [स्त्री० प्रिया] १. जिसके प्रति बहुत अधिक प्रेम हो। बहुत प्यारा। २. पत्र लेखन में, सौजन्यपूर्वक किसी का आदर, महत्त्व आदि सूचित करने के लिए प्रयुक्त होनेवाला संबोधक विशेषण। जैसे—प्रिय महोदय। ३. मनोहर या शुभ।
पुं० १. पति या प्रेमी। २. जामाता। दामाद। ३. ईश्वर। ४. कार्तिकेय। ५. मलाई। हित। ६. ऋद्धि नामक ओषधि। ६. जीवक नामक ओषधि। ७. कंगनी नामक कदन्न। ८. हरताल। ९. बेंत। १०. धारा कदंब। ११. एक प्रकार का हिरन।

प्रियक—पुं० [सं० प्रिय+ककन् वा] १. पीत शालक। पीत साल। २. कदम का पेड़। ३. कँगनी नाम का अन्न। ४. केसर। ५. धारा कदंब। ६. चितकबरा हिरन। ७. शहद की मक्खी। ८. एक प्रकार का पक्षी।

प्रियकांक्षी (क्षिन्)—वि० [सं० प्रिय√काङ्क्ष्, (चाहना)+णिनि] शुभाभिलाषी। हितैषी।

प्रिय-काम— वि० [सं० ब० स०]=प्रियकांक्षी।

प्रियकृत्—पुं० [सं० प्रिय√कृ+क्विप् तुक्] विष्णु।

प्रिय-जन—पुं० [सं० कर्म० स०] १. स्नेहपात्र व्यक्ति। २. सगा-संबंधी। ३. सौजन्यपूर्वक श्रोताओं को संबोधित करने के लिए प्रयुक्त होनेवाला शब्द।

प्रियतम—वि० [सं० प्रिय√तमप्] [स्त्री० प्रियतमा] जो सबसे अधिक प्रिय हो। परम प्रिय। उदा०—प्रियतम सुअन सँदेश सुनाओ।—तुलसी।

पुं० १. स्त्री का पति। स्वामी। २. प्रेमी। ३. मोर-शिखा नामक वृक्ष।

प्रियतमा—स्त्री० [सं० प्रियतम+टाप्] १. पत्नी। २. प्रेमिका। माशूका। वि० प्रियतम का स्त्री० रूप।

प्रियता—स्त्री० [सं० प्रिय+तल्-टाप्] प्रिय होने की अवस्था, गुण या भाव। (प्रायः समस्त पदों के अंत में प्रयुक्त) जैसे—जन-प्रियता, लोक-प्रियता।

प्रिय-तोषण—पुं० [सं० प्रिय√तुष् (प्रीति)+णिच्+ल्युट्-अन] एक प्रकार का रतिबंध। (काम-शास्त्र)

प्रियत्व—पुं० [सं० प्रिय+त्व]=प्रियता।

प्रियद—वि० [सं० प्रिय√दा (देना)+क] प्रिय वस्तु देनेवाला।

प्रिय-दत्ता—स्त्री० [सं० तृ० त० वा च० त० ?] भूमि, विशेषतः दान की जानेवाली भूमि।

प्रिय-दर्शन—वि० [सं० ब० स०] [स्त्री० प्रियदर्शना] १. जो देखने में भला और सुखद प्रतीत होता हो। २. मनोहर। सुंदर।

पुं० १. तोता। शुक। २. खिरनी का पेड़। ३. एक गंधर्व राजा।

प्रिय-दर्शी (र्शिन्)—वि० [सं० प्रिय√दृश् (देखना)+णिनि] [स्त्री० प्रियदर्शिनी] प्रेमपूर्वक किसी को या दूसरों को देखनेवाला।

पुं० अशोक वृक्ष।

प्रिय-पात्र—वि० [सं० कर्म० स०] प्रेम-पात्र। प्यारा।

प्रियभाषी (षिन्)—वि० [सं० प्रिय√भाष् (बोलना)+णिनि] [स्त्री० प्रियभाषिणी] मधुर वचन बोलनेवाला। मीठी बात कहनेवाला।

प्रिय-रूप—वि० [सं० ब० स०] मनोहर। सुंदर।

प्रिय-वक्ता (क्तृ)—वि० [सं० ष०.त० सं०]=प्रियभाषी।

प्रिय-वर—वि० [सं० स० त०] प्रिय या प्यारों में श्रेष्ठ। बहुत प्रिय। (इसका व्यवहार प्रायः पत्रों आदि में संबोधन के रूप में होता है।)

प्रियवादी (दिन्)—पुं० [सं० प्रिय√वद् (बोलना)+णिनि) [स्त्री० प्रियवादिनी] प्रिय वचन कहनेवाला। मधुर-भाषी।

प्रिय-व्रत—पुं० [सं० ब० स०] १. स्वायंभुव मनु के एक पुत्र का नाम जो उत्तानपाद का भाई था।

वि० जिसे व्रत प्रिय हो।

प्रिय-श्रवा (वस्)—पुं० [सं० ब० स०] १. भगवान कृष्ण। २. विष्णु।

प्रिय-संगमन—पुं० [सं० ब० स०] वह स्थान जहाँ प्रेमी और प्रेमिका अभिसार करते हों। संकेत-स्थल।

प्रिय-संदेश—पुं० [सं० प्रिय-सम्√दिश् (बताना)+अण, उप० स० भावे घञ्, ष० त०] चंपा का पेड़।

प्रिय-सख—पुं० [सं० कर्म० स०ष० त० वा] खैर का पेड़।

प्रियांबु—पुं० [सं० प्रिय-अम्बु ब० स०] १ आम का पेड़ या उसका फल। वि० जिसे जल बहुत प्रिय हो।

प्रिया—स्त्री० [सं० प्रिय+टाप्] १. नारी। स्त्री। २. पत्नी। भार्या। ३. प्रेमिका। ४. इलायची। ५. चमेली। मल्लिका। ६. मद्य। शराब। ७. कँगनी नामक अन्न। ७. एक प्रकार का वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में रगण (ऽ।ऽ) होता है; इसका दूसरा नाम मृगी है। ८. चौदह मात्राओं का एक छंद।

प्रियाख्य—वि० [सं० प्रिय-आख्या ब० स०] प्रिय। प्यारा।

प्रियात्मा (त्मन्)—पुं० [सं० प्रिय-आत्मन् ब० स०] जिसका चित्त उदार और सरल हो।

प्रियाल—पुं० [सं० प्रिय√अल् (पर्याप्त होना)+अच्] चिरौंजी का पेड़।

प्रियाला—स्त्री० [सं० प्रियाल+टाप्] दाख।

प्रियोक्ति—स्त्री० [सं० प्रिया-उक्ति, कर्म० स०] १. मधुर कथन। २. चापलूसी। खुशामद।

प्री—स्त्री० [सं०√प्री (तृप्त करना)+क्विप्] १. प्रेम। प्रीति। २. कांति। चमक। ३. इच्छा। ४. तृप्ति। ५. तर्पण।

वि०=प्रिय।

प्रीअंक—पुं०=प्रियक (कदंब)।

प्रीणन—पुं० [सं०√प्री+णिच्, नुक्, ल्युट्-अन] किसी को प्रसन्न तथा संतुष्ट करना।

वि० प्रसन्न तथा संतुष्ट करनेवाला।

प्रीणित—भू० कृ० [सं०√प्री+णिच्, नुक्+क्त] प्रसन्न तथा संतुष्ट किया हुआ।

प्रीत—वि० [सं०√प्री+क्त] १. जिसके मन में प्रीति उत्पन्न हुई हो। २. जो किसी पर प्रसन्न हुआ हो। ३. प्यारा। प्रिय।

† स्त्री०=प्रीति।

मुहा०—प्रीत मानना*=प्रीति करनेवाले की प्रीति से प्रसन्न होकर उससे प्रीति करना।

प्रीतम—व्रि०, पुं०=प्रियतम।

प्रीतात्मा (त्मन्)—पुं० [सं० प्रीत-आत्मन् ब० स०] शिव।

प्रीति—स्त्री० [सं०√प्री+क्तिन्] १. किसी के हृदय में होनेवाला वह सद्भाव जो बरबस किसी दूसरे के प्रति ध्यान ले जाता है और उसके प्रति ममत्व की भावना उत्पन्न करता है। २. प्रेम। प्यार। ३. आनंद। हर्ष। ४. कामदेव की एक पत्नी। ५. संगीत में, मध्यम स्वर की चार श्रुतियों में से अंतिम श्रुति। ६. फलित ज्योतिष के २७ योगों में से दूसरा योग जिसमें शुभ कर्म करने का विधान है।

प्रीति-कर—वि० [सं० ष० त०] प्रसन्नता उत्पन्न करनेवाला। प्रेमजनक।

प्रीतिकारक, प्रीतिकारी—वि०=प्रीति-कर।

प्रीतिद—वि० [सं० प्रीति√दा+क] सुख या प्रेम उत्पन्न करनेवाला।

पुं० १. विदूषक। २. भाँड़।

प्रीति-दान—पुं० [सं० तृ० त०] १. प्रेमपूर्वक दी जानेवाली कोई वस्तु। २. विशेषतः वह वस्तु जो सास अथवा ससुर अपने जामाता या पुत्र-वधू को, या पति अपनी पत्नी को प्रेम-पूर्वक भोग के लिए दे।

प्रीति पात्र—पुं० [सं० ष० त०] वह जिससे प्रीति या प्रेम किया जाय। प्रेम-भोजन।

प्रीति-भोज—पुं० [सं० तृ० त० स०] किसी मांगलिक या सुखद अवसर पर इष्ट-मित्रों तथा बंधु-बांधवों को अपने यहाँ बुलाकर कराया जानेवाला भोजन। दावत।

प्रीतिमान् (मत्)—वि० [सं० प्रीति+मतुप्] प्रेम रखनेवाला। जिसमें प्रेम-भाव हो।

प्रीति-रीति—स्त्री० [सं० ष० त०] वे कार्य जो प्रीति निभाने के लिए आवश्यक माने जाते हों।

प्रीति-विवाह—पुं० [सं० तृ० त०] पारस्परिक प्रेम संबंध के फलस्वरूप होनेवाला विवाह। (माता-पिता की इच्छा से किये जानेवाले विवाह से भिन्न।)

प्रीत्यर्थ—अव्य० [सं० ष० त०] १. प्रीति के कारण। २. किसी को प्रसन्न करने के लिए। जैसे—विष्णु के प्रीत्यर्थ दान करना।

प्रूफ—पुं० [अं०] १. दे० 'प्रमाण'। २. छपाई में किसी छपनेवाली चीज का वह आरंभिक नमूना जो छपाई संबंधी भूलें ठीक करने के उद्देश्य से छापा जाता है।

प्रूफ-रीडर—पुं० [अं०] वह जो छपनेवाली चीज का प्रूफ देखकर छापेवाली भूलें ठीक करता हो।

प्रूम—पुं० [?] नदी, समुद्र आदि की गहराई जानने का एक छोटा यंत्र जो सीसे का बना हुआ और लट्टू के आकार का होता है और जो डोरी के सहारे नीचे तल तक लटकाया जाता है।

प्रेंख—पुं० [सं० प्र√इङ्ख्+घञ्] १. झूलना। पेंग लेना। २. एक प्रकार का साम-गान।

वि० जो काँप, झूल या हिल रहा हो।

प्रेंखण—पुं० [सं० प्र√इङ्ख्+ल्युट्—अन] अच्छी तरह हिलना या झूलना। २. अठारह प्रकार के रूपकों में से एक प्रकार का रूपक जिसमें वीर रस की प्रधानता रहती है।

प्रेंखा—स्त्री० [सं० प्र√इङ्ख्√अ—टाप्] १. हिलना। २. झूलना। ३. यात्रा। ४. नाच। नृत्य। ५. घोड़े की चाल।

प्रेंखोलन—पुं० [सं०+प्रेङ्खोल् (चलना) ल्युट्—अन] १. झूलना। २. काँपना।

प्रेक्षक—पुं० [सं० प्र√ ईक्ष्+ण्वुल्—अक] १. वह जो खेल-तमाशा या ऐसा ही और काम या बात चाव से या ध्यानपूर्वक देखता हो। दर्शक। २. वह जो किसी काम, चीज या बात को किसी विशिष्ट उद्देश्य से बहुत ध्यानपूर्वक देखता रहता हो। (अबसर्वर)

प्रेक्षण—पुं० [सं० प्र√ईक्ष्+ल्युट्—अन] १. किसी काम, चीज या बात को किसी विशेष उद्देश्य से ध्यानपूर्वक देखते रहने का भाव (अब्सर्वेन्स) २. आँख।

प्रेक्षण-कूट—पुं० [सं० ष० त०] आँख का डेला।

प्रेक्षणीय—वि० [सं० प्र√ईक्ष्+अनीयर्] जो देखे जाने के योग्य हो। दर्शनीय।

प्रेक्षा—स्त्री० [सं० प्र√ईक्ष्+अ—टाप्] १. देखना। २. दृष्टि। निगाह। ३. नाच-तमाशा, नाटक आदि देखना। ४. प्रज्ञा। बुद्धि। ५. नाच, तमाशा, अभिनय आदि। ६. किसी विषय की अच्छी और बुरी बातों का विचार करना। ७. वृक्ष की शाखा। डाल। ८. शोभा।

प्रेक्षाकारी (रिन्)—वि० [सं० प्रेक्षा√कृ+णिनि] सोचसमझ कर काम करनेवाला।

प्रेक्षागार—पुं० =प्रेक्षा-गृह।

प्रेक्षा-गृह—पुं० [सं० ष० त०] १. प्राचीन काल में राज-महल का वह कमरा जहाँ राजा मंत्रियों से मंत्रणा करते थे। २. नाटकों के अभिनय आदि के लिए बनी हुई रंग-शाला।

प्रेक्षावान् (वत्)—वि० [सं० प्रेक्षा+मतुप्] सोच-समझ कर काम करनेवाला।

प्रेक्षा-समाज—पुं० [सं०] दर्शकों का समूह। दर्शक-वृंद।

प्रेक्षित—भू० कृ० [सं० प्र√ईक्ष्+क्त] अच्छी तरह और ध्यानपूर्वक देखा हुआ।

प्रेक्षिता (तृ)—पुं० [सं० प्र√ईक्ष्+तृच्] =प्रेक्षक।

प्रेक्षी (क्षिन्)—पुं० [सं० प्रेक्षा+इनि] १. प्रेक्षक। २. बुद्धिमान। समझदार।

प्रेक्ष्य—वि० [सं० प्र√ईक्ष्+ण्यत्] १. अच्छी तरह देखे जाने के योग्य। २. जो देखा जाने को हो।

प्रेत—वि० [सं० प्र√इ (गति)+क्त] जो यह संसार छोड़कर चला गया हो; अर्थात् मरा हुआ या मृत।

पुं० [स्त्री० प्रेता, प्रेतनी] १. आत्मा जो शरीर से निकलकर और यह संसार छोड़कर चली जाती है। २. पुराणों के अनुसार वह सूक्ष्म शरीर जो आत्मा भौतिक शरीर छोड़ने पर धारण करती है।

विशेष—कहते हैं कि आत्मा को दुष्कर्मों के फल-भोग के लिए यह रूप धारण करना पड़ता है और गंदे स्थानों में रहकर बहुत ही घृणित कर्म करने पड़ते हैं। लोगों का विश्वास है कि यह कभी-कभी छाया रूप धारण करके अनेक प्रकार के अलौकिक, भयावने तथा विकट कार्य करता हुआ दिखाई देता है। पुराणों में भूतों को देवयोनियों के वर्ग में रखा गया है; और इनका रंग काला तथा आकार-प्रकार विकराल बतलाया गया है।

३. मृत व्यक्ति का शरीर। लाश। शव। ४. प्रेत-शरीर। (देखें) ५. पितर। ६. नरक में रहनेवाले प्राणी। ७. लाक्षणिक रूप में, बहुत बड़ा कंजूस या धूर्त व्यक्ति।

प्रेत-कर्म (र्मन्)—पुं० [सं० ष० त०] हिंदुओं में दाह आदि से लेकर सपिंडी तक के वे कृत्य जो मृतक को प्रेत शरीर से मुक्त कराने के उद्देश्य से किये जाते हों। प्रेत-कार्य।

प्रेत-कार्य, प्रेत-कृत्य—पुं० =प्रेतकर्म।

प्रेत-गृह—पुं० [सं० ष० त०] ऐसा स्थान जहाँ मृत शरीर गाड़े, जलाये या रखे जाते हों।

प्रेत-तर्पण—पुं० [सं० ष० त०] १. किसी मृतक के निमित्त उसके मरने के दिन से लेकर सपिंडी के दिन तक किया जानेवाला तर्पण। २. किसी प्रेत के निमित्त वर्ष भर किया जानेवाला तर्पण।

प्रेतता—स्त्री० [सं० प्रेत+तल्—टाप्] = प्रेतत्व।

प्रेतत्व—पुं०[सं० प्रेत+त्व] प्रेत होने की अवस्था, धर्म या भाव। प्रेतता।

प्रेत-दाह—पुं०[सं० ष० त०] मृत व्यक्ति के शरीर को जलाना।

प्रेत-देह—पुं०=प्रेत-शरीर। (देखें)

प्रेत-नदी—स्त्री०[सं० मध्य० स०] वैतरणी नामक पैशाचिक नदी।

प्रेतनी—स्त्री०[सं० प्रेत+हिं० नी (प्रत्य०)] १. स्त्री प्रेत। भूतनी। २. लाक्षणिक अर्थ में, बहुत बड़ी धूर्त या अर्ध-पिशाच स्त्री।

प्रेत-पक्ष—पुं०[सं० मध्य० स०] पितृ-पक्ष।

प्रेत-पटह—पुं०[सं० मध्य० मे०] पुरानी चाल का एक बाजा जिसके बजने पर यह जाना जाता था कि कोई मर गया है।

प्रेत-पति—पुं०[सं० ष० त०] प्रेतों के स्वामी, यम।

प्रेत-पर्वत—पुं०[सं० मध्य० स०] गया तीर्थ के अन्तर्गत एक पर्वत।

प्रेत-पावक—पुं०[सं० ष० त०] वह प्रकाश जो प्रायः दलदलों, जंगलों, कब्रिस्तानों आदि में रात के समय जलता हुआ दिखाई पड़ता है। और जिसे लोग प्रेतों की लीला समझते हैं। लुक।

प्रेत-पिंड—पुं०[सं० च० त०] कर्मकांड में अन्न आदि का बना वह पिंड जो किसी के मरने के दिन से लेकर सपिंडी के दिन तक उसके नाम पर नित्य पारा जाता ह।

प्रेत-पुर—पुं०[सं० ष० त०] यमपुर।

प्रेत-भाव—पुं०[सं० ष० त०] मृत्यु।

प्रेत-भूमि—स्त्री०[सं० ष० त०] =श्मशान।

प्रेत-मेध—पुं०[सं० ष० त०] मृतक के उद्देश्य से किया जानेवाला श्राद्ध।

प्रेत-यज्ञ—पुं०[सं० मध्य० स०]एक प्रकार का यज्ञ जो कुछ लोग प्रेत-योनि प्राप्त करने के लिए करते थे।

प्रेत-राक्षसी—स्त्री०[सं० ष० त०] तुलसी (पौधा)। (ऐसा माना जाता है कि जहाँ तुलसी रहती है, वहाँ भूत-प्रेत नहीं आते)

प्रेतराज—पुं०[सं० ष० त०] १. यमराज। २. शिव।

प्रेत-लोक—पुं०[सं० ष० त०] यमपुर। यम-लोक।

प्रेत-वन—पुं०[सं० ष० त०] श्मशान। मरघट।

प्रेत-वाहित—भू० कृ०[सं० तृ० त०] जिस पर प्रेत या भूत का आवेश हो।

प्रेत-विधि—स्त्री०[सं० ष० त०] मृतक-संस्कार।

प्रेत-विमाना—स्त्री० [सं० ब० स०, टाप्] भगवती का एक रूप। (कहते हैं कि यह पाँच-प्रेतशरीरों पर सवार होकर आकाश में विचरण करती है।)

प्रेत-शरीर—पुं० [सं० ष० त०] पुराणों के अनुसार मृत व्यक्ति की जीवात्मा की वह अवस्था जिसमें वह तब तक लिंग रूप में, या सूक्ष्म शरीर धारण करके रहती है, जब तक उसका सपिंडी नामक श्राद्ध नहीं हो जाता। भोग-शरीर।

विशेष—कहते हैं कि सपिंडी हो जाने पर उसका प्रेतत्व नष्ट हो जाता है और वह अपने कर्मों का फल भोगने के लिए नरक या स्वर्ग में चला जाता है।

प्रेत-शिला—स्त्री०[सं० ष० त०] गया तीर्थ की एक पहाड़ी। (कहते हैं कि जब तक यहाँ मृतक के उद्देश्य से पिंड दान न किया जाय, तब तक प्रेतत्व से उसकी मुक्ति नहीं होती।)

प्रेत-श्राद्ध—पुं०[सं० मध्य० स०] किसी के मरने की तिथि से एक वर्ष के अंदर होनेवाले सोलह श्राद्धों में से हर एक।

३—८४

प्रेतहार—पुं०[सं० प्रेत√हृ+अण्] वह जो मृत शरीर उठाकर श्मशान तक ले जाने का व्यवसाय करता हो। मुरदा-फरोश।

प्रेता—स्त्री०[सं० प्रेत+टाप्] १. स्त्री प्रेत। प्रेतनी। २. कात्यायनी देवी।

प्रेतात्मक—वि०[सं० प्रेतात्मन् से] प्रेतात्मा-संबंधी। प्रेतात्मा का। (स्पिरिचुअल)

प्रेतात्म-वाद—पुं० [सं० ष० त०] यह विश्वास कि प्रेतात्माएँ जीवित व्यक्तियों से कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में अथवा कुछ विशिष्ट माध्यमों के द्वारा संबंध स्थापित करती और वार्तालाप करती हैं। (स्पिरिचुअलिज्म)

प्रेतात्मवादिक—वि०[सं० प्रेतात्मवाद+ठक्—इक] प्रेतात्म-वाद से संबंध रखनेवाला। (स्पिरिचुअलिस्टिक)

प्रेतात्मवादी (दिन्)—पुं० [सं० प्रेतात्मवद्+णिनि] वह व्यक्ति, जिसका इस बात में विश्वास हो कि प्रेतात्माएँ जीवित व्यक्तियों से संबंध स्थापित करती और वार्तालाप करती हैं।

वि०=प्रेतात्मवादिक।

प्रेतात्मविद्या—स्त्री०[सं० ष० त०] वह विद्या जिसके द्वारा प्रेतात्माओं से संपर्क स्थापित करके वार्तालाप किया जाता है। (साइकिक्स)

प्रेतात्मा (त्मन्)—स्त्री० [सं० प्रेत-आत्मन्, मयू० स०] प्राणी, विशेषतः मनुष्य की आत्मा की वह अवस्था या रूप जो उसे मृत्यु के उपरान्त प्राप्त होता है और जो हिंदू शास्त्रकारों के अनुसार लिंग-शरीर (देखें) से युक्त होता है। (स्पिरिट)

प्रेतात्मिक—वि० [सं० प्रेतात्मन्+ठक्—इक] १. प्रेतात्मा-संबंधी। २. प्रेतात्माओं द्वारा किया जाने या होनेवाला।

प्रेताधिप—पुं०[सं० प्रेत-अधिप, ष० त०] यमराज।

प्रेतान्न—पुं०[सं० प्रेत-अन्न मध्य० स०] १. पिंडा जो प्रेतों के उद्देश्य से दिया जाता है। २. बिना घी के योग से पकाया जानेवाला भोजन।

प्रेतावास—पुं०[सं० प्रेत-आवास, ष०त०] प्रेतों के रहने का स्थान। श्मशान।

प्रेताशी (शिन्)—वि० [सं० प्रेत√अश् (खाना)+णिनि] [स्त्री० प्रेताशिनी] प्रेत अर्थात् मृत शरीर खानेवाला।

प्रेताशौच—पुं०[सं० प्रेत-अशौच, मध्य० स०] किसी संबंधी के मरने पर होनेवाला अशौच। सूतक।

प्रेति—पुं०[सं० प्र√इ+क्तिन्] १. मरण। मृत्यु। २. अन्न। अनाज।

प्रेतिनी—स्त्री०=प्रेतनी।

प्रेती—पुं०[सं० प्रेत+हिं० ई (प्रत्य०)] प्रेतात्माओं की पूजा करनेवाला तथा उन्हें प्रसन्न करके उनके द्वारा कुछ विशिष्ट काम करानेवाला व्यक्ति।

प्रेतेश—पुं०[सं० प्रेत-ईश, ष० त०] यमराज।

प्रेतोन्माद—पुं०[सं० प्रेत-उन्माद, मध्य० स०] प्रेत-बाधा अर्थात् प्रेतात्मा के प्रकोप से होनेवाला उन्माद।

प्रेम—पुं०[सं० प्रिय+इमनिच्, प्र आदेश] [वि० प्रेमी] १. किसी के मन में होनेवाला कोमल भाव जो किसी ऐसे काम, चीज, बात या व्यक्ति के प्रति होता है जिसे वह बहुत अच्छा, प्रशंसनीय तथा सुखद समझता है अथवा जिसके साथ वह अपना घनिष्ठ संबंध बनाये रखना चाहता है। प्रीति। मुहब्बत। जैसे—(क) काव्य, चित्रकला, जाति, देश आदि के प्रति होनेवाला प्रेम। (ख) भाई-बहन अथवा माता-पुत्र में होनेवाला प्रेम।

विशेष—अपने विशुद्ध और विस्तृत रूप में यह ईश्वरीय तत्त्व या ईश्वरता का व्यक्त रूप माना जाता है और सदा स्वार्थ-रहित तथा दूसरों के सर्वतोमुखी कल्याण के भावों से ओतप्रोत होता है। इसमें दया, महानुभूति आदि प्रचुर मात्रा में होती है।

२. शृंगारिक तथा साहित्यिक क्षेत्रों में, वह मनोभाव जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों एक दूसरे के गुण, रूप, व्यवहार, स्वभाव आदि पर रीझकर सदा पास या साथ रहना और एक दूसरे को अपना बनाकर प्रसन्न तथा संतुष्ट रखना चाहते हैं। प्रीति। मुहब्बत।

विशेष—यह अनुराग तथा स्नेह का बहुत आगे बढ़ा हुआ रूप है; और प्रायः इसके मूल में या तो काम-वासना या तृप्ति से प्राप्त होनेवाला सुख होता है; या काम-वासना की तृप्ति करना इसका उद्देश्य होता है। अनुराग या स्नेह तो मुख्यतः लैंगिक सम्बन्ध होने से पहले होते हैं; परन्तु प्रेम प्रायः किसी न किसी प्रकार के शारीरिक संबंध का परिचायक होता है। स्त्री-और पुरुष जाति के जीव-जंतुओं में यह मुख्यतः कामज ही होता है।

३. केशव के अनुसार एक प्रकार का अलंकार। ४. सांसारिक बातों के प्रति होनेवाली माया या लोभ। ५. आनन्द। प्रसन्नता।

प्रेम-कलह—पुं० [सं० सुप्सुपा स०] प्रेम के प्रसंग में किया जानेवाला या होनेवाला झगड़ा।

प्रेम-गर्विता—स्त्री० [सं० तृ० त०] साहित्य में वह नायिका जो इस बात का गर्व या अभिमान करती है कि मेरा पति या प्रेमी मुझसे अधिक प्रेम करता है।

प्रेम-जल—पुं० [सं० ष० त० या मध्य० स०] प्रेमाश्रु।

प्रेमजा—स्त्री० [सं०] मरीचि (ऋषि) की पत्नी का नाम।

प्रेम-नीर—पुं० = प्रेमाश्रु।

प्रेमपात्र—पुं० [सं० ष० त०] [स्त्री० प्रेम-पात्री] १. वह व्यक्ति जिससे प्रेम किया जाय। २. वह जिस पर किसी की विशेष कृपा-दृष्टि हो।

प्रेम-पाश—स्त्री० [सं० ष० त०] १. प्रेम का फंदा या जाल। २. आलिंगन।

प्रेम-पुलक—स्त्री० [सं० तृ० स०] आवेग के कारण होनेवाला रोमांच।

प्रेम-भक्ति—स्त्री० [सं० मध्य० स०]=प्रेम-लक्षणा।

प्रेम-मार्ग—पुं० [सं० ष० त०] वह मार्ग जो मनुष्य को सांसारिक विषयों में फंसाता है। अविद्या-मार्ग।

प्रेम-लक्षणा—स्त्री० [सं० ब० स०] भक्ति का वह प्रकार जिसकी साधना पुष्टमार्ग (देखें) में होती है। उदा०—श्रवण, कीर्तन, पाद-रत, अरचन, वंदन, दास, सख्य अरु आत्मनिवेदन प्रेम-लक्षणा जास।—सूर।

प्रेम-लेश्या—स्त्री० [सं०] जैनों के अनुसार वह वृत्ति जिसके अनुसार मनुष्य विद्वान्, दयालु, विवेकी होता तथा निस्वार्थ भाव से सबसे प्रेम करता है।

प्रेमवती—स्त्री० [सं० प्रेमन्+मतुप्] १. पत्नी। २. प्रेमिका।

प्रेम-वारि—पुं०=प्रेमाश्रु।

प्रेमा—पुं० [सं० प्रेमन्] १. प्रेम। २. प्रेमी। ३. इंद्र। ४. वायु। ५. उपजाति वृत्त का ग्यारहवाँ भेद जिसके पहले, दूसरे और चौथे चरणों में क्रमशः जतजगण और दो गुरु और तीसरे चरण में क्रमशः ततज और दो गुरु होते हैं।

प्रेमाक्षेप—पुं० [सं० प्रेमन्-आक्षेप, ब० स०] केशव के अनुसार आक्षेप अलंकार का एक भेद जिसमें प्रेम का निवेदन करते समय किसी प्रेम-जन्य कार्य से ही उसमें बाधा होने का वर्णन होता है।

प्रेमालाप—पुं० [सं० प्रेमन्-आलाप मध्य० स०] १. आपस में प्रेमपूर्वक होनेवाली बातचीत। २. दो प्रेमियों में होनेवाली बातचीत।

प्रेमालिंगन—पुं० [सं० मध्य० स०] १. किसी को प्रेमपूर्वक गले लगाना। २. कामशास्त्र के अनुसार नायक और नायिका का एक विशेष प्रकार का आलिंगन।

प्रेमाश्रु—पुं० [प्रेमन्-अश्रु, मध्य० स०] वे आँसू जो प्रेम के आधिक्य के समय आप से आप आँखों से निकलने लगते हैं।

प्रेमिक—वि० [सं०] [स्त्री० प्रेमिका]=प्रेमी।

प्रेमी (मिन्)—वि० [सं० प्रेमन्+इनि] किसी से प्रेम करनेवाला। जैसे—देश-प्रेमी, साहित्य-प्रेमी।

पुं० १. वह व्यक्ति जो किसी स्त्री विशेषतः प्रेमिका से प्यार करता हो। २. किसी स्त्री के साथ अनुचित रूप से सम्बन्ध रखनेवाला व्यक्ति। यार।

प्रेय(स्)—वि० [सं० प्रिय+इयसुन् प्रादेश] [स्त्री० प्रेयसी] बहुत प्यारा। विशेष प्रिय।

पुं० १. परम प्रिय व्यक्ति। २. स्त्री का पति या स्वामी। ३. स्त्री का प्रेमी। ४. धार्मिक क्षेत्र में यह कामना कि हम स्वर्ग प्राप्त करके अनेक प्रकार के सुख भोगें (मोक्ष-प्राप्ति की कामना से भिन्न)। ५. कल्याण। मंगल। ६. साहित्य में एक प्रकार का अलंकार जिसमें एक भाव किसी दूसरे भाव अथवा स्थायी का अंग होता है। जैसे—प्रभु-पद सौंह करें कहत, वाहि तुच्छ एक तीर। लखत इंद्रजित् कौं हनहु तौ तुम लछमन बीर। इस प्रसंग में व्यभिचारी भाव 'गर्व' कुछ गौण होकर स्थायी भाव 'क्रोध' का अंग हो गया है।

प्रेयसी—स्त्री० [सं० प्रेयस्ङीप्] १. वह स्त्री जिसके साथ कोई पुरुष बहुत अधिक प्रेम करता हो। प्रेमिका। २. पत्नी। भार्या।

प्रेरक—वि० [सं० प्र√ईर्+णिच्+ण्वुल्—अक] १. किसी को प्रेरित करनेवाला। जो प्रेरणा करता हो। २. भेजनेवाला।

प्रेरण—पुं० [सं० प्र√ईर्+णिच्+ल्युट्—अन] १. किसी को कोई काम करने के लिए बहुत अधिक उत्साहित करना। २. कोई काम करने के लिए प्रवृत्त करना।

प्रेरणा—स्त्री० [सं० प्र√ईर्+णिच्+युच्—अन्, टाप्] १. किसी को किसी कार्य में लगाने अथवा प्रवृत्त करने की क्रिया या भाव। २. मन में उत्पन्न होनेवाला वह भाव या विचार जिसके संबंध में यह कहा जा सकता हो कि वह दैवी साधन या कृपा से उत्पन्न हुआ है। ३. किसी प्रभावशाली व्यक्ति या क्षेत्र की ओर से कुछ करने या कहने के लिए होनेवाला संकेत। (इन्स्पिरेशन, उक्त दो अर्थों में) ४. दबाव। ५. झटका। धक्का।

प्रेरणार्थक—वि० [सं० प्रेरणा-अर्थ, ब० स०, कप्] १. प्रेरणा-संबंधी। २. प्रेरणा के रूप में होनेवाला।

प्रेरणार्थक क्रिया—स्त्री० [सं० कर्म० स०] व्याकरण में, क्रिया का वह रूप जिसमें क्रिया के व्यापार के संबंध में यह सूचित होता है कि यह क्रिया स्वयं नहीं की जा रही है बल्कि किसी दूसरे को प्रेरित करके या किसी दूसरे से कराई जा रही है। जैसे—खाना से खिलाना, चलना से चलाना, भागना से भगाना आदि बननेवाले रूप प्रेरणार्थक क्रिया कहलाते हैं।

प्रेरणीय—वि०[सं० प्र√ईर्+अनीयर्] प्रेरणा किये जाने के योग्य। किसी के लिए प्रवृत्त या नियुक्त किये जाने या होने के योग्य।

प्रेरना*—स०[सं० प्रेरणा]१. प्रेरणा करना। २. फेंकना। चलाना। ३. भेजना।

प्रेरयितृ (तृ)—वि० [सं० प्र√ईर्+णिच्+तृच्] [स्त्री० प्रेरयित्री] १. प्रेरक। २. आज्ञा देनेवाला।

प्रेरित—भू० कृ०[सं० प्र√ईर्+क्त]१. (व्यक्ति) जिसे दूसरे व्यक्ति से किसी बात की प्रेरणा मिली हो। २. किसी प्रकार की प्रेरणा से होनेवाला (कार्य)। ३. भेजा हुआ। प्रेषित। ४. ढकेला हुआ।

प्रेषक—वि०[सं० प्र√ईष् (गति)+णिच्+ण्वुल्—अक][स्त्री० प्रेषिका] भेजनेवाला।

प्रेषण—पुं०[सं० प्र √ईष्+णिच्+ल्युट्—अन]१. प्रेरणा करना। २. रवाना करना। भेजना।

प्रेषण-पुस्तक—स्त्री०[सं० ष०त०] वह पुस्तक या बही जिसमें बाहर भेजी जानेवाली चिट्ठियों, पारसलों आदि की तिथि, विवरण, डाक-व्यय आदि लिखा जाता है। (डिस्पैच बुक)

प्रेषणीय—वि०[सं० प्र√ईष्+णिच्+अनीयर्]१. प्रेरणा पाने योग्य। २. भेजे जाने के योग्य।

प्रेषणीयता—स्त्री०[सं० प्रेषणीय+तल्—टाप्] १. प्रेषणीय होने की अवस्था या भाव। २. किसी पदार्थ या बात का वह गुण या तत्त्व जिसके द्वारा कुछ कहीं से कहीं पहुँचता हो। (कम्यूनिकेशन) जैसे—साहित्यिक कृतियों में जब तक भावों की प्रेषणीयता तत्त्व न हो, तब तक उनका कोई महत्त्व नहीं होता। (अर्थात् उनमें यह गुण होना चाहिए कि वे कवि या लेखक के भाव पाठकों तक पहुँचा सकें।)

प्रेषित—भू० कृ०[सं० प्र√ईष्+णिच्+क्त] रवाना किया हुआ। भेजा हुआ।

पुं० संगीत में स्वर-साधना की एक प्रणाली जिसका रूप है—सारे, रेग, गम, मप, पध, धनि, निसा। सानि, निध, धप, पम, मग, गरे, रेसा। (संगीत)

प्रेषितव्य—वि०[सं० प्र√ईष्+णिच्+तव्यत्] जो भेजा जाने को हो या भेजा जा सके।

प्रेष्ठ—भू० कृ० [सं० प्रिय+ईष्ठन्, प्रआदेश] [स्त्री० प्रेष्ठा] सबसे अधिक प्रिय। परम प्रिय। प्रियतम।

प्रेष्य—वि०[सं० प्र√ ईष्+णिच्+यत्] जो भेजा जाने को हो या भेजा जा सकता हो।

पुं०[स्त्री० प्रेष्या] १. नौकर। सेवक। २. दूत। हरकारा।

प्रेष्यता—स्त्री० [सं० प्रेष्य+तल्—टाप्] प्रेष्य होने की अवस्था या भाव।

प्रेस—पुं०[अं०]१. रूई आदि चीजें दबाने की कल। २. पुस्तकें, समाचार-पत्र आदि छापने की कल या यंत्र। ३. छापाखाना। मुद्रणालय।

मुहा०—(किसी चीज का) प्रेस में होना=(किसी चीज की) छपाई का काम जारी रहना। जैसे—अभी वह पुस्तक प्रेस में है। (अर्थात् छप रही है।)

४. समाचार पत्रों का सामूहिक वर्ग। सभी अखबार।

पद—प्रेस ऐक्ट।

प्रेस ऐक्ट—पुं० [अं०] वह कानून जिसमें छापेखानेवालों तथा समाचार-पत्रों के अधिकारों की सीमाओं का उल्लेख होता है।

प्रेसमैन—पुं०[अं०] छापे खाने या मुद्रणालय का कर्मचारी।

प्रेसिडेंट—पुं०[अं०]१. सभापति। २. अध्यक्ष। ३. राष्ट्रपति।

प्रेसिडेंसी—स्त्री०[अं०] १. प्रेसिडेंट का पद या कार्य। २. ब्रिटिश भारत में शासन के सुभीते के लिए कुछ निश्चित प्रदेशों या प्रांतों का किया हुआ विभाग जो एक गवर्नर या लाट की अधीनता में होता था।

प्रोंचिया†—स्त्री०=पहुँची (कलाई पर पहनने की)। उदा०—गजरा नवग्रही प्रोंचिया प्रोंचे।—प्रिथीराज।

प्रोंछन—पुं०[सं० प्र√उन्छ्+ल्युट्—अन] १. पोंछने की क्रिया। २. पोंछने का कपड़ा। ३. बचे हुए खंडों को चुनना।

प्रोक्त—भू० कृ०[सं० प्र√वच्(कहना)+क्त] कथित या कहा हुआ। उक्त।

पुं० कही हुई बात या वचन। उक्ति।

प्रोक्षण—पुं०[सं० प्र√उक्ष् (सींचना)+ल्युट्—अन]१. जल छिड़कना। छिड़काव करना। २. यज्ञ में, बलि देने से पहले पशु पर पानी छिड़कना। ३. पानी का छींटा। ४. वध। हत्या। ५. विवाह का परिछन नामक कृत्य। ६. श्राद्ध आदि में होनेवाला एक कृत्य।

प्रोक्षणी—स्त्री० [सं० प्रोक्षण+ङीप्] १. यज्ञ आदि में छिड़का जाने-वाला जल। २. वह पात्र जिसमें उक्त जल रखा जाता था। ३. कुश की मुद्रिका जो होमादि के समय अनामिका में पहनी जाती है।

प्रोक्षित—भू० कृ० [सं० प्र√उक्ष्+क्त]१. सींचा हुआ। २. जिस पर जल छिड़का गया हो। ३. जिसका वध या हत्या की गई हो। ४. (पशु) जो बलि चढ़ाया गया हो।

पुं० वह मांस जो यज्ञ के लिए संस्कृत किया गया हो। (ऐसा मांस खाने में कोई दोष नहीं माना जाता।)

प्रोक्षितव्य—वि०[सं० प्र+उक्ष्√तव्यत्] जिसका प्रोक्षण होने को हो या हो सकता हो।

प्रोग्राम—पुं०[अं०]१. दे० 'कार्यक्रम'। २. वह पत्र जिसमें कार्यक्रम छपा या लिखा हो।

प्रोज्ज्वल—वि०[सं० प्र-उज्ज्वल, प्रा० स०]विशेष रूप से या बहुत उज्ज्वल।

प्रोज्झन—पुं०[सं० प्र√उज्झ् (त्याग)+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रोज्झित] परित्याग।

प्रोटीन—पुं०[अं०]खाद्य पदार्थों में पाया जानेवाला वह तत्त्व जिसमें कारबन, नाइट्रोजन, आक्सीजन, गंधक आदि मिले होते हैं, और जो प्राणियों और वनस्पतियों के जीवन-धारण के लिए आवश्यक और उपयोगी होता है।

प्रोटेस्टेंट—पुं०[अं०]१. ईसाइयों का एक संप्रदाय। २. उक्त संप्रदाय का अनुयायी।

प्रोढ़*—वि०=प्रौढ़।

प्रोढ़ा*—स्त्री०=प्रौढ़ा।

प्रोत—भू० कृ०[सं० प्र√वे—(बुनना)+क्त, सम्प्रसारण] १. किसी के साथ या किसी में अच्छी तरह मिला हुआ।

पद—ओतप्रोत।

२. गाँठ लगाकर बाँधा हुआ। ३. सीया हुआ। ४. छिपा हुआ। गुप्त।

पुं० कपड़ा। वस्त्र।

प्रोत्कंठ—वि०[सं०प्र-उत्कंठा, ब० स०] =उत्कंठित।

प्रोत्कट—वि०[सं० प्र-उत्कट, प्रा० स०] [भाव० प्रोत्कटता] १. उत्कट। २. विशेष रूप में बहुत बड़ा।

प्रोत्तुंग—वि०[सं० प्र-उत्तुंग, प्रा० स०] बहुत ऊँचा।

प्रोत्तेजन—पुं० [सं० प्र-उत्तेजन, प्रा० स०] [भू० कृ० प्रोत्तेजित] बहुत बढ़े हुए रूप में उत्तेजना उत्पन्न करना। ३. बहुत उत्कट या तीव्र उत्तेजन।

प्रोत्थित—भू० कृ०[सं० प्र-उत्थित, प्रा० स०]१. आधार पर रखा हुआ। किसी पर टिका या ठहरा हुआ। २. ऊपर उठाया हुआ। ३. बहुत ऊपर निकला या बढ़ा हुआ।

प्रोत्फुल्ल—वि०[सं० प्र-उत्√फुल्ल्+अच्]१. अच्छी तरह खिला हुआ। २. विशेष रूप से प्रसन्न या हर्षित।

प्रोत्सारण—पुं०[सं० प्र-उत्√सृ (गति)+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रोत्सारित] १. हटाना। २. निकालना। ३. पिंड या पीछा छुड़ाना।

प्रोत्साह—पुं०[सं० प्र-उत√सह्+णिच्+घञ्] बहुत अधिक बढ़ा हुआ उत्साह या उमंग।

प्रोत्साहक—वि० [सं० प्र-उत्√सह्+णिच्+ण्वुल्—अक] उत्साह बढ़ानेवाला। हिम्मत बँधानेवाला।

प्रोत्साहन—पुं० [सं० प्र-उत्√सह्+णिच्+ल्युट्—अन] [भू० कृ० प्रोत्साहित] १. बहुत अधिक उत्साह बढ़ाना। हिम्मत बँधाना। २. प्रोत्साहित करने के लिए कही जानेवाली बात। ३. उत्तेजित करना।

प्रोत्साहित—भू० कृ०[सं० प्र-उत्√सह्+णिच्+क्त] जिसे विशेष रूप में प्रोत्साहन दिया गया हो। अच्छी तरह उत्साहित किया हुआ।

प्रोथ—पुं०[सं० प्रु+थक]१. घोड़े के नाक के आगे का भाग। २. सूअर का थूथन। ३. कमर। ४. पेड़ू। ५. स्त्री का गर्भाशय।

प्रोद्भवन—पुं० [सं० प्र+उद्भवन] १. प्रादुर्भाव होने की क्रिया या भाव। २. आय, फल, लाभ आदि के रूप में होनेवाली प्राप्ति। (एक्रूअल)

प्रोद्भूत—भू० कृ०[सं०] १. जिसका प्रोद्भवन हुआ हो। जो आय, फल, लाभ आदि के रूप में प्राप्त हुआ हो। (एक्रूड)

प्रोनोट—पुं०[अं०]=हुँडनोट।

प्रोपगंडा—पुं०[अं०]=प्रचार। (दे०)

प्रोफेसर—पुं०[अं०]१. किसी विषय का पूर्ण ज्ञाता। भारी पंडित या विद्वान। २. प्राध्यापक। (देखें)

प्रोल—पुं०=पोल (दरवाजा)।

प्रोलि—स्त्री०[सं० प्रतोली] द्वार। फाटक। (राज०) उदा०—प्रोलि प्रोलि मैं मारग।—प्रिथीराज।

प्रोष—पुं० [सं०√प्रुष् (दाह)+घञ्]१. जलना। २. बहुत अधिक दुःख या कष्ट। संताप।

वि० १. जलता हुआ। ३. दुखी। संतप्त।

प्रोषित—पुं०[सं० प्र-उषित, प्रा० स०]साहित्य में शृंगार-रस का आलंबन वह नायक जो प्रिया को छोड़कर विदेश चला गया हो।

भू० कृ०१. प्रवासी। २. बीता हुआ। जैसे—प्रोषित यौवन।

प्रोषित-नायक—पुं०[सं० कर्म० स०]=प्रोषित।

प्रोषित-नायिका—स्त्री०[सं० ब० स०, कप्-टाप्, इत्व] वह स्त्री जो अपने पति (या नायक) के विदेश चले जाने के कारण उसके विरह में दुःखी या विकल हो। प्रवत्स्यपतिका।

प्रोषित-प्रेयसी—स्त्री०=प्रोषितपतिका।

प्रोषित-भर्तृका—स्त्री०=प्रोषितपतिका।

प्रोषित-भार्य—पुं०[सं० ब० स०] वह पुरुष जो अपनी पत्नी के विदेश चले जाने के कारण उसके विरह में दुःखी या विकल हो।

प्रोषित-यौवन—वि० [सं० ब० स०] [स्त्री० प्रोषित-यौवना] जिसका यौवन समाप्त हो चुका हो। जिसकी जवानी बीत चुकी हो।

प्रोष्ठ—पुं०[सं० प्र-ओष्ठ, ब० स०]१. सौरी मछली। २. गाय। ३. एक प्राचीन देश।

प्रोष्ठ-पद—पुं०[सं०ब०स०, अच्, पदादेश] भाद्रपद। भादों (महीना)।

प्रोष्ठ-पदा—स्त्री० [सं० प्रोष्ठपद+टाप्] पूर्व भाद्रपद और उत्तर भाद्रपद नक्षत्र।

प्रोष्ठपदी—स्त्री० [सं० प्रोष्ठपदा+अण्—ङीप्] भादों की पूर्णिमा।

प्रोष्ण—वि०[सं० प्र-उष्ण, प्रा० स०] अत्यन्त उष्ण। बहुत गरम।

प्रोह—पुं०[सं० प्र√ऊह् (वितर्क)+घञ्]१. हाथी का पैर। २. तर्क। ३. पर्व।

वि०१. चतुर। २. बुद्धिमान।

प्रोहित—पुं०=पुरोहित।

प्रौढ़—वि०[सं० प्र√वह्+क्त, सम्प्रसारण, वृद्धि] [स्त्री० प्रौढ़ा] [भाव० प्रौढ़ता]१. जो अच्छी तरह बढ़कर या विकसित होकर अपनी पूरी बाढ़ तक पहुँच चुका हो। अच्छी या पूरी तरह से बढ़ा हुआ। जैसे—प्रौढ़ बुद्धि, प्रौढ़ वृक्ष। २. (व्यक्ति) जो अपनी आरंभिक अवस्था पार करके मध्य अवस्था तक पहुँच चुका हो। ३. बलवान। शक्तिशाली। ४. दृढ़। पक्का। मजबूत। ५. अच्छी तरह भरा हुआ। ६. गंभीर। गूढ़। ७. चतुर। चालाक। निपुण। ९. जिसका विवाह हो चुका हो। विवाहित। ९. पुराना। १०. घना। जैसे—प्रौढ़ घन (बादल)। पुं० तांत्रिकों का चौबीस अक्षरों का एक मंत्र।

प्रौढ़ता—स्त्री०[सं० प्रौढ़+तल्—टाप्]१. प्रौढ़ होने की अवस्था, गुण या भाव। २. प्रौढ़ अवस्था या वयस। ३. विश्वास। ४. क्रोध। गुस्सा।

प्रौढ़त्व—पुं०[सं० प्रौढ़+त्व]=प्रौढ़ता।

प्रौढ़-पाद—पुं०[सं०ब० स०] पैर के दोनों तलुए जमीन पर रखकर बैठना। उकड़ू बैठना। (शास्त्रों में इस प्रकार बैठकर भोजन, स्नान, तर्पण आदि करने का निषेध है)।

प्रौढ़ा—स्त्री०[सं० प्रौढ़+टाप्] १. अधिक या प्रौढ़ वयसवाली स्त्री। २. साहित्य में प्रौढ़ वयसवाली नायिका जिसमें लज्जा कम और काम-वासना अधिक होती है और जो बातचीत में चतुर तथा काम-केलि में प्रवीण होती है। इसके रति-प्रीता, आनन्द-सम्मोहिता, विचित्र-विभ्रमा, आक्रान्ता आदि अनेक भेद कहे गये हैं।

प्रौढ़ा-अधीरा—स्त्री०[सं० व्यस्तपद] साहित्य में वह प्रौढ़ा नायिका जो अपने नायक में विलास-सूचक चिह्न देखने पर प्रत्यक्ष प्रकोप करे।

प्रौढ़ाधीरा—स्त्री० [सं० व्यस्तपद] व्यंग्यपूर्ण बातें कहकर अपना कोप प्रकट करनेवाली प्रौढ़ा नायिका।

प्रौढ़ाधीराधीरा—स्त्री० [सं० व्यस्तपद] साहित्य से वह नायिका जो अपने नायक में पर-स्त्री-गमन के चिह्न देखकर कुछ तो प्रत्यक्ष और कुछ व्यंग्य-पूर्वक कोप प्रकट करे।

प्रौढ़ि—स्त्री० [सं० प्र√वह्+क्तिन्] १. प्रौढ़ता। २. सामर्थ्य। शक्ति। ३. धृष्टता। ढिठाई। ४. तर्क-वितर्क। वाद-विवाद।

प्रौढ़ोक्ति—स्त्री० [सं० प्रौढ़ा-उक्ति, कर्म० स०] १. ऐसी उक्ति या कथन जिसमें कोई गूढ़ रहस्य हो। २. साहित्य में एक प्रकार का अलंकार जिसमें किसी कल्पित अथवा वास्तविक उत्कर्ष का आविर्भाव ऐसी चीज या बात से बतलाया जाता है जो वस्तुतः उस उत्कर्ष का हेतु नहीं होता अथवा नहीं हो सकता। जैसे—यदि कहा जाय कि यमुना के किनारे पर उगने के कारण ही सरल वृक्ष नीले रंग का हो गया है तो यहाँ प्रौढ़ोक्ति अलंकार होगा, क्योंकि वास्तव में यमुना के जल में आसपास के वृक्षों को नीला करने का गुण या शक्ति नहीं है।

प्रौष्ठ-पदी—स्त्री० [सं० ब० स०,+अण्—ङीप्] भाद्र मास की पूर्णिमा।

प्लक्ष—पुं० [सं० √प्लक्ष् (खाना)+घञ्] १. पुराणानुसार सात द्वीपों में एक द्वीप। २. अश्वत्थ। पीपल। ३. पाकर या पिलखा नाम का वृक्ष। ४. बड़ी खिड़की या छोटा दरवाजा। ५. दरवाजे के पास की जमीन। ६. एक प्राचीन तीर्थ।

प्लक्षजाता—स्त्री० [सं० पं० त०] सरस्वती (नदी)।

प्लक्षराज—पुं० [सं० पं० त०] सरस्वती नदी का उद्गम।

प्लक्षा—स्त्री० [सं० √प्लक्ष्+अ—टाप्] सरस्वती (नदी)।

प्लक्षावतरण—पुं० [सं० प्लक्षा-अवतरण, ष० त०]=प्लक्षराज।

प्लवंग—पुं० [सं० प्लव√गम्+खच्, टिलोप, मुम्] १. बंदर। २. साठ संवत्सरों में से इकतालीसवाँ संवत्सर। ३. हिरण। ४. वानर। बन्दर। ५. प्लक्ष या पाकर का वृक्ष।

प्लवंगम—पुं० [सं० प्लव√गम्+खच्, मुम्] १. २१-२१ मात्राओं के चरणों वाला एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण का पहला वर्ण गुरु और अंत में १ जगण और १ गुरु होता है। २. बन्दर। ३. मेढ़क।

प्लव—पुं० [सं० √प्लु+अच्] १. साठ संवत्सरों में से पैंतीसवाँ संवत्सर। २. कुक्कुट। मुरगा। ३. उछल-कूद कर चलनेवाला पक्षी। ४. कारंडव पक्षी। ५. मेढ़क। ६. बंदर। ७. भेड़। ८. चांडाल। ९. वैरी। शत्रु। १०. नागरमोथा। ११. मछलियाँ फंसाने का टापा या दौरा। १२. नदी की बाढ़। १३. नहाना। १४. तैरना। १५. जल-पक्षी। १६. एक प्रकार का बगला। १७. आवाज। शब्द। १८. अनाज। अन्न। वि० १. तैरता हुआ। २. झुकता हुआ। ३. क्षण-भंगुर।

प्लवक—वि० [सं० प्लावक] तैरनेवाला। तैराक।

पुं० १. [सं० प्लव+कन्] १. तलवार, रस्सी आदि पर नाचनेवाला पुरुष। २. मेढ़क। ३. प्लक्ष या पाकर का वृक्ष।

प्लवग—वि० [सं० प्लव√गम्+ड] १. कूदने या उछलनेवाला। २. तैरनेवाला।

पुं० १. बंदर। २. हिरन। ३. मेढ़क। ४. जल-पक्षी। ५. सिरस का पेड़। ६. सूर्य के सारथी का नाम।

प्लवन—पुं० [सं० √प्लु (गति)+ल्युट्—अन] १. उछलना। कूदना। २. तैरना। ३. =प्लावन।

वि० ढालुआँ।

प्लविक—पुं० [सं० प्लव+ठन्—इक] माँझी। मल्लाह।

प्लांचट—पुं० [अं०] तीन पायोंवाली एक तरह की छोटी चौकी जिसकी सहायता से प्रेतात्माओं से संबंध स्थापित करके वार्तालाप किया जाता है।

प्लाक्ष—वि० [सं० प्लक्ष्+अण्] प्लक्ष संबंधी। प्लक्ष का।

पुं० १. प्लक्ष होने की अवस्था या भाव। २. प्लक्ष या पाखर वृक्ष का फल।

प्लाक्षायन—पुं० [सं० प्लाक्षि+फक्—आयन] प्लाक्षि के गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति।

प्लाट—पुं० [अं०] १. इमारत बनाने या खेती आदि करने के लिए जमीन का टुकड़ा। २. उपन्यास, नाटक आदि की कथा-वस्तु। ३. षड्यंत्र।

प्लान—पुं० [अं०] दे० 'आयोजना'।

प्लाव—पुं० [सं० √प्लु+घञ्] १. पीपे की तरह की कोई खोखली चीज जो किसी जलाशय में लंगर आदि के सहारे ठहरी और तैरती रहती है, और जो प्रायः इस बात की सूचक होती है कि यहाँ नीचे चट्टान है अतः जहाजों, नावों आदि के टकराने का डर है। २. रबर आदि का वह गोलाकार खोखला पट्टा जिसके अन्दर हवा भरी रहती है और जिसका सहारा लेकर आदमी डूबने से बचकर तैरता रहता है। (बोई) ३. गोता। डुबकी। ४. परिपूर्णता।

प्लावन—पुं० [सं० √प्लु+णिच्+ल्युट्—अन] १. चारों ओर जल का उमड़कर बहना। २. जल की बहुत बड़ी बाढ़ जिसमें सारी पृथ्वी या उसका बहुत बड़ा अंश डूब जाता है। ३. अच्छी तरह डुबाने या धोने की क्रिया। ४. ऊपर फेंकना। उछालना। ५. तैरना।

प्लावित—भू० कृ० [सं० √प्लु+णिच्+क्त] १. बाढ़ के पानी से भरा हुआ। २. जो जल में डूब अथवा बह गया हो।

प्लाव्य—वि० [सं० √प्लु+णिच्+यत्] जल में डुबाये जाने के योग्य।

प्लास्टर—पुं० =पलस्तर।

प्लीहा (हन्)—स्त्री० [सं० √प्लिह्+कनिन्, नि-दीर्घ] १. पेट के अंदर का तिल्ली नामक अंग जो पेट के ऊपरी बाएँ भाग में होता है और जो शरीर का रक्त बनाने में सहायक होता है। (स्प्लीन) २. उक्त अंग के सूजकर बढ़ने का रोग।

प्लीहाविद्रधि—पुं० [सं० ब० स०] तिल्ली का एक रोग जिसमें साँस रुक-रुक कर आने लगता है।

प्लीहोदर—पुं० [सं० प्लीहा-उदर, ब० स०] प्लीहा के बढ़ने का रोग। तिल्ली।

प्लीहोदरी (रिन्)—वि० [सं० प्लीहोदर+इनि] [स्त्री० प्लीहोदरिणी] जिसे प्लीहा रोग हुआ हो।

प्लुत—वि० [सं० √प्लु+क्त] जो काँपता हुआ चलता हो। २. डूबा हुआ। प्लावित। ३. बहुत गीला या तर। ४. (ताल, स्वर आदि मात्राओं से युक्त। तीन मात्राओंवाला।

पुं० १. टेढ़ी और उछालवाली चाल। २. घोड़े की एक प्रकार की चाल जिसे पोइया या पोई कहते हैं। ३. (व्याकरण में किसी स्वर-वर्ण के

उच्चरित होने की वह अवस्था) जिसमें साधारण की अपेक्षा तिगुना समय लगा हो। इसका चिह्न ऽ है। जैसे—ओऽम्।

प्लुति—स्त्री० [सं० √प्लु+क्तिन्] १. उछल-कूद की चाल। २. पोई नामक साग। ३. तीन मात्राओं से युक्त वर्ण।

प्लेग—पुं० [अं०] १. कोई ऐसा भयंकर संक्रामक रोग जिसके फैलने पर बहुत अधिक लोग मरते हैं। महामारी। २. एक विशिष्ट प्रकार का घातक संक्रामक रोग जिसमें रोगी को ज्वर होता है और जाँघ या बगल में गिलटी निकलती है।

प्लेट—पुं० [अं०] १. धातु के पत्तर, मिट्टी आदि की एक तरह की छोटी थाली। तश्तरी। २. उक्त प्रकार का ऐसा पत्तर जिसपर कोई लेख अंकित या उत्कीर्ण हो। ३. तश्तरी। रिकाबी। ४. कपड़ों की वह पट्टी जो पहने जानेवाले वस्त्रों में कहीं तो मजबूती के लिए और कहीं शोभा के लिए लगाई जाती है।

क्रि० प्र०—डालना।—देना।

५. फोटो लेने का वह शीशा जो प्रकाश में पहुँचते ही अपने ऊपर पड़ने वाली छाया को स्थायी रूप से ग्रहण कर लेता है।

प्लेटफार्म—पुं० [अं०] जमीन से कुछ ऊँचा, चौकोर तथा समतल चबूतरा। जैसे—रेलवे स्टेशन का प्लेटफार्म।

प्लैंचेट—पुं०=प्लांचट।

प्लैटिनम—पुं० [अं०] स्वर्ण से भी अधिक बहुमूल्य, अधिक भारी तथा अधिक कड़ी सफेद रंग की एक धातु।

75674